

हिन्दी

विश्वकोष



[दशम भाग]

तोमिन् (म० पु०) तुमने तोप तत् विद्य पम्ब इति ।
तुम्हागि

तोमिया (म० स्त्री०) एक प्रकारका मोटा प मोटा ।
यह धान्यादि करमिसे बाद घरीर पीमिसे काममि
पातो है ।

तोमो (हि० स्त्री०) १ मटोरो एक ग्दारको छोटे
पानो । मटोका चोड़े सुँडला बडा बतन । इममि
बिरीचकर इ रक्ता जाता है ।

तोमो (म० पु०) तुमव मोमं तत् विद्य पम्ब इति ।
१ तुम्हाराई । तुम्हादण्ड मानदण्ड ररइति य० सा ।
२ गुम्हादण्डो मपिक । ३ बड्ढानकी तमो आनि । यह
आनि तुम्हाण्ड कारच कर बंगपरम्परान् म्बमाय करतो
पाई है, इ कारच तिने जातोका मरा नाम तोमो
पडा है । कई बोई इम आतिबो तोमि मममति है,
परन्तु तोमि प्रतिभोम कर्ण मड्ढर जा है, लमके भाय
तोमो आनि बोई मी मम्बम्ब करो ।

तिथी १०/ सकिड देवी

तोम्य (म० पु०) तुम्हा परिच्छिन्न इम् । १ तुम्हा
द्वारा परिच्छिन्न की तोम कर बर्दा मी हो । २ तुम्हा
मदम ।

तोम्यवावण (म० पु०) तुम्हलण्ड करियेपम्ब तुम्हा,
तुम्हलण्ड-इम् पम्ब । तुम्हलण्ड करिये तुम्हा म मय ।

तोम्लि (म० पु०) तुम्हलण्ड करियेपम्ब इम् । तुम्हलण्ड
करिये म मय ।

तोम्लिपटि (म० पु०) पाणिनिआ गम्बिमिप । तोम्लिपटि,
कारचि पारचि, राबचि, टैकोपि दैयति, बाकंति,
मैबकि दैबमति, दैमबडि, पाफडकि मेल्लकि मेल्लि,
पातुराडति, पोम्बरमादि, पातुराडति पातुति, पाटो-
इति, मैमिप, पाड्ढाडति, बाम्बचि, मंयोति, पाडिमाचि,
पाडिमि पाडुति, मैमिपि पाडिबम्बकि तोम्बरैय
पासि मेल्लकि, मेल्लकि मेल्लति । (पथिनि २।३।११)

तोमरक (म० स्त्री०) तुम्हा इटं पम्ब काये बन । १ तुम्हरो
मम्बम्बोय खेजादि । २ तुम्हरक ।

तोम्लिआ (म० स्त्री०) चौपमिड, एक प्रकारकी
दवा ।

तोमावच (म० स्त्री०) तुम्हा चड्ढरदेमादि पचादिआव
पम्ब । तुम्हके ममोपमर्तो दिम ।

तोमार (म० पु०) १ तुम्हाराक बन, पाडेका पान्ने ।
(स्त्री०) तुम्हारेदे टुम्हारेपम्ब । २ तुम्हारे मम्बम्बोय ।

द्वारा देवी ।

तौहीन (अ० स्त्री०) अपमान, अप्रतिष्ठा, वैशङ्कनी ।
 त्वन (स० पु०) आत्मन् आनीपः । आत्मा ।
 त्वज्ज (स० त्रि०) त्वज-ज्ज । हतत्यागी, त्यागा दुष्टा,
 छोड़ा दुष्टा । पर्याय—हीन, समुज्झित, उत्सृष्ट,
 धूत, विधूत, विनाशित, विगटित और निष्कृष्ट ।
 त्वज्जश्च (स० त्रि०) त्वज-तश्च । त्वजनीय, छोड़ने योग्य ।
 त्वज्ज (स० त्रि०) त्वज-त्त्च् । त्यागकारी, छोड़ने-
 वाला ।
 त्वगल (स० पु०) गत्यकर्त्ता, वह जो किताब बनाता हो ।
 त्वगनायि (स० स्त्री०) सामभेद, एक प्रकारका माम ।
 त्वजन (स० स्त्री०) त्वज ल्युट् । त्याग, छोड़नेका काम ।
 त्वजनोय (स० त्रि०) त्वज-अनीयर् । त्यागने योग्य,
 छोड़ने काविल ।
 त्वजस् (स० पु०) त्वज भावे असुन् । १ त्याग । (त्रि०)
 कर्त्तरि असुन् । २ त्यागकर्त्ता, छोड़नेवाला ।
 त्वच्यमान (स० त्रि०) जिसका त्याग कर दिया गया हो,
 जो छोड़ दिया गया हो ।
 त्वट् (स० त्रि०) त्वज-अदि सच डित् । (त्वजितनीति । उण् ।
 १३२१) । १ आकाश । २ वायु । (भाग० १०।२।२६)
 ३ सर्वदा परोक्षाभिधानार्थं वस्तु । ४ प्रसिद्ध, मशहूर ।
 यह शब्द सर्वनाम है । इसका रूप त्वटादिको नाईं
 होगा, जैसे पुलिङ्गमें स्यः, त्वी, त्वे, स्त्रीलिङ्गमें स्याः, त्वे,
 त्याः और क्लोवलिङ्गमें त्वट्, ते, तानि इत्यादि । अथर्व-
 भाष्य समासमें इस शब्दका अच् समासान्त होता है ।
 यथा—त्यस्य समोपे उपत्यदं इत्यादि ।
 त्वटाटि (स० पु०) पाणिनीय गणसूत्रोक्त शब्द समूह—
 त्वट्, तट्, यट्, एतट्, इट्, अट्, एक, द्वि, युष्मट्,
 अस्मट्, भवत्, किम् । अथ विधिमें अर्थात् टि स्थानमें
 अत् होता है । इस विषयमें शब्द पर्यन्त ग्रहण की भाष्य-
 कारका अभिलपित है । त्वटाटिके टि स्थानमें अत्
 होता है, इसमें त्वट्से ले कर किम् पर्यन्त मालूम पड़ता
 है, किन्तु भाष्यकारका कहना है कि अथ विधिमें द्वि
 पर्यन्त ग्रहण जानना चाहिये ।
 त्याग (स० पु०) त्वज-भावे घञ् । १ उत्सर्ग, किसी पदार्थ
 परसे अपना स्वत्व हटा लेने अथवा उसे अपने पाससे
 अलग करनेकी क्रिया । मनुने लिखा है, कि माता,

पिता, स्त्री और पुत्र ये चारों त्यागने योग्य हैं
 अर्थात् इन्हें त्याग नहीं करना चाहिये ।

२ दान । ३ विवेकी पुरुष, ज्ञानी मनुष्य ४ सर्व
 कर्मफल विसर्जन, विरक्ति आदिके कारण आत्मिक
 विषयों और पदार्थों आदिको छोड़नेको क्रिया त्यागको
 विषय गोचरमें इस प्रकार निष्ठा है—

संन्यास और त्यागमें एकसुत्र कोई विभेदन नहीं है ।
 संन्यासकर्म ही एक विशेष अवस्थाको ताग कहते हैं ।
 विद्वानोंने समस्त काम्यधर्मके परित्यागकर्म संन्यास
 और समस्त कर्मों फलकी आगा न रचनेको ताग वत-
 लाया है । अतएव संन्यासको विशेष अवस्थो गिनतो
 त्यागमें कौगड़े है । त्याग और संन्यास विषयमें
 कुछ ऋषियोंके जटिल सिद्धान्त देख कर मतभेदसा
 प्रतीत होत है, किन्तु बहुत गोरसे देख जाय, तो
 कोई मतभेद नहीं मालूम पड़ता । कोई ई कहते
 हैं, कि जो देह, मन और इन्द्रियादि हारा जो काम
 करता है, वह केवल बन्धनके लिये है । इस कारण
 यह भी अन्यथा दोषांकी नाईं परित्यज्यः । फिर
 कोई ठोक सथा विपरोत कहते हैं । उनका कहना है,
 कि यज्ञ, दान और तप आदि कर्मानुष्ठानोंद्वारा विशुद्ध
 हो कर चित्तब्रह्मज्ञानका अधिकारी होता है, अतएव
 यह परित्यज्य नहीं है । भगवान्ने इसके विषयमें अर्जुन-
 से यों कहा था—“तागके तीन भेद । सात्त्विक,
 राजसिक और तामसिक । यज्ञ, दान और तप आदि कर्म
 कर्मो भी छोड़ने योग्य नहीं हैं । इनका अनुष्ठान सर्वदा
 करना चाहिये क्योंकि यज्ञ, दान और तप आदि कर्मोंसे
 मनुष्योंको देह मन और इन्द्रियां विशुद्ध व निर्मल हो
 जाती है । अतएव आसक्ति और फलकाम्ना-रहित हो
 कर इन सबका अनुष्ठान करना कर्त्तव्य है । विद्वानोंने
 बन्धनके भयसे जिस काम के परित्यागको वत कहा है,
 वह तो कर्म है । असुक कार्य द्वारा हमें असुक प्रकारके
 सुख मिलेंगे, अतएव उद्देश्यसे जो काम किय जाता है,
 उसे काम्यधर्म कहते हैं । काम्यधर्मद्वारा आत्मज्ञान
 लाभके उपयुक्त चित्तशुद्धि तो नहीं होती, पर स्वर्गादि
 फल अवश्य मिलते हैं । सुतरां मुक्ति नहीं हो कर बन्धन
 हो हुआ । इसीसे जो ऐहिक और पारलौकिक किसी प्रकार

के लक्ष्मणभोग्यो इच्छा नहीं रखती। शिवल सुद्धि प्रजात्
 श्वात्मिज्ञान द्वारा देव, मन धोर इन्द्रियादि लक्ष्मणदार्ढिक
 माय धर्मिभवावने धाकाको पति हैं। वे इसी श्वात्मि
 दिन प्रहे निर्ये सुभने प्राबं ना करती हैं। इस कारण
 श्वात्मिभवे धे धनुष्ठानको उरु अदरत नहीं पड़ते, यही
 समझ कर वे नित्य धोर नैमित्तिक कर्म का कर्मो मो परि-
 त्ताग नहीं करते। श्वात्मि नित्य धोर नैमित्तिक कर्मिका
 यवाविधि धनुष्ठान करतीं धे आपका धर्मो बन्धन नहीं
 होता, परन्तु अज्ञान प्रबन्ध होता है। पतयव मोहबन्ध
 इन सब कर्मोंके परित्तागको ताममत्ताग कहते हैं।
 प्रादोरिक छेय धोर धव महादिन धरि पतयत्त कष्ट
 बलक जान को कर्म परित्ताग किया जाता है
 धने राजम परित्ताग कहते हैं। इस तरह कर्मत्ताग
 करनेसे त्तागका फल नहीं होता। जो ममत्ता धामति
 पलाकाकाको ध्याया छोड़ कर केवल कर्मधरि पलासने
 को नित्य धोर नैमित्तिक कर्म किया जाता है धे
 सात्विक त्ताग है। कर्मसे धासक्ति धोर पलामिधायक
 परित्तागको जो कर्मत्ताग कहते हैं, न कि क्रियाके
 त्ताग को।

जो न तो धकुष्ठान कर्मसे कुछ विवेचरदती है धोर
 न धमत्रनत्र कायसे धामक हो रहती है, धे ही यथा
 से कर्मत्तागो है। जब तक देव, मन धोर इन्द्रिया
 कायम रहेंगे, तब तक धार्ढी मो प्राची धर्मय कर्म परि-
 त्याग नहीं कर सकना। श्वात्मि शोचन धारण करने
 से देव, मन धोर इन्द्रियोंका क्रिया प्रबन्ध होता हो है।
 यहाँ तक कि कलाप्रबन्धमि भी क्रिया बन्द नहीं रहती।
 पतयव कर्मिका जो परिध्याय है नह कियाका मो
 परित्याग है धेना नहीं धमभना बाधिय। किन्तु जो
 कर्मके पलावामो है, धेधो त्यागो कह्यते हैं। धम-
 फलपान हो त्याग पदवाच्य है। (गीता १८ न०)
 १ किमी बातको छोड़नेको क्रिया। २ सख्य धा न्याय
 न रखनेको क्रिया। ३ कल्यादान। (टि०) (त्रि०) ८
 धानकता, छोड़नेवाला।
 श्वात्मि (त्रि० त्रि०) धुधक करना लोडुका।
 श्वात्मय (म० त्रि०) श्वात्म्य पत। १ धामत्र, धव
 पत्र धिधने किमी प्रकारके त्यागका उरुधे हो।

२ धारपरिध्यामिकाय, लिहाकनाम। ३ श्वात्म्य।
 त्तागनाम (म० त्रि०) त्तागो त्रिधनेधरि क्रिया धे
 धवधा त्रिधने त्ताग करनेको क्रिया हो।
 त्यागयोक्त (म० त्रि०) त्याग एव योक्त का। धामत्र,
 उदार, दानी।
 त्तागकोधार (म० पु०) धामध्याय विधाय, धा
 सुखका परित्ताग।
 त्तागिन् (म० त्रि०) त्तागतोति त्ताग-विधुत्। १
 दानी। २ शूर। ३ बत्रं नयोस छोड़नेवाला।
 पलात्तागो, सांसारिक सुखको छोड़नेवाला।
 त्तागिन् (म० त्रि०) त्तागिन् विधुत्, त्ताग-मय
 छोड़ना धुधा।
 त्ताग्य (म० त्रि०) त्ताग्यते इति त्ताग कर्मधरि
 त्ताग्य इति न कुल। १ बत्रं नयो, जो छोड़ देने को
 हो २ धामके योध्य।
 त्ताग्य (म० त्रि०) त्ताग्य एव इत्यते एवो त्ताग्य इत्य
 क्रि। त्ताग्य उसके समान, बैधा।
 त्तो (त्रि० त्रि० वि०) १ धव प्रकाश, उस तरह। २
 तत्तात्त उकी नमय।
 त्तोरो (त्रि० धो०) धवकोधम, इष्टि निमाह।
 त्तोहार (त्रि० पु०) धमिक धा कातीय उसव दिन,
 परदिन।
 त्तोहारी (त्रि० धो०) त्तोहारके उपनयसे छोटी लडुको
 या लोडरो पादिको दिने ज्ञानिका धन।
 त्तो (त्रि० त्रि०-वि०) त्तो देवो।
 त्तोहार (त्रि० पु०) उध, तत्र।
 त्तोर (त्रि० पु०) त्तोर देवो।
 त्तोराना (त्रि० त्रि०) त्तोरि धरि धाना, धावा धूमना।
 त्तोरी (त्रि० धो०) त्तोरी देवो।
 त्तोरुध (त्रि० पु०) त्तोरुध देवो।
 त्तोहार (त्रि० पु०) त्तोहार देवो।
 त्तोहारो (त्रि० धा०) त्तोहारी देवो।
 त्तु (म० पु०) धमि-धव। धुरमदे एव धाधीन नगर
 का नाम जो पडती राधा इरिधकका राजनवर का।
 त्तुधाम (म० त्रि०) त्तुध-धामक। त्तुधामान, त्तुधने
 लडुका पाई हो।

वपा (सं० स्त्री०) त्रय्यते इति त्रय-अङ्, ततटाप्, १ लज्जा, लाज, शर्म । २ कुन्दा, छिनाल स्त्री । ३ कोर्त्ति, यम । ४ कुल, वंश । (त्रि०) ५ सलज्ज, लज्जित, शरमिन्दा । वपाक (सं० पु०) वपते लज्जते त्रय-आ-क । स्त्रेच्छ विशेष, नीच जाति ।

वपानिरस्त (सं० त्रि०) वपया निरस्तः । निलज्ज, लज्जा हीन, शर्म, बेइया ।

वपान्वित (सं० त्रि०) वपया अन्वितः । लज्जायुक्त, शरमिन्दा ।

वपारण्डा (सं० स्त्री०) वपायां रण्डेव, लज्जाहोन्त्वान् तथात्वं । बेइया, रंडो ।

वपावत् (सं० त्रि०) वपा विद्यतेऽस्य, वपा-मत्तुप्, मस्य व । लज्जाशील, लज्जावान्, इयामन्द ।

वपितं (सं० त्रि०) त्रय-क्तः ; वपायुक्त, लज्जित, शरमिन्दा ।

वपिष्ठ (सं० त्रि०) अयमिषामतिशयेन त्वप्र-इष्टन् । प्रिय-स्थिरैतदादिना त्वप्र-शब्दस्य त्वप् आदेशः । अतएव लज्जित, बहुत लज्जावान् ।

वपीयस् (सं० त्रि०) अयमनयोरलिययेन त्वप्रः त्वप-ईयस्यन् त्वपस्य त्वप् आदेशः । वपिष्ठ, अतएव लज्जित ।

त्रयु (सं० स्त्री०) अग्निं दृष्ट्वा वपते इवं वप-उस् । १ सोसक, सोसा । २ रइ, टोन । इसे तामिलमें तगरम, मलयमें तिम, फलघ, ब्रह्ममें खैम, अरबमें कसदिन, रसस और पारसमें सरजिल कहते हैं । (It-latta, banda stagnata, Fr. Ferblace, Cer. Weissblech, zinn; Rus. Blacha shest)

यह धातु देखनेमें चांदीकी तरह होती है । जब यह परिष्कार रहतो है, तब बहुत सफेद दीख पड़ती है । इसमें कुछ स्वाद भी है । घिसनेसे एक प्रकारकी गन्ध निकलती है । सोना जैसे नहीं होने पर भी यह धातु सोनासे कुछ कड़ी होती है । इसका भारोपन ७२८ है । यह बड़ा ही घातसह है, कितना ही इसे पीटें तो भी यह टूटती नहीं । यहाँ तक कि एक टोनसे ५००० पतलो चहर बन सकती है । ०००-इस परिधिविशिष्ट टोनके तारमें मोलह सबह धेरका बोझ लटका सकते हैं । इसको पीट कर इच्छानुसार जितना पतला कर

सकते हैं, उतना चोटा नमो कर सकते हैं । यह बहुत ही कोमल होता है, यत्नसे ही कुक जाता है । ताँवा, जस्ता आदि धातुओंके साथ टोन बहुत प्रासानोमें मिन सकती है । दूसरी धातुओंमें कलई करने वा टाँकनेमें टोन बहुत व्यवहृत होती है । इसको चहर द्वारा मट्टनेसे लोहेमें मोरचा नहीं लगता । अग्निका स्पर्श करानेसे टोन लोहेके भीतर मो प्रवेश करतो है और उष्णता रंग सफेद बना देतो है । मानुम पड़ता है, इसी कारण स्कोटनेगडमें टोनको चहर श्वेतलोह (White iron) नामसे प्रसिद्ध है । टोनको गला कर उष्में पतलो लोहेकी चहर डुबो देनेसे माधारणतः 'श्वेतलोह' बनता है । विलायतमें श्वेतलोहेका खूब आदर है ।

ताँबेके रसोई बनानेके वरतनोंमें बहुत जल्द मोरचा लग जाता है, किन्तु यदि टोनको चहरसे उष्में कलई की जाय तो फिर मोरचा नहीं पड़ता । नाइट्रिक स्यूरियाटिक, नाइट्रोसलफिउरिक और टर्टीरिक एमोडमें टोनको गला कर वइ बहुतसे रंगोंमें मिलायो जाता है । इससे रंग मदा एकसा बना रहता है और सफेदी भी बढ़ती है ।

बहुत प्राचीन कालसे टोन जनसाधारणके काममें आरंभो है । गजुर्वेदमें हम लोग 'त्रयु' शब्दका उल्लेख पाते हैं—

"लोहदन्ते मीमन्त्रे प्रयुच्यते गेहेन श्यन्तामशुक्लयुः १८१२

इसके सिवा प्रथमवेदमें (११।३।८) छान्दोग्यं पनिपत् (४।१७।७) आदि श्रुतियोंमें एवं मनु याज्ञवल्क्य आदि स्मृतियोंमें 'त्रयु' अर्थात् टोनका उल्लेख है । मयुंसक (पशुपत्नी) की इत्या करने पर याज्ञवल्क्यने प्रायश्चित्तस्वरूप एक माण और भीसा दान करनेको व्यवस्था की है । (३।२७३)

महाभारतमें त्रयुकी चाँदीका मल बतलाया है ।

(भारत उद्योग ० ३८७०)

भारतमें जिस तरह वैदिक युगसे त्रयुका व्यवहार चला आ रहा है उसी तरह यूरोपमें भी चिरकालसे इसका प्रचार है । हिरोदोतस, दियोदोरस सिक्कुलस और ट्रायी फिनिकोय वणिकोंके काश्तियों देश वा टोन होपमें यात्राका विवरण लिपिबद्ध कर गये हैं । पुराणके

शान्तैवास्ति सिध्दौ दीपं पौर विज्ञायते च
 बालुकी प्राचीनं खासितेरे देयं माना है। यथा बंमि
 पथ मी कर्षं बालु नाम च शान्तै खासये त्रितनो टोन
 निबलती है ततना यूरोपके पौर जिसे दूसरे खानये
 नहीं निबलती।

प्राचीन कालमें पार्थ श्रेयि खोय पथका फिलिडोव
 बन्दिब शीम टोनके खोन चीज बनाते थे, उसका खोरे
 काका प्रमाच नहीं मिलता। यद्यपि टोनको अद्वरत पड़ते
 को यत्र इम खोगीको यत्न देते पता लगता है। स्थिति
 त्रयुको विस्तरो मूलप्रान् बसुमें भी गई है। टोन पौर
 तथिको एक साथ मिलानेसे बाना बनता है, यह मी
 भारतवासी बहुत प्राचीन कालसे जानती हैं।

इन्द्रावग, बारबार, गुजरात पौर मध्यभारतके
 बस्तार राखमें कई जगह टोन पत्थर (Tin stone)
 पाया गया है। बिन्दु पत्थरो टोन नहीं मो नहीं
 मिलती। इन्द्रावग, मलयप्रायोद्वीप, यव-द्वीप पौर
 शोममें त्रयुको खान मिलतो है त्रिनमें मलयप्रायो
 को खान स सारमें प्रसिद्ध है। इतनो टोन पौर नहीं
 नहीं मिलता। प्राचीन कालमें यहीं भारतवर्षमें त्रयु
 मीत्रा जाता था। यहाँके ताबय नगरमें १३८६ ई०के
 प्रसिद्ध श्वमचकारो ताफकिच पाकर यो लिख यत्ने हैं—

I went from Pegu to Malacca, passing
 many of the sea ports of Pegu, as Martaban
 the island of Tavoy; whence all india is sup-
 plied with tin, Tenasserim, the island of Junk
 Ceylon, and many others

यद्यपि मलयवे भारतवर्षमें टोन पाता है। यहाँके
 टोनकी प्रति वर्ष १२०१३ लाख बण्डके खजानो
 होता है।

त्रयु खानके मोतर दो पथकाशोमें रहता है।
 बलो बमी यह सिद्धताजन तथि पौर मोने खादिके
 साथ विमत्ता रहता है। इसको टोन-कीड कहते हैं।
 इसको मन्थ कर परिष्कार करनेसे टोन। दुबड़ा बनता
 है। दूसरो पथकाशमें यह बाबू खादिके साथ मिलित
 रहता है, इसको गिनतो पक्कजिम टोनमें को गई है।

त्रयुक्तटी (स० खो०) १ त्रयुको; बकड़ो। २ यथा
 कीरा।

मपुटी (स० खो०) सफ़ाका, जोटो रत्नायपो।
 त्रयुन (स० खो०) त्रयुपि पश्चिम खर्मन बन्दिब इव
 त्रय-वाङ्क त्रयन्। रङ्ग, रंया।
 त्रयुप (स० खो०) त्रय-वाङ्क-त्रय। १ रङ्ग रंया। २
 त्रयुपो फल खोर। पथाय—बण्डविपल, सुबा
 बाप पौर सुगीतत। जोटे फलके त्रयु—मीठ बल,
 ख्या म्म, दाच, पिच पौर त्रयुपिचनायक। फले
 फलके त्रयु—पक्क, त्रयु, पिचन, बन्दिब पौर वातनायक।
 बड़े फलका त्रयु—मुन्नन, यीत, रच, पिच पौर
 भस्मपत्थनायक।
 त्रयुपनैक (स० खो०) त्रयुपनोबनेक, खीरेका सेत।
 त्रयुपो (स० खो०) त्रयुप मोरा; खीप। १, बकड़ो,
 बकड़ो। २ त्रयुप, खीरा।
 त्रयुस (स० खो०) त्रयु बाङ्कलकात् त्रय। १ रङ्ग रंया।
 २ बकड़ो, बकड़ो।
 त्रयुमा (स० खो०) त्रयुसो, मरेन्द्रवादी, बड़ा इन्द्रा
 यक।
 त्रयुमो (स० खो०) त्रयुन गौरा डीप। १ मरेन्द्रवादीको,
 बड़ा इन्द्रावय। २ फल बतानियेय, खोरा (Cucum-
 ber)। पर्याय—दोनतुप्य, काफ़ासु, त्रयुक्तटी बड़
 फला खोपफला, तुन्दिरफला, बण्डखीबता, सुबावाधा।
 त्रयु—यव रच, मङ्गर, गिरि, त्रयु, म्म, पिच
 विटाह पौर ममननायक है। (राखि०) इसको दो जाति
 हैं, एक तो भूमिचारिको पर्यात् अमोन पर फे बने बाना
 पौर दूसरो मङ्गचारिको पर्यात् मचान वा दोबार पर
 फे बनेबाको। भूमिचारिकोका फल खोटा थो गोटो
 होता है। यह दीनखानके खोचखान तक रहता है।
 मङ्गचारिकोका फल सन्ना पौर माब ही साब मोटा भा
 होता है। इसकोका फल मदिद पौर इसकोका मन्त्र
 र गका दिखमें पाता है। इसकी तरकारी मो
 बनतो है, परन्तु पचिन्नतर खोय रहे नमक मिरके साथ
 खाया जो जाति हैं। इतके वीत्र इमाके काममें पाता
 है। फल पौर बीजको तासोर डख्यो होता है। इसने
 मोनमें बलका पथ याबा जाता है, एको बाल्म साम
 रहे खोरा.वा कीप कहते हैं। यह फल पर्याये से कर
 यरत्कास तक पाया जाता है। २ बकड़ो।

वत्वादि (स० पु०) रङ्गादि संज्ञा धातु, रांगा इत्यादि सात धातुओंके नाम, जैसे-रांगा, सोसा, तांवा, चांदी, सोना, काला लोहा, लोहेकी मैल ।

वषा (सं० स्त्री०) घनोभूत श्लेष्मादि, जमो हुई श्लेष्मा या कफ ।

वपस्य (सं० स्त्री०) घनेतर दधि, पतला दही ।

वय (सं० स्त्री०) त्रि-तयम् । १ त्रितय, तीन युक्त । २ त्रिव्य संख्या युक्त । तीसरो संख्या ।

वयःपञ्चाशत् (सं० स्त्री०) १ त्र्यधिकपञ्चाशत्, तिरपन ।

वययाथ्य (सं० पु०) त्रयं जन्मत्रयं याति या वाहु० भाष्य । जन्मत्रयप्राप्त, वह जिसने तीनों प्रकारके जन्म पाये हैं । तीनों जन्मके समय-साठगर्भसे जन्म तक प्रथम, मौञ्जिबन्धन अर्थात् उपनयन संस्कार द्वितीय और यज्ञदीक्षा तृतीय ।

वयथत्वारिंशत् (सं० स्त्री०) त्र्यधिका चत्वारिंशत्, त्रिंशद्व्यस्य त्रयस् आदेशः । वह संख्या जो चालीससे तीन अधिक हो, तैंतालीस ।

वयःषट् (सं० स्त्री०) त्र्यधिका षट् । वह संख्या जो साठ और तीनके योगसे बनो हो, तिरसठ ।

वयस्-आदेश विशेष, अशीति शब्द और बहुव्रीहि समास के सिद्धा संख्यावाचक उत्तरपद पर रहने ता त्रि शब्दके स्थानमें त्रयस् होता है । यथा त्रयोदश प्रादि । अशीति शब्द पर रहने पर नहीं होता है । यथा-व्यशीति । (पा ६ । ३ । ४८)

वयस्त्रिंश (सं० त्रि०) त्रयस्त्रिंशत् पूरणे-डट् । जो तीसमें तीन अधिक हो ।

वयस्त्रिंशत् (सं० स्त्री०) त्र्यधिका त्रिंशत्, त्रि शब्दस्य त्रयम् आदेशः । वह संख्या जो तीस और तीनके योगसे बनती हो ।

वयस्त्रिंशत्पति (सं० पु०) त्रयस्त्रिंशत् देवानां पतिः । १ इन्द्र । वेदमें ३३ देवताओंकी कथा है, उनमें इन्द्र सबसे बड़े माने गये हैं, अतः इन्द्रका नाम वयस्त्रिंशत्पति हुआ है । २ प्रजापति । ये देवताओंके अधिपति हैं, अष्ट वसु, एकादश रुद्र, द्वादश आदित्य ये एकत्रिंशत् इन्द्र और प्रजापति ये त्रयस्त्रिंशत् हुए ।

(शतपथब्रा० ११।६।३५)

वयस्त्रिंशत्स्तोम (सं० पु०) त्रयस्त्रिंशत्स्तोमो अस्त्रं । यज्ञमैट, एक प्रकारका यज्ञ ।

वयस्त्रिंशिन् (सं० स्त्री०) त्रयस्त्रिंशत् ऋचः सन्त्यस्मिन् इति डित् । त्रयस्त्रिंशत् ऋक् द्वारा गोयमान साम-मैट, वह साम जो ३३ ऋकों द्वारा गाया जाता है ।

वयःसप्तति (सं० स्त्री०) त्र्यधिका सप्ततिः । तीन अधिक सत्तर, तिहत्तरको संख्या ।

वयो (सं० स्त्री०) त्रय-डोप् । ऋक्, यजुः और साम ये तीनों वेद । ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर । सर्गके आदिमें ऋङ्मय ब्रह्मा, स्वर्गस्थितिमें यजुर्मय विष्णु, स्वर्गनाशमें साममय रुद्र ये ही वयो हैं । २ पुरन्धो, पति पुत्र कन्या आदिसे भरो पूरा स्त्री । ३ सुमति । ४ सोमराजीलता । ५ भवानो, दुर्गा ।

वयोतनु (सं० पु०) त्रयो वेदो एव तनुः शरोरं यस्य । सूर्य । समस्त वेद सूर्यसे प्रचारित हुए हैं । इसीसे सूर्यका नाम त्रयोतनु पड़ा है ।

त्रयाधर्म (सं० पु०) त्रस्य वेदत्रयेण विधेयमानो धर्मः । वैदिक धर्म, जैसे ज्योतिष्टोम यज्ञ आदि ।

त्रयोमय (सं० पु०) त्रयात्मकः मयट् । १ सूर्य । (त्रि०) २ त्रयोधर्मात्मक । ३ वराहरूप । (पु०) ४ परमेश्वर । (भाग० २।४।१७)

त्रयोमुख (सं० पु०) त्रयो मुखो यस्य । ब्राह्मण ।

त्रयोदश (सं० त्रि०) त्रयोदशाना पूरणः त्रयोदशन् उट् । त्रयोदश संख्याका पूरण, तेरह ।

त्रयोदशचारित्र (सं० स्त्री०) जैनधर्मानुसार मुनियोंके लिए अवश्य पालनीय तेरह चारित्र । यथा—(१) पूर्ण अहिंसा, (२) पूर्ण सत्य, (३) पूर्ण अचीर्यं, (४) पूर्ण ब्रह्मचर्यं, (५) पूर्ण परिग्रहत्याग, (६) मार्ग संशोधनपूर्वक गमन करना, (७) मिष्ट, हितकर, मार्जित और संदेह रहित वचन बोलना, (८) दिनमें एक बार निर्दोष और अनुद्विष्ट आहार ग्रहण करना, (९) शरोर, शास्त्र, क्रम-गडलु आदि उपकरणोंकी नेत्रोंमें देख कर रखना और ठठाना, (१०) त्रस और स्यावर किसी मो प्रकारके जोवकी पोड़ा न हो, ऐसी शब्द प्राणिरहित भूमि पर मलमु-त्वादि छिपण कर प्राप्तक जलसे शौचक्रिया करना, (११) मनकी (१२) वचनकी और (१३) कायकी पूर्ण रूपसे यज्ञमें करना या रोकना । जैनधर्म देखो ।

त्रयोदशद्वीप (स० पु०) जैन-शास्त्रानुसार के तिरह द्वीप जिनमें पञ्चविम - जिनमन्दिर हैं । जम्बूद्वीपकोष्वरुच सुम्भारवर, वाहूचौरवर, चौरवर, वृत्तवर, चोद्वरुच, मन्दौ यर, पदपवर, पदचमामवर, कृपणवर, गहवर और दक्षिणवर इन तिरह द्वीपोंमें अवस्थित जिन मन्दिरों को पञ्चाङ्गिकापर्वमें पूजा की जाती है ।

त्रयोदशम् (स० वि०) त्रापिका दश । नव मध्या को तीन और दशके योगसे बनती हो, तिरहको मध्या यह शब्द निम्न बहुवचननाम है । १ त्रयोदश सध्यानुक्त, किछो ममय तिरह मज्जोन्निष्ठा म वसर होता है । मसम स होसि पर तीरह मज्जोन्निष्ठा सव होता है ।

त्रयोदशवाचकशब्द— १ पचपातिना २ इन्द्रिया निपच, ३ अमरकवता ४ चमा, ५ कज्जा, ६ तितिघा ७ पनक्ष्या ८ रक्षाम ९ मरकता, १० ध्याम, ११ ऐयं १२ दया, १३ पश्चि मा ये को सन्ध कदप है । (भारत उ० १०० ११२ अ०) । त्रयोदश दोय— १ ध्याम, २ श्लोक ३ शोच, ४ मर ५ माधय ६ ईर्ष्या ७ शोक, ८ मित्रा ९ पक्षाय प्रकृति १० पशुया ११, क्षया, १२ भय, १३ प्रति-विश्वानिष्ठा । (भारत उ० ११३ अ०)

त्रयोदशशुम्भुसु (स० पु०) शुम्भुसु पीपवर्मेह । इस को प्रसुतमवानो—बभ्रुं पञ्चमन्था, इनुवा, गुमच, यतमूली, गोचुर, राखा, म्नामासता, शुभफा गडो यवानो और शण्डी इनके समान मामोंको चुर कर जितना हो सतना हो शुम्भुन और शुम्भुनके पाखा ही मिले हैं बाद १ तोका प्रातावाण अन्न, यूप मध, लघ्नप्रच, दुग्ध वा मांसस इन्मेंसे किसे एकत्र माव सेवन करने से त्रिखगुल आनुगुल इनुप्राप्य बाहुमत मात सन्धि, पञ्चिखालु और मज्जागत वात कोडगत वाडु वात प्रीचिक रोम वायुके कारक उदोग और योनिरोग, मज्जाकि, शम्भ, शम्भुता शम्भो तथा पचाघात रोम कायि रहते हैं । (वाक्यशास्त्र शिरीषका०)

त्रयोदशी (स० श्लो०) त्रयोदश दिवसात् होय । तिथि विधेय किछो पचकी तिरहकी तिथि तिरह । पुराणके अनुसार यह तिथि धार्मिक कार्य करनेके लिये बहुत उपयुक्त है ।

त्रयोनवति (स० वि०) त्रापिका नवति । की गिनता-में नवति तीन पचिक हो, तिरानवे ।

त्रयोवि श्रुति (स० श्लो०) त्रापिका वि श्रुति । नव मध्या को दोस और तानके योगसे बनती हो, तीस को मध्या ।

त्रयाक्ष (स० पु०) १ मान्याताम शके त्रिभर्मके पुत्रका नाम । २ पन्द्रहवें हापरके एक ध्यासका नाम । ३ मरत-न श्रेय लखककके पुत्र एक राजाका नाम ।

त्रयाक्षि (स० पु०) एक प्राचीन श्रुतिका नाम । ये श्रीमहर्षिकके शिष्य और काशमय, माहर्षि पञ्चतमच, शि शपायन और शारोतके सहपाठी से (नग०)

त्रस (स० श्लो०) त्रम्भत विभेदत्वस्मिन् एव चतुर्थे क । १ वन, वगस । २ जडम । ३ जनेषु, सुप्रकच । ४ जैन धमागुमार एक प्रकारके शीव । इन जीवोंके चार भेद हैं श्रेय—श्रीन्द्रिय पश्चात् दो इन्द्रियोंवाले जीव श्रीन्द्रिय तीन इन्द्रियोंवाले जीव चतुर्दिन्द्रिय पश्चात् चार इन्द्रियोंवाले जीव और पञ्चद्वि पश्चात् पाँच इन्द्रियों वाले जीव ।

त्रसदण्ड (स० पु०) पुत्रकुण्डके पुत्र और मान्याताके एक पौत्रका नाम ।

त्रसन (स० श्लो०) त्रस भाषे क्नुट् । १ मग डर । २ लदेम । कर्त्तरि क्नुट् । (वि०) १ त्रसकुच, जिने डर लमा हो ।

त्रसर (स० पु०) त्रम बाहु परन् । तन्तुवायका लपक रच विधेय, सुताशोको दुराको, तसर । पर्याय—स्यवेदत तसर ।

त्रसरेषु (स० पु०) त्रसककनत्वात् मीत इव शेषः । सुप्रकच, से छोटे छोटे चमकीले कच की शिदमेंसे पातो हुई रूपमें नाचता वा झूमता दिखाई देता है । १ पर माण्ड वा ३ हाण्डका एक त्रसरेषु होता है । पर माण्ड दिखाई नहीं पड़ता है, किन्तु जब त्रसरेषु होता है पश्चात् १ परमाण्ड एकत्र होते हैं तमो नव दिग्मेंसे पाता है । सूर्यको चिरप्य जब अरोहिर्में होकर प्रवेय करती है, तब इस प्रकारमें जो छोटा पदार्थ बिचरक करता दिखाई देता है वही त्रसरेषु है । (श्लो०) २ सूर्यपत्योर्मद सूर्यको एक श्लोका नाम ।

त्रसित (वि० वि०) मयमीत करे दूया । त्रसुर (स० वि०) त्रम्-उरच् । भीव, डरपोक ।

वस्तु (सं० त्रि०) वस-क्त । १ भोत, डरा हुआ । २ चकित, जिसे आश्चर्य हुआ हो । ३ शोष, जल्दी । ४ पोड़ित, जिसे कष्ट पहुँचा हो ।

वस्तु (सं० त्रि०) वस्तुतोति वस-क्तु । वासयुक्त, भय-भोत, डरा हुआ ।

वाटक (सं० पु०) योगके षट्कर्मोंसे छटा कर्म वा साधन । इसमें अनिमेषरूपसे किसी बिन्दु पर दृष्टि रखी जाती है ।

वाण (सं० क्लो०) वै भावे ल्युट् वा क्तः पक्षे तस्य नत्वम् । १ रक्षण, रक्षा, बचाव । २ त्रायते इति कर्त्तरि ल्यु । २ रक्षिता, जिसको रक्षा की गई हो । (क्लो०) त्रायतेऽनेन इति कर्णौ ल्युट् । ३ रक्षाका साधन, कवच । ४ त्रायमाणानता ।

वाणकटं (सं० पु०) रक्षक ।

वाणा (सं० स्त्री०) वाण् टाप् । त्रायमाणानता ।

वास (सं० त्रि०) त्रि-क्त, विकल्पे तस्य नत्वाभावः । १ रक्षित, जिसको रक्षाकी गई हो । (क्लो०) भावे क्त । २ रक्षण, बचाव ।

वातथ (सं० त्रि०) वा-तव्य । रक्षा करनेके योग, बचानेके साधक ।

वाता (हिं० पु०) रक्षक, बचानेवाला ।

वातार (सं० पु०) रक्षक, वह जो रक्षा करता हो ।

वाट (सं० त्रि०) वै-लच् । रक्षाकर्त्ता, बचानेवाला ।

वापुष (सं० पु०) वपुषा निर्द्वन्द्वं अण् सक्-च । रङ्ग-निर्मित पात्रादि, रंगिका घना हुआ बरतन या और कोई पदार्थ ।

वामन् (सं० त्रि०) वै पालने मनिन् । रक्षक, बचानेवाला ।

वायन्तिका (सं० स्त्री०) त्रायमाणा लता ।

वायन्ती (सं० स्त्री०) वा क्विप् वा भयति इ-शब्द ततः डोप् । त्रायमाणानता ।

वायमाण (सं० त्रि०) वै कर्मणि शानच् । रक्ष्यमाण, बचानेवाला ।

वायमाणा (सं० स्त्री०) त्रायमाण-टाप् । चूद्र बुध्बु रा-कृति फललताविशेष, वनफलेकी तरहकी एक प्रकारकी लता जो जमीन पर फैलती है । इसमें बीच-बीचमें

छोटी डंडियाँ निकलती हैं और उनमें कसैले बीज होते हैं । पर्याय—वापिका, वायन्ती, बल-भट्टिका, बलदेश, सुभद्रोष्णो, भद्रनामिका, क्षतत्रा, त्रय-मणिका, बलभद्रा, सुकामा, वापिकी, गिरिजा, अनुजा, माङ्गल्यार्हा, देवलमा, पानिनो, भयनाशिनो, भवनो, रक्षणी और तामा । गुण—यह शोथ, मधुर, गुल्म, ज्वर, कफ, अस्त्र, भ्रम, लप्सा, चय, ग्लानि, विष और हृदि-नाशक है । भावप्रकाशमें इसे कषाय, तिक्तारस, सारक, पित्त कफ, ज्वर रोग, हृद्गुल्म, अर्श, भ्रम, शूल और विषनाशक माना है ।

वायमाणिका (सं० स्त्री०) त्रायमाणानता ।

वायहन्त (सं० पु०) अनूपदेशजात गण्डीर नामक शाकविशेष, गंडोर या गुडिरो नामका साग ।

वायोदश (सं० त्रि०) त्रयोदश्यां भावे अण् । त्रयोदशी-भव जो काम त्रयोदशीमें किया जाय ।

वास (सं० पु०) वस भावे घञ् । १ भय, डर । २ मणिका एक दोष । ३ कष्ट, तकलोप ।

वासकर (सं० त्रि०) वास-कृ-ट । भयजनक, डरानेवाला । २ निवारक, दूर करनेवाला ।

वासदृष्ट (सं० पु०) कुष्ठुरदृष्ट रोगभेद वह रोग जो कुष्ठके काटनेसे उत्पन्न हो ।

वासदस्यव (सं० क्लो०) तसदस्युके स्त्रोत्र-सम्बन्धी साम ।

वासदायो (सं० त्रि०) वासं भयं ददाति दा णिनि । भययाता, डरानेवाला । इसका नामान्तर शङ्कुर है ।

वासन (सं० क्लो०) वस-णिच् भावे ल्युट् । १ भयोत्पादन, डरानेका कार्य । (त्रि०) कर्त्तरि ल्यु । २ भयोत्पादक, डरानेवाला, भय दिखानेवाला ।

वासनोय (सं० त्रि०) वस णिच्-अनोयर् । ताडनोय, दण्ड देने या डराने योग्य ।

वासित (सं० त्रि०) वस्-णिच्-क्त । १ भोत, जो डराया गया हो । २ वस्तु, जिसे कष्ट पहुँचाया गया हो ।

वासिन् (सं० त्रि०) वस्-णिच्-णिनि । भयशोक, डरा हुआ ।

वाहि (सं० क्लि०) वै-लोट्-हि । रक्षा करो, बचाओ । वाहि कहनेसे 'तुम रक्षा करो' ऐसा समझना चाहिये ।

वि (सं० त्रि०) तरतीति तृ-ङि । तरतेर्ङिः । उण् ५।६६ ।

विल्व च क्याविगिष्ट, तोमरं वाचक्षयन्द वाच-
भूत, भविष्यत्, यत्तमान, पम्बि—दक्षिण, माहंपल्ल
चाहबमोय, भुवन—अर्ग मञ्ज, पातामः, गङ्गामार्ग—
मन्दाकिनी, भागोरयो, भोगवती। शिबचक्षु—चन्द्र सूर्य
घोर पम्बि, शृणु—सख, रज, तम सख्या—प्रात मन्व्या,
मन्वाहमन्व्या, माघ सन्व्या, राम—यशराम, दागरवोराम,
बनराम। यह मन्व बहुरवनात् ।

त्रि ग (म • त्रि •) त्रि गत्-घट । परम पूरमे घट । ग
३ २१८ । त्रि गत्तम, तोमर्वा ।

त्रि गत्त म • त्रि •) त्रि गता क्रीतः कुन्-डिच । शिबे
शरोदनेमिं तोम द्रव्य म्नी ही ।

त्रि गच्छन (म • श्रो •) त्रि गदर्चक यत् । बह स प्या
को एकसौ घोर तीमन्ने योगिने बनती हो, एक सौ तोमर्वा
स प्या ।

त्रि गत् (म • त्रि •) त्रयो दशमः परिमाणमस्य । ५ गणिक
त्रिभूति । पा १।१।३८ । इति निपातनात् पाठः । घ प्या
विशेष, तोम ।

त्रि गत्त (म • त्रि •) त्रि गत् परिमाणमस्य चक्षु । १
त्रि गत्परिमाच । २ उतनो ही स प्या ।

त्रि गति (म • श्रो •) त्रि गत् प्रयोदशदित्वात् भाषु ।
तीमर्वा स प्या ।

त्रि गत्तम (म • त्रि •) त्रि गता पूरणः तमप । तोम
स प्याका पूरक, तोमर्वा ।

त्रि गत्त (म • श्रो •) त्रि गत् स प्यानि पत्राचि दन्तानि
प्रतिपुण्यमस्य । कुमुद, रोहि का चक्षु ।

त्रि शांति (म • पु •) त्रि शक्ति गत् पूरकोऽय । १ किमी
पदार्थका तीवर्ता भाग । २ राशिका त्रि गत् पूरकभाग,
एक राशिका तोमर्वा भाग । इतथा विषय श्चोतिपमे इय
प्रकार निर्णय है—मैपाटि बारह राशिकोकी तोमर्वा भाग
दिने पर को च यवाया जाता है जमोका नाम त्रि शांति
है । यह त्रि शांति मैपाटि राशिकोमि बिष तरह आबद्धत
होता है, उमर्वा नियम इस प्रकार है—

मैपाटि बारह राशिकी विषय घोर समर्वा विमर्वा
है । जो बह राशिकी विषय भानो यई है उनर्वा
त्रिशांति विचार करनेमि मङ्गल, शनि, बृहस्पति, बुध को
यज्ञ ये पाँच बह क्रममे १।१।१७२ च यई पवि

पति होत है । प्रत्येक राशि तोम च योमि विमर्वा है यह
परमे हो कडा आ चुका है । परतएव त्रिभू विमो विषय
स प्रक राशिके त्रि शांतिका विचार करना हो उध
राशिके प्रथम च यमि पक्षमांग तक मङ्गलपक्ष त्रि शांति
पविपति, फिर पक्षांशमे दशमांग तक शनिपक्ष त्रि शांति
पविपति होते हैं । ११ च यमि १८ च य तक बृहस्पति
१८मे २३ च य तक बुध २६ च यमि ३० च य तक यज्ञ
त्रि शांति पविपति होते हैं ।

त्रिभू प्रकार ६ विषय राशिकोमि त्रि शांतिका विचार
किया गया है, उमो प्रकार ६ समराशिकोमि त्रि शांति-
विचार करनेमि भो यज्ञ, बुध, बृहस्पति, शनि घोर मङ्गल
पक्ष क्रमय त्रि शांति पविपति होते हैं । (कोऽप्ये •)

समो राशिको तोम भागोमि बाँट कर मङ्गल, शनि,
बृहस्पति बुध घोर यज्ञ ये क्रममे मेष मिथुन, मि च,
तुला धनु घोर कुम्भ हल कः विषय राशिकोमि ३ । ३ ।
८ । ० । इ भागके पविपति होते हैं । तथा उर, ककट,
कन्या हृषिक मकर, मोन हल कः राशिकोमि बप-
रोन्वातुमार है यथात् शुक्र, बुध शनि, मङ्गल क्रममे
पक्ष, सन पक्ष, पक्ष घोर पक्षभागके पविपति माने
यई है ।

त्रिशांति बहुरव - मङ्गलके तीमर्वा च यमि कथा होनेमे
मनुष्य श्चो-विशयो बनहोन, शोचपरायण, पाप्मविषयमि
शक्ति, तन्मरकमकारो एव पुत्र घोर बिष
बिहोन होता है । यदि बुधके बोधमे च यमि हो तो बह
उल्लासिमय घोर दुःखमम्यक भाना प्रकारके रवोमे
समन्वित होता है एव दिनीदिन उमके कोषावारकी
उदि होती है । बृहस्पतिक त्रि शांतिमे कथा होनेमे श्रेष्ठ
शान्तिमेका बहम, निष्काम्यसम्पय शान्तिघ घोर दोषांतु
एव शुद्धि त्रिशांतिमे कथा होनेमे श्रीमान्, बहू पाप्मा
बुध दानधर्मपरायण श्रेयतापीका चर्चेक तथा मृत्य
मोतममालुन होता है ।

त्रिभूका कथा शनिके त्रिशांतिमे हा, बह पापाका,
लोमो, परनिन्दक परदाररत घोर बनकान् होता है ।
प्रकारान्तरमे—मङ्गलके त्रिशांतिमे कथा होनेमे मनुष्य सर्वा
धनुर्विषयाका बडा नर्वा त्रिशांतुन बन घोर दार
बहित, तन्मर, मलिनदेह घोर दुःख म्भाबका होता है ।

गनिके त्रिंशशं जन्म होनेसे मनिम, घूर्त्त, सर्वदा कातर, सत्य और शीघ्रविहीन, सेवापरायण, कृपण और नेचस्वभावयुक्त; वृहस्पतिके त्रिंशशं जन्म होनेसे उग्र स्वभावविशिष्ट, सुन्दर शरीरयुक्त, बुद्धिमान्, भोक्ता, धनी सुखी, गुणात्थ और विषम लोचनविशिष्ट, बुधके त्रिंशशं जन्म होनेसे सर्वदा धर्म, अर्थ, काम, सुत, कीर्ति और जययुक्त, प्रजाविवेककुशलले, गुणवान्, उत्तम आश्रययुक्त, दिव्याङ्ग और सुगन्धि पुष्पयुक्त तथा शकके त्रिंशशं जन्म होनेसे बहुगुणपरिपूर्ण, सुन्दर, मनोहर, दृष्टिसम्पन्न, युवतियोंको आमोददाता; सर्वशास्त्र वेत्ता, ब्राह्मण और गुरुभक्त, दानशील और क्षपालु हो- है। (कोष्ठीप्र०)

त्रिक (स० क्लो०) त्रयाणां मसुः कन् । १ त्रिवसन्त्या, तीनका समूह २. एष्ट वंशधर. रौद्रके नेचिका भाग जहाँ कूल्हेकी इड्डिया मिलती हैं। ३. कटिभाग, कमर। ४ त्रिफला। ५ त्रिकटु। ६ त्रिपथसंश्रान त्रि-सुहानी। ७ गोक्षुर, गोक्षरु। ८ त्रिमट। तृतीयेन रूपेण ग्रहणं यस्य कन् पूर्णप्रतग्रस्य वा लुक् । ८ तृतीयक, तीसरे दिन आनेवाला च्चर । त्रयः अधिकाः शुक्लं लाभो वृद्धिर्वा यत्र शतादौ । १० तीन रूपये सैकड़ेका सूट या लाभ आदि। ११ मन्धिभेट, शरीरका जोड़ या गिरह।

त्रिककुट्ट (स० त्रि०) त्रीणि ककुटसदृशानि ध्वजतुलगानि शृङ्गाणि यस्य ककुटस्य ध्रम्यलोपः । त्रिकुट्टपर्वते । वा ५।४।१४७ । १ त्रिकुट्ट पर्वत । २ विष्णु । इन्होंने एक बार एकदन्त और तीन शृङ्ग बराबर मूर्त्तिधारण कर पृथ्वीका उद्धार किया था, इसीसे इनका नाम त्रिककुट्ट पहा है (मातृशांति ३४४ भ०) ३ दशरात्रसाध्य यज्ञभेद, दश दिनोंमें होनेवाला एक प्रकारका यज्ञ । (त्रि०) ४ जिसके तीन शृङ्ग हों ।

त्रिककुम्भ (स० पु०) त्रैधा कं पोतं उदकं स्कुम्भाति स्कुम्भ क्विप् छान्दस्य क्लोपः । १ उदानवायु जिमसे उकार और ह्रींके आते हैं। २ नवरात्रसाध्य यज्ञभेद, नौ दिनोंमें होनेवाला एक प्रकारका यज्ञ ।

त्रिककुवधामन् (स० पु०) सूर्होधोमध्वभेदेन त्रिष्टणां ककुभां दिशां समाहारः त्रिकुक्त् तत् धाम आश्रयो यस्य विष् ।

त्रिकग्रह (स० पु०) एक प्रकारका वातरोग ।

त्रिकट (स० पु०) त्रीन् वातादिदोषान् कटति प्राह-णोति-प्रच् । गोक्षुरवृद्ध, गोखरु ।

त्रिकटु (म० क्लो०) त्रयाणां कटुत्मानां समाहारः । संतं मिचं और पोपल ये तीन वसुएँ । पर्याय—त्रुपण, व्योप, कटुत्रय, कटुत्रिक । गुण—ग्रह दोषन काम, श्वास, त्वक् रोग, गुल्म, मेह, कफ, स्वल्प, भेट, श्रोत्र और पोपल नागक है ।

त्रिकटुक (म० क्लो०) त्रिकटु ।

त्रिकटुकाद्यमोदक (स० पु०) मोदक श्रोपधविशेष ।

इसको प्रस्तुतप्रणाली—त्रिकटु, त्रिफला, शकवन, मोहि-ञ्जनका मूल, विहङ्ग, हींग, कुटको, वृहती, कण्टकारी, हरिद्रा, दाकहरिद्रा, अजवायन, प्रतम, चोतिको छान, शीघ्रर्त्तन, जोरा, हनुपा और धनिया, प्रत्येकको प्राध प्राध छटांक ले कर उसे चूर्ण करें। पोलि जीका मसू, साठे ग्यारह सेर, घो तीन पाव, तिनका तेल तीन पाव और मधु तीन पाव सबको एक माय मिला कर मोदक बनाया जाता है। प्रत्येक टिन दो तोला भर खानेसे कठिनसे कठिन प्रमेह नष्ट हो जाता है ।

(भावप्र० तृतीयमा० प्रमेहाधि०)

त्रिकटुगुटिका (स० स्त्री०) गुटिका श्रोपधभेद । प्रस्तु-प्रणाली—त्रिकटु, और त्रिफलाचूर्ण प्राध पाव तथा गुग्गुल एक पाव इनकी एकत्र कर गोखरुके काट्टेसे ७ दिन तक भावना दें। दोप, काल और बलानुसार इसका व्यवहार करनेसे मेह, वातरोग, वातरक्त, सुत्रा-घ्रात, सूत्रदोष और प्रदर आदि रोग जाते रहते हैं तथा वायु भी स्वपथगामी हो जाती है ।

(भावप्र० तृतीयमा० प्रमेहाधि०)

त्रिकटुकाद्यवर्त्ति (स० स्त्री०) वर्त्ति श्रोपधभेद । प्रस्तु-प्रणाली—त्रिकटु, सैन्धव, सर्पप, गृहधूम, कुह और मदन फल सबका मिश्रित परिमाण २ तोला, मधु ८ तोला और गुह २ तोला इन सबका एकत्र पाक कर अंगूठेके बराबर बत्ती बनावे। पोलि-उसे घोंसे भिगी कर गुहमें प्रयोग करनेसे भानाह, उदावर्त्त, उदर और गुल्मरोग दूर हो जाता है । (भावप्र० तृतीयमा०)

त्रिकण्ड (स० पु०) वटा काण्डो काण्डका पत्र । १ गो
 चुर, गोखक । २ क्लृप्तो वृष । ३ मन्त्राभेद टे मरा
 मन्त्रो । ४ पत्रगुण, तिचार, बहुर । ५ इहतो मिचित
 पत्तिलमयी धोर दुरामना एत तोनीं द्रुवीका समूह ।
 पर्याय—काण्डकारोत्रक, काण्डकावय, काण्डकत्रय ।
 त्रिकण्डक (स० पु०-खो०) १ क्लृप्तमन्त्र, टे मरा
 मन्त्रो । (ग०) काण्डकप्रयाचित, तिसरें तोन कटि
 नो । २ गोचुर वृष गोखक । ३ त्रिगुल ।
 त्रिकण्डकत्रय (स० पु०) काय पोषणविधिय । इसको
 प्रकृत-प्रवाको—काण्डकारो धोठ वीर गुलक प्रत्येकका
 समामा सैकर काड़ा बनाने । पोषि लभ काड़े में पोषणका
 पूरु काय कर पान करके में जोष ल्वर, परबि खंमो,
 गुल, म्वास, पन्चिमास्य, प्रतिप्राय (सुखाम) धोर काय-
 मत रोय जाता रहता है । इस कायको सधैरे सेवन
 करनेका विधान है ।
 त्रिकण्डक (स० पु०) त्रिपन्ना, त्रिगुटा धोर त्रिभेद इह
 बहेड़ा धोर पांभना, सौठ मिच धोर पोषण तथा मीठा
 बीता धोर नायबिडम एत सबका समूह ।
 त्रिकण्डकायनौड (स० पु०) धीपत्रविधिय । इसको
 प्रकृत-प्रवाको—मन्त्रूर, इत शर्करा मधु प्रत्येकका
 पाठ-पाठ तोला धोर कायनौड । तोला इन सबको सौठ
 पोषण मिच इह, पांभना, बहेड़ा, मोठा, बीता धोर
 विहङ्ग कायने पत्तर या लोड्डे बरतनमें भावना दे का
 रूपमें लुपति । पादि, मन्त्र धीर पन्तमें पशुपतके नाव
 धियन करनेसे इहावच पाण्डु, कामना धोर इलोमक
 रोग जाता रहता है । (तेनबमर्ष०)
 त्रिकण्डक (स० पु०) खोति: गो धोर पाण्डु नामक पत्र
 को बह दिनीमें प्रमास होता है ।
 त्रिकण्डं (स० पु०) त्रैवि कामांवि मय्य । विपक्षे वृष
 करना, मधु कराना, दान सेना, दान देना, पढ़ना धोर
 पढ़ाना ये ३ ब्राह्मणोंके धर्म हैं । इन ३ धर्ममें उत्तिके
 विषे वायन, प्रतिपद्य धोर पञ्चयनके विना पण्ड्यय
 दान, इत्या धोर पञ्चयनक्य कामकारी ब्राह्मणको
 त्रिकर्मों कहते हैं । (भात बहुरा० १५१ ब०)
 त्रिकण्ड (स० पु०) १ तोन मातापीका पन्थ प्रत । २
 दोहीका एक भेद । इसमें ८ गुह धोर १० लहू पत्तर
 होते हैं । (त्रि०) त्रिसमें तोन काय धी ।

त्रिकण्ड—त्रयवि य नौर त्रिक ग पन्थ देवो ।
 त्रिकण (स० खो०) त्रिकण-कामाना तदावातानां समा
 चार । कथावातत्रय, खोड़ा मारनेके तोन प्रकार का
 भेद ।
 त्रिकण्ड (स० खो०) त्रिकण्ड गुल ३ तत् । रोगविधिय,
 एक प्रकारका वातरोग । त्रिपन्थको/दोनीं इच्छितो एक
 गीड़को दोनीं इच्छितोसं सम्यक्कानको त्रिक कहते हैं ।
 इन दोनेमें प्रथमा दोमेंके विधो एकमें बज बाहु हाथ
 पोड़ा होने लगतो है, तब तसे त्रिकण्ड कहते हैं ।
 दोनो हाथमें यन्त्रके साथ मानका खीर तथा रोगोके पोषि
 बनमोचतोकी धाम सेनो चाहिये । (मात्र०)
 त्रिका (स० खो०) त्रिया त्रायति कै-व ततडाप । मूष-
 मदीपत्र कलोहारक विदावमय पन्थभेद, इह परका
 बह पोषटा त्रिसमें मरुको कमी होती है ।
 त्रिकाण्ड (स० पु०) त्रैवि काण्डकाण्ड । १ पमरसिंहके
 एक कोपका नाम । इसमें तोनकाण्ड हैं—स्यर्धगादि
 काण्ड मुसिबगादि काण्ड धोर सामान्य काण्ड । तोन
 काण्ड रहनेके कारण इपका नाम त्रिकाण्ड पड़ा है । २
 निवृत्त । इसमें भी तोन काण्ड हैं—प्रथम काण्ड कै-
 प्य क, द्वितीय नैगम त्रितीय डैवत ।
 त्रिकाणो (स० खो०) प्रवाचा काण्डग्नं समाहारः
 ङोप । १ काण्डक्य बह पन्थ त्रिसमें धर्म उपासना
 धोर दान तोनींका बर्षन हो (त्रि०) २ त्रिकाण्डबुध,
 त्रिसमें तोन काण्ड हो ।
 त्रिकाम (स० पु०) बुद्धदेव ।
 त्रिकाय (स० पु०) त्रय काया पत्र यहा त्रिक पर्यति
 पत्र पयादान-पत्र वन् वा । बुध ।
 त्रिकार्षिक (स० खो०) कार्षिक द्वितं ठक्, ब्रह्मार्चं वात
 त्रिकण्डाणां कार्षिक । नागरय, पतोस धोर मोठा इन
 तोनींका समूह । २ त्रिकय परिमात्र, ३ तोला ।
 त्रिकान (स० खो०) कर्वाका कार्यकाकमृतप्रतिष्ठा-
 कामानां समाहार । १ मृत बर्त्तमान-धोर भविष्यत्
 कास । २ प्रातः सप्यात्र धोर नायात्र कास ।
 त्रिकालत्र (स० पु०) त्रिकाल जानाति जा-व । १
 पर्वत् त्रिनेत्र । २-बुध । (त्रि०) ३ मृत, भविष्यत् धोर
 बर्त्तमानका ज्ञाता ।

त्रिकालज्ञता (सं० स्त्री०) १ तीनों कालोंको वाते जानने की शक्ति। २ जैनधर्मानुसार वह ज्ञान जो अर्हन्तके ज्ञोता है, केवलज्ञानत्व।

त्रिकालदर्शक (सं० त्रि०) जो तीनों कालोंकी वाद जानते हों। (पु०) जिन भगवान्।

त्रिकालदर्शिता (सं० स्त्री०) त्रिकालज्ञता देखो।

त्रिकालदर्शी (सं० पु०) त्रिकालं पश्यति दृग्-णिनि। १ जिन, अर्हन्त। २ ऋषि, मुनि। ३ त्रिकालज्ञ, भूत भविष्यत् और वर्तमानका जाननेवाला व्यक्ति।

त्रिकूट (सं० पु०) त्रीणि कूटानि शृङ्गाण्यस्य। त्रिशृङ्ग पर्वत-विशेष, तोन शिखरवाला पर्वत, वह पर्वत जिसको तोन चोटिया हों। यह पर्वत लवणसमुद्रके मध्यस्थित और लद्दापुरका आधार है। पर्याय—सुवेल, त्रिककुत्, त्रिकूट त्रिशृङ्ग, चित्रकूटक। यह एक-पोठस्थान है। यहाँ भगवतो रुद्रसुन्दरोके रूपमें विराजित हैं। (देवीभा० पृ० ६६)

२ चीरोटसमुद्रके मध्यस्थित पर्वत, समरुका पुत। यह पर्वत समुद्र भेद कर बाहर निकला है। यहाँ देवर्षि रहते हैं और विद्याधर, किन्नर, अप्सर, गन्धर्व, सिद्ध और चारणगण क्रीड़ा करने आते हैं। इसको तोन चोटियां हैं। एक चोटी मोनेकी है जहाँ सूर्य आश्रय लेते हैं। दूसरी चोटी चांदोकी है; यह चोटी तरह तरहके फलोंसे आच्छादित है। यहाँ चन्द्रमा वास करते हैं। तीसरी चोटी वरफसे ढकी रहती है और बँदूर्य, इन्दुनेल आदि मणियोंकी प्रभासे चमकती रहती है। यही पहाड़को सबसे ऊँचो चोटी है; यह पर्वत नाभिकों और पापियोंकी दिखलाई नहीं देता। (वामनपु०) (स्त्री०) त्रिकूटः पर्वतः उत्पत्तिस्थानत्वेन अस्यस्य अर्थ आदि-त्वात् अच्। ३ सिन्धुलवण, सैधा नमक।

त्रिकूटलवण (सं० स्त्री०) त्रिकूटं सासुद्रीमिव लवणं। द्रोणो लवण, एक प्रकारका नमक।

त्रिकूटवत् (सं० पु०) त्रीणि कूटानि अस्यस्य त्रिकूट-मनुप-मस्य व। त्रिकूट पर्वत।

त्रिकूटा (सं० स्त्री०) भैरवीभेद, तान्त्रिकोंकी एक भैरवी।

त्रिकूटाहय (सं० स्त्री०) काचलवण, काचिया नोन, काचा नमक।

त्रिकूर्चक (सं० स्त्री०) सूर्यतोक्त शस्त्रभेद, सूर्य तर्क अनुसार फोड़े आदि चीरनेका एक शस्त्र। इसका व्यवहार वानक, हृद, भोर, राजा आदिकी अस्त्र-चिकित्साके लिये होता है।

त्रिकोण (सं० स्त्री०) त्रयः कोणा यस्य। १ योनि, भग। २ कामरूपस्य पोठविशेष, कामरूपके अन्तर्गत एक तोथ जो सिद्धपोठ माना जाता है। करतोयामे ले कर टिक्कर-वाशिनो तक सौ योजन फीला हुआ सर्व सिद्धिचैत्र माना गया है। कामरूप देखो। ३ लग्नस्थानसे जवम और श्वम स्थान। ४ त्रिभुज चैत्रभेद, तीन कोनेका चैत्र। ५ मोक्ष। ६ त्रिकोटियुक्त पदार्थ, तोन कोनेवाली कोई वस्तु।

त्रिकोणक (सं० पु०) तोन कोणका पिण्ड, त्रिकोना पिण्ड।

त्रिकोणघण्टा (सं० पु०) एक प्रकारका त्रिकोना बाजा, जो लोहेको मोटी सुनावका बना हुआ रहता है। इस पर लोहेके एक दूसरे टुकड़ेसे आघात करके ताल देते हैं। त्रिकोणफल (सं० स्त्री०) त्रिकोणा त्रस्रं फलं यस्य। शृङ्गाटक, सिंघाटा। २ त्रिभुजका चैत्रफल।

त्रिकोणभवन (सं० स्त्री०) त्रिकोणस्थान, जम्बूद्वीप-लोमें लगनसे पाँचवाँ और नवाँ स्थान।

त्रिकोणमण्डलभूमि (सं० स्त्री०) नदीके मुहाना पर स्थित माताशून्य वकारके जैमा होप, डेलटा।

त्रिकोणमिति—(त्रिकोण + मिति = परिमाण) शास्त्रभेद, त्रिकोण वा त्रिभुजको बाहु और कोणका सम्बन्ध निगण्य करना हो पहले इस शास्त्रका मुख्य उद्देश्य था, किन्तु गणितशास्त्रको उन्नतिके साथ साथ त्रिकोणमितिका कलेवर पुष्ट होता गया और वोजगणितका विषय भी इसमें शामिल कर दिया गया। अब त्रिकोणमिति कहनेमें उसी ग्रन्थका बोध होता है जिसमें त्रिभुज, चतुर्भुज आदि चैत्रोंको बाहु और कोणका विचार हो। सबसे पहले ग्रीकोंने यह शास्त्र प्रकाशित किया। हमारे भारत-वर्षमें भी पूर्वकालसे त्रिकोणमिति प्रचलित है और वह गणितविद्यामें विशेष पारदर्शी बड़े भारी विद्वान्-द्वारा लिखा गया है। त्रिकोणमितिके विषयमें वे जितना जानते थे, सबको लिपिवद्ध करना उन्होंने आवश्यक न

समझा । मान लें होता है, जसमें यादि मापनेके लिए रेखाचित्रम्युत्पन्न किसी विद्यामें पढ़के पढ़क इसका प्रचयन किया था ।

त्रिकोणमिति प्रधानतः दो भागोंमें विभक्त है—सरल त्रिकोणमिति (Plane trigonometry) और वक्र त्रिकोणमिति (Spherical trigonometry) । इनके सिवा और भी एक शैली है, जिसे शैली त्रिकोणमिति (Analytical trigonometry) कहते हैं ।

सारल, कोसाइन टेन्गेण्ट, कोसेकण्ट और कोटैन्जेण्ट के सब गण्य त्रिकोणमितिमें प्रयुक्त व्यवहृत हुआ करते हैं । वे सभी प्रमित्यारण हैं । नीचे इनके लक्षण लिखे जाते हैं—

मान लो, \angle α एक समकोण त्रिभुज है और α कोण एक समकोण है ।



अथ $\frac{\text{वक्र भुज}}{\text{समान भुज}}$, $\frac{\text{वक्र भुज}}{\text{समान भुज}}$, $\frac{\text{वक्र भुज}}{\text{समान भुज}}$ के यथाक्रम कोसक, कि साइन

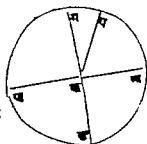
(Sine), कोसाइन (Cosine) और टेन्गेण्ट (tangent)

नामसे तथा इनके विपरीत अनुपात— $\frac{\text{समान भुज}}{\text{वक्र भुज}}$ और $\frac{\text{समान भुज}}{\text{वक्र भुज}}$

यथाक्रम कोसोकण्ट (Cosecant) कोसण्ट (Secant) और कोटैन्जेण्ट (Cotangent) नामसे पुकारे जाते हैं । किसी कोणविशेषके (समा α कोण) सारल यादि नियमोंमें साइन α , इस तरह लिखा जाता है और यदि इन सब राशियोंके वर्ग यादि नियम हो तो (साइन α)² (कोसाइन) α α यादि न लिख कर साइन α , कोसाइन α इस तरह लिखना चाहिये ।

रेखाचित्रके मतमें जब दो भिन्न सरल रेखाएँ मिल सिद्ध दिशाओंमें या कर एक दूसरोंमें मिल जाते हैं, तब कोण बनता है । किन्तु त्रिकोणमितिमें कोणको उत्पत्ति किसी और प्रकारसे बतलाई गई है और यही सब बचितमाफमें पाया है ।

मान लो, \angle α एक निर्दिष्ट रेखा है और α एक निर्दिष्ट बिन्दु है । α पर एक दूसरी रेखा पड़ने से α के साथ मिल कर वहीको मूर्च्छी

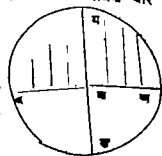


गतिके विपरीत और घूमती है । इस घूमनेवाली रेखा और α पर निर्दिष्ट रेखाके योगसे α के α कोण उत्पन्न होता है । रेखाचित्रके मतमें α के α कोण कहनेसे एक कोणका ही बोध होता है । किन्तु त्रिकोणमितिमें मतमें α के α कहनेसे परमकोण कोण समझे जाते हैं । क्योंकि जितनी बार एक मध्य α पहर घेय होता है, उतनी ही बार परमकोण जोड़नी पड़ते हैं ।

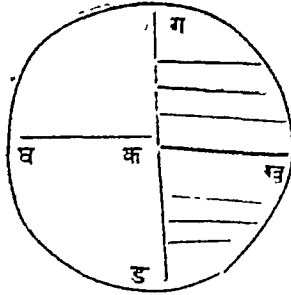
α के रेखाको α बिन्दु तक बढ़ापो और α के α एक मध्य रेखा धरो । α के α रेखा के α रेखाके साथ मिलीये, तब एक समकोण बनेगा । यदि α के α रेखाके साथ मिलनेसे दो परमकोण α के साथ मिलनेसे α परमकोण और फिर कब α के साथ मिलनेसे α परमकोण बनेगे ।

रेखाचित्रके साथ त्रिकोणमितिका एक और भी पन्तर है । रेखाचित्रके कोणके पढ़के कोई चिह्न नहीं लगता किन्तु त्रिकोणमितिमें विपरीत दिशामें घूमनेसे उत्पन्न कोई न कोई चिह्न लग हो जाता है । गणितज्ञ कोन एक मत हो कर पूर्व चिह्नमें चिह्नित और उत्पन्न कोणको योग्य और विपरीत और उत्पन्न कोणको विपरीत चिह्नसे चिह्नित करते हैं ।

इस प्रकार रेखाके विषयमें भी सिद्ध सिद्ध चिह्न व्यवहृत होते हैं । α के α के उत्पन्न और α के α के समान्तर चिह्नको रेखाएँ खींची गई हैं उनमेंसे योग्य और विपरीत और खींचनेसे विपरीत चिह्न होता है । फिर यदि चिह्नमें को α के रेखाएँ α के साथ समान्तर कर गड़को दाहिनी ओर खींचो गई हैं, वे



योजक्रमे और विपरीत और खोबी जाने पर विद्यो-जक चिह्नसे चिह्नित होता है, दृष्टान्त स्वरूप यदि क ख रेखाकी लम्बाई $\times \frac{1}{2}$ मान लें, तो क ख रेखाकी लम्बाई $\frac{1}{2}$ माननी पहंगी ।



एक समकोणको 90° ममान भागोंमें बांटनेमें प्रत्येक भागकी 1 डिग्री और प्रत्येक डिग्रीको 60 समभागोंमें बांटनेमें प्रत्येक भागकी 1 मिनट एवं इसी तरह 1 मिनटको 60 समभागोंमें विभक्त करनेसे प्रत्येक सेकेण्ड कहते हैं । डिग्री, मिनट और सेकेण्डके चिह्न क्रमशः $^\circ, ', ''$ हैं । 5 पाँच डिग्री 4 मिनट 2 सेकेण्ड यदि लिखना हो, तो $5^\circ 4' 2''$ इस प्रकार लिखा जाता है ।

कोण मापनेकी एक और प्रक्रिया है । तदनुसार एक समकोणको 100 भागोंमें विभक्त करना होता है । प्रत्येक भागको एक ग्रेड और प्रत्येक ग्रेडको 100 भागोंमें बांटनेसे प्रत्येकको 1 मिनट तथा प्रत्येक मिनटको 100 भागोंमें बांटनेसे प्रत्येकको 1 सेकेण्ड कहते हैं । इनके चिह्न यथाक्रम ग्रे, $'$, $''$ हैं । पन्द्रह ग्रेड छः मिनट और सात सेकेण्डकी अर्द्धमें इस प्रकार लिखते हैं, जैसे— 15 ग्रे $6'$ $7''$ । फ्रान्समें इसी प्रक्रियासे कोण नापनेका प्रस्ताव किया गया था, किन्तु वह कार्यमें परिष्कृत न हुआ ।

उपर्युक्त दोके सिवा कोण नापनेकी और भी एक प्रक्रिया है । यही प्रक्रिया मयसे अत्रिक काममें लाई जाती है और उच्चगणितमें केवल इसी प्रक्रिया द्वारा कोण मापा जाता है । किसी वृत्तकी परिधिका उसके व्यास द्वारा भाग देनेसे जो संख्या पाई जाती है, वे वृत्तके लिये एक है । यह संख्या ग्रीक वर्ण (π) इसी द्वारा लिखी जाती है, इसका परिमाण $3.1415926\dots$ अर्थात् प्रायः $\frac{22}{7}$ है; यदि किसी वृत्तको परिधिसे उसके व्यासकी समान कर एक अंश करके लिया जाय, तो उस परिधिखण्डके अभिमुखी केन्द्रस्य कोणको परिमाण अर्धो

वृत्तके लिये समान है । इसमें परिमित कोणको एक रेडियन (radian) कहते हैं । जिस प्रकार डिग्री और ग्रेड प्रभृति द्वारा कोणका परिमाण निर्णय किया जाता है, उसी प्रकार इस रेडियनके परिमाणमें भी कोण निर्दिष्ट होता है ।

यदि क और ख दो अनपूरक (Complimentary) कोण हों, तो ख अर्थात् $k + x = 90^\circ$

साइन क = कोसाइन ख
कोसाइन क = साइन ख
टेङ्गेंट क = कोटैङ्गेंट ख

सोकण्ट क = कोसीकण्ट ख
कोसीकण्ट क = सोकण्ट ख

क और ख यदि परिपूरक (supplementary) कोण हों अर्थात् $k + x = 180^\circ$ हों, तो

साइन क = साइन ख
कोसाइन क = कोसाइन ख
टेङ्गेंट क = टेङ्गेंट ख

उपर्युक्त सम्बन्धमें सोकण्ट, कोसीकण्ट और कोटैङ्गेंटका विषय मालूम किया जाता है । यथा—

सोकण्ट क = $\frac{1}{\text{कोसाइन क}}$ = $\frac{-1}{\text{कोसाइन ख}}$ = सोकण्ट ख
इस प्रकार—

कोसीकण्ट क = $\frac{1}{\text{टेङ्गेंट क}}$ = $\frac{1}{\text{साइन ख}}$ = कोसीकण्ट ख

कोटैङ्गेंट क = $\frac{1}{\text{टेङ्गेंट क}}$ = $\frac{1}{\text{टेङ्गेंट ख}}$ = कोटैङ्गेंट ख
 1 से 360° तकके कोणसमूहके साइन आदिके परिमाण और चिह्नमें कौसा परिवर्तन हुआ करता है, वह निम्नलिखित चित्रसे मालूम हो जायगा ।

क	0°	45°	90°	135°	180°	225°	270°
साइन क	0	+	1	+	0	-	-1
कोसाइन क	1	+	0	-	-1	-	0
टेङ्गेंट क	0	+	∞	-	0	+	∞
कोसीकण्ट क	∞	+	1	+	∞	-	1
सोकण्ट क	1	+	∞	-	1	-	∞
कोटैङ्गेंट क	∞	+	0	-	∞	+	0

मध्यमे—पूर्वस्थित यदि कोणका परिमाण हो, तो साइन आदिका परिमाण को जोगा, बहो १, २, ३, ५, ८ स्तम्भमें लिखा गया है।

कोणका परिमाण यदि ० से ८०, ८० से १२० १२० से २०० और २८० से ३६० हो, तो उनके पहले कोन चिह्न सहीया, बह १, ४, ६, ८ स्तम्भमें लिखा गया है।

प्रत्येक त्रिकोणमें ३ पग, ३ बाहु और ३ कोण होती हैं इसमेंसे यदि १ बाहु और दूसरे २ पग मालूम हों, तो तीसरे पंगुका परिमाण निर्णय किया जा सकता है। केवल एक अथवा दोका कुछ बेलखण्ड हो जाता है। यदि किसी त्रिभुजके कोणोंको क क ग कड़ और कक कोणोंको बिपरोत बाहुके नाम क च और म हों, तो

साइन क साइन च साइन म

$$\frac{\sin A}{a} = \frac{\sin B}{b} = \frac{\sin C}{c}$$

$$\sin A \sin B = \frac{a^2 + b^2 - c^2}{2ab}$$

$$\cos A \sin B = \frac{a^2 + c^2 - b^2}{2ac}$$

$$\cos A \cos B = \frac{a^2 + b^2 - c^2}{2ab}$$

इसके सिवा क + च ग = १८० = ११ और पन्थाय त्रिकोणमितिसे विधिय विधिय नियम विधिय विधिय आरंभमें व्यवहृत होती हैं। उक्त नियमों और रेखागणित को कईएक अतिशयोक्तियों सहजतासे त्रिकोणका निर्णय विधय निहाका जाता है

बहुभुज त्रिकोणमिति यहनचक्रादिसे प्रबन्धान और पर्यायार्थ बरनेके सिद्धे व्यवहृत होती है। यदि कोई समतल कोण बहुभुजका केन्द्र में क रने दो कण्डोंमें विभक्त करे, तो प्रत्येक बन्त कण्डोंके महाङ्गल कहलाता है। इस तरह ३ महाङ्गल द्वारा सोमाबद्ध समतल त्रिकोणको बन्त त्रिकोण (spherical triangle) कहते हैं। सरल त्रिकोणमितिमें जो सब नियम बरबहृत होते हैं, बहुभुज त्रिकोणमितिमें भी बहो सब नियम लागू हैं।

त्रिकोणा (स० छो०) १ त्रिभि-मम। २ त्रिगुहकण्ड, त्रिगुहके की कता।

त्रिचार (स० छो०) त्रिचारों चरार्थ समानाकार त्रिचारय समूह, त्रिचार, सजो और सुहागा इन तीनों चारोंका समूह।

त्रिचर (स० पु०) कोचि चरार्थोच पर्यायि यम्। कोचि काच पुच, तास मन्नागा।

त्रिच (स० छो०) त्रिच का पाबागोचकाय फरीस्र। इगुण और।

त्रिचट्ट (स० छो०) त्रिचर्चा चट्टानों समानाकार। चट्टाय तोन चारपाइचोंका समूह।

त्रिचट्टी (स० छो०) त्रिचट्ट चोप। त्रिचट्ट रेको।

त्रिचर्च (स० पु०) सामवेदकी शास्त्रादि विधियाध्यायो।

त्रिचर (स० पु०) त्रिचो मन्ना लघो यत्र बहुभुजार्थे "नदीमिच" इति श्लेषे पञ्चयोमासः। तोचें में द महाभारतके पनुसार एक तोय का नाम।

त्रिच (स० पु०) त्रिचार्थे त्रिचोचामार्थे यथा चमः।

त्रिचर्च, चर्च, चर्च और चाम।

त्रिचम्ब (स० छो०) त्रिचार्थे त्रिचम्बद्वारार्थे समानाकार। त्रिचम्ब रेकी।

त्रिचम्बोर (स० पु०) त्रिचि मम्बोर। बह त्रिचम्ब मम्ब (पाचरच), चर और त्रिचि मम्बोर हो। चार्थोका विज्ञास है कि पिसा थादमो सदा लुप्ती रहता है।

त्रिचर्च (स० पु०) त्रिचो गर्था यत्र। १ देवविधिय। इचका बन्तमान नाम चालम्बर है। इचर्च इति कि पनु मार यह कूर्मविभागके चत्तरकी और परबन्धन है। (इचर्च १५२५) चालम्बर रेको। २ त्रिचर्च देव्यन्त भूमि। ३ इस देवके निवासी।

त्रिचर्चक (स० पु०) त्रिचर्च एक चार्थके चर्च। त्रिचर्च देव।

त्रिचर्चपट (स० पु०) त्रिचर्च बहो वर्गा यत्र। पानु ओचिनचर्च में द।

त्रिचर्चा (स० छो०) त्रयो योनिव्यां वर्ता यत्राः। १ आनुचो चो, त्रिचान् चो। आनुचो चो एचोचोचिका होने पर मो मैचनके समय त्रिचोचिकाके पुत्र हो जातो है इयोने इचका नाम त्रिचता पड़ा है। २ त्रिचरु।

त्रिचर्चक (स० पु०) त्रिचर्च त्रिच।

त्रिगुह (स० छो०) त्रिचार्थे त्रिचम्बद्वारार्थे त्रिचार्थे समानाकार। त्रिचम्बद्वारार्थे त्रिचम्ब, त्रिच और त्रिचोचाम्ब

प्रधान। सत्त्व, रज और तम इन्हींसे सबसे पहले प्रधानकी उत्पत्ति हुई। इस प्रधानका नाम है बुद्धितत्त्व। इस बुद्धितत्त्वमें ही सब उत्पन्न होता है। (भाष्यशां० ११)

त्रिगुण अत्रिवेको, विषय, सामान्य, अचेतन और प्रसवधर्मों है। प्रधान व्यक्त सृष्ट है। यह परिदृश्यमान संसार त्रिगुणात्मक और अत्रिवेको है, अर्थात् इसमें विवेक वा भेद नहीं है। यह गाय है, यह घोड़ा है, जिसे तरह यह पृथक् क्रिया जाता है, उस तरह व्यक्त और गुण पृथक् नहीं किया जा सकता। इसी कारण जो जो गुण है, वही वही व्यक्त है। गुण और व्यक्त एक ही हैं। विषय भोग्य है ऐसा जानकर जिसे भोग करते हैं वही पदार्थ भोग्य है। द्विगुण वा द्विगुणोत्पन्न व्यक्त भोग्य पदार्थ हैं, इसीसे व्यक्तका नाम विषय पड़ा है। यह व्यक्त सभी पुरुषोंके भोग करनेका पदार्थ है।

सामान्य वेश्याको तरह सभीका भोग्य-पदार्थ है, इस कारण व्यक्त सामान्य है। अचेतन, सुख दुःख और मोहका बोधाभाव है, अतः व्यक्त अचेतन है। प्रसवधर्मों बुद्धिसे अहङ्कारादि निकले हैं, इस कारण व्यक्त प्रसवधर्मों है। अहङ्कारसे एकादश इन्द्रिय और पञ्चतन्मात्र तथा तन्मात्रसे पञ्चमहामूत हुए हैं।

यह त्रिगुण अभिन्न भावसे जडा हुआ है। व्यक्त भी त्रिगुण है और अव्यक्त भी त्रिगुण है, जिसका कार्य है यह महादादि, वह भी त्रिगुण है। यह गुण है, यह प्रधान है, इनको पृथक् नहीं कर सकते। त्रिगुण वा प्रधान अचेतनका अनुमान इस प्रकार है, अचेतन सृत्पिण्डसे अचेतन बड़े हो बन सकते हैं। इस कारण प्रधान वा प्रधानोत्पन्न सुख दुःख और मोहमें चेतनता नहीं है, इस कारण त्रिगुण अचेतन है। यह त्रिगुण अर्थात् सत्व, रज और तम प्रकाशार्थ है, प्रहृत्यर्थ है। प्रहृत्यर्थ और नियमार्थ है, एक दूसरेसे अभिभूत है, एक दूसरेका आश्रित है, एक दूसरेसे उत्पन्न होता है, एक दूसरेसे मैथुन सम्बन्ध है, एक दूसरेमें वर्तमान है एवं यह सुख, दुःख और मोहात्मक है। सुख सत्व है, दुःख रज है और मोह तम है। सत्व गुण प्रकाशार्थ अर्थात् प्रकाशसमर्थ है; रज प्रहृत्यर्थ अर्थात् प्रहृतसमर्थ है, तम नियमार्थ अर्थात् नियमसमर्थ है वा नियम शब्दमें स्थित है। अतएव

सत्व रज और तमोगुण क्रमशः प्रकाशक्रिया और स्थिति-शून्य रूपमें परिगणित होता है। एक दूसरेसे अभिभूत है अर्थात् प्रत्येक गुण शेष दो गुणोंको वशीभूत करता है। जब सत्वगुण उत्कट होता है, तब रज और तमोगुण अपने अपने गुणोंसे अभिभूत हो कर प्रीति और प्रकाश स्वभावमें काम करता है। जब रजोगुण उत्कट होता है, तब सत्व और तमोगुण अभिभूत हो कर अप्रीति और प्रहृत्तिधर्ममें वास करता है। तमोगुण जब उत्कट होता है, तब सत्व और रजोगुण अभिभूत हो कर विषाद और स्थितिशून्य धर्ममें काम करता है। यह त्रिगुण परस्पर मिथुनभावमें सम्बद्ध है। रज सत्वको ले कर मिथुन और सत्व रजको भी ले कर मिथुन हुआ है अर्थात् यह एक दूसरेका सहायक है। त्रिगुण एक दूसरेमें वर्तमान हैं अर्थात् सभी गुण त्रिगुणमें ही अन्वयिकभावसे रहते हैं, इसका एक उदाहरण देनेसे स्पष्ट हो जायगा। एक सुन्दरो स्त्री स्वामीके सुख, सपत्नीके दुःख और लम्पटके मोहका कारण है। उसमें यह त्रिगुण है। ऐसा जान कर ही वह इस प्रकार प्रकृतिसे अनुभार सुख-दुःख और मोहका कारण हुई है। इसी प्रकार संसारके सभी विषयोंमें ही ममभक्षना चाहिये।

सत्वगुण लघु और प्रकाशक है, रजोगुण उपपृष्णक और चञ्चल है तथा तमोगुण गुरु और आवरणक है। ये तीनों एक साथ मिनाकर प्रदीपको नाईं किसी विशेष प्रयोजनको मित्र करते हैं। जब सत्वगुण उत्कट होता है, तब अज्ञादि लघु, बुद्धि प्रकाश और सभी इन्द्रियां प्रसन्न होती हैं। रजोगुण उपपृष्णक और चञ्चल उसी प्रकार है, जिस प्रकार एक हृष्य जब दूसरे हृष्यकी देखता है, तो वह उपपृष्णक अर्थात् रजोगुण द्वारा चालित होता है। उस समय इसी रजोगुणका आधिक्य होता है। इस कारण चित्त चञ्चल हो जाता है और उसीके अनुसार काम करने लगता है। तम गुरु और आवरणक है। जब तमका आधिक्य होता है तब अज्ञादि भारी मालूम पड़ने लगता है और सभी इन्द्रियां आच्छन्न हो जाती हैं अर्थात् अपना काम नहीं कर सकतीं।

यहां यह कह सकते हैं, कि त्रिगुण जब एक दूसरेके विरुद्ध रहता है, तब वह किस प्रकार प्रदीपकी नाईं

किसी विधिय प्रयोगनको सिद्ध कर सकतो है ? इसका उत्तर यह है, कि प्रदीपमें तिल, चन्दि घोर बत्तो इन तीन पदार्थोंके बिना कृत्रिम प्रदीपोंमें पर मो बह एकत्र संयोगसे प्रकाश द्वारा दूसरे दूसरे पदार्थोंको प्रकाश पड़ जाता है। उसी प्रकार मत्त, रज घोर तम एक दूसरेके बिना रहने पर मो बह अपने अपने स्थावराचरमें समर्थ है। (अल्पप्र) कोरे कोरे कहते हैं कि त्रिगुण वैशेषिक दर्शनोक्त गुणपदार्थ है वा द्रव्य पदार्थ। इसमें गुण शब्द रहनेसे गुण पदार्थ समझा जाता है, किन्तु पदार्थमें यह गुणपदार्थ नहीं है। संख्यदर्शनके मात्तमें इस प्रकार सोमोमा को गई है—

“कलादीनि क्त्वापि न वैशेषिकरहत्या संयोगवशात् कजुल-बलर-गुणकारिर्नकलात्वात् गुणयोः ७ गुणपदार्थ-संयोगवशात् पदार्थद्रव्यकत्रिगुण-प्रकमरहादि रन्ध्रि-र्गुणपदार्थ-प्रकमरे” (संख्य २० भाग ११५)

सत्त्वादि तोंनीं गुण द्रव्य पदार्थ न कि गुणपदार्थ। स योगवशाके सिद्धे सत्त्व, रज्ज घोर गुणत्व धादि द्रव्य पदार्थके जो धर्म हैं। गुण पदार्थके धर्म नहीं हैं। इसी प्रकार पदार्थ न कह कर गुण पदार्थ कहा गया है। इस का कारण यह है कि पदार्थके पदार्थत्व करमेके सिद्धे प्रकृति त्रिगुण महदादि रज्जु बनाते हैं। इसीसे इसको गुणपदार्थ बतलाया है। विशेष विवरण कृष्ण धर्ममें देखा। (त्रि०) २ अक्षादि गुणतुल्य, त्रिसके सत्त्वादि तोंनीं गुण हैं। मनुने सिद्धा है कि क्वत् त्रिगुणमय है, एक पात्राके सिवा घोर समो पदार्थोंमें जो त्रिगुण नष्टमान है। ३ तीन द्वारा गुणित, तोगुणा, तिसुगा। ४ त्रिगुण, त्रिगुणो तीन भाषाएँ जो।

त्रिगुणा (सं० जी०) त्रयो गुणा बणा। १ दुर्ग। २ माया ३ क्लामाख्यात बीजभेद, तन्ममें एक प्रसिद्ध बीजका नाम।

त्रिगुणावर्च (सं० त्रि०) त्रिगुणो वर्चो बण। त्रिगुण वर्णक्य लक्षणान्वित। त्रिसके ज्ञान तोग मागोंमें शीघ्र हुए जो। यह गुणलक्षणका चिह्न है।

त्रिगुणाहत (सं० त्रि०) त्रिगुण कर्चं हतं त्रिगुणा क्त्वा। संख्यानाय कलात्वात्। वा श्रु० ५१। जो खेत तोग बार होता कहा जो।

त्रिगुणावसरस (सं० पु०) वातरोयका रस। त्रिगुणावर्च (सं० जी०) त्रयो गुणाः त्रयोवर्चक्या पात्रागो बण। त्रिगुणविगिष्ट त्रिसमें सत्त्व, रज घोर तम ये तोंनीं गुण हैं।

त्रिगुणित (सं० त्रि०) त्रिभिर्गुणितः। त्रिगुणित, जो तोग बार-मुखा किया गया जो।

त्रिगुणो (सं० जी०) त्रयो गुणा एव यथा। त्रिगुणय वैनका विह। वैनके एते तोग तोग एक मात्र होते हैं इसीसे इसका यह नाम पडा।

त्रिगुल (त्रिगुल) - बलदे प्रदेयवासी एक जाति। त्रिनको तोग पोको मोक्ष (आरज) है, ये जो त्रिगुण नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। किनो त्रिसो ज्ञानके त्रिगुणोंका उद्वन है कि ब्राह्मण माता घोर शूद्र पिताके घोरसके उद्वनका उत्पत्ति हुई है। प्रवाद है, कि दिग्वाचीके प्रासनक्षत्रमें त्रिनको मा ब्राह्मण-छिवां घोर ब्राह्मण बिबवाये परपुत्रपई मङ्गलासये मर्मबतो होतो हैं। कर्मे महाप्राज्ञोंके प्रधान तोर्बे पण्डितपुरमें भेज देते हैं। यहाँ वे प्रसवके बाद नवजातमियुको पश्य किशोको दे देती जा। इसी कारण पण्डितपुरमें घोर ससे निकट बर्ती स्त्रियोंमें त्रिगुणोंको स प्या प्रसिद्ध है।

इस लोनीके धार्तरस, भरहाज, हरिताम्र, काय्यप, मोहित घोर शोबन्ध योग हैं। ये रसात्त वा मागवत हैं देखनेमें पावा मरुता ब्राह्मणोंके महय हैं। ये लोत्र प्रधानतः पच ओबी हैं पर कुछ दिनोंमें बहुतमे लोम श्लेष्मणसय महजनी कृकामदारो घोर मोबरो करने जन मये हैं। सबको पचका एकसा नहो है। पाहार लवहार पाच-चक्रन सब देयक ब्राह्मणोंके निकते सुकते हैं। ब्राह्मणोंको तरह ये लोम भी पयो पयोत पड़ते हैं; किन्तु त्रिसो दूसरो अंशके ब्राह्मण इन लोनीके साव पाहार वा विवाह-सांगो नहो करती। देयक ब्राह्मण जो इनके पुरोहित हैं। वाप्यसो, नासिक पासन्ध, पण्डितपुर घोर तुलजापुर ये इनके प्रधान तीर्थ हैं।

इस लोनीमें कई एक विधिय निदम हैं। पचके प्रसव के समय त्रिगुणोंके घोर पातो हैं। यन्तान कल्पक शीर्षके बाह प्रकृति-पदमें तोग न ह तक दीया कलाया

जाता है। प्रमवके बाद प्रथम दश दिन ग्रामको पुरोहित आ कर शान्तिपाठ करते और पोछे प्रसूतिको धानमें आशीर्वाद देते हैं। मिक इतना ही नहीं, वे प्रसूति और शिशुके ललाटमें भस्म भी लगाते हैं। इस देशमें जिस तरह छठोके दिन पुरोहित आकर पछो-रात्रिकी पूजा करते हैं, उसी तरह इन लोगोंमें भी पांचवें दिन धाय आ कर यथारोति पछो-पूजा करते हैं। इस दिन चार ब्राह्मण रात भर जग कर शान्ति पाठ करते हैं और सबेरे उनको कुछ दक्षिणा तथा पान-सुपारो दे कर विदा करते हैं। ग्यारहवें दिन प्रसूति और शिशु स्नानादि करके शुद्ध होते हैं। सन्तान उत्पन्न होनेके तीन मास बाद प्रसूति अपने स्वामीके घर जाती है।

१० वर्ष होनेके पहले ही बालकका नपनयन होता है।

त्रिगुद (स० पु०) स्त्रियोंके विषमें पुरुषोंका नृत्य।

त्रियासो (स० स्त्री०) त्रयाणां ग्रामाणां समाहारः।

१ तीन ग्रामोंका समूह। २ एक ग्रामका नाम।

त्रिघण्टा—एक कल्पित नगर जो हिमालयको चोटी पर अवस्थित माना जाता है। कहा जाता है, कि यहाँ विद्याधर आदि रहते हैं।

त्रिचक्र (स० पु०) त्रोग्णि चक्राणि यस्य। अश्विनोक्तुमारो-का रथ।

त्रिचक्षु (स० पु०) त्रोग्णि चक्षुःपि यस्य। त्रिनेत्र महादेव।

त्रिचतुर (स० त्रि०) त्रयो वा चत्वारो वा विकल्पार्थे डच-सम्प्रदान्तः। तीन या चार।

त्रिचत्वारिंश (स० त्रि०) त्र्यधिका चत्वारिंशत् पुरणे डट्। तैत्तलीसवां।

त्रिचत्वारिंशत् (स० त्रि०) त्र्यधिका चत्वारिंशत्। जो गिनतोमें चालीससे तीन अधिक हो, तैत्तलीस।

त्रिचिन् (स० पु०) त्रीन् अन्नोन् चिनोति स्म चि-भूते क्तिप्। अतातामिनत्रय चयनकारो।

त्रिचित (स० पु०) त्रिभिः त्रिभागीकृधाभिरिष्टकाभिः चितः। गार्हपत्य अग्निभेद, एका प्रकारकी गार्ह-पत्याग्नि।

त्रिचिनापल्ली (त्रिशिरापल्ली)—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत एक जिला। यह अक्षा० १०° १६' से ११° ३२' उ० और

देशा० ७८° ८' से ७८° ३०' पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल ३६३२ वर्गमील है। इसके पूर्वमें तंजौर, उत्तरमें मार्कट और नन्म, पश्चिममें कोयाम्बुतुर और मदुरा, तथा दक्षिणमें पुदुकोट राज्य है।

इस जिलेमें जितनी भी नदियाँ हैं, उन सबमें कावेरी नदी प्रधान है। यह पश्चिममें पूर्वकी ओर बहती हुई औरङ्गम् झोपके निकट जा दो शाखाओंमें विभक्त हो गई है, जिनमेंसे एक तो कावेरी नामसे प्रसिद्ध है और दूसरी कोनेरून नामसे। कावेरी नदीके दक्षिण और उत्तरमें चूने और लोहके खाने हैं, परन्तु वे काममें नहीं लाई जाते। यहाँको जनवायु शुभ्र तथा स्वस्थकर है। वार्षिक वृष्टिपात लगभग ३४ इंच है।

इसमें कुल शहर और ग्राम मिला कर ८३७ नगरे हैं। लोकसंख्या प्रायः १४४७७० है, जिनमें अधिकांश हिन्दू और थोड़े मुसलमान तथा ईसाई हैं। ये लोग तामिल बोली बोलते हैं, किन्तु कुछ तेलगू तथा कर्णाटो भाषाका भी व्यवहार करते हैं। तमाम जिना कुलित्तै, मुमिरि, परमेधनूर, त्रिचिनापल्ली और उदयारपालयम् इन पांच तहसीलोंमें विभक्त है।

विशेष ऐतिहासिक विवरण इसी नामके शहरमें देगे।

२ उक्त जिलेका एक तालुक यह अक्षा० १०° ३८' से ११° १' उ० और देशा० ७८° २८' से ७८° १' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ५४२ वर्गमील और लोकसंख्या प्राय ३२२०८१ है। इसमें शहर और ग्राम दोनों मिला कर १८३ हैं।

३ उक्त जिलेका प्रधान शहर। यह अक्षा० १०° ४८' उ० और देशा० ७८° ४२' पू०के मध्य कावेरी नदीके दाहिने किनारे मन्द्राजसे १८५ मीलकी दूरी पर अवस्थित है।

इस नगरको उत्पत्तिके विषयमें ऐसा प्रवाद है—पूर्व समयमें त्रिशिरा नामका एक राक्षस पर्वतको शृङ्गमें रहता था। पर्वतके चारों ओर घना जंगल था। उक्त राक्षसके भयसे कोई वृद्ध जानका साहस नहीं करता था। बाद सुरवदित्तान नामक किसी साहसी वीर पुरुषने इस राक्षसको मार डाला। उसी दिनसे इसका नाम त्रिशिरापल्ली पड गया। सुरवदित्तानने त्रिशिरापल्लीको मार कर वहाँका जंगल कटवा डाला और

१) श्री जयंत राजधानी स्थापना की। ये दिन समर्थों
 धारिभूत हुए थे, इसका पता नहीं चलता। सुरभद्रि
 ज्ञानने त्रिचिरापल्लीके भयसे इस जनपदको रक्षा की
 की, इसीसे वहलके लोग जानेरो नदीके दोनो किनार
 विधाबय निर्माण कर मुहुराण्य नामसे उनको पूजा
 करते हैं।

कहा जाता है, कि ईसाको पाचवीं शताब्दीके पहिले
 यहाँ चोल-राजाधोका राज्य था। मगधके प्रयोग राजाके
 विभवशून्यमें श्री गिरालेख है। उतमें चोल-राजाधोके
 नाम पाये जाते हैं। श्रीपुर नामक ज्ञानने चोल राजाधो-
 को राजधानी थी जो त्रिचिरापल्लीके एक मौजकी
 दूरी पर अवस्थित है। शोकस प्या माव १०४०२१
 है जिनमें पत्रिकथि हिन्दू और कुछ सुकृष्णमान तथा
 ईसाई हैं।

त्रिचिर समय रामानुजाचार्य औरइन्द्रमं रच कर
 त्रिचिरादेतमतका प्रचार कर रहे थे उस समय करि
 काल नामक कोई चोल-राज त्रिचिरापल्लीमें राज्य करते
 थे। १०२० ई०में श्रीरामानुजाचार्यका जन्म हुआ था और
 १० वय को लक्ष्मी के शाहापुर श्री महेश्वरि कर औरइन्द्र-
 की पढ़ाई मये थे, पोल्ले के वैश्यावधममें दाखिल हो कर
 शाहापुरको छोड़ पाये। इसके बाद वे तिरुपति चले हुए
 त्रिचिरादेतमतका प्रचार करनेके लिये औरइन्द्र मये।
 उस समय लक्ष्मी लक्ष १० वर्षके कम न होगी।
 इसके भी बहुत समय बाद औरइन्द्रमें लक्ष्मी देवता
 हुआ था। इससे प्रतीत होता है, कि चोल राजने करि
 काल १०६० ई०के बाद त्रिचिरा समय राज्य किया होगा।
 मधुरापुरके विवरणमें लिखा है, कि सुन्दर पाण्डुरने
 श्रीपुरको समा ज्ञाना था और वहलके पूर्वशासनकर्ताके
 पुत्र करिकानको कुम्भकोचका शासनकर्ता बनाया था।
 मि० टेकरने परम्परागत विवरणको मद्रासतन्त्रिये यह
 लिखनाया है, कि श्रीपुरके तदस-नदय हो जाने पर
 चोल-राजधानी लक्ष्मी कर कुम्भकोच चली गई थी।

१००१ ई०में विजयवाहु महाबलि नामन पर बैठे।
 उनके राजत्वकालमें चोल-राजने सि हल पर शासन
 किया। किन्तु वे जनवादक न हो सके। सि हलके राजने
 ११२६ ई०में चोलराज्य पर धाव किया। वे भी लक्ष्मी

न को कर महेश्वरि छोड़ पाये। पराधीनवाहुने ११२६ से
 ११८६ ई० तक सि हलमें राज्य किया। पाण्डुर कुम्भ
 मिकरके सि हल-राजने पराजित होने पर चोल-राजने
 लक्ष्मी नदय राज्य छोड़नेमें मजबूतता की थी। इस पर
 पराधीनवाहुने प्रतिशोध लेनेके लिए चोलराज्य पर धावा
 किया और कुम्भ प्रदेश दण्ड कर लिए।

सुसम्मानने किंस समय त्रिचिरापल्ली पर शासन
 किया था, इसका पता ज्ञाना बहुत कठिन है। उज्ज-
 रत सुकृतान पञ्चाशद्द्वी साहसने १२८० ई०में मधुरापुरके
 ज्ञान कर लये अपने राज्यमें मिला किया था। १११०
 ई०में टीकोके बादशाह पनाशद्द्वीके प्रधान सेनानायक
 बलाल-राजधानी शरमसुद्ध मूट कर रामेश्वर तक
 पधमर हुए थे। त्रिचिरापल्लीके शासनके विवरणमें कोई
 विषय विवरण नहीं मिलने पर भी पञ्चना इतना अनु-
 मान अवश्य किया जा सकता है, कि उन लोगोंने त्रिचिरा
 पल्लीमें सुट मचाई थी।

तन्त्रो और मधुरापुरके विवरणके ज्ञान जाता है, कि
 तन्त्रोके शिव राजा श्रीरघुकरने त्रिचिरापल्ली श्री मधुरा
 पुरोकी अपने राज्यमें मिला किया था। विजयनगर
 के सेनानायक कलिदान नायनायकने श्रीरघुकरको
 पराजित कर त्रिचिरापल्ली; तन्त्रो और मधुरापुरो पर धावा
 किया था। विजयनगरके राजा चम्पूतरायने अपने मासे
 सेवपानायकको तन्त्रो और त्रिचिरापल्लीका शासन-
 कर्ता नियुक्त किया। इस समय त्रिचिरापल्लीमें लक्ष्मी
 का म क्या बहुत बड़ गई और लक्ष्मी नदी बहुत मय
 पाने लगे। विजयनाय नायकका मधुरापुरोके शासनकर्ता
 होनेके बाद त्रिचिरापल्लीमें लक्ष्मीका प्रभाव मानस हो
 गया। लक्ष्मीने तन्त्रोके राजाको त्रिचिरापल्लीके बटने
 बलाल नामक दुर्ग दे दिया और लक्ष्मी वहाँ था कर
 लक्ष्मी कि त्रिचिरापल्ली पञ्चना धाराकर ज्ञान है और
 दुर्गका मन्दार हो जानेसे वह और भी सुदृढ़ हो
 प्रायग। इसी लक्ष्मीके राजधानी स्थापित की।
 त्रिचिरापल्लीके शासन प्राचोरका मन्दार। करारा
 तथा एक लक्ष्मी-श्रीवारी भी बनवाई। इसी प्राचोर
 के पञ्चात्मागमें श्रीरघुकर कर इने दुर्गके कर
 दिया। श्रीरघुकरने लक्ष्मीके लिए जानेरो नदी तक एक

नाना लगा दिया। इस समय नेदीके दोनों पारके जङ्गल कटवा कर आवादी को गई और भिन्न भिन्न देशोंके शिल्पकारोंको ला कर यहाँ बसाया गया। विश्वनाथने ब्राह्मणोंके रहनेके लिए स्वतन्त्र घर बनवा दिये थे। थोड़े ही दिनोंके मध्य यह नगर सुख-सन्धुक्षिणाली देशमें गिना जाने लगा। इस समय इन्होंने औरङ्गजेबके रङ्गनाथ-स्वामीके मन्दिरके बाहरवाले दरवाजे पर एक गोपुर निर्माण किया। ये कभो मधुरामें और कभो त्रिचिनापल्लीमें रहते थे। इस समयसे ले कर चादसाहबके अधिकारके समय (१७३६ ई०) तक मधुरापुरी और त्रिचिनापल्ली नायक-राजाओंके शासनाधीन था। मद्रा देखो। नायक-राजगण अधिकांश समय तक त्रिचिनापल्लीमें रह कर राजकाज करते थे। १६२६ ई०में तिरुमलके राजा होने पर वे राजधानीको उठा कर मधुरापुरीको ले गये। इनके पुत्र अलकाट्टि (मत्तुवीरप्पा)-ने त्रिचिनापल्ली दुर्गका पुनः संस्कार किया। इनके पुत्र शोक्यनाथ १६६१ ई०में जब राजसिंहासन पर बैठे, तब उन्होंने पुनः त्रिचिनापल्लीमें राजधानी कायम की। नायक-राजाओंने उनके समयसे ले कर १७३१ ई० तक त्रिचिनापल्लीमें वास किया था। १७३१ ई०में अन्तिम नायक-राज विजय राववको मृत्यु हुई। उन्हें कोई सन्तान न थी, इसलिए उनकी विधवा स्त्री मोनाची देवीने वङ्गारतिरुमलके पुत्र विजयकुमार सुत्तुतिरुमलकी गोद लिया और आप नवाल्लिगको अभिभाविका हो कर राज कार्य करने लगी। इस समय वङ्गारतिरुमलने प्रकृत उत्तराधिकारी होनेका दावा किया। ये ख्यातनाम तिरुमल नायकके छोटे भाई और कुमार सुत्तुके प्रपौत्र थे। इनके पिता कुमार तिरुमलने रङ्गनाथ सुत्तुवीरप्पाके समयमें थोड़े दिनोंके लिए युवराजका कार्य किया था। जब इनके प्रपितामह राज्यके अधिकारी न हुए, तब वे किसी हाजतसे प्रकृत उत्तराधिकारी ही नहीं सकते थे। दलवाय वेंकटाचार्यने तिरुमलको राजा बनानेको पूरा चेष्टा की, किन्तु वे कृतकार्य न हो सके। अन्तमें वेंकटाचार्यने अपने मनोरथको सिद्धिका कोई उपाय न देख आरुकाडुके नवाब दोस्त अल्लोजे पुत्र सुवेदार अल्लोको शरण ली और उनसे कहा—‘यदि आप वङ्गारतिरु

मलकी राजसिंहासन पर बैठ सकें, तो आपकी ३६ लाख रुपये दिये जायेंगे।’ सुवेदार अल्लो अच्छा मौका हाथ आता देख कर चादसाहबके साथ त्रिचिनापल्लीके दुर्गके सामने आ पहुँचे और उन्होंने सहसा बलपूर्वक रानीके सैन्य-सामन्तोंको पराजय किया। पीछे उन्होंने देखा, कि दुर्ग अधिकार करना बहुत सहज है; इस हेतु छल करके दोनों पक्षका विवाद मिटानेके लिए उन्हें अपने दरवारमें बुलाया। वङ्गारतिरुमल तो दरवारमें पहुँच गये, किन्तु मानाचोदेवाके पक्षमें कोई नहीं गया। तब उन्होंने वङ्गारतिरुमलको प्रकृत स्वत्वाधिकारी स्थिर कर राज्यशासनका भार अर्पण किया और ३० लाख रुपयेका एक पत्र उनसे लिखवा लिया। रुपया वसूल करनेका भार चाद साहबके हाथ दे कर नवाबके पुत्र आरुकाडुकी चले गये। उनके चले, जानीपर मोनाची देवीने चादसाहबको कहला भेजा ‘यदि राज्य वङ्गारतिरुमलके वदले मेरे ही हाथमें रखा जाय, तो मैं आपका १ करोड़ रुपया दूँगा।’ चादसाहबने रुपयेके लोभमें पड़ कर वङ्गारतिरुमलकी रानीके हाथमें ही सौंप दिया। चादसाहबने अपने वात पूरे करनेके लिये मोनाची देवीके सामने हाथमें कुरान ले कर शपथ खाया था। कोई कोई इतिहास-लेखक कहते हैं, कि—‘उन्होंने कुरान के वदले एक ईंटका अच्छे कपड़े से ढक कर अपने हाथ में ले शपथ खाया था।’ कोषागारमें रुपया नहीं रहनेसे एक करोड़ रुपयेके रत्नादि दिये गये। मोनाची देवीने वङ्गारतिरुमलकी मधुरापुरीका शासन-कर्त्ता बना कर भेजा। १७३८ ई०को चादसाहबने त्रिचिनापल्लीमें आ कर धोखेसे दुर्गमें प्रवेश किया और रानीको अपने घरमें नजरबन्दो कर आप राजा बन बैठे।

रानीने अपने बचावका कोई रास्ता न देख विष खा कर आत्महत्या कर डाली। अब चादसाहब निष्कण्ठक हो गये। वङ्गारतिरुमलने अपनेकी निरावलम्ब देख सतारा जा कर महाराष्ट्र-पतिसे सहायता मांगी। महाराष्ट्र सेना-नायक रघुजो भोंसले एक दल सैन्य ले कर कर्णाटक प्रदेशकी गये। आरुकाडुकी नवाब दोस्त अल्लोने उनसे छोड़ छाड़ की, किन्तु १७४० ई०को २०वीं मईको वे वेलरके निकट पराजित हो कर मार डाले गये। रघुजो

श्री मन्मते त्रिचिनापल्ली पर्वतोत्तर १०४१ ई०को २६
 की माघको दुर्ग पविहार किया। इधर चांदसाहबने
 भी उनके पुत्रको बंद कर मतारा भेज दिया और सेना-
 नायक सुरारि रावको त्रिचिनापल्ली प्राप्त मार घोषा,
 १८ हजार महापाद-सेना रख कर पाप घिताराको चले
 गये। ब्रह्मवतिदमनने इनके भेंट कर राज्य
 प्राप्तको इच्छा प्रपट की। रघुको भोसनेने बुद्धि
 काच १० लाख रुपये मंगि। ब्रह्मवतिदमन १५५ समय
 उतना दैनिको राजो हो गये। किन्तु वे पदा कर न
 रहे। १०४१ ई०में जब निजाम-उम सुल्तान पाठपचाह
 त्रिचिनापल्लीको पर्वतोत्तर करती पाये तब सुरारी राव भी
 दुर्ग छोड़ कर भाग चले। उच समय त्रिचिनापल्ली और
 महारापुरो निजामके पादमेये पाठकाहु, के नवाबके पत्रो
 हो गया। ब्रह्मवतिदमनने पुनः साम्य-परोषाके निजे
 निजामको शरण ली। निजाम ब्रह्मदुरने उन्हें सन्धान
 करती हुये कहा, कि सुध-व्यय १० लाख रुपये और कारि
 भेंट १० लाख रुपये देमिसे उन्हें राज्य मिल सकता है।
 इस समय त्रिचिनापल्लीके शासन-कर्ता चनवर उद्दोने
 ब्रह्मवतिदमनको दैनिक शरणके निजे १०० रुपये और
 उनके पुत्रको १५० रुपये नियत कर दिजे तथा महारापुरो
 भोटा देनेको बात हो। ब्रह्मवतिदमन इस इच्छाको भीम
 करती करती परतोषको चन बधि।

१०४८ ई०में निजाम-उम सुल्तानको मृत्यु हुई। उनके
 महक नाबिरउद्दौले विशयद प्राप्त किया। इस समय
 चांदसाहबने भी मताराके घुटकारा पाया। निजामके
 एक दोहरत मुशफ्फरउद्दौले अब नाबिरउद्दौले विद्व
 चांदसाहबके पक्षयत्नमें शामिल हुये तब प्रामो
 मियोंने भी मुशफ्फरउद्दौला पक्ष पर्वतमन किया।
 पहरेकोने नवाब चनवर उद्दोने निजाम नाबिर
 उद्दौला माय दिया। १०४८ ई०की ११ की सुनाईको
 पाठकाहु, के २१ ईस दूर पाठक राजमक ग्यान्में लुकार
 किने। इस लुकारमें चनवर उद्दोने पराजित हो कर
 चन्नुको प्राप्त हुये। इनके पुत्र महक महकमट पत्नीने
 त्रिचिनापल्ली माय कर पाठकाहु, के नवाबका नाम पदक
 किया और चन्नुके मन्मतेये महायता मानी। इधर
 चांदसाहब पुदिचेरोमी जंगलो मन्मतेयेको महायता

के लुकारके नवाब हो गये। चांदसाहबने
 प्रामोभो-सेना साध मे त्रिचिनापल्ली का घेरा। इस
 समय महकमट पत्नी पर्वके पमानमे बहुत हो कहलें य।
 उनकेने महकमटके राजाके पर्व और सेनाको महायता
 माननेके निजे प्रतिप्रापक इस प्रकार निज मीजा,—
 “यदि पाप मुझे इस घोर विपद्दे लक्ष्मी तो त्रिचिना
 पल्ली प्रदेश पापको पद न कह।”

महकमटके सेनानायक दनराय मन्दोराय और
 महापादके सेनानायक सुरारि राव नवाबको महायताके
 निजे पत्नी पत्नी सेनाको मात्र से छापनारायचपुरके
 निजट या पहुँचे। प्रामोभो सेनाने उन्हें रोका। कमान
 कोप यह सवाद पाकर उनके महायताके निजे चन
 पङ्के और पराजित हो कर आरामनामके मासके पद
 गये। इसका बाद कमान उठनेके इस मुद्देमें महायता
 पङ्के पायो। मन्दोराय और सुरारि राव पत्नी पत्नी
 सेनाके साथ त्रिचिनापल्ली तक पधर हुये। इधर
 तन्दोरेके राजाने महकमट पत्नीके माहायतके निजे पत्नी
 सेनानायक महकोके मात्र ३०० पञ्जारीको और २०००
 परातिसेना भेजी। पदुकोईके तप्योमान ४०० को
 पञ्जारीको और १०० को पदातिक सैन्य पाय से या
 पहुँचे। बाद निजाम लखनेके निष्पडेके दुर्गके ३०० को
 गारे और ११०० या मिंगाको से त्रिचिनापल्लीको घेर
 पाने समय प्रामोभो एकके समीप प्रामोभोको घाप्त
 रिया और से त्रिचिनापल्लीके मुकभ भोतर या डटे। उनकेने
 चान्दसाहबको पराजय करनेका इच्छा महकमट किया। इस
 समय चान्दसाहब औरउत्तेके निष्पुमन्दिरमें घोर
 प्रामोभो जम्मेकेगरको छावनामें डहने हुये यि। दोनों
 पत्नीमें कोई एक छोटी छोटी लुकारिया चनता रह्यो।
 धीरे धीरे विपत्तियोंके समक काम कामिक कारण प्रामोभो
 सेनानायकने जम्मेकेगर छोड़ कर औरउत्तेके
 पानय लिया। तब निजाम लखनेके औरउत्तेके
 मन्मतेये दिजे शरण लक्ष्मी दिया। इस समय साहब
 नवाबको और कोनकन मन्दोरेके बिना, तन्दोरेके निज
 नायक महकोके निष्पुमन्दिरके निजट और महकमटके
 सेनानायक मन्दोराय (बिना) और पत्नी १००
 रहे यि।

चांदसाहब इस तंत्रह चोरो' ओरसे चिरे गये। जब क्लाइवने सुना कि फ्रांसोसोसेना चांदसाहबको सहायताके लिये आ रही है, तब वे छिपके १०० सौ गोरे, १००० सिपाहो और दो हजार महाराष्ट्रसेनाको साथ ले फ्रांसोसीको रोकनेके लिये आगे बढ़े। बलिकन्दपुरके सामने दोनो'में घनघोर युद्ध मचा, जिसमें क्लाइवजी ही जीत हुई। इस युद्धमें १०० सौ फ्रांसोसी, ४०० सौ सिपाहो और ३४० देगोय भ्रश्वारोहोके साथ फ्रांसोसी-सेनानायक कैद किये गये। चांदसाहबने यह सम्वाद सुन कर तख्तोरके सेनानायक मंकोजोसे सन्धि कर ली। चांदसाहबने मंकोजोके ऊपर विश्वास करके उन्हे' आत्मसमर्पण किया। मंकोजोने विश्वास-घातकतासे चांदसाहबको अपने हाथसे मार डाला। फ्रांसोसोका पराभव और चांदसाहबकी मृत्यु का सम्वाद पाकर फ्रांसोसी शासनकर्त्ता डूझे अत्यन्त दुःखित हुए।

बाद १७५३ ई०के नवम्बर मासमें फ्रांसोसियो'को मई सेना आने पर विपलियो'ने रातके समय त्रिचिनापल्ली अधिकार करनेके अभिप्रायसे दलहन-व्यूहके निकट आक्रमण किया, किन्तु सफलता प्राप्त न की। इसमें ३५० फ्रांसोसोसेना अङ्गरेजोंके हस्तगत हुई। १७५४ ई०के फरवरी मासमें अङ्गरेजोंको रसद कलिपुर नामक स्थानमें आ जानेसे फ्रांसोसी सेनानायकने वह रसद छान ली और पदुकोडाई-प्रदेशमें लूट मार मचाते हुये तख्तोरको और अग्रसर हुये। इसके बाद अगस्त मासके अन्तमें अङ्गरेज और फ्रांसोसोके बीच कई एक छोटी छोटी लड़ाइयां हुईं; किन्तु पोछे दोनो'में सन्धि हो गई। महिसुरके सेनापतिको नाम इस सन्धिमें न रचनेसे वे इस सन्धिको माननेमें बाध्य न हुए और उन्हो'न कहला मेजा कि—'मैं इस नियमसे बाध्य नहीं हो सकता।'

कामान सिय १५० गोरे और ७०० काले सिपाहो ले कर त्रिचिनापल्लोके दुर्गको रक्षा कर रहे थे। उन्हो'न दुर्गका अच्छी तरह संस्कार किया। फ्रांसोसोने इस दुर्ग पर आक्रमण करनेकी पूरी कोशिस की, किन्तु वे इसमें कृतकार्य न हो सके।

१७६० ई०के मई मासमें हैदर अली महिसुरके प्रधान हो गये। १७८० ई०में उन्हो'ने अंगरेजोंके साथ लड़ाई

ठान दी और १७८१ ई०में वे स्वयं कर्णाटकमें था, कर त्रिचिनापल्लो और मदुरामें लूट मार मचाने लगे। उन्हो'ने जलप्रणालीका बाध काट कर सब आवादी जमीन नष्ट कर दो ओर कर्नल वेलोको कैद कर महिसुर भेज दिया। बाद त्रिचिनापल्लोका दुर्ग अधिकार किया। सर-आयस्कूट पराजित हो कर पोछे हट गये; किन्तु श्लो जुलाईकी जो लड़ाई छिड़ो, उसमें हैदरको हार और सर-आयस्कूटको जीत हुई।

१७८२ ई०में हैदर अलीके मरने पर उनके लड़के टोपू सुलतान कर्णाटकको छोड़ कर महिसुरको लोट आये। १७८२ ई०में गवर्मेण्टके धाय नवाबको एक सन्धि हुई।

१७८८ ई०में टोपूकी मृत्युके बाद औरङ्गपत्तन अधिकृत हो जाने पर अन्यान्य कागजोंके साथ नवाब हैदरके बहुतसे पत्र पाये गये। 'नवाब अंग्रेजोंके विरुद्ध टोपूके पत्रमें हैं और १७८२ ई०में उन्हो'ने सन्धि तोड़ दी है' इस कारण ब्रिटिश गवर्मेण्टने यह प्रदेश अपने साम्राज्यमें मिला लिया और नवाबको वृत्ति कायम कर दी।

अभी त्रिचिनापल्लोमें दुर्ग नहीं है, केवल दो दरवाजे पूर्व गोरवका परिचय दे रहे हैं। दुर्गको दोवार टूट-फूट गई है और उसके चारों ओरकी खाईकी भर कर उसके ऊपर रास्ता बना दिया गया है। दुर्गके भीतर पुराना राजभवन आज भी विद्यमान है, जिसमें तह-सोलदारकी कचहरो, मुन्सफकी कचहरो, स्थानीय कोषागार और औपचालय अलग अलग बना दिये गये हैं।

त्रिचिनापल्लो दुर्गका पर्वत तयुमानस्वामोमलय नामसे प्रसिद्ध है। पर्वतके ऊपर जानिके लिये चारों ओर पत्थरकी सोढ़ियां बनी हुई हैं। सोढ़ोके ऊपर महादेव तयुमानस्वामोका मन्दिर है। सामनेका पहाड़ काट कर एक घर बना दिया गया है। कर्णाटकके युद्धके समय उसमें बन्द रखी जाती थी। इस मन्दिरका दृश्य बहुत सुन्दर है। अनुमान किया जाता है, कि मन्दिर चोल-राजाओंसे बनाया गया होगा। प्रति वर्ष भाद्रमासमें महादेवका उषव होता है। जयसे त्रिचिनापल्लो अंग्रेजोंके हाथ आया है, तबसे यहांकी बहुत उन्नति हुई है। अर्वा जिलेके जज, कलेक्टर, मुन्सफ-डाक्टर, पुलिस, सुपरिण्टेंडेण्ट आदि रहते हैं।

१३ शहरमें एक, पी, जी, डारल्लू, चर्चोंका एक
सेना विनाश और दक्षिण-प्रदेशके रैलवेका एक प्रधान
आयोजक है। यहाँकी कलवायु बहुत स्वास्थ्यकर है।

त्रिपुर-मन्द्राचल कोचीनराज्यका एक शहर। यह पचा०
१० १२' उ० और देशा० ७६ १३' पू०के मन्थ परमस्मित
है। भूपरिमाण १३ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः
१३३८२ है। यह एक प्राचीन शहर है। यहाँके स्थान
पुराणके अनुसार परशु, राम इनके अधिष्ठाता माने जाते
हैं। १७०६ ई०में ब्रह्मोसिने इन पर चढ़ाई करके अपना
राज्य बना लिया था। पेरि १७०६ ई०में यह स्थान
हैदर अलीके और १७८८ ई०में टोपू सुब्बतानके हाथ
आया। १७७७ ई०में यहाँ मद्रोका एक युग बनाया गया
था, जो धर्मो मन्नावस्थामें पड़ा है। यह शहर वाणिज्य
का एक प्रधान केंद्र है। यहाँ डिस्ट्रिक्ट जज, मजि
स्ट्रेटकी अदालत, विजिलान्स और तीन इन्स्टीट्यूट हैं।
इनके सिवा शहराचार्यकी कार्यालय बनाए हुए बहुत
प्राचीन तीन मठ हैं। इनमेंसे एक मठमें हिन्दूशास्त्र ब्राह्मण
को भोजन तथा बेटकी शिक्षा दो जाती है।

त्रिजगत् (स० छो०) त्रिगुणित जगत् म ब्राह्मण्य कर्म-
चार्या। स्वयं, पृथ्वी और वातावरण ये तीनों लोक।
त्रिजट (स० पु०) त्रिजटा जटा' यन्त्र। १ महादेव।
२ ब्राह्मणका नाम त्रिजको बनवायाके समय रामचन्द्रने
बहुतसी गाँवे दीं थीं।

त्रिजटा (स० छो०) त्रिजो जटा' यन्त्र। राक्षसोंके,
विभीषणकी बहन। बहू राक्षसी पयोःकटाक्षिन्नामं जानका-
कोत्रे पाम रक्षा करती थी। मोताके प्रति इनका बहुत
प्रेम था। जब लक्ष्मी अश्वत्थ राक्षसों मोता पर आकाश
करती, तब यह लक्ष्मी रोक देती थी। त्रिजटानि अश्वत्थ
राक्षसोंका अग्रगण्य देखा था और वह अश्वत्थान्त भुजा
मुना कर मोताको उन्मत्तित करती थी।

(रामा० इन्दर० २०-३० अ०)

३ त्रिजट, देवका पिड। इनके तीन पत्नीं जटा
बिन्दु और महेन्द्र रक्षते हैं। इन मन्त्रिद्वयों है, इन
मुनमें बहू रक्षता है तथा मयूरे वरु ब्राह्मणद्वय हैं।
इन पत्नीं हर वा हरिको परंपना करनी चाहिये। गति
पूजामें बँसके पत्नी अस्वत्थ पयोःत्रनोय हैं। इन पत्नीं

हरा पूजा करनेके लक्ष्यनाम होता है।
(इन्द्रोत्पीतम ६०)

त्रिजटो (स० पु०) महादेव, शिव।
त्रिजट (त्रि० पु०) १ जटारी। २ लखनार।
त्रिजातक (स० छो०) त्रिजातसारी' कनू। रजापची
दारपोली और त्रिजपत्ता इन तीन प्रकारके पटासीका
समूह। इन्के त्रिगुणित मो खड़ी है। तटि इमें नाम
क्षर मो शिवा दिशा ज्ञाय ३ इन्के चतुर्जातक अष्टमे।
त्रिजात और चतुर्जात ये दोनों ही रेशक, दुस, तोप्य,
लक्ष्मणोय' सुखमत दुर्गमनाग्रह, लक्ष्मण पित्तबर्हक,
पत्तिकाकरक, बर्षप्रसाहक तथा अफ, बावु और विप
नागक हैं।

त्रिजोका (स० पु०) त्रिपुर रात्रिपु बीवा। तीन रात्रियों
अर्थात् ८० अशो तक फल हुए पापकी व्या।
त्रिज्या (स० छो०) व्यासको बाधो रेखा, जिसे उत्तर
क्षेत्रसे परिधि तक खींचो कुरे रेखा।

त्रिधा (स० छो०) त्रय पुरोहरा० नाहु'। अथ ज्ञान।
त्रिधता (स० छो०) त्रिपुर स्थानिपु नता नक्षत्र त्रय।
त्रैप्यार अष्टावाम्। १ वा ८३। २ अशु, अशुप। (त्रि०)
३ जो तीन अथवा लुका कृपा की।

त्रिधत्त (स० छो०) त्रिधत्त मान त्रिधत्त। त्रिधत्ता मान।
त्रिधयन (स० पु०) त्रिधि नयनानि यत्त। शिव महा
देव।

त्रिधव (स० पु०) त्रिधाहता नक्षत्र समाभासा' म प्रा
स्तात् त्रय। मन्त्रि महात्त सामप्तोमरीट, साम मान-
को एक प्रनालो, त्रिजमें एक त्रिधोय प्रकारके लक्षको
सत्ताईन पाठितियां करतें हैं। सत्ताईन बार पाठ
तियां करनेमें प्रथमपर्यायमें, प्रथम तीन मध्यम १ और
उत्तम २; द्वितीयपर्यायमें प्रथम एक, मध्यम तीन और
उत्तम दोन तथा तृतीयपर्यायमें प्रथम दोन मध्यम एक
और उत्तम तीन। इन तीन पर्यायमें जो जो करके तीन जो
पदांत् २० बारकी पाठतियां सामप्तोम है। इस समष्टि
श्लोकको समी पाठतियां करनेसे त्रिधव होता है।

त्रिधाक-त्रिधाक रेखो।
त्रिधाचिन्त (स० पु०) त्रि' इन्द्रविषो 'त्रिधाचिन्तः पत्तिय
येन, पूज'पदाविति त्रय। १ अक्षुर्देवि एक क्रिय

भागका नाम । २ उन भागके अनुयायी । यजुर्वेदका प्रख्यात भाग त्रिणाचिकेत नामसे ख्यात है । ३ नारायण । (भारत १२।३३८।४)

त्रित (सं० पु०) १ देवतासिद्ध, एक देवताका नाम । २ ब्रह्माके मानसपुत्ररूप ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम जो ब्रह्माके मानसपुत्र माने जाते हैं । ३ गौतमसुनिके पुत्र । एकत और द्वित नामक इनके दो भाई थे, पर ये दोनोंसे अधिक तेजस्वी और विद्वान् थे । ऋषि लोग इनका गुण देख कर इन्हें गौतमको नाई पूजा करते थे । किसी समय ये अपने भाइयोंके अनुगोषसे उनके साथ पशुसंग्रह करनेके लिए जङ्गलमें गये । वहां दोनों भाइयोंने इनके संग्रह किये हुए पशु कोन का इन्हें अकेला छोड़ कर घरका रास्ता जिया । इसी वीच एक भेलिया आया, जिसे देख कर ये डरके मारे दौड़ने लगे और दौड़ते हुए एक गहरे कुएँमें जा गिरे । वहीं इन्होंने सोमयोग आरम्भ किया, जिसमें देवता लोग भाषा पहुँचे । उन्हीं देवताओंके वरसे ये कुएँसे निकले । महाभारतमें लिखा है, कि इसी कुएँसे सरस्वती नदीका आविर्भाव हुआ ।

त्रितस्र (सं० स्त्री०-स्त्री०) त्रयाणां तस्र्यं समाहारः अस्मात् । तीनों तस्र, तीनों सूत्रधर ।

त्रितन्वीषोष्णा—वीषावायुविशेष । यह कच्छपो वीषाकी तरहका होता है । केवल इसका खोल काठका बना होता और इसमें तीन आवक रहते हैं । इस वीषाके तीन तार कच्छपोके नायकोसुर और पञ्चमके जैसे होते हैं । वज्रानका टंग भो कच्छपोसा है । यन्त्रकोष ।

इसका आधुनिक नाम सितार है, जो वीषाका अनुकल्प है । त्रिशब्दको पारसो भाषामें 'से' कहते हैं, इसीसे अमोर खुसखने तीन तारोंसे युक्त त्रितन्वीका सितार वा सितार नाम रखा है ।

त्रितय (सं० स्त्री०) त्रयोऽवयवा अस्य त्रि-तयप् । (संख्याया अवयवे तयप् । पा० ५।२।४२) धर्म, अर्थ और काम इन तीनोंका समूह । २ सन्निपात । (त्रि०) ३ त्रिप्रकार, तीन तरह ।

त्रितन (सं० त्रि०) त्रितस्रस्य, तीन खनका घर ।

त्रिताप (सं०-स्त्री०) त्रयाणां तापानां समाहारः पाध्या-

त्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक ये तीनों प्रकारके दुःख । आध्यात्मिक दुःख दो प्रकारका होता है, शारीरिक और मानसिक । घात पित्त और श्लेष्मादिके विषयमें उत्पन्न ज्वर, प्रतिभार आदि रोग शारीरिक दुःख है । काम, क्रोध, प्रियवियोग और अप्रियसम्बादसे जो दुःख उत्पन्न होता है, वह मानसिक दुःख है । आधिभौतिकके चार भेद हैं, जरायुज, अण्डज, स्वैदज और उद्भिज्ज । शोत, उष्ण वात, वर्षा और वज्रपतन आदिसे जो दुःख उत्पन्न होता है, उसे आधिदैविक कहते हैं । लोग त्रितापमें पड़ कर तरह तरहके कष्ट पाते हैं । श्रवण, मनन, निदिधामन ये सभी त्रितापके नाशक हैं । त्रितापके नाश होनेसे ही मोक्ष मिलता है । नगान्तार त्रितापसे पीड़ित रहनेके बाद मनुष्यके सामने शास्त्रजिज्ञासाका उद्देश्य पहुँच जाता है । शास्त्रजिज्ञासाका उद्देश्य पहुँच जानेसे ही वे मोक्षके पथ पर अग्रसर होते हैं ।

त्रिदण्ड (सं० पु०) त्रिदण्डं चतुरङ्गुलमीवालविष्टनान्योन्यसम्बन्धं पत्यस्य, अर्थं प्रादित्वाद् । १ सत्रामात्रम, संन्यास आश्रमका चिह्न । (स्त्री) त्रयाणां दण्डानां समाहारः । यतियोकं चार अङ्गुलपरिमित तीन दण्ड जो एक दूसरेमें बंधे रहते हैं । यथा—वाग्दण्ड, मनोदण्ड और कायदण्ड ।

त्रिदण्डक (सं० स्त्री०) त्रिदण्ड-स्वार्थं कन् । त्रिदण्ड । त्रिदण्डो (सं० पु०) त्रिदण्डमस्त्यस्य इति इति । त्रिदण्ड-धारो यति, वे जिनके कायदण्ड, मनोदण्ड और वाग्दण्ड बुद्धिमें स्थापित है अर्थात् जो ज्ञानबलसे मन, वचन और कर्म इन तीनोंको दमन कर सकते, वे ही त्रिदण्डी कहला सकते हैं । केवल तीनों दण्ड धारण कर लेनेसे ही त्रिदण्डी बन नहीं सकते । वरन् काम और क्रोधको दूर हटा कर जो त्रिदण्डका यथाव्यवहार करते, वे ही त्रिदण्डोपदेवाच तथा सिद्धिनामके अधिकारी हैं । (मनु १२।१०।११)

त्रिदण्डग्रहण करनेसे उनका प्रेतत्व दूर ही जाता है । त्रिदण्डियोंका आद्यश्राद्ध नहीं करना पड़ता है; किन्तु मृत्युके बाद ग्यारह दिनोंमें पार्वणश्राद्ध करना पड़ता है । २ यज्ञोपवीत, जनेक ।

विद्वत् (म० पु०) मोक्षि दक्षानि यन्व । त्रिस्वस्रस्र, सेन
का वेदु ।

विद्वन्ना (स० स्त्री०) मोक्षि दक्षानि प्रतिपत्तं यस्याः ।
गोष्वापदोमता, व सन्दी ।

विद्वय (स० पु०) वनोवा दया यन्व । त्रिगण्द्व्यात्र
त्रिमासकत् वृत्तीवार्थकता वा त्रिस्तो अन्वसत्ता त्रिमा-
साख्या न तु मन्त्रानुमितव वृत्तिपरिचामसदाप्या' दया
वप्या वहा मोक्षतापान् दयति दन्वय सत्रयै क एवी०
मातुः वा सावित्रा विराड्छाः दय परिमासकम् ।
देवतापौत्रा स्त्रि र मोक्षनम्यन्व । देवतापौत्र अग्न
मत्ता धोर त्रिमासाप्या पवप्या है, किन्तु यह पवप्या
मानको क हैमा पृष्टि, परिचाम धोर सत्रवप नहीं है ।
देवगण मनुष्यो व आध्यात्मिक, आधिभौतिक धोर पाचि-
देविक त्रितापो को नाम करते है । देवतापौत्रो स'दया
तोन पात्रुति दय भवात् तोस है; किन्तु ठनका परिमास
व्यपि यत् पत्रात् न तौम वतवाया है । यज्ञं धर एक
एक त्रिगण्द्व्यात्रा द्वारा सत्रारण्यके कारण व्यपि यत्
का बोध होता है । इहो मत्र कारणांसे देवतापौत्रा
नाम त्रिदय पड़ा है ।

ते तोम प्रथम देवताये है—१९ अक्ष, ११ वदु,
८ अष्टवसु धोर २ परिमनीकुमार । कोरि कोरि कहते है,
त्रि दोनों परिमनीकुमारको छोड़, इन्द्र धोर प्रथापतिको
नेकर ते तोम होते है । त्रिद्यौदगा' ज्ञापदावस्था वस्तु ।
२ कोव । १ देवतापौत्रा वासस्थान, ज्ञन । (त्रि०)
त्रि यत्परिमित, तीम ।

विद्वयुव (स० पु०) विद्वयानां देवानां युवः १-तत् ।
दिवयुव, सुव्यपति ।

विद्वयस्य (म० पु०) विद्वया देवमेव इन्द्र सोपो
रचक्रोऽन्व । इन्द्रस्योवकीट, वोरवहरो नामका कीड़ा ।

विद्वयत् (म० स्त्री०) विद्वयत् माव' विद्वय-त्स । देवत्व ।

विद्वयदाह (म० स्त्री०) देवदाहकाण्ड ।

विद्वयदोषिका (म० स्त्री०) विद्वयानां देवानां दोषिका ।
अयं द्रु, आशामयद्रा ।

विद्वयपति (म० पु०) विद्वयानां पतिः १-तत् । इन्द्र ।

विद्वयमन्त्रो (म० स्त्री०) विद्वयविद्या मन्त्रो यस्याः ।

स प्रायान् न कप । तुमभो ।

विद्वयवत् (म० स्त्री०) विद्वयानां वत् । अम्परा ।
विद्वयवत् (म० स्त्री०) विद्वयानां वत् । नमस ,
आशामय ।

विद्वयवर्ष (म० पु०) विद्वयविष्य' वर्ष'ण । दिवसवर्ष,
एक प्रकारको सरनो ।

विद्वयवृत् (स० पु०) विद्वयवृत् पृथु, य' । वप्य ।

विद्वयवार्त् (स० पु०) विद्वयानां आचार्य' । देवतापौ-
त्रे युव वृद्धस्पति ।

विद्वयव्य (स० पु०) विद्वयानां पथिव्य । विद्वयके
पथिवति, इन्द्र ।

विद्वयव्यस्र (स० पु०) विद्वयानां पथ्यस्र' । विष्णु ।

विद्वयव्यन (स० पु०) विद्वयानां पथ्यन यन्व । विष्णु ।

विद्वयवृत् (स० पु०) विद्वयानां पाथुवः । वप्य, इन्द्रका
अनुप ।

विद्वयारि (म० पु०) विद्वयानां देवानां परिः १-तत् ।
देवतापौत्रे है यत्, अथर ।

विद्वयानय (म० पु०) विद्वयस्य पाथय' १-तत् । १ अर्ग' ।
२ सुमिद्वयवत् ।

विद्वयानस (स० पु०) विद्वयानां आवास' । १ अय' ।
२ सुमेद्वयवत् ।

विद्वयान्तर (म० पु०) विद्वयानां अन्तर' । अन्तर, सुभा ।

विद्वयेश्वर (म० पु०) विद्वयानां ईश्वरः । इन्द्र ।

विद्वयेश्वरो (म० स्त्री०) विद्वयेश्वर-श्वरो' । दुगा ।

विद्वयिन्ना (स० स्त्री०) विद्वयिन्ना वृद्धविषय, आमर
अथ, मातका ।

विद्वयिन्व्य (म० पु०) विद्वयिन्ना अन्वदिनस्य अयमिति
स्वयं द्विप् । अथाह, अह तिमि ओ तोम दिनोंको अय
करतो है ।

१- एक पक्षोरात्रके मन्व यदि दो त्रिदिवोंका म पृथ
पथमान हो तो अथे पथमदिन कहते है धोर एक एक
तिथि यदि तोम वारको अयं करती हो तो अथे अथ-
अयं कहते है । ऐसे दिनमें स्नान धोर दानादिके पति-
तिव धार कोरि अथकाय नः करना चाहिये ।

विद्वय (म० पु०) वयो वृद्धविष्णुवद्द्रा' दोष्यताम्बत्र
दिव पथ्य' का दोष्यति वति दिवाः दिव क, वय' वय
'अथमोदपा' दिवा होइका' वय । १ अयम ; वृद्धा,

विष्णु और महेश्वर स्वर्गमें रहते हैं, इससे स्वर्गका नाम
त्रिदिव पडा । २ आकाश । (क्लो०) ३ सुख ।

त्रिदिवा (स० स्त्रो०) नदीभेद, एक नदीका नाम ।
२ एला; इलायचो ।

त्रिदिवाधीश (स० पु०) त्रिदिवध्य अधीशः । इन्द्र ।

त्रिदिवेश (स० पु०) त्रिदिवस्य ईशः । देवता ।

त्रिदिवेश्वर—त्रिदिव-धीश देखो ।

त्रिदिवोद्भव (स० स्त्री०) त्रिदिव उत्पन्न हुआ है ।

१ स्थूलएला, बड़ो इलायचो । २ गङ्गा । (त्रि०) ३ स्वर्ग-
भवमात्र, जो स्वर्गसे उत्पन्न हुआ है ।

त्रिदिवीकस् (स० पु०) त्रिदिव ओको यस्य । देवता ।

त्रिदृश (स० पु०) त्रिदृशः दिशः; निताणि यस्य । वा त्रौणि
भूतादीनि पश्यति दृश-क्तिप । त्रिनयन, महादेव, शिव ।

त्रिदोष (स० स्त्री०) त्रयाणां दोषाणां समाहारः । १ वात,
पित्त और कफ ये तीन दोष । २ त्रिदोषज रोगभेद,
वात, पित्त और कफसे उत्पन्न रोग, सन्निपात ।

त्रिदोषज (स० त्रि०) त्रिदोषाज्जायते जन-ड । वात, पित्त
और कफजनित सन्निपात आदि रोग । ज्वर देखो ।

त्रिदोषज वमिरोगमें अत्यन्त शूल भुक्तद्रव्योंका
अपाक, अरुचि, दाह, पिपासा, श्वास और मोह होता
है । इसका रोगी सर्वदा उष्ण, नील वा रक्तवर्ण लव
णान्तरमविशिष्ट पटायं वमन करता है ।

त्रिदोषज (स० त्रि०) त्रिदोष हन्ति हन-टक् । त्रिदोष-
नाशक ।

त्रिदोषदावानलरस (स० पु०) ज्वरमें दिये जानेका
एक प्रकारका रस ।

त्रिदोषरोहिणो (स० स्त्री०) गलेका एक रोग जो त्रिदोष-
से उत्पन्न होता है ।

त्रिदोषसम्भव (स० पु०) सन्निपात ।

त्रिदोषहारो (स० पु०) ज्वरको औषधि ।

त्रिद्वनि (स० पु०) एक प्रकारको रागिणो ।

त्रिधन्वन् (स० पु०) सुधन्वा राजाके एक पुत्रका नाम ।

ये त्रिधन्वाके त्रयर्षण नामक सर्वविद्याविशारद एक
पुत्र निकले । (हरिवंश १२ अ०)

त्रिधर्मो (स० पु०) महादेव, शिव ।

त्रिधा (अथ) त्रि-प्रकारे धाच् । त्रिविध, तीन प्रकारसे,
तीन तरहसे ।

त्रिधातु (स० पु०) त्रिन् धर्मार्थकामान् दधाति पुष्पा-
तीति धा-तुन् । १ गणेश । (क्लो०) त्रयाणां धातूनां समा-
हारः । धातुत्रय, मोना, चाँदी और ताँवा ।

त्रिधात्व (स० स्त्री०) त्रिधा भावे त्व । विप्रकारत्व, तीन
प्रकारका भाव ।

त्रिधामन् (स० पु०) त्रौणि भूरादीनि सत्त्वादीनि वा
धामानि यस्य । १ विष्णु । २ शिव । ३ अग्नि । ४ मृत्यु ।
(क्लो०) त्रयाणां धातूनां धाम्नां समाहारः । ५ धामतय,
तीनों धाम । ६ स्वर्ग । (त्रि०) ७ त्रिधंख्यान्वित,
जिनमें तीन अंक हों ।

त्रिधामूर्त्ति (स० पु०) त्रिधा मूर्त्ति र्यस्य । परमेश्वर
जिनके अन्तर्गत ब्रह्मा, विष्णु और महेश तोनों हैं ।

त्रिधारक (स० पु०) तिस्रो धारा यथाख्यस्य, तत स्वार्थे
कन् । गुणदृष्टण, बडा नागरंमोया, गुँदला । २ कसेरूका
पेड ।

त्रिधारस्तुहो (स० स्त्री०) त्रिषु भागेषु धारा यस्याः सा
एव स्तुहो । स्तुहोविशेष, त्रिधारायुद्धर, तीन धारवाला
सेंहुड । इसका पर्याय—यस्त्र और स्तुही है ।

त्रिधारा (स० स्त्री०) त्रिषु स्थानेषु धारा प्रवाहा अस्यः ।
धारात्रयान्वित गङ्गा, स्वर्ग, मल्य और पाताल तीनों
लोकोंमें बहनेवाली गङ्गा ।

त्रिधाविशेष (स० पु०) त्रिधा त्रिप्रकारो विशेषः । सर्वाख्यके
अनुसार सूक्ष्म, मातापित्तज और महाभूत तीनों प्रकारके
रूप धारण करनेवाला शरीर । इसके मध्य सूक्ष्म शरीर
नियत, मातापित्तज शरीररस, भस्म वा विष्टारूपमें
परिणत होता है ।

त्रिधासर्ग (स० पु०) त्रिधात्रि प्रकारः सर्गः । भूतादि
सर्ग ।

ब्राह्म, प्राजापत्य, ऐन्द्र, पैत्र, गान्धर्व, याच, राचस,
और पैशाच ये आठ प्रकारके दैवसर्ग हैं । पशु, पक्षी,
मृग, सरीसृप और स्थावर ये पाँच प्रकारके तिर्यग्सर्ग
हैं । मानुषसर्ग भी एक है । ब्राह्मण, चत्रिय, वैश्य प्रभृति
मभी जातिया ही मानुष-सर्गके अन्तर्गत हैं । ये ही
तीन प्रकारके सर्ग हैं, जिनके अन्तर्गत सारी सृष्टि आ
जाती है ।

त्रिनयन (स० पु०) त्रौणि चन्द्रसूर्याग्निरूपाणि नय-

जानि वरुच, पूर पदात् स चायामित माने सुमृदिषु च
 इति निर्वेषात् न बल । १ शिव, महादेव ; महादेवके
 तोसरे निरको उत्पत्तिके विषयमें इस प्रकार लिखा है—
 एक दिन पार्वतीने हँसोसे महादेवको दोनों पाँखें धपने
 बाँधोसे मूढ़ रयीं । ऐना करनेसे सारा स सार च बहार
 मय दोबने लगा और होम तथा बपटकार गूथ्य हो
 गया । तब महादेवके कलाटदेमसे एक सुगान्ताकाजोम
 प्रच्छ मात्त पत्र सद्य नैव उत्पद्य दुषा । इस निरको
 ज्योतिषे चारों दिशाये जगमग लठीं । बहुत लक्ष्ण भय-
 कार दूर हो गया और हिमानव पर्वत दग्ध होमे लगा ।
 यह पङ्कत दग्ध देख कर पार्वती महादेवका प्दाव
 करने लगे । तब महादेवने प्रकटिल्ल जा कर पार्वतीसे
 कहा—द्वि । तूने बिना पायी-पौके सोचे भेरो दोनों
 पाँखें मूढ़ रयीं को जिससे सारा स सार च बहार
 मय और त्रिनयनाय हो गया बा । इन समय मैंने इन
 सबको रचाके बिदे ही इस मनुष्यस जताय नैरकी
 सृष्टि की है । (नारय चतुष्टय० १४० न०)

(त्रि०) २ शोचनब्रह्मबुद्ध, त्रिनको तीन पाँखें हैं ।
 त्रिनयना (स० श्री०) शोचि नयनानि यस्याः टाप् ।
 दुर्गा ।
 त्रिनयति (स० श्री०) त्रयत्रिका नयति । यह स य्मा
 ओ तीन और नन्वेके योमसे बनती हो, तिरानसेही
 च य्मा । २ उच्च न य्मास्तवक पङ्क । (त्रि०) तत्त पूर्ये
 षट् । ३ तिरानयै ।
 त्रिनयति (न० त्रि०) त्रिनयति-तमय । तिरानयैर्वा ।
 त्रिनात्र (स० पु०) त्रिभिः पञ्च दुर्ष्य यस्मिन् नात्र
 पुच्छकोचः ततोय नात्र । १ ततोय नात्र स्वर्ग ।
 २ उत्तम स्थान ।
 त्रिनय (स० पु०) त्रयो लोको नामो वरुच पञ्च समा-
 सान्तः । त्रिषु ।
 त्रिनिष्क (स० त्रि०) त्रिनिष्कैः श्रोत ठय तस्य
 बाहु सुत्र । ओ तीन निष्कमें खरीदा गया हो, त्रिस
 को कीमत तीन निष्क हो ।
 त्रिनेत्र (स० पु०) त्रौचि त्रिवाचि चरय । १ महादेव शिव ।
 २ श्वर्च, मोमा ।
 त्रिनेत्र—भ्राताबाहुष लपतर राज्यके यत्नमें त दग्ध त्रिनेत्र

याम । यह चमो तरनेत नामसे मयङ्गर है और विष्यत
 प्राधान लगरधानके पात्रमें प्रचक्षित है ।

शानमाहात्म्यके मतमें सुराङ्गके एक पत्रका नाम
 देवपञ्चाल है । यहाँ त्रिनेत्रेखर महादेव रहते हैं ।
 इन्का के नामानुसार इस स्थानका नाम त्रिनेत्र वा तरनेत
 पड़ा है । त्रिनेत्रमाहात्म्यके मतानुसार सख्यबुद्धि
 मान्वातामें यहाँ एक सुवेमन्दिर निमाच बिद्या था ।
 लक्ष्मपुराणके प्रमासखण्डमें लिखा है—

त्रिपयगामिनो गङ्गाके ईयान कोषमें स माक्षर
 नामक एक तोषके प्राजाकारने यहाँको सब मङ्गलियाँ
 तान चौखाना हो गई हो । इस तोषमें स्थान करनेसे
 नक्षपाप खाते रहते हैं । १ ने सब बात सुन कर पार्वतीने
 एक दिन महादेवसे पूजा कि त्रिपयगामिनो गङ्गा
 किन कारण यहाँ आई थी और यहाँकी मङ्गलियोंके
 क्यों त्रिनेत्र हो गये थे ? इसके उत्तरमें महादेवने कहा,—
 (कौ) कारणे पद्मानाथ श्रवितोमि सुभे शाप
 निदा । इस पर बहुतसे श्रवितगव सुभको शापपदा देख
 कर बठोर तपस्या करने लगे । मैंने भी श्रवितोत्र शापमें
 रात्रदय धारण बिद्या बा । बठोर तपस्या करने पर भी
 कहे सुभसे दग्ध न हुआ, सुभसे साक्षात् नको होने
 पर भी है यह त्रिनेत्र हो गये थे । तमोषि यह स्थान एक
 पत्र न तीर्थमें विना जानि लगा । यह मन्वाद चारों ओर
 पौन जाने पर चतु प्रकृति श्रवितगव धाकर बठोर
 तपस्यामें प्रवृत्त हुए और लक्ष्मीने यहाँ स गालेखर नामक
 महादेवको मूर्ति स्थापन की लक्ष्मी सुभसे दग्ध न
 नहीं होने पर तीन पाँखें हो गई । बाद लक्ष्मीने भ्रानमें
 भेरा लक्ष्य जान कर कहा 'ममो' यदि पाप हम पर
 मनुष्य है तो हमें यहाँ कर दोत्रिये कि यहाँ विपत्र
 यामिनो गङ्गा प्रवाहित हो । तमो समय में चतुपदसे
 त्रिपयगामिनो गङ्गा जमोत द्वेद कर बाहर निकल
 और इसमें मङ्गलियोंके ताल पाँखें हो गई ।

(महाब्रह्म २१० न०)

यहाँके सङ्गानेखर महादेव ही त्रिनेत्रेखर कहलाने
 हैं । यहाँ बहुतसे मनुष्य काम करते हैं ।

त्रिनेत्रचूडामणि (स० पु०) त्रिनेत्रव चूडामणिः त्रिने-
 त्रुवच । चन्द्र, चन्द्रमा ।

त्रिनेत्रस (सं० पु०) श्लेषविशेष, एक प्रकारको दवा जिसका व्यवहार सन्निपातरोगमें होता है। इसकी प्रस्तुतप्रणाली इस प्रकार है,—शोधि हुए पारे, गन्धक और फूँ के हुए तविका बराबर भाग लेकर जितना हो, उतने ही गायके दूधसे उसे मलते हैं। पोछे कड़ो घूपमें सुखा कर उसे संभल लू और सोडिफ्लानके काथसे एक दिन तक फिर मर्दन करते हैं। बाद उसे गोल बना कर एक अन्धसूषायन्त्रमें रखते और बालुकायन्त्रमें तीन प्रहर तक पाक करते हैं। इसके बाद उसे खरलमें पीस कर चूर चूर कर डालते हैं। चूर्णमें इसके आठवें भागके बराबर विष मिला कर इसे अच्छी तरह मलते हैं और एक एक गोली २ रत्तीकी बनाते हैं। पञ्चकोलके काथ अथवा बकरीके दूधके साथ सेवन करनेसे कठिनसे कठिन सन्निपातज्वर नाश हो जाता है। (भावप्र०)

त्रिनेत्रा (सं० स्त्री०) वाराहो कम्द ।

त्रिनिष्क (सं० त्रि०) त्रिभिनिष्कः क्रोतं त्रिनिष्कं ठञ् ठञि उत्तरपदस्य वृद्धिः । जो तीन निष्कमें खरीटा गया हो, जिसका मूल्य तीन निष्क हो ।

त्रिपक्ष (सं० पु०) तृतीयः पक्षः संख्याशब्दस्य वृत्ती पूरणार्थत्वात् । तृतीयपक्ष, तीसरा पक्ष । आयुश्राद्धकालमें प्रे तोहेश्यसे ह्योत्सर्ग नहीं होने पर त्रिपक्षमें किया जा सकता है ।

“बृष्टे मासि त्रिपक्षे वा ।” (श्राद्धतत्व)

त्रिपच्छस् (अथ०) तीन पदोंसे ।

त्रिपञ्च (सं० त्रि०) त्रिगुणिताः पञ्च । जो गिनतोमें दश से पांच अधिक हो, पन्द्रह । यह शब्द नित्य बहुवचनाम्त है ।

त्रिपञ्चाङ्ग (सं० पु०) त्रिपञ्च पञ्चदश अङ्गानि यस्य । समाधिभेद । इस समाधिमें १५ अङ्ग हैं, यथा यम, नियम, त्याग, मोन, देश, सुकालता, आसन, मूलबन्ध, देहसाम्य, टकस्थिति, प्राणसंयमन, प्रत्याहार, धारणा, आत्मध्यान और समाधि ।

त्रिपञ्चाश (सं० त्रि०) त्रिपञ्चाशत् -पूरणे ङट् । जो गिनतोमें पचाससे तीन और अधिक हो, तिरपन ।

त्रिपञ्चाशत् (सं० स्त्री०) त्र्यधिका पञ्चाशत् । १ पचाससे तीन अधिकको संख्या । २ उक्त-संख्यासूचक अङ्ग ।

त्रिपञ्चाशत्तम (सं० त्रि०) त्रिपञ्चाशत् पूरणे तमप् । तिरपन संख्याका पूरण ।

त्रपट्ट (सं० पु०) १ कांच, शोशा । २ विद्ध सैन्धव और काच ये तीन प्रकारके नमक ।

त्रपताक (सं० स्त्री०) तिस्रः पताका इव रेखा यत्र । १ रेखात्रयान्वित ललाटदेश । माथा वा ललाट जिसमें तीन बल पडे हों । २ मध्यमा और भ्रुवामिका छोड़ शेष तीन उंगलियोंको उठाकर हाथका फैलाना ।

त्रिपती (सं० स्त्री०) तिरुपति देखो ।

त्रिपत्र (सं० पु०) त्रोगि त्रोगि पत्राणि यस्य । १ विद्वद्वच, बेलका पेड़ । २ तीन तीन दल लगे हुए बेलके पत्ते । बेलका पेड़ परम तोय माना गया है । इसके तीन पत्तोंमेंसे ऊपरका पत्ता शिव स्वरूप, बाया पत्ता ब्रह्मा और दहिना पत्ता विष्णु है । (त्रि०) त्रयाणां पत्राणां समाहारः । ३ पत्रत्रय, जिसमें तीन पत्ते लगे हों ।

त्रिपत्रक (सं० पु०) त्रिपत्र संज्ञायां कन् । १ पलाशवृक्ष, टाकका पेड़ । (स्त्री०) त्रयाणां पत्राणां समाहारः । संज्ञायां कन् । २ तुलसी, कुंद और बेलके पत्तोंका समूह ।

त्रिपत्रा (सं० स्त्री०) १ अरहरका पेड़ । २ तिपतिथा घास ।

त्रिपथ (सं० स्त्री०) त्रयाणां पथौ समाहारः अच् समा० । १ कर्म, ज्ञान और उपासना इन तीनों मार्गोंका समूह । २ त्रिमार्गयुक्त, तिसुहानी ।

त्रिपथगा (सं० स्त्री०) त्रिपथे स्वर्गमर्त्यपाताल मार्गं गच्छतीति गम-ङ । गङ्गा । स्वर्ग, मर्त्य और पाताल इन तीन लोकोंमें गङ्गा बहती है, इसीलिये इसे त्रिपथगा कहते हैं ।

“गंगा त्रिपथगा नाम दिव्यः भागीरथीति च ।

श्रीरू पथो भावयन्तीति तस्मात् त्रिपथगा स्मृता ॥”

(रामा० १।४४।६)

त्रिपथगामिनौ (सं० स्त्री०) त्रिपथगम-णिनि-ङोप् । गङ्गा ।

त्रिपद्—त्रिपाद् देखो ।

त्रिपट (सं० पु०) त्रोगि पदानि अस्य । १ त्रिविक्रम, परमेश्वर । २ तिपाई । ३ त्रिभुज । यज्ञोंको वेदी नापनेको प्राचीन कालको एक नाप जो प्रायः तीन हाथसे कुछ कम

होतो हो। (त्रि०) ४ तोन पददुस, त्रिपदे तोन पद या चरच हो।

त्रिपदा (स० स्त्री०) त्रय पादाः मूलाणि यस्याः। टापि पादस्य पदावः। १ च सपदोक्तता, नाम रङ्गका सञ्ज्। पर्याय—मोघापदा, सुबहो घोर च सपदो है। (त्रि०) त्रयः पादाः बरचानि यस्याः। २ त्रिपाददुस गायत्री। गायत्रीसं बिल्ल तोन हो पद होत है। इसलिये इसका यह नाम पड़ा। त्रिपदागायत्री हो एकमात्र ब्रह्मपात्रिका उपाय है।

त्रिपदिका (स० स्त्री०) त्रय पदाः यस्याः त्रिपदी ततः स प्राचां कन् ततटाप। पूजा कान्तेन गङ्ग रत्ननका पात्र एक प्रक्षारका पात्र त्रिम पर देवपूजनक समय गङ्ग रत्ना जाता है। यह त्रिपदिका तरङ्गा पोतक चादिका बना होता है। इस पत्रके ऊपर गङ्ग रत्न भर पत्र क्वापन करना पड़ता है। २ त्रिपदः। ३ सहोर्ध्वरामका एक भेद।

त्रिपदो (स० स्त्री०) त्रय पादाः यस्याः पञ्चसोपः समा०, हीपि पदावः। १ त्रिपाददुस। २ मायत्रोक्तम्। इससे प्रत्येक पदमें ८ पक्षर होत है। इसलिये तोन पदमें २४ पक्षरका एक बन्द होता है।

“र विष्णुर्बिष्वक्त्रये भोवा त्रिर्ध्वं परं बभूववत्स परितुरे। (सूक्त १।२२।२०)

१ चन्द्रियोंके पादबन्धनाथ रक्षुमिद बह रक्षा बिषये त्रिभयोंक पात्र बांधे जाते हैं। ४ यथाधार पात्र मीट, त्रिपदः। १ बन्दोविधिय, एक प्रकारका बन्द। लस्य—

“बन्धविद्यया	बदि बन्धयन्ता
	इत्यत्र बन्धित मात्रा।
दिग्दर्शनीति	दक्षिणदिग्दर्शनीति
स्वार्द्धव्याकरणशास्त्रे	(अध्याय १)

त्रिपदोक्तम् तोन तोन करच पद रहते हैं। त्रिमर्मे पदमें घोर कूपरे पदके साथ तथा दंतोपपद युक्तचरचके दंतोपपदके साथ तुल्यबन्धो रहतो है।

त्रिपद (स० पु०) बन्दमात्र दम होईमिसे एक।

त्रिपरिज्ञान (स० पु०) त्रिपु द्वयर्क कर्मसु परिज्ञान विद्वान्। यह ब्राह्मण ने पत्र की परंपर्याधि घोर क्षान है।

त्रिपद (स० पु०) त्रौचि त्रौचि पत्रानि यस्याः। १ पञ्चम का पङ्क। (त्रि०) २ त्रिदशपत्रत्रय, त्रिममें तोन पत्रो हो।

त्रिपदिका (स० स्त्री०) त्रापि त्रौचि पत्रानि यस्याः स प्राचां कन् टाप्, टापि चनदस्य। बन्दविधिय एक प्रकारकी मूला। पर्याय—द्वयत्रयका बिल्लपत्रिका बन्दानु बन्दबहुका धान्नबर्ता बिलादका घोर त्रिपदी है। इसका शुभ मन्त्र गीतन ध्याम, काम, विप घोर अष्टबिलामय है। २ त्रयाम।

त्रिपदी (स० स्त्री०) त्रौचि त्रौचि पत्रानि यस्याः। गौरादित्यात् टाप्। १ गायत्रिर्ध्वो। २ वनकार्गोमो वन कवाम। ३ चन्द्रिपदी, पिठवननता।

त्रिपर्याय (स० त्रि०) त्रिममें तोन तत्र सभो हो।

त्रिपला (स० स्त्री०) त्रिपला।

त्रिपाठ (स० पु०) त्रयाणां पाठः। तोन पदक्रम स द्विताका पाठ।

त्रिपाठो (स० पु०) त्रीन् पदक्रमम द्विताकपञ्चानु यदति पठन्निनि। १ तोन वेदाका ज्ञानेनाका पुरय त्रिवेदो। २ ब्राह्मणोंको एक आगत त्रिवेदो तिबारा।

त्रिगञ्च (स० स्त्री०) त्रि छत्वा पात्र बन्दकपात्र यच्च, इतो सुवो भोयः, स प्रात्वात् चत्स। १ बह छत्त तो तोन बार मिथोया गया हो। २ बल्लक, हास।

त्रिपाट (स० पु०) त्रय पादाः यस्याः स व्यापूर्वत्वेऽपि ममामान्तविधेरनिश्चलासाक्ष्यभोयः। १ परमिग्नः। २ अर, दुकार।

त्रिपाद (स० पु०) त्रया पादा यच्च संख्या पुनस्तादन्त्या भोयः। त्रिभिन्नम विष्णु, भगवान् विष्णु ने कामनक्य चारच कर बलिसे तोन पद भूमि मंगी। त्रिग्नो बलि ने तधासु चक्षर बनकी मंग पूरो हो। जो समय भगवान् ने कामनक्य परिष्ठाग किया घोर बलिहो सब द्वैतमय विगष्ट रूप दिखनाया। बलिहो ऐसा मान्नुम पड़ा कि प्रमो लनके दोनी पौर है, पात्राय मप्यक है, बन्द घोर सूर्य दोनी मत्र है। इत्यादि। बलि भवान् ब्रह्मरूप दिव कर ओचित हो गये। तब भगवान् के एक पौरसे बलिहो मारी मूनि मरीने पात्राय दोनी बाहुमें सब त्रियादे हा मई। उनमें दूसरे पत्रमें स्वतंत्र प्राय सभो स्थान था गये। बिन्दु तोनरा पद रचनेको

कहीं जगह न वचो, तब भगवान्‌ने उसे स्वर्गसे ले कर मर्त्यलोक, जनलोक और तपोलोकके ऊपर मन्वलयोकमें फेलाया। भगवान्‌का यह चरण अत्यन्त दुर्लभ है। (भागवत ८।२० अ० और हरिवंश २६२ अ०) वामन और वलि देखो। २ च्वर, बुधवार।

त्रिपादिका (सं० स्त्रो०) त्रयः पादिका मूलानि यस्याः कप् ततष्टाप, टापि अत इत्व । १ हंसपादीलना, लाल रङ्गका लज्जालु। संस्कृतपर्याय—हंसपदी, हंसपादो, कीटमाता और त्रिपादिका है। २ तिपाई।

त्रिपापचक्र (सं० स्त्रो०) त्रिपापस्य चक्रम्। ज्योतिषोक्त त्रिपापविषयक चक्र। इस चक्रसे वर्ष भरका शुभाशुभ फल जाना जाता है। ज्योतिषमें इस प्रकार लिखा है,—

राशिचक्रमें अश्विनो आदि २७ नक्षत्र हैं। प्रत्येक मनुष्यका किसी न किसी नक्षत्रमें जन्म हुआ हो करता है। इसी कारण २७ नक्षत्रोंका एक चक्र लिखा गया। इन चक्रोंको देख कर हर एक मनुष्य जिस वर्षका चाहे शुभाशुभ फल मालूम कर सकता है।

त्रिपापचक्रफल—त्रिपापचक्रके जिस वर्षमें चन्द्र और बुध वर्षाधिपति हों उस वर्षमें शुभफल जानना चाहिये। फिर जिस वर्षमें राहु और शनि वर्षपति हों, उस वर्षमें मृत्यु, तुल्य फल, दो वृहस्पतिमें सुख, मंगल और रविके वर्षाधिपतिमें दुःख होता है। केतुपताको, केतुकुण्डली और गुरुकुण्डली इन तीनोंके मतसे भी यदि पापग्रहका वर्ष हो, तो उस वर्ष जीवनका डर रहता है। रवि और मंगलके वर्षमें दुःख, केतुके वर्षमें महा-लेश, चन्द्र और बुधके वर्षमें सुख, वृहस्पति और शुक्रके वर्षमें राज्यलाभ तथा राहु और शनिके वर्षमें महा-लेश होता है।

त्रिपापचक्रमें दो रविके रहनेसे लेश, दो चन्द्रसे सुख, दो मंगलसे अग्निभय और पीडा, दो बुधसे धनसञ्चय, दो शनिसे सर्वनाश, दो वृहस्पतिसे राजभोग, दो राहुसे अस्त्रभय और दो शुक्रके रहनेसे नाना प्रकारके सुख मिलते हैं। त्रिपापचक्रमें तीन रवि हों, तो विषतनाश; तीन चन्द्र हों, तो रौप्य और शुभवस्त्रलाभ, तीन मंगल हों, तो जीवनसञ्चय, तीन बुध हों,

तो रत्नलाभ तीन शनि हों, तो वध और वस्त्रन; तीन वृहस्पति हों, तो अतुल ऐश्वर्य; तीन राहु हों, तो अस्त्राघात, तीन शुक्र हों तो सर्वदा लाभ और यदि तीन केतु हों, तो च्वरपोडा होतो है। त्रिपापके वर्षमें नाना प्रकारके कष्ट हुआ करते हैं। (ज्योतिष०)

त्रिपिटक (सं० स्त्रो०) बौद्धोंका धर्मग्रन्थ। बुधको मृत्युके उपरान्त उनके ५०० गिष्योंने पाटलीपुत्रके निकटवर्ती किसी गुहामें एकत्र हो कर उनको उपदेशावलोका संघ किया। यह बौद्धोंको पहली समिति है। इसी प्रकारकी धर्म-समितिका नाम सङ्घ है। उन्हींने प्रभुके उपदेशोंकी तीन भागमें विभक्त किया (१) गिष्योंके प्रति बुद्धका उपदेश, (२) तत् प्रदर्शित नियम विधि, (३) तत्कथित धर्ममत। यह तीन पिटक सूत्र, विनय और अभिधर्म नामसे प्रसिद्ध हैं। प्रथम पिटकमें नीति वा विनय सम्बन्धीय विषयोंका वर्णन है। द्वितीय पिटकमें सूत्रावलो और तृतीय पिटकमें दार्शनिक तत्त्वमूहको वार्ता लिखी हैं। द्वितीय और तृतीय पिटक कभी कभी धर्म नामसे भी पुकारे जाते हैं। ये सब सूत्र शाक्यमुनिद्वारा वतलाये जाते हैं। इनमें कथोपकथनके क्लसे नीतिशास्त्र और दार्शनिकतत्त्वको श्रालोचना को गई है। नारायण, जनार्दन, शिव, ब्रह्मा, पितामह, वरुण, शङ्कर, कुबेर, शक्र, वामन-विश्वकर्मा प्रभृति देवताओंका भी उल्लेख इस धर्मग्रन्थमें है। इण्डिया-आफिसको लाइन्ने रोमें चीन-भाषामें लिखा हुआ जो बौद्धोंका त्रिपिटक है, वह २००० खण्डोंमें विभक्त है। कोई कोई अनुमान करते हैं, कि "अस्त्र-कथा" नामक पालिभाषामें जो टिप्पणो थो, उसे अशोकके पुत्र महेन्द्रने सिंहालमें ले जा कर वहाँ उसका सिंहाली-भाषामें अनुवाद किया और बुद्धोपनि प्रायः ४२० ई०में शेषोक्त ग्रन्थका अनुवाद पुनः पालिभाषामें किया। फिर किसी किसोका मत है, कि राजा वत्सगमनोके राजत्वकालमें (ईसाके ८८—७६ सन् पहली) सिंहालके याजको और कनिष्कके जो धर्मसभा संगठित हुई थी (१०—४० ई०) उसीमें सक्त मत लिपिबद्ध हुआ। सिंहालके याजकोंने जो कुछ लिखा है, वह सिंहाली भाषामें हो है और पीछे ५म ई० सन्में वह

पानिमायामे पनुवादिह द्रुपा; किन्तु पूर्वोक्त धर्म
 धर्माभि म स्तुत भाषा हो व्यवहृत हुई हो। बोधधर्म के
 प्रतिष्ठित मत विरुद्धान तक एवमे नहीं रहें। बोध
 धर्ममें इनका परिवर्तन भी होता गया। मद्राज य नामिक
 धर्ममें निष्ठा है कि बुद्धको श्राद्धके बाद २० वर्षके
 पश्चात् १८ बार इसी प्रकार परिवर्तन द्रुपा था।
 बोधधर्म के कामधूमि भारतवर्षमें वैदिक अनुयायियों
 ने इनका धोर विरोध किया था किन्तु सि धर्ममें इनके
 विरुद्ध कोई विरोध बाध न हिडो हो। ११ यताम्होमें
 तामिनीमें सि धर्म पर पाकमय कर बौद्धधर्मोंको
 तद्वत् नद्वत् कर जाननेका प्रथम प्रयत्न किया था; किन्तु
 बर्बादे यात्राकीने यह हताश दूत द्वारा यत्नान्गरे
 करमा भेजा। जोहि यत्नान्गरे सपुत्रक यात्राकीने पा
 कर धर्मधर्मको रचा को। यत्रारवर्षी यताम्होका शिव न
 होने पाया था कि सि धर्ममें यात्राकीने यत्रमे बोधधर्म
 को बड़ पुत्र मन्त्रदूत को गर्द। तमोवे यात्राक क्रोध
 लम्बाही को कर बोधधर्म के मतका प्रचार कर रहें हैं।
 इन लोकोके जाहिलाने चलन हैं धोर बर्षीमें धर्मक
 पुत्रक तथा छोटे छोटे धर्म प्रत्य प्रकाशित होती हैं।
 त्रिपिण्ड (स० श्लो०) श्लोचि पिण्डानि दीयानि यत्। पाबं-
 थाहमें पिता, पितृमह धोर प्रपितामहके श्रद्धाहमें दिये
 हुए तीनों पिण्ड।

त्रिपिण्डो (स० श्लो०) त्रयाणां पिण्डानां ममाहार होय।
 त्रिपिण्ड वेदी।

त्रिपिण्ड (स० पु०) त्रयोभ्यां त्रिहोत्रा च पिण्डानि पा-
 त्राह्मिनि स मन्त्रधर्म भागभेद; नन्वे ज्ञानवाला
 बड़ा पशु। यह धर्म दोनों ज्ञान धोर धर्ममें जन्म
 पोता है, इसीसे इसका नाम त्रिपिण्ड पड़ा। पिता बकरा
 प्रभुके धनुकार पिण्डधर्मके लिए बहुत उपयुक्त होता है।
 त्रिपिण्ड (स० श्लो०) मन्त्रं, दातानापेचया धर्मिय पिण्डक
 मुचन इतो त्रिगन्धर्व विमानवत् पूरपाबता। १ स्वयं।
 २ याजाय।

त्रिपिण्डकद् (स० पु०) त्रिपिण्डे भोदति नट क्रिय।
 टेषता।

त्रिपु (स० पु०) श्लोच, धोर।
 त्रिपुट (स० पु०) श्लोचि पुटानि यत्। १ यतीनक,

मटर। २ तोर बिगारा। ३ इष्टमेट, एक हावला
 माय। ४ तानकटयत्, ताना। ५ गोसुरादध, गोबुद्धका
 पेटु। ६ यर। ७ खेमारी। इनका प्रयोग—त्रिपुट धोर
 व्यपिण्डक है। इसका मुख—मन्त्र तिष्ठ तुवर यत्, यत्
 धोर पितृनायक, बधिकर, पाहक, योतय, यत्त धोर
 पद्वारक तथा यतात्त वासु-प्रधिकर है।

त्रिपुटक (स० पु०) त्रिपुट म प्रायां बद्म्। १ बंदन
 खेमारी। २ जोडोका एक पाकार। ३ त्रिपुत्र।

त्रिपुटा (स० श्लो०) श्लोचि पुटानि यत्। १ मन्त्रिका
 यमिने। २ श्लोकाकूल। ३ विरुद्धक विनका पीड़।
 ४ सूक्ष्मा छोटी रत्नायको। ५ सूक्ष्मा, बहो रत्ना-
 यको। ६ त्रिचित् निमोच। ७ यत्तम्हाटमता, जलकोडा
 विन। ८ रत्निहत्त। ९ श्वेतत्रिहत्त। १० कुलत्रिका,
 कुलको। ११ तन्मोक्षदेकाविशेष तान्त्रिकोंकी एक देवी
 को धर्मिहताको मानो प्राती हैं।

यह त्रिपुटा देवी पारिजातवनमें सुन्दर रत्नमय
 सि कामन पर अत्युत्सव मोचे रहती हैं। इनको
 पूजा भदा करलो जाहिये। ये धर्मिहताको हैं।

त्रिपुटिन् (स० पु०) श्लोचि पुटानि मन्त्रव्य रनि होय।
 १ यत्तम्हाट है कृका पीड़। २ विरुद्धकिये विमारी।

त्रिपुटो (स० श्लो०) श्लोचि पुटानि सत्त्वया यत् तोरों-
 होय। १ त्रिहता, निमोच। २ सूक्ष्मा छोटी रत्ना
 यको। त्रयाणां प्रावधान ज्ञेय यत्तार्थ पुटानामा
 कारणां ममाहार होय। ज्ञान, धान धोर प्रपदय
 तीनों पुट।

त्रिपुटद्वय दैत वा लोके धर्मावर्षे निये सभी भूतो-
 को लयलितके पहरे देवन मय व्यायो शैतन्य का
 इनको निवा धोर कुक नहीं था। धान, प्रिय धोर प्राता
 इन तीनोंका नाम त्रिपुट है। प्रत्ययधर्ममें यह त्रिपुटो
 नहीं रहती है। शान्तिच धर्मिकानमें इन त्रिपुटोका
 प्रत्यय धर्म धान द्रुपा करमा है। प्रत्ययकानमें फिर
 धर्मिकान मने रहता। जो जो प्राता है, वे ही प्रिय
 हैं धोर वे ही धान भो है। यता मव एव हो है।

उपयक विधानमय धर्मको धान कहते हैं। यती
 मय धर्म धान है तथा मन्त्र यगादि सभी विषय ज्ञेय
 हैं। इनके समुद्रका नाम त्रिपुटो है। ज्योतिषके पहरे

इस त्रिपुरोको सत्ता अमर्य है। उस समय यह परिपूर्ण अहोतके स्वरूपमें रहतो है। (पञ्चदशी।)

शंकराचार्यरचित 'त्रिपुरी प्रश्नरत्न' एवं आनन्दतीर्थ और प्रह्लाणन्दकृत-त्रिपुरी प्रश्नकोटीकामे इसका विस्तृत विवरण देखो।

त्रिपुरीफल (म० पु०) त्रिपुरी पुटत्रय फलेऽस्य। एरण्ड-वृक्ष, रंङ्का पेड।

त्रिपुराङ्क (म० क्लो०) त्रयाणां पुण्ड्रूणां इक्षुषदाकाराणां समाहारः। तिलकभेद, भस्मको तीन आडो रेखाओंका तिलक जो शैव या शाक्त लोग ललाट पर लगाते हैं। त्रिपुण्ड्र धारण कर शिव-पूजा करनेका विधान है।

बिना भस्म और त्रिपुराङ्क लगाये शिवपूजा निष्फल है। शैवको त्रिपुराङ्क और वैष्णवको उद्वेपुण्ड्र धारण करना चाहिये। जो लोग त्रिपुण्ड्रकको निन्दा करते, वे मानों महादेवकी निन्दा करते हैं, जो इसे ललाट पर लगाते, वे मानों शिवजीको धारण करते हैं। तिलक और शिवपूजा देखो।

त्रिपुनित्तुर—मन्द्राजक कोचीन-राज्यके अन्तर्गत कनयनूर तालुकका एक शहर। यह अक्षा० ८°५७' उ० और देशा० ७६° २०' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या ३००० के लगभग है। शहरमें १६ मील दूर एक पहाड़के ऊपर सुन्दर भवन बना हुआ है, जिसमें कोचीनके राजा अकसर आ कर रहा करते हैं।

त्रिपुर (म० स्त्री०) त्रिगुणिता. पुरः समासान्तविधेर-नित्यत्वात् आर्षेण अच् समा०। मयदानवके बनाये हुए असुरोंके तीनों नगर।

त्रिपुर (सं० क्लो०) त्रयाणां पुराणां समाहारः। असुरोंके तीनों पुर। त्रिपुरका विषय महाभारतमें इस प्रकार लिखा है,—'तारकाक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्मालो नामक तारकासुरके तीन लड़कोंमें कठोर तपस्या आरम्भ की। ब्रह्मा उनलोगोंको तपस्यामें मन्तुष्ट हो बर देनेको उद्यत हुए। इस पर उन्होंने प्रार्थना की, कि जिससे हम लोग समस्त भूतोंसे भवध्य हों, वही बर देनेको कृपा करे'। पर ब्रह्मा यह बर देनेको राजी न हुए। बाद इन तीनों भाइयोंने मिला कर फिर ब्रह्मासे इस प्रकार निवेदन किया, 'हम लोग यही बर चाहते हैं, कि हम तीनों तोन पुरमें

रह कर जनसमाजमें पूजित हों और हजार वर्ष बाद जब हम तीनों एक साथ मिल जायें, उस समय यदि कोई एक वाणसे तीनों पुरोंका एक साथ संहार कर सके, तो हम लोगोंको उसीके हाथमें मृत्यु होगी।' ब्रह्मा तयामु कह कर चल दिये। इस समय इन तीनोंमें तीन पुर निर्माण करनेके लिये मयदानवकी नियुक्ति गिया। मयदानवने अपने तपोबलसे स्वर्गमें काञ्चनमय, अन्तरोक्षमें रजतमय और मर्त्यलोक्षमें लौहमय तीन पुरोंका निर्माण किया। हर एक पुर को योजन विस्तृत था और वह गृह, अष्टानिका, प्राकार, तोरण आदिसे सुशोभित होता था। तारकाक्ष स्वर्गमय पुरीका, कमलाक्ष रजतमय पुरीका और विद्युन्मालो लौहमय पुरीका अधीश्वर हुआ। इन लोगोंने जब अस्त्रके जनसे तीनों लोक पर आक्रमण किया, तब अमुर लोग देवताओंको नाना प्रकारके कष्ट देने लगे। तारकाक्षको हरि नामक एक पुत्र था जिसने कठोर तपस्या करके ब्रह्मासे यह वर मांगा कि 'मैं अपने पुरमें एक ऐसा तालाव प्रस्तुत करनेको इच्छा करता हूँ कि जिसका जल यदि अस्त्र निहत वीरोंके ऊपर फेंका जाय तो वे पुनर्जीवित हो जायें।' इससे वे और भी दुर्धर्ष हो गये। देवताओंने पद पद पर लाञ्छित हो ब्रह्माको धारण ली और विनयपूर्वक जब उनसे असुरोंको दौरात्म्यकी कथा कह सुनाई तब ब्रह्माने कहा, 'ये तीनों दानव मेरे ही वरके प्रभावसे अभिमानमें चूर चूर हो रहे हैं, शोष हो उन लोगोंका सर्वनाश होगा। महादेवके सिवा और कोई देवता एक वाणसे इन तीनों पुरोंको भेद नहीं सकता। अतः हम लोग इन्हींके पास चले। इसमें तीनों पुरोंका प्रति शोष नाश होगा और ये तीनों दानव मारे जायेंगे।' यह कह कर वे सबके सब महादेवके समीप गये। महादेवने देवताओंको वात सुन कर कहा, 'तुम लोग पहले हमारे आधि बलको लेकर युद्ध करनेको तैयार हो जाओ।' इस पर देवगण बोले, 'हम लोग आपकी आधी शक्ति ले कर लड़ें, ऐसा सामर्थ्य हममें नहीं है, बल्कि आप ही हम लोगोंके आधि बलको ग्रहण करें तो और अच्छा हो।' तब महादेव देवताओंके आधि बलको ले कर और भी अधिक बलशाली हो उठे। इसी समयसे शिवका नाम महादेव

हुवा है। महादेवने देवताओंसे कहा,—‘तुम लोग यदि भिरे निचे बहुत पोर रख तेवार कर दो, तो मैं बहुत जल्द त्रिपुराको टक कर डालूँगा।’ तब देवमण्डलियसर्मा-की हुवा कर रख बनवाने लगे। तबोने पर्वत, बन, दीप पोर भूताने परिहृत विमान मरमसम्ब बधुभरा को महादेवका रख बनाया। मन्दिर पर्वत, दानशालय पोर अग्निशिखि रज्जा पच; मागोरको जह्वा; दियाए मूलका। लचत ईसा, सयहुग पोर सगंयुग काठ; मुन्नय-रात्र पनतदेव, कुभिर, विमानय, विन्वाचन सूर्य पोर चन्द्र बख; मन्विमण्डल चक्ररचक; गङ्गा मरमनो सिन्धु पोर पाषाणमूर्ध्मां, बज्र पोर नदी बन्धननामयी, दिन, रात्रि, बन्ना झाडा, झं जलु पोर ममन दोसपव पनुचय; तारागण बह्वा बमं पच पोर काम बिदेह, पनपुचके सुयोमित पोयवि पोर नता चण्डा; रात्रि पोर दिनपूर्व पोर पपरपच; हृताङ्गमुन्न दगनामणति ईसा। महोरगण योद्ध; सत्यसक्त मिय बुचम, काम हङ्क; लहुन, बर्कोटव, बतचय पोर पन्थाय नागगच काईके किगबन्धन, ममन दिगार्गे पोर बमं, मण्ड तय, तथा पचं पञ्जरिञ्जि; सन्धा हृति, मिय, क्लिनि, सयति पोर पच-नचवादिसे सुयोमित लमोमण्ड बह्वा बरक कोडेगर, रण्ड, सचय, यम पोर कुभिर पण्ड। पूर्व चमाबन्ना पूर्वपोचं माहो, उत्तर चमाबन्ना पोर उत्तर पोचं माहो पञ्जयोद्ध, पूर्व चमाबन्नाके परिहित विजगण, बुमकोचक; मम, रघोपम्य मरमनो रचका पवाङ्गाय; गह-चापमन्त्रिन विद्युत पवनोद्वृत्त पताका; बघट कार प्रनोद पच गायको शीयं बन्धन हुई। बिन्दु, धोम पोर हृतामन से तोनों महाभाके योगने महादेवके बाच कल्पित हुए। पन्थि उन बाचका काण्ड मोम पनक यो। बिन्दु तोत्पहारस्पन्द हुए। पचने ईमानके यज्जमें को बयं कल्पित हुआ था, पमो उनसे शरामनका कर पोर काचितोमं शीरोत्रा कर बाच किया। कामरुचने पमिच दिशबमं बरिभूत हुआ। सेनाच पोर मरुपर्वत ये दोनों अत्रपटि हुए। लोदासिनो मन्त्रित मरमनाका पताका हुई। इक प्रकार पचूबं रच शरामनादिह तेवार को ज्ञाने पर देवताओंने यष्ट, प्रताका महादेवके जा बुनाया। महादेवने तप पर चपने ब्रह्मण बमण्ड मखीको रखा

पोर पाषाणको अत्रपटि बना कर उनके खयर महा हयमको मन्त्रिबिहित किया। अत्रदण्ड, कामदण्ड, बद्रदण्ड पोर ल्पट रखके पाण रचक पचबं पोर पाणिरम, चपु-रचक तथा जह्मदेहादि पाण्डं पर हुए। ‘पोकार’ रखके भासने बिच दिया गया। महादेवने तं श्रुतुपेनि गृह मन्त्रकरको विवित शरामन बना कर चपनी हाथाको शी शीरोत्रा बनाया। मगवान् बट माषात् काकस्पन्द हैं म बचर उनसे शरामन हैं, इमो निचे उनको हाथाकप काकरादि तप शरामनको शीरोत्रा हुई। बिन्दु, पन्थि पोर चन्द्र ये लोग उनके बाचस्पन्द हुए। महादेवने इन शीरोत्र चयु पोर चण्डिकाको यष्टमभूत दुग्ध लीचांनिको स्थापन किया। महादेवने इन रख पर बट कर देवताओंनि बह्वा,—‘धमो धोम महाभा मीरे मारयोत्रा काम करेगे। इम पर देवगण बोनी,—‘पाप जिनको पाप्रा देवे, ये जो पापक मारयो जोगे।’ फिर महादेवने बह्वा—‘जो मुमने पचिच न्येठ हों, तुम लीय उनका विचार कर उन्हें बहुत जल्द मारको बना कर भिजे।’ बह्वा सुन कर देवताओंनि वितामरको मरक से कर बह्वा, ‘इस बुद्धि पाप हीको मारयोत्रा काम करना होमा।’ वितामर इने खोकार कर महादेवके मारयोत्रे पट पर पमिपिञ्ज हुए। तब महादेव बिन्दु, मोमाञ्जि-अमुण्ड शर प्रह्वण कर रख पर चढ़े। कममयोनि (जह्वा) भूतनाच फात्पानुमार विपुरको पोर रख होवने लगे। शून्गापि महादेव काव लोचने पधीर हो लठे तब तोनों लोच कल्पने लया। उन समय बह्वा रख मोम, पन्थि बिन्दु, जह्वा, बद्र तथा उन शरामनके म चामनम चमन बना। तब नासायचने उन शरामने निजक कर हयम दण्ड काच कर उन शरामको चपनी पोठ पर रख किया। महादेव बड़ेको लो पोठ पोर हयमके यष्टक पर नवार हो कर बिहनाट काने हुए हाजबुगाको पोर देवने लगे पोर तबोने लोकेके पनको काट डाला तथा हयमके पुरीको दो चण्डोमें विमण्ड किया। तभीने लोके पनकोम है पोर लोचमूठके पुर दो भासोमें बंटे हुए हैं। बाद महादेव दशबनको प्रह्वण लोच पोर लने पाण पताचमें ल योत्रित कर त्रिपुरको पटिया करने लगे।

तब वे तोनों'पुर एक साथ मिल गये। यह देख कर देवता, सिद्ध और महर्षिगण अत्यन्त आश्चर्यचकित हुए और वे महादेवका स्तुति करने लगे। तब त्रिलोकेश्वर महादेवने दिव्यगरामन खींच कर तोनों' पुरों' पर लक्ष्य करते हुए उस वैलोक्यभारभूत शरको छोड़ा। उस शरसे त्रिपुर उसी समय भूतल पर गिर पड़ा। असुरगण घोरतराशात्तनाद करने लगे। तब भगवान् शहरने उन्हें दग्ध कर पश्चिमभागमें फेंक दिया। चारों ओरसे महादेवके स्तुति-गान होने लगे। महादेवके क्रोधके प्रभावसे त्रिपुर भस्म हो गया। बाद महादेवने अलेपः क्रोधको रोका। पृथ्वी भारशून्य हो गई, देवगण स्वर्गराजमें अधिष्ठित हुए। (भारत वर्षपु० ३१ अ०, तथा हरिवंश ।)

त्रिपुरघ्न (स० पु०) त्रिपुर' हन्ति छन-टक । महादेव । त्रिपुर देखो ।

त्रिपुरदहन (स० पु०) महादेव, शिव ।

त्रिपुरदास—एक भगवद्भक्त कायस्थ । ये पहिले छटिश गवर्में रहते अधीन मुहूर्तिरका काम करते थे। इसमें इन्होंने बहुत आमदनी होता था। इनके पास जितना धन था, सभी इन्होंने भगवद्देवतामें लगा दिया। प्रति वर्ष गोवर्द्धन पर्वत पर वे शोनायजको शीतल देते थे। दरकारो नो करो छूट जाने पर ये दरिद्र हो गये। जमा कुछ भी रकम न थी, जो कुछ आमदनी होती थी, उसे भगवद्देवतामें खर्चकर डालते थे। इस समय इनको अवस्था शोचनीय हो जाने पर भो ये शोनायजको येनकेन प्रकारेण गालवस्त्र देते हो थे। एक वर्ष दुर्भाग्यवश जब वस्त्रका इन्तजाम न हो सका, तब इन्होंने अपनी पोतलकी टवात बेच कर उसी पैसेसे शोनायजकी गालवस्त्र खरोट दिया। इस बार भगडारोने इसे श्रीनायजको न देकर कहीं दूसरो जगह रख दिया। रातमें भगडारोको स्वप्न सुनाया कि, 'मैं जाड़ेसे कट पा रहा हूँ, और तूने त्रिपुरदामके दिये हुये कपड़ेको लठा रखा है, हजारों गालवनात रहते भी मेरा जाड़ा नहीं जाता। इतः त्रिपुरदासके कपड़ेको हमें शौघ दे।

(भक्तमाल)

त्रिपुरभैरवो (स० स्त्री०) त्रिपुरा धर्मार्थकामानां दातो सा चास भैरवो चिति । एक देवोका नाम ।

ये, रक्तवर्ण, रक्तवस्त्रपरिधाना और चतुर्भुजा हैं। इनके ऊर्ध्वदक्षिणहस्तमें माला, अधोदक्षिण-हस्तमें उत्तम पुस्तक, दोनों वामहस्तोंमें अभयवर है, शरीरको दीप्ति सहस्रसूर्यको नाई उज्वल है, तीन नेत्र हैं, चाल गजन्द्रसो है, दोनों स्तन बड़े बड़े हैं, श्वेतप्रेतके ऊपर बैठे हुये हैं तथा सर्वालङ्कारभूषिता और सहास्यवदना हैं। इनके मस्तक, वक्षस्थल और कटि इन तीन अङ्गोंको छोड़ कर शेष सुण्डमालासे सुशोभित है। तीनों नेत्र मधु पानमें भ्रमित हैं तथा ओठाधर रक्तवर्ण है। इसी प्रकार त्रिपुरभैरवोका ध्यान करना चाहिये। (कालिकापु० ७४ अ०)

त्रिपुरभैरवोके पूजोपकरण-पात्रादि और आसनादिका किसी दूसरी पूजामें व्यवहार न करना चाहिए।

त्रिपुरभैरवोकी पूजा करनेका समय तीन सुहृत्काल लिखा है। इनको पूजामें तीस बारसे कम जप नहीं करते हैं। अङ्गुष्ठा, मध्यमा और अनामिका इन तीन उंगलियोंके योगसे पुष्पादि चटाते और माला द्विगुणा करके पहनाते हैं। साधक चर्मासन पर बैठ कर दोनों पैरोंको पीछेकी ओर रख एकाग्रचित्तसे निर्जनस्थानमें इस देवीको पूजा करते हैं। विश्वाधक पुष्प और नैवेद्यादिको वाये हाथसे चटाते हैं। इस देवीको यदि विधानपूर्वक पूजा न की जाय, तो पूजकके शरीरमें अवश्य ही निन्दितव्याधि उत्पन्न होती है। स्त्री, पुत्र और शत्रुव्यादि अवशोभूत होते हैं तथा पीछे उनको शस्त्राघातसे मृत्यु होती है। यह त्रिपुरभैरवो योगनिद्रा जगज्जननी मायाका रूपभेद है। एत ही माया अनेक रूपमें क्रीड़ा करतो है। (कालिकापु० ७४ अ०)

त्रिपुरमल्लिका (स० स्त्री०) त्रिपुराणि दलाद्यत्तयो यस्याः, सा चासौ मल्लिका चिति । पुष्पवृक्षविशेष, एक प्रकारके चमेलोका पेड़ ।

त्रिपुरा (स० स्त्री०) त्रिपुरा धर्मार्थकामान् पुरति पुरतो ददाति पुर-क, ततष्टाप् । देवीविशेष, त्रिपुरादेवी कामाख्याकी एक मूर्त्तिके नाम। वाग्भव, कामवील और ईश्वर, धर्म, प्रथं तथा कामादिके साधक और ये कुण्डलीयुक्त हो कर त्रिपुरादेवीके मूलमन्त्र होते हैं। कामरूपिणी कामाख्या तीन प्रकारके पदार्थ दान करती

३ घोर तानने आगे पूजो जाती है । इसीसे इनका नाम त्रिपुरा पड़ा है । (अश्विघण्ट ११ अ०)

इस देवीका मन्त्र मिथीच—तोन रक्षासि निर्मित है, तोन पुर मन्त्रके तोन पञ्चर है, रूप तोन प्रकारके है घोर त्रिदेवोशो अटिके लिए कृष्णलोयकि भा तान की प्रकारको है । ये समो बल तोन तीनको है, इसीसे इन का नाम त्रिपुरा पड़ा है । (अश्विघण्ट ११ अ०)

इनका रूप सिन्धुपुच्छसदृश है इनके तोन भ्रम है, चार भुजा हैं, बायें पोरके अर्ध हस्तमें पुष्प-बन्धु है, पयो-हस्तमें पुष्पाक्ष है, दाहिने पोरके अर्ध हस्तमें पाँच बाण हैं, पयोहस्तमें पञ्चमाखा है, चार कृष्ण (बरखा) जोड़ पर पोर एक रक्षाके लिए दण्डायमान है, जटाबूट है । धई चन्द्र द्वारा बहकेय है, गम्भा है, मन्त्रदेयमें त्रिबन्धि द्वारा सुयोमिता है सब पञ्च कारोमि मूर्तिता है । सवाहस्तमें है, मङ्गलमया है धनवितरककारिणी है तथा सर्व लक्ष्मणसम्पत्ता है । इसी प्रकार उस मूर्ति का प्रमाण करना पड़ता है ।

इसके रूपसे पक्षी ध्यान करना चाहिये घोर पपनेको मो तोन प्रकारके रूपोंमें समझना चाहिये ।

द्वितीय त्रिपुरा मूर्ति इस प्रकार है—बन्धुबन्धुपुष्प-सदृशो, जटाबूट तथा चन्द्रद्वारा मण्डिता सबलसब सम्पत्ता, सब प्रकारके पञ्चद्वारोंसे सुयोमिता, उष्यस्वर्ण सङ्घम बध्मपरिधाना, पद्मपर्यङ्गम श्लिषा, मुक्ता घोर रत्नाकरोमुता, योगोन्नतपद्मोत्तरमुक्ता, त्रिबन्धिसुयोमिता, पाबबने धामोदमें सन्तुष्टा, मेलाहादकरो, विष्टवा, जयतको घोमिषो त्रिनेत्रा, योगिसुद्राके प्रति ईदत्त हाण्ड-समाभुजा, लघोबलसम्पत्ता, पञ्चानुत्पन्न चतुर्भुजा, बायें पोरके अर्ध हस्तमें पुष्पाक्ष, पयोहस्तमें पमय, दाहिने पोरके अर्ध हस्तमें पञ्चमाखा, पयोहस्तमें पर, लक्ष्मण, सुर्गमा अदस्त्रोपबनाम्नरिता, रघुमदाविनो घोर कामाहादकारो है । बको मनोहरा द्वितीय त्रिपुरा-मूर्ति का ध्यान है । (अश्विघ्ना १३ अ०)

तृतीय त्रिपुराको मूर्ति कबाकुचम सदृशो मुञ्जकेयो धमानता घोर हाण्डकारी है । ये सदायिकको प्रतिबत्त ल्वापन कर लको से इद्व पर पद्मासनके रूपमें बैठी हुई है । प्रोकाटमें पावाटनम्बिना रक्षोत्पन्नमिचित लुण्ठ

मानाधारिको योगोन्नतपयोधरा, चतुर्भुजा, दिग्मन्धरो दाहिने पोरके अर्ध हस्तमें पञ्चमाखाधारिकी, पयोहस्तमें बरदा, बायें पोरके अर्ध हस्तमें मो पञ्चमाखाधारिकी तथा पयोहस्तमें बरदाविनो त्रिनेत्रा हाण्डसुषो, गन् दुधिरमोयान्ता घोर सर्वोम सुन्दरो है । नाभकको इसी प्रकार मोसरो मूर्ति का ध्यान करना चाहिये ।

(अश्विघण्ट १२ अ०)

पाचक्ष्ण वायुभाब द्वितीय कामभोज घोर तृतीय शंकर एव मोहन नामसे मण्ड है । पाचक्षको चाहिये त्रि से पक्षी एक पक्ष करन तौनो रूपोंका ध्यान कर बाइके सङ्घम इदयाम्यन्तरमें भी तौनो मन्त्रो को उखा रण कर लोकोपपारसे प्रत्येकको पूजा करे । देवोको तौनो मूर्ति एकत्र कर लमको बीचमें तौना मन्त्र एक साथ करके इदयमें रखे ।

कामरूपिको त्रिपुरादेवोको मो प्रकारसे पूजा ली जाती है । त्रिबिबत् त्रिपुराको पूजा करनेसे साधकके पमोड पूर्ण होते हैं और अन्तमें से देवलोबको जाती है ।

(अश्विघण्ट १३ अ०)

त्रिपुरा—पूर्व-बङ्गालका एक प्रांत मूमाव । इस प्रदेश के कई पय त्रिषा त्रिपुरा नामसे बङ्गालके भाटके पञ्चोन घोर कई पय पावरय त्रिपुरा नामसे त्रिपुराके प्राचोन राजब यके पञ्चोन हैं ।

त्रिषा त्रिपुरा—यह पचा० २३ २ से २३ १६ ५० घोर ८० ८० १३ से ११ २२ पूर्वमें अवस्थित है । मूरिमात्र २४८८ बग मोल है । इसके उत्तरमें बङ्गालके पलगत मैमनसिंह जिलेके कई पय घोर आनामके पल गंत घोइह जिला, दक्षिणमें मोघालाको जिला, पश्चिममें मिथना नदो घोर पूर्वमें पार्श्वय त्रिपुरा है । जिला-त्रिपुरा को पूर्व-बीमा जो इटिपभारतकी पृथान्त-बीमा है । १८३३ ई०में भारत-राजमें एडको पोरसे मि० त्रिनेदरने घोर त्रिपुरा-राजका पोरसे मि० ल्वाञ्जलने यह सोसा निर्धारित ली । पक्षी यह जिला पश्चिमके कमिधरके पञ्चोन बा । १८०३ ई०से यह ठाकाके कमिधरके पञ्चोन हो गया ।

इस जिलेकी भूमि लक्ष अयक्ष समतल है, कोबल पूर्वांशमें कई कई जालमाद पर्वतका कुछ कुछ पय

है। नदो और खाड़ीकी संख्या अधिक है। टेङ्का वाणिज्य प्रायः नाव द्वारा ही चलता है। ग्रीष्मकालमें नदो और खाड़ीके सुख जानि अथवा जलको कम जानि पर भी उसी राह ही कर वाणिज्य होता है। बड़ी बड़ी नदियोंमें वर्षाकालमें बाढ़ आ जाती है, जिससे निकटवर्ती घर आदि जलमग्न ही जाते हैं। निम्नस्थानकी मट्टो बहुत हलकी और उच्च स्थानको कहीं पाई जाती है।

लालमाइ पहाड़ पर कपासको खेती अधिक होती है। जङ्गल परिक्षार किये जानि पर इम पहाड़ पर सब जगह बैलगाडो आ-जा सकते हैं। इम पहाड़के उत्तर मयनामती पहाड़ पर पार्वत्य-त्रिपुराके महाराजको कई एक अटानिकायें हैं, वहां जिला-त्रिपुराका प्रधान शहर कुमिला है जहां अट्टर्रेज लोग वास करते हैं। समस्त लालमाइ पहाड़ पहले महाराजके अधीन था; किन्तु कुछ दिनमें मयनामतीके चर्क सिवा गवर्नरने और कहीं भी महाराजका अधिकार न दिया। अन्तमें महाराजने प्रायः २८ हजार रुपये दे कर समस्त पहाड़ खरीट लिया है। त्रिपुराको राजवंशो लालमाइ (लाल-मयो) नामक किसी राजकन्याके नामसे इस पहाड़का नामकरण हुआ है।

इम जिलेके पश्चिममें मेघना नदी प्रवाहित है। केवल इमो नदोमें बड़ो बड़ो नावें आ जा सकते हैं। गोमती, हाकानिया तथा तितास प्रभृति नदियोंमें डोंगो सब समय चलती है।

मेघना—चाँटपुरके निकट मेघनामें गङ्गा और ब्रह्मपुत्र नदी मिली है। तीन नदियोंका जल मिल जानिसे इम जिलेको मेघना नदोका परिभर और वेग अधिक हो गया है। नदोमें कई जगह चर भी पड़ गया है। इम नदोमें आना जाना बहुत खतरानाक है। नदोमें धसे हुए बजादुगी फाट और बड़े बड़े वृक्षको शाखाओंमें टकरानेमें प्रायः नावें नष्ट हो जाया करतीं हैं। दैनिक साहबके समयमें ब्रह्मपुत्र और मेघनाका मद्दम वर्त्तमान स्थलमें ६० मोल उत्तर भैरवराज नामक स्थानमें था। कालक्रमसे चर पड़ जानिके कारण नदोको गति बदल गयी है। इम नदीके निकटवर्ती स्थानमें 'वरिपालके कमान'की गई कामानका शब्द होता है। यह शब्द कहासे आता

है, इसका ठीक ठीक पता नहीं चलता।

गोमती—मेघनाके वाट ही गोमती इम जिलेको प्रधान नदो है। यह लालमाइ नदीसे निकली है और जिला त्रिपुराको दो समान भागोंमें विभक्त करती है। जिलेका प्रधान शहर कुमिला नगर इसीके किनारे अवस्थित है। नगरसे ८ मोल उत्तरमें यह नदो इस जिलेमें प्रवेश करती है। दाउदकान्दिके निकट गोमती मेघनामें मिलती है। वर्षाकालमें यह नदो बहुत प्रबल हो उठती है। शीतकाल और ग्रीष्मकालमें यह कई जगह सूख जाती है और लोग इसे पैदल पार ही जाते हैं। कुमिला छोड़ कर इसके किनारे जाफरगञ्ज तथा पाँचपोखरिया नामक और दो प्रधान शहर पड़ते हैं। नदोको लम्बाई कुल ६६ मोल है जिसमेंसे ३६ मोल इसी जिलेमें पड़ता है।

हाकानिया—यह पार्वत्य-त्रिपुरासे निकल कर सुभागाजो नामक स्थानमें त्रिपुरा जिलेमें प्रवेश करती है। इसकी लम्बाई १५० मोल है। यह पश्चिमकी ओर लाचाम, चितोमो और हाजोगञ्जके निकट होती हुई पश्चिमकी ओर बह गई है। फिर वहांसे दक्षिणकी ओर ६६ मोल आनिके बाद नौआखालो जिलेके रायपुर नामक स्थानके निकट मेघनामें मिलो है।

तितास—यह नदी इस जिलेके उत्तरमें प्रवाहित है और लालपुरके चरके निकट मेघनामें गिरी है। इसकी लम्बाई ८२ मोल है। इसके किनारे ब्राह्मणवाहिया पड़ता है।

उक्त नदियोंके सिवा-मुहरो, विजयगांग, बूढीगांग आदि और भी कई एक छोटी छोटी नदियाँ हैं। इन सब नदियोंके पार होनेके ८ घाट हैं। गोमतीमें कुमिला, कम्पनोगञ्ज और नुरपुर; मुहरोमें शुभापुर, पशुराम और कारकुना; तितासमें उजानी शहर और विजयगाङ्गमें नयानपुर नामक स्थानमें पार होनेके घाट हैं।

समस्त जिलेमें १०४ खाड़ियाँ हैं, जिनमेंसे चाँटपुरको खाड़ी और गोकर्णको खाड़ी विशेष विख्यात है। इनमें बड़े बड़े गर्त भी हैं, जिनमेंसे सराइल परगनेमें आटकोपागर्त, ककाइगर्त, बड़ालेगर्त, चाल्तागर्त, काजलागर्त, आलतागर्त, खोलघारोगर्त, 'ववदा-

शक्ति परबर्मेने बड़ापत्त, नादपाङ्क गत्त' और नुरनगर परबर्मेने ब्रजभागेमत्त' हो विधिय विख्यात है। इनमेंसे कोई भी १ बर्गभोक्तके काम नहीं है। बड़ासिमत ३८ बर्गभोक्त विख्यात है।

इस जिलेके उत्तरमें महानीका कारवार है। ये सब महानिधि ठाका और बहपाम मीची जाते हैं।

त्रिसेने शीतलपाटो बनाने योग्य घास और भोसाको रक्तमो होता है।

त्रिसेना पञ्चिजाय घेस पद्मय शोभिके कारव खान भी पसल पच्छो लगता है और पोषा बहुत लम्बा बहुत है। सरारस परबर्मेने २० फुट लम्बा पयाल देखा गया है।

काबमाई पहाड़ पर २००१ ई०में बहुतसो बोहेकी खानि पाविष्कत हुई; जिन्दु पच्छो खोडा और खानमें बबिख भोवला नहीं रहनेके कारव खानका काम पारव्य नहीं हुआ।

इस पियाका पाम बहुत खराम होता है। पन्ध खानों को नाई पामको लकड़ो मो रतनो पच्छो नहीं होता है। सुपारी, शेत, खजूर पादिके रसके पामरुना होता है। यहाके जङ्गलमें हाबा, बाब होता, अंबको सुधर, बोहड़ और भेस पञ्चिज वाये खानि हैं। तरह तरहके पयो मो मिछरी हैं जो खोन और बहपाम भेके जाते हैं। बर्ग भेकेके पम्पुका खबसाय मो होता है।

त्रिपुरामें तिपाठ नामक एक पसम्भ जातिका बास है। ये बड़ासिमेके कोई सम्बन्ध नहीं रखते। इन शोमीकी भावा कतम्भ है; जिन्दु कोई बर्गभासा नहीं है। एक प्रकारका निकत सिन्दूरम हो इन शोमीका बर्ग है।

सदरस परबर्मेने एक प्रकारका मसखिन खपड़ा अज्ञात होता है, जिसे ताश्चिब कहते हैं और यह ठाकाके विख्यात मसखिनके जिन्को प र्गमें काम नहीं है। इसका पत्त हाबसे वेगता जाता है। इसके पिवा शीतल पटोका खबसाय मी यदा कबू चलता है। यर्गटा नामक खानमें पदुके, प बरीकेके पधोन बाकता खपड़े का कारवार बा। अब उधका बिककुस कारखाना बन्द हो गया है।

त्रिपुरा जिलेमें अंगरेजके राजत्वकायम इतिहास—१७५३ ई०में बड़ासके पन्धमाय खानोंके माव त्रिपुरा मो प ग रेञ्जिके जाव या गया। इसके पहले १५८८ ई०में त्रिपुरा और नोपाकाको बरवार सुबर्गपामके पधोन या। १७११ ई०में सरकार सुबर्गपाम और सुकतात सुबाने जो जो प य जोत कर इन सरकारके पन्धमुंज बिदे से, ब ११ बकभोमि विभक्त हुए। उनमेंसे त्रिपुरा और नोपाकाको बकला जहाङ्गोरनगरके पधोन या। बकला जहाङ्गोरनगर मुन कई एक जमोदारियोंमें विभक्त हुए। जिनमें जकाबपुरके जमींदार प्रधान गिने जाते थे। १७२८ ई०में सुजा खानि बङ्गालको २१ "इइतिमाम" नामक प र्गमें विभक्त किया। इस समय पूर्वाञ्च जकाबपुर जमोदारोको एक 'इइतिमाम' बनाया गया। नोपाकाकी और त्रिपुरा इमी इइतिमामके पन्धगत था। १७५३ ई०में प गरीजोका बड़ासमें पञ्चकार हो खानिसे जकाबपुरका मासन-मार राजा विष्णुसिंह और जमारत का नामक हो जमोदारोके जाव सौप बिबा गया। बाद १७५८ से १७०२ ई० तक तीन मुखप प गरीजोके तखानखानमें रहे जिनके नाम सि० खलसाह, सि० जारिप और सि० खजर्ट थे। १७०२ ई०में एक यन्त्रिको कलखरको उपाधि है कर कबके जाव शासन मार नोपा गया। १७७१ ई०में प्रोमिस्चियस कोन्सियस स्थापित हुई। तमोके १७८० ई० तक कोन्सियसके निरुक्त नावन को राजत्वसम्बन्धके समी जाव खरते थे और दूसरे दूसरे कार्य कई एक विहित प बरीज खम खारिरी द्वारा बिदे जाते थे। १७८१ ई०में नोपाकाको और त्रिपुरा सतम्भ विभाज मिना खाने गया। बहुतने प गरीज-खम खारी के जाबमें इस नूतन विभाजका मार रजा जिन्दु उन शोमीके जाबमें मजिस्ट्रेटको समता न हो। पन्धमें १८२२ ई०में त्रिपुरा और नोपाकाको मुन्ध विभक्त बिबा गया। इसके बाद भी लोमा और परगनेको व्यवसाये कर पम्प समय पर बहुत परिवर्तन हो गया है।

इस जिलेमें तीन विभाग हैं—सदर उपविभाग, नादपुर और जहाङ्गखाङ्गिका उपविभाग। सदर उपविभागमें कुसिमा, सुपहनगर, दाउदबादि, खानि

बाङ्गोको प्रजाको नाममे परिहित है। पार्वत्त प्रत्येक प्राप्तिमे एक एक सर्दार सर्दाको नामको बाद बाङ्गो शब्द जोड़ कर उस प्रासका नामकरण किया जाता है।

यह प्रदेश साधारणता पर्यंतमय है। भूमि पश्चिममे ७०° होतो गई है। १।६ पर्यंतमानाप यमानान्तरकूपमे परब्रजित है। प्रत्येक पर्यंतमे ६ जोधका पत्तार है। पर्यंत पर बांसका जङ्गल घोर निम्नभूमिमे बैठका जङ्गल हो पवित है। पूर्व दिशाक प्रधान पर्यंतका नाम बाम्पुई है। इसको सबसे ऊंचो चोटो धैतलिङ्गिय १२०० फुट का हो है। यहाँको प्रधान नदियाँ मोमतो, धावप जोषाई, बसाई, मनु, लुगे घोर किनी है। इन नदियोमे क नलके बड़े बड़े वृक्षको शाखाये बहा कर स्थित है, जिनसे चक्को चक्को नाँव बगाई जाती है। सुसाईपच क गर्भमे बड़े बड़े बोया नामके भाँवको मारते घोर उनका भाँस खाते है। बाम्पुईके सिवा इस प्रदेशमे घोर भी कई एक पर्यंतमाना है।

शेवटी बरी—घटरमुड़ा पर्यंतमे चायम। घोर लङ्ग तराई पर्यंतमे रावमा नामक दो नदियाँ निम्न कर ६ मरा नामक जलप्रपातसे कुछ ऊपर एकत्र हो कर योमतो नाम धारक करती है। शायोमाङ्ग घोर मित्ता पाङ्ग नामकी दो उपनदियाँ है, जो बीबी-बाजार नामक ग्रामके निकट सिद्धा त्रिपुरामे प्रवेश करती है।

मनु बरी—सकललङ्ग पर्यंतके कोईयिच सिधरमे निम्न कर योङ्गमे प्रवेश करती है। देव घोर दुसाई नामक इसको दो उपनदियाँ यथाक्रममे कामनाघ घोर कदमहाटा नामक स्थानमे इनके साथ मिल गई है।

इन सब नदियोमे पानसो, डिङ्गी, धासतो पादि चन्दी है। इन नदियोमे १० मन बोझ लाद कर नाँव या का सक्तो है। पर्यंत पर कहीं कहीं बोयसी घोर तरङ्ग तरङ्गके प्दार पाये जाते है। कामनाक घोर सिधो पर्यंत पर दो नदियाँ है, जिन्के मुनबड़ा करती है। इन दो नदियोके उत्पत्तिस्थानका जल लक्ष्मण घोर लक्ष होता है। बाम्पुई पर्यंत पर लक्षकी प्दान है।

जङ्गलमे हाँवो घोर चोते बहुत देखे जाते है। हाँवो पकड़नेके सिधु शङ्ख-टकरारमे पशुमति लोको पकृतो घोर कर देना पकृता है। प्रत्येक हाँवो शिकते समय

भी जवके मृन्पये राजपाय्य लक्ष कर उसका पाठवाँ च य राजाको देना पकृता है। जङ्गलमे सुष्पा पकड़ कर पन्थ देखेमे भेजनेमे राखा एक प्रकारका कर लोते है। सर्पाके समय जङ्गलविभागमे हाँस मच्छड़ पादि रतने ५ भिन्न जोते है, कि वनवासो भो कभी कभो पपना बाल प्दान छोड़ कर पन्थ लक्षे जाते है।

पार्वत्त त्रिपुरा पागरतका घोर वेनायङ्गर इन दो विभागमे विभक्त है। पागरतना विभागमे ६२ हजार घोर कैलाघङ्गर-विभागमे ६ हजार पार्वतोय लोयोका बास है। समतल स्थानमे कुल २० हजार मनुष्य रहते है।

पार्वतोय जाति तीन भागमे विभक्त है। १ तियरा वा टियरा। तियरा देखे। २ बामाहता, ३, लोधातिया घोर रियङ्ग। यहाँ लूको घोर सुसाईयोका भो बास है। इली लो लुसाई देखे। पार्वतोय उपलक्ष्यमे मन्चिपुरो जाति रहते है।

वे निम्नलिखित कई एक लक्षण मनाते है—१, रैक पसके पश्चिम दिग्मे सात मसाङ्ग जोनेके उपलक्ष्यमे एक लक्षण करती है। इसमे भोज घोर पामोट पाङ्गाट हो पश्चिम किया जाता है। यह लक्षण पात दिन तक रहता है। २ पाम्पिन भागमे पसल खाटते समय "मिखाटान" वा लनाक नामक लक्षण होता है। पार्व तोय लोम यह लक्षण मानते है। इसमे देवताये बसोतकी ठररताके निचे प्रायः ना करती है। ३, पयङ्गापच भागमे हैमलिख बान्य काटे जाते पर नूनन मचका एक लक्षण होता है इसमे वे 'मनुई' नामक ब्रान्यमे एक प्रकारको खाँवो प्रलुत करते घोर देवताको लोम चाबल लक्ष्य करती है घोर धर कोई लोम चाबल प्दाने तथा बकरा, पयो घोर इँकर पादिको भी लनि देते है।

इन लोकोके प्रधान लक्षणका नाम 'किरपूजा' है। सर्वापदुगातिके निचे धायारु भागमे यह लक्षण होता घोर कई दिन तक रहता है। लव कोई पवने दिनके दम बनी रातने तोसरे दिनके लक्ष बनी प्रातःकाल तक अपने अपने घरका दरवाजा बन्द रहते है। घरके बाहर कोई नहीँ जा सकता है। लोचमे कुछ बान्यके निचे

दिनमें दो बार बाहर निकल सकते हैं। भागरतलामें राजप्रासादके निकट एक स्थान वांससे घिरा हुआ है, उसी जगह उत्सव मनाया जाता है।

विदेशियोंका वास—चट्टग्रामके पार्वत्य प्रदेशमें लुमाई-युक्तके समय कुनोका काम करनेके लिये चाकमा जाति लोग इस देशमें आ वस गये हैं।

ग्राम-नगरादि—एक भागरतला नगरके सिवा और कोई दूसरा प्रसिद्ध नगर नहीं है। कैलाशनगर और त्रिपुराको प्राचीन राजधानी उदयपुर ग्राम ही इस प्रदेशमें सबसे बड़ा है।

भागरतला कुमिक्सासे ३० मीलकी दूरी पर अवस्थित है। यहाँको अष्टालिन्गायें उतने सुन्दर नहीं हैं। सामान्य दोखन्नका मकान ही राजभवन है। यहाँ केवल नौ सौ मनुष्योंका वास है, सड़के अच्छे नहीं हैं।

कैलाशनगर—पर्वतके नीचे अवस्थित एक ग्राम है। एक उपविभागका सदर होनेके कारण यहाँ हाट लगती है। इस हाटमें तमाकू, सुपारी और सूखी मछलीके साथ रूई बटलो जाती है।

उदयपुर—यह गोमतीके बायें किनारे प्राचीन राजधानी उदयपुरसे कई कोसकी दूरी पर अवस्थित है। यहाँ पार्वतीय रूईको हाट लगती है। बहादुरी काठ, वांस और रूईके बटले पहाड़ी लोग तमाकू, नमक और सूखी मछली ले जाते हैं। १८६१ ई०की वर्त्तमान उदयपुरमें कूकी लोगोंने बहुत अत्याचार मचाया था। वे ग्रामके अधिकांश मनुष्योंको मार कर और बहूतोंको पकड़ कर अपने देश ले गये थे।

वर्त्तमान भागरतलासे २ कोस पूर्वमें प्राचीन भागरतला है। १८६४ ई०में यहाँ १ हजार मनुष्य रहते थे। पहले यहाँ राजाओंका वास था। १८४४ ई०को भागरतलामें नूतन राजधानी हुई। प्राचीन भागरतलाका राजभवन अभी भी मग्नावस्थामें विद्यमान है। यहाँ राजा और राजिनियोंके कई एक स्मरणस्तम्भ हैं। पुराने राजभवनके निकट एक छोटे मन्दिरमें पहाड़ी लोगोंके चौदह देवताओंकी प्रतिमा हैं। मन्दिरके निकट होकर जाते समय सब कोई यहाँ तक कि सुसलमान भी प्रतिमाकी प्रणाम किया करते हैं।

प्राचीन उदयपुर सीलहथीं शताब्दीके अन्तमें राजा उदयमानिक्यसे राजधानीमें परिणत हुआ और उन्हींके नाम पर इसका नामकरण हुआ है। यह भी गोमतीके बायें किनारे पड़ता है। प्राचीन राजभवन आदि अभी भी घने जङ्गलमें वर्त्तमान हैं। यहाँ ८ फुट लम्बा एक लोहेका कामान है। लोगोंका विश्वास है कि इस पर फूल रखनेसे शुभाशुभ जाना जाता है। पथिक कामान देख कर सनाम करते हैं। यह कामान किमका है और किम तरह कहासे यहाँ आया है कोई भी नहीं बता सकता।

यह प्राचीन उदयपुर एक पोठ स्थान है। यहाँको देवीका नाम त्रिपुरादेवी और भैरवका नाम त्रिपुरेश है। यहाँ सतीका दाहिना पैर गिर पड़ा था। भैरव-लिङ्ग सफेद पत्थरके बने हुए हैं। त्रिपुरादेवीके मन्दिरमें अनेक यात्री एकत्र होते हैं।

भारतचन्द्रने भैरवका नाम नल बतलाया है। देवीके मन्दिरके निकट बहुतम छोटी छोटी अष्टालिकाओंके ऊपर बङ्गला अक्षरमें खुदा हुआ शिलालेख है। मन्दिरके समीपमें अण्डाकार एक बड़ा तथा परिष्कार तालाव है। इसके किनारे दुग्धप्रवेश जङ्गल है।

त्रिपुराका इतिहास—बङ्गला भाषामें लिखा हुआ राजमाला नामक एक काव्यग्रन्थ है, जिसमें त्रिपुराके राजवंशका इतिहास लिखा है। त्रिपुरा अत्यन्त प्राचीन कालमें भाजतक एक राजवंशके अधीन आ रहा है। राजमालाके मतसे यह राजवंश चन्द्रवंशीदभूत है। चन्द्रवंशमें ययातिके पुत्र दृष्ट्युसे इस वंशकी उत्पत्ति-गणना की जाती है, किन्तु गौर कर विचार करनेसे स्थिर हुआ है कि यह वंश शान जातिसे उत्पन्न हुआ है। शान जाति लौहित्यवंश नामसे अभिहित हुई। अंगरेज लोग इस जातिके व्याख्याकालमें इसे Tibbeto-Burman कहते हैं।

त्रिपुराके राजाओंसे प्रतिष्ठित एक शब्द अभी भी प्रचलित है। इस देशमें प्रचलित सन्से ३ वर्ष पहले त्रिपुराब्द प्रतिष्ठित हुआ।

जब चन्द्रवंशीय राजगण भारतवर्षमें सम्मिलित थे, तब भारतके पूर्वसौमान्वावर्त्ती हिडिम्ब देशके दक्षिण

परंतमव राज्य विराट देय कल्पना था। विपुल के।
 चन्द्रगोय राजा यथातिष्ठ चोदि पुत्र राजा हुए।
 राजमान्नाथ मत्तये हितोय पुत्र द्रुह्यु पिताने परिव्रज्य
 होकर हमी विराट देयमें पाये। विराट देयकी अपिष्ठा
 (ब्रह्मपुत्र) नदीके किनारे विराटराज्यके साथ
 द्रुह्यु का सुहृद हुआ। इस सुहृदमें विराटकी पराक्रम करके
 वे राजा बन बैठे। बाद उन्होंने अपिष्ठाके किनारे त्रिभेग
 नामक नगर निमाष कर वहाँ राजधानी स्थापन की।
 द्रुह्युको यथातिष्ठ गाय दिया वा कि 'द्रुह्यु ! तुमने मेरे
 हृदयमें लक्ष्यपश्य करके जो अपनी उन्नत प्रधान न की,
 इस कारण तुम्हारा मियतर यमिप्राय वहाँ मी सिद्ध नहीं
 होगा। जहाँ जोड़ा रथ, बाणो, राजाके योग्य सवारो,
 गाय, मन्त्रा, बकरा पालकी पादि द्वारा समतागमन न
 हो सके, सर्वदा बैठा घोर हृतगति द्वारा पानाममन
 हो सके घोर जहाँ राजमन्द प्रविष्ट न हो तुम क्षय ग्रमें
 लसो देयमें बाल करोते।' (महाभा० अम्बर ८८ अश्व०)
 महाभारतके मतानुसार इनके व ग्रमें 'भोजगण उत्पन्न
 हुए थे। (१० अ० २५ अ० १०)

राजमान्नाथके मत्तये यही विराटदेय विपुला है
 घोर यथातिष्ठ पुत्र जो यहाँके प्रथम राजा थे। राज
 मान्नाथ मतानुसार द्रुह्यु के बाद उनके पुत्र विपुल राजा
 हुए। विपुलपुराण घोर हरिच ग्रमें द्रुह्युके दो पुत्र
 बभ्रु घोर वीरुके नाम पाये जाते हैं। वीरुके दौलका
 नाम गान्धार था। ओमदभागवतमें गान्धारके परवर्ती ५
 पुत्रपत्तये नाम पाये जाते हैं, किन्तु इनमें विपुलका नाम
 नहीं मिलता है। पुराणके मतानुसार द्रुह्युके पुत्र गान्धार
 के गान्धारका नाम हरण हुआ है। इस तरह घोर
 विरुके मत्तये पैना स्त्रीकार किया जाता है कि द्रुह्यु
 भारतवर्षके पूर्व प्रान्तमें न था कर पश्चिमप्रान्तमें गये
 थे।

जो द्रुह्यु की, राजमान्नाथ मत्तये उक्त विपुलने से कर
 वर्तमान ज्ञान तक विपुल एक ही राजव शक पधोन
 था रहा है।

विपुलने शक्यमि क्षामन पर बैठ विराट-राज्यका श्यम
 परिवर्तन किया घोर अपने नामके अनुसार विपुल राज्य
 घोर विराट आतिष्ठा नाम विपुल (विपुला) आति रचा।

विपुल प्रजापीडक थे घोर गिनहोयो जो कर उन्होंने
 अपने राज्यमें श्रैव नाम सोप किया। हम देयो
 विपुलके पत्न्याचारसे ब्राह्मण घोरे घोरे दूधरे देय का कर
 बधने लगे। बहुतसो प्रधान प्रजाने पत्न्याचारीके हायसे
 राजघोकारके लिए कामरूपके पश्चिमतिसे प्रान्तना को
 किन्तु वे विपुलपतिसे मरके इस विषयमें सङ्गत न हुए।
 प्रजा इताय हो कर स्वदेशको छोड पारि। इतनेमें
 पशुपत विपुलको मर्यु हुई। विजया रामो सिंहासन
 पर बैठ कर राज्य करने लगी। ब्राह्मणोंने राजव श
 नटपाय देख गिनको पाराधना को। गिनभीने भर
 दिया कि "तुम लोगोंने इच्छा पूर्ण की। मेरे घोरस
 घोर विजया रामोके गर्भमें एक सुतप्यत्र पुत्र उत्पन्न
 होगा।" कुछ समयके बाद बैसा हो हुआ। रामीने
 तोन नैतबाका एक पुत्र प्रकय किया, त्रिसका नाम
 त्रिभोजन रवा गया। दय वर्णको पचस्मामें त्रिभोजन
 राजा हुए। राजा त्रिभोजनने जमया प्रजाको दुष्टविधा
 सिखायो। बाद घोरों घोरके राज्य जय कर अपने राज्यको
 उचति करने लगे। इन्होंने जो विपुलपतिवर्गमें राज-विद्व,
 घोर धवसहस्रका पक्षसे पक्षन व्यवहार किया।
 तमोसे पात्र तक उक्त विद्व जसा था रहा है। पार्थवर्ती
 वैदिक देमाधिपतिने विपुलाधिपति त्रिभोजनके हाय
 मद्राय रक्थिसे लिए अपनी सङ्कोका बिबाह कर दिया।
 महाभारत त्रिभोजन गियमज से घोर गिनके पादेयमें
 इन्हीं चोदक देवप्रतिमा प्रतिष्ठित हैं। ये चोदक
 देवता जो विपुल पतिवर्गके कुलदेवताके रूपमें पात्र भो
 पूजे जाते हैं।

"दयमा हरिनावाथी इवगणे वनयो विपु ।
 कान्ति न गा णिषी कयो हियारिच वरुदुप ॥"

हर, उमा हरि, नयो, सरस्वतो, आर्तिष्क, मयेय,
 चन्द्र, पाशाण, ससुत्र, गङ्गा काम घोर विमलय ये ही
 चोदक देवता हैं।

त्रिभोजनने एक यज्ञका अनुष्ठान करके देवस-ब्राह्मण
 को शर्तिक लिए गङ्गासायदेवमें अपने पादमौकी भिजा
 बा। बङ्गदेयके वैदिक ब्राह्मणकी जब माहसुम हुआ
 कि विपुलराज कोवित है तब पक्षी तो वे पानेको
 रामी न हुए; किन्तु यन्तमें विपुलके मर्यु-सम्वाद पर

विश्वास कर उन्होंने जा कर त्रिलोचनका यज्ञसम्पन्न किया। इस यज्ञमें किरात (त्रिपुरा) और कूकियोंसे लावे हुए अनेक छं समझिपादि वनिदान किये गए। हैटिम्ब-राजकुमारोके गर्भने त्रिलोचनके वारह पुत्र उत्पन्न हुए। राजमालाके मतसे ये सब पुत्र विष्णु और शिवकी देहको नाईं अद्भुत-प्रत्यद्भुतविशिष्ट थे। वत्तमान कालमें भी प्रवाद है, कि राजवंशघर इसी तरह लक्षण-क्रान्त होंगे।

राजमालामे लिखा है, कि— 'त्रिपुराधिपति त्रिलोचन राजा युधिष्ठिरके समसामयिक थे; किन्तु महाभारतमें इनका नामोल्बेख नहीं है, पर राजसूययज्ञकालमें भोमसे पूर्वदेश जय करनेके समय किरातके राजाका पराजय-विवरण और घोषयात्राके बाद कर्णसे पूर्व दिशामें जय के समय त्रिपुरा राज्यका जयविवरण लिखा है। महाभारतको लडाईमें त्रिपुराधिपति किसो पक्षमें उपस्थित नहीं थे। ऐसा प्रतीत होता है, फिर राजसूययज्ञके समय उपस्थित राजाओंमें भी उनका नाम पाया नहीं जाता है; किन्तु त्रिलोचन और युधिष्ठिरका समय निरूपण कर देखनेसे दोनों समसामयिक प्रतीत नहीं होते हैं। त्रिलोचनको वंशवालो राजमालामें जो कुछ लिखा है, उससे जाना जाता है, कि त्रिपुराके राजा वीरचन्द्र मार्णिक्यके भतीजे ब्रजेन्द्रचन्द्र तक त्रिलोचनसे १०८ पीढ़ी हो गई है। वत्तमान प्रवत्तविदोंके मतानुसार त्रिलोचन ब्रजेन्द्रचन्द्रसे ३६३६ वर्ष पहले वत्तमान थे। वत्तमान त्रिपुरा राजको पूर्ववर्ती महाराज ईशानचन्द्रमार्णिक्यके १२७७ बङ्गाब्दकी ३० वर्षकी अवस्थामें मृत्यु हुई, तब उनके पुत्र ब्रजेन्द्रचन्द्र बहुत बच्चे थे। अभी यदि युधिष्ठिर कलियुगके प्रारम्भमें वत्तमान थे, ऐसा स्वीकार किया जाय, तो ब्रजेन्द्रसे ४८६८ वर्ष पहले विद्यमान होंगे; क्योंकि महाराज ईशानचन्द्रको मृत्युके समयमें कलियुगके ४८६८ वर्ष बौत चुके थे। इस हिसाबसे युधिष्ठिर और त्रिलोचनमें १३३३ वर्षका फर्क पड़ता है। १३३३ वर्षमें ४० पुरुषका अभाव देखा जाता है; किन्तु महाभारतके वनपर्वमें जब त्रिपुरा नाम पाया जाता है, तब अनुमान किया जा सकता है,

कि त्रिलोचनके पिता त्रिपुरा युधिष्ठिरके पूर्ववर्ती न थे, पर समसामयिक थे। सभापर्वमें भोमके दिग्विजयके समय जब किरात राज्यका नाम त्रिपुरा नाम न हो कर किरात नाम ही देखा जाता है, तब यह भी सम्भना होगा कि राजसूययज्ञके समय त्रिपुराके रहने पर भी उन्होंने स्वराज्यका नाम परिवर्तन नहीं किया। यह भी सम्भव है, क्योंकि राजसूययज्ञके बाद दुर्गधनने द्यूत-क्रीडामें पाण्डवकी वारह वर्षके लिये वन भेजा था। इसी वारह वर्षके अन्तमें घोषयात्रा हुई। इसके बाद कर्णसे त्रिपुरा जीता गया। सुतरां भोमसे किरात राज्य जीते जानेके वारह वर्ष बाद कर्णसे त्रिपुरा नामक किरात राज्यका जीता जाना कुछ असम्भव नहीं है। इसी घटनासे त्रिपुराकी युधिष्ठिरका समसामयिक कह सकते हैं। राजमालाके मतसे त्रिपुरा द्रुह्युके पुत्र हैं। यदि ऐसा स्वीकार किया जाय, तो त्रिपुरा युधिष्ठिरके बहुत पूर्ववर्ती ही जाते हैं; किन्तु त्रिपुरामें एक प्रवाद है, कि "त्रिपुरा द्रुह्युके पुत्र नहीं है। केवल उत्तर-पुरुषमात्र हैं। द्रुह्युसे बौत राजाओंके बाद त्रिपुरा सिंहासन पर बैठे।" इस प्रवाद पर विश्वास करनेसे देखा जाता है, कि ययातिके तीसरे पुत्र द्रुह्युसे निम्न ३३वीं पीढ़ीमें त्रिपुरा और ययातिके कनिष्ठ पुत्र पुरुको ३६वीं पीढ़ीमें युधिष्ठिर वत्तमान थे। पौराणिक-विवरणमें ४१५ पुरुषका अन्तर (१५०।१७५ वर्षका फर्क होने पर भी) वत्तव्य नहीं हैं। अतएव राजमालाके मतसे त्रिलोचनकी युधिष्ठिरके समसामयिक स्वीकार करनेको अपेक्षा, महाभारतके मतसे त्रिपुराकी युधिष्ठिरके समसामयिक स्वीकार करना ही सङ्गत है; किन्तु इस जगह यह कहना उचित होगा, कि ये सब घटनायें निःसन्देह ऐतिहासिक नहीं कहो जा सकती हैं।

राजमालाके मतसे त्रिलोचन त्रिपुराके पुत्र माने गये हैं, किन्तु त्रिलोचनके जन्मविवरणका जो उपाख्यान दिया गया है, वह अस्वाभाविक स्वीकार किया जा सकता है।

कल्युगके हिसाबसे भी देखा गया है, कि युधिष्ठिर

पौर त्रिनोचनने जो १३३६ वर्ष का ४० पोटोका पत्थर पड़ता है, उससे पत्तुमान किया जा सकता है कि उक्त ४० पिट्टियों पड़ना उनसे जो पश्चिम पिट्टियों के राजा-त्रिपुराको तरह देवद्विजविहोरो से है। इस कारण राजमानाके शक्तिसे अपने इतिहासमें उक्त विहोरी राजाशोका उल्लेख न करके शैव पौर विजयस्य राजा त्रिनोचनको शिवसे करने प्राय शिवपुत्र माना है।

त्रिनोचन यथार्थमें अर्द्धवर्षोद्धव नहीं है। राज मानने में उन्हें शिवशोके पौरसे ही उत्पन्न बतलाया गया है। एकर पाषाण मन्थनके स्थिर हुआ है, कि मन्थपुर राजव शोके मारि त्रिपुराका राज व शो मान का शोद्विषय शोद्धत है पड़ना यदि उसे अर्द्धवर्ष शोके माना जाय, तो शो प्रमाणको कोई विधेय सुविधा नहीं। क्योंकि इस पत्थर से दोषा गया है, कि दुष्ट से शिव त्रिपुराके मन्थ ३२ राजाशोके नाम तथा त्रिपुरासे न कर त्रिनोचनके मन्थ ४० राजाशोके नाम नहीं मिलते हैं। शो न कर सकता है, कि उक्त दो समयके मन्थ राज्य एक राजव शोके दूसरे व शोके हाथ नहीं गया होगा।

शो कुछ शो, पत्थर राजमानाहत इतिहास शोका पत्तु-सरक करना होगा। त्रिनोचनके शोतरो उनसे पत्थर शैविश्वप्रतिशोके पत्तु हुई। शो पत्तुमन्थ से। त्रिपुराके बाद राजकुमार मातामह राज्यके उत्तराधिकारी बन कर पापममें राज्यविकारके स्थिते भयङ्गनी लगे। इस पर त्रिनोचनने अपने बड़े पुत्रको शैविष्मदेयका राजा बना कर स्वाधिकारके शान्त किया। महाराज त्रिनोचनने बहुत समय तक राज्य किया। उनके समान दोषातु राजा पात्र तक कोई त्रिपुराके सिद्धान्त पर न बैठे, किन्तु उनके बड़े मारि मातामह राज्य शैविष्म-देयके राजा हुए थे। शो दो पौत्रकारण पानिसे जिये राजा दक्षिणके विह्वल समैय्य पत्थर हुए थे। धातु दिनों तक शोनी भाइयोंमें सुख होता रहा। बाद शैविष्मराज ने मन्थन श्याताको पराजित कर पित्रराज्य पश्चिमाकर कर निवा पौर शो शोनी राज्यको मिलाकर शासन करने लगे। राज्यपुत्र राजा दक्षिण पौर उनके दूसरे इय मारकोने त्रिपुरा पत्थरका कर शासनका नदी पार को,

एक अगव्य पानकान स्थिर किया। महाराज त्रिनोचनके इस बड़े पुत्रका नाम राजमानानि नहीं पाया जाता।

कुछ समयके बाद प्रजा विद्रोहसे शैविष्मराज, राज्य-पुत्र पौर प्रभावो राजा दक्षिण पुनः सिद्धान्त पर प्रतिष्ठित हुए। महाराज दक्षिणके बाद उनके पुत्र तपदक्षिण राजा हुए। इनसे शिव प्रसार तक ३३ राजाशोके शासनकालमें त्रिपुराके कोई विधेय घटना नहीं घटी। महाराज प्रसारके पुत्र कुमार राजा जो श्यामलनगरमें शिवके दयन करने गये। श्यामलनगर शिवका प्रिय शिव मन्थना जाता था। यह श्यामलनगर नहीं है, समझा पता नहीं चलता। पर कहते हैं कि अष्टपामने उत्तरोय पत्थरका सुप्रसिद्ध शिव नाथ शिवमन्दिर बहुत प्राचीनकालमें त्रिपुराविरपतिशोके बनाया हुआ है। पत्र शो मन्दिरके सप्तराका अथ त्रिपुरा राजकोषमें दिया जाता है। इसमें पत्तुमान किया जाता है कि शोके शान्त उन समय श्यामलनगर नामसे प्रसिद्ध था।

राजमानाके त्रिनोचनसे शिव निम्न २०में पुत्रपदे महाराज ईश्वरको 'फा' को उपाधि थी। त्रिपुरामायामें 'फा' का पद 'पिता' शोना है। कोई कोई राजा शौरव-क जिये यह 'फा'की उपाधि पश्य करती है।

महाराज कुमारके बाद उनके पुत्र सुकुमार, सुकुमार के बाद उनके पुत्र तक्षराज पौर तक्षराजके बाद उनके पुत्र राज्येश्वर त्रिपुराके सिद्धान्त पर बैठे। महाराज राज्येश्वर बहुत लघु इन्द्रमावर्क थे। उन्होंने पुत्र पानिसे जिये शिवशोको तपसा को। किन्तु तपसासे विफल हो उन्होंने कोजित हो कर मन्दिरको शिवप्रतिमाके दोनो पौर बाधसे बंद काले। शिवकोने इस पत्थरसे त्रिपुरा छोड़ दिया। अन्तमें महाराज राज्येश्वरने शिवके शैव-शे दो नरबलि देकर दो पुत्र प्राप्त किये। शायद इस समयसे त्रिपुरामें नरबलिको प्रथा पड़ने पड़न पारम्भ हुई। महाराज राज्येश्वरके बाद उनके बड़े लड़के मिमशिराज राजा हुए। उनके कोई सन्तान न थी इस कारण उनके बाद उनके छोटे मारि त्रिपुराका राज्य सिद्धान्त पर बैठे। त्रिपुराकाके बाद मात राजा पौर हुए। उन शोके शान्तकालमें कोई विधेय घटना न हुई।

से। इनके साथ राज-दासों की मित्रता हुई। उन्होंने कुमारको चार वर्ष तक बहुत धाटने परने पास रखा। पीछे एक बड़ी सेना माय दे कर विजयात्मिका उबार करके पहायता को।

राज राज-दासों के मित्रतापान्ति में पहुँचे, तब राज बगले परनेक लड़कोंने उनका माय दिया। मुझमें त्रिपुराके राजाको चार हुई। कुमार राज या निष्कण्ठक होनेके लिये उन विद्यासभातो १० माहयोंका प्राय माय कर पाय राजा बन बैठे। शायद यह घटना ६८८ त्रिपुराब्दि (१२०० ई०) हुई होगी। यह त्रिपुरा त्रिपुराके राजाकोका निज प्रतिष्ठित एक पद है। यह पद किमते सब पौरकों प्रतिष्ठित हुआ। इसका पूरा पता नहीं चलता। १८६२ ई०में महाराज ईशान चन्द्रमाषिक्यको मृत्यु हुई। उस समय त्रिपुरा १२०२ था। पता इसको पौर त्रिपुराब्दि ३८० बयका पत्तर पड़ता है। पतएव ६८२ ई०में प्रथम त्रिपुरा प्रकृति हुआ।

महाराज राज धाने राज्य नाम कर कृतप्रतापे निद र्गन्मन्त्र्य तुषरिस-खाँको १०० हाथो पौर तरह तरहके मषिभाषिक्य प्रदान किये। इन र्गोमिसे एक ऐसा राज था कि वे सा बड़ा राज सोके खरको भी न था। तुषरिस-ने इस राजको पाकर बहुत आनन्दसे राज-दासों को माषिक्य-को उपाधि पौर ३००० सुविधित सैन्य प्रदान की। राज-दासों महोपकारी बन्दुदत्त उपाधि धारण कर यह नियम चलाया कि कृतप्रतापे विजयबन्धुप उनसे बग कर मस्के राजा यह 'माषिक्य' उपाधि धारण करेगी। सुसममान ऐतिहासिकगण इस घटनाको तुषरिस-कर्ताके त्रिपुरा-विजय कह कर वर्णन कर मय है। सि० मर्ममालने अपने इतिहासमें लिखा है कि मोड़के गाम-जला मयाप उद्दोमने त्रिपुराके राजाके कर पदच किया था, किन्तु राजमाकारि इसका कोई बखेब नहीं है। महाराज रजमाषिक्यने अपने राज्यमें बहुतसे दुर्ग निर्माण किये थे।

महाराज राजमाषिक्यके बाद प्रतापमाषिक्य राजा हुए। इनके समयमें सुवर्णधामके बड़ाधिप गाम-जरोमने प्रताप-माषिक्य पर पादमप किया। इन इहमें

पाषाण त्रिपुरा कोड़ कर पौर ममो शान सुसमामाषिक्य हाथ था गये। प्रताप माषिक्यके प्रयोजने समय तक यको सब शान सुसमामाषिक्ये पधिकारमें थे। महाराज प्रतापको पमुदक पनखामे मृत्यु हुई। सुतचं इनके छोटे भाई सुकृत राजा हुए। महाराज महामाषिक्यके बड़े लड़के जोधर्मने उनको जोबन दयामें हो म न्याम पदच किया पौर छोटे लड़के जोबन उनके मरते समय बमसोन थे।

बसन्तरोगेने महाराज महामाषिक्यका दिहास हुआ। कुमार जोधर्म उस समय म न्यामो डोबर कायोमें थे। महाराज महामाषिक्यको मृत्युके बाद त्रिपुराके बहुतसे मनुष्य उनको तनायमें कामो पड़्ये। बर्हा उनोने जोधर्मके लहा 'कुमार! पापके पिताको मृत्य हो गई। सेनापोने प्रतिष्ठा की है, कि पापके लीसे लो दूमरीको बात तो दूर रहे, छोटे कुमारको भो लि जा सन पर नहीं बैठने देंगे।' राजकुमारने इस अनुरोधके साथ डोबर राज्यमार पदच किया। ये ८१० त्रिपुराब्दि में (१३०० ई०में) राज्यनिहासन पर परमियत्र हुए। इनोने सुसमामाषिक्ये हाथमें त्रिपुराके समो राज्यम लोटा लिए। महाराजने इन सब प्रदेशोको इस तरह लूट लिया था, कि कुछ दिनों तक बर्हाके पधिकारिदोको सबकल पड़ना पड़ा था। इसका बदला लेनेके लिये मोड़ाधिपने पदमदगाथको सेनाको पराजित कर पूर्वबहाक लूटा। कुमिहानगरमें इनोने एक मरोबर खोदना कर उनका नाम धर्मसामर रखा। इसके धनार्नेसे दो बय ली से। इनोने तावगासनके हाथ श्राद्धको को बहुतसे जमीन दान दी। इनके समयमें ब्राह्मणोंको पुत्र लक्ष्मीके विवाहका खर्च राजकोषमें दिया जाता था। इन्हींके समयमें बड़ा पयबन्दि राजमाता रको गई। १२ वर्ष राज्य करनेके बाद महा राज धर्ममाषिक्य परलोचको चण बने। महाराज जोधर्मके बाद ८६८ त्रिपुराब्दि (१३६८ ई०में) उनने छोटे लड़के राजा हुए। राजमाकारि इनका नाम नहीं है। बहुत मोड़े समयके बाद जो सेनापतियोंके पड़ यन्ने से मारे मने पौर जोधर्मके छोटे भाई जोबन राजा हुए। जोबनमाषिक्यने राजा होनेके साथ ही प।

पाप रामोके साथ राज्य करने लगी । पार मन्त्रीनिधि बाद जब सेनापति नामा बि जोन्तारने रामोको सन्नाहसे हेबमाचिबको मार डाला है । तब उन्होंने लम्बत हो कर परपिठ चोन्तारई, पापिनो रामो पोर पापोयपोके धर्मज्ञात घिय महाराज इन्द्रमाचिबको विनाय कर एक महुँमें माङ्ग दिया ।

इतने बाद देवमाचिबके बड़े सङ्के विजयमाचिब ८६३ त्रिपुराब्दमें (१३३३ ई० में) राजसि हासन पर पमिपित्त हुए । विजयने राजा हो कर जब देखा कि मन्त्री हो प्रव्रतराजा है बं साको गोपाधमास है । तब उन्होंने ब्रह्मशराय पिनाकर मन्त्रीको मार डाला । इनके समयमें दिक्को सिन्नाट्टुन त्रिपुराको आधीनता छोकार थीं । विजयमाचिबने कई हजार प्ठान पम्पारीही सेना निकुञ्ज को । आसियाके राजा उनके वापिक ३ हाथी पोर १० घोड़े करअल्प्य देसि से । पमिमानमें पा कर जब अत्यन्तियाके राजाने जनको पचोनता श्रीकार न को, तब विजयमाचिबने जनका विनाश करनेके लिए १२को म मोको १२ सो कुदासो दि कर मेजा । म गेके हाबसे मरना पपमानजनक समझ कर अत्यन्तके राजाने जनका पचोनता छोकार को । पीछे उन्होंने पठान सेनाका चरधाम बीतनेके लिए मेजा; किन्तु जन कोगीकी तन बाह बाकी को इसलिये से राजाको मार डालनेके लिए तयार हो गये । महाराज विजयमाचिबकी जब यह बात मास हुई, तब उन्होंने लय ब्रह्म करके जन सोयीको बँदे कर लिया पोर चौदह देवतापोंके कामने बलिदान दिसा । बाद बहानने नबाब सुसीमानने एक हजार पम्पारीही पोर १० हजार पदाति सेनाके साथ महम्पद खा नामक सेनापतिको त्रिपुरा भेजा । चरधाममें ८ मास तब सङ्घाई होतो रहो । बुद्धने पक्षके त्रिपुराके सेनापति विनष्ट हुए सङ्को; किन्तु पीछे सुमसमानोकी हो डार हुई । सेनापति महम्मद खा चौङ्के पि करैने बन्द करके राजधानीको लावे मए, यहाँ चौदह देवतापोंके निष्ठत उनकी बलि दी गई ।

कुछ दिन बाद विजयमाचिबने अय बङ्गदेय पर पाबलप बिबा । उनके साथ २६ हजार पदाति ३ हजार पम्पारीही पोर ३ हजार गावें थीं । सुवर्णधामने

सङ्घाई बिङ्गी, सुसलमान लोग डार मये । पीछे से साधा मदे पार कर प्ठायय लत पनेक खानोंमें कूट मार मचासि हुए लौट पाये । ब्रह्मपुत्र नदोके किनारे भाकर लुटको सामयो राजधानी भेज दी गई पोर पाप जोङ्गमें कूट मार मचाने लगी । जोङ्गको लुट कर उन्होंने बहाके एक घामसे समो अग्निबासियोंको विनाश कर डाला पोर पीछे बङ्गने असायय खुबवा कर से ब्दयेको लौट पाये ।

विजयमाचिब एक दिन कम्पतक हुये से । इनके छोटे सङ्घक अमरने नेनापति गोपमसादको बन्पासे विबाह किया । बिधा आंतिजोमि राजाने कहा था, बि उनके छोटे सङ्घके ही राजा हगि । यह सुन कर उन्होंने अपने बड़े सङ्घकेको तोज यासाके बहानेके पुत्रपोत्तममें भिज दिया । विजयमाचिब प्रसन्न पराक्रमसे ३० वर्ष राज्य कर ८८३ त्रिपुराब्दमें बसन्तरोमसे मरे । बङ्गतपो रानियां सो उनके साथ यतो हुई ।

बाद उनके छोटे सङ्घके भगन्त खसुरको सहायतासे राजा हुए, किन्तु छेड़ वर्षके बाद खसुरसे ही शुभ तोरसे मार डाले गये । उनके दो जन धतो होनेको चली, तब उनके पिता गोपोप्रसादने उनके रोका । भन्तमें रामोने स्वय मि हासन पर बैठनेको इच्छा प्रगट की किन्तु निम्नासहातक कामाद्वन्ता गोपोप्रसाद बन्पाको राज्यसि हासन न दे कर अय उदयमाचिब नाम धारक करके ८८३ त्रिपुराब्दमें (१३८३ ई०में) सिहा सन पर बैठे । बाद उन्होंने बन्पाको पच्छोग्रधाम आगोर देकर इन्द्रोगङ्गको रामो बनाया । गोपोप्रसाद पक्षके धर्मनवरके तइसीनदार थे, पीछे राजाके पाचक बाद चोकोदार पोर भन्तमें मासपामको लू कर शपथ का करके सेनापति हुए ।

उदयमाचिबने राजधानी राजामहोका नाम बदल कर उदयपुर रखा । उनके समयमें बङ्गुतसे असायय पोर प्रासाद बनाये गये; उनके २७० पिछो ही जिनमें से ७५के म्पटा यो । इस समय मोङ्के एक सुसमनाम राजपुत्र अमच करनेके लिये त्रिपुरा पाये । महाराजने उनका प्युन बल्हार किया । म्पट रानियो भंसे बिधो बिधोने इनके साथ सो सङ्गत को । यह रहस्य मानस

हो जाने पर उदयमाणिक्यने गौड़-राजपुत्रको देखसे निकलवा दिया और भटा स्त्रियोंको हाथोंके पैरसे कुचलवा दिया ।

सुगलोंने पुनः इस समय चट्टग्राम पर अधिकार किया युद्धमें ३४ हजार त्रिपुरमैन्य विनष्ट हुई । इस युद्धके ५ वर्ष बाद किसी स्त्रीने विष मिला कर राजाके प्राण नाश किये । उदयमाणिक्यके समय त्रिपुरामें घोर दुर्भिक्ष पड़ा जिससे बहुतसो प्रजा नष्ट हुई ।

उदयमाणिक्यके बाद उनके जड़के जयमाणिक्य १००६ त्रिपुराब्दमें (१५८६ ई०में) राजा हुए । वे नाममात्रके राजा थे । उनके चाचा रङ्गनारायण ही सर्वसर्वा हो कर राज्य चलाते थे । रङ्गनारायणने देखा कि महाराज अनन्तमाणिक्यके चाचा (विजयमाणिक्यके भाई) अमर बहुत प्रबल हो उठे हैं, उनको शोषण टमन नहीं करनेसे पुरातन राजवंश पुनः इनके हाथ लग जायगा । यह सोच कर उन्होंने एक दिन अमरको भोजन करनेके लिये बुलाया । वहाँ अमरके एक बन्धुने तलवारसे एक पानको टो खण्ड कर उन्हें इगारा किया । अमर यह इगारा समझ हठात् असुखताका वहाना करके बोड़े पर सवार हो चल दिये । पीछे वे एक दूरके मारनेकी चेष्टा करने लगे । रङ्गनारायणने भय खा कर दुर्गमें श्राव्य लिया और पत्रद्वारा अपने भाईको समैन्य आकर अमर पर चढ़ाई करनेके लिये बुलाया । राहमें पतवाहक अमरसे पकड़ा गया और बँद कर लिया गया । अमरने रङ्गका इम्प्राजर बना एक छत्रिमपत्र तैयार कर रङ्गके निज विग्रहानुचर हाग उनके भाईके पास भेज दिया । रङ्गके भाईने पत्र पाकर वाहकका व्योहो श्राति-ज्ञान किया व्योहो हो घट उनका मस्तक काट कर अमरके पास ले आया । अमरने उस मस्तकको दुर्गमें रङ्गके पास भेजवा दिया । रङ्ग मस्तक देख व्याकुल हो उठे और सोचने लगे, कि जब भाई मारे जा चुके हैं, तब अवश्य ही उनको सेना भो निहत हुई होगी । इस पर वे आप भो भयभीत हो किला छोड़ कर भाग गये । दो दिन द्विपके रहनेके बाद अमरकी एक सेनाने उन्हें देख पाया और उसने तुरत उनका मस्तक काट कर अमरको उपहार दिया । अमरने खुश हो कर उस से निककी 'साहसनारायण'की उपाधि दी ।

जयमाणिक्यने यह सखाट पा कर अमरकी एक पत्र लिखकर पूछा कि वे ऐसा श्रत्याचार क्यों कर रहे हैं ? अमर अश्वमुखसे उत्तर देनेके लिये ससैन्य अग्रसर हुए । महाराज जयमाणिक्य डरकर कहीं भाग गये । अमरकी सेनाने उन्हें रास्तेमें पकड़ कर मार डाला । केवल एक वर्ष राज्य करनेके बाद जयमाणिक्य मारे गये थे ।

१००७ त्रिपुराब्दमें अमरमाणिक्य राज्यसिंहासन पर बैठे । राजा होनेके साथ ही इन्होंने त्रिपुराके सभी जमींदारोंको लिख भेजा, "एक सुदोर्घ दोषिका खुटवानो होगी । इसके लिये आप लोग कुदाल भेजें ।" उनके कथनानुसार ८ जमींदारोंने ७३०० कुदाल भेजे थे । बाद उदयपुरमें जो बड़ी टोषिका खुदवाई गई, वह आज भी अमरसागर नामसे प्रसिद्ध है । ओहटके अन्तर्गतके जमींदारोंने इस कार्यमें कुदाली नहीं भेजी थी । इस कारण महाराज अमरने उन्हें कैद करनेके लिये २२ हजार सेना भेजी । जमींदारने भाग कर ओहटके सुसलमान शासनकर्त्ताको शरण ली । उनके लड़के कैद कर लिये गये । अमरमाणिक्यने यह सुन कर ओहटके सुसलमान शासनकर्त्ताके विरुद्ध यात्रा की और गरुड़व्यूह बनाकर सूर्योदयके समय लड़ाई छिड़ दी । दो पहरकी कुक्काल तक विश्राम करनेके बाद पुनः युद्धप्रारम्भ हुआ । सन्ध्याकालमें सुसलमान लोग पराजित हुए । १००८ त्रिपुराब्दमें (१५८८ ई०में) शायद यह घटना हुई होगी । इसी समयसे ओहट त्रिपुराका करप्रद हुआ । नोआखालीके अन्तर्गत बलरामके जमोन्दारने पहले अमरमाणिक्यको कर नहीं दिया और कहा कि, अमर जारज हैं । अतएव वे राज्यके विधिसङ्गत अधिकारो नहीं हो सकते । यह सुनकर महाराज अमरने एक दल सेना भेजकर युद्धमें उन्हें करप्रद बनाया । इस समय वाकलाचन्द्रनीप बहुत समृद्ध-शाली था । अमरमाणिक्यने घनके लोभसे उस राजासे लूटपाट मचाई और बहुतसे अधिवासियोंको दासके रूपमें बन्द किया बहुतोंकी खरोदा भो । बाद उन्होंने ब्राह्मण-दम्पती और तुलापुरुष दान किया तथा दोषिका बनवाई । १०१८ त्रिपुराब्दमें बङ्गालके नवाब इसलाम

जानि राजधानी ठाकावे त्रिपुरा पर भाषा किया। चमर
माचिबन्धे इया खाँ नामक एक सुमनमान सिनापति
का। एक बड़ी सेना दे कर महाराज चमरने लक्ष्मी को
बुद्धमें भेजा। इया जानि यन्त्रुकी सामने होती हुए भी
समय जान कर धाकमन न किया। त्रिपुराके प्रधान
मन्त्रीमें यह सुनकर भीर भो एक दस सेना उनको मझ
बताके नियो भेजो और इया खाँको बुझा दिया, कि वे एक
समयको सपेदान कर बिपक्ष पर धाकमन करे। इस
समय चमरमाचिबन्धको छोलेने इया खाँको प्रसन्नकर
पटना चरबासत भेजवा दिया। इया खाँने रानोके इस
चतुपक्षमें लडाइत हो बारह हजार यथायेको
घोर कुछ पदाति सेना से कर यन्त्रु पर उठात् धाकमन
किया। सुमनमान लोग पराजित हो कर भाग चले
घोर इया खाँ विजयो होकर लौट पाये।

इसके बाद चमरमाचिबन्धने पाराकान पर धाक
मन कर लम्बे पन्तगत कई एक प्रदेश जोत लिये।
पाराकानपतिने बार बार पराजित होने पर पोत्तु
गोर्खाको सहायता लो घोर त्रिपुराके राजा पर भाषा
दिया। बुद्धमें पक्षमें त्रिपुरापति पराजित हुए किन्तु
बलमध्य कर पुनः पाराकान पर चढ़ाई करनेको
उद्यत हुए। इस पर पाराकानके राजाने एक वर्ष
तक लड़ाई बन्द रखनेके लिये अनुरोध किया। दोनो
पक्षके लोग पापामो पुनोसकके पक्षमें बुद्ध करनेको
सहमत हुए, क्योंकि बुद्धमें बन्दिनीको दुर्गाके सामने
बलि दे सकेंगे। त्रिपुराको सेना लौट आई। पाराकान
पतिने पच्छा भोजा देण सम्भिमङ्गल कर दो तथा पश्चिम
पर धाकमन कर अधिकार कर लिया। त्रिपुरापतिने
पवने तोनी पुर्वोको सेनापति बना कर एक बड़ी सेनाके
मात्र भेजा। पाराकानपतिने महभोत हो हाथोटातका
बना हुआ सुकृष्ट उपहार दिया और राजकुमारोंके
निबट लम्बिका प्रस्ताव पेश किया। सुकृष्टके अधिकार
को लिये तोनो राजकुमारोंमें पनबन हो गई।
यैवे चमर पर पाराकानके राजाने त्रिपुराको सेना पर
भाषा किया। तोनी राजकुमारोंमें एक पदात हाथो
को पोट परसे मिर कर पश्चिमको प्राप्त हुए और यैवे दो
राजकुमार पराजित हो कर भाग चले। मगोमें उनका

चतुस्रथ किया था। पुनः दोनोमें युद्धमें हुए।
इस बार त्रिपुराके पठान-पन्थारोहियोंके सहाय्य
को जानि कुमारोंको हार हुई। मग लोच राजधानी
उदयपुर पहुँच गये। चमरमाचिबन्ध दुर्गस्य समझ
राजधानी छोड़ कर देवघाट नामक स्थानको चले गये।
मग लोग उदयपुरको लूट कर नृपिमि था गये। उन्को
समय किनो नदो त्रिपुराको दक्षिणोसोमा निर्दिष्ट हुई।
पश्चिमादि स्थान पापकानराजके पन्तगत हुए।
महाराज राजाको पक्षस्था, पुर्वोकी बुद्धि घोर विवेचना
पादि देख कर दुःखने व्याकुल हो लठे। पन्तमें एक
दिन पयिन्न मनु नदीमें स्नान कर जलोंने पक्षीम खा
कर प्राणत्याग किया। उनको छो भी लतो हो गई।

१०२१ त्रिपुराब्दमें (१६११ ई०में) चमरमाचिबन्धके
पुत्र राजवर राजा हुए। वे शांतिप्रिय वैश्वव
थे। सिर्फ देवघाटमें लम्बे रहते थे। उन्होंने एक
कुन्दर विष्णुमन्दिर निर्माथ किया था, जिसमें ८
गायक सर्वदा हरिनाम-कीर्तन करनेके लिये नियुक्त
थे। उन्होंने बहुतेरे ब्राह्मणों को विष्णु जमोन दान दो
थे। मन्थवोके उनको उदारता पर झिङ्गाड़ करने पर
महाराज राजवर बोले,—“यैवे पक्षस्थाको भेरे पददंठे
क्या होगा यह हीन लड मकता है। समय रहते पर-
कान्तका उपाय करना पच्छा है।” इस बहसके
नवाबने राजवरको ऐसो पक्षस्था सुन त्रिपुरा पर धाकमन
करनेके लिये एक सेन्धकन भेजा, किन्तु त्रिपुराके सेना
पतिने लोयलने से पराजित हुए। राजवर १ वर्ष राज्य
कर गोमतेमें छुट गये।

बाद १०२३ त्रिपुराब्दमें (१६११ ई०में)
राजवरके पुत्र यन्तोच राजा हुए। राजा होनेके
साथ हो रकोने त्रिपुरामें मग लोगोका पन्थापार
निवारण किया। इनके समयमें दिन्नोचर जहागीरने
कई एक हाथो करमध्य मगि थे। महाराज ययोधरके
दिनेमें पक्षोकार करने पर दिन्नोके पादोयने बहानके
नवाबने त्रिपुरा पर धाकमन किया। दिन्नोके सुयन
सेन्ध लो पहुँच चुकी हो। बुद्धमें त्रिपुराके राजा पर
जित घोर बन्दो हुए। सुमनसेना राज्यका कुछ पक्ष
लूट बन्दो महाराज ययोधरमाचिबन्धको पाप ले कर

दिल्ली पहुँची। सम्राट् ने उन्हें छुटकारा दे कर कहा, कि 'यदि वे प्रति वर्ष कई एक हाथी और घोड़े करस्वरूप दे, तो उनके विरुद्ध लड़ाई नहीं ठानी जायगी। यगो धरने इसे अस्वोकार किया और यवनसे पराजित होने पर वे तोर्याटनमें पापदेश चय करनेके लिये प्रयाग, मथुरा वृन्दावनादिकी गये। ७२ वर्षकी अवस्थामें वृन्दावनमें विष्णु सेवा करते हुए उनका प्राणान्त हुआ। उधर त्रिपुरामें अवशिष्ट मुगल सेना लगातार दो वर्ष तक राज्यमें लूट-मार मचाती रही। इतनेमें वर्षा महामारी उगस्थित हुई, जिसमें अधिकांश मुगलोंकी मृत्यु हो गई और अवशिष्ट प्राण जानकी भयसे त्रिपुरा छोड़ दिल्लीकी चले गये। बाट कल्याणमाणिक्य सभी त्रिपुरावासियोंकी सम्प्रतिसे राज्यसिंहासन पर बैठे।

१०६५ त्रिपुरावर्द्धमें (१६२५ ई०में) कल्याणमाणिक्य राजा हुए। वे क्रिकके पुत्र थे, वह राजमालामें लिवा नहीं है; किन्तु लोग उन्हें यशोधरमाणिक्यके ज्ञाति भ्राता बतलाते हैं। अनुमान किया जाता है, कि महाराज राजधरमाणिक्यके एक भाई आराकान-युद्धमें हाथोके पैरतले मर चुके थे और दो भाग गये थे। कल्याणमाणिक्य इन्हीं दोमेंसे किसोके पुत्र होंगे। कल्याणमाणिक्यके जन्मसम्बन्धमें भी एक लौकिकप्रवाद है—उनका पिता एक दिन आखेटकी बाहर निकले। एक पलायित शृगके पीछे दौड़ते दौड़ते मध्याह्नकालमें वे प्याससे कातर हो गये। बाट जलकी खोज करते करते वे बाह्याल-प्रजाके घर पर गये। त्रिपुरा जातिमें बाह्याल नामक एक सम्प्रदाय है। कल्याणके पिता उस बाह्यालकी रूपवती कन्याको देख कर मोहित हो गये। बाह्याल-कुमारोने भी राजपुत्रको आत्मसमर्पण किया और उसीसे कल्याणमाणिक्यका जन्म हुआ। महाराज कल्याणमाणिक्य विद्वान्, बुद्धिमान् और बलशाली थे। उन्होंने सेनाओंकी सुव्यवस्था किया। उन्हींसे त्रिपुराके राजपरिवारमें एक नूतन नियम स्थापित हुआ। उन्हींने ही सबसे पहले युवराज पदको सृष्टि कर अपने बड़े लड़के गोविन्दको उस पद पर नियुक्त किया और सिक्केमें अपा नामके साथ 'शिव' देवनाम अङ्कित किया था। उन्हींके समय से राजनामके साथ देवनाम योग कर सिक्का मुद्रित

हुआ करता था। सम्राट् शाहजहानने उनसे कर मांगा था, किन्तु कल्याणमाणिक्यके अस्वोकार करने पर सम्राट् ने वज्रानकी सुवेदार शाह सुजाको त्रिपुरा पर चढ़ाई करनेका हुक्म दिया। शाह सुजाने जो मैन्वदन भेजा था, उनके साथ एक चर्मनिर्मित-कामान था। जो कुछ हो, महाराज कल्याणने मुसलमानोंको पराजित कर भगा दिया था। इसके बाद कल्याणने तुला उपनचमें उड़ोना, मथुरा आदि दूर स्थानोंसे ब्राह्मणोंकी बुलाकर प्रचुर धन दान दिये थे और अपने राज्यमें घूम घूम कर निःस्व प्रजाकी अर्थदान तथा ब्राह्मणोंकी यथैष्ट भूमि दान दी थी। जब कोई तोर्याटनको दृष्टा करता तो, वे अपने राजकोपमें उसका खर्च देते थे। नूरनगरके कशवा ग्राममें उनकी प्रसिद्ध दोर्घिका आज भी 'कल्याणसागर' नामसे विद्यमान है। कल्याण ३४ वर्ष राज्य कर १०६८ त्रिपुरावर्द्धमें स्वर्गको प्राप्त हुए।

बाट युवराज गोविन्ददेव 'माणिक्य' की उपाधि धारण कर १०६८ त्रिपुरावर्द्धमें (१६५८ ई०में) राज्यसिंहासन पर बैठे। उनको स्त्री कमला मन्नादेवी बहुत धर्मपरायण थीं। उनके सिक्केके एक पृष्ठ पर शिव और स्वामीका नाम तथा दूसरे पृष्ठ पर उनका नाम अङ्कित रहता था। उनका निर्मित कमलासागर आज भी कशवा ग्राममें वत्तमान है। महाराज गोविन्दके छोटे भाई नचत्रराय बह्यालके सुवेदार शाह सुजाके साथ मिल कर त्रिपुरा आक्रमण करनेको उद्यत हुए, किन्तु महाराज गोविन्दमाणिक्यने सोचा, कि इस युद्धमें चाहे मेरा प्राण जायगा अथवा मेरे भाईका। यह समझ कर उन्होंने बिना युद्ध किये नचत्रके हाथमें राज्य सौंप थाप आराकान राज्यमें आश्रय ग्रहण किया। इधर नचत्रराय क्वत्र माणिक्य नामसे सिंहासन पर बैठे। महाराज गोविन्द आराकानके आश्रयमें जब चट्टग्राममें रहते थे, तब भ्रातृयुद्धसे पराजित शाह सुजाने आ कर आराकानमें आश्रय लिया। राहमें महाराज गोविन्ददेवने उनका खूब सत्कार किया और यथासाध्य सहायता भी दी। सुजाने उनके व्यवहारसे नञ्जित हो कर चम्पारण्यना मांगी और अपनी "निमचा" नामक बहुमूल्य तलवार प्रदान की।

सुत्रार्थ पाराशरान पदुचने पर पाराशरानके राजा सुत्राको कन्याके रूपसे सुख हो गये। उसे इत्यागत करके उसे जिसे कहोंने अपने राज्यमें यह प्रचार किया, कि सुत्रा अपने बौध्दमें पाराशरान कोतर्निक जिसे पाये हैं, पतएव उन्हें मार डालना उचित है किन्तु बिना सुत्रका रक्षका विरला बोहोके निवमले पशुचित था, इसलिये कनो ने छिपके सुत्राको पकड़ म गाया और उन्हें एक नाममें बाँध कर नदीमें डुबो दिया। सुत्राको छोलेने पतनी कतोलें सुतो सुभा कर मान त्याग किया और दो कन्याओंने विद था कर पचइत्या कीं। तोसरो कन्याको पाराशरानके राजाने प्रइय किया था।

इधर ० वर्ष राज्य करके रजमाचिकरा त्रमद्राम पोर गरहरि नामक दो पुत्र छोड़ परमोके निधारी। इनको मृदुके बाद मोविन्ददेव पुन' नि नामन पर बैठे। उनोंने सुत्राके प्रति पाराशरान-राजके मृय म प्रयचारसे मर्माहत हो कर सुत्राको ननवारकी महायतसे धर म यर किया और कुमिकागारमें एक मरिचक बनवाई जो प्राय मो 'सुत्र-मरिचक' नामसे वर्णमान है। महाराज गोविन्दमाचिकरने मंडेरकुन पाबाद पोर घातिमा घाममें दोरिका खुदवाई। है भी ताम्बयासन द्वारा ब्राह्मणों को बहुतसो कमीन दान कर मय हैं। १०७८ त्रिपुराब्द (११६८ ई०में) उनका टंकास्त हो गया।

१०८० त्रिपुराब्दमें (११७० ई०में) सुबराज रामदेव डाकुर (गोविन्दके लोठ पुत्र) राजा हुए। उन्होंने पदकी अपने धारी कलिभोमनारायणको सुबराजके पद पर नियुक्त किया। बाद अपने बड़े मकूके रजदेवको भी समी पद पर स्थापित किया। इससे घनस्तर उन्होंने सुबराज पदका पचयवहित होनेके बाद जो बड़ा ठाकुर' नामक एक पदको छट्टि कर उस पर अपने दूसरे पुत्र दुत्र'य दिवको नियुक्त किया। इसको राज्यप्युत करकेके लिए बहुतस्य रचा गया, किन्तु इसका कुछ फल न हुआ। घनद्राम पोर चन्द्रमचि नामक उनके पोर भी दो पुत्र थे।

१०८२ त्रिपुराब्दमें (११८२ ई०में) सुबराज राजदेव राजा हुए। उन्होंने अपने छोटे भाई दुत्र'यमचिको 'बड़ा

ठाकुर'का पद पोर मामा कलिभोमनारायणको 'सुबराज' का पद प्रदान किया। किन्तु उन्हें पोर पोर इटा कर राजव मोन चम्पकराय पोर पोरोरवरको सुबराज-पद पर तथा पोरि भाई चन्द्रमचिको 'बड़े मकू'के पद पर नियुक्त किया। रजदेवके १२५ विवाह हुए थे। रज माचिकरको बहुत बच्चे उमर थी, किन्तु सिवोज सुब राजमच उनको पपिया बड़े पोर बहुत परयाचारी थे। इस समय म गासके नवाब साइफाकानि मरिचुठाकुर नामक रजमाचिकरसे एक शाचको सहायतासे त्रिपुरा पर आक्रमण किया और उसे जीत मो लिया। बाद से रजमाचिकर पोर तोमो सुबराजो को बँदे कर पाये।

साइफा काको सहायतासे मरिचुठाकुर राजा हुए। तीन वर्ष राज्य करकेके बाद रजमाचिकरने साइफा का को इत्यागत कर पुन' राज्याधिकार किया। १८ वर्ष राज्य करकेके बाद रजमाचिकरने तीसरे भाई घनद्रामने कनो राज्यत किया।

घनद्राम राज्य था कर मरिचुमाचिकर नामसे नि हासन पर बैठे। मन्कोके परामर्शसे मरिचुने एक छोके दो कानो रचना युक्तिसे नहीं है, यह जान रजमाचिकरको मार डाला। घनमें माइबबके पापसे दुःख्य देवते देवते १ वर्ष के पच्यस्तर ही उनका प्राय मशु बड़ गया।

११२४ त्रिपुराब्दमें (१०१४ ई०में) सुबराज दुत्र'य दिव धर्ममाचिकर नाम धारण कर चि नामन पर पादुङ हुए। उन्होंने चन्द्रमचिको सुबराजके पद पर पोर बड़े मकूके म नाचरको बड़े डाकुरके पद पर नियुक्त किया। म मासके माजिमें इस समय एक दस मेश मित्र त्रिपुराके कई एक जिने पहिकार कर लिए पोर बड़ा सुमनमान त्रमोदार नियुक्त किया तथा एक दस सुगममेश्य उदयपुरमें रज दी। एक दिन सुमन मोग कव निजलाचिलसे मोजन कर रहे थे, तब धर्ममाचिकर ने जडात् उन पर आक्रमण किया और जड़े किच मिच कर मार डाला। बहुत छोके मोग प्राय से कर मान पाये।

रजमाचिकरने मकूके जगदात्मने इस समय डाकाके सुमनमान-मासनकताके माय मित कर त्रिपुरा पर

चढ़ाई को। युद्धमें पहलै तो त्रिपुराको जीत हुई, किन्तु पीछे महाराज, धर्ममाणिक्य पराजित हो कर भाग गए।

१६४२ त्रिपुराद्धमें (१७३२ ई०में) जगद्राममाणिक्यने सुसलमानोंके माहाय्यसे राज्य प्राप्त किया, किन्तु उनसे त्रिपुरामें जो क्षति हुई, वह मात्र तक संशोधित न हो सका। सुसलमान-दौवान मोर हवीवने पार्वत्य त्रिपुरा खाधेनरख अन्य समस्त स्थान सुसलमान राज्यमें मिला लिए और उन्हें सुसलमान जमींदारके हाथ सौंपा। केवल जगद्राम-माणिक्यको २२ परगनेका चकला रौसना वाद जागोरके रूपमें दे दिया। यह जमींदारी अब भी मौजद है। त्रिपुराके राजा अभी इसका कर वृत्ति-सरकारको देते हैं।

धर्ममाणिक्य राज्यच्युत हो कर सुसलमानोंको सहायताके बिना और कोई दूसरा उपाय न देख सुर्षिदावादको चले गये। वहाँ उन्होंने जगत् सेठसे मिथता का और उनकी सहायतासे पुनः राज्यप्राप्त किया। धर्ममाणिक्यने वंगला भाषामें महाभारतका अनुवाद किया। योड़े समयके बाद धर्ममाणिक्यकी मृत्यु हुई।

वाद टाकाके फौजदारने धर्ममाणिक्यके बड़े लड़के गङ्गाधरको उनके पिताके समयका वाको राजस्य परिशोध करनेकी कक्षा। इस पर उन्होंने अपनी अक्षमता प्रगट की। युवराज चन्द्रमणि वह ऋण परिशोध कर फौजदारको सहायतासे सुकुन्दमाणिक्य नामसे राजा हुए। सुकुन्दने राज्य पा कर अधर्म नहीं किया। उन्होंने अपने भतीजे गङ्गाधरको जो युवराजके पद पर और बड़े लड़के पाचकौड़ीको बड़े ठाकुरके पद पर नियुक्त किया तथा जामीनस्वरूप पांचकौड़ीकी सुर्षिदावादमें रफ छोड़ा। सुकुन्दमाणिक्यने रुद्रमणि नामक एक द्वातिकी हाथी पकड़नेके लिये मतिया पहाड पर भेजा। वहाँ रुद्रमणिने वृचरनारायण नामक पार्वतीय त्रिपुरा सर्दारके साथ मिल कर सुकुन्दमाणिक्यको एक पत्र लिख भेजा, कि— 'पार्वतीय त्रिपुराण यवन-संश्रवमें रहना नहीं चाहते। महाराजको अनुमति पानेसे वे फौजदार-मानुचर हाजोके लिये मुनसिपको बंध करनेमें प्रसूत हैं।' सुकुन्दमाणिक्यने पत्र पा कर चिन्तित हो उत्तर

दिया, कि— 'ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि उनके बड़े लड़के जामीनस्वरूप सुर्षिदावादमें हैं।' रुद्रमणि इस पर भी स्थिर न हो कर फौजदारको मार डालनेके लिये तैयार हो गये। सुकुन्दमाणिक्यने किंकर्त्तव्य-विमूढ हो कर वह पत्र फौजदारको दिया। फौजदारने प्राणरक्षाके लिये कृतज्ञ न हो कर सोचा, कि महाराज सुकुन्द भी इस पड़यन्त्रमें शामिल हैं। सुतरां उन्होंने उनको, उनके लड़के रुद्रमणि, क्षणमणि और बड़े ठाकुर गङ्गाधरको कैद कर लिये। रुद्रमणिठाकुरने यह सन्वाद पा कर ससैन्य आ उदयपुरको चेर लिया।

इसी बीच महाराज सुकुन्दने यवनके हाथ बन्दो हो जाने पर विष खाकर आत्महत्या कर डाला। रानो सतो होनेकी तैयार हो गईं। इस पर सर्दार वृचर नारायणने उन्हें उत्तराधिकारो नियुक्त करनेकी प्रतिज्ञा की। रानोने पहलै अपने पुत्र पांचकौड़ी, और उनके बाद गङ्गाधरको उत्तराधिकारो निर्देश किया; किन्तु वृचरनारायणके रुद्रमणिको उत्तराधिकारो निर्वाचित करने पर रानोने चितामें बैठ आत्महत्या की।

सर्दार वृचरनारायणके साहाय्यसे रुद्रमणिठाकुर जयमाणिक्य (२य) नाम धारण कर राज्यसिंहासन पर बैठे। वे गोविन्दमाणिक्यकी छोटे भाईके छोटे लड़केके ज्येष्ठ पुत्र थे। फौजदारने अपने अपराध पर क्षमा प्रार्थना मागे। इस पर जयमाणिक्यने उन्हें अभयदान दिया। रुद्रमणि प्रभृति राजकुमार छुटकारा पाकर टाकाको चल दिये।

पांचकौड़ी उस समय भी बङ्गालके नवाबके निकट थे। वे बहुत दिनोंसे त्रिपुराका कोई सन्वाद नहीं पानेसे नवाबकी अनुमति ले नाव पर चढ़ कर स्वदेशको आ रहे थे। पद्मागर्भमें उन्हें ज्यों ही क्षणमणिके पत्रसे राज्यकी अवस्था मालूम हो गई त्यों ही वे पुनः सुर्षिदावाद लौट गये। नवाबने उनसे सब बातें सुन कर टाकाके शासनकर्त्ताको उन्हें सहायता देनेका आदेश किया। बङ्गालके नवाबने इस समय पांचकौड़ीको सिंहासन पर बैठनेकी अनुमति स्वरूप एक सनद दी।

पांचकौड़ीके ससैन्य कुमिल्ला पहुंचने पर प्रजा और सभी कर्मचारियोंने उन्हें अपना राजा बनाया। उदय-

पुरी में नज़ाई बिड़ो । द्वितीय अयमाधिक्य पराजित हुए । ११४८ विपुलाब्दे (१०३८ ई० में) पांचकोटो इन्द्रमाधिक्य (२५) नाम पद्वय कर विहासन पर पाकड़ हुए । उनको भाई जयमालि बुवराज पोर इतिमलि बड़े झकुर हुए ।

अयमाधिक्य राजपुत्र जो कर इतिमाराधक चौथो नामक एक प्यत्रि समझ देईकुलके शैवदस्य पोर १३ सो घेनापोंको माघ से विपुलाके कई म्यान सुटने मी । अन्तमें तर्कोने रियासत देकर ठाकाके प्रासनकर्ता अग जादेरवाको बयोभूत बिदा तथा इन्द्रमाधिक्यके विरुद्ध उत्तोजित किया । रोसनाबादके बाको खजानाके कारख बलबादेर का इन्द्रमाधिक्यको कैद कर ठाका ले गये । इस समय ठाकामें अयमाधिक्यके पुत्र मझाकर रहते थे । तर्कोने बलबादेर काको बूझ कर राजा बोला बाबा । मरहद रवि नामक एक प्यत्रिने एक टन मेला माघ से अगजादेरको पात्रानुसार मझाकरको विपुलाके सि हासन पर बिठया । मझाकर द्वितीय अयमाधिक्य नामसे राजा हुए ।

अयमाधिक्य राजपुत्र जो ठाकाके ३ परमनेका जमो शारोसल से कर नाम कर रहे थे । (इनके बंधुकर पंच भो ठाकामें हैं । वे 'बादबाके राजा' वा 'ठाकाके राजा' नामसे प्रसिद्ध हैं ।) अयमाधिक्यमें जयसता प्राप्त न कर सकने पर इह अयद्रामको पुत्र मुनाबेमें डालनको बिटा को । तर्कोने कहला मीत्रा, बि—'यदि अयद्राम रियासत देकर ठाकाके नबाबको वधोभूत कर सक, तो वे (अयमाधिक्य) पुन राजा हो सकते हैं पोर राजा जो पर अयद्रामके भाई मरहदको बुवराज अयद्राम नामसे । अयद्रामने भी बीसा जो किया । अगजादेर का मो पप के दाम थे । तर्कोने मो इको समय अयमाधिक्यके बदने अयमाधिक्यको विपुलाका राजा खोजार किया पोर अयद्रामको भगा कर उन्हें सि हासन पर बिठाया । अयमाधिक्यने पुन राज्य पाकर अयद्रामके भाई मरहदको बुवराज बनाया ।

इस समय निवारण मरहद ठाकाके शासनकाल हुए । हुसेनकुली पों उनको लखारो थे । इन्द्रमाधिक्यने हुसेनकुलीने मित्रता को पोर उनको बहा-

यतासे बहाबको नबाब बनोवरीं सोने से म्य लेकर विपुला पर अधिकार जमाया । द्वितीय अयमाधिक्य कैदो बनाकर सुयिंदाबाद मिर दिबे गये । इन्द्रमाधिक्यने दूसरो बार राज्यमात्र कर सुयिंदाबादमें एक प्रतिनिधिरखा । कुछ दिनोंके बाद सुयिंदाबादसे मन्दाट पाठा कि अयमाधिक्यने नबाबको प्रियपात हाजो इ बेनके माघ मित्रता को से पोर हाजो हुसेन उन्हें राज्य देनेको बिटामें हैं । इन्द्रमाधिक्य उद्विग्न हो सुयिंदाबाद गये पोर तर्कोने मर बाने अयोवरीं खान कह सुनाई । नबाबने हाजो हुसेनको दसके निचे तिग्यार कर अयमाधिक्यको खारागारमें रखनेका आदेश दिया । इन्द्रमाधिक्य अपने राज्यको छोड पाये । इससे बाद हाजो हुसेन अयमानका बदला लेनेके निचे कुमिनाके जोबनार जो कर विपुला पाये पोर इन्द्रमाधिक्यके राज्यमें पाखाचार करने मी । इन्द्रमाधिक्यने इसे सहन न कर नबाबको खबर दो । तर्कोने इसका अनुमन्याम लेनेके निचे हुसेन तर्कोनको मीत्रा । वे इनका पता लगा कर हाजो हुसेन पोर इन्द्रमाधिक्यको साथ से सुयिंदाबाद गये । नबाबने हाजोका हा दोन उदरा कर उन्हें इन्द्रमाधिक्यको क्षतिपूर्ति करने को कहा । १०४४ ई० में इन्द्रमाधिक्य इस उपनयमें सुयिंदाबादमें थे । मरहदा हुदई नबाबने उन्हें एक टन घेनाका भार सो पा, किन्तु मारोकि अहम्य रहनेके कारण वे हुदई जा न सके । उनको अत्यन्तताको बात सुनकर नबाबने हाजो हुसेनके ऊपर बिबिष्याका भार दिया । हाजोने बिबिष्याके साथ परामर्श करके जो पोवच उन्हें बिनाई को, उनोने उनका प्राधान्य हुआ । नबाबने सोड कर उनको खोज जो पोर अयुनम्याद सुनकर बहुत पापिय किया बाद तर्कोने उनके छोटे भाईका राज्य देनेके निचे कहा जोबदार हाजो हुसेन बीसा हो करनेको राजा हुए पोर कुमिना पहुँच कर तर्कोने बुवराज अयमाधिक्यको रोसनाबादने भगा दिया एवं ममनेर गाबो पोर पचपुस अराक नामक दो बिबिषीके ऊपर शासनभार पवंच किया । बुवराज अयमाधिक्यने बादुबनसे पारोषीन विपुलाके कुछ पय अपने दयनमें कर लिए । इससे बाद हाजो हुसेन सुयिंदाबाद पाए पोर द्वितीय अयमाधिक्यका शासन

सुक्त कर त्रिपुरा ले गए। जाते समयं ठाकामें उनकी मृत्यु हुई। तब हाजीने उनके भाई हरिधनठाकुर को विजयमाणिक्य नाम देकर सिंहासन पर विठथा और रौसनावादसे मासिक एक हजार रुपये उन्हें देने की व्यवस्था कर दी। रौसनावादका राजस्व वाको रद्द जाने के कारण विजयमाणिक्य कौट कर लिए गए और कुछ कालके बाद वहीं उनका प्राणान्त हुआ।

समय र गजो और अत्रदुल राजाक रौसनावादमें शासन करने लगे। त्रिपुरा जातिसे कर मांगने पर उन्होंने कहा कि राजवंश छोड़ कर और किसोकी हम लोग कर नहीं देंगे। इस पर उन दोनों सुसलमानों ने परामर्श कर हिन्दू उदयमाणिक्यके भतीजे वनमालो ठाकुर को लक्ष्मणमाणिक्य नाम दे कर त्रिपुराकी राजा बनाने का सङ्कल्प किया। युवराज क्षणमाणिक्यको यह बात मान ली होने पर उन्होंने त्रिपुराका राजसिंहासन तोड़ कर नदीमें बहा दिया। लक्ष्मणमाणिक्य वांसके बने हुए सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। उन दो सुसलमानों ने उनसे नामसे नोआखाली और चट्ट्याम प्रभृति देशोंमें लूट-पाट करना आरम्भ को तथा वे लूटके मालसे अपने धनागार भरने लगे। रौसनावादको प्रजाने उनके अत्याचारकी सहन न कर नवाब मोर-काशिम अली खांसि प्रार्थना को। इस पर नवाबने सेना भेज दोनोंको कौटो बना कर तोपसे उछा डाला।

११७० त्रिपुराब्दमें (१७६० ई०में), युवराज क्षणमाणिक्य नवाब काशिम अली खांसि सनद ले कर क्षणमाणिक्य नामसे राजा हुए। उन्होंने त्रिपुरामें नवोन राजसिंहासन प्रस्तुत किया और उदयपुर परित्याग कर आगरतलामें राजधानी स्थापित की। क्षणमाणिक्यने अपने भाई हरिमणिको युवराजके पद पर और अपने चचेरे पोते वोरमणिको बड़े ठाकुरके पद पर नियुक्त किया। इस समय चट्ट्यामके सुसलमान बहुत अत्याचार कर रहे थे। कश्मीराममें लड़ाई छिड़ी। महाराज क्षणमाणिक्यने पराजित हो कर दुर्गमें आश्रय लिया और वहाँसे अस्त्रनिक्षेप कर सुसलमानोंको परास्त किया। कश्मीर-दुर्गका भग्नावशेष अब भी कालो खानके उत्तरमें वर्तमान है। इस समय अंगरेजोंने

बंगाल दखल किया। पीछे १७६५ ई०में लार्ड क्लाइवने बंगालकी दोवानी पाकर राल्पलिक नामक एक व्यक्तिको रेसिडेण्ट बना कर त्रिपुरा भेजा।

२य रत्नमाणिक्यने कुमिल्लेमें जो सप्तदश चूड़ा-मन्दिरका आरम्भ किया था, उसे महाराज क्षणमाणिक्यने समाप्त कर उसमें जगन्नाथको मूर्ति स्थापित की, युवराज हरिमणिक्य कण्ठमणिक्य और राजधरमणिक्य नामक दो शिशुपुत्र छोड़ कर परलोकको सिधारे। महाराज क्षणमाणिक्य और उनको स्त्री जाइवा देवी कण्ठमणिक्या अनादर और राजधरका समादर करतो थीं। ११८१ त्रिपुराब्दमें (१७८० ई०का, ११वीं जुलाई) महाराज क्षणमाणिक्यकी मृत्यु हुई। उस समय कुमार राजधर कुमिल्लामें और रेसिडेण्ट लिक चट्ट्याममें थे।

स्वामोको मृत्युके बाद रानो जाइवादेवी त्रिपुरामें राज्य करने लगीं। रेसिडेण्टने गवर्नर जेनरल वारेन् हेस्टिंग्सको यह सन्वाद पहुँचाया। मि० लिकके आगर तला आने पर रानोने उन्हें कहला भेजा कि राजधरके सिंहासन पर बैठनेसे वे राजकार्यसे अलग हो जायंगे। बड़े ठाकुर वोरमणिको रानोका अभिप्राय समझ कर राज्याधिकार करनेके अभिलाषो हुए, किन्तु उठातु मृत्यु हो जानेसे वे कुछ भी कर न सके। राज्यच्युत लक्ष्मणमाणिक्यने ऐसे सुयोगमें सिंहासन अधिकार करनेकी चेष्टा की, किन्तु जाइवादेवीके कौशलसे वे वशोभूत हुए।

जाइवादेवीने कुमिल्लेमें एक दीर्घिका खुदवाई, जो आज भी रानोकी दोघो नामसे वर्तमान है। वारेन् हेस्टिंग्सने रानोके कथनानुसार राजधरको त्रिपुरापति स्वीकार किया। ११८५ त्रिपुराब्दमें (१७८५ ई०में) महाराज राजधरमाणिक्य सिंहासन पर बैठे और उन्होंने महाराज लक्ष्मणमाणिक्यके पुत्र दुर्गमणिक्य ठाकुरको युवराजके पद पर नियुक्त किया। राजधर राजा हुए सही, किन्तु वे लिखना पढ़ना कुछ भी नहीं जानते थे। इसलिये अंगरेज गवर्मेण्टने रौसनावाद कुछ दिनोंके लिये त्रिपुराके कलेक्टरके हाथ लगा दिया। उस समय वहाँको आमदनी ३६००० रुपयेकी थी। महाराज अपने खर्चके लिये मासिक १ हजार रुपये पाते थे।

राजधरने मत्स्यपुरके राजा जयसिंहको कन्याके विवाह किया। पहले उन्हें कोई सन्तान न थी। दूसरी औषध गर्भके जनके पार पुत्र के जन्मके ले दो को योग्य काममें हो मृत्यु हुई पोर दो जीवित रहे।

इसके समयमें ब्रह्मदेयाधिपतिने त्रिपुरा पोर पाराकान पर आक्रमण किया। सेनापति चायमपतिने भयभीतकी पराजित किया। पाराकान ब्रह्मदेयके अधिकात्ममें पाया। कृकियीके मित्राहो होने पर सेनापति चायमपतिने उन्हें परास्त किया।

राजधरने अपने बड़े लड़के रामगङ्गाको बड़े ठाकुरके पद पर नियुक्त कर उनके हाथमें राज्यशासनका भार सौंपा। वे पिछलेकी क्षासीचरकको जगह ले कर पश्चीतके राजकार्य चलाते थे। योद्धके किसी मष्ट चायमकी कन्या चन्द्रताराके रामगङ्गाका विवाह हुआ था।

राजधरने राजधानीमें इन्द्रावन नामक एक विपक्षकी प्रतष्ठा की पोर मोरपायाममें राजधरगण्ड नामका एक बाजार स्थापित किया। राजधर चलित्त प्रबन्धमें बेराय्य प्रबन्धन कर १२१४ त्रिपुराब्देमें (१८०४ ई०में) बरात काठके गाभमें एक से। पित्तकी मृत्युके बाद रामगङ्गा राजा पौर भाई कामाचन्द्र सुबरात्र हुए। सुबरात्र दुर्गामक्षिने कुशाचाराजुसार राज्य पालिके निजे पालेदन किया। चलने १८०८ ई०का १८०९ सुभाईका प्रभिमियण काठके मतके क हा रामनावाद जमा दाराक परिवहारी उदरायें गये। महाराज रामगङ्गामाविषयने सहर दोषाममें परोस की। पयोसम मा दुर्गामक्षिना स्वतः कायम रहा। पत्त ५ मरेज मधमेंपुन दुर्गामक्षिना त्रिपुरापति बनाया। रामगङ्गा राज्य छोड़ कर जाइइकी चर्च गये को बहकि विपयान पर बानियारा नामक दो पयनका जमो दागे फल ले कर सपरिवार रहन लगे।

दुर्गामाविषय १८०८ ई०में राजा हुए। उन्होंने पहले दोबान रामरजको कन्या सुमित्रा दीनेकी स्थापना, उनके गर्भके दो कन्या जपक हुई। पाके जपेन मकुल वाहनिमको कन्या मङ्गलतिने विवाह किया।

दुर्गामाविषयने कायोमें सिवका स्थापन पोर सिव

मन्दिर निर्माण किया। उन्होंने दो वर्ष राज्य करनेके हितोय विजयमाविषयके पौर शम्भुचन्द्र ठाकुरको सुबरात्र पदोपयोगी हतदण्डादि दिये थे किन्तु उनका परिषेक नहीं हुआ। शम्भुचन्द्रके ज्ञानमें राज्यभार देकर पाप कायोकी चले गये। राजमें १२२६ त्रिपुराब्दको (१८०८ ई०के पत्रिम मानका) पटनेमें उनका देहान्त हुआ।

दुर्गामाविषयकी कन्याके बाद रामगङ्गा प गौत्रके पनुपक्षमें पुनः राजा हुए। कण्ठमवि ठाकुरके पुत्र (महा राज रामपक्षके बड़े भाई) पशुममपि ठाकुर, मनामोत सुबरात्र शम्भुचन्द्र ठाकुर पोर रामो सुमित्रा महादेवीने रोमनावाद जमो दाराके निये सुबहमा चलाया। किन्तु रामगङ्गा माविषय पहले बड़े ठाकुर के रसलिके सदर दोबानो पदालनमें ठकीका स्वतः कर किया गया। सुबहमा मिय होने पर रामगङ्गा १२३१ त्रिपुराब्देमें (१८२१ ई०में) दुधरा वार राजा हुए। कायोचन्द्र पुनः सुबरात्रके पद पर पोर रामगङ्गाके पुत्र कण्ठमियोर बड़े ठाकुरके पत्त पर नियुक्त हुए।

शम्भुचन्द्र सुबहमें वार वार खाईपि पसति कुकियोंके साथ मिन मये पोर बुद्धका पाद्योन्नत करने की, किन्तु त्रिपुराके सेनापति सुबा चन्द्रपक्षे पालत हुए। ब्रह्मरात्रने त्रिपुरा पर पडाई की, किन्तु रामगङ्गाने अपने कायमने उन्हें राज्यमें प्रवेश करने न दिया। ब्रह्मबुधने उन्होंने प मरेजकी महायता को भी।

महाराज रामगङ्गामाविषयने मोरपायाममें एक दार्जिका सुदबाई जियका नाम गङ्गाधामर रखा गया। यह दोर्विका पात्र भी बल मान है। उनकी चलने पुत्र सुबनमोहन पोर सुबपको पोर विमोरीदेवी नामके दो विपक्ष प्रतिष्ठित किये। उनके विषय एक जो था। वे पारमो भायामे पण्डित, माछ, मफ्त विद्या पोर मङ्गबुधने पट्ट थे। १२३६ त्रिपुराब्देमें (१८२६ ई०में) चन्द्रपक्षके समय रातकी मन्थरमें दोषा गुहका पद पोर कचलनमें शानपाम करके कर महाराज रामगङ्गामाविषय स्वर्गलोकाको प्रात्र हुए। इन्द्रावनमें भी कर्नेने रामविहारी नामक पिता स्थापित किया। कन्याके बाद जनको हविर्वा इन्द्रावनके लगे दिवानमें

गाड़ी गईं। उनके आदमे १८ हजार रुपये केवल गरीबोंको बाँटे गये थे।

१२३७ त्रिपुरावर्द्धमें (१८२७ ई०के मार्च मासमें) युवराज काशीचन्द्र राजा हुए। रामगङ्गासाणिकरके समयसे विपुरापतिके अभिषेक काल तक वृटिगराज उन्हें खिलात दिया करते थे। कृष्णकिशोर युवराज और कृष्णचन्द्र नामक काशीचन्द्रके पुत्र बड़े ठाकुर हुए। कृष्णचन्द्रको माता कुटिलाची महादेवी मणिपुर-राज-कन्या थीं। उन्होंने अपने पुत्रोंको युवराज बनाने कहा, इसलिए काशीचन्द्रने उनका यथेष्ट तिस्कार किया।

इस समय फ्रान्सीसी एक कुर्जन रौसनावाटके अध्यक्ष हुए। वे राजाके विश्वासपात्र हो कर बहुत धन-शाली हो गये थे। इनके बड़े लड़के चन्दननगरमें सब से सुन्दर अट्टालिका बना गए हैं। काशीचन्द्र शराब बहुत पीते थे, इसलिए तीन वर्ष राज करनेके बाद ही इनका प्राणान्त हुआ।

१२४० त्रिपुरावर्द्धमें कृष्णकिशोर राजा हुए। बड़े ठाकुर कृष्णचन्द्रके मर जाने पर कृष्णकिशोरने अपने लड़के ईशानचन्द्रको (जिनको उमर द्वाद्वि वर्षकी थी) युवराजके पद पर नियुक्त किया। कृष्णकिशोरने तान्त्रिकोंके अनुरोधसे अनेक चण्डालोंका वध किया और उनके मस्तकसे महापात्र और हड्डोसे महाशङ्ख को माला बनवा कर उन्हें तान्त्रिकोंको दान दिए। विद्वान्, बौर और युद्धकुशल होने पर भी वे मध्य और इन्द्रियपरायण थे, कृष्णकिशोरके समयमें चट्टग्राम के कमिश्नरने त्रिपुराको स्वाधोनता ले लेनेकी चेष्टा की, किन्तु गधर्नर जिनरलने उसे अनुमोदन न किया। उनके दूसरे लड़के उपेन्द्र बड़े ठाकुर हुए।

कृष्णकिशोर शिकारप्रिय थे। शिकारके हेतु उन्होंने जलाभूमिमें राजधानी बसाई और उसका नाम रखा 'नूतन हवेली'। ८ पुत्र और १५ कन्यायें छोड़ कर कृष्णकिशोर १२५८ त्रिपुरावर्द्धमें वज्राघातसे मरे। इनके अपरिमित व्ययके कारण चाकले रौसना वाद बहुत ऋणसे ग्रसित था।

१२५८ त्रिपुरावर्द्धके २० माघकी (१८५० ई०की १श्री फरवरीकी) महाराज ईशानचन्द्रसाणिकर राजा

और बड़े ठाकुर उपेन्द्र युवराज हुए। उस समय राजाका १२ लाख रुपये ऋण था। कृष्णकिशोरने अपनी माताकी सहचरोके लड़के बलरामको आला-हाजीके पद पर नियुक्त किया। ईशानने उसे सुचतुर समझ कर दोवानका पद दिया, किन्तु बलराम अपने भाई ओदामकी सहायतासे राजमें अत्याचार करके अपना कोप भरने लगे। यह देख कर राजा और युवराज छोड़ कर और सभो विरक्त हो उठे। त्रिपुराके प्रधान मनुष्य उन्हें मार डालनेकी चेष्टा करने लगे। अन्तमें कुकियाकी सहायता ले परौचित और कीर्त्ति नामक दो ध्यक्षियोंने नायक हो कर बलराम तथा ओदामके घर पर धावा किया। बलराम भाग गये और ओदाम मारे गए। ईशानचन्द्रने क्रुद्ध होकर बलरामके शत्रुओंकी बन्दो और ओदामहन्ता कीर्त्तिके प्राणनाश किया। बलरामके प्रति प्रजाका विद्देष जान कर महाराज ईशानने उन्हें पदच्युत किया और ब्रजमोहन ठाकुरको दोवान बनाया। द्वितीय विजयसाणिकरके पुत्र इस समय केशो नदोके दक्षिणो किनारे वगाचतल नामक स्थानमें एक छोटा राजा स्थापन कर त्रिपुराके दक्षिणार्धमें लूट मार मचाते थे। ईशानचन्द्रने उन्हें वशीभूत किया। युवराज उपेन्द्र पिता सराखे मध्यपान और कुकियासक्त थे। १२६१ त्रिपुरावर्द्धमें उनको मृत्यु हो जाने पर त्रिपुरामें शान्ति विराजने लगी। ब्रजमोहन दोवान भो ऋण शोध न कर सके। रौसनावाद हाथसे निकलने पर ही गया। राजपरिवारका भरणपोषण क्लेशकर हो पड़ा। कलकत्तेके ठाकुर वंशोय दक्षिणारञ्जन सुखोपाध्याय इस समय त्रिपुरा आ पहुँचे। उन्होंने महाराजको दिलाशा दिया। इस पर महाराजने उन्हींको मन्त्रो बनाना चाहा, किन्तु उनके चरित्रमें दोष रहनेके कारण राजगुरु विपिनविहारी गोस्वामोने समस्त कामचारियोंके परामर्शसे महाराजको इस काममें बाधा दी। महाराज ईशान अथन्त गुरुभक्त थे। उन्होंने गुरु-वाक्यसे दक्षिणा वावूकी विदा करके उन्हें कहा, 'प्रभो! मैं चाकले रौसनावादकी रक्षाका उपाय नहीं देखता हूँ। आपके चरण पर राजा और जमींदारी सौंपता हूँ, आप ही इसकी रक्षा कीजिये।'

विपिनविहारोने १२६३ त्रिपुरास्मिन् त्रिपुराहा शालन
मार अपने ऊपर लिया। समकालमें कार्य बनाने-
के लिये एक समय वज्रचन्द्र यशोपाध्याय नामक एक
बालक बुद्धिमान् मनुष्य धामलोकाग निवृत्त हुए। वे कुछ
समय कलकत्तमें पौर कुछ माह आगरतकामें रहते थे।
गुरु विपिनविहारोने धामलोके परामर्शसे राज्यका
व्यवस्थापनके लिये लिये। ईशानचन्द्रने २
अष्ट भूमि आकाश कराकर उत्तमा नाम अपने दो
पुत्रोंके नाम पर ज्जिन्दनगर पौर लखन्योय रखा। गुप्तको
सहायसे इन्होंने अपने दोनों पुत्रोंको सुवराज पौर वड़े
ठाकुरके पद पर नियुक्त करवाया। इस पर उनके
माई सजाया करने लगी। उन्होंने मयसे ईशानचन्द्रको
कहना मेला कि ईशानके दो पुत्रों के लिये पौर बिनो
का कोई उत्तराधिकारी पद नहीं देवे। राजाको भी
द्विपथे मार डालनेको लोचिग होने लगी, जिन्तु गुप्त
परसे लोचनसे यह बात जान लेने पर राजाने उन्हें
पकड़ संगया पौर कैद कर लिया। इस समय अष्टपाम
में विद्याके विद्वेष्ट चारण्य हो गया था। ईशानचन्द्रने
इसे दमन करनेमें पराजयकी शून्य सहायता
की।

१२६८ त्रिपुरास्मिन् कुम्भिलोका उत्थात यक्ष कुषा
बिन्दु महाराजने लखे गुरु त दमन किया। इस समय
बड़े ठाकुर पौर सुवराजके पद जानेके लिये नीचलख
पौर बोरचन्द्र नामक ईशानके दोनो माई धायपमें
भ्रमणमें लगे। सु+दमा करने पर मो के निजदी न
हुए, बिन्दु इनके परिवारमें अट्टिग गवर्नमें लखे साव
त्रिपुराको मित्रताके रूपमें एक मन्थि हुई।

ईशानचन्द्रने तोउरी पुत्रके नाम पर मो रोहिणी
नगर नाम रखकर एक नूतन नगर बनाया पौर तीसरी
पुत्रको जामोर को। तिष्ठा वरगनेमें शनी चन्द्रमुखी
महादेवीके नामसे एक शांकर बनाया गया। चन्द्रगरने
अन्दाजनमें राजामावहकी एक मूर्ति स्थापन की।

१२७२ त्रिपुरास्मिन् ११ वापककी ३३ वर्षकी
परकामें महाराज ईशानचन्द्रमाषिक उत्तराधिकारी
नियुक्त लिये बिना शांतरोने परमोक्तकी बल से।

इन्होंने ही त्रिपुरामें नूतन राजमापाद निमाप किया
था। केवल एक दिन तक इन्होंने इस प्रासादका भोग
किया था। बहुत तक मितकडे बाद बोरचन्द्रमाषिक
न राज्य प्राप्त किया। ये धामिक तथा माहित्यानुवागी
थे। इन्होंने यथसे त्रिपुराराज्यमें बहुतसे सुनियम बनाये
गये हैं। इनके बाद राजा विजयमाषिक पौर राजा
राधाविशोर देव वर्ममाषिकने त्रिपुरा-राज्य कापन-
को सुशोभित किया। वर्तमान राजाका नाम H H
गवा बोरचन्द्रविशोरमाषिक बहादुर है। इनके अट्टिग
वर्षमें पञ्चको पौरके १३ लोकोको सन्नामो निवृत्त है।
त्रिपुरामें बौद्धधर्म प्रचलित है।

“रामपासके राजस्वकायमें प्रसिद्ध बौद्धतामिक
विक्रय पाविभूत हुए। इनका दूसरा नाम धर्मपाल था।
उनके प्रधान गिबका नाम काकविक्रय था। एक समय
धापाय काविक्रय त्रिपुराको पाये। उनका सदुपदेश
सुनकर त्रिपुरापति बिसुम्ब को गये पौर उनसे तान्त्रिक
बौद्धधर्ममें दीक्षित हुए। धापायके निवृत्त रहते रहते
राजा भो एक मित्र को मये। तान्त्रिक बौद्धके मतसे भो
मन्थिपद्म लखे होनेसे सिद्धिसाध लखे होता है।
एक दिन राजाको भी धायेय मिला कि पद्मावतो नामक
लोकत्री लख्याको मन्थिपद्मसे प्रसन्न करने पर उन्हें
निधि प्राप्त हो सकती है। राजाने इष्टविलसे लोमनी
को प्रसन्न किया। उसको साथ ही वे राजधानी छोड़ धन
को लखे गये पौर लखे सावना करने लगे। लमयः के
लोमराज का लोमाचारी नामसे विख्यात हुए। इनके लका
प्रारक समता थी। बिन्दु लोमकथामें महाभारत करनेके
कारण वे राज्यमें निर्वासित हुए थे। उनको पशुपत्ति
में राज्यमें महामारो पड़ू को। ज्योतिषिणीने यचना कर
कहा कि राजाके नहीं रहनेसे ही ऐशो दुर्घटना उपस्थित
हुई है। प्रधान राजाको बहुत यत्नसे बुलाया। राजाके
पार्थ पर राज्यमें शान्ति स्थापित हुई। लखोंने वर्म
नामक तान्त्रिकबौद्ध मतका प्रचार किया। बहुत छोटे
दिनोंके मन्थ बहूतसे लोगोंने इन मतको प्रसन्न कर
लिया। धर्मपूजामें बयलोमिने, बयशाराको बय
डादिने, बयमें देव वा देवयान, माय धादिनी पूजा की
जाती है।”

त्रिपुरान्तक (सं० पु०) त्रिपुरस्य अन्तं करोति अन्त-गिञ्
श्वन् । १ गिव, महादेव ।

त्रिपुरारि (सं० पु०) त्रिपुरस्य अरिः, क्षतन् । १ गिव,
महादेव । २ एक टीकाकारका नाम, पार्वतीनाथके
पुत्र । इनको बनाई हुई अनर्वा रावव और मानतो-
माधवकी टीका पायी जाती है ।

त्रिपुरारिपान्—एक संस्कृत कवि । सदुक्तिकर्णामृतमे
इमको कविता उद्धृत हुई है ।

त्रिपुरारिभ (सं० पु०) औपवविभिय, एक प्रकारकी
दवा । इमको प्रसृत प्रणाली—हिन्दु, लोथ, पारा, तीखा,
गन्धक, लोहा, इस्वक, विष प्रत्येक १ तोला, चाँदीकी
भस्म आठ तोला, इन सबकी एक साथ मिना कर चट-
खुई रसमें मन्त है और वाट २ रत्तीका गोली बनाते
है । इमका अनुपान मधु, चीनी वा अदरखका रस है ।
इसके सेवन करनेसे आठों प्रकारके ज्वर, म्रोडोदर, गीघ
और अतिशय बहुत जन्ट आगम हो जाते हैं । गद्वरने
जिस प्रकार त्रिपुरको टग्न कर डाला था, उसी प्रकार
यह दवा भी रोगोंकी अति गौर जला देती है, इसीसे
इमका नाम त्रिपुरारिभ पड़ा ।

त्रिपुरुष (सं० स्त्री०) त्रयाणां पुरुषाणां समाहारः । १
पितादि पुरुषत्रय, पिता, पितामह और प्रपितामह । त्रयः
पुरुषाः पित्रादयो भोजारो यस्य । २ भोगभेद, सम्पत्तिका
वह भोग जो तीन पोटियों अलग अलग करे ।

प्रपितामहने जिसका भोग किया हो, पीछे उसकी
पुत्रने किया हो और वाट जिसे उसका भी पुत्र भोग कर
रहा हो, उसे त्रिपुरुष कहते हैं, किन्तु पितामह, पिता
और पुत्र इन तीनोंके जीवित रहते जो भोग किया जाता
है, उसे एक पुरुष भोग कहते हैं ।

(त्रि०) त्रयः पुरुषाः परिमाणमस्याः ठन् तस्य लुक् ।
३ पुरुषत्रयपरिमित, जो तीन पोटियोंमें चला आ रहा
हो ।

त्रिपुरिगाडि (सं० पु०) काश्मीरका एक पर्वत ।

त्रिपुष (सं० पु०) १ ककड़ी । २ खीरा । ३ गेहूँ ।

त्रिपुषा (सं० स्त्री०) श्रोन् वातादिदोषत्रयान् पुण्या-
तोति पुष-क, तनष्टाप । कण्विद्वत्, काला निमीय ।

त्रिपुंकर (सं० स्त्री०) त्रयाणां पुंकराणां समाहारः ।

१ पुंकरत्रय, ब्रह्मकृत तीर्थभेद । २ ज्येष्ठ, मध्यम और
कनिष्ठके भेदमें पुंकर ऋट । (पु०) ३ नचत, वार,
तिथिरूप अशुभयोगभेद । पुनर्वसु, उत्तराषाढा,
कृत्तिका, उत्तरफल्गुनी, पूर्वभाद्र, विशाखा, रवि, मङ्गल
और गनिवार तथा द्वितीया, मगमी, तथा द्वादशी तिथिमें
सृत्यु होनेसे त्रिपुंकरयोग होता है । सृत्युके दिन उक्त
वार, नक्षत्र और तिथिके पढ़नेमें ही इस प्रकारका
त्रिपुंकरयोग लगता है ।

यह त्रिपुंकरयोग बहुत अशुभ है । इस योगमें
किसी व्यक्तिको सृत्यु होनेसे बहुत जल्द उसको शान्ति
करने चाहिये, नहीं तो उसके परिवारके प्रायः सभी
आदमी मर जाते हैं, यहाँ तक कि उसके वृद्ध आदि भी
नष्ट हो जाते हैं । पूर्वोक्त तिथि, वार, नक्षत्रमें जन्म होने-
में जारजयोग होता है । इसमें यदि कोई लाभ हो, तो
वैसा ही लाभ और तीन वार होता है, यदि हानि हो,
तो वैसी ही हानि और तीन वार होती है और यदि
कोई चीज चोरी गई हो, तो वैसी ही तीन वार चोरी
होती है । इस योगमें मरनेमें प्रथम मास वा वर्षमें पीडा
होती और उसके पुत्र विनष्ट होते हैं । देवतासे रक्षाको
जाने पर भी पुत्रकी रक्षा नहीं है ।

त्रिपुंकरयोगकी शान्ति अगोचकें दिन करनी होती
है । इसमें देरी करनेसे घोर घोर अनर्थ होने लगता
है । अर्थात् पुत्र, भाई, स्त्री, पति, श्वसुर, माता, पिता,
स्वसा, चाचा, बहनोई, बड़े भाई, स्वामी, अपत्य इनमेंसे
एक एकको सृत्यु क्रमशः होने लगती है । १६ मास पुरने
पर वाश्वनष्ट होते और यदि वाश्वन न हो, तो वासु वृक्ष
तक भी जीवित नहीं रहते । इस योगमें यदि कोई
मरे, तो उसके परिवारमें तीन आदमी और मरते हैं ।
यदि कोई वस्तु लाभ हो, तो वैसा ही लाभ और तीन
वार होता है । इस प्रकार श्भाशुभ कार्यमें तीन तीन
कर मङ्गलामङ्गल होते हैं, इसीसे इस योगका नाम
त्रिपुंकर हुआ है । इसकी शान्ति करनेमें वराह-संहि-
तोक्त अयुतहोम करना होता है । यदि इसमें कोई
अशुभ हो, तो उसे सुवर्णादि दान करना चाहिये ।

आचार्य द्वारा होम और वलि प्रशस्ति की जाती है ।
शान्तिविचारण पुंकर शब्दमें देखो ।

विपुष्ट (स० पु०) जल-सुराभासुसार पोदनपुरिरे राजा प्रजापतिसे पुत्र, इस युगके ८ नारायणोंमेंसे प्रथम नारायण । इनको माताका नाम भगवती या । नारायण विपुष्ट स्वारक्षमें तोर्षाद्वार भगवान् चोदासनायके समयमें उत्पन्न हुए थे । इनका जीव पूवभर्षमें मारोचको प्लासमें था । इनको पाशु चोरासो नाथ भर्षको यो । इनोंने प्रतिनारायण पञ्चशोभको कुर्ममें पदाप्त चोर निहत किया था तथा पाप तोम कच्छके स्नामो बने थे । इनके पाल शक्रवर्तसे पायो मन्थति घो, इसनिसे वे पईचक्रवर्ती कहलाते थे । पञ्च ८ नारायणोंके विषयमें सो प्रश्नो बाले हैं । इनकी १६०० रानियां थीं । पहरागी का नाम था क्षय प्रसा । इनके ल्येह पुत्रका नाम श्री विजय था । इनको पिता प्रजापतिसे विहितायण मुनिसे निष्कट दोषाश्री श्री चौर निर्वाचप्राप्त हुए थे । किन्तु नारायण विपुष्ट मर कर नरक गये ।

(प्राचीन शैव-इतिहास ११ भाग पृ० ११२ ११)
 विपौरप (स० लो०) सोम विवादीन् पुष्यान् व्याजोति पञ्च उत्तरपट्टशि । विवादि क्रमसे तोम पोषिर्वाका सोम । त्रिपुरर वैको ।

विपौनिवा (वि० लो०) विपौनिवा वैको ।

त्रिप्यपूर—भग्नराजके विवाहुरराज्यके पत्न्यंत त्रिप्यन्द-रम् तासुका एक घाम । यह पचा० ८ ११ उ० पौर देया० ०५ १८ पू०में त्रिप्यन्दरम्में ३ मील उत्तरमें अवस्थित है । जनसंख्या प्रायः १११० है । वहां बिन्दुके चरकोंकी पूजा होती है, यह कारण इसकी विनतो तोर्षासे को गई है । कहते हैं कि विवाहुर राजव यथै कृष्णदेवता धनतपधनामका मरतक तिहन्नभर्षमें, बड़ विषन्दरम्में चौर पौर त्रिप्यपूरमें है । इस कारण यह घाम बहुत पवित्र माना जाता है ।

विपुष्ट (स० पु०) लयाचां टिमन्नेमन्नाम्यं प्रथ० । १ दिक्देशे चौर कासविषयक प्रथ टिमा देम चौर कासमन्थो म्य ।

विपुष्ट (स० पु०) त्रिपु लानेपु प्रमुनः । मह चरित मत्तगज बड़ हाको त्रिपुके मत्तव कपोन चौर नेत्र इन तीनों स्थानोंसे मह भङ्गता हो ।

विपुष्ट (स० पु०) जगदविशेष, एक बहुत प्राचीन देशका नाम ।

त्रिकुणा (स० लो०) त्रयाणां कुणानां समाहारः पञ्चटि-त्वात् । "त्रिमी" (पा० ३।१।११) इति ध्रुवेष ङीप् । १ पांचवले, बड़ पौर बड़ेकेका मन्थ । इनका पर्याय—त्रिकुमी फलत्रय पौर फलत्रिक है । यह पांचवले लिए जितकारक धर्मिदोषक, इतिहासक सारक तथा कज, पिठ, मंड, क ह पौर विषमन्वरका मायक माना जाता है । इससे द्वारा वैश्वकर्में पनेक प्रकारके छत पादि बनाए जाते हैं ।

त्रिकुणाद्युत (स० लो०) त्रिकुणानां रमेण सुष्ठ छत । छतपोषणमेद । सो 58 मेर, कायके लिए मिना कुपा त्रिकुणा ८८ सेर, जल ६४ सेर, श्रेय १६ सेर मायका मूत्र 58 मेर, चूर्ण मिना कुपा ६१ मेर इन्होंने मन्थके मेल-से यह छत प्रस्तुत होता है । इनके सेवन करनेसे तिमिर रोग जाता रहता है । (वैद्यग्र०)

प्रस्तुतको पूपरी विभिन्नी 58, कायके लिए त्रिकुणा (प्रत्येकका) ८२ मेर, जल 8८ मेर श्रेय १० मेर मूत्र 58 मेर, कल्पाय त्रिकुणा, त्रिकुट, त्राचा, यष्टिमड कुटको, पुष्पगोकलाह कोटी इषायणो, विडड, मागिग्रर, गोमोत्पल धनतमूल, श्यामाशता रक्तचन्दन हरिद्रा हाहृरिद्रा प्रत्येकका दो दो तोला से कर छत प्रस्तुत करते हैं । इनसे तिमिररोग एवं कामल, पशुद, विमर्ष, प्रदर, कण्डू, पादि रोग नष्ट हो जाते हैं ।

(वैद्यग्र०)

त्रिकुणादिनीच (स० लो०) शोषकविषय । इसमें बनानेको विधि यह है—त्रिकुणा शोका त्रिकुट, विडड कुट, बच चोतामूल, यष्टिमड प्रत्येकका चूर्ण १ पल कोइचूर्ण ८ पल, शुष्क ८ पल, इन सबको १२ पल मधुके साथ चोट कर शोषक बनाते हैं । प्रातःकाल इसका सेवन करनेसे पुःसायक घामवात, पाण्डू, इन्दी मक, मूल, मूत्रपु पौर विषमन्वर जाता रहता है ।

त्रिकुणाद्युत (स० लो०) १ चन्द्रतोत्र छतपोषण-मेद । कोटी पौर बड़ेके भेदसे यह दो प्रकारका है । मधुविषमाद्युतमें 58 मेर सो पौर १६ मेर मत्त मुनीके कायमें काल, त्रिकुणा पौर यष्टिमड ६१ सेर

डाल कर आग पर चढाते हैं। थोड़े देर बाद उसे उतार कर उसमें एक सेर मधु मिला देते हैं। इससे त्रिदोषज तिमिररोग दूर हो जाता है।

त्रिफलाद्यमहाष्टत—ष्टत ५४ सेर, क्वाथके लिए मिला हुआ त्रिफला ५२ सेर, जल ५६ सेर, शेष ५४ सेर, भृङ्गराजरस ५४ सेर अथवा वामकमूल ५२ सेर, जल ५६ सेर, शेष ५४ सेर, शतमूलीका रस ५४ सेर, छागदुग्ध ५४ सेर अथवा पूर्ववत्क्वाथ ५४ सेर, आंवलेका रस ५४ सेर, कल्कार्यं पीपल, चोनी, द्राक्षा, त्रिफला, नीलोत्पल, यष्टिमधु, नीरकाकोलिका, गम्भारीकी छाल, कण्टकारो आदिका मिश्रित भाग ५१ सेर लेकर यह महाष्टत प्रस्तुत करते हैं। इसके सेवन करनेसे सभी तरहकी चक्षुरोग नष्ट हो जाते हैं। यह नेत्ररोगके लिए रामवाण है। (भैषज्य०)

२ कृमिरोगोक्त ष्टत—श्रीपधमेत। यह ष्टत ५४ सेर, गोमूत्र ५६ सेर, कल्कार्यं त्रिफला, निसोथ, दन्तीमूल, वच, कमलगट्टा ५१ सेर लेकर प्रस्तुत किया जाता है। इसके सेवन करनेसे सब प्रकारके कृमिरोग जाते रहते हैं।

दूषणो विधि—हृद, बहेडा, आंवला, विडङ्ग प्रत्येक १६ पल, पीपल, पीपरामूल, चंद्र, चीतामूल, सोंठ मक्की मिला कर १६ पल, दशमूल १६ पल, पाकार्यं जल ६४ सेर, शेष ५८ सेर, ष्टत ५४ सेर, कल्कार्यं मन्थव लवण ५२ सेर सबको एक साथ मिला कर आग पर चढाते हैं। बाद आग परसे उतार कर ५१ सेर चोनी डाल देते हैं। इसका गुण भी पूर्ववत् है। (भैषज्य०) त्रिफलीकृत (म० त्रि०) त्रि त्रिवारं फलो कृतः वितुपीकृतः। वह चावल जिसकी भूसी तीन बार निकाली गई हो।

त्रिवन्दरम्—मन्द्राजके त्रिवाङ्गुर राजाकी एक राजधानी। यह अक्षा० ८' २८' ३०" और देशा० ७६' ५७' ५०" में अवस्थित है। भूपरिमाण ८८८ वर्गमील है और लोकसंख्या प्रायः ५७८२२ है। मलयालम् प्रदेशको सामाजिक प्रथाका एक केन्द्र होनेके कारण यह नगर बहुत प्रसिद्ध है। त्रिवाङ्गुड राजाके प्रासाद, सभामण्डप और दुर्ग इसी नगरमें हैं। नगरके चारों ओरका दृश्य बहुत मनोहर है। समुद्रके किनारेसे यह एक कोस

दूर है। इसके गामने समुद्र गर्भमें एक वानुका चरं और दलदलविशिष्ट द्वीप पश्चिमघाट पर्यंतके क्रीडवर्ती जमीनके साथ मिल गया है। करुमानय नदी इस नदीके निकट हो कर बहती है। नगरका दक्षिण भाग स्नाय्यकर है। घने नारियलके वगोचे होनेके कारण उस अंशकी जलवायु खराब है। यहाँका दुर्ग उतना मजबूत नहीं है, चारों ओर दृढ़ और ऊँचे प्राचीरने घिरा है। त्रिवाङ्गुड राजाका यही सबसे प्रधान शहर है। यहाँ त्रिवाङ्गुडके महाराज और वृटिगसेना रहते हैं।

दुर्गमें राजवंशका प्रासाद तथा पद्मनाभ नामक विश्वसृष्टिका विख्यात मन्दिर है। इन सब अटालिकाओंके बड़े बड़े बगमटे, भरोखे आदि कारुकार्ययुक्त हैं, जो देखनेमें बहुत सुन्दर लगते हैं। पद्मनाभका मन्दिर बहुत प्राचीन और पुण्यस्थान होनेके कारण प्रसिद्ध है। मन्दिरके रहनेसे ही यहाँ त्रिवाङ्गुडकी राजधानी उठा कर लाई गई। मन्दिरको देवोत्तर-सम्पत्तिसे वार्षिक ७५ हजार रुपयेकी आय है। बहुतोंने आधुनिक राजाओंको यह अस्वास्थ्यकर स्थानका दुर्गवास छोड़नेके लिए अनुरोध किया, किन्तु प्राचीन वासस्थान की माया तथा ब्राह्मणोंके कथनानुसार वे यह स्थान छोड़ देनेको राजी न हुए। प्रति पुण्याह कर्ममें महाराजको उपस्थितिका प्रयोजन पडता है, इस कारण वे और भी पद्मनाभके मन्दिरका साविध्यवाम परित्याग नहीं कर सकते। इस नगरमें महाराजकी एक टकसाल जिसमें पैसेकी सिवा और कोई मुद्रा नहीं चलती है। शहरके उत्तरमें स्कंधावार, अम्नागार, अस्पताल, नायर विथ्रोड नामक नायर मैन्डलके कार्यालयदि और यूरोपोयनके वासस्थान हैं। मैन्डलमें प्रायः १४ सौ सेना हैं जिनमेंसे तीन यूरोपोय सेनानायक हैं। ये लोग मन्द्राज गवर्नमेंटसे नियुक्त हुए हैं। महाराजके बाद ही दीवानका पूरा अधिकार रहता है। उनके वासस्थान तथा कार्यालयदि भी इसी शहरमें हैं। शहर में एक मन्दिर अदालत, एक चिकित्सालय और अंगरिज-डाक्टरके अधीन अस्पताल है, जिनमेंसे गर्भिणोंका अस्पताल, साधारण अस्पताल, पागलोंका अस्पताल और

मैत्रावरुणस्य चर्यात्कालं ध्यतस्व ॥ यथा महासारात्रका
एक शशिश्चै त्रिस्रसो बनावट् केचने योग्य ॥
१८२१ ई०को शहरमें एक भान-मन्दिर स्थापित हुआ
॥ महासारात्र ही इस मन्दिरके पवित्रता है ।
१८२१ ई०में इस मन्दिरको एक श्राद्धा पगस्येधर पर्वत-
के खपर स्थापित हुई है । पहले यहाँ युरोपीय ज्योतिषी
रहते थे, पामी उनको जगह पर देगोय ज्योतिषी हैं ।
यहाँ पढ़नेके कारण १६६१ ई०में पगस्येधरका मान
मन्दिर तोड़ डाला गया । यहाँका 'मिथियर म्युजियम्'
नामक बाबूसर बहुत सुन्दर है । त्रिवाङ्गराज-
की ३३ प्रतिधियाकाधोमिसे प्रधान प्रतिधियाका जो
हठी नगरमें पवकित है, राजस्थानके परिवाकित होती
है । 'त्रिवाङ्गर राज-गण्ड' नामक सामाजिक पत्र मसवा-
कन्धु और च मरीजे भावामें हसो खानसे प्रकाशित होता
है । नगरकेयन शहरमें 'त्रिवाङ्गर टाइम्स' नामक पत्र
है जो समाचारपत्र महीनेमें तीन बार निकलता है ।
त्रिवाङ्गुके राजाकी राव सेवर चङ्गरीकेसे यहाँ डेनि
पापधामिस् कीका गया है ।

त्रिवन्धन (स० पु०) १ हव'सने योज एक राजाका नाम ।
२ वापदादि तोनों पवकामे कीन ।

त्रिवन्धु (स० पु०) त्रिकोकका बन्धु ।

त्रिवलि (स० खो०) त्रिगुधिता बलिः । उदरकित बली-
जप, में तोन बस जो पीठ पर पढ़ती हैं ।

त्रिवलीक (स० खो०) तिखी बस्यो वस वप । १ नाडु ।
२ मलहार, हुदा ।

त्रिवाणु (स० पु०) त्रयो वाणयो यण । १ ब्रह्मणुचरमिद,
बहुके एक पनुचरका नाम । २ पनुबुधाकारमेट
तनवारका एक श्राव ।

त्रिम (स० खी०) त्रयावा भागं रामोर्णं समाहाटः । १
बन्धादि रामिषय सन्ध ह्यादि तोनी राशि । २ तोन
राशि । (त्रि०) १ मन्ध्रमयबुध, त्रिममें तोन मन्ध्र
हो, ऐकतो चङ्गिनी और भरणी मन्ध्रबुध धारिण,
। घतमिवा पूर्वभाद्रपद और चत्तरभाद्रपद मन्ध्रबुध
भाद्र, पूर्वफल्गुनी, उत्तरफल्गुनी और हस्ता मन्ध्रबुध
पाशुन भास ।

त्रिमङ्ग (स० सि०) त्रौचि मङ्गानि बन्धाचि यण ङ्ग न

त्रि-मङ्ग, तोन वनहसे टैङ्गा, श्रीलक्ष्मीको एक भूति
त्रिसमें मगवानुको पोवा ङटि घोर जाडु बुध बस
भावसे बने होते हैं ।

त्रिमङ्गो (स० खो०) १ मासाङ्गत बन्दोर्मिद, एकमासिक
बन्धका नाम । इसके प्रबन्ध चरचमें १२ मासाए
होतो हैं और १०,८,८,६ मासाओं पर यति होतो है ।
२ ताकच साठ सुख्य भिदोर्मिसे एक । इसमें एक शुभ, एक
शुभ और एक भूत भासा होतो है । ३ यह रागका एक
मैद । (त्रि०) ३ त्रिमङ्ग, तोन जगहमें टैङ्गा ।

त्रिमञ्जोबा (स० खो०) त्रिमन्त्र जोबा, ३-तत् । त्रिष्या,
व्यामको पावो हैबा ।

त्रिमञ्ज्या (स० खो०) व्यासादे रैषा, त्रिज्या ।

त्रिमण्डो (स० खो०) मीनुं वातादि सोपान् मण्डलि परि
हनतोति मण्ड-पण्ड मतो डीप । त्रिहता, निभोय ।

त्रिमङ्ग (स० खो०) त्रिषु मन्ध्रतदन्ततमर्दनेष्वपि
मङ्ग यस्मिन् । प्रसङ्ग, भोग, रतित्रिया ।

त्रिमसोर्बिधा (स० खो०) त्रिज्या व्यासको पावो
हैबा ।

त्रिमाय (स० पु०) त्रितोयो मागं त्रयो च क्या मन्ध्र
पूरुचार्यत्वात् । त्रियोय माग, तोहरा त्रिष्या ।

त्रिमानु (स० पु०) त्रुर्बन्धु व शने एक राजाका नाम ।

त्रिमात्र (स० पु०) त्रिषु शशिषु भावोऽप्य । त्रिशासिक
पदाय ।

त्रिमृत्ति (स० पु०) त्रिषु सुन्दिरप्य । तिरहुत वा मिथिला-
रैय ।

त्रिमुञ्ज (स० खो०) त्रयो मुञ्जा यत । त्रिवाङ्गु, तोन
मुञ्जापो का वेत । केन हैको ।

त्रिमुवन (स० खो०) त्रयावा मुवनानां सोकानां समा
चारः, पन्धादित्वात् डोप । त्रिलोक, जगत्, हृमी और
पाताम ।

त्रिमुवन—समाधितक नामक जैन ग्रन्थके रचयिता ।

त्रिमुवन चन्द्रवर्ती—दक्षिण प्रदेशके राजाओंको उपाधि ।
धेर सोम, पाण्डु, चाण्डल प्रथति व मोर्ने बहुतने
राजाधीने यह उपाधि पवच को दो ।

त्रिमुवनपान—१ गुजरातके चौतुकर व शने एक राजाका
नाम । ये तिरहु, नपास नामसे प्रसिद्ध थे । २ कीजे १०८८

सम्बतमे ले कर केवन चार वर्ष तक राज्य किया था। किसोके मतसे इन्होंने ही सूर्यशतक्रको टोका रची थी।

२ गौडराज धर्मपालके महामामन्ताधिपति। ये ब्राह्मण और पण्डितोंका खूब आदर करते थे। इन्होंने अनुरोधसे राजा धर्मपालने नारायण भट्टारककी बहुत-सो जमोन टान दो थो। दूताङ्गद नामक संस्कृत छाया नाटकके रचयिता कवि सुमटने इन्होंने आयय और उत्साहसे उक्त पुस्तक रचना की थी।

त्रिभुवननाल—नारदविज्ञान नामक संस्कृतग्रन्थके रचयिता।

त्रिभुवनेश्वर लिङ्ग (सं० स्त्री०) भुवनेश्वर वा एकाम्ब जीवका प्रधान लिङ्ग। एकाम्ब और भुवनेश्वर देखी।

त्रिभुवनसुन्दरी (सं० स्त्री०) १ दुर्गा। २ पार्वती।

त्रिभूम (सं० पु०) तिस्रो भूमयः ऊर्ध्वो मध्यस्था अस्य, अत्र समासान्तः। प्रामादमेद, तीन खण्डोंवाला मकान, तिमहला घर।

त्रिभोनेश्वर (सं० स्त्री०) त्रिभिन्नवृत्त पर पढ़नेवाले क्रान्तिवृत्तका ऊपरी मध्य भाग।

त्रिमङ्गल—एक विख्यात द्वाविड़ पण्डित। इन्होंने त्रिमङ्गल-वार्त्तिक नामक मध्वाचार्यका मतपोषक एक बड़ा ग्रन्थ प्रणयन किया है।

त्रिमण्डला (सं० स्त्री०) लूता भेद, एक प्रकारकी लहरौली मकड़ी।

त्रिमद (सं० पु०) त्रिगुणितो मदः संप्रात्वात् कर्मधा०। विद्यामद, धनमद, और अभिजनमद ये तीन प्रकारके मदोत्पन्न गर्वत्रय, परिवार, विद्या और धन इन तीन कारणोंसे होनेवाला अभिमान। २ सुप्ता, चित्रक, विडुङ्ग, माया, चीता और वाय विडुङ्ग इन तीन चीजोंका समूह।

त्रिमधु (सं० स्त्री०) त्रिगुणितं मधु संप्रात्वात् कर्मधा०। १ दुग्धादित्रय, दुध, चीनी और शहद इन तीनोंका समूह। (पु०) २ ऋग्वेदैकदेश, ऋग्वेदके एक अंशका नाम। ३ ऋग्वेदका यागभेद, ऋग्वेदका एक यज्ञ ४ वह व्यक्ति जो विधिपूर्वक उक्त अंश पढ़े। ५ मधुवातादि तीनों ऋक् जाननेवाला पुरुष।

त्रिमधुर (सं० स्त्री०) त्रिगुणितं मधुरं संप्रात्वात् कर्मधा०। घी, शहद, और चीनी इन तीनोंका समूह।

त्रिमल्ल—इस नामके बहुतसे संस्कृत और तामिल ग्रन्थकार दक्षिण प्रदेशमें हो गए हैं, जिनमेंसे निम्नलिखित प्रधान हैं--

१म—इन्होंने गोतगोरी, गोपालाख्या और भक्ति-विनास चम्पू प्रणयन किए।

२य—इन्होंने 'अनुव्याख्या' नामक सिदान्तकौमुदी की एक व्याख्या पुस्तक लिखी है।

३य—ये तिरुमल्ल आवाई नामसे प्रसिद्ध हैं। इत-सिद्धि नामक वेदान्त, सहस्रकिरणो और सारकौमुदी प्रभृति संस्कृत ग्रन्थ इन्होंने बनाये हुए हैं।

त्रिमल्लज्ञान—आश्वलायनीय विध्यपराध-प्रायश्चित्त नामक संस्कृत ग्रन्थकार।

त्रिमल्लतनय—कात्यायनज्ञानसूत्रके एक टोकाकार।

त्रिमल्लभट्ट—पल्लवारमल्लरी नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

त्रिमल्लभट्ट वैद्य—आयुर्वेदके जाननेवाले एक प्रसिद्ध वैद्य पण्डित। ये शिङ्गणके यौव, वत्सभके पुत्र और रसप्रदोषके रचयिता शङ्करभट्टके पिता थे। इन्होंने द्रव्यगुणशतशोको, योगतरङ्गिनी, वृत्तमाणिक्यमाला और वैद्यचन्द्रोदय आदि वैद्यकग्रन्थ प्रणयन किये।

त्रिमातृ (सं० स्त्री०) त्रयाणां लोकानां माता, निर्माता। त्रिलोक-निर्माणकारक, तीनों लोकोंके बनानेवाले।

त्रिमात्र (सं० पु०) तिस्रः मात्रा उच्चारणकालेऽस्य। पुत्र स्वर। एकमात्र स्वर ऋ, द्विमात्र स्वर दीर्घ, त्रिमात्र स्वर ऋत और व्यञ्जन अर्द्धमात्र है, प्रणव त्रिमात्र है, प्रत्येक कार्यके प्रारम्भमें त्रिमात्र प्रणव उच्चारण करना पड़ता है।

त्रिमात्रिक (सं० स्त्री०) तीन मात्राओंका, जिसमें तीन मात्राएँ हों, पुत्र।

त्रिमार्ग (सं० स्त्री०) त्रयाणां मार्गाणां समाहारः। तीन पथ, तिसुहाणी।

त्रिमार्गगा (सं० स्त्री०) त्रिमार्गैर्गच्छति गम-ङ। गमना।

विमार्गगामिनी (स० श्री०) विमार्गमें गच्छति गम
चिनि-जोप. गङ्गा ।

विमार्ग (स० श्री०) त्रयो मार्गो यस्या । १ गङ्गा ।
२ तिसुहातो ।

विमर्ग (स० श्री०) विमार्गो वेषो ।

विमार्गो—बम्बई प्रदेशमें रहनेवाली एक प्रकारकी
मिथात्रोवि जाती । इन लोगोंका कहना है, कि बहुत
दिन हुए तैलुङ्गसे यह जाति कर्णाटक प्रदेशमें या बने
। ये लोग तिसुगु भाषा बोलते हैं । मिथा जो इन
की जातिगत उपभोविधा है । कोई कोई ब्रह्मच,
सुखीमाना यज्ञसुत्र आदि का व्यवसाय करते भी
जोविधा निर्वाह करते हैं । मङ्गल, मास, वराह आदि
व्यवहार इन लोगोंमें प्रचल है । ये लोग १० दिन तक
पशुपत मानते हैं । आचार, व्यवहार, व्रत, उपवासादि
प्रकारों कुचलियों सरोका है । बाल्यविवाह और विधवा
विवाह आदिको प्रथा प्रचलित है ।

विमुक्त (स० पु०) बौद्ध मुक्तानोव शब्दानि यम् ।
हिंमुट पर्यंत, बह पहाड़ त्रिसकी तीन चोटियां जो ।

विमुक्त (स० पु०) बौद्धि सुत्यानि यम् । १ माध्याह्निक ।
२ मासको अर्धमेंकी जोबोध मुद्रापरिधि एक मुद्रा ।

मुद्रा वेषो ।

विमुक्ता (स० श्री०) बौद्धि मुक्तानि यम् । बोध देवो
मिद, मायादेवो । पर्याय—मारोको बन्धनात्मिका
विधवा, बन्धनाराहो, गौरी और पात्रियया है ।

विमुषी (स० श्री०) मुहको माता, मायादेवो । महा-
यान शास्त्रके बोधदेवो रूपमें इनकी उपासना करते हैं ।

विमुनि (स० श्री०) ब्रह्मर्षी मुनोनां समाहार
पालिनि, कात्यायन और पतञ्जलि ये तीनों मुनि । २
पालिनि आदि तीनों मुनियोंके बन्धमें हुए व्याकरण ।

विमूर्त्त (स० पु०) विस्ती मूर्त्तयो यम् । १ ब्रह्म,
विन्दु और मित्र ये तीनों देवता । २ रूप । (श्री०)

ब्रह्मपरिनिष्ठ, ब्रह्मको एक मन्त्रि । यह मन्त्रि एक
वर्षियों होने पर भी ब्रह्मरूपवाचकके रूपमें मित्र
रूपकी जो गई है । ३ बोध देवोर्मिद, बोधोको एक
देवो ।

विमूर्त्त (स० पु०) त्रयो मूर्त्तानोव्य, बहुवी० बोधसमा

सात्त । १ तीन देवता । (वि०) २ त्रिसके तीन मन्त्रक
को ।

विमोक्षानो—यमोर त्रिस्तिका एक गण्ड घाम । यह पचा०
२२३४ उ० पौर देगा० ८८ १० पु०, क्षेत्रपुरसे २४ कोप
पविर्गमें पवञ्जित है । यहां मद्रानटो बोधोताचने पक्षग
जो कर कहती है । जिस जगह इन नदीके तीन सुख वा
सुहाने दो मये हैं वही जगह विमोक्षानो नामके प्रसिद्ध
है । नदीके किनारे यह स्थान जाटके लिये प्रसिद्ध है ।
इस जगहके घामका नाम चन्द्रा है । यहां पक्षसे जोनो
का बहुत आरवार बनता था, किञ्चि पत्र उतना
नहीं होता । तीनों यज्ञोंसे दूर दूर देगोमें जोनोको
रक्षको होती है । चैत मासमें ब्राह्मणोंके समय यहां एक
बड़ा मेला लगता है । विमोक्षानोसे एक पात्र दूरमें मिर्जा
नगर है वहां सुखसमानाके समयमें यमोरके प्रोत्रदार
रहते थे । १८११ ई० तक यह स्थान यमोरके मन्त्र एक
बड़ा नगर गिना जाता था, किन्तु पनो रक्षका पूर्ण
गोरक जाता रहा ।

विम्बक—बम्बईके नासिक जिलेका एक प्रसिद्ध शहर
और तीर्थस्थान । यह पचा० १८१४ उ० पौर देगा०
७१३१ पु० नासिक नगरसे २० मील दक्षिण-पश्चिममें
पवञ्जित है । जनसंख्या प्रायः ३३२१ है ।

स्थानमाहात्म्यमें यह स्थान त्रिम्बक नामसे प्रसिद्ध
है । त्रिम्बकेश्वर महादेव वहां प्रतिष्ठित हैं, इन्हींसे यह
पुण्य स्थानोंमें गिना गया है । इस त्रिम्बकके कई एक
माहात्म्य पाये जाते हैं, त्रिमनेने एक पद्मपुराणके पाताल
अण्डके पन्तगत है एक बराहपुराणके और एक
भारतपुराणके उत्तर अक्षरमें वर्णित है ।

यहांके त्रिम्बकेश्वर महादेवका मन्दिर बहुत प्रसिद्ध
है । वर्त्तमान मन्दिर सदाशिव रावसे बनवाया गया है ।
मन्दिरके लक्षके लिये शकमें ११००, ६०
मिलते हैं । यहलगावार्देमें यहां एक सुन्दर मन्दिर निर्माच
रिया था ।

त्रिम्बक दुर्ग पहाड़के ऊपर समुद्रतलसे ४०४८
फुट और निम्नतलमें घामने १८०० फुट लगे थे पर पव-
ञ्जित है । पहा दुर्गमें पौर दुर्गमें दुर्ग इय मानमें पौर
कहो नदो देवनेमें पाता । दुर्गमें प्राजके किञ्चल दो

हार हैं। दक्षिण हार होकर रसद आदि पहुँचाई जाती है और उत्तर हार होकर केवल एक मनुष्य जा सकता है। यह चारों ओर ऊँचे नीचे पहाड़ों से घिरा है। दुर्ग हार छोड़ कर पहाड़ पर कहीं कहीं बहुतसे चुर्लें हैं। १८५७ ई० में पण्डाओंको उक्त जनासे कई एक भोल और ठाकुरोंने यहाँके सरकारी कोषागार पर आक्रमण किया था। दक्षिण प्रदेशके भिन्न भिन्न स्थानोंसे बहुतसे यात्री यहाँ जुटते हैं। बृहस्पतिके सिंह राशिमें प्रवेशके समय यहाँ भी कुम्भ लगता है। आमदनी ८८००, २००० है। इसके सिवा वार्षिक २५००, २० तोर्य-यात्रियोंसे भी प्राप्त होते हैं। शहरमें केवल एक चिकित्सालय है।

त्रिम्बकजी देगलिया—पेशवा बाजीरावके एक विश्वासी और आश्रित व्यक्ति। ये पहले एक सामान्य जासूस वा गुप्तचरका काम करते थे। जिस समय होलकरके डरसे बाजीराव पूनासे पहाड़में भाग आये थे, उस समय इन्होंने बाजीरावके पत्रका जवाब बहुत श्रम्य समयमें उन्हें ला कर दिया था। इनकी कार्यकुशलताको देख बाजीराव इन पर बहुत खुश हुए थे। तभीसे त्रिम्बकजी हमेशा उन्हेंके साथ रहना करते थे। वे अत्यन्त चतुर, धूर्त तथा पटु थे। थोड़े ही समयमें बाजीरावके हृदय पर इन्होंने अपना अधिकार जमा लिया। बाजीराव सर्वोंकी अपेक्षा इन पर अधिक विश्वास रखते थे। अतः धीरे धीरे ये उनके एक प्रधान मन्त्रदाता हो गये। सब पूछिये तो ये बाजीरावका बहुत सम्मान करते थे। बाजीराव जो फारमाते, त्रिम्बक हितहितका विचार किये बिना उसे फौरन कर डालते थे। क्रमशः इनकी अवस्था उन्नत होने लगी। सेनापति गणपत रावकी जागीर जब जब्त कर ली गई, तब इन्होंने ही सेनापतिकी पद ग्रहण किया था।

इसके कुछ दिन बाद ही खुसरूजीने जब कर्णाटक प्रदेशके शासनकर्तृत्वका पद त्याग कर रेसिडेन्सी एजेंट का पद प्राप्त किया तब त्रिम्बकजी कर्णाटकके शासनकर्त्ता बनाये गये।

अंगरेजोंके कथर ये बहुत जलते थे। ब्रिटिशराजकी ध्वंस करने तथा उनकी हस्तताकी भारतवर्षसे विलुप्त

कर डालनेके लिये इन्होंने कोई कसर, उठा न रखी थी। इनकी उक्त जनासे बाजीराव ब्रिटिश-गवर्मेण्टके शत्रु हो गये। उनके पंजसे बाजीरावकी स्वाधीन करनेके लिये त्रिम्बक गोसावी और अरवी सेना नियुक्त करने लगे। १८१५ ई० में इन्होंने परामर्शसे बाजीरावने सिन्धिया, भोसले, होलकर और पिण्डारियोंके पास गुप्तचर भेजा। बाद सब कोई मिलकर येनकेन प्रकारेण ब्रिटिश पराक्रम खूब हो जाय, वही पल्यन्त्र रचने लगे।

इसो वर्ष इन्होंने पण्डरपुर नामक पुण्यक्षेत्रमें गङ्गाधर शास्त्रीको गुप्तभावसे मरवा डाला। इस ब्रह्महत्याके पापसे वे पीछे विलुप्त ही हो गये। यह पापकाण्ड छिपानेसे भी छिप न सका। बम्बईके गवर्नर एल फिंटेन साहबको इस बातकी खबर लग गई। उन्होंने त्रिम्बकजीको बहुत जल्द ब्रिटिश गवर्मेण्टके हाथ अर्पण करनेके लिये पेशवाको बुला भेजा। बाजीराव तो त्रिम्बकजीको बहुत चाहते थे। अतः वे उन्हें ब्रिटिश गवर्मेण्टके हाथ लगा देनेकी राजी न हुए। इसपर एक दल ब्रिटिश सेनाने पूना पर धावा मारा। त्रिम्बकजीने कोई उपाय न देख (२५ सितम्बरको) ब्रिटिश गवर्मेण्टकी आत्मसमर्पण किया। सालसेटके धाना दुर्गमें वे बन्दी हुए। बाजीरावने उन्हें कुछा लानेके लिये अपना कुल दिमाग लड़ाया। धाना दुर्गमें केवल गोरा ही पहरू थे, उन्हें रिश्वत दे कर वशोभूत करना अथवा उनकी आँखोंमें धूल डाल कर उन्हें भगा देना कोई सहज काम नहीं था। केवल एक साईसकी सहायतासे त्रिम्बकजी किसी तरह धाना दुर्गसे भाग आये थे। साईसने त्रिम्बकजीसे कोई बात तो की नहीं, पर इशारेसे घोड़ेका शरीर मलमल कर एक गीत गाया जिसका मर्म इस प्रकार था,—‘भाड़ीके मध्य अनेक धनुर्धर रहते हैं, वहाँ पेड़के तले एक घोड़ा बंधा हुआ है, फौरन वहाँ जाओ और घोड़े पर सवार हो दक्षिणायकको स्वाधीन करो।’

त्रिम्बकजी उस गानका आशय समझ गये, पर यूरोपीय सैनिकोंको कुछ भी समझने न आया। सच-सच वहाँसे भागते समय इन्होंने खूब बहादुरी दिखाई थी। आज भी महाराष्ट्रगण त्रिम्बकके दूसरे कार्यके लिए तो नहीं, पर उनके भागनेके साहस और कौशलकी खूब तारीफ करते हैं।

बहसि नाम धार्मी पर से गुप को न बैठे । प धर्मी के ऊपर उनका क्रोध और भी बढ़ गया । वे नासिक, यङ्गमनेरि खामदेय और भङ्गादेय पादि पार्वतीय व्याधों से हुए घूम कर भौस, रामुनी और बङ्ग केन्द्रको स पङ्क करने लगी । फलततः पन्तगत वैवाङ्ग नामक स्थानमें इनका प्रधान पङ्कना था । वहाँ बङ्गदर्मी जब से भी क सि से तब १०० रामुनी सेना प्रयत्न उनको रचा करतो थे । बाबोराम भी उनसे लन लोको को सहायता करने लगी ।

पच त्रिभङ्ग विप्लारितो यो गार्ह हटिसि राज्यमें उत्पन्न भवाने लरी । एकविन्दन साहबने फिर बाबोरावको बहसना भेजा कि वे तुरत त्रिभङ्गजनोंको पकड़ बाटे, नहीं तो उनका बहुत घनिष्ट होना । जब तब वे त्रिभङ्गजनोंको पकड़वाना देने, तब तब सि हयक पुरन्दर तथा रायमङ्गला दुर्ग हटिसि जाय रहेंगा । कुछ दिन तो बाबोरामने सोके सोकी बातोंसे एकविन्दनको भुनावेसे छाननेको बिठा ली, पर उससे कोई फल न हुआ । ७वीं मईको (१८२७ ई०) एकविन्दनने पुन बहसना भेजा कि जब पच भी पेशवानी त्रिभङ्गके प्रतिभूखरूप तोन पुनको न छोड़ा, तब पूना पर पश्चिमार करनेको जिये सेना भेजनी पड़ेगी । इधर पूनाके पाम प पेकी सेना पट्ट प गई । बाबोरामने लख तोनो दुर्ग छोड़ दिये और पङ्करीजोंको प्रमथ रखनेसे लिए यह घोषणा कर दो कि त्रिभङ्गको मरा वा जिन्द को पकड़ कर लावेगा उसे दो लाख रुपये पारितोषिकमें दिये जावगी । इससे निवा वे त्रिभङ्गजोंसे अनुगत पामोल करानेके ऊपर भी लोको को दिखानेके लिये पञ्जावार करने लगी ।

जो कुछ हो, इस बार बाबोराम प्रकाश रूपसे बाहे को करे पर त्रिभङ्गकी जिनसे हटिसिसे पंथिमें न पड़े, गुप्तपदे उसका भी धायोजन करने लये । पमी जिससे हटिसिराम्य धरत हो जाय, एकविन्दन भी यौत्र को इन लोचसे चल बसे, बाबोराम इनको भी बिन्द्यामें लन लये । पपनो इन कामकायी पूरा करनेके लिये बा रोरावने प्रधान मन्त्री बागुगेखलाको एक छोटी बपदे दिसे । भोबई, डिभिया और शोसकरसे भी पच-पच-

वार होता था । इसी समय दयोवन्तारामने जोड़पड़ेमें एकविन्दनको यह सुत्र समझाकर कह दिया । एकविन्दन बाबोरामसे जा मिले । इस समय भी दोनोंमें पञ्जा सहाय था । जो कुछ हो, छोड़े दिनसे बाद यह सुलभती पाग वरक लगी । चारों ओरसे मराठेसिना पूनामें पाने लगी । एकविन्दन साहब विपद्को धायवा कर पूनासे दो कोन उत्तर बिर्को पामको बसे गये । १८२७ ई०से १ नवम्बरको बिर्कोमें एक छोटी लड़ाई हुई । १० नवम्बरको प परेबीसेनाने पूना पर पश्चिमार कर लिया । बाबोराम कई एक जुर्मानों परालत को सनेन्य रखने भाग गये ।

त्रिभङ्गकी बहुरिसे उत्तर भासवाटके मामनवाड़ी धाममें दखलसे साथ पेशवानी मिले । वहाँका गिरिभट्ट बहुत दुर्गम था, जिनतन सिन्ध सनेन्य उनका पीछा करने पा रहे थे । त्रिभङ्गने यहाँ प्राचपचसे उनका सामना किया था । कई एक जुर्मानों परालित को लानेसे मझाराइ सेना निवृत्ताइ हो गई थी । पतः त्रिभङ्गको विविध प्रयत्न करने पर भी कुछ कर न सके । पुन पेशवाको लड़ाईमें दोठ दिवानो पड़े । बुद्धिगा नामक स्थानमें भोवप सुत्र हुआ जिनमें बहूतसे यूरोपीय कर्म चारो मारे गये तथा धायल हुए । त्रिभङ्गने सुद्धमें माहल तो बूझ दिसनाया पर भी प मरेको धार्म्य पचसे सामने डहर न सके । मझाराइको चार हुई । सुद्धमें बाबोरामने त्रिभङ्ग पादिको सम्मोषन देती हुये कहा था, तुम लोकोको बिहार है, कि सुद्धी भर सेनाको तुम नोम डरा न सके, धमो यह तुम्हारा नव कर्हा चला गया ?

कई जयज भटकरी भटवते त्रिभङ्गकी हटिसिसे पदेमें प म गये । इस बार उन्हें पुनारसे दुर्गमें कई किया गया, पच फिर सुद्ध नामकी धारा न रही ।

त्रिपत्त (स० पु०) त्रिपत्त, निरीय ।
 त्रिपत्त (स० पु०) तोचि पञ्चबानि यत्त । १५६ वा (इन्द्रसुननवा) पा ६।५।००) त्रिनेत्र, मझारिय ।
 त्रियन (प० ली०) लयो यवाः परिमाच यत्त । परिमाच विरीय, एक परिमाच जो तोन लोके बराबर या एक रस्तीसे लगमग होता है ।

त्रियष्टि (स० स्त्री०) त्रिषु वातपित्तकफात्मकेषु दोषेषु यष्टिरिव । १ क्षुभेद पित पापडा, शाहतरा । २ त्रिगुच्छं हार ।

त्रियान (स० स्त्री०) बौद्धोक्ते तीन प्रधान भेद या यान, यथा महायान, हीनयान और मध्यमयान ।

त्रियामक (स० स्त्री०) त्रिषु कालेषु यमयति यम-गुलु पाप ।

त्रियामा (स० स्त्री०) त्रयो यामा अम्याः । निशा, रात्रि । रातके पक्षे चार दण्डो और अन्तिम चार दण्डोको गिनती दिनमें की जाता है, जिसमें रातमें केवल तीन ही पहर बच रहते हैं, इसीसे उसे त्रियामा कहते हैं । २ हरिद्रा, हल्दी । ३ यमुना नदी । ४ कृष्ण विह्वत्, काला निसोष । ५ नीली, नीलका पेड़ ।

त्रियुग (स० पु०) त्रोगि युगानि सवत्रेताहापररूपाणि आभिर्माधकालोऽस्य । १ विष्णु । २ वसन्तादि काल त्रय, वसन्त, वर्षा और शरदृ ये तीन ऋतुएँ । ३ सत्य, त्रेता और हापर ये तीनों युग । (त्रि०) ४ पञ्च-श्वश्र्गान्ता, जिसे छको प्रकारकी ऐश्वर्य हो ।

त्रियूह (स० पु०) कपिलाश्व सफेद रंगका घोड़ा ।

त्रयद्व (स० स्त्री०) बौद्धधर्मके प्रधान तीन धन यथा बुद्ध, धर्म और सद्ग ।

त्रिरश्मि (स० स्त्री०) त्रिकोण ।

त्रिरसक (स० स्त्री०) त्रयाणां रसकाणां समाहारः ।

१ त्रिप्रकार रसयुक्त चुरा, वह मदिरो,जिसमें तीन प्रकारके रस या स्वाद हों । २ तीन बार मधु पान ।

त्रिरात्र (स० स्त्री०) त्रिसृणा रात्रौणां समाहारः अत्र समा० । सव्यापूर्वत्वात् स्त्रीवता । १ रात्रित्रय, तीन रात । २ तदुपलक्षित तीन दिन । ३ गर्गत्रिरात्र नामक योग । ४ एक प्रकारका व्रत जिसमें तीन दिनों तक उपवास करना पड़ता है ।

त्रिरूप (स० पु०) त्रोगि रूपाण्यस्य । अश्वमेधीय अश्वमेद, अश्वमेध यज्ञके लिये एक विशेष प्रकारका घोड़ा ।

त्रिरेश्व (स० पु०) तिस्रो रेश्वा यत्र । १ शद्व । (स्त्री०)

तिसृणां रेश्वानां समाहारः । २ रेखात्रय, तीन रेखा । (त्रि०) ३ तीन रेखाधीवाला, जिसमें तीन रेखाएँ हों ।

त्रिन (स० पु०) त्रयो नाः लघुवर्णा यत्र । लघुवर्णयुक्त नगण ।

त्रिनघु (स० त्रि०) त्रयो लघवो यत्र । १ ऊन्दोयत्र प्रसिद्ध नगण । २ पुरुषविशेष, वह पुरुष जिसको गर्दन, जांघ और सूत्रेन्द्रिय छोटे हों । पुरुषके लिये ये लक्षण शुभ माने जाते हैं । (अश्वमेध ११ अ०)

त्रिनगण (स० त्रि०) त्रयाणां लघणानां समाहारः, त्रिगुणितं लघणं संज्ञात्वात् वा कर्मधारयः । लघनत्रय, सेंधा, सभर और मोचर नमक ।

त्रिनिद्र (स० त्रि०) त्रीणि निद्रानि अस्य । १ पुंस्त्वादि त्रिनिद्रात् त्रिनिद्रात् शब्द । त्रिणि सत्वादीनि निद्रानि अनुमापकानि अस्य । २ अहङ्कार आदि । ३ वात इत्यादि धातुदोषसे उत्पन्न एक प्रकारका रोग । ४ तैलद्र देवका बना संस्कृत रूप ।

त्रिलिङ्ग—(तैलद्र) दक्षिण भारतका एक प्राचीन देश । कोई कोई कहते हैं, कि कालेश्वर, श्रीगौतम और भीमेश्वर नामक तीन पहाड़ों पर शिवलिङ्ग रूपमें आविर्भूत हुए थे शायद इसी कारण इस प्रदेशका नाम त्रिलिङ्ग पड़ा है । अभी उसका अपभ्रंश रूप तैलद्र है । फिर कोई कोई कहते हैं, कि प्राचीन कालमें इसका नाम त्रिकलिङ्ग था, 'क' का लोप हो कर त्रिलिङ्ग हुआ, एवं अपभ्रंशरूपमें कोई तो तिलद्र कोई तैलद्र और कोई तिलिङ्ग इत्यादि कहा करते हैं । कर्लिंग शब्दमें विवृत विवरण देखी ।

यथार्थमें त्रिकलिङ्गसे त्रिलिङ्ग हुआ है वा नहीं, यह ठोक ठोक कह नहीं सकते । महाभारतके समयमें इसका विस्तार वैतरणी नदीसे लेकर गोदावरोके कलिङ्ग राज्य तक था । किन्तु उस समय इसका कोई अंश त्रिकलिङ्ग वा त्रिलिङ्ग नामसे प्रसिद्ध न था । श्लो गताब्दीमें प्रिनिने मोदोगलिङ्गम् (Modogalingam) शब्दका उल्लेख किया है । तैलद्र शब्दमें सुटुका अर्थ तीन है, सुतरां मोदोगलिङ्गम् शब्दके प्रयोगसे त्रिकलिङ्ग नामका बोध हो सकता है । २रो गताब्दीमें टलेमीने त्रिग्लिफ्टन वा त्रिग्लिफन देशका उल्लेख किया है । यह शब्द संस्कृत त्रिकलिङ्ग वा त्रिलिङ्ग इन दो शब्दोंका रूपान्तर मात्र हो सकता है ।

३ठी गताब्दीसे गिरालिपि वा ताम्रशासनमें त्रिक-

तिरु देवता उल्लेख पाया जाता है। उल्लेख चौर कलिङ्ग के राजाओंने भी लिखलिरुनाथ नामके चपना परिचय दिया है।

११वीं शताब्दीके प्रथमभागमें उल्लेखराज उद्योत वीरगोत्रे समयमें उल्लेख इन्द्रायार कल्पिमें वन लोग सभने पहले तिरुङ्ग देवता उल्लेख पाते हैं। इस विष्णुसिद्धिमें लिखा है कि महाराज उद्योतवीरगोत्रे पूर्व पुरुष पक्षसे तिरुङ्ग देवमें राज्य करते थे, अर्थात् वे हर उद्योने उल्लेख पर अधिकार जमाया। यही तिरुङ्ग देव यही तिरुङ्ग नामके समयकर है इसमें संदेह नहीं। किन्तु यह 'तिरुङ्ग' शब्द 'तिरुवलिङ्ग' शब्दका चपनाय है वा 'तिरुङ्ग'का इसका कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता। सिद्धि यह यह सकती है, कि कलिङ्ग राज्यका दक्षिणार्ध एक समय तिरुङ्ग नामके विस्तृत था। शक्तिमन्त्रम तन्त्रके मतानुसार चोयैवने सिकर चोलेयके मन्त्र माय तत्र तिरुङ्गदेव है।

श्रीमैत्रेय ऋषिने तया चोलेय वा चोसलिङ्ग नामो उत्तर पार्श्वे त्रिसैके शोसलिङ्गपुरमें प्रवर्णित है। कृष्णा नदीके पश्चिम वा पश्चिमोत्तरी नदी तत्र दक्षिणार्धपूर्वार्धमें प्रायः सप्तमं भूभाग पक्षसे तिरुङ्ग नामके समयकर वा। कुञ्ज शोर्गोका मत है कि पुराणमें जो पञ्च राज्याका उल्लेख है, यही तिरुङ्ग देव है। ७वीं शताब्दीमें चोम परिव्राजक मुपलभुयग चन्द्रराज्यमें पाये थे। उनके मतानुसार यह राज्य ३० लोम पश्चात् प्रायः ५०० मील विस्तृत है और इसकी राजधानीका नाम वैङ्गि (वेङ्गि) है। मोहाबरो जिलेमें इलोरामें ६ मील उत्तर वैङ्गि वा वैङ्गि पड़ता है। इस विषयके (कलिङ्गम खादि प्रवृत्तचरित्रं मतने) चन्द्र वा तिरुङ्ग देव मोहाबरो चौर कृष्णा नदीका मन्त्रवर्णो भूभाग होता है।

प्राच्य-पञ्चवरोमें 'तिरुङ्गाना' वा तिरुङ्ग देव

• Best's Bakhshar Records of the Western World Vol. II, p. 217
 † B Sewell's List of Antiquities in the Madras Presidency Vol. I p. 26
 ‡ Jarrett's Aini Akbari (Vol. II p. 228, 227,

वरार वा वैरारके दक्षिणार्धमें निर्दिष्ट हुआ है। उस समय सरकार तिरुङ्गना १८ परमनेमें विमन्त्र वा चौर ७१८०५००० टाम राज्य बसूक्त होता था। तिरुवर्तके पण्डित तारानाथने १६०८ ई०में लिखा है, कलिङ्ग विजिष्णुका ही कुञ्ज पत्र है।

विर १७८६ ई०में रैनेन साहब लिख गये हैं 'तिरुङ्गनाको राजधानी बरुङ्ग है। यह कृष्णा चौर मोहाबरो के बीच तथा विजिष्णुपुरके (चिन्नापुर ?) पूर्वमें एक क्षिण है।

इस तिरुङ्ग वा तिरिङ्गके मनुष्य चौर उनको प्रबल शक्ति माया तिरुङ्ग वा तिरुङ्ग नामसे प्रसिद्ध है। वर्तमान समयमें उत्तर योक्काकोनाम् (चिन्नाकोना)से से कर दक्षिण परबर्णाडु (पुन्डिकट) तक तिरुङ्ग भाषा प्रचलित है। चिन्नाकोसके मजोप उद्दिष्टाने चौर पुन्डिकटके बाटवे तामिन मायाने तिरुङ्गका स्थान अधिकार कर लिया है। इधर पयिमांशमें महाराष्ट्रकी पूर्वसीमा, मद्रिपुर कर्णुम त्रिशा चौर निजाम राज्य तक तिरुङ्ग भाषा चलती है। भाषा-म स्थानकी चौर इटिपात करनेमें तिरुङ्ग भाषा-प्रचलित भूभागको जो तिरुङ्ग देव यह सकती है। इस विषयके तिरुवलिङ्ग शब्दके तिरिङ्ग वा तिरुङ्ग नाम पहा है यह शोर्गार कर सकते हैं चौर कलिङ्ग देवको तिरुङ्गका एक पत्र मन्त्र सकते हैं।

चिङ्ग देवो।

७वीं शताब्दीमें मुपलभुयङ्गने चन्द्रदेवमें था कर दिया था, कि यहाँ मन्त्रभारतकी सिधि प्रचलित है। इस के वन शोर्गोको प्रमाण मिलता है कि उस समय मध्य-भारतकी वर्षमानाको पाञ्च कुडोसाकी वर्षमानाका जो पाकार मिलता सुकता था। कान्यकुब्जने पाञ्चजन्य इतना विर्मद पड़ गया है, कि तिरुङ्गको एक मानाको एक सम्पूर्ण पत्रक वन माना कहनेमें भी कोई शक्य नहीं।

मुपलभुयङ्गने दक्षिणार्धको भाषाको पन्डु-दक्षिण भाषा यह कर वर्णन कर गये हैं। तामिन देवो। कुमा रिन वर्णित पन्डु, भाषा यात्र भी तिरुङ्ग नामके प्रसिद्ध है।

• Schlegel's 1 rasatha p. 264
 † Best's's Memoir 3rd edition, p. 62.

तैलङ्ग भाषामें २३ स्वर और ३५ व्यञ्जनवर्ण हैं ।
अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, (ङस्व), ण (दीर्घ),
ऐ, ओ (ङस्व), औ (दीर्घ) और औ यही १३ स्वर हैं
एवं क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड,
ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व
य, प, स, ह, ल और ल यही ३५ व्यञ्जन हैं ।

तैलङ्गके पण्डितोंका कहना है, कि कण्व मुनिने सबसे
पहले तैलङ्ग व्याकरणको रचना की । एक बार वे आम्-
राजको समामें उपस्थित हुए थे । इसी राजके समयमें
संस्कृत भाषा तैलङ्ग देगमें प्रचलित हुई । उक्त प्रवादमें
क, छ, ङ, एभा मालूम पडता है, कि ब्राह्मणाने प्रा-
कर हो तैलङ्ग देगमें संस्कृत भाषाका प्रचार किया और
उन्हींके आधार पर तैलङ्गलिपि और तैलङ्ग व्याकरण
बनाया गया । कण्वका तैलङ्ग व्याकरण अभी बिलुप्त
हो गया है । अभी जो सबसे पुराना तैलङ्ग व्याकरण
मिलता है, वह भी नन्नय वा नन्नपभट्टका संस्कृत भाषा
में बनाया हुआ है । नन्नपभट्टने ही तैलङ्ग भाषामें महा-
भारतका प्रकाश किया । अभी नयपभट्टका महाभारत ही
तैलङ्ग भाषाका आदिग्रन्थ समझा जाता है । चातुर्वराज
विष्णु वर्द्धनके समयमें नन्नय आविर्भूत हुए थे । चातुर्व-
वर्द्धनमें विष्णुवर्द्धन नामक नौदश राजाओंने विभिन्न
समयमें राजत्व किया था । चातुर्वय शब्द देखो । किस विष्णु-
वर्द्धनके समयमें नन्नय विद्यमान थे, उसका पता नहीं
चलता । यदि शेष विष्णु वर्द्धनका समय ही तो भी नन्नप-
भट्टको ११वें शताब्दीके कवि कह सकते हैं ।

कोई कोई तो इन्हें आदि ग्रन्थकार मानते हैं पर
वह ठोक प्रतीत नहीं होता । इनके विस्तृत ग्रन्थ-
की रचना-प्रणाली और भाषाको ऋटा देखनेमें ऐसा
मालूम पडता है कि तैलङ्ग भाषाको सृष्टि इनके बहुत
पहले ही हो चुकी थी तथा इनके महाभारत बनाये
जानेके पहले भी अनेक छोटे छोटे ग्रन्थ प्रचलित थे ।
नन्नपभट्टके बाद अन्य कविने तैलङ्ग भाषामें एक तैलङ्ग
व्याकरण श्लोकके आकारमें प्रणयन किया ।

वेमन नामक एक व्यक्तिके सूत्राकारमें दो हजारमें
अधिक धर्मनाति-विषयक उपदेश तैलङ्ग भाषामें लिखे
हैं । इनकी वाक्यावलीमें धर्मकाण्ड और हतवादको

निन्दा रहनेमें कोई कोई इन्हें ईसाधर्मके परवर्ती
वतनाते हैं । किन्तु वेमनके विषयक प्राध्यात्मिक और
अद्वैतवादीविषयक सरल उपदेशोंको भाषा पट में बह
बहुत प्राचीन प्रतीत होती है । इसके सिवा तैलङ्ग
भाषामें और भी कई एक ग्रन्थ हैं । सुद्रायन्वके प्रभाव-
में तैलङ्गमें भी प्रतिवर्ष अनेक ग्रन्थ प्रकाशित होती हैं ।
त्रिलिङ्गक (सं० त्रि०) त्रिलिङ्ग सार्वं कर्त् । यिदिंग देवो ।
त्रिलिङ्गो (सं० त्रि०) त्रयाणां लिङ्गानां समाहारः त्रिोप ।
लिङ्गत्रय, तोनों लिङ्ग ।

त्रिनोक (सं० त्रि०) १ त्रिभुवन, स्वर्ग, मर्त्य और
पाताल ये तोनों लोक । (पु०) २ स्वर्ग, मर्त्य और
पातालके अधिपानो ।

त्रिनोक—हिन्दीके एक कवि । ये १०५४ ई०में वर्त्तमान
थे । सुजानचरित्रमें इनका नाम दिया हुआ है । इनकी
रस पद्यकी कविता बड़ी सराहनीय होती थी । उदाहर-
णार्थ नोचि देते हैं,—

‘मेरी मन मोह्यो सावरी अब घर ही में रन्गी न जाव ।

चबल विरयो मों ह्यो सर्वस्व दो मेरी लियो पुताप ॥

माई हो गोरग से निकसी हृदावन होरी मंझार ।

आय अचानक आंगक मट्टकी बहो मेरी दोन्ही डार ॥

गदि अवर मो छो यो ह्यो कौन हो दुम बाधो नार ।

के बेगी या मागे गई दान दो हमारी डार ॥

और कदा लणि बरगिये कइ सब री जोइ आवे लाज ।

जन त्रिलोक प्रभुको रंगी देयो मेरे तनको सान ॥’

त्रिनोकधत् (सं० पु०) त्रयाणां लोकानां धत् धृति रस्य
धृ-क्षिप । परमेश्वर ।

त्रिनोकदास—हिन्दीके एक कवि । इन्होंने भजनावली
नामक ग्रन्थ बनाया है । ये १७२० ई०के लगभग
विद्यमान थे ।

त्रिलोकनाथ (सं० पु०) त्रयानां लोकानां नाथः ।
परमेश्वर ।

त्रिलोकसिंह—एक हिन्दी कवि । इनका बनाया हुआ
सभा-प्रकाश नामक ग्रन्थ मिलता है, जिसे इन्होंने १७२०
ई०में बनाया था ।

त्रिनोकात्मन् (सं० पु०) त्रयो लोकाः आत्मानः स्वक
पाणि यस्य । परमेश्वर ।

त्रिसोत्तरपद्य (स० पु०) परमेश्वर ।

त्रिसोत्तरी (स० खो०) त्रयाणां लोकाणां समाहारः कोष् । स्वर्ग, मर्त्य और पाताल ये तीनों लोकः भूलोक, सुवर्णलोक और स्वर्गलोक ।

त्रिसोत्तरीनाथ (स० पु०) त्रिशोक्तनाथ देवः ।

त्रिसोत्तरीनाथ मुचनमय—त्रिभूतौ एक कवि । ये याक हीयो ब्राह्मण, महााराज मानसिह भयोभानरीयके मतोसि धी । सि भावाके पच्छे कवि ये । इन्होंने पहले पाचवज्जोतिका एकादय पध्याय पबंन्त भावा इन्देमें पनुवाद किया और फिर न वत् १८१०में मुच नेश्मुवय नामक ३० इतोका स्पेइन्डर कविताका एक स्वतन्त्र पद्य बनाया । इनके बनाये हुए और भी पद्य मिलते हैं यका मुचनमय-विश्वास और मुचनमय-पञ्चप्रकाश । इनके कुटुम्बमें माया समी लोका बहुत काव्य रचना करती थी । सुचनमयोका स्वर्गनाम हुए करीब २३ वर्षके हुए हैं । इन्होंने ब्रजभाषामें कविता को जे जो सरस और मनोहर है । उदाहरणार्थ 'इनका केवल एक शब्द लोषे लिखा जाता है -

"हर क न केवारे एति रहे करी कति लीं सुदिने अतिथि ।
अतिराति अरुति मने विधि से अचनैकनि कानि पठी नकडे ॥
पुरनेए सु माये अवे न कच सुच बंहुक अन्नुदये इकडे ।
मनोरम नैव अभिन्न सौ एव केव न कबो अदिने अकिडे ॥'
त्रिसोत्तरीकोति—एक विमम्बर जैन पद्यकार । इन्होंने सामायिकसूत्रको टीका रची है ।

त्रिसोत्तरी (स० पु०) त्रयाणां लोकाणामीयाः । १ परमेश्वर । २ स्वर्ग ।

त्रिसोत्तर (स० पु०) त्रिसोत्तरी नामि यद्यः । १ शिव, महादेव । २ कायोके चौदह सिद्धोंमेंसे एक सिद्ध । ३ एक संस्कृत पद्यकार । इन्होंने पार्श्वविजय नामका एक काव्य बनाया है ।

त्रिसोत्तरतोष—द्विरजा दीवके पत्न्यगंत एक तोषः ।

(अपिकवर्णित)

त्रिसोत्तर दास—एक प्रसिद्ध कवि । बर्हमानके दस कोस उत्तर गुजरात स्टेशनके पांच कोस दूर कुपुर नदीके किनारे महानकोटके समीप कुधा ना को नामका एक ग्राम है, जहाँ १८८३ ई०में इनका जन्म हुआ था । इनके

पौर तीन ग्राम हैं—सुमोचन लोचनार्णव लोचन । विशेष लोचन नामसे ही जो प्रसिद्ध है । चरितावृत और मखिरकाकरादि प्राचीन पद्योंमें ये सुलोचन नामसे ही मशहूर हैं ।

गुजरात स्टेशनके समीप कांबड़ा ग्राममें विख्यात शैतन्धमहल मायक प्राचक्षत्र चक्रवर्तीके घरमें इनके जन्मस्थिति पत्नके पद्य हैं । उस मौलिक पद्यमें तथा जापके शैतन्धमहलमें जन्मोत्त पासमानका पद्य है ।

फिर बहुतसे लोग कहते हैं, कि लोचनदास संस्कृत नहीं जानते थे, किन्तु यह पसरय जान पड़ता है । प्रसिद्ध राय रामानन्द कृत संस्कृत जगन्नाथवचनके प्रोक्तारिका जो एक मनोहर पद्यानुवाद है वह लोचन दासका ही बनाया हुआ है । अगर ही संस्कृत नहीं जानते होते तो प्रोक्तके अनुवादमें अतकार्य नहीं हो सकती थी ।

इनको सिखावट पच्छी और बड़ो जेतो जो । पपने घरमें एक प्यरके छपर बैठ कर शृंग्य भावायके तसि जे शैतन्धमहल काव्य लिखते थे । वह प्यर पात्र भी विद्यमान है । जिसके दायंनके लिए वैश्यव लोय पात्र भी जाया करती हैं । १३१० मकमें इनका देवाण्ड हुआ था ।

त्रिसोत्तर दास—एक प्रसिद्ध विद्याकरय । इन्होंने कातश्व इतिपत्तिका और कातश्वोत्तरपरमिहको रचना की है ।

त्रिसोत्तरदेव श्यामपद्मानन—नवहोपके एक नैयायिक पंडित, रामके भात्र । ये श्यामसुसमाकलियाख्या रच गये हैं ।

त्रिसोत्तरनाथ—महाराज राक्षपाक्षके पुत्र । ये मायदे प्रयाग पक्षमें राज्य करते थे । प्रयागसे प्रदत्त त्रिसोत्तरनाथका १०८४ पद्यहित एक तात्त्व्यासन एयिया टिक जोसाइटीमें रखा हुआ है । उसे पढ़ कर प्रकृतस्य विद् किलहर्ष साइबने इस पद्यको सम्बुद्धापक्ष खिर किया है । (Indian Antiquary, vol. X, II p. 84)

त्रिसुदस तात्त्व्यासनको १०८४ मद्य सम्बुद्धा जो

मान सकते हैं, क्योंकि सूत्र तास्त्रगामनेमें सध्वत् शब्द स्पष्ट नहीं है। तास्त्रगामनेमें इन्हें राज्यपालके पुत्र और विजयपालके पौत्र बतलाया है। ११८८ सम्बत्में जो तास्त्रगामन सक्तीर्ष्य हुआ है, उसमें महाराजपुत्र राज्यपाल का परिचय है। (Ind. Ant X^v 111.p 26) पूर्वोक्तकी और शेषोक्तकी सध्वत् माननेसे राजपालके तास्त्रगामनेमें केवल २०० वर्ष का अन्तर देखा जाता है। 'महाराजपुत्र' राजपालने भो कान्यकुब्जराज गोविन्दचन्द्रको सम्प्रतिसे भूमिदान किया था। ऐसा होनेसे राजपालका गोविन्दचन्द्रके अधोच होना साचित होता है; किन्तु त्रिलोचनपालको परम भद्रारक महाराजाधिराज इत्यादि स्वाधोच राजाकी उपाधि मिली थी।

२ एक पराक्रान्त राजा जो पश्चिमोत्तर प्रदेशमें राज करत थे। उन्हींने सुलतान महमुदके साथ युद्ध किया था।

३ शाहदेशके चौतुक्खवशोय एक विख्यात राजा, वत्सराजके पुत्र। ये ८२७ शकमें राज करत थे।

त्रिलोचन भद्राचार्य—न्यायमद्धित नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

त्रिलोचनमित्र-धर्मकोप नामक धर्मशास्त्रके संग्रहकार। वर्तमान और आङ्गिकतत्त्वमें रघुनन्दनने इनके वचन सङ्ग्रहित किये हैं।

त्रिलोचन शिवाचार्य—रत्नत्रयोद्योत और सिद्धान्तसारावली नामक शैवशास्त्रकार।

त्रिलोचना (सं० स्त्री०) दुर्गा।

त्रिलोचनाचार्य—वैयाकरण कीटिपत्र नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

त्रिलोचनादित्य—एक संस्कृत ग्रन्थकार। इन्होंने नाटलोचन और लोचनव्याख्याएँ ग्रन्थ बनाये हैं।

त्रिलोचनाष्टमी (सं० स्त्री०) त्रिलोचनाथ शिवपूजायें या षट्ठी। ज्यैष्ठमासकी गौणचान्द्र कृष्णाष्टमी। इस षट्ठीमें शिवकी पूजा करनेसे शिवलोककी प्राप्ति होती है।

त्रिलोचनी (सं० स्त्री०) त्रीणि लोचनानि यस्याः। दुर्गा।

त्रिलोचनेश्वरतीर्थ (सं० स्त्री०) त्रिलोचनेश्वर नाम तीर्थ। तीर्थ विशेष, एक तीर्थका नाम।

त्रिलोह (सं० स्त्री०) सुवर्ण, रजत और तास्त्र; सोना, चाँदी और ताँबा।

त्रिलोहक (सं० स्त्री०) सोना, चाँदी और ताँबा ये तीनों धातु।

त्रिलोहक (सं० त्रि०) त्रीणि लोहानि धातवो यत्र, संप्रसार्य कन्। सुवर्ण, रजत और तास्त्रमय पात्रादि; सोने, चाँदी और तंबिके बरतन आदि।

त्रिवण (सं० पु०) सम्पूर्ण जातिका एक राग। यह दो पहरके समय गाया जाता है। कोई कोई इसे हिंडोल-रागका पुत्र मानता है।

त्रिवणो (हिं० स्त्री०) एक संकर रागिणी। यह शंकराभरण, जयश्री और नरनारायणके योगसे बनती है।

त्रिवत्स (सं० पु०) त्रयो वत्सः वत्सराः यस्य सः। तीन वर्षका पशु।

त्रिवर्ग (सं० पु०) त्रयाणां धर्मार्थकामानां वर्गः समूहः। १ अर्थ, धर्म और काम। २ त्रिफला। ३ त्रिकटु। ४ वृद्धि, स्थिति और वय। ५ मत्त, रज और तम ये तीनों गुण। ६ ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य ये तीनों प्रधान जातियाँ। ७ सुनीति। ८ गायत्री।

त्रिवर्ण (सं० स्त्री०) १ तीन रङ्ग।

त्रिवर्णक (सं० स्त्री०) त्रिवर्णं स्वार्थं कन्। १ ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ये तीनों प्रधान जातियाँ। २ त्रिफला। ३ श्याम, रक्त और पीत; काला, लाल और पीला रंग। ४ गोक्षुर, गोखरू। ५ त्रिकटु।

त्रिवर्णकत् (सं० पु०) सरट, गिरगिट। यह तीनों रंग धारण कर सकता है।

त्रिवर्णा (सं० स्त्री०) वन कार्पासो, वनकपास।

त्रिवर्ष (सं० पु०) एक प्रकारका मोती। कहा जाता है कि जिधके पास यह मोती होता है उसको दरिद्र कर देता है।

त्रिवर्षगा (सं० स्त्री०) त्रिपथगा, गङ्गा।

त्रिवर्षन् (सं० स्त्री०) १ त्रिपथ। त्रीणि वर्षानि यस्य। २ देवयान, पिढयान और दक्षिणायन इन तीनों मार्गोंके जीव।

त्रिवर्ष (सं० त्रि०) त्रयो वर्षा वत्सराः प्रस्य। १ तीन वर्षके जीव। (पु० स्त्री०) २ वर्षत्रय, तीन वर्ष।

त्रिवर्षा (सं० स्त्री०) तीन वर्षको गाय।

त्रिवर्षिका (सं० स्त्री०) त्रिवर्षादेवता।

त्रिबर्णीय (स० त्रि०) त्रिबर्णं भवा मयादिभ्यश्च । त्रिबर्णो त्यक्, जो किञ्चल तोन बर्णं तत्र दृश्यता है ।

त्रिबर्णी (स० ङी०) इन्दोवर, मोलकमन ।

त्रिबन्ध (स० पु०) बहुत प्राचीन ज्ञानका एक प्रकारका वाक् । इस पर चमड़ा मढ़ा होता था ।

त्रिबाहुर (त्रिबहाहोड़ वा त्रिबहाहू)—मन्द्रा प्रदेसके अन्तर्गत देगीय राज्यासित एक मित्रराज्य । यह अक्षांश ८० ४ और १० २१ से तथा देशांश ७६ १४ और ७७ १० पू० में अवस्थित है । इससे उत्तरी ओरकोनाम्य पूर्व में मधुरा और तिबेनेनी त्रिस्ता, पश्चिम और दक्षिण में भारत महासागर है । यह राज्य उत्तर दक्षिण में ८० कोस लम्बा और १८ कोस चौड़ा है । भूपरिमात्र ६०१० वर्गमील है । इसमें ११ तासुक लगते हैं । इसको राजधानी त्रिबन्दरम् है । यहाँ त्रिबाहुरके राजा वास करते हैं ।

यहो राज्य प्राचीन बेरनका दक्षिणार्ण्य है । इसके कई एक नाम पाये जाते हैं, यथा—त्रोत्रिबन्धुपुत्र, त्रोत्रेनपुर और पद्मानभपुर । पेरिब्रह्मके अनुसार इसका एक प्राचीन नाम 'सुरभि' है ।

त्रिबाहुरका प्राकृतिकदृश्य अत्यन्त सुन्दर है । पूजा में पर्वतमाता बहुत उम्र अङ्गुली देवी है । पर्वतका शिखर ८ हजार फुट ऊँचा है । समुद्रके किनारे ३ कोस दूर बसन्त घाटमें आश्रित्य और सुवारीके दृष्ट देखे जाते हैं ; ये ही दोनों दृष्ट देखके ज्ञानमन्त्रके प्रदान उपाय है । हारा देव एक प्रकारको बर्ष उपायकाके पाण्ड्या दित है पूर्व-पश्चिममें लहियां प्रकाशित हैं । समुद्रके किनारे तथा अय्यन्तर बहुतसे ऊँट हैं त्रिभने पानी केट कर एक दूसरेके मिला गई हैं । अब नदीमें अन्न नहीं रहता वा पातानीके समुद्र होकर वा आ नहीं रहते तत्र इन्हीं ऊँटों हो कर नौका पाते जाते हैं । नाशिकनाक नामक पूर्व दिशामें ज्ञान और ताक बहुत उपजते हैं । यह नगर जो किबेनेनी त्रिषिध के पा है, पर नहीं नहीं अनुबर जमीन भी पाई जाती है । समुद्रके किनारेकी जमीन धरने पश्चिम बर्बर है । पर्वतमाताका दृश्य बहुत मनोरम है । दक्षिणार्ण्यमें पर्वतमाता लङ्कनीके पाण्ड्यादित और पूव का भी है । मन्त्रकका पहाड़ उतना ऊँचा नहीं है । उपायकादिमें

ऊँचे मन्दिर और मित्रा है । पश्चिमार्ण्य बहुतने बनीके है । ममारसुद्धि, कोनाचल, विनिष्क्रम पन्तराह, पञ्चोत्ती कुइमोन (कोनाच), वायहू, तम् पोरकाड़ और पत्रेवि नामक प्रधान बन्दर समुद्रके किनारे पर्वतमाता है । इनमेंसे पर्वेवि कुइमोन और कोनाचन बन्दरोंमें जो बड़े बड़े जहाजादि पाते जाते हैं और सब दूसरे बन्दरोंमें देवो बड़े बड़े नावें पातो हैं । पेरियर नदीके पश्चिममें पर्वतमाताका नाम पन्नमपय है । इसी शिखरके ताम्बपर्वो नदी निकलती है । यहाँको उपायकामें सब बसन्त काफो और चाय उपजतो है । पश्चिममय वा जामिनटन उपायका ३ कोस लम्बो और ६५ कोस चौको है जिसमेंसे १० हजार बोले जमीनमें शिवल काफो और चायको फसल होती है । मिनमय वा वानन्दनन पर्वत पर मो ऐसा हो मन्वा चौड़ा चाय और काफोका घेज है । त्रिबाहुरके पर्वते ऊँचे पर्वतशिखरका नाम पन्नपसुद्धि है, जिसको ऊँचाई ८८१० फुट है । बिमा लयके दक्षिणमें यही सबसे ऊँचा पर्वत है । इसके समीप और भी कई एक शिखरको ऊँचाई ८ हजार फुट है । इस पर्वतमाताके दक्षिणमें एलाचि-पर्वत माता है, जहाँ वारकोनी बहुत उपजतो है । यह पर्वत-माता दक्षिणमें प्रथम पतनो और छोटी होकर कम्पा कुमारिका तत्र विच्छिन है । इस पहाड़में मत्स्योका वास बहुत कम है ।

घाट पर्वतने इस देशको बहुतसे नदियां उत्पन्न हुई हैं । पेरियर नदी ही इस देशमें प्रधान है । यह पर्वतके बहुत ऊँचे स्थानमें निकल १३२ मील पाकर कोदङ्गुर नामक स्थानमें समुद्रके एक अलावतर्ष में गिरी है । इस नदीके मुहानेमें ऊपर १० कोस तक गांधे बनतो हैं । इसके बाद पम्बर नदी है । इसकी पश्चिम बहल और बहदा नामको दो उपनदियां हैं । कुनि तोरह वा पश्चिमताम्बपर्वो मन्ने मङ्गुनिरि नामक पर्वतके उत्पन्न हो कर तिबेनेनी त्रिसेमें प्रवेश करतो है । बड़े ताम्बपर्वो नदी भी पन्नमपय पर्वतके निकल कर समी त्रिसेमें प्रवेश करतो है । दक्षिणार्ण्यमें प्रथम और कोदर नामक स्थानमें वाण्डु राजाधीके बनाये हुए बहुतने पानिबट वा डीनाबरोह है । तीरवर्ती अलावतर्ष

प्रकारका कर पाव तक नहीं देता । विष्णु जब सोई 'अन्न' अन्नको अमोन अन्नानि होइ कर किमी दूसरेके हाथ बेचना वा बन्ध करना है, तब उस अमोन का 'अन्न' काव नष्ट हो जाता और राजा उसके उपर दण्ड कायम कर देता है । इस तरहको 'राज मोदम्' कहते हैं । अतः अमोन पर कर लगाया जाता है । उसमें होनेके सिद्धे बीजका पावा अर्ध राजा देता है और उक्त अमोनका जो कुछ कर प्रशा देता है उसका अर्ध विष्णु राजा पाता है । इस तरह मन्थनि अन्नतमी अमोन विदेमिपिके हाथ या मई है; इने अन्नम् वा विर कायो बन्दोबस्त कहते और जो अमोन नायरीके दाब पक्षके ही राहो है उसे 'मादभिमार्' कहते हैं । इसमें राजा राजमोगम् बहुत नहीं करते । अन्नम् अत्यको अमोन विष्णुके उपराध और उत्तराधिकारीके नहीं रहने पर राजाद दानमें या जाती है । बाटको अमोन, परकी अमोन और समुद्रका कर राजाके अर्धमें है, इने परबारी अमोन कहते हैं ।

इस देशमें नारियल, नारियलको रखी, बूबेका घोल, नारियलका मीन, सुलो पदरख वा पीठ, मान मिश्र, सोना मङ्गो, बहादुरी काठ, बायो, रनायथो, मोम, इसको और ताजावको मङ्गो रकजको होते तथा दूसरे दूसरे देशोंमें तमाघ, विनायतो द्रव्य, चाबक, पत बई और तबिको पामदनी होती है ।

इस देशमें १८ मुसफो, ६० जोबदारो, ३ जिला पदा मत और राजधानीमें एक सदर पदान्त है । पुलिस-का एक भी प्रतन्त्र प्रबन्ध नहीं है । दीवान विरवार (वा विभागीय प्रबन्ध अर्धकारी) और तहसीलदार भीम पुलिसका काम करते हैं । विरन्दरूममें २, कुई भीनमें एक और पक्षेदिमें एक अर्ध विधानत तथा अक्षेत्र है । इसमें धिया २३ जिला पदून और बालिका विधानत है ।

१८६१ ई०में आबकर स्थापित हुआ, विधमें केवल राजकीय कार्य चलाया जाता है । यमी उपमें याबा एकका भी पबिहार दे दिया गया है । इसमें पतिरिज और भी ८८ डाकघर हैं ।

सदारात्रे पान १३६० पदाति केव ६० पम्पारोको ३० मीनन्दात्र और ३ अमान है ।

तिहास—विवाहुरका प्राचीन विम्बासयोज्य इतिहास नहीं है । प्रवाद है, कि परशुरामने सब मसुठ के प्राणसे समस्त मसुठालम् भूमाम बचाया था, तब उन्होंने यह प्रदेश नाम्पुरि नामक आश्रमोंकी स्थापना किया । ई० मन्के ६८ वर्ष पहले नाम्पुरिगण इस प्रदेशमें शासन करते थे । बाद ब्राह्मण लोग एक चक्रिजकी बारह वर्ष तक अपना राजा चलाते और एक पादमोका बारह वर्षका समय पुरने पर एक दूसरे पादमोको उभ पद पर पबिधित करते थे ।

विवाहुरके दीवान अङ्गुजिमेनने विवाहुरका प्राचीन इतिहास इस प्रकार लिखा है—

परशुरामने मसुठालम् भूमामका उदार कर दक्षिण केरलमें भागुविक्रम नामक एक केरलाश्रमोंके पबिधित किया । भागुविक्रमके बाद उनके मतोत्रि पादित्व विक्रम परशुरामने राजा बनाये गए थे । पोहे परशुराम उदयवमाको उत्तर केरल प्रदान किया । मँतायुगमें यह घटना हुई । अन्वियुगमें ३८ राजांपनि दक्षिण केरलमें राज्य किया । १८६० अन्वियुगमें राजा कुल सिद्धर पावामें राज्य करते थे । कुछ दिन बाद जो उन्होंने मन्थान काम पक्ष किया । पात्र भी विवाहुरके मिश्र मिश्र अन्विके मन्दिर्मिं उनको मूर्तिपूजा हुआ करती है । बहुत समयके बाद अन्विके प्रारम्भमें मसुठ के राजा बीरवर्माने पाण्ड्य और पेर राज्य पर पबि कार किया । पोहे कोइराजापोंने पेर राज्य जीत लिया । इस समय केरलाश्रम यमें मसुठ और तिथेथीका प म परित्वाग कर जिवाहुरके पाकर पान्त्य प्रवृत्त किया ।

पिदमन्नेने प्रायः २०० वर्ष केरल राज्य पर शासन किया । इस समय त्रिरोचक ईसाई और यन्त्रगेयक कोचोनमें पाकर रहने लगे । अन्तमें पिदमन्नात्र कोचोनके राजा और आन्विकेटके सामन्तरात्रको राज-दण्ड देकर पन्तर्हित हो गये

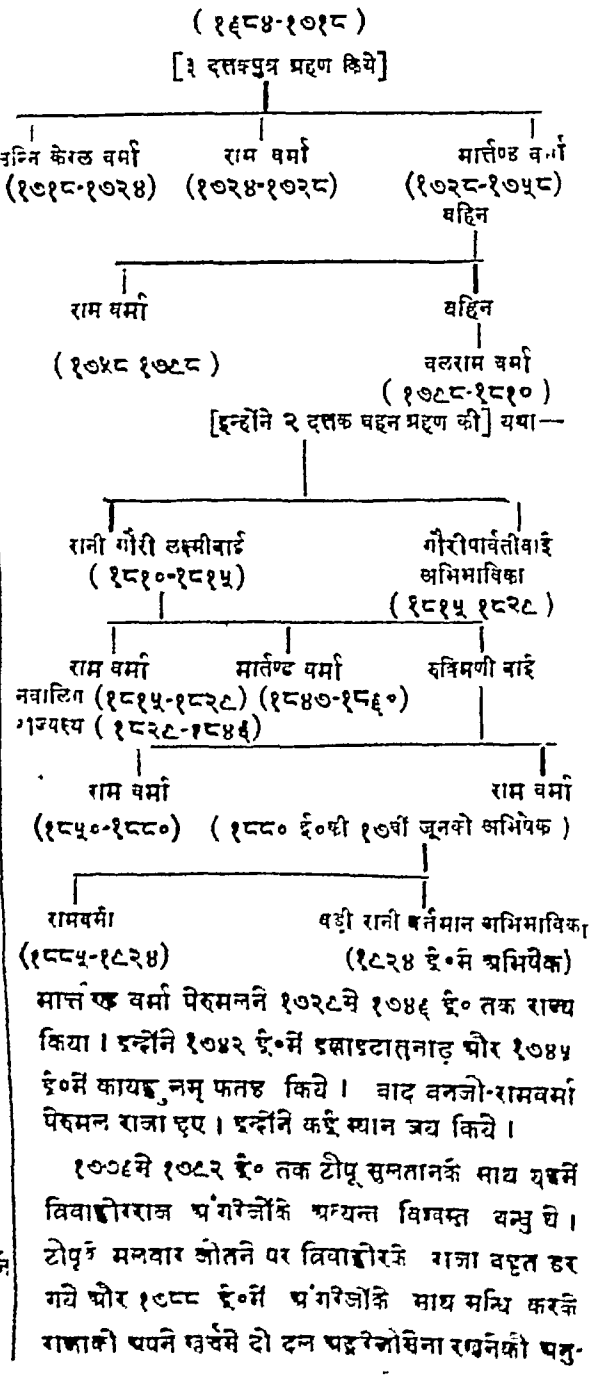
उपयुक्त विवरण केवल प्रवादमूलक है यह पत्रत पतिहासिकता प्रवृत्त नहीं किया जा सकता । बाद लक्ष्मणयोज्य दो राजांपके नाम पाये जाते हैं—एक बीर मार्गण्ड बर्मा, ये ०११ ई०में विद्यमान थे और दूसरे उदयमार्गण्ड बर्मा, इन्होंने ८२४ ई०में कोन्वन्दा अन्वित

किया। यह शब्द अभी मन्थालम् शब्द नामसे प्रचलित है। वाट ११८८ और १३३० ई०में प्राटिल्यवर्मा नामक दो राजाश्रीके नाम मिलते हैं। वीरराममार्त्तण्ड वर्मानि (१३३५-१३७८ ई०के मध्य) त्रिवन्दरमुका राजप्रासाद और दुर्ग निर्माण किया। उनके पोछे एरवोवर्मानि १३७६से १३८२ ई०तक राज्यशासन किया। केरल-वर्मा कुलगोस्वर-पेरुमलके ३ मास राजत्व कर स्वर्गगमन करने पर उनके यमज सहोदर चेर उदयमार्त्तण्ड वर्मा राजा हुए। इन्होंने १३८२से १४४४ ई० तक राज्य किया। ये चेरसाट्टेवा नामक स्थानमें रहते थे। वहाँ इनको शिनालिपि भी है। वाट निम्नलिखित राजाश्रीनि यथाक्रमसे राज्य किया,—

राजाश्रीके नाम	राज्यकाल
वनवनाड मुत्तराज	१४४५-१४५८ ई०
वीरमार्त्तण्डवर्मा	१४५८-१४७१
प्राटिल्यवर्मा	१४७१-१४७८
एरवीवर्मा	१४७८-१५०४
मार्त्तण्ड वर्मा	१५०४
वांगरवी वर्मा	१५०४-१५२८
मार्त्तण्ड वर्मा,	१५२८-१५३७
उदयमार्त्तण्ड वर्मा	१५३७-१५६०
केरलवर्मा,	१५६०-१५६३
प्राटिल्यवर्मा	१५६३-१५६७
उदयमार्त्तण्डवर्मा	१५६७-१५८४
वांगरवी वर्मा	१५८४-१६०४
वीर वर्मा	१६०४-१६०६
रवि वर्मा	१६०६-१६१८
अतिकेरल वर्मा	१६१८-१६२५
रवि वर्मा	१६२५-१६३२
अतिकेरल वर्मा	१६३२-१६६१
प्राटिल्य वर्मा	१६६१-१६८०

शेष प्राटिल्यवर्मा और उनके प्रातिगण मारे गये। उनका भाँचे उमयम रानो १६०० ई०में राज्यको अभि-भाषिकाके रूपमें नियुक्त हुईं। १६८० ई०में सुमन्मार्त्तण्ड विषाह, र पर आक्रमण किया। उन लोगोंके अधिनायक विष्णुवर्म्मेने कुछ काम रहे थे। फलमें राज्यमें शीघ्र सेना-

पति केरलवर्माने उन्हें राज्यसे भगा कर मार डाला। उमयम रानोके पुत्र रविवर्मा वयःप्राप्त होने पर १६८४ ई०में राज्यसिंहासन पर बैठे। रविवर्माके परवर्ती राजाश्रीकी तालिका नीचे दी जाती है—
रवि वर्मा।



मति मिली। इन सेनाओं का खर्च उन्हें नगद वा भात मिच देकर मोच करना पड़ता था। यह संशयदम बिपिन दोपडे निवृत्त पदवी परी न पया वा बि टोपूने त्रिबाहुर पर धारा किया। चायकोइ धीर कोटइदुर ये दोनो दुर्ग पोन्नद्वारोसे त्रिबाहुरोके राजानि चरीदे से। टोपूने उन पर अपना दावा कमाया धीर बुद्ध जान दिया। भाय्य-कामसे बुद्धने टोपू पराजित हुए धीर उनके दमके २ हजार मनुष्य मारी गये। दूसरे वर्ष (१०८० ई०में) टोपूने पुनः त्रिबाहुर पर आक्रमण किया धीर इस बार भी पराजित हुए। १०८२ ई०में च गरीजनि टोपूके पबिहत प्रदेशके कुछ खंड (तोन जिले) राजाको सौटा दिये धीर उनके बदले राजा तोन दस सिपाही भेज धीर एक दम च गरीज गोलमद्वार से गेवा खा खर्च देनेको बाध्य हुए। १०८५ ई०में च गरीजनि राजाको फिर भी एक दस सिपाही भेजवा खर्च का बिबिध ऽ साध रूपसे देनेको बाध्य किया। १०८८ ई०में यह रूपया बहुत बाकी पड़ गया। इनका दोष दोबानके मर्ती मढ़ा गया। चङ्गैजनि दीवानको कामसे पलग हो जाने कथा। इन पर १० हजार नायर बिद्रोहो होकर चङ्गैजको रचितभेज पर टूट पड़े। चङ्गैजनि मजबूत हो कर क्वाटक बिबिध नामक पबिह ध्यवसाय च गरीजो-नेनादसठ हठमइ किया। उसका खर्च राजानि दिया। तमोसे त्रिबाहुरीके धीर कोई पुखंटमा न बडो। १०९० ई०में बनरामको म्हापु दुई। इनके बाद क्खोरानोनि हूड जान तक राज्य कर बर्मल मनरो नामक रैनिठेके हाथ राज्य परिचालनका मार सौवा। १०९४ ई०में क्खोरानोको म्हापुके बाद उनको बडम पावतोरानोनि पमिमाबिका हो कर राजा रामबर्माको नि ज्ञानन पर पबिहित दिया। रामबर्मा १० वर्ष राज्य कर १०७८ ई०में करान जानके गानमें कने। उनके मारे मारत एक बमा राजा हुए। बाद उनके भाजे बनजो जान रामबर्मानि १०९० ई०से १०८० ई० तक राज्य किया। १०९२ ई०में मबनर वीरलनठ उत्तराचिचारीके पमाबर्मा दत्तक बहन पडक करनेका पबिहार प्रदान किया। ये सब दत्तक रानियो पतिल नामक ज्ञानने रहती धीर तुम्बतो नामने प्रबिह थीं। मकवारके निय

मातुमार इस राज्यमें राजाके बाद उनके भाई धीर तक बड़े भाजे राजा हुआ करते हैं। वर्तमान राजाके मूल पूर्व महाराजका पूरा नाम थोपपनामदाय-बनजोबाध रामवर्मा-कुसुमीनर बिरोटपति मुके तुमताम-महाराज राजाराम राजा बडापुर घर ममनेरका भो० धी० एस० पाई० का। इनके सन्धानार्थ २१ तोपे दो जाती थीं। यहांके महाराज मम्बूबं खाभोन हैं। पयराचिचोके भोजनमरचके क्षयर इनको पुरो समता है पयरात् पयोजन पढ़ने पर ये प्राचदण्ट दे सकते हैं। इनकी माइमाया मन्वाकम् है।

त्रिबाहुरीमें पमी पादयं द्विन्द्याय्य है। राजा बिमोयकपसे द्विन्द्याय्यके पतुमार पवती हैं, इकोसे उन्हें प्रति दिन कामसे काम एक बार पदनाम व्यागोके मन्दिरमें जाना पड़ता है।

त्रिवार (स० त्रि०) १ बारमयुक्त, तोन बार, तोन टपा। (पु०) २ गवकूके एक मुत्रका नाम।

(भारत इतिहास १०० पृ०)

त्रिबाहुर (म० पु०) तमवारके ३२ घण्टोंमें एक घण्ट। त्रिविक्रम (म० पु०) त्रिपु मोडेपु बलिबचनार्थे म्पूपाताम-खरी पु क्रमः पादव्यासो वम्ब यदा भोनु भोवानु विमिपेच क्षमिति व्यागोतीति विक्रम-३५॥ १ विष्णु, २ धामनका पबतार।

त्रिविक्रम—१ मद्रुत्रिचर्मायतहत स खलत बलि। बिपो के मतके मद्रुत्रिचर्मायतमें दो विक्रमयो क्षमिताके उद्भूत दुई हैं, त्रिनमिसे एक भागवत धीर कूसरा भेष है। २ एक बर्म शाकवार। निर्बंयसिन्धु धीर प्रतिहा मयुधमें इनके बचन उद्भूत हुए हैं।

३ एक पमिधानकर्ता। ईमाद्रि धीर दिनचरको रहक मटोबार्में इनका नाम उद्भूत हुआ है।

४ कानबिधान नामक ज्योतिषग्रन्थकार। महादेव धीर बिष्मनाचने इनका मत उद्भूत किया है।

५ उवाहरच ग्रन्थक म खलके काम्यकार।

६ एक बिष्वात ज्योतिषो। इकोने त्रिपमारिचो, ब्रह्मपयकार, मदनभो-अयवकारक वा त्रिविक्रममतक ज्योतिषतक रन्वादि नामक कई एक ज्योतिषग्रन्थ बनाये हैं।

० पञ्चिकीयौत नामक संस्कृत ग्रन्थकार ।

८ महालसाचम्पूके रचयिता ।

९ रामकीर्त्ति सुकुन्दमाला नामक संस्कृतग्रन्थकार ।

त्रिविक्रमभट्टारक—एक विख्यात तान्त्रिक, राम भारती-
के शिष्य । इन्होंने मन्तररत्नमञ्जुषा नामक तन्त्र और
सुगुणार्थदोषिका नामक शारदातिलककी एक टीका
रची है ।

त्रिविक्रमदेव, - १ प्राज्ञान व्याकरणकी त्रिविक्रमा नामक
वृत्तिके रचयिता । ये जैनधर्मावलम्बी मङ्गिनाथके पुत्र
और आदित्यवर्माके पोत्र थे ।

२ शौहप्रदोष नामक वैद्यकग्रन्थकार । इन्होंने
गौडान्तःपुर वैद्य कह कर अपना परिचय दिया है ।
भोजराज, बङ्गसेन आदिके ग्रन्थ देख कर यह ग्रन्थ
बनाया गया है । इसमें नाना प्रकारके खनिजद्रव्योंका
गुणागुण वर्णन किया गया है ।

त्रिविक्रम पण्डित—पुण्यग्रामके एक विख्यात शास्त्री ।
इन्होंने पञ्चायुधप्रपञ्च नामक एक संस्कृत भाषण प्रणयन
किया है ।

त्रिविक्रम पण्डिताचार्य—वायुस्मृति, ऋषिहस्तुति और विष्णु-
स्मृतिके रचयिता । ये त्रिविक्रम पण्डित नामसे प्रसिद्ध हैं ।
त्रिविक्रमशिव—ग्रोमदोषिका नामक वैदान्तिक ग्रन्थ-
कार ।

त्रिविक्रम सूरि—रघुसूरिके पुत्र । इन्होंने आचारचन्द्रिका
और प्रतिष्ठापद्धति नामक ग्रन्थ बनाये हैं ।

त्रिविक्रमाचार्य—१ गोवाणभाषाभूषण नामक संस्कृत
के भूमिधानकार ।

त्रिविक्रमानन्द—सारसंग्रहज्ञानभूषा नामक वैदान्तिक
ग्रन्थकार ।

त्रिविद् (स० त्रि०) तीनों वेदके जाननेवाले ।

त्रिविद्य (स० पु०) त्रिस्रो विद्याऽस्य । त्रिवेदज्ञ द्विज,
तीनों वेदके जाननेवाले द्विज ।

त्रिविध (स० त्रि०) त्रिस्रो विधा अस्य । तीन प्रकारका,
तीन तरहका ।

त्रिविगत (स० त्रि०) जो देवता ब्राह्मण और गुरुके प्रति
बहुत श्रद्धा और भक्ति रखता हो ।

त्रिविष्टप (स० त्रि०) त्रिष्वन्ति अस्मिन् सुकृतिनः विश-
कपन् तुष्ट यत्त्वच्च । १ स्वर्ग । २ तिव्वत देश ।

त्रिविष्टपसट् (स० पु०) त्रिविष्टपे स्वर्गे सीदति सट-क्तिप् ।
देवता ।

त्रिविष्टप् (स० त्रि०) त्रिष्विष्टप्स्वामि यत् । त्रिदण्ड-
रूप तीन श्वष्टम्भ ।

त्रिविस्त (स० त्रि०) त्रिष्वि विस्तानि स्वर्णकर्षमूल्यवान्
अनर्हति ठक् तस्य वा लुक् । जिसका दाम तीन स्वर्ण
कर्ष हो ।

त्रिविस्तीर्ण (स० पु०) त्रिभिः विस्तीर्णः । शुभलक्षण-
युक्त पुरुष, बड़ पुरुष जिसका ललाट, कमर और छाती
ये तीनों अङ्ग चौड़े हों । ऐसा मनुष्य भाग्यवान् समझा
जाता है ।

त्रिवीज (स० पु०) श्यामाक, सार्वा ।

त्रिवृत् (स० पु०) त्रि-वृ-क्तिप्, तुक् च । लताविशेष,
निषोथ । इसके संस्कृत पर्याय—सर्वांगभूति, सुवहा,
त्रिपुटा, सरण, सरमा, त्रिपुटी, रोधनी, मालविका, मसुरी
श्यामा, अर्द्धचन्द्रा, विदला, सुवणो, कालिङ्गक, कालमेधी,
काली, त्रिवेला, त्रिवृत्तिका, श्वेता और सारा हैं । कोई
तो इन्हे सामान्य त्रिवृत्के और कोई श्वेत त्रिवृत्के
पर्याय बतलाते हैं ।

क्षया त्रिवृत्के पर्याय—श्यामा, कालिन्दी, सुषेणिका,
काला, मसुरविदला, अर्द्धचन्द्रा, कालभेषिका, काल-
मेशिका, पालिन्दी ।

श्वेत त्रिवृत्के पर्याय—त्रिवृत्, टकाची, सुवहा,
त्रिभण्डो, त्रिपुटा ।

अरुणत्रिवृत्के पर्याय—व्याघ्रादनी, कटुरुणा, निः-
श्वता, त्रिवृता, अरुणा ।

निषोथ भिन्न भिन्न देशोंमें भिन्न भिन्न नामोंसे पुकारो
जाती है; जैसे,—वर्द्धमान, टाका, यशोर और वरिशालके
अञ्चलमें तेउड़ी, मैमनसिंहमें त्रिशिरा, बङ्गमें कहीं कहीं
दुधकलमो, सन्यालपरगनेमें वनएतका, पञ्जाबमें चिता-
वास, बम्बईमें निशोतर, फुटकारो, दक्षिणमें तिङ्कुरो,
तामिलमें शिवदई, तेलगुमें तेगड़ और अरबी भाषामें
तरषन्द वा तरषद । अंगरेजो वैज्ञानिक नाम Ipo-
maea Turpethum (India jalap) ।

यह लता सारे भारतवर्षमें, सिंहल, भारतमहा-
सागरीय द्वीपसुख, मलय, अष्ट्रेलिया आदि नाना देशोंमें

पाई जाती है। अक्षरवर्तमें कई जगह उष्यामो की गोमा बहानेके सिधे यह शता उमाई गई है। बिन्दु दवाके काममें जड़को कता ही फायदासम्ब है।

बैशम्भके मतके सामान्य त्रिहृत्वा गुण—कटु, उष्य, क्षमि, शीघ्रा, उदररोय, कुष्ठ कण्टु, पीर प्रवनायक है। विरैचनमें इसे प्रयुक्त माना है। (यमि०)

पच्य त्रिहृत्वा गुण—झाडु, कपाय, खटु, रैचक, हच, कटु, शीघ्रपाकमें पित्त पीर कफनायक है। राज वज्रमक्षे मतके श्वेतत्रिहृत् पीर पक्षत्रिहृत्के गुणमें जोड़ा ही पक्ष पड़ता है।

भाबप्रकाशके मतके श्वेत त्रिहृत्वा गुण—विरैचन झाडु, उष्य, बायुकर, हच तथा पित्तकर, शीघ्रा पित्त, शीघ्र पीर उदररोय नायक है। कण्टु त्रिहृत्वा गुण—श्वेतत्रिहृत्के कुष्ठ शीघ्र, तोम्र, विरैचक, मूच्छा दाह, मट, श्वाति पीर कण्टुल्लव्यकर है। (बाबप्रकाश) पमो देसीय बैशम्भ पक्षकर विरैचक शीघ्रकण्टु त्रिहृत्को ही काममें खाते है। भारतवासीकी गई परबैचिकि कक्षकष मी बहुत प्राचीनकालमें शीघ्रमें त्रिहृत्वा व्यवहार करते पाये हैं। चाबिकीजाने 'तरबद' नामके इस विरैचक शीघ्रका उल्लेख किया है। इसी 'तरबद' के पगरीजो नाम Turbith or turpeth नाम पड़ा है।

डाक्टर एनरिच कालिच, गर्डेन, स्वास पादि पनेक यूरोपोव चिकित्सकोंने त्रिहृत्वा कण्टु विरैचक गुण स्कोधार किया है। इनके सिवा डाक्टर पालडनका मत है कि यह मात, कुष्ठ पीर शीघ्रमें भी विदिय उपकारी है। इनके गुण रहने पर मो एक कमय त्रिहृत् का बहुत फायदा ही मया था। डाक्टर कसप्रभोने निम्नये परीचा करके तथा कर्बोत्र पनुवर्ती कोरर काकर धिरेडिने पपना मत प्रकट किया कि, "इसका गुण विषकुष्ठ अनिपित है औरकष यह मुस्ताक्षमें इहका नाम नहीं रहना ही उचित है।" कम दोनोको बातो पर विम्वार रखते हुए यूरोपमें इसका प्रचार उठ गया। बिन्दु मारतवर्षमें ज्योका जो बना रहा। सुदिनवेरिच पादि विषकष चिकित्सकोंने उमका प्रतिवाद करते हुए कहा, त्रिहृत्के कोकड़को हालमें शेषा गुण है शेषा पीर

बिन्दी पत्रमें नहीं है। बाजारमें इसको बड़ पीर कण्टुको काम दोनो एक साथ विकतो है। सोकड़को हाल एक एक मताने रहे उ इह तक नम्यो पीर चौकाई इधरे एक इह तक मोटो होतो है। इनके परतो गोल गीर मुकोले होते हैं। इसमें मोन मोन कण्टु लगते हैं। सविद निशोबके सोकड़को काम बूसर वा श्वात बूसर देखनेमें पातो है। आसो निशोब पि मन् बर्बको होती है पीर इनको काम सविद निशोबके बहुत पतलो होतो है। इसका गुणाव नबने पच्छा समझा जाता है।

वर्तन इत् वि तिस्र उतो यम। (त्रि०) २ विवा विगुचित। तोन बार त्रिगुना, यशोपकोत। यशोपकोतको तोन बार त्रिगुचित करके बनाते हैं, इसीके इसका नाम त्रिहृत् पड़ा है।

यद्यपि मनुनि 'त्रिगुण कष' पर्यात् त्रिगुणा करलेको मो कहा है तथापि इन्दोगपरिमिट पादिने मतानु सार यशोपकोतको तोन बार त्रिगुना करना चाबिये।

त्रिहृत्के इत-शिव्। १ मित्रित रैत्र, कष पीर पच। ३ त्रिगुचित, त्रिगुना। त्रिभिः कण्टुशुःशाममि बर्त्तते इत कर्त्तरि शिव्। (गु०) १ यत्र। त्रिभिः बर्त्तते त्रिगुण्येन बोधार्थेत्। १ अक्ष्विमीपका नरक। यह नरक नरकोइके पाच माय कड़ाके पूव मुकसे उत्पन्न हुआ है। (त्रिपुत्र० १।१।१८)

त्रिगुता (घ० खो०) त्रिभिरवयवैर्हता। त्रिहृत्, निशोब। त्रिगुण केषा।

त्रिहृत्करच (घ० खो०) त्रिगुता करच इ-तत्। त्रित्र त्रन पीर पचका क्राभय करच चिति, कस पीर त्रित्र हन तोनोका मियच। हन तोन मुताको दो भागोंमें विभक्त कर प्रकोकक्षि एक एक परबको फिर दो भागोंमें बांटे हैं, बाट कोय परबको जोड़ कर शीघ्र दो परबोंमें एक एक माग जोड़ना होता है इसीको त्रिहृत्करच कहते हैं।

आन्दोष्वापनिपदुनें हच प्रकार निवा है—

उक्त तोन देवतापोंके श्वात् त्रित्र, कम पीर पच क्य तोन देवतापोंके जोजमून पाम्याहात श्वाभावस्थामि पनु

• Dr O. Senghosey's Bengal Dispensary
• Waring's Pharmacopoeia of India,

प्रवेश कर इनके नाम रूप व्यक्त करते हैं। इसी अभि-
प्रायसे दर्शन का उन तीन देवताओंमेंसे एक एकको
तिगुणा करते हैं। जिस प्रकार समान परिमाणके तीन
सूतोंको तिगुणा करनेसे रस्सो बनती है, उसी प्रकार तेज,
जल और अन्न इन सबको भी त्रिवृत्करण समझना
चाहिए। किन्तु तीनोंके नाम पृथक् पृथक् रखे गये
हैं, अर्थात् यह तेज है, यह जल है, यह अन्न है इत्यादि
तेजोंको विशेष माना है। उक्त तीनों तेज देवताओंके
उक्त रूपमें यथोक्त जोवोंके साथ अन्तःप्रविष्ट होते हैं और
वैराजपिण्ड अर्थात् देवताओंके पिण्डमें अनुप्रवेश करके
इनके वे नाम हैं एवं इनके वे रूप हैं इत्यादि प्रकारसे
उसी तरह नाम रूप व्यक्त करते हैं। जिस तरह इस
वह्निःस्य पिण्डसे तीन देवताओंका त्रिवृत्करण हुआ है।
देवताओंका जो त्रिवृत्करण कहा गया है उसका उदा-
हरण इस प्रकार है—

अग्निका जो लोहित रूप देखा जाता है, वह उर्ध्वी
तेजोंका रूप है, शुक्ल रूप जलका है और जो कृष्ण रूप
है उसे अन्नका अर्थात् त्रिवृत्कृत पृथ्वीका रूप सम-
झना चाहिए। ऐसा होने पर भी लोग अग्निको इन
तीन रूपोंके अतिरिक्त मानते हैं। इससे अग्निका अग्नित्व
नष्ट हो गया है। पहले वे तीनोंरूप विवेकविज्ञान-
वशतः अग्नि समझे जाते थे, पर तेज द्वारा वह अग्नि-
बुद्धि और अग्निशब्द अपगत हो गया है। रक्तोपधान
संयुक्त स्फटिक मणिको ग्रहण करनेसे पहले वह पद्मराग
मणिके जैसा प्रतीत होता है, लेकिन जब इसके स्वरूप-
का ज्ञान हो जाता है, अर्थात् यह रक्तोपधान है ऐसा
मालूम पड़ने लगता है, तब फिर पद्मरागका ज्ञान जाता
रहता है। उसी तरह जब तक अग्निके पूर्वोक्त तीन
गुणोंका ज्ञान नहीं होता, तबो तक अग्निबुद्धि और
अग्निशब्द रहता है। तीनों रूपोंका सम्यक् ज्ञान हो
जानेसे ही उनको पृथक् ताका ज्ञान दूर हो जाता है।

यथार्थमें वह विकार मात्र है, केवल तीनों रूप ही
सत्य हैं। तीनों रूपोंको छोड़ कर और कुछ भी सत्य
नहीं है।

सूर्यका जो लोहित रूप देखा जाता है, वह तेजका
रूप है, चन्द्रमाका शुक्ल रूप जलका और कृष्णरूप अन्न-

का अर्थात् त्रिवृत्कृत पृथ्वीका है। जब तक तीनों
गुणोंका सम्यक् ज्ञान नहीं होता, तब तक वे पृथक्
पृथक् रूपसे प्रतीत होते हैं। विवेकज्ञान ही जानेसे
तीन रूपोंके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं रहता, इसो-
से केवल वे ही तीनों रूप एक मात्र सत्य हैं।

उक्त तीन रूपोंके प्रतिष्ठित और कुछ भी सत्य नहीं है।
तेज, जल और अन्न जिस तरह इन तीन देवताओंके
त्रिवृत् करनेमें एक एक होता है, वह इसी तरह जानना
चाहिये। पहले जो उदाहरण दिया गया, वह तेजका
था। अन्न जल और अन्नका उदाहरण दिया जाता है।

पृथ्वीमें गन्ध है और जनमें रस है; किन्तु तेजमें वे
सब नहीं हैं। गन्ध और रस तेजमें नहीं है, सारा
संसार त्रिवृत् है, केवल तीनों रूप ही सत्य हैं, अन्न
और जल निष्पाद्य प्रयुक्त जल ही सत्य है, जल भी केवल
तेजः सम्पाद्य है। सुतरां जल और नाम मात्र तेज ही
सत्य है, तेज और सत्पदाथ निष्पाद्य है, सुतरां तेज भी
नाम मात्र है। अतः वही सत्पदाथ सत्य है, वायु और
आकाश त्रिवृत्कृत नहीं हैं, तबो वे तेजके अन्तर्गत
नहीं हैं।

जितने त्रिवृत्कृत है, सभी असत्य है। केवल एक
मात्र सत् पदार्थ ही सत्य है। (छन्दोग्य उप० भाष्य)

त्रिवृत् (सं० त्रि०) त्रिगुणित, तिगुणा।

त्रिवृत्ता (सं० त्रि०) त्रिरावृत्ता, त्रिवृत्, निसेध।

त्रिवृत्ति (सं० त्रि०) तिस्रः वृत्तयः कर्मधा०। त्रिवृत्,
निसेध।

त्रिवृत्तिका (सं० त्रि०) तिस्रः वृत्तयोऽस्याः कर्त्।
१ त्रिवृत्, निसेध। (त्रि०) २ त्रिधावृत्तियुक्त, जिसको
तीन वृत्तियां हों।

त्रिवृत्पर्णी (सं० त्रि०) त्रिन् दोषान् नाश्रुत्वेन।
वृणोति त्रिवृत् त्रिदोषघ्नं पर्णमस्याः। हिलमोचिका,
दुरदुर।

त्रिवृद्दे (सं० पु०) ऋगाद्यात्मना, त्रिवृत्ते त्रिवृत् कर्म-
धा०। १ त्रयोः ऋक्, यजु और साम ये तीनों वेद।
२ उनसे उत्पन्न ऋषयः। जो उक्त तीनों वेदको जानते
हैं, वे ही वेदविद् कहलाते और ये तीनों वेद जिनमें
प्रतिष्ठित हैं और जो साथ अक्षर ब्रह्म अर्थात् ऋषयको
जानते हैं, वे ही वेदज्ञ हैं।

त्रिवृन्द (स० पु०) पलाय हृत्, ठाकवा पड़ ।

त्रिवृन्द (स० पु०) एकादश द्वारके स्थान, मुद्रायामुसार
ध्वारकें द्वारके व्यासका नाम ।

त्रिवृन्द (स० पु०) एक राजपिंडा नाम, अथर्ववे
पिता ।

त्रिवेणी (स० स्त्री०) तिस्त्री वेणु वारिप्रवाहा त्रिसुहा
स युवा वा यत् । बह्नासके बुमसो जिसेवे पत्न्यत गहा
तोरक एक तोत्रं पौर घाम । यह पत्ना० २१ १८० ७०
पौर देया० ८८ १६ पू०में परब्रह्मत है । त्रिवेणी
घामके सामने मुहामें सर पड़ गया है । इस सरके
दक्षिणमें दूसरे बिगारे यमुनाका मुहाना है । त्रिवेणी
घामके उत्तर ओ कर सरस्वती या कर गङ्गामें मिल गई
है । इन तीन नदियोंके सम्मेलनके कारण इसका
त्रिवेणी नाम पड़ा है । त्रिवेणी घाम पक्षी एक प्रयाग
बन्दर था । योक् लोग इस बन्दरका ज्ञाप ज्ञानति थे ।
त्रिने सिद्ध मय है कि दक्षिणमें गोदावरी मुहामिने लो
सब अज्ञात पटने जाती लक्ष्मी पक्षी त्रिवेणी ओ कर
जाना पड़ता था । ठसिसोको मुहानमें भी त्रिवेणीका
उल्लेख है । त्रिवेणीके नोवे मरम्भतोको धार्मिक मित्रो
कोदने समब धमो बहुतवे मन्त्र, मुद्राओ नर्मि पौर
महत्वादि देखि जाते हैं ; घाममें सो कई जगह मन्त्रो
के नोवे पश्चिमाधीको दोवार मिलतो हैं ।

नरकतो मुहानिने उत्तरमें त्रिवेणीका सुप्रसन्न घाट
है । कहा जाता है कि लक्ष्मीके गजपतिव मीय पत्निय
न्याधीन राजा सुकुन्ददेवने ब्रह्म घाट निर्माण किया था ।
१३१२ ई०में सुकुन्ददेव सिंहासन पर बैठे । तोन सो
बर्षके पश्चिम हो गये हैं तो भी घाट ज्योथा खां बचा
हुवा है । बोधमें एक बार इसकी मरम्भत हुई है । इस
घाटमें चांदनो वा कर नहो है । इस घाटके बयलमें
चांदनो विमिष्ट एक मन्दर घाट है जहां गहा वासियोंके
बर है ।

त्रिवेणीको दक्षिणसोमामें एक विख्यात मस्जिद
है जिसमें चाकर खां पौर लक्ष्मी क मन्त्रे कई एक स्थितियों
को समाविष्टा हैं । चाकरखां पाण्डु धाके मोहम्मामे बटित
हुवके नायक शाह सफोके बचा है । चाकर धाके साथ
सुदियाके राजाका बुध हुवा था, लवो बुधमें चाकर मारे

गये थे । लक्ष्मी लक्ष्मीने बुधनीके राजाको परास्त कर
उनको लक्ष्मीको खाहा था । मस्जिदमें लक्ष्मी राजकन्या
की भी समाधि है । मुसलमान धर्ममें हिन्दूलोग पात्र भी
राजकन्याकी कब्रमें सिरनी चढ़ाते हैं । सुना जाता है
कि चाकर खां भी गङ्गाको पूजा करते थे ।

मि० श्यामलान चाकरको मस्जिद देख कर हम
प्रभार निश्च गये हैं—

मस्जिद दो दोवारिसे घिरो है । बाहरवाको पक्षो
दोवार बड़े बड़े पत्थरको बनी हुई है । कहा जाता
है कि भी हिन्दू मन्दिरकी तोड़ कर लक्ष्मी पत्थर स पक्ष
किये थे । गङ्गाको पौर दोवार पर लक्ष्मी कई एक प्रमाण
पाये जाते हैं । क्योंकि पत्थरों पर बहुतसी हिन्दू देव
देवियोंकी पक्षीन मूर्तियां पौर पत्थर सौंय विष्णु
धादिकी मूर्तियां पक्षित हैं । इसवे अनुमान किया जाता
है कि ये सब पत्थर सप्तमूर्धमें किसी हिन्दू मन्दिरने जिये
गये हैं । इन दोवार पर लक्ष्मीके चार हाथ लपटमें एक
कोईका पत्थर मड़ा हुवा है । प्रवाद है कि यह चाकर
खांका बुवाका था । दूसरो दोवार पक्षो दोवारके
दक्षिणकी पौरने निम्न कर मस्जिदको घेरे हुये हैं ।
यह दानादार पत्थरोंको बनी हुई है । वर्तमान
धादिम धाष्टानाके पश्चिमको निपट मूर्ध नहीं कह
सकते हैं । लक्ष्मी यह भी कहा है कि चाकर खांका
कस्त्रिमान सबने पश्चिममें है । धादिम खां यादिन खां पौर
बोरखां गात्रो नामक चाकरके लीन पुर्वीको भी धनय
धनय तोन कब्रें हैं । पक्षी दोवारके मध्य दर खां
माजीके दो पुत्र रक्षीम खां गात्रो पौर लरोम खां गात्रो
के समाधिस्थ हैं । दूसरो दोवारके मध्य पश्चिमकी
पौर ७० हावके पत्थर पर एक मस्जिदका मन्वावधिप
देवा जाता है । यह भी हिन्दू मन्दिरके लपटकरके
बनी हुई है । इसके शुभप्रके मन्त्र बहुत मोटे हैं ।
इस मस्जिदकी पश्चिमी मोतमें बहुतके लीव खुदे हुए
हैं पौर मोतारमें कई एक घरकी भाषामें लिखो हुई
यिनालिपियां हैं । लक्ष्मी पक्षीके जाना जाता है कि
पुर्वी खां मन्त्रधर चाकर खांने १८८८ हिजरोमें (१९८७
ई०में) यह मस्जिद निर्माण की । इसने धनका बहुतके
ई दो भी मोतके म् सावयेय देखनेमें पाये हैं । पक्षीके

अधिवासियों का कहना है कि ये सब खादिमों के घर थे ।

प्राचीन पुराणादिमें प्रयाग जो त्रिवेणी नामसे प्रसिद्ध है । प्रयागमें गङ्गाके माथ यमुना और सरस्वतीके मिल जानेसे उस स्थानको युक्तवेणी और त्रिवेणी नामक ग्राममें गङ्गासे सरस्वती और यमुनाके स्वतन्त्र हो कर भिन्न मुख हो जानेसे उस स्थानको युक्तवेणी कहते हैं ।

रघुनन्दनके प्रायश्चित्ततत्त्वमें लिखा है कि, 'प्रयुम्न-नगरके दक्षिण और सरस्वती नदीके उत्तरमें दक्षिण प्रयाग है । इस स्थानमें गङ्गासे यमुना दूर रह गई है । यहाँ स्नान करनेसे प्रयागमें स्नान करनेका फल होता है । उन्मुक्तवेणी दक्षिण-प्रयाग सप्तशामके निकट दक्षिण दिशमें त्रिवेणी नामसे प्रसिद्ध है ।'

आर्त्त रघुनन्दन श्री चैतन्यके समकालवर्त्ती थे, सुतरां चार सौ वर्ष पहले भी जो त्रिवेणी तोर्यवत् प्रसिद्ध और प्रयागके समान गिनो जाती थी उसका प्रमाण पाया जाता है । इसके सिवा कविकण्ठकी चण्डीमें भी त्रिवेणीका उल्लेख और उसकी सन्धििका कुछकुछ प्रमाण है । त्रिवेणी एक प्रधान तोर्य और वाणिज्यका स्थान रह कर उक्त पुस्तकमें वर्णित है ।

त्रिवेणीमें त्रिवेश्वर नामका एक स्थान है । इसके सामने गङ्गाके एक टहकी लोग कालोदर कहते हैं ।

त्रिवेणी-घाटके उत्तरमें बान्दा पहाड़ है । यहा एक जगह प्राचीन कालका एक बड़ा पत्थर विद्यमान है जिसे लोग भोविनका पाट कहते हैं । त्रिवेणीके घाटसे कुछ उत्तरमें उस पत्थरके समोप एक पुष्करिणी भी है, वह भी 'भोविनका पोखर' नामसे मशहूर है ।

जाफर खाँकी मस्जिदमें जो लोहदण्डकी कथा कही जा चुकी है उसके विषयमें एक प्रवाद है । सोम साधारणतः उसे 'गाजोका कुठार' और उस स्थानको 'दफरा गाजोका तला' कहते हैं । वह लोहदण्ड नवानेसे नब जाता है, किन्तु दोबारसे गिर नहीं पड़ता, इससे एक प्रवाद इस प्रकार है, 'गाजोका कुठार नवता, चढ़ता किन्तु गिरता नहीं ।' दफरा गाजोके विषयमें एक कहानी भी इस तरह है । दफरा गाजो नामक कोई मुसलमान धनी थे । एक दिन निमन्त्रणसे सौतेले समय राहमें गुफान

तथा टुटिने उन्हें घेर लिया । समीपमें कोई आश्रम न पा कर वे पासके एक बड़े वटवृक्ष पर चढ़ गये । वृक्षके पास हो श्मशान था । भूत और प्रेतोंने उस वृक्ष पर बैठ आपसमें कुछ बात चीत कर रही थीं, प्रेतोंने भूतसे पूछा 'क्या मेरा विवाह नहीं होगा ? क्या इसी अवस्थामें विरकाल तक रहूँगी ?' भूतने जवाब दिया—'बहन ! प्रसुक ग्रामके दफरा गाजोके नौकरको कल उफोकी गाय उसे मार डालेगी वह मर कर भूत होगा । उसी भूतके माथ तुम्हें ब्याहूँगा ।' दफरा गाजोके सध वाते सुन लो और टुटि वन्द होने पर उसने घरको राह नो । यहाँ उसने किसीसे कुछ न कह कर उस नौकरको बुलाया और उसे एक घरमें बन्द कर ताला लगा दिया, किन्तु वे उसको ताली उभो जगह भूल आये । उनको खोने उसे छिपा रखा । शहर उनको गाय रफो तोड़ कर बहुत उत्पात मचाने लगे । कभी वह गङ्गाके किनारे और कभी घरमें इधर उधर कूदती और अनर्थ करते थे । गृहिणी-ने देखा कि यह भारो विपद् आ गयो, ऐसा होनेसे राहके मुसाफिर मारे जा सकते हैं । ऐसा सोच कर उसने गायको बाधनेके लिये उस नौकरको बाहर कर दिया । ज्योंही वह गायको बाँधने गया त्योंही उसने ऐसा सींग मारा कि उसके पेटको अतडो भादि बाहर निकल आई और उसकी प्राणवायु चढ़ गई ।

घर आने पर दफरा गाजोकी नौकरकी मृत्युका हाल मानूँ म हो गया । वे किसीको कुछ कहें बिना मध्याके समय उसी श्मशानके वटवृक्ष पर छिपके बैठ गये । कुछ समयके बाद उन्होंने सुना, प्रेतनी कह रही है, 'तुमने कहा, कि दफरा गाजोका नौकर मरने पर भूत होगा लेकिन ऐसा तो हुआ नहीं ।' भूतने कहा 'हाँ । उसका जन्म भूतयोनिमें न हुआ । माय जब रफो तोड़कर गङ्गाके किनारे गई थी, तब उसके सींगमें गङ्गाकी मट्टी लग गई थी । मरते समय मृत्तिकाके स्पर्शसे नौकर उठार हो गया ।' दफरागाजोने यह सुनकर अपने मनमें कहा, 'हिन्दूकी देवी गङ्गाका जब ऐसा माहात्म्य है, तो मैं गङ्गाके किनारे रहनेसे क्यों वञ्चित रहूँ ।' यह सोच कर दूसरे दिन जहाँ जाफर खाँकी मस्जिद थी, उसी जगह वे आकर रहने लगे । इसके पश्चिम औरकी

नेवार पर पश्चात् यहाँ माओका कुठार है, यहाँ निम्न
हस्तका एक पत्थरका चार टेपर्मिं घाता है। यहा जाता
है कि दफरा गाओ महावागी हो कर उस स्थान पर
रहते थे। सोमोका विग्रहास है कि विग्रहकार्मिं महाका
पादेयके महामन्त्रके किये रात भरमें बड़ चर निमाच
बिधा बा, किन्तु सवेरा हो जानेसे वो रङ्ग न सके और
चर पश्चा हो रङ्ग गया। दफरा गाओ महापुत्र चरके
मुक्त हो गये थे।

महावी स्तम्भमानाके मध्य न स्तम्भ भागाके सुकलित
बन्दि एक स्तम्भ है जिसे दराफका नामक सिधो सुसक
मानने रचा है। स्तम्भ के मा माचविग्रह है बीसा हो
सुकलित हो है। प्रायः समो किन्तु यह स्तम्भ जानते हैं
और गङ्गास्नानक विग्रह वसे पाठ करती है। इस स्तम्भका
मिय इस प्रकार है—

“द्वारुमिमुमिहन्ने तारवे पुष्ववन्त
च तस्मि निवपुमैस्तन कि ते महत्स्वम् ।
वसि च त्रिविदिन तारवे पपिन वा
तस्मि उप मरत्त तस्मिहत्त महत्त ॥”
इति दराफकाविरचित ग याष्टक ब्रह्मसूत्रम् ।

माओका कुठार और आपरकाका बुहाफक तथा
दफरामाओ, दराफका और आपरकाके नाम और उनको
गङ्गामन्त्रिणी कहा सुन कर अनुमान किया जाता है,
कि ये सब एक व्यक्ति विचरच हैं। सोमोके सुषर्मे
एक आपरकाके नामने भी त्रिविध आचार धारच
किया है।

पश्चि च स्तम्भ मियाके किये चार स्थान नदिया राक्षसिं
निरीय विप्रात है, इन चारोको चार समाज कहते हैं।
ये चारो स्थान महदोय, भाटयाङ्गा, मुनिपाङ्गा और यधो
दिनेको हैं। इस समय त्रिवेदीमें ताप न स्तम्भको पाठ
याचते हैं।

द्विविध्यात पर त्रिविधम जोकाके स स्तम्भ मियाक
परितोय पछित ब्रह्मदाब तर्कपञ्चानने यहाँ अन्य
पदच किया था और ये उठो यामके जाती है।

ब्रह्मदाब तर्क पञ्चन देवो ।

माओको और मकार-स स्थातिओ त्रिवेदीमें तीन दिनों
तक मेला लगता है यह समय बहुत यात्रा इकट्ठी होती

है। इससे निम्न पञ्चनादिमें भी पनेक यात्री पाते हैं।
२ इडा, पिङ्गा और सुसुम्भारूप पात्रिमायिक तोमो
नदिबोका सङ्गमस्थान।

त्रिवेद्य (स० पु०) त्रयो वेदो ब्रह्म । रक्षसुव्यक्त
पद्यय मेद रक्षके समसे भागके एक प गङ्गा नाम।

त्रिवेद (स० पु०) त्रौ न वेदान् वेत्ति-विद-पच्, त्रयो
वेदाः पचीतन्वेन श्रुत्याय पच् वा । १ वेदत्रयवेत्ता,
तोमो वेदके जाननेवासे। २ रक्षक यहु और नाम
ये तोमो वेद। ३ वेदत्रयविहित कर्म, तोम वेदोंमें
यतनाके हुए कर्म।

त्रिवेदी (स० पु०) त्रिवेद वेत्ति-वन् । १ वेदत्रयप्र
क्षक, यहु और साम इन तोमो वेदके जाननेवासे।
२ ब्राह्मणो का एक भेद।

त्रिवेदा (स० श्लो०) त्रिषो वेदा सोमानोऽप्य ।
त्रिषु, त्रिषोः ।

त्रिवेदिक (स० त्रि०) त्रिषु विद्यापि स्वर्गकपे मुस्ताय
र्चति इत तत्र च सुमनाः स्वर्गकपे मुस्ताय, त्रिस
कोऽत्रोमत तोम स्वर्गकपे हो।

त्रियञ्जि (स० श्लो०) त्रिगुचिता यञ्जिः । १ काओ,
ताप और त्रियुय ये तोमो देविया। २ इच्छा,
ज्ञान और त्रियाकयी तोमो ईश्वरोय यत्रिया। ३
राजाओ को, प्रभाव, उच्छाह और मन्दा; ये तोमो
यत्रिया। ४ त्रिगुचात्मक प्रधान, बुद्धि। ५ मायमो।

त्रियञ्जिहृत् (स० पु०) त्रियञ्जि इच्छादिमन्त्रिकय चरति
हृत्-हृत् । १ परमेश्वर। २ त्रिगुओतु राजाका नाम।

त्रियह (स० पु०) त्रय यज्ञं इव यज्ञः । १ मार्जार, बिलो।
२ यज्ञम, पतंग, त्रिषो। ३ पातक पयो, पयोडा। ४ यद्योत,
सुयम् । ५ परमत्रियेय एक पञ्चाङ्गका नाम। ६ यत् -
ब गोय एक राजा। इनका नियम रामायणमें इस प्रकार

लिखा है—राजा त्रियहृत् में अयरोर अग्न्यामको कामनाके
पधने शुभ बगिहदेवको यज्ञ करने कहा। बगिहने इनमें
पनिच्छा प्रकट की और पिना नहीं हो मन्त्रता यह
करने कहा। इस प्रकार त्रियहृत् बगिहने त्रियुय हो
कर दक्षिण दिशाओ नाम दिवे। यहाँ बगिहके कहके
तयथा कर रहे थे। त्रियहृत् में उनको धारच भी और यज्ञ
करनेके किये निरीय अनुरोच किया। तब बगिहके कहको

ने उनसे कहा, 'मालूम पड़ता है कि तुम्हारे बुद्धि मारी गई है। जब पिताजीने इसका खंडन कर दिया, तब तुम उसे उलझन कर क्यों दूसरेको शरण लेते हो ? उन्होने जो कुछ कहा है वह 'प्रमोघ है और किसी हालतसे टल नहीं सकता। सुतरां जब उन्होने "पिसा नहीं हो सकता" यह कहा, तब हम लोग पिताजीको आज्ञाके विरुद्ध यह यज्ञ नहीं कर सकते।' इस पर त्रिशङ्क बोले "आपके पिताने मुझे विमुख कर दिया और आपने भी वैसा ही किया, अब मैं किसी दूसरेका आश्रय लेनेको बाध्य हूँ।" यह सुन कर वशिष्ठके लडके क्रोधसे अघोर हो उठे और 'तुम चाण्डाल हो जाओ' ऐसा शाप दे कर वे अपने अपने आश्रमको चल दिये। बाद त्रिशङ्क चाण्डालत्व प्राप्त कर इधर उधर भ्रमण करने लगे और दुःखसे नितान्त विद्वल हो उन्होने महर्षि विश्वामित्रका आश्रय ग्रहण किया। राजाको चण्डालरूपो और विफल-कर्मा देख कर विश्वामित्रका हृदय दयासे भर आया और वे बोले 'मैं दिव्य चक्षुसे देखता हूँ कि तुम महा-बलसम्पन्न अयोध्याधिपति हो और अभिशापसे चण्डालत्व-को प्राप्त हुए हो। जिस कार्यके लिये तुम मेरे समीप आये हो उसे कहो "तुम्हारा कल्याण होगा।" तब त्रिशङ्क, राजाने हाथ जोड़ कर कहा, 'प्रभो ! मैं यज्ञ करके सशरीर स्वर्ग जाना चाहता हूँ, यही मेरा अभिलाष है। मैं गुरु वशिष्ठ और उनके लडकेसे विमुख हो चुका हूँ, प्रभो आपही मेरे एक मात्र आश्रयदाता हैं। मैंने अपनेक यज्ञ किये हैं और कभी भी धर्म विगर्हित कार्य नहीं करता।' विश्वामित्रने त्रिशङ्कको यह बात सुन कर कहा, 'डरो मत, गुरुके अभिशापसे तुम्हारे ऐसी भवस्था हो गई है। तुम इसी भवस्थामें सशरीर स्वर्गको पहुँच जाओगे। अभी मैं यज्ञ साहाय्यकारी पुण्यकर्मा महर्षियों-को बुलाता हूँ, तुम निखिल हो कर यज्ञ करो।' तब विश्वामित्रने अपने पुत्रोंको यज्ञका आयोजन करने कहा और सब शिष्योंको बुला कर कहा, 'तुम लोग मेरी आज्ञासे ऋत्विक्, और वशिष्ठपुत्रादि बहुश्रुत ऋषियों-को सुद्ध और शिष्योंके साथ बुला लावो। जायगे वा नहीं जो जैसा कहें वह मुझे खबर दो। शिष्यगण चारों ओर चल दिये। वेदविद् सभी ऋषि यज्ञमें आने लगे,

केवल वशिष्ठके पुत्र और महीदय नामक ऋषि नहीं आये। उन्होने कहाला भोजा कि, जिस यज्ञका याजक क्षत्रिय है वशिष्ठतः जो चण्डाल है उसको यज्ञ-स्थानमें सुर और ऋषि नोग किस प्रकार हवि भोजन करेंगे। विश्वामित्र यह वचन सुन कर क्रुद्ध हो बोले, "वशिष्ठके पुत्र जब बिना दोषके मुझे दोषो वनाते हैं, तब वे मेरे इस अभिशापसे कुरूप कुक्कुर मांसाहारो भंगीको योनिमें सात सौ वर्ष तक जन्म लेकर इस संसारमें भटकते फिरें। महीदय भी निपादत्वकी प्राप्त कर अधिक समय तक दुर्गति भोगें।" बाद विश्वामित्रने समागत ऋषियोंसे कहा, 'त्रिशङ्कने सशरीर स्वर्ग जानेकी इच्छा करते हुए मेरी शरण ली है। अतः ये जिसे ज्ञान द्वारा सशरीर स्वर्ग ला सकें आप लोग मेरे साथ उसी यज्ञका अनुष्ठान करें।'।

ऋषियोंने विश्वामित्रको अत्यन्त क्रोधित स्वभावका जान कुछ भी प्रतिवाद किये बिना यज्ञका आरम्भ कर दिया।

विश्वामित्र स्वयं इस यज्ञमें अध्वर्यु बने। मन्त्रकांविद् ऋत्विक् शास्त्रानुसार सब कार्य करने लगे। महर्षि विश्वामित्रने देवताओंको हविर्भाग प्रदान किया, किन्तु कोई देवता यज्ञमें न आये। तब विश्वामित्रने क्रुद्ध हो सूत्रकी रठा कर त्रिशङ्कसे यह कहा, 'नरेश्वर ! मेरी अर्जित तपस्याका प्रभाव देखो ! अभी मैं अपने तंत्रसे तुम्हें स्वर्ग भेजता हूँ। कोई भी सशरीर स्वर्ग नहीं जा सकता है, पर तुम जाओ। मैंने अपनी तपस्या द्वारा जो फल प्राप्त किया है, तुम उसीके प्रभावसे सशरीर स्वर्गको जा सकते हो।' विश्वामित्रके इतना कहने पर त्रिशङ्क सशरीर स्वर्गकी जाने लगे। इधर इन्द्रने त्रिशङ्कको सशरीर स्वर्गकी ओर आते देख कर कहा, 'सूख ! तुम्हारे लिये स्वर्गमें स्थान नहीं। तुम पर गुरुका शाप है, अतः यहांसे थोड़े मुँह मयेंलोकको नोट जानो।' त्रिशङ्क जब जोरसे गिरने लगे, तब 'मुझे बचाइये' कह कर जोरसे चिला उठे। इस पर विश्वामित्र बहुत विगड़े और "ठहरो, ठहरो" यह कह कर उन्होंने दक्षिणकी ओर दूसरे सप्तर्षियों और नक्षत्रोंको रचना आरम्भ की। इन्द्रने ऋषि करनेको इच्छा करते

हुए पुनः सोचा कि इन्द्रस्य वृद्धि हो मयष्ट है। जब देवता भयभीत हो कर विद्यामित्रकी शरणमें पहुँचे। तब विद्यामित्रने उनसे कहा, मैंने त्रियम्बुकी समरीर स्तम्भ पहुँचाने की प्रतिज्ञा की है अब वह किस प्रकार सिद्धा हो सकता है। परतः परतः वह राजा कहके तहाँ बान करेगी और जब तक मनुष्य बत मान रहेगी तब तक हमारे बनाए सन्नधि धोर नक्षत्र उनके धारो धोर रहेंगे। भाग बीग इस विषयमें क्या कहते हैं। देवताओंमें उनको यह बात स्वीकार कर ले। तबसे त्रियम्बु, वहाँ पाकायमें पड़ित नक्षत्र के बीच-बीचें गिर बिद्य हुए लटके हैं धोर नक्षत्र उनको परिक्रमा करते हैं। (रामायण १।५०-६२ उर्ध्व)

इति शर्म त्रियम्बुका विषय इस प्रकार लिखा है—
महापद्म जयादक्षके सम्ब्रत नामक एक पुत्र था। जे बहुत पराक्रमी थे। उन्होंने वैवाहिक नियमका उल्लंघन कर दूसरीको विवाहिता स्त्रीको अपने घर लय लये अपने लो बना कर रण किया। जब महापद्म जया दक्षको यह बात मालूम हुआ, तब उन्होंने सम्ब्रतको सन्नद्धो समझ कर परित्याग किया। इस प्रकार पिता से तिरस्कृत होने पर सत्यव्रतने उनसे पूछा "मैं कहाँ रहूँ।" इस पर जे बहुत विनम्र धोर बोले, "तुम चाण्डालोंके साथ जा कर रहो। मैं तुम्हारे सरोवापुराका पुत्र द्वारा पुत्रवान् होनेको दण्ड नहीं करता।" सम्ब्रत पिताके पादेशने नगर छोड़ बाहर हो गये। त्रियम्बुने भी इसमें कुछ झिड़काव न बी। इसी तरह सम्ब्रत अपना समय चाण्डालोंके साथ बिताने लगे। इस प्रान्त पर ममवान् इन्द्रको पेशो लुहटि पड़ो कि बारह वर्ष तक छटि हो न हुई। इधर विद्यामित्र अपनी स्त्रीको इसी प्रान्तमें छोड़ पाप जडोर तपस्या करनेके लिए किसी स्थली जाग रह गये थे। इससे विद्यामित्रको लो पन्थाय पुर्वीके भरथीपथके लिए स्वयंसे धोरस-ज्वात मन्थम पुत्रको नहेमें बाँध कर ली गायो लो बैचने निकलीं। जब वह सम्ब्रतके पास पहुँचो, तो लोने स्वयंको प्रसन्न करने-पयना अनुपपन्निकि ली पागाये लोकी कहकर लो एक लगे भरथ पीड़कका मार पथक किया। विद्यामित्रके पुत्र सम्ब्रतके

पासे गए थे। इसी कारण उनका नाम यासक पड़ा।
सत्यव्रत प्रतिज्ञाकर लो कर-विद्यामित्रको पत्नीका प्रतिपानन करने लगे। सत्यव्रतके राज्यके बहिर्गंत होनेसे समझ बगिठने कुछ मो नहीं कहा था, इस कारण जे स्वयं पर कुपित रहते थे। सत्यव्रतके अपर लगेके पिता लो अपमथ के लगे महापापके इन्द्रमें बारह वर्ष तक छटि गन्त कर लो। यमो सत्यव्रतने बारह वर्षके बीच पुत्रके रोधा पथक लो परवाल् पापके निवृत्त हो कर लुखकी निष्कति लाम लो। किन्तु एक बार माँके पमाथके कारण लोने बहिर्गंतको कामधेनु लोको मार कर लोका मांस विद्यामित्रके लड़केको खिलाया था धोर स्वयं मो खाना था, सुतरां यह धोर महापापका काम हुआ। त्रियम्बुको जब यमो लोके मारे जानेका बात मालूम हुआ तब लोने सम्ब्रतके कहा: "यदि तुम जे दोनों पाप नहीं किये होत तो निवृत्त हो मैं तुम्हारे पापफुली-यद्दुको दूर कर देता। एक तो तुमने अपने पिताको अपमथुट किया, दूसरे अपने पुत्रको गो मार वाली धोर तीसरे लक्ष्मण मांस स्वयं तथा स्वयं-पुत्रो लो खिलाया। यही तीन महापातक तुमने किये। अब किसी प्रकार तुम्हारी रक्षा नहीं हो सकती। सम्ब्रतने जे तीन महापातक किये थे, इसीसे जे त्रियम्बु कहलाए। लोने विद्यामित्रको लो धोर पुत्रो ली रक्षा लो लो, पथकिये स्वयंने लगे कर माँके लो लिए कहा। त्रियम्बुने समरीर लय जानेको प्राणना लो विद्यामित्रने 'तवाशु' कह कर लोकार किया। लोके बारह वर्ष लो पनाछटिका भय दूर होने पर लोने त्रियम्बुको लगेके पैलक राज्य पर परिचित किया धोर सब लगेके सुरोहित बने। विद्यामित्रके यज्ञ करने पर देवताओंने लो त्रियम्बुका पनादर किया धोर त्रियम्बुके समरीर लोको लोपको अनुमोदन किया। सम्ब्रतने जे लयय शकी सन्नधका नामक लोकाको व्याधा था धोर लोके मर्मके प्रसिद्ध सम्ब्रतने महापद्म इन्द्रके लयक हुए थे। इन्द्रके लोके मर्मको लोने लो।

७ नक्षत्रविषय एक तारा। इलके विषयमें प्रसिद्ध है कि यह लोने त्रियम्बु लोने लोने इन्द्र पाकायके मिश्र रहे थे धोर लोने मार्गमें लो विद्यामित्रने रोधा दिया था।
(हरिवंश १२-२३ अ०)

त्रिशङ्कुज (स० पु०) त्रिशङ्कोर्जायते जन-ड । हरिश्चन्द्र राजा ।

त्रिशङ्कुयाजी (स० पु०) त्रिशङ्कुयाजयति यज-णिनि । विश्वामित्र ऋषि । त्रिशङ्कु देखी ।

त्रिशत (स० स्त्री०) त्रिगुणितं शतं मध्यलो० । त्रिगुणित शत, त्रिगुणा सौ, तीन सौ ।

त्रिशतोप्रसारिणोतैल (स० स्त्री०) तैल औषध भेद । प्रसृत प्रणाली—तिल तैल ४८ सेर, छायाय मूल-पत्र और शाखाके साथ मारविशिष्ट गन्धभद्रा १०० पल, पाकार्य जल ६४ सेर शेष १६ सेर, अश्वगन्धा १०० पल, जल ६४ सेर, शेष १६ सेर, दशमूल १०० पल, जल ६४ सेर, शेष १६ सेर, देधिका जल १६ सेर, कांजी ३२ सेर, कल्क पाकार्य जल २५६ सेर, कल्कार्य जोवनीय गण प्रत्येक १ पल, अदरक ५ पल, भिलावेकी मुट्टि ३० पल, पिपरामूल २ पल, चीतामूल २ पल, यवचार २ पल, सैन्धव २ पल, सचल लवण २ पल, मजोठ २ पल, गन्धभद्रा २ पल, यटिमधु २ पल, इन सब द्रव्योंकी तैल विधिके अनुसार पाक कर छतार लेते हैं । यह तैल अभ्यङ्ग, वस्तिकर्म, निरूह, पान और नस्यार्थमें व्यवहृत होता है । यह वातरोगका एक रुक्णत तैल है । इस तैलका व्यवहार करनेसे अस्यो प्रकारको वातज व्याधि और वोम प्रकारकी पैचिक तथा श्लैष्मिक व्याधि बहुत जल्द प्रगमित हो जाती हैं । इसके सिवा गुधवी, अस्थिभङ्ग, मन्दाग्नि, अरोचक, अपस्मार, उष्माट, विभ्रम, पचाघात, सर्वाङ्गहत, वातशूल, आदि रोग जाते रहते हैं । (मैषजशरत्नावली)

त्रिशरण (स० स्त्री०) त्रीणि शरणानि यस्य । १ बुद्ध । २ जंनियेके एक आचार्यका नाम ।

त्रिशर्करा (स० स्त्री०) त्रिगुणित शर्करा, मध्यलो० । गुड़, चीनी और मिस्त्री इन तीनोंका समूह ।

त्रिशला (स० स्त्री०) तिस्रः शला यस्याः पृषोद० साधुः । अर्हन् मातृविशेष, वह मान या महावीर स्वामीको माताका नाम ।

त्रिशल्य (स० पु०-स्त्री०) जैनधर्मानुसार माया, मिथ्यात्व और निन्दन ये तीन शल्य । मनमें और वचनमें तया कार्यमें कुछ और ही करना यहो मायाशल्य

है, तत्त्वार्थ अर्थात् जिनागममें अयदान वा मन्देह करना मिथ्यात्वगल्य है और भविष्यमें विषयभोगोंको वाञ्छा करना निन्दनगल्य है । इन तीनोंके रहते हुए मनुष्य व्रतो नहीं हो सकते अर्थात् जिनमें ये तीन गल्ये पाई जाय, उनका अहिंसाटि व्रत हृथा है ।

(तत्त्वार्थसूत्र ७।१८)

त्रिशाख (स० त्रि०) तिस्रः शाखा अशाणि यत्र । त्रिशाकार अयवग युक्त, जिसमें आगेको और तीन शाखाएँ निकली हों ।

त्रिशाखपत्र (स० पु०) विस्ववृक्ष, बेलका पेड़ ।

त्रिशाण (स० त्रि०) त्रयः शाणाः परिणाममस्य तैः क्रीतं वा अणु तस्य वा लुक् । १ त्रिशाण परिमित । २ जो एक त्रिशाणमें खरोदा गया हो ।

त्रिशानक (स० स्त्री०) तिस्रः शाला यत्र वा कण् । हिरण्यनामाख्य वस्तु भेद, वह इमारत जिसके उत्तर और और कोई इमारत न हो । ऐसी इमारत अच्छी समझी जाती है ।

त्रिशिख (स० स्त्री०) तिस्रः शिखा यस्य । १ विश्व । २ किरौट । ३ रावणके एक पुत्रका नाम । ४ विस्व, बेल । ५ तामस नामक मन्वन्तरके इन्द्रका नाम । (त्रि०) ६ शिखातथयुक्त, जिसको तीन शिखाएँ हों ।

त्रिशिखर (स० पु०) त्रीणि शिखराणि यस्य । त्रिशङ्क-पर्वत, वह पहाड़ जिसको तीन चोटियाँ हों ।

त्रिशिखिदला (स० स्त्री०) तिस्रः शिखाः सन्त्यत्र इनि तादृशं दलमस्य । मालाकन्द नामक मूल ।

त्रिशिखिन् (स० त्रि०) त्रिशिखाः सन्त्यस्य इनि । त्रिशिख, जिसको तीन चोटियाँ हों ।

त्रिशिरस (स० पु०) त्रीणि शिरांसि अस्य । १ कुवेर । २ रावणके एक पुत्रका नाम । ३ खरके एक सेनापतिका नाम । ४ न्वर पुरुष । इसे दानवीके राजा रावणको सहायताके लिये महादेवजोने उत्पन्न किया था । इसके तीन सिर, तीन पैर, छह हाथ और नौ आँखें थीं । ५ जैव-रथ । ६ लष्ठा प्रजापतिके पुत्रका नाम । ७ असुरविशेष, एक राक्षस जिसका उल्लेख महाभारतमें है । यह खर-दूषणकी सेनामें वचमान था । श्रीरामजोके द्वारा १४ हजार राक्षसोंके मारे जाने पर त्रिशिरा और खर ये नौ

दोनो बरषे से। (त्रि०) = त्रिसके तीन घिर हैं।
 त्रिघोष (स० त्रि०) त्रिषि योषापि यत् । १ त्रिघिषर,
 त्रिसको तीन घोटियां हो। २ खडा प्रजापतिके पुत्रका
 नाम।
 त्रिघोष (स० ङो०) त्रिघोष-यत् । त्रिगुण।
 त्रिघोषन् (स० पु०) खडाके एक पुत्रका नाम।
 त्रिघ्न (स० पु०) त्रिघ्न शब्दो टोमगः शोका वा पक्ष् ।
 १ बरषे त्रिसका प्रजाय स्वप्नं पन्तरिष घोर घप्ते तीनीं
 खानेमिं है। २ पाष्याजिषादि शोत्रययुक्त, बह त्रिसे
 देविक, देविक घोर भोतिक तीनी प्रकारके दुःख हो।
 त्रिगुण (स० पु०) त्रीषि गूणानि इव यथापि यत् ।
 खनामख्यात यक्षत्रिय एक प्रकारका यक्ष त्रिसके सिरे
 पर तीन पक्ष होते हैं। यह महादेवकी ओ पक्ष माना
 जाता है। इसका सखन पर्याय—त्रिघिष, गूण घोर
 त्रिघोष है। २ देविक, देविक घोर भोतिक दुःख।
 ३ तन्त्रके अनुसार एक प्रकारको सुद्र। इसमें च गूणोको
 खनिष्ठा, च गणोके साथ निष्ठाते हैं घोर बाको तीन च ग-
 सिवोको फंका सेते है।
 त्रिगुणवाल (स० ङो०) त्रिगुणेन वार्त। तीर्थत्रियेय,
 एक तीर्थका नाम। इस तीर्थमें खान कर पिंड घोर
 देवताघोको पचना करदिसे गायपन्देस प्राप्त
 होती है।
 त्रिगुणमुद्रा (स० ङो०) त्रिगुण पाकारत्वं नास्वप्या।
 मुद्रात्रियेय एक प्रकारको मुद्रा। विषय देवे।
 त्रिगुणो (स० पु०) त्रिगुण यक्षमस्वयम्, त्रिगुण-हनि।
 १ यिष, महादेव। (ङो०) २ दुमा। (त्रि०) ३
 त्रिगुणचारो, त्रिगुणको धारण करनेवाले। (ङो०) ४
 पारद, वाय।
 त्रिगुण (स० पु०) तीषि त्रिगुणि यत् । १ त्रिगुण पर्यंत।
 इसो पचाइ पर लहा बनो है। २ त्रिगुण।
 त्रिगुणो (स० पु०) त्रीषि त्रिगुणोष सन्वत्त्र त्रिगुण
 हनि। रोहित मध्य, टेंगला नामको महानो त्रिसके
 घिर पर तीन काटि होते हैं।
 त्रिगोष (स० पु०) त्रय पाष्याजिषादयः शोका पक्ष।
 तीष, पाषादेविक पाषिभोतिक घोर पाष्याजिष ये
 तीन प्रकारके शोष जीवके होती हैं, इसीसे जीव मात्र

को त्रिगोष है। २ खप्न कवित्र एक पुत्रका नाम।
 त्रिगुणमन्त्र (स० पु०) एक प्रकारका विद्वत पत्र।
 यह मन्त्रोपनो नामको मुतिसे धारण होता है। इसमें
 चार युतियां होती हैं।
 त्रिगुण (स० त्रि०) त्रिभिर्हनिभिं म सुत्र त्रिषि खन्द्-
 भोति सानुवृत्तो वेदे पक्ष। १ तीन बार त्रियि सुत्र
 यत्। २ जो तीन जोत्रों से सुत्र हो।
 त्रिगुण (स० ङो०) त्रयः स त्रयरा साधनका
 यत् वेदे पक्ष। त्रियं भाज सत्रमेद तीन बर्षमें होने
 वाला एक प्रकारका सत्र।
 त्रिगुण (स० त्रि०) त्रयः सन्वयोऽप्य वेदे वा पक्ष।
 त्रिगुणयुक्त, जो तीन मासोंमें विमल हो।
 त्रिगुण (स० ङो०) स्वर्त सोमोऽस्य च पाषादे वृत्तः पूर्व
 पदादिति। त्रिकास प्रातः, मन्त्राङ्क घोर साय ये तीनी
 काल।
 त्रिगुण (स० त्रि०) त्रिगुणो कृत यतादित्यात् ङ० त्रिगुण
 कृत यतादि, खममें त्रिसके खान पर पङ्कनेवाला, त्रि-
 यत्।
 त्रिगुण (स० ङो०) त्रिगुणो पक्षि बहुल्येऽपि एक
 यत्। त्रिगुण पक्षि सत्रा, बह स पक्षो को साठवीं
 तीन घोर पक्षि हो, त्रिगुणो क क्या। २ सत्र स क्या
 सुत्रक पक्ष।
 त्रिगुण (स० त्रि०) त्रिगुणो पूर्व त्रिगुण। त्रिगुण
 स क्याका पूर्व, त्रिगुणो।
 त्रिगुण (स० पु०) त्रयः सुप्यान्नाद्याकवयन्दा यत्।
 १ बहुत्रक वेदके एक मागका नाम। त्रिगुण देवां।
 २ सत्र इत। ३ सत्र इतचारो पुत्रक।
 त्रिगुण (स० ङो०) त्रिगुणो सुप्यते सुम त्रि-
 पक्ष। यथादय पक्षर पौदक बर्ष इत खन्दिमेद, एक
 वेदिक खन्दि त्रिगुणके त्रिये चरपने धारण पक्षर होते
 हैं। इन्द्र धारण पक्षरसे त्रिगुण खन्दिका विधान
 करते हैं। (इन्द्रः १३६)
 त्रिगुण (स० त्रि०) त्रिगुणो सुप्यते सुम त्रि-
 पक्ष। यथादय पक्षर पौदक बर्ष इत खन्दिमेद, एक
 वेदिक खन्दि त्रिगुणके त्रिये चरपने धारण पक्षर होते
 हैं। इन्द्र धारण पक्षरसे त्रिगुण खन्दिका विधान
 करते हैं। (इन्द्रः १३६)
 त्रिगुण (स० त्रि०) त्रिगुणो सुप्यते सुम त्रि-
 पक्ष। यथादय पक्षर पौदक बर्ष इत खन्दिमेद, एक
 वेदिक खन्दि त्रिगुणके त्रिये चरपने धारण पक्षर होते
 हैं। इन्द्र धारण पक्षरसे त्रिगुण खन्दिका विधान
 करते हैं। (इन्द्रः १३६)

शोडशानाम् कमाहार वा० पादादित्वात् न डीप ।
 तोन वार मनु पात ।
 त्रिसरा (स० श्री०) त्रिसर रेखी ।
 त्रिसरो (स० पु०) एक प्रकारका षोडश त्रिसरे सयाङ्ग
 त्रिस त्रिस रचके जो शंभल गिर जाना हो ।
 त्रिसर्ग (स० पु०) तयाचा मल्लजस्तमर्मा सम ।
 कल, रत्न पौर तम तोनों गुणो का सम, छट्टि ।
 त्रिसवन (स० श्री०) त्रिकास माधु है दिक सबन ।
 त्रिसवनखायो (स० पु०) त्रिसवने त्रिकासे खातीति
 का चिनि । त्रिकासखायो, बह जो तोनो वास खान
 करता हो ।
 त्रिसामन् (स० पु०) त्रीचि सामानि श्रुतिसाधनानि
 यत्न । परमेश्वर ।
 त्रिसामा (स० श्री०) त्रिसामन् टाप । महेन्द्र पर्वतसे
 त्रिसको हुई एक नदीका नाम । (भागव० ५।१।१८)
 त्रिसाहस्र (स० त्रि०) त्रीचि सहस्राचि परिमाहस्र पच्
 लत्तपदद्वयि । जो तीन हजारका हो पचवा त्रिमर्मे
 तीन हजार हो ।
 त्रिमिता (स० श्री०) त्रिगुणिता सिता । त्रिदशप रेखी ।
 त्रिसख (स० श्री०) त्रिवार सोतवा सहित यत्न ।
 (नौबरोबरेति । वा ३।१।११) बह समोन जो तीन वार
 जोतो गई हो ।
 त्रिसुसम्भि (स० श्री०) तयाचा सुसम्भिद्रव्याचा कमा
 हार । त्रिसातक दाहवीनो, दवायको पौर त्रिसपात
 इन तोनो सुसम्भित समानो का समुह ।
 त्रिसुपर्ण (स० पु०) श्याम, वैदिके तीन विमिष्ट मन्त्रोका
 नाम । २ यत्नवैदिके तोन विमिष्ट मन्त्रो का नाम ।
 त्रिसुपर्ण रेखी ।
 त्रिसुपर्णिक (स० पु०) बह पुत्रय जो त्रिसुपर्णका जानने
 जाना हो ।
 त्रिसुवचक (स० पु०) पाद्विरस च्चबलपय चम्पि ।
 त्रिसौपर्ण्य—विद्यगमि रेखी ।
 त्रिसौपर्ण (स० श्री०) सुपर्णेन श्यविचा हत पच इतो
 त्रिसौपर्ण्य सुसर्वता लत्तपदद्वयि । सुपर्ण श्यविचा
 बिद्या कृपा एक जन । महर्षि सुपर्णेने ज्योरे तयम्बा,
 नियम पौर दमगुणके प्रभावसे ज्ञय मगवान् नारायणके

इम धर्मको पाया वा पौर से प्रतिदिन तोनवार करके
 इसका पाठ बिद्या करते से । इसो कारण बिदान्
 योग इस धर्मको त्रिसौपर्ण्य कहते हैं । इस धर्मका
 वर्णन श्रृंग, वैदिके पाया है । इसका अनुष्ठान बहुत कठिन
 है । अतुपाय समोरचने महर्षि सुपर्ण्यके यह समानत
 धर्म पाया वा । पीछे समोरचने यह धर्म विद्यमासो मह
 पि योको पौर फिर लको ने भी इसे महामसुद्रको
 प्रदान किया । बाद यह धर्म पुनः मगवान् नारायणके
 सोन हो गया । (भारत काण्ड ३५० अ०)
 सुपर्ण्य एक ज्ञाने पच, ज्ञय सोपचा यत्न । २ मन्त्र
 त्रिस, श्याम, वैदिके त्रिसलिखित तोन मन्त्रके नाम त्रिसौ
 पर्ण्य है—
 वसुष्पर्वो मुवतिः श्रुतेषा लुप मदीषा वसुपानि वरत्रे ।
 वरवा सुपर्णा कृपया त्रिवेरुत् अत्र देवा वधिरे भावनेव ॥
 इत्- इतः श्रुतैः यद्युत्तरमाविरेव स हर विर सुवन रिचयत् ।
 त पाकेन मनवा परमभितरत म वा टिप व रे देवातरै ॥
 इत्येकिया कवरो वचोभिरेव कल्प बहुवा कस्तन्ति ।
 इत्यति व दवतो जन्तुेषु यान्तोमोमन् विमते श्रुत् ॥”
 (श्रृंग १०।११।१५)
 एक बुचतो श्री है त्रिसके मन्त्रक पर पार देखो
 हैं जो सुन्दर पौर त्रिस है, जो पच्छे पच्छे बच पर
 गतो हैं, दो पचा त्रिनके लपर बैठे रहते हैं पौर अर्धा
 देवता पचना पचना भाग पाते हैं । (इस अगह नारी
 यन्त्रका पर्य यत्नवेदी है) इमके चारो पौर ली रहनेसे
 यह त्रिस है पौर इमोको विसी कहा गया है । यद्य
 सामसो हो पच्छे पच्छे बच है । इतने जो दो
 पयो बतवाये गये हैं, वे यत्नमान पौर सुगोहित हैं ।
 सुपर्ण्य यद्योत् श्रीव पौर परमात्मा इतने नियम हैं । इय
 वेदोमें चम्पादि देवता पचना पचना भाग पाते हैं ।
 एक सुपर्णेने (पक्षोमें) समुद्रमें प्रवेग किया पौर
 बर्धा इम त्रिस सुवनको देख पाया । परिपत बुद्धिके
 दार में लके क्या देखता है कि ये निश्रुतवर्तिनो
 माताको पुत्र रई हैं पौर माता भी लके पुत्र रई है ।
 यद्य पर पयोका पर्य प्राचवापु वा परमात्मा है, समुद्र
 जो है बह ब्रह्मावृत्त है, लकेनि एक त्रिसको समस्त

भुवनको एवं भूतजातको विशेषरूपसे स्थापित किया है। माताका अर्थ वाक्य या बोलो है। प्राणके नहीं रहनेसे बोलो नहीं निकलती। सुषण एक ही है, पर परिहर्तोंने कल्पना करके उनके अनेक रूप बतलाये हैं। ये लोग दक्षके समय नाना प्रकारके हन्ड उच्चारण करते हैं और त्रारह सोमपात संस्थापन करते हैं। सुषण अर्थात् परमात्मा एक ही है, पर तत्त्वज्ञ लोग उन्हें हन्ड और स्तोत्रादि द्वारा अनेक बतलाते हैं। भिन्न भिन्न देवताओंका एक आत्मा है। (सायण) ३ परमेश्वरका नामभेद, परमेश्वरका एक नाम।

'त्रिषौपर्ण तथा ब्रह्म यजुषां गतश्चिद्य' ।' (भारत शां० २८६अ०)

कई जगह 'त्रिषौवर्ण' ऐसा पाठ है। यह निपिकर प्रमाद है, इसीसे यह शब्द नहीं लिया गया।

त्रिस्कन्ध (म० स्तो०) त्रयः स्कन्धा इव अवयवा यस्य । ज्योतिःशास्त्र । नाना प्रकारके भेदविषयक ज्योतिःशास्त्र तीन स्कन्धसे प्रतिष्ठित है। संहितास्कन्ध, तन्त्रस्कन्ध और होरास्कन्ध, वेहो तीन ज्योतिःशास्त्रके स्कन्ध है। जिसमें ज्योतिःशास्त्रके सभी विवरण रहते हैं, उसे संहितास्कन्ध; जिसमें गणित द्वारा ग्रहगतिका निरूपण होता है, उसे तन्त्रस्कन्ध और जिसमें ब्रह्म विनिश्चय अर्थात् यात्रा विवाह आदिका वर्णन रहता है उसे होरास्कन्ध कहते हैं। (बृहत्सं १।८)

त्रिस्तानो (म० स्तो०) स्वयः स्ताना भ्रमराः डीप । १ राक्षसी भेद, एक राक्षसोका नाम, जिसके तीन स्तन थे। २ गायत्री।

त्रिस्तावा (स० स्तो०) त्रिगुणिता तावतो वेदिः अच् समासान्तटिलोपौ समासश्च निपात्यते । (द्विस्तावा त्रिस्तावा वेदि । पा ५।४।८४ ।) अश्वमेध यज्ञकी वेदी जो साधारण वेदीसे तिगुनी बड़ी होती थी।

त्रिस्थली (म० स्तो०) त्रयाणां गवा काशो-प्रयाग-रूप-स्थलानां समाहारः। काशी, गया और प्रयाग ये तीन पुण्यस्थान।

त्रिस्थान (स० पु०) स्वर्ग, मर्त्य और पाताल तीनों स्थानोंमें रहनेवाला परमेश्वर।

त्रिस्थान (स० स्तो०) त्रिषु कालेषु स्नानमत्र । त्रिकाल

स्नानान्न व्रतभेद, मन्वेरे, दो पहर और संध्या तीनों समयका स्नान जो वानप्रस्थ आश्रममें रहनेवालेके लिये आवश्यक है। कई प्रायश्चित्तोंमें भी त्रिकालस्नान करना पड़ता है।

त्रिस्पृशा (स० स्तो०) त्रिणि चान्द्रदिनानि एकस्मिन् सावने दिने स्पृशति स्पृश-क । एकादशीभेद । जिस एकादशोके पूर्व दिन दशमो और दूसरे दिन कुछ एकादशो, पोछे हादशो, और रातके अन्तमें त्रयोदशी होती है, उसे त्रिस्पृशा कहते हैं, अर्थात् एकादशी, हादशो और त्रयोदशी ये तीन तिथि एक सावन दिनमें रहनेमें त्रिस्पृशा होती है। ऐसी एकादशी बहुत उत्तम और पुण्यकार्यके लिये उपयुक्त माने जाते हैं। इसमें स्नानदानादि विशेष फलप्रद हैं।

त्रिस्तोता (स० स्तो०) त्रिणि स्तोतानि यस्याः, त्रिषु स्थानेषु स्वर्ग-मर्त्य-पातालेषु स्तोतो यस्याः । गङ्गा ।

त्रिस्तोता (तिस्ता)—उत्तर बङ्गानको एक बड़ी नदी। यह अक्षा० २८ २ ३० और देशा० ८८ ४४ पू०में अवस्थित है। तिब्बतके अन्तर्गत चतामू झटसे इसकी उत्पत्ति हुई है। फिर सिक्किमके काञ्चनजङ्घानुझ पर भो इसका दूसरा उत्पत्तिस्थान पाया जाता है। दार्जिलिङ्गको उत्तरो सीमामें यह नदी सिक्किमसे बनग हो कर ब्रिटिश राज्यमें प्रवेश करती है। कुछ दूर तक दार्जिलिङ्गकी सीमामें प्रवाहित होकर रञ्जित नदीके साथ मिलती है और दक्षिणको और दार्जिलिङ्गके पहाड़ी प्रदेश होता हुई जलपाईगुड़ो जिलेमें प्रवेश करता है। यहाँ इसके किनारे पहाड़ पर शालको जंगल है। जिस स्थान पर तिस्ता शिवकगोला नामक गिरिवर्त्म होतो हुई समतल भूमिमें गिरतो है, उस जगह उसको चौडाई ७८ सौ गज है। नदीमें कहीं कहीं पत्थरके बड़े बड़े टुकड़े, रहनेसे नावके लिये बहुत विपज्जनक है। तराईसे पृथक्, हो कर जलपाईगुड़ोमें और पीछे ब्रह्मगञ्जके निकट कोच-विहार राज्यमें यह नदी प्रवेश करती है और जयसिंहके निकट कोचविहार छोड़कर वारुणो ग्रामसे ६ मील उत्तर रङ्गपुर जिलेमें बहती है। रङ्गपुरमें भवानौगञ्ज उपविभागके मध्य चिलमारी थानाके निकट बगौषा नामक स्थानसे नीचे यह ब्रह्मपुत्रमें गिरी है। रङ्गपुरमें

इसको जम्माई ११० मोठ पोर चौड़ाई ६५ ८ मो यज
 है। उस स्थान पर इसका स्त्रोत बहुत प्रखर है। समी
 समय रङ्गपुरमें इस नदी जोकर सी मन बोध लाद कर
 नाँवें जाती पातो है। तिस्तामदीका गर्म बाहुमय है।
 इससे दक्षिणी भागको आवासियानि जेकर गनबन्धुवाट
 तक पामनी नदी बहते है।

तिस्ताका जन्मस्त्रोत बहुत जन्दो जन्दी बहकना
 रहता है। इस तरह इससे धर्मिक पुरातन गर्म छोटी
 तिस्ता बूढ़ो तिस्ता तथा मरी तिस्ता नामसे पुकारे जाते
 हैं। १०६५-०२ ई०में जेकर ऐनेजके भूमावर्ष समय
 तिस्ताका प्रधान स्त्रोत दक्षिणको पोर बहना दुपा
 टिमात्रपुरकी धारासे नदीके साथ मिल कर मङ्गा वा
 पयामि गिरता था। १०८० ई०को रङ्गपुरमें जो
 महाकावन दुपा का उन समय तिस्ता उक्त पयको छोड़
 गई सो पोर दक्षिण पूर्वको पोर पयनी जो एक शापामि
 मिलकर बहुतने देग, वाट तथा मनुष्योंको नष्ट करतो
 हुई मङ्गपुरमें गिरी जो। इससे पहिलो बिगारिका जोड़ा
 मारा नामक बृहत्पक्ष त्रिप तरह प्रति वर्ष पोछे बटता
 का रहता है, उससे अनुमान बिद्या जाता है, कि उक्त
 पामको प्रकृत पक्षस्थिति बहुत जन्द सुत्र हो आयगी।
 तिस्ताके इस तरह परिवर्तन होनेसे उत्तर बङ्ग प्रदेशके
 बिगारे जोमर नामक स्थानमें जाट बाजार दिनों दिन
 बढ़ता जा रहा है।

बाकिं किङ्गमें इसकी प्रधान शाखापेछि नाम रङ्गपु
 रीनी, बड़ो रंजित, रङ्गजी, राजेङ्ग पोर सिबब है।
 वहाँ इसका जन्म मनुदके जेसा जोमा पोर बसो बभा
 बूबना सवेद हो जाता है। जन्मवाँसुडोमें तिस्ताको
 धर्मिक रूपनदियाँ पोर शाखा नदियाँ हैं जो उनका प्रबल
 वा प्रयोजनोय नहीं हैं। इनमेंसे बाघट पोर मानम
 विख्यात हैं।

तिस्ताका मङ्गल नाम त्रिस्रोता वा त्रिस्ता है। कामिका
 पुराणमें इसका उत्पत्ति-विशेष इस प्रकार लिखा है—
 त्रिनी समय एक सिबमज पशुने भयवतीको छपीला
 करने हुए उनके माय काड़ाई काल दी। सुबमें जातर
 जोकर वह पशु त्रिस्तापुर हो गया पोर सिबजोधि
 जन्मसे लिये मायका जो। इन पर सिबजोने भयवतीके

बचसे दूधको धारासे रूपमें पानी निकाल कर उसे पिन्ना
 दिया। पशुको दूधका मिठ आनि पर मो वह धारा बन्द
 नहीं हुई कर तोन बाघपामि विमज हो कर दुग्धोमें
 प्रकाशित हुई।

त्रिस्तामसो (स० श्लो०) शोणि स्त्रोतानि मन्ति जम्बा ।
 वह नदी त्रिमने तोन स्त्रोत निकसे हो ।

विश्व (स० श्लो०) विश्वार् जलेन ह्यह वस बत् । वह
 जेन ओ तोन बार स्त्रोता गया हो, इसका पयाय-विशु
 काकत, दतोबाकत पोर त्रिमोस्य है।

त्रिहायच (स० श्लो०) त्रयो ज्ञापना बलोप्य, चत् । १
 त्रिषर्ष पयल्ल गवादि तोन वर्षका बहङ्गा । २ त्रिम
 ह्यह, तोन वर्ष ।

त्रिहायचो (स० श्लो०) त्रिहायच ज्ञेय । १ त्रिषर्ष
 गामि तोन वर्षका बहङ्गा । २ द्रौपदी । उक्त युवमें
 पेटवती, येतामि जनबाभत्रा पोर हापरमें द्रौपदी ये ही
 लक्ष्मी पोर त्रिहायचो नामसे प्रसिद्ध हैं।

त्रिबुल—शिरदुप हेकी ।

त्रोपु (स० श्लो०) त्रय रूपय परिमाणमप्य जन् तप्य
 तुम् । बाब्रव्यपरिमित स्थान, तोन भाषों तकको
 दूरीका स्थान ।

त्रोपुज (स० श्लो०) त्रय रूपको यत्र अप । बाब्रव्यपुत्र
 धनु तीन भाषाभाषा प्रमुप ।

त्रोडक (स० पु०) त्रिस्तः क्षयादिक्रिया इटका यत्र ।
 चन्दिमेट, एक प्रकारको वैज्ञिक यन्त्र ।

त्रुटि (स० श्लो०) त्रुट्यसे त्रुट इत् मय बिम् । १ सूर्यना,
 जोटो वलायचो । २ पत्य, जोड़ा, जमो, जकर ।
 ३ म शय, अदिह । ४ कालमेट, समयका एक पक्षल
 सुत्र विभाग । दो परमाणुका एक पक्ष पोर तोन पक्षका
 एक त्रयनेष्ट होता है। जब सूर्यको किरण भरोसे
 जोकर करने प्रवेश करती है तब यह त्रयनेष्ट देखा जाता
 है। सूर्यको किरणके योगसे पक्षल मनुष्यके कारण जो
 इतर उच्च पाकायमें उठता टिपारि र्ना है बहो
 कामनेष्ट है। उमि पिसे तीन त्रयनेष्ट जो समय मोग करके
 समोका नाम त्रुटि है। त्रुटिकुपने कालको जो भाग
 करनेसे एक पक्ष तोन वेधका एक नद, तोन नदका
 एक त्रिनेष्ट पोर तोन त्रिनेष्टका एक पक्ष होता है।

५ कुमारानुचर मातृ भेट, कार्त्तिकेयकी एक मातृकाका नाम । ६ अभाव । ७ भूल, दृक । ८ वचनभङ्ग ।

वृटित (मं० त्रि०) वृट-कृ । १ छिन्न, कटा या टूटा हुआ । २ भय । ३ आहत । ४ आघातित, जिम पर आघात लगा स्त्री । ५ खलित, गिरा हुआ ।

वृटिवोज (मं० पु०) अरुई, कष्ट ।

वृटिस्वीकार (मं० पु०) द्रुष्टीना स्वीकारः । दोषस्वीकार भूल मंजूर करना ।

त्रेता (सं० स्त्री०) त्रेनु भेदान् एति प्राप्नोति वा त्रित्वा मित्वा पुषा० साधुः । १ अग्निवय, दक्षिण, गार्हपत्य और आहवनीय नामक तीन प्रकारकी अग्नि । वेदविद्व मुनियोंने अग्निको तीन बार प्रणयण किया था, इसोसे अग्निके त्रेता नाम पड़े हैं । (हरिवंश २०५.५)

महाराज इलानन्दनने एक अरणि निर्माण कर शम्भो वृक्षने अग्निमन्थनपूर्वक उसे तीन भागोंमें विभक्त किया तथा उस अग्निमें अनेक प्रकारके यज्ञका अनुष्ठान किया । यज्ञमें महाराजको गन्धर्वोंका भालीक्य मिला जो पहले केवल अग्नि था । गन्धर्वों के वरके प्रभारसे महाराजने उसे तीन भागोंमें बांट दिया । तागोसे अग्नि तीन भागोंमें विभक्त है । (हरिवंश २६, ४५, ४६)

२ यत विशेष, तीन कौड़ियोंके चित हो जानेसे त्रेता होती है ।

जिम पामेमें जुग्रा खेला जाता है उसके जिम और तीन त्रिंटिया हो, उस और यदि वह पासा चित हो जाय तो त्रेता होती है । 'श्रेतथा हतसर्वस्वः' (मृच्छकटिक ३ सत्य और हापर युगान्तरवर्त्ती युगमें ३, चार युगोंमेंसे दूसरा युग । कार्त्तिक मासको शुक्लानवमी तिथिमें त्रेतायुगको उत्पत्ति हुई है, इसोसे कार्त्तिक मासकी शुक्लानवमी बहुत पुण्या तिथि मानी जाती है । इसी युगमें भगवान्ने वामन, परशुराम और श्रीरामचन्द्रके रूपमें अवतार लिया था । इस युगमें पुण्यके तीन पाद और पापका एक पाद होता है । पुष्कर ही प्रधान तोय है, ब्राह्मण साम्निह हैं और प्राण अस्त्रिगत है । मनुष्यका परिमाण चौदह हाथ और इनकी आयुका परिमाण दस हजार वर्ष होता है । चाँदीके पात्र काममें आते हैं । यह युग १२८६०००

वर्षका होता है । इस समय सूर्यवंशीय वाहुक, मगर, अंशुमान्, असमञ्जा, दिलोप, भगीरथ, अज, टगरथ, श्रीरामचन्द्र और कुश ये लोग राजवक्रवर्त्ती होंगे । तथा सब लोग दानधर्मपरायण, ब्राह्मण साम्निह और राजगण यज्ञपरायण होंगे ।

त्रेता युगमें राजा अपने प्रजाको सन्तानकी तरह पालन करते हैं, इसोसे अन्तमें वे स्वर्गको प्राप्त होते हैं । त्रेतायुगके अन्तिमें हो धर्मका एक पद जाता रहता है । लोगोंकी अधिक कष्ट भुगना नहीं पड़ता । सबके सब दयालु होते, कोई भी धर्मका उल्लङ्घन नहीं करता । तथा वे यागयज्ञपरायण और विष्णुध्यानरत होते हैं । चतुरिय भूमिके अधिकारो होते, गृह ब्राह्मणोंकी सेवामें लगे रहते तथा ब्राह्मण उदारचित्त, वेदवेदान्त-पारग, प्रतिग्रहनिरत, सत्यमन्त्र, जितेन्द्रिय और विष्णु-सेवी होते हैं । स्त्रियां पतिरता होतीं, पुत्र पितृभक्ति-परायण होते तथा वसुन्धरा गण्यशालिनी होती है ।

(पाद्ये क्रियायोगसार)

मनुके मतानुसार इस युगमें मनुष्योंको आयु तीन सौ वर्ष होती है । महानिर्वाणतन्त्रमें लिखा है,—सत्ययुगके वीत जाने पर त्रेतायुगमें मर्त्यलोक वेदोदित सभी कर्म अच्छो तरहसे नहीं हो सकता । इस समय वैदिक कर्म बहुत लेशकर होगा, वेदार्थयुक्त सभी शास्त्र स्मृतिके रूपमें अवस्थित रहेंगे और ऐसे घोर संसार सागरमें शिव ही एक मात्र हर्त्ता कर्त्ता होंगे ।

त्रेताग्नि (मं० पु०) दक्षिण, गार्हपत्य और आहवनीय ये तीन प्रकारकी अग्नि ।

त्रेताय (मं० पु०) त्रेताणां एकोऽयः । यत भेद, पामा खिलनेका एक प्रकार ।

त्रेतायुग (मं० स्त्री०) त्रेतैव युगं । द्वितीययुग । त्रेता देखी ।

त्रेतायुगाय (सं० स्त्री०) त्रेतायुगस्य आद्या तिथिः । कार्त्तिक शुक्लानवमां । इसो दिन त्रेताका जन्म या आरम्भ होना माना जाता है । यह तिथि पुण्य तिथियोंमें गिनी जाती है ।

त्रेतािनो (सं० स्त्री०) त्रेता अस्त्रात् इनि-ङोप् । त्रेता-ग्निसेध क्रिया, वह क्रिया जो दक्षिण, गार्हपत्य और आहवनीय तीनों प्रकारकी अग्निमेंसे ही ।

वैषा (स० प०) त्रिप्रकार त्रि-पथाच् स प्रायां विधाब्
धा । (वा ३।१।३२) इति-या । (एवाच । पा ३।१।३६)
त्रिप्रकार, तीन तरहके ।

वैश (स० झो०) त्रि-पदभाषाया परिमाणमस्य ब्राह्मण्यस्य
ह । तीस अक्षराय परिमित ब्राह्मण्यमेद ।

वै (द्वि० वि०) तीन ।

वैकलुद (स० झो०) त्रिकलुद नाम पर्वत तत्र भव
पथ् । सोबीराष्ट्रान्, एक प्रकारका काजल वा सुरमा ।

वैकलुम (स० झो०) त्रिकलुम् पथ् । १ उदान
सम्बन्धीय । २ नवरत्निका साज्य यज्ञमेद, एक प्रकारका
यज्ञ जो जो दिनमें यमास होता है ।

वैकट, (स० झो०) त्रिकट् ।

वैकट्यक (स० सि०) त्रिकट्यकं बहुगर्गमस्य ततः
परिमाषि रजतादि स्वात् पञ्च । सङ्गमा मस्यका
परिमाष, जो हाठो डेग्रा मस्योषि परिमाषका हो ।

वैकास्य (स० त्रि०) त्रिकास्य पथ् । त्रिकास्य
सम्बन्धीय, तीनों कासका ।

वैकासिक (स० त्रि०) त्रिकामि भवः इज् । मृत
मन्त्रिण्युं धोर वत्मान कासकर्त्ता, तीनों कासमें या
सदा होनेवाला ।

वैकास्य (स० झो०) त्रिकास्य काये पथ् । मृत,
मन्त्रिण्युं धोर वत्मान कास ।

वैकृत्यक—वैदिराज्यमें एकवृत्ति व शका समसामयिक
त्रिकृत्यक वा वैकृत्यक व श राज्य करता था । याज तत्र
इस व शके करीब नामक क्षेत्रन एक ही राजाका नाम
पाया गया है । उनका २०७ सम्बत्में प्रदत्त एक ताब्य
शासन थाविश्रुत हुआ है । पाञ्चाज्य पण्डितोंने मतसे
यह पञ्च वैदि सम्बत्-प्रायक है । यदि यह बात सत्य
हो, तो ३३६ ई०में राजा करीब त्रिप्रमाण से, दिसा
धर्मका कहिये । (२३६ ई०में वैदि सम्बत् प्रति
प्यत हुआ ।) वैकृत्यक राजाकेसे स्थापित एक पथ्
प्रचलित था । उनके २३६ ई०में प्रदत्त धोर जो एक
सम्बन्धायन पाया गया है जिसमें "वैकृत्यकानां प्रवर्ग
मान राज्ञ्य मन्त्रत्" ऐसा लिखा हुआ है किन्तु
धर्ममें इय व शके किन्हीं राजाका नाम नहीं है । राजा
करीबने धर्ममें यज्ञ किया था दिसः उनके प्रदत्त

ताब्यशासनमें लिखा है । ईसके प्रमाणित होता है,
कि वैकृत्यक व शीय राजाकेका प्रमाण एक समय बहुत
बड़ा चढ़ा था ।

वैकीचिक (स० पु०) १ बह बिचके तीन पात्रों को,
तिमहका । २ वह जिसके तीन कोष हो ।

वैकर्त्त (स० पु०) त्रिगर्त्तौ देयवियेष सोऽभिजितोऽप्य
तत्र वा पथ् । १ बह जो सुववातुकासे त्रिगर्त्त देयमें
रहता हो । २ त्रिगर्त्त देयके राजा ।

वैकर्त्तक (स० त्रि०) त्रियत्तस्य देयमेदस्य पदूर
त्रेयादि त्रियत्त कुञ्ज । त्रिगर्त्त देयके निकटवर्ती
देयादि ।

वैशुचिक (स० त्रि०) त्रिगुणार्थं त्रय एक गुण प्रवृत्ति
त्रिगुण-उज् । १ जो तीन बार गुणा किया गया हो ।
२ त्रिगर्त्त तीनों प्रकारके गुण हो ।

वैशुप्य (स० झो०) त्रिगुणार्थं भागः धर्म वा कर्म
पथ् । १ सत्यादि गुणत्रय, सत्य रज धोर तम इन
तीन गुणोंका धर्म वा भाव ।

वैत (स० पु०) त्रीनु बलान् तनोति कुमपत् तत्र वाहु-
ह तित गर्भर्षीहः तत्र भवा पथ् । १ कुमपत्प्रकारक
धर्मजात पथ्, बह पथ जिसके साथ माय ही धोर पथ
पैदा हुए हो । २ किसी तीन शोकीका समूह ।

वैतन (स० पु०) पञ्चमत् निर्दुषं दासमेद ।

वैदयिक (स० झो०) त्रिदया देयता पथ् इय । देय
पहुं क्य क्य तोर्भेद र्थमनोका धनना भाग जो
तीर्थ कहलाता है ।

वैज (स० प०) त्रि प्रकार इति त्रिधा ततः प्रथम
त्रिभोगवसुध । वा ३।१।३६) त्रिप्रकार, तीन तरहके ।

वैर्ष्य (स० झो०) त्रयाणां विद्वानां धर्मान् पर्वति
पथ् । त्रयादिबेट सम्बन्धीय होत ।

वैर्षातयो (स० झो०) उदयनानोयाक्य वज्रमेद, एक
प्रकारका यज्ञ ।

वैर्षातयोय (स० झो०) वैर्षातयो गदादि० ह । यज्ञ-
मेदोद्वा कर्ममेदः ।

वैर्षातुव (स० त्रि०) त्रिभिः चातुभिः कर्त्तव्यताये
निवृत्ता इज् । १ कर्त्तादि चातुत्रय लिप्याद्य, जो तीनों
चातुर्पोंके कर्त्तव्यता मया हो । (पु०) ३ तीनों कोष ।

त्रैनिधिक (म० वि०) विभिः निष्कैः क्रीतं ठक् । जो तीन निष्कोंमें खरीदा गया हो, जिसको कीमत तीन निष्क हो ।

त्रैपारयणिक (स० वि०) विः पारायणं प्रावत्तं यति ठक् । जिसने तीन ३ र वेद पढ़ा हो ।

त्रैपुर (म० पु०) विपुर-स्त्राये अण् । १ विपुरटेग २ उम टेगके निवासी । ३ उम टेगके राजा । ४ विपुर नामक असुर भेद, विपुरासुर नामका एक राजस ।

त्रैफल (म० क्तो०) त्रिफलानां तदाद्यद्रव्याणामिदं अण् । चक्रटत्तोक्त वृत्तभेद, चक्रटत्तके अनुसार वैद्यकमें एक प्रकारका वृत्त । इसको प्रसृतप्रणाली इस प्रकार है—वृत्त ४ सेर, काढ़के लिये त्रिफला दो सेर, जल ४८ सेर, गंध २ सेर, दूध ४ सेर, चूर्णके लिये त्रिफला, त्रिकटु, द्राक्षा, यष्टिमधु, कुट, पुण्डरीक काष्ठ, छोटी इलायची, विहङ्ग, नागेश्वर नोलोत्पल, श्रमन्तसूल, श्यामालता, रक्तचन्दन, हरिद्रा और दारुहरिद्रा प्रत्येक दो दो तोला, इन सब द्रव्योंको एक साथ मिला कर यथा-नियम वृत्त प्रचुत करते हैं, इसमें तिमिर, कामल, विषर्ष, प्रटर आदि अनेक प्रकारके रोग प्रशमित होते हैं ।

(चन्द्रदात)

त्रैवलि (म० पु०) ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम जिनका उल्लेख महाभारतमें आया है ।

त्रैमातुर (म० पु०) तिसृणां मातृणामपत्यं अण् मातुरत् । लक्ष्मण । ये कौशल्या, कैकेयी और सुमित्राके स्नेह-भाजन थे । सुमित्राने कौशल्या और कैकेयीके चरुना अंग खाया था और उन्हींसे लक्ष्मणजीकी उत्पत्ति है इसीसे उनका नाम त्रैमातुर पड़ा । लक्ष्मण देखो ।

त्रैमासिक (म० वि०) त्रैमासं तृतीयमासं भूतः स्वसक्तया प्राप्तं ठक्, त्रिगच्छस्य पूरणार्थत्वेन संख्यावाचकत्वाभावात् न द्विगुलं 'द्विगोलुगनपत्वे' इति नलुक । १ जिसकी उम्र तीन वर्षकी हो । २ त्रिमासभव, हर तीन-रे महीने होनेवाला ।

त्रैमास्य (म० क्तो०) त्रिमासं स्वार्थे षञ् । त्रिमास, तीन महीने ।

त्रैम्यक (म० पु०) त्राम्यको देवता अस्य । १ त्राम्यक देवताके उद्देश्यसे यज्ञ किया हुआ एक प्रश्न । २ होम

भेद, एक प्रकारका होम । ३ रुद्र देवताकी धूर्तिवद्द्या-भेद । ४ रुद्रदेवताक वलि प्रश्रुति, महादेवके उद्देश्यसे यज्ञ किया हुआ उपहार आदि । (वि०) ५ त्राम्यक सम्बन्धो ।

त्रयम्बका (म० स्त्रो०) गायत्री ।

त्रैयाहावक (स० स्त्रो०) त्रैयाहावे देगभेदे भवः घृणादि बुज्, भव वृद्धि नियेभात् ऐच् । त्रैयाहावदेगभव, जो त्रैयाहावदेगमें उत्पन्न हुआ हो ।

त्रैराशिक (म० क्तो०) त्रौन् रागोन् श्रद्धिक्तय प्रवृत्तं ठक् । गणितभेद, गणितकी क्रिया जिसमें तीन ज्ञात राशियोंको सहायतासे चौथी अज्ञात राशिका पता लगाया जाता है ।

तीन राशियां लेकर चतुर्थ काम किया जाता है, इसीमें इसका नाम त्रैराशिक (Rule of three) पड़ा है । तीन निर्दिष्ट राशियोंमें एक और फिर एकका जितना गुणा वा भाग होगा, निर्णय चौथी अवशिष्ट राशिका उतना ही गुणा वा भाग होगा । अतः त्रैराशिककी प्रक्रिया गुणन और भागकी मूलक है । जैसे—एक मन चोनीका मूल्य ७५४ आना हो, तो ५ मन चोनीका मूल्य कितना होगा ?

इस प्रश्नमें ५ मन एक मनका जितन गुणा है, ५ मनका मूल्य भी एक मनके मूल्यका अर्थात् ७५४ आनेका उतना ही गुणा होगा । सुतरां ७५४ आनेको पञ्चगुण या ५से गुणा करनेसे ५ मनका मूल्य ३८७ हुआ इस प्रश्नके अर्द्धोंकी दूसरी रीतिमें रख कर उत्तर निकाला जा सकता है, जैसे—

मन	मन	रूपया
१	: ५	: ७५४, ३०

अर्थात् इष्ट राशि । यह अज्ञात इस प्रकारसे पढ़ना होता है ।

ऐसे ५ सम्बन्धमें ७५४ आ० है वैसे उनके सम्बन्धमें भी । इस लिये उ निकालनेमें ७५४ आनेकी ५से गुणा कर गुणनफलकी १से भाग देना होता है, किन्तु १से भाग देना वा नहीं देना दोनों एकसा है । अतएव ५से गुणा कर जो गुणनफल होगा, वही उके बराबर है । यहाँ पर ५ मनसे गुणा किया गया, ऐसा न ख्याल कर

धनवेष्टिहराणि ३ वै ही गुणा क्रिया गयी है, ऐसा समझना चाहिये, अन्यथा गुणक्रिया सन्भव नहीं है।

उदाहरण—यदि ८ मरी सोनेका मूल्य ३२ रु० हो, तो ३ मरी सोनेका मूल्य कितना होगा।

यहां पर पक्षी १ मरीका मूल्य निकाल कर उसे तोलने गुणा करने पर तीन मरीका मूल्य निकल पायेगा।

एक मरीका मूल्य निकालनेमें ८ मरीके मूल्य ३२ रूपयेमें ८के भाग देना होगा। ३२ रूपयेमें ८के भाग देने पर भागफल ४ रु० होता है। पर उसे ३के गुणा करने पर (३४) या ३ गुणा और यहाँ प्रश्नका उत्तर है। यही इस प्रकार यहाँको पूर्ववत् रखनेसे हम प्रकार होता है। कैवे—

मरी मरी रु०

८ ३ ३२ : ८ का दृष्ट राशि
किन्तु ३२को पक्षी ८के भाग दे कर पीछे भाग फलको उसे गुणा नहीं कर यदि ३२को ही उसे गुणा करे और गुणनफलको ८के भाग दे, तो फलमें कोई फरक नहीं पड़ेगा। परन्तु ३२को ३के गुणाकर गुणनफल ९६में ८का भाग देनेसे भागफल १२के गुणा। यही प्रकार प्रश्नको समी प्रक्षिपायोंको भली भाँति सोच विचार कर परवर्ती नियम स्थिर हो सकता है।

ने राशिकके बहुपालका नियम—तोन निर्दिष्ट राशियोंमें से जो राशि दृष्ट चौकी राशिको जातिकी हो, वही तोसरे स्थानमें रखते हैं। जोसे प्रश्नका भाव भली भाँति सोच कर यह दिखना होता है कि चौको राशि तोसरी राशिये बड़ो होयी वा छोटी। यदि बड़ो हो, तो निर्दिष्ट राशियोंमें से परिशिष्ट दोमें जो बड़ो होमो उसे पचवा यदि छोटी हो तो उन दो राशियोंमें से जो छोटी होमी उसे दूसरे स्थानमें तथा चौको प्रथम स्थानमें रखते हैं।

प्रक्षिपा यष्टि नियम—

पक्षी और दूसरी राशि यदि भिन्न भिन्न चोको हो, तो उन्हें पावच्छकतागुणार सबसे निम्न वा एक चोकीमें करते हैं। जिहा करते समय उन्हें पचव श्लेष समझना चाहिये। तीसरी राशि यदि भिन्न

राशि हो, तो हमें पावच्छकतागुणार सबसे निम्न चोकीमें करते हैं। जोसे दूसरी और तीसरी राशिये गुणनफल पक्षी राशिये भाग २ कर जो भागफल हो वही उत्तर होमा। तीसरी राशि जिस चोकीमें लाई गई है उत्तर भी उसी चोकीमें होगा।

जोसे अक्षरत होने पर उसे एक वा निम्न भिन्न भिन्न चोकीमें स्थानसे प्रकृत उत्तर निकल पायेगा। दूसरे जमो यहाँको रखनेसे वा उन्हें अन्य चोकीमें स्थानसे यदि पक्षी और दूसरी चोकीका पचवा पक्षी और तीसरोका कोई बाकार गुणनफल रहे, तो उससे उनमें भाग देना होता है और भागफल से कर पूर्व स्थिति काय करना होता है। ऐसा करनेसे कुछ प्रमेद नहीं पड़ेगा और प्रक्षिपाको भी सुविधा होमी। क्योंकि भाव्य और मात्रक दोनों राशिको किसी एक राशिये भाग देनेसे भागफलमें कोई फरक नहीं पड़ता है। उदाहरण—यदि ३३४ रु० तेलका दाम ३२३० पाणा हो तो ३५८ वीरका दाम कितना होगा।

इस प्रश्नमें दृष्ट या प्रधान राशि पचवा है। पचवच उसी जातिका ३२३० पाणा तोसरे स्थानमें रखा गया एक प्रश्नकी गतिसे ऐसा ज्ञात हुआ कि दृष्ट राशि तोसरी राशिये कम होगी। इसी कारण पचवच दो राशियोंमें से जो राशि छोटी है उसे दूसरे स्थानमें और चौको पक्षी स्थानमें रखा।

मन	मन	रूपया
३३४	३५८	३२३० : ८०

जोसे पक्षी और दूसरी राशिको शिर्षमें वा कर और तीसरी भिन्न राशिको पार्श्वमें वा कर फिर हम प्रकार लिखा गया।

वीर	वीर	पाणा
३५४	१५८	३५४ ८०

यह प्रक्षिपाई नियमागुणार—

$$\frac{३५४ \times १५८}{३५४} = \frac{५५४ \times ९}{४} = १०१ \times ९ = ९११ \text{ पाणा}$$

पर्यात् ३११ उत्तर हुआ।

यहां १५८ और ३५४ को ३५४के भाग देने पर पचव १ और दूर चार हुआ; फिर १५८ और ४ को ४के भाग दिया गया।

इसी प्रकार सब जगह समझना चाहिये ।

त्रैलोक्य (मं० लो०) त्रिरूपस्य भावः यत्र । त्रिधा रूप, जिमका प्रकार तीन प्रकारका हो ।

तैल्लिद्र (मं० लो०) त्रीणि सत्त्वरजस्तमांसि पुंस्त्रील्लोव-
रुशानि वा लिङ्गानि यस्य तस्येदं वा अण् । त्रिलिङ्ग-
प्रधान काय । त्रिलिङ्ग देखो ।

त्रैलोक्य (मं० पु०) त्रिलोक स्वार्थे अण् । त्रैलोक्य, स्वर्ग,
मर्त्य और पाताल ये तीनों लोक ।

त्रैलोक्य (मं० लो०) त्रिलोको एव स्वार्थे यञ् । स्वर्ग,
मर्त्य और पाताल ।

त्रैलोक्यचिन्तामणिरस (मं० पु०) १ रसेन्द्रसारसंग्र-
होक्त च्चरनागक औषधभेद । प्रसृत प्रणाली—
स्वर्ण, रौप्य और अभ्र प्रत्येक दो भाग, लोह और प्रवाल
प्रत्येक ५ भाग तथा रससिन्दूर ७ भाग इन सबको एक
साथ मिला कर छतकुमारोके रससे घांटते हैं । पीछे २
रत्नोंकी गोली बना कर कायामि सुखाते हैं । इस औषध-
को बक्रोके दूधके साथ सेवन करनेसे ज्वर, कास
(खाँसी), गुल्म, प्रमेह, जोणं च्चर और उन्माद आदि
रोगोंको शान्ति होते है । यह औषध वायुको शान्ति-
कारक है । (रसेन्द्रधारसं० उवरचि०)

२ रसेन्द्रसारसंग्रहोक्त औषध भेद । इसकी प्रसृत
प्रणाली इस प्रकार है—हीरा, स्वर्ण, सुम्ना, तीक्ष्ण लौह
प्रत्येक एक एक भाग, अभ्र ४ भाग, रससिन्दूर
चार भाग इन सबको पत्थरके खन्डमें लौहदण्डमें छत-
कुमारोके रसके साथ घांटते हैं । बाद एक रत्नोंको
गोली बनाते हैं । पार्वतो और सूर्यदेवको पूजा कर इस
रसका सेवन करनेसे अनेक प्रकारके रोग और च्चरका
नाश होकर सुख मिलता है । अदरकके साथ रसके सेवन
करनेसे शोषा जाती रहती है । श्रेष्ठाके मूत्र ज्ञान पर
मात्रिक पिप्तको अधिकतामें छत और चीनी वात-श्रेष्ठा
में पीपरका चूर्ण और मधु तथा प्रमेहमें दूधका सेवन
करना चाहिये । यह औषध कास और कफवातनागक,
सम और पन्निवहेव, आयु और पुष्टिकर, हृष्य तथा सर्व
रोगनाशक है । (रसेन्द्रधार० वातव्याधिचि०)

त्रैलोक्यचरस (मं० पु०) रसेन्द्रधारसंग्रहोक्त औषध-
भेद । प्रसृत प्रणाली—पारा, ताम्र, गन्धक, पोपर, जय-

पाल कटकी, (ज्ञानभिर्व), हरोतकी (जड़) निसोथं
प्रत्येकके एक तोलकी यूहरके दूधमें मिला कर २ रत्नों-
की गोली बनाते हैं । इसका अनुपान मधु है । इस
औषधसे नवचर बहुत जल्द जाता रहता है ।

(रसेन्द्रधारसं० उवरचि०)

त्रैलोक्यमण्ड—१ चोलुक्वराज प्रथम भोमदेवके परवर्ती
राजा, प्रथम कर्णदेवका नामान्तर । चौबिस देखो ।

२ कालञ्चरराज त्रैलोक्यमण्डदेव किसो किसो ताम्र-
शासनमें त्रैलोक्यमण्डदेव नामसे प्रसिद्ध है ।

३ ग्वालियरके कच्छपारिवंशमें उत्पन्न मालवके
विजेता राजा कोर्त्तिराजके पुत्र । इनका दूसरा नाम
मूलदेव था । राजा मूलदेव भुवनपाल नामसे भी
पुकारे जाते थे । इनको पत्नीका नाम देवव्रता था
जिनके गर्भसे राजा देवपाल उत्पन्न हुए थे ।

ग्वालियरके सासवाहु मन्दिरमें ११५० विक्रममें
लक्ष्मण महीपालको शिलालिपिसे जाना जाता है, कि
कच्छपघात वा कच्छपारिवंशमें लक्ष्मण नामके एक
राजा थे । उनके पुत्र वज्रदामानि गाधिनगर वा कान्य-
कुलराजको परास्त कर गोपाद्रि दुर्ग (ग्वालियरके दुर्ग)
पर अधिकार जमाया । वज्रदामानि के पुत्र मङ्गलराज
और मङ्गलराजके पुत्र कोर्त्तिराजने मालवदेशको फतह
किया तथा सिंहपानीय ग्राममें शिवमन्दिरको प्रतिष्ठा
की । इन्हींके पुत्र मूलदेव थे । इनमें चक्रवर्ती राजाके
सभी लक्षण मिलते थे । मूलदेव ही त्रैलोक्यमण्ड नामसे
मगहर थे । इनके पुत्र देवपालके बाद इनके पोते पद्मपाल
बहुत शूरवीर तथा युद्धप्रिय निकले । दक्षिण भारतमें
भोये युद्ध करने गये थे । युवावस्थामें ही इनको अकाल
मृत्यु हुई । बाद इनके शान्तिभ्राता सूर्यपालके पुत्र मही-
पाल राजा हुए । कच्छपारिवंश इतिहासमें कच्छवह
वंश नामसे प्रसिद्ध है । ग्वालियर देखो ।

४ नेपालके तृतीय ठाकुरीवंशोय एक राजा । १४०२
ई०में इस वंशके राजा यक्षमण्डको मृत्यु हुई । यक्षमण्डके
तीन पुत्र थे । सबसे बड़े जयरायमण्डने भाटग्राममें एक
स्वतन्त्र राजवंश स्थापित किया । इन्हींने सिर्फ १५ वर्ष
राज्य किया था । पीछे इनके लड़के सुवर्णमण्ड, सुवर्णमण्डके
पुत्र प्राणमण्ड और प्राणमण्डके पुत्र विश्वमण्ड एक एकने

१३ वर्ष शासन किया। पोलि विष्णुमन्त्रके एक पुत्र बैलेश्वर
मन्त्र १३१० ई० में राजभिषास पर बैठे। शायद
१३वीं शताब्दी में १३ वर्ष शासन किया था। वेराज रचो।
शैलोत्पलशोधन (स० वि०) शैलोत्पल शोधयति सुव-
दिक-म्बु। तन्मोक्ष तारावलयमेद। यह कवच मया
पद्मिनाशक, सर्वविषामय और सर्व मन्त्रमय है। जो
इसे धारण करेगा वा रीज अर्पित है, वे सर्वत्र और सर्व
निह होते, उनकी धरमें अच्छी काम करता तथा सुँच
पर करणती विराजमान रहती है। इस कवचके प्रभा
वसे किसी प्रकारका अष्ट भुजगना नहीं पड़ता।
इस कवचको धारि विना जो तारादेवकी प्रार्थना करते
हैं वे पत्न्यासु, निहंन और मृच्छ होते हैं। इसीसे ता।
देवीके लपासकको चाहिये, कि वे पहले पहले इस कवच
को जान लें और तब तारादेवकी पूजामें काम लावे।
शैलोत्पलशोधन (स० पु०) काशीरके एक राजाका नाम।
शैलोत्पलशोधन—कास्यारके एक राजाका नाम। अपनी
पिता परमार्थदेवके मरने पर ये १२०३ ई० में राजसही
पर बैठे थे। १३वीं शताब्दीमें सुयसमानोंने कास्यार पर
शासन किया था। अजयनरुमें इनकी राजधानी थी।
१२३३ ई० में दिल्लीके सल्तनत अजयनरु एक बार काम
करके मृतने पाये थे। इनके पिताके समयमें मजोबा
प्रदेश कास्यार राज्यके अधिकारकृत हो चुकीपास
जाय गया था। १३वीं शताब्दीके अन्तमें अजयनरु
प्रायः अजयनरु कास्यारके अधिकार देना प्रदेशके
पूर्वाशके अन्त में मजोबा और मिर्जापुर जिला तक विस्तृत
था। शायद कवच राजाकीके प्रथम होने पर उस पद्यमें
इनका अधिकार जाता रहा। वे बन्द्येन वा चन्द्रादेय
के मन्त्र थे। चन्द्रादेयके रचो।
शैलोत्पलशोधन (स० श्लो०) शैलोत्पल शोधयति यथा।
विधि, भाग।
शैलोत्पलशोधन (स० पु०) १ रमेश्वरशोधन शोधक
शोधकमें एक प्रकारका रस। प्रयुक्त
पचासी—पारा ३ भाग, चन्दन ६ भाग, शीशु ८ भाग,
मन्त्र, इतोनको, धामनको (पावना) बड़ेका, भोठ
पीपर, मिर्च शोधक रस तामसुनी (सुयस) और शुद्ध
मन्त्रके १ भागको एक साथ मिला कर होता और

शोधकमें काठमें दस दिन तक बीच बार माचना देते
हैं। पोलि पाव तोनीको गोली बनाते हैं। इसका बहुत
पान करना और मनु है। इसके सेवन करनेसे शोध,
पाण्ड, मय और अवातिमारोग शान्त होता है।
(शैलोत्पलशोधन १० पाण्ड वि०)

२ अजयनरु शोधयति। मिश्रित एक तोला पाण्ड
और एक तोला मन्त्रको एक साथ मिला कर उसे
कुट्टन तामसुनी मूले, तरौरे, अजयनी और मण्डूक
पर्णिके पत्तोंके रसमें मिला कर सुपाते हैं। पोलि एक
शोकी शोकी बनाते हैं। इसके सेवन करनेसे शोधोपत्र
अपतियोग्य मूर होता है। यह विरचक है। शरीरका
उत्पाप यदि अधिक हो गया हो, तो मारियकके पाणीसे
इसका प्रयोग करना चाहिये। (शैलोत्पलशोधन १० अजयनरु)

शैलोत्पल (स० वि०) शोधयति मन्त्रमय इह शिवादि
पञ्च। शिवके सम्बन्धो।

शैलोत्पल (स० पु०) शिवके अर्पण शोधयति इह। शिवके
अधिकारी सम्बन्धो।

शैलोत्पल (स० श्लो०) शिवके शोधयति इति लक्षणादि
क। शैलोत्पल सम्बन्धुक्त।

शैलोत्पल (स० वि०) शिवके अर्पण शोधयति इह। शिवके
अधिकारी सम्बन्धो। शिवके अर्पण शोधयति इति लक्षणादि
क। शैलोत्पल सम्बन्धुक्त।

शैलोत्पल (स० वि०) शिवके अर्पण शोधयति इह। शिवके
अधिकारी सम्बन्धो। शिवके अर्पण शोधयति इति लक्षणादि
क। शैलोत्पल सम्बन्धुक्त।

शैलोत्पल (स० पु०) शिवके अर्पण शोधयति इह। शिवके
अधिकारी सम्बन्धो। शिवके अर्पण शोधयति इति लक्षणादि
क। शैलोत्पल सम्बन्धुक्त।

शैलोत्पल (स० वि०) शिवके अर्पण शोधयति इह। शिवके
अधिकारी सम्बन्धो। शिवके अर्पण शोधयति इति लक्षणादि
क। शैलोत्पल सम्बन्धुक्त।

शैलोत्पल (स० वि०) शिवके अर्पण शोधयति इह। शिवके
अधिकारी सम्बन्धो। शिवके अर्पण शोधयति इति लक्षणादि
क। शैलोत्पल सम्बन्धुक्त।

त्रैविक्रम (सं० त्रि०) त्रिविक्रमस्य इटं अण् । १ त्रिवि-
क्रममन्वयो । (पु०) २ त्रिविक्रमावतार विष्णु ।

त्रैविद्य (सं० पु०) त्रिस्रो विद्याः समाहृताः ऋक्-यजुः
सामरूप त्रिविद्यं तदधोते वेद वा अण् । १ त्रिवेदज्ञ,
तीनों वेदोंका ज्ञाननेवाला मनुष्य । २ तीन विद्या ।
३ व्रतविशेष, एक प्रकारका व्रत ।

त्रैविध मुनि -मिदान्तशिरोमणि नामक जैनग्रन्थके रच-
यिता ।

त्रैविध्य (सं० क्ली०) त्रिविधस्य भावः प्यञ् । त्रिपका-
रत्व, तीन प्रकार, तीन तरह ।

त्रैविष्टप (सं० पु०) त्रिविष्टपे वसति अण् । स्वर्गमें
रहनेवाले देवता ।

त्रैविष्टपेय (सं० पु०) त्रिविष्टपे वसति वा ठक् । देवता ।

त्रैवृण्य (सं० पु०) त्रिवृण्यस्य अण् वा अण् । राज-
विशेष, एक राजाका नाम ।

त्रैवेदिक (सं० त्रि०) त्रिषु वेदेषु तदध्ययनार्थं विहितः
ठक् । तीनों वेद अध्ययन करनेके व्रतादि ।

त्रैवृद्धव (सं० पु०) त्रिवृद्धोरपर्यं अण् । त्रिवृद्धुके पुत्र
हरिचन्द्र । त्रिशंकु देखो ।

त्रैत्रिणा, सं० त्रि०) त्रयः शान्ताः परिमाणस्य तैः कृतं
वा अण्-विकल्प पक्षे नलुक् । १ त्रिशाण परिमित, जो
एक त्रिशाणके बराबर हो । २ त्रिशाण परिमाण द्वारा
कृत, जो एक त्रिशाणमें खरोदा गया हो ।

त्रैशोक (सं० क्ली०) त्रिशोकैः ऋषिणा इष्टं साम ।
'विश्वं पृतना' इत्यादि ऋग्वेदका ब्रह्मसुतिविषयक
सामभेद ।

त्रैष्टम (सं० त्रि०) त्रिष्टप् उक्तादि-अण् । त्रिष्टम्भच्छन्द
सम्बन्धोऽयं । त्रिष्टम्भ देखो ।

त्रैसानु (सं० पु०) तुवं सुवं शकं राजा गोभानुकं पुत्रका
नाम ।

त्रैस्वर्यं (सं० क्ली०) त्रिस्वर-स्वार्थं प्यञ् । उदात्त,
अनुदात्त और स्वरित तीनों प्रकारके स्वर ।

त्रैहायण (सं० त्रि०) त्रिहायणस्य इदं हायनान्तत्वा-
दण् । १ त्रिवर्षसम्बन्धो, तीन वर्षोंमें होनेवाला ।
(क्ली०) २ तीन वर्षका समय ।

त्रोटक (सं० त्रि०) त्रुट-णिव-ण्वुल् । १ छेदक । (क्ली०)

२ दृश्यकाव्यभेद, नाटकका एक भेद । इसमें ५, ७, ८
वा ८ अङ्क होते हैं । स्वर्गीय और पार्थिव विषय इष्टके
प्रधान वर्णनोय है । यह नाटक नृपाररमका प्रधान
है और इमका नायक कोई दिव्य मनुष्य होता है ।
स्तुभितरम्भ और विक्रमोर्वशी प्रसूति त्रोटक दृश्यकाव्य
हैं । ३ एक रागका नाम । ४ एक विपला कोड़ा । ५
गङ्गाराचार्यके एक शिष्यका नाम ।

त्रोटकी (सं० स्त्री०) रागिणोविशेष, एक रागिणोका
नाम ।

त्रोटि (सं० स्त्री०) त्रोट्यते भिद्यतेऽनया त्रोटि-इ (अच्-
इ । उण्-४।१३८) १ कटफल, जायफल । २ चञ्चु,
चोंच । ३ पक्षिभेद, एक प्रकारको चिड़िया । ४ मौन
भेद, एक प्रकारको मङ्गल ।

त्रोटिहस्त (सं० पु०) त्रोटिचञ्चुर्हस्त इव ग्रहणसाधनं
यस्य । पक्षी, चिड़िया ।

त्रोटो (सं० स्त्री०) त्रोटि-डोप् । १ टोंटो । २ चिड़िया
की चोंच । त्रोटि देखो ।

तोतल (सं० क्ली०) १ तोड़ने तन्त्र । (त्रि०) २ तीतला,
जो बोलनेमें तुतलाता हो ।

तोत्र (सं० क्ली०) त्रायते शिञ्चते नियम्यतेऽनेन त्रै उत्र
(अशित्वादिभ्य इत्रोर्वा । उण्-४।१७२) गवादि ताड़न-
दण्ड, चातुक । पर्याय—प्राजन, तोदन और प्रवयण ।
२ अस्त्र । ३ आरूपक्रिया । ४ व्याधिभेद, एक प्रकारका
रोग ।

तोम्बे—बम्बई प्रदेशके याना जिलान्तर्गत सालसेट तालु-
काका एक वन्दर । यह अक्षा० १८°२'उ० और देशा०
७२°५७'पू० बम्बई शहरसे ३ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित
है । जनसंख्या प्रायः २७०२ है । यहाँ कुष्ठपोड़ित
रोगियोंका एक आश्रम है ।

त्रयंश (सं० पु०) तृतीयोऽंशः । १ तृतीय अंश, तीसरा
भाग । २ त्रिगुणित अंश, तिगुना भाग ।

त्रयत्र (सं० पु०) त्रीणि अत्रोषि नेत्राणि यस्य ततः
समासान्तप्रत्यय । त्रिनेत्र, शिव । २ दैत्यविशेष,
एक दैत्यका नाम । (त्रि०) ३ नेत्र त्रयविशिष्ट, जिमकी
तीन आँखें हों ।

त्रयचर (सं० पु०) त्रीणि अकारीकारमकाररूपाणि

पचरात्रि यत्न । १ प्रवृत्त । तद्वत् प्रवृत्त ही वृत्त है ।
इसमें तोमी बंद प्रवृत्त है । (ङो०) २ इत्यो
भेद, एक प्रकारका इन्द्र । ३ त्रिचर्वाण्य तन्मोक्ष
प्रवृत्त, तन्मोक्ष इव इत्यत्र त्रिचर्वाण्य तोन प्रवृत्त हो ।
४ पद्यत् । (सि०) १ अर्थः अथवा मात्र, तीव्र पद्यत्का ।
मद्र (म० ङो०) त्रीणि पद्यानि यत्न । त्रीणिपद्यत्त
इति ।

मद्र (म० ङो०) त्रिमिरत्तृष्वते मय्यते मद्र पट्
पप्, मन्त्रादिस्त्रादस्योप । १ त्रिमिरत्तृ, त्रिधा,
त्रिचर्वाण्य । २ त्रिधात्तृ, (पु०) १ इन्द्र । ३ मन्त्रमा ।
मद्र (म० ङो०) त्रिस्तोत्रुत्तृ प्रमाचमयत्, तदि
तामदि इवस्य तस्य तुत्रिचर्वाण्य ममा० । १ मद्रुत्तृ
सब परिमित को तोन चर्वाण्यका हो । २ पद्यत्तृ
परिमित पद्यत्तृ, को तोन चर्वाण्यका हो ।

मद्र (म० ङो०) त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।
त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।
त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।
त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।

मद्र (म० ङो०) त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार वा०
टच् समा० । १ समाहार तोनो पद्यत्तृणां । त्रिमिरत्तृ
त्रिमिरत्तृ त्रिमिरत्तृ त्रिमिरत्तृ त्रिमिरत्तृ ।
२ मद्रत्तृ, त्रि तोन पद्यत्तृणां चरोदा यथा हो ।

मद्र (म० ङो०) त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।
त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।

मद्र (म० ङो०) त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।
त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।

मद्र (म० ङो०) त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।
त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।

मद्र (म० ङो०) त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।
त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।

मद्र (म० ङो०) त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।
त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।

मद्र (म० ङो०) त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।
त्रयाणां पद्यत्तृणां समाहार ।

२ मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।
मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।

मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।
मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।

मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।
मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।

मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।
मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।

यदि रवि चोर मद्रत्तृणां समाहार ।
यदि रवि चोर मद्रत्तृणां समाहार ।

मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।
मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।

मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।
मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।

मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।
मद्रत्तृणां पद्यत्तृणां समाहार ।

त्रयवि (मं० पु०) परमासात्मकः कालः त्रयि तिस्रोऽधयो यस्य । अष्टादश मास वयस्क पशु, अठारह महीनेका पशु ।

त्रय्य (मं० स्त्री०) त्रयाणां अर्थानां समाहारः । १ वर्ष त्रय, तोन वर्ष । (त्रि०) २ त्रिर्ष्ववयस्क जिसकी उमर तोन वर्षकी हो ।

त्रयशीन (सं० त्रि०) त्रयोति ततः पूरणे डट् । त्रयोति संख्याका पूरण, तिरासीवां ।

त्रयगोति (सं० स्त्री०) त्रयधिका अशीतिः कर्मधा० । १ अश्वो और तोनका जोड, तिरागो । २ उक्त संख्या सूचक अङ्क ।

त्रयगोतितम (मं० त्रि०) त्रयोति पूरणे तसप । त्रयोति संख्याका पूरण, तिरासोवां ।

त्रयष्टक (सं० स्त्री०) सुश्रुतीक्त जलनिक्षेपण स्थानभेद, सुश्रुतके अनुभार वह स्थान जहा जल फेंका जाता है ।

त्रयट् (सं० त्रि०) त्रिगुणित्वात् अट् । १ चतुर्विंशति संख्या, चौबोमकी संख्या । २ उक्त संख्यासूचक अङ्क ।

त्रयस्र (सं० स्त्री०) तिस्रः अस्त्रयः कीणा यस्य अच् समा० । १ त्रिकोण । २ त्रिभुज रूप, मटरका गाक । ३ व्याघ्र-नख, बाघका नाखून । (स्त्री०) ४ शुक्र विहति, मफेद निभोय । ५ वापिके मसिना, चमेला ।

त्रयस्रफल (सं० स्त्री०) शलकी वृक्ष, सेमरका पेड़ ।

त्रयह (सं० पु०) त्रयाणां अर्जां समाहारः समासान्त टच् समाहारद्विगुत्वात् अर्जादेशः । दिनत्रय, तोन दिन ।

त्रयहस्यर्ष (सं० पु०) त्रयहचान्ददिनत्रयं स्पृशति स्पृश-अण् । १ तिथित्रयस्यर्षी एक सावन दिन, वह सावन दिन जिसे तोन तिथियां स्यर्ष करतो हो । २ दिनत्रय, दिनका घटना ।

त्रयहस्पृश (सं० स्त्री०) त्रयहं स्पृशति स्पृश-क । सावन दिनत्रयस्यर्षी एक तिथि, वह तिथि जो तोन सावन दिनोंकी स्यर्ष करतो हो । ऐसी तिथि विवाह या यात्रा आदिके लिए निर्दिष्ट पर स्नान दान आदिके लिए अच्छी मानी जाती है । अवम देखो । त्रयह-स्पृश-क्विन् त्रयहस्य, श् ।

‘एषादशी द्वादशी च रात्रिशेषे त्रयोदशी ।

त्रयहस्पृक् उदहोरात्रमुष्या सा सदा तिथि ॥’ (श्रुति)

पहले एकादशी पीछे द्वादशी और रात्रिके शेषमें त्रयोदशी, होनेसे त्रयहस्पृक, होता है । यही तिथि उपोष्य है अर्थात् इन तिथिमें उपवास करना चाहिए ।

त्रयहिकारिरम (सं० पु०) रमेन्द्रमार० अहीक्त श्रौषध भेद । प्रसून प्रणाली—पारा, गन्धक, तृतीया और गन्धके प्रत्येक भागकी द्वावोगाक, जयन्ती और नटियां गाक-के रससे सात सात बार भावना टे कर ४ रत्तीकी हरएक गोली बनाते हैं । जोरा और नीके साथ सेवन करनेसे त्रयहिक या तिजागे वृष जाता रहता है ।

त्रयहोन (सं० पु०) त्रिभिरहोभिः निवृत्त ख । त्रिदिन साध्य क्रमुभेद, तोन दिनोंमें होनेवाला एक प्रकारका यज्ञ ।

त्रयहैहिक (सं० त्रि०) ईहायां चेटायां भवं ऐहिकं धनं त्रयै दिनत्रये पर्यामं ऐहिकं धनं यस्य । दिनत्रय-निर्वाहोचित धनयुक्त, वह गृहस्थ जि-के यहां तोन दिन तक निर्वाह करनेके लिए यद्यष्ट सामग्री हो ।

मनुने चार प्रकारके गृहस्थ बनाए हैं—कुमूलधान्यक, कुम्भीधान्यक, त्रयहैहिक और अश्वस्तनिक । जो गृहस्थ तोन दिनकी जाविका सञ्चय कर रखते हैं उन्हें त्रयहैहिक कहते हैं । ऐसे गृहस्थ मध्यम नमस्के जाते हैं ।

त्रयचायण (सं० पु०) त्रयचन्य युवा अपत्यं फञ् । गिशुपाल हरादिके युवा वंशज ।

त्रयचायणभक्त (सं० पु०) त्रयचायणः तस्य विषयो देशः ऐपुकादिः भक्तत्वात् । त्रयचायणका विषय ।

त्रययुष (सं० स्त्री०) त्रयाणां वात्ययौवनस्यविराणां आयुषां समाहारः वेदे अच् समा० । वाल्यादि आयुस्त्रय, वाल्य यौवन और स्थविर ये तोन अवस्थाये ।

त्रयर्षेय (सं० पु०) त्रयः आर्षेयाः ऋषयो यत्र । १ त्रिपथर गोत्रभेद, वह गोत्र जिसके तोन प्रवर हों । ऋषेरयं ठक् आर्षेयः ऋषिधर्मः त्रय आर्षेयाः धर्मा रेषां । २ अश्व, वधिर और मूक, अश्व, बहुरा और गूंगा । इन तोनोंकी यज्ञमें जानिका अधिकार नहीं है । तीन ऋषियोंमेंसे एकने दूमेरकी चीज देख कर आंखि बंद कर लीं । इसीसे वे अश्व हुए, दूमेरने परनिन्दा अवनम्यता करके कान मूंद लिये, इसीसे वे बहुरा हो गये और तीसरेने मथ्याकंधनकी शंका की थी, इसीसे वे गूंगे हुए थे ।

त्वक्पत्रो (स० स्त्री०) त्वक्, गौरा० डोप । १ हिङ्गु-
पत्रो । पर्याय—कारवी, पृथ्वी, वास्पीका, कवरो
श्रीर पशु । २ केलिका पेठ । ३ तेजपत्तके जैसो
पत्ता ।

त्वक्परिपुटन (स० फलो०) त्वचः परिपुटनं । चमड़े-
का खींचना, शरीरसे चमड़ेका अलग करना ।

त्वक्पाक (स० पु०) त्वचः पाको यत्र । शूकंदोष
निमित्त पोड़कारोगविशेष, सुश्रुतके अनुसार एक
प्रकारका रोग जिसमें पित्त और रक्तके कुपित होनेसे
शरीरमें फुंमियां निकल आती हैं । शूकंदोष देखो ।

त्वक्पाक्य (स० फलो०) त्वचः पाक्यं कठोरता ।
त्वक्का काठिन्य, चमड़ेका कड़ापन ।

त्वक्पुष्प (स० फलो०) त्वचः पुष्पमिव । १ रोमाघ,
रोए खड़े हो जाना । २ किलास, सेहूभा रोग ।

त्वक्पुष्पिका (स० स्त्री०) चर्म रोग विशेष, एक प्रकार-
का चमड़ेका रोग ।

त्वक्चर्म (स० स्त्री०) त्वच्यतेऽनेन त्वच करणे असुन् ।
बल, ताकत ।

त्वचोयस् (स० त्रि०) प्रतिशयेन त्वक्षिता इयसुन्
दृष्योलीपः । दोम, चमकता हुआ ।

त्वक्सार (स० पु०) त्वचि सारो यस्य । १ वंश, बांस ।
२ वंशका त्वक्, बांसका छिलका । ३ गुहृत्वक्,
दारचोनी । ४ शोणवृक्ष, सनका पौधा ।

त्वक्सारमेदिनी (स० स्त्री०) त्वचः सारं भिनत्ति भिद-
गिनि ङोप् । सुद्रव सुवृक्ष, छोटा चैच ।

त्वक्सारा (स० स्त्री०) त्वक्सारो वंश उपसिकारत्वं ना-
स्त्रास्याः अच ततटाप् । वंशलोचना, वंसलोचन ।

त्वक्सुगन्ध (स० पु०) त्वचि सुगन्धः सदुगन्धो यस्य ।
१ नारंगी नौवू । २ लवङ्ग, लौंग ।

त्वक्सुगन्धा (स० स्त्री०) त्वचि सुगन्धो यस्याः । १ एल-
वालुका नामक गन्धद्रव्य, एलुषा । २ सुर्मा ला, छोटी
इलायची ।

त्वक्स्नाही (स० स्त्री०) त्वचि स्नाहो । दारचोनी ।
त्वग्दूर (स० पु०) त्वचश्चर्मण्यं अद्दूरइव । रोमाघ ।
त्वग्चीरो (स० स्त्री०) त्वक्चीरो पृषोदरा० साधुः ।
वंशलोचना, वंसलोचन ॥

त्वग्गन्ध (स० पु०) त्वचि गन्धो यस्य । नागरद्व, नारद्वी
नौवू ।

त्वग्ज (स० स्त्री०) त्वचः जायते जन ड । १ रोम, रोमां ।
२ रुधिर, लेह ।

त्वग्दोष (स० पु०) त्वचो दोषो दूषणं यस्मात् । कुठ-
रोग, कोढ़ । इसमें शरीर पर चकत्ते पड़कर फिर पोछे
छिप जाते हैं । इसको गिनतो महारोगमें की गई है ।
महापातकज ८ प्रकारके जो रोग कहे गये हैं, उर्हमिसे
यह एक है । इस रोगसे यदि किमीको मृत्यु हो जाय
तो उसका प्रायश्चित्त किये बिना दाहकर्म करना निषिद्ध
है । मोहवग्ग यदि कोई दाह कर्म कर ले, तो उसे
चान्द्रायणव्रत करना होता है । (शुद्धितत्व)

त्वग्दोषोपहा (स० स्त्री०) त्वग्दोषं रोगविशेषं अपहन्ति
हन उ-टाप् । सोमराजी, वक्रुचो, वावची ।
जहाँ ये चकत्ते पड़ गये हों, वहाँ उसे लगा टैनेसे रोग
जाता रहता है । (गण्ड १८४ अ०)

त्वग्दोषारि (स० पु०) त्वग्दोषस्य अरिः, तत्राशकत्वात्
तथात्वं । हस्तिकन्द । इससे त्वग् दोष नष्ट होता है ।

त्वग्दोषो (स० त्रि०) त्वग्दोषोऽस्त्रासत्र त्वग्दोष-इनि ।
त्वग्दोषयुक्त, जिसे कुठरोग हो ।

त्वग्भेद (स० पु०) त्वचो भेदः इ-तत् । त्वक्का भेद,
चमड़ेका फटना ।

त्वग्भेदक (स० पु०) त्वचो भेदकः । त्वक्भेदकारी, वह
जो चमड़ा छेदता हो । समान जातिमें यदि कोई किसी
का चमड़ा छेद करे अथवा खून बहावे, तो उसे एक सौ
पण दण्ड होगा ।

त्वङ्गार (स० पु०) तुम इस प्रकारका वाक्य । गुरुजनोंको
त्वङ्गार अर्थात् तुम इस तरहका वाक्य कहनेसे भारी
दोष समझा जाता है । ऐसे हालतमें कहनेवालोंको
चाहिये कि वे उपवास कर अपमानितोंके घर पकड़े
श्रीर उन्हें प्रसन्न करनेको चेष्टा करे ।

त्वच् (स० स्त्री०) त्वच्यते संत्रियते देहोऽनया, त्वचति
संघृणोति वा टेहं त्वच-ङिप् । १ वस्त्रकल, काल । २
चर्म, चमड़ा । ३ स्पर्शग्राहक वाह्येन्द्रियभेद, पांच
इन्द्रियोंमेंसे एक । यह इन्द्रिय सारे शरीरके ऊपरी भागमें

श्याम है। दमर्ष द्वारा श्याम होता है तथा बड़के घोर मरम
पादिका प्राण प्राण किया जाता है। प्रायोग्य श्रवियेनि
एषे वाबुधे सरवायसे उत्पन्न माना है घोर दसको पवि-
तायी देवी वाबु बतकार है। ४ शुद्धबन्ध, दारचोमो।
पर्याय—रवच, बरुचन, श्वर, बराह, मुष्योषन,
ग्रहण, बिहल, बरु, सुरत कामबलम, सत्त्व, बहुरम्य,
विचल, मनविद्य, मटपच, मन्धबल, बर घोर श्रोत।
गुण—घट्ट, श्रोतन, कफ घोर कामनायक,
शुक्र घोर धामनोपनायक, कष्टघृष्टिकर तथा मनु है।

१ वा बुध, बरेनुन।

त्वच् (च० झी०) प्रयदा स्वगन्ताय इति घर्मपादि
रवादेव । १ शुद्धत्वच्, दारचोमो । २ त्वग पत्र
तेजपत्ता।

त्वचम (म० झी०) त्वच घसुन । त्वच देवो।

त्वचम् (म० त्रि०) त्वचसि क्वित यत् । त्वचिन्द्रियका
चित्तकर।

त्वचा (म० फी०) त्वच् पचे ट्राप् वा त्वचति स इषोति
कव शरीरमिति त्वच् ततद्राप । १ त्वच्, चम चमड़ा।
२ मिष्ट बरुचल दारचोमो।

त्वचापत्र (स० झी०) त्वचा त्वच पत्रमिव यत् ।
१ शुद्धबन्ध दारचोमो । २ तेजपत्र, तेजपत्ता।

त्वचिह्न (स० त्रि०) पतिशयेन त्वचान् त्वचत् इहन्,
ततो मनुयो तुक् । (सिम्बतोर्त्तु, वा १३।४७) त्वचन्त
त्वच बुध, श्वादा चमड़ावाला।

त्वचिहार (म० पु०) त्वचि हारी यया । ब श, बम।

त्वचिह्वग्या (म० फी०) त्वचि ह्वग्यो ययाः, सत्रग्या
पतुक् । सुद्रेना बोडो रनायका।

त्वचोपम (म० वि०) पतिशयेन त्वचान् त्वच, ईयसुन्
मतेतुक् । त्वचन्त त्वच बुध त्रिनमै पत्रिच चमड़ा या
द्विचका हो।

त्वचप्राण (म० झी०) त्वचा प्राण । श्याम श्रविये
नयक प्राण।

त्वचप्रेय (म० त्रि०) त्वचा प्रेय । श्याम श्रविये द्वारा
प्राणमै योग्य।

त्वत् (च० त्रि०) तत्-विद्य पतो वा तुक्च । (लोकेश्वर
१५५ । इत् २।११) १ मिच । २ बुधक् दन्धको मपमादे
बचबचनका वप।

त्वक्वत (म० त्रि०) त्वया क्वत १ तत् । तुमचे किया
वृथा।

त्वक्त (म० चय) पक्वार्थेते, बुधदन्धमिच । तुम्हारे
निवृत्तये।

त्वदोय (स० त्रि०) तव इदं त्वदादिर्त्वेन वृहत्त्वात् च,
त्वदादेयः । तुम्हारा । त्रिन बगवद् बहुरुचन हो उक्त
अगव् त्वदोय शब्द न होकर मुषदोय शब्द होगा।

त्वद्विच (म० त्रि०) तवेव विधा प्रकारो यस्य । त्वत्
पदय, तुम्हारे कोना।

त्वम्पदतथावर् (म० पु०) त्वमिति पदम् अस्त्रोऽर्थः ।
चेतम्, चेतमता।

त्वम्पदवाच्य (म० त्रि०) त्वम्पदस्य वाच्य । त्व, ब्रह्म।
त्रिन प्राचोके दिक् पादि पावरच नहीं है वे ही त्व है।

त्वम्पदवाच्यार् (म० त्रि०) त्वमिति पदस्य वाच्योऽर्थः ।
पञ्चानादिषो षष्टि।

त्वम्पदामिच (म० पु०) त्व पद पमिचा यन्त्र । त्वम्पद
वाच्य श्लोक, त्रिनचे 'पद' इत्यादि पमिमान द्विदि वृत्
है घोर मोचमपममै धवक्षित है वे ही त्वम्पदामिच है।

त्वपाय (स० त्रि०) तुष्णत् श्लक्ष्ण मयट् । त्वत् श्लक्ष्ण।
त्वपता (म० फी०) त्वया दत्त पयो म्हापु । तुमचे दिया
वृथा।

त्वरच (म० झी०) त्वर माचे ववुट् । त्वरा शीघ्रता
अन्दो।

त्वरचोय (स० त्रि०) त्वर चनोय । धृतगमनशील,
अरदो जानैवाला।

त्वरमाच (म० त्रि०) त्वर-यामच् । त्वर तेज ।

त्वर (म० फी०) त्वरचमिति, त्वर पट्, तना ट्राप्,
वेग, शीघ्रता, अन्दो। पर्याय—मम्मम पाशिंग, त्वरि,
नृचि घोर मर्षम है।

त्वरपच (म० त्रि०) त्वरा पचन यन्त्र । ततो वाच ।
त्वरामट् शीघ्रता अरनेवाला अन्दशात्र।

त्वरशीघ्र (च० पु०) त्वरागत, अयोग, अतुर।

त्वरवत् (च० त्रि०) त्वराम्नाम् त्वरा मनुप्, मय वा।

त्वरवुध शीघ्रता अरनेवाला।

त्वरि (म० फी०) त्वरचमिति त्वरमाचै इत् । त्वरा,
शीघ्रता।

त्वरित (सं० क्लो०) त्वरन्त । १ शोष, ज्वरो । (त्रि०)
२ तेज ।

त्वरितक (सं० पु०) त्वरितं कायति प्रकाशते जायते
कै०क । त्रीहिभेद, स्युत्तके अनुसार एक प्रकारका
चावल जिसे तूर्णक भी कहते हैं ।

त्वरितगति (सं० स्त्रो०) रुन्दोभेद, एक वर्णवृत्तका
नाम । इसके प्रत्येक चरणमें दश अक्षर होते हैं । इसके
पाँचवें और दशवें वर्ण गुरु और शेष वर्ण लघु होते हैं ।

त्वरिता (सं० स्त्रो०) देवोभेद, तन्त्रके अनुसार एक
देवी । इसकी पूजा युद्धमें विजय प्राप्त करनेके लिये की
जाती है । इसका विधान अग्निपुराणके १५१ अध्यायमें
और इसकी यन्त्रादिका विषय तन्त्रमारमें लिखा है ।

त्वरितोदित (सं० क्लो०) त्वरितं शीघ्रं यथा तथा उदितं
कथितं । शीघ्रोच्चारित वाक्य, बहुत जल्द उच्चारण
किया हुआ वाक्य ।

त्वत्सग (सं० त्रि०) त्वत्सग प्रयो० साधुः । जलमर्ष; पानो-
का साध ।

त्वष्ट (सं० त्रि०) त्वष्ट तनूकरणे । तनू कृत, जो
पतला या सूक्ष्म किया गया हो ।

त्वष्टि (सं० पु०) मनुक्ता सद्गोर्ण जातिभेद, मनुके अनुसार
एक संकर जाति ।

त्वष्टीमतो (सं० स्त्रो०) त्वष्टा तदनुग्रहोऽस्यस्याः मतुप-
प्रयो० साधुः । त्वष्टाकी अनुग्रहयुक्ता स्त्री, विश्वकर्माकी
दयालु स्त्री ।

त्वष्ट्र (सं० पु०) त्वेषति दोष्यति त्विष दोषो लक्ष, इतो
अस्वञ्च (नप्तनेतृत्वष्टृहोमिति । उण्, २।८६) १ आदित्य-
भेद । वारह आदित्योंमेंसे ग्यारहवें आदित्य । ये आँखके
अधिष्ठातृ देवता माने जाते हैं । विराट् पुरुषकी दो
आँखोंके डिम्ब प्रथक, प्रथक, उत्पन्न होने पर लोकपाल
त्वष्टा (ग्यारहवें आदित्य) अपने अंगसे चक्षुके साथ अधि-
देवता स्वरूप उसमें प्रविष्ट हो गये । उसी चक्षुसे जीवका
ज्ञान हुआ करता है । त्वच्छति तनू करोति, काष्ठादिकं
शिल्पकार्यं त्वात्त्वञ्च—लृच् । २ विश्वकर्मा । विष्णु-
पुराणके अनुसार ये सूर्यके सात सारथियोंमेंसे एक हैं ।
३ विश्वकर्माके पुत्रविशेष, विश्वकर्माके एक पुत्रका
नाम । ४ प्रजापतिविशेष, एक प्रजापतिका नाम । ५

महादेव, शिव । ६ वर्णसङ्करजातिविशेष, सूत्रधार
नामकी वर्णसंकरजाति । ७ चित्रा नक्षत्रके अधिष्ठत्री
देवताका नाम । ८ तक्षककर्ता, बटई । ९ पशु और
मनुष्यादिके गर्भके अभ्यन्तरस्थित शतोरूप विभाग-
कारक देवभेद, एक वैदिक देवता । ये पशुओं और
मनुष्योंके गर्भमें वीर्यका विभाग करनेवाले माने जाते
हैं । १० ताम्र, ताँबा ।

त्वष्ट्रमत् (सं० त्रि०) त्वष्ट्रं अस्त्वर्थं मतुप । वीर्याधिष्ठातृ
देवभेदयुक्त, एक देवता जो वीर्यके अधिष्ठातृ देवता
माने जाते हैं ।

त्वाचप्रत्यञ्च (सं० क्लो०) त्वाचं त्वच-सम्बन्धि प्रत्यञ्च ।
स्वर्ग ज्ञान, क्लृ कर किमो चोजका अनुभव करना ।
त्वादत्त (सं० त्रि०) त्वया दत्तः वेदे साधुः । जो तुमसे
दिया गया हो ।

त्वादूत (सं० त्रि०) त्वदूतो वेपानं । तुम जिसके दूत हो ।
त्वादृग् (सं० त्रि०) त्वमिव दृश्यते युष्मद् दृग्ः किन् ।
तुम्हारे जैसे, तुम सरोता ।

त्वादृग् (सं० त्रि०) त्वमिव दृश्यतेऽसौ युष्मद् दृग्-कञ्
(तदादिपुद्गो रनालोचने कंच । पा ३।२।६०) तुम्हारे सदृश,
तुम्हारे जैसे ।

त्वायत् (सं० त्रि०) त्वामात्मन इच्छति, सुप आत्मनः
क्यच् क्यजन्ताङ्गटः शटि । आत्माभिलाषी, जो अपने
इज्जत वा प्रतिष्ठा वाहता हो ।

त्वायु (सं० त्रि०) त्वाम्बन इच्छति क्यच् युष्मदस्त्वदा-
देशे क्वाच्छन्दसि इति उ । जो तुम्हें चाहता हो ।

त्वावसु (सं० पु०) त्वं वसु व्यापकोऽस्य त्वादेशः वेटे
प्रयो० साधुः । तुमसे व्याप ।

त्वावृध (सं० पु०) त्वया वर्धितः । तुमसे बढ़ाया हुआ ।
त्वाष्टो (सं० स्त्रो०) दुर्गा ।

त्वाष्ट्र (सं० त्रि०) त्वष्टा देवता अस्य अण् । १ त्वष्टा
देवताके उद्देशसे लाया हुआ घी इत्यादि । २ वृत्तासुर ।
३ त्वष्टा या विश्वकर्माका बनाया हुआ इधियार, वज्र ।
४ चित्रा नक्षत्र । ५ विश्वरूप ।

त्वाष्ट्रो (सं० स्त्रो०) त्वष्टा अधिष्ठातृ देवता अस्य, त्वष्ट्र-
अण् लोपः । १ चित्रा नक्षत्र । २ विश्वकर्माकी कन्या
संज्ञाका एक नाम । यह सूर्यकी व्याही थी और इसके
गर्भसे अश्विनीकुमारका जन्म हुआ था ।

स्विय (स० स्त्री०) स्विय दीर्घी सम्प्रदादि त्वादिस्विय ।
 १ शोभा, प्रभा, चमक । २ भाव । ३ व्यवसाय । ४
 त्रिजोषा, अवचो दृष्ट्या । (त्रि०) १ दोष्यमान चमकता
 दृष्या ।
 स्विया (स० स्त्री०) स्विय् इत्वात् वा टाय । दोषि, प्रभा,
 चमक दमक ।
 स्वियामोघ (स० पु०) स्विया ईमा चतुष्चमाध । १
 सूर्य । २ पर्व इव आकृष्टा पर्व ।
 स्वियाम्यति (स० पु०) स्विया पति, पठगा चतुष्च ।
 १ सूर्य । २ पर्व इव ।
 स्वियि (स० स्त्री०) स्विय दोषी स्विय् इत् मच स्विय्
 (इत्प्रात् क्ति । इष् ४।११५) किरक ।
 स्वियित (स० त्रि०) स्विय् जाताऽप्य तारकादि इतप ।
 क्वकित, चमकता दृष्या ।
 स्वियोमत् (स० त्रि०) स्वियि स्वियातेऽप्य स्वियि मत्प
 वेदे दीष । दोषिमत् चमकता दृष्या ।
 स्विये (स० त्रि०) स्विय पचाद्यच् । दीप्त, अवमगता
 दृष्या ।
 स्वियेय (स० त्रि०) स्वियेयच् । दीप्त, चमकता दृष्या ।
 स्वियेयन् (स० त्रि०) स्विये दीप्त यन् यच् । दीप्यमान
 धर्मोत्सव, जिसका वय अवमगता हो ।

स्वियन् (स० त्रि०) स्वियेय यच् । मदीप्त यन्
 स्वियेय ताकत हो ।
 स्वियप्रतोक् (स० त्रि०) स्विय प्रतोक् यत् । दीप्तसु
 जिसका सुँड बहुत चमकता हो ।
 स्वियरय (स० त्रि०) स्विय रय यत् । दोतरय
 चमकीला रय ।
 स्वियस (स० स्त्री०) स्विय् पसुन् । दीप्त प्रकाशमान ।
 स्वियस इय (स० त्रि०) स्विय स इत्क यच् । दीप्त
 म इय ।
 स्वियो (स० स्त्री०) दीप्ता ।
 स्वियै (स० पञ्च०) १ स्वियेय । २ वितक ।
 स्वियैरको (स० पु०) कृषिक ।
 स्वियोत (स० त्रि०) स्विया क्त वेदे मातुः । तुमने वचित,
 जो तुमसे बचाया गया हो ।
 स्वियत् (स० पु०) स्वियति क्त्वोत्थ गच्छतिस्वर उ । १
 कृष्णसुति, तनवाको मूठ । इसका पर्याय—सुहिताक
 तन्व है । २ सर्प सौंय ।
 स्वियारि (स० त्रि०) स्वियरयुक्, बहुत स्वियोत् ।
 स्वियार्य (स० त्रि०) स्वियो तद्युक्ते निपुण । पचाद्यो
 क्तन् तत् पचाद्ये यच् । पचिभुङ्गनिपुण, जो तनवार
 चमकीले निपुण हो ।

थ

थ—वकार, स स्तत धोर हिन्दो वच माताका सजइवां
 व्यन्तवर्षे धोर तवर्षका मूरा पञ्जर । इसका उच्चारण-
 रच-स्थान दन्तमूल है । दन्तमूलके द्वारा जिह्वाके
 पथलागका स्थाने होमि पर इस वचका उच्चारण होता है ।
 इस ध्वनिपर प्रयत्नके कारण इसको वर्षन्प्यता होती
 है । इसमें विचार ध्याय, चयोप धोर महाभाष वाङ्म
 प्रयत्न होते हैं ।
 पर्याय—त्रिभामो, महागन्धि पन्थिपाइ भवान्क,
 यिसौ, गिरसिन्न दन्तो, मरुहाकी मिकोच्च कृष्ण
 मुहि बिजबां, दर्शिकाया, पन्थि पमर वरदा भोगदा,
 क्षिय वामकहा, पन्थ, पन्थ, सोस चव्यपिनो, इत् ।

मुञ्ज शरधन्त, विदारय । (वर्णानिवाच) इसका ध्वनि
 इस प्रकार है—“थ” ।
 इससे ध्यानके मन्त्र—
 “नीकवना विववना पञ्जुर्ना वरदा वरदा ।
 पीनवकारिचानां वरा तिष्ठिवाविचीम् ॥
 एव ध्यात्वा वधरन्तु तन्मन्त्र इच्छया जपेत् ।
 व चरेवम वरं व चरावम वरा ॥
 उक्तकारितवर्षकाय वकारं प्रवचाम् इम् ॥” (वर्ण-शास्त्रम्)
 मातृकाव्यारम्भे—वाम लहा पर वकारका ध्याय
 किया जाता है ।
 इसका व्यन्त—कुञ्जो, मोचकपिनो, त्रियिदि

विविन्दु तंचप्राणमय और सर्वदा पञ्चप्राणमयवर्ण एवं नवोदित सूर्यके समान है। (कामधेनुतन्त्र)

काव्याटिमें थकारका प्रथम प्रयोग होनेसे फल युक्त होता है। ("यस्तु युद्धम्" वृत्तान्ना० टी०)

य (स० पु०) युद्ध-संघर्षो ड। १ पर्वत, पहाड़। २ व्याधिभेद, एक रोग। ३ भय। ४ भक्षण, आहार। ५ रक्षण। ६ मङ्गल। ७ साध्वस। (त्रि०) ८ भयचक। यंका (हि० पु०) विलसुकता।

यंव (हि० पु०) खंभा। २ सहारा। ३ राजपूतोंका एक भेद।

यंबो (हि० स्त्री०) १ खड़ो लकड़ो। २ सहारकी बल्लो, चाँड, यूनी।

यंभ (हि० पु०) खंभा।

यंभन (हि० पु०) १ स्तम्भन, रुकावट, ठहराव। २ तन्त्रके छः प्रयोगोंमें एक। ३ एक प्रकारकी दवा जो शरीरमें निकली हुई वस्तु जैसे मल मूत्र शुक्र इत्यादि को रोकें रखे।

यक (हि० पु०) याक देखो।

यकना (हि० क्ति०) १ शिथिल होना, फनान्त होना। २ ऊब जाना, हैरान ही जाना। ३ सुध होना, लुभाना। ४ बुढ़ापेसे अशक्त होना। ५ शिथिल पड़ जाना, चलाता न रहना, घौमा पड़ जाना।

यकरो (हि० स्त्री०) खुसको कुँचो जिससे फ्लियाँ बाल भाड़ती हैं।

यकान (हि० स्त्री०) शिथिलता, यकावट।

यकाना (हि० क्ति०) शिथिल करना, हराना।

यकामांदां (हि० वि०) अमित, मिडनत करते करते अशक्त।

यकार (स० पु०) य स्वरूपे कारः। 'य' अक्षर।

यकाराटि (स० पु०) यकार घाटिर्यस्य। जिसके प्रारम्भमें य अक्षर हो।

यकारान्त (स० लि०) यकारोऽन्ते यस्य। जिसके अन्तमें य हो।

यकाव (हि० पु०) यकावट।

यकावट (हि० स्त्री०) शिथिलता।

यकावट (हि० स्त्री०) यकावट देखो।

यकित (हि० वि०) १ अन्त, शिथिल, थका हुआ। २ सुध, मोहित।

यकिया (स० स्त्री०) १ यह मोटो तह जो किमो गाटो चोजकी जम जानसे हो जाती है। २ गली हुई धातुका जमा हुआ लौटा।

यकौहां (हि० वि०) शिथिल, कुछ थका हुआ।

यक्ता (हि० पु०) १ गनो हुई धातुका जमा हुआ कतरा। २ किसो गाटो चोजकी मोटो तह, जमा हुआ कतरा।

यगर—निम्न ब्रह्मके तोड़, जिलेके अन्तर्गत एक नगर। इसके मध्य होकर बहुतेरे गिरगैल गये हैं और कहीं कहीं तरह तरहके वृक्ष तथा लतासे परिपूर्ण क्षेत्र देखे जाते हैं।

यगित (हि० वि०) १ ठहरा हुआ, रुका हुआ। २ शिथिल, ढोला। ३ मन्द, सुस्त।

यडा (हि० पु०) १ बैठनेका स्थान, बैठक। २ दूकानकी गद्दो।

यतिया—युक्तप्रदेशके फर्रुखाबाद जिलेके अन्तर्गत तिरवा नगरसे ३॥ कोसको दूरी पर अवस्थित एक नगर। पहले यहाँ बहुत मनुष्योंका वास था। अब भी यहाँ बाजार आदि हैं। बहुतसे सड़के इस नगरमें आ मिली हैं। यहाँ गो घादिका व्यवसाय होता है। नगरमें पुलिस, डाकघर, अंगरेजो विद्यालय, सराय प्रभृति हैं। नगरसे दक्षिण एक जंघी जमीनके ऊपर दुर्गका विह्व देवनेमें आता है। पहले उस दुर्गमें तान आमके बबेला राजपूत रहते थे।

१८५७ ई०में यहाँके दुर्गपति बघेला सर्दार मो विद्रोहो हुए थे। विद्रोहके बाद वे हीयान्तर भेजे गये और उनका किला तहस नहस कर डाला गया।

यतुन—निम्न ब्रह्मके तेनसेरिम विभागका एक जिला। यह अक्षा० १६°२८'से १७°५१'उ० और देशा० ८६°३८'से ८८°२०'पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ५०७८ वर्ग मील है। इसके उत्तरमें सलवीन और यौनगौन नदियोंका सङ्गमस्थान, पूर्वमें यौनगौन नदी ७० मील तक प्रवाहित है तथा दक्षिण-पश्चिममें मत्तवानकी खाड़ी और सोतंग नदीका मुहाना है। जिला चारों ओर पर्वत मालासे घिरा हुआ है।

जिसेको प्रधान मन्त्री बोलमोन है का यमद्वष्ट जिसे
से निम्नतः कर २०० मोन तक बहती हुई जिसेके उत्तर
सप्तमोन मन्त्री आ मिनो है। इसका मित्रा कुलेन्द्रके,
मन्त्री, गौड़ विष्णोम और मित्तका नामक कई एक
मन्त्रियों जिसेके चारों ओर प्रभावित है। यहाँके अङ्गनमें
हाथी, शीता, बाघ, हरिय, घुंघर, भासू और तरु
तरुके पक्षी पाये जाते हैं।

यह जिना पक्षी मोन का लेशकाके अधिकारमें का।
पात्र कस मो इयके कुछ पक्ष यहाँ कीर्तिके अधिकारमें
है। १८२० ई०में बरमाको दूसरो मन्त्रीमें यह पक्ष
इन्तके उत्पन्नमें पाया।

इसमें दो महर और ११०१ ग्राम लगते हैं। जोक
पक्षा प्रायः १३१११० है। जैन जातिके लोगको
स स्या सबसे अधिक है। बहानकी अमोन बहुत उपजाऊ
है। बालको जिसेको प्रधान उपज है। यहाँके विद्यापती
कापड़े, रसम, चांदो, धान सालको लकड़ो और भूमिके
पत्थरको उपजको होता है। १८८३ ई०से यहाँ इमगाको
मो चन्मने लगी है।

सम्बन्ध जिना तीन उपविभागोंमें विभक्त है पहला
पान उपविभाग, जो होनप्रमो मन्त्रीके पूर्वमें सागने
पड़ता है, दूसरा कौकतो और मोसरा धनुन उपविभाग
है। त्रिद्विष्ट जत्र और मरुकारो अत्रने विचारकार्य
सम्पादन होता है। यहाँको प्राय १६ लाख रुपयेमें
परिचर को है।

धनुन जिना विधाकितमें बहुत पोडा पड़। कृषा
के जिन्ने इसको उत्पत्ति यह धारे धारे होती आ रही
है। पात्रकस यहाँ केवल ११ किण्टरो २११ प्राइमरी
और ३२८ पन्निमहो म्पुन है। विद्याविभागमें जाति
२३८००० व० स्थप होती है।

१ अत्र जिसेका एक उपविभाग। इसमें धनुन और
पोडा नामक दो महर लगते हैं।

२ उपतोत्र जिसेका एक प्राचीन महर। यह पक्षा
१६ २३० और देवा० ८८ २२ पु०में पर्यन्त है।
जोकर म्या प्राय १३१३१ है। यमो यहाँकी पूर्व मन्त्रि
जातो रहो। तो मन्त्र इतिहासमें यह स्थान बहुत विख्यात
है। कई एक इतिहासकार कहता है, कि १०वीं

शताब्दीमें यह नगर स्थापित हुआ है और बहुत काम
तक यहाँ काशीन राज्यको राजधानी था। १०वीं
शताब्दीमें ब्रह्मराज धनवरात्मने इस पर अधिकार किया।
ब्रह्मपुराणमें धनुनके अधिकार करनेका विषय विस्तार
पूर्वमें लिखा है। इस नगरमें पञ्च बौद्ध ऐनामय दिग्दि
जाते हैं, जिन्ने अधिकार्य मन्त्रावस्थांमें पड़े हैं।

बनो (वि० प्सा०) रागि टेर पुष्प।

यन (वि० पु०) योपबोका स्नान।

यनकुने (वि० पु०) एक प्रकारका बोझी पक्षी। यह
मोन रहन जिन्ने लमकीना होता है और बोझी मकोदो
पाता है।

यनमन (वि० पु०) बरमा इतर और मन्त्रारमें होने
वाला एक बड़ा पिक। इसको मन्त्रको बहूत मन्त्रकून होती
है और इमारत बनानिके काममें पातो है।

यनट (वि० प्सी०) यह प्सी जिसेके नाममें दूध नहीं
निष्कमता हो।

यनो (वि० प्सी०) १ बकारियोंके गलेके नीचे लटकती हुई
दो बोनियां जिन्का आकार स्तनका होता है, गन्धना।
२ अन्के पाकारका निखना कृषा मोमका पादुर जो
जाबियोंके आनके पास होता है। इस तरुका नामो
ऐको समझा जाता है। ३ बह भटकता कृषा मांस जो
चोड़की किन्दिन्द्रियमें रहता है और जिम्का आकार उल
ना होता है। चोड़में यह एक एक समझा जाता है।

यनेका (वि० पु०) १ प्तिर्षिके पान पर होनेवाला एक
प्रकारका फोड़ा। इसमें सूजन और पोड़ा होती है
तथा बाय मो हो जाता है। २ एक प्रकारका फोड़ा।
यह तुबरेसेको जानिका होता और गाय भंस आदि
यनमें उह मार देता है जिम्में दूध सृष्ट पाता है।

यनेत (वि० पु०) १ पामका प्रकान गाँवका सुबिधा
= बमोदारकी ओरने गाँवका लगान धनुन करमें
वाला मनुष्य।

यपका (वि० जि०) १ यिचयय जिमके मरोर पर
धारे होने का मारना, बच्चेकी लुप नेक लिए रने धारे
धारे डोकना। २ डाटन बंधना, टम निनामा देना।
३ जिमोका गुप्ता डकटा करना जाला करना।

यपकी (वि० प्सी०) १ बह पावात जो प्यारने जिमके

शरीर पर हथेली द्वारा धीरे धीरे पहुँचाया जाता है।
२ हाथसे अहिस्ता अहिस्ता ठोकनेकी क्रिया। ३ वह
कड़ा आघात जो हाथके भटकेसे पहुँचाया जाता है।
४ वह सुंगरो जिमसे जमोन पोट कर चौरस को जाती
है। ५ थापी। ६ मोटे मोटे कपड़े पीटनेका धोत्रोका
सुंगरा।

यपहो (हि० स्त्री०) करतलीका परस्पर आघात दोनों
फैलो हुई हथेलियोंको एक दूसरे पर मारनेकी क्रिया।
२ तालो बजनेकी आवाज। ३ जोरा, नमक और
हींग मिलो हुई वेपनकी पूरी।

यपथपी (हि० क्रि०) थपकी देखो।

यपना (हि० क्रि०) १ स्थापित होना, ठहरना। २ प्रति-
हित होना। ३ धीरे धीरे पीटना या ठोकना।

यपना (हि० पु०) १ किमो धातुकी पीटनेका पत्थर,
लकड़ो आटिका औजार। २ थापी।

यपुआ (हि० पु०) चोडा, चौरस और चिपटा छाजनका
खण्ड। खुरोलमें प्रायः यपुआ और नरिया दोनोंका
मेल होता है।

यपेड़ा (हि० पु०) १ वह आघात जो हथेलीसे पहुँचाया
जाता है, थप्पड़। २ धक्का, टक्कर, ठोकर।

यप्यड (हि० पु०) १ तमाचा, चपेट। २ धक्का, टक्कर
३ टाद या फु मियोंका छत्ता, चकत्ता।

यप्पा (हि० पु०) एक प्रकारका जहाज।

यम (हि० पु०) १ स्तम्भ, खुम्भा, धूनो। २ केलिका पेड़।
३ देवोको चढ़ानेकी छोटी छोटी पुरिया और हलुआ।

यमकारो (हि० वि०) स्तम्भ करनेवाला, रोकनेवाला।

यमना (हि० क्रि०) १ रुकाने करना। २ किमो चोज-
का लारी न रहना, बन्द होना। ३ धैर्य धरना-
सत्र करना।

थर (हि० स्त्री०) १ तह, परत। (पु०) २ वाघको माद।

थर और पार्कर—बम्बईके सिन्ध प्रदेशका एक जिला। यह
अक्षां २४° १३' से २६° १५' उ० और देशां ६८° ५१' से
७१° ८' पू०में अवस्थित है। इसके उत्तरमें खैरपुर राज्य,
पूर्वमें जयसलमेर, मचानो, जोधपुर और पालनपुर राज्य,
दक्षिणमें कच्छकी लवणाक्त दलदलभूमि और पश्चिममें
हैदराबाद जिला है। भूपरिमाण १३८४१ वर्ग मील है।
जिलेका सदर अमरकोट है।

थर और पार्कर जिलेकी दो भागोंमें विभक्त कर
सकते हैं—एक भाग 'पट' वा समतल भूभाग और दूसरा
'थर' वा मरुभूमि है। पट भूभाग समुद्रसे ५० वा १००
फुट ऊँचा है। इसके मध्य भो कहीं कहीं २०० फुट
ऊँचा बालूका पहाड़ विद्यमान है। किन्तु थरमें उससे
ऊँचा बालूका पहाड़ एक भो नहीं देखा जाता।
कुछ दिन पहले यह भूभाग मरुभूमिवा दीखता था,
जलकी सुविधा भो व भो नहीं थी। लेकिन अभी रोड़ी
नामक खाड़ीके हो जानेसे जलका कष्ट जाता रहा। इस
भूभागमें पहलेसे नारा और मिथी नामकी दो खाडियाँ
बहती आ रही हैं और इनसे चौर तथा थरथाल नामके
दो कृत्रिम स्रोत निकल कर प्रायः ८० मील तक बह
गये हैं।

थर वा मरुमय अंशमें एक भो नदी वा खाड़ी नहीं
है। इसके दक्षिण-पूर्वमें पार्कर नामक भूभाग है जो
थरसे बिलकुल विभिन्न है। यहाँ कई एक छोटे छोटे
पहाड़ देखे जाते हैं जिनको ऊँचाई ३५० फुटमें
अधिक की नहीं होगी। इसका पूर्वभाग उतना
ऊँचा नहीं है और जो कुछ है भो वह अब धीरे धीरे
समतलक्षेत्रमें परिणत होता जा रहा है।

जिलेमें कई जगह सूखी नदीका गर्भ रह गया है
जो देखनेसे ही मालूम पड़ता है, कि एक समय सिन्धु
नदी अथवा उसकी शाखा प्रशाखाके स्रोत इसी हो कर
बहते थे। अभी जहाँ मरुभूमि है, पहले उसी जगह
काफी पनाज उपजते थे। बहुतसे ईंटें और पात्रादि
जो वहाँ पाये गये हैं उनसे जाना जाता है, कि एक
समय वहाँ मनुष्योंका वास था।

पुरातत्व—पार्करके भूभागमें बहुतसे प्राचीन देवा-
लयोंके भग्नावशेष देखे जाते हैं। विरावेसे १४ मील
उत्तर-पश्चिममें गोर्वा नामक एक प्राचीन और प्रसिद्ध
जैन देवमन्दिर है। यहाँ की जिनमूर्त्ति देखनेके
लिये दूर दूर दृष्टीसे जैन लोग आते हैं। इसके निकट
पारा नगर नामक एक प्राचीन नगरका भग्नावशेष
पड़ा है जिसका आयतन प्रायः ६ मील होगा। धर्म-
सिंह नामक किसी व्यक्तिने यह नगर स्थापन किया था।
पहले यह विशेष सम्बुद्धिशास्त्री और बहुजनकोष था।

१६वीं शताब्दीमें इसको चमकाने की रणनीति थी। यहाँके प्राचीन मन्म देवानचका मिल्मने पुच्छ दंष्ट्र कर चमकत होना पड़ता है। बिमानगरमें दक्षिण नारायणजीके ऊपर रताकोट नामक एक विश्वस्त नगर देखा जाता है। प्रवाद है कि १००० वर्ष पहले रता नामक किसी मनुष्यने यह नगर स्थापन किया। 'हा' सो वर्ष पहलेमें इसको चमकाना मोचनोच हो गई है। त्रिनेत्रि नामा स्थानमें तनपुर मीरीके समयमें बनाये हुए धर्मिक दुर्ग देखनेमें पाते हैं, जिनमेंमें इस नामकोट, मिति और विद्यालय प्रभाव हैं। परमो से सब सम्भावनामें पड़े हैं।

इतिहास—त्रिनेत्रि प्राचीन इतिहास बहुत कम जाना जाता है। यहकि सोदा राजपूतोंका कहरना है, कि लक्ष्मणियोंमें उन लोगोंके पूर्वपुत्र परमार सोदा नाम करते थे। १२१६ ई०में ये मिथुपदेशको पाये और यहाँके शासनकर्त्ताओंको हरा कर पाप राजा बन बैठे। इनके पक्षमें यहाँ सुमरागच राज्य करते थे। कोई कोई कहते हैं कि १६वीं शताब्दीमें सुमरागच सोदा राजपूतोंमें यराम्म हुए थे। १०२० ई०में ये जो कहकोरोंकी पक्षों मता श्रीकार करनेकी आज हुए। इस समय कुछ ज्ञान तक यह जिज्ञा मिथुराज्यके शासनकोषण रहा। कल कोरीके पक्षगतनके बाट यह जिज्ञा तनपुर मीरीके पक्ष करते पाया। ये लोग लपकका ६ भाग प्रदाने वसूल करते थे। उनके समयमें यहाँ कई अवध दुर्गादि बनाये गये।

उद्युत दिनों तक हर और पाकर जिज्ञा कहतेकीका पञ्चा कह कर प्रमिद था। ये लोग कच्छ और निरुट कर्त्ता जिज्ञाओंमें लट मार मरति थे।

१८३६ ई०में जब मिथुपदेश उदितराज्यके चम्पसुंज हुआ तब १४ जिसेके लोकोने कच्छक शासनकोषण पदनेको इच्छा की। इसके अनुसार १८३७ ई०में बनि वारी, टिप्ला, मिति, इस नामकोट, मिहका, बिरावा विद्यापुर, मोत्रावर और पाकर कच्छमें मिलाये गये एक परमारकोट, महरा और नरार्थ पार्थि कई एक भूभाग हैदराबाद बनकरीके पक्षों हुए।

माहराज और हिन्दू विवाहके कश्चमें पटेल का प्रभाव लोम लो कश्चर्च पर्यं स यह करते थे, वह लडा

दिया गया और नरार्थको पञ्च कश्चकार करमने लो नियत किया गया। इन सब कारकानि सोनाराजपूत लीय ताक गये और बिदो हो जो लडे। १८४८ ई०में विदोह कुछ कुछ शांत हुआ। गवर्मेण्ट उन लोगोंके चसतोप-के कारक जाननेको इच्छुय हुई। इस पर उन्होंने कक्षा हम लोम करारक बनिदोके विवाहमें करमण्य २६३ रुपये और कश्चके समय एक रूपया लीम करनेको इच्छा करते हैं क्योंकि यह नियम वसुत विनामे कक्षा था कक्षा है। हम लोम लो मिन्कर कमीन लोम करती हैं, वह बहुत कम हो गई हैं और कुछ हम लोमनि लीन लो लो मई हैं, वह लीम लोटा दो जाय। विर्येव कर दुर्मिचके समय हम लोकोके कश्चहायं पक्षीम भा गम्पादि पर इच्छु ल कमाया जाय। हम लोम बहुत दिनोंके लो कश्चकशासनमें जब कमी बनिदोके घर पड़ ल जाति लो विना कुछ दिये लो मोत्रम करते और चनाज पति था रहु हैं। हम लोको लो यह प्रया लो लो लो बनो रहु। इसके कक्षाका परमारकोटने लो इच्छु वसुल होता है, लसका कुछ पय हम लोकीको ली मिले।

उन लोको का यह पायेदण सुन कर इटिय गवर्मेण्टने इस प्रकारका बन्दोबस्त कर दिया—

करारक बनिदोके विवाहमें सोदाराजपूतगाय कश्चक्य सेक ~ ६) व०के दिनारभये (११०००) व०का वार्षिक सूद पावेगे, बहुतमो मिन्कर कमीन लो भोग कर सकेगे और परमारकोटने लो इच्छु वसुल होया लसका कुछ भाग लक्षे लो दिया जायगा।

१८२० ई०में सोदाके अमो टारके साच परमारकोट और नारा विमानका एक प्रकारका बन्दोबस्त लो गया। पोके १८२४ ई०में मिथु पदेशके कश्चिन्कर मर बाट ल मिथुरने यहाँ दृष्ट माला बन्दोबस्त कायम किया।

१८२६ ई०में इस जिसेका मरमय भाग और पाकर पुना मिथुपदेशके साच मिला दिये गये।

१८२८ ई०में बहुतमो लोकोमैन्च गनाच जाच मिन्क कर बिदो हो लो मई। पीके हैदराबादके सिनामि का कर लक्षे दमन किया। १८६८ ई०में विवाहानुसार रानाको १४ वर्ष और लक्षे मन्कोको १० वर्षका निर्भ-सम लच्छु मिला। लकोके निर्भिम कोरे दुर्घटना न घटी।

यहाँकी लोकसंख्या प्रायः ३६३८८४ है। इसमेंसे सेकडे ५३ मुसलमान, २१ हिन्दू और अहिन्दू असभ्य जाति प्रायः सैकडे २३ है। इसके अलावा यहाँ जैन, सिख, ईसाई, यज़्दी और ब्राह्मण भी हैं। वाजरा और दूध ही यहाँकी लोगोंको प्रधान उपजीविका है। धान, ज्वार और टलहनकी फसल भी कम नहीं लगती।

वाणिज्य—थर और पाकर्सि प्रधानतः तरह तरहकी अनाज, पशु, घो, ऊँट, गाध, भेंड़े, चमड़े, मकानो, नमक आदिकी रफ्तानो और रुई, धातु, सूखा फल, रंग, कपड़ा, रेशम, गुड और तमाकूकी अमदनी होती है। यहाँ ऊनी और सूनी कपड़े तैयार होते हैं।

शासन—राजस्व और विचारारटिका काम एक डिपटो कमिश्नरके हाथमें है। इनके ऊपर जज और मजिस्ट्रेट इन दोनोंका अधिकार है। इनके अधीन एक डिपटो कलेक्टर और एक सुधितयार हैं।

विद्यास्थितिमें यह जिला बहुत गिरा हुआ है। अभी यहाँ कुल १६४ स्कूल हैं। अमरकोट टेकनिकल स्कूलमें वट्टे और लोहारका काम सिखाया जाता है। विद्या-विभागमें वार्षिक ३४००० रुपये खर्च होते हैं। इसके सिवा यहाँ चिकित्सालय भी है।

थरकाना (हि० क्रि०) भयसे काँपना ।

थरथर (हि० स्त्री०) १ भगादिनेतु कम्पन, डरसे काँपनेकी सुद्रा ।

थरथर-काँपनी (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी छोटी चिड़िया। जब यह बैठती है तो काँपती हुई मालूम पड़ती है ।

थरथराना (हि० क्रि०) १ भयसे काँपना । २ काँपना ।

थरथराहट (हि० स्त्री०) डरसे उत्पन्न काँपकी पी ।

थरथरी (हि० स्त्री०) थरथराहट देखो ।

थरना (हि० क्रि०) १ हथौड़ी आदिसे धातु पर आघात करना । (पु०) २ पत्तीको नकाशो बनानेका सुनारोंका औजार ।

थरवटो—निम्नब्रह्मके अन्तर्गत पेरूविभागका एक जिला । यह अक्षा० १७' ३१' से १८' ४०' ८०' और देशा० ८५' १५' से ८६' १०' पूर्वमें अवस्थित है। भूपरिमाण २८५१ वर्ग मील है। इसके उत्तरमें प्रोम जिला, पूर्वमें पेरूयोम-

गिरि, दक्षिणमें इन्धवटो और पश्चिममें इरावती नदी है। इसका प्रधान सदर थरवटो है। सदरके समोप ही कर इरावती-ष्टेट-रेलवे गई है।

यहाँको इरावती और नितं नदियोंकी अववाटिका और पेरूयोम पहाडका प्राकृतिक दृश्य, बहुत मनोहर है; प्रधान शैलसङ्घ वरवसेकन और क्यौक्-त-द २००० फुट ऊँचे हैं। शैलमालाके मध्य क्यौक्-त-द प्रयात् शैलसेतु नामक एक विचित्र पहाड है जो ताशावकी ऊपरमें चारों ओर विस्तृत है। यह सेतुके जैसा देखनेमें लगता है, इसीसे इसका नाम शैलसेतु पड़ा है ।

लोकसंख्या प्रायः ३८५५७० है, जिनमेंसे वीहोंकी संख्या सबसे अधिक है। अनेक हिन्दूधर्मावलम्बी हिन्दु स्थानी, बङ्गाली, उडिया तेलगू और तामिल लोग भी यहाँ आकर बस गये हैं। इस जिलेमें ५ शहर और १८१ ग्राम लगते हैं। यहाँकी जमीन उर्वरा है, अतः तरह तरहको काफी फसल उत्पन्न होती है। इस जिलेका इतिहास हेनजदा जिलेके साथ संश्लिष्ट है। थरहरी (हि० स्त्री०) वह कपक पी जो डरके कारण हुई हो ।

थराड़—थराड़ और मोरवाड़ा राज्यका एक प्रधान नगर । यह अक्षा० २४' २१' १०" ८०' और देशा० ७१' ३७' पूर्वमें अवस्थित है। यहाँ थराड़के राजा वास करते हैं।

थराड़ और मोरवाड़ा—बम्बई प्रदेशके पालनपुर एजन्सीकी अधीन एक देशीय राज्य । यह अक्षा० २४' १०' ८०' और देशा० ७२' २८' पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १७७८८ है। यह राज्य उत्तर-दक्षिणमें प्रायः १२३ कोस तक विस्तृत है। इसके उत्तरमें सारवाड़ जिला, पूर्वमें पालनपुरराज्य, दक्षिणमें भावर और तेलवारा-राज्य है। राज्यकी अधिकांश जमीन अनुर्वर और बालुकामय है, सिर्फ ग्रामीणिके निकट कुछ कुछ कालोसदी पाई जाती है। यहाँ ५०से ८० हाथ जमीन खेदने पर पानो मिलता है। सुतराँ जलकी विशेष सुविधा नहीं है। इसी कारण फसल अच्छी नहीं लगती। यहाँ वैशाख और ज्येष्ठ मासमें अषाढ गरमी पड़ती है। पालोसे

भाष्यही मन्त्र एक पक्षी मङ्गल शब्दके मध्य ही कर मर्त है।

यहाँ बहुत दिनोंके कथिया राजपूतगण राज्य करते थे। १८६८ ई०में सोमा घाटि मुठेरोके उत्पातमें तद्द या कर यहाँके मामलाराजने छिटिय सबमेंपुङ्खी मरच ली थी।

राज्यके भूतपूर्व सरदारका नाम ठाडूर खिडरमि च बा। राजा यराडू नामक नगरमें रहते थीर राजजायं ल्यय बनाते हैं।

राज्यकी धाय ८५०००) ६० है। इन्को ३० परया रोको थीर ३० पदानिच मीया है। राजाके मरने पर उनके बड़े लड़के को उत्तराधिकारी होते है।

परि (हि० स्त्री०) बाघ घाटिकी मांढ, पुर।

परिया (हि० स्त्री०) नाली देवी।

परवट (हि० पु०) प्राइपीको बस्ती।

परामोडर (प० पु०) बड़ वन्य त्रिसने सरदी मरमो नापो जाती है। वाममान देवे।

पराना (हि० स्त्री०) मयवे कापना, दहनना।

पल (हि० पु०) १ खान जगह, ठिडाना। २ एक स्थान, मूखी बरती। ३ बलका मामे। ४ ब्रचमण्डल, पौडूका नाम थीर सुत्रा दूपा घेरा। ५ चबकोई बरा बरका बाटरीका गोल मात्र। यह बर्षाको ठोपो पादि पर ठीका जाता है। ६ रेत पड़ी हुई स्थान, रैमिस्थान, मूह। ७ बाघकी मांढ। ८ खैची बरती टोना।

पलबना (हि० स्त्री०) १ भोज पड़नेके कारण करर नीचे दिवना। २ बल वल करना, मोटाईके कारण मरीरका मान दिवना।

पलवर (हि० पु०) बड़ जोड जो प्यो पर रहते है।

पलवारो (हि० वि०) भूमि पर चलनेवाला।

पलवण (हि० वि०) दिवना दूपा।

पलवणाला (हि० स्त्री०) मोटाईके कारण मरीरया मान दिवना।

पलवड़ा (हि० पु०) बड़ कमज वहाँ गाव या जहाज या कर उहरना है, गाव या जहाज चलनेका घाट।

पलवारी (हि० पु०) खड्गारीको एक बीजो। इन्के से पिहने खड्गारीकी जाती रतीसे मीदानका होना लूचन करके है।

पलिया (हि० स्त्री०) पानी।

पलो (हि० स्त्री०) १ स्थान, जगह, ठिडाना। २ खैची अमीन टोना। ३ पानी अमीन। ४ बामुका मीदान रतीमी अमीन। ५ बँठनेका स्थान, बँडक। ६ असके मोथेका तल।

पलर (हि० पु०) बड़ जो मजान बनाता हो, बागीगर, राज।

पलन (हि० पु०) बड़को तोसरी बार पयने पलिके बरको बाबा।

पलना (हि० पु०) कथो महेका एक मीना। इसमें मने वई लड़कोके हिनमें परतोको लकड़ो पड़ी रहते है।

पलराना (हि० स्त्री०) १ कमजोरीके कारण पड़ीका कापना। २ कापना।

पलराना (हि० स्त्री०) मड़पाईका पता मगाना, पाइ देना। २ बिमोकी बिधा या धान्यरिब इच्छाका पता मगाना।

पलराना (हि० स्त्री०) बड़ाजकी उहराना।

परा (हि० स्त्री०) १ बड़ गुन स्थान वहाँ थीर या डाकू या कर उहरते है। २ पनुपन्याम थीर, पता। ३ गुन कपने किसी बातका पता मगाना, मेट।

परा (हि० पु०) १ बड़ मनुष्य जो थोरोका मन्त्र मीना हो या पयने पाल रहता हो। २ थोरोका भेटिया। ३ पद मनुष्य जो थोरोके मानका पता मगाना हो, जानुन। ४ थोरोके मीनका मरदार।

परागोरा (हि० स्त्री०) बनीटा काम।

पार (हि० पु०) १ पथा। २ प्यो थोड़।

पारना (हि० पु०) बिमो लगे हुए पोथिका घेरा या मूहा घाना।

पा (हि० स्त्री०) 'ई' मन्त्रका मूलबाल, वहा।

पाई (हि० वि०) १ स्थिर रहनेवाला जो बहुत दिनों तक बना रहै। (पु०) २ बँडनेका स्थान बँडक। ३ लुबण कापी। यह पद मामेमें बार बार कहा जाता है।

पाक (हि० पु०) १ वाममोना, गावको परवट। २ पृथ, रासि, ईर।

याति (हि० स्त्री०) १ स्थिरना, ठहराव ।

याती (हि० स्त्री०) वह वस्तु जो समय पर काम आनेके लिए रखी जाती है । २ धरीहर, अमानत । ३ सञ्चित धन, जमा, पूंजी ।

यान (हि० पु०) १ स्थान, जगह, ठौर । २ घोड़े या चौपाये वांधनेका स्थान । ३ निवासस्थान, डेरा । ४ मन्दिर, टेवल । ५ लिङ्गेन्द्रिय । ६ संख्या, अदृष्ट । ७ घोड़ोंके नोचे विछाई जानेकी घास । ८ कपड़े गोटे आदिका पूरा टुकड़ा ।

यान—हिन्दीके एक कवि । इन्होंने १८४८ ई०में दलेल-प्रकाश नामक ग्रन्थ बनाया । इनके पिताका नाम निहाल राय और पितामहका नाम महासिंह था । दलेल-प्रकाशमें एकादश अध्याय और कोरव साठेतीन शीकें छन्द हैं । आदिमें इन्होंने जिस छन्दका नाम आ गया है उसका लक्षण भी उसी स्थान पर कह दिया है । इसी प्रकार जहाँ किसी छन्दमें कोई अलङ्कार आ गया वहाँ उसका भी लक्षण कह दिया है । एक स्थान पर राग रागिनियोंका नाम आया, वहाँ इन्होंने उसका भी वर्णन कर दिया है । ग्रन्थके अन्तमें कुछ चित्रकविता भी की गई है । इन्होंने चित्रकाव्यके विषयमें ब्रह्माचरोंका जो एक छन्द कहा है, वह बहुत अच्छा है । आपने अनुप्रासका समावेश भी किया है, पर अधिकतासे नहीं । कुल मिला कर यानरामकी कविता सन्तोषजनक है । उदाहरणार्थ दो कविताएँ नीचे देते हैं—

(१) जै लम्बोदर शम्भुवृवन अम्भोशह-लोचन ।

चरन्ति चन्दन चंद्रमाल वंदन रुचि रोचन ॥

मुख मंजुल गंडालि गंड मंडित श्रुतिकुंडल ।

हुं दारक वर हुं द चरन वंदत अवलंब धल ॥

धर अमय गदा भं कुश धरण पिघन हरण मंगल करन ।

कवि यान मवासौ सिद्धि धर एक वंदत जै तुव धरण ॥

(२) पोथी पै दाहिनी परम हंसवाहिनी हो

पोथी पर चीना सुर मंगल मंदत है ।

आसन क बल अंग अंबर धमल मुख

चंद सौ अवल रंग नवल चढत है ॥

ऐसी मातृ भारतीकी आरती करत यान

जाको जस विधि ऐसी पंडित पवत है ।

ताकी दयावीठ लाख पाखर निआखरके

मुखवे मधुर मंजु आवर ऋत है ॥

यान—बम्बई प्रदेशके काठियावाड़ राज्यके अन्तर्गत लखतर राज्यका एक शहर । लोकसंख्या प्रायः १३२० है । बहुवानसे राजकोट तककी सड़क इसी शहर हो कर गई है । शहरमें एक दुर्ग है । यहांके विनोदेश्वरका मन्दिर, कन्दोलाका सूर्यमन्दिर और वमाङ्गोका वासुकी मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है ।

शहरके निकट कमला और प्रीतम (प्रियतम) नामकी दो पुष्करिणो हैं । प्रवाद है, कि इन दो सरोवरोंमें लक्ष्मो नारायण स्नान करते थे । दुर्गका नाम कन्दोला है, यहीं सुविख्यात सूर्यमन्दिर प्रतिष्ठित है । कन्दोला दुर्गके सामने पर्वतके ऊपर सोनगढ़ दुर्ग है । वासुकी मन्दिरके जैसा बन्दियावेली नामक स्थानमें बन्दूक नामका एक और भी सर्पमन्दिर है । जिसके निकट टाला पर्वतमाना अवस्थित है । इस पर्वतके एक अंगकी माण्डव पर्वत कहते हैं । इसके ऊपर माण्डव दुर्गका भग्नावशेष देखनेमें आता है ।

यानक (हि० पु०) १ स्थान, जगह । २ वृत्ता, फेन । ३ वह गश्ता या घेरा जिसके भीतर पौधा लगाया जाता है, थाला । ४ नगर ।

याना (हि० पु०) १ ठहरनेका स्थान, अड्डा, ठहराव । २ पुलिसकी बड़ी चौकी । यहाँ अपराधोंकी सूचना दी जाती है और कुछ सरकारी सिपाहो भी रहते हैं । ३ दाँसोंका समूह, घासकी कोठी ।

याना—बम्बई प्रदेशका एक जिला । यह अक्षा० १८°५३' से २०° २२' ८०' और देशा० ७२° ३८' से ७३° ४८' पू०में अवस्थित है । इसके उत्तरमें पोतंगो जिलेके दमन और सुगत जिला, पूर्वमें नासिकनगर, अहमदनगर और पूना ; दक्षिणमें कोलावा जिला और पश्चिममें अरवसागर है । जिलेके उत्तरी और पूर्वी भूभाग ऊँचे हैं । नासिक जिलेके अन्तर्गत ताम्रक पर्वतसे घेतरणी नदी निकली है । यह एक पवित्र नदी है । जिलेके निकट सालसेट द्वीप है ।

यहाँ छद्म एक भी नहीं है । लेकिन कुर्ला और यानामें बम्बई नगरसे ७॥ कोसकी दूरी पर वेहार नामक

स्वामिनं यच्च जन्ममन्त्रय जन्माग्रय है । त्रिसका परिमाच ४२०० बीचा है । इसका जन्म २५६६ गहरमें जाता है । तोन बाँच टे कर यच्च अज्ञायय तै यार बुपा है । इसके निबद्ध सेती वा बाचिष्ण व्ययमाय करनेकी मधर्मोप्यत्रो पोरसे मनाही है । एदने इस अज्ञाययका जन्म परि म्कार रहता था, पमी इसमें नम प्यादिसे लग जानेने कुल परान हो गया है ।

जिनसे चारों पोर पर्वत हैं । सामसेट होयके उत्तर दक्षिणमें जो पर्वतमाना है बहो सशै प्रमान है । मरील पोर दमन पर्वत भी कम ऊँचाईको नहीं है । यैतरवी नदीके उत्पत्ति स्वामसे उत्तर-दक्षिणमें बहूतसे पहाड़ हैं । इनमेंसे बिचो बिचो पहाड़के ऊपर प्राचीन सुदुग्ग मुम' देखनेमें पाते हैं जिनमेंसे माहुको पोर मरानयद् प्रसिद्ध हैं ।

पैयवाके पश्चिमत कुल राणाको लेकर यह जिन्ना संगठित हुआ है । अश्वमेध ऐतिहासिक विरम बम्बर कपर मे बेलो । इसमें ७ महर पोर १६४६ पाम मगत हैं । मोकल क्या प्राय ८११४१ है । धालसेट पोर से मम नामक क्लानके ईसाई मोम १६वीं यताम्दोमि नेप्य सिमिवर पोर लनके पनुबरोमि दोषित हुए । ये मोग मण्डारो, कुनको, कोको प्यादि जातियमि ईसाई हुए हैं । ईसाई होने पर मो ये लोम जातिसेद मानते हैं, पोर पमी ईसाई मण्डारो, ईसाई कुनवी कहण्यते हैं । इन लोमोंके पोतु'मोज ईसाई मो नाम हैं । जव हमी गिजामि मिला मगता है, तब ईसाईके सिवा पोर भी बहूतसे हिन्दू तथा पारसी बर्जा एवम् होने हैं । लनका विद्याम है, बि गिजामि जामिसे परगळ रोम दूर हो जाते हैं, एधीसे ये मोग बर्जा आकर तरह तरहके पूजोपहार दिया करते हैं । ईसाई लोय भी हिन्दू पाण्य दिवताकी मजि पोर पूजा करते हैं । इसमें जो मात महर कयत हैं उनके नाम ये हैं--बन्दरा, शैवीन, भीबन्दी कन्वाव, कन्वेमाडोन, कुसा पोर बाना ।

पावन, ममक बाड, पुन पोर सुबो मज्जनोंकी रख तनो पोर कपडा, पनाक, तमाकू, नारियल, चोमो पोर शुद्धको धामदनी चोतो है ।

अधिचार्य की बर्जाके मोमोंकी सुप्य कपकोविका

है, बाद ममक तै यार करनेका काम है । ममकके २०० कारखाने हैं जिनमें प्रतिवर्ष ४६१००००) मन ममक प्रयुत होता है । मसुद्रके मलका खूपसे पुन्ना कर ममक बनते हैं ।

शासनकार्यको सुविधाके लिये यह जिन्ना तोन उपविमानोंमें विभक्त कर मसुद्रकारो कवच्छर तथा एक डिग्टो-वसेन्द्रके पधान रखा गया है । बिहारकार्य डिग्टिष्ट पोर सेमन अत्र तथा क्वड सडकारो मज्रा हा । सम्पादन होता है ।

यहां एक डिग्टोव्य सिम, ११ छोटे सिम, एक जवा मल, १ बार्ड क्लूक, ८ सिडिल पोर २४१ प्राधमरी क्लूक हैं ।

२ पाना जिन्नाका एक प्रमान नगर । यह पका १८ १२ व पोर देमा ०२ ३८ पू०में पर्वसित है । कोकस प्या माय १६०११ है । साकसेट म्काडोके तोर मर्ती होमि के आरक यह नगर देखनेमें बहूत सुन्दर लगता है । दुम', पोतु'गोज-गिजा पोर कई एक जला मय इसको पूव' सन्दरिखा परिपय देते हैं । मरहबा यताम्दोमि यह एक प्प्राचीन राणको राजधानो था । १११८ ई०में सुभारक बिजली इसके शासनकर्ता हुए । १३२८ ई०में बार्म्प महरको मोविनाके बिनट पोर सिमिन लण्डनक दम्भ होने पर इस नगराधिपतिने पोतु गोजीको प्पधानता छोकार को । पोतु'गोजीने इस नगरको दो बार पोर गुजराताने एक बार लूटा था । १३११ ई०में अम्बिके पनुकार यह नगर पोतु'गोजीको दे दिया गया । लनके समयमें नगरको लूट लकति हुई थी । १०१८ ई०में पोतु गोजी के शासके शैसिमके माय साव घानाका पश्चिमाक जाता रहा । १८०४ ई०में पोतु'गोजीने पुन-धाना नगर जोतनेके लिये लो बेना मंत्रो ; लनपोर सुदुके बाद प मरिज प्लोग विजयी हुए । इस नगरमें एक शमवे स्टेशन है । बम्बईसे सिवक एक सडिका रास्ता होनेसे यहां बम्बईके पनेक प मरिज कर्मचारी आकर रहते हैं । महरमें कोजोभोय हाईस्कूल, बामक तथा बालिकाके सिडिल १ मलिय स्कूल पोर ३ बर्नेर नर पडूक हैं । १८६१ ई०में यहां म्युनिसिपैलिटी स्थापित हुई है ।

३ अयोध्याके अन्तर्गत उनाव जिलेका एक शहर। यह उनाव शहरसे २॥० कीसकी दूरी पर अवस्थित है। अक्रवरके राजत्वकालमें चौहान ठाकुर धानसिंह और पुराणसिंहसे यह नगर प्रतिष्ठित हुआ है। धानसिंह यहाँ एक दुर्ग भी निर्माण कर गये हैं।

थानापति (हि० पु०) ग्राम देवता।

थानाभवन—युक्तप्रदेशके मुजफ्फरनगर जिलेके अन्तर्गत कैराना तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २८°३५' ३०" और देशा० ७७°२५' ५०" मुजफ्फरनगरसे ८ कीस उत्तर पश्चिममें कल्या नदीके किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८८६१ है। अक्रवरके समयमें यह 'थानाभीम' नामसे मशहूर था। यहाँके भवानोदेवोके मन्दिरसे वर्तमान नाम प्रसिद्ध हुआ है। भवानोदेवोके दर्शन करनेके लिये अनेक यात्री आया करते हैं।

मिषाही विद्रोहके समय काजी मन्तुर अलोग्वाँ और उनके भतीजे इनायतअलोक अघिनायकतामें यहाँ भी विद्रोह हुआ था। शिखजादागण इन विद्रोहियोंके प्रधान थे। विद्रोहके बाद नगरको चहारदीवारी और आठ फाटक तोड़ डाले गये। यहाँ १७वें शताब्दीको कई एक मस्जिदें और समाधियाँ हैं।

थानो (हि० पु०) १ स्थानका मालिक। २ लोकपाल, टिकपाल। (वि०) ३ सम्पन्न, पूर्ण।

थानैत (हि० पु०) शान्त देखो।

थानैतार (हि० पु०) थानैका अपसर या प्रधान। इनका काम शान्ति बनाने रखना तथा अपराधोंको हानवीन करना है।

थानैतारो (हि० स्त्री०) थानैतारका पद वा कार्य।

थानेश्वर—१ पञ्जाबके कर्णाल जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २८° ५५' से ३०° २५' ३०" और देशा० ७६° ३६' से ७७° १७' ५०" यमुना नदीके पश्चिमी किनारे अवस्थित है। भूपरिमाण ५८८ वर्गमोल और लोकसंख्या प्रायः १७३२०८ है। इसमें थानेश्वर, लादव और शाहाबाद नामके तीन शहर तथा ४१८ ग्राम लगते हैं। तहसीलको आय दो लाख रुपयेसे अधिक है। पहले यह स्थान अम्बाला जिलेके अन्तर्गत था। १८८७ ई०में यह कर्णाल जिलेमें मिला दिया गया। तहसीलके चारों ओर टाक (पलास)के जंगल हैं।

२ उक्त तहसीलका एक पवित्र नगर और प्राचीन हिन्दूतीर्थ। यह अक्षा० २८° ५८' ३०" और देशा० ७६° ५०' ५०" कुश्वात्रके टोक समतल क्षेत्रमें सरस्वती नदीके किनारे अवस्थित है। इसका संस्कृत नाम स्याग्रीश्वर है, इसीका अवभृशरूप थानेश्वर हो गया है। महाभारतमें स्यागुतीर्थ नामसे इसका उल्लेख है। लोकसंख्या लगभग ५०६६ है।

७वें शताब्दीमें सुचनचुअंग जब यहाँ आये थे, उस समय स्याग्रीश्वर (थानेश्वर) स्वतन्त्र राज्यमें गिना जाता था। चोन-परिभ्राजकने लिखा है कि यह राज्य प्रायः ५८३ कीस विस्तृत था। १०११ ई०में गजनोके महसूदने इस नगर पर आक्रमण किया और वे यहाँको प्रसिद्ध चक्रस्वामोको मूर्ति गजनीकी उठा ले गये।

सिखोंके अभ्युदयके समयमें सरदार मिठासिंहने थानेश्वर पर अधिकार जमाया। बाद वे अपने भतीजे को यह पुख्तोर्थ अर्पण कर गये। मुगलोंके आधिपत्यकालमें यहाँके अनेक मन्दिर तोड़-फोड़ डाले गये और उस स्थान पर मसजिदें बनाई गईं। सिखोंने पुनः सर मसजिदें अधिकार कर वहाँ अपना धर्मग्रन्थ पाठका स्थान बनाया।

मिठासिंहका वंश लोप होने पर यह स्थान १८५० ई०में ब्रिटिशगवर्मेंटके अधिकारभुक्त हुआ। पहले यहाँ बहुत मनुष्योंका वास था। सदरके उठ जानेसे लोकसंख्या बहुत कम गई है। कुछसे देखो।

थानैत (हि० पु०) १ किसी स्थानका मालिक। २ ग्राम-देवता वा किसी स्थानका देवता।

थाप (हि० स्त्री०) १ तबली, मृदङ्ग आदि पर पूरे पंजेका आघात, ठाक। २ अपय, कसम। ३ मान, कदर। ४ महत्त्व स्थापन, प्रतिष्ठा, धाक, साक। ५ स्थिति, जमाव। ६ पचायत। ७ छाप, निग्रान। ८ थप्पड़, तमाचा।

थापन (हि० पु०) १ स्थापित करनेकी क्रिया। २ प्रतिष्ठित करनेका कार्य, रखनेका काम।

थापना (हि० स्त्री०) स्थापित करना, बैठाना। २ हाथ या सचिसे पीट या दबा कर किसी गौली वस्तुको कुह बनाना। (स्त्री०) ३ प्रतिष्ठा, स्थापन। ४ नवरातमें

दुर्ग पूजाके लिये षट् स्थापना । ३ खिमी प्रतिमाको स्थापना या प्रतिष्ठा ।
 धापरा (हि० पु०) छोटी गाव डोमो ।
 धाया (हि० पु०) १ पत्रेका हाया या मिगान लिये लिखा खिसो मङ्गलके पत्रपर पर दोवार पादि पर पनातो है । २ सुभ रायि टेर । ३ मोयो सामयो दवा कर वा डाकडर कोरे बहु बननेका सोबा । ४ निप-सियोकी एक प्राति । ५ चन्दा को गर्बने देनी देवताको पूजाके लिये स पक्ष किया जाता है । ६ मोबर पादिका यह मिगान को पक्षियाने पनात्रके टेर पर लगावा जाता है सोको । ७ रग पादि पोत कर कोरे चिन्न अहित करनेका सोबा, हाया ।
 धापिया (हि० खो०) बापी देवी ।
 धायो (हि० खो०) १ बाठका बना हुआ थोड़े सिरैकी एक सु गते । इससे कुन्धार लखा घड़ा पोटा है । २ मध पीटनेको राज या भारोयको थिपयो सुं गरो ।
 धाम (हि० पु०) १ स्थल ज मा । २ मण्डल । (खो०) ३ धामनेकी खिया बा ठ म, पकड़ ।
 धामना (हि० खि०) १ गति पवत करण । २ गिरने पड़नेके बचाना । ३ खिसी कार्यका मार पक्ष करण । ४ हात्रने खेना, पकड़ना । ५ सहायता देना, सहाय देना । ६ थोत्रयोने रचना पहरने करण ।
 धायेतम्बो—निम्न ब्रह्माके पिसुके पनागत एक जिना । यह पना० १८ १२ से १८ १८ ७० धोर देया० ८७ ७० से ८२ १२ पू०में अवस्थित है । मूर्परिमा ४०१० बर्गमोन है । इसके उत्तरमें उत्तर ब्रह्म पूर्वमें तोडू बिना, दक्षिणमें प्रोम धोर पश्चिममें धान्दोये है । उत्तर ब्रह्मके कोक निम्नभाबमें अवस्थित होनेके कारण यह जिना निम्न ब्रह्मके सोमान् प्रदेयको ल्या करता है । इरावतीका शिखा दक्षिण करनेके बाद १८२१ ई०में इनकोसोमें दक्षिण ब्रह्मके दक्षिण कर सोमा निर्दिष्ट कर दिया । यह जिना उत्तरमें धाराबानके पिसु-योमा गिरिमाना तक विस्तृत है । इसके पूर्वमें पिसु-योमा धोर पश्चिममें धाराबान-योमा गिरिमाना है । शेषोड गिरिमाका १०० फुट लंबा है । काचित्त, नाउदङ धोर फोटङ-मङ्गलिका नामक इसके तीन शिखर हैं । यह पहाड़

उत्तरमें बहुत सुन्दर है धोर इसमें पनेक नदिया निकली है । धार विरिपय इस पर्वतके कोके मन्त्र हो कर मान्दोये प्रदेयको लये गये हैं । धोपबानके सिवा इन रातो हो कर जाना पाना बहुत दुःसाध्य हो जाता है ।
 इरावती इस जिनेकी प्रधान नदी है जो धायेतम्बोके उत्तरसे दक्षिण तक विस्तृत है । इसका शिखर बहुत लंबा है, इसोसे इस जिनेका कोरे स्थान बाढ़ने नहीं डूबता । इन नदीमें दो होप हैं—धायेतम्बोनकाके बाननेका वेवन दीप धोर श्वोत्र-दिन् शिप दीप । धोथ काकमें इस नदीका बन बहुत बट जाने पर मो खिसो बवड पांच फुटने कम महरा नहीं होता ।
 पश्चिमकी धोरसे तीन धोर पूर्वसे दो नदिया इरावतीमें पा गिरो हैं । प्रथम तीन नदियोके नाम—पान, मातान धोर मदी तवा शेषोड दोके नाम कारिनी धोर बासेट हैं । पान उत्तर ब्रह्मके निकल कर कई मीट जानेके बाद धारोतम्बा नगरके निम्न धोर मातान निम्न ब्रह्मके निकल कर दक्षिण-पूर्व की धोर १५० मील जानेके बाद कामानगरके निम्न इरावतीमें गिरी है । पूर्वकी दो नदियोमेंसे एक काचित्ती नदी उत्तर ब्रह्मके योमासेके निकल कर मायिदे नगरसे कुछ दूर इरावती में जाव मिलती है । बाठसे नदी ६ सुं पर ४१० फुट लम्बा बाठका एक पुल है जिसके ऊपर दो बार रथून धोर मायिदेका रास्ता गया है ।
 इस जिनेमें बहुतसे गरम सोते बहते हैं । धारोतम्बो नगरके ७ मील उत्तर पश्चिममें पदबनिन नगरके निम्न धोर धाराधन सेन पाया जाता है । ब्रह्मने शोत, बनवि-साक, करिच, हाथो गैङ्गा, बाघ पादि मिलते हैं ।
 ब्रह्मदेयके इतिहासमें धारोतम्बोका नाम बहुत कम पाया जाता है । पक्षी इस पक्षकेमें धूम प्रातिके नाम रूचते थे । भारतवर्षके बर्गयात्रकोने यह इस प्रदेयके लोगोको बीच धर्ममें दीक्षित किया, तब मायद इस जिनेका निम्नभाग धरवेत (शेषोड-यहांका प्रोम) के माथ सन्निवृत्त था । ४४४ ई० सन्के पक्षी धूल-ता शीतके प्रोम नय स्थापित होने पर यह प्रदेय लोके राण्य मुक्त हुआ । बाद ही प्रोमक ईसा पतन होने पर पक्षी यतान्दोके पक्षमें ब्रह्मनद रतने पयनमें एक राण्य

वमाया। उनके वंशधरोंने ११०० वर्षसे अधिक राज्य किया। इस समय थायैतम्यो पगन राज्यके अन्तर्भूक्त था। पीछे यह जिला सान सरदारोंसे अधिकृत हुआ। १८५२-५३ ई०में जब पेंगू हटिंग राज्यमें मिलाया गया, तब थायैतम्यो प्रोम प्रदेशका एक महकमा हुआ। १८७० ई०में इसे युयक् कर एक डिपटी कमिश्नरके अधीन कर दिया गया है।

इसमें थायैतम्यो और थालनम्यो नामके दो शहर तथा १२७५ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः २३८७०६ है। इनमेंसे अधिकांश लोग विशुद्ध सग वा ब्रह्मभक्त हैं। इसके सिवा और कई जातियां यहाँ वास करती हैं, यथा—चीन, तेलगू, तामिल, हिन्दुस्थानो, मान, करो, ब्रह्माली, चीन देशीय और अन्य।

जिलेके उत्पन्न द्रव्योंमें चावल, तेलहन, रुई तथा कृ और प्याज प्रधान हैं।

इस जिलेमें कत्या, सुपारी, रुई, चावल, नमक, अपरिष्कृत रेशम और मिट्टीके बरतनीकी रफ्तानी और अपरिष्कृत रुई, रेशम नील, चमडे आदिकी आमदनी होती है।

इस अञ्चलमें विशाको खूब उन्नति है। प्रति वर्ष १६ हजार रुपयेसे अधिक इस विभागमें खर्च होते हैं। यहाँ चार अस्पताल भी हैं।

२. उक्त जिलेका एक उपविभाग। इसमें कुल तीन शहर लगते हैं।

३. उपरोक्त उपविभागका एक शहर। यह अक्षा० १८° २०' उ० और देशा० ८५° १२' पू०में इरावती नदीके दाहिने किनारे अवस्थित है। कहते हैं, कि १३०६ ई०में पगनके ग्रेप राजासे यह शहर स्थापित हुआ है। लोकसंख्या प्रायः १५८२४ है। यहाँ अंग्रेजी सेनाओंका बाम है। अंग्रेज और कई साममें यहाँ बहुत गम्भी पड़ती है। शहरमें अस्पताल और स्कूल हैं।

यारू—विहार और उत्तर भारतको एक जाति। यारूओंको उत्पत्तिके विषयमें नाना मतभेद पाये जाते हैं। इनको 'गैतर' नामके अंग्रेजीका कहना है कि वे चित्तौरके राजपूतोंसे उत्पन्न हुए हैं। परन्तु इसका कुछ प्रमाण नहीं मिलता।

पूर्णिमाके अन्तर्गत कुर्गी नदीसे कुमायूँ और नेपालके अन्तर्गत शारवानदी तक हिमालय निम्न-प्रदेशमें इस जातिका यत्र तत्र वास है। अति प्राचीन कालमें गोरखपुरके लालगञ्जके पास वातकान् और देवगञ्ज ग्राममें यारूओंका वास था, ऐसा वहाँके लोगोंका विश्वास है।

यारू लोग देखनेमें काले तथा इनके सिरके बाल लम्बे और घने होते हैं। शक्तित और बालचलन प्रायः स्थानोद लोगोंके समान ही होता है।

गोरखपुरके यारू लोग दो भागोंमें विभक्त हैं—एक पूरबी और दूसरे पछमी। पछमी लोग अपनेको जत्रो बतलाते हैं और पूर्वियोंके साथ आहार विहार नहीं करते। पछमियोंमें भी दो थोक हैं—बड़का और छोटका। अयोध्याके अन्तर्गत गोगड़ा प्रदेशके कठरिया और उंगरिया नामके यारूओंमें भी दो थोथो हैं। विहारमें उतर थोथो थोथे समभो जाते हैं।

चितवनिया वा चितीनिया कहलानेवाले यारू जुलाहेका काम करते हैं। ये लोग मृतव्यक्तिको याद्दाटि क्रियाएँ नहीं करते और न इनकी स्त्रियाँ प्रसवके बाद श्रमोच-पालन हो करती हैं। वारातमें सिर्फ चार पाँच घाटमो जाते हैं और गाना बजाना कुछ भी नहीं होता। बाल्य और प्रौढ़ दोनों प्रकारके विवाह इनमें प्रचलित है। लड़केका बाप नौ रुपये कन्याको देता है। यह प्रथा इनमें बहुत दिनोंसे प्रचलित है। परन्तु पवस्थाविशेषमें इसमें तारतम्य भी हो सकता है। नको विवाह-प्रथा निम्नथोथोके हिन्दुओंके समान है। ब्राह्मण लोग पुरोहितका काम करते हैं। मर्दनिया और चितीमियोंके विवाहमें (विवाहसे पहले) वर पक्षवानी तीन दिन तक कन्या पक्षवालोंको खिलाते हैं। बड़े उम्रमें व्याह होनेसे बधुकी शोभ ही स्वामीके पास आना पड़ता है। इस समय बधु और उसके साथ आनेवाले कुटुम्बियोंके स्वागतके लिए घरके घर "दुलहिन भतावन" (बहमात) नामका उल्लव होता है। परन्तु बधुको उम्र कम होने पर उसे पुनः पोहर जाना पड़ता है और मृतमयी न होने तक वहाँ रहना पड़ता है।

इनमें बहु-विवाह और विधवा विवाह प्रचलित है। विवाह अथवा समाजकी अनुमतिसे छूट सकता है।

ऐसी दायिर्ग परिग्रहणा श्री पुन' अपने विवाह कर सकती है। परन्तु यह विवाह बिना विवाहको तरह होता है। इस तरहको छोटी दोगी पक्षबाधे 'छारो' श्री कहते हैं। परन्तु दूसरे पक्षके सामोययको सम्मतिसे बिना विवाहिता होने पर तथा 'भताना न देवेसे ऐसीको 'हुरै'लिन का बेझाके समान समझे जातो है। समाज खु न होने पर भी उसे 'भताना' देना पड़ता है।

प्रादिम पक्षय्य जातिमें प्रचलित प्राणोपूजा और प्रकृतपूजाका मिश्रण ही ब्राह्मणों का धर्म है। गौर श्वेय्यर इनसे एक प्रधान उपान्य देवता है। हूर देवमें जानेसे पहले उनको पूजा की जाती है। खिरो बिलेके बाद लोग कहा करते हैं, कि राजपक्षधर्ती बेधके श्वेय्यर का यह नामसे एक पुत्र से। राजाने खु ह जो कर पादेम किया कि उन्हें (श्वेय्यरको) एक सहित पत्थरको घोर ऐसे स्नानमें निवासित किया जाय, जिनमें धिर से शौट न सके। राजाने पादेमसे श्वेय्यर अपने एक सहित निर्वासित हुए। राक्षोंमें से जहाँ तहाँ लूटने लगे, वनपुत्रके लक्षोंमें बहुतसो जियाँ मो रहगो थीं। उन जियाँके गमसे जो मत्तान हुई यह वाक्य कहलाने लगी। श्वेय्यरने, हिमासकके वनमें बड़े यक्षसे ब्राह्मणों को रचा को धो। ब्राह्मणोंका विज्ञान है, कि जब भी रक्षमें वनमें भागमें सत्र जगह श्वेय्यर उनकी रचा करते हैं। ये मद्देव घोर घरपछो नामके घोर भी दो देवताओंको पूजते हैं। गो भेष, गूरर प्रादि निविंज विचारण कर सके, इससे शिप से बरपछोको पूजा करते हैं। ये 'मरी' नामक देवताकी भी उपासना करते हैं। सोई कोई 'मरी' घोर हिन्दुओंकी कामोदेवोको एक ही समझते हैं। अय्यारवमें 'कुपत' पाम्यदेवताकी तरह पूजा जाता है। परन्तु किनहाल इनमें शिव घोर काको पूजाका प्रकार होनेसे उच्च देवतापो का पूजा समझा गटतो जाती है। बाह्य लोग कानिका देवोको ही अमत्-में सर्वश्रेष्ठ देवता मानते घोर जीवन मरपछो लक्षों ममम उनको पूजा करते हैं। जिन जियाँके पत्तान नहीं होते, वे कलके शिप कानिकादेवीसे मार्गना करतो है मोष्ठा मदेयके देवोपाटनमें कानिकादेवीके पूजोअव-

ध में अपनेक अन्तुपो का बच करते घोर लक्षोंमें पानन्द मानते हैं। ये लोग भैरव, गुरु मन्नादेव भादि नामसे शिवके चित्रको प्रतिष्ठा कर उनको पूजा करते हैं। बाह्य लोग उन्हें कृष्टिके स्थितिइत्ती मानते हैं। बहुतसे ब्राह्मणोंके मत्तानके सामने मिहोके टोले पर मिहोके शिप निज दिखनेमें पाते हैं।

पमो अधिचतादे हिन्दुधर्मको मान कर अपने पर भी श्राह्मणोंका पूर्वविश्वास निरोहित नहीं हुआ है। ज्यार शही, उदरामय मूर्च्छ, गिरापोडा कथा, दुःखत्र तथा पन्थाय रोमो के उपस्थित होने पर ये लक्षे उप-देवताका कार्य समझते हैं। खिरो भी प्रकारको पाडा लो न हो ये पोम्हाको पश्यत्र बुझते हैं। उन लोगोंके दिक्षमें एसा विश्वास बैठ चुपा है, कि अधिकाय उपदेवता पोम्हायोंको पाछा मानते हैं पोम्हा पाड़े तो पोकृत मरीरमें भूतको पक्षग कर मझते हैं घोर चाड़े तो उन्हें स्थानान्तरित कर मत्तु, पोको कष्ट से बचते हैं, पाच तक नष्ट कर सकते हैं। इधरिप बाह्य लोग पोम्हाधर्म बहुत करते हैं। भूत भ्रष्टमें समय पोम्हा बाये हाकमें कपड़ेको राव घोर सरलें लें कर कानिकादेवीके शिप निज निहित मन्त्र पढ़ते हैं -

"गुरु है गुरु भैर तन्म मन्त्र गुरु, लक्षे निरखन तोका सोई प लका भाग, हमका सोई गुन विद्याके भाग अज्ञान से विद्या नहो, कमरा कामके विद्या। जेसे विद्या कमर काम के माने ऐसे विद्या कामह मोर।"

ब्राह्मणोंकी पम्पेद्विप्रिया नामा प्रकारकी है। बहुतसे मतसे पक्षसे ये लोग मुरदेवोके शिप गाड़ दिया करते हैं। परन्तु जब हिन्दुओंको देवा-देवोके से शकदाह करने लगे हैं, शिप देवा घोर शिपकपासीको गाड़ते हैं याकने वा हाह करनेसे पक्षसे वे हिन्दु अर्पेट कर मुरदेवो एक रात्रि करके कामने मिहोके टोले पर बुन्ना रहते हैं। ब्राह्मणोंका विश्वास है, कि रातको घत प्यजिको प्रोताका बन्ध अन्तुपोको लदेड़ कर शकको रचा करतो है। पम्पेद्वि प्रिया पामके दक्षिणामने होती है। दाहके बाद लक्षो मरम से कर पामकी नदोंमें जाकते हैं। जो पक्षसे चित्तमें पाम लमाता है, लक्षे १० दिन तक

ठूम कर खाना । ३ मारना, पीटना । ४ कस कर भरना ठूसना ।

धूर्त (हि० त्रि०) धूर्त-ह्र । विनासित, जिसकी हानि हुई हो ।

धूला (हि० वि०) छूट पुष्ट, मोटा ताजा ।

धूलो (हि० स्त्री०) १ अनाजका वह मोटा कण जो टल कर अलग किया जाता है, २ गायको वच्चा जनने पर दिये जानेका पकाया हुआ दलिया । ३ सुजो ।

धूवा (हि० पु०) १ जंघो भूमि, टोला । २ मट्टीका लौंदा । ३ टूटके आकारका काला रंग हुआ पिंडा । तम्बाकू बचनेवाले इसे अपनी टूकानों पर चिह्नके लिये रखते हैं । ४ गोली मट्टीका पिंडा, धोधा । ५ सोमा सूचक मूल्य, मट्टीका वह चिह्न जो सरहदके निशानके लिये सथाया जाता है । (स्त्री०) ६ धिक्कारका शब्द ।

धूहर (हि० पु०) एक प्रकारका छोटा पेड़ । इसको टहनियां लघोली नहीं होतीं, गांठों परसे गुह्यो या डंढेके आकारके डंठल निकलते हैं । इसके कई भेद हैं । किसोमें बहुत मोटे दलके लम्बे पत्ते होते हैं और किसोमें एक भी पत्ता नहीं होता । इसके डंठलों और पत्तोंमें कड़ुआ दूध भरा रहता है । इसमें पोले रंगके फूल भी लगते हैं । औषधके काममें इसका दूध बहुत उपयोगी है । यदि दूधमें सानो हुई वाजरके अटिकी गोली कुछ काल तक रख कर सेवन करे तो पेटका दर्द जाता रहता है और पेट भी परिष्कार ही जाता है । धूहरके दूधमें भिगोई हुई चनेकी दाल सुलावसा काम देतो है । इसकी राखसे निकाला हुआ खार भी दवामें बहुत काम देता है और इसका कोयला बारूद बनानेके काममें आता है । विशेष विवरण सुदी शब्दमें देखा ।

धूहा (हि० पु०) १ राशि, ढेर, ढूह । २ जंघो भूमि, टोला ।

धूहो (हि० स्त्री०) १ मट्टीका ढेर । २ मट्टीके खंभे । इन पर गाडो या घिरनोको लकड़ी ठहराई जाती है ।

धैर्य (हि० वि०) आन्त, सुम्न, हैरान ।

धैर्यई (हि० वि०) ताल सूचक नाचकी आवाज और सुझा ।

धैगलो (हि० वि०) धिगली देखो ।

धेवा (हि० पु०) १ अंगूठीका नगोना । २ सुहर खोदो जानेका धातुका पत्र । ३ नगोना । जड़नेका अंगूठीका एक घर ।

धेवना (कनिष्ठ) एक प्रसिद्ध भ्रमणकारी । इन्होंने पारसमें जन्मग्रहण किया था । फ्रान्सके मियाना नगरमें १६६७ ई० ता० १८ नवेम्बरको इनकी मृत्यु हुई । ये Petis de la Croiz के मित्र थे और इसलिए इन्होंने उनके Memoirs नामक ग्रन्थका संशोधन किया था । यह ग्रन्थ (१६८८ ई०में) तीन खण्डोंमें छपा था । धेवनो १६६५ ई० ता० ६ नवेम्बरको वसोरासे जहाज पर सवार हो जनघरीको १० तारोखको सुरत आए थे । ये भड़ौच होते हुए महमदाबाद, बम्बई, आगरा, टेहली, इलाहाबाद, बरहमपुर, गोया, गोलकुण्डा, हैद्राबाद, मङ्गलीपट्टम, सुरत, बन्दर अब्बास, सिराज, कूम और फरसह भ्रमण कर मियाना पहुँचे थे । इनके भ्रमण-वृत्तान्तसे उस समयकी भारतकी अवस्थाका कुछ कुछ परिज्ञान हो सकता है ।

धैचा (हि० पु०) वह छप्पर जो खिन्नमें मचानके ऊपर रखा जाता है ।

धैला (हि० पु०) किसी वस्तुको भर कर बन्द करनेका एक पात्र जो कपड़े टाट आदिको सो कर बनाया जाता है, बड़ा कोश । २ जंघेमें लेकर घुटने तकका पायजामेका एक भाग । ३ वह कोश जिसमें रुपये भरे रहते हैं, तोडा ।

धैलो (हि० स्त्री०) १ छोटा धैला, कोसा । २ रुपयोंसे परिपूर्ण कोश, तोडा ।

धैलीदार (हि० पु०) १ खजानेमें रुपये लठानेका एक मनुष्य । २ तहसीलदार, रोकड़िया ।

धैलोवरदारी (हि० स्त्री०) धैलो लठा कर पहुँचानेका कार्य, धै लियोंको ढोभाई ।

धोक (हि० पु०) १ पुञ्ज, राशि, ढेर । २ समूह, झुण्ड, जटथा । ३ वह स्थान जहाँ कई एक ग्रामीको सोमाएँ मिलती हों । ४ एकहा बचनेको चीज । ५ एकत्रित वस्तु, कुल । ६ किसी खास एक आदमीका जमीनका टुकड़ा ।

धोकदार (हि० पु०) वध व्यापारी जो एकहा माल बेचता हो ।

बोद्धन (स० झी०) बुद्ध-बुद्ध । उत्तरार्ध, पाश्चात्तम
उत्तम ।

बोद्धा (हि० वि०) न्यून पक्ष, क्षम, उत्तरार्ध ।

बोतो (हि० स्त्री०) मधेरीके सुपका अपभ्रंश, बुद्धन ।

बोव (हि० स्त्री०) १ निम्नारता बोधनायन । २ तौद,
पैठी ।

बोवरा (हि० वि०) १ बोधरा, बाली । २ निम्नार,
पोना । ३ पञ्चबा, निम्नबा ।

बोवा (हि० वि०) १ बो बिना सारका हो, बोधका ।
२ कुष्ठित मोबा, जिसकी धार तत्र न हो । ३ बिना
पूजका, बाँदा । ४ अर्थका निम्नमा । (पु०)

१ मदीका बह धावा जिसमें परतन जाना जाता है ।

बोयो (हि० स्त्री०) एक प्रकारको घास ।

बोपड़ी (हि० स्त्री०) ब्यङ्ग, पपत, बीन ।

बोपना (हि० स्त्री०) १ पानीमें सने हुई बसुके कोदेको

विपबानेके जिसे दूमरी बसु पर जोसा कर कासना । २

पाकमय भादिसे रसा करना, बचाना । ३ मोटा सेप

पढ़ाना । ४ धारोपित करना, मन्त्रे मढ़ना ।

बोवड़ (हि० पु०) बुद्धन ।

बोव रथना (हि० स्त्री०) त्रहाजको धार पर पढ़ाना ।

बोरो (हि० स्त्री०) एक हीन पनावजाति ।

बोनेयक (स० पु०) पत्थि पत्र, गठिवनका पिक ।

द

द—दकार, सञ्ज्ञत एक हिन्दो वर्णमासाका पठा
रहना अक्षरमयं चौर तयमका तोसरा पक्षर । इसका
पञ्चारण ज्ञान दन्तमूल है । दन्तमूलके साव जिह्वाके
पथमानका अग्र्यं होमी पर इस वर्णका उच्चारण होता
है, इसलिये इसमें अग्र्यं वर्णता है । इस वर्णके उच्चा
रणमें ल वार, ग्राह चौर घोष नास्त्रमयक होते हैं । यह
पञ्चप्राप है । इसके पर्याय—धद्रि, दैह, जातको धाता,
दाता, दास, दसदस, दोन ज्ञान, दान, भक्ति, पापहर्ता,
हरा सुपुत्रा, योगिनी, सत्य कुशल, वाममुक्षपत्र, आत्मा-
समो धिवा दुर्गा, पनङ्गनामा जिह्वपङ्को, अस्त्रिय,
कुटिमारूप, ज्ञान स्थामा, जिवेन्द्रिय, अमङ्गत वाम
देव अमरेश, सुबहस्य हरिप्रापुरवेदो दक्षपाणि, तिरै
सक । (वर्णनिर्णय) इसको अक्षिप्यामीद्वीका ध्यान
इस प्रकार है—

“ ध्यानमस्य दक्षरस्य वचने श्रुत शरैतिः ।

वदुमुखा पीठवर्त्ता वचवोरवर्त्तितर्ता ।

अनेकरावर्त्तितहास्तुकोविता ।

एव नवप्रता दक्षाल्पु तथ्याहं दक्षवा वरेद ।

विह्वलितरित रेवि विविन्दुवर्त्तित तथा ।

आत्मारितलक्षय बुद्ध रक्षत प्रथमान्दहम् ॥ (वर्णद्वयतः)

दकारको अक्षिप्यामीद्वीको वदुमुखा पीठवर्त्तपरि
धाना चौर नववृत्ततो तथा भागा रक्षादि अक्षित धार
न पुरादिसे सुयोमित हैं । इस प्रकार दकारका ध्यान कर
इसका दय वार अप करना चाहिये । पोछे त्रिगुण
व बुद्ध, विविन्दुवर्त्तित चौर आत्मादि तत्त्व स बुद्ध दकार
को प्रथम करना चाहिये । आत्मधेनुतत्त्वमें दकारका
अक्षय इस प्रकार कहा है—

दकार चतुर्वर्ण-प्रदायक है पञ्चदेवमय चौर पञ्चप्राप
सक है, त्रिगुण चौर त्रिगुणबुद्ध है, रक्षविन्दु ज्ञानकार
चौर आत्मादितत्त्वस बुद्ध है । आत्मके भादिमें इह
वर्णका प्रयोग होने पर सुखको प्राप्ति होती है । (इतर-
दोष) मातृकाव्यासमें इह वर्णके वाममुष्पन्नी आस
क्षिया जाता है ।

द (स० पु०) दैव दहो वा द्वा दामि दो बाहुनकात् ख ।

१ पक्षक पर्वत, पञ्चाङ्ग । २ दन्त दाति । ३ दाता ।

ददाति धान्यमिति दा-ख । (स्त्री०) ४ मार्धा स्त्री ।

दो पक्ष्पने सम्पादित्वात् मधि क्षिप । (स्त्री०) १

कक्षन । २ पक्ष, रथा । ददाति दा-ख । (स्त्री०) दाता

द्वेनीबावा ।

दद्रे (हि० पु०) १ ईश्वर, जिघाता । २ दैव न घोम,

प्राख ।

दईमारा (हिं० वि०) जिस पर दईमारा का कोप हो,
अभागा, कामवस्तु ।

दंग (फा० वि०) १ आद्यर्थांशित, विस्मित, चकित
(पु०) २ भय, डर ।

दंगई (हिं० वि०) उपद्रवो, लड़ाका, भगड़ान् ।

दंगान (फा० पु०) १ मजबुद, पहलवानोंको कुशलो ।
२ वह स्थान जहा पहलवान लड़ते हैं, अखाड़ा । ३
समूह, जमात, टल । ४ बहुत मोटा तोगक ।

दंगवार (हिं० पु०) किसानोंको आपसमें हल बँध
देकर सहायता, जिता, हरसोत ।

दंगा (फा० पु०) उपद्रव, बखेडा । २ शोरगुल, गुन-
गवाडा ।

दंगैत (हिं० वि०) १ उपद्रवो, लड़ाका । २ बागो ।

दंतिथा (हिं० स्त्री०) छोटे छोटे दाँत ।

दंदि (हिं० स्त्री०) १ वह गरमी जो किमी पदार्थमें
निकलतो है । (पु०) २ हन्त, लड़ाई भगड़ा । ३ हला
गुला, गुलगपाड़ा ।

दंदाना (फा० पु०) उभरो हुई वस्तुओंकी पंक्ति जो दाँत-
के आकारसा होतो है ।

दंदिन्दार (फा० वि०) जिसमें दाँतको तरह निकले हुए
कंगूरोंकी पंक्ति हो ।

दंदाग (हिं० पु०) छाला, फफोला ।

दंदा (हिं० वि०) उपद्रवो, भगड़ान् ।

दंवारो (हिं० स्त्री०) वनोंमें रौंदवानिका काम जिससे
अनाजके सूखे डंठलोंसे दाने भड़ जाते हैं ।

दंश (मं० पु०) दंश दंशने पड़ायात् । कोटविशेष,
डाँस, वगदर । इसका पर्याय—वनमच्छिका, गोमच्छिका,
अरख्यमच्छिका, मभरालिका, पांशर, दंशक, दुष्टमुख,
क्रूर, क्षुद्रिका और दंशमशक है । विष्ठा, मूत्र, सृतदेह
और सड़े हुए थंड़ोंसे दंश प्रभृति अनेक तरहके कोड़े
उत्पन्न होते हैं । इसके काटनेसे शरीरमें सूजन और
पोड़ा होतो है । दशतोव शरीर । २ वर्म, बकतर ।
दंश भावे घव् । ३ दंशन, दाँत काटनेको क्रिया । ४
दोष । ५ सर्पचत, सर्पके काटनेका घाव । ६ दन्तचत,
दाँत काटनेसे उत्पन्न घाव । ७ हेष, वैर । ८ दन्त
दाँत । ९ विषैले जन्तुओंका डंक । १० आक्षेप बचन,

काटुक्ति, बौद्धार । ११ एक असुर जिसको कथा महा-
भारतमें इस प्रकार लिखी है—

मत्ययुगमें दंश नामका एक प्रवल पराक्रान्त असुर
रहता था । यह भृगु मुनिसे ज्यादा उम्रका था । एकदिन
वह असुर भृगुकी स्त्रीको हरने गया । इस पर भृगुने
प्रत्यन्त क्रोधित हो कर उसे शाप दिया कि, 'तू मनु-
मूर्खका कीडा हो जा ।' शापसे डर कर जब असुरने
भृगुसे बार बार क्षमा प्रार्थना की, तब उनका शरीर
दयासे पिघल गया और बोले—'मेरे वंशमें जो राम होगे
वही तुम्हें मुक्त करेगे ।' बाद यह दंश कीटयोनिकी
प्राप्त हुआ । कर्ण जब परशुरामसे अस्त्रविद्या सीख
रहे थे, तब एक दिन परशुराम कर्णकी जाँघ पर अपना
भिर रख कर सो गये । ठोक उमो समय वह कोड़ा कर्ण
के समोप पहुँच उनको जाँघमें काटने लगा । गुरुकी
निद्रा भद्र होनेके डरसे कर्णने अपनी जाँघ न हटाई ।
कुछ समय बाद जब जाँघसे रक्तकी धारा निकल कर
परशुरामके शरीर पर गिरने लगी, तब परशुरामको नोट
टूटो । कर्णने मारा हान गुरुसे कह सुनाया ।

परशुरामने कर्णकी बात सुन कर उम कोड़ेको और
ताका । वह सफेद कोड़ा था और उसके शरीरका आकार
सूअर भा, दाँत तेज और मसूचा शरीर सड़े सरोखे रोए-
से टका था । परशुरामके ताकतहो कोड़ेने उसी रक्तके
बीच अपना कोट शरीर छोड़ा और शापसे विमुक्त हो कर
रामसे प्रार्थना की । बाद वह अपने स्थानको चला
गया । (भारत शास्त्र १०७०)

दंशक (सं० पु०) दशतीति दन्श गतुल् । १ दंशः
डाँस नामको मक्को । २ नृपभेद, एक राजाका नाम ।
ये कम्पन देगके अधिपति थे । (वि०) ३ दंशनकर्ता,
काटनेवाला; जो दाँतसे काट खाय ।

दंशन (सं० पु०) १ दाँतसे काटना, उसना । २ वर्म,
कवच ।

दंशनाशिनो (सं० स्त्री०) दंशं नाशयति नाशिन-
पिनि-
डीप । तैलकीटभेद, एक प्रकारका तैलका कीडा ।

दंशभीर (सं० पु०) दंशात् वनमच्छि कातः भीर ।
महिष, भैंसा ।

दंशमूल (सं० पु०) दंशवदुयं मूलमस्य । शिशुवृक्ष,
सहजनाका पेड़ ।

दशमदन (स० पु०) दशमपदी, मदिद चोळ, बाँद ।
 दशिका (स० स्त्री०) दशमचिका, काँस ।
 दशित (स० त्रि०) दशो बर्म् मन्नातोऽप्य परिहित-
 म्नादिति, दश तात्कालिकात् इत्यच् । १ कर्मित, अथवा
 पादिने ठका बुधा । दशते दशम विष् मदि म् ।
 दश, दाँतसे खाटा हुधा ।
 दशो (स० स्त्री०) दशो दश फल्यार्थे ङीय, वा दश
 तोति दश-पक्ष गौरा ङीय । १ सुद दश छोटा दसि ।
 २ कुदुर, हुता । (त्रि०) जो दाँतसे खाटता हो, डमने
 यान्ता । ३ कट्टि कडनेवाला पावेप बचन कडने
 यान्ता । ४ होयो, बैर रस्मिवाला ।
 दशूक (स० सि०) दशम बाहुनकात् उक् । दशम
 मोल, डमने योग्य ।
 दशैर (स० त्रि०) दश वाहु० परक् । पपकारक, सुरादि
 कारमेवासा ।
 दश (स० पु०) १ दशम-त । २ दश, दाँत । ३ शूकर, सुपरक ।
 दश (स० स्त्री०) दशविंशतया दशम करि इत् ।
 (राम्योत्प्रेति । वा शशु१२२) वा 'सब'वास्तुभ्य इत्' इति
 इत् । १ क्त्वा दशमे द बङ्गे बङ्गे दाँत, दाढ़ भीमर ।
 २ हृत्वालो, विभुधा नामवा पोवा । इमि रोई दार
 फल समे है ।
 दशानलविप (स० पु०) दशार्थो नञि च विप यत् ।
 मा शौरादि बहु जन्तु त्रिसडे बन्ध पोर दाँतसे विप हो ।
 बिन्नो, कुता, बन्दर, मन्धर, मीठक, प्रचलाक (ओड़ा,)
 जियकनो, गोह साँप पोर चार पैर नासे जोड़े दश
 नञ्, विप । इनके दाँत, नञ् भूत, बिठा बीय, सार,
 रञ्, सुँह पादिमि विप रचता है ।
 दशानुज (स० पु०) दश पाशुज इव यत् । बराह,
 सुपर ।
 दशान (स० त्रि०) दश पशु पुद्गादिकात् क । १
 २ दशानुज, बङ्गे बङ्गे दाँतवाला । (पु०) २ राशस-
 विधीय एक राशसका नाम ।
 दशानिप (स० पु०) दशार्थ विपमत् । मोम सप, बहु
 साँप त्रिसडे दाँतसे विप रचता है ।
 दशान्ज (स० पु०-स्त्री०) दशान्जमिनाञ् । बराह,
 नूपर ।

दशिका (स० स्त्री०) दशो विषयैऽस्याः, दश ठम् ।
 १ दश दाढ़, भीमर । (त्रि०) २ दशानुज, त्रिसडे
 वाढ़ हो ।
 दशो (स० पु०-स्त्री०) प्रयप्ता दश पशुनाम् इति इति ।
 १ शूकर, सुपर । २ सप, साँप । (त्रि०) ३ दशानुज बङ्गे
 बङ्गे दाँतवाला ।
 दशना (स० स्त्री०) दश, सुरादिकात् विष्, तनोमावि
 सुक् । बर्म्, काम ।
 दशनावत् (स० त्रि०) दशना विषयैऽप्य मतुप ततो
 मन्व वा । १ बर्म्बुत् । २ पशोबिच ग्रन्थिमान त्रिषे
 शूब ताकत हो ।
 दशस (स० स्त्री०) दशस पशुन् । बर्म्, काम ।
 दसि (स० पु०) दशस-इत् । काम, काम ।
 दसिष्ठ (स० त्रि०) दशस दक् दसिष्ठा पतिथयेन
 स-इत्त्वा यथो सुवि चित्तोपः । १ पयन्त बर्म्बर्ता,
 जो शूब काम करता हो । २ दश लोबतम, देकने
 योग्य । ३ पयन्त ग्रन्थि सञ् ।
 दसु (स० स्त्री०) पशोबिच ग्रन्थि पङ्कत ताकत ।
 दसुत्त (स० त्रि०) दश पशुद्वारा सुत्तुपेरित, जो
 शूब मीठ जोड़े से भेबा सया हो ।
 दसुपवी (स० स्त्री०) १ बहु त्रिषे पशोबिच ग्रन्थि-
 मय्यक मालिच हो । २ दमन करने बाद पशुरोके पति ।
 दश स० स्त्री०) दशक प्रयोदशदिकात् साहुः । बन्ध
 पागो ।
 दशस्यबिक (स० पु०) दशस्यबिय ।
 दशार (स० पु०) दशरूपे कारट । तबन'वा तीमरा
 पथर द' ।
 दशारदि (स० सि०) दशार पादिय य् । त्रिसडे पादि
 मी दशार हो ।
 दशारान्त (स० सि०) दशारोऽन्तं यत् । त्रिसडे प्रथमि
 दशार हो ।
 दशौवा (प० पु०) १ शीर्ष कारोक वात । २ उच्च, उपाय ।
 ३ चच, कडवा ।
 दशोद्धार (स० स्त्री०) दश अक्षरोत्त उद्धार यत् ।
 सुसुतोक्ष उद्धारोऽग्नि'द, एक तरबको पीठको बोगारी ।
 सुदुर्गमि देवा लिखा है, कि शरोरक ३२४४ दीप प्रथक्

रूपमें अथवा मिल कर शोचोदर, बडगुद, भागन्तुक और टकोटर आदि रोग उत्पन्न करते हैं।

टकोटरके लक्षण—सोहपान द्वारा अनुवाहित होने वा वमन वा विरेचने कराने अथवा निरुद्ध वस्त्रिका प्रयोग करनेके बाद यदि शोतल जल पान किया जाय, तो जलवाहिनी नालियोंके दूषित होने वा पहलके तरङ्ग जठरको अंतर्द्वारा स्नेहोपलिस हो जाते हैं और उसमें टकोटर हो जाता है। इस रोगमें नाभिसगुल्ल स्थित किन्तु वृत्ताकारमें शोष हो उन्नत और जलमें भरा हुआ सा हो जाता है। चर्मखण्ड जलपूर्ण होने पर जैसे चुम्ब, क्रम्यित और शब्दित होता है, टकोटरमें भी वैसा ही होता है।

इस रोगमें आधान, गमनको अगति, टीवन्ध, ग्राफ, अर्द्धको अवसन्नता, वायु और मल रुक जाता है। (सुश्रुत) विशेष विवरणके लिये उदर शब्द देखो।

दक्खिन (हिं० पु०) दक्षिण देखो।

दक्खिनो (हिं० वि०) जो दक्षिण दिगामें हो, दक्खिनका। दक्षिणी देखो।

दक्ष (सं० पु०) दक्ष कर्त्तारि अच् । १ ताम्र चूड़, सुरगा । २ अति ऋषि । ३ गिवहृषभ, महादेवका बेल । ४ दक्ष-भेद, एक तरहका पेड़ । ५ दक्ष संहिताके कर्त्ता कोई मुनि । मनु, अति आदिने जो धर्मशास्त्र रचे हैं, दक्ष-संहिता उन्हींमेंसे एक है। ६ महेश्वर । ७ उशीनरके पुत्र दक्षभेद, एक राजा जो उशीनरके पुत्र थे।

(भागवत ८।२४।) ८ विष्णु । ९ बल । (निघंटु०)

(क्ला०) १० वीर्य । (शुक्ल यजु० १४।३)

(त्रि०) ११ चतुर, कुशल, निपुण, जिसमें किसी कामका भ्रष्टपट और सुगमताने करनेको शक्ति हो, होशियार । १२ दक्षिण भाग, दाहना।

(पुं०) १३ एक प्रजापति, जिनसे देवताओंकी उत्पत्ति हुई। (पुराण)

ऋग्वेदके बहुतेसे मन्त्रोंमें प्रजापति दक्षकी स्तुति की गई है। किसी किसी मन्त्रमें उनको ज्योतिष्काका पिता बतलाया है। जैसे—“हे शोभनदोमियालो सूर्य! दक्ष जिनके पितापुरुष हैं, उन शोभन ज्योतिष्क देवोंसे हमारे अनपराधकी कामना करना।” (ऋक् ६।५०।२)

दक्ष अदितिके पिता है। अदितिसे ज्योतिष्क और

देवोंकी उत्पत्ति हुई है, इमोत्रिये दक्षकी देवताओंका पितापुरुष माना गया है। ऋक् संहिताके अन्य मन्त्रों (१०।७२ सू०) में लिखा है—“देवोंके उत्पन्न होनेसे पहले ब्रह्मणस्पति कर्मकारकी तरह कार्य करते थे। प्रभृत्से मत् उत्पन्न हुआ। देवोंकी उत्पत्तिके प्रथमकालमें (इस प्रकार) प्रभृत्से मत्की उत्पत्ति हुई। बादमें उत्तानपट्टसे टिक हुआ। उत्तानपट्टसे ‘भू’ और ‘भृ’ से टिककी उत्पत्ति हुई। अदितिसे दक्ष उत्पन्न हुए, फिर दक्षसे अदिति। हे दक्ष! जिन्होंने अदितिके रूपमें जन्म ग्रहण किया है, वे तुम्हारी कन्या हैं, पीछे उन्हींमें भद्र और अविनाया देवोंका उत्पत्ति हुई।”

अदितिसे दक्ष, फिर दक्षसे अदिति उत्पत्ति की हुई, इस बातका तात्पर्य क्या? इस विषयमें यास्कने निरुक्तमें लिखा है—“दक्ष आदित्य (अर्थात् अदितिके पुत्र) हैं और आदित्यके पुत्र होनेके कारण वे सुत्य है। अदिति टाक्षायणी अर्थात् दक्षकी कन्या हैं। (श्रुतिमें लिखा है, कि) ‘अदितिसे दक्ष और दक्षसे अदिति उत्पन्न हुए हैं’ यह कैसे सम्भव हो सकता है? या तो दोनोंका एक साथ जन्म हुआ होगा अथवा देव धर्मके अनुसार दोनों ही एक दूसरेसे उत्पन्न और प्रकृति-प्राप्त हुए।

जर्मन विद्वान् रोयका मत है कि यहाँ दक्ष Spiritu-
tunc force है और अदिति Eternity।

शतपथब्राह्मणमें लिखा है—“केवल प्रजापति ही सबसे पहले हुए थे। प्रजापतिने प्रजाकामा हो कर पहले यज्ञ किया था कि मुझे बहुत सन्तान प्राप्त हो, यो प्राप्त हो, यगस्वा होऊँ, और अन्न मिले। उन्हींका नाम दक्ष है।” (२।५।१।)

पुराणोंमें जिस तरह विष्णुको विश्वका पालक बतलाया है, उसी तरह दक्षको भी माना है। जैसे—“प्रजापति हैं मरत स हीदं सर्वं विभक्तिं।” (शतपथ ६।१।१।५) अर्थात् प्रजापति हो भरत है, क्योंकि वे सम्पूर्ण जगत्का भरणपोषण करते हैं।

हरिवंशमें दक्षको विष्णुका ही स्वरूप माना है,—

“व्यतिकेन्द्रियो विष्णुगो गरमा ब्रह्मण्मवः।

दक्षः प्रजापति भूत्वा सजते विपुलाः प्रजाः ॥”

(हरिवंश २।११ अ०)

विष्णुपुराणके मतसे भी अदिति दक्षकी कन्या है (४।२।५)

रामायण महाभारत तथा पुराण-धर्मोंमें दसपक्षका जैसा प्रसङ्ग है वैसे ही इनमें इनका कुछ उल्लेख न करने पर भी तैत्तिरीयम विज्ञाने २५ ब्राह्मणे ६७ प्रपाठकर्म बद्रके प्रभाव प्रकाशमें उपरका कुछ सामान पाया जाता है।

महाभारत और पुराणादिके मतमें—ब्रह्मादि दशिया ब्रह्ममें दसका अर्थ है।

इसमें पहले मानसकी सृष्टि होती थी। इस प्रजापति ने जब देखा कि मानस सृष्टिके द्वारा प्रजाओ इति नहीं होती तब उन्होंने पहले पद्मसे मनुज द्वारा प्रजाको सृष्टि की। तभीमें मनुष्य एवं और पक्षी आदिबौं सैद्युज-द्वारा सृष्टि होने लगी है।

दशोत्पत्तिके विषयमें यहूद पुराणमें इस प्रकार लिखा है—विधाताने प्रजा-सृष्टिको धर्मिणावामे पहले जर्म ब्रह्म मनु, धनव, अशु आदि प्रजावर्णा मानसपुत्रोंको सृष्टि की पोछे कर्मसे दशव्याहू-द्वारा दसको तथा

ब्रह्माहू उने दसपक्षोंको उत्पत्ति हुई। दसने उन पक्षोंमें बहुतसो जन्मोंके उत्पन्न कीं और ब्रह्माके मानसपुत्रोंको शोध दीं। बद्रको मतो नामको जग्या प्राप्त हुई। जर्मसे बद्रके पम अथ महादेव पुत्र उत्पन्न हुए। किसी समय दस जयमेंथ पक्ष कर रहे थे, बदा मतो भी पनाइता होकर आई और दस द्वारा उपमानित हो कर उन्होंने प्राय तत्र दिये। इन पा महादेव ऋद्ध होकर यज्ञ पक्ष कर दिना और दसको धर्मियाय दिया कि "तुम ब्रह्मके धर्म उत्पन्न हो कर मनुष्यत्वका प्राप्त होओ।

बादमें मनुष्य शोभ्य प्रकृताधीन करार तपस्या द्वारा प्रजापत्तिको प्राप्त होने पर, सारियाके गर्भमें दस उत्पन्न हुए। धनन्तर दसने अशुविष मानस प्रजाको सृष्टि की। जब यह मानस-सृष्ट प्रजा भी इतिको प्राप्त न हुई, तब सैद्युज द्वारा प्रजाकी सृष्टि करनेके लिए उन्होंने बोरक प्रजापतिकी कथा धर्मिणाके माह विवाह कर लिया और इनके उत्पत्ति करार पुत्र उत्पन्न किए। इन पुत्रोंमें भी प्रजाको इति न हुई। इसके बाद धर्मिणाके ही कथाए उत्पन्न हुई जिनमेंसे दो पत्रिणाको दो जग्यापक्षो टय बर्भको, तीरह काप्रपक्षो और लता ईम चन्द्रो प्रदान को गई। जोरें जोरें इनके द्वारा चराचर जगत्को सृष्टि हुई और तभीमें सैद्युज-द्वारा

सृष्टि जियाका प्रसंग न हुआ। (पद्मपुरा २।६ अ०)

ब्राह्मिणापुराणमें लिखा है—इस जनत्को पादि सृष्टिके समय ब्रह्माने पर्ययरोरमें पुरुष और पराशरोरमें पक्षी हो कर उनको पक्षोंके गर्भमें विराट पुरुषको उत्पन्न किया और उनसे कहा "तुम प्रजापतिको सृष्टि करो।" धनन्तर विराट पुरुषने तपस्या करके स्वायम्भुव मनुष्यको सृष्टि की। स्वायम्भुव मनुष्य तपस्याके प्रभावसे ब्रह्माको परितुष्ट किया। ब्रह्माने मनुष्ट हो कर सृष्टिके लिए दसको उत्पन्न किया। उत्पन्न होनेके माघ हो दसने मनुष्य और विषिको दस बार प्रकाम किया। इस पर ब्रह्माने और भी दस प्रजापतिको सृष्टि का। दसने बहुततर प्रधान प्रधान देवर्षि, महार्षि और भोग्य पादि पितृ गणाको उत्पन्न कर सृष्टि प्रकृत की। यही दसका प्रतिमर्ग है। (वा०गु० १८ अ०)

दस प्रजापतिने योगमायाको उत्पन्न करके कठोर तपस्या की थी। योगमाया समुद्र हो कर प्रवृत्तमोचर हुई और उससे कहा—"तुम्हारे प्लवने मैं समुद्र हुई हूँ तुम धर्मिणापित पर मांगो।" दसने कहा—"यदि कर देतो है, तो यह टोत्रिये कि पाप मेरो कथा हो कर महादेवको पक्षा होवे। महाभाये। यह पर जेवन विरा हो नहीं है बरन् ब्रह्मा, विष्णु और महादेवका भी धर्ममें। महाभाया उत्तरमें "तवाहू" कह कर बोला कि मैं शीघ्र हो तुम्हारी पक्षोंके गर्भ में तुम्हारी कथाएधर्मिणा धवतीच हो कर शहरको महाधर्मिणाकी होलागे। किन्तु जिस समय मेरा तुम पनादर करोगी मैं उनो समय दस स्वायम्भुमो। मैं प्रवृत्त सृष्टिमें तुम्हारी कथा हो कर महादेवको पक्षो होजागे।" इतना कह कर महाभाया पलायित हो गई। धनन्तर दस पक्षो-सृष्टिके विना को महत्त्व धर्मिणाके मानस और विन्ताको पदायताये प्रजा उत्पादन करने लगी। ये सब पुत्र नारदके उपदेशानुसार सृष्टिके पय टन करने लगी। इसमें भी जब प्रजाको इति न हुई तब धायने सैद्युज धर्ममें बोरकतपया धर्मिणाके माय विवाह किया। 'दसके धर्ममें मन्ता होवे', पक्षी ऐसी धर्मिणाके करनेके पाह ही उनके धर्ममें महाभायाने जन्म लिया। ये मतोः नामके प्रसिद्ध हुई। दिविके प्रयत्नसे महादेवक माय

मतीका विवाह हो गया। प्रजापति दत्तने एक महा-यज्ञका अनुष्ठान करना शुरू कर दिया। इस यज्ञमें ऋषी हजार देवर्षि उजाता थे, नारद आदि षडतर ऋषि अभ्यर्तु और होता थे। समस्त देवताओंके साथ विष्णु इस यज्ञके अधिष्ठाता और स्वयं ब्रह्मा इसके देवविधि-प्रदर्शक थे। इस यज्ञमें समस्त टिक्कानगण हारपाल और रक्षक थे। उस म्यान पर मूर्तिमान् यज्ञ स्वयं उपस्थित था। पृथिवी स्वयं यज्ञवेदी थी। प्रजापति दत्तने सभीको वरण किया था। महादेव कपानी होनेके कारण यज्ञाङ्ग नहीं है, ऐसा समझ कर दत्तने यज्ञमें सिर्फ उन्हें निमन्त्रण नहीं दिया था। मतो प्रिय-तनया होने पर भी कपानाकी भार्या थी, इस लिए वे भी निमन्त्रित नहीं हुईं। यह सुन कर मती अत्यन्त क्रोधित हुईं और दत्तके इस निदारुण काय का स्मरण कर जननी मन जनने लगीं। इस समय कौप-रत्ननयना मतीने योगबल से समस्त हागे की रोक कर कुम्भक धारण किया, इस महाकुम्भकमें ब्रह्मरश्मि मँट कर उनकी प्राणवायु निकल गई। उस समय शिव मानससरोवरमें सन्ध्या समापन कर कैलासकी लोट रहे थे। माग में सतीके देहत्यागका संवाद पा कर वे ग्रीध्र ही घर लौटे और वहाँ विजयाके भुँहसे सब सुन कर अत्यन्त रुष्ट हुए। उस समय महा-रुद्रकी श्राव, कान और मुखकुहरसे अग्निकणोद्धार, प्रलयसूर्यसन्निभ ज्वलन्त उल्का निकलने लगी। इसके बाद महादेव यज्ञ स्थानके वहिर्भागमें जा विराजि और दूरसे उस समुज्ज्वल यज्ञस्थानकी देख कर वीरभद्रकी शोष हो वहाँ भँज दिया। वीरभद्र अपने टलजलके साथ यज्ञ-स्थलमें पहुँचे और महाका दत्तके यज्ञको ध्वंस करने लगे। वीरभद्रकी यज्ञ ध्वंस करती देख देवोंके साथ विष्णुने उन्हें वारण किया। वीरभद्रकी निवारित होत देख मासपीली आँखे कर महादेव स्वयं यज्ञस्थानमें घुस पडे और यज्ञ ध्वंस करने लगे। उन्होंने समस्त देवताओं की मंगा दिया और भृगुका रूप धारण कर भागते हुए यज्ञका पौधा किया; यज्ञ ब्रह्मलोकमें प्रविष्ट हो गया। पीछे पोछे महादेव भी पहुँचे। वैचारा यज्ञ डर गया और ब्रह्मलोक-

में उतर कर अपनी मायाने मतीके शरीरमें प्रविष्ट हो गया। फिर क्या था, यज्ञानुगामो रुद्र रुत मतीके पास पहुँचते हो उन्हें देख कर यज्ञको भूल गये और मतीके शोकमें व्याकुल हो कर रोने लगे। (काठिकापु० ८-१८४०) यतो देखो।

दत्तोत्पत्तिके विषयमें हरिवंशमें इस प्रकार लिखा है—दृग प्रचेताओंके मानस हाग मारिपाके गर्भ और सोमदेवके अंशसे दत्त प्रजापति उत्पन्न हुए। अनन्तर इन्होंने स्यावर, जड़म आदि विविध पदार्थोंकी सृष्टि कर कुछ मनःकल्पित कन्याओंकी सृष्टि की। उन कन्याओंमेंसे १० धर्मको दो गईं, १३ कश्यपकी और श्रवणगिट २१ कन्याएँ सोमदेवको दी गईं। उनके गर्भसे गौ, पत्नी, नाग, टैल्य, टानव आदि नाना जातिके प्राणियोंकी सृष्टि हुई। इसी समयसे स्त्री-पुरुषके सह-योगसे प्रजा-सृष्टिका प्रारम्भ हुआ। इससे पहले मनन, दर्शन और स्वर्गद्वारा प्रजाकी सृष्टि होती आ रही थी, वह अथ वर्जित हो गई। ब्राह्मणके दक्षिण-भद्र ऋषि दत्त और वामाङ्ग ऋषि उनका पत्नी उत्पन्न हुई, यह बात अत्यन्त कहा जा चुकी है। परन्तु इस जगह दत्तकी प्रचेताओंका पुत्र कहा गया है। सोमदेवके दोहित्व हो कर भी वे किस तरह उनके श्वशुर हुए, इस सन्देहके निवारणार्थ जनमेजयने कहा है—उत्पत्ति निरोध अर्थात् जन्म मृत्यु, प्राणिमात्रका ही नियत धर्म है। इसमें ऋषि और ज्ञानियोंके लिए कोई मोहका विषय नहीं है। प्रत्येक युगमें दत्त आदि दृपतियोंको एक बार उत्पत्ति और फिर लय हुआ है। पहले ज्येष्ठत्व कनिष्ठत्व कुछ भी न था, एक मात्र तपोबल ही उत्कृष्ट और अफर्षका कारण था। प्रजाविधाता दत्त विधाता द्वारा आदिष्ट हो कर भूतोंकी सृष्टि करने लगे। दत्त प्रजापतिने पहले ऋषि, देवता, गन्धर्व, असुर, राक्षस, यक्ष, भूत, पिशाच, पशु, पक्षी और रूग आदिकी मानस-द्वारा सृष्टि की; किन्तु पीछे जब देखा कि मानस-सृष्ट प्रजाको हर्षि नहीं होती, तब उन्होंने प्रजा-सृष्टि-की उत्कृष्ट वासनासे स्त्री-पुरुषके सहयोग द्वारा विविध प्राणियोंकी सृष्टि करना ही अथेय समझा और वीरण प्रजापतिकी असिद्धी नामकी कन्याका प्राणि-

दक्षयागः/पहारी (स० पु०) महादेव, शिव ।
 दक्षविहिता (स० श्लो०) दक्षेव विहिता गीतिका । १
 गीतिकामिद, एक प्रकारका गीत । (सि०) २ दक्षप्रत, दक्षमे विता हुआ ।
 दक्षप्र (स० श्लो०) जिसने अपने योषितासे उचलित की हो ।
 दक्षस (स० श्लो०) दक्ष करके पसुन । बल, ताकत ।
 दक्षसाधन (स० श्लो०) दक्षप्र साधन । धनसाधक ।
 दक्षसाधिका (स० पु०) मनुमैद नवम मनु । भागवतमें इनके विषयमें इस प्रकार लिखा है— दक्षकी इनकी उत्पत्ति हुई भूतकेतु, दैमिकेतु आदि इनके पुत्र थे । इस मन्वन्तरमें मरुवि गम पावि देवता हैं पशुन इनके दम्प हैं अतिमान् आदि श्रयि, पातुभान्सी पशु, धाराके गर्भमें भरवान् विष्णु कवमदेवक नामसे पनतोके हुए थे । ये पशुन नामक दम्पको नर्भे सम्पत्समस्त द्विषोक्त कि मोनो बलशाली हैं । दयम मनुका नाम मो दक्षसाधिका । ये उपलोचके पुत्र थे । भूर्विष्य आदि इनके वंश धर थे । इन मन्वन्तर कविषान् पानि ब्राह्मण पञ्चात् कविषान् सुव्रत बन्ध, बय भूर्त्ति आदि श्रयि और सुरसेन पतिव्रत आदि देव तथा गण्य देवरात्र हैं । भयवान् विष्णुने विषयक विप्रक वर विष्णुके पचाससे जन्मपञ्च विद्या द्या । ये विषयके नामसे प्रसिद्ध थे । उस समय देवरात्रका शयुके साथ मैत्री हुई थी । (भा० ६।१३ ब०) दक्षसाधिकाके समय पुत्रपुत्र पविषान्, शयुतनप सुव्रति, पत्रिपुत्र पयोभूर्त्ति, नमि उत्तमप पद्म, पुनपपुत्र प्रमति, कश्चपपुत्र नमोव और अत्रिपुत्र सख थे सात महर्षि थे । ये ही श्रयिमन्वन्के पद्वितीय कल्प कहें गये हैं । दक्षसाधिकाके सुत उत्तमोका, भोयवान्, कृत्तिपुत्र यतामोक, नरमित उपसेन, अयद्वय, भूर्विष्य और सुवर्चा ये १० पुत्र थे । (हरिव ७० ब० द्वापनेहपु० ८२ ब०)
 दक्षप्रत (स० पु०) दक्षप्र सुता । १ देवता । (उभासाधिका)
 प्रत्रापतिने दक्षके सुतेके नट हो जाने पर सुतिका कल्प की और इनसे देवता आदि उत्पन्न हुए । इन पुत्रि कापोह पुत्र कोनेके कारण दक्षोमें पुत्रव निह हुआ । विवाहाने सब दक्षको प्रत्राकृष्टिके निजे आदेश दिया

तव उभेनि मनके प्रभावसे श्रयि देवता, सुर, मन्वन् पादिको छटि की ।
 २ इयं आदि पुत्र । दक्षप्रवापतिके इयं आदि पुत्र हुए । ये समो प्रत्राको छटिके लिए मण्डित रहते थे किन्तु नारदने उपदेशानुसार वे छटिकोका परिमाण जाननेके लिए चारों दिशाओंको गये थे फिर लौटे नहीं । (हरिव ७३ ब०)
 (श्लो०) १ पत्रिगो आदि दक्षकन्याओंका नाम ।
 दक्षा (स० श्लो०) दक्षने बर्षी मारचारके समया भवति दक्ष-पञ्च टाप । पृथ्वी ।
 दक्षाभरभ सख (स० पु०) दक्षप्र पञ्च भ्र सवति भन्म विष्णु-कृत । १ शिव । २ शिवकीकी कठामे उत्पन्न बोरमद्र ।
 दक्षाभरभ सखत् (स० पु०) दक्षाभरभ भ्र न बराति । कृष्ण तुगागम । दक्ष यज्ञ-विनायक शिव, बोरमद्र ।
 दक्षाप्र (स० पु०) दक्षके चान पु समया भवति दक्ष पाय । (अक्षिरगृष्टिपञ्च भाष्यः । इन् १८६)
 १ गवङ्क । २ यज्ञ पको । दक्ष सुभो पाय । (श्लो०) १ वरिष्ठ, ब्रह्मन या उचलित करनेवाला । ३ पूजनीय ।
 दक्षाराम (द्वाकाधाम)—मोदाबरो जिलेक पन्तवत सुप्रसिद्ध आतंतीव । यह कोटोकनो नामक प्रसिद्ध तीर्थमें ७ मील पूर्व और रामचन्द्रपुरसे ४ मील दक्षिणमें पवसित है । यहाँ मोमिथरका एक बड़ा मन्दिर है । इसका निज दुम कनेको बतको मीद कर दो फुट लम्बा बसा गया है । पूजाके बन्त पुरोहितको दुम बल पर बैठ कर निद्रका अभिये आदि करना पड़ता है । प्रधान मन्दिरके भातर और मो छोटे मन्दिर हैं । प्रधान मन्दिर बड़ा क बहुरतीको लिए हुए, नाना प्रकारके विज्ञेयि बसित है । यहाँ भोमन्दाकीको दो क बहुरत कने हैं । मोमिथरके मन्दिरमें ईसाकी बारहवों मत न्दीक बहुरतने गिरासेक पाये जाते हैं ।
 दक्षि (स० श्लो०) दक्षमील कन्याके नामे योग्य ।
 दक्षि (स० श्लो०) दक्षमें इति दक्ष-रमन् (द्वाक्षिन्ना शिव्य । इन् ३।१६) १ दक्षिकोद्वृत्त, जो दक्षिण दिशामें हो । २ पश्चिमानुवर्ती जो पूर्वके अभिमुखसे चलता हो । ३ वह दिशा को द्युको और सुद करके कहे

मपयवाय, छत्रगम पाणि बद्धमे ब्रह्मो वरिषा
 ने दक्षिणरायको लोकांश चामर वा कई यत्र त्रिभि ई
 त्रिनमें छत्रगमपाणिका शयनमय नामक यत्र दक्षि
 दोष्य है। इमें दक्षिमे मानम पीता है कि प्रभाकर
 नामक एक राजा है, त्रिभिने नम नटया का शय
 नपायन किया वा। इकीं ही मलादे वको पूजा करनेमें
 दक्षिणराय प्राप्त हुए थे। दक्षिणराय ब्रह्मण
 मीशिके गता हुए हैं। बाल्यरायके परामयासुमार दित्रनी
 का कर इकीं ने नामि क पर प्राप्त किया वा। लक्ष्मि
 नामक स्थानमें दक्षिणी राजी भोग इतरा सुद दूषा
 वा। पत्नी को पीने मित्रता को गई थी।

बहुते गत्रीय दक्षिमे मानम भोग र त्रिभि मय
 ब्रह्मणमें सुवचनमार्तिका प्राचय वा लोको मयय दक्षिणराय
 पाणिभूत हुए थे, समस जरीं तरय व्यापी का बरा
 लयद्वय था। वास्तु इन्के प्रायगे व्यात्र विभीका पणित
 म कर मइने थे। इमोनित्र मीय भोग इमें व्याघ्र-
 रोको धोर व्याघ्र राजा ममभ का बड़ी मत्रि खाने थे।
 खनि छत्रगमने लिना है, कि बहुते गत्रीय ज्योति
 दक्षिणराय पविधारमें का पदुयत लखीं मत्राको
 तत्र करना मइ कर दिया, इमपिय दक्षिणरायमें ब
 । गत्रीका युव इन गया धोर लम सुदमें दक्षिणरायका
 मिर बट गया। वास्तु देवबर्तने कटा दूषा मिर मिर
 लुइ गया। पाणिभ मत्राकेने वा कर दोनो का मत्रा
 निबटा दिया धोर दोनोमें मित्रता कर दा। लोको
 बहु मर दक्षिणरायमें त्रिभि मीकोइ द्विष्टु धोर सुवच-
 मान बहुते गत्रीय पर दक्षिणरायक मयनका पूजा
 धारि वा रही है।

धोर-मय मिर त्रिभि दक्षिणरायक माय माय लमक
 गहन व्याघ्र धोर सुभाषा का मयय मूर्ति को लो पूजा
 दूषा करनी है। इकीं कटी दक्षिणराय धोर बाल राय
 निबगमक इकीं पुत्रि जान है। त्रिभि दिव्य का बदना
 है कि मत्राकेने तब ब्रह्मण मयय दक्षिण रा
 यक मयय इय र मययने क लुभाय धोर दक्षिणराय
 का लयति हुई थी।

दक्षिण दक्षिणराय—शिवना मनी सुगमना पत्र दाय।
 मय क मययक त्रिभिकादक मयकूमा है। १०६३

इकीं रने पुयक मयकूमा किया गया। मोना धोर
 वाग उद्योग बाल्यदर नामदे ही धाने इन्के पत्न्यगत
 है सुदक्षिण ११३ बग मोन है। इमें ४०० याम
 नगने है।

मयाट है, कि १००१ ई०को ११वीं पल्लवाका लो
 नूयन कटा वा लनेके सभित वा नामक इम मयकूमीक
 मय लोको भोग ब्रिण्ट हुए थे।

दक्षिणराय (म० त्रि०) दक्षिण भागमें स्थित, जो दक्षिणको
 धोर पड़ता है।

दक्षिणराय (म० पु०) दक्षिण मयुद्रा कर्मधा०।
 दक्षिणदिग् स्थित मयुद्रा, मयय मयुद्रा।

दक्षिणाय (म० त्रि०) दक्षिण भाग तिष्ठति म्मा क।
 १ बह मयया लो धयने मयुद्र दक्षिण धोर पड़ा है।

२ दक्षिण भागस्थित, जो दक्षिणी धोर पड़ता है।

दक्षिण (म० लो०) दक्षिण राय। ३ दक्षिण त्रिभि,
 दक्षिणदिगा। पदाय—पवाधो मयमनो यामो बह
 मयो।

दक्षिण दिगाको बाबुका गुण पदरायुक्त, चतुर्धा
 लिङ्गयक लक्ष्मीक रमयितनायक, सुय, क्षान्ति धोर
 बुधियायक मयमनायक, विद्याका धय धोर बाबुयईक
 है। मयुद्र (कर्मकाय) कटत्रनक है। इम निमाके
 पविगति हय कया धोर मययरायि है। (उपनिषत्तय)
 २ यथात्रिभि दिग्। ३ मलिहा इयत, मयमाम। ४
 यत्र त्रिभि पवमान पर ब्राह्मरो को त्रिभि जामेका बन,
 ब्रह्मणो वा पुरोदिताको यथादि कर्म मयमिने वेदि लो
 बन दिया जाना है तय दक्षिण कइने है। दान यत्र
 मय पादिको दक्षिण लई नेनेने बह राधमें ही इयने
 ३ कोमा निपयन हो जाता है। इयानि प्रयेक कया को
 मयमि पर दक्षिण निमा कर्तव्य है।

“अदक्षिणाय दान मयनेर पुणेन।
 दिग्ध त्रिभिमीय दयानवीर तुग दक्षि इ” मयिबपु०)
 मयि हो कर मयिदूषक दक्षिण निमा धारिने।
 दक्षिण दिग्दि निमा किया मयया २४ काम निपयन को
 जाना है। त्रिभि नाम कइने मये है मयमने मान को
 मय है। इया कश्च मयो लोकोमें दीनेका दक्षिण
 निमा विधान है।

दक्षिणाव्योतिस् (ब० पु०) दक्षिणा दक्षिणार्धा व्योति रश्मि । पश्चिम दिशाम् ।

दक्षिणात् (स० पञ्च०) दक्षिणार्धा दिशि, दक्षिणार्धा दिशि दक्षिणा वा दिक्ष दक्षिणा-प्राति (उत्तरावररक्षिकारति) । प० १।१।१६) १ दक्षिण दिक्ष, दक्षिणको घोर । २ दक्षिणम् । ३ दक्षिणम् ।

दक्षिणातिक्षा (स० खो०) बैतानीय शब्द । यह मात्राहृत है । बैतानीय मात्राहृतके पक्षे घोर तोसरे चरचर्म १५ मात्राय घोर दूसरे तथा चौथे चरचर्म १५ मात्राय रहती है ; किन्तु इसमें प्रमित यह है, कि यदि दूसरी घोर तीसरी मात्रामें एक मुख हो, तो यह दक्षिणातिक्षा मात्राहृत होगी घोर दूसरी दूसरी मात्रा बैतानीय से होती है ।

दक्षिणापत्र (स० पु०) दक्षिणा पत्राः पत्र समाधानम् । १ देयभेद, एक देयका नाम । भक्तको घोर श्रेष्ठ पत्र त पार कर दक्षिण पत्रमें कर एक राशि गई है जो विन्यत पत्र त घोर अनुष्ठायामिनी पत्रोचो नदी है ; यहाँ यह प्रियेके प्राथम घोर विद्वानके पत्र है जो योग्यको घोर चर्म गने है । इसके बाद दक्षिण दिशामें जो देय पड़ता है, उसका नाम दक्षिणापत्र है । (मरुट १।१६ न०) राक्षसाक्ष देको । २ दक्षिणकृतमार्गज्ञान, यह राक्षा को दक्षिणको पार गया हो ।

दक्षिणापत्रिक (म० त्रि०) दक्षिणापत्रोद्ग्राह्य स्नाभिभेन पात्रास्त्रेण वा नम् । दक्षिणापत्रदेयकायो दक्षिणापत्र देयके राजा, दक्षिण देयके सम्बन्धी ।

दक्षिणापत्रा (स० स्त्री०) दक्षिणाया अपराधा दिवोऽन्त राक्षा दिक्ष् । १ नैऋतकोष । (त्रि०) २ तद् संस्थित, जो नैऋत नोचर्म पड़ता हो ।

दक्षिणापत्रक (स० त्रि०) दक्षिणा दक्षिणार्धा प्रवक्ष गिन्ध । उत्तरकी पक्षेया दक्षिणकी घोर मोषा क्लान आद्यादि प्रदेय । यह क्लान आद्यादिके लिए प्रयत्न होता है ।

“दुर्भिक्षे विरिच न सेनेनेपकेपयेत् ।
दक्षिणा प्रवक्ष नैव प्रवेनेपराक्षेत् ॥” (मनु० १।१०५)
आरथाकेके लिए पक्षि वा पञ्चापदिगुण्य दक्षि घोर निर्वेन प्रदेय विरिच कर, कवे मोहरसे हीपना चाहिये ।

यह क्लान यदि समागत दक्षिणको घोर प्रमय मोषा न हो, तो प्रवक्ष करके उसे दक्षिणापत्रक करना चाहिये 'दक्षिणापत्रक' (कात्यायनभौ० २।२।१।६) 'दक्षिणापत्रक देवकम् नवति' (कर्क)

दक्षिणापटि (ब० पु०) हुयंपेयया पण्डित देयमभ्योति प्र-पय शिष् दक्षिणा दक्षिणार्धा प्रति वाह्यः । १ हुयंपे मय दक्षिणकृत पयमिद यह जोड़ा जो तोन जोड़ों के रक्तको माकुमें पामि कोता जाता है । २ दक्षिणकृत प्रति महय पञ्च ।

दक्षिणावन्ध (स० पु०) दक्षिणार्धा वन्धः अनुवन्धः । यहक पादिरे दक्षिणावन्धका एकभेद । जो पश्चिमाम पूर्वक दक्षिणा देति है घोर काम मोक्ष पादिरे पश्चिमत है सिधे यहक ब्रह्मचारो सिद्ध घोर बैतानसेके लिए जो दक्षिणवन्ध कहा गया है । "दक्षिणावन्धो नाम दृष्टक ब्रह्मचारिसिद्धकैलाशसंगं कथयोरुपेठम् अभिप्रायपूर्वकं दक्षिणा वरपठना दक्षिणावन्ध इत्युच्यते ।" (उत्तरावर) ब्रह्म-वन्धामें पश्चात् जिनका पश्चिमाम सूर नहीं हुआ है, उनसे लिए ब्रह्मवन्ध समझना चाहिये ।

दक्षिणासुख (सं० त्रि०) १ दक्षिणा दक्षिणार्धा सुख यत्न । दक्षिणाविसुख, दक्षिणापत्र, जिसका सुख दक्षिणको घोर हो । पूर्वकी घोर सुख करके भोजन करनेसे पातुकी हृदि घोर दक्षिणसुख बैठ कर भोजन करनेसे ब्रह्मको प्राप्ति होती है । (मनु०)

प्राप्तु जिनके पित्त कोदित है उनसे लिए यह विधि नहीं है । है यदि दक्षिणसुख बैठ कर भोजन करे, तो उनके पिष्टकातो समझना चाहिये । कोदितपिष्टकीको घमावाह, घमावाह, घोर दक्षिणसुख भोजन न करना चाहिये । (त्रिपित्त) दक्षिणको तरण सुख करके पित्तको तर्ण करना चाहिये । ' स्त्री०) २ दक्षिणकी घोर सुख ।

दक्षिणामूर्ति (स० पु०) दक्षिणा पशुब्रूया मूर्तिरश्मि न ज्ञानान् न सुप्यत् । शिब मूर्ति मंद, तन्त्रके पशुसार शिबको एक मूर्ति । पाशककोहको प्रति दिन शिबकी दक्षिणामूर्ति का ध्यान करना चाहिये । इस मूर्ति का एक वर्ष तक ध्यान करनेसे याज्ञवल्क्याजामकी शक्ति प्राप्त होती है । (उत्तरावर)

इसका ध्यान इस प्रकार है--

“श्रेयश्चक्रान्नपहावयद्ममन्त्रे योपाननस्यं प्रभुं ।
प्रतःशतत्तत्रमुनिमुनिः प्रतिदिशं प्रोद्दीक्ष्यमानाननं ॥
मुद्रा तर्कमर्था दधानममलं कर्पूरगौरं शिवं ।
हयन्तः कल्पे स्फुरन्तमनिसं भ्रूदक्षिणामूर्त्तिकं ॥”

ये महाचक्रके तन्त्रे योगामनने अवस्थित हैं, अध्यात्म-
तत्त्वके जिज्ञासुगण चारों तरफसे उनका मुख निःशरति
है, वे तर्कमुद्रा धारण किये हुए हैं, उनका वर्ण कर्पूर-
वत् शुभ्र है, वे सर्वदा टेटोप्यमान हैं । ऐसे दक्षिणा-
मूर्त्ति महादेवका सर्वदा ध्यान करना चाहिए । (नैऋ-
त्य समासमें 'कप' होता है, उस अवस्थामें 'दक्षिण-
मूर्त्तिक' ऐसा रूप हो जाता है ।

दक्षिणामूर्त्तिमुनि—उद्धारकोप वा कोपध्याननिर्णय
नामक मन्त्रत ग्रन्थके प्रणीता ।

दक्षिणायन (सं० ज्ञा०) दक्षिण दक्षिणस्यां दक्षिणे गौने
वा अयनं रवेः । १ सूर्यको दक्षिण गति, सूर्यको
कर्करेखासे दक्षिण मकर रेखाकी ओर गति । २ सूर्यका
दक्षिण गोलरूप तुलादि षोः राशिमें जाना ।

सूर्य गगनमण्डलमें परिवर्ष, आपादमासके अन्तमें
उत्तरको ओर जंझा तक गमन करते हैं, वहां तकका
नाम उत्तरमंक्रान्ति और क्रान्ति तथा उत्तर क्रान्तिसि-
ले कर जहां तक दक्षिणको ओर गमन करते हैं, इसका
नाम दक्षिणक्रान्ति है । इन दो प्रकारको गतियोंको
दक्षिणायन और उत्तरायण कहते हैं । अर्थात् सूर्य जब
आषणसे शेषमास तक उत्तरी रेखासे दक्षिणी रेखाको
जाते हैं, तब उसे दक्षिणायन और जब माघ मासे
आषाढ़ तक दक्षिणी रेखासे उत्तरी रेखाकी जाते हैं
तब उसे उत्तरायण कहते हैं । इन दो सोमाश्रितियोंके
पृथ्वीका जो अंश पड़ता है, उसका नाम मध्यखण्ड है ।
इस खण्डमें १२ राशि हैं और इन वारहोंके अन्तर्गत
१०१६ नक्षत्र देखनेमें आते हैं । गगनमण्डलके मध्य-
खण्डसे उत्तर जो अंश है, उसे उत्तरखण्ड कहते हैं ।
इस खण्डमें ३५ राशि अर्थात् पुञ्ज है और उनमें भी
अन्तर्गत १४५६ नक्षत्र हैं । यह इस लीगोंने दूरान्तेय
ज्योतिर्विदों द्वारा पता लगा है । मध्य खण्डमें जितने
नक्षत्र हैं, उनमेंसे जितनोंको एक एक कर

आहति निर्दिष्ट कर पूर्वकालमें ज्योतिर्विदोंने उन्हें
वारह भागोंमें राशिचक्र नामसे सोमावह किया है ।
इन वारह राशियोंके नाम ये हैं—मेघ, हृष, मिथुन,
ककट, सिंह, कन्या, तुला, विद्या, धनु, मकर, कुम्भ और
मोन ।

मेघ राशिके प्रथमांशमें जो क्रान्तिपात होता है ।
जिन दो दिनोंमें सूर्य उस रेखामें रहते हैं, उन दिनोंमें
दिवा और रात्रिमान बराबर होता है । -

विषुवरेखाके उत्तरको ओर ६ राशि अर्थात् मेघ, हृष,
मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या और फिर दक्षिण को ओर ६
राशि अर्थात् तुला, विद्या, धनु, मकर, कुम्भ और मोन
द्विक भावसे अवस्थित है ।

पृथ्वी अपने क्रम पर घूमते घूमते वैशाख मासमें जब
मोन और मेघराशिके बीच पड़च जातो है अर्थात् जिस
अंशमें राशिचक्रके माय विषुव रेखासे मिलती है, तब उस
अंशमें माघ सूर्यका समसूत्रपात होता है और मोन तथा
मेघ राशि ठीक सूर्यके सामने रहती है । उस समय
पृथ्वीके निरक्षरत्तके ऊपर सूर्यरश्मि ठीक सोधो पड़तो
है । इन कारण पृथ्वी पर सब जगह उस दिन दिवा और
रात्रिमान बराबर रहता है । अर्थात् जब सूर्य विषुव-
रेखा पर रहते हैं, तब उनको क्रान्ति शून्य होता है और
एक सेरसे दूसरे सेर तकका गोलकाई प्रकाशमय रहता
है । सूर्यको उत्तरक्रान्ति जितनी हो बढ़ती है, उतना
ही उत्तरमेरु पार कर सूर्यका प्रकाश फैल जाता
तथा दक्षिणमेरु प्रकाशजोन ही जाता है और सूर्यको
दक्षिणक्रान्ति जितनी बढ़ती है, उतना ही दक्षिणमेरु
पार कर सूर्यका प्रकाश फैलता तथा उत्तरमेरु प्रकाश-
जोन ही जाता है । सूर्यकी क्रान्तिका परिमाण २३-
२८ है । वैशाखमासमें सूर्य मेघराशिमें प्रवेश कर रोज
एक अंशसे कुछ कम ही कर ज्येष्ठमासमें हृषराशिमें
पड़च जाते हैं । मेघराशिमें कुछ पश्चिम और कुछ
उत्तरमें हृषराशि अवस्थित है । सूर्य रोज एक अंशसे
कमको चालसे जा कर आषाढ़ मासमें मिथुन राशिमें प्रवेश
करते हैं । मिथुनराशिमें हृषराशिके ठीक उत्तरपश्चिममें
अवस्थित है । सूर्य मिथुन राशि पार कर आषणमासमें
ककट राशिमें जाते हैं । जिस स्थान पर राशिचक्रके

माघ उत्तराश्विनीको रैवा मियो है। यह स्थान उभर
 टिन डोह मयुं सारने रहता है। इसने बाद मयु
 उत्तरको घोर नहीं जाने। इसोने उभ समग्रका पयगा
 कालका कहते हैं। मयुं इस राशिमें १ पार कर
 भाद्रमासको मिक राशिमें गमन करति हैं। यह मिक
 राशि ककैट राशिके दक्षिण पश्चिम भागमें पवन्वित है।
 दोहे मयुं पश्चिम मासको अष्ट्याराशिमें जाने है। शिव
 राशिमें विदुवरैवाके माघ चक्रका जैमा न योग है। सेमा
 को न भोग तुला राशिमें समझना चाहिये। सेवराशि तुला
 राशिमें १८ घूर है। इसी कारण सेवानि ६ राशिवां
 राशिचक्रका चर्हे माघ घोर तुलादि ६ राशिवां उभ चक्रका
 पयगाई पय है। मयु कालिके मासमें तुला राशिमें,
 पयगापय मासमें हृदिके राशिमें घोर दोष मासमें अनु
 राशिमें प्रवेश करते हैं। त्रिम पय में राशिचक्रके माघ
 दक्षिणकातिको रैवा मिलतो है। यह पय उभ दिगाई
 डोक मयुंके मासमें पड़ता है। फिर इस स्थानमें मयु
 दक्षिणको घोर नहीं जाने। इसोने यह समय दक्षिणा
 यनालक्षण कहनाता है। इस राशिमें बाद कृष्णराशि
 घोरतव मीन राशि पड़तो है। त्रिममें मयुं कर्म
 पाना न घोर चैव मासमें प्रवेश करति हैं।
 इसा प्रकार पुनो फिरने जैमान मासमें मीन घोर
 सेवराशिमें मज्जलकर्म आ पवु चली है। विदुवरैवाके
 काक राशिचक्रका को पय मिलता है, उभ पयके मयुं
 मण्डकके मासमें पाने पर दिवा घोर राशिमान मदा
 एक मा रहता है। यदाकर्म मयुं हो एक राशिमें
 दूसरी राशिमें पूर्वोक्त दपके अमय करते हैं, उभा नहीं,
 मचन पदार्थमें पवन्वित हो कर पचन पदार्थ को
 घोर हृदियात करनेने उभ पदार्थका गतिभ्रम जाता है।
 इसो अमचे कारण सेमा दाप पड़ता है। इसका उभ
 यह निश्चलता है, कि पुनो कपोक कर्मके एउ राशिमें
 दूसरो राशिमें जा कर उत्तरायण घोर दक्षिणापमक
 पनुनार बारह राशिमें मा भोग काले दुई एक चर्चमें
 गर्भको एक बार परिष्कमा करतो है। मयुं दूसी अर
 कय रको। दक्षिणापममें पुत्र कर्म तथा प्रतिष्ठा
 पादि करना विशेष है।

सम्भावनात्ममें निधा है कि दक्षिणापममें विराट्,

प्रम, चूहादि भंस्कर दोष, यद्य, यद्यप्रवेश टान
 पुत्रा पतिव्रादि नहीं करनो चाहिये। यद नीर मोह
 पय कर भी न तो लसे उभ नहीं होता।

किर कर्मतिमें भी निष्ठा है कि उभका भागी घोर
 पारामादिको प्रतिष्ठा उत्तरायणमें करनो चाहिये।
 दक्षिणापममें नहीं करनेने उभ प्राप्त नहीं होता। किन्तु
 दक्षिणापममें माघ, भैरव वराह, नरसिंह, विद्विज्जम
 घोर मदिपासु, इन्दीको प्रतिष्ठा को आ मजनी है।

(काकमा० विषयन०)

दक्षिणापम उभतापो भी राशि है इसोने दुर्गा
 सारके समय मय्या कालमें देवोटा उद्योहन करना होता
 है। १ दक्षिणापममिमामो देवताभेद। ३ दक्षिणापम
 स्थान प्राण।

दक्षिणापम (म० को०) दक्षिण पयगा। पय
 भेद एक अगलता नाम।

दक्षिणापम (म० पु०) दक्षिण दक्षिणमानी चक्रमें
 यम्ब। प्यादि कालके दक्षिणापम प्रथित मयुं यह मयुं
 त्रिमक दक्षिण पयगा म्याधिक नार मारनेने जाव हो
 गया थी।

दक्षिणापम (म० पु०) दक्षिण पयगा दक्षिणापम (म०
 १ ११११२) दक्षिणापम यह को दक्षिणापम उद्योहन
 को। इसका पयगा-दक्षिण घोर दक्षिण है।

दक्षिणापम (म० वि०) दक्षिण पयगाके मयुं मयुं
 म०। दक्षिणापम।

दक्षिणापम (म० वि०) दक्षिण पयगाके पापुन पय।

१ दक्षिण पयगाके उद्योहन आ दक्षिणा पार पुमा कृपा
 को। २ दक्षिणापम स्थान को दक्षिणको पार पवन्वित
 को। (पु) ३ मयुं विगैय एक प्रकारका मयुं त्रिमका
 पुमाद दक्षिणा पयगा जाता है।

दक्षिणापम को (म० का०) दक्षिणापम नामका योडा।

दक्षिणापम को (म० को०) दक्षिण पयगाके पापुन
 पय, गोपानिजातुद्वेय। दक्षिणापम नामका योडा।

दक्षिणापम (म० को०) मयुंके मयुं मयुं।

दक्षिणापम (म० पु०) दक्षिणा दक्षिणापम तो पयगा
 यह पय। दक्षिणापम दक्षिण पयगाको योडा।

दक्षिणापम (म० वि०) दक्षिण पयगाके उद्योहन पय।
 दक्षिणापम।

दक्षिणाशा (स० स्त्री०) दक्षिणा आशा दिक् । दक्षिण-
दिक्, दक्षिण दिशा ।

दक्षिणाशापति (स० पु०) दक्षिणस्या दिशः अधिपति । १
यम । २ मङ्गलयज्ञ ।

दक्षिणासद्—दक्षिणसद् देखो ।

दक्षिणाहि (स० अव्य०) दक्षिण दूरार्थे आहि । दूरस्थित
दक्षिण भाग ।

दक्षिणित् (स० अव्य०) दक्षिणात् वेदे ष्योदरादित्वात्
साधुः । दक्षिणको श्रोत्र ।

दक्षिणी (हि० स्त्री०) दक्षिण देशको भाषा । (पु०) २
दक्षिणदेशका निवासी । (त्रि०) ३ दक्षिणदेश सम्बन्धो,
दक्षिण देशका ।

दक्षिणीय (स० त्रि०) दक्षिणामर्हति दक्षिणा-क । १
दक्षिणाहं, जो दक्षिणाका पात्र हो । २ दक्षिण सम्बन्धो,
दक्षिणका ।

दक्षिणतर (स० त्रि०) दक्षिणादितरः । दक्षिणसे इतर
वाम, बायां ।

दक्षिणन (स० अव्य०) दक्षिणएनप् । दक्षिणकी श्रोत्र
इस शब्दके योगमें द्वितीया विभक्ति होती है ।

दक्षिणमन् (स० पु०) दक्षिणे ईर्षे ऋणं यस्य ततोऽनच् ।
व्याघ कर्त्तक दक्षिण पाश्वरका आहत ऋण, वह हरिण
जिसके दहिने बगलमें व्याघाके तौरसे घाव हो गया हो ।

दक्षिणेश्वर—वंगालमें चौबोस परगनें जिसके अन्तर्गत एक
ग्राम । यह हुगली नदीके किनारे अवस्थित है और
कलकत्तेसे कुछ उत्तरमें पड़ता है । यहां वारूद तैयार
करनेका कारखाना, वारह मनोहर शिवमन्दिर और एक
सुन्दर कालीका मन्दिर है ।

दक्षिणीत्तर (स० त्रि०) दक्षिण और उत्तरको श्रोत्र अव-
स्थित, जो दक्षिण और उत्तरमें पड़ता हो ।

दक्षिणीत्तरो (स० त्रि०) दक्षिण भागके ऊपर अवस्थित ।
दक्षिण्य (स० त्रि०) दक्षिणां अर्हति दक्षिणा यत् ।
दक्षिणाहं, जो दक्षिणाका पात्र हो ।

दक्षिणेश्वरलिङ्ग (स० स्त्री०) काशीस्थित दक्षप्रजापति
स्थापित लिङ्गभेद, काशीका एक लिङ्ग जिसे दक्षप्रजा-
पतिने स्थापित किया था । दक्षप्रजापतिने ब्रह्माके आदेश-
से काशीमें शिवलिङ्गकी स्थापना की थी । वर्षा के

अनन्यचित्तसे उनको पूजादि करते थे । महादेवने
मन्तुष्ट हो दक्षको वर दिया और कहा—“तुम्हारे सम्पूर्ण
अपराध मैंने क्षमा कर दिये, तुम्हें और भी एक वर
देता हूँ कि तुमने जिस लिङ्गकी प्रतिष्ठा की है, वह
दक्षिणेश्वरलिङ्गके नामसे प्रसिद्ध होगा । जो लोग इस
लिङ्गकी सेवा करेंगे, मैं उनके सहस्र सहस्र अपराध
क्षमा कर दूंगा । तुम भी इस लिङ्गकी पूजाके कारण
सर्वके मान्य बनोगे और दो परार्द्धकालके बाद मोक्ष
प्राप्त करोगे ।” इतना कह कर महादेव उस लिङ्गमें
अन्तर्हित हो गये । (काशीख० ६१ अ०)

दक्षमा (हि० पु०) पारसीके मुद्दे रखनेका स्थान ।
पारसी लोग शवको जलाते या गाड़ते नहीं हैं, बल्कि उसे
खास निर्जन स्थानमें रख देते हैं जहाँ चोल, कौए आदि
उनका मांस खा जाते हैं । इस कामके लिये थोड़ासा
स्थान पचोस तोस फुट ऊँचो टोवारसे घेर दिया जाता है
और इसके ऊपरों भागमें जंगला मढ़ा जाता है । वे
इसो जंगले पर शव रख देते हैं, चोल-कौए आदिसे
उसका मांस खावे जाने पर हड्डियां जंगले होकर नोचे
गिर पड़ती हैं ।

दखल (अ० पु०) १ अधिकार, कब्जा । २ हस्तलेप,
हाथ डालना । ३ प्रवेश, पहुँच ।

दखलदिहानो (हि० स्त्री०) किसी वस्तु पर किसीकी
अधिकार दिहा देना, कब्जा दिलवाना ।

दखलनामा (अ० पु०) दखलदिहानीका सरकारी आँशा-
पत्र ।

दखील (अ० वि०) अधिकार रखनेवाला ।

दखीलकार (फा० पु०) कमसे कम बारह वर्ष तक किसी
जमींदारके खेत पर अपना दखल जमाये रखनेका
आसामी ।

दखीलकारो (फा० स्त्री०) १ दखीलकारका पद । २
वह जमीन जिस पर दखीलकारका अधिकार हो ।

दगड़ (हि० पु०) एक प्रकारका टोल जो लड़ाईमें
बनाया जाता है, जंगी टोल ।

दगड़ना (हि० क्ति०) सत्य वचनका विश्वास न करना ।

दगदगा (अ० पु०) १ डर, भय । २ सँदेह, शक ।
३ एक प्रकारकी कंठील ।

दगदगाना (द्वि० द्वि०) चमकना, दमदमाना ।
 दमदमादद (द्वि० फो०) चमक दमक ।
 ददददो (द्वि० फी०) दन्दय देवो ।
 दयना (द्वि० द्वि०) १ दन्दूक वा तोपका कटना । २
 दाना लाना । ३ दण्ड होना, जलना ।
 दयरो (द्वि० फो०) जिना मन्दिना दहो ।
 दमदपदस (द्वि० पु०) बोधा परेव ।
 ददना (द्वि० पु०) बर्दादा वा मोटी कपडका पगरवा ।
 ददनामा (द्वि० द्वि०) किमी दूमरको दामनेके काममें
 लाना ।
 ददवा (द्वि० वि०) १ दागवाना । २ सखिद दामवाना ।
 ३ प्रेतत्वम-कार्या, तिसने प्रेतजिवा को को । ४ जो
 दण्ड दिया गया हो ।
 ददा (प० फो०) कपट, जल, बोधा ।
 दमादार (प० वि०) विमानगातक, बोधेबाज, जलो ।
 दगावात्र (प० वि०) १ कपटो जमी । (पु०) २ बर
 मनुष्य जो बोधा देता हो, जलो पादमी ।
 दगावात्री (प० फी०) जल, कपट, बोधा ।
 दगागल (प० फो०) दकषण ललहारोबल पगांल

मिच बमभयपठे तु इयोदरादित्वात् मकारस्य ककारः
 दकामल । नित्रल स्थानके खपरो लपच देक कर
 भूमिके गोचे पानी होने पचवा न होनेका ज्ञान ।

इसका विषय इहद्वल जिताने इस प्रकार सिखा है—
 त्रिम प्रकार मनुष्यके शरीरमें रक्तवाहिनो मिराए होती
 हैं, उसी प्रकार पृथ्वीमें खपर नाचे जलवाहिनो मिराए
 होती हैं । एक वर्षे धोर एक रसबुज्ज जलके पाश्चात्य
 गिरने पर मडो थनेक वर्षों तथा रसोके बुज्ज हो जातो
 है । इसी कारण जलको परोषा मडो हारा करनी
 चाहिये । रज्ज, पत्थि, यम, निष्यति, बचच, पवन चन्द्र
 यहर खादि शिवाक जसया प्रदक्षिणक्रमके पूर्वोदि
 मडो दियाकोके अधिवर्तित है । पागे दियाकोमि बहने-
 वानो मिराए पपने पपने अधिपनिर्के नामके पुष्कारो
 जातो है ।

पृथ्वीके मध्य को मिरा प्रवाहित है, उसे महामिरा
 कहते हैं । महामिराके पनावा धोर भी वैदिकों मिराए
 है, जो मरुता प्रचारके निहनु कर मिच मिच जातोके
 मरिच है ।

धारी धोर पचव्यित तथा पागाकथि उचित मो
 नव लक्ष्मिराए हैं, वे शुभजनक हैं । कोनको धोरमि
 पवात् पत्थि नैकल, वायु धोर दूयोन इन धार कोकोमि
 निजनी बुर्क मिराए एमजनक नही हैं । यदि किमो
 नित्रन स्थानमें ये तथा उच हो तो समझना चाहिये
 कि उसने पश्चिम तोन हाथको धूरो पर छिड पुरने गोचे
 पच्छे जलको मिरा है धोर उसने मो पाच पुरने० गोचे
 पाच्छे वर्षे मच्छूक पातवर्षे श्रुतिवा धोर पुटमन्क
 पापाच इका विज्ञोके गोचे जल है । नित्रन प्रदेयमें
 याद मसुनका पेड़ हो, तो उसने उत्तर तोन हाथको
 धूरी पर दो पुरचे गोचे पूर्ववाहिनो मिरा पचव्यित है ।
 इस जगह एक पुरने नाचे कीइमन्दिना श्रुतिवा धोर
 पाच्छे वर्षे मच्छूक है, ऐसा समझना चाहिये ।
 जस्य, उचच पुर्बको धोर पाच हो यदि बसोके नी, तो
 उत्तरे दक्षिण दो पुरीको धूरो पर दो पुरने गोचे खादिद
 जल मिसेया । मडो कोन्ति समय यदि पाच पुरने गोचे
 मडोको धोर कहुतरक समान पत्तर एक मडो मोको निजने
 तो समझना चाहिये वहां बहुत समय तक जल रहता
 है । गूररुहकथि तोन हाथ पश्चिम एक पुरने कमीनके नाचे
 सखिद इडो धोर पश्चनके त्रैमा प्कर नित्रले, तो पाच
 पुरीको धूरो पर उत्तम जनबुज्ज मिरा मिसियो । पत्तु न
 उचने तोन हाथ उत्तर यदि बसोके रहे, तो समझना
 चाहिये पश्चिमको धोर पाच पुरनेको धूरी पर जल है ।
 मडो जोदते समय यदि पाचपुरके गोचे मोड नामक
 जन्तु धोर एक पुरन गोचे धूसरवर्षे मडो तथा समक भो
 कुछ गोचे पीना पच रीतोको मडो मिसि तो वहां पप
 रिमित जल पाया जायगा । बसोकेमि एकत्रित निगुण्टो
 उचने तोन हाथ दक्षिण दो पुरने गोचेमें पयोष धोर
 स्वादु जल; उसने मो पाच पुरने गोचे रोहित मडको,
 तब कपिनबच धोर उचने मो नीके मण्डर वर्षे तथा
 रीतोकी मडी मिसियो धोर बर्दाका जल बहुत खादिद
 होगा । यदि हैर पिड़के पूर्व बस्तीक देना जाय, तो
 उत्तरे बसनेमें तोन पुरने गोचे जल पचम मिसिगा ।
 बर्दा हाथ तथा शिरका पीड़ एक साब मिला हो, बर्दा
 तोन पुरने गोचे पश्चिमको धोर जनमिरा; उसने मो

एक पुरसे नोचे दुन्दुभिका चिह्न ; यदि बेल और गूनर-का पेड़ मिला हो, तो दक्षिणको और तीन हाथ छोड़ कर तीन पुरसे नोचे जल तथा ठमसे भा आध पुरसे नोचे क्षणमग्डूक मिलेगा । दठगूनर पेड़के समोप यदि वल्मीक नजर आवे, तो समझना चाहिये, कि पश्चिमकी ओर तीन पुरसे नोचे टिगवाही गिरा प्रवाहित है । इससे भी आध पुरसे नोचे ईपव् पाण्डुवर्ण और पीपी मिट्टी, दूधके जैसा स्फोटपत्थर और कुसुटके जैसा मृषक देखनेमें आवेगा । जलहीन स्थानमें जहां स्फोट नौसादरों पेड़ देखा जाय, वहां पूर्वकी ओर तीन हाथकी दूरी पर प्रथम दक्षिणवाहिनी गिरा प्रवाहित होती है । इस जगहको जमोन खोदनेमें नोलात्पलवर्ण और कपोत-वर्ण विविष्ट मालूम पड़ेगी तथा हाथ भरके फामने पर अजगन्धो मत्स्य और चीर समन्वित जल मिलेगा । शोणाक वृक्षके पश्चिम-उत्तरकी ओर दो हाथ छोड़ कर हुसुद नामकी गिरा मिलेगी । यह गिरा तीन पुरसे नोचे हो कर बहती है । यदि विभोतक वृक्षके टाङ्गिने वगलमें वल्मीक हो, तो समझना चाहिये, कि पूर्वकी ओर आध पुरसे नोचे हो कर जन्मिगिरा प्रवाहित है । यदि वहासे हाथ भरको दूरी पर वल्मीक रहे, तो माटे चार पुरसे नोचे जल प्रवाहिनी गिरा अवश्य बहती होगी । उस जगहकी एक पुरसे नोचेकी मट्टी स्फेद तथा कुडूम की तरह चमकीला पत्थर मिलेगा । तीन वर्ष बात जानने पर वहाको जलवाहिनी गिरा नष्ट हो जायगा, ऐसा समझना चाहिये । (हृदयहिता ५१ अ०)

दगैल (फा० वि०) १ जिसमें दाग हो । २ जिसमें कुछ दोष हो । (पु०) ३ छली, कपटी, दगावान ।

दग्ध (स० वि०) दहना । १ क्षतदाह, भस्मीकृत, जो जल गया हो, जला या जलाया हुआ ।

“दशा दग्धं मनश्चिन्तं बोधयन्ति दशैव भा ॥” (साहित्यद०)

२ दुःखित, जिस कष्ट पहुँचा हो, जिसका हृदय दग्ध हुआ हो वा जो जल गया हो ।

(क्लो०) ३ शरीरस्थ अग्निदाहमेद, वह शरीर जो जल गया हो । शरीरका कोई अङ्ग जल जाने पर निम्न लिखित प्रणालीसे उसका प्रतिबन्धन करना चाहिए । अग्नि घृत, तैलादि स्नेहविशिष्ट भयवा नोरस द्रव्यका

आयुष्य ले कर दहनकार्य सम्पन्न करती है । अग्नि द्वारा मत्तम होने पर घृत तैल आदि स्नेहद्रव्य सूक्ष्म गिराओंमें प्रविष्ट हो जाते हैं, इस कारण वह त्वक् और मांस आदिके भीतर प्रवेश कर शीघ्र ही दहन करते हैं । इन्हीं लिए स्नेहद्रव्य द्वारा दग्ध होने पर अन्यन्त वेदना होती है । यह अग्निदग्ध चार प्रकारका है—प्लुट, दुर्दग्ध, सम्यक्दग्ध और अतिदग्ध । जिसमें जलन पड़े और रंग अदृश जाय उसे प्लुट कहते हैं । जिसमें दग्ध स्थान पर स्फोट (फफोला) हो जाय और वह स्थान अत्यन्त उष्ण, दाहयुक्त, रक्तवर्ण, पाक एवं वेदनाविभिष्ट हो तथा क्लिप्तवर्ण आरोग्य हो, उसका नाम है दुर्दग्ध । दग्ध स्थान गभोर न हो और पके ताड़की तरह उसका रंग हो तथा पूर्वोक्त लक्षण उसमें विद्यमान हों, तो उसे सम्यक्-दग्ध समझना चाहिये । अतिदग्ध होनेसे, दग्ध स्थानका मांस भूल जाता है, शरीर गिधिल और शिवा, स्रायु, मन्धि, एवं अक्षि नष्ट हो जाते हैं तथा अत्यन्त ज्वर, दाह, पिपासा, सूच्छा आदि उपद्रव उपस्थित होते हैं । इसमें जल स्थान देखसे भरता है और भर जाने पर विवर्ण हो जाता है । इस चार प्रकारके दग्धोंके द्वारा अग्नि-कर्मका साधन हुआ करता है ।

अग्नि द्वारा प्राणियोंका रक्त कुपित हो कर शीघ्र ही वेग-विविष्ट हो जाता है ।

रक्तके उस वेगके कारण पित्त भी वेगवान् हो जाता है । अग्नि और पित्त दोनों प्रायः एक जातिके पदार्थ हैं और एक ही रस-विविष्ट हैं ; इसीलिए अग्नि-दग्ध स्थानमें तंत्र वेदना, स्वभावतः जलन और स्फोट ही जाते हैं तथा ज्वर और दृष्ट्याकी दृष्टि होती है ।

दग्ध-विक्रिष्ण—प्लुट दग्धमें अग्निका ताप तथा उष्ण-क्रिया और उष्ण शोषका प्रयोग करना चाहिए । उसके द्वारा शरीर घर्माक होने पर और भी तरल हो जाता है । शीतल जल द्वारा स्वभावतः उक्त स्थान्दित (जम-जाना) होता है । इस लिए प्लुट-दग्धमें उष्णके सिवा शीतल क्रिया कभी भी सुलभकर नहीं होती । दुर्दग्ध स्थान पर उष्ण एवं शीतल दोनों प्रकारकी क्रियाएं करनी चाहिए । दग्ध स्थान पर घौ लगाना और शीतल वस्तु सेचन करना चाहिए । सम्यक्-दग्ध होने पर

व शोषण चन्दन, शीत घोर गुणक इनको सोमें मित्रा कर प्रथेय देना चाहिये । अथवा पाममें वा जस-ककुल देयमें जो पण रहते हैं, उनका प्रथवा जसककुलवा मीस पोष कर उसका भी प्रथेय दिया जा सकता है । पित्तत्रय विद्रुधि होने पर जेमें निरन्तर उष्ण शिवा को खातो है इसमें भी बँसा हो करना चाहिये । अति दम्ब न्यानका जो मीस शोष हो जाता है उसे ठंडा कर देना चाहिये घोर उष्ण पर शीतक क्रिया करने चाहिये । उससे बाद शान्तिवायुके गुण विद्रुधन त कुम्भी (बाजबं) को पोष कर सोमें मित्रा कर प्रथवा गावक्षि काशमें गाव को ज्ञान पोष कर उनमें दूत मित्रा कर उसका प्रथेय देना चाहिये । गुणकके पत्तोंमें प्रथवा पानोमें होनेवाले किसी पेंकू प्रत्येयें अत स्नानको ठंड रखना चाहिये । पित्तत्रय विषय रोगमें जो शिवाय को खातो है इसमें भी उष्ण प्रयोग करना चाहिये । मीस, शीतो मधु शोषके पेंकू को ज्ञान, धना म खोठ, चन्दन घोर मूर्धामुख इनको एक साथ पोष कर, दूत पाउ करना चाहिये । इस बीजे यह प्रकारके अग्निदम्ब प्रथ अशुको तरु भर जाते हैं । स्नेहद्रव्यके म योगसे दम्ब होने पर उसमें बस क्रिया को विधेय सामसायक होता है ।

उष्ण वायु घोर रोग (बुध वा घाम) द्वारा दम्ब होने पर शीतक क्रिया करने चाहिये । अतिमय शीत द्वारा दम्ब होने पर किसी भी प्रतिकारने उसको शान्ति नहीं होती । ज्ञानाग्निद्वारा दम्ब हो कर यदि ओषित रहे, तो तमाम शरीरमें दूत तैलादि स्नेह द्रव्योंका मदन घोर घेवन करना चाहिये तथा पूर्वक अग्निदम्बके प्रथेयका भी प्रयोग करना चाहिये ।

यक्ष-बहिष्कारमें अग्निद्विया को प्रधान है । पौकित स्नानको अग्निद्वारा दम्ब करनेका नाम अग्निद्विया है । अग्निदम्बके विज्ञानानुसार दम्ब करनेसे यह रोग फिर कमो नहीं होता । जो रोग चार-द्वारा पारोष्य नहीं होते, वे अग्निद्वियाने पारोष्य को खाते हैं । स्नेहद्रव्यके पौकित स्नान पर अग्निदम्ब करना हो, तो उसमें विषको हागोविडा गोदन्, शट, मन्काका श्रायकोष्ठ प्रथवा अन्य किसी प्रकारका शोष मधु शुद्ध दूत, तेल घोर बसा पादि द्रव्योंक म योगकी आवश्यकता होती है ।

किसी प्रकारके लक्ष् रोगमें यदि दम्ब करनेकी पाव दृढता था पके तो विषको हागीविडा, गोदन् पर घोर शलाकाके द्वारा मीसमत रोगमें दम्ब करना हो तो श्रायकोष्ठ वा अन्य किसी प्रकारके शोषद्वारा शिरागत स्नानुपेत, सम्प्रियन, वा अक्षिगत रोगमें दम्ब करना हो तो शुद्ध मधु वा अन्य किसी प्रकारके दूत तैलादि स्नेह-द्रव्य द्वारा दम्ब करना चाहिये ।

शरत् घोर शीतकृतके मित्रा अन्य कमो अशुधोमें रोग विधेयसे पौकित स्नान दम्ब क्रिया जा सकता है । परन्तु दम्ब क्रियाका प्रयोग तभी करना चाहिये जब कि यह रोग अन्य किसी भी प्रक्रियासे पारोष्य न हो । अन्यथा दम्बकर्म करना उचित नहीं ।

रोमीको, इत्युक्त करनेसे पहले विच्छिन्न अथ निश्चाना चाहिये । तब दम्ब करना चाहिये ।

किसी किसी बिदानुके मतसे यह दो प्रकारका है—
 लक्ष्-दम्ब घोर मीसदम्ब । परन्तु सुश्रुतके मतसे गिरा, स्नायु, सम्प्रि घोर अक्षि-स्नानमें भी इस प्रकार दम्ब करनेका निषेध नहीं है । लक्ष् को दम्ब करनेसे 'चट-चट' शब्द, दुर्गन्ध घोर लक्ष् का प्रतीक होता है । मीस-को दम्ब करनेसे दम्बस्नान कपोतवर्ण अथ स्वीत, वेदनाविशिष्ट शब्द सुकृषित घोर अत हो जाता है । गिरा घोर स्नायु पर दम्बकर्म करनेसे दम्बस्नान हृष्य बर्ण घोर उच्चतत्रविशिष्ट तथा रक्तादिवा स्नायु बंद हो जाता है । सम्प्रि घोर अक्षि-को दम्ब करनेसे दम्बस्नान हृष्य, अक्षयवर्ण घोर लक्ष् य हो जाता है तथा दम्बजनित अत भी शीघ्र पारोष्य नहीं होता । गिरोरोग घोर अक्षि-दम्ब रोगमें अशु लक्षाट घोर लक्षाटको अक्षि-को दम्ब करना पड़ता है । बर्ण रोगमें अशुके इति-स्नान पर अत लक्ष् वाष्पादिन शर्दु-बर्ण-स्नानके रोग पर दम्ब क्रिया करनी चाहिये । रोगके स्नातमेंदने अग्निदम्बके भी चार भेद हैं—
 1. अशय बिन्दु, बिसेपन घोर प्रतिमाशक ।
 2. शोषी तरु शोष शिवाके पाकार दम्ब करनेका नाम अशय है । बिन्दुके पाकार दम्ब करना बिन्दु अक्षयता है । शरीरके शिष्य अशुकेको जना देना बिसेपन है ।
 3. उष्ण दूत वा तैलादि तरुन पटाप के म योगके को दम्ब-कर्म होता है अथ अशयमें दम्बका उपकारी द्रव्य शरीरमें

व्याज हो जाय उसे प्रतिसारण कहते हैं। इससे विलम्बमें प्रारोप्यता प्राप्त होती है। (सुश्रुत) अग्निदग्ध देखो।

(स्रो०) ४ कटण, एक प्रकारको घाम। (रत्नमाला०)

५ तिथिभेद-युक्त चन्द्राश्रित राशि। (ज्योतिस्तत्व)

इस दग्धग्रहमें जो भी कार्य किया जाता है, वह नष्ट हो जाता है। ६ वारभेद युक्त नक्षत्रभेद।

दग्धकाक (सं० पु०-स्त्री०) दग्ध इव काकः। द्रोणकाक, डोम कौवा।

दग्धपात्रन्याय (सं० पु०) न्यायभेद, एक प्रकारका न्याय।

दग्धमन्त्र (सं० पु०) दग्धः मन्त्रः कर्मघा०। तन्त्रसारोक्त मन्त्रभेद, तन्त्रके अनुसार एक मन्त्र। इसके मूर्धा प्रदेशमें वज्र और वायुयुक्त वर्ण होते हैं।

दग्धमत्स्य (सं० पु०) अग्निदग्ध मीन, भुनो हुई मछली।

दग्धरथ (सं० पु०) दग्धः रथः यस्य। इन्द्रके एक सारथी, चित्ररथ गन्धर्वका नामान्तर। ये इन्द्रके यज्ञ सारथीका काम करते थे। इनके एक विचित्र रथ था, इसीसे इनका नाम चित्ररथ पड़ा। किन्तु समय पाण्डवगण पाञ्चाल को जा रहे थे, इसी समय दग्धरथ मोमाश्रयण तोर्यमें गङ्गामें पैठ कर रमणियाँके साथ झोडा कर रहे थे। पाण्डवोंको अपनी और आति देखे ये घनुष्टङ्कार करते हुए अर्जुनके पास पहुँच गये और अभिमानसे बोले,—“मैं यहाँ जलविहार करता हूँ। इस समय देवगण भी यहाँ आनेका साहस नहीं करते। तुमने मनुष्य हों कर क्या मोच कर यहाँ आनेका साहस किया ?” इस प्रकार दोनोमें कुछ काल तक वादानुवाद होता रहा। पीछे घनघोर युद्ध छिड़ ही गया। अर्जुनने आग्नेय शास्त्रके प्रभावसे इनका रथ दग्ध कर डाला। उसी समयसे ये दग्धरथ नामसे प्रसिद्ध हुए। वाट इन्हीं अर्जुनके साथ मित्रता कर लो और उन्हें चक्षुषीविद्या सिखला दो। (महाभारत आदिप० १०० अ०)

दग्धरुह (सं० पु०) दग्ध अपि रोहति रुह-क। तिलकृष्ण। तिलक वृक्ष।

दग्धरुहा (सं० स्त्री०) दग्धरुह-टापु। वृक्षविशेष, कुरुक्ष नामका पेड़।

दग्धवर्षक (सं० पु०) रोहिष नामक वृक्ष, रोहिष नामकी घास।

दग्धा (सं० स्त्री०) १ सूर्यावस्थान टिक, वह दिशा जिस ओर सूर्य अवस्थान करता हो, सूर्यके ग्रस्त होनेकी दिशा, पश्चिम। २ वृक्षविशेष, एक तरहका पेड़। इसे कुरु कहते हैं। पर्याय—कुरुह, दग्धरुहा, दिग्धिका, खलेरुहा, रोमशा, ककेशदला, भस्मरोहा, सुदग्धिका। गुण—कटु, वैषाय, उष्ण, कफवातनाशक, पित्तप्रकोपक, जठराग्निकारक। (राजनि०)

३ राशिभेदयुक्त तिथिभेद, विशिष्ट राशियोंसे युक्त कुछ विशिष्ट तिथियाँ। जैसे वैशाख मासको शुक्लाष्टमी, आषाढको शुक्लाष्टमी, भाद्रपदको शुक्लाष्टमी, कार्तिकको शुक्लाष्टमी, पौषको शुक्लाष्टमी, फाल्गुनकी शुक्लाचतुर्थी, व्यावणको कृष्णाष्टमी आश्विनकी कृष्णाष्टमी, अग्रहणकी कृष्णाष्टमी, माघकी कृष्णाष्टमी, चैत्रकी कृष्णाष्टमी और ज्येष्ठकी कृष्णाचतुर्थी। ये दग्धा तिथियाँ निष्फला हैं और इनकी सामदग्धा कहते हैं। इन दग्धा तिथियोंमें यदि कोई यात्रा करे, तो उसको मृत्यु निश्चित है, चाहे वह इन्द्र-तुल्य क्यों न हो। दग्धातिथिमें विवाह होनेसे स्त्री विधवा हो जाती है, कृषिकार्यमें फलका अभाव, विद्यारम्भमें सुखंता, स्त्री-सङ्गममें गर्भपात और दूग्धमूलधनका नाश होता है। अतएव दग्धातिथियोंमें कोई भी शुभ कार्य न करना चाहिए। (ज्योतिस्तत्व)

रविवारकी द्वादशी, सोमवारकी एकादशी, मङ्गलवारकी दशमी, बुधवारकी नवमी, वृहस्पतिवारकी षष्ठी शुक्रवारकी अमावस्या और पूर्णिमा एवं शनिवारकी सप्तमी होनेसे वह तिथि दग्धा समझी जाती है, इनकी दिनदग्धा कहते हैं। दिनदग्धा तिथियोंमें भी कोई शुभ कार्य न करना चाहिए। (ज्योतिस्तत्व)

दग्धाक्षर (सं० पु०) पिङ्गलके अनुसार भ, ह, र, भ और ष ये पाँचों अक्षर। इनका कन्दके आरम्भमें रखना वर्जित है।

दग्धास्य (सं० पु०) कुमारिच क्षुप लालमिर्चका पौधा। दग्धाह (सं० पु०) चारप्रधान वृक्षविशेष, एक प्रकारका पेड़।

दग्धिका (सं० स्त्री०) कुक्षिता दग्धा-कन् (कृषि०)। पा ५:३:७४) टापु। १ दग्धान्न, जला हुआ भात। इसका पर्याय—भिस्रटा, भिस्रिटा, भिस्रिटा, भिस्रिटा और भिस्रिका है। २ दग्धावृक्ष, कुरु नामका पेड़।

दशैष्टका (स० श्लो०) दश दशका जलो दुई ई ट.
भईवा।

दशोदर (स० श्लो०) दश उदर। दशोदर कला
बुधा पेट।

दशक (हि० श्लो०) १ बह चोट को भटके वा दशोपके
को जाती है। २ बका डोडर। ३ दशक।

दशकन (हि० श्लो०) १ डोडर आना। २ दश काना।
३ भटका आना। यह मकमक किया मो है।

दशना (हि० श्लो०) गिरना, पटना।

दशाल (स० पु०) १ मिथ्याबादो, भूत, विद्वान।
२ गिर।

दशकल (हि० पु०) मजदुरी नामका पोषा।

दशोष्ण (हि० श्लो०) दशकना बाह, सडु आदिबा
बोना।

दशियन (हि० श्लो०) दशोवाला जिसने दशो रघो डो।

दशियर (हि० पु०) सुय।

दश (स० श्लो०) दश वज्र वा दाम्यतेज दमक।

दशारथ (स० श्लो०) दश नामो कडा।

दश बारक करमेसे काम—गिर पड़ने पर लकड़े
सहारे उठ सकत हैं, मज से पाकामक करने पर पचनो
रघा कर सकत हैं इत्यादि। यह पाकुण्डर घोर मज
नामक है। (रेपक) ब्राह्मण पर दश छठाने पर ब्रह्म
घोर प्रतिब्रह्म आचरक करना चाहिये।

६ बह दश जिन ब्रह्मचारो धारक करते हैं। ब्राह्मण
पादि लोगो कर्मके लिए उपनयनके समय दश बारक
करनेको विधि है। तन्नुसार ब्राह्मणको चित्र घोर
पनामका, चित्रको बट घोर घटिका एक (वैश्वको
विष्णु घोर लदुमर-काठका दश बारक करना चाहिये।
ब्राह्मणका दश बेमान पर्यन्त, अश्विनोका दश लकाट
पर्यन्त घोर वैश्वकोका दश नासिका पर्यन्त होना
चाहिये। (मठ १।३५-४८)

भन्वासिदीके लिए दश पदकके विषयमें विरोधता है।
यथा—

“कुटीरके। बहुरके इ कर्षिक दशैष्टक।
बहुर्के बली इ को न बरवाण क जलन इ” (शरीर)
कुटीरक, बहुरक, इ म घोर परमह स वन म ग्या-

मिदिनि पदकेको पपिचा पोषिके लक्षरोत्तर कपत घोर
येह है। कमनाकरने सिखा है कुटीरक घोर बहुर
दशको तोन दश, इ मको एक बहुरक क तथा परम
इ मको एक दश रचना चाहिये। (निर्देशिक)

मिधातिथि सिद्धि है—
“वाक-रतुजयो इ बमवापरकेन वतवेद”

पर्याय, जब तक मिट डी न हो मके, तब तक एक ही
दश रहने, परन्तु यहाँ मिट क यत्रिपर नहीं है, नाम
द श्रादि दमनपर है।

पहले जो परमह मके लिए एक दशको बात कही
गई है वह अविद्वानोंके लिए है; परमज्ञानिकोंके लिये
नहीं। मजोपनिषद्में लिखा है—‘न दश न पिशा मप्यका
रन न मकेन कति परन्तु व ‘अन्वे वास्य दश’। पर्याय
ज्ञान को परमह सखा दश लक्ष्य है।

३ मूहमेद, एक प्रकारका मूह। अश्विपुरात्रके
मतमें मण्डन घोर घस इतके मेटसे माला प्रकारके दण्ड
हैं यथा—तियं यश्रुति छति, सभं तोषति, दृषगं श्रुति।
इसके नामान्तर इस प्रकार हैं—मदर, दृष्टक, धमक,
बाप, वैश्विक प्रतिष्ठ सुपतिष्ठ, शीन, विजय सभय,
विशाल, धुरो लू वाककं चमसुय, यपंतुक, बलय,
पतिशाल, पतिशाल, विषय म्पुषापस धनु पस
दिस्युष लख दश, दिद क, चतुर्दण्ड, मोमुशिका,
सहारी, मकट, मकर, इत्यादि। मूर देको।

भाषि पच्। ३ दमन, माघन। १ मरकामतका,
सभंभूतमें पक्षि सा घोर दानक्य कम लय।

(मठ मीश्वर्य)

दण्ड इवाचरति दशकल्पितो भाषि बन्। ६ दश
तुष्कजति, दश दिने योग्य धमका। दश करपादो पच्।
७ प्रकारक बड़ा भारो। ८ पञ्च सोडा। ९ कोष,
कोना। १० मज्जन, मवाजो। ११ मैय शीना। १२
मूमिका परिमाचर्म द कमोण मापनेका एक प्रकारका
दंड वा मज्ज। यह चार ज्ञान मन्ना होता है। (अथर्वली)

१३ सुयका एक परियदु। १४ यम इच्छकर्ता।
१५ अमिमान, कमण्ड। १६ दशकार पदमिद, एक
पच डी दशके पाकारका होता है। बहाण मारक देने,
१७ इच्छापुरात्रके एक पुत्र। इन्के नामानुसार दण्ड

कारणका नामकरण हुआ है। (हरिवंश १० अ०) १८ माठ पलके बराबर समय। घटियन्त्र देखो।

१८ विष्णु। (भारत १३।१४८।१०५) २० शिव। (भारत १३।२८६ अ०) २१ दंडाकार ऋजु स्यु के परिवेषका एक भेद। (बृहत्सं १३ अ०) २२ दंडवत् स्थित सूर्यादिकी किरणोंका संघात। (बृहत्सं ३० अ०)

२३ राज्यकी रक्षाके लिये राजाओंकी ओरसे किया जानेवाला चौथा उपाय। साम, दाम, भेद और दंड ये चार उपाय हैं। स्वदेश और परदेशके भेदसे दंडमें पावक्य होता है। राजा स्वदेश अर्थात् अपने राज्यमें प्रजाशासनके लिये जो दंडविधि प्रचलित करता है, उसे स्वदेश-दण्ड कहते हैं। अग्निपुराणमें लिखा है—परदेश-जं प्रयोच्य दण्डादि प्रकाश और अप्रकाशके भेदसे दो प्रकारके हैं। लुण्ठन, ग्रामघात, शस्त्रघात, अग्निदोषन, विष, अग्नि और विविध पुरुषोंकी सहायतासे वध, ये प्रकाश-दण्ड हैं। साधू-दूषण और उदक-दूषण इनको अप्रकाश-दण्ड कहते हैं। (अभिपु० १०४ अ०)

प्रजा शासन दण्डके विषयमें महाभारत और हिन्दू-धर्मशास्त्रादिमें कैसा वर्णन है, यहाँ उसका सार सार कहा जाता है।

राजाकी किस अपराधमें कैसा दण्डविधान करना चाहिए, इस विषयमें निम्न प्रकार लिखा है।

ऋणदान—उत्तमर्णके कर्ज देने पर यदि अधमर्ण परिशोध (चुकता) न करे, पीछे उत्तमर्ण राजाके पास नालिश करे और अधमर्ण ऋणको स्वीकार करे, तो अधमर्णको एक सौ पणमेंसे ५ पण दण्ड देना चाहिए, परन्तु अधमर्ण यदि ऋणको अस्वीकार करे, तो उसे सौ पणमेंसे १० पण दण्ड देना उचित है। उत्तमर्णको बन्धक (गिरवी) ले कर ऋणस्थानमें वृद्धि ग्रहण करना चाहिए अर्थात् प्रतिमास सैकड़ा पीछे अस्सी भागका एक भाग ब्याज लेना चाहिए। यदि कोई भोगार्थ वसु वा दास दासीको उत्तमर्णके पास गिरवी रख कर अधमर्ण रुपये कर्ज लेवे, तो उन रुपयोंका सुदो ब्याज नहीं ली जाते। इसका व्यतिक्रम करनेसे दण्डनोय होंगे।

मिथ्या साक्ष्य (भूठी गवाही)—लोभके वशवर्ती भूठी गवाही देनेसे हजार पण दण्ड होता है। मोहके

कारण भूठी गवाही देनेसे ढाई सौ पण, भयके कारण मिथ्या साक्षी देनेसे हजार पण, स्नेहमें या कर भूठी गवाही देनेवालेको हजार पण, कामाधोन ही कर भूठी गवाही देनेसे ढाई हजार पण, क्रोधवश देनेसे तीन हजार पण, अज्ञानतासे देने पर दो सौ पण और असावधानतासे भूठी गवाही देने पर एक पण दण्ड होता है। राजाको सत्यधर्मके पालनार्थ और अधर्मके शासनके लिए उक्त दण्डविधान करना चाहिए। परन्तु छत्रिय, वैश्य और शूद्र ये तीन वर्ण यदि वारम्बार मिथ्या साक्ष्य दें, तो उन्हें पूर्वाक्त दण्ड दे कर देशमें निकाल देना चाहिए। ब्रह्मणको अर्थ दण्ड न करके, सिर्फ निर्वासन-दण्ड ही देना चाहिए।

निक्षेप—यदि कोई व्यक्ति विग्रहासपूर्वक किसीके पास धन गच्छित (धरोहर) रखे और उसे फिर वह वापिस न दे, तो राजाको उचित है कि उसे सुवर्णादि-चोरके समान दण्ड दें। जो व्यक्ति मिथ्या प्रतारणादिके द्वारा पाधन चरण करता है, उसको तथा उसके सहायकोंको वध दण्ड मिलता है।

अस्वामि-विक्रय—जो अस्वामो हो कर स्वामोकी श्रुत मतिके बिना उसको चीज बेचता है और वह व्यक्ति यदि द्रव्य स्वामोके वंशका कोई हो, तो उसे ६ सौ पण दण्ड देना चाहिए और यदि द्रव्य-स्वामोके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध न हो, तो उसे चौरदण्डसे दण्डित करना चाहिए।

सम्भूयसमुत्थान—बहुतसे मिल कर काम करें, उनमेंसे परस्परका अंश भी यथा नियमसे विभाग कर लें। यदि मोहवश इनसे अन्याया करें, तो राजाको चाहिए कि उसको चौरके निमित्त एक सुवर्णका दण्ड दें।

क्रयविक्रयानुषय—क्रय वा विक्रय करके जो पीछे अनुत्ताप करता है, वह उस द्रव्यको दश दिनके भीतर फिरतो दे वा फिरतो ले सकता है। परन्तु दश दिनके बाद इस तरह फिरती लिया वा दिया नहीं जा सकता। यदि बलपूर्वक लौटा दे वा फिरतो ले, तो उसको ६ सौ पणका दण्ड होता है।

दोषविशिष्टकन्यादान—दोषविशिष्टा कन्याके अवशुणों को छिपा कर यदि उसका कोई सम्भ्रदान करे,

ती राजा उसे २५ पणका दण्ड देता है। -- जो स्वयं दोषके कारण किसी पण्य पर 'चतुर्थीति है,' 'हुमारी नहीं है' कह कर दोष लगाता है और उसे प्रमाणित नहीं कर सकता राजा उसे सो पणका दण्ड देता है।

। तामि-रुद्र विचार—पण्योधि कारिं सामो पौर पासक नियमका अतिशय कर, तो राजाको विचार पूर्वक दण्ड देना चाहिये। यदि कर्मके दोषके मन्त्रको जानि हो तो राजा उसे जितना मन्त्र राजाका मान्य है, समने दण्ड गुना दण्ड दे। सामी पौर पण्यमानक रक्षण के दोषके पण्यद्वारा मन्त्र नष्ट होने पर भी राजाको उक्त प्रकार दण्डविधान करना चाहिये।

गर्भ-पारथ (गालोगोत्र)—चक्रिय यदि ब्रह्मणको मासो देवे तो उसे सो पण, वैश्यको छिद्र वा दो सो पण पौर गुरुको मन्त्र (अर्थात् दशविध शारोरीक दण्डोन्नि कोरि पत्र) दण्ड देना चाहिये।

ब्राह्मण यदि चक्रियका मासो दे, तो उसे ५० पण दण्ड देना पड़ता है, वैश्यको दे तो २५ पण पौर गुरुको दे तो १२ पण दण्ड होता है। द्विजातियोनि सम वर्णमें परस्पर धर्ममापक होने पर १२ पण दण्ड होना चाहिये। किन्तु यदि कोरि अन्वय मासो गणेश कर तो उसे पूर्वोक्त दण्डसे दूना दण्ड देना चाहिये।

। एव आति अर्थात् गुरु यदि द्विजातियके प्रति कठिन भावका प्रयोग करे, तो गुरुको जिज्ञास्यदका दण्ड मिलना चाहिये। दर्पित भावसे गुरु यदि ब्राह्मणको धर्मोपदेश दे तो राजाको उससे सुन पौर कामने मरम मिल उल्लाह देना चाहिये। किन्तु यदि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्तिको निपा देन, जाति मन्कार पौर कर्मके विषयमें दर्प करके अन्वया कृष्ण करे, तो उसे दो सो पण दण्ड होना चाहिये।

माता पिता, पत्नी, व्याता, पुत्र अथवा सुभ, इनको मासो देनेके एक सो पण दण्ड होना चाहिये।

। दण्डनय (मारपीट)—यदि अन्वय (अर्थात् गुरु) किसी भी पण्यके अर्थ जातिको मारि, तो राजाको उचित है कि वह कर्मके उक्त पण्यको क्षेद दे। गुरु यदि अर्थ जातिको मारनेके लिए हाद का डका उठावे तो उसे अन्वयदका दण्ड मिलना चाहिये पौर यदि पद-

द्वारा आघात किया हो, तो पदच्छेद होना उचित है।

गुरु यदि ब्राह्मणके माय एक पासन पर बैठे तो राजाको उचित है कि उसके कटिदेश पर मोहमय तम शलाका टाग कर देगसे जिज्ञास्य द अथवा मारने न पावे इस उ मने उक्तका पञ्चात्माग (पुतङ्क) बाट से। दर्प करके यदि गुरु ब्राह्मणके शरण पर ब्रह्म दे तो उसके भीष्मकर क्षेद देना चाहिये। पियाव करनेके लिए पण्योधि, अथवा वा तनेने गुच्छदेश क्षेदन, पौर पण्यद्वारा पूर्वक यदि अन्वयदारा ब्राह्मणके उक्त कारण करि वा द्विमात्रय पददव पौर डाढ़ी पकड़े तो उसके दोनों हाथ क्षेद देना चाहिये। समान जातिमें यदि कोरि किसीका कर्मभेद अथवा रज दण्ड न करे, तो उसे एक सो पण दण्ड होगा। मांममेद-कारोको ६ निष्क दण्ड होगा। अन्वय म द करनेवालेको निर्वासनदण्ड होगा। मनुष्य अथवा पण्योको मार कर पोड़ा देनेके पौड़ाके अणुपार द ड होगा। अणुभेद अथ वा रजपात होने पर, मारने वालेको पातत व्यक्तिके धाराम पड़नेके लिए भीषण पौर पण्य आदिका कर्ष देना पड़ता है; नहीं देनेके सम अन्वयके समान द ड होता है।

बीवारि—मासिकसे सामने वन-पुत्र का बीरो की जातो है उसे साहस उन्नति है पौर परमधर्म बिज कर बीरो करनेको बीरो। यदि कोरि किसीको चीज से कर पलोकार करे कि, 'मिने नहीं ला' तो उसे भी बीरो करती है। और जिन जिन पण्योने बीरो करता है राजाको उचित है कि समने वे पण्य क्षेद दे जिनके क्षिद्र नष्ट बीरो न कर मने। पिता, आचार्य, माया, सुतोहित आदि समो दण्डनोन है। राजा यदि अन्वय धण राव करे तो उन्हें भी द ड पण्य करना पड़ता है। राजा अन्वय को पण्य द ड देगे, उसे पानीमें डाल देने का ब्राह्मणको दे देगे।

बीरो करनेवाला गुण्यदोषक यदि गुरु को तो पण्य गुण्य; इसी प्रकार वैश्य बीरोको १६ गुण्य उन्निय बीरोको १२ गुण्य पौर ब्राह्मण बीरोको ६४ गुण्य द ड दिया जाता है। यदि ब्राह्मण बहुत गुण्यवान् को तो मत्तगु द डकी व्यवस्था करने चाहिये; अन्वय भी अधिक गुण्यवान् होने पर १२८ गुण्य अधिक द ड होना चाहिये।

पत्नी वा वैश्यागमन—स्त्री-पं-ग्रह और परदारसंभोग-
से लोकमें वणं मद्धर सन्तान उत्पन्न होता है और
उमसे नाना प्रकारके अधर्म एवं सर्वनाश उपस्थित होते
हैं। इसलिए परदारसंभोगमें प्रवृत्त लोगोंके लिए नाना
प्रकार उद्देशजनक नासाकर्णच्छेदनादि कठोर दंड-
विधान करना उचित है। परस्त्रीको सुगन्ध माला आदि
भोजना, उमसे परिहास करना, आलिङ्गन करना, उमके
अनङ्गार छूना, वस्त्र पकड़ना, उमके साथ एक शय्या
पर सोना और एक साथ भोजन करना इत्यादि अपराध
करनेवालोंको गणना स्त्री-सं-ग्रहण रूपमें करना चाहिए।
स्त्रियोंके अपस्थान पर यदि पुरुष हाथ लगावे वा स्त्री
यदि पुरुषके अपस्थानको स्पर्श करे और पुरुष कुछ न
कहे, तो यह दोष मानुमत स्त्रीसं-ग्रहणपदवाच्य होगा।

शूद्र यदि अकामा ब्राह्मणोंके साथ उक्त प्रकार व्यवहार
करे, तो उसे प्राण दंड होगा। चारों ही वर्णके लिए
भार्या सर्वदा अत्यन्त रक्षणीया है। भिन्नाजीवो, वन्द्ये,
ऋत्विक् और सूपकारादि कारक, ये लोग परस्त्रीके साथ
अनवारित भावसे बात चेत कर सकते हैं; किन्तु स्वामीके
निषेध कर देने पर उन्हें बोलना बन्द कर देना चाहिए।
निषेध करने पर भी जो बात चेत करता है, उसे एक
सुवर्ण दण्ड देना पड़ता है।

ऊपर जो विधि लिखी गई है, वह नट, नर्तक वा
भार्याजीवी आदि नीचोंको स्त्रियोंके लिए लागू नहीं
हो सकते। तोभो उपयुक्त व्यक्तियोंको स्त्री वा दामोके
साथ क्रिय कर अभिचार करनेवालोंको किञ्चित् दण्ड
देना उचित है।

अकामा कन्याके साथ संभोग करनेसे सद्यः शारी-
रिक दण्ड होगा। समानजातीय अकामा कन्या-गमनमें
शारीरिक दण्ड नहीं है। अपकृत जातीय स्त्री यदि अपने-
से उल्लूट जातीय पुरुषको भजना करे, तो उसे कुछ
भो दण्ड नहीं होगा। जो पुरुष दर्प करके बल-पूर्वक
समान जातीय पर स्त्रीको योनिमें अङ्गुलि प्रक्षेप करे,
उमको दो अङ्गुलि उसी समय छेद देने चाहिए और
६०० पण भो दण्ड देना चाहिए। सकामा समानजातीय
स्त्रीके साथ यदि उक्त रूप व्यवहार किया जाय, तो उसको
अङ्गुलि नहीं छेदी जायगी; किन्तु अत्यासक्ति निवारणके

लिए दो सौ पण दण्ड अवश्य होगा। यदि कोई कन्या
अन्य कन्याको योनिमें उँगनी डाले, तो उसे दो सौ
पण दण्ड तथा दूना शुल्क और दण्ड वेंत मारना उचित
है। (मनु ८। ३६९)

यदि वयस्का स्त्री कन्याको उक्त प्रकारसे नष्ट करे,
तो उसका मस्तक मूंड कर अंगुलि छेद देना चाहिए
और गदहे पर चटा कर राजपथमें घुमाना चाहिए।
जो स्त्री में धनको कन्या छूँ यह समझ कर वा अपने
सौन्दर्यके मदमें आकर अपने पतिको त्याग दे और
परपुरुषके साथ रमण करे, तो उसे जनसमूहके बीचमें
ले जाकर कुत्तोंसे नुचवाना चाहिए। पाप करनेवाले पार
पुरुषको तम लोह पर सुलाकर जलाना चाहिए और जब
तक वह भस्म न हो जाय, तब तक लकड़ो देते रहना
चाहिए। एक बार दण्डित हो कर यदि फिर एक पण
वीतने पर वही अपराध करे तो उस दुष्टको दूमा दंड
देना चाहिए। प्रात्यजात स्त्री और चांडालो स्त्रीके साथ
गमन करनेसे भी यही दंड देना चाहिये। रक्षिता हो वा
अरक्षिता, शूद्र यदि हिजातीय स्त्रीसे संभोग करे तो
उसे लिङ्गच्छेद और सर्वस्व हरणको दंड देना चाहिए
तथा भर्तृ आदि रक्षिता स्त्रीके साथ गमन करनेसे वध
और सर्वस्वहरण दंड होगा। वैश्य यदि रक्षिता
ब्राह्मणीसे रमण करे, तो उसे सहस्र पण दंड और
गदहेके मूत्रसे मस्तक मुण्डन करना चाहिए।

वैश्य और क्षत्रिय यदि रक्षाहीना ब्राह्मणोंके साथ
रमण करे, तो उसे शूद्रवत् दण्ड होगा, अथवा दर्म वा
शर द्वारा टक कर उसे जला देना उचित है। ब्राह्मण यदि
रक्षिता ब्राह्मणोंके साथ बलपूर्वक संभोग करे, तो सहस्र
पण दण्ड और सकामा ब्राह्मणी-गमनमें ५०० पण दण्ड
होगा। ब्राह्मणके समस्त पापयुक्त होने पर भो उसे सर्वस्व
घनके साथ अक्षत शरीरमें निर्वासन दण्ड देना उचित
है। वैश्य यदि रक्षिता क्षत्रिया स्त्रीके साथ गमन करे
अथवा क्षत्रिय यदि इस प्रकारको वैश्य-स्त्रीसे संभोग
करे, तो दोनोंको अरक्षिता ब्राह्मणो-गमनमें जो दंड
दिया जाता है वही दंड देना उचित है। ब्राह्मण यदि
रक्षिता क्षत्रिया वा वैश्या स्त्री-गमन करे, तो सहस्र
पण दण्ड होगा। वैश्य यदि अरक्षिता क्षत्रियाके साथ

इस कर, तो बौद्धको १०० एक दंड होया उसिम
के लिए यधिके मुद्रके मद्रक-मुद्रक पत्रका १०० एक
दण्डकी आवश्यकता है। परचित्ता चरिया वा बौद्धा गमन
में ब्राह्मणको लक्ष्य एक दंड होया। चण्डालादि स्त्रियों
के साथ गमन करनेके भी ब्राह्मणके लिए एक दण्ड को
है। जिस राजाके राज्यमें दंडके अर्थके कोई भी चोरों,
पारसी गमन, बाह्यपादक साहस-दण्डपादक आदि पद-
राज नहीं करता, वह राजा दण्डके समान प्रभाव
यामी है।

यदि काम-सम कर्तव्यको यज्ञमान प्रकारप स्था
दे पत्रका यदि निर्दोष यज्ञमानको पुगेहित पराज
न्याय दे, तो दोनोंको एक सो एक दण्ड देना पड़ता है।

(मनु ८१६-८२०)

विता, माता, पत्नी और पुत्र इनको बिना पतित हुए
सोई-पूर्वक परिभ्राग करके १०० एक दंड होता है

दिशान्तिमें, बाह्यस्त्रादि पायस-वटित यास्त्रा
इतके बिचयमें यदि परस्पर बिबाह हो जाय, तो पात्र-
हितवादी राजाको चाहिये कि उसी समय कोई दण्ड
लिय न करे। ऐसे पत्रकामों को बिच प्रकार सभ्यके
कोई है, उनको उसी प्रकारने पूजा करके मान्यता
हारा इनके शोकका उपाय करना चाहिये और ब्राह्मणों
को सहायताके धर्मको व्यवस्था नदमना देनी चाहिये।
कोई दण्डक यदि साह्यिक कार्यमें २० ब्राह्मणोंको
भोज देना चाहे और प्रतिधैमी यथा तदन्तरसर्ग
पनुवेमी भोजनार्थ ब्राह्मणको छोड़ कर अन्य ब्राह्मणोंको
नुमाये, तो राजाको उसे एक माना चाँदीका दण्ड देना
चाहिये। पय शोचिव होकर यदि कोई प्रतिधैमी वा
पनुवेमी शोचिव काह्यकोका विवाहादि भूति जायमि
भोजन न कराये तो उसे भोजनके दिगुण भोज्य द्रव्य
घोर एक माना मोश दण्डवक्य देना पड़ता है।

जो पत्रक-वर्ण राजाको खान बहनातो है पत्रका
जिनको देयाकर से कामको वाशने मनाई कर दी है
उन कनुपीको यदि कोई व्यवसायो शोचने पाकर देया
कर से जाय तो राजाको चाहिये कि उनका सर्वस्व
हरब कर ले। राजा पत्रक-वर्णके कर्म-धर्ममें शोचनी
भाग लेगी। यदि कोई व्यक्ति दण्ड न देनेके परिश्रायके

पत्रकमार्गका पत्रक-वर्ण करे, राजाको शत्रु विषय की
वा बेबी हुई शोचनीको सपना घटा कर लड़े, तो उसे
पापघातित राजदेयके पाठ गुना दण्ड मिलता है।

ब्राह्मण यदि प्रभुत्व एवं शोचने कयोभूत हो कर
पनिष्कृ, क ब्राह्मणके पैर सोना पादि दाहकर्म कराये
तो राजा उसक लिए १०० एक दण्ड विधान करेगा।
(मनु ८८०-८८५)

यात्रवत्काम दितामि दंडविधिसे सभ्यमें इस प्रकार
लिया है—

राजाको शोक घोर शोचकृत्य हो कर शम याप्राप्त
मार बिना ब्राह्मणोंके साथ व्यवहारको विनियममें जान
कर दण्ड विधान करना चाहिये।

६६-वाक्य—पाशात, चिह्न घोर प्रयोजन पादिको
पयाशोचना तथा जल प्रवाहक ऊपर निर्भर करके, किन्तु
माथी-रहित बिभ्रामें बिजिन पर्याशोचना करके दण्ड
देना चाहिये। शरीर पर भस्म, पत्र पत्रका भूमि देने
पर दण्ड एक दण्ड होया। पर्याय कनु पादशोच घोर
मिच्छोवन शत्रु सभ्य कातनेने पूर्वोक्त दण्डको पविता गुना
दण्ड होया। सम व्यक्तिक प्रति पत्र निवम है। लकट
व्यक्ति वा परशोके प्रति पिया करनेने गुना दंड घोर शोच
व्यक्ति प्रति पिया व्यवहार करनेने पाषा दंड होगा।
बिचकै-कथ ना मत्ततादि कय पिया करनेने दंड नहीं
होगा। रजशान्तिको प्रकार करने वा समक प्रति पर
लठामेके दण्ड एक दंड होया। परस्पर इनकायं शत्रु
कथत करनेके उत्तम साहसका दंड होया। पत्र उम
बस्य पत्रका हाथ पत्रक कर शोचनेके दण्ड एक दंड
होया। बस्य द्वारा बन्धन, मासमर्दन एक पाह्यर्षक
पुत्रक पाद प्रकार करनेने भी एक दंड होया। काष्ठादि
प्रकारने पाह्य व्यक्तिके रजगत न होने पर एक प्रदतां
व्यक्तिको २२ एक घोर रजगत होने पर उनके गुना दंड
होया। हाथ घोर पत्रका दंड शोचनेके काम वा माक
काटनेके पुत्र शत्रुको ज्वाला बड़ा देनेने, घोर शत्रुके
मनुष्य सुदके मरण हो जाय उषी ताहना करनेने
मध्यम साहसका दंड देना चाहिये। समन, भोजन घोर
शत्रु कथना बन्ध कर देनेके पत्र घोर बिधा हिट नेने
तथा पोषा वाह्य वा कथ हिटनेके मध्यम साहसका दण्ड
देना चाहिये।

जिस अपराधमें एक व्यक्तिको जो दण्ड हुआ है, बहुतसे मिल कर एक व्यक्तिको मारे तो उस अपराधमें उससे दूना दण्ड भोगना पड़ेगा। दूसरेको भित्ति सुगंध आदिसे अभिहित, विदारित, द्विधाकृत तथा भूमिगायित करनेसे उसका यथा-क्रमसे पाँच दण्ड और दोस पण दंड होगा, तथा गृह स्वामिको पुनः संस्कार करने योग्य धन देना पड़ेगा। जो परकीय गृहमें दुःखजनक कष्ट-काटि वा विपत्तियाँ प्राणहर द्रव्य फेंकेगा, उसे क्रमशः १६ पण और मध्यम साहसका दण्ड होगा। छाया द लुट पशुको ताडन, रक्तप्रात, शृङ्गादि छेदन एवं कर-चरणादि अङ्गच्छेदन करनेसे यथाक्रमसे दो पण चार पण और आठ पण दंड होगा। इनकी हत्या अथवा लिङ्गच्छेदन करनेसे मध्यम साहसका दंड होगा। गवादि महापशुके प्रति ऐसा व्यवहार करनेसे दूना दण्ड होगा।

जो साधारण वस्तुका अपलाप करता और दासिको धर्म नष्ट करता है, त्यागके उपयुक्त कारणसे विना ही पितामाता आदिको त्याग देता है, उसके लिए १०० पण दंड कड़ा गया है। रजक यदि बोधार्थ समर्पित परकीय वस्त्रको पहने, तो तीन दंड, वैच दे, भाङ्गे पर दे, गिरवो रखे वा बान्धवोंको पहननेके लिए दे, तो उसे दस पण दंड होगा।

आयुर्वेदको विना जाने ही, केवल जोविष्ठा निर्वाह करनेके लिए किसी पशुपक्षिको मिय्या चिकित्सा करनेसे, चिकित्सकको प्रथम साहसका दंड होगा; साधारण मनुष्यको मिय्या चिकित्सा करनेसे मध्यम साहस और राजपुरुषके साथ ऐसा व्यवहार करनेसे उत्तम साहसका दंड होगा। (याज्ञ० २ अ०)

वर्त्तमानमें ये दंडविधियाँ प्रचलित नहीं हैं। ब्रिटिश गवर्मेण्टने भव नये नये कानून चलाए हैं।

२४ कोरव पचीय एक वीर। इनके भाईका नाम दंडधार था। दंडधारकी मृत्युके बाद ये अश्रुनके हाथ मारे गये थे। (भारत कर्ण० १३ अ०) २५ हापरके एक राजाका नाम। (भारत आदि० ६७ अ०) २६ इच्छाकुर्क सौ पुत्रोंमेंसे एक। ये शुक्राचार्यके शिष्य थे। २७ धर्मके पुत्रका नाम। दंडयति कर्त्तरि अच्। २८ राजा, दंडविधानकर्त्ता। २९ हलको लम्बी लकड़ी।

दण्डक (सं० पु०-स्त्री०) दंडश्च कायति कै-क। १ छन्दो-भेद। इस छन्दके प्रत्येक चरणमें २० अक्षर होते हैं। दंडक दो प्रकारका होता है, एक गणात्मक और दूसरा मुक्तक। गणात्मक वह है जिसमें गणोंका बन्धन होता है अर्थात् किस गणके बाद फिर कौन गण आना चाहिये इसका नियम होता है। मुक्तक वह है जिसमें केवल अक्षरोंको गिनतो होता है अर्थात् जो गणोंके बंधनसे मुक्त होता है। किसी किमोमें कहीं कहीं लघु गुरुका नियम होता है। हिन्दो काव्यमें जो कवित्त और घनाक्षरो छन्द अधिक व्यवहृत हुए हैं वे इसी मुक्तकके अन्तर्गत हैं। २ इच्छाकुराजाके एक पुत्रका नाम। ये शुक्राचार्यके शिष्य थे। इन्होंने एक बार गुरुको कन्याका कौमार्यधर्म नष्ट किया। इस पर शुक्राचार्यने शाप दे कर उन्हें इनके पुरके साथ भस्म कर दिया। इनका देश जङ्गल हो गया और दंडकारण्य कहलाने लगा। (रामायण) ३ वातरोगविशेष, एक प्रकारका वातरोग। इस रोगमें हाथ, पैर, पाठ, कमर आदि अङ्ग स्तम्ब हो कर ऐंठसे जाते हैं। ४ डंडा। ५ दंड देनेवाला पुरुष, शासक। ६ दंडकारण्य। ७ शुद्धरागका एक भेद।

दण्डकन्दक (सं० पु०) दंडवत् कन्दो मूलं यस्य। धरणी कन्द, सेमरका मुसला।

दण्डककर्त्तृ (सं० त्रि०) दंडस्य कर्त्ता। जो दंड विधान करते हैं।

दण्डकर्मन् (सं० स्त्री०) दंडस्य कर्म। दंडविधायकका काम।

दण्डकल (सं० पु०) छन्दोभेद, एक छन्दका नाम। इसमें १०, ८ और १४के विरामसे १२ मात्राएँ होती हैं।

दण्डका (सं० स्त्री०) दंडक स्त्रोलिङ्गत्वाद्वा टाप। नागवलासला।

दण्डकाक (सं० पु०) दंडो यमदंडश्च काकः, अमङ्गल सूचकत्वात् अस्व तथात्वं। द्रोण काक, काशा कौशा, डोम कौशा।

दण्डकारण्य (सं० स्त्री०) दंडकं नाम अरण्यं। दंडका वन, दंडक नामक राजाका राज्य। यह प्राचीन वन विन्ध्य पर्वतसे ले कर गोदावरीके किनारे तक विस्तृत था। इस वनमें श्रीरामचन्द्रजी वनवासके कालमें चौदह

वर्षं दृष्टेः। यथा शूणं कदाचि नाक-खान कटे ये वीर
 सीता चरक वृषाया। एत पराश्रया ववृत्त य म पात्र
 मो वर्त्मान है। यइ खान ववृत्त रमचोय है। (तामानव)
 दण्डकाठ (स० लो०) द कायं काठ। द ड सम्भवोव
 काठ। दण्ड देखो।

दण्डको (स० लो०) डोसक।

दण्डमोरो (स० लो०) पण्डरामे द एक पण्डराका
 नाम।

दण्डवच (स० लो०) द डण्ड वच। चंभ्यासायम
 पवसम्भन। इन पावमियोले हासमें पावम विक्रमद्वय
 एक एक द ड रहता है।

दण्डवाह (स० लि०) दण्ड वृद्धति पद पच्। दण्ड-
 वारक, दण्ड रक्षनेवाला।

दण्डव (स० लि०) द डेन देहेन वृत्ति इन डक। १
 द डवाहकवर्त्तन ड डेन मारनेवाला। त्रिस राजाधि
 राक्षमें घोर परजोवामो, द डवाहककारी प्रवृत्ति न
 वीं ये दण्डसोबको पाये हैं। २ द डको न माननेवाला,
 नइ मनुष्य को राजाधि दिये हुए द डको न मानता हो।
 दण्डवच (स० पु०) १ घुराचोड पण्डमेद। २ मैत्र्य
 विभागमे है।

दण्डवक्रादिश्याय (स० पु०) श्यावमेद। श्याव देखो।

दण्डवक्रा (स० लो०) द ड ताद्यमाना वक्रा। बाय
 विषय, दमामा नपारा, बौसा। दण्डका स छत पशोव-
 नामी, बडौ, यामनासी, यमिदका, यामचोय, दण्डम
 दुन्दुभि, दुन्दु घोर बमोरिका है।

दण्डतापी (स० लो०) द डेन ताडवमाना तापी
 ताप्य निर्मित बाय। तापीवाद्यमैद, नइ बसतराह
 शात्रा त्रिचमै तपिबौ बडोरियां काममें लारि जाती हैं।

दण्डव (स० लो०) द डण्ड भावः भावे इ। द डता,
 द डका भाव।

दण्डदान (स० पु०) द डदि वन दण्डवै दास। राज-
 क्त द ड दृष्टिसे दिये दास कोबार करनेवाला, नइ
 को द डका दपया न दे सकनेके कारण दास-पुत्रा को।
 बात देखो।

दण्डदेवकुस (स० लो०) द डडेपण्ड कुस यम। धर्मा
 विचारक मुखिय पदासत।

दण्डवर (स० पु०) धरतीति वट पचाद्यन् द डण्ड
 वरः। १ यम, यमराज। २ राजा यामनकर्त्ता।
 राजा समो लोकोको स्थितिसे दिये द ड वारण करने है
 इसीस्थिसे राजाका नाम द डवर पड़ा है। ३ स न्यासी।
 (लि०) ४ लघुद वारक, ड ड रक्षनेवाला।

दण्डवार (स० पु०) द ड धरति वृषण्। १ यमराज।
 २ राजा। ३ लामपलात एक सुवति एक राजाका
 नाम। धर्मेनि लोचनवर्त्तन पसुरणे च यमि- कण्य द ड व
 किया था। कुड-पाण्डवको नगाईमें यह सुवर्त्तनको
 घोर या घोर पशुंनवे घोर नुड कर मारा गया था।

दमका मारि द ड मो रसो सुधमै लिहत वृषा का।
 मारत कर्म १८ न०) ४ पंडन पचोय एक घोर, पाण्डव
 पक्षी एक बोहाका नाम। यह पीडवकी घोरने महा का
 घोर कर्मके हाथसे मारा गया था। (पारत कर्म १० न०४)

१ इतराईके एक पुत्रका नाम। (लि०) ४ दण्डवारक
 द ड वारण करनेवाला यासक।

दण्डवारक (स० लो०) द डण्ड वारक ४ तत्। १ द ड
 पडक। २ स न्यास मायमका पवसम्भन।

दण्डधारी (स० लि०) द ड धरति द ड-ड चिनि। १
 द डवट, ड ड रक्षनेवाला। २ द डवमो स न्यास
 धायम पवसम्भन करनेवाला

दण्डद्वय (स० पु०) द डधारी।

दण्डन (स० लो०) द ड क्युड। द ड देनेको क्रिया,
 यासन।

दण्डनाडक (स० पु०) द ड राजा चतुर्विधाय नवति
 नो क्युड्। १ सेनापति। २ द डधेता रूप द डंविधान
 करनेवाला शात्रा। ३ द ड देनेके अधिकारी विचारपति
 शक्तिम। ४ पूर्वके एक धनुषका नाम।

दण्डनिपातन (स० लो०) द डण्ड निपातन। द ड
 देनेको क्रिया यासन।

दण्डमोति (स० लो०) दण्डेन मोयसी वा द डो मोयसे
 इनवा नो कर्मवि करणे वा जिन्। १ पच शास्त्र
 राजनैतिक शास्त्र बर्ष शास्त्र जिसमें राज्ययासन सम्भयो
 समस्त नियम घोर उपदेय हो पावस्य पादिसे नोति-
 यास्य।

१ दण्डेन मोयसे वैर्ष द ड नवति वा पुनः।
 दण्डमोतिरिति इत्यर्था 'वीर्योपेक्षामेतिरिति' (१-१२०)

एक दण्डनोतिमें हो अश्विनमें आदि विद्याओंका वाम है और उभीसे समस्त विद्याओंका प्रारम्भ कहा गया है। दमन हो एकमात्र दंड है। इस दंडमें राजा अश्वस्थान करता है; इस कारण राजाका नाम भी दंड है। राजा जिसके द्वारा लोभोंकी संस्थापित करता है, उसे दंडनोति कहते हैं।

महाभारतके शान्तिपर्वमें लिखा है—

भगवान् कमलयोगि ब्रह्माने लोकस्थितिके लिये दंडनोतिका प्रणयन विद्या है। इस नोतिशास्त्रमें अनेकानेक विषय हैं, यथा—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, सत्व, रज और तम ये मोक्षके तीन वर्ग; वृद्धि, चय और समानत्व नाम न दंडज विवर्ग; धित्त, देश, काल, उपाय कार्य और महाय ये नोतिज पडवर्ग; कर्मकांड, ज्ञान कांड और रूपि वाणिज्यादि जोविकाकांड, अमान्य-रचार्य नियुक्त चर और गुप्तचरोंका विषय, राजपुत्रके लक्षण, चरोंके विविध उपाय, साम, दाम, दंड, भेद, उपेक्षा, भेदकरण, मन्त्रण और विभ्रम, मन्त्रसिद्धि और असिद्धिका फल, भय, मन्कार और धित्तग्रहणाय अधम मध्यम और उत्तम ये तीन मन्त्रियां, चतुर्विध यात्रा काल, त्रिवर्गका विस्तार, धर्मयुक्त विजय, अर्थद्वारा विजय और आसुरिक विजय, अमान्य, राष्ट्र, दुर्ग, बल और कोप इन पांच वर्गोंका त्रिविध लक्षण; प्रकाश्य और अप्रकाश्य सेनाका विषय, अष्टविध गूढ विषय प्रकाश, हस्तो, अश्व, रथ, पदाति, भारवह, चर, पोत और उपदेष्टा इन अष्टविध सेनाहोका विषय, वस्त्रादि और अस्त्रादिमें विषययोग, अभिचार, अरि, मित्र और उदासीनोंका विषय पथ-गमनके ग्रहनक्षत्रादि जनित समस्त गुण, भूमिगुण, आत्मरक्षा, आश्रय, रथादि निर्माणका अनुसन्धान, मनुष्य, हस्तो, अश्व और रणसज्जाके उपाय, विविध व्यूह; विचित्र युद्ध-कीशल, धूमकेतु आदि ग्रहोंके उत्यात, लस्का आदि-का पतन, सुप्रणालीसे युद्ध, पलायन, अस्त्रशस्त्रमें शाण प्रदान, अस्त्र-ज्ञान, सैन्य व्ययन, मोचन, सेनामें हर्षोत्पादन, पीडा, आपटुकाल, पदाति-ज्ञान, खात, लनन, पता कादि प्रदग्-न-पूर्वक शत्रुके अन्तःकरणमें भय सञ्चारण, चोर, उग्र स्वभाव, अरण्यवासी, अग्निदाता, विषप्रयोक्ता, प्रतिरूपकारो, प्रधान व्यक्तिके भेद, वृचच्छेदन, मन्त्र

तन्त्रादिके प्रभावसे हस्तियोंका बल-क्राम, शब्दाउत्पादन, अनुरक्त व्यक्तिके आराधन और विग्वामजनक द्वारा पर-राष्ट्रमें पीडा-प्रदान; राज्यकी शास-वृद्धि और समता, कार्य सामर्थ्य, राष्ट्रवृद्धि, शत्रु मध्यस्थित मित्रोंका संग्रह, वनवानोंका विनाश-साधन और पोहन, सूक्ष्म व्यवहार, खलका उन्मूलन, व्यायाम, दान, द्रव्य-संग्रह, अभृत व्यक्तियोंका भरण-पोषण, शृत व्यक्तियोंका पर्यवेक्षण, यथासमय अर्थदान, व्यसनमें अनासक्ति, भूपतिके गुण, सेनापतिके गुण, त्रिवर्गके कारण और गुण-टोप, असत् अस्मिन्धि, अनुगतोंके व्यवहार, सधमें आशङ्का, अन्वधानता-परिहार, अलक्ष्य विषयोंमें लोभ, लक्ष्य विषयोंकी वृद्धि, प्रवृद्ध धनके विधानानुसार सत्पात्रमें दान, धर्म, अर्थ और काम; व्यसनोंके विनाशार्थ अर्थदान; सृष्ट्या, अक्षक्रीडा, सुरापान और स्तो-सम्भोग इन चार प्रकारके कामज तथा वाक्पारुष्य, उग्रता, दण्डपारुष्य नियुक्त, आश्रयार्थ और अर्थदू-ए इन छः प्रकारके क्रोधज व्यसनोंका विषय, विविधयन्त्र और कार्ययन्त्र, चिह्नविलोप, चैत्य-छेदन, अथरोध, कृष्यादि कार्यका अनुशासन, नाना प्रकारके उपकरण; द्रव्योपार्जनके लिये युद्धयात्रा, युद्धोपाय, पण्य, धानक, शङ्ख और भेरो इन छः प्रकारके द्रव्योंका विषय, लक्ष्य राज्यमें शान्ति स्थापन, माधुर्योको पूजा, विद्वानोंके साथ मित्रता, दान और होमका परिधान, माङ्गल्य वस्तुका स्पर्श, शरीर-नस्कार, आहार, आस्तिकता, एक मार्गमें उत्पत्ति लाभ, मृत्यु और मधुर वाक्य, सामाजिक उत्सव, गृहकार्य, चत्वारि स्थानके प्रत्यक्ष और परोक्ष व्यवहारका अनुसन्धान, ब्राह्मणकी अदण्डनोयता, युक्तानुसार दण्डविधान, अनुजोषियोंमें जाति और गुणगत पक्षपात, नगरवासियोंको रक्षाका विधान, हादश राजमंडल विषयक चिन्ता, बहत्तर प्रकार शारीरिक प्रतोकार; देश, जाति और कुलके धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका उपाय; अर्थसृष्टि, कृष्यादि मूलकार्योंको प्रणालो, मायायोग, नौकानिमज्जनादि द्वारा नदीका पथरोध इत्यादि।

इस शास्त्रके द्वारा जगत्के समस्त मनुष्य दण्ड-प्रभावसे पुरुषार्थ फलकी प्राप्ति करनेमें समर्थ होते हैं, इसलिये इसका नाम दण्डनीति पड़ा है। इस दण्डनीतिमें हो

धर्म, पत्र, नाम और मोक्षद्वय चतुस्रम निहित है।
 ब्रह्मनि पचले कथाजायको द दनोति रचो श्री, बादमें
 प्रजावर्गको भाहुको पश्यता पर विचार कर उद्यको
 म चित्त कर दिहा। महेन्द्रने इसे दम हकार पञ्चायमि
 प्रसिद्ध किया। उक्त स चित्त नीतिग्राह्य 'बिद्याका'के
 नामसे प्रसिद्ध हुआ। चमत्कार इच्छने इसका २ प्रकार
 पञ्चायमि वचन किया जो 'बाहुदण्डक' नामसे
 विख्यात हुआ। इहस्ततिने इस 'बाहुदण्डक' पत्रका
 तोन प्रकार पञ्चायमि प्रकार किया और वह 'बाह्यस्तक'
 नामसे प्रसिद्ध हुआ। चमत्में यज्ञापात्र'ने इस ग्राह्यको
 एक प्रकार पञ्चायमि रचा। इस प्रकारसे यह चमत्में
 प्रचारित हुआ। एक दण्डकोतिष्ठ प्रमावने जो चम
 ममावर्गमें नीति और चम का प्रकार हुआ है।

(भारत मीप्यप ० ५५ अ०)

२ प्रजाको दण्ड दे कर चमका पीडित करने शासनमें
 रखनेकी राजाओंको नीति, वेना बादिसे द्वारा बह प्रयोग
 करनीको विधि।

दण्डनीय (स० त्रि०) दण्ड चनोवर । दण्डार्थं दण्ड
 होने शेष ।

दण्डमन्त्र (स० त्रि०) दण्ड नयति दण्ड मोदय् । दण्ड
 विधाता मन्त्रा देनीवान् ।

दण्डय (स० पु०) दण्डेन पाति पात्रः । दण्ड द्वारा
 पासक राजा दण्डके द्वारा शासन करनेवाका राजा ।

दण्डपाण्ड (स० पु०) दण्डेन दण्डकारैश्च पाण्डक
 मोक्षः । दारपाण्ड, दरमान ।

दण्डपाणि (स० पु०) दण्डा यष्टिः पाणो यण्ड । १ यम । ये
 अपनी हाथमें डमिया दण्ड लिए रहते हैं । २ कायोहित
 में रक्षार्थ दण्डोर्मि मौरवकी एक मूर्ति । पूर्वमन्त्र
 नामक किमो यक्षने महादेवकी धारापना करने एक
 पुत्र प्राप्त किया जिसका नाम रक्षा यदा हरिश्चिय ।
 हरिश्चिय बचपनहीरे महादेवका बड़ा मन्त्र था ।
 पोक्षे लक्ष्मिने महादेवके चहरेअसे कठोर तपस्का
 धारण की। इस प्रकार बहुत दिन बीत गये। महादेव
 इनको तपस्कासे प्रसन्न हो कर पायतीक्षे श्राव कहा
 पूर्ण मये धोर हरिश्चियका शरीर क्षय किया। इस पर
 हरिश्चियके हृदयमें ज्ञानका उदय हुआ धोर अपनी धमोड
 देवकी कामने देव ने च ही न समझे धोर इनकी स्ति

करने लगे। बाद शिवका बोले—यद्यः तुम कायोके
 दण्डकर हो जा। बड़ाच पुष्टीका शासन धोर माहुषोंका
 पासन करना। पात्रके तुम्हारा नाम दण्डपाणि रखा।
 मन्त्रम धोर उद्भवम नामसे मेरे हो गय तुम्हारे बड़ा
 यताके लिये यदा तुम्हारे पाव रहेगे। बिना तुम्हारी
 पूजा किये कोई कायोमें सुख नहीं पा सकेगा। जो
 मेरे मन्त्र ज्ञेय, उन्हें मो पहले तुम्हारे पूजा करने
 पड़ेगे। देवमय धोर मानव समाजमें तुम जो प्रथम
 पूजनोय होंगे। इतना कह कर महादेवने धामन्दक्षानन
 में प्रवेश किया। दण्डपाणि महादेवके पादेयानुसार
 कायोपुरका शासन कर रहे हैं । (काथिक० १२ अ०)
 २ धनामक्षयत चन्द्र गीव सुपथिषिय, चन्द्र वः एक
 राजाका नाम। इ बुद्ध मूर्तिभेद बुद्धवचन एक मूर्तिका
 नाम ।

दण्डपात (स० पु०) दण्डय पातः । सच्चिपात रोग
 विधिय । इनमें रोगको नौठ नहीं पातो, वह रबर रबर
 पागलको तरह झूमता है ।

दण्डपातन (स० ज्ञो०) दण्डय पातन । दण्ड निषेय,
 दण्डेना विवना ।

दण्डपादक (स० ज्ञो०) दण्डेन वत् पादक पश्यता दण्ड
 तेर्मिति दण्डोद्वरतेन यत् पादक विवहाचरच ।
 १ मन्त्रकार विषयमेद, सुदकार्यं मार पोड । दूसरेके
 शरीर पर हाथ धोर धोर धम्य धादिसे धाघात करने तथा
 पूरु मन्त्रमूत्र धादि कि लनेको दण्डपादका कहते हैं
 यर्थात् देवके प्रति जो लुब्ध विवहाचरय किया जाय,
 उसका नाम दण्डपादक है । २ राजाधोक्षे यात मन्त्रधो-
 मिति एक । ३ धमरक विवादेमिति एक । ४ दण्डेको ।

दण्डपाण (स० पु०) दण्ड शरीर पासकति पाणि-यण ।
 १ मन्त्रार्थेद दाङ्किका मन्त्रकी । दण्डेन पासकति पाणि
 यण । २ दारपाण्ड, योद्धोदार दरमान ।

दण्डपाण्ड (स० पु०) दण्डपाणात् अयति अ-अ ।
 यक्षुन्मन्त्र, नाम मन्त्रकी ।

दण्डपाणी (स० ज्ञो०) तुष्ठापण्ड, ताम् ।

दण्डपाण्ड (स० पु०) १ प्रधान दण्डदाता, दण्ड देनेवाका
 प्रधान कामधारे । २ पाठक, यज्ञाद ।

दण्डपाणिन (स० पु०) बाहुक, बन्नाद ।

दण्डविङ्गलक (सं० पु०) दंड; देहः पिङ्गलोऽत्र । उत्तरस्य
देगमेद, एक देगका नाम जो उत्तरको ओर पड़ता है ।
दण्डप्रणाम (सं० पु०) दंडवत्, भूमिमें डंडेके समान
पड़ कर प्रणाम करनेकी क्रिया ।

दण्डवध (सं० पु०) दंडेन वधः । प्राणदण्ड ।

दण्डबालधि (सं० पु०) दंड इव बालधिर्यस्य । हस्तो,
हाथी ।

दण्डबाहु (सं० त्रि०) दंड इव बाहुयस्य । १ दंडाकार
बाहुयुक्त, जिसको बाहु डंडेके आकारसे हो ।

दण्डभोति (सं० स्त्री०) दंडस्य भोतिः इतत् । दंडित
होनेका भय, सजा पानेका डर ।

दण्डभृत् (सं० पु०) वक्रभ्रामणार्थं लघुहादिकं भ्रमति
भृत् क्लिप् तुगागमच्च । १ कुम्भकार, कुम्हार । दंडं टमनं
विभर्ति । (त्रि०) २ दंडधारक, डंडा रखनेवाला ।

दण्डमस्य (सं० पु०) दंडइव मस्यः । दण्डाकार
मस्यभेद, एक प्रकारकी मछली जो देखनेमें डंडे या
सांपके आकारकी होती है, वाम मछली । इसका गुण—
तिक्त, पित्तरक्त और कफनाशक, शक्त तथा बलवर्धक है ।

दण्डमातङ्ग (सं० पु०) तगर, एक प्रकारका पेड़ ।

दण्डमाय (सं० पु०) दंडकारो मायः पन्याः । प्रधान
पय, सोधा रास्ता ।

दण्डसाधिक (सं० पु०) दंडसायं धावति ठक् । प्रधान
पथसे धावमान वरक्ति वह मनुष्य जो सोचे रास्तेमें
जाता हो ।

दण्डमानव (सं० पु०) दंडप्रधानो मानवः मध्यलो०
कर्मधा० । दंडप्रधान जन, वह जिससे दंड देनेको
अधिक आवश्यकता पड़ती हो, बालक, लड़का ।

दण्डमुद्रा (सं० स्त्री०) दंडाकारा मुद्रा । तन्त्रपारोक्त
मुद्राभेद, तन्त्रकी एक मुद्रा । इसमें सुष्ठो बाधकर बोच-
की सगली ऊपरको खड़ी करते हैं ।

दण्डयात्रा (सं० स्त्री०) दंडाय शत्रुदमनाय यात्रा या
यात्रा प्रयाणं । १ दिग्विजय । २ सेनाको चढ़ाई ।
३ वरयात्रा, वारात ।

दण्डयाम (सं० पु०) दंडं यच्छति - यम-प्रण० ।
१ यमराज । २ दिवस, दिन । दंडे इन्द्रियदमने यामः
संयमो यस्य । ३ अगस्त्य मुनि ।

दण्डयोग (सं० पु०) दंडविधान, शान्तिप्रदान ।

दण्डरी (सं० स्त्री०) दंडं तदाकारं गति रा-क-गौरा०
डोप् । डण्डरी वृक्ष, एक प्रकारको ककड़ी ।

दण्डवत् (सं० त्रि०) दंड-विद्यतेऽस्य दंड-मतुप् मस्य
वः । १ दंडविगिष्ट, दंडधारो । (स्त्री०) २ साष्टाङ्ग
प्रणाम, पृथ्वी पर लेट कर किया हुआ नमस्कार ।

दण्डवादिन् (सं० पु०) दंडेन वदति वद-णिनि । १ हार-
पाल । (त्रि०) २ दंडवक्ता, जो सजा देनेका डर
दिखलाता हो ।

दण्डवाच्यं (सं० स्त्री०) श्रवस्यानभेद ।

दण्डवासिक (सं० पु०) हारपाल, औटोदार, दरवान ।

दण्डवासो (सं० पु०) दंडेन वसति वस णिनि । १
हारपाल, दरवान । २ एक यामका शासनकर्ता, गांवका
हाकिम या मुखिया ।

दण्डवाही (सं० पु०) दंडं वहति वह-णनि । दंडधारक,
पुनिस कर्मचारी ।

दण्डविधि (सं० स्त्री०) वह नियम वा व्यवस्था जो
अपराधोंके दंडसे सम्बन्ध रखता हो, जुर्म और सजाका
कानून । (Criminal law)

दण्डविक्रम (सं० पु०) दंडः मन्यान दंडं विक्रमाति
निवधाति यत्र, वि-स्तान्म अधिकरणे घञ् ततोपत्वं ।
मन्यनदंडं वांधनेका स्तम्भ, मझा मयनेका खंभा ।

दण्डवृक्ष (सं० पु०) दंडाकारः पत्रादिहोन्वात् वृक्षः ।
१ सुहीवृक्ष, यूहर, सेंहुड़ । (Euphorbia) स्वार्ध-
कन् । दंड वृक्षक, एक प्रकारका पेड़ जिसमें पत्ते पाटि
कुछ भी नहीं होते । यह डंडेकी तरह खड़ा रहता है ।
इसीसे इसका नाम दंडवृक्ष पड़ा है ।

दण्डव्यूह (सं० पु०) दंडध्वजकी व्यूहः । व्यूहभेद,
सेनाकी डंडेके आकारकी स्थिति । इसमें आगे सेनाध्यक्ष,
बोचमें राजा, पीछे सेनापति, दोनों ओर हाथो, हाथियों-
की बगलमें घोड़े और घोड़ोंकी बगलमें पैदल सिपाही
रहते थे । इस व्यूहका उल्लेख मनुस्मृतिमें आया है ।
अग्निपुराणमें इसके सर्वतोवृत्ति, तिर्यग्वृत्ति आदि
अनेक भेद बतलाये गये हैं ।

दण्डव्रतधर (सं० पु०) दंडवय व्रतं तस्य धरः । १ दंड
रूप व्रतधारो राजां । २ दंडधर, यम । (त्रि०) ३ दण्ड-
धारक, डंडा रखनेवाला ।

दृष्ट मंत्रिता (स० श्लो०) दृष्ट संहिता भारत ।
 ७ दृष्ट नियमक शास्त्र, पौत्रदात्री धार्मिक (Pestal code)
 ८ दृष्टमहाय (स० पु०) दृष्ट महाय । बुद्ध दमन प्रभृतिनि
 शास्त्रा महाय, बद्ध महायना जो दुष्टोको दमन करने
 के लिये राजाको पोरसे पहुँचाई जाता है ।
 ९ दृष्टीन (स० पु०) १ पुरुष यकी एक राजा को विष्णु
 भेनके पुत्र थे । २ हापरसुमके एक राजाका नाम ।
 (भा०त० भा०रि० १४०)
 दृष्टज्ज्ञान (स० श्लो०) दृष्टज्ज्ञान १-तत् । दृष्टका
 ज्ञानविधिय, बद्ध ज्ञान जहाँ दृष्ट दिया, जा मरता
 है । मनुने दृष्टके लिये १० ज्ञान निश्चय लिखे हैं,—
 कपल उदर, शिखा, दानां शक्य होनां पौर, बद्ध,
 गतिज्ञा कर्ष, धन पौर ह्ये । राजा परराजके धनुषार
 कक्ष दम ज्ञानोनि दृष्टका विधान कर सकरी हैं । (मनु
 ५।१९३ २५) दृष्ट देवो ।
 दृष्टदृष्ट (स० श्लो०) १ करन दृष्टो दृष्टदृष्टा यत् ।
 तन्मरुप्यु, तन्मरुका यत्न ।
 दृष्टा (स० श्लो०) नामकता मयेरन, मुक्तसकरो ।
 दृष्टा (वि० पु०) दृष्टा देवो ।
 दृष्टाच (स० श्लो०) तौर्बभेद, एक तौर्बभेद ज्ञान जो
 चम्या नदोक्षि किनारे प्रवसित है । इसमें ज्ञान दानादि
 करनेसे ज्ञान गी दान करनेका यत्न होता है ।
 दृष्टांवात (स० पु०) दृष्टेन पाचाता १ तत् । दृष्ट द्वारा
 प्रकार दृष्टेसे मारनेकी क्रिया ।
 दृष्टाजिन (स० श्लो०) दृष्टज् पत्रिनह दयोः समा
 हार । १ मातृ मन्त्रासिद्धि धारण करनेका दृष्ट
 पौर अयधर्म । तच्छलेन धायतया चन्द्राय यत् । २
 यकता कष्ट वीच, भूठमूठका पाडलर । कपटो बाहर
 से तो दृष्ट अगधर्म धादि धारण करते, किन्तु मीतरसे
 कष्ट मरा रहता है । इसी कारण दृष्टा मन्त्रे मठ
 ताका मो अर्थ होता है ।
 दृष्टाज्ञा (स० श्लो०) दृष्टज् धामा । दृष्टादेव, सत्रा
 देनेका दृष्ट ।
 दृष्टादक्षि (स० पद्य०) दृष्टेह दृष्टेह प्रज्ञा प्रज्ञा
 सुह दृष्ट समासात्का पूव महदोषः । दृष्टेहमरुतिहारे ।
 १।३।१२०) परम्पर दृष्टि द्वारा बुद्ध, दृष्टेकी मार
 पोट, धुवाजी ।

दृष्टादि (स० श्लो०) दृष्ट पादिपय । पाविष्णु
 नयमेट पाविष्णुका एक गण । दृष्ट, सुमन, मधुपर्क
 कथा, चक्र सेव सुवर्ष उदक, बद्ध, बुद्ध, गुहा, माग
 रम पौर भद्र से दृष्टादि गण हैं । (वाग्धि)
 दृष्टात्रिय (स० पु०) दृष्टज् पत्रिपति १ तत् । दृष्टा
 क्षिपति राजा ।
 दृष्टाक्षिपति (स० पु०) दृष्टज् पत्रिपतिः १ तत् । दृष्ट
 सेनेके पत्रिपति, राजा ।
 दृष्टापातानत्र (स० श्लो०) वातरोगविधिय, एक प्रकारको
 वात-ज्वरि । इसमें ज्वर पौर वातके विगड़नेसे मनुष्यको
 देह सूँटे जातकी तरह जड़ हो जाती है ।
 दृष्टापुण्याय (स० पु०) दृष्टे दृष्टाक्षर्ये चतुष्पत्त तत्र
 मन्त्रस्य जय तत्रप्रतिपादकस्याय । न्यायमेट, एक
 प्रकारका न्याय वा दृष्टान्तकलन जिसके द्वारा यह
 सूचित किया जाता है कि जन्म किसीके कोई कर्म
 कार्य हो गया तब उससे सम्बन्ध रखनेवाला सङ्ग काय
 पत्रज्ञको बुधा होया । जैसे—कोई मनुष्य अपने घरके
 किसी जगह दृष्टेमें बाँध कर मांसरूपा रच गया हो
 पौर बीट कर उसने पुरुषो दृष्टा क्षति देखा ह्ये तो
 वह सङ्ग ही समझने या जाता है कि उस चूर्डने
 मांसरूपा तो पक्षी को कड़ा दिया जाया थाकि वह
 वह दृष्टा सत्रकी कड़ा चोत्र या रहो है तो उसने
 मांसरूपा जैसे गरम पौर म ठो चोत्र न थायी हो
 यह कदापि क्षमन नहीं हो सकता । अतएव निश्चय
 बुधा कि चूर्डने प्रवृत्त हो मांसरूपा खाया है । इसी
 प्रकार किसी कष्टनाथ काय को सिद्धि धनुमान करने-
 को दृष्टापुण्याय कहा जा सकता है । शब्द देवा ।
 दृष्टायमान (स० त्रि०) जो दृष्टेको तरह सोचा
 पड़ा हो ।
 दृष्टार (स० पु०) दृष्ट क्षयति क्ष-पच् । १ बाहन
 गाऊने नाव पादि । २ मत्त दृष्टो, मतवाला शको ।
 ३ दुष्प्रकारक, कुम्हारका नाव । ४ यन्त्रभेद, अनुप ।
 दृष्टात्त (स० श्लो०) चम्या नदोक्षि समोपल तोष
 भेद एत तीव्र को चम्या नदोक्षि किनारे पड़ता है ।
 दृष्टान्य (स० पु०) १ न्यायानय ज्ञानसे दृष्टका विधान
 हो । २ दृष्ट लिये जानेका ज्ञान । ३ एक जन्म । कोई
 कोई हने दृष्टका मो कहता है ।

दण्डासन (सं० स्त्री०) आसनभेद एक प्रकारका आसन ।

दण्डाहत (सं० स्त्री०) दण्डेन आहत । १ तक्र, काक, मङ्ग । (त्रि०) २ दंड द्वारा ताड़ित, डंडेसे मारा हुआ ।

दण्डिक (सं० पु०) दंडोऽस्त्यस्य दंड-ठन् । (अत-इतिठनौ पा । ५।२।११५) १ दंडधारक, वह जो डंडा रखता हो । २ मत्स्यविशेष, एक प्रकारको मछली । इसका गुण—तिक्त, कफ, वायु और पित्तनाशक तथा नष्टु है । (त्रि०) ३ दंडाता, मारनेवाला ।

दण्डिका (सं० स्त्री०) दंडिक टापु । १ द्वारविशेष । २ रज्जु, डोरो, रस्सी । ३ श्लोणाकवृक्ष । ४ वीस अक्षरोंका एक वर्णवृत्त । इसके प्रत्येक चरणमें रगणके बाद एक जगण इस प्रकार गणोंका जोड़ा तीन बार आता है और अन्तमें गुरु लघु होता है ।

दण्डित (सं० त्रि०) सञ्जातोऽस्य दंडतारकादित्वादि-तच । कृतदंड, दंड पाया हुआ, जिसे दंड मिला हो । इसका पर्याय—दापित और साधित है ।

दण्डिन् (सं० पु०) दंडोऽस्त्यस्य दण्ड-इनि । १ यम । २ नृप, राजा । ३ द्वारपाल । ४ मञ्जु-घास, सूंज । ५ सूर्यके एक पार्श्वचरका नाम । ६ जिनदेव । ७ टमनक वृक्ष, दौनिका पौधा । ८ चतुर्थायमविशेष, दंडायमी, वह संन्यासी जो दंड और कमंडलु धारण करे वा किये हो । दंडी देखो । ९ दंडधारक, दंडधारण करनेवाला वारिकी । १० महादेव । ११ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम ।

१२ संस्कृत साहित्यके एक प्रधान कवि । कोई कोई इन्हे व्यासके बाद ही आसन देनेके लिए प्रसूत हैं । एक उद्धृत श्लोक है—

“नाते जगति वाल्मीके कविरित्थमिधीयते ।

कवी इति ततो गगसे ष्वयस्तत्रयि दण्डिनि ॥”

वाल्मीकि द्वारा जो ‘कवि’ शब्द प्रचलित हुआ । अर्थात् वाल्मीकिके पहले किसोंने कवि शब्दाख्या नहीं पाई, उनके बाद व्यासने जन्म लिया तो ‘कवी’ अर्थात् दो कवि हुए, फिर दण्डो हुए, जिससे ‘कवयः’ अर्थात् तीन कवि हो गये ।

किसी कभीका कहना है कि उक्त श्लोक महाकवि कालिदासका है, परन्तु ऐसा हो नहीं सकता, क्योंकि दण्डो महाकविके बहुत पीछे हुए हैं । पर हाँ, कालिदास नामधारी अन्य किसी परवर्ती व्यक्तिका हो सकता है ।

ऊपरके श्लोकके अनुसार दंडीको कालिदाससे श्रेष्ठ नहीं कहा जा सकता; क्योंकि कालिदासकी रचना दंडीको अपेक्षा कहीं उत्कृष्ट है । लेकिन दंडीके सुमधुर, सुललित और उत्तम छन्दोविन्यासको देख कर उन्हें भी महाकवि कह सकते हैं ।

संस्कृतवित् पंडितोंका कहना है कि दंडीने तीन ग्रन्थ रचे थे जिनमें ‘दण्डकुमारचरित’ और ‘काव्यादग’ ये दो ग्रन्थ मिलते हैं । याड़े दिन हुए, प्रो० पिम्बेल माहवनि प्रकट किया था कि शूद्रक-रचित मृच्छकटिका नामक जो नाटक है, वही दंडीका तृतीय ग्रन्थ है । उनको विश्वास है, कि दंडीने काव्यादगमें (२।३६१) जो यह श्लोक लिखा है कि—

‘रिम्पतीव तमोऽद्भानि वपतीवाजनं नमः ।

धसत्सुवपसेवेव दृष्टिर्बिकलता गता ॥”

वह मृच्छकटिकके प्रथमाद्वये उद्धृत किया गया है । दंडाने कभी भी दूसरेका श्लोक उद्धृत नहीं किया । इसलिये मृच्छकटिक दंडीका ही रचा हुआ मालूम पड़ता है । मृच्छकटिकमें जिस दण्डसे मानव-जीवनके बटना-वैचित्र्यका वर्णन किया गया है, दंडीके दण्ड-कुमारमें भी वही दण्ड पाया जाता है * ।

पण्डित महेशचन्द्र न्यायरत्नने इसमें उत्तरमें प्रमाणित किया है कि “उक्त श्लोक दंडीका रचा हुआ नहीं है, अन्यत्र अलङ्कारशास्त्रोंमें भी इसका उल्लेख है । दंडीने काव्यादगमें महाभारत, शकुन्तला तथा शिशुपालवधसे भी कोई कोई श्लोक मुलतः वा सामान्यतः उद्धृत किए हैं जैसा कि नाचके श्लोकसे स्पष्ट प्रतीत होता है—

“पूर्वशास्त्राणि संज्ञन् प्रयोगानुपलभ्य च ।

यथासाधर्म्यमस्मानिः कियते कान्यलक्षण ॥”

पूर्व शास्त्रसे संग्रह किया है यह कवि स्वयं स्वीकार करते हैं । ऐसी दशामें मृच्छकटिकके वचन (श्लोक)

* Pischel's edition of Rudrata's Oringaratilaka and Rayyala's Sabridayalila.

काशादयमं रश्मिर्भे कार्ण मृच्छकटिकस्यो दंकिरचित
 नहो कदा वा सखता । विधिपत दशकुमारचरितकौ
 पादुमर-पुत्र भावा और मृच्छकटिककौ मरन माया
 इन दोनोंकी पर्यालोचना करनेसे दोनों पत्र एक मात्र
 ही सिद्धि हुए हैं, यह खटापि नहो कदा वा सखता ।
 मृच्छकटिकके रचयिता शूद्रक हैं जो टंकोसे बहुत पढ़ने
 हुए हैं, इसके बहुत प्रमाण मौ हैं ' + घरक वेरों ।

बहुतोंका मत है कि टंको ११वीं शताब्दीमें पाणिभूत
 हुए थे। कोई कहते हैं कि काशादयमं (११२)
 'कन्दोविचित्रा मलकण्डुप्रपदा निदग्गिता' इस पद्यमें
 'कन्दोविचित्रिता कर्त्तव्य है और बहो टंकोका तोसरा
 पत्र है और किसी किमोबा यह खबर है, कि
 'दशकुमारका' उत्तराह टंकोका रथा हुआ नहो है ।

११ स खलत भावार्थि चनामपद्योवधे रचयिता ।

१३ काशादयमस्यै एक टोकाकार ।

१४ ग्राममाणा ऽ नामक स खलत श्लोक रचयिता ।

दक्षिदमन (स० मु०) द इत्य भाव कर्म वा इमनिय ।
 इ इत्यस्य द इतिना नाम ।

टंको—द्विभूषा एक उपामक स प्रदाय । ये लोग टंको
 और काम डण्ड लिए बहर ठहर धरम्य करते हैं, इसी
 कारण इनका नाम टंको पड़ा । ब्राह्मणके सिवा और
 किसीको टंको होनेका अधिकार नहीं है । फिर पिना
 माता पुत्र, कन्या और मायाके रहने मो टंको चीना
 नियत है । (विद्यामकर १४ पदक)

पिता माता इत्यादिके नहो रहने पर ब्राह्मण जब
 स ग्यासात्मक पदक करनेक नितात्ता कसुक हों तमो
 है किसी टंको गुहके पास जा सकते हैं । टंकी गुह भी
 फिर कबे विधीयपवर्षे जाकर प्रातय विषय जान लेते
 और जब कबे पच्छो तरहसे मासूम हो जाता है कि
 पयावधे टंको होनेकी इनको गहरी सम्झना है, तब
 उन्हें मन्त्र दान करती हैं ।

मन्त्रप्रदानका नियम यह है—गुह पक्षे मिषर्षे

† Proc. of the Asiatic Society of Bengal, 1857
 p. 108.

‡ 'कान्तका' शब्दक और एक संस्कृत श्लोक है जिसके एक
 श्लोक यह अर्थ है । यह मन्त्र का गुण है ।

शरीरमें फूटार दे कर प्राय प्रतिष्ठा करते और पोषि
 भवागमदि सभी सफ्कार विरसे करते हैं । इसके
 उपरान्त दयाका मन्त्र देते हैं । शिष्य इस मन्त्रको मूल
 मन्त्र समझ कर शप करता है । मन्त्र लेते समय वृषको
 शिवा मूक हो जातो और अनिल उतार कर मन्त्र जगा
 दिया जाता है । पश्चा नाम मो बदल दिया जाता
 है । इस प्रकार यथावहित शिवादि कर बुकनेके बाद
 गुह टण्ड कमण्डपु और गिरथा बध्न २३ है ।
 टण्ड को टण्डियोंके लिए पञ्चम पादरकी बन्धु है
 क्योंकि ये इसके उपर महाभावाकी कल्पना करने पूजा
 करते हैं ।

दशकुमोग गिरथा बध्न पढ़नेसे मिर सुझाये रहने
 और मरुस तथा ब्रह्मचको माना धारण करते हैं । ये
 लोग पत्नि बन्धु वा वातय पात्रादि शर्य नहीं करते,
 सुतर्ग पपने डाबने रसोर नहीं बना सकते हैं ।
 माथमें यदि कोई ब्रह्मचारी रहने तो लक्ष्मि रमोई बना
 कर ला सकते, पन्थवा किमो ब्राह्मणके घरने पकी
 रसोई माय कर ला सकते है । सोनेके लिए इके
 डबल एक छोटी बटाई और एक तक्रिया बाँधिये । इन
 के लिए दो बार भोजन करना तथा ब्राह्मणक प्रतिशिक्ष
 और किसी मूसो जातिवा वय पाना नियत है । इन
 सब नियमोंका बरह कर्य तक पालन करके बाद
 टंकोक अन्तमें पोंक टंकी परमस्य ब पाचमको प्राय
 करता है ।

बिन्दु कोई कोई बारह वर्षके पढ़ने हो न ट प क
 देना और कोई कोई ङा दिन तक सब पाचममें रहता
 है । टंकीके पाचारणतः विद्युदाचारो होने पर मो
 तास्त्रिक टंकीके निय हिय कर मध्यासादि व्यवहार
 करनेको व्यवस्था लिखी है—

'व कण्ठ सरा श्रेय गुणभावे विने विषः ।'

(शालतंत्रियों)

बिन्दु ऐसो व्यवस्था रहने पर मो कितने तास्त्रिक
 टंको लोग मध्यासादिका व्यवहार नहीं करते । जो
 करती मो हैं, ये बहुत हिय कर ।

निगुंथ ब्रह्मोपासना की टंकीको प्राधान्य धर्म है ।
 शैखन की इस प्रकारको उपासना नहीं कर सकते
 रहने लिए शिवादिकी उपासना लिखा है ।

इस धर्मसम्प्रदायमें जो विविध विद्वान् हैं, वे तो अपना अधिकांश नमय अध्ययनादिमें विनत हैं। वे मोमांसा, न्याय, वेदान्त और अन्यान्य शास्त्रों का अध्ययन करते हैं। बहुतसे ब्राह्मण पंडित उनके समीप गिजा प्राम करनेके निमित्त आते हैं।

मरने पर दंडियों का शवदाह नहीं होता, या तो शव मिट्टीमें गाड़ दिया जाता या नदीमें फेंक दिया जाता है। काशीमें आज भी बहुतसे दंडी दिखाई देते हैं।

फिर एक दूमरोत्रेणके दंडी हैं जो अपने परिवारके साथ रहते हुए भी दंडी कहलाते हैं। ये लोग सासारिक विषय धामनामें लिप्त रहते हैं। इनको उपाधि 'तौर्य' 'आयम' आदि है। यद्यो नहीं वरन् कभी कभी दंड, कमंडलु और गुरुशास्त्रके साथ तीर्थयात्राको निकलते हैं। कान्धो जिलेमें कई जगह इस सम्प्रदायके लोग दखे जाते हैं। ये लोग अपने सम्प्रदायमें ही विवाह करते न कि अपने मठके दंडीके घरमें।

इस घरवारी (गृहस्थ) दंडीके ऊपर एक मत्स्य है। कितने सन्ध्याभियांके मुग्धसे ऐसा सुना जाता है कि कोई सुरसिक दंडी किसी स्त्राके रूप पर मोहित हो उसे ले कर संसारी हो गये थे। उससे घरवारी (गृहस्थ), दंडी ऐसा नाम चला आ रहा है।

वैष्णव दण्डा नामक एक और त्रैणिके दण्डा हैं। ये लोग अपने साथ त्रिदण्डा अर्थात् तीन दण्डको एकमें बांध धर उधर लिए फिरते हैं। चतुर्भुज नारायण इनके उपास्य देवता हैं। ये लोग शिखा छोड़ कर नमाम सिर मुड़ा देते, गुरुवा वस्त्र पहनते तथा गलेमें तुलसीकाठ और कमलबोजको माला एवं यज्ञोपवीत धारण करते हैं। वैष्णव दंडो बड़े शब्दाचारा होते हैं, यथासमय वेदाध्ययन और नित्य क्रिया किया करते हैं। इन लोगोंका भोजन, अग्निस्पर्श, कौपोन और कमंडलुधारण तथा कईदेहिक सभी क्रियाएँ शैव दण्डियों सरोग्धो हैं, किन्तु कुलाचारी शैव दंडियोंके उसीकोई मध्यमांसका श्वहार नहीं करते।

दण्डोत्पल (मं० क्लो०) दण्डयुक्त उत्पलमिव। वृचभेद, एक पौधका नाम। (*Canscorda decussata*) यह

एक प्रकारका शाक जातीय रूप है। कमलके जसा इसका कुसुमस्थित वृत्त दण्डको तरङ्ग लम्बा होता है, इसीसे इसे दण्डोत्पल कहते हैं। पीला, लाल और सफेद फूलके भेदने यह तीन प्रकारका होता है। दंडोत्पलके विषयमें बहुतोंका मतभेद देखनेमें आता है।

इसे कुछ लोग गूमा, कुछ लोग कुकरौंघा और कुछ बड़ी सहदेया समझते हैं। कोई कोई कहते हैं, कि इसका नाम दण्डकलम है। अब यह देखना चाहिए, कि दण्डोत्पलको प्रकृतिक संज्ञाको यदि दण्डकलम कहें, तो द्रोणपुष्पीके विषयमें भेद पड़ जाता है। क्योंकि द्रोणपुष्पीकी ही नोग दण्डकलम कहते हैं, कारण इसमें द्रोणकलमके जैसा छोटे छोटे सफेद दलयुक्त पुष्प लगते हैं। फल भी ठोक गोशीर्षकको आकृतिका होता है, इसीसे उसे गोशीर्षक भी कहते हैं। उद्योमामें यह गोंदच और म लोगोंके देशमें गूमा नामसे मयहर है। दण्डोत्पलकी कहीं कहीं शद्धपुष्पी वा शद्धाहुली कहते हैं। किन्तु शद्धपुष्पी और दण्डोत्पल भिन्न भिन्न जातिका पौधा है। प्रायद मालूम पड़ता है कि इसके तीन भेद जो वतलाये गये हैं, उनमेंसे शुक्लपुष्प दण्डोत्पलकी शद्धाहुली और पोटपुष्प दण्डोत्पलकी गोवरिया कहते हैं। गोवरियाका अपभ्रंश गोवन्दिनी है। भ्रूणपुष्प दण्डोत्पलको उनसे भिन्न वतलाया है, लेकिन यह युक्तिसङ्गत नहीं है। क्योंकि भावप्रकाशमें उक्त तीनों प्रकारके पुष्पोंको कुकरौंघाके अन्तर्गत माना है। रत्नमालामें उसे कुकरौंघा, गोवरिया और गोच्छाल नामसे उल्लेख किया है। इससे यह सावित होता है, ये तीनों वृक्ष ही दण्डोत्पल नहीं हैं और न इनके फूल ही कमलके जैसे लम्बे होते हैं। अब यह देखना आवश्यक है कि किस जातिके वृक्षको दण्डोत्पल कह सकते हैं। जब पहले यह कहा जा चुका है कि दीर्घवृन्तयुक्त कमलके सदृश जिसका फूल होता है वही दण्डोत्पल है तब सहदेव जातीय पुष्पशाकको ही दण्डोत्पल कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं। क्योंकि इसका फूल उत्पल सा और वृत्त भी लम्बा होता है। लोग इसके पौधेको अकसर दोबालके ऊपर लगाया करते हैं। इसके पत्ते हरसिंगार (सिठलो)के पत्ते सदृश, पर उनसे कुछ मोटे होते हैं।

इसमें कृताके ऊपर शब्द दत्तवृत्त चन्द्रमणिशा मुष्पाङ्कति
के पुत्र लगती हैं। यह पुत्र प्रसूटित हो कर जब एक
जाता है, तब उसमें बहुत बारीक रुई निकल कर इकामें
इसर उतर चढ़ती है। यद्यो यथावत् मंत्रोत्पत्तय दक्षी
त्यक्त है। यह दत्तवृत्त सचदेवोकी पोत दक्षोत्पत्तय और
इसो कतिपय परब पुत्रको परब दक्षोत्पत्तय कह सकती
हैं। पोत दक्षोत्पत्तया नामान्तर गोबन्दी और गन्ध
बन्दी है। इनका मुख—स्य, श्याम और आसनायाक
तथा अग्निगोत्र है। (राजनि०)

दक्षोत्पत्ता (स० श्लो०) श्वेत मुख व क्षोत्पत्त, सविद कुल
वाया द क्षोत्पत्त ।

दक्षः (स वि०) दक्ष कर्मणि यत् । द क्षनीय, द क्ष
याने शोच्य, त्रिषे द क्ष विना उचित हो ।

दत् (स० पु०) दत्त स्योदरादि० साङ्ग । दत्त, दत्त ।
दत्तवत् (वि० श्लो०) दत्तवत् देवी ।

दत्तारः (वि० वि०) दत्तारथा, जिसमें दत्त हो ।

दत्तितर—बन्दी प्रदेशके भक्तार्थत दाना जिसके माहिम
व्यवसायका एक चन्द्र । यह पचा० १८ १० ८० और
देगा० ०२ १० पू० माहिममें १० मोक्ष उत्तर-पश्चिममें
प्रवक्षित है। इस चन्द्रके निजद एक दुर्ग का ध्वंश
मिप दिखनेमें आता है। प्रायद यह दुर्ग पोष, दौर्गमि
बनाया गया होगा ।

दत्तिया—१ कुन्दबन्दीके भक्तार्थत एक द्वीप राज्य। यह
पचा० २१ १० के २१ १० ८० और देगा० ०८ १० से
०८ १५ पू०में प्रवक्षित है। इसका क्षेत्रफल ८१५ वर्ग-
मोक्ष है। इसके पूर्वमें मन्सो प्रदेश और तीनों और
आसित्वर राज्य पड़ता है। मोक्षमि ११२ है ।

१८०२ ई०को वैश्विकी अग्निसे चतुस्रार कुन्दस-
न्दीके अन्त्या प्रदेशमेंके साव दत्तिया राज्य पित्तवादि
प मन्सोके जाय सौया गया। १८०४ ई०में चंगीजोने
दत्तियाके राजा परीक्षितके साव अग्नि कर ली। राजा
परीक्षितके बाद इनके दत्तक पुत्र विजय बहादुर राज्य
नि शासन पर बैठे । १८२० ई०में राजा निजयकी बहू-
के बाद इनके पोष पुत्र मन्सो राजा हुए । वे कुन्दना
राजपूत हैं। इनका अन्त १८५४ ई०में हुआ था। वत्
मान मन्सोराजका नाम H H मन्सोराज पर भीष्म
सोबन्दके ब बहादुर K O S I और सुवराजका
नाम राजा बहादुर बलमद्रनि हजो है ।

राज्यकी वामदनी प्राय १०००००) ५०वीं है ।
वैश्विक विमानमें ८० वामान, १५० गोक्षन्दा, ०००
पन्सोरोही और १००० पद्मतिक सिना हैं। राजसभान
के सिने १५ गोपि लोड़ी जाती हैं ।

२ कुन्देय अग्नि दत्तिया राज्यका एक नगर। यह
पचा० २१ १० ८० और देगा० ०८ १० पू एक
कोटे पहाड़के ऊपर प्रवक्षित है। यह पार्श्वसे १२५
मोक्ष दक्षिण पश्चिम तथा समुद्रसे १५८ मोक्ष उत्तर-पूर्व
पार्श्वसे समुद्र तक आसित्वसे सम्यक् पर पड़ता है। यह
ने मध्यमत्तमें तरङ्ग तरङ्गके पक्ष उच्च तथा प्रसोद उद्यान
से सम्बन्धित राज्य प्राप्ता है। यद्यपि प्राय ४ मोक्षकी
दूरीमें बहुतेक बौद्धमन्दिर देखे जाते हैं ।

दत्त (स० वि०) दीयते इति दात्तः । १ दत्तित, वपाया
दूपा । २ दत्त दान दिया हुआ। इसका संस्कृत पयाव—
विषद और विद्याचित है । (पु०) दा मांभे क । १ दान ।
३ एक अग्नि । ये पश्चिमे पुत्र और दत्तात्रेय नामके
प्रतिष्ठे है। मागतत्तके मतमें ये विष्णुके चारों भवतारों
मेंसे कृते परतार माने गये हैं। इन्होंने इस भवतारमें
पत्तके और प्रकाशके समीप पाञ्चविद्या वर्णन को की।
इसके पुत्रका नाम निमि था। २ पश्चिमि कुन्देय नैग-
मोद के निषिद्धि नी वासुदेवके निषे एक । ३ एक राजाका
नाम । (भारत १२११५(१२)) ४ यदुष गीय राजाके
देवरके पुत्र । (रतिव व ५८२) ८ ये श्लोकी एक उपाधि ।
८ ब्राह्मणोंमें 'ग्रामेय, सत्रियोंमें 'वर्मन्' के श्लोके दत्त और
शूद्रोंमें दास के कई एक साधारण उपाधि हैं। १० एक
पञ्चारके व नामी आबन्दाकी उपाधि। योद्धे सन्धिकी
की दत्त उपाधि है। कुल । ११ पुत्रमोद, परतक ।

दत्तक (स० पु०) दत्त एव आर्त्त कम् । दत्तवत्तके
पुत्रोंके भक्तार्थत सुवक्षिण्य बारङ्क पञ्चारके पुत्रोंमेंसे
एक, शास्त्रविधिसे बनाया हुआ पुत्र, यह जो वास्तवमें
सुत्र न हो पर सुत्र मान लिया गया जैसे मोद लिया हुआ
सङ्घा, सुत्ररथा ।

दत्तक-विषयक पनेक पन्थ हैं यथा—दुर्गेशाचार्य
कोसल्याचार्य, नन्द पंडित और राम पंडितको चार
'दत्तकपत्रिका' आसाचार्यका 'दत्तकद्वय', धनतराम
का 'दत्तकदीर्घति' तथा प्राज्ञी और विजयनाथ उपा
ध्याय प्रभोत 'दत्तकनिषेय' पन्थदेव-कृत 'दत्तकपुत्र

विधि', नन्दपंडित, माधवाचार्य और रामकवि-प्रणेत भिन्न भिन्न 'दत्तक मोमांसा', गूलवाणि कृत 'दत्तकविषेक' और 'दत्तकल्पलता', अनन्तदेव-कृत 'दत्तकौस्तुभ', धर्म राजका 'दत्तरत्नाकर', माधव पंडितका 'दत्तादर्य', गङ्गदेव वाजपयोकी 'दत्तकचन्द्रिका', नागोजी भट्टका 'दत्तकौस्तुभ'. कृष्णमियका 'दत्तकाभाषण', चोनाथ भट्टका 'दत्तनिर्णय', दत्तकतिलक' आदि ग्रन्थ प्रचलित हैं। इनमें नन्द पंडितको 'दत्तकमोमांसा' और देवानन्द भट्ट वा कुवैर प्रणेत 'दत्तकचन्द्रिका' को सर्वापेक्षा मान्य है। ये दो ग्रन्थ भारतवर्ष के प्रायः समस्त प्रदेशों में तुल्यरूपसे प्रामाण्य और ममाहत होती हैं। 'दत्तक'के विषयमें, शास्त्रोंमें कोई विशेष मतभेद न होने पर भी जहा जहा 'दत्तकमोमांसा' और 'दत्तक चन्द्रिका'के मतमें अनेक्य है, वहा यहाँ 'दत्तकचन्द्रिका' का मत बड़ान और दक्षिणप्रदेशोंके किसी किसी स्थानमें आहत होता है—और 'दत्तकमोमांसा'का मत मियिला एवं काशीको तरफ सुख्यरूपसे गण्य है।

पुत्र उत्पन्न हुए बिना पित्रऋणसे उधार नहीं होता और पुत्रास नरकका भोग होता है। इसलिए अपुत्रकको पुत्र ग्रहण करना चाहिए।

'अपुत्रेण सुतः कार्यः यादृक् तादृक् प्रयत्नतः ।

पि ङीदकक्रियाहेतोर्नामसकीर्तनाय च ॥

अपुत्रेणैव कर्तव्यः पुत्रप्रतिनिधि सदा ।

पिंङ्गीदकक्रियाहेतोर्यस्मात् कार्यः प्रयत्नतः ॥" (मनु)

अपुत्रक व्यक्तिको आह तर्पण आदि तथा नामको रक्षाके लिए अतिशय प्रयत्नके साथ पुत्र ग्रहण करना चाहिए अर्थात् विशेष प्रयत्न करके पुत्र-प्रतिनिधि दत्त कादि ग्रहण करना चाहिए। पुत्रके बिना अन्य किसी भी उपायसे नामको रक्षा नहीं होता और पित्रऋण आहतर्पणादिके अभावसे नितान्त अवसन्न हो जाते हैं। इसलिए अपुत्रकके लिए दत्तकादिका ग्रहण करना आवश्यकतैव्य है। पुत्र उत्पन्न हो कर यदि मर जाय तो पित्रऋणसे तो मुक्त हो सकते हैं, परन्तु आहतर्पण आदि कुछ भी सम्पन्न नहीं होते। इस कारण मृतपुत्र व्यक्ति (अर्थात् जिसका पुत्र मर गया हो)-को भी पुत्र ग्रहण करना आवश्यकतैव्य है।

'अपुत्रो मातृपुत्रो वा पुत्रार्थं समुपोष्य च ।

ज्येदेन ज्ञातमात्रं न पुत्री भवति मानवः ॥

पित्रणामवृष्यैव स तस्मात्पुत्रमर्हति ॥" (शौनह)

'मृतपुत्रो वा' इस पदमें व्यक्त होता है, कि मृतपुत्र प्याशिका पुत्र-ग्रहण करना आवश्यकतैव्यमें गण्य है। परन्तु जिनके पुत्रको तो मृत्यु हो गई है और पौत्र वा प्रपौत्र जोवित है, ऐसी दशामें उसको दत्तक ग्रहण करना पड़ेगा या नहीं ? इसका समाधान इस प्रकार है—'उसको दत्तक ग्रहण करनेको जरूरत नहीं; कारण पुत्र ग्रहणका उद्देश्य नाम-रक्षा और पित्रऋणका आह तर्पणादि कार्य सम्पन्न होना है और वह कार्य पौत्र वा प्रपौत्रमें भी हो सकता है। इसलिए उसको पुत्र-ग्रहण करनेकी आवश्यकता नहीं। अपुत्रको पुत्र प्रतिनिधि करना चाहिए। प्रतिनिधि ग्रहणसे अतिशय आदि ग्यारह प्रकारके पुत्र समझना चाहिए।

'क्षेत्रजादीन् श्रुयानेतानेकाद्य यथोदितान् ।

पुत्रप्रतिनिधोनाटुः विद्यानेयान् मनोपिनः ॥" (मनु)

'क्रयाके लोपके कारण मनोपियोंमें क्षेत्रज आदि ग्यारह प्रकारके पुत्रोंको जो पुत्र प्रतिनिधि कहा है। जैसे दूतके अभावमें तैमको उसका प्रतिनिधि कहा गया है, उसी प्रकार औरसपुत्रके अभावमें ग्यारह प्रकारके पुत्रोंकी पुत्र-प्रतिनिधि समझना चाहिए। औरस पुत्रकी जे कर पुत्र वारह प्रकारके हैं; यथा—औरस, क्षेत्रज, दत्तक, कृत्रिम, गूढोत्पन्न, अपविष्ट, कानोन सहोदर, झोत, पौन संव, स्वयं दत्त और शौट। पुत्र देवी।

'अनेकथा कृताः पुत्रा ऋषिर्गव्य पुत्रगतैः ।

न शक्यन्तेऽपुना कर्तुं शक्तिहीनतया नरैः ॥

पुत्र-प्रतिनिधि अनेक प्रकार होने पर भी कलियुगमें शक्तिहीनताके कारण अपुत्रक व्यक्तिके लक्ष सभी प्रकारके पुत्रोंको ग्रहण करनेमें समर्थ न होंगे।

'ईमान् धर्मान् कलियुगे वर्जानाहुर्ननीपिणः ।'

दत्तक पुत्रके विवा कलियुगमें धन्य प्रकारके पुत्र ग्रहण करना निषिद्ध वा वलित है।

कलिकालमें अपुत्रकके नामकी रक्षा और आह तर्पण आदिके लिए एकमात्र दत्तक पुत्र ही उपाय स्वरूप है। प्रत्येक अपुत्रक व्यक्तिके लिए दत्तक ग्रहण करना आवश्यक है।

अहम से कर तोन अहमि सुन होना प्रसन्न हिनूषा
 वर्तव्य है। ब्रह्मचर्य द्वारा कृपिचोर्षि, यज्ञ द्वारा देवता
 चोर्षि और पुत्रोत्पादन द्वारा पितरोर्षि अहमि विमुक्त
 हो सकते हैं। इसलिये पुत्रोत्पादन परब्रह्म विधेय है।
 परन्तु जिनके पुत्र नहीं हुआ है, वे पित्र-व्यथये मुक्त
 नहीं हो सकते; और वसोष्ठिय उन्हें पुत्र-प्रतिनिधिबो
 धारणकता होते हैं। कनिष्कानने प्यारह प्रकारके
 पुत्रनिधिर्षिमिने दत्तकके सिवा अन्य प्रकारके पुत्र प्रति
 निधि ग्रहण करना निषिद्ध है- इस कारण कस्मिने अपुत्रक
 व्यक्तिके लिये दत्तक ग्रहण करनेके सिवा अन्य कोई
 उपाय नहीं है। 'अपुत्रक व्यक्तिके दत्तक ग्रहण करें' इससे
 यह समझना चाहिये कि स्त्रियोंको दत्तक ग्रहण करने
 को अमता नहीं है; पतिबो अनुमतिके बिना कोई भी
 विधवा स्त्री दत्तक ग्रहण नहीं कर सकती और स्त्रीको
 अनुमतिके बिना पति भी दत्तक देने वा ग्रहण करनेमें
 मन्त्र नहीं हो सकता। सामी यदि ब्रह्म समयेमें अनु
 मति दे, तो वह विधवा स्त्री दत्तक ग्रहण कर सकती
 है। पति जितने दत्तक ग्रहण करनेको अनुमति दे
 वाय स्त्रीको उतने ही दत्तक ग्रहण करनेका
 अधिकार है।

न स्त्री पुत्र इच्छा शीघ्रहीदात्ता अन्वश्रुतज्ञानाङ्गुर्मिति
 अनेन विधवाया नरैनुज्ञावाङ्मन्वात् अनधिकारो गन्धते।
 न च ब्रह्मणा स्वर्भेनुज्ञापेका पातन्नात् ॥ (इत्यपीमांता)

सधवा स्त्री स्वामीको अनुमति से कर दत्तकग्रहण
 कर सकती है या नहीं? इसका समाधान हम प्रकार
 है—सधवा स्त्री स्वयं कोई कार्य नहीं कर सकती
 किन्तु स्वामीके साथ मिल कर समो कार्य कर सकती
 है। सामी यदि दत्तकग्रहणको अनुमति बिना दिये हो
 सर जाय, तो विधवा स्त्रीको दत्तक ग्रहण करनेको
 धारणकता नहीं है। कारण यह कि सामीको अङ्गु
 र्बाद ब्रह्मचर्य धारणमन कर पनायाय ही वह समस्त
 पार्ष्णिके विमुक्त हो स्वर्भोचको आ सकती है अतएव
 दत्तक-ग्रहण निषेधोक्त है। जो मा कि कहा है—

"पुत्रे मतीरि वाप्यी एवी ब्रह्मचर्यत रिचता।
 स्वर्भे मच्छन्नुनाति नवा से ब्रह्मचरिणः ॥
 एषि मद्रवा मन्व र्दनेन उरगरेहाराभिधानाद्यिष्टि ब्रह्मचर्य
 क च ॥" (इत्यपीमांता)

अपुत्रेण' यह अहम एव अहम के इसलिये इसका
 अर्थ यह होता है कि एक ही अपुत्रक व्यक्ति दत्तक
 ग्रहण करे, दो का तोन व्यक्तिके मिल कर नहीं। कारण
 दत्तक पादिका हातुत्पाद्यकत्व धारण विवह रूप है इस
 लिये ऐसा नहीं कर सकते।

"हापुत्रा-नवा ये स्वरुतःश्रीतःपरदाः ।
 नाश्रुवैःहनुश्रुःह दुर्गवैमि रवोर्षवा ॥" (इत्यपीमांता)

एतदधिकि—ब्राह्मणोंका व्यक्ति होने पुत्र स यह करना
 चाहिये अर्थात् नविके पुत्रको दत्तक वा गोद
 लेवे। सपि कथा पुत्र यदि न मिले तो अपसिद्ध, और
 पमपि कथा भो न मिले तो पमाश्री पुत्रको दत्तक ग्रहण
 करना चाहिये। यदि समोत्रका पुत्र न मिले तो पमयो
 तका पुत्र ग्रहण करें, किन्तु दत्तक ग्रहण करनेमें सपि क
 का पुत्र को सर्वाधिक खेह कहा गया है। अतएव
 सपि कके पुत्रका माद मैमिके लिये विधेय प्रयत्न करना
 चाहिये। अहम मुख्य पयत्न ज्ञातिको सपि क
 करने है। सपि क पुत्रके न मिलने पर समाश्रीदक
 पुत्र समाश्रीदक पुत्रके न मिलने पर माङ्गुल्य
 पुत्र और माङ्गुल्य पुत्र भो न मिले तो समोत्रका पुत्र
 दत्तक-ग्रहणके योग्य है। यह मा यदि न मिल सके तो
 भिक गोत्रके पुत्रको गोद लेना चाहिये। इतको विविधों
 के द्वारा इत्यकको धारणकता दिखलाई है। किन्तु
 शीघ्र भागिनिय और माङ्गुल्य पुत्रको अर्थात् गोद न
 लेना चाहिये।

"माङ्गुल्यो कर्मिष्ठु वर्तन्व पुत्रतमः ।
 उदमःश्रीवपिष्ठे वा अन्यत्र तु न कारवैर ॥"

ब्राह्मणादि कपि क वा लसके समाश्रीमें पमपि क
 पुत्र ग्रहण कर सकते हैं, पर अन्यत्र नहीं कर सकते।
 'अन्यत्र न तु अन्यत्र न करे' इसका परिभाषा यह है
 कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदिके पुत्रको ग्रहण नहीं
 कर सकते। परन्तु 'अन्यत्र' अर्थात् सपि क और पम-
 पि कके सिवा अन्यके पुत्रको ग्रहण न कर सकते हैं, ऐसा
 यह करनेमें बचनाकारक माय विरोध होता है। क्योंकि
 बचनाकारके अट निष्ठा है—

कविदारमदक्षै व समोत्रकवापिका ।
 अपुत्रयोदिभोवत्मात् हुक्मे परिबन्धैर ॥

सुनिश्चित मोक्षमें प्राप्तिके द्वारा परिशुद्ध करण चाहिये ।

तदन्तर बन्धुघोरे साध दाताके सम्यक् ज्ञान कर "पुत्र दीर्घ" (पर्यात् सुखि पुत्रदान श्रेष्ठिये) पितो याचना करनी चाहिये । दाता यदि पुत्र दान देनेमें समर्थ हो, तो पत्नीताको चाहिये कि वह पुत्रदान प्रयोजनविधिसे अनुसार पुत्रको पश्य करे । "दिव्यत्वादि" इव मन्त्रके द्वारा पुत्र प्राप्ति किया जाता है । उपरान्त बन्धुव्यवस्था जप करके मियुक्ता मष्टक सूचना चाहिये और फिर मूत्र शोथ प्रादि माहुरणिक कार्योंके सम्यक् होने पर उसे घर ले आना चाहिये । ७

घनस्तर प्राचार्यको दक्षिणा देनेो चाहिये । यदि राजा दत्तक पश्य करे, तो राज्याहं पर्यात् राज्याही व्रित्तनो पाय हो, तमसे प्राची दक्षिणा देनेो चाहिये । वैश्यादिको यज्ञायज्ञि दक्षिणा देनेो चाहिये । पत्नीताको उचित है कि दत्तक पश्य कर, धन-भावोक्त विधिसे बतु घर कम दत्तक (पुत्र)के पिताने द्वारा कोई मष्टक आयादि सम्यक् करावे । यदि कोई सखार हो चुका हो, तो पुत्रा मष्टक करानेको कोई प्रायश्चित्त नही । जो सखार न हुए हों उसी बेवस सखारके कराना चाहिये ।

जिन वासकका पुत्राकरण सखार हो चुका है उसे दत्तकपयमें न लेना ही उचित है और न देना । पतयक पौष वर्ष तकके बच्चोंको जो गोष्ठ लेना चाहिये, फिर नही । ७

- "धीरघोरे प्रवृत्तानि पुत्रसंभवेपर्यन्त ।
- कर्त्तव्यो यत्पुत्रो वा पुत्रार्थे उत्तरोप न ॥
- वाच्यो ह्येते ह्यहं कर्त्तव्यं वागुदीयक ।
- आचार्यं वसुधैव कुटुम्बकम् ॥
- मनुष्येभ्यः सर्वेषु रामानरं विश्वान् श्रेष्ठिन् ।
- दत्तः घनस्य गता न पुत्र देहीति वाच्यते ॥
- राजे कर्मणो हाहास्ये को बभेदेति व बनिः ।" (दशकर्मोपनिषत्)
- "शुभोर्ध्वेन न पुत्र संशुद्धा प्रविधीयते ।
- अथपुत्रान्त्वं न पुत्रं च पुत्रतां नरिं वाम्भतः ॥
- पुत्राया यदि संस्थापितं न शोभते वैश्रवा ।
- वचसात्मनवास्ते स्फुरन्त्यः वाच उच्यते ॥
- करुण्यन्तु व वमाहृषीन्त्वं न दयाया पुत्रा ह्य ॥"

(दशकर्मोपनिषत्)

इतक द्वारा दोनेवाके वाक्य निर्णय—दत्तक-पश्यके बाद यदि पत्नीताके पुत्र उत्पन्न हो, तो पत्नीताको मूत्र होने पर, यदि हीकरणके बाद योद्धा याहमें दत्तकका पश्चि कार नही रहता । इसमें लोह और कानिष्ठके नियमकी रचना नही होती । दत्तक लोह होने पर भी, पौरस पुत्रके रहते हुए यदि हीकरणके फलमें योद्धा याह नही कर सकता ।

दत्तकपौष—दत्तकके जननकुलमें यदि कोई मर जाय तो उसका पयोच नही होता । किन्तु पत्नीताकुल में जनन पौर मरनेमें होनेसे त्रिपत्रि पयोच रहता है । पर्यात् पत्नीता प्रादि व्यभिक्तिका यथासम्भव जनन पौर मरने होने पर दत्तकको, तथा दत्तकको भी पौर उससे पुत्रादिका यथासम्भव जनन पौर मरने होने पर पत्नीता प्रादिको तीन दिनका पयोच लगता है ।

दत्तक यदि मृति क हो, तो भी पयोच तीनही दिनका होता है, मष्टक नही ।

"विश्वोक्ताः पुत्रं विहा पुत्रं न उपरान्तस्थाः ।
 नवने मरने कैव महाशीघ्रत्वं भाषिता ॥
 विश्वोक्ताः पयोत्रो वा श्लेषः संशुद्धः वैश्रवा ।
 वरुने पार्षे तत्वं महापौष विधीयते ॥"
 (दशकर्मोपनिषत्)

दत्तक प्राप्ति के ही पौर प्राप्ति नगोत्र वा मित्र-गोत्र हो, जनन पौर मरनेमें उसे तीन ही दिनका पयोच लगता है । दत्तकके समय दत्तक-पत्नीताको मो तीन दिन पयोचका पालन कराना पड़ता है । परन्तु दामुवरा-यक-दत्तकके जननकुल पौर पत्नीताकुल दोनों कुलमें तीन दिन पयोच होता है । बन्ध्याकी जिन प्रकार आज पक्षमें मापि चर निरूपित होती है, दत्तकका मो उसी प्रकार आजपक्षमें (पश्चात् पयमेंको मज्जान कर बतुय पुत्रय पयत्ता मापि ह्यके कारण तीन दिनका पयोच होता है । दत्तकको पक्षम पुत्रपक्षे दाम्भ पुत्रय पर्यन्त एक दिनका पयोच लगता है । इसमें पुत्रपक्षे ऊपर ज्ञानमात्रने सुधि होती है । "दत्तकपशुदिका"के मतसे यदि पत्नीता द्वारा दत्तक उपनोत हुआ हो, तो पत्नीता को मूत्र होने पर उसे दस दिनका पयोच लगीमा ।

"पुत्रमेतत्तं विद्यात्पुत्रं पुत्रेण पयाचकम् ।
 जेदारी दम तत्र स्वराजनेन ह्यदिति ॥"

दत्ति मरीचिवचनेन शिष्यस्य गुह्यं प्रोक्तं कार्यकरणनिमित्तं दशाहं।
 शौचमुक्तं भवति, अत्र गृहगन्ध आचार्यादिरूपः । गृहत्वमत्रा-
 प्यस्ति उपनयनादिकर्तृत्वात् न तथा दत्तकस्य प्रतिप्रदोषकियाकारण-
 एव दशरात्राशौचं सिद्धति, अन्यथा त्रिरात्रमेव" (दत्तकमीमांसा)
 साम्नि—दत्तकको सास्त्रस्वरिक अथ दत्तकद्वि विधान-
 का अनुसार करना चाहिये; पावर्णविधानानुसार नहीं ।
 दत्तकके विवाह—दत्तकके विवाहादिमें परिवेदन दोष नहीं
 होता, अर्थात् च्येष्ठ सहोदरके अविवाहित रहते हुए
 दत्तक विवाह नहीं कर सकता और दत्तक अविवाहित
 हो तो उसके कनिष्ठ सहोदरका विवाह नहीं हो सकता ।
 दत्तकके विवाहस्थल पर गृहीतकुलमें वै पुरुषिक सापिण्ड
 है, अर्थात् गृहीतकुलमें दत्तक चतुर्थी कन्याके साथ
 विवाह कर सकता है ।

दत्तकका मातामहपक्ष—यदि गृहीताके बहुतसो
 स्त्रियां हों और गृहीत दत्तककी वृद्धि उपस्थित हो, तो
 दत्तक-गृहीताकी कौन सी स्त्रीके पितादि उसका माता-
 मह पक्ष होगा ? शास्त्रोंमें प्रथमा स्त्रीको धर्मपत्नी कडा
 है, द्वितीया आदि कामपत्नी कछो गई है, अतएव प्रथम
 स्त्रीके पितादि ही मातामह पक्ष होगा । जिस स्थल पर
 पतिकी अनुमतोके अनुसार विधवा स्त्रियां दत्तक ग्रहण
 करती हैं, उस स्थल पर स्वामी अपनी स्त्रियोंमेंसे जिसकी
 अनुमति दे जायगा और उसके अनुसार जो दत्तक
 ग्रहण करेगा, उसोके पितादि दत्तकका मातामह पक्ष
 होगा ।

दत्तक-दायविभाग—दत्तक ग्रहणके बाद औरस पुत्र
 उत्पन्न हो, तो उस औरस पुत्रको ३ भाग और
 दत्तक पुत्रको १ भाग मिलेगा । बंगालमें तोन भागमेंसे
 दो भाग दत्तकको मिलता है ।

“उत्पन्ने त्वोरसे पुत्रे तृतीयांशहरा स्मृताः ।

सवर्णा असवर्णास्तु प्रासाच्छादनगानिनः ॥

चतुर्थ्यांशहरा स्मृता इति द्वितीय चरणे क्वचित् पाठः ।”

(दत्तकचन्द्रिका)

दत्तक कन्याग्रहणविधि—दोहिव्रादिके द्वारा उपकार
 पानेकी प्रत्याशा कर दत्तककन्या ग्रहण को जा सकती
 है । यह शास्त्रानुमोदित है, पुराणादिमें इसका उदाहरण

मिलता है । दंशरथने शान्ताको दत्तककन्याके रूपमें
 ग्रहण किया था । इत्यादि ।

अविवाहितके लिए दत्तकका नियम—अविवाहित पुरुष
 दत्तक ग्रहण नहीं कर सकता । दार परियह न करनेसे
 अपुत्रक तो कहलाता है, पर उसके पुत्र होनेको सम्भावना
 अवश्य है, इसलिए उसके लिए दत्तक ग्रहण करनेका
 निषेध है ।

बहुतसी स्त्रियोंके होते हुए यदि स्वामी उन स्त्रियों-
 की दत्तक ग्रहण करनेकी अनुमति दे और तदनुसार
 प्रत्येक स्त्री एक एक दत्तक ग्रहण कर ले, तो ऐसो दशा-
 में शास्त्रानुसार सिद्ध होने पर भी प्रथम गृहीत दत्तक
 ही धनका अधिकारी होता है तथा एक समयमें अनेक
 दत्तक गृहीत होने पर किसी भी दत्तकको धन ग्रहण
 करनेका अधिकार नहीं होता ।

बोरमित्रोदयके मतसे—पति यदि मरते समय दत्तक-
 की आज्ञा न दे सके और मर जाय, तो स्त्री स्वयं दत्तक
 ग्रहण कर सकती है । बंगालमें ऐसा नहीं होता ।

स्त्री अथवा शूद्रकी दत्तक ग्रहण करना हो, तो पहले
 ब्राह्मणके द्वारा होम कर लेना चाहिए । ऐसा नहीं
 करनेसे दत्तकत्व सिद्ध नहीं होता । ब्राह्मणादिके द्वारा
 आवश्यक मन्वादिका पाठ कराना चाहिए । मन्त्र-पाठके
 विना ही स्त्री और शूद्रादिका दत्तकत्व सिद्ध हो सकता
 है, किन्तु होमके विना कदापि दत्तकत्व सिद्ध नहीं
 होता । उत्तरकालमें कोई अनर्थ न हो, इसके लिए वन्धु-
 वान्धव और राजपुरुषके समक्षमें दत्तक ग्रहण करना
 मङ्गल है । (दत्तचन्द्रिका, दत्तकमीमांसा)

दत्तकग्रहण प्रयोगविधि—गृहीताकी दत्तक-ग्रहणके एक
 दिन पहले उपवास करना चाहिए, फिर उसके दूसरे
 दिन प्रातःकाल सम्पन्न करके आचमन, विष्णुस्मरण
 और नारायणकी गन्धपुष्प चढ़ा कर स्वस्तिवाचन करना
 चाहिये । “ॐ कर्तव्येऽस्मिन् पुत्रप्रतिग्रहकर्मणि पुण्याह”
 भवन्तो ब्रह्मन्तु, ॐ पुण्याह” यह मन्त्र तोन बार पढ़ा
 जाता है ।

इस तरह स्वस्ति और ऋषिकी तीन बार करना
 चाहिए, परन्तु शूद्रके लिए “स्वस्ति भवन्तो ब्रह्मन्तु” इतना
 हो कहना प्रथीक होगा ।

नामधेयिणी—“ॐ चण्डि नोमोऽह” पोर वरु
बेदिदीको—“ॐ मूयः नोमो यमः कान्तः” वरु मन्त्र
पठना चाहिये।

तमने बाद “एते यन्त्रपुत्रे ॐ चण्डिनादि नवपद्मेभ्यो
नमः” ऐसा कह कर पूजा करें। फिर मनेगादि पत्र
देवता इन्द्रादि दम दिक्पालान् शुभ पोर ब्राह्मणको पूजा
करें। तमने बाद पठन्य करे जो इम प्रकार है—

“बोविण्णु रीं तन्नादय पमुके मा म पमुके पये पमुक
तिवो पमुकतोम” ओपमुक देवममा (शुद्ध रीं तो पमुक
दामः) पत्रत्रालपमुकपे ब्रह्मन्नावावकरवपुत्रामनरबा माय
दारा ओगरमिन्नारमोत्थरं पाव्यव शरवाःयं च मनुपुत्र
मनिर्वायतुगोनकपरागदापविं वाक्यानुनासे न ययाको
मिर्बिजिना पुत्रमतिपद्मक करिये।”

नामधेयो जो तो ‘दिवा को’ इत्यादि, यमुबेदी जो तः
यन्नावतो’ इत्यादि न कल्पसुत्र पाठ करना चाहिये
बादमें विज्ञनायके निय पथियपूजा करे पोर ब्रह्म, शोता,
पाचार्य पोर पदमको वरु करे।

दशक-परीता कहे—“ॐ म् मायु भवानायां
ब्राह्मण कहे—“ॐ म् मायुभमाने” अन्ता कहे ‘वचंय
प्यामो मवना” पोर ब्राह्मण कहे—“ॐ म् पचंय।
इसके बाद ब्राह्मणको वरु पत्रद्वारा पादि दे कर तमने
दक्षिण प्राणुका न्यय कर कहे -

“विन्दुतीं तन्नादय पमुके मांमि पमुके पये पमुक
तिवो मन्नाह्मिन्पतयोनकायुत्रबिजिना पुत्रपद्मकम वि
ब्रह्मधर्मकरवाय पमुक गात्र ओपमुक देवमर्मान्
पमि पायादिमिरम्यरं मवन्तु मरु इहे (ब्राह्मण रीं तो
इताःप्रिय कहे)। तमने बाद ‘अयाविहित ब्रह्मधर्मकुं’
पिया कहे। ब्राह्मण रीं तो ‘यया प्राण करवाचि’ ऐसा
कहे। इम प्रकार शोता, पाचार्य पोर पदमको का वरु
करना चाहिये। बादमें शोता पादि विना पर बैठ कर पत्र
पत्रद्वारा न्ययाकोत्र ययाविहित मन्त्र पठकर पत्रययका
सोहन करे। पत्रययका सोहन जो कुम्भे पर प्रथम
दारा पत्रययको रीं वरु करे इम मन्त्रके शिदोका सोहन
करना चाहिये—“ॐ शिदोभिदि नमाम्यने वरिं वा वरिं
रिन्दि ७ वृषेन द्युप वाप्यापने प्रथाने इन्धिरामिना ।’ कपके
बाद शिदोके अन्तर चलाता (चंदना) अगाना चाहिये।

मन्त्र इम प्रकार है—“ॐ म् उदुर्ध्वतयव ततये तहादिभो
नः मविता। उदुर्ध्वोराजन्व सविता यदेभिर्मिवागामि
विंइयामहे।’

तत्र गान्तिब्रह्मणको टा मन्त्रादि पात्राह्मिन् कर
“ॐ वरुचम्योत्तथमममि वरुचम्य वरुच सत्रोम्य वरु
कव्य नरत मन्त्रमि वरुचम्य अरत मन्त्रमि वरुचम्य
कत मन्त्री माभोद” इम मन्त्र द्वारा गान्तिब्रह्मणमें उच
मरना चाहिये। तमने बाद शिदोके मन्त्र पत्रययके श्रुच
दारा मव तोमद्रमन्त्रन पत्रका पट्टनकमस बनाना
चाहिये। इसमें धानपाम मिना न्यायन कर पूजा करतो
चाहिये। पत्रके सामान्यार्थ पोर मृतयइगादि करे।
प्रथम चटमें पथिय, द्वितीय चटमें मूय ततोप चटमें विरु
वतुके चटमें मिच पोर पत्रम चटमें दुर्गाको पूजा करे
तथा पादिखादि नवपदो पोर इन्द्रादि दमदिक्पालोका
पुत्रक पत्रक पावाइनादि करके पुत्रन करे। पन्ना
गान्तिब्रह्मणमें वरुचका पात्रान् करके ययागति पुत्रा
करे। फिर मन्त्रपति प्रजापति, विरु पोर वमको
पौत्रयोगचारने पूजा करे। इम प्रकार पूजा करके विरु
ययका पावाइन कर मन्त्रिके पनुकार तनको पूजा
करतो चाहिये। “ॐ म् विरुम्यो नमः, ॐ म् कुलदेवताम्यो
नमः, ॐ म् शुभव्यो नमः ॐ म् पम्यय नमः, ॐ म्
स्युमाविवरी नमः, ॐ म् वायवे नमः ॐ म् स्याव नमः,
ॐ म् प्रजापतये नमः, ॐ म् नोमाव नमः, ॐ म् दिवे नमः,
ॐ म् पृथिव्ये नमः, ॐ म् भूतं नमः, ॐ म् भुवन नमः, ॐ म्
स्व नमः ॐ म् भूतं वा स्व नमः ॐ म् पामये अतिष्ठते
नमः” इतकी पूजा कर कर गच्छोत्र विधिसे कुट्ट वा
अण्डिभने मन्त्रिन्वायन कर शोम करना चाहिये।
यमुबेदियो की वरुबेदीका पोर नामधेयियो की नाम
शिदोके विधिसे पनुकार कुयन्त्रिका न्यय करना
चाहिये। उचके बाद पाचार्यको भी उचित है, कि
ब्राह्मणादिसे पाप परीताका दानार्थ दान से का पर
“ॐ म् पुत्र देहि” इम प्रकार पुत्रको वाचना करे।
बादमें पुत्रदाता पाचमनपुत्रके विरुका नाम स्मरण
कर शुभ गर्भय पोर नवपद पादिकी पूजा करे। फिर
वर्दिवाचन करे—“ॐ म् अत को इमिन् पुत्रदान-
कम वि वा म् पुत्राक मवना वरुवन् ॐ म् पुत्रान्”

(इसको तीन बार पढ़ना होगा ।) फिर स्वस्तिऋषिका पाठ करें ।

अनन्तर वेदोके पूर्वमें पांच घट आरोपित कर घटस्थापनोक्त मन्त्र द्वारा पांच घट स्थापन करें । फिर देवीके ईशानकोणमें शान्तिकलस स्थापन करें ।

अनन्तर 'स्वस्तिनः इन्द्रो' और 'सूर्य सोमो यमः कानः' ये दो मन्त्र पढ़ें वाटमें नारायणकी गन्ध पुष्प ट्रे कर पूजा करें और इस प्रकार सङ्कल्प करें—

'ओविष्णोरो तत्सदय्य अमुके मासि अमुके पक्षे अमुके तिथौ अमुक गोत्रः ओअमुक देवशर्मा ओपरमेश्वरप्रोत्वयं पुत्रदानकर्माहं करिष्ये ।'

इसके बाद सङ्कल्पसूक्तका पाठ करें और गणेश आदिकी पद्यादि द्वारा पूजा कर पुत्रदान करें । उत्सर्ग करनेका मन्त्र इस प्रकार है—

"विष्णुरो तत्सदय्य अमुके मासि अमुके पक्षे अमुके तिथौ अमुक गोत्रः ओअमुक देवशर्मा चतुस्त्रिष्टुप् पञ्चालुष्टुप् पुत्रदाने विघ्ने यज्ञेन दक्षिणया समपरियज्ञिरे इति पठित्वा ये च यज्ञे त्याटि पञ्च ऋचश्च पठित्वा इमं पुत्रं तव पैतृकऋषापकरण पुत्रामन्त्रकत्रासवशरचासिद्वयं आत्मनश्च परमेश्वरप्रोत्वयं अमुक गोत्राय अमुक प्रवराय ओअमुकाय तुभ्यमहं संप्रददे ।'

अनन्तर "मम प्रतिगृह्णातु पुत्रं भवान्" यह मन्त्र पढ़ कर "प्रतिगृह्णोयुस्ते" कहते हुए अक्षतके साथ जल चढावें और उसके बाद दक्षिणा दें । अनन्तर "विष्णुरो तत्सदय्य अमुके मासि अमुके पक्षे अमुके तिथौ अमुक गोत्रः ओअमुकदेवशर्मा परमेश्वरप्रोतकामनया याचते तत्पुत्रदानकमणः साङ्गताय दक्षिणामिदं कांचन तम्बूल्यं वा ओविष्णुदेवतं अमुकगोत्राय अमुकप्रवराय ओअमुकाय तुभ्यमहं संप्रददे" इतना कह कर बालककी ग्रहोत्तकके हस्तमें अर्पण करें । इसी समय दाता बालककी प्रतिग्रहोत्तककी दें । दत्तकग्रहोत्तक 'ॐ देवस्यत्वा सवितुः प्रसवस्त्रिनोर्वाहुभ्या पुष्पो हस्ताभ्यां हस्तं गृह्णाभ्यसौ' इस मन्त्रकी पढ़ कर बालककी अर्पण, हाथोंमें ले लें । फिर गोदमें बिठा कर 'ॐ अङ्गादङ्गात् सन्भवसि हृदयाघ्नजायसे आत्मावै पुत्रनामासि संजीव शरदः शत" इस मन्त्रके द्वारा बालकका मस्तक सूँ और यह

मन्त्र पढ़ें— "धर्मा यत्वा परिगृह्णामि ॐ सन्तानाय त्वा परिगृह्णामि ।" इसके बाद ॐ 'वस्त्राणि परिधत्स्व' इस मन्त्रके द्वारा वस्त्र पहाराना चाहिए । अनन्तर उष्योष और कुंकुमादि द्वारा तिलक करें तथा "ॐ हिरण्यरूपमवसे कतुध्वं" इस मन्त्रके द्वारा अलङ्कृत कर बालककी गोदमें लें । पश्चात् "ॐ स्वस्तिनो मिमितामश्विनोभ्यां स्वस्ति ते व्यादिभि वनवर्णः स्वस्ति पूषा खरोदधातु नः स्वस्ति वाद्या वा शुश्रिवो सूचेतना स्वस्तये वायुमुपश्रुया महौ सोमं स्वस्ति भुवसं यम्पतिः । ॐ हृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तये आदित्य सोमा भवन्तु नः विश्वे देवा नोद्यौ स्वस्तये वैश्वानरा वसुरग्निः स्वस्तये देवा अमवन्नभवः स्वस्तये स्वस्तये स्वस्तिनो रुद्रपात्वंहसः स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्यो रिवती स्वस्ति न इन्द्रस्याग्निश्च स्वस्तिनोऽदितयस्काधि । स्वस्तिपत्या मनुरेम सूर्याचन्द्रमसौ च पुनर्दधता ज्ञता जानता सहमे मयि स्वस्त्रेय नन्तारिष्टनेमि रिषमरिष्टनेमि महद्भूतं वयसं देवतानां असुरज्ञं इन्द्रसञ्चं समित्कहाद्यसोनामिवारुहेम अयं होमुचमाङ्गोरसङ्गयश्च रश्मातेयं मनसा च तार्चं प्रेतपाणि स्मरण प्रपद्ये स्वस्ति सव्यादेवभयस्तु तदस्तु मित्रावरुणा तदग्नेये रुंयोरभ्यमन्तु सस्त अगोमहि गाधसुतः प्रतिष्ठवा मा दिवे हृहते साधनाय गृह्णावै प्रतिष्ठासुक्तं तत् प्रतिष्ठितं मया वाचा संस्तव्यं तस्मादेत्य विदूरे पुषं लभते गृह्णाणि वै नानाजिगमिषति पशुनां प्रतिष्ठा ।"

इस मन्त्रको पढ़ कर अग्निकी पश्चिम दिशामें उपवेशन करें और अग्निकी पश्चिमदिशामें अपने दाहिने बालककी बिठा कर आचार्यकी दाहिने ग्रहोत्तक खूँ वैठे । इसके बाद आचार्य होम करना प्रारम्भ करें ।

"ॐ यस्वाङ्गादव्यारिणामन्य मामोमत्यं मान्याजोऽवीपिजात वेदीयशोऽस्मासुषोहि प्रजाभिरग्नेरमृतत्वमसां स्वाहा ॥ १ ॥ ॐ यस्मैत्वां सुकृते जानवेद उलोक्रमन्मेऋषवस्त्रोणं अश्विणं सपुत्रिणं घोरवन्तं गोमत्तं यिनः अन्ते स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ त्वं त्वामग्ने पर्यवहन् सूर्यां वक्षतुनासह । पुनः पतिभ्योजायादा अग्ने प्रजयासह स्वाहा ॥ ३ ॥ ॐ सोमोऽदृगन्धर्वाय गन्धर्वाऽदृगन्धे वयित्वापुत्रान्चाददे दग्ने महीय मञ्चो इमां स्वाहा ॥ ४ ॥

ॐ ईश्वरं वागिदोस्तं विष्णुमावुबुद्धं न विष्णुमावुबुद्धं ।
 क्रोरतो पुत्रैर्नृपुत्रैर्मामो यो न्ये गृहे न्वाहा
 ॥ ३ ॥ ॐ यानः प्रजा जनयतु प्रजापति वाकरभाय
 मान्तय मा वावुर्मङ्गलो पतिभोजमाविम मयोम
 दिष्टेय चतुष्टये न्वाहा ॥ ४ ॥ ॐ यदोरवा सुरपति
 इ इभिरा पवभ्यः सुमताः सुनर्षः । सोऽमुर्देवकामा
 यो भो मया भव दिष्टेय चतुर्देव्याहा ॥ ० ॥ ॐ इमा
 त्वमिन्द्रमोक्षं सुपुत्रान् कृतुः । दगाप्यां पुत्रानाभिदि
 पतिभिः दग कृचि न्वाहा ॥ ८ ॥ मन्वापि शरपुरे भव
 ॐ मन्वापि शरपुरे भव । मन्वापि च मन्वा
 पि भव मन्वापि यद्विदेवसु न्वाहा ॥ ८ ॥ ॐ मन्-
 वसु विरिटेवा ममापो हृदयानिभो । न्या
 तरिगा मन्वाता मनुदेष्टो दचनु भो न्वाहा ॥ १० ॥
 १० दग मन्वा दारा मन्वेकका पवहोम न्वाहे
 प्रजापति होम करमा वाचिप । मन्व — ॐ प्रजापते
 नत्वदेवाम्भ्यो विष्णुभ्रातानि परिगा वभूव । यत्त्वामा
 यो सुदुमन्मकोऽनुभव प्याम यनदोरयीनां म्वाकृति मन्वे-
 चाष्टोत्तरयतं पान्यगयवहोम कुर्यात् ।”
 प्रायश्चित्त-होम मन्वय कर दक्षिणात् ३१ । “यद्ये
 त्वादि पमुत्र मोत्र” कोपमुत्र देवममा पमुत्र योत्रय
 पमुकदेवममं पद्विपिन पुत्र प्रतिपदाहोमकम नि
 ब्रह्मब्रह्मप्रतिहाः पूषं पात्र कोविप्युदेवतं पमुत्र
 मोत्राय औपमुकदवदमसि ब्रह्मन् तुभ्यमह मन्व
 ददाति ।” ब्रह्म न्तिवा मन्वय कर “दम्येत्” इत्यादि
 मन्व दारा पन्नि विमर्शन करे । तस्यै वाट यद्ये त्वादि
 मन्वादिपुत्रवर्षिपदाहोमकम नि योत्रादिब्रह्मं प्रति-
 हायं इदं सुवग कोविप्युदेवतं पमुत्र योत्राय औ
 पमुत्र देवममं च होतुं तुभ्यमह मन्वददेत् ।” इत्यादि
 क्वय दक्षिणात् ३१ । इतः उपरात् ब्रह्मच पात्राय
 मन्वय दानिभो भोजन करा कर मन्वाव करे ।
 योः पुत्र देवा ।

दत्तपुत्र (म० पु०) दत्तः पव पुत्र । वारह प्रचारके
 पुत्रींमिने एक प्रचारका पुत्र । माता वा पितामि त्रिम
 पुत्रको दान कर दिवा है उने दत्तपुत्र कहने है ।
 दत्तः हैको ।

दत्तपुत्र (म० वि०) त्रिमने विभो चामर्ष यद्य जो
 लदावा हो ।

दत्तपुत्र (म० पु०) गत उद्योगिभोः यम पदं
 मन् यत उद्योगिभोः पाठये पदं ।
 दत्तपुत्रोपहार (म० वि०) मृत्वा दारा जन यमिवादन
 नाय दारा को दूरं कृति ।
 दत्तपात्र (म० वि०) त्रिमने यवना भोजन उद्यम विद्या
 वा ।
 दत्तमाय (म० वि०) गतिरोध नहीं करणा, पद्यने
 पद्यन हो जाना ।
 दत्तवर (म० वि०) १ त्रिमने वर दिया गया हो । २
 वर वर को प्रायंता करने पर मिना हो ।
 दत्तयजु (म० पु०) राजाधिदेव शूरके एक पुत्रका
 नाम । (हरिवंश १८ अ०)
 दत्तयजु (म० पु०) वर कन्या त्रिमने लिये दत्त
 वा पद्य दिया गया हो ।
 दत्तहस्ता (म० वि०) त्रिमने यवकन्य वा रक्षां लिए
 हाथ दिवा हो, रचित ।
 दत्तात्मा (म० पु०) वारह प्रचारके पुत्रींमिने एक पुत्र ।
 मनुने लिखा है, कि त्रिम पुत्रको उमर्ष माता पितामि
 स्थाय दिया हो पद्यवा त्रिमने माता-पिताका स्थाय हो
 पुत्रा हो और ओम्बव विमोक्षे याम आ कर यमका
 दत्तक पुत्र बने, वर यद्योताका दत्तात्मा वा स्वयं दत्तपुत्र
 कहमाता है ।
 दत्तार्थय-विष्णु यवतारः कविर्भटः । महाभारत
 हरिवंश भागवत, विष्णु वराह, मार्कंडेयपुराण
 आदि प्राचीन पुत्रोमि दत्तार्थका उल्लेख है । इनको
 कल्पितः मन्वयमि माह एव यवुरापमि ओ कथा लिखी
 है इन प्रचार है—
 कुमिक व योव कोर्द कोर्दो ब्राह्मण प्रतिहाःपुरने
 रहते थे । इनको यो पतिव्रता और श्रामिमन्व वा ।
 यनेक कष्ट मिलते हुए भी वर प्रायणने स्वामीको सेवा
 यदुया किया करतो और मदा उर्दं सुम यवनेको
 कोशिय करतो रहतो जो । एक बार वर ब्राह्मण विमो
 मुन्द्री ब्रह्मा पर पादपूज हो गये और उमव वर मि
 त्रार्थके लिये उन्हांने यवने कोषि कहा । वरके पात्राः
 नृनार वर पतिव्रता यो और यववटापुत्र रातिम
 स्वामीको यवने उर्दं पर बिठा और यवने कृष्ण यववा

दत्तात्रेयदे नाम पर निम्नलिखित ध्यानाध्याय प्रथमित हैं—

पद्मसुतोता, पद्मसुतमोता, दत्तासुतोतायोगात्, सर्व-
प्रबोध, विद्यामोता, स्वात्मसम्बन्धुपदेय, दत्तात्रेययोगस्य
पौर दत्तात्रेयोपनिवत् । इत्येवै मिका दत्तात्रेयतन्त्र,
दत्तात्रेयचन्द्रिका, दत्तात्रेयश्रुतम् दत्तात्रेयसहिता,
दत्तात्रेयवददय पादि कुत्र तास्मिन् यन्त्र भो देवनेमिं प्रति
हैं । 'दत्तात्रेय महापूजा मन्त्र' नामक म स्मृत प्रथम
दत्तात्रेयको पूजादि वर्णित हैं । वेनो मोम मो दत्ता
त्रेयको पूजा करते हैं । दिनम्बरायुष्य द्वारा रचित
दत्तात्रेय माहात्म्ये इम विषयको बहुतमी बाने लिखो
हैं । भागवतमें लिखा है, कि दत्तात्रेयने चौबोस पदार्थों
में धनिक विचार्य जोको वीं पौर तर्को चौबोस पदार्थों
को ये पचना शुद्ध मानते थे । चौबोस पदार्थके नाम ये
हैं—धूम्रो, बाहु, पाषाण जन, धम्मि चन्द्रमा सुय
कस्तुरि चक्रवर्त, चापर, पतङ्ग, मनुष्य, चाको मनुष्यारो
हरिच, मन्त्रो, पित्रुना श्रेष्ठ, निच बानक कुमारी
कम्पा, बाच वननिबाना, चाप मन्त्रको घोर तितथी ।
दत्तात्रेय देवदत्त—विद्यावन्तुवक नामक म स्मृत ध्येय
प्रथिता ।

दत्ताप्रदानिक (म० स्त्री०) दत्तस्य मन्त्रानाम प्रथमम
स्वल्प दत्ता-प्रदानम् । बह्वाद्य विवाह पदान्तगतं
विवाहपदविषय, पहरह प्रकारके विवाह पदमेंसे
पौत्रके विवाहपद । चार प्रकारके दानमार्गोंमें जो
दत्ताप्रदानिक पदार्थके धनगत पदेय, देय दत्त पौर
पदत्त ये चार प्रकारके दानमार्ग जो दत्ताप्रदानिक नाम
से प्रसिद्ध हैं ।

जो दान देकर किरने धर्याय पूर्वक छने प्राय
करनेका प्रथम कारना है छने दत्ताप्रदानिक कहते हैं
पौर यह व्यवहारपदके धनगत है । इमका विषय वीर
मियोद्वयमें जो लिखा है, बह्वाद्य प्रकार है । स्वात्पर
वस्तु पर प्रभावप्रदके परिष्कार कर सकते हैं । दानका
जो विषय ध्योहार कर लिया गया हो, छने धनगत देना
चाहिये पौर जो दे दिया गया हो, छने किरने देना
करना नहीं है । किन्तुना जव तक दानवस्तुके धन
न कर न तव तक दानका अन्त भव परके नहीं जाता ।

दानात्म वस्तु परने धनमा स्वल्प इटा भो 'कों न
ही, लेखिन कर तक पड़ोता छने पश्य न करे, तव
तक दानका अन्त छस पर बना रहता है । धनम्युक्त
धनमे दान दे कर किरने जो पश्य करनेको दत्ता
प्रकट करे, तो छम पश्य करनेका नाम दत्ताप्रदानिक
व्यवहार है । जव वस्तु २ दो जाती है, तव पको पश्य
करनेगे धनमा निवय कर छने छदेममे दानका अन्त करने
या पड़ोताका अन्त हो जाता है । यदि पड़ोताको
दत्ता दान देनेको पौर न छे तो बह्वाद्य अन्त नहीं
रहता । यात्रवस्था-संज्ञिताने इस प्रकार लिखा है—यदि
कर प्रतिपालनके परिशेषमें प्राक्योय श्रेष्ठ दान कर
सकता है । पर्याप्त जितनेसे परिवारका मनो प्रति
पालन हो सके छतना धन रख कर तव दान कर सकते
हैं, धनका नहीं । पुत्रयोवादि बह्वाद्य सर्वस्य दान नहीं
कर सकते एव पश्यने यदि किनो दूसरेको बह्वाद्य
देनेको बात दे मो खुदे हो तो भी बह्वाद्य दे न सके ।
प्रतिपद्य प्रकार भावने हो करना चाहिये । जो कुत्र
दान देनेको स्वीकार किया हो, बह्वाद्य दान करना कवित
है । दान करके किरने छने देना विनकुल निवय है ।

दत्ताप्रदानम् (म० स्त्री०) इत्यस्य धनपत्रमं पादानं
वत् । दत्ताप्रदानिक, दान किए हुए पदार्थको धर्याय
पूर्वक किरने प्राय करनेका प्रथम ।
दत्तामित्र (म० पु०) मोक्षर उपमेद ।

(कार्य कारि १३५ अ०)

किन्ने किन्ने प्रकृतस्वविद्वं मत्तानुसार दोष नागके
निवृत्त यह मन्त्र Demonstration नामसे प्रसिद्ध है ।
दत्ताध्यान (म० स्त्री०) दत्त ध्यान योम । धनहित,
एकाध धित, साधनाम ।
दत्तामन (म० स्त्री०) दत्त ध्यान योम । प्रदत्तामन,
किन्ने ध्यान दिया गया हो ।
दत्ति (म० स्त्री०) दा भाषि किन्ने । दान ।
दत्तिक (म० स्त्री०) धनो दत्ता दत्त । पश्यदत्त जोड़ा
दिया हुआ ।
दत्ती (स्त्री०) दत्तकर्म्य मगाईका पदा जोना ।
दत्तीय (म० पु०) दत्ताया धन्य पुमान् दत्त दत्त ।
दत्तु ।

कुष्ठरोगके प्रथममे माना गया है। मासप्रकाशमें निम्ना है—कुष्ठमें रक्तवर्षं कपटु, दुग्ध को पीड़का मध्यमाकारमें निश्चलतो है वरि दद्रु कहते हैं। उसकी चिकित्सा इस प्रकार है—कुट्टकी विड्डा चक्रक कुट्टकी मैश्वर पौर सरसी इन सबको कात्रोधि सात्र पोष कर प्रथिप देनेसे दान पौर कुष्ठरोग जाता रहता है। दूधरो विधि—दूध मवा (शोधनविधिय) मैश्वर, चक्रक पौर कुट्टकी इत्य इन सबका बराबर बराबर मास मे कर कात्रोधि मात्र पोसते हैं। बाल तोन दिन तक रचका मिय देनेसे दद्रु पौर कुष्ठरोग पारोम्य हो जाता है।

मासप्रकाशके मतसे—मांइर काय, सष्टिद मरसी पौर कुष्ठरका पत्ता इन तीनों को बराबर बराबर मासिने दूना पचक बना पत्ता, इन सबको बिना कुटे चउमुनि मायकी काजमें कुबो देते हैं। तीन दिन बाद तर्के एक मास पोस कर सात दिन तक प्रथिप देनेसे दद्रुरोग नाश हो जाता है। प्रथिप देनेके पचने उस अगहको बनीरौठामे लुग्गना मिला चाहिये। कुष्ठसवय, यौनिफित (तारपोनका र्शन), हरिद्रा, तिंकेट, चक्रमदका मोक्ष पौर मूलकरोज इन सबको काकडे नाश पोस कर दाह पर लगानिसे गट्टरीय 'पारोम्य' हो जाता है। मैश्वर, चक्रमदका रोज गजैरा नागधियर पौर कप्यात्रिनको कैदरि रसके साथ पोस कर प्रथिप देनेसे दद्रुरोग यौत्र विनष्ट हो जाता है। ऊर्ष चोरो व्याधिघात, विरोप, निम्ब गान कुट्टक पौर लता-शालका चूच तैयार कर खानके बाद उभे हादकी तगह पर निम कर लगानिसे दाह बहुत जल्द जाती रह तो है। (इन्द्रुद इन्द्रुधियर) गवकुपुराचके मतानुसार यह एक प्रकारने त्रच प्रातिष्ठा रोम है। हरिद्रा हरितान, दूर्वा गोमुत्र पौर मैश्वर इन सबको एक मास पोस कर नानानिसे दद्रु रोग पारोम्य हो जाता है।

(भरतु० १८७५०)

दद्रुक (स० पु०) दद्रुके अर्थं कन् । दद्रु रोग ।
 दद्रुक (स० पु०) दद्रु दद्रु रोग इति इम-उक् । चक्र-
 मदक चक्रमदक, चक्रमदक ।
 दद्रुक (स० त्रि०) दद्रु रक्तवर्ष दद्रु च । दद्रु रोगो,
 त्रिसे दद्रु रोग दूपा हो ।
 दद्रुनामिने (स० घा) दद्रु नागपति नव चिचु बिनि
 औप । तैमिनी औट, एक प्रकारका इत्य ।

दद्रुरोगी (स० त्रि०) दद्रुरोगीभ्यश्च दद्रु रोग-चिनि ।
 दद्रु रोगविशिष्ट चिने दादका रोग दूपा हो ।

दद्रु (स० पु०) दद्रुति दुर्गच्छयुग्ममनिमिनि हरिद्रा-
 सः, रक्तारकाकारानां शोधय (हरिद्रादिनी गोपय । कन्-
 १८२) दद्रु, दादका रोग ।

दद्रुक (स० पु०) दद्रु, चलि इम उक् । दद्रु, वाट ।
 दद्रुक (स० त्रि०) दद्रुक । दद्रु, ।

दद्रुत्वत् प० त्रि०) दद्रु-मत्तु, विदे निपातनात् दद्रुका
 द्रुंये मल्ल वा । दद्रुविशिष्ट त्रिसमं दद्रुो मिना
 दूपा हो ।

दधानिया—बम्बई प्रदेशके पन्तमल मङ्गोकाप्लावा एक
 राज्य । यन्त्रि प्रदान एक क्कट मदार है । उक्त बरोदा
 न ग यक्षबाइको बापि क ७००) द० 'बासदाना' कह
 कर तना पदके राजाको ६०) ६० सौम्यको रक्त कह
 कर कर क्कट दने पकते हैं । मङ्गोकाप्लावमें धि पपने
 न मने क्क्यापनकाउये की राज्य कर्त पा रहे हैं । ये
 निमोदिया राजपूत हैं पौर राजपूतानिसे यहाँ पा कर
 बस गये हैं । दक्षक मुय निने विपक्षमें इन लोनेमें कोई
 सिद्धकाइ नहीं है । क्कठ पुत्र को राज्यके पक्षिकारी होते
 हैं । १६७७ ई०में प्रथम डाकुर या प्रथम पदरके राजा
 यहाँ मोचरो करते धि पौर लोनेमें तर्के ७५ घाम लपहारमें
 सिमि पे । कित्तु पोके जव धि मारवारके राजकुमारको
 निवा करनेको राजी न हुए तब उनको उक्त इति कुत्र
 तया हो गई ।

दद्रि (स० पु०) दधानीति वा कि (नावां न न इत्य
 पविमिने नमन् । पा ३।२।१०१) दुग्धविहारविशेष
 दद्रो कमाया दूपा दूव । इसका पर्याय—धीरज मद्रुम्य
 विरल पौर पदम्य है । इनका शुच—लपकोर्ण, पयि
 दीनिष्कायक, शिम्ब, कपाय, शुच पम्बविपाय, धारक
 रक्तपित्तकारक शोधनक मिठीबईक, कपप्रदायक
 बलकारक शुकबईक मूत्रकण्ट, प्रतिग्राय शीतक-
 नामक विषमज्वर पथोमार, चर्चिक पौर क्षयताके निवे
 बहुत लपकारो है । दधि पांश प्रकारका होता है, पक्षमा
 मन्ट, दूधवा क्कानु, तीमर। सादक चोका चक्र पौर
 पीचका पचक ।

मन्टदधि—श्री दूध विव्रत हो कर कुत्र माका हो

गया हो और अच्छी तरह दधिके रूपमें न जमा हो, उसे मन्त दधि कहते हैं। इसका गुण—मल और मूलनिःसारक तथा त्रिदोषजनक है।

खादुदधि—जो दूध अच्छी तरह गाढ़ा हो कर अत्यन्त मधुर रसके साथ जम गया हो और खट्ट रसका अनुभव न होता हो, उसे खादुदधि कहते हैं। इसका गुण—अत्यन्त अभिव्यन्ती, शक्लजनक, मेटोवर्द्धक, कफकारक, वायुनाशक, मधुरविपाक और रक्तपित्तका दोषनाशक है।

खाहस्तदधि जो दूध गाढ़ा हो कर कुछ कसैला निये मधुर अन्त खादुदधि देना हो, उसे खाहस्त दधि कहते हैं। इसका गुण सामान्य दधि मरोखा है।

अम्लदधि—जिम दधिमें मिठास न हो, अरु अम्लरस प्राया जाय उसे अम्लदधि कहते हैं। इसका गुण—अग्निसन्तोषक, रक्तपित्तवर्द्धक और कफवर्द्धक है।

अत्यम्लदधि—जिम दधिसे दन्त तथा रोम हर्ष हो जाय और कण्ठसे दाह देने लगे, उसे अत्यम्ल दधि कहते हैं। इसका गुण—अग्निदोषिकारक और रक्तपित्तजनक है।

गव्यदधि—मधुर रस, वलकारक, रुचिजनक पवित्र, अग्निदोषक, स्निग्ध, पुष्टिकारक और वायुनाशक है। सब प्रकारके दधियोंमें गव्यदधि ही अधिक गुणविशिष्ट है।

महिषदधि—अत्यन्त स्नेहयुक्त, कफकारक, वायु और पित्तनाशक, मधुरविपाक, अभिव्यन्ती, शक्लवर्द्धक, गुरु और रक्तदूषक है।

छागोदधि—बहुत संप्रामी, लघु, त्रिदोषनाशक, अग्निदोषिकारक तथा श्वान, कास, अर्श, क्षय और क्षयरोगमें हितकर है।

पक्ष दुग्धदधि—अच्छी तरह उबाने हुए दूधसे जो दधि बनता है, उसका गुण—रुचिकारक, स्निग्ध, अत्यन्त गुणकारी, पित्त और वायुनाशक तथा घातृग्नि समूहका वलकारक है।

निःसार दुग्धदधि—असार दूध अर्थात् जिस दूधसे जकड़न निकाल लिया गया हो, वैसे दूधसे जो दधि जमाया जाता है, वह असार, शोतधोय, वायुवर्द्धक, लघु, विटम्बी, अग्निदोषिकारक, रुचिजनक और अहृणो रोगनाशक है।

गान्धितदधि—जिस दधिका तोड़ निकाल लिया गया है उसे गान्धित दधि कहते हैं। इसका गुण—स्निग्ध वायुनाशक, कफकारक, गुरु वलकारक, पुष्टिजनक, रुचिजनक, मधुररस और अत्यन्त पित्तजनक नहीं है।

शर्करायुक्त दधि—(चोनो मिला हुआ दही) यह दधि सब प्रकारके दधियोंमें श्रेष्ठ गुणदायक है। इसमें प्यास, रक्तपित्त और दाह जाता रहता है। गुरुयुक्त दधि वायुनाशक, शक्लवर्द्धक, शरीरका उपचयकारक, तमिकर और गुरु है। रातको दही खाना मना है। एकान्त भोजन करते समय जल, घी, चोनो, मूंग, तरकारो, मधु अथवा भाँवला इनमेंसे किसी एकको दधिके साथ मिला कर खाना चाहिये। उष्ण करके भो रातमें खा सकते हैं। यद्यपि रातमें दधि खाना निषिद्ध है तो भो घी आदिके साथ मिला कर खानेसे वह दोषावह नहीं है। किन्तु रक्तपित्त और कफोद्भव रोगमें जल वा घी मिला कर दहीका भोजन करना अप्रशस्त है।

हेमन्त, शिशिर और वर्षा इन तीन ऋतुओंमें दधि खाना स्वास्थ्यकर है तथा शरत् शोष और वसन्त इन ऋतुओंमें अहितकर। दधिलोलुप मनुष्य यदि उक्त नियमका उल्लङ्घन कर दधिका सेवन करे, तो वह ज्वर, रक्तपित्त, विसर्प, कुष्ठ, पाण्डू, भ्रम और उष्य कमला रोगसे पीडित रहता है। दधिके स्नेह समन्वित ऊपरी भागको मलाई वा छालो और मण्डको मसु वा तोड़ कहते हैं। दधिकी छालोमें मधुर रस, गुरु, शक्लवर्द्धक एवं वायु और अग्निप्रणाशक गुण है। खटा हो जाने पर इसका गुण वस्तिशोधक एवं पित्त और कफवर्द्धक है। दधिके तोड़में क्षान्तिनाशक, वलकारक, अमाभिलाषजनक, स्रोतःसमूहका शोधनजनक, आक्तादजनक, कफघ्न, पिपासाजनक, वातापहारक, अहृण्य, प्रीतिजनक और शीघ्र हो सञ्चित मलविरचक गुण माना गया है। (भावप्रकाश)

सुश्रुतमें दधिका विषय इस प्रकार लिखा है—दही तीन प्रकारका होता है—मधुर, अम्ल, और अत्यम्ल पीछे कषाय। यह स्निग्ध और उष्ण एवं पोषण, विषमज्वर, अतिसार, अरुचि और सूत्रकृच्छ्ररोगशान्तिकर, तेज-

कर, धोबकर और मङ्गलकर्म है। मोठा दहीमें चसुरोग उत्पन्न होता है तथा कक धोर मिरवो हडि होती है। खाहा दही पित्तघ्न्याकी वृताता है धोर जो बहुत मडा है उससे रक्त दूषित होता है। मन्दजात पर्याप्त आ पच्छा तरह जमने लहो पात बड़ टरी रिदाको होता है, अमिमें दाह उत्पन्न करता है तथा समने मरु. मूत्र, वातु पित्त धोर कपको हडि होती है।

गण्दधि स्निग्ध महुर धमिहर बधिकर, धोर पबिध है।

कामीदधि—मनु पक पित्तका शान्तिहर, वातु शान्ति उत्प्रेरणका निवृत्तिहर पर्य, खास धोर काम रोगका विहर एवं धमिहर है।

माद्विध दधि महुर, हृत्, वातुपित्तका शान्तिहर, कक बईक धोर स्निग्ध है।

उदु दधि—उत्थानमें पर कट रस चारुवृत्त गुणधक धोर भेदकर तथा वात, पर्य, कुष्ठ, कृमि धोर पेटको शोमारोमें शान्तिहर है।

पाविक दधि मंडूके वृषका जमावा कृपा दही वात, हृदया धोर पर्यवईकर। रथ धोर पाक होने पर मधुर, चसुरोगकर एवं दीपवर्क है।

बौद्धोका दधि—धमिहर, चसुरोग धोर वातवह क, वध कथ्य कदाय एवं कथ तथा मूत्रनामक है।

गारो दधि—स्निग्ध पाक होने पर मधुर, वनकर, पृथिवर, मार, चसुरा हितकर एवं दीपशान्तिहर है।

हस्तिनीका दधि—कहुवाक ककद्र, उत्प्रेणीयं प्रकोलं कथ एवं मनवर्क है। सैकिन जितने प्रकारके दधि बनताये मय हैं उनमेंसे मन्व दधि जो चोठ है। गावका दही स्वादिष्ट होता है कथसे ज्ञानमें पर वध शरीरकी मबधुत वगता है वातुकी शान्त करता है धोर र्न फारे। वृताता है। सैकिन दहीमें पित्त कुपित लहो होता। दधिकी मन्वाई गुणपाक, हृत् वातुकी शान्तिहर, धमिहर एवं कक धोर मन्ववईक है। बिना मन्वाईका दधि कथ मरुो वध, वातुवईमकर, धमिहर कहु कपाय धोर बधिकर होता है। मरुु दोष धोर अमन्तकानमें दही पाना कपयत्त धोर ईमन्त मिथिर तथा बर्गकाकमें प्रयत्न है। दहीका तोड़ा या पानी कथा धोर शान्तिनायक, कहु,

धरोरई हारका शोधनकर, परन, कपाय, मधुर धोर वातघ्न पाता शान्तिहर है किन्तु यर तिबोवईक लहो है। इनके मित्रा वध मन्वदकर, दधि, वन, बधिकर तथा मन्वमेंदक भी है। जितने प्रकारके दधि लार वत काए मय हैं उनके सात प्रकारके दधिके धमगत समभनना चाहिये। खटु पक्क पक्कम्ब, मन्दजात पक्कपुग्बजात, दधिकर धोर पसार यही सात प्रकारके दधि हैं। इनका तोड़ा या पानी भी दधि मरुता गुणकारो है। (इष्टव)

शरत्कालमें दधिका गुण—गुण, परन धोर रक्तपित्त बईक शोक, कथा, खर शून धोर विदमन्वकारक है। अमन्तकानमें दधिका गुण—गुण, स्निग्ध, मधुर, कक जत धोर मनवईक कथ, मेध पुटि मुटि तथा हडि दायक है।

मिथिरमें दधिका गुण—पन्व मधुर, गुण, हृत् वन कारक, वन धोर मोठ भायक है।

दोषमें दधिका गुण कहु धमन उत्प, रक्तपित्त कारक, शोय धम धोर विवाभाहारक है।

बर्गोंमें दधिका गुण—शोथक, शोय वात, धमन काम धोर पतिमात्रायक है (शान्तिवर्ण) इन ममय य र वीलक, पतिमा, शोथ, विदमन्व, धदधि, मूत्रकथ्य धोर कृमता रोममें विधीय जावदापन्व माना गया है।

(शरीर क क) र कथ्य कपका।

दधि (धि० पु०) चसुर, माग।

दधिक (ध० पु०) शीवेष्टकथय यकादका दिदु।

दधिकम (ध० पु०) दधिम कथ कर्म। दधि

धन्वारक वैदिक कर्ममेंद।

दधिकान्दो (धि० पु०) एक प्रकारका कर्मव जो प्रायः अमाशयमें ममय होता है। इनमें शोय कदा मित्रा कृपा दही एवं दूमरी पर कि कर्ति है। प्रवाद है कि जब शोथकथ्य कर्मपदकथ्य बिद्या या, तब शोयी धोर गोविर्गमें धान्दमें मन्व होकर कन्दो मित्रा कृपा दही एक दूमरी पर इतना धधिक कका जा वि गवियेमें दहीका कापक सा हो गया था।

दधिकृषिका (ध० धो) दधिकान्तः कृषिका या पहाद कोथ दुर्ध इवकन बोवात् जाता। दुग्ध विहार मेंद वटे इव दुग्धका वध धम जो पानी निकलने पर

वच जाता है, छेना । उससे हुए दूधके साथ दही मिल जानेसे अर्थात् गरम दूधमें खटाई मिल जानेसे दूध फट जाता है, उसी फटे हुए अंशको दधिकूर्चिका कहते हैं । इसका गुण—व तनाशक, ग्राहक, रुच और दुर्जर है ।

दधिका (स० पु०) दधिः दधदन्यं धारयन् सन् क्रामति, क्रम-विट्-अन्त्स्यात् । १ अश्वरूप अग्न्यात्मक देवभेद, एक वैदिक देवता जो घोड़ेके आकारके माने जाते हैं । २ अश्व, घोड़ा ।

दधिक्रावन् (स० पु०) दधिः दधत् क्रामति क्रम-वनिप, अन्त्स्यात् । अश्वरूप अग्न्यात्मक देवभेद, वैदिकके एक देवता जिनका आकार घोड़ेसा माना गया है ।

दधिग्राम-श्रीकृष्णका एक लीलास्थान ।

दधिचार (स० पु०) दधि चारयति चालयति चर-णिच्-अण् । दधिमय्यनदण्ड, दही मथनेका डण्डा, मथानी । इसका पर्याय—वैशाख, तक्राट और करघर्षण है ।

दधिज (स० स्त्री०) दध्नी जायते जन-ड । नवनीत, मक्खन ।

दधिजात (स० पु०) १ नवनीत, मक्खन । २ उदधिसुत, चन्द्रमा ।

दधित्य (स० पु०) दधिवर्णो द्रव्यस्तिष्ठत्यस्मिन्, स्था-क, प्रबोदरादित्वात् साधुः । कपित्य, कौथ ।

दधित्याख्य (स० पु०) दधित्यं आख्याति कपित्यद्रव्यं अनुकरोति आ-ख्या-क । सरलद्रव, लोवान ।

दधिधेनु (स० स्त्री०) दधिनिमिता धेनुः । दानार्थ-कल्पित दधिकुश्र निमित्त धेनुभेद, दानके लिये कल्पित गौ जिसको कल्पना दहीके मटकेमें की जाती है । इसका विषय हेमाद्रिदानखण्डमें इस प्रकार लिखा है—जिस स्थान पर यह कल्पित धेनु प्रस्तुत करनी पड़ती है उस स्थानको गोबरसे अच्छी तरह पीत देते हैं । फूलोंसे सुशोभित एक गोचर्म रखना होता है । पीछे जमोने पर कुश फौला कर उसके ऊपर कृष्णाजिनका आसन रखते हैं और धानके ऊपर दधिकुश्र स्थापित करते हैं । इसके बकड़ेकी भी कल्पना कर उसका मुँह सेनिका बनाना होता है । पीछे प्रशस्तपत्र द्वारा धेनुके अवनण, मुक्ताफल द्वारा चन्द, चन्दन और अगुरु द्वारा शृङ्ग, शर्करा द्वारा

जिह्वा, श्रोत्रण्ड द्वारा घ्राण, फलमूल द्वारा दण्ड, ताम्र द्वारा पृष्ठ, दर्भ द्वारा रोम, सूत्रमय द्वारा पुच्छ, सुवर्ण द्वारा शृङ्ग, रोप्य द्वारा क्षुर, नवनीत द्वारा स्तन और इक्षु द्वारा पाद प्रस्तुत करते हैं । इसके अनन्तर धेनु सर्वाभरणसे संयुक्त की जाती है । बाद वस्त्रयुग्म और गन्ध-पुष्पादि द्वारा धेनुको पूजा करते हैं । जितेन्द्रिय और सकलगुणसम्पन्न कुलोन ब्राह्मणोंकी दधिक्रावनी इत्यादि मत्र पठ कर वह धेनु दान देते हैं और साथ साथ उन्हें हृत्त्रपादुका आदि भी देते होते हैं । इस प्रकार दधिमय धेनु जो दान करते हैं और उस दिन ऋतु दधि खा कर हो रहते हैं, वे परमपदको प्राप्त होते हैं । इतनाही नहीं, उनके पूर्व दग्ध, अधस्तन दग्ध और एक आप ये इकोस पुरुष विष्णुलोककी जाते हैं । जहाँ नदियाँ मधु-वाहिनी हैं, पायसमय कदंम है एवं जहाँ ऋषि, मुनि और सिद्धगण अवस्थान करते हैं, दाता उसी स्थान पर पहुँच जाते हैं । (हेमाद्रिदानख० बगहपु०) जो यह भक्तिपूर्वक अवनण करते हैं, उन्हें भी अश्वमेधयज्ञका फल मिलता है ।

दधिनाम (स० स्त्री०) १ कपित्य फल, कौथका फल । २ कपित्य वृक्ष, कौथका पेड़ ।

दधिपयस (स० स्त्री०) दधि च पयस । दधि और पय दही और दूध ।

दधिपयसादि (स० स्त्री०) दधिपयः आदिर्यस्य । गणभेद, एक प्रकारका गण । इस गणका समाहारइन्द्र निर्धेध हुआ है । दधिपयस, मधुसर्पिस, ब्रह्म प्रजापति, शिव-वैश्वण, स्कन्दविशाख, परित्राट्, कौशिक, प्रवर्ग्य, उपसद, शुक्लकृष्ण, इक्ष्वावर्हिस, दोघातपस, मेधातपस, अभ्ययनतपस, उदखलमुशल आदि भवसान, अहा, मेधा, ऋक्-साम और वाङ्मनस् ये सब दधिपयस, आदि गण हैं । (पाणिनि)

दधिपुष्पिका (स० स्त्री०) दधीवं शुभ्रं पुष्पमस्याः कप-टापि भतइत्वं । श्वेतापराजिता, सफेद अपराजिता ।

दधिपुष्पी (स० स्त्री०) दधीव पुष्पमस्याः जातित्वात् ङीष् । कोलसिम्बो, सेम । २ श्वेतापराजिता, सफेद अपराजिता । ३ कटभी वृक्ष, लघु ज्योतिषती लता, छोटो रनजोत ।

द्विपुत्र (स० पु०) द्विपुत्रं पुत्र । अपूपमेव एक प्रकारका पुत्रवान् । इसको प्रसूत प्रभावो—शान्ति प्राप्त की श्चर्चको दृष्टीमें मिला कर धर्म तथा जाता है । बाद कबे गोपाचार्यमें प्रसूत करते हैं । इसका सुत्र—गुण बलधारक इत्यत्र बादु शौर पितृनायक अग्निबलक तथा द्विचर है ।

द्विपुत्रसुत्र (स० पु०) द्विपुत्रं सुत्र यत्र । द्विपुत्र । द्विपुत्र देवेः ।

द्विपुत्र (स० पु०) द्विपुत्रं शब्दोद्भवः अग्नि यत्र । अग्नि, अग्नि ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) नवभोज मन्त्रन ।

द्विपुत्र (५० पु०) दद्या मपुत्रः । द्विपुत्रा मपु द्विपुत्रा पात्रो । द्वि देवेः ।

द्विपुत्रातक (स० श्लो०) द्वि मनुनि, द्विपुत्रा पात्रो ।

द्विपुत्रोद (स० पु०) द्विपुत्र इव उदक यत् उद कथ्य इदादेय । द्विपुत्रोद, द्विपुत्रा मपुत्र । इम मपुत्रका जन द्विपुत्रे जनने समान होता है, इमीके इसका नाम द्विपुत्रोद हुआ है ।

द्विपुत्रोदक (स० श्लो०) नवभोज, मन्त्रन ।

द्विपुत्र (स० पु०) द्विपुत्रं शुभ सुत्र यत्र । राम-चन्द्रका एक बन्दरीक । यह सुपुत्रका मामा शौर मनुवनका एकक था । अनुमानघाटि बन्दरीमें मीता ११ मन्दाद पा कर इस इममें बन्धन लिया था । पक्षी द्विपुत्रने बन्दरीको उखन करनेके मना बिना किन्तु उखनि उमकी बात अनकनी कर उमका बहुत अपमान किया था । (रामायण ४।११, ११, १३ वर्ग)

द्विपुत्र (द्वि० पु०) एक कता को जोबन्धिकाकी जाति की होती है । इसके अर्थे मन्त्र शौर पात्रके आकारके होती है । इसको उदकको आदिमेंसे दूध निकलता है । इसके पून स्यांमुनी पूनमें होती है । शोचर्चमें यह बहुत उपयोगी है चर्चपुत्रो, अन्धादृष्टी ।

द्विपुत्र (स० पु०) द्विपुत्र, द्विपुत्रा अपरो भाग, आर्षी, मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० पु०) द्विपुत्रं यत्र यत्र । द्विपुत्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) द्विपुत्रं अस्मिन् मपुत्रे द्विपुत्रे म । द्विपुत्र, त्रिपुत्रे द्विपुत्रा चो ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) १ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) २ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) ३ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) ४ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) ५ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) ६ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) ७ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) ८ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) ९ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) १० मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) ११ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) १२ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) १३ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) १४ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) १५ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) १६ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) १७ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) १८ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) १९ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) २० मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) २१ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) २२ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) २३ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) २४ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) २५ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) २६ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) २७ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) २८ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) २९ मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

द्विपुत्र (स० श्लो०) ३० मालधाम मूर्तिके मन्त्र वामन मूर्तिके मन्त्र ।

को मलाई । इसका पर्याय—दधिसर, सर, दध्युत्तरग और काटवर है । इसका गुण दधि वन्दमें देखो ।

दधिस्वेद (सं० पु०) दध्निः स्वेद इव । तक्त्वा, छाक, मट्टा ।

दधीच (सं० पु०) दधीचि मुनि, शुक्राचार्यके एक पुत्र । दधीचास्य (सं० पु०) दधीचस्य अस्थि । १ वज्र । ० हीरक, हीरा ।

दधीचि—एक पौराणिक ऋषि । ये वेदमें दध्यञ्च और महाभारतमें दधीच तथा दधीचि नामसे प्रसिद्ध हैं । यास्कके निरुक्तके मतसे ये अथर्वाके पुत्र हैं, इसीसे ऋग्वेदके वेदोंमें इनका नाम अथर्वण लिखा है । (निरुक्त २।३३) ब्रह्माण्डपुराणमें इनकी शुक्राचार्यका पुत्र बतलाया है । सरस्वतीसे इनके सारस्वत नामक पुत्रगण उत्पन्न हुए थे । (ब्रह्माण्डपु० उ० १ म अ०) किसो किसो पुराणमें इन्हें अथर्वके औरस और कटं मरुत्या शान्तिर्गर्भसे उत्पन्न माना है । ऋक्मंहिताके दो ऋकोंमें दधीचके विषयमें ऐसा लिखा है—

“दध्यह ह यन्मध्याथर्वणोऽश्वामश्वस्य शीर्ष्णा प्रयदीमुवाच ॥”

(१।११६।१२)

अथर्वाके पुत्र दधीचने अश्वमस्तक धारण कर तोमाभोंकी मधुविद्या मिखलाई थी ।

“आथर्वणाथारिवना दधीचेऽश्वं शिरः प्रत्यैयनं ।

स र्वा मधु प्रबोचदत्तायत्वाष्ट्रं यद्द्वैवापि रक्ष्यं वाम् ॥”

(ऋक् १।११।१२)

हे अश्वियुगल । तुमने आथर्वण दधीचके धड़ पर घीहेका मस्तक जोड़ दिया था । उन्होंने भी सत्यका पालन करते हुए त्वष्टासे लब्ध मधुविद्या तुम दोनोंकी सिखला दी थी । हे दत्तहय ! यह विद्या तुम लोगोंकी अपिकस्वरूप हुई थी ।

सायणने प्रथमोक्त २२ ऋक्के भाष्यमें शाट्यायन और वाजसनेयप्रपञ्चसे जो उपाख्यान उद्धृत किया है वह इस प्रकार है—“इन्द्रो दधीचे प्रवर्ग्यविद्या मधुविद्या चोपदिश्य यदौसामन्यञ्च वच्यसि शिरस्तेऽक्षित्यामो-

त्युवाच । ततोऽश्विनावश्वस्य शिरस्त्विता दधीचः शिरः प्रच्छिद्यान्यत्र निधाय तत्राश्वं शिरः प्रत्यधत्ता । तेन च दध्यञ्च ऋच सामानि यजुषि च प्रवर्ग्य विषयाणि मधुविद्याप्रतिपादकं ब्राह्मणं चाश्विनावध्यापयामास । तदिन्द्रो ज्ञात्वा वज्रेण तच्छिरोऽच्छिनत् । अथाश्विनौ तस्य स्वकीयं मानुषं शिरः प्रत्यधत्तामिति ।”

इन्द्रने दधीचकी प्रवर्ग्यविद्या और मधुविद्या सिखला कर कहा था, ‘यदि यह विद्या तुम किसो दूसरेकी बतला दोगे, तो हम तुम्हारा शिर काट डालेंगे । अश्वियुगलने दधीचका शिरच्छेदन कर उसे अन्यत्र रख दिया और उस स्थान पर फिर बोड़ेका शिर जोड़ ऋक्, साम और यजुः इन तीन प्रवर्ग्यविद्या और मधुविद्याप्रतिपादक ब्राह्मणोंका अध्ययन किया । यह बात जब इन्द्रको मालूम हुई, तब उन्होंने फिर उस शिरको काट गिराया । बाद अश्वियुगलने धड़ पर पुनः मनुष्यवाला पहला शिर लगा दिया ।

ऋग्वेदमें और दो जगह दधीचकी मस्तकास्थिके विषयमें इस प्रकार लिखा है—

प्रतिकूल शब्दरहित इन्द्रने दधीचकी अस्थिसे नौ गुण निन्यानबेवार घृतगणका बंध किया था पर्वत पर छिपे हुए दधीचके अश्वमस्तकको पानेको जब इन्द्रको इच्छा हुई, तब उन्होंने उसे शय्यणावतमें पाया था । (१।८४।१२) (१।८४।१४)

उक्त दो ऋकोंके विषयमें शाट्यायनीका एक इतिहास यों प्रसिद्ध है—

अथर्वाके पुत्र दधीचकी फिरसे जोवित देख कर असुर लोग देवताओंसे परास्त हुए थे । वोछे दधीचके स्वर्ग चले जाने पर असुर लोग पुनः पृथ्वी पर भर गये । बाद इन्द्र उनसे लड़नेमें असमर्थ हो दधीचकी तलाश करने लगे । यहाँ उन्हें न देख वे स्वर्ग जा कर सभोसे पूछने लगे, ‘दधीचिका अधशिट अङ्ग कहाँ है ?’ जवाब मिला, ‘दधीचिका केवल अश्वरूप मस्तक मौजूद है जिससे उन्होंने अश्विद्वयकी मधुविद्या मिखलाई थी ।’ इन्द्रने कहा, ‘मैं उसी मस्तककी खोजमें हूँ ।’ इस पर वे बोले, ‘हम लोग नहीं कह सकते, वह मस्तक कहाँ है ।’ इस पर इन्द्रने जब उन्हें मस्तककी तलाश करने कहा, तब उन्होंने शय्यार्णवत् नामक कुरुक्षेत्रके जघ-

* सायणने यहाँ ‘वष्टा’ शब्दका ‘अर्थ’ इन्द्र लिखा है ।

† सायणने ‘अपि रक्ष्यं’ शब्दका अर्थ किया ‘है प्रवर्ग्यविद्यास्वरूप’ ।

भाईसि इमे पावा वा । जेहे इन्द्रने लमो मरुतको
बळोवे पसुणोका बच बिया वा ।

मानवतर्मि मो लक्ष्मीदेहि पश्यगिरे विवचर्मि लुक्
प्रमङ्ग है । ओवरन्नामोने मो मायच को तरङ्ग इम लया
एवान्ना मो पाचोन पञ्चमे बहुत बडा बडा कर उद्दृष्ट
बिया है । (नागरय ६।११ म० और जीवटीका इत्यम्)

यथाभारतमि इतको लया इस प्रकार लिखो है—
एव जिह समय हरिहारमि बिना गिबत्रीमे वधका पशु
छान करति ये, उन समय इन्द्रमि गिबत्रीको निमन्वित
करतिहे सिह दक्षको बहुत समभ्राया वा, किन्तु इयने
एक मो न हुनो । इम पर बहुमन्न दक्षोचि यत्रमभाको
बोडू कर चले गये है । इतके गिब लन्दे इतके गिब
मन्त्रमि दोहित हो गिबवाय द बहलानि सती ।

एक समय दक्षोचि बड़ो बडिन तपस्या करति लगी ।
इम पर इन्द्र बहुत डर मये और लक्ष्मीने पञ्चगुणा
पचपदका ब्रह्म मङ्ग करतिहे लिखे भेजा । जिह समय जे
सरस्वत के किनारे तपन कर रहे थे उमो समय पञ्च
गुणा लक्ष्मी सामने पाकर चढ़ो का मरे । पञ्चगुणाको
देखकर दक्षोचिका कोपप्रकृतित हो गया । त्रिमये एउ पुत्र
को लपति हुई । यहा पुत्र सारस्वत नामने प्रसिद्ध हुआ ।
देवतच ब्रह्म इन्द्रादुरक्ष भयने त ग त म या मये, तब
लक्ष्मी मानूस पड़ा, सि दक्षोचिका पश्चिमिर्मित बस
पावे बिना हुलका नाय नहीं हो सक्ता है । तब देव
राज इन्द्रने इतके पाम जा कर पश्चिमि लिखे प्राण भा
को । जो इन्द्र दक्षोचिच कहए उम् घि पात्र लक्ष्मीके
लपकारके लिखे दक्षोचिने अपना घरार तब अपन कर
दिया । पश्चिमपुराचर्मि लिखा है कि केवल बच्य हो नहीं
बल्कि दक्षोचिको पश्चिमि और मो पनेक पश्य बनावे
मय है ।

दक्षोचिकि (स० लो०) दक्षोचिराज । १ दक्षोचि सुनिको
पञ्च जिससे बच्य बनाया गया । २ जय । ३ हीरक,
हीर । दक्षोचि देवो ।

दक्षोचिक (स० पु०) बानरसिद्ध, एक बन्दरका नाम ।
दक्षय (स० लि०) दृष्टोतीति दृष्ट-ङिन्, दित्वादिबच्च
निपातनात् सिह (अल्पिक दक्षिण्यि । १ १।१। २)
१ दृष्ट, गिब ब्य, वैदवा । २ बय क, दमन करनेवाला
पाचको ।

दक्षयनि (स० लि०) दक्षयिवाचरति दक्षय् ङिन्
मतेो भाङ्गुनकात् ङिनि । अर्थात् पश्चिमावच पराजित
करनेवाला ।

दक्ष (स० पु०) दक्षते लोभ्य्य पापपुष्पाफनाफन दधा-
तीति दक्ष दानि वाङ्गुनकात् न । यम चौदह यमोर्मिने
एक यम ।

दक्षय (स० लो०) दक्षिण्य, दक्षोबी मन्साई ।

दक्षय (स० पु०) सरल इव मोहान ।

दक्षय (स० पु०) दक्षिण्य अर्थात् पञ्च-ङिन् ।
पञ्चका पश्चिमि पुत्र लक्षोचि सुनि

इन्द्रने दक्षोचिको प्रवर्ष्यविद्या पौर मनुविद्या
सिखा कर बडा था कि यदि तुम यक्ष विद्या किमोको
बतलाओति तो मैं तुम्हारा सिर काट डालूंगा । इम पर
पश्चिमतुमने दक्षोचिका सि। काट कर पञ्चय रक्ष टिया
पौर समने बड़ पर चोड़के जा सिर लया टिया । उम
तरङ्ग लक्ष्मीने लक्षोचिने प्रवर्ष्य (मनु, पञ्च माम पौर
यज्ञ प्रवृत्ति विद्या) लोको । जब इन्द्रको यक्ष कात
मानूस हुई तो लक्ष्मीने था कर लक्ष्मी चोड़केनामा निर
बन्धने काट डाला । बाद पश्चिमतुमने लक्ष्मी बड़ पर फिर
लक्ष्मी अपना सिर लया दिया ।

(अक्ष १।११।१२ लक्षण) दक्षोचि देवो ।

दक्षय (स० लो०) दक्ष्यपसिन्न पक्ष । दक्षिमियिन
पक्ष दक्षो मित्वा हुआ पञ्चात्र ।

दक्षामो (स० लो०) दक्षिण्य इन्द्रतां पामवति या मो
ङिन् । सुदयान लुक्, मदन मद्र ।

दक्षामो (स० लो०) दक्षानी देवो ।

दक्षायिगि (स० लि०) दक्षायि पुष्पाति इति दक्षिण्यति
ङिन्नादि इत्यागो दक्षोचि पाशोर्घञ्ज । दोपसातक ।

दक्षायः (स० पु०) कथित इत्य अर्थका विक्र ।

दक्षयत्त (स० लो०) दक्ष उत्तर चरमावका पश्य-
तीति अ-ङ । दक्षिण्ये दक्षोको मन्साई ।

दक्षयत्त (स० लो०) दक्ष उत्तर चरमावका गच्छ
तीति गम क । दक्षिण्ये दक्षोको मन्साई ।

दक्षय (स० पु०) दक्षिण्यदक्ष यय लक्षय लहादेया ।
दक्षिण्ये दक्षोका ससुह ।

दक्षोदन (स० पु०) दक्ष्यपसिन्न योदन । दक्षिमियिन
आदन, दक्षो मित्वा हुआ मात ।

दन (हि० पु०) दिन ।

दनकर (हि० पु०) सूर्य ।

दनकौर—युक्तप्रदेशके बुलन्दशहर जिलेके अन्तर्गत शिकन्दराबाद तहसिलका एक शहर । यह भूभा० २८° २१' ३०" और देशा० ७७° ३३' पू०के मध्य बुलन्दशहरसे २० मीलकी दूरी पर अवस्थित है । जनसंख्या ५४४४ है । कहते हैं, कि नहाभारतके वीर द्रोणने यह नगर वसाया था । यहां एक तानाव और एक मन्दिर है जो आज भी द्रोणाचार्य नामसे पुकारा जाता है । शहरके पास ही यमुना नदी बहती है । यहां घो, चीनी और गन्धका व्यापार होता है ।

दनखर--पञ्जाबके काण्डा जिलेको एक प्राचीन राजधानी । यह भूभा ३२° ५' ३०" और देशा० ७८° १५' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या लगभग ७१३ है ।

दनगा (हि० पु०) खेतका छोटा टुकड़ा ।

दनगोधा—त्रिपुराके अन्तर्गत साचर नदीके किनारे एक ग्राम । यहां वाणिज्य व्यवसायकी अच्छी वृद्धि है ।

दनदंनाना (हि० क्रि०) १ दन दन शब्द करना । २ आनन्द करना, खुशी मनाना ।

दनमणि (हि० पु०) सूर्य ।

दनादन (हि० वि०) दन दन शब्दके साथ ।

दनायुस् (स० स्त्री०) दत्तको कन्या, कश्यपकी स्त्री । इनके चार पुत्र थे—विचर, वल कौर और हृत् (भारत आदि ६५ अ०) दनायुस्के पुत्र दानव नामसे प्रसिद्ध हैं ।

दनु (स० स्त्री०) १ दत्तकी एक कन्या जो कश्यपकी ब्याही थी । इसके चालीस पुत्र हुए थे जिनके नाम ये हैं—विप्रचित्ति, शम्बर, नमुचि, पुलोमा, असिलोमा, केशी, दुर्जय, अयःशिरा, अश्वशिरा, अश्वशङ्ख, गगन-मूर्धा, स्वर्भानु, अश्व, अश्वपति, हृत्पर्वी, अजक, अश्व-श्रीव, सूक्ष्म, तुष्टुण्ड, एकपद, एकचक्र, विरुपाक्ष, महोदर, निचन्द्र, निकुम्भ, कुपट, कपट, शरभ, शलभ, सूर्य, चन्द्र, एकाक्ष, अमृतप, प्रलम्ब, नरक, वातापो, शठ, वनायु और दीर्घजिह्व । ये सब दानव कहलाते हैं । इनमें जो चन्द्र और सूर्य हैं, वे देव सूर्यसे भिन्न हैं । २ एक दानवका नाम, जो अर्धादानवका पुत्र था ।

दनुज (स० पु०) दनोजायते जन-ड । असुर, राजस ।

दनुजदलनो (स० स्त्री०) दनुजस्य दलनो । असुर-नागिनो, दुर्गा ।

दनुजद्विप् (स० पु०) दनुजानां असुराणां द्विष्ट गवः वा दनुजान् द्वेष्टि द्विप-द्विप् । १ देवता । (वि०) २ दनुजगवः, जो असुरके दुश्मन हैं ।

दनुजराय (हि० पु०) दानर्वीका राजा हिरण्यकश्यप । दनुजारि (स० पु०) दनुजस्य शरिः ह-तत् । दनुजगवः, देवता ।

दनुजेन्द्र (स० पु०) दानर्वीका राजा रावण ।

दनुजेग (स० पु०) १ हिरण्यकश्यप । २ रावण ।

दनुप (स० पु०) राजस ।

दनुभ्रंभव (स० पु०) सन्भवत्यस्मात् सन्भू-भ्रप् दनोः सन्भवः । दनुके पुत्र दानव ।

दनुसूतु (स० पु०) दनोः सूनु । दनुकी सन्तान, दानव ।

दन्त (स० पु०) दन्त-तन् (हृदिमृत्प्रिणि । उप्-३।८६) १ अट्टिकटक, पर्वतका मध्य भाग । २ कुञ्ज, हाथीका दांत । ३ पर्वतनितम्ब, पहाडका टालुवा किनारा । ४ मानु, अधित्यका, ऊँचा पथरोना मँदान । ५ मुखके भीतर चर्चण साधन अस्थिभेद, अंकुरके रुपमें निकली हुई हड्डी जो जीवाँके मुँह, तालु, गले और पेटमें होती है और आहार चक्षुः, तीडने तथा आक्रमण करने, जमीन खोदने इत्यादि कार्योंमें आती है, दांत । इसको संख्या बत्तीस है । पर्याय—रदन, दशन, रद, दिज, खड्ड ।

(शब्दरत्नावली)

आहार करनेकी नलीसे लेकर मुखके भीतर मंलम्ब जितने कठिन पदार्थ है, वे दांत कहलाते हैं । प्राणी-मात्रको दो दांत होते हैं, किन्तु आहार्य द्रव्य तथा अभ्यासका पात्र कथके अनुसार दांत भी पृथक् पृथक् होते हैं, दांतोंकी ऐसी पृथक्तासे प्राणोत्पत्तिदांतोंकी प्राणीको श्रेणोविभाग करनेमें बहुत सहायता मिली है ।

शारीरतत्त्वविद् पण्डितोंके मतसे दांत तीन भागोंमें विभक्त है, पहला मस्तक (Crown), दूसरा जड़ (Root) और तीसरा ग्रीवा (Neck) । प्रत्येक दांतके भीतर एक धमनी और एक छाया प्रवेश करती है तथा प्रत्येकके अन्तर्में एक छोटा गट्टा देखा जाता है । इस गट्टेके भीतर पल्प (Pulp) अर्थात् दांतके लिए एक

कीमल रक्तसूत्रों और सञ्चितन पदार्थों देखनेमें आता है। दाँतको सर्वोत्कृष्ट छेद करनेके लक्षमें चार पदार्थ देखे जाते हैं—(१) डेंटिन (Dentine), (२) सिमिप्ट बासु (Cement or creosta petrosa), (३) एनामिल (Enamel) और (४) पल्प (pulp)



१ डेंटिन—यह दाँतका प्रधान पदार्थ है। इसके लोह्रि लोह्रि भेद है—(१) हड़ बा हड़ डेंटिन (Hard or true dentine), (२) मासो डेंटिन (soft dentine), (३) पट्टियो डेंटिन (osteo dentine)। डेंटिन सिमिप्ट और एनामिल द्वारा पावत रहता है। इसमें पत्तिका छोटे छोटे नल और नहर तथा लक्ष्य कणिका देखी जाती हैं। इन पद लक्ष्य नली और नहरोंमें सूक्ष्म कणिका (Calcareous particles) तथा एक प्रकारका बर्तन तरल पदार्थ रहता है। डेंटिनके सब आत्ममें पल्प नामका नहर देखा जाता है। लक्ष्य लक्ष्य नली और नहरोंके सुख हरी पल्प नहरोंमें लगी रहते हैं।



इसमें प्रत्येकको एक एक बहिर्वाहक है जिसे डेंटल अर्थ (dental sheath) या दन्तावरण कहते हैं।

जिस मूल रक्तवाहा नाड़ोमय पल्प (Primitive vascular pulp) द्वारा डेंटिन परिपुष्ट होता है वह सब स्नायीरूपमें सूक्ष्मनिर्मित रहता है, तब साके कणिकाय रक्तवाहा नाड़ी द्वारा मूलतन्तु या तिसीमें (Tissue) लाया जाता है। इस प्रकारके डेंटिनको मासो डेंटिन (vaso dentine) कहते हैं।

पुच्छ बीजमय (collular base) रक्तवाहा नाड़ोके

(vascular canals) चारों ओर अब समर्पितिक स्तर पर सञ्चित रहता है तब डेंटिनका कुछ कृपास्तर जो जाता है। इस पदसाके डेंटिनको पट्टियो डेंटिन (osteo dentine) कहते हैं।

२। सिमिप्ट बासु पट्टियोस पत्तियाँ दाँतका कठिन पदार्थ—यह दाँतके मूल भागकी ढक रहता है। हाथी तथा घोरे जितने प्रकारके जन्तुपक्षी दाँतोंमें सिमिप्ट पत्तिका मात्रा में रहता है।

३। एनामिल—दाँतके व्युत्पत्तु (Tissue) में यह सबसे कठिन है। यह दाँतके मस्तक (crown) को पावत किये रहता है।

४। पल्प—ये डेंटिनके मजबूतकी पदमाये रूप है। इसमें रक्तवाहा नाड़ो, खासु और ल योगतन्तु देखे जाते हैं।

डेंटिन और मासोडेंटिनजुक्त दन्तमज्ज को साधारणतः देखे जाते हैं। मनुष्य और मानवाहारी जन्तु पक्षी दाँत देखनेसे ही पता लगता है कि लक्ष्य डेंटिन और एनामिल भरे हैं। किन्तु लक्ष्य दाँतके मस्तक (crown) पर सिमिप्टका एक पतला आवरण रहता है।

मनुष्यको दो बार दाँत निकलती हैं—१ दुग्धदन्त (यह दाँत बहुत कम समय तक रहता है) और २ दोषकाक स्नायी दन्त।

दुग्धदन्त—ये दो वर्षको अवधामें ही निष्कलित प्रशासोक्तमधि निकलती हैं।

१। ऊपरके बीमड़के बीच ४ इनसाइडर या लोडक दन्त जो ८वें १० मास तक रहते हैं।

२। नीचेके बीमड़के दोनों ओरके इनसाइडर और ४ मोटर या चब दन्त—१२से १४ मास।

३। ४ क्यानाइन या मोहनदन्त—१८से २० मास

४। ४ पथाहायक मोटर २०से २४ मास।

दोषकाक स्नायी दन्त—इन सबकी पदसाके भीतर ही दुग्धदन्त छड़ जाती हैं। बीस दोषकाक स्नायी दन्त निकलती हैं। बारह या तीरह वर्षके भीतर दाँत निकल पाते हैं। २१ या २२ वर्षकी अवधामें जब पत्तियाँ बीमड़ या पत्तिकादाड़ (wisdom tooth) निकलती हैं, तब २० दाँत पूरे हो जाते हैं। निम्न

निकलित प्रणाली-क्रम से वे सब दाँत निकलते हैं।

१। प्रथम मोलर	६ वर्षको अवस्थामें,
२। दो मध्यके इनसाइजर	७ " "
३। दो समोपके	८ " "
४। प्रथम वाइकाम्पिड वा द्विमूलो	९ " "
५। द्वितीय	१० " "
६। क्यानाइन	११-१२ " "
७। द्वितीय मोलर	१२-१३ " "
८। ज्ञानदन्त (अकिलदाढ़)	१७-२१ " "

दुग्धदन्तके मोलर दन्तकी जगह पर वाइकाम्पिड दन्त और मोलरदन्तके पीछे तीन तीन करके स्थायी मोलर दन्त निकलते हैं। ३२ दाँतोंमें प्रत्येक दाढ़के आधे भागमें २ इन्साइजर १ क्यानाइन, २ वाइकाम्पिड और ३ मोलर रहते हैं, सुतरा कुल ८ इन्साइजर, ४ क्यानाइन, ८ वाइकाम्पिड और १२ मोलरदाँत हैं। इनमेंसे ८ इन्साइजर दाँत सामनेकी दो दाढ़ोंमें रहते हैं। ये दाँत लम्बे और चिपटे होते हैं। इनमें धार रहती है। जिससे खाद्य पदार्थ अग्रमानोसे काट कर खाया जाता है।

दाढ़के इनसाइजर दाँतके पासछो ४ क्यानाइन दाँत हैं। ये दाँत लम्बे होते हैं और इनको एक बगल चिपटो होती है।

क्यानाइन दाँतके बाद ही ८ वाइकाम्पिड दाँत रहते हैं जिन्हें प्रिमोलर (Premolar) दाँत भी कहते हैं। इनको जड़ (Fang) का अगला भाग दो खण्डोंमें विभक्त रहता है। इनके पार्श्वको और गड्ढा, ऊपरमें चिपटा और दोनो बगल २ गुटिका देखी जाती हैं। नीचेके जवहके बीचमें दो इन्साइजर हैं जो ६८ मासकी अवस्थामें निकलते हैं।

सबसे पीछे १३ मोलर दाँत रहते हैं। इनका गिरा चौड़ा और चौकोर होता है और जिनसे पीसा या चबाया जाता है।

ज्ञानदन्त या अकिलदाढ़ एकमे लम्बे नहीं होती। दातका गणायनिक पदार्थ—

दन्तास्थिमें	सैकड़ें ३३ भाग ज्ञानत्व पदार्थ
क्रुष्टा पिट्टीसा वा सिमेण्ट	३ भाग " "
डैप्टाइड	२८ भाग " "

एनामिल

३५ भाग " "

दाँतोंमें जो खनिज पदार्थ देखे जाते हैं, उनमें क्यालसिक फस्फेट, क्यालसिक कार्बोनेट, क्यालसिक फ्लोरोराइड और म्याग्नेसिक फस्फेट प्रधान हैं।

दाँत देख कर कौन जन्तु किस श्रेणीका है तथा उसके अभ्यासदि किस प्रकारके हैं, उसका निरूपण किया जा सकता है। हमलोग देखते हैं, कि माँसाहारो जन्तुओंके मोलर दन्त पिषणदन्तके जैसा न हो कर तोच्छाधारविशिष्ट होते हैं। कौड़े मकोड़े खानेवाले जन्तुओंके मोलर दाँत दाँनददार तथा खूब बारीक होते हैं।

फल खानेवाले जन्तुओंके मोलर दाँतोंके ऊपर गोलदानि से रहते हैं और पाकभोजी जन्तुओंके मोलर दाँतोंका ऊपरी भाग चोड़ा तथा असमान रहता है।

मनुष्य तथा और दूधपिलानेवाले जीवोंमें दाँत दाढ़ और ऊपरी जबड़ेके माँसमें लगी रहते हैं। मछलियों और सरोखोंके दाँत केवल जबड़ोंमें ही नहीं, तालुमें भी होते हैं। पक्षियोंको चोंच ही दाँतका काम करती है, उनके दाँत नहीं होते। असली दाँत मछुड़ोंके गद्दोंमें जमे रहते हैं। सरोख्य आदिमें दाँतका जबड़ेको हड्डोसे अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। रोढ़वाले जन्तुओंमें मुँहको छोड़ स्त्रोत अर्थात् भोजन भोतर ले जानेवाले नलमें और कहीं दाँत नहीं होते। बिना रोढ़वाले छोटे छोटे जन्तुओंमें दाँतोंकी स्थिति और आकृतिमें परस्पर बहुत विभिन्नता है। किसीके मुँहमें किसीको अंतडोमें अर्थात् स्त्रोतके किसी स्थान में दाँत हो सकते हैं। केकड़ा, भिंगवा आदिके उदरमें मछीन मछीन दाँत या दानेदार हड्डियाँ सो होती हैं। जलके भोतर बहुतसे ऐसे कौड़े हैं जिनका मुँह गोल या चक्राकार होता है। ऐसे कौड़ेके मुँहके किनारे पर चारों और असंख्य मछीन दाँतोंका मण्डलसा होता है। मनुष्य और वनमानुसमें दन्तावलि पूर्ण होती है।

दन्तोद्गमफल—बालक यदि सद्गन्त उत्पन्न हो, तो वह पितामाताका घातक होता है। जातबालकके पहले ही मासमें दाँत निकलने पर पिताकी मृत्यु, दूसरे

मासमें निकलने पर माताको घोर तीव्र मासमें निकलने पर सद्योदरको चक्षु, जोतो है। चार मासमें दांत निकलना समझना है। पांच मासमें दांत निकलनेमें प्राग्जातक निहमीको घोर लुकीं होता है। मासमें निकलनेमें पण्डित ० मासमें बसवान् ८ मासमें दरिद्र ८ मासमें बोर घोर दस मासमें निकलनेमें लकीं चक्षु जोतो है। स्यारहमें घोर बारहमें महीनेमें दांत निकलना अच्छा है। यदि पूर्वोक्त पद्यमन्त्रक महीनेमें दांत निकले तो लमको मान्ति करना प्राक्ज्यक है मान्ति करनेमें पहले ० सुत्तिका बना कर लक्ष्य सुगन्ध मन्त्रकोसे चतुष्पद करते हैं। दोहे छन्दोपुत्र द्वारा स्थापित कर प्राग्जातको घोर होमादि करते हैं। ०

रतिश्रीकामि दन्तावातका काम - मूत्रकर्म समय मूत्र, मण्ड, पोष्ट घोर चक्षु १५ पांच म्पानिमें दांत मङ्गला स्थितीक बिसे सुखजनक है।

“एतवतीर्यन्तोरेष्व ओंके वैव उवाचरे।

दन्तावन्त- प्रवर्तयः वासिनीनां इच्छात् ४ (कायपठ) बर्माकायके सातमें मासमें वाक्कसे दन्तमूलका प्रादु र्भाव होता है।

दन्तक (म० पु०) दन्ती दन्तमासमें प्रसित। कन। १ दन्त मासमें प्रसित, बह पीप जो दांत मन्त्रके निकलतो है। दन्त दन्त कन्। २ दन्तमन्त्र, पहाड़को चोटो। ३ पर्वतके बहिर्निगत पाषाणमेद पहाड़के निकलने वाला एक प्रकारका पत्थर। कावे कन्। ४ दन्त दांत। दन्तकका (स० खो०) कनद्विदि, ऐसो बात त्रिसे बहुत दिनोंके लौक एक मूसरेके सुनते चले पावे हों।

दन्तकारण (स० पु०) दन्तरोमभेद दांतकी एक प्रकारको बीमारो।

दन्तकक (स० पु०) दन्तान् कर्पति छान-भ्यु। कन्वार क भीरो मीवु।

दन्तवात (स० खो०) दन्तवातनाब काठ। दन्तवायन कठ, दन्तुवन।

दन्तवातका निवय प्ररक वितामें दस प्रकार लिखा है, -बहो। म्पान सुग्म घोर इकोके प्रमं दके कारक इमारो प्रकारके दन्तवात की चकते हैं। इस कारण किस किस इच्छा दन्तवात समझना है घोर निवय किस इच्छा

पद्यमन्त्रक भी लिखते हैं। पद्यातपूर्व वाहका वा पद्यमन्त्रित सुग्मवर्ष, पाटिन उर्ध्वदन्त घोर लक्ष्मिहोम दन्तवातने दन्तवादन नहीं करना चाहिए। वैषद्यत, त्रौफल घोर काजोरी इच्छाकी दन्तुवन करनेमें लक्ष्मण स्थिती चक्षु। मास जोतो है। निमतवृत्तके दन्तवातसे उपासा भावार्थ पद्यमन्त्रके छदि, चर्कइच्छासे निशोर्ध्व मनुक इच्छासे सुवनाम घोर ककुभइच्छासे मनीका मिश्रल प्राप्त होता है। गिरीय घोर करण इच्छा यदि दन्तवात हो, तो लक्ष्मी, इच्छा हो, तो पयोप्लित चर्कइच्छा। जातिइच्छा हो तो मनुकाल प्राप्ति, पद्यत इच्छा हो, ता प्राक्जातनाम, बदी घोर इच्छा इच्छा होती पारोम्य घोर पाहुइच्छा तथा विन्व घोर खदिर इच्छा हो तो ऐश्वर्यकी छदि हातो है। नीमकी दन्तुवन करनेमें पर्य प्राप्ति करवोरने पयनाम, माफोरसे पत्र तथा पक्षधाम घोर पशुंन इच्छाके दन्तुवन करने में दम्भुगाय होता है। गास पन्थकच, मद्रदास घोर पाठकपठ इच्छाके दन्तवातका व्यवहार करनेमें गौरव प्रकाश घोर भिय सु, पयामार्ग, चक्षु तथा दाहिमका व्यवहार करनेमें सब प्रकारके सुख प्राप्त होती है। पूर्व घोर उत्तर मुख बैठ कर दन्तुवन करने चाहिये। दन्तुवन करने सुख हो लेना चाहिये। बाद उन दन्तुवन को बिसे पच्छे खानमें छि ब दिना चाहिये। ज्योति मन्त्रमें लिखा है कि दन्तवातके प्रगण्ड दिम्बकी घोर गिरनेमें सुमकर घोर यदि बह खपरमें हो लकीं पर पटल रङ्गे, तो पन्थोत समझना एक प्राप्त होता है। ऐसा नहीं होनेसे पद्यमन्त्रक फल मिलता है।

प्रातः कासमें शोषादि कार्य सम्पन्न करके दन्तुवन करने चाहिए। तिल, बट, पयाय, सुगन्धि कण्डक हुत घोर शौरिकाप्य सब दन्तुवनमें अच्छे है।

निविहकापिठ- तुवा- ताम, चिताक, शितको, पञ्चूर घोर कारियन के मय हृष कवरात्र नामसे प्रसिद्ध है। पत- दन्तवा दन्तवाप्य काममें न जाना चाहिए।

खदिर, कटक, करण, बट तिलको, विठपुष्ट, पाय, निव, पयामार्ग, शिव चर्क तथा कुमर इन सब इच्छाके दन्तवाप्य प्रगण्ड माने गये हैं।

दन्तवाप्यका परिमात्र- वैश्वीके लिए माण्ड चक्षुकी

का शूद्रोंके लिए छः उंगलीका और स्त्रियोंके लिए चार उंगलीका दंतकाष्ठ बतलाया है ।

‘ द्वादशांगुलं च वैश्यानां शूद्राणां तु षडंगुलम् ।

चतुरंगुलमात्रेण नारीणां विधिः कृते ॥’ (मरीचि)

दन्तधावन देखो ।

दन्तकाष्ठक (स० लो०) ऋष्वं काष्ठं काष्ठ ॥ दन्त-
धावनयोग्यं काष्ठकं । आहुल्य वृक्ष, तरवटका पेड़ ।

दन्तकूर (स० पु०) दन्ताः कूरं भ्रम्रमिव चर्यात्वात् यत् ।
संग्राम, युद्ध, लड़ाई ।

दन्तकेतु (स० पु०) लघुनिम्ब वृक्ष, छीटा नोबूका पेड़ ।
दन्तकूर (स० पु०) दन्ताः कूरः यत् । १ टैगविशेष,
एक देशका नाम । २ दंतकूर देशके राजा ।

(भात श्लोक ५० ६० अ०)

दन्तग्राही (स० ति०) दंतं गृह्णाति ग्रह-णिनि । जी
दंत नष्ट करता हो, दांत बरबाद करनेवाला ।

दन्तघर्ष (स० पु०) दंतस्य घर्षः क्षत्वात् । सभी दांतोंका
परस्पर घर्षणभेद, दांत पर दांत दबाकर घिसनेको
क्रिया, दातका किरकिराना । भोजन कर लेने पर भो
जिसका हृदय लुधासे पोड़ित हो और दांत किर-
किराने हों उसकी आयुका शेष समझना चाहिए ।
निद्राकी अवस्थामें बच्चे कभी कभी दांत किरकिराने हैं
जो अशुभ समझा जाता है । रोगीके पचमें यह और
भी अशुभ लक्षण है ।

दन्तघात (स० पु०) १ दंतस्य घातः दंतेन वा । दंत
द्वारा आघात, दांतसे काटना । २ निम्बवृक्ष, नोबूका
पेड़ ।

दन्तचाल (स० पु०) दंतानां चालयनमत्र । आत्
रूपद्रवभेद, दांतका हलना । हृद होने पर दांत आपसे
आप हलने लगते हैं ।

दन्तच्छेद (स० पु०) दंताच्छायन्ते ऽनेन हृदि-णिच् घ,
ततो ऋः (पुंषि संशया घ प्रायेण । ५० ३।३।१९८)
घोष्ठ, घोट ।

दन्तच्छेदो (स० स्त्री०) मधुरविंबो, विंबाफल, कुंठरू ।
दन्तच्छेदोपमा (स० स्त्री०) दंतच्छेदस्य घोष्ठस्य उपमा
सादृश्यं यत् । विंबीलता, विंबाफल, कुंठरू । कविने
इसके साथ घोष्ठको उपमा दी है, इसीसे इसका नाम
दन्तच्छेदोपमा पड़ा है ।

दन्तजात (स० ति०) जातो दन्तोऽस्य, निष्ठागतत्वात् पर-
निपातः । १ जातदन्त, जिसे दांत निकल आए हों । २

दांत निकलनेके योग्य । गर्भोपनिषद्में लिखा है, कि
बच्चेको पातवे महोनेमें दांत निकलना चाहिए । यदि
उप समय दांत न निकले, तो अशुचि लगता है ।

दन्तग्राह (स० लो०) दंतानां मूलं कर्णादित्वात् ग्राह ।
दंतमूल, दांतकी जड़ ।

दन्तताल (स० पु०) ताल देनेका एक प्रकारका प्राचीन
बाजा ।

दन्तदर्शन (स० लो०) दंतानां दर्शनं दृश-णिच्-शुट् ।
युद्ध या चिह्नचिह्नादृष्टमें दांत निकालनेको क्रिया ।
युद्धमें सबसे पहले दांत निकालना, पीछे शब्द करना और
तब युद्ध करना चाहिए । (दशभारत ब्रह्म ५० ७१ अ०)

दन्तधावन (स० लो०) दंतानां धावनं । १ दंतमार्जन,
दांत धाने या साफ करनेका काम, दातुन करनेको
क्रिया । दंतानां धावनं यस्मात् । २ दंतकाष्ठ,
दंतुवन, दंतून ।

प्रातःकाल उठकर सभोकी दंतुवन करना आवश्यक
है । दंतुवन करनेसे मुखको दुर्गन्ध आदि जाती रहती
है, दांत परिष्कार और अधिक दिन तक स्यायो रहते
हैं । इसी कारण दंतुवन करना हर एकका अवश्य
कर्तव्य है ।

दन्तधावनका विषय आङ्गिकतत्त्वमें इस प्रकार
लिखा है,—

‘मुसे पशुपिते नित्यं भवत्यप्रयतो नः ।

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन भक्षयेत् दन्तधावनम् ॥’

(आहिष्ठतरव)

सुहं शशी रहनेसे दुर्गन्ध निकलतो है, इसीसे यत्-
पूर्वक दन्तधावन करना उचित है ।

सबसे यथाविधि शौचकर्म सम्पन्न करनेके बाद दंतुवन
करके स्नान करना चाहिए दांत परिष्कार करनेमें
दंतकाष्ठ ही एक मात्र प्रयुक्त है । इस कारण दन्त-
धावन करनेके लिए दंतकाष्ठका इन्तजाम करना अवश्य
कर्तव्य है । कोमल साथ साथ कड़ ई तौती और कसैली
दंतुवन जिससे दांतकी मांसमें अक्षर न पड़े, दन्तधावनके
लिए प्रयुक्त है । कनेर, आम, करञ्ज, मौससरी आदि

कण्टक इत्ये तत्रा पीरतुञ्ज इत्ये ओ बहूपा कमेया
तीता पीर सुयमित्तो, दंतकाष्ठ स पञ्च करणा चादिप ।
रंतकाष्ठ देवे । दक्षिण पीर पश्चिमसुको होकर दंतुवन
करणा निवृत्त है । यदि कोई मोहन्य दक्षिणसुको
हो कर दंतुवन करे तो कमको पातुञ्ज्य होती है, पश्चिम-
सुको हो कर दंतुवन करनेसे रोग होता है । बाद मरने
पर उसे मरक जागा पड़ता है ।

“दक्षिणामितुको भूत्वा वक्षिणामितुकरणा ।
न दन्तधावनं कुपारं कुर्वीषैर्दारुभी भवेत् ॥”
(भाविष्णव)

पूर्व पीर उत्तरसुको होकर दंतुवन करना प्रशस्त
है । दाँतोंको छपर मोचे मनोमर्ति दंतुवनसे विमकर
सुइको जनपूर्व करनेसे तथा चक्षुको जन्ने धोनेसे इष्टि
पश्य होती है । पमावस्था पक्षी नभमो, प्रतिपद,
पहाइयो पीर उपवाससे तथा याइवामसे पीर रवि
बारसे दिन मरुकोसे दंतुवन न करनी चादिप । इन
मरु निविह दिनमि तथा कम खानने अहां दंतुवन न
मिच्छतो हो, मर्दा कपडुने दांत पीर ओम धिस कर
बारह बार कुको बारसे सुइ साध करना चादिप ।
चर्दित कर्षंशूलपद, ट तरोगी, नरक्यार, शोयरोमो,
वायरोमा पीर मूष्णाभाविबुद्ध मनुष्योको द तकाठका
धनहार करना विमकुन ममा है । (राजव०)

दन्तधावनध प्रथम—प्रतिदिन दंतुवन करनेसे सुइ
का बहूपापन तथा ओम पीर दांतके ओन जाते रहते
है पीर सुइको बर्ष होती है । दाँतोंको तर्जोसे
कदापि छियना न चादिपे, इनके सिधे मध्यमा, पना-
मिका वा इडाहूट प्रशस्त है । सुर्वोदयके पक्षसे दंतु-
वन करना उचित है । ओ सुर्वोदय होने पर दंतुवन
करनी है, कमकी मरु क्षिपयि मरु होती है । खान
करती मरु दंतुवन करनेसे कमके विप्रगण निराम्य हो
कर जने जाते हैं तथा दिवता ओम कमको पूजा मरुच
नहीं करते । ओ मन्थाञ्ज पीर चवराञ्ज समय दंतु-
वन करते हैं, कम पर दिवता पीर विप्रगण बट रहती है ।

“सूर्वादि विप्रगणं कुपारुपयामन

— निवक्षिणक्य तरु लक्ष्मिद विनरति ॥

नः राजवपने कुपारं कैमिने दंतधावन ।

Vol. X 16

निराका विरता यति तस्य देवा सुर्वदा ।
इ तस्य भावनं कुपारं हो मन्थाञ्जा पराहना ।
तरु सुर्व न पडति देवताः निरता मरु ॥”

(पाक्ष्य विवाशोपता)

दन्तकाष्ठ कनिष्ठा र्गकोसे चपमामये समान होना
चादिपे । यह ब्राह्मणच सिधे बारह कमको चादिपके
सिधे हो बरुमके सिधे पाठ पीर गूइके सिधे च र्गको
का होना पाक्यम् है ।

दन्तधावनका नियम मानवकायमें इन प्रकार सिद्धा
है—मनुष्य अपनी आस्फारवाके सिधे ब्राह्मणसुइतमें कनी
पेके शीषकायादि बारह हाव पैर हो कावे । इससे
पनतर दंतुवन करे । दंतुवन बारह र्गको सज्जो,
कनिष्ठा र्गकनिधे चपमामये समान मोटो सोबी तथा
बिना मीठको होनी चादिपे । बाद त्रिधये दन्तवेष्टित
मांसमें दोट न पडुसे इससे सिधे दंतुवनसे चपमामको
सू को सरोपा बनाने पीर कममें दन्तयोवन चूच मिना
कर दंतुवन करे ।

मधुर, चिबट्टु सपपतेस धैर्यवलयच, त्रिज पीर
वक्ष्यच चूच द्वारा प्रतिदिन घोषण तैयार करे । मधुर-
काष्ठमें मीठकाठ, कट्टरमनुष्य काष्ठमें करण पीर तिष्ठ
रमन बुद्ध काष्ठमें निव्य प्रशस्त है । पना इन्हीं कम
पेकोसे दंतुवन पच्छो मानो मर्द है । इस प्रकार दन्त-
धावन करनेसे सुचकी विरसता, दन्तगतरोय जिह्वागत
रोम जाते रहते हैं तथा बर्ष सुकळा निममता पीर
कहुता कत्यक होती है । चकवनको दंतुवन करनेसे
बोबं काम होता है बटवे मरोरको कान्ति सुचतो है ।
करणसे कय जाती है, पाकरसे चर्षं सम्पत्तिको इति
होती है । बरुसे मरोरमें सुमन्थ निव्यनती है । इनसे
वन प्राप्त होती है वचह मरने काको सिधि होती है,
पामसे मोरोगी होता है । कदम्बसे चारुचमि बढतो
है, चम्पासे मति इष्ट होती है । गिरोप इत्ये कोर्दि,
सोमाम्य पीर परमासु प्राप्त होता है । मयाइ इत्ये
बारच यति बढती है दाकि न, चतु न पीर कूटज इत्ये
दन्तधावन करनेसे मनुष्य सुन्दर पाञ्जलिमय्यच होता
है । जाती तयर पीर मन्थारुपुपकाष्ठसे सुर्ववत्र पूर
होता है । सुपारोके पेड़की दंतुवन काममें न मानो

चाहिये, यह पहले ही कह चुके हैं। गलगोरी, तालु-
रोगी श्रोत्रोरोगी जिन्हा श्रोत्र दंतरोगी, मुख और मुख-
श्रोत्रोरोगीका टनुवन नहीं करनी चाहिये। जो मनुष्य
दुर्बल हो, जिसकी पाचनशक्ति कम गई हो, जो खास,
काम, वमि, हिक्का और सूँझा आदि रोगोंमें ग्रसित हो,
जो मटरोगसे, शिरोरोगमें पीडित हो, जो पिपासित,
चाँत और मस्यपानसे क्लान्त हो गया हो तथा जो अर्धित
रोगमें, कर्णशूलमें, नेत्ररोगमें, नवल्डरमें और हृद्रोगमें
आक्रान्त हो, उसे दंतकाष्ठ वर्जन काना कर्तव्य है।
दन्तुवन कर चुकनेके बाद जोभी करनी चाहिये, तब
कुत्ती करके सुँह अच्छी तरह साफ कर लेना चाहिये
(भावप्रकाश)

धावयत्यनेन धावि-ल्युट्। ३ खटिगद्वच, खैरका
पेड। ३ गुच्छ करख, करखका पेड। ५ धकुल, मौन
सिरो।

दन्तधावनक (सं० पु०) दंतधावन, स्वार्थे कन्। दंत
धावन, दातुन करनेकी क्रिया।

दन्तपत्र (सं० लो०) दंतपत्राणि अथ। १ कर्णाभरण
विषय, (Earing) कानका एक गहना। २ गजदंत-
निर्मित पत्राकार कर्णभूषणसेट, पत्रके आकारका
गहना जो हाथके दांतका बना होता है।

दन्तपत्रक (सं० लो०) कुटपुत्र्य, मकरंद।

दन्तपवन (सं० लो०) दंतं पुनाति अनेन पू करणे ल्युट्।
१ दंतकाष्ठ, दातुन, टनुवन। भावे ल्युट्। २ दंत
धावन, दांत साफ करनेका काम।

दन्तपात (सं० पु०) दंतम्य पातः ह-तत्। १ दंतका पतन,
दांतका झड़ना। २ घोटोंको वह अवस्था जब उसके
दांत आपसे आप झड़ने लगते हैं। हृहस्त-हितमिं इसका
विषय इस प्रकार लिखा है—

जब घोटोंके छः सफेद दांत निकल आवें, तब उसे
शिशु समझना चाहिये। वे सब दांत जब कषाय वर्षके
हो जाय, तब उसको अवस्था दो वर्षकी जाननी
चाहिये। मध्यम और अंतके दांतोंके झड़ने
वा समुदित होनेसे घोटोंकी उमर इसे ५ वर्ष
तककी होती है। दांतोंमें जो दाग पड़ जाता है
उसका नाम सन्दंग है, अथवा जवड़ेके दोनों और

एक साथ जो दो दांत निकलते हैं, उसे भी सन्दंग कहते
हैं। यह सन्दंग यदि काला, कृष्ण होना, सफेद, काँच-
से जैसा, मक्खीके जैसा तथा गहरे जैसा हो जाय तो
उसे यथाक्रम उत्तरः उत्तर तीन तीन वर्ष अधिक उमर
का जानना चाहिये। अर्थात् सन्दंगके काला होनेसे
घोटोंकी उमर ८ वर्षकी, पीला होनेसे ११ वर्षकी और
सफेद होनेसे १४ वर्षकी होती है। अनन्तर घोटोंके
दांतोंमें छेद हो जानेसे उसको उमर चौबीस वर्षकी,
उनके हलनेसे सत्ताईस वर्षकी और झड़नेसे उमर
उमर तीस वर्षकी होती है, ऐसा जानना चाहिये।

(हरतसंहिता ६६ अ०)

दन्तपाग (हि० स्त्री०) दांतको पोड़ा, दांतका टट।

दन्तपानो (सं० स्त्री०) दंतस्य पानो द-तत्। १ दंताग्र,
दांतका अगला भाग। तालु, श्राठ, अक्षर और दंताग्र
प्रभृति यदि रक्त वर्णके हों तो मुख, वनिता, अर्थ तथा
संतति प्राप्त होती है। २ शिशुदन्तरोग, बच्चोंके दांतका
एक रोग।

दन्तपोठक (सं० लो०) दंतवेष्ट, दांतोंके ऊपरका मांस,
मसूड़ा।

दन्तपुष्पक (सं० पु०) दंतरोगप्रद, मसूड़ोंका एक
रोग जिसमें वे सूज जाते और टट बरते हैं।

दन्तपुर (दन्तपुरी)—बोडगन्धर्ष मतानुसार प्राचीन कलि-
राज्यका एक नगर। बोड धर्मको तुनी जब चार्ग और
बोन रहो थीं, तब यह नगर बहुत बड़ा चढ़ा था।
बौद्धाधिकारके पहले इसका क्या नाम था, मालूम नहीं।
कलिङ्गराज ब्रह्मदत्तके समय यहाँ बुद्धदेवका दन्त
स्थापित हुआ था और उसी पर एक मन्दिर भी बनवाया
गया था, इसीसे इसका नाम 'दन्तपुर' या 'दंतपुरी'
पड़ा है।

दन्तपुरका वर्त्तमान स्थाननिर्णय ले कर पुरातत्त्व-
विदोंमें बहुत मतभेद है। डा० राजेन्द्र नालमित्रने
अपने उल्लेखके पुरातत्त्वमें लिखा है, कि कलिङ्गनगरोंमें
पहले पहल बुद्धदंत स्थापित हुआ। वहाँसे यह पिपली-
के निकट एक मन्दिरमें प्रतिष्ठित किया गया। राजेन्द्र-
पाल उक्त स्थानका नामोर्द्ध करके समय उसे दंतपुर
बतला गये हैं।

फागु सन साइबने मि हनेो बौरपयल दाढाव यको चुवाँरे दे कर प्रमाणित किया है कि प्राचोन द तपुरो नगरो को यवाँको गुगे मगरी है । पुरोमि जगवायदेवका मन्दिर जो बिदावत् न्यानके ऊपर निर्मित है वह फागु सन साइबने मतानुसार बौरपेके दहगोरके बौरा है और मङ्गलपत्ताने मो डोक कमको तरफ है । सुतराँ जगवाय का मन्दिर जो द तमन्दिर है पौर गुगे द तपुरो नगरो है । किन्तु दाढाव य पढ़नेमि जाना जाता है कि जेम नामक बुद्धके एक शिष्यने बुद्धदेवको चित्ताने दाहकालमें एक द त स पक्ष किया । उन्मि वह द त कनिहराज ब्रह्मदत्तको दे दिया । ब्रह्मदत्तने उम द तके ऊपर एक मन्दिर बनवावा त्रिभुजा मीतरो भाग मोनेमि मङ्गवा दिया था । ब्रह्मदत्तने मन्दिरका निर्माण किया दहगोरका नहीं । ब्रह्मदत्तके म गने १००मि १८० ई०के समकालमें गुहगिब नामक एक राजा हुए । गुहगिब ब्रह्मचरम को खेठता श्रीकार करते थे । वे ब्राह्मणके शिष्य तथा ब्रह्मा विष्णु विवादिके पूजक थे । एक दिन राजधानी दंतपुरमें दंतोच्चक लेख से सुन्य हो गये और बौद्ध बन गये । इस पर ब्राह्मणयोग बहुत विगड़ें पौर लक्ष्मिने पाटलीपुत्रक राजा पाण्डु राजको यह समाचार बहना मीत्रा । पाण्डु राजने जब सुना कि लनके पक्षीमन्य राजा मि दूसरा बम पबनमन्य कर लिया है, तब लक्ष्मिने कन्हे बौद्ध कर लनिक लिखे जैनन्य नामक जिनो सामन्त राजा को दनबनके साथ मीत्रा । जैनन्य द तपुर जाकर द त मन्दिरादि देव सुन्य हो गये और लनेो ममय बौद्ध बन गये । किन्तु पाण्डु राजका ध्यादेव निमने लक्ष्मण न हो नके । इस कारण युद्धमें राजा गुहगिबको पराजत पौर बन्दो कर दंतपुरके द त मो सार ले वे पाटलीपुत्र पहुच गये ।

बुद्ध लने पाटलीपुत्रमें पानेसे ही राज्मने पनेक प्रकारका धारण्य बटनाए होने लयो । पाण्डु राज पाप मो बड़े विक्रियत हो गए । इस पर ब्राह्मणसोम मारा कथके सर्वभ्यादुत्तल पौर पम दल पबनारलको बचाए सुना सुना कर राजाको पचाव देने लगे मेडिन फल कुच मो न लिभना । पाण्डु मी धानिर्म बौद्ध को ही गए । लक्ष्मिने द तथा एक मन्दिर मो बनवा दिया ।

पाण्डुके मरने पर गुहगिब दंत से कर पपने राज्यको भेट पाए । औरबार नामके एक राजाने लन पर पाञ्चमथ किया, किन्तु वे ही बुद्धमें मारे गए । औरबार के भगोमि जब राजा हुए, तब वे एक एक करके गुहगिब को तह करने लगे । लक्ष्मणको राजपुत्र द तकुमारने राजा गुहगिबको दम्बा सेममानाये विवाह किया था । गुह गमने विपुत्रको पामाहार देव पपने जामानसे कहा 'यदि बुद्धमि मरौ पञ्च हा व्याय, तो द त से कर तुम मि इसको चला जाना ।' बौरा ही हुआ मो । बुद्धमि गुहगिब मारे गए, राजपुत्र द तकुमार लक्ष्मि के साथ द त ले कर सि इसको चला दिये । राजमि वे ताखनिममि उहरे पौर बहमि जहाज पर चढ़ कर मि इसको रवाना हुए । इस प्रसङ्गने जाना जाता है, कि द तपुर जगवाय पुरो नहीं है । पाहिलान जब १०वीं मतान्धोमि पुरो पाए थे, लम समय पुरो को एक बड़ा बन्दर या पौर इचिय जनेके लिए इमी बन्दरमें जहाज पर चढ़ना होता था । दंतकुमार बौरा न कर मि इन खानेके लिए अब तमोसुक्त गये थे, तब यह खोबार खरना होगा कि लनेके पास जिनो खान पर द तपुर पबलियत था ।

डा० रात्रिन्द्रनाथने पपने उद्योगाये ब्रह्मतत्त्वमें लिखा है, कि सिन्धुनदीपुरके पबनमैत कनेमरसे ६ कोस दक्षिणमें दानन नामका जो खान है वही प्राचीन द तपुर है । यह तमोसुक्तसे २१ कोस दूरमें पड़ता है ।

इस लानके विषयमें जगवायके पहा बहने हैं, कि जगवाय जब दक्षिणको पा रहे थे, तब लक्ष्मिने इमी खान पर द तथावन करके द तथाप्ट पका था । प हा लोग पात्रियोको मन्दिरमें एक बाँदोको उठुवन दिव्य जाया करते हैं ।

पुत्रविद् कलि इमने ज्यपुत्र प्राचोन मूर्तिकरके ११०वें पृष्ठमें रोमकपच्छत छिनेके भारतोय खान मसूरके काननिर्चय करती समय कहा है, कि प्राचीन कलिहराज्य कलिजन पबनारोपके द तगुङ्ग नगर तह विस्तृत था । यह कलिजन प तरौप बलमान कलिजा पबनके निबट पौर द तगुङ्ग नगर छिनेके मतानुसार गङ्गाके मुहानेमें १०४ मोल दूर है । वर्तमान राजमण्डे श्री नगरको दूरो गङ्गा-मुहानेके प्रायः लतनेो ही जेयो ।

सुतरां कनिष्ठसके मतानुसार राजमहेन्द्री हो प्रिगेकयित दंतगुह वा दंतपुर नगर है। प्रमाण देते हुए उर्होनि कहा है, कि वर्तमान कलिङ्गपत्तनसे राजमहेन्द्री वा प्राचीन दंतपुरको दूरी केवल १५ कोस है।

राजमहेन्द्री जो दन्तपुर नहीं है, वह विखकोपके 'कलिङ्ग' शब्दमें देखो।

सेटिनोपुर जिल्लिमें दातन नामका एक परगना है जिसका भूपरिमाण ३८०.३ वर्गमोल है। इसका राजस्व १०८०.६ रु० है। इसमें ३४ जमींदारी मोर ३३० ग्राम लगते हैं। इस परगनाका प्रधान ग्राम दातन है। यहाँ जगन्नाथदेवका एक मन्दिर है। प्रवाद है, कि अभिराम चौधरीके बहुत पहले यहाँके मन्दिरको देवसेवाके लिये परगनेकी आय निर्दिष्ट थी। यहाँ दूमेरे दूमेरे ट्रेण्डोसि वारोक चावल और ईखकी आमतनी होती है।

दन्तपुष्प (सं० क्ली०) दंतद्वय शूलं पुष्पं यस्य । १ कतक फल, निर्मली । २ कुन्द, कुंदका फूल । ३ शङ्खस्य वृक्ष, पीपलका पेड़ ।

दन्तप्रचालन (सं० क्ली०) दंतस्य प्रचालनं । १ दंत-धावन दांत साफ करनेका काम । २ दंतकाष्ठ, दंतुवन, दातुन । दन्तधावन देखो ।

दन्तफल (सं० क्ली०) दंतद्वय शूलं फलं यस्य । १ कतक-फल, निर्मली । २ कपिल्य, कैय ।

दन्तफला (सं० क्ली०) दंतफल-टाप । पिप्पली ।

दन्तभङ्ग (सं० पु०) दंतस्य भङ्गः । दातका टूटना ।

दन्तभाग (सं० पु०) दंतसहितो भागः । गजाय भाग, हाथीके मस्तकके सामनेका भाग जहाँ दांत दिखाई पड़ते हैं ।

दन्तमय (सं० द्वि०) दंतस्य विकार दंत-मयट् । १ दंत निमित्त, दांतका बना हुआ । २ दंतस्वरूप, दांतके जैसा ।

शंख, पशुको सींग, पशुको हड्डियाँ वा दांतके बने हुए द्रव्य ये सब लौमवस्त्र (मनके रेशोंके बने हुए कपड़े) की तरह गोमूल वा जलयुक्त सफेद भरसोंके चूर्णसे विशुद्ध होते हैं ।

दन्तमूल (सं० क्ली०) दंतलग्नं दंतस्य वा मूलं । दंत-

लग्नकोट, दांतकी मूल । इसका पर्याय—पुष्पिका है । दन्तमांस (सं० क्ली०) दंतमंलग्नं मांसं । दंत मंलग्न मांस, मसूदा ।

दन्तमूल (सं० क्ली०) दंतस्य मूलं । १ दंतका मूल, दांतको जड़ । २ दन्तरोगभेद, दांतका एक रोग ।

दन्तरोग देखो ।

दन्तमूलिका (सं० क्ली०) दंतद्वयशूलं मूलं यस्याः कप्, टापि अमश्वत्वं । दंतोत्थक, जमालगोटिका पेड़ ।

दन्तमूलीय (सं० पु०) दंतमूलं भवः कृ । तवगाँदि, ये वण दंतमूलसे उच्चारण किये जाते हैं, इसीसे इनका नाम दंतमूलीय पड़ा है ।

दन्तरञ्जन (सं० क्ली०) कागोप, कपोप ।

दन्तराग (सं० पु०) दन्तस्य रोगः इत्तु । सु परागांत-गत दन्तमूल सन्वयय रोगभेद, दन्तपोड़ा, दांतका दर्द । इसका विषय सुश्रुत, भावप्रकाश आदि वैद्यक ग्रन्थोंमें इस प्रकार लिखा है—

दन्तरोग—शीताद, दन्तपुष्पटक दन्तवैष्टक, शीपोर, महाशीपोर, परिदर, उपकुग, दन्तवैद्य, अधिमांस और ५ प्रकारको नाडी ये पन्द्रह प्रकारके रोग दांतोंको जड़में हुआ करते हैं । दन्तमूलमें अकस्मात् दुर्गन्धयुक्त कृण्वर्ण और क्षिन्न शोणित जव घोड़ा थोड़ा करक निकलता है और जव दांतका मांस शोणं हो पक कर गिरने लगता है, तब उसे शीताद नामक रोग कहते हैं । यह रोग कफ और शोणितसे उत्पन्न होता है ।

दन्तपुष्पटक—दो या तीन दन्तमूलोंमें जव अत्यन्त वेदना होती है और सूजन पड़ जाती है, तब उसे दन्त-पुष्पटक रोग कहते हैं । इसको भी उत्पत्ति कफ और रक्तसे है ।

दन्तवैष्टक—दंतमूलसे पोप और शोणितके निकलने और उससे दंत चालित होने अर्थात् हलनेसे दंतवैष्टक रोग होता है । यह रोग दूषित शोणितसे उत्पन्न होता है ।

शीपोर—दंतमें जव सूजन पड़तो, वेदना होती और रक्तस्राव होता है, तब उसे शीपोर रोग कहते हैं ।

महाशीपोर—दंतमूलसे दांतोंके चालित होनेसे, तालु, ओष्ठ और दंतमूलके अर्धदीर्घ होनेसे तथा दंत-

मूलसे मानने पर सुखमें वांछना होनेसे श्वाशी वीर रोग होता है ।

परिदर—द तर्मांशके शीर्षं होनेसे, निद्रोवनके समय पर्याप्त सुख के कति समय निद्राके निवृत्तकेसि परिदररोग होता है । यह रोग पित्त रक्त वीर कषयकर्तृक उत्पन्न होता है ।

उपकुश—द तमूलमें त्रब दृष्टं होता है वीर एक कर जब दांत जलने लगते हैं, जोड़ो रगड़ने त्रब शोषित निवृत्तके लगना है, रक्तछायाके बाद जब तमूल सुख जाता है वीर सुखमें दुर्मन्ध पाने लगती है, तब उसे उपकुश रोग कहते हैं । इस रोगकी उत्पत्ति रक्त पित्तके है ।

दन्तद्वेदयं—किसी तरह क्षयित होनेसे जब द त मूलमें ददं भाग म पड़े वीर कष्ट सुख जाय तथा समी दांत जलने लगी, तब उसे द तद्वेदयं कहते हैं । यह रोग किसी प्रकारके धावातसे उत्पन्न होता है । इसमें बाहुकर्तृक क्षामाविक्र दांतिसि पत्रिक दांत निवृत्तके हैं । उन सब दांतिसि निवृत्तके समय बहुत तोर वैदना होती है । बिन्दु उनके निवृत्तके पाने पर पूर्वसे वैदना नहीं रहती, बहुत कुछ कम जाती है ।

पत्रिमांसक—गालके मोतारके शीघ्र मानके दांतिसि जब सुखन होती है वीर ददं भो होता है तथा क्षेत्र मिरने समता है, तब उसे पत्रिमांसक रोग कहते हैं । यह कषयके उत्पन्न होता है ।

दन्तमूलमें पांच प्रकारकी लम्बियां उत्पन्न होती हैं यथा—दाहलन क्षमिद तक, द तद्वेदयं, मन्धनक शर्करा, कषयानिका वीर वजुमोच ।

दानन—त्रिषये दांत निद्रोर्षं होनेसे जंसा ददं होने समता है, उसे दाहलनरोग कहते हैं । इस रोगकी उत्पत्ति वायुके है ।

क्षमिदपत्र—दांताके कषयके द्रिद्रवुक वीर पानित होनेसे उनसे रक्तछाया निवृत्तके वीर पकारक जो पर्याप्त बिना दाहनेके जो कष्ट कष्ट शब्द करनेसे तथा दद मान म पदकेसि क्षमिद तरोग समझा जाता है । यह रोग वायुके उत्पन्न होता है ।

दन्तद्वेदयं—दांत त्रब गौतल वा कषयक्यं वरदाज

कर न मर्ष तब उसे दंतद्वेदयंरोग कहते हैं । इस रोगकी भी उत्पत्ति वायुके है ।

मन्धनक—सुख वीर द तमन्ध होनेसे तथा पक्ष्यत यातना होनेसे मन्धनका रोग समझा जाता है । यह रोग कषय वीर वातसे उत्पन्न होता है ।

द तमन्धर—मनमचित्त जो कर शर्कराको तरक कठिन हो जानेसे दांतिसि सुखकी क्षमिद होती है । इसीको द तमन्धर कहते हैं । इस द तमन्धरके साथ जब द तमूलका मांस मोषे सुख जाता है, तब उसे कषयानिका कहते हैं । इस रोगमें द तमन्ध री जाते हैं । शोषितमिथित पित्तसे द तमोग हो कर श्लाम वा मोल बनने हो जानेसे श्लामद तरोग समझा जाता है । वायु कर्तृक उत्पन्न होने पर बहुत जब श्मिदमिथित हो जाता है, तब उसे दन्तमोच कहते हैं । इस रोगमें पदित्त वायु का सघन वेगना जाता है । (क्षया हुक्केपनि)

द तमोगकी विधिशा—शोताद नामक रोगमें रक्तको साथ कर सरसी विपक्षा वीर मोषा इनके क्षयकी रसाक्षरमें मिथा कर कुम्हो करनी चाहिये । त्रियङ्गु, विपक्षा वीर मोषा इनके पूर्वका शिप तथा बहिसमृत् उत्पन्न, पक्ष वीर विपक्षाक क्षायाका नस क्षमा चाहिये । शिरोविचरण, मन्ध वीर शिष्य मोषल मो इनमें शिरीष वितकर है । दन्तद्वेदयमें शोष रक्तमन्ध, बहिसमृत्, वीर नाया इन सबका पूर्व मन्ध, दन्त वीर शर्कराके क दोषसे कषय, म्मु रक्षा क्षाम बना कर उससे कुम्हो करती हैं । शोषोरोगमें रक्तमोचय कषय शोष, मोषा, रसाक्षर वीर मन्धको एक साथ मिथा कर उनका शिप समता है वीर यद्रुम्भुरके क्षायाको कुम्हो करती हैं । परिदर रोगमें शोताद रोगके क्षया प्रतिकार करना होता है । द तमोचय रोगमें वमन, विचरण वीर शिरो विचरण करके क्षायाक म्भुर या मोषिषाके पत्रिसि शोषितको शान्ति करनी चाहिये । पीक्षे मन्ध वीर त्रिकटुकी मन्धके मयोमने मन्धन करना चाहिये । पोष, भरमें, शीत वीर निद्रुनके पन्न इन सबको जल में सिद्ध कर कुछ कषयक्यमें भी कुम्हो करनी चाहिये । शीतकके माय दोषी पाक कर कुम्हो वीर मसका प्रयोग करना भी वितकर है । द तद्वेदयं रोगमें श्लाम दाह

दंतमूल संशोधन करके चारप्रयोग पूर्वक शोतन क्रिया करनी चाहिये। ज्ञानदन्तके उत्पन्न होने पर उन्हें उद्घृतन करके अग्निका प्रयोग करना चाहिये। दंतमूलमें यदि अधिक मांसरोग हो गया हो, तो उसे काट कर वच, पीपर, पारा, सोहागा और यवचार इनके चूर्ण को मधुके साथ प्रयोग करना अच्छा है। पोछे मधुके साथ पोपरके काशको कुसा करनेको लिखा है। पटोल, विफला और निम्ब इन कसैले पदार्थोंसे दंतमूलका माफ करना, गिरोविरेचन तथा धूमविरेचन लेना हितकर है।

दंतनाशकी विक्रिया—जिस दंतमूलमें नालो उत्पन्न हुई हो, उस दंतको निकाल फेंकना चाहिये। शस्त्र द्वारा मांस काट कर चार वा अग्नि हाग शोधन करना चाहिये। नालीरोगमें दांतके नहीं निकालनेसे हनुपरकी हड्डो भेद कर नालो उत्पन्न हो जातो है। अन्व एव नालीरोगमें दंत वा भग्नाविषकी अलग कर देना उचित है।

जिस दंतमूलका वन्धन अस्थिर रहता है, उसमें यदि दंतमूल निकले, तो उसे निकाल फेंकना उचित नहीं है। उसके उखाड़नेसे लेह्र अधिक निकलेगा और उससे अन्धता वा अदित नामक वायुरोग आदि कठिनने कठिन रोग उत्पन्न हो जायेंगे। यदि दात हिलते हैं, तो जातो पुष्पका पेड़, मदन, स्वादुकण्टक और खदिर इनके कायमें दंतमूल माफ करना चाहिये। दंतमूलमें नालाके उत्पन्न होनेसे नालोका पथ काट डालना चाहिये और तब जातो, मदन, कटुक, स्वादुकण्टक, खदिर, यष्टिमधु, रोध्र और मञ्जिष्ठा, इनके कषायमें तैलको पाक करके शोधनार्थ नालोके स्थानमें इसका प्रयोग करना चाहिये।

दंतदुर्गरीगमें स्नेह (घृत वा तैल) वा त्रैहृत घृत, वातघ्न द्रव्यके काथको कुसाका प्रयोग प्रशस्त है। स्नेह द्रव्यका धूम वा नस्य अथवा क्षिग्ध द्रव्यका भोजन भी हितकर है। मांसरस, यवागु, दुग्ध, सत्तानिका, घृत, गिरोवस्ति और वातघ्न अन्यान्य प्रतिकार भी हितकर हैं। दंतशर्करारोगमें जिससे दंतमूल आहत न हो। इस प्रकारसे शस्त्रपात करके शर्कराको निकाल

फेंकना चाहिये। दंतदुर्गरीगमें जो सब प्रतिकार वतलाये गये हैं, वही इम रोगमें भी करने होते हैं। कपालिका रोग अत्यंत कष्टसाध्य होने पर भी पूर्वोक्त प्रतिकार उसके लिये हितकर है। क्षमिदन्तरोगमें जिससे दांत इनने न पावे, इस प्रकारसे स्वेटका प्रयोग करके रसरत्नाटिको निकाल देना चाहिए। पोछे वातघ्न अथ पाउन और क्षेप गण्डू तथा भद्रद्राव्यादिगणम्य और वर्षाभू इन दो द्रव्योंका लेप देनेका विधान है। हिलने वा टांताकी उखाड़ कर दंतमूलके गट्टे को चार वा अग्निमें दग्ध करना चाहिये। बादमें क्षिटारो, यष्टिमधु, गृह्णाटक और कसेरु इस सबके सहयोगमें दग्धुर्न दूधमें तैल पाक करके नमका प्रयोग करना चाहिये। हनुमीच रोगमें अदित नामक वायुरोगके जैसा प्रतिकार करना होता है। अस्तफल और शोतन जनसे दंतधावन तथा अत्यंत कठिन द्रव्यभक्षण दंतरोगके लिये हितजनक नहीं है। (सुश्रुत सुप्रयोगनि०)

भावप्रकाशमें इसका विवरण इस प्रकार लिखा है—
नागरसोधा, हरीतकी, त्रिकटु, विडङ्ग और निम्ब पत्र इन्हें गोमुत्र द्वारा पोस कर गोला बनाते हैं। पोछे उन गोमियोंको धूपमें सुखा लेते हैं। प्रतिदिन एक गोली सुंघमें रख कर रातको घटि सो जाय तो उससे निश्चय ही चलितदंत दृढ़ हो जाते हैं।

तैल वा घृत ५४ सेर, कल्काय दुरालभा, खदिर काष्ठ, यष्टिखदिर, जामुनका छिलका, ग्रामका छिलका, यष्टिमधु और नीलोत्पल प्रत्येक एक एक छटांक, काथाथ नीलभिण्डो (नीलो कठमर्या) माटे दारुह सेर, जल १॥४ सेर, शिप ६ सेर। इस तैल वा घृतको पाक कर सुंघमें रखनेसे दंतरोग नष्ट होता है।

कण्डोरुत—संश्रित वायुकर्टक दंतसमूह लंघ धीरे धीरे भयानक विकृताकृतिका हो जाती है, तब उसे करालदंत कहते हैं। प्रायः सभी प्रकारके दंतरोगोंमें लाक्षाथतैल उपकारो है। तैल ५४ सेर; कल्के लिए लोह, कटफल, मञ्जिष्ठा, पञ्जकेशर, पञ्जकाष्ठ, रक्तचन्दन, नीलोत्पल और यष्टिमधु प्रत्येक एक एक पल; काथके लिये उक्त मिश्रित द्रव्य ५२॥, जल १॥४ सेर, शिप १६ सेर, लाक्षारम ५४ सेर और दूध ५४ सेर इस

नेमको पात्र कर मु हमें धारक करनी दान, द त इ व,
द त मो छ, बगनिवा मोगाद पूतवन्न पदवि शो
मुपवे वय्य नट वा कर दंत मन्नूण शो ज ति ई ।

(नव-वच)

दत्तोमो (म० वि०) द त गो गपुठ, त्रिने दंतिका रोम
दुपा हो ।

दत्तमेव (म० वि०) द तान् निपति शोविवाये
निपत्तुन् निपयमाम । द तनेपवद्वत् शोविवा
मुन्न शो द तनेपवने पयना शोविवा चनाता हो ।

दत्तमेव (म० श्लो०) पयविशेष । इमं दारा
दतिशो अद्वैतं पान मनुके चार कर मवाट पादि
निर्गमि जाति है त्रिने दंतिका पांदा पूर हो जाता
है । द तमकं वा नामक रानमें दत्त पयको पावय्यवता
होती है । द मका एक बिना धारदार चोर शोकोना
होता है चोरो दूधरा गूढ नीला दुपा रहता है ।

दत्तव (म० पु०) मुपविशेष । इति दत्तु शोविवा
गर्भं चोर उद्वेगमात्रं पानमत्र मया पदक विद्या या ।
वे अद्वैत दंतिकं दारा धि चोर पयत प्रथम पानाका
तया द तवन्न नामके त्रिने धि । (द्विपम १७ म०)

इत्यने धारकामें रहने समय दत्त मारा या । नाग०)
धे दिद्वानके मारि धि । दिद्वानक मारे जाल पर
दतिहा नामक पाममें इत्यने अद्वैतमें पयना मदाने
दत्तका मात्र न धार विद्या से तामें यह दत्तम० च चो
कपदुगमें दिद्वारकदिपु होय हुआ था ।

(श्रीगुणारवभो० वृ०)

दत्तवृ (म० वि०) द त विपदि, द त मनुप ततो
मय्य वा । द त विदित त्रिने दति हा ।

दत्तव (म० पु०) द ति, दया ।

दत्तव (म० श्लो०) द तव दत्तमिष । द ताराव
वर्द्धाव मानिने दंतिका अद्वैत उपरवा मान,
अनुपा ।

दत्तव (म० श्लो०) द तनिमित्त वति । पददत्तव
अनुपा एव उदारवा इति । शि० दवा ।

दत्तव (म० श्लो०) द तान् वया पाव्यद्वेगान् ।
५ प, पात्र ।

दत्तव (म० पु०) द तव वाव वद्विष वाव
वद्विष । ५ प, पात्र ।

दत्तवित (म० पु०) द तव्य विवत । द तपात,
दंतिका पावता ।

दत्तवित (म० पु०) द त गो मने दंतिका एव रोम ।
दत्तरोम देको ।

दत्तवोत्र (म० पु०) द ताराव शोजाति यन्व । दत्तिम
पगार ।

दत्तवोवा (म० श्लो०) एव पधारको शोपा शो दंतिके
मया कर वराया ज्ञाना है ।

दत्तवदत्ता (म० श्लो०) द तव्य विदता द तनु । द तप्यवा
दंतिका दट ।

दत्तवद्व (म० पु०) द त गो मने द तिका एव रोम ।
पात्रं वनु । १ द तवद्वक मनुशा । वरतीम देको ।

दत्तवद्व (म० पु०) द त गो मने द, दंतिका एव रोम ।
दत्तरोम देको ।

दत्तवम (म० श्लो०) द तव्य वयम । द तनाय,
दंतिका वरवा होना ।

दत्तवद्व (म० पु०) दत्तुवाव पयामेव चार पात्रका
एव पात्रार यव को पयति पात्राका होता है ।

दत्तवद्व (म० पु०) द तनु मद्र दव ग्यानिप्रनकावात् ।
न तमद्र ।

दत्तवद्व (म० पु०) द तनु मद्र दव । (अलोः शोरो
नावु । २ कथय, कोप । ३ अमरद्वक, वमरव । ४
न गाद्वक मारद्वी । ५ वय, वयार्थ । त्रिने पामिने
मद्वैतं वारव दंत मुकमें हो जाय है ही दंतमद्र है ।

दत्तवद्व (म० श्लो०) द तनु मद्र । १ पात्रोः वम
लोको वरामातिपय । २ दत्तवित्वा, वृक वट ।

दत्तवद्व (म० श्लो०) द तव्य मद्र विव । द त गो म
विमिय दंतिका एव राम का मोन कम चर वेक जाति
ने धारव होता है ।

त्रिने दंतिके मोन पानका तवव मम ज्ञानो है
वनाको द तमकं वा अद्वैत है । इममें दंतिक वर मुप
जाति रहने है । गोलावक टा (गोला) का अद्व
पात्र कर अद्वैत काव वन जाल दिमलक पामिने यव
रोम दूव ही जाला है ।

दत्तव (म० पु०) द तान् मान दव । निप दव,
विवादे इति मं वरानेका व लान म वन विद्या ।

दन्तशिरा (सं० स्त्री०) दंतानां शिरा यत्र । मसूड़ा ।

दन्तशुद्धि (सं० स्त्री०) दंतस्य शुद्धि, द-तत् । दांतकी विशुद्धि, दांतकी सफाई ।

दन्तशूल (सं० पु०) दंतस्य शूलइव, शूलवेदनवद् वेदनादायकत्वात् । दंतवेदना दांत तो गोड़ा ।

दंतगोष देवो ।

दन्तगोफ (सं० पु०) दंतस्य गोफ इव । दंत रोग-निग्रोह, दंतार्बुद, दांतके मसूड़ोंमें होनेवाला एक प्रकारका फोड़ा । इसका पर्याय—दंतशूल, दंतगोफ और द्विजवर्ण है ।

दन्तसंघर्ष (सं० पु०) दंतस्य संघर्षः । दांतोंका घर्षण, दांतसे दांतकी रगड़ । दंत संघर्षण नहीं करना चाहिये, करनेसे अशुभ होता है ।

दन्तहर्ष (सं० पु०) दंतानां हर्षा यस्मात् । दंत रोग विशेष । जिसके दांत शीत और उष्ण सद्य न कर सके उसे दंत रोग हुआ है ऐसा समझना चाहिये । दंत रोग देखो । स्नान करते समय जिसका शरीर अत्यंत पौडित और दंतहर्ष उपस्थित हो नाय उसकी चूचु बहुत निकट समझो जाते हैं ।

दन्तहर्षक (सं० पु०) दंतान् हर्षति ह्यपि च-ण्डुल । जंबोर, जंबोरी नौवू ।

दन्तहर्षण (सं० पु०) दंतान् हर्षयति ह्यपि च-ण्डुल । जंबोर, जंबोरी नौवू ।

दन्ताग्र (सं० स्त्री०) दंतस्य अग्रं । दांतका अगला भाग ।

दन्ताघात (सं० पु०) दंतान् आहति आ-हन-अण् । १ निवृक, नौवू । २ दशनाघात, दांतका आघात ।

दन्ताट (सं० पु०) सुन्तोक्त दंतखादक क्षमिरो-मैद, दांतको जड़ या सन्धिमें पहनेवाले कोड़े । वे रक्तसे उत्पन्न होते और बाल, नाखून तथा दांत खाते हैं ।

दन्तादति (सं० स्त्री०) दंतैश्च दंतैश्च प्रहृत्य प्रहृतं युद्धं इव-समामान्तः पूर्वाणो दोर्षः । परस्पर दंतप्रहार द्वारा प्रहृत युद्ध; एक दूसरेको दांतसे काटनेको लड़ाई ।

दन्ताना - मध्यभारतके पश्चिम मालवा एजिप्सीके अधीन एक सामान्य सर्दारका राज्य । यहांके ठाकुर या सर्दार मिन्धियासे १८०, ५० तनखाह पाते हैं ।

दन्तान्तर (सं० स्त्री०) दंतस्य अंतरं । दांतके मध्य, दांतके बीच ।

मूँहके बाल मुँहमें जानेसे उच्छिष्ट नहीं होते और दन्तमध्यस्थित अन्नादि भी मुँहको उच्छिष्ट नहीं कर सकते ।

दन्तायुध (सं० पु०) दंत एव आयुधं यस्य । शूकर, शूकर ।

दन्तार्बुद (सं० पु० स्त्री०) दंतस्य अर्बुदमिव । दंत रोगमैद, मसूड़ेमें होनेवाला एक प्रकारका फोड़ा । इसका पर्याय—दंतशूल, दंतगोफ और द्विजवर्ण है ।

दन्तानिका (सं० स्त्री०) दंतान् अन्नति पर्याप्नोति अल-यवुन्-द्रापि अतइत्वं । बला, लगाम ।

दन्तान्त्रो (सं० स्त्री०) दंतान् अन्नति अन्न-भण-गौरादि त्वात् डोप् । बला, लगाम ।

दन्तावन (सं० पु०) अतिमायितो दंतो यस्य दंत वल्लव (दंतविलात् सहायां) । ११ ५२।(१२) तनो दोर्वः । हस्तो, हाथी ।

दन्तिका (सं० स्त्री०) दम-तन् गौरा-डीप-स्वार्थे कन् ततो ङम् । दंतो ह्यच, जमालगोटा ।

दन्तिजा (सं० स्त्री०) दंतिका प्रयो-नाधुः । दंतिकाः जमानगोटा ।

दन्तिदन्त (सं० पु०) दंतानां दंतः इ-तत् । हस्ति-दंत, हाथीके दांत ।

दन्तिन् (सं० पु०) प्रशस्तो दन्ती स्तः अस्य दन्त-इनि । हस्ती, हाथी ।

दन्तिनो (सं० स्त्री०) दन्तस्तदाकारोऽस्यस्याः सूले-दन्त-इनि-डोप् । दंतो ह्यच, जमालगोटा ।

दन्तिसूनिका (सं० स्त्री०) दंति गजदंतयुक्तमिव सूल-मस्याः कप्-कापि अतइत्वं । दंतो ह्यच, जमालगोटा ।

दन्ती (सं० स्त्री०) दाम्यचनया दम-तन् ततो गौरादि-त्वात् डोप् । (हस्तिमिणवेति । उण् ३।८६) स्वनाम-ख्यात ह्यच, अंडोको जातिका एक पेड़ । (Croton polyondrum or Baliospermum montanum)

इसकी जड़ सूअरके दांतसे होती है । दंतो दो प्रकारको होती है—लघुदंतो और बृहद्दंतो । जिसके पत्ते गुलरके पत्तोंके जैसे होते हैं, वह लघुदंतो और जिसके

एर इया प जोधिमे होते बह इइर्नो है। पर्याप्त—
 मोसा म्भेनपय्या निकुम्भो, नामस्कोता, इ तिने, उप-
 चित्ता मश, बचा, ईचने धनुकुका, निम्बका चक्र
 ए तो, विद्यका, महपुत्र परप्यका, तरबो, पररु
 पत्रिका, पनुदेवतो, विगोचनो कुम्भो उरुम्बरदना,
 निकुम्भदमिका, प्रकक पर्षी पोर उरुम्बरपरी। (अम,
 रात्रि०) इमका गुण—कट, उच्च गुण, पाम उरुदोय,
 पर्ग, मच, परमरी पोर शकनायक है। (रात्रस्तम)
 सहु द तोषि कन महु रर, महु र, विपाक, शोतबीध,
 मच और मूलनिःसारक तथा गरदोय, शोच और कफ
 नागक है। डीने द तो सारक कट, रर, कट, विपाक,
 पम्पिदोयक, तोष्, उष्णोर्म तथा शुदाहु, परमरो,
 गुण, पर्ग, कट, कुष्ठ, बिहाइ, पिता, ररुदोय, कफ,
 शोच, उरु और कृमिनायक है। (नायक) अर्त्त-
 मान यूरोपोय चिकित्सार्थी मने यह बहुत विरिचक
 मानो मई है। इमने बीज पत्रिक मात्रामे देमि
 विपका काम करते है। कहीं कहीं अयपानके बढने
 इ तोषि कोक म्बवृत्त होती है। इसके रसमे कोडा मर
 जाता है।

इन्दोपक (स० खो०) १ विपयो। २ द तोषे रोज।
 इन्दोपकममाकृति (स० पु०) विष्ठाउच, पोष्ठा।
 इन्दोपोज (स० खो०) अयानकोक, कामाकगोटेका बीज।
 इन्दोपरोतको (स० खो०) शुक्रमाचिचारबी दीवक-
 मंद। इसको प्रयुक्त प्रकाको रस प्रकार है—प्रपयोइमो
 बह इरोतबी २२, द तोमूल २१ पन कम १३ बेर,
 मिय ८ बेर। इस कावत्रकर्म २१ पन पुराना मुक
 कास कर रने जान सेते है। बाद रमने साध पूर्वोक्त
 २१ इरोतको दे कर पाक करत है। पासक पाकमें
 निपोषका चूर् ४ पन, सिमतीन ३ पन, पोपन चूर् ३
 ३ तोना पोर को ३ चूर् ३ तोना कास कर थकड़ी तरह
 करत है पोर पोषि उत्तार सेते है। मीतन रीने पर
 रसमें महु ३ पन, इरकोमी, तिबपत्ता इलागको पोर
 नामदेशर प्रर्षक २ तोसा सिमा सेते है। बिबनकी
 माका २ तोसा पोर एक इरोतका है। इसने गुण, डोडा
 पोर मोक पादि पनेक प्रकारके रोग जाती रहती है।

(भैरवर० प्रमाधि०)

इन्दुर (स० ति) उकता दता सन्मप्य दत-करच
 (र० उरुव इरव्। पा ५।२।१०६) १ उकतदत, जिसके
 इति पायी निकुम्भि हो द तुका, दान्। सुपरको मारनेसे
 पूर्व इ अर्षमें इन्दुर को कर उरुवदक करता है। (पापान)
 मसुद्रिकके मतमें द तुका मनुष्य कदाचित् हो मुर्क
 होता है। (पु०) २ इष्टी, जायो। ३ मूकर, सुपर।
 इन्दुरक (स० पु०) दिग्मंद एक देम आ पूव दिगामि
 पनकित माना गया है। (हरत्थ० १०११)
 इन्दुरक (स० पु०) इन्दुर उकतानतच्छेदो बष्प।
 बीजपुर, विजोरा मोहू।
 इन्दुर—सधप्रदेशके इन्दुर रात्रिके पन्तमंत एक
 पाम। पचा० १५ १६ ७० पोर देमा० ८१ २३०
 १० पूंके मय दहानि पोर क्कानि नदिमेथि सडम
 खान पर तथा भेका दिनाक नामक पहाडके पश्चिममें
 पनकित है। यहां दंत्यरी नामक कायोका मसिह
 मन्दिर है।
 इन्दोष्ण (स० खो०) द तीन उष्ण्ट। दत इरा
 उष्ण्ट, मच भी दांतेमे कूठा किया गया हो।
 इन्दोष्णका (स० खो०) अंत जातीपुत्र उच, सकिद
 आयकनका पीक।
 इन्दोपादन (स० खो०) दंतप उतपादन। दांतका
 उत्पादन, दांतका उत्पादन।
 इन्दोडेद (स० पु०) इतल उईद। द तोदगम
 दांतका निकसना।
 इन्दोपुषिच (स० पु०) इतल उनुषका शोष्पादि
 इति क्। (अनपिने। पा ३।२।११३) पाच
 प्रकविरीय/एक प्रकारके सन्धाही। ये उकनी पादिने
 कूटा कृपा पच नहीं पाते, दांत द्वारा बाल पादिसे
 बाबल निष्काक कर जाती है। ये या तो पन जाती है
 या जिसके सचित पनाइके दाने ये कोग पम्पिक बीज
 नहीं जाती।
 इन्दोष् (स० खो०) द ताथ कोथो च तिया समाहार।
 दत पोर पोष्का समाहार, दांत पोर कोठ।
 इन्दोठर (स० पु) इन्दोठे मय प्रतीरावयमत्वात्
 यत्। दत कोठ द्वारा उचारकोय बर्ष बह बर्ष जिसका
 उचारक दांत पोर बीठने हो। पसा बर्ष 'व' है।

दन्त्य (स० त्रि०) दंतियु भवः दंतं यत् । (शरीरावयव-
पर्यायश्च । पा ४।३।५५) १ दंतोद्भव, जिसका उच्चारण
दांतकी सहायतासे ही तवर्ग । २ दंतसम्बन्धी ।
३ दांतिका हितकारो ।

दन्वर्ण (स० पु०) दंतोद्भव वर्ण, दंत द्वारा उच्चारित
वर्ण, त, थ, द, ध, न, स और व है ।

दन्तग्र (स० पु०) दंत, दांत ।

दन्त्यशुक (स० पु०) गर्हितं दशति दन्त्य यद् शुकः । जय
जयदशा दहः । पा ३।२।१६६) १ सप, साप । २ राक्षस ।

(त्रि०) ३ हिंस्र, हिंसा करनेवाला ।

दन्त्यमान (स० त्रि०) दय, दहकता हुआ ।

दन्त्यमाण (स० त्रि०) दम-यद् गानच् । कुटिल गति-
युक्त, टेढ़ी चालवाला ।

दन् (हि० पु०) तोपभादिके कूटनेका दन् शब्द ।

दपट (हि० स्त्री०) घुड़की, डपट, डपेट ।

दपटना (हि० क्रि०) डाटना, भिडकना, घुलफना ।

दपु (हि० पु०) दप, अक्षकार, गिरी ।

दपेट (हि० स्त्री०) दपट देखो ।

दपेटना (हि० क्रि०) दपटना देखो ।

दफतर (हि० पु०) दफ्तर देखो ।

दफतरी (हि० पु०) दफ्तरी देखो ।

दफतरोखाना (हि० पु०) दफ्तरीखाना देखो ।

दफतो (अ० स्त्री०) गच्चा, कुट, वसली ।

दफन (अ० पु०) १ किसी चीजकी जमीनमें गाड़नेकी
क्रिया । २ मुरटेकी जमीनमें गाड़नेकी क्रिया ।

दफनाना (हि० क्रि०) जमीनमें दफाना, गाड़ना ।

दफरा (हि० पु०) नावके दोनों और लटकता हुआ
काठका टुकड़ा । दूसरो नावकी टक्करसे बचनेके लिये
यह लटकया जाता है, हींस ।

दफराना (हि० क्रि०) १ नावकी आपसमें टक्कर लड़नेसे
बचाना । २ पाल खड़ा करना । ३ रक्षा करना, बचाना ।

दफला—आसामके अन्तर्गत दरङ्ग और लक्ष्मीपुर जिलेको
एक असभ्य जाति। ये लोग साधारणतः लक्ष्मीपुरके निक-
टस्थ पर्वतों पर वास करते हैं । १८७२ ई०में दरङ्गके
अन्तर्गत आमतोला नामके स्थानके अधिवासी दफला-
गण जब पार्वत्य दफलाओंसे आक्रान्त हुए थे, तब दृष्टि

गवर्मण्टने उन्हें दमन, वरनेके लिये पुलिस भेजा ।
पुलिसने दफलाके वामस्थान पर धावा मारा, किन्तु कोई
फल न निकला । घाट १८७४।७५ ई०में दृष्टिचारवन्द
एक दूभरा मैन्डल पट्टा और उन्हींके बन्दो दफ-
लाओंका उदर किया ।

दफलापुर—मत्तारापी पोलिटिकल एजेन्सिके अधीन एक
जागीर । यह अक्षा० १०° ०' ३०" और देशा० ७५° ७' ५०"में
अवस्थित है । यह यथायत्न जाटराज्यका एक अंग है ।
दफलापुर ग्रामके पेटेल इस जागीरके स्थापनकर्त्ता हैं ।
इसो ग्रामके नामानुसार उनका एक नाम दफला पहा-
या । १८२० ई०में अङ्गरेजोंने वर्तमान जाटपतिके पूर्व
पुरवर्तिके नाथ एक सन्धि यो । उसी सन्धिके अनुसार जाट-
पतिने अपने राज्यका स्थायी अधिकार पाया । १८७२
ई०में जाटपतिका ऋणशोधके लिये सत्तारके राजाने
इस जाट राज्यकी अपने राज्यमें मिला लिया । श्रीर ऋण
शोध ही जाने पर १८४१ ई०में वह फिर उन्हें लौटा
दिया । इस जाट जागीरके आर्थिक विषयको ध्येयस्था
कर देनेके लिये अङ्गरेजोंने कई बार इसके ग्राहक-
कार्यमें हस्तक्षेप किया और बहुत तरहके अत्याचार ही
जानेसे १८७४ ई०में जाट राज्याधिपतिको औरसे उन्हें
अपने हाथमें राज्यका भार ले लिया । आनेसे कुछ पक्षने
लक्ष्मीवाड़े दफला नामको एक विधवा दफलापुरकी
शासनकर्त्री थीं ।

दफलापुर राज्यमें ६ पृथक् पृथक् ग्राम लगते हैं ।
इसका क्षेत्रफल ८४ वर्ग मील है । राजस्व प्रायः ८०१०,
रु० है । यहाँके प्रधान उत्पन्न द्रव्य बाजरा, ज्वार, रुई
और गेहूँ है । यहाँ तीन विद्यालय हैं ।

दफा (अ० स्त्री०) १ वार, वीर । २ किसी कानूनी किताब-
का एक अंश जिसमें किसी एक अपराधके सम्बन्धमें
व्यवस्था हो, धारा । (त्रि०) ३ तिरस्कृत, हटाया हुआ,
दूर किया हुआ ।

दफादार (अ० पु०) फौजके कर्मचारी जिसके अधीन
कुछ सिपाही हों ।

दफादारी (हि० स्त्री०) १ दफादारका पद । २ दफा-
दारका काम ।

दफीना (अ० पु०) गढ़ा हुआ धन वा खजाना ।

दर (पा० पु०) १ आर्वाणव, पाकिम । २ मरिचक पत्र
 मन्थो बौद्धो बडो । ३ विप्लव हातांत, पिडा ।
 दक्ष तरो (पा० पु०) १ बिडो दक्ष तरका कर्म चारो ।
 इसका मुख्य काम काम्य प्रादि बुद्धत करना और रति
 एतौ प्रादि पर रूप खोजना है । २ बह जो किताबीको
 क्रिप्ट बांधता हो मित्रमात्र, क्रिप्टव द ।
 दक्ष तरोबाना (पा० पु०) किताबी को क्रिप्ट बांधनेका
 स्थान ।
 दक्ष (दि० वि०) प्रभावशालो दबावबाना ।
 दक्ष (दि० श्लो०) १ त्रिपुत्रकेका भाव । २ विबुद्धन ।
 ३ प्रातु प्रादिको न बाहरनेके निचे पोटेनेकी क्रिया ।
 दक्षकनर (दि० पु०) दक्षका या तार बनानेवाला ।
 दक्षकना (दि० क्रि०) १ डरक मारे जिसो तग स्थानमें
 द्विपना । २ सुकना द्विपना । ३ बिडी बतुको बडाना
 या थोड़ा करना पोटेना । ४ डाटना, डपटना ।
 दक्षकनो (दि० श्लो०) मानोका बह भाय त्रिपके हो कर
 उनसे क्या प्रथिय ज्ञोता है ।
 दक्षकबाना (दि० क्रि०) जिसो दूरनेको दक्षकानेमें
 लयाना ।
 दक्षका (दि० पु०) कामदानका सुनइका विपदा तार ।
 दक्षकाना (दि० क्रि०) १ शिपाना, डाटना । २ डाटना,
 डपटना ।
 दक्षको (दि० श्लो०) १ महोका एक बरतन । इसका
 पात्रार सुराही सा होना है । इनमें पानो भर कर चरवाह
 और बिमान घेत पर से बाधा करते हैं । २ दक्षकने
 का द्विपनेका भाव ।
 दक्षकेका समसा (पा० पु०) चमकीला समसा ।
 दक्षकेया (दि० पु०) बह जो सोने चांदीके तारो को पोटे
 कर बडाना और थोड़ा करता है, दक्षकगर ।
 दक्षक (दि० पु०) १ बह जो डाल बनाता हो । २ बह
 जो चमकेके छुकी बनाता हो ।
 दक्षक बुमड़ (दि० वि०) कायर, डरती ब ।
 दक्षदबा (पा० पु०) प्रताप, वीरहाव ।
 दक्षना (दि० क्रि०) १ बोधके लोके बाना । २ हाव या
 प शिमें पाना । ३ ऐना चमकाने या काम्य त्रिसमें सुक
 बन न चक सके । ४ पसुचित रूपके बिधोको थोड़ा दूरनेके

पबिचारमें बसा जाना । ५ यान्त रइना । ६ जिसो
 बातका एक हो जगह फिर रइना, जिसो बातका जहाँ
 का तहाँ रइ जाना । ७ चपनी बगइ पर डटा न रइना
 पोहि डटना । ८ जिसोके प्रभाव या दबावमें पा कर
 विषय होना । ९ चकल न खचना । १० स खोप
 करना । ११ मन्द पडना, थोसा पडना ।
 दक्षमो (दि० पु०) हिमासय पहाड़ पर मिशनेबाना
 एक प्रकारका बकरा ।
 दक्षमान—राजपुतानेके मुन्दो राज्यका एक गहर । यह
 पचा० २३ ३३' ४०" और देगा० ७३ ३ ५०'के मज्ज मुन्दो
 गहरके ११ मील उत्तर मज्ज नदोके बिनारे पवसित
 है । लोखन दगा ११३६ कि लामग है । १७५३ ई०में
 यहाँ महाराज राजा समिदसि इके पचीन चारगजपूतो
 के माघ जयपुरके महाराज रैखरोमि इको सेनाका
 मुसुच स घाम बुधा बा । बुधमें महाराजको ही ज्ञोत
 हुई ।
 दक्षमाला (दि० क्रि०) बिडी दूरनेकी दबावनेमें लयाना ।
 दक्षमाली—पञ्जाबके हिसर जिलेके पलतम मिरसा तह
 शीनको एक सपतइसोम । मूरपरिमाण ३४८ बय मील है ।
 इसमें ५८ घाम लगते हैं ।
 दक्षम (दि० पु०) बह मान जो जहाजो मोदाममें रइता
 है, बहाव परको रसद तथा दूरप सामान ।
 दक्षार (दि० श्लो०) शौदबानेका काम ।
 दक्षक (दि० वि०) १ दबानेबाना । २ त्रिसका
 घमका माय विबले मायके पबिच बोधस हो, बधू ।
 दक्षाना (दि० क्रि०) १ मारके लोके रखना । २ जिसो
 पहाव पर बहुत खोर लयाना । ३ बिडोको घपहाव
 पबकामिं से पाना । ४ अन्दोके घानी बड़ कर बिडी
 चोत्रको पकड़ लेना । ५ हैदमालीके बिडीकी चोत्र
 बन त करना । ६ यान्त करना दमन करना । ७ चपनी
 स्थानसे पोहि डटना । ८ बरतोके लोके गाडना, टपन
 करना । ९ खोर कास कर विषय करना । १० दूरनेके
 मुन्थे या मज्जका प्रभाव न होने देना । ११ बिडी
 बातको खैलने न देना ।
 दक्षबा (दि० पु०) एक प्रकारका बहुत लम्बा थोड़ा
 सन्दूब जो काठका बना होता है । यह बुधको एक

मामग्री है। इसमें कुछ आदमियों को बिठा कर गुग रूप-
में सुरंग खोदने अथवा और कोई उपद्रव करनेके
लिये दुग्मनके किलेमें उतार देते हैं।

दवाव (हिं० पु०) १ दवानेकी क्रिया, चाप। २ दवानेका
भाव। ३ प्रताप, रोव।

दवित (हिं० पु०) हलवाइयोंका एक औजार। यह काठ-
का बना होता है और टेम्पनेमें खुरपो या खुरचनी मा-
नगता है। इसमें घे बेंसन आदि भूतते, खीवा बनाने
या चीनीकी चागनी आदि मिलाते हैं।

दवीज (फा० वि०) मोटे टलका, गाटा, मंजीन।

दवीर (फा० पु०) १ वह जो लिखनेका काम करता हो,
सुंयी। २ महाराज द्राघणोंकी एक उपाधि।

दव्वा (हिं० पु०) १ जहाजका पिछला भाग, पिच्छल।
२ पतवार लगी रहनेका वही नावका पिछला भाग। ३
जहाजका कमरा।

दवेला (हिं० वि०) १ जिस पर रोव पड़ा हो, दवा
हुआ। २ जल्दी जल्दी होनेवाला।

दवैल (हिं० वि०) १ जो किसीके प्रभाव या दवावमें
पड़ा हो। २ जो बहुत डरता हो, दवजू।

दवोचना (हिं० क्रि०) १ किसीको अकस्मात् पकड़ कर
दवा लेना, धर दवाना। २ छिपाना।

दवोम (हिं० स्त्री०) चमकोला पत्थर।

दवोता (हिं० पु०) लकड़ीका एक कुंडा। यह पानोमें
भिगोए हुए नोलके डंठलों आदिकी दवानेके लिए
ऊपरसे रख दिया जाता है।

दवीनी (हिं० स्त्री०) १ बरतनों पर फूल पत्तों आदि
उभारनेका औजार जो लोहेका बना होता है। २
जुलाहोंको वह लकड़ी जो भजनीके ऊपरको और
लगी रहती है।

दभोई (दर्भवती) बंबई प्रदेशके अन्तर्गत गायकवाड
राज्यका एक नगर। यह अक्षा० २०° १०' ३०" और
देशा० ७३° ७८' ००", बहोदा राज्यसे १५ मील दक्षिण-
पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १४५३८ है।
यहां अष्टम हाउस, पब्लिकीका डाकबंगला, रेलवेस्टेशन,
श्रीपहालय, कारागार और बहुतसे विद्यालय हैं। इनके
सिवा रुईसे वीज बाहर निकालनेकी एक कल भी है।

यज्ञो ११वीं गताष्टोका प्रसिद्ध दर्भवती नगर मानी
जाता है।

दभ्य (सं० त्रि०) दभे अच् ततो यत्। अन्तर्ग, मारनेयोग्य,
कत्तन करने काविल।

दभ्र (सं० त्रि०) दभ्नोतीति दन्भ-रक्। (स्पायित्वांति)
उत् २।३) १ अन्ध, थोड़ा। २ अन्धयुक्त, जिसमें बहुत
कम ममाता हो। (पु०) ३ समुद्र। (श्रु०) ४ उत्तरदिक्,
उत्तर दिगा।

दभ (सं० पु०) दभ भावे प्रज। १ दग्ध, दमन, मज्जा।
मनुष्योंको दमन करनेके लिये दण्ड का नाम दभ पड़ा
है। दंड दग्धे। इसका पर्याय—दन्ति, दमय और दमन
है। २ वाह्येन्द्रिय निग्रह, इन्द्रियोंको बगमें रखना।
बुरे कामोंमें चित्त को लोटनेका नाम दभ है अर्थात् जिसमें
बुरे कामोंमें चित्त प्रवृत्त न हो या चित्तको किसी कुकर्म-
की ओर झुका देय जिस शक्तिके बलमें वह उस कुकर्म-
की ओरसे मोटाया जाता है उसको दभ कहते हैं।
३ कर्दम, कीचड़। ४ गृह, घर। ५ एक प्राचीन
महर्षिका नाम। (भारत १।२।६।५) ६ मरुत्त-
राजके पुत्र। भाग० ८।२।२८) ७ मरुत्तके पौत्र। ये दुर्गा
को दमन करते थे तथा बहुत बलवान् और तथा दक्षि-
णादि सब प्रकारके मद्युगणोंमें विभूषित थे। इन्हींमें
वभ्रुको कन्या इन्दुमेनाके गर्भमें जन्मग्रहण किया था।
ये नौ वर्ष तक माताके गर्भमें रहे थे। इनके पुरोहितने
समझा था, कि जिसको जननीकी नौ वर्ष तक इस
प्रकार इन्द्रियका दमन करना पड़ा है, वह बालक स्वयं
भी बहुत दमनगोल होगा। इसी कारण पुरोहितने
इनका नाम दभ रखा था। महाराज दमने हृदयपूर्वसे
धनुर्वेद और दैत्यराज ह्युदुभिमें अनेक तरहके अस्त्रादि
सोखे थे। वेद वेदाङ्गके भी ये अच्छे ज्ञाता थे। (मार्क-
ण्डेयपु० १।३३-१३४ अ०) ८ भोम राजाके एक पुत्र जो
दमयन्तीके भाई थे। (भारत ३।५।३।१) ९ विष्णु। १०
बुडका एक नाम।

दभ (फा० पु०) १ श्वास, सांस। २ नशे आदिके लिये
सांसके साथ धूर्ध्रा खोचनेका काम। ३ प्राण, जान,
जो। ४ सांस खीच कर जोरसे बाहर फेंकनेका काम।
५ एक बार सांस लेनेका समय, पल, लहसा। ६

प्राकृतिक । ० जीवनी गति । ८ पक्षीकी एक क्रिया ।
 इसमें किसी भाव पदार्थको बरतनमें रखते पौर उसका
 सु ह वन्द्य करके पाग पर चढ़ा देते हैं । इस प्रकार
 बरतनमें मोतरीको भाफ जो बाहर गरी निश्चलने पाती
 उस पदार्थको पक्षमें बहुत सहायता पहुँचाती है ।
 ८ न मोतरी किसी स्वरका देर तक उच्चारण । १० बोधा,
 हन, परैव । ११ तनवार या बुरो पादिवा बाड़, बार ।
 दम (हि० पु०) एक प्रकारको निकोनी जमावो जो दरी
 बुननेवालीके काममें पाती है । इसमें सवा सवा गज
 की तीन लच्छड़ियाँ एक दूमरोसे न चो रहती हैं । ये
 करपेमें पड़ो रहती पौर उनमें जोती न चो रहती है ।
 यह जोनी घेरके चूहेके बाँध दो जाती है । बुननेके
 समय यह घेरके बल नोके दबाया जाता है ।

दमक (म० लि०) दमयताति दम-विच चतुः । दमन
 कर्ता शासनकारो ।

दमक (हि० स्त्री०) चालि, पसक चमचमाइट ।

दमकना (हि० लि०) चमकना, चमचमाना ।

दमकन-पक्षिसे घडादिकी रसा करनेका एक यन्त्र ।

दमकन दो प्रकारकी होती है एक हाथसे चलाने की
 और दूसरी बायीं दमकसे । नदीमें पृथदाइक निवा
 रके लिए बहुत पहलने ही दमक तदबीरे होती पा रहती
 हैं । ईयात्रकसे दो मो बर्ष पहलने मो घीस पौर रोममें
 इस विषयमें कई एक यन्त्रादि उदाहित पौर प्रच
 लित हैं ।

दिलाल । मुहम्मद पौर हिमी जामा (Hama)
 नामक एक प्रकारके यन्त्रकी कथा उल्लेख कर गये हैं ।
 कितनोसे तो इसे एक प्रकारको जलपूयो माना है किन्तु
 बीजटनका कहना है, कि यह जलपूयो नहीं है । यह
 एक प्रकारका बड़ा डक वा टेंटा मोटा है जो किसी
 बड़े दण्डपरमें बसा रहता था । मानस पड़ता है
 इसने पश्चिमिगिष्ट उद्यादिकी चीज कर उन्के बुझाने
 को योग्य करते हैं ।

प्लियो (Pliny the younger) नम वा मारकन
 की महायताने पाग बुझानेको कथा उल्लेख की है ।

त्रिसे कन कह कहते हैं उरका ईयात्रकसे १३०
 वर्ष पहलें पाकिष्कार हुआ । विविध (Ctibus)

नामक एक प्रचिद चीज यन्त्रकविदु टनेमा विपाडे न
 पसके शास्त्रकालमें मिय ट्रेममें रहते हैं । जय से पसेक
 जेविष्णुयामें से, तब हिरो (Hero) नामक उनके एक
 बाइ या जो पयमें स्पिरिटेलिया (Spiritalia) नामक
 यन्त्रमें एक प्रकारको लमका बय न कर गये हैं । उस
 काममें एक प्रकारका जकीतोमनयन्त्र (Forcin,
 pump) पौर दो बड़े नम कनो हुए हैं । इस यन्त्रको
 चलति होनेसे ही वरको हस्तचालित दमकनका चालि
 प्रकार हुआ है । सिं बिकने पयमें जगत्को चलति
 नामक यन्त्रमें कथा है कि हिरोके इस यन्त्रमें वर्तमान
 हस्तचालित दमकनके समस्त मूल सूत्र से । केवल
 दिनां दिन जामोवतिसे माइ म.य जो इन सूत्रोंको
 उचति हुए है ।

मन्वाट फोत्रन (Emperor Frojon) यन्त्रो यहा
 विज्ञानके पापोनाडोरन (Apollodoros) नामक यन्त्र
 को कथा उल्लेख कर गये हैं । इस यन्त्रमें जल भरा
 हुआ एक चमड़ेका कुप्पा रहता था पौर उस कुप्पेके
 घाट नम नया हुआ था । कुप्पेको दबानेसे जल जो
 कर जल पश्चिमयाममें पड़ जाता था ।

१११८ ई०को अर्मनोके पगसबर्ज नगरमें पाग
 बुझानेके लिये विवकासोकी तरहको एक प्रकारको कन
 को जनि (Instrument of fire वा Water-syringe)
 कहते हैं ।

कम्पार मोटने (Casper Schott) एक पौर प्रकार
 को कनका उल्लेख किया है । यह कन १११२ ई०को
 मुस्लिमयमें व्यापृत होती था पौर प्रायः हिरीकी
 उन्नितिन कनकी तरह थी । इनको बड़े मोच कर ले
 जाते हैं । इसमें एक बड़ा नम नया हुआ रहता था ।
 कनको चाल करनेमें १८ मनुष्योंकी अदरत पड़ती थी ।
 इसने एक बड़ मोटो जलको द्वारा निचलती थी ८०
 फुट ऊपर जा कर गिरता थी । १० बर्ष यतान्तर
 पतमें वायुचम (Air-chamber) को विवकास एक
 मोटा नम (Hose) काइहन हुआ । ये कन दूर-
 भयुक्त कने १८५४ ई०में व्यापृत होती थी, इसका
 उल्लेख पिरलट (Perrault) कर गये हैं । कनां
 १६०० ई०में माक्कार जारक (Vanler Hiss) नमन

है। इस विषयमें अब भी विशिष्ट आलोचना का सीमांत नहीं हुई है।

दमकल चत्वारिंशत् सिद्धे एष दम विद्यते मनुष्यका प्राक्प्रकृता है। इनके मनुष्य पर इष्ट सिद्धान्त और धार्मिकता सम्बन्धित रहते हैं। इनके रहनेमें अत्यन्त दुष्ट चरका मन्त्रांग का बीज बना लगने केपर विरमो कर्त्तव्य भाव, तोमी कुछ अनिष्ट नहीं होता, इन लोगोंका भावधर्म भी प्रयत्नयोग्य है। ये लोग अत्यन्त नम्र से करके लो मोरता और साहजिक साह्य पश्चिममें जूद पड़ते हैं प्रत्यक्षित गृहसे लोगोंके जीवन और धनको रक्षा करती हैं यह निष्कामप्रणय है। यमो पुरोयमें सब अदभुत लन्दनके निवास दमकलके लोगोंको सिद्धांशे जाति है। लन्दनके दमकल पाकिस्तानमें जो बीरे पश्चिम कापुको खबर पडु जाता है उसे पारितोषिक मिलता है। इसी कारण लन्दनमें अब लमो लड़ों पाम बनतो है, तो बहुत अल्ट पाकिस्तान खबर पडु च आतो है।

अभी प्रायः सभी प्रधान शहरोंमें बड़ा भाग बगो है उसे देखनेके लिये गिराके मिथरके जैसा एक लया काठका घर बना रहता है। इस घरमें रात दिन एक पक्ष बैठता रहता है जिसका काम शहरके चारों ओर निगाह डालनेके सिवा और कुछ भी नहीं है। अब लड़ों पाम होकर पड़ती है तब यह सुरत ही लोके पा कर दमकल पाकिस्तान खबर पडु जाता है।

कानशाहितमोपलम लख पतरीयके दोनों बरस लख प्रकारके दो पश्चिम नन्ड बने हैं। बड़ा भी पक्ष बँडता है। पक्ष अब बड़े भाग देखता है, तब लक्षके द्वारा करनेके बी दूरे दूरे पक्ष नगरके पशु स्नानमें पाम लगे है। ऐसा लख कर विद्यार्थी और लमो पर बँट पीटते हैं। लख मरमें सारे नगरमें विजलीकी लाई यह सम्वाद फोन जाता है। बड़ा तब कि यदि बीखोरसे दूरे लिनारे भी धाय लगे हो, तो शहरके लोगोंको इस तरहके सम्वादने लबड़ा देते हैं। पक्षदार नगरवासियोंको बाध्य करके पश्चिम मुम्बामें निरुद्ध करती हैं। ये लोग पश्चिम अंशित बरोंको तोड़ पीड़ कर पश्चिम मुम्बामें हैं। अब भाग एक चर्चके पश्चिम देर तब उबर आतो है तब विद्यमान लख अल्प लख स्नान पर

पडु च आते और लोगोंको उन्हाहित करती हैं। ऐसे प्रधान नगरवासियोंको देशाधिपके दमन करनेका पक्ष मोका मिल जाता है। धतः ये लमसे पाम मुम्बामें और विद्याधिपके पडु च आते पर लमके सामने पयना दुष्कृता रोंते हैं। वर्तमान लक्षमें देशाधिप पश्चिम स्नान पर लखम नया कर पयने लक्षीरको संज टेंते हैं। लक्ष मिथाल पर बना दुषा एक यन्त्र। इसको सहायतासे लुपसे धन निकाला जाता है।

दमकला (हि० पु०) एक प्रकारका बड़ा पात्र जो दम कलके लीसा बना होता है। इसमें पिचकारी लगे रहती है जिससे बड़ी बड़ी मजकिलमें लोगों पर गुलाब लण पक्षवा रग पाटि छिड़का जाता है। २ पात्र लड़ा करकेका एक बहाज।

दमकल (फा० पु०) १ इकता, मजबूतो। २ लोचनी यन्त्रि माच। ३ लखवारका धार और लखका मुकान।

दमघोष (स० पु०) चन्द्रम गोय एक रागा। ये सिद्धि देयके पश्चिमि गिष्ठापानके पिता थे। इनका दूषरा नाम श्रुतयका मो है।

दमघोषचुल (स० पु०) दमघोषक सुत। दमघोषके पुत्र, गिष्ठापान।

दमचा (हि० पु०) खेतके कोने पर लगे हुई मधान। इस पर बैठ कर खेतिकर अपनी खेतको रक्षवाली करता है।

दमचुल वा (हि० पु०) एक प्रकारका लोहेका बना हुआ मोल लुम वा। इसके बीचमें एक जानो जेतो है जिसके बीच एक और लड़ा खेद होता है। इसका जानो पर लुख लोकेले लख कर लक्षकी दोबार पर पक्षानेका बरतन रखा जाता है और लोकेले छिद्री लखा ली जाती है जिसके भाग लुखगते रहते हैं। लोयसेके अल त्रामे पर लक्षको राख जानो को कर लीके गिर पड़ती है।

दमबोड़ा (हि० पु०) पक्षि, लखवार।
दमड़ा (हि० पु०) लण लपया, क्षाम।
दमड़ी (हि० लो०) १ पेशिके पाठ मानोंमेंसे एक माग। २ एक प्रकारका पयो।

दमधु (सं० पु०) दम उपगमे दम अथच् (वाहुक्कात्
दृगितिदसिभ्यश्च । टण् ३।११४) दम, दण्ड, मजा ।

दमधु । सं० पु०) दम भावे अथु । दम, मजा ।

दमदमा—१ वड्डालके २४ परगने जिनके अन्तर्गत वारक-
पुर उपविभागका एक महकूमा । यह अक्षा० २२° ३४'
उ० और २२° ४१' उ० तथा देशां ८८° २६' और ८८°
३१' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण २४ वर्ग मील
है । इसके मध्य हो कर मध्य-वङ्गरेलपथ गया है ।

२ उक्त महकूमेका एक शहर । यह अक्षा० २२° ३८'
उ० और देशां ८८° २५' पू० कलकत्तासे ७ मील
उत्तरमें अवस्थित है । जनसंख्या प्रायः १०८०४ है ।
यहां स्युनिसपनिटी और सैनिकावास है । यह सैनिका-
वास ईंटोंका बना हुआ है और बहुत प्रशस्त है ।
१७८३ ई०में लेकर १८५३ ई० तक यह फमान आदि
रावनेका स्थान था । १८५३ ई०में यह मोरट उठ कर
चला गया । उस समय यहाँ एक अस्त्रागार, सैनिका-
वास, अस्पताल, बडावाजार, अनेक परिष्कार जलपूर्ण
ढीघो और प्रेटेष्टागहोंका गिरजा था । जिस सन्धिके
अनुसार वड्डालके नवावने अङ्गरेजाको कलकत्ता, कासिम-
वाजार और टा का ये तीनों देग दे दिये थे, वह सन्धि
इसो स्थान पर हस्ताक्षरित हुई थी । (१७५७ ई०की
६ ठो फरवरी) यहाँ पूर्व-वङ्ग रेलवेकी एक स्टेशन और
अङ्गरेजी स्कूल है । प्रतिवर्ष सुभलमान फकीर ग्राह
फरोदके उद्देश्यसे यहा एक मेला लगता है ।

दमदमा (फा० पु०) मोरचा, धुत ।

दमदमा—पूर्व वड्डाल और आसामके लक्ष्मीपुर जिलेके
अंतर्गत डिवरूगढ उपविभागका एक ग्राम । यह
अक्षा० २७° ३४' उ० और देशां ८५° ३३' पू०के मध्य
अवस्थित है । यहां चाय का व्यवसाय खूब चलता है ।
यहा एक प्राचीन दुग का भग्नावशेष देखनेमें आता है ।
दमदार (फा० वि०) १ जिसमें जोनेकी शक्ति बहुत हो ।
२ दृढ, मजबूत । ३ जिसमें अधिक समय तक घांस रह
सके । ४ तेज धारवाला, चौरवा ।

दमन (सं० पु०) दाम्यतीति दम ल्यु । १ दण्ड, दवानि
या रोकनेकी क्रिया । २ इन्द्रियादिका वाञ्छित-
निरोध, इन्द्रियोंको धँचलता रोकना । ३ पुण्यवृक्षविशेष,

एक प्रकारका पेड़ । ४ कुन्द पुण्यवृक्ष । ५ ऋषिविशेष,
एक ऋषिका नाम । (भारत ३।५।२।६) ६ दमराजा-
के एक पुत्रका नाम । महाराज दमने दमन ऋषिकी
पाराधना करके सब पुत्र प्राप्त किये थे, इसीसे उन्हींमें
पुत्रका नाम दमन रखा था । (भारत ३।५।३।८) ७ विष्णु ।
(भारत १।३।१४।३४) ८ महादेव, शिव ।

दमनक (सं० पु०) दमन एव स्वार्थ कन् । वृक्षविशेष,
दीना । इसका पर्याय - दमन, दान्तः गन्धोष्कटा, मूनि,
जटिला, दंतो, पाण्डुरोग, ब्रह्मजटा, पुण्डरीक, तापस-
पत्तो, पवित्रक, देवशंखर, कुलपत्त, विनीत, तपस्विपत्र,
मूनिपत्त, तपोधन, गन्धोष्कट, ब्रह्मजटो और कुलपत्तक ।
(भागप्रकाश) इसके फूल सुगन्धित और जटाकृतिके
होते हैं । इसका गुण—शीतल, तिक्त, कपाय, कटु,
कुष्ठटोष, विष, विषस्फोट और विकारनाशक है ।
भावप्रकाशके मतसे इसका गुण—हृद्य, हृथ औरसु गन्धि,
ग्रहणी, अस्त्र क्लोट तथा कण्डूनाशक है । (कौ०)
२ छन्दोविशेष, एक छन्दका नाम । इसके प्रत्येक
चरणमें ६ अक्षर होते हैं । इसमें तीन नगण, एक लघु
और एक गुरु होता है । ३ एकादश अक्षरपादक छन्दो-
विशेष, एक छन्दका नाम जिसके प्रत्येक चरणमें ११
अक्षर रहते तथा शेष वर्ण छोड़ कर और सत्र अक्षर
लघु होते हैं । (ति०) ४ दमनशील, दमन करने-
वाला ।

दमनकारोपणीत्सव (सं० पु०) दमनकस्य आरोपणार्थ
य उत्सवः । ओङ्कारको दमनक अर्पणार्थ महापूजारूप
उत्सवविशेष । ओङ्कारकी दमनक-दानोत्सवविधि हरि-
भक्तिविलासमें इस प्रकार लिखा है—

चैत्रमासकी शुक्लाष्टादशीमें ओङ्कारको दमनक
दान करके उत्सव करना चाहिये ।

मधुमासको शुक्लाएकादशीदिमें प्रातः कामं
समाप्त करके दमनक वनमें जाते हैं और वहाँ निम्न
लिखित मन्त्रसे उसकी प्रार्थना करते हैं—

“धशोकाय नमस्तुभ्यं कामस्त्रीलोकनाशन ।

शोकाग्नि हर मे नित्यं धानन्दं जनयस्व मे ॥

नेस्यामि कृष्णपूजार्थं त्वां कृष्णप्रीतिकारकं ॥”

इस प्रकार प्रार्थना और प्रणाम कर दमनको ज्ञापन करते हैं। योही पञ्चम्य द्वारा उसे प्रभावित कर पूजा करते हैं और अन्तमें पाष्ठादन कर दीपाद्य करते हुए घर जाती हैं। इनकर दमनकारिणाम करना होता है।
 अथिवाहोवि—श्लोकाद्युक्ते पारि इति एक कर सर्वतो मद्रमच्छन करते हैं और तमके अक्षर इस दमनको म स्थापित कर निम्नमन्त्र द्वारा अभिषाम करते हैं।
 मन्त्र—

“पूजार्थं देवदेवस्य विन्दोर्ध्वपीपतेः प्रभो ।
 एवम । स्वमिहापञ्च वासिभ्य इव ते वयम् ॥”

योही सर्वोच्च धामदेवको पूजा करनेको होती है और एकदो पाठ कर कामयाबीका रूप करके धामन्त्र करना होता है। सुभामन्त्र द्वारा निम्नलिखित मन्त्रमें इन्द्रका भी जाती है। मन्त्र—

“नमोऽस्तु तुभ्यवाचक भगवत्प्रकारिणे ।
 मन्त्रवाचकत्वेने तिमिष्टिप्रकारिणे ॥”
 बाद श्लोकाद्युक्ते इस मन्त्रमें धामन्त्र करती हैं।
 “आनन्दिबलेशुनि देवैः । पुण्यपुत्रोत्तमम् ।
 श्रुतस्माद्दृशित्पत्तिं नास्तिभ्य इव देव्यम् ॥
 निवैद्वान्मह शुभ्य श्रुतमनक ह्यम् ।
 सर्वैः सर्वैः विन्दो नमस्तेऽस्तु प्रसीद मे ॥”

इस प्रकार धामन्त्र करके मुख्य मोतादि द्वारा शक्ति प्रथम कर बिताती है। दूसरे दिन अर्धे प्रातःकाल धामन्त्र कर दमनक पारोपचके विधि महापूजा भी जाती है। बाद दमनको मन्त्रपूर्वक हाथमें ले कर निम्न मन्त्रमें श्लोकाद्युक्ते पर्यन्त करते हैं। मन्त्र—

‘देव देव भगवान् वासिभ्यैः प्रदानम् ।
 इत्यस्मिन् एव मे इत्य कामान् कारेश्वरीयम् ॥
 एव दमनक देव एतान् मन्त्रमहाय ।
 सर्वं शोचन्ती पूजा भगवत्पि एव ॥”

अन्तर दमनक-पुत्रकी माना इस मन्त्रमें श्लोकाद्युक्ते चढ़ाती है—

“अथिदिग्दमनकारिण्यारुहवादिभिः ।
 इव शोचन्ती पूजा तन्वात् नरवन्त्रम् ॥
 धमन्त्रां वना देव । शोचन्त ईतद इदि ।
 एतद्वामन्त्रं माका इत्याय इत्ये वरा ॥”

इसके पश्चात् मुख्यमोतादि तथा श्राद्धपत्र भीषम कर कर मन्त्रोक्त करती हैं।

‘समाप्तमें दमनक पारोपच करनेमें यदि कोई विधि जो आय, तो उसे आय का आशय मासमें घर सठती है।

जो इस दमनक पारोपचका उत्सव करते हैं, उनमें समी मनीरय सिद्ध होती है, तथा उन्हें ममदा तीर्थ आनादिका फल मिलता है। (हरिमन्त्रिकाद्य १३ वि०)

दमनन्दि—पाप तिलक नामक प्राकृत जैन ग्रन्थके रचयिता।

दमनगोत्र (म० वि०) दमन करनेको क्रिमको प्रकृति जो दमन करनिवाला।

दमनो (म० लो०) दम्पतीस्त्रिभया दम-बहुट जिया डोय। अम्बिदमनो उच्य।

दमनो (वि० लो०) मनीष, मन्त्रा।

दमनीय (म० वि०) १ दमन जानेका योग्य। २ जो दबाया जा सके।

दमपुत्र (का० पु०) जो दम से कर पलाया गया जो।

दमवात्र (का० वि०) जो दम करता हो बहाना करने वाला।

दमवाची (का० लो०) दम वा बहाना करनेका काम।

दमयत् (म० वि०) दम विच द्यत्। १ मासनकर्ता, मासन करनेवाला। (पु०) २ विष्णु।

दमयन्तो (म० लो०) दमपति नामवति समद्वन्दादिब मिति दम विष्णु-यत् डोय। १ मद्रमन्त्रिका। २ नम राजाकी पत्नी से दम राज मोमको कन्वा। सुन्दरतामें वह अर्धितोय चीं भूनिवहराज नमको लव इनके रूपको कथा मात्स्य हुई, तब से इन पर लडू हो रही। उन्हेंनि अपने प्रेमका विषय एव व स द्वारा दमयन्तोके पास भिजवा दिया। दमयन्तो भी इससे ललक रूप और गुणादि सुन कर उन पर आसक्त हो गई। इसी समय विदर्भ राज दमव तोकी विवाहवाच्य देख कर अक्षयशरको तैयारो करने लगी। देय देयके शृण्णव इस अक्षयशरमें पाये यहाँ तक कि इन्द्रादि लोकपालमय भी दमय तो की पानको इच्छा करती हुए पेशारी।

राश्ट्रीमें पाते अमय देवताधर्म नरको देव कर लके

दूत बना दमयंतीके पास भेजा। नल देवताओंके वरसे अलक्ष्य रूपसे दमयंतीके पास पहुँचे और देवताओंका अभिप्राय कह सुनाया। उत्तममें दमयंतीने कहा, "मैं पहलेहीसे नलको वर चुकी हूँ। उनके सिवा और कोई भी मेरे स्वामी नहीं हो सकती।"

यह सुन कर देवगण नल रूप धारण कर स्वयम्बर स्थलमें खड़े रहें। दमयंती और कोई दूसरा उपाय न देख देवताओंकी स्तुति करने लगीं। पाँचि इन्होंने देवताओंके स्तुतिविरहित, स्तुतिरहित, दिव्यमाध्यधारी देहसे नलको पहचान कर उनके गलेमें माला डाल दी। उन दोनोंने कुछ दिनोंतक सुखसे समय व्यतीत किया। पाँचि नल जुएमें अपना सर्वस्व खो कर वनको चले गये। पतिव्रता दमयंती भी उनके साथ हो लीं। यो भ्रष्ट होनेपर मनुष्यकी बुद्धि मारो जाती है। एक दिन नन्दराज पतिपरायणा सोई हुई श्रीकी निविड़ वनमें छोड़ आग किन्ही दूसरे वनमें चले गये। अंतमें दमयंती बहुत कष्ट भोगती हुई पिताके घर पहुँची।

दमयंती पतिविरहसे बहुत अधीर हो गईं। इनके पिताने नलको खोजमें सर्वत्र अपने अनुचरोंको भेजा, लेकिन कहीं भी उनका पता न लगा। तब दमयंतीने कोई दूसरा उपाय न देख एक अद्भुत उपाय दूँड निकाला। वे जानती थीं कि राजा नल योभ्रष्ट और अपमानित हो कर हो कहीं अवश्य छिपे हुए हैं। किन्ही असामान्य घटनाके सिवा उन्हें छिपे हुए स्थानसे बाहर निकलना असम्भव है। इसी कारण इन्होंने घोषणा कर दी कि राजा नलके अनेक समय तक अज्ञातवास करनेके कारण उनको स्त्री दमयंतीने स्वयम्बर द्वारा विवाह करनेकी इच्छा कर ली है। यह समाद पाते ही सर्वसहिष्णु नल स्थिर न रह सके। इतने दिनों तक वे अयोध्याधिपति ऋतुपर्णके यहाँ छद्म वेशमें अतिहीन अश्वपालका काम करते थे। अयोध्यापति जब स्वयम्बरमें जाने लगे, तब राजा नल भी उनका सारथि बन कर विदर्भ राज्यको गये। दमयंतीने दासीके मुखसे जब इस सारथिक अलौकिक रूप गुणाटिकी कथा सुनी, तब ये सन्दिग्धचित्तसे अश्वशालामें पहुँची। वहाँ अश्वपालको अपना हृदयवत्तम नल

पहचान कर उनके चरणों पर गिर पड़ीं और स्वयम्बर ओषणारूप घृष्टताके लिये क्षमा प्रार्थना की। दमयंती इस प्रकार स्वामीको पा कर पुनः भक्त राज्यमें राजमहिषी हुईं। (भारतवनप०) नल देखी।

दमलचेरि—मन्द्राज प्रदेशके अंतर्गत उत्तर अर्काटका एक गिरिपथ। यह अक्षा० १३°२५' ४०" उ० और देशा० ७५° ५' ५०" में अवस्थित है। इसी राह हो कर महाराष्ट्रकी शिवाजी १६७६ ई०में पहलो बार कर्णाटक पर चढ़ाई करनेके लिये गये थे। इसी स्थान पर १७४० ई०में नवाब दोस्तअली महाराष्ट्रसे युद्धमें मारे गये थे। १७८०-८२ ई०में हैदर अलीको सेनाने जब कर्णाटक पर आक्रमण किया था, तब इसी राहसे होकर रमद भेजा जातो था।

दमलिङ्ग—पञ्जाबके अंतर्गत बसहर राज्यका एक ग्राम। यह अक्षा० ३१°४५' उ० और देशा० ७७°३८' पू० समुद्र सतहसे ८४०० फुट ऊँचे पर अवस्थित है। यहाँके अधिवासी चोचतातारोंसे मिलते जुलते हैं। ये बौद्ध धर्मावलम्बी हैं।

दमान—१ पञ्जाबके अंतर्गत एक बड़ा जिला। यह अक्षा० २८° ४०' और ३३°२०' उ० तथा देशा० ६८°३०' और ७१°२०' पू०में अवस्थित है। सुलेमान पर्वतका पूर्व पाददेशस्थित प्रदेश और डेरा इस्माइल खानि अंतर्गत सिन्धुनदाका दक्षिणतोर इसा जिलेके अंतर्गत है। यहाँको भूमि अनुवर और पश्चादिविहीन है।

२ बम्बई प्रेसिडेन्सीके गुजरात प्रदेशके अंतर्गत पोत्तुगोजीके अधीन एक नगर। यह अक्षा० २०°२५' उ० और देशा० ७२°५३' पू०में अवस्थित है। इसके उत्तरमें भगवान नदी, पूर्वमें ब्रिटिश राज्य, दक्षिणमें कलेम नदी और पश्चिममें काश्मि उपसागर है। नगर हवेली परगनेके साथ इसका परिमाणफल १४८ वर्ग मील है।

दमानके दो विभाग हैं—१ परगना नायर वा दमान ग्राण्डी तथा २ परगना कलन पवीरो वा दमान पिकेनी। इनके सिवा पूरे ७ मील तक हवेली परगनेका एक पृथक अंश है।

दमान नगर १५३१ ई०में पोत्तुगोजीसे लूटा गया था। यहाँके अधिवासियोंने इसका पुनः संस्कार किया। बाद १५५८ ई०में पोत्तुगोजीने पुनः इसे अधिकार कर

बर्हा व्याधिक्रम्ये रश्मिणा बन्धोबद्धं बिवा । इयमे ३८
पाम नमने ई । श्लोकम व्या प्राय १०३८१ ई ।

यद्वा स्वान्नाम्ने उपमापरके यामने प्रचक्षित है पौर
नमनगङ्गा नामक नदी द्वारा दमानप्राण्डि (बर्हा दमान),
पौर दमानपिंडीने (पुत्र दमान) नामक दो विमानमें
विभक्त है । दमानप्राण्डि दक्षिणकी ओर याना नामक
सट्टिप्राण्डित निमेषेऽम नमने है पौर दमानपिंडीना कल्प
को पौर सुरतके शोर्मत प्रदेशमें प्रचक्षित है । शिपोव नाम
इस कनूट व्यापिंडीने द्विजगामाश्चाने पचीन पोत्तु मोक्षति
१३६८ ई० को दूसरो परबरोको प्रचिक्षित दुपा । नगर
इयैलो परगतेका परिमाणापन ६० वर्गमोव पौर श्लोक
म व्या प्राय २००६२ ई ।

१०८० ई०को इटी अनधरीको पूना नगरको मन्दिने
पयुमार लक्ष परगता महाप्राण्डीने पोत्तु मोक्षति प्राय
पर्यन्त किया ।

दमानकी प्रधान नदियां भगवान् कसीम, मन्दलवाक
या दमनगङ्गा हैं । ये काव्के उपमागरमें गिरि हैं । यहाँका
अनवातु नाम्नाकर है । यहाँ बहुत बड़े बड़े जङ्गल हैं ।
यहाँको अमीन चर्बरा है । चावम्, गीह पौर तमाप्
बर्हाके प्रधान उत्पन्नद्रव्य है । चावलको सुविधा रहने
पर मो यहाँ कुल ३० अमीन धाराद होती है । अमीन
पर ही एक प्रकारका टीम निवारित है जिधने प्राय
८०००, ६० आरात्रक मत्तुन होता है ।

पोत्तु मोक्षको समता आम शोर्मत पक्षमें पञ्चोकाके
उपक्रमक प्राय दमानका कुब स्थानय चलता था ।
१८१०में १८३० ई० तक चीन राज्यके माव यहाँका
पचोमका व्यवसाय होता था । बिन्दु प ६११में मिन्नु
देम शोर्ने जतिह बाद पचोमका रूप तनो बन्द हो गई
पौर तनोके दमानका पचोमका व्यवसाय, रुठ गया है ।

पूव, पमपमें कपड़े बुनने पौर र शामिके लिए दमान
यह र प्रसिद्ध था । बुननेका काम प्रात्र चल मो चल
रहा है । यहाँ माचू पार लखरके पत्तीकी डोबरो
बनाई जाती है ।

शामलशायकी कुविधाके निचे दमानकी एक प्रदेशमें
मिनती बूई है । यहाँ एक म्बु निज पानिडा है । शोपा
के गवर्नर जनरलके पक्षों एक शामनकल्पके दमान

शामित होता है । विचार विमान एक लक्षके पचोम
है पौर ये एक पट्टी बनकर तथा दो या तीन कर
पिचकी सहायतासे विचार 'काय' करती है ।

यहाँ दो दुर्ग हैं । पक्षमें दुर्गमें गवर्नरका प्रासाद
मैथवा पाबाप, पन्नाताक, म्बु निजियन पानिस, पदानत
पुत्र श्लेक, दो गिरजा पौर दूसरे दूधरे मकान हैं । छोटा
दुर्ग श्लेक जिरौमोकी सहायतासे पोत्तु मोक्ष द्वारा स्थापित
हुया है बिनमें एक मिरजा पौर एक मोरखान है ।

दममाज (पा० पु०) बिनो गार्थे सेके शामिके समय लसको
सहायतासे लिए श्वर मरनेवाला पाम्नाम ।

दमा (पा० पु०) एक प्रसिद्ध रोम । इममें श्याम-आङ्गिको
लकोके च तिम प्रायमें पाक पन पौर ऐ इलके कारक
श्याम जेनेमें बहुत बट्टा होता है, काँसो पाती है पौर
कन बह कर बडो कडिनामि पौर पौर निकलता है ।
रोगो इममें बहुत कष्ट पाने हैं । शोयोका निम्बास है, जि
यक रोय कको पच्यता नही होता ।

दमाद (हि० पु०) जामाता कन्वाका पति ।

दमादम (हि० जि० वि०) १ इम दम इन्धके साथ ।
२ समातर, बराबर ।

दमान (हि० पु०) दामन, दानको चादर ।

दमानक (हि० प्त्रो०) तोपोंकी बाढ़ ।

दमाम (हि० पु०) दमामा शैलो ।

दमामा (पा० पु०) नमारा लका ।

दमाह (हि० पु०) बैसीका एक रोम । इममें बोन
वृक्षन लघता है ।

दमित (म० जि०) इम्बने म्म दम ह । । वा दाम्ब कोरेधि ।
वा ०१२२०) १ शामित, को वय किया गया हो । २
छो शमचिप्य कष्ट लक्ष्मणाका ।

दमिह (म० पु०) दम-पुत्र । शामनकत्ता ।

दमिन् (म० जि०) दमोऽप्याप्तोति दम-इनि । १
दमनविधिह दमन करनेवाला । (छो०) २ धागर
पौर मिन्नुकल्पके इचिपक तोपोंमें ह । ३ लक्ष तोप
प्रकल एक कदि । लक्ष मोर्के पापनायक है । बर्हा
ब्रह्मादि उचनोपनि सङ्घरको उपायना को को । इममें
खान पौर देवताकामि परिष्ठित बट्टको पूजा करनेके
अप्रावधि पमा प्राय जाते रहते हैं । कल्पिके यह करने

से जो फल होता है, केवल यहा ज्ञान करनेसे वही फल प्राप्त होता है। (भागवत १८२ च०)

दमी (फा० श्लो०) १ एक प्रकारका जड़ीया या मफरी टैचा। (वि०) २ दम लगानेवाला। ३ गांजा पीनेवाला, गजडो। ४ जो दमा रोगसे ग्रसित हो।

दमोमारयि (सं० पु०) बुढका नामान्तर।

दमनम् (सं० पु०) दमनम्, 'अन्ये पामपि दृश्यन्ते' इति पत्ते टाडः वा दमननम् (दमेहनयिः । टण् ४।२.५४) , अन्ति । २ शुक्राचार्य (वि०) ३ दमयिता, दमन करनेवाला।

दम (सं० शब्द) दम बाहुलकात् । गृह, घर।

दमोडा (हि० पु०) मूल्य, कीमत।

दमोटर (हि० पु०) दमोटर देखो

दमोह—? मध्यप्रदेशके चौफल्कमिश्रके ग्रामनाथोन जञ्जलपुर विभागके अन्तर्गत एक जिला। यह प्रचा० २३ १० से २४ २६ उ० और देश० ७८ ५७ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण २८१६ वर्ग मील है। इसके उत्तरमें बुन्देलखण्ड, पूर्वमें जञ्जलपुर, दक्षिणमें नरमिंहपुर और पश्चिममें सागर जिला है। प्रधान नगर दमोह इसी ग्रामन विभागका मटर है। इस जिलेके चारों ओर पर्वतश्रेणो है, इसीसे मीमा निर्धारण करनेमें बहुत गडबड होती है। दक्षिणकी ओर बालुका-प्रस्तरमय ऊँचो पर्वतश्रेणो तथा अनेक शाखा प्रशाखाये है जो नरमिंहपुर और जञ्जलपुर जिलेमें इसकी पृथक् करती है। पूर्वकी ओर भैंदना पहाड क्रमशः उत्थित हो कर अन्तमें भाडके पर्वतमें मिल गया है। पश्चिममें विन्ध्याचल श्रेणो मीमात् प्रदेशके बहुत दूर तक फैली हुई है। अधिकांश जमीनी नदी होने पर भी यह पर्वत जिलेमें परम रमणीय है और प्राकृतिक दृश्यके सोन्दर्यको बढावा है। बीच-बीचमें अन्य ऊँचाईके घने जङ्गलसे परिपूर्ण पर्वतकी उपत्यका भूमि विराजमान है। इस उपत्यकाके कई अंश सागर जिलेके अन्तर्गत है। इस तरह तीन ओर पर्वतश्रेणोसे वेष्टित दमोह जिलेकी मालभूमि उत्तरकी ओर क्रमभिन्न होने चली आ रही है। अन्तमें उत्तर सीमाका भूभाग महेशा अवनत ही

अरे बुन्देलखण्डको विस्तीर्ण समतल भूमि देखनेमें आती है। दक्षिण और पूर्व प्रांतमें पार्यत्य भूमि छोड़ कर जिलेका अधिकांश समतल उर्वरा है, केवल बीच-बीचमें एक टो ऊबलभद्र पहाड देखे जाते हैं। जिलेका मध्य भाग ही सर्वसे अधिक उर्वरा है। जिलेकी समस्त नदियाँ दक्षिणमें उत्तरको ओर प्रवाहित हैं, जिनमेंसे प्रधान सोनार और वैरमा नदियाँ विद्यास, कोषा, गुरा-इया आदि उपनदियोंके साथ मिलकर बहुत वेगमें उत्तरी सीमा तक पहुँच गई है। इस स्थान पर सोनार नदी पूर्वकी ओर घूम कर वैरमाके साथ मिल गई है और पीछे उक्त संयुक्त नदियाँ दमोह जिलेमें बाहर निकल कर राहमें किमी दूरी नदीके साथ मिल गई है, अन्तमें यमुनामें जा गिरी है।

पहले वर्त्मान दमोह और सागर जिला महोबा नगरके चन्देल राजाओंके अधीन था और बाहिलने नगरके प्रतिनिधिसे शासित होता था। कुछ प्राचीन मन्दिरके भग्नावशेषके सिवा चन्देल राजाओंको और कोई कीर्ति अभी विद्यमान नहीं है। ११वीं शताब्दीके अन्तमें चन्देल राजाओंका अधःपतन होने पर बुन्देलखण्डके खतोलावासो गोंण्डाने इसका अधिकांश अधिकार कर लिया। पीछे प्रायः १५०० ई०में विस्वात बुन्देलराज वीरवर बहमिंहदेवने गोंण्डाको परास्त कर दमोह पर अपना अधिकार जमाया। बाद यह जिला सुसलमानोंके हाथ आया। आज भी यहाँ सुसलमान शासनकर्त्ताओंके वंशधरगण यास करते हैं, किन्तु इन लोगोंकी मंस्या बहुत थोड़ी है और अवस्था भी शोचनीय हो गई है। महाराष्ट्रके अभ्युत्थानके समय ज्योंही सुसलमानोंका प्रताप घटने लगा, त्योंही पन्नावासो महाराज राजा ऊबगालने दमोह और सागरको अपने राज्यमें मिला लिया। इन्हींके समयमें छटा दुर्ग बनाया गया है। १७३३ ई०में फरुखाबादके नवाबने दमोह पर आक्रमण किया। राजा ऊबगालने उन्हें मार भगानेके लिये पेशवासे सहायता मांगी। इस सहायताके प्रतिदानमें ऊबगालने अपने राज्यकी तीन बराबर भागोंमें विभक्त कर दो भाग अपने दो लड़कोंको और एक भाग पेशवाको दिया था। वर्त्तमान दमोह जिलेका कुछ भाग रानी

तोम च मीति पढा बा । जो कुछ हो, मकाराष्ट्रोंने बहुत बन्द सारा राज्य अपना लिया ।

तमोने बह जित्वा सागरार्थ महााराष्ट्रोंके पचोस पचा बारा रखा बा । उनके दोराज्यसे इतके पनेक जाल परफ्त में परिबत हो गये हैं । च तमिं १८२८ ई०में दमोद जित्वा च गरिबीको मीटा मया । तमोने इसको दिनों दिन जोड़ति हो रही है ।

बहाओ नोकस क्या प्राय २८५१२६ है । हिन्दूमें ब्राह्मण और बहिरीको स क्या प्राय १५ घ श है; पन्थान्क हिन्दुधर्मिं कुर्मिं हो मरये पच्छे पदक बहकति है । ये नोम मिह और राजमह है । दूधरे दूधरे कवि कीबिद्योमिं लोकोमच प्रधान है । ये कल्पकार्यमें कुर्मिंकोके कम मर्ती है, किन्तु ये नोम बह दुर्दान्त और प्रतिहि साधिय होतें हैं । इन लोगीकी स क्या मरये पबिह है । ये लच्छट सैन्य होमिंके उपबुद्ध हैं । पबमिह कातिवोमिं गोफ्त, बाको चमार बीमण और चन्दानपबिह है । तुमनमाओको स क्या बहुत बोको है और जो कुछ है मी से प्राय ममी लुको सपदावये है ।

इम जिलेमें दमोद और इहा नामके दो महर तथा १११६ घाम लरतें हैं ।

१८८१-८२ ई० में दमोद जिलेको कुल २०८८ वर्ग मील जपोनमेंके क्षेत्र ८१० वर्ग मील जमीन थाबाद होतो हो । कविजात कुर्मिंमें गीद्ध प्रधान है पन्थान्क पनार्थमिं जाल और सरनो हो उल्लेखयोग्य है । कपास जो कुछ कुछ उपजाई जातो है । प्रवान कुवक कुर्मिं प्राय २६० वर्ग पक्षे मया और वसुनाक मजबूत-से (पन्थान्कोसे) बहा पा गये हैं । इन लोगमिंसे क्या ओ क्या पुक्क बमो जेत आ कर काम करतें हैं और बहा इन लोगीकी उदात्तका मूल कारण है । कुर्मिं लोग म्पनिधिय और राजमह होतें हैं । इनके हाट लोबीमच कविकार्यमें बिधिय पट्टु है । मोग्ग म्पय पाव जपदेयमें बहुत कम धैती बरतें हैं और जितने कुर्मिं तथा लोबिरी-के बहा मजदूरी कर बोबिका पालतें हैं ।

जिलेका बहिरीय म्बनलाबबाबिचक प्रधानत-कुच्छनपुर और बन्दकपुरके दो मीनति हो चुपा करता है । कुच्छनपुरका मीका चैलमाथमें होसीके बादे हो

पारम्भ होता और एक महीना तक रहता है । बहा नेमिनायके मन्दिरके निकट यह मीका लयता है । बहुतसे जैन पबजित हो कर नेमिनायको उपासना करतें और सामाजिक विवाट बिपन्नादके मोर्माभा करतें हैं । इममें बहुतोको धय दण्ड होता है जो मन्दिरके लक्षमें लमाबा जाता है । बन्दकपुरका मीका माघ और फागुन मासमें बमन्तपक्षमी और विश्वराजिसे उपनचमें लगता है । इम समय मिह मिह देयोंने मजबब पचनो मनकामनासिद्धि के विधे यामीन्वर महादेवके मन्दिरमें पाति और गङ्गा तथा नम दाबा जल लन पर चरुतें हैं । इच तरङ्ग पूजासे मन्दिरकी बाबिबक पाय प्राय (१२०००) ५० होती है ; दमोद-निकाओ महााराष्ट्रीय पच्छित मानत्रा-बहानमें पिताने १७०१ ई०में यह मन्दिर निर्माच किया है । प्रबाट है, कि एच रात कइमें कच्चे चणोमिं गईं हुए सिमन्तिका जाल मानम दुपा और लस जाल पर मन्दिरके तैयार हो जानेसे महादेव पायसे पाय जमीन फाड़ कर निकल पाये । तमोने यहाँ पनेक थाको पाने लगी है । पचो बह पबसर पर प्रायः लापसे पबिह याता ममायम होतें हैं । बहुतसे प्यबपायो लोडागर पादि इच मीलीमें पा कर खीद जिन्को करतें हैं । तरङ्ग तरङ्गके कपड़े, बरतन और बिनीने पादि हो मीसेके प्रधान वाबिन्ध द्रव्य है । पूर्व दिग्गने विधा यतो थीग देगी कपड़े, तमाकू, पान, सुपारो, नारियल, तरङ्ग तरङ्गके मसाले, चीनो, गुड़ और बागुनिमित्त भाति भाति बरतनीको घामदना होतो है । राजपूतानेमें लमक पाता है । दमोदके कुर्मिं जिलेमें बहुत कम उपत होतो है, पबिबांय द्रव्य यइवि दूधरे कानमिं मिने जात है । एउलनामें गीद्ध, चना चाबल घी, कप्यास मोटा कपड़ा और पयचमं प्रधान है ।

माघरसे जम्बकपुरका राजपय सागरसे जौबाई तक को सङ्क, इहा होता हुई नामोद तकको मङ्क तथा एक दूनरो सङ्क दमोद जाता हुई मई है ।

१८६१ ई०में दमोद मध्यप्रदेशके एक एङ्क जिलेके रूपमें परिबत चुपा है । यूरोपीय डिप्टी कमिश्नरके एक मङ्ककारी कमिश्नर और तहनामदारकी मजायतासे यहाँका माघनकाय चबाबा जाता है ।

दमोड जिलेका जलवायु स्वास्थ्यकर है। नमंटा तीर-वर्ती भूभाग तथा उत्तरोय भारतको अपेक्षा यहा शोष-का प्रादुर्भाव बहुत कम है। शीतकालमें प्रायः मामान्य वृष्टि होती है। वृष्टिके बादसे ही पाले आदिका गिरना बन्द हो जाता है। सर्पिक वृष्टिपात प्रायः ५६ इंच है।

जिलेमें म्लेग तथा वमंत रोगसे बहुत मनुष्योंको मृत्यु होती है। जबसे टोका टेनेको प्रया आरम्भ हुई है, तबसे वमंत रोगका प्रादुर्भाव कुछ कम हो गया है।

२ उक्त दमोड जिलेका एक तहसिल। यह अक्षा० २३°१०' से २४°४' उ० और देशा० ७८° ३' से ७८° ५७' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण १७८७ वर्गमोल तथा लोकसंख्या १८३३१६ है। इस तहसिलमें दमो नामका एक शहर और ६८२ ग्राम लगते हैं। सदर मिला कर यहां ४ टोवानो और ७ फोजदारो अदालत हैं। तहसिलको आय प्रायः २१६०००) रु० की है। इसके उत्तर-पश्चिममें सोनार नदी प्रवाहित है।

३ उपरोक्त दमोड जिलेका एक प्रधान नगर और सदर। यह अक्षा० २३° ५०' उ० और देशा० ७८° २७' पू०में अवस्थित है। कहते हैं, कि राजा ननको स्त्री दमयंतोके नाम पर शहरका नामकरण हुआ है। लोकसंख्या प्रायः १३३५५ है। मागरसे जञ्जणपुरका जंजा राजपय और मागरसे जोकाई होता हुआ इलाहाबादका राजपय इसी नगर हा कर गया है। नगरको टीवार वानुकाप्रखरके ऊपर स्थापित है, इसीसे वर्षाका जल पुष्करिणोमें ठहरने नहीं पाता। कुण्भाटि भी यहाँ अधिक नहीं हैं। फुटेरा ताल नामकी जो एक बड़ी पुष्करिणो है उसमें भी काफी जल नहीं है। शहरके आस पास पहाड रहनेसे यहां गर्मी बहुत पड़ती है। नगरमें एक भी उन्नत खुरीय मन्दिर नहीं है। पहले यहां बहुतसे प्राचीन हिन्दू-देवीके मन्दिर थे, किन्तु सुसनमानोंके उर्ध्वे तोड़ फोड़ कर दुर्ग आदि बना लिये जिनका अभी केवल भग्नावशेष रह गया है।

दम्पती (सं० पु०) जाया च पतिश्च इन्दे जायाशब्दस्य पत्ने दमादेशः। मिलित जाया और पति, स्त्रीपुरुषका जोड़ा। यह शब्द नित्य द्विवचनान्त है। इन्द्र ममाममें जायापती, दम्पती और जम्पती ये तीन पद होते हैं।

जायायाः जमभावो दम्भावथ। जाया शब्दके स्थानमें विकल्पमें जम् और दम् आदेश होता है।

दम्भ (सं० पु०) दम्भते इति दम्भ-ध्वञ्। १ कपट, कल, धोखा। २ शठ्य, ब्रदजाती, शरारत।

भागवतमें लिखा है, कि अधर्म ब्रह्माके पुत्र थे और उनको स्त्री मिया था। मियाके गर्भसे माया नामक एक कन्या और दम्भ नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। माया और दम्भ महीटर होने पर भी अधर्माशमभूतके कारण परस्पर मियुन शर्यात् स्त्री पुरुष हुए थे। इसी दम्भ और मायासे लोभ और निर्मृति (शठता) नामक एक पुत्र और कन्या उत्पन्न हुईं। ३ महत्त्व दिव्याने या प्रयोजन सिद्ध करनेके लिये झूठा आडम्बर, पाखण्ड। ४ वह काम जो लोभ और बख्शनासे किया गया हो। ५ पूजा तथा मन्थान पानिके लिये स्वधार्मिकत्व त्यागन। ६ अभिमान, घमण्ड। ६ धर्मके प्रति अनुत्साह, पाप। दम्भकः (सं० पु०) दम्भ-ध्वञ्। प्रतारक, पाखण्डो, टकीसलीवाज।

जो सदा लुब्ध रहते शर्यात् जिनके हृदयमें सदा धन लोभकी इच्छा बनी रहती, जो धर्मके चिह्न प्रभृति धारण करते और जनसमाजमें अपनी धार्मिकताका परिचय देते, वे वैद्वान्प्रतिक हैं।

दम्भचर्या (सं० स्त्री०) शठता, बख्शना, ठगी।

दम्भन (सं० पु०) दन्म भावे ल्युट। १ दम्भ, पाखण्ड। २ मोहन, लुभानेकी क्रिया।

दम्भिन् (सं० त्रि०) दन्म-णिनि। १ दम्भकर्ता, आडम्बर रचनेवाला। २ अभिमानी, घमण्डो, झूठी ठमक-वाला।

दम्भोद्भव (सं० पु०) १ मार्वाभौम नामक एक राजा। ये बहुत दाम्भिक थे। नर नामक एक ऋषिने इनका अभिमान चूर किया था। (भारत उद्योग ८१ अ०) (त्रि०) २ जो दम्भ या ठगीसे किया गया हो।

दम्भोलि (सं० पु०) दम्भ भावे असुन्, दम्भसि प्रेरण भलति पर्याप्तीति अल-इन्। वल्ल, इन्द्रास्त्र।

दम्भ्य (सं० पु०) दम्भ्यते इति दम्भ-यत्। १ प्राप्त भारवहनयोग्य वस्तु, वह वस्तु जिसकी भवक्षा बोझ देनेकी हो गई हो। (त्रि०) २ दमनोय,

दमन करतीके योग्य । (पु०) । धनदान, यह बैल जो बचिवा करती योग्य हो ।

दय (म० पु०) दय बाहुसबात् पय । दया, हाप, करवा ।

दवा (म० जो०) दय मिटावक ततशाय । अरवा दुखित कोरके प्रति धनुष्या पत्रात् मरका बह वु धपूषं वेग जो दूनरेक कटकी देल कर उत्पन्न होता है और तल कटकी दूर करतीको पिटा करता है ।

द्विषाद्योम मावर्तमं विद्या है कि दूररेके कटकी निवारकके लिये जो प्रथम दृष्ट्या उत्पन्न होती है उसको नाम दया है । सब शीर्षके प्रति मङ्गल और हित कार्यके लिये जो पय जायं किसे जाते हैं उर्षीका नाम दया है । दया एक मात्र प्रधान कर्म है ।

द्वेषो मागवतमं बहि साओ परमभमं, बलनाबा है एवं सब कोर्षके प्रति दया करना उचित है । दया मोह को छोड़ है । दयाके बिना हम व मारने समा काम निष्पन्न है ।

२ दण्डको एक कन्या जो बर्मको ब्याधो गई हो ।

३ शान्तिरसका व्यभिचारिमान ।

दवाकूब (म० पु०) दवायां कूबं एव । हुइदेव ।

दवाकूब—हिन्दोके एक कवि । दण्ड कन्याके हुए कई एक धर्म मिश्रते हैं ।

दवादाव—हिन्दोके एक कवि । दन्ति जनकवधामा और विनयमाका नामके धर्म बगाने हैं ।

दवादेव—हिन्दोके एक कवि । ये १०२४ ई०में विष्णु-मान है । दूदनम सुत्रान्-वरिधमें दण्डका नाम कहा है ।

दवाहटि (म० जो०) द्विषोके प्रति अरवा या धनुषका मान, दण्ड या निहरवालीको नकर ।

दवागत (म० जो०) लक्ष्मिहा, ईमान ।

दवागतदार (म० पु०) सबा, ईमानदार ।

दवागतदारी (म० जो०) ईमानदारी ।

दवानन्द धरकतो—एक गुजरातो वैदाम्निह और धन मत प्रचारक । दन्ति अपना जोवनपरित द्विन्दोके एक न भावपत्रमें प्रकाशित करवाया था ।

दवानन्द गुजरातके धन्वर्तन व्याख्याताइ लिलेमें मोरबीके धात्राके अयोगक द्विषो नगरमें उत्तर प्रदेशीय

ब्राह्मणवर्गमें उत्पन्न हुए थे । दन्तिने अपना पचसी नाम और पितामाताका नाम प्रकट नहीं किया । इसका कारण थापने यह बतलाया है कि 'मिने ब्रह्मानुरोधसे अपने मातापिताका नाम प्रकट नहीं किया है । पर मातीको अवर नगते ही वे सुम्नि घर मौदा से आयेग, उनसे माय सम्बन्ध होती ही सुम्नि उनसे पमाव दूर करने के लिये फिर पर्वोपार्जन का पर्वस्वयं करना पड़ेगा और उससे मिने जिस कार्यके लिये अपना जोवन उत्सर्ग किया है उसमें विषम ब्याघात पड़ेगा ।'

दवानन्दमें पाँच वर्षको लक्षमें बय माना मोव ली और जति एव व शक्ति नियमाधुसार लसो लक्षमें लक्षे बहुतेके वैदिक मन्त्र व उपन्यस्य करके लिये गये । पाठ वर्षको पत्रक्षामें थापका उपनयन व अहार हुआ । उप नयनक बाद जो थापने गावती, सम्भ्रा, बन्द्या और द्वाध्याकसे ही कर यजुर्वेद व श्रिता तक पढ़ना शुरू कर दिया ।

दण्डके पिताद्विषेक थे, इसलिये बहुत योद्धो लक्षमें ही वे मिशोके शिवलिंग बना कर लण्डो पूजा करने लगे । य लोचित उपवास ब्रतादिमें मा थाप धम्मस्त हो गये । परन्तु माता इसमें थापति भरती हो, क्वाचि थाप पमा कर्षे ही वे और उपवास थादि करना बघो के लिये शानिप्रद है । एव विषयमें कमा कसो पितामातामें परस्पर बिबाद हो जाता था ।

एव समय दवानन्द लक्ष्मण व्याकरक मोक्षते थे, वैदिक मन्त्रादि क ठकर करते थे और प्रतिदिन पिताके माव शिवपूजाक शिवमन्दिरमें जाया करते थे । योद्ध वर्षको पत्रक्षामें थापने सम्पूर्ण यजुर्वेदक श्रिता, पन्थाक वेदो के कुछ कुछ प म तथा 'शम्भुप्याकसो क ठ कर लो गीं । उस दिशके लान इतनेसे विधाधिया ब्रह्मण लक्ष्मण व ।

दण्ड पिता कर बन्धु करते और मजिह्नेटका भी काम करते थे । दवानन्द कह मने है कि 'पितामें अब सुम्नि पाँच कलिपूजाके लिये दोषित किया था, लक्ष समय सुम्नि बड़ा कष्ट हुआ था । इबध माकूम होता व कि दोषाके दिन ही थापका मत-परिवर्तन हुआ था । दोषाके दिन एव (एक मर उपवास करना पड़ा व) और

रातको पिताके साथ मन्दिरमें जा कर जागरण करना पड़ा था। आधी रातको आपने देखा, कि मन्दिरके पूजक, श्रुत्य और कुछ उपासक मन्दिरके बाहर जा कर सो गये, उनके साथ आपके पिता भी थे। दयानन्द सन्देशाकुलितचित्तसे शिवके ईश्वरत्वके विषयमें विचार करने लगे। सन्देश वढ़ गया। आपने उसी समय पिताको जगाया और उनसे पत्र किया। पिताने पूछा, “यह बात क्यों पूछ रहे हो?” दयानन्दने कहा, “यह देवमूर्ति हो परमेश्वर है, ऐसो सुके धारणा नहीं होतो, उनके ऊपरसे चूहे आदि चले जाते हैं, किन्तु सर्वशक्तिमान् हो कर भी वे कुछ प्रतीकार नहीं करते।” इस पर पिताने इन्हें समझानेकी कोशिश को और कहा—“उस प्रतिमामें, शुद्धत्व ब्राह्मणादिके द्वारा प्रतिष्ठित होनेके कारण देवत्व आ गया है। वस्तुमान कलियुगमें किसोको भी शिवके मात्तात् दर्शन नहीं होतै, भक्तगण इस प्रतिमामें ही भक्तिबलसे उनकी सत्ताको कल्पना करते हैं।”

इन बातोंसे दयानन्दको लज्जा न हुई। त्रान्ति और लुधा लगनेके कारण आप पिताने अनुमति ले कर घर चले आये। पिताने उपवास भङ्ग न करनेके लिए विशेष भावसे सतर्क कर दिया, किन्तु घर आने पर साताने उन्हें खिला दिया। दूसरे दिन पिताने आपको उपवास-भङ्गके पापका स्वरूप समझाया, पर इनको देवता-भक्ति पहलसे ही दूर हो चुका था, इसलिये उन बातोंको ये धारणामें न ला सके। इसके बाद आपने अपना मत अग्रकट रक्खा और विद्योपार्जनमें लग गये। इस समय आप वैदिक कर्मकाण्ड, निघण्टु, निरुक्त और पूर्व-सौमांसा पढ़ रहे थे।

जब आप सोलह वर्षके हुए, तब आपके छोटे भाईका जन्म हुआ। आपके और भी दो छोटे बहने और एक छोटा भाई था। एक दिन रात्रिके समय चौदह वर्षको उम्रमें आपको एक बहन मर गई। दयानन्दके जीवनमें यह पहला शोक था। इस शोकमें आप श्रुत्य और मुक्तिकी चिन्ता करने लगे। इस चिन्तामें आपने प्रश्न कर लिया कि “कुछ भी हो, सर्वस्व त्याग कर मैं मुक्तिका माग दूंगा।” फिर आपने

उपवास पाययित्त आदि सब छोड़ दिये, पर किसीने अपने मनको बात न कही। इसके बाद ही आपके खुशतातका शरीरान्त हो गया। ये दयानन्दको बहुत ही प्यार करते थे। इनके वियोगमें दयानन्द अत्यन्त दुःख हुए और जीवनको नश्वरताको भनीभाति समझ कर अपने प्रतिष्ठा-पालनके लिए तत्पर हो गये।

इस समय इनके पिता इनके विवाहको कोशिश करने लगे। परन्तु विवाह करनेको इच्छा इनकी शिष्य कुल न थी। बहुत श्रमको बिनतो करके इन्होंने एक वर्षके लिए विवाह स्थगित करा दिया और कागोमें जा कर संस्कृत शास्त्र पढ़नेके लिए पिताने अनुमति मांगा। परन्तु पिताने अनुमति न दी। शायद भाग जाय, इस डरसे इनके पिताने अपने यामसे तोन कोम ही दूरी पर एक याजकके पास इन्हें पढ़ने भेज दिया। कुछ दिन बाद फिर विवाहकी तैयारियां होने लगीं। दयानन्द भी घर आये। उस समय आपको उमर २१ वर्षकी थी। प्रथम अनुरोध करनेसे कोई न मानेगा, यह सोच कर आप छिप कर घरमें निकल पड़े। इनके पिताने, उसी समय कई सुह-सवार भेजे, पर कुछ फल न हुआ—दयानन्दका पता न लगा।

दयानन्द कुछ सवारोंको निगाहोंमें छिप कर पंदिन चलने लगे। रास्तेमें भिक्षुक ब्राह्मणोंने उनका सर्वस्व ज्ञान निधा और कहा—“संसारमें जितना भी दान दोगे, परलोकमें उतना ही मङ्गल होगा।” कुछ समय बाद दयानन्द शील नामक स्थानमें उपस्थित हुए। यहाँ लाल भगत नामके एक विद्वान् रहते थे, जिनकी बात इन्हें पहले ही मालूम थी। उनके सिखा शीलमें एक ब्रह्मचारी भी रहते थे। दयानन्द उनके दलमें प्रविष्ट हो सन्यासो हो गये। दोचारिके समय दयानन्दका नाम “शुद्धचैतन्य” रक्खा गया। सन्यासीके वेषमें शुद्धचैतन्य-स्वामी अहमदाबादके निकटवर्ती कुथड़ाबाद नामक छोटेसे राज्यमें पहुँचे। दुर्भाग्यवश वहाँ दयानन्दके परिवारवर्गके साथ एक सन्यासीकी भेंट हो गई। उन लोगोंने दयानन्दके पिताकी खबर दी कि शुद्धचैतन्य स्वामी सिद्धपुरके मेलामें जा रहे हैं। शुद्धचैतन्यस्वामी और भन्यान्व छात्रगण जिध समय टरदी स्वामीके साथ

मोक्षकण्ठक मन्दिरमें डहरी हुए थे, उन समय दयानन्दके पिता घर कर उनमें सामने उपस्थित हुए। पिताने इन्हें पुनः घर छोड़नेके लिए बहुत चतुरीय किया। पर उन्होंने एक न माने। पाँचदिन तक मर तरफसे द्वार मने तब गिताने इन्हें कैदियोंको तरह विधाहियाके द्वारा सुपुर्दे दिया। कुछ मो जो दयानन्द कोयलने फिर माग कर पहरमादाहाद पा गये। वहथि माग कर कुछ दिन पाप बड़ीदा राखने रहे। बड़ोनाथ चेतनमठमें कुछ ब्रह्मचारियों पोर ब्रह्मानन्दस्वामीसे पाउका ज्ञान परबान हो मई। रनी कमर पावने पहने पहन बेदान्त पढ़ना रुक किया था। ब्रह्मानन्दस्वामीसे उपदेशमे हो पापका मोक्ष पोर ब्रह्मके एकत्वका भयोमती ज्ञान हुआ था।

इसके बाद पाप कायो पाये। यहाँ प्रबान ब्रह्मान पण्डितके माग पावने परिचय किया। सप्टिद्वानन्द परमह मने योग मिसाके लिए इन्हें नर्मदातीरवर्ती चानीकू कन्याको ज्ञानेकी सहा। दशानन्द वहाँ पहुच गये पोर दोघितेके परिचय होने पर परमानन्द परमह मने गिप्व बन मने। इन्होंने पास रह कर पापने बेदान्तकार, बेदान्तपरिभाषा पाठिका पच्ययन किया था। उनके बाद पाप योग-मिसाक लिए दोघित हुए। बीहो कपर मो इमलिए पक्षि दोघाके विषयमें कुछ बाबा दी, किन्तु पोके इनका पावक देखकर परमानन्द परमह मने दोघा दे कर दण्डपत्रक बना दिया। इस दोघाके समय पाउका नाम हो गया—दयानन्द करन्मो। कुछ दिन बाद दयानन्द चानीकूमें व्यामानममें पहुँचे। योगानन्द नामके एक योगिशास्त्रने इन्हें योग मिसा दी। कुछ समय योगाभ्यास करलेक बाद, योगकी उच्चतम मिसा परमं करलेके लिए पाप पहरमादाहके निकट वर्ती बिबो स्थानमें गये। वहाँके दो टोमिजान पापको कोविधियाके मिय गुन विषयकी मिसा दी। उनके बाद दयानन्द, योगकी मूलन प्रबानो मोषनेके लिए रात्र पुतागाके कमरमें पापु परत पहुँचे।

१८३१ ईमें दयानन्द हरिद्वारके महा-मिक्षामें उपस्थित हुए। कुछ दिन वहाँ ठहर कर पाप ताइहो नामक ज्ञानमें गये। वहाँ माँवाइ तो हाइयो पोर तन्मदाखनो

देखकर पाप बड़े विरक्त हुए। पनगत पाप कोमर का कर बेदारघाटके एक मन्दिरमें रहने गये। यहाँ गङ्गागिरि नामक एक दाय निष्क मासुह पान पावने दयानन्दाका पचयन किया। दयानन्दके पर पाप याप्याय मो करत थे। दो मास बाद म ग्यामियाक थाप पाप बहुरप्रयाग पहुँचे। वहाँमें पचयनाराम गये। उनके बाद उनका उत्तरवर्ती मिशपुर नामक स्थानमें शोत कान स्थलीत कर घिटारघाट पोर मुजकामीमें शोत पाये। चानीकूमें रहते समय माहुदोपसे पाप मीत्रा पोनेमें पच्ययन हो गये थे। एक दिन रातको नयासे बृटकारा पानके तिये दयानन्दने एक मिथमन्दिरमें जा कर पापय लिया। बरामदेमें उपमूर्ति पोर प्रकाश मन्दोमूर्ति का। इहमूर्ति का उदर रिक्त था। महसा दयानन्दका इटि उपमूर्तिके उदरमें स्थिये हुए एक मनुष्य पर पडो। पाप मूर्तिके उदरका द्वार खोलना हो चाहते थे कि उतमें बह स्थानि पुरतोमे निकल कर भाग गया। दया नन्द पम्हारमूर्तिमें प्रविष्ट हुए पोर रात भर पानन्दने सोये। सबैर एक हवा रमयो तब मूर्ति की पूजा करनी पाई। पूजाके समय दयानन्द उपमूर्तिके उदरमें थे थे। कुछ देर बाद इन्होंने दक्षिण पोर गुड़ काकर उपको (मोग) दिया पोर उनके मातर दयानन्दके देख, उन्हें मरहयो उप परमह प्रबान किया एक पाहाग कमर सामने रख दिया। दयानन्द सुजात थे मर था गये। दक्षिण कानेने उनका नया हट पडा। यहाँके फिर वे नर्मदाके उपस्थितस्थानमें बसे गये।

दयानन्द मिय दयामें दुग्ध पोर पचके विधा पोर कुछ पाहाइर न करते थे, पचने पावने पच मो हाइ दिया था।

स ग्यामियोंको तरह पाउका यरोर ज्ञान था। पापका यरोर सुदीव सुन्दर पोर बिनपच बनन था। एक महापाइो पण्डितने पापके विषयमें कहा है—दयानन्द कां पहरमादाहको ताकत रहने थे पोर पाण्डित्य भी उनमें पाँच विधानीका मोशुट था।

दयानन्द मूर्तिपूजाके बिदेमो थे। पचने मत प्रचार के तिये पाप करके दा भयमक किया करत थे। जहाँ जाते थे वहाँ पाप-समात्र नामका ममतिकी स्थापना

श्रीर स्वमतानुयायो भाष्यपहित ऋग्वेद प्रकाशित करते थे। भाष्य आपने स्वयं रचा है। इस भाष्यमें आपने मूर्तिपूजा प्रतिपादन श्लोकोके भाष्यकी अन्यरूप व्याख्या कर एकेश्वरवादका प्रतिपादन किया है। दयानन्दके भाष्यका सर्वत्र आदर नहीं होता।

दयानन्द कलकत्ते भो आये थे। सभी उनके लिये आग्रहान्वित हुए थे। बङ्गानके प्रसिद्ध व्यक्ति केगवचन्द्र सेनने इन्हें अपने मकान पर ठहराया था। केगवचन्द्रके मकान पर एक प्रकाश्य सभामें आपका व्याख्यान हुआ था। आपकी भाषा सरल और सतेज थी। संस्कृतमें हो आपकी बातचीत होती थी। वक्तृता हिन्दीमें भो देती थी। बम्बईमें अरब सागरके किनारे आपका एक आश्रम था। आप पुराणोंके उपाख्यानो पर विलकुल विश्वास न करते थे। कोई यदि "रूपक" कह कर उनकी व्याख्या करता था, तो आप बड़े जोरसे बोल उठते थे,—“सब झूठे बातें हैं।” बम्बईमें रहते समय आपने गुरुआ वसन छोड़ दिये थे और नानापाठकी धोतो पहना करते थे।

आपने लाहौरमें एक वक्तृता दी थी, जिसके अंतमें कहा था—प्राणायाम द्वारा योगमार्ग प्रवलम्बनके सिवा ब्रह्मप्राप्तिका अन्य कोई उपाय नहीं है। जो योगके भीतर प्रवेश नहीं कर सके हैं, वे धर्ममन्दिरके बाहर घूम रहे हैं।

दयानन्द अजमेरमें, ३० अक्टोबर शनिवारकी शामके ६ बजे, उनसठ वर्षकी उमरमें परलोक सिंधारे थे। बहुतसे लोग आपके शवके पीछे पोछे गये थे। दो मन चन्दन, आठ मन सामान्य काठ और टाई सेर कर्पूर आपकी चितामें दिया गया था।

इस समय, दयानन्दद्वारा प्रवर्तित “आर्यसमाज” विधवाविवाह आदि कार्योंके प्रचारमें अग्रसर हो रहा है। दयानन्दने ‘सत्यार्थप्रकाश’ नामकी एक पुस्तक लिखी है, जिसमें साम्प्रदायिक द्वेष भरा हुआ है। यह ग्रन्थ स्वमतकी मुष्टिके लिए लिखा गया है।

दयानाथदुवे—हिन्दीके एक कवि। सन् १८३२ ई०में इन्होंने जन्म ग्रहण किया था। इनका बनाया हुआ प्रेम-सम्बन्धी एक ग्रन्थ मिलता है जिसका नाम है “भानन्द रस।”

दयानिधान (सं० पु०) दयाका पुञ्ज, बहुत दयालु पुरुष।

दयानिधि (सं० पु०) १ वह मनुष्य जिसके चित्तमें बहुत दया हो, बहुत मेहरवान आदमी। २ ईश्वरका एक नाम।

दयापाल (सं० पु०) वह जिस पर दया करना उचित हो। दयानिधि—वैसवाड़ेके रहनेवाले एक हिन्दी कवि। ये १७५४ ई०में जन्मे थे। राजा अचलमिहकी आज्ञामें इन्होंने शालिहोत्र नामक एक ग्रन्थ लिखा था।

दयापाल—१ रूपसिद्धि नामक शाकटायनके मतानुसार एक संस्कृत व्याकरणके रचयिता। २ अह्म देशके एक राजाका नाम। (म० ब्रह्म० २०।४०)

दयामय (सं० त्रि०) दया-मयत्। १ पल्लव दयालु, दयासे पूर्ण। (पु०) २ ईश्वरका एक नाम।

दयार (हि० पु०) १ देवदारका पेड़। (प्र० पु०) २ प्रांत, प्रदेश।

दयाराम—१ एक विख्यात स्मार्त पण्डित। इन्होंने दान-प्रदीप, पदचन्द्रिका, स्मृतिसंग्रह नामक संस्कृत भाषामें कई धर्मशास्त्रोय ग्रन्थ प्रकाश किये हैं। २ शालग्राम-शिलामाहात्म्यके रचयिता। ३ देवकोनन्दनके पुत्र। इन्होंने ‘रसमानस’ नामक एक संस्कृत वैद्यक ग्रन्थकी रचना की है। ४ काशमोरवासी साङ्ख्यरामके पुत्र। इन्होंने लिङ्गपुराणकी टीका प्रणयन की है। ५ दिदभीके रहनेवाले एक कवि। ये जातिके ब्राह्मण थे। इनके पिताका नाम लक्ष्मिराम था। इन्होंने २२० पृष्ठका ‘दया विलास नामक एक ग्रन्थ बनाया है। ये १७७२ ई०में विद्यमान थे। ६ हिन्दीके एक कवि। ये जातिके वैश्य थे। इन्होंने सीताचरित उपन्यास और मनुस्मृतिपालहा नामके दो ग्रन्थ बनाये हैं।

दयाराम त्रिपाठी—हिन्दीके एक कवि। इनका जन्म सन् १७१२ ई०में हुआ था। इनकी कविता प्रधानतः शास्त्र-रसकी और भुक्तो हुई होती थी। इनका “अनेकार्य” भी प्रसिद्ध है।

दयारामनाचसति—सुम्बोधके एक टीकाकार।

दयार्द्र (सं० त्रि०) दयासे भीगा हुआ, दयालु।

दयास (सं० पु०) मौठीबीसो बोचनेवाली एक चिड़िया।

इयासं—१ हिन्दीके एक कवि । जे मुबारको ब्राह्मण छि ।
 मन् १८८३ ई०में जे जोडित छि । इउके पिताका नाम
 मोम कवि छ। इनको बनाई हुई दानदोषक नामक
 पुस्तक मिलती छै ।

२ बनारसवासी एक हिन्दो कवि । इन्होंने रामि
 माता नामकी पुस्तक रची छै । जे जातिव काव्य छि ।
 इयासनि इ—इनका पूरा नाम मर्दोर दयासनि क मजो
 किया बा । इनका कथ पञ्चावने एक प्रतिष्ठित सिक्क
 कुम्भमें १८८६ ई०में हुआ छ। इनका परिवार
 दासमोन्ताके सिधे प्रतिष्ठ छै । इनके पितामह मर्दोर
 देगामि क काटोके नेता छि । मधाराज रचबित्ति इन
 देगामि इको इनके समरकोमल पौर-उनके पन्थपुर्वी पर
 प्रबन्ध जो कर कन्ने पन्थतमरका यामनकर्ता बनाया ।
 दयासनि इके पिता सिद्धनामि क जानका शिनाके शिष्य
 पति छि । १८३३ ई०में जब इनके पिताका दिहाय्य हुआ,
 तब इनको पचवन्ना बेचन इ अर्धको जो । कोट पाप
 बाईको सिद्ध ईकमें इनको पन्थतिका प्रबन्ध पौर
 सिधा होने लगो । इन्होंने योद्धो प वरीको पौर फारसी
 भाषाधेनि पमिप्रता प्राप्त कर लो । पपकी सम्पत्तिका
 पबिहार मिल आनि पर जे दो अर्ध तब इइके प्थमें जो
 रछे छि । वही इनको खुद ध्यातिर हुई छो । यइवे लोट
 कर इन्होंने देगम सामाजिक पौर राजनोतिक विषयो
 को रचति करनेके सिधे प्रबन्ध किया बा । जे पञ्चावके
 राजनोतिक नेता छि । पञ्चावके प्रधान प मरेको पस
 'हिन्दी' जे जे प्रतिष्ठता छि । मरये समय इन्होंने
 पुस्तकालयके सिधे ६० हजार रुपयेका एक दानपत्र
 लिख दिया या । कावेर खोलनेके सिधे इन्होंने जो
 कल्पित दो जो कलका मूल्य १३ लाख रुपये छै । जे
 कावेरके कलकाकोमिसे एक छि । इन्हीको कहायतासे
 काकोमि कावेरका पबिचैसन हुआ या । १८०३ ई०में
 इनको मरु हुई ।
 दयासु (क० लि०) दयते इति दय-वासु । (रघुके पछेठ
 प ३।१।१३८) इयासुक्त, दयावान् । इउका पर्याय—
 कावचिक कयासु पौर सुत छै ।
 दयासुता (क० ली०) इका करनेकी प्रकृति, दया होने
 का भाव ।

दयासु यमन्—गोपालकृष्णनाममूयके रचयिता ।
 दयासु मिय—कवीन्द्रचन्द्रोदयसुत कवि ।
 दयासुत (हि० लि०) इयासुक्त, दयासु ।
 दयासुत् (स० लि०) इका विद्यतिपत्र, दय-मनुप् मय
 क । दयासुक्त, इयासु ।
 दयासुतो (हि० लि०) १ दया करनेवाली । (ली०)
 २ अथमप्यरको तीव्र श्रुतिधेनिसे पइको श्रुति ।
 दयावान् (हि० पु०) जिसके चित्तमें दया हो, दयासु ।
 दयावीर (स० पु०) इयया वीर इतत् । १ इयासुक्त
 वीर, वइ मनुष्य जो वृष्टकेके दुःख दूर करनेके लिए प्राण
 तक छे सक्ता छै । २ इयासुक्त नायकमेंद वीर-रमके
 कथकमें वार नायकोका कथक छै—दानवीर, धर्म वीर,
 दयावीर, वीर सुहवीर ।
 इयामहर—१ एक विख्यात धर्म प्रोफेसर पण्डित, धरको
 पछे पुत्र । इनका बनाया हुआ माहापनीव पुष्करोक्त
 ज्ञानपथोप पत्रमेंसे प्राप्त होता छै, कि छि १०५६ ई०में
 जोडित छि । इनके बनाए हुए कई एक पत्र छै जिन
 मेंसे कुछके नाम जे छै—
 अथरपवति आधानपवति, उपक्रमविधि, भोईदेविक
 पवति आनकर्मोदि समावस नामप्रयोग, तिथिनिर्णय
 इयं आद्यप्रयोग, दानप्रदीप, मोतिनिर्णय, वीथरीकज्ञान
 प्रयोग, रत्नाकर, बालुचन्द्रिका, इतिवाहविधि, ज्ञतोषा-
 पनकोमुद्रोपमाद्य, यदिरज आद्यपवति, आद्यप्रयोग,
 दोषाधिकान्तक, धाम्यज्ञानोपनिषदोका, धाम्यज्ञानपत्र
 इति, माहायनमन्त्रप्रवृत्तका प्रयोगदोष यामतकको
 दोषा पादि ।
 २ पनुभवप्रवृत्तनवादके रचयिता ।
 ३ पददोषिका, प्रबन्धनोरमठोका पौर महाारिपवति-
 टीकाके प्रथिता ।
 ४ विविधाकलिका नामक केषक प्रबन्धकार ।
 दयासुक्त (स० लि०) इया एक शील बन्ध । दयासु,
 इयावान् ।
 इयासुपी—हिन्दीके एक कवि । जे रसपदकी पनेक
 कवितार्य बना मय छै । इनकी कविता प्रथ समय
 होती छी । उदाहरणय एक कीछे छि छै—
 'पविता वा कावेरी मोरी कविजन वरत प्रक' ।

सछन अछन गछे अलत्रेनी निरखे नवेली बाल ॥

रंग भरी गोरी गई घोरी करत अटपटे खाल ॥

दशावस्त्री घनदाम लारटे भुज मर करत निहाल ॥'

दयासागर (सं० पु०) जिसके चित्तमें अगाध दया हो,
अत्यंत दयालु मनुष्य ।

दयासागर—एक जैन मुनि ।

दशमुन्दर—शशोधरचरित्र नामक संस्कृत जैन ग्रन्थके
रचयिता । ये जातिके कायस्थ थे ।

दयित (सं० पु०) दय-क्त । १ पति । (त्रि०) २ प्रियपात्र,
प्यारा ।

दयिता (सं० स्त्री०) दयित-टाप् । भार्या, पत्नी, स्त्री ।

दयिताघोन (सं० पु०) दयितायाः अघोनः । स्त्रीके वशो-
भूत, जोरूका गुलाम ।

दयित्वा (सं० त्रि०) दय-इत्वा । दयाघोन, दयालु ।

दयू (सं० त्रि०) देव क्लिप्त-जट् । देवनकर्त्ता ।

दर (सं० स्त्री०) १ शर । २ गर्त, गड्ढा, दरार । ३ भय,
डर । ४ कन्दर, गुफा । (पु० स्त्री०) ५ पर्वतगुहा,
पहाड़की कन्दरा ।

दर (हि० पु०) १ सेना, समूह । २ स्थान, जगह । ३
जुलाहीकी तानिकी डंडियां गाड़नेका स्थान । (स्त्री०) ४
भाव, निर्ख । ५ प्रमाण, ठोक ठिकाना । (त्रि०) ६
किञ्चित्, थोड़ा, जरासा ।

दर (फा० पु०) द्वार, दरवाजा ।

दरक (सं० त्रि०) दर भये कृत्रादिभ्यो वुन्ः इति-
वुन् । भीरु, डरपोक, कायर ।

दरक (हि० स्त्री०) वह दरार जो जार या टाव पढने
से हो जाता है ।

दरकण्टिका (सं० स्त्री०) दर ईषत् कंठी यस्याः कण्-
टापि अत इत्वं । शतावरो, सतावर नामको औषध ।

दरकच (हि० स्त्री०) १ वह चोट जो जोरसे रगड़ या
ठोकर खानसे लगे । २ वह चोट जो कुचल जानसे लगे ।

दरकटी (हि० स्त्री०) भाषका ठहराव, दरकी मुकररी ।

दरकना (हि० स्त्री०) विटाण हीना, चिरना ।

दरका (हि० पु०) १ विदीर्ण होनेका चिह्न, दरार । २ वह
चोट जिससे कीई वस्तु दरक या फट जाय ।

दरकाना (हि० स्त्री०) १ फाड़ना । २ फटना ।

दरकार (फा० वि०) आवश्याक, जरूरी ।

दरकिनार (फा० स्त्री० वि०) घुघक, अन्नग, दूर ।

दरकूच (फा० स्त्री० वि०) बराबर यात्रा करना हुआ ।

दरखान्त फा० स्त्री०) १ निवेदन-प्रार्थना । २ प्रार्थना-
पत्र, निवेदन पत्र ।

दरख्त (फा० पु०) वृक्ष, पेड़ ।

दरगाह (फा० स्त्री०) १ चौखट, टेढ़री । २ दरवार,
कचहरी । ३ किमी सिंहपुत्रका समाधिस्थान, मक-
बरा, मजार । ४ मठ, तोय स्थान ।

दरगुजर (फा० वि०) १ वृद्धित, अलग, बाज । २ जमा
प्राप्त, सुभाष ।

दरगुजरना (फा० स्त्री०) १ त्यागना, छोड़ना । २ जमा-
करना, सुभाष करना ।

दरङ्ग आसाम प्रदेशके अन्तर्गत एक जिला । यह अक्षा०
२६° १२' से २७° ३०' और देशा० ८१° ४२' से
८३° ४०' पूर्वमें अवस्थित है । भूपरिमाण ३४१८ है ।
इसके उत्तरमें भूटान, टोबङ्ग और अरुणा तथा दक्षिणा
पहाड़; पूर्वमें नखिमपुर जिला और मङ्गलदई नदी,
दक्षिणमें ब्रह्मपुत्र और पश्चिममें कामरूप है ।

यह जिला भैरवी और ब्रह्मपुत्रनदीके मङ्गल पर
अवस्थित है । तेजपुर इस जिलेका सहर है ।

बहुतसो बड़ी तथा छोटी नदियां इस प्रदेश
हो कर प्रवाहित हैं । २०० से ५०० फुट ऊंचे अनेक
छोटे छोटे पहाड़ हैं । यह प्रदेश वन और जङ्गलमय है ।
यहां सब प्रकारके हिंस्र जन्तु पाये जाते हैं, शिकारीको
बाघका शिकार करनेमें २० रु०, चोता बाघ मारनेमें
५ रु०, भालू मारनेमें १० रु० और हरिण मारनेमें
२५ रु० तक दिये जाते हैं । जंगली हाथी कभी कभी
अनाज बहुत नुकसान करता है ।

ब्रह्मपुत्र दरङ्गको सबसे प्रधान नदी है । इसकी पाँच
मुख्य शाखायें हैं—१ भैरवी, २ धिलादरो, ३ धनि-
श्वरो, ४ नोनाई और ५ बड़ो नदी । इनके सिवा यहाँ
और भी २६ छोटी छोटी नदियां बहती हैं । यहाँ बृहद
एक भी नहीं है । खेतोको सुविधा तथा ब्रह्मपुत्र नदीका
बाढ़ रोकनेके लिये दो बाँध हैं ।

आसामसे घुघक, इतिहास दरङ्गका नहीं है । पुरा-

तत्र घोर खानीय परम्परागत प्रवादके ज्ञाना जाता है कि पुराखानमें ब्रह्मपुत्र नदीकी उपशखासे निकल बहुत दूर तक चिन्मू सभ्यता फैली हुई थी। तत्रपुर नगरके चारों ओर पहाड़ समूह पर बड़ाकाष्ठ मन्दिर घोर प्रानादके जो सब ध्व सावयेय हैं उनमें मानस होता है कि ये ध्व मन्दिरादि किसी विविध जमानतयक जातिसे बनये गये थे और ये लोग किसी प्राक्रमक कारोसे विवह हुए थे यह लक्ष्मि पद्यमान किया जाता है। कोई कोई कहते हैं कि, ब्रह्मण्डि पतिपति युद्धमानके विनापति जाकापहाड़ने ही य सब ध्व विधातक काम हुए थे। फिर कोई कहते हैं कि यह बाहराजके साक जोलपके बुद्धका प्रक है। चिन्मूराजके पतनके बाद पासासक पन्थान्ध प्रदेशोंको नाई दरङ्ग पुनः पसम्भोक दखमें आ गया। ब्रह्म देवके पहाड़के पाई हुई धानक मोडूत पाहोम जाति तिरुचौ यताम्होको ब्रह्मपुत्रको उपखखामि प्रयेय कर बीरे जोरे भीषिको घोर पधसर हुई थी। य गरीजोके धाममन काक तक इन्होंने जो इस खानको पपने पधिधारमें कर रखा था। उत्तरमें पयत नये जाका प्रदेश पाहोमराज प्रतिवर्ष ८ मजोनिधे सिन्धे सुटियाको धान पादिको फसल कपजानेके सिन्धे द्वीप घोर इसके बटके उनसे प्रतिवर्षके कल्प इन्धोमिधे कुछ पय सी छिनि थी। बर्षके धिय पार मान पबाल पावाङ्कसे पाखिल तक से खय जो इस प्रदेशके ऊपर राज् करते थे। य गरीजोके १८२६ ई०में पासास जीत जानेके बाद मो कुछ दिनी तक बडो मन्धोपल चलता रहा। चिन्मू १८३० ई०में सुटियाका खान कामा कर लके बार्धिक १००५ ब० दिने काम लगे। इस विवादी जमीनके प मरिच सरकार ११८२५ ब० राखल पाने लगे।

जिन सुटियाको कथा ऊपर लिखी गई है, वे भूटान राज्के अधीन नहीं, बल्कि तासा गवर्मेण्टके पधीन हैं। ये तिम्पतिथि साक कूब खबहाय करते हैं। सुटियाके पनाका पूर्व दिग्गामि पका वा डली नामक एक छोटी जाति बाल करतो है। ये बार्धिक १००५ ब० कर पाने हैं। यहाँ तक कि ल्कोंने १८२१ ई०में भी एक प्रदेशका दावा करके इटिच पधिकार पर दखल जमाया था। कदा रेकी।

घरने घोर मो पुर्बमें दखला नामक एक जाति है। ये १८०२ ई०में पमतोना याम पर पाक्रमक कर बर्षके बहुतसे मनुष्यो को खैद कर ले गये थे। चिन्मू १८०७-०९ ई०में एक दख मनामे लके लहार किया। दख्य रेका। यहाँको लोचस क्या प्राय २१०१२१ है।

दरङ्गको पधिवासियोमें पयम्भ जाति जो प्रधान है। इनमेंसे ककारो, रामा घोर लोचको स क्या पधिच है। इनके भिवा पाहोम, सुटिया सुटिया, दखला मारो, धिय पादि घोर मो कई एक जातियां हैं। यहाँके समी सुसलमान लुचो है घोर इनको पयखा कूब बडो पडो है। ककारिओमें बहुतोंने ईसाई धर्म पयलम्भन किया है। यहाँ एक गिरजा घोर बहुतसे मिगनरो खल है। मवर्मेण्ट बार्धिक ११०५ ब० पल्लके लकके सिन्धे देता है। १८०२ ई०को तंत्रपुरमें एक ब्राह्म-समाज स्थापित हुआ है।

तिरुपुर जो इस जिलेका पयथी बडो शहर है। इसके भिवा बिम्बनाक इवासा, मोहनपुर, लखवाङ्को घोर कुदवागीब नामक कई एक नाबिम्भप्रधान ग्राम हैं। यहाँ चावल ही प्रधान शय है। चावल दो प्रकारका होता—एका गासो वा पामन, यह योतकाजमें काटा जाता घोर यको प्रधान खाद्य है। २१ पाठस—यह पोच खानमें काटा जाता है। धान काटनेके बाद सरसो मटर, करट पादिको फसल होता है।

यहाँके खपचोबी पयखा कराय नहीं है। ये पय मॅण्डको खास जमीन दखल करतें हैं ल्केंकि इन लोयो में ऐसी चमता है। जिनके पाप जमीन नहीं है वा कर सेनेको भी चमता नहीं है, वे मो साधारणतः मजदूरी करने लगे जाते।

दरङ्ग न लो बाङ्कके लकसे प्रानित होता घोर न इटिचे पभाबने मो खट पाता है दुमिचका यहाँ नाम मो नहीं है। बर्षमान यताम्होके प्रथम भागमें एक बार पयामका खट हुआ या बड मो सिर्फ ब्रह्मदेश नासियोके पाक्रमकके कारण न कि इटिके पभाबसे।

ऐयम तुनना जो यहाँका एक मात्र मिल्ककर्म है। ऐयम दो प्रकारका होता है। एडिया घोर सुय। यहाँ बहुतसे सोन लून खातके लुनते घोर र मते हैं। ऐयम

वध्न दुननेके सिवा कई जगह पीतल और मिट्टीके बरतन भी तैयार किये जाते हैं ।

चायकी खेतो यहाँ देवना साइकोंके हाग हो की जाती है और लगभग दो सौ चायके वागीचे हैं ।

वहाकी रफतना द्रव्योमि चाय, सरसों और रेगम वख्र हो प्रधान है । चाय-वागीचोंके निकटस्थ म्यानोंमें प्रति ममाइ मेला लगता है । कहीं कहीं वार्षिक मेला भी हुआ करता है । यहा मुटिया लीग छोटे छोटे घोड़े, कबूतर, लवण, मोम, स्वर्ण, लाला प्रभृति बेचते हैं ।

ब्रह्मपुत्र नदी द्वारा स्टोमर पर सध समय आ जा सकते हैं । इसके सिवा जाने आनेके दूसरे रास्ते बहुत थोड़े हैं । आशाम-रास्ता (Assam Northern Trunk Road) नामक एक प्रगस्त रास्ता दरङ्गके एक प्रान्तसे ले कर दूसरे प्रान्त तक प्रायः १४३ मील चला गया है । आशाम-बङ्ग-रेल पथसे (Assam Bengal Railway) इस प्रदेशमें जाने आनेको बहुत सुविधा हो गई है ।

यहां ५ थाने लगते हैं । तेजपुरमें निलिका सदर, मजिस्ट्रेटको अदालत और अन्यान्य कर्मचारियोंके कार्यालय हैं ।

बङ्गालके अन्यान्य प्रदेशोंको नाई यहाँ गिलाको उन्नति देखी नहीं जाती । तेजपुरमें एक गवर्मेण्ट अंगरेजी विद्यालय और मिशनरियोंका एक नार्मल स्कूल है ।

सविराम ज्वर, आमाशय आदिरोग यहाँ प्रायः हुआ करते हैं । यहाँ दो दातव्य औषधालय भी हैं ।

दरङ्गिरि—आसाम प्रदेशके गारोपहाडके अन्तर्गत एक ग्राम । यह सोमेश्वरो नदीके किनारे अक्षा० २५' ४६ उ० और देशा० ८०' ५६' पू०में अवस्थित है । इसके निकट १० मील लम्बो और ६ मील चौडो एक सुन्दर कोयलेको लमोन है । यहाँ यथैष्ट कोयला पाया जाता है ।

दरज (हि० स्त्री०) दरार, दर्राज ।

दरजन (हि० पु०) दर्जन देखो ।

दरजा (हि० पु०) १ दर्जा देखो । २ नोहा टालनेका एक यन्त्र ।

दरजिन (हि० स्त्री०) दर्जिन देखो ।

दरजी (हि० पु०) दर्जी देखो ।

दरण (सं० पु०) १ दलने वा पीसनेकी क्रिया । २ ध्वंस, विनाश ।

दरणि (सं० पु० स्त्री०) दृ विदारणे अग्नि (इणातेरप्यतिः । उण् २।१०३) कृत्तभङ्ग, नदीके किनारेका टूटना । इसका संस्कृत पर्याय—कृत्तहण्ट और कृत्ततण्डुल है ।

दरथ (सं० पु०) दृ-विदारणे अथ । १ प्रसरण, चारों ओरका फैलाव । २ गर्त, गड्ढा, दरार ।

दरट्ट (सं० स्त्री०) दृनाति द-विदारणे अटि (श्दमसो ऽदिः । उण् १।१२८) १ अट्टि, पर्वत, पहाड़ । २ प्रताप, भरना । ३ भय, डर, खोफ । ४ अस्ति जाति । ५ देश-विशेष, एक देशका नाम । ६ तोर, किनारा ।

दरद (सं० स्त्री०) दृ इषत् टायति श्रध्यतीति, टे-क । १ हिङ्गुल ईंगुर, सिंगरफ । इसके पर्याय—दरद, स्त्रेच्छ, चिवाङ्ग और चूर्ण पाएट हैं । दरद तीन भागोंमें विभक्त है—चर्मर, शुकतुण्डक और हंसपाद । ये तीनों यथाक्रम एक दूसरेसे अधिक गुणदायक है, अर्थात् चर्मरसे शुकतुण्डकमें और शुकतुण्डकसे हंसपादमें विशेष गुण है । चर्मर श्वेतवर्ण, शुकतुण्डक पीतवर्ण और हंसपाद जवापुष्प सरोखा लोहितवर्ण होता है । हंसपाद हिङ्गुल ही सर्वाङ्कट है । औषधमें दरदका व्यवहार करनेमें हंसपादहो प्रशस्त है । गोघित हिङ्गुलका गुण—तिक्त, कषाय, कटु, रस एवं चक्षुरोग, कफ, पित्त, कुष्ठ, ज्वर, कामला, प्रीहा, आमबात और गरदोषनाशक है । हिङ्गुलकी पोस कर ऊर्ध्वपातनके नियमानुसार उमरु-यन्त्रमें पाक करके जो रस बनता है, वह स्वभावतः विषहृ है । अतः उसे शोधन करनेको जरूरत नहीं पड़ता ।

दरद शोधन विधि—भेंड़ोंके दूध और अन्नवर्ग द्वारा यन्त्रके साथ सात बार भावना देनेसे हिङ्गुल शोधित होता है । हिङ्गुलसं रस निकालनेमें उसे कामजी नानू अथवा नीमके पत्तोंके रससे एक पहर तक पोस कर पारेकी नाई ऊर्ध्वपातन करते है । पोंछे ऊपरके पात्र-संलनन रसको ले लेते हैं । यह शुद्ध और हितजनक होता है । सुतरां सभी कार्योंमें इसका प्रयोग कर सकते हैं । (भावप्र०)

रसेन्द्रसारसंग्रहमें इस प्रकारके हिङ्गुलकी हिङ्गुल, शुकतुण्डक और रसगन्धक नामसे उल्लेख किया है । रसेन्द्रसारसंग्रहके मतसे इनको शोधन-प्रणासो—पहले

अथर्ववेद की भाव पीछे अँसके दूधके हाव पोसनेके विज्ञान कोचित होता है। दूसरी विधि—मे कृषिके दूधमें सात बार और अथर्ववेदमें सात बार मानना देनेसे भी यह घोषित होता है। तीसरी विधि—अँसीरी मोबूके रसके दोषयुक्त इसे पाक कर अथर्ववेदमें सात बार मानना देनेसे यह विज्ञान होता है। रसमन्थक विद्रुल देवनेमें खरबूतिके फल सेना लगता है और सबसे कमटा होता है। विषय विद्रुल, भिड़ और कुठकारक, क्विकर, कलप्रह, मेंका और पत्थिबर्षक है। (रहेभकारकप्रह १)

द्वि श्रम देखो ।

२ देवविधीय काश्मोर और हिन्दूकृत्य पर्यंतके प्रयोग का प्राचीन नाम। उच्चकचित्तानि इस देवको ईमान कोचमें कित्त बतनावा है। क्लिष्टिन पात्रकस जो दारद नामको पहाड़ी भाति है उच्चका बासकान कदाच गिचमित, चित्रपाक, मानर वृत्रा पादि क्यानि हो है। प्राचीन यज्ञानो और रोमन लेखक भी इस ज्ञानिका निनामकान हिन्दूकृत्यके पाठ पाठ हो बतला गये हैं। (इष्टवर्ष १६ अ०) १ दरद देगविधीय, घोडमित्रमोषक, तख राखा ना धच, बहुपु पको सु। दरद देगवाले, दरद देगके लोग। इ दरद देगके राखा। दरद देग बासोके पर्यंत दरद मन्द बहुबचनान्त होना चाहिये किन्तु पायप्रयोगमें कहीं कहीं एक बचनान्त भी देखा जाता है। क्या—

“कालदाकन दररो निरेहविधितित्यवा ॥”

(हरिद क ८१ अ)

१ स्पेष्क भातिमेंद । इन ज्ञानिके जोम पहले कश्चिद थे, पीछे उपन्यक्तको प्राप्त हो गये हैं। पार देखो ।

मनुस्मृतिमें लिखा है कि पोष्क, पीड, अविह काञ्चीक, जवन, यच, पारद, पञ्च बीज, चिरात, दाद और चयके सत्र देगोइन सत्रिय लोग जयनवादि व श्कार विधीन हो जाने और श्राद्धघोषा पर्यन्त न पर्यन्त मूत्रकली प्राप्त हो गये हैं। पात्रकस दरद नामका भाति काश्मोरके पाठ पाठ कदाचपि के कर मन्त्र-पु का और चित्राक तख पाई जाती है। इस ज्ञानिके जोम अविधाय सुसलमान हो गए हैं। क्लिष्टिन यदि इनका भाषा और रीति नोतिको और इडि जाती पाठ

तो पैसा प्रगट होता है, कि ये लोग पायकुसोप्यक हैं। सुसलमान हो जानेके कारण ये जागरी पत्तरीका अथ वार करतें हैं सङ्गे, मगर इनको भाषा काश्मोरोके बहुत कुछ मिक्तो सुसतो है। (त्रि०) दर मय ददाति टा क । १ मयदावक मयहर ।

दरद (पा० पु०) १ कट पोड़ा, अथवा । २ कदवा, सहायमूर्ति दया, तसं । निरेप ररमें देखो ।

दरदर (पा० जि० वि०) दार दार, दरनामि दरबानि ।

दरदरा (हि० वि०) त्रिविके कच लूठ हो, जो खुब बारीक न पीसा हो ।

दरदराना (हि० जि०) बहुत बारीक न पोसना पीड़ा पोसना ।

दरदरो (हि० नि०) त्रिविके रसे मोटे चीं ।

दरदमत (पा० वि०) १ छयासु, दयासु । २ पोषित दुबो ।

दरदमान (पा० पु०) दालानके बाहरका दालान ।

दरद (हि० पु०) दर देखो ।

दरपन (हि० पु०) दर्यक पादना गीमा ।

दरपना (हि० जि०) १ श्लोक करना । २ पञ्चहार करना ।

दरपनी (हि० जो०) जोडा पादना ।

दरपरदा (पा० जि० वि०) शिवाकर, पाङ्गुमि ।

दरपिय (पा० जि० वि०) सन्धुच सामने ।

दरप (हि० पु०) १ बन, दीलत । २ घातु । ३ एक प्रकारकी बादर जिसका बिनारा मोटा हो ।

दरबर (ब० पु०) इरेतु मर्हनु बरा खँठ । पाथ लख मर्ह ।

दरबहाप (हि० पु०) कड़े हुए बलकालिरीका एक प्रकारका मद्य ।

दरबा (पा० पु०) १ बाडका बार्निदार स कूच बिममें कर्त्तर पादि रखे जाते हैं । इनके एक एक स्थानमें एक एक पत्थी रखा जाता है । २ किसी पत्थी वा जीवके रङ्गिका हीवार वा पीङ्गका खोटर ।

दरवान (पा० पु०) दारवान, इ योडीदार ।

दरबानो (पा० जो०) दारवाणका काब दरवानका नाम ।

दरबार (पा० पु०) १ राजा याकमिर्षके साथ निय कान

पर बैठ कर राजकीय कार्य करते हैं, उसीका नाम दरवार है। २ राजसभा, कचहरी। ३ महाराज, राजा। ४ अमृतसरमें सिद्धोंका मन्दिर। इसमें अन्य साहज रखा हुआ है। ५ द्वार, दरवाजा।

दरवारदारी (फा० स्त्री०) १ राजसभामें उपस्थिति, दरवारमें हाजरी। २ किसीके पास बारवार जाकर बैठने और विनती करनेका काम।

दरवारविलासो (फा० पु०) द्वारपाल, दरवान।

दरवारी (फा० पु०) १ राजसभाका सनामट दरवारमें बैठनेवाला आदमी (वि०) २ राजसभाके योग्य, दरवारके लायक।

दरवारी कान्हड़ा (फा० पु०) एक प्रकारका नाग। इसमें श्व कृपभके अतिरिक्त शेष सब कोमल स्वर लगते हैं।

दरभ (हि० पु०) दर्भ देवी।

दरभङ्गा—विहार प्रदेशके तिरहुत कमिश्नरीके अन्तर्गत एक जिला। यह अक्षा० २५°२४'से २६°४०' उ० और देशा० ८५°३१'से ८६°४४' पू०में अवस्थित है। पहले यह पटना कमिश्नरीके अन्तर्गत था। १८७५ ई०के जनवरी महीनेमें तिरहुत जिलेको विभाग कर स्वतन्त्र दो जिले कर दिये गये। उसी समय तिरहुत जिलेके पूर्वावस्थित दरभङ्गा, मधुवनो और ताजपुर उपविभाग लेकर दरभङ्गा जिला सङ्गठित हुआ। इस जिलेके उत्तरमें नेपाल राज्य, दक्षिणमें मुङ्गेर और गङ्गातटी, पूर्वमें भागलपुर और पश्चिममें मुजफ्फरपुर है। जिलेको लम्बाई ४८ कोस है। भूपरिमाण ३३३८ वर्गमील और जनसंख्या लगभग २८१२६११ है। यहाँ ब्राह्मण, वाभन, राजपूत, अड़ोर, दुसाध, धालुक, कीदरो, मज्राह, चमार, केवट, कुर्मी, मुमहर, ताँतो और तेलो आदिकी संख्या अधिक है। इनके अलावा सुमलमान और ईसाई भी हैं। जिलेमें ग्राम और बाँसके उद्यान यथेष्ट हैं।

वाघमती, गण्डक, छोटी गण्डक, कराइ, कमला, तिलहृगा आदि नदियाँ प्रधान हैं। २० वर्गमील परिमित तालवहनेना नामक झड़ जिलेमें सबसे बड़ा है। इस जिलेमें धानके बड़े बड़े पौधे लगते हैं जिनकी ऊँचाई ८ से १२ हाथ तक होती है। धान, तोसो, नील, मरसी, गेहूँ, महुआ, मसुरो, कीदाँ, चना, उरट, मूँग,

जुन्दरो, बारलो, तमावू आदिकी उपज अच्छी होती है। अलोपुर परगनेमें धानकी खेती अधिक होती है। नोनका व्यवसाय अन्नरेजोंके अधिकारमें और चीनी हिन्दुस्तानिके अधिकारमें है। ताजपुरके अन्तर्गत पूसा नामक स्थानमें तमावूकी कोठी स्थापित हुई है। यूरोपीय और अमेरिकन कृषि-प्रणालीके अनुसार तमावूको खेती और सुखत तैयार होता है। जिलेमें ४ शहर और ३२३३ ग्राम लगते हैं। मधुवनामें संस्कृतके कई एक विद्यालय हैं। ज्वर ही यहाँकी प्रधान व्याधि है।

२ इसी जिलेका प्रधान उपविभाग। यह अक्षा० २५° ३८' से २६° २६' उ० और देशा० ८५° ४१' से ८६° ४४' पू०में पड़ता है। भूपरिमाण १२२४ वर्गमील और जनसंख्या लगभग १०६५५८५ है। इसमें एक टोपानी और ५ फौजदारी अदालत हैं; तथा टम्भनी एवं नसेरा नामके दो शहर और १३०६ ग्राम लगते हैं।

३ दरभङ्गा जिलेका प्रधान शहर। यह अक्षा० ३६° १०' उ० और देशा० ८५° ५४' पू० छोटी वाघमती नदीके किनारे अवस्थित है विहार प्रदेशके मध्य यही तीसरा शहर है। लोकसंख्या प्रायः ६६२४४ है जिनमेंसे हिन्दू ही अधिक है। शहरमें म्युनिसिपलिटो और बड़े बड़े मनोरम सरोवर हैं।

दरभङ्गा शहर सभवतः सुमलमान नगरी था। कोई कोई कहते हैं, कि टम्भनी वाँसि यह नगर स्थापित हुआ है। किसीका अनुमान है कि हारवडसे दरभङ्गा नाम हुआ है। अमरख पुष्करिणी देख कर बहुतसे लोग कहते हैं, कि येनानिवास स्थापन करनेके निवे प्रचुर मटो लो गई थी और वे हो गत्त पुष्करिणीके रूपमें परिणत हो गये हैं।

शहरके चारों ओरको जमीन बहुत नीची है और प्रायः वाघमती और कमलाको बाढ़से डूब जाती है। यहाँके बाजार बहुत बड़े बड़े हैं, हाट प्रतिदिन लगता है। तिरहुत स्टेट रेलवे गङ्गातोरवती वाजितपुरसे आ कर दरभङ्गा शहरमें मिल गई है। वाजितपुरके सामने इष्ट इण्डियन रेलवेके बाइ नामक स्टेशन है। दरभङ्गा जिलेमें बाढ़से जहाज पर चढ़ कर वाजितपुर होती हुए जाना पड़ता है। इस शहरसे सरसों आदि तेलहन

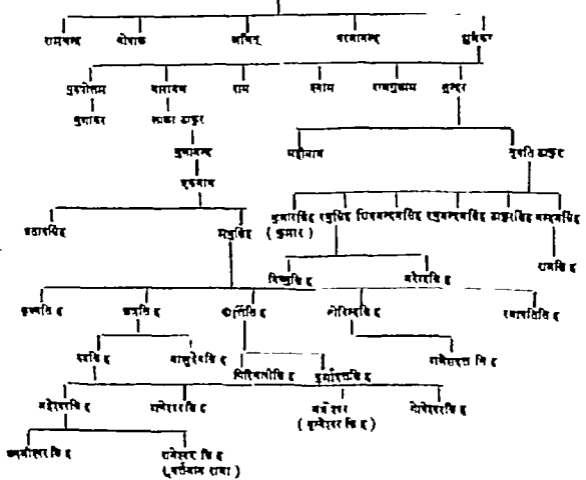
कोश, जो पौर शासकों रक्षक भी होते थे।

इतिहास—महेश ठाकुरके पिताका नाम चाँद ठाकुर था। ये मध्य भारतके खण्डवाका कुलोद्भव खोखिय ब्राह्मण थे। ये सोनहरीके इलाक़ेमें तिरहुत या खर मण्डपि इ देवब शीव राजाओंके यहाँ पुरोहितका काम करते थे। बरलि इ देवका विद्वान् विद्वान् उपर्ये केके।

रघुनन्दन राव नामक एक मोगल ब्राह्मण महेश ठाकुरके ज्ञात थे। दरमहाके पक्षगत गोइ परमनेके मध्यगत रामपुर धाममें रघुनन्दनका घर था। दिवोंके मन्नाट, पक्षवरको घर धर्मको बघावाका सुननेका बड़ा शोक था। इको सुनने रघुनन्दन एक दिन पक्षवरके दरबारमें पहुँचे। उन्होंने यहाँ माफीय तक में जय प्राप्त की। पक्षवरने मस्तुट हो कर ८५५ पसलोको २४वीं चैतकी (१२६५ ई०में) उन्हें पण्डितका खिताब पौर

तिरहुतके पक्षगत जाते परमनेको जमो दारो प्रदान की। रघुनन्दन पण्डित दिग्विजयमें बरिगत हुए थे। पत लक्ष्मी उक्त जमो दारो पवने पास रखनेकी इच्छा न की। उन्होंने देग या खर महेश ठाकुरको गुण दक्षिणमें जमो दारो दे दो। महेशने प्रथमतः दान पश्य न किया किन्तु पोछे बाप्य को खर मध्यको बामना पूरो की। पर ये विषयके जमो न थे पत बहुत बठ करके लक्ष्मी पुनः रघुनन्दनको जमो दारो सोटा दो। इसके बाद ही १२६८ ई०में महेशकी शत्रु हुई। रघुनन्दन दिग्विजयमें निकले थे इस कारण ये गुबहत भगवा मोम करनेके निचे बिलकुल राजी न हुए। इस पर महेशके दूतरी लक्ष्मी गोपान ठाकुर पिता के दानपत्रके बलसे जाते परमनेका बन्दोबस्त करानेके लिए दिवोंको मने। दिवों दरवारके विचारने महेश

महेश ठाकुर ।



ठाकुरका मन्त्र कायम किया गया। जमोदारो वन्दोयस्त प्राप्त कर लीटने समय १५८५ ई०की कागोमें गोपालको मृत्यु हुई। इस समय टोडरमल अकबरके दरबारमें रहते थे। गोपालके समयमें ही दिवोमे दरभङ्गेका एक फौजदार नियुक्त हुआ।

दरभङ्गेको प्रजाका प्रथम भूमिपति हातो परगनेका परिमाण २१०२४१ बीघा है। इस परगनेके भवारा ग्राममें महेश ठाकुरके वंशधर रहते थे। अकबरके समयमें उद्धानके सुवादार जलानुशनको बनाई हुई एक मस्जिद भवारा ग्राममें वक्त मान है।

दरभङ्गा जिनेका प्रायः ६ स्थान अभी दरभङ्गाराजके अधिकारमें था गया है।

महेश ठाकुरने जमोदारो-प्राप्तिके माय माय 'मादुर' कर ग्रहण करनेका प्रविचार पाया था। किन्तु १०८८ ई०में कलकुर महवक्के निम्ति हुए विधरणमें जाना जाता है, कि १०२७ ई० तक महेशके वंशधर इस प्रकारका कर ग्रहण करनेके अधिकारी न थे, पर १०२८ ई०में महेशउतजत्रको सुवादारोके समयमें उक्त उक्त कर यण करनेकी छमता दी गई थी।

१५५८ ई०में महेश ठाकुर पाँच नहके कोड कर परनोकको विधरि। वहे नहके रामचन्द ठाकुरकी अधिवाहित अवस्थामें मृत्यु हुई। दूसरे नहके गोपाल ठाकुर कुछ काल तक जमोदारो भोग करके कार्गीके वासो हुए और १५८५ ई०में स्वर्गलोकको प्राप्त हुए। तीसरे अचित् ठाकुर (अजित वा अशुत) अष्टवक् अवस्थामें मरे। चौथे परमानन्द ठाकुर मध्यम भाईके बाद जमोदारो भोग करने लगे, किन्तु उनका भी अष्टवक् अवस्थामें देहांत हुआ। पीछे पाचवे शुभदर ठाकुरने जमोदारोका अधिकार प्राप्त किया। १६०७ ई०में इनको मृत्यु हुई। दरभङ्गेके वर्तमान राजगण इन्हीं शुभदरके वंशीपत्र हैं।

शुभदरकी मृत्युके बाद पुरुषोत्तमने पिष्टमम्पत्ति पाई। १६४२ ई०में उनको मरने पर उनके सबसे छोटे भाई सुन्दर ठाकुर सारो मम्पत्तिके अधिकारी हुए। २० वर्ष राज्य कर के बाद १६६२ ई०में उनकी मृत्यु हुई। पीछे इनके बड़े लड़केने राव्याधिकार

पाया। १६८४ ई०में मन्दीन, यने अष्टवक् अवस्थामें मरने पर उनके छोटे भाई नृपति ठाकुर राजा बन गये। १७०० ई०में नृपतिके मरने पर उनके दूसरे लहके रघुसिंह राव्याधिकारी हुए सुवादार मफ्तत जत्रको अष्टवक् भेटे टिकर रघुसिंहने 'राजा'को उपाधि पाई और कार्षिक माय कपरे और टिकर सरदार तिरहुतकी सुकर जमा ग्रहण की। नवाब मलज्जतके टायान राजा धरणीधरको फिर भी ५० अक्षर रूप नजराना दे कर उन्नि निर्विवादसे जमोदारो भोग करनेकी व्यवस्था कर ना। रघुने नूतन रमोदारो और राजाकी उपाधि पा कर अपने वंशगत 'ठाकुर' की उपाधि छोड दी और राजबोधक 'सिंह'को उपाधि ग्रहण की। कुछ दिनोंके बाद राजा रघुसिंहने 'पितामह' सुन्दर ठाकुरके दूसरे भाई नारायण ठाकुरके प्रतीक एकाप ठाकुर इनमें डाइ करने लगे। उन्नेने नवाब मलज्जत के लड़के सुवना दी कि, राजा रघुसिंह नाथ रूपये कर देकर जिन सरकार तिरहुतका भोग कर रहे हैं, उसमें जमीमात गुना हदि ही गई है। मरमुच १६८५ ई०में सरकार तिरहुतने ७६८०८७) १० राजस्व वसूल नो। था। नवाब यह सन्नाट पा कर उसी समय तिरहुतकी घन टिके प्रो। वंश जाकर उन्नेने राजा रघुनी मम्पत्ति जप्त कर लो तथा उनके परिवारवगंभी कैट कर पटना भेज दिया। राजा रघु प्राण ले कर किसी तरह भागे। नवाबने उन्ने एकलनेके निम्ति प्रादमो नियुक्त किये। कुछ दिनोंके बाद वे स्वयं नवाबके समीप पहुँचे और उनका प्रसाद नाम कर पुनः स्वराज्यमें प्रतिष्ठित हुए। किन्तु इस बार उनकी सब छमता जातो रह्यो। वे सरकार तिरहुतकी तहसिलदार मात्र हो कर रहे और 'मादुर' कर ग्रहण करनेका अधिकार उन्ने इस गते पर मिला कि वे सरकार तिरहुतकी विचारादि कार्य करेगे, प्रजाका कष्ट दूर करेगे और देगकी उन्नतिकी और विशेष ध्यान रखेगे। राजा रघुने जीवनके अधिशिष्ट कालमें ये सब स्वत्व प्रतिपानन किये थे। १७३६ ई०में उनका देहान्त हुआ। उनके बड़े लड़के विष्णुसिंहने पिष्ट अधिकार पाया, किन्तु अष्टवक् अवस्थामें १७४० ई०की उनकी मृत्यु हुई। बाद इनके भाई नरेन्द्रसिंह पैटकमम्पत्तिके अधिकारी

दुप । १०२३ ई०में मन्नाथ पन्निबर्दी खाने लखे कई विषयोंमें 'दरभया' बहूत खानेका पबिखार दिया था । मन्नाथि व यद्य पबिखार या खर प्रति पसल मीठीमें 'सिरिहदिह' पर्यात् १३० ब०, प्रत्येक कबुनियतके प्रत्येक रूपमें एक पाया, प्रत्येक कबुनियतके रूपमें सैकड़ें २) ब० छुट पोर पनो जमींदारोंमें सैकड़ें १०) ब० मनिखाना मिया करती है । १०२० ई०की पात्रा मन्नाथका पपुत्रकाबखाने देखाता हुआ । लखी में पूर्वाक्ष एक गाव ठाण्डरु बड़े लकड़ प्रतापका गीद मिया जा । इस समय तक मनुबलाके निष्कट मोरा नामक स्थानमें राजशाहाद था । पात्र भी वहाँ महीके दुर्गका मन्नाथमिय दिखामान है । इस दुर्गको राजा रजुने बनवाया था । प्रतापने राज्यमान कर १०२२ ई०की दरमन्नामें एक प्रामाद निर्माथ बिधा । पात्र भी वह प्रामाद बर्तमान है पोर दरमन्नाके राजपरिहार लभमें बाप करते हैं । मन्नाथ खानिम यको खाने राजा प्रतापसि हको 'माधुर कर' पद्वय करनेका पबिखार पटान बिधा किन्तु व गरीज गभर्मने १०२२ ई०में 'ननकर' घाम 'दरभया' पद्वय करने पोर मनिखाना पद्वय करनेका पायगर भोटा मिया पोर राजा मन्नाथको राजाको खानन-खर्चके सिधे १० घाम; राजा प्रतापके भाई मनुमि हके सिधे २ घाम पोर राजाको मानिक एक हजार रूपये दिये । १००५ ई०में राजा प्रतापको पपुत्रकाबखाने पद्वय हुई । बाद लखे भाई मनुमि व राजा हुए । ५ रूपये बाद लखे पाब खरखार सिरदुतका पबिखारी बन्दोबस्त कर दिया गया । मनुमि व लखे बड़ी जमींदारो पर शासन करनेमें बिलकुल समर्थ न थे । राजा मनुमि हने राज्यमान कर पत्रैज के दरभया बहूत करन का पबिखार पुनः पान का पाये दन किया । लखीन कहा, कि लखे यहाँ प्रास रूपये बाको रज खानिक खारन यह पबिखार ले लिया गया है इतनेम काठस्थिके हनका पपुनस्थान करनेको हकका ब्रयट करने पर राजा मनु सनद पाटि दिगानेमें राजा न हुए । लखीने जराब दिया कि खानमनोका विमान दीवनेके ही लखे माने मान्म हो जायेंगी । लखेके पिता लखीन बिल बर्धने दरभया बहूत करनेकी

धरता मी मो गई लो लख बर्धने मीखर पात्र तक लखे जितने रूपये मुकमान हुए थे लखका एक तानिका दी था । लो कुछ हो, प गरीज मन्नाथने लखे ८ वर्षको बाको दरभयामें पटनेके खोवापारसे १८१००) ब दिये पोर १८०१ ई०में गभर्मर मि० प्यान्सि टार्टने दरभया पदा खरनेकी खमतार्थ बन्दे मासिक एक हजार रूपये देनका व्यवस्था कर दी, किन्तु लखी वर्षके नमन्नाथ मन्नाथमें ऐसा सुना गया है, कि राजा मनुमि व दरभयाके बन्दोबस्तमें सिधे हुए मन्नाथमेंसे खोई मन्नाथ प्रतिपालन नहीं करते हैं (पर्यात् देखाकी मन्नाथ नहीं करती देखाका लखे दूर नहीं करती तथा देखाको बखतिखी पोर लख मी ध्यान नहीं देती), नर प्रजाके खर्चमें जमा पोर खजोन मी खोन लो है । इसके अलावा भी बन्दोबस्तो भर खार तिरदुतमें मो सुबाबस्थिके मासन पासन नहीं कर सकते हैं । लखी ये सब सिखायती सुन कर भी खेद कर सिध गये किन्तु दूधरे बर्ध पुन लखीके पाय सरखार सिरदुतका बन्दोबस्त कर दिया गया । इस समय सरखार तिरदुतका कर २५१८१२) ब० निष्पत्त हुआ । राजा लुटकाता या खर पने राज्यको पाये, किन्तु राजमन्नाथ किन्तो रूपया बाको पकने लगा । कनखरके रिपोर्ट करने पर १०८८ ई०में यह खिर हुआ कि राजा के माब बन्दोबस्त नहीं रहेगा । इस समय दययाका बन्दोबस्तका बावोजन हो रहा था । राजा मनुमि हने लख बन्दोबस्तने कर्णख साधनमें पराप्त हो खर निधे दन किया कि जब तक प पत्रैजराज लखे खरखार तिरदुतका सुखर ही व दोबस्त मनिखाना पोर दरभया बहूत करनेका पबिखार न देगी, तब तक ही कुछ मी नहीं करेगी । इस पर गभर्मर खेनरकने १०८० ई०में राजाको जमींदारो फयेज लखी पोर बरखत-लखा खीके माब व दोबस्त कर दी । पन्नामें खोईके बिखारसे राजा मनुमि हने पुनः मनिखाना पोर दरभया पदा खरनेका पबिखार पाया । किन्तु भी जमींदारो भोटाके निधे पक-वस्त करने लगी । १०८१ ई०के नमन्नाथ मन्नाथमें फयेज लखीने पपना बिष्ठा छोड़ दिया पोर कहा, कि राजा मनुमि हके बखानिये खोई प्रजा मानगुजारो नहीं देतो है पन्नाखरखरने माब हो खर फयेज-लखीका परिखार

अंग राजा मधुके माथ वंदोवस्त कर दिया। वरकत उज्जा खां भी इस समय घरकी छत परसे गिर कर कराल कालके गालमें फंसे और उनके उत्तराधिकारियोंके जमींदारी अपने पाम रखनेमें असुखोकार करने पर अवगिष्ट जमींदारीका भी राजा मधुके हाथ वंदोवस्त कर देनेका विचार हुआ। किन्तु राजा अलीपुर परगने और सरकार तिरहुतकी सुकरंरी जमा पाये बिना वंदोवस्त करनेकी राजी न हुए। इस पर कलकत्तेमें १७८३ ई०में बहुतसे ठेकेदारोंके साथ ७ वर्षोंके लिए वंदोवस्त कर दिया। पीछे कलकत्तेमें पुनः राजाके साथ मलिकाना और टस्तरतके अलावा (१६८५०६) रु०में जमींदारी वंदोवस्त कर देनेका विचार किया। पहले राजाने और भी ६ हजार रुपये कमा देनेकी चेष्टा की, किन्तु अन्तमें दस हजार रुपये और बढ़ाकर जमींदारीका भार ग्रहण किया।

१८०८ ई०में मधुसिंह ५ लडके छोड़ कर स्वर्गलोक को प्राप्त हुए। बड़े लडके कृष्णसिंहकी अपुत्रकावस्थामें मृत्यु हो गई। पीछे दूसरे लडके कृष्णसिंह राजा हुए। १८३८ ई०में कृष्णसिंहका भी देहान्त हो गया। इन्होंने ही सबसे पहले 'महाराज' की उपाधि धारण की थी। कृष्णसिंहने अपने जोधन दशमें सारी सम्पत्ति बड़े लडके रुद्रसिंहके हाथ मर्पण की और छोटे वासुदेवको जराइल परगना, ४ मकान, २ हाथी और राज-प्रासादमें कई एक घर दिये। कृष्णसिंहने अपने भाइयोंमें से कौत्तिको परगना जवटो, गोविंदको परगना पहाड़पुर और रघु तथा रामपतिको परगना पचाही दिया। वे जीते जो कलकत्तेमें अपना नाम खारीज करा कर अपने लडके रुद्रका नाम लिखवा गये थे। पिताकी मृत्युके बाद वासुदेवसिंह आधा राज्य पानेके लिए कुलाचारकी अपेक्षा करके नालिश की, किन्तु मुकदमेमें वे हार गये। पीछे अपोल करने पर भो कुल न हुआ। महाराज रुद्रसिंह १८५० ई०में परलोकको सिधारे और उनके लडके महेश्वर सिंह राजा हुए। १८६० ई०में भूभारपुरमें महेश्वरको मृत्यु हुई। इस समय महेश्वरके दोनों पुत्र लक्ष्मीश्वर और रामेश्वर नाबालिग थे। इस कारण सारी सम्पत्ति—कोर्ट-आफ-वाइसके अधीन

हुई। इस समय जमींदारीको आय प्रायः १६ लाख रुपयेकी थी, किन्तु ऋण ७० लाख रुपये था, वंदोवस्त भी अच्छा नहीं था।

दरभङ्गाको जमींदारी तिरहुत, मुद्गरे, पुर्णिया और भागलपुरमें अवस्थित है। तिरहुतमें जराइल, हाटो और अलीपुर परगनोंमें, भागलपुरके बचीर, तिरहुत और नरदोगा परगनोंमें, पुर्णियाके धर्मपुर परगनेमें और मुद्गरेके हवेली खरगपुर परगनेमें दरभङ्गा-राजकी जमींदारी है। धर्मपुर परगना १७०६ ई०में मन्नाट शाहअलमून राजा प्रतापसिंहको दिया था। १२ वर्षोंमें कोर्ट-आफ-वाइसने ७० लाख श्रेण चुका कर राज्यको आय भो ८ लाख बढ़ा दी। बाद लक्ष्मीश्वरसिंहने वालिग हो कर राज्यका भार ग्रहण किया। १८८८ ई०में उनके मरने पर उनके छोटे भाई वर्त्तमान महाराजधिराज सर रामेश्वरसिंह, के०, सि०, आइ०, इ०, राज-कार्य चला रहे हैं। ये कुछ समय तक वायसरायको मन्त्री-सभाके सभ्य थे। राज्यकी आमदनी ८० लाख रुपयेकी है। कलकत्ता-विश्वविद्यालयमें संलग्न महाराजका एक भवन है जो 'दरभङ्गा विलाडिग' नामसे प्रसिद्ध है। जमींदारी कई एक विभागोंमें विभक्त है। प्रत्येक विभाग एक एक सभ-मैनेजरके अधीन है। प्रत्येक मैनेजरके अधीन तहसिलदार हैं जिन्हें मालगुजारी आदि वसूल करनेका अधिकार है।

दरमन (फा० पु०) शोध, इलाज।

दरमा (हि० खो०) वांसकी एक प्रकारकी चटाई।

इससे बंगालमें भोपडियाको दोवार बनाई जाती है।

दरमाहा (फा० पु०) मासिक वेतन, तनखाह।

दरमियान (फा० पु०) मध्य, बीच।

दरमियानो (फा० वि०) १ मध्यका, बीचका। (फा० पु०)

२ मध्यस्थ, वच मनुष्य जो दो आदमियोंके बीचके झगड़ेका निवटेरा करता है, दलाल।

दरवाजा (फा० पु०) १ द्वार, मुहाना। २ कपाट,

किवाड।

दरवी (हि० कि०) १ सोंपका फन। २ संभूषी, दस्त

पनाह। ३ करबूल, पोना।

दरवेश (का० पु० । सुमनमानोका मिलोपशोको धर्म मन्वदायविदिब, फखोर, माहु । पदमे यह मन्वदाय बाह्य श्रेष्ठिर्मि विमल का । पोहे इमको मन्वा योर भी बहु मर् है । सुमनमानोमें प्रवाट है कि योशरम विम-बमोर इम मन्वायके प्रवर्तक से । किन्तु दरवेशके वर्तमान को यह मन्वदाय करि सुचकमान राखामें विचिक्रम भावने को म् दूय है से कहते हैं कि मपमकि मीकक पन्वदता सोमरी मन्वदाय-प्रवर्तक जमान्दरीन् वमिसे यह मन्वदाय प्रवर्तित कथा है ।

तुदप्यष्टमके दरवेशमथ (० श्रेष्ठिर्मि विमल है । इमोमें मही पयना बहुत कुछ परिष्कार जमा लिया है । जनमानिलोपकमे इतायो वा श्रेष्ठतायी नामक मन्वदाय इरानही सिदिह नियमोके अनुसार नहीं चलता यो म मन्वदायको ही ईम्बर-परित वसन्त कर दिनाम जाता है । तुदप्यष्ट रपई नामक दरवेशमथ पन्वत पाकनिर्वाणन करते हैं । सिदमारिया नामके प्रविष्ट है । अ-रतवर्धके पन्वक दरवेश का जोष म हीडव योर पन्वपरित है । इममें वि चरित्राङ्ग मेया मन्वदायमनुक है । ये जोय कभो कभो इहोके पश्चिम प्रदेश तक जाया करते हैं । भारतीय फकारके पश्चिमिटांम को वा-बरा मन्वदायमनुक है से मन्विक चरुकाते है ।

बादि-सुरीम्याड मदारक नाम पर मन्विकमे मन्वदायका मदर्शिका नाम पड़ा है । बादि-सुरीम मदारका कोर कोरि मन्वदा मदार भी कर्तते हैं ।

मन्वदायकी दरवेशमथ परमे धर्म मन्विको हाउने मन्वमानोको बिटा करते है । मन्विक दरवेशमिनि परिष्कार मिष्ठित है । अब तक से चहर का कर विर नहीं पढ़ने, अब तक म् म् म् म् का नामने रहने है ।

रकेका दरवेशमथ इतोके पयना योर इटत, जलना दूया म मार मिकरुई, कांष चकारे तथा इमो चकारके चम्याय चम्या मद्दम कांठ करते है । से चमपयन है कि इम प्रकार कडोर कांष मन्विके ईम्याके भाय सुममिष्ठित को कामको कथाकना रहना है ।

गुणमन्विका नामक एक योर चकारके इमोय है । इ जोम चकार चकार विज्ञान रूप चर्म मिरको कामे

पैहे तब तक सुमार्ति रहते है, अब तक मूर्ध्मिंत को कर गिर नहीं पड़ते ।

दरम (हि० पु०) दरवेशो ।

दरगन (हि० पु०) दरवेशो ।

दरगाना (हि० जि०) दरगना रको ।

दरम (हि० पु०) दरगन, देवा देवो । २ मं ट, सुनाकात । १ रूप सुन्दरता, हरि ।

दरमन (हि० पु०) दरवेशो ।

दरमना (हि० जि०) दरिपारि पड़ना, निवर्तमे पाना । २ जेचना, कथना ।

दरमनोकुन्तो (हि० क्ती) २ एक प्रकारको दू को जिसके सुगतानको मिनिको दग दिन या नमने कम दिन भाको हो । २ एक ऐसी वस्तु जिसे दिग्गते को कोरि कुमरो वस्तु जानिक हो जाय ।

दरमान (म० पु०) इ-विदारि इ-पमानच । योत प्रकाय ।

दरमाना (हि० जि०) दरिपारिचर दरगन, हि राना । २ म्पट करना प्रकट करना ।

दरमाना (हि० जि०) दरमना देवो ।

दरानां (हि० यो०) १ च विद्या जिसमें धाम वा फलन काटो जाती है ।

दराज (वा० वि०) १ दोरै, कम्बा, बड़ा । (वा० जि० वि०) २ परिष्क बहुत ।

दराज (हि० यो०) १ दराज दरज, गिलाज । २ म्पुत्र गुमा जाना को मन्विके मया रहता है । इममें कुछ वस्तु रका कर ताया जमा मन्विके है ।

दराकुम (प्रयम) [म्प माघामिं दारयकुम]—वाकारकता से Daru-ly-Aspa नामक पलिह है । ये वृष प्याय नामक चिमो पारय कम्बालक पुत्र है ।

कहने है कि पारयप्राज काररमिके कुछ कामकारे मिकको म्पुत्र के बाद म्मारदिम नामक पारयके एक म्पुत्रमे (Me, un) कम्पाय पुत्रके पारयका नि कामने परिष्कार कर लिया । दराकुमे पारयके व म्बालकोका एक हीच कर म्मारदिमको मार जाना । इम इका काकरके बाद मही म्पुत्र म्पुत्र, कि पारयके राजा कोम वमि १ बहुत मन्विकके बाह्य कर विर दूया कि दूया

दिन सूर्यास्तके समय सात मनुष्य घोड़े पर सवार हो किमो निर्दिष्ट स्थानमें उपस्थित हों। वहाँ जिनका घोड़ा सबसे पहले हिनहिनावेगा, वही सिंहासनके अधिकारी ठहराए जायगे। दरायुस्के इवारिस नामका एक विश्वस्त और विचक्षण शूत्र था। उसीके कौशलसे दरायुस्का घोड़ा सबसे पहले हिनहिनाया। ठीक इसी समय परिष्कार आक्राशमें विजलीको कड़कटाहट और भेषका गर्जन सुनाई पड़ा। इस घटनाको देख अन्व कइ मनुष्य बहुत जल्द घोड़े परसे उतर कर दरायुस्के पाँव तले गिर पड़े और उन्हें सम्राट् स्वीकार कर लिया।

इस प्रकार (५२१ ई० सन्के पहले) दरायुस्ने पारस्यका सिंहासन सुशोभित किया। अरबी लोगोंको छोड़ कर एशियाके जिन सब जातियोंने काइरस और कामवाइसिसको अधीनता स्वीकार कर ली थी, वे भी अब दरायुस्को कृद्विद्यामें आ गईं। सिंहासन पर बैठनेके बाद ही इन्होंने पहले अतोषा और अन्तिस्तोन नामकी काइरसको दो कन्याओंसे, पोछि काइरसके पुत्र स्मार्दिसकी कन्या पटमिग और ओटानिस नामक एक दूसरे व्यक्तिको कन्यासे विवाह किया।

अपने प्रभुत्वकी जड़ मजबूत कर इन्होंने पहले एक अश्वसृष्टि बनवाई और उसके ऊपर इस प्रकार लिखवा दिया—'हयतास्यके पुत्र दारयवुस्ने अपने घोड़ेको चतुरता यथा इवारिस नामक शूत्रको तीक्ष्ण बुद्धिके बलसे पारस्यका साम्राज्य पाया था।'

इसके अनन्तर इन्होंने पारस्य साम्राज्यको २० प्रदेशोंमें विभक्त कर एक शासनकर्त्ताके अधीन प्रत्येकका नाम जत्रपो (Satrapy) रक्खा। इन सब शासनकर्त्ताओंके नाम भी जत्रप रखे गये। प्रत्येक जत्रपसे कितना कर लिया जायगा तथा सेनाओं और राजपरिवारके लिये कितना द्रव्य देना पड़ेगा, दरायुस्ने उसको भी ताटाद स्थिर कर दो।

उधर मारदिसके शासनकर्त्ता ओरिंटस विना कारणके सम्भ्रान्त लोगोंकी हत्या बहुत निष्ठुरतासे किया करते थे। यह देख दरायुस्ने उन्हें टण्ड देनेका संकल्प कर लिया। ओरिंटसके शिरुद्ध सेना न भेज कर दरायुस्ने स्वयं कुछ लोगोंको साथ ले उन्हें मार डाला।

इसके कुछ समय बाद ही दरायुस् जब आर्सेटकों निकले थे, तब घोड़ेसे उतरते समय इनका सुटना चकनाचूर हो गया था। डिमससिडिस नामक एक चिकित्सकको चिकित्सासे इन्होंने बहुत जल्द आरोग्य लाभ कर लिया।

दरायुस् जब कामवाइसिसके शरीर-रक्षक बन कर मिय गए थे, तब वहाँ स्यामसके दुर्दृष्ट शासनकर्त्ता पत्तिक्रीटिसके भाई सिलोमनके शरीर पर इन्होंने एक ऐसा सुटा कपडा देखा कि उसे खरोदनेकी इच्छा उत्कट इच्छा हो गई। किन्तु मिलोमनने विना कुछ लिए ही उसे इन्हें दे दिया था। पौछि जब वे पारस्यके राजा हुए, तब मिलोमनने आ कर इन्हें पहले की बात याद दिला दी इस पर इन्होंने प्रचुर स्वर्ण और रजत मुद्रा देना चाहा। किन्तु सिलोमनने अर्थ लेना तो अस्वीकार किया पर अपने जम्भभूमि स्यामसकी उद्धार कर उन्हें प्रदान करनेको प्रार्थना की। दरायुस् इस पर भी सहमत हो गए और स्यामसके उद्धारके लिए ओटानिसको एक दल सेनाके साथ भेजा। ओटानिसने बहुत आसानीसे स्यामस पर अधिकार कर उसे सिलोमनको अर्पण किया।

ठीक इसी समय बाविलनके अधिवासो विद्रोही हो उठे। दरायुस्ने यह संवाद पा कर ही प्रभूत सेनाकी साथ ले उनके विरुद्ध यात्रा की और नगरकी घेर लिया। कई दिन बोट गए, पर बाविलोनियोंकी परास्त कर उन्हें अधीनता स्वीकार करानेका कोई लक्षण देख नहीं पड़ता था। इसी प्रकार एक वर्ष आठ मास गुजर गए। दरायुस्के सभी कौशल बाविलोनियोंके सामने निष्फल होने लगे। अवरोधके बीसवें महीनेमें योपिरिस नामक दरायुस्के एक कर्मचारीके बुद्धिकौशलसे बाविलन हाथमें आ गया। योपिरिस अपनी नाक और कान काट कर बाविलोनियोंके समीप गए थे और दरायुस्से उनकी यह दुर्दशा हुई है, कह सुनाया था। बाविलोनियोंने उनकी बात पर विश्वास कर अपना सभी भार उन पर सुपुं द कर दिया। अर्द्धा मीका देख कर योगीश्वरने विश्वासघातकतासे दरायुस्के हाथ बाविलन नगर समर्पण किया। दरायुस्ने नगर पर पूरा अधि-

कार जमा कर १००० मन्मन्त्राल मनुष्योंकी जन्मा की
 पौर दुर्गादिबो तोड़ फोड़ जाना (११६ ई०के पहले)।

बाबिलन तो हाथ लग गया। पब टाबुल
 विद्विद्या राज्य पर पारमम्व करनेके लिए तैयारी करने
 लगी। प्रायः ७—८ लाख सेना दृष्टी की गई। बल-
 पौरम उपसागरके ऊपर एक काठका पुल बनाया गया।
 टाबुल प्रभूत सेनाको माघ में सुभावे रवाना हुए पौर
 काठ पुल हो कर बलपौरस पार हो गए। यहाँ से पुलक
 बनानेवाले सामिया होयक पश्चिमा मासाहोकीयको
 यमद पुरकार दे कुंमके मध्य होते हुए टानियुव लगी
 पार हुए पौर ज्ञान लहीकी पौर जाने लगी। चलते
 से विद्विद्याके पम्पनार पहुँचे पौर विद्विद्यान मोम
 बामने तो कुछ न कर सके, पर विप कर तथा सुविधा
 देय कर पारमिकों पर पारमम्व करने लगे। टाबुल
 को रमद अब भीरे भीरे करने लगी तब से मोट ज्ञानिका
 तैयारी करने लगी। पौरिक्त पौर दुर्गल सेनापोंको
 फोड़ कर एक दिन से निगाबानमें विपक बहाने बह
 दिव पौर काठके पुल द्वारा बमकारस पार कर गेन होते
 हुए भीरे भीरे पविवाह पम्पनार पहुँचे। ये पार
 द्वापर सेनापोंकी सेनाविजयके पथोन रस कर हाँके
 कुंम पर चढ़ाई करनेको बह पाये थे। सेनाविजयने
 इस विषयमें बहुत कुछ लक्ष्यता प्राप्त कर ली थी।
 इस प्रकार लनका विद्विद्याविजयका लक्ष्य निम्न-
 हुआ।

पारमको पहुँच कर दरापुसने पुनः पौर विन्नु
 को तब अपना प्रमुख फौज लिया।

१०१ ई० मनुके पहले लक मनु-दीपमें अब लड़कको
 दृष्ट हुई, तब बहाने मन्मन्त्राल मोम इस प्रदेशकी होइने
 को माघ हुए पौर लको से जा कर मिनिटमके मानन
 कर्ता परिटमोरसके सहायता माँगे। परिटमोरसने
 भी पारिमके माननकता दरापुसके भाई पाताकार
 निमको मदद चाही। पाताकारनिमने पारम्वके लम्बाट
 में सभ्यनि से की पौर मैगरेटिकके पथोन २०० सहाय
 मता कर लके मिनिटम जाने पौर परिटमोरसको
 विम्यकी बाव से लक बन होय पर चढ़ाई कर देनेको
 पाजा हो। पार माघ बिरा हाँके रहनेके बाद पण्डिको

रसने जब देवा वि रमद पौर भीरे लमतो कारको से
 पौर मनु मो हाथ लही पाता, तब लकोने पाहयो-
 नियो को विद्रोही होनेके निचे लक्षित किया। तदनु
 पार पाहयोनियो में विद्रोही हो कर सार्दिन नगर जमा
 ठाका पौर मिनिटम होय मनु के हाथ लगा।

(१०२ ई०के पहले)

पण्डिके पश्चिमादिपानि लस विद्रोहमें परिटमोरस
 को सहायता दी है, यह जान कर दरापुल पाम
 बहूना हो गये। लकोने इटिस पौर पाताकारनिमके
 पथोन एक टन सेना पण्डिकाहोपमें भेजे। लपसह
 मारयन बुह-सेममें मिमद्रापण्डिक पथोन पारम्व सेना
 पविमवासीये पूरो तरह पराजित हो पयियाको काट
 पाई। (१०० ई० मनुके पहले) दरापुल फिर मो एक बार
 पसे न पर चढ़ाईको तैयारी करने लगे। किन्तु पुहाय
 से पहले ही इनका स्वयं बाम हो गया।

(१०२ ई०के पहले)

इसके समयमें पारम्वराण्ड उपनिषी करम मोमा
 तब पहुँच गया था। राजकोप मन्मन्त्राली भिजनेके निचे
 लकोने निर्दिष्ट पुराके पनुकार राज्य भरमें मनुष्य द्वारा
 काक भिजनका व्यवस्था कर दी थी।

राजा होनेके पहले इसके तीन पुत्र थे, जोसे पार
 पार पुवानि लक्ष्य पाह्य किया था।

दरापुस् (द्वितीय)—ये भाषारण्ड दरापुल बहाव नामके
 प्रसिद्ध है। ये पाता करसेमके आरम पुत्र थे। द्वितीय
 करसेमके मारि जानेके बाद ये ज्ञानक मवदिवानसको
 नि हासन प्य त कर लय पारम्वके नि हासन पर बैठे
 (१०३ ई० मनुके पहले)।

इसके दो पुत्र थे। पहलेका नाम पाता करसेम
 पौर दूसरेका काररस (Cyrus) था। ये मनुष्य बहने
 कोराबन पौर पयना लो पारिसेटिकके परिपालित
 होते थे। पत इनका राज्यमान लुबाह रूपने लही
 चलता था। पनेक पण्डिय राजविद्रोहा को मने विममें
 पण्डिकायने पराप्त हो कर इनका पथोनता कोकार
 कर ली थी। १० वर्ष राज्य कर पुनर्निके बाद ७७ ई०
 मनुके पहले इनका निजान हुआ। पण्डि इनके पुत्र
 कारता करसेम पारम्वके नि हासन पर पण्डिके हुए।

दरायुस् (तृतीय)-ये द्वितीय दरायुसके प्रपौत्र और इसो वंशके अन्तिम पारस्य राजा थे। इन्होंने तृतीय आर्त्ता-जरदेशके बाद पारस्य-सिंहासनको सुशोभित किया था (३३६ ई० सन्के पहले)। इनके राजत्वके दूसरे वर्ष अलेक्सन्दरने हेलेस्पेस पा कर एशियामें प्रवेश किया। दरायुसके साथ अलेक्सन्दरको कई बार सुठ भेह हुई थी और हर समय दरायुसकी ही हार होती गई थी। पचास वर्ष की अवस्थामें ये पञ्चत्वको प्राप्त हुए (३१० ई० सन्के पूर्व)। इन्होंने केवल छह वर्ष राज्य किया था।

दरार (हि० स्त्री०) दरज, गिगाफ।

दरारना (हि० स्त्री०) विदोषा होना, फटना।

दरारा (हि० पु०) धक्का, देररा, रगहा।

दरिंदा (फा० पु०) मासभक्षक वनजन्तु, फाड़ खाने-वाला जन्तु।

दरि (सं० स्त्री०) दृ विदारणे इन् डोषः। १ कन्दर, गुहा।
२ तक्षककुलजात सर्पभेद।

दरित (सं० त्रि०) दरो भयमस्य सञ्जातः, दर-तारकादि-त्वात् इतच्। भोत, डरपोक।

दरिद्र (सं० पु०) दरिद्राति दुर्गच्छति दरिद्रा-प्रच्।
१ निर्धन, कंगाल मनुष्य। पर्याय—निःस्र, दुर्विध, दोन, दुर्गत, कौकट, दुस्य और अस्तमित। (सं० त्रि०)
२ निर्धन, गरोब, कंगाल।

पद्मपुराणमें लिखा है, कि जो मनुष्ययोजिमें जन्म ले कर तीन दिन भी उपवास नहीं करते अर्थात् किसी व्रत नियमादिका अनुष्ठान नहीं करते और किसी तीर्थकी नहीं जाते तथा सुवर्ण गो प्रभृति दान नहीं करते, वे ही दरिद्र हो कर जन्म ग्रहण करते हैं।

मनुका मत है, कि जो किसी शुभ कार्यादिका अनुष्ठान नहीं करते, वे ही दरिद्र होते हैं।

श्लौ, बालक, ब्रह्म, लम्बत और दरिद्रको धनदण्डकी जगह वेंत आदिकी सजा देनी चाहिये।

दरिद्रता (सं० स्त्री०) दरिद्रस्वभावः दरिद्र-तल्। दरि-द्रत्व, निर्धनता, कंगाली।

दरिद्रत्व (सं० स्त्री०) दरिद्र-त्व। दरिद्रता, निर्धनता, गरोबी।

दरिद्राण (सं० स्त्री०) दरिद्रकी अवस्था, दरिद्र्य, गरोबी।

दरिद्रायक (सं० त्रि०) दरिद्रातीति दरिद्रा-यकुलः। दरिद्र, दोन, गरोब।

दरिद्रित (सं० त्रि०) दरिद्रा-क्त। दरिद्र, गरोब।

दरिद्रित्व (सं० त्रि०) दरिद्रा-त्वं वा त्वच्। दरिद्रायक, दुःखी, गरोब।

दरिन् (सं० त्रि०) दृ-भये विदारि वा इनि। १ भोक, डरपोक। २ विदारणशोल, फाड़नेवाला।

दरिया (फा० पु०) १ नदी। २ सिन्धु, समुद्र।

दरिया (हि० पु०) दलिया।

दरिया—अफ्गानिस्तानके अन्तर्गत एक ऊद। यह अक्षां ३३° ३५' ७" और देशां ६४° ३' ५०" में अवस्थित है। यह सियाकीसे ४० मील दक्षिणमें पड़ता है।

दरिया इ-नेरिल नामक एक ऊद पारस्यके अन्तर्गत सिराज नगरसे १० मील पूर्वमें अवस्थित है। इसकी लम्बाई ६० मील है।

दरियाई (फा० वि०) १ नदी संबन्धी। २ नदीमें रहने-वाला। ३ नदीके पासका। ४ समुद्र संबन्धी। (स्त्री०) ५ गुब्बोको दूर ले जा कर हवामें छोड़नेकी क्रिया, भोली। ६ एक प्रकारकी रेशमी पतली साटन।

दरियाईघोडा (हि० पु०) अफ्रिकामें नदियोंकी किनारेको दलदलों और भाड़ियोंमें पाये जानेवाला एक प्रकारका जानवर। यह गेँडेको तरहका होता और इसको खाल मोटी होती है। इसके पैरोंमें चार चार उँगलियां रहतीं जो खुरके आकारकी होती हैं। मुँहके अन्दर कटोले दाँत होते हैं। इसका शरीर नाटा, मोटा, भारी और बेटंगा होता है। इसके शरीर पर बाल नहीं होते। नाक फूलो और उभरी हुई तथा पूँछ और आँखें छोटी होती है। इसका आद्य पदार्थ पौधेकी जड़ और कच्चा है। सारा दिन यह भाड़ियों आदिमें छिपा रहता है। रातको अपना आहार ठूँड़नेके लिये बाहर निकलता और फसल आदिको खान पड़ जाता है। जरासा चटकता या भय पाते ही यह नदीमें जा कर गोता मार लेता है। यह बहुत डरपोक जानवर होता, इसी कारण नदीसे बहुत दूर नहीं जाता है।

सोम इसका मिश्रण गहरे लोह कर करती है। रातको बहो से फिर कर कर म जानिमे यह मार जाना जाता है। इससे समझते एक प्रकारका मधोना और मजबूत वायुक बनता है। विविध कर मिले दिग्गमि इन वायुक का प्रकार है। बर्जाओ प्रजा इसको मारते बहुत मय खाते है। पूर्व समयमें इस प्रकारके छोड़े मोल नदोके किनारे बहुत पावे जाते थे, पर अब मिश्रण होनेके कारण कुछ कम हो गये है।

दरियाई नारियल (हि० पु०) पत्रोका, पदिरिका यादि में समुद्रके किनारे होनेवाला एक प्रकारका नारियल। इसको गिरो घोर क्लिष्टता सूचन पर बहुत बड़ा जो जाता है। विरो दबाके काममें खाई जाती है, खोपड़े का पात्र बनता है जिसे म म्यामो या पकोर परने पास रखते है।

दरियायक्ष—धारक त्रिसेके धन्तगत एक प्रधान वाणिज्य स्थान।

दरियादाबी—एक सम्प्रदाय। प्रवाद है कि वे पापे हिन्दू घोर पापे सुसम्मान होने हैं। वे निरुप लयावका हैं, किसी देव प्रतिमूर्ति को प्रर्चना नहीं करती है। इस सम्प्रदायको दरिया माइर नामक एक स्थानि पन्नाया बा।

दरियादिह (फा० वि०) उदार, दानी।

दरियादिलो (फा० खो०) उदारता।

दरियापुर—; बरारके धन्तगत समराज्यतो त्रिसेका एक गावुख। यह पचा० २० इ० से २१२० ०० घोर देमा० ०० ११ से ०० १८ पू० में अवस्थित है। इसका परिमाण फस १०५ बर्ग मील है। कुछ राजस्व १०००००) १० है। यहां ० दोबानो घोर १ बीजदारो यदाहत तथा दो बाने हैं। लोबच प्या प्राया १११६८८ है। वधमें एक यहर घोर १२६ ग्राम मयती है।

२ एक गावुका प्रधान नगर। यह पचा० २० इ० घोर देमा० ०० २२१० पू० पश्चिमपुर नगरसे प्राया १६ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। यहांके अजिबातियों में कुनबोकी म स्या हो पवित्र है। यहां बीजदारो घोर दोबानो यदाकनके प्रतिरिख दो वृक्ष घोर घाना है। नगरके बायीं घोर बहुतसे मन्दिर घोर मस्जिद हैं।

दरियाबाट—पयोधाके धन्तगत, बड़वाको जिनेका एक परगना। इसके उत्तरमें बादोसराय, पूर्वमें मयराजट घोर दक्षिणमें बमोरो परगना है। परिमाणफस २१ बर्ग मील है। यह परगना हिन्दुओंके सत्नामो नाम। सम्प्रदायका प्रधान धर्या है। यहांके कत्यक द्रव्योंमें शारब गीर्ण ईश घोर ज्वार यादि प्रधान हैं।

२ बुजप्रदेगके बड़वाको जिनेके धन्तगत रामसनेको साट तहसिलका एक यहर। यह पचा० २६ ३१ ०० घोर देमा० ०१ ३४ पू०। यहर घोर शोडिलचक्र १००के समो अवस्थित है। लोकम स्या प्राय १८२८ है। बहती है, पन्द्रहवीं यताधोमें जोलपुरके मन्थरमाइ नामक किसी बर्म घोरने इति बनाया है। पहली यहाँ जिमिका सदर या किन्तु जलवानु बरार रइनेके कारण यदासन तथा समस्त कार्यालय छठ कर बड़वाकोको बनो गये। यहां एक यधतान एक स्थान घोर दो बाजार हैं।

दरियापत (फा० जि०) प्राप्त, साम्भूम।

दरिया यधमद (हि० पु०) दरिगधर देको।

दरियाबदार (फा० पु०) यह भूमि को किसी नदोको धारा इट जानेके निरुक्त वागो है घोर जिनमें जेतो जेतो है।

दरिवाबुर्द (फा० पु०) नदोको बारासे नहरको मई बुई जमीन इस प्रकारको जमीन जेतोको योभव नहीं रहतो।

दरियाव (हि० पु०) १ दरिवा देको। २ समुद्र, सिन्धु। दरो (म० खो०) दरि कोय। १ परतकी गुहा, खोज। २ पहाड़को बीच यह मोचस्थान जहाँ कोई नदो बहतो बा गिरतो जो।

दरो (हि० खो०) १ एक प्रकारका मोटा दनका विहीन ओ मोटे स्पर्शका गुना हुआ जोता है यत र जी। (वि०) २ बिदोष करनेवाला, पाड़नेवाला। ३ खरीक करनेवाला।

दरोफान (फा० पु०) एक प्रकारका कर जिसमें बहुतने दरतामि हों, बारबदरो।

दरोषा (फा० पु०) १ बिड़को, भरयोवा। २ छोटा धार। ३ बिड़कोसे पास बँडोको जगह।

दरीची (फा० पु०) १ भ्रगोष्वा, खिडकी । २ खिडकीके पास बैठनेकी जगह ।

दरीवा (हि० पु०) १ पानका बाजार । २ बाजार ।

दरीमृत (म० पु०) पर्वत, पहाड़ ।

दरोमुख (सं० लो०) द्रव्याः मुखं इ-तत् । १ गिरि-गुहाका मुख, गुफाका मुंह । २ रामकी सेनाका एक बन्दर ।

दरीवृत् (म० त्रि०) दरी विद्यतेऽस्य दरी-मत्तुप् मस्य वः । गुत्रविशिष्ट पर्वत, वह पहाड़ जिसमें बहुतसो गुहायें हों ।

दरीती (हि० स्त्री०) अनाज दलनेका छोटा औजार, चक्की ।

दरीक (हि० पु०) बकाइनका पेड़ ।

दरीग (म० पु०) कामी, कसर ।

दरीरना (हि० क्रि०) १ रगड़ना, पीसना । २ रगड़ते हुए धक्का देना ।

दरीरा (हि० पु०) १ रगड़ा, धक्का । २ मेंहका भाला । ३ बहावका जोर, तोड़ ।

दरीस (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी छीट । (वि०) २ तैयार, बना बनाया ।

दरीसो (हि० स्त्री०) तैयारो, मरम्मत, दुरुस्तो ।

दरीग (म० पु०) असत्य, झूठ ।

दरीगहलकी (म० स्त्री०) १ सत्य बोलनेका शपथ खा कर भी झूठ बोलना । २ झूठी गवाही देनेका जुर्म ।

दरीगा (हि० पु०) दारोगा देखी ।

दरीड़-बस्मई प्रदेशके अन्तर्गत काठियावाड़ प्रदेशके भालावर विभागका एक सामान्य राज्य । इसमें केवल एक ग्राम लगता है जिसमें दो करद खाद्योन्नत जमींदारोंका अधिकार है । राज्यका आय प्रायः ११८० रु० है जिसमेंसे इष्टिग गवर्मेण्टको ३६६ और जूनागढ़के नवाबकी ५० रु० करस्वरूप देने पड़ते हैं ।

दरीदर (सं० पु० स्त्री०) दरी भयं तज्जनकं उदरं यस्य वा दुरीदरं पृषो० साधुः । दुरीदर, पाशा-क्रोड़ा, जुआ ।

दरीतो-वडालके शाहाबाद जिलेका एक ग्राम । यह राम-गढ़से ५ मील उत्तर पश्चिममें अवस्थित है । यहाँ गवर कौत्तिका ध्वंसावशेष है ।

दरीली-सारण जिलेके अन्तर्गत चानवाड़ा विभागका एक प्रधान ग्राम । यहाँ हिन्दुओंकी दो छोटी मन्दिरोंका ध्वंसावशेष देखनेमें आता है । इसके सिवा यहाँ दो सुन्दर जलाशय और दो बड़े स्तूप हैं ।

दकीर (हि० क्रि० वि०) दरकर देखी ।

दगीह (हि० पु०) दरगाह देखी ।

दर्ज (हि० स्त्री०) १ दर्ज देखी । (वि०) २ लिखा हुआ, कागज पर चढ़ा हुआ ।

दर्जन (हि० पु०) बारहका समूह, एकत्रित बारह वस्तुएँ ।

दर्जा (म० पु०) १ श्रेणी, कोटि, वर्ग । चढ़ाईके क्रममें ऊँचा नीचा स्थान । ३ एक ओहड़ा । ४ विभाग, खण्ड । (क्रि० वि०) ५ गुणित, गुना ।

दर्जिन (फा० स्त्री०) १ दर्जी जातिकी स्त्री० । २ दर्जीकी स्त्री ।

दर्जी (फा० पु०) १ कपड़े सोनिका व्यवसाय करनेवाला मनुष्य । २ कपड़ा सोनेवालो जातिकी पुरुष ।

दत्त (सं० वि०) द् विदारि द्-लृच् वेदे इडभावः । दा-यित्वा, विदारणकर्त्ता, फाड़नेवाला ।

दत्त (सं० पु०) द-वाहु० व इडभावस्त्वान्दसः । टारक, वह जो फाड़ता हो ।

दर्द (फा० पु०) १ व्यथा, पीड़ा । २ दुःख; तकलीफ । ३ सञ्चालुभूति, कष्ट, दया । ४ हानिका दुःख ।

दर्दमद (फा० वि०) १ पीड़ित, जिसे दर्द हो । २ जिसे सञ्चालुभूति हो, दयावान् ।

दर्दर (सं० पु०) दृ-यद् अच् पृषो० साधुः । १ पर्वत, पहाड़ । २ ईषट् भग्नभाजन, वह पात्र जो कुछ कुछ भग्न हो गया हो ।

दर्दराम (सं० पु०) व्यञ्जन विशेष । इसका पर्याय—मोनाम्नोण है ।

दर्दरीक (सं० स्त्री०) दारयतीव कर्षीं दृ-णिव्-ईकन् । १ वायव्यविशेष, एक प्रकारका बाजा । २ भेक, वेग ।

दुर्दर (सं० पु०) दृणाति कर्षीं शब्देनेति दृ-उरच् । १ भेक, मेढ़क, वेग । २ मीघ, बादल । ३ वायुभेद, एक प्रकारका बाजा । ४ पर्वतभेद, मलय पर्वतसे लगा हुआ एक पर्वत । ५ राक्षसभेद, एक राक्षसका नाम । ६ अन्नक धातुभेद, अबरक नामकी धातु । ७ उक्त पर्वतके निकट

का देयः । ८ इनका एक प्रकारका छोटा पैसा । ८
रन्ध्रोपश्रीट, बोरबड़ो नामका एक बाँड़ा । १० मासि-
बायमेद एक प्रकारका घान ।

दुदुरक (स० पु०) दुदुराय कायति दुर्दुर ह्य कायति
गन्धावति वा के-क । १ मायमेद एक प्रकारका बाबा ।
२ मेक, मैदुब ।

दुदुराच्छटा (स० खी०) दुदुर ह्य छटो यस्याः । माछो,
दुटो ।

दुदुरदद्या (स० खी०) मच्छ कपचीं सुबहुका ।

दुदुरदधी (स० खी०) दुधमेद, एक पीड़का नाम ।

दुदुरा (स० खी०) इवाति दारयति वा अक्षरान् इ-अरच्
प्रत्ययेन म्यातनात् साङ्, ततश्चात् । अणिका, दुमां ।

दुदु (स० पु०) दुदु रोय, दादबी बीमारो ।

दुदु (स० पु०) दरिद्रा बाहु उ । दुदुरीनमेद, दाद
नामक रोग ।

दुदुदु (स० पु०) दुदु इति दुदु इत्यन्तक । चक्रमर्दक,
चक्रमर्दक ।

दुदुदुदु (स० खी०) १ पञ्चमाकनियेय, एक प्रकारका
नाम । २ चक्रमर्दक चक्रमर्दकका पत्ता ।

दुदुमायिनो (स० खी०) दुदुमायति नय चिच्-यिनि
ततो ङोप् । तैसिनी ह्य ।

दुदु (स० पु०) दुदु रोम दादबी बीमारो ।

दुदु (स० खी०) दुदुराप्नोति दुदु न ततो षत्व
(षोकारिण्यतिनिष्ठक्यतिन्य कनेडका । वा ३।२।१००)

दुदुरोमे, जिसे दादका रोम हुआ हो ।

दुदुरोमो (स० खी०) दुदुरोम अस्याप्नोति दुदुरोम इति
दुदुरोमि, जिसे दाद हुई हो ।

दुप (स० पु०) इत्यति इति इय मासि चक् । १ पञ्चद्वार ।
इसका पर्याय—गर्भं पञ्चद्वारि, पञ्चद्वारा पमिमान,
ममत्त, मान, बिसोसति घोर छार है ।

पञ्चिक समाधि होने पर दुपरेके प्रति ओ पञ्चका बी
जाती है उडोका नाम दुप है ।

२० धन घोर बिधादिसे उत्पन्न होता है । एक मात्र
दुप ही चर्भनामका मूल है । इस स धारमें जब तक
मनुष्यके दुप नहीं होने, तभी तक वे उचलित कर
सकते हैं । दुप होनेके साथ ही मगनात् उचलना प्रति

पन्न देते हैं । क्या छोटे, क्या बड़े समो दुपों होनेसे
कत्तानीय हो जाते हैं । यहां तक कि मछला, विष्णु,
मङ्गल, चर्म धम गहक मङ्गि जय, विजय सुर घोर
पसुर पादि त्रिनके गर्भं होनेके तत्तनात् प्रतिफल
पावते । इसलिये प्रत्येक उचलितकामोका दुप परिहार
करना पञ्चक कर्त्तव्य है । २ मयमेद, एक प्रकारका
हरिच । ३ उद्या, रिग, कोप । ४ उच्छ्रु, ह्यस्त उह इता
पञ्चद्वार । ५ चर्म मयोदातिमम । ६ उच्छाच । ७
अष्टुरो । ८ पातक दुयाम, रोव ।

दुप (स० पु०) दुपयति ह्ययति मोहयति वा इप-
यिच्-अच् । १ कामदेव । ये समो ध्यतिर्वाओ मोहित
करते हैं, इसीसे इनका नाम दुपयक पड़ा है । (त्रि० २
पञ्चद्वार घोर मोहकारक, पमिमान करनीवान् ।

दुप (स० खी०) दुपयति सन्धोपयति दुप-यिच्-अच् ।
१ चट्ट, मिय, चीक । २ सन्धोपन, समारमिका कार्य
कर्त्तव्यता । (पु० खी०) दुपयति दुप-यिच्-अच् (कश्चि
मरीति । वा ३।१।१३) ३ क्यदमं ग्याप, पारसी, पादना ।
इसका पर्याय—सुक्र, पादम, पाकदमं मन्द, दम न,
प्रतिबिम्बित, कक घोर ककर है । इममें पापुः
ओकारी घोर पापनायकका तुल्य माना है । प्रातःकाल
उठ कर दुप चर्म पचना सुब देवनेसे उठ दिन खम होता
है । ४ पवतमेद, एक पञ्चद्वार नाम । ५ मयमेद
एक मशका नाम । ६ म मदीच विपचर्म काश्चिक्पापुरालने
इस प्रकार लिखा है—

दुप नामका एक प्रसिद्ध पत्त है । इस पर एतोंने
साक कुबेर नरकदा बास करते हैं । इतने पञ्चमें सीलित
मछलाके पाहारेके केना रोहच नामका एक पर्वत है
जिसके होनेसे ही मोहा मोना हो जाता है । इससे पानडो
दुपय नामकी एक नदी है जो विमान्य पञ्चद्वारे निकलने
है । इसका पन्न सोडिचमदके त्रैवा है । ओचितिके
उत्पन्न होनेसे ओच्छपने भव देवतापति साथ तथा नर
तोर्बटक द्वारा यहाँ काम किया वा । इस स्थानसे उनका
पाप घोर दुपं विरक्तुन दूर हो गया था, इसीसे यह
दुपय नामसे प्रसिद्ध हुआ है । (अष्टिपुत्राय ८१ अ०)

जो बाति चमसाओ यज्ञ-प्रतिपद तिथिको इस
नदीमें काम कर दुप वाचनकर कुबेरको पूजा करते, वे

शत ऐश्वर्ययुक्त हो कर ब्रह्मलोककी जाती हैं। इम दर्पणाचलके पूर्वमें अग्निमान् नामक एक पर्वत है, जिसका आकार माँप मा दोख पड़ता है। पर्वतकी जँ चाड़े, लम्बाई और चौड़ाई उसी संरीखा है।

दर्पट (स० त्रि०) दर्प ददाति दा-क । १ गवँ टायक पदार्थ, अभिमान उत्पन्न करनेवाला । (पु०) २ विष्णु ।

दर्पपत्रक (स० पु०) काशटण, कुश, डाम ।

दर्पहन् (स० त्रि०) दर्प हन्ति हन-क्तिप् । १ गव हारक, अभिमान या घमण्ड दूर करनेवाला । (पु०) २ विष्णु ।

दर्पा (स० त्रि०) कस्तूरी ।

दर्पारम्भ (स० पु०) दर्पस्य आरम्भः इ-तत् । अहङ्कारका आरम्भ । इसका नामान्तर मटस्फटि है ।

दर्पित (स० त्रि०) दृप-क्त । अहङ्कृत, अहङ्कारसे भरा हुआ ।

दर्पी (स० त्रि०) दृप-इन् । दाम्भिक, घमण्डी, अहङ्कारी ।

दर्भ (स० पु०) दर्भति विदारयति दृ-भ (इ दलिभ्या म० । उण् ३।१५१) कुश । इसका पर्याय—उलपटण और काश है । दभ दो प्रकारका होता है जिनमेंसे एकका पर्याय—कुश, दभ्यं, वहि, सूच्य और यज्ञभूपण तथा दूसरेका दीर्घपत्र और क्षुरपत्र है । दोनों प्रकारके कुश त्रिदोषनाशक, मधुर, कपायरस, शोतवीय और मूलक्षच्छ, अशमी, दृषण, वस्तिगतरीग, प्रदर तथा रक्त दोषनाशक है । (भावप्र०) कौसा ही घर्मका काम क्यों न किया जाय, उसमें अम का नितान्त प्रयोजन है । आडादि-कर्मोंमें दर्भमय ब्राह्मण बनाना पड़ता है और आसन भी कुशका छो होता है । काश, कुश, वल्ज, तोच्छ, रोमश, मौञ्ज और शाहल वे कुछ प्रकारकी दभ हैं ।

कुश भरति (कुशनेसे कनिष्ठाके सिरे तक) परिमाणका होना चाहिये ।

वजनीय दभ—पद्म, यज्ञभूमि, आस्तरण, आसन और पिण्डस्थित दभ वर्जनीय है । पिण्डके निधि जो दर्भ आस्तृत होता है, उस दर्भसे यदि कोई पितृ तर्पण करे, तो उसका तपश्च निष्फल होता है ।

नात, पाँच वा नौ कुशोंसे ब्राह्मण, ब्रह्मा और विन्दर (आसन) बनाना चाहिये । इसमें प्रमेद यद है, कि ब्राह्मण और ब्रह्मा बनानेमें कुशको अग्रभागके माथ दाईं वार सुड़ कर अग्रभाग ऊपर रखते हैं, पर विष्टर बनानेमें उसे दाहिने और नहीं करके बायो और करते और अग्रभागकी नाँचेका तरफ रखते हैं । ५ कुशासन, कुशका आसन

दभक (स० पु०) घोडेके पाँवका एक रोग ।

दर्भकुक्षम (स० पु०) क्षमि जाति, कीड़ेकी एक जात ।

दर्भकस्तु (स० पु०) कुशध्वज, राजा जनकके भाई ।

दर्भट (स० त्रि०) दर्भ संटर्भं वाहुं षटन् । निभृत गृह, भोतरी कीठरो ।

दर्भपत्र (स० पु०) दर्भस्यैव पत्रमस्य । काश, काँस ।

दर्भपुष्प (स० पु०) सपभेद, एक प्रकारका माँप ।

दर्भमय (स० त्रि०) दर्भात्मकः दर्भं शरादि० मयट् । कुशनिमित्त ब्राह्मणादि, कुशके बने हुए ब्रह्मा, ब्राह्मण आदि ।

दर्भमूला (स० स्त्री०) दर्भस्यैव मूलमस्याः शोष् । १ औषधभेद, एक प्रकारको देवा । २ कुशमूल, कुशको जड़ ।

दर्भर (स० पु०) दर्भस्य सचिक्रष्ट देशादि दर्भं प्रश्मादि-त्वात् रः । १ दर्भदिके अदूर देशादि, कुश आदिके निकटस्थ स्थान । २ लाव पत्तो ।

दर्भवट (स० त्रि०) अन्तर्गृह, भोतरी कीठरो ।

दर्भसमद्र (स० पु०) दर्भादिका आसन, कुशका विक्राना ।

दर्भसूप (स० पु०) दर्भप्रक्षुरोऽनूपः संज्ञानूत्वेऽपि क्षुम्नादि पाठात् पत्ते पूर्वपदात् न णत्वं । दर्भप्रक्षुर अन्पदेश भेद ।

दर्भस्तम्ब (स० पु०) दर्भादिका गुच्छः, कुशका गुच्छा ।

दर्भासन (स० पु०) कुशासन, कुशका बना हुआ विद्यावन ।

दर्भह्वय (स० पु०) दर्भं आह्वयते सादृश्यात् आह्वेय । सुञ्ज दृषणभेद, सूज नामकी घास ।

दर्भिः (स० पु०) एक ऋषिका नाम । महाभारतमें लिखा है, कि इन्हीं ऋषि ब्राह्मणोंके उपकारके लिये

दर्बीकोप नामक तीर्थ स्थापन किया। इस तीर्थमें चार मनुष्य धरालिखत हैं। जो इसमें क्षान् करती है सब प्रकारको पुण्यतिथिमें छुटकारा पाते हैं। (भाट १११० ८३५)
 दर्म (४० सि०) दृ-विदारि बाहु० स। दारक, पाइने वाला।

दर्मन् (म० पु०) दृ-विदारि बाहु० मनिन्। दर्म देखो।
 दर्माच—पश्चात्तमे पक्षमें त शुद्धदामपुत्र त्रिभिन्नी प्रकरगुरु तद्विषयका एक नगर। यहाँ एक सामान्य ध्युनिभि-
 पविष्ट है। पहाड़ी महाजन यहाँ नाम करते हैं।

दर्मिदान (हि० पु०) दर्मिदान देखो।
 दर्मिदायी (हि० वि०) दर्मिदायी देखो।
 दर्प (स० सि०) दरम्भ इति गवादिस्त्रात् यम्। दरहित, भयभावक।

दरा (फ्रा० पु०) पहाड़ी रास्ता, बाड़ी।
 दरा (हि० पु०) १ मोटा बाटा। २ च करीबो मरा।
 ३ दराट, दरब।

दर्शीन (फ्रा० खो०) बाह सीमा करीबका एक दम्भ जो लकड़ीका बना होता है।

दर्शीना (सि० सि०) वैश्वकृष्ण पत्नी जामा, बिना डरक बना जाना।

दर्श (म० पु०) दृ-चाति विदारयतीति ड म। १ हि सा करीबका मनुष्य, राक्षस। २ जाति विदिय एक जाति जिसका लक्ष्य टरट विद्यात पादिके साथ महाभारतमें पाया है। (भारत २।२।११) ३ दम जातिका निवास मूल जनपदविदिय, वह उय जहाँ दम जाति बसता है। यह जलमान पञ्चाब प्रदेशके उत्तरमें परमेश्वर का स्थान है। ४ उमानकी पत्नीके उमानकी एक-पत्नीका नाम।

दर्श (स० पु०) दर्शय वि भाये अटति पट यच् मर-
 भादिस्त्रात् दन्वोयः। १ दृष्टतादी, मन्ना टेनेकी बसको।
 २ दारवात धीमोदार, दरवान।

दर्शीक (स० पु०) दृ-विदारि दृ-दन्वन्। १ दन्। २ बाहु।
 ३ पापविदिक, एक प्रकारका जात्रा।

दर्श-१ दराकें मूल निसेका एक तानुष। इसका सिद्धन १०६२ वर्गमीक है। इसमें ३९३ घाम भयते हैं। राजस्व कुल २६८११०० रु० है। यहाँ एक होशामो, दो कोष दारी बदासत और ८ बार्न है।

२ उच्च तानुषका एक नगर। यह सत्ता २० १८ ३० ४० घोर रेखा ७७ इले मू०में धरालिखत है। यह महर कुल त्रिभुज महरमें २४ मील दक्षिण-पश्चिममें धर स्थित है। यहमें शहर महर तक एक पटो मनुष्य गई है। यहाँ एक बाना एक डाकघर, पविष्टोधि निये एक न मत्ता घोर एक म्भ म है। दर्वा एक प्राचीन नगरो है।

दर्वि (म० खो०) दृ-चाति विटा। यामेन दृ विन्।
 १ म्भलनादि चारक, करको डौवा। इसका न म्भलत पयाय चामि लुनाका दर्वी, खन्वी घोर म्भलकन है।
 २ मर्षकी पत्ता, मोपका फन।

दर्बिक (म० पु०) दर्बि श्यावे कन्, पमिवाणान् पु स्व।
 दर्बी देखो।

दर्बिका (म० खो०) दर्बि श्यावे कन् टाप। १ दर्बिका, करको, होवा। २ म्भलनमें दर्बिकमें लामिका एक प्रकारका कात्रन। यह कोमे भरे दीबेमें बनी म्भल कर म्भलाका जाता है। यह कात्रन देवता घोर दिवोको चक्याका जाता है। ३ मोत्रिज्जालता, बनभोमी, मोत्रिया।

दर्बिपतिचा (म० खो०) मोत्रिजा सोमिया।

दर्बिहोम (म० पु०) दर्ब्याः होम इ तत्। दर्बीमाचन होममें द।

दर्बिहोमो (स० सि०) दर्बिहोमोप्याप्तीति इनि।
 दर्बिहोमकारो दर्बी नामक होम करानेवाला।

दर्बी (स० खो०) दर्बि बाहु डोय। दर्बि, करको, बसका, डोवा।

दर्बीकर (म० पु०) दर्बी चर्चा करोतीति क ट, वा दर्बी कचा कर दवाय। मर्ष, फनवाना मय। दर्बीकर मर्षके विषयमें सुष्ठुतमें इस प्रकार लिखा हुआ है।

दर्बी परम प्रकारके होते हैं साधारणतः धर्मो प्रकारके हैं जो दर्बीकर, मन्त्रो राजिमरु, निर्विष घोर बौध्दधरुन वं च भेषियोमें विभक्त है।

दर्ममें दर्बीकरके २६ भेद हैं यथा—क्षणमर्ष महाक्षण क्षणोदर म्भेतकपोत महाक्षणोम म्भलाइक, महामर्ष, महामान, मोक्षिताक, मधेकुल, परिधर्ष, पण्डकचा ककुल, पण्ड, महापण्ड, दमपुष्य दक्षिणुष, पुण्डरोक, अकुटीमुप्य, सुपामिचोर्च, गिरिनर्ष,

ऋजुसर्प, श्वेतोदर, भडाशिर और अलगदं इन २६ प्रकारके सर्पोंकी फन होती हैं इसीसे इनका नाम दर्वीसर हुआ है। जिन सर्पोंके मस्तक पर रथाङ्ग, नाङ्गल, कत, स्वस्तिक अथवा अङ्गुशके चिह्न रहते हैं उन्हें भी दर्वीकर कहते हैं। ये सप फणाविशिष्ट और शोभनगामो होते हैं तथा दिनके समयमें इधर उधर विचरण करते हैं। दर्वीकरके काटनेसे त्वक्, चक्षु, नख, दन्त, मूत्र, पूरोप और दंश-स्थान काले हो जाते हैं तथा शरीरकी रुचता, मस्तकका भार, सन्धि स्थानमें वेदना, कटि, घृष्ट और ग्रीवाको दुर्बलता, लृभन, कम्प, वाक्यकी अवसन्नता, शरीरकी जडता, शक्य उन्नार, काम, श्वास, हिक्का, वायुकी ऊर्ध्वगति, वेदना, वमनको इच्छा, तृष्णा, लालास्राव, फेणानिःसरण, इन्द्रियकार्यका अवरोध आदि तरह तरहकी यातनाएं उत्पन्न होती हैं। विशेष विवरण सर्प शब्दमें देखो।

दर्वीसंक्रमण (सं० क्ली०) एक तीर्थ । यह तीर्थ तोंनों लोकमें पूजित है और इसमें स्नान दानादि करनेसे अशुभोपशान्तिका फल होता तथा स्वर्गलोककी प्राप्ति होती है। (भारत वन ८४७०)

दर्वीशोम (सं० पु० । दर्वीशोम देखो ।

दर्य (सं० पु०) दृश्यते उपर्यधोभावापन्न समसुव्रपात-न्यायेन राश्यांकांशावच्छेदनसहावस्थितौ चन्द्रसूर्यो यत्र यत्र दृश्य अधिकरणे षड् । १ सूर्य और चन्द्रमाका सङ्गम काल, अभावस्या तिथि । २ दर्शकाल कर्त्तव्य यागभेद, वह यज्ञ जो अभावस्याके दिन किया जाय । ३ दर्शन । दर्शक (सं० पु०) दर्शयति नृपादिसमीप-गमनपथ-मिति दृग्गणिक यवुल । १ द्वारपाल, षोढौदार । द्वार-पालगण लोकोकी राजाके पास ले जाकर उनके दर्शन कराते हैं, इसीसे इनका नाम दर्शक हुआ है । (त्रि०) २ द्रष्टा, देखनेवाला, प्रधान, मुख्य । ४ निपुण । ५ दर्शयिता, दिखानेवाला ।

दर्य कगङ्गाहार—वङ्गाल देशके मालदह जिलेका एक राजस्व विभाग । इसका परिमाणकृत १७०२८ वर्गमोल और राजस्व २०८) ६० है । यहाँ एक भी नदी नहीं है, किन्तु अनेक जलाशय, भोन और नाले हैं । बहुत सी जलाभूमि रक्षनेके कारण यह स्थान अत्यन्त असा-

ख्यकर है । यहाँ खर और गात्र वेदना भव समय हुआ करता है । यहाँकी भूमि उर्वरा है इसीसे चावल, गेहूँ और सरसों आदिकी फसल अच्छी लगती है ।

दर्यत (सं० पु०) दृश्यतेऽसौ दिवि दृश कर्मणि अतत् । १ सूर्य । २ चन्द्रमा । (त्रि०) ३ दर्शनोय, देखने लायक ।

दर्शतत्रो (सं० त्रि०) दर्शनोयविभूति, देखनेयोग्य ऐश्वर्य ।

दर्शन (सं० क्ली०) दृश्यतेऽनेनेति दृश करणे लृट् । १ नयन, आंख । २ स्वप्न । ३ बुद्धि । ४ धर्म । ५ दर्पण । ६ इज्या । ७ वर्ण । ८ मुलाकात, भेंट । जैसे—धन न मालूम आपके कब दर्शन होंगे । यह शब्द बड़ोंके लिए प्रयुक्त होता है । ९ चाक्षुष ज्ञान, वह बोध जो दृष्टिके द्वारा हो, अवलोकन, साक्षात्कार, देखादेखा । पर्याय—निर्वर्णन, निष्धान, आलोकन, उच्चण, निभासन । (जटाधर)

जिसके देखनेसे पुण्य एवं पाप होता है, उसका वर्णन ब्रह्मवैवतपुराणमें इस प्रकार लिखा है—

सुब्राह्मण, तीर्थ, वैष्णव, देवप्रतिमा, तीर्थस्त्रायो नर, सूर्य, सती स्त्री, सन्धाषी, यति, मुनि, ब्रह्मचारी, गो, वज्रि, गुरु, गजन्द्र, सिंह, श्वेताश्व, शुक, पिक, खड्गन, हंस, मयूर, सवत्सा धेनु, पतिपुत्रवती नारी, तीर्थयात्री नर, सुवर्ण वा मणिमयप्रदोप, मुक्ता, हारक, माणिक्य, तुलसी, शक्तपुष्प, शक्तधान्य, घृत, दधि, मधु, पूर्णकुम्भ, राजा, राजन्द्र, दर्पण, जल, शक्तपुष्पमाला, गीरोचना, कर्पूर, रजत, सरोवर, पुष्पित पुष्पोद्यान, देवपूजाके निमित्त स्थापित घट, शङ्ख, दुन्दुभि, कस्तूरी, कुङ्कुम, शक्ति, प्रवाल, स्फटिक, कुशमूल, गङ्गासृत्तिका, कुश, ताम्र, विशुद्ध पुराण ग्रन्थ, सवोज विष्णुमन्त्र, रत्न, तपस्वी, शिव मंत्र, समुद्र कणसार, यज्ञ, महोत्सव, गीमूत्र, गोमय, दुग्ध, गोधूलि, गोष्ठ, गोष्पद, पक्ष शस्त्र-युक्त क्षेत्र, श्यामा स्त्री, क्षेमहरो वेश्या, गन्ध, दूर्वाक्षतयुक्त तण्डुल, सिद्धान्त और परमात्र इन सबके दर्शनसे पुण्य होता है तथा समस्त अमङ्गलोंका नाश होता है । कार्तिकी पूर्णिमाकी राधिका, पौषमासकी शकटा तिथिमें पद्मा, आश्विनकी अष्टमीमें दुर्गा, जम्माष्टमीमें विध्व-

माधव तथा बायोमि पञ्चपूर्वा आदिदिग् दर्शन करनेमें प्रयोग कुछ काम होता है। (बर्षी-०-३-०-३-०-३-०-३-०)

दृष्टन विषय तत्त्वमतेन इयं वार्षिके म्युत् १० प्राण, पञ्चाब्देयं दक्ष माधवेद त्रिभुक्ते इति यथा तत्त्वका ज्ञान होता है, उसे दर्शन कहते हैं।

ज्ञान नाम करनेके लिये दर्शन ही एक मात्र उपाय है। दर्शनमाधवेका पञ्चयत्न, बिना बिन्ने बिन्ने मी तत्त्व का ज्ञान नहीं होता। यह दर्शन प्राण आत्मिक, मानसिक और, बोध वैश्वानर आदि माना भेदोंके कारण माना प्रकार है। उपनिषदोंमें प्राण दर्शनका मूलमूल प्रकट किया गया है। पञ्चाब्दतत्त्वविद् अथपिपयं बहुदृष्टयता इति त्रिभुक्तेका प्रमाण करते हैं, ज्योका नाम दर्शन है। वैदिकी संहिता, ब्राह्मण और उपनिषद्के आधार पर जो परमार्थ सम्बन्धी कुछ मत प्रचारित हुए हैं, उनका मी मूल दर्शन है। परमाथ तत्त्वका अनुभवान करना जो प्राण दर्शनमाधवेका प्रधान उद्देश है। इन दर्शनमाधवेमें ही जलतक कारणोंका निरूपण और अनुभवको बुझियां वा पारलौकिक उद्यति साधनके उपाय निवारण आदि आलोचित हुए हैं। इनमें बहुदर्शन को प्रधान है, जैसे—साहज, पातञ्जल श्वाय, वैश्वियर, मोर्मासा और वैदान्त। साधनाचार्यमें 'सर्वदर्शन स यद्दर्शनं बहुदर्शनं' बिना और मी दृग् दर्शनोका संछिन्न विवरण दिया है, यथा—चारोंके बोध, पाठशु वा ज्ञेय, लक्ष्मीय, पायपत, पूर्व पक्ष रामानुज, रवेन्दर, पाञ्चिन, यौन और प्रकृतिज्ञा। ये सब दर्शनमाधवे सुख प्रकाशके लिये गये हैं।

दर्शनमाधवेमें प्रवेश करनेके पहले 'तत्त्वपदार्थ' और 'कारण' आदि शब्दोंका धर्म ज्ञान लेना आवश्यक है। श्वाय, वैश्वियर धर्म आदि दर्शनमाधवेके प्रारम्भमें कुछ पदार्थ वा तत्त्व प्रज्ञोक्त हुए हैं। जैसे—श्वाय-माधवेमें बौद्धपदार्थ वैश्वियरमें वन पदार्थ सांख्यमें पञ्चतत्त्व और पातञ्जलमें बहु बि गति तत्त्व माने गये हैं। वन मान धर्ममें पदार्थ शब्दका प्रचलित पद वैदिक कतिपय इन्द्रियोपर बहुषोका निर्देश करता है। जैसे—अक्ष, अक्षर, धारण, धारिता इत्यादि। परन्तु दर्शनमाधवेमें अक्षर पदार्थ शब्दका ऐना पद नहीं है

जैसे श्वायकारणमाधवे पदार्थमें पञ्चसे पहले कुछ ज्ञान-विद् स प्राणोंका ज्ञान कराया जाता है, उसी प्रकार दर्शनमाधवेमें प्रवेश करनेमें पहले तत्त्व और पदार्थके ज्ञान पड़ता है, उन्हें दर्शनमाधवेको वातु वा स प्राण समझना चाहिये। दर्शनमाधवे अनुसार हर एक कार्यका कारण है। श्वाय और वैश्वियर दर्शनमें मित्र शब्द द्वारा तथा वैदान्तदर्शनमें मित्र शब्द द्वारा कारणका नामकरण हुआ है। श्वाय और वैश्वियर में कारण तीन प्रकार माना गया है—समवायो, असमवायी और निमित्तकारण। वैदान्तिकानि और मो एक सांख्यिक कारण माना है। इनका कहना है, बि जो कारण पद उपादानको सहायताके बिना ही कार्यको उत्पत्ति करता है और श्व कार्यरूपमें परिणत नहीं होता उसे विवत उपादानकारण कहते हैं जैसे रज्जु-मर्पका मर्म जोमिसे रज्जु ही उस मिया सर्पज्ञानमें विवत उपादानकारण होता है। यथा—रज्जु, मर्म मर्प नहीं होती बल्कि पद उपादानको सहायताके मिया सर्पज्ञान उत्पन्न करते हैं।

यह साधनाचार्यके 'पद दर्शन'के अनुसार तथा ज्ञानके आधारे आदि पद दर्शनका विवरण दिया जाता है।

आधारेक रूप—आत्मिकोमि आधारेक जो खंड है। इन दर्शनके अनुसार अनुभवको जोवन भर सुन्दर उपायोका बिन्ना करनी रचना चाहिये।

'कारणविदं मुक्ते जीवितं इत्याहुं विवेत्।

असोमूलकं देहसु सुखागमनं कृत्वा ॥' (बर्षी-०-३-०)

आधारेकके मतके देह ही आधारे है देहके बिना आधारे कोई सुख-वस्तु नहीं है, प्रत्यक्ष मात्र ही प्रमाण है, अनुमान आदि प्रमाण नहीं है। आत्मिक-अधारे उपादेय उद्यम-सत्त्व और उत्तम वस्तु-परिधानादिने उत्पन्न होनेवाला सुख जो परमसुखपदार्थ है। सुदान्क पदार्थ बिना और कर्म को प्रज्ञोक्तमय नहीं है। इन मतके अनुसार मूल कारण ही है। आधारेक मतावलम्बोपेक आधारेको मूल नहीं मानते।

विशेष विवरण आधारेकके लिये देखो।
शेव दर्शन—यह दर्शन चार वैश्वियरमें विभक्त है,

प्रायः सभी दर्शनोका अपसाहित्य बचकन किया गया है। विस्तृत विवरण कारनेके लिए दर्शन भाष्यमें वैचर्यमें कर रहे थे।

ब्रह्मीय शास्त्रपर-वचन—इह दर्शन परम कारकिक महादेवको ही परमेश्वर एक जीवो को एक वतनाता है। जीवोंके अधिपति होमिंके कारण परमेश्वरको एक पति भी कहा जा सकता है। जैसे किसी विपदाका सम्पादन कारनेके लिये पशुदादि, पक्षत जन्तुपदादि-को महावता सिनी पड़तो है उसी प्रकार अन्य जन्तुकी सहायताके बिना जो जगदीश्वरने जगत्कात समुदय निर्माक किया है इसलिये उनको सतत्कालतां भी कहा जा सकता है तथा पशुदादिके द्वारा जो कार्य सम्पन्न होते हैं, वनके भी कारण परमेश्वर हैं, इसलिये वनको सब कार्यका कारण भी कहा जा सकता है। इस दर्शनके मतसे, सुखि ने प्रकारको है—एक दुःखीकी पश्यता निवृत्ति थीर दूमरो परमेश्वरको प्राप्ति। दुःखीके निवृत्तियुक्त सुखि होने पर फिर वही दुःख नहीं होता। इसलिये उस सुखिको परम सुखनिवृत्ति कहते हैं। इह सुखि द्वारा कोई विपद प्रतिघात नहीं रहता, कितना भी दुःख, कितना भी अशुभकृत वा पुरुष्य नहीं न हो, स्वस पश्यकृत थीर पशुवर्ती वस्तुकी तरह इन्द्रियोत्तर होता है तथा जिन दर्शनो को गुण वा दोष है, नह भी मान्य हो जाता है। पश्यत' जने विषय इह पश्यिमान् स्वस्त्रिके ज्ञानपद के पश्यि कहते हैं। ज्ञियामात्रि होनेसे एक त्रिम विषय को पश्यिवाप्य होता है, उसो समय वह सुखमय दुषा करता है। ज्ञियामात्रि सुख पश्यिषी केवल इच्छा मात्र को पपिया करती है। सुख पश्यिषी इच्छा होने पर अन्य किसी कारणकी पपिया न कर, धीरने ही सचये मनोरथको पूरि होता है। इस प्रकार इह सुखि थीर ज्ञियामात्रिक्य सुखि परमेश्वरकी तत्त्व यत्रि सद्य है, इस कारण पश्यका नाम पारमेश्वर्य सुखि है। पूष मद्यदर्शनमें कथित मययहासक प्राप्तिको सुखि कहा गया है। सुख पश्यि यदि दानस्वक्य पयोमताश्रमतामि कह ही रहा, तो उसे सुखि किस तरह कहा जा सकता है ? इत्यादि क्यसे दर्शन मद्यपूष दर्शनका अन्तन किया गया है।

इह दर्शनमें प्रधान कर्मसाधनकी वर्तानिधि कहते हैं। वर्ताने दो प्रकारकी है, एक व्रत थीर दूमरो धार। सिद्धयग मत्सम्बन्धक, मत्सम्बन्धा पर व्रतन थीर वद्यार इन तोन ज्ञियार्थीको व्रत कहते हैं। 'वृ' 'वृ', 'वा' इन प्रकार हास्यक्य इतिव गभर्नशास्त्रानुसार महादेवके गुणमानक्य मोत, मात्रपात्रक मन्मत युक्त, सुखवके चोत्कारके समान चोत्कारक्य कृदात्, पश्याम थीर अप इन का कर्मकी उपहार कहते हैं। इन प्रकारके व्रत जनममात्रमें न कर पश्यता सुमरोतिने मयय करने चाहिये। धारक्य वर्ताने का मेटे हैं—आत्मन अन्तन मन्तन, नृत्तारक, पशितारक थीर पशितहापय। इम न होने पर भी दिक्काने होनेको ज्ञायन पश्यते हैं। वासु-के सम्पर्कसे कथितको तरह शरीरादिने कथ्यनको अन्तन, पश्य कथिने समान गमनको मन्तन, परम कथ्यतो प्योके सन्दर्शनसे वास्तविक वासुके न होने पर भी कामुकको भाति कथित प्यन धार करनेकी नृत्तारक, कथनमाकर्तवा शानसुखको तरह विगर्हित कर्मानुष्ठानको पशितत्कारक थीर निर-बक वाचितार्कक शन्दोत्कारकको पशितहापय कहते हैं। इन दर्शनके पशुसार तत्त्वज्ञान ही सुखिका भावन है। शास्त्रान्तरमें भी तत्त्वज्ञानकी सुखिका साधन कहा गया है किन्तु शास्त्रान्तर द्वारा सुखि तत्त्वज्ञान होनेको मन्थावना न होनेसे यको शास्त्र सुसुद्धीके लिए पय कावनीय है। विशेषक्यसे समस्त वस्तुओंका ज्ञान बिना पुण तत्त्वज्ञान नहीं होता। इन शास्त्रमें पारमेश्वर्य को प्राप्ति थीर दुःखको निवृत्ति इन दर्शनोका ज्ञान ही सुखि है थीर ये ही दोना योगका पय है। इस दर्शन के मतसे कार्य नित्य है थीर परमेश्वर सतत्कालकर्ता है।

ब्रह्मीय-शास्त्रपर देखो।

वेदवचन—इह दर्शनमें शिवका परमेश्वर थीर कोषीको एक कहा गया है। नकलापयापयत-दर्शनके मतने परमेश्वरके कर्मदि निरपिचकत्तंथ्य कहे गये हैं, किन्तु पिया न मान कर त्रिम यत्रिने त्रिम प्रकारका कर्म किया है, परमेश्वरने कने तत्त्वक्य हो पय दिया है, इस कारण परमेश्वरको कर्मदिभापिय कर्ता कहा गया है। पशुदादिके पशितरिक्त कोई एक कथ्यकर्ता है,

यह अनुमानसिद्ध है। अस्मदादिकी तरह परमेश्वरका प्रकृत शरीर नहीं है, पञ्चम त्वात्मक शक्ति ही उनका शरीर है। ईशान, तत्पुरुष, अवीर, वामदेव और सद्यो-ज्ञात ये पाँच मंत्र यथाक्रमसे ईश्वरके मस्तक, मुख, हृदय और पादस्वरूप हैं तथा अनुग्रह, तिरोभाव, प्रलय, स्थिति और सृष्टिरूप पञ्चकृत्योंके भी कारण हैं। आगम द्वारा फिलहाल मालूम होता है कि अस्मदादि-कोतरह ईश्वरके भी नयनादिविशिष्ट शरीर हैं, परन्तु वास्तवमें ऐसा नहीं है। उन आगमोंका तात्पर्य इस प्रकार है, कि निगकार यस्तुको चिन्ताके स्वरूपका ध्यान नहीं हो सकता, इस कारण भक्तवत्सल परमेश्वर भक्तोंके उन कार्योंके सम्पादनार्थ करुणापूर्वक कभी कभी तादृश आकार धारण करते हैं। इस दर्शनके मतसे पदार्थ तीन प्रकारका है, १ पति, २ पशु और ३ पाश। पति पदार्थ स्वयं भगवान् शिव हैं और जो शिवत्वको प्राप्त हुए हैं, वे पशु हैं तथा शिवत्व-पदकी प्राप्तिके लिए दोष्तादि उपाय पाश हैं। पशु पदार्थ जीवात्मा है। यह जीवात्मा महत् क्षेत्रज्ञादि पदवाच्य है, देहादिसे भिन्न सर्वव्यापक है, नित्य है, अपरिच्छिन्न, दुर्घ्न्य और कर्त्तास्वरूप है। जीवात्मा देखो। पाश पदार्थ चार प्रकारका है—मल, कर्म, माया और बोधशक्ति। स्वाभाविक अशुचिको मल कहते हैं, जैसे तण्डुल तुष द्वारा आच्छादित रहता है, उसी प्रकार वह मल ढक शक्ति और क्रियाशक्तिको आच्छादित कर देता है। धर्माधर्मको कर्म कहते हैं, प्रलयावस्थामें जिससे समस्त कार्य खोन होते और फिर सृष्टिके समय पुनः उत्पन्न होते हैं, उसकी माया और पुरुष तिरोधायक पाशको रोधशक्ति कहते हैं। जोव पशुपदार्थ है। यह पशु पदार्थ तीन प्रकारका है—विज्ञानाकल, प्रलयाकल और सकल। एकमात्र मलस्वरूप पाशयुक्त जीवका विज्ञाना-कल कहते हैं और मल, कर्म और माया इन पाशत्रय द्वारा युक्तको सकल। समाप्तकलुष और असमाप्तकलुषके भेदसे जोव भी दो प्रकारका है। प्रलयाकल जीवके भी दो भेद हैं—पक्षपाशहय और अपक्षपाशहय। पक्ष-पाशहयको सुप्ति मिलती है। अपक्षपाशहयको पूर्यष्टक देह धारण कर स्वकर्मातुसार तिर्यक, मनुष्यादि विभिन्न

योनियोंमें जन्म लेना पड़ता है। इस मतमें—मन, बुद्धि और अहङ्कार, चित्तस्वरूप अन्तःकरण, भोगसाधन कला, काल, नियति, विद्या, राग प्रकृति और गुण ये सम तत्त्व, पञ्च महाभूत, पञ्च तन्मात्र, पञ्च ज्ञानेन्द्रिय और पञ्च कर्मेन्द्रिय इन एकविंशति तत्त्वात्मक सूक्ष्म देहको पूर्यष्टक देह कहते हैं। अपक्ष पाशहय जोवोंमें जिनके पुण्या-तिशय सञ्चित हैं, उनकी महेश्वर पृथिवीपतित्व प्रदान करते हैं। सकल-स्वरूप जोव भी दो प्रकारका है—पक्ष कलुष और अपक्ष कलुष। महादेव अपक्ष कलुषोंको महेश्वरकी पदवी देते हैं और अपक्ष कलुषोंको संसाररूपमें निश्चित करते हैं। शैव देखो।

पूर्णप्रबुद्धदर्शन—पूर्णप्रज्ञने आनन्दतीर्थकृत भाष्यके मतानुसार अपने दर्शनका सङ्गलन किया है। इस दर्शनके अनुसार जोव सूक्ष्म और ईश्वर-सेवक है, वेद अपौरुषेय, सिद्धार्थबोधक और स्वतःप्रमाण है, प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम ये तीन प्रमाण हैं। 'प्रपञ्चसत्य'के विषयमें पूर्णप्रज्ञ और रामानुजका एकसा मत है, परन्तु रामानुजके माने हुए भेद, अभेद और भेदाभेद इन तीन तत्त्वोंको यह स्वीकार नहीं करता। पूर्णप्रज्ञका कहना है कि रामानुजने विरुद्ध तीन तत्त्वोंको स्वीकार कर शङ्कराचार्यके मतकी पुष्टि की है। यह मत अशुद्ध है। आनन्दतीर्थकृत शरीरकमीमांसाके भाष्य पर दृष्टिपात करनेसे मालूम होता है कि जोव और ईश्वरमें जो परस्पर भेद है, उसमें कुछ भी संदेह नहीं है। इस भाष्यमें लिखा है—“स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो।” इस श्रुतिका यह तात्पर्य नहीं कि ईश्वर और जीवमें परस्पर भेद नहीं है, किन्तु 'तस्य त्व' अर्थात् 'उसके तुम' इस पद्यो समास द्वारा उसमें 'जोव ईश्वरका सेवक है', ऐसा अर्थ निकलता है। इस दर्शनमें तत्त्व दो प्रकारका माना गया है—स्वतन्त्र और असतन्त्र। इनमें भगवान् सर्वकीर्ष-विवर्जित अशेष सद्गुणोंका आश्रयस्वरूप विष्णु, जो स्वतन्त्र तत्त्व हैं और जीवगण असतन्त्र अर्थात् ईश्वरके अधीन हैं। ईश्वरकी सेवा तीन प्रकारसे होती है—अङ्गन, नामकरण और भजन। इनमेंसे अङ्गनको पद्धति साकर्यसंहिताके परिशिष्टमें विशेषरूपसे लिखा है तथा उसकी भावश्यकताका प्रतिपादन तैत्तिरीयक उपनिषद्में किया गया

है। जिससे नारायणके शङ्खचक्रादि चिह्न विरक्तान् विराजित रहे, ऐसा करना चाहिये। पद्मनभो प्रसिद्धाए पद्मिपुराणमें लिखी हैं। द्वितीय सेवा नामकरण है, पद्मिपुराणिकोंका लेखनादि नाम रखना चाहिये, इससे बात बातमें ममवानुका नाम-ओर्तन होता है। तृतीय सेवा भजन करना है। यह सेवा तीन प्रकारकी है—वायिक, वाचिक और मानसिक। वायिक भजनमें तीन भेद हैं—दान, परित्राण और परिरेक्षण। वाचिकके चार भेद हैं—शक्त, हित, प्रिय और आध्याय। मानसिक भजन में तीन प्रकारका है—दया, स्तुति और खडा। जैसे “अनुभवात्प्राय मन्वा गुरोपि त्रस्तानो मयै” इस वाक्यसे गुरु को मन्त्रिके काव श्राद्धके पूजा करे तो श्राद्धके भी भांति पवित्रादि सुखविमिष्ट ही मन्वता है, ऐसा धर्म समझमें आता है, उसी प्रकार ‘ममभिर् मर्तन मयै’। इस श्रुति वाक्यसे द्वारा ‘ब्रह्मज्ञेयोर ब्रह्मज्ञा परमेद’ ऐसा धर्म न हो कर ऐसा धर्म होगा कि ‘ब्रह्मज्ञानां अत्रि ब्रह्मको तरण सर्वप्रस्तादि सुखसम्पन्न होती हैं।’ श्रुतिमें माया पवित्रा, निरति, मोहिनी] महति और वाचना इन दो शब्दों का प्रयोग है, जिनका धर्म ममवानुकी इच्छामान है, न कि धर्मतवादिमेंकी अस्मित पवित्रा और जो प्रपन्न शब्द कहा गया है, उसका धर्म महत्त एक भेद है। परमेद इन प्रकार है—मोहिमरमेद, अहंमरमेद, अहंमोमेद दोनों तथा अहंपदावका परफर भेद। ये प्रपन्न धरय और पनादिदिह हैं। ब्रह्मका सर्वोत्कर्ष प्रतिपादन करना जो सम्यक् शास्त्रोंका लक्ष्य है। धर्म, धर्म, धाम और मोक्ष ये चार सुवचार्थ हैं, जिनमें मोक्ष ही श्रेष्ठ है, परम तीन सुवचार्थ पतिवर्ध है। बुद्धिमत् अस्मितामका प्रधान सुवचार्थ मोक्षको प्रातिक्रि लिए प्रयत्न करना लक्ष तोभावे लचित एवं विधीय है। परन्तु ईश्वरके प्रपन्न हुए बिना मोक्षलक्ष्य नहीं होता। शान्ति के बिना ईश्वर पवक नहीं होते। शान्ति शब्दसे विष्णुका सर्वोत्कर्ष ज्ञान समझना चाहिये।

धर्म और धर्म्य आदिवा सम्यक् ज्ञान होनेसे विष्णुके साथ सहवाच होता है, नमस्तु दुःख पूरे ही जाती हैं और श्रेष्ठ सुखका उपभोग होता है। श्रुतिमें लिखा है—एक मरुका पर्याप्त ब्रह्मका तत्त्वज्ञान होनेसे समस्त

मनुष्योंका ज्ञान हो सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि जैसे धामल प्रधान अस्मिन्को ज्ञान लेनेसे धामका परिचय मिल जाता है तथा पिताको जाननेसे पुत्रका परिचय प्राप्त होता है, उसी प्रकार इस जगत् प्रधान भूत और पिता स्वयं को ब्रह्म हैं उनका ज्ञान ही ज्ञानसे सम्यक् पदार्थोंका ज्ञान ही जाता है। परंतु मतामसम्बन्धीय व्यासकृत वेदान्तसूत्रका जो कृटार्थ लिखा करती हैं, वह कुछ नहीं है। उन श्रुतिमें एक सूत्रका तात्पर्य यहां लिखा जाता है। यथा—“मपठ मयविष्णु” इस सूत्र “धर्म” शब्दसे तीन धर्म होते हैं—दानधर्म, परित्राण और भजन। “धर्म” शब्दका श्रेष्ठार्थ गुरुगुरुराचरे त्रह्मनारद स नादमें लिखा है। ‘अथ नारायणकी प्रमथनासे बिना मोक्ष नहीं जाता और उनके ज्ञानके बिना उन्हें प्रमथना नहीं होती, तब ब्रह्मविद्याका पर्याप्त ब्रह्मको जाननेको इच्छा करना पावश्यक है। यही इस सूत्रका धर्म है। “ममभारत” इस सूत्रमें ब्रह्मसे लक्षण कहे गये हैं। एक सूत्रका धर्म यह है कि जिससे इस मन्वतकी उत्पत्ति, स्थिति एवं व हार होता है, और जो शिख निर्देव धर्मिय सम्युपाचर्य हैं, ऐसे नारायण ही ब्रह्म हैं। ‘ऐसा ब्रह्म है इसका प्रमाच क्या?’ इस प्रश्नसे उत्तरमें कहा है, “शास्त्रोन्मितात्” शास्त्र ही निश्चय ब्रह्मके प्रमाच हैं, कारण ब्रह्म ही शास्त्रोंका प्रतिपाद्य विषय है; शास्त्रोंसे उपक्रम और उपस हारमें ब्रह्म ही प्रतिपादित हुए हैं। धामश्रुतीर्षक माधमें लमदा विवरण विष्णुरूपसे लिखा है। पूर्वप्रश्नके इस भाष्यके मतानुसार उसका उत्तर खोल दिया है। पूर्वप्रश्नकी धर्म भां दो व श्रार्य हैं—मध्यमन्दिर और मध्य। पूर्वप्रश्नके धर्म मध्यभाष्यमें लिखा है, मैं वातुका उत्तोर धर्मतार हूँ। वातुन प्रथम धर्मतार हूँ मयत् तथा द्वितीय धर्मतार मय है। ईश्वर ही हैं।

धामश्रुतके न-इसमें धार्ष्टतमताका प्रतिपाद है। रामा-सुत्रमें तर्कादि द्वारा वह प्रमाचित करनेका प्रयत्न किया है, कि वह धर्ममाधिक धर्म पवकैय है। कारण उनमें पवतत्त्व, धर्मतत्त्व और मन्वतत्त्वादि नामा विषय प्रकटित हुए हैं। प्रथमतः मन्वतको यह शब्दके व-स्थित ही मन्वतता है कि मन्वतत्त्व, मन्वतत्त्व और पवतत्त्व आदिमें कि

पर विश्राम करना चाहिये * । बादमें अथर्वव्यवस्थित मता-
वलम्बनसे प्रयोजन क्या, ऐसा समझ कर लोग उस
मतके ग्रहण करनेसे निवृत्त हुए । आर्हतमतमें लिखा है
कि देहके परिमाणानुरूप जीवका परिमाण है । इसका
भो खण्डन है । इसमें नाना प्रकारकी युक्तियाँ दी गई
हैं । देहके परिमाणानुरूप जीवका परिमाण होनेसे
घटाटि जड़वस्तुकी भाँति जोव भो परिमित होना
चाहिए । परिमित वस्तु कभी भो नाना स्थानोंमें नहीं
रहते, अतएव जीवका भो एक समयमें नाना देगोंमें
रहना असम्भव है, इत्यादि ।

अर्हतमतप्रवर्तक शङ्कराचार्यके मतावलम्बियोंका
कहना है कि एकमात्र ब्रह्म ही सत्य एवं च्युतिप्रति
पाय है । जगत् प्रपञ्च कुछ भी सत्य नहीं है । सब
मिथ्या है । जैसे भ्रमवग रज्जुमें सर्पको मिथ्या कल्पना
हो जाती है, और पोछे रज्जु जान कर भ्रम निवारण
होने पर उस कल्पित सर्पको भी निवृत्ति हो जाती है,
उसी प्रकार अविद्याके द्वारा यह जगत्प्रपञ्च ब्रह्ममें
कल्पित हो रहा है । ब्रह्मज्ञान होनेसे ही उस अविद्या-
को निवृत्ति हो कर जगत्प्रपञ्चकी भी निवृत्ति हो जाती
है । अविद्या भाव पटार्य है, किन्तु वह सत् वा असत्
पटवाच्य नहीं हो सकता, इस कारण उसे सदम्बुनिर्व-
चनोय कहा गया है । विद्या अर्थात् ब्रह्मज्ञान होनेपर
उस अविद्याका नाश हो जाता है । परन्तु इस विषयमें
अर्हतमतावलम्बियोंने जो अनुभव प्रमाण रूपमें उपनि-
षद्के वाक्य उद्धृत किये हैं, उसके द्वारा उल्लिखित भाव

* आर्हतदर्शनमें प तत्त्व नहीं माना है और न नवतत्त्वका ही
कहीं उल्लेख है । आर्हतदर्शन केवल सप्त तत्त्वोंको ही स्वीकार
करता है; जैसा कि नीचेके सूत्रसे प्रकट होना है ।—

“जीवाजीवाशशान्त्वमंवरमोक्षास्तत्त्वम् ॥”

(उत्तार्थसूत्र अ० १ सू० ३)

! इसमें आर्हतमतका यह कहना है कि जीव परिमित नहीं
है, किन्तु जब लैशा शरीर पाता है, तबमें रहता है, वरीरसे
बाहर नहीं निकलता और न शरीरके कुछ अशोमें ही रहता
है, वरन् समस्त शरीरमें व्याप्त रहता है । जैसे—प्रदीपका
प्रकाश घटमें भी समा सकता है और बड़े भारी मकानमें भी
व्याप्त हो सकता है । वही प्रकार जीव भी स्वदेहपरिमाणो है ।

धरूप अविद्या मित्र नहीं हो सकती । रामानुजने इस
प्रकारसे शङ्कराचार्यका अर्हतमत खण्डित किया है । इस
दर्शनमें पटार्य तीन माने गये हैं—चित्, अचित् और
इन्द्र । चित् जोवपटवाच्य, भोक्षा, असङ्घुचित, अपरि-
च्छन्न, निर्मल, ज्ञानस्वरूप नित्य एवं अनादि कर्मरूप
अविद्यामें वेष्टित है । भगवत्की आराधना और उसके
पटकी प्राप्ति करना आदि जीवका स्वभाव है । जीव
अति सूक्ष्म है । अचित् भोग्य और दृश्यपटवाच्य है ;
अचितनस्वरूप जज्ञात्मक जगत् एवं भोग्यत्व आदि स्वभा-
वोंमें युक्त है । यह अचित् पटार्य तीन प्रकारका है—
भोग्य, भोगोपकरण और भोगायतन । जिसकी भोगा
जाय, वह भोग्य है; जैसे अन्नपानादि । जिससे भोग
क्रिया जाय वह भोगोपकरण है, जैसे भोजनपात्रादि ।
जिससे भोगा जाय, वह भोगायतन है ; जैसे शरीरादि ।
इन्द्र सबके नियामक है जगतके कर्ता है. एवं अपरि-
च्छन्नज्ञान ऐश्वर्य और धैर्यशक्ति आदिसे सम्पन्न है । चित्
अचित् सभी वस्तुएं उनके शरीरस्वरूप हैं, पुरुषोत्तम,
वासुदेव आदि उनकी मंज्ञार्ण हैं । इन्द्र परम कारु-
णिक है, इनलिए उपासकोको यथोचित फल प्रदान
करनेके अभिप्रायसे पाँच प्रकारका शरीर धारण करते हैं ।
प्रथम अर्चा अर्थात् प्रतिमादि : द्वितीय रामादि व-
तारस्वरूप विभव ; तृतीय वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न
और अनिरुद्ध ये चार मंज्ञार्णान्त व्यूह ; चतुर्थ सूक्ष्म
और सम्युर्ण पङ्गुण वासुदेव नामक परब्रह्म और
पञ्चम अस्त्यामो, सम्युर्ण जोवोंके नियन्ता हैं । इन पाँच
सूर्तियोंमें पूर्व पूर्वकी उपासनासे पाप क्षय होता और
उत्तरोत्तर उपासनाका अधिकार प्राप्त होता है । इस
मतमें अभिगमन, उपादान, इज्या, स्वाध्याय और योगके
मेदसे उपासना भो पाँच प्रकार को मानी गई है । देव-
मन्दिरका मार्जन और अनुलेपन आदिको अभिगमन
कहते हैं और गन्धपुष्पादि पूजोपकरणके आयोजनको
उपादान । इज्या पूजाका नामान्तर है । अर्थानुसन्धान
पूर्वक मन्त्र, जप, स्तोत्रपाठ, नाम-मंकीर्तन और शास्त्रा-
भ्यास आदिको स्वाध्याय तथा देवतानुसन्धानको योग
कहते हैं । इस प्रकारसे उपासना करनेसे भक्तोंकी ईत्सव
पटकी प्राप्ति होती है तथा भगवान्की स्वरूप ज्ञान लेने

पर पुनर्जात्यादि नहीं होता। चित् पौर अचित्के मात्र ईश्वरका भेद, भेद पौर भेदाभेद तोनों को विद्यमान है। नृत्तिमें बर्हा ईश्वरको निर्गुण कहा गया है, बर्हा उसका तात्पर्य चित्त इतना ही है कि वास्तुतमें मनुष्योंकी तरह रागादौपादि गुण ईश्वरमें नहीं हैं और बर्हा पदाब्जके आत्मात्व-विषयका निश्चय किया गया है, उसका तात्पर्य यह है कि ईश्वर चित् पौर अचित् समस्त बहुषीको जाना है। इसलिये अन्वय पदाब्ज को ईश्वराब्ज है। ईश्वरसे अन्वय कोरे बहु नहीं है। इन सब विषयोंका तत्त्वानुसन्धान करके रामानुजने शरीरक सुखका भाव बनाया है। बीजाद्यन्तार्थायै मशोर्वाण्यद के मतानुसार एक वृत्ति बनाई है, जो अत्यन्त विस्तृत है। इसलिये रामानुजने उस वृत्तिके मतानुसार एक अचित्त भाष्य लिखा है। रागादुत्र हेको।

रघुईश्वर-वर्णन—पदाय-निर्णयके विषयमें प्रत्यभिज्ञा दर्शनके साथ इसका एकमत्र है। प्रत्यभिज्ञादर्शनमें पारद-पदायके विषयमें बर्ही भो उत्प्रेषण नहीं है। परन्तु इन दर्शनमें उसका विशेषत्वमें निर्देय किया गया है। यह वही दर्शनमें विधिपता है। जिसे प्रकार प्रत्यभिज्ञादर्शनमें महीश्वरको परमेश्वरक्य माना है और जोकाया एक परमात्माका भेद छोड़कर किया है, उसी प्रकार यह दर्शन भी महीश्वरको परमेश्वर एक जोना-काको परमात्मा माननेके लिए प्रयुक्त है। परन्तु यह प्रत्यभिज्ञादर्शनमें ही तरह कपोल-कल्पित एक मात्र प्रत्यभिज्ञाको ही परमपद सुखिका साधन नहीं मानता, परम सुखिके लिए यह दूसरा ही मार्ग बतलाता है। इस दर्शनका मत है कि सुसुप्त स्थितियोंको प्रथमतः देहकी खिरताके लिए एक कारण चाहिये। पीछे क्रमशः योगाभ्यास करते करते जब ज्ञानोदय हो जाता है, तब सुखि रसका प्राविर्भाव श्रुत हो जाता है। यद्यपि अन्वयान्य दर्शनमें भो सुखिके साधनके लिए एक-एक मार्ग दिख-काया गया है और इन मार्गोंमें परमपद सुखिपद पानेको सम्भावना है, तथापि जब मार्गमें लोभोको प्रवृत्ति नहीं हो सकती। परन्तु इन दर्शनमें पारद-रसद्वारा देहका जैसे अन्वयान्न कर क्रमशः योगाभ्यासमें निरत हो सकते हैं, ऐसा होनेसे परमकारणिक परमेश्वर परिदृष्ट

हो कर पारिणीपिक्कल्लया सर्व प्रदान सुखिपद प्रदान करते हैं। इसलिये सुसुप्त स्थितियोंको प्रथमतः देहको खिरताका उपाय करना चाहिये। देहको खिरताके लिए पारदरसको एकमात्र उपाय है पारदरसद्वारा देहका अन्वय अन्वयान्न होता है ऐसा अन्य किसी भो दर्शनमें कहसके नहीं है। इन दर्शनमें अतसे पारद रसमें देहका अन्वय अन्वयान्न करनेसे शरीरके रहते ही सुखि होती है यह सुखिको बीजसुखि कहते हैं। प्रथमतः यह शरीर अन्वयान्नमादि माना रोगोंका प्राचय है विन श्वर है, इस कारण समाधिचरण जैसे सहनेमें नितान्त प्रयत्न है। दूसरे बात यह है कि उसी समय देहका पतन हो जाता है, इसलिये देहमें समाधिजा होना असम्भव है। इससे लिए पहले पारदरसद्वारा शरीरको दिव्य कर लेना चाहिये ऐसा कर लेनेके बाद फिर योगाभ्यास आदिके द्वारा परमत्त्वको स्फूर्ति का होना सम्भव है। यही कारण है जो इस दर्शनमें देहका खिरताका साधन बतलाया गया है। यह पारदरस सामान्य बातु नहीं है कारण महादेवने अय पार्वतीसे कहा है कि पारदरस मीठ करुण है, यह मीठ प्रत्यक्षमें उत्पन्न हुआ है। यह पारद स शरकरुण सुसुप्तके अन्वयान्न-निश्चित-स्वल्प है। पारद पदु जाता है, इसलिये यह 'पारद' कहलाता है। पारद मीठ मात्र है और अन्वय तुम्हारा। इन दोनों बीजोंका यवारीति मिश्रण कर कबली पर नृत्य और शरिप्रय नचा दूर होता है।" पारद मात्र प्रकारका है, एक एक प्रकारके पारदमें एक एक प्रकारका बन्धा-धारण सुख है। यह पारद द्वारा शून्य मार्गमें अन्वयको यदि तथा अत पारद द्वारा जोवित करनेको यदि प्राप्त होती है इत्यादि। एक मात्र पारद ही धर्म, धर्म काम और मोक्ष रूप बहुबगको प्रदान करता है। पारद के सिवा अन्य कोई भो वस्तु ऐसी नहीं है जो शरीरको क्रिये बना सके। इसके दर्शन, अय न, मन्वय, स्मरण पूजन और दानसे अन्वय अन्वयान्न सिद्ध होते हैं। पारद रस अन्वयान्न रसोंको पपीचा उत्तम होनेसे कारण हो उसका नाम रघुईश्वर पड़ा है। इस दर्शनमें रसका गुण विशेष रूपसे वर्णित है इसी कारण यह दर्शन रसे अत नामसे प्रसिद्ध हुआ है। रघुईश्वर हेको।

पाणिनिदर्शन - यह दर्शन पाणिनि मुनि प्रणेत है। पाणिनि-व्याकरण जो पाणिनि दर्शन है। इसमें समस्त संस्कृत शब्द जो साधित और व्युत्पन्न हुए हैं। इस पाणिनि दर्शनके अध्ययन करनेसे संस्कृतभाषामें व्युत्पत्ति होती है। संस्कृतभाषामें व्युत्पत्ति होनेसे नाना उपकार होते हैं, बेटादि शास्त्रोंको रचा जाती है, इत्यादि।

इस दर्शनके मतसे, शब्द दो प्रकारका है, एक नित्य और दूसरा अनित्य। नित्य शब्द एकमात्र स्फोट है, उसके सिवा वर्णात्मक शब्दसमूह अनित्य है। वर्णातिरिक्त स्फोटात्मक भी कोई नित्य शब्द है, इस विषयमें बहुत सो युक्तिवा टिखलाई गई हैं। उनमेंसे प्रधान युक्ति यह है, कि स्फोट न होता तो केवल वर्णात्मक शब्दके द्वारा अर्थबोध नहीं हो सकता था। यह सभी मानते हैं कि अकार, गकार, नकार और इकार ये चार वर्ण ऐसे हैं जिनके द्वाारा अग्निका बोध होता है; परन्तु यह केवल उन चार वर्णोंसे जो संपादित नहीं हो सकता, कारण यदि उन चार वर्णोंमेंसे प्रत्येक वर्णके द्वारा वज्रिका बोध होता, तो केवल अकार अथवा गकार उच्चारण करनेसे ही वज्रिका बोध क्यों नहीं होता? इस दोषके परिहाराय वे विचारको एकत्रित हो कर वज्रिका बोध करा देते हैं, यह कहना भी वास्तविकताका प्रकाश करना है। कारण वर्ण तो आशु-विनाशो टहरे, आगके वर्णोंको उत्पत्तिके समय पूर्व पूर्व वर्ण विनष्ट हो जाते हैं, सुतरां अर्थबोधकी बात तो दूर रही, उनका एकत्रावस्थान भी असंभव है। अतएव कहना होगा कि उन चार वर्णोंसे प्रथमतः स्फोटको अभिव्यक्ति अर्थात् स्फुटता होती है। बादमें स्फुट-स्फोट द्वारा अग्निका बोध होता है। इस स्थल पर कोई आपत्ति करते हैं कि प्रत्येक वर्ण द्वारा स्फोटकी अभिव्यक्ति स्वीकार करनेसे पूर्वोक्त प्रत्येक वर्ण द्वारा अर्थबोधका दोष आता है और समुदाय वर्णद्वारा अभिव्यक्ति स्वीकार करने पर भी वही दोष आता है। जब दोनों हो पक्षमें दोष आता है, तब इस स्फोटको स्वीकार करनेसे क्या प्रयोजन? इसका सिद्धान्त इस प्रकार है—जैसे एक बार पाठ करनेसे पाठ्य ग्रन्थका समस्त तात्पर्य अवधारित नहीं होता किन्तु बार-बार आलोचना करनेसे ही वह दृढ़रूपसे अवधा-

रित होता है, उसी प्रकार प्रथम वर्ण प्रकारके द्वारा स्फोटको किञ्चिन्मात्र स्फुटता होने पर भी संपूर्ण स्फुटता नहीं होती। शब्दमें द्वितीय और तृतीय यादि वर्ण द्वारा क्रमशः स्फुटन और स्फुटतम हो कर स्फोट वज्रिका बोधक होता है, नहीं तो किञ्चिन्मात्र स्फुट होनेसे ही स्फोट अर्थबोधक होता हो, ऐसा नहीं। जैसे नोल, प्रोत और रक्तादि वर्णोंके मात्राध्ययन एक ही स्फुटिक मणि कभी नोल, कभी प्रोत और कभी रक्त वर्ण प्रतीयमान होता है, उसी प्रकार स्फोट एक मात्र होने पर भी घट और पटादि रूप भिन्न भिन्न अर्थका बोधक होता है। इस मतमें स्फोटको ही सच्चिदानन्द ब्रह्म माना गया है। शब्दशास्त्रको आलोचना करते करते क्रमशः अविद्याकी निवृत्ति होती है और तदनन्तर मुक्ति मिल जाती है। व्याकरणशास्त्र मुक्तिका द्वारा स्वरूप है। पाणिनि और व्याकरण देखो।

प्रत्यभिज्ञादर्शन—इस दर्शनके मतसे महेश्वर जगदोत्पन्न है, वे ही एकमात्र समस्त जगत्के कारण हैं। जिस प्रकार बहुरूपी लोग कभी राजा, कभी भिखारा, कभी स्रो और कभी हृद इत्यादि नाना प्रकारके रूप-धारण करते हैं, उसी प्रकार भगवान् महेश्वर भी स्थावर-जङ्गमादि नाना रूपोंमें अवस्थान करनेको इच्छासे स्थावर और जङ्गमात्मक जगत्का निर्माण करते और उसी उसी रूपमें अवस्थान करते हैं। इस कारण यह जगत्के ईश्वरात्मक होनेमें तनिक भी सन्देह नहीं। परमेश्वर आनन्दस्वरूप, ज्ञाता एवं ज्ञानस्वरूप हैं, इसलिए अस्मदादिको घटपटादि विषयक जो ज्ञान हो रहा है, वह सब परमेश्वरका स्वरूप है। इस मतमें मुक्तिस्वरूप परापर सिद्धका उपाय एकमात्र प्रत्यभिज्ञाको माना है। अन्य मतोंको तरह इस मतमें पूजा, ध्यान, जप, याग और योगादिके अनुष्ठानको आवश्यकता नहीं बतलाई गई है। प्रत्यभिज्ञाके द्वारा सब कुछ सिद्ध हो सकता है। 'स एवेश्वरोऽहं' 'वह ईश्वर ही मैं हूँ' ऐसे परमेश्वरके साथ जावात्मके अभेदज्ञानको प्रत्यभिज्ञा कहते हैं। इस प्रत्यभिज्ञाको स्वीकार करनेके कारण इस दर्शनका नाम 'प्रत्यभिज्ञा' पड़ा है। खर्वाकृति व्यक्तिको वामन कहते हैं। पूर्व उपदिष्ट व्यक्तिको खर्वाकृति पुरुष दृष्टगोचर होने

पर, "सोऽयं ब्रह्मन्" 'ब्रह्म यही ब्रह्मन् है', ऐसा ज्ञान होता है, नैसाविक प्रादि इसे जो प्रत्यक्षिज्ञा कहते हैं। प्राक्क पौर पनुमानादिभि द्वारा ईश्वरक स्वरूप पौर यज्ञिका परिज्ञान कर, नह यज्ञि जोबाब्यामिं सेो है, ऐसा ज्ञान प्राक्क कर लेने पर "ब्रह्म एवेयरो इह" "ब्रह्म ईश्वर मैं होइ" ऐसा ज्ञान हो जाता है। इस मतके पनुसार जोबाब्या पौर परमाब्यामिं कोरे मेद नहो है परमाबा सत" प्रकायमान है। जैसे प्राकोकस योगादिभे बिना हुए म्बलित वटपटादि बनुका प्रकाय नहो होता उस प्रकार परमेस्वरके प्रकायमिं बिसी कारणको प्राक्क यज्ञता नहो होतो, से कब स सर्वदा प्रकायमान है। परन्तु जब 'सुब्रह्मन् यत्र चर सर्वे ज्ञानादि-रूप ईश्वर का सम' सुभर्मिं हो है, ऐसा ज्ञानका कहव होता है, तब पूर्वभाब्या प्राबिमांन होता रहता है पौर प्राक्का प्रक्क मिज्ञा सत्य होतो है फिर पब्य बिसी भी पदासंको प्राक्क यज्ञता नहो रहता। प्रत्यभिज्ञा सेो है।

मोक्षकरवयव-महर्षिं ब्रह्मादने इस दयान्का प्रक्क यन बिता है। इनका दूसरा नाम सन्मूक या; इपनिष इह दयानको पौदुक्तदयान कहते हैं, ब्रह्मादमो इहोका नाम है। इस दय नमिं पब्याक दयानौका पनमिसत बिसेय नामसे एक स्रतक पदासं माना गया है इस सिध इसका नाम बेशिविज दयान है। यह दयान यह दयानमिंसे एक है। इन दयानमिं पब्याक दु-पनिश्चितको जो सुक्ति माना है। जिस दुष्कको निश्चित होनेसे फिर कदा दुष्क न हो, उसको पब्याक दुष्कनिश्चित कहते हैं। यह सुक्ति प्राक्क-साध्याप्राज्ञद्वय तत्त्वज्ञानके बिना नही मिलती। बिन्तु यह तत्त्वज्ञान महत्र माध्य नहो है। जबच, मनन पौर निदिध्यानमने द्वारा तत्त्वज्ञानको प्राप्ति होतो है। भगवान् ब्रह्मादने शिष्यसे प्रासंन करने पर मननका पहिलतोय प्राक्क-स्वरूप दय-प्राप्तावाम्क इस याज्ञका प्रक्कयन बिता है। इस दय नमिं सदी प्राक्कादिभि प्राक्क नामक दो ही बिरामज्ञान हैं। इस दयानके मतके प्रक्क पौर पनुमानके पनिरिक्त पौर कोरे प्रमाच नहो है। पब्याक दयानमिं जिनने मो प्रमाच मानिं नहो है, से जब पनुमानमिं प्रा जाति हैं। इस दय नमिं पदासं दो प्रकारका माना गया है—माच पौर पमाच।

माच पदासं का प्रकारका है—द्रव्य, गुण, बर्म, जाति, बिसेय पौर समवाय। इनमिं द्रव्यपदासंके जो मेद है—पृथिवी, जल, तैज, वायु, प्राक्काय, काष्ठ, दिक्, प्राक्का पौर मन। गुणपदासं २४ प्रकारका है—रूप, रस, मन्ध, ध्यासं, क स्था, परिमाच, प्रयत्नल स योग बिभाग, परत्न, पपरत्न, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, ईय, यज्ञ गुणल, इन्धल, ईह, स स्कार, बर्म पौर पब्रम। मोक्ष पांतादि बचको रूप कहते हैं। रूप बर्णके मेदके नामा प्रकारका है जिस वस्तुका रूप नहो है, वह इटिगोचर नहो होता पौर जिसका रूप है वह इटिगोचर होता है, इससिध रूपको दयानका कारण माना गया है। रस का प्रकार का है—कटु, कषाय तित्त, पक्क, सक्क पौर मधुर। मन्ध, कुरमिं पौर असुरमिंके मेदके दो प्रकार है। बुद्धि यन्त्रका पयं ज्ञान है। ज्ञान दो प्रकारका है—प्रमा पौर मय। जिसमिं जो जो गुण वा दोय हो, उसको जन गुणो वा दोयसे बुद्ध समझना ब्यासं ज्ञान वा प्रमा है पौर जिसमिं जो दोय वा गुण नहो हो उसको जन दोयो वा गुणसे बुद्ध समझना पयबाक ज्ञान वा मय कह जाता है। जैसे, पण्डितको सुखं वा रब्जुको मय समझना। निश्चय पौर स मयके मेदके भा ज्ञान दो प्रकारका है। 'इस मयमिं मनुष्य है' पौर 'इस मयमिं मनुष्य है या नहीं?' ऐसे प्राज्ञोको ययाज्ञमसे निश्चय पौर स मय कहते हैं। स मय नामा कारणोसे जो सकता है। बिसेय दय नह होनेसे स मयको निश्चित होतो है। बिसेय पदसे, जिस वस्तुका स मय जो उसके ब्याप्यका बोध करना प्राचिये। जिस वस्तुके न होने पर जो वस्तु नहीं रह सकतो वही वस्तु उसको ब्याप्य है। जैसे बकिभे बिना बूम नहीं हो सकता, इपसिध बकि का ब्याप्य बूम है, पतयन जब तक बूम न दिखसारे से तब तक बकिका स मय हो रहता है। परन्तु बूमके दिखसारे दिने पर वह स मय कूर हो जाता है। पृथ पौर दुष्क बर्मासंके द्वारा होता है। पृथ सक्का पनिर्रत है पौर दुष्क पनमिर्रत। प्राक्क पौर पब्याकारादिभे मेदके ह्व तका जोगादिभे मेदके दुष्क नामा प्रकारका है। पनित्वावको इच्छा कहते हैं। यह तान प्रकारका है—महत्ति, निश्चित पौर बीचन

योनि । जिस विषयमें जिसको चिकोर्पा होता है, उसे उस विषयमें प्रवृत्ति होती है और जो जिस विषयमें होप करता है, वह उस विषयसे निवृत्त होता है । अतएव प्रवृत्ति और निवृत्तिमें यथाक्रमसे चिकोर्पा और होप कारण है । जिस यत्नके करने पर जोवित रह जाता है उसको जोवनयोनि कहते हैं । जोवनयोनि-यत्नके बिना प्राणी जन्मकाल भी जोवित नहीं रह सकता । इस यत्नके द्वारा ही प्राणियोंके स्वाम-प्रवामादि निर्वाहित होते हैं । गुरुत्व पतनमें कारण है तथा द्रव्यत्व चरणमें कारण है । यह स्वाभाविक और नैमित्तिकके भेदसे दो प्रकारका है । संस्कारके तीन भेद हैं—वेग, स्थितिस्थापक और भावना । वेग क्रिया आदिके द्वारा उत्पन्न होता है । वृक्षकी शाखाको आकर्षण करके मोचन करने पर जिस गुणके सहायसे वह पूर्व स्थानमें स्थित होता है, उस गुणको स्थितिस्थापक संस्कार कहते हैं । जिस संस्कारके द्वारा पूर्वानुभूत वस्तुओंका स्मरण हो, वह भावना-संस्कार है । धर्म, शुभाष्ट और पुण्यादि पदवाच्य है । यह गंगाज्ञान और यागादि धर्म-जनक है । अधर्मको दुरष्ट और पाप कहते हैं ; यह अवैध धर्मानुष्ठानके करने पर होता है एवं प्रायश्चित्तादि-द्वारा विनष्ट हो सकता है । शब्द दो प्रकारका है—ध्वनि और वर्ण । मृदङ्गादि द्वारा जो शब्द होता है, उसे ध्वनि एवं कण्ठादि द्वारा जो शब्द उत्पन्न होता है, उसे वर्ण कहते हैं । यह वर्णात्मक शब्द स्वर और व्यञ्जनके भेदसे दो प्रकारका है । गुणपदार्थ द्रव्यमात्रमें विद्यमान है । क्रियाश्री कर्म कहते हैं । कर्म पदार्थ उत्क्षेपण, अवक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण और गमन, इस तरह पाँच प्रकारका है । उर्ध्व-प्रक्षेपको उत्क्षेपण, अधोविक्षेपको अवक्षेपण और विस्तृत वस्तुओंके विस्तारको प्रसारण कहते हैं । भ्रमण, ऊर्ध्व-व्यञ्जन, तिर्यक गमन आदि गमन ज्ञेयमें शामिल हैं । जातिपदार्थ नित्य और अनेक वस्तुमें रहता है । पर और अपरके भेदसे जाति द्विविध है । जो अनेक स्थानोंमें रहती है, उसे परजाति कहते हैं और जो अल्प स्थानोंमें रहती है उसे अपर जाति । जिसके चैतन्य है, वह आत्मा है । आत्मा इन्द्रिय और शरीरको अधिष्ठाता है; आत्माके बिना किसी भी इन्द्रियसे कोई भी काम नहीं हो सकता ।

आत्माके दो भेद हैं—जोवात्मा और परमात्मा । जोवात्मा देखो । इस दर्शनमें विशेष पदार्थको नित्य माना है । आकाश और परमाणु आदि एक एक नित्यद्रव्यमें एक एक विशेष पदार्थ है । यदि पदार्थ न होता, तो परमाणुओंके परस्पर विभिन्न रूपका निश्चय कटापि नहीं हो सकता था । जैसे दो भवयुक्त वस्तुओंके, परस्पर अवयवगत विभिन्नताको देख कर, विभिन्न रूपोंका निश्चय किया जाता है ; उन्हीं प्रकार यह परमाणु अन्य परमाणुसे भिन्न है तथा अन्य परमाणुमें जो विशेष है, वह अपर परमाणुमें नहीं है, इसलिए अन्य परमाणु अपर परमाणुसे पृथक् है इस रीतिसे समस्त परमाणुओंकी परस्परकी विभिन्नताका निश्चय किया जा सकता है । द्रव्यके साथ गुणका, कर्मके साथ जातिका और नित्य द्रव्यके साथ विशेष पदार्थका जो सम्बन्ध है तथा अवयवके साथ अवयवोंका जो सम्बन्ध है, उसीका नाम समवाय पदार्थ है । अभाव दो प्रकारका है—सैत और संसर्गाभाव । गृहसे पुस्तक भिन्न है पुस्तक गृह नहीं है, इत्यादि स्थलोंमें जो अभाव प्रतीयमान होता है, वह सैत कहलाता है । संसर्गाभाव तोन प्रकारका है—प्रागभाव, ध्वंसाभाव और अत्यन्ताभाव । पहले जो सात पदार्थोंका उल्लेख किया गया है, उनमें सिवा और पदार्थ नहीं है । इन्हींमें तावत् पदार्थ आदि-भूत होता है । अन्धकारादि कोई स्वतन्त्रपदार्थ नहीं है, क्योंकि आलोक का अभाव ही अन्धकार है । इसके सिवा अन्धकार पदार्थमें और कोई प्रमाण नहीं है ।

वैशेषिक और ऋणाद देखो ।

अक्षपाददर्शन (न्यायदर्शन)—इस दर्शनके प्रणेताका नाम महर्षि अक्षपाद और गौतम था, इसलिए इसे अक्षपाद और गौतमदर्शन कहते हैं । इसमें न्याय और तर्क पदार्थका विशेषरूपसे दिग्दर्शन कराया गया है, इसलिए इसके न्याय और तर्कशास्त्र ये दो नाम यह गये हैं । इसके दर्शनमें अनुमानकी रीतिका भी विशेष निष्कर्ष है, इसलिए लोग इसे आण्वीक्षिकी शास्त्र भी कहते हैं । इस न्यायशास्त्रमें सभी शास्त्रोंकी उपयोगिता बतनाई गई है । कारण दर्शनकारका यह कहना है, कि न्यायशास्त्रके बिना किसी भी शास्त्रका

ब्रह्मार्थ तात्पर्य प्रकृत नहीं किया जा सकता। अतएव व्याख्यात्मक भ्रमण शास्त्रीका दारुणरूप है। बभूतो का कहना है कि इस शास्त्रमें "एकमेवाद्वितीय" इत्यादि अनेकानिष्ठ न्यायबिबेक युक्तियाँ हैं, परन्तु इनको बोधाधिकार-विपुलितको पाद्योपास्य देवमन्त्रिणे उक्त कहन मिथ्या प्रतीत होने लगती है। महामहोपाध्याय रघुनाथ शिरोमणिने उक्त युक्तियोंका प्रमाणव किया है। यद्युक्त ५ अक्षरार्थमें विमल है, प्रत्येक अक्षरार्थमें दो ही पादिक हैं। इस मतमें पदार्थ शेषव मान हैं—प्रमाण, प्रमेय, मध्य प्रयोगन, इत्यात्म, सिद्धान्त, प्रत्यक्ष तर्क, निश्चय, बाध, अन्य वितण्डा इत्यादिमान कह, अति और निपटव्याप्त। जिससे द्वारा यथावश्यकने बभूतोका निश्चय किया जाता है उसे प्रमाण पदार्थ कहते हैं। प्रत्यक्ष अनुमान उपमान और शब्दके भेदमें प्रमाण चार प्रकारका है। इन चार प्रमाणोंके क्रमः प्रत्यक्ष, अनुमिति उपमिति और शब्द-बोध ये चार प्रमाणाँ उक्तव होती हैं। नयनादि इन्द्रिय द्वारा यथावश्यकने बभूतो का जो ज्ञान होता है, उसे प्रत्यक्षप्रमिति कहते हैं। प्रत्यक्षप्रमिति ६ प्रकारकी है—प्राञ्ज, रामन, चाक्षुष त्वाच, श्रावण और मानस। व्याप्य पदार्थको नैस कर व्याप्य पदार्थका जो ज्ञान होता है उसे अनुमिति कहते हैं। जिन पदार्थोंके रहने पर जिन पदार्थ का प्रभाव नहीं रहता, उनको व्याप्य और जिन पदार्थोंके न होनेसे जो पदार्थ लगे रहत उसे व्याप्य कहते हैं। जैसे—जिसी भी स्थानमें बज्रके बिना जूम लगे रह सकता' यहाँ जूम बज्रिका व्याप्य है तथा 'जहाँ जूम रहे, वहाँ बज्रिका प्रभाव लगे हो सकता' यहाँ बज्रि जूमका व्यापक है। वही कारण है जो वर्तमान पर जूम देव कर बहिरुका अनुमान किया जाता है। अनुमान तीन प्रकारका है—पूज्य बत् मियबत् और सामान्यतो इह। कारण दीव कर काय का अनुमान करना पूज्य बत् (यहाँत् कारणनिष्ठक अनुमान) है। जैसे मोक्षकी उचितको देव कर बर्बादा अनुमान करना। कार्य देव कर कारणका अनुमान करना मियबत् (यहाँत् कार्य निष्ठक अनुमान) है। जैसे, नदीकी पारना इहिकी

देव कर इहिका अनुमान करना। कारण और कार्यके बिना जो केवल व्याप्य बभूतो देव कर जो अनुमिति होती है, उसका नाम सामान्यतोइह है। जैसे गगनमण्डल में पूर्व अन्तर्माके मन्दगंते एक पक्षका अनुमान क्रियाकी हेतु मान कर गुणका अनुमान और इत्येवमेव जातिकी हेतु मान कर द्रव्यत्वजातिका अनुमान करना पादि। जिसी किसी शब्दके किसी किसी अर्थमें गति परिच्छेदको उपमिति कहते हैं। इन शब्दों द्वारा जो बोध होता है, उसे शब्दबोध कहते हैं। यह शब्दप्रमाण दो प्रकारका है—इत्यायक और यदुतायक। जिस शब्दका अर्थ प्रत्यक्षसिद्ध है; उसे इत्यायक शब्द कहते हैं और जिसका अर्थ यदुतायक है, वह शब्द यदुतायक कहलाता है। प्रमेयपदार्थ वारह प्रकारका है—पाम्ना प्रयोग अर्थ, बुद्धि, मन प्रवृत्ति, दोष प्रेक्षमाण, फल, दुःख और अयवर्ग। इन्द्रिय ही ही है—अन्तरिन्द्रिय और बहिरिन्द्रिय। दोष तीन प्रकारका है—गण, ह्येय और मोक्ष। काम मन्सर, स्तब्ध, अज्ञा, लोभ माया और अथादिक भेदमें राम नामा प्रकार है। रमयिष्ठा को काम कहते हैं। अर्थमें प्रयोगनके बिना जो दूसरेके परिमित विषयको निवारक अज्ञाका नाम मन्सर है। जिस विषयमें अर्थकी कोई ज्ञान नहीं होती ऐसे विषयको मात्रिका परिमाणाको म्दुहा और भिरे उचित द्रव्यका अर्थ न हो एताइय अज्ञाको अज्ञा कहते हैं। आप्त्य पादिके भेदमें अज्ञा नामा प्रकारकी है। जिसके द्वारा पाप हो सकता है ऐसे विषय फलका परिमाणाको लोभ कहते हैं। परब्रह्मका नाम माया है। अन्तरे अर्थना अर्थि अज्ञानि अज्ञत करत अर्थना उक्त अर्थ अज्ञत करनेको अज्ञाको अज्ञा कहते हैं। लोभ ईयाँ अज्ञा हीह, अर्थ्य और परिमाणात्मिके भेदमें हय लो नामा प्रकारका है। विषय, सद्य, तर्क, मान, प्रमाद, मय और अज्ञादिके भेदमें मोक्ष लो नामा प्रकारका है। कारणका अत्यन्तिकी यथात् एक बार अर्थ्य और एक बार अर्थ्यप्रकृत तथा पुनः मरत और तन्मन्तर अर्थ्यप्रकृत अर्थ्यप्रकृतको पादिकितिकी प्रियमाण कहते हैं। जब तक मुक्ति न हो अमन अर्थ्यकी यह प्रेक्ष भाव दुःख दिया करता है। मुक्तिके बिना इन दुःखने

निवृत्त होनेका और कोई उपाय नहीं है। अत्यन्त दुःखनिवृत्त रूप मुक्तिको अपवर्ग कहते हैं; यह अपवर्ग जो सबका प्रयोजनीय एवं प्रार्थनीय है। मुख्य और गौणके भेदसे प्रयोजन दो प्रकारका है। अभिलषणोप विषयान्तरका सम्पादक होनेसे जो विषय अभिलषणीय होता है, वह गौण है, और तदतिरिक्त केवल अभिलषणोप विषयको मुख्य प्रयोजन कहते हैं। प्रत्येक जीवका मुख्य प्रयोजन सुख और दुःखको निवृत्ति है। कोई भी व्यक्ति किसी भी विषयमें प्रवृत्त क्यों न हो, सबका प्रधान उद्देश्य सुख वा दुःख निवृत्ति है। इस सुख वा दुःखनिवृत्तिका सम्पादक होनेके कारण अति क्लेशकर विषय भी प्रार्थनीय होता है। फलतः सभी विषयोंका प्रधान उद्देश्य सुख वा दुःखनिवृत्ति है और इसलिए सुख और दुःख-निवृत्तिको मुख्य प्रयोजन कहा है। धनोपार्जन आदि इसका साधन है, इसलिए वह गौण प्रयोजन है। अनिश्चित विषयका शास्त्रानुसार निर्णय करनेका नाम मिहान्त है। जैसे—'मुक्ति कैसे हो सकती है?' इस प्रकारके प्रश्न उपस्थित होने पर शास्त्रादिके द्वारा 'तत्त्वज्ञान होनेसे मुक्ति होती है' ऐसा निश्चय करना। मिहान्त चार प्रकारका है—सर्व-तन्त्र, प्रतितन्त्र, अधिकारण और अभ्युपगम। विचाराङ्ग वाक्यविशेषको अवयव कहते हैं। अवयवके प्रभेद हैं—प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनयन और निगमन। आपत्ति-विशेषका नाम तर्क है। परस्पर जिगोपु न हो कर किसी प्रकृत विषयके तत्त्वनिर्णयार्थ वादोपुत्ति-वादोके विचार (शास्त्रार्थ) को वाद कहते हैं। प्रकृत विषयका वास्तविक साधक न होने पर भी आपाततः जिसे प्रकृत विषयका साधक समझा जाय, वह क्लेश-भास है। वक्ता जिस अर्थ तात्पर्यसे जिस शब्दका प्रयोग करता है, उस शब्दका वैसे अर्थ ग्रहण न करके उसके विपरीत कल्पनापूर्वक मिया अर्थ वा दोषारोप करना क्लेश कहलाता है। प्रतिज्ञात विषयमें प्रतिवादोके दोष देने पर उस दोषके उद्धारमें अग्रतः ही कर प्रतिज्ञात विषय परित्यागादिरूप पराजयमें जो कारण है, उसे निग्रहस्थान कहते हैं। न्याय मतमें, षोडश पदार्थका तत्त्वज्ञान होने पर आत्म-

तत्त्वज्ञान होना माना है। फिर वस्तुके स्वरूपकी उपलब्धि होती है। आत्मा शरीरादिसे पृथक् मालूम होने लगती है। इसलिए शरीरादिमें आत्मत्वबुद्धि-स्वरूप मिथ्याज्ञान उत्पन्न नहीं होता। यदि राग और द्वेष ही नहीं रहा, तो फिर उनके कार्य स्वरूप धर्म और अधर्मात्मक प्रवृत्तिकी पुनः सम्भावना कैसे हो सकती है? धर्म और अधर्म ही जब जन्मग्रहणका मूल कारण है, तब धर्म-धर्मसे निवृत्त होने पर फिर जन्मादि नहीं हो सकते। जन्मादिका अभाव ही सम्पूर्ण दुःख-निवृत्ति है और सम्पूर्ण दुःखनिवृत्ति ही मुक्ति है। जीवात्माके अतिरिक्त एक परमेश्वर भी है, अनुमान और श्रुति आदि उसका प्रमाण है। जीवात्मा देखो। न्याय और वैशेषिक इन दोनों दर्शनोंमेंसे, पत्र किसी भी शास्त्रमें मूलसूत्रका सम्यक् अनुगोचन नहीं रहा, केवल शास्त्रसम्मत मंग्रह और टोकाए हो साधारणतः न्यायशास्त्रके नामसे प्रसिद्ध है। परमाणिक मतके विषयमें दोनोंका एकसा मत है। ये दोनों युक्ति प्रधान शास्त्र है। अन्यान्य विषयोंमें जो थोड़ा बहुत मतभेद है, वह अत्यन्त सामान्य है। वैशेषिक सम्पदार्थ मानता है और नैयायिक षोडशपदार्थवादी है, इतनी ही दोनोंमें विशेषता है। ये दोनों ही दर्शन परमाणुवादो हैं। न्याय देखो।

संख्यदर्शन—इस दर्शनके प्रणेता महर्षि कपिल हैं। महर्षि कपिलने जब देखा कि इस जगत्प्रणालीमें सभी वित्तापसे तापित हैं, जिधर दृष्टि फेरो जाय उधर हो दुःख-मय है, दुःखके भिवा और कुछ भी नहीं है, तब उन्होंने दयाकरवश ही निस्तारके उपायस्वरूप इस अध्यात्मशास्त्रका प्रचार किया। इस दर्शनमें पञ्चविंशति तत्त्वोंकी संख्या अर्थात् गणना की गई है, इसीलिए इसका नाम सांख्यदर्शन पड़ गया है। मूल प्रकृति, महत्, अहङ्कार, एकादश इन्द्रिय, पञ्च तन्मात्र, पञ्च महाभूत और पुरुष इस प्रकार पच्चीस तत्त्व हैं। प्रकृतिके परिणामसे इस चराचर जगत्की उत्पत्ति हुई है और पुरुष प्रकृतिको मायामें विमोहित हो कर प्रतिविम्बकमसे दुःख भोगता है। पुरुष नित्य और अपरिणामी है। यह न तो किसीकी प्रकृति है और न विकृति। मूल प्रकृति त्रिगुणात्मिका

पर्याप्त समामात्रमें ध्वनिगत जो सस्त्र, राज और तमोगुण है, इनका स्वरूप है। मन्त्र राज और तम से भौतिकीय गुण पदार्थ नहीं है, किन्तु सूक्ष्म पदार्थ है। पुरुष परम ब्रह्मन करता है, इसलिए इसे गुण कहा गया है। यह प्रकृति सञ्चित, निष्क, अपाञ्चित (पश्चात् विघ्नोपाय्यका पञ्चमज्जन बिना लिए जो परस्मिन्) परम गुण, पवित्रतम क्षतम्भ (पर्याप्त पञ्चद्वारादि तत्त्वान्तरको वृद्धावतासे बिना होव्यवर्धनं समर्थ) पचेतन, अद्वाक्य और परिचासो है। महत्त्वमें से कर इस दृश्यमान महान् महोमच्छो धादि महामूर्त तत्र सम्युक्त परार्थ मूल प्रकृतिको साक्षात् परम्यगका परिचाम विधेय है। वे सुब्रह्म परस्पर मिल कर प्रगट्-कार्यका सम्पादन करते हैं। अस्त्युक्त दुःख-स्वरूप, कष्ट और प्रकाशक है, रजोगुण दुःख-स्वरूप एवं उपट्-प्रकाश पर्याप्त सत्त्व और तम जो अपने अपने कार्यमें प्रवृत्त होता है। उपका प्रकृतिक है। तमोगुण मोहकस्वरूप, गुण और धारक है। अत्रि नमय प्रकृतिका विरुद्ध परिचाम होता है, उस समय प्रकृतिसे महत्त्व, महत्त्वि पञ्चद्वार, पञ्चद्वारसे एकादश इन्द्रिय और पञ्चतन्मात्र तथा पञ्च तन्मात्रसे पञ्च महामूर्त, इन प्रकार समस्त घटित होते हैं। इनसे बिना पञ्च कोई पदार्थ नहीं है। महत्त्व बुद्धिकस्वरूप है। बुद्धितत्त्वसे द्वारा जो समय विषयोके कर्त्तव्य-कर्त्तव्यका निश्चय होता है। इन निश्चयको पञ्चमसाय कहते हैं। पञ्चमसाय बुद्धिका कर्म है। पुरुष स्थिर, अस्वादि विद्युत्-गुण, पित्त-स्वरूप, साधो, कूटस्थ, इन्द्रा, विघ्नो, सुखदुःखादिसे शून्य मज्जक और उदासीन पदार्थ है। पुरुष शरीरार्थसे मोहसे नाना प्रकारका है पर्याप्त एक एक शरीरका परिष्कारा शौच-स्वरूप एक एक पुरुष है। शरीर दो प्रकारका है—एक न और दूसरा। एक शरीर मातापितासे उत्पन्न होता है। मातासे शोभ, शोभित और मांस एवं पित्तसे अस्त्यु, अस्त्रि और मज्जाको उत्पत्ति होती है। इस मातापित्तक शरीरको पाट्-भौतिक शरीर कहते हैं। यह शरीर ही रहान्त मज्जक और विहात होता है। एक शरीर बुद्धि, पञ्चद्वार पञ्चद्वैन्द्रिय और पञ्च तन्मात्र इन अन्तर तन्मात्रोंका समूह है। यह स्थिर पर्याप्त प्रकृत

पुण्य लयायी और धर्मीयते कर्त्तव्य पञ्चतन्मति-सुख है। शून्य शरीर पित्रादि प्रविष्ट हो सकता है तथा यह लोक और परलोकमें साध रहता है। यह स्वप्न शरीर नर, पय, पक्षी, मित्रा और इत्यादि स्वरूप कर्त्तव्य शरीर धारक करता है। शरीर शरीर दुःख दुःखदिखा मोह करता है; इसका विनाश नहीं होता। प्रकृतिसे समके धादिमें एक एक स्वप्न शरीरका निर्माण किया जा। प्रकृति पुरुषको विवेकस्मात् तत्र पुरुषके धाम (सुख) रहते हैं। विवेकस्मात् जोती ही प्रकृति स्थिर होती है। जेसे नर्त्तको सुख दर्शन-रूप स्वरूप सम्पादन कर निवृत्त हो जाती है, समो प्रकार प्रकृति भी पुरुषको स साररूप रह दिख कर अपने निवृत्त हो जाती है। ये परमपुरुषत् स्वरूप सम्पादनमें समर्थ है। शरीर स्थिर प्रकृति पुरुषसायिक है शोभ पुरुष भी प्रकृतिगत है। दुःख दुःखको धामगत मज्जक कर उपके निवारण-को परिष्कारासे बुद्धिको प्रार्थना करता है। यह बुद्धि प्रकृतिसे माय पुरुषको पञ्चमसाय (पर्याप्त भेदज्ञान स्वरूप तत्त्वज्ञान)से बिना नहीं मिलते। यह तन्मात्र प्रकृतिसे द्वारा ही सम्पादित होता है। इसलिए पुरुष भी प्रकृति सायिक है। पुरुषके तीन मोह हैं—प्रकाश, पशुमान और शब्द। समो कार्य कर्त्त पर्याप्त उपपत्तिसे पुरुष स्व स्व धारकसे सुख रूपमें न बुद्ध रहते हैं; पीछे जब धारिर्भूत होती हैं, तब तपे उत्पन्न करते हैं और जब तिरोभूत हो जाते हैं, तब विनष्ट। वस्तुतः कोई भी कार्य उत्पन्न या विनष्ट नहीं होता। अत्रिण दुःखको पञ्चमसायिक ही परम पुरुषार्थ का मोक्ष है। अत्रिसे इस दुःखकी निवृत्ति ही मर्क, शरीर विषयको इस दर्शनमें विधेय धारोचना भी नहीं है।

शान्त और धरिण हैं।

शान्त-वर्त्म—इस दम नसे पचेता समयान् पतञ्जलि है। शरीरके नामानुसार इस दम नका नाम पातञ्जलि दर्शन पड़ा है। इस दर्शनमें योगका विषय विवेकता निर्दिष्ट होनेसे धारक शरीरको योगमात्र भी कहते हैं तथा पदाय निश्चयमें मांसके साथ एकमत होनेसे यह कर्त्तव्यमन्त्र भी कहा जाता है। मन्वान् अल्पमें जो पक्षीम तन्मात्र माने हैं, उन्हें पतञ्जलिमें जो शरीरकार विहा

है। इनके मतसे, पुरुषातिरिक्त परमेश्वर है, केवल इतना ही प्रभेद है। इसीलिए कोई सांख्य शास्त्रकी सेखर साख्य और निरोश्वर सांख्य कहा करते हैं। सेखर सांख्य पातञ्जल है और निरोश्वर सांख्य कपिलसूत। सांख्यशास्त्रमें ईश्वरको खोकार किया है या नहीं, यह नितान्त दुर्वोध्य और अनालोच्य है। इसलिये तद्विषयक विचारादि यहाँ नहीं दिये गये।

यह दर्शन चार पाठोंमें विभक्त है। इन चार पाठोंमें योगशास्त्र करनेकी प्रतिज्ञा, योगका लक्षण, योगके उपायस्वरूप अभ्यास और वैराग्यका स्वरूप और भेद, सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञातके भेदसे समाधिमें विभाग, सविस्तर योगोपाय, ईश्वरका स्वरूप, प्रमाण, उपायना और उसका फल, चित्तविक्षेप और दुःखादिका निवारणोपाय, समाधिमें क्लेशयोग, क्लेशकर्मका प्रभेद, तत्त्वज्ञान, यम-नियमादि, ध्यान, धारणा, समाधि, सिद्धि पञ्चक, विज्ञानवाद, निराकरण आदिका दिग्दर्शन कथया गया है। पतञ्जलिने छव्वीस तत्त्व माने हैं। इन छव्वीस तत्त्वोंमें ही समस्त पदार्थ प्राविर्भूत हुए हैं। इनके सिवा और कोई पदार्थ नहीं है। चौथीस तत्त्व और पुरुष इन पञ्चीस तत्त्वोंका वर्णन मात्र दर्शनमें हो चुका है। छव्वीसवाँ तत्त्व ईश्वर है परमेश्वर का आदि-से रहित, जगन्निर्माणार्थ स्वेच्छानुसार शरीर धारण-पूर्वक संसारके प्रवर्तक और संसारानलमें सन्तप्तमान व्यक्तियोंके अनुयाहक, असोम कृपाजि निधान तथा अन्तर्यामिके रूपमें सर्वत्र देदीप्यमान हैं। योगके द्वारा उनको पहचाना जा सकता है। चित्तवृत्तिना निरोध अर्थात् विषयसुखमें प्रवृत्त चित्तकी विषयोंमें विनिवृत्त और ध्येय वस्तुमें संस्थापित कर, तन्मात्रका ध्यान करनेका नाम योग है। अन्तःकरणको चिन्त कइते हैं। चित्तको पाच अवस्थाएँ हैं—क्षिप्त, लूट, विक्षिप्त, निरुद्ध और एकाग्र। चित्तकी अवस्थाविशेषको चित्तवृत्ति कहते हैं। चित्तवृत्ति पाँच प्रकारकी होती है—प्रमाण, विषयय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। प्रत्यक्ष, अनुमान और आगमके भेदसे प्रमाण तीन प्रकारका है। सिध्याज्ञानकी विषयय कहते हैं। कोई विषय वास्तवमें नितान्त असम्भव होने पर भी तदर्थ प्रतिपादक शब्द श्रवण करते

हो आपातः तद्विषयका जो ज्ञान उत्पन्न होता है, उसका नाम विकल्प है। निद्राशब्दसे साधारण निद्रा और स्मरण शब्दसे स्मृति अर्थ ग्रहण करना चाहिये। यह पाँच प्रकारकी चित्तवृत्ति ही चित्तका परिणाम विशेष है और इसीलिए वह चित्तका धर्म है, आत्मधर्म नहीं है। परिणाम तीन प्रकारका है—धर्म, लक्षण और श्वस्या। योगस्वरूप चित्तवृत्तिका निरोध अभ्यास और वैराग्यसे होता है। बहुत काल तक निरन्तर आदराति-ग्यके द्वारा किसी विषयमें प्रयत्न करनेका नाम अभ्यास है, और विषयसुख विलुपणाको वैराग्य कहते हैं। जिसको वैराग्य उत्पन्न होता है वह विचारता है कि 'मैं सुख दुःखजनक विषयोंके वशीभूत नहीं हूँ, सुख-दुःख-जनक विषय मेरे ही वशीभूत हैं।' इसलिये वैराग्यको वशीकार शब्दसे भी कहा जा सकता है। विषय दो प्रकारका है, एक दृष्ट और दूसरा आनुश्रविक। इहलोकमें उपभुज्यमान विषयको दृष्ट कहते हैं और परलोकमें भोज्य विषयको आनुश्रविक। ज्ञानयोगके अधिकारा सभी नहीं होते, जिनका चिन्त प्रसन्न है, उन्हींका ज्ञानयोगमें अधिकार है। जिनका चिन्त प्रसन्न नहीं हुआ है उन्हें क्रियायोग करना पड़ता है। मन्त्रका संस्कार दश प्रकार है—जनन, जीवन, ताडन, बोधन, अभिषेक, विमलोकरण, आप्यायन, तर्पण, दीपन और गुप्ति इन क्रियायोगोंका अनुष्ठान करनेसे क्लेशोंमें चोगता होती है। योगाज्ञके आठ भेद हैं—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। प्राणवायुके स्वाभाविक गति-विच्छेदकी प्राणायाम कहते हैं। प्राणायाम तीन प्रकारका है—रेचक, पूरक और कुम्भक। विधिके अनुसार योग-अनुष्ठान करनेसे सिद्धि होती है। सिद्धि नाना प्रकारकी है, जिनमें अणिमा, लघिमा, गरिमा, प्राकाम्य, ईशित्व, विशित्व और कामावशायित्व ये आठ सिद्धियाँ महसिद्धि कहलाती हैं। सभी व्यक्तियोंके लिए संसारका कारण एक मात्र प्रकृतिपुरुषका संयोग है। यह प्रकृति-पुरुष-संयोग अविद्याके कारण होता है। उस अविद्याको नष्ट करनेमें एक मात्र विवेकस्थाति ही समर्थ है। इसके सिवा अन्य उपाय नहीं है। जिस प्रकार चिकित्सा

शक्ति रोग, रोग हेतु आरोम्बे धीर हीयत्रके मेदवे
 चतुर्व्युत्पन्न रूप है, उसी प्रकार योग्यात्म मो ज्ञेय, जे-
 हेतु, मोक्ष धीर मोक्ष हेतुके मेदवे चतुर्व्युत्पन्नरूप है।
 पुण्यमय स सार ज्ञेय है। प्रकृति-पुत्रव-स योग ज्ञेय-
 हेतु है। धामान्तरिक प्रकृति-पुत्रव स योग निवृत्तिरूप
 केवचको मोक्ष धीर विवेकव्यातिम्बक्य द्यमनको
 मोक्षहेतु कहते हैं। शतवक और धरत देवो।

वीरशक्ति ४- इस द्यमनके प्रतीता महर्षि त्रैमिनि
 हैं इसलिये इसका द्वितीय नाम त्रैमिनिदमन मो है।
 इसमें वेदके विषयोंको मोमांसा की गई है, इसलिये
 इसका नाम मोमांसा दमन पड़ा है। मोमांसाके बिना
 बिना मो विषयका सिद्धान्त नहीं बन सकता। इसलिये
 प्रत्येक कार्यमें मोमांसाको आवश्यकता है। जिस
 प्रकार वेदके तात्पर्यका निषय करना कठिन है, उसी
 प्रकार श्रुति धीर स्थिति पादिका धारधारिक विरोधमध्यम
 पूर्वक हीनोंको माग्बता कायम रचना मो कर्म कठिन
 नहीं है। इसलिये मोमांसाका प्रयोजन है। मोमांसा
 करने से, तो एक मात्र मोमांसादमन जो हमने लिए
 उपाय लक्ष्य है। श्रुतिमें जिन श्रानो पर पकड़ता
 धीर धारधारिक विरोध का, पथया तादृश श्रुतिक बाध
 जिन श्रानो में लक्ष्यमाण धीर मनु पादि स्थितियों की
 विभक्तिपर्यन्त हो, महर्षि त्रैमिनि इस दमनमें लक्ष्य की
 मोमांसा की है। इस दमनका मत इस प्रकार है-वेद
 पयोद्वेष्य है धीर वेद जो ब्रह्म है, ईश्वर वा मनुष्य को।
 मो बलका कार्य नहीं है। वह निरव है। जो वेदको
 धारक धीर वेदिक समाचरण करते हैं व ही ब्राह्मण हैं।
 वेद यदि किसी व्यक्ति-द्वारा रचा गया होता, तो उसका
 कोई पक्ष पकड़ ही निया होता इसमें सन्देह नहीं।
 इसादि रूपके वेदका पयोद्वेष्यत्व प्रतिपादित हुआ है।
 यह दमन हादय पञ्चायोन तथा महत्त्व स प्यक पक्षि
 करधर्म विमल है। उसमें एक एक पक्षिकारधर्म एक
 एक प्रकार विरोधको मोमांसा है धीर प्रत्येक पक्षिक
 रधर्म पांच पांच पक्ष हैं - विषय अधिपय, पूर्व पय,
 उत्तरपय धीर निर्बंध।

परिभेदविचरन्ने पूर्वप्रसक्तोत्तरैः।

विषय वेदि रक्षन् शक्तपिडरय स्मृत ४ (मोमांसा)

जैसे-एक श्रुतिमें है, 'सुख मन्मथीय क्रुय-द्वारा यद
 करना चाहिये धीर दूसरी श्रुतिमें है, 'उदम्बर उद्यजात
 क्रुय द्वारा यद करे। इस स्थानमें क्रुय-द्वारा यद करने
 के व्यवहारका नाम विषय है। समस्त प्रकारके श्रुतियोंके
 क्रुयके यद होया या उदम्बर उद्यसमन्मथीय क्रुयके होया
 ऐसे सन्देहका नाम अधिपय है। सिद्धान्त विद्व
 तर्कोपस्थानका नाम पूर्वपय है धीर सिद्धान्तानुक्रम
 विचारका नाम उत्तरपय। निर्बंध शब्दके मन्त्रति
 (पर्याप्त सिद्धान्तविद्व विषय वाक्यमें तात्पर्योपकारण)
 पक्ष सेना चाहिये। देवयज शरीरो वा मथितन नहीं
 है जिस देवके जिने को मन्त्र वेदमें निर्दिष्ट हुआ है वह
 ठेक उसी मन्त्र-सदय है, मन्त्रके प्रतिरिक्त देवताके
 सत्यमें कोई प्रमाच नहीं है, पर तद्विरोधा प्रमाच जो
 बहुत है। इसमें सन्देह नहीं कि यदि मन्त्रके मिय
 कोई शरीरो देवता होवे, धीर उसको पूजा को जानो
 तथा वे पाकाइनादि द्वारा कइका पूर्वक घट धीर
 प्रतिमा चादिमें पश्चित्त हो कर पूजादि पकड़ करते,
 तो वह या पञ्चक-प्रतिमा चादि ऐरावतके साथ इन्द्र-
 देवके मारवचनमें पयज हो कर चुप हो जाती धीर
 कोटके घटमें तादृश उददाकार ऐरावतके साथ इन्द्रका
 समावेश हो जैसे सभकवर हो सकता है? परन्तु
 देवताको मन्त्रात्मक कहनेसे यह शोप नहीं पाता। वेद
 पयोद्वेष्य धीर म्मतप्रमाच है। ऐसे स्थल पर नैयायिक
 पादि पश्चित्तगण कह दिया करते हैं कि वेदोक्त विषयमें
 अत्यन्त है इसलिये वेदको निरव मानना उक्त या, पिशा
 कोई नियम नहीं। वह कुम्भकार द्वारा बना है इह
 वाक्यायर्धमें यायार्थ है। इसलिये जेम्हे उद वाक्यमें
 पञ्चान्त पुत्रयोनि है उसी प्रकार वेद पञ्चान्त
 पुत्रयके द्वारा बना है किसी व्यक्तिके हाथ नहीं बना।
 नैयायिक विद्वानोंने इस प्रकारके पक्षके मूल्यानुसन्धान
 कर वेदका ईश्वर-निर्मितत्व प्रतिपादन किया है, किन्तु
 इह परमेश्वरके शरीररुपि कुम्भ को स्वीकार नहीं करते,
 इह अत्यन्त पाचयोंका विषय है। यदि परमेश्वरके शरी
 रुपि नहीं है तो उनमें वेदको रचना बिना प्रकारसे
 की? इसादि प्रकारके श्रायको श्रुतियोंका लक्षण बिना
 गया है। मोमांसा रको।

वेदान्त दर्शन—इसके सूत्र-रचयिता वेदव्यास हैं गङ्गाचार्यने उस सूत्रके आधार पर इस दर्शनका प्रस्थान किया है; इस कारण इसका नाम गङ्गरदर्शन भी है। वेदव्यासके सूत्र इतने अस्पष्ट हैं कि किसी प्रकार भी उनका तात्पर्य ग्रहण नहीं किया जा सकता, यत्र जिसका जैसा अभिप्राय है, वह उसी तरहका अर्थ ग्रहण कर सकता है। इसी कारणसे वेदान्तसूत्रके नाना प्रस्थान हैं, अर्थात् रामानुजकृत व्याख्यानार रामानुजप्रस्थान, मध्वाचार्यकृत व्याख्यानार माध्व प्रस्थान और गङ्गाचार्यकृत व्याख्यानार गङ्गरप्रस्थान हुआ है। इनमें सिद्ध और भी अनेक प्रस्थान हैं, जिसका सम्प्रति प्रचलन नहीं है। गङ्गाचार्यने असाधारण प्रतिभाशक्तिसे इसमें अद्वैतमत संस्थापन किया है। उपनिषद् शास्त्र ही भारतीय ब्रह्मज्ञानका पूर्ण-माध्यार है। इस उपनिषद्को मोमांसाके लिये वेदान्त सूत्रको सृष्टि हुई है। वेदान्तका विषय कहनेके पहले उपनिषद्का विषय कहना ही उचित है। उपनिषदोंका मत दो प्रकार है—हैत और अहैत। अहैतके मतमें, ब्रह्मके सिवा और कुछ भी नहीं है। हैत मतानुसार ब्रह्म भी है और जोव एवं जगत् भी है। आपाततः ये दोनों मत स्वतन्त्र ज्ञान पहुँचे हैं, परन्तु स्पष्ट समझमें आ जाने पर वह मत मिश्र नहीं जान पड़ता।

गङ्गाचार्यने इस दर्शनमें विशेषतः अद्वैतमतकी पुष्टि की है। यह वेदान्त दर्शन चार पादोंमें विभक्त है, जिनमें ब्रह्मको जगत्त्वत्वादि अस्पष्टार्थ श्रुतियोंका ब्रह्मपरत्वादि, नांश्वमत निराकरण, अद्वैतमत-विरुद्ध श्रुति और स्मृतिका समन्वयादि, आकाशके नितरत्वका खण्डन और जन्यत्वका संस्थापन, जोषकी संभारगति, क्रमादि जगत्की अवस्थाभेद आदि वेदान्त प्रतिपाद्य विषयोंका विवेचन है। इस दर्शनके मतसे एक मात्र ब्रह्म ही सत्त है और सम्पूर्ण, जगत् मिथ्या है; ब्रह्म-ज्ञान होने पर मुक्ति हो जाती है। ये सब विषय प्रधान रूपसे श्रुति, स्मृति और युक्ति टिखना कर ही प्रतिपादित किये गए हैं। इसमें अधिकारी होना आवश्यकीय वसन्ताया है। जो अधिकारी न हो कर सर्वोपास्य नियुक्त

ब्रह्मोपामनाके लिए उद्यत होने हैं, उन्हें “ज्ञानार्थं नरकं” अर्थात् केवल शास्त्रज्ञानकी आलोचना करनेमें नरक जाना पड़ता है। इत्यादि श्रुतिके अनुसार केवल नारका होना पड़ता है।

वास्तवमें प्रकृत फल अनुभाव भी प्राप्त नहीं होता। ब्रह्मज्ञानके अधिकारी होना महक नहीं है। जिनके अध्येयनविधिमें अनुभाव वेद और वेदान्तोंका अध्येयन कर वेदार्थको संपूर्ण तथा हृदयद्रम कर लिया है; जिनके अध्येयनमें वा उन्मान्तमें काश्य और निषिद्ध कर्मादि निवृत्त हो कर केवल मन्वावन्टपादि रूप निरत नैमित्तिक कर्म, प्रायश्चित और उपासना अर्थात् शाण्डिल्यवित्याके अनुसार मनुष्य ब्रह्मविषयक मानस उपासना आदि अनुष्ठानों द्वारा चित्तकी अतारत निर्मल बना लिया है तथा जो माधन चतुष्टय संपन्न हो कर अस्मान्त हो चुके हैं, वे ही व्यक्ति ब्रह्मज्ञानके अधिकारी हैं। उल्लिखित प्रकारमें ब्रह्मज्ञानके अधिकारी हो कर ज्ञानकाण्डको आलोचना करनेमें शोष ही ब्रह्म-भाव प्राप्तिस्वरूप मुक्तिभाजन हो सकते हैं। ब्रह्म सत् अर्थात् सत्स्वरूप है, चित् अर्थात् चैतन्यपदवाच्य है, ज्ञानस्वरूप है, अमृच्छ अर्थात् अपरिच्छिन्न है, अद्वितीय है तथा निधर्मक अर्थात् ब्रह्ममें ज्ञान वा सुखादि कोई भी धर्म नहीं है। ब्रह्म ही स्वयं ज्ञान और स्वरूप है। यद्यपि ‘घटज्ञानमें पटज्ञान भिन्न है’ और ‘तुम्हारे ज्ञानमें मेरा ज्ञान श्रयक है’ इस तरहके भेदव्यवहारकी देव्य कर साधारणतः ज्ञानका नानात्व ही प्रतीयमान होता है, तथापि विशेष रूपसे विवेचना करने पर वह मानस ही जायगा कि विशेष स्वरूप उपाधिके नानात्वके कारण ही ज्ञानके नानात्वका भ्रम होता है, वास्तवमें ज्ञान अनेक नहीं किन्तु एकमात्र है। जैसे एक ही सुख तीसमें प्रतिबिम्बित होने पर दूसरे तरहका और जलमें प्रतिबिम्बित होने पर तीसरे तरहका मालूम होने लगता, किन्तु वास्तवमें सुख एक ही प्रकारका है, उसमें भेद नहीं है, तैलादि रूप उपाधिके भेदसे भेद-व्यवहार ही जाता है, उसी प्रकार ज्ञानका ऐक्य रहने पर भी घट-पटादि विषयस्वरूप उपाधिके भेदसे ज्ञानमें विभिन्नता प्रतीत होती है। परब्रह्मके प्रतिबिम्बमुक्त सत्त्व, रज और

तमोगुणालय और सद् वा पदसद्वृत्तमें अनिर्घोष पदार्थ विभियको प्रज्ञान कहते हैं। यह प्रज्ञान जो कर्मज्ञा कारक है, इस प्रज्ञानको आधारक और बिन्दु के दो शक्ति हैं। जैसे शिव परिमाणमें पत्त जोमि पर मो टग्य कींके नयन धाकाकर कर बहुवीजन विस्तृत ल्युंमकन-को मो मानो धाकाकरित कर देता है, वही प्रकार प्रज्ञान परिष्कृत जो कर मो जिन शक्ति के द्वारा टग्यको बुद्धि कृत्तिको धाकाकरित कर मानो अपरिष्कृत धाकाको ही तिरोहित कर देता है। उन शक्तिको आधारकशक्ति कहते हैं और जिन शक्ति के द्वारा प्रज्ञा र लयादान-कारकत्वमें कर्मसद्वृत्ति होती है उसे विवेकशक्ति कहते हैं। यह प्रज्ञान वास्तवमें एक जोमि पर ही परल्लामे होने दो प्रकारका है—प्रज्ञा और पविद्या।

विद्युत्, पदार्थ रज वा तमोगुण दाया प्रमिममृत तत्त्वगुण-प्रधान प्रज्ञानको पविद्या कहते हैं। मायामें अ परल्लामेका प्रतिबिम्ब होता है, वह प्रतिबिम्ब ही सर्व अ मर्षशक्तिमान् वा ईश्वर है और पविद्यामें जो प्रति बिम्ब पड़ता है वह उस पविद्याके कर्मभूत जो कर मनुष्यादि वाचन् कोयपहवाच्य है। पविद्या नामा प्रकाशको है, अतएव उनके प्रतिबिम्ब मो नामा जेनेके जोव भी नामा है। जोवके नामात्त्ववादको मर्ष वेदा श्चिब जोकार मर्षो करी, बलिब बुद्धि द्वारा एकत्ववाद का ही प्रतिपादन करते हैं। माया और पविद्याको जो यथाहमने ईश्वर और जोवकी सद्बुद्धि, ध्यानमय कोय और कारक-शरीर कहते हैं। इस कारक शरीरमें पमिमानी ईश्वर और जीव यथाहमने सर्वत्र और प्राण को जाते हैं। जोवके लपयोगके लिए परमेश्वर जोवके पूर्वज्ञत सद्गत और दुष्कृतके अनुसार अपरिमित शक्ति विभिन्न मायाके माह नामरूपालय निश्चिब प्रपञ्चको प्रथमतः बुद्धिमें कल्पना कर "यिमा कल्पनी क्वचित है" इस प्रकारका कल्प्य करी है। पीके उस मायाविभिन्न धाकाके वाच्यम्, धाकायके वासु वाबुने तज, तीव्रमे कल और कल्पके इबिको लत्यक होती है। इन धाका यादि धांच पदार्थको पञ्चरूपभूत, पञ्चोद्भूतभूत और पञ्चतन्मात्र मो कहते हैं। कारकमें जोमा गुण होता है, तदनुकूप गुण कारकमें मो लत्यक होता है, इस व्यापके

अनुसार कारकके मत्त, रज और तम यादि गुण हैं और धाकायादि पञ्चभूतमें स ज्ञाना होती हैं। इन पञ्चभूतोंके एक एक सत्तायने ज्ञानम' प्रानेन्द्रियपञ्चक लत्यक होता है।

धाकायके सत्तायके योत्र वाबुके सत्तायके त्वक, तीव्रके सत्तायके चक्षु, अक्षर सत्तायके रचना और बुद्धिको के सत्तायके प्राबिन्द्रिय लत्यक होते है तथा पञ्चभूतोंके सत्तायके मित्र जाने पर, कसके द्वारा पन्ता-करकको लत्यक्ति होती है। पन्ता-करक धर्मसाके भेदने दो प्रकारका है—बुद्धि और मन। जिस समय पन्ता करक की निधयात्मक कृत्तिको होती है, उस समय उसे बुद्धि कहते हैं और जब सद्बुद्ध्य और निष्कलात्मक कृत्तिको होती है तब वह मन कहलाता है। प्रत्येक पञ्चभूतके रजो प मये ज्ञानम' वाक्, पाणि, पाद, पात्रु और लपसद्वृत्त पञ्चकर्मोन्द्रियोंको सृष्टि होती है तथा उन पञ्च भूतोंके ससृष्टित रजोप मपञ्चकने प्राचवाबु लत्यक होते है। पूर्वोक्त बुद्धि प्रानेन्द्रियपञ्चकके पाच विज्ञानमय कोव मन कर्मोन्द्रियके पाच मनोमय कोव और प्राच कर्मोन्द्रियके पाच प्राचमयकोव बन जाता है। इन तीन कोवामें विज्ञानमयकोव प्रानमशक्तिमान् है; कर्षत्वशक्ति सम्पन्न मनोमयकोव रक्षाशक्तिशील एक कारकत्वकूप है और प्राचमयकोव विद्याशक्तिशील एक कार्य स्वकूप है। पांच प्रानेन्द्रिय, पांच कर्मोन्द्रिय पांच प्राच, बुद्धि और मन के तत्रत्र सञ्च-शरीर हैं। सिद्धशरीर इस सूक्ष्म-शरीरका जो नाम है। सिद्धशरीर इहलोक और परलोकशामी है तथा सुद्धि पर्यन्त काबी है। एक एक निद्र-शरीरके पमिमानी जोवको तै अक्ष कहते हैं और समस्त सिद्धशरीरके पमिमानीको विरक्षामर्म। ईश्वर ज्ञानके लपयोग-मन्वाद्यक ज्ञान विपयोगके सम्पादनमें पांच पांच सूक्ष्म भूतोंका पञ्चोकारक करते हैं। जिनको प्रथानी इस प्रकार है परमेश्वर धाकायादिमेंके प्रत्येक को प्रथमतः दो प शोमें विभक्त करते हैं। पीके प्रत्येक भूतके उस एक एक पंचमके चार चार टुकड़े करके पूर्व ज्ञत धाकायके दो लपयोगके जो एक एक लच्छ बचा है, कसमें वाबु, तीव्र, कल और प्रविष्टीके चार चार लच्छोमेंके लवका एक लच्छ दे कर ल्, धाकायको तथा

पूर्व स्थित वायुके एक अंशमें आकाश, तेज, जल और पृथिवीके उन चार चार खण्डोंमेंसे एक एक अण्ड देकर स्थूलवायुकी; और इसी रीतिमें स्थूलतेज, स्थूलजल और स्थूलपृथ्वीको भी सृष्टि करते हैं। इन पञ्चोक्त पञ्च भूतोंकी ही पञ्च स्थूलभूत कहते हैं। इन स्थूल भूतोंमें जो शब्दादि गुणोंकी अभिव्यक्ति होती है। इस प्रकार पञ्चोक्त और त्रिहृतकृत स्थूलसे जो यथामभव भूः, भुव, स्व, मह, जन, तपः और सत्य ये सप्त लोक तथा अंतल, वितन, सुतल, रसातल, तलातल, महातल और पाताल उपपन्न होता है। स्थूल शरीरके चार भेद हैं—जरायुज, अण्डज, स्वेदज और उद्भिज। इस स्थूल देहकी कान्ति और पुष्टिमें कारण है अन्न और पानी-यादिका भक्षण। अन्नके उदरस्थ होने पर उसके स्थूलान्श से पुरीष, मध्यमांशसे मांस और सूक्ष्मांशसे मनको पुष्टि होती है। पीत पानीयादि वस्तुके स्थूल, मध्यम और सूक्ष्मांश यथाक्रमसे मूल रक्त और प्राणको पुष्टिके रूपमें परिणत होता है।

आस्तवमें परब्रह्मके सिवा सभी वस्तुएं मिथ्या हैं, इस जगत्में जो कुछ पदार्थ दृष्टिगोचर होते हैं, वे सब रज्जु-सप की तरह अज्ञान कल्पित मात्र हैं तथा जीवात्माके माद्य परमात्माका भेद नहीं है, जीवात्मा ही परमात्मा है और परमात्मा ही जीवात्मा है। अतएव इस जगत्का सृष्टिक्रम और जीवात्मा एवं परमात्माका विभाग करना बन्धावृत्तके नामकरणको तरह हास्यास्पद है। जैसे मायावो इन्द्रजाल-विद्याके द्वारा ऐन्द्रजालिक वस्तुओंका प्रकाश करता है और दशकोंका दर्शनोत्सुक निवारण कर पुनः उन वस्तुओंका संहार करता है, उन्हीं प्रकार परमेश्वर अचिन्त्य शक्तिशाली मायाके द्वारा जगत्की सृष्टि कर प्राणियोंको सुकृत और दुष्कृतका फल प्रदान करते हैं और फिर भ्रन्तमें जगत्का प्रलय कर देते हैं। प्रलय चार प्रकार है—नित्य, प्राकृत, नैमित्तिक और आत्यन्तिक। ब्रह्मज्ञान नैमित्तिक परम मुक्तिकी प्राप्तिकी आत्यन्तिक प्रलय कहते हैं। ब्रह्मज्ञान द्वारा संसारके मूलकारण मूल अज्ञानसे निवृत्त होने पर फिर संसारकी स्थिति वा पुनरुत्पत्ति नहीं होती। प्रलयका क्रम इस प्रकार है—प्रथमतः पृथिवीका लय जनमें होता है, पीछे

जलका लय तेजमें, तेजका लय वायुमें, वायुका लय आकाशमें, आकाशका लय जीवमें, जीवका लय अहङ्कारमें, अहङ्कारका लय हिरण्यगर्भाके अहङ्कारमें और उभका भी लय अज्ञानमें होता है।

इस दर्शनके मतमें प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, प्रागम अर्थापत्ति और अनुपलब्धिके भेदसे प्रमाण छः प्रकारका है। इन छः प्रमाणों द्वारा सम्पूर्ण पदार्थोंको सिद्धी होती है। इन छः प्रकारके प्रमाणों द्वारा बुद्धिमान् व्यक्तिगण ऐच्छिक और पारलौकिक सुखसम्भोगादिके अस्थिरत्वादि दोष देख, परम सुख-स्वरूप परात्पर परब्रह्म-प्राप्तिके निमित्त तत्साधनोभूत तत्त्वज्ञानिच्छा, जो कर उसके उपाय-स्वरूप श्रवण, मनन, निदिध्यासन और समाधिसे अनुष्ठानमें प्रवृत्त होते हैं। सविकल्पक और निर्विकल्पकज्ञान, त्रैय और ज्ञाता इत्यादि विकल्पोंके विलय-निरपेक्षकी सविकल्पक समाधि कहते हैं और तत्सापेक्ष परब्रह्म वस्तुमें निविष्टचित्तकी स्थिरताकी निर्विकल्पक। निर्विकल्पक समाधि-दशमें चित्तवृत्ति निर्वायु देयस्थित प्रदोष-शिखाकी तरह निश्चल होती है। इस निर्विकल्पक समाधिकी सिद्धि होने पर तत्त्वज्ञानो जो कर क्रमशः जीवन्मुक्त और परममुक्त हो सकते हैं। फिर सम्पूर्ण अज्ञान तिरोहित हो जाता है।

वेदान्त और शंकराचार्य देखो।

पहले दर्शन ही हिन्दुओंके गौरवका विषय है। इन छहों दर्शनोंके प्रतीता मुनिगण विषयशक्तिका ऋस कर परमपदकी प्राप्तिके लिये विशेष यत्नशोल थे। एक एक दर्शन-सम्बन्धी अनेकानेक ग्रन्थ हैं।

प्राचीन आचार्योंकी तरह प्राचीन योस और चीनदेश तथा मुसलमानोंमें दर्शनशास्त्रको विशेष चर्चा थी। वर्तमानमें यूरोप और अमेरिकामें इसकी काफी चर्चा हो रही है। देशभेदसे दर्शनशास्त्रको अर्थोपह करनेसे आर्यदर्शन एवं मुसलमानों और चीनोंके दर्शनकी प्राप्ति तथा यूरोप और अमेरिकामें दर्शनशास्त्रको पाश्चात्य कहा जा सकता है। पाश्चात्य दर्शनकी भी समयके भेदसे अर्थोपह करनेसे प्राचीन और आधुनिक इन दो अर्थियोंमें विभक्त किया जा सकता है, जिसमें योस-देशीय दर्शन ही प्राचीन है। पाश्चात्य दर्शन तथा

रोमका दर्शनशास्त्रक भी प्राचीन यौक्तिक दर्शनशास्त्रके प्रथम सूत्र है। दर्शनशास्त्रके इतिहास-नीलकोने प्राचीन यौक्तिक दर्शनशास्त्रको तीन भागोंमें विभक्त किया है। एक तो थैलिस (Thales) को यौक्तिकदर्शनका प्रवर्तक माना है। सक्लेटिस से सक्लेटिस के पूर्वतन दार्शनिकों को प्रथम समझता यह सक्लेटिस (Socrates) प्रोटो (Proto) और आरिस्टोटल (Aristotle) को द्वितीय समझता तथा आरिस्टोटल से नव प्रोटोपिस्टम (Neo-Pistonism) नामक दर्शनके प्रथम पर्यन्त दार्शनिकों को तृतीय पर्याप्त प्रथम समझता है। सक्लेटिस के पूर्ववर्ती दार्शनिकों को पांच विभागोंमें विभक्त किया गया है—हिलिसिड (Hilicist) पिथागोरियन्, (Pythagorean), एलिवाटिक (Eliatic), सोफिस्ट (Atomist) और सफिस्ट (Sophist)। थैलिस (Thales) को प्रथम यौक्तिक दार्शनिकोंमें स्थानानुसार प्रथम यौक्तिक दार्शनिकों को प्रथम यौक्तिक पायोनिज (Ionic) दार्शनिकों को कहा जा सकता है। परिदृश्यमान अनन्त किस तरह और किस मूल तत्वादानसे उत्पन्न हुआ उत्पन्न दार्शनिकों का मूल चर्चण था। इनमें हिरोसिडोसिने प्रथम, हिरोसिने वासुकी और हिरोसिने सिन फ्रादिको काटिकारण माना है। थैलिस (Thales) ने ईसासे ६०० वर्ष पहले प्रथम यौक्तिक किया था। ६२० पूर्व ख्रिस्ताब्दको इनको मृत्यु हुई थी। ये क्रिस्त (Craesus) और सोलन (Solon) के नाम नामविशेष हैं। इनके मतमें सब ही समस्त पदार्थोंकी उत्पत्तिमें वाटिकारण है। आनाक्सिमन्दर (Anaximander) और आनाक्सिमैनिज (Anaximenes) ने दोनों पायोनिज (Ionic) दार्शनिक हैं। आनाक्सिमन्दरके मतमें मोतीका पश्चात् सिन और सिनका पश्चात् तथा आनाक्सिमैनिजके मतमें सब ही विग्रहका कारण है। ये दोनों को यौक्तिक पायोनिज दार्शनिकोंमें विधिय प्रसिद्ध है।

पिथागोरस, पिथागोरियन् (Pythagorean) नामक दर्शनशास्त्रके प्रवर्तक है। पिथागोरसका जन्म ६२० ख्रिस्ताब्दको स्पामन नगरमें हुआ था और ५०० ख्रिस्ताब्दको मृत्यु हुई थी। इनका प्रवर्तित दर्शन-

के मतमें, जन्मपश्चिमेय और समानुपात (harmony and proportion) तथा इन दोनोंको परिचित म व्या हो (number) पदार्थोंकी उत्पत्तिमें कारण है। इस यौक्तिक दर्शनमतका प्रचार करने पहले फिलोलस (Philolan) ने किया था। सिमियस (Simias) मिनिस् (Colos), ओकेलस (Ocelus), टिमियस (Timaeus) एकेलेटिस (Echecrates), एचिओ (Achrio) आरिस्टोटल (Archytas) लायसिस (Lyais) और उरुटियस (Urytus) ये जो यौक्तिक पिथागोरियन् दार्शनिकोंमें व्याप्तनाम हुए हैं।

पिथागोरियनोंमें आत्माका अस्तित्व स्वीकार किया है। इनके मतमें आत्मा भी हरमनि (Harmony) माना है और यही हरमनका आत्मापर स्वल्प है।

अनोफन देसोय (Colophon) जिओफोनिस (Xenophones), एलिवाटिक (Eliatic) दर्शनके प्रवर्तक हैं। पूर्व पूर्व दार्शनिकोंमें पदार्थका बहुत्व स्वीकार किया है। किन्तु इन लोगोंमें पदार्थ के एकत्वको स्वीकार करनेका प्रयास किया है। इनके मतमें ईश्वर को सर्व नियन्ता है। इनमें आरमिनाइडिस (Armenides) जिओ (Zeno), मीनिजस, ये जो स्प्रातनामा दार्शनिक हुए हैं। एक मात्र वस्तु को पदार्थ है, प्रत्यक्ष कोई पदार्थ नहीं है, यही आरमिनाइडिसका मत है। अन्त्याक पिसेन विद्वान आरमनसर्पेस और आरमनसर्पेस आरमने रखा।

दर्शनशास्त्र (सं पु०) दर्शनशास्त्र पन्ना ६ तत् । इतिपत्र नगरकी पृष्ठ ।

दर्शनशास्त्र (सं पु०) दर्शनशास्त्र प्रसिद्ध । प्रतिभूते, वह मनुष्य जो किना दूसरेको आश्रित कर देने का मार पवने अपर है, आश्रितदार। इच्छा विषय याज्ञवल्क्य ग इतिमें इस प्रकार लिखा है—भाट्ट, आत्मी श्री, पिता और पुत्र इन दोनोंका धन जब तक एक साथ रहता है, तब तक एक दूसरेके सहाय नियो किना इनमें से कोई भी आश्रित नहीं हो सकता है। पाप होने को देह अद्वयत पड़ने पर ही वही आश्रित कर दूगा, इने पाप शब्द है, यह उनीमा नहीं विद्याको है, पाप यह नहीं देगा, तो मैं अथ बुका दूगा पाप किना आश्रित कर न करे, जो आश्रित कर शब्द है, इस प्रकार दार्शनिक

तीन भेद जामिन कहे गये हैं। दर्शन और विश्वासका जामिन यदि मर जाय, तो उसके लड़कोंको महाजनका ऋण परिशोध करना चाहिये, नहीं तो वे पापके भागी होते हैं। यदि अनेक व्यक्ति अंश निर्देश कर किसी एकके प्रतिभू हों, तो जो जिस प्रकारके अंशका प्रतिभू हुआ हो, उसे वैसा ही देना होगा। फिर यदि एक क्लाययित हो अर्थात् विशेष अंश निर्देश न कर सभी मिल कर ऋणोत्तरी हो जाय, तो जामिनदार महाजनके इच्छानुसार धन देनेकी बाध्य है। जामिनदार मर्क सामने महाजनकी जो कुछ देगा, ऋणीकी उचित है, कि वह उसका दूना लगा कर प्रतिभूको दे। धानका ऋणोत्तरीसे प्रतिभूको उसका तिगुना, वस्त्रका चौगुना और रसका प्रथगुना देनेकी लिखा है।

(याज्ञवल्क्य २४०) प्रतिभू देखो।

दर्शना (सं० स्त्री०) नदीविशेष, एक नदीका नाम।

(पद्मपु०)

दर्शनो (सं० स्त्री०) तैलकीट, तैलिन नामका कोडा।

दर्शनोय (सं० त्रि०) दृश्यते इति दृश-अनीयर, १

दर्शनोयय, देखने लायक। २ मनोहर, सुन्दर।

दर्शनी हुडो (हिं० स्त्री०) दरवनी हुडी देखो।

दर्शनीच्छन्ना (सं० स्त्री०) श्वेत जाती वृक्ष, मफेट जायफलका पेड़।

दर्शनीपनिपट् (सं० स्त्री०) उपनिपट्ट, एक उपनिपट्टका नाम।

दर्शप (सं० त्रि०) दर्शन दर्शन पिवन्ति पाठः। दर्शनमात्रसे हो पाठ देकभेद।

दर्शयामिनो (नं० स्त्री०) दर्शय्येव यामिनो। तमिया, अंधेरो रात, अभावस्थाकी रात।

दर्शयित (सं० त्रि०) दर्शयतीति दृश-णिच्-दर्शित्त्। १ दर्शक, दिखानेवाला। (पु०) २ द्वारपाल, डोढ़ीदार।

दर्शविपट् (सं० पु०) दर्श अभावस्थायां विपट् प्रणाशोऽदर्शनं यस्य। चन्द्र, चन्द्रमा।

दर्शाना (हिं० स्त्री०) दरशाना देखो।

दर्शित (सं० त्रि०) दृश-णिच्-क्त्। १ दिखलाया हुआ। २ प्रकाशित।

दर्शिन (सं० त्रि०) दृश-णिनि। १ दृष्टा, देखनेवाला।

२ विवेचक, विचार करनेवाला। ३ साक्षात् कारक, दर्शन या मुलाकात् करानेवाला।

दर्शिवन् (सं० त्रि०) दृश "अन्धेष्वपि दृश्यन्ते" इति इवणिप्। दृष्टा, देखनेवाला।

दर्शी—१ मन्दाज प्रदेशके अन्तर्गत नन्दूर जिनिका एक जमींदारो तालुक। इसका परिमाणफल ६१६ वर्गमील है। तालुकका प्रधान नगर दर्शी है। यह अक्षा० १५° ३३' से १६° १' ३०' और देशा० ७६° १८' से ७६° ५८' पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ८२४५८ है। इसमें १२८ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त तालुकका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० १५° ४८' ३०' और देशा० ७६° ४४' पूर्वमें अवस्थित है। यह घाना, डाकघर तथा कुछ राजकीय कार्यालय हैं।

दर्श्या (सं० त्रि०) दृश-यत्। दर्शनोय, देखने लायक।

दल (सं० स्त्री०) दलतीति दल-प्रच्। १ उत्सव। २

खण्ड, टुकड़ा। ३ पत्र, पौधोंका पत्ता। ४ धन, टोलत।

५ तमालपत्र। ६ ढह, आधा भाग। ७ अस्त-च्छद,

अग्निके ऊपरका आच्छादन, शीप, म्यान। ८ अय्य,

बुरी बोज। ९ समूह, झण्ड, गरोह। १० काष्ठ फलकादि-

का शूलत्व, पटरीके आकारकी किसी वस्तुगी मोटाई।

११ जलजलणविशेष, जलमें होनेवालो एक वास। १२

फूलकी पखड़ी। १३ मण्डली, गुट। १४ सेना, फौज।

१५ तेजपत्र, तेजपत्ता।

दल—शनके छोटे भाई। शल देखो। इन्होंने वामदेवको मारनेके लिये एक विपाक वाण फेंका था, इस पर वामदेवके श्रापसे उसी वाण द्वारा इनके पुत्र श्वेनजित् मारे गये।

दलइलामा—बौद्धसंग इन्हें एक जोषित बुढ़का अवतार समझते हैं। तिब्बतकी राजधानी लासा नगरके बाहर बुइला नामक मन्दिरमें ये धाम करते हैं। इनके शिष्योंकी संशोधित वा संस्कृत बौद्ध कहते हैं।

लामा शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

दलक (सं० स्त्री०) गुटडो।

दलक (हिं० पु०) १ नकाशो साफ करनिका राजगोरीका एक यन्त्र। इनका आकार कुरोसा होता है परन्तु सिरे

पर चिपटा होता है। (श्री०) २ अण्ड, वरपरचट
 वमज। १ टोक, वमज।
 दमकना (हि० लि०) १ घट जाना, चिर जाना। २
 पहिल जो छटना, खोचना। १ भागना चरना। ३
 मोत कर देना, डराना।
 दमकपाट (म० पु०) फूलका बह बोध जिनसे भीतर
 बनने रहते हैं। इसको पलङ्गिका चरो जोते हैं।
 दमकोमल (म० श्री०) पत्र कमल।
 दमकोप (म० पु०) दमकोय कोपी यत्र। १ अन्तपुत्र
 वृष कृ दका पोता। २ मन्त्रिजापुत्रवृष, धर्मकोको
 पङ्क।
 दमकपत्र (म० लि०) १ मैनाको मारमिवाला। (पु०)
 १ एक प्रकारका वान।
 दमकम्प (म० पु०) मन्त्रयत्र वृष कतिवन्।
 दममोमा—धामामके ज्ञानपाङ्का जिनका एक धाम।
 यह पचा० २६ १ स० पौर देश० ८० ३८ ५० में पत्र
 स्थित है। यहाँ प्रतिवर्षके जनवरी मन्त्रोत्तमि एक बड़ा
 मेला लगता है। यहाँ इस जिनके प्रधान कर्मोदार
 विजयो शास्त्राको एक कर्मोदारो कचरहो है।
 दमबुरा (हि० पु०) एक प्रकारका रोटी। इसमें पिरो
 हुई दान लवण मसालेके साथ मरो रहते हैं।
 दमव (म० लि०) दम बाहु० पठन्। दिवाकारक, हो
 टु, कृति करमेवाला।
 दमवमन (म० पु०) कर्मका बना हुआ कमलाव सुमने
 कर्मिका एक वत्त। इसमें च कुड़ा पौर लवणा बधा
 रहता है।
 दमबिवा—बहुत २३ परगनेके पत्तलत बलिरचट मर
 कर्मका एक धाम।
 दमवक (हि० श्री०) १ कोचड़, पंख। २ बहुत मरदाई
 लवण मोको कर्मोत्त। यह कर्मोत्त इस तरहको होते
 हैं, हि इस पर पौर रखनेसे यह मोचे बन जाता है। ३
 पुत्रो श्री०। यह पानकोके कर्तारोको मोको है।
 दमदण (हि० वि०) जिनमें दमदण हो।
 दमदण (हि० वि०) मोटादलवाला।
 दमन (म० पु०) १ दोन कर कृष या ह कर्मिका धाम।
 २ विनायक, वचार।

दमना (हि० लि०) (पुर्ब करना, कष्ट कष्ट करना,
 मोड़ना। २ रोटना, कुचलना, धमना। १ मट करना
 बरबाद करना। ३ बहो हारा पनाइ धादिके दानको
 दो दमीम करना।
 दमनिर्माक (म० पु०) दमतोति दम कल्पक निर्माक
 इन यत्र। मूर्धपयवृष, मोत्रपयका पङ्क।
 दमनी (म० श्री०) दमकोलया दम करके मृट-डोप।
 १ मोट्ट, डेला। २ मोदकता, विष्णुद करमेवाला।
 दमप (म० पु०) दमकोदो दमते धर्मन या दम-वपन्।
 १ धर्म, जोता। २ शत्रुवधक, इतिवारका जोड़ना।
 ३ विदारक मात्र। ३ दसपति।
 दसपति (म० पु०) दमप पति १ तत्। १ दसका
 प्रधान स्थिति, मन्त्रकोका मुनिया सरदार। २ धेनापति।
 दमपुत्रा (म० श्री०) दमानि एकाकोव पुत्राधि यत्र।
 धितको। इसके फूल पत्रोके आकारसे होते हैं।
 दमदा—मि इससे आण्ठी लमार्के पहिल पुत्रदेवके सचिव
 दत्त। पोत्, गोत्रोने १३६० ई० में धमको दात विनट
 कर दिये थे। धमोको दात देखे जाते हैं, धे प्रायः दो
 इस सम्ये विवर्ष जायो-दातन मिया पौर कुल नहीं हैं।
 ये दिवनेमें बहुत कुल कुशीरके दातो धे लगते हैं।
 दमपतिराय—हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि। ये पञ्चमदा
 बादके रहनेवाले थे। इनका जन्म १८२८ ई० में हुआ
 था। इनोंने "सटी पुर" बाबि जयनेसके नाम पर यह
 पत्र बनाया है। यह पत्र लदयपुर पौर जगत्सिद्ध
 है। इनको माया बहुत मजूर पौर माव बड़े मन्धीर
 होते थे। नीचेका दोहा इनोका बनाया हुआ है—
 "रहे हरा विद्विध विवक बरे राव मरु म ह।
 बरगो बरि पुनि च बरे प्यारी तर बुक च नु ह"
 इनोंने पनुप्रास मो पच्छे रक्ते हैं। इनको कविता
 बहुत मोड़ी है, परन्तु हैं बड़ी कष्टत। इनके बनाये
 हुए पत्रके इन्द्र भा मिलते हैं। लदाहरणार्थ एक इन्द्र
 मोचे लिखा जाता है—
 "कामी ये मिष्टि कुपमापुत्री दुकपी धारि
 रेणुि काल भीतके रेव रावये राव
 भी इनके कोरिओ भी हैरेयो मिष्टि मरु
 रेणो वकीओ कर मरु कर्षे बरु

आहु लो' न जानी ही से परी पहिचानी छेवे
जोवन निशानी ऐसी अंग अंगको धरत ।
विधना प्रधीन मानो तनमें नवीन कियो चाहै
कटि छीन याते पोत कुचको काट ॥”

दलवन (सं० पु०) सैन्य, फौज, लावलदकर ।
दलवा (हि० पु०) एक निर्बल पत्नी जिसे तोतरवाज,
वटेरवाज आदि अप्पनि पास रखते हैं । वे इसे दूसरे
पक्षियोंसे लड़ा कर और मार खिला कर-उन पक्षियोंका
साहम बढ़ाते हैं ।

दलवाइ सेतुपति—रामनादके एक राजा । इन्होंने १५७१
शकाब्दमें प्रसिद्ध रामेश्वर-मन्दिरका पूर्वोय गोपुर निर्माण
किया था । यह आज भी असम्पूर्ण अवस्थामें पड़ा है ।
द्वितीय प्राकारके पूर्वोत्तर कोणका सभापति नामक
मन्दिर भी इन्होंने बनाया हुआ है ।

दलवादल (हि० पु०) १ वादलोंका समूह, वादलोंका
कुण्ड । २ भारो सेना । ३ बहुत लम्बा चौड़ा शमियाना,
बड़ा भागे खेमा ।

दलमलना (हि० क्रि०) १ कुचल डालना, रौंदना, मीड़
डालना । २ विनट कर देना, मार डालना ।

दलमा—बङ्गाल देशके मानभूम जिलेके अन्तर्गत दलमा
नामक पर्वतश्रेणीका एक प्रधान पहाड़ । यह ३४०७
फुट ऊँचा है । यह पार्वनाथका प्रतिहन्दी समझा
जाता है, किन्तु पार्वनाथ पहाड़के उच्च शृङ्गके जैसा
इसके एक भी शृङ्ग नहीं है । खुरिया और भरिया नाम-
की दो असभ्य जातियाँ इस पर्वत पर वास करती हैं ।

दलमी—१ युक्तप्रदेशके रायवरेली जिलेको एक तहसिल ।
इसमें दलमी, सरनो और खाइरोन नामके परगने लगते
हैं । यह अक्षा० २५' ५७" से २६' २२" उ० और देशा०
८०' ४१" से ८१' २१" पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण ४७२
वर्गमील और जनसंख्या लगभग २७०८०० है । इसमें
कुल ५७५ ग्राम और एक शहर पड़ते हैं ।

२ उक्त तहसिलका एक परगना । इसके उत्तरमें
रायवरेली परगना, पूर्वमें मलीन, दक्षिणमें फतेपुर
जिला तथा पश्चिममें खाइरोन और सरनी परगने हैं ।
परिमाणफल २५३ वर्गमील है । पड़ने इस प्रदेशमें
भर नामकी एक जाति रहती थी । दिल्लीके सम्राट् अक-

बरने इसे परगना बनाया । इसमें १० ग्राम लगते हैं
जिनमेंसे लालगञ्ज ही प्रधान है । प्रत्येक ग्राममें एक
बाजार है । यहांके ग्रामदनों दृश्योंमें फौजाबादका चावल
और चोनी तथा फतेपुरकी रूई ही प्रधान है । पहले
यहां बहुत सोरा तैयार होता था, किन्तु अभी केवल
दो ग्रामोंमें कुछ कुछ तैयार होता है । यहां प्रतिवर्ष दो
मेले लगते हैं ।

३ उक्त परगनेका एक प्रधान नगर और सदर । यह
अक्षा० २६' ४' उ० और देशा० ८१' ३' पू० रायवरेली
नगरसे १६ मील दक्षिणमें गङ्गा नदीके किनारे अव-
स्थित है ।

कहा जाता है, कि प्रायः २००० वर्ष पहले कन्नोज
के राजा दलदेवने यह नगर स्थापन किया । बहुत
दिनों तक यह स्थान भर जातिके अधिकारमें था । इसके
चारों ओरके प्रदेशोंमें भर जातिके साथ मुसलमानोंका
विघाट बहुत काल तक चलता रहा । लगभग ४००
ई०में भरलोग सुलतान इब्राहिम सरकोसे सम्पूर्ण रूपसे
पगल हो गये । यहां बहुतसो मस्जिदें तथा भर लोगों-
के दुर्गका भग्नावशेष देखनेमें आता है ।

यहां महादेवका एक मनोहर मन्दिर, मुसलमानों-
की कई एक मस्जिदें तथा सराय हैं । गङ्गासे ले कर
रायवरेली होती हुई लखनऊ तक एक पक्की सड़क गई
है । यहां थाना, डाकघर, गवर्मेण्टके अंगरेजी विद्या-
लय तथा छोटी औपधालय हैं । कार्तिक संक्रान्तिमें
यहां प्रतिवर्ष एक बड़ा मेला लगता है । सारा दलमी
परगना एक मुन्सफके अधीन है । शहरको लोकसंख्या
प्रायः ५६३१ है ।

दलशालिनी (सं० स्त्री०) कञ्चुक शाक, कञ्चुका साग ।
दलसायसो (सं० स्त्री०) खेत तुलसीवृक्ष, सफेद तुलसीका
पौधा ।

दलसारिणी (सं० स्त्री०) सारोऽस्त्यस्याः सार इति ह्योष्
च, दले सारिणी । कंसुक, कंसुषा, कञ्चु ।

दलसिंह—नुन्देलखण्डके एक राजा और हिन्दीके एक
कवि । इनका जन्म १७२४ ई०में हुआ था । इन्होंने
“प्रसन्नयोनिधि” नामक एक ग्रन्थ बनाया था ।

दलसूचि (सं० पु०) दलस्य सूचिरिव । १ कण्टक, कांटा ।

६ कण्ठक इक्ष, नक्ष पीषा त्रिससि पत्तमि काठि हो । १ पत्तिका काटा ।

दसव्य (स० त्रि०) दसि लिङ्गति प्वा ३ । दसमुक्त, त्रिप में दस हो ।

दसलभा (स० श्लो०) दसव्य प्वा ६-तत् । पवसिरा ; पत्तिका मम ।

दसवम (हि० पु०) नक्ष पनाम त्रिससि दाम बनाई जाती है ।

दसहरा (हि० पु०) दाम वैशनेवासा जो दाम वैश कर पयना रोको जताता हो ।

दसदोनपका (स० श्लो०) सुवेमानी यत्रूर ।

दसाह्वान्त (स० त्रि०) दसि पाह्वान्त । दसव्य, त्रिसमें दस हो ।

दसाठक (स० पु०) दसैराकृत्त इक्ष । १ सय जात त्रिन हय, ब मको तिष्ठ । २ सुयो, गीक । ३ नामकेदार पुष्य इक्ष । ४ कुन्द पुष्यपुष्य । ५ करिक्कहृत्त, यत्र कर्को, एक प्रकारका पन्थाय । ६ गिरोव हृत्त विरिनका पैङ् । ७ वासा पत्तिका यत्र हृत्त । ८ मन्तर, प्रतिष्ठित । ९ दिन । १० वातक । ११ माहृत । १२ कुम्भिना जन्मुष्ठी ।

दसाठकी (स० श्लो०) १ पविकम्प हय । २ पत्रिपत्ती, पिठवन लता ।

दसाव्य (स० पु०) दसिन मेहेन प्वाद्या । १ पक्ष, कोचङ् । २ कुन्दपुष्पहय ।

दसामल (स० श्लो०) दसिन पमल । १ मक्षक हय, मक्षिका पीषा । २ दमनक हय, दानिका पीषा । ३ मदन हय मैनवनका पैङ् ।

दसव्य (स० श्लो०) दसिपु पन्थो रसो यम् । पुष्यमाय पमनीमी, कोमिया माय ।

दसाग (हि० पु०) एक प्रकारका भुक्तनीवाला विस्तरा । मन्त्राह कोन दमका म्पक्षहार जहाज पर करती है ।

दसान्त (स० पु०) १ थोदा मोन क्षेने वा बेचनेमें कहा यता पक्षीवासीवाला प्रादम विचरई । २ वक्ष को जो पुष्यका पन्थित व दीय करता हो, कुटना । ३ प्राटी को एक जाति ।

दसामी (स० श्लो०) १ दसानका माय । २ दसानको मिक्तनीवाला हय ।

दसाहय (स० श्लो०) दस इति पाह्वयो यम् । पवक, तेजपला ।

दसि (स० पु० श्लो०) दसति इति दस हन् (वर्षवपुम्प इत्तन ३।१२०) मोङ् टेना ।

दसिक्त (स० श्लो०) दसति मिथसि दसहन् म प्राया हन् । काठ, काठ ।

दसिङ्गकोट—श्यापीन सिद्धिमथे दसिच निचु पौर दिच नदीके पश्चिम तथा तिस्ता नदीके पूर्वमें अवस्थित एक पावक उपविभाग । १८२४ ई०को मृतानको पामाके फलत्तरदरमें यह प्रदेश पनरैको के हाथ आया । अमी यह दार्जिलिङ्ग प्रदेशके पक्षमुख हो गया है पौर बान्निमपक्ष नामने मयङ्गर है ।

अमी यह मङ्गला तीन भागोंमें विभक्त हो गया है—१ छपको के लिए एक भाग । इसको ३००० एकड़ अमीन माय कर हय मालक लिए बन्दाबस्त हो गई है । २ एक बल धीरे सिनकोना उपजानेके सिधे गवर्नमेंपक्षी पास अमीन । ३ बायको येती कर के सिधे ८००० एकड़ अमीन ।

असमें एक बाजार पौर मङ्गलके कार्यालय है । तिस्ता नदीके प्पार एक पुष्य वा बानिने समो समयमें पश्चिम दियामे पाने जानिको सुविधा हो गई है, इसी कारण धीरे धीरे लोकास प्वा मो बढ़ती जा रही है । इसका परिमाणकन ३८६ वर्गमोस है ।

दसित (स० त्रि०) दसमस्य जात दस तारकादिसादि तत् । १ प्रम्पुटित, प्रमुक्त । २ बन्धित, दुष्का बिवा हुआ । ३ बिदोष, रोदा हुआ, कुचला हुआ । ४ जिलट बिवा हुआ । (श्लो०) ३ हाल ।

दसिन् (स० त्रि०) दस सुकादिसात् मल्लर् दसि । १ दसकुक्ष, त्रिसमें हय वा मोटाई हो । २ त्रिसमें पत्ता हो । दसिया (हि० पु०) नक्ष पनाम जो दस कर दुष्के दुष्केमें किया गया हो ।

दसीपसिंह (दिशापमि ह)—पञ्चावकेयरी रचजित्ति हके बनिह मुक्त । १८२८ ई०में तद्वान्तान गवर्नर जनरल माईं थाबनेल्हट वाय मन्त्रालय रचजित्तिहके कासात् सोमिसे प्राय तीन मन्थेने पक्षे दसीपसिंहका अर्थ हुआ था । मन्त्रालय रचजित्तिहका मन्त्रके काह

पञ्जाब-राज्य प्रभुत्व-प्रयासो अर्थ गृह्णु, पिशाचोंके ताण्डव-
नृत्यसे विभीषिकापूर्ण हो गया। रणजितसिंह १८३८
ई०में मृत्यु-ग्रथ्या पर पहुँच चुके थे और दलीप १८४३
ई०में सिंहासन पर बैठे थे। इन पाँच वर्षके भीतर
राज्यशासनको क्षमता पाँच व्यक्तियोंके हाथ पहुँच
चुकी थी। दलीपसिंहको भारतवर्षका श्रेष्ठ स्वाधोन
भूपति समझना चाहिए। दलीपसिंहकी जोवनीसे
हम सिंहासनारोहणके समय पञ्जाबकी अत्रस्थाको पर्या-
लोचना करना चाहते हैं और उचित भी यही है।

रणजितसिंहको मृत्युके बाद उनके ज्येष्ठपुत्र खड्ग
सिंह राजसिंहासन पर बैठे; किन्तु उन्होनें अपना
अकर्णखता और क्षिप्रताके कारण राज्यका भार विप्र
ध्यानसिंहको न दे कर चेतसिंह नामके एक मूर्ख,
दाक्षिक और खुगामदीके हाथ सौंप दिया। खड्गसिंह-
के पुत्र नवनिहालसिंह अत्रमंख्य पिताके क्रमठ पुत्र थे।
उन्होंने ध्यानसिंहके साथ मिल कर चेतसिंहके कबलसे
पिताको रक्षा की और कार्यतनः वे ही पञ्जाबके राजा हो
गए। नवनिहालसिंह अपने पिता खड्गसिंहको अख्येष्टि-
क्रिया सम्पन्न करके लौट रहे थे कि रास्तेमें विश्वास-
वातकीके पड्डयन्त्रसे अथवा यों कहिये कि पञ्जाबके घट्ट-
चक्रका परिवर्तन होनेवाला था इसलिए वे मार दिये
गये। नवनिहालसिंहके मारे जाने पर उनको माता
चाँदकुमारोने राज्यका भार अपने ऊपर ले लिया। ध्यान
सिंह उनकी अधोनतामें शासन सचिव नियुक्त हुए।
किन्तु इससे ध्यानसिंहको सन्तोष न हुआ वे शेर-
सिंहके साथ पहयन्त्र रचने लगे। शेरसिंह रणजित-
सिंहके पुत्र थे, किन्तु रणजितसिंह उन्हें अपना औरस
पुत्र न समझते थे। ध्यानसिंहके भाई गुलाब-
सिंह और सुचेतसिंह इस पहयन्त्रमें शामिल थे।
ये दोनों शेरसिंहके घट्टपोषक थे और इसीलिये रामी
चाँदकुमारोको बाध्य हो कर सिंहासन त्यागना पड़ा।
किन्तु शेरसिंह राज्यभार ले कर बड़ी विपत्तिमें पड़
गये। उनके ज्वालालसिंह नामके एक प्रिय सरदार थे।
राज्यप्राप्ति-विषयमें सहायता करनेके कारण ज्वालालसिंह
शेरसिंहके और भी प्रिय बन गये और इसीलिए वे कूट-
नीतिविशारद प्रभुत्व-प्रयासो ध्यानसिंहकी कोपट्टिमें
पड़ कर मारे भी गये।

शेरसिंहने लखनासिंह नामके एक मिश्रनवालि
सरदारको बन्दो कर उनकी सम्पत्ति अपने राज्यमें मिला
ली थी। कुछ दिन बाद लखनासिंहके मुक्त होने पर
उनके भाई उत्तरसिंह और भतोवी अजितसिंह राज-
दरवारमें सम्मानित हुए। अब ये उत्तरसिंह और
अजितसिंह ही क्षमता प्राप्त हो अपना बदला चुकानेके
लिए ध्यानसिंह और शेरसिंहमें अविश्वासका बीज बोने
लगे। चेटा फलवती हुई। शेरसिंह अपने कमरेमें
बैठ कर मझोंकी क्रोड़ा देख रहे थे, कि इनमेंमें अजित-
सिंह अपनी बन्दूक दिखानेके बहाने भीतर घुस पड़े।
शेरसिंहने बन्दूक लेनेके लिये ज्यों ही हाथ बढ़ाया त्यों
ही दुनाली बन्दूककी गोली उनकी छातीमें आ लगी,
उसी समय वे जमीन पर गिर पड़े और मर गये। बादमें
लखनासिंहने शेरसिंहके अप्रामवयस्क पुत्र प्रताप-
सिंहको भी हत्या कर डाली। ध्यानसिंहने चक्रान्त-
जालमें पड़ कर प्राण गँवा दिये। ध्यानसिंहकी
हत्याके समय लखनासिंह उपस्थित न थे। उनको
इच्छा थी, कि ध्यानसिंहके सुयोग्यपुत्र होरासिंह और
सुचेतसिंहको भी राजधानीमें बुला कर एक साथ दोनों
का काम तमाम करसे; किन्तु जब वह आशा विफल
हुई तब उन्होंने दूसरी चाल चली।

ध्यानसिंह और गुलाबसिंह देखो।

होरासिंह उस समय अपने सेनावासमें थे। उनके
पास समाचार भेजा गया, कि महाराज शेरसिंहकी
मृत्यु पर विचार करनेके लिए राजा ध्यानसिंहने सुचेत-
सिंह आदिको बुलाया है। परन्तु उन लोगोंने ध्यान
सिंहके हाथका आज्ञापत्रके बिना जाना स्वीकार न
किया। इस पर खबरन ले जानेके लिए ५०० सेना उपस्थित
हुई। होरासिंहने भी दलबलके साथ उनका सामना
किया, जिससे उनको सेना भाग गई। अब तक होरा-
सिंहकी सिर्फ शेरसिंहकी हत्याका हाल ही मालूम
था, ध्यानसिंहके विषयमें वे कुछ भी न जानते। एक
घण्टे बाद यह समाचार उनके कानों तक पहुँचा।
उन्होंने सिख-सर्दारोंको बुला कर पिताकी हत्याका
हाल सुनाया और उनसे सहायता माँगी। शेरसिंहके
समयसे ही सिख सेना प्रभुत्व-प्रयासमें अचसर हुई थी।

राज्यके मासग पौर परिषदके नियममें सिद्ध समीर लोग पञ्चायत करने बहुत कुछ महायता पशु चाया करते थे। इस दुर्दमहदय चण्डालन जातिको निरमोमें पावक रख कर उनसे काम लेते, ऐसा व्यक्ति हम समय कोई भी न था। रचत्रितिसि इको पशुके बाद पञ्चविंश को कमज यदि नमनिष्ठाकमि इ सि जासल पर बैठते, तो क्षम्य वा सि पञ्चायका पहल-पञ्च एकटा प्याता पौर चण्डालको ऐसी पञ्चोगति न होने पागे। जोरामि इ समय गये थे, कि ज्ञानसा सेना जो इन समय पञ्चायको 'प्रभु' के उनका परिभक्त जिनकी तरफ है, वको राजा है। इसीलिए उन्होंने निरस धरदारोये मसाह को पौर ज्ञानसा सेनाके हाथ पारस समर्पण कर दिया।

कालघातेमाने पर तब सुबुद्धि परिचालित हो कर कार्य किया था। पञ्चमेश्वर ग्रेसि इको पशुने उपरि विशेष चति न समझे थी। किन्तु कार्यदण्ड मन्त्रो प्यान सिद्धको इत्याके यह विन्यनवासि मदीरों पर चियेय हू हू पौर जोरामि इको पञ्चायता करनेके लिए तैयार हो गई।

इसो बीचमें पञ्चमेश्वर पञ्चमर्षोब गिय दकोपको राजा बना कर खुद बजीर बन बैठे। जोरामि इने परामोयो सेनापति भेक्षुरा पौर पावेडा सेकोकी सहायतासे जाहोर बिरनेको तैयारियां कर ली। छिदनासि इ पौर पञ्चमेश्वर इ दण्डवच-पचित मारे गये। सिर्फ किसी तरह दण्डवचके साथ यतः नदी पार हो प योजो राज्यमें आ, अपने प्राय बचा गिय। कुछमें विजय होनेसे जोरामि इने कैनिर्षोको एक मासका शितन सुरक्षार लिया पौर मरिचमि शितन बड़ा देनेको शोकारता दी। जाहोर पञ्चमेश्वर करनेके बाद जोपे दिन मासग पौर मैनिच विमायके समस्त सम्पत्त व्यक्तियोंके समक्षमें उनको पशुमतिसे महापञ्च रचत्रीनसि इके एकमात्र श्रोचिन्तपुत्र दशमपत्र इका 'राज्यमार प च' विरोधित पया। इरिमि इ करने बजीर हुए।

महाराजो मिन्दन दकोपकी समक्षारिको माता थी। पञ्चमेश्वर मिन्दन जो महापञ्च रचत्रितिसि इको विवक्तता मन्त्रिको थी। महापञ्च इके "मा पुत्रा" पञ्चमेश्वर 'पतिश्री काङ्को' कहा करती थी। यह बात सब

को मज्जती है कि चरित-दोषके उनका चरित कसदित वा किन्तु वे बीर्यवती पौर मज्जितो थीं, इस बातको कोई भी पञ्चोकार नहीं कर सकता। प योज इतिहास सेरुबामि पपको सेरुबामि बनने रामो मिन्दनका चरित मिया कसदित कर दिया है।

सुचेतसि इ महाराजो मिन्दनके प्रियपात्र थी। जोरा सिद्धका यजोर जोना सुचेतसिइको सहा न पुत्रा। वे महा रामीके बड़े भाई जबाहरसि इने इस नियममें परामर्ष करती थी। महापञ्चो को समयमें शामिल हो गई। गुनव नि इ इस समय जम्बूने लाहोर पा गये। परन्तु शितन छेड कर देनेमें जोरामि इ सेनाके प्रिय बल सुके थे, इसलिये वे उनका कुछ कर न सके। एक दिन जना हरिसि इने महापञ्चको हृदयगत करने सेनाके नामने कहा कि "दिशोप यो। उनको मालाको जोरामि इ विनियोगने नियोजित कर रही है। यदि प्राय लोग इसका शोध प्रतिविधान न करेगे तो शोध हो इने महापञ्चको सि कर प योजका प्राय सेना पड़ेगा।" महापञ्च रचत्रितिसि इको पशुके बादसे प योजने जाहोर दरबारके माय पञ्चा पञ्चमेश्वर नहीं जिबा था। १०८ ई०में प योज गवर्मेपुके साथ महापञ्च रचत्रितिसि इको प्रथम मन्त्रि हुई को। १०९० ई०के जून मज्जोर्ममें प योज, रचत्रितिसि इ पौर पञ्चमेश्वरानके पयिपति ग्राहपुत्रा इन तोगके बीच एक मन्त्रि हुई जिसमें मिन्दुदेयके पमोरको शाबोतता थीबार लो गई थी। प योजोने लुआका पच ही कर मिन्दुदेय इक्षुप कर लिया। पञ्च मान पुत्र सम्राज होने पर प योजो सेनाने पञ्चायके सेना से कोडनेकी पशुमति मानो। उस समय नयनिष्ठाकमि इ बड़ाके प्रकाश थी—तो उन्होंने पशुपहृण क सिर्फ एक बारके लिए पशुमति दे दी। इससे कुछ दिन बादमाह लुआका रसाके लिए विर पञ्चमेश्वरानके रमट पौर सेना मंजनेकी पावत्रकता पड़ी—जाहोर दरबारको पूर्ण सभ्यतिसे पञ्चाय प्रदेयके सेना मंजो गई। इस समय जाहोरके पुत्र पौर छहमपञ्च रचिन्दिष्ट पोनेड माहबके पञ्चमेश्वरने सिद्ध जाति निन्दन उत्तोजित होतो आ रही थी। गवर्मेर जनरल जाहूँ पाक सेरुबामि उनके ज्ञानाकारित करके सिद्धोको मान कर दिया।

उत्तरसिंह व उस कार्यके लिए मन्मथ को योज्य पादमी है।
 इससे बाद वे खानना विनाके पाम पत्रादि में लगे लगे।
 बिद्योरासिंह व पौर विद्योरासिंह व मो इन बिद्योरासिंह सभ
 नित हुए। बिद्योरासिंह-दमनके विधि लाघोरेमें लगे समय सेना
 मेको गई। दोनों तरफसे बड़ी ओरको लड़ाई हुई। सुद
 क्षेममें बाबा जोरसिंह मिश्रनबाबे उत्तरसिंह, बागरीरा
 सिंह व पादि जोरसिंह पर सदाके लिए भी गए। उपा-
 याकार न दिख पियोरासिंह इने भाओर का कर पाबसम-
 र्पक किया। इस तरह शौगरसिंह व निष्कण्ठक से गए।
 कर्मके शत्रु कुलका दमन हो गया विद्योरासिंह प्रयमित हो
 गया, त्रिम प्रसुतकी प्रमायासे लक्ष्मी अपने पिप्य
 सुतेतमि वही मो निगिट कर जाना या, इनमें दिन बाह
 बड़ी प्रसुता लगेको सुतेमें पा गई।

पच्छिम अज्ञा जोरासिंह वही थाक्युव है। अज्ञा उद्यत-
 क्षमाक, समताप्रयासी पौर अरुहमा है। शौरसिंह व
 इस स्थितिसे हाथकी लीङ्गायुक्तिका माय है। शौरा-
 सिंह वही मन्मथद्वयके साथ साथ लडाबी मो सर्पादा
 बहुतो जाते हो। अज्ञा जितनी समताका परिचासन
 करते है, उससे योगुने इतधारिता दिखाते है। स्वाहसा
 दिग्ने लगेके विरह जोरासिंह वही लई वार साकधान
 कर दिया था किन्तु जोरासिंह इने उद्यको परबाह
 नहीं हो; अबबा यों समक्षिये कि उस विषयमें
 कुछ निराकरण करना लगेको शक्ति बाहर था। कारण
 बाहे को हो; शौरसिंह इने अब लपका लोई प्रतिविधान
 न किया तो निष्कण्ठका विरहका जोने लगे। अज्ञा
 दरवारमें बैठ कर उद्य धरदार पौर मामलराशिको
 परबसालना किया करते है। इस तरह परबसागिन हा
 इह माक्रितित-धरदार सेइनासिंह इने हरिहारको याना-
 के कहते लाओर ग्राम दिया। महाराजो मिन्दनके बड़े
 माई अबाहरसिंह व इस समय मन्मथपहरमें रह कर
 शौरसिंह वही विरह यकासी, माई पादि रचबन्ध सभ
 हाथको उन्नतित कर रहे है। लाओर दरवारमें एक
 लासिंह वही सिवा पौर लोई मो समतायासी स्थिति न
 था। यह समता भी जोरासिंह वही हो हुई न हो
 गानो मिन्दन कामसिंह व पर लोई करती थीं, लगे यक्ति
 से जानसिंह व शक्तिमान है।

अबाहरसिंह व मन्मथनहरमें धमिनायानुयायो थायं
 पमात्र कर लाओर लौट पाये। यहाँको उद्यत खानना-
 मिनने लगेको सहायता करना लोकार कर लिया।
 महाराजो मिन्दन पौर कामसिंह व मो जोरासिंह वही मर्न
 नायके लिए लोका दिव्य रहे है; लगे मो लोका दिव्य
 गया।

महाराजो मिन्दन पुत्रको महानकासनाके विधि एक
 दिन दान कर रही लो; उस समय लक्ष्मी लगे मन्मथ
 पौर कामसिंह किया। अबाहरसिंहको मनका समा पूर्ण
 हुई। लगेने सेनाके मात्र मिल कर शौरसिंह वही अज्ञा
 पच्छिमको मांगा। जोरासिंह व पच्छिम अज्ञाको लोडुनके
 निधि राखो न हुए। पराजितको सभासना लोने पर मो
 कुछ यज्ञकी न हुई। किन्तु शौरसिंह व समझ मने है
 कि यह लगेका समय पूरा हो लुका यह माग जानसिंह
 सिवा दूसरा लोई उपाय नहीं है। मन्मथके रहनेके लगे-
 को जानसिंह मो हाथ लोना पड़ेगा। शौरसिंह वपने
 दक-पक्षित लाओर लोडु कर लय दिडे। अबाहरसिंह व
 ने सेनाके मात्र लगेका पोछा किया। तारीख २१ दिन
 कर मन्मथके लोको शौरसिंह वपने दन सहित
 मारे गए। बहुत दिनेमें अबाहरसिंह वही मनकासना
 पूर्ण हुई, व लोकर लो गये।

शौरसिंह व अपने पिता जानसिंह वही तरह मर्न गुचा
 में गुचवानु न लोने पर भी लुचिमान, बिचलक पौर
 कमठ स्थिति है। नागा तरहकी महककोये रहने लो
 वहीमें इतने दिनों तक पपने समताको मन्मथित
 रज्जा या, यह साकारक समताका परिचासक नहीं है।
 लगेको मर्न कामेच्छा भी प्रबल लो। रचसिंह वही
 लुखे बाद गुचासिंह व वनरासिंहको गाडुकोमें मर कर
 लगे ने गये है। शौरसिंह इने मन्मथ लोनेके मात्र ही
 रनजितसिंह वही लोकावारके प्राद लोनेसु लाक बपने
 ब्रजम कर लिए। जानसिंह वही लगेके बाद यदि
 सिन्धुनामीक हाव राकबा मार रहना, तो बह ल
 लोवामारमें लो रहता पौर सिधु लगेके समय लगेने
 लुकीका लपकार होता। जानना सेनाकी बनिश्च
 कारिताके शौरसिंह व लोकर हुए पौर राक्यमें बिद्योरा
 पच्छिम पादि तरह तरहकी लुखकी लोने लगे। परन्तु

इस खालसा-सेनाके भयमे होरासिंहको बहुत मावधान रहना पड़ता था; अन्यथा उनको प्रभुत्व-प्रचेष्टा और अथरुद्धता दुरागाके मर्वीचमिखर पर पहुँचे बिना नहीं रहती। यह कहना अशुक्ति न होगा कि इन वंशका प्रभुत्व हो पञ्जाबराज्यके अधःपतनका अत्यन्तम कारण है।

जवाहिरसिंह इस बातको समझ गये थे। वजीर होते हो उन्होंने गुलाबसिंहसे तान लाख रुपये मांगी और मृत सुचेतसिंह एवं होरासिंहकी सम्पत्ति राज्यमें मिला ली। गुलाबसिंहने गत्यन्तर न देख खालसा सेनाकी शरण ली और उसकी बहुत रुपये दिये। परन्तु इतने पर भी उन्हें शान्ति न मिली; उन्हें लाहौर जाना पड़ा; वहाँ उन्हें ६८००००० रुपये दण्डस्वरूप देने पड़े और न्यायग्राम जागोरीके सि. १ और सब वापस कर देने पड़े। इस तरह बहुत कुछ हानि सह कर उन्हें जम्बू लोट भ्राना पड़ा।

गुलाबसिंहकी क्षमताका ह्रास हो जानेके कारण अब मुलतानका शासन करना अवश्यकर्तव्य हो गया। यहाँ मुलतानका थोड़ासा इतिहास लिखा जाता है, क्योंकि वह अग्नि मुलतानमें हो प्रज्वलित हुई थी, जिमसे बादमें पञ्जाव भस्मीभूत हुआ। मुलतान पहले सुसलमान शासनकर्त्ताओंके अधीन था। १८०२ ई०में रणजितने इस पर पहला आक्रमण किया, किन्तु विफल-मनोरथ ही उन्हें लौट जाना पड़ा। बहुत कोशिश करने के बाद रणजितसिंहने १८१८ ई०में मुलतान अधिकार किया। उस समय यहाँ 'जमजमा' नामको प्रसिद्ध और बड़े तोप व्यवहृत होती थी, जो इस समय लाहौरके अजायब-घरमें मौजूद है। मुलतान अधिकार करनेके बाद वे एक व्यक्तिको नवाब नियुक्त कर लाहौर चले आये। इस समयमें लाहौरमें प्रतिवर्ष नियमित कर आने लगा। १८२१ ई०में सेवनमल मुलतानके नवाब हुए। वे विचक्षण शासनकर्त्ता थे। १८४४ ई०के मितस्वर मासमें सेवनमल मारे गये और उनके पुत्र मूलराज मुलतानके शासकर्त्ता हुए। इन्होंने लाहौर दरवारको नियमातुसार नजराना नहीं भेजा और न उसकी आशाकी कुछ परवाह ही की। इस कारण लाहौर-दर-

वारने सेना भेजनेकी तैयारिया की। मूलराज उर गये और १८४५ ई०में १८ लाख रुपयेको नजर भेंट की।

इधर अपमान और अपय्यके कारण गुलाबसिंह जम्बूमें बैठे हुए जाल-जड़ित सिंहेकी तरह अपने आप जल कर खाक हो रहे थे। वे जवाहिरसिंहसे वदना लेनेकी इच्छासे पेशोरसिंहके साथ पहुँच्यन्त रहने लगे। काश्मीरसिंहको मृत्युके बाद लाहौर-दरवारके विद्रोहमें मल्लिम रहनेके कारण पेशोरसिंहको अन्य कोई दण्ड न दिया गया था। उन्हें केवल लाहौरमें निकल जाने और गुजरानवालामें रहनेकी अनुमति दे दी गई थी। वे वहाँ शान्तिसे रहते थे, किन्तु गुलाबसिंहके परामर्शने उनको राज्यलालसा बढा दी। फौजके भरोसे तथा बाध्यतावश वे लाहौर आये। रानी फिन्दनने उन्हें आदरके साथ रक्वा। सैनिकीकी पञ्चायतोंने भी उनका यष्ट सम्मान किया। इससे जवाहिरसिंह बड़े चिन्तित हुए और सेनाकी रूपयोंका लोभ दिया। खालसा-सेना धनके वशमें थी, धनके वशोभूत ही उसने पेशोरको लौट जानेके लिए कहा। पेशोरसिंहको बाध्य हो कर लाहौर त्याग देना पड़ा। इस समय गुलाबसिंहने जवाहिरसिंहको पेशोरसिंहकी हत्या करनेके लिए परामर्श दिया। किन्तु महमा ऐसा ही न सका। पेशोरसिंह महसा अटकदुर्ग अधिकार कर राजाकी उपाधि ग्रहण कर बैठे। लाहौरसे सेना भेजी गई, पर उसने रणजितसिंहके पुत्रके विरुद्ध युद्ध करना खोकार नहीं किया। अन्तमें दोनोंमें सन्धि हो गई। सन्धिके बाद ही पेशोरसिंह पकड़े गये और कैदमें डाल कर वे मार दिये गये। यह संवाद जब लाहौर पहुँचा, तो जवाहिरसिंह बड़े आनन्दित हुए। जवाहिरसिंहके मित्रोंने उनकी आनन्द-प्रकाश करनेके लिए निषेध किया था, किन्तु होनहार वलवान् होती है। गुलाबसिंहके चर खालसा-सेनाकी जवाहिरसिंहके विरुद्ध उत्तेजित करने लगे। सिख-पञ्चायतने जवाहिरसिंहको दरवारमें उपस्थित होनेके लिए आह्वान किया। बहुत जहापोह करनेके बाद जवाहिरसिंह दलीपके साथ एक ही हाथी पर सवार हो सेनाके सामने आये। सेनाने उनकी मार छात्रनेका निश्चय कर लिया था। महसा दक्षिणकी खानाभरित

कर दिया गया और दूसरे सुदूरतम बन्दूककी गोलियोंसे
 बचावदिए व मार दिये गये। रात्री भिन्दनके विरमव
 को सोना न रही। येना बचावदिए इको मार कर
 ही शान्त हो गई; इस बार उसने और कुछ पहितावरण
 पर अपनी समता बलहित न की। बचावदिए व मार
 तो मरे, पर बजोर बनना अब बिसोने भी खीकार न
 किया। मुग्धबलि व, तेजसि व पाटिन, आलसा
 येनाके बचनहारके तर कर लखि व पद पनीकार किया।
 पनमें खिर वृषा कि नालिन इको मरु बखि व और
 निजसि इको प्रधान येनापति नियुक्त कर मझारानो
 भिन्दन ही राज्य प्राप्त करे यो। इस तरह पन्हाव
 के शरीर रचनितसि इका समुद्र राज्य दो कापुहम और
 पबनमंजर बखियों के हाव भीया गया।

आमथा-येनाका प्रताप इस समय लच्छुङ्गलताको
 चम सोमा तक पहुंच गया था। नालिन व और
 निजसि व ममरु मने ये कि कइ तक आलसा-येनाका
 पन्तिल है तब तक ये बिसो तरह भी निरापद नहीं
 हो सकती। आलसा-येना उनको बिलाम-प्रियतामें
 सहायता नहीं पहुंचा सकता। ब्रिटिशराज्यको येनाके
 निवा और बिसोको भी समता नहीं जो इस दुईर
 पराक्रमयामो आलसा येनाको को बय करे। परन्तु इस
 बातको ये प्रगट न कर सके। कारण बचावदिए इका
 उग्र उनके सामने भा व रहा था और यह भी निश्चित
 था कि मोर-शंशरीर रचनितसि इको सुदूरको आलसा
 येना कसो भी पर्वको भी पबनता खीकार करनी न
 देगी। इतने पर भी नालिन व और निजसि इने
 अपना लक्ष्य यको निश्चित किया, कि वीके बने देके
 आलसा येनाका बिलाम करना ही होना। ये इकोका
 लीका इकने मती।

वदि आलसा येना इतनो लच्छुङ्गल न होती और
 यदि कइ अपने बलप्रकृतिके कारण अपने राजनीति
 कुदम पन्तियो का शय न करती, तो शायद पन्हाव
 राज्य इतना प्रस्टी ब्रिटिश राज्यका विचार न बनता,
 शायद अब भी इस पन्हावके नि हासन पर देखीयनि इ-
 सि व मझरको देखती। वही शीमक-येनाको लच्छुङ्गलता
 शीम राज्यके अध्यात्मका अन्तम कारण हुई यो, उकी

पकार आलसा येनाको लच्छुङ्गलता पन्हावके बिये
 हुई।

जिन सब कारणोंसे यिपुके राज्यमें पर्वको
 का प्राबल्य होने लगा था, उनका बर्चन पढ़के किया
 जा चुका है। इतनेमें और एक बड़ा वा कार्य हो
 गया है। अभीष्ट माधनमें पहलतकार्य हो सुनिश्चित व
 बिरोजपुर भाग गये थे। वहाँ मरते समय वे पन्हाव
 माल बयये जमोनमें मरु छोड़ गये थे। उनके अनुचरों
 में लख बययो को हथम करना थावा, बिन्तु ये पकड़े
 गये। काबोर दरबारका नियम था कि 'निगमनाम
 प्यक्रियो की सम्पत्ति राज्य कोयमें निम्ना लो जायगी।
 इसको निवा राज विद्रोहीको सम्पत्ति भा जप्त कर
 लो जातो यो। इस निबमके अनुसार काबोर दरबारने
 सुचितनि इको लख पर्व पर अपना अधिकार निर्धारित
 किया। परन्तु व्यापरायण ब्रिटिश सरकारके मतसे खिर
 वृषा, कि सुचितसि व राजद्रोहीके लोका, उनको सम्पत्ति
 राजकोय-मुक्त नहीं हो सकती और काबोर-दरबार
 जिन सम्पत्ति पर अपना अधिकार बतलाता है, लच्छुका
 विचार ब्रिटिश-पदात्मने प्रभावमानके होमा। यिपुके -
 ने इस तरहके मोतिबहिर्भूत प्रादियका भी अनुमोदन
 दिया था। बिचार वृषा और भारतीय रीतिनीतिके अनु
 धार सुचितसि इस पर्व पर काबोर-दरबारका पूव अधिकार
 को प्रमाचित वृषा; बिन्तु पर्व कीटावा नहीं गया।
 जतने बाद योमान्प्रदेयमें पर्वके जोय जमय' अपना
 बम बटाने मती। चौदह और जमये जमने बिरोज-
 पुरको अपने सुभोमें कर लिया; सुबियाना, सिबाव, और
 पन्हावामे भी येना बैज दी। सिन्धुदेम मो व वी-
 ल हास लग गया। १८१७ ई०में साझात प्रदेयमें
 ११०० पर्वको येना को का जमय' बटुते हुई
 १२००० हो गई; इन्के पसावा १०००० येना भिरठमें
 रक्यो गई यो। इको सब कारण-कलापि यिपुको
 ल'देह वृषा कि अपने राज्यकी रचा करना पढ़ीकीका
 लक्ष्य नहीं है-पाम-दानके राज्योंको दाम करना ही
 उनका ध्यमिय है।' इसके निवा उन समय रचनित-
 सि इके राज्यका मन्थन क्या होवा इस विषयमें भी
 प्रकाशपदये बादविवाद बन रहा था। कर विनि

यम सेक्रेटरी ने घोषणा की थी कि रणजितसिंहके पौत्र-को मृत्युके बाद पेशावर राज्य गारुसूजाको सौंपा जायगा। १८४६ ई०में मेजर ब्रडफूट सोमान्तप्रदेशमें ब्रिटिश प्रतिनिधि नियुक्त हुए। इन्हींने घोषणा की कि पतियाना आदि लाहोरके अधीनस्थ राज्योंने अंग्रेजोंका आग्रह ग्रहण किया है, इसलिए वे दलीपसिंहको मृत्युका पदच्युतके बाद ब्रिटिश अधिकारमें आ जायेंगे। इसी समय शतद्रु नदी पर नावोंका पुल बांधनेके लिए जो नावे बंध कर तैयार हुई थीं, उनमें सगंध सेना भर कर फिरोजपुरको तरफ भेज दी गईं। मुल्तानके शासनकर्त्ता सुनराजके साथ भी ब्रडफूट साहबका गुप्त-पत्रव्यवहार चल रहा था। मिथु-विजंता दर चार्ल्स नेपियरने भी कहा था, कि अंग्रेजोंको पञ्जाबमें प्रवेश करना ही पड़ेगा। इन कार्य-कलापोंको देख कर सिख-जातिने यह निश्चय कर लिया कि अंग्रेजोंसे युद्ध अवश्यभावी है। टासल्वकामा, विश्वासघातक दोनों सचिव इस अग्निमें वीका काम करने लगे। इसी समय सोमान्त प्रदेशमें तदानीन्तन गवर्नर-जनरल लार्ड हार्डिंजको शोध आतंकी खबर सुन कर सबके सब दंग रह गये। युद्धकी अनिवार्य समझ, १७ नवम्बरकी सिख जातिने अंग्रेजोंके विरुद्ध घोषणा निकाल दी। ११ दिसम्बरकी वे शतद्रु पार कर १४ दिसम्बरकी फिरोजपुरके पास पहुँच गये और वहाँ पहाव डाल दिया। इस तरह प्रथम सिख युद्ध का सत्रपात हुआ।

मुदको, फिरोजगढ़, बटु माल, अलोवाल और सोवरा-इन आदि स्थानोंमें कई एक भोपण युद्ध हुए। सिख-सेनापतियोंके पड़यन्त्रसे महावीर सिख जाति परास्त हो गईं। अंग्रेजों फौज शतद्रुके उस पार धावित हुई। गवर्नर जनरल लार्ड हार्डिंजने कसूरसे १४ फरवरी १७४६ ई०)की घोषणा की कि "जब तक सिख लोग अंग्रेजोंके साथ अपना सन्धि मङ्ग करनेका समुचित दण्ड न देंगे, तब तक पञ्जाब राज्य अंग्रेजोंके अधिकारमें रहेगा।"

सिखोंने इस बातकी कल्पना मोन की थी, कि साधुसाराहनमें जय प्राप्त करनेके बाद ही अंग्रेज लोग इतनी जलद ही शतद्रु पार हो कर लाहोरकी ओर अग्रसर

होगे। अब बड़े लाटको घोषणा सुन कर लाहोर तरवार बढी विन्तारि पड़ गया। जिसने अंग्रेजों फौज लाहोर न आ सके, ऐसा बन्दोबस्त करनेके लिए गुलाब-सिंह शोध हो कसूर भेजे गये। परन्तु लाटसाहबः गुलाबसिंहको एक भो न माने और कहा "लाहोरके सिवा हम अन्य किमो भी स्थान पर सिखोंने सन्धि न करेंगे।" गुलाबसिंह विफल-मनोरथ हो लौट आये और सोचने लगे, शायद बालक दलीपसिंहको अंग्रेज सिखिरमें पड़ुचा देनेसे अंग्रेजोंका लाहोर आना रुक सकता है। यह सोच कर वे टिन्नापको ले चले। उस समय अंग्रेजों सेना कसूरसे रवाना हो कर गलिया नदी पार कर चुकी थीं; वहाँ दलीपसिंह बड़े लाटके सामने पहुँचाये गये। महामान्य हाडिंजने दलीपसिंहके साथ बड़े आदरका बरताव किया और कहा, "जिस दरपतिने अंग्रेजोंके साथ तोस वर्ष तक अविच्छिन्नभागसे मझाव रक्वा है, उन्हींके वंशधर पञ्जाबके राजा हों, यही हमारा अभिप्राय है।"

उस समय बड़े लाटने सरदारोंके प्रति लक्ष्य रख कर कहा था कि "दलीपसिंहको राज्याभिषेक किया जायगा; परन्तु विपशा और शतद्रुके मध्यस्थ प्रदेश विजिताई राज्यमें शामिल किया जायगा और युद्धको क्षतिपूर्ति के लिए पञ्जाबराज्यसे डेढ़ करोड़ रुपये वसूल किये जायेंगे।" बहुत बाद-विवादके बाद, इच्छा न होने पर भी सिख सामन्तोंको लाटसाहबके प्रस्ताव पर सहमत होना पड़ा। परन्तु बड़े लाटने निश्चय किया कि सिखोंको राजधानीमें ही सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर होंगे। लिहाजा सिख सरदारोंको दलीपसिंहके साथ लाहोर लट आना पड़ा। २० फरवरीको अंग्रेजों फौज सिखोंको राजधानीमें उपस्थित हुई। उसी दिन गवर्नर जनरलके आदेशानुसार सर हेनरी लारेन्स, सर फ्रेडरिक बेरि और विलियम एडवर्ड्स दलीपसिंहको पुनः सिंहासन पर प्रतिष्ठित करनेके लिए आये। महासमारोहके साथ दलीपसिंह पञ्जाबके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। दूसरे दिन राज-भासादमें एक दरवार लगा, यहाँ दलीपसिंह और उनके अमात्यवर्गने गवर्नर जनरलके साथ सादर सम्भाषण कर उनके सदयाचरण

को उपेक्ष प्रथम ही । इस दरबारमें बड़े काठने सुप
 सिद्ध 'बोधिना' देखनेको पच्छा प्रकट को । गुणावधि व
 अथ सम राजको कामे धोर काठं हाडिंभुको दिव
 काया । यथाविद्य य गतिरा रात्रपुत्रयोनि उच यतुलनीय
 कोरको टेषा धोर पायवर्णित ही कर इसको बहुत
 प्रथम ही जाने लगी । तारीख ८ मार्चको सिद्ध-दरबार
 धोर य गरीबोमें पहनो सन्धि हुई, जिसमें सिद्ध हुआ
 कि सिद्ध-महाराज गतदुःखे दक्षिण प्रदेसो का अथ
 विलकुल छोड़ देसि विप्राया धोर गतदुःखे मध्यस्थ
 प्रदेसो पर य मरीको का अधिकार होमा । युद्धको प्रति-
 पूर्णिके लिए छेड़ करीक सुये देनेमें यममय होनेके
 कारण सिद्ध-दरबारने एक करीक रूपके बन्दे विच
 कान काशीर धोर हजाराके साथ विप्राया धोर सिन्धु
 नदीके मध्यस्थो कमल प्रदेस देना कीकार किया तथा
 बाकी पचास लाख रुपये नगद देने वरून किये । इसी
 समयसे सिद्ध-राज्यको १२ हजार पन्नाको धोर २०
 हजार प्यादे रखनेको यतुमति ही गई धोर कहा गया
 कि इन्द्रिय गवर्मेष्टको बिना यतुमति लिए एक स द्वा
 बर्तार नहीं का सकती । ब्रिटिश गवर्मेष्ट सिद्ध-दरबारके
 पारम्परिक राजकार्यमें हस्तक्षेप न करेगी । परन्तु यदि
 किछो विषयमें मध्यस्थताकी आवश्यकता पड़े, तो
 ब्रिटिश गवर्मेष्ट सिद्ध-राज्यके मध्यस्थके लिए यपनी
 सहाय दे कर सिद्ध दरबारको सहायता करेगी ।

कोई भी दिनोंमें सिद्ध दरबारने बाकी पचास लाख
 रुपये चुका दिये । इसी समय महाराजो सिन्धुनने
 वहतदरभाय सिद्धोको कार्यवलीके कर कर गवर्नर
 जनरलको लिख मेका कि हमें धोर हमारे पुत्र हमोय
 को निधोके हाडने न रख ब्रिटिशसीमासे पयथा कान
 कर्तक गवर्मेष्ट-हाडसमें रखना ही दानो क लिए
 मनुष्यजनक है । महाराजोके यतुरोबानुसार सिद्ध-दर
 बारके प्रधान प्रधान राज-पुत्रयोनि काठ हाडिंभुने मारो
 दरबारकी रक्षाके लिए यतुरोब तथा कि कुछ दिन
 ब्रिटिश-सेनाको यहाँ रखने दे तो पच्छा हो ।

तारीख ८ मार्चको गवर्नर जनरलके सिद्धमें एक
 पत्रा हुई, जिसमें दलीपसिंह धोर प्रधान प्रधान सिद्ध
 नरदार उपस्थित थे । बड़े काठने लखको करके करके कहा

“इन्द्रिय गवर्मेष्ट सिद्धोके राजकार्यमें हस्तक्षेप करना
 नहीं चाहतो; ब्रिटिश-सेना प्रधान कार्योंके लिए तैयार
 है । परन्तु माहोर-नरवारके यतुरोबने हमने छडे कुछ
 दिन धोर रखनेके लिए कीकारता दी है । गुदरा राज
 कार्य न शोधनक विषयमें मरी कुँका मार सिद्ध-दरबार
 पर छोड़ते हैं । हम यथाभाव सहायता करनेके लिए
 तैयार हैं, किन्तु सिद्ध सरदारगण यदि कायदवाको
 करेगे तो उनके राज्यको रक्षा करनेमें ब्रिटिश गवर्मेष्ट
 सिद्धो तरफ मो समय न होगी ।” काठं हाडिंभुका
 यदुपदेश सुन कर सभी मरदारोमें कृतप्रता भोबार हो ।

दूसरे दिन काठं हाडिंभुने राज प्राकारमें का कर
 महाराज दलीपसिंह के साक्षात् किया ।

तारीख ११को एक सन्धि हुई जिसमें निर्धारित हुआ
 कि सिद्ध राज्यके शोधन धोर सन्धररके लिए ब्रिटिश
 गवर्मेष्ट वर्तमान रूपके पन्त तक महाराज पोंग
 काहोरवासियो को रक्षाके लिए यपनी सेना मारोमें
 हो रखेगी ।

सिद्ध राज्यको रक्षा तो हुई पर गवर्नर राजा दलीप
 सिद्धके प्रतिनिधि अल्पकाल राज्यधानन करेगा यह
 कथन न हुआ । इस समय यदि गुणावधि व मन्ना
 बनये जाते तो कुछ गड़बड़ो न होते किन्तु सिद्ध
 राजमाताके छे-बर्तित कामनि व, महाराजो सिन्धुनकी
 कृपाके अधिक बन गये । वे मन्ना तो हुए, पर मय कन्ने
 हुआको इडिने देखने लगी । उनके मन्नाकी धोर सुगा
 मदी लोप निष्कट लपायोके मन्नाका लून चुपने लगी ।
 कुछ भी ही, यीत्र ही मालसिंह कहा यथयतन हुआ ।

अन्तिम इ देखा ।

दरबारक प्रधान मन्ना न, बासिक दलीपसिंह कहा
 माहात्मि पनखा तक, ब्रिटिश-गवर्मेष्टको पन्नाहका
 माननमार पक्ष करनेके लिए यतुरोब किया । काठं
 हाडिंभुन हम यतुरोबको रक्षा की । ११ दिनमरका
 धोर एक सन्धि हुई, जिसमें सिद्ध हुआ कि “गवर्नर
 जनरलके प्रतिनिधि अल्पकालकाहोमें एक य दक्ष सिन्धु
 रहेंगे । प्रत्येक राजकोय कार्यमें लखी पूर यमता
 होगी । कर एक दस लाख सिन्धुके करको कार्य
 कता बनाने काठने । जिससे पन्नाहका विषयो काता

प्रथा और आचार व्यवहारकी रक्षा हो एवं सबका न्याय-स्वत्व कायम रहे, उसके लिए ब्रिटिश-गवर्मेण्ट विशेष ध्यान दिया करेगी। रेसिडेण्टके परामर्शानुसार सदस्यगण राजकार्य चलावेंगे, महाराजकी रक्षा और राज्यमें शान्तिस्थापन करनेके लिए गवर्मेण्ट लाहौरमें इच्छानुसार सेना रख सकेगी, जिसके लिए पञ्जाबराज्य वार्षिक २२ लाख नानकशाही रुपये ब्रिटिश-गवर्मेण्टकी टिया करेगा। महाराज दलीपसिंहकी जननी और उनको परिचारिकाओंके भरणपोषणके लिए सिख-दरवार वार्षिक डेढ़ लाख रुपये दिया करेगा। जब तक दलीपसिंह नात्रालिग है, तब तक दोनों पक्षोंको इष्टी सन्धिके नियमानुसार चलना पड़ेगा।” १८४४ ई०के ४ सितम्बरको महाराज दलीपसिंहके पोद्दशवर्षमें पदार्पण करने पर इस सन्धिके नियमोंसे दोनों पक्ष सुख हो गये। इतिहासमें यह सन्धि ‘भैखाल’ नामसे प्रसिद्ध है।

इस प्रकार बालक दलीप ब्रिटिश-गवर्मेण्टके आयत हुए। लार्ड हार्डिञ्ज जब तक भारतमें थे, तब तक उन्होंने सिख राज्यके प्रति यथेष्ट उदारता दिखलाई थी। महामति सर हेनरो लारिन्सने उस समय पञ्जाबके शासन और बालक दलीपके रचना-वैक्षणका भार ग्रहण किया था। इन्हीं महानुभवके प्रयत्नसे सिख राज्यमें शान्ति हुई थी। यद्यपि ये महाराज दलीपकी यथेष्ट सहायको दृष्टिसे देखते थे, तथापि महारानी भिन्दन प्रतिनिधि-सभाके विरोधमें थी। महारानी भिन्दन कई बार रेसिडेण्टको इच्छाके विरुद्ध कार्य कर चुकी थी, किन्तु लारिन्स उनके विरोधी न हुए थे। अन्तमें लार्ड हार्डिञ्जकी रानीके आचरणका संवाद मिलने पर, उन्होंने महाराज दलीपकी मातासे पृथक् रहनेका आदेश दिया। दलीपसिंहने, मातासे पृथक् होने पर भी, अंग्रेजोंके साथ पूर्ववत् शिष्टाचार और नम्रतासे पेश आये। वास्तवमें लार्ड हार्डिञ्ज और सर हेनरो लारिन्स महाराज दलीप पर जनककी तरह स्नेह रखते थे; किन्तु दलीपके दुर्भाग्यसे ये दोनों ही महानुभव थोड़े दिन बाद भारतभूमि त्याग कर विलायत चले गये।

लार्ड हार्डिञ्जके बाद अब पर-राष्ट्रलोलुप मार्कीस,

आफ डलहौसी गवर्नर जनरल हो कर भारत पधारे। उस समय सम्पूर्ण भारतवर्षमें पूर्ण शान्ति विद्यमान थी एवं लाहौरके रेसिडेण्ट सर एफ० कैरि थे और उनके सहकारो सर हेनरी लारिन्सके भाई जन लारिन्स।

उन दिनों मुलतानके शासनकर्ता थे मूलराज। ये भी सिख दरवारके आचरणसे असन्तुष्ट हो कर विद्रोही हो गये। इस समय लाहौरके रेसिडेण्ट यदि विलम्ब न करके शीघ्र ही सेना भेज देते, तो सम्भवतः विद्रोह दब जाता; किन्तु उनके विद्रोह दमनमें विलम्ब करनेके कारण पञ्जाब राज्यके भावो अनिष्टपात की सूचना हो गई।

इसो समय महारानी भिन्दन शिखोपुर दुर्गमें निर्वासित हुई एवं छत्रसिंह नामक सिख सामान्यके एक विशिष्ट सम्भ्रान्त सरदारकी कन्याके नाथ जो दलीप का विवाह सम्बन्ध स्थिर हुआ था, वह भी रेसिडेण्ट द्वारा उपेक्षित हुआ। इसकी सिवा उक्त छत्रसिंहके साथ अंग्रेजोंने घड़ा दुर्व्यवहार किया * जिसके कारण १८४८ ई०में दूसरो बार सिख युद्ध हुआ। यद्यपि वह युद्ध ब्रिटिशगवर्मेण्टकी प्रसावधानताके कारण ही हुआ था, तथापि गवर्नर जनरल डलहौसी इस बार पञ्जाब राज्य शास करनेके लिए अग्रसर हुए। युद्धकी सूचना पाते ही प्रधान सेनापति लार्ड गफ पञ्जाब पहुँचे। दलीपसिंहका सौजन्य देख कर वे मुग्ध हो गये।

रामनगर, साहदुल्लापुर और चिलियनवालाके युद्धमें सिखसेनाका अद्भुत रणनैपुण्य और अजीय ब्रिटिशसेनाको पराजय देख कर ब्रिटिश गवर्मेण्ट और समस्त भारत विचलित हो गया था। इस संवादके इर्लख पहुँचने पर वहाँके कोर्ट-आफ फिरेक्टर लोग सिन्धुविजिता नेपियरकी प्रधान सेनापतिका पद देनेके लिए तैयार हो गये थे। कुछ भी हो, वीरवर लार्ड गफके अद्भुत रण-कौशलसे गुजरातके युद्धमें सिखसेनाने, अलौकिक वीरता दिखलाते हुए पराजय स्वीकार कर ली। इस युद्धमें लाहौर दरवारके अधिकांश सरदारोंके योग न देने पर भी और उस समय पञ्जाब-राज्य सम्पूर्णरूपसे ब्रिटिशके कर्तृत्वाधीन होने पर भी लार्ड डलहौसीने दलीप-

* इसका विवरण 'शेरसिंह गद्दमें' देखना चाहिये।

को राज्यभूतकार पञ्चावली त्रिदिव्य मासमासोन कर दिवा ।



इन्वीवर्षिह

१८४८ ई० २८ मार्चको लाहोर राज-दरबारका थोक पब्लिकेशन हुप्रा, इस दिन पश्चिमावक प चर्चोंक रक्षणाभोन रक्षत्रितसि हके पुत्र महााराज दन्वोप सि हने पेंडक मि कामन पर बैठ कर पञ्चिम पश्चिमीयन समाज दिवा । इस पब्लिकेशनमें मिश्रपरदारगक दोन होन बेधने उपस्थित हुप छ ।

पच क्या प, दन्वोपमि हके सर्वनायको तैयारिवा होमि लो । पर गङ्गोतुप प र्चल प्रतिनिधिमि महा राज रक्षत्रितसि हके एक माघ उत्तराधिकारी ज्ञोवित पुत्र बालक इन्वीवर्षि हको मन्थि पर ब्रह्माचर करनेके निप पादेय दिवा । दोबान दीननायनि मिय श्रुति पर फयाकार न करनेके निप धोर एक बार प्रार्थना को; किन्तु प र्चक राजपूवर्षिनि उनको बात पर तनिक भी ध्यान न दिया । पञ्चान बालक इन्वीवर्षिमि हने पश्चिमावक प र्चक राजके पादेयागुमार पपने सर्वनायपत्र पर ब्रह्माचर कर दिये । अन्वियत्र पर निष्कानिकित शर किन्वी वरु बी—

१। महााराज दन्वीवर्षि हने छय एक लम्बे उत्तराधिकारियोकी तरफसे पञ्चावका मय हक छोड़ दिया ।

२। लाहोर दरबारका अत्र बुकानिके निपे दरबार की पागे सम्पत्ति इष्टरथिवा बन्वणीको दी जाती है ।

३। 'कोडिनर' इम्बेल्डको राजोको दिया जायगा धोर महााराजा दन्वीवर्षि ह पपने निवे तबा पपने प्रानि पच पनुचरजक के भ्ररसपोपकके निपे क पनीके ब्यादासे ब्यादा पांच भाग्य धोर पचमसे काम बार काय बपयेकी कार्पिक हनि लिया करेगे ।

४। मिश्र-राज पञ्चम 'महााराज दन्वीवर्षि ह महा दुर्' वरु उदाधि काममें ला सकेगे । महााराज दन्वीवर्षि ह पचौं वाप कर लकेगे, अत्रकि निप सचनर जनरल पाया है ।

इस प्रकार पञ्चावकपने मिय महााराज दन्वीवर्षि ह पपने पत्रिच सम्पत्तिसे बधित विपे गये । बहोमी देखो ।

१८४८ ई० में मिय दन्वीवर्षि पश्चिमावक द्वारा सर्व स्वातन्त्र्य होने पर जन शोभिन् नामक एक प पच डाक्टर लम्बे मिश्रक धोर तत्त्वावधारक नियुक्त हुए । दन्वावर्षि प्रासादके समीप ही उनका वासस्थान निर्दिष्ट हुप्रा । पच तब दन्वीवर्षि ह बारहवें वर्षमें ही थे । इतनी कम उमरमें अन्वोपने कारमो भाया शोषणो । प चोको शोषणेका मो लम्बे पापक वा ।

शोभिन् संदय ब्रह्मचारसे दन्वीवर्षि छोड़े को दिनमें लम्बे पचपातो ही गये । लम्बे इमैशा शोभिन्के साह रचना वसन्त वा । बिना शोभिन्को साह निवे से कामी भी बाहर क्या जाने लगे निजसने से । वास्तवमें शोभिन् भी दन्वोप पर श्रु बहे करती थे । बालक दन्वीवर्षि इतनी कम उमरमें भिन्न ही अज्ञिक्ता परिचय दिया वा, लम्बे शोभिन्को यह श्लोकार करना पड़ा वा कि— 'ब र्चक बालक इस लम्बे ऐसो बुद्धिवा परिचय देनेमें पचम है । पासोद-प्रमोदमें दन्वीवर्षि काचपकोहा मिश्र धोर बिजपटाटि पङ्कन करना वसन्त वा । १८४८ ई०की ११ गिम्बरको गवर्नर जनरलने दन्वीवर्षि हको पञ्चावके पत्रिमर्क पसे अग्निसे लिप पादेय किया । इन्वीवर्षि वरु नाटके पादेयागुमार राजा धोरमि हके पच माघ पुत्र किचको उच्च नाटके वरु वरुकी बी, कुमार

शिवदेव भी दलोपके साथ स्थानान्तरित किये गये। १८५० ई०के फरवरी मासमें दलोप, शिवदेव और उनकी माता रानो देखनू के साथ फतेहगढ़ आ गये।

गङ्गाके समोप एक साधारण प्रासाद दलोपके लिए निर्दिष्ट हुआ। दलोपके शिष्यक महात्मा लोगिन्ने निकटवर्ती बंगलोंको खरोद कर, दलोपके लिए वहाँ एक उद्यान बनवा दिया। यहाँ दलोपको शिवदेवके साथ गाढ़ी मित्रता हो गई। १८५० ई०में लोगिन्ने दलोपके विवाहके लिए प्रस्ताव किया। परन्तु दलोपको सम्मति न होनेके कारण विवाह स्थगित रहा। लोगिनको शिष्यके प्रभावसे दलोप अङ्गरेजी शिक्षा और अंग्रेजी रीति नैतिकता अनुकरण करना खूब पसन्द करते थे। थोड़े दिनोंमें उन्हें ईसाई धर्म पर यत्न हो गई और उसे धारण करनेको अभिलाषा भी जग उठी।

१८५२ ई०में दलोपसिंहको हिन्दुस्तानके प्रधान प्रधान स्थानोंमें परिभ्रमण करनेकी इच्छा हुई। वे प्रच्छन्नभावसे थोड़े आदिमियोंके साथ फतेहगढ़से निकल पड़े। फिर शिवदेवकी माता उनके साथ नहीं गई थी, वे कुछ दिनोंके लिए पोहरमें रही थीं।

दलोप यद्यपि गुप्तभावसे निकले थे, तथापि उन्हें देखनेके लिए रास्तेमें बहुत लोगोंका समागम हुआ था। दिल्ली, आगरा, मीरठ, रुरथी, मिर्जपुरा आदि स्थानोंमें परिभ्रमण करते हुए हिन्दुओंके पवित्र तीर्थ हरिद्वार पहुँचे। इस समय हरिद्वारमें यात्रियोंकी बहुत भीड़ थी, नाना स्थानोंसे नाना जातीय लोग उपस्थित थे, इस लिए दलोपके प्रकाशभावसे वहाँ भेजनेमें गवर्मेण्टको शङ्का हुई। दलोप यद्यपि अति गुप्तभावसे हरिद्वार पहुँचे थे, तथापि कुछ सिखोंने उन्हें पहचान लिया और उनकी मङ्गलकामनाके लिए जयध्वनि झरने लगे। गवर्मेण्टने इस भयसे कि पीछे कुछ गडबडी फौजे, दलोपकी अंग्रेज-शिविरमें पहुँचा दिया। वर्षाके प्रारम्भमें ये मसूरी पहुँच गये। वहाँ ये प्रतिदिन प्रातः कालके समय ४।५ कोस तक उपदल भ्रमण करते थे। वसन्तकाल तक मसूरीमें ही विता कर पीछे ये वायव्य-सहित फतेहगढ़ लौट आये।

१८५३ ई०की दलीपसिंह की मर्च को, वे अपना धर्म छोड़ कर ईसाई बन गये। जर्जन नटोके जलके बदले गङ्गा-जल छिटक कर उनका धर्मान्तर-प्रवृत्त कार्य सम्पन्न किया गया। इस समय वहुतसे अंग्रेजों और इस देगके ईसाइयोंने मङ्गलकामनायें इन्हें पत्र भेजी थीं। दलोपको विलायत जानेको इच्छा पड़लेसे ही थी। लोगिन्ने यह बात लार्ड डलहौसीको लिखी। १८५४ ई०के प्रारम्भमें कोर्ट-ऑफ-डिरेक्टरकी अनुमति ले कर गवर्नर-जनरलने दलोप को विलायत जानेको आज्ञा दे दी। शिवदेव भी दलीपसिंहके साथ विलायत जानेके लिए तैयार थे। परन्तु १८५४ ई०में (ग्रीष्मऋतुमें) जब दलोप विलायत जानेके लिए कानकत्ता आये, तब शिवदेवकी माताने शिवदेवको विलायत-यात्राके विरुद्ध भावेदन-पत्र भेजा, जिससे उनका जाना रुक गया। दलोपको गवर्नर-जनरलने अपने प्रासादमें आमन्त्रण कर उनका खूब स्वागत किया था।

१८५४ ई०, १८ अग्रेलको दलीपसिंह विलायत जानेके लिए जहाज पर मवार हुए। लोगिन् और पण्डित नैमियागोरे नामक एक ब्राह्मण-जातीय ईसाई उनके साथ गये। दलोपसिंह इंग्लैण्डमें अपने जातीय पोशाक काश्मीरी कुर्ते पर जरीदार मखमलका कोट और जरीदार पतलून, शिर पर रत्न लङ्घित शिरपेच, कानोंमें पर्वाँकी वीरबली और गलेमें मोतियोंको तिलड़ी पहना करते थे। इंग्लैण्डकी महाराजोंके स्वामी प्रिन्स अलवर्ट इनके साथ सर्वदा वार्तालाप करते रहते थे और अक्सर इन्हें वकिङ्गहम प्रासादमें ले जाकर उनकी तस-बोर खिचवाते थे। एक दिन इस प्रकार चित्र तसबोर उतारते वरुत महाराजो विक्टोरियाने वीकी लोगिन्से पूछा 'महाराज क्या कोहिनूरके विषयमें कभी कुछ पूछते हैं?' इस विषयमें महाराज जो कुछ कहें सुभसे सब कहना।' अक्सर मिलने पर एक दिन वीकी लोगिन्ने दलोपसे पूछा, 'आप क्या कोहिनूर देखनेकी इच्छा रखते हैं?' दिलोपने उत्तर दिया, 'हां, मैं और एक बार उसे हाथमें लेना चाहता हूँ।'

एक दिन दलोपसिंह राजप्रासादमें चित्रकारके पास चुपचाप बैठे थे, इतनेमें महाराजो विक्टोरिया, हाथमें

अच्छी व्यवस्था हो सकती है, इस आशयमें उन्हें नो क्लारिज होटलसे १८५६ ई०के ८ दिसम्बरको कोर्ट-आफ डिरेक्टरीके सभापतिको एक पत्र दिया, जिसमें लिखा था—“दश वर्षको उमरमें मैं अपने अभिभावकके आदेशानुसार पञ्जाबराज्य अङ्गरेजीको देनेके लिए बाध्य हुआ था। उस समय अभिभावक और मन्त्रियोंके परामर्शसे सन्धिकी शर्तें अच्छी हो मालूम पड़े थीं। अब आशा करता हूँ, कि मेरे पूर्वपद और वर्त्तमान अवस्थाका विचार करके मेरे सम्मानके योग्य न्याय्य बन्दोबस्त किया जायगा।” सभापतिने इसके उत्तरमें यह लिख भेजा कि “भारतवर्षसे खबर मंगा कर उत्तर दिया जावेगा; किन्तु सन्धिके नियमानुसार जो आप अपने इच्छानुसार वामस्थानके विषयमें पराधीन थे, उससे मुक्त किए जाते हैं।” मई मास तक ठहर कर वे अपने विषयमें कोर्ट-आफ डिरेक्टरीसे पूछना ही चाहते थे, कि इतनेमें (जून मासमें) संवाद पड़चा कि ‘भारतवर्षमें भोषण सिपाहो-विद्रोह फैल गया है। इस कारण उन्हें नो पत्र लिखना स्थगित रक्खा।

इस समय विण्डहमर और असबरनूर्क राजप्रासादमें प्रायः दलोपका निमन्त्रण हुआ करता था। श्वराज और राजकुमार अलफ्रेड असबरटनमें आ कर दो तीन बार क्रौन्ट खेनते थे और उनका फोटो लिया करते थे।

१८५६ ई०के अन्तमें विलायतके कुछ धूर्तोंने दलोपके नामसे रानो भिन्दनको पत्र लिखा। उस समय दलोपको माता नेपालमें थीं। भिन्दन देखे। संयोग-वश वह पत्र जङ्गबहादुरके पास पहुँच गया। उन्हें नो उसे नेपालके ब्रिटिश रेसिडेण्टके पास भेज दिया। बादमें वही पत्र गवर्नर जनरलके पास होता हुआ विलायतमें डिरेक्टरीके पास पहुँचा। दलोपकी तरफसे सर जन् लोगिनने गवर्नेण्टकी कड़ा, “ये पत्र दलोपके नहीं है। जाल मालूम पड़ते हैं।”

इसी समयसे दलोपकी माताके विषयमें कुछ चिन्ता हुई। नेमियागोरे भारत लौट रहे थे। दलोपने उनसे माताके पास जानेके लिए श्वुरोध किया। किन्तु नेमियागेरे स्वयं न जा कर एक उदासीकी मारफत रानो भिन्दनके पास पत्र लिख भेजा। इस संवादसे रानो बहुत दुःखित

हुई। सर जन् लोगिनने दलोपकी तरफसे नेमियागोरे पत्र दिया जिसमें लिखा था—“एक अपरिचित व्यक्तिको महारानीके पान भोजना, यह महाराजकी इच्छा नहीं थी। आप स्वयं जा कर महारानीमें मिलें और उन्हें समझा कर कहें, कि किम तरह रहना आप पसन्द करती हैं, महाराज किस तरह आपके काममें आ सकते हैं? इस समय नेपालमें रहना ही उनके लिए मङ्गलकर है। भविष्यमें जिससे वे आत्मोप-स्वजन और परिवारवर्गसे परिहृत हो कर सुखसे रह सकें, महाराज भारतमें जा कर उमका प्रयत्न करेंगे।”

सिपाहो विद्रोहके समय महाराज दलीपसिंह का फतेहगढ़वाला मकान भी लूट गया, जिसमें उनके भारत लौटनेके लिए कुछ धन था। इस समाचारमें दलोप बड़े दुःखित हुए थे। अंग्रेजोंकी देखरेखमें रहने पर भी अंग्रेज गवर्नेण्टने उसको क्षतिपूर्ति नहीं की थी।

१८५७ ई तारीख २८ दिसम्बरको, दलोप लोगिन्को शिखाधोनतासे मुक्त हुए। जिस उमरमें हिन्दू-राजकुमार बालिग होते हैं, उससे तोन वर्ष ज्यादा होने पर भी अथवा यूरोपीय राजपुत्र जिस अवस्थामें बालिग समझे जाते हैं उससे एक वर्ष अधिक होने पर भी कोर्ट-आफ डिरेक्टरीने दलोपको सूचना दी कि “महाराज अब भी नाबालिग हैं, इसलिए विषय सम्पत्तिके कार्य-सम्पादनमें अक्षम हैं।” दलोपसिंहको उनसे इस प्रकारके उत्तरसे कुछ आश्चर्य हुआ था। कुछ भी ही, इस समय भारत-गवर्नेण्टने लोगिन्का वित्त बन्द कर देने और दलोपको वृत्तिमेंसे लोगिन्को ४१११/४ देनेके लिए, कम्पनीके सेक्रेटरीको लिखा। परन्तु कोर्ट-आफ डिरेक्टरीने इस प्रस्तावका समर्थन नहीं किया।

दलोपसिंहको अब फिर देश-भ्रमणको इच्छा हुई। वे विक्टोरिया और उनके साम्राज्यके निमन्त्रणको रक्षा कर इंग्लैण्डसे चल दिये। रोम, कनस्तान्तिनोपल आदि स्थान देख कर दलोपको अत्यन्त दुःख हुआ। रोममें कुर्ग-राजकुमारोंके साथ हूनको मुनाकात हुई। वोवो लोगिन्ने सोचा था, कुर्ग-राजकुमारो ही दलोपका मन चुरावेगो; किन्तु दलोपने एक दिन बात बातोंमें वोवो लोगिन्से कहा—“सिर्फ अंग्रेज-रमणों ही मेरो पल्लो बननेके

योग्य है। इस विषयमें मुझे कई एक कार्त्त-काम्याधीको पात्रियवचको दिनामा मिलो है।” घोषणात्ममें दलीप फिर ईम्बैरु पदु व मये।

कुमार शिवदेवने अपने चचाको एक पत्र लिखा कि “मैरी माताकी इतिहास ही इस समय बड़ो तन्मोयने मैरो सुन्नर होतो है।” दलीपने शिवदेवकी इतिहास बढ़ा देनेके लिए भरतवर्मण्ये पात्रियव चिया। बहुत बादानुवादको बाद शिवदेवको लिए सिर्फ ८०००, ६० बी इति निर्वापित हुई।

१८१८ ई० तारीख २० मसको दलीपलि दने सुना कि ‘प रीको ज्ञानू लको पनुमार बाबिम होने पर लुके मयमें २१०००, पोण्ड (बरोब टाई लाख रुपये) की इति मिलना करेयो।’ इसको बाद सुना कि उनमेंसे १६०००, पोण्ड उनको बीबिताकामें मिलिनी, पत्रशिष्ट १००००, पोण्डमेंसे उनको कोको लिए कामने कम बाबिब १००००, पोण्ड रस कर बाकी १२०००० को कामलू लको पनुमार से अपने उत्तराधिकारियोंमें बटि जा मनेगी। जिनु मदि कोरि उत्तराधिकारो न हो तो जिन रुपयेको प्यात्रसे उनको बाबिब दमदकार पीण्ड हिये जायमे है सब रुपये गवर्मण्यके होगे।’ परन्तु सिपाकी बिद्वेषको समय उनको को सम्पत्ति नष्ट हुई अ, ६८००० रुपयिपूत्रि स्वरूप बन्के कुछ मो न मिला।

दलीपने १ नवम्बरको नोमिन्के लिए एक पत्र लिखा कि ‘गवर्मण्यने पमा तक मैरे लिए कुछ बन्दो वस्तु नहीं किया है मैं पत्रिर हो गया हू। मुझे डर है कि कबो मैं कर्त्तदार न हो जाऊ, गवर्मण्यको इस विषयको जल्द ताकोद करनो चाहिये।’

कोरे धीरे धनके समावसे दलीप व्याकुल हो उठे। बहुत निष्ठापुको कारमेंसे बाद मवर्मण्यने दलीपके सब डक पुकानिब लिए उनसे १८१० ई०की २०वीं जनवरीको एक आश्चित पत्र लिखा जा सिवा, जिनमें लिखा था— ‘मैं कोबह्यामें बाबिब २१०००० पोण्ड धीरे इसके पन्नावा नबद २०००० पोण्ड चाहता हू’। उत्तराधिकारीके पमावमें यह इन भारतके आचार्य हितवायमें व्यय करमेंका मुझे पत्रिकार बोमा। इसीसे मैरे सब डक कुछ बाबिब है।’

भारत-मसामि दलीपके कुछ आश्चित पत्रको वा कर (२१ मार्चको) दलीपको सिखा कि “१८१८ ई०को मन्दिबे पनुमार इतिहास को पत्र मन्तारात्रको मिल सकता था, पर उपमें उनका पत्रिकार न रहा।”

बाबुवर्मण्यने इतिहास इस समय बरोब २० लाख रुपये बने थे। १ पत्रिकको दलीपने उत्तर दिया कि “मर बाबैम उरुसे सुलाकात करवे समय पत्र पर मीने को पन्नावा लिखे थे, उसके लिए मैं बहुत दुःखित हूँ। तसि मोगीको सम्भू होमिसे पत्र तज बितने रुपये उरुसे हुए हैं, इस बातको बिना जाने मैं पपना बन्ब छोड़ नहीं सकता।” बरोब डेढ़ वर्ष हो गये दलीपको पपने शिप पत्रका कुछ मो उत्तर नहीं मिला।

१८६० ई०के दिसम्बर मासमें दलीपने माताके मानस्थानका बन्दोबस्त पोरे व्याप गिदार करनेको पन्नामे भारत वाजा को।

गवर्नर जनरलने दलीपके भारत पानमें कुछ मो पापलि नहीं को; किन्तु बन्के पन्नाबराज्यमें प्रवेश करनेके लिए निषेध कर दिया।

१८६१ ई०के जनवरी महीनेमें दलीप भारत वा मये। पानि समय से पपने जमींदारो पादिसे विषयमें कोठे पाण्ड-डिरेक्टरोंसे निजापुकी करन का मार कोगिन्तु पर छोड़ पाये। परन्तु कोठे पाण्ड डिरेक्टरोंने कोगिन्तुके समता पत्रको पपाह किया।

दलीपके बन्बकी धा कर प्येसस कोटलमें उरु है। यहाँ कुमार शिवदेवके बाप उनको भेंट हुई। दलीप गवर्मण्यके निवेदन कर माताको पुत्रा भारत ने पाये। बहुत दिन बाद एबजितसि डकी पकी मन्ताराको मिन्दलने अपने सुतका सुब दिख कर कहा था “मैं पत्र अपने सुतसे पनय न रहा गो।”

दलीपको भारतवर्षमें रहना पन्ना न लया। परन्तु मासमें इरीने कोगिन्तुको एक पत्र दिया, जिनमें लिखा था— ‘भारत बहुत ही लक्ष्म्य ज्ञान है। यहाँ मैं पाया हू, इबलिए मुझे पनुताप हो रहा है। मोमकी मिला मैटी मुझे कराने मो दम नहीं लने देती। कुछ पनुचार कोब पुतानी बातो को डेढ़ कर मुझे इरान किया कारसे है। भारतवासी बडे, निष्ठावादी, प्रबलध धीरे मैरे

दृष्टांके पाते हैं। इंग्लैण्ड आनेके लिए मैं अपना सर्वस्व टे सकता हूँ।”

इसो समय एक दिन कुछ सिख-सेना चीनसे कलकत्ता आई। रणजितसिंहके पुत्रका आगमन-संवाद मालूम होते ही उसने आनन्दमें उत्फुल्ल हो होटल चेर लिया और उच्चैःस्वरसे दलीपको अभिवादन किया। सिख सेनाकी राजभक्ति देख कर अंग्रेजोंको विचलित होना पड़ा था। गवर्नर-जनरलने दलीपका पश्चिम-प्रान्तमें जाना बन्द कर दिया और शीघ्र ही उन्हे विन्नायत जानिके लिए कहा गया। इस वार दलीपकी मा भी विन्नायत गईं।

जुलाई मासमें सब विन्नायत पहंच गये और सैन्ट्रल-गिटके पास एक बड़े प्रासादमें ठहराये गये।

जुलाई मासमें दलीपकी सर चार्ल्स उडके एक पत्रसे मालूम हुआ कि ‘१८५८ ई० तारीख ४ सितम्बर तक किसी किसी वृत्ति भीषीकी मृत्यु हो जानेसे कुल ७६४२६३ रुपयकी वचत हुई थी।’ परन्तु इस हिसाबमें भूल होनेके कारण दलीपने एक पूरा और असली हिसाब भेजनेके लिए लिखा। महीनों बीत गये, पर कुछ उत्तर न आया।

माताके प्रभावसे दिलीपसिंहका धर्म-भाव घटने लगा। अब प्रत्येक रविवारको गिरजा जाना भी उन्हे अच्छा न लगा। उच्चपदस्थ राजपुरुषोंने माताके पास रह कर दलीपसिंह विगड़ जायेंगे, इस आशङ्कासे माता के लिए प्रयत्न-सकानका बन्दोबस्त कर दिया।

दलीपसिंह समझ गये कि अङ्गरेज लोग सचजमें उनकी सुख्यवस्था करनेके लिए तैयार नहीं, और तो क्या उनकी माताको भी विना टोपके उनसे प्रयत्न कर दिया। इन सब कारणोंसे अब वे स्थिर न रह सके। माताको भारत भेजनेके लिए अधीर हो उठे। अपने भावी जीवनके निरानन्दमय दृश्यको देख कर दलीप सन्तुष्ट हुए और उन समय कुछ शान्तिकी आशासे उन्होंने इंग्लैण्डकी मां जना रमणी-नमाजमें अपना चरित्र कल्पित कर लिया।

१८६१ ई०में दलीपसिंह “एर-अव-इण्डिया” की उपाधिसे विभूषित हुए।

१८६३ ई०में महारानी क्रिस्टनको लण्डन नगरमें मृत्यु हुई। माताका गोक पूरा भोग हुआ था कि दो भाग बाद संधीमें जनकोपम उनकी गिधागुरु सोगिन्का देहान्त हो गया। इस उच्चपदस्थ व्यक्तिकी मृत्युसे दलीपकी यड़ा कष्ट हुआ था। बाबी लोगिन्की मास्वभा देनेके लिये कुछ दिन ठहर कर १८६४ ई०में दलीप माताकी मृतदेह ले कर बम्बईमें उपस्थित हुए। यहाँ उन्होंने जननीका शयदाह किया और नमंदाके पवित्र जलमें उनकी भस्म डाल कर ये फिर इंग्लैण्डकी तरफ चले दिये।

रास्तेमें दलीप इजिप्टकी राजधानी अलेक्जान्द्रिया नगरमें उतरे। यहाँ बोम्बामूनर नामकी एक सरल मार्किन-ब्राह्मिसे उनका विवाह हो गया। सरला पोह्यो और महाराजदलीपकी महिषी हो कर भी पूर्ववत् धोर धोर शान्त थीं। वे इंग्लैण्डको उच्च रमणी-नमाजमें मिनना भी पसन्द न करती थीं उन्हे निश्चयमें पति-सहायमें समय विताना बहुत पसन्द था। ये अरबोंके विधा और कोई भी भाषा न जानती थीं। इसलिए पहले पहल दलीपसिंहको श्लोकें साथ बातचीत करनेमें वही पर्यायी ठहाने पड़ी थीं। पाँके उन्होंने श्लोकों अङ्गरेजो सिखानेके लिए एक बोबो नियुक्त कर दा थो। महारानी विक्टोरियाने दलीपकी मन्थीक बुलाया था और उनका महिषीके शान्तस्वभाव और सद्गुणसे उन्हे बड़ा आनन्द हुआ था।

अब महाराज दलीपको अपने परिवारको विन्ता हुई। १८६२ से १८८२ ई० तक गवर्नरसिंहने दलीपके लिए कुछ भी बन्दोबस्त नहीं किया। आखिर दलीपने उपायान्तर न देख सर जन् लोरेन्स पर इस विषयको मोर्सासा करनेका भार देनेके लिए प्रयत्न किया। सर जन् लोरेन्स १८४८ ई०को सन्धिका असली हान्ज जागते थे, क्योंकि उन्हेके प्रयत्नसे यह सन्धि हुई थी। सर चार्ल्स उडने दलीपके प्रस्ताव पर सहमत हो कर सर फ्रेडरिक कैरिको लोरेन्सको सहायता पहुंचानेको कहा। रणजित सिंहको पञ्जाबके राजा होनेसे पहले कुछ पैत्रिक जमींदारो थो। महारानी क्रिस्टन अब दलीपकी अभिभाविका थीं, तब वे जमींदारियोंसे कर वसूल करती

या' । यह औरत एक अनोदरियोंका विषय समझनेके लिए दलीपके पक्षमें निरुक्त हुए । परन्तु कुछ ही दिनों बाद दलीपके बाद औरतस्य पौर क्षितिं ओ निर्वासित किया भारतसमाजी बह श्रीकार नहीं हुआ ।

सन्धि के बर्तौकी कुछ ही मीमांसा न हुई पौर तो क्या, दलीपकी पूर्व वैश्व सम्पत्ति पौर विप्राधीविद्रोह में नष्टो जानेवाले प्रतिगड़के आबर सम्पत्तिके विषयमें भी कुछ बन्दोसका न हुआ । बहुत विद्या-युक्तोंके नष्ट प्रतिगड़की प्राय दो लाख रुपयेको सम्पत्तिके अत्रांतिक बट्टे १०००० रुपये मिले ।

इस समय दलीपसिंहने सुना था कि दलीपकी मृत्युके बाद उनकी एक मित्र जयदीनारो भी पैस हो आयेगे । यह ही इस विचारमें पड़ गये कि उनकी मृत्युके बाद उनकी पुत्रादिली क्या जानत होगी । उन्होंने बह भी सुना कि उनकी मृत्युके बाद उन्हें राजकुमारके मर-पोषणके लिए मन्त्रीय सिर्फ १००० पोख दिया करेगी । ओ दलीपसिंह जब पुत्रके लिए निश्चायत बनती है ।

दलीपसिंहने जब कुछ ही मर्याद न देना, तब उन्हें स्व-वाचिद्वैके सुविचार पानेकी धारणा उन्होंने १८८२ ई० तारीख ११ अगस्तके "टाइम्स" पत्रिकामें एक निम्नलिखित प्रकट की, जो इस प्रकार है,—

"मैं रवाक-सन्धिके अनुसार च नैत्र गवर्ने अपने भिरे राजक पौर राज्यपालनका भार प्रकट किया था । घ य ईकीके सुकृतानके विद्रोह दमनमें निम्न्य करनिके कारण ओ मारे पञ्जाबमें विद्रोहात्म्य प्रकटित हुई थी । विद्रोह दमनके बाद नार्ड कलडीरीने घोषणा कर दी थी कि का काम विद्रोहमें शामिल नहीं है, उन्हें किसी भी तरहकी सजा नहीं दी जायेगी । इस प्रकारकी घोषणा निश्चयन पर भी शान्ति स्थापन कर चुकिते बाद ही एक घण्टाव मियेको सुईमें पा कर अपने भीमको न सहाय सके मरवाक-सन्धिके अनुसार कार्य न कर नुकीं पञ्जाब कल्प कर किना पौर भारो सम्पत्ति पैस दो । पैस कर २१ ००० पोख डठे, यह धन त्रिदिय-पालित सेनाको बाँट दिया गया । मैं निर्दोष हूँ, भिरी कनिडाहूँ, मैं भी जभी गवर्ने अपने निराह नहीं कठे। किन्तु दोबियों

साथ मुझे भी सजा भोगनी पड़ेगी । मैं पचास रुपये अपने वैश्विक राज्यके बहित किया गया हूँ ; नार्ड उलडीमाइ मतवे १८७० ई०में भिरे राज्यकी घामद ५ लाख रुपयेको थी, यह सम्भवतः घामद पौर भी बड़ गई होगी । मैं नाबालिक पचस्यसि घमिमाबकके पादेयातु मार राज्यव्युत्तिके सम्पत्त पर हम्नाधार करनिके लिए वाप्य किया गया था । मैं उस सम्पत्तिको कानूनक विद्याय समझना हूँ । इसलिये अब मैं भी पञ्जाबका परिपति हूँ । कुछ ही ही, अब इस बातके त्रिद्वै पुत्र लाभ नहीं । यह मैं अपने दयालु इन्वैकडे खोकी पका बन कर रहना चाहता हूँ । १८७८ ई०की सन्धिके अनुसार मरी घू सम्पत्ति कत्र नहीं हुई है । उस सम्पत्तिका राजक इस समय ११००० पोख है, किन्तु दवामय त्रिदिय गवर्नेय मुक्ति याकजीवन २५०० पोख इति दे कर ही समुह हो गई । इससे पलाका भिरी मृत्युके बाद भिरी क्या दारी पैस दी जायेगी इस हृदयविदारक बात पर मन्त्रिक में मुझे पौर मी २००० पोख इति देना श्रीकार दिया है । घतरां साय दोष रहा है कि भिरे पौके भिरे प्रमादि का माण-सम्भवत मर नह जां जायना । मैं ईच्छरके प्रार्थना करता हूँ कि हम सभा सुद्धान् अयुक्तं यदि एक भी म्याअपरायण मन्त्रि विद्यमान जां, तो ही मरी पौरने य मोत्र-वार्तासंय्पमें मरी पयका समझ न करे । पन्था मीव सुविचार पौर कहां हो सकता है ?

दलीपकी इस विनोत प्रार्थना पर जिज्ञोने का ज्ञान न दिया । एक दिन १८८१ ई०के सुलाई मासमें उन्होंने बीबा भोगिनके कथा, "मिने इन्वैकडे पौर कलकी शठनासे अब लम्बय तोड़ दिया ; बाबां भोगिन् निर्दलीपको घमलाका च बाद सर जेनरो पनुसन्कीकी सारकत प्रहारानो विन्धोरीकाको दिया । महाराजोने भारत-सर्विपको हनोपके लम्बयमें विन्धेचना करनिके लिए पसुरोष किया । परन्तु जेरोव एक वर्ष बीत गया, भारत-समनि कुछ मो प्रतिविधान न किया । १८८४ ई०के तापेको २१ सुलाईको दलीपने बीबी भोगिन को कहर दो कि मैं मीत्र हो भारत बाक ना ; क्य-सेना करीजन था चुकी है, भारत विपत्तिमें है । इस

मई उस वकिए खाट-कूप ने सोमल प्रदेयक कर्मचारो
 पोर सुनिमको तार दिया तथा दकोपको खानेके लिए
 एक दूतको भेज दिया ।

१८०० ई०के पन्नेस मानमें दकोपने रूपधरवने
 प्रवेश किया । मन्त्रोपकरणे उपस्थित होने पर खाट-
 कूपने पादरुके भाव उनको धम्मबंनो की ।

दकोपने मझो रहते समय इन्धेपुत्रके प्रति यष्टि
 उभवा पोर बिदेपमान प्रकट किया था । वे मबदा यकी
 कहा करके थे कि 'दुसियाको पचीमता लोकार करना
 हमारा प्रथम कर्तव्य है । मैं मझ एशियाके विषयमें
 रुचिके लिए पाओलरगं करनेके लिए तैयार हूँ ।'

दकोपने सुझसे पङ्क्रेको का निम्दा सुन कर रुचके
 लोग का वस्तु कहते थे । ११वीं वृत्तको मझोके
 मन्त्रर जनमानमें प्रभावकूपके दकोपको धम्मबंनो
 की थी ।

इसके एक महीने बाद दकोपने सुन, कि उनको
 मियतमा मझोने लफोको विरह के दमले इन्धेपुत्रके
 प्राथम्य दिए हैं । रामोको धम्म के दकोप पोर भी
 व्याकुल हो उठे । उनका मझिन्ध विकृतप्राय हो गया ।
 लफोने भारतवर्षके [प्रधान प्रधान स बाइपको में इस
 प्रकारको सोचका निरस्तता दो—'दकोपने रोके कर्मिके
 कारण मेरो पङ्क्रेक मझि दारुण दुखामें परिगत हो
 गई है । पङ्क्रेको ने, प्रन्धाय कूपके निरा राज्य इरु
 दिया है । इसीलिए मैंने कसके प्राचाभोज रह कर
 कार्य करना प्रारम्भ कर दिया है ।'—इसके बाद १८०८
 ई०के प्रथम मानमें लफोने भारतवासियो को सम्बोधन
 करके फिर एक सोचका निरस्तता—'मैं भारतवर्ष के
 पचास करोड़ लोगोंके, कसकेके मानिक एक पैसा पोर
 पचासके प्रत्येक व्यक्तिके एक पाना मासिक दिनेके
 लिए प्राथना करता हूँ । मैं दुसियाको सहायताके
 सुरोपोय केना से कर दीव हो भारतमें पदार्थ करने-
 को प्रतिज्ञा करता हूँ ।

कुछ मो हो, दकोपकी पदार्थिताके कारण कसके
 मझादके कसके भाषात् न किया । दकोप भी पायानु
 का महासुनि न पानेके कारण १८०० ई०में प्राधको
 राजधानी पिरि, खोड पाए । वहाँ प्रोपबिहासमें

उनका वरिष्ठ पोर भी कसुपित हो गया, कसके घोष
 भी एक भौवध रोम हो गया । रोगका सबाद वा कर
 उनके पुत्र मिकटर दकोप कसके देवनेके लिए पाए ।
 १८०० ई०में इसी प्रकारमें दकोपने भारत-सचिव साईं
 क गोको एक पत्र दिया उसमें लिखा कि 'मैं भारतीयो
 महारानी विक्टोरियाके क्षमा मांग रहा हूँ । यदि मे
 क्षमा कर दे, तो मैं अरिचनेके कसके इच्छाभोज रहना
 कोकार करता हूँ ।' तारोके १ मयको माड क्यूकोने
 दकोपको निजा कि 'महारानी आपकी क्षमा करती हैं ।'
 इसी दिशीप कुकु निरिस्त हुए । दकोप सभुत ल्वाटा
 होमार के, इसलिये कसके पुत्रने महारानीको धम्मबाद
 विज मित्रा ।

१८०३ ई० तारोके २३ पञ्चोवरको पिरिसनगरके
 एक छोटेकमें न न्यानरोयके दकोपके इकी क्यू कर
 हो । तारोके २८ पञ्च करके उनका क्षतवरीर एकमिजनक
 प्राभादमें जाया गया पोर वहाँ पन्धेदिशिवा मन्ध
 की मई ।

दकोकथ (स० पु०) विसिगय नैपोल प्राबिबिधिव ।
 न्कोक (स० लो०) १ सुनि, तर्क । २ बडब, बाट
 निनाद । ३ प्रयोक्त्रोय कागत्र पत्र ।

दकोमि (स० पु०) दकोमको यत्र समातात् इत्
 मप्रम्या पसुक् । यमपकी इय ।

दनेपत्र (हि० पु०) १ कूडा कोड़ा, बड कोड़ा की
 प्रवाल न रह गया हो । २ बड पादको जिसको उमर
 ठक गई हो ।

दनेक (हि० लो०) द्विज, कथापद ।

दने (हि० जि०) कायोवार्ताको एक कोको । इसमें काको
 सुड कोमता पोर खाने लगता है ।

दकोइव (स० जि०) दकापुडवति कदू सू पत्र । दन्वला
 मनुमिद, एक प्रकारका मरुद जो पकोके उत्पन्न होती
 है ।

दम्भ (स० पु०) दम्भति विगीव प्रवकनेन इल-म ।
 (इ इच्छा म । इन् ३।१२) १ पतारपद, कोषा । २
 पाप, गुनाह । ३ चक्र, चक्रा पहिया । ४ सुनिनेद एत्र
 सुनिजा म्भ ।

दम्भ—राज्य देको ।

दक्मि (स० पु०) दलति विदारयति असुरगानिति दन्-मि
 (दन्मिः । उण् ४ । ४०) १ इन्द्रः । दल्यतेऽनेन । २ वज्र ।
 दक्मिमत् (स० ति०) दक्मि विद्यतेऽस्य दक्मि-मत्पु ।
 षष्पयुक्त, जिसमें वज्र हो ।
 दल्य । स० वि०) दलस्य असुरदेशादि दलवकादित्वात्
 य । दलके असुर देशादि, दलका मन्त्रिकट स्थान ।
 दल्लाल (हि० पु०) दलल देवो ।
 दल्लाला (अ० स्त्री०) यत्नो, कृतनी ।
 दल्लाली (हि० स्त्री०) दलली देखो ।
 दल्लरो (हि० स्त्री०) दल्लरो देवो ।
 दव (स० पु०) दुनोति पोषयति दु-भच् । १ वन, जङ्गल ।
 २ वनाग्नि, यह भाग जो वनमें प्रापसे प्राप लग जाती
 है । ३ अग्नि, भाग । ४ उष्णता, गरमो । ५ लपताप,
 दुःख, तकलीफ ।
 दवद्यु (स० पु०) दु-भावे अद्युच् । १ परिताप, दुःख ।
 २ दाह, जलन ।
 दवदग्धक (स० स्त्री०) दवेन दग्धं सत् कायति प्रकाशते
 कौ-क । रोहिष लण, रोहिम नामकौ घास ।
 दवदहन (स० पु०) दावाग्नि, दवारि, दावा ।
 दवन (हि० पु०) १ नाग । २ दोना नामका पौधा ।
 दवनपापडा (हि० पु०) पितपापडा ।
 दवना (हि० स्त्री०) दग्ध करना, जलाना ।
 दवनी (हि० स्त्री०) दल्लरो, मिसाई, मंडाई ।
 दवा (फा० स्त्री०) १ रोग या व्यथा दूर करनेवाली वस्तु,
 औषध । २ चिकित्सा, उपचार ३ दूर करनेकी युक्ति ।
 ४ अवरोधका उपाय, दुरुस्त करनेको तदक्षोर ।
 दवाईखाना (हि० पु०) दवाखाना देखो ।
 दवाखाना (फा० पु०) औषधालय ।
 दवाग्नि (स० पु०) दवानां वनाना अग्निः, वा दव एव
 अग्निः । दावानल, वनमें लगनेवाली भाग ।
 दवात (अ० स्त्री०) मसिपात्र, मसिदानो ।
 दवानल (स० पु०) दवस्य अनलः । वनाग्नि ।
 दवामो (अ० वि०) स्थायी, जो सदा बना रहै ।
 दवामो बंदोवस्त (फा० पु०) जमोनका एक बंदोवस्त ।
 इसमें सरकारी मालगुजारी सदाके लिये नियत कर दी
 जाती है ।

दवारि (हि० स्त्री०) वनाग्नि, दावानल ।
 दविष्ट (म० वि०) अयमेवामतिगयेन दूरः दूर-इदन्-
 दूर गच्छ स्थाने दवाटेगः । सुदूर, बहुत दूरवर्ती ।
 दवोयम् (म० वि०) इदमनयोरतिगयेन दूरं दूर-इयसन्
 म्यूर दूरेत्यादिना साधुः । सुदूर, अत्यन्त दूरवर्ती ।
 दश (म० वि०) दशवति दीप्यते दन्मि वाद्युन्धात्
 कनिन् न लोप (दन्मि दग्ने नलोपः । उण् १ । २५६
 उज्ज्वलदश) । सख्याविशेष, पंचमा दृशा, जो गि-त-
 में नामे एक अधिक हो, दश ।
 'दिगोदलोकाः पुरुषस्य लोके सख्यवाद्दशरूपं कानि ।
 दशैव माधान् विभति गर्भवत्पो दशैरथा दशदाशा दशोदाः ॥'
 (भाग्य १।१३४।१०)
 दशयाचक शब्द ये हैं—हस्ताङ्गलि, अश्वबाहु,
 राधणमस्तक, क्लृपताके तार, दिक्, विश्वदेव, मयस्या,
 चन्द्राग्र भोर पंक्ति । (कथिक्तरत्ना) दशन् शब्द नित्य
 बहुवचनान्त है ।
 द्रव्यकी दश प्रकारकी गुण-क्रिया है । १ शैत्य—
 इससे द्वादन, स्तम्भन, मूर्च्छा, लम्बा और दाहकी
 निवृत्ति-होती है । २ उष्ण—यह शैत्यका उलटा है,
 किन्तु पाचक है । ३ सिन्ध—स्नेह और मार्दवकर, बनकर
 और वर्षणकर है । ४ रुच—सिन्धका विपरीत, विगि-
 पतः स्तम्भनकर और खर है । ५ पिच्छिल—नोव-
 नोय, बलकर, सम्भानकर, श्लेष्मल और गुरु है । ६
 विशद-पिच्छिलका विपरीत, क्लेशोपक और रोपणकर है ।
 ७ तोषण-दाहपाक और भासावकर है । ८ मृदु—तीक्ष्ण-
 का विपरीत है । ९ गुरु—अवलम्बता, उपलेप, बलदम्भि
 और पुष्टिजनक है । १० लघु-गुरुका विपरीत, लेपनकर
 और रोपणकर है । द्रव्यके दश प्रकारके गुण १ द्रव—
 क्लेशकर है । २ सान्द्रस्थूल—बन्धनकर है । ३ स्रक्ण—
 पिच्छिनवत् है । ४ कर्कश-विशदवत्, सुखानुबन्धो और
 सूक्ष्म है । ५ सुगन्ध—रुचिकर और मृदु है । ६ दुर्गन्ध—
 सुगन्धका विपरीत, हृत्सायक, अरुचिकर, मारक,
 अनुलोमकारक और मदकर है । ७ वश्यायी—सारे
 शरीरमें फैल कर उसे पाक कर देता है । ८ विकाशी
 यह आह्लाद उत्पन्न कर धातुका बन्धन शिथिल कर देता
 है । ९ भाग्यकारी—यह द्रुतगामोके लिए जलस्य तैल

वत् प्रीतिरने बहुत जय्ये ज्ञानातैः तथा १० श्रोत्रो
 श्रोत्रो गिरा प्रीतिर्भो प्रथमं य वरता है। (रत्नमुक्तरयन)
 दयद—श्राद्धियार राक्षसके भस्मगतं एक नयर। यह मन्त्र
 भारतके मुपावर एजिप्तीके सबोन दयद नामक कामोर
 का प्रधान नगर है। यह धर्मभिरासे १० मील उत्तर
 महापुरिसे १२ मीलकी दूरी पर अवस्थित है।
 दयक (दं० श्लो०) दय परिमाचषण कन्। दय संख्या। मनुष्य
 अनुसार प्रति, यमा, दय, धन्यै य शीघ, इन्द्रियनिषय,
 भो विद्या लक्ष्य शीघ यशोध ये दय धर्मके मन्त्र हैं।
 दयकण्ड (स० पु०) दय कंड गला यम्। रावय।
 दयकण्डब्रह्मा (स० पु०) रावयस इररन् श्रीरामचन्द्र।
 दयकण्डत्रिभु (स० पु०) दयकण्ड त्रयति त्रि द्विप्।
 रावय श्रिता, राम।
 दयकण्डारि (स० पु०) रावयके शम्, श्रीरामचन्द्र।
 दयकण्ड (सि० पु०) रावय।
 दयकण्डर (स० पु०) दयकण्डरा श्रीवा यम्। रावय।
 दयकण्डात्रिभु (स० पु०) दयकण्डर त्रयति त्रि द्विप्।
 राम।
 दयकण्डायतीर्ष (स० श्लो०) तोर्यमंद, एक तोर्यवा
 नाम।
 दयकर्म (स पु०) दय कर्म-श्रा-क। दयकर्मके मन्त्रादि
 विषयमें धर्मिण यह जो दयकर्मके मन्त्रादि जानता
 हो।
 दयकर्मन् (स० श्लो०) दयविष कर्म। कर्माधानादि
 दयविष स श्राद्धकर्म, गमाधानमे क्षेत्र विवाह तकके
 दय मन्त्रार यथा—यमोक्षान पु संवन शीघ्रकीर्षण,
 जातकर्म निष्कामय, नामकण्ड, चयमायन, चूड़ाकरण,
 चयनयन, पौर विवाह।
 दयकर्मपटु (स० पु०) दयकर्मवि पटुः। दयकर्म
 नियमके पारदर्शी।
 दयकर्मपति (स० श्लो०) दयकर्म वा पतिः। दयकर्म-
 विषयक पति, जिस पुत्रकर्म दयकर्मके समी निवारण
 निष्पे हूरे हैं, उसे दयकर्मपति कहते हैं। नाम, अथ
 पौर यजुर्दोय तीन दयकर्मपतिधा है; उनमेंसे
 मुकटभमहने नामके दोय, पयपतिमहने यजुर्दोय और
 काशेयोने अक्षके दोय दयकर्मपति प्रचयन हैं।

शर्षी पशुतिधांके अनुसार धर्मो समस्त स श्राद्ध काय
 निष्पे जाते हैं।
 दयकर्मनिष्ठ (स० पु०) दयकर्मनिः पशिता। १ दय-
 कर्म द्वारा वृत्र को सब कावादि करती है तन्हे दयकर्म
 निष्ठ कहते हैं। २ दयकर्मनिष्ठ ब्राह्मण, जो दयकर्म
 नियमक पौर यमोक्षय सब प्रकारके वीरोद्विधादि काय
 यज्ञो तरह जानते हैं, तन्हे दयकर्मनिष्ठ कहते हैं।
 दयकाममन्त्रायन (स० श्लो०) कामने उत्पद्य दय प्रकार
 के मन्त्रन। अगमा, यत्तकीका, दिवानिद्रा, पारनिद्रा,
 प्रमहायज्ञि, लक्ष गेत, श्लोका दया मन्त्रक पौर मय
 पान से जो दय प्रकारके मन्त्रन कामन हैं। मन्त्रन हैकी।
 दयकुमारपरित (स० श्लो०) महाकवि दशुकोका बनाया
 हुआ एक गणमन्त्र। इसमें दय राजकुमारोंके चरित
 बर्चित हुए हैं, इसीसे इस मन्त्रका नाम दयकुमारपरित
 पड़ा है। यह एक पर्यन्त पाचवें उपन्यास मन्त्र है।
 अग्निसे इसमें पशुशक्ति अविश्रयशक्ति परिचय दिया
 है। यह मन्त्र दो मामोंमें विभक्त है—पुत्रं पौर उत्तर
 माय। कोई कोई पण्डित कहते हैं कि दयकुमारका
 पूर्वभ्रात जो दशुकोका बनाया हुआ है उत्तरार्ध किमी
 दूरी अग्निवा ज्ञत है। इस प्रकारको ति अदन्तोका
 कोई प्रमाण नहीं मिलता है।
 दयकुलद्वय (स० पु०) दयमुचितः कुलद्वयः। तन्कोक कुल
 एक दयक, तन्कोके अनुसार दयकुलद्वय। शिमोका, कण्ठ,
 शैव, पोपल, अद व, गोम, बरगद, मूषर, पांचषा पौर
 इमलो से ही दय कुलद्वय है। समी पाचकोंको प्रात-
 ज्ञान कर कर इन दय कुलद्वयोंको प्रथम करना चाहिये।
 दयकोपो (स० श्लो०) इन्द्रतानके प्यारइ मदीमिसे एक।
 दयपीर (स० श्लो०) दयविष पीर। दयविष दुग्ध,
 सुदुग्धके अनुसार दय अन्तुपोंका दूध। माय, बहरी,
 ल टलो, भैस, चोको, फो, इजिना, हरिको पीर मदको
 इन दय प्रकारके अन्तुपोंके पीरको दयविष पीर कहते
 हैं। दुग्ध हैको।
 दयगात्र (स० पु०) १ यतीरक दय प्रधान यन। २
 लक्ष मन्त्रयो एक कर्म। यह मनुष्यके मरनेके पीछे
 दय दिन तक होता रहता है। इसमें प्रतिदिन विष्णु
 दान करती है। इसीसे अनुसार इसी विष्णुके द्वारा

क्रम क्रमसे प्रेतका शरीर बनता है और दशवें दिन पूरा हो जाता है, पहली पिण्डसे शिर, दूसरेसे आँख, नाक, कान इत्यादि बनते हैं।

दशग्राम (स० स्त्री०) दशग्रामयुक्त परगना।

दशग्रामपति (स० पु०) दशानां ग्रामाणां पतिः, उत्तरपद द्वियुस०। दशग्रामके अध्यक्ष, वह जो राजाकी ओरसे दश ग्रामोंके अधिपति बनाया गया हो। जिसको आज्ञासे दशग्राम शासित होते हैं, उसे दशग्रामपति कहते हैं। इसका विषय मनुस्मृतिमें इस प्रकार लिखा है—राजा राज्यको सुरक्षाके लिए यथामार्थ-दो, तीन, दश वा सौ ग्रामोंके मध्य एक दल सैन्य संस्थापन करे और एक एक अधिनायकके ऊपर उन ग्रामोंके विचारदिका भार सौंप दे। राजा पहले पहल प्रत्येक ग्राममें एक एक अधिपति, पछे क्रमगः उसमें अधिक प्रतिष्ठा और योग्यताके मनुष्य देख कर दश ग्रामोंका अधिपति नियत करे। इसी प्रकार बीस, सहस्र आदि तकके ग्रामोंके जाकिम नियुक्त कर सकते हैं। जय ग्राममें चोरी आदि किसी प्रकारका अन्याय कार्य उपस्थित हो जाये, तो शासाधिप स्वयं उसका विचारदि करते हैं। यदि सम्यक् रूपसे वे कर न सकें, तो दशग्रामाधिपति उसका न्याय कर सकते हैं। यदि वे भी इसमें असमर्थ हों, तो इसी प्रकार उत्तरोत्तर अधिनायककी इसका विचार करना चाहिये। (८३ अ०) अग्नी जिस प्रकार एक एक मिला मजिद्वैटसे शासित होता है, उसी प्रकार पहली भी ग्रामपति, दशग्रामपति आदिसे एक ग्राम वा दशग्राम शासित होते थे।

दशग्रामिक (स० त्रि०) दशग्रामा अधिहृतत्वेन सन्त्वस्य ठन्। १ दशग्रामाधिप, दशगावके मालिक। २ दशग्रामादिके अदूर देशादि।

दशग्रामी (स० पु०) दशग्रामा अधिहृतत्वेन सन्त्वस्य इनि। दशग्रामका अधिपति, दशगावका मालिक।

दशशोच (स० पु०) दश शोवा अस्व। १ रावण। २ असुरविशेष, एक राजसका नाम। ३ दमघोषका एक पुत्र, शिशुपालका भाई। ४ एकादश मन्वन्तरमें इन्द्रका शत्रु, मेद, ग्यारहवें मन्वन्तरमें इन्द्रके एक शत्रुका नाम। इसका दूसरा नाम ह्य था। (गणहपु० ६० अ०)

दशजटा (स० स्त्री०) दशमूल।

दशज्योतिस (स० पु०) सभ्राजका बड़ा लड़का। इसके दश हजार पुत्र थे। (भारत आदि० १ अ०)

दशत् (स० स्त्री०) दश परिमाणस्व अति। दशवर्ग, दशकी संख्या।

दशतय (स० त्रि०) दश अवयवा यस्य, दशानां अवयवा वा संख्यायाः अवयवे तपत्। १ दशमंख्या, दशका अंक। २ दश संख्यान्वित, जिसमें दशका अंक हो।

दशति (स० स्त्री०) दशाहत्ता दश निपातनात् साधुः। शत संख्या, सौ।

दशदशी (स० त्रि०) दशाहत्ता दश परिमाणस्य द्विनि। शतशुणित, सौ गुना।

दशदिक् (स० स्त्री०) पूर्वादि दिक् समुहः। यथा—पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, अग्नि, नैऋत, वायु, ईशान, अधः और ऊर्ध्व।

दशदिक्पाल (स० पु०) दशदिशः पालयति, पाल-अच्। दश दिशाओंके अधोश्चर, वे सब देवगण पूर्वादि क्रमसे दश दिशाओंका पालन करते हैं—इन्द्र पूर्व दिशाके पालक, अग्नि अग्निकोणके, यम दक्षिणदिशाके, निऋत नैऋत कोणके, वरुण पश्चिमदिशाके, मरुत् वायुकोणके, कुबेर उत्तरदिशा, ईश ईशान कोण, ब्रह्मा ऊर्ध्व दिशा और अनन्त अधःदिशाके पालक हैं। ये दश देवता दश दिशाओंको रक्षा करते हैं। प्रत्येक पूजामें इन्द्रादि दशदिक्पालकी पूजा करनी पड़ती है।

दशहार (स० पु०) शरीरके दश छिद्र, यथा - २ कान, २ आँख, २ नाक, १ मुख, १ गुद, १ लिङ्ग और १ ब्रह्माण्ड।

दशधा (स० अथ०) दशानां प्रकारः दश-धा (संज्ञायां विधार्थे धा। पा ५।३।४२) दश प्रकार, दश तरह।

दशन् (स० त्रि०) दश वाहुं कनिन्। १ संख्याविशेष, दश। २ दश संख्यायुक्त, जिसमें दश अंक हों।

दशन् (स० स्त्री०) दशतेऽनेन शरीरं दशन् करणे ल्युट्। दश दशति निदेशात् क्वचित् कित्त्वपि न लोपः। १ कवच। (पु०) २ शिखर। ३ दन्त, दाँत।

दशन्च्छट (स० पु०) दशानां दन्तान् आदयति आदि घञ् ऋस्वः। मोठ, हीठ।

दशमपद (स० स्त्री०) दशमस्य दशमपदस्य पदं। दशम-

संत ज्ञान, बड़े बगल जहाँ दर्शिके आठमिने जलम हो गया हो।

दयनास (स० स्त्री०) दयनास नाम एक पाण्ड्यादक लाल। भोठ, हीठ।

दयनास (स० पु०) दयनास नाम वीरमय। दक्षिण इक्ष, धनार।

दयनास (स० पु०) दयनास य इक्ष-तत्। दयनासोतिः, दर्शिकी शोभा।

दयनास (स० पु०) दयनास दयनासतत् इक्ष। दयनासत, दर्शिके आठ वृषा जलम वा बिछ।

दयनासा (स० स्त्री०) दयनासा नामो यथा पतत् शिवनि हि इक्ष्वाकु इक्ष्वाकु पक्ष तत्वात्। बुद्धिवा, शोनिवा साग।

दयनासा (स० पु०) दयनासोतिः दयनास, यथा—तीर्थ, पावन, जल, परल्ल निरि, पर्वत, माग, बरल्लतौ, भारतो धीर पुरी।

दयनासो—स श्वाभिवीक्षा एक वर्ग। यह तत्वात् प्रचारक सुपदिष्ट महात्माचार्यके चार प्रधान शिष्य—पद्मपाद, इक्ष्वाकु, मन्मथ धीर तोडक। इन चारोंके मो विर पक्ष पक्ष शिष्य से। पद्मपादके दो शिष्य—तीर्थ धीर पावन, इक्ष्वाकुके दो शिष्य—जल धीर परल्ल, मन्मथके तीन शिष्य—निरि, पर्वत धीर साग, इसी प्रकार तोडकके मो तीन शिष्य से—बरल्लतो, भारतो धीर पुरी। इको दयनासके नामसे दयनासो च श्वाभिवीक्षा उत्पत्ति हुई है।

जो तत्त्वमिदं प्रकृति लक्ष्यविधि है धीर शिष्यकी लक्ष्यतीर्थमें तत्वात् मासके ज्ञान करते हैं वे तीर्थ लक्ष्यतीर्थ हैं। जो पावन पक्ष करनेमें बसते हैं धीर कामनाविशेषित जो कर लक्ष तथा मरुतके निम्न होति हैं, इनका नाम पावन है। जो कामना परिपूर्ण हो कर इसकी शिष्यके पावनके ज्ञानमें बास करते हैं, वे जल लक्ष्यतीर्थ हैं। जो परल्ल-जल पक्ष करने भारत म वार लोड देते धीर पान्ददातक ज्ञानमें विरल्लत तब बास करते हैं, उन्हें पक्ष कहते हैं। जो इक्ष्वाकु पर लक्ष, मोताम्बातमें बुद्ध्या, शिवशिवन बुद्धि धीर गभीर हैं, वे निरि कह्यते हैं। जो महाकुक्षि मासे

बास करते हैं, धान धीर भारत करनेमें बसते हैं तथा बाराबार ब्रह्मको ज्ञानते हैं, उनका नाम पर्वत पक्ष है। जो मागके सद्य गभीर मासके रहते हैं, फल फलदि पादार करते हैं धीर नाममर्वाकाका लक्ष्यन नहीं करते, उन्हें माग लक्ष्यती हैं। जो सभदा परल्लान विधि, करवाही, बदीकर धीर म वार सामरमें नार ज्ञानविधि हैं, वे परल्लती लक्ष्यती हैं। जो विद्या मासके परिपूर्ण हो कर सभी मासोका ज्ञान करते हैं धीर सुष्ठ-भार का है, उसे ज्ञानते तब मो नहीं, उनका नाम भारतो है। जो ज्ञानतत्त्वमें पूर्ण हैं पूर्णतत्त्वदर्शन पक्षित हैं धीर सभदा परल्लानमें निरत रहते हैं, वे जो पुरी हैं।

महात्माचार्यने चार मठ काचित किये से जिनमें इन दयनासके शिष्य-परम्परा जती जाती है। पुरी, भारतो धीर परल्लतोके शिष्यपरम्परा मन्मथी मठके पक्ष गंत है। तीर्थ धीर पावन भारतोके पक्षगंत, जल धीर परल्ल मोसके पक्षगंत तथा निरि, पर्वत धीर साग लोको मठके पक्षगंत हैं। प्रत्येक दयनासो स श्वाभिवीक्षा चार मठोंमें विधीन विधीके पक्षगंत होता है।

प्रत्येक मठके एक-एक पक्ष है जो महल कह्यते हैं। प्रत्येक महल अपने मठ धीर तत्त्वमिदं लक्ष्यतीर्थके पहिचारी हैं।

दयनासोमें परल्ल-सम्प्रदायकी स श्वाभिवीक्षा प्रायः नहींके बराबर है। सागर धीर पर्वत सम्प्रदाय मो बहुत है।

यद्यपि दयनासो ब्रह्म या निम्न लक्ष्यके प्रसिद्ध हैं पर इनमें बहुत शिष्यमण्डली होना भेते हैं। दयनासो स श्वाभिवीक्षाके जितने तो ऐसे हैं जो लक्ष्यमें विद्यमान प्रतिपादन नहीं करते। इन लोकोके लक्ष्य-लक्ष्य दिखनेके मास पढ़ता है कि लोको-जान धीर गच्छिका शिवनके बिना इनके धीर कोरे कार्य नहीं है। वेदान्तका तत्वाद्युक्तन जो इनका प्रधान धर्म है, किन्तु जे लोको तत्त्व धीर योग्याजका पद्युक्तन करने तद लक्ष्य कार्य करते हैं। इनमेंके कुछ तो शिष्योपनीतो हैं धीर कुछ वाचिकदि करते जपना गुणार करते हैं।

दर्शनामी सन्धासियो मंसे पनेक सुपरिद्धत, गन्यकार और अध्ववसायशील पर्याटक देखे जाते हैं। शङ्करा चायंके शिष्य आनन्दगिरिने उनके जोवनौविषयक एक प्रबन्ध लिखा है और उनके बनाये हुए सूत्रभाष्य आदि को टीका भी रची है। सुप्रसिद्ध माधवाचार्यने सन्धासधर्म ग्रहण करनेके बाद वेदभाष्य लिखा और तभीसे वे विद्यारण्यस्वामी नामसे प्रसिद्ध हुए। इस सम्प्रदायके अनेक सन्धासी आज भी सेतुबन्ध, वदरिकात्रम, केदारनाथ, कैलास पर्वत और मानस सरोवर, यहाँ तक कि वेलुचिस्तीन आदि स्थानोंमें भ्रमण क्रिया करते हैं। पुराणपुरी तिन्वत और रुपियासे ही आये थे।

ये लोग कोपीन पहनते हैं। मरने पर शवदाह नहीं होता शव या तो नदीमें फेंक दिया जाता या जमीनमें गाड़ा जाता है। ये लोग भिन्न भिन्न पत्न्या और वृत्तिका अवलम्बन करके टाढ़ी, परमजस आदि नाम धारण करते हैं। सन्धासी और दशरी देखो।

दशगोच्छिष्ट (सं० क्लो०) १ निश्वास, नाक या सुँके बाहर निकलनेवाला श्वास। २ अधर तुम्बन, हीठोंका चूमना।

दशप (सं० पु०) दश ग्रामान् पाति रक्षति पाक। दश ग्रामरक्षक, राजनियुक्त पुरुषभेद। जिस राजपुरुषके ऊपर दस ग्रामोंका रक्षणवेक्षणका भार सौंपा गया हो, उसे दशप वा दशग्रामपति कहते हैं। राजा किसोको एक ग्रामका, किसीको दश, बीस वा सौ ग्रामोंका आधिपत्य देते हैं।

दशपञ्चतपस् (सं० पु०) दशसु इन्द्रियेषु पञ्चसु वृद्धिषु तपो यस्य। इन्द्रियजयपूर्वक पञ्चाग्निपञ्चारी, जो पञ्च ज्ञानेन्द्रिय और पञ्च कर्मेन्द्रियको जीत कर पञ्चाग्निमाध्य तप करते हैं उन्हें दशपञ्चतपस् कहते हैं।

दशपक्षा—उड़ीसके करद महालोंमेंसे एक छोटा राज्य। यह अक्षां २०°११' से २०°३५' उ० और देशां ८४°२८' से ८५°०' पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल ५६८ वर्गमील है। इसके उत्तरमें अङ्गुल राज्य, नरसिंहपुर राज्य और महानदी; दक्षिणमें मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत गुमसर राज्य, पूर्वमें खण्डवाड़ा और नयागढ़ राज्य तथा पश्चिममें वोटा राज्य है। यह छोटा राज्य पर्वतमय है। इसके

प्रधान पर्वतकों नामें गोशाले देश है जिसको ऊँचाई २५०६ फुट है। प्रधान शहरका नाम दशपक्षा है।

लोकसंख्या प्राय ५१८८७ है। हिन्दू और असभ्य निवासियोंमें कथं जातिकी संख्या ही अधिक है। राज्य की आय लगभग ७००००) रु०की है जिसमेंसे ६६१) रु० छटिशसरकारको देने पडते हैं। यह राज्य दो भागोंमें विभक्त है। महानदीके दक्षिणखण्डकी दशपक्षा और उत्तरखण्डकी युदुम वा जीरीपक्षा कहते हैं। शेष अंश जोत कर दशपक्षा राज्यके अन्तर्भूक्त किया गया है। यह अंश पहले अङ्गुल राज्यके अन्तर्गत था।

यहकि राजवंश सूर्यवंशोय क्षत्रिय है। इनकी उपाधि भञ्ज और राजचिह्न मयूर है। वोटराज्यके एक पुत्रने पांच सौ वर्ष पहले यह राज्य स्थापन किया। मठूरभञ्जके राजाको सट्टय इस वंशके आदिपुरुष मयूरडिम्बसे उत्पन्न हुए हैं। वर्त्तमान कालमें राजाके ५२१ सैन्य और २६८ पुलिस प्रहरी हैं। इसमें कुल ४८५ ग्राम लगते हैं जिसमेंसे कुञ्जवन प्रधान है। राज्यमें १ दातव्य शोधालय, १ मिडिल-स्कूल, २ अपर प्राइमरी तथा ३० लोअर प्राइमरी स्कूल हैं।

दशपारमिताधर (सं० पु०) दश पारमिता धरो येन। बुद्ध।

दशपिण्ड (सं० पु०) मृत्युके बाद दिये जानेके दश पिण्ड।

दशपुर (सं० क्लो०) दश दिशः पिपत्तीति पृ-क। १ कैवर्त्ती सुस्तक, कैवटी मोथा। दश पुरी यत्र। २ देशविशेष, मालवेका एक प्राचीन विभाग। इसके अन्तर्गत दश नगर थे। मेघदूतमें इसका नाम आया है। इसका वर्त्तमान नाम मन्देशोर है।

दशपुरुष (सं० पु०) दश गुणितः पुरुषः। स्वजनकावधि पुरुष दशक, अपनेसे ले कर दश पीढी।

दशपूर (सं० क्लो०) दश दिशः पूरयति पूर-घण्। नगरविशेष। दशपुर देखो।

दशपूर्वथ (सं० पु०) दशपूर्वः रथः यस्य। दशरथ।

दशपेय (सं० पु०) दशभिः पुरुषश्चैव समं पेयं यत्र। यज्ञभेद, एक प्रकारका यज्ञ।

दशवल् (सं० पु०) दशवलानि यस्य। बुद्ध। दान,

गोत्र, समा शोर्ष, ध्यान, प्रज्ञा, धन, उपाय, अविधि
 धोर प्राण बुद्धि ये दश वन धि, इत्येव इतथा नाम
 दशवन्त इत्यादि ।

दशवाह (स० श्री०) दश वाहकोऽप्याः । दशमुद्रा,
 पुर्णा । (वि०) २ दशवाहबुद्धि विनये दश मुद्राय
 च ।

दशमुद्रा (स० श्री०) दश मुद्रा वाहको यस्याः । दुर्गा ।
 शैतानुगर्भे क्षायन्तु व मन्वन्तःको देवतायो गे मन्वादि
 त्रिप मन्वायाया दशमुद्रादप्ये प्रादुर्भूत बुद्धि वी धोर
 तन्मोने क्षय देवीका नाम क्रिया वा ।

दशमूर्ध्मिय (स० पु०) दशम मूर्ध्मिषु दातादिबन्धु गच्छतीति
 नाम इ । बुद्धदेव ।

दशमूर्ध्मिय (स० पु०) दशम मूर्ध्मिषु दातादिषु ईडे
 प्रभवति इत्यथ च । बुद्ध ।

दशम (स० शि०) दशानां पूर्य पूर्ये षट्, ततो मात्
 त्वात् षट् । दश स क्त्वाका पूर्य, द्यर्वा ।

दशमदशा (स० श्री०) साहित्ये इत्ये निरूप्यते विद्योमी
 को एव दशा । इत्ये वद प्राण कोडु देता च ।

दशमभाष (स० पु०) अक्षरम्भाषविधिये, तन्वादि वाह
 माधोर्षे दशानां भाव पश्चात् कुण्डलीके लम्बये दशानां
 चर । लम्बये से चर व्यय पर्यन्त वाह रागियां चो तनु
 प्रथति स प्रा निदिष्ट चै । इत्ये वद इत्ये चरमे मान,
 पात्रा धोर कर्मविषयक शुभाशुभका विचार क्रिया जाता
 चै । इत्ये चरमे वदि शुभपश्चादि चो, तो शुभफल धोर
 अद्यम पद चो, तो अद्यमफल मित्रता चै । तनु प्रथति
 भावको स्पृष्ट लक्षणाके विना फलाफल प्रायः ठीक नचो
 होता चै । इत्ये चरमे वदेके ।

दशमनव (वि० पु०) निवन्ता एकमेव । इत्ये चरमे
 दश वा उच्यता शोर्ष ज्ञात होता चै ।

दश महाविद्या (स० श्री०) मात्कोको उपाय दश इष्ट
 देवमूर्ति वा ।

शास्त्रातन्त्रे मतये—
 "काशे ताता महाविद्या शोर्षी मुहनेचरी ।
 मेरुदे विनयस्तु व विद्या ब्रह्मादी तुवा ।
 वनम विद्याविद्या व अर्धेके वनकारिका ।
 इत्ये इष्टमहाविद्या विद्याविद्या मन्त्रिणता ॥"

वाभौ, तारा, शोर्षी, मुहनेचरी, मेरुदे विद्या-
 मस्ता, शुभाशुभ, वनम, माताको धोर वनमता वद दश
 महाविद्या विद्याविद्या नामके प्रसिद्ध चै ।

इत्ये दशमहाविद्याको उपायविधि मतमेष्ट चै । बुद्ध
 जोम यो चरति चै —मत्तोमे अब दशपद्यमे ज्ञाना वाहा
 तव महादेवने निधिय क्रिया । इत्ये वर भगवतीने पदसे
 काको मूर्ति निद्या चर गिबको इराया । भोलाभाय
 मयमीत हो चर मानिको उपाय बुद्ध, विन्तु महाभावाये
 द्यो धोर दश मूर्ति योमि पाविभूत हो चर उच्यता
 उच्यता रोक् द्विया । श्रित दश मूर्ति योमि महाभावा
 पाविभूत बुद्धे वी, बहो दश महाविद्या चै । महा
 भावमतपुराणने इत्ये चरमे वदेके चै—

पशुवाच ।

अरुणं वद देवेश तवापि विदुःशतये ।
 विविधमि महावद इष्टमिष्टपुरेष्ट प्रभो ॥
 ममि वद तवावत् स दशमने बुद्धे वदि ।
 तरोरुवा विदरे तुम्ये वदविषयि च हृन्मू ॥
 ममाये वदि ते विद्यां वदोक्तमि विदुःशतये ।
 तदा तव मन्त्रेणै माधवाभि व संभव ।

शिव उवाच ।

न तव गमने बुद्ध कदाविधि ते वदि ।
 विनायमात्रं कम्पाने तव तेन ज्ञेयवदि ॥
 मन्त्रिणमन्त्रप्रभे वदोक्तमि विद्या वद ।
 वावाह हात्मनि तन्त्रे त्वा तस्व किं ॥ वदोक्तमि ॥

पशुवाच ।

वात्सल्येव महावद वद मन्त्रिणुवाचये ।
 त्वमात्रवद वा को वा वद वद वदामि ते ॥

शिव उवाच ।

मन्त्रिणमन्त्रप्रभे पुना पुनं किं
 ज्ञेयमि मन्त्रे विदुःशतये च ।
 प्रबोक्तं तव विदुःशतये ते वदि
 बुद्धे इत्ये तव वदमेतनुवाचये ॥
 अद्यमन्त्रे वद वैद्य विद्ये व दुःशासन मू ।
 तव तव मन्त्रेणै वद कम्पानेभावन ॥
 मन्त्रे वदामिने मन्त्रेणै वदोक्तमि वदि ।
 अद्यवदव वा वद न वा पुनेति मन्त्रे ॥



बहुमुखां दक्षिणसंमुखीवशात् ॥
 इव विभोषणं तौ धम्ममुदीहाभीयं दशजयीत् ।
 का लम्बु इवामा सती कुत्र गता मासाववशया ॥

बन्धुवाच ।

न वस्यति महादेव त्वनीं मां पुरतां रिक्तया ।
 कर्णे तवेजो मुदि किं मां एव बहस्येदुम्बरा ॥
 पितृ वधाव ।

एव वा मूर्ति सती दहधन्वा यन्त्राववहमा ।
 क्वच तदा कुपववर्षा क्वच वा भूभयवरा ॥
 कर्षांश्च रिपु एषा का देवोसिमवशादिना ।
 त्वा कर्षा वपना देभि इव मां भयनिद्वय ॥
 उद्युवाच ।

अहम्बु उच्यते मृतमा दक्षिणैरकारिणी ।
 अमल त्वामिताये त्वरये गौरवेक्षिणा ॥
 त्वानेव किञ्च उच्यते माहुरीहववर्षादिद्वय ।
 काश्च रिपुर्न हायइयिकाशाव भवावका ॥
 अमव'एवम्बु मा मीति कुत्र गतां महेष्वर ।
 इव रिपु महाभीषा वा एषा दशमूर्त्तया ॥
 कर्षां वदेव मा शम्भो भयं कुत्र महामते ।
 त्व महावसुमे भर्त्तां तवाह वनिता गती ॥
 त्वां हृद्रुह महाभीष वावमान रिजो मयाद्य ।
 वरिषाये रिजा क्वा इतवह द्वावा रिषजा ॥
 पितृ वधाव ।

त्वा मृगशकित्वा लुप्तमा दक्षिणैरवन्धकारिणी ।
 त्वासाहाता बोहम्मोहासतापियत्रमं वधा ॥
 मयोक्त उक्तमहादेवे सप्तमव वरदेवसि ।
 महामवावका एषा मूर्त्तौ दशलव वां निवे ॥
 कर्षां वासाति मे मुदि अत्रैव यीमलोषवे ।
 हेमुवाच ।

एषा कर्षां महादेव महाविद्यावमममा' ।
 अर्षां असाति दहधामि म्बु ताति महेष्वर ॥
 काशीं ताता महाविद्या बोहटी मुदनेरारती ।
 मेरुटी किममारा व ह्मरपी वगावमुषी ॥
 मृतानी व मांती वास्य'अवप'ति ने दिवे ।
 पितृ वधाव ।

वधवाः निवाम देवि त्व रिदेषे व मृदुद मृदुद ।
 वधवन्व वगासांश्च ह्मसताभि मे वरि ॥

हेमुवाच ।

येष त पुता' कृष्य मा कासी यीमलोषया ।
 एवाम्बना तु या देवी त्ववर्षु' भवविद्या ॥
 उच्ये ताता महाविद्या महाकाव'एवविपी ।
 दक्षे सन्धेतेरेव वा बिदौर्वा'तिमवपदा ॥
 इय देवी किममता महाविद्या महामते ।
 वायेतेरेव वा देवी वेष तु मुजनेवपी ॥
 पूजन्मव देव्येवा वरतां जाम्बुद्वती ।
 वदिदे'वैतेरेव या विववाकृष्यारिणी ॥
 उच्ये मृतावती देवी महाविद्या महेषपी ।
 मेव साप्तेरे वा देवी मेव विपुरसुरपी ॥
 वासी या तु महाविद्या उच्ये मातृपुत्राविधा ।
 देजाय्यां बोहती देवी महाविद्या महेषपी ॥
 अहम्बु मेरीपी यीमा मन्त्रो मा त्व मय कुप ।
 एषा सर्वा' महेषाम्बु मूर्त्तये वदु मुदिपु ॥
 नवमा संभवतां निजां बन्धुर्वैर्बहवमदां ।
 सर्वांभीष्टमवापिष्यः सावकाशं महेसवा ॥
 मा'एवोवावव'होमसोदग्राहयानि व ।
 वर'व'ह'मवविदु'वापति त्रेणां कुर्वते ॥
 इमां सर्वां बोहतीवा न वधाया कदाचन ।
 अस्तां मन्त्र तवा यन्त्र पूजाहोमविधि तवा ॥
 पुराणया विद्यान व स्तोत्र व वचन तवा ।
 कावागनिपय वाति स्तानकनी महेष्वर ॥
 तवेवानमसाहम्बु कोके वयाव अविप्यति ।
 अह तव शिवतमा एव व मे'वि'विप्यरति' ॥
 रिपु' वगावदेर्वैरवकावाद्य ममाभ्यहम् ।
 त्वमासावय देवैरेव इव अ'प'ह'वि वेदमि ॥
 इति देव ममाभीष तवपराजुगतारहम् ।
 मय्येभि यदवाशाव रिपु'रैव अवागतेः ॥
 इति ताव वच मुन्ना महाभीष इव रिषतः ।
 मेराव कर्षं ह्मम् कासी यीमां रिभेवर्षां ॥
 काये त्वां वरमेजांनि वृत्तीं अतिपुत्राम्बु ।
 अमावता महाबोहावदुव' उद्युम'रि ॥
 त्वमाका वरमा विदा वरै'मृताववरीयाता ।
 इतदन्ना वास्य'अति वरते रि'व'विरेवव ॥
 अ वे'ए'वि'म'ति दिवे दहध'विम'जाये ।
 काये द'वि'म'वां निवे'रु' वरं तवातिव वा वस्य ।

दक्षोऽपमन्त्रिभोहेन मत्वेतान्नं पतिं तव ।
 तत्प्रमस्य महेशानि यथाशुचि तथा कुरु ॥
 एवमुक्त्वा महेशेन तथा सा जगदम्बिका ।
 शैपन्वहास्यवदना वदनं चेदमन्त्रवीत् ॥
 त्व तिष्ठ सर्वप्रमथं रत्नदेव महेश्वर ।
 याम्बहं मत्पितृगृहे सम्प्रतं यष्टदंजने ॥
 इत्युक्त्वा सा महादेवं ताराप्युद्व्यवस्थिता ।
 एरुहया समभवत् सहसा तत्र नारद ॥
 अन्याथ मूलं यथाष्टौ सहस्रात्तर्हिता स्तदा ।
 भय शम्भुः समालोक्य गन्तुमिच्छुं सुरेश्वरीं ॥
 प्रमथानाः भगवान् रथमानय चोत्तमम् ।
 युताश्रयुतमिहेन गजनालविराजितम् ॥
 तच्छ्रुत्वा तन्पुत्रादेव प्रथमाभिवनिः स्वयं ।
 रथं समानयत् सिंहैर्युत्तयुक्तमाशुभिः ।
 तां समारोपयामास प्रमथाधिपतिः स्वयं ।
 तस्मिन् रथेस्थिता काली विह्वला भीमरूपिणी ॥”

(महाभागवत ८म अ०)

ऊपर दश महाविद्याको उत्पत्तिके विषयमें जो विवरण लिखा गया, वह महाभागवत पुराणके सिवा और किसी पौराणिक वा तान्त्रिक ग्रन्थमें नहीं मिलता ।

तन्त्रमें महाविद्याको उत्पत्ति और प्रकारसे वर्णित है—

“काली कृष्णत्वमासाय श्रुत्वापि नीलरूपिणी ।
 लीलया वाक्प्रदानेन तेन नीलसरस्वती ॥
 हास्यत्वात् सदा तारा तारिणी च प्रकीर्त्तिता ।
 भुवनानां पालकत्वाद्भुवनेशी प्रकीर्त्तिता ॥
 सृष्टिस्रिविकरी देवी भुवनेशी प्रकीर्त्तिता ।
 श्रोदात्री च सदा विद्या श्रीविद्या च प्रकीर्त्तिता ॥
 निर्गुणा च महादेवी योग्यो परिकीर्त्तिता ।
 भैरवी दुःखमर्हन्त्री यमदुःखत्रिनाशिनी ॥
 कालभैरवभार्या च भस्वी परिकीर्त्तिता ।
 त्रिशक्ति कालदा देवी शिवा चैव सुरेश्वरी ॥
 त्रियुगा च महादेवी मोहिनी मोक्षदा भुव्यं ।
 धूमावती महामाया धूमासुरनिन्दनी ॥
 धूमरूपा महदेव्या चतुर्वर्गप्रदायिनी ।
 जगन्नाता जगदात्री जगतामुपकारिणी ॥
 वकारे वाङ्मयी देवी गकारे सिद्धिदा सृष्टा ।

लकारे पृथिवी चैव चैतन्यां मे प्रकीर्त्तिता ॥
 मातंगी मद्भीलत्वान्मतंगीसासुरनाशिनी ।
 सर्वापकारिणी देवी मातंगी परिकीर्त्तिता ॥
 वैकुण्ठवासिनी देवी कमला च परिकीर्त्तिता ।
 पातालवासिनी देवी लक्ष्मीरूपा च सुन्दरी ॥
 एता दशमहाविद्याः सिद्धविद्याः प्रकीर्त्तिताः ॥”

महादेवोके शक्ता होने पर भी कलिमें कृष्णत्व प्राप्त कर नीलरूपिणी हो गई थीं । अब लोलाकमसे उन्होंने वाक्शक्ति प्रदान की, इसीसे इनका नाम नीलसरस्वती पड़ा । सब भूतोंको तारण करनेके कारण वे तारा वा तारिणी कहलाईं । ये सब भुवनोंका पालन करती हैं इसीसे ये भुवनेश्वरी नामसे प्रसिद्ध हैं तथा सृष्टि और स्थितिकारिणी होनेसे भो ये भुवनेश्वरी कहलाईं । महादेवो जो दान करती हैं, इसीसे ये श्रीविद्या नामसे प्रसिद्ध हैं । ये त्रियुगातोता हैं इसीसे इनका नाम वीहशी है । ये सब प्रकारके दुःखोंका नाश करती हैं, यम-यम्यणासे रक्षा करती हैं और भैरवको भार्या हैं इसीसे इनका नाम भैरवी पड़ा है । यह देवी त्रिशक्तिरूपिणी हैं, मस्तकछिन्ना हैं, मोहिनी और मोक्षदायिनी हैं, इसीसे इनका नाम छिन्नमस्ता हुआ है । इसी महामायाने धूमासुरका विनाश किया था, तथा इनका वर्ण धूम्र है तथा ये धर्म अर्थ काम और मोक्षको देनेवाली हैं इसीसे ये धूमावती नामसे प्रसिद्ध हैं । वकार शब्दका अर्थ वाक्पणे देवो, गकार शब्दका सब प्रकारको सिद्धिदायिका और लकार शब्दका अर्थ पृथिवी है तथा ये स्वयं चैतन्यरूपिणी हैं इसीसे इनका नाम वगला रखा गया है । महादेवो अत्यन्त मद्गिला हैं, इन्होंने मतङ्ग असुरको मारा है तथा ये सब आपदीसे उधार करती हैं, इसी कारण इनका नाम मातङ्गी है । महादेवो हमेशा वैकुण्ठमें वास करती हैं, इसीसे इनका नाम कमला और पातालमें रहनेके लक्ष्मी नामसे प्रसिद्ध हैं । यह दशमहाविद्या भो सिद्धविद्या नामसे वर्णित हैं ।

नारद-पञ्चरात्रमें (३३ अ०) लिखा है—

“दशमेहे समुद्रमतां या सती लोकविश्रुता ।

उपित्वा दक्ष राजर्षिं पती त्यक्त्वा कलेवरं ॥

अनुपपन्नं मेतन्मं कादा हरयन्मु वा तथा ।
बाधो नन्वेति विद्वान्ना सर्वपाप प्रतीतिता ॥”

मतो दण्डपट्टहर्मिं प्रथमं से कर राजप्रति दण्डके प्रति
बद्धं कुपितं हृदि ; इतो कारकं हृदयेन धयन्त कर्मिभर
कोङ्क दिया । कोङ्कि बद्धं अनुपपन्नं खरने पर इदोने
मेतन्मंके ममने अन्त-पद्यकं क्रिया धोर लम समय ये
मतो बाधा नाममे प्रसिद्धं हृदि ।

छिन्नं भूतस्य-तन्मन्त्रे मतमे—

“महागामिनिनेत्रशलां नमर्वां नतयेव तत् ।

उत्थोरुं मदेणमी क्षाप्तत् वरप्रदायक ॥”

मङ्कुरीने अथमी मतोने महागामिनिं दिन बाधो-
रुप धारकं क्रिया बाध इतोने दनका नाम बाधो पडा है ।
वे माघात् वैश्वान्तरागिनो है ।

भारदपट्टतन्मर्मे (३२ पं०) निम्ना है—तो दण्ड
पट्टहर्मिं अथक हृदि ती, लनका नाम यतो है, को पण्डटा
विमो रोनेके कारक दनका नाम एकरता है के जो
मक मूर्तीको तारक करनी है ; इमाने दनका नाम तारा
पडा है अथवा मोना प्रामने वाक मान करतो है इतोने
दनका नाम मोनपरव्यतो धोर अथलके कारक अथ
तारिषो नाम पडा है ।

छिन्नं भूतस्य-तन्मन्त्रे निम्ना है—कामरात्रिने त्रिं दो-
पहर रातको इदोने अथ धान्दने तारक क्रिया या ।
इधोने दनका नाम अथतारा पडा । मेरुके पश्चिम कुन्मि
चौल नामक एक महाकुट्ट है । इस कुट्टमे माता मोनपर
कतीने अथपट्टक दिया धोर यहाँ ये तीन युव तक अथ
करतो रटो ; त्र्यम्बं वज्रने तिओरात्रिं चोलाइहर्मिं गिरमे
ये दनका बर्ष मोका जो मया या, इधोये ये मोनपर
कती ममने प्रसिद्ध है । कोङ्कुरीने अथलका विवरक
भारदपट्टराठमे इस प्रकार निम्ना है—

“सूयं तनु हृदिषिधं रत्नं वयं अनुपपत्तम् ।

धैव बाधो महासाया अनुपपीलनुतापता ॥

दन्वन्त्रिभरे इमे वक्रमाने व दण्डे ।

इधैव जेवाम्मक सर्वपापहरणे मुता ॥

अन्वन्त्रा महादेव हृदयुतुनु मदेरत् ।

दैन्यं वचने अन्व तामो व अनुपपत्तः ॥

अन्वन्त्रा महादेव बाधा अथकृतता लनं ।

द्वैतं वराच ।

पुरस्वातिविर्षेणः पुदतो वात्र वंशवः ।

श्रीषीं श्री वातिविर्षेण तन्मन्त्रुतु वाधिर्वा ॥

इत्युक्तत्वा उत्तरं तस्य विवेकं परमेस्वरं ।

इवःच बाधो महापातीइदं परमेष्ठी ॥

ता अन्वन्त्रा परतो मीने वरमनुर्धवां ।

ततो देवी महापाती विगमिन्ना मुमुक्षुः ॥

एवमुक्त्वा महापाय श्रुत्वापी महासायः ।

पन्नात् बाधोऽस्ति बाधोऽस्ति महादेवः वनाइपैर ॥

इति लक्षणम् अथवा अथकृतं गता पत्ता ।

महा देवोऽपि कायेन गणाप्रतापुर्षे विषः ॥

मायस्कं तथा बाधो ठरुने ठरिमात्तु देव ॥

अथ काके अथविभु मागतस्तत्र मारुतः ॥

अथम्य गिरता देवं वरदेवं मदेरत् ।

अन्वन्त्रिपुदस्यत्वी ततो देवापता मुनि ॥

महादेवोऽपि बाधेन बाधिता मुनिवचन ।

अथकृतं अन्वन्त्रुत्वं चके पुम्बवर्ती कर्वा ॥

कायेन विद्यता तत्र अन्वन्त्रे मुनिस्तम् ।

तत्राच क्वरं बाधेन अथम्य अन्वन्त्रुत्वं ॥

मारु वराच ।

ए गता रत् वरीमन्त्र काके काकभिसाधिपी ।

मन्त्रुवाच महादेवर्त्तं मुनिं क्वरं ततः ॥

अन्वन्त्रेन गता रपी वा क्षिंषा मुनिवचन ।

इति शैलया अथकृतं मारुतो र्वैवापता ॥

विदारतमपथर्त्तं म्हापायकाके इत्येव ।

इति अथम्य अथवा अन्वन्त्रात्रिं मारुता ॥

द्वैतं तां महापाती अन्वन्त्रा अन्वन्त्रिः ।

इत्येवोत्तरं बाधे त्रिंता वा अन्वन्त्रे ॥

अथम्य अथवा अथवा अन्वन्त्रे अन्वन्त्रे ।

देवमुवाच ।

विदुषा मदीयेन त्रिं करोति अन्वन्त्रः ।

तन्नेव हृदय कर्त्तुं अथकृतं हृदीयत् ॥

मारु वराच ।

अथीम अथम्य अथ विदारतं मदेरत् ।

देवदेवा निनेऽपि तं विदारकं मुमुक्षुः ॥

इति मुवाच अथम्य अन्वन्त्रं अन्वन्त्रे ॥

वाञ्छन्त्यमाना रक्षाशो ररमन्त्यद्वयो परा ।
 यन्नास्ति त्रिपु लोकेषु सौन्दर्यमपि इन्द्रियत् ॥
 दधौ तद्रूपमबुलं सर्वेषामधिकं परं ।
 यथास्ते मगवान् देवो वैवदेवो महेश्वरः ॥
 समागता क्षीणैव ततः सा परमेष्ठुरी ।
 ददर्श हृदये शम्भोः स्वच्छामां परमेष्ठुरी ॥
 उवाच सा महादेवं ह्येतेन महताहृता ।
 हृतमस्त्वं महादेव मया य. समयः कृतः ॥
 त्वत् त्वं लक्षितवान् देव शिष्यं परमेष्ठुरं ।
 कृत्वा विवाहं हृदये स्थानं दत्तं मया शिव ॥
 एतद् श्रुत्वा वयस्तस्याः प्रहस्य परमेष्ठुरः ।
 उवाच स त्रियां शार्धां प्रेमगण्डव्या गिरा ॥

ईश्वर उवाच ।

नाहं हृतोऽस्मि नाहं समग्रलंपकः ।
 हृदये मे त्वया दृष्टा स्वच्छामां नात्र संशयः ॥
 स्थानं कुरु महाभागे पश्य त्वं शानचक्षुषा ।
 स्वच्छामां वैव देवेति ततः सुध्यामवत परा ॥
 उवाच परमेष्ठानं देवदेवं महेश्वरं ।
 परेण प्रेमभावेन जगदीशं जगन्मयं ।
 सा च्छामा इति दृष्टा सा तन्मे शुद्धिं जगन्पते ॥

प्रमोक्षाय ।

इति श्रुत्वा महादेवः काष्ठिकावचनं परं ।

उवाच प्रेमभावेन देवदेवं सनातनः ॥

ईश्वर उवाच ।

यस्मान्निमुचने रूपं श्रेष्ठं कृतवती गिने ।
 तस्मात् स्वर्गं च मल्लं च पातालेऽन्यत्र पार्वति ॥
 इन्द्रो पञ्चमी शोध स्याता त्रिपुरइन्द्रो ।
 सदा योऽज्ञास्यो या विख्याता योऽहं ततः ॥
 नां कृष्णं हृदये मेऽथ दृष्ट्वा सीता सुरेश्वरि ।
 तस्मात् सा त्रिपु लोकेषु स्याता त्रिपुरभैरवी ॥
 यावन्मया भगवत्याय सुस्यञ्चिता कृपामयी ।
 ततस्तां मुचनेशानां राजगणेश्वरीं विदुः ॥
 या चोपतारिणी प्रोक्ता या च दिक्कवाचिनी ।
 यैषा उल्लिखन्तास्या स्याता मंगलवर्णिहता ॥
 कौषिकी देवद्वी च साधान्यामूर्त्तयः स्मृताः ।
 या स्याता सुवनेशानी तस्या मेदानेरुषा ॥

त्रिपुटा ज्वरुगी च वनदुर्गा त्रिदण्डद्वय ।

कात्यायनी महिषयो दुर्गा च वनदेवता ॥

श्रीगणेशदेवता यज्ञप्रवृत्तारिणी च शूलिनी ।

शुद्धदेवी गृहस्था भेषा राधा च कलिदा ॥

कथिताय समासेन तामां मेदाथ नारद ।

विस्तारणे तु केनच धारयते गतिं मुने ॥”

जिस समय शरद रमणोय कौलास-शिवर पर वाम
 करते थे, उस समय इन्द्रने उनका स्तव करनेके लिए
 अप्सराश्रीको भेजा था । अप्सराश्रीने पा कर जहाँ तक
 हो सका खुब स्तव किया । इस पर महादेवको सन्तुष्ट
 हो कर बोले थे, 'पुरुषका अतिथि पुरुष है,
 स्त्रीका अतिथि स्त्री है । इस कारण तुम लोग
 कानीके निकट जायो ।' इतना कह कर महा-
 देव तो रमणीयपुर चले गये और अप्सरागण भी
 परमदुर्गम प्रीति प्राप्त कर वापस आईं । महादेवने
 यह हृत्तान्त कानांस कहा । इस पर कानो बहुत चिन्ता
 करने लगी और कासारूपका परिन्याग कर शुद्ध गौरी
 हो गई । महादेव भी काली काना कष्ट कर चिन्ताने लगे
 महादेवने भक्तःपुर जा कर जब कानोको नहीं देखी, तब
 वे वहाँ रहने लगे । किसी समय नारदजी वहा जा
 पहुँचे । महादेवने नारदक शरारती वाएँ हाथसे धर्य
 कर उनका खुब सत्कार किया और तरह तरहका वात-
 चोत का । नारदने महादेवसे पूछा, 'कानविना-
 शिना काला आपको छोड़ कर कहां चली गई है ?'
 महादेवने कहा, 'काली हमें छोड़ कर अन्तर्हित हो गई
 है ।' यह सुन कर नारदजी बहुत खुश हुए । उन्होंने
 अपने ध्यानचक्षुसे देखा कि मुनेरके उत्तरपाश्वरसे महा-
 देवी प्रवस्थान करता है । इस पर नारद महाभायाक
 पास गये और उन्हें प्रणाम कर वहाँ रहने लगे । महा-
 देवीने नारदसे पूछा, 'महादेव मेरे बिना किस प्रकार
 रहते हैं, उनका कुशल मन्वाद हमें कहो ।' इस पर
 नारदजीने कहा, 'हे गिरिसुति ! देवदेव महादेव परम
 विहारके लिए उद्योग कर रहे हैं, आप उन्हें रोकिये ।'
 यह सुन कर देवी बहुत विगड़ी और उनका अग्नि जाल
 जाल हो गई । तब देवीने दूभरा रूप धारण किया ।
 उन्होंने त्रैसा सौन्दर्य धारण किया, बैसा तोनों लोकोंमें

बच्चों को न था। ऐसे अतृप्तमनोय बच्चों को चारुच चर वि
 पक्षा ममबाह मनेष्वर रचते थे. बच्चों उपखिल हुई।
 महादिनेने यद्युके इदयमें ययने जाया देख बहुत
 युष्ठा कर कहा—'हे कृतज्ञ। तू मरे साय प्रतिज्ञाक्यो
 पायधि बने हुए हो, तो फिर क्यों लसे उलङ्घन करत
 हो? तू मे निवाह करके सुमि ययने इदयमें खान दिया
 है।' महादिन कामोकी ऐसो खोज मरो बार्ते चुन कर
 कुछ सुमकुटा कर बोने, 'हे बच्चाको! मैं कृतज्ञ नहो
 मैं चोर न मीने प्रतिज्ञा हो उलङ्घन की है मरे इदयमें
 जो देखतो हो, वह सुनारो हो जाया है, ययमें पन्देह
 नहो। पोसे कासीको कय माक मपडा कि यह लक्ष्मीको
 जाया है, तब मैं कुछ थाप्य हुई और महादेवजनेने
 बोलो, 'वह जाया खीन है? हमें कबिजे।'

यह सुन कर महादेवने कहा, 'हे मित्रे। तूने मित्तु
 बनमें जो इक्षुय चारुच किया था। इसीसे ययमें, मर्ज
 में और पाताकमें कामया सुन्दरो, पक्षमी और श्रीनिपुर
 सुन्दरी नामके प्रसिद्ध होमो चोर चर्नहा योद्धयवर्षीया हो
 कर योद्धुमी नाम भी चारुच करोगे। पात्र मरे इदयमें
 ययने जाया देखकर तू कर गई हो इसीसे तौमें कोर्को
 में विरा नाम निपुरमैरको होवा। मनबतीकी छपामयो
 सुखवित्ताकी जो चबका है लसे तू सुवनखरो
 कीर राजरासिखरो समझे। वह छपामयी चबका
 उपतारिको दिबरवायिनो, कलितकाला, महाबचिष्टका
 बीपिबी, देवदूतो पादि नामोंके प्रसिद्ध हो गी। उनका
 एक नाम सुवनखरो ओ होमा जिनके पनेक मिद होंगे।
 कहा—निपुरा, जयपुरा बनदुगय, जिष्टक, कालवायिनो
 मजिषयो, दुर्गा, बनदेवता, चारामदेवता, ययप्रस्था
 रिषी, सुनिनो, यष्टदेवा, मथा, राधा, कालिका
 पादि।

दिवसस्थाका लयति-विबरच नारदपञ्चराममें इस
 प्रकार लिखा है—

"एकदा वारंटी देवी कामार्च गणवन्धि।
 सार्ध बहुवर्षीयाव मन्वास्तिष्ठा नके सुरा ॥
 एक कस्य कस्यवापीविद्या व कस्यमयी।
 वयुह ज्ञाय या देवी कस्यदानपदरिषी ॥
 कय लसे कस्यपिपु नाम्नां हृदा नहेषती।

देहि मय्य सुवापाम्ना सावाम्नां परमन्परी।
 जत्र ते व प्रदास्वामि कुर्यां मे व्रटीक्षण।
 यत्रापुष्पी पुनः वृषा देहि मय्यप्रकारयोः ॥
 व्रटीक्षण प्रकुर्यां विभित्तु काय स्वरासि ॥
 क्षुवात् परमूचदुलो देहि भवनमवाशके ॥
 सावा रय सर्वैवगादी मातरै प्रावैरिपिच्छुः।
 साया वदाधि सर्वैर्वा भोक्त्रापञ्चादवापिच्छुः ॥
 भतस्त्य प्रायेण मय्यं वक्ष्यां चरनासि।
 इति सुष्वा महेतावी मजुर वचन उचोः ॥
 यद्ये यथा प्रदास्वामि इत्युक्ते वचन उचोः।
 कयदुल्ले पुनस्तां धि वाक्पियी वरिषी परे ॥
 कया व दिवया ये तु कारां सुन्दरिरीयिते।
 देहि मय्य कस्यम्पार्चका तुने ज्ञायमि ॥
 तथा पुन कस्यम्पार्चके देवी वाक्पिच्छुः ॥
 इति सुष्वा वच कस्यं ज्ञायमसि क्षुषिरिमत ॥
 वचयेन व विच्छेदु वामेन स्वस्तिरस्तदा।
 जिम्पामन्नु तत्पुष्पीं नामहस्ते पपत्त व ॥
 कस्यदिमिच्छत एक विचारैव तपोवच।
 कस्यस्तिष्ठाभेदेक ये चारे व विभिर्भेदे।
 मयौदुके तु पदेव्य मय्यचारा स्वचकने।
 एव क्वा तु वा लत्र यदाः सर्वै यपामतम् ॥
 क्षिण तन्ना ययो सुत्र जिम्पस्ता वयः स्सुवा।"

एक दिन पार्वतीदेवी सङ्घरिषीके पाय मन्दाकिनो-
 में खान करने गईं। खान करनेके बाद वह कामातुर
 हो गईं। उस समय जगदानन्दचारिको डंको ज्ञाया हो
 मरे। पोसे बिचो समझ ठो सङ्घरिषीने मनेखरोके
 कहा, 'हे मनेखरी! हम बीवीको बहुत मूख समो है,
 यत हमें कुछ पानेकी दोखिजे'। मनेखरीने कहा या
 'कुछ कास उबर जाओ पानेकी उेतो ह'। पोसे कुछ
 समय मोत जाने पर दोनोंने फिर देवीमें कहा, 'पाप
 ल चारको माता है मिय माताधि जो थाय पदाके
 लिए प्रार्थना करता है। माता ययने लमी बच्चोंकी खानि
 देतो है। यतः मैं कश्चामसि। पापये हम लोय खानि-
 की कुछ चाहता ह'। यह सुन कर देवीने कहा, 'हर
 का कर हम लोम भोजन करे गो।' काबिनो, बर्षीनो
 क्या, दिवयार्च विरये सुवातुर जो कर कहा था, 'हे

कर्मणातः कृपामयि ! इमं लोकोको खानिके लिए कुछ दीजिए जिससे लुघा निवृत्त हो ।' कृपामयी देवोने यह मुन हर दाएँ नखायसे अपना करण काट डाला । ऐसा करनेसे उनका मस्तक बायें हाथ पर गिर पड़ा । कण्ठमें नष्ट हो तीन धाराएँ निकलीं । बादेँ और दाहिने और की धाराको उन्हींकी दो सखियोंने मुँहमें लगा दिया और बीचकी धाराकी उन्हींने अपने मुँहमें रख लिया । इसी प्रकार सुण्डच्छिन्न हुआ था । उनका छिन्नमस्ता नामपढनेका यही एक कारण है ।

स्वतन्त्रतन्त्रने लिखा,—

“छिन्नोत्पत्ति प्रवक्ष्यामि तारा सैव च कालिका ।
पुरा कृतयुगे चैव कृतासे पध्वंतेःसने ॥
महामाया मया सर्वा महारतपरायणा ।
शुक्रोत्सारणकाले नु चण्डमूर्त्तिर मूत्तया ॥
तदास्वदेहसम्भूते द्व प्रार्था सम्भवभुवतुः ।
दाहिनी वर्णिनी नाम्ना यस्यां ताभ्या सुदाम्बिका ॥
पुष्पभद्रानटीकूलं जगाम चण्डनायिका ।
मध्याह्ने च लुघार्थे च चण्डिकां पृच्छतस्ततः ॥
भक्षणं देहि तत्पुत्रा विहस्य चण्डिका शुभा ।
चिच्छेद निज मूर्दानं कवन्धोपरि पावती ॥
निज मूर्त्तिं व्रजामाय या पुरा परिकीर्तिता ।
त्रिवर्गां तान्नु दृष्ट्वाहं सहसा क्रोधमागतः ॥
अन्यैः कृतमिदं भूत्वा ततः शूद्राव तयया ।
तदामृतं क्रोधजो देवी मदंश क्रोधभैरवः ॥
वीररात्रिदिने जाता दिनान्तं परमा कला ।
सखीभ्यां सह देवेशि नयां तस्यां प्रचण्डिका ॥”

छिन्नाकी उत्पत्ति कहता हूँ,—वही कालिका और वही तारा छिन्नमस्ता है । पहले सत्ययुगमें सर्वश्रेष्ठ कौलास पर्वत पर महामाया हमारे (शिवके) साथ महा-रतपरायणा थीं । शुक्रोत्सारणके समय महामायाने चण्ड-मूर्त्ति धारण की और उस समय उनकी देहसे दो-सखियाँ निकली जिनके नाम हाकिनी और वर्णिनी थीं । इन दोनोंमें सखीभाव था, श्रविका उनके साथ पुष्प-भद्रा नदीके किनारे गई थीं । दीपहरके समय उन दोनोंने लुघार्थ ही चण्डिकासे कहा था कि, 'हमें भूख

नहीं है । कुछ खानेकी दोजिए ।' तब चण्डिकाने धर्मसे हुए अपना मस्तक काट डाला ।

मातङ्गोष्ठी उत्पत्ति नारदप्रचारात्मने इस प्रकार लिखी है—

“द्वेलासङ्गिरे रम्ये नानारप्रविभूषिते ।
उपविष्टो महादेवीं शम्भोरके प्रिया सती ॥
उवाच प्रेमभावेन स्वपतिं परनेमरी ।
देयुवाच ।

त्वत् प्रसादात्मगनाय न किञ्चित्कृतं मम ।
यत्स्वभवं सर्वतोऽस्तीति सर्वेषां प्रियकारक ॥
किन्त्वहं गन्तुं चिच्छामि मातापित्रोः शुभादये ।

ईश्वर उवाच ।

प्रियं सर्वतद्देवेभिः प्रमायि गमनं त्रिवे ।
चन्देहः किन्तु मे देवि गन्तासि एनिमन्त्रिता ॥
इति श्रुत्वा वनः पशुपतिर्दाम्बिकां सप्रयत्न ।
गतायां प्रायि तत्रैव ततो गन्तासि शङ्कर ॥
एतत्ते समयं भद्रे श्रुत्वानस्मदहं शिवे ।
गतायां त्वयि गच्छामि तवानयनहेतुना ॥
एतन्मिमं तरे मेना चकारोन्मुखमुत्तमम् ।
कौञ्चमाप्रिययामास यत्र देवः सदाशिवः ॥
ततो दृष्टा महादेवः कौमं तं धरणीगतं ।
वामेन पाणिनीयाभ्य समाख्येय गिरेः सुतं ॥
बुभुव्वे तस्य मूर्दानं नेत्राभ्यःशिरसि क्षिपन् ।
साके निवेशयामास पृष्ठा कुशलमध्ययं ॥
उवाच शृण्वया वाचा किमर्थहिमागतः ।

कौंभ उवाच ।

यदि वेदस्ति कृपानाय मयि दासे जगत्पते ।
हिमालयपर्वतां गौरां तत्र नेतुं समुत्सहे ॥

शङ्कर उवाच ।

क्षीघ्रं गच्छ वरारोहे कौंभेन सह पावती ।
पुनः प्रणम्य सा देवी देवदेवं महेश्वरं ॥
कृच्छ्रेण ययमारुण्य मैनाकिना समं ययी ।
क्षणात् पितृग्रहं प्राप्य उत्तीर्यं च रथात्ततः ॥
जगाम वायुवेगेन कौंभेन सह सतरा ।
यत्रास्ते हिमवान् राजा वना च वरवर्णिनी ॥
एवं सुसौपिता तत्र पावती पितृमन्दिरे ।

इसाम कीभिमामाकान्त ठैव हरेवद व ॥
 लकीरकामने मन्मु मकमामान देवराह ॥
 व कथाव्य वेदेन वगन द्विमदुराह ॥
 सिद्धेदुराव व कर्मां एके विमुगलव ॥
 वनीया प्रवरी मक वार्थेय व दरानि व ॥
 व बीपी इवगुणियो कथा लव्य व लभन्ती ॥
 हाव्यभि मे प्रामाणे बाया व मदेव्यदि ॥
 मवा टपपिन मदे हाव्य मृगमेव लव् ॥
 वइमुपला वगडानो वरिहाव मुदेवकम् ॥
 द्विम मगोरी व व वावक्य सुतोव्य ॥
 व कथाकदवाड मृग्य वेदि वनिने ॥
 देमुवाव ॥

पिना मे विमवागिबोर्ती वम्मु इवमवा ॥
 पुना मे वगवाकादा वगना मीकाक एव व ॥
 मन्मुपुना मव वीप्यो वागा व मव मेवव ॥
 वर वार्थेयि मन्मुले वगवाग्नि व वीकव ॥
 वइवका ववाव ॥

वीकिा वगवामेव लवा मदि वगामे ॥
 एव वव मा मदे वाक्य वव ममेपिन ॥
 इति मृगा वगवक्य इववक्य वरीटी ॥
 मगोरी वव वल व ववोपि वगवरी ॥
 मन्मु इवमागिणी टपु ववे वगवण ॥
 वी मव वगवाव वरीटी वव वरीटी ॥
 वरव वीगि मन्मु मवव वगवरी ॥

ववाव वगवारी व वीगुरीववा वग ॥
 मन्मु वव मन्मु वगवामि मगोरीवव ॥
 विगवरी वगवारी विववा मा वगवण ॥
 विगवरीवगवामि वगवरी वगवरी ॥
 मगव वर वरीटी वगवारी वरी वरीटी ॥
 वगवरी वगवरी वगवारी वगवारी ॥
 वगव वर वगवरीवरी वगवारी ॥

वगवरीवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरीवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥

वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी ॥

वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी ॥

वगवरीवगि वगवरी वगवरीवगवरी ॥
 वगवरीवगि वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी ॥

वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥

वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी ॥

वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी ॥

वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥

वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥

वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥

वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥

वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥

वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥
 वगवरी वगवरी वगवरी वगवरी ॥

मातङ्गो नाम मूर्तिस्ते भविष्यन्त न संशयः ॥

सिद्धविद्या महाविद्या यथा त्रिपुरसुन्दरी ।

त्रिपुरभैरवी देवी यथा च भुवनेश्वरी ॥

काली तारा महाविद्या यथा ते उत्तमे तनू ॥

भैरवी द्विप्रसन्ना च तथा धूम्रावतीतनू ।

बगला सिद्धविद्या च मातङ्गी ते तनुरियं ॥”

नाना रत्नैश्च विभूषित रमणोय कौलास-शिखर पर महादेवी शम्भुकी गोदमें बैठो हुई है। इसी समय उन्होंने बहुत प्रेमभावसे शिवजीसे कहा,—‘हे प्रभो! आप सब अभिलाषाओंके देनेवाले हैं। आपको कृपासे हमें कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं है। पिटलघर जानिकी आज मेरी एकान्त इच्छा है।’ यह सुन कर महादेव जो बोले,—‘इसमें मेरी अगिच्छा नहीं है और मैं भी बड़ा जाना चाहता हूँ, किन्तु बिना बुलाये जाना उचित नहीं है।’ इस पर पार्वतीने कहा, ‘मेरे जानेके बाद आप जाइयेगा।’ फिर महादेवजी बोले, ‘मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, कि तुम्हारे जानेके कुछ समय बाद ही मैं तुम्हें जान जाऊंगा।’

इस समय मैनकाने महोत्सव किया था। इस उप-सभमें पार्वतीकी जानेके लिये उसने क्रौञ्चकी भेजा। क्रौञ्चने आ कर शिवजीसे निवेदन किया। महादेवने उसको खुश खातिर को। क्रौञ्चने महादेवसे कहा ‘जगत्पते! यदि मेरी प्रति कृपा करें, तो गौरीकी पिता-हाथ ले चकू।’ यह सुनकर महादेवजीने पार्वतीकी क्रौञ्चने साथ बहुत जल्द जानि कहा। पार्वती महा-देवकी प्रणाम कर रथ पर बैठें और मैनकाकी साथ, जहाँ राजा हिमवान् और मैनका थे तथा जहाँ पार्वती पुरुषसे पानी गईं थी, उस पिटलघरमें पहुँची। इसी समय देवपति शम्भु हाथमें शंख लिये शंखकारका भेष बना हिमालयके घरमें प्रधारे और शंख बचनेका बहाना कर स्त्रियोंको शंख दिखाने लगे। इन्होंने सभीको शंख दिया, किन्तु पार्वतीकी नहीं। पार्वतीके शंख मांगने पर शंखकारने कहा, ‘हे महेश्वर! मैं इसका जो दाम मांगूंगा वह दाम दे दो, तो मैं तुम्हें एक बट्टिया शंख दूँ। पार्वतीके लोकार करने पर शंख कारने उन्हें शंख पहना दिया। दाम मांगने पर

पार्वतीने कहा, ‘मेरे पिता पवनयंत्र हिमवान् हैं, कृपा-मागर महादेव मेरे स्वामो हैं, गणपति आदि पुत्र हैं, मैनका भाई हैं, क्रौञ्च भतीचा है, खेनका भतीचा है, अतएव आप जो चाहें सो मैं देनेको तैयार हूँ। यह सुन कर शंखकारने कहा,—‘हे वरानने! मैं अत्यन्त कामपोषित दृष्टा हूँ, अतः मेरी इच्छा शोच पूरा करो, इसके सिवा मैं और कुछ माँ नहीं चाहता।’ यह सुन कर पार्वती बहुत क्रोधान्वित हो बोलीं, ‘द्विजगत्में सुम्मे इस प्रकार कठोर वचन कहनेकी जिनका शक्ति है? यह सोच कर पार्वतीने मन-हो मन उन्हें शाप देना चाहा। पीछे ध्यान करनेमें उन्हें मालूम पड़ा कि शिव-जीके सिवा यह दमरा कोई नहीं है।

बाद महामायाने कुछ हंस कर कहा, ‘भ्रमो जावो, कुछ दिन बाद तुम्हारा मनोरथ पूरा करूँगा।’ महादेव-जी तो चले गये। इधर पार्वती किरातका भेष धारण कर सखियोंके साथ, जहाँ देवपति महादेव सन्ध्या कर रहे थे, वहाँ नृत्य गीत आदि कामवेशविभूषिता हो पहुँची। इस समय शिवजी सन्ध्या करनेकी इच्छामें मानससरोवरमें गये थे। वहाँ वे कामवेशोच्चना, रत्नवर्णा रत्नवस्त्रपरिधाना, पीनोन्नतपयोधरा, सखोपरि-हता गौरीका देव, उनके पास गये और बोले, ‘हे सुभु, तुम कौन हो? किस लिये यहाँ आई हो? तुम्हारा मनोरथ पूरा करूँगा, सुम्भ पर कृपा करो।’ महादेवके इस प्रकार पूछने पर उस स्त्रीने कहा, ‘मैं चाण्डाल हूँ, तपस्याके लिये यहाँ आई हूँ, देवत्व नाम करना हो मेरी अभिलाषा है। मेरे तपमें विघ्न न डालें, यह आपसे निवेदन है।’ इस पर महादेवजीने कहा, ‘मैं देवता-शिव हूँ और मैं हो तपस्वियोंको फल प्रदान किया करता हूँ। अभी मैं तुम्हें पार्वतीके समान मानूँगा इसमें सन्देह नहीं। हे कल्याणि! अभी तुम कामवशसे मेरी सेवा करो। यदि देवत्व चाहतो हो, तो विलम्ब क्यों करतो? इस पर चाण्डालोने कहा, ‘हे देवदेव जगत्-पते! मैं तपस्याके लिए यहाँ आई हूँ, देवत्व प्राप्त होगा, इसमें आप विघ्न न डालें।’ महादेवने कहा, ‘तुम्हारी तपस्यामें विघ्न न होगा और शरीरमें कष्ट देने का ही क्या प्रयोजन! अभी तुरत देवत्वको जावोगी, मेरा वचन कभी निष्फल होनेकी नहीं।’ इतना कह कर

उभेने वाचछात्रोका इदं पञ्चका धोर उभे उच्यते चापन
 'पर विद्याया। महादेवं उच्यते भाव पाञ्चिङ्गनादि खरुके
 लोका करमेवे विप उताप हो गए धोर बुद्ध कास तत्र
 लोका करमे वाचछात्रोको प्राप्त हुए। पोछे सतीने
 कहा, 'चापको मैं किसी प्रकार ब्रह्म नहीं सकता, चाप
 दोबदेव जगत्पति है। इस प्रकार उन दोनोंमें सङ्को
 प्रीति हो गई; इससे धनकार सतीने कहा था, 'हे अय-
 चाप! अय कौत्रिये धोर इमें अभिलषित कर दात्रिये।'

यह सुन कर महादेवने कहा 'मैंरा रूप चाण्डाल
 सा हो गया है, चतः तुम भी चाण्डालो होमो, इसमें
 मन्वेष्ट नहीं। सती याच्यामि तुम गोपिता उच्छिष्ट-
 चाण्डालिनी नामसे प्रसिद्ध होमो। हे देवि! पूजा करनेसे
 बाद अथ तत्र तुम्हारे पूजा न हो जायगो, तब तब पूजा
 मिर न होमो। तुम्हारे इस मूर्ति का नाम मार्तण्डी
 रह्यमा। जिस प्रकार सिद्धविद्या महाविद्या, त्रिपुरामैत्री
 मुक्तेश्वरी, कामो, तारा तुम्हारी तनु है सती प्रकार
 सैरको, विषमस्ता, बुम्भारतो बयना पादि त्रिभविद्या
 भी तुम्हारे तनु होमो।

किर कतस्ततन्त्रे के मतमें—

'अनोपिच्छवाच्योऽपि हने श्रुत्य धामनाम्नः ।
 गारः पूषात् सिन्धु गीतकानि वर प्रभो ॥
 तदुवाच हरिः पूर्वं गतोऽहं लङ्करं प्रति ।
 तत्र ह्ये किं वात्स' मरुतैरालकैश्चम्पु ॥
 अनेकरसैर्दुक् विविनात्वात्वेर्षु'तम् ।
 धामरास्य वरा वापमुद्दिष्टं वज्रिण मुदा ॥
 अनेकमुच्यतेऽस्या अयुक्ता कुमारी च ।
 उच्छिष्ट' रेदि देहीसे वासीने कहुरेव च ॥
 इमाम्नां दत्तमुद्दिष्टं वसाव प्रीतिपूर्वकम् ।
 पारावकी सारदु एतां वन्दे एतां प्रवन्दित है ॥
 अतोमादिजितैरां विष्णुभि च ज्ञानैरवा' ।
 वरा वक्ष्ये कौण्डिन्यात्मज्ञोवि निरवदे ॥'

उच्छिष्टचाण्डालिनोका विषय कहता अ, ध्यान दे
 कर सुनो। इस समय सरदेने पद्य विषय विष्णुसे पूजा।
 इससे उत्तरमें विष्णु ने कहा, 'एक दिन जब मैं शिव
 रूप में करन गया था, तब मैंने कहा शिवजी मान्य तदा
 सारीचा धीर उच्छिष्ट आतिसे विरा देया। उच्छिष्ट दो,

उच्छिष्ट दो, ऐसा कह कर पावतो महादेवसे चाप
 प्रीतिपूर्वक उच्छिष्ट प्रसाद धामि नग्यो। इन पर उभे
 हीमें शिव-शक्तियोंमें कहा था 'जो तुम्हारे सृति करेमा
 अपमोहादि द्वारा सखीसे अथ अनोरथ मिर होमि।'
 तमोने पावतोका उच्छिष्ट मानकी नाम पड़ा है।

उक्त विवरणके बाद स्वतन्त्रमें दूसरो प्रथम लिखा है—
 'अथ नाठज्ञिनी हने कुर्यात्प्रभं कटी ।
 पुरा कुर्यादिति वै वायाऽसतमात्रके ॥
 बसार्थं अयमूनामो मठ गो वास्यो सुदि ।
 अथर्वसहस्राणि तथोऽप्यत कल्पम् ॥
 तत्र देवाः कल्पार्थं कल्पटी मेवत' इति ।
 तेजोरत्रिभुवतश्च स्वयं श्रीकाञ्चिकाभिरका ॥
 रणमक कुर्यात्वाय रानमाठज्ञिनी भवेत् ।'

कुर्यात्प्रभंइरो मानज्ञिनीका विषय कहा जाता
 है। पक्षके नामा प्रकारके उच्छिष्ट परिपूर्ण कदम्बवर्णमें
 सती भूशोको अय करनेसे विप सतङ्ग नामक सृनि
 प्रकार अथ तत्र तपस्याको हो। यही पर कुर्याके मंत्र
 से तीत्र निष्कन पड़ा था। सती तीत्रोनामि पक्षके जो
 काञ्चिका वा पञ्चिका पोछे अस्मत्त रूप धरकरान्न कर
 राजमातङ्गिनो नामसे प्रसिद्ध हुए हैं।

बुम्भारतोको उच्छिष्टके विषयमें भी इसी प्रकार मत
 मिर है भारदपञ्चरासके मतमें—

'एवमा वचमावन्तु कौकादिचरै हरः ।
 अहम्भा गीरिका तत्र परच्छ इतरनश्चम्पु ॥
 सुववा योजनवाकारिण रेदि भोक्त्वं यकोवित ।
 एवम ववाच ।
 एव प्रतीच्छा मरु ते वासनामि भोजन भूतत' ।
 इत्युक्त्वा विररायाय देव हैर वरुषव ॥
 देभुवाच ।
 रेदि वरा महादेवं सुकिनामि कल्पते ॥
 विष्णुश्च य शक्त्यामि पीडितामि महेश्वर ।
 इति श्रुत्वा विवाहात्तत्र पुनः वाद इवाभिवि ॥
 एव प्रतीच्छा कल्पमि वसव वापि वसिष्ठ ॥
 पुनः प्रतीच्छा का देवो पुनः वाहिन्य ववा ॥
 रेदि मयः वागाय व शक्तोमि विष्णुश्च ॥
 इत्युक्त्वा उच्छिष्टाद्य सुके विष्णु का वरा ॥
 कथं तदया वेशात्तु पूषावैपो अयाय ।

ततो देहे समुत्पन्ने शंभुस्तु निज मायया ।
 उवाच परमेशानः स्वां प्रियां शृणु शोभने ॥
 पश्य भद्रे महाभाने पुरुषो नास्ति मां विना ।
 त्वदन्या वनिता नास्ति पश्य त्वं ज्ञानचक्षुषा ॥
 विघवासि कुरु त्यागं शङ्खसिन्दूरमेव च ।
 सावध्यं लक्षणं देवि कुरु त्यागं पतिव्रते ॥
 एषा मूर्तिस्तव परा विख्याता वगलामुखी ।
 धूमव्याप्तगरीरास्तु ततो धूतावती स्मृता ॥”

(नारदप० ३१ अ०)

एक दिन महादेव कैलास-शिखर पर बैठे हुए थे और गिरिजा उनकी गोद पर बैठी थीं। उन्होंने हृषभ-ध्वजको पूछा था, 'हे देवदेव महादेव ! मैं भूखसे बहुत व्याकुल हो रही हूँ, कुछ खाद्य पदार्थ दीजिए।' महादेवने कहा, 'कुछ काल ठहर जाओ, खानेकी देता हूँ। इतना कह कर शिवजी विरत हो गये। देवीने फिरसे कहा, 'हे देवदेव जगत्यते। मुझे इतनी भूख लगी है, कि मैं जणकाल भी ठहर नहीं सकती, अतः बहुत जल्द 'खानेकी कुछ दीजिए।' महादेवने प्रियतमा पत्नीकी यह बात सुन कर कहा, 'कुछ समय विलम्ब करो, वाट वाल्कृत खाया देता हूँ।' सती फिर भी बोलती, 'हे जगन्नाथ ! विलम्ब करनेकी अब सुभक्त शक्ति न रही, शोष खानेकी दीजिए।' इतना कह कर देवीने पतिको पकड़ कर अपने मुखमें डाल दिया। थोड़े ही समय बाद उनके शरीरसे धूमराशि निकलने लगी। बाद शिवजीने अपनी माया द्वारा देह उत्पन्न कर पत्नीसे कहा था, 'भयि शोभने ! ज्ञानचक्षु द्वारा देखो, मेरे सिवा कोई पुरुष नहीं है और तुम्हारे सिवा न कोई स्त्री ही है। अभी तुम विधवा हो चुकी, शङ्खसिन्दूरका परित्याग करो हे पतिव्रते, अब पातिव्रत्य चिह्न छोड़ दो। तुम्हारे यह मूर्ति वगलामुखी नामसे प्रसिद्ध होगी। तुम्हारे सम्पूचे शरीरमें धूम परिव्याप्त हो गया था। इस कारण तुम्हारा दूसरा नाम धूमावती भी होगा।'।

स्वतन्त्रतन्त्रके मतसे—

“दशप्रजापतेभ्यो सर्वसंहारचला ।

कुदा वेहं विनिक्षिप्य ततो धूमोऽभवन् महान् ॥

तस्माद्धूमावती जाता सर्वशत्रु विनाशिनी ।

काठी काला कालवप्रज्ञा भौमवारे निगामुखे ॥

प्राप्तेऽस्य हवीयायां जाता धूमावती शिवा ॥”

दश प्रजापतिके यज्ञमें मत्तोंने अपनी देह परित्याग कर दो थी। पीछे इस देहसे धूमराशि निकलने लगी, इसीसे इनका नाम धूमावती पड़ा है। मङ्गलवार प्रक्षय-हृतोयाको ग्रामका शिवा धूमावती ही कर उत्पन्न हुई थीं। यह मूर्ति सर्वशत्रु विनाशिनी है।

स्वतन्त्रतन्त्रमें वगलामुखीकी उत्पत्ति इस प्रकार लिखी है—

“अथ यत्प्राप्ति देवेभिः शङ्खोत्पत्तिकारणम् ।

पुरा कृतयुगे देवि वातशोभतपस्थिते ॥

चराचर-विनाशाय विश्वेष्टिन्तापरायणः ।

तपस्यावाच सन्तुष्टा महाश्रीनिपुराम्बिका ॥

हरिद्राह्वयं सरो हृष्टा जलक्रीडापरायणा ।

मदापीतज्जदस्यान्ते सौगाद्रे वगलाम्बिका ॥

धोविद्यासंभवं तेजो विजृम्भति इतस्ततः ।

चतुर्दशी भौमशुता मकारेण समन्विता ॥

कुलरुधसमायुक्ता धीररात्रि प्रकीर्तिता ।

तस्याभेवादर्शनात् त्रै पीतहृदनिवासिनी ।

ब्रह्मास्त्रविद्यासंज्ञता त्रै लोभ्यस्तम्भनी परा ॥

तस्यो विष्णुजं तेजोविद्यासुविद्ययोगं तम् ॥”

हे देवेशि ! वगलाकी उत्पत्तिका कारण कहता हूँ। पहले सत्ययुगमें चराचर विश्वके विनाशके लिए वात-शोभके उपस्थित होने पर विश्वा बहुत चिन्तित हुए थे। पीछे त्रिपुराम्बिका तपस्या-वाक्यसे सन्तुष्ट हो हरिद्राह्वय सरोवर देख कर जलक्रीडापरायणा हुई थीं उस देवीने महापीतज्जदके मध्य श्रीविद्यासंभव तेजको मङ्गलवारकी चतुर्दशी और उसमें कुल नक्षत्रका योग तथा मकार समन्वित होनेसे वीररात्रि हुई। इस वीररात्रिके दिन आधी रातको त्रै लोभ्यस्तम्भिनी पीतज्जद-निवासिनी देवी उत्पन्न हुई थीं। यह तेज विष्णुसे निकला था।

महालक्ष्मीकी उत्पत्ति भी स्वतन्त्रतन्त्रमें इस प्रकार लिखी है—

“अथ धोभुवनां पद्मो त्रै लोकोत्पत्तिमात्रिकां ।

पुरा ब्रह्मा जगत्स्रष्टुं तपोऽप्यत दारुणम् ॥

तपसा तस्य तन्मया तपिः सा परमैश्वरी ।
 त्रिप्रह्वणवचनवस्तुं वराणां तारिणी स्वयम् ॥
 श्रीवाराहिकः ब्रह्मावस्थायां कथयतिप्रदीपिता ।
 श्रीतीरान्तैरवर्षमूया मयनगुह्यैः पुत्र ॥
 विष्णोवच स्वकस्या च वस्तुसममता रवा ।
 इत्याहवन्मं ननुवर्ष शोकापुत्रिभित्तिनी ॥
 तन्वां तिनो हस्तुयना महावाप तिनो कदा ।
 कामुपैश्वरशोभुका त्वो मीमे च वा त्रिभिः ॥
 वाद्य तन्वां महाकम्बो- सर्वशोभ्यवदादिनी ॥

पतन्वत इति शोभ्यको उत्पत्तिश्च विपवर्षे मातृस्वकप
 योमुक्त्वाका विषय लज्जता इ । पश्चिमे ब्रह्मामि जगत्को
 स्रष्टि करमिंके त्रिप तोर तपस्या को सी । तनको तपस्या
 मे परमेश्वरीको नष्ट शक्ति समुद्र को मर्षी सी । पतपव
 चत यत्क लभको तारिणी स्वय उत्पन्न कुर्वी सी । ये
 मर्षशक्तिमयी शोर श्रीवाराहिक नामसे प्रसिद्ध कुर्वी । ये
 पदसे समुद्रमयमके समय श्रीरोदसमुद्रसे निकको सी ।
 ये विष्णुको कथयन्कलादिनी शोर पञ्चमनगता ई । इत्येति
 शो मातृको लक्ष्म्याइमो तिजिंको श्रीनाशुरको विनाय
 बिया शौर जमो तिविमें महामाताइमो रूपमें उपाय कुर्वी
 सी । प्राञ्ज लमासकी यथादमोतिविंको, पयवा शुद्ध शौर
 महाम्बाराको जो त्रिपि पक्वती ई, जमो तिविमें मर्ष-
 श्रीमायादादिनी महाकम्बोका जन्म हुआ था ।

अन्वेषे महाविद्याशा खिर भैरव भिदिष्ट ई ।
 तोडुगत इति मतसे—

अथ काव्येयं सुखं शक्तिवाचायु मेरवम् ।
 महावाच दक्षिणवा दक्षिणमे प्रकथयेत् ।
 महावाचैव मे शार्द दक्षिणा रम्ये परा ॥
 तातावा दक्षिणे भागे बल्लोन्व परिपूर्वयेत् ।
 तव शार्द महामाया तारिणी रम्ये परा ॥
 महाविपुलइन्द्रवा दक्षिणे पूर्वयेत् विवम् ।
 च वचनत्रिनेत्र च प्रतिवचने सुशेरि ॥
 तव शार्द महादेवी ब्रह्मणामङ्गलप्रदा ॥
 अनएव परेशानि च तमोनि त्रयोपि ता ॥
 श्रीवद्व्युत्पन्नइन्द्रवा दक्षिणे त्रयम्बक पञ्चैत् ।
 मेरुणा दक्षिणे मन्वे दक्षिणापूर्तिं कण्डम् ।
 पूर्वयेत् परवन्वेव च वचन तमेव दि ॥

विजयलक्ष दक्षिणति कथय पूर्वयेत् विवम् ।
 कथयपूर्ववाहोवी कर्षमिन्दोररो मर्षैत् ॥
 वृषावती महाविद्या विजयलक्षारिणी ।
 वनकाया दक्षिणमे पूर्ववचन प्रकथयेत् ॥
 महावाचैति विजयार्तं जगत्पदारकारवम् ।
 मार्तवी दक्षिणति मे मात च पूर्वयेत् मिवम् ॥
 त्रिनेत्र दक्षिणामूर्तिं वपदावन्वकारवम् ।
 वमकाया दक्षिणति विष्णुस्तु पराधिपम् ॥
 पूर्वयेत् परमेशानि दक्षिणो वाच पञ्चमः ।
 पूर्वयेत्पूर्ववा दक्षिणति च कथयम् ॥
 महायोत्तमद वेव दक्षवचन मदेत्तरम् ।
 दुर्गाया दक्षिणे भागे शारद परिपूर्वयेत् ॥
 अन्वगतु कर्षविद्यायु जगत्परिशीलित्वा ।
 त एव तपसा मर्षा च दक्षिणमे प्रकथयेत् ॥

वालिवाच/ भैरव वाचको पूजा कानांसे दक्षिण भाग
 में करनी चाहिये । इन प्रकार ताताके दक्षिणमें पञ्चोभ्य-
 को, महाविपुलइन्द्रकी दक्षिण पश्चान्न मिवको, सुबन
 इन्द्रकीसे दक्षिण ब्रह्मवचको, मर्षकीसे दक्षिण दक्षिणा
 शक्तिको, विजयामप्याके दक्षिण कथय नामक मिवको,
 वनकाके दक्षिण महावाच नामक एतवन्न महादेवको,
 मातृकोसे दक्षिण मतङ्गनामक मिवको, कथकाके दक्षिण
 विष्णुकपी सदाशिवको, धनपूर्वाके दक्षिण इगदुत्त
 महेश्वरकी शौर दुर्गामे दक्षिण तातद इत्यादि मर्ष
 मूर्त्तिको पूजा करनी होती है ।

शास्त्रीका कथना है कि दयमहाविद्याने जो दयाम-
 ताररूप शारद किये है । तोडुगतमके १०म ब्रह्माममें
 लिखा है—

एकमन्तारं देवेभ नृदि ये वयदा शुरो ।
 इरातीं श्रीमुनिष्कानि कथयन्त इतिस्तपार ॥
 वा वा देवी कथयन्ता पर मे परमेश्वर ।
 शिव वनाच ।
 ताता देवी मीरुया वगवा पूर्वमूर्त्तिषा ।
 वृषावती वाराह वराह विजयलक्षामूर्त्तिषा ॥
 सुवनेत्तरी वामन स्वाग्मनाथी राममूर्त्तिषा ।
 त्रिपुरा कामरम्यन स्वाहवन्नरुप मेरुती ॥
 महाभमीमैवेत् कुको दुर्गा त्पत्त कथिस्मिणी ।

‘स्वयं’ भगवती काली कृष्णमूर्तिः समुद्रवा ॥

इति ते वयितं देव्यवतारं दशमेव हि ।-

एताषा एजनाद्देवि महादेवमो भवेत् ॥”

हे देवि जगत्पुरो । भुक्ति दशावतारका विषय विस्ताररूपमे कहिंये, यह ह्यतान्त सुननेको भुक्ति तोत्र उक्तरहा है । कौन कौन देवी किस मूर्ति में आविर्भूत हुई थीं, भो भो कहिये । पावतीके इस प्रश्न पर महादेवने कहा था, ‘तारादेवीने मत्तप्रावतार, वगलानि कूर्म, धर्मावताने वराह, छिन्नमस्ताने नृसिंह, भुवनेश्वरोने वामन, मातङ्गोने राम, त्रिपुरासुन्दरीने जामदग्न्य, महालक्ष्मोने बुद्ध, दुर्गांने कल्कि और कालीने ज्योतिषमूर्ति धारण की थी । इनको पूजा करनेसे माघक महादेव सट्ट्य होता है ।’ दशमहाविद्याका ध्यान तत्तत् शब्दमें और अपरापर विषय यन्त्र और मन्त्र शब्दमें देखो ।

दशमाग (स० पु०) दशवां हिस्सा, दशवां भाग ।

दशमान (स० पु०) जनपदविशेष तथा तज्जनपदवासी, एक देशका नाम तथा वहाँके अधिवासी ।

दशमाल (स० पु०) जनपदविशेष, दशमालिक देश ।

दशमालिक (स० पु०) १ देशभेद, एक प्राचीन देशका नाम । २ दशमालिक देशके राजा । ३ उक्त देशके अधिवासी ।

दशमास्य (स० पु०) दशमासान् गर्भे स्थितः यत् । दश मास तक गर्भमें स्थित बालक । गर्भस्थित बालकके गर्भमें सुखसे जोवन वितानेके लिये ये तीन ऋक् उतलाए गए हैं ।

‘यथा वातः पुष्करिणीं समिंशयति सर्वतः ।

एवा ते गर्भं एजन्दु निरैतु दशमास्यः ॥”

‘यथा वातो यथा वनं यथा समुद्र एजति ।

एवा त्वं दशमास्यं सहानं हि जरायुणा ॥”

‘‘दशमासाच्छयानः कुमारो अधिमातरि ।

निरैतु जीवो अक्षतो जीवो जीवन्त्यग्रा अधि ॥”

(ऋक् ५।७८।७-८ ।)

वायु जिस प्रकार जलाशयको परिचालित करती है, उसी प्रकार तुम्हारा गर्भ सञ्चालित हो और दश मासके बाद गर्भस्य जोष निकल पड़े । वायु स्वयं कम्पमान् हो कर वनको कम्पित करती है, समुद्र वायुसे परिचालित

हो कर स्वयं परिचालित होता है । उसी तरह गर्भस्थित जीव दश मास तक गर्भमें रह कर जरायुवेष्टित हो भूमिष्ठ होवे । जीव दश मास तक अपने जननोके जठरमें अवस्थित रह कर जीवित अक्षतशरीर जननोसे निकल जावे । दशमास सुखसे जननोके जठरमें वाम कर जरायुज जीव निर्गत होवे और जननो भो जोषित रहे ! (सायण) अश्विनीकुमारने गर्भिणोके सुखप्रसवके लिये इसी प्रकार स्तव किया था ।

दशमिकभग्नांश—अष्टशास्त्रका एक प्रकरण । जिसके द्वारा भिन्न मात्रको हो अखण्ड आकारमें रख सकें उसका नाम दशमिकभग्नांश वा दशमलवभिन्न है । जब भिन्नका हर दश वा दशका कोई घात होता है, तो उसे दशमलवभिन्न कहते हैं । दो वा अधिक भिन्नोको तुलना करनेमें पहले उन्हें समान हरवाले भिन्नोमें लाना पड़ता है, फिर दूसरे दूसरे हरोंके भिन्नको अपेक्षा समान हरवाले भिन्नके प्रश्न सहजमें बनाये जाते हैं । किन्तु जिन सब संख्याओंको ले कर सहजमें हिसाब बनाया जा सकता है, वे सब अष्ट १०, १००, १०००, १०००० इत्यादि हैं, क्योंकि १के बाद केवल शून्य ही रखना होता है । इन सब अष्टोंको दशमलव अष्ट कहते हैं । किन्तु एक अखण्ड राशिको दशमलवमें आसानोमें ला सकते हैं । जैसे;—

$$७४ = \frac{७४०}{१०} = \frac{७४००}{१००} = \frac{७४०००}{१०००}, \frac{३}{१०} \text{ अथवा } \frac{३००}{३०००}$$

$$\text{अथवा } \frac{३०००}{३००००} ।$$

किसो संख्याके अन्तमें एक शून्य बैठाना और उसे दशसे गुना करना दोनों समान है । हम लोग किसी भिन्नके अंशमें अनेक शून्य योग कर सकते हैं, किन्तु जितने शून्य योग करेंगे उतने ही शून्य फिर हरमें भो बैठाने होंगे ।

इसी प्रकार सामान्य भिन्नको दशमलवभिन्नमें ला सकते हैं । मान लो, $\frac{१६}{१६०}$ को दशमलवभिन्नमें लाना है । अब इसके अंश और हर दोनोंको क्रमशः १०, १००, १०००, १०००० इत्यादिसे गुना करो । गुणनफल क्रमशः $\frac{७}{१६०}, \frac{७०}{१६००}, \frac{७००}{१६०००}$ इत्यादि होगा । यहा

भागशेष पहलके किसी भागशेषके बराबर होगा। अब इससे स्पष्ट जान पड़ता है कि जितने भागशेष समान होंगे, भागफलमें फिर उतने ही समान अङ्क आवेंगे। यहाँ पर ऐसा प्रश्न किया जा सकता है कि जब अनेक सामान्यभिन्न दशमलवभिन्नमें परिणत नहीं होते, तब दशमलवको क्या आवश्यकता है? इसका उत्तर यही है कि दशमलवके सङ्कलन, व्यवकलन, गुणन और भाग सामान्य भिन्नको अपेक्षा बहुत सहज है। यद्यपि सभी सामान्यभिन्न समान दशमलवभिन्नमें परिणत नहीं होते, तो भी उसका एक ऐसा निकट दशमलव निकल सकता है कि यदि उस सामान्य भिन्नके बदले वह दशमलवभिन्न वैठाया जाय, तो बहुत सामान्य भूल होता है।

सभी दशमलवभिन्न सामान्य भिन्नके रूपमें नहीं लिखे गये हैं। वे इस प्रकार चिह्न द्वारा लिखे जाते हैं, जैसे—हरमें जितने शून्य रहेंगे, अंशके उतने अङ्क दाहिनी ओरसे ले कर एक विन्दु द्वारा चिह्नित करते हैं। जैसे—

$$\frac{१४०३२६}{१०} = १४०३२.६; \quad \frac{१४०३२६}{१००} = १४०३.२६;$$

$$\frac{१४०३२६}{१०००} = १४०.३२६; \quad \frac{१४०३२६}{१००००} = १४.०३२६$$

विन्दुकी बाईं ओरके अङ्कोंमें दशमलवकी कितनी अखण्ड राशि है और दाहिनी ओरके अङ्कोंमें कितने भिन्न हैं (जिसका हर १० है), वह मालूम हो जाता है। जैसे—पहलेकी दाहिनी ओरके अङ्कमें एक भिन्न है जिसका हर दश है, दूसरेका १०० है इत्यादि समझा जाता है। सभी दशमलव पूरे आकारमें नहीं लिखे जाते। ७ लिखनेसे १०.०७ लिखनेसे $\frac{७}{१००}$ इत्यादि समझा जाता है। दशमलवको दाहिनी ओर शून्य वैठानेसे उसके मानमें कुछ फर्क नहीं पड़ता। जैसे—३ और ३.००। पहला दशमलव $\frac{३}{१०}$ और दूसरा $\frac{३००}{१०००}$ के समान है। हम लोग देखते हैं कि दूसरा दशमलव पहलके अंश और हर दोनोंका १००से गुणा किया गया है। अतएव दोनोंका मान समान है।

दो दशमलवके समान हरके बनानेमें जिस दशम-

लवमें दूसरे दशमलवकी अपेक्षा केम अङ्क है उसमें जितने अङ्क कम है उतने शून्य वैठाने हैं। मान लो, '५४ और ४' ३२६ है। पहला दशमलव $\frac{५४००}{१००}$ और दूसरा $\frac{४३२६}{१०००}$ । यद्यपि हम लोग देखते हैं कि दोनोंका हर समान है किन्तु $\frac{५४००}{१०००} = ५.४००$ । यद्यपि राशिमें दशमलव घटानेमें वैठाने हैं, जैसे १२६ = १२६.०। किन्तु अन्तिमको विन्दो लिखनेसे नहीं होता है। यह स्मरण रखना चाहिये कि १२६ और १२६.०० दोनों बराबर हैं। क्योंकि पहला १२६ और दूसरा $\frac{१२६००}{१००}$ है। किम तरह सामान्य भिन्नको विशुद्धरूपमें दशमलव भिन्नमें वा भिन्नमें ला सकते हैं उसका यहाँ पर जानना आवश्यक है। जिस भिन्नका हर मौलिक अङ्क २ और ५ को छोड़कर किसी दूसरे मौलिक अङ्कमें विभाज्य हो वह भिन्न सम्पूर्ण रूपसे सामान्य दशमलवमें परिणत नहीं होता। फिर जिस भिन्नका हर उन दोनों मौलिक अङ्कोंसे विभाज्य हो उस भिन्नको सामान्य दशमलवमें परिवर्तन कर सकते हैं।

दशमलवका सङ्कलन, व्यवकलन, गुणन और भाग होता है। सभी आवर्त दशमलव भिन्नको विशुद्ध रूपसे दशमलवमें नहीं ला सकते। जिस भिन्नका भागफल शेष नहीं होता और भागफलमें कई एक अङ्क बारबार आते हैं, उस भागफलको आवर्तदशमलव कहते हैं।

आवर्तदशमलव दो प्रकारका होता है—विशुद्ध और मिस्र। जिस दशमलव भिन्नमें दशमलव विन्दुकी बाट पहले ही अङ्कसे एक वा अधिक अङ्क बार बार आने लगे उसे विशुद्धआवर्त दशमलव कहते हैं जैसे—'५५५५...'। जिस दशमलव भिन्नमें दशमलव विन्दुकी बाट कोई ओर प्रकारके अङ्क आ कर फिर एक वा अधिक अङ्क बार बार आने लगे उसे मिस्र-आवर्त दशमलव कहते हैं। जैसे—'३२३२३२.....'।

मगनाश और पौनःपुनिकदशमिक देखो। 'दशमिन् (सं० त्रि०) नवते रुद्धं दशमो सा अवस्थामेदो अस्त्यस्य पूरणन्तात् इति। अति वृद्ध, जिसकी उमर ६० वर्षसे अधिक हो गई हो।

दशमी (सं० स्त्री०) दशम-डोप। १ तिथिविशेष, चान्द्र

शामके किसी पक्षकी दशमी तिथि । २ विसुखावस्था ।
 ३ मरवावस्था । ४ धर्मिय बयोवस्था ।
 दशमीश्र (म० द्वि०) दशम्या पक्षस्यायां तिष्ठति न्वा क ।
 १ पतिव्रत, त्रिपथी कमर ८० वर्षमे पश्चि बहुरे हो ।
 दशमुख (म० पु०) दशमुखाणि मुख । रावक ।
 दशमुखान्ताव (स० पु०) दशमुखान्तावन्ताव । राम ।
 दशमुखरिपु (स० पु०) दशमुखान्तरिपुः ६ तत् । राम ।
 दशमूलक (स० श्लो०) दशानां मूलानां समाहारः ।
 हाथी, भैंस, खट, गाय, बकरा मीना, घोड़ा मक्का,
 मनुष्य और श्वे इत दश जोबोका मूल । एत समस्त
 प्रकारके मूर्तके विषयमें सुप्तमें इस प्रकार लिखा है—
 गाय, भैंस, बकरे, भेड़, हाथी, घोड़े, मक्के और
 खटका मूल तोष्य, खट, उष्य, तिक्त, पचात्पुत्रक रस
 कृशु, शोचनकर, कफ, मान, क्षमि, भेद, विष, सुभ्रम,
 पर्य, बहररोग, कुष्ठ, शोथ, पश्चि और पाण्डुरोगका
 शान्तिकर, इत्ये और पश्चिकर है । इसके विवा कृशे
 शोचोका मूल खट, तोष्य, उष्य, कृशु, शोचनकर, कफ
 और बाहु शान्तिकर, क्षमि, भेद और विषनायकः पशु,
 बहररोग, सुभ्र, शोथ, पश्चि और पाण्डुरोगहारो,
 भेदक, इत्या पश्चिकर तथा पापक है ।

विषय विरल मूल उच्यते देवो ।

दशमूल (स० श्लो०) दशानां मूलानां समाहारः, पात्रादि
 ज्ञात् न डोप । पाचनविषय । सरिवन, पिठवन, छोटे
 बटार, बड़ो बटार और मोखर ये कष्टमूल तथा बेल,
 सोनापात्र, मसारी, बनियारा और पात्र इष्टमूल
 कहकारते हैं । इन दोनोक घोलकी दशमूल कहती है ।
 इन दशमूलके शाहमें दोवरका पुष्य पात्रा तोषा मिना
 कर शिवन करनेसे मक्षिपात, क्वर, मान, श्याम, तन्दा
 पात्रमूल तथा कष्ट और ब्रह्मवैषी वेदना जातो
 रहतो है ।

दशमूलशुद्ध (म० पु०) शोधयविषय, एक प्रकारकी
 दवा । दशमूल मिलित । २१ मिरको ६३ मिर जसमें
 डाल कर पाग पर बहाते हैं । जब जल विष्य १६ मिर
 बच जाता है, तो उसे छतार लेते हैं । बाद इस
 काढ़में १४ मिर सुतना शुद्ध और ६३मिर शदरकका रस
 मिला कर उसे शोभी पचने दाब करते हैं । काई या

बना हो जाने पर उसमें पीपर, पिपरामूल, मिर्च मोठ
 र्शिम, विडङ्ग, जगपत्रनाथ जोतामूल चर्द और पक्ष
 मयक प्रवेक १ पत्र डाल कर पखी तरह मथते हैं ।
 पाक हो जाने पर उसे खिच माच्छमें रच जोड़ते हैं ।
 इसको सेवन-मात्रा एक तोषा है । इससे पश्चिमाश्व
 पापक पक्षी, शोधा और उर पादि रोग बहुत उच्छ
 दूर हो जाते हैं । (नैबन्धन० महन्धि०)

दशमूलशुद्ध (स० श्लो०) चन्द्रतोष्य उषरनायक दृग
 भेद । दशमूल ६३मिरकी ६३ मिर जसमें डाल कर पश्चि
 देते हैं । पोखे पीपर, पिपरामूल, चर्द, जोतामूल, मोठ
 और मयकार प्रक्षोकाका न तोषा से कर पूष बनाते
 हैं । जो पीर दशमूलके काबको एक माब पाक कर
 पोखे कल्कद्रव्य पाक करते हैं । बाद जो ज्ञान कर ६३मिर
 दूषके साथ पाक किया जाता है । ऐसा करनेसे बाद
 क्रिमे उभ दूष मिश्रित होको ज्ञान लेते हैं । इससे
 सेवन करनेसे विषम क्वरादि रोग जाता रहता है ।

दशमूलतैल (स० श्लो०) चन्द्रतोष्य विरलातायक तैल
 शोधयमेद । प्रसुत प्रकारको—कटुतैल ६३ मिर, शागव्य
 दशमूल १२३ मिर, जस ६३ मिर, मन्दापुषी पौषा
 रस १६ मिर, शाबार्क दशमूल १ मिर । इस तैलके
 सेवन करनेसे मक्षिपात, शिरका रोग और पश्चिपश्चि
 तुर त ही पारोम्य हो जातो है । कृशरी विधि—कटु
 तैल ४ मिर, दशमूलका ज्ञाय १६ मिर, कल्कार्य दशमूल
 १ मिर । इस तैलका नम लेनेसे पसमय पर बाशोका
 मक्षिद होना बन्द हो जाता है तथा पश्चि शिरामूल
 पादि रोग जाते रहते हैं ।

पक्षमकार—कटु तैल ४ मिर, दशमूलका ज्ञाय १६
 मिर, पूष ५ मिर, कल्कार्य मोखर क्वरमय भेद मन्दा
 भेद, क कोल, चोरक कोषी, प्यडि, इडि, प्रक्षो ५
 तोषा । इसका मयहार करनेसे मातमूल, विषमूल,
 कफमूल, शिरारोग पादि नष्ट हो जाते हैं ।

दशमूलतैल—शुष्य, उष्य और मध्यमर्ध भेदसे
 तोल प्रकारका है ।

शुष्य दशमूल—कटु तैल ३ मिर, दशमूलका ज्ञाय
 १६ मिर, कल्कार्य दशमूल १ मिर । इससे शान्तिपश्चि
 क्वर, श्याम और बाहरोग जाता रहता है ।

सधम दशमूलतैल—कटु, तैल ४ मेर, काथायं दशमूल, करञ्जबीज, सन्हालूका पत्र, जयन्तोपत्र, धुत्रूर-पत्र प्रत्येक ४६ पल, जल ६४ सेर, श्रेय १६ मेर, कल्कायं काय द्रव्य प्रत्येक ६ तोला । इसका सेवन करनेमें गिरो रोग नष्ट हो जाता है ।

बृहद्दशमूलतैल—कटु, तैल ४ मेर, काथायं दशमूल प्रत्येक १० पल, जल ६४ सेर, श्रेय ८ सेर, अटरकका रस ४ सेर, कल्कायं पोपर, पिपरामूल, चई, चोतामूल, मोंठ, त्रिकटु, जीरा, क्षणजोरा, मफेट भरमो, मैश्वर, यवचार, निसोय, इल्दो, टारुइल्दो प्रत्येक २ तोला, पाकका जल ८ सेर । यह तैल श्रम्यङ्ग और नसमें व्यवहृत होता है । इसमें गिरोरोग और कर्ध्वजलुगत नाना प्रकारके कष्ट दूर हो जाते हैं ।

दूसरे प्रकारका बृहद्दशमूलतैल—कटु, तैल १६ मेर, काथके लिये दशमूल १२॥ सेर, श्रेय १६ सेर, धुत्रूरपत्र १२॥ सेर, सन्हालूका पत्र १२॥ सेर, जल ६४ सेर, श्रेय १६ सेर, चूर्णके लिये वासकमूलकी छाल, वच, देवदारु, कचूर, रास्ना, यष्टिमधु, मिर्च, पीपल, मोंठ, क्षणजोरा, कायफल, करञ्जबीज, कुट, इसलोको छाल, जंगलीधिम, चोतामूल प्रत्येक ८ तोला । इसका व्यवहार करनेसे कर्णशूल, शिरःशूल और नेत्रशूल तुरन्त ही दूर हो जाता है ।

महादशमूलतैल—कटु, तैल १६ सेर, काठके लिये दशमूल १२॥ सेर, जल ६४ सेर, श्रेय १६ सेर, विजोरेका रस १६ सेर, अटरकका रस १६ सेर, धुत्रूरका रस १६ सेर । चूर्णके लिये पीपल, कुटकी, करञ्जबीज, क्षणजोरा, खेतघण्ट, वच, मोंठ, चोतामूल, कचूर, देवदारु, रास्ना, छुरछुर, कायफल, सन्हालूका पत्र, चई, गेरुमट्टी, पिपरामूल, शुष्कमूला, अजवायन, जीरा, कुट, वन-अजवायन, विहङ्गकमूल प्रत्येक १ पल । इस तैलके सेवन करनेसे कफ, खाँसी और शिरका रोग चंगा हो जाता है । यह प्रत्यक्षमें फल देनावाला है । शिरके रोगमें यह एक प्रधान तैल है ।

दशमूलशुण्ठी—ज्वरघ्न श्लेष्मभेद । इसकी प्रसुतप्रणाली इस प्रकार है—३२ तोला जलमें २ तोला दशमूल डाल कर काढ़ा बनाते हैं । ८ तोला जल बच जाने पर उसे

उतार लेते हैं । पीछे ठममें आध तोला मोंठका चूर्ण डाल देते हैं । इसमें सेवन करनेमें ज्वरानिवार और श्लेष्म माय ग्रहणी रोग नष्ट हो जाता है । (भयङ्कर) दशमूलाटिकाय (म० पु०) च्वरनाशक श्लेष्मविशेष । प्रसुत प्रणाली—धूलका किलका, गंभारी, मोना-पाठा, श्योनाक, गनियारी, जयन्ती, गोमरु, भटकटैया, इडतो, मंरिवन, चाकण्ण, रास्ना, पीपल, पिपरामूल, कूटकी, मोंठ, विरायना, मोघा, गुलब, गुलशकरी, टाख, दुःरानभा और शतमूली इन सबका काय सेवन करनेमें वातजनित च्वर तथा अन्य प्रकारके उपद्रव ज्ञाने रहते हैं ।

दशमूलारिष्ट (म० पु०) वाञ्छीकरणाधिकारी श्लेष्मभेद । प्रसुत-प्रणाली—दशमूल प्रत्येक ५ पल, चोतामूल २५ पल, कुट २५ पल, सीध २० पल, गुलब २० पल, श्यावना १६ पल, दुःरानभा १२ पल, खैर, विहङ्ग, इड प्रत्येक ८ पल, कटु, मञ्जिठा, देवदारु, विहङ्ग, यष्टिमधु, काञ्जिका निर्मली, बहेड़ा, पुनणया, चई, अटामामो, प्रियङ्गु, अनन्तमूल, क्षणजोरा, निसोय, रणुक, रास्ना, पीपल, सुपारी, कचूर, इल्दो, मुल्फा, पद्मकाष्ठ, नागेश्वर, मोघा, इन्द्रजो, ककटशुद्धी, जीवक, न्ययमक, मेठ, मश-मेठ, कंकोल, चोरकंकोला, कृदि, हृदि प्रत्येक २ पल, पाकके लिए उक्त समुदायका ८ गुना जल, श्रेय चतुर्थांश, टाख ६० पल, जल ३० सेर, श्रेय २२॥ सेर । इन डीनों काठके एक साथ मिला कर मट्टोके बरतनमें रखते हैं और पीछे मधु ४ सेर, गुड़ ५० सेर, धवईका फूल ३ पल, कंकोल, गुलशकरी, रक्तचन्दन, जायफल, लवङ्ग, दारचोनी, इलायचो, तेजपत्र, नागेश्वर, पीपल प्रत्येक २ पल और न्यगनाभि ॥ तोला इन सबका एक साथ मिला कर उस मट्टोके बरतनमें डाल देते हैं । बाद बरतनको टक कर एक मास तक जमोनमें गाड़ रखते हैं । पीछे उसमें निर्मलो फल दे कर रसको साफ करते हैं, यह अरिष्ट, ग्रहणी, अरुचि, वातव्याधि, श्वास, कास, धातुचय और सिंह आदि रोगोंमें विशेष उपकारी है । यह अत्यन्त पुष्टिजनक, बलकर, शुक्रवर्धक और कामोद्दीपक माना गया है ।

दशमूलतैल (म० क्लो०) वाधियं नाशक तैल श्लेष्म-

राम, कैकयीसे भरत तथा सुमिवामे लक्ष्मण और जत्रुल्ल उत्पन्न हुए। कौग्याकि गान्ता नामको एक कन्या भी थी, जिसे दशरथने लोमपाटको दत्तकरूपसे दिया था। राम जत्र बड़े हुए, तब उन्हें राज्यमिंज्ञामन पर अभिषिक्त करनेका आग्रह करने लगा। कल रामचन्द्रजीको राजगद्दी मिलेगी, यह खबर मन्थरा हाग कैकयीकी लगी। इस पर कैकयीने दशरथसे पूर्वके दो बर मंगि। पहला रामकी चौदह वर्षका वनवास और दूसरा भरतकी राज्य। दशरथ अपनी प्रतिज्ञाको पालन करनेके लिये वै मा हो कानिही वाच्य हुए। रामके वन चले जाने पर राजा दशरथ बहुत दुःखित हुए और पुत्रविद्योगसे ही आधे रातकी पड़त्वकी प्राप्त हुए। पीछे इनको मृतदेव तैल-द्रोणीमें रखके गई और ननिहानसे भरतने प्रा कर अर्घ्येष्टि-क्रिया की। राम देखे।

० शानिकके पुत्र, जिनके पुत्रका नाम ऐडवीही या (भाग०) ३ मन्माट्, अशोकके पुत्र। विपदही देखे।

दशरथसुत (सं० पु०) दशरथस्य सुतः ६-तत्। राम। दशरथसुत (सं० पु०) दशरथस्य सुतानि अस्य। महस्त्र-किरण, सूर्य।

दशरात्र (सं० पु०) दशभि रात्रिभि निर्वातः ठञ्, तस्य लुकि तद्विहार्य द्विगो अच् ममा०। १ दशरात्रसाध्य यागमेंद, एक यज्ञ जो दश दिनेसि समाप्त होता है। (लौ०), २ दशार्ना रात्रीर्ना समाहारः। रात्रिदशक, दश रात। संख्यावाचक शब्दके बाद रात्रि शब्द रहनेसे समाहारद्विगु समाप्तमें लौचिह्न होता है।

दशरूपक (सं० लौ०) दशरूपकानि दृश्यकाव्यानि प्रतिपाद्यत्वेन सत्यत्र अच्। नाटकादि लक्षण प्रतिपाटक ग्रन्थमेंद। इस ग्रन्थमें दृश्यकाव्यके लक्षण और नायक नायिका आदिके लक्षण तथा नाटकाके दोष गुण आदि विविध रूपसे बतनाये गये हैं।

दशरुभृत् (सं० पु०) दश-मत्स्यकर्मवराहादीनि रूपाणि विभक्ततीति मृ-क्षिप्-तुगागमच्च। विष्णु। दशावतार देखे। दशरत्नणक (सं० पु०) दश लक्षणानि यस्य। धर्म। धर्मके दश लक्षण हैं, इसीसे इसे दशलक्षण कहते हैं। वृत्ति, जमा, दम, अश्लेष, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धी,

विद्या, मन्व और अक्रोध ये दश धर्मके लक्षण हैं।

दशवक्त्र (सं० पु०) दश वक्त्राणि यस्य। रावण।

दशनाजिन् (सं० पु०) दश नाजिनो रथे यस्य। चन्द्रमा।

दशवर्षिक (सं० वि०) दशसु वर्षसु भयं तत्र, दशर-पट वृद्धिः। दशवर्षभय, जो दश वर्षमें पीता से।

दशवाह (सं० पु०) सथादेव। (भाग० ३, १, १५०)

दशविध (सं० वि०) दशविधा प्रकारा यस्य। दश प्रकार, दश तरह।

दशवोर (सं० लौ०) दशवोरा यस्य। मन्मथेद, एक सत्र या यज्ञका नाम।

दशव्रज (सं० पु०) ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम।

दशगत (सं० लौ०) दशगुणितं गतं। १ दश मी, हजार। २ तत्संख्येय, वह जिसमें हजारको संख्या हो।

दशगतनयन (सं० पु०) दशगतं नयनानि यस्य। इन्द्र। दशगतरश्मि (सं० पु०) दशगतं महस्त्रं रश्मयोऽस्य। सूर्य।

दशगतात् (सं० पु०) दशगतं भस्तीति यस्य। इन्द्र।

दशगताद्दि (सं० स्त्री०) दशगतं अक्षुण्यो यस्य। १ गत मूलो। २ गतावरो।

दशगोर्ष (सं० पु०) १ रावण। २ एक प्रकारका अश्व जिससे चलाये हुए अश्व निष्कलन किये जाते हैं।

दशगथा (सं० स्त्री०) दश च मय च अस्यां विष्णु तो। सामवेदके विन्यामके भेदमें एक विष्टुतिका नाम।

दशसाहस्र (सं० लौ०) दशगुणितं महस्त्रं परिमाणमस्य अणु उत्तरपदवृद्धिः। १ दशगुणित सहस्र, अशुत, दश हजार। २ तत्संख्येय, उतनीही संख्याश्लोका।

दशसाहस्रिक (सं० लौ०) दश सहस्राणा प्रमाणं अणु ततो ठञ् उत्तरपदवृद्धिः। अशुत परिमित मागादि, दश हजारका हिस्सा।

दशहरा (सं० स्त्री०) दश षट्सोपादानहिंसादि दश-विधानि दशजन्मकृतानि वा पापानि हरतीति दृ-अच् ततटाप्। ज्यैष्ठ मासको शुक्लादशमी। इसी दिन गङ्गाका जन्म हुआ था।

ज्यैष्ठ मासकी शुक्लादशमी महलवारकी इत्या नक्षत्रमें गङ्गा स्वर्गसे मर्त्यलोक पर पतारो थी। इसीसे

यह दिन अश्वत्थ पुष्पजनक माना जाता है। इस तिथि में मंत्र प्रचारके पाप नष्ट हो जाते हैं। इस तिथिमें यदि गङ्गास्नान किया जाय, तो अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होता है। इस तिथिमें आश्विनी दश प्रचारके तथा दश अश्वत्थ पाप हरण करती है। इसी कारण इस तिथिका नाम दशहरा पड़ा है। अक्षय्या तथा दशहरा, अश्विनी पूर्वक ही या पौर परदारवेला से तोन प्रचारके आदिख पाप हैं पाह्य अक्षय्य, पिण्डता पौर अश्वत्थ प्रभाव से चार मासय पाप हैं। परब्रह्मचरित्तन मन ही मन दूमरीका धम मन करनेको चेष्टा पौर मिथ्यामिनिवेश से तोन मानन पाप हैं। ये दश प्रचारके पाप म गति हरण किये जाती हैं। इसीसे जो छोटा दशमीका नाम दशहरा रक्खा गया।

“अक्षय्यपुष्पजनक (दशा विवादिनामत्) ।
 बरदारोपसेवा न कालिक विविच दृष्ट ०
 नाक्षरप्रसन्नैव वैश्रवणवर्जित इववः ।
 अश्वत्थपञ्चमय बाहमन स्तान्पत्तुर्षि ॥
 नरुषैव्यन्मिान मनकामिद्विपत्तन ।
 विनयामिनिवेश विविच कर्ममावर्ष ॥
 एषामि वच नाग्नि मङ्गल वायु वाङ्मि ।
 एतास्व मय मे हेमि मके विष्णुपरोरुभवे ॥
 विष्णुपार्ष्णैरुभूत् नये विपचगामिनि ।
 बर्षैर्विदि विचमते वा न इर वाङ्मि ।
 नदवा कश्चिद्व्यये श्रीमाङ्गि नद्वि ।
 अमृतैवान्मुना वेदि धायीरिपि सुभीदि मां ॥ (हरवत्स)

दशहराके दिन मङ्गास्नान करते समय इस मन्त्रको पढ़ कर स्नान करना चाहिये। यदि इस दशमीमें इष्टा नक्षत्रका योग हो, तो इस अश्वमेध दश प्रचारके पाप चय होते हैं पौर वज्र तिथि यदि मङ्गलनारमें पड़े तो दश प्रचारके पाप नष्ट हो कर छो अश्वमेध यज्ञ करनेका फल प्राप्त होता है। जोठ मासमें बटि मन्माच हो तो भी तन मासको यज्ञा दशमी तिथिमें दशहरा होती। बर्षा पर तिथिमाहात्म्य ही प्रथम है। (किष्कि०) यदि दशमी तिथि दो दिन तक व्याप्त रहे पौर पक्षसे दिन इष्टा नक्षत्रका योग हो तो लघो दिन दशहरा होती। यदि पक्षसे दिन इष्टा नक्षत्र न हो तो दूसरे दिन पौर

यदि पूर्व दिन मङ्गलवार पड़े, तो तमो दिन दशहरा माननी जायगी। बाद दूसरे दिन केवल तिथिमें स्नान करनेको लिखा है। यदि इस दिन मङ्गा स्नान न कर सके तो किसी नदीमें घण्टान घोर तर्पणादि करनेसे भी सारीसे भाग पाप पूर हो जाता है। (एकपु०) ५

दशहरा तिथिमें ग गामूर्ति बनवा कर ग गामूर्त्ता करने चाहिये। इस दिन य गामूर्त्ता पचय्यकृतंय है पौर मङ्गल, अक्षय्य, मङ्गल मकरादि नक्षत्रमु लोम, शोमे पादिके बनवा कर उनके गंगामि मि अनेका विधान है। यदि माने, यदिके न बनवा सके, तो पिण्डके जो बना कर काम चला सकते हैं पौर दशप्रदोषको नला कर य गति बहा देना चाहिये। इस दिन जो भोई मनुष्य 'यो नम मिवाये नारायण्यै दशहरायै मङ्गावे नमा' यह मन्त्र दिन रात जप करे, उसे पांच प्रकार दशधर्म फल प्राप्त होता है। दशहराके दिन मङ्गास्नानमें बैठ कर जो गंगाका प्यौर पाठ करती हैं, वे अक्षय वा दरिद्र नष्टा होती। इसी कारण इस दिन दश प्रचारके पापोंको चय करनेके सिधे मना स्नान पचय्यकृतंय है।

दश (ल० प्यो०) दशतीति दशम-क ततो न लीपय वा दभ्रते इति अच् ततश्च ॥ १ अश्वत्था इत्यतः । २ दोष बर्त्ति, दोषे ली भयो । ३ विपत् । ४ अश्वत्थान् अणुकेषां पौर । यह दश मन्त्र बहुवचनान्त है । ५ आश्वत्थ गम-नामादिक्य अश्वत्था, यह दश दश प्रचारको है। मनुष्य को दश दशाप है—मर्मबाध, कर्म, वाक्, लोभात्, योगत्, दोषन, अविज्ञता, अरा, प्राचरोध पौर अक्षय्ये दश मनुष्यकी अश्वत्था दश दशके अर्थोत्त है। (मोक्षधर्ममें नीलकण्ठेच) । ६ कामक्षत विरहियो को अश्वत्था । यह अश्वत्था भी दश है, यथा—नवनमीलि, चिन्ता, अहम्, निद्राच्छेद, तनुगा, विपयनिष्ठति अज्ञानाय, अनुमाद, मूर्च्छा पौर मरत्तः पहले नामकथा दशान, बाद पक्षसे लिये चिन्त, चिन्ता करते करते नायकको पाने का सहस्य इस मङ्गलसे निद्राका आह, निद्रा आह होनेसे जो शरीर चोच हो जाता है, शरीर चोच हो जानेसे फिर कोई विषय अच्छा नहीं लगता, तन पापसे पाप लम्बा जाती रहती है। बाद एकवारगी लक्ष्य होय पड़ता है, अन्ततसे मूर्च्छा पा आने है। इस

सूर्यासि सूर्य, तक होनेकी सम्भावना है। विरहवर्षन करते समय इन दशाधीनमें केवल ८ का ही वर्णन करते हैं, सूर्याका नहीं। (अत्रंकरमात्र) ७ यज्ञीको स म फल विधाक कालमें इरूप प्रवस्था। ज्योतिषमें इनका विषय इय प्रकार लिखा है—

सत्ययुगमें सान्निर्द्धीदशा, वेतामें गौरीदशा, हापरमें योगिनोदशा और क्लियुगमें नाक्षत्रिकी दशा द्वारा मनुष्यके शुभाशुभका विचार होता है। प्रभौ अष्टोत्तरो नाक्षत्रिका दशाका विवरण देहा जाता है।

सूर्यका दशाभोगकाल ६ वर्ष, चन्द्रमाका १० वर्ष, मङ्गलका ८ वर्ष, बुधका १७ वर्ष, शनिका १० वर्ष, बृहस्पतिका १८ वर्ष, राहुका १२ वर्ष और शुक्रा २१ वर्ष है। इनमेंसे प्रत्येक दशाकी अन्तर्दशा है।

एक चतुकोण-क्षेत्र अङ्कित करके उसमें पूर्वादि अष्ट-दिक् चिह्नित करो। पीछे इस क्षेत्रको आठ दशाधीन पूर्वदिशामें प्रारम्भ कर क्लिकादि नक्षत्र स्थापन करो। पूर्वादि चारों ओरमें तीन तीन करके और अन्यादि चार कोणोंमें चार चार करके नौ नक्षत्र रक्को। यथा,—पूर्वदिशामें—कृत्तिका, रोहिणी और सृगमिग इन तीन नक्षत्रोंमें जन्म होनेमें रविकी दशा, घनि-कोणमें—आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्या और अश्लेषा इन चार नक्षत्रोंमें जन्म होनेमें चन्द्रकी दशा, मघा, पूर्वफल्गुनी और उत्तरफल्गुनीमें जन्म होनेमें मङ्गलकी दशा इत्यादि, चित्रा, स्वाता और विशाखा नक्षत्रमें जन्म होनेमें बुधका दशा; अनु १वा, ज्येष्ठा और मूला नक्षत्रमें जन्म होनेमें शनिका दशा, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, अभिजित् और चवगा नक्षत्रमें जन्म होनेमें बृहस्पतिकी दशा; घनिष्ठा, अतमिषा और पूर्वभाद्रपदनक्षत्रमें जन्म होनेमें राहुकी दशा; उत्तरभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी नक्षत्रमें जन्म होनेमें शुक्रीका दशा होती है। सूर्य, राहु, मङ्गल और शनि इनका दशामें मनुष्योंको दुःख तथा बृहस्पति बुध, चन्द्र और शुक्री इनको दशामें सुख मिलना है। वर्तमान शकाब्दके अहर्दशमें जन्मकालीन शकका अहर्दशदिनमें जितने वर्ष बचे, उनके प्रतिवर्षमें ५ दिन १५ दण्ड ३१ पल ६१ विपल २४ अनुपल जोड़ते हैं, अब योगफल जितना होगा उतना ही वर्ष उमर मान कर दशाका निर्णय करते हैं, इसीकी सावधानि कहते हैं।

जन्मकालमें नक्षत्रका जितना दण्डपन होता गया है और जितना दण्डपन बच रहा है, उसे जान कर अनुपात द्वारा दशाकालमें कितना अंश होता गया है और कितना अंश अवशिष्ट है उसका निर्णय करना होगा। जिस तरह रोहिणी नक्षत्रमें किसी मनुष्यका जन्म होनेसे २ वर्ष बीत गया है और चार वर्ष अवशिष्ट है, ऐसा जानना होगा। अवशिष्ट चार वर्षोंमें रोहिणी नक्षत्रका कितना दण्डपन बीत जाने पर जन्म हुआ है, उसमें अनुपात करके कितना अंश अवशिष्ट है, वह स्थिर करना होगा। जन्मसे पहले जिस यष्टकी दशा होगी उसके भोगकालके बाट नक्षत्रवर्ती ग्रहकी दशाका भोग होगा। यदि जन्मनक्षत्रका परिमाण ६० दण्ड ही, तो दशाका भुक्त और अवशिष्ट जाननेके लिए अनुपात नहीं करके निम्नलिखित नियमानुसार भुजावर्गेय स्थिर कर सकते हैं।

जन्मसे समयमें नक्षत्रका जितना दण्ड और पन बीत गया है, उसग्रहकी दशा होनेसे उसे छोड़ा और पापग्रहकी दशा होनेसे उसे दूना करके, गुणफलकी पुनर्धार दशा परिमाणके अङ्कमें गुणा करते हैं।

पीछे उस गुणनफलकी ३० में भाग देनेसे प्राप्त भागकी १२में भाग देनेसे वर्ष होगा। इस प्रकार दशा का भुक्त अंश जान कर दशा परिमित कालमें वियोग करनेमें ही अवशिष्ट मालूम हो जायेगा। जन्मनक्षत्रका परिमाण यदि ६० दण्डमें न्यूनधिक ही, तो अनुपात करके दशा कालका भुक्त और अवशिष्ट अहर्दश स्थिर किया जाता है।

नक्षत्रानुसार दशामागदा कालविभाग—कृत्तिका, रोहिणी और सृगमिग नक्षत्रमें जन्म होनेसे पहले रविकी दशा होती है। इस दशाका भोगकाल ६ वर्ष है। इसके प्रति नक्षत्रमें दो वर्ष, प्रति नक्षत्रों पादने ६ भाग (नक्षत्रके चार भागोंमेंसे एक भागका नाम पाद है) और प्रति दण्डमें १२ दिन तथा प्रति पलमें १२ दण्ड होते हैं। आर्द्रा, पुनर्वसु और पुष्यानक्षत्रमें जन्म होनेसे चन्द्रकी दशा होती है, इस दशाका भोगकाल १५ वर्ष है। इसके प्रति नक्षत्रमें ३ वर्ष ८ महिना, प्रति-पादमें ११ महिना ७ दिन ३० दण्ड, प्रति दण्डमें २२ दिन ३० दण्ड और प्रति पलमें २२ दण्ड ३० पल होते

है, वैशा आनना वाहिये मन्त्रा, पूर्व कस्तुनी घोर उत्तर कस्तुनी नक्षत्रमें जन्म होनेसे मन्त्रको दण्डमें जन्म आनना होता है। इस दण्डका परिमाण ८ वर्ष है। इससे प्रति नक्षत्रमें २ वर्ष ८ मास, प्रति नक्षत्रके पादमें ८ मास प्रतिदण्डमें १६ दिन तथा प्रतिपक्षमें १६ दण्ड होते हैं।

इत्या, चित्ता स्वाती घोर विगाहानक्षत्रमें जन्म होनेसे बुधकी दण्डमें जन्म आना जाता है। इस दण्डका परिमाण १० वर्ष है। इससे प्रति नक्षत्रमें ३ वर्ष ३ मास, प्रति नक्षत्रके पादमें १ वर्ष २२ दिन १० दण्ड, प्रति दण्डमें २३ दिन १० दण्ड घोर प्रति पक्षमें २३ दण्ड १० पक्ष होते हैं।

चतुराशा, ज्येष्ठा घोर मूला नक्षत्रमें जन्म होनेसे गनिको दण्ड होता है। यह मूलाभोग्यकाल १० वर्ष है। इससे प्रति नक्षत्रमें १ वर्ष ३ मास, प्रति नक्षत्रके पादमें १० मास, प्रति दण्डमें २० दिन घोर प्रतिपक्षमें १० दण्ड भोग्य होता है।

पूर्वाषाढा उत्तराषाढा चमिञ्जित् घोर शक्रानक्षत्रमें जन्म होनेसे बुधकी दण्डमें दण्डा होती है। इस दण्डका परिमाण १८ वर्ष है। इससे प्रति नक्षत्रमें ३ वर्ष ८ मास, प्रति नक्षत्रके पादमें २ वर्ष २ मास १३ दिन, प्रति दण्डमें २८ दिन १० दण्ड घोर प्रति पक्षमें २८ दण्ड १ पक्ष होते हैं।

शक्रानक्षत्र—बुधकी दण्डा १८ वर्ष है। इस दण्डा परिमितकालको चार भाग करके एक मास पूर्वाषाढानक्षत्रका घोर शक्रगिह सौम भागको समष्टि चक्रात् १३ वर्ष ३ मासको दो भाग करके एक भाग चक्रात् ० वर्ष १ मास १३ दिन उत्तराषाढा नक्षत्रका घोर ० वर्ष १ मास १३ दिन शक्रानक्षत्रका विभाग आनना होता है। चमिपुराशके मत्तानुसार बुधकी दण्डाको ३ भाग करके एक भागको पूर्वाषाढा नक्षत्रका घोर शक्रगिह पर्यन्त, चक्रात् चमिञ्जित् नक्षत्रका घोर बुध पर्यन्तको शक्रानक्षत्रका विभाग आनना होता है। यथा पूर्वाषाढाके ३ वर्ष ८ मास उत्तराषाढाके ० वर्ष १ मास १३ दिन, चमिञ्जित्के ३ वर्ष १ मास २२ दिन १० दण्ड घोर शक्राश १ वर्ष १ मास २२ दिन १० दण्ड होते हैं।

शनिहा, गतमिया घोर पूर्वमाद्रपद नक्षत्रमें जन्म होनेसे पहले राहुको दण्डा होती है। इस दण्डका परिमाण १२ वर्ष है। इससे प्रति नक्षत्रमें ३ वर्ष, प्रति नक्षत्रके पादमें १ वर्ष, प्रति दण्डमें २३ दिन घोर प्रति पक्षमें २३ दण्ड होते हैं।

उत्तरमाद्रपद, ऐततो, चमिनी घोर मरको नक्षत्रमें जन्म होनेसे पहले शक्रको दण्डा होती है। इस दण्डका भाग काल २१ वर्ष है। इससे प्रति नक्षत्रमें १ वर्ष ३ मास, प्रति नक्षत्रके पादमें १ वर्ष ३ मास २० दिन १० दण्ड, प्रति दण्डमें १ मास १ दिन १० दण्ड घोर प्रतिपक्षमें ३१ दण्ड १० पक्ष होते हैं। पहले जन्मनक्षत्रने दण्डा का निदण्ड विद्या जाता है।

नक्षत्र	दण्डा	भोग्यकाल	
१ शक्रिका ४ शनिहा ३ चमिञ्जित्	}	रवि १ वर्ष	
६ पाशा ० मुलक घु ८ मुखा ८ चक्रा		}	चन्द्र १३ वर्ष
१० मत्ता ११ पूर्व कस्तुनी १२ उत्तर कस्तुनी			}
१३ इत्या १४ चित्ता १५ स्वाती १६ विगाहा	}		
१७ चतुराशा १८ ज्येष्ठा		}	
२० पूर्वाषाढा २१ उत्तराषाढा ० चमिञ्जित् २२ शक्रा			}
२३ शनिहा २४ गतमिया २५ पूर्वमाद्रपद	}		
२६ उत्तरमाद्रपद २७ ऐततो २ चमिनी २ मरको		}	

इस सब नक्षत्रोंके चतुराश विम नक्षत्रमें जन्म हुआ है उसो नक्षत्रोंको भी सब दण्डका निदण्ड करना चाहिये।

दशाफल—रविकी दशामें चित्तका परिताप, धन-
हानि, क्षीय, विदेशगमन, रोगभय, अनिष्टपात, दुःख,
जीवनहानि, वन्धन और राजपोड़ा होती है।

चन्द्रको दशामें—मनुष्यका ऐश्वर्य, चोटकादि वाहन,
राजपूजा, रत्न, वस्त्र, मङ्गल, प्रताप, वीर्य बुद्धि, मिष्टान्न-
भोजन, पानीयपान और उत्तमशय्या लाभ होती है।

मङ्गलकी दशामें—दुष्ट मनुष्योंसे आत्मविनाश, वन्धन,
भय, चिन्ता, च्चर, विकलता, और भीति, अग्निभय,
विवाट रोग, अक्रोर्त्ति, प्रताप हानि और धनका विनाश
होता है।

बुधकी दशामें—उत्तमा कामिनीसम्भोग, धनागम,
अत्यन्त सुखलाभ, विविध ऐश्वर्य, कीयोगारकी वृद्धि
और मनोरथपूर्ण होता है।

शनि की दशामें—अपवाद, वध वन्धन, आश्रयविनश,
दौरभय, अग्नि, अर्प तथा राजभय, आशामङ्ग और कार्य-
हानि होती है।

बृहस्पतिकी दशामें—राज्यप्राप्ति, धनागम, पुत्रलाभ,
विविध वस्तुओंका भोग, सुख और धन, धान्यवृद्धि, विद्या,
सुख्यांत, एवं लक्ष्मी प्राप्त होती हैं।

राहुके दशाकालमें—पत्नीके अपराधके कारण विवाद,
वन्धन और अन्ध्राघातका भय, अल्प पराक्रम, अत्यन्त
कष्ट, धन और क्रान्तिविहीन शरीर होता है।

शुक्रकी दशाके समयमें—मन्त्रमिहि, प्रभदासङ्गलाभ,
अभिलाष पूर्ण, वदान्यता, राजपूजित, हस्ती और अश्व
आदि सवारियों पर जाना, मनोरथ सिद्धि, अर्थसञ्चय
और राजलक्ष्मी लाभ होती है। यह तो स्थूलदशाका
विषय कहा गया, किन्तु प्रत्येक दशामें अन्तर्दशा है।
अन्तर्दशाका फल अन्तर्दशाके कालानुसार हुआ
करता है।

अन्तर्दशा—रविकी स्थूलदशा ६ वर्ष है जिसमेंसे
रविका अपना दशान्तर ४ मास, चन्द्रका १० मास,
मङ्गलका ५ मास, बुधका ११ मास २० दिन, शनिका ६
मास २० दिन, बृहस्पतिका १ वर्ष २० दिन, राहुका ८
मास और शुक्रका अन्तर्दशा २ वर्ष २ मास है। रविकी
दशाके मध्य रविकी अन्तर्दशासे राजदण्ड, मनस्ताप,
वन्धन, विदेशगमन, शरीरपोड़ा और नाना प्रकारके

दुःख प्राप्त होते हैं। रविकी दशामें चन्द्रकी अन्तर्दशासे
मनुष्यका शत्रुनाश, रोगशान्ति, वित्तलाभ और नाना
प्रकारके सुख मिलते हैं। मतान्तरमें रविकी दशाके मध्य
चन्द्रकी अन्तर्दशासे रोग, श्रद्धा, वास, इच्छाहानि,
मनःपोड़ा आदि होती है। रविकी दशाके मध्य मङ्गलका
अन्तर्दशासे मनुष्य प्रधान हो कर मणिरत्न और प्रवाल
आदि पाते हैं। रविकी दशाके मध्य बुधकी अन्तर्दशासे
मनुष्य दरिद्र और दुःखी होता है एवं उसके सारे शरीर-
में विचर्च्चिका आदि रोग होते हैं और इस प्रकार नाना
प्रकारके शरीरके उपद्रवोंमें बह कष्ट पाता है।

रविकी दशाके मध्य शनिकी अन्तर्दशासे मनुष्य
राजभय पा कर गतिरहित और धैर्यहीन होता है, तथा
उसके सब कार्य निष्फल होते हैं। मतान्तरसे—रविकी
दशाके मध्य शनिकी अन्तर्दशासे मनुष्यका सन्ताप,
वित्त वस्तुनाश, परालय तथा उसके सब कार्य नष्ट हो
जाते हैं।

रविकी दशाके मध्य बृहस्पतिकी अन्तर्दशासे मनुष्य-
की सम्पत्ति वृद्धि और रोगशान्ति होती है तथा वह
दूमरोंसे विश्वास और धर्म लाभ करता है। मतान्तरसे—रविकी
दशाके मध्य बृहस्पतिकी अन्तर्दशासे मनुष्य
मनुष्य अर्थ, धर्म और सुख पाता है। इसके बाद वह
कुष्ठादिरोगसे कुटकारा पा कर सुखी होता है।

रविकी दशाके मध्य राहुकी अन्तर्दशासे मनुष्यके रोग,
शोक, भय, मृत्यु, वित्तनाश और तरह तरहके अशुभ
होते हैं।

रविकी दशामें शुक्रकी अन्तर्दशासे शिरःपोड़ा, उदरा-
भय, च्चर, अर्तासार और शूल आदि रोगोंसे मनुष्यका
शरीर शोष नष्ट हो जाता है।

चन्द्रमाकी स्थूल दशाका काल १५ वर्ष है जिसमेंसे
२ वर्ष १ मास अपना अन्तर्दशा है। इस समय सम्पत्ति-
की वृद्धि, स्वर्णभूषिता स्त्रीलाभ और अत्यन्त यशोवृद्धि
होती है।

चन्द्रकी दशामें १ वर्ष १ मास १० दिन मङ्गलकी
अन्तर्दशाका काल है। इस समय सर्वदा काल और
चोर भय तथा शरीरमें अनेक तरहके रोग होते हैं। मतान्तरसे
चन्द्रकी दशाके मध्य मङ्गलकी अन्तर्दशासे मनुष्यकी

मन्थितोष्ण घोर घोरका मय होता है ।

बन्दूको दशमि ० वर्ष ३ मास १० दिन बुधकी पलट दंशाका मोनकाठ है । इस समय प्रसूत, सुषमन्थित, हाथो घोर घोड़े की पवानी तथा गोवनादि प्राप्त होता है ।

बन्दूको दशमि १ वर्ष ३ मास २० दिन शनिको पलट दंशाका भाग है । इस समय बुधिय, सुहृदेष्ट, विपद् पादि अनेक प्रकारके पलट होत हैं । मत्तार में बन्दूकी दशाके मन्थ शनिको पलट दंशमें अंग रात्र मय, विपद्, मोक्ष घोर सम्पत्ति नाश होती है ।

बन्दूकी दशमि २ वर्ष ० मास २० दिन बृहस्पतिको पलट दंशाका भाग है । इस समय मनुष्य वन, भय, सुख, बन्ध घोर पलट प्राप्त करता है ।

बन्दूकी दशमि १ वर्ष ८ मास राहुको पलट दंशाका भाग है । इस समय पक्ष प्रकारका रोग घोर बन्धनाश होता है तथा बन्ध बंधना समय मो सुखी नहीं हो सकता है । मत्तारके—पम्पिमय, दुःख, शोक, बन्धुविच्छेद घोर धनघट्य होता है ।

बन्दूकी दशमि २ वर्ष ११ मास शुक्रकी पलट दंशा का समय है । इस समय मनुष्य उत्तमाक्षोभहम वन, धान्य सुखा, मन्थि पादि लाभ कर सुखी होता है ।

बन्दूकी दशमि १० मास रविको पलट दंशाका भाग है । इस समय मनुष्य राजाका अनुपपन्न सुख घोर धनपुत्र रिशय लाभ करता है ।

मङ्गलकी शून्य दशा ८ वर्ष १ दिन २० दण्ड है । मङ्गलकी इस निश्रदशाके समयमें बन्धुके हाथ बलह पम्पिदाह घोर गरीरिख पोड़ा होती है ।

मङ्गलकी दशमि १ वर्ष १ मास २० दण्ड बुधकी पलट दंशाका भाग है । इस समय मृग, घोर मङ्गु घोर मङ्गिअनुके मय तथा नाश प्रकारके मनघटा घोर क्षरादि होते हैं ।

मङ्गलकी दशमि ८ मास २६ दिन ३० दण्ड शनिको पलट दंशाका भाग है । इस समय धननाश, मनघटा, हृदयपोड़ा पादि दुःख होते हैं ।

मङ्गलकी दशमि १ वर्ष ३ मास २६ दिन ४० दण्ड बृहस्पतिको पलट दंशाका भाग है । इस समय मनुष्य

मोघंयाता निव-साध्य पूजा पादि अन्धे अन्धे कार्य करत हैं । किन्तु माघ को माघ राजमय म होनेकी सम्भावना है ।

मङ्गलकी दशमि मन्थ बृहस्पतिको पलट दंशमें मनुष्य पुत्र, धन, पक्षधनादि हाथ दिवता घोर ब्राह्मणकी परेशना करता है घोर राजतुल्य नथान पाता है ।

मङ्गलकी दशमि २० मास २० दिन राहुको पलट दंशाका भाग है । इस समय पक्षमय, पम्पि, वीर गत्र मय घोर निश्रनाम पादि धमहन होता है ।

मङ्गलकी दशमि १ वर्ष ६ मास २० दिन शुककी पलट दंशाका भाग है । इस समय धननाश, रोग, मन्थु-मय पादि उपद्रव घोर राजमय होता है ।

मङ्गलकी दशमि ३ मास १० दिन रविको पलट दंशाका भाग है । इस समय पतुल रिशय, राजममान, खौबाम तथा पटकी हृदि होती है ।

मङ्गलकी दशमि १ वर्ष १ मास १० दिन बन्दूकी पलट दंशाका भाग है । इस समय नाश प्रकारको नथपत्ति, सुख, सुखा घोर मन्थि पादि भुयवको प्राप्ति होती है ।

शुक्रकी शून्यदशा १० वर्ष ३ अशुभमेंसे २ वर्ष ८ मास ३ दिन २० दण्ड उत्तमको निश्र दशाका भाग है । इस समय मनुष्य धर्म उपाशन करता बुद्धिही हृदि होती है तथा वन, सोमाथ घोर पतुल रिशय प्राप्त होता है ।

शुक्रकी दशमि १ वर्ष ६ मास २६ दिन ३० दण्ड शनिको पलट दंशाका भाग है । इस समय नाशपना, पोड़ा बन्धुके मय विनाश घोर विद्वेगमय पादि अय होते हैं ।

शुक्रकी दशमि २ वर्ष ११ मास २६ दिन ३० दण्ड बृहस्पतिको पलट दंशाका भाग है । इस समय मनुष्य रोगने हृदकाय, मन्थुमय विनाश धनायम घोर सुपुत्र पाता है ।

शुक्रकी दशमि १ वर्ष १० मास २० दिन राहुको पलट दंशाका भाग है । इस समय पक्षधनात् पम्पिमय नथपत्ति, निश्रनाम घोर महाक्षीय होता है ।

शुक्रकी दशमि १ वर्ष १ मास २० दिन शुककी पलट दंशाका भाग है । इस समय मनुष्य पुत्रवान् घोर धार्मिक होता है ।

बुधको दशममें ११ मास १० दिन रविकी अन्तर्दशा का काल है। इस समय मनुष्य सुवर्ण, प्रवाल, विपुल यश, श्रीमान् और दूसरेका धन प्राप्त करता है।

बुधको दशममें २ वर्ष ३ मास १० दिन चन्द्रकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्य शत्रु, धीर शृङ्गि-जन्तुसे भय तथा नाना प्रकारके कष्ट पाता है।

बुधकी दशममें १ वर्ष ३ मास ३ दिन २० दण्ड मङ्गलको अन्तर्दशाका काल है। इस समय शिरका रोग, हृदय पीड़ा, दस्य, और तस्करभय एवं जाघ और पैरमें पीड़ा होती है।

शुक्रकी स्थूल दशाका भोगकाल १० वर्ष है जिसमेंसे ११ मास ३ दिन २० दण्ड शुक्रकी निजान्तर्दशा है। इस समय मनुष्य खलवृत्ति अवलम्बन करता है एवं स्त्री और पुरुषसे निग्रह, अर्घ्य भय, वन्धुविनाश, विदेशगमन और मिथ्यापवाद आदि पाता है।

शुक्रकी दशममें १ वर्ष ८ मास ३ दिन २० दण्ड बृहस्पतिकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्य देवताओंके प्रति अनुरक्त और शान्त प्रकृति हो कर विविध सम्पत्ति लाभ करता है तथा उसका शत्रु नाश होता है।

शुक्रकी दशममें १ वर्ष १ मास १० दिन राहुकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्यका विदेशगमन, वन्धुविधेय, मित्रभय और अकस्मात् अग्निदाह आदि तरह तरहके उपद्रव होते हैं।

शुक्रकी दशममें १ वर्ष ११ मास १० दिन शुककी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्यका वन्धु समा-गम, भार्या और वित्तलाभ होता है तथा सुख सम्पत्ति और सौभाग्यको वृद्धि होती है।

शुक्रकी दशममें ६ मास २० दिन रविकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्यका धनपुत्रविनाश हो कर दुःखकी वृद्धि होती है और जीवन तथा बल नष्ट होता है।

शुक्रकी दशममें १ वर्ष ४ मास २० दिन चन्द्रकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्यका वन्धु-विच्छेद, स्त्रीविनाश, कलह और नाना प्रकारकी पीड़ा होती है।

शुक्रकी दशममें ८ मास २६ दिन ४० दण्ड मङ्गल-को अन्तर्दशाका काल है। इस समय देशत्याग, पीड़ा और तरह तरहके दुःख प्राप्त होते हैं।

शुक्रकी दशममें १ वर्ष ६ मास १० दिन २० दण्ड बुधकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्य भाग्य-वान् और सम्मानभाजन हो कर पुत्रलाभ करता है।

बृहस्पतिकी स्थूलदशाका परिमाण १८ वर्ष है जिसमेंसे ३ वर्ष ४ मास ३ दिन २० दण्ड इसकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्य मत्पुत्र, तपस्या, सुख्याति, पौरुष, सुख और गजाश्वादि वाहन पाता है।

बृहस्पतिकी दशममें २ वर्ष १ मास १० दिन राहुकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय अकस्मात् भय और राजपीड़ा आदि उपद्रव तथा वन्धन और मनस्तापादि शारीरिक क्लेश होता है।

बृहस्पतिकी दशममें ३ वर्ष ८ मास १० दिन शुककी अन्तर्दशाका काल है। इस समय शत्रुभय और वन्धुनाश हो कर नाना प्रकारके रोग और स्त्रोवियोग आदिसे तरह तरहके दुःख होते हैं।

बृहस्पतिकी दशममें १ वर्ष २० दिन रविकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मित्रलाभ, धनागम, उत्तमा-स्त्रीलाभ और राजाका प्रियपात्र होता है।

बृहस्पतिकी दशममें २ वर्ष ७ मास २० दिन चन्द्रकी अन्तर्दशाका काल है। ऐसे समयमें उत्तमा स्त्रीलाभ और धनभय होता है। तथा वह सब प्रकारके रोगोंसे मुक्त हो कर राजतुल्य सम्मान पाता है।

बृहस्पतिकी दशममें १ वर्ष ४ मास २६ दिन ४० दण्ड मङ्गलकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्य अत्यन्त क्रोधो, शत्रुनाशक और हाथीके जैसा मयङ्कर देखनेमें लगता है। तथा वह सौभाग्ययुक्त हो कर सुखसे समय बिताता है।

बृहस्पतिकी दशममें २ वर्ष ११ मास २६ दिन ४० दण्ड बुधकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्य कभी सुख और कभी असुख हो कर सुख और दुःख भोग करता है; शत्रुकी वृद्धि होती है और देवपूजामें अनुराग उत्पन्न होता है।

बृहस्पतिकी दशममें १ वर्ष ८ मास ३ दिन २० दण्ड

यनिही पत्तंशिक्रा खान है। इस समय मनुष्य
के २५ मज्जासंनि सुषुप्तोत्तम करता है और विनियोग
ही कर २५ वटा चर्म खाद्यमं जवा रहता है।

राहुको व्युत्क टगा १२ वर्ष है। इसमें राहु ५
निजमोगनाह १ वर्ष ३ मास है। इस समय स्त्री
विद्योग, वस्तुनाश, शत्रुमय और पर्याग्रा होता है।

रहुको दशमि २ वर्ष ३ मास शुक्रको पतदशाका
खान है। इस समय ब्राह्मण्ये माह मित्रता श्लोनाम,
शिक्षणय और वस्तुचोखे माय खेदहृदि होती है।

राहुको दशमि ८ मास रविको पतदशाका खान
है। इस समय शत्रुमय मयाजक रोम, पर्याग्रा राजमय
पतिरय व्याप और शिरोरोवादि धर्मक प्रकारके कष्ट
होते हैं।

राहुको दशमि १ वर्ष ८ मास चन्द्रको पतदशाका
खान है। इस समय स्त्रीविनाय, कलह, खी, पापमं
पनुनाग कुमोहन, वस्तुविच्छेद और विपुत्रा मय लय
स्थित होता है।

राहुको दशमि १० मास २० दिन मङ्गलकी पत-
दशाका खान है। इस समय मनुष्यको विषमय पर्यामय,
पन्निमय, बोरमय और तरह तरहके कष्ट होते हैं।

राहुको दशमि १ वर्ष २० मास २० दिन बुधकी
पतदशाका खान है। इस समय मनुष्यको कष्ट और
वातघटितरीम तथा मज्जाह गिरापोड़ा होती है।

राहुको दशमि १ वर्ष १ मास १० दिन बृहस्पतिको
पतदशाका समय है। इस समय मनुष्य रोगमुक्त और
शत्रुमयके विद्वान् वा कर देवता और ब्राह्मणपूजामें
तत्पर रहता है और नामा प्रकारके धर्म ज्ञानजन
करता है।

शुक्रकी व्युत्क टगा २१ वर्ष है जिसमें ५ वर्ष १
मास शुक्रको चरमो हो पतदशाका खान है। इस
समय मनुष्य सुनीति मीमं कर भोति नाम करता है
और स्त्री द्वारा सुषु हृदि और पय नाम होता है।

शुक्रकी दशमि १ वर्ष २ मास रविको पतदशाका
खान है इस समय मनुष्यको चक्रुल, वस्तु, मद्रामह
और वन विषयमें परामुत्त होता है।

शुक्रको दशमि २ वर्ष ११ मास चन्द्रको पतदशाका

का काल है। इस समय मनुष्यके लय, दंत और
मज्जासंनि पोड़ा होती है तथा वस्तुचोखे माय सर्वदा
विवाह उपस्थित होता है।

शुक्रको दशमि १ वर्ष १ मास २० दिन मङ्गलको
पतदशाका खान है। इस समय मनुष्यको उत्तम मय
और सुनि-नाम होता है तथा बौर्यको ज्ञानि होतो है।

शुक्रकी दशमि १ वर्ष १ मास २० दिन बुधकी पत-
दशाका खान है। इस दशमि उत्तमाश्लोनाम धन
शान्धाट मगान, शरीरको पुष्टि और धर्मरक्षादि
हृदि होती है।

शुक्रकी दशमि १ वर्ष ११ मास १० दिन शनिको
पतदशाका खान है। इस समय मनुष्य उत्तम मय
में पतल मज्जाघ्रा, सुन्दरी श्लोक माय क्रीडा
कोतुक पादि पामोद म्मोद रहता है तथा शत्रुनाम
और मित्रनाम होता है।

शुक्रकी दशमि १ वर्ष ८ मास २० दिन बृहस्पतिको
पतदशाका खान है। इस दशमि मनुष्य उत्तमा प्पा
और धन वाच्य नाम करता है, तथा सब दा वस्तुचोखे
भेंटित ही कर सुयनि समय बिताता है।

शुक्रका दशमि २ वर्ष ३ मास राहुको पतदशाका
खान है। इस समय विदेश मगन दुःख, पन्थवातिर
माय म्मायम और पापकर्म में पनुनाम होता है।

इस सब घटीको पतदशाके पनुनाम प्पाकय स्थिर
होता है तथा दयाचानोम चोखे पन्थवाचके लय पन्थ
पल निरंतर करता है।

रागीरव्या—इसरीरोदशाको मज्जासंनि सूर्य चन्द्र
मङ्गल, राहु उदरवति, शनि, बुध, केतु और शुक्र
इस स्थानो द्वारा पदोको मज्जा करतो होती है। इस
दशमि मगन चोखे दशमोवर्ष खानकी ममटि १२०
वर्ष है। इस दशमकी मगन करते समय कतिनामि
ने कर पूर्व पनुनामो लय नो मज्जासंनि मयादि मज्जाचो
दशाका पारम्भ होता है। वाके उत्तरकमनुनाम और
उत्तरपाठामि नो मज्जासंनि पय एक पदोकी दशाका
पारम्भ हुपा जाता है। शुक्रचरमं ज्ञान वाचिक मज्जासंनि
होती तरह कतिना मज्जासंनि मज्जा करके दशाक पारम्भ
का निन्दय विद्या जाता है। लय पयमें ज्ञानवाचिके

सम्बन्धमें अश्विनीसे गणना करके किस नक्षत्रमें जन्म होनेसे किस ग्रहकी दशा पहले होगी इसका निश्चय किया जाता है।

हरगौरीकी दशामें ६ वर्ष रविकी दशा है; पीछे चन्द्रमाकी दशा १० वर्ष, मङ्गलकी ७ वर्ष, राहुकी १८ वर्ष, बृहस्पतिकी १८ वर्ष, शनिकी १७ वर्ष, बुधकी १६ वर्ष, केतुकी ७ वर्ष और शुककी २० वर्ष दशाका भोगकाल है। जिस ग्रहकी दशामें जिस ग्रहको अन्तर्दशाका निर्णय करना होगा, उन दो ग्रहोंकी दशावर्ग संख्याकी परस्पर गुणा करके गुणफलकी दशासे भाग देते हैं, भागफल जितना होता है उतना महोना होगा और फिर अवशिष्टाङ्कको ३० से गुणा करके दशसे भाग दे कर भागफल जितना होता है, उतना दिन होगा और इसे ही अन्तर्दशाका भोगकाल मानना चाहिये। इसी प्रकार इस दशाकी अन्तर्दशाका निरूपण किया जाता है।

विंशोत्तरी दशा—इस विंशोत्तरी दशामें पहले सूर्यकी, पीछे चन्द्र, मङ्गल, राहु, बृहस्पति, शनि, बुध, केतु और शुक इस प्रकार क्रमशः दूसरे दूसरे परवर्ती ग्रहोंकी दशाका भोग है। इस विंशोत्तरी दशाके मतसे रविकी ६ वर्ष, चन्द्रकी १० वर्ष, मङ्गलकी ७ वर्ष, राहुकी १८ वर्ष बृहस्पतिकी १६ वर्ष, बुधकी १७ वर्ष, केतुकी ७ वर्ष और शुककी २० वर्ष दशाकी भोग अवधि है। इन सब ग्रहोंके दशाकालको समष्टि १२० वर्ष है। जिस मनुष्यकी राशिमें समस्त ग्रहोंका दशा-भोग रहता है, वह मसुष्य १२० वर्ष तक जीता है।

इस दशामें और कृत्तिका नक्षत्रसे जिस दशाका आरम्भ होता है, उसमें विशेषता यह है, कि जिस मनुष्यका कृत्तिका उत्तरफल्गुनी अथवा उत्तराषाढा-नक्षत्रमें जन्म होता है, उसकी पहले रविकी दशा होती है। इसी प्रकार रोहिणी, हस्ता वा अश्विणनक्षत्रोंमें जन्म होनेसे चन्द्रकी दशा होती है। मृगशिरा, चित्रा और धनिष्ठानक्षत्रोंमें मङ्गलकी, आर्द्रा, स्वाती वा शतभिषा नक्षत्रोंमें राहुकी; पुनर्वसु, विशाखा वा पूर्वभाद्रपदमें बृहस्पतिकी, पुष्या, अनुराधा और उत्तरभाद्रपदमें शनिकी; अश्लेषा, ज्येष्ठा और रेवतीमें तथा मूला

वा अश्विनीमें केतुकी; पूर्वफल्गुनी, पूर्वाषाढा वा पूर्वभाद्रपदमें बुधकी और मघा वा भरणी नक्षत्रमें जन्म होनेसे शुककी दशा पहले होगी। जोहें ऊपर लिखे हुए क्रमातुमारसे दूसरे दूसरे परवर्ती ग्रहोंकी दशा होगी।

विंशोत्तरी दशामें इसी प्रकार अन्तर्दशाके कालका निरूपण करना होता है। जिस ग्रहकी दशामें जिस ग्रहको अन्तर्दशा स्थिर करने होगी, उन दो ग्रहोंके दशाभोगको वर्ष संख्याकी परस्पर गुणा करके १२० से भाग देते हैं, भागफल जितना होगा वही अन्तर्दशाका वर्ष है। अवशिष्ट अङ्कको १२ से गुणा करके गुणफलको १२० से भाग दे कर भागफल जो होगा, वह महोना होगा। इसी प्रकार दण्डादि भी स्थिर करना होता है।

आर्द्रादि अष्टोत्तरी दशा—अष्टोत्तरी दशाकी गणनाकी प्रणाली प्रायः पूर्वोक्त नक्षत्रकी दशाकी नाई है। केवल प्रभेद यह है, कि नक्षत्रकी दशामें कृत्तिकासे आरम्भ करके सूर्यादि ग्रहकी दशा निर्णय करने होती है, लेकिन इस दशामें आर्द्रानक्षत्रसे आरम्भ करके दशा स्थिर करने होगी। यथा—

आर्द्रादि अष्टोत्तरी दशा।

जन्मनक्षत्र	दशा	दशाभोगका काल		
आर्द्रा पुनर्वसु पुष्या अश्लेषा	रविका	६ वर्ष !		
मघा पूर्वफल्गुनी उत्तरफल्गुनी			चन्द्रका	१५ वर्ष !
हस्ता चित्रा स्वाती विशाखा				
अनुराधा ज्येष्ठा मूला			बुधका	१७ वर्ष
पूर्वाषाढा उत्तराषाढा अभिजित् अश्लेषा	शनिका	१० वर्ष !		

व्ययनचक्र	दशा	दशामोमका ज्ञान
शनिदा यत् सिधा पूर्व भाद्रपद	वृषभतिथिका	१८ वर्ष ।
		१२ वर्ष ।
चक्रमाश्रय शनी पश्चिमो भरणी	राहुका	१२ वर्ष ।
		२१ वर्ष ।
कृत्तिका रोहिणी चमगिरा	शुक्रका	२१ वर्ष ।

इसी प्रकार चंद्रोत्तरी दशा स्थिर करनी होगी । चक्र परवत्तदशाका ज्ञान नाचक्रिकोदशाके जैसा होगा । शिवन चक्रों चक्रों यथाक्रममें क्रम पड़ेगा ।

त्रि शोचरो दशाकी गणना इस प्रकार करनी चाहिये । चंद्रोत्तरी नाचक्रिकी दशाको नारं करके नचक्रानुसार पहिले दशाका निरूपण करना होगा । शिवन दशामोमक ज्ञानमें पर्व पड़ता है, नाचक्रिकोदशामें रविका ६ वर्ष चंद्रका १२ वर्ष है इत्यादि । इस दशा में नचक्रोमें ज्यो होनेसे तिस दशको दशा होगी, उस दशके दशामोमके ज्ञानमें तन मत्र नचक्रोका भाग देनेसे त्रितना वर्ष और त्रितना महीना होगा उत्तरी को वर्ष और महीना उस दशके दशामोमका ज्ञान ज्ञानना होगा ।

बदा रविका २ वर्ष, चन्द्रका ६ वर्ष ८ मास, मङ्गल का २ वर्ष ८ मास, बुधका ३ वर्ष १ मास, शनिका ३ वर्ष ४ मास बृहस्पतिको ४ वर्ष ८ मास, राहुका ४ वर्ष, शुक्रका ३ वर्ष १ मास मंगलाक है ।

इस सब दशाओंकी समष्टि १० वर्ष है । सुता १० वर्षमें समस्त चंद्रोका दशामोम गीय होता है । दशामोम गीय को ज्ञान पर पुनः तन सब चंद्रोका दशामोम हुआ करता है ।

विद्योत्तरी दशानक—त्रिनका त्रिन नचक्रमें जन्म होता, उस नचक्रावधि दशाको जन्मदशा, जन्म नचक्रने दशम नचक्रको दशाको जन्मदशा और जन्म नचक्रके पाठ्य नचक्रको दशाको पाठान दशा कहते हैं । तिस वर्षमें मनुष्यको जन्म इमामें रवि वा बृहस्पति, जन्म

दशामें राहु वा रवि और पाठान-दशामें बुध वा गनि चरित्पति हो, उस वर्षमें उसको मृत्यु होता है ।

दिसो मनुष्यका क्षतिको नचक्रमें जन्म होनेसे प्रथम २ वर्ष रविको दशा पोछे ३ वर्ष ८ मास तक चन्द्रको दशा ८ वर्ष १ मास तक मङ्गलको दशा, १० वर्ष ८ मास बुधको दशा, बाद १६ वर्ष तक शनिका दशा, २० वर्ष ८ मास तक बृहस्पतिको दशा, २४ वर्ष ८ मास राहुको दशा और उसके बाद १० वर्ष तक शुक्र को दशा होगी । इस प्रकार १० वर्ष तक पहिले दशा-मोम करके पोछे पर्यात् १० वर्षके बाद पुनः तन मत्र चंद्रोका दशामोम होगा ।

त्रिनका को जन्मनचक्र होगा, वह तदनुसार इसी प्रकार दशाका काक और पहला निर्णय कर ले । बाद उससे जन्मनचक्रको दशाकी गणना करनी होगी । यथा—त्रिनका क्षतिको नचक्रमें जन्म हुआ है उसका जन्मनचक्र १२ उत्तररज्जुकी है । पहले मङ्गलको दशा और दशामोमका काक २ वर्ष ८ मासमें ४ वर्ष १ मास, बुधको दशा कोदुमके ६ वर्ष १ मास होता है । पोछे १० वर्ष १ मास शनिको दशा और उसके बाद १३ वर्ष तक बृहस्पतिको दशा है । फिर उसके बाद १६ वर्ष तक राहुको दशा, २४ वर्ष १ मास शुक्रको दशा, २६ वर्ष ३ मास तक रविको दशा, और उसके बाद १० वर्ष तक चन्द्रको दशा है ।

इसके अनंतर जब मनुष्यके पाठान चक्रात् पौड्य नचक्रकी गणना करनी होगी ।

क्षतिकानचक्रमें जातपञ्चिका ज्योत्तानचक्र को पाठान नचक्र होगा । इस नचक्रमें पहिले ३ वर्ष ४ मास शनिको दशा पीछे ८ वर्ष १ मास तक बृहस्पतिको दशा १२ वर्ष १ मास तक राहुको दशा, १० वर्ष ४ मास तक शुक्रको दशा, १८ वर्ष ४ मास तक रविको दशा, २६ वर्ष १ मास तक चन्द्रको दशा बाद ३१ वर्ष ८ मास तक मङ्गलको दशा और उसके बाद १० वर्ष तक बुधको दशा होगी ।

इस प्रकार प्रति नचक्रमें जातपञ्चिक जन्म, जन्म और पाठान नचक्रकी दशाकी गणना करने चाहिये । शिवी मनुष्यके त्रिन वर्षमें जन्मनचक्रका दशाविति

चन्द्रमासो षष्ठ्यं होगा । त्रिविक्रं परित्याग्यं क्रीतं परं विरं
सैषां षष्ठ्यं नरो होता, तत्र विरं च यथा उरुषे षष्ठ्यं
निष्ठावता होमा ।

शोचिनी रथा—श्रीयं अमनचन्द्रमे तीन आङ्क कर
८वें भाग देनेसे श्री चक्रगिट रथेगा उनी चङ्कडे चतु
मास योगिनी दृगा मासूम ही प्रायगी । १ चक्रगिट
रथनेसे मङ्गलाकी दृगामि, २ रथनेसे विङ्गलाकी दृगामि
३ रथनेसे श्याकी दृगामि ४ रथनेसे श्यामरीकी दृगामि,
५ रथनेसे मङ्गलाकी दृगामि, ६ रथनेसे लल्वाकी दृगामि,
७ रथनेसे निहाकी दृगामि और ८ रथनेसे गडटाकी
दृगामि शब्द होमा ।

मङ्गलाका इमामोग काष्ठ १ वर्ष, विङ्गलाका २
वर्ष, श्याकाका ३ वर्ष, श्यामरीका ४ वर्ष मङ्गलाका ५
वर्ष, लल्वाका ६ वर्ष, निहाका ७ वर्ष और गडटाका
८ वर्ष है ।

अमनचन्द्रमास योगिनी रथाच निहाच—चाट्टा निहा
घोर अथपानचन्द्रमे अमन होनेसे पहले मङ्गलाको
दृगा पुनवैसु आतो योगि धनिष्ठानचन्द्रमे अमन होनेसे
विङ्गलाका; पुया विगाथा घोर अतनिपानचन्द्रमे
श्याकी चक्रिनी, चक्रेवा, चतुराघा घोर पूर्वभाद्रपद
अथचन्द्रमे श्यामरीकी भाषा, मघा ऋषि हो। उत्तर
भाद्रपदचन्द्रमे मङ्गलाका; कृत्तिका पूर्वपक्षमा
मूला घोर वैशालचन्द्रमे लल्वाकी; राशिनी अ-
पक्षमा घोर पूष पक्षानचन्द्रमे निहाका अथगिरा
दृगा घोर उत्तराषाढाचन्द्रमे अमन होनेसे गडटा
योगिनीकी दृगा होमा । पहले अमनचन्द्रमास दृगाका
निर्णय करके अमनचन्द्रका मासदृक् विरं करण है ।
यदि इन नचन्द्रका जितना दृक् मुक्त दृषा है तथा
जितना दृक् बच रहेमा उनमे चतुराघा चरके शोमका
काल निश्चय करती है । मङ्गलाकाविनी मनुवाका
सबदा मङ्गल करता है उनको दृगामि मघय, यमनाम
घोर मर विपद्येनि दृम होता है ।

विङ्गलायोगिनी सर्वदा मनुवाकी तरह तरहका
चट्टा निहा करता है । इनको दृगामि मनुवा दुःख
घोर बनादिना नाम दोगा है ।

मघा अथचक्रिनी श्यायोगिनीका दृगामि सुष,

दुःख शोचिनि, मघय, मग्मान घोर धनधान्यादि प्राप्त
होता है ।

अ मरीचोमिनी जमेशा मनुवाकी दुःख निहा करतो
है । इनकी दृगामि बिदेग मम, दुःख अथ मय मय
पौका चादि नामा प्रहाके श्लोम होती है ।

मङ्गलायोगिनीकी दृगामि सुष काम यग धर्म-
मोप श्लो, पुत्र घोर मलीप होता है ।

लल्वायोगिनी सब मघय मनुवाके मारुकी बङ्गतो
है । इनका दृगाम तरह तरहके रोग, दुःख, मय, शोक
धननाग, शत्रु, मय घोर मनुस्ताप बुधा करता है ।

निहायोगिनीकी दृगामि धन वायु, यश, धन, सुष
वात्रपूजा घोर अम माधारकमे घाटर प्राप्त होता है घोर
सर्व कार्यका सिद्धि होती है ।

गडटायोगिनी दृगामि जोरनका डर रहता है । यदि
जिसी तरह ताबन रह मात्रा तो वह सर्वदा रोग
शोक मन्वोका घोर काना प्रहाके गडटोमे बिदा
रहता है ।

योगिनीसर्व—जितना वर्ष जितनी लक्ष्मणा
होगी उतने ही पङ्कडो वन चक्रोम गुवा बरुच गुवन
पलका ३३मे माय देनेसे जितना मागफल होता है
उतना ही वर्ष उम ही मनीका फलदृगा प्राप्त हो गा ।
आ मय योगिनी दृम फल देतो है चन्द्रदृगामि भी ये
दृमफल ही देगी ।

शानिदृष्टा—दृगाम न द्वारा सब माविनीका इमामुम
पलका मय जाना जाता है । इनसे दृगाका निश्चय
करना पाव्यम्ब है । पानु"य मचना-प्रधानी द्वारा मचना
करके जिन पङ्कडो जितना वर्ष निर्णय होमा उम
पदका दृगामकाल उतना ही वर्ष अममना चादिहै ।
यद्यप्य पलकादुमार पयन चयन दृगामकालम इमामुम
फल देने है । मय रवि घोर चन्द्र दृम मासमे श्री बन
कान् हागा, लल्वाका मया पयन होमा । यदि जिनका
दृगा होयो उमके शिन्दुमासमे आ पङ्क १६वें, उमकी
दृगा मममनी चादिहै ।

श्लोमासमे यदि हा शोम पद रहे तो उनमें ही
पद बननाम् है पङ्क १ उमकीका दृगा होमा । यदि चक्रानु-
कार घोर दुमरे दुमरेकी ।

पहले जिसको दशौं होगी, उसके केन्द्रस्थानमें यदि कोई ग्रह न रहे, अथवा केन्द्रस्थानमें दशाभोगके बाद पणफरमें अर्थात् दूबरे, पांचवें, आठवें और ग्यारहवें स्थानमें कोई ग्रह रहे, तो दशा उसीको होगी, पणफरके घरमें दो तीन ग्रहोंके रहनेसे पहले बलवान् ग्रहका पीछे बलहीन या का दशाभोग होता है। यदि दो तीन ग्रहोंका बल समान हो, तो जिस ग्रहकी प्रदत्त आयुकी संख्या अधिक होगी पहले उसीकी दशा होती है। पीछे क्रमशः ग्रहप्रदत्त आयुके संख्याधिककी अनुसार दशाका पूर्ववर्तित्व समझना चाहिये। दो तीन ग्रहोंका बल और आयुकी संख्या समान रहनेसे जिस ग्रहकी प्रदत्त आयुकी संख्या अधिक होगी, पहले उसीकी दशा होती है, बाद क्रमशः ग्रहप्रदत्त आयुकी संख्याके आधिक्यानुसार दशाका पूर्ववर्तित्व होगा। दो तीन ग्रहोंका बल और आयुकी संख्या समान होनेसे जो ग्रह पहले उदित होगा उसीकी दशा पहले होगी। इसी प्रकार दूबरे दूसरे उदित ग्रहोंकी दशा क्रमशः होती जायगी।

ग्रहगण यदि स्वक्षेत्रमें वा स्वहोरादिमें अथवा मित्रक्षेत्रमें वा मित्रहोरादिमें रहे, तो दशाफल शुभ होता है। स्वक्षेत्र होरादिस्थित और मित्रहोरादि स्थित ग्रहगण अब नोचेसे ऊपरकी ओर जाते हैं तब उरुका दशाफल बहुत शुभ होता है, ऐसा समझना चाहिये।

नैऋतिक दशा—हृदयक्षेत्रमें नैऋतिक दशा इस प्रकार लिखी है—चन्द्रमाका १ वर्ष, मङ्गलका २ वर्ष, बुधका ८ वर्ष, शुकला २० वर्ष, बृहस्पतिका १८ वर्ष, रविका २० वर्ष, और शनिका ५ वर्ष, नैऋतिकी दशा है। अपने अपने दशाकालमें ग्रहगण यदि शुभ हों तो दशाफल शुभ और यदि अशुभ हों, तो दशाफल अशुभ होता है।

ग्रहदशाके अन्तमें लग्नकी दशा—यवनाचार्यके मन्त्रमें लग्नदशानि मनुष्यकी शुभफल मिलता है। लेकिन ज्योतिषिद्वारा कहना है, कि लग्न दशामें अशुभ फल होता है। लग्न चन्द्र और सूर्य ये दोनों यदि पूर्ण बलवान् हों, तो सत्वाचार्यके मतानुसार पहले लग्नदशा होती, यदि तानोंके बल समान न हों, तो उनमेंसे जो बलवान् होगा, उसीकी दशा पहले होगी।

दशाधिपति यदि नोच स्थानमें अर्थात् शत्रुस्थानमें अथवा नवांशमें स्थित हो तो उस दशाकालमें मनुष्य अशुभ फल पाता है। जब दशाधिपति ग्रह पूर्ण बलवान् और परमोच्च स्थानमें रहता है, तब वह दशा सम्पूर्ण दशा कहलाती है। इस दशामें आरोग्य और धनकी वृद्धि होती है। दशाधिपतिग्रह यदि सम्पूर्ण बलहीन और नोच राशि स्थित हो तो वह दशा अज्ञानदशा कहलाती है। इस दशामें मनुष्यका धन पुत्र नष्ट होता है। जब दशाधिपति ग्रह अपने उच्चराशिमें अवस्थित हो और यदि उसे कुछ बल रह जाय, तो उस दशाको पूर्ण दशा कहते हैं। इस दशामें मनुष्यको धन वृद्धि होती है। जब दशाधिपति वरुण नोच स्थानमें अर्थात् शत्रुके नवांशमें रहता है, तब वह दशा अनिष्टफला कहलाती है। इस दशामें अनेक प्रकारके रोग और अनिष्टका वृद्धि होती है।

रविके दशाकालमें मनुष्य नष्ट, दन्त, चर्म, सुवर्ण, क्रूरकर्म, पय और राजा द्वारा धन लाभ करता है तथा उनके तेज, धैर्य, उद्यम, कोर्त्ति और प्रतापकी वृद्धि होती है। भार्या, पुत्र, धन, अस्त्र, अग्नि और राजा इन सबसे कष्ट पहुँचनेका सम्भावना रहती है। तथा पापकर्ममें अनुराग, निज भुक्तके साथ करुण, हृदय और क्रोधस्थानमें पीड़ा होती है।

चन्द्रके दशाकालमें मनुष्य मन्त्र और ब्राह्मण द्वारा धन कमाता है, निद्रा, भ्रान्त्य और स्मृतताकी वृद्धि होती है, ब्राह्मणके प्रति भक्ति होती है। कोर्त्ति बढ़ती है, अर्थात्पार्जन और अर्थव्यय दुःखा करता है तथा स्वजनोत्त शत्रुता होती है।

मङ्गलकी दशामें मनुष्य शत्रुदमन, राजा, भ्राता, मङ्ग और उर्णाविशिष्ट पशु इन सबसे धन उपार्जन करता है। मङ्गलग्रहकी शुभ होनेसे सब फल मिलते हैं, लेकिन यह ग्रह यदि अशुभ हो, तो पुत्र, मित्र, स्त्री और भाइयोंके साथ शत्रुता होती है तथा पण्डित और गुरुके साथ अप्रणय उत्पन्न होता है। परस्त्री लोभ, प्रहारादि जनित पिपासा, रुधिरस्राव, ज्वर और पित्तविकार आदि रोग होता है, पापकार्यमें आसक्त व्यक्तियोंके साथ प्रणय जनमता है तथा वह अधर्मप्रवृत्त और उग्र स्वभावका होता है।

गुहको दयामि गुहयव यदि दम हो, तो मोक्ष, दोष कम द्वारा मित्र, गुह घोर ब्राह्मणके बलनाम होता है तथा वह पक्षित, प्रयमित घोर क्षोर्त्तमान बन होता है घोर उभे काँसा, मोता, बोड़ा क्रमोन मोसाय घोर दुख मिष्टता है। गुहयवने पयम रजमने मनुष्य लप-हास, परमेवा, परियम बन्धन मोक्ष घोर यौद्धायव्य रहता है।

इहमस्तिरे दयाकात्मि—यह यह यदि दम हो, तो विद्यादि गुह, सध्याम, प्रादुर्भाव, रुचि, क्षान्ति, प्रताप, साक्षात् घोर लक्ष्मादि द्वारा बलनाम; सुबन्ध, पय, पुत्र, वस्ती घोर बलनाम तथा गुहयव राजाके माय प्रभव घोर लभने खंडका प्राप्त होता है। इहमस्तिरे पयम होमिरे लक्ष्मणहरे मनुष्यात्मि परियम बन्ध योद्धा घोर पश्चिमिर्बोधे साध शत्रुता होतो है। गुहयवी दयामि गुहयै दम होमिरे मनुष्यके मोतापुत्राय हर्ष, शुगन्धि दूध, पय, पामीठ बन्ध स्त्री, रज, शरीरकाष्ठि, धमि-नपित इय, शान, मिथयलु घोर बन्धु हन सरको इहि होतो है तथा वह लपविद्ययमे कोषके घोर लपिचार्थ द्वारा हन लपार्जन करता है। गुहयै पयम होमिरे राजा, व्याध और पश्चिमिर्बोधे साध शत्रुता तथा मित्र क्षान्ति विनाय पर मोक्षप्राप्ति होतो है। मनिरे दयाकात्मि मनिरे दम होमिरे मनुष्यको मदहा अट, पयो घोर इहा श्री मिक्तो है तथा वह घाम, गवर घोर घुरो पर धमि शर बसा कर मध्यामनाम करता है। मनि यदि पयम हो, तो क्षमा, बाहुकीय घोर मोक्ष प्रपति विपद् पड़तो है तथा, विद्या, धान्य घोर परिक्रमादि द्वारा क्षेय लम्ब, लताम श्री हनेये पयमान तथा पयमके घोर योद्धात्रनि लोभमोक्ष होता है। जो यह लपमनामि दम रहैग, वह दयाकात्मि भो शमयन द्या, पयम होमिरे पयम घोर मित्र होमिरे मिथयन पात्र होता है। कर्माधिपति यहको दयाके असा लम्बहमाका भो पय होता है।

पयमिरे दयाकात्मि दयाधिपति घोर पन्तदंशाधि-पति होतो है पय देने है, किन्तु पन्तदंशाधिपति यह पदपत बन्ध हो मनुष्य भोग करता है।

बीमिमी, शार्दिबी, नाचविबी, शान्तिबी, सुहृन्दा,

वि शोत्तरी त्रि शोत्तरी, पनाबी, हरमोरो घोर दिनदरा ते ही दय दया है। एमिरे मनुष्यमि लम्बदया सेतामे हरमोरो दया, दयामि दोगिनी दया घोर क्षमिरे पय-मस नाचविबी दया हो प्रबान है। ज्योतिर्विद्याका बहना है, कि पूर्वोक्त विवरण देव दयाकर्मकी गचना करके लोकमके धमाशुभका निर्बंध क्रिया का सकता है। दयाकर्म (म० पु०) दयावाचकां चाकर्मति तैत्तिरिह मिति चाकर्म-पय् । १ प्रताप, विराग । २ बन्धायन बपडेका क्षोर या प यन ।

दयाकर्मि (म० पु०) दयाया चाकर्म तीति दया-क्षम निमि । प्रहोय, विराग ।
दयिचर (म० श्लो०) दय पक्षराणि पादेऽम् । १ प त्रि नामक इन्द्रमिष्ट । (त्रि०) २ दयाचरभुज मन्मदे दयागुणु (म० पु०) भावप्रकाशिका धोयमिष्ट । विकट चित्तमि विषय, सुपठ (मोधा) घोर गुणुन हनके समान समान मागको पका कर नानके अदोदोय तथा बन्ध घोर पादवातसे लपय समस्त रोग नष्ट होति है । (मन्व०)

दयाइरूप म पु० १ पयवद विद्यादि नाचक रूप विधिये। यह य प विदोयनायक है। मूर रतो । २ पुष्य शानके बाद देवताओंको दिवे क्षमिरे रूप । मङ्ग, मोधा, श्री, मन्म, गुणुन, पयु, ऐलज, धरम सिद्ध घोर विचार्य हकी दय प्रथाका रूप कर दयाइरूप तैयार करति है ।

हनके बानिबी हूमरो गेति—वर्ष १ कुह, पयु, गुणु, कन्द, कैशर, वासक, पय, लक्ष्म घोर क्षातीकीय हन मय हन्मिरे रूप मी मिलातेसे दयाइरूप तैयार होता है ।

दयाइसेप (म० पु०) मनि विषयमे दिवे क्षमिरे दयाइ-बोमिमेय । शिपीय, यद्विमनु तयरेवको नाचकन्द, दयाकर्म, अदामीने हकी टाककन्दो; कुट घोर नाचा हनको पाचकर पीके नाच धनेय देनेने विमर्ष कुट, क्षर घोर शीघ क्षानि रहति है ।

दयाइरूप (म० श्लो०) दय पयुक्षत हन मिरा विद्यानि पयलपुपरि मन्मय, पय । बन्धु, करपुजा । भावप्र कायम मतके दय पयके लपर ल मनोको नाई मिरा

चिह्न रहता है, इसीसे इस फलका नाम दशाङ्गुलि हुआ है। दश अङ्गुलयः परिमाणमथ इति तद्विचार्य द्विगोः उच्च तस्य लुक समाप्तः अच् प्रत्ययः। दशाङ्गुलि परिमित, वह जो दश उँगलीका ली।

दशाङ्गु (स० पु०) दशमूल।

दशाधिपति (स० पु०) १ ज्योतिषीक दशापति रव्यादियह, फलित ज्योतिषमें दशाषोंके अधिपति ग्रह। दशानां पदातीनां अधिपतिः। २ दश पदातिका अधिपति, दश सैनियों या सिपाहियोंका अधिपति, जमादार।

दशामन (स० पु०) दश आनानि वदनानि वस्त्र। रावण।

दशानिक (स० पु०) अत्यन्त इति भावे अञ् आनो-जोवनं तस्मिन् हितः आनिकः दशायां अवस्थाविशेषे आनिकः। दण्डावृत्त, जमानगोटा।

दशान्त (स० पु०) दशायाः अन्तः इत्यन्तत्। १ वार्द्धक्य, बुढापा। २ वर्त्तिकान्त, वक्तोका पिच्छला भाग।

दशापविव (स० स्त्री०) दशा वस्त्राञ्चलपविवमिव। यादादिमें देय वस्त्रखण्ड, कपड़ेके खंड जो याह आदिमें टान दिये जाते हैं।

दशामय (स० पु०) दश आमया यस्मात्। रुद्र।

दशार—अश्वदे प्रवेशके अन्तर्गत काठियावाड़के भासावर विभागका एक सामान्य राज्य। इसमें ७ ग्राम लगते हैं। राजस्व प्रायः ६०००० रु० है, जिसमेंसे १२६६८ रु० वृत्तिय गवर्मेंटको करस्वरूप देने पड़ते हैं। इसका परिमाणफल २६५ वर्ग मील है।

दशारुद्रा (स० स्त्री०) दशसु दिशु गारोहति अष्टैवांप्रो-तोति आरुद्रकटाप्। कैवर्त्तिका, एक प्रकारकी लता। यह मालव देशमें बहुत होती है और इससे कपड़े रंगाए जाते हैं।

दशार्ण (स० पु०) दश ऋणानि दुर्गभूसयो जनधारा वा यत्र ततो वृद्धिः। देशविशेष, एक देश जो विन्ध्य पर्वतके पूर्व दक्षिणमें अवस्थित है। दशान नदी इसी देश जो कर बहतो है। टलेमीने इस स्थानका नाम दोसारण (Dosaron) लिखा है। सेवदूत पढ़नेसे पता चलता है, कि विदिशा नगरी इसी दशार्णको राजधानी थी। विदिशा देखो।

(द्वि०) ततम्याभिजन तस्य राजा या अण्। = उस देशके निवासी। ३ उस देशके राजा। दश अर्णानि वर्णानि यत्र ५ दशाक्षरमन्त्रविशेष। (स्त्री०) ५ नदीविशेष, एक नदी जिसका वर्त्तमान नाम दमान है। ६ जैनपुराणके प्रमु-सार एक राजा। इन्हींमें तीर्थद्वारे दशार्ण निमित्त जा कर अभिमान किया था। इस पर तीर्थद्वारके प्रताप उन्हे बड़ा १६७७००१६००० इन्द्र पौर १३३०५७२-८००००००० इन्द्राणिर्या टिखाई पड़ों और उतका गर्व चूर्ण हो गया।

दशार्णक—दशार्ण देशी।

दशार्णा (स० स्त्री०) दमान या धमान नामकी एक नदी। यह विन्ध्य पर्वतसे निकल कर बुन्देसखण्डके कुछ भागमें प्रवाहित हो कर फालगोके पास यमुनासे मिल गई है।

दशार्णपु (स० पु०) पौरव रोद्राम्न राजाके एक पुत्रका नाम। (हरिवंश ३१ अ०)

दशार्ण (स० स्त्री०) दशार्णा अर्णं। १ पञ्चनख्या, दशका आधा पाच। २-तत्। मन्त्रोय, पाँच अक्षरोंका दश-वन्तानि ऋषीति ऋच-अण्। ३ दशवन बुद्ध, दश वनोंसे युक्त बुद्धदेव।

दशार्ण (स० पु०) १ क्रोड्रवंगीय छुष्ट राजाके पुत्र। २ राजा हृषिके पोत्र। ३ हृषिकवंगीय पुरुष। ४ हृषिक-वंगियोंका अधिकृत देश। (पु०) ५ विष्णु।

दशावतार—विष्णुके अष्टमस्य अवतारोंमेंसे दश अवतार बहुत प्रसिद्ध हैं। इन दश अवतारोंके नाम यों हैं—मत्स्य, कूर्म, वराह, वृषिंह, वामन, परशुराम, दशरथो राम, धन्तराम बुद्ध, और कर्कको। विष्णुके जितने अवतार हैं उनमेंसे यह दश अवतार उन्हींमें सभारके प्रति शङ्कट कालमें लिये थे, इस कारण दश-अवतार कहनेसे केवल इसी दशका बोध होता है।

भगवान् विष्णु कब, कहाँ, किस तरह बार क्यों, दश सूक्तियोंमें दश बार इस पृथ्वी पर अवतारों हुए थे, नीचे उसका संचित विवरण दिया जाता है—

१ मत्स्यावतार।—पौराणिक कालमें गणानासुर वत्तमान समयमें श्वेतवराह नामक कल्प चल रहा है। इसके पहले कई कल्प ही चुके हैं। प्रतिकल्पके

पक्षमात्रके समय एक एक महाप्रलय होता गया है। सृष्टि रक्षा महात्मा मय समय योग्यनिद्राक समाभूत थे। प्रलय कालमें भू-पानि चोटरी भुवम जलमय हो गये, बिटाटि भी बिगट हुए। अंतवराहकल्पके पहले जो कल्प था उस कल्पको प्रकृतिके समय जो प्रलय हुआ उस समय निद्रित ब्रह्माके मुखमें बिटाटि गिर पड़े। अथपुत्र नामक छोटे दानवपति उस समय वैशंकी पुत्रा से गया। प्रलयकी घटनाक पहले द्वाविष्ट मिथिं सत्यव्रत नामक पतितेव्रती विषय परायाण एक रात्रियं राज्य करते थे। ये अन्नबिहिनम पोषणप्यामं धारण विव्यपिता महादिने भी बड़े चढ़े थे। अन्नमात्र अंतवराहकल्पमें इसी सत्यव्रतने विषकल्पके पुत्र व्याहनेके दयमें अणु लिया था। इस वानुने वनोंको प्रभुक पद पर परिमिषित किया। एक समय राजा सत्यव्रतने मिथ्याकायदरो नामक म्दानमें एक पदमें लज्ज वाकु की पाँके मन्तकको मुखाप परिमेष्य दृष्टिये तपस्या करना पारम्भ किया। इस तरह इनके दय इन्द्राक वर्ष व्यतीत हो गये। बाण एक दिन ये लतमाना जनों (दिनेो किमोके मतने तमधा जनोंमें) धार्डकदमे विद्यमोकीकी अण तर्पण कर रहे थे। तर्पण करनेके लिये लो जल से रहे थे उसको पेट पचानिमें दिग्मा नामकी एक छोटी मछली पारै। द्वाविष्टअने अन्धविषि साय मछलीकी पुत्रा जनों से छुटिया। इस पर मछली कल्प स्वयं बाण उठी, 'इ राजन्। पाप दोनकालां पोर परमकाकनिक है मैं पावना पुपुंछ हूँ, धन पापरा पायव बाहता हूँ। अन्नकृष्णोर्गादि हिंस्त्र कृष्णपेनि मेंके प्रातिवर्गको मार काना है इसी समयमें मैंने पापको मरण लो यो, तब पापमें शो मुक्ति पुनः इस मछलीं ज्ञान दिया।"

तब द्वाविष्टअने सत्यव्रतने लक्षणाद्र जो पुत्र उसे बाहर निकाला पोर अद्यां लिये कनकाके जन्ममें रख दिया। पाँके तर्पणादि कारक से मछली पतित लज्जमाका की कर पर पाये। लगे दिनेर तमें वह मछली रहती वह कई कि कनकाके लज्ज लिये जाको जगद ल रही। तब लमें व्याजुन की राजाके लजा यह में हममें अन्धकारने रह नहीं पकती हूँ, मुक्ति किमी नूनरे विम्वत व्यानमें रह होइये। तब राजाके लने मकि

कच्छुजलनें (पन्थ पुराके मतानुसार जूयनें) रख दिया। मरिचकक जलमें रखनेक साध हो वह मछली एक ही सुखूर्तमें तीन हावटी को मरे पोर वातर को कर पुन लमें पन्थ विरह्यत व्यानक लिये राजाके प्रार्थना को। इस बार राजाके लने मरोवरमें ज्ञान लिया, बिन्धु वहाँ भी उनको देह बदले लगे पोर लय मारमें ही मरोवरके पायतनमें व्यान हो मरे। तब मछलीत पुन व्याजुन भी कर राजाके कटा, 'महात्मन्। पापने मेंरो रक्षाका मार लिया है पोर जिन सब जलमायोंमें मुक्ति कि लते पा रहे हैं लमें मार जारोड बड़ व्यानसे मैं अन्धकारदयने रह नहीं सदती हूँ। अथय मुक्ति एने अन्धकारमें रख होइये जिनके जन्म बर्हिंत नेकक माय पच्छो तरह रह सकूँ।'

रात्रियं सत्यव्रत यह रूप बहुत विभित हो गये पोर लने एक कदमें नूनरे अदम देते लगे। इस पर भी लहाँ लमें रहनेकी गुजाइस न लज्ज रात्रिय लने मसुद्रमें छि कनेक लिये धन पड़े। तब लन पन्नोकिक मछलीने राजाके कटा 'राजन्। सुखे मसुद्रके अलमें मत को केंके लो। क बा। निहयरो कनयान् मासुद्रिक लन्तु सुखे मर लामे मे। ऐन प्राय वधानके लिये ही पापका पायव लिय है। धनो पायव धनेको बात तो दूर रहे लकी मेंके प्रायनागको सम्पूर्ण मन्धावना है लहीं पाप मुक्ति पेशनेकी ला रहे है।

यह सुन कर राजा कि कल व्याविमूढ़ हो गये पोर कुछ ज्ञान मोन मात्रमें रह कर लके एमा मानूम पड़ा कि वह मछली लकी की पकता है मयवान् सिया ऐसो पथोकि क देह धारण करलका समान किम कोबमें है? एना मोच कर लकानि मछलने पुहा, पाप कोन है? क्या पाप मुक्ति इस तरह बिमोहित उभन है? पाप एक ही दिनके मज्ज ममप्ट अद मरावरने लो पवित्र बड़ गन्। वह ईमरीय मायात्र विधा पोर कुछ नहीं है। मानूम पकता है कि य प लथं नाशयल है पोर पागियों के बिना मछलाई मार लिये पापन लज्जक दय धारण किया है। धन, है पुत्रपोलम। मैं पापका लाम हूँ ली मुक्ति इस तरह माया निम्ना रहे है? धनो विष लिय पापने बहुत मरार धारण किया है, मो मुक्ति

कहिजे। आपको लीला सुननेसे जो मैं चरिताथ कें
नाजंगा।”

तब मत्सरूपीने कहा, 'राजन्! मैं जो नारायण
हूँ। जोवरक्षार्थका उपदेश देनेके लिये तुम्हारे पास
आया हूँ। आजमे मातर्वे दिन म्यावर ब्रह्मादि
समन्वित यह जगत् प्रलय-पयोधिके जन्ममें निमग्न होगा।
बहुत भोषण काल आ रहा है, अभी तुम मेरे उपदेशा-
नुसार कार्य करो। क्या स्वावर, क्या जन्म, क्या जड़,
क्या चेतन सभोका विनाश हो कर जब जगत्को प्रलय
जन्ममें निमग्न होत देखोगे तब तुम ममस्त श्रोपधि,
शैज, प्राणी-मिथुन और ऋषियोंको ले कर मेरी प्रपेक्षा
करना। प्रलयके भोषण तरङ्ग-मुखमें मैं एक बड़े नाव
सेडूंगा। तुम उल्लेख कर उम विगल नाव पर चढ़
जाना। उस समय चारों ओर अन्धकार छा जायगा।
महर्षियोंके तेजोबलसे वह नाव उस आलोकहीन प्रलय-
जन्ममें भ्रमण करेगी, क्योंकि उसका विनाश नहीं है।
जब प्रचण्ड वायुवेगमें नाव डगमगाने लगेगी, तब मैं
शुद्धयुक्त अलौकिक शक्तों मत्सरूपमें उपस्थित हो
जाऊंगा। और तुम महासर्प रूपमें रस्नेसे मेरे सींगमें
नाव बाँध देना। कमलयौनिके निद्राग्रमान तक हम
लोगोंको नावको ले कर प्रलय जन्ममें घुमाते फिरेंगे।
उस समय तुम मेरा ब्रह्म नामका माहात्म्य समझ
सकीगे। मैं ही वह वर्णन कर तुम्हारे गरागमें प्रपना
स्वरूप दिखना दूंगा। इतना कह कर मत्सरूपी
भगवान् अन्तर्धान हो गये।

पौछे राजर्षि सत्वव्रत भगवान्की वाक्यानुसार उक्त गभी
को संयत्न कर समुद्रके किनारे कुशासन फीला भगवान्
विष्णुकी प्रतीक्षा करने लगे। इसके अनन्तर प्रलयकारी
मेघगण सुपहधारसे जल बरसाने लगे और समुद्रका
जल बहुत हो शीघ्र बढ गया। धीरे धीरे सूय क्षिपन
लगे। समुद्रमें पर्वतके समान तरङ्गें उठों और आस
पासको सभा जमाने प्रारम्भ होने लगे। इस समय
तरङ्गके मुखमें एक विशाल तरणी आ पहुँची। तब
राजर्षि विष्णु, भगवान्की स्मरण कर महर्षियोंके साथ
सब संशुद्धीत वस्त्रों और प्राणियोंको ले कर नावपर
चढ़ गये। इधर पृथ्वी डूबने लगी और उधर नाव समुद्रमें

तैरने लगे। कुछ समय बाद दग क्षण योजन निम्न
शुद्धयुक्त सुवर्णमय एक महामत्स्य उनके माथने प्राविभूत
हुआ। राजर्षिने भगवान्के आदेशानुसार महासर्प-
रूपमें रज्जुमें उस मत्स्यके शृङ्गमें नाव बांध कर समुद्र
का स्तव किया। नावके बाधे जाने पर वह मत्स्य बहुत
तेजीसे उसे खींचने लगा।

इस तरह भ्रमण करते समय उस मत्स्यके मुखमें
राजर्षि सत्वव्रतने मत्स्यपुराण, माख्ययोग और आत्मतत्त्व
सुना। मत्स्यपुराण देखे। इस तरह कुछ दिन बीत जाने
पर नाव हिमालय पर्वतके निकट जा पहुँची। प्रलय
जन्ममें चराचर विष्वके डूब जानेसे भी प्रथमदेही हिमा-
लयके एक गिखरका कुछ अंग विष्णुका माथने न डूबा।
मत्स्यने उस शृङ्गको दिखना कर राजर्षि सत्वव्रतने उसी
गिखरमें नाव बाँधने कहा। राजर्षिने भी वैसा ही
किया। वह गिखर तभासे नोवन्धन नामसे प्रसिद्ध प्रा-
रहा है। पौछे मत्सरूपी नारायण अन्तर्हित हो गये।

इसके अनन्तर प्रलयकी समाप्ति हो जाने पर विधाता
यागनिशाने उठे और उन्होंने देखा, कि भगवान्की
छायामें जगत्का बीज बच गया है महा किन्तु वेद अपहृत
हो गया। ब्रह्माने वेदके विरहसे व्याकुल हो विष्णुको
गरण लो। इस पर भगवान्ने दानवैश्वर्य हययावको
संहर कर बेट ब्रह्माको दे दिया।

पौछे भगवान्ने मत्सरूप परित्याग कर ऋषियोंके
निकट अपने रूपकी व्याख्या को प्रारंभ कहा, 'यह सत्वव्रत
मनुष्य रूपमें प्राविभूत हो कर सुर, असुर, नर आदि
पदार्थोंको सृष्टि करेगा। इसके तीव्र तपोबलसे जगत्-
का उत्पादन शक्ति पैदा होगी।' इतना कहकर भगवान्
अन्तर्धान हो गये।

यही सत्वव्रत अन्तमें विवस्वत्के पुत्र आइदेव नामसे
वत्तमान कल्पमें प्रादुर्भूत हुए और विष्णुके प्रसादसे
ववस्वत नामसे वत्तमान कल्पके सप्तम मनु हुए थे।

२५ कूर्म अवतार। एक दिन दुर्वासा मुनि सन्तानक
वनमें भ्रमण कर रहे थे। इसी समय विद्याधर बंधुओं-
ने पारिजात फूलकी एक माला दे कर उनकी
सम्बन्धना का। महर्षि दुर्वासा जब उस मालाको पहने
जा रहे थे, तब उन्होंने रास्तेमें देवराज इन्द्रको देखा

घोर उन्नीको मङ्गल माना मन्वर्ष्ये को । इन्द्रने मन्वर्षि
को दो दुई माकाको मन्वर्ष्ये न पङ्कन रियावतके कुम्भके
छपर रथ दिवा । रियावतने पारिजातको गन्धर्वे प्रमत्त
को उच माकाको घपनो लू कुम्भे ब्रजान पर कि क दिया ।
मन्वर्षि दुर्वासामि निज प्रदत्त मानाको इस तरह पम
सोदा देव लोहित हो कर इन्द्रने कहा, 'शान्त । तूने
मन्वर्षित को कर मरो दो दुई माकाको घबहोना को है
इस कारण पावने तू शोभ्यत होगा घोर रिया मन्वर्षी
को होना होवेमा । दुर्वासामि बचन शिषी श्रामतसे
सिखा नहीं हो सकत । कम्पोटेभी कसो ममय काम
घोर इन्द्रको लोडकर पातामने वदकके घर चलो पाई ।

देवताघोषे शोभ्यत शो बानेने यथादि श्राय विभुष
होने लगे । चतुरगण प्रवृत्त पराश्रान्त हो उठे । देवता
तुर्मि पराजित हुए । बहुते देवताघोषि चतुर-शुद्धि
प्राप्तमाय किया । तब इन्द्र, चन्द्र, वायु, बहव प्रशति
प्रधान देवमन्वर्षि विपम मङ्गलमा पाममन देव य चारको
रथाका उपाय भोचने लगे । किन्तु जब वे कुछ फिर
न कर सके, तब सबके मन्वर्षि सुनिश्चिन्त पर उपलित
हुए ।

तन्मि ब्रह्माका पदम कर तनके मन्वर्षि कह सुनाई
घोर कहा कि, इस विपद्मि हरिषे सिवा घोर भूत
कोई उपाय प्राप्त नहीं पङ्कता है । पतः इस मोग उन्नीके
पाम चले । इतना कह कर सबके मन्वर्षि पाम
पङ्के घोर उन्नीके पतम कर प्रसन्न किया । विष्णु भगवान्
ने कहा, 'इम तुम मोगीका विपद् दूर करेगे, किन्तु
पमा तुम्हें पच काम करना पङ्केगा । जब तब सुसमय
उपलित न हो, तब तब तुम मोग दैत्यमि माव मिन
कर रहो । पमो मन्वर्षको ओ पचक्या है बह पङ्कत
शिवा घोर दुष्टके शिषीने भी दूर नहीं हो सकतो । पतपम
त्रिषे मनुद्रमन्वर्षि द्वारा पङ्कत उपाय हो, न को काम
करना पङ्केगा । पङ्कतके नेवम करनेके पत मा लोहित
को जाता है, मनुद्र मन्वर्षि बाप हापका वेत्त नहीं है ।
घोरोदहागामि चमी न्तापना-लोभमि धे को श्राय मा
घोर मन्वर्षपङ्कतको मन्वर्षि दष्ट तथा माङ्ककोका रङ्क
बना कर मनुद्र मयना होमा । देवाङ्कमि बैरमाव
रङ्कनेके पच काम नहीं हो पङ्कता कर उनको भी

उपायता इसमें पावङ्कत है । पतः तुम मोग पङ्कत-
के मोग करनेके लिये तैयार हो जाओ । मनुद्रमन्वर्षने
मन्वर्षपच तथा वेग पङ्को मङ्को मङ्क सकतो, वङ्क प्रमत्त
रपान्तको चमी जायगे । तब मी कुर्मके कामि मन्वर्षको
पचमी पोड पर पङ्का नूमा । मनुद्र मन्वर्षने पचके
य उपाय होगे, मोग मङ्को करमा, देवो की मन्वर्षिके
बिना कोई काम न करमा तथा पामदुष्ट उपाय होने
पर करमा भी नहीं ।' इतना कह कर माधव्य पच-
हामि हो गये ।

उच ममय पचि देवो के पचिपति से । देवताघो न
तनसे मन्वर्षि करनेका प्रस्ताव पंग किया । बनिराजने
इन्द्रने मनुद्रमन्वर्षनेको कर्त्तव्यता घोर उपायारिता जान
कर परिहर्नेमि प्रशति शान्तो ने मन्वर्षि से कर मन्वर्षि
कर मो घोर के मायमन्वर्षि कर पचतापनादनमें पच
हो गये ।

पोडे सुरासुर दोनों पचो मी मनुद्र मन्वर्षका न कन्व
कर मन्वर्ष पङ्कतको उठाङ्का घोर उने ने कर से घोरोद
मामको घोर रवाना हुए । कुछ दूर आकर के पङ्कतका
शोभ सक न सके घोर रास्तेमें ही उने छोड दिया ।
मन्वर्ष पङ्कतके मिरनेसे पचके मुरासुर चर चर हो
गये । तब मङ्ककामान विष्णुने कर्त्तव्यता कर
मन्वर्ष पङ्कतको उठा मङ्कको पोड पर रथा । मङ्कने
मी पङ्कतको घोरोदके बनिरा रथ कर प्रश्रान्त किया ।

इसके पचकार देवताघो ने मनुद्रको प्रसन्न करनेके
उद्देश्ये कहा - 'कि शरिषे । इम मोग पङ्कत निजामनेके
लिये तुम्हारे जन मन्वर्षि, इमि तुम पचमति दो ।' घोरोद
मागने कहा, - 'पति पाप मोग सुमि पङ्कतका कुछ प य
पिना लीशर करे, तो इसमें सुमि मन्वर्षादिके मन्वर्षने
जितना कह शीमा कसे मङ्क करनेके तैयार हू ।
इ पर देवमन्वर्ष पङ्कत हो गये । पच काम पारप
हुवा । माङ्कको रङ्क बना कर देवताघोने उने
मन्वर्षके चारी घोर मर्देत दिया माराचने देवताघोको
माङ्ककोका पङ्कता भाग घोर देवोको पिङ्कता भाग
पङ्कनेके लिये कर । इम पर देवोने कहा 'पिना नहीं
होगा । इम लोगीने शिदापयन किया है पचविपामि
मी म मोग निपुण है, इम लोगीका कच काम मी

अप्रगस्त नहीं है, तो हम लोग सर्पका पिछला भाग अर्थात् दुम ध्वों पकड़ने १ शत्रुमें लिखा है, कि सर्पका लाङ्गूल पकड़नेसे अमङ्गल होता है, अतः हम लोग उसे पकड़ नहीं सकते ।' विष्णुने भो हा में हाँ मिला कर उदको बात मान लो । अन्तमें देवताओंने सर्पका लाङ्गूल-भाग और दैत्योंने सुख भाग पकड़ कर मन्दरक समुद्रजलमें स्थापन किया ।

मन्थन कार्य आरम्भ हुआ । मन्दर दैव-दैत्यके वलसे आकर्षित होने लगा । मन्दरका वेग मज्ज करने का जलमें न तो ऐसा जोई आधार था और न देवासुर का ऐसा बल ही था कि मन्दरको पकड़ कर रख सके । सुतरां मन्दर धीरे धीरे समुद्रके गर्भमें जानी लगा । तब मय जोई विषयसुखसे विष्णुका सुख ताकने लगे । विष्णुने भो दुर्वापाक समझ एक विशालाकार कूर्मका रूप धारण किया और समुद्रके जलमें प्रविष्ट हो उस भ्वाभ्यमाण मन्दरको अपनी पीठ पर रख लिया और ऊपरको घोर उठाये रहा ।

मन्थनके वेगसे क्रमशः वासुकीके सहस्र फणोंसे अग्निशिखा और धूम निकलने लगा जिससे दैत्यगण बहुत व्याकुल और निर्बल हो गये । भगवान्की कृपासे मेघ जल बरसाने लगा और उन्हे कुछ शान्ति मिली ।

इसके अनन्तर सबसे पहले ही सधूम अग्निकी नाईं महाविष कालकूट (दूसरे पुराणके मतसे सबसे पीछे) उत्पन्न हुआ । इस विषके आघ्राणसे देवासुर और जगत्के समस्त प्राणी क्षतचेतन हो पडे । यह देख ब्रह्माने महादेवकी शरण ली और उनसे कहा, 'प्रभो ! यदि आप अभी रक्षा नहीं करेंगे, तो त्रिभुवन ध्वंस हो जायगा ।' इस पर जगत्को भलाईके लिये महादेव कालकूटको पी गये । विषके प्रभावसे उनका कण्ठ नीलवर्ण हो गया, तभीसे महादेव नीलकण्ठ नामसे प्रसिद्ध हुए हैं ।

शिवकी कृपासे कालकूटके अन्तर्हित हो जाने पर दैवदैत्य चेतन्य लाभ कर पुनः समुद्र मथने लगे । इस बार पहले सुरभो नामक गौ उत्पन्न हुई । ब्रह्मवादी ऋषियोंने उसे ग्रहण किया । देवताओंके श्रीभ्रष्ट हो जानेसे उनका यज्ञ बिनाष्ट हो गया था, सुरभोके घृतके उस यज्ञको उद्धार करनेके लिये महर्षि लोग उसकी

सेवा करने लगे । पीछे अश्वत्थ उच्चैः यदा निकला । इन्द्र और वलि दोनों ही उसे लेनेकी कोशिश करने लगे । विष्णुके कहनेसे इन्द्रने शीघ्र ही उसका मोभ परित्याग किया । बाद गजरत्न ऐरावत निकला जिसके चार दाँत थे । इन्द्रने उसे ग्रहण किया । इसके अनन्तर शष्ट दिग्गज, अष्टकरिणी, पद्मराग और कौस्तुभमणिकी उत्पत्ति हुई । कौस्तुभमणिकी विष्णु भगवान्ने स्वयं अपने यज्ञस्थल पर धारण किया । पीछे स्वयं लक्ष्मी देवी और तब अलौकिक रूपलावण्यवती कमलनयना परम-रमणीया एक दूसरी कामिनी उत्पन्न हुई । इ का नाम वारुणी वा मदिरा था । नारायणके आदेशसे दैत्योंने उस कन्याको ग्रहण किया । बाद अमृतकुम्भ हाथमें लिये धन्वन्तरि निकले । देव और दैत्य अमृत लेनेके लिये आपसमें भगड़ने लगे । अन्तमें दैत्योंने बलपूर्वक उसे ले लिया । उस पर नारायणने मोहिनी स्त्रोमूर्त्ति धारण कर दैत्योंसे अमृतकुम्भ मांगा । उन्हेने इनके रूपसे मोहित हो जब अमृतकुम्भ दे दिया, तब विष्णु भगवान् उसे ले अन्तर्हित ही गये । इसी बीच शिवजी उस मोहिनी स्त्रोत्तिकी देख आसङ्गलिप्सासे सुग्ध हो कर उसके पीछे पीछे धूमने लगे थे । अन्तमें नारायणने उनका भ्रम तोड़ कर कहा, 'जो कुछ भी, जब तुम सुग्ध हो गये हो, तब तुम्हे उपभोग करनेके लिये मैंने अपना आघा शरीर दिया ।' इतना कह कर दोनोंका देहाई मिला कर वे हरिहर स्त्रोत्तिके प्रकाशित हुए ।

इधर देवासुर अमृत पुराया गया है यह देख आपसमें युद्ध करनेकी सुस्ती दे हो गये । वासुकीके निश्वाससे जर्जरित हो दैत्यगण परास्त हुए और देवतालोग विजयो हो कर विष्णुलोककी चले गये । वहाँ वे अजर अमर होनेके उद्देश्यसे अमृत पीने लगे । सिंघिकानन्दन राहु नामक एक दैत्यने भो हृषिके उन लोगोंके साथ अमृत पी लिया । चन्द्र और सूर्यने यह देख उसकी पील खोल दी । उसी समय विष्णुने राहुका मस्तक सुदर्शन चक्रसे काट डाला । अमृत उसके कण्ठ तक चला आया था, इस कारण उसकी मृत्यु नहीं हुई । तभीसे उसका हिन्दु मस्तक गगनपथमें धूमता है

एव ज्ञानके ज्ञानानुसार चन्द्र और सूर्यको धाम करता है ।

इस तरह भयभङ्गने कर्मभूतिमें जगत्को ज्ञान कर्मको उद्धार किया ।

दूर्योधनके कर्मभङ्गकारका विवरण इस प्रकार है— भयभङ्ग जब जन्ममें बोधे हुए थे, तो उनके मातमनमें एक रमको उत्पन्न हुई । यही रमको पापायामि है । भयभङ्ग इन्हीं भयकर्मण कर इन्हींकर्म मर्मके ज्ञाना, विष्णु पौर महेश्वर इन मोक्ष भूतिदोनों पाविभूत हुए । पापायामि तब यथके रूपमें बहती हुई ज्ञानके निकट पहुँची पौर उनके मिलनेके इच्छा प्रकट की । इस पर ज्ञानमें कह करी पौर देवनेके लिये पयसा सुद सुमाया, तब से चतुर्मुख हो गये । दोहे से विष्णु के पाक गई, विष्णुने उन्हें सुरत हो बापिक कर दिया । पत्नमें उन्होंने जब महादेवसे मिलनेको प्राप्तना की, तब महा देवने कहा, 'यदि पाप हो बार पयसा शरीर परिवर्तन कर कहे, तो मैं पापको पक्ष कर सकता ।' इस पर पापायामि मित्रको इच्छा पूरी कर उनसे मिल गई ।

इस तरह गाँवके स्थापित होने पर विष्णुने ज्ञानमें पुत्रको सृष्टि करने कहा । ज्ञाना पुत्रोपा शीत नहीं पा कर निर्देह हो रहे । तब विष्णुने अपने कर्ममनमें महादेव नामके दा देवीको उत्पादन किया । ये उत्पन्न होते हो ज्ञानको मागने दोहे । ज्ञानमें भयभीत हो विष्णु की ही शरण लो । विष्णु में देवीको मार कर लक्ष्मीके मिरमानमें पुत्रोको सृष्टि करने कहा । ज्ञानमें मात्र पा कर मीदिना सृष्टि का, किन्तु अमर्ष जयर जन्म करने लगे । ज्ञानको लिर करनेके लिये बराबरान परतको सृष्टि की, लेकिन परतके भारसे पुत्रों का मनाने लगी । ज्ञानने तब साधुकी मागको परत पक्षुके कहा, पर जन्ममें साधुकीका पाचार कीन भोगा यह मोक्ष का लक्ष्मीके जिर विष्णुको शरण लो । तब विष्णुने महाहर्मभूति शरण कर साधुकोको पयसा पोट पर ले लिया । परतसे माह इतिवो लिर हुई । ज्ञानमें जिर स्थावरजगत्का सृष्टिको पौर मन दिया ।

इस वृत्तान्त—जोगविषय नामके मन्थानुसार चतुर्दश अक्षरों का ब्रह्मके ताद्विपरिमित को दिखाने

में एक कल्प हुआ । इस कल्पके पत्नमें महात्मण हुआ था । चतुर्दश मनुष्योंमें श्रायम्भुव मनु ही प्रथम थे । अब स्वायम्भुव मनु पक्षमें उत्पन्न हुए, तब उन्होंने ज्ञाना से पूछा, 'हे पिता ! मैं किस तरह पापको भेदा कर, मे सुम्नि बतवा दोजिये ।' ज्ञानने कहा, 'बन्ध ! तम भयभीती फीसे एक पुत्र उत्पादन करो पौर पुत्रो मागन तब साधुके द्वारा ब्रह्मके पापायामा करो । इस पर मनुने कहा 'जिज्ञा ! पुत्रोत्पादनका म्यान कहा है ? पुत्रो कहा है ? भयो तो जन्ममें कहे हुए हैं ।' मनुके बचनसे ज्ञाना जाना है, कि उनके जन्मकालमें महात्मण हो कर खोई एक कल्प होत गया है पौर उन्होंने ही पक्षमें मनुके रूपमें जन्म पाहण कर दूरसे एक कल्पका धारण किया है । तो क लम्बे समय विष्णुने बराबरभूति शरण की ।

ज्ञानमें मनुके मुखमें पुत्रोको जन्मम्यावस्था पुत्र कर सोचा, इतिवोका उद्धार कीन कर सकता ? जिज्ञानि सुम्नि सृष्टि कायमें निवृत्त किया है, उन्नी मन्थानु माग यथके भिवा पूरा कोई मो बह काम करनेमें समर्थ नहीं जान पवता है । ज्ञाना यह मोक्ष हो रहे से कि उनको लाक्षमें एक कर्मकोका वराह निकल पड़ा । ज्ञाना उनके देख कर विस्मित हो गये । वह शूकर सुरत हो पाकायमें रह कर एक बड़े दावीके समान बह गया । ज्ञानान इस पक्षोक्ति शूकरकी देख कर नमन्ना कि नारायण वह मायाको देव शरण कर पक्षी पक्षुके है । इस समय शूकररूपमें पयसा शरीर परतके श्रिया बड़ा कर ब्रह्मभक्तिका मर्दि शब्द दिया । उन्ना भयम ज्ञानादिने उन्हें नारायण नमन्ना पौर निय सयितके रूप में उन्हें जान कर तांन शिरीसे उनका स्तन किया । बराबरदेवने उन्हें पायाल देवके ब्रह्मके पुनः जन्म करते हुए जन्ममें प्रवेश किया ।

यद्यप्यह भयभङ्गन मनुष्यमें बहिष्ठ होयने पुरान समुद्रको एक पोरसे दूसरे पोर तक विदारण करके नेका, कि मन्थकालमें उन्होंने शरण करण-प्रथम मयन कर जिन इतिवोका मोदमें शरण किया का, वही इतिवो पन्ना रनातलमें पयो हुई है । पादिकराह यह देख पयने विद्यान दृष्टाच पर बराबरकी भिदा कर जन्म शरण निकले ।

एक दिन सूर्योदय के समय सरोचिन्द्रन क रूप होमकार्य समाप्त करके अग्निगृहमें बैठे हुए थे। उनी बोच उनको स्त्री दिति कामपोड़िता हो उनके समीप पहुँची। महर्षिने कहा, 'कुछ देर ठहरो, अभी राक्षसो समय है, इस समय भगवान् भूतपति भूतोंके साथ सर्वत्र विचरण करत हैं और अपने तीनों नेत्रोंसे सब और निहारते हैं। इस समय भगवान्के स्मरणके सिवा दूसरा काम नहीं करना चाहिये, करनेसे अशुभ होता है।' दितिने कहा, 'हे नाथ ! मैं पुत्रवती मपत्त्रियोंका सोभाग्य देख कर नितान्त दुःखित हो गई हूँ, इसी कारण अभी सदनमेंटना उपास्थित हो कर बहुतही यत्नणा दे रही हूँ, अतएव आप दुःखिनोकी उधार काजिये।' कश्यप उह फिर समझाने लगे, किन्तु दितिने इस और कुछ भी ध्यान न दिया और वे लला परित्याग कर स्वामोक्षा वस्त्र खींचने लगे। कश्यपने पत्नीका ऐसा आग्रह देख भगवान्का स्मरण करके पत्नीको अभिलाषा पूरी की। कश्यपका साथ कालीन नियम मङ्ग हुआ और दितिजा मन अनुतापसे जन्मने लगी। कश्यपने अपने स्त्रीको चिन्तित देख कर कहा, 'हे प्रिये ! तुम्हारे चित्तकी अशुद्धि, सुहृत्तदोष, मेरा नियमभङ्ग और सृष्टी अवहेला इन चार दोषोंके कारण तुम्हारे इस गर्भसे दो अपकृष्ट पुत्र उत्पन्न होंगे। वे लोक और लोचनानोंकी कष्ट पहुँचावेंगे, अनर्थक प्राणोहत्या और स्त्रियोंको कष्ट देंगे और अन्तमें सहर्षियोंका कोप बढा कर भगवान्के हाथसे मारे जायेंगे। तुम्हारे एक पोत्र होगा, जो सदा ईश्वरके ध्यानसे लान रहेगा।' दितिने सौ वर्ष गर्भ धारण करनेके बाद हिरण्यक्ष और हिरण्यकशिपु नामके दो यमज पुत्र प्रभव किये। ये दोनों पहले जय विजय नामसे वैकुण्ठके द्वारपाल थे। एक समय सनकादि चारों ऋषि जब विष्णु, भगवान्के दर्शन करने आये थे, तब इन्होंने उन्हे नंगा देख उपहास किया और बँत भी लगाया। उन्हे ऋषियोंके शापसे जय विजयने हिरण्यक्ष और हिरण्यकशिपु हो कर दितिके गर्भमें जन्म लिया।

थोड़े ही समय में उन दोनों पुत्रोंने महाबलशाली हो कर देवतओं पर अपना आधिपत्य जमाया और

ब्रह्माकी शरणाधना कर वर प्राप्त किया। हिरण्यकशिपु विभुधनका श्रीश्वर हुआ और हिरण्यक्ष पृथ्वी जोत कर स्वर्गको गया। ब्रह्माके वरके प्रभावसे देवगण उन दोनोंसे परास्त हुए। तब हिरण्यक्ष जयकी अभिलाषासे सागरके मध्य वरुणकी विभावरीपुरी पहुँचा। वरुणने कहा, 'मैं आपसे युद्ध नहीं कर सकता, आप अद्भुत बलशाली, दैत्यश्रेष्ठ और रणप्रण्डित हैं, सुतरां पुरुषोत्तमके शिवा कोई भी आपको रणमें मनुष्ट नहीं कर सकेगा। आप उनके पास जाइये, वे ही आपका अभिमान चूर करेंगे।' हिरण्यक्ष इस कटूक्तिको और ध्यान न दे कर विष्णुकी खोजमें निकला। नारदने उसे कह दिया कि विष्णु अभी रसातलमें मिलेंगे।

यह सुनते ही हिरण्यक्ष रसातलकी पहुँच गया, वहाँ उसने विष्णुको तो नहीं देखा, लेकिन देखा कि एक विशाल वराह अपने दाँतोंके ऊपर पृथ्वीको धारण किये उसे ऊपर उठा रहा है। तब इस अद्भुतकर्मा वराहकी देख कर वह दैत्यश्रेष्ठ विस्मित हो गया और गाली गलोज देता हुआ उन पर टूट पड़ा। आदिवराहने कटूक्ति सुन कर उसके प्रति अपना भीम दृष्टि फेरो; उससे उसका तेज विनष्ट हो गया। पोछे हरिने पृथ्वीको उठा कर जलके ऊपर रखा और अपनी आधारशक्तिसे उसे स्थिरकर अर्ध वराह और अर्ध विष्णु, सृष्टिमें दैत्य पर आक्रमण किया। दोनोंमें घनघोर युद्ध होने लगा। ब्रह्मा अन्तरीक्षमें बोलि, 'यह दुष्ट दैत्य मुझसे वर पा कर देवताओंसे अजय हो गया है, किन्तु अभी लोकनाशकारी अभिजित् नामक मुहूर्त्त बीत रहा है, अतएव आप उसे विनाश कौजिये।' नागायण स्वयं अनन्त कालरूपी हैं, इस पर ब्रह्मा उन्हे मुहूर्त्तका उपदेश देते हैं, यह देख कर उन्होंने चिठ कर सुदर्शन वक्र द्वारा उस दैत्यवती मार डाला। वराह अवतारमें भगवान्ने इसी तरह धरित्रीका उधार किया था।

कालिकापुराणमें इस वराहके विषयमें एक नयी कथा पाई जाती है। भगवान् वराहसृष्टि धारण काने हिरण्यक्षको मारने तथा पृथिवीका उधार करने पर भी शान्त न हुवे। म हावराह तब पृथ्वीसे उपरत हो कर बहुतसो संताप उन्हादन करने लगे। उन सब महा

गुरुर्ननु प्रथमो पर उपास्यं चारुं चिदा । देवताधोनि
 एतन्ने चत्वारोऽपि उपास्यं चो पुनः विष्णुं वा स्युः कर
 उतये चत्वारः 'हे प्रभो ! पाप एव महाबराह मूर्ति' को
 म बार कोजिये तथा एव मय करीयुक् प्राचिदीको मी
 मार चालिये । इस पर विष्णु ने जवाब दिया, 'एक बार
 जो यज्ञि सुमन्त्रे निवृत्त करे है उतये मी म बार नहीं कर
 प्रकृत । उत यज्ञिको टमन करनेके लिये उतये मी
 पश्चि चिसी दूसरो यज्ञि बी पाचप्रकृता है । इनके
 लिये महादेव उपास्युं ठहराये मये । देवताधोनि मी
 उतये पश्चिक्तर यज्ञि समर्पित करनेके लिये धयना
 धयनी यज्ञि चर्के' प्रदान को । तब महादेवनी पद्यपद
 महाकाय धरममूर्ति चारु कर महाबराह चौर उतये
 च यज्ञो विनाय कर प्रदियो प्रागत बी । शिरःपाव देको ।

इमं वृत्तान्तरात् ।—हिरण्यप्रदाका भार्गविरण्यमग्निपु
 ने ब्रह्मादि कर पावा या, चि च्छा देवता, च्छा मानव
 च्छा च्छा प्राची जिमीये मी उतया नाम नहीं होगा
 धोर न तो अस्त, अस्त, अग' वा पाचार्थमिं चो उतको
 च्छा, होयो । इस करने प्रमाणमे बह धयनेको धयन
 समन्त्र देवताधोनी उपासा तथा उतये प्रति चत्वारो
 करने मी । बह इन्द्रादि देवता विधोको मी नहीं
 समन्त्रता तथा विष्णु, मी माच इमीया होय रचता वा ।
 एतन्ना पुनः ब्रह्माद बहुत यचयनये हो ममवदुमन्त्र वा ।
 एव चारु चि च्छाकग्निपु उतये अथ बहुत विरल रहा
 करणा वा । ब्रह्मादको हरिमन्त्रिये विचमिन करनेके
 लिये हिरण्यमग्निपुने पक्षे उतये च्छिमिं चाच पौर चाच
 करके अतमिं धोर जायोके धोर मी च्छे दिया किन्तु
 ममवान्नी च्छाये ब्रह्मादका चान बाका मी न हो
 सका । दैत्यपतिने अथ विरल चो कर पूजा कि एव
 तरह विपदुमिं बह च्छिम तरह रचा पाता है ? तब
 ब्रह्मादने उतये जवाब दिया 'कि ममवान् विष्णु को उतये
 उतार करने है । के धर्मव्यापी नर्केटगीं धोर मय प्र
 है । इस पर दैत्यपतिने कहा, 'तुम्हारा हरि कः धर्म
 व्यापी है ? क्या बह इस मर्मरपत्तये च्छमिं मी है ?'
 ब्रह्मादने बहुत इन्द्राये उतार दिया, 'अदर, ममवान् इतमिं
 मी है । तब दैत्यपतिने उतयो बात पर च्छिच्यो कर
 धुरको मियाबादो बतनाया धोर हरिको क्पासनाये

विचमिन करनेके लिये कहा, 'यच्छा इम धयो धयोकी
 दो मय करने है, देखे, तुम्हारा हरि इतमे किम तरह
 है । इतना बह कर दैत्यपतिने च्छमिं धयन जो हो
 च्छा कर जाना । पाचार्थका विचय या, कि ममवान्
 मन्त्रवाच्य मन्त्रनिगम धोर मन्त्रके प्राय च्छानेके लिये
 उतये समय चर्के मि च्छे धोर चर्के मन्त्रकार टव चारु कर
 उत मन्त्रके निवृत्त पक्षे धोर बिना उपासा लिये इव
 उत दैत्यपतिने चान चोच कर उतये धयने दोनी कर
 पर रच दिया धोर मन्त्रमि उतया कुचि पाव कर उतये
 मार चाला । उत ममय मन्त्रा चान वा । दैत्यपतिने
 इम तरह पद्यपद एक चमिनव क्रीडाकार मूर्तिके अथ
 पर मन्त्राके समय प्राच त्वाच लिये । ब्रह्माच्य मी
 उतये च्छा । इन्द्र मी शिरःकग्निपु देको ।

ममवान् इमी तरह चोय च्छतारने मूर्ति इन्मूर्ति
 धार च कर मन्त्रकी प्राचरचा धोर प्रदियोको दैत्यके
 लयके उतार किया ।

५ ममवान्तरात् । सुमिं ब्रह्मादने च्छिम ब्रह्माद
 को च्छा करी नई है, उतये के पौत्र बलि च्छे च्छिम क
 धि । उतये इम धोर सुचिये प्रमच चो कर ममवान्नी
 उतये च्छिचालका पश्चिपति बनाया । इस पाचिपतयको
 वा कर के च्छे दानयोच हो गये । उतये निवृत्त कोई
 धर्मी किन्तु नहीं होता वा । उतये च्छाव सुमानक
 धोर सुपासक मी एतये एव धि । ऐसा च्छे च्छे अथ
 रचने पर मी के इतने मवि न धि कि देवता धोर
 ब्रह्माच्यकी धोर नजर मी नहीं उतारि धि । इस चारु
 देवताधोनि उतये धयना च्छे कर विष्णुको धयन को ।
 विष्णुने उतये पाचासित कर च्छान्यके धोरम धोर
 पदिनिव धर्ममिं चामन कर्म उपास्युं किया । उत
 मयनके बाद चामन बलिने निवृत्त दान धानेकी च्छाच
 मया । बलिने सुदुकाय ब्रह्माच्य नन्तानको धयने चामने
 प्राचीके कर्म उपासित देव पूजा 'हे विभ्र ! तुम क्या
 चाहते हो ? इस पर चामनने कहा 'मी उतये च्छे च्छाव
 कर तपस्याका पाचन बनानेके लिये निवृत्त तीन च्छे
 अमोन मांगता च्छे । बलि कोने 'पिमा मामान्य दान
 मीरे लिये उपास्युं कर है तुम चाम नजर चादिने लिये
 प्राचीका करो । तब चामनने कहा, 'मीरे पश्चि प्रयो

भासाधार उपजन्मं समुद्रं प्राप्य नन्दं चरन् प्राप्य भीमं तदा
विद्यमानं च ।

भगवान्ने इह पचतारमिं माहृदन्वा को वी, पचः
इह पापने पर्यु तनङ्गं चावमिं लया हो रक्षा वा इमंति
तनका नाम पर्युराम वृषा चै । दुर्दान्तं चतुर्यांवा
विनाश, समुद्र-वृग्को रोच कर दक्षिण भारतको रक्षा
ये सब काम इमी पचतारमिं हुए छि । वसुधाम् देख्ये ।

७७ राम भवत्पार । - लहामिं रामच नामक राजमराज
बहुत दर्पित हो कर त्रिषोडशमिं उपात मचाने मगि ।
द्विषतापीकी प्राञ्जलाये भगवान् मारायचने राम लकाच,
भरत धोर ग्रन्थ नामसे चार पद्यमिं उत्तरकोजासुदि
राजा दयारथके पुत्र बन कर उत्सवपत्र किया वा । लक्ष्मो
भी सीताके रूप मिविचारप्राप्तो कथा हुई या ।
तारका नामको एक राजसोके उत्पत्तये पचीर हो कर
विश्वामित्र ऋषि भगवान्के पचतार लक्ष्मण रामके पास
गये धोर लगे सहायता मंगो । राम धोर लक्ष्मण दोनों
मिं वा कर ताड़कावा विनाश किया धोर यद्य देवमिंके
बहानेमे मित्रिमिं या मित्र वसु तोड़ कर सीताको
प्राहा । पर्युराम इह वसुधको मन्त्रिण रवे गये छि ।
उन्हे जब मान्म पड़ा कि चतुरिये बह वसुध तोड़ा
गया तब वे रामका विनाश करनीच मिते उपात हुए ।
रामने व मति हुए भाग्यके लयंममनका राम्ना बन्द
कर दिया यह देख पर्युराम लज्जित हो बाधित धाये ।
विनाशके चक्राम्मिं पड़ कर राम लक्ष्मण धोर सीताके
साथ पचकटा बनको गये । बहा रामचको बहन सुपं
चक्षाने लक्ष्मणको देख कामपीडित हो कर लने
प्रार्थना की । लक्ष्मणने रामके द्वारा पा कर लक्ष्मो
नाक काट प्राणी । सुपंचकाके रचक धरदूषण बाद
सुह करने पाये तब वे दक्षवसुके साथ मारे गये । तब
सुपंचकाने सब वृक्षान्त रामचके बह सुनाया धोर
बह दुष्ट राघव सीताको हर कर लहा ले बहा । मारीच
राघव लानेवा बन बन रामको प्रणाम कर बहुत दूर
ले गया, इको बोच रामच योगोके वंशमिं सीताको हर
ले गया वा । राष्मिं पचोद्भूत जटायुने रामचको रोका
धोर पीछे लङ्काके रामचने लगे मार कर लहा प्रत्यान
किवा । बोला लक्ष्मण रक्षमिं बीडी हुई सीतो धोर

पचने पचकारको छि कता चको गई । पीछे
रामने मारीचकी राघव जान मार डाला ।
जब लक्ष्मो ने सोच कर जटायुं सीताको न देया, तब
वे लक्ष्मो तक्षायमिं बाहर निकले धोर राष्मिं वृतमाया
पतित जटायुमिं नब वृक्षति मान्म हो गया । श्वभसुप
पच त पर बाघराजाके भाई सुवीरके निष्कट लक्ष्मिं
सीताका एक पचकार पाया । सुवीरने सीताके उधारका
लीम दिखा कर रामके बानरराज मानिका बन कराया
धोर श्वय राज्य पक्षिकार कर रामका बानरसेना दाा
सहायता की । इतुमान्मे समुद्र पार कर सीताको खोज
निकला धोर बहाने राजीधानको तक्षसमह कर
सीटा । नब नामक एक बानरने पचुत कीगनके समुद्र
को पुनये बांध दिया । लमी वृष्ट द्वारा रामने ममेन्व
सहा वा रामचको लयम नाम कर उधार किया ।
रामचके भाई विभीषचने लक्ष्मिं समयमिं श्री रामकी
सहायता की । पचमिं विभीषच श्री सहाके राजा हुए ।
पीछे राम सीता धोर लक्ष्मणके साथ पयोधा सीटे धोर
भरतने लक्ष्मण साथ मी प दिया । सीताके क्रूरके वरमिं
पक्षिक दिन रक्षनेके कारण बृहत् उधर जाना प्यु होने
लगे । रामने सीताको बाल्मीकिने तपोवनमिं छोड़
पानेके लिये लक्ष्मणके सहा । लक्ष्मणने मो बैसा ही
किया । लक्ष्मण सीता गर्भवती की । ऋषिके पापममिं
कुप धोर लक्ष्मण लक्ष्मणके दो पुत्र हुए । इन दोनों ने
ऋषिवासकोको भाई सीतादि धोर चतुर्यांको भाई
वसुधके मो सोखा । बाल्मीकिने इन्हे चनका परिचय
न दिया, किन्तु स्तम्भित रामायणका गान सीतावर्जन
तब चिन्ता दिया । इकर कुछ दिन बाद रामने पचम
मिं च यत्र पारथ कर सब ऋषियोंको निमन्त्रण किया ।
बाल्मीकि मो लक्ष्मिं वृषभककी साथ छि यत्रकचनमिं
पहुंचे । समालम्भने रामायणका गान होने लया ।
लक्ष्मण ऋषिने लक्ष्मणको परिचय दे दिया । सीता
सुन लार् गई । किन्तु रामचन्द्रने जब पक्षि पतीचा
किये बिना लक्ष्मिं सुनपंच करना न चाहा, तब सीता
परोवा देखके पक्षी हो वाताकको चको गई । पीछे कुछ
दिन बाद जब राम कान्मुपचके साथ लक्ष्मणकचन कर
रहे छि, लक्ष्मण लक्ष्मण बहा पचुच गये धोर राम

नियमानुसार लक्ष्मणकी परित्याग करनेकी वाध्य हुए । लक्ष्मणने सरयूमें प्राणत्याग किया और कुछ दिन पीछे राम, भरत, गत्रह तथा अन्यान्य अनुगत लोगोकी साथ कर सरयूमें प्रवेश करते हुए स्वर्ग चले गये ।

राम देखो ।

८म वलरामवतार—मथुराके राजा उग्रसेनके औरससे कंस नामक एक दैत्य उत्पन्न हुआ । कंसने राजा हो कर अपने बड़े पिता उग्रसेनको कैद कर लिया । इसके प्रत्याचारसे सभी लोग तड़क तड़क हो गये । बाद देवताओंकी प्रार्थनासे भगवान्‌ने पृथ्वीको भारसुक्त करनेके लिए पुनः अवतीर्ण होना स्वीकार किया । देवकी कंसको चचेरी बहन थी, जिसका विवाह हृषिण्वंश्रीय वसुदेवसे हुआ था । कंसकी नारदसे यह बात मालूम हो गई कि देवकीके आठवें गर्भसे जो लड़का उत्पन्न होगा वही उसका प्राणनाश करेगा । इस पर उन्होंने क्रुद्ध हो कर देवकीकी पतिके सहित कैद कर रखा और एक एक करके उसके छ बच्चोंको मरवा डाला । जब मातर्वांशिशु गर्भमें आया, तब योगमायाने अपनी शक्ति उस शिशुकी देवकीके गर्भसे आकर्षित कर रोहिणीके गर्भमें कर दिश । रोहिणी मथुराके निःशुभवर्ती गोकुल-पति गोपराज नन्दके यज्ञ रखी गई । आठवें गर्भके समय देवकी पर कड़ा पहरा बैठाया गया । आठवें महीनेमें भाटी वदो अष्टमोकी रातको देवकीके गर्भसे श्रीकृष्णका जन्म हुआ । वर्षा बहुत जोरसे हो रही थी, उभो रातको पहरुओंके मो जाने पर वसुदेव उस शिशुकी ले कर नन्दके यहाँ टे आये । उसो रातको नन्दके भी एक कन्या हुई थी । वसुदेवने स्तिका रातमें जा उस कन्याको ला कर देवकीके पास सुला दिया । दूसरे दिन जब कंस उस कन्याकी मारनेके लिए उद्यत हुए, तब वह कन्या उनके हाथसे छूट आकाश जाकर धानी 'तुम्हारा विनाश करनेवाला गोकुलमें बट रहा है ।' यह सुन कर कंसने गोकुलके सब बालक और जोब सन्तानको मार डालनेकी आज्ञा दी । नन्दालयमें रोहिणीके गर्भजात शिशुका नाम बलराम तथा देवकीके शिशुका नाम श्रीकृष्ण रखा गया । बचपनमें वे दोनों कंसके भयसे दधर दधर कपि रहते थे । बाद जब वे

गाय चरानेमें प्रवृत्त हुए, तब कंससे नियुक्त दैत्यगण उन्हें मारनेके लिए आने लगे । बलरामके हाथसे धेनुक और प्रलम्ब नामक दो असुर मारे गये । कंसने दोनों भाइयोंकी मारनेके अनैक उपाय किये पर सब व्यर्थ हुए । अन्तमें उसने उन्हें एक यज्ञमें निमन्त्रण किया । नन्द कंसके अधीन एक राजा थे, अतः वे सपुत्र वधों पहुँचे । यज्ञस्थलमें श्रीकृष्ण और बलरामने कंसको मार उग्रसेनको कारागारसे सुक्त कर सिंहासन पर स्थापन किया । पीछे वे ही मथुरा राज्यके सर्वे सर्वा हो गये । बाद जरासन्ध (कंसका श्वशुर)ने मथुरासे भगाये जाने पर वे दोनों द्वारकामें आ ठहरे । बलरामने देवतोसे विवाह किया । जब कृष्णके पुत्र शाश्वत दुर्योधनको कन्यालक्षणाकी सुरानेमें कारावद्ध हुए थे, तब बलरामने ही युद्ध करके उन्हें छुड़ाया था । द्विविद नामक वानरका राजा भी इनके हाथसे मारे गये थे । वे दुर्योधनके अन्न-विधाके गुरु थे और एक बार तीर्थ गये थे । अन्तमें प्रभासके युद्धमें यदुवंशका नाश होने पर इन्होंने योग-बलम्बन करके कृष्णके पहले ही प्राणत्याग किया ।

इस अवतारमें भगवान्‌ने श्रीकृष्णके साथ मिल कर अवतारका कर्तव्य पालन किया ।

९म अवतार बुद्ध ।—कपिलवस्तु नगरमें राजा शुद्धोदन और मायादेवोसे मिहार्थ नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ । वे अन्तमें प्राक्यासिंह नामसे ही पुकारे जाने लगे । इनका एक दूसरा नाम गौतम था । बचपनसे ही ये खेलसे विरत निर्वनवासप्रिय और ध्यान-धारणापरायण थे । दण्डपाणिको कन्या गोपासे इनका विवाह हुआ । संसारी होने पर भी गौतम कड़ा करते थे, "जगत्में स्थायी कुछ नहीं है, सत्य कुछ नहीं है, काष्ठके घर्षणसे उत्पन्न अग्निक्षणको नार्हें यह जीवन है, यह क्रमो जल उठता है और कभी बुझ जाता है । हम लोग यह नहीं जान सकते कि यह कहाँ आता है और कहाँ चला जाता है । यह वीणाधनिके समान है । पण्डित लोग तथा इसका आद्यन्त अनुसन्धान करते हैं । क्या ऐसो कोई एक महाशक्ति है जिससे हम लोग विरामलाभ कर सकें ? यदि मैं उसका अनुसन्धान करूँ, तो निश्चय है कि मैं उसे मनुष्योंको

दिखा सकता। यदि मैं आद्योम को खाऊ तो मैं हथेलीको मुक कर सकता।" गीतमने ऐसे विधातोत विचार दूर करनेके लिए पनीक उपाय किये गये। विष्णु मन्त्र ब्रह्म हुए। एक दिन जब वे नगर बुधने गये तब वहाँ एक अराष्ट्र हठ, एक रोगपोकित तथा एक मिथुन मन्त्रालोको देख कर उनके मनमें वैराग्य उत्पन्न हो पाया। एक रातको वे एक जोहरको साथ छे बीजे पर सवार हो राजघाट छोड़ काड़ कर घरने निकले। इस समय उन्हें शकुल नामका एक पुत्र हुआ था। प्रातः काल होने पर गीतमने उस जोहरको अपना धनदाता, परिच्छेद और दोहा लेकर राज्यको लोट जाने कहा। बाद में पड़ते वैशाखी नामक मन्त्रानि काकर एक विप्र-ब्राह्मणके गिण हो गये। उनको प्रान्तस्था उपरिभोग को। वैशाखीने गिणा समाय कर वे राजघटके विद्वान्त योष्ठ पकिरतके पास गए। यहाँ भी वे ठहर न हुए। तब वे बहविल्लयाममें जा कर पाँच सङ्घपाठियोंके साथ तपस्या करने लगे। तपस्याके बाद, उनमें कावियोंने उन्हें नास्तिक समझ कर छोड़ दिया। अन्तमें वे पनीक साधनाके बाद यद्यार्थज्ञान प्राप्त कर लान हुए। इसी समय उन्होंने बुद्ध नाम ग्रहण किया और भावाभोजित प्रयत्नके लिए एक नूतन प्रान्त-लोक प्रकाश किया। वे अपना मत प्रचार करने के लिए जायी गये, वहाँ उनके महाप्रायी पाँच मन्त्रालो उनका मत मानने लगे। पोषे प्रचारकार्यमें कतौ ही कर वे राजघटमें राजा विन्दि मारको समामें बुलाये गए। राजाने उनका उपदेश सुन कर उनके रहनेके लिए आलासक नामक मठ उन्हें प्रदान किया। यहाँ रह कर वे अपना उपदेश प्रचार करने लगे। इसी स्थान पर उनके प्रधान गिण मारि पुत्र आराधायन और मोदुगन्धायन इनके निकट पाये वे राजा विन्दिमारके पुत्रके वे दोनों मारे जाने पर बुद्ध राजघट छोड़ कर आबस्तो नगरको चले गये। पयोप्या के राजा प्रवेगजित्ने उनका मत ग्रहण किया। बारह वर्ष बाद वे अपने पिताने मुखाकात करनेके लिए घर छोड़े। उन्होंने अपने राज्यमें कई एक परामुपुत्रों काय करके तब शास्त्रीको बोध बनाया। आन्तानिडे मन्त्र करने पड़ते उनको छोड़ और जायीने बुद्धमत

ग्रहण किया। ७० वर्ष की अवस्थामें वे फिर राजघट पाये और पिच्छकला राजा प्रजातयानु को बोध बनाया। पोषे के वैशाखी और बहामे कुशीनगर गये। इस समय उन्हें ऐसा मानस पड़ा कि उनका पश्चिम समय दोत रहा है। वैशाखी पूर्णिमाके दिन एक शाकल्यके तसे स्थानमें ही उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया।

पुत्राचये अनुसार वे ही बुद्ध माराकवके अवतार थे। पुराणमें लिखा है कि एक दिन देवोंने हम्प्रे पूजा कि किस तरह हम भीय आभिमावके संसार पर राज्य कर सकेंगे? हम्प्रे उन्हें पवित्र भावके वागवचन और वेदविहित आचारके अनुकर्त्ता होने कहा। इस पर जब वे एक महापद्मका अनुष्ठान करने लगे, तब अन्त्याय देवताधेनि विष्णुको शरण लगे। विष्णुको भी जब यह मानस हो गया कि यद्यप्यहने त्रिषोक्तका आधिपत्य देवोंके दक्षित होया तब भी एक संन्यासीमूर्ति आरण्य कर अपवित्र भेदामें जावमें एक भाङ्ग लिये यज्ञानुष्ठायोके स्थानके निकट पड़ूँगे। जब उन लोगोंने इनके अपवित्र वेगमूया देख कर इनका परिचय पूजा, तो हथो मे कोई अन्य उत्तर दिये बिना यज्ञमें द्विकारके किये प्राचीन करना बहुत अन्त्याय मतमाया। अन्य पवित्र होनेके किये नृसीका प्राच शिना यह विसतुन अनुचित तथा अन्त्याय है। मैं जब बसता हूँ, तो इसी भाङ्गके प्रायीका असान नाक कर सीता, जिसके कि कोई दूध प्राची ओरे तसे दूध कर मर न जाय। इस तरहके हृदय-मोहकारी दया उन्हें पक्ष बचनेके देवोंका हृदय पिच्छ पाया और उन्होंने पारम्भ ब्रह्मको परिस्थाप्य कर, "पदि ना परमो धर्मः" यह मत अवलम्बन करते हुए वेदमार्ग त्याग किया। तिसु बल देवके प्राकने बच गया। नागायपका अवतार होने से जो मन्त्रलोमूत हुआ। बुद्ध के।

१०५ अवतार कथी—कलको अवतार पर तब भी नहीं हुआ है। इससे बाद होया। कसिने पन्नाचारके पोहित हो कर देवमन्त्र विष्णुके मार्गना करेगे और विष्णु अन्त्यायाममें विष्णुदया नामक ब्राह्मणके शीरके लयन होसे। परशुराम उन्हें वैदादि सिद्धांति और महा देव अलविद्या दिया कर एक वर्षवामी मन्त्राण्य, एक

अक्षय शसि श्रीर एष शुक्लपक्षी दान देंगे। पीछे वे पृथ्वीके समस्त नन्दे और विधर्मियोंको विनाश कर पुनः मनातन धर्मको प्रतिष्ठा और हिन्दुराजत्व स्थापन करेंगे। इन्हीं देखो।

इन दश अवतारोंमें मत्स्य, कूर्म, वराह और वामनको कथा वेदमें पाई गई है। मत्स्य और कूर्म को उक्ति शतपथ-ब्राह्मणमें, कूर्म, वराह और वामनको कथा तैत्तिरीय-ब्राह्मणमें है। मत्स्य अवतारमें जो प्रलयकी कथा लिखी गई है, वह ईसाइयोंके बाइबिलमें लिखे हुए नोआके समयके जनस्रावण इतिहाससे मिलती है। भगवान्की आदेशसे मत्स्यवतने जिस तरह नाव द्वारा सब बीजाकी रक्षा की, ईसाइयोंके नोआने भी उन्हींके आदेशसे वैसा ही किया था। मनु और तु या नोआ शब्द पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे एक व्यक्तिबोधक है। उन लोगोंका कहना है, कि पाश्चात्य शास्त्रके इतिहासने देशभेदसे रूपान्तरित हो कर वेदमें स्थान पाया है। प्रलयकालके जलस्रावणको पण्डित मोक्षमूलक कहते हैं, कि यह वार्षिक हैमन्तिक अथवा प्राण्टिके दृष्टि-जनित देशविशेषके जल-स्रावणके सिवा और कुछ नहीं है। प्रत्य देखो।

भूतत्त्ववेत्ता कहते हैं—कि इन दश अवतारोंमें पृथ्वी परकी जीवसृष्टिकी क्रमविकाश कथा ही लिखी गई। वे यह भी कहते हैं, कि जब भूसृष्टि नहीं हुई थी, तब जलचर जीवके सिवा और दूसरा कोई नहीं था। उस समय भगवान्की सत्ता टिखलानेके लिये उनकी मत्स्य मूर्त्तिके कल्पना की गई है। पीछे जल सागरमेंसे थोड़ा जमीन निकली, तब उभर कर कूर्म वा कच्छप मूर्त्तिके कल्पित हुईं हैं। इसके अनन्तर भूमिभाग बढ़ने लगा, जल हट कर बहुत दूर चला गया, किन्तु भूमि उस समय वर्तमान मात्र थी। वैनी जमीनमें वराह सरौखा जोव ही रह सकता है, अतः उस युगमें भगवान्की वराह अवतार कल्पित हुआ है। इसके बाद जमीन सूख गई जिससे वराह छोड़ कर अन्य जीव रहने लगे। नर और पशु उत्पन्न हुए, किन्तु तो भी नर और पशुमें जो विभिन्नता है, वह नहीं थी। उसी नर और पशुको सृष्टिके प्रथम युगमें भगवान्की नर-पशु (ऋषि) मूर्त्तिके कल्पित हुईं हैं। पीछे वामन और परशु-

राम अवतारमें मनुष्य समाजको उन्नतिका क्रम-विकाश और रामचन्द्रमें उसका पूर्ण विकास दिख लाया गया है। बलराम, बुध और कलिकमें मनुष्य समाजको विभिन्न अवस्थाका वर्णन और तदुपयोगी अवतारको कल्पना है।

यदि यद्यार्थसे देखा जाय, तो पच्छे चार अवतारोंमेंसे तोनमें जैसा दृष्टत् कार्य हुआ है, शेष कोई अवतारोंमें वैसा नहीं देखा जाता। ये सब अवतार पाश्चात्य जगत्के Hero-worship रूपान्तर मर्मके जाते हैं।

अभी उड़ोसा प्रभृति स्थानोंमें दशावतारकी जो मूर्त्तियां देखनेमें आती हैं, उनमेंसे बुधकी जगह चतुसुंज जगन्नाथकी मूर्त्ति अद्विष्ट हुई है। इसी कारण बहुतसे लोग जगन्नाथदेवकी बुधना ही रूप मानते हैं। किन्तु जगन्नाथ देवदेवमाहात्म्य-प्रकाशक स्कन्दपुराणोप उल्लेखणमें दशावतारसे जगन्नाथमूर्त्तिके कोई सम्बन्ध नहीं लिखा है—

“अतो दशावताराणां दर्शनार्थस्तु यत्फलम्।

तत्फलं लभते मर्त्यो दृष्ट्वा श्रीपुरुषोत्तमम् ॥”

(स्कन्दपुराण ५१ अ०)

दशाश्व (स० पु०) दश अश्व रथे यस्य । १ चन्द्रमा । इनके रथमें दश घोड़े लगते हैं। २ इक्ष्वाकुके दशवें लडके। (भारत १३।२।६)

दशाश्वमेध (स० क्रो०) काशीके अन्तर्गत एक तीर्थ । ब्रह्माने राजर्षि दिवोदासकी सहायतासे काशीमें दश अश्वमेध यज्ञ किये थे। जिन स्थान पर ये यज्ञ किये गये वही स्थान दशाश्वमेध नामसे प्रसिद्ध है। पहिले यह तीर्थ रुद्रसरोवरके नामसे मशहूर था। ब्रह्माके यज्ञके पीछे दशाश्वमेध कहा जाने लगा। यह स्थान अत्यन्त पुण्यजनक है। यज्ञकी समाप्ति होने पर ब्रह्माने यहाँ दशाश्वमेधेश्वर नामका शिवलिङ्ग स्थापित किया था। यह तीर्थ सब तीर्थोंमें अष्ट है। यहाँ स्नान, दान, जप, होम, वेदपाठ, देवपूजा, सन्तोषपासना, तर्पण और आदि सत्कर्म करनेसे अक्षय फल प्राप्त होता है। जो मनुष्य दशाश्वमेधमें स्नान कर दशाश्वमेधेश्वर का दर्शन करती है, वे गमना पापोंसे मुक्त हो जाते हैं। न्यैष्ठ मासकी शक्ता प्रतिपद् तिथिमें यहाँ स्नान करनेसे

वाजसनेयन पाप धोर द्वाविंशतोर्यामिं क्षान्त्वा ज्वरनेमि
 उभा सम्यग् दोषो बन्धश्च पाप गत इति स्मृतम् । अथैत
 मानसो द्वाविंशतोर्यामिं तिथिं तत्र जो मनुष्य यथाक्रमे
 गर्हा क्षान्त्वा इति तिथिं तस्या परिमितं बन्धमस्मिन्
 पापेषु कृत्वा पापेति ॥

दशममेखिकात पापम क्षान्तो दशहरा तिथिं जो
 मनुष्य दशममेखिका तीर्थे क्षान्त्वा करता है उसे यमयज्ञका
 भोग नहीं करना पड़ता है । दशहरा तिथिमें दशम
 मंथिरा दशमं ज्वरनेमि दशममेखिकात पाप जाते रहते
 हैं । दश मंथिरा यज्ञ करके भवभूत क्षान्त्वा ज्वरनेमि जो
 फल प्राप्त होता है दशहरा तिथिको दशममेखिकात क्षान्त्वा
 करके भी निषेध हो नहीं फल मिलता है । यज्ञके
 पवित्रो बिना पवस्वित दशहराके प्रथम ज्वरनेमि
 मनुष्य कभी दुर्दशापन्न नहीं होते हैं ।

(धार्ष्ट्य ५३७०) कर्त्ता वेको ।

दशममेखिका (म० खी०) दशममेखिका वेको ।

दशम (म० पु०) दश मंथिरा यज्ञ । राक्षस ।

दशममेखिका (म० पु०) दशममेखिका ज्वरनेमि दशममेखिका कि क्षिप ।
 शौरास ।

दशम (म० पु०) दशमं यज्ञं समाहारं टत् नमामास
 समाहारत्वात् साक्षादियः । १ दश दिन । २ यज्ञक
 ज्येष्ठा दशमं दिन । पशुसुक्तां यज्ञक यज्ञं तोष
 शौ दिनेषु क्षान्त्वा गता है । प्रथम दिन यज्ञकज्येष्ठा धोर
 पश्चिम क्षय नुपरे दिन यज्ञकज्येष्ठा धोर या द धोर तीर्थे
 दिन मथिराकरके । स्थितियों प्रथम दिनके ज्येष्ठा
 दश दिनेषु तत्र बद्धा दिवा है, त्रिंशत्तं हर एक दिन एक
 एक पितृ एक एक पशुको पूर्ण क लये दिया जाता
 है । किन्तु यज्ञके दिनके ज्वरनेमि पशु मां दिनेषु
 न कल्पका पाठ किया जाता है ।

दशम (म० खी०) दश मंथिरा देवां द्विजि । १ दश
 मंथिरा दश मंथिरा । दश मंथिरा प्रथमं देवां
 द्विजि । २ दश मंथिरा प्रथमं, जो दश पशुका जो ।
 (पु०) ३ राजान् मनुष्य दशममेखिकात । दशमं यज्ञं
 बन्धनात् वा पशुनात् इति । ४ दशमं दशमं, यज्ञ
 विधानं त्रिंशत्तं दशमं यज्ञं दो । ५ दशमं यज्ञं धाम्ना
 दशमं यज्ञं ।

दशममेखिका (म० पु०) दशममेखिका मंथिरा, यज्ञ देवा जो
 दशममेखिका पवस्वित है । (मा०, मी० ८, ७०)

दशममेखिका (मं० पु०) दशमं यज्ञं वा दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं ।
 प्रदीप विधान ।

दशम (म० पु०) दशमं यज्ञं दशमं यज्ञं । दशमं यज्ञं,
 दशमं यज्ञं ।

दशम (म० पु०) दशमं यज्ञं मंथिरा यज्ञं । १ दशमं यज्ञं । २
 दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं । ३ दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मान्सात्कार देवा । ४ दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं । ५ दशमं
 यज्ञं मथिरा यज्ञं ।

दशममेखिका (म० पु०) दशमं यज्ञं दशमं यज्ञं दशमं यज्ञं
 मथिरा यज्ञं । दशमं यज्ञं ।

दशम (म० पु०) दशमं यज्ञं दशमं यज्ञं । १ दशमं यज्ञं
 मथिरा यज्ञं । दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं । २ दशमं यज्ञं
 दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं ।

दशममेखिका (म० खी०) दशममेखिका यज्ञं दशमं यज्ञं
 दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं

दशममेखिका (म० पु०) दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं

दशममेखिका (म० पु०) दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं

दशममेखिका (म० पु०) दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं

दशममेखिका (म० पु०) दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं
 मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं

दशममेखिका—दशमं यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं मथिरा यज्ञं

भक्त है। इस तरह औषध सेवन करनेमें जीव परिपाक होता है और वनको ज्ञान होता है। वृद्ध, गिण, भौक और स्त्रियोंके लिये इस प्रकारका औषध सेवन विशेष है। यद्यो भक्त-भो-नान्तमें औषध सेवन का नाम अबोधत है। इसमें शरीरके ऊर्ध्वभागस्थ अनेक प्रकारके रोग गान्त होते हैं और कृत्वत भो भा जाती है।

मध्यभक्त—यानि समय औषध सेवन करने की मध्य भक्त कहते हैं। इसमें औषधका वीर्य सारे शरीरमें फैलता नहीं है, मगर मध्यभागस्थ सभी रोग जाते रहते हैं।

अन्तरामक्त—यानेके पहले वा पीछे औषध सेवन करनेका नाम अन्तरामक्त है। यह हृद्य, वनकर और अग्निकर है।

सभक्त—औषधके मूलमें भोजन तैयार कर सेवन करनेको सभक्त कहते हैं। यवला, जानक और वृद्धके लिये यह औषध सेवनोय है।

सामुद्र—भोजनके पहले और पीछे औषध सेवन करने का नाम सामुद्र है। जब ऊर्ध्व और अधः दोनों और औषधको गति रहती है, तभी इस प्रकारका सेवन कितकर है।

सुहसुह—अथके साथ ही वा न ही सर्वदा सेवन करनेका नाम सुहसुह है। श्वास, काम, हिक्का और वमनरोगमें इस प्रकारका सेवन करना कर्त्तव्य है।

ग्रामान्तर—पिण्डके साथ मिला कर सेवन करनेको ग्रामान्तर कहते हैं। वदनीय, घूम और श्वासादि रोगमें लेहनीय औषध इसी प्रकार सेवनोय है। यज्ञो द्य प्रणारका औषधका समय है।

दट (सं० वि०) दृष्ट-क्त। दं गित, दंतसे काटा हुआ। दटपौड़ित (सं० क्तो०) दं गनविषय, दातसे काटनेका एक भेद।

दम (सं० पु०) दम उपलेपे विष्टे भावे अच्। उपलेप, आलेप।

दम (हिं० वि०) १ पाँचका दूना, जो गिनतोंमें नौसे एक अधिक हो। २ कई, बहुतसे। ३ पाँचको दूनी संख्या। ४ उक्त संख्याका सूचक अंक।

दमठीन (हिं० पु०) प्रसवकालकी एक रीति। इसमें

प्रसूता श्री दसवें दिन स्नान कर सोरीके घरमें दूसरे घरमें आती है।

दमना (हिं० क्तो०) १ विस्तृत होगा, फैलना। २ विस्तार फैलाना, विद्याना। (पु०) ३ विस्तार, विछोना।

दममरिया (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी वरनाती नाव। यह बहुत बड़ी होती है। इसमें दम तकसे लंबाई केवल लगे होती हैं।

दमरंग (हिं० पु०) मलबंकी एक कमरत।

दमरान (हिं० पु०) कुठोका एक पेच।

दमवाँ (हिं० वि०) गिनतोंके क्रममें जिसका स्थान दम पर हो।

दया (हिं० पु०) अगरवाल वंशोंके दो प्रधान भेदोंमेंसे एक भेद।

दमारो (हिं० स्त्री०) पानीके किनारे रहनेवाली एक चिड़िया।

दसी (हिं० स्त्री०) १ कपड़ेके किनारे परका सूत, छोर। २ कपड़ेका पक्षा। ३ बैलगाड़ीको पटरी। ४ एक प्रकारका अोजार जिसमें चमड़ा छोला जाता है।

दसूया—१ पञ्जाबके होशियारपुर जिलेके अन्तर्गत एक तहसील। यह अक्षा० ३२° ३५' से ३२° ५' उ० और देशा० ७५° ३०' से ७५° ५८' पू० काङ्गडा पहाड़ और विपासा नदीके मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ५०१ वर्ग मील और लोकसंख्या लगभग २३८००४ है। इसमें दसूया, मुकेरियन, मिथानी और तन्दाठरसर नामके शहर तथा ६३३ ग्राम लगते हैं। इसकी प्राय ४ लाख रुपये से अधिक है।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० ३२° ४८' उ० और देशा० ७५° ४०' पू० होशियारपुर शहरसे २५ मील उत्तर पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६४०४ है। प्रवाट है, कि विराट् राजने यहाँ राजधानी स्थापन की। आइन-इ-अकबरीमें नगरके उत्तर एक प्राचीन गढ़का उल्लेख है। १८२० ई०में रणजित्-सिंहने इस दुर्गको अपने अधिकारमें कर लिया था। १८६७ ई०में यहाँ एक म्युनिसिपलिटि स्थापित हुई। यहाँ धान और तमाखूका व्यवसाय खूब चलता है। नगरमें छोटी अदालत, धाना, डाकघर, सराय, विद्यालय और सुन्दर जलाशय है।

द्वैत (द्वि० पु०) द्वि. त्रि. का द्वैत ।
 द्वैतरत्न (स० पु०) द्वैतरत्नः सर्वदेव सोऽभिन्नोऽप्य,
 तत्र राधा वा पद्म । १ द्वैतरत्न द्वैतरत्न देवते
 विवाही चौर राजा । २ द्वैतरत्न देवते समो मनुष्य यो
 राजगण । ३ मर्दम, यदुवा ।
 द्वैत (द्वि० ज्यो०) द्वैतीति तिथि ।
 द्वापरा (द्वि० वि०) द्वापरा, द्वापराधिप ।
 द्वैती (द्वि० पु०) द्वैतियों वा चारणोंको एक जाति ।
 ये लोग चणोंको ब्राह्मण बतलाते हैं ब्रह्ममह ।
 द्वापराज (पा० ज्यो०) द्वापराधिप, बिलो कामर्षि के
 ब्राह्मण ।
 द्वाप (पा० पु०) १ पतका पापकाण । २ द्वाप ।
 द्वापक (पा० ज्यो०) १ द्वापकानोंकी क्रिया । २ चरभ
 प हरभे लोभोंको बुझानेके लिये बाहरये द्वापराजको
 बुझो द्वापकानोंकी क्रिया । ३ द्वाप पापपत्र का
 क्रियाके देना या मासपुत्रारी बचन करनेके लिये
 निष्काया जाता है निष्कारो वा बल्लुकीका परवाना ।
 द्वापकार (पा० पु०) द्वापकारो जो जाबने कारो
 मरीका काम करता हो ।
 द्वापकाटो (पा० ज्यो०) कला स बन्धनों सुन्दर रचना
 जो जाबने को बाब, जाबनी कारीगरों ।
 द्वापकत (पा० पु०) द्वापक, द्वापकार ।
 द्वापकती (पा० वि०) जिस पर द्वापकार हो ।
 द्वापगीर (पा० पु०) द्वापक, मदनकार ।
 द्वापगण (पा० पु०) ब्रह्मण ।
 द्वापवरदार (पा० वि०) जो जिसी बसु परये चपना
 पत्रिकार सदा से ।
 द्वापवरदारो (पा० ज्यो०) १ श्राव । २ श्रावण ।
 द्वापराव (पा० वि०) श्राव, श्रावण ।
 द्वापराव (पा० पु०) श्राव राखे जानेको बादर पचात्
 बीबीकी बह बादर जिस पर सुवचनमा कोग भोजनकी
 श्रावो रक्षी है ।
 द्वाप (पा० पु०) १ द्वाप जो जाबने जाने । २ सौदा,
 बह । ३ बीबी या बहवा पर कामनेकी एक प्रकारकी
 बुझी । ४ द्वापमें या जाने योग्य किसी बसुका मन्त्र
 का पूजा । ५ द्वापराखे बीबीक ज्ञानकी गण्ठी ।

६ द्वापरीका गुण्ठा, गुण्ठद्वारा । ७ शोबार पादिका
 मूत्र, वे ट । ८ सिपाइयो का छोटा टुक, गारद । ९ पप
 रास, मन्त्राप । (द्वि० पु०) १० एक प्रकारका बसना
 बरसिका । ११ कला देवी ।
 द्वापरा (पा० पु०) १ द्वापराको चापका मोत्रा ।
 २ एक प्रकारकी मोचो तनवार । ३ द्वापरी मूत्रके लार
 बसाई तक पद्म चनेबात्रा काईका परदा सगा
 रहता है ।
 द्वापार (पा० वि०) द्वैतरत्न, जिसके द्वापरा श्राव ।
 द्वापार (पा० ज्यो०) द्वापार सन्ध्या मेव, बह
 भागवत जिसके द्वैतरत्न जिमोने कोई प्रतिष्ठा थी जो
 पचका द्वाप सन्ध्या पादिका शीत देन क्रिया हो ।
 द्वापारो (पा० वि०) द्वापारोत्र सन्ध्या, द्वापारोत्रका ।
 द्वापरी (पा० वि०) १ द्वापरा । (ज्यो०) २ कोटी मूत्र,
 कोटा देव । ३ कोटा कसमदान । ४ विजयादयमीके दिन
 द्वापरी परदारो तथा पचसरो के मोच बटि कामिका
 योगत । ५ कुञ्जोका एक पत्र ।
 द्वापरी (पा० पु०) १ रीति, नियम, रस्म रवाज । २
 बिधि, कायदा । ३ पारसियों का मुद्रित । ४ अज्ञानके
 छोटे पान । ये चरने कपराबाले पासके मोचोको पत्र
 में दोनो धोर जोते है ।
 द्वापरी (पा० ज्यो०) एक प्रकारका द्रव जो मोचर चपने
 मासिकका सोदा लीनेमें दूधानदारोके पाने है ।
 द्वापरा (पा० पु०) ब्रह्मण ।
 द्वाप (स० पु०) द्वापति अर्धचपति द्वापरादिकमित
 द्वापमक । १ उपदिपक, चापेप करनेवाला । २ द्वाप
 नीय देवने योग्य । ३ यजमान । ४ चौर, चोर । ५
 बुतायन, पन्थि । ६ कष्ट, दुष्ट मनुष्य ।
 द्वापम (स० वि०) द्वापि द्वाप द्वापनीयो, मतो मन्त्र
 द्वापमिन्त्रय मन्त्राव्य सर्वव्याप्या तकार । द्वापनीय,
 देवने योग्य ।
 द्वापमन्त्र (स० वि०) द्वापमन्त्र यज । १ द्वाप
 नीय पीका, जिसका प्रभाव कृष बड़ा बड़ा हो । (पु०)
 २ द्वाप । ३ मन्त्र ।
 द्वापम्य (स० पु०) द्वापमन्त्र मन्त्र । द्वापनीय, देवने
 योग्य ।

दस्यवसह (म० पु०) संपद्रवके लिए चोरका अभि-
भावक ।

दस्यु (म० पु०) दस्युति परस्वान् नाशयतीति टण-युच्
(यजि मनि न्युन्विदसि जनिभ्यो युच् । ण् ३२०) । १ महा-
साहसिक, डकैत । २ खल, दुष्ट । ३ चोर, चोर ।

ब्राह्मणादि चारों वर्णोंमें जो क्रियादिसे रक्षित हो
जानेके कारण वाञ्छजाति कहलाते हैं, वे चाहे साधु-
भाषी हों अथवा स्त्रेच्छभाषी हो, उनको गिनतो दस्युमें
हो की जा सकती है । द्विजविगर्हित काम करनाही
इन लोगोंकी जीविका है । दस्युजातिमें आयोगव
स्तोके गर्भसे जो सन्तान उत्पन्न होता है वो सैरिध
नामसे प्रसिद्ध हैं । यह जाति केशरचनादि कामोंमें सु-
चतुर है, ये यथार्थमें दाम नहीं, तो भ दास कार्याप-
योगी एवं पाय दारा मृगादिजा वध कर जोविका
निर्वाह करते हैं । (मनु १०।३१) ४ कर्मवर्जित,
वह जो अपने कर्मसे च्युत हो गया हो । ५ असुर,
राक्षस । (त्रि०) ६ उपक्षेपक, उपेक्षा करनेवाला, विरक्त
रहनेवाला ।

ऋक् संहिताके कई मन्त्रोंमें दस्यु शब्दका उल्लेख है ।
कहीं कहीं दस्यु शब्द पढ़नेसे बोध होता है, कि आर्य
भिन्न कोई जाति दस्यु वा दास कहलाती थी । इन
लोगोंने आर्य जातिसे पहले भारतवर्षके नाना स्थानों
पर अपना अधिकार जमा लिया था । कितनेनि तो ग्राम
नगरादि भी वसाया था । इनके बाहुबलसे आर्यगण
कई बार अनेक कष्ट पा चुके थे और वे हो पहले असुर-
रादि कहलाते थे । इन्द्रने मानी उन्हींको उच्च बनानेके
लिये श्रवतार लिया था । आर्य लोगोंके प्रभावसे 'अनास'
दस्युगण परास्त हो कुछ तो जङ्गलमें और कुछ दूर देशों-
में प्राण ले कर भागे और जो बच रहे उन्हींने आर्योंको
अधोमता स्तोकार कर ली और उन्हींके समाजमें मिल
गये । निम्नलिखित मन्त्रसे दस्युके साथ आर्य जातिका
कौसा सम्बन्ध था वह जाना जाता है ।

“त्वं ह नु त्यद् अदमयो दस्यु रेकः कृथीरवनोरार्याय ।”

(ऋक्. ६।१८।३)

हे इन्द्र ! मैंने ही दस्यु लोगोंको अपने वशमें किया
है और तुमने ही आर्य लोगोंको पुत्र दासादि दिए है ।

“निश्वास्यात् मौमपमानिन्द्र दस्युन् विनो दामीग्धोर प्रशस्ता ।”
(५।२८।४)

हे इन्द्र ! तुमने ही इन दस्यु लोगोंको समस्त मद्-
गुणों वञ्चित किया है, तुमने ही दाम मनुष्योंको निन्द-
नीय बनाया है ।

हम लोगोंके मित्र तमदस्यु लोगोंको क्रोधर पर्वतके
शिखर परसे गिरा दे जो भिन्न वतावलम्बो हैं, जिनके
मनुष्यत्व नहीं है, जो यज्ञादि नहीं करते अथवा देव-
ताओंको भी नहीं मानते हैं । (ऋक्. ८।५८।१०)

हे इन्द्र ! हम लोगोंने इन यज्ञकी सामथो इकट्ठी
की है, तसि भर खा लो । हम लोग तुमसे अन्न और
पेमा बल चाहते है जिससे अमानुषको विनाश कर सकें ।
हम लोगके चारों ओर दस्यु हैं । वे न तो याग यज्ञादि
करते और न किसीको मानते ही हैं, उनके कार्य
स्वतन्त्र हैं, वे मनुष्यमें ही नहीं हैं । हे प्रमित्रह !
उन लोगोंका वध करो, उन दासोंको हत्या करो ।

(ऋक्. १०।२२।७-८)

हे इन्द्र ! तुमने पहले सूर्यका रघचक्र काट डाला
था । दूसरा धन प्राप्तके लिये कुत्सको दिया था । तुमने
वज्र द्वारा सुखमीर्य छोड़ने अर्थात् नासिकारहित दस्यु
लोगोंको हतबुद्धि कर युद्धमें वध किया था ।

(ऋक्. ५।२८।१०)

यज्ञहोन, जल्पक, हिसितवाक, अज्ञहोन, वृद्धिशून्य,
पणिनामक यज्ञरहित दस्युगणको दूर कोजिये । अग्नि-
को प्रधान कर जो यज्ञ नहीं करते उन्हें 'होय दृष्टिसे
देखिये । (ऋक्. ७।६।३)

हे इन्द्राग्नि ! तुमने एक ही उद्योगसे दासोंकी
८० पुरियोंको कम्पित कर दिया था । तुमने दस्यु
शम्बरकी प्रतापिक अप्रतिम पुरो ध्वंस कर दो है ।

(ऋक्. ३।१२।६)

अब उनके हाथोंमें वज्र दिया गया था तब उन्हींने
दस्युगणको उससे विनाश कर दिया था । (२।२०।८)

हे इन्द्र ! तुमने कुलितरके अपत्य दास शम्बरको
वह पर्वतके शिखर परसे चौधे मुँह गिरा कर नाश
किया था । (४।३०।१४)

तुमने इस युद्धमें मनुष्यका सुख बढ़ानेके लिये

दाम मनुषिका मन्त्र चक्रमाचर कर दिया है ।
(१३१०)

दासने शिषी को अपना पञ्चकल्प बनाया था । इसकी चरना येना मेरा क्या कर मनेमो ? यह शेष कर दम्भ उन्नी दो मियतमा शिषी की पलागपुरमें शेष कर दीजे उस दम्भ के पाय लड़ाई करने गये थे ।

इस प्रकार और मनुषि ये सब दाम, दम्भ, धोर पहर नामने बेटमें वर्धित हैं । इससे मानुस होता है ये तीनों दम्भ के दिक्कतुममें एक कातिशेषक थे ।

मनुषि, गम्बर और इन देखो ।

ब्राह्मण-उपनिषद्में धनुष जातिके विषयमें जो वया लिखी है सब रूप प्रकार है—

धाम मो जो मनुष्य दामहोन, यहाहोन या यमहोन है वे धनुषधमा कहलाते हैं । धनुषका यही मन्त्रात्मबर्म है, वे शब्ददेहको धर्म, मन्त्र, धोर धनुषकारके मन्त्र ते हैं । इन लोको का मन्त्रात्म है कि एना काम करमेते ही हम लोडका सुवर्षाचं निह होता है ।

यद्यप्यं भारतीय धर्मध धोर म्हेच्छ जातिमें उक्त प्रमा सब मो वर्धित है ।

ऐतरेयब्राह्मणमें लिखा है—

तुम लोमाका म शबर कष्ट होगा । यही धाम, धुपड, शबर, पुत्रिध धोर सुतिव लतापदिहवासो धर्मक जातिवा है । विद्यामित्रके ही दस्तुगक उतपु द्युप हैं ।

कुत्र कटोशामि लिखा है, कि ब्राह्मण, धरिप बेम्भ धोर शूद्र जातिमें जो विद्यारहित होनेक कारण जाति कृत द्युप हैं वे बाई म्हेच्छमापो हैं, बाई पायंभापो ही धर्मो दस्तु कहलाते हैं ।

महाभारतके धर्मापबर्में इस प्रकार लिखा है—

“हरिणान् वरु धामोत्रैववन् रावडावनि ।

शमुन्नी रिच के च वक्रवधभिर हरवः ॥”

दरदंमि पाय कामोत्र धोर लतापूरुमें जो सब दम्भ जाति बाब करतो दो धनुंमने लहे पराध विद्या था । श्रीधर्ममें भी म्हाभूदुध दम्भजातिका उल्लेख है ।

मान्तिपबंके १८८ अध्यायमें दस्तुके विषयमें भोजने सब इतिहास रूप प्रकार कहा है—

मध्यदेशीय एक ब्राह्मण ब्राह्मणकीन मन्त्रिमानो एक धामको लोख कर मिचाकी पायाये वहा गये । सब वर्षोका मन्त्रात्म, धम शोन मन्त्राटी धोर दामनिरत एक बनी दम्भ, कहां वास करता था । ब्राह्मणने लकीके धाम आ कर मिचा मातो । उस ब्राह्मणका नाम मोनम था । दस्तुने भाव रह कर बोरे बीरे के मो लम्बी को तरु को गये । इस प्रकार के धामदुपूरुव दस्तु धाममें रहने लगे । इमो शेष एक ब्राह्मणने पा कर लम्बे कहा, तुम मोहाय को कर क्या कर रहे हो ? क्याम मध्यदेशीय ब्राह्मणधर्ममें तुम्हारा जन्म है । किम प्रकार तुमने इस दस्तु मावको पकड लिखा ?

उक्त विवरण पढ़नेसे जाना जाता है, कि दस्तुजाति म्हेच्छ मन्त्रो जातो धी धोर लम्बे साथ वास करता ब्राह्मणके मिय नित ल देय समझा जाता था ।

शान्तिपबंके १३ अध्यायमें दस्तुका वर्णन इस प्रकार निर्धारित हुआ है—

मात, पिता, धाराय, शुद्ध धोर राजाकी सेवा करना को दस्तुका कर्तव्य है । बेटके धनुमार इन लोकोका धर्मकायं करना ही धम है । धियधम, कृप, जन्धम, मयन धोर यया समय ब्राह्मणको दान पहिंला सब धामाव हति, धातिपावन, पुत्रभायादिका भरण पोषण, शीघ धरोह ममा वर्धमि दधिना दाम धोर पाकयज्ञादि करना ये सब दम्भके प्रधान धम हैं । ये सब धर्म धिबन दम्भ के हो नहीं। पर चारो वर्षके बतकाय मय हैं । मान्त्राता कहते हैं, कि धमा वर्धमि दम्भ पाये जाते हैं, वे मित्र मित्र वंश धारण कर चारो धायमेंमें वर्त्तमान हैं ।

दस्तुव्रत (म० वि०) दम्भमि कृतः । दस्तु धारा में रित जो उल्लेखो धे कुकर्ममें प्रवृत्त हो ।

दस्तुनर्ष (म० वि०) दस्तुका दमनकर्ता उल्लेखो को दमन करने वाला ।

दस्तुता (म० धो०) १ सुटेरापन, उल्लेखो । २ दुटता कूरधमान ।

दस्तुमय (ध० पु०) दम्भना मयः । धोरमय धोर या लम्बे लका हर ।

दस्तुवृत्ति (ध० धो०) दम्भना वृत्ति । धोर्यं धोरो, कर्त्तव्यो, सुटेरापन ।

दस्युसात् (सं० अव्य०) दस्यूनःसघोनं भवति सम्यदति वा साति । तस्कराधीन ।

दस्युहय (सं० क्लो०) दस्युना हृत्या यत् । वह संश्राम त्रिसमें डकैत मारे जाते हैं ।

दस्युहन् (सं० त्रि०) दस्युं हन्ति हन्-क्तिप् । असुर विघातक इन्द्र ।

दस्र (सं० पु०) दस्यति उत्क्षिपति पांशुनिति दस-रक् । १ खर, गदहा । श्रियां जातित्वात् ङोष् । दस्यति रोगान् क्षिपति दस उपक्षेपे रक् । २ अश्विनोकुमार । ३ हित् स ख्या, दोहरो संख्या । ४ हित् संख्येय, दोका समूह, जोडा । ५ अश्विनीनक्षत्र । (क्लो) ६ दश नोय, देखनेयोग्य । ७ हिं स्र हिंसा करनेवाला ।

दस्रदेवता (सं० स्त्री०) दस्रो अश्विनो अधिष्ठातृ देवता यस्याः । अश्विनोक्षत्र ।

दस्रसू (सं० स्त्री०) दस्रो अश्विनो सूते सू-क्तिप् । संघा, सूर्यकी स्त्री । इनके गर्भसे अश्विनोकुमारने जन्म ग्रहण किया है ।

दद (हिं० पु०) १ नदीके भोतरका गह्रा, पाल । २ कुण्ड, हीज । (स्त्रा० ३ ज्वाला, लपट, लौ ।

दद (फा० वि०) दश ।

ददक (हिं० स्त्री०) १ आग ददकनेकी क्रिया, धधक, दाह । २ ज्वाला, लपट । ३ शर्म, लज्जा ।

ददकन (हिं० स्त्री०) ददकनेकी क्रिया ।

ददकना (हिं० क्लि०) १ ज्वालाके माथ ऊपर उठना, धधकना । २ शरीरका गरम होना ।

ददकाना (हिं० क्लि०) १ धधकाना । २ क्रोध दिलाना, भड़काना ।

ददकामल—हृन्दावनका एक ग्राम । यही ओक्षणका लोलास्थान था ।

ददददद (हिं० क्लि०-व०) लपट फेंकते हुए, धार्यधार्य ।

ददददा (सं० स्त्री०) कुमारानुचरमातृभेदः ।

(भारत शान्ति०. ४७ अ०)

दहन (सं० पु०) दहतीति दह व्यु । १ अग्नि, आग । २ चित्रकवच, चोला । ३ भ्रजातकः भिलावा । ४ दुष्टतेजा, दुष्ट या क्रोधो मनुष्य । (पु०) ५ कपोत, कवूतर । ६ रुद्र-

भेद, एक रुद्रका नाम । ७ कृत्तिकानक्षत्र । ८ तीनकी संख्या । ९ ज्योतिषमें एक योग । यह पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद और रेवती इन तीन नक्षत्रोंमें शुक्रके होने पर होता है । १० ज्योतिषमें एक बोधो । यह पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा नक्षत्रोंमें शुक्रके होने पर होता है । ११ दाह, जलनेकी क्रिया । (त्रि०) १२ दाहक मात्र । (क्लो०) १३ वृश्चिकालो । १४ गुग्गुलु । १५ अगुरु, अग्र वृक्ष । १६ काष्ठीकमेद, एक प्रकारकी काजी ।

दहनश्तन (सं० पु० क्लो०) दहनस्य शतनं ध्वज इव । धूम, धुआं ।

दहनप्लुट (सं० त्रि०) दहनादिव प्लुटं प्लोपयं यस्मात् । वैद्यक प्रसिद्ध पदार्थ । (Blister) यह शरीरमें लगानेसे अग्निको नाई फफोले पड़ जाते हैं ।

दहनप्रिया (सं० स्त्री०) दहनस्य अग्नेः प्रिया इ-तत् । स्वाहादेवो, अग्निकी प्रिया ।

दहनवहल (सं० पु०) अग्नि, आग ।

दहनविटपी (सं० स्त्री०) लाङ्गलिका, एक प्रकारका पेड़ ।

दहनर्च (सं० क्लो०) दहनं नाम अर्चं । कृत्तिका-नक्षत्र ।

दहनशोभ (सं० पु०) जलनेवाला ।

दहनमारयि (सं० पु०) दहनस्य सारयिः इ-तत् । वायु, हवा ।

दहना (हिं० क्लि०) १ जलना, बलना । २ भस्म करना, जलाना । ३ क्रोध दिवाना, कुटना । ४ धंसना, नीचे बैठना ।

दहनाशुभ (सं० पु०) दहनाय अशुभ । दाहाशुभ, एक प्रकारका सुगन्ध द्रव्य ।

दहनाराति (सं० पु०) दहनस्य अग्ने अराति शत्रुः । जल । अग्निमें जल देनेसे वह बुझ जाती है, इसीसे अग्निको दहनाराति कहते हैं ।

दहनिय (सं० त्रि०) दहते दह-अनीयर् । दाह, जलने वा जलाये जाने योग्य ।

दहनोपल (सं० पु०) दहनाय वज्रतृपादनाय य उपलः प्रस्तरखण्डः । सूर्यकान्तमणि । इस मणिमें सूर्यको किरण लगनेसे आग निकल आती है, इसीसे इसका नाम दहनोपल हुआ है ।

दहनोक्ता (स० स्त्री०) दहनम् उक्ता इत्यम्। अग्निवि
विष्णु निरुद्ध कम् उक्ता ।
दहनपट (पा० वि०) १ ध्वस्त, चौपट । २ दक्षित, रोदा
दुषा, कुचला दुषा ।
दहनपटा (वि० स्त्री०) १ ध्वस्त करना काला । २ दक्षित
करना, कुचलना ।
दहनवासी (पा० पु०) दम सिपाहियोंका सरदार ।
दहर (स० पु०) दह-धर । १ मूविना, पुष्टिया । २
व्यात, भार । ३ बालक । ४ नरक । ५ श्वशुर । ६ सुख
सुर्मा । (वि०) ७ लक्ष्य, होटा । ८ सुष्प । ९ दुर्बोध ।
दहर (वि० पु०) १ दह, नगीहा महरा ज्ञान । २ सुद,
शोक, गहा ।
दहर दहर (वि० स्त्री० वि०) दहकते हुए, शीघ्रपाये ।
दहनपट (स० स्त्री०) तैलितोय म दित्ताका एक पत्र ।
दहरपत्र (स० स्त्री०) बोधोका एक पत्र या पत्र ।
दहराशाय (स० पु०) दहर पाशाय कर्मका । चिदा
काग, ईश्वर ।
दहन (वि० स्त्री०) मयमे दमात् शीघ्र उठनेको शिवा ।
दहनना (वि० स्त्री०) मयमे स्तुधित होना उरवे शीघ्र
उठना ।
दहन्य (पा० पु०) द्य चिर्द्धिवात्ता ताय ।
दहनाना (वि० स्त्री०) मयमेत करना, उरवे शपाना ।
दरकीर (पा० स्त्री०) बह लक्ष्मी श्री दरवाजेके चौकट
के मोमे कर्मो पर रहनी है, देखनी ।
दहयत (पा० स्त्री०) मय, हर, यौव ।
दहनो (पा० स्त्री०) इस भावके भाविको बनी ।
दपा (पा० पु०) १ सुहरमका महीना । २ तात्रिया ।
३ सुहरमको र्थे । ४ तातोपका मयय ।
दपई (पा० स्त्री०) १ दयका मान । २ पदो के स्थानों
को मचनाने दूसरा स्थान ।
दपाइ (वि० स्त्री०) १ बिफो मपहर मनुका बोर
मन्द । २ धार्माद, रीनेका बोर मन्द ।
दपाइना (वि० स्त्री०) १ मरचना, गुर्गना । २ बिहा
बिहा कर रोना । ३ बोरने बिहाना ।
दपाना (पा० पु०) १ दार । २ मयचका सुद । ३
मदोका मुचाना । ४ मानो, मोरो । ५ पौडके सुदको
मगाम ।

दपार (स० पु०) १ प्राक्त, प्रदेश । २ समोपमती प्रदेश,
वैद ।
दपिङ्गल (वि० पु०) एक प्रकारकी चिड़िया । यह पाठ
य गुण लम्बी होती घोर कोड़े मकीड़े खाती है । इसके
पैरो पर सफेद घोर कासी बहोने होती है ।
दपिद—द बईने काठियावाड़के पन्नामें एक छोटा राज्य ।
दपिना (वि० वि०) पपसय, बायाका उलटा ।
दपिनाकर्त (वि० वि०) दक्षिणावत रीको ।
दपिने (वि० स्त्री० वि०) दाहिने तरफका ।
दपियल (पा० पु०) दयामाय, दयना शिष्या ।
दपियक (वि० पु०) दरका देनी ।
दपौ (वि० पु०) रवि देनी ।
दपे गर (वि० पु०) दपोका बड़ा ।
दपेड़ी (वि० स्त्री०) मडोका बरतन जिनमें दपौ रखा
जाता है ।
दपेज (स० पु०) विवाहके समय बन्धापकको घोरने
करपकको दिने जानेका धन, योतुक दायना ।
दपेला (वि० वि०) १ दय, प्रना दुषा । २ म तन,
दुष्की । ३ चाइ, मीगा दुषा ।
दपोतरभो (वि० पु०) एक छो दय ।
दप्रामान (स० वि०) दह-वर्मणि मानम् । जो मय
रहा हो ।
दप्रा (स० पु०) दहतीति, दह-रक । १ दावान्त,
दावानि । २ नरक । ३ पन्नि । ४ बहक । ५ इटवा
काय ।
दप्राग्नि (स० पु०) दहक पन्नि । अडगानि ।
दा (स० स्त्री०) दा क्षिप । १ दान । २ रवा । ३ छिद ।
४ उपताय उताप, गर्मी ।
दा (वि० पु०) मितारका एक कोल ।
दाई (वि० वि०) १ दाहिने । (स्त्री०) २ मा, दपा ।
दाई (वि० स्त्री०) १ बायो, बाय । २ बह स्त्री को
पसुताके उपचारके लिए निबुद्ध होती है बह स्त्री को
बिवायो बहा बननेमें बहायता देतो है । ३ बह दाकी
को छोटी छोटी बहोंकी दिय-मान करनेके लिए रखी
जाती है । ४ पिताको माता, दादी । ५ बड़ी बूढ़ी स्त्री ।

दाउद खाना—जब जेरशाह-वंशीय इस्लाम शाह दिल्लीके सम्राट थे, उस समय बङ्गालके सूबेदार शेरशाय अन्तिम नवाब गयासुद्दीनको १६३ ई०में मार कर सुलेमान नामक करागीवंशके पठान बङ्गालके अधिपति हुए। १५७२ ई०में सुलेमान करागीको मृत्यु हुई। बाद उनके बड़े लड़के वयाजिद राजगद्दी पर बैठे। दूसरे वर्ष वयाजिदको मारकर पठानसरदारोंने वयाजिदके छोटे भाई दाउदको बङ्गालके सिंहासन पर अभिषिक्त किया। राजा होनेके साथ ही दाउदने देखा कि उनके पास कुल १४०००० पदातिक, ४०००० अश्वारोही, २०००० कमान और ३६०० हाथी है। उस समय गौड़नगरके दूसरे पारमें उनकी राजधानी थी। दाउदने अपना सैन्यबल देख कर बिहारमें सब जगह अपने नाम पर खुतबा पढ़नेका हुक्म दिया। पहली बारकी युद्धयात्रामें इन्होंने गालीपुर के समीपस्थ जमानिया नामक सुगल दुर्ग पर अधिकार जमाया। इस समय दिल्लीमें अकबर सम्राट थे। दाउद का विवरण सुनकर अकबरने उनके विरुद्ध अपने प्रधान सेनापति सुनीमखान और राजा टोडरमलको भेजा। सुनीमने पठानको जीत कर बङ्गालमें प्रवेश किया। दाउद उड़ीसाको भाग गये। रास्तेमें मेदिनीपुर और जलेश्वरके बीच सुगलमारी (तुकारो) नामक स्थानमें सुगल और पठान-सेनाको मुठभेड़ हुई (१५७५ ई०में)। पहले पठानोंकी जयको सम्भावना थी, किन्तु टोडरमलके कौशलसे अन्तमें सुगलोंकी ही जीत हुई। दाउद उड़ीसाको चल दिये। सुगलोंमें पोछा किये जाने पर कटकके समीप दाउदने आत्मसमर्पण किया। पोछे सुगलोंने उन्हें कटकका शासनकर्त्ता बनाया। सुनीमखान लौट कर फिर ताण्डासे गौड़में राजधानी उठा लाये और आप स्वयं बङ्गालका शासन करने लगे। इस समय गौड़में महामारी फैली हुई थी, सुनीम खान उसीके शिकार बन गये। बङ्गाल सुगलराज्यभूक्त हुआ। गौड़नगर भी अरबमें परिणत होने लगा। सुनीम खानका मृत्यु-सम्वाद सुन कर दाउदने कटकसे बङ्गाल पर घावा मारा। सुगल सम्राटने हुसेन कुली खानको सेनापति बना कर टोडरमलके साथ दाउदके विरुद्ध भेजा। राजमहलके समीप घनवीर लड़ाई हुई। दाउद मारे गये और

सुगलोंकी जीत हुई (१५७५ ई०में)। दाउदका हिकमतक अकबरके पास भेज दिया गया। हुसेन कुलीखान ही बङ्गाल बिहार उड़ीसाके शासनकर्त्ता हुए।

दाउदनगर—गया जिलेके औरंगाबाद उपविभागका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० २५° ३' ०" और देशा० ८४° २४' ५०" सीन नदीके दाहिने किनारे और पटना शहरके बायें किनारे पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८७४४ है। कहा जाता है कि दाउद खानसे यह नगर स्थापित हुआ है। उन्हींको बनाई हुई दाउद नामको सराय शहरकी प्रधान अष्टालिका है। शायद यह दुर्गके रूपमें व्यवहार करनेके लिये बनाई गई थी। एक छोटा इमामबाड़ा और व्यवसायके लिये उपयुक्त चौतरा नामक चकवा विख्यात है। यहाँ कपडा, मोटा गलोचा और कम्बल तैयार होता है। दाउदनगरसे ४ मील दूर गया जानेके रास्ते पर एक सुन्दर गिर्विकार्य-विशिष्ट मन्दिर है।

भविष्य ब्रह्मखण्डमें लिखा है कि, 'सीन नदीके किनारे गया देशमें दाहुद (दाउद) नगर बसाया जायगा और शापभ्रष्ट दाहुद नामक एक सुसलमान इसके स्थापयिता होंगे। साल भर दाउदनगरमें हिन्दू और सुसलमानोंमें लड़ाई होगी। पोछे कौकटवासियोंको प्रार्थनासे शान्ति स्थापित होगी। दाहुद नगरकी प्रजा सीन नदीकाही जल काममें लावेगी। कलिके दश हजार वर्ष बीत जाने पर दाहुदनगर ध्वंश हो जायगा।'

दाउदनगर गयासे २० कोस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। इसमें प्रायः ८००० घर लगते हैं। दाउद खानको सरायमें दो बड़े बड़े फाटक हैं। दाउदके पुत्रका नाम अहमद था। इसीके नामानुसार अहमद गञ्जका नाम पड़ा है। चौतरा मकान तीन खनका है। प्रत्येक तल क्रमशः छोटा है और प्रत्येक तलमें ढालू छतका बरामदा है। यहाँ आजकल भी देशो वस्त्र प्रसृत होता जिसे यहाँके अधिवासी अपने काममें लाते हैं। यहाँके तांतियोंको दुर्भिक्षके समयमें भी सरकारी रिलीफ कार्यकी सहायता नहीं लेनी पड़ती है। यहाँ १८८५ ई०में म्युनिसिपलिटो स्थापित हुई है।

दाउदपुरे—मन्दाट, पञ्चवर्षे मरनेके बाद तथा गादिर गाहके पन्ध्र बरबे मन्ध्रशालमें (१६०५ १०१८ ई) दाउद बलि पुत्रगण बहुत प्रवन्ध हो उठे थे । वे दाउद-पुर नामके द्वी प्रविष्ट हो गए थे, यहाँ तक कि इनके पत्नी व धरार 'दाउदपुर' कहलाते थे । अथवा तुमना तथा सैनिक कृति हो इन लोगोंको अयजोविद्या थी । मिश्रापुर प्रान्तमें इनका प्रधान पञ्चा था । अममयान्त्रातिका गोर्दा ई लोक जसो तो कोपुरेमें धोर जसो तराई, मन्ध्र भादि ज्ञानोंमें रहा करती थी ।

मन्ध्रोंके साथ चलेक सुदके बाद दाउदपुरमें जलर विन्धुप्रदेश पर चपनी मोटे जमारी । इस समय ये लोक एक प्रचार पुत्रपातुलमके सिन्धुप्रदेश पर शासन करते रहे, विन्धु निबन्धनोंके प्रदेशोंके शासनकर्त्ताओंके साथ इनका हमेशा ब्रह्म-विषय हुआ करता था । इधे शास्य करनेके लिए अर्द्धमौरने सिन्धु प्रदेश पर चलायो राज प्रतिनिधि निवृत्त किया । पीछे दाउदपुरमें १६१८ ई०के से कर १७८० ई० तक सिन्धुप्रदेश पर शासन किया जा, दाउदपुर—प्रतापगढ़ जिलेका एक ग्राम । जहाँ दाउद बलि बनाये हुए बहुतसे मन्ध्रपुर्य ईश्वरमें जाते हैं । कहा जाता है, कि प्रलात्तोन्त्र विस्त्रयीके समयमें ये सब दुर्ग बर्णय गए थे

दाउद (हि० पु०) १ बड़ा मार । २ ज्ञानके अर्थ में आता, बलदेव ।

दाउद (हिब्रु, David)—दूसरा नाम दिभिड (David = विव) इस्त्रायलके तिस्रो राजा । ये जुडा आतिशुल से तथा वेयससु निबाली मीथेके लक्षम धोर मन्ध्रके छोटे लड़के थे । अक्षयमें ये चरने पित्तके मेषयानको रचा करती थे । उन समय पन्द्रह वर्षको अचक्षानमें चातुपेसने इन्हें इस्त्रायलके राजपद पर अभिषिक्त किया । इस्त्रायल के राजा मन्ध्र तथा समय मो कोचित थे यावद इस अस्त्रिकका विषय नहीं जानती होयि । दाउदको मोचा अज्ञानको अनीबिध यज्ञि हो । उन बीच बीचमें पायन हो जाया करती थी, तसो दाउद समुद्र मोचाअनि सुना कर उनको अचक्षता दूर करती थी । पीछे इस्त्रायल-लोयोंके साथ अत्र विजिहाइनेको फा मन्ध्रका अर्थात्त हुआ तब उनमें सधेय्य सुदयाजा थी । दोनो पत्नीमें अत्र

जुह-मैत्रमें अदम बड़ाया, तब विजिहाइनेमिने एक पुर्षमें बलयाकी महाबाय गोमियय नामक धोरने इस्त्रायली को ब्रह्म करनेके लिए ससबाया । इस पर अत्र किमोने अदम बड़ानेका साक्षय न किया तब दाउदने स्वय गोमिययके सामने हो लभ पर प्दर कि जा जिनसे बह जसोभ पर गिर पड़ा धोर तब तबभारके उसका गिर लाट काका । इस पत्नीबिध बौरलने इस्त्रायलाइट यत्र सधेके यत्र दाउदके पचपाती हो अन्ध अन्ध कहने लगी । सन्धने मो लड़ाई जोत कर पवसे दाउदको खुब तारोफ को हो, पर पीछे लन्धे मयोके प्रेमभाजन टिन्धु लनकी पवने प्रोति मोत्र हो उल्लट कि लामे पचट पाई । फिर दाउद मन्ध्रके मि शासन पर बैठेया इस विन्धुके सुमगतो हुई पाय धोर बचक छोटे । लकोने दाउदको मार काउनेका सक्षय किया । विन्धु लन को एक मो खान न चनी—दाउदका एक भाग मो बाँका कर न सके । पीछे इन विन्धुको निवृत्तानिसे प्दानने मन्ध्रने चपने लड़कीको लन्धे ब्राह किया । सिन्धु नर ईयान्त्र अत्र सुभनेको जा—मन्ध्रने मोतर जल रहा था । सन्ध पुन्ध दाउदको मारनेके लिए अटि नर हुए । दोनोमें बनधोर लड़ाई बिडो । दाउद यत्रा माघ्य वाभरका करने लगी । लहरी समय इन्धोंने चकको दो बार चपने हाबने वा कर मो लन्धे न मारा । चपनेमें सुदमैत्रमें लन मारी यत्रे धोर लड़ाईका मो पचयान हुआ ।

पीछे दाउद लूडाके मि शासन पर बैठे । इवरनमें लनकी राजधानी बनाई गई । अरुडा लीड कर धोर दूसरी दूसरी जातियोंमें सन्धे पुत्र रम्बोथिककी चपना राजा मान कर इन जातको लोपका कर दो । इम्बो थिकके मारे जामे पर दाउद नन्धे राण्यके पचि धारो हुए धोर १०१३ से १०३३ ई० तक राज्य कर पाय पवलय को मार्य हुए । राजयहो पर बैठनेके बाद ही वे सन्धके पवसे लीसुसाइटोंके साथ लड़नेको उताव हो गये धोर लन्धे पराम्प कर लनका बचान मगर विवमसिन्धु ले लिया तथा जहाँ चपना वाभन्धान स्थापित किया । इन्धो नगर-में पञ्चदिवोंका प्रधान पञ्चा था । बाद दाउद किनि स्तारन, चामेकबाइट, यकोमाइट, मोयाबाइट, चमो-

नाष्ट और सिरोय आदि जातियोंको युद्धमें परास्त कर एक ओर इडफ्रेतिमसे भूमध्यसागर तक और दूसरे ओर सिरोयसे लोहित सागर तक ५० लाख प्रजापूर्ण विस्तोर्ण साम्राज्यके अधीश्वर हुए। किन्तु इन्होंने वायसेवाका हरण और उसके स्वामीको विनष्ट कर अपने विजय-गोरवको कलङ्कित किया। वे वाणिज्यसे लक्ष्मण साधनमें लक्षाहो तथा उसके उन्नति-कल्पमें विशेष मनोयोगी थे। उनके राजत्वमें यहूदियोंने शिल्प, वाणिज्य, धर्मनोति, राजनीति, समाजनोति, काव्य, इतिहास, मन्त्रोत, आदि की अच्छी उन्नति की थी। राज्यशासनके लिये हमेशा एक दल सेना तैयार रहते थे। सुचारुरूपसे राज्य चलानेके लिए उन्होंने वारह शासनकर्त्ताओंको नियुक्त कर हर एक पर इस्त्रायलकी विभिन्न जातियोंका शासन भार सौंपा।

जो कुछ हो, दाऊद निरापद्रुसे राज्यसुखका भोग कर न सके थे। उन्हें अनेक विपत्तियोंका सामना करना पड़ा था। उनका पुत्र भी विद्रोही हुआ था और पीछे मारा भी गया। इससे उनका अवशिष्ट जीवन बहुत उदासीनतासे बीतता था, इसमें सन्देह नहीं।

दाऊद केवल युद्धवीर, राजनीतिविद् और राजा थे, सो नहीं, उनको कवित्व शक्ति भी प्रशंसनीय थी। उनका बनाया हुआ स्तुति गीतिपुस्तक (Book of psalm) ईसाई जगत्में अतुलनीय है।

दाऊदका जीवन निष्पाप नहीं था। दुर्दम इन्द्रियोंके धगीभूत हो कर वे अपना अधिक समय भोगविलासमें बिताया करते थे। इन सब दुष्कृतोंके वे हमेशा जर्जर और व्याकुल रहते थे। वे कहते थे, कि गतपाप उनके हृदयमें हरवन्त जाग्रत रहता है। किन्तु इतने पापी तथा भ्रमसङ्कुल तामसी होने पर भी उनका भ्रकपट हृदयावर्ग इतिहासमें अतुलनीय है। दुर्दान्त रिपुओंसे उन्मार्गी किये जाने पर भी उनकी हृदयवृत्ता लुप्त न हो सकी थी। अनुत्त पाननसे उनका हृदय दग्ध हो कर पवित्र रहता था। कोई पाप करनेमें वे हिचकते नहीं थे और न करके उसे छिपाते ही थे। दाऊदका बनाया हुआ जो धर्मगीत है, उसे पढ़नेसे ही ज्ञात होता है, कि किस प्रकार इन राजकविकी सरल आत्मा भविष्यत्की

भीषण विभोषिकासे भीत, निविड तंममाच्छन्न, सन्देहसे आन्दोलित और अज्ञात पापत्पातकी आशङ्कामें आतङ्कित होकर विधुर्णित होता है, अन्तमें फिर किस प्रकार उस महा अन्तर्विषयको भीषण भटिकाके अपगत होनेमें दुःख, गोक, सन्ताप, मर्मपोटा द्वारा विगोधित ईश्वर-प्रेम उनके हृदयमें उदित हुआ है। ईश्वरमें भ्रुव, भटल और ऐकान्तिक भक्तिस्त्रक इस प्रकारका गीत बारविल-में बहुत काम देखनेमें आता है। दाऊदके सुखदुःखमय अनेक घटनापूर्ण जीवन-चरित उनके गीतमें ही साफ झलकता है। बहुतसे ऐसे धर्मविद् ईसाई हैं जो दाऊदको येशुखृष्टका एक स्वरूप मानते हैं। बाइबिलमें दाऊदका खूब लम्बा चौड़ा इतिहास वर्णित है।

दाऊदखानो (फा० पु०) १ एक प्रकारका चावल। २ अटिया सफेद गेहूं।

दाऊटिया (अ० पु०) १ एक प्रकारका गेहूं। २ एक प्रकारको आतिगवाजी।

दाऊदो (अ० पु०) बहुत नरम और सफेद छिजकेका एक प्रकारका गेहूं।

दां (हि० पु०) वार, दफा, वारी।

दां (फा० पु०) आना, जाननेवाला।

दांक (हि० स्त्री०) दहाड़, गरज।

दांकना (हि० क्रि०) गरजना, दहाड़ना।

दांग (फा० स्त्री०) १ छः रत्तीकी तौल। २ दिगा, और। ३ छठा भाग।

दांग (हि० पु०) १ नगाडा, डंका। २ टीला, छोटो पहाड़ी। ३ पहाड़का शिखर।

दांगर (हि० पु०) दांगर देलो।

दांगो (हि० स्त्री०) जुलाहोंकी एक लकड़ी जो कंठोंमें लगी रहती है।

दांडना (हि० क्रि०) १ दण्ड देना, सजा देना। २ चुरमाना देना।

दांडिक (हि० पु०) जहाद।

दांत (हि० पु०) दन्त देखो।

दांतपुष्टुनो (हि० स्त्री०) पोम्तिके दानेकी पुष्टनी। यह बच्चेका पहला दांत निकलने पर बंटी जाती है।

दांतली (हि०, स्त्री०) काग, डाट।

दाता (हि० पु०) एक प्रकारका बंगूरा को दाँतके
पाकारका होता है ।

दाताबिदम्बिट (हि० स्त्री०) १ बाय-पुत्र, भ्रमड़ा । २ गाँधी
गर्बीव ।

दाताबिदम्बिस (हि० स्त्री०) दाँतबिदम्बिट देखो ।

दाँतिका (हि० पु०) १ बच्चा नमक त्रिषे पोतेके त बाजू
में उसको तीसो बड़ानिसे निसे छातर्त है ।

दाँतो (हि० स्त्री०) १ हास या पसल काटनेका ह निवा ।

२ नावके बाट पर गड़ा हुआ बड़ा कूड़ा । इससे नावका
रक्षा बाँध दिया जाता है । ३ मिट्टीको जातिका एक
काटा बौड़ा । ४ दाँतोनी व लि । ५ दो पहाड़के बीचका
त ग ब्राम, दर, बाटी ।

दाँता (हि० स्त्री०) पत्थी पत्थरके छठने को दाँता पत्थर
कर देनेके लिये रीढ़नाम ।

दाँतनी (हि० स्त्री०) दाँतनी नामका धामूवक ।

दाँतरी (हि० स्त्री०) रत्न लोरी ।

दाह (स० पु०) दहाति दहिषामिति दा-ह । १ बज्र
मान । २ दाता ।

दाघ (स० पु०) दघघेद घच् । १ दघघमन्धोव
वज्रादि । दाघिचां सङ्घं पञ्चे लघच् भा इलन्तात्
घच् । २ दाघिसमुदाह । ३ लघका पङ् । ४ लघका
लघच् । दाघे ब्राह्मः 'दघघ' इति पच् । ५ दाघिका
बाह्यकर्मन् । दाघिसगत पच् । (स्त्री०) ६ दाघिसे
पागल, दाघियज्ञसे भावा हुआ । ७ दाघिका दघ
प्रधान मानवका घमो बासी ।

दाघघ (घ० पु०) दाघेरिघ गोवहरचात् पुञ् । १ दघ
प्रधान मानवका घमो बासी ।

दाघायक (स० पु० स्त्री०) दघघ गोत्रायक रज बुनि
पक् । १ दघका पुवा भोमापक । २ दघघादि पसहर
घोमि चादिका धामूवक । ३ मूवक, गङ्गा । ४ दघघत
घघमेद, दघ द्वारा किया हुआ एक बज्र त्रिषुको
कथा मतपत्र-ब्राह्मणमें है । (स्त्री०) ५ दघके कल्प । ६
दघके योगका । ७ दघ घमन्धो ।

दाघायकमन्त्र (स० पु०) दाघायकल विषयो देय एतु
कार्यादिकात् भङ्गः । दाघायक पत्र सामन्धोय देयदप
निवह ।

दाघायकपत्र (स० पु०) दाघायकल पत्र । दघपत्र ।
दाघायकित् (स० स्त्री०) दाघायक-पत्नि । सुभ० पुञ्,
घोनेका ।

दाघायकी (स० स्त्री०) दघघ पपल श्री दघ-घिम,
घोरा० लोव । १ पत्रिमीसे सेठर १ नतो तक २० मघत्र ।
२ दुमा । ३ रोहिणो मघत्र । ४ दघकी कथा । ५ दघतो
हव । ६ कल्पको लो, घदिति । ७ कट्ट । ८ निमता ।
(मघत १।२२।५)

दाघायकीपति (स० पु०) दाघायकीनां पत्रिण्यादि
मघवाकां पतिः इ-तत् । चन्द्रमा ।

दाघायकोरमन्त्र (स० पु०) रमयतीति रम-क्यु । चन्द्रमा ।

दाघायक (स० पु०) दाघायक्यां घदितो भव-यत् ।
घादिभ्य ह्य ।

दाघाय (स० पु०) दघाय एव धामो घच् । घच्,
निह ।

दाघि (स० पु० स्त्री०) दघघ मोत्रायक इन् । दघका
पपल, दघको सन्तान ।

दाघिकन्वा (स० स्त्री०) दाघोकां कन्वा, (इन्द्रावक-भो-
वीर्ये । पा १।३।२०) इति लघीनल्लामानात् न लोभता
नालोच संघे ।

दाघिकर्ष (स० पु०) घामविधिय एक माँचका नाम ।

दाघिकुल (स० स्त्री०) एक घामका नाम ।

दाघिच (स० पु०) दघिचा प्रयोजनमल घच् । श्रु-
पवाङ्-घोममेद, एक घोमका नाम । (स्त्री०) २ दघिचा
घमन्धो, ।

दाघिचक (स० पु०) दघिचायां कर्मघमाग्री दघदान
रुपायां त्रिबायां प्रघतः, दघिचमार्गे चन्द्रलोच
मन्धुति ना पुञ् । १ दघिचात्पत्तर । चन्द्रलोचगामा ।
कन्धविधिय, कन्धके तीन भेद हैं,—प्राकृतिक, वैकृतिक
घोर दघिचक । मन्धे रेकी ।

दाघिचघात (स० स्त्री०) दघिच-घाताकां मघ । दघिच
हारी घट्ट, नघ घर त्रिषका हरबाबा दघिचकी घोर लो ।

दाघिचान्न (स० स्त्री०) दघिचा दघिचर्षां दिशि भव-
दघिचान्नक (दघिच पवाङ्-पुल्लेज् । पा धी०।१८) १ दघिच
देयोद्वह, को दघिच देयमें कल्प हो । २ दघिचादिक् कर
दघिचदिवाका । (पु०) ३ मारिषेच, मारिचक । ४ दघिच

देशवासियों। ५ दक्षिण देशके अन्तर्गतों। ६ दक्षिणराज्य।

भारतवर्षके दक्षिणदिशको साधारणतः दाक्षिणात्य कहते हैं। विन्ध्य पर्वतमालाके भारतवर्षके ठोक मध्यम्यक्षमें पूर्वसे पश्चिमकी ओर विस्तृत होनेसे भारतवर्ष उत्तर और दक्षिण खण्डोंमें स्वभावतः विभक्त हो गया है। उत्तरखण्डको आर्यावर्त और दक्षिण खण्डको दाक्षिणात्य कहते हैं। आर्यावर्त देखो। जिस प्रकार उत्तरखण्डका आर्यावर्त नाम हुआ है, उसी प्रकार दाक्षिणात्य नाम किसी कारणसे नहीं पड़ा है। केवल दक्षिण दिशमें रहनेमें ही लोग इसे दाक्षिणात्य कहते हैं। एक समय नर्मदा नदीसे क्षणा नदीके अन्तर्गत भूखण्ड मात्रको दाक्षिणात्य कहते थे। किन्तु कालक्रमसे वह परिवर्तित हो गया है।

दाक्षिणात्य भारत एक दृष्टत् उपद्वीप है। इसके पश्चिममें अरबसागर, दक्षिणमें भारत महासागर, और पूर्वमें बङ्गोपसागर; केवल उत्तरमें विन्ध्यपर्वतमाला और आर्यावर्त नामक उत्तरभारत है। यह उपद्वीप त्रिकोणाकार है। इसके शृङ्गका नाम कुमारिका वा कन्याकुमारो अन्तरोप है जो सर्वदक्षिणाग्रमें भारत महासागरमें प्रविष्ट हुआ है, तथा जिसका भूमिभाग विन्ध्यपर्वतमाला है। यह त्रिभुजाकृति दाक्षिणात्य स्वभावतः एक दुर्भेद्य दुर्गवत् रचित है। इसके उत्तरमें जिस तरह विन्ध्य पर्वत माला पूर्वपश्चिममें एक समुद्रकुलसे दूसरे समुद्रकुल तक विषद्यत है, उसी तरह पश्चिम पार्श्वमें समुद्रकुलसे थोड़ा दूर पर उत्तर-दक्षिणमें विस्तृत लगभग ४ हजार फुट ऊँचा पश्चिम घाटका सहाय पर्वतमाला है। और उसी तरह पूर्वमें भी पूर्वघाट पर्वत माला और दक्षिणमें दोनों पर्वतोंके सङ्गमस्थान पर नीलगिरि और मलयपर्वत है। पश्चिमघाटके पश्चिममें समुद्रके किनारे जिस प्रकार अग्रशस्त भूखण्ड उत्तर दक्षिणमें विस्तृत है उसी प्रकार पूर्वघाटके पूर्वमें भी पश्चिमकी अपेक्षा कुछ अधिक विस्तृत भूखण्ड है तथा नीलगिरि और मलयके दक्षिणमें भी वैसा ही है। दाक्षिणात्यके पश्चिम उपकुलको मलयार उपकुल और पूर्व उपकुलको करमण्डल उपकुल कहते हैं। यहाँ जितनी नदियाँ हैं सभी पूर्वको और पूर्वघाटके मध्य

कोतो हुई बङ्गोपसागरमें गिरती हैं। प्रधान प्रधान नदियोंमें नर्मदा, ताप्ती, गोदावरी, क्षणा, पेन्नार और कावेरी बड़ी और बौद्ध है। इनमेंसे पहली दो नदियाँ पश्चिमको और प्रवाहित हो कर अरब सागरमें गिरती हैं। पूर्वोपकुलकी भूमि दमटल है। लेकिन पश्चिमोपकुलकी वैसी नहीं है। यहाँ कहीं कहीं पश्चिमघाटका एक एक गाँवा पर्वत समुद्रपृष्ठमें बहुत ऊँचा है तथा समुद्रोपकुल तक फैला हुआ है यहाँ तक कि कोई कोई पर्वत ऐसा है जो समुद्रके जलमें प्रविष्ट हो गया है।

भारतवर्षके प्राचीन इतिहासमें आर्यावर्तका जितना वर्णन पाया जाता है, उतना दाक्षिणात्यका नहीं। १३वीं शताब्दीमें सुमलमानोंको गोठो जमनेके पहले प्रबलत्वविदोंको गवेपणासे तथा प्राचीन मन्दिर दुर्गादिके अस्तित्वमें ही यहाँका कुछ कुछ इतिहास जाना जाता है। हिन्दू पुराणादि तथा बौद्ध ग्रन्थादिसे भी कुछ हाल मालूम होता है। रामायणोक्त रामकर्त्तृक दाक्षिणात्य-प्रवेशके पहले दाक्षिणात्यके विषयमें उतना अधिक विवरण नहीं मिलता। रघुवंशमें रघुके दिग्विजय-उपलक्षमें दाक्षिणात्यका जो विवरण पाया जाता है, उसे ठोक रामचन्द्रके पहलीका नहीं मानना हो शक्तिसङ्गत है, उसे रघुवंशके ग्रन्थकार कालिदासके समसामयिक मानना अच्छा है। रामायण महाभारतादिके समय दाक्षिणात्यके समन्ताग्रमें जितने मनुष्य रहते थे, उनका प्रमाण मिलता है।

ईसा जन्मके समयसे ले कर इस विषयका विचार करना सुविधाजनक है। १३वीं शताब्दीके पहलेका दाक्षिणात्यके सम्बन्धमें जो कुछ हाल मालूम है, वह हिन्दूशास्त्र, बौद्धशास्त्र, चीनपरिव्राजकोंका भ्रमणवृत्तान्त, प्राचीन खोदित लिपि और प्राचीन ग्रीक लोगोंके लिखित विवरणादि द्वारा जाना जाता है।

ग्रीक लोगोंके वर्णनसे ईसाजन्मका परवर्ती हाल कुछ कुछ जाना जाता है। ८०से ८८ ई०के बीच "पेरिप्लस" नामक ग्रीक लोगोंके वाणिज्य विवरणकी पुस्तक लिखी गई।* बहुतेकोंका मत है कि यह ग्रन्थ एशियासे लिखा गया है। पूर्व समयमें जब ग्रीक

भोग भारतवर्ष आते थे, तब उन्हें पोलोने निम्न कर
मिथ, पारस, पारिया, पारस, वैकुण्ठमान आदि दीर्घों
बिसो दिवो न्यानने कहाँ न गते थे। उक्त ग्रन्थमें
उमका आरामाधिक बर्णन है। उमके बाद सबसे पहिले
भारतीयग्रन्थमें जिन सब ज्ञानोंका उल्लेख है, उनका
विषय आरामाधिक रूपमें म विद्य रोतिने नीचे दिया
जाता है। हमने पहिली प्रताप्दीमें टाविचानको प्रबन्धा
को भी, वच मान्य हो जायेगा।

१। स्कारथिया (Skythia) (सक) रोमके इपसून-
बर्ती सिन्धु (Sindhia) नदीका मुहाना - यही सिन्धु
नदीका मुहाना है। पारस (Pariss) - ये पश्चिम
पारिया (Parira) नामक छोटे शहरके कोड़ी
दूर पर बगियर (Bagiyara) नामका बन्दर या जो
वर्तमान उर्मरा का पारना नामक पश्चिमोपे ऊपर
प्रस्थित था। इस स्थानके पोषवोत सिन्धु मुहानेमें
प्रवेश करता था। यहाँका प्रथम मन्दिर है। मदिद उक्त
देव कर ही नाबिक शीव मावचाल हो जाते थे, क्योंकि
यहाँके मनुष्यके प्रथम मर्त्य बहते हुए दोष पड़ते थे
तथा कोड़ी दूर पर पारसको पौर एक प्रकारका विभिन्न
जातीय 'ग्रास' (Grass - पाह) कुम्भोर जाया जाता
था। मध्य सुन्दके ऊपर 'बर्बरिकन्' (Barbarikon)
नामका एक विख्यात वाणिज्य बन्दर था।*

२। मीन नगर (Mionagar) यह नगर उक्त बन्दरके
नामने एक सुन्दरीय पर प्रस्थित था। इसी नगरमें वच
समय मन्तरान्यको (Skythio) राजधानी थी। पारस
राज्य (Parthian Prince) जब समय यहाँ राज्य
करते थे। इसी छोटे छोटे राज्यमें कुछ विषय मन्त्र
वृत्त करता था।

३। पारियाकि (Ariake) 'मोम्बरोक' (Mombara)
प्रदेशके पारियाकि (Ariake) एक विभागका नाम
है 'पारियाकि' टोमेमीके मतानुसार 'कारिकि' नामके
प्रतिष्ठ है। इतुवके मतने कारिकि 'जाट' वा 'जार' देश
है गुजरातका पश्चिमि प्राचीन ज्ञानमें जाट नामके
समझते थे। पण्डित भवबानुनाम चन्द्रजीके मतानुसार
पारियाकि स एतत् 'अपानिक' मन्त्रका पीठ नाम है,

पश्चिम समुद्रतटवर्ती प्रदेश पुराणमें 'अपानिक' नामके
प्रतिष्ठ वृत्त है। 'मोम्बरोक' वेदो वक्त मान 'सुम्बरी' वा
'बम्बरी' मन्त्र उत्पन्न वृत्त।

४। पारियाकि (Aberia) मोम्बरोकके दूरि देयके
मध्य नामने प्लाथियाका पारियाकि या प्र प्रस्थित है।
यही स एतत् 'पामीर' देय है। इस पामोरोदेयके मध्य
वर्ती समुद्रोपसूत्र को 'सुरसरोके' (Sarostrene)
स एतत् पुराण है। पुराण देयको राजधानीका नाम मो
उस समय मोननगर था। इसी मोननगरके बहुत रूपके
विचनेके किये बहगत्र (मन्त्रकण्ठ) शहरमें भेजे जाते थे।

५। पठकप्र (A Taka pra) यह बहगत्र शहरको
(Baruzga वर्तमान मरोकेके) विपरीत दिगामि 'अप
क्षित है। इस नगरका स एतत् नाम इतुवके मतानुसार
'इपुबकप्र वा 'इपुबकप्र' है। यही वर्तमान माधननरके
निकटवर्ती 'हायक' नामका स्थान है।

६। मर (Mora) पठकप्रका एक नदी। इस
नदीका सुन्दर बहुत विस्तृत है और बाईं पौर 'बह-
पोनिन' नामका एक दोय है। 'मरम्' नदी वर्तमान
'मरो' के पौर हाप शापद 'पिरम्' होना ।

७। नन्तदोयम् (Yamudain) - यह शीयने पूव
को पौर पपसर को कर इसी नामको एक नदीमें सिन्धु
नदी के पौर बहगत्र शहरको बर्ती गई है। यही नदी
वर्तमान नम दा नदी है।

८। बहगत्र (Baruzza) शहर बहो नमंदा
तीरक एक प्राचीन विख्यात बन्दर है। इसका वर्तमान
नाम मरोक है। पञ्चापक विन्मनके मतने यह अगुदेय
वा 'अगुबक' मन्त्रका पपन्न था है। इहवप हितामि
यह मन्त्रकण्ठ नामने प्रतिष्ठ है। अगुव मीके शीव जहाँ
रहते थे, वही अगुदेय है। गुजरातमें अन्ध प्रदेशमें
पौर मरोक जिलेमें पात्र मो जन्म मार्ग व ब्राह्मण नाम

१ India Ant Vol 111 1979 141 'वैरिपुत्र'में
मे कवना दक्षिण की ओर अथवा रोमेकी वनीका देखी जाती
है इनके नगरके जनावर्ती 'एवका' शीव 'रीव' है, 'रेका'
रोमेके 'बहन' मरी' नदी हो करता। 'रेका' वच अन्ध है
कि नदी एक वृत्त का ज्ञान एक एक वर्तमान 'रेक'
करता था।

* Indian Antiquary, Vol. VII p. 185 181

करते हैं। ये लोग अभी दरिद्र और मूर्ख ही गये हैं। मूर्खोंके कहनेसे 'भृगुनेत्र' कामगः 'भृगुहृत्' 'भृगुकच्छ' 'भृगुकक्ष' 'भृगुकक्ष' हो गया है। शोक लोगोंने इस भृगुकच्छका नाम 'वरुगज' रखा है।

८। दक्षिणावन्तम् (Dakhinabads) वही देश है जो वरुगजसे दक्षिणमें अवस्थित है। इसका संस्कृत नाम 'दक्षिणापथ' है। इस देशका अग्रन्तर भाग मरुमय तथा पार्वत्य है एवं व्याघ्रादि खापद, भीषण सर्प और वानरादिसे परिपूर्ण है। इसको दूसरी और गङ्गातोर-वर्ती जनपद है।

१०। 'पैठान' (Paithan)—यह शहर वरुगजसे दक्षिण २१ दिनको दूरी पर अवस्थित है। इसके पूर्वमें दश दिनके रास्ते पर 'तगर' (Tagara) शहर पड़ता है। ये दोनों शहर उस प्रान्तमें सबसे प्रधान वाणिज्यस्थल हैं। यह 'पैठान' प्रतिष्ठान शब्दका अपभ्रंश है; तथा तगर वर्त्तमान 'सुनार' है। इन दो स्थानोंमें पहले वस्तु-शिल्पका बड़ा ही प्रादुर्भाव था।

११। लिमारिक वा दिमारिक (Lamurike or Dimurik) वा दमिरिक दाक्षिणात्यके पूर्ववर्ती एक विभाग है। शायद यही तामिल वा द्राविड देश है। तामिल देखो।

१२। कल्लिएन (Kalliena) वर्त्तमान 'कल्याण'। यह अभी बम्बईके निकट अवस्थित है। एक समय इसका नाम खुव मगहर था। अनेक खोदित लिपियोंमें इसका उल्लेख है। इसके सिवा नौसरिप (Nausaripa) वर्त्तमान सुरतसे १८ मील दक्षिणमें अवस्थित नौसरि नामका स्थान है। सौप्पर (Souppora) बम्बईके निकटवर्ती सुपारा नामका स्थान है, पुराणमें इसे सूर्पारक कहा है। पूर्व समयमें यहाँ ताँबा और तिल उत्पन्न होता था तथा पोशाकके लिये अच्छे अच्छे कपड़े तैयार होते थे।

१३। सेनुल (Senulla) इयुलके मतालुमार यह वर्त्तमान बम्बईसे २३ मील दक्षिण चैनवन वा चौल नामका बन्दर था, किन्तु पण्डित इन्द्रजीके मतसे यह वर्त्तमान 'चिमूला' है। अनेक खोदित लिपियोंमें इसका उल्लेख है।

उस स्थानके बादसे ले कर दमिरिकके निकट तक कई एक छोटे स्थानोंका उल्लेख है, जो वर्त्तमान गोषामे बम्बईके मध्य अवस्थित थे। उनमेंसे कुछ ये हैं—हिप्पो-कौर (Hippokoura) वर्त्तमान 'घोडा बन्दर', मन्दगर (Mandagar) वर्त्तमान 'राजपुर', पलैपतम् (Palai-patm) वर्त्तमान 'वड्डुट', मेलिजेगर (Melizeigara) वर्त्तमान जयगढ़, बुजानटियम् (Buzantium) वर्त्तमान बैलयन्ती, तोगरोन (Togaron) वर्त्तमान देवगढ़, (यह विजयदुर्गके निकट है)। तुरनोसबोया (Turonosboa) इयुलके मतसे यही वर्त्तमान वन्दा वा तिरकल नदी है। इस पञ्चलमें मालवणके निकटस्थ तौर पर प्रथम हीपका नाम सिन्धु दुर्ग है। इसके बाद ही एक छोटा हीप है जिसे अद्दरेजोमें अभी बागट शार्डलेण्ड्स (Barut Islands) कहते हैं। इसीके बीच भिङ्गोर्ला (Vingorla) पर्यन्त विशेष प्रसिद्ध है। पेरिप्लुसमें यह पर्वत सेसिक्रियेनइ (Sesakrienaï) नामसे वर्णित हुआ है।

१४। ऐगिदिअन (Aigidion) गोषाके निकटवर्ती ऐगिदियार्डे हीप है, किन्तु इयुलका कहना है, कि सदाशिवगटकके दक्षिणवर्ती 'भद्रहोप' है।

१५। नौर (Naura) यह दमिरिकके अन्तर्गत है। वर्त्तमान डोनेवर कभी कभी अनौर रूपमें लिखा जाता है। यह शरावती नदीके मुहानेके निकट अवस्थित है।

१६। नित्र (Nitra)—यह दमिरिकका प्रथम बन्दर है। सुन्नरके मतालुसार यह वर्त्तमान मिरजान-वा कोमता है, किन्तु इयुल इसे मङ्गलूर वतलाते हैं। इस स्थानके और कई एक जो स्थान हैं वे इस प्रकार हैं,—मुज़रिस (Muziris) नामक नगरमें पारियकि और मिस्रसे आगत जहाजोंके ठहरनेका स्थान था। कान्तडोएलके मतसे यही वर्त्तमान मुइरीकोटा (Mui-irekotta) है। यह केरोबोत्रस (Kerobotres) राज्यमें अवस्थित है। तुण्डि (lundy) इस राज्यकी राजधानी और बन्दर थी। इसका वर्त्तमान नाम तुण्डो और नेलकुण्डा (Nelkunda) है, उस समय इसको गिनती प्रधानमें हीतो थी। यही वर्त्तमान किरण्डा नामक स्थान है। केरोबोत्रसका संस्कृत नाम केरस-

पुत्र है। बिरजपुत्रके राजगण जिन भूमिपरसे राज्य करते थे वहाँ धर्मो मन्मथान्त्रु भाषा प्रचलित है और वही प्राचीन बिरज राज्य है। करोर (harours) नगरमें वर्तमान करूर नगर उसकी राजधानी थी। निरुपुत्रा पाण्डु राजाकीसे अधिकारमें का पोर मद्रुवा (गामिक) का मकरा (म स्कन) मद्रुमें इनकी राजधानी थी। इस मद्रुके निकट नदोके मुहाने पर वहाँ बहारा खादि ठहरते थे, वह बकरो (Bakro) का बिकार (Bucaro) नामके मसिह था। इसका वर्तमान नाम मुहरके मतसे मकरी है। उस समय बहारा पोर निरुपुत्रा सरोवा बड़ा आदिप्य स्थानदाक्षिणात्यमें एक भोज था।

१०। परलिया (Paralia) — यह एक प्रदेशका नाम है। यमी इसे दक्षिण त्रिवाङ्ग के पोर दक्षिण तिरुचेथी कहते हैं। यहाँ कुडमन कोलमर नगरके दक्षिण ओर पर्वत है, पिरियुन यन्में उसका नाम पुरथोम (Purthos) रखा है। इसके समीप उस समय भी मुक्ता निकाली जाती थी। पाण्डु राजनय इस म्बमयाके अधिकारी थे।

१८। कोमार (Kumar) का कुमारिका पन्तरीय, दुर्गा कुमारोके नामसे ही इसका नामकरण हुआ है। पात्र भी यहाँ धर्मिक मनुष्य प्रतिमान भगवतीके लक्ष्यके किशो विधिय दिनमें स्नानदानादि किया करते हैं। विजिन प्राचीनकालमें जिनको कुमनाम हुआ करते थे, उनमें पात्र कल नहीं। उस समय यहाँ एक दुर्ग भी था। पिरियुनकी निवित पीक नाविकोंके बर्चनमें आना जाता है, कि जमी समय यह ज्ञान समुद्रका गर्मयामी जेनि पर था। पात्र कल कलन विजिमान भी दृष्टियत नहीं होता है किचन पन्तरीयके कुछ दूर समुद्रमर्ममें पईजापरित एक पर्वतके ऊपर एक परिष्कार कलका रूप है। पिरियुनमें कोनकोरै वा कोनकोरै (Kolkbor) नामक एक दूरी स्थानका कुलके कुमारिकाके बाद पाया जाता है वह कयान नामक प्राचीन नगर है। वहाँ पर पाण्डु राजाकीको प्रथम राजधानी थी। यमी वह समुद्रके ३ मील दूर बना गया है। इसके समीपमें समुद्रके डट काम पर इकीसे पमानमें पोर्चुगोलीने एक मुतकुरि (Talcorta) नामका एक नया मद्रु निर्माक किया है।

१८। कयानके समीप लपकुल पर पारगुनु नामक प्रदेशका नाम पाया जाता है। इसके एक पन्तरीयका नाम कोर (koru) या तिरुके ऊपर चागिह (Aigai-roo) नामका एक नगर बना हुआ था। यही प्राचीन भूचेलापीका कोलिस नगर था। इसका वर्तमान नाम शमिगर है। बाद पूर्व लपकुल की कर कलरको पोर जनेमें निरु करै एक विख्यात आदिप्यमान मितते थे—कामर (Kamaru), ठनेमो मयट इसी को नाबेरिस नदी तोरवर्ती कह गये हैं। यही वर्तमान कावेरो तोरवर्ती कावेरो परतन है, पुडुको (Poduko) वही पुडुकोरि का 'मूलन नगर' है, यही वर्तमान कामने मुट्टिचेरो है।

२०। इसके बाद ताम्बपर्षी होयका बर्चन है। समग्र में एक टल पोपनिबेयिचने या कर इस होयका ताम्ब पर्षी नाम रखा। तिरुचेथी जिलेमें इस नामकी एक नदी है। मूहर समुमान करते हैं, कि यही इस नदीके बिलारे मनामें लपनिबेय बसाया, जोई यहथि टका कर सिंहल से गये।

२१। मखिन (Machin) मोदावरो पोर कृष्णाके मध्यत भूमिपत्रा नाम है। टलीमोने इसे मकोनिया कहा है। म स्कन नाम मोसन है। मयट मयलोपाटन (महकोपतन) इसीका क्पाकर है।

२२। इसके बाद दोमारिक (Doboreno) नामका एक नूसा प्रदेश है। यह दमान पोर गोदावरो नदीके मध्य तत भूमिपत्रा नाम है। यही म स्कन दयार्च देय है। टलीमोने इस स्थलके अधिकारियोंक विषयमें कहा है, कि यहाँ मिच मिच जातिके लोग रहते थे, जिनमेंके एक जातिका नाम बिरादरै (Biratada) है। म स्कनमें इने बिरात कहते हैं।

१३। इसके बाद पिरियुनमें मद्रुके मुहानास्थित एक नगरका नाम मात निपा है। भारतनमन्त्रमें कोरै उल्लेख नहीं है।

इसके हम सीग यह टिपते हैं कि उस समय दाक्षिणात्यमें घण्ट घन्घता थी धर्मिक राज्य, नगर, मद्रुकादि थे। यूरोपके पाद भी दाक्षिणात्यके धर्मिक जनपदोंका आदिप्यमान्य था।

यही मनाम्ने दाक्षिणात्यकी वही पहला था।

अब यह देखना चाहिये कि ईसा-जन्मके ५१६ मी वर्षके भोतर १५५ देशको कैसी अवस्था थी। ईसा-जन्मके ५१६ मी वर्ष पहले बुडका समय था। उनके समयका दक्षिणात्यका बहुत परिचय पाया जाता है।

महावंश पठनेसे मालूम होता है, कि विजय नामके जो बङ्गराजकुमार मिथिल जा कर पहले पहल राजा हुए थे, उनका जन्म तथा बुद्धदेवका निर्वाणलाभ एक ही दिन हुआ था। विजय जब शत्रुसे विताडित होकर दक्षिणको और चले, तब वे 'लान' (राठ)देशको उपत्यका तथा पर्वतमाला पार कर अग्रसर हुए। उन्होंने नर्मदाके उत्तर मुटुगिरि, सुण्णार (सूर्पारक) देशको मानागिरि (मलयगिरि) और दक्षिणमें पाण्डुगिरिको भी अतिक्रम किया था।

बौद्धग्रन्थोंमें महावंश, राजसत्तकरो, राजावली, मिलिन्दिमश, महमालद्वार, कायविरतिगीत और अनेक बौद्धजातक ग्रन्थादि, फाहियान और यूएनसुषुङ्गका भ्रमण, ललितविस्तर, सहस्रमपुण्डरीक इत्यादि ग्रन्थ तथा पाश्चात्य पण्डितोंकी गद्यपद्यापूर्ण पुस्तकादि पढ़नेसे जाना जाता है, कि बुद्धके समयमें दक्षिणात्य प्रधानतः दो खण्डोंमें विभक्त था, एक कल्याणनदीका उत्तरोत्तर-खण्ड, दूसरा दक्षिणीय खण्ड। उत्तरीय खण्डमें (१) उडोसा और (२) कलिङ्ग ये दोनों राज्य तथा पूर्वांशमें (३) लान (लाट) टैग नर्मदाके दोनों कुलोंसे ले कर गुजरात तक विस्तृत था। (४) सुनापरान्तक (स्वर्णपरान्तक) वा अपरान्त, (५) अवन्ति और (६) नवभूवन ये सब पश्चिम कुलमें नर्मदाके निकट वर्त्तमान थे। फिर दक्षिणखण्डमें (७) रक्तचन्दनका देश (८) द्राविड (९) पाण्ड्य और मलय (१०) महिन्द्र (११) नागोदोपा (नागद्वीप) १२ महिलारष्ट्र ये कई एक राज्य थे। राजावलीसे बौद्ध धर्मविरोधी राज्योंमेंसे चोलराज्यका भी नाम है।

गोदावरीकी अववाहिकामें दक्षिणात्यका साधारण नाम दक्षिणापथ था। उत्तर-पूर्व राज्योंके दक्षिणभागको होरकक्षेत्र कहते थे। चौरनदी वा पद्मार-नदीकी अववाहिका ही द्राविड, नामसे मशहूर थी। यह पूर्व-

वाट पर्वतमाला और पद्मार-नदीको दक्षिण अववाहिकामें लेकर चोन्नराज्यकी दक्षिणी मोमा तक विस्तृत थी।

इस समय नर्मदा नदीके उत्तरोत्तर किनारे कीडण प्रदेशमें (वेण) गङ्गा नदीके कूल तक नागराजका राज्य विस्तृत था। आवन्तीमें लोटने समय बुद्ध इस राज्यमें पहुँचे थे। काम्बे उपसागरके पश्चिमांगमें नर्मदाकी खाड़ीके ऊपर लान (लाट) टैग अवस्थित था और एक हूमरा लान (राठ) बङ्गराजके अधीन रहा।* नर्मदाको उत्तर अववाहिकाके निकट उज्जयिनी वा अवन्ति राज्यका उद्भव है। यह राज्य आर्यावर्तान्तर्गत होने पर भी दक्षिणात्यके भाग इसकी घनिष्टता थी।

गोदावरीकी उत्तरोत्तर अववाहिका पर अग्रमक और मूलक राज्य था। गुहानिपिमें इसका उद्भव है। 'मूलक' राज्य ही पौराणिक 'मौलिक' राज्य है। गोदावरीके दोनों किनारे तथा डेल्टामें कलिङ्गराज्य था। कल्याणनदीके पूर्वांशके उत्तरी किनारे वर्त्तमान विदर और गोदावरीकी मखिरा नामक प्राञ्च-नदीके कूल तक मखरिक नामक नागराज्य था। बुद्धने इस देशके नागराजकी अपना दर्शन दिया था।

दक्षिणांशमें पाण्ड्यराज्य ही एक मात्र पराक्रान्त सुख्यवस्थित राज्य था। यह राज्य वर्त्तमान मदुरा और तिरुवेली जिला तक विस्तृत था।

सिंहलद्वीपमें भी तीन नागराज्य और तीन यक्षराज्य थे। सिंहलद्वीपके समीप मणिद्वीपमें भी नागाधिकार था।

७वीं शताब्दीके श्योंमें थोड़, दक्षिणकोशल, महाराष्ट्र, आन्ध्र, प्राचीन कलिङ्ग, मानव, भरुकच्छ (मृगुकच्छ वा क्षेत्र), धनकटक (कल्याणनदीके दक्षिणांशमें अवस्थित) द्राविड (राजधानी काञ्चीपुर), मालकूट (राजधानी कीडणपुर), आदि राज्योंमें बुद्धके भ्रमणकी बातें लिखी हैं।

इन सब नगरोंमेंसे लालदेशमें सिंहपुर (सिंहदुवर वा सिंहपुरदुवर), सुनापरान्तदेशमें सागलदुवर, भरुकच्छ (भरोच), उज्जयिनी, अलक, प्रतिष्ठान, गङ्गानदी (ग्राम), सूर्पारक नगर, मलुयाराम (ग्राम ;

कनिङ्ग देशमें प्रथमक पौर शोचिक, इतिहास परमें माधि-
कतो* मानसूर राज्यमें कौङ्कपुर, इतिङ्ग राज्यमें
काचोपुर पौर दक्षिण मधुरा (मधुरा) बा ।

बन्दारदिमें मन्वचक्र नि दपुर (बङ्गराजपुर विजय
ने इस नगरमें नि इकको यात्रा को) आगन (विजयके
मरने पर उनका भतीजा नि हासन पानिकी रक्षामें
वहने नि इकको गये थे), सुर्गारक* (इस स्थानमें
नि इस ज्ञाने समय विजयका महाराज ठहरा का), कनिङ्ग
देशमें पात्रिका (Adasetta) ब्रह्मदेशीय बौद्धधर्मके मता-
नुसार बहोपमागमें बहाज ठहरनेका स्थान) पादिका
पर्वत है ।

अकपानमें—“अनन्वजातक” धर्ममें एक महाराजके
मठ दोनिको कहा सिनी है उसमें माफो महाराज पौर
पारोही मिमा कर कुल ० भी मनुया थे । सुर्गारक
बोधिपत्त बिल महाराज पर पढ़ कर दासिण्य करनेके
छिने गये थे, धर्ममें लक्ष्म छोड़ कर पौर भी ० यो बन्धक
थे, ऐसा लिखा है । मन्वचक्र जातकमें एक महाराज पर
३ भी मनुष्योंको शात निका है । बुद्धियुक्त पुनर्क मारि
नील को मनुष्यो को शाव ही कर एक महाराज पर गये थे
इत्यादि । इनमें जाना जाता है कि उन समय बहुत
बड़े बड़े महाराज थे पौर दासिबाळके बन्दारमें पाया
जाया करते थे । ये सभी महाराज बाबुके बंगने पकते थे ।

एक द्रुप्याका विषय सुर्गारक-बोधिमन्त्रके विवरकमें
है । लक्ष्मिने सभी स्थानों न सब प्रकारका द्रुप्यक पढ़
किया था । रत्नबन्दक, शैतबन्दक, मन्धिमाधिक्यादि,
नि इनकी मुद्रा पादि द्रुप्य भाषाकर पढ़ाके लाब समो
कुछ कुछ पाते थे । मदन बङ्गराजकुमारने विजयको
अब कुनेको पाहायें दान किया, तब लक्ष्मिने महाराज हाग
थापन स यह कर दिया था । सुतरीं उस समय बाबक
को धामना पौर रत्ननीं भी थी । कनी कनी देशीय
द्रुप्य ही कर जिन बिदेशीय द्रुप्याको बदकने थे इनमें
थाबक, जाल, रत्नबन्दक, शैतबन्दक, सुप्यद्रुप्य, पोबक,
मह पर्व, ओड तथा उनका द्रुप्य कपाय राहुन
बन्ध पादि हो पदान था ।

* महाराज लोक । ग. गी. म. र. क. का ।

† यह भी महाभारतके देश है । यह काङ्गुनिड देश
नरके निकट वर्तमान था ।

बुद्धके समय जब दासिबाळमें रतना बाणिज्यपायापर
रहनेका प्रमाण मिलता है तब यह स्पष्ट कह सकते हैं
कि बुद्धके पक्षी कालके कम ३ को वर्ष भी दासिबाळमें
मथ्यता तथा राजादिको अज्ञाना हो । इस प्रकार ई-
मन्के हजार वर्ष पहले सो दासिबाळमें की मथ्यता हो
बहु बहुत कुछ प्रमाणित है इतने पहले महाभारतका
समय था ।

महाभारतके समय भी दासिबाळमें धार्मिकमथ्यता
पैको हुई हो । उन समय कनिङ्ग, माहिभती, बिदमं,
इतिङ्ग पादि स्थानोंमें दक्षिण राजाओंका राज्य था पौर
दासिबाळके धर्मके स्थान पावोंके निम्नत मुप्यदेशकमें
गिने जाते थे । बन्धक भी तोर्षयात्रा पवाधायमें इनका
बिन्धक प्रमाण पाया जाता है ।

किन्तु भारतीय युगमें भी दासिबाळके धर्मके स्थान
बन करकोने परिचित थे । धार्मिकमथ्यता ज्यो ज्यो
बढ़ती जाती थी, गयी तथा मन्त्रद्रुप्य धाम नगरादिमें
परिचित होता जाता था । इसके पहले हम लोग रामा-
यक पौर लक्ष्मि भी पहले वैदिक युगमें पा पढ़ें है ।

वैदिकयुगमें दासिबाळमें केवल पनायें जातिका
हो बास था, जब समयमें धार्मिकमथ्यता बढ़ी पैको न
थी । पवपरा अविने ही पहले दासिबाळमें धार्मिकधर्म
प्रचारका सुबधान किया तथा परछराम पौर रामचन्द्रके
ब्रह्मने पनाय जातिमें धार्मिकमथ्यता प्रचारित हुई । रामा
यक पढ़नेके मान्यम होता है, कि यमुना नदीके दक्षिण
के ही कर समय गाहाको प्रदेश तक दक्षिणपक्ष ही
विस्तृत था । यहाँ राघव प्रथम पनायें जाति राज्य
करतो था । उस समय राघव, बानर पादि पवपक
जातिगक तरद तरकक पक लुकोसे बमाकोबे धाम
तथा निरिहीपेहित कुशमय गुहापेनि रहते थे ।
उन कालमें भी राजा थे, नामक थे तथा राज्यपरिचाल-
नीयको बन्धि-व्यवस्था भी थी । उनके बन्धिब्रह्मने
धार्मिकधर्मक बहुत मय तथा कह पाते थे । पादावक-
बाको पतिवो को पहाबना लिते थे । दक्षिण राजपक भी
दासिबाळके राजाओंकी उत्तनी उपेका नहीं करे ।
राजर्षि जनकने भीता अयम्बरके समय दासिबाळ
राजाओंको भी निम्नित किया था—

“दाक्षिणात्यप्रदेशां चर्चानानय मा चिन्तु ॥”

(रामा० १।१२ अं)

दाक्षिणात्यवासी अनार्य जातिके उपद्रवकी कथा रामायणमें इस प्रकार लिखी है—

“दशैवत्यतिवैमर्त्यैः क्रूरैर्मैषिणैरपि ।

नानाहरेर्वि रूपैश्च रूपैरुपदर्शनैः ॥

अन्नगतैरशुचिभिः संप्रयुज्य न तापसान् ।

प्रतिप्रत्ययान् दिशामनार्याः पुरनर्षभः ॥

तेषु तेष्वधनस्थानेष्वुदमवलीय च ।

रमन्ते तावसांस्तत्र नाग्यतोऽलुचंदेशः ॥

(रामा० २।११६ अं)

किमीका मत है, कि ऐतरेयब्राह्मणमें विद्यामित्रके पुत्र अंधका उल्लेख है। इसी अंधमें दाक्षिणात्यके आंध्र वा आन्ध्रजनपदका नामकरण हुआ है। इसमें कोई कोई अनुमान करते हैं, कि ऐतरेयब्राह्मणके समयमें ही दक्षिणात्यवासी अनार्य जातिके साथ आर्य जातिका संस्त्रव हुआ था। रामायणमें दाक्षिणात्यके अन्तगत पाण्ड्य, चेर और चोल इन तीन प्रधान जनपदोंका उल्लेख है। हरिवंशके मतसे सयातिके पुत्र तुर्वसुके वंशमें पाण्ड्य, केरल, कौत्त और चोल ये चार उत्पन्न हुए थे।

उपरोक्त प्रमाणोंसे सिद्ध होता है, कि अंध्र, पाण्ड्य, चोल आदि त्रिविद्यगणने ही संस्कारभ्रष्ट, जातिशुद्ध और समाजशुद्ध हो कर दाक्षिणात्यमें प्रवेशपूर्वक अनार्य समाजमें आधिपत्य फैलाया तथा अधिक दिन तक अनार्य जातिके साथ रह कर अनार्यधर्म और अनार्य भाषा ग्रहण की। उनके वंशधर पैटक आर्य भाव और आर्य भाषा कुछ समय तक भूल गये थे।

१ली शताब्दीमें दाक्षिणात्यमें कैसी सन्धि और सभ्यता थी, उसका पालात्य ग्रन्थोंसे पता लगता है। उस समयें दाक्षिणात्यमें श्राद्ध, आंध्र, काण्व आदि राजगण राज्य करते थे। इनका अंधधतन होने पर नल, सौर्य, कदम्ब, सेन्द्रक, कंसचूरी, गङ्ग, अलूप, चाट, मालव, गुर्जर, पल्लव, चालुक्य, राष्ट्रकूट, होयसाल, यादव आदि वंशीय राजाओंका आधिपत्य फैल गया। कौङ्गण और कौरुडमें शिलाहार, सौन्दरि, रट्ट हाड्डल और गोशामे कदम्ब, वेसवर्गमें सिन्द, गुत्तलमें शुत्त, मञ्जिसुरमें कौङ्ग,

शौरङ्गलमें गणपति आदि सामन्त राजगण भी एक समय प्रवल हो उठे थे।

१३वीं शताब्दी तक समस्त दाक्षिणात्य हिन्दू राजाओंके शासनाधीन था। १२८०में १३०० ई०के मध्य दिल्लीगंग अलाउद्दीन खिलजीने महाराष्ट्र, तैल्लूर और कर्णाट पर आक्रमण किया। १३२८ ई०में महम्मद तुगलकने दाक्षिणात्यमें हिन्दू प्रभायकी दूर कर डाला। इसके कुछ दिन बाद ही वाङ्गणोवंगका अभ्युदय हुआ। इनके प्रवल प्रतापमें तैल्लूरके तथा विजयनगर वा कर्णाटके हिन्दू-राज्यका अन्त हो गया। कुछ समय बाद गृहविवादके कारण वाङ्गणोराज्य विजयपुर, चरमदनगर, गोलकुण्डा, विदर और बेरार इन पांच गण्टोंमें विभक्त हो गया। १६३० ई०के पड़ने हो अन्तिम टी राष्ट्रोंका पक्षित लोप हुआ। ग्रेष तोम शाहजहान् और औरङ्गजेबके यत्नसे ही दिल्ली साम्राज्यमें मिला लिए गये। १७६० ई०में महाराष्ट्रने दाक्षिणात्यमें चोय वसूल करनका अधिकार पाया था। महाराष्ट्रनायकने मतारा राज्यका वसाया। पीछे सताराके राजाकी प्रकृत शासनभक्ति पूनाके पेशवाके हाथ लगी। शीघ्र ही महाराष्ट्रोंका पराक्रम कुछ कम हो गया।

दाक्षिणात्यके सुसनमानोंकी चेष्टासे हैदराबादमें निजामत राज्यका सूत्रपात हुआ। इस समय तुङ्गभद्राके उत्तरयर्ती राजा और सामन्तगण पेशवाकी तथा दक्षिणात्यकी राजा निजामकी अधीनता स्वीकार करते थे। पीछे मञ्जिसुर दोनों शक्तिको अधीनता स्वीकार करता था, बाद वह हैदरअलीके हाथ लगा। इस समय केवल त्रिवाङ्गुडके हिन्दूराज स्वाधीनता भोग कर रहे थे १८वीं शताब्दीमें दाक्षिणात्यकी ऐसी अवस्था थी। इस समय पोत्तुगोज, शोलन्दाज, फरानी और ब्रिटिशजाति दाक्षिणात्यके उपकूलमें वाणिज्य करती थी। जिस समय महाराष्ट्र और निजाममें लड़ाई छिड़ी थी, उसी समय फरानी और ब्रिटिशने दोनों पक्षोंको सहायता देकर धीरे धीरे अपनी प्रभुता फैला ली। यदा समय ब्रिटिशका भाग्य चमक उठा अभी प्रायः अल्पभूभाग छोड़ कर समस्त दाक्षिणात्य ब्रिटिश गवर्नमेंटके शासनाधीन है।

अभी दाक्षिणात्य प्रधानतः मन्दाज प्रेसिडेन्सी,

बन्धुई प्रीतिहेतुका दक्षिणीय ईदवावाद, मन्दिपुर, त्रिवाङ्ग, तथा और कई एक देगोय राग्योमि विमान है।

भारत समान और गौरानिदरुतके दासिनाप नव नद बन्धुवा नाम तथा वर्तमान अन्ततान दासिनापके विभिन्न शाब्दिके होके।

दासिनापवद (स० वि०) दक्षिणापदे देसे मन्धुमादिवात् पुन । दक्षिणापदेयज्ञान, दक्षिणापदेशका ।

दासिचिद (स० पु०) अन्वयविशेष, एक प्रकारका अन्वय जो दक्षिणा प्रधान द्वापुर्त्त पादि कर्मिकी कामनायश करनेके होता है।

दासिच (स० स्त्री) दक्षिण्य भाव दक्षिण्य कर्म । १ अनुकूलता, प्रशंसा । २ परस्मानुबन्धन, कृपरेके चित्तको धिरेमि वा प्रसन्न करनेका भाव । ३ सरलता, सुशीलता, छदारता । ४ भावित्यदप्यञ्चोक्त नाटक कथकभेद, साहित्यमि नाटकका एक भेद ।

छेदा तथा भाव्य हाग कृपरेके लदायोग वा प्रप्रसव चित्तको धिरे पर प्रसन्न करनेका नाम दासिच है । लदाडरव—

“प्रवाचनपुरी कर्ष राजा त्व हि किनीच ।
 कार्येणानुपदीतश्च क विद्म विदितमत्ता ॥”
 (कारित्यदान)

हे किनीच । तुम लदापुरीको रचा करो तथा तुम जो यहाके राजा बनो । इस क्रमके इदी वाक्य द्वारा किनीचका चित्त अनुवर्तित हुआ, इसीके यह दासिच हुआ । इनो प्रकार छेदा द्वारा भी हुआ करता है । १ दक्षिणाकारक्य भावविशेष, प्रयागमैरव और छप्रताप प्रथित देवोको कामाचार और दक्षिणाचारमि पूजा करनेका भाविके । अथि, देवता शिष्ट, मनुष्य, मृत कन्धु वन पाँच प्रकारके यज्ञ द्वारा मन्धु प्रकारके श्च परिशील कर विभिन्नक कामदानादि द्वारा मन्धुष्य लो पूजा भी जाती है इसीको दासिच कहते हैं । (दासिनापु० ७० व०) (वि०) ६ दक्षिणा, दक्षिणाप्य वन्धो । इतिमि मन्धु दासिच-उक्त् । ७ दक्षिणमन्धु, दक्षिणा ।

दासिचद (स० पु०) अन्वयविशेष, एक देवता नाम । दासिचद (स० पु०) एक उदका नाम ।

दासी (स० स्त्री०) दक्षिण्य अन्वय दक्षिण्य । १ दक्षिणा स्त्री-पयस्य दक्षिणी कथा । २ पाणिनि मुनिकी माता । पाणिनि हेको ।

दासीपुत्र (स० पु०) दासिनापुत्र ६ तत् । पाणिनि मुनि ।

दास्य (स० स्त्री०) दासिनापय्य पुमान् दासी-उक्त् । (कीर्त्ये-उक्त्) वा ३।१।२०) दासीपुत्र, पाणिनि मुनि । दास्य (स० स्त्री०) दक्षिण्य भावः कर्मका० दक्षिण्य । दक्षता, निपुणता, पटुता ।

दाय (हि० स्त्री०) १ पगूर, २ सुनका । ३ किगमिग । दासि (का० वि०) १ मन्दि उक्त् हुआ हुआ येम हुआ । २ शान्ति, शरीर, मित्रा हुआ । ३ पशु वा हुआ ।

दासिन्धारिज (का० पु०) सरकारो कामत्र परमि किशो मन्धुसिधे पबिबारोका नाम काट कर मन्धु पर लनके लतासिधारो वा किशो कृपरे पबिबारोका नाम सिलनेका काम ।

दासिदत्त (का० वि०) बिना विचार किये हुए दत्तके कास रखा हुआ काम ।

दासिना (का० पु०) १ प्रथम पेट । २ वह कार्य को किमी मन्धु, कार्योस्य पादिमि सन्धुचित्त किया गया हो । ३ किशो शीतके दासिना वा लमा करनेका काम ।

दासी (हि० स्त्री०) दासी हेको । दान (हि० पु०) १ दण्ड, दाह । २ पदकका दाह कर्म, सुदर् लतानिको किया । ३ जन्म, दाह । ४ अग्नि का चिह्न ।

दान (का० पु०) १ धन्वा, बिती । २ बिह्न, मिथान, पक्ष । ३ कनक पत्र, दोष । ४ कलनेका चिह्न । ५ वह बिह्न को किशो शीतके कर्ष कामिके लम पर पड़ जाता है ।

दानदार (का० वि०) १ जिह पर दान लना हो । २ धन्वेदार ।

दागना (हि० स्त्री०) १ इन्ध करन, जनागना । २ शरीर पर बिह्न देनेके किये तपे हुए लोहेमि किशोके पङ्को

लजाना। ३ भगे दूरे बन्दुकमें बनी टैना, रंजकमें अग लगाना। ४ तप्त मुद्रासे अंकित करना। ५ गरोर की फुंभो आदिको जलाने वा सुखानेके लिये तेज टवा लगाना। ६ रंग आदिसे अंकित करना।

दागबेल (फा० स्त्रो०) वज्र चक्र जो सहक बनाने, नींव खोदनेके लिये कुटालसे भूमि पर किया जाता है।

दागव्यायनि (सं० पु०) दगुका गोत्रापत्य।

दागो (फा० वि०) १ दागयुक्त, जिस पर दाग लगा हो।

२ जिस पर सहनेका निगान हो। ३ कनडित, दीप-युक्त, नाञ्छित। ४ दगिडत, जिसको सजा मिल चुकी हो।

दागोव—वौधोका एक प्रकारका स्मरणार्थ स्तम्भ। यह संस्कृत 'घातु गम' शब्दका अर्थ है। पालि भाषामें इसे 'घातुगम्य' और तामिलमें 'दागोव' (Dagob) कहते हैं। जिस प्रकार सभा चैव्य वीहके नाम पर प्रतिष्ठित वा उत्सव किये हुए हैं, उसी प्रकार मृत व्यक्तिको भस्म ले कर जो सब स्तम्भ वा स्मृतिचिह्न बनाये जाते हैं उन्हें दागोव कहते हैं।

दागोवमें तरह तरहकी कारुकायेविशिष्ट घातु और प्रस्तरनिर्मित पात्र रहते हैं। प्रायः प्रत्येक दागोवमें एक एक सोने वा चांदीका बकस रहता है जो कई प्रकारका होता है। गिण्डसे घिरे हुए गोतमको धर्माप-देगक मूर्ति बकस पर अद्वित रहती है। वह बकस नागा प्रकारके रत्नसे मण्डित और तरह तरहके चित्रोंसे चित्रित है। कहीं कहीं तो इन सब बकसोंमें दांत, हड्डी और भोजपत्र पर लिखे हुए अनेक ग्रन्थ देखनेमें आते हैं, किन्तु ये सब अभी काममें नहीं आते, क्योंकि इतने जोर्ण हो गये हैं, कि ठठानेमें हा नष्ट हो जाने-को सम्भावना है। सिंहलके अतुराधापुरमें बहुतसे दागोव हैं। वीह पुण्यार्थी लोग इनके चारों तरफ प्रदक्षिण करते हैं। इन सब चैत्योंके विषयमें प्रवाद है— किन्तो समय सिंहलराज एलारा वैलगाडो पर कहीं जा रहे थे। राक्षोंमें गाड़की पहियेसे टकरा कर दागोवका एक पत्थर टूट फूट गया। पीछे राजाने देखा कि इस स्थानकी १५ पत्थर अलग अलग हो गये हैं। इस पर वे डर गये और पापके प्रायश्चित्तके लिये १००००० रु० दान किये।

भारतवर्षके नामा ग्यानेमें नाना प्रकारके दागोव देखनेमें आते हैं। इनमेंसे अमरावती, अजगटा, रुपाव-बेडी, काली, अमयगिरि, नद्वाराम और ब्रह्ममधुका दागोव प्रधान हैं। इनके सिवा और भी अनेक दागोव हैं जो ब्रह्मशासो वीहोंके उपसना-मन्दिर सरीखे दोस्त पड़ते हैं।

दाघ (सं० पु०) टह-भावे घड-न्यहादित्वात्-कु। दाघ, जलन, गरमी।

दाङ्ग—बम्बई प्रदेशके मूरत पोन्टिफकन एजेन्सोके अर्धोन एक विस्तोर्ण भूभाग। इसके उत्तरमें बरोटा राज्य, दक्षिणमें नासिक जिला और सरगानराज्य, पूर्वमें खान्देश, नासिक जिला और बरोटा राज्य तथा पश्चिममें वासिदा राज्य है। यह अक्षां २०° २२' से २१° ५' उ० और देशां ७३° २८' से ७३° ५२' पू० तक विस्तृत है। भूपरिमाण ८८८ वर्ग मील है। यह भूभाग उत्तर-दक्षिणमें ५२ मील लम्बा और २८ मील चौड़ा है।

यह भूभाग १५ भागोंमें विभक्त है। प्रत्येक भाग एक सरदारके अधोन है। १५ भागोंके नाम ये हैं— दाङ्गपिमप्रो, बड़वान, वैतककटुपडा, अमाला, चिजलि, पियलादेवो, पलासविहार, प्रोबर, टेरमोति, गार्वि, गियवारा, किर्नी, वासुर्णा, विलवारी और सुरगाना। इन पन्द्रहोंमें १४ भीलसरदारोंके अधोन और १ कुषुबोके अधोन है। यथार्थमें ये सबके सब स्वाधोन हैं, किन्तु कुछ-विशेषके समय ये सब गार्वीसरदारके अधोन काम करने-को बाध्य हुए थे। पहले ये सरदारगण मसहारके प्रधान-को ७०० रु० कर देते थे। लेकिन कर बसूल करनेके समय प्रधानके साथ सरदारोंका विवाद हुआ करता था। अभी गवर्मेण्टने इस गड़बड़को दूर करनेके लिये सरदारोंके प्राप्य रूपमेंसे कुछ लेकर प्रधानके वंशधर-को दे देनेकी व्यवस्था कर दी है।

इसमें २६८ ग्राम लगते हैं और लोकसंख्या प्रायः १८६२४ है।

सरदारोंमें एक मात्र बड़ा मड़का जो उत्तराधि-कागे होता है। अभी समस्त दाङ्गभूभाग गवर्मेण्टने सरदारोंसे ठेके पर ले लिया है। इसमें यह शर्त किया गया है, कि सरदार छः मास पहले सूचना देकर

भुभाग पुन, वापिम वर मवते है; यहाका लनबावु पन्नाएकर है।

दाङ्गि (दाङ्गि)—एक सन्ध्यासो सम्प्रदाय। इस स मारमें पर्यक बिना कोई काम सम्पन्न नहीं होता और पर्यक का वन सहजे पबित है। इसीसे इस सम्प्रदायके सन्ध्यासी मिथावृत्ति कोङ्क कर वाचिन्व्य व्यवसाय धनकाम्यन क्रिमे हुए है। शैवराष्टर पूजा सताय पादि पनेक प्रसिद्ध नयरीमें इनके मठ जोडो बिद्यमान है।

पारसे कलकत्तमें सो इनके मठादि है। इनकेबि एक एक मठक मठाध्यक्ष पर्याप्त मजदुर होते है। कच्ची वाचिन्व्य व्यवसाय द्वारा विपुल सम्पत्तिसे पशोकर हो म्मे है। यहाँ तक कि कितने मठमोंके पास करोड़ों रुपयेकी सम्पत्ति है।

ममाध्यक्ष मठमें रह कर मठका काम कात्र किया करते है। उनके शिष्यभोग देसदेगान्तरीमें भूम भूम कर वाचिन्व्य व्यवसाय द्वारा पपना निबाह करी है। इस प्रकार वाचिन्व्यके जो धन काम होता है, यह सत्त्वमें भि जमाया जाता है। दाङ्गि मजदुर श्रम कामकोंको खरीद कर पपना गिया ना पैसा बनाती है। ये उन्हें यज्ञपूर्वक प्रतिपादन और शिष्या प्रदान करते है। कुछ दिन इसी प्रकार प्रतिपादन कर यदि मठाध्यक्ष जोनेके उपयुक्त समझते, तो मठका कुछ भार उन्हें वा सुपुर्दे कर देते तथा पन्ध्याका उन्हें दयनामी मन्थाचिरीको सौप देते है।

दाङ्गन—पन्ध्याके देरामात्रोवां जिलेके पन्ध्यात जेनपुर तहसीलका एक नगर। यह पन्ध्या २८ ३४' ८" और देगा ७० २४ पू०; देरामात्रोवां महारके ४८ मील दक्षिणमें अवस्थित है। जाहिरके वाचिन्व्यके समस्त यह नगर बहुत बड़ा चढ़ा बा। कुछ नमरके बाद मात्रोवानी यह महार पपने पबिचामें किया। योके यह जेनातके जामोके दाच पाया। पन्ध्यामें बहाँ बहुत वाचिन्व्य होता बा पपने कप तरफका नहीं है। यहाँको लोकस एवा लयमम १९११ है। १८०१ ई०में म्म निविपान्ठो व्यापित हुई। महारको पाय १८०७ ६० है।

दाङ्क (६० पु०) दानपति सुभाष्यन्तरान्द्रय दिक्कौं करोतीति दक्ष विच-खक, खण्ड। १ दत्त, दाति। २ दाङ्क, डाङ्क।

दाङ्क—पामबिन्ध, एक गाँव जो पारीषि दो वीसन पथिममें पदस्थित है।

मन्थिन्व्यप्रणयणमें मिथा है कि कलिक मगवान् कौन्धीको तनवारसे नाम करके मान्तिपूर्वक इसी दाङ्कप्रदेशमें रहते। दाङ्क पामके पास हो ताव्यपुङ्ग नामक पाममें दबल नाम रहतेके कलिका प्राया भाग समग्र होने पर यह पाम नष्ट हो जायगा।

(मा० प्रप ४० १० म०)

दाङ्क (हि० पु०) एक प्रजाका संघ।

दाङ्कि (स० श्लो०) दलनमिति दाङ्क, तेन निहतः मान मयव्यादिमप इत्यपौरुक्तम्। १ एना, एनायची। २ फलसुवचिन्धिय पनार।

इसका फल नाम और फल पत्रा किये कुछ मोठा होता है तथा बीजोंके मरा रहता है। संस्कृत पर्याय—करक, पिच्छुपुत्र, दाङ्किय, पर्यक खादक, पिच्छीर, फलगाङ्क, शकलकम रहतुपुत्र, दाङ्किसीरा, कुडिम, पलसङ्कम रहतीक सुपुत्र दन्तबीजक, महुबोक कुच पान रोचन, मचिशक, कलकपन इत्यपत्र सुनीक, मोरुपत्र।

मिथ मिथ देवोंमें भोग हवे मिथ मिथ मामेदि पुत्रा रति है, बेसि, यज्ञानमें टानिम दाङ्किय कानिम, पानार; पथिमाचकमें कानिम टारिम पनारका पिङ्ग, शैदाना नामकत; उड़ोषामें टानिम दाङ्किय; दक्षिणमें पनार, प्राङ्गिमें मादके, मदनम्; मिचिप्रालिमें मदन; तेकड्गमें दक्षिण दादिम दाङ्किय, कचालमें टानिभैमिदा, बन्धुई मदेशमें पनार, दाङ्किय गुणपतमें दाङ्कम्; पन्ध्याकमें दाच दाचको; पारकमें नर पनार; पारकमें राधा ना रथन। (I unca Granatum)

पारक कुदिप्यान, पयगानिप्यान, बन्धुचिप्यान और मारतवर्षमें सब कामक पनारके पिङ्ग पाये जाती है। कहीं कहीं तो छोटी छोटी पार कहीं बड़ी बड़ी माकापी प्रमायाचौंङ्क बड़े बड़े पिङ्ग दिखतेमें पाते है।

बहुत पन्ध्यामें मारतवर्षमें भोग हवे पादर करते पा रहे है। इससे फुलेके बीजा पन्ध्याको नाव रग बनता है जिससे भोग कपड़ा बनती है। फलका हिनका चमड़ा बनानेके और निम्नानेके काममें पाता है। अभी

इसमें इने कर्षी और नील रंगके माय मी मिला देते हैं। पतिसावर्णमें इसके छिन्नरमे कपडा रंगानेका एक प्रकारका रंग तैयार किया जाता है जिसे ककरेजो रंग कहते हैं। इसके लिये वे छिन्नरकी पानोमें सिद्ध करते हैं और वारण ग्रामके हिमावनी पानी जप जाने पर उग्र गर्मीको या काममें लाते हैं। पेड़के छिन्नरमें भी उमसा रंगाया जाता है। इन्को कारण युक्तप्रदेशमें प्रति वर्ष इसकी ग्रहण रक्तनी होती है। यह रूपमें डेट मेरमें भी कर रज और तक विफता है।

अनारके फलका व्यवहार शोषधमें पहनेमें ही होता था। एलिटुमोकि प्राचीन वैद्यक ग्रन्थमें, साइगोकि वाई-बलके पाटि भागमें भी अनारका उल्लेख है। इजिप्ट, पार्सिपोलिम और पारिथियाके स्याप्लगिन्थमें तथा पुरातन कीर्त्तिस्तम्भमें अनारके चित्र देखे जाते हैं।

यूरोप रोगमें अनारका रस वृत्त हितकर है। डाक्टर पेंसिका कहना है, कि पेटमें जब बड़े बड़े कीड़े पड जाते हैं, तब उन्को नष्ट करनेमें इसके मूलका छिलका बहुत उपयोगी है। जोज शोग मज्जा क्रमग पाकस्थली और श्लेष्मिकके लिये फायदाकर, मद्दोचक और गैल्यकारक है। फूल और कली रक्तमोचक और त्वग्प्याटक है। इसके मूलमें कोई शग करनेका जो गुण है, वह पहली यूरोपीय शोग नहीं मानने थे। डाक्टर बुकाननको बहान-में इसका क्षमिनागक गुण मानलूम हुआ था। पोके डाक्टर पेंसिका, पनेमिं पाटि यूरोपीय चिकित्सकगण इसका व्यवहार करने लगे। अभी यूरोप और भारत-वर्षमें सब जगह इसका मूल व्यवहृत होता है। इसकी मात्रा पांच छटाईके एक छटाईक तक है। कण्टोगीय या सूतनामी मन्वन्धोग रोगमें भी इसके पाटके का प्रयोग होता है।

अनारके पाण्डुमिर्गमें कहीं कहीं अनारके पत्ती-का रस और कशा फल उपयोगी है। इसकी कलीको पाण्डु रोग में कशा प्रयोग करनेसे वायुनलोपदाह (Pneumonia) प्रशामित भी जाता है।

यह पेड़ पर्वतों पर प्रदेजमें बहुत उपजता है। बङ्गाल-या अरुण छोटा शोग बोझपूर्ण होता है। इसमें एक-सालीयान शो अरुणके कीड़े दानेदार, बड़े बड़े अमार

इस देशमें वेचनेकी लार्थे जाती है। वहाँके अनार बङ्गाल-की अपेक्षा सुखाटु और नरम होते हैं।

वैद्यकके मतसे—अनार रपकं भेटमें तीन प्रकारका होता है, मधुर, मधुरास्त्र और केवल अस्त्र। इनमेंसे मधुर रमयुक्त अनार वायु, पित्त, कफ, प्यास, दाह, प्वर, हृदोग, कण्ठगत रोग तथा सुखुरोगनाशक, वसिकारक, शुकवर्धक, लघु, कुक कपाय रस, धारक, स्निग्ध और मेधा तथा बल-वर्द्धक, मधुरास्त्र अनार अग्निदीप्तिकारक, रुचिकारक, क्रिद्धित् पित्तवर्धक और लघु तथा अन्न अनार पित्तवर्धक, कफ और वायुनाशक है। (भावप्र०)

यह प्रदेशमें जो अनार उपजता है, वह अधिक दानेदार और अन्न रसात्मक होता है। पटना प्रदेशमें जो अनार आता है, वह मधुरास्त्र रसात्मक होता है और उसे मस्कट कहते हैं। काबुल प्रदेशके अनारमें केवल मीठा रस रहता है और उसे वेदाना कहते हैं। इनके सिवा एक और प्रकारका दाड़िमका पेड़ है। जिसका फल देखनेमें नहीं आता है। यह घोर रक्त-वर्ण बहुदलोंसे परिपूर्ण रहता है और इसमें केशर नहीं होता है। इसे कोई तो ग्लो-अनार और कोई रोहितक कहता है। इसका दूसरा नाम दाड़िमपुष्पक है।

दाड़िमपत्रक (स० पु०) दाड़िमस्य पत्रमिव पत्रमस्य कर्। रोहितक वृक्ष, रोहिंडा।

दाड़िमपुष्प (स० पु०) दाड़िमस्य पुष्पमिव पुष्पमस्य । रोहितक वृक्ष। यह पेड़ अनार फूलके जैसा होता है, इसीमें इसका नाम दाड़िमपुष्प हुआ है। (को०) दाड़िमस्य पुष्पं ६-तत् । २ दाड़िम या अनारका फूल।

दाड़िमप्रिय (स० पु०) दाड़िमफलं प्रियं यस्य। कीर पशो, सुग्गा। यह अनार खाना बहुत पसन्द करता है। दाड़िमभक्षण (स० पु०) भक्षयतीति भक्षि-न्त्यु, भक्षयो भक्षकः, दाड़िमस्य भक्षणः ६-तत् । कोरपत्तो, हक, सुषा, तीता।

दाड़िमादिचूर्ण (म० को०) वैद्यकोक्त चूर्ण शोषधभेट। दाड़िमाद्यवृत (म० को०) वृत्तोपधभेट। प्रसृत प्रणाली—घो ३४ सेर, चूर्णके लिये अनारका दाना, विरह, इसदी, चई, जीरा, त्रिफला, सीफ, पोपल, गोशुद्धका बीज, पत्रवायन, शमिया, चमसवेत, घोपरा

मूल, मध्यमवच प्रत्येक २ तोला, पाकका अन्न १६ बेर।
 रत्न चक्रको दृष्टपाक प्रचालोके चतुस्रार यथोपयुक्तपयसि
 पाक करते हैं। उपयुक्त माहामि रत्नका म्यङ्गहार करने-
 के प्रमेद, मूलाभात, चन्द्ररी शीत मूलाहक्य पादि रोग
 काति रहते हैं।

रत्नके सिवा शीत दो प्रकारके दाङ्गिमाहक्य हैं। महा
 दाङ्गिमाहक्य शीत इहदाङ्गिमाहक्यतः। महादाङ्गिमाहक्यो
 प्रसून प्रचाली—एत ३४ बेर, काङ्गुके लिए दाङ्गिमके बीज
 १२ बेर, जल १६ बेर, शीत ३४ बेर, चक्रतन्त्र १२ बेर,
 जल १६ बेर, कुम्भकोर १२ बेर, अन्न १६ बेर शीत ३४
 बेर, अतमूनीका रत्न ३४ बेर, मातका दूध ३४ बेर, चूर्ण
 के लिए दाह, विच्छयत्र, विषला, रीणक शोबक,
 श्यमक अशोक शीतकोश मीद, महामिद श्रद्धि,
 इति देवदाह चकरी, दाहहनदी, म शोक, कुट, रत्ना
 यथो, मूमिदुपाक, वना, गिलाजित, दारशोभो, चक्रको
 चक्र शीत इत्याम् प्रत्येकका चूर्ण तीन तोला। रत्न
 मयको दृष्टपाक चतुस्रार पकाने है। रत्न शीतके जोने
 के सब प्रकारका मीद जाता रहता है। मीद रोगके लिए
 यह एक अहमक्य पोषक है।

हरदाङ्गिमाहक्य—एत ३४ बेर, काङ्गुके लिए एका
 चक्र १८ बेर, अन्न १६ बेर, शीत १६ बेर, चूर्णके लिए
 चक्रका दाना चर्द, शीत विच्छय, चक्रदी, दवाहनदी,
 दाह, विच्छयत्र, मोमोत्पल, मन्त्रविषयो, वनयमानो,
 महाजित, अशोक चर्द, चक्र, देवदाह, कुट, मन्त्रारोके
 मूलको काक, चक्रिम, चक्रमूक म्नालककुङ्कुमा मूल,
 मूर्ध, चक्रोचन, चक्रमूर्ध, चक्रिदा, कुम्भको महा
 मीद, मातको दान इहती अटकटैया, विषला चक्रु
 को काक, चक्रानुका मूल, मय सिना कर ३१ बेरको
 १६ बेर जलमें बहाविधि पाक करते हैं। इसी शोके
 जोनेके सब प्रकारका मीद पूर हो जाता है।

(मैत्रयट—रत्नदाहिकार)

दाङ्गिमाहक्य (म० पु०) शेषकमें एक चूर्ण। रत्नमें
 चक्रका चक्रका चक्रता है।

दाङ्गिमो (म० पु०) दाङ्गिमहक्य, चक्रका चक्र।

दाङ्गिमोरक (म० पु०) रत्नमिद। रत्नको प्रसून प्रचालो-
 चक्रको जोने चक्रक करते एक चक्रतन्त्रमें रहते हैं। रत्न

तरह चक्र जाने दर चक्रे चक्रमें दान कर शी रत्न निच
 मना है चक्रको दाङ्गिमोरक कहते हैं।

दाङ्गिमोमार (म० पु०) दाङ्गिमो दाङ्गिमोमन्द चरति
 प्राप्नोति च-यच। दाङ्गिम, चक्र।

दाङ्गिम (म० पु०) रत्नमिद।

दाङ्गी (म० पु०) दक्षते चक्रको चक्र वि चक्र, मोरा
 चक्र मध्य चक्र। १ दाङ्गिम, चक्र। २ चक्रका चक्र।
 दाङ् (म० पु०) १ चक्र। २ मीच मन्द, मरज
 दवाङ्।

दाङ्गा (म० पु०) देव-शीतके दा शिप दे शोको दानाय
 वा शोके शोके च। १ दवा चक्र। २ चक्रका
 चक्र। ३ चक्र, चक्र।

दाङ्गा (चि० पु०) १ दानाचक्र, चक्रको चक्र। २ चक्र,
 चक्र। १ दाह, चक्र।

दाङ्गिका (म० पु०) दाङ्गिके चक्रममूलाय प्रमवतोति
 चक्र तत्प्राय। १ रत्न, दाङ्गी। २ दवा, चक्र।

दाङ्गी (चि० पु०) १ चक्र। २ चक्रको शीत दाङ्
 चक्र चक्र।

दाङ्गीचक्र (चि० पु०) चक्र मनुच चक्रको दाङ्गी चक्रो
 चो। यह एक प्रकारको गानो है चक्रके शिवाय चक्रका
 चक्रको देती है।

दाङ्ग (म० पु०) दाङ्गिके चक्रममूलाय प्रमवतोति
 चक्र तत्प्राय। १ दवा, चक्र। २ दवा, चक्र।
 दाङ्गिके चक्र। ३ दवा, चक्र। ४ दवा, चक्र।
 दाङ्गिके चक्र। ५ दवा, चक्र। ६ दवा, चक्र।
 दाङ्गिके चक्र। ७ दवा, चक्र। ८ दवा, चक्र।
 दाङ्गिके चक्र। ९ दवा, चक्र। १० दवा, चक्र।

दाङ्गिक (म० पु०) १ चक्र-चक्रकोचक्र चक्र।
 २ दवा, चक्र। ३ दवा, चक्र।

दाङ्गिकोच (म० पु०) दाङ्गिके चक्र। दाङ्गिक।
 दाङ्गिक।

दाङ्गिकोच (म० पु०) दाङ्गिके चक्र। दाङ्गिक।
 दाङ्गिक।

दाङ्गिकोच (म० पु०) दाङ्गिके चक्र। दाङ्गिक।
 दाङ्गिक।

दादूराह (स० पु०) दादूराह-दादी का नाम । दादूराह । दादूराह (स० पु०) दादूराह-दादी का नाम । दादूराह पदो, पयोदा ।

दास (स० श्लो०) दासि दासि दासिनी शो दासककनी इत् (दास्य बवेति । वा श्रा० १८२) १ वेदमहाभन पद्यमेद, दती, हंशिया । इनका पर्याय—दासिनी और दासीक है । २ दास । ३ दासक, दाने का काम । ४ दासकनी, वह जो दास होता है ।

दासी (स० श्लो०) दासि-दासि । १ दासकनी, वह जो दास होती है । २ दास । ३ दासिया, दासी ।

दास्य (स० पु०) दासोति दास्य (दासि वा श्यु बिति । इत् ५।१०४) १ दास । २ दासकनी ।

दादा (दादा)—बन्धुप्रदेशी का क्रियावाक्य क्रिमिके पत्यमंत एव छोटा राज्य । इसमें २६ पाम लयते है । राज्यको धामदनी २१०००, ह० है क्रिमिके १०८८) ह० करोडा-के माककवाक्यको और १८८) ह० कनामपुके नवाकको करभक्ष्य देने पक्षि है । भूपरिमाण ११ बर्गमील और लोकसंख्या प्रायः दस हजार है ।

दाद (स० पु०) दाद भाषि-दाद । दास ।

दाद (चि श्लो०) एक प्रकारका चर्मरोग । रक्त रिको ।

दादगो (दा० श्लो०) १ बुवाई का दो जानकी रक्तम । २ बिघो कामके सिने पेशबी दो जानिको रक्तम ।

दादमर्दन (चि० पु०) चिन्मुष्टानक लघानिनि मिन्ने-बाना एक प्रकारका चर्मरोग । प्रवाद है, कि यह पेंक पमैरिखाके टापुपेके खाया गया है, इसीके इसे विखाकती चर्मरोग भी कहते हैं । इसके पक्षिको पौम कर लयानिनि दाद जाता रहती है ।

दादप (चि० पु०) १ एक प्रकारका चकता नाम । २ एक प्रकारका ताल, क्रिमिके दो पर्यमात्रके रहती है । इसमें शिवक एक पाकाल होता है ।

दादप (चि० श्लो०) दादको नाम, दादिया नाम ।

दादा (चि० पु०) १ पितामह पिताका पिता । २ बुढ़ा माई । ३ पादरक्षक गन्ध जो बड़े बूझके प्रति कहा जाता है ।

दादाकी शीघ्रदेव एक प्रसिद्ध दक्षिणी राज्याय । मकराह-नायक शाहजोनि पुनामें राजबानो ज्ञापन करके बर्हाका

शासनमार दादाकीपर सौंप दिया । ये बिपलक व्यापक, राजनीतिक्रमल और प्रजाप्रिय थे । इनके शासनके शुभके बोड़े की दिनोंमें राज्य लक्षितको चरम-सोमा तक पहुँच गया था । इसीनि प्रजाको मातगु वारो-वर बहुत कामा है । पुनाके निबटवर्ती कर्णकोको व्याजदि चि श्वक अमुपये गृह्य कर दिया, इस प्रकार पश्चिमि तथा पश्चिमिकी श्व मर्वाई को ।

कोरोबाई और लछे लछेके प्रसिद्ध पिताकोके रहनेके सिने एकोनि मानमहक नामक एक इहत् प्राबाई निर्माक बिबा बा ।

शाहजोनि दादाकीके ही लय पिताकोका पिता-भार सौंप दिया बा । इसीके गिवापुषके पिताको राज्याय मक, चिन्-बमाहपुगी, समरक्यक और राजनीतिक्रम को कर भारतमर्ममें प्रसिद्ध हो गये थे । शाहजोनि मरनेके बाद दादाकीने ही पिताकोके प्राय विष्टाराल्यका शासन-भार परंपर किया । पिताको दादाकीकी श्व ल्यातिर करते थे । १६४० ई०में दादाको इम लोकटे चल बसे । मरने समय ये पिताकोको जमनो कयामूमि की काशीमता, मो-बाइकको रचा और चिन्मुष्टमकी जयपताका लयनिका लयदेम दे गये थे । पिताकी काकोमक गृहके लयदेश मूले नहीं थे । पिताकी देको । दादामाह—एक बिख्यात ज्योतिर्विद् । इनके पिताका नाम बा नवावरमाचन । इसीने बिदवायकी नामक ल्य पिताकाको टोका तथा गुरीयवर्णकी रचना को है ।

दादामाह नौरको—बापेकी रत्नापार देको ।

दादी (चि० श्लो०) पिताकी माता ।

दादो (दा० पु०) व्यावका मार्ग, परिचायी ।

दादी-१ पन्नाककी चिन् बिनामन और राज्यको लक्षिकीय लक्षिकीय । यह पचा० २८ २४ से २८ ४८ ल० और डिगा० ७१ ११ से ७५ १० पू०के मज पचन्वित है । भूपरिमाण ३८१ बर्गमील और जनसंख्या प्रायः ८२६५८ है । इसके दक्षिण और पश्चिममें पुनामराज्य, नामाको बाकल, बिनामन पट्टिपक्षिको मङ्गलगाक निनामन और बीहाकप्राक्य पश्चिममें बिमार जिता और पूर्वमें रोहतक है । यहाँका जनबासु दस्य और मरम है । इसमें दादो, लखाना और बौद नामके मोम शहर

तथा १८१ ग्राम लगते हैं। राजसूत दो लाख रुपयेसे अधिकका है।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २८° ३५' ८०" और देशा० ७६° २०' पू० दिक्कोसे ८७ मोल और जिल्हाशहरसे ६० मोल दक्षिणमें पडता है। जनसंख्या लगभग ७००८ है। यह बहुत पुराना शहर प्रतीत होता है, लेकिन इसका प्राचीन इतिहास कुछ भी मालूम नहीं। १८५७ ई०में यह शहर भ्रष्टारके नवाबके आत्मोप नवाब वहादुरजङ्गसे प्राप्त होता था। पोछे कई कारणोंसे हटिगवर्गमें रहने उनके हाथसे यह स्थान छीन लिया। बाद १८५७ ई०के गटरमें जिन्दके राजाने भ्रष्टारकोंको काफी सहायता पहुँचाई थी, इस कारण उन्हें पुरस्कारस्वरूप यह स्थान दिया गया।

दादुपत्नी—एक विख्यात वैष्णवसम्प्रदाय। दादुपत्नियोंकी रमानन्दोकी एक गाथा कह सकते हैं। टाटु इस सम्प्रदायके प्रवक्तृक थे इसीसे इसका नाम दादुपत्नी हुआ है। प्रवाद है, कि टाटु एक कवीरपत्नीके शिष्य थे, क्योंकि कवीरपत्नियोंकी शुरुप्रणालीमें इनका नाम बड़े स्थानमें आया है, जैसे—१ कवीर, २ कमान, ३ यमान, ४ विमल, ५ बुद्धम और ६ दादु। रामका नाम जपना जो इन वैष्णवोंको एकमात्र उपासना है। ये रामकी अपना उपास्य देवता मानते हैं सही, किन्तु वेदात्मसतसिद्ध परब्रह्मकी नाई उमका निर्गुणस्वरूप वर्धन करते हैं और उनका मन्दिर तथा प्रतिमुक्ति स्थापित करना अनुचित समझते हैं।

दादु अहमदाबादके एक धुनिया थे। १२ वर्षको अवस्थानमें ही ये अपना नगर परित्याग कर अजमेरके अन्तर्गत शम्भर नगरमें रहने लगे थे। वहाँसे ये कल्याणपुरको गये। अन्तमें इन्होंने ३७ वर्षकी अवस्थामें जयपुरसे बीस कोस पर नरैन नामक स्थानमें निवास किया। कहते हैं, कि यहाँ इन्होंने आकाशवाणी हुई कि, 'तुम परमार्थ साधनमें लग जाओ।' इस वाक्यकी सुन कर ये नरैनमें ५ कोस दूर बडरणा पर्वत पर चले गये और वहाँ कुछ दिनों तक रह कर पोछे सदाके लिये गायब हो गये, कोई चिह्न वचन न रहा। इस पर दादुपत्नी

लोग कहते हैं, कि वे परमेश्वरमें लीन हो गये हैं। दादुपत्नीमें लिखा है, कि एकवरके समय टाटु टरबेरी प्रयात सटामीन हो गये थे और पट्टेसे हुए भाइयोंमें गिने जाते थे। दादुपत्नी न तो निम्नक समाते और न माला हो पड़ते हैं केवल जपमाना मात्र रखते हैं और मस्तक पर एक प्रकारकी टोपी पहनते हैं। यह टोपी चौकीर प्रयत्ना गोल होती है और रङ्ग मफेट रहता है। पोछेमें एक भस्मा लटका रहता है। ये लोग स्वयं अपने हाथसे टोपी बनाते हैं।

दादुपत्नी तीम त्रिपियोंमें विभक्त है—विरक्त, नागा और विस्तरधारी। जो विषय रागगुण्य हो कर परमार्थ साधनमें समय बिताते हैं, वे लोग विरक्त कहलाते हैं। इन लोगोंके शरीर पर केवल एक वस्त्र और हाथमें कमंडलु रहता है; मस्तक पर कोई आवरण नहीं रहता।

नागा लोग अन्नधारो होते हैं, रुपये वैसे मिल जाने पर युद्ध करनेको भी तैयार हो जाते हैं। वे सब युद्ध कालमें बड़े दक्ष होते हैं। बहुतसे राजा नागा सेना अपने यहाँ रखते हैं।

विस्तरधारी लोग साधारण मनुष्योंकी तरह नाना प्रकारके व्यवसाय करते हैं। वे तोन गाथाएँ फिरसे विभक्त हो कर कई एक प्रगाथाओंमें बँट गई हैं जिनमेंसे ५२ प्रगाथा प्रधान हैं। इन ५२ प्रगाथाओंमें परम्पर क्या फर्क है, उनका जानना बहुत कठिन है। दादुपत्नी लोग उपाकानमें ग्रव दाह करते हैं, किन्तु इनमेंसे कुछ ऐसे भी धर्मव्रतो हैं जो समझते हैं कि शवदाह करनेमें किनने कोई मकोड़ेके माण नष्ट होंगे, इस कारण वे मरते समय अपना शव शरीर पशुपत्तियोंकी खुना टेनेके लिए प्रान्तर वा कान्तरमें फेंक देनेको कह जाते हैं। दादुपत्नीमें भी लिखा है, कि किसीके स्वर्गवास होने पर दादुपत्नी शव देहकी पशुको पीठ पर रख देते और यह कह कर प्रान्तरमें भेज देते हैं कि इससे हिंस्रक और दूभरे दूभरे जन्तुओंका सन्तुष्ट होना हो सबसे श्रेय है। अजमेर और मारवाड़ देशमें दादुपत्नी अधिक संख्यामें रहते हैं। नरैन ग्राममें इस सम्प्रदायका एक प्रधान देवस्थान विद्यमान है। वहाँ दादुको शय्या और दादुपत्नियोंके प्रामाणिक शास्त्र भी रखे हुए हैं। विश्वित

विधानके मांछे इन दोनोंको पूजा होती है। नरनेके नाम जो एक बहादुर है उस पर खोटा कर बना हुआ है, बहुत है, कि हमो आनने दादु पल्लवान को मरो है। वहां प्रति वर्ष पान्थुनको एक पचोब प्रतिपदन मेकर पोर्माह तक एक बड़ा भारो मेला लगता है। हम मन्दावाका विचारके हिन्दो भाषाके कई प्रसिद्धि लिखा हुआ है। उनके समस्य बने कई जगह खबोर-प विपक्षि पनेक बचन छहूत है।

“दादुके विद्यामहा पदु” नामक एक पद्य है जिसकी कुछ कविता मोचे देते हैं।

“दादु कहते दावग ने कुछ रचिया राम।
कैसे बने मरे दूरी होइय काम।”

शाम जो कहती है, बह, पचय्य हो जाओगा। पता: तुम क्यों मर्ये? योबने प्राय ज्ञान करती हो? यह अच्यत हूयचोय काम है।

“दादु बने के सेफिया हरेदी रा को दू बरे।
बरेक करारक एक दू थोरे न देका हुरे ह
मोह हसार। मादरके के बरका इति विचार।”

दादु कहते हैं, कि मैं जमदीगर। तुमो जो कुछ किया है बहो रद मया है पोर को मूबरेगा, बहो जोगा। मूकर्ता है मूहो कारवित्त है, दूसरा कोई नहीं। जिन्होंने मारी मनुष्योको सुन्दर बना कर रखा है मैं ही हमारो ईश्वर है। जोबन पोर मरबका विचार लनीके पाक है, पता: लनीका मदा मरबक करो।

दादुर (चि० पु०) मोंदक, धंग।

दादु (चि० पु०) १ दादार्क प्रति प्यारका शब्द। २ माई पादिके समय एक साधारण लोचन। ३ एक मातृका नाम इनके नाम पर एक वंश चलता है। कहा है, कि दादु पदमदावारके हुनिया है। जब इनको लमर १२ वर्षको हो, तमो ये पचना मगर होइ कर पचमों, कन्धाचपुर पादि ज्वालामें कुछ दिनों तक रहे है। योहि १६ वय की पचमपामें में जयपुरमें २० कोल दूर नरेन नामक स्थानमें जा कर रहे। यहां ये आशामवासीके मनुष्य पर कई दिनों तक रुक है। खबोरपिपोत्रे मविच है कि दादु खबोरप हो है। हमोने मो खबोरके लगान हो राम नामके कर्मि निमुंय परजइको कपालना बलाई

है। पचबरेके समयमें दादुका मूत्र धादुर होता था। इनको बनाई दूरे पनेक कविताए मिलती हैं जिनमेंसे एक मोचे देते हैं—

“मो बक ने बदि माउ बते भिन कदि भिने लने करे मादु।
मौर धीरे निहार विनो लव कानि डेरि मृगारके मादु।
एनमया प्रयाव विनो दुनि हृदि बसो यह मार विगदु।
ऐसो कया मू बती इन बार ह रतेके बर है उर दादु ह”

दादु—हमारेके मरकाना जितिका एक मातृक। यह पचा० २६ ३५ से २७ ३ व पौर देया० ६० ३ से ६८ ३ पु०के मध्य पचरिगत है। मूरिमाच २८५ वम मीन पोर लोचन मया सममग ३२१२८ है। इसमें दादु नामका एक महर पोर ३१ घाम लगती है। पाक १६ साल बचपे को है। मातृकके उत्तर सिन्धु नदी बहती है। मीन पोर पना यहाँका प्रधान उत्पादक है।

दादुदयाक (चि० पु०) दादु रेको।

दादुपयो (चि० पु०) दादु नामक साइका पनुपायो। दादुपयोके तीन मोंद हैं—विमर, मागा पोर विमर-धारी। विमर जोग विरके अलपाम पोर कोपोन रहती है माया लोचकहाके कोमि पोर राजावीको धेमासि भरतो होती है। दादुपयो देवी।

दाबिक (म० वि०) दक्षिण दक्का वा मरुतत दक्का चरति दक्षिणक। (पट्टि। पा ३।३।८) १ दक्षिमें मरुतत दक्ष, दक्षमें मोका हुआ पदाक। २ दक्काचारी। ३ दक्षि दारा य कहत। ४ दक्षिमें लपमि। (को०) १ हतपोयबमोंद। हमको मरुत प्रचामो—विट मरबक इनाबको, नैन्बक, बिजब विबट, मोरक (मोरा), विट्ट (वीन) लोचकेन यवचार आम्नातक पोर पचबरेतम रन मब दूसाका मतामको मीरुंय समस्य चोगुन दबीके माक वाको पाक करते हैं। हमो चोका नाम दाबिक ही है। इसके विषय बरनेमें मुम्म, जोका पोर मूल पादि रोग जामि रहती है।

दाबिक (क० वि०) दक्षिण मन्मन्वोय।

दाबिय (म० को०) दक्षिणय विचार पनुदापादित्वात् पम। १ कपिलका विचार, कौयका विचार। (को०) मय परिमाण पम। २ कपिलपरिमाण, कौयके बराबर।

दाबोचि (चि० पु०) दबोचिने क मया मनुष्य।

दाहवि (म० को०) दक्षिण सुद सुक ततो दम्। चरिमे, इन्को, धारतो।

दायुधि (म० वि०) दृष्ट्युत्कृततो इन् । १ धर्मक, दमन करने वाला, टवाने वाला । २ अत्यन्त धर्मक । दान (म० लो०) दा दाने दो अक्षरान्तरने टैप शोधने भावाटो व्युत् । १ गजमट, हाथोका मट । २ पालन । ३ छेदन । ४, ५ वस्तु जो दानमें दी जाय । ५ कर, महसूल । ६ राज-नोतिके चार उपायोंमेंसे एक । ७ शुद्धि । ८ वृक्षकोटर कोटज मधु, वह मधु जो पेड़के कोटरके कोठोंमें बनता हो । इसका गुण—रस, टोपन, कफ, छटि और मेड-नाशक है । ९ देवब्राह्मणादि मन्त्रदानक द्रव्यमोचन । यह व्यापार जिसमें किसी वस्तु परसे अपना स्वत्व दूर हो गया हो । इसका पर्याय—त्याग, विहायित, उत्सर्जन, विसर्जन, वित्यापन, वितरण, स्पर्शन, प्रतिपादन, प्रादंशन, निर्वपण, अपवर्जन, अंशति, दाय, प्रदान, ददन, दत्ति, उत्सर्ग, अतिमर्जन, स्मरण, विसर्ग, क्षणन और प्रदंशन है । दानका लक्षण—

“अर्पानामुदिते पात्रे प्रदद्या प्रतिगदनं ।

दानमित्यभिनिर्दिष्टं ध्यात्वादानं तस्य ददते ॥”

(शुद्धितत्व)

सत्पात्र देख कर उन्हें अर्थापूर्वक समस्त द्रव्य अर्पण करनेका नाम दान है । दानके ६ अङ्ग हैं, यथा—
“दाता प्रतिप्रदीना च प्रसादेश्च च धर्मयुक्त ।

देजहारौ च दानानामाङ्गान्येतानि पद्धिदुः ॥” (शुद्धित०)

दाता, प्रतिग्रहोता, यदादेय, धर्मयुक्त, देय और काल ये जो ६ दानके अङ्ग कहे गये हैं । जब दान करना हो, तब मन हो मन पात्रको स्थिर कर अर्थात् असुक्त व्यक्तिको दान देगे ऐसा नियम करके पृथ्वी पर जल गिरा देना चाहिये, पोछे दानवस्तु उन्हें दे देने चाहिये । इस तरहका दान सबसे अष्ट है, सागरका अन्त भले ही मिल जाय, पर इस प्रकारके दानफलका अन्त नहीं मिलता है ।

परोक्षकल्पित दान—यदि वह पात्र न मिले, तो उनके गोत्रजोंको, यदि गोत्रज भो न मिले तो वस्तुको, वस्तुके प्रभावमें स्वजातिको, यदि स्वजाति भो न मिले तो उस दानवस्तुको जलमें फेंक देनेको लिखा है ।

(शुद्धित०)

दान करनेके समय स्नान कर विशुद्ध स्थानको गोबर-से सौप ले, बाद उस स्थान पर बैठ कर पहली दान दे और पोछे दानके लिये दक्षिणा ।

प्रयोजनको प्रपेक्षा न कर अर्थात् किमो प्रकारकी उपकारकी प्राणा न रखते हुए केवल बुद्धिमें प्रयोदित हो कर सत्पात्रको जो दान दिया जाता है उसे धर्म दान कहते हैं । (शुद्धित०)

यह दान अतोव पुण्यदायक है और सभी दानोंमें श्रेष्ठ है । जिसका दान देना हो उसके समीप जा कर दान देनेमें अनन्त गुण और बुद्धि कर दान देनेमें नहस्य गुण प्राप्त होता है । प्रार्थना करनेके बाद दान देनेमें अहं फल मिलता है । जो किसीको प्राणा दे कर दान नहीं देते, वे ब्रह्मदत्ताङ्ग पातक होते हैं । जो दान दे कर पीछे तापग्रन्थ हो, वे भी निरयगामी होते हैं ।

उक्त विधानके अनुसार जो दान देते और लेते हैं, वे दोनों ही स्वर्गवासी और उनके विपरीत होनेमें नरकवासी होते हैं । प्रकृतिके अनुसार दानके तीन भेद हैं, सात्विक, राजसिक और तामसिक ।

उपकारक व्यक्तिके उपकारका स्थान न कर केवल दातृके स्थानमें ही उपयुक्त देण, काल और पात्रके अनुसार दान दिया जाता है, उसे सात्विक दान, प्रत्युपकारको इच्छासे अथवा फलप्राप्तको इच्छामें जो दान दिया जाता है, उसे राजस दान और देणकाल पात्रादिका विचार किये बिना जो किसी देणमें, किसी कालमें तथा किमो पात्रको असत्कार एवं अवज्ञाके साथ दान दिया जाता है, उसे तामस दान करते हैं । जिनको प्रकृति सात्विक भावसे गठित है, वे सात्विक दान करते हैं, उनके सामने राजस और तामस दान हीय है । यह दान नित्य नैमित्तिकादिके भेदसे चार प्रकारका है,—नित्य, नैमित्तिक, काम्य और विमल । इन चारोंमें चतुर्थेदान सबसे अष्ट है । किसी उपकारको प्रत्यागा न कर प्रतिदिन ब्राह्मणादि सत्पात्रको जो दान दिया जाता है, उसे नित्यदान, जो दान पापादिको शान्तिके लिये, अर्थात् किसी प्रकारके उपकारके लिये सत्पात्रको दिया जाता है, उसे नैमित्तिक दान, सन्तान, ऐश्वर्य और स्वर्गादिको कामनासे जो दान दिया जाता है, उसे काम्यदान और ईश्वरको प्रीतिके लिये ब्रह्मविद् ब्राह्मणोंको जो दान दिया जाता है, उसे विमल दान कहते हैं । यही दान सबसे अष्ट है । (शुद्धित०)

अधिष्ठात्री देवता वरुण हैं। सुवर्ण दानके देवता अग्नि, गन्धदानके प्रजापति, पुस्तकादि विद्यादानके सरस्वती, हस्त कृपाजिन, शय्या, रथ, आसन और पादुका दानके देवता प्रजापति, सब प्रकारके व्रतोपकरणके देवता विष्णु, मसुद्रजात रत्नादि देवता अग्नि हैं, इत्यादि। जिस किसो द्रव्यका दान करना हो, उस द्रव्यके अधिष्ठात्री देवताका नामोद्देश करके उत्सर्ग और दान करना चाहिये। दान करते समय दाता जिसे दान दे उसका नाम गोत्र ले कर तथा द्रव्यके अधिष्ठात्री देवताके नामसे उत्सर्ग करके दान करे। (विष्णुनवोत्तर)

दानके पात्र-जिनके चान्ति, दया, सतय, शील, तपस्या और शास्त्रज्ञान आदि हैं, वे ही प्रकृत दानके पात्र हैं।

हरएकका मुख्य कर्त्तव्य है, कि वह हमेशा गो, तिल, भू, हिरण्य आदि पात्रविशेषको दान करे। पुण्य कारो मनुष्य आर्त्तियोंको अन्नदान कुटुम्बोंको गोदान, यात्रिकोंको सुवर्ण, अनपत्योंको पुत्र, कन्या, स्त्रियोंको युक्षोपकरण द्रव्य, वैश्यको पशुपयोगी द्रव्य और शूद्रको गिस्तीपयोगी द्रव्य दान करे। जो वस्तु जिस वर्षकी उपयोगी है, वही वस्तु उसे दान करनेसे विशेष फल प्राप्त होता है। ब्रह्मचारियोंको टण्डु, कृपाजिन और कम गडलु दान करनेसे अधिक पुण्य लिखा है। इसी प्रकार गृहस्थकी वस्त्र, शय्या, आसन, चान्य, गृह और गृह-परिच्छेद, वानप्रस्थोंको नोवार, शाक, फल और दुग्ध तथा स्त्रियोंको गन्ध, माङ्गल्य द्रव्य, ताम्बून और अलङ्कार वस्त्रादि दान देनेसे विशेष फल है। लेकिन स्मरण रहें, कि स्त्रियोंको यदि दान देना हो, तो उसके स्वामिके प्रत्यक्षमें दान दे, न कि परोक्षमें। वानकोंकी क्रोडनक अर्थात् काठके खिलौने दान करनेसे विशेष पुण्य होता है। वे दोनों लोकमें पुण्यवान् होते हैं; जो दुर्मिक्षमें अन्न और सुमिक्षमें हंस तथा वस्त्र दान करते हैं। (अग्निपुराण)

जो धन अन्वान्य कार्य द्वारा प्राप्त हुआ हो; उसे दान करनेमें कोई फल नहीं है।

दानाह कालमें तिथिकाल—कार्तिक मासकी प्रतिपदा तिथिमें जो दान किया जाता है, वह अतीव पुण्यजनक माना गया है। आश्विन मासकी द्वितीया तिथिका दान भी विशेष प्रशस्त है। वैशाख मासके

शुक्लपक्षकी तृतीया तिथिमें जो दान किया जाता है उसे भी पुण्यजनक माना है। भाद्र श्रावण मासको शुक्ल चतुर्थीमें यदि मङ्गलवार पड़े, तो उस दिनका नाम सुवदा है और उस दिन दान करनेसे विशेष पुण्य मिलता है। अग्रहायण और यावण मासको शुक्ल-पक्षमें दान करनेसे अथव पुण्य मिलता है। अग्रहायण और यावण मासको पक्षोंमें एवं शुक्लपक्षकी सप्तमीमें यदि उस दिन रविवार पड़े दान करनेसे अन्नयफल प्राप्त होता है। अग्रहायणकी शुक्ल सप्तमी, पोषमासकी शुक्ल-दशमी, आश्विन मासकी शुक्लानवमी, ज्यैष्ठमासकी शुक्ल-दशमी तथा शुक्लपक्षकी पुष्यानक्षत्रयुक्त एकादशी तिथि, भाद्रमासकी अशुष्मा नक्षत्र युक्त शुक्ल द्वादशी, आश्विन मासकी द्वादशी, पुष्यानक्षत्रयुक्त फाल्गुन मासकी द्वादशी, चैत्रमासकी त्रयोदशी, चैत्रमास और यावणको शुक्ल चतुर्दशी, वैशाख मास और कार्तिक मासको पूर्णिमा ये सब तिथियां दानके लिए प्रशस्त कही गई हैं। व्यतिपात, युगादि, अमावस्या, अयमसंक्रान्ति, चन्द्र और सूर्य ग्रहण आदि पुण्यकालमें दान करना चाहिये। दानका निषिद्ध काल-शामकी तथा रातकी दान नहीं करना चाहिये, जो कोई रातको दान करता है उसे कोई फल नहीं मिलता। (स्कन्दपुराण)

महागुरुके मरने पर पहले वर्ष दान नहीं करना चाहिये। चन्द्रघर्षादि ग्रहणमें भी रातको दान कर सकते हैं। कन्यादान रात हीमें प्रशस्त है। (हृदय वशिष्ठ)

ग्रहण, उदाह, यात्रादि-प्रसव ये सब नैमित्तिक दान हैं। रात्रिमें भी यह दान निषिद्ध नहीं है। अष्टहास, गङ्गासागरसङ्गम, कुरुक्षेत्र, गया, गङ्गा, वाराणसी आदि तीर्थ समूहमें दान करनेसे अन्नय फल प्राप्त होता है। नदीके किनारे, गोष्ठ, ब्राह्मणके घर इत्यादि पुण्यस्थलमें जाकर दान करना पुण्यप्रद है। दान करनेके समय सबसे पहले अर्वाकी विशेष जरूरत है। अर्वाहित हो कर यदि शाक भी सुड़ी भर दान किया जाय, तो वह भी अनन्तगुण फलदायी होता है। फिर अर्वाशून्य हो कर यदि सर्वस्व दान भी क्यों न कर दे, तो भी कोई फल नहीं। इसीसे अर्वाकी दानका एक अङ्ग माना है। केवल दान ही नहीं बरं, अर्वाके बिना सभी काम निष्फल

होते हैं। दानके समय दाता और प्रतिपक्षीता दोनों की खानादि कर दान हो जायें, पक्षि-नाता दान करे और पक्षीता उस दानको ग्रहण करे। (ब्रह्मसूत्र)

दानशक्तमें 'दो' शब्द उच्चारण कर दान करना चाहिये। पक्षीताको भी प्रथम उच्चारण कर उसे ग्रहण करना चाहिये। (भाष्यप्रश्न)

प्रथम जो एक मात्र अगत्या शीघ्र और वेदका पादि है। इसी कारण प्रथम उच्चारण कर खान दानादि ग्रहण करनीकी शिक्षा है।

प्रत्युक्त को श्राद्धको दान देता है वह नरक भोगी होता तथा जो श्राद्ध इस प्रकारका दान ग्रहण करता है उसे भी नरक सुगमता पड़ता है। (शुक्लध्वज)

अपमान करके जो दान देते हैं उन को इस प्रकार का दान नोते हैं 'दोनी' जो बहुत दिन तक निरपगामो होते हैं। किसी कार्यको प्रत्याया करके जो दान करते हैं और जो उसे ग्रहण करते हैं, दोनों को नरककण्ड सुगमता पड़ता है।

चाहे जिस किसी वस्तुका दान करना चाहे उसे मन्त्रपूर्वक दान करे परमेश्वर दान लिप्कन होता है।

यदि महापातकजन शोक हो अथवा किसी कर्मिण पोड़ा के घटा हो, तो उस समय निम्न लिखित मन्त्र विधानादु शर दान करके शिक्षा करने चाहिये। रोगके निम्न दानका विषय शरीरतन्त्रिकानमें इस प्रकार लिखा है—

जो भूमि या सुवर्ण दान कर देवताको या पूजन पूर्वक रोमका प्रतिहार करे। कुछ और पाण्डुरोगको शान्तिके लिए गो, भूमि या हिरण्य दान करना चाहिये। मेष हस्त, म्नास मन्वदर, चर्म और जामरोममें सुवर्ण तथा पक्ष दान अरु रोगमें बद्धजप, मीति, पक्ष या मांस दान; शुष्म और पन्थिमान्दरोगमें कन्यादान; शीघ्र और धम्रौ रोगमें लवण दान करना चाहिये। मूलरोग में मूलत वन दान करनेसे शारीर्य लाभ होता है। रक्त पित्त रोगमें पूत और मूत्र दान; पक्षरोगमें भी, हिरण्य, भूमि और पक्षदान; कुम्भी और म्नासदन्तरोममें सुवर्ण दान, मित्र और कुङ्कुममें शीघ्रदान; मिथन रोगमें जपु-दान; बद्धमूर्ति शीघ्रदान; मंत्ररोगमें हृत दान; कामि-रोगमें सुमन्त्र दान, पाण्डुरोगमें तैल दान शिष्टक

रोगमें रस दान और पित्तरोगमें बद्धदान करके रोमकी शिक्षा करनेकी बतलाया है। इस प्रकार दान करके शिक्षा करनेसे रोग बहुत श्रद्ध मान्य हो जाता है।

(रघुपति शिरीष रत्न १७०)

ग्रहणच गोचरमें यदि अक्ष भणं या दग्धाके विषय हों तो दानादि द्वारा ग्रहण होता है।

रविग्रहका दान—माषिक (समानमें मूत्र), मोक्ष, मन्त्र भेद, कुम्भारक्षित बण, शुद्ध अर्घ्य, तास्य रक्त चन्दन रत्नचक्र और पातपतपत्र, दक्षिणादि साध दान करनेसे रविग्रह जमी कुरा फल नहीं देता है।

चन्द्रका दान—रत्न पात्रमें तम्र, कर्पूर, सुन्ना, यज्ञचक्र, रोष्य, हुनोपसुन्न हय, हृतपूर्व कुम्भ और मन्त्र है।

मङ्गलका दान—प्रधान, मोक्ष, मन्त्र, लरद, पक्ष्य वन हय, शुद्ध, अर्घ्य रत्नचक्र अरु रोग शुभ्य और तास्य मङ्गलघटके लिए करना होता है।

सुखका दान—मोक्षचक्र, अर्घ्य, शीघ्र, लरद, पीत वर्ण पुष्प, श्राधा और इक्षितक है।

इक्षितिका दान—शीरी, दाक्षरिद्रा, धम्र, पीत-शान्य पीतचक्र, रक्तपुष्प लवण और लवण है।

शुक्रका दान—विपत्त पक्ष्य योतास्य, शीघ्र, बण रोष्य, अर्घ्य, सुमन्त्र और तम्र, ल है।

शनिका दान—करद, तैल, शीतलवण, अक्षितिक, पीतमन्त्र, मन्त्रिक, लोह और लवण दक्षिणा है।

राहुका दान—मोषेद, रक्त पक्ष्य लोम बण, अर्घ्य, लक्ष्मिण और लवण दक्षिणा है।

शुक्रका दान—मै दुर्घमन्त्र रस, अगमद तिण, तिण-तैल अक्षय्य और पक्ष लवण दक्षिणाके साथ दान करना होता है। पक्ष चक्रश्रीय जमी दान उसी मन्त्रके तथा बणके साथ लवण करके दान करना चाहिये। दानश्रद्धादि पक्षाचार्यको दि पन्थका फल नहीं मिलता है। यदि कोई श्राद्धक खान कर अथवा विना खाने खोमवध उस दानकी पक्ष्य करे, तो वह इस लोचमें दक्षिण होता है और मरनेके बाद अष्टाश्रीनिमि लवण होता है। (उद्योति)

पक्ष मन्त्रश्रीय किनी प्रकारका दान श्राधाचार्यके

सिवा और किसी ब्राह्मणको न लेना चाहिये।

सभी धर्मशास्त्रों और पुराणोंमें दानका माहात्म्य वर्णित है। इनके सिवा कितने ग्रन्थकारोंने दानके विषयमें कितने ग्रन्थ संस्कृतभाषामें रचे हैं। उनमेंसे कुछ ये हैं—कमलाकररचित दानकमलाकर, रघुनन्दनकृत दान लपतक, गोविन्दानन्द रचित दानकौमुदो, अनन्तदेव रचित दानकौस्तुभ, गौतम, जयराम, दिवाकर और वृन्दावनकी दानचन्द्रिका, दिवाकरका दानदिनकर, भवदेवभट्टको दानधर्मप्रक्रिया, नरराज और रत्नाकर ठक्करकी दानपञ्चिका, रामदत्तको दानपद्धति, नीलकण्ठको दानपरिभाषा और दानमयूख, श्रीधरमिश्रको दानपरोक्षा, अनन्तभट्टका दानपारिजात, मित्रमिश्रका दानप्रकाश, दयारामका दानप्रदोष, कुवेरानन्दका दान भागवत, ब्रजराजकी दानमञ्जरी, चण्डेश्वर और राजभट्टका दानरत्नाकर, नरराज और विद्यापतिकी दानवाक्यावली, दानविवेक, मदनसिंहदेवका दानविवेकीद्योत, दिवाकरकी दानसंक्षेपचन्द्रिका, अनन्तभट्ट, कामदेव तथा राजा बल्लालसेनका दानसागर, इनके सिवा हेमाद्रिका दानखण्ड और अपराकका दानापरक है।

दानक (सं० लो०) कुत्सितं दानं दानकम्। कुत्सित दान, बुरा दान।

दानकर्म (सं० लो०) दानमेव कर्म। दानक्रिया, देनेका काम। इसका पर्याय—दाति, दाशति, दासति, राति, रासति, घृणात्तं, घृणाति, शिचति, तुञ्जति और महत है।

दानकाम (सं० त्रि०) दानं कामयते कामस्वार्थे निष्पन्नं। दानशौस्त, दान देनेका काम।

दानकुल्या (सं० स्त्री०) हस्तीका मद्जल, हाथीका मद्।

दानकैलो—श्रीरूपगोस्वामोका बनाया हुआ भाणिका-लक्षणाक्रान्त दृश्यकाव्य।

दानगढ़—इस स्थानमें शोकप्लाने दानलोला की थी।

दानघाटी—गोधर्दनस्थित शोकप्लाने लोलास्थान।

दानच्युत (सं० पुं० स्त्री०) गोत्रप्रवर ऋषिभेद।

दानधर्म (सं० पुं०) दानाख्यो धर्मः दानरूपोधर्मो वा मध्यलो०। दानका धर्म, दान-पुण्य।

दाननिवर्तनकुण्ड—गोविन्दकुण्डके निकट अवस्थित एक कुण्ड।

दानपति (सं० पुं०) दाने पतिः श्रेष्ठः ७-तत्। १ सतत दाता, सदा दान देनेवाला। २ अक्रूरका नामान्तर, शतधन्वनि स्थमन्तक मणिकी सुराकर इन्हींके पास रखा था। मणिके प्रभावसे ये प्रतिदिन दान दिया करते थे, इसी कारण इनका नाम दानपति हुआ है। (भागवत) ३ दैत्यभेद, एक दैत्यका नाम।

दानपत्र (सं० स्त्री०) दानस्य पत्रं। त्यागपत्र, वच लेख या पत्र जिसके द्वारा कोई सम्पत्ति किसीको प्रदान की जाय। पूर्व समयमें दानपत्र ताम्रपत्र आदि पर खोदे जाते थे। बहुतसे राजाशोकें दिये हुए दानपत्र ऐसे हैं जिनसे अनेक ऐतिहासिक बातोंका पता लगता है।

दानपद्धति (सं० स्त्री०) दानस्य पद्धतिः। दान-विषयक पद्धति, दानकी प्रणाली वा नियम।

दानपात्र (सं० लो०) दानस्य पात्रं। दानयोग्य ब्राह्मण-भेद, दान पानेके उपयुक्त वाक्ति।

दानप्रतिभाष्य (सं० लो०) ऋण परिशोध करनेके लिये जामिन।

दानफल (सं० लो०) दानस्य फलं ६-तत्। दानका फल, दानके लिये धर्म सहाय।

दानफलका विषयमें अग्निपुराणमें इस प्रकार लिखा है—जो दाता ब्राह्मणोंके समोप जा कर भक्तिपूर्वक उन्हें दान देते हैं वे तीन अवस्थामें अन्नय फल प्राप्ति करते हैं। भय वा क्रोधपूर्वक दान देनेसे गर्भावस्थामें तथा ईर्ष्या और क्रुद्ध हो कर दम्भ तथा अर्थके लिये द्विजातियोंको दान देनेसे वायकात्ममें इसका फल प्राप्त होता है।

जो वैश्य और वेदविहीन सभ्यादि-उपासना वर्जित ब्राह्मणोंको दान देते हैं, वे षड्कालमें इसका फल पाते हैं।

चार प्रकारके जन्म और सोलह प्रकारके दान निष्फल हैं—अपुत्र वाक्ति, बक धार्मिक, परान्नभोजी और जो सर्वदा मनुष्योंको कष्ट देते रहते हैं इन्हीं चार प्रकारके मनुष्यका जन्म निष्फल है। १ देवपितृविहीन, २ ईश्वरके प्रति दोषारीपों, ३ दत्तानुकीर्तन (दान दे कर बोलना),

४ वेद, ५ अग्नि और इन्द्रायामी, ६ पन्थाव दाता अर्थात् ब्रह्म दान, ७ ब्रह्मदातो ८ विद्यादातो गुरु, ८ और, ९ पतिव्रत, १० ब्रह्म ११ जो मन्त्र दाता ब्राह्मणों के प्रति देव रक्षता को, १२ याचक, १३ इयमौपति, १४ परिचारक, १५ अन्ध और १६ विद्यादाताओं को दान देना यही सोनव प्रचारके दान निष्पन्न हैं।

दानमौला (स० श्लो०) १ कृष्णको एक भीमा । २ सुमं कर्मोने प्वाभिलोमि मोरस बं चमिता कर बल्लुन क्रिया सा । ३ एक पुत्रक चिममं त्रीकण्यको वम मोनाका नचंन क्षिया गया है ।

दानव (स० पु०) दनोरपत्यं दनु पत्न । (दन्वापत्य । ग ३।१।१२) दनुका अत्रक कर्मपदे में पुत्र त्री दनु नाम को दनोके उत्पन्न हुए, असुर, राक्षस ।

दनुमि पमिपुत मोमको दान कर मायावी राक्षसोली नमो माया गह कर दी थी । मायवतमें दनुके ६१ पुत्र मिलाने गये हैं । त्रिमर्षि हिमूहा शम्बर, परिष्ट, इवपीव, विनावसु पयोमुख गहृगिरा, अर्मातु कपिल, अरुण पुनोना उपपर्वा एकचक्र, तापन, बृम्भेय विष्णुपाद, विप्रचिति और दुर्ग्रय यही १८ प्रधान हैं ।

महाभारतके धनुषार दण्डको अग्या दनुने विद्यात बालोम पुत्र उत्पन्न हुए थे, विमर्षि विप्रचिति राजा हुए थे । इनके नाम ये हैं,—शम्बर, मनुचि, पुमीमा, पमि मोमा, क्षीमी, दुर्ग्रय, अर्मागिरा, अर्माशिरा, भीर्यवान्, अर्मागह, नमनसूरा, शैतवान्, कितुमान्, अर्मातु, अर्मा पम्भयति, इयववा, अत्रक, अर्मापीव, अर्मा, तुनुपुष्ट, अर्मापाद अर्माक, विष्णुपाद मजोदर, निचन्द्र, निकुण्ड, कुपट, अर्मा, शरम्, यमन, सुर्व और अन्द्र । दनुव यमि अत्र होमिने कारक ये लोग दानव कहलाये । दानवोंमें जो सुर्व और अन्द्र हुए उनके देवताओंके मित्र ममाभला चाँदिके । (भारत १।६४ अ०)

मनुचि रित्तमं निष्ठा है, कि दानव मित्तोंके उत्पन्न हुए हैं । (शु १।२०१)

मरौचि पाटि अयिपीके पितर उत्पन्न हुए थे । विर पित्रयकोने देव दानव और देवताओंके कराकर अयात् वानुपूर्विके अमरे उत्पन्न हुए हैं । दानवअद अन् । (वि०) दानव अन्धभीय । अिर्वा कोय ।

दानवगुरु (स० पु०) दानवानां गुरु इत्यत् । दानवोचि गुरु अन्धाराय ।

दानवध (स० पु०) दाने बध दन । यै श्वभ्रातिका पम्भ- विधीय एक प्रकारका घोड़ा ; महाभारतमें लिखा है, कि इस प्रकारके घोड़े देवताओं और गन्धर्वाओं को ममारोमें रहते बसो बूढ़े नसे रोते और मनको तरङ्ग वेगयाली रोते हैं । (भारत १।१०१ अ०)

दानवप्रिया (स० श्लो०) नागवक्रो मना पानवो वेम । दानवारि (स० पु०) दानवानां पारि इत्यत् । १ देवता । २ विष्णु । ३ अन्द्र ; दानमेव पारि मन् । (श्लो०) ४ यत्रमदमन चायोका मद ।

दानविधि (स० पु०) दानम् विधिः इत्यत् । दान देवता विद्यात वा नियम ।

दानवो (स० श्लो०) १ दानवको श्लो । २ दानवभ्रातिका श्लो, राक्षसा ।

दानवो (वि० वि०) दानवमन्त्रयोः दानवो षो ।

दानवीर (स० पु०) १ अयन्त दाता वक्र को दान देनेके न इटे । २ वीररत्नमेद । ३ नायकमेद । चाँदिकेमें वीररत्नके अन्तर्गत कर प्रकारके आ वीर मिलाने गये हैं उनमें एक दानवीरका मो नाम धाता है । दानवीरता- नि उल्लाह आयोमाव है याचक पाकभ्यन है, पाकभ्यनय और दानसमय दान पाटि अर्पणन विमान है, मन्त्रैव आन पाटि अर्पणन तथा जब और इति पाटि न वारी भाव है ।

दानवेन्द्र (स० पु०) राजा बलि ।

दानवेव (स० पु०) दन्वा अत्रक दनु अिर्वा अद- ततो डक । दण्डको अग्या दनुका अयत् ।

दानवत (स० श्लो०) दानमेव व्रत । दानकपो व्रत ।

दानवति (स० श्लो०) दानव्य यतिः । शब्दक, दान करनेका अमता ।

दानयोक्त (स० वि०) दानि यीन स्वभावो यय । दाता, दात्री । दण्डका अर्वा—वदान्य और वदय है ।

दानयोक्तता (स० श्लो०) मदारता, दान करनेको प्रवृत्ति ।

दान्यार (स० पु०) दानि शूः वीर । दानवीरः शास्त्रमुनि ।

दानयोन्व (स० वि०) दानिनु योन्व अतिदयः । पम्भन वदान्य, बहुत दानो ।

दासु (सं० पु०) दशातोति लासु (शशान्तां पु। १७० १।१२)
 १ दाता । २ बिलाला । ३ कुम । ४ बासु इवा ।
 ५ दानक, शकन । (को०) ६ दान । ७ दसक, वासनेका
 काम । ८ देय धन, देनेयोग्य धन ।

दासुद (सं० लि०) दासु इदाति दासु-द-क । धनदाता,
 धन देनेवाला ।

दासुमत् (सं० लि०) दासुः विद्यतेऽस्य दासु मत्पु ।
 द्वि मासुज ।

दासुदार (घा० लि०) जिसमें दासि हो रवादार ।

दासोक्त (सं० को०) दानका एक निवस दान देनेका
 एक स्थान ।

दान्त (सं० लि०) दमन्तारि क । १ बहिरिन्द्रिय नियंत्र
 कर्ता, जिसमें इन्द्रियोंको बहामें कर निवा हो । २ दमित
 क्रिमका दमन किया गया हो । ३ दन्तनिर्मित, जो दान-
 के बनि हो । ४ दांत सत्वन्धी । (पु०) १ विपित
 सुख, पहाड़ परबो शकनी । ६ मदनक सुख, मीनपत्र ।
 ७ बिदमके राजा मोमनीके दूसरी सुख को दमयन्तोके
 मारि से । ८ दाना ।

दान्ता (सं० श्री०) पत्थराजिमीय, एक चर्चराका नाम
 जिसका उल्लेख महाभारतमें थाया है ।

दासि (सं० श्री०) दम-जिन्म । १ तपःश्रेयादि सदि
 न्युता वह जिसमें श्रेय धादि सद्गुणको शक्ति हो । २
 बाह्येन्द्रियनियंत्र, इन्द्रियां का दमन । ३ बम्वता, जकी
 मता । ४ नखता विनय ।

दासिक (सं० लि०) यजदन्तनिर्मित, श्री शक्योके दासि-
 के बनि हो ।

दाय (वि० पु०) १ दय, चरदार, दमक, मर्ग । २
 शक्ति, बल, जोर । ३ बलाह, वमह । ४ पातह, रोष ।
 ५ शोच, शुद्धा । ६ दास्य जलन, ताप ।

दायक (वि० पु०) दशानिकाला ।

दायनीय (सं० लि०) दशार्थ, सत्रा देनेयोग्य ।

दायितव्य (सं० लि०) दक्षिणे योग्य सत्रा देने लायक ।

दायित (सं० लि०) दा विच् कम चि क्क । १ धासित,
 को धासन किया गया हो । २ दक्षित जिसे सत्रा
 मिले हो । ३ सत्रादि बाह्य भागसौकरक को धन धादि
 शिखर बयोमूल किया गया हो । (पु०) ४ दायितधनक
 प्रतिवादी प्रवृत्ति । ५ योचित इच्छ ।

दायोको—१ बम्बई प्रदेशके राजमिरि जिलेके पन्तगत एक
 उपविभाग । यह पचा० १० १५ से १८ ३०-घोर
 सुया० ७३ २० से ७३ २२ पू०में अवस्थित है । भूपरि
 मान ५०० वर्गमील घोर जगस क्या प्राय १३३६२८ है ।
 इससे उत्तरमें ज्वालिया घोर कुलाबा, पूर्वमें कुलाबा घोर
 सिद्धा दक्षिणमें नासिरी मदी को बिपुलनवे दायोकी
 को पन्तग करती है । तथा पश्चिममें भरतभावर है ।
 यहाँ दूसरी दूसरी जातियोंमेंसे कुनबी, मोम, महार घोर
 मङ्गे जातिके काय पबिक रहते हैं । इसमें दायोकी
 घोर इरलाय नामके दो शहर तथा १४३ ग्राम अवस्थित हैं ।
 यहाँका जलवायु स्वास्थ्यकर है । वार्षिक हठियात १३१
 इंच है ।

समुद्रके बिन्दु पर विभाग प्राय ३० मोल बिन्दुत
 है । समुद्रके निम्नतरफों पाम पक्क बासुकासुज है ।
 समुद्रके बिन्दु पर नासिरी घोर नासिरी नदियों के पद्म
 पर बहते घोर दानोस नामके दो बड़े बड़े घाम हैं
 जहाँ पाम घोर बटवसके सुख सपेष्ट पाये जाते हैं ।

२ उच्च विभागका एक शहर । यह पचा० १० ३६
 क० घोर देया० ७३ ११ पू० समुद्रसे ३ मोलकी दूरी
 पर अवस्थित है । लोकस क्या प्राय २८६० है । १८८०
 ई०में यहाँ प्युनिवर्सिटीको स्थापित हुई । शहरमें एक
 नन-जत्रको पदासत पध्याताक, मिशन क्लूल तथा एक
 टेकनिकल क्लूल है । कोइन्बेके मज्य यही स्थान
 स्वास्थ्यकर है ।

दाव (वि० श्री०) १ दवने या दशनेका भाव, चाप ।
 २ मार, बोग्ग । ३ पातह, पबिकार, रीव ।

दावकम (वि० पु०) शोशरी के शिदरके जको का एक
 चिन्हा ।

दावदार (वि० लि०) पातह रखनेवाका, प्रभावमाको,
 प्रतापो, रोषदार ।

दावध (वि० लि०) दवाना देको ।

दावा (वि० पु०) १ कलम मन्वनेका काम । इसमें
 पौधाकी उद्गमको महीमें जादूनी वा दवाते हैं । २ नि क,
 कुम्भमेय घोर बलाकको नदियोंमें निम्ननेवाकी एक
 प्रकारकी मज्जने को पाठ हो प सुल कम्मे होतो है ।

दावध (वि० पु०) एक प्रकारका ज्वेद पको । इसकी

चौच टम वारह अंगुल लम्बी और छोर पर पैंसैकी तरह गोल और चिपटी होती है।

टाको (हि० स्त्री०) कटो हुई फमलके पृले जो बराबर बराबर बाँधे हुए रहते हैं और मजदूरीमें टिये जाते हैं।
 टाम (हि० पु०) एक प्रकारका कुश. डाम।

दाभि—गुजरातकी राजपूत-जातिकी एक प्रधान खेणो। प्रवाद है, कि पूर्व समयमें दाभि लोगोका वासस्थान गजनी, एदर, भीलडीगढ़ और खेडागढ़में था। टामऋषि इन लोगोके आदिपुरुष थे। दाभऋषिकी उत्पत्तिके विषयमें ऐसा सुना जाता है,—

श्रीरामचन्द्रने मीनाकी वनवास दिया। सोता निज नवनमें जा कर रहने लगे। दश मास व्यतीत होनेके पश्चात् उन्होंने पूर्णचन्द्र प्राय एक पुत्र प्रसव किया जिमका नाम रखा गया लव। एक दिन सोता उसे ऋषिके पास छोड कर स्नान करनेकी चलो गईं; किन्तु रास्तेमें एक वनचरीकी देख लौट आई और लवकी माय ले पुनः उसी राहसे स्नानके लिये निकलीं। इस ऋषिके ध्यान टूटने पर जब उन्होंने लालकको अपने समीप न देखा तब वे विचार करने लगे कि, शायद विडाल वा नृगाल भयवा कोई हिंस्र जन्तु उसे मार खाया। ऐसा भोच कर उन्होंने टाम (टर्म) की एक मूर्ति बनाई और यजुर्वेदका स्मरण कर उसका नाम टर्म वा दाभऋषि रखा। मीताने लौट कर देख कि उन्हीके लड़केके जैसा एक दूसरा लड़का उक्त मुनिके आश्रममें पड़ा हुआ है। ऋषिसे पूछने पर उन्होंने कहा “हे शक्ति! अब क्या हो सकता ? इन दोनोंको तुम अपना पुत्र समझो।” इस प्रकार कृतबुगका अर्द्धभाग बोलने पर ल्यैष्ठ नामके कृष्णपक्ष सोमवार दिन दुर्वासा मुनिने महाबल टर्मको सृष्टि की। गङ्गवेग-पर्वत पर ८४ ऋषियोके समक्षमें उसी युगके १५८४ वर्ष बोलने पर दाभि उत्पन्न हुए थे। टर्म ऋषिको २०वीं पीढ़ीमें अमरमेनने जन्म ग्रहण किया था। उन्होंने पसोङ्गड़से यात्रा कर चौहान लोगोको मार भगाया और प्रभाषगढ़ अपने अधिकारमें कर लिया। अमरमेनकी १२ वीं पीढ़ीमें सुरपाल पैदा हुए। ये प्रभाषगढ़की छोड कर कुछ दिन काश्मीरमें जा बसे थे। सुरपालकी १६ वीं पीढ़ीके बाद बोचाने काश्मीर-

की छोड दिया और पडियारोको परास्त कर लम्बील पर अधिकार जमाया। उनके १० पीढ़ी नीचे अखिराज-ने यादवोंसे शत्रुञ्जय दुर्ग जीता था। देमा (डिमा) अखिराजके ७ पीढ़ी नीचे थे। इन्होंने सभ्यत् १२७२ में कौरभोंको मार भगाया और खेडागढ़ अपने अधिकारमें कर लिया।

दाभि लोग खेडागढ़में बहुत दिनों तक रहे। पीछे राठोर लोगोंने इन्हें मार डाला। उनमें ५ शालदाभिने किसी प्रकार आकरराजा को और भिम्बोले (भिल्लमाल) में आ कर बस गये। शालदाभिके पूर्ववर्त्तों अष्टम पुरुष दुदारके समयमें दाभि लोगोंने कच्छवाह भोलोसे भीलडी-गढ़ जय किया था। यहां बहुत दिनों तक उन लोगोकी राजधानी थी। दुदारकी प्रवीं पीढ़ीमें सोमेश्वर दाभिने जन्म ग्रहण किया था। इन्होंने मेहराज नामक एक कविको सेताम्हा ग्राम दान किया था। जिनके वंशधर आज भी उक्त ग्रामोंका भोग करते हैं।

शालदाभिके प्रपोत्र आमलदाभिने गृह-विवादके कारण भिम्बाल छोड कर एदरमें प्रायय लिया। यहाँ एदरराजने उन्हें दश हजार अखावोहीके पद पर नियुक्त किया। यथाक्रम उन्होंने अनेक ग्राम अधिगत कर भीलडीगढ़में वासस्थान बनाया। आमलदाभिके पुत्रने एक भील सरदारकी कन्याके रूप पर सुग्ध हो उसका पाणिग्रहण किया, किन्तु अन्तमें समाजके मध्य निन्दित होनेके भयसे वे एदरमें न आ कर आवूशिखरके समीप चोलोपला पहाड पर चले गये और वहा भाटेश्वरी देवीकी कठोर आराधना करने लगे। देवीने उनको पूजासे सन्तुष्ट हो उन्हें शिरोहोराजके निकट जानेका आदेश दिया। शिरोहोराजने उन्हें रोह-सरोत्रा चौरासो ग्राम दान दे सम्मानित किया। भाटेश्वरीके अनुग्रहसे ही उन्होंने सम्मान लाभ किया था, अतः उन्होंने अपना नाम भाटेश्वरीय रखा। उनके वंशधर आज भी भाटेश्वरीय नामसे प्रसिद्ध हैं और वर्त्तमान समयमें भी उक्त स्थान पर वास करते हैं।

दामी (सं० स्त्री०) अनिष्टजनक, वह जो हानि पहुँचाता हो।

दाभ्य (सं० त्रि०) १ शासनके योग्य, जो शासनमें आ सकें। २ बाधा देने योग्य।

शाम (स० श्लो०) दो खण्डों का करके मन् शामन् ।
 १ पश्चादि बन्धनरक्षु पयु चादिनी बन्धनकी रक्षी ।
 २ कक्षा पर्याय—सन्धान घोर रक्षु क्षि । २ माक्षा शर ।
 ३ बभ्रुव, शशि । ४ विद्य, मोक्ष । ५ शम्भान कोत्र,
 तक्षमा । (मि) ६ दाता टिनेवाला ।

शाम (श० पु०) १ शाल, चन्द्रा, पाय ।

शाम (हि० पु०) १ एक इमलीका तीव्रता भाग । २ धन
 शय्या, पैसा । ३ दानमौति, राजनीतिको एक शास्त्र ।

शामें शत्रु धन द्वारा बधमें बिबाह जाता है । ३ मृच्छ,
 कोमल मोक्ष । ४ शिवा, शय्या ।

शामक (स० पु०) १ एक रक्षो की माङ्गिक सुपमें लगे
 रहती है । २ बाण, डोर, लताम ।

शामकण्ड (स० पु०) मोक्षप्रवर्तक क्षामिभेद ।

शामकण्ड (स० पु०) १ शामकण्डल सुवा गोलापत्र
 शामकण्डलम् । शामकण्डला सुवा गोलापत्र ।

शामप्रति (स० पु०) १ मन्थरात्र विराटका सेनापति ।
 (भारत विराटम् ३१ ब०)

शामशब्द (स० पु०) १ उपद शब्दको एक पुत्रका नाम ।
 (भारत वीरम् १२८ ब०)

शामशतको (स० पु०) १ सुराङ्गक शशक शब्दा एक
 शब्द ।

शामन् (स० श्लो० श्लो०) दो खण्डों दोषयें रति दा
 मन्निम् । (ब्रह्मसूत्रो मन्निम् । उप ४।३३) १ दोहन
 के समय पश्चादिना पादबन्धनरक्षु, बह डोरी की
 भावसे दुष्टते समय लवके घेरमें बांधी जाती है ।
 २ माक्षा, शर । ३ रक्षु, रक्षो । ४ बह रक्षो जिनसे
 पर्यन्त पयु बांधे जाय । ५ दमनक शब्द ।

शामन (पा० पु०) १ चीने, खाँट, कुर्त चादिवा निपला
 माय पत्रा । २ पशुविकी नीचको मृमि । ३ शय या
 लहात्रक शामनीका बह दिया बिध घोर श्वाका सदा
 शयता को । ४ बाणबाण ।

शामनगोर (पा० वि०) १ पशुमेवाला, पर्ये पशुमेवाला ।
 २ दावा करमेवाला, दावेदार ।

शामनशब्द (स० श्लो०) १ दमनी दमनशब्दका हिन्दि
 शब्द प्रत्यये शामन लक्षणमन्थन्थि पय यत्तिम् ।
 १ दमनशब्द तिथि, शैल यक्षचतुर्दशी । २ शैलमासको
 यक्षदाशुकी । दमन० देको ।

शामनि (स० पु०) १ दमनशब्दका एक । २ दमनका
 पत्रम् । ३ शानुशब्दको शब्दम् ।

शामनी (स० श्लो०) १ शामन पश्चादि० शब्दों पयु पति
 लगेय होय । पयुशब्द-रक्षु, रक्षो, डोरी ।

शामनो (पा० श्लो०) १ चोड़ो की पीठ पर शास्त्रकेवा चोड़ो
 लपका ।

शामनोय (स० पु०) १ शामनि शब्दकादि० श । दमनका
 पत्रम् ।

शामन्यादि (स० पु०) १ शामनिका मन्थमेद । शामनि,
 शोबधि, शैलपयि, चोडदि चोदाह, पान्युत्ति, श्राङ्ग-
 शक्ति, शोबिन्दति, चोडनि, शास्त्रदन्तवि शाङ्गुत्ति,
 शार्बेति विन्दु, वेन्दुनि तुलस मोक्षापन काउन्दि
 घोर शामनोपुत्र से हो शामन्यादि हैं ।

शामर (हि० श्लो०) १ दरार भरनेके किलु नादोंमें लयाई
 जानिकी रात । २ शामर देवा । ३ बह मे कु जिनके काम
 खाटे होते हैं ।

शामर (हि० श्लो०) १ शमी देको ।

शामरो (हि० श्लो०) १ रक्षु, रक्षो, डोरो ।

शामनित (स० श्लो०) १ शमोनिता मन्थर । शमोडक रक्षो ।

शामनित (स० पु०) १ शाम खेदि निच-शब्द । शाम
 शिबक ।

शामा (स० श्लो०) १ शामन्-शब्द । २ म देको ।

शामाशब्द (स० श्लो०) १ शामाशब्द सुवादर दिजातु बह
 ना । पश्चादिको पादबन्धन-रक्षु, बह रक्षो जिनसे
 चोड़ो प दिबे घेर बांधे जाते हैं ।

शामाशब्द (स० श्लो०) १ शामा शब्दकामि । राजाजन देको ।

शामाद (पा० पु०) १ शामाता, शमाई ।

शामाशाह (हि० पु०) १ बह दिवाणिया मन्थान्न शिसकी
 सम्पत्ति लभके लहनेदारोंके बीच शिवाके सुताविश बँट
 जाव ।

शामाशाहो (हि० श्लो०) १ शिवा रक्षकका बह निच य
 की दिवाणिया मन्थान्नको सम्पत्तिमेंके एक एक लहने-
 दारको मिले ।

शामिनी (स० श्लो०) १ शामा सुदामा मन्थ स एकदेखने
 पक्षरक्ष इति-श्लो० (शंकायां कल्याण) वा १२।१।१०
 १ विद्युत्, विजयी । २ शिवीका एक गिरीभूषण,
 दाबनी ।

दामो (हि० स्त्री०) मालगुजारी, कर ।

दामोद (म० पु०) अथर्ववेदकी एक शाखा ।

दामोदर (स० पु०) दाम वन्धनमाघन उदरे यस्य, वा दमादि साधनेन उदारा उदकृष्टा मतिर्या तथा गम्यते इति दामोदरः । यशोदानन्दन कृष्ण । यमलाक्ष्मणके गिरनेके समय यशोदाने ताडनेके लिये श्लोकाङ्कके पेटमें रख्यो लगाकर बाँधा था, इन्हीं गोपियाँ उन्हें 'दामोदर कहने लगीं' । तभीसे वे संसारसे अभिहित हुए हैं ।

(हरिवंश ६३ अ०)

विष्णुमहस्वनामके भाष्यकारके मतसे दामका अर्थ विश्व या लोक माना गया है । जिनके उदरमें समस्त विश्व हो, उन्हींका नाम दामोदर है । महाभारतमें लिखा है 'दामाहामोदरं विदुः' अर्थात् वहिरिन्द्रिय निग्रहका नाम दम है, अत्यन्त दम साधनके लिये दामोदर नाम पडा है । २ अतीत अर्द्धभेद, एक त्रिदेवका नाम । ३ शालग्राम मूर्त्तिभेद, यह शालग्राम स्थल होता और उसका चक्र सूक्ष्म होता है । यह मनुष्योंके लिए सुखद है ।

जिसमें ऊपर और नीचे दो चक्र होती, मुखमें बिल अर्थात् गद्दा होता और मध्यभागमें एक सँवो रेखा खींची रहती है उसे भी दामोदर ममभना चाहिये ।

(ब्रह्मांडपु०)

दामोदर—१ काश्मीरके एक राजा । ये काश्मीरके राजा प्रथम गोनर्दके बाद राजा हुए । ये गाम्भार-राजकुमारके स्वयंवरमें उसे हरणको गये थे और वहीं श्रीकृष्णके चक्रसे मारे गए । २ काश्मीरके एक दूसरे राजा । ये महा राज जल्लोकके बाद सिंहासन पर अभिषिक्त हुए और ये शिवभक्त भी थे । यथाधिपति कुबेरके साथ इनका मित्रता थी । इनके आज्ञानुसार यज्ञोंने एक जलाभूमिके ऊपर एक बड़ा पुल निर्माण किया और उसीके ऊपर इन्होंने एक नगर स्थापन कर उसका नाम दामोदर रखा । एक दिन इन्होंने क्षुधातुर ब्राह्मणोंको प्रार्थना पूरी नहीं की । इस पर उन्होंने राजाको सर्पयोनिमें जन्म लेने का शाप दिया । पीछे इन्होंने ब्राह्मणोंको मन्तुष्ट कर यह वर पाया, कि एक दिन समस्त रामायण सुन लेने पर वे शापमुक्त हो जायंगे ।

दामोदर—इस नामके अनेक संस्कृत-ग्रन्थकारोंके नाम

पाये जाते हैं । जिनमेंसे निम्नलिखित प्रसिद्ध हैं ।

१ महानाटक सङ्कल्यिता ।

२ काश्मीरके एक ग्रन्थकार ।

३ पद्मावती, सदुक्तिकर्णामृत और भोजप्रबन्धद्वय एक महाकवि ।

४ अभववादके रचयिता ।

५ पद्मनाभके शिष्य । इन्होंने १४१८ ई०में आर्यभट-तुल्यकरण ग्रन्थ और करणप्रकाश-टीका प्रणयन की है ।

६ कंसवध-नाटकके रचयिता ।

७ लघुकालनिर्णय नामके ज्योतिर्ग्रन्थकार ।

८ जातकमं पद्धति और दामोदरपद्धति नामके ज्योतिर्ग्रन्थकार ।

९ लीलावती-पाटीगणितके एक विख्यात टीकाकार

१० भक्तिचन्द्रिकाका प्रणेता ।

११ माधवयोगीके शिष्य । इन्होंने 'मौसांसानयविवेका-लङ्कार' रचा है ।

१२ वाणोभूषण नामके छन्दोग्रन्थके रचयिता । ये अपनेको दीर्घघोषवंशीय बतला गये हैं ।

१३ विवेकदीपक नामके धर्मशास्त्रके संग्रहकार ।

१४ एक विख्यात वैद्यक ग्रन्थकार । इन्होंने वैद्य-जोवन, व्याध्यर्गल और हरिवन्दन नामके वैद्यकग्रन्थ प्रणयन किये हैं ।

१५ शतपथीयानुवाकसंख्या और हौवावलोकके प्रणेता ।

१६ आहपद्धतिके रचयिता ।

१७ अष्टाङ्गहृदयको सङ्कतमञ्जरी नामके टीकाकार ।

१८ समरसार नामके ज्योतिषके एक टीकाकार ।

१९ लक्ष्मोधरके पुत्र, सङ्गीतदर्पणके रचयिता ।

२० विष्णुभट्टके पुत्र, आरोग्यचिन्तामणिके प्रणेता ।

२१ इष्टिकालके रचयिता ।

२२ जातक संग्रहकार ।

२३ सिद्धान्तहृदय नामके ज्योतिर्ग्रन्थकार ।

२४ होराप्रदोषके रचयिता ।

२५ गङ्गाधरके पुत्र, यन्त्रचिन्तामणि नामके एक तान्त्रिक ग्रन्थकार ।

२६ विश्वनाथके पुत्र, भगवत्प्रसादचरितके रचयिता ।

२० वरुण चन्द्रके दिग्द, एक कोन-पन्थकतां । इन्दीमि
च द्रुपमपुराच इतच्छायाकोग पोर श्यामकाचार एन तोन
पन्थो का प्रथयन क्रिया है ।

२८ हिन्दूके एक कवि । इन्दीमि यदुत्तमो पन्थो पन्थो
कवितापो की रचना की है । उदाहरणार्थ एक नौसे
दो मई है —

श्रीवत्स काच श्याम मरे भिदिदिन री मारि
माधुमी मूरति लोहमे सुति पिठ जिणे पुतारै ।
काज गाय नटदि माक विपुठ बैरव कडमाक
वर्मदून मरुहाय कोवन इवदारै ॥
मोरकल शीश मरे मोडिनके हार मरे बाजूपर
बहुपिन वरमुक्तिषा इडार ।
छर बडिवा वैहरि सुपुर जिडिया छुट्टा
अग अ य देवत हर आन द व समारै ॥
सुरकी श्वर नरे इयाम ठाई मक पुपति माह
कत पुनम तान मय म लखईव वारै ।
मिदिम कन कति मन्त्र काच सुवरर विमान
वकम-पर किंकर दामोदर कति कारै ॥

दामोदर—ब्रह्मासक्तो एक प्रसिद्ध मदी । यह पचा० २३
१७०० पोर देजा० ८४ ४१ पू०में पड़तो है । यह
छोटा नागपुरके पञ्चाङ्गके निष्कन कर दक्षिण पूर्व को पोर
११० मोस जानिके बाद विख्यात जलमारो (माड्डाड्डा)
(James and Marysands) नामक बालूरेतके
छूट उत्तरमें कलकत्ते मे २० मोस दक्षिण दामोदरमें
मिग्न गर है । यह मध्यमकाल पचा० २२ १० ८०
पोर देजा० ८८ १ पू०में अवस्थित है । कलकत्तेसे
मे कर उत्तर-पूर्वमें मध्यभारतके पारम्भिकदेशकी सीमा
मज्जे विद्योत्तर् भूमाममें दामोदर तथा रमको बहुत मो
बहावक नदियां बहती हैं ।

साबरकड वा नगरके समोप दामोदर नदीको पवनवा
दिवा (Hassan) सोननदीकी पवनवादिजान एवम् हुई
है । एक पोरका अल पूर्वको पोर या कर दामोदरमें
पोर दूसरा पोरका उत्तरकी पोर विहार प्रदेशको लवने
प्रधान सोननदीमें जा मिरा है । दो नदियोंके मिलनेसे
यह नदी उत्पन्न हुई है जिसमेंके दक्षिणकी नदीका
उत्पत्तिस्थान सोड्डाड्ड मार्के तोरो पारनेमें पोर उत्तर-

को नदीका उत्पत्तिस्थान हजारीबाग जिलेके उत्तर
पश्चिम कोनेमें है । ये दोनों पहाड़ो नदियां प्रायः २६
मोस जानिके बाद हजारीबाग जिलेके पश्चिममें एक
दुर्गमें मिल कर ठोक पूर्वको पोर छुपाकी जमुन्या
पादि उत्तरक उपनदियोंक नाम मिल गई है पोर पीछे
उक्त जिलेके मध्य हो कर ८१ मोस तक बहती गई है ;
बाद मानसूनि जिला होतो हुई पूर्वको पोर बईमान
जिलेके प्रान्तमाममें या गई है । इस स्थानमें दामोदरको
सवसे बड़ो उपनदी बराबर हलसे या मिली है । यद्यपि
इसका खोत दक्षिणकी पोर कुछ बह हो कर यह
बईमान जिलेके पश्चिममें शानोपक उपविभाय पोर
बांझुवा जिलेकी मन्थ सीमा होतो हुई बईमान जिलेमें
प्रवेश करता है पोर उसी पोर बह माननगरसे कुछ
दक्षिण तक या गई है । बाट बह नदी ठोक दक्षिणको
पोर बईमान पोर पूगानो जिला जा कर प्रवाहित है ।
इस स्थानमें सेकर बहुत दूर तक पान ज्य पदेममें हमका
शेन प्थ प्रवाह है । यहाँ बहुत सो नदियां इसमें या
मिली है । किन्तु पन्थ नदियोंके मिल जानेसे ही
इसको गति मृदुल नहीं हुई है, बर घमत्तन मूर्तिमें
प्रवाहित होनेसे इसका जल गाथा प्रयाणके उपमें
बाहर निकल गया है । इन उपनदियोंमें कोच नदी
प्रधान है जो बईमान जिलेके सन्नासाबादसे निकल कर
हुको नदी नाम प्राप्त कर नौपासराय घामके निकट
मागोरघामें जा गिरी है ।

पहले दामोदरका खोत कलकत्तेसे बहुत उत्तरमें
मागोरघामे नाम मिलता था । अभी यह ज्ञास हो
गया है । जो कुछ सामान्य खोत रक गया है सोय लने
'बाचपोका'को खाड़ो कहते हैं ।

भारतवर्षकी पन्थान्ध नदियोंकी नाई दामोदर
नदीकी भी मति पहने प्रवाह पोर पीछे पन्थान्ध मन्द
है । इसका उत्पत्तिस्थान मसुप्रचडम ११२१ फुट ल था
है । इसी लके स्थानसे ही कर यह नदी हजारीबाग
जिलेमें प्रति सोनमें ८ फुट नीचिकी पोर प्रवाहित हो कर
किन्न ८१ मीन घाममें ०५४ फुट नीचे पड़ च गई
है । मिय २१० मोनके पथमें इसकी कुल पवनगति
वेचन १८२ फुट है । इस तरह पहले प्रवाह वैगर्धे मात्र

वृद्धिमें ही मष्टी आदि जम गई है और पीछे इसका वेग मन्द हो गया है।

मानभूम जिल्लेमें भी दामोदरका वेग उतना कम नहीं है। लेकिन वर्षमान जिल्लेमें इसका वेग बहुत मन्द हो गया है, इसीसे वहाँ अक्सर बानूवा चर पड़ा करता है। वर्षमानके दक्षिणमें तथा हुगली जिल्लेमें इनकी गति मन्द है, सुतरां स्रोतमें लाई हुई मष्टी आदि इस प्रदेशमें तथा पल्लुआकी दूसरी और भागीरथीके माघ मङ्गलमन्थनमें बहुत जम गई है। फिर इस स्थानसे कई सोन दक्षिणमें रूपगारायण नदीका गङ्गम है। सुतरां भागीरथीका स्रोत रुक जानेसे वहाँ बटा चर पड़ जाता है, इस कारण जल धारणमें बहुत अशुविधा होती है। पहल्ले जब दामोदर कलकत्तेके उत्तरमें भागीरथीसे मिलतो थी, तब स्व जल प्रवाहित हो कर नदीका सुझाना परिष्कार रहता था और चर पड़ जानेकी कोई आशंका नहीं रहती थी। स्रोतके परिदूर्जन हो जानेसे कलकत्तेके उत्तरमें भागीरथीके किनारे जलपथ द्वारा वाणिज्यका बहुत ह्रास हो गया है।

सुझानेसे बहुत दूर तक दामोदरनदीमें नाव आदि आती जाती हैं। वर्षाकालमें रानीगण्डके ऊपर तक बड़ो बड़ो नावें जा सकती हैं; अन्य समयमें हुगलीके आसता तक नाव जातो है। पहल्ले रानीगण्डसे बहुतसी नावें पथरियाकोथला लाद कर हजरादे अन्तर्गत महेय-रेवा-को जातो था और वहाँसे ये सब कोयले उलुवेडिया खाड़ी तथा भागीरथी ही कर कलकत्तेकी नावें जाते थे। अभी रेल हो जानेसे कोयलेकी रफ्तनोको सुविधा हो गई है।

दामोदर नदीमें बहुत भयानक बाढ़ आतो है, जिससे ग्राम, शस्यक्षेत्र, मनुष्य तथा मवेशी आदि विनष्ट हो जाते हैं। १७७० ई०की बाढ़से वर्तमान नगर प्रायः तहस नहस हो गया था और नदी-किनारेका बांध टूट जानेसे बहुत क्षति हुई थी। फलतः उस साल घोर दुर्भिक्ष पड़ा था। १८२३ और १८५५ ई०की बाढ़से भी बहुतसे मकान, हल, मनुष्य तथा पशु आदि बह गये थे और क्लषकोंके खेत आदिका चिह्न भी विलुप्त हो गया था जिसके लिये बहुत काल तक सेमानिर्धारण ले कर

विवाद चलता रहा था। उक्त बाढ़के बाद वर्तमानके मध्य हो कर ऐनपत्र स्थापित हो जानेसे रेलवे लाइनकी रक्षा लिये अच्छी व्यवस्था कर दी गई तथा १८५५ ई०में गवर्मेण्टने बांधकी रक्षाका भार अपने ऊपर ले लिया, तभीसे वहाँ कोई दुष्घटना न हुई। नदीके उत्तरकी ओर अभी एक तरहका प्रभाव हो गया है, किन्तु सब जल एकही ओर बहनेसे दक्षिण दिशाकी प्रथम्या और भी गौघनीय हो गई है। उस ओर उर्वर प्रस्थपूर्ण दिशाको बाढ़से अवनत क्षति हुआ करतो है।

दामोदर आचार्य—एक विख्यात उपनिषद्-भाष्यकार इनके बनाये हुए ऐतरेय, कठ, ऐन, तीक्ष्णीय, प्रयु और सुण्डकोपनिषद्के भाष्य पाये जाते हैं।

दामोदर गार्ग्य—एक वैदिक पण्डित। इन्होंने पारस्करानुशास्त्रो प्रयोगव्यति रचना की है और कर्क, विष्णु, गङ्गाधर तथा हरिहरका नाम उद्धृत किया है।

दामोदर गुप्त—काश्मीरके एक प्रसिद्ध कवि। इन्होंने अम्बनीमत वा कुट्टनोमत नामका काव्य बनाया है। राजतरङ्गिणीमें ये जयापोरकवि नामसे प्रसिद्ध हैं। जयापोरने ७७६ से ८१३ ई० तक काश्मीरमें राज्य किया।

दामोदर ठाकुर—एक प्रसिद्ध स्मार्त पण्डित। इन्होंने संशयशास्त्रके राजत्व कालमें 'दिव्यनिर्णय'को रचना की है। दानमयूखमें कई जगह उनका मत उद्धृत हुआ है।

दामोदर त्रिपाठी—बालकृष्णतन्त्र और हन्वदिन्तामणिके रचयिता।

दामोदर दास—हिन्दीके एक कवि। इनका जन्म सन् १५६५ ई०में हुआ था। इनके विषयमें और किमो विशेष बातका पता नहीं चलता।

दामोदर देव—हिन्दी-ग्रन्थके रचयिता। इन्होंने अनेक ग्रन्थ बनाये हैं, जिनमेंसे कुछ ग्रन्थोंके नाम नीचे दिये गए हैं—रस-सरोज, बलभद्रशतक, उपदेशशतक, बलभद्रपचीसो और हन्दावनचन्द्रशिखनखण्डानमंजूषा। ये १८८८ ई०में विद्यमान थे तथा सरका-नरेश हमीर सिंहके गुरु थे।

दामोदर देवधर—सभाविनोद और पट-पञ्चाशिकाके टीकाकार। केशवके नातकपद्धतिमें श्रेयोक्त ग्रन्थ उद्धृत हुआ है।

दामोदर पण्डित—कीर्त्तिचन्द्रोदय नामक धर्मशास्त्रकार।

इति चकार चैव सम्यग् बुद्धमन्त्रो ब्रह्मयतामे उच्यते
पञ्च प्रथमं विद्या है ।

दामोदर मठ—१ त्रयोपमन्द विद्या पौर मोनमहरी
पुत्र । इति तर्कज्ञाकरकेतु पौर सुसुप्तकवक बनाइ
है । २ माण्डविक्रमे रचयिता ।

दामोदर मिय—कर्णपुराणे राजा कुमन्तनि कचे मभा
पण्डित । इन्दीने विद्यातातु मोयकी मोररदायको नाम
ओ एक टीका बनाइ है ।

दामोदर शास्त्री—हिन्दी पञ्च १ रचयिता तथा लुपसिध
कवि । ये स बत् १८१० में विद्यमान है । इन्होंने बन्दुनसो
हिन्दी पुस्तकोंकी रचना की है जैसे—राजमोपा, यज्ञ
कटिक, वासुदेव, श्यामाकव में बड़ो ज्ञानिपुत्रविद्या,
पूर्वदिग्भासा दक्षिण दिग्भासा लवणलक्षा इतिहास,
पश्चिम रामायण पौर बिलोमङ्ग । इनको गिनतो भाष्य-
कारोंमें ही जानतो है ।

दामोदर मन्त्राय—हिन्दीमें एक कवि । ये स बत् १८६०
में मोरङ्ग है । इनको लक्ष्मी चालमेंही हुई है । इनके
बादमें पौर कुछ विमिय बातका पता नहीं चलता ।

दामोदर श्यामी—हिन्दी-पञ्च १ रचयिता तथा कवि ।
इन्होंने स बत् १६०० में 'निमबत्तोसी नामक पुस्तककी
रचना की । इन्होंने बनाये हुए निमबत्तोसी रचना, मन्त्र
विद्या, रासविद्या पौर मय सुब्रह्मताप नामक पञ्च
ब्रह्मपुराण पाठे मय है । इनको यविला सरावणीय होतो
है । ज्ञानार्थ एक मीचे टो गई है,—

‘ओ हरिब ज्ञानाङ्ग कवक वर १ वर श्यामी’ ।
इत्यादिमें बनी कीच विद्वान्ध नाम ।
मन्त्र बन्धुना मोर भीर रावतामि गात्र ।
नन्दि निरको कु ब रैतु या वर लराङ्क ।
बहु ज्ञान बोले कनि कही निररा सुनी व दाय ।
मिय वर पुत्रो बननी लनी वर वन एक वमान ।

दामोदरीय (घ० पु०) प्रवर कविमिद । (मारत पञ्च १ ब०८)
दाम्यक (घ० श्लो०) दाम्योरिद पम्पकताम् एक ।
१ दम्पती सम्पत्ती पम्पिकोवादि, दम्पतीके सम्पत्त
रवनेवाले पम्पिकोवादि काम । २ श्लो पुत्रके शेषका
प्रेम या व्यवहार । (श्लो०) १ श्लो पुत्रक सम्पत्ती, श्लो
सुदयका पा ।

दाम्यकपथय (घ० पु०) विद्यावित श्लोपुत्रका प्रथम
श्यामी पौर श्लोका परस्पर पसुराम ।

दाम्यक (घ० श्लो०) दम्पति चरतीति दम्प-उक्त् ।
(वरति । पा ३।४८) १ दम्पकृत, मन्त्रक पाण्ड्यो । २
पञ्चद्वार, बमण्यो । (पु०) १ बक, बगला ।

दाय (घ० पु०) दा-दाने बन्, ततो दृष्ट् (भाते पुत्र-
विन्दुने । पा ३।१।११ १ शोतुकादि श्रेय बन्, दास्यी,
दान पादिने दिया ज्ञानेवाणा धन । २ विद्याया
पितादि बन्, बारिषोमें बडा ज्ञानेवाणा धन या ज्ञान
क्रियत, दात्रभाय द्यो । दोहये भावे वम् १ श मय
बह शो लेने भाय द हो । दो-व्यपत्ते वम् १ ३ पञ्चन,
विद्याया । ३ श्रेय बन्दि, देनेशय धन । ४ दायमान धन
बह धन शो दृष्टके श्लो गद्या हो । ० दान । ८ दाता,
बह शो दान नेता हो ।

दायक (घ० श्लो०) ददातीति दा-व्युत् । १ दाता,
दिनेवाणा ।

दायक (श्लो० पु०) दायका श्लो ।

दायका (श्लो० पु०) योनुक दृष्टे ।

दायक्यु स० पु०) दाये बन् । श्यामा, भाई ।

दायमान (म पु०) दायण भाग वा दायण सम्पत्ति-
विभागो यत् । धनविभाग, पैसाक धनविभाग, श्लोती
धन या आपसमें बांट, पञ्चारे प्रञ्चारेके विद्यादोषिय एक
पञ्चारेका विवाद । बह-देशमें जोमृतवाहनहत दाय
भावका विमिय पादर है । बह पञ्च धर्मरत्न या एक भाग
है । जोमृतवाहनमें एक एक विषयमें तर्क बितर्क,
विमिय विवेचना पौर यथायोग्य प्रमाण दिखना बर
नूनैका मत पञ्चन करति हुए पणन मत मन्त्रापन
क्रिया है । बाद दायनिबन्धन तथा पौर जितने पञ्च
रत्ने ये हैं, वे श्लो जोमृतवाहनके ही पाञ्चारे पर बने
हैं मभी पञ्चानि पणने पणने मतको प्रामाणिकता पौर
पोषकादि जिसे श्लोका मत चरनम्बन क्रिया है । तहां
तर्क कि जतमें कई जगह लनका बाण्ड इवज उद्भूत
क्रिया गया है । दायमाणक भाष भाव दायणत्व, श्लोका
तर्कान्तररहत दायमाण टीका पौर दायणमन पाठका
विमिय पादर है । १ दायमाण रङ्गमन्दनत दाय-
तत्त्व निरन्ता म चिह्न होन पर भा विमिय उपकन्तो है ।

इसमें विषय तो सभी है, पर वे जो मृतवाहनके मतानु-
मतको अपेक्षा मंदिन वाश्वमें प्रकाशित हुए हैं। देवल
किमो किमो विषयमें रघुनन्दनने दायभागमें भिन्न मत
प्रकाश किया है और कहीं कहीं दायभागको टुटि भा
पूरी की है। दायक्रमसंग्रह श्रोकण तर्कालङ्कारका
सूत्र ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ दायभागका संग्रह है और
इसका मत दायभाग टीकाके अनुरूप है।

रामनाथ विद्यावाचस्पतिकृत दायरहस्य वा स्मृति-
रत्नावलीका बहूदेगमें कहीं कहीं आदर था, किन्तु
किमो विषयमें उनका मत जो मृतवाहन और रघुनन्दन-
के मतमें भिन्न है।

दायभागको अनेक टीकाएँ हैं जिनमेंमें रामनाथ-
भाचार्य चूडामणिकृत टीका ही सबसे प्राचीन है। यह
टीका यद्यपि कई जगह श्रोकणतर्कालङ्कारमें उल्लिखित,
खण्डित और मंशोधित हुई है, तो भी इसको गिनती
एक उत्तम टीकामें की गई है। अथुत चक्रवर्तीने भी
दायभागकी एक टीका बनाई है। इस टीकामें कई
जगह उन्होंने चूडामणिका उल्लेख किया है। इसके
मिवा उन्हीं आदिविवेककी भी एक टीका रची है।
अथुत और चूडामणिके बाद महेश्वर भट्टाचार्य ने भी
एक टीका प्रणयन की है। यह टीका श्रोकणतर्का-
लङ्कारके समयको अथवा उसमें कुछ पहली ही है। श्री
कण्ठतर्कालङ्कार एक प्रधान नैयायिक पण्डित थे।
इन्होंने विशेष विवेचनापूर्वक यह टीका प्रणयन की है।
टीका विशेष आदर और विख्यात है, तथा दायभाग
और दायतत्त्वके बाद ही प्रामाण्य है। रघुनन्दन नामक
एक और पण्डितने दायभागकी टीका बनाई है। कोई
कोई इन रघुनन्दनकी स्मृतिके संग्रहकर्ता रघुनन्दन
बतलाते हैं, किन्तु यह भ्रमात्मक है। क्योंकि स्मार्त्त
रघुनन्दन इस प्रकारको अकर्मण्य टीका अभी नहा
लिख सकते। किमो पण्डितने इस टीकाका विशेष
प्रचार होनेके लिये अपना नाम न दे कर रघुनन्दनका
ही नाम दिया था। दायरहस्यकर्ता रामनाथ विद्या
वाचस्पति भी इसको एक टीका बना गये है। काशीराम
भट्टाचार्यने जो टीका बनाई है वह दायतत्त्वकी है।
यह टीका दायभागकी टीकासे बहुत कुछ मिलती
सुचती है।

दायभागका मत परम्परें भिन्न होने पर भी भिन्न
भिन्न देगोंमें भिन्न भिन्न निवन्धकारियोंके मत प्रचलित
है। गोड अर्थात् बहूदेगमें धर्मरत्न अर्थात् दायभाग,
श्रोकण तर्कालङ्कार और रामनाथभाचार्य चूडामणिकृत
दायभाग टीका, स्मृतिरत्न, दायतत्त्व, विवादाणवमेतु,
विवादसाराणव और विवादमङ्गलार्णव वे सब ग्रन्थ विशेष
आदर हैं और इनके मतानुसार बहूदेगमें दायविषयके
सभी विचार सम्पन्न होते हैं। मिथिला अञ्चलमें मिता-
चरा, विवाटरत्नाकर, विवादविस्तारणि, व्यवहारविस्तार-
मणि, हैतपरिगिट, विवादघन्ट, स्मृतिनारममुच्चय और
मदनपरिज्ञान प्रादिका मत प्रचलित है।

काशीप्रदेगमें मिताचरा, वोग्मित्रोदय, माधवीय,
विवादताण्डव और निर्णयसिन्धु इन सब ग्रन्थोंका मत
प्रचलित है।

मराठार प्रदेगमें मिताचरा, मयूख, निर्णयसिन्धु,
देमाद्रि, स्मृतिकोसुम और माधवीयका मत चलता है।

द्राविट-प्रदेगमें द्राविड और कर्णाटकभागमें मिता-
चरा, माधवीय और नरचर्माविलास एवं अश्वभागमें
मिताचरा, माधवीय, स्मृतिचन्द्रिका और मरधतो-
विलासका मत प्रचलित है।

मिताचरा ग्रन्थ काशी प्रदेगमें प्रचलित मतका संस्था-
पक है और श्रोकण निवन्धके कई जगह प्रामाण्य है।
काशीप्रदेगसे ले कर भारतवर्षीय अन्तरोपको दक्षिणी
सीमा तक मिताचराका आदर है और यह ग्रंथ प्रधान
निवन्धके जैसा गण्य और विशेष मान्य है। काशी
प्रदेगमें पराशरमाधव, व्यवहारमाधव, मित्रमित्रकृत
वारमित्रोदय, वारेश्वर भट्ट और वाजसुभट्ट प्रणीत मिता-
चरा टीका और कामलाकरकृत विवादताण्डव प्रादि
मिताचराके साथ विशेष आदर और व्यवहृत होता है।
वहाँ उन्हीं ग्रंथोंके मतानुसार दायविभाग सम्पन्न
होता है।

भारतवर्ष जब अंग्रेजोंके शासनाधीन हुआ, तबसे
ले कर आज तक संस्कृतमें तीन निवन्ध प्रसृत हुए हैं,—
पहला विवादाणवमेतु वारनहेटि'सके समयमें, दूसरा
विवादसाराणव और तीसरा विवादमङ्गलार्णव साडे
कार्णवालिसके समयमें। पहला निवन्ध मिथिलावासी

संज्ञात् सर्वत्र विवेकीयं चौर दूरात् विवेकीयानामो
 न्यायान्तरं तत्रैव ज्ञानमत्रे स एतत्तु कृपा है । किन्तु ये
 दोनो पद्य मर विनिमम जोम साधनके पाटिम चौर
 उपदेयानुसार रहे मये है ।

दायविभागका विषय दायभागमें हम प्रकार निहा
 है—कृष्णके मर पिछ्छनको जो पापधर्म कांट छिने है
 हमोका नाम दायभाग है । हम विभागमें जो धन प्राप्त
 होता है उसे ध्विय जोग विधादपद कहते है, यर्द्धतु यह
 धन से कर जाना प्रकारके विधाद उपहित होती है ।

पिछ्छे पापत धनका नाम पिछ्छन का सवितो धन
 है । पिताके मरनेके बाद उस पिछ्छनको पुत्रवत्त्वक
 कहते है । पित्रा चौर पुत्र से दोनो पद उपलभ्य मात
 है । हमने सामर्थ्य समस्त पवित्राविधोका शोध होता
 है । कौण्डि मन्वन्त्रे मात्रने जो समस्त सामर्थ्योके धन
 विभागमें भी दायभाग पदका प्रयोग है । इसी कारण
 दायभाग विधादपद अपक्रम करके मात्र प्रवृत्तिका भी
 धनविभाग निर्दिष्ट कृपा है । (एतत् इति श्रुतमवाराध
 क्तो वराधि प्रयोगे शोधः । जो दान करे इस व्युत्पत्ति
 दाय मन्व निहन्ता है । किन्तु यथादि धनमें यह लागू नहीं
 है । यत दा श्रापका प्रयोग शोध है, शतशामिक द्वारा
 बिध प्रकार दानाधोन स्वत्वनाम चौर परस्वतोत्पत्ति
 उत्पद्य होता है, उसी प्रकार मरने पर वा पतित होने पर
 पदवा धन्यासधर्म प्रवृत्त करने पर हम धनमेंसे हमका
 धन नहीं रह कर पुत्रादिका स्वत्व रहना है ।

पूर्व कामोका स्वत्वनाम धोमि पर पोछि तन्वन्वनाधोन
 त्रिप प्रथमै कत्व रहता है हमी धनमें दाय मन्व प्रसिद्ध
 है । पक्षी दाव निरूपण करके उसका विभाग निरूपण
 करना पानम्भक है । पक्षी यह देवना चाँदिये कि
 दायका विभाग यत्रवत्त्वका विभाग यत्रवत्त्व दायके सदित
 विभाग, इन धन एतोंमें कोल पद्य यत् है ? प्रथम पक्षको
 यत् नहीं कह सकते, क्यो कि ऐसा होनेसे दायविनाय
 होता है दूराप पद्य मो उपयुक्त नहीं है, स हुक्त कृष्णसे
 यह मेरा नहीं है, मेरे माँकेका विभाग धन है
 इस प्रकार व्यवहार कृपा करता है । स बन्धका विधिय
 इस प्रकार सामुदायिक स्वत्व उत्पद्य होनेके बाद हम
 कत्वके दूध विधियमें जो व्यवस्थापन होता है उसका

नाम विभाग है, यह मो नहीं कह सकते । एक म बन्ध
 एतका सामुदायिक स्वत्व उत्पद्य कराने समय एक
 दूरात् तुल्यवत्त्व मन्वन्व कृष्णका प्रतिबन्धक होता है, धनः
 ऐसा न कर एकके ध म शक उत्पद्य करता है, पोछि
 विभाग दो उत्पद्य व्यवहार होता है । फिर समस्त पित्र
 धनमें सब सुवोके सामुदायिक स्वत्वको उत्पत्ति चौर
 विभाजको व्यवधानमें स्वत्व गौरवमात्र है ।

श्रुति सुबन्ध पादि धनमें एक देगोपात्त यर्द्धतु हम
 ध ममें उत्पन्नकृष्णका यह दूध पशुत्वका है, यह पशुत्वकी
 नहीं है इस प्रकार धनधारण धनमन्वन्वत्त्वमें नहीं रहनेके
 ये शिथिल व्यवहारको पशुपशुत्वताका होना नहीं होनेक
 बराबर है । धार्मिक स्वत्वके शुद्धिकापातादि द्वारा
 शक्तिधरत्वको विभाग कहते है यत्रवत्त्व विभाग मन्वका
 यौमिक धर्म यह है-विधियमये माग धर्मात् कत्वज्ञापन,
 हमोका नाम विभाग है ।

पिताके मरनेके बाद पुत्र धनको पापधर्म कांट सकते
 है ऐसा कहनेसे क्यो शोध होता है कि विभाग धनमेंके
 पक्षसे हम धनमें पुत्रका जोई स्वत्व नहीं रहता चौर
 विभाजको मो स्वत्वका कारण नहीं कह सकते, कौण्डि
 उदासीन शक्ति चौर पक्षधर्मोके धनको शुद्धिकापातादि
 द्वारा विभाग करने पर स्वत्वनाम जो सक्तता है यह मो
 पक्षक है । इसीसे ऐसा सिद्धान्त कृपा है । पितादिसे
 मरनेके बाद जो यह धन हम लागोका है, ऐसा पुत्रगण
 कहः करते है चौर एक पुत्रादिका जगद विभा विभाग
 की स्वत्व हो जाता है । सुतरा पित्रादिको स्वत्व, जो
 पुत्र प्रवृत्तिके स्वत्व का कारण है, हमने पूर्वादि किछो
 प्रकारकी पक्षकति नहीं है ।

पूर्व स्वामोके मरने समय उत्तराधिकारोका जोधन की
 उद्य स्वत्वका कारण है । जोधनपदसे सन्तानको गर्भस्वा-
 न्त्वका भी धान होता है किधन मम स्वत्व जन्म क्षिने-
 को यथिया रहतो है । उत्तराधिके यत्राजंन्व व्यापारको
 यत्राजंन्व कहते है । इस धनन द्वारा जो उत्तराजित धन
 का कामो जाता है, हमका नाम यत्राज है । हमनिय
 उत्तराधिकारिताको जगद पुत्रका जन्म जो यत्राजपद
 वाच्य है, इससे पिताके धनोको पुत्रका पिछ्छनमें स्वत्व
 जो मो जाय तो भा ऐसा कहनेके पित्रादिको मरवापिया

नहीं है। इस कारण किसी किसी ग्रन्थमें लिखा है, कि जन्म ही अर्जन है। पितृधन पुत्रका है, ऐसा कहनेसे मनु प्रभृति स्मृतिशास्त्रके साथ विरोध उत्पन्न होता है। मनुने कहा है, कि पिता और माताके मरने पर पुत्र पैतृकधनको आपसमें बराबर बराबर बांट ले। पिता माताके जीतेजो पुत्र उस धनको आपसमें नहीं बांट सकते। पत्नी, पुत्र और क्रोतदान ये तीनों अधम माने गये हैं। लोग जो कुछ उपाजन करते हैं, वह धन उन्हींका होता है। अतः ऐसा स्थिर हुआ कि पिता और माताके जीवित रहने पर पुत्रोंका धनमें कोई अधिकार नहीं है, उनके मरने पर ही उनका स्वामित्व होता है। स्त्रियुपदेमें केवल मरणपात्र विवक्षित नहीं है, किन्तु पतितत्व प्रव्रजितत्वादिका बोधक है। क्योंकि स्वत्व विनाशक रूपमें क्या मरण क्या पातित्व, क्या संन्यास सभी समान हैं। नारदके वचनानुसार माताको रजोनिवृत्ति और बहनोंको शादेविवाह होनेके बाद तथा पिताके पतित वा गृहस्थायमर्राहत अथवा विषयविरक्त होनेके बाद पुत्रगण पितृधनको आपसमें बांट सकते हैं। इनमेंसे पतितके सर्वस्व दानादि प्रायश्चित्तशास्त्रमें विहित होने पर यदि पिता प्रायश्चित्त न करे, तो उनका पातित्व ही स्वत्व-विनाशक होता है, लेकिन यदि वे प्रायश्चित्त ले लें, तो उनका स्वत्व नाश नहीं होता।

“मातुर्निवृत्ते रजसि दत्तासु मणिनीपुत्र च।

विनष्टे वापशरणे पितर्युपरतस्पृहेः ॥”

(दायभाग)

पिताके मरनेके बाद बड़ा लड़का ही सर्वधनाधिकारी होगा अन्य लड़के नहीं, इसका क्या कारण ? मनुने कहा है, कि बड़ा लड़का ही समस्त पितृधन पावेगा, अथवा भाई पितृवत् उस बड़ेके अनुजौबी होंगे।

“ज्येष्ठ एवतु गृहीयात् पित्र्यं धनमप्रेषतः।

शोषास्तमुपजीवियुर्थयैव पितरं तथा ॥”

(दायभाग)

इस वचनके ज्येष्ठपदमें पिताका पुत्राप्त-नरकनिवर्त्तक पुत्र ही अभिप्रेत है, वर्त्तमान जीवितमें ज्येष्ठ नहीं है ऐसा मनुका वचन है। ज्येष्ठसे ही मनुय पुत्रवान् और

पितृभोक्तके ऋणसे मुक्त होता है। इसी कारण ज्येष्ठ पितृधन प्राप्त करने योग्य है। जिनके हाथ ऋणग्रस्त ही और स्वर्गका आनन्दनाम ही, वही ज्येष्ठ धर्मजपुत्र है, अन्य पुत्रोंको कामज वतलाया है। इसका तात्पर्य यह है, कि बड़ा भाई पिताको नाई अनुगत ममो भाइयोंका भरणपोषण करे। यदि वे इसमें असमर्थ हों, और छोटा हाँ भरण पोषण कर सके, तो बड़े कर्त्ता ठहराया जायगा। संसार प्रभृतिका रक्षणवक्ष्य करनेमें यदि छोटा असतावान् हो, तो ममोके इच्छाधीन बड़े छोटा स्वका भरणपोषण करेगा। इस कारण ज्येष्ठत्व सब धनाधिकारका कारण नहीं मान्म पड़ता, क्योंकि मनुने फिर एक जगह कहा है, भ्रातृगण मिल कर रहें अथवा धर्मवृद्धिको कामनासे पृथक् रूपसे रहें, यह उनकी इच्छा पर निर्भर है, इत्यादि कारणोंसे बड़ा भाई धनाधिकारी न हो कर सभा भाई पितृधनको आपसमें बराबर बराबर बांट सकते हैं। इस प्रकार पिताके स्वत्वनाशका काल एक और विभागका काल एक दूसरा है। यदि पिताका स्वत्व नाश न हो, तो उनकी इच्छासे ही विभाग हो सकता है। इन तरह पितृधन विभागके दो समय हैं, एक पिताके मरने पर और दूसरा पिताके विषयवैराग्य तथा मत्ताकी रजोनिवृत्ति होने पर यदि माताको न तो रजोनिवृत्ति ही और न पिता ही विषयानुरक्तने रहित ही, तो धनविभाग उनकी इच्छा पर निर्भर है। इस सिताक्षरामें जो तीन काल कहे गये हैं वे आदर्शनीय नहीं हैं। क्योंकि माताकी रजोनिवृत्ति और पिताका विषय वैराग्य एक समयमें नहीं होता।

कोई कोई कहते हैं, कि बड़ा पिताके कार्यात्म होने पर पुत्र पितृधन विभाग कर सकते हैं, किन्तु इस वचनका ऐसा अभिप्राय नहीं है। पिताके जीवित रहने पर पितृधनके ग्रहण वा दान अथवा गच्छित करनेका पुत्रका कुछ भी अधिकार नहीं है। पिताके अत्यन्त वृद्ध वा प्रधासो अथवा रोगग्रस्त होनेके बाद पैतृकधनकी और ख्याल करना चाहिये। उनकी अनुमति ले कर कार्य देच अन्य पुत्र भी सब काम काज कर सकते हैं। किन्तु पिता वृद्ध वा उन्मत्त अथवा रोगग्रस्त ही क्यों न हो जाय, तो भी ज्येष्ठ पुत्र ही पिताकी नाई अन्य भाइयोंके

बनको रक्षा करेगा निश्चिन्त छरी धनविभाग करनेका कोई अधिकार नहीं है। यह धनविभागी वचन ही ही समय उपयुक्त समझे नये, एक पिताको बहुत धीर दृष्टि रहनी चाहिए। यदि वे चाहे तो हर समय पुत्र-के बीच धनविभाग कर सकते हैं। पितामाताके मरने पर पुत्र पित्रहत्याको पापसमं बाँट से बर्खास्त माहस्य पापम धनके बिना नहीं चलता इसी कारण पुत्र पिता माताके रहने स्थायीन नहीं हो सकते। यदि ममी अपनी अपनी इच्छासे धन व्यर्ष करे, तो धन-व्यय हो जाता है और यह व्यायम नहीं चलता। इसी कारण पितामाताके शोचित रहने पर पुत्र स्थायीन नहीं हो सकते हैं। यतः इनको जोर-जुमाने पुत्रीका एक माय रहना निश्चय है। इनके मरनेके बाद वे विभाग हो कर प्रथम प्रथम रूपमें धर्म धर्म की हृदय कर सकते हैं। इसीलिये जीवित पितामाताका विभाग निषिद्ध बतलाया है। यह विभाग पुत्र, पौत्र और प्रपौत्रके बीच एकमात्र सम्भन्धा चाहिये। क्योंकि पुत्र अतःपितृक पौत्र और अतःपितृक पितामाताको प्रपौत्र इन तीनोंके जो पार्ष्ण्य-कारिण धनविपण्य और धनमोक्ष पित्रहत्या दानमें कोई नहीं है। त्रिभ प्रकार दत्तियक धौलकपुत्र पर रहने को पाया करते हैं, इनके प्रकार पिता पितामह और प्रपितामह से यह आगतसन्तानको अपनाया करती है और यह पाया रखती है, वि अन्तान मनु माँच याक, पुत्र और पापम द्वारा कपामि नकोदकोपनधने तथा मरामे धन कोपेका बाह करेगी। धनमज।

१३ वचनमें प्रपितामह प्रथमके लिये पुत्रपदके ही कर प्रपौत्र तक लाक्षणिक विज्ञान है। प्रपितामह तक पार्ष्ण्य यादकारो समझ कर प्रपौत्र पर्यन्तका वचन बराबर पबि-कार है। इसीसे जीवितपितृक पौत्र और प्रपौत्रके पार्ष्ण्ये धनविभाग प्रयुक्त पित्रहत्या प्रदान नहा करनेसे वे दाशविभाग नहीं हो सकते।

धनके पिताका भाग जो अनिष्यमें समझा होगा। फिर जहाँ एक पुत्र जीवित है और उसमें कोई एक पुत्र भी है वहाँ एक भाग एक पुत्रका और एक भाग एक सय पौत्रका होगा। इसका कारण यह है कि पितामह धन संवेद्यका मूल कारण है अनिष्यकोन अर्थ है, सुतराँ सय पिताक

त्रितने धनको स्वात्मिययोग्यता से, उत्तमके ही वे सब पबिकारो होयें। फिर 'अनेक सिपुधान्तु सिपुये मागधनना' इन वचनका अर्थमाय ऐसा नहीं है। यहाँ पर यदि एक वचन का प्रयोग किया जाय, तो ऐसा समझा जायगा कि वह धन पित्रहत्याके पिताका हो या, यतः पित्रहत्या ही वह धन होया, स्वात्पुत्रका कुछ भी नहीं। फिर 'पितृना मागधनना' इस वाक्यका अर्थ यदि पुत्रवत् भागही व्यवस्था करे, तो त्रिभ प्रकार पिता के दो भाग प्राप्त होते हैं उनमें प्रकार पित्रहत्याके दो भाग और उनमें स्वात्पुत्रका एक भाग होता है किन्तु यह भी मिटाचारनिष्ठ है। यतएव कहाँ एक मारके चौके पुत्र से और दूसरेको धनेक, वहाँ भी पित्रहत्याका भागही व्यवस्था करने चाहिये। यतः यह फिर कृपा कि पैतृक धन पति विपु करणा से, तो समो पुत्र हरा-बर बराबर भाग में ऐसा न हो कि किसीको कम मिले और किसीको अधिक।

यात्रवचनके अर्थ है कि पितामाताके मरने पर पैतृक धन और अल्पको पुत्रगण आपसमें समान भागमें बाँट से।

पिताको अर्थ के बाद यदि सहोदर मारके पित्रहत्याको बाँटना चाहे तो माताको मो पुत्रका बराबर भाग है। किन्तु सहोदर और बौध्माह दीर्घक बीच भाग विभक्त न कर दे। 'सर्वोदाहरिषो माया इत्यादि वचनाने भाव पदका सुम्भ अर्थ बनना है, न कि विभागा।

यदि माताके पास स्वामी और यह्यरादिका दिया कृपा कुछ भी जोधन न रहे, तो बचे पुत्रका समान पत्र भाग है। निश्चिन्त यदि श्रीधन दिया गया हो, तो भाग भाग देना उचित है। जहाँ पिता पुत्रीको समान भाग दे, वहाँ पुत्रकोना समो अर्थको सो जोधन नहीं रहने पर पुत्रका समान पत्र देवे। वचन विशिष्ये यकी प्रमाणित कृपा है कि पिता पुत्रहीना पत्रियोंको भी पुत्रके लैका पबिकारिषो बनाने, किन्तु पुत्रवतियोंको नहीं। पितामह धनविभागके समझ पौत्र पुत्रहीना पितामहीको समान पत्र दे, क्योंकि यत्रामे पितामहो-को माताके समान कहा है।

पबिकारिता अन्त्या सिधं विवाहयोर्य धन पा सकते

हे। कोई कोई कहते हैं, कि अविवाहिता कन्याको भ्रातृभागका चतुर्थांश मिलना उचित है। "समागामातर स्वेर्थां तुरीयांशश्च कन्याः।" (बृहस्पति) इस वचनके अनुसार माताको समान अंश और कन्याको चतुर्थांश मिलना चाहिये अर्थात् पुत्रका तीन भाग और अविवाहिता कन्याका एक भाग। किन्तु जहाँ स्वल्प धन रहे, वहाँ पुत्रोंका स्वामित्व है, अर्थात् पुत्र अपने अपने भागमेंसे कुछ निकाल कर चतुर्थांश कुमारको दे, अर्थात् अमंस्कृत भगिनियोंकी भी अपने अंशसे चतुर्थांश दे कर उनका संस्कार करे। इस वाक्यका तात्पर्य इस प्रकार है—भगिनियोंकी संस्कार-कर्त्तव्यता ही निखी गई है, अधिकारिणाधी कथा नहीं। प्रचुर धन होने पर भगिनियोंकी विवाहयोग्य धन होना चाहिये, कोई निर्दिष्ट अंश देनेकी व्यवस्था नहीं है। यदि सब जगह चतुर्थांश देनेका नियम कायम रखे, तो जहाँ चार पांच पुत्र और एक कन्या हो, वहाँ कन्याको प्रचुर धन हाथ लगेगा। फिर जहाँ चार पांच कन्या और एक पुत्र हो, वहाँ भी पुत्रकी कुछ भी नहीं मिल सकता। लेकिन यह उचित नहीं है क्योंकि सर्वत्र पुत्र ही प्रधान है। इन्हीं सब कारणोंसे भगिनीकी कोई निर्दिष्ट अंश न दे कर केवल विवाहयोग्य धन देना चाहिये। अविवाहिता भगिनियोंका ऋतुमतो होनेके पहले ही विवाह करना कर्त्तव्य है। इसीसे अंगाटिका विशेष नियम नहीं है, किन्तु उस संस्कारकार्यमें यदि सम्पूर्ण व्यय भी हो जाय, तो भी वह दोषावह नहीं है।

स्त्रीधन-विभाग—प्रथमतः स्त्रीधनका निरूपण करना चाहिए। शिशुवचनानुसार पित्रदत्त, मातृदत्त, पुत्रदत्त, भ्रातृदत्त, अध्वग्न्युपागत अर्थात् यौतुक धन, अधिवेदनलभ्य, मातृलाटि दत्त, शुल्क और अन्वाधेय ये सब स्त्रीधन है। विवाहके बाद भर्तृकुल और पितृमातृकुलसे तथा भर्ता और पितामातासे स्त्रीको जो धन मिलता है, उसी धनको अन्वाधेय धन कहते हैं। पिता और माताके सम्पत्तियोंसे और पितामातासे विवाहके बाद जो धन मिलता है तथा स्वामीसे और स्वामिभक्त अर्थात् श्वशुरादिसे जो धन प्राप्त होता है, उसका भी नाम अन्वाधेय है। विवाहके समय यौतुक धन मिलता है, वह सन्तान

सन्ततिके नहीं रहने पर स्वामीका होता है। नारदने अध्वग्नि, अध्यावाहनिक, भक्तृदत्त, भ्रातृदत्त, पितृ और मातृदत्त इन ऋः प्रकारके धनकी स्तोत्रन कथा है। विवाहकालमें अग्निके सामने स्त्रियोंकी जो दान दिया जाता है, वही अध्वग्नि नामक स्त्रीधन है। पोहरमें मसुरान जाते समय स्त्रीको पितृकुल वा मातृकुलसे जो धन मिलता है, उसे अध्यावाहनिक स्त्रीधन कहते हैं। भर्तृदाय शब्दसे भर्तृदत्त धनका बोध होता है, मंक्रान्त धनका नहीं। पतिके मरण पर स्त्री अपने गृहानुसार भर्तृदाय खर्च कर सकती है। किन्तु पतिके रहते वह कुछ भी खर्च नहीं कर सकती।

याज्ञवल्कर कहते हैं, कि पितृदत्त, मातृदत्त पतिदत्त, भ्रातृदत्त, अध्वग्न्युपात और अधिवेदनिक ये ऋः स्त्रीधन है। द्वितीय पक्षमें विवाह करनेके नित्य स्वामी पहलो स्त्रीको जो पारितोषिक देता है, उसका नाम अधिवेदनिक है। (अधिवेदन शब्दका अर्थ बहुविवाह उपलक्षमें जो कुछ मिले, इसी व्युत्पत्तिसे अधिवेदनिक शब्द निकला है) अर्थात् ग्रामाच्छादनावशित धन, अन्नद्वार, शुल्क, और सूट ये सब स्त्रीधन है। स्त्री वेरोकटोक इन सब धनोंका दानविनयादि कर सकती है। स्त्रीधनका प्रकृत लक्षण यह है—स्त्री स्वामीको कुछ भाग्येष्टा न कर स्वयं जो धन दान विश्रय कर सके, उसको स्त्रीधन कहते हैं।

स्त्रीका शिल्पकर्मने तथा पितृमातृ और भर्तृकुल भिन्न अन्य किसी व्यक्तिसे जो कुछ मित्र, वह भी स्त्रीधन कहलाता है। कात्यायन ऋषिने कहा है, कि यथा-विवाहिता हो वा कुमारो हो अथवा पतिके घरमें वा स्वयं पतिसे जो कुछ प्राप्त हो, उसे सौदायिक नामक स्त्रीधन कहते हैं। इस सौदायिक धनमें स्त्रीका पूरा अधिकार रहता है। स्वामी यदि दुर्भिक्षादि सङ्कटमें पड़ जाय और जोषिकानिर्वाह करनेका कोई उपाय न रहे, तो उसी हालतमें वे स्त्रीधन ले सकती हैं, अन्यथा नहीं। दुर्भिक्षके समय, आवश्यक धर्मकार्यमें और रोग-ग्रस्त होने पर तथा उत्तमर्ण ऋण परिशोधके लिये कारारोध करनेके बाद स्वामी विपद्ग्रस्त हो कर यदि स्त्रीधन ग्रहण करे और पोछे उसे लौटा न दे, तो कोई

देव नहीं । किन्तु पूर्वीक दुर्घटनाज्योत बहि
रत्रोहन पदच करे तो पक्षि उभे परिपोष कर देना
चाहिये, नहीं तो वह राजाचे दण्डनीय होता है ।
इसको जोखन से कर यदि परदाराधि लाव महनाम
तथा पूर्वकोषी पत्रसे ला करे, तो राजाको उचित है
कि उसके जोखन बलपूर्वक से कर खीको दिना दे ।
माताह मरने पर मजोहर भाई पौर बहन धन कोटि
मिल कर पयोतुव बनको पापसमें बराबर बराबर बांट
ये । जोखनमें उनके लड़कोंका तथा पवित्राहिता
बन्धापोंका बच रहता है । किन्तु विवाहिता बन्धा
पुत्रके रहते पयोतुव बन नहीं पा सकतो ।

दाशाधिकारक्रम । स्वल्पभारण ।—पूर्व स्वासीके
मरने समय उत्तराधिकारोका जोखन ही तत्कालका
प्रतिकारण है । यहाँ पर जोखनके पक्ष में मर्मावस्थाका
मो मोह होता है । किंचत्त समझके तथा संनिको ही
पक्षका रहती है । गर्भस्थके भूमिठ होने पर बसका
माय्य बन उसके बन्धु का मिलके धाय तब तक ध्युर्द्वार
होना चाहिये ।

उद्देहरहित व्यक्ति (जिनका बिलो प्रकारका उद्देह
न पाया जाय) बनमें बारह वर्ष होनेपर पर समके
उत्तराधिकारोका स्वत्व जो जाता है ।

मरकपातिव्य, पात्रमास्तर बमन पौर उपेया द्वारा
सनेका स्वत्वग्राह होने पर उप बनमें पुत्रका पविचार
रहता है । पौरसमुक्ते जन्म लेनेके पहले पड़ोत दत्तक
पौर मनुष्यके द्वारा विपद्यमागी होता है । सभी पौरसमुक्ती
का पित्रवर्षमें समान पविचार है । जिस पौत्रका पिता
तथा जिस प्रपौत्रका पित्रपितामह मर गया हो वे
(बनेका) पुत्रके धाय पयना पयना पितृयोव्य प य
विभाव कर है । पौत्रोका पित्रसुधार मान मिलेया न
कि स क्यानुकार ।

पत्नीका पविचार—पुत्र पौत्र पौर प्रपौत्रके समानमें
पत्नी कनाधिकारिको होती है । पत्नी यदि व्यक्तिपरिको
ही तो पविचारिको नहीं हो सकती । जो बन पतिके
पविचारमें था, पत्नी तको बनको पविचारिको होगी ।
पति मरिचमें जिस बनका उत्तराधिकारी होता है, पत्नी
उप बनको पविचारिकी नहीं होगी । यदि दो बा दोने

पविच पत्नी रहे, तो सर्वोका बराबर बराबर हिस्सा
होना । पतिवर्षमें यदि बिलीको ध्युर्द्वार हो जाय, तो उसके
पविचान पतिवर्षमें बीवित पतिवर्षका पविचार सम
भना चाहिये । पत्नी पतिका किंचत्त धन भोग कर सकतो
है, दान विव्यय का बन्धक रक्षणका उभका कोई पवि
चार नहीं है । अपुत्रा पत्नी विपद्यमाभा हो पतिवर्षमें
वास कर यान्त्योवन बन भोग करे, पक्षि उसके मरने
पर पतिका उत्तराधिकारोके भन पदच करेगा । यदि
दोराज्यादिके कारण पत्नीका पतिवर्षमें रहना नकिन हो
जाय, तो पितृ मरुति पुत्रमें रह कर वह पतिका धन
पाषेणै, किन्तु व्यक्तिपरिकी होने पर उसे पतिका धन
नहीं मिलेगा । श्रीम ज्ञाना धनमात्रमें तत्पूर्वव्यामीके
सम्बन्धके जो उत्तराधिकारो होनेने पत्नीवर्षमें पविच
रिकी श्रीमात्रका बौध होता है । जो पतिवर्ष ज्ञाना धनका
केवल उपनीय कर सकतो है, पययय किन्तो ज्ञानतके
नहीं कर सकतो । यहाँ उपनीयका पक्ष विकास नहीं
है, बर दीव्य धारकोपुत्रक पयययय है, पक्ष मरनेके लिये
उन बनके से सकतो है । पतिका धन यदि उतना सापो
न हो जिसके पत्नी तरफ खोवन कारण कर रहे, तो
पतिका विपद्य बन्धक दे सकतो है यदि उसके भी पुत्र
न करे, तो विव्यय करनेका भी उसे पविचार है । पति
को पारमौलिक सिद्धांके लिये यदि वह दान विव्यय करे,
तो वह भी सिद्ध होता ।

पतिके स्वययोव्य, बन्धाके विवाह, पययय पौत्र परि
कारण प्रतिपालन पययय पय्यावर्षक चितकार्यमें
दानादि करनेके वह धन मित्र होता ।

मरिच उत्तराधिकारी यदि पत्नीका पयययान
पय पययय करत पययय कायका लक्ष्य दे या देनेको राजो
हो, तो वह पतिका विपद्य विव्ययदि नहीं कर सकतो ।
यदि वह तो वह मित्र नहीं होता । पतिके उपकारार्थ
दान पौर भोगके सिवा यदि धन दूसरे दानादिमें खर्च
हो, तो वह पविच माना जाता है । मरक पक्ष कर यदि
जोखन कारण पौर पतिके स्वययोव्यदि पययय करत
काय सम्पन्न न रहे, तो वह भी यायययय है । किन्तु
पारमौलिक काम्यविपद्यके लिये किंचत्त जोड़ा हो प य
दानादिमें खर्च करना पविचन है लक्ष्य नहीं । पत्नी

यदि ग्रामः विकृत दानादि करे, तो उसके पतिके उत्तराधिकारोगण इसमें प्रतिबन्धक हो सकते हैं, किन्तु जो मुख्य अधिकारी है, वे ही रोकटोक कर सकते हैं। जो गौण उत्तराधिकारी है उन्हें छेड़छाड़ करनेका कोई अधिकार नहीं है।

धनस्वामिके उपकारार्थ पत्नी यदि अर्थात्तरूप दानादि करे, तो भविष्य उत्तराधिकारिको सलाह नहीं लिये बिना भी वह सिद्ध होगा।

पत्नी जिस तरह स्यावर धनका अपहार नहीं करती, उसी तरह अस्यावर धनका भी अपहार नहीं कर सकती। क्योंकि दोनों प्रकारके धनसे ही अन्तमें पतिका उपकार हो सकता है। इसी उद्देशसे प्रचलित दाय-भागान्त अर्थोंमें स्त्रीके अधिकृत संक्रान्त स्यावर अस्यावर धनसे कोई विशेषता नहीं बतलायी है।

धनस्वामिके अनुपकारके पत्नी यदि भविष्य उत्तराधिकारीकी सम्पत्तिके बिना दानादि करे, तो वह अमिद होता है।

पत्नी यदि पतिसंक्रान्त धनको अभियोगादि द्वारा उद्धार कर भो ले, तो भी उस धनमें उसकी पहलेसे अधिक जमता नहीं होता। पत्नी जिस तरह पतिका संक्रान्तधन दानादि नहीं करती, उसी तरहसे तदुपघातसे उपाजित समस्त धन भी दानादि करनेका उसे अधिकार नहीं है। पत्नीके संक्रान्त धनका दानादि अमिद होने पर वह धन पत्नीके देखलमें ही रहैगा। (यदि वह पत्नी अभिचारादि कोई अन्याय कर्म न करे, तब)

उत्तराधिकारीको उगनेके उद्देशसे स्त्री यदि किसी तरह पतिका धन दूसरेके हाथलगा भो क्यों न दे, तो वह अमिद होगा। पत्नी पतिके पिढ्यादिको सलाह ले कर अपने पिढ्याट-कुलमें भी दान दे सकती है। किन्तु दानादि विषयमें विधवा पतिकुलके ही अधोन रहैगी।

पत्नीके मरने पर उसके जीवित निकट सम्बन्धी ही पीछे उत्तराधिकारी होगे। पत्नीके अभावमें दुहिता अधिकारिणी होती है। दत्ता और अदत्ता कन्याके रहने पर अदत्ता कन्या ही धनाधिकारिणी होती है। यदि अविवाहिता कन्या न रहे, तो पुत्रवती और सम्भावित-

पुत्रा दुहिता दोनोंका बराबर अधिकार होगा। कन्या और पुत्रहीना दुहिता अधिकारिणी नहीं हो सकती।

जिस कन्याके पुत्र नहीं पर पौत्र है, जिसके पुत्रकी मृत्यु हो गई है तथा जिसके केवल कन्या है, वह कन्या नहीं होने पर भी धनाधिकारिणी नहीं हो सकती।

अधिकारप्राप्त दुहिता चाहे कन्या ही, चाहे विधवा ही अथवा वह कन्यामात्र ही प्रसव करे, उसका स्वत्व नाश नहीं होता।

दायाधिकारसे अयोग्य दुहिताको यदि कोई जीविका न रहे, तो सङ्गतिके अनुसार उसे अन्नवस्त्र देना उचित है। [यदि अधिकारयोग्या अनेक दुहिता हों, तो समोका समान अधिकार होगा। उनमेंसे किसी एकके अभावमें उसका अधिकृत धन जोवित सभी अधिकारिणियोंका होगा। नष्टको संक्रान्त धनको शास्त्रीक नियमके भिन्न दानविक्रय वा बन्धक नहीं दे सकती, यदि दे, तो वह जायज नहीं होगा।

अधिकारयोग्या दुहिताने अभावमें दौहित्रका अधिकार होता है। दुहिताका अभाव यह पद वहा पर पुत्रवती और सम्भावितपुत्रा दुहिताका अभावज्ञापक है। क्योंकि कन्या और पुत्रहीन विधवा दुहिताने रहने पर भी दौहित्रका अधिकार देखा जाता है।

मातामहका धनाधिकारी हो कर, यदि दौहित्रकी मृत्यु हो जाय, तो उस संक्रान्त धनमें उसके पुत्र आदिका अधिकार होगा। मातामहका कोई सम्बन्धी अधिकारी नहीं हो सकता। अनेक दौहित्रके रहने पर सभीका मातामह धनमें समान अधिकार है, वह विभाग उन्हींके संख्यानुसार होगा, न कि उनके माहस संख्यानुसार।

दुहिताका दत्तक मातामहके धनका अधिकारी नहीं हो सकता। दौहित्रके अभावमें पिता और पिताके अभावमें माता धनाधिकारिणी होती है। विमाता अधिकारिणी नहीं होती। माता शास्त्रीक नियमके अतिरिक्त दानविक्रय आदि नहीं कर सकती है। माताके अभावमें भ्राताका अधिकार, सौतेल भ्राताके अभावमें वैमात्रेयभ्राताका अधिकार होता है। अविभक्त स्यावर धनमें सौतेल और वैमात्रेय भ्राताका समान अधिकार है। गुणवान्

दत्तक यदि पोरमपुत्र पर्याप्त धनो ही मातासे पदप किये जाय, तो वह भी सहीतरके रूपमें गिना जाता है। फिर यदि बनीको माता उसे दत्तक न बनाये, तो उसकी निश्चयी बनीके बँसार्थीयमें होने है। माईका धन या धर यदि माईकी मृत्यु हो जाय, तो उससे अपने लड़के की लक्ष बनने पबिकारी होती है। यदि सहीतर पोर बँसार्थीय भ्राता भृत भ्राताके स दत्त न हो, तो सही-तरका धन सहीतर ही पावेगा। जहाँ बँसार्थीय म सृष्टि पोर सहीतर पम सृष्टि हो, वहाँ दोनों की दायधिकारी होती है।

बदि सहीतर पोर बँसार्थ दोनी ही न सृष्ट ही, तो केवल सहीतर ही धन पावेगा। सहीतरमेंसे किसी एकके सँसृष्ट होने पर वही पबिकारी होता है। केवल बँसार्थीय भ्राताके मरने पर उनमेंसे जिनकी मृतके साथ प सृष्ट का, वहसे वही लक्ष धनका पबिकारी होय। समर्थ धमाधमें पम सृष्टि।

भ्रातृगण विभक्त हो कर यदि पक्षे प्रेममय मिश्र भाव पोर फिर गंभी विभक्त हो जाय, तो बराबर बराबर धन बाँट ले, वहीकी पबिकार नहीं मिलेगा।

भ्राताके साथ भ्रातृपुत्र एक समय पबिकारो नहीं होते। बँसार्थीय भ्राताके धमाधमें सहीतर भ्राताका पुत्र पबिकारो होता है। सहीतर भ्राताके पुत्राधाममें बँसार्थीय भ्राताका पुत्र पबिकारो होता। यदि सहीतर भ्राताका कोई पुत्र न सृष्ट पोर कोई पम सृष्ट हो, तो जो न सृष्ट है, वही लक्ष धनका पबिकारो होता है। लक्ष प्रकाय बँसार्थीय भ्राताका कोई पुत्र न सृष्ट पोर कोई पम सृष्ट हो, तो जो स सृष्ट है, वही पबिकारो होता। यदि सहीतर पोर बँसार्थीय भ्राताके पुत्र सँसृष्ट बचका पम सृष्ट हो, तो मो दोनों पवस्थामें सहीतर भ्राताका न सृष्ट पुत्र पबिकारी है।

मनोजिबे धमाधमें माईके पक्षका पबिकार है। भ्रातृपौत्रके पबिकारमें भी सहीतर पोर बँसार्थीय लक्ष एक सँसृष्ट पोर पम सृष्टिका नियम लागू है। धनपियवक भ्रातृपुत्र पोर धनपियवपितामहका भ्रातृपौत्र यदि पक्ष ही तो सहीतर पोर बँसार्थीय स सृष्ट पोर प सृष्ट लक्षपुत्र पबिकार पोर विभाग होगा।

सेजिन वह विभाज बनने म स्थापुसार होगा, पितृ व स्थापुसार नहीं।

भ्रातृपौत्रके धमाधमें पितृदोहिजका पबिकार है। सहेतर पोर बँसार्थीय दोनों प्रकारके धनोपुत्राका समान पबिकार होगा।

विभादिबे की दोहिजगण धनी पयका तदुत्तरादि कारोकी पबिकारके निश्चयकाममें जोवित वा गर्भस्थित है, वें ही धन धनके पबिकारो हंगि। धनके बादका मर्मक पबिकारो नहीं होगा। पितृदोहिजके धमाधमें भ्रातृ-दोहिज पबिकारो निना जाता है।

भ्रातृ-दोहिजके धमाधमें पितामह, पितामहके धमाधमें पितामही, पित सहीके धमाधमें पितृसहीतर, पितृ सहीतरके धमाधमें पिताके बँसार्थीय माई, पितृबँसार्थीयके धमाधमें पितृसहीतरके पुत्र पोर पितृसहीतरके धमाधमें पितृबँसार्थीय भ्रातृपुत्र धनाधिकारो होता है।

पितृबँसार्थ भ्रातृपुत्रके धमाधमें पितृसहीतरका पौत्र, पितृबँसार्थीय भ्रातृपुत्रके धमाधमें पितृसहीतरके पौत्र, पितृसहीतरके पौत्राधाममें पितृबँसार्थीय भ्राताके पात्र पोर पितृबँसार्थीयके भ्रातृपौत्राधाममें पितामहके दोहिजका पबिकार है।

पितामहके दोहिजाधाममें पितृमहके दोहिज, पितृमहके दोहिजके धमाधमें प्रपितामहका पबिकार है पोर प्रपितामहके धमाधमें प्रपितामही धनाधिकारिको होती है।

प्रपितामहके धमाधमें पितामहका सहीतर, बँसार्थीय माई पोर धनका पुत्र तथा पौत्र यथाक्रमसे पबिकारी होता है।

पितामहके पौत्रके धमाधमें प्रपितामहके दोहिज का पबिकार है।

प्रपितामहके दोहिजाधाममें पितामहका भ्रातृ दोहिज धन पावेगा।

पितामहके भ्रातृदोहिजाधाममें मातामह धनाधिकारो हंगि।

मातामहके धमाधमें मामाका पबिकार है। मामाके धमाधमें मामाका पुत्र पबिकारो होगा। मामाके पुत्राधाममें मामाका पौत्र धनाधिकारो होगा।

सामाजे वीत्राभावमें मातामहका दौहित्र धनाधिकारी होता है।

मातामहके दौहित्राभावमें प्रमातामह, प्रमातामहके अभावमें उनका पुत्र, प्रमातामहके पुत्राभावमें उनका पोत्र, पोत्रके अभावमें प्रपोत्र, प्रपोत्रके अभावमें उनका दौहित्र और दौहित्रके अभावमें वृद्धप्रमातामह धनाधिकारी होते हैं।

वृद्धप्रमातामहके अभावमें उनके पुत्रका, वृद्धप्रमातामहके पुत्राभावमें पोत्रका, पोत्रके अभावमें प्रपोत्रका और प्रपोत्रके अभावमें उनके दौहित्रका अधिकार है। धनोका भाग हो, इस प्रकार पिण्डदानकर्त्ताके अभावमें मकुल्य अधिकारी होता है। पोछे प्रपोत्रका पोत्र और उसके बाद प्रपोत्रका प्रपोत्र अधिकारी होता है। उसमें अभावमें वृद्धप्रपितामहादि ऊर्ध्वतन सकुल्यका और उनको सन्ततिर्योका यथाक्रम अधिकार है। अर्थात् पहले वृद्धप्रपितामह, अभावमें उनके पुत्र, पोत्र, प्रपोत्र और दौहित्र क्रमशः अधिकारी होता है। इनके अभावमें अतिवृद्धप्रपितामह, उर्ध्व पुत्र, पोत्र, प्रपोत्र और दौहित्र क्रमशः अधिकारी होता है। उनके अभावमें अत्यतिवृद्धप्रपितामह, उनके पुत्र, पोत्र, प्रपोत्र और दौहित्र क्रमशः अधिकारी होता है। बहुप्राति सकुल्य और वान्यवके रहने पर उनमेंसे जो अधिक निकट सम्पर्कीय है, वही अपुत्र व्यक्तिका धनाधिकारी होगा। इस प्रकार सकुल्यके अभावमें समानोदकका अधिकार होगा।

चौदह पीढ़ी तकके प्रातिको समानोदक कहते हैं। समानोदक और सकुल्यको नाई' आसक्ति अर्थात् पुत्र, पोत्र और प्रपोत्रादि क्रमशः धनाधिकारी होता है। समानोदकके अभावमें आचार्य अधिकारी होता है। आचार्याभावमें शिष्य, शिष्यके अभावमें सहवेद्याधी (ब्रह्मचारी, उसके अभावमें स्वग्रामस्य सगोत्र, सगोत्रके अभावमें स्वग्रामस्य समान प्रथम अधिकारी होता है। उक्त सभीके अभावमें वेदेष गुणयुक्त उस ग्रामस्थित ब्राह्मणका अधिकार है। अगर इसका भी अभाव हो, तो ब्राह्मण छोड़ कर दूसरेके धनमें राजा अधिकारी होते हैं। गुणवान् ब्राह्मणके अभावमें ब्राह्मण भिन्न धनमें ग्रामस्य ब्राह्मणका अधिकार है। स्वग्रामस्य

गुणवान् ब्राह्मणके अभावमें दूसरे ग्रामके गुणवान् ब्राह्मणका अधिकार होगा। सम्भ्रान्त ब्राह्मणके धनमें सामान्य ब्राह्मणका अधिकार है। यदि सदृशब्राह्मणका प्रभाव हो, तो ब्राह्मणका धन सामान्य ब्राह्मणके हाथ लगेगा।

पहले स्वग्रामस्य सामान्य ब्राह्मण, उसके अभावमें भिन्न ग्रामस्य सामान्य ब्राह्मण अधिकारी होते हैं।

शास्त्रानुसार आचार्य धनाधिकारी हो सकते; लेकिन गुण नहीं। धनी ब्राह्मणके नहीं होने पर उत्तराधिकारोंके अभावमें उसका धन राजाका होता है।

मृतधनीकी और्ध्वदेहिक क्रिया करनी चाहिये। मृत व्यक्तिका जो धन पावेगा, वही उसके और्ध्वदेहिकादि कार्य करेगा। यदि एक व्यक्ति धनाधिकारी हो और दूसरा और्ध्वदेहिकादि क्रियाधिकारी हो, तो धनाधिकारी व्यक्ति धन दे कर क्रियाधिकारी द्वारा वह कार्य करावेगा।

वानप्रस्थादिका धनाधिकार-ब्रह्मचारीके धनमें आचार्यका अधिकार है।

वानप्रस्थके धनमें एक तीर्थवासी अथवा एकाग्रम-वामी धर्मभाता अधिकारी होगा। उसके अभावमें एकत्रवामी अथवा एकाग्रमो अधिकारी होते हैं। नैष्ठिक ब्रह्मचारीके धनमें आचार्यका अधिकार है।

उपकुर्वाह ब्रह्मचारीका धन उसके पितादिका होता है।

कुलाचारादि—यदि किसी देशमें, प्रान्तमें, ग्राममें वा समाजमें, जातिमें वा कुलमें कोई आचार बना आ रहा हो, तो पूर्वोक्त ममस्त नियमापेक्षा मान्य है। किन्तु जो आचार बहुकालका बहु पुरुषसे एकादिक्रम चला आता हो, वही पूर्वोक्त नियमकी अपेक्षा विशेष मान्य होगा। जो आचार बहुकालमें क्रमिकरूपमें न आवे, वह उतना मान्य नहीं है। किन्तु बलसे वा अधर्माचरणसे यदि आचारका अवरोध हो, तो उसे आचारभङ्ग नहीं कह सकते। जोविकाविषयक मृत धनीके त्यक्त विषयसे उसका अवश्य पोषण अथवा रक्षण पा सकता है।

मृत धनीके त्यक्त विषयसे उसको अविवाहिता भगिनो वा कन्या विवाहोचित धन पानेकी अधिकारिणी है।

पत्नी का शरीर परिवारका यदि कोई पसुचित कारण-
से चपत कर दिया गया हो, तो परिवार कर्त्तव्ये ज्ञानमें
तथा उसको मुख्य मूल्य मान कर उस करने पर प्रवृत्त
पावेगा । जो पोष्यव्यक्ति व्यायुक्त परिवारमें रहे और
पाश्चात्य न पावे, वह प्रवृत्त हो कर प्रवृत्त पावेगा ।
अतः शरीरके धर्मोपकार वह ज्ञान जतना हो जन पावेगा
अधिक उचित गुणवत्ता हो । शरीर प्रवृत्त हो
निर्दिष्ट ऐसा न हो कर विषय का जो रूप पर दूसरे दूसरे
पाश्चात्य एक जन का भाव जन देना होगा

यदि कोई स्त्री धर्मिणिको कामना न कर पिता
माता या कुटुम्बके धर्ममें पावेय है तो भी वह प्रवृत्त
व्यक्त पतिव्रत पतिव्रतिका है । पतिव्रत यदि ऐसा
पावेय हो, कि पतिव्रतके धर्ममें ही पाया जाता
हम मिस्रगा, तब वह पतिव्रत का कारण है कि जो दूसरे
ज्ञानमें का कर भाव कर, तो वह पाश्चात्यका पति-
व्रतिका नहीं हो सकती ।

पतिव्रत विभागमें पतिव्रतिका के अति प्रवृत्त शरीरके
विषयके प्रवृत्त पावेगा । दास्यविकारो उक्त कर्त्तव्यों
को यदि प्रवृत्त न दे, तो राज्याको देना देना
उचित है ।

पतिव्रतिका के अतिव्यक्त शरीर न कर तब का जो न
जाह, तब तब ही पाश्चात्यका न पावेगा ।

जनकी पसुता किन्हींको यदि ही सदाचारो हो, प्रवृत्त
व्यक्त मिस्रगा, धर्मिणिकी होने पर न हो ।

पतिव्रत विभाग ज्ञान ।—पिता स्त्रीपतिव्रत जनको
कर पावे, विभाग कर प्रवृत्त है । किन्तु पति-
व्रत विषयमें माताकी रजोनिवृत्ति होने पर जन पिताको
दृष्टा हो, तब ही विभाग कर सकती । (माता शब्दके
विभागाका भी धीव होता है)

अतः माता और विभागाको रजोनिवृत्ति बाद
प्रवृत्त पिताको रजोनिवृत्ति शब्द होनेके बाद जन पिताकी
दृष्टा हो, तब ही विभागाधर्मको नाह सकती है ।
पिताके जन विभाग हो जानेके बाद यदि कोई मातृव्यक्त
है तो वह भी बराबर विभागा पा सकती है ।

विद्य कर्त्तव्य स्त्रीपतिव्रत जनविभाग- स्त्रीपतिव्रत
जनका विभाग पिताको दृष्टा पर निर्भर है । स्त्रीपति-

व्रत जन पिता विभाग पावे, जतना ही सकती है ।

किन्तु पुत्रके शुचिपतिव्रतके लिये उन्मत्तपाय प्रवृत्त
विद्यो पुत्रके पतिव्रत परिवारका पालन करनेके लिये
प्रवृत्त कोई पुत्र प्रवृत्त हो एक जग मक्ति पावेके
कारण यदि पिता न्यूनव्यक्त विभाग करे प्रवृत्त किन्तु
पुत्रका पतिव्रत और किन्तुको जन दे तो भी वह विभाग
धर्मता विद्य होगा । किन्तु यदि शुचिपतिव्रतका कारण
न हो, तो स्त्रीपतिव्रत जनका विभाग धर्म उन्नत
नहीं है ।

अतः व्याधि, स्त्रीपतिव्रतके कारण पाश्चात्यव्यक्त हो कर
प्रवृत्त कामादि विषयमें अतः पाश्चात्य हो कर यदि
पिता एक पुत्रको पतिव्रत और दूसरेको जन भाव दे,
प्रवृत्त कुत्र भी न दे तो वह विभाग पतिव्रत होता है,
किर विता यदि शुचिपतिव्रतके कारण न्यूनव्यक्त मान दे,
तो वह धर्म उन्नत और विद्य होता है । यदि स्त्रीपतिव्रतके
पाश्चात्यव्यक्त हो कर प्रवृत्त नाह दे प्रवृत्त किन्तु
पुत्रको कुत्र भी प्रवृत्त न दे, तो वह भी पतिव्रत माना
जाता है । शुचिपतिव्रतके कारण तब रोगादिके
लिये अतिव्यक्तता मित्र केवल दृष्टाके यदि न्यूनव्यक्त
विभाग कर दे, तो वह धर्म उन्नत नहीं है, पर विद्य
है । यदि पुत्र एक ही समय अपने अपने विभागाके
लिये मार्गना करे तो मज्जाका विद्य कारण पिता विषय
विभाग न करे । समा पुत्रोंको समान मान देनेके
पुत्रहीना पतिव्रतको भी पुत्रके बराबर मान देना उचित
है । ज्ञानो स्त्रीपतिव्रत न दे कर पतिव्रतको भी समान प्रवृत्त
देवे । यदि स्त्रीपतिव्रत न हो, तो जिस प्रवृत्तको जितना स्त्रीपतिव्रत
दिया गया है पिता जतना हो जन पसुता स्त्रीको भी
दे । यदि स्त्रीपतिव्रत न हो, तो उन्हें पुत्रका समान प्रवृत्त
देना उचित है । किन्तु पुत्रोंको न्यून वंश योग जन्य
पतिव्रत होनेके पिता पुत्रको न पतिव्रत प्रवृत्त न प्रवृत्त
पुत्रके बराबर भाव देवे । स्त्रीपतिव्रत होने पर पसुता
पतिव्रतको धारणा देना चाहिये ।

मार्ग, माता प्रवृत्त पितामहीका सम्बन्ध प्रवृत्त प्रवृत्त
धारा प्रवृत्त हो जाय, तो मार्ग पुत्रः स्त्रीपतिव्रत पतिव्रत-
कारिको है । यदि भीमान्यदि १६ और शरीरका प्रवृत्त
जन भीममें जन हो जाय, तो ही पुत्रादिपत् मार्गके भी

ले सकते हैं। पत्नीको अपने विभागमें जो धन प्राप्त हुआ हो, उसे वे बिना न्यायकारण टानविक्रय नहीं कर सकते और न बन्धक हों दे सकते हैं। ये निवन् मोग मात्र कर सकते हैं, पछि वह धन पूर्वस्वामिके उत्तराधिकारिका होगा।

स्वोपार्जित और पैतामह-धननिर्णय।—जो धन अटिमें पितासे उपार्जित हुआ है वह उसका प्रकृत उपार्जित है। पितामहका धन जो जनिके बाद पिता यदि उसे निज परिचय द्वारा उधार करे, तो उस धनको वे स्वोपार्जित धनकी नाई व्यवस्था कर सकते हैं। पैतामह स्थावर धन रहने पर अस्थायर पैतामह धनको वे स्वोपार्जित धनके जैसा काममें ला सकते हैं। पिता अपने पितासे जो भूमिनिवन्ध और टासाटि पाते हैं, वही प्रकृत पैतामह धन है। क्रमागत धन ही पैतामहवत् व्यवहारार्थ है।

मातामहादिकी न्यु होने पर जो धन हाथ नगता है, वह स्वोपार्जित धनको नाई व्यवहृत हो सकता है।

पिटकृत पैतामह धन विभाग—पैतामह धनको यदि पिता विभाग करे, तो एक एक अंश अपने पूर्विके और दो अथवा दोसे अधिक अंश आप लेवे। पूर्विके गुणवत्त्वादिके कारण पिता पैतामह धनको न्युनाधिक विभाग नहीं कर सकते और इस प्रकार विभाग करनेका उन्हें अधिकार भी नहीं है। पिता जितना पुत्रको देवे, उतना ही पिटहोन पौत्रको और पिता-पितामहहीन प्रपौत्रको भी उनके पिटपितामह योग्यांग देवे।

पुत्रार्जित धनमें पिताका अंश।—पुत्रार्जित धनमें भी पिताके दो भाग हैं। पिटद्रव्यके उपघातमें पुत्र कटक अर्जित धनका आधा पिताका और इस प्रकार जो उपार्जन करते हैं, उनका दो अंश और अन्य पूर्विके का एक एक अंश होगा।

पिटद्रव्यके उपघातके बिना अर्जित धनमें पिताका दो अंश और पुत्रका भी उतना ही होगा। अन्याय्य पूर्विके इस धनमें कुछ भी नहीं मिलेगा।

विद्याविहीन पिता जनकता मात्र दो अंश पावेगे। यदि कोई पुत्र निज परिचयसे और किसी भाईके धनके उपघातसे उपार्जन करे, तो उस धनमें पिताका दो

अंश और उन दो पुत्रका एक एक अंश होगा। फिर यदि वह किसी भाईके धन द्वारा तथा निज परिचय और धन द्वारा धन उपार्जन करे, तो उन्हें धनकका दो अंश और पिताका भी दो अंश तथा धन दाताका एक अंश होगा। दोनों अवस्थामें ही दूबरे दूबरे भाईका अंश नहीं है।

जिस पौत्रका पिता जीवित है, उसके अर्जित धनका भाग पितामहका नहीं वरं उसके पिताका होगा। पैतामह धनके उपघातसे यदि अर्जित हुआ हो, तो उपघातित धनानुसार पितामह एक अंश पावेगा।

मातामहके धनोपघातसे यदि दीहितने धन उपार्जन किया हो, तो उपघातित धनानुसार मातामहका एक अंश और मातुलादिका एक अंश होगा किन्तु मातामहके धनोपघातके बिना यदि दीहित धन उपार्जन करे, तो मातामहका कुछ भाग न होगा।

भ्रातृकटक विभाग—पिताके मरने पर उनका स्थल नाग होने अथवा स्थल रहने पर भी, धनविभाग पूर्विके इच्छा पर निर्भर है। तभीसे भ्रातापौत्रका विभाग काल माना जाता है। किन्तु माताके रहते विभाग धमसङ्गत नहीं है। यदि माताको अनुमति नो कर विभाग किया जाय, तो वह धमसङ्गत हो सकता है।

भ्रातापौत्रके अंशका-परिमाण—सहोदर भाइयोंका धनमें समान अधिकार है, अतः वे बराबर अंश लेते।

औरस और दत्तक पुत्रके बीच यदि धनविभाग किया जाय, तो औरस पुत्रका दो अंश और दत्तकका एक अंश होगा। अधिकारी भ्रातापौत्रसे यदि कोई एक भी प्रपौत्र छोड़े बिना मर जाय, तो उसका दूसरा जो कोई उत्तराधिकारी होगा, उसे भी योग्य अंश मिलेगा।

पिटहोन पौत्र और पितृपितामहहीन प्रपौत्र क्रमशः अपने अपने पिता और पितामहके योग्य अंशका भागी हैं, अपने अपने संख्याके अनुसार नहीं।

साधारण धनके उपघातमें उपार्जित विषय-भाग—साधारण धनके उपघातमें अर्जित धनमें अर्जकका दो भाग और अन्यका एक भाग होगा। अविभक्त कुटुम्बोंमें यदि किसीके यमसे साधारण धनको हर्षि हुई हो, तो उसमें उसे दो अंश मिलना उचित है।

साधारण जनता उपचात होनेसे जिसका जितने धनका उपचात हो, उसे उससे बहुतसारा भाग मिळना चाहिये।

मिथित धन का परिचयसे यदि कोई विषय तथा जित हो पौर यदि उसका जन तथा यमका परिमाण साक्ष्य ही जाय, तो वे तदनुसार पय भागो होये, एवम्बा धनमात्री।

मातृधर्म यदि एकही मो रच्छा दृढक होनेको हो, तो जन विभाग हो सकता है। यदि माताको जोसे को विभाग हो जाय तो, उसे पुत्रके बराबर भाग मिलेगा। माता या पितामहको रच्छासे धनविभाग नहीं हो सकता।

स्वामो प्रकृति यदि स्वीकृत न हो, तो हमसे माता का समभाग प्राप्त है, किन्तु स्वीकृत होनेसे उसे केवल पाया मिलेगा। यदि पुत्र माताका पय होनेसे दत्तकार भाग तो माता पमिलोगादि द्वारा भी सकता है। जहां माताको केवल एक पुत्र हो, जहां उसे केवल पयय त मिलेगा।

सजोदर पौर नैसाके भावयोंके बीच परम्पर विभाग होनेसे माता पयमातृधर्म नहीं होता। किन्तु यदि सजोदर भावयोंके बीच विभाग हो, तो माताको मातृ-तुल्या मिळना चाहिये। बेशक भावयोंके मातृ यदि सजोदर भवता हमसे कोई पयना भाग दयक-कर है, तो उसको माता पौर पुत्रको बराबर पय मिलेगा।

पैतृक धनके उपचातमें पत्रित विषयका पय पाने का मातृ जिन प्रकार पत्रितारो है माता मो उसी प्रकार सबको पत्रितारिको है।

माता यदि किसी वत पुत्रको उत्तराधिकारिको हो, तो वे तदुद्योगका तथा मातृत्वके कारण पुत्र तुल्या पावेंगे। वे केवल एक पुत्रके पय ही मायिनो होये, नैसा नहीं। पुत्रके विभागमें उन्हें जितना मिल सकता, पुत्र पौर योग्य विभागेसे मो जतना हो मिलेगा।

पितामहका जन यदि पौर विभाग करे, तो पितामहो पौर पौर दोनोंका बराबर बराबर भाग मिलेगा। पितामहो यदि किसी वत पौरको पत्रितारिको हो

तो वह उसी प्रकार उपका योग्य तथा पितामहो वह कर अपना योग्य पावेंगे। यदि पौरमें कोई पौर पयका किसी वत पौरका सन्तो उपका पय हो हो, तो पितामहो हमसे पयना पय पानेको पत्रितारिको है। साधार पौर पयकार पयपति एक प्रकारसे विभक्त हो जानेसे मो पितामहो उसी प्रकार पयना पय पावेंगे।

माताको मातृ पितामहो मो प्राप्त धनको दान मिळ यदि नहीं कर सकता।

विभाज्य निर्यय -पितामह पौर जितका पत्रित तथा साधारण धनके उपचातसे पत्रित वे तीन प्रकारके जन विभाज्य है। पुत्रके व्यापारसे जो जन पत्रित दूया है, वह केवल व्यापारकारोसे साक्ष्य हो विभाज्य हो सकता है। पुत्रका धूमिने यदि कोई निज परिचय द्वारा बहार करे, तो उसे पार भागेसे एक भाग देकर फिर देय भागो को पापसे बराबर बराबर बांटेंगे।

विद्या उपधि द्वारा प्राप्त धन साधारण धनके उपचातसे पत्रित नहीं होने पर मो समान है पौर पत्रित विधानोसे माय विभाज्य है। न्यूनविद्या तथा विद्या ज्ञान अधिपति न साक्ष्य वह जन विभक्त नहीं हो सकता। उपचातसे पत्रित विद्याधनमें समोका पय है।

कुलसे या गितासे मिथित माताया द्वारा उपार्जित तथा शीघ्र ज्ञान प्राप्त धन विभाज्य है। गिता पौर पित्र्यादि मित्र पचात् दूधने मिथित हो विद्या द्वारा जो कुल पत्रित विद्या जाता है, वह समविदान् तथा पत्रित विधानोसे पय विभाज्य है, न्यून विद्या पौर विद्याधीनके माय विभाग नहीं हो सकता।

यदि विद्यार्जनकालमें उससे परिवारका यदि दूधरा मातृ पयने धनसे प्रतिपालन करे, तो वह उस विद्यासे उपार्जित धनमें भाग नो सकता है। हो नर तीन मूर्ख मातृ यदि उसको पौरका प्रतिपालन करे, तो वे भी उन धनके भाग्ये होये। यदि कोई मातृ पयने परिवारका दूधरे मातृक ज्ञानमें पौर जन उपार्जन करनेसे जिसे विदेय गया हो, तो हमसे उपार्जित धनमें उसके मातृका मो पय होया। जहां भागका परिमाण निर्णय न हो, जहां समान भाग समझना चाहिये।

अविभाज्य निर्णय—अनुपघातसे अर्जित धन अर्धक-
का ही होगी, दूसरेका नहीं।

साधारण धनके उपघातसे अर्जित धनमें अन्ध
भ्राताओंका भाग निर्दिष्ट होना अनुपघातसे अर्जित
धनमें भाग नहीं होनेके समान है। जो धन पितादिकी
धनको सहायता न ले कर उपार्जित हुआ है, वह
अनिच्छासे विभक्त नहीं हो सकता, क्योंकि वह निज
देष्टासे प्राप्त हुआ है।

पैटक धनके उपघाताभावमें द्रव्य द्वारा अन्य भाइयों-
का उद्योग नहीं है केवल अर्जकने अपना चेष्टासे उसे
प्राप्त किया है। यह उभका अभावधारण धन है, यह
विभक्त नहीं हो सकता। पितृद्रव्यका स्वर्च न ले कर
स्वयं उपार्जित धन श्रौहादिक धन अर्थात् जो धन
श्रमसे जमाईको दिया हो, विद्या द्वारा लब्ध धन शौर्य
द्वारा उपार्जित धन तथा सौदायिक धन अविभाज्य है।

ब्रामागत बिषय यदि किसी दूसरेने ले लिया हो और
उसे यदि परिवारमेंसे किसीने साधारण धनके उपघातके
बिना तथा और भी दूसरे प्रकारको मदद न ले कर
लोटा लिया हो तो यह धन उसका ही होगा दूसरेका
नहीं। अर्थात् विभक्त या अविभक्त द्वारा साधारण धनके
अनुपातसे एवं दूसरेकी सहायताके बिना भूमिसम्पत्ति
छोड़ कर जो कुछ अर्जित हो वह अर्जकका ही होगा,
उसमें दूसरेका कुछ भी अधिकार नहीं।

पितृ-पितृव्यादि भिन्न दूसरेसे प्राप्त तथा किये विद्या
द्वारा साधारण धनके अनुपघातसे अर्जित धनमें व्यून
विद्वान् वा अविद्वान्का हिस्सा नहीं है, किन्तु समान
विद्वान् वा अधिक विद्वानका हिस्सा है।

शौर्य द्वारा अर्जित धन, भार्याधन और विद्यार्जित
धन तथा अज्ञप्रयुक्त पितृदत्त धन, ये चारों प्रकारके
धन विभाज्य नहीं हैं।

वस्त्र, पत्र अर्थात् अश्वटि वाहन, अलङ्कार, उदक,
रुताव, स्त्रीगण, योगवेस अर्थात् अपना अपना व्यवहार-
योग्य शय्यासन, भोजनपात्रादि, यान्य, यागस्थान वा याग-
प्रतिमा अर्थात् देवोत्तर ये सब विभाज्य नहीं हैं। (मनु)

मवेशीका पय, गाड़ीका पय, परिषेय वस्त्र, प्रयोज्य
और गिन्याय द्रव्य अविभाज्य है। प्रयोज्य अर्थात्

जो जिसके कामकी चीज है, यथाश्रुत प्रसूतिके गन्दादि,
ये सब सूखोंके साथ विभक्त नहीं हो सकते। पुत्रक
केवल पण्डितोंकी होगी, सूखोंको नहीं। लेकिन
उनका जो कुछ अंश निकड़ेगा, उसमें वे उनका मूल्य
अथवा अन्य द्रव्य पा सकते हैं।

पिताके जौतेजी पुत्र यदि गृहस्थानादि लगावे, तो
वह उसीका होगा, दूसरेका नहीं। पिता इसमें कुछ भी
छेड़छाड़ नहीं कर सकते, विभाग करना वा न करना
उनी पर निर्भर है।

विभागके बाद गर्भस्यपुत्रका भाग यदि पिता पुत्रोंके
बीच धन बांट कर तथा आप भी यथाशान्ध भाग ले कर
पुत्रोंके साथ असंश्लेषावस्थामें मरे, तो विभागके बाद
जातपुत्र पितृधन को पावेगा और वही उसका अंश
होगा।

यदि धनीकी अज्ञात गर्भावस्थामें पुत्र पृथक् पृथक्
हो जाय, तो उसके बाद जातपुत्रका भी भाग भ्राताओंके
भागमें होगा। धनीकी स्त्रीका गर्भ प्रकाश हो जाय और
यदि गर्भस्वके भूमिष्ठ होनेके पहले उसका भाग अलग
कर दे, लेकिन विभागके बाद पुत्रोत्पादन न हो, तो
पिताका अंश सभी पुत्र बराबर बराबर बांट सकते हैं।
पुत्रोंको पृथक् पृथक् कर किसी पुत्रके साथ संश्लेषा-
वस्थामें फिर एक पुत्र उत्पन्न करनेके बाद यदि पिताकी
मृत्यु हो जाय, तो उस धनमें विभक्तोंका ही अधिकार
होगा।

पिता यदि स्त्रीका गर्भ निश्चय करके भी अपने प्रभुत्व
के लिये पुत्रोंकी विभक्त कर दे, तो उससे पुत्रोंका ही
अधिकार कायम रहेगा, गर्भस्यका नहीं। पितृधनमें
ही केवल उसका अधिकार होगा। विभागके बाद पुत्रो
त्पादन होनेसे उसे भी समान भाग मिलेगा। यदि भूमि
आदि पितामह धन भी विभक्त हो जाय, तो विभक्तज
उस धनका भाग भ्राताओंसे पावेगा।

विभाग हुआ है वा नहीं इस प्रकार सन्देह उपस्थित
होने पर ज्ञाति वा वन्धुओंकी अथवा दूसरोंकी गवाही
द्वारा अथवा लिखित कागजादि द्वारा उसका निणय
कर लेना चाहिये। यदि कोई निदर्शन वा साक्षी न
हो, तो आनुमानिक प्रमाण प्रामाण्य है।

वितामरुके बाद आगत कुटुम्बका भाग—विमल जो
 ना न हो, दासाद उपस्थित होने पर वह साधारण विषय
 का भाग पावेगा। स्वयं, पित्र, पृथ्व, और लोक जो जो
 वेतामरुके बन हो, विरहात्मक विदेशमें रहने पर भी यदि
 वह फिर घर छोड़ पावे तो वह उस जनका भागो होगा।
 किन्तु लक्ष्मीको भाग मिलेना सो नहीं, उसकी मज्जा
 भी मागहारी होगी।

यदि कोई आदमी पवित्रभाववशमें दिवान्तर जाय और
 बहुत समयके बाद छोड़ पावे तो वह तथा सातपौढ़ो
 तक बहुतो मज्जा प्रदान प्रदानकरके तद्देवताको वा प्रति
 बाधोके परम्परा परिचित होनेके बाद यथाभाज्य भोग
 पावेगा। किन्तु विदेशमें रहते हुए उसकी किन्तु चार
 पौढ़ो तक उस जनकी भागो भीगी। पवित्रभाववशमें
 जनको हृदि या चय हो कर जितना भये उतना ही
 विभाज्य है।

स्वयं-परिग्रहोदि—विताका स्वयं परिग्रह कर
 जितना धन वह रहे, वही विभाज्य है। वितामरुके
 बाबाका पयवा दूरैका दासव्ययन यदि जाय लगे, तो
 पक्षी उसका स्वयं पुत्रा कर दासपक्ष करना चाहिये।
 उत्तराधिकारो क्रमसे जिसका धन प्राप्त होना, पक्षी
 वह उतना स्वयं परिग्रह करनेको भाज्य है। किन्तु
 ब्रह्मदेहमें विनाशा वा वितामरुका पयवा किसी पूर्व
 स्वामीका धन कर तक न पावे, तब तक कोई उसका
 स्वयं परिग्रह करनेको भाज्य नहीं है।

पूर्व स्वामीका स्वयं परिग्रह करने तक जनके परि
 माकानुसार कर्त्तव्य है। अतः धनोका त्यज्य धन यदि
 बहुतोके शाय लगे, तो उसका स्वयं प्रत्येकको अपने
 अपने पक्ष में पुत्राका चाहिये। वितामरुके जोवनकाक्रममें
 पोमो के वेतामरुके धनाधिकारी होनेसे पक्षी वितामरुका
 स्वयं परिग्रह करना कर्त्तव्य है। स्वयं पुत्रा कर
 यदि धन बहुत बंध रहे, तो विताका स्वयं भी उसे
 परिग्रह करना हीना। अधिकारी विनाशा स्वयं
 उसके जोवनकाक्रममें ही वेतामरुके धनाधिकारी पुत्रो ही
 पुत्राका चाहिये। स्वयंपात्री अर्थात् २० वर्ष तक
 प्रवासी होने पर उसका पुत्र, पौत्र पयवा जनहारो
 अर्थात् बीस वर्षके बादउत्पन्न पुत्रा है।

विता यदि अपने पुत्रोंके बीच धन और स्वयं बाँट दे
 और पयवा भय प्रत्यक्ष कर से तथा पक्षी यदि दूररा
 पुत्र उत्पन्न हो, तो सातपुत्र विताका स्वयं परिग्रह कर
 दास पावेगा। पवित्रभाव दायादमें पक्षी परिवारके लिये
 यदि स्वयं शिवा जाय तो समोको वह भय पुत्राका
 होता है पयवा वह स्वयं साधारण विषयसे पुत्राका
 जायगा। पवित्रभावका अतः स्वयं उनमेंसे किसी पक्षी
 जोचित रहने पर भी उसे ही देना होता है तथा
 आतापक्षीके पवित्रभाव होने पर पित्रस्वयं भी उसी प्रकार
 परिग्रह्य है। किन्तु विमल को जाने पर भी अपने अपने
 भाग दायानुसार उसे पुत्रा है।

धर्मकृत पुत्र-व्ययका संस्कार—जिन माहर्षीका
 संस्कार हुआ है, उन्हें पित्रव्यय दास भयकृत माहर्षी
 और बहनो का संस्कार करना पक्ष्य कर्त्तव्य है। धनो
 को पवित्राहिता स्वयं पवित्रा विवाहादि संस्कार
 पवित्रता धनानुसार होगा। पित्रव्यय नहीं रहने पर भी
 माहर्षी अपने अपने जनके उतना संस्कार करे।

पयवा व्ययकार विषय—इस समयमें प्रचलित धाखा-
 नुसार पयवा पक्षीके शीर्ष तक पयवा व्ययकार कास
 पयवा नाबाकिगी है। नाबाकिग बरहवार कार्य नहीं
 कर सकता; यदि किसी तरह कर भी ले, तो वह पयवा
 तथा निवृत्त ही है। अतः तक उसकी नाबाकिगी दूर न
 हो, तब तक उसका धन पक्षीके वन्द्य वा मित्रके हाथ
 हींया रहना, उसका धन किसी हातसे पक्षी नहीं हो
 सकता। जो दूद अपनेको तथा अपने जनका बचानमें
 पयवर्ष है उसका राजा धर्माध्य है। पयवर्षके
 राजा बासकके धनको उसको नाबाकिगी तक
 दिख रह लगे। राजा पायोध व्ययगोर्षे लिये
 होय्य समझे कपोंके अथ नाबाकिगका कुल मार सुपुर्दे
 कर दे। वे बासकके तथा पयवर्षके परिवारके पक्ष
 पक्षके लिये पायवर्ष होने पर पयवा पयवर्ष का
 करनेके लिये जितने पक्षका पायवर्ष तथा समझें उतना ही
 पक्ष। नाबाकिगी दूर ही जाने पर उन्हें उसके जनको
 पाय, व्यय जाय और इच्छा विच्छा देना होगा। यदि
 वे किसी प्रकार धनको को दे, तो उसका अति पूर्य
 भी करना होगा।

● वर मास आनेके अन्तसार १० वर्षके उमर तक।

अद्वैतमें पुत्रवान् पुरुष पितामह वा स्त्रीपार्जित म्यावर अम्यावर विषयकी पुत्रोंकी सम्पत्तिके विना दान-विक्रय यथा उच्छा कर सकती है। धनो मरते समय अपने धनकी विभक्त करनेका नियम (विल) कर सकती हैं।

हिस्सेदारोंमेंसे एक वा अनेक यदि साधारण विषयमें अपना प्राप्य अंश दानादि कर दे, तो वह वैध और सिद्ध है। अविभक्तावस्थामें हिस्सेदार नाबालिगकी सलाह न ले कर आवश्यक पहूने पर विक्रयादि कर सकता है।

जहाँ समान हिस्सेदार प्राप्त व्यवहारादि प्रयुक्त सम्पत्ति देनेमें समर्थ हों, और अनुपस्थित भो न हों, वहाँ दानादि कार्य करने पर भो उनको सम्पत्ति लेने पड़ती है।

दान लेख्य और वाक्य द्वारा हुआ करता है। ग्रहीता जत्र तक उसे ग्रहण न करे, तत्र तक दाताका स्वत्व उस वस्तु पर बना रहता है।

किसी नियमपूर्वक दानमें यदि वह उस नियमसे पालित न हो, तो दाताका स्वत्व नहीं जाता तथा ग्रहीताका भो स्वत्व नहीं होता।

दानमें प्राप्त कह कर दो मनुष्योंके एक वस्तुके प्रार्थी होनेपर भी किसका आगम पड़ले है वह यदि व्यक्त न हो, तो जिसको भुक्ति प्रमाणित होती, वही अधिकारी माना जाता है। किन्तु किसीका भी आगम पूर्वसे प्रमाणित होनेसे उसकी भुक्ति नहीं रहने पर भो वही अधिकारी होगा। जो जो विषय दानविषयक, विक्रय और वन्धक हैं उनमें यही नियम लागू है।

अद्वैत प्रकरण—निवेप, न्यास, गच्छित, वन्धक, याचित और न्याय कारणके विना अपने स्वत्वके अतिरिक्त साधारण धन और अनापत्कालमें स्त्रीधनका दानादि असिद्ध है।

पुत्रादि रहने पर सर्वस्व दान तथा शास्त्रसम्मतके विना साधारण विषयमेंसे अपने अंशका दानादि सिद्ध तो है; लेकिन अधर्म है।

दत्तक पुत्र बनानेके लिये पुत्रदान, परिजन आश्रय विपदमें परिजनका पालन करनेके लिये तथा आश-

यक धर्म कर्म करनेके लिये अविभक्त विषयका स्वकीय अंशातिरिक्त और विभक्त स्वकीय मनुदायका और स्त्री धनका दानादि सिद्ध तथा धर्मसंगत है।

द्वैत प्रकरण—उत्तम रूपमें परिवारका प्रतिपालन कर जो कुछ वच रत्न उस म्यावर अवस्थावर धर्मका दानादि सिद्ध और धर्मसंगत है।

परिवार पालनके व्याघातमें स्वेच्छापूर्वक अथवा कामधर्मकी कामनामें जो दानादि किया जाता है वह सिद्ध होने पर भी धर्मसङ्गत नहीं है, किन्तु सर्वेश्वर न वेच कर विपदमें द्राण, परिवार पालन अथवा अवश्य धर्म कर्म यदि न किया जाय, तो सोच विचार कर जो कुछ किया जायगा, वही सिद्ध होगा। भरणपोषण अग्रहतादि न्याय्यकार्यमें यदि कोई स्त्री तात्कालिक मुख्य दायदको स्वाधिकृत संक्रान्त धन दे दे, तो यह दान सिद्ध समझा जायेगा।

राज्य अविभाज्य है। योग्य होने पर बड़ा ही राज्याधिकारी होता है। यदि बड़ा अयोग्य हो, तो अन्य भ्राता राज्याधिकारी होगा।

दत्त प्रकरण—भूति, द्रव्यका मूल्य वा शुद्धरूपमें अर्थात् विवाहमें, तृष्टिमें वा प्रत्युपकाररूपमें, अहमें, अनुग्रहमें वा अदापूर्वक जो कुछ दिया जाय, वह अपत्याचार्य है। भूतिमें वा अत्यन्त बराकुलताप्रयुक्त हो कर यदि अधिक धन देनेकी राजी हो जाय, तो वह दातव्य नहीं है। वस्तुतः गृहदाहादिमें और पुत्रके रोगादिमें यदि कोई किसी भाईकी सर्वस्व देनेकी स्वीकार करे, तो वह स्वीकार असिद्ध है। किन्तु उपकारके अनुसार अधिक देना उचित है। अत्यन्त अधिक धन देनेमें प्रतिशुद्ध हो जाने पर यदि वह न दिया जाय अथवा चतना दे भी दिया जाय, तो भी वह उपरोक्त युक्तिसे पुनर्यह्नोय है।

अदत्त-प्रकरण—भयान्वित, क्रोधान्वित, कामान्व, मोहप्रयुक्त, उन्मत्त, भ्रातृ वा अपरकृतिस्य अवस्थामें, अथवा उल्कोचरूपमें, परिहासमें, क्रीडामें, भ्रममें वा प्रतारणामें, अथवा बालक अस्वतन्त्र वा अपवर्जित द्वारा, अथवा प्रतिज्ञाभङ्गमें वा अपात्रको पात्रबोधमें अथवा अतिवृद्ध, अतिवराकुल, निःसम्बन्ध, वा अति वृष्ट द्वारा

पयवा पापकर्ममें जो दिया जाता है वह पदप है। बहुतो दोषयुक्त दान पसिह है, किन्तु कारकमूलक दान सिद्ध है। पातकृत धर्माय दानको सिद्ध माना है। वासक कर्णिक धर्माय दान इतिहादि सिद्ध है।

दायमाय सम्बन्धमें जो कुछ निष्ठा गया, वह माय वर्तमान पारिभाषिक पनुमार है, किन्तु कहीं कहीं कुछ पदम बदल भी हो गया है। दावमन्त्रमें मिताजराका मत नहीं लिखा गया। मिताजराग्रन्थमें यह विषय लिखा जायगा। दावमायि कहीं कहीं पनक विषय ऐसे हैं जहाँ बहुतो का मतभेद है तथा टोकाकारोंमें भी जहाँ पोर भी दुष्क पर दिया है। इन्हीं सब कारकोंसे कई जगह इनका मत न से कर केवल दाय विषयमें दाव सम्बन्धों कावलाये दी गई है।

दावमुल्लवस (स० पु०) पावक्य कौट, कासी पाण्डेको पन्ना।

दावर (पा० नि०) १ पक्षता कृपा, विगता कृपा । २ पक्षता भारी।

दावरा (स० पु०) कुच्छल, मच्छल, योन जेरा । २ दल । ३ खचा । ४ मच्छली । ५ उफको, ख जड़ो।

दायाँ (हि० हि०) दाहिना ।

दायामत (स० नि०) १ जो कुछ बाँट बर्तनें थाया हो, मोक्षनी दिखोंमें पड़ा हुआ । (पु०) २ पन्द्रह प्रकारके हाथोंमेंसे एक।

दायायी (पा० जी०) दाईका नाम।

दायाद (स० पु०) दाव विमज्जनाय धन पादल पा दा द, दाव धनि पट-पय दावज पादा पादकः । १ दावपाही, दिग्दाहार । २ मुक्त, पैदा । ३ यपिच्छ कुटुबो। (नि०) ४ दायाधिकारो, जनाधिकारो, जो दायका पश्चि कारो हो। जिहाँ टाप । ५ दाव्या । सुभ्योर्बर्ध मत-ने पक्षकारके दाव होय, होता है, ऐसी जाकर्ममें दायादो ऐसा रूप होना चाहिये। कोबिन प्राय सभी जगह दायादा ऐसा ही रूप देखा जाता है।

दायापवर्त्तन (स० जो०) दावपक्ष पयवर्त्तन । कस्तुरा-जिवाटिल सोप करक बिबी कायदाहमें मिलनेवाले दिखोंको कल्पो।

दायादवत् (सं० नि०) मुक्त, लड़का।

दायाही (सं० जी०) कन्या, लड़की।
दायाध (स० जो०) दायादपक्ष भावाः ब्राह्मणादि० अत्र । १ सापिच्छ । दायक्य धाय । २ सापिच्छ निवन्धन धन ।

दायाधता (स० जी०) दायाधपक्ष भावाः भावे तत्त्व ततो टाप । दायाधका भाव, देनदार होनेका भाव।

दायित (स० नि०) दाय-दाने विष्णुः । दायित, दिया हुआ।

दायित्व (स० पु०) १ दायःदका भाव, देनदार होनेका भाव । २ त्रिधो दारी, कर्माधेयो।

दायित् (स० नि०) दाय विनि । दाता, देनेवाला।

दायिनी (स० नि०) देनेवाली।

दाये (हि० नि० नि०) दाहिने पोरको।

दार (स० पु०) दारयति भावम् इ-विष्णु दारे कर्त्तारि पच् । १ माया, औ, पयो। 'दारदिनि' इत् इत्थे पनुमार दारगन्ध निम्ब-बहुवचनान्त है। इस मन्त्रमें एक बचनका प्रयोग नहीं होता उदा बहुवचन कृपा करता है। दू करके बन्ना । २ यौपयनेद, एक प्रकारको दवा। भावे बन्ना । ३ विदारक, फाड़नेका काम । 'दार' मन्त्र विद्योमें औचित्य होता है।

दारक (स० नि०) दारयति नागयति पितृनां दू-विष्णु क्तम् । १ मुक्त, पैदा । २ वासक लड़का, लौड़ा। जिहाँ टाप । ३ कन्या । ४ पाव्यगुम्बर, बरैण सुपर । (नि०) ५ विदारक, फाड़नेवाला।

दारकर्मन् (स० जो०) दाराका तन्नामप्य प्रतिपादक कर्म । भार्यात्वमप्यादक ज्ञान विधेय रूप विवाह, जिस क्रियामें एक मेरो भाग्यो है ऐसा ज्ञान उत्पन्न हो जाता है सभीको दारकर्म कहती है, विवाह, माहो।

दारकाचार्य (स० पु०) दायकपुत्रक गिणागुह ।

दारकिया (स० जो०) दारानां क्रिया। दारकर्म, विवाह।

दारकम्बु—रत्नावादाद नगरके उपकच्छक एक शहर। यह पन्ना २१ ४४ ७० पौर देया ० ८१ २१ पु०में पवस्थित है। यह शहर मन्नाके दक्षिणे किनारे पड़ता है इसीसे यह रत्नावादादका एक पक्ष को समझा जाता है। रत्नावादादके समीप ही यहाँका प्रायण-

कार्य चलाते हैं और वहीं की पुलिस इस ग्रहरणो शान्ति रक्षा करती है। नगर भी इलाहाबाद म्य. निसिपै लिटो-के अन्तर्गत है। इलाहाबादके केन्द्रस्थानसे इसको दूरी केवल २ मील है।

दारग्रहण (सं० क्लो०) दाराणां ग्रहणं । पत्नोग्रहण, विवाह ।

दारण्य (सं० क्लो०) दारयति नाशयति जलमलं अनेन दृ-
षिच् करणे ल्युट् । १ कतकफल, निर्मलोका फल ।
यह फल जलमें देनेसे जलको मैल दूर हो जाता है ।
दृ-णिच् भावे ल्युट् । २ विदारण, चोरने या फाड़नेका
काम, चोर फाड़ । ३ विदारणसाधन अस्त्रादि, चोरने
फाड़नेका अस्त्र या औजार । ४ व्रणादि स्फोटन सम्पा-
दक औषधविशेष, वह दवा जिसके लगानेसे फोड़ा आपसे
आप फूट जाता है । भावप्रकाशमें लिखा है कि कारञ्ज,
भङ्गातक (चिलबिल), दण्डो, चिता, अश्वभारक (कानेर),
कवृत्तर, कौवे और गीधकी बीट कुछ पके हुए फोड़ेमें
लगानेसे वह आपसे आप फूट जाता है । चार द्रव्य
अथवा यवचार आदिके प्रयोगसे भी फोड़ा फूट जाता
है, किन्तु यह बहुत कष्टदायक होता है ।

दारद (सं० क्लो०) दरदि देशभेदभवः सिग्धादि० अण् ।
१ दरद देशोद्भव विषभेद, एक प्रकारका विष जो दरद
देशमें होता है । २ पारद, पारा । ३ हिङ्गुल, ईङ्गूर ।
४ मसुद्र ।

दारद (दार्द)—लादक प्रदेशके पश्चिमभागमें सिन्धु नदीके
कूलवर्ती भूभागवासी एक जाति । ये लोग आर्य वंशके
हैं, नाना शाखाओंमें विभक्त हो कर नाना स्थानोंमें वास
करते हैं । इनमेंसे कितने ऐसे हैं जिन्होंने सुप्रसन्नानी
धर्म ग्रहण कर लिया है । मनुने महाभारतादि ग्रन्थोंमें
इस जातिको संस्कारभ्रष्ट ब्राह्मण चतुर्विध बतलाया है ।

अभी ये लोग तीन विभिन्न भाषाओंमें बोलते हैं । तीन
भाषाओंमें लिखते समय पारस्य अक्षर व्यवहृत होता
है । इन तीन भाषाओंके नाम शोना, खलुना और
अर्षिया है । आस्तर, गिलघिट्, एव' और भी दक्षिणमें
चेला, दारेल, तोड़ली एव' पाला प्रभृति सिन्धुनदके उभय
कूलवर्ती प्रदेशोंमें शोना क्षत्रजा और नागर नामक स्थानों-
में खलुना तथा चित्रल और इयाशानमें अर्षिया भाषा

प्रचलित है । काश्मीरी लोग इनके मध्य रह कर भी
अपना ही भाषामें बोलते हैं, किन्तु काश्मीरी और दार्द
भाषा बहुत कुछ एक दूसरेसे मिलती जुगतती है ।

गिलघिट्, आस्तर और बलूचिस्तानके दार्दगण रोण,
शोन, यस्कून, क्रीमिन और डोम आदि अणियोंमें विभक्त
है । इनमेंसे शोन और यस्कून जाति ही प्रधान है ।
क्रोमिणगण मिय जाति है । डोम और टोकरा सबसे
नीच है । बहुतेका मत है, कि यही दार्द जाति ग्रीक
ऐतिहासिक हिरोदोतस, वर्णित दादिसि (Dadicae)
जाति है । किन्तु सार्जन बेलु (Belleu) साहब कहते
हैं कि काकर जातिके साथ अफगानिस्तानमें 'दादि'
नामक एक जाति वास करती है, शायद यही जाति
हिरोदोतस, वर्णित दादिसि जाति होगी । ग्रीको भी
काश्मीर सीमान्तके हिन्दूकुशस्थ दारद प्रदेशका उल्लेख
कर गये हैं । पुराणमें भी दरद और इस जनपदवासी
दारदोंका उल्लेख है ।

दारद लोग शराबकी बड़े प्रेमी हैं । ये स्वयं अपने
पीनेके काविल शराब प्रस्तुत करते हैं । शस्यसारकी सिद्ध
कर उसमें लादक प्रदेशसे मंगाये हुए प्यापस नामक
एक प्रकारका द्रव्य मिलाते हैं । वाद उसे धूपमें अथवा
आगके समीप १०१२ दिन तक रख छोड़ते हैं । पीछे
इसे छान लेनेसे ही शराब तैयार हो जाती है । आस्तर,
शोन और गिलघिट्के लोग इस प्रकारका मद्य काममें
लाते हैं । नागरमें भी दाखसे एक प्रकारका मद्य बनाया
जाता है ।

दारदगण स्त्रीपुरुष एक साथ खाते हैं । अगर दो
पुरुष एक साथ दूध पी लें, तो वे बहुत दिन तक
जाति च्युत किये जाते हैं ।

ये लोग घोड़ेकी पीठ पर चढ़ कर एक प्रकारका खेल
खेलते हैं, जिसे 'पोलो' कहते हैं । आस्तरमें इस खेलको
तोपो और गिलघिट्में बुला कहते हैं । इस खेलके लिये
गाँवके बाहर एक लम्बा चौड़ा मैदान नियत रहता है ।

शिकारमें जाना ये लोग बहुत पसन्द करते हैं और
धनुर्वाण चलानेमें बड़े सिद्धहस्त हैं । प्रायः शीतकालमें
ही शिकार खेला करते हैं ।

ये लोग बन्दूकका व्यवहार करते हैं । इनकी बन्दूक

प्रसिद्ध हुई थीं *। इन्हींका समाधि-मन्दिर जगतमें 'ताजमहल'के नामसे विख्यात है। अरमो साहबने सुमलमान ऐतिहासिकोंके विवरणसे जो कुछ संग्रह किया है, उसमें लिखा है कि शाहजहानने आसफभा (नूर जहानके भाई)की कन्या समलाजा जमानोके साथ विवाह किया था, इन्हींकी समाधिके लिये ताजमहल बनवाया था और इन्हींके गर्भसे दाराशिकोह, सृजा आदि पुत्र उत्पन्न हुए थे †। कौनसे संवत्में दाराका जन्म हुआ, इसका कोई निश्चित विशरण नहीं मिलता। विभारिज माहव अपने 'भारतवर्षके इतिहास'में एक जगह लिखते हैं, कि १६५७ ई०में दाराकी उम्र ५२ वर्षकी थी और वे श्रीरङ्गजीवसे दो वर्ष बड़े थे ‡। इससे तो यह मालूम होता है कि दाराका जन्मकाल १६१५ ई० है; किन्तु श्रीरङ्गजीवके समकालवर्ती काफी खाने अपने 'सुन्तखव-उल-लुवाव' नामके इतिहासग्रन्थमें श्रीरङ्गजीवका जन्मकाल १०२८ हिजरी (अर्थात् १६१८ ई०) लिखा है। इस हिसाबसे दाराका जन्मकाल १६१७ ई० ठहरता है। बादशाहनामाके मतसे, १०२४ हिजरी २८ सफर (१६१५ ई०, २० मार्च)की दाराका जन्म हुआ था। दाराके सड़ोटर भाई आठ और छः बहनें थीं। शेष सन्तानके प्रसव करते समय, ४० वर्षकी उम्रमें अलिया-वंगमकी (१०४० हिजरी, १६२० ई०में) मृत्यु हुई थी। उस समय दाराकी उम्र सिर्फ १३ वर्षकी थी। शाहजहानको राजगद्दी पर बैठे सिर्फ चार ही वर्ष हुए थे। सृजा और रङ्गजीव, सुराद तथा जहान-आरा, रोशन-आरा आदि शाहजहानकी इतिहास-प्रथित सन्तानें दाराकी सहोदर-सहोदरा थीं।

काश्मीरसे लाहौर आते समय, मार्गमें जब (१६२७ ई०) जहांगीरकी मृत्यु हुई थी, उस समय दाराशिकोह, महम्मद, सृजा और और रङ्गजीव नूरजहानके पास ही थे। यद्यपि नूरजहान इस समय अपने दामाद शाहरियारके

लिए दिल्लीका राजसिंहासन हस्तगत करना चाहते थे और उसके लिये शाहजहान भतीज-जमाई होने पर भी उनके विश्व आचरण करते थे, किन्तु तो भी भतीजी को सन्तान होनेके कारण वे शाहजहानके पुत्रोंको अपने महलके पास रख कर उनका लालन पालन करती थीं। इस समय दाराकी उम्र १० वर्षकी थी। जहांगीरकी मृत्युके समय शाहजहान आगरामें न थे, दक्षिणात्यमें थे। शाहरियार जो राज्यके अधिकारी होंगे, ऐसा प्रायः निश्चित हो चुका। परन्तु मूर्ख शाहरियार उस समय पिताका धन हस्तगत करनेके अभिप्रायसे लाहौर चले गये। इधर मन्त्रो इराद खां और सेनापति यामिन-उद्दौला आसफ खां (नूरजहानके भाई) राज्यको विश्वस्तला निवारणार्थ, खुशरू (जहांगीरके ज्येष्ठ पुत्र)के पुत्र तुलाकीको सिंहासन पर बैठानेके लिये नूरजहानके खीय अभिप्रायसिद्ध करनेके एक दिन पहले आगरा आये और सबसे पहले उन्हें शाहजहानके पुत्रोंको राजाके अधिकारसे निकाल कर आदिश खां नामक एक सेनापतिके हाथ सौंप दिया। दोहिनोंको निरापद्रु करके, आसफखाने जामाताके लिए सिंहासनके रत्नार्थ मन्त्रोके परामर्शसे तुलाकीको सिंहासन पर बिठा दिया और जामाताको लानेके लिए दक्षिणात्यको आदमी भेज दिया। ४ महीने बाद (१६२८ ई०में) † आगरामें आ कर शाहजहानके राज्यप्राप्त करनेके ३ वर्ष बाद (अर्थात् १६३० ई० वा १०४० हिजरीमें) १३ वर्षकी उम्रमें दाराका विवाह हुआ था। जहांगीरके द्वितीय पुत्र कुमार परवेजको कन्या नादिरा भी दाराका बगनाई थी। यह विवाह बड़े शान-श्रीकृतके माय हुआ था। उन्हीं नादिराके गर्भसे सुलेमान-शिकोह और शिपेहर शिकोह नामके दाराके दो पुत्र हुए थे। १६५१ ई० (१०६२ हिजरी)में सुलतान शाहजहानके आदेशसे कुमार और रङ्गजीव बहादुर सुलतानसे कन्दाहार जय धरनेके लिये गये थे, कानुलके रास्तेमें अलामो शाह दुला खां नामक सेनापति कन्दाहार जयका फरमान और

* Elliot's History of India, Vol VII p 27, and note

† Historical Fragments of the Moghul Empire, p. 187—188.

‡ Beveridge's History of India, Vol, 1, p. 28.

* १६२७ ई०के अक्टूबर मासमें जहांगीरकी मृत्यु हुई थी और १६२८ ई०के फरवरी महीनेमें शाहजहान सिंहासन पर बैठे थे।

बड़ी मारो फोड़ने साथ उनका माघ दिया था। दोनों
 विनाशक इच्छा कर चोखेजने केन्द्रशाखा दुर्ग
 धर। तथा। दुर्ग सुदूर धोर चकर मफवे पूर्व यम मोर
 मे चकर मयं च होरने चारण मुयानके निय चका
 रचना भी मुजु हिन हो गया। चोरकुमरके चकीन दो
 तोय दो, पर भी भी कगातार चकाने रकने के परत गई।
 चकाने ग्राह दुष्कावांन विनाशकमें मोर-र पातोम
 वागिन खाँड चकोन पाँच तोयि यो; भी भी कगातार
 चकतो रही जो पर उनमें मुजु चक न दुवा; चकयँक
 वाफ्य धोर गेले नट नट हो मये दुर्गको तनिक भी
 चानि न दुई। यह नकाट ग्राहचक्रान्क पात्र पङ्क था
 धोर एक विचलिका लुपपात दुवा। गजनीके निबट
 कर्तो उग्रवैक धोर चन्मान ज्ञानोय चकयामोने विद्रोही
 हो कर मया चनिष्ठ करण गृह कर दिया। चतचक्र
 १६१२ ई०में चोरकुमरको भोट चाना पड़ा।

चोरकुमरके भोट चाने पर, कुमार कुमर इकजान
 दास-विभोकेने इतनात्र साथ चका नि, भी 'कन्दाहार पर
 चकयक विशय काम चक गा। ग्राहचक्रान्के गेले पुत्रको
 बात पर विमिश्र कर रही कयँ रके कानून धोर मुजु
 तान प्रदेशके सामगजता मया कर कहुन भी विनाके साथ
 कन्दाहार मेक दिया। दाराने लाहौर पङ्क चनेके साथ
 हो भाव मुहको घब तै पायिवा कर भी, त्रिनको चकरनेमें
 चकने काम १ वर्ष लपन, चने दाराने चार हो मदिनेमें
 कर दियाका। रकने साथ 'बिवाचर कुमर' देवचक्रा)
 धोर 'दकुमचक्र' नामकी हो कहुन कहुी ताये यो। रकने
 का नीने दिवे जति धे उनका चक्रन १५८ (एक मन चाट
 बिर) का। धोर भी एक तोय दो त्रिनका चक्रन १६६
 (एक मन चानक बिर) था। रकने निवा चानने १ हजार
 मन चाटध धोर २१ हजार मन बोवा भी साथ रज्जा
 था। नक तै चारिया कर कुकने पर चानने चकनेक दिन
 पिनाके चनुमति भी। मुजुमानके शक्तीमें रकध धोर
 चायका सुमोता या रकनिय मेना चमी साथने चमी।
 १६११ ई०में (दिवाते मजु १०६१ में) दाराने कन्दा
 हार चकरीक बिद्या धोर मुयाने दुर्ग पर चरिकार कर
 बिद्या।

रक चकनेके १ मनेने चक मदे। बाकद, कीबद,

दीक्षा, मोको मय निबटाक हो चने। चकयानिनामके
 परबतमाना ममाच्युय प्रदिममें गीतके प्रचोपने धोनकय
 धोन मुमकनेना कहुो बिरक हो उठो। मुजुमान ग्राह
 चक्रान्को मानूम पकृते हो चकने निच मेजा कि 'चदि
 चमी दुर्ग' हय करण मयच समभी धोर चोई दिनमें
 काम पूरा हो जार, तो चोने दो। कर्तो तो हया मयच
 नट करण। उचित कर्तो, भोट चाना हो येचकर है।
 दाराने द्वारा नक-निबुच कुल प्रदेशके सामगजता मुया
 दुर्ग धे न करके विना मदिन दाराने साथ था मिसे। उरकनि
 दुर्गके साथ साथ मुयुका चारपाता नक उठा दिया।
 गराके भोट चकनेका प्रप्राक चरने पर चमी सुमन किला
 पनि उरमें रात्री हो गये धोर चमी कयँके सिधमाभमें
 चकरोच उठा कर सब हिमुपान भोट पाये।

कहानेके समयमें देना निर्चय चका था कि चकने
 बितोरके भोट भी राणा बितोरदुर्गका मक्यार क कर
 रकेने। १६११ ई०में राणा ज्ञानुवि इने उल चादेम-
 को मुह भी परबाह न कर दुर्गके जोबे ज्ञानात्री मुहुका
 कर मजजूतोके साथ चकवाना गृह कर दिवा। ग्राहचक्रान्
 को मानूम पकृते 'न कने १० हजार चैनिडेकाव
 चकामे गाहदुका चाँकी बितोर धे न करनके निय भिच
 दिया।

दारानेको ग्राहचक्रान्के द्विय पुत्र धे, मयँदा उरके
 पात्र रहने धे चकने नक कि मगदत चोने पर भा धे
 दाराने परामयातुकार काम करते धे। मयाटुको यर
 पुत्रकयताकी बात कर्बत फोन मर। राणा चकयुंके
 को भी यह बात मानूम यो। ग्राहदुका चाँकी चकान
 पुरमें काकर राजना कानने हो चकने मुहमाके दारा
 धे पात्र चकना विमयत चान्मा मेका। चकने दाराने का
 कर कका 'राणा कहेते है, पात्र चाँकी पङ्क चर बाट
 ग्राहके जोबको माना कर दीचिदे।' दाराने राणा कानु
 नि चका धोर मयाटुके मयँगा को। मयाटुके पूत्रके
 मारकत राणाको कहुना भी जा कि 'राणा चकने च्छे
 मुयको मुयन दरबारमें रवे धे धोर राणाको कच हन
 वेना कर्बके बिना चाँकीक कचके चकोन दाविचर-
 में रर का मुजुन बादमाचका काम करे।' यदि रक
 चादेमको राणा न मानमे तो उनका बितोर धे न कर

दिया जायगा। रानाने पुनः दाराको मंवाद दिया कि, 'यदि आप अपने दोवानको भेज दें तो उनके साथ मैं पुत्रवधो भेज सकता हूँ।' सम्राट् से आज्ञा ले कर दाराने अपने दोवान शिखु अत्रदुल करोमकी चित्तोर भेजा। इतनेमें शाहदुल्लाकी सेनाने चित्तोर पर आक्रमण कर मोरचाको दोवार चादि तोड़ना शुरू कर दिया। रानाने पुनः प्रतिनिधि भेजनेका निश्चय किया, इतनेमें दाराके दोवान आ पहुँचे।

रानाने अभी मध्य अपने ज्येष्ठ पुत्रको उनके साथ बादशाहकी सेवामें भेज दिया। दाराकी मध्यस्थतामें राजकुमारकी प्रतिभूरूप पा कर शाहजहानने रानाकी जमा कर दिया।

१६५३ ई०के मध्यभागमें शाहजहानके राज्यमें १०६५ हिजरी सन्के वीतने पर एक उल्लव हुआ था। उस उल्लवमें नाना देशोंके राजा निमंत्रित हुए थे। इस मन्त्रिणमें शाहजहानने अपने ज्येष्ठ पुत्र दाराको एक विशेष खिलात दे कर सन्मानित किया था। इस खिलात के साथ जो अंगरखा दिया था, उसकी अस्तौन और मगजीमें कारचोपीका काम था, जिसमें मोती और मणि माणिक्यादि जड़े हुए थे। इस अंगरखेको कोमत ५० हजारसे ज्यादा ठहराई गई थी। एक शिरपेच (शिरफन्द) दिया गया था, जिसके एक चुनो और दो मोतियोंके टाम १ लाख ७० हजार रुपये थे। इसके सिवा नकद १३ लाख रुपयेभी दिये गये थे। इस खिलात पानेके बाद दारा शाह बुलन्द एकवार 'दाश गिकोह' कहलाने लगे। शाहजहानकी यह उपाधि जहाँगोरसे मिली थी। दारा अब तक दरवारमें सम्राट्के तख्ताऊसके सामने बैठा करते थे, अब वे तख्ताऊसके दाहिने स्वर्ण-सिंहासन पर बैठाये जाने लगे।

१६६८ ई०में शाहजहान् बीमार पड़ गये। इस समय राज्यका समस्त कार्यभार दारा पर था, जिससे उनके और भाई विगडू उठे, महम्मद सूजा इस समय वज्रालमें, भोरङ्गीव, दक्षिणाल्यमें और सुराद वक्क गुजरातमें शासनकर्त्ता थे।

दारा शाहजहान्के बड़े प्रिय थे, क्योंकि वे फारसी, पारसी और संस्कृत भाषामें विशेष व्युत्पन्न तथा साइमो,

सरल और बुद्धिमान् थे। परन्तु एक बातकी दारामें कमी थी, वे अपरिणामदर्शी थे, जब जिन कामको प्रवृत्ति होती उसे भट कर डालते थे। शाहजहान् दारा पर इतना प्रेम करते थे कि कभी कभी उनके परामर्शानुसार अन्याय काम भी कर डालते थे। दाराको सम्राट् अपने आँसूके ओभल न होने देते थे। दारामें एक विशेष गुण था कि उन्होंने अकबरकी तरह सुसलमान और हिन्दू धर्मके सार तथ्योंका संग्रह कर अपना धर्ममत स्थिर किया था। जिस समय दारा कन्दाहार जय करने गये थे (१०५० हिजरीमें) उस समय काश्मीरमें मोलाना शाह नामके एक फकीरसे आपको मुलाकात और जान पड़-चान हुई थी। उसी व्यक्तिने आपको हिन्दू, सुसलमान और ईसाई धर्मका समन्वय करके अद्वैतवादकी शिक्षा दी थी। इन्हींके द्वारा आपको हिन्दू शास्त्राका रहस्य मालूम हुआ और तभीसे आपके धर्ममनमें परिश्रुतन हो गया। ये अकबरकी तरह सुसलमान फकीर और हिन्दू संन्यासी, गुंसाई आदिके साथ बैठ कर सबंदा धर्मा-लोचना किया करते थे। उपासनाके समय आप अन्नाहके बदले 'प्रभु' शब्द व्यवहार करते थे, अंगूठी पर छंकार खुदाते थे और नमाज, रोजा आदिका पालन कुराणके अनुसार नहीं करते थे। इन कारणोंसे सुसलमान-समाज दारा पर बहुत नाराज रहतो थी। दाराका कहना था कि हिन्दू और सुसलमान दोनों धर्मका उद्देश्य एक ही है और दोनोंको नोबं यमज भ्राताको तरह सत्य पर अवस्थित है। दारा अपनेकी कटर सुसलमान नहीं कहते थे और नवैसा आचरण ही करते थे। इन्हीं सब कारणोंसे, जब आपने पिताको अस्वस्थतामें राज्यभार ग्रहण किया, तब राज्यके सम्भ्रात लोगोंमें सनसनी फैल गई। बहुतोंके हृदयमें ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि अगर इस समय बादशाहकी मौत हो जाय, तो दारा सुसलमान धर्मका मूलोच्छेद विना किये न छोड़ेगी। इसी कारण सुसलमान ऐतिहासिकोंने दाराकी बहुत कुञ्च निन्दा की है। शाहजहान्ने पहिलेसे ही दाराको अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था। सुजा, भोरङ्गीव आदिके मनमें राज्यलिप्सा थी, किन्तु अब तक प्रकाशमें नहीं आये थे। दाराके भाइयोंमें सुजा अष्टाचाने खिला-

समय, बिन्दु युद्धवित् और बुद्धिकोषि धि, सुराद विधम
 पानन्दविय और पम्पला मयवेको धि । दारा पक्षसेवे जा
 नतर्क हो गये धि, उन्नीन पिताकी मारकत भादयो को
 पति दूरेदो को वे शायनकर्ता निरुक्त कर राजधानीसे बहुत
 दूर निजवा दिया था । इसीलिए सखाटके पक्षक होनी
 पर जब दाराने राज्यमार दक्षक किया, तब साधान्
 पमात्रमें कुछ मङ्गलही न लसेने पर भी, परस्पर एक
 दूसरेको पत्नारु द्वारा सब सबाद मासूम हो गया ।
 बडाबर्मे सुजानि और पद्मदादाबादमें सुरादने अपने अपने
 नामके सिक्के बना दिये और सुवृथा पकाने ली । उत्रा
 देर करणा होकर न समझ कर राज्यहठिने पसियाये
 पटना और बिहार प्रदेश बडाबर्मे मिया किया । दारा
 बिक्रम और प्रीतको बूटभुवि और तोप्य हठिने करती धि
 और दक्षिणमें लको में कैला बलबिक्रम दिनाया बा
 लसे मो के शास्त्रवेधे महित धि । शास्त्रज्ञान् पक्षसे
 को दाराके पक्षपाती और इस समय मन्नागत हो कर
 और भी लनके निदेशानुवर्ती हो पड़े । और प्रवेव ठोक
 रही मोके पर भोजपुर पबरीव किया । लनको सहायता
 के लिए लन समय बहुतसी सेना और सेनापति उद्योजित
 धि । धिने मोके पर और प्रीतके पक्षो न इतनी यक्ति रखनी
 दाराने बुद्धिसङ्गत न ममम्भ । उन्नीन अपने स्वभावसिद्ध
 हठ-कारिताके बग लके कोयलके बटाने लिए सुरात को
 सखाट के दारा पादेय मित्रवा दिया कि ‘भोजपुरका
 पबरीव छोड़ कर समझ सेना और सेनापतिवो के साथ
 राजधानीमें लसे पावो ।’ और प्रीत इव पादेयका मम
 ममम्भ गये और लकेसेने पबरीव करणा सुकिकल समझ
 कर भोजपुरके दक्षिणदि निरुद्धर पादिनमाहके प्रस्तावा
 सुधार लसने लखि कर लो और राज्या । एक सन्धि
 मन्मदपर्म १ शराङ्क रूपसे ही कर सुकिकला सुनियाद
 (और प्रदाबाद) को लन दिने । लन पड़ लने पर लके
 मासूम हुआ कि दारा दिनी छोड़ कर विज्जकोपागार
 पबिहार करनेके लिए भागा लये धि ।

१६१० ई०के मिय भागमें सुजा बड़ी मारो लोत्रके
 नाव दिनीको और पयपर हुए । शास्त्रज्ञान् लन समय
 कुछ लख धि । लनेके दाराको युव करनेके लिये पल
 हाग मन्मर्दी ली, पाल्नु हलके बाट हो लके स बाट

मिहा कि सुजा सुकिके लिये पयपर हो रहे धि । पब
 नाव लो कर दाराको सुजा लयधि ल (मोरवा) और
 सुसेमान्-मिकोहके पक्षो न सेना मित्रनी पड़ी । राजा
 लयधि ल लव सेना सामने ही कर लयीके निरुद्ध मन्ना-
 मोरवने बहापुरपुर पड़ ल; तब सुजा छिड़ लोत्रको लुरीसे
 सुकिके लिये लोत्र हुए । लूनने लिन सुवृथदयसे पक्षो
 राजा लयधि लने सेना-महित पाली लड़ कर पंक्षुल
 पबलामि सुजाकी सेना पर पालमय किया । सुजाकी
 सेना लयाका लको मन्नुर निरुद्धमें मन्म लो । सुजोका
 मन्म सुन कर सुजाको सेना लन गई । लठ कर देवा
 तो लन बव सपाया पाया—पनरज, तोप गोला, शरद
 लव लुक्त मन्मके लक्ष्मीमें पड़ ल लुका ल, लुक्त लोप
 लन्दा ली लो लुके धि । पादिन मामका विमङ्गले देख
 सुजा लुक्त पलुचरोके साथ सुवबाप नाव पर लड़ कर
 लसने लने । सुजा अपने राज्यमें न गये, इधरि लनका
 भाग राज्य दाराके इक्षमगत लो मया । इधर लो दिनीको
 लो कर लयधि ल पावरा पड़ ल; दाराने लन कैदियो-
 लो लनरके लारी तरख सुमाया एक लुक्त लीनीको लखि
 लण्ड दिया मया और लुक्त लोरीके लय लोटे दिये लये ।

त्रिध दिन दाराके सुभ सुषेमान मित्रोह और राजा
 लयधि लने सुजाके निरुद्ध राजा लो लो, लसो दिन और
 एक लन सेनाके नाव महाराज पयवन्धि ल और
 लसिम लो दक्षिणको लना लुए धि । और प्रीत और
 सुराद दक्षिण लका लर रहे धि और लिन पबलामि धि,
 इव बातको लाननेके लिये ही दाराने ऐसा किया
 था । सुरादलक्य पयर पद्मदाबाद लोत्रकर और
 लिसो तरख लय तो लन पर पालमय लनेका भार
 लक्षिम पर लोपा मया और पयवन्धि ल पबका देख
 लर लयका लने, सेना निरुद्ध हुआ । इससे पक्षो
 लव सुगम लखाट महाराज पयवन्धि लका राज्य
 पालमय करनेके लिए पयपर हुए धि, लव समय लय
 लन्धि लने अपने लनालको पक्षो तरख लमम्भ लर
 दारामिकोहके पास लून मित्र दिया था । लने दाराके
 पास पड़ ल लर लव लक सुनाया, दारा राजाको सहायता
 पदु लनेको राजो लो गये । सखाटमें दाराको लमम्भ
 लर, लुक्त निरुद्धर और पालमय देख, एक पक्ष लीका ।

यशवन्तसिंह पत्रके द्विभावात्मक मर्मकी समझ और भी डर गये, उन्होंने दाराकी खुशामद छोड़ कर मिर्जा राजा जयसिंहकी सहायतामें सम्राट् से समा प्राप्त की। सम्राट् ने उन्हें शान्त करके अहमदाबादको सुवेदारी दे दी और उसको लिए एक फरमान और खिलात भेज दी। दाराने इस समय भालखकी अपने वगमें कर लिया और उसकी राजस्व द्वारा वेतनादि दे कर सेनाकी सन्तुष्ट किया। सेना भी वहाँके धनरत्नादिकी देख कर बड़े उछाहसे मानिकका काम बजाने लगे। इसी बीचमें दाराने औरङ्गजेबकी वकीलको कैद कर उसका मकान लूट लिया।

इस सुराटवक्षने अहमदाबादमें अपने नामका सिक्का चला दिया और इतना पढ़नेका हुकम जारी कर स्वाधीनतामें खाला-गाहवाज नामक एक खोजाके अधीन सुरत दुर्ग जय करनेके लिये सेना भेज दी और साय ही बन्दरकी समस्त बगिकोंमें १५ लाख रुपयेका दावा किया। बहुत तर्क वितर्कके बाद बगिकोंने ६ लाख रुपये देनेकी स्वीकारता दी।

उधर जब औरङ्गजेबने जाफराबाद और कल्याण प्रदेश जय कर वोजापुर पवरोध किया, उस समय सम्राट्, गाहजहानने मीरजुमला (उमृदात्-वस् सत्तातनत् उल्ह खिर सुयाज्जमखी)-की उनकी सहायताके लिये भेजा। मीरजुमला उनके साथ मिल कर कार्य करने लगे। आन्ध्रमगीरनामामें लिखा है, कि दाराधिकोठने इस समय गुजरोल्या वोजापुराधिपति आदिलखी और उनके अन्यान्य अमीर उमरावाकी औरङ्गजेबके आदेशानुसार कार्य न करनेके लिये पत्र लिखा था। इसमें आदिलशाहने औरङ्गजेबको बात न मानो। इसके बाद दाराने औरङ्गजेबकी हीनबल करनेके लिये सम्राट् के द्वारा मीरजुमलाको सेना-सहित आगरा लौट आनेके लिए आदेश भिजवाया। तदनुसार मीरजुमलाने आगरा लौटनेको तैयारियां कर लीं। औरङ्गजेब बड़े आर्द्रके इस कौशिककी समझ गये। उन्होंने मीरजुमला जैसे सुदृढ सेनापतिका हृदय सेना-सहित दाराके पक्षमें रहना युक्ति-सङ्गत न समझ, उन्हें मार्गमें ही सहस्रांश कर दौलताबादके दुर्गमें कैद कर दिया। मीरजु-

मलाके पुत्र महमूद अमीनखी इस समय दरवारमें मीर-यक़ोके पद पर नियुक्त थे। दाराको मीरजुमलाके बन्दे होनेका संघाट मिलते ही, उन्होंने अमीनखीको कैद कर लिया। पछे ३१४ दिन बाद यद्यार्थ चटका मामूला होने पर वे छोड़ दिये गये। इनायतखीके "गाहजहाननामा"के अनुसार, इसमें कुछ पहले पाटिल-खीकी खल्दु हो गई थी और उनके पुत्र मजदुन इनाखी उनके उत्तराधिकारी निर्णित हुए थे। औरङ्गजेबने इसी समय अपने मातुलपुत्रको, जिनका नाम खी जहान् गायस्ताखी था, शासनभार सौंप कर दोमताबाद भेजा था। इसके अनावा वोजापुरके पवरोधकी रक्षाके लिए जमादत् उन-मुल्क सुयाज्जमखी (मीरजुमला), गाह नवाखी सरको (गायस्ताखीके छोटे भाई), महमूद-खी, निजवेतखी, राजा रायसिंह पाटिल सेनापति और करीब २० हजार अम्बारीही भी उनके साथ गये थे। सुयाज्जमखी (मीरजुमला)ने, इसमें कुछ पहले (पाटिलखीको जीवित-पवस्थामें) गाहजुमद एकवाल दाराधिकोठके द्वारा प्रेरित दो क्रोतदासके साथ हुए शुभ आदेशके अनुसार हीरा, पला, सुयो पाटिले सुगोमित कुछ घोड़े, कर्षातजयकी धनरत्नमें कुछ अंश तथा दोनों क्रीतदासोंकी पाटिलखीके पास भेजा था। उपहार और दूतोंकी प्रशंसा करनेके बाद ही पाटिलखीकी खल्दु हो गई थी। नवभूपतिने उन दोनों क्रोतदासोंके साथ पत्नीत्तर और उपहार दे कर वापस कर दिया था।

'अमल-इ माली' नामक इतिहासके मतमें, दाराने सिर्फ मीरजुमलाकी ही नौट आनेका आदेश नहीं दिया था, वरन् औरङ्गजेबके अन्यान्य सेनापतियोंकी भी बुलाया था। तदनुसार महाबुखी, राव इतसाख तथा अन्यान्य दो चार व्यक्ति औरङ्गजेबको आज्ञाको अपने पास न कर लौट आये थे।

औरङ्गजेब, जोशसे छोटे भाइयोंको हस्तगत करनेसे अभिप्रायसे सर्वदा पत्रादि लिखा करते थे और साथ ही उन्हें भारतके भावी सम्राट् बतला कर शुभ रखनेको चेष्टा भी करते थे। वे समझते थे कि गुजा बङ्गालमें अकेले है, यदि उत्तराधिकारकी ने कर भाइयोंमें युद्ध उठे, तो उन दोनों भाइयोंके दक्षिणसे युद्ध करनेके

निर्दिष्ट किये जाने पर, अर्थात् दारा या चर्चों के द्वारा शाहा नहीं दे सकती हमारे दुर्भाग्य चर्चोंकी सब शोभा। उनको बाद काफ़ूर ने सब काफ़ूरवत सुरापायी धरिबत बुद्धि सुरादकी इत्यादि किये कहकर न शोभा। ऐसा विचार कर चर्चोंने सुरादकी पत्र लिखा —
 "मैं चर्चों हूँ। प्रवृत्तापूर्व स धारमें रहने का राज कार्यमें इष्टिये करनेकी शिरो रक्षामात्र ही इच्छा नहीं है। परन्तु साब हो मैं यह भी नहीं चाहता कि प्रवृत्ति का राग राग्याधिकारी बन। तुम और हो, और हो, राज्यके तुम ही लोक्य अधिकारी हो। यद्यपि सिंह दाराने पिताको अपने बगलमें कर लिया है और अपने सब हम शोभा पर बुद्धि भी चर्चोंने लगा है। इस समय हम शोभाको यह साब काम करना चाहिये और राज्यकी विवृत्तिका दूर करने चाहिये। पिता कोवित है यदि हम लोग मिल कर उनको राज्यमें गृहस्था स्थापित कर लेंगे तो वे भी समुद्र होयें। फिर हम लोग अपने दाराके निवेद्यमा मीमें और चर्चों सहा भेजनेको व्यवस्था करेंगे। फिरहाल मानवारे ययवन्तहि इ तुम्हारी राह रोहनेके निवेद्य किये शोभा। तुम उनको चर्चों तरह जानू करना। मुझे तुम अपना प्राज्ञाकारो समझना। मैं शोभा को अपने बुद्धि शोभा और बुद्धिसे तोयों के साथ नर्मदानदोके किनारे तुम्हारे साथ था मिलूंगा। तुम अपने ही विजय प्राप्त करोगे। परमेश्वरके नाम पर शपथ करके यह रहा है, तुम मुझ पर इच्छा न करना।"

१६१० ई० में औरङ्गजेब दुर्रुमपुर पहुँचे। महाराज ययवन्तहि चर्चों औरङ्गजेबके जानेको कुछ भी खबर न हो। बाकिर औरङ्गजेबकी सेना सब लखिमनौषी ० कोमकी दूरी पर पहुँची, तब चर्चों ने बाद लिखा। भाङ्गूने अधिपति राजा गिरधराजी माङ्गूय होने को चर्चोंने महाराज ययवन्तहि चर्चों लिख भेजा कि यद्यपि चर्चोंने शिवा गिरागदो पार हो चुकी है। लख बाधिमर्चा ही सुरादके अहमदाबादने चर्चोंका सहाय दून कर अपने पर पया किन्तु रास्तेमें अब सुना कि वे दूरने सामने औरङ्गजेबके साथ मिलनेके निवेद्य करे १० कोस पारने निकल गये हैं, तब इत्यादि हो कर लौट पाय। बा

दुर्गके पास औरङ्गजेब और सुरादकी सेनाका मिथान हुआ। भार दुर्गमें दाराकी सेना थी, वह कर गई और दुर्ग छोड़ कर महाराज ययवन्तहि चर्चों दूरमें जा मिले। बाधिमर्चा भी जा मिले।

महाराज ययवन्तहि चर्चोंने अपने समस्त सेनाके साथ औरङ्गजेब और सुरादकी सम्पूर्ण सेनाके डेढ़ कोमकी दूरी पर जावने कास दो। दूरदुर्ग औरङ्गजेबने इस समय कवि नामके एक ब्राह्मणको भूत बना कर अहमदके पास भेजा। कवि काब्रह्मण और हिन्दूके कवि थे। चर्चोंने औरङ्गजेबके पादियासुधार ययवन्तहि कवि काकर कहा, "मैं प्रियदर्याने किये का रहा है, अपनेप तुम मेरे साथ एक सचने हो वा मेरे मायं से सेना उचित दूर चले जाओ, क्योंकि इससे गृहवृद्धी हो लक्ष्मी है।" ययवन्तहि इ हल चातुरीको समझ कर बड़े क्रुद्ध हुए, चर्चोंने इसका जवाब दे दिया। दूसरे दिन (२० फरवरी १६१० ई०) दूर दूर हो गया। रात्र पूतबकह ययवन्तहि और बाधिमर्चाको सेना परास्त हो कर भाग गई। औरङ्गजेबने विजयी हो कर बाधिमर्चा से मायंके प्रकान किया।

इस समय बहुत ब्यादा गरमो पड़नेके कारण सन्नाट, माङ्गूजहाङ्गका आकर कुछ पच्छा था, वे पागनेने देखा जाने गये। दाराने बहुत पापति की। इस पर फिर सब ययवन्तहिचर्चों पराजयकी बात सुनो, तब चर्चोंने जीव हो नखाटकी आगरा जानेके लिए लिखा। इससे बाद दारा ६० हजार सेना और २०० सेनापतियोंको साथ ले कर बुबके लिए अपनेप हुए। सन्नाट माङ्गूजहाङ्गने निवेद्य किया, समझया कि धर्मो हम अधिपति हैं, इस मुद्देके लीलाका क्या निकलना। लिख भादयोमें बिबाद कहा हो आयया। इस समय मेरो बाबाका आभोजन करना ही लोक है, मैं जा कर औरङ्गजेब और सुरादको समझ दूँगा। पर दारागिरीने उनकी बात न माने। वे शायदशर्चाकी मन्त्रकाममें सन्नाटकी मति परिवर्तन करनेको कोशिश करने लगे। शायदशर्चा सन्नाटके अज्ञातके वे नेमो भाङ्गूकी पर धार करती थे तथा औरङ्गजेबकी बुद्धि और बुद्धीकी प्रयास करती थे। सन्नाट बुद्धीके मनोभावको ताड़ गये; वे औरङ्गजेबको

अपने पास बुला कर समझाना चाहते थे और इसकी लिए गायस्ताख्वांसे सलाह भी लिया करते थे।

यशवन्तसिंहकी पराजयकी खबर आनेके पहले गायस्ताख्वांसे इस विषयमें काफी सलाह होती थी; पर गायस्ताख्वां उन्हें मना करते थे। औरङ्गजेवकी बुद्धि पर भरोसा था, उन्होंने औरङ्गजेवकी समझानेकी कोई श्रावश्यकता न समझी। उसके बाद जब यशवन्तसिंहके परामर्शका संवाद आया, तब सम्राट् गायस्ताख्वां पर बहुत लक्ष्मकी आवेशमें आकर गायस्ताख्वांकी छाती पर वेंत जमा दिया और २३ दिन तक उनका सुँह ग्रा देखा। इसके बाद सम्राटने फिर उन्हें बुला कर वही बात पूछी, परन्तु गायस्ताख्वांने पूर्ववत् परामर्श ही दिया। मव तैयारियां ही जाने पर भी गायस्ताख्वांने सम्राट्को बुलाके साथ मिलने न दिया।

यशवन्तसिंहके पराजय होनेके बाद १६५८ ई०के मई महीनेमें दाराशिकोहने खुलील-उल्लाखां नामक एक सेनापतिके अधीन कुछ सेना धौलपुर रवाना की। चम्पारन नदीके पारघाटोंकी रक्षाका भार भी, उक्त सेनापति पर ही था। दारा स्वयं आगरामें शहरकी बाहर रक्त कर प्रतीक्षा करने लगे। शजाकी राजाजित कर सुलेमानशिकोह वहाँ आ कर उनसे मिलने; ऐसी उनकी आशा थी, किन्तु ऐसा न हुआ। यथा समय सुलेमान उपस्थित न हो सका। दाराकी बाध्य हो कर अग्रसर होना पड़ा। सासुगढ़ नामक स्थानमें दोनों पक्षकी सेनाएँ एक मौलकी फास ले कर पट्टाव डाल दिया। खुलील-उल्लाखां धौलपुरमें रुक कर भी कुछ बाधा न डाल सके।

दूसरे दिन सुबह (ता० ७ रमजान, १०६८ हि०में) दाराशिकोह अपनी सेना सन्हालने लगे। उस दिन बड़ी गर्मी पड़ी थी। छूपकी गरमीसे बर्मा आदिके गरम हो जाने तथा पानी न मिलनेके कारण बहुत से सेना मर गईं। औरङ्गजेव अमिसुखी तीपका गोला गिरने योग्य स्थान छोड़ कर विपन्नके आक्रमणकी प्रतीक्षा करने लगे। परन्तु दाराने शान्तक आक्रमण ही नहीं किया। औरङ्गजेवने उसी तरह सेनाको विव्याम करनेका आदेश दिया और सुबह तक खूब हौगियार रहनेके लिये रुक दिया। रात बीत गई सुबह नवाज पढ़नेके बाद ही

औरङ्गजेव युद्धार्थ प्रस्तुत हुए। महमूद सुरादेवको अपने प्रसिद्ध सरदारोंको ले कर वहाँ तरफ रहे। बहादुरखां दाहिनी ओर और औरङ्गजेवकी पुत्र महमूद आनिम हाथो पर चढ़ कर पीछेकी तरफ रहे।

दाराको तरफ उनके द्वितीय पुत्र सिपेहर-शिकोह सेनाके सामने थे। उनको सहायताके लिए रुस्तमखां वारह हजार अश्वारोहियोंके साथ दाहिनी ओर मौजूद थे। ये पहले औरङ्गजेवकी तीप पर कब्जा करनेका प्रयत्न करने लगे। औरङ्गजेवकी तरफसे उनके पुत्र महमूद सुलतान सम्मुखभागको रक्षाके लिए उपस्थित थे। दुर्भाग्य वश अपने ही तरफका गोला लग जानेसे रुस्तमखांका हाथो मारा गया। उस समय युद्धकी अवस्था भोषण थी। रुस्तमखांने बीचमें रहना युक्तिसङ्गत न समझा, शत्रुकी दाहिनी ओर बहादुरखां पर हमला कर दिया। बहादुरखां रुस्तमका आक्रमण सह न सके, क्रमशः पीछे हटने लगे। घोरतर युद्धके बाद बहादुरखां आहत हुए और युद्धमें पीठ टिखा कर भागनेके लिए मजबूर हुए। दाहिनी ओरकी सेना तितर-बितर होने लगी। यह देख इस्लामखां, मेख मोर आदि सेनापति दक्षिण पार्श्वको रक्षाके लिए नव-बलके साथ दोड़े आये। नव-बलके साथ रुस्तमको परिव्रान्त सेना ज्यादा देर तक रुक न सकी। रुस्तमखां प्रायः परास्त हो गये और सिपेहर-शिकोह भाग गये।

खबर पातेही दाराने रुस्तमको सहायताके लिए २० हजार अश्वारोहियोंको नियुक्त किया और स्वयं पीछेसे तीप छोड़ने लगे। दाराके स्वयं अग्रसर होने पर औरङ्गजेवने अपने दलके कुल बन्दूक-बारियांको सामने कर दिया और एक साथ तीप दागनेके लिए आघात दे दी। दारा सहसा इतने गोला-गोलियोंका आक्रमण सह न सके और पीछे हट आये। उस दिन यहीं तक हथो कर युद्ध समाप्त हो गया।

दूसरे दिन दाराने सुराद पर आक्रमण किया। खुलील-उल्लाखां आज दाराके दलमें सम्मुखभागके नायक थे। उन्होंने एकवारगो हजार उजबेक तोरन्दाजोंको सुरादके हाथो मारनेके लिए आघात दो। सुरादकी सेना और उसी एक साथ हजार तोरन्दाजोंका आक्रमण सह

न मर्षे । राजा मादा जाता हा, पर सुनादने लक्ष्मी पेशी
 न कर इच्छा ही । राजपुत्र मरदार राजा रामनिधुन इन
 समय अपने पीतमन्त्रपरी सेनाके साथ पागे बड़े
 पौर सुनाद पर बरखा झोकते हुए कहने लगे "तुम
 दारादिशेरके साथ हिंसात्मकते सेकर धरती करने
 पाये हो ?" सुनादने अपने शब्दों पर तौर मार कर
 राजा रामनिधुनके लक्ष्मी पर गिरा दिया कि मर गये
 उनको पश्चिमांग पीतमन्त्रपरी सेना प्रमत्त दृष्टीके
 द्वारा मारी गई । पालममोर नामके विद्या है कि पौर
 इजिप्तने इस समय सुनादको सहायता दी थी । पशु
 सुनतपत्र लक्ष्मी-सुभावके प्रत्यक्षरने सब अपने विद्या
 (को कि उस समय पौरइजिप्तके पास मोडूद ही) सुनने
 सुना था कि पौरइजिप्तने सुनादको महापना पर
 जानेवा इनादा तो विद्या था, पर ऐसा ही न मन्त्रा ।

इस समय रामेश्वर इजिप्तने राजपुत्र सेनाके
 साथ पौरइजिप्तकी सेनाका सम्बन्ध पाहसक किया ।
 सम्बन्धमें पौरइजिप्त स्वयं सेनापति थे । इजिप्तने
 बुद्धिमें प्रवेय करनेके साथ ही तत्पर करके ही कर
 विपक्षकी सेनाके पन्द्र मृत पड़े पौर अपने बड़ेको
 छोड़ कर विपक्षकी विनाश करते हुए पौरइजिप्तके
 हथौको लक्ष्य करके पागे बढ़ने लगे । बौरने मो लक्ष्य
 रोक न सका । शत्रु, स्वयं ज्ञान करके ही जालीके पास
 पहुँच गये पौर शेरको रको काट कर लगे गिराने को
 कोशिश करने लगे । पौरइजिप्तने विस्मित हो कर इन
 प्रकारके दारुण कारकी लोचित बना करनेका प्रादेश्य
 दिया, किन्तु नैतिकोंने उनको पाशा समझनेमें परहे
 ही लय दुर्घट वीरको ट, कड़ा ट, कड़ा का जाना ।

बन्धुमर्षीने था कर बुद्धकी भीषणता पौर मो बड़ा
 ही । इन बुद्धिमें बन्धुमर्षी पौर राजा कञ्जयान मारी अरे ।
 दारा एक ही बुद्धिमें इनसे विनाशितियोंको मरते देख प्राय
 वनवृद्धि ही लगे । इना समय एक सोको था कर लन
 के शेर पर लगी, जिसके द्वारा शक्तिपौर भयभीत
 हो कर निरपेक्ष पक्षकारों एक छोड़े पर पधार को अरे ।
 इससे पौर मो घनिष्ट हुआ । उनको सेनाका कुछ प म
 तो कर्ण शेर पर न देख जताय ही तथा पौर कुछ
 प म कर्ण निरपेक्ष पक्षकारों छोड़े पर पधार होने के

यह समझ बैठा कि वे प्राय रहें हैं । बहुतने मैत्रिक
 इस विचारमें पड़ गये कि पक्ष कुछ ही या भाग बने ।
 इना बीषम पौर एक दुर्घटना हुई एक मैत्रिक दाराको
 पीछे एक मरपूरे तूष बांध रहा था । वह दाहिने
 हाथमें तूषको धामे हुए दाहिने हाथमें बाँधनेका फोता
 हुमा कर जा हो रहा था कि दृष्टनेमें एक तोपका गोला
 पाया पौर वह तूष शक्ति दाहिने हाथको लड़ा ही गया,
 नाथ ही वह मैत्रिक मो मारा गया । इसमें पासपातको
 सेना बहुत कर गई पौर मरणने लगे । उन्हें भासने
 देख तथा दाराको जालो पर मवार न देख बुद्धिबुद्ध
 बहुत मो सेना दाराको शत्रु-पामदने तितर बितर हो
 गई । दाराने अपने सेना की सम्बन्धके लिए बहुत
 कुछ कोशिश की, पर सब विधो तरह मो वह एकदम न
 हुई तब दारा ने शत्रुको लोचके सामने खड़े हो कर
 प्राय देनेकी पक्षेया भास जाना ही उचित समझा ।
 निरिहर मित्रोड १-१३० अनुचरोके साथ उनके साथ
 का मिने । पीछे पौर मो हजार पयारोको लक्ष्ये भास
 को लिए । विना पौर पुर दारा पागताको तरह नष्ट
 दिये । शत्रु, इस पामदने विजयात्मकमें मरत जा गया ।

पौरइजिप्तने बुद्धिमें लगी ही का पामदने परहे उपा-
 मना को, बाइसे स्वयं जा कर दाराके परिवार
 गिरि पर पण्डा कजा कर दिया । सुनादके मर र पौर
 सुष पर तीरके बहुतने जसम ही पये थे । पौरइजिप्तने
 का कर पक्षमें उनमें कथ्या पर श्रेय लमबाया पौर
 सुनादके बालकको पक्ष पय मा की । पामदने लगे भावी
 मन्त्राट, वह कर मृष पामिर्षी राजपुत्रको पुना
 दिया । सुनादके शेर पर पण्डने, 1१ लगे कि वह
 एक बड़ा बेह-ना दीयता था । पर निह यह शेर
 मुर दई बालकका निद्राम लक्ष्य बहुत दिना लक्ष
 (उदकविद्यारक समय लक्ष) सुगम-नाशमन्त्रारमें प्रा
 पित था ।

पुत्र शक्ति दारा गामद बहुत दिना शयनीके अपने
 पामादमें पड़े थे । लक्षाके मारी है विनाको चरना मुह
 न निगा लगे । मन्त्रटने जब दाराके जानेका प बाद
 सुना तब शत्रु पागता दे कर परामर्शके लिए अपने पास
 बुलाया ; तो मो दारा उनके पास न जा गई । ३५१

रातकी तौसरे पहरके बाट उन्होंने साहौर पहुँचनेके अभिप्रायसे दिल्लीकी प्रस्थान किया। साथमें मिपेडर गिकोह, पत्नी, कन्या और कुछ अनुचर थे। मार्गमें तीन दिनके बाद प्रायः ५ हजार अग्वारोही उनके साथ हो लिए। इसी समय सम्राट्के भेजे हुए कुछ अमार भी वहाँ आ पहुँचे और दाराके साथ हो लिए।

जयन्ताभके बाद औरङ्गजीवने पिताकी एक पत्र लिखा, जिसमें समस्त घटनाएँ आनुपूर्विक लिखीं और पीछेसे परमेश्वरको इच्छासे ऐसा हुआ है, इस प्रकार लिख कर पिताके पास भेज दिया। इसी समय मामा खाँ जहान् शायस्तावाँ और उनके पुत्र महम्मद अमीनखाँने आ कर औरङ्गजीवका साथ दिया। ता० १० रमजानकी औरङ्गजीवने सामुगढ़ त्याग दिया और आगरा पहुँच कर नगरके बाहर पड़ाव डाल दिया। इस जगह बादशाहने उन्हें मान्दना दे अपने हाथसे एक पत्र लिखा। इसी समय शाहजादो बादशाह-वेगम पिताको अनुमति ले कर भाईको देखने गई और सँझकने दे एक बातमें अनुयोग किया। औरङ्गजीवने अनुयोगकी अत्यन्त कुमावसे ग्रहण कर व्येठी भगिनीको तीव्र उत्तर दिया। बादशाह-वेगम भाईके व्यवहारसे क्रुम् हो कर लौट आईं। दूसरे दिन सम्राट्ने एक तनवार पर "आलमगीर" शब्द खुदवा कर तथा एक प्रयासा-सूचक पत्र दे कर अपने एक विश्वस्त अनुचरको औरङ्गजीवके पास भेज दिया। औरङ्गजीव "आलमगीर" अर्थात् "विश्व-विजेता" नाम पा कर अत्यन्त आनन्दित हुए और अपने पुत्र महम्मद सुलतानकी गृहमें शान्ति स्थापनके लिए भेज दिया। इस अवसर पर बहुतसे सम्भ्रान्त व्यक्ति उनकी साथ मिलने आये थे, औरङ्गजीवने उन्हें पददृष्टिके साथ साथ बहुत धन-रत्नादि उपहारमें दिया।

ता० १० रमजान (८ जून) की औरङ्गजीवने पुत्र महम्मद सुलतानको कहला भेजा कि "पहले तुम आगरा-दुर्गमें जाना और दुर्गके प्रत्येक द्वारमें अपने विश्वस्त अनुचरको प्रहरी नियुक्त कर देना। पीछे अपने बाबाके पास जा कर उनसे राजकार्यसे अवसर ग्रहण करने का प्रस्ताव करना। बाहरकी कोई भी खबर तब सम्राट्के पास न पहुँचने पावे, इसकी विशेष व्यवस्था करना।"

महम्मद सुलतानने पिताका इशारा पा कर अपने बांश (बह शाहजहान्)के हाथसे सम्पूर्ण अमता छोड की और उनके रहनेके लिये निर्जन स्थानका बन्दोवस्त कर दिया। इसके बाद औरङ्गजीवने दाराशिकोहको जागोर मेवात अधिकार करनेके लिए महम्मद जाफर खाँकी भेजा। राजकीयागारसे सुराटकी २६ लाख रुपये और राजाओंके प्रयोजनकी अन्यान्य सामग्रो दे कर उस समय भी उन्हें वधमें रक्ता और १२वीं रमजानकी भयं मेना सहित आगरामें प्रवेग कर दाराशिकोहकी अटालिकामें रहने लगे।

इधर दारा लाहौर गृहमें भो न घुम सके। उन्हें आगडा थो, कि कहीं औरङ्गजीवकी सेना छिप कर उनका पीछा न करतो हो, नहीं तो गृहमें घुसते हो वध उन्हें घेर लेगे। दाराशिकोह बाहरमें रह कर हो अर्थ और बल-संग्रह करने लगे। सुलेमान-गिकोह राजाको पराम्त कर विहारमें ठहरे हुए थे। औरङ्गजीवकी जय-वार्ता सुन, पिताके साथ जा मिले या नहीं, इसी दुर्भाग्यनामें पड़े हुए थे। दाराने पुत्रको आनेमें अनयंक खिलब होते देख, स्वयं निश्चिष्ट नची रह सके; डर लगा कि किसी दिन औरङ्गजीवकी सेना आ कर उन्हें कैद कर लेगी। आखिर वे १५ हजार सुदसवारोंके साथ पञ्जाबकी तरफ चल दिये। दारा इस समय कातरीक्षसे अपने विपदावस्थाकी बात लिख कर रोज अपने पुत्रको (विहारमें) पत्र लिखा करते थे और इसी तरह आगराकी भी पिताके पास अपनी दुष्टशाके कारण बुद्धि-भ्रंशताकी बात लिखा करते थे।

औरङ्गजीवने सोचा था, कि पितासे जा कर समा मंगि और जो कुछ हुआ, सब ईश्वरकी इच्छासे हुआ, ऐसा कह कर प्रबोध देंगे; किन्तु दारा पर सम्राट्के अत्यधिक सँझका स्मरण होते हो उनका साहस जाता रहा। फिर उन्होंने अपने मध्यम पुत्र महम्मद आजिमकी भेज दिया। आजिमने जा कर ५०० अग्ररफियाँ और ४ हजार सिक्के नजर किये। सम्राट्ने शोकसे, दुःखसे, क्रोधसे आँखोंमें पानी भर कर पोतकी आँसुसे चुपटा लिया। इसके बाद आजिमने पिताकी ओरसे वक्तव्य सुनाया। सम्राट्ने 'हाँ' या 'ना' कुछ भी नहीं

कहा। उसके बाद शौरहरीय अपने श्रेष्ठ पुत्र सुह
म्हद सुकतान शौर इसमाराजको हुक सम्पादना
प्रहरो निवृत्त कर क्येक स्वाताधि पशुसम्पत्तमें प्रहस
हुए। श्री दूरान् इनाबाबाद भविष्यकार करनीके लिये
भेजे गये।

इस श्रावणमासमें कातुलके शासनकर्ता मन्मतकाको
मुनरोतिथि एक पत्र लिखा, कि "दाराशिकोह काशोर का
रहे हैं; वहां रुपये शौर पादमियोंको कमी नहीं है
शौर न चापके समान साहसको शौर ही कोई है। इसलिय
चाप चपनी सेनाके साथ दारासे मिले शौर वहां पा कर
उन हीनी प्रबाध दुर्दान्त मुनोका शासन कर इह सम्पाद
का उद्धार करे।"

सुराद शौर शौरहरीय दाराको शोचते हुए मसुरा
पहुँचे शौर वहाँ पकान छान दिया। इही समय एक
दिन (इही वनासको) शौरहरीयको हुका मार बहन
पचक्र हो गया। लक्ष्मी सुरादको अपने तन्मूर्ति श्रोता दे
कर हुकाया शौर कृप ग्राम पिका कर शैकोनेमें लम्बे
केट करके शायी पर चढ़ा कर काबिलनपुरके बिलेमें पैर
दिया। साथ ही लोनोंको सम्बेद न हो इह खवाससे,
हीन हाको मजबा कर शायी लोनों दियाशोमें भेज दिने।
योके लका बनरजादि सर्वका इरक कर दिया।

इही बीचमें दाराने काशोर का कर राजकीयामारसे
करीब एक करोड़ रुपये मात्र लिखे शौर चमोरेसे मो
लने काको पहायता मिशो। पाव र्धे सेना इकठ्ठो करने
गये। लखर १०८८ हि.में इही शिवनद (ता. २२
सुहाई १६३८ ई.)को शौरहरीय मसुरासुहर्तमें दिखीके
विजयवन पर गेठ गये। परन्तु अपने नामके सिक्के
चलाना, विभिन्न देसीय राजाओंको लवहार देना शौर
अपने नामसे नूतना पशुबाना पादि कार्य कर्मित रखे।

इस सुसीमान शिकोह विताना पत्र पा कर लखे
मिलने तथा शौरहरीयके शायके बर्तनके परिप्रायसे इरि
शारके पास सेना लक्षित गइया पाव कर काशोरको तरप
रक दिने। शौरहरीयका यह बात मालूम पकृते ही
लक्ष्मी बहादुरशोको लखे अतिरोधके सिप मेजा शौर
अप काशोरकी शौर इनामा हुए। सुसीमानमें गइया पाव
कर सुहर्त पर हुना कि वनके निराध सेना पा रहे है।

इस सम्पादने पाति हो लक्ष्मी काशोर जानेका निषय
कर सिवा शौर शोनगरके पहाड़की नइक पकड़ लो।
शोनगरके राजा लक्ष्मी सहायता मो दे सकते हैं, ऐसी
सुखेमानको पाया हो विन्तु ऐसा नहीं हुआ। बलिक उन
को निरक्रको सेनामें ली लकका साथ छोड़ दिया। सिफ
५०० पहाड़ोको मात्र लखे साथ रहे। काबिरको लुसे
मान इनाबाबाद लोड पाये शौर वहां बोमार पकृ गये।
बोमारोकी हासतमें शौर मो हुक पशुबाने लकका माव
छोड़ दिया। सुसीमानको कर या कि लको मयुके हाथमें
न लईस काव इसलिय कि हुक दो ही पादमियाके माव
खिर शोनगर रक दिसे। मार्गमें बादशाह बैबनका
काशोरके बोचये जाते समय लक्ष्मी अपने दोवानके २
लाक रुपये लिखे शौर वनका मजान लुट लिया। पत्रमें
लक्ष्मी मार ली हाका। इस श्रावणमासे लुह हो कर लमदा
पशुचरो ने लकका साथ छोड़ दिया, सिफ मन्मत
शाह काका पक्षसे लखे साथ रहे। शोनगर पशु लने पर
बकि राकाने भनादि ल कर इके एक तरहेने के शैकी
हासतमें रकता। बहादुरशोको मालूम शोते ही, लक्ष्मी
राजाको निष मेजा कि "बन्दीको सेनाको रककतामें
इमारे पास भेज कर आप भाग्य परी काइते।"

पमल-इ-शानोके मामिले मालूम होता है कि शोनगर
के राजाने सुसीमान शिकोहकी बन्दी कर अपने पुत्रके
माव बहादुरशोके पास भेज दिया या शौर बहादुरशाने
लक्ष्मी लखे सम्पाद (शौरहरीय)के सामने लपजित
किया। सम्पादने लक्ष्मी शालियर-मुर्ममें रख कर कइए
(पोष्टर मरमत—सुदु विव) बिलानके लिय पादेग
दिया।

इसो समय पकोनकोसे मुर्ममें सुरादके नाम पर पिड
इनाको मालिय थी। शौरहरीयने सम्पादकी हैसियतसे
लक्ष्मी शालियर का कर लुनके बदले लुन सेनेका
पादेग दिया। सुराद इस समय शालियरके बिलेमें लद
ये। काको लोम सुरादके शोबाहुसम्पत्तमें प्रहसत हुए। इस
पर सुरादने कहा—"सुदि वना सेनेके राजकी हुक जानि
नहीं होती। परन्तु यदि लखाट हो बन्दीको बचाना
नहीं चाहते, तो खिर इया पाठम्बरकी क्या पावककता
है? मेरे मामिले जो हुक है, सोने दो।" पकोनकोके

दोनों पुत्रोंके दो आघातमें सुराटको मृत्यु हो गई । इसमें वाट मृत्यु-विषके प्रभावमें सुनेमान-शिकोहको मृत्यु होने पर चचा और भतीजी दोनोंकी उभो किल्लेमें गाड़ दिया गया ;

लाहौर और उसमें आसपासके स्थानोंमें दाराने लोभ दिखा कर करीब बीस हजार अखबारोहो इकट्ठे किये । वाट शूजाको हस्तगत करनेके लिये दाराने उन्हें प्रति-युतिथोगे भरा हुआ एक पत्र लिखा । शूजा भी वडे भाईको सहायता करनेके लिए टाकांमें सेना मंग्रह करने लगे । इधर दाराने लाहौरमें ही अपनीकी सम्राट् रूपमें प्रसिद्ध करने तथा अपने नामने मुद्रा चलानेका विचार किया, किन्तु ऐसा हो न सका । कारण इधो वोचमें लाहौरके लोगोंकी मालूम पड गया कि औरङ्गजेब दिल्लीके सिंहासन पर बैठ गये हैं, इसलिए वहुतोंने उससे दाराका पक्ष छोड़ दिया ।

उधर औरङ्गजेबके साथ मसुगटके युद्धमें पराजित हो कर महाराज यशवन्तसिंह अपने भाग्यमें भाग गये । राजा छत्रगालकी कन्या उनको प्रधान महिषी थी । स्वामी युद्धमें पीठ दिखा कर भाग भागे है, यह सुन कर महारानोने स्वामीका बड़ा तिरस्कार किया । महाराज यशवन्तसिंहने खोके द्वारा तिरस्कार होने पर औरङ्गजेबसे क्षमा मांगी । औरङ्गजेबने महाराजको प्रार्थना खोकार कर लो, दरवारमें उपस्थित होने पर सम्राट्ने उन्हें धनादि द्वारा संबर्द्धित किया और उनको मनसब-दारो (अखबारोही सेनाका नायकत्व) उन्हें हो वापस दे दो ।

औरङ्गजेबके पक्षावकी तरफ अग्रभर होने पर दारा-शिकोह डर गये । एक तो पहलसे ही औरङ्गजेबके नामसे डर कर बहुतसी सेनाने उनका साथ छोड़ दिया था, दूसरे फिर सेना इकट्ठी होनेसे पहले ही दिल्लीकी वही सेनासे युद्ध होनेकी सम्भावना देख, वे एक हजार अखबारोहो और तोपें ले कर ठग्रा और मुनतानकी तरफ चल दिये । उनके सेनापति टाजदखा औरङ्गजेबको गांठ रोकनेके लिए लाहौरमें हो रहे । टाजदखाका आदेश दे गये कि दिल्लीको सेना जिससे नदी पार न हो सके, उसकी उपायार्थ उन लोगोंके आनेसे पहले ही नदीको कुल

नावेँ डुबी कर वा जला कर नष्ट कर दें । कुछ दिन बाद, औरङ्गजेबने मुनतानके पास इरावती नदीके किनारे पड़ाव डाल दिया है, यह सुन कर दारा डट कर भङ्गर नामक स्थानमें चले गये ।

इसी वोचमें मंवाट आया कि मुयाज्जमखाने मुनतान शूजाको पराम्ना करके आ रहे हैं और सम्राट्-पुत्र महम्मद मुनतान उनका पीछा कर रहे हैं । इस समय दाराकी और भी कुछ सेनाने साथ छोड़ दिया । दाराकी वाध हो कर धनरत्नाटिका कुछ मंग्र भङ्गरमें छोड़ना पड़ा और महभूमिके वाचमें गिबिल्यान नामक स्थानका प्रस्थान करना पड़ा । सेखमोरने उनका पीछा किया । सेखमोर जब उनके बिलकुल पास पहुँच गये तब दारा-शिकोह १ हजार अखबारोहियाके साथ बहमदावाद चले गये । सेखमोरकी सेना भी जनाभाव और पथक्कान्तिके कारण बलहान हो गई थी । अधिक घोड़ों तथा सारवाहियोंकी मृत्यु हो जानेसे अधिकांश सेना पैदल चलने लगी ।

इसो समय औरङ्गजेबने सुना कि दाराशिकोह कच्छके रास्तेसे बहमदावादके बहुत पास पहुँच गये है और मार्गमें उन्होंने ११४ हजार अखबारोही सेना मंग्रह को है । सेखमोरने जब देखा कि दाराका पीछा करना व्यर्थ है, तब वे पञ्जाबके रास्तेसे लौट पड़े । मार्गमें लाहौरके शासनकर्ता औरङ्गखाने सम्राट्के आदेशानुसार सजोमगटसे सुराटको उनके साथ ग्वालियर दुर्गको भेज दिया । वहा उनके भाग्यमें जो बदा था, वह पहले ही लिखा जा चुका है ।

इधर दाराशिकोहने कच्छके जमींदारको रुपये दे कर वधमें कर लिया और उनको कन्याके साथ अपने पुत्र सिपेहर (सफोर) शिकोहका विवाह करनेका वचन दिया । कच्छके जमोन्दारने अपने आदिमियोंके साथ उन्हें बहमदावाद भेज दिया । वहाँ पहुँचने पर औरङ्गजेबके शरशर शाहनवाज खाने उनसे आ कर मिले और सुरादवक्का रक्वा हुआ करीब दस लाख रुपयेका चादो-सोना उन्हें दे दिया । माल हाथमें पकते हो दाराने फिर बल सञ्चय करना प्रारम्भ कर दिया । दाराके नव नियुक्त सेनापतियोंने धीरे-धीरे सुरत, काम्ब,

मङ्गोच आदि वन्द्यो पर पपय बजा कर उससे वारो तरफका प्रदेय भी इष्टयग कर लिया। पाँच मन्नाइके मोतर दाराने पोर २० इन्चर पम्पाओकी दृष्टी कर लिए। फिर ज्वा हा, दाराने बोझापुर पोर कैदगाहादके गायनकर्ताको रुपये पोर सेना भिन्ननेके लिए लिख दिया।

इसो बीचमें महराराज यमवन्तसिंह के फिर कुदिहोमके मुनक दरबारके निवासे गये। इन्नाके पाच कुछ करने गये थे, जिनु नई का कर है यन्नाके मिल गये। पोके यन्नाके पराष्ट होने पर मगवन्तसिंह पपमानित हो कर दत्तियको भीर मान गये। दाराको पाया को बि से पपमानित रात्रनुन बोर स बाद पाते हो उनका नाब देनकते हैं। जिनु से तुयन दरबारमें मुनः पपना विम्वार कायम करनेके पमिप्रायके फिर एक विम्वार-वातकताके कार्यमें प्रवृत्त हो गये। दारा जब दत्तिय के नव-मदित जेम्बदसको भी कर पागे बड़े उस समय यमवन्त सिंहने पत्र दारा इनको सूचना दी कि "मैं पा कर पापका पाप दूँ।" पोरइन्नेवको इस बातका पता लगने ही से पत्रभेरेकी पोर बन दिये। मित्रों राजा जयभिरने इस समय महराराज यमवन्तसिंहकी तरफके उनको जमा पदान करनेके लिए पोरइन्नेवके बहुत कुछ पत्रुपेठ किया जा। पोरइन्नेवने इनको बात मान ली। राजा यमवन्तसिंह दाराने मित्रनेके लिए जोधपुरमें २० बीन पागे बसे गये थे; उन्ना मन्नाइके माकूम पकते हो से लीट पके पोर पन्ने राजाके चले पाये। दाराने यमवन्तको पपने पपमें जानेके पमिप्रायके देवबन्द नायक एक मन्नाइको दो बार तथा मजोर सिखोइको एक बार इनके पास भिजा; परन्तु शत्रुनि काब जान लीसा कर लगे प्लोबकावतो के मुना दिया।

काहाय विरहित हो कर दाराने पत्रभेरेकी पर्वत मायाको वारी तरफके सुरचित रक्षनेकी व्यवस्था की पोर जब बोचमें रहने के लिए जिनमें भी पाके वय गये है कर पन्तर उनका कर बन्द करा दिये। बीच बोचमें बन्नुइ चारिपेओ एक छोटा था चेर वही वही गये भी बँदाय हो भी जोधपुरकी माकूम पकते

को जनोंके पपने सेनाको लोपि भेज करदना भिजा कि जिस तरफ हो दाराका ब्यूक तोड़ी। तोन दिन तक मोषण कुछ होना रहा, पर दाराको सेना हम डमये गयो हुई को बि इन तोन दिनेमें उनको विपय कुछ जानि नहीं हुई। दाराको दिपो दूरे सेना चडका पाय मचकारो मय के नामने पातो पोर लगे बिच मिच करके गुर न पपनी जगहमें छिप जाती को। बोपे दिन पोरइन्नेवने सेनापतियो को बुना कर लकाहित किया पोर लके मगमान लईनाहा लोम दे कर यामुनके जमींदार राजा राजकपको प्रथम पाकम रखा भार दिया। राजकपने एक म्ठ माहको प्पाटोके पाच दाराके सेनाबूइके पोके एक छोटेने पत्र तमिषर पर जा कर मुनक मन्नाइको पनाहा उठा दी। दाराके सेनापतियक यह मर्तो जानते थे कि उस स्थान पर पा कर मय, बिपो दिन उन पर हमला कर देंगे। कुछ मो हो, राजा राजाकपने पीहेये पा का माह-महाबली पर चढ़ाई कर दो। माहनमात्रके दसके मम्मुपभाग पर जब बिच मीर पोर पचगान-बोर टिनोरना दोनामें एक माय पाक-मय किया, तो भी पराष्ट हो गये पोर दामादके मुहमें पराष्ट हो जानेके पपमानके कुछ हो कर कुदयेभने हो लनोंके पपने पाच तत्र दिये।

दारा पराजः पोर माहनमात्रक माच-बिबन्तनका जान मुन कर मचना मम्मु-बूदर हो पडे पोर मुन मजोर-सिखोइ पोर खिरोत्र भिबानो तथा पोर कुछ पन्नापुर चारिनोको माय से भाग गये। कुछ एकके कोमतो मचि मादिबन्नीके मिदा भी पपना मर कुछ बर्ती छोड़ गये पोर पचमदाहादको तरफ पचपर हुए। जब तोन चण्टे रात बीत चुकी, तब पोरइन्नेवने मुना कि दारा मान गये। लय समय भी दाराकी खोई खोई पचवर्ता भिना हुए कर रहे थी। राजा जयपि च पौर बहादुर याने एक टक सेना से कर लम्बा पोहा किया। दाराके पाच कोच यानि बहु जाने पर उनका काम चारियोमें परन्तर विवाद हुआ पोर इनकी जनासिधिवे त्रिपये जाय जो पका, सेबर चयन हो गया। बिपो की रसाके लिए जो बीना मिदुम छे. भी मो इनका कुछ न कर मने; बिजं खियो की रसा करती रहे। परन्तु इन पचजन सुटेरो ने

स्त्रियों के भी जबर उतार लिए, उन्हें एक छावनी पर बिठा दिया और उनके ऊट ले कर मरुभूमि के रास्ते में चम्पत हुए। खोज नौग उस छावनी में ले कर डेढ़ दिन बाद दारामे जा मिले। भूत्व-विरचित, इत्यादि सुगठित और अपदस्व दारा एक दल चम्प, विषण, क्लिट, अत्याचार-पीड़ित स्त्रियों को साथ ले मरुभूमि पार कर ८ दिनों में अरबमटावाट पहुँचे। गहरके प्रधान व्यक्तियों ने, औरङ्गजेबकी सम्मत्, समझनेके कारण उनके डरसे, दाराको गहरमें घुसने से रोकना। भाग्यताद्वित दारा वहाँ भी इस प्रकारसे प्रपमानित ही, नगराधिकारको भाशा-की छोड़ गहरमें ठी क्रीसको दूरी पर क़ारी नामक स्थानकी चले दिये। इस जगह दुर्दान्त कौल-सर्दार कान्धोने इनकी सहायता की और उन्हें साथ ले कर गुजरातके भीतरमें कच्छकी सीमा तक पहुँच गये। कच्छके जमींदारने इसमें पहली जिम प्रकार दाराको सहायता पहुँचायी, अबकी बार ये मा नहीं किया। पहली उन्होंने दाराके भाग्य परिवर्तनके साथ साथ अपने भाग्य-परिवर्तनका भी मीजान समझाया था, परन्तु अबकी बार भाग्यहीन दारामे कुछ सागा करना व्यर्थ जान, उनके साथ सुलाकात तक भी नहीं की। दाराकी चाँखोंमें आँसु गिरने लगे, वे उसी टगामें महरकी चले दिये।

जो अब तक इतनी दुर्दशामें भी छायाकी तरह दाराके साथ रहते थे, सिन्धु प्रदेशकी मोमामें पहुँचते ही उसी फिरोज भेवातीने जब देखा कि दुर्भाग्य दाराका पीछा न छोड़ेगा, तब वह भी उन्हें छोड़ कर दिल्लीकी चले दी। दारा सिर्फ एक पुत्रको ले कर जावियान नामक स्थानमें पहुँचे। वहाँ मरुभूमि के उकैतीने कैद करनेके अभिप्रायमें इनका रास्ता रोक दिया। इनके साथ युद्ध करके दारा मकाशो जातिके टैगमें पहुँचे। इस जातिके सरदार मिर्जा मकाशीने उन्हें आश्रय दिया और अपने पादमियोंके साथ १२ दिनका रास्ता तय कर कन्दाहार पहुँचाना चाहा। मिर्जा मकाशीने ईरान (फारम) जानेके लिए दारामे बहुत कुछ अतुरोध किया, पर दारा दिल्लीके सिंहासनका स्तम्भ न छोड़ सके थे; इसलिये उन्होंने कच्छके अन्तर्गत दादरके जमींदार

मालिक जीवानरें पास जानेकी इच्छा प्रकट की। मालिक जीवानर बहुतने विषयोंमें दारामे कृतज्ञ था, दाराने कई बार उसकी जान बचा दी थी और बहुतसा उपकार भी किया था। दाराके उपस्थित होने पर यह पतिय-इतना-कारो कृतज्ञ नरपक्ष उन्हें अपने घर ले गया। यहाँ दो दिन रहनेके बाद दाराकी पत्नी नादिग बेगम और कन्या कुमारी परबेजने दुर्दशा और दुश्चिन्ताके कारण आमा-ग्य रोगमें प्राण तज दिये। अबकी बार कच्छमें प्रवेश करते समय वहाँके नियुक्त क्रिये हुए सूरत और भवौच-के शासनकर्त्ता गुल मरुमट ५० अगारोहियों और २५० बन्दूकधारियोंके साथ आ कर मिले थे और वहाँ तक बराबर साथ थे। अब दुःख पर दुःख, विपत्ति पर विपत्ति, निराशा पर निराशा भोग कर दारा पागन-में ही गये थे। उनको बुद्धि मारी गई थी। उन्होंने उसे मौके पर अपने एकमात्र सहाय गुल महम्मदको लो और कन्याके चूत-शरीरके साथ लाहोर भेज दिया। विपत्तिके समयमें एकमात्र विगाही बन्धुकी दूर भेज कर कुछ नौकरों तथा अकर्मण्य खोजके साथ वहाँ पहुँच रहे।

दूसरे दिन सुबह मालिक जीवानरकी सहायतामें बे ईरान जानेके लिये तैयार हुए; मालिकने तैयारियाँ भी कर दीं, कृतज्ञताकी पानीमें बहाकर धन पालेको आशा-की विषाये यह कुछ दूर तक दाराके साथ भी गया; किन्तु पीछेसे बहाना बतना कर यह लौट आया और अपने भाईके अधीन कुछ बढमास आदमियोंको उनके साथ छोड़ आया। कुछ दूर चल कर उस स्थितिने दारा पर सहसा आघात कर उन्हें बन्दो कर लिया। इसके बाद मकीर शिकोह तथा पन्थान्य व्यक्तियोंको भी बन्दो कर बहे भाईके पास पहुँचा दिया। मालिक जीवानरने यह संवाद राजा जयसिंह और बहादुरखानेको भेजा। बहादुरखानेने महरके शासन कर्त्ताको यह संवाद गोप्य ही सम्मत्के पास भेजनेको कहा और उन्होंने स्वयं भी भेजा। दोनों जगहसे संवाद आने पर औरङ्गजेबकी विस्वास ही गया, उन्होंने टोल पिटावा कर यह खबर चारों तरफ फैला दी। साधारण लोग मालिक जीवानर पर विगासघातकताके कारण बड़े विगड़े और उच्च धिकारने लगे, परन्तु दरबारमें उसे २०० घोड़े और एक इलारी मुनसबदारी मिली।

एव समय सुसैमान मिश्रों को नगरके राजकी प्रायश्चित्त में है। राजा राजकुमार लखाट, से पाठेयानुसार खोमबरेके राजाको सिद्ध दिया कि "धायने सुसैमानको पापव दिया है, इन कारक यज्ञाट, पापके नाराए हैं वतएव आप उन्हें अपने राज्यके निदान दीजिये।" राजका परिचयम ओ कुछ हुआ वह पहले ही निजा का हुआ है।

१६३८ ई०में, शिवेश्वर नामके प्रायश्चित्त बहादुरखाने दाराशिकोह और सफ़ोर-मिश्रोंको से का यज्ञाट,के पाम पदुके।

यज्ञाट,के पाठेय दिया—“पिता और पुत्रकी बन्धोरोंके बीच कर जाओ पर बड़ाया काय और महरके तयाम बाजारोंमें हुआ कर पुराने दिवोंके खिजराबाद नामके ज्ञानमें बंद रहना पाव।” बहादुरखानेको दोनों बंदियों को से पानेके बावत कायो जनाम मिना और इज्जत को मई।

मासिक जोबान, इस बटनाके बाद बख्शियारखाने नाम धारक कर दिवों पदुके। मगमें, ओ नोम मग ही मग दाग पर बंद करतें हैं, उन नोतो ने तथा नाकारक जनताने मिन कर मासिक जीवानको मारा पोटा गासी-मसोब दो और कोच व बड़ मो मारै। पन्तमें जानके मार बालनेको मो कोशिम को पर मासिक जोबान ठाकने यवता सु व खिजा कर मोहूर्में मासिक को खिखो तरक राज-उरमार तक पदु व यसे। एखमें बहुरते पायो मारै मो मय से पोखिसे कोतबालने पाकर बहुरो की बचा खिजा अनुसन्धान किए जाने पर मालूम हुआ, कि कैवलखाने नामके एक पाहरी (राजको-में इस बड़बड़ीका लुभयात किया था। उसको गिर बंदीका इक दिया गया।

१६४८ ई०में शिवेश्वर नामके पन्तमें (१०६८ ई० में जीवहर्षमें) दाराशिकोहके खिजे प्रायश्चित्तका पाठेय हुआ। बख्शियारखानेको ने राय दो कि "दाग बने बहिभूत बनावारो, खासिरो व यदवाका और लकक पापारी के पाकक है, इधनिए सुनतमानो-याकके बहुरार है बपदयो है।" बावन्तके प्रकृत बख्शियार

खारी मारतके माने लखाट दाराशिकोहका मरतक पात्र बातको बातमें बहुरी यदग कर दिया गया। उनका खिज शरीर जायो पर एक दर नगरमें हुमाया गया और पन्तमें बड़ हुआ बादयाइकी बहुरे पाप पाक दिया गया। सफ़ोर मिश्रोंके स्वासितर-दुर्ममें बंद रहने गए।

हिन्दू-बन्धु सुयस विहासमें प्रकृत बख्शियारखाने दाराशिकोहका पात्र इस तरह पन्त हो गया।

पन्त हो निजा का हुआ है कि दाराशिकोह एक निबन्धक विद्वान् है। काव्य-त्रयमें इनकी 'बादिरो' नामने प्रसिद्धि है। धायने 'सकोमत् एक पाठसिधा' नामने मन्थादको मचित खोवने, हिन्दू और सुनन मान-भर्म एकीकरककी मनपाके मन्मा लक, बहुरदन नामके एक लकट प्रम पन्त, १०६० ई०में 'सुलखर' ग्रहणनामा, "इस नाम एक परिषीम" पादि बंदे लकट फारसीपदक रहे है। धायने पन्तोर मौनानाके सु बड़े ईशके मारभूत उपनिषदका परिचय पा कर काशीसे साठ न नामो और प्रधान परिषीमो की बुझाया था और लकके सु बड़े उपनिषदको व्याख्या इन, ६ महीने तक कठिन परिश्रम करके १०६० ई०में (१६३६ ई०में) टिप्पणी बहित फारसी भाषामें प्रायः धर्मो प्रधान उपनिषदो का अनुवाद प्रकट किया था।

फारसी विद्वान् धूसो पान्तारै दुपे तोंने ठक अनुबाहित उपनिषदोका फरासोको भाषामें प्रचार किया था। इस फरासोकी अनुबादकी देख कर जो बुरोपियोंका ध्यान इकर पाकर्षित हुआ था, धर्म मो दुरोपोसगक रहका पाकर करतें हैं। दाराशिकोहके पद्यपाठगुण्य धर्म मतकी इन दर हिन्दू लोग लके हिन्दू को धर्मना करतें है। काह, (Castro) ने निजा है कि दाराने मरते समय बुरोपेय मत पदक निजा था। उप निबन्धोकी भूमिखामें दाराने बंद धार पुराणको पाठो-पना कर एक बड़ी पन्तकी बात लिखो है।

● बहुरेकी-बहुरार इस प्रकार है—Happy is he who having abandoned the prejudice of vile selfishness sincerely and with grace of God renouncing all partyship shall study and comprehend this translation which is to be dematerialized mighty matters.

दाराजिकोह प्रकृत तत्त्वज्ञानको प्राप्तिके लिए मिर्ण कुराणका ही सरोमा नहीं रखते थे। आप हिन्दुओंके वेदोपनिषदादि, ईसाइयोंके बाइबिल आदि भी पढ़ा करते थे। उपनिषद्की भूमिकाओं आप इस बातको कवून कर गये हैं। इस भूमिकाओं आपने स्वीकार किया है कि किसी धर्मको निन्दा वा किमोमे वृणा करना कुराणका अभिमत नहीं है। आपका बनाया हुआ फारसी भाषासे रचित अथर्ववेदीक सूत्रध्वव बहुत ही सरस है।

दारि (सं० त्रि०) दृ-ण्विच्-इन् । दारक, फाड़नेवाला ।

दारिका (सं० स्त्री०) दारक-टाप्, अतइत्वं । १ कन्या, वेद्यो । २ वानिका ।

दारिकादान (सं० स्त्री०) दारिकायां दानं । कन्यादान ।

knowing it to be a translation of the words of God, he shall become unpishable and without dread and without solicitude, and eternally liberated."

(a) "And whereas the views of this seeker of plain truth were directed to be origin of the being in Arabic language, and the Syriac, and the Chaldaic, and the Sanskrit, he was desirous to comprehend these *Opnikhats*, which are a treasury of monotheism and in which the proficients, even among that tribe, were become very rare by translating without any wordly motive in a clear style word for word."

(b) "And whereas the holy Koran is almost totally mysterious, and at the present day the understanders thereof are very rare, he (Dara) was desirous to collect into view all the heavenly books, that the very word of God itself might be its own commentary, and if in one book it be compendious, in another book it might be found diffusive, and from the detail of one, the other might be comprehensible, he had therefore cast his eyes on the book of Moses, and the Gospel, and the Psalms and other holy pages."

† "And it is also known out of the holy Koran that there is no tribe without a prophet and without a Bible and from sundry passage therein it is proved, that God inflicts no punishment on any tribe until a Prophet hath been sent to them and that there is no country wherein a religion accompanied with prophecy hath not been placed."

दारिकेश्वर—ब्रह्मानन्द अन्तगत वाँकुड़ा शोर वर्धमान जिलेको एक नदी। यह मानभूम जिलेके तिनारो पहाड़से निकल कर पूर्व दक्षिण की ओर वाँकुड़ा, वर्धमान शोर हुगली जिलेके मध्य होते हुई भागोरथीके मुहानेमें गिरी है। वाँकुड़ा जिला ही कर प्रवाहित होनेके समय इसका स्रोत पूर्व की ओर चला गया है शोर दो शाखाओंमें विभक्त हो कर पुनः मिल गया है। इसकी प्रधान उपनदी गन्धेश्वरी वाँकुड़ा शहरसे ३ मोन पूर्व दारिकेश्वरके माघ मिलती है। वर्धमान जिला ही कर जाने समय दारिकेश्वर ताराजुनी शोर भामोदर नामको शोर भी दो उपनदियोंके साथ मिल कर बहिःतरङ्गमें प्रधानत दक्षिण पूर्व की ओर गमन करती है। वाट यह हुगली शोर सेदिनीपुर जिलेको मध्य सोमा जैती हुई मुहाना तक चली गई है। वर्धमान जिलेसे बहिःगत होनेके बाद इसका नाम बदल कर रूपनारायण हो गया है। प्रति मानमें इसकी प्रवणता दामोदरकी रूपेचा कुछ न्यून होने पर भी इसमें दामोदरकी नाईं अनेक समय भोषण वाट आया करती है जो प्रायः ४१३ फुट ऊंचे जलके प्राचोरकी नाईं नदी शोर जलको भरती हुई प्रवर वेगसे उठात् पड़च जाती है शोर मनुष्य, पशु घोड़े आदिको जो कुछ मामने पड़ते बहा ले जाते हैं। स्त्रियां नदीके किनारे बालूके ऊपर अपने अपने कलियों रख कर स्नान करती हैं, ऐसे समयमें सहसा कलकल गभीर शब्द करती हुई भोषण वेगसे वाट पड़च जाते शोर स्त्रियां कलियों लेकर किनारे तक भी पड़चने नहीं पाते, कि वाट पड़च कर उन्हे कलियोंके साथ बहा ले जाते हैं,—इस तरहको घटना कई बार हो चुकी है। वर्षाकालमें कभी कभी इसमें दो तीन दिन तक ऐसी वाट रहती है, कि आना जाना बिलकुल बन्द हो जाता है। नदीमें कहीं कहीं बड़े बड़े पत्थर हैं जिनमें टक्कर खा कर नावें आदि टूट फूट जाते हैं। वर्षाके मिठा दूधरे समयमें अधिक जल नहीं रहता है। श्रीमकालमें नदीका अधिक जल स्यान बालूसे टक जाता है। बालू खोदने पर जल मिलता है। इस नदीमें कई जगह वाटके समय स्रोतके वेगसे बालूके हट जाने पर गहरा शोर बहुत लम्बा रह बन जाता है। जिसमें श्रीम

आत्मने भौ प्रचुर अत्र रहता है। दारिद्र्येश्वरं नामके द्वारा वाचिष्वादि लक्षो होता है। बर्षाकालमें विषम दो बार बड़े बड़े बाढ़ मानसूनमें बहा जाती है। रामका किनारा बहुत बड़ा है। वर्षमान पौर कृषको निवेदिं दारुके बचनेके लिए नदीके किनारे बांध है।

दारित (स० लि०) दार्यंति स्थिति इ-विष्-ञ। अतदारच, भीरा या पाड़ा हुआ।

दारिद्र्य (स० ली०) दारिद्र्यं भाव दारिद्र्य-ञम्। दारिद्र्यता, निर्धनता, गरीबी। दुःखका अनुभव करने सुख मोभा पाता है। नोटिन को सुखका अनुभव करने दुःख पाता है वह अतकथ्य हो कर अनोचनाय करता है। दारिद्र्यता अन्त दुःखदायक है। सुखवान् अनुभव मो सब दारिद्र्य दयाको प्राप्त होते हैं, तब उनके समो सुख आवे रहते हैं।

दारिद्र्य—बस्यार्थके प्रयोग। इन्धेनि सयर्बमिदोय कोशिक सुखको टोका रचना को है।

दारो (स० ली०) दारयति पदतन्मिति इ-विष्-इत्। (क०) नापुष्प इत्। इत् डा१(८) ततो लीय। दारुको-विधिय। मानसकाशमें लिखा है कि, को लोग यैदन पश्चिम चलते हैं उनको बाहु कुलित हो कर सुखो हो जाती है और पीछे बमड़ा बड़ा होकर पट जाता है, वेनाई, कबवा।

इसको चिकित्सा - रघु वीरमें गिराने उपुर्वक रक्त-सोचक पौर खेड ल्बेड तथा प्रलेप द्वारा चिकित्सा करने वाहिये। मोम, बबरेको चर्बो पौर मध्या, जो पौर पचकार इन सबको मिला कर बार बार प्रलेप देना चाहिये। धुना, सैन्धव पौर मोहा इन सबको जो पौर मद्धके घाव मल कर कपमें मरकोका तेल मिश्राने पौर बाह रोमी यै रोमिं कयानेके दार रोम जाता रहता है। मोम, मिश्रामत्त, जो, सुङ्ग, हुम्बु, धुना, पौर गिद्धमरी इन सबको पीस कर प्रलेप देनेसे यह रोग दूर हो जाता है। कूर्पिके बीजका मूल कल्क पौर मानकड़का चार अत्र दे कर करबोके ईन्धने पकाई, बाह लसे यै रोमिं कयानेके पारदारपीपीय लट हो जाता है।

दारी (सि० ली०) दारो, लड़ाईमें जेल कर भाई हुई (ली०)।

दारोकार (सि० पु०) १ लोडोका क्षामी पूर्व समझी राजा लोग कोई लोडो रथ लिया करते थे। पीछे कसके पप्रमक होने पर उसे किसी सुनर मनुष्यको नौय दिते थे तथा जोबननिर्वाहके लिये कुछ जागीर म दे देते थे। जो उस लोडोका पति बनता, वह 'दारोकार' कहलाता था। पौर इनके उत्पन्न सन्तान 'दारोकार' कहलाते थे। २ दासीपुत्र, पुत्रात्।

दाह (स० पु० लो०) दौर्घमि इति इत्-उत्- (इत्प्रिबनीति। इत् १।१) १ काठ, काठ ककड़ो। २ गिराक, पोतक। ३ दिवहाह, देवदार। ४ मिष्ठी, बड़ई, कासीयर। ५ दारक वह जो पोरकाड़ करता हो। (सि०) का दाने दो खण्डने या-व। ६ दानयोक्त, देनेकासा। ७ कण्डनयोक्त, टूटने पटनेकासा।

दाहक (स० ली०) दाह-स्तावे इत्। १ दिवहाह, देवदार। (पु०) २ काठका एक मारकोका नाम। ये बड़े कल्प-अन्न थे। सुमद्राहरकके समय इन्धेनि पस्तु लक्षे बहा था कि सुमि बांध कर तब भाप सुमद्राको रक पर छे काए। में यादकी के बिबह रक नहीं हाके सभता। यौहकके मरने पर बें पस्तुनको कनके निबट भाप पौर बाह कडकको चले गये। (भाग० बाट) १ एक सोमाचार को मिषके चयतार कड़े जाते हैं। ३ काठका पुतला।

दाहकण्ड (स० पु०) १ दिग्भिद, एक देगका नाम। (सि०) तत्र मव कण्डान्तदेयनाकितात् सुम्। २ दाहकण्डक, दाहकण्डदेगका।

दाहकटलो (स० ली०) दाहकल खाडिना कटलो। १ कनकदलो, बड़को कला। २ काठकटलो, कटकेला।

दाहका (स० लो०) दाहका काठेन जायति के-व द्यप। काठमयी लो, कठपुतली। इसका पर्याय—पलिहा, दाहको, घासमडिहा, घासमको, गाहाहो, दाहपुलिहा, कुबल्टी पौर दाहममा है।

दाहकावन (स० लो०) कनकवतोय भेद, एक कनका नाम जो पवन तीव्र माना जाता है।

दाहिक (स० पु०) दाहकत्वं पपञ्च विष्। दाहकका भयम्।

दाहकेशर (स० पु०) विषलिङ्गीद।

दारुकीश्वरतीर्थ (सं० स्त्री०) शिवपुराणोक्त तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम जिसका उल्लेख शिवपुराणमें आया है।

दारुगन्धा (सं० स्त्री०) चीड़ा नामक गन्धद्रव्य, विरोजा।

दारुगन्ध (सं० स्त्री०) दारुमयो गर्भो यस्याः। दारुमय स्त्री, कठपुतली।

दारुचीनी (सं० स्त्री०) स्वनामख्यात गुडत्वक, एक प्रकारका तज। भावप्रकाशके मतसे इसके पर्याय—त्वक, स्वादु और दारुप्रिता, तथा शब्दरत्नावलीके मतसे सूतकट, शृङ्ग, त्वक, पत्र, वराङ्गक, त्वक, चौल, पत्र, हृद्य, सुरभिषलकल, उल्लट, चोष और गुडत्वक हैं। इसे धड्डालमें डालचीनी, पञ्जाबमें किरफा वा दारुचीनी, बम्बई प्रदेशमें तज, दालचीनी वा तोखो, तैलङ्गमें दारु-निद्र, नवद्वपत्ता, सत्रलवद्वपत्ता, द्राविडमें कर्वा, कर्णाटमें दालचीनी वा लवद्वपत्ते, सिंहलमें दारुचीनी वा तल्लिखान्नि कहते हैं। गुडत्वक देखो।

यह पेड़ दक्षिण-भारत, सिंहल और तेनासरिममें होता है। सिंहलके पश्चिम उपकूलमें भी इसको खेतो होता है। भारतवर्षमें यह जंगलोंमें ही मिलता है और लगाया भी जाता है तो बगोचोंमें शोभाके लिये। कौडूण-से ले कर लगातार दक्षिणकी ओर इसके अनेक पेड़ मिलते हैं। जो पेड़ जङ्गलमें सगता है वह लगाए हुए पेड़से कहीं बड़ा होता है। (Cinnamomum zeylanicum) वाइविल पुस्तकमें यह दारुचीनी Kinnemon नामसे वर्णित है। (Exodus XXX 20)

वाणिव्यचेत्रमें दो श्रेणियोंको दारुचीनी प्रचलित है, सिंहनकी दारुचीनी और चीनकी दारुचीनी। चीनकी दारुचीनी बहुत निकट समझी जाती है।

सिंहल, चीन, श्याम, कोचीन, चीन और यवद्वीप से विशेष कर इसको रफतनी होती है। इनमेंसे सिंहल को दारुचीनी ही बहुत पहलसे विदेशमें रफतना और आदृत होती आ रही है। १७६८ ई०को (भोलन्दाजोंके आधिपत्यकाल तक) सिंहलमें सब जगह यह पेड़ जंगलो उपजता था, तब भी कोई दारुचीनीकी खेता नहीं करता। नरम जमीनमें जो पेड़ उपजता था वही चतकठ समझा जाता था और गरम मसालेके लिये यूरोप आदि स्थानोंमें भेजा जाता था।

सिंहल और दक्षिणालयमें जो त्वक, संग्रह करते हैं, वे इसके नौ भेद बतलाते हैं—१ नाग, २ कपूर, ३ वाइते, ४ सवेल, ५ उवुल, ६ निका, ७ माल, ८ तोपत और ९ वेकुरुन्द।

इसके पत्ते तेजपत्ते जैसी तरहके, पर उनसे चौड़े होते हैं। इसमें बहुत छोटे छोटे फूल गुच्छोंमें लगते हैं। फूलके नोचको दिखलो छ फाकोंकी होती है। सिंहलमें दारुचीनीके पेड़ लगानेकी यह रीति है—कुछ कुड रेतली करैल मिट्टीमें ४५ हाथके फासले पर इसके बोज बोते या कलम लगाते हैं। इन्हें छ पसे बचानेके लिये पेड़की डालियाँ आस पास गाड़ देते हैं। ६ वर्षमें यह पेड़ ४५ हाथ ऊँचा हो जाता है। इस समय इसकी डालियोंको छिलका उतारनेके लिये काटते हैं। डालियोंमें कुरीसे छलका चौरा इस वास्ते लगा देते हैं कि छाल जल्दी उचट आवे। इस प्रकार प्रत्येक किए हुए छालके टुकड़ोंको जमा करके दवा दवा कर छोटी छोटी अटियोंमें बाँध कर रख छोड़ते हैं। दो तीन दिन इसी तरह पड़े रहनेके बाद छालोंमें एक प्रकारका हलका खमीर-सा उठता है। इसको सहायतासे छालके ऊपरकी भित्ती और नीचे लगा हुआ गूदा टेढ़ी कुरीसे हटा दिया जाता है। अन्तमें छालको दो दिन छायामें सुखाने और फिर धूप दिखा कर रख देते हैं।

दारुचीनीको छाल, पत्ते और मूल इन तीन स्थानोंसे तीन प्रकारके तेल निकलते हैं। सिंहल और इंग्लैंडमें छालको चुभा कर सैकड़ों पीछे आध वा एक भाग तेल निकालते हैं। यह तेल देखनेमें खीरे जैसा लगता है और गन्ध भी काफी रहती है। वह सुगन्धद्रव्यमें व्यवहृत होता है पत्तोंसे जो तेल निकलता है उसकी गन्ध सबझ सो होती है। सिंहल देशसे यह 'लवङ्गतैल' नामसे भेजा जाता है। मूलका तेल पोला और पानोसे कुछ हलका होता है। इसमें कपूर और दारुचीनीका गन्ध रहती है। पहले इस पेड़के फलसे ही एक प्रकारका तेल प्रसृत होता था लेकिन अब कहीं भी देखनेमें नहीं आता।

दारुचीनी दो प्रकारकी होती है, दारुचीनी जीहानी और दारुचीनी कपूरी। ऊपर जिस पेड़का विवरण

दिना गया है, यह दाहवीनी बीजानी है कपूर के द्रव्य के
में बहुत ज्यादा सुगन्ध रहती है। जिन्दुस्तानमें इसके
पत्र देहरादून, मोहनगिरि पाटि ज्वालामुखी सपाए मये हैं।
पर्वनी चीन देशमें इसकी सुगन्धित ज्ञान पातो जो,
इसीके उषे दाहवीनी कहते मी।

सुरोपय विविधको के मतसे दाहवीनीका गुण—
सुगन्ध, लक्ष्मीक वातुनामक, उदराघान, उदरगून
पतङ्गोषी प्रायेपजनक दोङ्ग, बलहारक उदरामय
पाकश्लोका प्रदाह, रक्तसाधिय पादि रोमोंमें विमिय
कपधारी है। दन्तगून घोर जिह्वाके लिए यह पत्रक
सिक्का है। पामाययरोममें मी २० धंन दाहवीनीके
चूर्णका प्रयोग विविध फलपद है।

दाहव (स० पु०) दाहयो कायते जन ड। १ मर्दक वाय-
मेद, एक प्रकारका वात्र। (त्रि०) २ काठनिर्मित,
लकड़ीका बना हुआ। ३ काठसे कपक, लकड़ीमें पैदा
होनेवाला।

दाहव (स० पु०) दाहयतोति दृ विष् कन्। १ विष-
हृत्, शीतका पित्त। २ मदानक रस। ३ रोह नामक
लकड़। ४ विष्णु। ५ मित्र। ६ एक तरहका नाम।
७ राहस। (त्रि०) ८ निदाहक, पाङ्गुनीवाला। ९ भोवक
घोर। १० दुग्ध, प्रकण्ड कठिन।

दाहवक (स० जो०) दाहवक्य् कायतोमि कौ क।
मलककाल दृह रोगविधिय, मिरमिं जोनिवाला एक
दुहरोन जिसमें चमड़ा रसा जोकर खपिट मूनीको तरह
कूटा है, इसी। वातु घोर काज कृपित जोकर मदान
के कर्तमें का कर प्रायय मीता है, तत्र वेदमूमि कण्डु
सुख, बच घोर कर्तम जो जातो है चर्माय् कपरका
चमड़ा खनि बनता है, इसको दाहवक कहते हैं।
इसको विविधता एक प्रकार है—पियारका बीज, यहि
महु कुट, उरद घोर सैन्धव इन सबको महुके माप मिका
कर मलक पर कर्मानसे दाहवक रोग जाता रहता है।
शुक्रापकके चूर्ण घोर दृहरात्रके वसये विसको पका
कर प्रयोग करनेसे भी कण्डु घोर दाहवक सुहरोन नष्ट
होता है। पामबी गुटको घोर दृहके बराबर बराबर
भागको सूखे माप पीस कर लकडा वसिय भी इत रोग-
का रामवाक है। (गन्ध०)

दाहवता (स० जो०) दाहवक्य माक दाहव-लक,
मियां टाप। दाहवका माक, कडेरता।

दाहवा (स० जो०) १ तिजिमेद, प्रकण्डतोया। २ मर्दका
कण्डको पवित्राको सेवी।

दाहवाक्यम् (स० त्रि०) दुराका, दुष्ट, खोटा।
दाहवादि (स० पु०) विष्णु।

दाहवक (स० जो०) १ काबर्म्म, कूरता, कडेरता।
२ उयता, मीपपता।

दाहवक (स० जो०) निवपुराचोळ तोर्बमेह।
दाहवयो (स० जो०) कठपुतली।

दाहवारो (स० जो०) कठपुतली।
दाहनिगा (स० जो०) दाहप्रमाना निगा इन्द्रि।

दाहविरिहा, दाहवयोः।
दाहवतो (स० जो०) दाहवः देवदाहका पत्रमिव पत्र
मन्ना, डाप। विष्णुपत्नी।

दाहपात्र (स० जो०) दाहवः पात्र ना दाहनिर्मित
पात्र। काठ लकडाकारदि पात्र, काठका बरतन। मनुके
वतियोंका धनामुपात्र (सुमङ्गी) घोर दाहपात्र रखनेका
विधान किया है।

दाहपोता (स० जो०) दाहका काठेन पोता, काठ
प्रमाणवात् तवाक। दाहविरिहा, दाहवयोः।

दाहपुत्रिका (स० जो०) दाहमयो पुत्रिका। काठपुत्र
निका कठपुतली।

दाहपत्र (स० पु०) पिप्पला, Pistacelo।
दाहपत्र—अगवाय। अगवाय हैके।

दाहमय (स० त्रि०) दाहनिर्मित दाह मयट्। काठ
निर्मित, काठका बना हुआ।

दाहमुपात्रवा (स० जो०) दाहमुक्य पाहवते लईते पा-
त्रे पत्र। मोषा, मोष नामक कण्डु।

दाहमुच (स० पु०) एक प्रकार विषका नाम।
नबमूया (स० जो०) दाहप्रमाना मूया। दाहमोषाक्या-
विय, एक प्रकार विषका नाम।

दाहपक (स० जो०) दाहमय पक्य। काठनिर्मित घंन
मेद, काठका बना हुआ एक शोषार।

दाहपोविता (स० जो०) कठपुतली।
दाहपत्र (स० जो०) दाहमयो कण्डु, कण्डुपतिमा

दारुमयो बधूरिव वा । १ काष्ठपुत्तलिका, कठपुतलो ।

२ काष्ठमयो स्त्रो प्रतिमा ।

दारुवह (म० त्रि०) दारु-वहति वह-अच् । दारुवाहक, लकड़ो दोनेवाला ।

दारुमार (म० पु०) दारुयु सारः श्रेष्ठः । चन्दन ।

दारुसिता (म० स्त्री०) दारुणि सितिव । गुडत्वक्, दारु-चानो ।

दारुहरिद्रा (स० स्त्री०) दारुप्रधाना हरिद्रा । स्वनाम-ख्यात वृक्षविशेष, (Curcuma xanthorrhiza) दारु-हलदी । इसका पर्याय पोतष्टु, कालयेक, हरिद्रु, दार्वी, पचम्यचा, पर्जनो, पीतिका, पोतदारु, स्थिरराग, कामिनी, कटडुटेरो, पर्जन्या, पीता, दारुनिशा, कालीयक, काम-वतो, दारुपीता, कर्कटीनी, दारु, निशा और हरिद्रा है ।

यह हिमालयके पूर्व भागसे ले कर आसाम, पूर्व बङ्गाल और तेनासरिम तक होता है । इसमें सफेद फूल गुच्छोंमें लगते हैं । एक प्रकारका पीला रंग इसके जड़के किर्लकेमें निकलता है । इसका जड़ और डंठलका रंग पोलो होता है, इसीसे इसका नाम दारुहलदी पड़ा है । यद्यार्थमें यह हलदी जातिका नहीं है । यह दवाके काममें आती है । इसका गुण-निक्त, कटु, उष्ण, व्रण, मूत्र, कण्डु, विसर्प, त्वग्, दोष और अक्षु दाप नाशक ।

दारुहस्तक (स० पु०) हस्त इव प्रतिकृतिः कन् । इवे-प्रतिकृतौ । पा ५।३।८६ दारुणो हस्तकः । काष्ठ निर्मित हस्त, काठका बना हुआ हाथ ।

दारु (फा० स्त्री०) १ शोधक, दवा । २ मद्य, शराव । ३ वारुद ।

दारुकार (फा० पु०) शराव बनानेवाला, कलवार ।

दारिल (दारल)—सिन्धुनदीके पश्चिमकूलवर्ती एक प्राचीन प्रदेश । बहुत प्राचीनकालमें दारिलनगरमें उद्यान राज्यको राजधानी थी । दारदगण इस प्रदेशके प्राचीन अधिवासी थे । इसीसे इसका नाम दारिल पड़ा है । बौद्धोंके प्रादुर्भावके समयमें दारिल अत्यन्त सौभाग्यशाली था । चीनयात्री फाहियान और युएनचुघन दोनों ही इस देशको देखने आए थे । फाहियानने दारिलका तो-लि नाम रखा है । उन्होंने यहाँ १०० फुट ऊँची मूर्तियों की धोषसखकी काष्ठनिर्मित एक बड़ी मूर्ति देखी थी ।

युएनचुघनने इसे उज्ज्वल श्वव वर्णमें रक्षित एवं श्रवण-किक गुणसम्पन्न जतलाया है । प्रवाट है, कि मध्यान्तिक नामक एक मनुष्यने धोषसखके तत्वावधानमें इस विशाल मूर्ति का निर्माण किया था । निर्माताको भावो धोषसख मूर्तियोंका आकार प्रकार सूक्ष्मरूपमें दिखलाने के लिए मध्यान्तिक उसे तीन बार तृपित नामक चतुर्थ स्वर्गमें ले गए थे । स्वपतिने वहाँ मूर्तियोंकी मूर्ति देख कर उसे प्रकारकी दीर्घ आकारप्रकारादियुक्त काष्ठ-मयो मूर्ति बनाई ।

दारोगा (फा० पु०) १ प्रवन्ध करनेवाला अफसर ।

२ पुलिसका एक अफसर जो किसी थाने पर अधिकारी हो, थानेदार ।

दारोगाई (फा० स्त्री०) दारोगाका काम वा पद ।

दारुसत्र (स० त्रि०) दोर्घसत्रे भवः दोर्घसत्र-अप्-ततो आद्य च आत् (देविकाधि-दापेति । पा ५।३।८६) दोर्घसत्र-यागोत्पन्न, उस यज्ञका जो बहुत दिनों में समाप्त हो ।

दाजिलिङ्ग—१ बङ्गालके लेफ्टिनेण्ट गवर्नरक शासनाधीन राजशाही कोचबिहार विभागके उत्तरभागका एक जिला । यह अक्षा० २६° ३१' से ३०° १३' ४०' और देशा० २७° ५६' से २८° ५३' पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण ११६४ वर्गमोल है । यहाँको लोकसंख्या प्रायः २४८११७ है । इसमें दो शहर और ५६८ ग्राम लगते हैं ।

यह जिला दो भागोंमें विभक्त है—एक भाग पार्वतीय और दूसरा भाग तराई वा पर्वतके तलदेशको, यहाँके लोग मोरङ्ग कहते हैं । तराई प्रदेश अस्वास्थ्यकर है ।

इस जिलेके समतल क्षेत्र समुद्रपृष्ठसे सिर्फ ३०० फुट ऊँचा है, किन्तु उसको बगलसे ही गिरिमाला ६००० से १०००० फुट तक ऊपर उठो है । उसका पार्श्वभूभाग समुज्ज्वल तुपारमण्डित है । पृथ्वीमें सबसे ऊँची चोटी धवलागिरि और काञ्चनजङ्घा इस तुपारमय प्रदेशके साथ मिली है । इस पार्वतीय प्रदेशमें १२ हजार फुट ऊँचेमें श्यामल तणादि देखे जाते हैं । और उसके ऊपर तालीशपत्र जातिका वृक्ष और देवदारु, पाइन आदि तथा समतलक्षेत्रके निकट मूष्यवान् शाल-वृक्ष उत्पन्न होते हैं ।

तराई पर धरने पड़ने सन्धीरिया खरका विधिय प्रादुर्भाव था। मैथ, सोमर, घोर कोच जातिके लोग दङ्गल बना कर लसमें खेती करते थे। धमी चाय घोर खेतोशरीको सिद्धे परिचांश जङ्गल परिष्कार किया गया है।

इंडियाजिज्ञासू भागमें वहां निम्नोला पहाड़ ही सबसे ऊँचा है। इसके बहुतने लंबे नहर हैं, जिनमेंसे पन्नासुम १३०३२ फुट, सुमान १०३३० फुट और तजुड १००८३ फुट लंबा है।

हरिवार—पड़ने यह बिना सिद्धिम राज्यके अन्तर्गत था। गोरखाके राजा ज्योतिरायच जिन समय प्रभूत सिद्धिमने नेपाल परबिहार कर अपना राज्य विस्तार करनेको प्रयत्न हुए थे लगे समय सिद्धिमके राजाने राज्यभूत हो कर इंडिय गवर्नमेंटको गरव ली थी। इसमें कई वर्ष बाद नेपालके शासक पहाड़को लुकाई जिद्धो। १८१६ ई०में मंगल राजाने पालत हो कर इंडिय सेनापति सरहेमिड परहरनेमोके साथ सम्धि कर ली। इस सम्धिसे पनुनार सिद्धिम घोर लसका दक्षिणतः इंडियासलनाबोल हुआ। इंडियगवर्नमेंटने सिद्धिम राज्य पञ्चत अन्तर्निहितको पर्यंच किया। इसा समयसे सिद्धिम पहाड़को लें मिरा राज्योमें मिला आगे बना। १८३४ ई० को राज्यसोमाके सिद्धे नेपाल घोर सिद्धिमने बिनाद लपकिरत हुआ। भिन्नर बयेडनी यवर्नर के लरन्च प्रतिनिधिमक्षय बिनाद निपटा दिया। इस समय बदेइ साइवने सिद्धिम राज्यको लूचना हो, कि यवर्नर के लरन्च राजिनिधि के लसबाहुका गुण पकी तराई या खुबि है; यदि राजिनिधि लूके दि दिबा जाइ, तो ही बहुत धुय होमि। इस पर १८३६ ई० में सिद्धिम राजाने राजिनिधिका पार्लतोय पर पहांसू ली रचित लदोका लदिय भाय, का लियन्, धमी (बलापन) घोर लोटो र जित लदोका पूष भाय तथा ल नाहू घोर महाकन्दा लनेका पधिमभाय इड दण्डिया लम्पनीको प्रदान किये। लघो बदेइसाइवने राजिनिधिमें पहाड़ नष्ट कर रास्ता निकाल दिया। जिद्धे ज्ञाने पानेको बहुत हकिचा हो गई है; ऐनपय जोमिन्न पडने रवी पर हो कर सोम राजिनिधि जयि है। गिर्लापुडोके

राजिनिधि पानेके ऐनपयको बगलमें लठ पहाड़ो रास्ता देखा जाता है। धमी लर रास्ता केवन् मूटिया सोमोके काम पाता है।

इस पर प्रभूत लरके बदेइ साइवने सिद्धिम पहाड़में सैनिक सिद्धिम बनाया तथा भूमि पादिक्ता बन्दोबस्त घोर विचारानायानि स्थापन किया। लोके लकीके यवने १८१८ ई० में इंडिय गवर्नमेंटने नेपालराजाने बनालन घोर लोटो र जित लदोका पधिमभाय लका लोका पूर्वाशक्ति मूल्यन पावा। लोके लो दिनोंमें राजिनिधि लो घोर बहालने राज पुर्वाकी इडि पाकानि त हुई घोर लर परम लू यूलोपोय सैनिकोके सेना निवासमें मिला जनि लगा। इस समय बहुतने घर पादि बनानेके सिद्धे लसोम बन्दोबस्त कर ली, लर ली राजिनिधिमें चायको खेतो प्रचलित ली हुई। लालर लुकार इंडिय गवर्नमेंट तथा सिद्धिमके राजाका पादिम लकर राजिनिधिसे सुलियेके लू लालर लम्पलके धाय सिद्धिमराज्य लो गये। लकीके लल लम्पलके पड़यल्लेके लूड कर लिडे गये। लल लोपाने पय-मानका लदका लुकाके लिये एक लस इंडियमैथ लें लो गयो। इंडियगवर्नमेंट सिद्धिम राजको प्रतिनर्प लपया मेकता लो, लर ली लन्द लर दिया। इस समय सिद्धिमको तराई लकर लया ६४० वर्ग लोके लसोम इंडियगलना लान हुई पुनः मूटानलुडके बाद १८६४ ई०में तिद्धा लदोके लूक पाइ लर लो पार्लतोय भूमाम राजिनिधिमें मिला दिडे गये। धमी सिद्धिमराजके साथ इंडिय-गव-मेंटको लोटो मिळता है। सिद्धिम राज राजिनिधि के पुटि-कामिगरीकी लकाइ ल कर लमी काम करमि है। इंडिय गवर्नमेंटने राजकी वारिष्क इल्लि लटा लर धमी १२०००, ६० लिय लर दिडे है।

पलरबावापयके लरन्च दार्जिनिधि लोके लप लया ली लो लर लतो आ ली है। विधीयता लोर्न लैडान लूट्टे लू ल लो लानेके लुडकाको लुगेपोय लोम निमका लोके ली पधिया राजिनिधि लो लो विधीय लसन्द लरमि है।

१८३६ ई०को राजिनिधिमें लरके लरके लायके लोके लगे लये गये। लोके लो दिनोंमें लरको लाय लर ल पाहत लो लानेके लो लोके खेतो ललन लर ली है,

इस कारण लोकसंख्या भी बढ़ती जा रही है।

बङ्गालके दूसरे दूसरे स्थानोंकी नाईं यहा भी आमन वा हैमन्तिक तथा आउस वा भदई धान होती है। तराई-प्रदेशमें दिनों दिन धानकी खेती बढ़ती जा रही है। बङ्गाली और नेपाली लोग ही यहाँ हल जोतते हैं। पहले वन जलाकर 'जूम' प्रणालीसे शस्योत्पादन करना प्रमुख जातिमें प्रचलित था। अभी वह प्रथा चूट गई है। पर्वत और तराई इन दो प्रदेशोंमें 'हाल' और 'पाटो' इन दो प्रकारकी भूमिकी माप प्रचलित है। जितनी जमीनमें जितना हल वा बैल लगता है उसको हाल और जितना बोज बुना जाता है उसको पाटो कहते हैं। अभी कहीं कहीं अंगरेजी माप प्रचलित हो गया है। तराई बङ्गालकी एक एकड़ जमीनमें प्रायः १२ मन अनाज उत्पन्न होते हैं। तिस्ता नदीके पश्चिम खासमहल में गवर्मेण्टने प्रति घरके ऊपर ३६० कर स्थिर किया है। किन्तु दार्जिलिङ्ग-गहर दार्जिलिङ्ग-म्युनिसिपैलिटीके कर्त्तव्यधोन है। अधिवासियोंको यष्ट कर देना पड़ता है। इस जिलेमें चायको खेतो और चायका वाणिज्य ही प्रधान है।

यहाके समस्त चायके बगीचे अंगरेजोंको देखभालमें है और उन्हींके मूलधनसे यह चलाया जाता है।

रेलपथकी सुविधा रहनेसे यहाकी अधिकांश चाय कलकत्तेकी भेजी जाती है। जिलेमें १८४ चायके क्षेत्र हैं और प्रायः १४ लाख बीघे जमीनमें चायकी खेती होती है। १८११ ई०को इस जिलेमें प्रायः १३२७३२ मन चाय पदा हुई थी।

१८६२ ई०से यहाँ सिनकोणाको खेती आरम्भ हुई है। इस ज्वरजन्य औषधका आदर बढ़ जानेसे अभी इसकी खेती भी खूब बढ़ गई है। कई जगह कुनाइनके बदले सिनकोणाका व्यवहार ही जानेसे प्रति वर्ष इस सिनकोणासे गवर्मेण्टको लाखसे अधिक रुपयेकी आमदनी होती है।

बाढ़ आदिसे दार्जिलिङ्गकी विशेष क्षति नहीं होती है। यहाँ दुर्भिक्षका सूत्रपात होनेसे ही पहाड़ी लोग एक स्थानसे दूसरे स्थानकी भाग कर भाग-रचा करते हैं। जिस समय पूस महीनेमें धानका मूल्य बढ़ जाता है,

उसी समय लोग भावी दुर्भिक्षका आशङ्का करते हैं।

वाणिज्य—अभी चाय ही यहाँका प्रधान वाणिज्य द्रव्य है। यहाँके लेपचा लोग एक प्रकारका मोटा सूती कपड़ा तैयार करते हैं जो जिले के निम्नश्रेणीके मनुष्यके काम आता है। पहाड़ी लोग भिन्न भिन्न स्थानोंसे चीना प्याला, मृंगा, अकीकका कटोरा और घंटा आदि यहा बेचनेकी लाते हैं। यहाँको भूटिया लोगोंकी बनावई हुई कटारो और लेपचा लोगोंको छूरी बहुत मशहूर है। दार्जिलिङ्ग शहरमें यूरोपीय लोगोंके व्यवहार्य और विलास-नुरूप अनेक द्रव्य पाये जाते हैं, किन्तु दूसरे स्थानोंकी अपेक्षा उनका मूल्य भी अधिक है। खनिजद्रव्योंमें यहाँ कोयला, लोहा, ताँबा और चूना पाये जाते हैं।

तिब्बत जानिके रास्ते पर तिस्ता नदीके ऊपर एक सुन्दर लोहेका पुल है। इस जिलेमें विद्याकी खूब उन्नति है। यों तो यहाँ बहुतसे स्कूल तथा कालेज हैं, पर सेण्टपाउस स्कूल, सेण्टजोसेफ्स कालेज, डायोसेसन्-वालिका स्कूल, लोरेटो कौनभेण्ट स्कूल, विक्टोरिया स्कूल तथा छावहिल वालिका स्कूल प्रधान हैं। इसके सिवा यहाँ अस्पताल, चिकित्सालय आदि हैं।

२ उक्त जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० २६° ५२' से २७° १३' ८०' और देशा० ८७° ५८' से ८८° ५३' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ७२६ वर्ग मील है। इस उप-विभागका अधिकांश पर्वतमय है और कुछ अंश जङ्गलसे परिपूर्ण है। यहाँकी लोकसंख्या प्रायः १३३३८६ है। इसमें इसी नामका एक शहर और १८१ ग्राम लगते हैं।

३ उक्त दार्जिलिङ्ग जिलेका एक प्रधान नगर और अंगरेजोंका शोषकालका स्वास्थ्यवास। यह अक्षा० २७° ३०' और देशा० ८८° १६' पू०में अवस्थित है।

इस स्थानकी उत्पत्तिक विषयमें मतभेद है। कोई कोई बीसके मतसे इसका प्राचीन नाम 'दर्जिलामा' बतलाते हैं। दर्ज नामके एक लामा यहाँ वास करते थे। उनमें पालौकिक शक्ति रहनेके कारण भूटिया लोग उनकी विशेष भक्ति अर्पण करते थे। इसी दर्जिलामासे दार्जिलिङ्ग नाम हुआ है। फिर कोई कोई हिन्दूके मतसे दुर्जवल्लभ नामका शिवकी नामसे ही वर्तमान नाम-

करके हुआ है, ऐसा कहते हैं। सांख्यशास्त्राचार्यमें जो एक दुर्जयगिरिवा जज्ञेव है। वरुमान दार्जिलिङ्ग-से कामरूप तक कि गिरिमाता शायद सांख्यशास्त्राचार्यमें दुर्जयगिरि नामसे बर्णित हुई है। फिर किसिम दार्जिलिङ्ग मन्दकी इस तरह व्युत्पत्ति भी है, द-प्रदर, रसि-थेट, लिङ्ग-आत्म वा प्रदेश पर्याप्त पवित्र गुहा वा कामाधीना विज्ञित ज्ञान। दार्जिलिङ्गकी वरुमान पदान्तसे कुछ दूरमें एक गुहा है जहाँ मूटिया लोग अभी अभी पावर महाबाहलकी पूजा करते हैं। बहुतसे संख्याको भी बीच बीचमें पाया करते हैं। मूटिया लोग कहते हैं कि इस गुहा को वरुमानकी राजधानी कासा नगरी तक जा सकते हैं और कामागण भी यह जो वरुमान पास जाते हैं। प्रवाद है, कि मैदानके पुनरीनामसे नामक एक राजाके राज्यकालमें यहाँ कामासराय या गुहा बनाई गई और कामाधीनी की इसका नाम दार्जिलिङ्ग रखा। इसी नामसे अभी सादा बिसा प्रसिद्ध है। एक सहीके पहाड़के ऊपर दार्जिलिङ्ग शहर परबन्धित है। इसके साथ तीन गिखर स सम्म है। यहाँ एकबेसी एक स्टेयम है जो समुद्रतलसे ७१६६ फुट ऊँचा है। जिसको बियो व मरेकवा नियुक्त है कि दार्जिलिङ्ग शहरमें और मरुतन नगरमें एक ही तरहका मोत-धोष पड़ता है। दार्जिलिङ्गका वरुमाना पक्षी कोमक कारण कोक व क्या भी योरे बोरे बड़ रको है। राजबलको लोक म क्या प्राय १६८२७ है जिनमेंसे १०२०१ चिन्कू, ३७१०, थोका, १११२ ईसाई और १०३८ सुपसमान हैं।

वर्षके पठनचान्द्रोरियम कीवविचार महाराजका प्रासाद, छोटे साटका प्रमोदमवन प्रादि जज्ञेव धोय्य हैं। इसके सिवा यहाँ बड़ी बड़ी मिर्जा तथा मोटनिजन गार्डन प्रादि हैं। यह शहर १८२३ ई०में च गरीजोंके साथ बना।

इसके पास पासमें भी लखीवोय्य पनेक ज्ञान है। ७८६ फुट ऊँचे कजापहाड़ पर सुन्दर लैण्डनिवाक महाबाहल पहाड़की गुहा, मूटियाके पासमें मोटियम भक्तिन तुडमन्दिर, निवडमें नुनन मैयकलाकामावाक और नगरके बांध बाकमोरु अन्नप्रपात देखनेके योग्य हैं। यह प्रपातको व मरेक कीव विद्योरिया धरु (Victoria

Fall) कहते हैं। कहते हैं कि, यहाँ मोरोटिबी या वरुमान लरतो यी।

आकारकाके लिए जिस तरह बहुतसे लोग यहाँ जाते हैं उसी तरह व्यवसायके लिए भी पनेक बहिक-धोर सामान्य दूकानदार बर्षका पाया करते हैं। यहाँको प्राय दो साथ बयदेके पथिक है। यहाँ प्रति रविधार की डाट लगतो है जिसमें समो बोरी म जगो विकतो हैं। शहरमें बहुतसे प्लम्प तथा चिन्कियाय्य हैं।

डाठभूत (स० पु०) १ इठभूतका पपक। २ सामनेट। डाठय (स० ली०) इठभूत भाग। इठभूत। इठता, मरुतनो।

दार्जय (स० लि०) इतो मवा इम्। १ इतिमम, चमड़ेका। २ इतममकित ओ चमड़ेमें रचता जो।

दापुंर (स० पु०) दपुंर। चतुपासभेद फडाकाओ प्लेप्ल मश्रादि खात् व। १ इचिवावर्त गहना एक भेट। (ली०) २ साधा, लाक, लाक। ३ बल, पागी। (लि०) इदुररुदे धप। ४ दपुंर सम्मयी।

दापुरिख (स० लि०) दपुर। चतुपासभेद। चित्तममक ठक। चतुपासभेदकारक, कुनार।

दामे (स० लि०) दमैरुदे धप। कुय सम्मयो।

दामायक (स० पु० ली०) दमैरु गोत्रायक दमैरु धप। दमैरुपिका गोत्रायक।

दामि (स० पु० ली०) दमैरु गोत्रायक दम। दम खविका गोत्रक।

दाम्य (स० लि०) दमैरु मवा कुर्बादि० ल्य। दमैरु मव कुयका।

दाव (स० पु०) १ देगमैद, एक देय जो कुर्मविभागके ईशान कोचमें पाहुनिङ्ग काजोरके पन्नागेत पड़ता था। (ली०) २ तवय नदीमेंद, लसी देयकी एक नदी।

दार्थक (स० लि०) दार्थिनु दार्थकनपदेनु मवा। बहु-कचनार्थे कुम्। दार्थकनपदमम, दार्थ देगका।

दावट (स० ली०) दावटन निधकतया निधकीय विववनिधवाके परन्त्यक पर वज्जो क। १ चित्ताप्यक, बहुकीउरो जहाँ एकात्ममें बँडकर बियो बातका भिचार बिवा प्राय।

दारुण (सं० पु०) दारुवत् कठिनं अण्डं यस्य । मयूर,
मोर । इसका अण्डा काठकी तरह कड़ा होता है ।

दारुघाट (सं० पु०) दारु काठं आहन्तीति आ-हन्-
अण् ट्ठान्ताटेशः । शतपत्रका पक्षी, कठफोहवा नाम-
की चिड़िया ।

दारुघात (सं० पु०) दारुणि आघातो यस्मात् । १ दारु-
घाट पक्षी । (त्रि०) २ काष्ठाघातमात्रं, काठ पर
आघात करमेवाला ।

दारुदि (सं० पु०) औषधभेद, एक प्रकारकी दवा ।
दारुहृदो, रसाञ्जन वासकमूलका छिलका, मोघा,
चिरायता, वेनसोठ और भेलावा हरएक दो दो तोला
ले कर आध सेर जलमें उबालते हैं । बाद आध पाव जल
रह जाने पर उसे नीचे उतारते हैं । मधुके साथ इस काय-
का सेवन करनेसे प्रदरोग दूर हो जाता है ।

दारुदिल्लीह (सं० स्त्री०) रसेन्द्रमारसग्रहोक्त औषध
भेद । इसकी प्रस्तुतप्रणाली—दारुहलदो, हृदो, हड़,
आवला, वहेडा, सोठ, पीपर, मिर्चे, विडंग और उतना
ही लोहेको एक साथ मिलावे । बाद मधु और चींके
साथ इसका सेहन करनेसे पाण्डु और काममारोग
जाता रहता है ।

दारुिका (सं० स्त्री०) दारुयति इ उल्गादित्वात् साधुः
डीप् । १ दारुि, दारुहृदी । तद्विकारोऽपि दारुि अभेदी-
पचारात् स्वार्थे कन् टाप् । २ दारुहरिद्रा-कायोद्भव
तुल्य, दारुहृदीसे निकाला हुआ तूतिया । ३ रसाञ्जन,
रसायन । ४ गोजिह्वाहृत्, वनगोभी, गोजिया ।

दारुिपत्रिका (सं० स्त्री०) दारुिः पत्रमिव पत्रमस्याः ततः
कन् टाप् अत इत्वं । गोजिह्वाहृत्, वनगोभी ।

दारुि (सं० स्त्री०) दारुयति इ णिच् ङण् स्त्रियां दाहणस्य
अवयवविभागरूपत्वेन गुणवचनत्वात् डीप् । १ दारु-
हरिद्रा, दारुहृदी । २ गोजिह्वा, वनगोभी । ३ देवदारु,
देवदारु । ४ हरिद्रा, हलदी ।

दारुिकायोद्भव (सं० स्त्री०) रसाञ्जनविशेष । दारु-
हृदीका काढा और उतना हो दूधको उबालते हैं, पीछे
जब बहुत थोड़ा वच जाय, तब उसे उतारते हैं, इसी गठ
दारुिकायको रसाञ्जन कहते हैं । चक्षुके लिये यह बहुत
उपकारी है । इसका पर्याय - ताक्ष्यशैल, रसगर्भ और

ताक्ष्यंज है । इसकी गुण—कट, तिक्तारम, उष्णवीर्य,
रसायन, छिदत तथा कफ, विष, नेत्ररोग और व्रणनाशक
है । (भावप्र०)

दारुितैल (सं० स्त्री०) तैल औषधभेद, तिलतैल ४४सेर,
कल्काय दारुहरिद्रा, तुलसी, यष्टिमधु, हरिद्रा, दारु-
हरिद्रा इन सबकी मिला कर ५१ सेर तथा १६सेर जल
सबको एक साथ उबालते हैं । इस तैलसे मेट्टरोग जाता
रहता है ।

दारुिदि (सं० पु०) औषधविशेष, एक प्रकारकी दवा ।
दारुहृदो, इन्द्रियव, मजोठ, हृदती, देवदारु, गुलबु,
भूआवला, पित्तपापड़, श्यामालता, गजपिप्पली, कण्ट-
कारी, नोमकी छान, मोघा, कुठ, सोठ, पद्मकाठ, कचुर,
अटरुप, सरगकाठ, चिरायता, मस्रातक, अकवच, कुगकी
जड़, कुटको, पीपल, धनिया इन सबको एक साथ
मिला कर काढा प्रस्तुत करते हैं । पीछे मधु मिला कर
इसे सेवन करनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सात्रि-
पातिक, हृन्तज, सनत आदि कठिनसे कठिन विषम त्वर,
अन्तस्थ, वहिःस्थ, धातुस्थ और टैष्यं रातिक त्वर तथा
शीत, कम्प, दाह, काश्यं, घर्मनिर्गम, वमि, प्रहृषा,
पतीसार, कास, श्वास, कामला, शोण, शोथ, अग्निमान्य,
अरुचि, अष्ट विधशूल, शोम प्रकारके प्रसेह, प्लाहा, अप-
मांस, यक्षुत्, हृन्मोमक इत्यादि रोग वष्याहत हृत्की
नाई नष्ट हो जाते हैं । (भैषज्यर. उवराधि०)

दारुि (सं० त्रि०) दर्शं भवं आर्षं प्रयोगे ठञ् वाधित्वा०
अण् । १ दर्शं भव, जो देखनेसे उत्पन्न हो । (त्रि०)

दृशि नेत्रे भवः अण् । २ नेत्रभव, जो आँखसे उत्पन्न हो ।

दारुिनिक (सं० त्रि०) १ दर्शनशास्त्रवेत्ता, दर्शनशास्त्र
जाननेवाला । २ दर्शनशास्त्र सम्बन्धी ।

दारुिपौर्णमासिक (सं० त्रि०) दर्शं पौर्णमास्यां च भवं
ठञ् । दर्शपौर्णमासभव, जो अमावस्या और पूर्णिमासे
हो ।

दारुिक (सं० त्रि०) दर्शं भवः दर्शं ठञ् । दर्शं भवः,
आर्षं प्रयोगसे दार्श होता है, अर्थात् ठञ् न हो कर
अण् होता है । दर्शपौर्णमास सम्बन्धी ।

दारुि (सं० त्रि०) दार्शिक ।

दारुि (सं० त्रि०) दृषदि पिष्टः अण् । पत्यरका बना
हुआ ।

दार्शनिक (म० जी०) इयद्वया नद्यातीरे कर्त्तव्यं च ।
समवेद, एव यत्र को इत्यतीरे मदीके विनागि रिया
जाता वा ।

दार्शनिक (म० जि०) इटात्म-रूप । इटात्मसुख, जिनमें
उदाहरण दे कर समझाया गया हो ।

दार्शनिक (म० जि०) इटात्मो न सुखं उच्यते । इटात्मसुख ।

दान (म० जी०) दत्तव्यं सचित दानं च । बन्धनमु,
पिङ्गि शिवाङ्गीमें मिलनवासा शक्य । इसका सुख—सहृद,
पथ, कृपायत्न, लघुवासी पम्बिदोत्रिचारक, कपत्र,
बुद्ध, ब्रह्मचार, बलि घोर प्रमिदगायक लिख, तथा
श्रीगोदा उपपत्तकर है (पु०) दक्षि आत इत्-पथ ।

२ कोद्वय दानमेव, कोदो नामका पथ । २ दान, पुर
पुर करलेना काम ।

दान (वि० जी०) १ दानो दुरै परहर मूग पादि को
दानको तरह पाई जाता है । जिन पनाजमें कल्पित
कर्मो है घोर जिनके बौद्ध दधानेके दूठ कर दो दानो वा
च कुंमि हो कामि है उसको दान कोतो है । २ दानक
पाचारको कोई ननु । ३ इन्दो, मसानके पाथ पानोम
उवाका बुधा टका पथ । कष्ट रोदो मात पादित्र माय
काया जाता है । ४ जिनको का समुद्र को सुयमुका
मीयेके को कर पाता है । यह एकडा हो कर मोन
दाके पाचारका हो जाता है घोर इनके पाग नग
जातो है । ५ वैचक, कोके पु गो पानिक उपरका
चमका को सुख कर क ट जाता है पयको । ६ पकेको
उरदी । (पु०) ७ दिमानव पर, मिमना तथा प जाधमें
मिलनेवाला एक प्रकारका पीड़ । यह तुन जालिका
होता है । इसको लडको बहुत मजबूत कोतो है जो
हरवक काममें कार्क जाता है ।

दानवीरो (म० जी०) शरणीसी हैदो ।

दानव (म० पु०) दानवति दन विच-रूप । इन्तगत-
रोममें ह, दतिवा एव राम ।

दानव्य (म० पु०) एक सुनिहा नाम ।

दाकमोट (वि० जी०) वह दान जो को गीन पादिमें
नमक मिचके पाथ लको गई है ।

दानव (म० पु०) दानति दन-रुच तस्मात् पथ ।
त्यावर विव ।

दाकबुद्धक—(Don Alphonzo Dalboquerque)
पोर्तुगोत्रराजका एक विद्याग नेताजन, लोग उन
विशेषकर पान्थकाजको दहा करते थे । १५०४ ई०८
ई०के मध्य में भारतको घोर भेजे गये थे । इन्होंने
परबसागरके विनागि मच्छट पादि स्थानोंको जीत कर
१५१० ई०के मध्य में मानमें दो बार गोवापर शासन
बिधाया । दूसरे वर्ष मन्त्राका दुर्ग घोर घमंज होव
भो इनके दयकमें पा गया । १५११ ई०को १८वीं
परबरोको पादेन इन्दर पर पत्रिहार जमानेके लिए ये
२० जहाजो पर १००० पोर्तुगोत्र घोर २००० भारतीय
नेतायो को साथ ही कर बर्षा वा पकुंसे, किन्तु उद्यम
सिद्ध न हुआ । जो कुछ जे, उनो मर्ष इन्होने पैरिम
होयमें प्रेष्य किया । १५१५ ई० तक इनकी चमता एक
भा बनी रही । इनके यन्त्रि पोर्तुगोत्रो का पाधिपत्य
बहुत दूर तक चला हुआ था । ऐतिहासिक डि प्यारम
इनके नामो है ।

दाका (म० जी०) दक्षते दक्ष कर्मचि वय । महाकाल
नामको मता ।

दाकादण्डिका—चि वसुधामो बोदो का एक कथन । इस
कथनमें सुखक दान यात्रियो को दिखलाए जाते हैं ।
काप्योउत्तरमनसक लय विहारमें ये दानोनाकाके
है घोर कई एक वास्तुनिमित्त रमकचित कथनमें रगे
हुए हैं । इन दानो का विषय दाकव यथे दूसरे घोर
तीसरे पनाधमें इस प्रकार लिखा है—

जेम नामक बुद्धक एक मिथमें शापदिदक्ष निवाकक
बाद (१४२ ई० समुद्र पदसे) उनके दान कुमानवदि
नाकर पानिक देयक राधा ब्रह्मदत्तको दिए थे । ब्रह्मदत्त
घोर उनके सुख करो तथा पाथ सुन्दर शासनकालने को
कर दूसरे राजाको शासन पर्यन्त प्राय ८० वर्ष तक
ने उन दान पाहरपुंथक रखे गये । पहने इन्तपुरावि
पति सुखमिच इन दानोके विषयमें सुख मो लकी जानते
थे, वेथे मान्मूय होत पर लकोमें कीचकम पदक वर
किया । मोर कर्मके दोषित हो कर लकोमें पयने
राज्यके पथ समारणस्त्रिको निजान मयाया ।
किन्तुधमि बहुत दुःखित होकर पाटलितुवक राजा पापु
को शरण की । पापुने सुखमिपदे विदक सुख घोड

भेजे । वे जा कर इन सब दांतों को पाण्डुराजाके पास उठा लाये । राजाने उन्हें नाड़ फोड़ डालनेको बहुत काशिया को, लेकिन वे कुछ कर न सके । अन्तमें उन्होंने भो बोधधर्म स्वीकार कर लिया । वे सब दांत फिरसे दन्तपुर भेज दिए गये । पोछे वे दांत वहाँसे अनु-ज्जापुरमें लाए गए । १५६० ई०में पोत्तु, गीज-युद्धके समय कनटान्ताइन डि ब्रागेश्वराने वे सब दांत नष्ट कर डाले । किन्तु सिंहालवासो बौद्ध लोग इसे स्वीकार नहीं करते । वे कहते हैं, कि जिन समय वह मन्दिर तोड़ा गया था उस समय वे सब दांत सहाराममें थे । अनेक पुरा-तत्त्वविदों और सिंहालवासो मुत्तुकुमार स्वामीका कहना है, कि अभी जो कुछ दन्त कह कर दिखलाए जाते हैं, वे किसी हालतसे नरदन्त नहीं हैं ।

दालान (फ्रा० पु०) मरकानका वह हिस्सा जो चारों ओरसे घिरा न हो और जिसकी तीन ओर खुली हो, वरामदा, श्रीमारा ।

दालि (सं० स्त्री०) दल-इन् । १ दाल । दाल देखो । २ दाड़िम्ब, अनार । ३ टिक्टाली लता ।

दालिका (सं० स्त्री०) दानैव स्वार्थे कन् टाणि अत इत् । महाकाललता ।

दालिम (सं० पु०) दाड़िमः इत्य ल । दाड़िम, अनार ।

दाल्म (सं० पु०) दलभस्य दलभगंत्वस्य छात्रादि० अण् यलोपः । दाल्भ्यके सभी छात्र ।

दाल्भ्य (सं० पु० स्त्री०) दलभस्य मुनिर्गात्रापत्यं यञ् (गर्गादिभ्यो वञ् । पा ४।१।१०५) १ दरभकृपिके गोत्रका मनुष्य । २ हक नामक मुनि । इन्द्र इनके वस्तु थे । इन्होंने चन्द्रसेन राजाकी गर्भिणी स्त्रीको परशुरामके क्रोधसे रक्षा की थी । इसके गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न हुआ वही दाल्भ्य कायस्थोंके आदिपुरुष हुए ।

दाल्भ्यघोष (सं० पु०) पुण्यायमरूप तीर्थमेद ।

(भारत वनप० ८० अ०)

दाल्भ्यायणि (सं० पु०) दलभ्वस्य यून्यपत्ये फिञ् ।

दाल्भ्य ऋषिका युवा अपत्य ।

दालिम (सं० पु०) दालयति असुरान् दाल-णिच् आहु० मि । इन्द्र ।

दाव (हिं० पु०) १ वार, दफा । २ अनुकूल संयोग, भव-

मर, मौका । ३ वारी, पारो । ४ चाल, पैश, बंद । ५ कार्यसाधनकी युक्ति, उपाय, चाल । ६ खेलनेको वारो । ७ छल, कपट । ८ जीतका पांश या कौड़ी । ९ डोर, जगह, स्थान ।

दावना (हिं० स्त्री०) दाना भाड़नेके लिए मांडना ।

दावनो (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका गहना जिसे स्त्रियां अपने माथ पर पहनती हैं ।

दांवरी (हिं० स्त्री०) रज्जु, रस्सी ।

दाव (सं० पु०) दुनोति चपतापयति दु-ण (दु०धोरणु-सर्गे । पा ३।१।१४२) १ वन, जङ्गल । २ वनवर्द्धि, वन-भाग । ३ अग्नि, भाग । ४ भावे घञ् । ४ चपताप, जलन ।

दाव (हिं० पु०) १ एक प्रकारका हथियार । २ एक वृक्षका नाम ।

दावत (अ० स्त्री०) १ ज्योत्नार, भोज । २ निमंत्रण, न्नीता, व्याप्त ।

दावदी (हिं० स्त्री०) युवदावदी देखो ।

दावन् (सं० पु०) दा कर्मभावादौ वनि । १ देव, वह जो देनेयोग्य हो । २ दान ।

दावन (हिं० पु०) १ दमन, नाय । २ हँसिया । ३ एक प्रकारका टेढ़ा कुरा, खुबड़ी ।

दावना (हिं० स्त्री०) १ दावना देखो । २ दमन करना, नष्ट करना ।

दावनो (हिं० स्त्री०) दावनी देखो ।

दावण (हिं० पु०) दावं वनवर्द्धिं पाति पा०क । पुरुष-भेद, एक मनुष्यका नाम ।

दावरा (हिं० पु०) घावरा नामका पेड़ ।

दावसु (सं० पु०) अङ्गिरा मुनिः एक पुत्रका नाम ।

दावा (हिं० स्त्री०) वनके बांस तथा पेड़ोंकी डालियोंकी रगड़से उत्पन्न भाग

दावा (अ० पु०) १ किसी वस्तु पर अधिकार प्रगट करनेका काम, किसी चोज पर हक जाहिर करना । २ वह मुकदमा जो किसीके विरुद्ध जायदाद वा रूपये पैसके लिए चलाया जाता है । ३ खल, हक । ४ अभियोग, नालिश । ५ प्रताप, अधिकार, जोर । ६ दृढ़तापूर्वक कथन, जोरके साथ कहना । ७ दृढ़ता ।

दावागीर (अ० पु०) वह जो अपना दावा करता हो अपना हक जतानेवाला ।

दादागिनि (म० पु०) दादोइको गिनि मध्यमो० कर्म बा०।
 दादोइव बनि, वनमें मगनिशानो पाग।
 दादागिनिमोचन—एक वनका नाम। इन वनमें शीतलपत्र
 दादागिनि मचप कर गये थे।
 दादागत (म० श्लो०) मसिपात्र, द्वाही रघुनिका वरतन।
 दादादार (म० पु०) दादा करनिबाणा, चपला वृक्ष जतानि
 बाणा।
 दादानम (म० पु०) दादोइकोऽनम। दादागिनि, वन
 पाग।
 दादानककुपुल—कुपुलविषय, एक कुड जो दादागिनिमोचन
 वनमें अवस्थित है।
 दादिब (म० त्रि०) देविबावो मका पक्, मतो पाप
 जो पाप् (देविबा गि अयेति। वा ७।१।) देविबानतो
 मचन, जो देविबानतोम होना है।
 दादिबकूल (म० त्रि०) देविबाकूल मः पक्, पाप
 जो पाप्। देविबाकूलोइव, जो देविबानरीके बिन है
 होता है।
 दादिनी (म० श्लो०) १ विज्रलो। २ एक गडना त्रिभि
 विजा मारि पर पडनतो है।
 दादो (त्रि० पु०) वरवा पिड्।
 दाय (म० पु०) दयति हिमस्ति मत्स्यान् दयट मध्य
 पाव (१ लाव। वन ३।१।) १ ओवर किन्ट, मधुपात्र।
 निपाट पुष्य ओर पायोमक शोभि उष्य श्यत्रिको
 दाग कहते हैं। ये मोका बनाने हैं ओर कर्म या
 किन्ट जो कहनाते हैं। २ मध्य ओवर।
 दायक (म० पु०) दाग-काहे क्। दाय ओवर।
 दायपाम (म० पु०) दायपामो घाम। ओवर पचान
 घाम वर मीव त्रिभि ओवोका जो वनमो बनती है।
 दायपामिक (म० त्रि०) दाय-पाम-उम। दायपामक
 निचट देसाटि।
 दायमया (म० त्रि०) दय-पचयका मय तय, ततः प्वात्रे
 व विजा होय। दयानवय श्यर्थे दबद्धिता।
 दायमन्दनः (म० श्लो०) दायम मन्दिनो। ओवरदादा,
 म्यावको माता, वनवना।
 दायपुर (म० पु० श्लो०) दायान् ओवरान् पुरर्णन मू
 पक्। १ कर्मवृत्त एक प्रकारका मोका। २
 ओवोको वती।

दायकही (म० श्लो०) दायपि पच पक्षाः टप।
 योपिमेद, एक प्रकारको टका।
 दायमेय (म० पु०) दयमेद एक दय जो उत्तर दिशामें
 पवस्थित है।
 दायरय (म० पु०) दयमयमेद पक्। ओरामपद्र।
 दायरयो ओरामयमेद पक्। (त्रि०) २ दादयि
 व बन्धाव।
 दायरयि (म० पु०) दय रयपवापक् चत ईम, दयमय
 क पुत्र रामपद्र पादि।
 दायरयि राय (दादराय नामसे प्रसिद्ध)—वडुदेमर्क एक
 विष्णुवात बनि। १८०४ ई०में इनका जन्म हुआ था।
 वडुका मादिबको दकोनि मूव लकति वर दादा यो।
 ये राठोय ब्राह्मण थे। कईमान त्रिभि वनगत काटोया
 के निकट वादिसुका नामक घाममें इनका प्रैवकवास था।
 पाटुकोत्र निकटवर्ती पोला नामक घाममें अपने भागबि
 दर्वा रव कर इनमें पडना विष्णुना बाधा था। पोहे ये
 प गैत्रको मोलको घोडेमें किगमोका नाम करके
 चपला मुन्नारा करने लगे। बचपनसे ही इनमें गाने
 बनानिका पुरा शौक था।
 इस समय पोलाघाममें पचय कटानो (पक्षावर्)।
 नामक मृत्यु गौत श्यमपामिनो एक मोव बानिको
 श्लो रहता जो। समये माने बनाने पर मोहित हो कर
 नागरबिरायका इमक नाय गाऊा येम ही गया था।
 कुछ दिन बाद पचकाईने एक कटादो बनिबा टग
 न गहन किया। एक दिन दायारयिने एक सङ्कोत नाममें
 प्रतिपद्यसे मामी ममोत्र मुना। तमोसे इकान प्रिया
 करके बनिबा एक जोड़ दिया। बनिदानमें पानेड
 पडल निययचर्मका परिभाष कर लिया था।
 इनको बनारि दुई पनेक बनिताप ओर बन् है।
 १७०८ तक (१८१६ ई०) को ११ वर्षको पचपने
 पापका देवान्त हुआ। उनक एक भा पुत्र न था, काया
 एक जो। प्रसूचमयो नामको वनको पती पनेक दिन
 तक जीवित रह्यो। रामवकादके लौका इनका नाम मपुर
 ओर बिलारकर्मक होता था। चात्र भी ब्रह्मने प्यास
 बड़ो बादने इनके नामका दुर मोचन है। इत्ये म
 कामोदान देवकोला बिन कर त्रिम प्रकार बडानका

जगताके भक्तिभाजन हुए है, दास्यथिराय भो उषो प्रकार
वज्रात्मके आवात्महृदयनिताके आनन्दके लिए सवज
नूतनरूप सङ्गीतामोद प्रदान कर सभोके प्रीतिभाजन
हो गये हैं।

दाशराज (स० त्रि०) दशानां राज्ञां वदं तद्वितार्थं दिगो
अणु-नपधालोपः । दशराजा सखन्वो ।

दशरात्रिक (स० पु०) दशरात्रेण निवृत्तः ठञ् । दश-
रात्र साध्य यज्ञभेद, एक प्रकारका यज्ञ जो दश दिनोंमें
रमास होता है। (त्रि०) दशरात्रस्येदं ठञ् । २ दश-
रात्र सखन्वो ।

दाशार्ण (स० पु०) दशार्णं स्वार्थं अणु । १ दशार्ण-
देश्य । सोऽभिजनोऽस्य तस्य राजा वा अणु । २ पित्रादि
क्रमेण दशार्णं देशवासा । ३ दशार्णं देशके राजा ।

दाशार्ह (स० पु०) दशार्हस्य गोत्रापत्यं शिवादिवात्
अणु । यदुवंगीय कर्णादि । दशार्हस्तदाचकशब्दोऽ-
स्त्वत्र अध्याये अनुवाके वा अणु । २ आयुधजोषिसंघ-
भेद । ३ यदुवंगीय राजा ।

दाशाश्वमेध (स० पु०) दशाश्वमेध-अणु । दशाश्वमेध
सखन्वीय ।

दाश (स० त्रि०) दाश दाने उन् । १ दाता, देनेवाला ।
२ दत्त, जो दिया गया हो ।

दाशुरि (स० त्रि०) दाश हिंसने उरिन् । हिंसक,
मारनेवाला ।

दाशिय (स० पु० स्त्री०) दाश्या धोवर्या अपत्यं टक ।
१ धोवरका अपत्य । स्त्रियां ङ.प. २ व्यामको माता
सत्यवती ।

दाशिर (स० पु०-स्त्री०) दाश्या अपत्यं छुद्रादित्वात् ठञ् ।
धोवरकी सन्तति ।

दाशिरक (स० पु०) दाशिरप्रधानः देशः संज्ञायां कन् ।
१ मरुभूदेश, मारवाड़ । २ मरुभूदेशके राजा । ३ उक्त
देशका निवासी ।

दाशौटनिक (स० पु०) दश ओदना यत्र यज्ञे तस्य
आख्यानो ग्रन्थः ठञ् । १ दशौदन यज्ञआख्यान ग्रन्थ,
यज्ञ पुस्तक जिनमें दशौदन यज्ञका विषय लिखा हो ।
दशौदन यज्ञस्य दक्षिणा यज्ञाख्यत्वात् ठञ् । २ दशौदन
यज्ञकी दक्षिणा ।

दाश (फा० स्त्री०) पालन पोषण, परवरण ।

दाश्य (सं० त्रि०) दश-क दशस्य, दंशकस्य अदूरदेशादि
महाशा० ख्य । दंशकके अदूर देशादि ।

दाश (सं० त्रि०) दाश वन् वाहु० इङ्भावः । दाता,
दानी ।

दाश्वस् (सं० त्रि०) दाश्व-दाने कसु (दाश्व न् सङ्घान-
भीट्, वांश्च । पा ६।१।२२) इति सूत्रेण निपातनात्
साधु । १ दत्तवत्, जो दिया गया हो । २ हिंसितवत्,
जो हिंसा की गई हो ।

दास (सं० पु०) दसतीति दसि-ट्, नस्य च पात्
(द शेषेष्टनौ । षण्, ५।१०) । १ ज्ञातात्मा, आत्मज्ञानी ।
२ शूद्र । ३ धोवर, मकुषा । स्त्रियां ङीप् । दास्यते
श्रुतिरस्मै दामति ददात्यङ्गं स्वामिने उपचाराय वा
दास-अच् । ४ वह जिसने अपना जीवन स्वामीकी सेवामें
लगा दिया हो; श्रूत्य, नोकर । ० पर्याय—दासेर,
दाशिय, गोप्यक, चेटक, नियोज्य, किङ्कर, प्रैष्य, भुजिष्य,
परिचारक, प्रेष्य, प्रेष, प्रैष परिकर्मा, परिचर, सहाय,
उपस्थाता, सेवक, अभिसर, अनुग । ५ शूद्रोंको एक
उपाधि जो उनके नामके अन्तमें लगाई जाती है ।

ब्राह्मणोंके नामके आगे शर्मन्, क्षत्रियोंके वामेन्,
वैश्योंके गुप्त और शूद्रोंके नामके आगे दास लगाया जाता
है । दास दाने सम्प्रदाने घञ् । ६ दानमात्र ।

जो अपना आत्माकी दूभरीके लिये दान करता है,
उसे दास कहते हैं । हिन्दू धर्मशास्त्रमें दासके विषयमें
बहुतसो बातें लिखी हैं । ब्राह्मण छोड़ कर क्षत्रियादि
तोन वर्ण दास हो सकते हैं ।

“त्रिषु वर्णेषु विशेषं दास्यं विप्रस्य न क्वचित् ॥”

(स्मृतिचं०)

तीनों वर्णोंमें दासत्वका विषय समझना चाहिये ।
ब्राह्मण सवर्णके यहां भो दास नहीं हो सकते, यदि
लोभवश हो भी जाय, तो उन्हें होनकर्म कदापि नहीं
करना चाहिये । (कात्यायन)

फिर मनुमें लिखा है, कि यदि कोई ब्राह्मण लोभवश
संस्कृत क्षत्रिको अपना दास बनावे, तो राजा उसे
दण्ड दे ।

किन्तु शूद्रोंको दास्यकर्ममें नियुक्त करनेमें कोई दोष

नहीं है। श्लोक विवाह-रथ करनेके लिये उपजो खटि
 हुई है। दास पन्द्रह प्रकारके माने गये हैं—एकजात
 पर्याप्त जो अपने घरमें दासके गर्भमें उपज बुधा हो,
 श्रौत पर्याप्त मोक्ष लिया हुआ, दायमें मिला हुआ, धन-
 कासमृत पर्याप्त दुर्मिर्षमें पाया हुआ, आश्रित पर्याप्त
 जो स्वामीके इच्छा कर से कर लिये सेवा द्वारा मुक्ता
 हो, श्रद्धादान पर्याप्त जो कष्ट से कर दासत्वसे उत्थानमें
 पड़ा हो, सुदयात लिये कर्माईमें जीता हो, पक्षमें जित
 लिये श्रुतमें जीता हो श्रद्धा उपागत जो अपनी राजी
 नुसोने दासत्व स्वीकार करने पाया हो, प्रसन्नामसित
 पर्याप्त जो सन्मानके पतित हुआ हो कृत पर्याप्त इतने
 दिनों तक थापकर दास बोलगा, इस तरह जो पाया
 हो मरदास, बड़वाइत (एकदासाका नाम बड़वा है
 उसको स्वामिं जो पाया हो पर्याप्त उसमें विवाह कर
 दासत्व कर्ममें निवृत्त होनेको बड़वाइत कहते हैं) और
 पाश्चात्तता, जिसने अपनेको बेच दिया हो। (वारर)
 जो दास अपने प्रभुको प्राचण्यके रथा करता है, प्रभु
 उसे मुक्तके समान प्रतिपादन करे और पीछे वह दास
 दासत्वसे मुक्त हो जाता है। (रथि०)

जो पाश्चात्तता है पर्याप्त कुछ रूपया से कर अपने
 को बिक्रा गया है, उसे सबसे मोक्ष दास समझना
 चाहिये। वह पाश्चात्तता स्वामीके प्रसादके बिना
 पर्याप्त स्वामीको खुद बिक्री बिना कसो दासत्वसे मुक्त
 नहीं हो सकता। (रथि०)

गृह स्वामीके विमुक्त होने पर भी दासत्वसे मुक्त नहीं
 हो सकता है। दासत्वकर्म उसका सामाजिक है। इसो
 कारण कोई उसे इस कार्यके निवृत्त नहीं कर सकता।

मनुमें सात प्रकारका दास बतलाया है—धनदास,
 पर्याप्त जिसे हुनमें जीत कर लाया जा भद्रदास पर्याप्त
 जो ईश्वर भाल या भोजन पर रखा गया हो, एहज
 पर्याप्त बरखी दासीका पुत्र श्रौत पर्याप्त जिसे भोक्त बिया
 हो, दक्षिण पर्याप्त जो दूरसे दिया गया हो, दण्डदास
 पर्याप्त राजद्वारा दण्डकारके लिये जिसने दासत्व स्वीकार
 किया हो। (मध ८।११५)

ये सब दास जो कुछ धन कर्मान्तर करके वह
 धनका नहीं करके स्वामीका होना। मनुका मत

है, कि ब्राह्मण विस्वामित्तने दासगृहका धन से सबके
 हैं, श्लोक गृहका पयता कुछ भी नहीं है।

ये सब दास यदि चन्दाय काम करे और प्रभुको पाशा
 पामन न करे, तो उन्हें दण्ड देना उचित है। मनुके
 मतानुसार श्लो, पुत्र, दास मित्र और मजोहर छोटा
 भाई ये सब यदि कुछ परराज कर बैठे, तो पतना
 रक्षाके चपया से दण्डलये उन्हें दण्ड देना चाहिये।

रक्षाके ईश्वर पीठ पाघात करे, मूल कर मो उत्तम
 धन पर प्रहार न करे। यदि मानिक बहुत गुस्ता कर
 दुरी तरहसे प्रहार करे तो वह चोरको तरह राजदण्ड
 से दण्डित होता है। (मध ८।२१३-१०) वनपूर्वक
 लिये दासकर्ममें निवृत्त बिना जो और चोरने चारो
 करके लिये दासके निमित्त सेवा हो वह पूर्वोक्त कारण
 जोड़ कर भी दासत्वसे मुक्त हो सकता है। (प.३११३)

दासके लिये दो तरहके काम बतलाये गये हैं यम
 और पयम। दरभामे पर भाइ देना, मक मूल उठाना
 लूटा होना आदि बुरे काम माने गये हैं और गेय यमो
 काम यम हैं। (मितासराष्टक वारर)

ब्राह्मणका दास चर्मिय, चरिपका बंध्य और गृह
 समीका दास है।

० निज श्रोत्रमें संस्कार श्रौत एहोतदसक, जिस
 बालकका पितागोत्रमें पूजादि सन्नाह किया गया हो,
 पीछे उस बालकको यदि कोई दसककपये पदक करे,
 तो उसे दान कहते हैं। ८ उभातर। ८ ८६३। एतु
 देना। जिना होय। दास। (ति०) दास उपसेयि थच।
 १० उपसेयक, उपेया का रूपा करनोपाना।

दास—इन्दीके एक प्रसिद्ध कवि। इन्दीमें पनेक सुमह
 कविताए रचो हैं; उदाहरणार्थक गोपि दो जाती है।

भोयुक्त नाच निव वतु बया।
 मकहेत पकडे नीबकम अगत विमिर ह्यो ॥
 मन्वन्मन भये एक प्रिरी गोर जन इदारी।
 नाच निवृत्त प्रवन हुके परमदित अनुबयो ॥
 कठि अगाप अवार मन्मिथि तारि अयो करयो।
 दास माचन प्राये लके करन मारयो ११३ ॥

दास पदक—इन्दी-पदके रचयिता। इन्दीमें "रेदासकी
 परचई" और "अबोर मादिककी परचई" इन दो पदक-

की बनाया है। ये किस समयमें विद्यमान थे, उसका ठीक ठीक पता नहीं लगता।

दासक (सं० पु०) दास-स्वार्थ क। १ दास, सेवक। २ गोत्रप्रवर्त्तक ऋषिभेद।

दासकायन (सं० पु० स्त्री०) दासकस्य गोत्रापत्यं अश्वत्थित्वात् फक्। दासक ऋषिका गोत्रापत्य।

दास गोविन्द—एक भक्त और हिन्दी-कवि।

दासता (सं० स्त्री०) दासत्व, सेवावृत्ति।

दासत्व (सं० स्त्री०) दासस्य भावं दासत्वतन्वी भावो इति त्व। दासका कर्म, पराधोना, गुलामो।

दास दलसिंह—हिन्दीके एक कवि। इन्होंने सन् १८८० ई०में "दलसिंहानन्दप्रकाश" नामक एक पुस्तक लिखी है।

दासनन्दिनी (सं० स्त्री०) दासस्य धीवरस्य नन्दिनी। सत्ववतो, धीवर-कन्या।

दासपत्नी (सं० स्त्री०) दासयति दास उपनेपो अच् दामो वृत्रासुरः पतिर्यासा। १ अप., जल। दासस्य पत्नी। २ दासको स्त्री।

दासपन (हिं० पु०) दासत्व, सेवाकर्म।

दासपुर (सं० स्त्री०) कैवर्त्तसुस्तक, एक प्रकारका मोथा।

दासमित्र (सं० स्त्री०) दासस्य मित्रं इ-तत्। दासका मित्र।

दासमित्रि (सं० पु० स्त्री०) दासमित्रस्य अपत्यं इञ्। दास मित्रका अपत्य।

दासमोय (सं० त्रि०) दसमे देशभेदे भवः, वा दासं शूद्रं मिमते मानयन्ति मैथुनाशिन्यः ता दासस्यस्तासु भवः छ। १ दसमदेश भव, दसम देशमें उत्पन्न। (पु०) २ दसमदेशका निवासी।

दासमेय (सं० पु०) पुराणोद्धव जनपदविशेष, पुराणके अनुसार एक प्राचीन जनपद।

दासर—कर्णाटक प्रदेशवासी जातिभेद। यह जाति कवल्लिगर वा कैवर्त्त जातिकी एक शाखा मानी जाती है। इनका कहना है कि ये लोग तैलङ्गसे कर्णाटमें आ कर बस गये हैं।

कर्णाटक प्रदेशके बीजापुर अञ्चलमें बहुतसे दासर

देखे जाते हैं। इनकी दो श्रेणियाँ हैं, तिरमल दासर और गन्धदासर। दोनों श्रेणियोंमें केवल स्नान पान ही चलता है, विवाह नहीं। तिरमलदासरकी स्त्रियोंकी अपनी स्वतन्त्रता रहती है, वे विद्यावृत्ति और नाच गान किया करते हैं, इसमें पुरुषवृत्तिक भी भागपत्ति नहीं करते। किन्तु गन्धदासरमें यह कुप्रथा प्रचलित नहीं है। इस जातिमें बारह उपाधियाँ हैं, विङ्गि, यवर्, चिन्मवर्, चिन्ताकालवर्, इत्यादि।

इन लोगोंका आचार व्यवहार कुछ कवल्लिगर वा धीवरसे मिलता जुलता है। किन्तु ये लोग उनसे कुछ अधिक असभ्य और परिश्रमो मालूम पड़ते हैं। इन लोगोंको भाषा कनाडा और तेलुगु है।

ये लोग गाँवके बाहर अस्थायी घर बना कर रहते हैं। हिन्दू होने पर भी सुसलमानो पर्व मोहरममें हसन होसेनके उद्देशसे गवकरके बलि देते हैं। किन्तु गोमांस कोई नहीं खाता। सभी धर्म कर्म ब्राह्मणोंसे कराते हैं। मारुति इनके उपास्यदेवता और नागपञ्चमो, दशहरा तथा गणेशचतुर्थी इनके प्रधान पर्व हैं। इन लोगोंकी विवाहपद्धति घिसाड़ी और कर्णाटककी कैवर्ते जाति सी है।

दासरहो—हिन्दीके एक विख्यात कवि। इनकी कविता लालित्यपूर्ण होती थी, उदाहरणार्थ एक नीचे दो गद्रे है,—

मोहे भोरी सोई रंगमें कान्दा और कीन्दो जोई मनमाना।

भिजवत मइको सब हिन जाना वर करि हूँ मैं कौन बहाना।

कौन अपना कौन विगनारखोगी जाकी काना।

दासरंगी है श्यामके रंगमें वाही भा रंग न भाना ॥

दासरराज—एक अनाथ राजा। इनकी पालित कन्यासे महाराज शान्तनुका विवाह हुआ था।

दासवेश (सं० पु०) दासस्य दसोर्वेशः इ-तत्। दसुनाग, कौर्त्तिका सत्वानाग।

दासा (हिं० पु०) १ वह बांध या पुष्पा जो दीवारसे सटा कर उठाया जाता है। यह कुछ ऊँचा होता है। और इस पर चीज वस्तु भी रख सकते हैं। २ वह सतूतरा जो आगनेके चारों ओर दीवारसे सटा कर उठाया जाता है। यह धाँगके पानीको घर या दानामें आनेसे

रोकता है। ३ बह पत्थर की दीवारकी छुरीके ऊपर
मेकावा जाता है। ४ बह लकड़ी या पत्थर को दरवाजेके
ऊपर दीवारके पारपार रहता है। ५ बह सिवा।

दासानुदास (स० पु०) शिवलका सेवक बहुत सुख
सेवक। यह मन्द मन्वता और श्रुता प्रमद करनेमें व्यव
हृत होता है।

दासिका (स० स्त्री०) दासति ददाति धाम्नामिति
दान दाने न्यक्, टाप यत वल। दासि, कौड़ी।

दासी (स० स्त्री०) दास गौरादि० कौड़ी। १ दासकी पत्नी,
नीच जातिके स्त्री। २ परिचारिका टटलने स्त्री।
३ गूड़ पौर केवर्तको भार्या, धावर या गूड़की स्त्री। ४
कोररी, मन्दाकिन। ५ खासकहा। ६ मौसाकान, काना
कारोम नामका घोषा। ७ नोसन्निष्ठी, मोठी बट
सरे वा। ८ योगन्निष्ठी, वीसो बटसरेवा। ९ शिरो।

दास्य (स० स्त्री०) दास्याः भावा दासी-श्च। दासोष्वा
वर्मा, सेवाश्रुति।

दासोदास—एक सुप्रसिद्ध हिन्दो कवि। १८वीं शताब्दी
मराठानोय होती थी, छटाहरकार्य एक नीचे देते हैं।

“शोक छपर कर्म होरी खेचन लीके समान।

इस श्रीदाशास्त्री गीरी कन कांरे ममाम ॥

नामा बहन भादुरन वरुके सुगल न स कठि काव।

रावत है गौरुनाम बगै सुति खेदि खेदि शिवाय ॥

गोरी गोर बर बाए बर वर विविध मन्वकी पात्र।

पित वम स बर अरत बाचठ बावत पृथ स्वर काव ॥

हलत र स पुन्यव उहावत मेक व भावन काव।

कुलके धन माव पुन्यवकी प्रय किलकी मरे भाव ॥

कनि कनि इ व इ स कत वल्यर ममामे कव काव।

मर भारी बर यह मुच विवलय शोक भयम शोक काव ॥

है पुनरी गिर मन्विर मोरी है देव विरताय ॥

रानीराव रिय डर निरन्तर यहि कवि को विराय ॥”

दासोपास (स० स्त्री०) दास्याः पाद इव पादो यन्त्र,
वन्धादिभ्याम् नाम्ना कोषः। दासपुत्र्य पादपुत्र, त्रिसं
पाद शानके शैषि हो।

दासोमारादि (स० पु०) दासिनोऽन्त मन्वपदिमिय।
दासोमार, दिवञ्जुति, देवमोनि, वसुमोति, चोपदि चोर
चन्द्रमन धे की दासीमापादिगह है।

दासीधम (स० स्त्री०) दासोर्ना वमा ततो ह्योषसिद्वय।
(नकाका वः न २। ३। १३) दासीको समा, दासियोंका
पुत्र।

दासेय (स० पु०) दास-स्त्राबे ठक्। १ दास, गुनाम
व्यादा। २ केवर्त, धीवर। दासक वल्यव रति कञ्।
(त्रि०) ३ दासोपच, को गसषि पैदा कृपा हो।

दासेयी (स० स्त्री०) दासेव ज्ञियां कोपु। मन्ववनी,
व्यामकी माता।

दासेर (स० पु०) दास्या वल्यव कृञ्। १ दास, गुनाम।
२ केवर्त, धीवर। ३ कट्ट कट। ४ दासिनायक,
दासोको समाति।

दासेरक (स० पु०) दासेर-स्त्राबे कञ्। १ कट्ट, कट।
२ दासोपुत, दासीपुत्र। ३ जातिभेद, एक जातिका
नाम।

दाप्तान (दा० स्त्री०) १ वृत्तान्त। २ हास, कथा। ३ मर्दन
वयान।

दास्य (स० स्त्री०) दास्यन् मावा दास याम्। मन्विके
नम भेदोर्भिके एक।

“मर्दन मर्दनं मन्वत्रय वेवमयेव व।

मन्वय श्यैर्नं श्रवण पुनमवच्येतिव ॥

मिवैरं स्वस्य दास्यं वक्ता मन्विकर्ष्य ॥”

(मन्व वेवर्तवृत्ति०) मन्विके देवी।

दास्यमान (स० स्त्री०) दास्यं चि प्रमान। मन्विक
दान सम्बन्धी वसु, को दिवा जानेवाला हो।

दास्यार्थ (स० पु०) मैपन्वपरतामन्विके पनुमार पाचन
वीपवमिद। प्रमुत प्रवाको—नीसो कठसरेया, दिवदाह,
रन्ववक, मन्वीड, म्नामानता, पचवम, लचर, सोठ,
चलको अङ्क, चिरामता, यत्रपियसो, वसाङ्कमर, पद्मावाठ,
भनिवा, मोवा, सरलकाह, खेदि वनकी कान्, गुपयचरी,
मटकटेया चेतप्यपङ्क कुमाकी लङ्, कुटकी पनकाभूम,
गुङ्क पोर कुट सब मिला कर २ तोका, रवे ३२ तोने
वर्तमें लडासते हैं, वर ८ तोना वन कच प्राय, तो कवे
बतार सेते हैं। पावा तोसा मङ्कवे मात्र इसका सेवन
करनेके बाहुल्य विपमव्यर, जिदोवत्रमित व्वर, पैवाहिक
पीर दराहिक, कामव्यर, मोकत्रमित व्वर वमिषि साव
व्वर, चायेव वल्यव व्वर, मततक, चानुवेक मादि व्वर
वति शोत्र प्रममित हो जाते हैं।

दास (सं० ली०) दस्रो देवतेऽस्य अण् । अश्विनो नक्षत्र ।
दाह (सं० पु०) दह भावे षञ् । १ दहन, भस्मीकरण,
जलानेकी क्रिया या भाव । २ शव जलानेकी क्रिया,
सुटा फूँकनेका काम ।

मृत्युके बाद शवदेह जलानो पड़ती है । इसका
विधान शुद्धितत्त्वमें इस प्रकार लिखा है,—मृत्युके बाद
पुत्रादि मृतशरीरको श्मशानमें ले जा कर रखें और
स्नान करके पिण्डदानके लिये अन्न पकावें । फिर मृतक-
के शरीरमें घी मल कर उसे निम्नलिखित मन्त्रपाठपूर्वक-
स्नान करावें । बाद नए वस्त्रमें लपेटें । उस जगह पर
कुश विधा कर मृतकका मस्तक दक्षिणकी ओर घुमा
कर रखना होता है ।

मन्त्र—श्रीं गयादीनि च तीर्थानि ये च पुण्याः शिलोच्चयाः ।

कृष्णेश्वर गङ्गा च यमुनां च सरिद्वरा ॥

कौण्डिकी चन्द्राणां च सर्वशपप्रणाशिनी ।

मद्रावकाशां गण्डक्यां सयू पनसां तथा ॥

वैनवच वराहच तीर्थं पिण्डारकं तथा ।

पृथिव्यां यानि तीर्थानि सरितः सागरैः स्तथा ॥”

इन सब पुण्य तीर्थोंका विषय स्मरण कर अर्थात्
इसका पाठ कर शवको स्नान करावें, बाद एक दूसरा
नवीन वस्त्र पहना कर गलेमें उपवीत और उत्तरीय
छाल दें । अनन्तर आँव, कान, नाक, सुँह इन सात
द्वेटोंमें थोडा थोडा सोना छालें ।

इतना ही चुकने पर अग्निदाता चिनाभूमिमें जा कर
पिण्डदान करे और जमोन पर थोडा गोबर गिरा कर
प्राचीनावीत हो (जनेऊको दाहिने कंधे पर छाल कर)
वायां घुटना टेक कर बैठे । बाद ‘श्रीं अपहता सुरा-
रक्षांसि वेदिसद्’ यह मन्त्र पढ़ कर कुशमूल द्वारा एक
रेखा खींचे । फिर उस रेखा पर कुश विधावै और ‘श्रीं
एहि प्रेत सौम्य गभीरैभिः पथिभिः पूर्विणेभिदे ह्यस्मभ्यं
द्विविण्ड भद्रं रयिञ्च नः सर्ववीरं नियच्छुं’ इस मन्त्रसे
आज्ञान करे । तदनन्तर सतिज जलपात्र बाएँ हाथसे
दाहिने हाथमें ले कर ‘श्रीं अथ अमुक गोत्र प्रेत अमुक
देवशर्मन् अवर्नचिव’ इस मन्त्रसे जलको कुश पर गिरा
दे । इसके बाद तिल सहित पिण्ड ले कर कुश पर
विसर्जित करे । जब इतना कृत्य हो जाय, तब पुत्रादि

चिता तैयार करे और सुटेको उभर पर दक्षिण ओर
सिर करके लेटा दे । जो सामवेदो हाँके शवका
मस्तक उत्तरकी ओर रखे । पुरुष शवको पट करके
और स्त्री शवको चित करके चिता पर लेटा देनेका
विधान है । फिर अग्निदाता अग्नि ले कर ‘एनं दहन्तु’
अग्नि इसे दग्ध करे, ऐसा कहे ।

“श्रीं कृत्वा तु दुष्करं कर्म जानता वाप्यजानतां ।

मृत्युकालवशां प्राप्य नरं पंचदशमागतं ॥

धर्माधर्मसमायुक्तं लोभभोहसमावृतं ।

दहेयं सर्वगात्राणि दिव्यान् लोकान् स गच्छतु ॥”

इस मन्त्रका पाठ कर तीन बार अग्नि प्रदक्षिण करे
और दक्षिण ओर अपना सुँह करके शवके मस्तकको
ओर आग लगा दे । दाहकर्म समाप्त हो जाने पर
प्रादेशप्रमाणको सात लकड़ियां हाथमें ले कर सात बार
प्रदक्षिण करे और प्रत्येक प्रदक्षिणमें एक एक लकड़ी
चितामें छालता जाय । जब शव जल जाय, तब ‘कथा-
दाय नमस्तुभ्यं” यह मन्त्र पढ़ कर एक बांससे चिता पर
सात बार प्रहार करे जिससे कपास फूट जाय । इतना
करके चिताग्निको ओर ताके विना, वामभाग होते हुए
नदोंमें वा गङ्गामें स्नान करनेके लिये सबके सब चले
जाय । शव सम्बन्धीय वस्त्रादि श्मशानवासो चाण्डालोंके
होते हैं । सूतिका और रजस्वला भवस्यामें स्त्रियोंकी
मृत्यु होनेसे ‘आपोद्दिष्टोय वामदेव्यादि’ मन्त्र द्वारा
आवाहन कर उसे स्नान करावै और तब दाह कर्म
करे । गर्भवतो स्त्रीको मृत्यु होने पर दूसरी जगह
गर्भ निःसारित करके दाह करना होता है । गर्भवती
स्त्रीका गर्भ निःसारित किए विना दाह करना विशिष
दोषावह और अधर्मजनक है ।

अनन्तर जलके समोप जा अग्निदाता बड़ोंको आगे
धरके जलमें प्रवेश करे । स्नान कर चुकनेके बाद वस्त्रादि
पहन कर प्राचीनावीत हो दक्षिणमुखमें प्रेतके उद्देशसे
तर्पण करे । जो सामवेदो हैं, उन्हें आचमन करके
‘श्रीं अमुकगोत्रं प्रेतं अमुक देवशर्माणं तर्पयामि’
इस मन्त्रसे तर्पण करना चाहिये और जो यजुर्वेदो है,
उन्हें इस मन्त्रसे, ‘श्रीं अमुकगोत्रं प्रेतं अमुक देवशर्म-
न्नेतत्ते तिलोदकं द्रव्यस्व’, तीन बार तर्पण करनेमें

बहुत कम निम्बा है एक बार करनेसे मो काम कम सक्ता है। तपन करनेके बाद फिरसे खान करने अग्निदाताको योगि लिए सबसे मज्जामासे बाहर हो जाय और झकपिये पर बैठ कर इस प्रकार चिन्ता करे—

इस संधारमें मनुज कदलोस्तम्भके जैसा निम्बार है जोवन बिद्युत् रूपन है, समो बसु चमखायो है, इनमें धारको बधना करना मूर्खोका काम है। समी अपने अपने कर्मोंका भोग कर देखताम करते है और करीये, इसमें निम्बाप करनेका क्या प्रयाजन ? सुभी, यमुद्र देवता जब इन मोगीका भोगाग है, तब मानवके बिपत्यमें चिन्ता हो क्या ? इससे बाद तर भा कर नोमके पत्तोको इतीसे काठ कर 'ममो पाप समयन्तु' इस मन्त्रके समीका शर्म करे। जोके 'मग्ने न क्रिरोम्यास' यह कह कर पाद द्वारा पत्तका और अग्निर्नः शर्मं ब कर्तुं कह कर अग्निका शर्म करनेको निम्बा है। बाद गो, ज्ञाय, मोमय, लदक और मोरनयं चू कर चर्म प्रवेश करना चाहिये।

दिनको यदि दाह करने जाके, तो रातको और यदि रातको जाय, तो दिनको सोट चर्षि। यदि ऐषा न हो सके, तो ब्राह्मणको अनुमति ले कर किसी समय सोट सक्ते हैं। (ह्यगिणल) अत्येति रेको।

२ कुपित पित्तक टेकसन्तापमेद एष रोग जिसमें शरीरमें 'असन' मासूम होतो है, प्यास लगती है और कण्ड सूचता है।

मावप्रकारमें दाहरोग घात प्रकारका निम्बा है। इनमेंसे पित्तकन्दा दाहरोममें पित्तक करके ममो सत्तक बीज पकते हैं, प्रमेद हतना हो है, कि पित्तकमें धारो को च्वालि धोर पामाग्रय कृतित होता है इस रोगमें मैसा नहीं होता। इसका मो पित्तक करके जैसा प्रतिविधान करना चाहिये।

उत्तम्य दाह—उत्तम्य दाह रोममें साय शरीरका एक विगड़ कर दाह उत्पन्न करता है, रोगी दाहसे हतना पोकित होता है कि उसका मसूका शरीरमामो निम्बटक प्रवकित अग्निसे तापित हो रहा है ऐसा मासूम पकता है। प्यास अधिक लगतो है, शरीर और दोनी भीम तापवक से हो जाते हैं, सुचमे उत्तपो गम्य निम्बटती है।

रक्तपूवं कोष्ठक दाह—मप्लाटिसे घत रोम पर उस घतने रक्तस्राव होता है और कोष्ठप्रदेश जब रक्तमें भर जाता है, तब उसे रक्तपूवं कोष्ठक दाह कहते हैं।

मन्त्रक दाह—मधुपानप्रतिपत्तमा पित्त धोर रक्तके साथ मित्त धोर वडू कर जब चर्ममें पाचय सेगो है, तब चारतर दाहरोन उत्पन्न होता है इसको मन्त्रक दाह कहते हैं, पित्तके कुपित होनेसे ज मा प्रतिविधान घाम म्त्रक है जो सा हो इसका प्रतिविधान कामा होता है।

दृष्यानिरोधक दाह—जो अथोच मनुज प्यास लगने पर जल नहो पीता उससे रसधातुके पीच हो जाने पर मो पित्तको लप्सा बसुतो है। जब पित्तोपमा शरीरके मोतर धोर बाहर दाह उत्पन्न करतो है। इस रोममें रोमोका गका, तातु धोर घोट सूच जाता है।

धातुसयत्र दाह—धातुसयत्रम्य दाह रोममें सूक्षा पातो है प्यास लगतो है, सारभू होता है, धोर काम काह करनेमें जो गहो सपता। यदि रोगो दाहसे अत्यन्त पीड़ित हो, तो समभना चाहिये कि समको पालु, निम्बट पडू व मरे है।

मर्ममिहातत्र दाह—मप्लक, हृदय धोर कक्षि पादि मर्मस्थानोंमें पाघात पडू करनेसे जो दाह उत्पन्न होता है उसीको मर्ममिहातत्र दाह कहते हैं। इस प्रकारका दाहरोग मी पसाध है।

पसाध दाह—सब प्रकारके दाहरोमियोंके शरीरका यदि बाहरो भाग शीतल धोर मोतरसे मयमें ब्रमन देतो हो, तो वैसे रोगोको पित्तिका नहो करने चाहिये। यको दाहरोग पसाध दाह कहजाता है। इसका प्रति विधान करना मसूको रसो बटनेक समान है।

शारीरपी निम्बटा—शतपीत हृत धोर जोके सत्तको मिका कर शरीर पर उसका शेष लगानेसे दाहरोन जाता रहता है।

शैरी पीठिके गूदेक धोर पाँसलकोको मिन कर उसे काँजो द्वारा पोस कर नेप लगानेसे पसबा काँजो प सिन्न पाद्रु बध्न द्वारा सार शरीरको डक रखनेसे दाह रोम धारोम्य होता है। कसको अडू धोर रक्तवन्दनको काँजोके साथ पोस कर शरीर पर लगानेसे तथा लघुपत्र प्रा कदनीपत्र निर्मित धव्या पर रुका कर चन्दमत्र शक

सिद्धित व्यजन द्वारा हवा करनेसे दाहरोग धिनट होता है।

दृष्या और दाहकी रोकनेके लिये जलसेवन, भ्रव-गाहन और व्यजनानिल सेवन करनेके बदले शीतल जल हो प्रशस्त है।

प्रियङ्गु, लोव, खसकी जड़, सुगन्धवाला, नागकेसर-पत्र और कौवर्त्तसुस्तक इन सबको कालोयक काष्ठ (पीसा सुसुवर)के काढ़के साथ पीस कर गरोर पर लगानेसे दाहरोग नष्ट होता है।

सुगन्धवाला, पद्मकाष्ठ, खसकी जड़, रक्तचन्दन और पद्मको एक साथ पीस कर जलमें मिलाते हैं, पीछे उस जल द्वारा एक द्रोणो भर कर उसमें स्नान करनेसे दाह-रोग दूर हो जाता है।

प्रस्पुटित पद्मसमन्वित तड़ाग, जलयन्त्र घर (फौआ-रेका घर) और चन्दनचर्चिताङ्गो कामिनो दाहरोगमें विशेष हितकर है। पद्मनिमग्न जल, चीनो मिश्रित जल, चीनो मिश्रित दूध और इखका रस सेवन करनेसे दाह रोग सदाके लिये जाता रहता है।

रक्तचन्दन, पित्तपापड़, खसकी जड़, सुगन्धवाला, मीया, पद्ममूल, पद्मशृणाल, सौंफ, धनिया, पद्मकाष्ठ और भौवसकी इन सब द्रव्योंसे शर्दावशिट काय, प्रसृत कर जब वह शीतल हो जाय, तब मधु मिला कर, उसे पान करे। इससे अत्यन्त प्रबल दाह भी नष्ट हो जाता है।

४४ सेर तिलतेलको ६४ सेर काँजीके साथ घीमी भ्राँचमें पाक कर शरीर पर लगानेसे दाहज्वर अच्छा हो जाता है। (भावप्रकाश दाहाधिकार)

पान जन्य उष्णता जब पित्तरक्तसे वृद्धि पा कर त्वकमें प्राप्य लेती है, तब घोरतर दाह उत्पन्न होता है। ऐसी हाजतमें पित्तजन्य दाहके जैसा प्रतिविधान करना चाहिए। इस प्रकारका दाह यदि समृद्धिशाली व्यक्तिके शरीरमें हो, तो चन्दनलेप, शिशिरोदक, शीतलजल, कौमल शय्या, कामिनीसंख्यर्ष आदि हितकर है।

पित्तजन्य दाहमें पित्तज्वरके जैसा प्रतिविधान है। प्यास लगने पर यदि पानी न पीए, तो जलीय रसधातु क्षोष हो कर तीज उत्पन्न होता है। इससे शरीरके भोतरों भागमें जलन देती है; गला, तालु, ओष्ठ और

जिह्वा सूख जाती है तथा रोगो काँपने लगता है। ऐसे समयमें तेजकी शान्त कर जलोय धातुकी वृद्धि करने चाहिए। शर्कराकी शीतल जल, इखके रस और मन्धमें डाल कर सेवन करनेसे यह बहुत जल्द पाराम हो जाता है। कोष्ठदेगके रक्तपूर्ण होनेसे अन्तर्दाह उपस्थित होता है। धातुजन्य जन्य दाहके उपस्थित होनेसे मूर्च्छा और दृष्या होती है, स्वर ज्योष होता है, क्रिया शक्तिरहित होती है और शरीर भ्रवसन्न हो जाता है। ऐसी हाजतमें रक्तपित्त-सी प्रक्रिया, सिग्ध और त्रायुमान्तिकर क्रिया हितकर है। अनाहार, शोक आदि अनेक कारणोंसे दाह उत्पन्न होता है; अमोघ विषयके प्राप्त हो जानेसे हो इसकी शान्ति होती है। मर्मस्थानमें अभिवातके कारण जो दाह होता है, वह असाध्य माना जाता है। जिस दाह रोगमें ऊपरसे तो शीतल और भीतरसे जलन दे, उसे भी असाध्य समझना चाहिए। (सुश्रुत)

४ जलन, ताप । ५ शोक, सन्ताप, अतपन्न दुःख, डाह । दाहक (सं० त्रि०) दहति दहणुलु । १ दाहकर्ता, जलानेवाला । (पु०) २ धिक्कट्टक, चीता । ३ रक्त धिक्क, लाल चीता । ४ अग्नि, भाग ।

दाहकता (सं० स्त्री०) जलानिका भाव या गुण ।

दाहकत्व (सं० पु०) जलानिका भाव ।

दाहकर्म (सं० पु०) शवदाहकर्म, सुर्दा फूंकनेका काम ।

दाहकाष्ठ (सं० स्त्री०) दाहाय यत् काष्ठं । दाहागुरु, अगुर जिसे सुगन्धके लिए जलाते हैं ।

दाहक्रिया (सं० स्त्री०) शवदाहकर्म, सुर्दा जलानिका काम ।

दाहघ्न (सं० स्त्री०) दाहं हन्ति हन-टक् । देहदाहनाशक औषधादि ।

दाहज्वर (सं० पु०) दाहप्रधानी ज्वरः । गात्रज्वालायुक्त ज्वररोग, वह ज्वर जिसमें शरीरसे बहुत अधिक जलन मालूम हो ।

दाहदा (सं० स्त्री०) नागवल्ली लता ।

दाहना (सं० स्त्री०) दह-णिव-भावे ल्युट् । १ मर्म करानेकी क्रिया, जलवानेका काम । २ जलानेका काम ।

दाहना (हिं० क्रि०) १ भस्म करना, जलाना, फूंकना । २ सन्तप्त करना, दुःख पहुँचाना, सताना ।

दाहनागुर (स० झी०) दाहनाय दाहनाय अगुर । दाह-
गुर नामक मन्थद्रव्यविशेष, अगुर ।
दाहनिग्राह (स० पु०) दुग्धम पचकत्तय ।
दाहमय (स० त्रि०) दाहने प्रकृत दाहमयत्, दाह
प्रधान अकारि यत्र अत्र जिसमें अधिक अवन मात्स्य
हो ।
दाहहर (स० पु०) दाहार्थं स्त्रियै मन्थयेऽभिन् य
अथ । अन्नदान, मुर्दा बसानेका स्थान ।
दाहहराच (स० झी०) दाहो जिह्वेऽनेन इ च्छुट्-विच-
करोति च्छु वा । बीरचमूक, अच ।
दाहा (वा० पु०) सुहरमन्त्रे दय दिन । इतने दिनों
के बीच ताजिया बनता है और दफन किया जाता है ।
२ ताजिया ।
दाहागुर (स० झी०) दाहाय यदगुर । सुगन्धितद्रव्यविशेष
जलानेका अगुर । इसका प्रयोग—दाहनागुर, दाह-
काह, धूपागुर, तैसागुर, पूर और बनबनम है । इसका
गुण—कटु, उष्ण, क्षेयघ्न, पचनसाधक, क्षयदोष,
विनष्टकारक और सब दाहोगन्धविघ्नकारको है ।
दाहिन (स० त्रि०) दहति दह विनि । दाहक, जलाने
वाला ।
दाहिकागनि (न० त्रि०) दाहक-अर्थां डोप । अत
इत् । दहन करनेको गनि ।
दाहिना (हि० वि०) १ अयस्य, दक्षिण, 'बायाँ' का
उलटा । २ जो दाहिना हाथ पकृती हो । ३ अस्तमूल,
प्रथम ।
दाहिनी (हि० त्रि० वि०) दाहिने हाथको और ।
दाही (हि० वि०) दाहिन देवी ।
दाहक (स० त्रि०) दह-वाहकत्तय उच्यन् । दाहक
जलानेवाला ।
दाह (न० त्रि०) दह कर्मणि अत् । १ दहनीय,
जलाने योग्य ।
दिपती (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारका बहुत छोटा दोया
जो मसोका बना होता है । २ मूलके गोपिकों की
१ गणों कीटोरो जो कई भागोंमें बटी होती है ।
दिपा (हि० पु०) दीपा देवी ।
दिपावती (हि० स्त्री०) दिवापती देवी ।

दिपावती (हि० स्त्री०) दिवावती देवी ।
दिच (द्वीप)—पश्चिम भारतमें पोस्तु मोरके पश्चिम एक द्वीप ।
यह पचा० २० ३१ और दूया ७१ २ ५० आदिवाबाद
के दक्षिणसोमाथ एक बिन्दुके आड़ोके दूसरे किनारे
पवक्षित है । पूर्व पश्चिममें इसको लम्बाई ७ मोस और
उत्तर-दक्षिणमें केवल २ मोन है । उत्तरसोमाथो
आड़ोमें छोटी छोटी डोंगो और नालें जाती पातो हैं । इस
आड़ोके रूढ़नेसे यह द्वीप गुरातमें एक ही मया है ।
दक्षिण भगनमें नीसे बानूका पहाड़ हो मया है,
इसोके गोपि हो कर समुद्रका अन्त बहता है ।
इस दोपके पहाड़ १०० फुटमें अधिक ऊँचे नहीं
हैं । इस दीपमें अन्न अन्न नारियलके बगोपि देखनेमें
पाते हैं । द्वीप छोटा होने पर भी यहाँ एक मन्दर
है । पाठ काह मन्दर जलमें अन्नक लगर कास कर रह
सकता है ।
यहाँका जनमानस गुरा और उष्ण है । जमीन पस्तु
कर है और पच्छी जलका मिला दुर्लभ है । कृषि
कार्यका भी उतना आसोत्रन नहीं है । उत्पन्न द्रव्योंमें
गन्ध, जंगली, बाबरा नारियल और धामके फल प्रधान
हैं । लोकसंख्या प्रायः १३११३ है ।
दीपके पूर्व आधमें दिच नगर अवस्थित है जो नवो
मन्दरमें पाँच मोन दूर पकृता है । एक समय यह नगर
नाथिक्य अन्नसाधने विशेष लक्ष्यस्थानी था । उस समय
यहाँ १००० लोग वास करतें थे । यमी नह पूर्व पश्चिम
जातो रहो । बहुत दिनोंकी बात नहीं है, कि मोजा
जिब और भारतके नामा स्थानीके धार यहाँका नाथिक्य
बनता था । नगरके पनेक गृहस्थोंके एक एक बड़ा अन्न
कूप है । यहाँके समयमें मोग लघमें जन भर रखते हैं ।
पहसे इन नगरमें बहुतसो मन्दर और बड़ी बड़ी
पशालिवाते थीं, यमो उस तरहकी बहुत थोड़ी बच गई
है । जर्मने सिमाधिक मित्रा सर्वेक्षणीय है । यमी यहाँ
विष्णुप्रसिद्ध पावन (वर्तमान वैजिक अस्पताल),
विष्णुजन नामक अन्नस्थान पादि मन्मात्रस्थानमें पड़े है ।
यहाँकी उच्चमार्गमें पहरी सब प्रकारकी मुद्राके प्रकृत
होतो थीं, यमी बैसा नहीं है । इसके पलाया यहाँ पोर्तु
गीज सभनेका प्राबाद कारायार और विचारक है ।

शहरमें १० देवालय और २ मस्जिद देखे जाती हैं। पोत्तुगोजीके आनेके पहले यहां बहुतेसे हिन्दूतोय और बड़े बड़े देवमन्दिर थे जो पोत्तुगोजीसे तहसनहस कर डाले गये।

दिउ नगर छोड़ कर इसमें और तीन ग्राम लगते हैं,—उत्तरमें वचवारा, दक्षिणमें नगवा और पश्चिममें मोनकवाग। शेषोक्त दो ग्रामोंमें दुर्ग है।

कपडा बुनना और कपड़ा रंगाना यहांके लोगोंकी प्रधान जीविका है। यहांके अनेक अधिवासी मस्जिद-जीवी हैं। वार्षिक आय प्रायः ४००००, रु० है।

अरब और पारस उपसागरमें वाणिज्यको विशेष सुविधा होगी, यह सोच कर पोत्तुगोजीने यहां आक्रमण किया, किन्तु पहले वार उनको सब चेष्टाएं निष्फल हुईं। सुगल-सस्ताट्टु मायुने जब गुजरातके अधिपति बहादुरशाह पर आक्रमण किया, उसी समय १५३५ ई०में बहादुरशाहने पोत्तुगोजीसे सन्धि कर उन्हें इस द्वीपमें एक दुर्ग निर्माण करनीकी आज्ञा दी। १५३६ ई०की दोनो पक्षोंमें पहिले चल रहा था। १५३७ ई०में पोत्तुगोजीके जहाजके लोटते समय गुजरातके अधिपति मारे गये। इसी वर्ष बहादुरके भतीजे श्य महमूदने पोत्तुगोजीके दुर्ग पर चढ़ाई की, किन्तु उनका सहेय्य सिद्ध न हुआ। १५४५ ई०में महमूदने दूमरी वार चढ़ाई की। इस पर डमजोभा और डिकाद्रो बहुतसो सेना ले कर द्वीप पहुंचे और उन्होंने सुसलमान सेनाओं को पराजय कर द्वीपवासो पोत्तुगोजीको रक्षा को। काद्रोके वारत्वसे सारा द्वीप पोत्तुगोजीके अधिकारमें आ गया। १६७० ई०में मस्काटसे अनेक सशस्त्र अरबोंने आ कर द्वीप पर आक्रमण किया और पोछे लूट-मार मचाते हुए वे लौट गये। तमोसे वहां कोई गढ़बढ़ो न हुई।

वर्तमान दुर्ग सुभलमान अवरोधके बाद डिकाद्रोसे बनाया गया है। इसका संस्थान सुदृढ़, गठन सुन्दर और बहुतसे पौतलके कामानसे सुरक्षित है। पुल पार कर बाहरो फाटक हो कर इस दुर्गमें जाना पड़ता है। बाहरो फाटकमें पोत्तुगोजी भाषामें उत्कीर्ण लिपि है।

वहांके गवर्नर फीजदारो और दीवानी दोनों शासन

विभागके कर्त्ता हैं। ये गोआके गवर्नर जनरलके अधीन है।

दिओदोरस, सिकिउलस (Diodoros Siculus)—एक प्रसिद्ध ग्रीक ऐतिहासिक। इनका सिमिली द्वीपमें आजिरियम नामक स्थानमें जन्म हुआ था। उनको लिखो हुई पुस्तकके सिवा और कहीं भी इनके जीवनचरितका जाल नहीं मिलता। वे लुलियस और अगस्टस् सोजरके समसामयिक थे। उन्होंने एशिया और यूरोपके नाना स्थानोंमें परिभ्रमण कर तथा रोमनगरमें बहुत दिनों तक वास कर उन स्थानोंका प्राचीन और तत्कालीन ऐतिहासिक विवरण संग्रह किया था। इन सब संग्रहोत विवरणोंसे उन्होंने तीस वर्ष अट्ट परिश्रम कर 'विब्लियोथेका' (Bibliotheca) अर्थात् पुस्तकागार नामक एक बृहत् इतिहास लिखा, जो चालोस खण्डोंमें संपूर्ण है। इसके प्रथम ६ खण्डोंमें द्रोजानु युद्धके पूर्व पर्यन्त ग्रीस और अन्यान्य देशोय देवदेवीविषयक कहानियोंका वर्णन है। उसके बाद ग्यारह खण्डोंमें ई०सन्के पहले ११८४ वर्षसे ले कर अलेक्सन्दरके समय तकका इतिहास लिखा है। अवशिष्ट तीस खण्डोंमें वे सभी घटनाएं वर्णित हैं, जो ईसा जन्मके ६० वर्ष पहले घटी थीं। इन चालोस खण्डोंमें संपूर्ण बृहत् इतिहासका अधिकांश कालक्रमसे लुप्त हो गया है, सभी केवल प्रथम ५ खण्ड और ११ से २० खण्ड तक, यही १५ खण्ड पाये जाते हैं। पूरे १० खण्ड तक तो एकवारगो ही लुप्त हो गया है, अवशिष्ट अशोकाना नाना अंश कई जगह मिलता है।

दिओदोरसके इतिहाससे प्राचीन कालका काफी विवरण जाना जाता है। साधारणतः उनको रचना कल्पनाचातुर्य और अतिरञ्जनदीपवर्जित तथा सरल और प्रसादशुणसम्पन्न है, किन्तु उनमें वैसी प्रखर मीधाशक्ति थी, ऐसा संभव नहीं। उनका इतिहास सुशुद्धलावह नहीं है, उन्होंने जो सब विवरण सुने थे अथवा अन्यान्य ऐतिहासिकोंसे प्राप्त किया था उन सबके सत्यासत्य निर्धारणमें वैसी विचार-शक्ति वे दिखला न सके हैं। ऐसा होने पर भी वे ऐसे कितने विषय लिपिवद्ध कर गये हैं, जो कहीं भी नहीं मिलते। किन्तु दुःखकी बात है कि उनकी पुस्तकके सर्वाधिक प्रयोज-

मोघ लुप्त भी सुप्त हो गए हैं। यदि वे सब लुप्त प्रभो रहने, तो मिःलन्देह धनोतकान्धे जाना तब जो प्रभो मन्देहके चोर प्रभुकारमें विभोजन है, सबके सामने प्रभु-मया कर्म।

दिह् (स० लो०) दिग्ना लोघ, तरल। दिहा देवो।

दिह् (स० वि०) १ विरल, क्षीण, तम। २ पल्लव, मोमार। (पु०) ३ लघो रोम, लघुदिह।

दिह्-धन (वि० पु०) एक प्रकारकी ईध। इनका सुद्ध बहुत चम्पा बनता है।

दिह्-नाह (वि० पु०) रिप्ताह देवो।

दिहोद्गो (वि० लो०) बर्हि चम्पा।

दिह (स० पु०) दिह्यु जावनी कौ-त। करम, बीध बयंका शायोका बहा।

दिहत्त (स० लो०) १ लट, लट्टो, तल्लोत्त। २ लडिगता, मुदिषत्त।

दिहन्वा (स० स्त्री०) दिह्य एक कन्या। दिह् रूप कन्या दिग्ना स्त्री कन्या। सब दिग्नाए ब्रह्माको कन्या मानो जाती है। बराहपुराणमें इसको कहा इन प्रकार लिखी है—

एक दिन ब्रह्मा जगत्की सृष्टि करनेके पहले सोचने लगे, कि इस स मारको सृष्टि क्यों करेगा? इसी सोच करनेके क्षणमें महाप्रभुमायात्मको उग्र कन्याये पाबि भूत हुई। इनमेंसे पूर्वो पबिमा, प्रभोको चोर लक्षरा ये चार कन्याये पञ्चम रूपवती चोर गणोर भी। पबिने ब्रह्माको प्रथम कर कहा है देव देव प्रवत्परे! हमें ऐना लान प्रदान कीजिये सहा। क्षामोके हाथ हम मोघ प्राप्तन्देह रहें। यह सुन कर ब्रह्माने कहा, 'तुम लोभोको चमिकाया पञ्च पूरो लोभो। यह ब्रह्माक बहूत विरलत है। इनके पञ्चमागमें प्रभो तुरल का कर तुम भोग प्रपने इच्छानुसार बाध करे विवच्य करनेको प्रकृत नहीं। तुम्हारे लिये तपस्को चोर निष्पाप पतिवोकी सृष्टि कर्त्तना जिनके नाव तुम लोभ लूब केन काटोमी। प्रभो तुम लोभो को जियर जनेको रक्षा हो करे चलो जायो। ब्रह्माके पात्रानुसार वे सब एक एक दिग्नाको बना गई। इन प्रकार ब्रह्माने उन्हें बिदा कर महाप्रभुको लोचपालो बहूत अर्द्ध सृष्टि

को। बाद सर्वोने दिग्ना कन्याको लुप्तवा। जो ल वितामह ब्रह्माने लोचपालोके पाठ उन सर्वोको माध दिया। इन्द्र, अग्नि, यम, निरृति बचन पाहु, धनद चोर ईशान इन पाददिह्-पालोको उक्त पाठ कन्याये प्रदान कर पाप तो लक्ष्म दिग्नामें रहने लो चोर शिपको कन्याने पदोदिग्नामें प्रकल्पित किया। इससे बाद वे सब देवियाँ इन्द्राग्नि साह पानन्दवे रहने लगीं। (बराह) दिह्वर (स० पु०) दिह्य पादेम करोति वा दिह्य लो सुषट्प्रदान करोति छट्पे। १ सुबह, अमान मत्तप्य। २ महादेव शिव।

दिह्वरवासिनी (स० लो०) दिह्वरि शिवे पशुतोति बसविनि, डीप। कामरूपक देवीजिन्देव, दिह्वर पचात् महादेवमें को पाठ करे लोको नाम दिह्वरवासिनी है।

दिह्वरिका (स० स्त्री०) दिह्वरिच दिग्मन्त्र मङ्गागात् कामये योमने इति दिह्वरिन् कौ क, ततटाप। मने विधीय। गाठक पर्वत पर मानसरोवरके जैसा एक सरोवर है। महादेव पावर्तोक सत्य इसो सरोवरमें जलजोड़ा करीने है। इससे पूर्वो चोर मञ्जुमयने तीन नदियाँ निकली हैं, पबिम भागये को नदी निकली है उसोका नाम दिह्वरिका है। यह हिम किं चैत्रसे निरगतती है इसीसे इसका नाम दिह्वरिका पड़ा है। इसका वर्तमान नाम दिह्वरगंठ है। कामरु देवो। दिह् इन्द्रादेव म करिदा मत्तपतेला च यथा। २ सुवतो, अमान चोर।

दिह्वरिन् (स० द०) दिह्यु (चित) कर। ऐरावत पादि पाठ लोभो दिग्मन्त्र।

ऐरावत, पुत्ररोक कामरु, लुमुन्, चम्पन, पुष्यदन्त, शम्भोम चोर सुवतोके वे पाठ लोभो दिग्मन्त्र नामसे प्रसिद्ध हैं।

दिह्वरी (स० लो०) दिह्य वत्, लाहावा टलघत ईकाको च मत्तपतेला च यथा म प्रात्वात् न जप, वा दिह्वर सुवा तला डोव। सुवतो लो

दिह्वान्वा (स० लो०) दिग्ना एक कन्या। दिह्वन्वा। दिह्वामिनी (स० पु०) दिह्य एक कामिका। दिह्व रूप स्त्री। दिह्वुमार (स० पु०) जैनिवोके मतानुसार भवतपति नामके देवताधर्मिये एक।

दिकचक्र (सं० क्लो०) दिग्गत्र चक्रं । १ चक्रवाल ।
२ घाटीं दिशाश्रींका समूह ।

दिकतट (सं० पु०) दिकचक्र ।

दिकपति (सं० पु०) दिगां पति । १ दिग्धीश्वर, ज्योतिषके मतानुसार दिशाश्रींके स्वामी ग्रह । शुक्र अग्निकोणके, कुज मङ्गल दक्षिणके, गुरु नैऋतकोणके, शनि पश्चिमके, चन्द्रमा वायुकोणके, बुध उत्तरके और बृहस्पति ईशानकोणके अधिपति माने गये हैं । २ घाटीं दिशाश्रींके पति इन्द्रादि । दिकग्ना देखो ।

दिकपाल (सं० पु०) दिशां पालयति पालि-अण् । १ पुराणानुसार दशों दिशाश्रींके पालन करनेवाले देवता । पूर्वके देवता इन्द्र, अग्निकोणके अग्नि, दक्षिणके यम, नैऋतकोणके नैऋत, पश्चिमके वरुण, वायुकोणके मरुत्, उत्तरके कुवेर, ईशानकोणके ईश्वर, ऊर्ध्वदिशाके ब्रह्मा और अधोदिशाके देवता अनन्त है । २ चौबोस मात्राश्रींका एक छन्द । इसमें १२ मात्राश्रीं पर विराम होता है । इसकी पाँचवों और सत्तरहवों मात्राएं लघु होती हैं ।

दिकशूल (सं० क्लो०) दिशि दिग्भेदे गती शूलमिव । कुक्षु विशिष्ट दिनोमें कुक्षुं विशिष्ट दिशाश्रींमें कालका वाम । दिकशूलके दिन कहीं जाना नहीं चाहिये । २ क्र और रविवारमें पश्चिमकी ओर, मङ्गल और बुधवारमें उत्तरकी ओर, सोम और शनिवारमें पूर्वकी ओर तथा बृहस्पतिवारमें दक्षिणकी ओर दिकशूल माना जाता है, अर्थात् जिस वारका जिस दिशामें शूल होता है, उस वार उस दिशाकी ओर नहीं जाना चाहिये । कहते हैं, कि दिकशूलमें यात्रा करनेसे इन्द्रतुल्य प्रभावशाली होने पर भी मनोरथ सिद्ध नहीं होता है, आर्थिक हानि होती है कोई न कोई रोग पवश्य हो जाता है और यहाँ तक कि कभी कभी यात्रोको मृत्यु भी हो जाती है ।

किसीके मनसे बुध और बृहस्पतिवारकी दक्षिणकी ओर, बृहस्पतिवारकी चारों कोणोंकी ओर, रवि तथा शुक्रवारकी पश्चिम दिशाकी ओर शूल होता है । पहली और प्रधान मतके सम्बन्धमें लोगोंनि एक चौपाईं भी इस प्रकार बना ली है—'सोम सनौचर पुरुव न चालू, मङ्गल

बुध उत्तर दिस कालू । आदित शुक्र पच्छिम दिस राह, बोफै दक्षिन नंक दिस टाह ।'

दिकसाधन (सं० क्लो०) दिग्ः साधात्ते ज्ञानार्थं अनेन । दिकज्ञान-साधन उपायभेद, वह उपाय जिससे दिशाश्रींका ज्ञान हो । बहुत पहलमें भारतीय ज्योतिर्विद सभो दिशाश्रींके निर्णय करनेका उपाय बहुत सूक्ष्म रीतिसे कह गये हैं । संस्कार ज्योतिःमिद्धान्त-शास्त्रके यन्त्राध्यायमें यष्टि और शङ्ख, आदि द्वारा दिशा निरूपणका सूक्ष्म उपाय वर्णित है । जिस दिशामें सूर्योदय होते हैं वही पूर्व और जिस दिशामें सूर्य अस्त होते हैं वही पश्चिम दिगा है, इन प्रकार पूर्व और पश्चिमका ज्ञान हो जानेसे मन्त्राचिह्न * द्वारा उत्तर और दक्षिणका ज्ञान बहुत आसानीसे हो जाता है । फिर समस्त भूमण्डलके उत्तर भागमें मेरु † है । सूर्योदयके समय सूर्यको और मूँह करके खडा होनेसे सामने पूर्व, पीठको और पश्चिम, दाहिनी ओर दक्षिण और बाईं ओर उत्तर दिगा पड़तो है । किन्तु सूक्ष्मरूपमें यदि विचार किया जाय, तो सूर्य प्रतिदिन पूर्व दिशामें उदय नहीं होते और न पश्चिममें अस्त ही होते हैं । हरणव पाँचवें वर्षमें केवल दो दो दिन अर्थात् विषुव मंक्रान्ति दो दिन सूर्य ठोक पूर्वमें उदय हो कर पश्चिममें अस्त होते हैं । जो कुछ ही, दूसरे दूसरे समयमें भी सूर्य द्वारा सूक्ष्मरूपमें दिशाका ज्ञान हो सकता है, प्राचीन सूर्यसिद्धान्तग्रन्थमें इसकी प्रणाली निम्नलिखित प्रकारमें वर्णित है । जैसे जल द्वारा संशोधित किसी समतल शिलातल पर अथवा

* पूर्व और पश्चिममें दो विंदू ठेकर उन्हें केन्द्र मानो और दोनोंकी परस्पर दूरीको व्यासार्ध मान कर दो वृत्त बनाओ । इस प्रकार जो दो परिधि बनती हैं वही मन्त्राचिह्न है । इसे कोई कोई विभिन्न भी कहते हैं, जिन दो विंदुओं पर दोनों परिधि आपसमें कटती हैं उन्हें एक रेखासे मिला दो । यही सयोजक रेखा उत्तर दक्षिणको सूचित करती है ।

† "यत्रोदितोऽर्कः किल तत्र पूर्वा

तत्रापराम्यतः प्रतिष्ठम् ।

तन्मत्स्यतोऽन्वे च ततोऽखिलानः-

मुदकस्थितो मेरुरिति प्रसिद्धाम् ।" (गोलाध्याय

जिसे प्रसार इष्ट होनेपरुक्त जिसे समस्त भूमि पर एकत्रानुसार क समोत्रो व्यापारि मान कर एक समस्त बनायो; इन हस्तके विन्यासमें बाहर क समोत्रो एक कोन दाह दो। वीथि उबकी दाबा पुर्वाङ्क चोर पद राजमें अर्धा अर्धा हस्तको परिचिह्नै छपर पकतो है वहाँ एक एक बिन्दु चिह्नित करो। इन दो बिन्दुयो को पूर्व चोर पश्चिमका बिन्दु मानो पद इन दोनो को पश्चिम पश्चिम ईश्ट मान कर तिमि या मन्त्राचिह्न द्वारा मध्य स्थानमें उत्तर दक्षिणकी रेखा चिह्नित करो। इसी प्रकार उत्तर-दक्षिण रेखा मध्यस्थानमें तिमि चिह्न द्वारा पूर्व पश्चिमकी रेखा भी खींची। इन दो रेखायो द्वारा उत्तर दक्षिण चोर पूर्व-पश्चिमका ज्ञान हो जानेमें मन्त्रा चिह्न द्वारा समो प्रसार बिन्दु चयात् मन्त्राचिह्नो चया निमाचो-का ज्ञान हो जायगा।

पूर्वोक्त कथने निवारित पूर्व-पश्चिम दिशा निरस प्रदेशक बिबा अर्थय समो स्थानोंमें समान नहीं है। पर्यान्तु निरस प्रदेशमें पूर्व पश्चिम निमा मन्त्राचिह्न एक रेखाभिरुगो है चयात् वहाँ एक स्थान एक चोर स्थानके पूर्व पश्चि-कोनेमें दूसरा स्थान पूर्व स्थानके ठीक पश्चिममें पकता है। ऐसा स्थान निरस प्रदेशमें ही होता है वृत्तों स्थान-में नहीं। क्योंकि वहाँ एक स्थानके दूसरा स्थान पूर्व पश्चि-कोनेमें पूर्व स्थान परोक्ष स्थानके बीच पश्चिममें नहीं पकता। इनका कारण यही है कि समो स्थानोंके उत्तरमें मन्त्राचिह्न चिह्नित है। सुतरां जिसे स्थानमें पश्चि- उत्तर दक्षिण रेखा चिह्नित कर पुर्वाङ्क कथने पूर्व-पश्चिम दिशाका निरूपण करनेमें जो रेखा उत्पन्न होगी, वनके पश्य दिमां बिन्दुमें दिशके यथाविधि उत्तर दक्षिणकी रेखा चिह्नित करो। बाट पूर्व-पश्चिम दिशाक निरूपण करनेमें मन्त्रोक्त पूर्व-पश्चिम निरूपण रेखा पदमोक्ष पूर्व पश्चिम रेखाके उत्तर नहीं पकती है। इन प्रकार उत्तरदिमें उत्तरके इन्हींके एक अनुपातमें वृत्तों पर पूर्वकी चार पट्टि समकोटि नगर चरचिह्न है; जो समकोटिके पश्चिममें उत्तरदिमा नहीं पकता। उत्तरदिमेंके दक्षिण लम्बा हो उनको दक्षिण पश्चि-कोने। बिन्दु निरसप्रदेशमें वन प्रकारके

पश्चिमप्रम होनेको छोड़ै मन्त्राचिह्न नहीं है। जो मन्त्र दो निरस प्रदेशमें समान चयात्तर हस्तोंको यदि उन मन्त्र स्थानोंके पूर्व-पश्चिमकी प्रापक रेखा कहे, तो फिर इन प्रकारको मन्त्राचिह्न होनेको मन्त्राचिह्न नहीं है। सुतरां जिसे स्थानको जिसे स्थानके पूर्व वा पश्चिम पश्चिमत स्थानमें ही है सोने स्थान एक चयात्तर हस्तमें पश्चिमत है, ऐसा समझना चाहिये। मार्केटर मापकच प्रसिद्ध मानचित्रमें (Mercator's Projection) इसी प्रकार दिशाचिह्न निरूपण हुआ है। समने याव्यो तर रेखाओंको उत्तर चोर दक्षिण मन्त्र प्रदेशमें मन्त्राचिह्न तो नहीं बिबा है वरन् उन्में पश्चिम मन्त्राचिह्न मापके चयात्तर हस्तोंको याव्योतर रेखाके माप समकोण बनाने हुए निरसप्रदेश समान्तर भावमें चिह्नित बिबा है। यता इनमें पूर्व-पश्चिम दिशाके निरूपणमें कोई मन्त्र नहीं लगे है। वृत्तताग उत्तरको चोर मन्त्राचिह्न उत्तर भावमें चरचिह्न है सुतरां वहि द्वारा मन्त्रको बीच कर पर्यान्तु वृत्ततागका धार मन्त्राचिह्न करके वन यति-को सम स्थान पर मन्त्राचिह्न, तो समके बीच नोने जो रेखा पकती वहाँ उत्तर दिशाको बतलाती है। कई अन्व इसी प्रकार वृत्तताग द्वारा उत्तर दिशाका ज्ञान बिबाया जा सकता है। बिन्दु यदि मन्त्राचिह्न गोर कर देया जाय, तो वृत्तताग मन्त्र प्रदेशके बीच उत्तरमें नहीं है वरन् इसके समीप हो है। जिसे स्थानमें यह बीच कहे जा सकते हैं। यह स्थान वृत्तताग चोर मन्त्राचिह्न मन्त्राचिह्न (चत मिया) नामक तारापुष्पके चरिमा ताराके नि कर वृत्तताग तन्त्र एक रेखा पर चरचिह्न है। यता वन वृत्तताग चोर मन्त्राचिह्न मन्त्राचिह्नका वन तारा केक कहे चयोभावेमें चरचिह्न रहना है। समो वृत्तताग भौगोलिक उत्तर दिशाको निरूपण करता है। पूर्वोक्त चरचिह्न चरचिह्न नमें प्रति दिन दो बार दूने प्रकार चटना हुआ करता है। सुतरां समो समय वृत्तताग द्वारा उत्तर दिशाका ज्ञान ज्ञान जाता है। जैसे एक दिशाका ज्ञान मान्य हो जानेके बीच दिशाचिह्नका ज्ञान प्राप्त हो जा सकता है। वही यदि द्वारा मन्त्राचिह्न चरचिह्न निवारित करके वन समय चरचिह्नो प्रति लम्बा कर मि-ही याव्योतर रेखा निरूपण चाहिये।

दिक् सुन्दरी (सं० स्त्री०) दिग् एव सोन्दर्यं । दिक् रूप सुन्दरो, दिक् कन्या ।

दिक् स्रक्ति (सं० स्त्री०) दिक् कोण, किसी दिशाका कोण ।

दिक् स्वामी (सं० पु०) दिशां स्वामो । दिग्धिपति ।

दिक्षा (हिं० स्त्री०) दीक्षा देखो ।

दिक्षित (हिं० वि०) दीक्षित देखो ।

दिखना (हिं० क्रि०) दिखाई देना, देखनेमें आना ।

दिखलवाई (हिं० स्त्री०) १ दिखलवानेके बदलेमें दिये जानेका धन । २ दिखलाई देखो ।

दिखलवाना (हिं० क्रि०) दूसरेको दिखलानेमें प्रहत्त करना ।

दिखलाई (हिं० स्त्री०) १ दिखलानेको क्रिया । २ दिखलानेका भाव । ३ दिखलानेके बदलेमें दिया गया हुआ धन ।

दिखलाना (हिं० क्रि०) १ दृष्टिगोचर कराना, दिखाना । २ अनुभव कराना, मालूम कराना ।

दिखाई (हिं० स्त्री०) १ दिखानेका काम । २ दिखानेका भाव । ३ दिखानेके बदलेमें दिये जानेका धन । ४ दिखनेका काम । ५ दिखनेका भाव । ६ दिखनेके बदलेमें दिये जानेका धन ।

दिखाना (हिं० क्रि०) दिखलाना ।

दिखाव (हिं० पु०) १ दिखनेका भाव या क्रिया । २ दृश्य ।

दिखावट (हिं० स्त्री०) १ दिखलानेका भाव या ढंग । २ ऊपरो तड़क भड़क, वनावट ।

दिखावटो (हिं० वि०) जो सिर्फ दिखने लायक हो, पर काममें न आ सके, दिखौथा ।

दिखावा (हिं० पु०) आडम्बर, ऊपरो तड़क भड़क ।

दिखौथा (हिं० वि०) वनावटो ।

दिखौथा (हिं० वि०) दिखौथा ।

दिशंग (सं० पु०) दिक्षु अंशः । दिक् स्थ अंशमेद, चित्तिजहत्तका ३६०वां अंश । आकाशमें ग्रहों और नक्षत्रों आदिको स्थिति मालूम करनेके लिये चित्तिजहत्त ३६० अंशोंमें विभक्त किया जाता है और जिस ग्रह या नक्षत्रका दिगंश जानना होता है, उस परसे अष्टस्वदिक और खस्यस्वदिकको अर्थ करता हुआ एक वृत्त

खींचा जाता है । यही वृत्त पूर्व विन्दुमें चित्तिजहत्तकी दक्षिण अथवा उत्तर जितने अंश पर काटता है उतनेको उस ग्रह या नक्षत्रका दिगंश कहते हैं ।

दिगंशयन्त्रं (सिं० पु०) किसी ग्रह या नक्षत्रका दिगंश मालूम करनेका यन्त्र ।

दिगन्त (सं० पु०) दिशां भ्रन्तः ६-तत् । १ सभी दिशाओंका भ्रन्त भाग, दिशाओंका क्षीर । २ शास्त्रीय ज्ञान क्रमयुक्त जगधिष्ठित मध्यदेशके अतिरिक्त एक देश । ३ चित्तिज, आकाशका क्षीर । ४ चारों दिशाएं । ५ दशों दिशाएं ।

दिगन्त (हिं० पु०) अशुका कोना ।

दिगन्तर (सं० स्त्री०) दिशा भ्रन्तरं भ्रवकाशः । १ दो दिशाओंके बीचका स्थान । अन्या दिक् दिगन्तरं । २ अन्यदिक्, विपरीत दिशा ।

दिग्ध्वर (सं० पु०) दिगिव भ्रम्बरं वस्त्रं यस्य । उलङ्घ्यत्वात् तथात्वं । १ शिव, महादेव । २ क्षपणक, नंगा रहनेवाला जैन यति । जैन देहे । ३ एक प्रसिद्ध वैद्यकरण । गणरत्न-महोदयमें इनका प्रहत्त नाम देवन्द्यो और इसका नामान्तर दिग्ध्वर और दिग्वाषा लिखा है । ४ दिशाओंका वस्त्र, तम, अंधेरा । (त्रि०) ५ जिसका वस्त्र केवल दिशाएं हों, उलङ्घ, नंगा ।

दिग्ध्वरता (सं० स्त्री०) नग्नता, नंगापन ।

दिग्ध्वरानुचर—एक प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थकार । इन्होंने बोधप्रक्रिया नामक वेदान्त, दत्तात्रेय माहात्म्य और ज्वालोपनिषदर्थप्रकाश नामक ज्वालोपनिषदकी टीका रचना की है ।

दिग्ध्वरो (सं० स्त्री०) दिग्ध्वर-हीन । १ दुर्गा, पार्वती । (त्रि०) २ नग्ना, नंगी ।

दिग्गादि (सं० पु०) पाणिनिस्तोत्र गगमेद । दिक्, वग, पूग, गण, पक्ष, धात्य, मित्र, मेधा, अन्तर, पथिन्, रहस, श्लोक, उखा, साचिन्, देश, आदि, अन्त, मुख, जघन, मेघ, यूथ, न्याय, वंश, वेश, काल और आकाश ये ही दिग्गादि गण हैं ।

दिग्गिभ (सं० पु०) दिशां इभाः । दिग्, हस्तो, दिग्गिभ ।

दिग्गीश्वर (सं० पु०) दिशां ईश्वरा ६-तत् । १ इन्द्रादि दिक्पाल । २ सूर्य, चन्द्रमा आदि ग्रह ।

दिगुपाधि (सं० पु०) दिशां उपाधिः । सभी दिशाओंके

प्राथ्यादि व्यवहारको उपाधि । समो दिग्घट निम्न है तथा एक दौड़िक व्यवहारके लिये पशुच दिग्घट पूर्व पौर पशुच पश्चिम है । इस तरह दिग्घटो को उपाधि कल्पित हुई है । उदाहरण दिग्घटो को कीर्ति उपाधि नहीं है । सिद्धा दोषो ।

दिग्घट (स० पु०) दिशि कितो मत्र । १ पाठो दिग्घटो मे पश्चिम दिशात पादि पाठ शायो । २े पुष्पीको उपाय रक्षते पौर वन दिग्घटो को रक्षाके लिये व्यापित है । इन पाठ वाकियोंके नाम ये हैं—पूर्व दिशात पूर्व दक्षिणके कोनेमें पुष्परीच, दक्षिणमें बामन दक्षिण पश्चिममें हुसुद, पश्चिममें पशुच पश्चिम-उत्तर कोनेमें पुष्पदन्त, उत्तरमें साबंभोम पौर उत्तर-पूर्वके कोनेमें सुमतीक । (सि०) २ बहुत बड़ा, बहुत भारी ।

दिग्घट (स० पु०) दिग्घट ।

दिशि—राजपूतानेके जयपुर राज्यके पन्नागत एक नगर । यह जयपुरके प्रायः २१ कोस दक्षिणमें पश्चिम है । यहाँ मठोको शैवारके चिरा हुआ एक किला है । प्रतिवर्ष नवरात्रकोका मेला लगता है जिसमें प्रायः १३ हजार मनुष्य एकत्रित होते हैं ।

दिग्घट (स० पु०) दिग्घट तत्कालोक्तपुष्पां जया । १ जित्तु राजाके दिक् कित राजाघो को जेतना । २ दिग्घट शरा नामा ज्ञानके मनुष्यो को जेतना । पूर्व समयमें जिस तरह राजा मन्त्रो राज्याभिविद्ध हो कर दिग्घटोको जेतने जाते थे, वही तरह दिग्घटो भी पाठ समाप्त कर सब ज्ञानोमें पण्डितो का जेतनेके लिये जाते थे ।

दिग्घट (स० स्त्री०) दिग्घट ज्ञान । प्राथ्यादि ज्ञानधातुन प्रकारके ज्ञानके समी दिग्घटो का ज्ञान हो ।

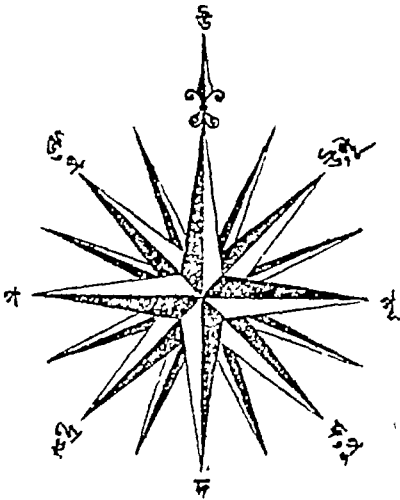
दिग्घट (स० स्त्री०) दिग्घट ज्ञान । दिग्घट दिग्घटो कोर ।

दिग्घट (स० स्त्री०) दिग्घट इन्द्रोत्तम इन्द्र करके लुट् । दिग्घट निष्पन्न करकेका यन्त्रविशेष, एक प्रकारका यन्त्र जिसके दिग्घटो ज्ञान होता है । (Merriner's compass) इसको सहायताके का अन्तर्भागमें, का पशुच समुद्रमें का वनपशुच पौर यन्त्रकार-

मयो राजाके समो समय प्राप्तोके दिग्घटो निष्पन्न किया जा सकता है । हमोने धर्मबहादुरो नाविकोके लिये यह यन्त्रविशेष उपहारो है । यहाँ तक कि पशुच पुष्पदन्त समुद्र जो कर सुदोर्घ यात्रा करके समय इसका साहाय्य पपरिहाय है । पहले नाविक होम सुघ पौर ज्ञानात्ता पादि नवरात्रो को देश कर अभीष्ट दिग्घटो पौर नाव व्यवहार करताते से किन्तु प्राकृतिक व्यवहारके शोभाता का, सूर्य चन्द्र तारे पादि कुछ भी दिग्घटो नहीं पकते थे तब किन्तु दिग्घटो पौर व्यवहार का रक्षा है, इसका फल नहीं लगता था, जिसके लिये बहुत कठिनाइयाँ भिन्नो पकती थीं । इस कारण से उपलब्ध दिग्घटो को रहते से, किन्तुका फल नहीं समने पर लिये शोध समुद्रमें व्यवहार से जानेका साहाय्य नहीं होता था । १२वीं शताब्दीके बाद भा सुरोपमें दिग्घटो न यन्त्रका कीर्ति लब्ध हो नहीं है । किन्तु लम्बे मो बहुत पहले पश्चिम प्राचोलकासमें चीन तथा भयान्या प्रायद्वीपके कोन को सु बन्धुकोका ज्ञान जाते थे, इसके पश्चात् प्रमात्र मिलते हैं । चीनका कहना है, कि २६३३ ई०पू० के पहले चम्पाट्, हुयान्तिरके प्रायद्वीपुत्तरको दक्षिणदिक् निर्देशक यन्त्र प्रयुक्त हुआ, यह सब दिग्घटो न यन्त्र का । ऐसा अनुमान किया जाता है, कि वे लोग पहले पश्चिम व्यवहारमें ही इसका व्यवहार करते थे; इ० ई०के समयमें इसका व्यवहार समुद्रमें जाते सुना गया । किन्तु किन्तुका मत है, कि चीन समयके शोधके समय माकं-योको लम्बे पहले दिग्घटो न यन्त्रको यूरोपमें लाये । फिर बहुतसे कहते हैं, कि निष्पन्न राज्यके पन्नागत पश्चिम-दिशाको रक्षाको धार गिबत्राके १३६२ ई०में समुद्र वाकोपयोगी दिग्घटो न यन्त्रका प्राविष्कार किया । किन्तु इसके पहले ही समुद्रमें दिग्घटो न यन्त्रके व्यवहारका लब्ध हो पाया जाता है; प्रायद्वीप मित्राके इसीका लक्षण साधन मात्र किया ज्ञाना । जो कुछ ही इसका प्राविष्कार-ज्ञान पश्चिम है । दिग्घटो न यन्त्रका प्राविष्कार ही जानेके व्यवसाय प्राविष्कारको विशेष बुद्धि का मर्दे है तथा नाविकोको मो समुद्रके शोध व्यवहार से ज्ञानका जो मय बना रहता था वह दूर हो गया है । पश्चिम नाविकलक्ष प्राप्तोके दुष्पर सागरमें का

पथानुसरण करके अभिलषित स्थानमें पहुँच सकते हैं।

दिग्दर्शन वा कम्पास यन्त्र लोहेकी मोटी सुईके ऊपर बना हुआ है। इसकी एक ओर धातुमय आवरणसे और दूसरी ओर काँचसे आवृत रहती है। धातुमय आवरणके भोतर दिक्-निर्देशक रेखा द्वारा विभक्त कागजके ऊपर सुँवकसूची स्थापित होती है। कागजके ऊपर उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम ये चार दिशाएँ तथा ईशान, अग्नि, नैऋत, वायु आदि चार कोण निर्दिष्ट रहते हैं। इस प्रकार कुल १६ वा ३२ दिशाएँ कम्पासमें व्यवहृत होती हैं। उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशाको पहले 'उ', 'पू', 'द' और 'प' सहित द्वारा चिह्नित करके उनके मध्यवर्ती जितने कोण होते हैं वे स चित किये जाते हैं। जैसे—उत्तरपूर्व कोण जानने में 'उपू', दक्षिण पश्चिम कोणमें 'दप' इत्यादि। उत्तर दिशामें जो सुँई रहती है उसमें हमेशा फूल वा तागाचिह्न अङ्कित रहता है। इससे उत्तर दिशाका इनाम सहजमें हो जाता है।



दिग्दर्शन-यन्त्र

जरोत्र आदि कार्योंमें दिक्-निर्देशक बदले उत्तरसे ले कर समस्त वृत्तकी परिधि ३६० समान अंशोंमें विभक्त

रहती है। उत्तरी रेखा पर इसका शून्य और यहाँसे क्रमागत पश्चिमकी ओर एकाटि क्रममें ३६० तक अङ्क लिखे रहते हैं। ठोक पश्चिममें ८०, दक्षिणमें १८०, पूर्वमें २७० इत्यादि। सुविधाके लिये किमी किमी कम्पासमें सम गोलाकार कागजका फलक सुँवककी सुँईके साथ संलग्न रहता है, सुतरां इसका कागज सुँईके साथ घूम कर चिह्नित स्थानके सर्वदा उत्तर दिशामें ही पड़ता है।

अब सुँवककी सुँईका एक प्रान्त हमेशा उत्तरको ओर रहता है। सुँवक देको। सुतरां कागजके उत्तरदिग्-ज्ञापक चिह्नकी सुँई ओर प्रान्तके नोचे लानेमें मभो दिशाएँ निर्दिष्ट हईं। किन्तु सुँवकका काँटा मर्वत भौगोलिक उत्तर अर्थात् याम्योत्तर रेखाके साथ ठोक नहीं रहता। यहाँ तक कि, एक छोटे स्थानमें विभिन्न समयमें इसका उत्तरो प्रान्त भौगोलिक वा प्रकृत उत्तर दिशाके पूर्व या पश्चिम दिशामें झुक जाता है। इसे सुँवककी अपसृति (Declination of the needle) कहते हैं। पूर्वको ओर काँटा झुकनेसे प्राच्यापसृति और पश्चिमको ओर झुकनेसे उभे प्रतोच्यापसृति कह सकते हैं। पृथ्वीके प्रायः सभी प्रधान स्थानोंमें अपसृति प्रायः सूत्ररूपमें अनेक प्रकारकी परीक्षा द्वारा निश्चित हुई है। कम्पास द्वारा ठोक दिशाका निरूपण करनेमें इस विषयताकी वाद देना होता है। यथार्थमें इसी प्रकार दिग्दर्शन द्वारा दिशाका निरूपण किया जाता है। सामान्य पर्यवेक्षणदि द्वारा यह अपसृति सहजमें निकाली जा सकती है। पृथ्वीके प्रायः सभी स्थानोंके चोम्बकीय अपसृति निर्देशक मानचित्र प्रस्तुत हुए हैं। प्रत्येक नाविक अपने अपने जहाज पर उस मानचित्रकी रख कर दिग्दर्शनकी सहायतासे दिशाका निरूपण करते हैं।

इसके सिवा प्रत्येक जहाज पर जितना लोहा देखनेमें आता है, उसमें थोड़ा बहुत सुँवकत्व आ ही जाता है। जहाज परका यह लोहा कम्पास यन्त्रके पास सटा कर रखनेसे पार्थिव सुँवक-शक्ति अच्छो तरह अपना काम नहीं कर सकती। सुतरां कम्पासके काँटकी उत्तरी दिशामें बहुत फर्क पड़ जाता है। इस फर्ककी दूर करनेके लिये नाविक लोग अनेक प्रकारके उपाय अवलम्बन करते हैं। जहाजके आगे कम्पासके समोप लोहेकी बड़

रत्न दिनेसे ब्रह्मज परसे पन्थाव्य भीरोको पुष्पव्यक्तिने
 पादपत्र उत्पन्न होता है बह बहुत कम जाता है।
 यमी कमी महाभक्त भगसे माग पर कल्यास न रत्न कर
 कथे मन्त्र पर रत्नसे ब्रह्मजको पुष्पव्यक्ति उत्तमो
 कार्यकारी नहीं होती। सुतरां कल्यासका कटा प्रायः
 पत्तारको पौर रहता है। किन्तु रत्नसे उपाय करने पर
 भी कमी कमी सुईके इट जानेसे दियाको भूल हो हो
 जाती है। प्रयाग-महाभागमें सुदोष जनयात्राके समय
 इस प्रकारको नामाव्य भूलसे भारी पण्डित हो सकता है।
 ऐसे समयमें नाविक लोग पाश्चात्यके किसी तारकी पौर
 नश्य करने ब्रह्मजके एक पहिलेको हुमासे है पौर कल्यास
 की सुईकी परीक्षा करते हैं। ऐसा करनेसे ब्रह्मज परकी
 पुष्पव्यक्तिसे उत्पन्न सुईको य क्षतिका परिमाण निश्चय
 पड़ता है। इधे प्रकार नाविक लोग कल्यासको निर्दिष्ट
 दिग्में स शोचन करके पश्चिमपित पौर जानेको समय
 होती है। कहना पड़ना है कि कल्यास द्वारा विग्रह
 रूपसे दियाका ज्ञान नहीं होनेसे उपहारको बात तो दूर
 रहे, विशेष पण्डित होनेको सम्भावना रहती है।

स्वस्वामयमी श्री श्रीव पादि कार्यमें कल्यासका व्यव
 हार बहुत उपयोगी है। भूगर्भ तथा सुरदाटिको खोदने
 में इसका व्यवहार अनुभवयात्राके व्यवहारने जिनो संयम
 कम नहीं है। दिग्दर्शन मिथ मित्र कार्यमें व्यवहृत
 होता है, इस कारण इसको पाण्डित पौर मज्जमवाची
 मिथ मिथ तरबको होती है। एक कामसे जिसे जो
 कल्यास बनाया जात है, वह दूसरे काममें नहीं जा
 सकता। २ पश्चिमता, आनकारो। ३ बह जो कुछ
 उदाहरण कल्प दिग्वाया जाय, नमूना। ४ नमूना
 दिग्वाके नाम।

दिग्दाह (स० पु०) दिग्दाहः । उत्पातविशेष एक
 है जो बटता। इसमें सुईका होने पर मो दियाए नाम
 असती सुई को माहूम पड़ती है।

दिग्दाह यदि पीतवर्ण होख पड़े तो राजाका भय पौर
 यदि पश्चिमवर्ष रीख पड़े, तो साध दिया नष्ट हो जानेका
 कर रहता है। इस समय यदि दक्षिणी वायु प्रवेक बह
 हो जाये, तो सारी पसल नष्ट हो जानेको सम्भावना
 रहती है। दिग्दाहमें बहुत कमकीसी पौर स्वयंसे जाया

प्रकाशित होती है, इस प्रकारका दाह राजाका भय पौर
 मध्यप्रयोग सूचना करता है। पूर्वीको पौर दिग्दाह होने
 में राजा पौर सन्निधीका, पश्चिमकोचर्म होनेमें मित्रियों
 पौर सुखारोका, दक्षिणमें होनेसे उपयुक्तों, श्रेष्ठां, पूर्वी,
 पुनर्भूयों पौर प्रमाटीका, पश्चिममें होनेसे शूद्रों पौर क्षत्रि
 कोबिद्योका, वायुकोपमें होनेसे सुगन्धके माद्य नाय सीरों-
 का, उत्तरको पौर होनेसे विर्मोका, पौर ईशानकोचर्म
 दिग्दाह होनेसे पाण्डित्यों पौर पश्चिमोंका पण्डित होता
 है। यदि पाश्चात्य परिवहार रहे पौर तारागण निर्मल
 मानूम पड़ती रहें तथा वायु प्रदक्षिण भावसे बहती हो
 तो सर्व बर्ष दिग्दाहमें प्रजा तथा राजा दोनोंका मज्जम
 होता है। (सुदर्शन० ३१ न०)

दिग्बेवता (स० जो०) दिग्वा तन्मर्त्यादानं ईवता माको
 भूतेव । नमो दिग्वाकोके साचीभूल देवता ।

दिग् (स० पु०) दिग्गते विप्यते इम विपवादिग्य दिग्-
 दा । २ विपादा बाध, लहर मित्रा हुआ बाध । इमका
 पर्याय—विम्रक है । २ स्त्रीक, प्रिम । ३ पश्चि । ४ प्रथम
 निम्न । ५ तीक्ष्ण, सैल । (सि०) ६ विपादा, लहरमें
 गुम्हा हुआ । ७ क्षिप्र ।

दिग् (डि० जि०) दोष, सन्धा, बड़ा ।

दिग्भार—बहैमान त्रिषिका एक धाम । यह पञ्च। २३
 २२ स० पौर देगा २० इहे पूर्वमें पण्डित है। पश्चि
 यहाँ बहुतसे मनुष्योंका नाम बा । यहाँसे पीतम पौर
 शक्तिका बरतन बहिया होता है ।

दिग्पट (डि० पु०) १ दिग्वाक्यो पञ्च । २ मत्र ओ
 दिग्वाक्यो मत्र धारण करता हो, दिग्भार, मन्त्र ।

दिग्पति (डि० पु०) दिग् वाक देवो ।

दिग्वाण (डि० पु०) दिग् वाक देवो ।

दिग्बह (स० जो०) दिग् निमित्त पदाका नाम ।
 कल्यादिमें क्षित पदोंका नाम । मज्जम पौर रविसे मन्त्रसे
 दमर्भे स्वानमें रहने पर दक्षिणदिग्बहको, मनि मन्त्रसे
 मातर्भे स्वानमें रहने पर पश्चिम दिग्बहको पौर दक्ष तथा
 पश्चिमा मन्त्रसे पश्चि स्वानमें रहने पर उत्तर दिग्बहको
 नामी जाती है । इसकी महापतामें दिग् निर्णय पौर
 दूसरी कई प्रकारको गणनाए की जाते है ।

दिग्बन्धि (स० पु०) दिग् बह पक्षरूप इति । १ दिग्

निमित्त बन्धुक्त ग्रह, वह ग्रह जो किमी टिकाके लिये
होती हो। २ तादृश राशिभेद, वह राशि जिस पर
यि मो ग्रहका बल हो।

दिग्भाग (सं० पु०) दिगा भागः। दिग्विभाग।

दिग्भ्रम (सं० पु०) दिशाभ्रोंका भ्रम होना, दिगा भूल
जाना।

दिग्मण्डल (सं० पु०) सम्पूर्ण दिशाएं, दिशाभ्रोंका
समूह।

दिग्म—ब्रारके वृत्त जिलेका एक नगर। यह अक्षां
२०° ६' ०" और देशां ७७° ४५' ०" में अवस्थित है।
सूनी कपड़ेके व्यवसायके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है।

दिग्गज (हि० पु०) दिग्गज देखो।

दिग्गत (सं० लो०) दिग्भेदे वदनं यस्य। समो
दिशाभ्रोंमें स्थित राशिभेद। पूर्वमें मेघराशि, दक्षिणमें
हृषराशि, उत्तरमें कर्कटराशि इसी प्रकार और सभीकी
समझना चाहिये।

दिग्गमन (हि० पु०) दिग्गम देखो।

दिग्गम (हि० पु०) दिक् रूपं वस्त्रं यस्य। १ महादेव।
२ जैनभेद, जपणक। (त्रि०) ३ लग्न, नङ्गा।

दिग्गान् (सं० पु०) चोकोटार, पहरेदार।

दिग्गारण (सं० पु०) टिचु स्थितो वारणः। ऐरावतादि
दिग्गज।

दिग्वास (सं० पु०) दिक् रूपं वासः यस्य। १ महादेव,
शिव। २ जैनभेद, नङ्गा रहनेवाला, जैन यति। (त्रि०)
३ उलङ्गा, नङ्गा।

दिग्विजय (सं० पु०) दिशां तत्स्यन्तृपलोकानां विजयः।
युद्ध द्वारा चतुर्दिक् जयकरण, अपने वीरता दिखलाने
और महत्त्व स्थापित करनेके लिए राजाभ्रोंका देश-
देशान्तरोमें अपने सेनाके साथ जा कर युद्ध करना और
विजय प्राप्त करना। जैसे पाण्डव-दिग्विजय। २ विद्या
द्वारा चतुर्दिक् जयकरण, अपने गुण, विद्या वा बुद्धि
आदिके द्वारा देश देशान्तरोमें अपने प्रधानता अथवा
महत्त्व स्थापित करना। जैसे, अक्षर दिग्विजय।

दिग्विजयगञ्ज—रायवरेली जिलेके अन्तर्गत एक तहसील
वा उपविभाग। यह अक्षां २६° १७' २०" से २६° ३६'
०" और देशां ८१° १' २०" से ८१° ३७' ०" में अवस्थित

है। इसके मध्यवर्ती दिग्विजयगञ्ज नामक ग्राममें
तहसीलदार और पुलिस-इन्स्पेक्टर रहते हैं। इसी
ग्रामके नामसे ही तहसीलका नामकरण हुआ है।

दिग्विजयो (सं० त्रि०) दिग्विजय-इन्। विद्या वा
वाहुबल द्वारा दिग्विजय करनेवाला, जिसने दिग्विजय
क्रिया ही, जैसे दिग्विजयो राजा, अर्थात् जिस राजाने
भिन्न भिन्न देशोंको युद्धमें जीत कर उन पर अपना
आधिपत्य जमा लिया है। जैसे, दिग्विजयो पण्डित
अर्थात् जिस पण्डितने गुण, विद्या वा बुद्धि आदिके द्वारा
देशान्तरोके पण्डितोंको परास्त कर वहाँ अपनी प्रधानता
अथवा महत्त्व स्थापित किया है।

दिग्विदिक (सं० स्त्री०) सकलदिक्, सब दिशाएं।

दिग्विदिकस्य (सं० त्रि०) दिग् विदिक, स्वा-क। जो
भिन्न भिन्न दिशाभ्रोंमें स्थित हो।

दिग्दिग्भाग (सं० पु०) दिशां विभागः। दिग्भाग, दिगा,
और, तरफ।

दिग्विलोकन (सं० लो०) दिशां विलोकनं। शून्यदृष्टि।

दिग्ध्यापी (सं० त्रि०) जो सब दिशाभ्रोंमें व्याप्त हो।

दिग्ध्रत (सं० पु०) जैनियाका एक व्रत। इसमें वे कुछ
ग्रहोंके समयके लिये प्रतिज्ञा करते हैं कि अमुक दिशामें
इतनी दूरसे अधिक न जायेंगे।

दिग्ध्रवा (सं० पु०) पूर्वदिशा।

दिग्ध्रसुर (सं० पु०) दिग्गज।

दिग्ध्रव (हि० पु०) एक प्रकारका पत्तो। इसको
छातो सफेद, डैने काले और सुनहले होते हैं।

दिह (सं० पु०) स्फोटनकाले दिह इति क्त्वा कायते
शब्दायते क-क। उत्कृण्डिम्ब, जू नामका एक छोटा
कोड़ा जो सिरके वालोंमें पहता है।

दिङ्गनचत्र (सं० लो०) दिशि दिग्भेदेन स्थितं नचत्रं।
दिशाभ्रोंमें अवस्थित नचत्र। कृत्तिका आदि सात नचत्र
पूर्वादिकी और उदय होते हैं। जिसका नचत्र जिस
दिशामें रहता है उसी नचत्रमें उसका घर शुभ
होता है।

दिङ्नाग (सं० पु०) दिशि स्थितो नागः। १ दिग्गज।
२ एक विख्यात बौद्ध ग्रन्थकार। इनका वनाया हुआ
प्रमाणसमुच्चय ग्रन्थ पढ़नेसे बौद्धमतके अनेक गूढ़ विषय

जाने का पक्षी है। मन्दिनामने मैचदूतको ठोकारि
निम्ना है, कि दिक् भाग खानिनासडे एव चौर प्रतिहन्वी
ये। बाचप्रति मिचने इनका मत उद्घृत किवा है।
बहमदेवको सुभावितामनीमें दिक्भागको एव खनिता
उद्घृत हुई है, किन्तु यह खनिता महाभारतमें पाई
जाती है।

दिक्कारि (स० श्री०) १ बिम्बा, रन्तो । २ कुम्भटा,
प्यमिपारिषो ।

दिक्कण्ठ (स० सि०) दिहा मण्डल । दिक्कण
गिमायोका मन्त्र ।

दिक्कामत (स० पु०) दिहि विन्नो मातङ्ग । दिक्क ।
दिक्कामत (स० श्री०) दिहि मामच । उदाहरण
भात्र, शैवम मन्त्रा ।

दिक्कमुद् (स० सि०) दिगि मूढ । १ दिग्भान्तिमुद्,
विभि दिग्भम कृपा हो । २ मूख, शिवकृक ।

दिक्कमोच (स० पु०) दिहि मोच । दिक्क भव दिहा मूख
जाना ।

दिक्क (स० पु०) तिष्ठि एयोदराहिलाय् साह ।
बाधमेद, एव तरदका भात्रा ।

दिक्कित (स० पु०) दिक्कित एयोदराहिलाय् साह ।
बाधमेद, प्राचीन भासका एक भात्रा ।

दिक्को (स० पु०) लक्ष्मी ममासापो का एक शब्द । इमने
पक्षमें दो शब्द होते हैं चौर त्रिचमें ८ तथा १० पर
विनाम होता है ।

दिक्कोर (स० पु०) समुद्रदिक्, समुद्रदिक् ।

दिक् (स० सि०) दोयती एम दो अक्षयणने हीन् इति
शब्द (एकीयगीति । वा अ०३३०) दिक्, चौरा कृपा ।

दिक् (स० श्री०) ऐश्वर्यमाता, अश्वर्य खचित्को एक खो ।
इमने गर्भने जो मय चापस कृप, से ही ऐश्वर्य कहलाये ।

दिक्पुराणमें लिखा है कि जब इनके यह पुत्र इन्द्र चौर
देवतायोसे मारे गये तब उन्होने अपने पति अश्वर्यसे
कह्य, कि 'मैं ए० ए० पुत्र चाहती हूँ जो रन्त्रका
मो दमन करे ।' अश्वर्यने लक्ष्मी पत्निमाया पूरी चौर
भाव ही भाव यह मो कह दिया कि, 'तुम्हें जो कर्ष तब
यमं धारण करना पड़ेगा । इतने समय तब बहुत जो
पवित्रता पूर्वक रहना पड़ेगा, अर्थात् लक्ष्मी अथवाअर्य

करना न होया । दिति भी बहुत भावधानीसे यमं
पालन करने लगीं । अरु इन्द्र अपने मावी विपद्को

पामडा कर दिति का अत मन्त्र करनेकी ताठमें लगी
रही । एक दिन रातके समय दिति बिना जाय पैर थोप

येनीको चलो गई । रग अथवरने इन्द्रने पक्षने लक्ष्मी
काहूके सात टुकड़े कर लाये । गर्भस्थ गिर्ये रोगिणी

इन्द्र भी चकरा उठे । लक्ष्मी समय लक्ष्मीने मातो टूकडो-
भिने कर एकके फिर सात टुकड़े किये । येको लक्ष्मी

अण्ड मन्त्र कहलाये है । मन्त्र दोको । दो-भावे किन् ।
२ अण्डन, तोड़ने या फोड़नेका काम । (पु०) ३ राव

विरीय, एक रात्राका भाग । (सि०) ३ गता देविनाका ।
दितिजुल (स० श्री०) ऐश्वर्य ग ।

दितिज (स० पु०) दिविर्भायती अन्-इ । ऐश्वर्य दितिजे
मुद्र ।

दितिजय (स० पु०) दितिजय । ऐश्वर्य अचर ।
दितिजुत (स० पु०) दिविर्-सुतः । ऐश्वर्य, राचस ।

दिय्य (स० पु०) दितो मया यत् । १ अचर, राचस ।
(सि०) २ छिन्नाई, जो छिदने या काटने योग्य हो ।

दिल्लबाह (स० पु०) दिक्क छिन्नाई कायादिक् दिति
यक्ष-दिक् । दिक्क यक्षय पर, दो कर्षका पर ।

दिक्का (सं० श्री०) दाहु-मिच्छा द सन् मावे य । दानेच्छा,
दान करनेकी इच्छा ।

दिक्क (सं० सि०) दाहुमिच्छा द सन् ततो क । दानेच्छ
को दान करना चाहता हो ।

दिक्का (स० सि०) दान करने योग्य, जो दान करता
का सुख ।

दिक्कार (सि० पु०) दीवार दोको ।
दिक्कियु (स० सि०) दक्ष मन् ततो क । व्यनकी
इच्छा ।

दिक्कियु (स० सि०) कोड़ देनेकी इच्छा ।

दिहा—जोहर दुर्गाधिपति सिद्धराजको कह्या । काश्मीरके
राजा ऐमगुर्षके मरने पर दिहा अमिमन्त्र, नामक गिर्य
मुद्रको धि हासन पर बिना चाप अन्धियकी महावताये
राज-कार्य चलाये लगी । इन्हींके सारा राजकार्य
अपने हाथमें ले लिया लक्ष्मी, किन्तु राक्षसासुरोप-
योगी बुद्धिका इमने बिलकुल पभाव था । ये मन्त्रो

फाल्गुन आदि कई एक प्रधान व्यक्तियों के साथ बहुत बुरी तरहसे पेश आईं। इस पर वे सबके सब दिहाके विरुद्ध पट्टयन्त्र रचने लगे। अन्तमें इन्होंने ब्राह्मणोंको रिश्वत दे कर बहुत चतुरतासे विवाद शान्त किया। कुछ दिन बाद पुनः विद्रोह उपस्थित हो गया। इस बार इन्होंने विवादको न निवटा कर सर्वेस्य दुर्गमें आश्रय ले लड़ाई ठान दी और विजय भी अन्तमें प्राप्त कर ली। कितने विद्रोही मारे गये और कितने कैद कर लिये गए। कैदी विद्रोही भी कुछ समय बाद यमराजके अतिथि बनाये गये। अभिमन्यु १३ वर्ष १० मास राज्य कर यच्चारोगसे पञ्चत्वकी प्राप्त हुए। पीछे दिहाने अपने पौत्र (अभिमन्युके पुत्र) नन्दीगुप्तकी राजा बनाया। इन्होंने अपने पुत्रके स्मरणार्थ अभिमन्युपुर नामक एक नगर बनाया और वहां अभिमन्यु स्वामी नामक एक देवमूर्त्तिकी प्रतिष्ठा भी की। इतना ही नहीं, ये अपने नाम पर भी दिहापुर और दिहा स्वामी नामक नगर और देवमूर्त्तिकी स्थापना कर गई हैं। इस प्रकार अच्छे अच्छे कामोंके करनेसे प्रजा इन्हें कुछ कुछ चाहने लगीं। किन्तु एक वर्षके अन्दर ही इनका पुत्रशोक जाता रहा और इन्होंने अपने पौत्रको मरवा डाला। पीछे द्वितीय पौत्र त्रिभुवनगुप्त राजा हुए, किन्तु दिहाने उन्हें भी यमपुरको भेज दिया। बाद कनिष्ठ पौत्र भोमगुप्तने राजसिंहासन सुशोभित किया। दिहाके समयमें पापको जड़ मजबूत हो गई थी। व्यभिचार तो मानो इसके अङ्गका भूषण बन गया था। नीचसे नीच जातिको भी अपना उपपति बना लेतो थे। धीरे धीरे लोगोंको अन्नदा इसकी और बढ़ने लगी। भोमगुप्तकी भी वे सब बातें अपनी भाँसे मालूम हुईं। वे कष्टर धार्मिक थे, पितामहका ऐसा व्यवहार देख अत्यन्त मर्माहत हो गये और उनका चरित्र सुधारनेका उपाय करने लगे। राजकार्यकी सुगृहला भी स्थापन करनेकी इन्होंने खूब कोशिश की। पापिष्ठा दिहाको यह सब ज्ञान मालूम होने पर इसने खुल्लमखुल्ला भोमकी हत्या कर डाली और स्वयं राजसिंहासन अधिकार कर बैठे। इसके प्रधान उपपति तुङ्ग प्रधान मन्त्री हुआ। यह मनुष्य पहले खगजातीय महिषपालक था,

पीछे रानीकी कृपासे पाँच भाइयोंके साथ राजकार्यमें नियुक्त हुआ। अन्याय मन्त्रियोंकी वाध हो कर तुङ्गको अधीनता करना पड़ी, किन्तु उनके छद्ममें राज्यनाशकी कामना जाग्रत ही गई। तुङ्गकी जड़ इसको खबर लगी, तब उसने बहुतोंका प्राणवध किया। पीछे दिहाने अपने भतेजी संग्रामराजको सिंहासन पर अभिषिक्त किया। इसके कुछ समय बाद रानीकी मृत्यु हुई। संग्रामराज राजकार्य चलाते रहे। (राजतरङ्गिणी)

दिहापुर—काश्मीरका एक नगर। दिहाने अपना नाम चिरस्मरणोद्य रखनेके लिये अपने नाम पर यह नगर बसाया।

दिहास्वामी (सं० पु०) दिहामे प्रतिष्ठित देवमूर्त्तिकी। दिहाने दिहापुरमें दिहास्वामी नामको एक देवमूर्त्तिकी स्थापन की।

दिट्टजमान (सं० त्रि०) दृग-मन् दिट्टज-मानच्। जो देखनेकी इच्छा करता हो।

दिट्टचा (सं० त्रि०) द्रष्टुमिच्छा दृग-सन् भावे अ। दर्शनेच्छा, देखनेका अभिप्राय।

दिट्टक्षु (सं० त्रि०) द्रष्टुमिच्छुः दृग-सन्-ततो उ। दर्शन करनेका इच्छुक, जो देखना चाहता हो।

दिट्टक्षेप्य (सं० त्रि०) द्रष्टुमिच्छुः दृग-सन् केच। दर्शन करनेका अभिलषणोद्य, जिसकी अभिलाषा देखनेकी हो।

दिट्टक्षेय (सं० त्रि०) दिट्टक्षा अर्हति, दिट्टक्षा वाहु० ठक्। दर्शनोद्य, देखनेयोग्य हो।

दियु (सं० पु०) दियुत् पृषोदादित्वात् साधुः। १ वध। २ वाण।

दियुत (सं० पु०) द्युत क्षिप निपा० साधुः। १ दोमिगील, वध जिसमें खूब चमक दमक हो।

दिधक्षमाण (सं० त्रि०) दिधक्ष शानच्। दाहनेच्छु, जिसने दाह करनेकी इच्छा की हो।

दिधक्षा (सं० स्त्री०) दग्धमिच्छा। दह सन् ततो अ। दग्ध करनेकी इच्छा, जाननेकी स्वादिश।

दिधक्षु (सं० पु०) दग्धमिच्छुः दह-सन् ततो उ। दग्ध करनेकी इच्छा।

दिधि (सं० पु०) धा-क्ति। १ धैर्य। २ धारण।
दिधिपाय्य (सं० पु०) दधाति आनन्दमिति धा-प्राय्य,

जातोर्द्विंशत् इत्थं पुनः च (दिविषाण्याः इत्थं १३८७) ।
 पाशोपित मनु, वनामयो दोष । (त्रि०) २ चारण,
 चारण करनेवाला ।

दिविषु (म० पु०) दिविषु चैवं स्मरन्तीति सो ब्राह्मणवात्
 इति वा दिविषु पावन इच्छति तु पावनं च्छत्, ततो
 क्षिप, वाहुः इत्यर्थः । इन्द्रकापति, पक्षी एक बार व्याहरी
 हुई श्रीका वृषरा पति । २ यर्माज्ञानकर्ता यर्माज्ञान
 करनेवाला मनुष्य ।

दिविषु (म० श्लो०) इति पाप यथा दिविषु चैवं
 इन्द्रियदोषं न्यात् स्मरति स्मरन्तीति हा वा सो मनुष्यद्वय
 लाघु (अरण इति १३८५) २ इन्द्रका, वर
 लो जिसके दो व्याह हुए हैं । २ मरु श्लो या श्रिया
 जिसका विवाह वरको बहो बहनेके विवाहके पक्षके
 दूपा हो । (त्रि०) ३ चारण, चारण करनेवाला ।

दिविषुपति (स० पु०) दिविषुः इन्द्रका तस्या पति
 श्यामो । इन्द्रकापति दो बार व्याहो हुई श्रीका पति ।

मनुष्य कहना है, कि सुतोत्पादनके लिये प्रसन्न
 प्रति शत्रुमें एक एक बार समन नहीं करके भी मनुष्य
 नियम धर्मको उल्लङ्घन कर कामधाय अपने शत्रु शत्रुता-
 ली पक्षमें पासव हो जाता है उसे दिविषुपति कहते
 हैं । स्मृतिमें परपूजाके पतिको दिविषुपति कहा है ।
 इतराह चोर पाण्डुके जनकत्वके लिये व्यासको भी
 दिविषुपति कह सकते हैं ।

दिन (म० श्लो०) अति मध्यवति मन्वाकासमिति दो
 वेदे-इत्यर्थः (इत्यन्वयमिति । इत् २।३८) सूर्योत्थित, प्रका-
 शित समय, सूर्यके उदयेके लक्षण चण तत्काला समय,
 दिवस, इ० उच्छ परिमित काल, उतना समय जिसमें
 सूर्योत्थितके अंतर रहता है । पचाय—बस, पचन,
 दिवस, वापर, भाकर, दिवस, वाट, पचन, च ।
 (अपर) वेदिक अर्थ—बसो, च, माप, वापर, वस
 रात्रि, म स, चर्म, हृत्, दिन, दिवा, द्विदिदि, अतिपति ।
 (विषय) चान्द्रतिविक्रय काच चोर मातृप दिन चर्कत्
 एक चाकृतिविषय एक दिन ।

यह समय चर्कदा परिचरत् मधीन है इस कारण
 ज्योतिषो लोग चर्कोरावको यह दिन मानते हैं । चाक्रि-
 गति निरन्तर पूर्वी २४ अष्टमें एक बार अपने भिन्नदृष्ट

(यद्य) पर वृत्तों है, यही दिनरात होनेका कारण
 है । प्रथो गोकाकार है, इस कारण एक बारमें उनमें
 पांचे मास पर सूर्यका प्रकाय पड़ता है चोर पाका मास
 पचिमें रहता है । जिस मास पर प्रकाय पड़ना है
 बर्हा दिन चोर जो मास पचिं रहता है बर्हा रात
 होती है । प्रथो च पात्रिक पावत्तं नके लिये दो मंड
 पविहित प्रदेश छोड़ कर पन्थाय सभी क्षामों प्रति
 दिन एक बार प्रकाय चोर एक बार चन्धकार पड़ता है ।
 चचना पड़ता है, कि सूर्य ही दिवारात्रिके जाता है ।
 दिवाभागमें सूर्य पक्षवालेके अपरो मास पर चोर रातको
 उसके नीचे रहता है, इसी कारण रातको दिवारात्रि नहीं
 पड़ता । सूर्य परिभ्रमान आकाशयच्छकके क्षिप्रो
 क्षान्ते चक्र कर कर फिर लगे क्षान पर या जाता है,
 तब चतनेहो समयको दिवारात्रि पचवा एक दिनका
 मास कहते हैं । यह मध्य यह कहता है, कि जिस समय
 दिनको मचना करने होगी ? इस विषयमें मित्र मित्र
 क्षाति चोर सभ्यताके लोभीका मिस मित्र प्याल है,
 पता है अपने पचमें सुमोतिके लिये दिनको गचना करते
 हैं । प्रधानत सूर्योदय, सूर्यास्त, दिनके दो पहर चोर
 रातके दो पहरने दिनका चारणकाल माना जाता है ।
 दिवाभागमें सभी प्राणो अपने अपने क्षामोंमें मद्य रहते
 हैं चोर पन्धकारमय निराज्ञानमें वे विश्राम करते हैं ।
 कामके बाद विश्राम होना सामाजिक है । पता सूर्या
 दयमें चारण करके सूर्योदय तकके समयको दिन मानना
 मनुष्यचिह्न चोर प्रकृतिसंगत है । मालूम पड़ता है कि
 इसी कारण हम देयके ज्योतिषियोंमें सूर्योदयके दिवसका
 गचना करनेको प्रथा मचलित थी है । चाच भो इस देयमें
 कही तरहको प्रथा आता है । प्रायः सभी प्राचीन क्षाति
 सूर्योदयके दिनमानको मचना करते हैं किंचन चरित्र
 लोग मध्याह्नके चोर दिवसे लोक धायो रातके दिनको
 मचना करते हैं । जिसकाय एविषाको परिचयों क्षाति
 चोर सूरीयके परिष्ण्या, सुकच चोर इत्यादीके लोय सूर्यो-
 दयमें तथा चोरो मध्याह्निके, चरको मध्याह्निके चोर
 प्रदोषोय पन्थाय क्षातिके लोग मध्याह्निके दिनको
 मचना करते हैं । सूर्योदयकाल सुखदयमें प्रत्यक्ष करना
 पपीचाकृत, चन्द्रिचन चोर दुकच होमेंके कारण ही

ज्योतिषी लोग शायद मध्यदिवा वा मध्यरात्रिसे दिनको गणना करते होंगे। यूरोपके अधिकांश स्थानोंमें मध्यरात्रिसे दिनकी गणना करने पर भी, ज्योतिर्विद्या-विषयक अधिकांश पद्यवेचनादि रजनीयोगमें ही हुआ करता है, इस कारण एक रातमें प्रत्यर्थीकृत भिन्न भिन्न प्रकारकी घटनायें कभी कभी भिन्न भिन्न तारोखकी पढ जाती हैं तथा उससे तरह तरहकी असुविधायें उत्पन्न होती हैं। इसीलिये ज्योतिषी लोग दो पहर दिनसे ही दिनकी गणना करते हैं। सुभोतेऽं लिये दिनकी पूर्वाह्न १२ घंटोंसे भाग न करके एक ही बार २४ घंटे तक गणना की जाती है। इन प्रकार ज्योतिषियोंका मङ्गलवार जब २१ घण्टे का होता है, तब लौकिक और राजकीय व्यवहारमें बुधवार पूर्वोक्त ८ घण्टे का होता है, ज्योतिषियोंका जब बुधवार २ घण्टे का होता है, तब लौकिक व्यवहारमें बुधवार अपराह्न २ घण्टे का अर्थात् ज्योतिषियोंकी तारोख लौकिक व्यवहारकी तारोखसे १२ घण्टेके बाद शुरू होती है। ईसाई धर्मयाजक सूर्यास्तसे ले कर सूर्यास्त तक दिनकी गणना करते थे।

पहले दिनके विषयमें जो कुछ कहा गया, उसकी आरम्भकालमें विभिन्नता होने पर भी समयका परिमाण बराबर है। ज्योतिषियोंने साधारणतः तीन प्रकारका दिन माना है— (१) नाचत्र दिन (२) स्फुट सावन वा सौरदिन तथा (३) मध्यम सावन वा सौर दिन।

किसी नक्षत्रको एक बार याम्योत्तररेखा परसे हो कर जानि और फिर दुबारा याम्योत्तर रेखा पर आनिमें जितना समय लगता है, उतने समयको नाचत्र दिन कहते हैं। याम्योत्तर रेखाके ऊपर हो कर जानिके बदले, नक्षत्रके उदयकालसे ले कर फिर दूसरो बार उदयकाल तकके समयको भी नाचत्र दिन कह सकते हैं। किन्तु पूर्वोक्त उपाय ही यन्त्रादि द्वारा देखनेमें सुविधाजनक मालूम पड़ा है। यह समय ठीक उतना ही है जितनेमें पृथ्वी एक बार अपने अक्ष पर घूम सकती है। इसका परिमाण हमेशा एकसा रहता है, जब कभी घटता बढ़ता भी है, तो इतना थोड़ा कि दो एक युगमें कोई फर्क न दोख पड़ता। इसीसे ज्योतिषी लोग नाचत्र दिनमानका व्यवहार बहुत करते हैं।

पृथ्वी अपने अक्ष पर ठीक एक बार घूम चुकी वा नहीं, उस विषयमें समुच्चोको उतना सम्भव नहीं है। प्रकाश और अन्धकार ले कर ही उनका दिन है। सूर्यको याम्योत्तर रेखा परसे हो कर जानि और फिर दोबारा याम्योत्तर रेखा पर आनिमें जितना समय लगता है, उतने समयका स्फुटसावन वा सौरदिन होता है। यह सौर दिन नाचत्र दिनसे लगभग ४ मिनट ज्यादा होता है। यह ४ मिनट घटनेका क्या कारण है, सो लिखते हैं। मान लो, कि एक दिन दोपहरके समय एक नक्षत्र और सूर्य युगवत् याम्योत्तररेखा पर आ पड़ें हैं। दूसरे दिन पृथ्वीके ठोक एक बार अपने अक्ष पर घूम चुकने पर वह नक्षत्र याम्योत्तर रेखा पर आवेगा, किन्तु उस समय सूर्य १ अंश तक आकाशमें पूर्व की ओर टल गया है। सुतारां सूर्यको दूसरो बार उस स्थान पर आनिमें पृथ्वीको और भी ४ मिनट अधिक घूमना होगा। राशिचक्रमें सूर्यकी इस प्रकारकी पूर्वगति यदि बराबर चालकी होती, तो वह सौर दिन और नाचत्र दिनके जैसा सुस्पष्ट हो जाता। लेकिन वैसा नहीं है। क्रान्ति-वृत्तके साथ निरक्षत्रको छिदनेके लिये इन दोनोंको वक्रता हमेशा एक सो नहीं रहती। अतः क्रान्तिपथमें दृश्यत सूर्यकी गति बराबर होने पर भी निरक्षत्रमें इसकी संचातगति समान नहीं होती। पृथ्वीको गति भी वर्ष भरमें सब दिन एक सो नहीं है। इन्हीं सब कारणोंसे दृश्यतः सूर्यकी पूर्वगति बड़ा हो वैषम्यभावापन्न है। इसीसे सौरदिनका मान भी घटता बढ़ता रहता है। यदि एक घड़ी यथाविधि प्रकृत सौरदिनका समय मालूम करनेके लिये रखो जाय, तो समाह हीते न होते देखा जायगा, कि उसमें और सूर्यघड़ीमें एक सा समय नहीं है, चाहे किसोमें काम होगा या ज्यादा। इसका कारण और कुछ नहीं है, बड़ो ठीक हो चल रही है, पर हाँ, इतनेमें सूर्यको दृश्यमान गति परिवर्तित हो कर सौरदिनको विषमता हो गई है, किन्तु सूर्यघड़ी हमेशा सौर दिन ही निर्देश करती है। यही सब गड़बड़ी देख कर ज्योतिषियोंने सौरदिनका एक परिमाण निर्दिष्ट कर दिया है। सम्बत्सरगत कालकी दिनसंख्या से भाग देनेसे जो काल पाया जाता है वही मध्यम

शोरदिन है। यह २३ घण्टे या ६० इण्डियन विमान
रहता है।

स्वति शीर पुराणके मतानुसार एक चन्द्रमास पितृ
शोकका एक दिन, एक शीर वर्ष देवता शीर चतुरोबा
एक दिन शीर ८३७०००००० वर्ष ब्रह्माका एक दिन
होता है। २ श्लोतिस्तुल्लोख रागिनिद, फलित श्लोतिपरि
एक रातिना नाम। १ समय, शान्त मत। ३ निचिन
या उचित समय नियत या उपयुक्त भास। ४ बह काल
जिसके मज्ज छोड़ विजये बह हो, विजयकाले विताया
कारिनामा समय।

दिनकर (स० पु०) करोतीति क-घञ्, दिनकर चर०।
१ सुखं। २ पक्षं ह्यत्र धाक्।

दिनकर—१ प्रबोधनुवाचर नामक मन्त्रत वेदान्तिक
पन्थके रचयिता। २ एक विद्यात नैवाविक। इनका
प्रकृत नाम महाशय दिनकर वा। इन्होंने तथा इनके
पिता बालकृष्णने सिद्धान्तसुब्राह्मणकोप्रकाश नामक
सिद्धान्तसुब्राह्मणको टीका प्रचलन की है। यह टीका
दिनकरो नामसे भी प्रसिद्ध है। इन्होंने सिवा भवानन्दने
को तलचिन्तामणिको टीका लिखी है, दिनकरने उसको
भी एक टिप्पणी की है। ३ मासप्रवेशपारकी नामक
श्लोतिपरिन्तकार। ४ रसतरङ्गिको टीकाके रचयिता।

दिनकरकाव्या (स० श्लो०) यमुना।

दिनकरतलय (स० पु०) दिनकरतल तलय ३ तत्।
पक्षं मन्द। १ गति। २ यम। ३ कर्ष०। ४ सुदीय।
जितौ टाप०। ५ तापतो। ६ बसुना। ७ चित्रगुण।

दिनकरदेव (स० पु०) सूर्य देव।

दिनकरमह—१ एक विद्यात स्मारकं पण्डित। वे रामिकर
महर्षे पुत्र शीर विद्येश्वरमहर्षि पिता थे। इन्होंने हस्त-
पति शिवशक्ति ध्यात्ममें दिनकरोद्योत नामक एक उद्दत्त
स्मृतिनिबन्धको रचना पाठ्य की। किन्तु वे इसे
सम्पूर्ण कर न सके; पर इनके पुत्र विद्येश्वरने इसे
पूरा किया। इन्होंने पन्नावा नदीने जगन्नाथसार, कामं
विद्याकरार, शान्तिसार शीर महर्षिदिनकर नामक याज्ञ
दोषिकाकी एक टीका प्रचलन की है।

२ बारीकबासी मोरेश मीर एक श्लोतिरिहू। इन्होंने
११०० मन्थमें शेटनिधि तथा चन्द्रार्क नामक श्लोतिपरिन्त

कनाके हैं। ३ पराचर महर्ष पुत्र। इन्होंने तल शोमुदो
नामक तर्कभाषाको एक टीका रची है।

दिनकर शब—स्वाशिवरके दीवान वा प्रधान राजमन्त्री।
१८५२ ई०में स्वाशिवरके राजा बालिग हुए शीर उनका
राजकार्य चलानेके लिये इण्डियन मन्थमें एके सुवक्त दिन
कर रावको दीवान बनाया। उनके सुशासनके सुखके
स्वाशिवरराजको खूब उन्नति हुई। उन्होंने श्री कृष्ण
मन्थार सिवा, प गरीश्वरप्रपुत्रयगव भी सुद्ध इण्डिये
उपको प्रथ मा कर मन्थे हैं। अन्त्यायुमें जो कर सिवा
जाता था, दिनकरने उसे बन्द कर दिया। पैना करने
से अनेक राजकर्मचारियोंका खार्च शोया गया।
इस पर राजा उन लोगोंको उत्तेजनामें दिनकर रावको
पदभूत कर बाप खूब राजकार्य देखने लगे। किन्तु
योड़ुं जो समयके बाद राजमन्थमें प्रगान्ति पौन गई।
सुतर्ग सुबहका स्थापन करनेके लिये दिनकर राव पुनः
निजुक्त लिये मन्थे। सिवाको विद्रोहके समय इन्होंने प्राक्
पन्थके इण्डिय मन्थमें एके सहायता की थी। १८६८ ई०के
दिवम्बर महोत्समें उनके ज्ञान पर भासात्री विमलात्रो
दीवान हुए।

दिनकरात्मजा (स० श्लो०) दिनकरतल सूर्यस्य पात्मजा।
सूर्यकन्या, यमुना तपती।

दिनकरत (स० पु०) दिन करोति क-घञ्। १ सुखं। २
पक्षं ह्यत्र, धाक्का पिङ्।

दिनकरत (स० पु०) दिन करोति दिन क-घञ्, पुत्रा-
मन्थ। १ सुख। २ पक्षं ह्यत्र धाक् म हार।

दिनकेशर (स० पु०) दिनकर शैवर इव। पम्बकार,
पथिरो।

दिनकथ (स० पु०) दिनकर तिथिः कथ०। तिथिवय।

दिनपर्या (स० श्लो०) दिनसुक्ता कर्त्तव्यकर्म दिन
मरणा काम फन्था। प्रति दिन किस प्रकारका पाचरक
करनेके शरीर स्वस्थ रह सकता है, इसके विषयमें माथ
प्रकाशमें इस प्रकार लिखा है—

जिस प्रकारके पाठार शीर पाचरवादि श्राप मनुष्यों-
को नर्न दा स्वास्थ्य रथा हो, वैथ उसी प्रकारको तर्क
सहाइ है। स्वास्थ्य कोव नवीं रहनेसे माथन धारक
हो विषयतुं हो जाता है। इही स्वास्थ्यसामक लिये

दिनचर्या, रात्रिचर्या और ऋतुचर्या लिखी गई है। इस विधिके अनुसार नियम प्रतिपानन करनेसे निश्चय हो गराय सुख रक्ष सकता है, इसमें सन्देह नहीं।

यदि वायु, पित्त, कफ, अग्नि, घात और मनको समता रहे, शरीरानुरूप स्थिति समर्थ हो और आत्मा, इन्द्रिय तथा मनकी प्रसन्नता रहे, तो उसे स्वाम्य कर्त है। हर किमीको स्वास्थ्यरक्षाने लिये ब्राह्मण सूक्तमें अर्थात् सूर्योदयके दो ढण्डके भीतर विद्यावनमें बैठ कर आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक इन प्रकारके दुःखोंको शान्तिके लिये ईश्वरका नाम जपना चाहिये। पाँच दिव, वृत्त, दर्पण, स्नेहदर्पण, विश्व, गौरीचन्द्रा और मान्यका दर्शन तथा मर्गन करना चाहिये। प्रति दिन धीको छायामें अपने शरीरकी देखनेसे आयुको वृद्धि होती है। उपाकालमें ही मलमूत्रादि परित्याग करना चाहिये। इस नियमका प्रतिपानन करनेसे अन्तःकृजन अर्थात् आंतोंकी गुडगुड़ाहट, पेटका फूलना तथा पेटको सुरक्षा जाती रहती है। मलमूत्रादिका वेग कभी रोकना नहीं चाहिये, क्योंकि इसमें नाना प्रकारकी पीड़ा उत्पन्न होती है।

मलवेग धारण करनेसे पेटमें गुडगुड़ाहट तथा वेदना और गुह्यद्वेगमें कर्तनवत् पाड़ा होती है। वायु वेग धारण करनेसे मलमूत्रनिरोध, एटराधान और शरीरमें थकावट आ जाती है और मूत्रवेग धारण करनेसे मूत्राशय तथा गिरद्वेगमें वेदना, मूत्ररुद्ध, गिरःशूल, शरीरमें नस्रता और दक्षणद्वेगमें आकषणवत् पीड़ा होती है। इससे मलमूत्रादिका वेग यदि उपस्थित हो जाय, तो अनिवार्यकार्य सामने रहते ही उसे रोकना न चाहिये। यदि वेग न पहुँचे, तो उसे बलपूर्वक काँध कर निकालनेकी कोशिश भी न करनी चाहिये। मलमूत्रादि कर चुकनेके बाद गुह्यद्वेगकी भलीभाँति जलसे परिष्कार कर लेना चाहिये। इससे शरीरकी क्लान्ति जाता रहती है, देख पवित्र होती है और अलक्ष्मी तथा क्लान्तिकालजात पाप विनष्ट होती है।

इसके अनन्तर हाथ और पाव धो डालना चाहिये, इससे शारीरिक पुष्टिसाधन और चक्षुको मलाई होती है। शब्द दंतुवन से कर सुख धोना उचित है।

दंतपावन और दंतहाट देखो।

दंतुवन कर चुकनेके बाद बार बार कुन्ना करने चाहिये। ऐसा करनेसे कफ, लज्जा और सुखगत मन जाता रहता है तथा सुखका भोतरों भाग साफ हो जाता है। प्रतिदिन कड़ु, आतिल नाकमें टेनेका अभ्यास करना चाहिये।

किन्तु कफ शान्तिके लिये प्रातःकाल, पित्त शान्तिके लिये मध्याह्नकाल और वायु शान्तिके लिये सायंकाल नश्य लेना उचित है। नश्य लेनेसे सुख सुगन्ध, म्वर विष्व और सभी इन्द्रिया शान्त होती हैं तथा बलि, पलित और व्यङ्गरोग जाता रहता है। इसके बाद आँवोंमें अंजन लगाना चाहिये, इससे आँखें देखनेमें सुन्दर लगती हैं तथा सूक्ष्म पदार्थ भी भलीभाँति देखे जा सकते हैं। किन्तु जो रातमें जगे हैं, उनके लिये तदा परिर्यान्त, वमिरोगाक्षान्त, भुक्त और गिरःस्नात मनुष्यके लिये नेत्रांजनका व्यवहार निषेध है।

हर पाँचवें दिन नख और दाढ़ी सुँड़वाने चाहिये तथा बाल छँटवाने चाहिये। क्योंकि केगाटिके छँटानेसे गिरकी शोभा बढ़ती है तथा धन और आयुको वृद्धि होती है। नाकके बाल न उखाड़ना चाहिये; उखाड़नेसे नेत्रकी शक्ति बहुत जल्द घट जाती है। प्रति दिन कंधोंसे बाल झालना तथा व्यायाम करना अवश्य कर्त्तव्य है। व्यायाम करनेसे शरीरकी लवुता, कर्मसामर्थ्य, विभक्त धनगात्रता (अर्थात् शरीरका जहाँ जहाँ पतला और मोटा होना उचित है वहाँ उसका पूरा होना), दोषका नाश और अग्निकी वृद्धि होती है। वसन्त और शीतऋतुमें व्यायाम करना विशेष उपकारी है। इसके सिवा अर्थात् शोषादि ऋतुमें जिसको जैसा बल है उसको आधे शक्ति लगा कर व्यायाम करना चाहिये। जब तक हृदयस्थित वायु सुखरन्ध्र द्वारा वहिर्गत न हो और सुखगोत्र उपस्थित न हो तथा कपाल, नासिका और गात्रसन्धिसे पसोना न जाय, तब तक आधे शक्तिका व्यायाम नहीं समझा जा सकता है। भोजन तथा शृङ्गार कर चुकनेके बाद व्यायाम करना निषिद्ध है। इसके सिवा दुबले पतले मनुष्योंके लिये तथा काष्ठ, श्लास, सद्य, पित्त, रक्तपित्त, क्षत और धातुयोध

रक्षादि रोगान्नाम मनुष्योंके लिये भी ध्यायाम निषिद्ध मतपाया है।

शरीरकी पुष्टिके लिये प्रति दिन समुदा शरीरमें तेल जगाना चाहिये। विषये कर मस्तक पर, दोनों कानों और दोनों पैरोंमें तेल जगाना फायदासम्बद्ध है।

धर्म्य विषयमें मरसो का तेल, मन्थनेन और पुष्प बासिल तेल प्रयुक्त है। धर्म्य द्वारा वायु कफ और श्याम्बि दूर होती है तथा बल सुख, निद्रा, शरीरकी क्षोभकता, परमाहु उद्वि तथा शरीरकी पुष्टि होती है। गिर पर तेल जगानेसे कारो इन्द्रिया व्यस्त होती हैं, दर्शन शक्ति बढ़ती है शरीरको पुष्टि होती है तथा गिरोमन रोम आता रहता है।

प्रति दिन कानमें तेल जगानेसे दिवसो प्रकारका कर्ण रोम नहीं होता। इस प्रकार तेल ममा कर अवनाहन पूर्वक खान करना चाहिये। इसमें खानकूप, शिरात्राक और बमनो द्वारा शरीरकी भीतर तेल जल आदिसे प्रविष्ट होनेसे दिहको क्षति तथा उद्वि होती है। जिस प्रकार उद्विसे मूलमें जल देनेसे जल पतत निकल पाते हैं, उसी प्रकार कर्ण में तेल जगानेसे जल देनेसे मनुष्यके रक्त-रक्षादि बात समुद्ध पुष्ट होता है। शोथन जगाने द्वारा परिदहन करनेसे बाह्य तथा प्रतिहत हो कर शरीरकी भीतर प्रविष्ट करती है। उष्ण जल द्वारा गिर-कान करनेसे पशुको दीर्घ बढ़ती है। खानके बाद कपड़ोंसे दिहको भस्मो भाति रगड़ना चाहिये। घिसा करनेसे शरीरको क्षान्ति, कण्ठ और लग-लोग बिनष्ट होता है। गामसदंनके बाद शरीर जल धोने से बचाय, तब कपड़ा पहन लेना चाहिये। खानादि कर सुखमेंके बाद यथा-योग्य धनुनेपनादि कर्त्तव्य है। धनुनेपनके बाद यथा विधान शरीरको भूषित करना चाहिये।

बाद अब आनेका समय पशुके, तब मङ्गलजलक सामथो पहन करनी चाहिये। प्रति दिन पैसा करनेसे परमाहु और श्मदाष्ट बढ़ता है। ब्राह्मण गो, पशु पुष्पकार हृत्, सूर्य, जल और राज्य से हो पाठ मङ्गल-जनक पदार्थ है।

यामेंके पशुमें और पीछे चडाकेका व्यवहार करना उत्तम है इससे पदमत रोम आता रहता है तथा पशुकी मनाई होती है।

मनुष्योंको क्षमावत चार प्युडा बनगतो होतो है—खाहार, पान, निद्रा और सुरवेच्छा। मूल्य समयने पर यदि न खाया जाय, ता पचन, श्याम्बि, तन्द्रा पशुकी सुखकता रक्त-रक्षादि वातुकी जीर्णता और बन-का क्षान्ति होती है। प्याय समयने पर यदि जल न पीया जाय, तो कष्टगीय, सुखयोग्य श्रुतिशक्तिका उच्छ, रक्त योग्य चार इदवदेयमें पोड़ा होती है। नींदको रोक्ने-से रुमादि, शिर और श्याम्बिका भारोपन, शरीरमें बंदना और तन्द्रा होता है तथा काया बुधा पदाथ भस्मो तरह परिपक्व नहीं होता। खाद्य पशु जिस प्रकार दाह्य बहुके क्षमावतमें घोसो हो जाता है उसी प्रकार सुचित श्रुतिको भाहार्यं बहु नहीं मिलने पर शारीरिक पाचक पशुमें मो पाच हो जाता है। जठराम्बि प्रयमन सुक्त रूप परिपाक करता है इससे क्षमावतमें कषादि दोष समुद्धको, फिर लसके भी क्षमावतमें रक्त-रक्षादि वातुको और बाद वातुके क्षमावत प्राच तत्र परिपाक कर जाता है। यहा खाद्य है कि मूल्य समयने पर भोजन करना कर्त्तव्य है। प्रति दिन भोजनके प्रारम्भमें लवणार्द्रक अर्थात् नमक और पदरुख खाना चाहिये, बाद क्षोभन द्रव्य और घन में द्रव पदाथ खाना या पीना उचित है। इस नियमा सुधार भोजन करनेसे बल और साम्यको रचा होती है। शीघ्र बहुमें जो जो पशु क्षमावतमें सुन्नादु हो, पक्षी लसको खाना चाहिये। एक बहु या खेनेह वाट दूमरो जो पशु खानेको इच्छा होती है; उसीका यहा पर सुन्नादु मतपाया है। बहुत बन्दोने या शरीरकी भोजन करना मना है। जिस मनुष्यको पशु मन्द हो, उसे तोन प्रकारके शुद्ध द्रव्यका परिस्वाग करना चाहिये। मासा शुद्ध, क्षमावतना शुद्ध और संस्वार शुद्ध यही तोन प्रकारके शुद्ध पदार्थ है। मासा शुद्ध मूल्य चाहिये यह क्षमावत शुद्ध नहीं है, पिष्ट-रुदि रक्षा शुद्ध है। शुद्ध और मनु द्रव्य जिनका पानेने क्षमिषोष हो सतना हो खाना उचित है। अर्थात् उरदबी पीठो पाषा मासामें और मूगादिकी पोथ पुरो मासामें खाना चाहिये। पिष्टादि लग्न द्रव्य है तत्र पाठि लसके भी चञ्चि तरल है 'घन' बिना पदाथनं उने विना कर चञ्चि मासामें पानेने मो लसे शुद्ध नहीं बह नकने। योऽपि पिय पदार्थ,

सब प्रकारसे लघु गुरुयुक्त है। शुष्क द्रव्य चिजड़ा आदि, विरुद्ध द्रव्य दूध मछली आदि और विटम्बि द्रव्य चना आदि, इन सबको खानेसे जठराग्नि मन्द हो जाती है। भोजनका उपयुक्त समय विता कर शयन भूख नहीं लगने पर खाना उचित नहीं है।

उदरके चार अंगोंमेंसे दो अंगकी भोज्य द्रव्यसे, एक अंगकी जलसे भर लेना चाहिये और शेष एक अंगकी वायु जानि आनेके लिये खाली छोड़ देना चाहिये। अत्यन्त जलपान करनेसे भुक्त द्रव्य परिपाक नहीं लेता तथा विलकुल जलपान नहां करनेसे भुक्तद्रव्यको पचनेमें बाधा पहुँचती है। इसीसे खाते समय जठराग्निको उद्दीप्त करनेके लिये पुनः पुनः थोड़ा थोड़ा जल पीते रहनेसे शरीर दुर्बल हो जाता तथा अग्नि प्रदीप्त होती है, भोजनके बाद जल पीनेसे शरीरकी स्थूलता और कफकी वृद्धि होती है। इसीसे आधा भोजन कर चुकने पर पानी पीना स्वास्थ्यकर है। तृष्णातुर वृत्तिके लिये भोजन और क्षुधित वृत्तिके लिये जलपान विलकुल मना है। क्योंकि तृष्णातुर मनुष्यके भोजन करनेसे गुल्मरोग और क्षुधित मनुष्यके जलपान करनेसे जलोदर उत्पन्न होता है। इस निघमसे भोजन शेष हो जाने पर तनिका करके कुक्षी करनी चाहिये। कुक्षी करते समय दांतोंमें जो मैल बैठे हो उसे यत्नपूर्वक धो डालना चाहिये। ऐसा करनेसे मुखकी दुर्गन्ध जाती रहती है। यदि कोई पदार्थ दांतमें दृढरूपसे सट गया हो, तो उसे दांत सम्भक्त कर निकालनेकी कोशिश न करने चाहिये।

आचमन करनेके बाद जलसिक्त हारा दोनों आँखोंकी पौछ लेना चाहिये। भोजन कर चुकनेके बाद आँखमें जल छिड़कनेसे तिमिका विनष्ट होता है। इसके अनन्तर जिससे खाया जाय, इसके लिए अगस्त्यादि महात्माशोकके नाम जपने चाहिए। अन्नारक, अगस्त्य, वैश्वानर, सूर्य और दोनों अश्विनोकुमारके नाम ले कर पीठ पर हाथ फेरनेसे खाये हुए पदार्थकी पचनेमें किसी प्रकारकी बाधा नहीं पहुँचती। भोजन करनेके बाद अगुरु आदिके धूर्णसे कफका नाश कर हृद्य, कटुतिक्त, कपाय, रमविशेष फलकी चवा कर मुखको निर्मल रखना चाहिए। पौष्टि सुगन्धित द्रव्यके साथ पान चिबानेसे चित्त प्रसन्न रहता है। ताम्बूल देखो।

इसके बाद धीरे धीरे एक मी कदम जाना कर्त्तव्य है। भोजन करके जो मनुष्य उक्त नियमका पालन न कर बैठ जाता है, उसे तोंड निकलती है, जो सो जाता है, उसके शरीरको पुष्टि होती है और जो भ्रमण करता है अर्थात् धीरे धीरे एक मी कदम जाता है, उसको आयु बढ़तो है। जो मनुष्य तेजीसे चलता है, उसे नाना प्रकारकी उल्टक व्याधि होती है। इसके पश्चात् जितने देर तक आठ बार साँस ली जा सकती है, उतने देर तक चित हो कर उससे दूना समय तक दाहिनी करवट ले बार और उससे भी दूना बाईं करवट ले कर सोना चाहिए। अजीर्ण होने पर बाईं करवट लेना मना है। उक्त निघमके अनुसार प्रतिदिन चलनेसे शरीरको किसी प्रकारकी व्याधि छू तक नहीं सकती।

(भावप्रकाश) रात्रिचर्या शब्द देखो।

- दिनचारो (हि० पु०) दिनकी चलनेवाला सूर्य।
 दिनज्योति (सं० क्लो०) दिनस्य ज्योतिः। आतप, धूप।
 दिनदीप (सं० पु०) सूर्य।
 दिनदुःखित (सं० पु० श्लो०) दिने दिवसे दुःखितः दिवा-भावे वियोगित्वात्तथात्वं। चक्रवाकपक्षी, चक्रवा पक्षी।
 दिननाथ (सं० पु०) सूर्य।
 दिननायक (सं० पु०) दिनके स्वामी, सूर्य।
 दिननाह (सं० पु०) दिननाथ देखो।
 दिनप (सं० पु०) दिन पाति पा-क। १ सूर्य। २ अर्क वृक्ष, आक। ३ वाराधिपति सूर्यादि, दिन वा वारके पति।
 दिनपति (सं० पु०) दिनस्य पतिः। दिनप देखो।
 दिनपाकी अजोर्ण (सं० पु०) एक प्रकारका अजोर्ण। इसमें एक वारका क्रिया हुआ भोजन आठ पहरमें पचता है और बीचमें भूख नहीं लगती।
 दिनपात (सं० पु०) दिनस्य चान्द्रदिनस्य तिथिः पातः क्षयः। दिनक्षय।
 दिनपाल (सं० पु०) सूर्य।
 दिनपिण्ड (सं० पु०) दिनस्य पिण्डः इतत्। ज्योति-पोक्त अर्हगण।
 दिनप्रेषो (सं० पु०) दिनं प्रणयति करोति प्र-णो-क्षिप। १ सूर्य। २ अर्क वृक्ष, आक।

दिनप्रवेश (स० पु०) ताजकोठ मासप्रवेशकी गई वर्षमास सम्बन्धी दिनका प्रवेश। इसका विषय ज्योतिष-मि इस प्रकार लिखा है। जय वर्ष प्रवेश होता है, तमो प्रथम मानका तथा प्रथम दिनका प्रवेश होगा समझा जाता है। वर्ष प्रवेश कापक्षे रविप्लुटमें एक राशि जोड़ने से जितनी राशि होगी, उसका नाम मासाथ है। मासाथ के निकटस्थ पूर्व परवर्ती किसी समयके रविप्लुटके मास मासाथका प्रकार कर भी पय वष रवेया, उसे वषा वनाम है। पीछे रविबी गतिसे तमने मास देनेसे जो मानफल हो उसे निकटस्थ जिस दिन पय दण्ड समयमें रविका प्लुट तिथा गया वा उसके साथ योग वा वियोग करते हैं। यथा मासाथके पूर्व रविप्लुटमें योग और पीछे रविप्लुटमें वियोग बिधा जाता है। (पृ० ४४)

इस प्रकार योग वा वियोग करनेसे जितने दिन दंडादि होंगे उतने ही दिन दण्डादि समयमें मासप्रवेश होगा। दिनप्रवेश भी इसी नियमसे समझना चाहिए। जिस समय दिनप्रवेशहोना उस समय समयदण्ड पक्षप्लुट, भाव, रश्मि योगैव्यादिषा निश्चय कर फलका विचार करना होता है।

दिन-प्रवेशकायमें वर्ष-प्रवेशादिहो गई सूर्यादि पक्ष और वायव्य भावका प्राण कर चन्द्र और नवांशाधिपति द्वारा शुभाशुभा विचार करते हैं। सुम्बाधिपति, अथ वम्बाधिपति, त्रिराधिपति दिनरात्रिका अधिपति, दिन सम्बाधिपति, मास सम्बाधिपति और वर्ष सम्बाधिपति इनमें जो बलवान् हो कर दिन सम्बन्ध देखता है, वही पक्ष दिनाधिपति होता है। यदि दिनप्रवेश काल वा चन्द्रके निकोच हो श्रेष्ठ हो वा प्यारहवां स्थान बलवान् हो, शुभपक्ष कठे स्थानमें तथा तीसरे वा प्यारहवें स्थानमें पापपक्ष हो, तो उस दिन बुध, मान, चर्य और वयका काम होता है।

कठे, पाठवें वा बारहवें स्थानमें यदि पापपक्ष दिनाधिपति, वर्षाधिपति वा मासाधिपति हो, तो रोय, मान और वयकी हानि होती है। जब यह गण यदि श्रेष्ठ निकोच वा प्यारहवें स्थानमें हो, तो सुखकाम समझना चाहिये। दिन-प्रवेश नवांश शुभपक्षबुध हो कर यदि चन्द्रमा चतुर्क मित दंडि द्वारा देखा जाता हो, तो नारोग

राज्य काम तथा शरीरको पुष्टि होती है। इसका विषय रोति होनेसे पूर्ववत् विपरीत पक्ष समझना चाहिये। यदि दिन प्रवेशकालमें जो भाव नवांश शुभपक्षमें खोज दंडि द्वारा देखा जाता हो वा शुभपक्ष हो तो उस भाव का शुभ फल होता है। इसका विपरीत होनेसे पर्यात् पापपक्ष वा पापपक्ष चतुर्क मात्र द्वारा देखे जानेसे उस भावका पक्षम फल समझना चाहिये। यहभाव नवांश यदि शुभपक्ष हो, तो रोग और पापपक्ष होने पर भी शुभफल है। अथवा नवांश शुभपक्ष वा शुभदंड हो, तो समझना चाहिये कि अपना ज्योति बहाय होगा। काया भावके नवांश शुभपक्ष वा शुभदंड होनेसे निश्चयको हाथ सुख और पाप दंड वा पापपक्ष होनेसे व्यह्वारोच होता है। यदि काका भाव दो वापक्ष वीचन पड़ जाय तो शत्रु समझी जाती है।

सत्रसमाव नवांश शुभ सम्बन्ध हो, तो पनेच प्रकारके कामिनी-सुख प्राप्त होते हैं। उक्त नवांशमें यदि वृहत् कति रहे, तो अपना ज्योति और यदि अन्यपक्ष रहे तो दूसरेकी खोमें रतिसम्बन्ध होता है। पटमभात नवांश दिनप्रवेश-सम्बन्ध पटम स्थान शुभपक्षसे दंड वा बुध हो, तो रश्मि श्रेष्ठ होती है। शुभाशुभबुध हो वा दंड हो, तो शुभ फल और यदि पाप दंड वा पापपक्ष हो, तो दुःख मिलता है। दिनप्रवेशकालके दूसरे और बारहवें स्थानमें पापपक्ष हो, तो हानि, शुभपक्ष हो, तो बहाय। पापपक्षसे विदे कर्त्तरीयोग हो, तो पशुम तथा रोग और यदि शुभपक्ष चट्टित कर्त्तरीयोग हो तो शुभ होता है। चौपचन्द्रमन्त्रमें वा पाठवें स्थानमें रव कर पाप दंड वा पापपक्ष हो, तो मूल पक्षवा रोग तथा मन्त्र, पक्षका मय होता है। मन्त्र बुध चन्द्रके कठे वा पाठवें स्थानमें रहनेसे शत्रुके पक्ष का मय और चौपे स्थानमें पापपक्षके रहनेसे गजायादि से पतन और शरीरमें माना प्रकारके रोग होनेकी शायदा रहती है। पाठवें स्थानमें शुभपक्षके रहनेसे अथ दूसरे स्थानमें सुख, नवें स्थानमें धर्म, पचासम और राज-सन्धान प्राप्त होता है। दिनप्रवेशके समय चन्द्रमा जिस प्रकार रहती है, पक्ष भी उसी प्रकार मिलता है। चन्द्र प्लुटकी राशिकी जोड़ कर पक्षदिह भागकी रश्मि शुभा

करे और गुणफलको पूरे भाग दे, तो चन्द्रमाको अवस्था मालूम हो जायेगी। चन्द्रमाकी प्रधानावस्था में मनुष्यका भी प्रवास, नटावस्थामें वित्तभाग, स्तावस्थामें मृत्युभय, जयावस्थामें जय, हास्यावस्थामें स्त्री विलासादि सुख, क्रोडावस्थामें सुख, सुषावस्थामें निद्रा, भुक्तावस्थामें दृढ़पोड़ा, भय और ताप आदि दृत्रा करता है। (नीलदण्डोक्त वाक्य)

दिनचन्द्र (सं० पु०) दिनच्य वस्तु। १ सूर्य। २ अर्कट्टक्ष, आक, मंदार।

दिनचन्द्र (सं० पु०) दिने चन्द्र यस्य। द्विपदराशि, फलित ज्योतिषमें वारह राशियोंमेंसे पांचवीं, छठी, सातवीं, ग्याहवीं, और वारहवीं ये छह राशियां दिनचन्द्र या दिनचन्द्र मानी जाती हैं और बाकी रातिचन्द्र।

दिनमणि (सं० पु०) दिनच्य मणिरिव। १ सूर्य। २ अर्कट्टक्ष, आक, मंदार।

दिनमयूख (सं० पु०) दिने मयूखो यस्य। १ सूर्य। २ अर्कट्टक्ष, आक।

दिनमल (सं० स्त्री०) माम, महोना।

दिनमान (सं० स्त्री०) दिनच्य मान। सूर्यदग्गन्धालका मानमेद, सूर्योदयमे ले कर मर्यास्त तकके समयका मान। वारहों मासके प्रति दिनका दिनमान निम्नलिखित नियमसे स्थिर किया जाता है। पहले रविस्फुट करना होता है। पछि यदि उस रविका स्फुट अथवाग युक्त हो, तो उसमें अथवाग निकाल लेते हैं। ऐसा करनेसे शुभ समयका अर्थात् विषुव संक्रान्तिके रविका स्फुट निकल आवेगा। इस विषुवसंक्रान्तिसे ले कर क्रमशः ६ मासके ६ संक्रान्ति दिनोंका अर्थात् वैशाख मासमें विषुव संक्रान्ति-दिवसाय ० शून्य, ज्येष्ठ मासकी संक्रान्तिके दिवसीय २० तीस, आषाढ मासके संक्रान्ति दिवसीय ५४, श्रावण मासके संक्रान्ति दिवसीय ९८, भाद्रमासके संक्रान्ति दिवसीय ५४, आश्विन मासके संक्रान्ति दिवसीय २० इन छः अर्द्धांशोंके विषुवकी मध्याह्न छाया ५१० से गुणा करते हैं, बाद उसमें ८० का भाग दे कर भागफल जो होता है उसमें ३० जोड़ते हैं। अब योगफल जो दण्ड होगा, वही यथाक्रमसे उक्त विषुव संक्रान्ति आदि छः संक्रान्ति दिवसका दिनमान माना

जायगा। फिर जो छः संक्रान्ति वच रश्मीं उनका दिनमान इस प्रकार निकालना होता है, जैसे—जिन ६ संक्रान्ति दिनोंका दिनमान ६० से नियुक्त करने पर जो वच जायगा वही यथाक्रमसे कार्तिकादि ६ मासके संक्रान्ति दिनोंका दिनमान होगा। जिन जिन टैगोमें वारह अंगुलीके शब्दका ५-१० पाँच अंगुल दग व्यङ्गुल मध्याह्न छाया हो उन टैगोका दिनमान इस प्रकार निकालना होता है, जैसे—वैशाख मासके विषुवसंक्रान्ति दिवसीय दिनमान ३० दण्ड होता है। इस ३० दण्डकी ६० दण्डमेंसे निकाल लेने पर जो ३० वच जाता है, वही कार्तिक मासके संक्रान्ति दिवसका दिनमान होगा। ज्येष्ठ मासका संक्रान्ति-दिवसीय दिनमान ३१।४३ पल है। इन अर्द्धांशोंकी ६०मेंसे घटा लेने पर २८।१० पल वच जाता है, यही श्रावण मासके संक्रान्ति-दिवसका दिनमान होगा। आषाढ मासका संक्रान्ति-दिवसीय दिनमान ३३।६ पल है, ६० मेंसे इसे निकाल लेने पर जो २६।५४ पल वच जाता है वही पौष मासके संक्रान्तिदिनका परिमाण है। श्रावण मासके संक्रान्ति दिनका परिमाण ३३।४० पल है जिसे ६० दण्डमेंसे निकाल लेने पर २६।२० पल अवशिष्ट रहता है यही माघ मासके संक्रान्ति दिवसका दिनमान है। भाद्रमासकी संक्रान्तिका दिनमान ३३।६ पल है, इस अर्द्धको ६० मेंसे निकाल लेने पर २६।५४ पल वच जाता है, वही फाल्गुन मासके संक्रान्तिदिवसका दिनमान होगा। आश्विन मासका संक्रान्ति दिवसीय दिनमान ४१।४३ पल है उसे ६०मेंसे वियोग करने पर २८।१० पल अवशिष्ट रहता है, यही २८।१० पल चैत्र-संक्रान्ति दिवसीय दिनमान होगा। ये सब जो दिनमान कहे गये प्रत्येक ६६ वर्षमें रविका एक अयन-दिन होता है। इसी नियमके अनुसार अभी १० चैत्रकी दिनमें सूर्यविषुवरेखा पर आते हैं, इसीसे वह दिवसीय दिनमान ३० दण्डका होता है। दूसरी दूसरी संक्रान्ति उस महीनेके १०वें दिनमें होती हैं। पहले केवल संक्रान्तिदिनका दिनमान कहा गया; इसके मध्यवर्ती दिनोंका दिनमान स्थिर करते समय मासका संक्रान्ति दिवसीय दिनमान निकालते हैं। बाद दूसरे दिनसे ले कर परवर्ती संक्रान्ति दिनके पूर्व दिन

तब गबनो करके जितने दिन टण्ड जोगी समसे पूज
स आम्तिसे पर स आम्ति तब जो दरगाहिको इति होतो
हे उचे से पायिक द्वारा सूनेर सूनेर दिवसका दिनमान
खिर क्रिया वा सक्तता है ।

शुक्राशुक्र ३० पुष्य शक्राशुक्र १४ सुगारु १० नैवेद्य
३४ कामरा । अना ५११ मा अना १० वृत्तयाः अना १०
३० बुधा बुधामि ३४ ४

दिनामाली (स० पु०) सूर्य ।

दिनामाली (स० शो०) दिनपत्र सुभ । प्रमात, मवेरा ।

दिनामाली (स० पु०) दिनपत्र मूर्ता इव वायु ध्यान-
लात् । उदयगिरि ।

दिनामाली (स० शो०) दिनपत्र योगनमिष । मध्याह्न,
दोपहर ।

दिनामाली (स० शो०) दिनपत्र रत्नमिष प्रकाशकलात् । १
सूय । २ अर्धरात्रि, आह ।

दिनामाली (स० पु०) सूर्य ।

दिनामाली (स० पु०) ज्योतिषोक्त चक्रगण ।

दिनामाली (स० पु०) दिनपत्र चक्रोपमात्मक कामदायक
इत्यर्थे व्यासः । सूय सिवात्मके चक्रुसार चक्रोपमा-
त्मक व्यासका चक्रव्यास ।

दिनामाली (स० पु०) दिनपत्र, सधा, धाम ।

दिनामाली (स० पु०) दिनपत्र चक्र । १ दिनके प्रातःकाल,
मध्याह्न काल और माघ कालमें तीन चक्र वा विभाग ।

२ दिनके पूर्व चक्र चक्र वा विभाग, जिनके नाम ये हैं—
पूर्वोदयके बाद तीन सुहस्रं मान्, तीन सुहस्रं चक्र,
तीन सुहस्रं मध्याह्न तीन सुहस्रं चक्र और तीन
सुहस्रं माघकालक । दिन चक्रों पूर्व चक्रों विभक्त है ।
रत्नमें प्रातरादि कालको विषयचक्र कहें यमें कोई कार्य
नहीं करना चाहिये ।

दिनामाली (स० पु०) दिनपत्र धाममा । प्रमातकाच,
तदुक्ता ।

दिनामाली—बुधपदार्थमें हमीरपुर जिलेके पन्थात एक
प्राचीन धाम । यह बुध पहाड़के ३ कोस पश्चिममें पन
चित्त है । यहां छोटे पहाड़के अथर चन्देन राजाजीके
समयका मिनमन्दिरना धर माघयज्ञ देखा जाता है ।
इसका आश्वास देवने योग्य है । पहाड़की नीचे जैन

तीर्थहर शालिनामेशी एक उच्च मूर्ति पड़ी हुई है
जिसमें केवल ११.८.४ स बत् सुधा हुआ है ।

दिनामपुर—बङ्गालके आठवीं यामनामोन राजसभो
विभागके पश्चिमामूर्ति एक जिला । यह अक्षा० २४
५३ से २५ २३ ५० और देशा० ८८°२३ से ८८° १८' पूर-
में अवस्थित है । मूरिमाच ४८.४६ बगमोन है । इसकी
उत्तर-पूर्वमें अन्धपारगुको पश्चिममें पुरणिया, पूर्वमें
एडुपुर, दक्षिण पूर्वमें बगुडा, दक्षिणमें राजसभो और
दक्षिण-पश्चिममें मातहा है ।

उत्तर बङ्गालके पन्थात जिलाओंकी पविषा यहाँ
की जमीन अल्पप्रामित हुआ करते हैं । विभागतयके
से कर यहाँके जिनके तबको मूमि बहुत मधु है, यह
कारण नदीका बिनारा सङ्गममें जो मट नहीं होता
है । जिसके दक्षिण और बाबुकोचमें कुसिक नदीके
तीरपट्टी प्रदेशको मूमि तरहायित होनेसे १८० फुट
का भी पहाड़के आकारमें हो गई है । बहुतसो नदियाँ
जिसमें पड़तो हैं । वर्षाकालमें जब बाढ़ या जातो है,
तब ये सब नदियाँ बिनारा पार कर पानपासके जालोंमें
पड़ भर देतो हैं । जितनी ही पड़ जम जातो है, वहाँ
उतनी ही पच्छो धरल बनती है । वर्षाकालमें उच्च
नदियाँ उमड़ जाती हैं, किन्तु शीतकालमें सूख कर
बहुत मकोप हो जाती हैं । जब उमने बाढ़ या जातो
है, तब अल से मोक्ष ध्यान तब फल जाता है । जिसके
दक्षिण भागमें मडोका पहाड़ है जो धनी जंगलसे परिपूर्ण
है और वहाँ तरह तरहसे वि सक पद दास करती हैं ।

दिनामपुर जिलेको समो नदियाँ प्रवाहितः दो के जियेमें
विभक्त है एक थोड़ी दक्षिणकी ओर या कर मङ्ग-
न्यामि गिरी है और दूसरो दक्षिण-पूर्वकी ओर बगुडा
और राजसभो जिलेकी तिष्ठा नदीमें । महाजन्दा नदी
पश्चिम शोभात्मके प्राय ३० मोस तक प्रवाहित है ।
गाहर, टाङ्गन और सुनमना इसको उपनदियाँ हैं जिनमें
वर्षाकालमें नार्थ या आ सक्ती हैं । धातराई (धात्रेयी),
यसुना और भरतोवा नदियाँ सुरानो तिष्ठामें आ तितो
हैं । बिगत प्रताम्हीमें तिष्ठाका खेत पञ्चमा परिभक्ति त
की कर मङ्गपुत्र नदीमें मिरता है इसो कारण इन सब
उपनदियोंमें वायिष्णवी बहुत पड़विना हो गई है ।

जिल्लेमें सब जंगल विरोधकर करतोया नदीके किनारे बहुतमे गालके पेट पाये जाते हैं। इन सब जंगलोंमें मोटासका बरफ्ट आवे जातो है। कमी कमी अजान-से वे सब पेट पाट कर नदीमें बहा दिये जाते हैं; अन-काठ उतना उमडा नहीं होता है। अरण्यामें मयु, अनल-मूल, गतमूला और जंगला फूल पाये जाते हैं। जङ्गली जमुनीमें बाव, चिता, मृषर, अरना, तरु तरुदे हरिय, वनविनाय, गोडह, नेवनी, लकडुवगवा और नदीमें कुम्हार घाटि देखे जाते हैं। बाव और चिता वनें जङ्गलमें रहते हैं और प्रति वर्ष बहुतमे मनुष्योंकी मार घाला करते हैं। अरना, मूषर और गोडह घाटि इन्व तथा धानके खेतोंमें आ कर बहुत नुकसान करते हैं। जिले भरमें गिकार और पश्यान्व पत्ता तथा तरु तरुको मन्त्रियां पाये जातो हैं। यहाँ कई जगह बहुत बड़े बड़े प्रान्तर पड़ गये हैं जहाँ परगणानकगण बिना करके अपने अपने सबेजोंकी चर्गते हैं।

यहाँकी लोकसंख्या प्रायः पन्ध्र लाख है जिनमें प्रमथ्य जातिका संख्या ही सबसे अधिक है। ये सब प्रायः नितान्त नाचभावने हिन्दू धर्ममें रहनेको अपेक्षा विज्ञता सुसलमानोंके धर्म का आश्रय लेना ही अच्छा समझते हैं और इसीसे यहाँ सुसलमानोंकी संख्या अधिक हो गई है। छोटा नागपुरमें भूमिज, मन्वान, कोल, खरदार, मूँडया प्रादि जातिके लोग यहाँ आ कर सड़क बनाने तथा जंगल काटनेके काममें लग गये हैं। प्रकृत हिन्दूकी संख्याको अपेक्षा हिन्दू सम्प्रदायभुक्त अर्ध हिन्दुओंका संख्या प्रायः दुगुनी है। ये पाली, राजवंयो और कोच प्रादि नामसे मगह्य हैं। कहते हैं कि कुछ कालके लिये ब्राह्मण यहाँ आकर वास करते हैं। अन्यान्य जातिधर्मोंमें राजपूत, कायथ, धोवर, बनियां, दुसाध, मांड, ताँतो, कुम्हार, लोहार, ग्वाला, भंगी और चण्डाल हैं। दिनाजपुर शहरमें ब्राह्मणसमाज स्थापित हुआ है, कई एक राक्षसकर्मचारा इसके उपासक हैं। कुछ हीनो भी यहाँ आ कर बस गये हैं। मिजाजोवो बैरागो ये पाण्डको संख्या भी कम नहीं है, अनेक पालो इस सम्प्रदायके अन्तर्गत हैं। अधिकांश सुसलमानलोग कृषि-वादी हैं, जमींदार या व्यवसायको संख्या बहुत कम

है। अनाजकी कटनेके समयमें कुछ लोग दूसरे जिल्लेमें वहाँ आ जाते हैं, किन्तु दिनाजपुरसे बहुत कम लोग दूसरे स्थानको जाते हैं।

दिनाजपुर जिल्लेमें एक शहर और ७८४१ ग्राम लगेते हैं। अधिकांश अधिवासी कृषिजीवी हैं जो छोटे छोटे गाँवोंमें रहना बहुत पसन्द करते हैं। दूकानदार और कारीगर लोग भी अपने अपने स्वर्चके सुताबिक अपना उपाज करते हैं। धानकी खेती ही यहाँ प्रवाह है, किन्तु उपयुक्त जमान रहने पर घोड़ा बहुत साग तथा फल-मूलादि भी उपजाया जाता है।

यहाँके अधिकांश कृषक बहुविवाह करते हैं। वे बाहरमें खेतों करते और घरमें प्रिया कपड़ा बुनतो, सूत काततो तथा बरके और सभों काम अपने ऊपर ले लेतो हैं। नदीके किनारे बड़ी बड़ा पाटते हैं अर्था धान तथा और तरुके अनाज जमा रहते और वर्षाके आरम्भमें बाव द्वारा दूसरे दूसरे स्थानोंमें भेजे जाते हैं।

धान ही इस जिल्लेका प्रधान गण्य है। ऐमन्तिक, प्राय, बोरो ये ही तीन प्रकारके धान यहाँ बुधा करते हैं। इसके सिवा कुन्डगे, बाजरा, तरु तरुका सरद, तमाकू, पटसन, मरसा, गुंजा, इन्व और धान प्रादि उप-जाये जाते हैं।

दिनाजपुरमें अतिहटि वा अनाहटि प्रादि दुर्घटना प्रायः नहींके बराबर है। वर्षाकालमें नदिया समझ कर बहुत दूर तक जलप्लावित कर देता है सही, किन्तु इससे उपकार नहीं ही तो शस्यका उपकार भी नहीं होता है। केवल १८७३ ई०के सुदीर्घ अनाहटिमें इस जिल्लेमें आमन धान कुछ भी नहीं हुआ था जिसे प्रजाको असोम कष्ट सुगतना पड़ा था। गवर्में रहने रिशोफ कार्य खोन कर इस दुर्भिक्षमें बहुत कुछ सहायता दो।

नदर्न-बदाल टेंट-रेलवेय इस जिले ही कर गया है। इसको एक शाखा दिनाजपुर शहर हीतो हुई गई है। जिले भरमें पकी सड़के हैं। नदी द्वारा वाषिन्वादि चलाता है सही, किन्तु बहुतसी नदियोंमें वर्ष भरमें केवल १४ सहीने तक बड़ी बड़ी नावे जातो आतो हैं।

पड़ले कहा जा चुका है, कि यहाँके अधिकांश अधि-वासा कृषिजीवी हैं, इसीसे शिल्पको उन्नति बहुत कम

इ मोच तथा रोगमयी एक मी खोरी नहीं है। खोरी का कारवार भी खोरी खीरे घटता जा रहा है। ज्वालोय व्यवहारके लिये मोटा कपड़ा कुछ कुछ तैयार होता है। किन्तु खोरी घानकी बनी हुई घटाई बहुत बढियाँ पोर टिकाज होती है।

ऐस खोरीके पक्षी मदी खो कर खो दिनात्रपुर ज़िमेका वाणिज्य होता बा। पसो ऐस खो खानेके व्यवसायको पोर मो लुबिवा खो गई है। चाबन, पटमन, तमाकू, खोनी पोर बमड़ेको रफतगी दूबरे दूबरे खानेमें होती है। चामदनेमें ममक पोर जिनायतो कपड़ा प्रधान है। जिन्के पक्षिम भागसे चाबन खादि मजानन्दामटी खो कर बिहार पोर उत्तर प्रदेशमें भेजे जाते हैं पोर पूर्वी भागसे चाबनद्वारा जिन्नाकी लपमटी तथा मर्दाने बडान-होट-रैलवेय खो कर बमबसे जाये जाते हैं। दोस खानमें व्यापारी कोय मारे जिन्में इधर उत्तर घुम कर चावल बरोगी पोर खने बै जयाऊँ पधवा बैष पर जाद कर पाकूमि अमा रखते हैं। बर्षाखानमें से सब चाबन दूबरे दूबरे देशोंमें भेजे जाते हैं। जिन्में रायगञ्ज मितपुर, चाँदमञ्ज, विरामपुर पोर पतिराम प्रधान हैं। निकमर्दाने नामक खानमें किसी सुसज्जमान खकीरके स्वरचाप प्रति बर्ष एक बीला जगता है जिन्में प्रायः छिटु लाल मनुष्य बन्दे होते हैं पोर भारतवर्षके मित्र मित्र प्राचीनै भाष भे स तथा तब तबके पञ्चद्वय जा कर बंसे जाते हैं। ज्ञानपुर, ठाकुरिन्पी, पोर बसवार खोबा इन तीन खानोंमें मो खोटा मोजा जगता है।

मध्यराति पोर पाठशाखाधोमें सरकारी महायता निचनेको व्यवस्था खो खानेके विद्यापिठाकी कूब लक्षति खो मरी है। प मरीके विद्याके लिये मो नागा खानोंमें खूब ख्यापित हुए हैं।

निम्नवर्षके पपेया दिनात्रपुरका बमबाहु खोतल है। यहाँ विना बमबखानके मीम खोनेसे गरमी नहीं पड़ती है। बैजाब मखीमें १-१११ दिन तक रातको खाकी डफ़ पड़ती है। योतखानमें रातको वाका पड़ता है पोर खबडको खाये पोर लुबिवा जा जाता है जो किना खोरेदबके मूर मजा खोत है। देखा बडा है, जि

पोषकात्ममें यह खान बिनेगिम्बोके लिये स्वास्थ्यर मखो है। वाणिज्य हटियात इइ रथ पोर तागम पा- २२ १ है।

जिन्में नागा प्रकारके खर, खानाखर, खोबा, लदामय, खेय पोर बसल खादि रोग मदा खोते रखते हैं। मखे रियाका प्रादुर्भाव यहाँ खूब पक्षित है। बहुतने पबिवाखो इस रोमके प्रति बर्ष मरते हैं। प गरेज खस पारोमख भी उइ रोगोके पाखान्त हो कर इस खानको खोकुनिमें बाध हो जाते हैं। राजस्थानके परिचालनमें मो बहुत पबुबिवा खो जाती है। परीया करके देखा गया है, कि संकड़े २२ पादमी रुम रखते हैं जिनमेंसे १४ छोडारोगसे। दिनात्रपुर-भुनितिये छिंटोमें मधु-स खा प्रात खजारमें वाणिज्य भागः ३२ मनुष्य खर्वात् लपमनगरके दुगुन होती है। जिसे मरमें खलुसंज्या पोर भी पक्षित है। दिनात्रपुर नगरके सखिबट तथा पन्थाय खानोंमें खब बाहर निशानने, बडख खादि खाटी तथा दातय पबिखाखय खानन खनेको व्यवस्था करके खायोवतिखी पोर विधिये ध्यान दिया जा रहा है। खडगा नहीं पड़ेया, जि दिनात्रपुरकी पबका पक्षीके बहुत कुछ सुधर गई है। दिनात्रपुर नगर, राय-मञ्ज, बुडामन महादेवपुर, बखुरवाड खादि खानोंमें दातय-पबिखाखय है।

इतिहास—दिनात्रपुरका प्राचीन इतिहास मितान्त पसद है। पौराणिककालमें यह खान ज्योतिषिक खानने मयहर या। पोखे इसका कुछ पय मियति पोर कुछ मरैन्द्रमूमे पन्तवत हुआ। प्रवादके अनुसार इस खिन्नेका पबिखाम प्राचीन मखेदेखके पन्तवत बा पोर बिगड राज यहाँ राज्य करते थे। बहुतने लाम इसो मखको महाभारतके बिगड, राजका राज्य बतलाते हैं। किन्तु महाभारत युद्धमें खेड खाना जाता है, जि बिगड का महाभारत उत्तर-पश्चिमखलमें पबलित्त बा, न जि इस पबलति। प्रवाद है दिनात्रपुरमें एक मयब बाब राजा राज्य करते थे। एव खिन्नेक नागा खानोंमें बाबको खोर्तिखा मखाभरीय देखा जाता है।

बहुन दिन हुए जि पराखान्त खोडारामख यहाँ राज्य करते थे। जिन्में खरै जाता खोडारामके प्रजट

निदर्शन पाये जाते हैं। बौद्धधर्मानुगामी पालराजगण इस अक्षयमें राज्यशासन करते थे। उनको कीर्ति आज भी दिनाजपुरमें मौजूद है। पुरातत्त्वप्रमद्वयमें इस विषयकी अलोचना की जायगी। पालवंश देखो।

पालवंशीय राजाश्रीका पराक्रम घट जाने पर यह जिला सेनराजाश्रीके हाथ लगा था। पालवंशकी नाई यहाँ कीई सेन-राज रहते थे कि नहीं, इसका प्रमाण नहीं पाया जाता है। किन्तु यहाँको तपणदेवोत्रेमें लक्ष्मणसेनका ताम्रशासन मिला है। सेनके बाद यह जिला गौड़के सुमलमान अधिपतिके अधिनारमें आया। दिनाजपुरके नाना स्थानोंमें उल्लोख पारभो और अरबी शिलालिपिसे उसका प्रमाण मिलता है। बुकानन साहबने लिखा है, कि गणेश नामके एक राजा यहाँ बहुत प्रबल हो गये थे। आर्देन-इ-अकबरमें इनका नाम कानिग वा गानिस बतलाया गया है। एक समय ये सारे बह्मालके अधीश्वर हो गये थे। अर्हतप्रकाश नामक ग्रन्थके मतसे—मन्त्री नरसिंह नाडियालको सनाहसे राजा गणेश सुसलमान बादशाहकी मार कर गोड़ेश्वर बने थे।

दिनाजपुरके वर्तमान राजवंशका इस तरह इतिहास पाया जाता है।

उत्तरराष्ट्रीय कायस्थवंशमें पूर्वोक्त गणेशके वंशधर विष्णुदत्त नामक एक व्यक्तिको नवाब सरकारसे दिनाजपुरमें कानूनगो-पद मिला। यहाँ भाग्यलक्ष्मी उन पर खूब प्रसन्न हुई। उनके पुत्र श्रीमन्तदत्तन बह्मालके सुबेदार शाह-शुजाके यज्ञ प्रतिष्ठा पाई और चौधरो उपाधि ग्रहण की। उनका एक पुत्र और एक कन्या थी। श्रीमन्तकी मृत्यु के बाद उनके पुत्र हरिचन्द्र मजुमदारने पिल्लसम्पत्ति प्राप्त की। उनके भाँजे शुकदेव अपने मामाकी सम्पत्तिको देख रख करते थे। अपुत्रकावस्थामें हरिचन्द्र चौधरोकी मृत्यु होने पर १५६६ शकाब्दमें शुकदेव मामाकी मारी सम्पत्ति पर अधिकार कर बैठे। उस समय राजमहलमें बह्मालकी राजधानी थी। शुकदेवने राजमहलमें जाकर शाहशुजासे फरमान ग्रहण किया। थोड़े ही दिनोंमें वे विपुल सम्पत्तिके अधीश्वर हो गये। सब कीई उन्हें राजा शुकदेव कहा करते थे। उन्होंने शुकसागर नामकी एक बड़ी दिगी खुदवाई थी। उनको पहली खोसे राम-

देव और जयदेव नामके दो पुत्र और दूसरीमें प्राणनाथ उत्पन्न हुए थे। १६०३ शकमें शुकदेवकी मृत्यु होने पर उनके बड़े पुत्र रामदेवने ३ वर्ष और छोटे पुत्र जयदेवने भी ३ वर्ष राज्य किया। इस समय घोडाघाट परगना उनके अधिकारभुक्त हुआ। १६०८ शकमें प्राणनाथने अपने वैमात्रेय भाईको सम्पत्ति पाई। उनके बिरुद्ध दिल्लीके दरवारमें अभियोग लगाया गया था, इसी कारण उन्हें दिल्ली जाना पड़ा। १६१४ शकमें वे वादशाह आलमगोरके निकट पहुँचे और अपने निर्दोषिता प्रमाण कर उन्होंने वादशाहसे 'राजा' की उपाधि पाई। राहमें हुन्दावनधामकी यमुनाके जलमें उन्हें राधाकृष्णकी एक मूर्ति मिली थी, उस मूर्तिको ला कर उन्होंने उसे अपने घरमें स्थापन किया। मूर्तिको नाम कृष्णो-कान्त रखा गया। उहाँके यत्रसे कान्तनगरमें सुप्रसिद्ध मन्दिर बनाया गया।

इसके सिवा प्राणनाथने और भी कई एक देवालय तथा प्राणसागर नामक एक बड़ा सरोवर निर्माण किया। कान्तनगरका मन्दिर उनके समयमें अधूरा हो रहा। उनकी मृत्युके बाद उनके दत्तक पुत्र रामनाथने उसे पूरा किया।

रामनाथकी कीई कीई रमानाथ भी कहते हैं। १६४१ शकमें राजा प्राणनाथकी मृत्यु होने पर रमानाथ सारी सम्पत्तिके अधिकारी हुए। प्रवाद है, कि उनकी वाणराजाके भग्न मकानमें प्रभूतधन हाथ लगा था, उसीसे उनकी शोहबि हुई थी। इस समय जब सालवाड़ी परगनेके जमींदार राजसूद दे न सके, तब नवाब सुर्मादकुलो खान रमानाथकी सालवाड़ी परगना अधिकार करनेका हुकम दिया। इस पर सालवाड़ीके जमींदारके साथ रामनाथका दो बार युद्ध हुआ। प्रथम युद्धमें रामनाथ जयलाभ कर सालवाड़ीसे कालिका और चामुण्डादेवीकी मूर्ति लाये। दूसरी बार युद्धमें जमींदार सम्पूर्णरूपसे परास्त हुए और सालवाड़ी परगना रामनाथके अधिकारमें आ गया। उन्होंने नवाबके पास अपना विजयसन्वाद और राजसूद भेज दिया। नवाबने सन्तुष्ट हो कर उन्हें करदार परगना प्रेषण किया। १६६७ शककी वे काश्या, प्रयाग, हुन्दावन तथा दिल्लीकी गये। दिल्ली-

हरद्वारमें लखे 'महाराज'की उपाधि, राजोचित खिलौपत धोर धपनी राजधानीमें दुर्ग तथा सैन्य रक्षकोंको पाठा मिली। ये इन्द्रावलीमें एक गोपालमूर्ति प्राये थे। १६७१ शकका गोपालमठमें पथोम मन्दिर निर्मात्र कर उस मूर्ति स्थापित की गई। - बङ्गालमें इस तरहका मन्दिर बिरसा ही है।

इसके पहले इन्हीं राजनागरके बिनारि विताये स्थापित इक्ष्वाकुसिद्धका भी एक सुन्दर शिवालय निर्मात्र किया था। इसकी पत्नीका रामनाथ धोर भी पत्नीक मन्त्रीति कर गये हैं। सुना जाता है कि एक समय एक खलपतक हो गये थे।

उस समय सेयद महम्मद नामक एक व्यक्ति रङ्गपुरकी गोमानारवाये लिए धोरदार निवृत्त थे। महाराज रामनाथने अतुल ऐश्वर्यका परिषय पा कर सुष्ट धोरदारने एक दिन उनके राजप्रासाद पर पादमन्त्र किया धोर उनका सब क्षण लट लिया। रामनाथने धोर पुत्रके साथ मोहिन्दनगर भाग कर पाकरधा की। पीछे बङ्गाधामने बङ्गाल करके लखीमें सुग्रीदाबाद जा लखादारने धोर दारके पत्नीधारको लखा कर सुनाई। सुनादारने सेयद महम्मदको पकड़ लानेके लिए एक सेयदम भेजा। उसी सेयदको उदायताने रामनाथने धोरदार को मार लखा तथा उनके पश्चिमत वातागनादि पक्ष परमने परिवहार किये। पीछे ये सुनादारके निजट नकद साईं चारुलाक हवये धोर सुझा लखाहरत भोज कर उनके प्रीतिमात्रन हुए। रामनाथने चार धोर चार पुत्र, चार लखा धोर चार लमाईं थे। इन्हीं में धपने ममलु इन्धोंने इ बिज अहित करारने थे। पात्र मो राजमन्त्रने धनी प्रथीमें थे चार बिज व्यवहार कीते देखी जाती हैं।

१६८९ शकमें रामनाथ पञ्चलको प्राय हुए। उनके जेठे लो बड़े लड़केकी मृत्यु हुई को। येव तोन पुत्रों में सम्यन्तित्र लिए विवाद उठा। रामनाथके पुत्रने पुत्र लप्यतय विवाह आहादिके बाद जो सन्तु नामिके लिए दिहोको गये, दिनु दुमागावय दिहोटे धोर धानिके बाद जो करदाह-धरने रुझा उननी मृत्यु, हो गई। धर इनके तोषईं भाई बैद्यनाथ निरन्धरके लो धारो

सम्यन्ति परिवहार कर बैठे। उनके समयमें मोरकामिम पञ्चलके मयाव थे। लखाने बङ्गाधाम समयत राजाधो तथा जमींदारोंके प्रति राजल ठहिन लिये दुक्य दिया। जब सेयदनाथ पश्चिम राजल ऐनेकी राजो म हुए, तत्र मोरकामिमने योग्यममने सुहारे धा कर लखे केद कर लिया। इस धनधर पर लखे छोटे भाई कान्धदेवने इष्ट इच्छिया कान्धनेके निजट धपने माम पर सन्तु पानिकी प्रायना की। बैद्यनाथ दुग रक्षकको रियमत टे कर दिनामपुर माम प्राये धोर लखानाथका पञ्चमय लान कर लखे धनत कर दिया। लखे यलने पानन्ध सागर नामक सरोवर, पानन्धसागर धोर माताधामने धाम स सुझ रामदाईना नामक लको धाको धोर १६८७ शकको धपनी राजधानीमें स्थापियाकान्धो ठ निपदका मन्दिर निर्मात्र किया गया।

बैद्यनाथके समयमें दिनामपुरका ऐश्वर्य चरम सोमा तत्र पहुँच गया था। लखे एक भी मन्थान ल को इलो से लखीने राजानाथ नामक एक धातिपुत्रको गोद लिया था। इतिम यवमें लखे निजट राजानाथने 'राजा लखा दुर्'को उपाधि पाई थी। लखीके समयमें दिनामपुर राजकी पवनतिका लुप्तपत हुए। सुधापनके धामाव से इस समय बिजयनधर धरगना छोड़ कर धाका धारो लप्यन्ति भेधो गई। इसो दुःखने राजानाथका प्राधान्य हुए। पीछे लख टनकपुत्र मोहिन्दनाथ लखारिधारो हुए।

इन्हीं इन्द्रावलीमें कुचम युद्ध एक धनोहर मन्दिर निर्मात्र कर राजाधाम रायके नाम पर लखन किया। १७२३ शकको मोहिन्दनाथकी मृत्यु होने पर लखे पुत्र तारकनाथ राजा हुए। महाराज तारकनाथ दिनामपुर जिखीत भागा लखानेमें लको सङ्के धोर दिनामपुर शहर तथा रायगञ्जमें इतक व्यवसाय निर्मात्र कर देगवा बहुत लपकार कर गये हैं। १७८० शकमें धपुसक पवनधामे लखनी धम्य हुई। बाद लखो लो लखामा मोहिनी लप्यन्तिको परिवहारको हुए। लखीने १८०४ ई के मन्थनारने समय बहुत धन दे कर टोन प्रजाजी रवा की थी। लखो धिनो धय दमाधे प्रतापके गव मँथने लखे 'महाराज'को उपाधि दी। इन्हींके यल

से दिनाजपुरमें श्रद्धालु, बङ्गला और ध्यायाम सिखाने-के विद्यालय स्थापित हुए। इन्होंने ही दिनाजपुरके भूतपूर्व महाराज गिरिजानाथ राय बहादुरको गोद लिया था। महाराज गिरिजानाथने ब्रिटिश गवर्नरसे K. C. I. L. को उपाधि पाई थी और वे निखिल भारतीय कायस्थ सम्मेलनके सभापति हुए थे। उनके दत्तक पुत्र वत्समान महाराज जगदीशनाथ राय बहादुर हैं।

पुरातत्त्व—इस जिलेके नाना स्थानोंमें प्राचीन हिन्दू और बौद्ध राजाओंकी प्राचीन कोत्ति और पुष्प स्थान हैं।

बोरगञ्ज थानेके मध्य कान्तनगरके चारों ओरके भूभागको यहांके लोग उत्तरगोख कहते हैं। उन लोगोंका विश्वास है, कि विराटराज यहां गौ चराते थे। बोरगञ्जसे २ कोस पूर्वमें श्रावेत्री नदीके किनारे सनका नामक स्थानमें प्राचीन ध्वंसावशेष देखा जाता है। कहते हैं, कि यहां चांद मोटागरके मटोका दुर्ग था। कान्तनगर और प्राणनगरमें दिनाजपुरके राजाओंके प्रासादका भग्नावशेष है।

रानो शङ्कल थानेके गोरखनाथ नामक स्थानमें एक अत्यन्त प्राचीन शिव और काली-मन्दिर देखे जाते हैं। यहां पत्थरसे घिरा हुआ एक प्रस्त्रवण वा कूप है। कितन ही जल उससे कहीं न खर्च किया जाय, ती भी कमता नहीं है। शिवरात्रिके दिन यहां बहुत भारो उत्सव होता है। इसके निकट रामराय और श्यामरायको प्राचीन कोत्तिके भग्नावशेष हैं।

पोरगञ्ज थानेमें तङ्गननदीके बायें किनारे ईंटोंका टेर देखनेमें आता है। प्रवाद है, कि यहां विराटके समसामयिक महादेवका एक किला था। हिम्मतवादीके निकट मखदुम दीकरपोस नामक एक मुसलमान साधुकी दरगाह है। हजारों मुसलमान यहां साधुकी पूजा करनेको आते हैं।

दीकरपोसकी मस्जिद सुलतान होसेनशाहने निर्माण की है। मस्जिदमें ८८६ हिजरी अद्वित है। हिम्मतवादीके पश्चिम भागमें महेश नामके एक राजा राज्य करते थे। यहांके लोगोंका कहना है, कि बद्रहोन नामक एक मुसलमान पोरके उत्पातसे महेश दाकामें जा बसे। यहां

एक ऊंचा प्राचीन है जिसे लोग होसेनशाहका 'तख्त' वा सिंहासन कहते हैं। वंशावली थानेके उत्तर पूर्व भागमें राजा महोपालकी कीर्ति महोपालदिगो नामक एक बड़ा सरोवर है जो बाध कोस तक फैला हुआ है। जगदन थानेमें नङ्गन और पुनर्भवा नदीमें दलदल ही जानेसे एक झोप हो गया है। इस झोपके मध्य एक सरोवर और एक प्रकाण्ड ईंटिका स्तूप देखा जाता है। इस अञ्चलमें लोगोंका विश्वास है, कि सूर्यवंशीय मायारुद्र राजा राज्य करते थे। गङ्गारामपुर थानेमें दमदमा नामक स्थानसे प्रायः तीन कोस दक्षिणमें अनेक प्राचीन कोत्तियाँ और ध्वंसावशेष हैं जिन्हें लोग बाण राजाकी कोत्ति बतलाते हैं। यहां तर्पणदोघी नामक एक बड़ी पुष्करिणी है। चौहत्तर सालके मन्वन्तरके समय इसके निकट एक छोटा तालाब खोदने समय उसमें महाराज लक्ष्मणसेनका एक खण्ड ताम्रशासन पाया गया था।

प्रवाद है, कि बाणराजा तर्पण करते थे, इसीसे इसका नाम तर्पणदोघी हुआ है। इसके पास ही बाणेश्वर भवन और मुसलमानोंको प्राचीन राजधानी देवकोट अवस्थित है। देवकोटमें मुसलमान राजाओंके समयको कई एक उत्कीर्ण लोपियाँ हैं।

हवड़ा थानेमें विराटपाट नामक ईंटोंके स्तूपसे घिरा हुआ एक प्राचीन स्थान है। यहांके लोग घोड़ी दूरके फासले पर विराटसेनापति मदनके प्रासादका भग्नावशेष बतलाते हैं। इससे भोक्क दूर अनेक प्राचीन स्तूप हैं जिनमेंसे कुछ कोचकके भवन माने जाते हैं। हवड़ा थानेमें करतोया तीर्थ अवस्थित है। किसी योग उपलक्षमें हजारों हिन्दू यहां करतोया नदीमें स्नान करते आते हैं। इस अञ्चलके मुसलमान लोग भी माना उत्सर्ग करके करतोयाके प्रति भक्ति प्रदर्शन करते हैं। इसके सिवा घोड़ाघाट थानेके करतोयामें ऋषिनीर्थ विद्यमान है। हिन्दू और मुसलमानकी कोत्तिके अलावा इस जिलेमें बौद्ध प्रभावके निदर्शन और बौद्ध ध्वंसावशेषको कमी नहीं है। दिनाजपुरके दक्षिण पूर्वांशमें अनेक बौद्ध कोत्तिके ध्वंसावशेष इधर उधर पड़े हैं। इस अञ्चलमें पौरवर्द्धनको प्राचीन राजधानी वर्द्धनकुटी अवस्थित है। पातराजगण यहां राजत्व करते थे। गोविन्द-

मन्थसे १६ कोस पवित्र पहाड़पुर नामक ग्राममें बोर
रूप देखा जाता है। इससे प्रायः ढाई कोस पवित्रमें
'योमो गुफा' नामक विख्यात स्थान है जहाँ पत्थरकी
मायादेवकी मूर्ति देखनेमें आती है। बोर कोमोके
इस पवित्र स्थानमें पूर्व समयमें वैष्णवीन पत्तुसुं
नारायण मूर्ति स्थापन की है। जहाँ बोरको देव
देविबोरकी मूर्तिया और विष्णुप्रसू देवे आते हैं।
येतत्र परगनेमें मो इस तरहके पत्थर हैं। पंचबोरको
जानके उत्तर-पूर्व और पहाड़के प्रायः १४ कोस उत्तर
में तुलसी-मन्थके किनारे निमाईगाड़ नामक पौरके
बानस्वानके समीप बोररूप देखा जाता है। यहाँसे
पांच कोसकी दूरी पर बोरराज महोपासका स्थापित
महोपुर अवस्थित है। योमोगुफाके चारों ओर पत्थर
ज सावनीय हैं। प्रवाद है, कि जहाँ देवपासकी माता
मीमादेवी, चन्द्रपास, महोपास पादिष प्रासाद से।
यहाँसे मोन कोस दूर प्रसिद्ध मुदुलस्थानमें नारायणपास
के समकालीन विनासिपि लक्ष्मी हैं। सधनुष योमो
गुफाके निकटतमती ६ मू प सदुवाटन करनेसे पास-
रात्रापीकी पत्थर कोसिपि पाई जा सकती हैं। जिलेमें
८ चिबिवासठ और कुल १०१४ विद्यालय हैं।

२ दिनात्रपुर जिलेका एक उपविभाग। यह पचा०
२१ १४ से २४ १० और देमा० ८८ २ से ८८
१८ पू०में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ११८४ वर्ग-
मील और जनसंख्या प्रायः ६१२६१० है। इसमें एक
महर और १२२० ग्राम समते हैं।

३ दिनात्रपुर जिलेका एक प्रधान महर। यह पचा०
२१ १८ से २० और देमा० ८८ १८ पू० पूर्वका नदीके
बाजे किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या जनसम बौद्ध
धर्म है। वहाँ १८८६ ई०में म्मुनिमिपैसिठो स्थापित
हुई है। महरमें जिलेके प्रधान कार्यालय, कारागार और
एक बरकारी बार्ड-रूम हैं।

दिनाष्ट (म० पु०) चन्द्रवार, चन्द्ररा।

दिनाती (वि० श्लो०) १ मन्थुरी पादिका एक नाम।

२ मन्थुरीकी एक दिनकी मन्थुरी।

दिनादि (म० पु०) दिनका पादि। प्रमातवाच, चरैरा।

दिनापीय (म० पु०) दिनका पपीय। १ पूर्व। २ चक्र
वृत्त, चाक्र।

दिनात्त (म० पु०) दिनका चत्तः। दिवाचवान, माय
चास, याम।

दिनात्तक (म० पु०) दिन चत्तयति चत्त चिच-चुत्त।
चम्पार, चं चिपारा।

दिनात्रपुर—राजपुर देवे।

दिनात्त (म० पु०) दिनका चारत्त ६ तत्। प्रमात-
वाच चरैरा।

दिनाई (म० पु०) मन्थार, दो पहर।

दिनापयान (म० श्लो०) दिनका पयवान। दिनात्त,
सम्भा, याम।

दिनाका (वि० श्लो०) दिनाकाय तथा पानामकी नदियों
में निकनेवाको एक प्रकारकी मन्थली जो प्रायः चाक्र
भर लम्बी होती है। इतिहासमें यह बहुत पाई जाती है।

दिनाष्ट (म० पु०) म्पांष्ट, सम्भा।

दिनाष्ट (म० श्लो०) मन्थदि, एक प्रकारका मन्थ।

दिनिष्ठा (म० श्लो०) दिन कालकेतु तथा परमत्र इति-
ठन्। एक दिन काल कर्मभूत्त, एक दिनका दिन या
मन्थुरी।

दिनी (वि० वि०) प्राचीन, पुराणा।

दिनेमार—शिराके देवके पवित्राये। प गरीजोमें इन्के डिन
(Dance) कहते हैं। देवार्क देवे। सत्तरहवीं शताब्दीके
चारपये जो दिनेमार लोग भारतवर्षमें बाबिष्य करने
लगे हैं। १६१२ ई०में इनको प्रथम बट इच्छिया लम्पनी
और १६०० ई०में द्वितीय बट इच्छिया लम्पनी स्थापित
हुई। १६१६ ई०में इन्के पौर औरामपुरमें इन्के
श्रीमो स्थापित की। वे दोनों स्थान बहुत दिनों तक
लक्ष्मीके पपीन रहें, परन्तु १८६२ ई०को प गरीजोने
लक्ष्मीके स्थानसे मोच ले लिया। मन्थार प्रेषिठिन्थिसे
पोटंगाम पौर मन्थारके उपभूक्तमें इहोमा तथा जोसवेरी
पादि स्थानमें मो दिनेमारो की कोठिया थी।

शिराके राजाको सहायतामें इस देवमें पहिले पहिल
ईसा वर्षके प्रटेष्टाष्टका मत चलाया गया। जिनेनवाच
और इन्के (Platachau) १७०१ ई०में दिनेमारो के
प्राथम इन्के, जर्मने प्रटेष्टाष्टके मतका प्रचार चारप
किया। इन्के में जो प्रटेष्टाष्टके मत पर लामिल मायामें
लमी मारवक बनाई है।

वज्राल देशमें केरि, मारमंजन, श्रोयार्ड आदि ईसाके प्रचारकोंके नाम विशेष मगझर हो गये हैं। इन्होंने जोरामपुरमें ब्रह्म कर भिन्न भिन्न मापामोमें वादवल्का प्रनुवाद किया। कहना नहीं पड़ेगा कि इन्होंने कितनी पुस्तकें प्रणयन को और विद्याशिखाकी नूतन प्रणाली बदल बदल कर इस देशकी कौंसो उन्नति की। वज्राला भाषामें पुस्तक रूपानेके लिये इन्होंने पहले वज्रोय अक्षर तैयार करवाये थे।

दिनेर (हि० पु०) दिनकर, सूर्य ।

दिनेश (स० पु०) दिनस्य ईशः । १ सूर्य । २ अर्कहृत्, आक, मंटा । ३ सूर्यादि वाराधिपति, दिनके अधिपति यह ।

दिनेश—हिन्दुके एक प्रसिद्ध कवि । ये गया जिलेके टिकारी नामक स्थानमें रहते थे । इन्होंने १८६४ मं'वत्मी' रमरहस्य और नखशिख नामक दो ग्रन्थ लिखे ।

दिनेशपुष्य (स० स्त्री०) कौरव पुष्य, कुमुद, बघोला ।

दिनेशात्मज (स० पु०) दिनेशस्य आत्मजः । १ शनि । २ गम । ३ कर्ण । ४ सुभोव । ५ च्छियां टाप । ६ तापती । ६ यमुना ।

दिनेश्वर (स० पु०) दिनस्य ईश्वरः । १ दिनेश, सूर्य । २ अर्कहृत्, आक । ३ सूर्यादि वाराधिपति ।

दिनौषी (हि० स्त्री०) आँखका एक प्रकारका रोग । इसमें दिनके समय सूर्यकी प्रखर किरणोंके कारण बहुत कम दिखाने देता है ।

दिन्दिगुल—१ मन्द्राकके मदुरा जिलेका एक उपविभाग । इसमें चार तालुक लगते हैं—दिन्दिगुल, पलनी, कोदिकानल और घेरियाकुलम् ।

२ उक्त उपविभागका एक तालुक । यह अक्षा० १०°०' से १०°४८' उ० और देशा० ७७°४०' से ७८°१५' पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण ११३३ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः साढ़े चार लाख है। इसमें एक शहर और २०८ ग्राम लगते हैं । १७८२ ई०में यह तालुक इष्ट-इण्डिया-कम्पनीके हस्तगत हुआ, कोटवर, मागरो आदि कई एक छोटी छोटी नदियाँ इसमें प्रवाहित हैं । इसके अलावा मङ्गलीसे परिपूर्ण अनेक तालाब हैं । सुना जाता है,

कि इन सब पुष्करिणियोंमें पहले मुक्ता और मोप मिलती थी । यहांके उत्पन्नद्रव्योंमें तमाकू, केला और कड़वा प्रसिद्ध है । इस तालुकके अन्तर्गत गुतम और कमलपत्ती नामक स्थानमें लोहेका कारखाना एक समय बहुत समृद्धियाली था ।

३ उक्त तालुकका एक प्रधान नगर । यह अक्षा० १०° २२' उ० और देशा० ७७° ५८' पू०में अवस्थित है । इसका प्रकृत नाम दिण्डु, कल अर्थात् दिण्डु, क नामक दानवका शैल है । यह नगर समुद्रपृष्ठसे प्रायः ८८० फुट ऊँचेमें अवस्थित है और पलनी-पर्वतके कोदारकानाल स्नास्थानवाससे ५४ मील और मदुरामे ३२ मील दूर है ।

अधिवासियोंकी संख्या २५१८२ है जिनमेंसे १८०६० हिन्दू ३१७५ मुसलमान और ३८४७ ईसाई हैं । १८६६ ई०में यहाँ म्युनिमिपैलिटी स्थापित हुई है ।

दिन्दिगुल मन्द्राक प्रदेशके बड़े बड़े शहरोंके साथ रेल द्वारा मयुक्त है । तमाकू, कड़वा, इलायची और पशुचर्म आदि यहाँसे भिन्न भिन्न स्थानोंमें भेजे जाते हैं । पहले यहांके रेशमो वस्त्र और उत्कृष्ट मसलिनका खूब आदर था; कसम्बा नामक ऊनी कस्बल भी बहुत प्रचलित था । सचडिविजनका मदर होनेसे दिन्दिगुल शहरमें समस्त अटालत, पोष्ट-टेलिग्राफ-आफिस, डाक वज्राला, गवर्मेण्ट स्कूल और दातव्य-चिकित्सालय है ।

पहले दिन्दिगुल नगर मदुरा राजाके नाममात्र अधीन एक पृथक् राज्यकी राजधानी था । इसका दुर्ग नगरसे पश्चिम समुद्रपृष्ठसे १२२३ फुट ऊँच एक दुरारोह शैलशृङ्गके ऊपर अवस्थित है और चारों ओर बहुत दूरसे देखनेमें आता है ।

आज भी यह दुर्ग सम्पूर्ण अवस्थामें विद्यमान है । दुर्गका अवस्थान स्वभावतः दुराक्रम और सुदृढ़ है, परन्तु यह मदुरा और कोयम्बतोरके मध्यवर्ती गिरि-धर्मसे रक्षित है । इसी कारण इस दुर्गके लिये कई बार लड़ाई हो चुकी है ।

१६२३से १६५८ ई० तक यह स्थान महाराष्ट्र महिसुर और मदुरा सेनाओंके रणकौशलकी लोलाभूमि हो गया था । उस समय दिन्दिगुलके सर्दारगण प्रायः १८

छोटे छोटे सदरोंके ऊपर पाबिषय कर दी है। चांद साहब, महाराष्ट्रके और महिंदरको सेनापति यदाकाम इस महलको पबिषय किया। १०११ ई०में हैदरअलीने इस दुर्गमें सेनामन्त्रिण्य करके निज माता राज्य स्थापन करकेका सुन्नपात किया। दक्षिणकी ओरसे कोठम्बो-तोरके बाह पबिषयत होनेके कारण हैदरअलीने माह दुर्गमें यह दुर्ग प मरीजो के लिये बहुत पबुविषयजनक को गया था। १०१८ ई०में यह प गरीजो के हाथ लगा, किन्तु १०१८ ई०में पुन, इनसे छोन लिया गया। १०८३ ई०में प मरीजोमें दूखरो बार इये पबिषयत कर १०८३ ई०में महलूरको सन्धिसे पनुवार महिंदरके राजाको पपंय किया। १०८० ई०में पुनः तुडको पबर माहम जोमी पर पदनेकोने इये हस्तगत किया। पन्तमें १०८२ ई०को सन्धिसे पनुवार यह दुर्ग इह इखिया कम्पनी-को दे दिया गया। पहाड़को सबसे ऊ को चोटो पर कई एक प साबिष्ट पुरातन देवमन्दिर विद्यमान है। दुर्ग-के प्राचीरके चारों तरफ १३६० गन्नाहित बिजलनगरके राजा पबुतदेवकी गिर्धानिधि दीयो जाती है।

दिन्दिबरम्—१ मन्दाक प्रदेशके दक्षिण पबार्क जिनका एक उपविभाग। इसमें तीन तालुक लगती हैं, दिन्दिबरम्, तिहबपामलतु और विसुपुरम्। दक्षिण भारतीय ईन्-पह इन तालुक कोकर गया है। इसमें तीन छेदान हैं जिनमेंसे प्रधान छेदान दिन्दिबरम् और गार्ग्य हैं।

२ एक विभागका एक तालुक। यह पचा० १२ २ से १२ २८ ड० और दिमा० ७६ १३ स ८० पू में पबस्थित है। भूपरिमाप ८२६ बर्गमोत और लोअपण्या प्रायः पाड़े तीन स्याथ है। तालुकको पाय ७००००० ब० है।

३ इसी नामके तालुकका एक प्रधान महर। यह पचा० १२ १३ ड० और दिमा० ७८ १८ पू०में पबस्थित है। इनका यह नाम तिबिकुवमम् पयात् इमलीका अहन है। लोअपण्या प्रायः बारह हजार है।

दिन्दीरीं—१ कर्नाट प्रदेशके पन्तमेंत नासिक जिनका एक उपविभाग। इबके उत्तरमें कलकान और लहण्ड पर्वत, पूबमें पन्दोर और निवाड दक्षिणमें नासिक उपविभाग तथा पबिमर्ग लहान्द्रि और पेंड है। परिमापफल ३२८ बर्गमोत है।

इस उपविभागका पबिषय पर्वतमय है, इसीसे बेश गाड़ो आये पागको बहुत पबुविषय है। विपै सायल गिरिवयसे लोकर कलवार तक एक पारवन गिरिवयसे लोकर कलवान तक दो पको सड़के गई हैं। ये साथ पोर मीठ महीमेंमें जयवासु आसुमकर है पोर पूरै समयमें उदरतोयका पूय प्रादुर्भाव होता है।

२ उपरोक्त उपविभागका एक प्रधान नगर। यह नासिकसे १३ मोत उत्तरमें पड़ता है। यहां पदायत, हाथकर हातक बिबिष्यालय पादि हैं।

३ मध्यप्रदेशके मन्डला जिनकी एक तहसील। यह पचा० २२ २६ से २३ २३ स० पोर दिमा० १० २० से ८२ ३३ पू०में पबस्थित है। भूपरिमाप २३२४ बर्ग-मोत पोर लोअपण्या समयम डेढ़ स्याथ है। इबमें ८३३ ग्राम सवते हैं, महर एक मी नहीं है।

दिवापाम (घ० पु०) गार्गीरका एक ग्राम।

दिवालयपुर—१ पन्नाके पन्तमेंत मोप्यमपारो जिनकी एक तहसील। यह पचा० ३० १८ से ३० ३६ स० पोर दिमा० ७३ २५ स ७८ स पू०में पबस्थित है। भूपरिमाप ८८३ बर्गमीन पोर लोअपण्या प्रायः दो स्याथ है। इसमें दिवालयपुर नामका एक महर पोर ३४८ ग्राम सवती हैं। इससे प्रायः ३ प ग्राम बिबिषय होता है यिन भाग परती पोर पनुवर् है।

२ एक तहसीलका एक प्राचीन पौर प् नासिक नगर। यह पचा० ३० ३० स० पोर दिमा० ७३ ३२ पू० पोखारा छेदानके १० मोत तथा पाहपत्तनके २८ मोत दिवान-कोबमें प्राचीन निपाया नदीके बिनारे पबस्थित है। यह दुर्गशापण होने पर मो पहले टिकीके पकान राजाओंके समयमें सुसंहर उत्तर पन्नाकी राजधानी था। सोनहवीं शताब्दीमें मो बाबरने दिवालयपुर नगरकी लोहोरका समयक वध कर लहंय किया है। इहतिरोंका पनुमान है, कि यह नगर शापट देवपान नामक किंको राजाके अर्थात् कृपा जोगा पोर लकीके नाम पर दिया नपुर नाम पड़ा है। किन्तु इसका कोई बिगीय प्रमाय नहो पाया जाता है। प्रवाद है,—इबका पाटि नाम पौपुर था। बिजयपन्द नामक किसी बबिषयने यह नगर स्थापन कर अपने सुबडे नाम पर इनका नामकरक

किया। जनरल कनिंघम साहब कहते हैं, कि यही स्थान सम्भवतः टलेमीवर्षित टैटलनगर होगा। प्राचीन नगर-प्राचीरमें कछो कछो भग्न ईंटोंके साथ शंकराजाशौकी सुद्रा पाई गई है। फिरोज तुगलकने चौदहवीं शताब्दीमें यह नगर परिदर्शन कर इसके बाहर एक मस्जिद निर्माण की और शतद्रु नदीसे खाड़ी काट कर वे नगरके समीप तक जल लाये थे। तैमूरके आक्रमणकालमें यह नगर समृद्धिमें मूलतान छोड़ कर और सभी नगरोंसे बड़ा चढ़ा था, उस समय यहां ८४ बुर्ज, ८४ मस्जिद और ८४ कूप थे। प्राचीन नगरको चहार-दीवारी प्रायः २१ मील लम्बी होगी। इसके बाहरमें भी बहुत दूर तक भग्न ईंटोंका स्तूप देखनेसे मालूम पड़ता है, कि प्राचीरके बाहर बहुत मनुष्योंका वास था। अभी उस विस्तीर्ण नगरका ध्वंसमात्र रह गया है। वर्तमान दिपालपुर-नगर प्राचीन नगरके ईशान-कोणमें नदीके दूसरे किनारे अवस्थित है। नदीके ऊपर तीन गुम्बजका एक पुल है। यह नगर किस कारण परित्यक्त तथा विनष्ट हुआ इसका पूरा पता नहीं चलता है, लेकिन अनुमान किया जाता है कि विषाशा नदीका पुरातन स्रोत सुख जाना ही इसका एक कारण है। अंगरेजोंके अधिकारमें आने पर खाड़ी आदि मरम्मत को गई जिससे दिपालपुरके प्राचीन वाणिज्यको कुछ तरकी हुई है। यहां तहसिल-को अदालत, थाना, सराय, स्कूल, चिकित्सालय आदि हैं।

दिपालपुर—मध्यभारतके अन्तर्गत इन्दौर तथा होलकर-राज्यका एक शहर। यह अक्षा २२° ५१' उ० और देशा ७५° ५५' पू०में अवस्थित है। शहरके पूर्वमें एक बड़ी पुष्करिणी है।

दिम्पु (सं० वि०) दम्भ सन् उ छान्दस न भव् । दम्भेच्छु, जो हानि वा कष्ट पहुँचाने वाहता है।

दिव (हि० पु०) निर्दिपिता या अपने कथनकी सत्यता प्रमाणित करनेकी परोक्षा, जैसे, अग्निपरोक्षा।

दिमंकरसी (हि० वि०) एक सो दो। इसका व्यवहार छोटे छोटे लड़के पहाड़में करते हैं, जैसे सत्तरह छके दिमंकरसी।

दिमाक (हि० पु०) दिमाग देखो।

दिमाग (अ० पु०) १ मस्तिष्क, निरंका गूदा। २ अभिमान, घमंड, श्रेष्ठो। ३ मानसिक शक्ति, बुद्धि, समझ।

दिमागचट (हि० वि०) जो बहुत अधिक बकवाद करके दूसरोंको ध्याकुल कर देता है, बक्को।

दिमागदार (फा० वि०) १ जिम्मेकी मागयिक शक्ति बहुत अच्छी हो। २ अभिमानो, घमंडो।

दिमाग-रीशन (फा० पु०) नास, सुँघनी।

दिमागो (फा० वि०) दिमागदार देखो।

दिमापुर—आसाम प्रदेशके अन्तर्गत शिवसागर जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा २५° ५४' उ० और देशा ८२° ४४' पू०में घनेश्वरी नदीके किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५६६ है। पहले यहां कछाड़ राजाशौकी राजधानी था। अब यह जङ्गलमें परिणत हो गया है। आज भी घने जङ्गलमें जहाँ तहाँ बड़ो बड़ी पुष्करिणी और दुर्गके प्राचीर-सा ध्वंसावशेष देखनेमें आता है। कुछ समय पहले जब यहां दिमापुर ग्राम और बाजार स्थापित हुआ, तब उस समय यहां एक आदमी भी नहीं रहता था। इस ग्राममें अनेक निर्मल जलपूर्ण सुन्दर सरोवर विद्यमान हैं और विस्तीर्ण दुर्गके प्राकारका स्पष्ट चिह्न आज भी दोख पड़ता है। ऐसा अनुमान किया जाता है, कि सत्त प्राचीर ईंटोंका बना था और कमसे कम ८ हाथ ऊँचा और ४ हाथ चौड़ा था। ईंटोंका बना हुआ सुदृढ़ फाटक और उसकी पत्थरकी चौखट आज भी दोख पड़ती है। किन्तु काठका किवाड़ बहुत दिन पहले लुप्त हो गया है। प्राचीरसे ईंटों गिर कर नीचे दोनों बगल टेर हो गई हैं और उसके ऊपर कई तरहको तरलतादि चपक गई हैं। दुर्गका परिसर दोनों तरफ प्रायः ८०० गज है जो बहुत कुछ समचतुर्भुज क्षेत्रके औसा मालूम पड़ता है। नदीको और प्राचीरके निकट खाई नहीं है, किन्तु नदीके विपरीत और गहरी खाईका चिह्न देखनेमें आता है। दुर्गमें तीन छोटी छोटी पुष्करिणियोंका गर्भमात्र रह गया है। फाटकके भीतर बायीं ओर बहुतसे पत्थरके स्तम्भ एक ओरमें खड़े हैं। कहना नहीं पड़ेगा, कि यही स्तम्भ यहाको प्राचीन कौन्सियोंमें सबसे अधिक कौतुहलोद्दीपक और विस्मयजनक हैं। बड़ेसे बड़े

द्वाराको क बाई १३ फुट धीर छोटेने छोटेको ८ फुट १
रख है। गिन द्वाभ १२से १३ फुट तथा परिधि १८से
२० फुटके भीतर हो हैं। इनको पाचारण गठनप्रधानो
एक ही होने पर भी ये एक समान दोष नहीं पड़ते।
प्रत्येककी गठन धीर छोटाईमें कुछ विभेदता है। जिस
उद्देश्ये ये सब स्तम्भ बनाये गये थे, उधरका अनुमान
करना कठिन है। इनको पथमान क बाई धीर ऊपरमें
काचकाब रहनेपर भी ये प्रासादादिदि स्तम्भके मासूम
नहीं पड़ते। बहुत पक्कीसे यह स्थान अलग्ग्य हो
गया है धीर यहाँके राजत य मित् भिन्न स्थानोंमें जा बसे
हैं। सुतरां इन सब प्राचीन कीर्तियोंके विषयमें किसी
तरहका विचारवशेष प्रवाद भी नहीं है धीर न तो
कहाँ कोईलिपि भी पाई जाती है। सम्प्रति कई एक
स्तम्भोंका निबटवर्ती स्थान अङ्गुल खाट कर परिष्कार
किया गया है धीर सब जगह दुर्गम परच्छ है।

पमो यहाँ एक सुसिद्ध फाउण्टेन-घोष्ट रह गया है। बने
प्रती नदी जो कर नावको जाने पानेको सुविधा होनेके
बहाँ नायाधीके साथ कुछ कुछ बाधिय्य व्यवनात
बसता है।

दिय (द • वि •) द्वेष्ट इवो • साह । टोय, टोने घोम्य ।

दियट (दि • खो •) धीरट देकी ।

दियघ (दि • घु •) एक प्रकारका पक्वान । मीठा मिल्ते
हुए पाउनेको लोई बनाते हैं धीर उसके बीचमें च गूठेके
सहा करके जो वा लोके तल कर बनाते हैं । सहा करने
पर इसका पाकार दीबे-भा हो जाता है इसीमें इसका
नाम दियघ पड़ा ।

दिवार (दि • खी •) पैसक देको ।

दिया (दि • घु •) टीया देकी ।

दिबागत (दि • खो •) दवागत देको ।

दियागतदारो (दि • खो •) दवागतदारो देको ।

दियावतो (दि • खो •) दोया बलामेका नाम ।

दियारा (धा • घु •) १ लदीके दूध जामे पर किगारेमें जो
कसोम निबन पातो है उसे दिबारा कहते हैं, कबारा,
आहर । २ प्रदेय, प्राक्त, दवार ।

दियाबनाई (दि • खो •) काठको बह बलाई को रगड़ने
के अर्थ कहती है । यह माय एक च गुल वा कपड़े को

कुछ काम संझी होती है । इससे सिरे पर गम्बक पादि
कई कामकनेवाले मसाले लमी होते हैं जिसमें रगड़
पहु करनेसे पाग निबन पातो है । जिस सनाईके सिरे
पर ग पथ रहतो है, वह हरएक जड़ो खोज पर रजकनेके
कल कहतो है । किन्तु दूसरे तरहकी मसालेयुक्त सनाई
विशिष्ट मसालोंसे लमी हुए तल पर जो रगड़नेसे अकता
है । धाम वा चिनगागोसे यदि लम्बा धारा ध्याय कराय
थाय, तो भी सनाई अल कहती है । लकड़ोंके पनावा एक
धीर प्रकारकी सोमको बनी हुई दियासलाई होती है
जो लकड़ोंको सनाईसे पक्क समव कहती रहती है ।
प्रायःलक वैज्ञानिकों द्वारा जागज पादिको भी सनाई
बनाई गई है । धाय सुकवाने धीर होया जमानेमें इसका
व्यवहार होता है ।

दिर (दि • घु •) धितारका एक मोल ।

दिरम (ध • घु •) १ मिश्र देशका पदोका विद्या । २ एक
तौल जो लकड़ें तोम माथीकी मामो कई है ।

दिरमामो (धा • घु •) बिबिधक, वैद्य ।

दिरधम (धा • घु •) दिरम नामका विद्या ।

दिरिपक (स • घु •) कन्दुक, मीट ।

दिरस (दि • घु •) एक प्रकारकी लीट जो मजोम कपड़ों
पर चढो होती है, दरिष । २ जोक करनेकी शिष्या ।
(वि •) १ दुबसा, सेंस, ठोक किया हुआ ।

दिरम (दि • घु •) दिरम देको ।

दिब (धा • घु •) १ कपिजा । २ मन, हृदय, चित्त ।
३ प्रवृत्ति, रच्छा । ४ साहस, दम ।

दिलमोर (धा • वि •) १ लदास । २ दुग्धो, घोडाहुल ।

दिलमोरो (धा • घु •) १ लदामो । २ दुग्ध रज ।

दिनगुरदा (धा • घु •) साहस दिबन, बहादुरो ।

दिनबना (धा • वि •) १ साहसो, दिसेर । २ गूर, बीर ।
३ दाता, दानो । ४ पायल ।

दिलबल्य (धा • वि •) चित्तार्थक, मनोहर ।

दिलबलो (धा • खी •) १ दिलका नाम । २ मनो
रक्षण ।

दिलधोर (दि • वि •) जो पक्को तरह काम नहीं करता
हो, कामधोर ।

दिलधमई (ध • खो •) धलोय, लघुको ।

दिलजला (हि० वि०) अत्यन्त दुःखी, जिसका दिल जला हो ।

दिलदरिया (हि० पु०) दरियादिल देखो ।

दिलदरियाधा (हि० पु०) दरियादिल देखो ।

दिलदार (फा० वि०) १ उदार, दाता । २ रसिक । ३ प्रेमी, प्रिय ।

दिलदारो (फा० स्त्री०) १ उदारता । २ रसिकता । ३ प्रेमिकता ।

दिलपसन्द (फा० वि०) १ मनोहर, उमदा । (पु०) २ एक प्रकारका कपडा जो फुलधर या चुनरोकी तरह होता है । इस पर बेलवूटे आदि छपे हुए होते हैं । ३ एक प्रकारका आम ।

दिलवर (फा० वि०) प्यारा, प्रिय ।

दिलबहार (फा० पु०) खश खाशो रंगका एक भेट ।

दिलरुवा (फा० पु०) वह जिससे प्रेम किया जाय, प्यारा ।

दिलवन (हि० पु०) एक प्रकारका पेड़ ।

दिलवाना (हि० क्रि०) दिलावा देखो ।

दिलवारा (दैलवाडा)—राजपूतानेके अन्तर्गत उदयपुर राज्यका एक शहर । यह अक्षा० २४°४७' ७" और देशा० ७१°४४' ५०" उदयपुर शहरसे १४ मील उत्तरमें अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः २४११ है । उदयपुरके कई सामन्त सरदार यहाँ वास करते हैं । नगरके दक्षिण एक पहाड़के ऊपर उन लोगोंके भवन हैं । इसमें शीर भी कुछ दक्षिण १००० फुट ऊँचे आवूँ पहाड़के ऊपर जैनियोंका विख्यात दिनवारा मन्दिर अवस्थित है । यह जैनियोंका पवित्र स्थान माना जाता है । पहले यहाँ शिवरूपादिके मन्दिर थे ऐसा प्रतीत होता है, किन्तु उनका एक चिह्न भी रह न गया है । इसमें दस ग्राम लगते हैं । यहाँके राजाकी उपाधि 'राजाराना' है । यहाँकी आमदनी ७२०००, रु० है तथा ४६००० रु० दरवारको करस्वरूप देने पड़ते हैं ।

दिलवाला (फा० वि०) १ उदार, दाता । २ बहादुर, साहसी ।

दिलवैया (हि० वि०) जो दूसरेको दिलाता हो ।

दिलवा (हि० पु०) दिला देखो ।

दिलद्वार (हि० वि०) दिलेदार देखो ।

दिलाना (हि० क्रि०) १ देनेका काम किसी दूसरेमें कराना । २ प्राप्त कराना ।

दिलारखाँ—जहाँगीरके दो सेनापति । उनमेंसे एक ५००० और दूसरे ७००० सैन्यके अधिनायक थे ।

दिनाराम—एक हिन्दी कवि । इनकी कविता सराहनीय होती थी । ये १७७५ म०में विद्यमान थे ।

दिभाल—मेघना मुहानेके सन्दीप नामक हीपका एक सुसलमान दस्युराज । इसको दस्युवृत्ति करनेके लिये अनेक बतनभोगो सेनाएँ थीं । इसका ख्याल था, कि विभिन्न जातीय स्त्री पुरुषोंमें विवाह यादो करनेसे जो सन्तान जन्म लेती है वह बहुत मजबूत होती है । इसी धारणाके अनुसार इसको अधिकारमें जितनी जाति वा सेना थीं, उनमें परस्पर आदान प्रदानकी प्रथा इसने जारी कर दी थी । वह यह भी कहा करता था, कि हिन्दू जो इतने दुबले पतले मालूम पड़ते हैं इसका कारण यही है, कि वे केवल अपनी ही जातिमें आदान प्रदान किया करते हैं । बङ्गालके नवाबको सेनासे पकड़े जाने पर यह मुर्शिदाबादको लाया गया था । यहाँ लोहेके पिंजरेमें कुछ काल कैद रह कर पञ्चत्वको प्राप्त हुआ ।

दिलावर (फा० वि०) १ शूर, बहादुर । २ उकाही, साहसी ।

दिलावर—पञ्जाबके अन्तर्गत बहवलपुर राज्यका एक दुर्ग । यह अक्षा० २८°४४' ७" और देशा० ७१°१४' ५०" पंचनदीके बायें किनारेसे ४० मील दूर मरुभूमिमें अवस्थित है । कहा जाता है, कि ८४३ ई०में घेड़ा सिन्धु भाटने इसे निर्माण किया । १७४७ ई० तक यह दुर्ग जयशालमेरके राजाओंके अधिकारमें था, उसी वर्ष दाउदके लड़कोंने इस पर अपना अधिकार जमा लिया ।

दिलावर खाँ—मालव प्रदेशके सुसलमान राजवंशके आदिपुरुष । इनकी माता सुलतान शाहउद्दीनके वंशकी थी । हिन्दू राजाओंके अधःपतन होने पर १३१० ई०में दिल्लीपति गयासुद्दीन बलबनके समयमें सुसलमानोंने मालव देश पर चढ़ाई कर उसे जीत लिया । उसी समय मालवने दिल्ली-सम्राट्की अधीनता स्वीकार कर ली । अन्तमें १३८७ ई०को महम्मद शाह तुगलकके राजत्व-

कासमें दिखाकर खाँ मानकके शासनकर्ता नियुक्त हुए। १३१८ ई० में तैमूरलङ्गने जब दिल्ली पर चढ़ाई की, तब पञ्जाब मध्यप्रदेश भाग कर लगभग ३ वर्ष पक्षे गुजरातमें और दोबे मासवर्षमें रह्ये थे। १३०१ ई० में जब पञ्जाब दिल्लीकी ओर तब दिखाकरने अपने समानदर्शके बीच मासव-राज्य विभाग कर कर्ने बहाका सामक राजा बनाया और भाग खाओन को कर राख करने लगे। बारा मगरमें उनको राजधानी थी। माण्डुनगरमें भी ये बहुत बाल तक रह्ये थे।

राजा होनेके कई वर्ष बाद १३०५ ई० में दिनाबर खाँको मृत्यु हुई। बाद उनके लड़के पाठ्य खाँ राज-मि शासन पर बैठे। दिनाबर खाँने जोधे उनके न शीय ११ राजाओंने मासवदेशमें राज्य किया। जोधे हुमायूँ के पुत्र बीरबर पञ्जाबमें मासव देशको जेत कर कर्ने दिल्लीके सुलत खाँब्याख्से मिला लिया।

दिलोप (स० पु०) सूर्यवंशीय सुयवियेय। सूर्यवंशमें दिल्लीय नामक दो राजा थे। इतिहासमें इन दोनों का विषय इस प्रकार लिखा है—राजा समरके पुत्राँमिसे पाँच पुत्र सुयोके पचोखर हुए। इन पाँचोंमें एकका नाम अरम अरम बा। अरम अरमके पुत्र अरमान और अरमानके पुत्र दिल्लीय थे। इनका कुमरा नाम बहाइ मो बा। इन्होंने सुइतकाकके लिए कर्नेके था कर मर्ककोकमें अरम अरम किया था। किन्तु इतने ही समयके मध्य इन्होंने मर्कअरम और हुइके समरके दिल्लीक का अनुष्ठान कर लिया। मगीरक इन्होंने पुत्र थे। दोबे इन्होंने सूर्यवंशमें महाराज अरममिसेके दुसिपुत्र नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। अरममिसे सब विधाविगारद ने। इनके भी पुत्रका नाम महाराज दिल्लीय था। ये दिल्लीय रामचन्द्रके प्रपितामह और इइके पिता थे। इन्होंने अपने बाल्यकके अवधिमें राजधानी नाई। (इतिहास १५५)

मिहसुराचके मतासुराच मध्यम अरमके पुत्र अरमान अरमानके पुत्र दिल्लीय और दिल्लीयके पुत्र मयोरय थे। जोधे इन्होंने सूर्यवंशमें ऐश्वर्यमि नामक राजाके औरके दिल्लीय अरम अरम किया। ये बहाइ नामने मो अरम थे; सुइतकाकके लिए ये अरमके मर्ककोकमें पावे थे। इन्होंने एक और हुइके अरमके लोनी लोनी तथा लोनी अरमके

को जेत किया था। इनको पुत्रका नाम रहु था। ये जो रामचन्द्रके प्रपितामह थे। (हिंमसुराच ११५०)

महाकवि खाँमिदासने अपने रचुन अरम दिल्लीयका विवरण इस प्रकार लिखा है—राजा दिल्लीय एक बार अरमके मर्ककोकमें अपने छोने मिशनेके लिए पावे समय अरमके गो सुरमिओ पूजा करना मूल मने थे। इसलिये उनमें दिल्लीयको भाप दिया कि, 'जब तक तुम मेरी मन्दिओको सेवा न करोगे, तब तक तुम्हें पुत्र न होमा।' बहुत दिनों तक खोई संस्तान न होनेके कारण राजा बड़े चिन्तित हुए, जोधे पञ्जेके साथ कुनगुद मयिउओ अरममें पड़्ये। अरम मयिउओ भोगअरमके मासुम हुआ कि सुरमिओ पचइका करना ही संस्तान नहीं होनेका मूल कारण है इसलिये उन्होंने राजाने मन्दिओको सेवा करनेको कहा। राजा मो अरमअरमके ही सुरमितमया मन्दिओको सेवा करने लगे। एक बार एक धरम मन्दिओको आना पाया। दिल्लीयने उसको रखाके लिए अपने पापको उस धरके पागे आत दिया। इस पर मन्दिओ बहुत प्रसन्न हो गई और उसने राजाको कर दिया। उस वरके लगे एक मुक्त उत्पन्न हुआ जिनका नाम रखा गया रहु। रहुके जो नाम पर रहुम अ नाम अरम हुआ है। दिल्लीयको पञ्जेका नाम सुदविचा था। रहु जब बड़े हुए, तब दिल्लीयने उन पर राज्यमार सोय अ शारका आग किया।

दिलोप—इन्दोके एक समसिध कवि। ये जैनपुर नामक यामने रहते थे। इन्होंने स वन् १२१६ में रामाचक टीका नामक एक पुस्तक लिखी।

दिलोपराट (स० पु०) दिल्लीय एक राट, राजा। दिल्लीय राजा।

दिलीपसिध—दिलीपसिध देखो।

दिलोर (स० ली०) योमय अरम गोबर अता, सुईपौड़।
दिलेर (फा० मि०) १ शूर, मोर। २ साइमी, शिष्यता।
दिलेरो (फा० ली०) १ बीरता बहादुरी। २ साइम, शिष्यता।

दिल्ली (फा० ली०) १ दिन अरमनेको किया। २ चिह्न बिनोद का अरमने अरमनेको बात, अहा हुमायूँक, मसकरी।

दिल्लीगोवाज़ (फा० पु०) वह जो हंमो या दिल्लीगो करता हो मसखरा, मखोलिया ।

दिल्लीगोवाज़ी (फा० स्त्री०) दिल्लीगो करनेका काम ।

दिल्ला (हि० पु०) क़िवाड़के पक्षमें नक़्शेका एक विशेष चौखटा बना या लड़ दिया जाता है ।

दिल्ली—पञ्जाबके अन्तर्गत एक भूभाग । यह अक्षा० २७° ३८' से ३१° १८' उ० और देशा० ७४° २८' से ७४° ४०' पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण १५३८५ वर्ग-मोल और लोकसंख्या प्रायः पांच लाख है । इस विभागमें दिल्ली, गुरुगांव, कर्णाल, हिस्सार, रोहतक, अम्बाला और सिमला नामके ७ जिले लगते हैं ।

२ पञ्जाबके लाटके शासनावेन उक्त दिल्ली विभागका एक जिला । यह अक्षा० २८° १२' से २८° १४' उ० और देशा० ७६° ४८' से ७७° ३' पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण १२८० वर्गमोल है । राजा दिलुवा धिलुके नाम पर इस जिलेका नाम पड़ा है । इसके उत्तरमें कर्णाल जिला, पश्चिममें रोहतक, दक्षिणमें गुरुगांव जिला तथा पूर्वमें यमुना नदी है । यमुनाके उत्तर-पश्चिम प्रदेशके अन्तर्गत मोरठ और बुलन्दशहर जिला पड़ता है ।

दिल्ली जिलेकी एक और यमुना नदीका अववाहिकास्थित पञ्चनमय उर्वरा प्रान्तर और दूसरी और राजपूतानेकी पर्वतश्रेणीकी उपकरुण्य शैलमाला है । इस कारण जिलेकी भूमिको प्रकृति भी विचित्र है । इसका उत्तर-भाग शतद्रु नदीके दक्षिण तीरवर्ती है । निम्न-प्रान्तर प्रायः लज्जुल्य और अनुर्वर है, पर इसके मध्य ही कर यमुना खाई गई है, इसीसे जहाँ तहाँ जल जमा हो कर कोई हानि नहीं करता अबवा जमीनके नमक निकल कर उद्विष्टका भो सतना सुकसान नहीं करता है । ऐसे स्थानोंमें फसल भो अच्छी लगती है । इस अंशमें केवल यमुनाकी तीरवर्ती भूमि स्वभावतः बहुत उर्वरा है । पहले यमुना नदी इस अंशके ५ कोस पश्चिममें जिम स्थान हो कर बहती थी, अब भी वहाँ नदीका कंचा तट साफ साफ दिखाई पड़ता है । क्रम-क्रमसे यमुना नदी हट कर वर्तमान स्थान पर आ गई है और वहाँ एक यह विश्वीर्य चर वा भरना क्रमशः

छोटा हो कर दिल्लीसे एक मील उत्तर मेवातगैलकी एक शाखासे प्रतिहत हो कर प्रवाहित होता है । यह प्रस्तरमय शैल प्रायः यमुनाके गर्भ तक विस्तृत है । परवली पहाड़की एक शाखा दिल्ली जिलेके दक्षिणकी ओर गुरुगांव होती हुई तीन मील प्रशस्त मानभूमिमें परिणत हो गई है और दिल्ली नगरसे १० मील दक्षिणमें दो भागोंमें विभक्त हुई है, जिनमेंसे एक भाग उत्तरकी ओर दिल्लीके पश्चिमसे आकर अन्तमें यमुनातीरस्थ प्रान्तरमें विलीन हो गया है और दूसरा भाग दक्षिण-पश्चिमकी ओर घूम कर पुनः गुरुगांव जिलेमें प्रवेग करता है । यह मालभूमि कियो जगह भो समतल भूमिसे ५०० फुट अधिक ऊँची नहीं है, किन्तु उसमें कहीं भी जल नहीं देखा जाता है । थोड़ी जमीन ऐसी है कि समतल होने पर भी जलके अभावसे वहाँ कोई फसल नहीं लगती । उसमें केवल घास आदि उत्पन्न होती है । पशुचारणके सिवा वह स्थान और कियो काममें नहीं आता है । वर्षाकालमें पहाड़का जल बहुत वेगसे नीचेकी ओर समतल प्रान्तरमें आ कर जमा हो जाता है और इसीसे आम पाषाणकी जमीन उर्वरा हो जाती है । जिलेके दक्षिण-पूर्वमें नाजफगढ़ नामक एक विस्तीर्य छिछला जलान्य है । भाद्र तथा आग्नि मासमें यह जलवायव प्रायः ४३।४४ वर्गमोल तक फैल जाता है । दिल्ली प्रवेग होनेके पहले हो यमुनाका अधिकतम जल पूर्व और पश्चिम-खाई हो कर बह जाता है । इसी कारण यहाँ आ कर यमुना सूख जाती है और वर्षाकालके सिवा दूसरे सभी समयमें पैदल पार कर सकते हैं । फिर भी दिल्लीके नाचे ओखला शहरके निकट यमुनाका अवशिष्ट जल आगरा खाई हो कर बह जाता है । इन सब खाइयों हो कर बह जानेसे यमुना अिलकुल सूख जाती है, किन्तु बाँध तथा बालूकी राशिके नीचे हो कर बहुत जल निकल कर जमा हो जाता है । इसी कारण स्रोत कुछ कुछ चपता रहता है ।

इस जिलेका इतिहास प्रधानत दिल्लीनगरके इतिहास-सेही संसर्ग रहता है । सुतरां वह उसी स्थानमें लिखना उपयुक्त होगा । अति प्राचीन कालसे ही यह स्थान भारतवर्षीय महावल पराक्रान्त एक राजचक्रवर्तीकी

समय राजधानी को हार या रक्षा है। वर्तमान दिहो नगर जिस स्थान पर अवस्थित है; उसकी चारों ओर प्रायः १०।१२ मीलकी मज्जा से नगर राजधानी एकाधिक बाट दूरी की प्रादि ज्वालने स्थापित हुई है। प्राय भी बहुतसे मन्त्रस्तुति के लक्ष्मणों से देखे जाते ओर से प्राचीन राजधानीका सोमनाथ तथा मन्त्रिणी धोषका शरती हैं। इसका प्रति प्राचीन नाम इन्द्रपुर्य है। पाण्डव लोग यहाँ था कर रहे थे। कुष्माण्डकी मन्त्रिणी बाट के इन्द्रपुर्य नगरी भारतवर्ष के पश्चिमीय राजधानीकी बुधितरकी राजधानी हुई। एतदपत्त है।

बुधितरके बाट उनसे व गंधी तोष पुष्टों वा पोड़ि योनि इन्द्रपुर्यमें राज्य किया। पीछे पाण्डव-राजमन्त्रीने मिश्रामन पश्चिमार किया। विमर्षके व शरतीके १०० वर्ष राज्य करनेके बाद एन्द्रपुर्य योतमराज इन्द्रपुर्यके मिश्रामन पर बैठे। इस जिलेके साथ समस्त पार्श्वगत यथाक्रमके दिहो, पट्टन, सुगन ओर पत्तन महाराष्ट्रोंके राज थाया। १८०३ ई०में काठं निकली विमर्षके बाद दिहो पट्टरीके हाथ प्राई ओर सम्यिके द्वारा तात्कालिक सुगन राजधानी दिहो-नगरके उत्तर-दक्षिण समुनाके पश्चिम तीरसे विष्णुके मूर्च्छण पट्टरीके दिवा मवा। पट्टरीके मन्त्री एतमें सम्राट् याइ पातमकी महाराष्ट्रोंके हाथ से बचाया वा, इस कारण उनसे वर्षके सिने सम्राट् में उक्त वर्तमान दिहो ओर विमर्ष जिलेका पश्चिमीय पार्श्व किया। पट्टरीके वर्म चारोमके सम्राट्के नाम पर दिहो प्रदेशमें राज्य करने लगे। किन्तु बहुमयदु प्रादि कई ज्वालने राजा प्राचीन मावसे अपना अपना राज्य शासन करते थे। सिद्धिन्तु इम तरह शासनकार्यमें बहुत दो विप्लवका उपस्थित हुई। अन्तरी १८१२ ई०में एक पार्श्वक द्वारा दिहोका वैपिष्ट्य ओर बीच कमिन्तरका एक छटा दिया गया तथा शासनका भार एक कमिन्तरके हाथ से कर धारणा-बाइकोटके प्राचीनरुच किया गया। पहले बादसे दो दिहोप्रदेश यथाक्रम में इह-दक्षिणा मन्त्र शक्ति पश्चिमीय था गया। तभीसे ही कर १८२० ई०में सिपाहीविद्रोहके समय तक यह प्रदेश कुम्भप्रदेशके पत्तमूर्ख रहा। १८२८ ई०में दिहो-जिला पट्टरी पत्तन ल कठित हुआ। उस समय वर्तमान रोहतक जिलेके

कई माग इवर्ष पत्तमूर्ख थे। पीछे अर्थात् जिलेके पत्तमूर्ख पाणोपत तहसीलके पश्चिमांत तथा बहुमयदु राज्य समय इसके पत्तमूर्ख सिने गये। सिपाही विद्रोहके समयमें समस्त जिला विद्रोहियोंके हाथ था मवा था तथा उत्तरीभाग पट्टरीके पुनराधिहार करने पर भी जब तक दिहो नगर मन्त्र्य के रूपसे पट्टरीके हाथ न थाया, तब तक वे दक्षिणभागमें पुनराधिपत्य स्थापन कर न सके थे। १८२८ ई०में सिपाहीविद्रोह के समय जिले पर दिहो जिला पट्टरीके मन्त्रिणीके नवोपाधिक पत्तमूर्ख प्रदेशके सिटि काठके पत्तमूर्ख किया गया। बहुमयदुके राजा राजविद्रोहियोंके पदपार्श्वमें दक्षिण होने पर, उनका राज्य एक नूतन तहसीलके रूपमें दिहोके जिलेका पत्तमूर्ख हुआ ओर समुनाके पूर तीरके पूर परगना नामक भूभाग कुम्भ प्रदेशके पत्तमूर्ख किया गया। कुछ दिनोंके बाद मिश्रामन नूतन दिहोके सम्राट् र गूणको निर्वासित हुए अर्थात् १८२२ ई०में उनका दिहस्त हुआ। सम्राट्को स्वागतात् रित करनेके बादसे दिहो जिलेमें एक प्रकारको शांति विराजती है।

जिलेमें ३ मण्डल ओर ०१३ पामणत हैं। लोक संख्या प्रायः सात लाख है जिलेमें दिहो २१०१२२ सुमनप्राय १६०२८० ओर जैन ३०२६ हैं। इनसे सिवा यहाँ सिख, पारसी, ईसाई तथा अन्धकार वर्मावस्थाके लोग वास करते हैं।

इस जिलेमें जितने जातियाँ वास करते हैं उनमेंसे जाटगण ही प्रधान हैं तथा उनको म क्या भी सबसे अधिक है। दिहोके उत्तरमें पश्चिमीय भूमि एकी जातियोंके अधिकारी हैं। किन्तु बहुत प्रगल्भे जाटगण भी अधिकारी हैं। पण्डित स्वामीके जाटोंको नार्थ वे भी परिचयमें, क्षत्रियगण तथा निवसित ममय पर राजक देते हैं। समुना तीरवर्ती लक्ष्मी भूमिका पण्डित मन्त्र-भाषकी व भी भूमिमें ही बहुतसे जाट वास करते हैं। दिहोके निकट 'वे प्रधानत' दो अचिरीमें विमर्ष है, यथा-देगवाक वा देगवाक ओर पाषाण, येनोत्र व प्रदाय पश्चिमसे पाये हुए हैं। दोनों समुदायमें विविध पार्श्वक नहीं है। इनमेंसे पश्चिमीय को वे व समुदायके

हिन्दूधर्मावलम्बी हैं और वस्तुओं में सुपलमान, मिख आदिका मत अवलम्बन किया है। इनके वाट राज-पूतोंको मर्यादा अधिक है। इन लोगों तथा ब्राह्मणोंमेंसे अपनेक सुपलमानधर्ममें टीजित हुए हैं। इनके सिवा ब्राह्मण, बनियाँ, लोहार, चमार, धोवो, चैरो, गूजर, कसाई, नाई आदि हिन्दू तथा वेलुचो, गेख, मैवट, पठान, सुगल, फकीर आदि सुपलमान धाम करते हैं। यहा तगा नामके एक दूसरी श्रेणीके ब्राह्मण हैं जो अपनेको गोडटेगाय बतलाते हैं। प्रवाट है, कि तत्काल कुलका मर्यादानाश करनेके लिये वे लोग यहाँ बुलाये गये थे। बहुतसे लोग अनुमान करते हैं, कि यह तत्कालक शायद वीहधर्मावलम्बी शकराजगण हो होंगे। बनियाँ लोग जिल्लेमें स्व जगह भरे हुए हैं और दृकान अथवा व्यवसाय करने अपनी लोबिका निर्वाह करते हैं। गूजर जाति स्वभावतः आलस्य और शठ होते हैं। इन लोगोंमेंसे अधिकश टाजणको और ऊँची मानभूमि और पहाड़ पर पशुचारण तथा कृषिकार्यादि द्वारा जीविका चलाते हैं। ये अधिक काल तक एक जगह नहीं रहते हैं। कहते हैं, कि वे लोग सबेगा आदि नो सुराया करते हैं। गोपालक अर्थात् अहीरगण अपनेकी हिन्दू-समाजमें नितान्त निम्न स्थानके अधिकारी नहीं समझते हैं। सुपलमानोंमें केवल पठांगण ही विशुद्ध सुपलमान वंशोद्भव हैं। इस जिल्लेमें जो चार गहर लगते हैं उनके नाम दिल्ली, मोनपत, फरोदावाट और बल्लभगढ़ हैं।

जिल्लेका अधिकश उच्च प्रस्तरमय अनुर्वर है तथा कहीं कहीं लवणमय भी है, इस कारण मभी जमीन कृषिकर्मका सम्पूर्ण अनुपयोगी है। अवशिष्ट जमीन जलके अभावमें परती रहती है। गवर्मेंगटने खाई काट कर अपनेक जगह जल सींचनेकी सुविधा तथा कृषिकार्यके उत्तिसाधनको अच्छो व्यवस्था कर दो है। उत्तरी भागमें यमुनाकी पश्चिम तीरवर्ती खाई रहनेके कारण अच्छी उपज होती है। कपास, ईख, धान, याजरा, उवार, चुन्दरी गेहूँ, जौ, चना आदि प्रधान उत्पन्न हैं। तम्बाकू भी क्रम नहीं उपजता है। नील और मरमों भी कुछ कुछ उपजाई जाती है। यमुनाके पश्चिमी किनारे विज्ञान पत्तिसय खादरमें जल सींचनेका अभाव नहीं

होने पर भी वहाँ खाईके किनारेके जैसा गम्यादि उत्पन्न नहीं होते हैं।

इस विषयमें कृत्रिम उपायने निश्चितभूमि यमुना-तीरवर्ती भूमिका अपेक्षा उत्कृष्ट है। खाईके किनारे जो मत्र अनाज उपजते हैं, वे मत्र खादरमें भी उभा करते हैं। थोडो गहरो जमीन खोदनेमें जो सुम्पाटु जल निकल आता है। टिकोके दक्षिणभागकी प्रकृति स्वभावतः अनुर्वर और पर्वतमय है। यद्यपि आगरा खाई इसी स्थान ही कर काटी गई है, तो भी खाई नीचे रहनेके कारण उसके जलमें ऊपरकी जमीन मीचनेका कीड़े उपाय नहीं है। नाजफगढ़-भोल वर्षाकालमें भर जाती है और उसका जल एक खाई से कर यमुनामें ही चला जाता है। भोलके कुछ सुख जाने पर जलमें डुंधो जमीन आवाद को जाती है। जो कुछ हो, इस जिल्लेमें वर्षा बहुत कम होती है, इसीसे खाई आदिके रहने पर भी कृषिकार्यको अच्छो उत्पत्ति नहीं होती है।

दिल्ली बहुत काल तक युक्तप्रदेशके अन्तर्गत था। अतएव इस जिल्लेको जीत जमीन आदिना बन्दोबस्त बहुत कुछ युक्तप्रदेशके जैसा है। भायाचारा नाम एक प्रकारकी जीत खूब प्रचलित है। अधिकश प्रजाकी देखलो जमीन नहीं है। जमीनके उत्पन्न प्रत्येक प्रमुख मानगुजारोका निखुँ भिन्न मिय है।

वाणिज्यादि प्रधानतः दिल्ली नगरमें ही अधिक हुआ करता है। इसके सिवा मोनपत, फरोदावाट और बल्लभगढ़में स्थानीय क्रय विक्रयके लिये हाट हैं। जिल्लेके गिष्पाटि भी दिल्लीनगरमें ही सीमावह है। नगरको नकाशो तथा जराका काम सर्वत्र विख्यात है और यहाँका काचमण्डित चिकनी मट्टीका बरतन पेशावर छोड़ कर भारतवर्षके अन्यान्य स्थानोंको बरतनोंकी अपेक्षा मत्रसे बढ़िया होता है। दिल्लीमें कुछ दूर यमुना नदीको पार कर कालका तक रेलवे लाइन चली गई है। अतः यहाँ वाणिज्यको अच्छो सुविधा है। जो कुछ हो, उसके लिये सामान्य अशुविधा होने पर भी नदी, सुन्दर राजपथ और रथपथ आदिके द्वारा दिल्ली प्रधान वाणिज्य स्थानमें मंगलन होने पर भी इसकी उत्तनी क्षति नहीं होती है। गाजियाबाद जंक्शनसे ले कर यमुनाके ऊपर

कोईके पुत्र पर रोतो हुई दिल्ली शहर तक १४-
दिल्लिया-अम्पनोके रेलपथको एक गण्डा पारि है। यह
गण्डा पक्का रेलपथके भाग मिली हुई है। राकपूताना
ट्रॉन्-रेलवे दक्षिणामयि कुछ दूर तक जिनैते मज
होती हुई शुद्धावको पोर यई है। वर्षाकालमें बड़ी
बड़ी नर्मि यमुनामें घातो जाती हैं। दिल्लीके लार्डो,
पानाग, जठपुर पौर हिमाल तक प्रफ़रमय छन्दत राज
पथ गये हैं। इनके निवा अन्धसाइयोंके जाने पानिसे लिये
बहुतवी मङ्गके प्रत्येक शहर पौर प्रधान प्रधान बाट
तक चली यई है। भागपत, जामा, मल्लिकारपुर पौर
मुन्दपुरमें नामके पुल हैं।

शासन पौर राजकीविभागमें यहाँ १ डिप्टिक्मिश्नर, १
सहायगी पसिडेण्ट पौर २ अतिरिक्त सहायगी पसि
डेण्टक्मिश्नर, १ स्नाइल जज, १ मुख्य पौर १ तहसील-
दार हैं। इनके निवा शान्तिरसा, आण्डय तथा राजल
पादि बसल जगैते लिये प्राक्शकीय दूसरे दूसरे कर्म
चारी हैं। यह जिला ३ तहसीलों तथा शान्तिरसाकी
सुबिबाई लिये ११ जामाकीमें विभक्त है। इस जिलेमें
विद्याकी कुछ उन्नति है। यहाँ २ पाठशाली, १४
बेबेगनी, ११० प्राइमरी, १ इंजिन, १११ एन्वियेण्टो
स्कूल तथा ७०० जामिना-विद्यालय हैं। इस विभागमें
प्रतिवर्ष लगभग दो लाख रुपये खर्च होते हैं। इनमें
निवा अतिरिक्त पञ्चताक पौर ८ चिकित्सालय हैं। १८०६
ई०के दिनम्बर महीनेमें जिज्जोरिया भिमोरिणल जगना
पथप्रताम एक लाख रुपये खर्च करके बनाया गया है।

अन्धान्य जिलापोंके साइ दिक्काके जलवायुका विषय
मिद नहीं है। अनेक मामके दाक्षक पोषक ममयमें
जायमें उत्तापका परिमाण ५० ११६ तक हुआ करता
है पौर पोषमाममें निम्नत क्या ५० ४६ इ तक रहती
है। वार्षिक उष्णता २०से ६० इ० है। पौर पौर उद
पामर पोड़ा मचराकर हुआ जाती है। कमी कमी
बघलागेयके बहुत मनुष्योंका मृद्भू होती है।

३ दिक्को जिलेकी सरदर तहसील। यह अक्षा०
२८ १० से २८ ३१ उ० पौर देशा० ७६ ११ से ७७
१७ पू यमुनातटीके पश्चिममें अवस्थित है। मूपरिमाण
३१८ वर्गमील पौर लोकसंख्या प्रायः २०८१४७ है।
दिल्ली शहर यही तहसीलके अन्तर्गत है।

४ उच्च दिक्को विभागके अन्तर्गत दिल्ली जिलेका
एक प्रधान नगर तथा भारतवर्षकी वर्तमान राज
धानी। यह अक्षा० २८ ३८ उ० पौर देशा० ७७
११ पू यमुनातटीके बाईे किनारे अवस्थित है।
यह शहर कुलकालसे ८१६ मील, बम्बईसे ८८२ मील
पौर काशीसे ८०० मील दूर है। मूपरिमाण ११७
वर्गमील पौर लोकसंख्या प्रायः २१२८६० है, जिनमेंसे
हिन्दू पौर मुसलमानको संख्या ही सबसे अधिक है।
शहरका दूसरा नाम शाहजहाँनगर है। इसकी उत्तर,
पश्चिम पौर दक्षिण-द्विगामन्नाट, शाहजहाँनको बनाई
हुई बहुत ऊँची प्थरको दीवारसे घिरा हुआ है तथा
पूर्वको पौर पश्चिमतीया यमुनातटी प्रवाहित है। उच्च
प्राचीरका परिमाण २६ मील है। वर्तमान लघोसको
प्रतापतीके प्रारम्भमें पञ्चरैकीकी छाई तथा प्राचीरसे नगर
पौर मो दुर्गम हो गया है। इसके दम सि इहार हैं
जिनमेंसे उत्तरमें आशमोर पौर मोरोहाट पूर्वमें काकुल
पौर आशीरहाट तथा दक्षिणमें पञ्चमेर पौर दिल्ली-दार
प्रधान हैं। मुगलसम्राट का राजप्रासाद नगरके पूर्वमें
यमुनातटीके किनारे अवस्थित है पौर यही यह दुर्गके
दपमें अत्यन्त होता है। इसके तीन पौर लोहितरथ
रेताने पत्थर बनाये हुए लिये प्राचीर हैं एक पश्चिम
तथा दक्षिणमें एक सि इहार है। १८२७ ई०में सिगाहों
विश्रोहक बाट प्रासादका कुछ समय तोड़ फोड़ कर मोरा
मिनापोंके रहनेके लिये मखान बनाये गये हैं। उच्च दुर्गके
दक्षिण दरियागन्ध नामक स्थानमें टेमो सिपाहो सेनापों
के लिये एक सेनानिवास है। यमुनाके दूसरे किनारे
मालहमी प्रतापतीमें सलाममाहका बनाया हुआ मखान-
गढ़ नामकी एक दुर्ग है जो यही मन्मदयामें पड़ा
हुवा है। सलामगढ़के एक कोमि हो कर रह दक्षिणा
रेलवे सभ्यताके रेलपथ एक मुख्य लोडिंग पुनसे यमुना
पार कर दिक्को नगरके अन्तर्गत एक स्थानको जाते हैं बाद
उच्च रेलपथ राकपूताना-खैट रेलवे नामक नगरके पुरार
पश्चिम कोमिमें प्राचीरको बिंद कर शहर निष्कल गया है।
नगरके उत्तर पूर्व कोमिमें लोहागार पौर अन्धान्य सर-
कारी प्राचीर तथा दरियागन्धका सेनानिवास है। दुर्गके
पश्चिमको पौर अम्पनोका बगोवा है। सेनानिवास, दुर्ग,

रेनपथ और वगोचा नगरके प्रायः आधे भागकी घेरे हुए है। इस भागमें लोकसंख्या कम है, किन्तु दूसरे भागमें बहुत अधिक है।

दिल्लीका स्थापत्य शिल्पका गौरव जगद्विख्यात है। इस जगह सम्पूर्ण विवरण देना असम्भव है। यथायत्नमें दिल्लीकी बड़े बड़े अटालिकाओंका निर्माणकाल बहुत आश्चर्यजनक है, जो वर्णनसे प्रकाश नहीं किया जा सकता। मि० फार्गुसनने अपने भारतीय और प्राच्य-रूपति-विद्याके इतिहास (History of India and Eastern Architecture)में इन प्रासादोंका खूब सुन्दर वर्णन किया है। शाहजहानका राजप्रासाद आगराके राजप्रासादसे चितवैचित्र्य तथा आडम्बरमें कम होने पर भी इसकी गठनप्रणाली समभावापन्न है और भारतीय सर्वप्रधान स्तूपतिप्रिय सम्राटसे बनाई गई है। इस प्रासादकी लम्बाई उत्तर दक्षिणमें ३२०० फुट और चौड़ाई पूर्व पश्चिममें ५६०० फुट है। इसके चारों ओर लाल पत्थरकी बनाये हुए ऊँचे प्राचीर हैं और कहीं कहीं गुम्बज भी दिये गये हैं। प्रवेशद्वार बहुत सुन्दर है। मि० फार्गुसनका कहना है, कि यह प्रवेशद्वार सम्राटके यावतीय प्रासादके प्रवेशद्वारसे कहीं बड़ा चढा है। यह प्रासाद बहुतसे उद्यान, फुवारे आदिसे अलङ्कृत है तथा नाव्यशाला, मङ्गीतशाला आदि अनेक अंगोंमें विभक्त है। दूसरे दूसरे मकानोंकी बात छोड़ देने पर भी दीवानोखाम अर्थात् सम्राटका मन्त्रणागर शाहजहानकी बनाई हुई अन्यान्य समस्त अटालिकाओंकी अपेक्षा सुन्दर नहीं होने पर शारदायामें समीपसे बढ कर है, इसमें तनिका भी सुन्दर नहीं। यमुना नदीके ठीक ऊपरमें एक घर अवस्थित है जिसके भीतरी भागका निर्माणकाल और फलपुष्पादिके चित्र आदिका कल्पनाचातुर्य बहुत प्रशंसनीय है। दीवानोखामकी छतके चारों तरफ लिखा हुआ है, 'पृथ्वीमें यदि स्वर्ग है तो यही एक है' वास्तविकमें इस तरहका अनुपम मोन्दर्यमय कला पृथ्वीके यावतीय राजप्रासादोंमें कहीं नहीं है, यदि ऐसा ऊँचे, तो कीर्ति अत्युक्ति नहीं होगी।

प्रासादके मध्यस्थलसे समस्त दक्षिण भागमें १००० फुट परिमित स्थानमें सम्राटका अन्तःपुर था। जिसका परिमर यूरोपके बड़े बड़े राजप्रासादोंसे भी हिरण

था। प्रासादके अधिकांश कक्षादि तहस नहस हो गये हैं, अभी जो कुछ बच रहे हैं उनके नाम इस प्रकार हैं— प्रवेशकला, नोवतखाना, दीवानो-ग्राम, दीवानोखाम, और इन्जमदल। इसके सिवा और भी दो घर विद्यमान हैं। कहना नहीं पड़ेगा कि, यही सब मकान प्रासादोंमें सम्पत्कृत हैं, किन्तु तिस पर भी इन नामनेका प्राङ्गण और एक दूसरेकी मिनानिवाने पथ आदिका लोप हो जानेसे इनकी भी बहुत कुछ जाती रही। अंगरेजोंके सैन्यशासकी इर्यावलीमें जो विचित्र काश्चनवचित्र किये हुए थे, वे अब नहीं हैं।

शहरके जिस अंगमें देगोय लागोंका वास है, वहाँकी अटालिकादि ईंटेकी हैं लेकिन बहुत सुन्दर और सुदृढ़ दोस्त पड़ती हैं। बहुत से गलिशों तथा छोटे छोटे रास्ते टेढे हैं, किन्तु खराब होने पर भी भारतवर्षके दूसरे दूसरे शहरोंमें दिल्लीके जैसा उल्कृत बड़ा रास्ता नहीं है। इसके प्रधान प्रधान दग हफ्तू राजपथ अच्छे तरह पत्थरसे बंधे हुए हैं। जन वाहर निकलनेके लिए नर्मदाकी व्यवस्था और रातमें रोगनी आदिका बन्दा बसा बहुत अच्छा है। चान्दनोचक वा रजतरथ्या नामक पथ सबसे प्रसिद्ध है, जो ७४ फुट लंबा है और दुर्गसे ले कर लाहोरके तोरण-द्वार तक प्रायः ३ मील लंबा है। इसकी मध्यस्थित जलप्रणालीके दोनों तरफ नीम और पोपलके वृक्ष लगे हैं। पहले इसी प्रणाली ही कर राजप्रासादमें लाना जाता था अभी इसके ऊपर ऊँचे सड़क बनाई गई है। चान्दनोचकसे कुछ दक्षिण एक खण्ड ऊँचे भूमिके ऊपर विख्यात जुमा मस्जिद है, सम्राट् शाहजहानने अपने राजत्वके चार वर्ष बाद इसका निर्माण आरम्भ किया और दस वर्षमें समाप्त किया था। इसके सामनेमें ४५० वर्ग फुट प्रगस्त चत्वरभूमि मर्मर पत्थरसे बंधे हुई है और चारों ओर दावार है। इस स्थानसे उत्तरकी ओर दृष्टिपात करनेसे समस्त दिल्ली नगर देखनेमें आता है। मसजिदकी लंबाई २६९ फुट है। इसके तीन गुम्बज सफेद मर्मर पत्थरसे बने हैं। नीचेसे लेकर मस्जिद तक पत्थरकी सीढ़ी गई है। छतके ऊपर सामने भागमें दो कीर्तनें दो ऊँचे शिखर हैं। मसजिदका अर्धतर भाग सफेद मर्मर

पत्थरका बना हुआ है। दिल्लीकी घोर दो मस्जिदें
 उल्लेखनीय हैं, उनमेंसे एकका नाम जाना मस्जिद है।
 प्रवाद है, सिंधी पकगान मस्जिद में इसे बनाया था।
 इसका रंग घोर हीरे जामा की धानिसे कारक लोग इसे
 काका मस्जिद कहते हैं। दूसरी रघुनन्दकोठी मस्जिद
 है; प्राथमिक बड़ी बड़ी पञ्चासिकापी मेंसे जिसे मस्जिद
 बनाने, सर्वप्रथम कानिज, रसिद्वन्ता घोर मस्जिदकी
 मिर्जा से ही चार प्रधान हैं। जलक इस्कोतर एक शाय
 में पत्थरक रूपसे खर्च करके उपरोक्त मिर्जा बना
 गये हैं। शान्दीमेंसे यमुनाको घोर पर्वत पर एक
 चट्टीका शाय घोर उससे सामने दिल्ली कानिज-
 भवन तथा स्युप्रियम का आदुर है। शान्दीचकसे
 उत्तरमें महााराजीका उद्यान है घोर उससे भी कुछ
 उत्तरमें पञ्चासके मूल तक नगरकी मोमा विस्तृत है।
 इस पर्वतसे न्यून पर चकुरिसे दिल्ली महर घोर शृंगलका
 इच्छ बहुत मनोहर समता है। नगरके पश्चिम प्राचीरके
 बाहरमें बहुतसे घाम देखे जाते हैं, इनमेंसे एक घाममें
 मस्जिद का समाधिस्थान है। इसमें मस्जिद हुआहुनु
 का बनाया हुआ पत्थर तथा न गममेंरका समाधिमन्दिर
 देखने योग्य है। नगरमें प्रायः दो मीनको दूरी पर एक
 विष्टीर उद्यानके चारों घोर प्राचीर है तथा पश्चिममें
 कई जगह सुन्दर लतामय घोर पत्थरक मन्दिर हैं। इनमें
 मन्थभागमें २० फुट लंबे घोर २०० फुट चौड़े बहुतरे
 के ऊपर सुन्दर शायरामि कुमोमित है तथा श्वेतमर्भर
 पत्थरका शुभ्रकुल हुआहुनुका समाधिमन्दिर अवस्थित
 है जो प्रायः तक भी लम्बू चकुराके विद्यमान है।
 नगरमें घोर भी कुछ प्रायः एक मोलकी दूरी पर
 एक दूसरा समाधि मन्दिर है जिसके पश्चिममें भी
 बहुत सुन्दर समाधिमन्दिर तथा छोटी मस्जिद विद्यमान
 है। इनमेंसे सुसममान कबोर निजामउद्दौन्की समाधि
 घोर धर्मशाना प्रधान है। निवाहीविष्टोइके पश्चिमें
 दिल्लीके मूल मस्जिद न्यून इस कबोरको समाधि चारों
 घोर चिरे रटते हैं। प्रथम समाधिसेव मर्मरके कीर्ति
 अवस्थित है। इस सब कब्रिदानों से पत्थरका शिलोंमें
 कुतुबमिनार, शीहस्तुष पादि घोर भी बहुत भी प्राचीन
 कीर्ति विद्यमान हैं जिनका कर्तव्य नोचें दिया गया है।

मस्जिदगाँधी घमोर तब; पश्चात्तय धनकुबेरोंको बन्यो
 वनो निःसन्देह पूर्व नगरको प्रभूत मोमा देता किन्तु
 उनमेंसे घमो एक भी मोजद नहीं है। उन सब स्थानोंमें
 वर्तमान मन्थान्ता व्यक्तियोंको मनोहर पञ्चासिका
 बनाई गई है। इस नगरमें परिप्लवण सब सब बगद
 मिश्रता है। घमो इसको परिष्कृतता तथा स्वास्वीयति-
 के शिवधर्म समीका ध्यान प्राप्तवित हुआ है।

१०५२ ई०में यहाँ दिल्लीका नैज स्थापित हुआ।
 जहाँ विद्यालय १०७७ ई० तक प्रधान गिना जाता था।
 पक्षे इसमें केवल ऐमीभावको गिना दो जाते थे।
 ऐमीय सम्मान सुमसमानयक सदा से कर इसका लक्ष
 बनते घोर ममा स गन्त करके इसको कार्यालयो परि
 दर्शन करतें हैं। १०८८ ई०को उच्च कासिजमें प गरीबी
 गिनाविभाव खाता गया घोर १०९३ ई०को यह सर
 कारी गिनाविभागके पत्थरत हुआ। तमोसे दिल्ली
 कानेजमें पत्थरक मीन गिनानाम कर कर्तव्य ही गये
 हैं। १०९७ ई०के निवाहीविष्टोइके समय विष्टोइमें
 इस कानेजमन्थको तदस नहस कर जाना घोर दुःप्राय
 पत्थरको लटा। १०९८ ई०में एक कुहरा मन्थान निर्माण
 कर उसमें कासिज स्थापित हुआ जो लक्षकता दिग्ग
 विद्यालयके फलोन दिया गया। पत्थरमें १०७७ ई०के
 चरको मन्थोमें पञ्चासको राजधानी गाँवर नगरके
 कासिजमें लम मदेयको गिनाका किन्तोमूत बनानेके निदे
 दिल्ली-कानेजके पञ्चास पादि स्थानाकारित हुए हैं।

जिन दिनके प्राचीन पाठगण भारतवर्षमें पत्थर
 प्राथम्य जमा कर पुष्पसनिना यमुनाके किनारे रटने
 लीं, उसी दिनमें यहाँ बहुतसे राजधानी घोर राजपत्र
 वर्तियोंका स्थान तथा पत्थर दोने लगा। कई एक
 राजाकीके बाद राजा मन्थारुके बाद मस्जिदमें यहाँ
 नयो नयो राजधानी स्थापित करके राज्ययामन किया।
 बाद से प्रथम करारक कारके यामने प लीं गये। पीछे
 बहुतसी राजधानियाँ स्थापित हुई घोर घोर हीरे तक
 नहस मो जोतो गईं। पत्थर वर्तमान कानेज जहाँ दिल्ली
 न्यर अवस्थित है, उसके चारों घोर एक प्रकाण्ड ध्वज
 चिह्नके लैना पड़ा है। विषय दिग्ग पाइव इस मन्थ
 इच्छका इस प्रकार वर्णन कर गये हैं, "यह दम्भ एक

अत्यन्त भयानक ध्वंसोत्सवके जैसा' टोप पड़ता है, भग्न-सूत्रके वाट भग्नसूत्र है समधिके वाट समाधि है, टूटे फूटे घरोकी टूटी फूटी ईंटें और तरफ तरफके पत्थरोंके टुकड़े चारों ओर वृक्षलता रहित कठिन मरुभूमिके समान पृथ्वी पर इधर उधर पड़े हैं। ये सब ध्वंसावशिष्ट भग्नसूत्रप्रागि वर्त्तमान गाइजनावाट नगरसे पांच कोस दूर राजपियोरा और लोगलगावाट दुर्ग तक विस्तृत है। जितनी दूर तक उक्त ध्वंसावशिष्ट राजधानी समूह देखा जाता है, उसका परिमाणफल ४५ वर्ग-मील है। वर्त्तमान नगरके प्राचोरेने २ मील दक्षिणमें जना इन्द्रप्रस्थ वा पुराणकिसा नामका ग्राम और दुर्ग है, पहले वहाँ पाण्डवोंका इन्द्रप्रस्थ नगर बना हुआ था।

अब यह देखना चाहिये कि शहरका नाम दिल्ली किस प्रकार पड़ा। ई० सन्के प्रायः ५० वर्ष पहलेमे दिल्ली अथवा दिल्लीपुर इसी नामको उल्लेख है। फेरिस्तानके मतानुसार जेनरल कनिंङम कहते हैं, कि राजा दिल्लीसे दिल्लीका नामकरण हुआ है। ये इन्द्रप्रस्थके गौतमवशीय राजाओंके परवर्ती मयूरवंशके अन्तिम राजा थे। उस समय दिल्ली-नगर वर्त्तमान शहरसे ५ मील दक्षिणमें अवस्थित था। किन्तु इन विषयमें जितनी कल्पनियां कही गई हैं, उनमेंसे तासरी वा चौथा शताब्दीके राजा घावकी द्वारा स्थापित प्रसिद्ध लौहस्तम्भसे जो कुछ मान्य हुआ है उसे ही प्रमाणस्वरूप ग्रहण करना चाहिये। यह शतुमय स्तम्भ ठोस है। इसका व्यास १६ इंच और लम्बाई ५० फुट है। इसकी आवेसे अधिक भाग मट्टीमें गढ़ा हुआ है। स्तम्भमें पश्चिमकी ओर संस्कृत अनुशासन मन्त्री भाति खोटा हुआ है। केवल यही लिपि इसको प्राचीन इतिहासके परिचायकके जैसा आदर्श-शीय है। प्रिन्स प साहबने सबसे पहले इस अनुशासनका पाठोच्चारण किया, जिसका मर्म इस प्रकार है—'राजा घाव जो अपनी भुजाके बलसे बहुत काल तक सारी पृथ्वीके अद्वितीय अधीश्वर हुए थे, उन्हीके कीर्त्ति स्वरूपमें यह स्तम्भ स्थापित हुआ। ये सब खोदितलिपियां उनकी तीज तन्ववारसे शत्रुओंकी देखके गहरे चतारुकी नाईं उनकी कीर्त्ति चिरकाल तक घोषणा करें।'।

कनिंङम माइव अनुमान करते हैं, कि ये घाव राजा गायद ३१८ ई०में विजय प्राप्त थे। उस समयके गुप्तवंशके अनुशासनके अक्षरोंका ढंग देखनेमें भी पता चलता है, कि ये सब अक्षर गुमराजवंशके समसामयिक हैं। किन्तु वंशपरम्परागत प्रवादके अनुसार उक्त लौहस्तम्भ तोमरवंशके स्थापनकर्त्ता इनद्रपालके प्रतिष्ठित समझा जाता है। ऐसा होनेसे इसका प्रतिष्ठाकाल आठवें शताब्दीमें पढ़ जाता है। कहते हैं, कि यामने राजाको यह स्तम्भ पृथ्वीमें दृढ़रूपसे गाड़नेका आज्ञा दी। और साथ साथ यह भी कह दिया था, कि इनको दृढ़ताके ऊपर ही उनकी राजलक्ष्मीको स्थिरता निर्भर रहेगी। उन्हीके कथनानुसार यह स्तम्भ गाड़ा गया। तब व्यासने पुनः राजाने कहा, कि स्तम्भका निचला भाग पृथ्वीके अन्दर वासुकीके मस्तकमें जा अटकता है, अतः स्तम्भ भी अचल रहेगा और राजाको राजलक्ष्मी भी अचल रहेगी। लेकिन स्तम्भका मूल वासुकीके मस्तक पर जा अटकता है, यह राजाको तनिक भी विश्वास न हुआ और उन्हीने स्तम्भको उखड़ा दिया। स्तम्भके उखाड़ते ही वंशसे सेइको धारा निकलने लगी। इस पर राजा विस्मय ही पड़े और अपने सन्देह पर पश्चात्ताप करने लगे। जो कुछ हो, राजाने व्यासको पुनः बुला कर स्तम्भको फिरसे स्थापित किया। किन्तु इस बार किसी तरह स्तम्भ पहलेकी तरह अटल न रह सका, वरं टोला अर्थात् ऊपरकी ही उठा रहा। इसी कारण तोमरवंशका राजलक्ष्मी भी थोड़े ही समयमें दूसरेके शाय लगी। स्तम्भके टोला रहनेके कारण ही नगरका नाम दिल्ली पड़ा। इस प्रवादमें भी मतभेद है। जो कुछ हो, यह बहु मनसे स्थिर हुआ है कि यह नगर तोमरवंशीय राजाओंके अभ्युत्थानके समय स्थापित हुआ। किन्तु स्तम्भमें जो लिपि है उससे प्रवादकी सत्यता अप्रमापित हो जाती है।

५. "दिल्ली तो दिल्ली गई

तोमर भये मत हीन।"

दिल्ली अर्थात् स्तम्भ दिल्ली अर्थात् डोला हो गया है, तोमरको इच्छा पूरी न होगी।

श्रीगुरुन कनि इमका कहना है, कि दिल्ली नगरके बहुत बान तब मन्नाबरघामि पडे रहनेके बाद चन्द्रपालने ७३ ई०मी यहा राजधानी स्थापित करके नगर का पुनः व्यवहार किया। उसके व शीघ्र परबतों राधा धर्मि निम्नोने बजोर का कान्ठदुहर नगरमी जा पर राजधानी बनई।

राठौर-व गके स्थापयिता चन्द्रदेवने जब प्यारधमी शताब्दीके मध्यभागमी कान्ठदुहर (बजोर) मे तोमरी-नी मार मगाया तब लमी व गके १३ चन्द्रपालने टिण्ठो को लोट कर बहा मुनः एक बार तोमर-राजधानी स्थापित की। लकीने दिल्ली नगरको फिरमे पृथ प्रामादि द्वारा सुगोमित तथा पारई घोर पाबोर द्वारा सुदृढ़ किया। पात्र मी कुतुबमिनारके चारों घोर लम दुर्गके प्राचीरका सम्प्राकर्षण यहा हुआ है। राजा नाथ के प्रतिष्ठित लीहस्तधर्मि चतुर्मासतरी एक घुमरो पत्रि है। जिसका मर्म इम प्रकार है—११०८ सम्प्रति (१०३१ ई०मी) चन्द्रपाल दिल्लीनी उन्नयन करे। १४ निर्दिष्ट चन्द्रपालका दिल्लीमें पुनरागमनका समय चतुर्मास किया जाता है। इसके प्राय एक लो वर्ष बाद तोमर का गुपार व ग्रने गेय राणा १५ चन्द्रपालके राजत्वकालमी पञ्चसौराधिकात्त कोकान व शीघ्र विज्ञान देवने टिङ्ग अधिकार किया। श्री कुङ्ग घो, विज्ञानदेव ने तोमरराजकी सामन्तदपमे दिल्लीमे राज्य करने दिया। जमया हीनों व य विवाहमन्ने एक हो गये। १६मी समय पाशावर्तके शीघ्र स्वाघोन मूर्धति मन्त्रालय ल्योराकने कथ पदक दिया। व गुपार घोर कोकान कोल व ग्रने कलाधिकारी हुए। इन्होंने शायबोरा नामक दुर्ग घोर चन्द्रपालके दुर्गप्राकारके बाहर एक घोर शबौर निर्माक कर दिल्ली नगरकी घोर मी सुदृढ़ कर दिया। पात्र भा बहुत दूर तक इम प्राचीरका सम्प्रायोग प देवनेमी जाता है। इसके बान सुमन्मान पतिशायिनीके दिल्लीका कृष्णट विनरक पाया जाता है। ११३१ ई०मी मारदुहान का महम्मदबोरो (गारो)ने पदनी बार पार्षवत पर चढ़ाई की। ल्योराकने पपने बहुत परबतमें राज्यको रखा को घोर मन्दि घामेयकके मुदरे महम्मद घोःकी मन्पूर्वकपरे दरा जिन तथा लके मगा कर ४० मील तक पनुपरक किया।

दी वर्षके बाद लो पराक्रान्त महम्मदबोरोने पुनः भारत-वर्ष पर पाकमय किया। इम बार देव दुर्गिपाकके ल्योराक सुदमे पाराजित हुए। दुर्गमे सुमन्मान नेना प तने बोपर ल्योराकको केद कर निमन्हाय पावल्धामि मार डाला। भारतका मोसाम्परबि लमी दिन चला हो गया। इन्दूके मोरवका लमी दिन परबमान हुआ। पार भोगताके तन्मोमय चक्राकलमें लमी मोवय निम्नो भारतके भादीने पट्टाकायम पाकमय किया। विष मिंयोका विज्ञातोप यामनयल लमी दिनमे इन्दूके बहसचलमी माटा गया।

महम्मद घोरोके प्रतिनिधि कुतुबुलौन पाहलकने ल्योराकको पाराजय कर दिल्ली अधिकार किया घोर लमी समयमे दिल्ली नगर सुमन्मानांनीरी राजधानी हुआ। १०७१ ई०मे महम्मद घोरोको सय क बाद कुतबने पपनेकी स्वाघोन राजा कह कर शापका की। दिल्लीके गुलाम-नाशायीमें लो को पदमे से। इसकी स्थापित मी हुई बहुत मी कोलियाँ व मावल्धामे पको है। उतुबुलौ मस्जिद ११९६ ई०म दिल्ली लीति जामिने बादने पाशय लो कर लोन सय म मगाय हुई। लीके लने जमाई पणतमकने इमका पनेकीय बहित किया। मम जिनके लो प्राङ्क है, एक वादरमे घोर कृष्ण मोतरमे। मोतरका प्राङ्क चारों घोर नाना कादगाय पबित म्प्राथमेकीके मुङ्ग शाराग्दरेके बिरा हुआ है। ये यगमन्ध प्राचोन इन्दूबमन्दिरको ताङ्ग छोड़ कर म पर बिके गये से। पदल इम म्प्राथमे ल्योदित दिव ल्योको प्रतिमूर्तिर्वा लुमी पादिने परिपुर्ण क्यून पावतकमे पाहल ली इन्दू लमी वादरकके गिर जामिने मूर्तिर्वा ल्यदपने लयनीबोर लो कर इन्दूको-के प्राचोन गिम्पगौरवकी पच्छी तरफ प्रकाय करती है। इवन बहुत नामक एक सुमन्मान धमककारी ने मस्जिद तैवार जामिने छिट लो बय बाद लने देप कर क हा बा, बि यव मस्जिद लो लये लो। विशारमें चतु-लौय है। मस्जिदके बाहरकाने प्राङ्कने लो ल्येनकोक में कुतबका एक घुमरा लीति म्प्राथ है इकोका नाम दिल्लीका कुतबमिनार है। इन्दुभिनार देको। कुतब मिनारके प्राङ्कके मध्यकालमें राजाशाकका प्रतिष्ठित कीङ्ग म्प्राथ विद्यमान है। इव मिनारके चारों घोर मय

रूप पड़े हैं जिनमेंसे १३११ ई०में गाराब अना-उद्दीन-का असम्पूर्ण स्तम्भका श्वंसावगेष प्रधान है।

गुलाम राजाके समयमें जो दिल्लीके सिंहासन पर एक मुसलमान रमणी आरोहण हुई। अनुचरोंने उन्हें सुनतान-रजिया यह पुरुषोचित उपाधि दी थी। १३८० ई० तक गुलाम राजाओंके राज्य करने पर जलाल-उद्दीन खिलजीने दिल्लीको अधिकार किया। इनके भतीजे अना-उद्दीनके राजत्व कालमें मध्य एशियासे मुगलोंने दो बार दिल्ली पर घावा मारा।

१३२१ ई०में तुगलक वंश दिल्लीके सिंहासन पर बैठे। इस राजवंशके आदिपुरुष गयास-उद्दीनने दिल्लीसे ४ मील पूर्वमें एक नूतन राजधानी स्थापित की। इस राजधानीका दूर्ग, अट्टालिका, राजपथ आदिका सुख्य भग्नावगेष विस्तीर्ण स्थानमें आज भी देखा जाता है। १३२५ ई०में गयास-उद्दीनके मरने पर उनके लड़के महम्मद तुगलक दिल्लीके सम्राट् हुए। इन्होंने तीन बार समस्त दिल्लीवासीको अपनी राजधानी देवगिरि वा टोलतावादमें जो ८०० मील दक्षिणमें अवस्थित था, भेजनेकी चेष्टा की। उस सुदीर्घ पथमें जाने आनेमें दिल्लीवासियोंकी जो कष्ट झेलने पड़े थे, वह अकल्पनीय है। तान्त्रियम-निवासी इवनवतुता १३४१ ई०में दिल्लीको देखने आये। वे इस परित्यक्त पुरीकी प्रकाण्ड शून्य अट्टालिकाओंका वर्णन अच्छी तरह कर गये हैं। पीछे फिरोजशाह तुगलक नामके एक दूसरे सम्राट् ने एक बार और दिल्ली राजधानी स्थानान्तरित की। हुमायुन की समाधि और पहाडके मध्यवर्ती स्थानमें यह राजधानी स्थापित हुई। इस नरपतिके प्रासादके भग्नस्वरूपमें वर्तमान दक्षिण तोरण द्वारके बाहर अगोकका बनाया हुआ स्तम्भ है जो ४२ फुट लम्बा और फिरोजशाहका लाट अर्थात् स्तम्भ कह कर विख्यात है। गुलाबो रंगके एक खण्ड पत्थर पर यह स्तम्भ संगठित है, जिसमें पालि भाषामें एक लिपि लक्ष्कोर्ण है। प्रिन्सेप साहबने बहुत यत्न और परिश्रमसे उसका पाठोद्धार किया। इस तरहके स्तम्भ आज तक दिल्ली नगरमें प्रतिष्ठित नहीं हुआ। फिरोजशाहने यह खिजिराबादसे ला कर अपने नवीन राजप्रासादमें स्थापन किया था।

१३८८ ई०की महम्मद तुगलककी राजत्वकालमें विख्यात तैमुरलङ्गने दिल्ली पर चढ़ाई की। महम्मद गुजरातको भाग गये और उनको सेना प्राचीरके समीप ही तैमुरसे पराजित हुई। तैमुर आजित नगरमें प्रवेग कर लगातार पांच दिनों तक लोमहर्षणकारी हत्याकाण्ड करने लगे। दिल्लीको मारो महकं तथा घाट मृतदेहसे भर गये। अन्तमें नरगोणितनोलुन तैमुरको चकट नरदतयाकी लालसा परित्यक्त होने पर वे अनेक नर नारीको बन्दी कर तथा प्रचुर अर्थ ले कर मृतदेहको लौट गये। प्रायः दो मास तक दिल्ली दमो तरह उजाड-सा दीखता रहा। अन्तमें महम्मद तुगलकने भा कर पुनः दिल्ली साम्राज्यका कुछ अंग अधिकार किया। १४०२ ई०में महम्मदके प्राणत्याग करने पर सैयद वंशने दिल्लीके चारों ओरसे सामान्य प्रदेशोंमें १४४४ ई० तक राज्य किया। पीछे लोदी वंशने राज्याधिकार करके आगरा नगरमें राजधानी स्थापित की। १५२६ ई०में भारतवर्षके मुगल मन्त्राटोके आदि पुरुष बाबरने बहुत थोड़ी भिन्न सेनाको साथ ले भारतवर्ष पर आक्रमण कर दिया और लोदी वंशके अन्तिम राजा इब्राहिमलुदीको पानोपतको लडाईमें परास्त कर दिल्लीको अधिकार किया। ये अपना अधिकार समय आगरेमें ही बिताते थे। १५३० ई०में बाबरको मृत्यु होने पर उनके लड़के हुमायुन दिल्लीको आगे और उन्होंने प्राचीन इन्द्रप्रस्थके अर्धार्धमें पुराणकिल्सा नामके दुर्ग निर्माण तथा मंस्कार किया। १५४० ई०में शेरशाहने हुमायुनको भगा कर दिल्ली नगर प्राचीरमें घेर लिया। इनका बनाया हुआ लालदरवाजा नामका फाटक आज भी जिलाखानेके सामने रास्तेके किनारे मौजूद है और इनके लड़के सलीमका बनाया हुआ सलीमगढ नामका दुर्ग आज भी देखनेमें आता है। १५५५ ई०में हुमायुनने पुनः दिल्ली अधिकार किया, किन्तु छह महोनेके अन्दर उनकी मृत्यु हो गई। इनका समाधिमन्दिर बहुत मशहूर है। उनके पूर्ववर्ती अकबर तथा जहाङ्गिर आगरे और लाहौर अथवा अजमेरमें रहते थे। सुनरा दिल्ली कुछ काल तक शीचनीय दशामें रही। पीछे सम्राट् शाहजहानके समयमें दिल्लीको दशा कुछ पलट गई।

इसके नगरको वस्तुमान परिवर्तना प्राचौरादिसे सुरक्षित
 किया और अपने नाम पर इसका नाम शाहजहानाबाद
 रखा। प्रसिद्ध मुस्ता मस्जिद इन्हींको बनाइ हुई है।
 इससे सिवा इन्हींमें यमुना नदीको पवित्रो प्याड़ी संस्कार
 की। पौराणिकसे समस्त हिन्दुओंको सब उन्नति हुई
 की। इनका समयोत्तम दिव्यपुत्र परितृप्त कर य रोप-
 लक्ष्मीं भी विन्यत को मया था और इनको राजसभाका
 यत्नोत्सव नैमत्र तथा गौरव भ्रमचभारिया ३ सुखसे
 और भा सो मुना बड़ कर कल्याणकी गई पूर पूर
 दिनोंमें जनसाधारणके मय विषय कोनुहने उद्देश
 करके प्रकृता जा।

पौराणिकको कालके बाद गृह-विवादसे शीघ्र को
 सुयम साक्षात्कारका पतन होने लगा। १०२५ ई०में
 महम्मद शाहके शास्यकालमें महाराष्ट्र लोग दिल्लीके
 समीप या पड़के। तोल करके बाद नादिरशाहने पति
 मानक माय इस नगरमें प्रवेश किया। तै सुरक्षित इत्या
 काएकश पुत्र एक बार पतिभय हुआ। ८८ दिन
 दिनोंमें रहकर उकीने भी, दरिद्र समोको मूटा। जब
 तब एक कोड़ी भी नहीं बच न रही, तब तक से छूटी
 ही रहे। अन्तमें से माय ८ करोड़ रुपये और विष्णुत
 मयूका पालन ने कर अदेशको छोट गये। १०५०
 ई०में प्रायः सब समा तब दिल्लीमें बसनाम बुद्ध होनेके
 बाद राजधानी पलायनकी बरामतोमा तब पड़ू
 गई। इसी समय पदमद शाह दुर्गाने दो बार दिल्ली
 पर आक्रमण किया और दुर्गास बर्गे बेगाने मो शहरको
 तहम नष्ट कर डाला। १०५० ई०में मन्नाट् पालमगोर
 मारे गये। बाद शाहपालम नाम भारतके सखाट्, हुए
 उद्दो, किन्तु उन्हें कुछ भी अधिकार न रहा। पलायन
 और महाराष्ट्रके भीरे भी दिल्ली पर चढ़ाई करने लगे।
 अन्तमें १०७१ ई०को महाराष्ट्रने शाह पालमको दिवो
 में अर्पित किया, किन्तु १०८८ ई०में उन्होंने दिल्लीका
 दुर्ग अधिकार कर लिया और सखाट्, विधिवाके शाय
 बन्दो हुए।

१८०१ ई०में नाड सेकने महाराष्ट्रको पराजित
 तथा दिल्ली अधिकार कर शाह पालमको मुक्त किया।
 पूरे वर्ष कोनकरने दिल्ली पर चढ़ाई कर दो, किन्तु

विदिष्ट पदरहातीने कुछ शिवाज साय नगरकी
 रचा की। अन्तमें कोई सेकने जा कर आक्रमण
 कारियोंको मार मनाया। इस विजित प्रदेशके प्रासाद
 कोइ कर और समो स्नान सखाट्, नामसे श्रापित
 होते थे।

इसके बाद पलायन वर्गोंसे अन्त्यतर दिनोंमें और कोई
 ऐतिहासिक घटना न हुई। पोंडे १८२० ई०में सिपाहो
 बुद्धके समय दिल्लीमें पुनः एक बार पतनामुच सुयवो
 का पापिपत्र अर्पित हुआ। १०वीं मईके सन्ध्या समय
 मोरटके सिपाहोमय बिहोको दो ठठि और दूधरे दिन
 प्रातःकालमें यमुना नदी वार करनेको चेष्टा करने लगी।
 यह सुन कर बलीकी रचित सेव्यके परिवनायक, लमि
 यर और कलहर साहबके भाहोरके फारुके समीप
 पड़ू लने पर बिहोदियाने उन्हें धरुध कण्ठ कर काट
 डाला। उस समय पलिकाय यूरोगेय कर्मचारी नगामें
 रहते थे। सर कर इत्याकाएक और मूट लमने लगी।
 ८ वर्षोंके मध्य अफगाण और दुर्ग कोइ कर समो शहर
 बिहोदियोंके शाय या गये। यह स बाद शीघ्र हो गया
 कि बाहर सेनानिवासमें पड़ू लने पर उसी समय लक्ष्मी
 एक दस सेना बिहोदियोंके विरुद्ध भित्री गई। किन्तु
 दिल्लीमें पड़ू लनेके शाय को यह सेना बिहोदियोंके साथ
 मिल गई और सेनानिवासके प्रधान प्रधान कर्मचारियों
 को कतल करने लगी। मेथिनेष्ट उद्देशोभीने पाठ यूरो
 पियनकी सहायतासे विमसक माहमके माय अफगाण
 को रचाके लिए बहुत चेष्टा की किन्तु अन्तमें जताय को
 से अफगाणको बादके डेरमें पाग लम कर मो-दो प्यार
 को मय। अफगाणमें बादके प्रकृतिक कोनेके बहुत
 मीयक मन्द करता हुआ अफगाण उड़ गया। इसमें
 पांच पदरेज विनट हुए और मिय चारने भाव कर पवने
 प्राय रसा की। दुर्ग और सेनानिवासके सिपाहो मोष्ट
 से गोरा लक्षण पानेकी पागइसे निमित्त बैठे थे।
 सन्ध्याक समय से भी बिहोदी को गये और यूरोपीय स्त्री,
 पुरुष, बाल, बूढ़ ब्रिसको सामने पामे लकीकी बच करने
 ली। बहुत कोइ यूरोपीय को बच गये से उनका
 भी मूख पालने प्रापगत हुआ। समी दिन सन्ध्या
 कर्मके बाद दिल्लीमें अन्तैकपालनके समस्त चिह्न
 एक बारी विमुक्त हो गये।

उस तरह सुगत साक्षात्कार पुनः एक बार अभ्य-
 त्थान हुआ, किन्तु सन्नाह, इस दौरे के अन्तर्गत स्वाधीनताका
 अन्तिम दिन भोग न कर सके। १८५७ ई०की ८वीं जून-
 की अंगरेजी सेना ने बटनी-जा-सरायके युद्धमें विद्रो-
 हियोंकी अस्त्रोत्तर पराजय किया। उसी दिन संध्या
 समय उन्होंने विद्रोहियोंके सेनानिवामसे भगा कर नगरके
 बाहर जाँची नदी पर छावनी डाली तब मात्र शवरोष
 किया अन्तिम वाट अंगरेजीसेनाके पुनः दिल्ली हस्तगत
 किया सन्नाहके भाग कर उपाययुक्त समाधिपत्थरमें
 आश्रय लिया किन्तु दूसरे दिन उन्होंने अंगरेजीको आत्म-
 समर्पण किया। सामरिक-प्रद्वेष उनका विचार किया
 गया। विद्रोहियोंको उक्त जगह अंगरेजीमें उन्हें टोपी
 ठहरा कर शिरवातके लिए रहूँ नगरको निर्वाहित
 दिया। वर्ष १८६२ ई०में उनकी मृत्यु हो गई और
 आज ही माघ सुगत सन्नाहका नाम भी जाता रहा।

दिल्ली पुनः अंगरेजीके अधिकारमें आने पर कुछ
 काल तक वह सामरिक-विभागके शासनाधीन रहा।
 उस समय भा. टिकोनियास; सुयाग पा कर यूरोपिय
 सेनाओंकी मृत्यु करनी लगे। इससे प्रतिशरके लिए उन्होंने
 अधिकारियोंको एक दिनोंके लिए दिल्लीमें निजाल
 वापर किया। किन्तु लोगों की कुछ दिन वाट ही नगर-
 के प्रवेश करनेका अनुमति मिली, किन्तु सुमनमान लोग
 १८५८ ई०का ११वीं जनवरी तक उसी छालने रहे।
 इस तागियोंके दिल्ली नगर सामरिक गण-के विभागसे
 साधारण शासन-विभागके अन्तर्गत किया गया। तभीसे
 दिल्लीमें एक प्रकारसे शान्ति विराजता है और दिनों
 दिन हमनी उन्नति हो रही है। १८७७ ई०की १नी
 जनवरीको महाराणी भारतेश्वरीका घोषणापत्र पढ़नेके
 लिए हमी दिल्ली नगरसे दरवार लगा, जिसमें भारत-उप-
 के सभी प्रधान प्रधानराजगण उपस्थित थे। १६०३ ई०का
 १नी जनवरीको वहाँ एक भारी दरवार लगा जिसमें
 समस्त एडवर्ड भारत-उपके सन्नाह, निर्वाचित किये
 गये।

१८९१ ई०की १२वीं दिसम्बरको भारत सन्नाह,
 पद्म लार्जके घोषणासुसार कीर्तिमय दरवारके दिन
 जबसे भारतको राजधानी कलकत्तेसे दिवो उठ कर

थाई तबसे उर्जाकी उन्नति दिनों दिन होती जा रही
 है। तारीख १५ दिसम्बरको मन्त्रालय स्वयं ही अन्तिम-
 पत्र स्यापित किये थे और कहा था, "हमारे आन्तरिक
 पच्छा है, कि उर्जा जितने सरकारी-भवन बनाए जाय,
 उनही गठन प्रणाली अति उत्तम हो, जिसमें कि
 इस प्राचीन और मनोरम नगरका मोर्च्य और भी
 अधिक बढ़ जाय।" तदनुसार एक सभा स्यापित हुई
 और उसी सभासे पहले पञ्च नगरकी उत्तरोय तथा
 दक्षिणीय दिशा सुचित की गई। ऐसा करनेसे दिल्लीमें
 जो वादका भय सदासे बना आ रहा था, वह जाता
 रहा।

१८९२ ई०के दिसम्बर मासमें Sir Bradford
 Le-lie ने लन्दनके Royal Society of Artsके
 भारतीय सेशनके मासमें एक प्रस्ताव पेश किया
 जिसमें उन्होंने कहा था कि नई राजधानी दिल्लीके
 उत्तरोय भागमें उमाई जाय, ऐसा करनेसे जनकी भी
 विविध सुविधा होगी, कारण यमुना नदी पार ही
 बहता है।

१८९३ ई०को फरवरीमें इस विषयमें एक सभा स्यापित
 हुई जिसमें यह निर्णित हुआ कि दिल्लीके उत्तरोय
 भागभी अपेक्षा दक्षिणीय भाग विविध ध्वास्यकर है।
 अतः दक्षिणीय भागमें ही राजधानीके सुप्रसन्न भवन
 बनाए जाय। अन्तमें ऐसा ही हुआ। उस भवनके पार
 ही राजप्रतिनिधि (Viceroy's Court)की अदालत भी
 बनाई गई। सरकार अदालत भी उसी जगह है जो
 पूर्वसे पश्चिमकी चली गई है और जिसकी लम्बाई ११००
 फुट तथा चौड़ाई ४०० फुट है। इसके उत्तरके अल-गमें
 प्रवेशद्वार और पश्चिमके अल-गमें एक बहुत लम्बा चौड़ा
 दालान है जिसमें समय समय पर सभा लगा, करती है।
 नोचिकी प्रधान सतहमें कांसुसिलके सटस्य, मन्त्री तथा
 इमरें दूसरे कर्मचारी रहते हैं। इसके अलावा और
 जितने स्थान हैं वहाँ भिन्न भिन्न विभागके हाकिम लोग
 बैठ कर विचार कार्य करते हैं। अदालतके चारों ओर
 घने वृक्ष, जसाशय आदिके रहनेके कारण वहाँको शीमा
 और ही निर्मली है। वर्तमान कालमें Imperial Re-
 cord-office, The Ethnological Museum, The

Medical research Institute, Library और War Museum इन चार सुदृग्ग भवनके बन जानिसे दिङ्गी नगरका सौन्दर्य पहिलेसे कहीं अधिक बढ़ गया है ।

वहाँ गत यूरोपीय युद्धके स्मारकमें एक पत्थरतम भवन बनाया जा रहा है जिसकी लम्बाई १२२१ ई०मी १० फरवरीकी घुस पक्ष कनाट (Duke of Cornwall) से जानी गई है । यह भवन १९२ फुट लम्बा होगा । इसका सजावट पत्थरका और मतल नाम पत्थरकी बनाई जा रही है । इनके ऊपरमें 'India' शब्द बड़े अक्षरोंमें खुदा हुआ है और समने मोषि १२१४ १८१८ ई० पढ़ित है ।

भाषारथ स्टेशनमें निर्मातिलिप्त प्रधान है । दिङ्गी इमरिट्रिडेट—वह लन साधारणसे बंदे तथा गवर्मेण्ट की गवाहतासे बनाया गया है । इसमें दरबारकोठ, यादू गर, सुप्रभासाय, पासायाद, स्टेयन संक्रान्तय बहूता टेनिका इतमथ और भाषका कर प्रादि कई एक विभाग हैं । स्तुतिविपक्ष-भवा और योनरीरो मन्त्रिद्वैतकी बैठक बड़ा दरबारशास्त्रमें लगती है । मरकारो सभी प्राक्सि, त्रिधा पदास्त, खोवागाय, सहयोगी सुक्षिय प्राक्सि, इतिहास क्षेत्र पणामाराय, पन्धताम और हातय्य शोधनाम है । सदाप्रतना घर बनसाधारणके चर्द और स्तुतिविपक्षितोकी सहायतासे चलता है । यहां ४ मिर्चा है । दिङ्गी-बासेर १७८२ ई०में स्थापित हुआ है जो बहोके प्रविवागियोंके चर्दसे परिचालित होता है । १८२८ ई०में लघुनक्षत्रे नवाय प्रकलपटो खनि इन प्राक्सिमें एकमुष्टसे (७००००) रु० दान दिये हैं । पत्नी दिङ्गीमें बहुतसे हाथियाने भी जो गये हैं ।

दिङ्गी नगरमें इट इण्डिया पन्धाब और राजपूताना डेट ऐलवेकी स्टेयन है । पाठक इन्डस्ट्रीज और पन्धान्य बहुतेमे सुन्दर रात्रयथ दिङ्गीके चारो ओर प्रधान प्रधान स्थाणोकी गये हैं । इथके सिवा यमुना हो कर सो गाई जाती पातो है । सुतरा दिङ्गीमें क्या कमयय, क्या स्वन-पक्ष, क्या ऐलपय यमो राप्तीसे प्राक्सिपकी सुविधा है ; प्रात्रकन यह गहर बनचले बम्बरे राजपूताने प्रादिसे नाय विदोषे प्राक्सिपका एक सेन्दुष्य है । पामान्नेमें भागकी गोडो, रामाबलिब शोधक, बई, ऐयम,

मृत, मीठ, भारी प्रादि तेलहन पनात्र, धो मगक, तरह तरहको धातु, सौंय, चमड़ा तथा विनायको लघुता प्रधान है । ये सब प्रुय पुनः यहांसे दूसरो दूसरो बगड मीजे जाते हैं । इनके सिवा तमाकू, चीनी, छैन मोने प्रादीके तरह तरहके घनहार और जरो प्रादिको रफ्ततनो कोतो है । भिन्द, चाहुन, पन्धभार, विनामिर नय पुन और टोपान तथा पन्धाबके समस्त नमरोमें निद्राकि सोदागर प्राक्सिप्य करमेका जाते हैं । बट्टान्य और टिमो-कैक यूरोपीय भूमयनसे स्थापित हुए हैं । यहां कई मोटामरके बहुतेमे एक्सिप्ट हैं । प्राटनोचक्र कारभारका प्रधान पन्धा है । मिश्रज्रातमें मोने प्रादोके सहोन भारोके बनाये हुए पुप्यानि प्रधान हैं । किन्तु पत्नी विनायता प्रुय्याका पनुकरक बहुत प्रयन जा जागिसे उनका सन्धना-प्रातुय और सौन्दर्य बहुत कम गया है । सुगन-रात्रय गन्धा शोध कोनेमें भी यह मिश्र लष्णाइहोन हो गया है । पन्धाबक मन्ध दिङ्गी नगरमें पन्धो मन्धिन तैवार होतो है, इससे सिवा यहां लच्छट यान तथा तरह तरहके खावप्रायविमिष्ट मशीसे बरतन प्रयुत होते हैं । प्राटनोचक्रमें सब लष्णाइहोन प्रादिके प्रनेय सोलाय रहते हैं । दिङ्गीकी स्य निमित्तीके प्रयम योवीमें गिनो जाता है ।

दिङ्गीका प्रन्धे प्राचीन लोधमन्दिर तथा पन्धान्य क्कानोका विपय संवेपनि निवनेसे भी एक प्रठाण्ट पुष्पक बन जाती, सुतरा यहां क्षियन प्रधान प्रधान प्यान और पन्धान्य प्राति बनार्पण विर्क नामको एक प्राक्सि धी आतो है । यथा—सुगनशाबाद, तुगयरको समाधि, इबार मतुन, प्रादिकाबाद, मन्दिरपन्धो, रोमन, विराम सुनतान बहुतेमे भोगोकी समाधि मत एका बाब, पाठकी मन्त्रिद, दरगाह सुसुन पोडन, दरगाह शिव सलावतान पंखुन, काश्चनमराय मडुर काडी समाधि, बन्तिप्राइड, विजिरका गुम्बज, बड़ पन्धा, पान प्णाननको समाधि, लोचगुम्यर हुमा सुन्दी समाधि और लम्ब मन्ध कई एक बड़ा परव वि मराट, दरगाजा मन्दिर, ईनापकी समाधि और मन्त्रिद, दरगाह निजामुशीन विजरा लोकी मन्त्रिद दिङ्गीके पन्धिन राजापोकी समाधि, दरगाह पमोर पुष्पक,

राजावाकी समाधि, चोपठ खंभा, आनमहल, सैयद
आविदकी समाधि, लाल बङ्गला, पुराणकिल्ला, खास-
महल, नीलकृति, मिरमन्दिर, किल्लाकोणमस्जिद,
काबुलका फाटक, फिरोजशाहका कोतला, प्रशोकका
स्तम्भ, कुशाक-शिकार चोबुर्जो, म्भून्निङ्ग, फिरोज-
शाहके कोतलाके दक्षिणको लिपियुक्त एक मस्जिद, पुराण
किल्लाके निकट नगरतोरण ओर इसके निकटवर्ती लिपि-
युक्त मस्जिद, कुतवमिनार, मस्जिद, कुतव-उल-इस-
लाम, लौहस्तम्भ, असम्पूर्ण मिनार, इडत् मिनार वा लाट,
कुशाक सबूज, अलतमस्की समाधि, अलाउद्दीन खिलजो-
की समाधि, अनाई दरवाजा, इमाम जामिनको समाधि,
महम्मद कुलो खकी समाधि, राजनका वदन, मोनाना
जमालकी समाधि और मस्जिद, गयास-उद्दीन बलवन-
की समाधि, शमशी हौज और निकटस्थ मन्दिर, दरगाह
कुतबुद्दीन, बखितशारकी मस्जिद, मोती मस्जिद, आदम
खकी समाधि, योगमाया, अनङ्गपालका लालकोट और
अलाउद्दीनकृत उनका विस्तार किला, राध पियोरा, हाजी
वावा रोसवाकी समाधि, सुलतान गोरीकी समाधि, हौज
खास, फिरोजशाहकी कब्र, पहाड़के ऊपर सुलतान गोरी-
की समाधिका भग्नावशेष, किस्तवायन, महोपालपुर,
मालवा, बटि मस्जिद वा विजयमन्दिर, मस्जिद वेगम-
पुर, मठकी मस्जिद, तिरहीनजा, सुवारकपुरकी कोतला
समाधि, बुज, कामा हजरत फतेशा, खैरपुरकी समाधि
और मस्जिद, सिकन्दर लोदोकी समाधि, यन्व-मन्व,
कदमगरीफी, महल मूली भटियारी, मस्जिद सरहिन्द,
निगमबोध घाट, दिल्ली दुगंख सौधमाला, लुमा मस्जिद,
काला वा कलान मस्जिद, दरगाह शाह तुर्कानान,
मस्जिद अकबरवाडो, मोनालो मस्जिद, जिनत-उल-
मस्जिद, शरीफ उद्दीनानी मस्जिद, फतेपुरी मस्जिद,
पञ्चावी कटरा मस्जिद, फकर-उल-मस्जिद, गानि
उद्दीनका मटरसा, सोनालो मस्जिद कोतवालो, श्रीक-
पुर और सूर्य कुण्ड, सलीमगढ़ और दुगंके मध्यवर्तीसिन्धु,
जहांपना, दिल्ली शिरसा, फिरोजशाह, सिदि, किलो-
कडो आदि ।

दिहीवाल (दि० दि०) १ दिल्ली सख्तो, दिल्लीका ।
२ दिल्लीका रहनेवाला । (पु०) ३ एक प्रकारका
देशो जूता जो दिहीमें तैयार होता है ।

दिव दार (फा० वि०) जिसमें दिनरा या दिना लगा हो ।
दिव (सं० स्तो०) दोब्यन्त्र दिव वाहु० आधारे दिव ।
१ स्वर्ण, सोना । २ आकाश । ३ दिन ।

दिव (सं० स्तो०) दोब्यन्त्रस्मिन्, दिव घव यं प्रधि-
करणे क । १ स्वर्ग । २ आकाश । ३ दिन । ४ वन,
जङ्गल ।

दिवलम् (सं० त्रि०) १ स्वर्गोय । (पु०) २ इन्द्र ।

दिवगृह (हिं० पु०) देवगृह देवां ।

दिवद्वम (सं० त्रि०) दिवं आकाशं स्वर्गं वा गच्छति
दिव वाहु० खच् सुम् । १ आकाशगामो । २ स्वर्गगामो ।
दिवन् (सं० पु०) दोब्यन्त्रस्मिन्निति दिव कनिन् ।
(कनिन्. यु ह्यपीति । उण् १।५६) टिन, रोज ।

दिवराज (सं० पु०) स्वर्गके राजा, इन्द्र ।

दिवरानी (हिं० स्त्रा०) देवरानी देवी ।

दिवस (सं० पु० स्तो०) दोब्यन्त्र दिव अमच्, क्तिञ् ।
(दिवः क्ति । उण् ३।१२१) दिन, वासर, रोज ।

दिवसकर (सं० पु०) करोतीति क्त-पच्, दिवसस्य करः ।
१ सूर्य । २ अर्कहृत्, मदारका पेड़ ।

दिवसकृत् (सं० पु०) दिवसं करोति क्त-क्लिप्, तुगा
गमः । १ सूर्य । २ अर्कहृत्, आक ।

दिवमनाथ (सं० पु०) दिवसस्य नाथः । सूर्य ।

दिवमभर्तृ (सं० पु०) दिवसस्य भर्ता । सूर्य ।

दिवसमुख (सं० स्तो०) दिवसस्य मुखं । प्रभात, मवेरा ।

दिवसमुद्रा (सं० स्तो०) एक दिनका वेतन, एक दिनकी
सजदूरी ।

दिवसविगम (सं० पु०) दिवसस्य विगमः । दिवावसान,
सन्ध्याकाल, शाम ।

दिवसान्तर (सं० त्रि०) अन्यत् दिवसः । अन्य दिन,
दूसरा दिन ।

दिवसेश्वर (सं० पु०) दिवसस्य ईश्वरः । दिनके प्रभु
सूर्य ।

दिवस्पति (सं० पु०) दिवः पति शलुकु समासः । त्रयो-
दश मन्वन्तरइन्द्र, तैरहर्वे मन्वन्तरके इन्द्रका नाम ।

दिवसपुत्र (सं० पु०) दिवः आकाशस्य पुत्रवच्, मिथः वा
दिवः पुत्र त्रायते त्रै क, पृथो० साधु । १ द्युलोक प्रिय ।
२ द्युलोकपालक, सूर्य ।

दिव्यपृथिवी (स० प्र०) चौथ प्रथिमी च दिवो दिनमा-
द्वयः । (विषयश्च पृथिव्यां । वा १।१।१०) कर्म चोर
भूमि ।

दिव्यस्वप्न (स० पु०) स्वप्नति स्वप्नं क्षिप्तं दिवा स्वप्न
१-तत् । २ पाद द्वारा स्वप्नं स्वप्नीं विष्णु । नामनावतारमं
विष्णुने पेरते स्वप्नं चोर्णं क्षिया वा ।

दिवा (स० पु०) १ दिन, दिवस । २ २२ पक्षदोषा
एक वर्षं दत्त । ३ पक्षे प्रबोधे चरन्मि ७ भगव चौर
१ सुख होता है ।

दिवाह-बुधप्रदेमके परम्यंत बुधव्याहुर त्रिलोका एक सप्तविं
शानो नवर चोर वाचिष्य ज्ञान । यश्च पचा० ४८ १२ स०
चौर देमा० ०८ १६ पू० पुनः पचाहरे २६ मोक्ष सप्तमि
पवस्तिन है । मोक्षवत्त्वा चमभग १०२०८ है । कदा ज्ञान
है, कि बुधव्याहुर नामक एक प्रधान राक्षसपुत्रमि राजधानीके
उत्तर १०२८ ई०में यश्च नवर स्थापित क्षिया । पमी
पयोध्या चौर रोहितपक्षश्च ईनपक्ष इसी नवर दो नर
वामिधे पक्षको दिनों दिन चरति चो रचो है । यक्षि
मोटे कपड़े हैं, जो चोर पनावको रक्ष तनो चोतो है ।
कदा एक पितृको बर्णन्यून चौर एक मिट्टिन-रक्षुत है ।
मति भोमवारको एक बड़ी डाट लगती है ।

दिवाहर (स० पु०) दिवा दिन करोतीति कृ० ।
(विषयमिति । वा १।२।११) १ स्वर् १२ जब दृष्ट,
पाव । २ खास, शोभा । ३ पुण्यविशेष, एक तरहका
कृष्ण ।

दिवाहर—इह नामके पनेक संस्कृत पत्रकारोंके नाम
मिलते हैं जिनमेंसे निम्नलिखित लक्ष्ययोग्य हैं—

१ दिनहरके पुत्र, दानदिनहरके रचयिता ।

२ इत्तरवाकरके डीकाकार । महिनायने मिथपाल
बचकी डीकामें कल डोका कडूत को है ।

३ मनिव ज्योतिर्विदु । बिषो क्षिरी पर्यमि
रुनका दूधप नाम दिनकर बतन्प्रया है । ये मृषि ७
के पुत्र कपदे कपडे पोत्र चोर दिवाकरके प्रपौत्र से ।

इन्मि मरुचिकामासि नामक मरुचिअतीव आतङ्ग
पहति, आतङ्गपहतिप्रकाश पत्रजातक क्षिप्रपहतिनी
प्रोक्कमनोरमा नाम डोका मरुचिअन्प्रापत्र, रघोडता
नामक बर्णनचितपहति, बर्णनक, श्रीपतिप्रकाश,

मरुचिअन्प्रापत्र, आतङ्गपहति उदाहरण, रामविनोद
प्रकाशपहति दिवाकरो चोर १६२० ई०में गोयोरान
मत्तपत्रक नामक ज्योतिष्य अ प्रचयन क्षिये ।

४ एक प्रसिद्ध ज्ञात पक्षित । इनके पिताका नाम
महादेवभट्ट चोर माताका नाम गङ्गा, पितामहका नाम
लक्ष्म, पितामहका महादेव चोर सुब्रह्मपितामहका
नाम मारायण था । इनके बियस एक पुत्र था जिनका
नाम था बंछनाथ ।

इन्को ने १६८२ ई०में बर्मशास्त्र सुबानिधि नामक एक
दृष्टतु ज्योतिषिबन्ध (चाबाराक, तिब्बक चादि इसीके
पनामत हैं) प्रायचित्तमुखावको चोर प्रायचित्तमुखा
बनोप्रकाश, सम्प्रसारक, श्रावणन्दिना चौर १६८४
ई०में इत्तरवाकरादम को रचना को ।

५ महादेवभट्टके पुत्र चौर रामेश्वरभट्टके पोत्र । इनका
उपनाम 'काठ' था । ये पुरातन दिवाकरको माता गङ्गाके
पितामह थे । इन्को ने दानचक्रिका चोर ज्ञात प्रायचित्त-
को रचना को । ६ पचावकोदत्त एक विष्णुवात क्षिये ।

दिवाकरदत्त—पृथिवीकोदत्त एक ब सुप्रन क्षिये ।

दिवाकरवध—कल्याणामास्योत्थ एक विधेउद्यान नामक
स सुप्रन पत्रके रचयिता । शिरोष्ठ पत्र पमिलकपुत्रको
ईश्वर-प्रक्षमिप्राधुर्बिमिषि मोहतिने उद्धृत कृपा है ।
दिवाकरदत्त (स० पु०) दिवाकरवध सुता । सुय पुत्र मनि
यम, कश्च सुधोष । क्षिया टाप । बभुना, ताही ।

दिवाकोषि (स० पु०) दिवा निवने एष ज्योतिर्वंध्य, रातो
चोरक्षमनिधे चान् । १ नाविन नाई । २ चाण्डाल ।
प्राचीन ज्ञानमें मारपी को केवल दिनके समय को नवर
चादिमें भुममें का गणिचार था । नाई चोर चाण्डाल
चादिका क्षय करनेके क्षान चादि कर लेना चाडिये ।
दिवा पञ्जालियंध्य । ३ इन्क कटम् । दिनमें इन्-
का नाम क्षेमें भ्रष्टद्वय तोला को जाता है, ऐसा प्रवाद
है । रमोके दिनमें इन्का नाम नहीं लेना चाडिये ।

दिवाकोश (स० छा०) दिवा दिवके कोश कोर्णोत्थेय ।
अथ साध गवामयमयक्षमें विबुधन ज्ञानिके दिन गो
नाममिट बह नाममान को क्षान भर्ममें कोनेवासे यथा
मयमयक्षमें विबुध न ज्ञानिके दिन माया जाता है ।

दिवाचर (स० पु०) दिवा चरतीति चर० । १ पयो,
विद्विद्यो । २ चाण्डाल ।

दिवाचारी (स० त्रि०) दिवा चरति चर-णिनि । दिवस-
मञ्चारी भूत, दिनमें चलनेवाला ।

दिवातर (स० स्त्री०) अतिशयेन दिवा प्रकाशकं तरप् ।
अत्यन्त प्रकाशक दिवा, बहुत उजला दिन ।

दिवानिगाम् (स० स्त्री०) दिवस और रात्रि, दिन रात ।

दिवानो (हि० स्त्री०) १ वरमें होनेवाला एक प्रकार-
का पेड़ । इसको लकड़ो लाल होता है और इस पर
भूरो तथा नारङ्गी रंगका धारियां पड़ो रहते हैं ।

दीयानी देखो ।

दिवान्ध (स० पु० स्त्री०) दिवा दिवसे अन्धः । १ पेचक,
उल्लू । २ दिवसान्ध प्राणिमात्र, वह जिसे दिनमें न
सूझता हो, दिनोंघोका रोग । (स्त्री०) ३ वनगुला पत्तो ।
(त्रि०) ४ जिसे दिनमें न सूझें ।

दिवान्धकी (स० स्त्री०) दिवान्ध स्वार्थ-क गौरा० डीप् ।
कुण्डरो, कुण्डर ।

दिवाष्ट (स० पु०) सूर्य, दिनकर ।

दिवाप्रदोष (स० पु०) कुण्ठित मनुष्य, खराब आदमी ।

दिवाभिसारिका (स० स्त्री०) वह नायिका जो दिनमें
अपने प्रेमीसे मिलनेके लिए तैयार करके किसी निर्दोष
स्थानमें जाय ।

दिवाभोत (स० पु० स्त्री०) दिवा दिवसे भोतः । १ पेचक,
उल्लू । (पु०) २ कुसुटाकर, सफेद कमल । ३ चोर,
चोर ।

दिवाभोति (स० स्त्री०) दिवा दिवसे भोतिर्मयं यस्य ।
१ पेचक, उल्लू । (त्रि०) २ दिवस भोतियुक्त, जो दिनमें
बाहर निकलनेसे डरता हो ।

दिवामणि (स० पु०) दिवा दिवसस्य मणिरिव । १ सूर्य ।
२ अर्क वृक्ष, आक ।

दिवामध्य (स० स्त्री०) दिवा दिवसस्य मध्यं । मध्याह्न,
दोपहर ।

दिवावसान (स० स्त्री०) दिनका शेष भाग, सन्ध्या,
ग्राम ।

दिवाल (हि० त्रि०) देनेवाला ।

दिवाला (हि० पु०) पूंजी वा आय न रह जानेके कारण
ऋण परिशोधमें असमर्थता, कर्ज न चुका सकना, टाट
उलटना । जब व्यापारीकी अपने व्यापारमें घाटा आता

है अथवा उसका ऋण बहुत बढ़ जाता है और वह
उस ऋणके परिशोध करनेमें अपना असमर्थता जाहिर
करता है, तब उसका दिवाना होना मान लिया जाता
है । पूर्व समयमें ऐसी हालत हा जाने पर ऋणो व्यापारो
अपनी दूकानका टाट उलटा कर उस पर एक चोसुखा
दीया जना देते थे । ऐसे करनेमें लोग समझ जाते थे,
कि अब इनके पास कुछ भी धन नहीं बचा और इनका
दिवाना हो गया । इसी दोषा यानने या जनाने
से "दिवाला" शब्दको उत्पत्ति हुई है । आजकाल
दिवानेके विषयमें कुछ कानून बन गये हैं । इस समय
ऋणो व्यापारो किसी निश्चित न्यायालयमें जा कर
दिवालीका दर्खास्त देता है कि मुझे वाजारका कितना
देना है और इस समय कितना धन या सम्पत्ति मेरे पास
बच गई है, वाद न्यायालयको तरफसे एक योग्य आदमी
नियुक्त हो कर उसको बचो हुई सारा सम्पत्ति नोलाभ
कर देते हैं और उस रकममें उसका सम्पूर्ण नहना
बसूल करके हिस्सेके अनुसार उसका सारा कर्ज चुका
देते हैं । इसमें ऋणोको ऋणके लिए जेल जानेको
भावश्यकता नहीं रह जाती । २ किसी पदार्थका
घिलकुल न रह जाना ।

दिवालिया (हि० त्रि०) जिसने दिवाला निकाला हो ।
दिवाली (हि० स्त्री०) १ पैशाही देखो । (पु०) २ खराद
या सानमें लपेटनेका एक तस्मा, जो उसे खींचनेके
काममें आता है, दयाली ।

दिवामसु (स० पु०) दिवा वसुः किरणो यस्य । १ सूर्य ।
२ अर्क वृक्ष, आक, मदार । दीव्यति दिव क्षिप् योः
भावसुः हविरस्य वा दिवमावसति वस-उत् । ३ दोह-
हविष्क । ४ द्युलोकवासो इन्द्र ।

दिवामय (स० पु०) दिवा दिवसे शीते शी-अच् । १
दिवालापयुक्त, वह जो दिनमें सोता हो । २ दिनमें
अप्रकाशयुक्त, अन्धरा दिन ।

दिवसञ्चर (स० त्रि०) दिवा दिवसे सञ्चरति सम-चर-ट ।
दिवसचारी प्राणिभेद, दिनमें चलनेवाला जानवर ।
इसका पर्याय-श्यामा, श्वेत, शशपत्र, वज्रूल, शिखी, शी-
कर्ण, चक्रवाक, चाप, अश्लोक, खञ्जरीट, शुक, ध्वान्त,
त्रिविध कपोत, भारद्वाज, कुलाल, कुङ्कुर, खर, हारोत,

पत्र, यद्यपि विष्य, पुनर्भूट पोर चटक है। ये सब दिवापर हैं।

दिवाभ्रात्र (स० पु०) दिवा दिवसे क्रात्रः। दिवानिद्रा, दिनको सोना। भावप्रकाशकं मत्तमुत्सार दिनमें सोना नहीं चाहिये, जोरिदि शरीरमें कफको उरि होतो है। किन्तु पोषकान्तरमें यदि दिनको सोये, तो कोई दोष नहीं। पोषकान्तरक विद्या पोर मृतुषोमें निवानिद्रा निविह है। बिनाका प्रति दिन दिवानिद्राका धम्यास है, वे यदि दिवानिद्राका परित्याग करे, तो उनका बाहु, पित्त पोर कफ से तोनों दोष विगड् जाती हैं। जो मृतुष ध्यायाम वा श्वीपशुद्ध द्वारा पचका पयपर्यटनसे क्रात्र हो जाती है तबका जो पतिसार शुभ प्रयाय, गियासा, जिह्वा बाहुरोम, मदास्त्रय पोर चक्षीर्ब इन सब रोमिसे चाक्रान्त हो पचका चोबदेह, चोचकफ, मिष्ट पोर वृह हो पच को रातमें कती हो, उनसे सिधे दिवानिद्रा हितकर है। जिन्हे दिवानिद्रा पोर रात्रिआमरणका धम्यास हो उन्हें दिवानिद्रा पोर रात्रिआमरणमें कोई दोष नहीं होता। (भावत्र०) विद्य देखो।

दिवानिद्रा कामत्र धामनमें गिनी जाती है।

"श्रम्याओ विवासरत्न" परिवर्ण विवां मरा।

श्रीयर्थिकं ब्रह्मत्वा न कामत्रा वचकोत्तमः ४" (मय)

दिवाभ्याय (स० पु०) दिवा दिवसे भ्यायः ७ तत्। दिवा निद्रा दिनमें सोना।

दिवाभ्याया (स० श्वी०) वन शुभा पयो, वचना।

दिवि (स० पु०) दोषनीति दिव्यु क्रोडायां दिव-इत् लय किन्तु। (इतराव दिव्यु । उन् ४११८) चापपयो मोलकच्छ।

दिविषय (स० त्रि०) क्षयवाओ।

दिविषिवत् (स० त्रि०) दिवि षपति चिन्विप- तुकामम, पनुक्-समागन्। स्वर्गबाओ, स्वर्गमें रहनेवाला।

दिविगत (स० त्रि०) दिवि गत- पनुक्-समास। स्वर्ग गत, जो स्वर्गको गया हो।

दिविचर (स० त्रि०) दिवि पाहामे चरतीति चर ट। पाकाचारी, पाकायमें वृमनेवाला।

दिविचारी (स० त्रि०) दिवि चरति चर चिनि। पाकाचारी।

दिविज (स० पु०) दिवि जायते जन-ठ पनुक् समास। १ पनुकोकजात बह जो स्वर्गमें उत्पन्न हुआ हो। २ कुह मायुक्चन्दन, केशरकुल भगरचदन।

दिविजात (स० त्रि०) दिवि जाता पनुक्-समास। स्वर्ग जात, जो स्वर्गमें पैदा हुआ हो।

दिविता (स० श्वी०) दीप बाहु० इतत्-पयो० मासु० । दोषि।

दिविभत् (स० त्रि०) दोषिमत्-पयोःपदिसत्वात् साहा० । दीसिगुह, प्रकायमान्।

दिविदिवि (द्वि० पु०) बारवाङ्क कनाडा कोनापुद, पान स्त्रय धादि नमरोमें मिशनेवाला एक प्रकारका छोटा पेड़। यह दक्षिण धर्मरिशाके भारतभयमें पाया है। इसकी पत्तियां चमड़ा सिमाने पोर रंगनेके काममें जाती हैं।

दिवियत्र (स० पु०) दिवि पनुकोक जिगान् इन्द्रानेम् यमते यज-क्रिय, पनुक्-समास। पनुकोकमित देववाओ, बह जो स्वर्गकोक्षमें रह कर देवताओंका याग करे।

दिविवोनि (स० त्रि०) स्वर्गजभा, जो स्वर्गमें उत्पन्न हुआ हो।

दिविरथ (स० पु०) १ सुदब धी राजा मूमन्व के एक पुत्रका नाम। २ नका उदरेश महाभारतमें पाया है। ३ चरिभ मके पनुसार पङ्कदेयके अविपति दक्षिवाहनक एक पुत्रका नाम।

दिविषिवत् (स० त्रि०) स्वर्गमें वास करनेवाला।

दिविपद् (स० पु०) दिवि लोटतीति मद्-छिदर, सकम्या पनुक्-पल्लव। १ देवता। २ स्वर्गबाओ।

दिविपत्र (स० त्रि०) स्वर्गमें स्वार्थनौय, स्वर्गमें रहने योग्य।

दिविपि (स० श्वी०) पाग, पङ्क।

दिविह (स० त्रि०) दिवि स्वर्गं तिहति श्या-य पनुक्-समास। ततो पत्त। १ स्वर्गस्थ, स्वर्गमें रहनेवाला। २ पन्तोचक्षित। ईशानकोचके एक देयका नाम जिसका बिबरच इहत्सु चितामें पाया है।

दिविमद्—दिविचर ईंकी।

दिविभ्यूय (स० त्रि०) दिवि इध्याति किन् न पत्त। पनुकोकधर्म्यो, जो स्वर्गकोकको स्वर्ग करती है।

दिवी (स० स्त्री०) दिव वाहु० इ० । उपजिहिका कीट,
एक प्रकारका कीड़ा ।

दिवेदिव (अस्य) दिव वाहुलकात् हित्त्वञ्च । दिनी-
टिन ।

दिवेश (स० पु०) दिग्पाल ।

दिवोकम्. (स० पु०) श्योः स्वर्गः आकाशो वा भोको
यस्य । १ देवता । २ चातक पत्तो, चकवा । (त्रि०)
३ आकाशवासो ।

दिवोजा (स० त्रि०) दिवो जायते जन-ड, वाहु० धनुक
समासः । जो स्वर्गलोकमें उत्पन्न हुआ हो ।

दिवोदास (स० पु०) दिवः स्वर्गात् दासो दानं यस्यै ।
१ वधशत्रुके एक पुत्रका नाम । ब्रह्मर्षि इन्द्रनेनाके वधशत्रु
नामक एक पराक्रमशाली पुत्र हुए । इन्हीं वधशत्रुसे
नेनकाके गर्भसे दो यमज सन्तान उत्पन्न हुईं जिनमेंसे
एक पुत्र और दूसरो कन्या थी । पुत्रका नाम राजर्षि
दिवोदास और कन्याका नाम यशस्विनी अहल्या रखा
गया । दिवोदासके महर्षि मित्रयु नामक एक पुत्र थे ।
(हरिवंश ३२ अ०) २ मनुवंशीय रिपुञ्जय नामक एक
राजा । इन्होंने काशीमें कठोर तपस्या की । ब्रह्मानी
तपस्यामें सन्तुष्ट हो कर वर दिया, “रिपुञ्जय ! तुम इस
पृथ्वीका पालन करो, नागराज अपने अन्नमोहिनो
नामकी कन्या प्रदान करते हैं, यहो तुम्हारी स्त्री होगी ।
देवता लोग स्वर्गसे तुम्हें पुष्प और रत्न देंगे, इसो
कारण तुम्हारा नाम दिवोदास पड़ेगा । मेरे वरमें तुम
अत्यन्त वचशाली होगे ।” लोकपितामह ब्रह्मा इस
तरहका वर देकर स्वस्थानको चले गये और दिवोदास
भी काशीमें रह कर अच्छी तरह प्रजापालन करने लगे
काशी देखो ।

दिवोदास चन्द्र वंशीय भोमरथके पुत्र थे । इनके
पुत्रका नाम सुदास और प्रतर्दन था । ये इन्द्रके उपा-
सक थे । इन्द्रने शम्बर असुरको १०० पुरियोंमेंसे ८८
पुरिया नष्ट करके बाकी एक पुरो इन्हींको दो थी । ये
काशीके राजा थे । महाभारतके मतसे इनके पिताका
नाम सुदेव था । पिताके मरने पर ये ही राजा बन बैठे ।
इनके पिताशत्रु, वीतहव्यके पुत्रोंने इन्हें युद्धमें परास्त
किया । पीछे इन्होंने भरद्वाज मुनिका आश्रय लिया ।

मुनिने इनके लिए एक यज्ञ क्रिया जिसके प्रभावमें इनके
प्रदर्शन नामक एक वीर पुत्र पैदा हुआ जिसने वीतहव्य-
के पुत्रोंको युद्धमें मार डाला । महादेवने इन्हींमें काशी
लो दो । (भारत अनुशासन ३० अ०) ३ दिवोदासप्रकाश
नामक धर्मशास्त्रके प्रणीता । निर्णयमिन्धु और याद-
मय स्वर्गमें यह ग्रन्थ उद्धृत हुआ है । ४ विकल्पादर्पण
कार । ब्रह्मवैवर्तपुराण और सुश्रुतमें इस ग्रन्थका
उल्लेख है ।

दिवोदुह (स० त्रि०) दिवोद्युक्त, स्वर्गमें दूधका गिरना ।
दिवोद्वय (स० त्रि०) दिवे स्वर्गं उद्ववति उट्-भू-घच् ।
१ स्वर्गजात, जो स्वर्गमें उत्पन्न हुआ हो । (स्त्री०)
दिवि वने उड़वो यस्याः । २ एला, इलायचो ।

दिवोरुघ (स० त्रि०) आकाशमें टोमिगोल, जो आकाश-
में चमकता हो ।

दिवोल्ता (स० स्त्री०) दिवा जाता उल्ता । वह उल्ता या
चमकीना पिण्ड जो दिनके समय आकाशमें गिरता हो ।
दिवोरुम् (स० पु०) दिव स्वर्ग आकाशो वा भोकोऽ-
वस्थानं यस्य । १ देवता । २ चातकपत्तो । (त्रि०) ३
स्वर्गवासो, स्वर्गमें रहनेवाला ।

दिवोकस (स० पु०) भोकस् शब्दो भद्रन्तोऽप्यस्ति दिव
भोकसोऽस्य । देवता ।

दिव्य (सं० त्रि०) दिवि भवः यत् । १ स्वर्गभव, स्वर्गसे सम्बन्ध
रखनेवाला । २ आकाशभव, आकाशसे संबंध रखने-
वाला । ३ प्रकाशमान, चमकीला । ४ अत्यन्त सुन्दर,
बहुत बढ़िया । (पु०) ५ यम । ६ गुग्गुलु, गुग्गुलु । ७
तान्त्रिक आचार विशेष, तान्त्रिकोंका आचार जिसे दिव्य-
भाव कहते हैं । सब तान्त्रिककार्य तीन भावोंके होते हैं,
दिव्य, पशु और वीरभाव । सत्य और त्रेताके प्रथमार्ध
तक दिव्य हैं ; वीरभावमें तान्त्रिककार्य करनेको विधि
निर्दिष्ट है । पञ्चमकार साधन, श्मशानसाधन और
चितासाधन दिव्य तथा वीरभावानुसार होते हैं । ये सब
आचरण पशुभावमें नहीं करना चाहिये । तन्त्र देखो । ८
उत्पातभेद, आकाशमें होनेवाला एक प्रकारका उत्पात ।
९ नायकभेद, वह नायक जो स्वर्गीय या अलौकिक हो ।
यह नायक दिव्य और पदिव्यके भेदसे कई प्रकारका है ।
इनमेंसे इन्द्रादि दिव्यनायक, इन्द्रापी आदि दिव्या

नादिका मासक यादि पदिव्य मायक, मासको यादि पदिव्या नादिका है। 'एवमन्तो' १० मन्त्र लोच। (श्लो०) ११ हरिचन्द्रन। १२ मन्त्रनादि अयं पूर्वक ययवमेद। मन्त्रान्न कृत्वा आ मन्त्र बोधना है वह अब तब मन्त्रादीं सति भोग नहीं जागे, तब तब मन्त्र में काम करता है। मन्त्रान्न अयं कर् ययव नहीं जाना चाहिये। यदि कोई मन्त्रान्न अयं कर् कर ययव जाने कहे तो दोमों को मरव्यामी जाने है।

गणोदक, तास्य, गोमय घोर गोरत्रप्रय कर यदि कोई मय वा पमय ययव करे, तो करमें घोर कराने जाने दोमों को मरव्यामी जाने है। (गायत्रीयन्त्र ३५) ११ व्यावहारिक, व्यायामयमें शोधन कामको एक प्रकारकी घरीचा जिनमें बिमो मनुष्यका अपराधी या निरापराधी होना सिद्ध होता था। अब आदो घोर प्रति बाधोका मोक्षक तथा मित्य प्रमाणादि नहीं रहते हैं, तब तुम्हा यादिके द्वारा बिबानानुसार परोचा को जातो थे। उद्व्यतिथि मतानुसार ये परोचाये नौ प्रकार को हैं।—

घट, चम्बि, उद्व, विष, क्षोय तण्डुल, तन्मापक, पन घोर बमत्र। रत्नमें तुम्हा या घट, चम्बि, अन्न, विष घोर क्षोय ये तींच घरीचार्य कठिन परराधोके लिये। तण्डुल कोरोके लिये, तन्मापक बडो मारा कोरोके लिये घोर घन तथा बमत्र साधारण अपराधोंके लिये है। यह त्रिष ब्राह्मणानि बचने-ने निव मित्र प्रकारका है। ब्राह्मणको परोचा बहनिधि या तुम्हामे चम्बिपका चम्बिने भेगपटी कहते घोर गूढको विषये परोचा येमों चाहिये।

कामक इह, पातुर घोर का इन मोमोंको परोचा तुम्हाविधि से होनी चाहिये। बिबुधहितामे लिखा है, कि पिछकी बिबयरोचा इमैसरोमी १० म्माकडस रोमीकी बन्धरोच, कात्रियको चम्बिरोचा घोर दर-बिघों, मपन, लुपारिकों कुर्सी तथा नादिकाको का-परोचा करानि न होनी चाहिये।

बर्षक घोर बटवारण घरीचा सब लडुवामे हो सकता है। बर्ष, ईमल घोर मिदिरकामने चम्बिके, बौधमें बमको घोर मीतकामने बिबको करवा करनेका

नियम है। धोतकामने त्रस, पोथकामने चम्बि, वर्षा कामने विष और प्रभातके समय तुम्हाका परोचा नहीं होनी चाहिये। चम्बि, घट घोर क्षोय उरोचा मषेरे, बम-परोचा दोपहरको घोर बिपयरोचा रातको होनी चाहिये। उद्व्यतिथि जिन समय सि हव्य या मकरस्य से पकवा मयु पम्प हो उन समय कोई परोचा नहीं करने चाहिये। मन्मामने घोर घटमो तथा चतुदमो को भी परोचा नहीं जानो चाहिये। त्रिष या परोचाके दिनमें एक दिन पहले परोचा देने घोर मनेवाने दाना को उपवास करनेका नियम है। कुल विगिट नियमाके पनुसार रात्रयमामे एकप्रित मनुष्याके कामने परोचा होनी चाहिये। बिमोरा मत है, कि इसकी वनाका तुम्हो नामका एक घोर प्रकारका दिव्य भी है, पर इससे बिदवमें कोई विमिय जान नहीं मिलतो।

तुम्हापरोचामे चम्बिबुध एक बड़े तराजू पर बडता घोर दो बार पदन बदन कर तोना जाता था। यदि वह दूसरो बारको लोचमें बड़ जाता, तो निरापराध घोर बराबर बतर जाता वा घट जाता ता दोपों समझ जाता था। चम्बिपरोचामे तब नादिको पम्पुनोम से कर मात मण्डिके भीतर घीरे छोरे बनना पड़ता था। बिना हाथ असे यदि वह काम हो जाता, ता चोर निर्दोय समझा जाता था। अन्परोचामे चम्बिबुध अक्षमें गाता जगाता था। गाता जगात समय तीन बाध छोड़े जाते हैं। जब चम्बिबुध कर्ममें डबना, ठोके उस समय तापरा हाथ चलावा जाता था। जिन बन्ध बाध भूटना था, उधो बन्ध एक पादमी बहुत संकोच बर्षा हाथ निरता बनो कान पर पड़ च जाता था घोर एक दूसरा पादमी कम बाधको छीकर उस कान पर बहुत धीमेसे दोड़ कर पाता था अहमि बाध ब टा था। रत्नमें समय तब यदि चम्बि बुध कर्ममें हो रहता ता वह निर्दोय समझा जाता था। बिपयरोचामे चम्बिबुधको विष चम्बिके जिन्याया जाता था। विष पच जाने पर चम्बिबुध निर्दोय इहवाया जाता था। कायपरोचामे चम्बिबुधको बिना देवताके कानका मोन च जनि अन्न दोमिच लिये दिया जाता था। एक पलके चम्बिबुध बस देवताके कोठने यदि चम्बिबुध बिघो घोर दु-वामे न पड़ता, तो वह रुका माना जाता था।

इसी प्रकारके श्रौंग भी दिव्य थे। १४ नखवेत्ता। (स्त्री०) १५ गामलकी, श्रावला। १६ बस्याकार्कटिकी, मांभ काकोडा। १७ शताधरी, शतावर। १८ सहामेदा। १९ ब्राह्मी। २० ज्वेतदूर्वा, सफेद दूब। २१ हरीतकी, हड़। २२ पुरा, सुरा। २३ गन्धवती। (पु०) २४ स्थूलजीरक, बड़ा जीरा। (स्त्री०) २५ दैवदिन। २६ दैवदिनका परिमाण। २७ न्यूलोकजात, बड़ जो स्वर्गमें उत्पन्न हुआ हो। २८ शूकर, सूप्र। २९ कपूरकचरो। ३० यय, जो। ३१ बड़ स्नान जो धूपमें डरसते हुए पानीसे किया जाय।

दिव्यक (सं० पु०) १ सर्पभेद, एक प्रकारका मांप। २ जन्तुभेद, एका प्रकारका जन्तु।

दिव्यकट (सं० स्त्री०) प्रतीचीख पुरभेद, प्राचीन कानका एक देश। इसका उल्लेख महाभारतमें है। यह पश्चिम दिशामें अवस्थित था।

दिव्यकवच (सं० पु०) १ देवताओंका दिया हुआ कवच। २ स्तोत्रविशेष, एक प्रकारका स्तोत्र जिसका पाठ करनेसे भंग-रक्षा हो।

दिव्यकुण्ड (सं० स्त्री०) दिव्यं पुण्यप्रदत्वात् अत्युत्कृष्टं कुण्डं। कामरूपमें लोभकशैलके पूर्व भागकी एक पुष्करिणीका नाम। कामरूपमें दुर्जय पर्वतके दक्षिण-पूर्व-कोणमें बरासन नामका एक नगर है। इसीके दक्षिणमें लोभकशैल अवस्थित है। पहाड़ पर लाल पत्थर के ऊपर स्वयं देवी विराजती है और इसी पहाड़को उपलकाभूमिमें दिव्यकुण्ड है जिसमें स्नान कर देवीकी पूजा करनेसे पडती है। जो सोभाग्यालाना मनुष्य दिव्य कुण्डमें स्नान कर पञ्चपुष्करिणी देवीका पूजन करते हैं उनका पुनर्जन्म नहीं होता है। (काशिकापु० ८१ अ०)

दिव्यक्रिया (सं० स्त्री०) दिव्यं कृत्वा परोक्षा लेनेकी क्रिया।

दिव्यगन्ध (सं० पु०) दिव्य गन्धः यस्य। १ गन्धक। दिव्यः गन्धः। २ मनोहर गन्ध, जिसकी गन्ध अच्छी हो। (स्त्री०) ३ लवङ्ग, लौंग।

दिव्यगन्धा (सं० स्त्री०) दिव्यः गन्धो यस्यः। १ स्थूलैला, बड़ी इलायची। २ महापञ्चशाक, बड़ी चंचका साग।

दिव्यगाय (सं० पु०) दिव्यः स्वर्गीयः गायनः। स्वर्गायक, गन्धर्व।

दिव्यचक्षु (सं० त्रि०) दिव्यं अनौक्तिकं चक्षुर्यस्य। १ ज्ञानचक्षु। गीतामें ब्रह्मज्ञाने भर्जुनमे कहा है, 'हे भर्जुन। तुम इस वर्मचक्षुहाग हमारे ऐश्वरिक रूपकी नहीं देख सकते हो। हम तुम्हें दिव्यचक्षु देते हैं, जिससे तुम हमारे ऐश्वरिकरूप और प्रभावको अच्छी तरह देख सकोगे।' दिव्यं स्वर्गीयं मनोन्नं वा चक्षुः। २ स्वर्गीयचक्षु। ३ सुन्दर लोचन, अच्छी आंख। ४ उपचक्षु, चश्मा। ५ मर्कट, बन्दर। ६ सुगन्ध भेद, एक प्रकारका गन्धद्रव्य। (त्रि०) दिव्ये प्राकाश-भूते चक्षुषो यस्य। ७ अन्धा, जिसे कुछ भी दिखाई न दे।

दिव्यचन्दन (सं० स्त्री०) हरिचन्दन।

दिव्यता (सं० स्त्री०) १ देवभाव। २ दिव्यका भाव। ३ उत्तमता, सुन्दरता।

दिव्यतुष्टी (सं० स्त्री०) अन्नाभूभेद, एक प्रकारका कद्दू।

दिव्यतेजस् (सं० स्त्री०) दिव्यं तेजो यस्याः। ब्राह्मी शाक। इसके सेवन करनेसे स्वर्गीय लोगोंने जैसा तेज ही जाता है, इसीसे इसका नाम दिव्यतेजस् पड़ा।

दिव्यदर्शी (सं० त्रि०) दिव्यं अनौक्तिकपदार्थं पश्यति दृश-णिनि। अनौन्दिय पदार्थ-दर्शक।

दिव्यदृग् (सं० त्रि०) दिव्यं पश्यति दृश-क्लिप्। दिव्य-पदार्थ देखनेवाला।

दिव्यदेवी (सं० स्त्री०) पुराणके अनुसार एक देवीका नाम।

दिव्यदोहद (सं० स्त्री०) दिव्यं स्वर्गीयं दोहदं अभिनाषी यत्र। उपपाचित, वह पदार्थ जो किसी अभोष्टको सिद्धि अभिप्रायसे किसी देवताको अर्पित किया जाय।

दिव्यदृष्टि (सं० स्त्री०) दिव्यचक्षु देखो।

दिव्यधर्मि (सं० पु०) सुगील, नेक, अच्छा।

दिव्यनगर (सं० पु०) ऐरावती नगरी।

दिव्यनदी (सं० स्त्री०) दिव्या नदी। आकाशगङ्गा।

दिव्यनारी (सं० स्त्री०) दिव्य स्त्री, अप्सरा।

दिव्यपञ्चामृत (सं० स्त्री०) पञ्चानां अमृतानां तत्तुल्यत्वाद् गुणद्रव्यार्था समाहारः। पञ्चामृतः यह दही, दूब, घी, चोनी, और मधु इन पाँच चीजोंको मिला कर बनाया जाता है।

दिव्यपुष्प (सं० पु०) दिव्यं मनोन्नं पुष्पं यस्य।

१ कर्बोर, खने । (ज्ञो०) २ मनोहर सुय, सुन्दर धूम ।
दिव्यायुष्या (सं० ज्यो०) दिव्यानि युष्यानि वस्त्रा । मध्याह्नीया,
बहुता युमा । इसका पीड़ मनुष्यके शरावर र्छाया और
पक्ष साक्ष होता है ।

दिव्यायुषिका (स० ज्यो०) दिव्यायुष्य म प्रायां वम् टाय् ।
धतरत् । सोहितवर्षे धर्मद्वय, ज्ञान र यथा मदार
वा प्रायः ।

दिव्यायुष्य (स० पु०) दिव्या युष्यः । अनागतप्रायस युष्यः ।

दिव्यामान (स० ज्यो०) दिव्या मान । देवमान ।

दिव्यायुषुना (स० ज्यो०) दिव्या युषुना तस्युष्णक
प्रदत्तात् । नदीविशेष । तद्द्वय नामरूपेणै दमनिका
नदीके पूर्वमे पञ्चजित है । दमनिका नदीके पूर्वोत्तर
कोरमें युषुनाके समान धनदायिने दिव्यायुषुना नामक ।
एक बहुो नदी है जो दक्षिण पर्वतसे निकल कर दक्षिण
समुद्रमें जा गिरी है । जो इस नदीमें एक मान त ।
ज्ञान करता है, वने तुल्य घोर तरङ्ग तरङ्गके सुख सोमाय्य
प्राप्त होते हैं । विशेष कर कालिक महीनेमें इस नदीमें
ज्ञान करमेंसे मोक्ष मिलता है । (आश्विनापु० ७१ म०)
नामक हैके ।

दिव्यारज (स० ज्यो०) दिव्या विद्यामात्र तदर्थे वदायक
त्वात् अतोश्चि ह रज । विद्यामश्चि । इससे विषयों
प्रसिद्ध है, कि वह सब कामनायें पूरी करता है ।

दिव्यारज (स० पु०) दिव्या अर्थात् अन्तरोक्ष वा रज
शरीरमयान, दिव्यताधीका विमान ।

दिव्यारज (स० पु०) दिव्या रजः निरुद्ध कामं वा० । १ पारद
घारा । २ मनोहर रस (जि०) दिव्या रज यज
३ महारसकुल प्रियका रस मोगा जो ।

दिव्यारजता (स० ज्यो०) दिव्यारजमभा मता । १ सूर्वा
मता, मूरुशरी, सुन्दरहार । २ मनोहर मतामात्र ।

दिव्यारजक (स० पु०) दिव्या रजकमिष, धमिषाजय
मुस्त । १ सूर्य-योमा सूर्यका प्रकाश । (ज्यो०)
दिव्य रजक । २ मनोहर वज्र, बर्षिया कपड़ा । दिवि
भव यत्, दिव्या रजक । ३ दिविभव रजक, धर्मिय
वज्र । (जि०) दिव्या सुन्दर जय यज । ४ सुन्दर
वज्रकुल, त्रिकोने पञ्चा कपड़ा जो ।

दिव्यारजक (स० पु०) आकाशवाणी, देववाणी ।

दिव्यारजक (स० ज्यो०) इयमातु मीयको इह कथाधीमि-
से एक ।

दिव्यारजित (स० ज्यो०) इह ज्ञान त्रिकोने सब कुछ
सुना भाय ।

दिव्यारजित् (स० ज्यो०) दिव्या रजित् । आकाशगङ्गा ।

दिव्यारजित् (स० पु०) दिव्या सारुयं यत् । १ निम्बके
मेघ । २ दिव्यारजित् मिरि ।

दिव्यारजित् (स० पु०) दिव्या सारो यज । मानस्य, ज्ञान
का पीड़ ।

दिव्यारजित्—वीर्य त्रिकोने उत्तर पश्चिमकी धैना इषा
ब्रह्मामय्य नामका एक उपविभाग । यहाँ काठक
का बहुत प्रसिद्ध है । ३०० वर्ष पहिले यहाँ जो राजा
राज्य करते थे, उनकी नाम दिव्यारजित् वा । वहीने
ब्रह्मचर्यमने अथपथक विद्या वा । पहले तमसुके
पिता कुबेर इनके मन्त्री थे । इसी कारण दिव्यारजित्
पहले तमसुके राज्यकरितके पञ्चो तरङ्ग पञ्चगत थे । ज्ञान
क्रमसे पहले तमसु काठक छोड़ कर गान्धियुर चले पाये ।
उनको प्यारो चारां घोर धैको बुरे जो । बाद सब
राजा दिव्यारजित् अपने लड़केको राज्य मौव कर प्राप
गान्धियुरमें पा कर पहले तमसुके साथ रहने लगे । राजा
के वै राज्यको देख कर पहले तने उनका अन्धदास यह
नया नाम रखा । धै-राजीमें वे इसो नामसे परिचित हैं ।
राजा दिव्यारजित् (अन्धदास)ने स सुत भावामे पहले-
को राजाकीना रचना को ।

दिव्यारजित् (स० पु०) रामातुह सन्ध्यायके बारह पाचार्य ।
इन्के नाम थे हैं, कासार, मूल, महत् मन्त्रिसार, मन्त्रि,
कुलीचर, विष्णुचित मन्त्रिरीच, मुनिवार चतुष्प
बीठ, रामातुज और गोदा देवा ।

दिव्यारजित् (स० ज्यो०) दिव्याङ्गा, अथवा ।

दिव्यारजित् (स० पु०) ध्यु ।

दिव्या (स० ज्यो०) दिवि भवा मनोप्रसन्न सुचारवतात्
दिव्यैव । १ भागे, भाय । २ अन्ध कर्बोटीकी, नाम
ककोड़ा । ३ यतावरो, यतावर । ४ मजामेठा । ५ प्राची
कड़ी । ६ कूल जोरक, कडा जोर । ७ मीतपूर्वा,
मवेद दूध । ८ इरीतकी, इड़ । ९ नाविचामिद, तीन
प्रकारकी नाविचाधीमिये एक ।

धन' कर्षति है। इय प्रकार कुल दय दियाये है। बेसि-
पिकका मत है कि भाष्यमें दिया एक जो है, काम
बनानिसे जिसे लक्ष्मी दीद कर लिए गए हैं। संख्या, परि
मात्र, हयकल, भयोग चौर विमाय इनके मुख हैं। २
दन्तवत, दंतका अणुम। ३ दयस प्या। ४ ओठाभिहित
देवतामेद, एक देवता जो कामके पवित्रता देवता माने
जाते हैं।

दियम् (म० स्त्री०) दिगतोति दिय कसुप। दिक्,
दिया।

दिया (स० स्त्री०) दिग्, क्षिप, टाप। १ निवत कामके
परतिरिक्त मिय विस्तार, चोट, तरफ। २ चितित्र हृत्तके
बिषे हुए चार कथित विमामोर्षिणि बिषो एक विभाग
को चोरका विस्तार। ३ मू देवा। ३ ब्रह्म-पञ्चोमेद, ब्रह्मी
एक स्त्रीका नाम।

दियागत्र (स० पु०) दियावां स्थितो गत्रः। दिग्गत्र।

दियाचक्षु (म० पु०) नक्षत्राब्ज मेट, गच्छके एक पुम-
का नाम।

दियापाल (म० पु०) दियां पालयति पालि धक्। १
दिक् पाल। २ ब्रह्मा कर्तुं क नियोजित बेराजदि प्रजा
पति-पुत्र, ब्रह्मणे नियुक्त किते हुए बेराजादि प्रजा-
पतिके मुख। ये बीय लक्ष्मी दियापोका पालन करते हैं।
हरिक धर्म देवका विषय इस प्रकार लिखा है—नोऽ
पितामह ब्रह्मणे सम्बन्धे ब्रह्मन् विमाम करके दिक्-प्राप्ती
को स्थापित किया पूष दियाको रसाक किते बिगुट के
नक्षत्रे सुहस्रा, दक्षिणमें बर्दम प्रजापतिके पुत्र ब्रह्मपद
राजा, पश्चिममें महाका रजापुत्र कितुमान चौर उत्तर
धोरमें प्रजापति पञ्चमे नक्षत्रे राजा हिरण्यरोमा नियुक्त
हुए। इन तरह मक्षपति चौर दिक् प्राप्तीसे स्थापित
प्रदेश यथाविधि पाचहम महाकवे पात्र तत्र पाठित
होता है। (हरिक ४३ ब०)

दियध्वम (स० पु०) दिक् ध्वम।

दियावकायकमत (स० पु०) बी नियोका एक प्रकारका
मत। इसमें वे मंदरे मर निषय कर सीते हैं कि पात्र
धम ममुख दिग्गमें इतनी दूर तक जायें।

दियागुल (दि० पु०) दिग्गुल रको।

दिदि (दि० स्त्री०) दिग्ग दीको।

दिगिनियम (दि० पु०, विचारकाऽभ्यन्त देको।
दिग्गम (स० पु०) दिग्गम।

दिग्गोदण्ड (स० पु०) दिग्ग पनादण्ड १५४। पनादर
धारा दण्ड।

दिग्ग (म० स्त्री०) दिग्गि नक्षमोति दिग्ग यत्। (विगादिभ्ये
यद। वा ४। १। ३५) दिग्गम, दिया म कक्षी।

दिग्ग (स० स्त्री०) दिग्गति इटागित फल ददाति दिग्ग-
(विच जो च च प्रायं। वा। ३। ३। ३३ ३ भाष्य। (पु०)
दिग्गति दिग्ग म प्रायां क। २ काम। ३ मक्षत मनुष्य
एक मुखका नाम। ३ दाबकदिग्ग दाबकद्वी (त्रि०)
३ उपदिग्ग, जिसे उपदेय दिया गया जो। ४ मर्दगित,
दिखनाया गया जो। ८ दक्ष को दिया गया जो।

दिग्गम्यक (दि० पु०) बिमो बीमको बन्धक या देहन
रत्नकेका एक भेद। इसमें महाजनको सेवक रूपकेवा
सुद दिया जाता है।

दिग्गस्त (स० पु०) दिग्गस्त माध्यम पन्तो यत्र। मरक,
मोत।

दिग्गि (स० स्त्री०) दिग्गि जिन् म प्रायां जिच-या। १ दुर्द,
सुमी। २ परिमात्र। ३ उपदेय। ४ कथन। ५ लक्ष्य।
६ भाष्य।

दिग्गा (स० पत्र०) दिग्ग सम्प्रदादित्वात् मांशे जिग्,
दिग्ग देगल म्हायति म्हा-क्षिप, लिया० माहुः। १ दुर्द
प्रमत्ता। २ मङ्गल।

दिग्गु (म० स्त्री०) ददाति दा बाहुनात् मिष्णु। दाता,
देनेवाला।

दिग्ग वर (स० पु०) प मनेको सानका पत्निम मरुना,
जिसमें इकतोम दिग्ग म्हाते है।

दिग्गा (दि० स्त्री०) दिग्गा देको।

दिग्गावत (दि० पु०) बीम्राको एक जाति।

दिग्गावर (दि० पु०) देगान्तर, सूखा देय।

दिग्गाव्री (दि० स्त्री०) को विदेमके पाता हो, बाहरी।

दिग्गागुल (दि० पु०) दिग्गुल देको।

दिग्गा (दि० पु०) देगा देकी।

दिग्गा (दि० स्त्री०) चौर तरफ।

दिग्ग हा (स० स्त्री०) दाता देनेवाला।

दिग्ग—धयोप्यादि कर्त्तव्यत वायव्येको जिदेका एक म्हार।

यह साईं नदीके किनारे वरेली नगरसे १० मीलको दूरी पर अवस्थित है।

दिङ्ग - आसामके अन्तर्गत लक्ष्मीपुर जिलेको एक नदी। जिन तीन नदियोंके योगसे ब्रह्मपुत्र नदी उत्पन्न हुई है, दिङ्ग उनमेंसे प्रधान है। इससे और सबकी नदियोंकी अपेक्षा अधिक जल आता है। तिव्वतदेशमें सानपो नामकी जो नदी है, समोका विश्वास है कि वही नदी हिमालयके अज्ञात अगम्य राह होती हुई बहुत दूर जानके बाद भरव पर्वतके गङ्गरपथसे निकली है और अन्तमें आसाम आ कर दिङ्ग नाम धारण किया है।

दिङ्गली (हि० स्त्री०) दहलीज देखो।

दिङ्गाड़ा (हि० पु०) १ दुर्गत, बुरी हालत।

दिङ्गाड़ी (हि० स्त्री०) १ दिन। २ दिन भरकी मजदूरी।

दिङ्गात (हि० स्त्री०) देहात देखो।

दिङ्गाती (हि० वि०) देहाती देखो।

दिङ्गातीपन (हि० पु०) देहातीपन देखो।

दिङ्गि—आसामके अन्तर्गत लक्ष्मीपुर जिलेकी दो नदियाँ।

इनके नाम नोभा (नव) दिङ्गि और बूढ़ी दिङ्गि हैं।

इन दो नदियों तथा दिङ्गि नदीके योगसे ब्रह्मपुत्र नदी उत्पन्न हुई है। नोभा दिङ्गि पूर्वभागमें सिंपो पर्वतसे निकल कर पश्चिमकी ओर सदिया शहरसे कुछ ऊपरमें ब्रह्मपुत्र नदीसे मिलो है। बूढ़ीदिङ्गि लक्ष्मीपुर जिलेके अग्निक्षेत्रमें पटकाई पर्वतसे उत्पन्न हो कर पश्चिमकी ओर जयपुर शहरके समीप होती हुई अन्तमें शिवसागर और लक्ष्मीपुर जिलेके मध्य ब्रह्मपुत्र नदीमें गिरी है। सर्पाकालमें बूढ़ीदिङ्गि ही कर जयपुर तक जहान जाता आता है। त्रिगाव नामक ग्रामके निकट कृत्रिम खाडो काट कर दो दिङ्गि नदियोंमें मिला दी गई है। बूढ़ीदिङ्गि नदीके किनारे विस्तृत स्थान पर पर्यिया कोयले और मिट्टेके तेलको खान है। यहाँका कोयला बहुत उमदा होता है तथा विदेश भेजनेकी भी अच्छी सुविधा है। १८८६ ई०में कोयले और मिट्टे तेलकी खान एक हो बार खोली गई, किन्तु अनेक दिन बाद काम बन्द हो गया। जयपुर और माङ्गम नामक स्थानमें अभी कोयलेकी खान खोदी

गई है। आसाम-रेलवे और ट्रेडिङ्ग कम्पनी स्थापित हुई है। इस कम्पनीने कोयलेकी रफ्तानेके लिए टिब्रु-गढ़ स्टोमरघाटसे ले कर दमदमा तक प्रायः ४५ मील रेलपथ खोल दिया है। दमदमासे पुनः दिङ्गि नदीके ऊपर हो कर माङ्गमके कोयलेको खान तक रेल गई है।

दिङ्गुडी (हि० स्त्री०) थोड़ी देपो।

दिङ्गुला (हि० पु०) पूर्वके जिनोमें होनेवाला एक प्रकारका धान।

दिङ्गुज (सं० पु०) दहेज देखो।

दीं (हि० स्त्री०) दोमक देखो।

दीघट (हि० स्त्री०) दीघट देरों।

दीघा (हि० पु०) दीघा देखो।

दीक (हि० पु०) काट, या हिजलीके पेटके छिलकेसे निकलनेवाला एक प्रकारका तेल। यह जानमें मांजा टेनेके काममें आता है। हिजलीके पेड़ टलियमें ससुद-फे किनारे बहुत पाए जाते हैं।

दीकक (सं० त्रि०) दीकते दीक-गुल्, उपदेष्टा, दोषा देनेवाला।

दीकण (सं० स्त्री०) दीक भावे ल्युट्। यज्ञादि निमित्त नियमभेद, दीक्षा टेनेकी क्रिया।

दीकणीय (सं० पु०) दीकणाय हितं हितदित्वात् छ। दीक्षासाधन उचिर्भेद, दीक्षासाधन करनेका एक प्रकार का होम।

दीकणीया (सं० स्त्री०) दीकणीय-टाप्। इष्टिभेद, एक प्रकारका यज्ञ।

दीकणीयेष्टि (सं० स्त्री०) दीकणीया इष्टिः। यज्ञविशेष। इसका पर्याय सौमिक है। इस यज्ञमें देवताओंको विशेषतः विष्णु और अग्निको आवाहन कर एकको सूर्यरूपमें और दूसरेको अपने रूपमें यज्ञशरारकी पापसुक्षिके लिए पूजते हैं। बाद उसे वस्त्र और काने हिरणके चमड़ेसे ढाँक कर अन्यान्य यज्ञकार्य किये जाते हैं। पोछे उसका आवरण उतार कर उसे स्नान करनेको भेज देते हैं। इसके अनन्तर उसका नया जन्म होना समझा जाता है।

दीक्षा (सं० स्त्री०) दीक्षा भावे, अस्त्रियां टाप्। १ यजन, यज्ञकर्म, सोम यागादिका संकल्प पूर्वक अनुष्ठान। २ पूजन। ३ व्रतसंघट्ट। ४ नियम। ५ उपनयनसंस्कार

त्रिसुप्तं चाचार्यं गायत्रीं मन्त्रं वा उपदेशं दिते ॥ १३० ॥
वहीत इत्ये । १ सुप्तं निष्कटं तन्मोक्ष इष्टमन्त्रपद्यम् ।

मोक्षमोक्ष तन्मोक्षे निष्ठा है, कि त्रिसुप्ते विमल प्राण
धोर दिग्मन्त्रा काम हो, सभी कर्मवासनाएं चौक हो
तथा पापसमुद्र छय हो, उभोका न म दीक्षा है । दीक्षा
पद्य करणा पद्यम कर्त्तव्य है । दीक्षित नहीं होनेसे
द्वेष्ट पवित्र नहीं होतो, इसी कारण मन्त्रेण पद्यका दीक्षा
पद्य करणा मुख्य कर्त्तव्य है विना मातामह, यन्त्रिह
सहोदर धोर गुरुपद्यसे मन्त्र सेना उचित नहीं ।

“शुभ्रं च न यद्वीयात् तथा यागमहर्षेण ॥

शेरशय कश्चिद्युय वैरिपद्याभिरुत्सव कश्” (शोभनीय १)

शामो पत्नीको, पिता पुत्रकन्याको धोर भार्द भार्दको
दीक्षा नहीं है मन्त्र । पति यदि विद्वान्मन्त्र हो तो
पत्नीको दीक्षित कर सकते हैं ।

‘न पत्नी वीर्येभ्यस्तं न पिता वीर्येभ्यः सुप्तं ।

न पुत्र न तथा ज्ञाता प्रतरं न च वीर्येभ्यः ॥

श्रियं को बन्धे पतिस्तथा पत्नी न वीर्येभ्यः ॥” (श्वन मन्त्र)

पति, पिता, नननाभौ धोर विभिन्नायमी पद्यात्
न मारम्यागौबे यदि दीक्षा लो जाय तो बह दीक्षा
कल्याणदायिका नहीं होतो ।

“अथेदीक्षा निरुद्धं ता वीक्षा न वनवाचिनः ।

निश्चिन्तयित्वा वीक्षा न ता कन्यानरायिका ॥”

(सूक्तपरिभाषिणी)

शे सब नियम नचन रहनेके कारण उक्त प्यज्ञियोंने
दीक्षा नहीं मिनो चाहिये । मेदिन से मर निविह
प्यज्ञियन यह विह हो, तो इनसे दीक्षा से सकते हैं,
नह दीक्षा पद्यम नहीं होतो, यस्मि कन्याप कर
होतो है ।

यदि माय्यानुसार भिह विद्याका नाम हो तो बिना
गुरुका विचार किए हो दीक्षा न सकते है । यदि
बिहीन प्रसाद वा पद्यानतायय पितासे मन्त्र ले लिया
हो, तो उसे प्रायश्चित्त से कर पुन दीक्षा पद्य करनी
चाहिये ।

“प्रसाप्य तथा नान् निरुद्धं तां समाचरत् ।

वाचस्त्रिपद्य मना इत्या पुनर्दीक्षां समाचरेत् ॥”

(गणकपरिभाषिणी)

बर्दा पर पितृपदको उपसल्लव जानना चाहिये
पद्यात् मातामह चादि पद्यने जो जो निविह बतकाये
गये हैं, उन्ही बदि मन्त्र लिया जाय, तो प्रायश्चित्त करने
फिरसे मन्त्र सेना विधेय है ।

यद्यपि इस प्रकार दीक्षा पद्य करणा प्रायश्चित्त दय
प्रकार साक्षिणी नव बतमाया है ।

इष्टयामन्त्रमे यतिने मी दोषा सिद्धिवा विधान है,
किन्तु विधेयता यह है कि वे तीर्थाचारकुल मन्त्रतन्त्र
विद्यारह, न यतिश्रिय धोर निव्हा काय तत्पर यति हो ।
पिताका मन्त्र निर्वर्ण है पद्यात् पितासे दीक्षित होनेसे
यदि उस मन्त्र द्वारा उय पूजादि को जाय, तो रिमो
पद्यको प्रायासे शाह भी नर बैठना पड़ता है । किन्तु
यैम धोर यात्र मन्त्रसे विषयमें धोर टाप नहीं ।
‘पितासे दीक्षित न होना’ यह पद्यन बोल-दीक्षापर
है पद्यात् औकाचार विहित दीक्षासे पितासे
मी मन्त्र पद्य कर सकते हैं, तद्विच भवत्त
नहीं । क्योंकि योगिनोतन्त्रमें शक्यादि विद्याका लक्ष्य
करके जो पितादिने दीक्षा पद्य निविह बतकाया
है ; पद्यना ‘श्रेयं यात्रे न दुष्पति इम ज्ञानसे गात्र
पदको केवलमात्र ताराणि विद्या विषयमें जानना चाहिये
पद्यात् तारादिका मन्त्र पितादिने पद्य किया जा
सकता है । मन्त्रमुक्तमें इम प्रकार लिखा है - ‘पिता
अथेष्टपुत्रको मन्त्र दे सकते हैं इममें कोई दोष नहीं ।
गर्हा धोर कायो चादि महातोर्वीमें तथा सन्त्र सूर्य-
पद्य कासमें पितादिने मन्त्रपद्य करनेमें बिनी दोषका
विचार नहा किया जाना । अत्रतन्त्र धोर जो प्रदत्त
मन्त्रका पुनर्वाच न स्वार करनेमें हा बह सुह होता है ।
यदि जियेसे मन्त्र सिद्धि की दृष्ट्या हो तो उनमें निम्न-
निविह सुधीका रहना प्रावश्यक है.—आधो मदाचार
तत्परता, शुद्धि यति मज्जियोना त्रिर्दिश्रया सर्वमन्त्रार्थ
तत्परता क्षमीना धोर पूजादि कार्यमें धनुरत्ता पद्यात्
इम सब सुचमन्त्रका जियेसे दीक्षा पद्य कर सकते
हैं । किन्तु निश्चयमें ये सब सुच रहनेपर भी बह दीक्षा
दिनेकी वीष्य नहीं है । श्री शुद्धि मन्त्र सिद्धि दय पद्य
मात्र होता है, विधेयता; मातासे दीक्षित होनेसे अष्टगुण
पद्य मिलता है । यदि माता पद्यना उपचित मन्त्र

प्रदान करे, तो अष्टगुण फल, नहीं तो शुभ फल होता है। किन्तु किन्तु तन्त्रविदुका कहना है कि सिद्ध मन्त्र ग्रहण करनेमें गुरुका विचार करना नहीं होता। विधवा स्त्रीको मन्त्र देनेका अधिकार नहीं है, इसके प्रतिप्रथममें इस प्रकार लिखा है,—विधवा स्त्री पुत्रकी प्राप्ता ले कर, कन्या पिताको प्राप्ता ले कर मन्त्र दे सकती है, नहीं तो इन्हें स्वतन्त्रता नहीं है। गर्भवती स्त्रीसे मन्त्र लेनेमें कोई दोष नहीं। किन्तु दशम मास गर्भवती स्त्रीसे यदि मन्त्र लिया जाय, तो रोरव नरक होता है।

मन्त्र यदि स्वप्नमें लाभ हो, तो वह मन्त्र सद्गुरुसे पुनः ग्रहण करना चाहिये। यदि सद्गुरु न मिले, तो जल पूर्ण कलसमें प्राण प्रतिष्ठा करके एक वटपत्र पर कुङ्कुम द्वारा वह मन्त्र लिखे और पीछे उस पत्रको उक्त कलसमें डाल दे। तदनन्तर मन्त्र सहित उस वट पत्रको उठा कर स्वयं वह मन्त्र ग्रहण करे। स्वप्रलब्ध मन्त्रमें मन्त्रपरीक्षा अनावश्यक है।

बीशकी अवरुधता—दीक्षाधीन मन्त्रजप दूषित होता है, इससे पहले दीक्षाका निरूपण करना आवश्यक है। दीक्षा मनुष्यको दिव्य ज्ञान देती है और पाप राशिको क्षय करती है। यह कारण है कि ब्रह्मचर्यादि सभी आश्रमोंमें दीक्षाकी आवश्यकता है। कारण दीक्षा ही जप, तपस्या आदिको जड़ है। बिना दीक्षाके जप तपस्यादि कोई कार्य ही नहीं हो सकता। इसलिये सभी आश्रमोंमें दीक्षित ही कर रहना चाहिए। बिना दीक्षित हुए जो मनुष्य जपपूजादि कार्य करता है, उसका वह कार्य पत्थर पर बोज बोनिके समान निष्फल होता है।

दीक्षाविहीन व्यक्तिको सिद्धि वा सद्गति कुछ भी नहीं होती। अतएव बहुत यत्नपूर्वक गुरुसे अवश्य दीक्षित होना चाहिए। यथाशास्त्र दीक्षित होनेसे वह दीक्षा क्षणकालके मधुर लक्ष उपपातक और कोटि महापातक दग्ध करती है। जो गुरुसे दीक्षित न हो कर ग्रन्थके मन्त्र देख कर स्वयं दीक्षित होता है, वह नराधम सदस्य मन्त्रन्तरमें भी निष्कृति नहीं पाता। अदीक्षित व्यक्तिको तपस्या, नियम, व्रत, तीर्थगमन तथा शारीरिक परिश्रम

द्वारा कोई कार्य सिद्ध नहीं होता। अदीक्षित व्यक्तिका अन्न विद्याके समान, जल सूत्रके समान और तत्कृत आद्यादि भी निष्फल है। (तन्त्र०)

शूद्रको दीक्षाके विषयमें जो प्रभेद है वह इस प्रकार है—प्रणव और प्रणवघटित मन्त्र शूद्रको नहीं देना चाहिए। जो ब्राह्मण शूद्रको आत्ममन्त्र, गुरुका मन्त्र, यजुषामन्त्र, स्वाहा और प्रणवसंयुक्तमन्त्र देता है उस ब्राह्मणको अधोगति होती है और मन्त्रप्रहीता शूद्र भी निरयगामी होता है। लक्ष्मी मन्त्र (त्रो) का लेना स्त्री और शूद्रके अधिकार नहीं है। शूद्रको गोपाल, महेश्वर, दूर्गा, सूर्य और गणेशका मन्त्र देना चाहिए। कारण शूद्र यही सब मन्त्र लेनेके अधिकारी हैं। इसको अन्यथा करनेसे वे पाप भागी होते हैं। जिन जिन देवताके मन्त्र लेनेका अधिकार है, उनमेंसे अनुकूल मन्त्र ग्रहण करना चाहिए। दीक्षाके समय ताराचक्र, राशिचक्र और नामचक्रका विचार करना होता है।

स्वप्रलब्ध मन्त्र, स्त्रीसे ग्रहोत्पन्न मन्त्र, मासामन्त्र और व्रतचरमन्त्र लेनेमें सिद्धादिका विचार नहीं करना चाहिए नपुंसक मन्त्र, सूर्यका अष्टाक्षर, पञ्चाक्षर, एकाक्षर, द्व्यक्षर और व्रतचरादि मन्त्रका सिद्धान्त विचार नहीं करना। जिस मन्त्रके अन्तमें 'हुंफट' रहे उसे पुं मन्त्र, जिसके अन्तमें 'स्वाहा' रहे उसे स्त्री मन्त्र और जिसके अन्तमें 'नमः' रहे, उसे नपुंसक मन्त्र कहते हैं। सुतरां मन्त्र तीन प्रकारका है।

जो जो महाविद्या पृथ्वा पर दोषपरिशून्या है उसका विषय इस प्रकार लिखा है। काली, नीला, महादुर्गा, त्वरिता, छिन्नमस्ता, वाग्वादिनी, भद्रपूर्णा, प्रत्यङ्गिरा, कामाख्यावासिनो, वाला, मातङ्गो, शैलवासिनो आदि देवियां कलिकालमें साधकको पूर्णफल प्रदान करती हैं। ये सब देवता सिद्धमन्त्र हैं, सुतरां कलिकालमें इनको उपासनामें अधिक परिश्रम उठाना नहीं होता अर्थात् "कलौ संख्याचतुर्गुण" इत्यादि शास्त्रानुसार कलिकालमें जप पूजादिकी जो चतुर्गुणसंख्या निर्दिष्ट है, वह करनी नहीं होती। कारण ये सब महाविद्या कलिदोषदुष्टा नहीं हैं।

दश महाविद्या मन्त्र लेनेमें सिद्धादि विचार, नक्षत्र

पञ्चादि विचार, वचनादि मोक्षन चोर परिनिर्वादिना विचार क्रमात् नहो जाता । दीक्षात्रि समय एतन्ना मन्त्र पश्य करनेसे एत होता है । कोई कोई कहते हैं, कि एत प्रथम मा-नाम्नका विचार सर्वत्र हो पावश्यक है । क्योंकि पुनरुद्भवमये यदि स्वप्नमें कसो वैशिमन्त्र मिल जाय तो उससे दोष इष्ट होता है । इसी कारण विचार का आवश्यक है ।

दीक्षाके समय नामपरंपरानु-दीक्षा पश्यत्रि समय वितामाताये को नाम रखा है, उसी नामको नियमों प्रादि उपदि चोर कोका परित्याग कर पश्याय्य समी कर्ष नाम पश्य करे । नाम पश्यत्रि नियमों विज्ञता तन्मयें इस प्रकार विद्या है—जिसका जो प्रसिद्ध नाम रहता है धवना अथवा नामों को नाम रखा जाता है उसे वही नाम लेना होता है और यदि लोगोंके लिए वही नाम लेना उचित है तो उससे शुद्ध पुण्यगत द्वारा रखते हैं । ब्रह्मवासमें सिद्धा है, कि जो नाम से कर पुकारनेसे निर्द्विज वरिज जग उठता है, वृष्ये अथवा देता है और जो नाम से कर पुकारनेसे पश्याय्यमण्ड धवनामि प्रभु तार देता है वही नाम पश्य कर दीक्षा कार्यका अनुष्ठान करना चाहिये । जिस देवतासे मन्त्रपश्यमें लिप्य चक्षुहा पावश्यक है, वह एत प्रकार है—विष्णुमन्त्र पश्यमें लक्ष्मण, शिवमन्त्रमें कौटिल्य विपुलामन्त्रमें रामिचक्र, योगमन्त्र और राममन्त्रमें पञ्चकमन्त्र, महीदामन्त्रमें हरचक्र, बराहमन्त्रमें कौटिल्य, और महा लक्ष्मीमन्त्रमें कुन्दाकुलचक्रहा विचार कर दीक्षा पश्य करनी चाहिये ।

यत्क विचारका बाल्य निरव एतत्क यत्क पर्यवे देकी ।

दीक्षापश्य—दीक्षासे समय निर्दिष्ट दिनमें शुद्ध शिष्यको बुला कर पवित्र कुसुमया पर विद्याये चोर निद्रामन्त्रसे उलजा शिष्यावस्थ करे । शिष्य मयनसे समय यह निद्रामन्त्र तीन बार पढ़े और उपवासी तथा त्रिनेन्द्रिय जो कर जो शुद्धे पादुका ध्यान करती वृष को जाने । निद्रामन्त्र—“ॐ हिसिचिसि शुक्लापदे प्याहा” पश्यवा

“कसो वय भिन्देवाय विष्णुकाय महावने ।

रामाय विष्णुमन्त्र स्वप्नानिन्दये वयः ॥

एतत्के कथन में एतत्क सर्वकार्येभ्योक्तः । शिष्याधिक विचारस्यापि एतत्क प्रपारात्क मरेतर ॥” यत्क मन्त्र पढ़ कर मयन करे । दूसरे दिन धर्मसे शुद्ध शिष्यसे स्वप्नइष्ट समायम ज्ञान पूछे । शिष्य यदि स्वप्नमें कन्धा, ब्रह्म, रथ, प्रदोष, पञ्चासिका, पश्य, नटो इत्यो, वृष मात्र, मनुक, मयं इत्य, पर्वत, चोडक कोरि पवित्र द्रव्या, पाममात्र, मद् और पासन इनमेंसे कोई एक वस्तु देखे, तो उसका मत्र सिद्ध होता, पिना समझना चाहिये ।

दीक्षाके निरवमें का-निर्षय—वेदनाममें दीक्षापश्य करनेसे पुनरुपायविधि वैशाख मासमें रजताम, क्येठ मासमें पञ्च, भावाङ्गमें बन्तुनाय श्राद्धममें रजसचय, कार्तिक और पशुपञ्चममें म जसिद्धि पोवमें शत्रुपीडा म, वमें मंकाष्ठि और पाशुगुनमें चक्र प्रपाराको कामनाए सिद्ध होती हैं । यदि एत विहित मासमें मयनाम पढ़े, तो इस मासको छोड़ देना चाहिये । कसो मो मयमासमें दीक्षापश्य न करे । वैश मासमें दीक्षाका जो विधान कहा गया है, उसे गोपालम ज पश्यत्रि नियमों जानना चाहिये । क्योंकि तिसो तन्मयें सिद्धा है कि चैत्रमासमें दीक्षापश्य करनेसे मरक और दुःख होता है । माद्र और लक्ष्ममासमें मो म म लेना निन्दे है । इनो कारण दाक्षासे सपश्यमें योगमाय प्राप्त है ।

दीक्षाके मन्त्रमें वा-निर्षय—विचारको दीक्षापश्य करनेसे विष्णुसहय भोमशारको शान्ति, मङ्गलशारको पाशुपत्य, बुधशारको सोम्यमात्रि इष्टशक्तिशारको शाननाम, शुकशारको सोमाय्य और गनिशारको वयवा नाय होता है ।

विशिविषयन - प्रतिपदमें दीक्षापश्य करनेसे ज्ञाननाम, द्वितीयां ज्ञान तृतीयां पवित्रता, चतुर्थीमें विष्णुनाम, पंचमीमें बुद्धि, षष्ठीमें शाननाय, सप्तमीमें सुख, अष्टमीमें बुद्धिनाम, नवमीमें शरीररथ, दशमीमें राजवत् सोमाय्यनाम, एकादशीमें पवित्रता, द्वादशीमें सब सिद्धि, त्रयोदशीमें दरिद्रता चतुर्दशीमें तिय ज्ञानिमात्रि, पन्नासप्तमीमें मानवानि और पूर्वमा तिथिमें म स भिन्ने बर्माको इति श्लोके है । किन्तु एत मत्र तिथिमें पन्ना-भ्याय तियि बर्जित है । जिस दिन सव्यागत्रंन,

भूमिकाम्य और उन्कापात ही, वही दिन अस्याध्याय कृतताता है। सुतर्ग उन समस्त दिनोंमें तथा वेदोक्त अन्यान्य अस्वाध्यायमें दोक्षाग्रहण निषेध है। द्वितीया, पञ्चमी, षष्ठो, द्वादशी और त्रिंशोदशी तिथि दोक्षाके लिये प्रगन्त है। किन्तु षष्ठो और त्रयोदशी तिथिमें केवल विष्णु मंत्र और षष्ठी तिथिमें गिवमंत्र ग्रहण कर सकते हैं। दशमी और पद्मसी तिथिको दोक्षाके लिये निषिद्ध वतलाया है। (शेषतः)

नक्षत्र-निर्णय—अश्विनी नक्षत्रमें दोक्षाग्रहण करनेमें सुख, भरणीमें मृत्यु, कृत्तिकामें दुःख, रोहिणीमें वाक्पतित्व, मृगशीर्षमें सुखप्राप्ति, आर्द्रामें वस्तुनाश, पुनर्वसुमें धनसम्पत्ति, पुष्यामें शत्रुनाश, अश्लेषामें मृत्यु, मघामें दुःखनाश और पूर्वफल्गुनीमें मोन्दर्यप्राप्ति, उत्तरफल्गुनीमें ज्ञान, हस्तामें धन, चित्रामें ज्ञानमहि, स्नातोमें शत्रुनाश, विशाखामें सुख, अनुराधामें वस्तुवृद्धि, ज्येष्ठामें सुतन्त्रानि, मूलामें कौत्सि वृद्धि, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढामें कौत्सि, श्रवणामें दुःख, धनिष्ठामें दारिद्र्य, शतभिषामें ज्ञान, पूर्वभाद्रमें सुख, उत्तरभाद्रमें दुःख, और ऐश्वते नक्षत्रमें कौत्सि वृद्धि होती है। यहाँ आर्द्रा और कृत्तिका जो निषेध वतलाया है वह गिव और वज्रिके इतर विषयमें लिये अर्थात् गिव और वज्रिके लिये उक्त दोनों नक्षत्र दोषरहित नहीं हैं। कारण कहीं पर गिव और वज्रिके ग्रहणके विषयमें आर्द्रा और कृत्तिका नक्षत्रको प्रगन्त वतलाया है।

अश्विनी, भरणी, स्वाती, विशाखा, हस्ता, ज्येष्ठा, उत्तरभाद्रपद, उत्तरफल्गुनी और उत्तराषाढामें दोक्षाग्रहण शुभजनक है। यहाँ पर ज्येष्ठा और भरणीनक्षत्रमें दोक्षाका जो विधान है, वह केवल राममन्त्रके लिये।

योगनिर्णय - शुभ, सिद्ध, आयुष्मान्, ध्रुव, प्रीति, सौभाग्य, वृद्धि और हर्षणयोग दोक्षाकार्यमें शुभावह है। रत्नावलीमें लिखा है कि प्रीति, आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन, धृति, वृद्धि, ध्रुव, सुकर्मा, साध्य, शक, हर्षण, श्रीयान्, शिव, मिह और इन्द्रके सोलह योग दोक्षाकार्यमें शुभजनक हैं।

रुग्णनिर्णय—वव, वानव, कौलव, तैतिल और वणिज ये सब करण दोक्षा कार्यमें शुभ हैं।

रत्न निर्णय—हृष, मिंर, कन्या, धनु और मोन इन सब लग्नोंमें तथा चन्द्रतारा शुद्धिमें दोक्षाग्रहण कर सकते हैं। विष्णुमन्त्र लेनेमें म्थिरलज्ज अर्थात् हृष, मिंर, वृष्टिक और कुम्भ ये चार लग्न प्रगन्त हैं।

गिवमन्त्र लेनेमें चार लग्न अर्थात् मेष, कर्कट, तुला और मकर ये चार लग्न तथा शक्तिमन्त्र दोक्षामें हस्तक लग्न अर्थात् मिथुन, कन्या, धनु और मोन ये चार लग्न शुभजनक है। लग्नमें दशम, षष्ठ और एकादश स्थानमें पापग्रह तथा लग्नि चतुर्थ, मघम, दशम, नवम, और पञ्चम स्थानमें शुभग्रह रहनेमें दोक्षाकार्यमें शुभ होना है। किन्तु दोक्षाकार्यमें ध्रुवग्रह अग्निटकारो है, इसो उमका परिष्ठाग करना चाहिये।

पक्षनिर्णय—शुक्लपक्षमें दोक्षा शुभफल प्रदान करती है और कृष्णपक्षमें पञ्चमी तिथि तक भी दोक्षाकार्य दोषावर नहीं है। सम्पत्तिकामो अश्विनी शुक्लपक्षमें और सुत्तिकामोको कृष्णपक्षमें मन्त्र लेना चाहिये। पूर्वाक्त निषिद्धमाममें और तिथि विग्रोपमें मंत्र ग्रहण कर सकते हैं, इस विषयमें रत्नावलीमें इस प्रकार लिखा है,—भाद्रमासकी षष्ठो, आश्विनमासकी कृष्णाचतुर्दशी, कार्तिककी शुक्ला नवमी अश्विनीमासकी दशमी, वीषकी शुक्लाचतुर्थी, फाल्गुनकी शुक्लानवमी, चैत्रमासकी काम-चतुर्दशी, वैशाखकी अष्य दशमी, ज्येष्ठकी दशमरा, आषाढकी शुक्लापञ्चमी और श्रावणकी कृष्णापञ्चमी इन सब देवपर्वोंमें जो दोक्षाग्रहण की जाती है, वह तोर्ध-स्थानमें दोक्षाग्रहणके समान जोटि शुणफलदायी होती है। इन सब देवपर्वोंमें मन्त्रग्रहण करनेसे मान, तिथि, वार और नक्षत्रादि कुछ भी विचार नहीं किया जाता। गिवजोने स्वयं कहा है, कि देवपर्वमें मन्त्र-ग्रहण करनेमें वार, नक्षत्र, मास और तिथ्यादि दोष तथा योगकरणादिके दोषादोषका विचार नहीं करना चाहिये। इसो किमोका मत है, कि चैत्रकी शुक्ला-तयोदशी, वैशाखकी शुक्ला एकादशी, ज्येष्ठकी कृष्णा-चतुर्दशी, आषाढकी नागपञ्चमी, श्रावणकी एकादशी, भाद्रको जम्माष्टमी, आश्विनकी महाष्टमी, कार्तिककी शुक्लानवमी, अश्विनीमासकी शुक्लाषष्ठी, वीषकी चतुर्दशी, माघमासकी शुक्ला एकादशी, फाल्गुनकी शुक्लाषष्ठी ये

मत्र तिथियां दोषाकार्ये तिष्ठ प्रयत्नः । अतएव च
 चौर दक्षिणादि मन्त्रादिना, चन्द्रसूर्यपञ्च,
 शुक्राद्या तिथि चौर मन्त्रात् तिथि तथा महापूजा दिन
 दोषाकार्येण समप्रदः । चतुर्थी, पंचमी, षटुदमी चौर
 पञ्चमी ये मत्र तिथियां मी दोषापञ्चके तिष्ठ प्रयत्न
 मानो नरैः । यदा २२ षटुदमी चौर पञ्चमीको यति-
 दोषानि तथा चतुर्थीको गण्डिमन्त्रदोषाके विषयमे आगता
 चाहिये । दोषाके तिष्ठ सूर्यपञ्चके जैसा उत्तम समय
 चौर कृमय नहीं है । चन्द्रसूर्य-पञ्चकाकर्म कार-
 तिष्यादिका विचार नहीं किया जाता । सूर्यपञ्चकाक-
 र्म यज्ञदोषा चौर चन्द्रपञ्चकाकर्म विष्णुदोषा नहीं
 सेमी चाहिये । अथवा मन्त्रे अथवा पुनः शीविद्याके शिवा
 धर्म विद्याके विषयमे आगता चाहिये यथाच सूर्यपञ्च
 में शीविद्याका मन्त्र चौर चन्द्रपञ्चकाकर्म गोपाल
 मन्त्र पञ्च कर सकते हैं । शीतमीय तन्त्रमें कहा है,
 त्रि पर्यं होममें चौर चन्द्रपञ्चकाकर्म समो प्रकारको
 दोषाप प्रयत्नः । लोकत त्रि तारा मन्त्रका विषय
 हक प्रकार लिखा है—हृत्पञ्चकी षट्ठी तिथि, शुभरुद्र,
 पूर्वमाश्रयद नक्षत्र चौर मित्रनारायें दोषा पञ्च करनी
 चाहिये ।

चन्द्र चौर सूर्य पञ्चकाकर्म दोषा पञ्चका कुत्र भी
 विचार नहीं किया जाता । सूर्यपञ्चकाकर्म शीविद्या चौर
 दुर्गा मन्त्रपञ्च करनेसे मनुष्य सुखिणम करता है । यदि
 सोमवारको अमावस्या मन्त्रकारको चतुदमी चौर
 रविवारको अमवा तिथि पडे, तो वह तिथि यत सूर्यपञ्च
 समान होती है, इसमें दोषादि कार्यं यत्न प्रयत्न है ।
 कुशाकर्षमें लिखा है कि रविवारको अमवा सोमवारको
 अमावस्या, मन्त्रकारको चतुर्थी चौर अष्टमतिवारको
 षट्ठी तिथि होनेसे दीवतुल्य पद होता है, इस कारण
 यह तिथि दोषाके विषे यत्न प्रयत्न है ।

महादि पुत्रतीर्था, कुशसेन, पोडजान प्रयाग, बेलप
 पर्वत चौर काशीसेन इन सब स्थानोंमें मत्र पञ्चका
 कुत्र भी विचार नहीं किया जाता । विष्णुधामकर्म
 लिखा है, कि देवादि होपनेसे खेद नभवी तत्र त्रितनी
 तिथिसे मृत्यु, मन्त्रके तिथिमें दोषापञ्च करनेसे
 समस्त यमोद विष होती हैं । चाण्डिकाकर्मको शृणुहो

तिथि दोषाके तिष्ठ विषय प्रयत्न है क्योंकि इन समय
 अथवा चर चर विराजतो हैं । अतएव इस समयमें दोषा
 पञ्च करनेसे यथेष्ट फल प्राप्त होता है, इसमें मास चौर
 मन्त्रादि का विचार नहीं किया जाता । फिर भी लिखा
 है कि दुर्गादेवोके वीचनमें, यमोकाहमीमें, रामनभोमें
 तथा गुरुद थाचापुनः मत्र जेनेमें थाटाकादिका
 विचार नहीं करण चाहिये ।

तत्र किमी एक कर्म वा तिथिमें दोषापञ्च कर
 सकते हैं ।

इतनेमें जिस किसी कर्म वा जिन दिनों तिथिमें को
 दोषापञ्च को जानो है, वह दोषापञ्च नहीं कोतो । मन्त्र
 वारको चतुर्थी पड़नेसे तथा अष्टम्यां दिनमें कर्मादिकी
 बिना विधिना तिष्ठ ही मन्त्र से सकते हैं । समयाचार
 तन्त्रमें लिखा है, कि युगायतिथि, अष्टादश चौर उत्त
 रायच तथा दक्षिणायन मन्त्राको दोषापञ्च करनेमें
 अमावस्या कुत्र भी विचार नहीं किया जाता । गुरुदेव
 यिष्णुको कुत्रा कर अथवा पूर्वक यदि दौचित करे, तो
 मन्त्रादिका कुत्र भी विचार नहीं करना जागा । जब
 मन्त्र शुद्ध स्वयं कर्षित हो कर यिष्णुको दीक्षित
 करे, तब समस्त बार, पद, नक्षत्र चौर राशि समस्त
 देतो हैं ।

श्रीवाराणसी विद्वान्—गोयाका, गुरुका मन्त्र देवा
 कथ, कानन, पुष्पसेन, अथवा, नदीतीर, पामलकी चौर
 विश्वरूपके मनीष, पर्वताय, पर्वतगुहा चौर महातट
 इन सब स्थानोंमें दोषापञ्च करनेसे शीविष्णु फल प्राप्त
 होता है । यथा, भास्करसेन विराजातोर्ष अथवा मन्त्र
 नाय पर्वत मतदुर्देय चौर कन्याशुद्ध इन सब स्थानोंमें
 मन्त्र नहीं लेना चाहिये । बाराहीतन्त्रमें लिखा है कि यदि
 यज्ञ यत्नगत पयवा अथवा कर्ममें हो, पयवा यदि गुरु
 चौर रवि एक धरनें हो, तो मेष अथवा चौर पि इमें
 मन्त्रपञ्च करनेसे दोष नहीं होता । काम्ये तारादि
 महाविद्याके मन्त्रपञ्चके काकाकादिका विचार नहीं
 किया जाता । यह विषय मनुष्यमासातन्त्रमें इस प्रकार
 लिखा है—महाविद्याका मन्त्र जेनेमें आनादिका विचार
 नहीं किया जाता चौर न परिमन्त्रादि दोषके विचार
 को ही पावयायता कोतो है । (त नवार)

० हिन्दोके एक कवि । ये जिला रायवनेनीमें रहते थे और इनके पिताका नाम था भीन कवि ।

३ एक सुप्रसिद्ध हिन्दो-कवि । इन्होंने बहुतमो कवि-ताएँ रची हैं, उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं,—

“जाँव रक्षिया मोहन गऊ चरावै

उहो राग मुख प्रीमुख भावै ।

नकुट कामर मुरली कर लिये

दोहना मोहना मोहना ॥

मुकुट शरक टग हंमनि अलक

झुवि अङ्ग अङ्ग नरुसे सोहना मोहना ।

यद छवि निरखु जिव ब्रह्मा

मुर नारद भीन ठे मुख जोहना ॥

दीन-दयाल हवाठ अथ

गनकी अगय अगोर ताहे ।

नचावत गवाठ पाठ सङ्ग

मोहना मोहना सोहना ॥”

दीनदयालगिरि—हिन्दोके एक सुप्रसिद्ध कवि । इन्होंने सबकु १८८८में अनुरागवाग तथा सं० १८१२में अन्धोक्ति-कल्पद्रुम ये दो पुस्तकें लिखीं । इनके निवास-स्थानका हाल इन्होंने दो ग्रन्थोंमें विदित होता है । अनुरागवागमें इन्होंने श्रीकृष्णजीका चरित्र संक्षेप-रूपसे वर्णन किया है । इन्में उड़वका श्रीकृष्णसे गोपिकाश्रीके सन्देशका वर्णन बड़ा लम्बा चौड़ा है और इसमें मूरदासकी भाँति इन्होंने भी उड़वका प्रेमोत्सव हीना लिखा है । इस पुस्तकमें पाँच अध्याय हैं, जिनमेंसे चारमें श्रीकृष्णकी कथा वर्णित है और पाँचवेंमें देवताश्रीकी स्तुति है ।

ये रूपकके बड़े प्रेमी थे । इन्होंने अन्य काव्यांगीका भी वर्णन किया है, जिनकी कथा साहित्य-रोतिकी जैसी है । इनके लगह जगह पर प्राकृतिक वर्णन भी अच्छे दोख पहुँते हैं इनकी अनुरागवाग नामक पुस्तकमें लिखी हुई अनेक सुमधुर कविताश्रमोंसे एक उदाहरण-रूप नीचे देते हैं—

“गरजै शानन वे बहा दिरु नीगधि गम्भीर ।

विकल धिरोकेँ कृपय लुपावन्त तो तीर ॥

लुपावन्त तो नीर किँर तोहिँ लाज न जाँव ।

भँवर लोल बलोट कौटि निज विमय दिग्बाँव ॥

घरनेँ दीनदयाल गिन्नु तो को को बरसै ।

तरल तरंगी ध्यान हृया शाननते गरजे ॥”

दीनदयालगिरि—हिन्दोके एक कवि तथा भारतधर्मसमा-सङ्गणके सबसे बड़े व्याख्यानदाता । इनकी अवस्था प्रायः ५५ वर्षकी होगी । इन्होंने घूम घूम कर भारत-वर्षके समो प्रांतोंमें व्याख्यान दिये हैं तथा अच्छी सफलता प्राप्त की है ।

दीनदयालु (मं० वि०) दोने दयालु । १ दुःखित पर दयालु, दोनों पर दया करनेवाला । (पु०) २ ईश्वरका एक नाम ।

दीनदयालु पाठक—मुहूर्त्त भैरव नामक संस्कृत ज्योति र्थग्रन्थके रचयिता ।

दीनदयालु वाजपेयी—रघुवरसंहिता नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता ।

दीनदरवेग—फारसीके एक कवि । इनका जन्म-स्थान बुन्देलखण्ड था और ये १८७५ सं०में विद्यमान थे तथा भारवाड़ नरेश महाराज मानसिंहके यहाँ रहते थे । दीनदार (फा० वि०) जो अग्नि धर्म पर विश्वास रखता हो, धार्मिक ।

दीनदारी (फा० फ़ो०) धर्माचरण ।

दीनदाम—हिन्दोके एक कवि । इन्होंने गोलकाण्ड नामक ग्रन्थ लिखा ।

दीनदुनो (अ० श्री०) लोक परलोक ।

दीननाथ (सं० पु०) दोनाना नाथः । दुःखित जनभर्त्ता, वह जो दुखियोंकी रक्षा करता हो ।

दीननाथ—१ गौर्वाणवोध नामक संस्कृत काव्यके रचयिता । २ पूर्वमंग्रह नामक संस्कृत ज्योतिषके रचयिता ।

दीननगर—पञ्जाबके गुरुदासपुर जिलेका एक शहर । यह पचा० ३२° ३०' और देशा० ७५° २८' पू० गुरुदासपुर शहरसे ८ मोलको दूरी पर अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः ५१८१ है । १७५० ई०में यह शहर अटोनवेगसे स्थापित हुआ । यह रणजित्मिहका शोभाकालका वासस्थान था । इसकी नामकी नदी यहाँ प्रवाहित है । १८६७ ई०को शहरमें स्युजिनिपैनिटी स्थापित

दुर्ग । अखिल तथा मातृके सिद्धे यद् यद् प्रसिद्ध है । यहाँ एक बिक्रिमान्तक पौर एक मित्रिण स्वयं है । यद्दको पाय प्रायः ८००५ ६० है ।

दीननाथ पण्डित—पश्चात्-हीनारो महाप्राज्ञ रचयित्वा इति राजस्य पवित्र । इतरे पिता महातमस दिवो नवरसे एक सप्तदश सप्तवारो कर्मचारी है । पश्चात्ने दीवान महाराजस्य साह इतथा सतिष्ठ सम्बन्ध था । १८१३ ई०में गजाराजने दिवोमे इत्थे आशोरमें बुलाया । उसी समय महाराज आशोरमें राज सभारके कर्ताकरतां ये; धन-सकीने दीननाथको एक पद पर नियुक्त किया; और जो इनको पताकारक हीमति तथा अख्यसत्त्व सब अथक भाग्य हो गया । १८२३ ई० में कुछ दिवस दीवान महाराजको स्वयं के बाद सन्धि पद पर ये जो राजकीय सुहाय्य पौर सैनिकविभागके प्रधान कर्मचारीके पद पर नियुक्त किये गए । यीके १८२७ ई०में दीवान महारोहासर्ष मरने पर ने प्रधान राजस्यपवित्रके पद पर नियुक्त हुए । रचयित्वा सिद्धकी स्वयं के बाद भी ये बहुत दिनों तक सिद्धराज्यके प्रधान दीवान रहे । ये सुबहा कर्मद्वयक, कूटनीतिवित् सुधर्मद्वयों तथा परिचयो है ।

दीननाथसूत्रि—क म कृत पञ्चकार । इत्थोने राहुकृत च गोप भैरवनाथके पादेयके भैरव नवरसयव नामका म कृत पञ्च बनाया है ।

दीनचन्द्र (म० पु०) १ बड़ जो दुर्गियाको सहायता जाता जो । २ ईश्वरका एक नाम ।

दीनचन्द्रसिद्ध—ब्रह्मणके एक विख्यात पञ्चकार पौर कवि । जोबोध परगमेंके पञ्चार्त बोलियो धाममें इतके पूर्व-पुत्र्य नाम करते है । इनका जन्म ई० १८२० सालके चैत्र भासमें हुआ था ।

इचगमें इतके आषाढ पाठयाभामें लिखना पढ़ना नामा करनेके बाद इतके पिताके इत्थे प्रमोदारी मिरी-प्रीं नामान्य बैतल पर नियुक्त करा दिया । किन्तु इस पौर इतका तनिक भी ध्यान न था पतएक विनाकी बात पनडुमो कर वे अन्तमें धात्रे पौर यहीं इत्थनि प नरैको मोचना प्रारम्भ कर दिया । योके जो दिवोने इत्थनि फिर सङ्घको सञ्चालन आरम्भपि-परोघायाज को

पौर १८२१ ई०में साक्षित होक दिया । ये १८२१ ई०का परनेमें साक्षिक ११० ६० पर पोड माटरके पद पर नियुक्त हुए । इनकी कार्यक्षमता देख सबमेंष्ट मरवार बहुत प्रसन्न हुए पौर बोरे बोरे के अन्तमें जिनरम पोड माटरके प्रधान मन्त्रारोके पद पर नियुक्त हो गये ।

सुसाई युद्धके छोट घाने पर १८०१ ई०में इत्थे राठ बहादुरको पदवी मिली पौर १८०२ ई०की १शो मन्त्रार को इत्थोने विषम वधुमुत्र रोगके आत्मान्त हो कर पपना कसेवर बटका । इतके बनाये हुए मोनदय च, लोनावती, दादय कविता, अमरीकामिनो नामक पञ्च बहुत प्रसिद्ध हैं ।

दीनमयानन्द—एक प्राचीन पदकारता । इनके बनाये हुए ब्रह्मना पद में पञ्चविंशति छिप बड़े जो गोचर हैं ।

दीनकाट-ब्रह्मणके कोबविहार राज्यका एक महर । यह पचा० २५ ८ ८० पौर देया० ८८ २८ पू० रङ्गपुर सङ्घ पर चर्चकित है । जगत पञ्चा एक इशारेके करीब है । यहाँ एक हाई स्कूल है ।

दीनधातक (स० पु०) महादेव ।
दीना (म० श्लो०) दीन-प्राय । १ सुविधा, मृदा सुधा । (वि०) २ दरिद्रता, गरीब ।

दीननाथ—एक प्रसिद्ध हिन्दी कवि । ये मुन्देलखण्डमें रहते है । इत्थनि १८११ स० में मन्त्रिमन्त्री नामक पुस्तक लिखे ।

दीननाथचम्पु—एक हिन्दी-कवि । इनका सम्बन्ध १८०५में अथक हुआ था तथा स० १८००में अशोकर अष्ट नामक पञ्च लिखा गया ।

दीनार (स० पु०) इत्यति इति । १ अर्चभूषा सोनेका गहना । २ निष्कको परिमाण, निष्कको तोल । ३ जो सुवर्ण कर्प । ४ अर्चभूषा, मोहर । ५ माप चतुष्टय-मात्र । ६ माया ।

दीनार (स० पु०) १ अर्चभूषण, सोनेका गहना । २ निष्कको तोल । ३ अर्चभूषा, मोहर । ४ पयिषा पौर यूरोपके नाजा स्थानीमें प्रचलित प्राचीन मुनाबिषय । यह कहीं सोनेका पौर कहीं चांदीका बना होता था दियमें इसे इतके मूल्यमें सो भेद था । पयो भारतवर्षमें यह कहीं भी प्रचलित नहीं होता, किन्तु सुधनमानोंके

यहां आनेके बहुत दिन पहलेसे इसका प्रचार था। हरिवंश, महाबोरचरित आदिमें इसका उल्लेख है। मांवीमें बौद्धतत्त्वका जो बड़ा खण्डहर है उसके पूर्व द्वार पर मस्त्राट् चन्द्रगुप्तका एक लेख है जिसमें दोनारका नामोल्लेख पाया जाता है। अमरकोषमें भी दोनार शब्द मिलता है और निष्कके बराबर अर्थात् दो तोलिका माना गया है। खुनन्दनके मतानुसार दोनार ३२ रत्ती सोनेका होता था। अकबरके समयमें जो दोनार नामका सोनेका सिक्का प्रचलित था उसका मान एक मिसकाल अर्थात् आध तोलीके बन्दाज था।

हिन्दुस्तानकी तरह अरब और फारस देशमें भी दोनार नामको स्वर्णमुद्रा प्रचलित थी। बहुतेका अनुमान है कि फारस और भारतवर्षको दोनार-मुद्रा सम्भवतः रोमके दिनागियसके नामसे ही प्रचलित थी। घात्वर्थ पर ध्यान देनेसे भी दोनार शब्द आर्य भाषाका ही प्रतीत होता है। अब प्रश्न यह होता है कि यह सिक्का भारतसे फारस अरब होते हुए रोममें गया अथवा रोमसे अरब आया। यदि चन्द्रगुप्तका लेख तथा हरिवंश आदि संस्कृत ग्रन्थोंकी अधिक प्राचीनता स्वीकार की जाय, तो दोनारको इसी देशका मानना पड़ेगा।

दीनारी (हि० पु०) लोहारोंका ठप्पा।

दीप (सं० पु०) दीप्यते दीपयति वा स्वं परञ्चेति दीपि वा दीप च। वर्त्ति स्थ ज्वलदग्निगिखा, जलती हुई वत्ती, दीया, चिराग। पर्याय—प्रदीप, सौहाग, दीपक, कञ्चलध्वज, शिखातक, गृहमणि, ज्योत्स्नाह्वज, दग्धेभन, दीपा-तिलक, दीपास्य, नयनोत्सव।

जलदाता ढमि, अन्नदाता अन्नय सुख, तिलदाता मनो-मत सन्तान सन्तति और दीपदाता उत्तम चक्षुलाभ करत हैं। इसका विषय पद्मपुराणके उत्तरखण्डमें इस प्रकार लिखा है—चन्द्रसूर्यग्रहणमें तथा नर्मदा और कुरुक्षेत्रमें तुलापुरुषदान करनेसे जो पुण्य होता है, कार्तिक मासमें दीपदान करनेसे उससे कहीं अधिक पुण्य प्राप्त होता है। कार्तिक मासमें विष्णुके आगे जो दीपदान करते हैं उनका अश्वमेधयज्ञ निःप्रयोजन है और एक दीपदान करनेसे समस्त यज्ञका फल मिलता है। जो कार्तिक मासमें विष्णुके आगे दीपदान नहीं

करते, उन्हें चारों ओरसे पाप घिर लेता है और जो करते हैं उन्हें अग्रेय फल प्राप्त होता है। कार्तिक मासमें दीपदान करनेसे विष्णु जैसा प्रसन्न होते हैं वे आ गयामें पिण्डदानसे नहीं होते।

“मन्त्रहीनं किंहीनं शुद्धिहीनं जनाहंन।

व्रतं सम्पूर्णं वातु कार्तिके दीपदानतः॥”

इसो मतमें विष्णुके आगे दीपदान करना चाहिये। वनि कार्तिक मासमें विधिपूर्वक विष्णुके आगे दीपदान करके सब पापोंसे मुक्त हुए थे तथा स्वर्गको चले गए थे। दीपका अंग करके कोई वैधकार्य करना नियम है, करनेसे महापाप होता है।

“दीपं स्पृष्टा तु यो देवि मम कर्माणि कारयेत्।

तस्यापराधाद् मुनेः पारं प्राप्नोति मानवाः॥”

(पाराहपु०)

दीपार्थं सौहादिका नियम-वृत्त और तैलसे दीप प्रस्तुत करना चाहिये, दूसरे सौह पदार्थसे नहीं। (अमिपु०)

दीप द्वारा लोक त्रय होता है—यह तैजोमय और चतुर्वर्गप्रद है इसीसे यत्पूर्वक दीप द्वारा देवताको पूजा करनी होती है। दीप ७ प्रकारका है—वृत्त-प्रदीप, तिलतैलयुक्त प्रदीप, माषप तैलयुक्त, फलनिर्घोस-जात, राजिकाजात, दधिजात और अणुज। पद्मसूत्रभव, दण्ड, गर्भसूत्रभव, शणज, वादर और कोयोद्भव ये पांच प्रकारको वत्ती दीपकार्यमें व्यवहृत होते हैं। तैजस, टारुमय, लौहनिर्मित, नृणमय और नारिकेलजात पात्र दीपके लिये प्रशस्त है। प्रदीपका आधार तैजसादिका होना चाहिये अथवा हृत्तके ऊपर दीपदान करना चाहिये। भूल कर भी जमीन पर दीपदान न करे, पृथ्वी सब कुछ सहन कर सकती है, केवल दो वस्तु सहन नहीं कर सकती—एक धिना कारण पटाघात और दूसरो दीप-ताप। इस कारण पृथ्वी जिससे ताप न पावे, इस प्रकार दीपदान करना चाहिये। जो ऐसा नहीं करता उसे ताम्रताप नामक नरक होता है। शोभनवृत्ताकार वर्त्तियुक्त, सुस्रष्ट, अभग्नपात्रमें स्थित, सुदृश, सुच्छाय, इस प्रकार वृत्तकोषमें यत्पूर्वक दीपदान करना होता है। जिस दीपका ताप चार सँगलोको दूरीसे पाया जाय, वह दीप नहीं, वह पापवह्नि है। जैसादिका आन्नादकार,

शोभन, चञ्चि कुञ्ज, स्मृतितापविबन्धित, सुमिञ्ज, शम्भु
 शून्, घूमरहित, धनति प्रकच धोर दक्षिणावर्त्तवर्ति
 ब्रह्म दीपदान की मङ्गलप्रदक है। दीप यदि वृष पर
 क्कित हो धोर पात्र यदि स्नेह द्वारा पूरित रई, बत्ती
 यदि दक्षिणावर्त्तमें धवस्थित हो कर उज्ज्वलभावधे जड़े,
 तो बड़ा दीप मन्ने खेठ है। इस प्रकारका दीप देव
 तापीका तुष्टिप्रद माना जाता है। यदि इस प्रकारका
 दीप वृष पर न हो तो उसे मध्यम दीप धोर यदि वष
 टे एमें शिख न रई, तो उसे प्रथम दीप कहते हैं। शक-
 सुत्र वा वृषको लख-निर्मित पचमा बीर्ब, यत्र वा
 मलिन वष सविताकी काममें न काना जाइये। नी-
 हर्षिके लिय सर्वादा तुलाको मलित प्रसृत करने
 जाइये। घृत धोर तैलादि मिखा कर दीपकी न बानना
 जाइये। ओ मनुष्य घृत धोर तैलादि मिखा कर दीप
 बानने है उर्बे तामिस्र नरकमें जाना पड़ता है। बसा,
 मन्ना धोर पक्षि निशान प्रकृति प्राचियोंके पञ्चसमुद्र
 स्नेह द्वारा टोषा अज्ञाना निषेध है, जो रिहा करता है
 उसे नरक भुवतना पड़ता है। चोहदिको इच्छा रहते हुए
 पक्षिनिर्मित चबवा दुर्गाभ्यादिदुष्ट पात्रमें दीप रई।
 चक्रपूर्वक चामी मो चक्रवृत्त धोर दक्षिणाके निमित्त
 कल्पित दीप न हुम्काना जाइय धोर न शानपूर्वक चबवा
 सोमादि बशीमूल को कर उसे पुराना हो जाइय।
 श्लोक दीप पुरानेमे पन्था होता है धोर जी दीप बुधता
 है बहू बाका होता है। (अश्विपुत्र ०८ अ)

पुष्यके दीप बुधनेके धोर श्लोक बुध्याच्छेन्न
 करनेमे निषय हो व श माग होता है। पुष्य दिवस
 दीप बुध्ता चकते हैं।

कार्तिक मासकी कृष्ण चतुर्थी तिथिको नरकमे
 कृटकारा पानिक निवे दीपदान करना जाइये। देवता-
 को दीपदान करते समय पण्य चक्रक बजाकर जाइये।

“काने चूते तथा दीपे नैवेद्ये नृपे तथा ।
 पण्यमाद इच्छन्ति तथा नीराजनेत्येव ॥”
 (विष्णुपुराण)

एकादशोत्सवक आनिकापुराणक चबनामुष्यर
 देवताके निमित्त कल्पित दीपका मो बुध्ता मना है।

“नेव निर्यायेरूपीय देवावद्वय कर्मिय ।
 दीपदर्शान्वैरत्ना कान्ते निर्याये भवैत् ॥”
 (इशारदीप)

देवाकं उपकल्पित दीप पुराना नहीं जाइये, पुरानेके
 पन्था होता है। इहत्पूर्वकतामें दीपका सस्य
 इस प्रकार लिखा है,—बामावर्त्त, मलिन खिरक,
 स्पुन्निवृत्त धोर चक्रमूर्ति टाप विमम स्नेह धोर
 बर्त्तिकापित होने पर मो यौध नाम पात्र होता है।
 जो दीप अश्वमान धोर शम्भुका होता है, विषेयकपके
 उपको प्रसारित मिखा होने पर मो यक्षम वा मरुत्
 बिहीन हो कर शोत्र नाम होता है। इस प्रकारका
 दीप वाप कस ठेनेबाका है। सोपादि मदन मूर्ति,
 पायत तह, क पनकोम, दोत्रिमान, नि'शम्भु सुन्दर
 प्रदक्षिण गति पर्यात् त्रिचको गति दक्षिणको धोर हो,
 वे दुर्ग धोर शर्बे सङ्घय धु,तिमय धोर खिर दीप शुभ
 जनक माने जाते हैं। (इशारदीप ०४ अ०) धरीय देवी ।
 दीपक (म० जो०) दीपयति दीप-चिस्-कल् ।
 १ वाक्यासङ्कार। इसका सस्य प्राङ्मुखध्वचमें इस
 प्रकार निषा है—सर्वा प्रसृत धोर धवस्तुतका एक
 हो बम कडा जाता है पचवा बहुत धो खिवापीका
 एक हो कारक होता है बड़ा टाप शानदार होता है।
 प्रसस्तुतका पर्वे चक्रकीय विषय धोर प्रसुतका पर्व
 बर्त्तनीय विषय है। उदाहरक—

“पञ्चकैयारपुत्रायि पूर्ववत्
 मवाप्यते तेन लगणिकदीपुना ।
 लो न वेधिय इतिरिव निरवका
 पुनाबचन्नेति मवान्देवनि ॥” (अश्विपुत्र०)

अयस्त्रियोपु वड मिदयाम पक्षिको तरक (पर्यात्
 पूव अर्थमें खिरकध्वमिपु प्राङ्गिके रूपमे त्रिम प्रकारका
 स धारको बहू देता या) पात्र भी पञ्चद्वारके साथ वृष
 स धारको बहू देता है। यना जो धोर निबन्ना प्रकृतिमे
 अमान्तरमें मो लस पुष्यको धाया या। निषयना
 प्रकृति धोर नती फी परबन्धमें मो लसका परिक्राम
 नहीं करती तथा लयका पात्रय पदक चरती है। सर्वा
 पर बर्त्तनीय विषय दुष्वा-मिदपाक संसारको बहू देता
 है, पूर्व अर्थमें अथ खिरकध्वमिपुने शयवादि रूपमें अथ

ग्रहण किया था और जिस प्रकार वह संसारको कष्ट देता था, आज भी शिशुपालके रूपमें उसी प्रकार कष्ट देता है। हिरण्यकशिपु रावणाटिकी परपीडारूपनिचला प्रकृतिने इस शिशुपाल-रूपमें जन्मग्रहणके समय भो उसका परित्याग नहो' किया अर्थात् यही यहाँ पर वर्णनाय विषय हुआ। यहाँ पर वर्णनीय विषय हुआ—सतो स्त्रो जन्मान्तरमें भी उसका परित्याग नहीं करती। इन दो वर्णनीय और अवर्णनीयका धर्माभिसंबन्धके कारण दीपक अलङ्कार हुआ। अनेक क्रियाश्रोंका एक कारक होनेसे दीपक अलङ्कार होता है। उदाहरण

“दूर समागतवति त्वयि जीवनाथे

भिन्ना मनोभवशरेण तपस्विनी सा।

उत्तिष्ठति स्वपिति वासगृहं त्वदीय

मायाति याति हसति श्वसिति क्षणेन ॥”

(साहित्यद०)

हृदयनाथ। तुम्हारे चले जाने पर वह दोना काम शरपोहित हो कर कभी उठती है, कभी सोती है, कभी हँसती है और कभी लंबो साँस भरती है। यहाँ पर एक नायिकाके उल्यानाटिके अनेक क्रियासंबन्ध हेतु दीपक अलङ्कार हुआ।

तुल्ययोगितासे भा एक धर्मका कथन होता है पर वह या तो कई प्रस्तुती या कई अप्रस्तुतीका होता है। दीपकमें प्रस्तुत और अप्रस्तुतके एक धर्मका कथन होता है। दीपक चार प्रकारका होता है—आवृत्तिदीपक, कारक-दीपक, माला दीपक और देहलीदीपक। आवृत्ति दीपकमें या तो एक ही क्रियापद भिन्न भिन्न अर्थोंमें बार बार आता है अथवा एक ही अर्थके भिन्न भिन्न पद आते हैं। कारक दीपक भो ठोक इसी तरहका है। माला दीपकमें एकावली और दोपकका मेल होता है। देहली दीपकमें एक ही पद दो और लगता है। २ रागविशेष, मङ्गीतमें छः रागोंमेंसे एक। अनुमत्के मतसे यह छः रागोंमें दूसरा राग है। यह राग सूर्यके नेत्रसे निकला है और सम्पूर्ण जातिका है तथा पहल स्वरोसे आरम्भ होता है। इसके गानेका समय शोषणस्तुका मध्याह्न है।

इसका स्वरग्राम यह है—स रे ग म प ध नि स।

इसकी पांच रागभियां माने जाती हैं—देगी, कामोदो, नाटिका, केदारी और काण्डा। पुत्र आठ हैं—कुन्तल, कमल, कान्ति, चम्पक, कुसुम्भ, राम, लहिल और हिमाल। भरतके मतसे दीपककी पत्नियां हैं केदारा, गौरी, गौडो, गुर्जरी और रुद्राणी तथा पुत्र हैं कुसुम, टङ्क, नटनारायण, विहागरा, विरोदस्त, रभममङ्गला, मङ्गला-ष्टक और अहाना। ३ तालविशेष, एत तालका नाम। इसमें झुत लघु और झुत होते हैं। ४ प्रदोष, दीया, चिराग। ५ पद्यविशेष, वाज नामका पद्य। ६ यमानो, अजवायन। ७ कुङ्कुम, केसर। ८ मयूरशिखा। ९ एक प्रकारको आतिशयाजी। (त्रि०) १० दोषिकारक, प्रकाश करनेवाला, उजाला फैलानेवाला। ११ जठराग्निको दीप्त करनेवाला, पाचनकी अग्निको तेज करनेवाला। १२ उत्तेजक, शरीरमें वेग या उत्साह लानेवाला। दीपकमाला (सं० स्त्री०) १ दशाक्षरयुक्त छन्दोभेद। एक वर्णवृत्तका नाम इसके प्रत्येक चरणमें भगण, मगण, जगण और गुरु होता है। २ दीपकअलङ्कारका एक भेद।

दीपकपूरज (सं० पु०) कपूर, कपूर।

दीपकलिका (सं० स्त्री०) दीपस्य कलिकेव। १ दीपशिखा, दीपकी टेस। शूलपाणिकृत याज्ञवल्क्यसंहिताकी प्रसिद्ध टोका।

दीपकनी (हि० स्त्री०) दीप शिखा, चिरागकी ली।

दीपकवृत्त (सं० पु०) १ एक प्रकारका बड़ा दीपक। इसमें दीये रखनेके लिए कई शाखाएँ इधर उधर निकलती रहती हैं। २ भाङ।

दीपकसुत (सं० पु०) कज्जल, काजल।

दीपकाल (सं० पु०) दीया बालनेका समय, सन्ध्या।

दीपकावृत्ति (सं० पु०) १ दीपक अलङ्कारका एक भेद। २ पनसाखा।

दीपकिट (सं० स्त्री०) दीपस्य किटं। दीपजात कज्जल, काजल।

दीपकूपी (सं० स्त्री०) दीपस्य कूपोव तैलधारकत्वात्। दीपवर्ति, दीपकी बत्ती।

दीपखोरी (सं० स्त्री०) दीपं खोरयति गत्याघातं करोति स्थिरीकरोतीति खोर गत्याघाते शिच्-अच्, गौरादित्वात् ङीष्। दीपकूपी, दीपकी बत्ती।

दीपहर—दुर्बल अर्थात्तन्निमित्त एव धयताम् ।

दीपहर श्रीज्ञान प्रतिप—एव विख्यात बौद्ध यतिः । ये ८८० ई० में मोड़राज्यात्कार्गत् विहङ्गपुर नगरम् उत्पन्नं कृतं यत् । इतश्चापदि नाम चन्द्रमर्म वा । इत्थोनि पञ्चभूत जितारिषे विद्या प्राप्त की यो । ये हीनयान श्रावकोंके विपिठक, यैमे विक दर्म, महायान मतान् कश्चिदोके तीन पिठक, माध्यमिक पौर योगान्तर मन्त्र दायधुक् बोहोरे दुर्बल श्वायदर्मन तथा चार तन्त्रोनि मनी भाति ज्ञानकार ये । इत्थोनि तोयि कोरे म्याप्तने मो मन्त्रक पारदयिता प्राप्त कर एक ब्राह्मणको तर्क वितर्कित परास्त किया वा । येके इत्थोनि सांसारिक दुष्कर्मोम विषयार्थ कर्म, ध्यान पौर पञ्चाङ्गज्ञानकश्चिन्तन त्रिगिष्वा नामक बोहोरे तन्त्रपद्य पदुनिवी इत्थ्या प्रकट को । इमके लिए ये ह्यच्यविरिषे विहारम्य शकुन्तुदुर्बले पास गए । यदा बोहोरे शुद्धात्मके दीपित हो कर इत्थोनि परमा नाम शुद्धज्ञानमय रथा । लक्षोस यव को पञ्चम्यानि दन्तुप्रीके महासाहिबाबाव श्रीनरचितने इत्थे पबिब बोहमन्दिमि दीपित कर दीपहरकोज्ञान उपाधिने भूयित किया । इत्थोस कर्षको पञ्चक्योने शोचानने उच्चतम मिथुकी पदको ज्ञान की पौर कर्म-रचितने इत्थे बोधिनक मन्त्र पञ्च करायो । इत्थोनि उम कर्मके समस्त बोहपलितोरे विद्या प्राप्त की यो । बाद इत्थोनि बोहकर्मके पञ्चान धार्याव चन्द्रगिरिने विद्या प्राप्त करनेको इत्थ्या प्रकट को । तदनुसार ये एक बलिष्क पौन पर चदु कर कर्षकीदीपको पदुके पौर कर्षा बारद कर्ष तर्क विद्युद बोहकर्म भोग कर कर्षामनरथ (बोह-मया) महाबोधिने पदने पा कर इत्थने गी ।

अथैव ही ।

दीपकन्द—विन्दोऽ एक प्रतिह कवि । इत्थनिर्ष० १०३० में परमापापुराक चिदिनाक पौर ज्ञानदर्षक नामक पद्य लिखे ।

दीपदान (४० पु०) १ बिजो देवताके कामने दीपक कथानेका काम । दीपदान पूजनका एक कर्म समझा जाता है । शुंकार्षिण्य मन्त्रोनेनें प्रकृतने दीपक जपानेका काम को विधीय कर राधाशोभोदके निवे किया जाता है । २ मरवाकक पञ्चिका एक काम । इत्थने

उत्थे जावने पाटेके अन्तरे दृष्ट दीयेका मद्रूप्य करायो जाता है ।

दीपदानो (वि० वृत्तो०) १ क डिबिया जियने को वक्तो पाटि दीया अज्ञानको सामथो रची जातो है ।

दीपध्वज (४० पु०) दीपध्वज इव । ध्वजध्वज, ध्वजध्वज । दीपन (४० पु०) दीप्यते इति दीप-न् । १ नगरमूक नगरको जड़ । २ कुट्टुम, ईकर । ३ मद्रु, रजिषा इव । ४ शानिक प्राय, एक प्रकारका नाम । ५ काममटं कर्मो दा । ६ पनाकटु, प्यात्र । ७ पाद्यमन्त्र म स्कारमेद मन्त्रके उम दय म स्कारिषिने एक जिनके बिना मन्त्र सिद्ध नहीं होता । जनन जोवन तोहन शोचन, परिषे विक विमलोकरक, पाप्याबन, मर्षक शोचन पौर मुनि ये भी दय मन्त्रके म स्कार हैं । ८ प्रकाशन, प्रकाशित करने का काम । ९ श्वेयारदगंनके पनुसार पारेका मानका म स्कार । १० अठारामिको तोत्र करनेको किया, भूकको समारनेका काम । ११ कर्षोत्रन धारिण टापक करमा । (वि०) १२ दीपयिता दीपन करनेवाला ।

दीपनयक (४० पु०) अठारामिको तोत्र करनेवाले पदार्थो का कर्म । इस कर्मके अन्तर्गत शोता, कनिधा, पत्र मोदा, जौरा, हाकबेर इत्यादि हैं ।

दीपनी (४० स्त्री०) दीप्यति अठारबडिरनका दीप बिष्क्युड स्थितको शोपु । शिबिका, मियो । २ यमानो, पञ्चवायन । ३ पाठा । ४ कर्ष टिका, कर्षको ।

दीपनोय (४० पु०) दीप्यति अठारबडिरनका दीप बिष्क्यु पनोम । १ यमानो, पञ्चवायन । २ दीपककर्मविधिय । दीपनयकैको । (वि०) ३ दीपनयोप्य । ४ कर्षोत्रनके शोम् ।

दीपनोका (४० वृत्तो०) यमानो, पञ्चवायन ।

दीपनोयोप्य (४० स्त्री०) धार्षीय पोपक ।

दीपपादप (४० पु०) दीपय्य पादप इव । दीपगुप्त, शोचट ।

दीपगुप्त (४० पु०) दीप इव गुप्त यत् । पञ्चक इव, यथा ।

दीपमात्र (४० स्त्री०) दीपय्य मात्रम् । तत् । दीपयत् । दीपमाना (वि० वृत्तो०) दीपानां माना इ तत् । शेषो मृत इदोत्र अन्तरे दृष्ट दीपको धरि

दीपमाली (हिं० स्त्री०) दीपमाली ।

दीपवत् (मं० त्रि०) दीप अस्त्वर्थे मत्तुप प्रत्यय व । दीप-
युक्त गृहघाटि, जिमके घरमें दीप जलते हों ।

दीपवती (मं० स्त्री०) दीपवत् स्त्रियां ङीप् । कामाख्या-
स्थित नदीविशेष । यह गङ्गावती नदीके पूर्वमें अवस्थित
है और हिमालय पर्वतमें निकलती है । यह नदी
दीपकी नाई' अन्धकार दूर करती है, इसीसे देव मनुष्य
महात्मसे इसका नाम दीपवती हुआ है । इसके पूर्वमें
शुद्धाट नामका एक प्रसिद्ध पर्वत है । (कालिदासपु० ८२:३)

दीपवृक्ष (मं० पु०) दीपस्य वृक्ष इव आधारः । दीपा-
धार, दीपवट, दीपट । इसका पर्याय—दीपतरु च्योत्स्ना
वृक्ष और दीपपाटप है ।

दीपशत्रु (मं० पु०) दीपस्य शत्रुविष । क्रीटभेदः
पतंग, फर्तंगा ।

दीपशिखा (मं० स्त्री०) दीपस्य शिखा कारणात्वेन
अस्त्वस्याः अच्-टाप् । १ कञ्जल, काजल । दीपस्य
शिखा । प्रदीप चाला, चिरामकी लौ ।

दीपशुद्धता (मं० स्त्री०) दीपानां शुद्धनेष । दीपालो,
दीपमाली ।

दीपमञ्ज (मं० पु०) चित्रकवृक्ष, चीता ।

दीपकृत (मं० पु०) कञ्जल, काजल ।

दीपान्नि (मं० पु०) आचका एक परिमाण जो धूम्रमाग्निने
चौगुना माना जाता है ।

दीपान्वित (सं० त्रि०) दीपै रन्वितः । दीपयुक्त ।

दीपान्विता (मं० स्त्री०) कार्तिक मासको अमावस्या
जिमके प्रदीपकालमें लक्ष्मीका पूजन और दीपदान आदि
होता है, दीपमाली । इस दिन लक्ष्मीका पूजन किया
जाता है और यथाशक्ति घरमें भीतर, बाहर, पय, हाट,
भ्रमगान, नदीतटकी दीपमालामें सजाते है । सूर्यके
तुलारामिमें जानसे अर्थात् कार्तिक मासकी अमावस्या
तिथिकी नाना प्रकारके उपकरणों द्वारा पार्वणश्राद्ध
करे और अक्षराक्ष समग्रमें राजा नगरके सब किसानोंसे
लक्ष्मीपूजा तथा उल्कादान करनेकी घोषणा कर दें ।

लक्ष्मीपूजाकी व्यवस्था ।—यदि अमावस्या दो दिन
पड़े, तो प्रदीप व्याप्तिके द्वारा समयका निर्णय करना
होता है अर्थात् जिस दिन अमावस्याका प्रदीप समय हो

उसी दिन लक्ष्मीपूजा होती है । इसका प्रमाण—

“द्वारास्यसहस्रानां प्रदोमे भूतदर्शयोः ।

उल्का हस्ता नराः पुष्टुः पितृणां मार्गदर्शनम् ॥”

(विहित०)

किन्तु यदि प्रदीप दोनों दिन पावे, तो दूसरे दिन
लक्ष्मीपूजा करनेको चाहिये । इसका प्रमाण—

“उभयवः प्रदीपप्राप्ती परदिन एव युग्मात् ।

दंटेकरजनीयोगो दर्शास्य स्यात् परेऽहनि ।

तदा विहाय पूर्वेषुः परेऽपि सुखरात्रिका ॥”

(विहित०)

दोनों दिन प्रदीपप्राप्ति होनेमें दूसरे दिन लक्ष्मीपूजा
होगी । अमावस्या यदि दूसरे दिन एक दण्ड रात तक
रहे, तो पूर्वदिनका परित्याग कर परदिनमें लक्ष्मीपूजा
विधेय है । इसका नाम सुखरात्रिका है । यदि दो दिन
प्रदीपकी प्राप्ति न हो, तो पार्वणश्राद्धके अनुरोधसे दूसरे
दिनमें उल्कादान और पूर्वदिनमें लक्ष्मीपूजा होगी ।

“अमावस्या यदा रात्रौ दिवाभगे चतुर्दशी ।

पूर्वमीया तदा लक्ष्मीर्दिनेया सुखरात्रिका ॥”

(विहित०)

दोनों दिन प्रदीप नहीं पानेसे उल्कादान पार्वण-
श्राद्धके अनुसार दूसरे दिन करना होगा । भूत-चतु-
दशीके दिन जो सुख उल्कादान करता है, उसीके पितृ-
गण निराश हो उसे दारुण श्राप देकर चले जाते हैं ।
दर्शनके लिए उल्कादानको अवश्य कर्तव्यता है । जिस
दिन पितृगणके उद्देशसे पार्वणश्राद्ध किया जायगा
उसी दिन उल्कादान विधेय है । इसी कारण दूसरे
दिन पार्वणश्राद्ध किये जाने पर उसी दिन शामको
उल्कादान करना होता है और पूर्वदिन लक्ष्मीपूजा ।
कारण यदि रातको अमावस्या पड़े और दिनमें चतुर्दशी
रहे, तो उसी दिन रातको लक्ष्मीपूजा करने होगी इश्री-
का नाम सुखरात्रि है । पितृकृत्यके कारण दक्षिणकी
और प्राचीनावीत हो उल्कादान करना चाहिये ।
उल्काग्रहणका मंत्र—

“शुक्राशुभहतानत्रि भूताना भूतदर्शयोः ।

उज्ज्वल्यधोतिपा देहं दहेयं श्योमबहिना ॥”

उल्कादानका मंत्र—

“अग्निदग्धाद्यै शीला वैः-वस्त्राणां कुम्भे मम ।
 वज्रमङ्गलोतिषा वरुणास्ते यान्मु वसतां नति ॥”

उष्णाग्निमूर्त्तनका मम—

“यत्तन्मैव परिमन्व्य ज्ञायात् यै मन्त्राद्यैः ।
 उष्णवज्रमूर्त्तित्तप इत्यै प्रवर्धयन्तो वज्रम्यु दे ॥”

इसके म मन्त्रे उत्पन्नपञ्च दान और विमूर्त्तन करना होता है । इस दिन बान और चातुरसे मित्रा बिलो-को दिनमें न जाना चाहिये । प्रदोषके समय यथाविधान शक्तीपूजा करने देवताके चरमें दीपपञ्च प्रदान करे और दोहे अनुसार प्रदान नदो, पर्यंत, यानु, वज्रम्यु, मोह, चक्रा एव और वज्र बिम्बक स्नानको दीप पंक्तिके शक्ती तरङ्ग सुशोभित करे । इस प्रकार चारों ओर रोयनी करनीका नाम दीपको है । कुम्भप्रदोषमें वज्र खीबार खुब प्रमत्ताने मनावा जाता है ।

दीपान्विता अन्वयस्वादे द्विज वरुणोपनयनयोः—उत्तरे उत्तरतुको दोहा लक्ष्मीका पूजन करे । पहले अष्टि पाचन करके सङ्का करे । “ॐ तदसद् वो अयं अष्टि प्लुङ्ग मोक्ष प्लुङ्ग देववर्मा परम विभूतिसामकामा लक्ष्मीपुत्रमदाह करिके”, इस प्रकार सङ्का करके माथ घाम वा अष्टिदिक् उत्तरे लक्ष्मीपूजा करे । ‘यायाव’ इत्यादि म मन्त्रे प्यान करके यथावर्ति, द्य वा होङ्गोप चारों पूजा करनेका विधान है । पनन्तर—

“ओ वसन्ते सर्वे देवानां वरुणाधि इरिदिये ।
 वा गणितसव प्रणम्यां सा मे भूषासवभेगात् ॥”

इस म मन्त्रे तीन बार पुष्पाच्छादी के कर निम्नलिखित म मन्त्रे प्रथम करे ।

“ओ निराहस्यन् भ्रातृभिः पत्ये पयाकवे शुने ।
 कर्त्ता पति मां हैति मन्त्रास्तिम वस्येऽस्तु दे ॥”

उत्तरे वाट सुविरादिषा पूजन करना होता है । पूजा हो जानेके बाद चरमें दीप जलाते हैं । दीपका मन्त्र—

“अग्निमूर्त्तितः शक्तिमूर्त्तित्पन्नोतिष्ठतवै न च ।

मम—सर्वे श्रोत्रिण्यै शैलेषु प्रविश्यातां ॥”

बाद ब्राह्मण और अनुबन्धकोको विचारिये कर कर्य श्रोत्रन करती हैं । कर्त्तव्य हैके ।

कान्ते कुत्तवद्वाव नामक तारिजकमन्त्रके मन्त्रे—

इस दिन महाविद्याको काशीपूजा की जाती है । विषय विवरण स्वामा ग्रन्थने देको ।

दीपान्वी (स० श्लो०) दीपानां धातो । दीपत्र्यं चो, जगति वृष दीपवी पञ्चि ।

दीपान्वी (स० श्लो०) रागिणोर्विभेय । यद्य दीपत्र्यं चोर धरकतो है श्रोत्रसे उत्पन्न हुई है ।

दीपान्वि (स० श्लो०) दीपानां धावति १-न्त् । १ दीप-त्र्यं चो, दीपौवी पञ्चि । २ दीपान्वी

दीपिषा (स० श्लो०) दीपवति प्रजाप्रवति होय-विष्-कुञ्च टापि पत इत्य । १ महिन्नायनोय योगिवातकत श्रोत्रिष्यं च । २ रागिणोर्विभेय । यद्य रायवी प्रयो मावो

जातो है चोर प्रदायवाकर्म मारे जातो है । (वि०)

३ प्रकाय करनेवाको लकाका कैलानेवाकी ।

दीपिषातेक (स० श्लो०) तैक्पोवज्रमेद । इसको पशुत प्रयाथो—दिग्दार, सखे या होङ्को खात खात पशुत लक्ष्मी लक्ष्मीको सेते और लक्ष्मी वृष पादिषि लक्ष्मी

को तरङ्ग चारों ओर बिद्ध करती है । फिर उत्तरे ईयम लपेट कर सेतमें खुब कुवाते और लक्ष्मीको तरङ्ग जलाते

है । इस प्रकार प्रवृत्तित वस्तुसिंसे जो मरम मरम तीन वृद्ध वृद्ध विरता है, लक्ष्मीका नाम दीपिषातेक है । जानका ददं दूर करनेके लिये यह रीति बहुत उपकारी है ।

दीपिष (स० श्लो०) दीपयतीति दीप विष्-प्यत् । १ दीपि-ष्यत्, प्रकाय करनेवाका । २ प्रकायित, प्रवृत्तित । ३ धमकता हुआ । ४ उत्तेजित ।

दीपेय (स० श्लो०) दीप यूप्यादित्वात् चितार्थे च । दीपवित ।

दीपेयान (स० श्लो०) दीपे वक्रवः । १ दीपेयानुष लक्ष्म, दीपको । २ दीपान्विता धमावप्या ।

दीप (स० श्लो०) दीप इ । १ प्रजायांशित, लक्ष्मवाता, हुआ । २ प्रवृत्तित, कलता हुआ । (श्लो०) ३ कृष्ण कोना । ४ हिङ्, ईम । ५ निम्बुक नीम् । ६ सिद्ध । ७ शक्तिमानत रोमविभेय, गजका एक रोग । इसमें नाथके भापकी तरङ्ग मरम मरम इना निवृत्ततो है चोर अनुसिंसे कलन होती है । (श्लो०) ८ उष्णव, पकिट । ९ पातोक्षमय, प्रकायमय ।

दीर्घकंस (स० स्त्री०) शुद्धकांस्य धातु, शुद्ध कांसा ।
 दीर्घक (स० स्त्री०) दीर्घमेव स्वार्थे कन् । स्वर्णं, मोना ।
 दीर्घकिरण (स० पु०) दीर्घाः किरणाः यस्य । १ सूर्य ।
 २ शकं वृक्ष, शक, मदार ।
 दीर्घकीर्त्ति (स० त्रि०) दीर्घा कीर्त्तियस्य । १ प्रकाश-
 मान यस्यस्त, जिसका यश बहुत दूर तक फैल गया हो ।
 २ कार्त्तिकेय ।
 दीर्घकेतु (स० पु०) १ नृपभेद, एक राजाका नाम । २ दक्ष-
 सावर्णि मनुके एक पुत्रका नाम । दीर्घः केतुः कर्मधा० ।
 ३ दीर्घध्वजा । दीर्घः केतु यंस्य । (त्रि०) दीर्घ ध्वजक,
 जिसको ध्वजा प्रदीप्त हो उसे दीर्घकेतु कहते हैं ।
 दीर्घजिह्वा (स० स्त्री०) दीर्घा जिह्वा यस्याः । उष्ठा
 सुखी शृगाली, मादा गौदह, सियारिन । गौदहके मुँहका
 अगला भाग कुछ काला होता है, इसीसे इसका नाम
 उदका या लुभाठा मुख पड़ा है । उदकाका दूसरा अर्थ
 जलता हुआ दिण्ड या प्रकाश है । इसी अर्थसे दीर्घजिह्वा
 नाम रखा हुआ जान पड़ता है ।
 दीर्घपिङ्गल (स० पु०) दीर्घपिङ्गलय दीर्घं स्वर्णं तद्वत्
 पिङ्गलो वा । सिंह ।
 दीर्घपुष्पा (स० स्त्री०) लाङ्गलो वृक्ष, कलियारी ।
 दीर्घमूर्त्ति (स० त्रि०) दीर्घा मूर्त्तियस्य । १ प्रकाशान्वित
 मूर्त्ति, जो मूर्त्ति बहुत सफेद हो । (पु०) २ विष्णु ।
 दीर्घरस (स० पु०) दीर्घ उज्ज्वलः रसो यस्य । किञ्चुलक,
 कंबुभा । रातः समय अंधेरमें किञ्चुलके शरीरके रससे
 एक प्रकारकी चमक निकलती है, इसीसे इसका नाम
 दीर्घरस पड़ा ।
 दीर्घरोम (स० पु०) विश्वदेवभेद, एक विश्वदेवका नाम ।
 दीर्घलोचन (स० पु०) दीर्घे लोचने नयने यस्य । विडाल,
 विल्ली ।
 दीर्घलीह (स० स्त्री०) दीर्घं लोहमित् । १ कांस्य, कांसा ।
 २ ज्वलित लौह, तपाया हुआ लाल लौह ।
 दीर्घवर्ण (स० त्रि०) दीर्घं स्वर्णमिव वर्णो यस्य । १
 सुवर्णतुल्य, जिसका वर्ण सोनेसा चमकता हो । (पु०)
 २ कार्त्तिकेय ।
 दीर्घशक्ति (स० त्रि०) दीर्घा शक्तियस्य । १ प्रकाशमान
 सामर्थ्य, जिसका प्रभाव बहुत फैल गया है । (पु०) २
 कार्त्तिकेय ।

दीर्घांशु (स० पु०) दीर्घा अंशुर्वास्या । १ सूर्य । २ शक-
 वृक्ष, शक, मदार ।
 दीर्घा (स० स्त्री०) दीर्घ-टाप् । १ लाङ्गलिका वृक्ष,
 कलियारी । २ ज्योतिषती लता, मालकंगनी । ३ मातला
 नामक शृङ्खर । (वि०) ४ प्रकाशयुक्ता चमकतेः कुई ।
 ५ सूर्यसे प्रकाशित ।
 दीर्घाक्ष (स० पु०) दीर्घे अक्षिणो यस्य । १ विद्वान्,
 विद्वान् । (त्रि०) २ दीर्घलोचनान्वित, उज्ज्वल चक्षुर्विशिष्ट,
 जिसको अक्षि चमकती हो ।
 दीर्घानि (स० पु०) दीर्घः अनिर्यस्य । १ अगस्त्यमुनि ।
 इन्होंने समुद्रकी पो लिया था और वातापि नामक राक्षस
 को पचा डाला था, इसीसे इनका नाम दीर्घानि हुआ
 है । अगस्त्य देखो । (त्रि०) २ दीर्घजटराग्नियुक्त,
 जिसको पाचनशक्ति बहुत प्रबल हो । ३ प्रज्वलित
 अग्नि, जिसकी मूख जगो हो, मूखा ।
 दीर्घाङ्ग (स० त्रि०) दीर्घं अङ्गं यस्य । १ दीर्घयुक्त देह,
 जिसका शरीर चमकता हो । (पु०) २ मयूर, मोर ।
 दीर्घि (स० पु०) दीर्घं जित् । दीर्घ, उजला, रोगना ।
 इसका पर्याय—प्रभा, रुचः, रुचि, त्विष, भा, भास, हवि,
 द्युति, रोचिष, और शोचि है । २ स्त्रियोंका अयधमज
 गुण ।
 वयसभोग, देशकाल और गुणादिद्वारा जो कान्ति
 बहुत उद्योग होती है, उसीको दीर्घि कहते हैं । प्रवस्थाके
 अनुसार स्त्रियोंकी शारीरिक कमनीयता उत्पन्न होती है,
 उसीका नाम दीर्घि है । ३ अभिव्यक्ति, ज्ञानका प्रकाश
 जिससे विवेक उत्पन्न होता है और अज्ञानरूपी अन्धकार
 दूर हो जाता है । दीर्घं श्रियां जित् । ३ लाक्षा,
 लाख । ४ कांस्य, कांसा । ५ कान्ति, शोभा, हवि ।
 ६ विश्वदेवभेद, एक विश्वदेवका नाम ।
 दीर्घिक (स० पु०) दीर्घा कायतोति कै-क । दुग्धपापाण-
 वृक्ष, शिरशोला ।
 दीर्घिकेश्वर तोर्थ (स० स्त्री०) दीर्घिकेश्वरं नाम तोर्थं ।
 तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम ।
 दीर्घिमत् (स० त्रि०) दीर्घि विद्यतेऽस्य, दीर्घि-मत्तुप् ।
 १ दीर्घियुक्त, चमकता हुआ । २ कान्तियुक्त, शोभा-
 युक्त । (पु०) ३ सत्यभामाके गर्भसे उत्पन्न श्रीकृष्णके
 एक पुत्रका नाम ।

दीर्घमात्र (द्वि० द्वि०) दीर्घमात्र देवो ।
 दीर्घोद (स० पु०) दीर्घ उदक यत्र उदकस्य उदादियः ।
 १ तोर्बंभेद, एव तोर्बंका नाम । इम तोर्बंभे बहू सर
 नामको एक नरो है जिसमें खान भर दानादि भरनेसे
 समस्त पण घूर हो जाति है । यहाँ भृगुनन्दन परस्य
 रामने खान बरके पण्य खोया हुआ तीव्र खिरने प्रात्र
 किया था । देवबुधने भृगुने यहाँ घोर तपस्या को
 है । (भारत वन ८८ अ०)
 दीर्घोपन (स० पु०) दीर्घा सूर्यखिरचन्मर्षात् खलितः
 उपनः । सूर्यकात् मर्षिः ।
 दीर्घोप्य (स० द्वि०) दीर्घाय दीपनाप द्विन बवादि. यत् ।
 दीर्घद्वित, जो ब्रह्माया जामि को हो । २ जो ब्रह्मामि
 पोष्य हो । (पु०) दीर्घाय धन्विदीपनाय द्वित यत्
 पाटिलात् पसे यत् । १ यमानो, यत्रवायन । उह
 बहुत पविचारक होता है, इसीसे ब्रह्मा नाम दीर्घ
 पड़ा । ३ जोरक, जोरा । दीप तस छाह इति यत् ।
 १ मयूरदिका । ३ ब्रह्मटा ।
 दीर्घक (स० ज्यो०) दीर्घाय द्वित माहुरिति वा । दीप-
 यत् घृताः न्नर्थे कन् । १ यत्रमोदा । २ यमानो
 यत्रवायन । ३ मयूर-दिका । ३ काचमय्यत्र इत्य,
 ब्रह्मटा । १ रत्नचिन्म, नाक पीता । ३ कुट्टुम,
 विसर । ७ तमर । ८ निम्बकहय, मोरुका पीड़ ।
 ८ म्मेन पको ।
 दीर्घका (स० ज्यो०) यमानो, यत्रवायन ।
 दीर्घमान (स० द्वि०) प्रव्यक्षित, यमकता हुआ ।
 दीर्घबन्धो (स० ज्यो०) यत्रमोदा ।
 दीर्घा (स० ज्यो०) १ विष्टकहूर्त्ती विष्ट यत्रूर । १
 कन्धजोरकभेद, एक प्रकारका काका बारा । ३ यमानो,
 यत्रवायन ।
 दीर्घ (स० द्वि०) दीर्घसे इति दीर्घर (वमिष्मपाति ।
 पशः । (१६०) दीर्घिमील प्रकागमुह ।
 दीर्घक (वा० ज्यो०) नक्षत्रो धादिने तप्यत्र एक प्रकारका
 कोड़ा । यह पीठोको तरह होती है घोर इति जानीदार
 पर निश्चयमें है । मन्त्रो देवी ।
 दीर्घट (द्वि० पु०) दीर्घ देवो ।
 दीर्घमान (स० द्वि०) दीर्घसे इति दा कर्म वि यानच् ।
 त्रिषे विसीक) दीर्घ्य हो, जो दीर्घसे किये ही ।

दीर्घा (द्वि० पु०) १ बहू यतो जो प्रकाशने किये बलाई
 जाती है, विपद्य । दीर्घ देवो । (ज्यो०) २ बहू भरतन
 जिसमें देव छात्रकर जाननेसे किये यतो दो जाते है ।
 दीर्घासकाई (द्वि० ज्यो०) विपासकाई देवो ।
 दीर्घक द्विन्दोके एक कवि । ये जातिसे ब्राह्मण तथा कामी
 कामी ही । इहानि यन्मत् १०८८ में दो यत्नोंको निपा
 जिसके नाम इन्द्रान्तरिक्षो घोर व य वर्णन है ।
 दीर्घ (स० द्वि०) १ वाताति १ विदारके वाहू० यम् ।
 १ धायतसम्बा । १ पीठक देवो । (पु०) २ सतायाकउच ।
 १ इन्द्र, एक प्रकारका घुप । ३ माहुरह । १ उह,
 खंड । ३ रामयद, भरकट । ७ ज्योतिषमें पंचपयो, कठो,
 घातवीं घोर पाठको यर्वात् सिद्ध, कन्या, तुका घोर
 इतिच रायिको दीर्घरायि कहते हैं । ८ विमानवर्ष,
 बहू यर्षे जिसका उच्चारण सी च कर हो । पा, ई, ल,
 ख, घ, ष, जो, यो ये दीर्घर कहलाने हैं । सतीतमें
 मो दो मातापौता नाम दोष है, यथा च—पको एक
 मात्र उच्चारण करनेमें जो कान लगता है, वह दीर्घ
 काल कहलाता है ।
 दीर्घकथा (स० ज्यो०) दीर्घा यथा निरुधर्मं वा ।
 गोरगोरक, सफिद जोरा ।
 दीर्घकण्ठ (स० पु०) दीर्घः कण्ठो यज्ज । मयूर
 उच, मयूरका पीड़ ।
 दीर्घकण्ठ (स० पु०-ज्यो०) दीर्घः कण्ठो यस्य । १ बहू
 यसी बसन्ध । २ दानव भेद, एक दानवका नाम । (द्वि०)
 १ धायत कण्ठमात्र, जिसको मरदन लम्बी हो ।
 दीर्घकण्ठक (स० पु०) दीर्घः कण्ठ-कप । बहूयच
 बगना ।
 दीर्घकन्द (स० ज्यो०) दीर्घः कन्दो यज्ज । १ मूलक
 मूनी । २ माहाकन्द
 दीर्घकन्दक (स० ज्यो०) दीर्घः कन्द कप । मूलक मूनी ।
 दीर्घकन्दिवा (स० ज्यो०) दीर्घः कन्दक टापू टापि यत
 इत् । नासमूको, मूलको ।
 दीर्घकम्बर (स० पु०) दीर्घः कम्बरो यज्ज । १ बहूयचो,
 बगना । (द्वि०) २ दीर्घकम्बरुह, जिसको मरदन
 लम्बी हो ।
 दीर्घकर्ष (स० द्वि०) दीर्घो कर्षे यज्ज । १. जिपके खान

बड़े बड़े हैं। (पु०) २ जातिविशेष, एक जातिका नाम।

दीर्घकाण्ड (सं० पु०) दीर्घः काण्डो यस्य । गुण्ड लण, गीटना।

दीर्घकाण्डा (सं० स्त्री०) १ पातानगरुडीमता, द्विर द्विटा। २ तिकाङ्गा, एक प्रकारकी वेन।

दीर्घकाय (सं० त्रि०) दीर्घः कायः यस्य । आयत शरीरौ, लम्बे चौड़े शरीरवाला।

दीर्घकाल (सं० स्त्री०) दीर्घं कालं । अनेक दिन।

दीर्घकोल (सं० पु०) दीर्घः कीलः शाखादण्डो यत्र । अङ्गोष्ठच, अंकोलका पेड़।

दीर्घकीलक (सं० पु०) दीर्घकीलः स्वार्थे कन् । अङ्गोष्ठ सच, अंकोलका पेड़।

दीर्घकुल्या (सं० स्त्री०) गजपिप्पली।

दीर्घकूरक (सं० स्त्री०) दीर्घं कूरकं अन्नं । राजान, आम्नन्देशमें जोनिधाना एक प्रकारका घान।

दीर्घदेश (सं० पु० स्त्री०) दीर्घः देश इव लोम यस्य । १ भल्लुक, भालू। २ टैगभेट, एक टैय जो कूर्म-विभागके पश्चिमोत्तरमें अवस्थित है। (त्रि०) ३ आयत-वैशयुक्त, जिसके लम्बे लम्बे जान हैं।

दीर्घकोशिका (सं० स्त्री०) दीर्घं कोशो यस्याः कप्, कापि अत इत्वं । भिनायिका, सुतुही। इसका पर्याय—दुर्गामा और शुक्ति है।

दीर्घस्वरच्छन्द (सं० पु०) इत्काट, एक प्रकारका छुप।

दीर्घगति (सं० पु०) दीर्घः गतियस्य । उट्ट, ऊंट। यह लम्बे लम्बे डेग रखता है, इसीसे इसका नाम दीर्घ-गति हुआ है।

दीर्घगमन (सं० त्रि०) दीर्घं गच्छति दीर्घं-गम-णिनि। जो बहुत तेजीसे जाता हो।

दीर्घग्रन्थि (सं० पु०) दीर्घोग्रन्थि पत्र यस्य । गजपिप्पली।

दीर्घश्रीव (सं० पु०) दीर्घां श्रीवा यस्य । १ उट्ट, ऊंट।

२ नीलकौश, मारस। ३ देशभेद, एक देशका नाम।

यह कूर्म-विभागके दक्षिण-पश्चिमकी ओर अवस्थित है।

(त्रि०) जिसकी गरदन लम्बी हो।

दीर्घघाटिक (सं० पु० स्त्री०) दीर्घां घाटां अस्वास्ति

उन् । १ उट्ट, ऊंट। २ वक्र, घगला। (त्रि०) ३ लंबी गरदनवाला।

दीर्घचक्षु (सं० पु०) दीर्घां चक्षु, यस्य । पल्लभेट, एक किष्मकी चिट्टियां।

दीर्घोच्छ्रुट (सं० पु०) दीर्घोच्छ्रुटा यस्य । १ इन्, ईन्। (त्रि०) २ दीर्घोच्छ्रुटक, जिसके लम्बे लम्बे पत्ते हैं।

दीर्घच्छन्द (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, बड़ा छन्द।

दीर्घजङ्गल (सं० पु०) दीर्घं यथा तथा जङ्गलो गति-शीलः । सत्प्रविशेष, बहा भीगा।

दीर्घजङ्ग (सं० पु०) दीर्घां जङ्गा यस्य । १ वक्र, घगला।

२ उट्ट, ऊंट। (स्त्री०) ३ दीर्घ जाँव, लम्बी टांग।

(त्रि०) ४ आयत जामुयुक्त, जिसकी टांगें लम्बी हैं।

दीर्घजामुक (सं० पु०) दीर्घः जामुयस्य ततो ऋप् । दीर्घजङ्ग, लंबी टांग।

दीर्घजिह्व (सं० पु०) दीर्घां जिह्वा यस्य । १ मयं, मांय । २ दानवविशेष, एक दानवका नाम। (त्रि०) ३ जिसकी लंबी जीभ हो।

दीर्घजिह्वा (सं० स्त्री०) दीर्घजिह्वा-टाप । १ राजसो-भेद, विरोचनकी पुत्री एक राक्षसी जिसे इन्द्रने मारा था। २ कुमारानुचर माटगणभेट, माटगणमिसे एक जो कार्त्तिकेयकी अनुचरी है।

दीर्घजिह्वी (सं० पु०) १ कुङ्कुर, कुत्ता।

दीर्घजीविन् (सं० त्रि०) दीर्घं बहुकालं जीवति जीव-णिनि। बहुकालजीवी, जो बहुत दिनों तक जीए।

राजा यदि न्यायपूर्वक टच्छ दे, महापातकोसे धन न ले और वेदपारग ब्राह्मण यदि प्रभु हैं, तो ऐसे ममयमें वे दीर्घजीवो होते हैं। दीर्घजीवन लाभ करनेमें विशुद्धाचारकी आवश्यकता है। विशुद्धाचारी और स्वधर्म-परायण होने पर नियय हो दीर्घ-जीवन प्राप्त हो सकता है। यथेच्छाचार हो अकाल मृत्युका प्रतिकारण है, इसीसे मन्वादि सभी शास्त्रोंमें ही विशुद्धाचारीकी प्रशंसा देखी जाती है और अकाल मृत्युके वाट उद्देश्य स्वल्पमें भी इस प्रकार लिखा है—विहितकर्मका अनुष्ठान, निन्दितका सेवन, इन्द्रियका अनुग्रह, पालन और धर्म ये सब हो एकमात्र अकाल मृत्युके कारण हैं। जो ये अनुष्ठान नहीं करते, अर्थात् स्वधर्मपरायण हो कर रहते हैं, वे ही दीर्घजीवन प्राप्त कर सकते हैं।

चैतन्य (म० पु०) दोषास्तन्नाम सुतयो यन्त्र । १ यन्त्र-
सुतिक देवादि, बह देवादि त्रिमये चनेक स्तव हो । २
नेत्रं ब्रह्मण्ययो मन्त्रान्तर । ३ दोषं तन्तु, न वा ताया ।
नेत्रं तन्तु (म० पु०) दोषं बह्मण्ययापक तपो
यन्त्र । ४ बह्मण्ययापक तपस्क पापुषु शोय नृपमंज,
हरिश्च दधि चमपाय पापुषु शोय एक राज्ञा । इनेति
बहुत काम तक तप दिया था, इसीसे इनका नाम दोष
तपम पड़ा है । (त्रि०) २ त्रिमये बहुत दिनों तक
तपसा हो हो ।

नेत्रतमम (म० पु०) कायोरात्रये पुत्र बन्धनारोके
मिता, उत्तमये पुत्र । महाभारतमें इसको कहा इस
प्रकार लिखी है—उत्तम नामक एक योग्यप्य सुनि धि ।
इसको कनिका नाम समता था । समता त्रिम समय पूर्व
गर्भवतो यो तम समय उत्तमके छोटे माई देवताओं
के पुरोहित उदर्यति समताके पास पदुके पीर सह
भापको उच्छा प्रकट करि ली । इस पर समताके उद
र्यतिने कहा 'मिने तुम्हारे बड़े माईके गर्भ बाएच किया
है, धतः इन समय तुम जापो । मिरो इस सन्तानके गर्भमें
हो रह कर पदुइके पन्धयन किया है तुम्हारा बेटा
भी चमोय है, एक कुलमें दो सन्तानका रहना पतथाक
है । इसलिये तुम चमो चने जापो ।' सिद्धि उदर्यति
वति निरूपी हो कर मो कामने जगने पा कर चपनेको
रोक न मके पीर उदर्यतिमें प्रकृत हुए । इस पर गर्भक
बातकने मोतरके कहा 'हे तात ! मात हो, एक गर्भ में
दो बालकोंको स्थिति नहीं हो सकती । अब उदर्यतिने
इसने पर मो न सुना, तब उच निरूपी गर्भक गियने
चपने के रोके बेटोंको रोक दिया, त्रिमये बह बेटों मीके
कमीन पर निर पदा । इस पर भगवान् उदर्यतिने ब्रह्म
हो कर गर्भक बातकको माय दिया, 'तुमने सुमि ऐने
ममयमें इस तरकीबी बात कही इसलिये तुम दोष
तामममें प्रविष्ट हो चकान् चम्या हो जा । उदर्यतिने
मायके बह बातक चम्या हो कर कथा पीर दोषं तममा
नामके बनिह हुए । प्रहोयो नामकी एक ब्राह्मण
कथामे इनका विवाह हुआ । इस लीके गर्भमें एक
योग्य पादि कई पुत्र उत्पन्न हुए जो मरके मच मोय
पीर मोइके बनीयून धि । दोषं तममा ब्रह्मि-बन्तान काम

पेसुने मोषमं गिष्ठा प्राप्त करके उससे यशपूर्वक से पुत्र
पादिमें प्रकृत हुए । दीर्घतमाको इस प्रकार मयां दामन
करते देख पायमने सुनि शोय उनके विवाह हो गये ।
उमकी ली प्रहोयो भी बहुत बिरह हुई । एक दिन दोषं-
तमामे लीयो चमकक देख कर पूजा, 'तु सुम्भने क्यों
दुर्भाग रहतो हो ?' इस पर प्रहोयोने जवाब दिया 'रक्षामो
ल्लोका मरुच पोषक करति है ईसीसे उनके मर्ता का
पति कहति है । पर पाप चम्य है, कुछ कर नहीं
सकने । इतने दिनों तक मैं पापका तथा पापके पुर्वाका
मरुच पोषक करति रहरी बह मई, पर पापी सुम्भने
यह काम नहीं हो सकता ।

दीर्घतमामे ब्रह्म हो कर कहा, 'पात्रये मैं यह मयांदा
बाँध देता हूँ कि लो एक मात्र पतिने हो चतुत्प
रुं । पति चाँहि लीता हो या मरा, बह कदापि दूसरा
पति नहीं कर सकती । यदि कोई ली दूसरा पति
पहन करेगी, तो बह पतिन हो जायगी ।' लामीके ऐसे
बचनोने कुपित हो कर ब्राह्मणोने चर्म नकडेके कहा
'तुम शोय चपने चम्ये पिताको बाँध कर गङ्गामें डिक
पापो ।' माताके पात्रानुसार ये लके गङ्गाको तीरमें बैठा
पर चटा कर कहा पाये । दोषं तममा गङ्गामें बहुत दूर
तक बह कर चले गये । स योग्यप्य वति नामक एक
राजा स दासनामको पाये हुए थे । ये चरित्रको ऐसी
पचमामें देख चपने करको ले गये । बाद लके निरुको
ज्ञान कर राजाने उनके पापका ली, के महामान ।
मरी लीके महाबाह कर एक योग्य बन्तान उत्पन्न
कीजिये त्रिमने मरी व दाको रचा हो ।' बह चरि
न्यत हुए, तब राजाने चपने सुदिया नामकी रानीको
जनके पाय भेजा । किन्तु रानी लके चम्या पीर पुहा
देव कर लनेके पास न गई, सिद्धि कपने चपनी दासोको
भिक्ष दिया । अचिने उच गङ्गा दासोके लघोकान् पादि
प्यारद पुत्र उत्पन्न किये । राजाने यह ज्ञान कर पुना
चपनी लो सुदियाको लनेके पास भेजा । दोषं तमामे
रानीका सारा च यट्टोच कर कहा, 'मात्र, तुम्हें चम्यन
निरूपीको पुत्र लीम पीर धि च य, च य, अचि न पुबहु पीर
बुद्ध नामके बनिह होये । इन मूयक्यममें लनेके नाम
धे एक एक टोक विरह्यत होवा । च गने नामके च म

देश, वंगसे वंग देश, पुण्ड्रसे पुण्ड्र देश और सुघ्रसे सुघ्रदेश होगा। (भारत वादिप० १०४ अ०) नोति-मञ्जुरोमं निष्ठा है—द्वैतन आदि श्रुतियों ने दीर्घतमाको पहले अग्निमें डाल दिया, किन्तु अग्निनीकुमारकी रक्षासे इस वार बच गये। उन्होंने पुनः दीर्घतमाको जलमें फेंक दिया, इस वार भी इनका कुछ भी अतिष्ट न हुआ। बाद तैतनने इनके मन्त्रका, वच और दोनो' वाहुषो' पर आघात किया था अन्तमें बहुत अनुत्तम हो कर ऋषिने आम्बहत्या कर डाली।

दीर्घतरु (सं० पु०) दीर्घः तरुः । १ तालवृक्ष, ताड़का पेड़ । २ दीर्घवृक्ष मात्र, लंबा पेड़ ।

दीर्घता (सं० स्त्री०) दीर्घस्य भावः दीर्घ-मल-टाप । आयति, लम्बाई ।

दीर्घतिमिषा (सं० स्त्री०) दीर्घतिम षा धिपन् । ककरोटा, ककड़ी ।

दीर्घतुण्डा (सं० स्त्री०) दीर्घं तुण्डं यस्या । १ कुकुन्दरो, छट्टूदर । (त्रि०) २ दीर्घतुण्डयुक्ता गजादि, जिसका मुँह लम्बा हो, जैसे हाथी आदि । (स्त्री०) ३ दीर्घतुण्ड, लम्बा मुँह ।

दीर्घदण्ड (सं० पु०) दीर्घं दण्डमिव, अभिधानात् पुंस्त्वः । १ पक्षिवाइ दण्ड, एक प्रकारकी घास जिसको खानेसे पशु दुर्बल हो जाते हैं । (स्त्री०) २ दीर्घदण्ड, लम्बी घास ।

दीर्घदण्ड (सं० पु०) दीर्घं दण्ड इव काण्डावच्छेदेन । १ परण्डवृक्ष, अंडोका पेड़ । २ तालवृक्ष, ताड़का पेड़ ।

दीर्घदण्डो (सं० स्त्री०) दीर्घदण्ड गौरादित्वात् ङोर्ध । गोरघी, गोरख रमली ।

दीर्घदग्निता (सं० स्त्री०) दीर्घदग्निनी भावः दीर्घदग्निन् तस्य अनुमासिक लोपः ततो टाप । बहुदग्निता, बहुत दूर तककी बातका विचार ।

दीर्घदर्शी (सं० पु०) दीर्घं दीर्घात् वा पश्चति षिनि । १ वह जो दूर तक सब बातोंका परिणाम सोचता हो, परिहृष्ट । २ मन्त्रक, मालू । ३ गृध्र, गोघ । (त्रि०)

४ धृददर्शक, बहुत दूर तक सोचनेवाला ।

दीर्घदन्त (सं० पु०) मालाकन्द ।

दीर्घदृष्टि (सं० पु०) दीर्घं दृष्टिर्दृशं नमस्य । १ परिहृष्ट,

वह जो दूर तककी बात सोचता हो । २ दूरकोषण नामक यन्त्रभेद, दूरवीन ।

दीर्घद्वु (सं० पु०) दीर्घं द्वासो द्रुश्चेति । तालवृक्ष, ताड़का पेड़ ।

दीर्घद्वुम (सं० पु०) दीर्घो द्वुमः । गाल्मलिहृत्, मेमरका पेड़ ।

दीर्घद्वार—भविष्य ब्रह्मखण्डोक्त विशाल टेगान्तर्वर्ती एक जनपद । यह गण्डकी नदीके किनारे अवस्थित माना जाता था । पहले इसमें मात हजार ग्राम और तीस शहर लगते थे ।

दीर्घनख—बुद्धके सामयिक एक ब्रह्मचारी । इन्होंने 'दीर्घ-नख परिव्राजक-परिग्रह्या' नामकी पुस्तक रची है ।

दीर्घनाट (सं० पु०) दीर्घः दूरगाभित्वात् विस्तीर्णः नाटो यस्य, छुम्नादित्वात् न णत्वः । १ गृह । २ आयत-शब्द, जोरकी आवाज । (त्रि०) ३ बहुकालव्यायी शब्दयुक्त वण्टादि, जिसमें भारी शब्द निकले ।

दीर्घनाल (सं० पु०) दीर्घं नालं यस्य । १ दावनाल, स्वार । २ गुण्डदण्ड, गोटला घास । (स्त्री०) ३ दीर्घ-रोहिष्क, रोहिंस घास ।

दीर्घनाम (सं० त्रि०) दीर्घा नामा यस्य । दीर्घनासिका-युक्त, जिसकी नाक लम्बी हो । २ दीर्घनासिका, लम्बी नाक ।

दीर्घनिद्रा (सं० स्त्री०) दीर्घा निद्रा । १ श्लथु, मौन । २ दीर्घकालव्यापिनी निद्रा, बहुत देर तक रहनेवाली नींद ।

दीर्घनिष्वास (सं० पु०) लम्बी सांस जो दुःख या शोकके आवेगके कारण ली जाती है ।

दीर्घनिस्खेन (सं० पु०) शब्द ।

दीर्घपक्ष (सं० पु०) दीर्घो पक्षो यस्य । १ कलिङ्गाख्य, कलिङ्ग पक्षी । २ दीर्घपक्षयुक्त पक्षिमात्र, वह पक्षी जिसके छेने लम्बे हों ।

दीर्घपटोलिका (सं० स्त्री०) दीर्घा पटोलिका । लताफल विधिप । इसका गुण—सिग्ध, कटु, विष्टम्भो और गुरु ; वायु, पित्त, श्लेष्मा, रुचि, भेदकारक, मधुर और शीतल है ।

दीर्घपत्र (सं० पु०) दीर्घं पत्रं यस्य । १ राजपक्षाङ्क,

भान व्याज । २ बिन्दुबन्ध । ३ हरिदमं, एक प्रकारका फुग । ४ कुपीसुतस कुचना । ५ रघुमंद, एक प्रकारकी रीच ।

दीर्घपत्रक (न० पु०) दीर्घपत्र स प्रायां कन् । १ रत्न मयन, मान लहयन । २ एरुड रीच, प छो । ३ हिज्जल ह्य, मसुप्रफल । ४ बैतसह्य, पित । ५ करोगह्य टेंटी का पिक । ६ अलत्र मधुबह्य, जलमधुपा । ७ मयन लहयन ।

दीर्घपत्रा (स० स्त्री०) दीर्घ पत्र स प्रायां । १ बिज्रपर्बक, म जोठ । २ अलत्रमधुपत्र, छोटा वासुनका पिक । ३ प्रसिपर्वीकता, पिडबन । ४ गन्धपत्रा । ५ बैतको । ६ घासपर्वी, सरिबन । ७ जोरोसुप, एक प्रकारकी मत्ता ।

दीर्घपत्रिका (स० स्त्री०) दीर्घपत्र क प्रायां कन् टाप पत रत्न । १ श्वेतवन्धा मयोज कच । २ हृतकुमारो, पीकुमार । ३ गात्रपर्वी, सरिबन । ४ श्वेत पुनकवा मयोज मधुपुरना ।

दीर्घपत्रो (स० स्त्री०) दीर्घपत्र गोपादि० स्त्री । १ पलायोलता, शिरनो । २ मद्वाचपु, याच, पच बिन्धाका पाप ।

दीर्घपर्व (स० स्त्री०) त्रिहने कल्पो पत्ते चीं ।

दीर्घपर्वी (स० स्त्री०) दीर्घ पर्व यस्या गौरादि० स्त्री । प्रसिपर्वी, पिडबन ।

दीर्घपत्रक (स० पु०) दीर्घः पत्रको यत्न । १ शनह्य, मनका पिक । (त्रि०) ७ पापत पत्रक, त्रिसकी पतिपां मन्को वा । (पु० स्त्री०) १ चापनउह्य, लना पत्ता ।

दीर्घपाद (स० पु०) दीर्घः पादो यथा नमामान्तः पश्यन्तोः । १ बहूपयो । २ मारस । (त्रि०) १ दीर्घ पदबुद्ध, कम्बो टंगवात्ता ।

दीर्घपाहय (स० पु०) दीर्घपाहो पाहयवेति । १ लान, ताङ्का पिक । २ पूर, सुपारोका पिक ।

दीर्घपत्र (स० पु०) दीर्घं पत्रं बध्न । कर्प, मांवा ।

दीर्घपत्र (स० पु०) दीर्घपत्रमि पसुराबतर इत्यया नामक सुपेय, हापरके एक पत्रा इत्यर्थां को पसुरके पबतार पि । वि शकल कूरुर्मां पि, रवीये इत्या नाम दीर्घपत्र पक्वा । (त्रि०) दीर्घपत्रा यत्न । २ पूरयो ।

दीर्घपत्र (स० पु०) दीर्घपत्रं बध्न । पारमपत्रक, धमनताव ।

दीर्घपत्रक (न० पु०) दीर्घपत्र स प्रायां कच । पयल्लउच, पयल्लका पिक ।

दीर्घपत्रा (स० स्त्री०) दीर्घानि पत्रानि यस्या । १ माबन दिगपिडि कतुका नामकी मत्ता । २ कपिलप्राया, प मूर ।

दीर्घपत्रिका (स० स्त्री०) दीर्घपत्र कप् टाप कापि पत रत्न । १ कपिलप्राया, मन्वा पंगूर । २ कतुका । ३ मयनह्य नामकी मत्ता । ४ तिलाकापु, तोता कच ।

दीर्घवाका (स० स्त्री०) दीर्घं वाक्यं यथा यत्नः । बसरी, मूरावाव

दीर्घवाह (स० पु०) दीर्घो वाह यत्नः । १ दिवानुचर पेद गिबके एक पतुचरका नाम । २ इतराहका पुतमेद, इतराहके एक पुतका नाम । (त्रि०) ३ पाबत, वाहु कुत, सिसकी मुजा क बी को ।

दीर्घवासुक (स० पु०) इहदारक मत्ता ।

दीर्घवाहयवित (स० पु०) दीर्घवर्ध, एक पसुरका नाम ।

दीर्घभुज (स० पु०) दीर्घो भुजो यत्नः । १ दिवानुचर नंद, गिबके एक पतुचरका नाम । (त्रि०) २ दीर्घ वाहुकुत, बिबकी मुजा कम्बो को ।

दीर्घमाहत (स० पु०) दीर्घं पश्चिज्जमबकपयो माहतः त्रिभ्यसबाहुयं च । इत्यो, जायो ।

दीर्घसुख (स० पु०) १ यत्नमेव, एक बसका नाम । २ दीर्घसुखबुद्ध, त्रिलका सुख कथा को ।

दीर्घसुख (स० पु०) दीर्घं सुखं यत्नः । १ मोरटकता, एक प्रकारकी रीच । २ बिन्धानुपत्र, (स्त्री०) ३ धाम क्यकच, एक पोथी काप को बैन्को तरक होतो है । ४ माससुप कबाह । ५ बिलह्य, बेनका पिक । ६ बिना तबह्य । ७ इन्दयव, हड्डा । ८ मूलक, मूयो ।

दीर्घमूलक (स० स्त्री०) दीर्घं मूलकं यथां कन् । मूलक, मूयो ।

दीर्घमूला (स० स्त्री०) दीर्घं मूलं यत्नः टाप । ध्यामा कता बाकोसर । १ शान्यपर्वी, सरिबन ।

दीर्घमूलिका (स० स्त्री०) दीर्घं मूलं कप् टाप कापि पत रत्न । इराकमा, बवान कमाया ।

दीर्घमूली (स० स्त्री०) दीर्घं मूलं यत्नः कोप । इरा कमा, कवाका ।

दीर्घयज्ञ (स० त्रि०) दीर्घः बहुकालव्यापकी यज्ञो यस्य । १ बहुकालव्यापक यज्ञकारी, जिसने बहुत काल तक यज्ञ किया ही । (पु०) २ हापरयुगके एक अयो-ध्याधिपति । (भारत समा० २८ व०)

दीर्घयाथ (स० त्रि०) या-कर्मणि य, दीर्घकालिन याथः गन्तव्यः । दीर्घकाल द्वारा गन्तव्य, बहुत काल तक जाने योग्य ।

दीर्घरहा (स० स्त्री०) हरिद्रा, हलदी ।

दीर्घरत (स० पु०) कुकुर, कुत्ता ।

दीर्घरद (स० पु०) दीर्घा रदो दन्तो यस्य । १ शूकर, सूअर । २ दीर्घदन्त, लम्बा दाँत । (त्रि०) ३ आयत-दन्तयुक्त, जिसके निकले हुए लम्बे दाँत हों ।

दीर्घरव—उल्लालके एक राजा । ये उल्लालविजयी महाराज जनमेजयके पुत्र थे । जनमेजय देखो ।

दीर्घरसन (स० पु०) दीर्घा रसना जिह्वा यस्यः । सर्प, सर्प ।

दीर्घरागा (स० स्त्री०) दीर्घः अधिककालस्थायो रागः यस्याः । हरिद्रा, हलदी ।

दीर्घरात्र (स० स्त्री०) दीर्घाः प्रचुरा रात्रयः सम्प्रत, अग्र आदित्वादयः । चिरकाल, अधिक समय ।

दीर्घराव (स० त्रि०) दीर्घः रावः यस्य । उच्च शब्दकारो, जो भारी शब्द करता हो ।

दीर्घरोगिन् (स० त्रि०) चिररोगी, जो सदा रोगसे ग्रसित रहता हो ।

दीर्घरोम (स० पु०) दीर्घाणि रोमाणि यस्य । १ भल्लूक, भालू । २ शिवानुचरभेद, शिवके एक अनुचरका नाम ।

दीर्घरोहिषक (स० स्त्री०) दीर्घं रोहिषं ततः स्वार्थं सन्नायां वा कन् । सुगन्धि लण्विशेष, मालव, राज पूताना और मध्यप्रदेशमें होनेवाली एक प्रकारकी रोहिष घास । इसमेंसे बहुत अच्छी सुगन्धि निकलती है जो नीमकी सुगन्धिसे मिलती जुलती है । इसका संस्कृत पर्याय—दृढकाण्ड, दृढच्छद, यज्ञोष्ट, दोषनाश और तिक्तसार है । इसका गुण—कटु, उष्ण, कफ, घात, भूतघ्न और विषनाशक तथा ब्रणघ्न और उपशम-कारक है ।

दीर्घतलाष्टम (स० पु०) अष्टकणं वृक्ष, लताशाल ।

दीर्घलोचन (स० त्रि०) दीर्घलोचनं यस्य । १ आयत नेत्रक, बड़ी आँखवाला । (पु०) २ शिवानुचरभेद, शिवके एक अनुचरका नाम । ३ धृतराष्ट्र पुत्रभेद, धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । (स्त्री०) आयतं लोचनं । ४ लम्बी आँख । दीर्घलोहितयष्टिका (म० स्त्री०) रक्तदन्तु, लाल ऊख । दीर्घवंश (स० पु०) दीर्घा वंश इव । १ नल लण, नरकट । २ मन्तल कुल । ३ प्राचीनवंशसम्भूत, वह जो प्राचीन वंशसे उत्पन्न हुआ हो ।

दीर्घवक्र (म० पु० स्त्री०) दीर्घं वक्रं सुखं यस्य । १ हस्तो, हाथी । (स्त्री०) दीर्घं वक्रं । २ आयत वदन, लम्बा सुँहवाला ।

दीर्घवाक्का (म० स्त्री०) दीर्घवत् शीकते सिद्धति शोक-कृपपोदरा क्लमः । कुम्भीर, घड़ियाल ।

दीर्घवर्षाभू (स० पु० स्त्री०) दीर्घा वर्षाभूः । श्वेत पुन-र्णवा, चिराटिका ।

दीर्घवक्षो (स० स्त्री०) दीर्घा वक्षो । १ महेन्द्रवारणी, बड़ा इन्द्रायन । २ पातालगरुडोलता, छिटा । ३ पलाशो-लता, बोटिया पलाश ।

दीर्घवृक्ष (स० पु०) दीर्घः वृक्षः । १ शालवृक्ष, सालका पेड़ । २ तालवृक्ष, ताड़का पेड़ ।

दीर्घवृत्त (स० पु०) दीर्घं वृत्तं यस्य । १ शोनाक वृक्ष, सोनापाठा । २ शोनाक प्रभेद, एक दूसरे प्रकारका सोनापाठा । ३ लताष्टम, लताशाल ।

दीर्घवृन्तक (स० पु०) दीर्घं वृन्त स्वार्थं कन् ।

दीर्घवृन्त देखो ।

दीर्घवृन्ता (स० स्त्री०) दीर्घं वृन्तं यस्यः । इन्द्र-चिभिंटीलता ।

दीर्घवृन्तिका (स० स्त्री०) दीर्घं वृन्तं यस्यः कप्-टापि अतइत्वं । एलापर्णी ।

दीर्घशर (स० पु०) दीर्घः शरः । यावनाल धान्य, न्वार, जुहरी ।

दीर्घशस्य (स० पु०) गांश फल ।

दीर्घशाख (स० पु०) दीर्घा शाखा यस्य । १ शण्डवृक्ष, सनका पेड़ । २ शालवृक्ष, सालका पेड़ ।

दीर्घशाखिका (स० स्त्री०) दीर्घा शाखा यस्यः कापि अतइत्वं । नोलाशोक्षुप, नखवनशुड़ ।

दीर्घमिथुन (म० पु०) दीर्घा मिथुनयं वा अप ।
 एक, एक प्रकारकी राशि ।
 दीर्घगूळ (ब० पु०) दीर्घः गूळः अप यमा । शान्तिमिद-
 एक प्रकारका भाग ।
 दीर्घगूळक (स० मत्री०) दीर्घं गूळं यथा अप् ।
 रासायन, धतू दियेके पामन भागकी रासायन कहते हैं ।
 दीर्घस्नानु (स० सि०) दृष्टव् स्नानुमुद्र, त्रिमञ्जी बड़ो बड़ो
 दाढ़ी हो ।
 दीर्घत्रयम (स० पु०) दीर्घं त्रयो यमा । १ दीर्घं तन्मा
 अविधि एक पुत्रका नाम । इत्यंति यनादृष्टि जेनि पर
 ओविकाके निचे बाचियन कर दिया जा त्रिमका उबेक
 आन्देमें है । (क०) २ दीर्घं त्रयं, न वा याम ।
 (त्रि०) ३ दीर्घं त्रयं कुंठ, त्रिसरे नके काम ही ।
 दीर्घं तुव (स० त्रि०) १ जो दूर तक सुनाई पड़े । २ त्रिम-
 का नाम दूर तक मिथ्यात हो ।
 दीर्घं सख (ब० त्रि०) दीर्घं सखं त्रिनो यथा बहुत्रो०
 आह्वाय च । दीर्घं, त्रिमञ्जी जाय न भी हो ।
 दीर्घं यत्र (स० त्रि०) दीर्घं बहुकालमात्रं सखं । १ यत्र
 विषय एक यत्र जो बहुत दिनोंमें समाप्त होता जा ।
 २ तीर्थमिये, एक तीर्थका नाम । उस तीर्थमें ब्रह्मादि
 देवता पीर परमर्षिविद आदिने यथानियम बाध बिना
 या । इस तीर्थमें केवल जानिये जो धर्मिय पीर राज
 स्युयप्रका एक प्रश्न होता है । (भारत १।२०।१।२०३)
 ३ यामञ्जीवन कर्त्तव्य धर्मि होय यत्र । (त्रि०) ४
 दीर्घं सख यत्रकाल, त्रिमञ्जी दीर्घं सख यत्र बिद्या हो ।
 दीर्घं सख (स० त्रि०) दीर्घं यत्रस्य । निविद्धं नन,
 बना कहल ।
 दीर्घानर्घ (ब० पु०) दीर्घोऽनर्घ इव । अन्तमन्दा
 एक हृद्य, बर्षिद मदार ।
 दीर्घाक्ष (म० त्रि०) दीर्घं पादा यत्र । १ पादत-
 मुच, बड़े लु डबाका । (पु०) २ यियातुवरमिद, यिक-
 क एक यनुचरका नाम । ३ जन्ती, हाथो । दीर्घं पादा
 यत्र देहि । ४ पवित्रोत्तर देयमिद ।
 दीर्घाक्ष (ब० पु०) दीर्घाक्षि यत्रनि यत्र । निदाय
 यमक, योजकाय ।
 दीर्घाक्ष (स० त्रि०) दीर्घं य दोषां न जायां अन् टयि

यत यत्र । १ अनाययमिद, बाबंजी, छोटा ताकाय ।
 बिमो बिमोके मतसे १०० अनुप नभे अनाययको
 दीर्घाक्ष कहते हैं । २ अनाययमात्र । ३ किङ्कपत्र ।
 दीर्घं बाध (स० पु०) दीर्घो वर्धावः । अहरोमता, न जो
 कहको । २ महाकायु बड़ा कर्तु ।
 दीर्घोच्चारण (स० त्रि०) दीर्घं उच्चारण । सुब उच्चारण ।
 दीर्घं (स० त्रि०) द्-विदारं वा । विदारित, फटा हुआ,
 टरका हुआ ।
 दीर्घ (त्रि० त्रि०) दीर्घा रखनेका आधार जो पातक,
 लकड़ी पादिका बना होता है, बिरागदान ।
 दीर्घान (प० पु०) १ राजप्रमा, दरबार । २ मञ्जी,
 बञ्जी । ३ यत्रलीके स यत्रकी पुत्रक ।
 दीर्घानधाम (प० पु०) १ धाम दरबार । २ धाम दर-
 बार न्यायिका स्थान ।
 दीर्घानकाग (प० पु०) यत्र पादमोक्षे बँडनी तथा मय
 सोम्ये मिथनेका चरका बाइरी कमर ।
 दीर्घानकाग (प० पु०) यत्र कर्मचारो त्रिसरे पान
 गजा या बाटयाइकी सुहर रहती है ।
 दीर्घानकाग (प० पु०) १ यत्र दरबार । २ यत्र दर-
 बार लगानेका मन्त्रान ।
 दीर्घाना (प० त्रि०) विचित्र, पायन ।
 दीर्घानायन (प० पु०) विचित्रता पायनयन ।
 दीर्घानो (प० त्रि०) १ दीर्घानका पद । २ सम्पत्ति
 पादि सन्तो फलका निचय करनेका आवालय ।
 (त्रि०) ३ यमनो, बाबजी ।
 दीर्घान (प० त्रि०) १ प्राचीर भोग । २ अवर उद्य हुआ
 किसी बहुका घिरा ।
 दीर्घानरी (प० त्रि०) दीर्घा पादि रखनेका पादार
 जो दीर्घामें लगाया जाता है ।
 दीर्घानरी (प० त्रि०) दीर्घारमें लगाये जानेका हथ
 हुआ कपड़, पिछाई ।
 दीर्घान (त्रि० त्रि०) दीर्घार श्रेयो ।
 दीर्घानर (त्रि० पु०) एक प्रकारकी कपडन । यह
 दीर्घार पर बाय टिका करके जाती है ।
 दीर्घासा (त्रि० पु०) निराका श्रेयो ।
 दीर्घानो (त्रि० त्रि०) एक उद्यम जो कार्तिकको यमा

वनग्रामें होता है। इसमें ग्राम-जो घरमें भीतर बाहर बड़त-से दीए जला कर पंक्तियोंमें रखे जाते हैं और लक्ष्मीका पूजन होता है। जिस दिन प्रदोषकालमें अमावस्या रहेगी, उसी दिन दीवाली होती है और लक्ष्मीकी पूजा की जाती है। जब अमावस्या लगातार दो दिन प्रदोष-कालमें पड़ती है तब दूसरे दिनकी रातको दीवाली मानो जाती है और वह रात सुखरात्रिका कहलाती है। यदि अमावस्या प्रदोषकालमें न पड़े, तो प्रथम दिन लक्ष्मी-पूजा और दूसरे दिन दीपदान होता है; क्योंकि पार्वण-आह उभो दिन होता है। इस दिन लोग अक्सर जुआ खेला करते हैं।

दीर्घसत्री, (स० पु०) दीर्घसत्रकारो, वह जिसने दीर्घ-सत्र यज्ञ किया हो।

दीर्घसूरत (स० पु०) दीर्घ बहुकालव्यापक सूरतं यस्य । १ कुक्कुर, कुत्ता । २ शूकर, सूपर । (त्रि०) ३ आयत सूरत, देरतक रति करनेवाला ।

दीर्घसूत्र (स० पु०) दीर्घासासी सूत्रमिति । प्राणायामभेद ।

दीर्घसूत्र (स० त्रि०) दीर्घेण बहुकालेन सूत्रं कार्या-रम्भः यस्य । १ चिरक्रिय, प्रत्येक काममें विलम्ब करने-वाला ।

मत्स्यपुराणमें लिखा है, कि सभी काम जल्दो करना चाहिये। यदि राजा दीर्घसूत्र हों तो उनकी बहुत खराबी होती है, किन्तु राग, काम, क्रोध, पापकार्य और अप्रिय कर्मोंमें दीर्घसूत्र हो अवलम्बन करना चाहिये, अर्थात् इन सब दुष्कर्मोंमें दीर्घसूत्री होनेसे वे सब काम नहीं हो सकते, इसीसे उक्त कर्मोंमें दीर्घसूत्रका विधान है। जो मनुष्य किसी उपस्थित कार्यके करनेमें देर लगाते अथवा भालसे दूसरे दिनके लिये छोड़ देते हैं, उन्हें दीर्घसूत्र कहते हैं। जो अपनी उद्विग्नता चाहते हों, उन्हें यत्नपूर्वक दीर्घसूत्रताका परिहार करना चाहिये। दीर्घसूत्र होनेसे कदापि उद्विग्नता प्राप्त नहीं कर सकते हैं। (क्लृ०) २ दीर्घसूत्र, लम्बा सूत्र ।

दीर्घसूत्रता (स० स्त्री०) दीर्घसूत्रस्य भावः दीर्घसूत्र-तल्-टाप् । चिरक्रियता, प्रत्येक काममें विलम्ब करने-की आदत ।

दीर्घसत्री (स० त्रि०) सूत्रं बहुकालं व्याप्य कर्मारम्भोऽस्त्वदीर्घसूत्र इति । दीर्घसूत्र, देरसे काम करनेवाला ।

दीर्घस्कन्ध (स० पु०) दीर्घः स्कन्धो यस्य । तालवृक्ष, ताड़का पेड़ ।

दीर्घस्वर (स० पु०) दीर्घः स्वरः । दीर्घ देखो ।

दीर्घा (स० स्त्री०) दीर्घा-टाप् । पृथ्विपर्णी, पिठवन । इसका पर्याय—पृथक्पर्णी, लाङ्गुनी, क्रोष्टुपुच्छिका, धामनि, कलसी, तन्वी, गूहा, क्रोष्टुक मोखला, दीर्घा, शृगालविन्ना, ओपर्णी, सिंहुपुच्छिका, दीर्घपत्रा, अति लुहा, घृतिला और चित्रपर्णिका है।

दीर्घाङ्कुर (स० पु०) राजशाली, राजान्न ।

दीर्घाङ्गी (स० स्त्री०) शालपर्णी ।

दीर्घाङ्गि (स० स्त्री०) शालपर्णी ।

दीर्घाध्वग (स० पु०) दीर्घ आयतं अध्वानं गच्छति गम-ड । १ पत्रवाडक । २ उद्ग, जंट ।

दीर्घायु (स० त्रि०) दीर्घ आयुर् यस्य । १ चिरजीवी, बहुत दिनों तक जीनेवाला । (पु०) २ शास्त्रमत्तो वृक्ष, सेमरका पेड़ । ३ काक, कोवा । ४ मार्कण्डेय । ५ जीवक वृक्ष ।

दीर्घायुत्व (स० क्लृ०) दीर्घायु देवो ।

दीर्घायुध (स० पु०) दीर्घः आयुधः । १ कुम्भास्त्र । दीर्घो आयुधो इव दण्डो यस्य । २ शूकर, सूपर ।

दीर्घायुध (स० पु०) दीर्घायुधो भवः दीर्घायुस्त्व । बहु-काल आयु, बहुत दिनों तक जीवित रहना ।

दीर्घायुष्य (स० पु०) दीर्घ आयुष्यं जौवनं यस्य । १ श्वेत मन्दारक, सफेद मदार । (त्रि०) २ दीर्घायुयुक्त, जिसको आयु बढ़ी हो ।

दीर्घायुस् (स० पु०) दीर्घ आयुर् यस्य । दीर्घायुष्युक्त, चिरजीवी, वह जिसको आयु बढ़ा हो, बहुत दिनों तक जीनेवाला मनुष्य ।

सुश्रुतमें लिखा है कि जिसके शरीरमें शिरा, आयु वा सन्धि गूढ़भावसे निहित हो; जिसका अंग प्रत्यंग परस्पर दृढ़रूपसे संनिष्ठ हो; सभी इन्द्रियाँ स्थिर हों और शरीर उत्तरोत्तर सुदृश्य होता जाता हो, वही मनुष्य दीर्घायु है। जो जन्मकालसे ही अरोग हो, जिसके शरीर का ज्ञान भीर विज्ञान दिनों दिन बढ़ता जाता हो, उसे

मो दीर्घानु समझना चाहिए। विदितकको चिकित्सा करती समय यह जान लेना परमावश्यक है कि योगी पन्थाहू है या दीर्घानु। दीवाहूके निष्पत्तके नियमों अनुगतों और एक बाह्य इस प्रकार भिन्ना है—जिसके चर्या, पाद, पाखंड, घृष्ट स्थानके प्रथमान, दगन, महान कृत्य और बसाट विस्त्रत हो। च शुक्तिके वर्ष, उच्छ्रान, बाहु और पशुदीर्घ हो, म्यू और दीमो स्थानके मन्त्र तथा मन्त्रकाल नियोजित हो; अह्ना, मंत्र तथा बीबा कृष्ण हो; नामि और मुक्ति गभीर हो दीमो स्थान अनुबध और हृद मास गमित हो; कर्ष दीर्घ सीमोसे विगिष्ट हो, मष्टिच्छ मष्टाकडे पन्थागमों हो तथा ध्यान और अनुभि एन करनेनि त्रिसका शरीर मष्टाकडे निष्कामय तक क्रमशः शुद्ध हो भाय और सबके पन्तने हृदयदेश शुद्ध हो, उषी मनुष्यको होचोतु समझना चाहिए।

दीवास—मोक्ष ब्राह्मण सन्प्रदायका एक मंद। इस नाम के ब्राह्मणोंकी लीकस तथा बीकानेर, मारवाड़ और भाय दारिमें अधिक पाई जाती है। राजपूतानिमें देवास नाम का खेट है, जहांसे ये लोग सपुत्र ब्रह्मणको चले प्राये और देवास वा दीवास नामसे प्रसिद्ध हुए।

दोकि (म० पु०) नीलकण्ठ नामका पक्षी।

दीसना (हि० लि०) दृष्टियोचर होना दिखाई देना।

दीना—ब कई प्रदेशके पन्तगत शुक्रराज प्रदेशके पासमपुर राज्यका एक गहर और शरीरको शिनामिवास। यह पन्था० २७ १५ १ ०० और शिगा० ०२ १२ २० ५० पासमपुरसे २०१ मील उत्तर पश्चिम नीमचरसे २११ मील पश्चिम तथा बंकेरगचरसे २८० मील उत्तर बानगु नदीके किनारे अवस्थित है। यहै इस गहर का नाम शरीदाबाद का। गहरके उत्तर-पश्चिम ३ मील को दूरी पर बानगु नदीके किनारे शंभरीकी शिनामिवास है। पूर्व-पश्चिममें यह गहर सुदृढ़ प्राचीरसे बिरा या और शरीदा नायकबाड़ तथा राजमपुरकी शिनामि पाक-मन्त्रके एक करण भी मह अष्ट न कृपा था। यमो मह प्राचीर कई जगह टूट पड़ गया है। जहां जाकधर और शिनामिवास पाकि है।

दुंका (हि० पु०) छोटा बच कन शान।

दुंभरी (हि० श्री०) एक प्रकारका मीठा कपड़ा।

दुंढ (हि० पु०) १ सुख, भयङ्गा। २ सुम्न, जोड़ा। ३ अभ्रम, जलपार, इक्षयन। ४ दुंभुमि, मनाड़ा।

दुहा (का० पु०) पन्थाय और शालीरसे से कर मन्थ-मानिपान तथा पारम तक्षमें मिश्रनीबाना एक प्रकारका मीठा। इसको दुम पन्थोके पाठको तरह गोल और मारी होती है। इसका रस बहुत उमड़ा होता है। दुवास (का० पु०) १ चोड़ी पूर। २ नाबकी पतवार। ३ अह्नात्रका विच्छा दिव्या।

दुहर—हिमाचलके किनारे शिनामिसे शहर पूरवकी ओर होने वाला एक प्रकारका पीड़। यह गूजरको आतिका होता है। बह्मण, उक्षोमा और बरमाको नटियों या नार्नी के किनारे भी यह पीड़ देखनेमें पाता है। इस पर नाख पाई जाती है। इसके किनासे ऐयेंसे ज्यपरको खांको बान पादि बांधी जाती है। इसके एक बर्षा खतुमें पकती और खाये जाती है। फल तो देखनेमें पन्थे मानस प्रकृतिपर आद घोषा होता है। इसमें पत्तों कुछ बचरी होती है और खाड मात्रनेक काममें खाये है।

दुःकृत (म० पु०) और गामक मन्थकृत।

दुःख (स० लो०) दुः दुष्ट एनतोति एन-ड वा दुःख-तोति दुःख पन्थ। १ सगर। २ व्याधि, रोग, बीमारी। ३ अष्ट, क्रोध तक्षलोष। [प्राय—सबका पमानजन प्रवृत्तिक, अष्ट कृष्ण, पामोक्ष, पति पति, पति, पौडन, पवाभा, बाबन, पाम नसा, पामानसा, बिबाहन, पौडिन और जिष्टेन। ये सब वस्तु दुःखद हैं—पारतया, सुनरीके पखोल यह कर जीवन चरक करना पावि (मानसिक लोय), व्याधि, मानस्युति, धन, हर्मावा गेण बनपाकि, कुपाम वास, कुष्मासिचन, बहुकम्पा उदस परव्यवसाय, बर्षावसाय, मायापय, कुसल, दुर्भनकरक कवि और अविश्वकलता जे सब मनुष्योके दुःखमद हैं। इ बांजादि मतसिद्ध प्रतिबुद्ध शिटनीय रकोकार्य चित्त धर्ममद। न्याय और वैशेषिक दर्शनके मतसे दुःख पायाका धर्म है और सर्वत्र शिदाता पादि दर्शन पायोमें दुःखको मुक्तिधर्म पन्थात् वित्तधर्म बतलाया है।

बुद्धि, सुख, दुःख और इच्छा ये सब आत्माके धर्म हैं। यह दुःख प्रथमसे उत्पन्न हुआ करता है।

दुःखके प्रति अधर्म करना दुःखका कार्य है, कार्य और कारणके साथ नित्यसंबन्ध रहनेके कारण अधर्म आचरण करनेसे ही दुःख अथश्रंभावी है। जितने प्राणी हैं दुःख सभीका अभिप्रेत है। मनुष्यकी जितने प्रकारकी चेष्टाएं देखी जाती हैं, सभीका उद्देश्य दुःखनिवृत्ति है। इसी दुःखकी निवृत्तिके लिए मनुष्य कितने प्रकारके फलेश सहते हैं, वह अकथनीय है। किन्तु किस पथका आश्रय करनेसे दुःखनिवृत्ति है, उसका निकषण कर पद पदमें अनन्त दुःख भुगतना पड़ता है। इसीसे न्याय और वैशेषिक दर्शनमें लिखा है 'अधर्मजन्यं दुःखं स्यात्' अधर्म आचरण करनेसे ही दुःख होता है। कौशादिके भेदसे दुःख कई प्रकारका है। सुख सभीका अभिप्रेत है, यही कारण है, कि सभी प्राणी सुखको तलाशमें सर्वदा प्रवृत्त रहते हैं। इस वसुसे हमारे सुख-दुःखको निवृत्ति होगी, ऐसा ज्ञान ही जानिसे सुख-दुःखको निवृत्तिकी इच्छा उत्पन्न होती है।

जिसके द्वारा जो निष्पन्न होता है, उसे उसका फल कहते हैं, जैसे रसोईका फल अन्न, शास्त्रानुशोचनका फल ज्ञानोदय, इत्यादि। फल पदार्थ भी मुख्य और गौणके भेदसे दो प्रकारका है। चरमफलको मुख्य फल कहते हैं। मुख्य फल सुख और दुःखका भोग है। इसके अतिरिक्त सभी फल गौण हैं, क्योंकि सभी कर्मोंके परममें सुख वा दुःखके भोगस्वरूप फल-पर्यायसान होता है। रम्भन द्वारा अन्तमें जब भोजन करनेसे लम्बिरूप सुख तथा शास्त्रकी आलोचना करके ज्ञानोदय होता है, तब असीम विद्यानन्दरूप दुःखका भोग होता है। फिर चौरी आदिके दोषसे दूषित हो कर कारागाररूप अशेष यन्त्रणास्वरूप दुःखका भोग होता है। इस प्रकार विवेचना करनेसे यह साफ भलकता है कि सभी कर्मोंका चरमफल सुख भोग अथवा दुःखभोग है। अत्यन्त दुःखनिवृत्ति होनेसे मुक्ति होती है। यही मुक्ति एक मात्र सभीकी अभिप्रेत है। इसी मुक्तिके लिये सभी चेष्टित रहते हैं, किन्तु पथ खो जानिसे मनुष्य

नाना प्रकारके उपाय अवलम्बन कर अनेक प्रकारके कष्ट पाते हैं।

सांख्यदर्शनके मतसे—दुःखनिवृत्तिके लिए ही शास्त्रको जिज्ञासा हुई है। मनुष्य जब दुःखसे सर्वदा पीड़ित हो कर क्रमागत जन्ममृत्युरूप दुःखसे अभिभूत होने लगा, तब परम कारुणिक कपिलदेवने भूतोंके प्रति दया करके दुःखोद्वारके उपायस्वरूप पञ्चोस तत्त्वज्ञानके विषयका उपदेश दिया। उसका ज्ञान ही जानिसे दुःखका क्षय होता है। यदि इस संसारमें दुःख नामका कोई पदार्थ न रहता, नित्यपदार्थके जैसा यदि उसकी निवृत्ति न होतो और इस दुःखका परिहार यदि अत्यन्त कष्टसाध्य होता, तो शास्त्रजिज्ञासाको आश्रयकता न थी। दुःखोत्पत्ति होती है, जब ऐसा देखा जाता है, तब फिर दुःख-धर्म भी होता है, इसीसे

“दुःखयामिधातामिधाया तदवपातके हेतौ।

दृष्टेसापर्यां चेद नैकान्तायंततो मावान्॥”

(तत्त्वकौमुदी)

दुःखत्रयका विनाश हो यहाँ पर जानना उचित है। दुःख तीन प्रकारका है—माध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक। इनमेंसे आध्यात्मिक दुःख फिर दो प्रकारका है, शारीरिक और मानसिक। वात, पित्त और श्लेष्माकी कमी वृद्धि होनेसे जो दुःख होता है, उसे शारीरिक दुःख कहते हैं, काम, क्रोध, लोभ और मोहादि निवन्धन दुःख मानसिक दुःख है। आधिभौतिक दुःख भी चार प्रकारका है—सभी भूतोंसे उत्पन्न, जरायुज, अणुज, स्त्रेदज और उद्भिज्जसे उत्पन्न, जैसे मनुष्य, पशु, पक्षी, सरीसृप, दंश, मशक आदि स्याधरादिजनित दुःख हैं। आधिदैविक अर्थात् देवनासे उत्पन्न, जैसे—घोत, उष्ण, वात, वर्षा और वष्यपतनजनित क्षीय।

इन तीन प्रकारके दुःखोंका विनाश हो एकमात्र शास्त्रजिज्ञासाका उद्देश्य है, जिससे इन तीनों दुःखोंका नाश हो, वही हेतु है। इन सब दुःखोंका लक्षिक नाश होते देखा जाता है। कोई कोई कहते हैं, कि इन सब दुःखोंके विनाशके सैकड़ों उपाय हैं। शारीरिक दुःखनिवृत्तिके लिये चिकित्सक द्वारा नाना प्रकारके उपाय निर्धारित हैं। मार्गस ब दुःखे त्वावारेव (ये

मनोच छो, पान, भोजन खादि जयाय बतलाया है। जोति शाकाभ्याम ह्रमयता खादि पचसक्यन करमेवे पायि मोनिक दुःखनिष्ठता होता है। खादिदेविक दुःखके प्रतापारके त्रिदे मयिमाकीयखादि बचत्र जयाय है।

इत मय दुःखके प्रतीकारके उपाय मय तो है शैबिन हमने कथिक निष्ठति होती है एकात्म पौर पञ्चत निष्ठति नहीं होती। एकात्म पौर पञ्चत दुःखकी निष्ठति हो मयो दर्गाशाखीका प्रदान उद्देश्य है। जिस तरह मूत्र नगने पर भोजन करमेवे मूत्र जाती रहती है फिर कुछ देरके बाद मूत्र लव जाती है वसो तरह उक्त उपायके दुःखको निष्ठति होने पर मो एकात्म पौर पञ्चत दुःख-निष्ठति नहीं होती। जै, मान बिबा, कि इटोपायमे दुःखनिष्ठति नहीं होती लेकिन धानुयविक प्रयोग वैदिक शिवालयवाय द्वारा दुःखको निष्ठति हो सकती है हम विवचने तखतोमुने में हम प्रकार सिखा है—

इटके जेना धानुयविक मो पठय्युर्कारक है, वर भी पविशदि पौर जयातिवयवुत्र है पौर इसके निप रीत है पवात् व्यक्त पञ्चत तथा प्रय प्रामको येय है, त्रिविध दुःख कुछ मो नहीं रहैगा, कसो मो पुनरुत्पन्न नहीं होगा, इस प्रकारका भाव जब विनिष्ठत वा विनष्ट हो जाता है, तब तमे प्राक्यनिक दुःखको निष्ठति कहति है।

मामूनी तोर पर दुःख निष्ठत होना साधारण पुत्रपाय है, किन्तु प्राक्यनिक दुःखका निष्ठतिकी प्राक्यनिक पुत्रपाय कहति है। इसका दूसरा नाम परमपुत्रपाय मो है। इसका कारण यह है कि इस प्रकारकी दुःख-निष्ठति हो दुःखनिष्ठतिबामनाको परममीमा है। इट उपाय द्वारा प्रयोग मोनिक उपायकरव द्वारा प्राक्यनिक दुःखको निष्ठति नहीं होती, शैबिक उपायकरव द्वारा प्राक्यनिक पुत्रकी निष्ठति होनेमे मो कथका पनुवर्तन रहता है। पत्रदि द्वारा उपायनिक दुःख मिट जाता है पही, शैबिन उक्त कुछ देर बाद ही फिर उषी प्रकारका दुःख पडु व जाता है। सुतरां यह कह पकरी है, कि मोनिक उपायके पचिक दुःख विनष्ट होता है, न कि प्राक्यनिक दुःख। पचिक दुःखको निष्ठति होनेके मो

वच पुत्रपायमें नहीं है, शैबिक उपाय वच मो पारता है पौर वच मो पान पगर पुत्रका प्रतिकार क्रिया प्राय, मो मय फिरके पुत्र लयक होमी, यह शेष वर क्या कीई कसो कदाउ हो मकता है? क्या कसो कसिमी रक्या नहीं करता? अतएव प्रति दिनकी पुत्रको कयव तिस प्रकार उक्त सामयिक पुत्रको निष्ठतिको पुत्रपाय मानते है उषी प्रकार मोनिक उपाय पौर तलाभ सामयिक दुःखनिष्ठति हम होनेकी मो पुत्रपाय मान सकते है।

मसो कयव पौर कसो समय दुःखनिवारक शैबिक उपाय नहीं रहता पौर रहनेको सम्भावना मो नहीं। पगर रहै मी, तो उषके दुःखकी प्राक्यनिक निवृत्ति नहीं होती। यही कारण है, कि शाक्यतलत्र सोम दुःखनिवारक मोनिक उपायको हैय पौर तुच्छ सम-भूति है। वे सोम श्री, पच-यान पौर मोनिकादि इट उपायका परिणाम पौर शाक्योय उपायका पचसक्यन करति है। शैबिक उपायके दुःख मिटता है उतका गारतय्य वा उरकपोकय है। किन्तु वच दुःखनिवृत्ति स्वल्प सुखिमें नहीं है। प्रकोवे सुखि हो सर्वरहित है। इसका तात्पर्य यह है कि सुखिही स्वयंता ज्ञान कर पमिष्ठ पुत्र पचिक दुःखनिष्ठति पौर तलाभक शैबिक उपायकरवको तुच्छ समझने है पौर सुसुप्त हो कर शय्य पच पचसक्यन करते है। वनादि इट उपाय पौर वैदिक शिवालयवाय दोमी हो एक है है। जनप्रोय बँडा मखर है, पुत्रमोगसो बँडा हो मखर है। पतः शाक्योय उपायके शिवालयक उपाय प्राक्यनिक दुःखनिष्ठतिका कारण नहीं है। शाक्यने मोयका उपदेश बतसाया है, यह बात ठीक है परन्तु कसमें पनेक प्रष्ट पौर पनेक विचार है।

कीई कीई कहति है कि हम दुःखका मोय भोग करता है? पामा वा पौर कीई कृतरा। किन्तु पामा किमी प्रकारके वसमें किन्न नहीं है वे विगुवातोत है प्रकति-को माबा पर मोहित हो कर प्रतिनि बडे तौर पर वच दुःखादि भोग करतो है। शीशामा रेको;

बाई बीयके साक्षात् स बन्धमें हो, बाई परम्परा न बन्धमें हो, एक बार वृक्षानुभव होनेके हो कुरी समझमें वच याद रहैमा पचसक्य याद रहैगा। पुत्रानिष्ठत मनुष्य

जो बार बार सुख भोगकी इच्छा रखता है, भोगकी कामना करता है और सुखसाधनद्रव्यमें समासक्त रहता है, उसको उस इच्छाका, उस कामनाका वा वैशेषी आसक्तिका नाम राग है। इस प्रकार सुखेच्छाकी नाईं दुःखके प्रति अनुग्रह वा अनुवृत्ति हुआ करता है। "दुःखानुग्रहा द्वेष" (पात० २५) पूर्वानुभूत दुःखका स्मरण होनेके साथ ही दुःखप्रद वस्तुके प्रति विद्वेषा, अनिच्छा वा अनभिनाय उत्पन्न होता है। उसको प्रतिघात चेष्टा भी होती है। उस प्रतिघात चेष्टा वा अनिच्छा विशेषको द्वेष कहते हैं। जिस वस्तुसे एक बार दुःख हो चुका है, उस वस्तुके प्रति द्वेष अवश्य उत्पन्न होगा। इस प्रकारका द्वेष होने से जिससे वह फिरसे उत्पन्न हो, उसको चेष्टा होती है अर्थात् अवश्य हो उसकी प्रतिघात चेष्टा उत्पन्न होगी। क्रोध, हिंसा और विप्रलम्भा अर्थात् प्रतारणाकी इच्छा ये सब द्वेषके रूपान्तरमात्र हैं। जिससे हमें दुःख न हो, प्रति दिन वही चेष्टा रहती है और दुःखका परित्याग कोई कारणमें समर्थ नहीं है। समस्त जोव बार बार मरणदुःखका भोग कर जीवके चित्तमें उसी प्रकारका संस्कार वा वासनासे सञ्चित वा वृक्षमूल होते भा रहे हैं। इन सब वामनाशिका नाम स्वरस है। इसी स्वरसके द्वारा ज्ञानी, पशुानो सभी जीवोंके चित्तमें उसी प्रकारका भाव अर्थात् अलक्ष्य रूपसे मरणदुःखकी छाया वा स्मृति नामक सूक्ष्माकार वृत्ति आरूढ़ है। उस आरूढवृत्तिका नाम अभिनिवेश है। एकबार दुःखानुभव हो जानेसे इस दुःखप्रद वस्तुके प्रति विद्वेष उत्पन्न होता है, जिससे वह फिर न हो, उसके लिये चेष्टा वा इच्छाविशेषका प्रादुर्भाव होता है, उस इच्छाविशेषको भी अभिनिवेश कह सकते हैं।

दुःखको घुलान्त सीमा मरण है। मरण ही दुःखकी पराकाष्ठा वा चरमसीमा है। यही कारण है, कि जोवकी मरनेका अधिक डर है और उनके चित्तमें "जिससे मैं न मरूँ" ऐसी जो सुलभवृत्ति है, वह अन्यान्य वृत्तियोंके मूलमें निगूढ भावसे छिपी है।

प्राणिमात्रमें ही शरीरके ऊपर—इन्द्रियके ऊपर "बह" इस प्रकारका सम्पर्क स्थिर है, कारण प्राणिगण देह और इन्द्रियसे पृथक्, हीना नहीं चाहते। केवल

यही नहीं, धनादिका नाश भी वे नहीं चाहते, हरवक्त यही ख्याल तथा प्रार्थना करते हैं कि जिससे उनका मरण किसी प्रकार न हो। विशेषतः मरणदुःखकी अनुवृत्ति अर्थात् "मैं जिससे न मरूँ" ऐसा प्रार्थना जीवके हृदयमें हर वक्त जागरूक है। क्या ज्ञानी, क्या सुग्रे, क्या इतर प्राणी सभीको मरनेका डर है। अतः सभी प्राणी इस प्रकारकी प्रार्थना करते हैं। जीवोंमें ऐसा संस्कार रहनेसे अनेक प्रकारका दुःख होता है और वे कर्मों भी किसी प्रकारका दुष्कर्म नहीं कर सकते। ऐसा कौनसा उपाय है जिससे "मैं न मरूँ" और हर नमय अच्छा बन कर रहूँ" यह चिन्ता हरवक्त मोजूद रहती है। महर्षि पतञ्जलि और अन्यान्य ऋषियोंने इस प्रकारका मरणवास टंग कर इसे पूर्व जन्मका संबन्ध अर्थात् पूर्व जन्मका भोग स्थिर किया है।

पहले कहा जा चुका है, कि सुखता एक बार अनुभूत हो जानेसे फिरसे उसको इच्छा बढ़ती है और दुःखका अनुभूत हो जानेसे उसके प्रति विद्वेष उत्पन्न होता है। जीवको जब मरनेके प्रति इतना विद्वेष है, तब यह निःसन्देह अनुमित होता है कि मरणमें कोई अवश्य कठोरतर यन्त्रणा है और जीवने उस कठोरतर दुःखका कभी न कभी अवश्य भोग किया है। मरणमें यदि दुःख नहीं रहता और जोव यदि उसका भोग नहीं किया होता, तो जोवको मरणके प्रति उतना विद्वेष नहीं रहता। मरणका विद्वेष केवल मनुष्यमें नहीं बल्कि कीटादि और सद्योजात शिशुमें भी है। मनुष्य जब एक ही बार मरता है, दो बार नहीं, तब मरनेका उतना डर क्यों? इससे यह अवश्य सिद्ध होता है, कि मरणमें एक अनिर्वचनीय दुःख है जिसका भोग जीवने किया है। वर्तमान देहमें हमको अनुवृत्ति होता है, वह अनुवर्तन वासना संस्कारके स्रोतमें आती रहती है। निगूढतम वामनाके स्रोतमें बहनेके कारण जोव उसे स्पष्ट समझ नहीं सकता अर्थात् मैं कई बार मर चुका और कई बार मरणदुःख-भोग कर चुका, यह स्पष्ट रूपसे नहीं जान सकता है। इन्द्रिय द्वारा यदि इसका ज्ञान हो जाता, तो यह अवश्य समझमें आ सकता था। किन्तु यह इन्द्रिय द्वारा उत्पन्न नहीं होता है। सुतरां उसका ज्ञान नहीं होनेसे ही

त्राण श्राद्ध इत्यादि समस्त नहीं बचता, कि मैं एक बार मर चुका था और अनिश्चय जड़ोरतम दुःख भी मीघ हुआ था। इसीसे शोकको मरनेकी इतनी चमिच्छा है। यदि मरण ही सब प्रकारके दुःखोंमें प्रधान हो, तो किस प्रकार हम दुःखके कृद्विहाय जाया जाय तथा हमका शरण ही क्या ? स श्राद्धा विम दैवर्षिसे मान्य म पड़ता है, कि ममो शोक अन्य से बर घनेको दुःख मिलते हैं और फिर श्रद्धा दुःखमें पतित होमे हैं—एक बार मर कर फिर दूसरी बार मरण सेते है। दुःखको बात तो दूर रहे, सामासिक जो सुख है, वह भी दुःखमय है। हम शरण लम दुःखमिथित सुखको दुःख ही समझना होगा। अथवादार्शनिक विद्यामिसुने जिहा है "तनु दुःखमे निज्येपीर" पर्यात् वच सुख भी दुःखमें मिलने योग्य है। ममो दर्शन शास्त्रोंमें दुःख निवृत्तिका कारण दूहा गया है। कोई कोई कहते हैं कि प्रकृति और सुखका स योग ही दुःखका प्रतिकारण है। फिर कोई कहते हैं, कि परिवर्तना या मायावयसे जो सुख भोग हुआ करता है। जो कुछ हो, हम सबमें सामान्य मतभेद रहने पर भी मूल जमीका एक है। जिथैका मत यह भी है, कि प्रकृति और सुख का सम्बन्ध ज्ञान को जानेसे दुःख निवृत्त होता है। फिर कोई कहते हैं, कि परमानीयवित चैतन्यकी माया द्य लयाधि तिरोपित हो जानेसे दुःख दूर हो जाता है। हम प्रकार दुःखके लक्ष्य होमेको सुखि या भोग कहते हैं। सुखि लौक मांइको। दुःखका कारण क्या है, यह विषय कुछ विषय रूप बतलाया जाता है। हम भोग का कामकाज करते हैं, वसका एक न प्रकार पाकांमे इष्ट रूपसे महित होता है। जोके वच न श्राद्धानुदय इष्ट दुःखका भोग हुआ करता है। पतयव वच और दुःखके मूकको समायच कहना चाहिये। इसा पर मनवानु पन्यविने कहा है, "नैकैक्या कर्मावकाशप्यव्ययैरदीना" (वा ६० २, २१)। जैदमूकक कर्माय हो प्रकारका है, पच इष्टकथविदनीक, दुःखका पहचकथविदनीक पर्यात् वसांमान शरीर द्वारा तथा ज्ञानानुदय शरीर द्वारा जत। विरवान् भोवित रह कर मसा दुरा काम करा और लवका पक्ष मोने। कभी तीव्र ज्ञेयसे बाध हो कर ही मने दुरे काम

करते हैं और वे सब काम फिर लभसे मने ज्ञेय वा काम मुनको कष्टि करते हैं। कामयकके चतुसक द्वारा जो विषयदेवक सुख, दुःख पादिका प्रति पूरक होता है वा नूतन राम, इत्यादि रूप कामवीज होता है, इसीको योगी लोग कर्मायय, कान्तिव शोभा पहट, पपूर्व, पाप, दुःख वा कर्मावम कहा करते हैं। कोई कसे न श्राद्ध भी कहते हैं। यह म श्राद्ध जब तक रहिय, तब तक दुःख चमिवाय है। १। म श्राद्धके रहनेसे जो लभसे पन्यदय प्राति, अथ, मरण, शोचन और भोग पचय्य होगा। वच कर्मायय जिहा यदि भोगादिके दान शोक, शोर्ष वा दानपचय न हो, तो लसे माय हो कर पचय्य हो विविध प्रकारसे पच्छे दुरे काम करन होमे तथा लसे अपने लिए दूय कर्मोंका पच्छा दुरा पन भी भोगना होगा। बार बार जन्म, बार बार मरण और बार बार दुःख, मर और तिर्थक योगिन पतन बार बार पच्यकाम और बहुकाल शोचन शरण तथा बार बार सुक-दुःखादि का भोग हुआ करेगा। जहाँ सुखका लक्ष्य है, वहाँ वच सांसारिक दुःखमिथित वच है पर्यात् दुःख नामक सुख है। क्योंकि योगियोंने विषय साधको जो दुःख माना है।

परिचाममें दुःख पर्यात् भोगकाममें दुःख और पश्चात् वा मरणकालमें भी दुःख होना तथा मरणादि सुखी पापममें चमिमूल करत टण कर योगिदनि पमी वसुपांकी दुःखमें विमता को है, किन्तु पनमिध पयोवी और चविषेको मनुष्य को मोइने दुःख और ममाम्भ हो कर इसमें सुख होता है, इसमें दुःख होता है पिसा मिर्चय करते हैं। जो नहीं जानता है, वहाँ विवाहको बुलावु ममम्भ कर मचय करता है। किन्तु जा जानता है वह लसे मचय नहीं करता। तथा तरह ही नहीं जानता है, वच दुःखमिथित दूय भोग करता है और जो जानता है वह लसे भोग करना नहीं चाहेगा। जिन तरह पच व शरीरक तथा लूच कोमक मचकोके लुतेव शर्यके पांयको दुःख होता है वसा तरह योगी भोग वा विषेको भोग दुःखाशुद्धि मोमको दुःखक समझते हैं। प्रबोच इजमें वा प्राक्क भोगसे परिमोचदुःख, जापकल्य और न श्राद्धदुःख एक जाय पयित है।

अनभिज्ञ मीमांस्य मनुष्य उसे नहीं समझ सकते। यही कारण है कि वे उस पर सुख होते, भीसक होते तथा भोग करनेके लिये व्यतिथस्त रहते हैं। किन्तु जो उसे समझ गये है, वे क्या कभी उसके पाम जा सकते? कभी नहीं। मधुपान द्वारा उत्पन्न मनोविकार जिस तरह शरीरकी निकट सुख समझा जाता है, उसी तरह विपर्ययके संयोग द्वारा अर्थात् चक्षु आदिके साथ स्त्री मूर्त्तिके आदिके संयोगादि द्वारा जो मनोविकार उत्पन्न होता है उसे अविवेकी लोग भूलसे सुख मानते हैं।

अविवेकी जिसे सुख कहते हैं, विवेकी उसीकी दुःख मानते हैं। जो परिणाम दुःख, तापदुःख और संस्कार-दुःखमें जड़ित हैं, जो केवल मनका विकार मात्र है, जो केवल संतुष्टिके कल्पित परिणामके सिवा और कुछ नहीं है, वह सुख नहीं है, दुःख नामक दुःख है। भोगमें जा सूरसे नहीं है, प्रत्येक भोगके साथ साथ जो परिणाम-दुःख, तापदुःख और संस्कारदुःख भुगतना होता है, वह जाननेके लिये थोड़ा ही विचार काफी है। मान लीं, एक दिन तुमने किसी एक दिव्याङ्गनासे सचवांस किया। उस समय तुम्हें जो मनोविकार उत्पन्न हुआ, उसको तुम सुख समझने लगे। मनोविकार जब तक रहता, तभी तक तुमने सुखका अनुभव किया। किन्तु उसके कुछ देर बाद ही फिर जो दुःख था वही दुःख है। वह काम करमेसे तुम्हारा प्राण जो जय हुई उसके लिये तुम्हें एक और पृथक् दुःख हुआ। फिर भी देखो, कि तुम्हारा वह मनोविकार वा सुख स्थायी न रहा, बहुत जल्द नष्ट हो गया। सुख नहीं रहा, नष्ट हो गया, यह सोच कर भी तुम्हें एक दूसरा दुःख उत्पन्न ही आया। तुमने जो उस अनुचित मनोविकारकी थोड़े कालके लिये सुख माना था, उसके प्रभावसे दूसरे दिन फिर वही पानेके लिये लालायित हुए। सुखके लिये लालायित होनेसे कितना लेश, कितना दुःख, कितना आयास और कितना पाप करना होता है, वह भी गौर कर देखो। उस सुख नामक मनोविकार वा भोगकी दोष करनेके लिये तुम इच्छा कर हो वा नहीं? अवश्य ही। किसी गतिसे यदि तुम्हारी उस इच्छाको पूर्ण न हो, अर्थात् उसके इच्छानुरूप उपकरण न मिले, अथवा

भोगका सहोच या उसकी अश्रयता हो, तो तुम्हें कितना दुःख होगा, वह भी सुंघ हुए बिना एक सुंघसे नहीं कह सकते।

मान ली, तुम्हारे भोगका सहोच वा अश्रयता न हुई, वहि ही हुई। किन्तु ज्यों ही भोग बढ़ा, त्यों ही उसके साथ साथ रोग भी उत्पन्न हुआ। "भोगे रोगभय" अर्थात् भोगके साथ रोगका भय अवश्य होता है। अत्यन्त भोग करनेसे रोग अवश्य होगा, सुतरां उससे दुःख भी होगा। अतः यह सिद्ध हुआ कि प्रत्येक भोगका परिणाम दुःखमय है। इसमें सन्देह नहीं। इस पर थोड़ा विचार करनेसे भोगका परिणाम जो दुःख है वह मालूम हो जायगा। यहाँ तक कि वर्त्तमानमें अर्थात् भोग-कालमें भी तुम सैकड़ों दुःख वा सैकड़ों परितापसे आक्रान्त वा जड़ित रहते हो। पीछे यह नष्ट हो जाता है, किस प्रकार यह स्थायी रहेगा, किस प्रकार यह बढ़ेगा, किस प्रकार इसका व्याघात नहीं होगा इत्यादि प्रकारके अनेक चिन्तानल वा तापजनक चिन्ताएं उपस्थित हो कर तुम्हें परितप्त करती हैं। इसके सिवा उसकी आनुसङ्गिक विविध पापमय मनोवृत्ति अर्थात् राग, द्वेष, क्रोध आदि उदित हो कर तुम्हारे हृदयमें अनेक प्रकारके भविष्य दुःखोंका बीज सञ्चार करते हैं। अतएव दुःखभोगके साथ साथ जो अनेक प्रकारके ताप वा दुःख भोगने होते हैं, अब वह स्थिर हो गया। इस विषयमें और भी एक उपाख्यान है। सुख भोग करनेके साथ ही चित्तमें उसका संस्कार श्रावण ही जाता है, यह संस्कार तुम्हें बार बार उस भोगको और खींच ले जाता है। यही कारण है, कि तुम पुनः पुनः पूर्वोक्त-भूत सुखके समान सुखभोगको इच्छा करते हो, जब तक उस सुखकी नहीं पाओगे, तब तक व्याकुल रहते हो। अतएव सुखभोगका संस्कार भी दुःखजनक है। भोग क्यों है, इसका विचार करनेसे मालूम पड़ता है कि भोग कुछ नहीं है। यह केवल एक प्रकारका मानसविकार है। सुतरां क्षणपरिणामो सत्त्वं, रज और तमोगुणका क्षणिक परिणामरूप क्षणभङ्गुर भोगमात्र ही दुःख है। इन्हीं सब कारणोंसे अर्थात् प्रत्येक भोगमें ही परिणाम, ताप और संस्कार अहित रहनेसे तथा परस्पर विरोधी

सुखपरिचयं नतं मानं रक्षन्ति श्रीमो लोग तथा विवेकी लोग समे दुःख मानते हैं। वे उषे कामी भो दुःख नहीं मानते। ऐसा होनेसे दुःख नहीं है, मनोविचारके नष्ट होनेसे हो दुःख है, ईश्वर धीर धामतत्त्वमें बिलके स्थिर होनेसे ही दुःख है, मनोमय होनेसे धीर भी दुःख है। यह सुख द्रष्टव्यमें नहीं है, इस कारण धीमी लोग इन्द्र सुसुखाको दुःख माना है। यही सबका रहस्य है, इसीमें भव छोड़ें स्थितिस्थिर रहते हैं। बिन्दु प्रकृतितमार्ग का प्रवणन न कर सङ्गति के कारण प्रसोम दुःखको रोचनीके निचे जो चेटा को ज्ञातो है, यह ठहा है। कौनके दुःखकी यह कल्पित ज्ञातो है, तब दुःखके प्रथम अवर्ग कल्पित वितोय चर्चमें ज्ञाति धीर यतोय चर्चमें दुःख प्रापसे प्राप नष्ट हो जाता है। दुःख अब प्रापसे प्राप बिन्दु हो जायगा तब उससे निचे चेटा करना निःप्रबो-जन है। यहीत दुःख तो बिन्दु हो चुका है, जबके लिए भी साधन करना निःप्रबोजन है। इसीसे शास्त्रमें ज्ञातो धीर वर्तमान दुःखका प्रतिहार न कर प्रजागत दुःखके प्रतिहारकी व्यवस्था है।

“इह दुःखकालेऽपि” (पाठ-२।१५) प्रजागत प्रजात् भविया दुःख को ज्ञेय है, जिससे भविष्यमें फिर कोई न ज्ञेय, यह करना ही वर्तमान है। इनका परिणाम यह है, कि शास्त्रोक्त प्रजात् त्रिभुजा भोग प्रारम्भ हुआ है, यह दुःख बिना भीय किसे निवृत्त नहीं होता। बिसे प्रजाके भोग का यथा उषे नष्ट हो नहीं कर सकती। पक्ष योनिके प्रति उपदेश यह है, कि वे प्रजागत प्रजात् भविया दुःखके निवारणको चेटा न करें। भोग द्वारा दुःखका भीय दण्ड कर ज्ञानके ही यह दुःख हो जायगा। दुःखकीवश्य प्रजागत नष्ट ही जानिसे दुःखदूर करके होया। इन्द्र धामा धीर इन्द्र प्रजात् पलाःकारण उन दोनों का संयोग रहना ही दुःखका कारण है।

तात्पर्य यह कि दुःख, दुःख धीर धीर से जमी बुद्धि केवले विकार है। बुद्धिद्वय का पलाःकारण इन्द्रिय प्रवण्य द्वारा विषयाकारण धीर दुःख दुःखादि पाकारमें परिणत होनेके मार्ग ही यह चित्तुयिष्ठ द्वारा प्रकृतित होता है। नव प्रकारकी प्रदीकताको शास्त्रकार

चित्तुयिष्ठका प्रतिषेधनं वा किराको ज्ञायावति नतमाने है। शोचक्यवकारमें उषे ‘दुर्गम’ वा ‘सुनावात’ कहते हैं। पक्ष परिचयम नामक बुद्धिद्वय का पलाःकारण पदाय इन्द्र है धीर उषेके निवृत्तकर्ता परिचयमो चित्तुयिष्ठ उषको इन्द्र है यथा इन्द्र धीर इन्द्र है—एन दोनों का जो संयोग कहा गया है, प्रजात् वे दोनों को यही भाव हो रहे हैं, यथा न धारो जीवके उचितित दुःखसमूहका मूल है; प्रजात् बुद्धि के धार प्रवण्य का पलाःको प्रमेद्वान्ति वा पलाःकारण चक्षित होता है, यही ज्ञान कर प्रवण्य सुखदुःखादिके विकारमें निवृत्त प्रायः होती हैं। सुतरां बुद्धिके धार उष प्रचारके निष्पान बन्धको चटना रहनेसे जो प्रवण्यका जो प्रथम भोग प्रचारकमें ही उत्पन्न होता है।

जब तब प्रकृतित प्रवण्यका तत्त्वज्ञान धीर प्रजागीप-वित भैतन्वकी माया प्रजात् दूर नहीं होती तब तब दुःख दुःख मो निवृत्त नहीं होगा। पहले कहा जा चुका है, कि वैदिक क्रियाकलाप द्वारा दुःखकी निवृत्ति नहीं होती, इसका तात्पर्य यह है कि उषेके पाल्नित्र दुःख निवृत्ति नहीं होती। ऐसा यह कर वैदिक क्रिया कलाप परिच्छेद नहीं है। इससे चित्त-रुद्धि होती है, चित्त-रुद्धि होनेसे सम्यक ज्ञानका उदय होता है, तभी दुःखको निवृत्ति होती है ऐसा माननेसे वैदिक क्रिया-कलाप भी दुःखनिवृत्तिका कारण है। जगत् सोम बन्धा लक्ष्म इत्यादि नृतिविधि हम लोग सोमरत्न धान करके देवका काम करेती, ऐसा निष्ठा है। वैदिक क्रिया-कलापमें न्यस्यदिक्षा नाम होता है, यहाँ पर सुखका अनुभव करके फिर पलाःका दुःखनिवृत्तिसे प्रति धन नहीं रहता। इनका पुण्य जब सोच हो जाता है, तब फिर प्रवण्यद्वय करना पड़ता है। इनो सब कारणोंसे क्रियाकलापको निष्ठा को यही है। इससे निष्ठा धीर सुख नहीं है। वैदिक क्रियाकलाप को एकमात्र जित्त रुद्धिका उपाय है। चित्त-रुद्धि नहीं होनेसे तत्त्वज्ञानादि नहीं होती।

मनुष्को धामा ही दुःखका कारण है। धामा जब तब रहेंगे; नव तब पलाःका दुःख सुखतना ही होगा; जब कोई प्रजागत धामा न रहेंगे, तभी प्रजागत दुःखका नाश होगा।

दुःखलोक (स० पु०) ब० लोक अर्था दुःख भोगना पड़े
 म नार ।
 दुःखवर्द्धन (न० पु०) बर्द्धपायीरोग, कानकी मोमें
 होनेवाली एक बीमारी ।
 दुःखशील (स० लि०) दुःख शीघ्रपति शील-पक्ष ।
 दुःखादुःखशीलमन्त्रज्ञता, त्रिसला दुःख भोगनेवा स्त्रिभान
 को, यथात् जो सर्वदा दुःख अनुभव करता हो ।
 दुःखसंचार (स० पु०) १ कष्टसे समबन्धा विताना । २
 कष्टभोग ।
 दुःखधार (स० पु०) दुःखाना धारण । दुःखका समुद्र
 धारणा कर्म ।
 दुःखमात्र (स० लि०) दुःखसे होने योग्य, बिनाका कारण
 कर्मिन हो ।
 दुःखधरा (स० स्त्री०) दुःख धरति ह यत्-राप् । दुःख
 भागिनी दुर्गा ।
 दुःखावर (स० पु०) दुःखलप वावर । १ दुःखकी रक्षण,
 न नार । (लि०) २ दुःखदायक, कष्ट पद धारिकाणा ।
 दुःखाचार (न० लि०) १ दुःखभाव । २ दुःखामन ।
 दुःखान्त (स० पु०) दुःखलप पन्त । १ दुःखका पन
 मान, क्लेशकी समाप्ति । (लि०) २ त्रिपक्षे पन्तमें दुःख
 हो । ३ त्रिसक्षे पन्तमें दुःखका अर्थन हो । प्राचीन युगमें
 साहित्यप्रयोगमें नाटकक दो भेद बतलाये गये हैं—एकका
 लघुनाम (Cow-dy) और दूसरा दुःखान्त (Tragedy) ।
 इसलिये यूरोपके साहित्य, नाटक वा उपन्यास दो प्रकार
 के कहे गये हैं । लेकिन भारतके पाचार्योंने इन प्रकार
 का भेद नहीं किया है ।
 दुःखान्वित (स० लि०) दुःखिन पन्वित । दुःखदुःख
 त्रिषे कष्ट हो ।
 दुःखापतन (न० पु०) ब नार ।
 दुःखार्त (स० लि०) दुःखिन पार्तः पोकित दुःखपोकित
 कष्टसे आकुल ।
 दुःखिन (न० लि०) दुःख लक्षणात्मक, दुःख ताराकादि
 लक्षणरहित । लक्षणात् दुःख, जि कष्ट वा तदर्थीय हो ।
 दुःखिन् (न० लि०) दुःखमन्वाप्तीति कर्मि । दुःखान्वित,
 क्लेशित क्लेशित ।
 दुःखिनो (सं० लि०) त्रिष पर दुःख पका हो दुःखिवा ।

दुःखाप्य (स० लि०) दुःखिन प्रान्तिने पाप-क्षय । दुःख-
 लम्प, त्रिष पर दुःख पका हो ।
 दुःखकुल (स० स्त्री०) दुःख शकुल । प्रथमदुःख
 निमित्तमिदं, दुरा शकुल । यत्नामें दुःख शकुल दिगारि
 पड़नेसे काम सिद्ध नहीं होता है ।
 कन्या, धर्म, गुण धर्मि, मर्त्य, सबन्ध, धरार, इत्यन
 स्त्री, मिट्ट, गैल, लक्ष्मण, वसा, योग्य, यत्, कठिन
 प्राहट, लक्ष, व्याधित, मन्त्र, तैत्तिर्य, निवृत्त, सुभार्त,
 रत्न स्त्रीपुत्र्य, धरठ, स्वयंइहाह मात्रारन्ध्र सुप्त, कापाय
 मन्त्रधारो, शुद्ध तन्त्र पद विववा, कुल, कुटुम्ब, यज्ञादि
 का स्तनन, कृष्णप्राथ, कपास नमन दक्षिणकी घोर
 वर्दभरक, मर्मिनी, सुश्रितमन्त्रक, पार्श्व मन्त्रपरिवादी, दुर्बल,
 पन्ध, बहिर घोर उदको से यत्र दुःखकुल हैं यथात् इन
 को देख कर धारणा करनेसे पमङ्गल होना है । यानी
 यदि काका मन्त्र पढ़ने हुए धारणाकालमें दिगारि पड़े, तो
 प्रथमकुल होता है । (सप्तभक्तिप्रामाणिक्य वाच्य)
 धारणाके समय पयो घादिह द्वारा पुत्रवैशे कन्याकार
 क्तन यथायुक्त कर्मप्रकाय होते हैं इनका नाम शकुल
 कहते हैं । (हरत्त्व-विद्या पृ० १८० न०) विशेष विवरणके लिये
 पात्रन शब्द देखे ।
 दुःखाना (स० स्त्री०) १ राजा हृतपदको एक मात्र कन्या ।
 यह मान्यारोड मर्मने लप्यक हुई थी घोर निन्दुरात्र अय-
 प्रयकी म्वादी थी । जब कुहसेमकी कङ्गाईमें लवप्रय
 मारी गये, तब दुःखानामि पपने छोटे कङ्केकी हो राज
 नि हासन पर विठ्ठा कर बहुत दिनों तक राजकाय
 चलाया था । सबसे लङ्केका नाम सुरक था जो लमयः
 राजकायमें बहुत विचलन हो गया था । पाण्ड्याके पय
 निव यत्रके समय जब परतुल यत्रका जोड़ा लेकर निन्दुरेममें
 पड़्ये, तब त्रिष परतुलके हाथसे इमके विनाकी मन्त्र हुई
 हो यको परतुल मुहामों होकर धार्य हुए हैं यह सुनकर
 सुरक मयसे मुक्ति हो पड़े घोर पक्षत्तकी प्राह हुए ।
 परतुलने इन बातका सुन कर सुरकसे मानक पुत्रकी
 सि हासन पर पमिविद्ध किया । (भाव) (पु०) २ हृत
 राहुके एक पुत्रका नाम ।
 दुःखामन (स० लि०) दुःखिन गियामेसो गाल लम बि
 बुध । १ त्रिष पर मानक करणा कर्मिन हो, जो बिबो

का दबाव न माने। (पु०) २ धृतराष्ट्रकेनो पुत्रमैते एक । इन्होंने गान्धारीके गर्भसे जन्मग्रहण किया था । ये दुर्धाधनके अत्यन्त प्रेमपात्र और मन्त्री थे । दुर्धाधन इन्हेंको रायसे सब काम करति थे । कुरु-पाण्डवकी लड़ाईमें यही मूल कारण थे । जब पाण्डव लोग जुएमें हार गये थे, तब दुःशासनने द्रापदीको रजसूनावस्थामे समास्यतमें ला कर वस्त्र खींचनेकी चेष्टा की थी । किन्तु ईश्वरको रूपामे लुब्ध कर न सके, जितना ही वस्त्र खींचते थे, उतना ही वह बढ़ता जाता था । अन्तमें वे धक कर लज्जासे सिर झुकाये सभामें बैठ गये । ये अत्यन्त क्रूर स्वभावके थे । पाण्डव लोग वन जाते समय एक एक प्रतिज्ञा करके पुरोसे निकल गये । भीमसेनकी प्रतिज्ञा थी कि, 'मैं जब तक दुःशासनका वनपान न करूंगा और इसके रत्नसे द्रौपदीके बाल न रगूंगा, तब तक द्रौपदी बाल न बाधेगी ।' कुरुक्षेत्रकी लड़ाईमें भीमसेनने उनका वल फाड़ कर अपनी यह भयङ्कर प्रतिज्ञा पूरी की थी ।

दुःशील (सं० त्रि०) दुष्टं शीलं यस्य । दुष्टशील, बुरे स्वभावका ।

दुःशीलता (सं० स्त्री०) दुःशीलस्य भावः दुःशीलतल-टाप् । अविनय, दुष्टता ।

दुःशोध (सं० त्रि०) दुःखेन शुध्यति दुर-शुध कर्मणि खल् । १ कष्ट द्वारा शोधनीय, जिसका सुधार कठिन हो । २ जिस धातु आदिका शोधना कठिन हो ।

दुःश्रव (सं० त्रि०) दुर-श्रु-खल् । १ अश्राव्य, जिसके सुननेसे दुःख उत्पन्न हो । (पु०) २ काव्यका एक दोष । यह कानोंको ककश लगनेवाले वर्णोंके आनिसे होता है ।

दुःश्रुति (सं० पु०) दुष्टः श्रुतिः सुसामादित्वात् पत्वे वा विसर्गस्य पः । दुष्टश्रुति, दिखावटो मोल ।

दुःप्रसम् (सं० स्त्री०) दुष्टं समसत्र 'तिष्ठद्गु' इत्यव्ययो भावः पत्वे रो वां पः । गहं, निन्दा ।

दुःप्रेष (सं० त्रि०) शेष करनेमें असमर्थ, जिसका निवारण कठिन हो ।

दुःसकथ (सं० त्रि०) दुष्टं सकथि यस्य, अच् समासात् । दुष्ट सकथयुक्त ।

दुःसह्य (सं० पु०) १ दुष्ट विचार, बुरा इरादा । २ जो बुरा सह्य करता हो, खोटी नियतका ।

दुःसह (सं० पु०) कुसहः, दुरासाथ, बुरी सोहबत ।

दुःसन्धान (सं० पु०) केशवदासके अनुसार काव्यमें एक रस । यह रस जगह पर होता है जहाँ एक तो अनुकूल होता है और दूसरा प्रतिकूल; एक तो मनको बात करता है, दूसरा विगाड़को ।

दुःसह (सं० त्रि०) दुःखेन सह्यतेऽसौ दुर-सह खल् । १ दुःखद्वारा सहनीय, जिसका सहन करना कठिन हो । (पु०) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम ।

दुःसहा (सं० स्त्री०) नागदमनी ।

दुःसाध (सं० त्रि०) दुःखेन साध्यतेऽसौ खल्, तत्रार्थं घञ् वा । दुःसाध्य, जिसका करना कठिन हो ।

दुःसाध्य (सं० त्रि०) १ कष्टसाध्य, जिसका साधन कठिन हो । २ जिसका उपाय कठिन हो ।

दुःसाधिन (सं० त्रि०) दुष्टं साध्यति साधि-णिनि । १ दुष्टसाधक । (पु०) २ द्वारपान, षोड़ीदार ।

दुःसाहस (सं० पु०) १ अनुचित साहस, ऐसी बात करने को हिम्मत जो अच्छी न समझी जाती हो । २ व्यर्थका साहस, ऐसी हिम्मत जिसका परिणाम कुछ न हो ।

दुःसाहसिक (सं० त्रि०) अगम साहसिक, जिसके लिये हिम्मत करना बुरा हो ।

दुःसप्त (सं० त्रि०) दुर स्वप-क्त वा पत्वं । १ दुष्ट-स्वप्रयुक्त । (स्त्री०) २ दुष्टस्वप्न, स्वराश सपना ।

दुःस्त्रो (सं० स्त्री०) दुष्टा स्त्रो, स्वराश औरत ।

दुःस्य (सं० त्रि०) दुष्टं तिष्ठति स्या-क । १ दुर्दशापन्न, जिसकी स्थिति बुरी हो । २ सूखं । ३ दुःखमें अवस्थित, दरिद्र । ४ लुब्ध, लोभी ।

दुःस्थित (सं० त्रि०) दूर-स्था-क्त । दुःखमें अवस्थित, दरिद्र, गरीब ।

दुःस्थिति (सं० स्त्री०) दूर-स्था-क्तिच् । दुरवस्था, दुष्टं गा, बुरी हालत ।

दुःस्पर्श (सं० त्रि०) दुःखेन स्पृश्यतेऽसौ दुर-स्पृश-कर्मणि खल् । १ दुरालभ, जिसे पाना कठिन हो । २ स्पर्श करानेमें अशक्य, जिसका छूना कठिन हो । (स्त्री०) ३ कटाकरञ्ज । ४ कपिकच्छु, केवाच । ५ आकाशमद्गा ६ करणकारी, भटकटैया ।

दुःस्फोटक (सं० पु०) दुष्टः स्फोटयति स्फुट-घञ् । अस्फ-विशेष; एक प्रकारका शिथिल ।

दुःख (स + पु) दुःख अत्रः प्रादिसमाप्तः । यद्यमसुखं
सुखमेव, नुरा अत्र, एषा सपना निमग्नता एव नुरा प्राणा
जाता नो । निद्रावस्थामिं क्या क्या स्वप्न देखनेसे क्या क्या
एक होता है, वह स्वप्नमेवत्पुत्रावर्त्ते एव प्रकार
निष्ठा है—

स्वप्नमें यदि कोई वृत्ति वा विचार देखे भवता जाचना
याना सुनि, तो समझि कि विपत्ति भानेवासी है । यदि
दांत-वा डूटना एव विपत्तय करना देखा जाय तो
गारोरिक पीड़ा होती है । यदि अपनीकी तीन मन्दि,
गदई, मी म या खंड पर सवार हो कर दक्षिण दिशाकी
जाति देखि, तो समझना चाहिये कि मृत्यु निश्चय है ।
स्वप्नमें सुख लभानुपु, अयोध, करवोरवेल और नमक
देखनेसे विपत्ति, भयना खो, क्षिपनाता सुद्रुकी निद्रवा,
पीठी और तापप्रक देखनेसे शोक; बट ब्राह्मण और
भोवाभिता ब्राह्मणको देखनेसे चरसे अचिरात् लक्ष्मी
स्वान तथा वनपुत्र, रत्नपुत्र, पलाय, अनाम और शत्रु
वत्स देखनेसे दुःख होता है ।

स्वप्नमें किसीको जमाने, मान करती तथा स्वप्नस्वप्न
परिधाना विषयाकी देखनेसे स्वप्न; देवताका नाच मान
और जलो तथा बहलना, झुटना या दीहम देखनेसे
ठन ठंडका शोक विनाय; बमि और मलयमूत्रव्याम तथा
बेष, भोना और चांदोका दिवना एव स्वप्नस्वप्नपरिधाना
खो क्षान्तिजन एषा देखनेसे वमको पराग्र मृत्यु
होती है । अत नक्षत्रिं अथवा नरमुच्य तथा पश्चिमाका
देखनेसे परमपुत्रा पश्चिमाका पाता है, एषा देखनेसे
विपत्ति; जो, बृह मधु झाह ना सुइसे अपनीको निपा
देखनेसे पीड़ा क ड वा मदइसे एव पर पक्षिना अपनीको
बंड दुषा देखनेसे मृत्यु; अथ वस्त्र पक्षी बुई तथा
नाम अमुनेपनसे विभूयिता स्वोको स्वप्नमें पाक्षिजन
करनेसे ध्याधि एव पतित भव और श्रेय प्रकार तथा
मरमपुत्र चिता देखनेसे मृत्यु होती है ।

अथान, शत्रुकाठ अथ, जीह और ईपत् स्वप्नमसो
स्वप्नमें देखनेसे दुःख, पादुका, वनच, रत्नपुत्रमात्र, माय
मधुर और सुख देखनेसे मय; अष्टम, मरनकाठ, काच
मय, काग, कर, पूष (पीप) और मात्रम देखनेसे
आचिका कारण; मय और अत, माच, शूद्र और नलत्

सुहरीमो, रत्नवच, अष्टिम गूबर, मनिम, कर महाघोर
पन्थकार अतजीन और योनिविह देखनेसे विपत्ति ।
कुबैयशारी, केश, पायइम, और वमपूत देखनेसे
वयमययु; ब्राह्मण ब्राह्मणी, बालक नातिना और पुत्र
भयना ये सब रागाभित हो कर बिदा हो रहे हैं । एषा
देखनेसे दुःखनाम; स्वप्नपुत्र और स्वप्नपुत्रमात्र,
पक्षमयशारी विज्ञतवाया केशकामिनो देखनेसे
अय्य हो अतु; सुखगीत, वाय रत्नवच, मदइअनि
और सुख देखनेसे निपय हो दुःख मन्त्रादि
पक्षइनेसे भाईको मृत्यु एव लवय, सुलनेयो,
विम और अतशारी ये सब देखनेसे मृत्यु होती
है । अत वा अत खी वा अतवनां खीच्युकीका
पाक्षिजन देखनेसे मी पन्थ अतु होती है । स्वप्नमें
दांतका डूटना वा नासांका गिरना देखनेसे गारोरिक
पीड़ा; शूरी वा द डो पाक्षमच करनीको उपत है, एषा
देखनेसे राजमय; विषयच, यिकाठि, तुय रत्नाहार,
मन्त्राठि, पतितअथ, मयानक वमवेत, अथवा मयमय
पादि देखनेसे दुःख; एव, अथ, शील, अथ, मो, इन्द्रो
तुरग और करसे अपनीको अथो पर मिा देखनेसे विपत्ति,
अथ स्वानसे गर्त, मय, अहार, चिता धारकुण्ड और
पूष में मिता देखनेसे अतु, वनपुत्र क शिवोका मयच
वा मयवने अत पक्ष कर रहा है, एषा देखनेसे विद
नाय सनवा मो मत्ता हो कर करने का रही है, एषा
देखनेसे अयोडीम वमपूत पायसे नाच कर मे जा रहे
हैं मयच, ब्राह्मण, ब्राह्मणी और शूद्र अथ हो याप न कर
जा रहे हैं भैव यदहा, मान, अत और अथर अथ जो
कर दाइ रहे हैं, एषा देखनेसे विपत्ति तथा कोपा,
कुत्ता, मातु, लक्ष्मी भमइती शरीर पर पा कर गिर रहा
है एषा देखनेसे अतु, होती है ।

जो सब स्वप्नको अथाय अथर करी गई है समी
दुःख है । विषय विपत्तय लय अथमें हैकी । स्वप्न
देखनेसे ही तदनुकार एव होगा मो नहीं समी स्वप्न
अनसाम नहीं करती । स्वप्न यदि मयम याममें देखा
जाय तो एव लक्ष्मी भौतर एव प्राप्त होता है । शूरी
याममें देखनेसे = मन्त्रोनेम, तोनर याममें तीन मन्त्रोनेम,
चोयेम पाच मन्त्रोनेम, यद्योदवकाममें स्वप्न देखनेसे एव

दिनमें और प्रातःकालमें देखनेमें उसी समय लगने पर फल मिलता है। किन्तु प्रातःकालमें दुःस्वप्न देखनेमें जाग उठना उचित नहीं, स्वप्न दर्शनके घाट सो जाना ही कर्त्तव्य है। चिन्ता और व्याधिसे समायुक्त हो कर यदि स्वप्न देखे, तो वह निष्फल होता है। जड़, मूल और पुरीष द्वारा अपवित, भयाकुल, टिगम्य (और मुक्तके) ऐसी अवस्थानें स्वप्न देखनेमें कोई फल नहीं मिलता। कागप्रगोत्र, नोच अग्नि, मूर्ध्व और शत्रु, आदि न समोप स्वप्नप्रक्षान्त नहीं करना चाहिये।

पूर्वाक्त दुःस्वप्न देखनेमें उसकी शान्ति करना चाहिए। शान्तिका विषय ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें जो लिखा है वह इस प्रकार है,—

रक्तचन्दनके काठको छतास कर होम और सहस्र बार गायत्री जप करे। ऐसा करनेमें दुःस्वप्नका फल नहीं मिलता और सहस्र बार मधुसूदन नामक जप करनेमें भी दुःस्वप्न सुस्वप्न हो जाता है। पूर्वमुख हो कर श्रीकृष्णका नामाटक भक्तिपूर्वक पढ़नेमें भी दुःस्वप्न सुस्वप्नमें परिणत हो जाता है।

दुःखभाव (मं० पु०) १ दुःशान्तिता, बुरा स्वभाव, बदमिजाजो। (त्रि०) २ दुःशील, दुष्ट स्वभावका।

दुःस्वरनाम (मं० पु०) एक प्रकारका पापकर्म। इसके उदय होनेसे प्राणियोंके कठोर और हीनस्वर होते हैं।

दु (द्वि० वि०) 'दो' शब्दका छोटा रूप।

दुश्न (द्वि० पु०) दुश्न देखो।

दुश्ना (अ० स्त्री०) १ प्रार्थना, विनती, याचना। २ आग्नी वांट, असीस। (द्वि० पु०) ३ एक प्रकारका गहना जो गर्भमें पहना जाता है।

दुश्वाव (द्वि० पु०) दुश्वावा देखो।

दुश्वावा (फा० पु०) वह प्रदेश जो दो नदियोंके बीचमें पड़ता हो।

दुश्वाव (फा० स्त्री०) १ चर्म, चमड़ा। २ रिकावका तमसा।

दुश्वाला (द्वि० पु०) लकड़ोका एक वैनना। यह सुनहरी कृषी हुई कौंटोंके कर्णोंको बँटानेके लिए फेरा जाता है।

दुश्मानी (फा० स्त्री०) मानको बही, खरादका तमसा।

दुकड़हा (द्वि० वि०) १ जिसका दाम दो दमड़ी या एक

छटाम हो। २ तुच्छ, नाचीज। ३ अनादृत, गीच, कमीना।

दुकड़ा (द्वि० पु०) १ एकमें लगी हुई दो वस्तु, जोड़ा। २ दो दमड़ी, एक पैसिका चोथार्द्धभाग, छटाम। ३ वह जिसमें किसी वस्तुका जोड़ा हो।

दुकड़ी (द्वि० वि०) १ जिसमें किसी वस्तुका जोड़ा हो। (स्त्री०) २ दो वृष्टियों वाला तागका पत्ता। ३ चारपाई की बुनावट। इसमें दो दो बाध एक साथ बुने जाते हैं। ४ वह वस्ती जिसमें दो चोड़े जोते जाते हैं। ५ दो कड़ियोंको लगाम।

दुकान (फा० स्त्री०) वह स्थान जहाँ बचनेके लिये तरह तरहकी चीजें रखी हों, हट, हटी।

दुकानदार (फा० पु०) १ दुकानका मालिक। २ दोंगरच कर रूपया प्राप्त करनेका काम।

दुकाल (द्वि० पु०) मस कष्टका समय, अकाल।

दुकुम्हो (द्वि० स्त्री०) चमड़ा मढ़ा हुआ एक प्रकारका पुराना बाजा।

दुकूल (मं० स्त्री०) दुःकाल-कुक्काल। दुष्टः कूलभि कूल आवरणे कृष्टयो वा माधु। १ चौम वस्त्र, मन या तोसीके रेशीका बना हुआ कपड़ा। २ सूक्ष्म वस्त्र, महीन कपड़ा, बारीक कपड़ा। ३ वस्त्र, कपड़ा।

दुकूल—बौदोंके शाम ज्ञातकके अनुसार एक बौद्ध ऋषि। ये गौतम वा शामके पिता थे। इनका विवरण शाम-ज्ञातकमें इस प्रकार लिखा है—शामके जन्मके बाद दुकूल अपनी स्त्री परिकाके साथ एक दिन फलमूलकी तलाशमें अरण्यमें गये और वहाँ दैवदुर्विपाकसे दोनों अंधे हो गये। शाम उन्हें ढूँढ़ कर अपने आश्रमको ले आये और अनन्यभाव तथा एकाग्रचित्तसे पिता-माताको सेवा करने लगे। एक दिन वे मन्मथा समय नदीसे जल लाने गये। वहाँ किसी राजाने उन्हें मृग समझ कर तीर चलाया। शाम राजासे अपने अमहाय माता-पिताके भावों दुःख सम्पूर्ण कहने न पाये थे, कि उनको प्राणवायु उड़ गई। बाद राजाने उनके अन्ध मातापिताके पास पहुँच कर सब समाचार कह सुनाया। इसके अनन्तर दुःखमें कातर वे सबके सब मृत शामके पास आए। परिकाने कहा, "यदि मेरा पुत्र

संपादक संज्ञाकारी रहा हो, यदि उस 'पद्यमित्र' लिपि का कल्पनाको पारंगतमात्रके लिपि हो, यदि मुद्रणके लक्षणा लक्षो मन्दि रही हो तो उस पुस्तकके पक्षके साथ पुत्र जो भाव ।" दुर्गलक्ष्मी इस तरह लक्ष्यलिपि करने पर धाम जो कहे । ऐसे समयमें एक नेत्रोने प्रकट हो कर लक्षके माता-पिताको चक्षु दान किया ।

यह लक्ष्याप सामाजिकमें दिव्य रूप समरप द्वारा पत्राक्ष मुनिने पुत्र मित्रुवचनके पाष्यालक्ष्मी धनुस्वरच है । पत्रक्षर इतना है कि सामाजिकमें मित्रु बाबावातापि गतासु हो गये थे और पुत्रयोके चक्षु मुनिने प्राच्यताग किया था, पर प्राच्यतागमें धामका लक्षणा और चक्षुका दृष्टि जाना गया था ।

दुर्गेला (वि० वि०) जो पक्षिमा न हो ।
 दुर्गेमे (वि० वि० वि०) दूसरे पक्षिको माय बिंदु ।
 दुर्गक (वि० पु०) १ एक प्रकारका बाबा जो लक्ष्मीकी तरह होता है और चक्षुनाईके माय ब्रजावा जाता है । २ एकमे लुको हुई या भाव पटी हुई दो आसो का बाबा ।

दुर्गा (वि० वि०) १ जो पक्षिमा न हो । २ त्रिममें कोई दो वस्तु एक साथ हों । ३ जो एक साथ दो हो ।
 दुर्गे (वि० स्त्री०) दो बुद्धियोंवाला मायका एक पत्ता ।
 दुर्गव्या (वि० वि०) दो लक्ष्मी, त्रिममें ही धन हों ।
 दुर्गहा (वि० पु०) १ दुःखका इत्तान, दुःखको कथा ।
 २ कष्ट, विपरित, लक्ष्मीको, सुयोग्यत ।

दुर्गदाई (वि० वि०) दुःखारी हैकी ।
 दुर्गला (वि० वि०) दोहादुख होना टट करना ।
 दुर्गाला (वि० वि०) १ कष्ट पर जाना, देहा देना ।
 २ बिर्सेके पक्षे धाम कारिको क देना ।
 दुर्गारा (वि० वि०) लोहित दुर्गे ।
 दुर्गेया (वि० वि०) दुःखके लोहित । जो दुःखमें पड़ा हो ।
 दुर्गेयारा (वि० वि०) १ त्रिने बिम्बो लानका कष्ट हो दुर्गेया । २ त्रिने कोई दारोरेक कष्ट हो रोनी ।

दुर्गे (वि० वि०) १ त्रिने कष्ट हो । २ त्रिने सामानिक कष्ट हुआ हो, त्रिमके त्रिममें एक हो ।
 दुर्गेला (वि० वि०) दुर्गलक्ष्मी, जो दुःख लोक्षण हो ।
 दुर्गे (वि० स्त्री०) बरामद्ध लोकारा ।

दुर्गक—बर्माईके धामे त्रिमके पत्राक्ष मित्रुदी लानका एक धाम । यह पत्ता १८ २० उत्तर और देगा ०३ ० पू० मित्रुदी शहरके ८ मील उत्तरमें पश्चिम है । लोक्षण व्यासाय ०३० है । १००० ई०में मीररत इत्यनेने मकाराहोकी इमी स्थान पर पत्राक्ष किया था ।

दुर्गाहिया—प्रब्रजामाके म्यानराक्षके बन्दोवस्थाधाममें पित्राको मरदाय चोत्रुके भारी शान्तापिने धपको भोगर्यामें मोम खरनेके लिए प्रजापक्षपुरका कुछ भाग आभारमें पाया था । १८२३ ई०में राजा राजे मरने पर लक्षके लक्षमानुमार हर्षिक गवर्ने गउने मारी पक्षपि लक्षके पाँच पुर्वीमें बराबर बराबर बाँट दो । दुर्गाहिया राजा लक्षि लानके पुत्रके चक्षुमें पड़ा ।

दुर्गदुमी (वि० स्त्री०) १ मरदनके मोक्षे और क्षातीके क्षयका भाग जो कुछ मरदा मा होता है । २ एक प्रकारका धामभूषण जो त्रिममें पड़ना जाता है और क्षातीके क्षय तक लक्षका रहता है ।

दुर्गला (वि० वि०) दिगुप दूला ।
 दुर्गट लियारकेक (वि० स्त्री०) दुर्गेका एक पैच । यह पत्रलक्षणाका एक दाब जोड़की मरदन पर होता है और जोड़का बड़ो हाथ पत्रलक्षणाको मरदन पर होता है लक्षो समय यह पैच बिना जाता है । त्रिममें पत्रलक्षणा दूला दाब बड़ा कर जोड़के त्रिमी देता है और बेटक करके मरदन इतने रूप बने के क देता है ।

दुर्गाका (वि० पु०) १ यह बन्दूक त्रिममें हा मनिवा लक्षो रहती है । २ दाहरो लोनी ।

दुर्गारि—रात्रदूलाके चक्षुके लक्ष्मीका एक धाम । यह पत्ता २२ ३० और देगा ०५ ३८ पू० बुद्धी यत्रामे ३० मील उत्तर-पूरुवमें पश्चिम है । लक्षणा लक्षाय १३१ है । १८०० मताधाममें यह धाम मरदाय राजा लक्ष्मीने एक बाँटे कड़ुको कारोरेके कक्षमें टिजा गया था । बाबा जो यह लक्षोके उत्तराधिकारीन पक्षोने है । लक्षणाधाम लक्षका पक्षे एक बड़ा लक्षणाध है त्रिमका क्षेत्रलक्ष लक्षणा लक्ष लक्ष लक्ष लक्ष । यह लक्ष्मीने हिन्दू देशाक्षक गया दो लक्ष-लक्षि है ।

दुर्गलक्ष (वि० पु०) त्रिमो दुर्गके लक्षणाका लक्ष ।
 दुर्गल (म० स्त्री०) दुर्गलक्षोदरदिल लक्षणा ।
 दुर्गक देखा ।

दुग्ध (सं० लो०) दुहते स्म दुग्ध कर्मणि क्त । स्त्रोजातिके स्तनोंमें निःसृत द्रव्यद्रव्यविशेष, सफेद रंगका वह प्रसिद्ध तरल पदार्थ जो स्तनपायी जीवोंको मादाके स्तनोंमें रहता है और जिससे उनके बच्चोंका बहुत दिनों तक पोषण होता है । इसके संस्कृत पर्याय—चौर, पीयूष, उपस्य, स्तन्य, पर और बालजीन हैं । (भावप्रकाश)

स्तनपायी जीव जन्म लेनेके बाद बहुत दिनों तक केवल दूध पी कर जीते हैं और उसीसे उनका पुष्टिसाधन होता है । परमेश्वरके अपार कौशलसे उनको माताके स्तनोंमें उनके जोवन धारणोपयोगी यथेष्ट दूध रहता है । उस समय शिशु दूधके सिवा और कोई खाद्य पचा नहीं सकता, उसे अन्य खाद्यका प्रयोजन भी नहीं पड़ता । माताके दूधसे ही उसके सभी बच्चोंका अभाव जाता रहता है । शरीर धारण करनेके लिये जितने पदार्थोंको आवश्यकता है, वे सभी पदार्थ दूधमें मौजूद हैं, अतः केवल दूध पी कर ही जीवन धारण किया जा सकता है । इसीसे बहुतरे डाक्टरोंने दूधको आदर्श खाद्य माना है ।

माताके शरीरका उस प्रक्रियाविशेषसे स्तनोंमें दूधके रूपमें परिणत हो जाता है और कुचाय (टिपनी) का गिर पड़ता है । गाय, भैंस आदि रोमन्थक प्राणियोंके कुचायमें केवल एक एक छेद रहता है, लेकिन मनुष्योंमें वे सा नहीं हैं । उनके स्तनोंमें दूध निकलनेके लिये अनेक छेद रहते हैं । ये सब छेद अनेक शाखाओं प्रशाखाओंसे युक्त हैं । विशेष विवरण स्तन भागमें देखो ।

प्रायः सभी प्राणियोंका दूध अस्वच्छ, शुभ्रवर्ण, परिशुत, जलसे कुछ भारो, कुछ मोठा और विलक्षण मूलकी गन्धयुक्त होता है । यह गन्ध दूधमें अनेक प्रकारके अम्ल और लक्षयु पदार्थोंके रहनेसे उत्पन्न होता है । लक्षाट अणुजोक्षण यन्त्रद्वारा देखनेसे ताजा दूधमें असंख्य शुभ्रवर्ण अणुआकार विम्ब देखे जाते हैं । इन सब विम्बोंका व्यास १ इंचके १० हजार भागोंके एक भागके लगभग होता है । सुतरां मनुष्यशोणितके अणुहाणु उनके दूधमें भी अधिक हैं । वह सूक्ष्म सूक्ष्म अणुसमेद वा तैल अणुलानवत् पदार्थसमूह हैं तथा स्वच्छ मलिलवत् पदार्थमें बहता है । दूधके उस जलोयाणमें अणुहाणु सबसे भारो

है ; इसी कारण दूध जब थोड़ी देर तक भी खड़ा किया जाता है, तब वह तैलमय अणु या चरबी ऊपर आ जाता है और वही परिवर्तित हो कर मलाई वा मक्खन बन जाता है । पोछे उस दूधमें मक्खनका भाग बहुत कम रह जाता है । दूधको मथने पर भी चरबी एक साथ मिल जाती है और बहने लगती है । इस प्रकारके दूधको मादा दूध कहते हैं और यह बहुत कम मोनमें विकता है । दूधमें जब खटाइका अंश मिल जाता है, तब थोड़ी देरमें वह जम कर टहो बन जाता है । कभी कभी ऐसा भी होता है, कि दूधमें ही जल और उसके संयोजक अंश अलग हो जाते हैं । इसे दूधका फटना कहते हैं । उसी समय भी जलमें शर्करा और नाना जातीय खनिज पदार्थ तथा लवणादि रह जाते हैं । नीचे बहुतसे प्रधान प्रधान प्राणियोंके दूधका पृथक् पृथक् उपादान लिखा गया है । १०० भाग दुग्धको विश्लेष करके उसमें जो जो वस्तु पाई जाते हैं, दूधरे स्तन्यमें उसकी तालिका दी गई है ।

	जनीयांग	तैलादि पदार्थ	छेना	शर्करा	जारादि कठिन पदार्थ
क्रीकादूध (ग्रोसत)	८८२.६	२६.२	१४.२	४८.२	२.२
„ (ऊर्ध्व संख्या)	६१४.०	४४.०	४६.२	६२.४	२.७
„ (निम्नसंख्या)	८६१.४	८.०	१६.६	६६.२	१.६
„ (शिशु १४दिनका)	८७६.८४८	४२.६६८	२६.२२२	४१.१२६	२.०६६
गायका दूध	८६०.०	४०.०	७२.०	२८.०	६.२
गदहीका दूध	६१६.२	१.१	१८.२	६.८	७.४
बकरीका दूध	८६८.०	१७.२	४०.२	६२.८	६.८
भेंडीका दूध	८६६.१	४२.०	४६.०	६०.०	६.८

हम लोगोंके देशमें भैंसके दूध, दही और घीका प्रचार बहुत ज्यादा है । भैंसके दूधमें तैलका भाग अधिक रहनेके कारण उससे मक्खन और घी ज्यादा निकलता है । घोड़ोंके दूधमें शर्कराका भाग अधिक है, अतः उससे एक प्रकारका आसव तैयार होता है ।

स्तनपायी जीवोंके बच्चे बहुत दिनों तक केवल दूध पी कर ही रहते हैं और उसीसे उनके शरीरको पुष्टि होती

पाली जातो है, तब उनमें दूधमें अधिक मक्खन रहता है और जब वे मैदानमें चरनेको छोड़ दी जातो है, तब दूधमें मक्खनका भाग कम जाता है। वर्षाकालकी कटी हुई सूखी घासको अपेक्षा ग्रीष्मकालको ताजे घास खिलानेसे भी दूधमें अपेक्षाकृत मक्खनका भाग ज्यादा रहता है।

फेरियर साहबने परीक्षा करके कहा है, कि शिशुके दूध पीनेके समय नारोका दूध यद्यपि क्रमशः बढ़ता करता है, तो भी उसमें नवनोतका अंश बराबर रहता है, कभी भी घटता बढ़ता नहीं। वस्त्रा ज्यों ज्यों बढ़ता जाता है, त्यों त्यों बाह्यदुग्धने छेनेका भाग भी बढ़ता जाता है। इधर शर्कराका भाग कम होता आर बढ़ा है और उधर चाराशकको वृद्धि होतो जा रहा है।

दूधको विद्वहताका निरूपण करनेके लिये अनेक प्रकारके यन्त्र आविष्कृत हुए हैं। इसका विवरण दुग्धपरिमापक यन्त्रमें देखो।

एशियाके पूर्व और दक्षिणागमें केवल हिन्दू छोड़ कर और कोई जाति गाय भैंसका ताजा दूध नहीं खातो। यद्यं तक कि चीन, ब्रह्मदेश, मलय और भारतके पूर्व प्रान्तस्त्र खसिया, गारो, नागा, जावा (यवहोप), सुमात्रा, जापान आदिके देशोंके लोग ताजा दूध पीना तो दूर रहे, के माफिक उससे घृणा करते हैं। वे लोग दूधको शुक कर अथवा नड़ा कर उससे पनीर, छेना आदि सुखाय द्रव्य बना लेते हैं। कहना फजूल है कि उनके वनावे हुए पनीरदि इस देशके लोगोंके लिए प्रीतिकर नहीं हो सकतें। हिन्दू छोड़ कर बहुत अल्प संख्यक जाति नवनोत वा मक्खनकी गला कर घो तैयार करती है और उसे रपाटिय खाद्यके जैसा व्यवहार करती है। यूरोपीयगण मक्खनका व्यवहार बहुत करते हैं, घोको चतना पसन्द नहीं करते। बहुत सी ऐसी जाति है जो दुग्धविक्रयको नितान्त होनवृत्ति समझती हैं। अरबो दूधके बदले परख लेते हैं, किन्तु बेचते नहीं। लब्दान (दुग्ध-विक्रता)को वे लोग प्रति घणित तथा जघन्य समझते हैं। बालफोर साहबका अनुमान है कि उस देशमें बिना पैसा लिए प्रतिथिको दूध देनेका जो नियम है उसीसे विक्रय-प्रथा इतनी

घणित समझो गई है। आज भी मका नगरमें मिस्र-रोय एक गिहकट जातिके सिवा दूसरो कोई जाति दूध नहीं बेचतो।

पश्चिम और मध्य एशियाकी अनेक जाति आज भी ऊंटनोका दूध पीतो हैं। वहाँ कितने ऐसे हैं जो केवल ऊंटनोका दूध पी कर हो जोवन धारण करते हैं। बहुत प्राचीन कालसे ऊंटनोका दूध व्यवहृत होते सुना गया है। बाइबलमें लिखा है कि याकुबने अपने भाई ईशाको अन्यान्य पशुओंके साथ ३० दुग्धवती ऊंटनो दो थो। इससे माहित होता है, कि यद्दोगण बहुत पहनेसे ही उद्दुग्धका व्यवहार करते थे।

चीनके उत्तर भागमें विशेषतः मन्गीलिया प्रदेशके लोग ताजा दूध पीते हैं और उससे छेना, मक्खन आदि भी तैयार करते हैं। मन्गीलियामें गौको संख्या अधिक है। गोदुग्धके सिवा ये लोग घोड़ेका दूध भी पीते हैं। घोड़ेके दूधमें कठिन चारादिका भाग सैकड़ें लगभग १७ और शर्करा लगभग ८ अंश है, इस कारण शर्कराभाग सृजमें ही अन्तरोक्षक द्वारा सुरासारमें परिणत हो जाता है। यही कारण है, कि मन्गीलिया तथा तातार-वासी घोड़ेके दूधसे कुमिस नामक अयने लिये कुछ प्रकारके बर्दियां आसव प्रस्तुत करते हैं। हानवंगोय सम्राटोंके राजत्वकालमें चीन देशमें कुमिस प्रचलित था। कालसक तातारगण गाय और घोड़ेके दूधको उवाल कर उद्या होने देते हैं और पीछे उसे अनेक तरहसे गला कर शराब तैयार करते हैं। यही मादक द्रव्य ग्रीष्मकालमें वहाँ बहुतायतसे व्यवहृत होता है। ग्रीष्मकालमें लगभग २४ घण्टे सड़ा रखनेके बाद सुघनिसे ही शराब बन जाती है। शीतकालमें २३ दिन तक दूध सड़ाया जाता है।

भैंसका दूध भारतवर्षमें बहुत व्यवहृत होता है। इसका दूध गाढ़ा और मोटा होता है तथा गोदुग्धकी अपेक्षा मक्खनका भाग इसमें ज्यादा रहता है। बहुतसे ऐसे धूर्त्त ग्वाल हैं जो गायके दूधमें थोड़ा भैंसका दूध मिला कर उसे गायका दूध कह कर बेचते हैं। यही नहीं, वे लोग भैंस और गायके दूधको एक साथ मिला कर उससे मक्खन निकालते हैं। जो कुछ हो, अनेक

निहावनं हिन्दू भे स पादिका दूध पवित्र समस्त कर
उसे काममें लही जाती ।

तिम्मत, मन्त्रोक्तिमा, चीन, तातार पादि ज्ञानोंके
मनुष्य जसरो बंजनी माय पादिका दूध पोते है । कपिया
के उत्तर भागमें ब्रह्मगाइरिब दूध देतो है । परबके
भोग बिना पांच दिवसे दूधको सुखा कर जसोदा नामक
एक प्रकारका घोर तैयार करते है । सो मित्राने
बच बहुत मोटा हो जाता है । जन मित्रा कर मो के
जान उस इच्छा घोरको दकियां समस्त कर पीती है, किन्तु
बिदिगियोंके लिए सब इतना सुखानु घोर प्रीतिकर नहीं
है । कइना लगे पकैया कि दिव, कास घोर मनुष्यों
को बचि भे दवे दरो, दिना, मन्त्रन, लनमोत नामा
प्रकारमें प्रगत तथा व्यवहृत होती है । जहां जितने प्रकार
मिहाक देखे जाती है वं वा तो दुग्धजात वा दूधमिश्रित
पात्रका दुग्धजात किषो पटाव घे बने हुए है । मायका
दूध केवल हिन्दू हो लगे बरन् पूरबे की पनेक जातियों
के खाद्यका प्रधान उपादान है । सस्कृत कवियोंका
कहना है, कि मन्त्रसब बिना भोजन हो प्रवा है । माय
में स पादिका दूध बच घोर तरल पचसामें हो सुपाच
तथा सुखिकर है । उसके सिवा उसे विहृत करके किसी
प्रकारका खाद्य वा पानेय प्रगत क्यो न करे बच पचिदा
कृत सुखाक हो जाता है । दूध मित्र मित्र उपायो के
रूपक दम चूर्ण पचकामें जाबा जाता है । इस प्रकारके
दुग्ध-चूर्णको मरम बंजमें मिश्रानेके क्लिप्त दुग्ध प्रसृत
होता है । घसुद्रमें पच लज्जो टीक करतो होती है तब
दूधका मिश्रना पचपाच हो जाता है । पिसी जाइतमें उस
दुग्ध चूर्णके क्लिप्त दूध तैयार कर वड कइजाइके भोगो
विशेषतः दुग्ध सु खे बचको दिया जाता है ।

ताका दूध पचिक घेर तब रक्तासे भी बच नष्ट लही
होता जिससे दूध नष्ट न हो घोर बहुत दिनों तक पचि
कृत रच सके उसके लिए पनेक 'बेडाए' को भेई है ।
जितनी तो इसमें कृतकार्य मो हो चुके है । इस प्रकार
जहां मांभ से नका ताका दूध लगे मित्रता वहां उन सब
दूधके काम पच जाता है ।

दुग्ध रचाके को पनेक उपाय रहे गए हैं यहां लज
का संक्षेप बचन दिया जाता है । इस क्षेत्रमें पात्र

कृत पनेक प्रबन्ध-प्रयत्न-काम्योक्त ओ सब विनायको
दूध पाता है, उसका पचिकार्य हो निम्नलिखित उपाय-
में प्रगत होता है, पचमें दूधका एक प्रयत्न तौबे
कइजाइमें कास कर ११० पा० तापसे निव करना होता
है घोर पोखे उसमें बोझो बोनी मित्रा कर क्रमावत चार
घण्टे तक उसे हावसे चलाते है । सिद्ध हो जाने पर
दूधका प्रतोर्णय सब पच जाता है, तब इसे उत्तार लेती
है । पोखे उस गाढ़े दूधको टीलके कन्दूरमें भर कर
ठण्डा होनेके लिए उसे कुछ कास तक पानोमें रख
कोइती है । इस प्रकारका प्रगत दूध बहुत दिनों तक
पचिकृत रहता है । इस प्रकारके प्रगत दूधको-एवेणत
पाच-मिष्य कहते है । झापफोटें भाइजने एक प्रकार
का क्लिप्त दूध तैयार किया है जिसको प्रगत प्रयाको
इस प्रकार है । ३६ घेर दूधमें १३ घेर श्वेत यर्करा
घोर एक चमचा भर बाईकाइमिट पाक-मोडा मित्राते
है । उन मिश्रित दूधको एनामिक मण्डित लौककटाइ
में क्लान कर बाध्यके तापसे सिद्ध करती है । क्रमावत
उसमें इया कइने देते घोर बराबर लने चकामि रहते है ।
ऐसा करते करती दूध लज विनकुल लज कर चूर्ण सा
रच जाता है तब उसे उत्तार लेती है । इसी चूर्णको
पोखे एक एक पोखका बना कर दाव रखते है घोर तब
इंटेके पाकारमें बना कर रखते है । व्यवहारक समय
लम इंटेके उसमें गन्तनेके हो दूध बन जाता है । कइना
पात्रक है कि बहुतसे लोगोको प्रतियोगिताके दिनां
दिन नामा प्रकारके रचित दूध पाविष्कृत हो रहा है ।
शोनी सोडा वा किसी प्रकारक चारयोमवे कसोयांयका
ऊस होना तथा दूधसे मायका निकल जाना के भव
प्रक्रियाके मूल सूत्र है । मित्रा माइजने दूधपात्रने बाहु
को निकाल कर पोखे बच पात्रकी यतामिकको ?
कलम बन्धिमें सिद्ध किया जा, पोखे बच दूध मोतनमें
पांच घण्टे तक पचिकृत रहा बा ।

बेचक भावप्रकाशने मतके दूधके गुण—मन्त्र रच
किए बाहु घोर पित्तनायक, सारक सघ दग्धकारक,
शोतनोर्ण सभी प्राणियोंका साध्य, भोजन घोर जघोरका
उपचयकारक, बलकारक निद्राजनक दग्धवैर्षिकिं र्बैड,
नयाकापक, पात्रुकार, उन्मानकारक, रचायन, जमन,

विनेचन और वस्तिक्रियाके समान गुणकर, पाण्डु, दाह, वृष्णा, हृद्दोग, शूल, उदावर्त, गुल्म, वस्तिगतारोग, गुदा-हृद्, र, रक्तपित्त, अतिशार, योनिरोग, यम, कृम और गर्भस्त्रावर्षमें सर्वदा हितकर है। वानक, हृद्, जत, क्षीण रोगग्रस्त, लुधातुर और मैद्युन द्वारा क्रम इन सब व्यक्तियोंके लिये दूध सर्वदा हितकारो है।

गोदुग्धके गुण—मधुर रस, मधुर विपाक, शीतल स्नायुवर्द्धक, स्निग्ध, वातघ्न, रक्तपित्तनाशक, दोष, धातु मल और श्लेष्मामूत्रका ईपत् क्षिप्रतासम्पादक एवं गुरु है। प्रतिदिन इसका सेवन करनेसे जरा और ममस्त रोग जाते रहते हैं। सभी दूधमें गोदुग्ध ही श्रेष्ठ है। इसमें भी काली गायका दूध वायुनाशक और अत्यन्त गुणकारी है। पीली गायका दूध पित्त और वायु नाशक; सफेद गायका दूध कफकारक और गुरु; लाल तथा विचित्र रंगों वाली गायका दूध वायुनाशक माना गया है। बालवत्सा अर्थात् जिस गायका बछड़ा बहुत छोटा है और जो बिना बच्चेकी है वैसे गायका दूध त्रिदोषजनक है। यह दूध कदापि सेवन नहीं करना चाहिये। जंगली, तराई और पहाड़ी गायका दूध गुरु और स्निग्ध है।

आहार विशेषमें गुण विग्रह—जो सब गाय बहुत कम खाते हैं उनका दूध गुरु, कफकारक, बलजनक अत्यन्त शक्तवर्द्धक और सुख व्यक्तियोंके लिये गुणकारी है। जो सब गाएँ पलाल तृण और कपासके बीज खाते हैं उनका दूध रोगियोंके लिये हितकर है।

भैंसका दूध—मधुर रस, शक्तवर्द्धक, गुरु, निद्रा-जनक, आमिष्यन्दी, लुधाजनक, शीतवीर्य है, तथा गायके दूधसे इसमें विशेष चरबी रहती है।

बकरीका दूध—कपाय, मधुररस, शीतवीर्य, संग्राही, लघु, रक्तपित्त, अतीसार, ज्वरकाश, और ज्वरका शान्ति-कारक है तथा सब प्राणियोंसे इसका दूध कुछ विशेष फायदामन्द है।

मृगादिके दुग्धगुण—मृगादि जंगलो पशुओंका दूध बकरी दूधके जैसा उपयोगी है।

भैंसका दूध—लवण, मधुर रस, स्निग्ध, उष्णवीर्य अश्वरीरोगनाशक, अश्वय, ढमिकर, केशका हितजनक,

शक्त, पित्त और कफवर्द्धक, गुरु और वायुजनक, काश-रोगमें तथा दुग्धरी दोषोंके संमर्ग बिहीन वायुरोगमें प्रयुक्त है।

घोडोका दूध—घोडोका दूध तथा एक खुरवाले जन्तुओंका दूध रुच, उष्णवीर्य, बलकारक, प्रसन्नवण, मधुररस, लघु, शीत और वायुनाशक है।

जैटनोका दूध—लघु मधुर, लवणरस, अग्निदोष-कारक, सारक और कृमि, कुठ, कफ, आनाह, शीत तथा उदर रोगनाशक है।

हथिनीका दूध—शरीरका उपचयकारक, मधुर, कपायरस, गुरु, शक्तवर्द्धक, बलकारक, शीतवीर्य, स्निग्ध, चक्षुका हितकारक और स्थिरतासम्पादक है।

नारीका दूध—लघु, शीतवीर्य, अग्निप्रदोषक और वायु, पित्त तथा चक्षुशूलविनाशक है। यह नख और चक्षुप्रसाधन क्रियामें प्रयुक्त माना गया है।

धारीण दुग्ध—अर्थात् दुहनेके बाद जब तक दूध उष्ण रहता है, तब तक उसका गुण बलकारक, लघु, शीतवीर्य, अमृतके समान गुणकारी, अग्निदीप्तिकारक और त्रिदोषनाशक है, किन्तु ठण्डा हो जाने पर इसे पीना निषेध है। गायका दूध धारीण अवस्थामें उप-कारी है; किन्तु भैंसका दूध धारीण अवस्थामें अर्थात् दुहनेके बाद ठण्डा हो जाने पर, भैंसोका दूध शीतोष्ण अवस्थामें (अर्थात् उबाल कर जब तब वह ठण्डा न हो तब तक) और बकरीका दूध उबाल कर ठण्डा हो जाने पर गुणदायक है। गाय और भैंसके दूध छोड़ कर सभी अपक दूध अभिष्यन्दी, गुरु, कफ-वर्द्धक, आमजनक और अहितकारो है। अपकनारोका दूध हितकारक है। लेकिन उबाले जाने पर वह अहितजनक हो जाता है।

दूधको उबाल कर उष्ण अवस्थामें सेवन करनेसे कफ और वायु नष्ट होता है और ठण्डा हो जाने पर उससे पित्तको हानो होती है। अर्थात् जलके साथ पाक करके जो दूध बच जाता है वह अपक दूधसे लघु होता है।

जलरहित दूध जितना ही उबाला जाय उतना ही वह गुरु, स्निग्ध, वृथ और बलवर्द्धक होता है।

सद्यप्रसूता गायके गाटे दूधको र पीयूष (पीबस)

कहते हैं। घटे हुए दूधको जवानमेंसे जो पिच्छाहति चंग बन जाता है उसे जिन्नाट वा जिना तथा अपघ्न घटे हुए दूधको क्षीरमास कहते हैं। टहों वा मूत्रने दूधको जाक कर उसे अपघ्नने निषीक मीनेसे जो मास बन जाता है उसे तज्जिण्ड घोर इन्धभागको मोरट (जिनेका पात्रो) कहते हैं। दौयूक, जिन्नाट, क्षीरमास घोर तज्जिण्ड से सब गुणवर्धक, शरीरका उपचयकारक, बनवर्धक गुण 'अपघ्न' बनक, इटयपाई, बाहु घोर पित्तनायक हैं तथा जिन्नाट पन्नि तीत्र है घोर जिने मोई नहो खयती है पत्रका जो मीटुन कर्मसे शीघ्र हो गया है उससे लिए ये बहुत उपशतो हैं। शोभी मिश्रित मोरटका गुण मनु, बलकारक, बचिजनक, सुखयोक, पिपासा, दाह रज्जपित्त, घोर क्षारनाशक है।

दुग्धका धर—गुण, मोतकोय, पुष्टिकारक, रज्जपित्त घोर बाहुनायक, क्षमिकारक, शरीरका उपचयकारक, शिथ, शक, बल घोर शकदायक है।

कण्ड म दूध दुग्ध—गुणवर्धक घोर द्वितीयनायक है। गुड म दूध दुग्ध—सुखकरनायक, पित्त घोर कषक वर्धक है। रात्रिकालमें सोमगुण पचिक हैं इसीसे सोमो प्राचिदीको देह सोमानक रहती है घोर उस समय किषी प्रकारकी शरीरक श्रिया नहीं होती, इन कारण देहिज क्षाहादि सोमगुण निशिट होते हैं। यही कारण है कि प्रमातजासका दूध साय खासके दूधसे गुण घोर मोतकीय होता है। दिनक समय स्युषको खिरचोनि प्राचिकोका शरीर य लज हो जाता है, गुतमें सोमो क्षाहादि पार्थीय शुबान्धित होते हैं। निर्मिदतः ध्यायाम घोर बाहुका शैवन बिद्या जाता है, इस कारण प्रमात कालके दूधको पपीटा काय कालका दूध मनु घोर बाहु तथा कवनायक होता है।

शतःकालने दूध पोनेसे पुष्टि, उपचय घोर पन्नि प्रदोसि होती है मज्जाकालने पीनेसे बल घोर पन्नि को इति होतो है। बचपनमें दूध पोनेसे शरीरपी इति स्यावस्थामें पोनेसे सधका निवारण, इहावस्थामें पोनेसे कृकको इति तथा रात्रिकालमें पोनेसे शरीरको प्रकार पन्नि प्रकारसे दीयोका नाय घोर बहका विमिह उपचार होता है। रत्नको गाने समय दूधको जिना कोत्रमें न

मिसा कर उसे क्षेपण पा जाना ही उचित है। यदि किषी क्षाय पदार्थमें मिसा कर इसे पोया जाय तो वह पक्षो तरफ परिपक्ष नहीं होता।

मानवमय दिनके समय बिदाको पत्र तथा पानीय दुग्ध खाते हैं, उस बिदाकको गानिके लिए प्रतिदिन दूध पोना चाहिये।

ज्ञय, वासक घोर हर व्यक्तियोंके लिए तथा जिनकी पन्नि प्रदोष है उनसे लिए दूध अम्लना प्रायाममन है, क्योंकि इससे सध गुणको इति होतो है।

मयित दूधका गुण—माय पयका बखीके दूधको मय कर कुछ लय पत्रव्यामि पीनेसे बह लघु, शकजनक घोर कर, बाहु पित्त घोर कृकनायक होता है। माय पयका बखरीके दूधसे जो दिन निकलता है वह तिदोष-नायक, बचिकारक बनवर्धक पन्निइतिकारक, बित कर, सधउज्जिकारक, लघु घोर पतोनाट, पन्निमाम्य तथा शीर्षणरमें प्रशस्त है।

निन्दित दुग्ध—जिस दूधका र म बदल गया हो, जो खाहा हो गया हो, जिससे दुग्धे पातो हो घोर जिसमें खाहा तथा मसक मा खाद पाता हो वह निन्दित पयाव् दुग्ध दूध कहलाता है। इस प्रकारका दूध खेवन खानी से हानि होती है तथा कुहादि रोग उत्पन्न होनेको सम्भा बना रहतो है। (भाषण० पूर्व०)

दूधका विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—माय बखरी खँटनेके मीको, मीघ, मारो घोर हसिमो, ये सब पन्नि प्रकारको पोचबिदा पानी है, इन कारण इनका दूध प्रमथ पाथ्याभजनक, गुण मनुट, पिच्छल, मोतक क्षिण्य निर्मल, मारक घोर मनु है। जो सब प्राकी क्षेपण दूध पो कर जोवन कारक करते हैं, उनसे लिए सज प्रकारका दूध ही पशुदूध घोर क्षेपणोय है। बिषो प्रकारका दूध उनसे लिए निषेध नहीं है। क्योंकि दूध उन सब प्राचिकोका कातोय पाकार है। बाहु, पित्त, मोचित घोर मानविक बिचारमें दूधका पोना पक्का है। शीर्षणर काम प्राम पय, शुम्भ कषाट, इदी मूर्ज, श्वम मत्ता, दाह पिपासा इतरोम बिया रोम, पाण्डु, पचनो, पय, गुण, कदाकत्त पतोमार, इतिदिहा पीनितोम, कर्मस्थक रज्जपित्तम घोर ज्ञय

इन सब रोगोंमें दूध शान्तिकार है तथा यह पापनाशक, बलकर, हृद्य, कामेन्द्रियका उत्तेजक, रसायन, मेधाजनक, सन्धानस्थापन, वयःस्थापन, शायुष्कर, पुष्टिकार, वमन और विरेचनमें हितकर और भोजःधातुवर्द्धक है। वानक, हृह, जत, क्षीण और क्षुधाके लिए तथा स्त्रोसंसर्ग और परित्रमसे जो हान्त हो गये हों, उनके लिए दूध ही उत्कृष्ट पथ्य है। रात्रिकालमें चन्द्रमाके गुणमें और व्यायामके अभावसे प्रातःकालका दूध प्रायः भारी और शीतल होता है। दिनके समय सूर्यके तापमें वातनमें, वायुसेवनादि कारणोंसे अपराह्न कालका दूध वायुका अनुलोमकर, शान्तनाशक और चक्षुका टाणिकर है। दूध उबाने जाने पर मधु होता है, केवल नारोका दूध ही अपेक्ष अवस्थामें हितकर है। अपेक्ष दूधमें धारोण्य दूध ही गुणविशिष्ट है, दुहनेके बाद ठण्डा हो जाने पर इसमें विपरीत गुण हो जाता है। उबाना हुआ सभी दूध भारी और पुष्टिकर है। दुग्धमित खटा, तथा नमस्वीना दूध पीना धिलकुल मना है। (सुश्रुत)

दूधकी उत्पत्तिका विषय छात्रोत्सर्गितामें इस प्रकार लिखा है। जो जो वस्तु खाईं जाती है, वह जीर शिरामें अनुगत हो कर पित्त द्वारा सूच्छित और जठराग्नि द्वारा परिपक्व होती है। इस प्रकार परिपक्व हो कर जब उसका मार स्तन्यवाहिनी शिरामें पहुँचता है, तब उसे दूध कहते हैं। यह अमृतके समान तथा सब प्राणियोंके जीवन तथा बलकारक है। हारोतर्न अक्षमस्त्रसमें पढ़ कर अपने पितासे पूछा था, 'विभो! यह दूध किस प्रकार रसको सम्पत्ति है और किस प्रकार इसको वृद्धि होती है? यह दूध रक्तवर्णका न हो कर पाण्डु वर्णका क्यों होता है तथा कुमारो और वाम्भको दूध नहीं होनेका क्या कारण है?' इसके उत्तरमें पिताने कहा था, 'रक्तपित्तमें परिपाक हो कर रक्त हो खेतवर्ण हो जाता है, दूधके संक्रेत होनेका यही कारण है। कुमारो और वाम्भको अल्प धातु और अल्पबल है, इसीसे उनको दूध नहीं होता। वम्भ्याकी घोर नाड़ी वातसे परिपूरित रहती है और पार्श्वका परिमाण अधिक रहता है, इसीसे इन्हें दूधकी प्रवृत्ति नहीं होती। स्त्रियोंके प्रसूता होने पर

स्त्रोतकी विश्रांति होती है, इसीसे बहुत जल्द दूध उत्पन्न हो जाता है। मधुःप्रसूता स्त्रोका दूध शैथिल्य रहता है, इसीसे उस दूधका परित्याग करना उचित है। स्त्रियोंका अधिकृत दूध बलकारक और दोषनाशक है।' (हारीतम० प्रथम स्थान ८४०)

पूर्वाह्नमें गायका दूध और अपराह्नमें भैंसका दूध प्रयुक्त है। दूधके साथ चीनी मिला कर खानेमें ही बलको वृद्धि होती। (राजनि०)

दूधकी सब समय गरम करके पीना चाहिये। दूधके साथ मछली, मांस, गुह, मुद्ग, और मूलक खानेमें कौढ़ होता है, शाक और जंबीरा नोदूधके रसके साथ सेवन करनेसे दुरत मृत्यु होती है। गाक, अम्ल, पत्र, पिप्ल्याक, कुलत्थ, लवण, आम्रिय, करोर, दधि और मांस मिला हुआ दूध अहितकर है। (राजवज्रम)

दूधकी उबान कर उसे कुछ लवण अवस्थामें हो पीना अच्छा है। उबाना हुआ यदि तीन मुहूर्त्त तक कौढ़ दिया जाय, तो यह अतम समझा जाता है, इस प्रकारका दूध दूषित है। दूधकी चायाईं भाग जलसे सिद्ध करके पान करनेसे शरोरकी मनाईं होती है। दूधका नर वायुनाशक, ढमिकर, बलकर, तेजस्कर, क्षिण्य, रुचिकर और स्वादु है, परिपक्व होने पर यह मधुर, रक्तपित्तनाशक और गुरुपाक होता है। दुग्धान चक्षुहितकर, बलकर, पित्तनाशक और रसायन है। पथ्यपित्त पर्यात् वासा दूध गुरु, विटम्भो और दुर्जर होता है।

बच्चा जन्मनेके बाद जब तक सात दिन पूरा न हो, तब तक गायका दूध पीना निषेध है।

दुग्धकूपिका (सं० स्त्रो०) दुग्धकूप साधनत्वेन अस्थस्या इति दुग्ध-कूप-ठन्-टाप्। पिट्तकविशेष, एक प्रकारका पकवान। भावप्रकाशमें इसको प्रस्तुत-प्रणाली इस प्रकार लिखी है,—पाककुथन मसुथ्य छेनेके साथ चावलके चूणको अच्छो तरह पीसे। बाद उसको गोख लोई बना कर उसमें गड़ा करे। फिर इस लोईको घीमें थोड़ा तल कर उसमें गड़ेमें खूब गाढ़ा दूध भर दे और गड़ेका मुँह मँदेसे बन्द कर दे। अनन्तर इस दूध भरे हुए बड़ेको घीमें तल कर चाशनेमें डाल दे और कुछ कालके बाद उसे घटा निकाल ले, इसीको

दुग्धसूचिका कहती है। इसका गुण—दमकारक, विल
 और वायुनाशक, पुष्टिजनक तथा शरीरका उपपचकारक
 है। इससे श्वेत करनेसे दूध मज्जित बहती है। (नमक)

दुग्धलासोय (० • ली •) दुग्धत्व ताकाय प्रतिहायि जित ।
 १ दुग्धाम्, दूधका घन । २ मसूर ।

दुग्धतुली (वि • सि •) घोरानाहु, सविद बहू ।

दुग्धघट (० • ली •) वो मरिच-कामदुग्ध, गायः मंस
 योग बकरोका दूध ।

दुग्धटा (स • ली •) दुग्ध दगति या दुग्ध शिखा
 टाप । १ बह जो दूध देती है । २ बचिका-उप, एक
 प्रकारकी घास ।

दुग्धपरिमापक यन्त्र—(Galactometer or Lacto-
 meter) दूधके गुणागुण और बिद्यरताकी परीक्षा करने-

का एक यन्त्र। प्रायः सभी जगह स्थापित विद्युत् दूध
 मन्ने मिलता। दूधकी घनत्व द्वारा देखनेसे दूधमें

मिसे हुए घनेक सम्बन्ध द्रव्य पाये जाते हैं। ज्वाट,
 मन्त्र आदिसे भी उपका कुछ कुछ पता लग जाता है। दूधमें

मज्जतका पद पचका हममेंका मिश्रित जलका परिमाण
 मान्न करनेके लिये दुग्धपरिमापक यन्त्रका प्रयोग

होता है। इस यन्त्रकी मज्जत और व्यवहार बहुत सरल
 है। एक लक्षकाँचका मन्त्र १०० घ मिलि विमल रहता

है। जिस दूधकी परीक्षा करनी होगी उसे इस मन्त्रमें
 धक्की तरह भर देते हैं। कुछ क्षण तक लघोमें रहनेके

बाद मज्जतका कुल भाग ऊपर उठ पायेगा। तब वह
 मज्जत मन्त्रमें जहाँ तक था गया है, लम्बे चिह्नित पट्टी

को देखनेसे ही दूधमें मीथके जितना मज्जत है, वह
 मापूम हो जायेगा। जोकेल नाइमने दूधकी परीक्षा करने-

के लिये त्रिश परिमापक यन्त्रका पानिष्कार किया है, वह
 ही इह लम्बा और २० घ मिलि विमल है। विद्युत् जलमें

देनेके लय यन्त्रका विद्युत् तक डूबता है और चापि
 विद्युत् गुप्तत्व १ इन्च होता है। यहाँ तक कि किसी

दूध पर्याप्तमें देनेके १० विद्युत् तक डूब जाता है। दूध
 मिश्रण होने पर वह यन्त्र १ इन्च घ म विद्युत् स्थान

तक डूबता है। कहना नहीं पड़ेगा, कि दूधमें पापेचिक
 गुणत्व जलकी परीक्षा कुछ अधिक है। जल मिश्रानेसे

ही इसका पापेचिक गुणत्व कम जाता है अतएव दुग्ध-
 परिमापक यन्त्र बचिक ह न जाता है।

दुग्धपाचन (स • ली •) पचयतिस्मिन्निति पच पथिवापि
 म्बुट । दूध गरम करनेका बरतन ।

दग्धपापाच (स • पु •) दुग्ध सीरं पापाच-एव कठिन
 यत्न । हृत्पथिप एक विस्मका पेड़ । इसका पर्याय—

दुग्धपापाचक, दुग्धाम्ना घोरौ, गोमेदमन्त्रि, बधाम,
 हीमिन्, दुग्धो घोर घोरसम है। इसका गुण—वृषि

कारक हैदुग्ध कर विल प्रसोग शूट, काम घोर
 पापान विनाशक है।

दुग्धपुच्छी (स • ली •) दुग्धवत् शुद्ध पुच्छ मूलदेमी
 यत्नाः घोरादित्वात् क्षोप । हृत्पथिप, एक पेड़का

नाम। इसका पर्याय—सेवकाशु, निगामन्ना और मस
 हरी है।

दुग्धपोष (स • सि •) दुग्धिन पोषा । १ जो श्वेत दूध
 पो कर रहता हो। (पु) २ मियु, बन्ना ।

दुग्धफिन (स • पु •) १ दुग्धत्व फिन हव फेनी यन्त्र । २ सीर
 निष्कार एक पोषा । इसका नामान्तर माकर है ।

३ दूधका फेन ।

दुग्धजोनी (स • ली •) दुग्धवत् शुद्ध फेनी यत्नाः गौरादि
 त्वात् क्षोप । शुद्ध सुपरिचि, एक जोडा पोषा । इसका

पर्याय—घर्ष फेनी, फ नदुग्धा, घर्षजिनी, मूलादि, ब्रह्म
 क्षीरुणो और गोत्रापथी है। इसका गुण—वटु, तिष्ठ

शोथक, निवर्षपनाशक और दधिकर है ।

दुग्धघटी (स • ली •) घोषघटी ।

दुग्धवन्धक (स • पु •) दुग्धाकं बन्धं ततो बन् । दुग्ध
 शोचगाईं गोवन्ध, दूध दूधनेके लिये शापका बंधना ।

दुग्धबोजा (स • ली •) दुग्धवत् शुद्धं बोज यत्नाः ।
 बजनानाय एत्सु, ज्वाट, शुष्की । इससे दो टांमोमिसे

सर्वेद दूध निकलता है ।

दुग्धमलानिका (स • ली •) दुग्धमर ।

दुग्धमसूर (स • पु •) मसूरविशेष घोरमसूर ।

दुग्धास (स • पु •) दुग्धवत् शुद्ध पच निष्ठ चिक्रिमिपो
 यत्न । उपरिचिप एक प्रकारका मग पा ऊपर । इस

पर सर्वेद मखेद जोटे होति है ।

दुग्धाब्धि (स • पु •) दुग्धसमुद्र, घोरसागर ।

दुग्धाब्धिनया (स • ली •) दुग्धाब्धे नयया । मज्जो ।
 दुग्धामुखि (स • पु •) दुग्धवत् शुद्ध घोरसागर ।

दुग्धाम् (स० स्त्री०) दुग्ध तानीय, मलाई ।
 दुग्धाम्बु (स० पु०) दुग्धं क्षीरं अम्बा प्रसूत इव कठिन
 यस्य । दुग्धपापान, एक पेड़ ।
 दुग्धिका (स० स्त्री०) दुग्धं निर्यासी बहुलतया विद्वतं
 यस्याः दुग्ध-ठन्-टाप्, च । १ वृक्षविशेष, दुधो नामका
 पेड़, खिरनो । इसका पर्याय—स्वादुपर्णी, क्षीरावी,
 क्षीरिणी, दुग्धो, क्षीरो क्षीर क्षीरायिका है । इसका
 गुण—उष्ण, गुरु, रुच, घातल, गर्भकारक, स्वादुक्षीर,
 कटु, तिक्त, मलसूत्रोपसर्गकारक, पटु, स्वादु, विष्टभो,
 वलकर एवं कफ, कुष्ठ और कृमिनाशक है । २ गन्धिका
 वृक्ष । इसका पर्याय—उत्तमा, युग्मफला और उत्तम-
 फलिनी है ।
 दुग्धिन् (स० त्रि०) दुग्धमस्त्वस्य इति । क्षीरवृक्ष, एक
 प्रकारका पेड़ ।
 दुग्धिनिका (स० स्त्री०) रत्नापामार्ग, नालचिचड़ा ।
 दुग्धी (स० स्त्री०) दुग्धं क्षीरं बहुलतया अस्त्वस्याः इति
 अर्ग आदित्वाच्च गौरादि० डोप् । १ क्षीरावी, दुधिया
 नामकी घास । इसका पर्याय—उत्तमा, दुधिका, दुग्धो,
 फलोत्तमा, फलिनी और दुग्धपापान है । (त्रि०)
 २ दूधवाला, जिसमें दूध हो ।
 दुध (स० त्रि०) दुह-क डस्य घ । दौहनकर्त्ता, दुहनेवाला
 दुधडिया (हि० वि०) टी घड़ीका ।
 दुधडिया मुहूर्त्त (हि० पु०) द्विषटिकासूक्तं देखो ।
 दुह्नागली—पञ्जाब प्रदेशके हजारा जिलेके मध्य एक छोटा
 स्वास्थ्यवास । यह अक्षा० ३४ ६ उ० और देशा० ७३
 २५ पू०में अवस्थित है । शोषकालमें अंगरेज लोग यहाँ
 आ कर कुछ दिनों तक रहते हैं । यहाँ एक हॉटेल,
 डाकघर और एक छोटा गिरजा है ।
 दुधदं (फा० वि०) द्विगुण, दूना ।
 दुधसा (हि० पु०) वृक्ष छत जिसके दोनों ओर टाल हो ।
 दुधित (हि० वि०) १ अस्थिरचित्त, जिसका चित्त एक
 बात पर स्थिर न हो । २ चिन्तित, फिक्रमन्द ।
 दुधित्ता (हि० वि०) १ अस्थिरचित्त, जो दुधधमें हो ।
 २ चिन्तित, जिसके चित्तमें खटका हो । ३ मन्देहमें
 पड़ा हुआ ।
 दुधक (स० पु०) दु-उपताप भावे क्षिप-तुक, च द्युत्

उपतापः तन्निवारणं शक्नोतीति शक-पचाद्यच् । १ सुरा
 नामक गन्धद्रव्यविशेष । २ कपूर कचरो । ३ तालिशयत्र ।
 दुधकुन (स० त्रि०) दुष्ट उच्छुनः पादिम० प्रयोदरादित्वात्
 माधु । दुष्ट उच्छुनः, जो बहुत फूल गया हो ।
 दुच्छुन (स० पु०) दुष्टः श्वा-प्राटिसमानः प्रयोदरा०
 माधु । दुष्ट कुकुर, पगला कुत्ता ।
 दुजह (हि० स्त्री०) तलवार ।
 दुजही (हि० स्त्री०) कटारी ।
 दुजान—१ दिल्ली विभागके कमिश्नरके अधीन पञ्जाबका
 एक रेग्योय राज्य । यह अक्षा० २८ ३८ से २८ ४२
 उ० और देशा० ७६ ३० से ७६ ४३ पू०में अवस्थित है ।
 भूपरिमाण १०० वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः २४१०४
 है । इसमें इमी नामका एक शहर और ३० ग्राम मगते
 हैं । अंगरेज सेनापति लोर्ड नेकने अवदुल समन्द खाँके
 कार्यसे समुष्ट हो कर उन्हे तथा उनके नहकोकी
 राजोवन भोग करनेके लिये यह स्थान प्रदान किया
 था । १८०६ ई०में गवर्नर जनरलने उन्हे एक चिर-
 म्बायो मनद दो था । इस समय हरियाना जिलेको कई
 जमींदागो इस मनदके अन्तर्गत हुईं । वाट उन कई
 एक ग्रामोंमें जमींदागीके बदले अवदुल समन्दने रोजतक
 जिलेके दुजान और मेहाना ग्राम ग्रहण किये । दुजान
 ग्राम दिल्लीसे पश्चिम ३१ मीलको दूरी पर अवस्थित है ।
 नवाब हसनअलने १८५७ ई०में सिपाही-विद्रोहके समय
 गवर्नरके अन्तर्गतकी सहायता पहुँचाई थी । १८८२ ई०में
 वर्त्तमान नवाब सुमताजअली इस राज्यके अधिकारी
 हुए । नवाब वृटिश गवर्नरके दो सौ अखारोहीसे
 सहायता पहुँचानेमें बाध्य हैं । राज्यकार्यकी सुविधाके
 लिये यह राज्य दुजान और नाहर नामको दो तहसिलों-
 में विभक्त है । यहाँ एक ऐंग्लो-वर्नाकुलर-मिडिल-
 स्कूल है । राज्यकी आय ७७१०० रुपये है ।
 २ उत्तर राज्यका एक प्रधान शहर । यह अक्षा० २८
 ४१ उ० और देशा० ७६ ३८ पू०, दिल्लीसे ३० मीलकी
 दूरी पर अवस्थित है । दुर्जन शाह नामक किसी फकीर-
 से यह नगर स्थापित हुआ है । उन्हींके नामानुसार शहर
 का नाम दुजान पड़ा है ।
 दुजानु (फा० त्रि० वि०) दोनों घुटनोंके बन्धः

दुह (वि० वि०) कथित, दो दुहड़ों में किया हुआ ।
 दुह (व० श्री०) दुग्नि सज्जः । कथ्यते, कहुते ।
 दुहक (स० वि०) दुहकम इव कायति श्री-व सुयो-
 मन्योः । दुहविष, कौट्य दिसवान् ।

दुहक (स० पु०) द्रोहिनि मन्वति दुहक मन्वते स म मुन
 रलोपच । दुहकम इव, डैकवा षयि ।

दुहमा (स० श्री०) धर्मपत्र एक प्रकारको भस्मो ;
 दुहमि (स० पु०) दुहमि इयां प्राप्त । पुन्दुमि ।
 दुत (स० वि०) दु-कप्तादि ऋ । पोहित विधि तक
 कोप हो ।

दुत (वि० ध०) १ तिरस्कारार्थक एक शब्द जो
 छदानेके समय प्रयोग किया जाता है । २ दुष्टार्थक
 शब्द ।

दुतकार (वि० ध०) तिरस्कार घट्टाट्ट, बिहार ।
 दुतकारणा (वि० वि०) १ दुष्ट दुष्ट शब्द करके किसीको
 अपने पाससे दूराना । २ तिरस्कार करना, बिहारना ।

दुतया (धा० वि०) दोनों पक्षका, दोनों थोरका ।
 दुतारा (वि० पु०) दो तार कर्म हुए एक प्रकारका राजा ।
 यह व महीके बितारको तरह राजा जाता है ।

दुति (वि० ध०) दुष्टि देहे ।
 दुतिया (वि० ध०) पचको दूधरो तिथि, दूध ।
 दुतिवत (वि० वि०) १ सामाजिक, चमकौटा । २ मनो-
 हट्ट चन्द्र ।

दुतीन्द्रमोच (स० पु०) मोक्षकच्छ-तात्रिकोक्त वर्ष-प्रवेश
 विषयक योग्यमेव, मोक्षकच्छतात्रिकर्ष मतानुसार वर्ष
 प्रवेशमें एक बीज ।

दुहरी (वि० ध०) एक प्रकारकी मन्त्री ।

दुहन (वि० वि०) १ विद्वत्, जिसके दूटने या छूटने
 पर दो बराबर दण वा चक हो जाव । (पु०) २ दास ।
 ३ हिमाचलके बस ठकुर ज्ञानेनि तथा मीरगिरि पर्यंत
 पर कोनेवाना एक प्रकारका योद्धा । इसकी बहुत दौधपक्षी
 काममें पातो है । जिनकी बीमारो, धान, चर्मरोग
 प्यादिमें यह बहुत उपयोगी होती है । कोई कोई इसे
 कामकूल और वरन मो कहते हैं ।

दुहनको (वि० ध०) इरॉंधी देको ।

दुहामो (वि० ध०) एक प्रकारकी रोगो चपड़ा । पक्षी
 इस तरहका चपड़ा माकनदेयमें बहुत बनता है ।

दुहादि (दुहे)—दुहप्रदेशके नामितपुर जिलेके पन्नांत
 एक प्राचीन ग्राम । यह पचा० २३ २३ स० और
 रेखा० ०८ ३३ पू० कथितपुर गहरमें २० मील दक्षिण
 में अवस्थित है ।

यहाँके प्रसूत अथवायमेय दिवसेके इस ग्रामको प्राचीन
 मन्दिनाके अर्थ परित्यक्त पाया जाता है । रामरामके
 बिनारे यहाँकी पूर्व कौर्ति का चित्र इधियापर होता है ।

यहाँके बराह-मन्दिर और ब्रह्म मन्दिर कर्णवयोप्य
 है । भारतवर्षमें ब्रह्माका मन्दिर बहुत कम पाया जाता
 है, किन्तु यहाँके सुगन्धि और गिर्नानैसुखसुख मन्दिर-
 ने यह प्रमाण दूर कर दिया है । प्राय १००० ई०में
 चन्द्रबराह वयोवर्माके योग देवसन्धिने यह ब्रह्म मन्दिर
 निर्माच किया है । मन्दिर जयमोहन, भोयमचण्ड और
 गर्मष्टक इन तीन व शोर्ति बिलम्ब है । गर्मष्टक बहुत
 पधिरा है और इसके बीचके पाटवकी निकट नमपद
 रचित पशुसुख ब्रह्ममूर्ति व मय जयर विराजित है ।
 १०वां शताब्दीमें उम्तोके कुटिलाचरको ब्रह्म गिर्ना-
 न्धियां इन मन्दिरमें लम्बीच है ।

इस ग्राममें दो अन्य जैन-मन्दिर मो देखे जाते हैं ।
 एकमें धर्मो मो व हाव ल को एक दिनकर जिनमूर्ति
 विद्यमान है । दूसरेमें पूर्व समयको तोर्णहरको २३
 मूर्ति लो स्थापित हैं । ब्राह्मणों के उत्पत्तसे जैन
 मूर्ति या का पश्चात्त कोप हो गया है ।

यहाँके एक पानको दूरो पर 'बनिबाबा बरात' नामक
 एक क मत्त पड़ता है । जिसमें बहुतसे प्राचीन मन्दिरों
 का अथवायमेय देवनेमें पाता है ।

चन्द्रबराह सन्नचपनि इको एक अछ खोदिन
 लिपिमें यह ज्ञान 'दुम्बकुपधाम' नामसे कथित
 हुआ है ।

दुधुआ—कन्याईसुको जिलेमें प्रवाहित एक नद्यो । गौर
 काटा और नगई नदीके मिश्रनेसे इस नद्योको उत्पत्ति
 हुई है । इसके बिनारे मगमें प्यके पास बन-विधान-
 के बाददि विजयको एक पड़ता है । इसकी कई एक
 लणदियां हैं, यथा—सुकन्दो, कपूआ, रगतो, बड़वाक,
 दिमदेमा और लाघाति । वे सब नदियां मुद्दानको विरि-
 माकाके निकली हैं ।

इहवा घोषा कलिवारी को को तरफका सुन्दर पंजीनि सुयोमित होता है। घोषीही जड़में ही विष रहता है। पक्षी अङ्ग कलिवारीको जड़में छोटे छोटे चौर मोटे मोते हैं। इजारावे मोम इमि मोहरी घोर काग्योरके बन-बस-गाय जड़में हैं।

दुसेको (हि० खो०) इमी देखो।

दुसेक (हि० वि०) को बहुत दूब देती है।

दुस (म० वि०) दुब बाहु० रक् । दुस ना बारबनि, इ क प्रयोदशदि० साङ्गः । १ हि मक, मारनेबाबा । २ परेक, भिन्नमेबाबा । ३ दुर्बल, प्रपञ्च, प्रबल । ४ दुर्बल, जिनका हमन करना कठिन हो । ५ दुष्टव्यवसायक ।

दुस्रहत् (म० वि०) दुस्य व्यावहारिक, धरान काम करने वाला।

दुस्रबाह (स० वि०) दुस्य बाबा, कटु बचन।

दुसया (हि० पु०) दो मदियोंका सङ्गमस्थान।

दुसाही (हि० वि०) १ जिनमें दो मूल लगी हो। (खो०) २ वह बन्दूक जिनमें दो दा सोलिया एक साथ भरो जाय।

दुसिया (म० खो०) १ स सार, जयत् । २ जमता, लोय । ३ अवतका प्रप, स सारका अ भास।

दुसियाई (हि० वि०) १ सांसारिक । (खो०) २ स सार जयत्।

दुसियादार (पा० पु०) १ वह मनुष्य जो सांसारिक भ्रममें पड़ना हो, घटवत् । (वि०) २ ध्ववहारकृतक, जो डेभ रच कर पपना काम निभाय लेता हो।

दुसियादारो (पा० खो०) १ घटखोला अ जाल, दुसिया का कारवार। २ वह लक जिनमें पपना मतलब बिह हो। ३ बनावटो ध्ववहार।

दुसियायात्र (पा० वि०) १ ज्ञान यात्रक, जो ठ ग रच कर पपना मतलब निभाय लेता हो। २ चापचुस, लडो पयो करमेबाबा।

दुसियाबाही (पा० खो०) १ छाप साबनबी इति पपना मतलब निभायनेका इ ग । २ चापचुस, बात बनानेका म।

दुस्यम (म० पु०) दुस्य इत्यव्ययस्येन स्यपि स्युष्ठापि इति मच मथे इ। दुस्यमि, मथाड़ा।

दुस्यु (म० पु०) १ मद्येक, बीकण्ये पिता । २ दुस्युमि मादा, धोया, मथाड़ा।

दुस्युमि (म० पु०) दुस्यु इत्यव्ययस्येन मातीति मा बाहुनकात् वि । १ इहत्कथा, बहा होल, मथाड़ा। इह का पर्याय—भीरो घोर पागल है । २ मद्यक । ३ टैम्बेद, एक टानकका नाम । ४ राचममिद, एक राचसका नाम।

५ बाटाबियेय, एक प्रकारका बाजा । ६ विष, अहर । ७ कुङ्कुरव शीय पन्थके एक पुत्र । ८ लोचदोपका दिग्मिद, कौच दोपका एक विभाग । ९ पर्यंतविशेष, एक प्रकारका नाम । ११ पलुरविशेष, एक राचमका नाम।

१२ श्यापचर्म निखा है, जि इसे बामिने मार कर श्वामुक्त पर्यंत पर लेका जा। वम पर मद्यमि मतलबे शायने कालि ठम पर्यंतके पात नहीं ग मकता या। (खो०) १२ एक मस्यर्बे।

१३ मद्यार्थे पानेयने हमने मस्यका जो कर मस्य पचक बिपा या। इमोके पदपन्थने रामचन्द्रजी बन गये छे। (मारतरव २०१ प०) १४ पचविशेष पानेका एक टाय । १४ एक प्रकारका पाचोन पातक यन्त्र।

दुस्युमिख (म० पु०) कोटमिद, एक प्रकारका कोडा।

दुस्युमिनिर्वाट (म० पु०) दुस्युमिरेव निर्वाटो यस्य । टानकमिद, एक पचुरका नाम।

दुस्युमिखेच (म० पु०) दुस्युमि शिनाया यस्मि । श्वमिन्, एक राजाका नाम।

दुस्युमिखन (म० पु०) दुस्युमि खानेके इत्य खने यस्य विपबिज्यायां। सुशुतोश्च विपबिज्यायांमिद, सुशुतमि निवो इई एक प्रकारको विपबिज्यायां। बच, पारकर्म, तिनिग, पिचुमर्द (मीम), पाटमि, पारिमटक पाथ, इ मर, करवाट (कमकाको मङ्क), कङ्कुर (पशुनका पीङ्क), मस्यक, पाथातक, धोथातक, पट्टोट, पामनक, प्रपच, कूटज, धामो, कुट्टिय पामनाक, बिरबिन्ध, महापुच, सुनुको इच, मझातकपुच खोनाहय मधुर, रस्योमा खन, मूवा, तिलक, मोसुरक मोपपय्य घोर परिमेद इन सबका मस्यका गोसूत्रमें चार बना कर कपड़में छेपे जानि । पीछे पिपयोमुन, लम्बुनीयज, एक शैलम, चोषक (काच), मुङ्कलक मन्दिहा, करचिखा । बरपिप्यकी मिर्च, लयक, म्यामानता, बिबुब काबी,

अनन्तमूल, सोमलता, निमोय, कुंकुम, शालपर्णी, केवडा, श्वेतसर्प, वरुणहृत्, सैश्वलवष, पाकर, चिञ्जलहृत्, वेतम, मूषिकपर्णी, वन्याम्बिका, अतिविषा, पञ्चगिरा, हरीतकी, भद्राक, कुष्ठ, हरिद्रा, वच और लौह चूर्ण इन सब द्रव्योंको उक्त चारमें डाल दे' और लेप बनावे। इस लेपको दु'दुभि, पताका, तोरण इत्यादिमें पीते। ऐसे तोरण, दु'दुभि आदिके चवण, दर्शन वा स्पर्शसे विषका प्रभाव दूर हो जाता है। शक'राश्रमरो, अश'यं, वायुजन्य सुख, काष्ठ, शूल, उदरी, अजीर्ण, ग्रहणां, अरुचि और सब प्रकारके शोक तथा खास रोगमें भी इसका सेवन किया जाता है। (सुश्रुत दु'दुभिसवनीय विधिप्रताप्याय) दुन्दुभिसर (सं० पु०) दुन्दुभिका शब्द, नगाईको भाषान।

दुन्दुभिसरराज (सं० पु०) बुद्धका एक नाम।

दुन्दुभ्य (सं० पु०) दुन्दुभो दानवभेदे विषे वादरभेदे वा भवः प्रच्यो वा यत्। १ रुद्रभेद। दुन्दुभये तक्षादनाय साधु यत्। २ दुन्दुभिषादन-साधनमन्त्रभेद, एक प्रकारका मन्त्र।

दुन्दुमार (सं० पु०) धनुमार ष्योटरा० साधुः। धनु मार, राजा त्रिशङ्कुके एक पुत्रका नाम।

दुपडा (हिं० पु०) १ दो पाटका चट्ट। २ वह लम्बा कपड़ा जो कंधे या गर्दने पर रखा जाता है।

दुपडा (हिं० स्त्री०) दुपडा देखा।

दुपट (हिं० पु०) द्विपद टोली।

दुपर्दी (हिं० स्त्री०) दोनो' और पटे' लगे हुए मिरजई फतुहो वा नौमस्तीन।

दुपहर (हिं० स्त्री०) दोपहर देखा।

दुपहरिया (हिं० स्त्री०) १ मध्याह्न, दो पहर। २ डेढ़ दो हाथ ऊंचा एक प्रकारका पोशा। यह एक मोषि ल'ठलके रूपमें होता है और फूलोंके लिये बगोचोंमें सगाया जाता है। दूसरे दूसरे पौधोंको नाई' इसमें शाखाए' या टहनियां नहीं निकलती हैं। इसके पत्ते आठ-दश अंगुल लम्बे, एक डेढ़ अंगुल चौड़े और गहरे हरे रंगके होते हैं। इसके फूल कटोरिके आकारके गोल और गहरे लाल रंगके होते हैं। फूलोंके भेड़ जाने पर जो बीज-कीय रह जाता है उसमें राईके दानेसे काले

काले बीज पड़ते हैं। इसका गुण—मन्त्ररोधक, कृष्ण गरम, भारो, कफकारक, ज्वरनाशक, तथा वातपित्त-नाशक है। ३ दुष्ट, पाजो, इगामजाटा।

दुपहरी (हिं० स्त्री०) दुपहरिया देखो।

दुफमली (हिं० वि०) दोनो' फमलो'में उत्पन्न होमिवाला।

दुफानिकुत्थ (मं० को०) नीलक'ठतानिकोक्त वर्षप्रवेश योग भेद। मन्त्रगति ग्रह यदि उच्च खवेत्वाटि रहित हो कर गीघ्रगति ग्रहके साथ इत्यगाल योगविशिष्ट हो और यदि उक्त शीघ्रगति ग्रह अष्टगत, नीचगत वा वक्रगत न हो, तो यह योग होता है। इस योगमें सभी काम सफल होते हैं। इस योगका नाम 'दुफानिकुत्थ' मो है।

दुर्बली (हिं० स्त्री०) मालशुभको एक कसरत। इसमें बेंतको दोनो' बगलो'मेंसे निकाल कर हाथ ऊंचे करके उसे इस तरह लपेटे जाते हैं कि एक' कुंठल सा बन जाता है। इसके बाट दोनो' पैरोंको सिगकी और उठाते हुए सभी गोल कुंठलमेंसे निकाल कर कलावाजोके साथ नीचे गिराये जाते हैं।

दुवडा (हिं० पु०) एक प्रकारकी घास' जो; सोपायो'के खानिके काममें आती है।

दुवधा (हिं० स्त्री०) १ अनिश्चय, चिन्तकी अस्थिरता। २ असमंजस, आगा पीछा। ३ मन्देह मंशय। ४ चिन्ता, खटका।

दुवराजपुर—बङ्गालके वीरभूम जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २३°४८' ८० और देशा० ८७°२४' ५० सिट्टीसे १४ मील दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। यहाँ सुम्फो अदालत, थाना और एक बड़ा बाजार है। यहाँ बहुतसे तालाब हैं जिनके किनारे अनेक तालुके पेड़ोंसे ताड़ी निकाली जाती है। नगरके दक्षिणमें दानेदार पत्थर तथा काले अवरकका पहाड़ है। इसके ऊपर चटनेसे पार्श्व-नाथ, राजमहल और पञ्चकूट पहाड़ दृष्टिगत होते हैं। पहाड़के ऊपर पत्थर काट कर एक सुन्दर गिवालय बनाया गया है।

दुवराजगोला (हिं० पु०) तोपका लंबीतरा गोला।

दुवराल पलंग (हिं० पु०) पालकी एक डोरी। इसे खींच कर पालके पेटेकी अवा निकाली जाती है।

दुधला (हिं० वि०) १ क्रय, शीघ्र शरीरका। २ अयत्न, कमजोर।

दुःखसाधन (हि० पु०) लज्जता, बीचता ।
 दुःखान (हि० श्री०) दूरीको श्री ।
 दुःखाना (हि० पु०) मनकी मोटो रखो ।
 दुःखारा (हि० हि० वि०) रोगारा बैकी ।
 दुःखाना (हि० वि०) रोगाना रैकी ।
 दुःखानिया (हि० पु०) मज घोषा जो दोनों जावोके
 लक्ष्यकार यन्त्रता हो ।
 दुःखिधा (हि० श्री०) दुःखना रैकी ।
 दुःखिमो (हि० श्री०) यममोप्यको थोरसे दिये जानेका
 एक प्रकारका कामोपन । इधमि मोच कपयेके लक्षण
 पर हो कपये दिने भासि है ।
 दुःखि (हि० पु०) ब्राह्मणको ली एक लयादि । यह मन्द
 द्विधेटीका प्रथम ग मन्द है । द्विधेटीका नाम संस्कृत भाषा
 भाषिकोंने दोषि रखा या किसका मो पच धा दो बिहडा
 कामनेका । यही दोषि मन्द भाषामि दुःखि हो गया ।
 दुःखामो (हि० पु०) दुःखारी होको ।
 दुःखामिया (हि० पु०) मज जो दो भाषापीको जानता हो ।
 दुःखामौ (हि० पु०) दुःखामिया ।
 दुःखिका (पा० वि०) दो ख का, जिसमें दो खन हो ।
 दुःख (पा० श्री०) १ पुच्छ, पूष । २ जिसी कामका
 सबसे गिय बोझाया भाग । ३ मज पादमी की जिसी
 के पीछे गया रहता है पिच्छवण्यु । ४ मज मलु जो
 पूषकी तरह पीछे जाती या व हो जाती है ।
 दुःखान-१ बिहार थोर लक्ष्मीके यन्त्रावत यन्त्रावत परमने
 जिसीका एक सदर उपनिभाग । यह पचा० २३ ३८
 से २४ ३८० थोर देगा० ८६ ३७० से ८० ४२०
 पू०में धरलित है । सुपरिमाव १३२८ मगसीक चौ
 माकस प्या प्राव ३१६८११ है । २ मज दुःखान नामकी
 यहर थोर २१०६ घाम जमति है ।
 २ लक्ष उपनिभायका एक प्रज्ञान यहर । यह पचा०
 २३ १६ थ थोर देगा० ८० २३ पू०में धरलित है ।
 माकस प्या प्राव ३३२६ है । यहूतीको राखके थारफने
 हा दुःखामि यहूतीक यममोप्यक जानेका नाम देकर्मि
 पाता है । १०१८ ई०म दुःखाना जीरभूमसे प्रथम एक
 वाटबानो धान, बा । १०२३ ई०में यत्रमडन पाकस
 प्रदेस पर धानन करनेक सिधे इसे भाजनपुरके प्रथम

एक 'बोडिकामी' बाना बना दिया गया । १८२३ ई०
 तक इसका नाम दुःखाना ही सुना जाता था । इसी धान
 यन्त्रावत-विशेषके समय यहाँको बाबरीको प मरिजी
 येथाने इसका नाम गवादुःखाना रखा । पाव मो
 लोग इसे केवल दुःखाना ही कहते हैं । गवादुःखाना
 का नाम बहुत कम सुना जाता है । १८५६ ई०में दुःखाना
 'यन्त्रावत परमना' जिसीका सदर रूप जिस्य कुछ दिनेके
 बाद लक्ष जिसीका प्रत्येक यमद्विभजन अब प्रथम
 जिसी हो गया, तब दुःखाना केवल दुःखाना-सकद्वि-
 जनका सदर रखा । यह जिसीको मन्त्रावत यदावत
 पादि है । मोर मरिजी जिसीका यहाँका बाजार पच
 जित है । १८०३ ई०में यहाँ थ निरिये मिठी स्थापित
 हुई । यहरकी भाव प्राव ०७०० ६० है ।
 दुःखमौ (पा० श्री०) ? पूषके मोके एका रूप बोडके
 मात्रका एक लक्षमा । २ मुडके बीचकी हड्डी ।
 दुःखदार (पा० वि०) ? जिसी पूष हो । २ जिसके पीछे
 पूषको तरह थोर मलु लगे या व हो हो ।
 दुःखन (हि० वि०) प्रथमक, मिच, धनमना ।
 दुःखाना (हि० वि०) १ सुरो माता । २ सीसीकी मा ।
 दुःखाना (हि० पु०) पाव, पदा ।
 दुःखक (म० पु०) दुःख, एक प्रकारका मेका ।
 दुःखाना (हि० वि०) १ जिसमें दो ख हैं । २ दो पच पच-
 कयन करनेवाला दो तरहको पाव कतनेवाला ।
 दुःखो (हि० श्री०) द्विधा, जमो एक पचका थोर
 जमी पूरै पचका पचनयन ।
 दुःख (स० धन्य) दुःखक दुःख वा । १ दुःख । २ निद्रा ।
 ३ निरिद्र । ४ पुच्छ । ५ ईरदय । ६ क्खाय । ७ लय,
 दुःखाना । ८ पचनयन । ९ मडल । जिसके भाव मिचने
 से दुःखना दुःख मन्द उपमने हो जाता है ।
 दुःख (स० हि०) दुःखिय । दार, दरवाजा ।
 दुःख (म० सि०) दुःखानु कुर । दाता देनेवाला ।
 दुःख (हि० धन्य) एक मन्द जिसका प्रयोग तिरकार
 पूषके किसीकी हटानेके लिये होता है । इसका प्रयोग
 विरिय कर कुत्तोंके लिए होता है । जमी जमी लोग
 यही पादिको को ही प्यारसे मो कहते हैं ।
 दुःख (पा० पु०) १ सुखा, मोमी । २ माकर्म पचनेका
 मोतोका लक्षण, लोचक । ३ मोटो माली ।

दुराचर (स० त्रि०) दुःखेन आचर्यतेऽसौ दुर-आ-चर-
खल् । १ दुश्चर, जो कठिनतासे आचरण किया जाय । २
दुष्टाचार युक्त, खोटा व्यवहारवाला ।

दुराचरण (स० पु०) दुष्ट व्यवहार, बुरा चालचलन ।

दुराचरित (स० क्लो०) दुःखेन आचरितं । जो बहुत
कठिनतासे किया गया हो ।

दुराचार (स० पु०) आचर्यते इति चर भावे खल् ।
दुर्दुष्टः आचारः । १ दुष्ट आचार, बुरा चालचलन ।

अध्यात्म-रामायणमें लिखा है, कि कलिकालमें सभी
मनुष्य पुण्यकर्मसे रहित होंगे, भयंटा खराब कामोंमें
लगे रहेंगे और झूठ बोलेंगे । (त्रि०) दुष्टः आचारी
यस्य । २ दुष्टाचारयुक्त, जिसका चालचलन खराब ही ।

दुराचारी (हिं० वि०) दुष्ट आचरण करनेवाला, बुरे
चालचलनका ।

दुराज (हिं० पु०) १ दुष्ट शासन, बुरा राज्य । २ वह
राज्य वा शासन जो एक ही स्थान पर दो राजाओंका
हो । ३ वह स्थान जिस पर दो राजाओंका राज्य हो, दो
राजाओंकी समझदारी ।

दुराजी (हिं० वि०) दो राजाओंका, जिसमें दो राजा
हों ।

दुराध्यक्ष (स० त्रि०) दुःखेन आध्यक्षं क्रियते कर्मोप-
पटे खल् सुम् । दुःख द्वारा अनादर, दुःखित,
घोड़ित ।

दुरादरसम्भव (स० क्लो०) दुःखेन अनादरेण आध्येन
भूयति, उपपटे भावे खल्-सुम् । जो बहुत कष्ट करके
सुरी अवस्थामें अच्छी अवस्थामें आया हो ।

दुरात्मता (स० स्त्री०) दुरात्मनो भावः दुरात्मन्-तल्-
टाप् । दुरात्माका कार्य या भाव ।

दुरात्मन् (स० त्रि०) दुष्टः आत्मा अन्तःकरणं यस्य ।
दुष्टान्त-करण, नीचाशय, खोटा । मनुके मतमें जो
मनुष्य कन्याका दीप छिपा कर कन्यादान करता है,
वही दुरात्मा है और उसका दान निष्फल होता है ।

दुरादान (स० त्रि०) जो कष्टसे धारण किया जाय ।

दुरादुरी (हिं० पु०) गोपन, छिपाव ।

दुराधन (स० पु०) धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम ।

(भारत आदि० ६० अ०)

दुराधर (स० पु०) धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम ।

(भारत १११० अ०)

दुराधर्ष (स० पु०) दुष्टान् राक्षसान् आधर्षति दुर-आ-
धृष-अचर् । १ श्वेतसर्षप, सफेद सरसों । २ विष्णु ।
(त्रि०) ३ अधर्षणीय, जिसका दमन करना कठिन हो ।
४ अहङ्कारी, अभिमानी ।

दुराधर्षता (स० स्त्री०) प्रचण्डता, प्रवृत्तता ।

दुराधर्षा (स० स्त्री०) दुराधर्षे-टाप् । कुटुम्बिनीहृत् ।

दुराधार (स० त्रि०) दुःखेन आधायते दुर-आ-धा-
रि कर्मणि खल् । १ दुःख द्वारा आधारणीय, जो कठि-
नताके सहारा पा सके । २ चिन्तनीय । (पु०) ३ महा-
देव, शिव ।

दुराधि (स० पु०) दुर्दुष्टः आधिः । क्लेशजनक, जिससे
दुःख हो ।

दुराधी (स० त्रि०) मन्त्र चेषाकारी, दुष्ट आचरणका ।

दुरानम (स० त्रि०) दुःखेन आनम्यते दुर-आ-नम-णिच्-
कर्मणि खल् । दुःख द्वारा आनमनीय, जो बहुत कठि-
नतासे सन्तुष्ट किया जाय ।

दुराना (हिं० क्लि०) १ दूर होना, हटना । २ अलक्षित
होना, छिपना । ३ दूर करना, हटाना । ४ त्यागना,
छोड़ना । ५ गुप्त रखना, छिपाना ।

दुरानो—अफगानिस्तानको सुसलमान-धर्मावलम्बी एवा
जाति । इसका दूसरा नाम अवदलो है । दुरानो
शब्द पारस्य भाषामें निकला है । इसका मौलिक अर्थ
'सुक्तासम्यन्वीय' है । अवदली जाति अपने दाहिने कानमें
छोटी छोटी सुक्ताओंसे जडा हुआ कुण्डल पहनती है,
इसीसे इन लोगोंके प्रथम राजा वीरवर अहमद शाह
अवदलीने 'दुरिदुरान्' अर्थात् सुक्तावलीकी सुक्ताकी
लघाधि पाई थी । तभीसे सभी अवदलो जाति दुरानो
नामसे कहलाती आ रही है । यह जाति साहोजाह,
पुलजाह, वारकजाह, हलजाह, नुरजाह, ईशाकजाह
और खगवनी आदि कई एक शाखाओंमें विभक्त है । इन
का आदि वासस्थान कन्दाहार (प्राचीन गान्धार) प्रदेशमें
था । वहीमें ये लोग बहुत दिन हुए हेलमन्द और
अवंदाव नदीके किनारे होते हुए वर्तमान हजारा
प्रदेशमें आकर बस गये हैं । काबुलसे लेकर जलालाबाद

प्रदेशके बीच कहीं कहीं दो एक दुरानोका नाम है। इन सब स्थानोंमें हमो जगद इन्मेंसे कुछ तो जमींदार हैं और कुछ सैनिक विभागमें इस्तिमोमो। जोई भी सामान्य प्रजाके क्षयमें नहीं है।

प्रसिद्ध पछट्ट शाह धरदपो (पेकि दुरानो) ने अपने पदाधारक बोरल और धरदवसायके प्रभावसे हम जातिको प्रथम पराक्रान्त, एककुत्राम और दिम्बिजयो बना दिया था। आर बर गार अरको देको। उन्हींके समय में यह जाति उत्पत्तिकी चरम मीमा तक पहुँच गई थी। पूर्वमें इतद्द और सिन्धु नदीके किनारेके शिकर पक्षियोंमें पारसकी सबभूमि तक और छत्तारमें घामु ना पञ्च, नदीके लेबर, दक्षिणमें धरदसामर तकसे प्रदेशोंमें दुरानो शासन विस्तृत था। यह सटर्क बार बार एक सबभूमि पर चढ़ाई करनेमें यह जाति राक्षसपट्टमें उन्नत और महासुखियाली हो गई। अतिसं पद्यमानक और दस्तुदुस्तिसे सदा से, से ममासदमें निरुक्त हुए। किन्तु धर्म्य परिचित पञ्चका दारा देव क्रमसे इन्हांतु बन सम्पत्ति और समतापाम कर दे मोय अथिक दिन उसे रख न सके। पछट्ट शाहके मरनेके बाद ही उनके पुत्र विनासो, दुर्बलसेता और निद्रयम तैमूरके राजत्वकालमें पक्षी धर्मके प्रदेश परिष्कारसे निबन्ध पड़े। तैमूरकी चम्पुके बाद उनके पुत्रोंने मारा राज्य आपसमें बाँट लिया, किन्तु यहविवादके कारण मोरु हा से सबसे सब बन गोन हो गये और बारबारारे न घोय दोष्य महमदने काबुलके सिंहासन पर अधिकार जमा किया। उनसे माहयोंने चम्पाहार, किनात आदि स्थानोंमें राज्य स्थापित किया। इसी प्रकार महोकाह न गये परमानिष्ठानका राज्य-शासन बारबारारेके हाथ गया। महोनाह न मोर पछमद शाह दुरानीके व शरर सुत्रा न गरीशके पाचित होकर सुखियानामें रहते थे।

भारत-भारतारके इतिहासके आरम्भमें बर्तनके विद्ये दोष्यमरुदके माय मरियु स्थापनका प्रस्ताव किया, किन्तु दोष्यमरुदके इन्में राजी न हुए। अतः गवर्मण्डने १८३८ ई में सुत्राको काबुलके सिंहासन पर विजया। पेकि दोष्यमरुदके सुरत ही पञ्चदेशीकी मरुच की ओर धर्मकेने लक्षे भारतवर्षको भेज दिया। किन्तु लससे

बाद जो काबुल वृत्तके समय १८३० ई०में सुत्रा दुरानि अजनातोमें मार गये। जसो बर्ष काबुलको मसी धम-रेको सेना मारी गई। इसका बदला लेनेके लिये च ग रेज गवर्मण्डने पन्च साहसके पञ्चोन बहा सिना भेजा जब वह सेना पञ्चीतरह बदला लेकर भारतको लौटा तब वहने दोष्यमरुदका परमानिष्ठानके धमीर बना कर भेज दिये गये। दुर्ब-पिच अजनातोने साहसां बार शान्त पञ्चमदको पाटर पूर्वक २ म्यर्वा ना की। तमोने लक्ष्मीके न शरर राज्य करने पा रहे हैं।

दुराय (म० त्रि०) दुर्बलेन धाम्यते सुर पाप-पण । १ दुर्भाय्य कठिनतासे मित्रनेवाला। (श्री०) मायि पक्ष । २ दुर्प्राप्ति ।

दुरापण (म० त्रि०) दुर. पाप स्फुट । दुष्पाय, कठिनता से मित्रनेवाला ।

दुरापाहन (च० त्रि०) दुर्बलेन पापायते दुर. च-पाट न्य ट । दुर्बल द्वारा पापाटनीय, जो कठिनतासे आ मर्क ।

दुरापूर् (स० त्रि०) दुर्बलेन पापूर्वमें पा पुर श्व न । १ दुष्पुत्र जो बहुत कठिनतासे पूरा किया जाय । २ दुष्क द्वारा पूर्वमान जो चारों ओर दुर्बलमें विरा हो ।

दुराबाध (च० त्रि०) १ जो दुष्क वा पीड़ा देनेके योग्य नहीं हो । (पु०) २ यिन महादोष ।

दुर्भाष्य (म० त्रि०) जो बहुत कठिनतासे वयोभूत किया जाय ।

दुराय्य (म० त्रि०) दुष्पाय्य जो कठिनतासे प्राप्त हो ।

दुरारक्ष्य (म० त्रि०) दुर्बलेन पाररक्षते दुर. रच-यत् । दुष्क द्वारा रक्षणीय जो बहुत कठिनतासे बचाया जा सके ।

दुराराज्य (म० त्रि०) दुर्बलेन पाराज्यते चाराध यत् । १ दुष्क द्वारा पाराधीय जिनको पूजना ना मनुष्ट करना कठिन हो । (पु०) २ विष्णु ।

दुरारिज्जु (म० पु०) दुष्टमिर्षाति दुर. श्व चिति । दुररी दुःखामो अक्षरः त ज्विय ज्वन-क्षिपु । विष्णु ।

दुरावह (म० पु०) दुर्बलेन पावहयतेपी दुर. पा तथ र्थे नम चि क । १ निरुत्पन्न शिकका पीड़ा । २ मारिजन इव, मारिजलका पीड़ा । ३ दुरारोहनीय जिस पर चढ़ना कठिन हो ।

दुरावहा (म० श्री०) १ चक्षुःशो इव चक्षुरका पीड़ा । २ तापप्रव, ताड़का पीड़ा । ३ व म्, बधि ।

दुरारोह (सं० पु० स्त्री०) दुःखेन आरुह्यते दुर-आ-रुह-
खल् । १ सरठ, गिरगिट । स्त्रियां जातित्वात् डीप् ।
(त्रि०) २ शोवली । ३ शालमलिहच, सेमरका पेड । ४ ताल
हच, ताड़का पेड । ५ खर्जुरी हच, खजूरका पेड ।
(त्रि०) ६ दुरारोहणीय, जिस पर चढ़ना कठिन हो ।
(पु०) ७ दुःख द्वारा आरोहण, वह जिस पर चढ़ना
कठिन हो ।

दुरारोहा (सं० स्त्री०) १ शोवलीहच । २ सरठ, गिर-
गिट । ३ खर्जुरी हच, खजूरका पेड ।

दुरालच्य (सं० त्रि०) दुःखेन आलच्यते दुर-आ-लच्य
यत् । जो बहुत कठिनतासे टोख पड़े ।

दुरालभ (सं० पु०) दुःखेन आलभ्यते आ-लभ-खल् ।
दुर्लभ्य, जिसका मिलना कठिन हो ।

दुरालभा (सं० स्त्री०) दुरालभ-टाप् । स्वनामख्यात कण्ठक
युक्त क्षुद्र क्षुप विशेष, जवाभा, घमाभा, हिं गुग्गुला । इस-
का संस्कृत पर्याय—दुरालभा, धन्वयास, ताम्रमूला,
कच्छूरा, दुस्पर्शा, धन्वी, धन्वयवामक, प्रबोधनी, सूक्ष्म-
दन्ता, विरूपा, दुरभियज्ञा, दुर्लभा, दुग्धपर्वा, याम, यवाह
दुस्पर्श, कुनाशक, रोदनो, अनन्ता, समुद्रान्ता, गाम्भारी,
कपाया, धनुर्यास, युवस, कच्छूरा, विकण्ठक और पद्म-
मुखी है । इसका गुण—सारक, च्वर, हृदि, श्लेष्मा,
पित्त, विसर्प और वेदनानाशक है । भावप्रकाशके
मतसे इसका गुण—कटु, तिक्त, उष्ण, चार, अम्ल, मधुर,
वात, गुल्म और प्रमेहनाशक है । २ कर्पास, कपास ।
दुरालभ (सं० त्रि०) दुर-आ लभ-खल् नुम् । दुरालभ,
जिसका मिलना कठिन हो ।

दुरालाप (सं० पु०) दुर्दुष्टः आलापः । १ कट, वचन,
बुरी बात चीत, गाली । (त्रि०) दुर्दुष्टः आलापो यस्य ।
२ कट, भाषा, बुरा वचन बोलनेवाला ।

दुरालोक (सं० त्रि०) १ अत्युज्ज्वल, बहुत सफेद । (पु०)
२ अत्युज्ज्वलता, चमक ।

दुराव (हिं० पु०) १ अविश्वास या भयके कारण किशोरे
वात गुम्ह रखनेका भाव, छिपाव । २ कपट, छल ।

दुरावत् (सं० त्रि०) जो बहुत कठिनतासे धुमाया जा
सके ।

दुरावह (सं० त्रि०) जिसका झाना कष्टकर हो ।

दुराव्य (सं० स्त्री०) अवगत्यादी भावे स्यत् दुष्टं प्राथ्यं
गतिः । दुष्टमति, खराब विचार ।

दुराग (सं० पु०) दुर्दुष्टा आगा यस्य । दुरागन्वित,
जिसे अच्छी उम्मीद न हो ।

दुरागय (सं० पु०) दुर्दुष्टा आगयः । १ दुष्ट आगय, बुरी
नीयत । (त्रि०) २ दुष्टागययुक्त, जिसकी नीयत बुरी
हो, खोटा ।

दुरागा (सं० स्त्री०) दुर्दुष्टा आगा । दुर्मनोरथ, ध्यर्थ की
आगा, भ्रूठी उम्मीद ।

दुरास (सं० त्रि०) अजेय, जिसे कोई जीत न सके ।

दुरामट (सं० त्रि०) दुःखेन आमाद्यतेऽसौ दुर-आ-मट
कर्मणि खल् । १ दुःप्राप्य, जिसका मिलना कठिन हो ।

दुरामित (सं० स्त्री०) दुर-आ-मक । १ वह स्थान जहाँ
रहने योग्य न हो । २ खराब वासस्थान ।

दुराहर (सं० त्रि०) दुःखेन आह्रियतेऽसौ दुर-आ-ह-
खल् । दुःख द्वारा आहरणीय, जिसके खानेमें बहुत
कष्ट हो ।

दुराहा (सं० त्रि०) दुरदष्ट, अभागा ।

दुरित (सं० स्त्री०) दुष्टं इतं गमनं नरकादिस्थानप्राप्ति-
रस्मात् । १ पाप । २ उपपातक, कौटा पाप । (त्रि०)
३ पापयुक्त, पापी ।

दुरितचय (सं० पु०) दुरितम्य चयः । पापचय, पापका
घटना ।

दुरितदमनो (सं० स्त्री०) दुरितं दम्यते इत्यथा दम करणे
ल्युट् डोप् । १ शमोहच । (त्रि०) २ पापनाशिनो,
पापका नाश करनेवाली ।

दुरितारि (सं० पु०) दुरितस्य अरिः इत् । १ दुरित
नाशक, पापनाशक । २ जैनियोंका शासनदेवतामेद ।

दुरिधाना (हिं० स्त्री०) १ दूर करना, हटाना । २ तिर-
स्कारके साथ भगाना, दुरदुराना ।

दुरिष्ट (सं० स्त्री०) दुष्टं इष्टं यज्ञः । अभिचारार्थं यज्ञ,
वह यज्ञ जो मारण, मोहन, उच्चाटन आदि अभिचारोंके
लिये किया जाय । सृष्टिपुराण आदिमें ऐसा यज्ञ करना
महापाप बतलाया है । विष्णुपुराणके मतानुसार देवता
ब्राह्मण और पितरोंसे द्वेष करनेवाला, रत्नका सुराने
वाला, दुरिष्ट यज्ञ करनेवाला, क्रमिभक्ष और क्रमोद्य

मरुति जाति है । २ पाप, पातक । समयको स्थितिमें पातकोंको दुरित कहा है ।

दुरिष्टकृत (म० पु०) दुरिष्ट परिचारक्य करोगोति क क्षिप तुगायम् । परिचार यज्ञकृता, यज्ञ जो परिचार कृत करता हो ।

दुरिष्टि (स० स्त्री०) दुष्टा इष्टि । पर्यायीय वच, परिचारक वच ।

दुरिक्त (स० त्रि०) अयमनयोरेतां वा अतिथयेन दुःमिन्दित । अतिमन्द बोधा, पराव ।

दुरोय (स० पु०) दुष्ट ईय प्रसा । निन्दित प्रसा ।

दुरीयथा (स० स्त्री०) दुर्दुष्टा ईयथा इच्छामि य सम । भाव, बहदुष्टा । १ अहित कामना, कुरी नीयत ।

दुष्ट (स० पु०) परात्मिन्, एक पदाङ्कका नाम ।

(मत्त मत्र० १६१ प०)

दुष्टक (स० स्त्री०) दुष्ट कक । दुष्टकचन, अराव नचन ।

दुष्टक्रि (स० स्त्री०) दुष्टा क्रि । अट्, पाक अङ्कुरी वात ।

दुष्टका (या० वि०) १ त्रिषु दोनों और सु द हो । २ त्रिषु दोनों और कोर् क्रि क हो । ३ त्रिषु दोनों और दो र य हो ।

दुष्टचार (स० त्रि०) दुःखिन उद्योगेऽसौ दुः-उत्-वर पनसें बन् । पदुद्योगे परीक्ष, उद्योगनक, अङ्कुर ।

दुष्टचार्य (स० त्रि०) दुः उ-वर-पत् । जो बहकर्मि उद्योग न बिबा का सके ।

दुष्टच्छेद (स० त्रि०) दुःखिन उच्छेदयेऽसौ दुः-उ-च्छेद-कर्म-वि-कत् । १ दुर्भार, जो कठिनतासे उखाड़ा जा सके ।

दुष्टच्छेद (स० त्रि०) दुः उ-च्छेद-कत् । दुष्टच्छेद, जो सक्षयमें उखाड़ा न सके ।

दुष्टचर (स० त्रि०) दुःखिन उद्योगेऽसौ दुः-उ-च्छेद-कर्म-वि-कत् । १ दुष्टचर त्रिषु चार पादा कठिन हो । २ अनुचर त्रिषु चार दिशा कठिन हो । दुष्ट चर (स्त्री०) ३ दुष्ट चर, अराव जना ।

दुष्टोत्थ (स० त्रि०) दुष्टोत्थ को बहुत कठिनतासे उभवा का सके ।

दुष्टकृ (स० त्रि०) दुष्टकृ, जो बहकर्मि योग्य न हो ।

दुष्टदय (स० त्रि०) १ जो अच्छी तरह दोष न पड़े । २ दुर्निरोध्य, त्रिषु देखते न बने भय कर, सौजन्यक । दुष्टदाहर (स० त्रि०) दुःखिन उच्छेदयेऽसौ दुः-पा-क-कर्म-वि-कत् । त्रिषु उच्छेदक सक्षयमें न दिया जा सके ।

दुष्टद्वय (स० त्रि०) दुःख, जो मङ्गल योग्य न हो ।

दुष्टद्वारा (स० स्त्री०) योगभेद, अन्तर्द्वारोक्ता एक योग । इसमें अन्तर्द्वार और अन्तर्द्वारा दोनों दोनोंका मिल जाता है ।

अन्तर्द्वारमें यदि सूर्यको छोड़ कोर् दूरपा एक चन्द्रमासे बारहवें घरमें जा ता पतका योग और यदि सूर्यको छोड़ चन्द्रमासे दूरवें घरमें हो, ता अन्तर्द्वार योग होता है । यदि ये दोनों क्षान जा पक्षात् सूर्यको छोड़ कोर् दूरपा एक चन्द्रमासे बारहवें घरमें रह कर चन्द्रमासे दूरवें घरमें अवसान करे, तो दुष्टद्वारायोग होता है । इस दुष्टद्वारायोगमें त्रिषु अन्तर्द्वारा होता है नष्ट बड़ा भारी बन्धा, बन्ध, बीर और विख्यात ज्ञानान, सोम्य मूर्ति उत्तम सोम्यायाको, सुखोपयोग, दाता, दुष्ट, अत्रि-पालक, सुदुष्ट और उत्तम पितृवसम्पन्न सुख्य होता है ।

दुष्टपञ्चम (स० त्रि०) दुःखिन उच्छेदयेऽसौ दुः उ-प-ञ्चम-कत् । दुराचर, दुर्गम, अज्ञा प्राणा कठिन हो ।

दुष्टपचार (स० त्रि०) दुः-उ-प-चार-कत् । अनुद्योग, अराव व्यवहार ।

दुष्टपयोग (स० पु०) अनुपपुञ्ज व्यवहार, दुरा उपयोग ।

दुष्टपनय (स० त्रि०) दुःखिन उच्छेदयेऽसौ दुः-उ-प-नय-कत् । दुर्निरोध, त्रिषु देखते न बने ।

दुष्टपनी (स० त्रि०) दुःखिन उच्छेदयेऽसौ दुः-उ-प-नय-विनि । अतर्कित मानसे पानत, जो अन्तर्द्वारा पा पड़े जा हो ।

दुष्टपक्षान (स० त्रि०) दुष्टपक्ष, त्रिषु मिश्रणा कठिन हो ।

दुष्टपाय (स० पु०) दुष्टा उपाय । दुष्टोपाय, अराव विचार ।

दुष्टप (पु०) नीलकण्ठताजिषु प्रतानुसार फलित ज्योतिषशा एक योग ।

दुर्ग (हिं० पु०) पतले और लम्बे दानिका एक प्रकारका गेहूँ ।

दुर्ग (फा० वि०) १ जो अच्छी अवस्थामें हो, लोक ।
२ विना दोषका जिसमें ऐव न हो । ३ उचित, सुना-
सिव । ४ यथार्थ, वास्तविक ।

दुर्गस्ती (फा० स्त्री०) संशोधन, सुधार ।

दुर्ग (सं० त्रि०) दुःखिन उच्यते दुर्ग उह-कर्मणि खलु ।
दुःखितर्क, जो विचारमें जल्दी न आ सके, गूढ, कठिन ।

दुर्ग (हिं० पु०) दिरेक देखो ।

दुर्ग (सं० त्रि०) दुर्ग-इ वाहु० व । दुर्गं हाग गन्ध, जहाँ
जाना कठिन हो ।

दुर्ग (सं० त्रि०) दुष्ट शोको समवायी अत । दुःसेव,
जहाँ रहने योग्य न हो ।

दुर्ग (सं० पु०) गृह, घर ।

दुर्ग (सं० पु०) दुष्ट आ समन्तादुर्गमस्य । १
श्रुतकार, लुआरो । २ पण, दाव । ३ अन्न, पासा ।
(लो०) ४ दूत, चुआ ।

दुर्ग (सं० पु०) नागर्कशर वृक्ष ।

दुर्ग (हिं० पु०) वह लकड़ी जो दरवाजेके ऊपरमें
रहती है, भरेठा ।

दुर्ग (सं० पु०-स्त्री०) दुःखिन गम्यतेऽसौ दुर्ग-गम-वाहु० ड ।
प्रसिद्ध राजाशोकका आश्रयणोय कोट, गढ़, किला ।
कालिकापुराणमें दुर्गका विषय इस प्रकार लिखा है—
राजा नगरके समीप ही प्राकार, अशालिका और तीरण
द्वारा भूषित दुर्ग बनावे । नगर पर यदि किसी तरह
शत्रु चढ़ाई कर दे, तो दुर्गमें आश्रय ले कर उनका
समना करे । दुर्ग राजाशोकका प्रधान महाय है ।
दुर्गका एक धनुर्दारी दूमरे स्थानके भी मनुष्योंसे और
दुर्गके एक सौ मनुष्य, बाहरके हजार मनुष्योंमें युद्ध कर
सकते हैं । इसी कारण सभी जगह दुर्गको प्रशंसा को
गई है । जलदुर्ग, भूमिदुर्ग, वृक्षदुर्ग, वनदुर्ग, मरुदुर्ग
और पर्वतदुर्ग इन छः प्रकारके दुर्गमें देखके अनुमार
कोई दुर्ग बना सकते हैं, जैसे पार्वत्यदेशमें पर्वतदुर्ग,
मरुदेशमें मरुदुर्ग इत्यादि । दुर्ग धनुषके जैसा
त्रिकोण वा गोल बनाना चाहिये, इसके सिवा
और दूसरे प्रकारका न बनावे । मृदाङ्गाकार

दुर्ग बनाना बिलकुल मना है, क्यों कि इस
प्रकारका दुर्ग कुलनाशक माना गया है । राक्षस-
राज रावणका लङ्का-दुर्ग मृदाङ्गकी आकृतिका था । बलि
राजाका शोणितपुरमें त्रिजोमय दुर्ग ता था मही, लेकिन
उससे अधिक पखे-सी थी इसीसे बलि शोभष्ट और
लङ्काधिपति रावण विनष्ट हुए । इच्छाङ्गवंशिय राजाशोकका
शयोध्या नगर धनुषके जैसा त्रिकोण था, इसीसे यह
सर्वदा शुभप्रद रहा । राजा दुर्गभूमिमें यदि दुर्गादेवीको
और दुर्गद्वारमें दिकपालोंका यथाविधि पूजा करे, तो
विजय प्राप्त कर सकती है । राजा जय, वृद्धि आदिकी
कामनासे दुर्गका निर्माण करे । (शालिवाह ५० ८४ अ०)

राजाको उचित है, कि दुर्ग भलोभांति प्रसूत कर
उसमें आप धास करे तथा उसमें अघिकांश वैश्य और
शूद्र, अल्प ब्राह्मण तथा अनेक कर्मचारीको भी रहनेका
स्थान दे । ऐसे स्थानमें दुर्ग बनाना उत्तम है, जहाँ
गन्तु हटात् आन सके, जहाँ नाना प्रकारके फलपुष्पादि
सुशोभित हो और जहाँ शाल तथा तरुकर आदिका कुछ
भो उपद्रव न हो । जहाँ तक हो सके भक्तजनकी
देखमें ही इसका बनाना योग्य है । धनुर्दुर्ग, महीदुर्ग,
नरदुर्ग, वृक्षदुर्ग, अश्वदुर्ग और गिर्गदुर्ग यही छः
प्रकारके दुर्ग हैं । इनमेंसे किसी एक दुर्गका निर्माण
कर उसमें राजा वास करे । इन छः प्रकारके दुर्गोंमें
शंखदुर्ग सर्वोत्तम, अश्व और शत्रुभेद है । वहा
दूसरोंके लिये दुर्गम, वृक्षदुर्ग, अनुयन्त्रायुधसम्पन्न और
हृष्टादि तथा देवान्यादि विशिष्ट पुर स्थापन करे ।

(अग्निपु०)

फिर मत्स्यपुराणमें लिखा है, कि राजा जय प्रभूत
धन सम्पत्ति, हस्ती, अश्व, प्रभृति वक्षसम्पन्न हो जाय,
तो दुर्ग बनावे और उसमें आप वास करे । दुर्ग निर्माण-
के लिये ऐसा स्थान प्रशस्त है—जहाँ अनेक वैश्य और
शूद्र, अल्प ब्राह्मण और बहुसंख्यक कर्मकार रहते हों,
जहाँ अनुरक्त मनुष्य वास करते हों, जहाँ प्रजा करके भारसे
पीड़ित न हों और राजा सुखभोगी हो, जहाँ भूमि
घटे वसाटक हो, वृक्षादि फलके बोझसे झुक गये हों
और परचक्रका अगम्य हों, जहाँ शत्रु आदि हटात्
प्रवेश न कर सकते हों और जहाँ सरीसृप, व्याघ्र और

तस्कर आदिको कुछ भी शिवायत न हो, बसो खान
 दुर्गके लिये प्रयत्न है। उक्त दुर्गमेंसे कौरे दुर्ग कौरे
 न हो, बसके चारों तरफ चारै पक्कम रहनी चाहिये।
 पोखी माकार पौर पहातकसंतुद्ध करके लसके चारों चार
 स बड़ों गतहो कर्नाका रहना परमावश्यक है। उनमें
 मनोहर मकपाट नोपुर बना कर उनमें पताकादि द्वारा
 सुमोमित कर दे पौर रहके मध्य मो चार खम्भो चौको
 बीजिका बनाये। पक्षो बीजिकाके पपमागमें सुदृढ़-
 मावसे देवताका घर दूमरी भोयिकाके पाने राजबेगम,
 तीसरीके धामि पमादिबकर अर्को विचारलय पौर चौथी
 बीजिकाके पपमागमें नोपुर बनाना चाहिये। पुरका
 बोधोन पावताकार वा वृताकार होना अच्छा है। इनमें
 सिक्को, यममक्ष परैचन्द्राकार वा बन्नाकार भी बना
 सकमें है। नदाके किनारे यदि पुरादि बचाना पाड़े
 तो लसे चन्द्राकारका भी बनाना चाहिये, इससे बिना
 पौर बिनी प्रकारका यमदावक नहीं है। राक्षस्यहके
 दक्षिण पौर बीयामार पौर लसके भी दक्षिणी मजखान
 बनाये। पश्चिमीमें पञ्चामार, मजानस, पञ्चान्य कस-
 मासाएँ, सुरोहितका बर, राक्षस्यके बाई पौर मन्ना,
 वैदिकद्विद्वाम्र, पिबिन्धक, कोडागार, गो पौर पञ्च-
 खान रहे। पञ्चमासाके उत्तर वा दक्षिणकी पौर लक्षी
 प्रयत्न है, दूसरो पौर नहीं। पञ्चमासामें धारी रात
 होय बजता रहे पौर लसमें कुछुर, बानर, मर्कट पौर
 सबका धनु भी रख दे। गो, मज पौर पञ्चमासामें ल्युं ब
 लुधने पर लसका पुराव दिखे। राजा इसी तरह दुर्गमें
 यथाक्रमसे योद्ध, सिन्धी, धम्भो, मोर्ष, पञ्चमेष,
 मजबेय पादिका पञ्चखान निर्दिष्ट करे। दुर्गके
 मध्य तरह तरहके बर होनेका सम्भावना रहती है,
 इसीसे लसके प्रतीकारके लिये वे पौ को रहना परमावश्यक
 है। दुर्गमें नाना प्रकारके प्रहरणयुक्त लक्ष्मणपती पञ्चात्
 जिसने बहलीको कुछमें मार डाला है जैसे मनुष्यके
 ऊपर दुर्गका हस्त दारमदार रहे। दुर्ग-दार कुतुम रहना
 चाहिये पौर इसका कार्य बरसाय जिसने कौरे न जान
 बसे इसका पूरा बन्दोबस्त रहे। दुर्गमें सब
 प्रकारके पायुध, वस्तुप तोमर, बर, बरब,
 बया, नागे, गेट कोड़ेकी बन्नी, मर्दान, प्रहार, सुहर,

विशुद्ध, पहिय, कुटार, शूत, मणि, करस, चक्र, वर्म,
 कुदान, रण्यु, वेत, गोडा भूसी, इतिया आदि सब प्रकार
 रहे बस्त यथादिक्का पूरा रत्नजाम रहे। सब प्रकारके
 बाजे, सब प्रकारकी घोषय प्रसुर यमक, रथन सुद्ध, वेत
 यथा मीरस मन्ना, खातु पक्षि, मोषम, पट्ट बान,
 को, गिद्ध रख, सब प्रकारके बस्त लस, मूय, बलाय,
 चना तिस प्रवृत्ति सब प्रकारके यज्ञ, पाँच, मोमय, मय,
 मज रस भूज, अट्ट, नाचा, टण्डल, पायोविन द्वारा
 कुम्भ, ब्याल, पि आदि सबपक्षो इके दुर्गके मज यथा
 खान पर रख दिया करे। इनके सिवा बड़ा नाना
 प्रकारके फल भी रखलित रहे।

मौत, प्रसक्त, कुपित, विमानित, कुप्यन्व पौर पावायय
 भोगीको दुर्गमें कदापि रहने न दे। (मास्वपु०२१० म०)
 दुर्ग राजाधीका प्रधान लहाय है। दुर्गके नहीं रहनेसे
 राज्यकी कुछ भी रचा नहीं हो सकती। राज्यरथा
 करमेंसे दुर्गकी बस्तमध्यसे सुदृढ़ रचना नितान्त प्रयो
 जन है।

दुर्गका विषय महाभारतमें इस प्रकार लिखा है—
 राजाको कौरे पुरमें रहना उचित है बुबिडिरीके इस
 पत्र पर मोषदेवने ऐसा कहा था, दुर्ग ६ प्रकारका है—
 बनुदुर्ग, महीदुर्ग, निरिदुर्ग, मनुष्यदुर्ग, बनुदुर्ग पौर
 बनुदुर्ग। यहाँ का प्रकारके दुर्ग बना कर लसमें लस्यदि
 मध्य सुरो बनाये। जो पुरो दुर्गके मध्य पञ्चखान तथा
 दुर्गके प्राकार, सुदृढ़ खाई, बाबो, कोड़े पौर रखने बना
 बीजके रहेगो। जहाँ पनेक विद्वान् सिक्को पौर कुनि
 सुच धामि कोका बास होगा, जहाँ फल स्य सत्रकी मनुष्य
 पत्र बाबो कोड़े, पत्तर पौर बाजार रहेगें, जहाँ किसी
 बातका हर नहीं है। दुर्गके मध्य कोष लक्ष्य पौर
 मित्र परिवर्तन तथा विचारलय न खानप करके पञ्चान्य
 मय पौर धामिने दोषको बाहर निकाल देनेकी इमिया
 कोमिग रहे। दुर्गमें पञ्चस्य स्या इति धाम्यादि ल पत्र
 पौर यन्त्र तथा पनेक इमिया मोत्र, र रहना चाहिये।
 बाह कोड, सुप, पडार, मज पक्षि, ब म मन्ना तेल,
 महुधम, घोषय मय मज रथ मर, चर्म, खातु, वेत, सुद्धा
 पौर मज्ज व पत्र, पुष्करिणी तथा क्षुप पादि नाना
 प्रकारके बसायय बट, पीपल पारि इर्षीकी वसपूषके

रखना चाहिये। आचार्य, ऋत्विक्, पुरोहित, स्वपति, सामन्तस्मरिण, चिकित्सक, प्रज्ञावान् और जितेन्द्रिय आदि साधु-समूहकी बहुत आदरके साथ इस दुर्गस्थ पुरीमें रख कर न्यायके अनुसार दण्ड देना चाहिये। जो राजा दुर्गका निर्माण किये बिना राज्य-रक्षा करना चाहते हैं वे बहुत जल्द राज्यच्युत और लोगोंके सामने अपह्वासस्पद होते हैं। दुर्ग ही राजाधीका प्रधान सहाय है। इससे दुर्ग निर्माण कर सुदृढभाषसे उसकी रक्षा करते हुए राज्य पालन करें। (भारत शान्तिपर्व राजधर्म देखो।)

२ असुरमेद, एक असुरका नाम जिसे मारनेके कारण देवीका नाम दुर्गा पड़ा। दुर्गा देखो।

दुर्ग—दुर्ग देखो।

दुर्गकर्मन् (सं० क्लो०) दुर्गार्थं दुर्गे वा कामं कार्यं।

दुर्गसाधन कर्ममेद, दुर्ग बनानेका काम। दुर्ग देखो।

दुर्गकारक (सं० पु०) दुर्गं करोति वेषेण कृत्स्नम्।

१ वृचमेद, एक पेड़का नाम। (त्रि०) २ दुर्गकर्त्ता

दुर्ग बनानेवाला।

दुर्गच्छा (सं० स्त्री०) जैन-दर्शनमें एक प्रकारका मोहनीय कर्म। इसके उदयसे मलिन पदार्थोंसे स्वानि उत्पन्न होती है।

दुर्गटीका (सं० स्त्री०) दुर्गमिच्छकत कलाप-व्याकरणकी एक टीका।

दुर्गत (सं० त्रि०) दुर्गच्छति दुर-गम कर्त्तरि क्त। १

दरिद्र, गरीब। २ दुर्दशाग्रस्त, जिसकी बुरी गति हुई

हो। (पु०) ३ मटुक्तिकर्णामृतघृत एक संस्कृत कवि।

दुर्गतता (सं० स्त्री०) दुर्गतस्य भावः दुर्गत-तल् ततो

टाप्। दरिद्रता, गरीबी, कंगाली।

दुर्गतगणो (सं० स्त्री०) दुर्गं तीर्थतेऽनया त् करणे

ल्युट-ततो ङीप्। १ देवी मेद, एक देवीका नाम।

(त्रि०) २ दुर्गतगणसाधन, जिसके द्वारा दुर्ग उत्तोर्य

हो सके।

दुर्गति (सं० स्त्री०) दुष्टा गतिः। १ नरक। २ दुर-

वस्था, बुरी गति, बुरा हाल। ३ क्लेशकर पथ, कठिन

रास्ता। (त्रि०) ४ दारिद्र्ययुक्त, गरीब।

दुर्गतिनाशिनो (सं० स्त्री०) दुर्गतिं नाशयति नाशि-

ग्नि-डीपः। दुर्गा देवी। इनका नाम लेनेसे सब प्रकारकी दुर्गति जाती रहती है, इसीसे इनका नाम दुर्गतिनाशिनो पड़ा। विपदके नमय जो भक्तिपूर्वक दुर्गका नाम जपते हैं उनके सभी कष्ट दूर हो जाते हैं। दुर्गदेव—पठोसम्बस्वरो नामक सस्कृत ज्योतिषग्रन्थके प्रणेता। इनका बनाया हुआ सम्बस्वर नामक एक दूसरा ज्योतिष पाया जाता है।

दुर्गन्ध (सं० पु०) दुष्टः गन्धः। १ दुष्टगन्ध, बुरोगन्ध, बदबू। जिसे दुर्गन्धका सुगन्ध और सुगन्धका दुर्गन्ध ज्ञान होता है अथवा जिसे किमो प्रकारकी गन्धका ज्ञान नहीं है, उसे चीनायु समझना चाहिये। २ आस्रहृत्, धामका पेड़। ३ गलागड़, प्याज। दुर्दुष्टो गन्धो यत्र। (त्रि०) ४ दुष्ट गन्धयुक्त, बुरी महकका। (क्ली०) दुर्दुष्टो गन्धो यस्य। ५ मौवर्चल लवण, काला नमक। हिन्दीमें इस शब्दकी ग्नील्लिङ्ग माना है।

दुर्गन्धता (सं० स्त्री०) दुर्गन्धका भाव।

दुर्गन्धिन (सं० त्रि०) दुर्गन्धोऽन्तस्थोति दुर्गन्ध इति।

दुर्गन्धयुक्त, जिसकी गन्ध बुरी हो।

दुर्गपति (सं० पु०) दुर्गस्य पतिः। १ दुर्गरक्षक, वह

जिसके ऊपर दुर्गका रक्षा-भार भौषा गया हो। २ दुर्ग-

स्वामी, किलेका मालिक।

दुर्गपाल (सं० पु०) दुर्गे दुर्गं वा पालयति पालि अण्।

१ कच्छपालक, वह जो विपदसे बचाता हो। २ दुर्ग-

रक्षक, किलेदार।

दुर्गपुष्पो (सं० स्त्री०) दुर्गे पुष्पं यस्याः जातित्वात् ङीप्।

वृचविशीष, एक वृचका नाम। इसका संस्कृत पर्याय—

केशपुष्पा, मानसो, बालाक्षी और केशवारिणी है।

दुर्गम (सं० त्रि०) दुर्दुःखेन गम्यते इति दुर-गम-ल्लत्।

१ जहाँ जाना कठिन हो। २ दुर्ज्ञेय, जिसे जानना

कठिन हो। ३ दुष्टतर, कठिन, विवाट। ४ दुर्ग, किला।

५ विष्णु। ६ असुरविशेष, एक असुरका नाम। (क्ली०)

७ वन, जंगल। ८ सङ्घटस्थल, कठिन स्थिति।

दुर्गमणीय (सं० त्रि०) दुर-गम अनोयर्। दुर्गस्य, जहाँ

जाना कठिन हो।

दुर्गमता (सं० स्त्री०) दुर्गम होनेका भाव।

दुर्गरक्षक (सं० पु०) गढ़पति, किलेदार।

दुर्गाय—बाहुदेवके पुत्र दादय घोडेके डोकागर ।
दुर्गाय (म० पु०) दुष्कितो मन्त्रो यत्र लोकात् । देवदेव,
एक देवका नाम । मोऽभिन्नोऽप्य. तत्र राजा वा
पुत्र । दुर्गाय, दुर्गाय देवो वा राजा वा पवित्राणो ।

दुर्गायज्ञ (म० पु०) दुर्गा दुर्गास्थान मन्त्रमूल्यादि
न ज्योतेऽनेन पवित्रं करिष्यते । २ तदु, छ ८ ।

दुर्गायज्ञ—एक मोड़ झाड़योका एक कुल नाम है जो
पात्रकाल मामल मी कदावा है । जोकि १३३३ यामी
में है वह मी एक यामदा नाम है और कदां रत्नैवाने
गोहृदि एक मेट दुर्गायाम पूज ।

दुर्गायस्वार (म० पु०) दुर्गाय स स्वार । दुर्गाका संस्कार
दुर्गाको मरघात करला । दुर्गाको मरघात नहीं रहनेके
राजाको पद पद पर पराश्रयणी नभावनला रहतो है ।
इको कारक नदेव दुर्गा संस्कार करला विर्येय पात्र
अक है ।

दुर्गायज्ञ (म० पु०) दुर्गा मन्त्रयते यनेन मन्त्र-कर करी
पय । नक्षत्र दुर्गाय स्नानो तत्र पदु यामेका माघन,
भोडो पुत्र, वैज्ञा पादि ।

दुर्गायज्ञ (म० पु०) दुर्गायज्ञानि दुर्गायज्ञान मन्त्र
यनेन गम्यतेऽनेन मन्त्र-कर-तत्र । दुर्गायज्ञ रेतो ।

दुर्गायज्ञ—कालप्रवृत्तिके रवयिता । मन्त्रिणय विदुष
मन्त्रो दुर्गायज्ञ, मोपदेव किमादि पादिने इनका मत
उद्धृत किया है । इकोने कलायज्ञाकरक और परिभाषा
उलिका रचना है है । ३ विषयात् निवृत्तमायाकार ।
६ अग्रमूर्त्तयानि नामने प्रविष्ट ये । ३ एक प्राचीन
ज्योतिर्विद् । मृदि ६ देवइने इनका मत उद्धृत
किया है ।

दुर्गायज्ञ कवि—दातक-दाकरकका कृतिके रवयिता
एक ग्रंथ कवि

दुर्गायज्ञ—ब्रह्मदेवके सुमायितावनो पूज एक प्राचीन
मन्त्रक कवि ।

दुर्गा (म० स्तो०) दुर्गा-मन्त्र-क (सुदुर्गायज्ञकरके । (वा
॥१॥ इन्द्रवर्मेन्द्रक मतहावु । ३ पापायज्ञि । इनका नामा
कर—यमा, बाबायनी, देवो, बायो हैमवती, ईश्वरा
दिवा यवानो, कदाका यवाय, कर्षमन्त्रा, यर्षका
पार्वती, कदाका, कलिबा, पन्थिका शारदा, कका,

चन्द्रवती पद्मा, चन्द्रमायिका, निरिबा, मङ्गला मारा
इको महामाया बीणयो, मन्त्रो, महादेवी हिष्ठी,
ईश्वरो, कौडयो, पदो माययो, मगन्दिनो, जयको,
मामंयो, रथा, सि हरमा, सतो, ध्यामरो दत्तकथा, मधिय
मदिनी ईश्वरजननी माविज्ञो कल्पिष्ठा कृपा
कपायो, कथा, हिमयो मन्त्रा, कालि यययु, पाया तिया,
विद्या, गुमहरो, सावित्री राजनी नामयो मीमा,
मन्दिनी, महामाया, शूभभारा सुमन्दा, धन्वयानिनो
जो, परबन्दाकतनया विमानकसुता मन्त्रपरबन्दिता,
मन्त्रा मगवती, ईशानो, मनातना, महाकामो विमान
हरकथमा उपचन्द्रा, चामुन्दा, विद्यायो, पानन्दा
महामाया मन्त्रमुद्रा, माडी मोमो, कन्धायो, कथा
मानदायो मन्त्राकथा, मानिका वाक्त्रा कपो, ईया,
हनेयो, धर्मो मूखा, फाक नो, यती, ब्रह्ममयो माविना,
देवा, कलिना, विनिता, विगुना, कलिबा तादा
मन्दिनो, मन्दा, परिबा, मायका विद्वान्मन्त्रकपिषो
मन्त्रकनो, महादेवी, निद्राकथा मन्त्राकथा, तारा, मान
वरकनतो कानिका, उपतारा, कामिम्बरा, सुन्दरो मेरवा
राजराजेश्वरो, भुवनेयो, क्वरिता, मन्त्राकनो, राजोन
नोचनो, कनदा, बायोगरो, विपुरा, क्वाकामुषो यमना
मुखो विरविषया कर्षक्यो विमानाया सुमना सुगुका
निर्गुपा कथका, गोनि गीतवाक्यिणा, पञ्चमकानिनो
पञ्चकानिनो घोरा प्रेमा, वटेयरो कौर्त्तिटा, कुदिदा
यकोरा, कलिनाकयवादिनो मन्त्रिता न ककर, कथा
कथा कलिप्रिया, सुमुना, कामिनो कामकथा, पुत्रदा,
विष्णुकथका पद्मा, इन्द्राकनककपिषो ययोयाकपिषो,
मायाकनो, कौमुलकनका कर्षकाकथकपिषो, कलि
कनका विद्याया, यमनाकुनो, यामिनो यमोदा वाटयो,
जगतो कल्पकाया, मन्त्रामाया सुमन्त्रिका कथका
दिगम्बरो, पूयका, नोष्ठा पाकाय कङ्कुरा, मन्त्रो,
मन्त्रयो ध्येवा कथको मोहने विकारा कथर
कामिनो य यथा कलिना कलिबा कथयो कथुना
कागडी, कथा, कामना कारिनी बी विरोधा मायो
कन्धायो कथका, काना यन्त्रा कृपा देवता
कथेदा, कथा, विपुरकुन्दरा रावेयो, दधककलिना
यिनी, कनका, कर्मयरो, कर्मयरो, कथका,

विदग्धा, कुजिका, विद्या, सुनेत्रा, चतुर्भुजा, राका, प्रज्ञा, षट्पदा, तापिनी, तपो, सुमन्त्रा, दूती-इत्यादि ।*

नामनिरुक्ति—देवीके दुर्गादि नाम होनेका कारण देवीपुराणमें इस प्रकार लिखा है—

“स्मरणदमये दुर्गे वारिता रिपुसंकटे ।

देवाः शक्वाद्यो यस्मात्तेन दुर्गा प्रकीर्त्तिता ॥” (३१ अ०)

स्मरणमात्रसे ही इन्होंने इन्द्रादि देवोंको दुर्गम यज्ञसङ्घटसे उद्धार किया था, इसीसे इनका नाम दुर्गा पड़ा ।

मार्कण्डेयपुराणोक्त देवीमहात्म्यके मतसे—

“तत्रैव च त्रिधावामि दुर्ग माह्वयं महापुरम् ।

दुर्गादेवीति विख्यातं तन्मे नाम मविष्यति ॥”

मैं दुर्ग नामक महासुरको विनाश करूँगी, इसी कारण मैं दुर्गादेवी नामसे विख्यात होऊँगी ।

काशोखण्ड (७२ अ०)में लिखा है—

“अथ प्रथम मे नाम दुर्गेति स्थितिमेव्यति ।

दुर्गं दैत्यस्य समरे घातनादतिं दुर्गमात् ॥”

ब्रह्मवैवर्तपुराणीय प्रकृतिखण्डके मतसे—

“दुर्गे दैत्ये महाविष्णे मवबन्धे च कर्मणि ।

शोके दुःखे च नरके यमदण्डे च जन्मनि ॥७

महाभयेऽपि शोके चाप्यशब्दो हन्तृवाचकः ।

एतान् हन्त्येन या देवी सा दुर्गा परिकीर्त्तिता ॥” ८

दुर्गा नामक दैत्य महाविष्णु, संसारबन्धन, काम, शोक, दुःख, नरक, यमदण्ड, जन्म, महाभय, अतिभय और हन्ताका भी जो देवी जनन करती हैं, वेही दुर्गा नामसे ख्यात हैं । (प्रकृतिखण्ड ५७ अ०)

अपरापर नाम निरुक्तिके विषयमें देवीपुराणमें इस प्रकार लिखा है—

“सर्वेणि हृदयस्थानि मंगलानि शुभानि च ।

ददाति शिष्यार्त्तिके तेन सा सर्वमंगला ।”

देवी सबके हृदयमें रह कर सद्गुण, शुभ और अभि-
नयित फल देती हैं, इसीसे जनमाधारणमें इनका नाम सर्वमङ्गला पड़ा है ।

“शोभनानि च श्रेष्ठानि या देवी ददते हरे ।

मक्षानामार्त्तहरणी मंगल्या तेन सा स्मृता ॥”

* एक हजार नामोंमें से कई एक नाम लिखे गये हैं ।

ये भक्तोंको शोभन अथवा श्रेष्ठ फल देती हैं और उनका दुःख निवारण करती हैं, इसीसे इनका नाम-
मङ्गला हुआ है ।

“शिवो मुक्तिः समाध्याता योगिना भोगगामिनी ।

त्रिधाय यो जपेद्देवी शिवर लोके ततः स्मृता ॥”

शिव शब्दका अर्थ मुक्ति है जो देवी योगियोंको मोक्षदायिका हैं । शिवफलके लिये देवीको आराधना की जाती है इसीसे इनका नाम शिवा पड़ा है ।

“सोमसूर्यानिलस्त्रीणि यस्या नेत्राणि भार्गव ।

तेन सा त्र्यम्बका देवी मुनिभिः परिकीर्त्तिता ॥”

चन्द्र, सूर्य और वायु से देवीके त्रिनेत्रस्वरूप हैं, इसीसे मुनियोंने इनका नाम त्र्यम्बका रखा है ।

“योगामिना तु या दग्धा पुनर्जाता हिमालये ।

पूर्णसूर्येन्दुवर्णामा अतो गौरीति सा स्मृता ॥”

योगानलसे जिन्होंने अपना शरीर दग्ध करके हिमा-
लय पर पूर्ण सूर्येन्दु सदृश रूप धारण किया था, वेही गौरी हैं ।

“कं त्रक्षा कं शिवः भोक्तुमस्मसारं कं मतम् ।

धारणाद्दसनाद्वापि कात्यायनी मता बुधैः ॥”

क शब्दसे ब्रह्मा, शिव और अस्मसारका बोध होता है । ब्रह्मा और शिव उन्हें धारण किये हुए हैं और अस्म-
सार उनके वस्त्र हैं इसीसे उनका नाम कात्यायनी पड़ा है ।*

देवीका स्वरूप ।—ब्रह्मवैवर्तपुराणके मतसे—

सृष्टि, स्थिति और लयकारिणी आया नारायणो गक्ति है । जिस शक्ति द्वारा मैं ब्रह्मादि देवताको सृष्टि करती हूँ, जिससे विश्व जययुक्त होता है और सृष्टि होती है, जिस शक्तिके बिना संसार नहीं रह सकता, वही शक्ति मैंने शिवको दी है । दया, निद्रा, सुधा, लज्जा, लम्बा, अथा, क्षमा, धृति, सुष्टि, पुष्टि, शान्ति और लज्जाकी अवि-
देवी ही शक्ति हैं । वे ही वैकुण्ठमें, गोलोक धाममें और मन्दिमें महासाधु राधिका सती हैं, वे ही ब्रह्मोद-
समुद्रमें लक्ष्मी हैं, वे ही दक्षकन्या सती हैं, वे ही दैत्य दुर्गा तिनगिनी मेनकाकी कन्या दुर्गा हैं, वे ही वाय्वी,

* देवीकी भिन्न भिन्न नामनिरुक्तिके विषयमें देवीपुराण

३० अ; और ब्रह्मवैवर्तमें प्रकृति-खण्ड ५७ अ० द्रष्टव्य है ।

विद्विंशो पञ्चमो देवो मन्त्रिणो वै, वै द्यौः पञ्चिषी दासिका शक्ति, सूर्यो प्रमाशक्ति, पूर्व चन्द्रो घोषा मन्त्रि जननी गीतलायन्त्रि, चराको धारणा पौर मन्त्र-प्रसूति शक्ति है, वै हो ब्रह्मर्षीको ब्रह्मण्यमन्त्रि, देवताओं को देवमन्त्रि, वै हो तपस्विनीको तपसा, सृष्टिनीको सृष्टि-द्वी, कुम्भीको सुवि पौर मांशरिणीको मांशमन्त्रि है वै ही मत्स्योको मन्त्रिमन्त्रि पौर इस लीलाके प्रति सर्वदा मन्त्रिमतो है, वै हो राजाधीको राजमन्त्रियो, पञ्चिकोको मन्त्रपञ्चिको है, घ सारसारको पार परनिमें वै हो दुग्ध तारिको ब्रह्मो है, मन्त्रोको वै ही सुवि पौर मन्त्रिमन्त्रि मन्त्र्या है, वै ही श्रुतिमन्त्राको व्याख्यायन्त्रि दाताको दानमन्त्रि, अग्निमन्त्रिको विप्रमन्त्रि पौर सतोको पतिमन्त्रि है। इस तरहको जो मन्त्रि हैं उन्हें मैं महादेवको दान दिया है।

देवीका परिचय।-मन्त्रे पक्षे मांशरिणो मन्त्रि (ब्रह्म यज्ञ १।१०)में पञ्चिकाका उल्लेख पाया जाता है—

“एत एव मन्त्र इह मन्त्रमिच्छता न सुख्य स्वाहा।”
 “हे ब्रह्म” पाप क्षमो मन्त्रिणो पञ्चिकाके मांश इम कोनीके दिप ह्य एत पुरीन्द्रायको क्षपया पञ्चय ऋषिभिः।
 (गैतिरीक-भाष्य १।१।१०५)

इहां मांशकार मन्त्रोवरने इस प्रकार लिखा है—
 ‘मन्त्रिदाया इममिन्दोः श्रुतोऽयम् (१।१।१०५), ‘मन्त्रिका इ वै मांशरिण लया तयादेव सह माग इति बोध्य इत्यर्थः। कुंरो देवलय विरोधिक् इ मन्त्रिच्छा मन्त्रि मन्त्रिका मन्त्रिका इ देवतया शपन्मन्त्रिका इ विवित। या मन्त्रिका शर दूष मांश मन्त्रिकमुद्राय इ विरोधिक् इति। इन्द्रमन्त्रिको-स्यमन्त्रिक इतिहा ज्ञात मन्त्रि। तथा च इतिगिः। एत ते मन्त्र मागः इह स्वकाशिकीकार इहा मन्त्रमिच्छा जा विवा एत विवित न विवित तथैव इह मांशरिणः”

पञ्चिकाके इन्द्रमन्त्रिका श्रुतिमें ही कहा गया है कि पञ्चिका उर्ध्वीकी मन्त्रिणोका नाम है, उनके मांश जनका भी पञ्चमाग है। यह ब्रह्म नामक मन्त्रदेवता अपने विरोधिनीका मन्त्रिणी देखा करते हैं। उद्यो तरह साधनमत्ता मन्त्रदेवी अपनी मन्त्रिणीके साथ विरोधी को मारती है। इहां पञ्चिका मांशरिणपञ्चिके मन्त्रिदि

उत्पादन करते अपने विरोधीको विनाश करते हैं। यह पौर पञ्चिकाका तपस्य ऋषिंसा मान्य हो। तिलिचि श्रुतिमें लिखा है कि ‘हे ब्रह्म! यही पापका भाग है मन्त्रिणी पञ्चिकाके मांश पञ्चय ऋषिभिः। यही पञ्चिका शरत् रूप धारण कर इनका नाश करती पौर तुम्हारे महित पुत्र-जात करती है।’

ब्रह्म प्रमाणने जाना जाता है कि देवो पञ्चिका पक्षमें बह्वी मन्त्रिणी रूपमें मिली जाती थी। यही तपस्यकार-तपसिपदमें उमा देवततोको उत्पत्तिके विषयमें इस तरह लिखा है—

एव समय ब्रह्मनि देवताओंके भिये बुद्धिमें अवलाम को चिन्तु यह ब्रह्मलाम उन लोकोके मामांश बलसे ही मन्त्रिण ह्युपा है, ऐसा समोने पटुमान बिवा। ब्रह्मा उन कोनीका यह क्षम दूर करनेके लिये प्रवृत्त हो गये। चिन्तु देवताओंने उन्हें न पक्षयाना। उन्होंने पक्षे पञ्चिको पीछे बाहुको उनका अल्प मालूम करनेके लिये भेजा। जब वै ब्रह्मके पास पहुँचे, तब ब्रह्मने उनका परिचय पूछा। पञ्चिकने कहा ‘मैं सब कोश जना मन्त्रो ब्रह्म’ बाहुने कहा, ‘मैं मन्त्र कोश उद्धा मन्त्रो ब्रह्म’। तब ब्रह्मनि उन्हें एक पास ही। दोनों देवता उस कामको लुप्त कर न सके। बाद देवताओंने इन्द्रसे कहा, ‘मन्त्रयन्। उनकर देखिये कि यह मन्त्रिका कोनसा पदार्थ है।’ इन्द्र उके देखनेके लिये स्वो को पक्षय ह्य, जो हो वे (ब्रह्म) पदम्य हो गये। यह ब्रह्म बहुत शीमाबमाना उमा देवततो लोको मूर्त्ति धारण कर उपर पांशायकी पौर पक्ष पक्षे। उनको भानि देव इन्द्रने उनसे पूछा, ‘पाप कोन है?’ इस प्रकार उन्कोने (लोकोपाने) कहा, यही ब्रह्म है। एको ब्रह्मको विनाश के प्रमाणके हो तुम लोकोने महत्त्व प्राप्त किया है।’ तमोने उन्कोने ब्रह्मको पक्षयाना।

लोकोपनिपदके ब्रह्म विनाशके अनुसार यह जाना जाता है कि उमा देवततो को ब्रह्मविद्या है। मांशकारने यहां उमा देवततो मन्त्रको इस प्रकार व्याख्या की है—
 ‘देवततो देवततामन्त्रिकतामिक् यदुमोमन्त्रामित्त्व’।
 पक्षय उमेव देवततो दुर्विता देवततो निम्नमेव मन्त्रो न देवततेव मन्त्र जस ते इति।’

तत्तिरीय आरखकके भाष्यमें सायणाचार्यने भी इस प्रकार लिखा है, "हिमवत्पुत्रा गौर्या ब्रह्मविद्याभिमानिरूपत्वाद् गौरीवाचक उमाशब्दो ब्रह्मविद्यामुपलक्षयति । अतएव तलवकारोपनिषदि ब्रह्मविद्यासूक्ति-प्रस्तावे ब्रह्मविद्यासूक्तिं पठ्यते 'बहुशोभमानामुमा हैमवतीं तां ह्रीवाच' इति तद्विषयः तया उमया सह वक्तुं मानत्वात् सोमः ।"

हिमवान्की कन्या गौरीका ब्रह्मविद्याभिमानो रूपरङ्गिसे गौरीवाचक उमाशब्द द्वारा ब्रह्मविद्या ही उपलक्ष होता है । इसी कारण तलवकार उपनिषद्में ब्रह्मविद्याकी सूक्ति वर्णित हुई है । 'उस बहु शोभमाना उमा हैमवतीने उन्हें कहा' इस तरहसे उमाके साथ वक्तुं मान हेतु सोम नाम हुआ है ।

पुनः उक्त आरखकके ३८ अनुवाकके सायण भाष्यमें इस प्रकार लिखा है—

"उमा ब्रह्मविद्या तत्रा सह वर्तमान सोम परमात्मन्"

हे परमात्मन् सोम ! उमा ब्रह्मविद्या है और तुम्हारे साथ वर्तमान हैं । उस आरखकके १८ अनुवाकमें 'अस्विकापनये' शब्द है, यहाँ भी भाष्यमें 'अस्विका जगन्माता यावती तस्या भर्तु' ऐसी व्याख्या है ।

कैवल्योपनिषद्में इस तरह वर्णित है—

'उमा सहस्रं परमेवरं प्रभुं त्रिलोचनं नीलकण्ठं प्रशान्तं ।'

तैत्तिरीय आरखकके नवम अनुवाकमें दुर्गाके विषयमें स्पष्ट आभास पाया जाता है ।

"कात्यायनाय विद्वद्ने कन्याकुमारि' धीमहि तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ।"

सायणाचार्यके मतसे यही वेदोक्त दुर्गा गायत्री है । उन्होंने लिखा है, 'पसाद्दुर्गा गायत्री । हेम प्रख्यामिन्दुखण्डाद्दुर्गासूक्तिमित्यागमप्रसिद्ध सूक्तिं घरां दुर्गां प्रार्थयति कात्यायनाय इति । कृतिं वस्ते इति कात्यायन इन्द्र ।...स एव यानमधिष्ठानं यस्या सा कात्यायनी अथवा कतस्य ऋषिर्विशेषस्य अपत्यं कालः ।...कुक्षितमनिष्टं मारयति इति कुमारी कन्या दोष्यमाना चाभी कुमारी च कन्या कुमारी । दुर्गिः दुर्गा । सिद्धादि व्यत्ययः सर्वत्र छान्दसो दृश्यः ।'

पीछे दुर्गा गायत्री कहता हूँ । सुवर्ण सङ्घ मस्तकमें अर्धचन्द्रभूषिता इत्यादि आगमप्रसिद्ध सूक्ति धारिणी

दुर्गाकी प्रार्थना करता हूँ । कृति आच्छादन करते हैं, इसीसे इनका दूसरा नाम काल है । वे जिषके अधिष्ठान हैं, वे ही कात्यायनी हैं । अथवा कत नामक ऋषि विशेषका अपत्य होनेके कारण काल नाम हुआ है । कुक्षित अनिष्ट मारते हैं अर्थात् विनाश करते हैं, इसीसे इनका नाम कुमारी है, कन्या अर्थात् दोष्यमाना टोनोंके मिल जानेसे इनका नाम कन्याकुमारी हुआ है । दुर्गि हो दुर्गा है, ऐसा सिद्धादिव्यत्यय वेदमें सब जगह देखा जाता है ।

नारायणोपनिषद्में दुर्गा गायत्री इस तरह है—

कात्यायनाय विद्वद्ने कन्याकुमारि' धीमहि,

तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ॥"

ऋग्वेद-परिशिष्टके रात्रि-परिशिष्टमें दुर्गाके विषयमें इस प्रकार लिखा है—

"स्तोष्यामि प्रयतो देवीं गरुण्यां बहुद्वचप्रियाम् ।

सहस्रप्रसिद्धतां दुर्गां जातवेदसे हनवाम सोमम् ॥५

शान्त्यर्थं द्विजातिनामृषिभिः सोमपाथिताः ।"

ऋग्वेदे त्वम् समुत्पन्नाऽराति यतो निदधाति वेदः ॥६

ये त्वाम् देवि प्रपश्यन्ते प्रादुषाः हन्यवाहनीम् ।

अविद्या बहुविद्याः वा स नः पशेदति दुर्गाणि विभवा ॥७

अग्निवर्णां शुर्गां सौम्या कीर्तिविषयंति ये द्विजाः ।

तान् तारयति दुर्गाणि नावेव सिंभुं दुरितात्मभिः ॥८

दुर्गेषु विषये घोरे संप्राने रिपुसंघटे ।

अग्निचौरनिपातेषु दुष्टप्रहनिवारणे ॥

दुर्गेषु विषयेषु त्वां संप्रायेषु वनेषु च ।

मोहयित्वा प्रपश्यते तेषां मे अभयं कुरु ॥

केशिणीं सर्वभूतानां पंचमीति च नाम च ।

स मां सर्वा निशाः देवी सर्वतः परिरक्षतु ॥ श्रीम् नमः ।

तामग्निवर्णां तपसा ज्वरंतीं वै रोचनीं कर्मकलेषु युधाम् ।

दुर्गां देवीं शरणमहं प्रपथ्य सुतरसि तरसे नमः

सुतरसि तरसे नमः ॥

दुर्गा दुर्गेषु स्थानेषु शं नो देविभिष्ये ।

यः इमं दुर्गास्तव पुण्य रात्रौ रात्रौ सदापठेत् ॥

देव्युपनिषद्में महादेवीका ऐसा परिचय है—

सर्व देवताओंने उनके चारों ओर बैठ कर उनसे पूछा था, 'पाप क्या महादेवि है ?' इस पर उन्होंने जवाब दिया, "मैं ब्रह्मस्वरूपिणी प्रकृतिपुरुषात्मक जगत् हूँ, मुझसे ही

करेंगी। हे दक्ष ! तू भी उस जगन्मयीकी पूजा करो जिससे वे तुम्हारी कन्या बन कर शिवकी स्त्री हो।" ब्रह्माको आश्चर्ये दक्ष प्रजापतिने तीन हजार दिव्य वर्ष तक कठोर तपस्या की थी। महामाया परले ब्रह्मा, पीछे ध्यानस्थ दक्षके सामने उपस्थित हुईं। उन्होंने स्वाकार किया कि वे ब्रह्माको कामना पूर्ण करेंगी और दक्षने इस प्रकार बोली, मैं बहुत शोच तुम्हारी स्त्रीके गर्भमें तुम्हारी कन्याके रूपमें जन्मग्रहण करके शहरकी सड़कमें नो होऊंगी। जभो तूने मेरा निरादर करोगे तभो मैं देह त्याग करूंगी।" ऐसा कह कर देवोंने दक्ष पत्नी वैरिणीकी गर्भमें जन्म लिया। क्रमशः महामाया शैशवावस्थाके पश्चात् यौवनावस्थाकी प्राप्ति हुई। महादेवको पानिके लिये वे माता पिताकी आज्ञा ले कर उनको पूजा करने लगीं। जो महादेव विवाह करनेसे घृणा करते थे अभी वे सतीके रूप और पूजासे मुग्ध हो कर उन पर आसक्त हो गये। उन्होंने सतीकी दर्शन दिये और मनोने वरकी प्रार्थना की। दासायणोको कथा समाप्त न होने पाई थी कि महादेव वार वार कहने लगे कि, 'तुम मेरी स्त्री बनो।' तब सती हँस हँस कर बोली, 'मेरे पिताकी सूचित कर मुझसे विवाह कीजिये।' यह कह कर सती अपनी माताके पास लौट आई। महादेव भी हिमालय पर्वत पर जा कर सतीके विरहसे व्याकुल हो पड़े और उन्होंने ब्रह्मासे अपना हाल कह सुनाया। ब्रह्माका मनोरथ फलीभूत हुआ। उन्होंने दक्षके पास जा कर शिवके मनोभावको कह सुनाया। दक्ष भी प्रफुल्ल चित्तसे सतीको उन्हे अर्पण किया। प्रकृति पुरुषका मिलन हुआ, कैलासगिरि कन्दर और हिमालय पर महाकौपो नदीके प्रपातके निकट शिवा शिवाणोके साथ अनेक प्रकारसे विहार करने लगे। इस तरह कुछ दिन व्यतीत हो गये। दक्षने महायज्ञका अनुष्ठान किया। सब देवता उस यज्ञमें निमग्नित हुए सिवा महादेव कपालीके। यज्ञमें बुलामे योग्य नहीं हैं ऐसा शोच कर दक्षने उन्हें निमन्त्रण नहीं दिया था। सती दक्षकी प्रियतमा होने पर भी कपालोकी भार्या होनेके कारण उस यज्ञमें दोषदर्शी दक्षने उन्हें भाङ्गान नहीं किया। जब सतीने अपने पिताके उस दुःखवहारको कथा सुनी, तब क्षण भर भी उनकी

जीवन धारण करनेकी इच्छा न रही। औपारक्षणयना सतीने योगबलसे शरीरके सब हार बन्द कर कुम्भक किया। उस महा कुम्भको छेद कर उनकी प्राणवायु निकल गई। महादेवने वर पा कर विजयामे सतीके प्राणत्यागका कारण सुना। इस पर रोपपूर्ण महाकृत् प्रति शोच दक्षयज्ञमें उपस्थित हो कर यज्ञ भंग करनेकी उद्यत हुए। दक्षयज्ञ देखो। तब रुद्रभोग यज्ञ ब्रह्मलोकसे आ कर अपने मायाबलसे सतीके मृत शरीरमें प्रविष्ट हुए। ब्रह्मासुगामो रुद्र सतीके पास पहुँच कर और उन्हें मृत देह यज्ञको भूल गये और उस मृत देहको वगलमें बैठ कर शोक करने लगे। उनके नेत्रके जलसे वैतरणी नदीकी उत्पत्ति हुई। महादेव सतीको लाशको कंधे पर रख कर विलाप करते हुए पर्वतको और जाने लगे। तब ब्रह्मा, विष्णु और शनि इन तीन देवताओंने सतीके शरीरमें प्रवेश कर उसे खण्ड खण्ड कर डाला। जहाँ जहाँ सतीका अंग गिरा वही स्थान पुण्य तोर्ष वा महापोठ हुआ। शिव मायासे मोहित हो कर सतीके शोकमें विलाप करते थे। जगज्जननी माया ही इसका कारण था। जब तक सती पुनः जन्म ग्रहण न करेगी, तब तक वे निष्कल परब्रह्मके ध्यानमें निमग्न रहें, ब्रह्मादि देवगण ऐसा शोच कर महामायाकी स्तुति करने लगे। उन लोगोंकी स्तुतिसे सन्तुष्ट हो महामायाने योगनिद्रा शिवका हृदय परित्याग किया। शिव प्रकृतिस्य होकर पुनः योगाधीन हुए। इधर हिमालयकी सती मेनका पुत्रके लिए सत्ताईस वर्ष तक महामायाकी पूजा करती रही। पहलेसे ही दासायणो गिरिराज-महिषीके प्रति सुवसन्न थीं। अभी उनको ऐकान्तिक भक्तिसे आकृष्ट हो कर उनके सामने प्रकट हुईं। मेनकाने प्रार्थना की, "हे देवि ! मैं वीर्यवान् और आयुष्मान् अतः पुत्र और आनन्दरूपा त्रिभुवनमोहिनी एक कन्याके लिये प्रार्थना करता हूँ।" भगवतोने उनकी प्रार्थना पूरी की और मेनकाको कन्याके रूपमें जन्म लिया। इस प्रकार बसन्त कालमें नृगशिरा नक्षत्रकी नवमे तिथिमें अर्धरात्रिके समय महामायाका जन्म हुआ। हिमालयने उनका नाम 'कालो' और वाग्धोने 'पार्वती' रखा।

एक दिन नारदने हिमालयकी अपना परिचय दे कर

पह , 'यदि धारको लड़को काभी तपस्वा द्वारा मित्रतो-
की प्रत्यक्ष कर से, तो वह सुवशाभा पौर सुवर्षको गार्
योराणी विष्णुवृद्धको हो जाये गो । त्रिपत्नी ही इतकी
ऐतय पर है । तस समय महादेव हिमालयको पोवचि
पत्यनवरके निशुट ध्यानसे मन्त्र प । एक दिन गिरि
रात्रने यहाँ था कर विद्यानपूर्वक महादेवकी पूजा
को । महादेव तनको पूजा पश्य कर बोले, "मैं सोप-
नीय कामसे तपस्वाके नित्ये पाया हू बिन्नु जिससे कीर्ति
प्यक्ति यहाँ पाये न पावे, वँ मा हो काम पाय कोरिए ।
गिरिराजने तनही पाया मान को केवल के पपने
लड़कीका महादेवको पूजाके नित्ये यहाँ हीहु पसे
पाये । काभी भी महापूर्वक प्रतिदिन गन्धुकी सेवा
करने लगी । दिग्गु हम बार भोजानाशका मन तनिज
भा न सुभाया । देवीको माया माचनसे महादेवने देव
करके मो न टिया ।

इधर तारकासुर प्रथम हो श्रागंशान्य पश्चिकार कर
बैठे । मन दे समय प्थासुन हो पड़े । इस समय महा
देवके चोरमवात पुत्रके मित्रा कीर मी तारकासुरको
मारनेमें समर्थ लहो है, यह बात ब्रह्मनि समीपे लड़
ते । महादेवको मोहित करनेके नित्ये मदन रति पौर
बलकसे माय मीसे गये । इस बार कुसुमायुधका गर-
मन्थान प्यर्षे हुआ । महादेवके शीबानन्धे के समो
प्रत्यक्ष मयस ही पड़े । तससे मयसनीको विरह व्याका
पौर मो लड़ गये । वे पश्यतया परके चोच पौर प्रविन
को पड़ो । (हरिच ममें मिया है, कि मितकामि कन्याको
सम पश्यतया होय कर चडा का समो पौर पश्चि
तपस्वा मन करो, तयासे मयसनीका नाम सम पड़ा ।)

पायगोय टा पर गिर रह लकने ? तर्कने
दे बोले कहा, "हे सुमने ! मैं तुम्हारे गिरइके बहुत
दुःखिन हू । मरे निब्रानमने टण्ड मदन मयस कपसे मरे
ही पश्यने बाय उभरा है । यह मानो बटणा पुबानिक मिय
तुम्हारे मयसमें ही सुदि टण्ड कर रहा है । यह दम सुभ
पर मयस होयो ।" हम पर दे मा पौर का काम पकतो ।
इसारेके तपानि पश्चिपेके यत्रा मयोपान कर हुआया -
पिया ही कन्याका मयसके बरने है । इस समय पिलाका
बहनेसे हो कर दियाकीका कन्या हो लकने है । इतना

कर कर मुझसे गिर सुझावे पावेती पपने पिताने कर
चको पाई । मयोचि पादि कृपियोंने महादेवके पाटेय-
से जनका इच्छा पूरो करनेको लडा । यह सुन कर गिरि
रात्रने मानो लय पा लिका । बहुत समयोइके साथ
बर्कने पावतोका बिबाह शिबके साथ कर टिया । पीछे
महादेव काभीको साथ से बीबान का कर पानन्द-
पूव ल रहने लगी । एक दिन महादेवने कर्षयो पादि
पयोपियापाको टण्ड कर पाव तोसे कहा "हे मित्रा
अनन्यामने कामि ! तुम तसयो पादिसे साथ पाबाप
करो । इतना लड़ कर के काभीके निशुटके हट गये ।
'मित्राअनन्यामना काभी' यह सुन कर मयसनीको
श्लोच था गया । तर्कोने पयराकोके नामने महादेवको
तम बानने बपनेको निन्दित समझा पौर शैलमिखर पर
सुन हो कर वे प्रकति भावसे रहने लगी । बहुत तनाय
काम पर भी महादेवने तर्को न पाया, इससे वे बहुत
प्यासुन हो गये । महादेवको बहुत दुःखित जान पतानि
तर्को पपना टण्डन टिया । महादेव तनका मान-मङ्ग
कानिच नित्ये तनके पाय गये, बिन्नु काभीने कहा "अब
तस मरा शरीर मोनेके समान योर न हो पावेया, तब
तस में दापके पाय लड़नात लहो कर सकतो ।" इतना
कह का महामाया महाकीरोप्रदान नामक हिमालयके
गिधर पर चको गई । यहाँ तर्कोने एक लो मय तब
तपस्वा ३१ । पत्यने के मोता पौर वाहर मय बगव
महादेवको ही टण्डने लगी । पव देवीका पमोष्ट विद
पुषा पाकाशमङ्गल प्रकने एतान कर काकी विष्णुत्
महमा गोरवका मोरो हो गई । (कथितानु० ४३ अ०)
काचित ल पौर मयिच इतके पुत्रके नाम है । इकोने
महिषामर्दिमोके कपसे महिषासुरका नाय बिया ।

देवीमायसतमें देवीकी कल्पितके विषयमें इस प्रकार
मिया है—

नेवलय महिषासुरके दुर्षमें पराक्त हो कर महादे
मरापाप हुए । ब्रह्मा मो मित्र पौर देवताओंको नाश
के विष्णुमोक्षको लने । यहाँ तर्कने विष्णुमि कहा
कि, ब्रह्मर्षे वरसे महिषासुर पुत्रके पवक है । तुम्हारे
वरदानके प्रभावसे वह बहुत ही उन्नत पौर तर्कित
हो गया है । इधर देवी कीर्तीको मी देखनेमें लगी

आती जो उसमें युद्ध करे। अभी जिसमें उसकी मृत्यु हो, वैसे ही उपाय कर दीजिए। यह सुनकर विष्णुने ऋषि हूए कहा, "यदि तुम लोग उस असुरका वध करना चाहते हो, तो अपनी अपनी शक्तोंके साथ मिलाकर अपने अपने तेजसे प्रार्थना करो, जिससे तेजसमूह एकत्रित हो कर एक नारोके रूपमें आविर्भूत हो जाये। उस नारोको हम लोग रुद्रादिके त्रिशूल आदि दिव्य-शस्त्रमें भूषित कर देंगे। वही नारो मद्गर्वित असुरकी मारनेमें समर्थ होगी।" इस समय ब्रह्माके मुखसे परब्राह्मणिको नाई रक्तवर्ण दुःसह तेज उत्पन्न हुआ। इसी तरह शङ्करके शरीरमें अत्यद्भुत रोषधर्म, विष्णुके शरीरमें नीलवर्ण, इन्द्रके शरीरमें त्रिगुणमय विचित्रवर्ण, कुबेर, यम, अनल और वरुणके शरीरमें सुमहत् तेजपुष्पका प्रादुर्भाव हुआ। पीछे अन्यान्य देवताओंके शरीरमें भास्वर तेज निकला। अब उन सब तेजोंके समूहसे बहुत बजला होने लगा जिसे देख कर विष्णु आदि सभी विस्मित हो गये। उनका विस्मय और भी बढ़ गया, जब एकस्मात् उस तेजपुष्पमें एक अद्वितीय रमणी मूर्ति आविर्भूत हुई। यही रमणी मूर्ति महालक्ष्मी है। इस भुवनमोहिनोको वाहु अठारह, मुखमण्डल श्वेतवर्ण, नयन कृष्णवर्ण, अधर रक्तवर्ण और पाणितल तास्त्रवर्ण है। ये दिव्यभूषणभूषिता कमनीया कान्तिधारिणी हैं। इनके मङ्गल वाहु होने पर भी वे असुरोंके विनाशके लिये तेजोराशिमें अठारह भुजा लिए आविर्भूत हुईं। (देवीभाग० ८८ अः)

किसके तेजसे भगवतोका कौन अंग उत्पन्न हुआ था, उसके विषयमें भी देवीभागवतमें इस प्रकार लिखा है—

शङ्करके तेजसे उनका सुविपुल श्वेतवर्ण और मनोहर मुखकमल, यमके तेजसे आज्ञानुलम्बित कृष्णवर्ण मनोहर केशकलाप, अग्निके तेजसे मध्यस्थलमें कृष्णवर्ण-तारकायुक्त और प्रान्तभाग रक्तवर्ण ऐसे त्रिनयन, सन्ध्याके तेजसे कृष्णवर्ण भ्रूयुगल, वायुके तेजसे नातिदीर्घ नातिङ्गल श्रवणयुगल, कुबेरके तेजसे तिल-फूलके सदृश नासिका, दश्यादिके तेजसे कुन्दकुसुमके सदृश दन्त-पंक्ति, अरुणके तेजसे रक्तवर्ण अधर, कात्तिकके तेजसे रमणीय ओष्ठ, विष्णुके तेजसे अष्टादश वाहु, वसुणके

तेजसे रक्तवर्ण समस्त अङ्गुलि, सोमके तेजसे उत्तम स्तन-युगल, इन्द्रके तेजसे त्रिवलीयुक्त मध्यस्थल, वरुणके तेजसे बद्धा और जरुयुगल तथा पृथ्वीके तेजसे विपुल नितम्ब उत्पन्न हुआ। तब उस पराशक्तिको देवताओंने अपना अपना शस्त्र इस प्रकार प्रदान किया, —विष्णुने चक्र, शङ्करने शूल, अरुणने शङ्ख, अग्निने गतघ्नो, वायुने वाणपूष तूण, इन्द्रने वज्र, यमने कालदण्ड, ब्रह्माने गङ्गाजलपूष कमण्डलु, वरुणने पाश और पद्म, इलाने वज्र और चर्म, कुबेरने सुरापूर्ण पानपात्र तथा विश्वकर्माने परशु और गदा प्रदान की। इस प्रकार शस्त्र शस्त्रमें भूषित हो महादेवी सिंहाके उपर आरोहण करके असुरका नाश करनेके लिये अयसर हुईं। समस्तान युद्धके बाद महादेवीके हाथमें महिषासुर पराजित और निहृत हुआ।

साकण्डेय चण्डोमें भी सब देवताओंके तेजसे सङ्ग-भुजा महिषमर्दिनीके आविर्भावकी कथा लिखी है। कालिकापुराणमें महामायाकी उत्पत्तिके विषयमें इस प्रकार लिखा है—

"जब महादेवी (दशभुजा) ने महिषासुरका वध किया हो था, फिर उन्हें (पोद्दशभुजा) ने भद्रकालीके रूपमें महिषासुरका वध किया था; ऐसा क्यों लिखा गया ? देवताओंकी जब उस भद्रकालीकी मूर्तिको दर्शन हुआ, तब उन्हें ने देवोके पाददशमें महिषासुरको निपतित और उसके हृदयमें शूल विद्य देखा था, उसका क्या कारण ? दोर महिषासुरने एक दिन निश्रायोगमें पर्वतके ऊपर बहुतर्पणनिदारण भयङ्कर रूप देखा था,—उसे ऐसा मालूम हुआ, कि महामाया भद्रकाली बहुत भौषण-भावसे अपना मुख फैला कर खड्ग द्वारा उसका शिरच्छेद करके रक्तपान कर रही हैं। प्रातःकाल होने पर महिषासुर बहुत डर गया और अपने अनुचरोंके साथ उसने महामायाकी पूजा की। पीछे महादेवी महिषासुर से पूजित हो कर पोद्दशभुजा भद्रकालीके रूपमें आविर्भूत हुईं। इस समय महिषासुरने महामायाको प्रणाम कर कहा था, 'हे देवि ! मैंने मत्स्यको ही स्वप्नमें देखा है, कि आप मेरा शिरच्छेद कर रक्तपान कर रही हैं। इससे मुझे पूरा विश्वास है कि आप निश्चय ही मेरा शिरपान करेगीं। मैं आपसे मारा जाऊंगा, इसमें तनिक

मो मग्देइ नहीं और माइ माइ दुःख मो नहीं है । पड़ने
 मीने वितामि मीरे बिने पापके साथ साथ ही पाराधना को
 हो, उमीदे मीरा लक्ष कृपा है । मीने इन्द्रको पाया है
 और पञ्चव्रत ब्रह्मचर्या पात्रियत निजि नादपूर्वक रूप
 मोम किया है, सुतरां पच सुनि पापके प्रायश्चि सिवा
 और किमी चोत्रको भूमिनाया नहीं है । निजिक यज्ञमें
 त्रिसष्टि में पूज्य होख, बेसा ही कोत्रिये । अब तक सूर्य
 रङ्गे तक तक मैं पापका पटव्याज न करूँ, यही कर सुनि
 प्रणाल कोत्रिये । इस पर महादेवीने कहा, 'ब्रह्मका ऐसा
 एक मान मो नहीं है जो पत्नी में तुम्हें दे सकू । किन्तु
 तुझमें सुम्भके मारि जाने पर मो तुम कसो मीरा पदव्याज
 नहीं करोगे । कहाँ मीरो पूजा होगी उही अजह तुम्हारे
 इस शरीरको भी पूजा होगी ।

तब महाविष्णुवरुण देवीको प्रणाम कर पूजा, 'हैं पर-
 मेश्वरि ! यज्ञमें पापको किस किस मूर्तिके प्राय में पूज्य
 होख ना ?' इस पर देवीने कहा 'उपब्रह्मा मद्रकाका
 और दुर्गा इन तोम मूर्तिमें योमि तुम सब दा मीरे पादकर्म
 होकर मनुष्य देव और राक्षसनि पूजे जाओगी । पादि
 अश्विन मीने ब्रह्मायमुत्रा उपब्रह्मको मूर्तिमें द्वितीय
 अश्विनमें इम (वोङ्गयमुत्रा) मद्रकाकीके रूपमें तुम्हें मारा
 है और पत्नी में (द्वयमुत्रा) दुर्गाके रूपमें अतुशरीके
 नाय तुम्हें मारू मो ।'

दुर्गाकी उत्पत्तिके विषयमें श्रीमद्भागवतमें इम प्रकार
 लिखा है—

पुराणानामि दुर्गा नामक बहव एव पुत्राः । तस्य महा-
 देव्येन तपस्या बन्धि तौमो मोक्ष कीर्तनकर रूपने पयोन
 कर जिने तथा इन्द्र, अश्वि, वायु, बृहस्प पादि पद भी
 होल जिने से । उनके भयने अश्विनमें तपस्या और
 ब्रह्मर्षीने वेद पाठ करण छोड़ दिया । देवतापोंने बहुत
 दुःखिन होकर महाेश्वरको शरण लो । महाेश्वरने इस दुःख
 बचुरको मारनिके लिये देवीको मीरा । महादेवीने देवता
 पोंको समय देकर बुद्धि उद्योग करनि लगी । पड़ने
 कर्मनि कामरात्रि नामको ब्रह्मर्षीको उस देवीको पकड़
 नानिके लिये भेजा । दुर्गासुर उन मनीरमा ब्रह्मर्षीके
 रूपके मोहित हो बड़ा और लम्बे इम अन्तःपुर पकड़
 कर से शक्ति दुष्प्र दिया । 'देवैश्चावमं पादं हृदं हृ'

पिमा कहने पर भी उनकी बात न सुनो गई । देव्ये पयु
 कर ज्यों हो कामरात्रिको पकड़नेके लिये उपसुर रूप,
 रत्नां हो देवीके बुद्धारमें से पकड़े सब अस्त्र होने लगी ।
 तब दुर्गासुरके पादोच्छेदक इन्द्र अतुशरी पा कर
 उस देवीको पकड़ना चाहा । देवीको निःश्राम वावुसे
 देव्येगव व्याकुल हो कर इन्द्र इन्द्र विरने लगे । देवी
 भी उन अन्तःपुर छोड़ कर पाशावामय की बनो गई ।
 दुर्गासुरने अपने देव्येवीरोंको साथ ले बनवा पोखा
 किया । कुछ समयके बाद महाेश्वरने विन्ध्यावन पर पा
 कर महाेश्वरमुत्रा, महाेश्विका और महाप्रह्लाबा महादेवीको
 देखा । उन्होंने यह मो देखा कि कामरात्रि पा कर
 शरीरके निश्चय उत्तम विषय कुछ कर रही हैं । दुर्गासुर
 महामायाका रूप देख कर कामरने मोहित हो गया
 और अपने अपने अतुशरीको प्रलोभन दे कर कहा कि
 'तुममेंसे जो कोई उन्हें पकड़ कर ला प्रकीर्ण करे विन्धि-
 रूपने पारितोषिक दूगा ।' तब देव्येवीरमन भयवतीको
 पकड़ लानेके लिये हुंटे । किन्तु कोई भी महामायाके
 प्रामने न हो सका । सभी पशान्न हो गये । पीछे दुर्गासुर
 स्वयं महादेवीके लक्ष्मिमें प्रवृत्त हुआ ।

महादेवीके शरीरने अनेक शक्तिगं उत्पन्न हो कर
 देवतासेना भव बनने लगी । दुर्गासुर अपनी सेनार्थीकी
 दुदया केवल महाामकी मूर्ति धारण कर देवीको
 और दौड़ा । महादेवीने पायालके महारने कसके भोग-
 कृतको हो लक्ष्म कर ज्ञाना । तब देवतापतिने फिर
 मधियरूप धारण कर देवी पर पाशमय किया किन्तु
 देवीने त्रिगुणके प्राधत्तये कये दृष्टा पर शेटा दिया ।
 फिर बहुत योग ही वह देता महाेश्वरमुत्र सुषयको मूर्ति
 धारण कर पाषण्यके युद्ध करने लगी । इस बार भी
 देवीने एक महाप्रह्लाद के कर लने पण्ड पण्ड कर
 ज्ञाना । दुर्गासुर मारा ममा । अर्गमें दुन्दुभि ब्रह्म लगे ।
 देवमय देवीको मूर्ति करने लगी । लगे किन्तु महा-
 देवी दुर्गाके नामने प्रसिद्ध हुई है । (शारीरक ४ ७२४०)

शक्तिबापुराणमें एक अजह लिखा है—शुभमुत्रा अत
 शरीरने हो महाविष्णुको विनाश किया था से हो पात्रिय
 माममें अन्धपणको अतुहयोको पादुभूत हुई थी ।
 पीछे अन्धपणको अतुहयोकी देवतापेकि लिये उकीने

देवीकी मूर्त्ति धारण की थी। अष्टमोक्षी देवताओंने उन्हे' तरह तरहके अलङ्कारोंसे सजाया था। नवमोक्षी महादेवीने नाना प्रकारके उपचारोंसे पूजित हो मद्रिपात्रको विनाश किया और दशमोक्षी वे देवताओंसे विरुद्ध हो कर अन्तर्धान हो गईं। पुराकालमें माय-शुभ्र, मन्वन्तरमें दशभुजा भगवतो देवताओंसे पूजे गई थीं। ममगतोचण्डीके मतसे—स्त्रारोचिष मन्वन्तरमें सुरय राजा और समाधि वैश्यने देवीका पूजन किया था। देवोभागवतके मतमें भारतभूमिमें सबसे पहली सुरय राजाने ही देवीकी पूजा की थी।

देवीभागवत, महाभागवत, कालिकापुराण, बृहन्नन्दिकेश्वरपुराण और बृहद्बर्मपुराणमें रामचन्द्रने जो शरत्कालमें देवीकी पूजा की थी, वह कथा लिखी है। कालिकापुराण और बृहद्बर्मपुराणमें लिखा है—रामके प्रति अनुग्रह और रावणको वध करनेके लिये ब्रह्मर्षि रात्रिकालमें महादेवीकी समझा कर काया था। महाभागवतमें लिखा है—रामचन्द्र अठहत्तर नौ नोक्षपद्म धारा देवीकी पूजामें प्रवृत्त हुए, किन्तु देवीने उन्हे' कल-के लिए एक पद्म छिपा रखा। तब रामचन्द्र अपनी एक आँखको निकाल कर देवीके महापद्ममें प्रयोग करनेकी अप्रभर हुये। देवीने उन्हे' निरस्त कर उनको मनो-वाञ्छा पूरी की।

किशोका मत है कि, रावणने वसन्तकालमें दुर्गाकी पूजा की थी, इसीसे वह वासन्तीपूजा नामसे प्रसिद्ध है। वासन्तीपूजा शब्दमें विवृत विवरण देखो।

दुर्गास्वविधि:—शरत्कालमें वार्षिक जो महापूजाकी जाती है, उसे शारदीया महापूजा कहते हैं। इस पूजाके चार प्रधान काम हैं, स्नान, पूजन, होम और बलिदान। यह पूजा तीन तिथि तक करना पड़ता है।

प्रतिवर्ष आश्विनमासमें प्रत्येकको यह पूजा करनी चाहिये। जो लोग मोक्ष, आलस्य और दम्भ वा द्वेषपूर्वक पूजा नहीं करते, उन पर देवी भगवतो क्रुद्ध होकर उनके सब मनोरथ नष्ट कर देती है। इस शरत्कालीन दुर्गा पूजाको नित्यता सप्त प्रकारसे प्रतिपादित हुई है जिसके नहीं करनेसे प्रत्यवायभागी होना पड़ता है। (तिथित०)

दुर्गापूजा करनेसे सब देवता प्रसन्न होती हैं और जो विधिके अगुमार पूजा करते हैं, वे अतुल विभूति और चतुर्वर्गफल पाते हैं। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इनमेंसे जो वे चाहते, वही उन्हे' गोत्र मिल जाता है। समाधि नामक वैश्यने पूजा करने निर्वाण और सुरय राजाने राज्यादि पाया था। जो जिस अभिलाषमें देवीकी पूजा करते हैं, उनका वध अभिलाष पूरा हो जाता है। रोगी रोगसे मुक्त होता और सुसुप्त सुप्ति लाभ करता है। इन्हीं सब कारणोंसे प्रत्येकको यह पूजा करना अवश्य कर्त्तव्य है। इस पूजाके ७ कल्प कहें गये हैं—एन सातोंमेंसे सामर्थ्यानुसार किसी कल्पमें पूजा करना चाहिये।

नवम्यादि कल्प।—भाद्रमासकी कृष्णानवमीसे लेकर आश्विनमासकी महानवमी तक जो पूजा की जाती है, उसे नवम्यादि कल्प कहते हैं। आश्विनमासकी शुक्ल प्रतिपदसे लेकर महानवमी तक जो पूजा की जाती है, उसे प्रतिपदादि कल्प, आश्विन शुक्लपट्टीसे लेकर महा-नवमी तकको यथादिकल्पः सप्तमोसे लेकर महानवमी तकको अष्टम्यादि कल्प, महापट्टीसे लेकर महानवमी तकको अष्टम्यादि कल्प, केवल महापट्टीके दिनको अष्टमीकल्प और महानवमीके दिनको नवमीकल्प कहते हैं। ये ही सात प्रकारके कल्प हैं। इन्हीं सात कल्पों द्वारा इनका नित्यत्व प्रतिपादित हुआ है। जो जिस अवस्थाके हैं, वे इन सात कल्पोंमेंसे किसी एक कल्पमें पूजा कर सकते हैं।

कल्पारम्भके बाद यदि अशौच हो जाय, तो पूजाके प्रति-बन्धक नहीं होना चाहिये। क्योंकि लिखा है—

'व्रतशुद्धिवाहेयु धादे होमोच्चर्चने जपे।

आरभ्ये सूतकं नस्यादनारभ्ये तु सूतकं ॥'

(तिथित०)

व्रत, यज्ञ, विवाह, त्राह, होम, अर्चना और जपके धारण हो जाने पर सूतक अशौच नहीं होता, अनारभ्य होने पर सूतक अशौच माना जाता है।

दुर्गास्वको व्रत कहा गया है। यह पूजा सात्त्विकी, राजसी और तामसी तीन प्रकारकी है। सात्त्विकी पूजामें निगमिष नैवेद्य, जप और यज्ञादि, पुराणादिमें

सौचित्य भगवतोऽपि साक्षात्कारं पाठं चौर देवीसूक्तं च य
 प्रकृति करने पढ़ते हैं। बलिदान चौर सामिप्येनैः पादि
 द्वारा जो पूजा को जाता है उसे राजसो पूजा कहते हैं।
 अथवा चौर विना सुसामादि उन्कारमें जो पूजा की जाती
 है, उसे सामसो पूजा कहते हैं। इस तरहको पूजा
 अथवा चौर दण्ड गण करती हैं। (तिथिः)

त्रिज जगह पूजाके ध्यान पर पूजाकका तपोयोग पवित्र
 रचना है चौर पूजाका आधिक्य तथा ऐक्यप्रतिष्ठितिका
 स्वरूप होता है तपो जगह देवता पदु र्ज जति है।
 (तिथिः)

नवग्रहदि कल्प—रविदि कल्पा राशिमें क्षणिके प्रयात्
 पाल्मिनमात्रके कल्पयज्ञको पाहुं नचतनुज नचमोतिथिमें
 देवीका बोधन करना चाहिये। यदि नवमीमें पाहुं नचत
 न पड़े तो किस नवमीमें बोधन होगा? जानिका
 पुराणके मतमें नवमीमें पहादयसुत्राका बोधन चौर
 पत्नीमें दयसुत्राका ध्यान करना कल्पय है। नवमासके
 मतमें यह क गन नहीं है, क्योंकि कामाख्यापञ्चमूर्ति
 प्रकरमें इस प्रकार बिद्या है—

‘शरत्काले दुर्गा द्यामात् नवम्या बोधना पुत्रे ।
 कारवा वा द्यामाकाला पीठे कोके न नवतः ॥
 सप्तम्याः पुत्रा प्रेक्ष्य सिरेण वज्रं बाहुभिः ।
 नवमेन दयसुत्रं चोत्थं चतुःशिरसि ॥
 कल्पयेत्तैः वा मुष्टिं नवम्याये रतः पुत्रः ॥’ (तिथिः)

नवा पूर्वोत्थां दित्ये सासुगेति इमेतिता ॥’ (तिथिः)
 पक्षे शरत्कालमें नवमोतिथिमें देवताधेनि जो
 देवीका ध्यान बिद्या है इसका नाम शरदा है। वे दय-
 बाहुदुख चौर वि दवादिनी हैं तथादि पूर्वोक्त नवमा
 पुत्रा महिवापुत्रके पादमन्त्रके कारण पूजाका विषय
 पक्षे बिद्या गया। चिन्तु पहादयसुत्रामें महिवापुत्रके
 प्रतिपादनमन्त्रको नवाधना नहीं है, इत्यादि कारणके
 भवमो या वहीमें दयसुत्राका ध्यान करना उचित है।

नवमीमें ध्यान करके क्वेठानघरको पत्नीमें विष्णु
 हृदयमें पामन्त्र, मन्त्रालयको नवमीमें पत्रिधारके, म
 पूर्वपादाकी पक्षमें पूजा, होम चौर उषधाम, कतरा
 पादानकरकी नवमीमें अनीक तरहको बलि द्वारा दिवा
 को पूजा चौर नवचामन्त्रको दयमीमें प्रथम करके

विशुद्धन करना चाहिये। दृग्नि जो नव नचत करे गये
 है उन नव तिथियोंमें यदि उन नव नचको का योग न
 हो तो तर्ही नव तिथियोंमें कापादि करकेका विधान
 है। नचतको बात को कही गई है यह मिकं कम्पति-
 शयके सिद्धि है। यदि उन तिथियोंमें पूर्वोक्त नचतका
 योग हो तो पूजामें जो बिधिय धन होता है। (तिथिः)

प्रतिवर्ष कथापामिमें धुय के रत्नेने पर्यात् पाल्मिन
 माममें कल्पयज्ञको अनुपपत्तिके लिये सि धको पचात्
 मादमाममें ध्यान तथा तुषामें पर्यात् कालिकामाममें
 व्यापनात्मिक करना चाहिये चिन्तु मयमाममें करना
 लिये है। यदि पाल्मिनमाम मलमाम हो तो उन माम
 में पूजा नहीं करके कालिकामाममें करना चाहिये।
 पिनो शान्तमें मादमाममें ध्यान चौर कालिक माममें
 पूजा होती। मादको कल्याणनवमीमें प्रतिदिन देवोमाका
 काका पाठ चौर पूजादि करनी पड़ती है। (तिथिः)

कल्याणनवमीमें जो ध्यान होना नव देवकालके लिये
 पूजाके होना चाहिये। यदि दोनो दिन पूजाके नवमी
 पड़े, तो पूर्व दिनमें चौर पूव दिनमें यदि पाहुंनघर हो
 तो पूर्व दिनके पूर्वोक्त मयमें देवीका ध्यान होना।
 शान्त करके जो रामिपठ उल्लिखित हुआ है क्वे देव
 शक्तिपद ममभला चाहिये। टचिवायन दयतापो की
 राशि है इसीमें रामिपण कायकल हुआ है। यदि पूर्व
 दिन पाहुंनघर हो, तो तपो दिन ध्यान करना चाहिये
 चौर यदि पूवाचक समय पाहुंनघर हो, तो पाहुंनघर
 के अनुपातमें पूर्वोक्त मयमें जो ध्यान करना होना।

वहीमें यदि ध्यान करना चाहे, तो काव कालमें
 करना चाहिये। जो नवमीमें ध्यान करके मय नही
 है वे जो बड़ाक समय काकको ध्यान करते हैं।

पत्नीके माय कालको विष्णुहृदयमें देवीका ध्यान करना
 चाहिये। त्रिम समय प च्या प्यह न दूरे हो, तारे पच्छी
 तरह दिवादि न पढ़ते हो नको समय प्रकृति ध्यानका
 ध्यान है।

वहीमें मय्या समय ध्यान चौर पामन्त्र्य करना
 चाहिये। पत्रिधारके शक पूर्व दिन यदि कायंनममें पत्नी
 हो तो एक हो लिन ध्यान चौर पामन्त्र्य होना। चिन्तु
 पत्रिधारके पूर्व दिन मय्या समय पत्नी न हो, तो कक्षके

पूर्व दिन मन्त्रा समय ध्यान और दूसरे दिन मन्त्राके समय आमन्त्रण करना होगा। जिस समय दोनों दिन मन्त्रा समय पछी हो उसी समय दूसरे दिन मन्त्रा समय ध्यान करना चाहिये। यदि दोनों ही दिन मन्त्रा समय पछो न हो, तो पूर्वाह्नमें पछीमें बोधन करना होगा। (लिखित०)

प्रतिपदादि कल्प - आश्विनमासके शुक्लपक्षमें नवरात्रक-विधिका अनुष्ठान और प्रतिपदादि क्रमसे महानवमी तक विधिपूर्वक पूजन करना चाहिये। प्रतिपदमें कल्प आरम्भ करके महानवमी तक देवीमाहात्म्य का पाठ और पूजन करना चाहिये। प्रतिपदमें केश-संस्कार द्रव्य, द्वितीयामें पट्टडोर, तृतीयामें दर्पण, सिन्दूर और अन्नकक, चतुर्थीमें मधुपर्क, तिलक और नेत्रमण्डल, पञ्चमीमें अङ्गराग और यथाशक्ति अलंकार, षष्ठीमें विस्व-वृक्षमें ध्यान, सप्तमीमें पूजन, अष्टमीमें उपवाम और अष्ट-शक्तिकी पूजा, नवमीमें उद्यचण्डा और अन्यान्य देवताओंकी पूजा, वलिदान और कुमारीपूजा करना चाहिये। दशमीमें पूजा करके विसर्जन करना पड़ता है।

इस तरह विधिपूर्वक जो भगवतीकी पूजा करते हैं उनके सब क्लेश जाते रहते हैं तथा वे पुत्र, दारा, धन और बान्यादि विविध सुखोंको प्राप्त करते हैं, और यन्त्र समय इस देवकी परित्याग कर भगवतीके गणोंमें गिने जाते हैं, उसी विधानकी नवरात्रक कहते हैं।

पठादिकल्प—षष्ठीके दिन प्रातःकालमें कल्पारम्भ करके मन्त्रा समय विस्वशाखा और फलसे ध्यान करना चाहिये। सप्तमीमें बोधित विस्वशाखा ला कर पूजा करनी पड़ती है। अष्टमीमें पूजा और जागरण, नवमीमें प्रभूत वलिदान और पूजा तथा दशमीमें शिवरोक्षव दारा विसर्जन करना चाहिये।

साधारणतः प्रायः ये ही तीन कल्प देखे जाते हैं, नवम्यादिकल्प, प्रतिपदादिकल्प और षष्ठ्यादिकल्प। कई जगह इन तीन कल्पोंमेंसे किसी एक कल्पके अनु-सार दुर्गाको पूजा की जाती है, किन्तु कुलाचारके अनु-सार जिनका जिस कल्पका विधान है वे उसी कल्पके अनुसार पूजा करते हैं। क्योंकि कुलाचार उल्लंघन करना शास्त्रमन्त्र नहीं है।

जिस दिनसे कल्पारम्भ हो उस दिनमें ले कर महानवमी तक पूजा और विजया दशमीमें विपन्न न करना पड़ता है, तथा प्रतिदिन देवीमाहात्म्य और ऋषि-च्छन्दादिका पाठ करना होता है।

पुराणादिमें जोचित भगवतीका माहात्म्य पठनेमें सब प्रकारकी कामनाएं मिट् होती हैं। मार्कण्डेय-पुराणान्तर्गत चण्डोमें इस प्रकार लिखा है—

“शरत्काले महापूजा क्रियते या च पापिका ।

तस्यां मर्मतन्माहात्म्यं न्युवा भाषन्मन्वितः ॥

सर्वावाचाधिनिर्मुक्तो घनधान्यसुतान्वितः ।

मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न स पातः ॥” (न० १)

शरत्कालमें जो महापूजा होती है उसमें चण्डो-माहात्म्य पठनीय है, जो भक्तिपूर्वक देवी-माहात्म्य पठते वा सुनते हैं, वे सब प्रकारकी विपदोंमें मुक्त होते हैं।

नवम्यादि कल्पारम्भमें महानवमी तक प्रति दिन एक बार करके देवीमाहात्म्यका पाठ करना चाहिये। कोई कोई कहते हैं, कि देवीमाहात्म्यका एक ही बारका पाठ काफी है, प्रति दिन पाठ करनेकी कोई जरूरत नहीं। इस पर रघुनन्दन कहते हैं, कि एक बार पाठ करनेसे शास्त्रार्थ मिट् होता है, तो भी फल-याहुन्यके कारण पुनः पुनः पाठ करना आवश्यक है।

प्रतिपदादिकल्पमें प्रतिपदमें महानवमी तक और षष्ठा-दिकल्पमें षष्ठीसे महानवमी तक पाठ करें। नवम्यादि कल्पमें नवमीमें बोधन करके पत्नीप्रवेशके पूर्व दिन अर्घ्यात् षष्ठीमें सायंकालको आमन्त्रण और अधिवास करें। यदि नवमीके दिन बोधन न कर सके तो षष्ठीके दिन बोधन, आमन्त्रण और देवीका अधिवास करना होता है।

बोधन और आमन्त्रणका मन्त्र भेदात्तुसार एक नहीं है, भिन्न भिन्न है। बोधन-मन्त्र—

“धीवृक्षे बोधयामि त्वां यावत् पूजा करोम्यहं ॥

एवं रावणस्य वधार्थाय रामस्यानुग्रहाय च ।

अकाले ब्राह्मणो बभूव देव्यास्त्वयि कृतः पुरा ॥

अहमध्याधिने तद्वत् बोधयामि-सुरेश्वरी ।

शक्रेणापि न सं बोध्य प्रातः राज्यं सुरावये ॥

उत्पारदं त्वां प्रतिशेवन्तमि विन्दतेराय्यद्विपतिहेतोः ।
यत्रैव सुपेव ह्येते दवास्त्य ह्यउदेर नान् नू विनिपचयामि ॥”

भास्कराचार्यकथा अन्त—

“नेदम शर-कथावृद्धिमपिचिन्तये मिते ।
कान् धीपकवृत्तय अन्निष्ठाया परा त्रिदा ॥
श्रीकेशमिन्दे वाया श्रीकृष्ण श्रीनिधेयनः ।
केशव्यापि वया गच्छ पुत्री बुधा वरदाय ॥”

प्रथमादिबन्ध—पश्चिमामासकोपुष्पा अन्नमीमं महा
नवमी तत्र देवीको पूजा करनी होती है । नवमी
तिथिमें कल्याण करके नवपत्रिका और सुष्मयो भग
वतीको प्रतिष्ठापूजा तथा अष्टमीमें महाछान करनी
होता है । पञ्चम, सायली, खयाय गन्धादि, तीर्थ
कारि, सब प्रकारकी भोगवि, ब्रह्मर, कनक, पुष्करवादि
तीर्थ प्रकृतितया मोत, वादिस नाव्य द्वारा महाछान कर
नीका विधान है । बाद पूजा, भागा प्रकारके उपचारानि
द्वारा नैवेद्य और तिलधात्यादि सुबुद्ध विलयन द्वारा
होम करना होता है । न सारमें जो सत्र काव्य सुख हैं,
वे इन्ने होम राग प्राप्त होते हैं, इतना ही नहीं, मनुष्य
दोषांशु, पुत्र और विपुल धनधान्यादि समन्वित होते हैं ।
नवमीमें इमी विधिसे अनुसार पूजा की जाती है और
देवीको प्रणय करनेसे किये कनि चलाई जाती है । इस
प्रकार विभिन्न उपचार पूजा करनेसे इस अर्थमें विविध
भोग करके उत्तमं स्वर्गको प्राप्त होता है ।

पञ्चमवेद्य-स्वस्वा—मूलानुष्ठानबुद्ध समी तिथिमें
वा केवल सममीमें पूर्वाह्न समय पञ्चमवेद्य परांतु भव
पत्रिकाको स्थापना करनी होती है । दोनो दिन यदि
पूर्वाह्न शाम हो, तो दूसरे दिन पञ्चमवेद्य होमा । इसमें
तिथिबुद्धादिवा विचार नहीं किया जाता ।

पूर्वाह्न समयमें नवपत्रिकाप्रवेद्य पञ्चम शम् और
विहिदासिनो है । महाह्न समयमें पञ्चमवेद्य करनेसे अन्-
गीकृत और अष्ट, तथा सायाह्नकालमें बह बन्धन और
मत्ता प्रकारके पण्डम होते हैं । इमीसे पूजा समयमें
नवपत्रिका प्रवेद्य प्रयत्न माना गया है ।

नवपत्रिका—कदलो, दाड़िम, श्याम हरिद्रा,
मानक, कज, बिल्व, चम्रोह और नवमौषध से ही नो
नवपत्रिका है । नवपत्रिका देवी ।

पत्नी स्थापन करके सुष्मयो मूर्ति को प्राचप्रतिष्ठा
करनी होती है । क्योंकि देवप्रतिमामें प्राचप्रतिष्ठा नहीं
करनेसे उत्तमं देवल नहीं होता । प्राचप्रतिष्ठासे बाद
प्रकाशविधि मानाप्रकारके उपचार बाद देवीका पूजन
किया जाता है ।

महाष्टमीके दिन उपवास माना प्रकारके उपचार
पौर बलि द्वारा ममवतीको पूजा करनी होती है ।
अष्टमीमें जो बलिदानका विषय व्यवस्थापित हुआ है
बिन्दु देवीपुराणके मन्वानपुराण अष्टमीको बलिदान
करनेसे व शशाग होना है । इस पर ब्रह्मन्मन्त्रने कहा
है कि अष्टमीमें बलिदान जो निषिद्ध बतलाया है वह
मन्त्रिपूजाके बाद, पारण मन्त्रिपूजा अष्टमीके शेष दण्ड
पौर नवमीके प्रथम दण्डमें होता है ।

सन्धिपूजा—अष्टमी पौर नवमीको सन्धिमें योगि
तिथिसे साय देवीको पूजा करनी होती है । इसमें अष्टमी
के शेषदण्ड और नवमीके प्रथमदण्डमें दो देवीको पूजा
की जाती है वह पञ्चम उपन्यास है । अष्टमी पौर
नवमीको सन्धि रात्रिमातमें ही प्रयत्न पर्यवर्तिमें दश
शुभ, सन्ध्यागतमें विगुण पक्षदायक है । इस सन्धि
कासको उमानुष्करतिथि कहते हैं ।

महाष्टमी तिथिको पुत्रवान् व्यधि उपवास न करे ।
नवमीमें विविध बलि प्रकृति उपचार शार देवीको पूजा
करे । अष्टमी वा नवमी इन दो दिनमेंसे किसी एक
दिनमें होम करना होता है, बिन्दु महाष्टमी दिनका
होम प्रयत्न है । उप और शीत वाट करके नवमीके
दिन दण्डकाल करना चाहिये । ऐकाके पूजोपचारके
विषयमें जिनको जेनो ग्रन्थि है वह उमो प्रकार पूजा
करनी चाहिये ।

महाष्टमीके दिन ही उपवास करनेका विधान है ।
महाष्टमी पूजाके पूर्व दिन यदि सन्धिपूजा हो, तो उन
दिन उपवास नहीं होमा ।

महानवमी पूजाकाल—पश्चिम सायमें महानवमी
को ममवतीको पूजा की जाती है ।

“अध्यासितेको वरदा सुते कश्चि बुद्धय न ।
उत्पार वा तत्र ईष्टया कल्पना बलिदवा पुत्रे ॥”
(श्रिष्टि०)

केवल अष्टमी और नवमीकाय—आश्विनमासकी
महाष्टमी और महानवमी तिथिकी विशुद्ध भावसे भग
वताका यथाविधि उपचारसे पूजन करना चाहिये ।

अष्टम्यादि कल्पारम्भमें—अष्टमी और नवमी ये दो
दिन यथाविहित पूजादि करने चाहिये ।

दुर्गाका ध्यान—

“जटाजूटसमायुक्तामर्देंद्रकृत्तमोदरा ।
लोचनप्रभसुष्का पूर्णेंद्रुषट्टजानना ॥
अवतीपुष्पवर्णाभा सुप्रतिष्ठा सुशोचना ।
नवयौवनधन्वाणां अर्षाभरणभूषिता ॥
सुचाहदगनां तद्वत् पीनोत्ततपयोधरा ।
विमंगस्पानसंस्थाना महिषासुरमर्दिनी ॥
सृणाद्याःतदंस्पष्टदशबाहुमप्रन्विता ।
त्रिद्वल दक्षिणे पाणौ सप्तं चक्रं क्रमादधः ॥
तीक्ष्णनाणं तथा प्राकं दक्षिणे सन्निवेशमेत् ।
शेटकं पूर्णचापस्य पाशानद्भुजाभेव च ॥
अष्टां वा परशुं वापि धामतः सन्निवेशयेत् ।
अधस्तान्महिष तद्वह्निस्त्रिरस्कं प्रदर्शयेत् ॥
गिरिशेखरोद्भवं तद्वह्निं नवं सन्नरुपिणं ।
हृदिश्लेन निर्भिन्नं निवदं त्रिभूषिता ॥
रक्तरणी कृताङ्गश्च रक्तविस्फुरितेक्षणं ।
वेष्टितं नागपाशेन च कृतोर्भाषणाननं ॥
सपाशधामदस्तेन धृतकेन्द्राद्य दुर्गाया ।
वप्रदुधिरवकत्रश्च देव्याः सिंहं प्रदर्शयेत् ॥
देव्यास्तु दक्षिणं पादं घमं सिंहोपरिस्थितं ।
त्रिद्विदूर्ध्वं तथा वाममङ्गुष्ठं महिषोपरि ॥
शत्रु क्षयकरां देवीं देव्यदानवदरां हा ।
प्रमन्त्रवदनां देवीं सर्वकामफलप्रदां ॥
स्तूयमानञ्च तद्रूपमपरैः सन्निवेशयेत् ।
उभयवन्हा प्रचण्डा च चण्डोप्रा चण्डनायिका ॥
अण्डा अण्डवती चैव अण्डरूपातिचण्डिका ।
आनि, शक्तिभिरशामिः सततं परिवेष्टिता ।
चिन्तयेत् सततं दुर्गां धर्मकामार्थमोक्षदां ॥”

इस मन्त्रसे देवीका ध्यान कर महाज्ञानपूर्वक षोड्-
शोपचार और वन्दितानादि द्वारा पूजा करे, साथ साथ
धावरण और देवताका भी पूजन हो । इसी प्रकार

सप्तमी, अष्टमी और नवमी पूजा की जाती है ।

विजयादशमीकृत्य—उपर्युक्त विधिसे पूजा समाप्त
कर दशमी दिन देवीका विसर्जन करना होता है ।

‘चरलंग विसर्जयेत्’ इस वचनके अनुसार चरलग्नमें
देवीका विमर्जन करना होगा । यदि चरलग्नका योग
न हो, तो केवल तिथिमें ही विसर्जन करना होता है ।
देवीको यात्राकालमें खान करा कर विसर्जन करनेका
विधान है । नौगान अथवा नगथान द्वारा भगवती गिधा
को ले जा कर क्रीड़ा क्रीतुकादि करतें दृष्ट क्रीतोत्तममें
केक टैना चाहिये ।

विमर्जन करनेके बाद घर आ कर अक्षिद्रावधारण
करना चाहिये । पीछे जल द्वारा निम्नलिखित मन्त्रसे
यजमानको अभिषिक्त करना चाहिये ।

अभिषेकमन्त्र—

“ओं वरिष्ठ मद्गणस्वसे यजन्तस्त्वमेदे देवा उपप्रयन्तु मस्तः
सुदानवे इन्द्रप्राशुर्भवा सत्वा ।

ओं सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्माविष्णुमहेश्वराः ।

वामुदये जगन्नाथस्ताम सङ्घर्षणः प्रभुः ॥

प्रतु धनधानिकदम्ब भयन्तु त्रिनयाय ते ।

आत्यन्तयोगिभू भवान् नमो ये केरुं तस्तथा ॥

वस्त्रणः पवनैश्च धनाध्यक्षस्तथा शिव ।

ब्रह्मणा चरितो जेपो दिक्पालः शान्तु ते सदा ॥

श्रीस्तिरुदयोर्धुं विमे वा पुष्टिः अद्या समा मतिः ।

सुदिलं जा वपुः प्राणितः पुष्टिः कान्तिश्च मातरः ॥

एतानिस्तामिषिञ्चन्तु धर्मपालाः सुसंयताः ।

आदिशब्दं द्रुमा मौमो बुधजोवस्वितार्कणाः ॥

शृहास्त्वामभिषिञ्चन्तु राहुकेतुश्च तर्षिता ।

ऋषयो मुनयो गावो देवमातर एव च ॥

देवपान्योऽपरा नागा दत्याध्याध्वर्यां शशाः ।

अस्त्राणि सर्वशास्त्राणि राजानो वाहनानि च ॥

औपघानि च रक्षानि कालस्यावयवाश्च ये ।

सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा ज्वराः ॥

देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः ।

एते त्वामभिषिञ्चन्तु धर्मकामार्थसिद्धये ॥”

(इन्द्रभिक्षेभरपुराण)

इसी विजयादशमीके दिन अपराजिताकी पूजा की

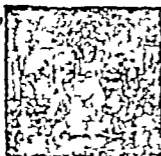
जाती है। इस तिथिमें राजाओंकी विजयवाता पचान्न
हमनापन्न होती है। इस दिन घनिष्ठ अर्घ्या न करे, तो
उसके राज्यमें बय बरके भीतर कहीं विषय नहीं होगा।
(धिर००)

यदि राजा अथ याता चाहते परमल ज्ञान तो
पुस्तकियाँ यात्रा तथा जाहिये। इस विजयवातामें
३ दिन दुर्गावासात्रा प्रयत्नमें घनीय यज्ञ प्राप्त होता
है। केशो पी विपत्तियाँ दूर हो पायेंगे दुर्गा नामका
अथ चरनेके यह आती रहता है।

“दुर्गा दुर्गाति दुर्गाति दुर्गाति वरं मय ।
वा अथै मयत्त कर्ण्ड जीवन्मुक्तं व मानव ।
महोत्सवं महागते महापिण्डे महते ।
महादुष्टिं महाशुके महापयसमुदीरते ॥
यं अथै मयत्त दुर्गावैरं वा वरं मयत्त ।
मं कर्ण्डो वा क्षेत्रेन नीतकर्मप्रसाधनात् ॥”

(उत्सवार्ण०)

माताशालमें लड़ कर जो दुर्गावासात्रा पारक करती,
उसके मो सब होज आती रहते हैं। दुर्गा नाम भव
ममुद्र पार करनेका तरायिकर है। सबिन्धुके जो
दुर्गावासात्रा कीते उनके धमोड पन्न प्राप्त होते हैं। दुर्गा-
नामके सब विपत्तियाँ दूर हो आती हैं। दुर्गादेविका
विभवान ही कर्मके बाद कर पा कर गिता, माता और
गुरुओं पक्षाम तथा आत्म्य वलन तथा वन्द्यावर्षा
के साथ प्रेमनिष्ठन करना चाहिये। दुर्गावन्द चिन्दुवा



का एक प्रधान उत्सव है। तिथि १ पुष्यमासे यह उत्सव
त्रिप समाप्तहोके मंगला जाता है। केशो और जिमी
देवके क्षेत्रमें नहीं जाता। चिन्दुवाक यज्ञा चपला

कामदाक टोक कर तीन दिन तक इस महीवर्षमें नही
रहने हैं। उनका अर्थना है, कि ऐसा दिन मानके
भीतर और जमी लगी जायगा। जो लोग दूर दूर हो गे
गेहो करते हैं, वे भी इस उत्सवमें घर जानके साथ
नहीं जाते, पृथकी वृक्ष पारवाक नहीं करते तथा उत्सव
में गोपदान दे कर अपने जोवनकी श्रद्धा समर्पण है।
देवी विभवानके बाद वे चानन्दमागरीमें गते करते
हैं, यहाँ तक कि कहर मनुष्योके भी पयराव भूज कर
उलने गन् यने मिलते हैं।

उत्सवका दुर्गाको सम्पयो प्रतिमाका पुजन सब
अपद नहीं होता। बङ्गालमें इसका भरमार है। पाया
वर्ष तथा टाडिवासाके दुर्गा दुर्गा स्वातिमि कर्वा भय
वर्षकी गतिमूर्ति प्रतिष्ठित है, यहाँ विभव कर देवी
पूजा और उन्नावति होते हैं। बहुत अथक ही यह
साधन करते जो महादुर्गाकी पूजा हो आती है।
बङ्गाल मिय यन् स्वातिमि इस उत्सवकी दुर्गाका कहते
हैं। इन्द्रिय प्रदेशमें इस दिन कहीं कहीं चण्डीवाकके
बन्देमें विद पाठ होता है। महाविषय, भारतीपूजा और
वापरी पूजा कभी चण्डीमन्त्रवाक विरल्य देना।

दुर्गा—(शब्दके एक कवि । एतदा वर्ष १८६० म ०में
दुर्गा वा गया इति १८८२ म ०में वदुतमो कविताए
रही ।

दुर्गावन्द रचित—एक बट्टाना बन्धु, गाविन्दचन्द्र
रचितके पुत्र । १५३० ई०में चन्दननगरमें इनका जन्म
रूपा था। जितके मने घर वे अन्धकारके क्षिपी मोटा
गावे यहाँ भोजी करने लगे। साथ साथ इका वराधान
पारनाय मा पारथ कर दिया। छोडे वा समर्थ पन्द्र
बाचक मन्त्रमें इकनि लूब नाम कहाया। मीच
गङ्गा, बटौ तथा प्रायः पञ्चाशत् महराजिं वराधान
दावके आनन्द कर प्रभूत बनयायी हो गए। इकोने
अपन लक्ष्म कर एक विद्याल। तथा हम याताके पन
बाई की। १८०२ ई०में चन्दननगरके मयन और विधि
पारना ० रनेक लिये जो लोत्तल कौमिल व्याजिन हुई
दी लकी। मन्त्र बनाए गए । १८०८ में १८२५ ई०
तक वे लक्ष्मणाक समर्थी रहे और इकोके पामिया
मुम्बर सब काम कात्र बनता रहा। १८८२ ई०में वराय

गवर्मे गृहने इनको सत्यता और न्यायपरताके पुरस्कार स्वरूप इन्हें नगरस्थ सर्वतनिक जज और मजिस्ट्रेट बनाया। इनका विद्यानुराग देख कर पारोनागरके फरासी माहिल्य-परिषदने इन्हें सम्मानित सभ्यपद (Officier de Academie) प्रपण किया और एक पदक भी भेज दिया। एशियाके पूर्व प्रान्तमें फरासी समाजने १८८८ ई०में इन्हें (Chevalier de ordre Royal du Cambodge)की उपाधि दी।

१८८६ ई०की १ली जनवरीको प्रसिद्ध नेपोलियन बोनापार्टके प्रतिष्ठित फरासीसियोंका श्रेष्ठ सम्मान-पद Chevalier de la Legion de honour नामक उपाधि भी इन्हें मिली थी। वे जातिके तार्तो और प्रकृति हिन्दू थे। अति सामान्य अवस्थासे निज चेष्टा द्वारा जितने मनुष्य अपने समाजमें उन्नत हो गए हैं वे उनमें से एक हैं।

दुर्गाचरण वन्द्योपाध्याय—ब्रह्मालके एक प्रसिद्ध चिकित्सक। यूरोपीय चिकित्सामें इन्होंने ऐसी पारदर्शिता लाभ की थी कि ब्रह्माल भरमें इनका मुकाबला कोई कर नहीं सकता था।

दुगाढ (सं० त्रि०) दुर्गाहा कर्मणि क्। कठ द्वारा अवशास्त्र, जिसमें प्रवेश करना कठिन हो।

दुर्गादत्त मैथिल—वृत्तनापति हिन्दूपतिके आययमें रह कर इन्होंने हत्तमुक्तावली नामक संस्कृत ग्रन्थकी रचना की।

दुर्गादत्त व्यास—हिन्दूके एक कवि तथा सुप्रसिद्ध कवि श्रमिकदत्त व्यासके पिता। वे काशमें रहते थे तथा इन्होंने सं० १८२७ में कवितासंग्रह नामक एक ग्रन्थ लिखा।

दुर्गादास—एक विख्यात राठोरनेता। मारवाड़के राजा यशोवन्तसिंहकी नृत्युके बाद पिगाच-प्रकृति औरङ्गजीवने जब यशोवन्तके शिशु पुत्र तथा उनके परिवारको अपने अधीन करनेकी चेष्टा की, तब राठोर-बोर दुर्गादासने राठोर-कुलमानकी रक्षा करनेके लिये दिल्ली राजधानीमें सुमलमानी सेनाके साथ घमसान युद्ध किया था। उन्हींके पगमर्गसे एक विश्वासो सुसलमान एक टोकरेमें यशोवन्तके पुत्र शिशु अजितको रख कर गुप्त भावसे दिल्ली

झोड़ किसी निरापद स्थानमें ले आया था। जब कुमार निरापदसे इष्ट स्थानकी पहुँच गये, तब दुर्गादास बहुतसे विश्वासी अनुचरोंकी साथ ले वहाँ आए और कुमारको ले कर भावूगिर पर चले गये। यहाँ वे एक सन्ध्यासोके घरमें गुप्त रूपसे रह कर शिशु अजितका लालन पालन करने लगे। इनके यत्न और स्नेहसे शिशु अजितने रक्षित और युद्धविद्यादि शास्त्रमें सुगिणित हो अन्तको राजपूत समाजमें विशेष ख्याति प्राप्त की।

जिस समय दुर्गादास अजितकी ले कर श्रवुदगिर पर जा रहे थे, उसी समय इन्दुवर्गीय परिहारके राजाने माहवारके शून्य सिंहासन पर अपना अधिकार जमाया। राठोरजातिने नेहहोन होने पर भी तुरंत ही परिहारोंकी भगा कर माहवारका उद्धार किया। नेहहोन राठोरोंका वीरत्व देख कर औरङ्गजीव जल उठे और माहवार-राज्यको ध्वंस करनेका दृढ़ संकल्प किया। इस समय दुर्गादानने कुमार अजितको सिंवारमें ला रखा था। औरङ्गजीवने सैन्य भित्तीर पर आक्रमण कर दिया। इस समय उन्होंने सुना कि राठोरबोर दुर्गादासने भालोर पर अधिकार कर लिया है। मुगलसम्राटने फौरन इसका बदला लेनेके लिये भालोरमें सेना भेजी। मुगलसैन्यके पहुँचनेके पहले ही दुर्गादास भालोर पर अपना पूरा अधिकार जमा तथा वहसि प्रचुर धन लेकर घोषण चले गये थे। इस समय मुगलसम्राटने समस्त राजपूत-जाति को इस नामधर्ममें दीक्षित करानेका हुक्म दिया। उनका यह आदेश प्रतिपालन करनेके लिये उनके पुत्र कुमार अकबर मुगलसेनापति ताइवरखसि जा मिले। नादोल नामक क्षेत्रमें मौषण युद्धको आग धधक उठी। सेवार और माहवारके वीरोंने मिल कर सुसलमानी सेनाको कुचल डाला। १७३७ सन्वत्के १४ आश्विनको जो महायुद्ध छिड़ा था उसमें महावीर दुर्गादासने अपना अतुल वीरत्व और अपूर्व शौर्य दिखलाया था।

औरङ्गजीवके पुत्र कुमार अकबर राजपूतोंका असीम बाहस और अनुपम वीरत्वको देख कर मुग्ध हो गये थे। उन्होंने सोचा था, कि इस प्रकारके महावीरोंकी यदि अपने पक्षमें कर सकें, तो मैं बहुत जल्द भारतका राज-द्वन्द्व ग्रहण कर सकता हूँ। यह सोच कर उन्होंने

दुर्गादासने मित्रनेके निचे लक्ष पाठ एक कृत भेजा । दुर्गादासने भोवा, कि हुमार पञ्चवरके साथ मित्रता करने से हुमार पत्रितके पक्षमें बहुत कुछ अच्छा होया । ऐसा सोचने हुए वे सब राजपूत बीरोंको साथ से सुमन सिविरमें जा पहुँचे । दोनों दक्षमें सम्ये हो गईं और उज्ज्वलके चिरायत, राजेरीने हुमार पञ्चवरको भारत का सम्राट्, भोकार कर लिया । तब पञ्चवरने अपनेको सम्पाट्, बलका कर तमाम लोगका कर दो । और उज्ज्वलका कर एक सम्पाट् मालम हुआ, तब लक्षमें पञ्चवर और लक्षमें लोधो दुर्गादासको अच्छी तरह दण्ड देनेके लिये कृतनीति बजाई । लक्षमें पहले ताशवरकाको भो पक्ष बरका दाहिना हाथ बा, उज्ज्वल करनेके लिये मज्जोध सुरस्वारका कोम दिखलाया । ताशवरका कोममें पड़ कर और उज्ज्वलके हाथ मिल गये और लक्षमें एक विद्याधो जसोरको भिन्नकर राजपूतो को एक बना दिया कि, 'पिता सुनने पत्र भेज हो गया है, हम लोगोंने जो प्रतिज्ञा की थी, अभी वह मानो पूरी हो गई है । अब आप लोग अपने अपने द शको छोड़ जाय ।' इतने यह भी कहा, कि ताशवरका और उज्ज्वलके हाथसे मारि गये हैं । यह इन कर राजपूतोमें बहुत बलबल मचा । वे सबके सब तुरंत ही पञ्चमेरे १० बोध हुए जैसे पाये । जैसे हुमार पञ्चवरका जब इस विद्याधवातकताको पञ्चर मिल, तो वे और ल विद्याध वैनाकी साथ से सुनः राजपूतो से जा मिले । यह राजपूत युव ज्ञानि पर राजपूत साथ बहुत पयाताप करने लगे । लक्षमें लोवा पञ्चवर हाथ गया था, कि लक्षमें बहुत उज्ज्वल पोटाजिबका सभा माय और लक्षका भाव्योद्व होता, इसमें लक्षण भी अच्छे नही ।

पमो और दुर्गादास हुमार पञ्चवरका ल कर माङ्ग-कारके पक्षमेंको पोर पक्ष पड़े । इस और उज्ज्वलने पञ्चवरको पक्षमेंके लिये एक विद्याधो मनुष्यक हाथ द बजार अर्धमूद्र दे कर दुर्गादासके पास भेजा । दुर्गादास बोधे पुत्र्य लक्षों से कि रिम्बलके बयोमूत्र हो जाती । लक्षमें लक्ष अपनेको से कर पञ्चवरको भी दे दिया । पञ्चवर दुर्गादासको ऐसो पानुराज पोर प्रतिज्ञाप्यजनमें लक्षमें पटल देव कर विजित हो गये । दिने एक इन्द्र

पञ्चिको लक्षोंमें पक्षसे लक्षों नहीं देखा था । और उ-ज्ज्वलने जब देखा, कि लक्षकी सब पाशवाको व्यव निरक्षी तब लक्षोंने दुर्गादास पोर पञ्चवरको पक्ष लक्षमेंके लिये बहुत बन्द एक दस मैत्र्य मंत्री । दुर्गादास अपने वड़े भाई योगिन्द्रके हाथ पत्रितका कुछ रचामार छोड़ कर पाप पञ्चवरको साथ लिए बाहर निकले । लक्षोंके वे बाहर निकले, लक्षोंके सुबल-धनाने लक्षों चारों पोर से लिया । दुर्गादास अपने पत्रित सेत्रके धाम्, लक्षोंके मिद कर दक्षिकको पोर पक्ष दिने । और उज्ज्वलने भावर तक जनका पोवा किया था । पत्रिते जब लक्षों मानम पड़ा, कि वे ठीक राक्षसे नहीं थाए, दुर्गादास दाहिना पार गुजरात पोर बाईं पोर चम्पलको छोड़ते हुए निरापदसे नर्मदाको पोर पक्षे गये हैं, तब वे लक्षके पवीर हो बडे और अपने पुत्र पत्रितका राजोरक द धम कर डालने के लिये हुक दे दिया पोर आपनेनाको माय से दक्षिण भी पोर रवाना हुए । इतना करने पर लो के दुर्गादास का कुछ भी पराक्रम लक्षों न कर सके । १७३८ सम्बत्में हुमार पञ्चवर मराठोंके साथ मिल गये । यह दुर्गादास निपिन हो कर लक्षके पक्षमेंको पहुँचे पोर लक्षके सुतनमान शासनकर्ता पर लड़ाई कर दो । लोके के महाराजाके शाहायाव कुछ दिनेके लिये पिनोरको गये । लक्षके लोके ही समय बाद हुमार पञ्चवर और उ-ज्ज्वल मयसे दारण देवको भाग गये थे । पक्षमें लो लक्षको लक्ष्य पोर परिवार राजोरके मिलोसके ल । लोके राजोरपतिने सुमनराजमन्दिनाका सतिल गड कर दिया इस लक्षकी पागुलके और उज्ज्वलने पत्रितके माय सम्ये कर लो । इतने दिनेके बाद दुर्गादासको मनस्वामना पूरो हुई । लक्षोंने जब देखा कि लक्षके पक्षका जन पत्रित समस्त पापदो को मिल कर सिंहासन पर बैठे, तब वे लक्षों न समायो । जब तब वे लोके लक्ष, तब तब पत्रितको लक्षपक्षके लिये लो लक्षोंमें भाव्यो लक्षों कर दिया था । इस प्रकारके लक्षपक्षके, प्रसुमल, महाभौर, बदायण पोर दक्षप्रतिष्ठ बहुत कम लिये जाती है ।

दुर्गादास विद्यानामिका—नवहोप निवासी एक पक्षिन । ये ने धार्मिक प्रधान वाक्यके साथ भोमके पुत्र के । लक्षने

विशेषतः ध्यानभूति सिद्धावनीमा चौर राधाकृष्णक नामक प्रथम प्रथम विधि ।

१ हिन्दोरे एव कवि । इन्दोरे पञ्चतसि इ परितः रम चयात् नान्यकारासो नामको एव मुद्रक (कवि) ।

दुर्गाप्रसाद मिश्र—हिन्दोरे परमोत्तम सेवको तथा कवियोगि एक । इतका अथ स वत् १८१६ को आश्रीर- में हुआ था । स प्लत, हिन्दोरे चौर व मनामें इन का पूरा टपन का तथा ये कुछ कुछ नगरको भी जानते थे । श्रीबचार्य ने सपरिवार कलकत्ते में ही रहने थे । इन्हां ने कई समाचार पत्र चलाये तथा सम्पादित किये । उन मेंसे प्रसिद्ध पत्र भारतमित्र इन्हींका चलाया हुआ है । इस पत्रिनिष्ठ नारदुधानिधि उत्पन्नकता चौर मार बाहो-बन्धु नामक पत्र इन्हींने प्रकाशित किये तथा २० २२ मुद्रके भी किये । स० १८६०को इर वर्षको चक्रवर्ति इतका प्रथम भास हुआ ।

दुर्गामङ्गलरहिम्ना (स० श्री) ए-ए तन्त्रका नाम । विद्यानि वैशो ।

दुर्गासाहाय्य (स० श्री०) दुर्गाया साहाय्य । देवी साहाय्य, मन्वतोको महिमा । अष्टाभि देवी साहाय्य विविधपदोंसे बर्णित है, इससे चण्डोको देवी साहाय्य कहते हैं ।

दुर्गाराम—पापघ्नपञ्चक नामक स मूल-पञ्चकार ।

दुर्गावतो—विष्णोके गना सङ्घको कथा । रिसनके राजा गिणोदोके साथ इनका विवाह हुआ था । १३२१ ई० में गुजरातके पञ्चविनि बहादुर शाहन गिणोदोको कैद कर लके बन्धुके सुपनमात्री धर्म में दीक्षित किया । कुछ समयके बाद ही गिणोदोके माई लक्ष्मणने जब रिसनका दुर्ग बहादुर शाहके हाथ सौं देनका ठाना, तब रामो दुर्गावतोने सुपनमात्रिके पक्षिमें जागरो पयिका विष खा कर मरना ही अर्थ समझा । वह नीचे कर इन्हीं सत मा रात्रपूत-विद्याके साथ प्रवृत्तित सुष्ठमें प्राप्तपत्र च किया ।

दुर्गावतो महोबाउ राजाको कथा । इमोपुर त्रिनेत्र मरीचामात्रमें चण्डेन रात्रपूतकी राजधानी थी । इन का रूप गुण सुन कर गङ्गमण्डलके गोकुल रात्रपूतव शीघ्र दमरुत्तमाने इन्हे विवाह करनेको विचार। दुर्गावतो विवाह दूहके पाव करी जा चुकी थी चौर साथ

माय दमपत्या जातिमें इनसे झग हो ये । इन्को दो क इन्को विवाहके ल-युक्त न १८१६ गये । इस पर दमपत्याने इतोकाह न हो दमपत्याने साथ दुर्गावतोके पिता पर बड़ाई कर दो चौर लके पराम्भ कर दुर्गावतोको निज बर्षेपकाउ रूपमें पढ़क किया । विवाह के एक वर्षपुवाद दुर्गावतोके एक पुत्र उत्पन्न हुआ । उनके तोसरे ही वर्षे दमपत्या रामी दुर्गावतो पर राज्यभार चौर पुत्र मोरगारावकका रचा मार ही प पाप इस ल-कसे लन बने । दुर्गावतो दयावर्त्ममें उत्पन्न चौर प्रजा-पालनमें सब हा कर्त्तव्यपयथा हो । मध्यपय- में पात्र हो इरएव घरमें उनको क्षोभित गार्ह जातो है । इनके पतुस दिवसोंकी कथा सुन कर सम्राट् एक बर्षके माचिकपुरख प्रतिनिधि पासवर्षाने १८०० देनाका माय से मन्त्रको राजधानी मिहगढ़ पर जावा मारा । रामो दुर्गावतो बुद्धमें पराम्भ हो कर पढ़के मङ्ग (चाहुनिष्ठ अथकपुरके समाप) चौर पंक्ति वङ्गसे मन्त्रको पला गार् । यहाँ फिर मा लकई हिंदी । पहले दिन तो रामो दुर्गावतोको जा श्रौत दुई, वैदिक दूसरे दिन चावपका अथ कामादे काम सेने लगे, तब रामोकी वपुत्त छति दुई । तिस पर मो ये पधोम साइसमें पधोने देनाका परिपालन करतो ही रहते, कुछ दिन छोड़ा मरो । बुद्धकावमें एक तोरसे इनको धारि पाँके चौर दूसरे गना मिट गया । बाद इनके पंक्ति-को सुको नदोमें सहना प्रसन्न था जानव इनको पत्र देनाय तितर बितर हो गई । तब लवंगी पाया न देख दुर्गावतो जाय हो मर चौर माहुतको कसरने तेज कुराका क कर पयनी जागोमें सुबेक दिया चौर पञ्चलको प्राण दुई ।

दुर्गावट्ट—इतान मङ्गरिपदान नामक ज्योतिषकी टोका ।

चौर चामारविनोद नामक मिथ्यापत्र प्रचयन किया है ।

दुर्गावट्टरपाई—हिन्दोके एक कवि । इतका अथ धम्यत् १८३६ में हुआ था । इन्हींने मटवरपचोसो, सेव चौर निपक, पुष्टकावलोकन, परिषिक अम भौतिमिया तथा इतनाभगतक नामक प्रथम किये ।

दुर्गावट्टो (स० श्री०) धारित चौर पंक्ति राजपत्रको पढ़ती ।

घोर महाराष्ट्रवे मात दीप्ती कर कोटा पर चढ़ाई कर दो। इस समय महावीर दुर्जन्यास अपने विपुल निजामने राज्य-रक्षा कर रहे थे। तोन मास परबरोब्बे बाण ईश्वरोसि हकी सब चेटायि क्यार् हई घोर के निराय हो कर सोट पाये। इस दुर्जन महाराष्ट्र-दुर्जनके पक्षमम नेता कल्या मिथियाका एक हाथ तौरने कट गया बा। प्रधान बेध्यापति दिव्यातमि हकी गुण्ये दुर्जनयासने वाली रावने नाहरनदुष्का दुर्ग पाया था।

ईश्वरीसि हकी भाग जाने पर बीरवर दुर्जनयासने पुर्न गत ताकी मूल कर समेदसि हकी समके पैठक मुन्दो राज्यमें पमिविन्न करमिदि निसे पात्र सिद्धा की। उस समय इनके परामर्शसे समेदसि हकी दोलकरकी सहायता से कर मुन्दो-राज्यकी बाधिस किया सही, बिन्दु इस उपकारमें हकी मो कोमकरकी स्थावोगता ओकार करनो पढ़ो हो। पोछे धर्मने पनेक देग लोग कर कोटा राज्यमें सिखा लिसे। १८१० स कृष्णो हर घोर कीको इन दो जातिमें धर्मभंग बुद्ध उपजित हुआ। इन बुद्धमें समेदसि हकी दुर्जनयासकी पूरक सहायता की थी।

तोम वय राज्य करनेके बाद दुर्जनयास इन लोकके पय गये। जिस गुणके रहनेसे राज्यपूत प्रय सनोय होती हैं वे सभी गुण इनमें पाये जाते थे। परमाधिकता, उदारता और साहसिकता इनमेंसे एकका भी इनमें परमान न था। वे गुण घोर विवशासा हके पक्षपाती थे। उनके समयमें यह नियम प्रचलित था कि मन्त्र्याके बाद कोटाका नगरदार बन्द हो जायत, फिर कोई भी नगरमें प्रवेश न कर सकेगा। स योग्यता एन दिन के बुद्धी लोट कर नगरदार पर उपस्थित हुए। उस समय रात हो चुकी थी, दरवाजा बन्द हो गया बा। नके कहनेमें नोकरोंने फाटकीमें बहा दिया घोर हकीं ने पयता परिपय दे कर फाटक कोभनेकी लडा। दार-रक्षकने मोतके कबाह दिया कि, 'रातमें दरवाजा कोभनेका कुछ नहीं है यतः पाप रात भर कहीं दूमने कबड जा कर रहें।

कहै अब दुर्जनयासने नगरमें प्रवेश किया तब दार रक्षकने उनके घरकी पर पछ रथ कर इनके

घना प्रायंगना की। दुर्जनयासने लकके लक्ष बाधायें ले चुप हो कर उभे पछिष्ट वाजिोविन्न दिये। इनके गुणके विवरमें पनेक टक-इकाय प्रचलित हैं।

दुर्जय (स० वि०) दुर्जिन ओबतेसो दुर्ज जि-खन । १ कय करनेमें परगय, जिवे जीतना बहुत कठिन हो। (पु०) २ बिन्दु। ३ कास्येवीय न यमें उपपय पयन रात्रिके एक सुवका नाम। (रस दुर्ग) ४ धानवविनेय एक पशुरका नाम। ५ राक्षसका नाम।

दुर्जयविरि—कामरूपका एक विश्वात पहाड़। कासिका पुराणमें इस पहाड़का विवर लिखा है। कामरु हैवी। दुर्जयन (स० पु०) नृगरीड, एक राजाका नाम। दुर्जर (स० सि०) दुर्जिन जीयति नृ पय । कष्टपरि पाय्य, को कठिनतासे पचे।

दुर्जरफय (स० लो०) कर्कटिक कचडो। दुवरा (स० लो०) दुर्जर टाप । ज्योतिषमतीक्ष्णता, मानत्र गयी।

दुर्जान (स० लो०) दुष्ट जात प्रा० म० । १ अपमन । २ परमज्ज्ञा, कठिनता, मकट । सि० ३ अरुका जय बुरी रीतिसे हुआ हो। ४ जिनका जय उभा हुआ हो। ५ परमाया, नीच।

दुर्जानि (स० सि०) दुर्जिता जाति रय्य । १ मिन्दित न शोय, दुर्बलका। दुःखिता जातित्रय यय्य । २ जिनका जय बुने रीतिसे हुआ हो। ३ जिनकी जाति बिन्दु गई हो। हुआ जातिः । ४ बुने या नीच जाति।

दुर्जन (स० वि०) दुर्जितो कोवा ओबतोपायो यय्य । १ परमज्ञाय पवीको कुररेके दिये पय पर रहनेवाला । दुर्जोय भावे यय्य । (लो०) २ मिन्दित कोबन, दुरा कोबन । दुःख ओबति ओब यय्य । ३ दूरके अधन ओकार कोबनकारय्य ।

दुर्जोय (स० वि०) दुर्जिन कोयतेसो दुर्जो यय्य । दुर्जोय जिवे ओतना परलत कठिन हो। दुर्जोय (न० वि०) दुर्जिन प्रायने या कर्मणि यय्य । दुर्जीय, जो कबहो समयमें न पा सके।

दुर्जय (स० पु०) दुष्टो लवः, प्रादिन० तनो कय्य । १ दुष्टा जाति बुरा बान । दुःखितो नयो यय्य । (वि०) २ दुष्ट मोतिबुद्ध, बुरो बालवाना ।

दुर्गा (स० त्रि०) दुःखेन नश्यति दुर्-नश अच् वेडे णत्वम् । कष्ट राग नष्ट, जो बहुत मुश्किलमे नष्ट हो ।
 दुर्गामन् (स० स्त्री०) दुःखितं नश्येऽस्य 'पूर्वपटात् सञ्जाया' इति णत्वे प्राप्ति जभ्राटिपाठान् न णत्व' इति केचित्, वेडे तु णत्व सध्वयाटोऽप्यति । १ श्लेष्कोगिका, शक्ति नामक जलजन्तु, सुतुली । २ अर्गरोग, बवा-
 मोरकी बीमारो । चण्ट पाप करनेमे अर्गरोग होता है । अतः पाप ही अर्ग रोगका कारण है । इसीमे इसे निन्दित समझ कर इणका नाम दुर्गामन् हुआ है ।

दुर्गीति—दुर्गीति देवी ।

दुर्गम (स० त्रि०) दुःखेन दम्यतेऽसौ दुर्-दम-कर्मणि णत्वम् । १ अटमनीय, जो जन्टी टवाया या जोता न जा सके । २ प्रचण्ड, प्रबल । (पु०) ३ रोहिणोके गर्ममे उत्पन्न वसुदेवके एक पुत्रका नाम ।

दुर्गमन (स० त्रि०) दुःखेन दम्यतेऽसौ वाहु० युच् दुःखेन दमनं यस्य इति वा । १ दुःख द्वारा दमनीय, जिसका दमन करना बहुत कठिन हो । २ जनमेजयवंग जात शतानीकासज नृपभेट, जनमेजयके वंगमें उत्पन्न शतानेक राजाके पुत्र ।

दुर्गमनीय (स० त्रि०) १ जिसका दमन करना बहुत कठिन हो । २ प्रचण्ड, प्रबल ।

दुर्गम्य (स० त्रि०) दुःखेन दम्यते दम यत् । १ अटमनीय, जो जन्टी टवाया या जोता न जा सके । (पु०) २ बलतर, गायका बहुरा ।

दुर्गर्प (स० पु०) भयातक वृक्ष, भिन्नार्षा ।

दुर्गर्ष (स० त्रि०) दुःखेन दम्यतेऽसौ दुर्-दृग कर्मणि णत्वम् । १ दुःखद्वारा दमनीय, जिसे देवना अत्यन्त कठिन हो । २ जो देखने-मयङ्कर हो ।

दुर्गर्शन (स० त्रि०) दुःखेन दम्यते दम-युच् । १ दुर्गर्ष, जो जल्दा दिखाई न पड़े । (पु०) २ कोरवीका एक मेनापति ।

दुर्गशा (स० स्त्री०) दुष्टा दशा । दुर्बला, तुनी दशा, खराब हालत ।

दुर्गान्त (स० त्रि०) दुःखेन दान्तः दम-ञ्ज । १ दुर्गमनीय, जिसका दमन करना कठिन हो । २ प्रचण्ड,

प्रबल । (पु०) ३ कलह । ४ बलतर, गायका बहुरा । ५ शिव, महादेव ।

दुर्गिन (स० स्त्री०) दुष्टं दिनं । १ मेवाच्छन्न दिन, ऐसा दिन जिसमे वाटन जाए लीं । २ अनान्यकार, बहुत यत्नकार । ३ वृष्टि, बरसा । ४ दुर्गित दिनमात्र, दुर्ग दिन । जिस दिन भगवान्का नाम लीं लिया जाना लीं दिन दुर्गिन है, मेवाच्छन्न दिन दुर्गिन नहीं है । (शब्दार्थवि० पून) ५ दुर्गशाका समय, बुरा वक्त ।

दुर्गवस (स० पु०) दुष्टः दिवसः प्रादिम० । दुर्गिन, खराब दिन, अमातका दिन ।

दुर्गुरिया—बङ्गाल प्रदेशके टाका जिलेके अन्तगत एक प्राचीन विध्वस्त ग्राम । भृश्या राजाश्रीका बनाया हुआ दुर्गका धर्मभावगण राज भो देखनेसे आता है । लोग इसे राजावाहो भी कहते हैं । एक समय यह दुर्ग अर्ध-चन्द्राकारमें व्यापित था । इसके चारों ओर बनार नदी बहती थी । १८३८ ई०में भी प्रायः २ मील तरफ १२ मे १५ फुट ज चो चहार-दीवारी थी । दुर्गको अवस्थिति देखनेमे मालूम पड़ता है, कि ए० समयदो मकान ओर एक बुज्र थे । इस ग्रामके पास ही पहले एक नगर था । अमो टटो फूटो ईंटे आदि उसका परिचय देता है ।

दुर्गुरुह (स० त्रि०) टोलयति उच्छिपति आन्तिकता-मिति टोनि वाहु० कूटप्रत्ययेन साधुः । जाम्बिक ।
 दुर्गुहा (स० स्त्री०) वह जिसके दृढ़नेत्र कठिनता हो
 दुर्गुत (स० स्त्री०) दुष्टं धूतं प्रादिम० । कपट धूत-क्रोडा, क्लम पागा खेनना ।

दुर्गुशोक (स० स्त्री०) दुर्-दृगर्षा कर्मणि ईकृक् । दुर्गर्षनीय विष, वह विष जो जल्दा दिखाई न पड़े ।
 दुर्गुष्ट (स० त्रि०) दुष्टं दृष्टं । रागादि दोष दुष्ट, जिसका राग, लोभ आदि कारण सम्यक्-निर्णय न हुआ हो । याज्ञवल्कर-स्मृतिसमें लिखा है कि ऐसे सुकटमेको राजा पुनः निराशय करे और यदि अन्धाय हुआ हो, तो न्यायाधीश तथा सुकटमा जातनेवालोंको उसका दूना दण्ड दे जितना हारनेवालेको अन्धायने हुआ हो ।

दुर्गुव (स० स्त्री०) दुष्टं देवं । १ दुर्गुष्ट, दुर्भाग्य । २ पाप । ३ बुरा संयोग, दिनाका बुरा फेर ।

दुर्गुववत् (स० त्रि०) दुर्गुवं विद्यतेऽस्य दुर्गुव समुप

मन्त्र वा । पुच्छट्टहृत्, समामा, पुगे विद्यमन्त्राका ।
 दुर्गिना (स० खी०) एक भताका नाम ।
 दुर्गम (स० पु०) दुष्टो दुर्मन् । पञ्चाल, प्याज ।
 दुर्हर (ब० पु०) दुष्टु-लेन विपरीत ह-अर्धमि चम् । १
 नरकविषय एक नरकका नाम । २ मयभोजवि । ३
 वारह, वारा । ४ महात्मक, मित्रादी । ५ मन्त्रियादृशा
 एक वेनापति । ये भगवतीदेवोषे प्राय बुद्धिं मारि मये ।
 (मार्क० पु० ८१।१८) ६ हृत्तरादृका पुनमेव, हृत्तरादृके
 एक पुनका नाम । ७ गम्भारादृके एक मन्त्रीका नाम ।
 ८ विष्णु । ९ राक्षसा वेनापति । पयोक्ववार्त्तिकादि कजा
 कनिसे समय एक हनुमान्के हाथने मनुष्ये रक्षक मारि
 मये तत्र राक्षसने लये एकहनेके निचे दुर्हर पादिको मेत्रा
 था । यह राक्षस हनुमान्के हाथसे मारा गया था ।
 (बि०) १० जिसे कठिनताये एकदु मन्के । ११ प्रवह,
 प्रचल । १२ दुर्ध्व, ओ कठिनताये ममम्मेन पावे ।
 दुर्हरा—महाराज चन्द्रगुप्तको पटराजो । चाचक्य मन्त्र
 हाथने कथामिदं निचे चन्द्रगुप्तको प्रतिदिन सोडा सोडा
 करके विद्यापानका प्रथम्य करता से । किन्तु चन्द्रगुप्तको
 रक्षका पता नहीं । स योगवय एक दिन राजी दुर्हर
 ठनके प्राय धामिको बैठे । उस समय के पूर्वगर्मा वीं
 घोर विष कानिका कन्के प्रथम्य मो न या । पता
 विवाक मोहन करती समय चाचक्य था पदसे घोर 'यह
 क्या कर रहे हो दिया कहते न कहते रामो पञ्चल
 को प्राप्त हुई । बाद चाचक्य ठनके मर्मको प्याङ्क कर
 मर्मके माचकको बाहर निष्कान निष्का घोर कही बानक
 पोषे विन्दुवार नामसे ब्रिहद कृपा ।
 दुर्हीरु (स० पु०) दुर्-ट्ट वा० ईदुल । दुर्हीरुषीय, वह
 को कच्छदी एकदुर्गमे न था मन्के ।
 दुर्हीरु (स० जि०) दुर्हीर, जिसे कठिनताये एकदु मन्के ।
 दुर्हीम (न० जि०) दुर्हिमो धर्मो यच्छ समानाक्तविधि-
 रभित्प्रस्तात् धार्येन कश्चित् पतिच् सम० । दुष्ट
 धर्मबुद्ध ।
 दुर्हीव (ब० जि०) दुर्हिेन हृत्तरादृको दुर्-हृप कर्मणि
 क्त । १ परार्थीय, त्रिभवा दमन करना कठिन हो । २
 दुर्हीय जिसे पराया करना कठिन हो । ३ प्रवह, प्रचल,
 लप । (वृ०) ४ हृत्तरादृके एक पुनका नाम । (नारन

१।११-७३) १ रामयक दक्षका एक राक्षस ।
 दुर्हीव (स० जि०) दुर्-हृप-युच् । युक्त द्वारा वय चीय,
 जिसे कच्छ दी वयमे न का लक्ष् ।
 दुर्हीवता (म० खी०) दुर्हीव्य भाव दुर्हीव लय टापु ।
 दुर्हीवका भाव ।
 दुर्हीपां (स० खी०) दुर्हीव टापु । १ नागदमनो, नाम
 दोग । २ कन्यारो हृय ।
 दुर्हा (स० खी०) दुर् वा भावे प । दुष्टकाल ।
 दुर्हाय (स० जि०) दुर्हिेन चार्थेन चारि-यत् । दुर्हीव्य,
 ओ जल दो धमम्मेन न था मन्के ।
 दुर्हाव (म० जि०) दुर्, भाव कच्छ । दुर्हीवलोय, त्रिभवा
 स योहन करना कठिन हो ।
 दुर्हित (स० जि०) दुर्-धा कर्मणि ल, बं देन धामो
 हिः । दुष्टभावसे स्थापित ।
 दुर्ही (म० जि०) दुर्हिेना धीर्यं च । दुष्टबुद्धियुक्त हुरो
 बुद्धिका ।
 दुर्हीर (स० जि०) दुर्, हृम हि सने कर्मणि क्षिप ।
 दुष्प द्वारा हि सनोय ।
 दुर्हीकृत् (म० पु०) दुर्, हृव कट ह्यो० माह । बुद्धि
 बिना गुदवाक्य प्रमाद्यकारो शिष्य, वह शिष्य ज्ञा
 गुहकी बात जस दो न माने ।
 दुर्हीय (न० पु०) दुर्-लो-पच् । नीति निष्ठापरक,
 कुमोति, हुरी चाम ।
 दुर्हाद (स० पु०) १ परिवह ध्वनि, नुरा मन्द । (जि०)
 २ कर्ममध्यनि करनीवाना ।
 दुर्नामक (स० पु०) दुष्ट नामा पन्क । पर्यरोम कवा-
 सोरबी बीमारी ।
 दुर्नामन् (म० पु० खी०) दुर्निन्दित नाम कथ । १ दोर्क-
 कोविद्या शीय, सुतुको । २ कुम्ब्याति, नुरा नाम, वद-
 नामो । ३ दुष्ट बचन, माथो ।
 दुर्नामारि (स० पु०) दुर्नाम' पर्यरोमय्य परि शब्दु ।
 मूरक जोमोभन्द । यह पर्यरोमको दूर कर देता है ।
 दुर्गाथी (ब० खी०) दुर् निन्दित नाम यस्या शीप् ।
 दुर्नामा, दुर्क, शीय ।
 दुर्निघ (म० जि०) दुर्-लेन निघ्नरते दुर् नि-घ्न
 यत् । दुर्दं, जिसे कच्छ दो वयमे न का लक्ष् ।

दुर्निमित्त (म० वि०) दुर्-नि-मित्त । १ दुष्टभायसे निमित्त, जो बुने ग्यान्तसे फेंक दिया गया हो ।
 दुर्निमित्त (म० स्त्री०) दुष्टं निमित्तं । भायि रिष्टसूचकः शकुनभेदः, हीन्दवान्ने परिष्टको सुचित कामेयाना पश-
 कुन, बुग मगुन । विपद् आनिङ्गे पक्ष्मे षो बुो मगुन दीष
 पङ्के है । तमो घानतमें उनका गान्ति करनो चाहिये
 दुर्निश्चन्तु (म० वि०) दुर-नि-श्चन्तु । दुःखे दारा
 नियन्तव्य, जिसे बहुत कठिणतासे प्रधोन कर सकें ।
 दुर्निरोध (म० वि०) दुःखेन निरोध्यते निर-रुध-यत् ।
 बहुत कष्टमें जो निरोधण किया जाय, जिसे टैलते
 न बने । २ भयदर । ३ कुरूप ।
 दुर्निरोध्य (म० वि०) दुःखेन निरोध्यते निर-रुध-यत् ।
 दुर्निरोध देखी ।
 दुर्निवृत्त्य (म० वि०) दुःखेन निवृत्त्यते दुर-नि-वृत्त-
 यत् । जो दुःखमें नियन्तित न हो, जो बहुत मुग्धकाममें
 किया जाय ।
 दुर्निवार (म० वि०) दुर-नि-वृ-घञ् । जो बहुत कष्टमें
 निवारण किया जाय, जो जन्-दो रोक न जा सक ।
 दुर्निवार्य (म० वि०) दुर-नि-वृ-ण्वत् । १ जो बहुत
 कष्टमें निवारण किया जाय, जो जल्दी रोक न जा
 सक । २ जो जल्दी हटाया न जा सक । ३ जिसका हाना
 प्रायः निश्चित हो ।
 दुर्निप्रपतर (म० स्त्री०) दुःखेन निप्रपतति दुर-निर-
 प्र-पत-भच्, प्रतिगयेन तत्तरप्-वंटे तकारलोपः । दुःख
 दारा निष्क्रान्तर, जो जल्दी टल न सक ।
 दुर्नीति (म० स्त्री०) दुर-नो-भावे ङ । १ नीतिविगडाचरण,
 बुरी नीति, कुचान । (वि०) २ दुर्नीतियुक्त, बुरी चानवाला ।
 दुर्नीति (म० स्त्री०) दुर-दुष्टा नीतिः दुर-नो-क्तिन् ।
 दुष्टानोति, अन्याय, प्रयुक्त साचरण । अन्यायो होनेसे
 अनेक तरहके कष्ट भोगने पड़ते है, इसलिये हरएकका
 दुर्नीति परिहार करना मुख्य कर्त्तव्य है । यदि राजा
 दुर्नीतियुक्त हो, तो उसका राज्य बहुत जवद नष्ट हो
 जाता है । दुर्नीति अवनम्यन कर जो कोई काम किया
 जाय, वही उच्छृङ्खल हो जाता है । नीति टैकी ।
 दुर्नीतिभाव (म० पुं०) दुर्नीत्याः भावः । दुर्नीतिका
 भाव ।

दुर्गुण (म० पुं०) दुष्टः गुणः । कुराजा, बुराव या बन्धुकी
 राजा ।
 दुर्बचन (म० पुं०) दुष्टो यचनः । कृतान्त, गान्धी ।
 दुर्बद (म० वि०) दुष्टं बद्धं । १ दुष्टभायसे बद्ध, जो
 गुराव तरहमें बांधा गया हो ।
 दुर्बल (म० वि०) दुर्निश्चितं बलं यस्य । १ लज्ज, दुबला
 पनजा । इसथा पर्याय—सर्वास, धान, ज्ञान, मित,
 शान, ययन और सन्धवलगुण है ।
 सभी कामेदि भवन मनुष्य जय प्राप्त करती है, किन्तु
 दुर्बल मनुष्यकी जीत टैचमंगीसमें ही होती है ।
 'बलीयमा हि दुर्बलं शक्यते ।' इति श्रुत्यात् । इन्वान्ने
 दुर्बल पराजित होता है, इस न्यायके अनुसार पत्थक
 बनवान् मनुष्य दुर्बलकी सहायकता है और कई सगह
 पोषित होते देया गया है । इसलिये 'दुर्बलस्य बलं
 राजा' पर्याय दुर्बलकी एकमात्र राजा हो बन है, ऐसा
 भी कहा है । राजाकी मर्दा सचमके हाथमें दुर्बलकी
 सचाना चाहिये । २ गिणित, बसजोर । ३ दुर्बली, जिसके
 चमड़े पर रोग हुआ हो ।
 दुर्बलता (म० स्त्री०) दुर्बलस्य भावः दुर्बल-तन्-टाण् ।
 १ दुर्बलत्व, यन्की कमी, कमजोरी । २ लज्जता, दुर्बला-
 पन ।
 दुर्बलत्व (म० स्त्री०) दुर्बल भावे त्व । दुर्बलता ।
 दुर्बला (म० स्त्री०) दुर्बल-टाण् । सस्य, शिरोपिका,
 जननिर्मिका पेट ।
 दुर्बलाचार्य—परिभाषेन्दुगैरटोका, मञ्जुषा और
 कुण्डिका नामकी उसकी टोका और दुर्बली नामक
 मन्त्रत प्याकरणके रचयिता ।
 दुर्बाल (म० वि०) दुष्टो बालो यस्य । १ दुर्बल रोगबुद्ध,
 जिसके चमड़े पर रोग हो । (पुं०) २ खलनि, गंजा ।
 ३ कुटिमकेग, घुंघराले बाल ।
 दुर्बीरण (म० स्त्री०) दुष्टं बीरणं । दुष्टबीरण हलभेद,
 एक प्रकारकी घाम ।
 दुर्बुद्धि (म० स्त्री०) दुष्टा बुद्धिः । १ दुर्मति, खंगव बुद्धि ।
 (वि०) दुष्टा बुद्धियं स्य । २ मन्दबुद्धियुक्त, खल, दुष्ट ।
 दुर्बुध (म० वि०) दुःखेन बुध्यतेऽसौ दुर-बुध-घञ्चर्क ।
 दुर्बल चित्त, बुरी चित्तका, दुष्ट ।

“दुर्मिक्षुपुंक्तारो च सूतके सूतकेऽपि वा ।
निष्पत्तौ न दुष्पन्ति दानधर्मरतेष्वपि ॥”

(गरुडपु० २२६ अ०)

जो कौन अपने पीछरमें है और उसका हिरागमन नहीं हुआ है, उसके पहलें यदि अकाल पड़ जाय, तो पति उसे अपने घरमें ला सकता है, इसमें कोई दोष नहीं है ।

“एकामे चतुःशान्ते दुर्मिदं राष्ट्रविष्टवे ।

पतिना नीयमानायाः पुरशुको न दुष्पथि ॥” (ज्योतिस्तत्व)

दुर्मिदके समय राजाको उचित है, कि वे बहुत यत्नसे प्रजाकी रक्षा करें । फिर जहाँ राजाके दोषसे ही दुर्मिद पड़ता है, वह देश समूल नष्ट हो जाता है । दुर्मिदके समय जो अन्नदान करते हैं, वे अत्यन्त पुण्यशाली हैं । दुर्मिदके समय चाणक्यने जो नौ वृत्तियोंका विधान किया है, वे वे हैं—

“शकटः शाकिनी गावो जालमास्त्रं स्तनं वनं ।

अनारः पर्वतो राजा दुर्मिदो नयत् ॥” (चाणक्य)

दुर्मिदके समयमें गाड़ी-कफा, शाकिनी, गाय, भैंस, जाल, युद्ध, वन, पर्वत और राजा इन नौ वृत्तियों को अवलम्बन करके विपदसे रक्षार होना चाहिये ।

दुर्मिद (स० त्रि०) दुःखिने भिद्यते दुर्-भिद कर्मणि घञर्थे क । १ दुर्मिद्य, जो जल्दी संदा न जा सके । २ जिसके पार कठिनतासे जा सके ।

दुर्मिदव्य (स० त्रि०) दुर्-भिपज कन्वा यकः कर्मणि ष्यत्-यलोपः । १ दुर्भिक्षण, जिमकी चिकित्सा महज-में न हो सके । २ दुःख द्वारा चिकित्सा, बुरी रीतिसे इलाज ।

दुर्मित्य (स० पु०) दुष्टो असत् भूतः । दुष्ट भूत, खराब नौकर । शुकनीतिमें सूत्रोंके विषयमें इस प्रकार लिखा है—जिन नौकरोंकी उपयुक्त तनखाह नहीं दी जाती ही और जिन्हें दण्ड दिया गया हो अथवा जो शठ, झूठ, लोभी, समझमें अप्रियवादी, दुःखी, नास्तिशक, उग्र, सत्यवादी होने पर भी असत्यपर लयण, अपमानित और जो अपनी बुद्धि अथवा असत्यकी सत्य और सत्यकी असत्य प्रमाणित कर धनादि ग्रहण करते हैं, वे अपने भ्रातिकका बहुत अनिष्ट कर बैठते हैं ।

दुर्मिद (स० त्रि०) दुःखिने भिद्यते दुर्-भिद-खेल् । दुर्मिद्य जो कठिनतासे छिदे ।

दुर्मिद्य (स० त्रि०) दुःखिन भिद्यते दुर्-भिद कर्मणि ष्यत् । दुर्मिद ।

दुर्भाह (स० पु०) दुष्ट आता, अपठे भाई ।

दुर्मख (स० त्रि०) १ असुखी । २ मन्द यज्ञ ।

दुर्मङ्गल (स० त्रि०) अशुभ, बुरा ।

दुर्मति (स० स्त्री०) दुष्टा मतिः । १ दुर्बुद्धि, बुरी बुद्धि, नाममत्तो । (पु०) २ साठ मन्वन्तरोंमेंसे एक । इस वर्णमें दुर्मिद होता है । (त्रि०) दुर्ब्यता मतियस्य । ३ दुष्टमति-युक्त, जिमकी समझ ठोक न हो ।

दुर्मद (स० त्रि०) दुःस्थिती मटो यस्य । १ अमत्त नगे प्रादिमें चूर । २ अभिमानमें चूर, गर्वसे भरा हुआ । (पु०) ३ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम ।

दुर्मनस् (स० स्त्री०) दुष्टं मनः । दुष्टमन, बुरा चित्त । १ दुःस्थितं मनो यस्य । (त्रि०) २ दुःस्थितमनस्क, उदाह, खिन्न, अनमना । ३ बुरे चित्तका ।

दुर्मना (स० स्त्री०) शतावरी ।

दुर्मनायमान (स० त्रि०) दुर्मनस् क्वड् सलोपः । दुर्मनाय शानच् । उद्दिग्मचित्त, चिन्तित, उदाह ।

दुर्मनुष्य (स० पु०) दुष्टो मनुष्यः । दुष्ट मनुष्य, खोटा आदमी ।

दुर्मनु (स० त्रि०) दुर्-मन-तुन् । दुष्ट मन्यमान, जो दुष्ट या खोटा समझा जाता हो ।

दुर्मन्त्र (स० पु०) दुष्टोमन्त्रः । दुष्टमन्त्रणा, बुरी मन्त्राह । दुर्मन्त्रित (स० त्रि०) दुर्-मन्त्र-क्त । १ दुष्टभावसे मन्त्रित, जिममें बुरी सलाह दो गई हो । (स्त्री०) भावे क् । २ दुष्ट मन्त्रणा, बुरी सलाह ।

दुर्मन्त्रिन् (स० पु०) दुष्टः मन्त्रो । कुमन्त्रा । मन्त्रोंके जितने गुण कहे गये हैं, यदि वे सब गुण उनमें न हों तो वे दुर्मन्त्री कहलाते हैं । जिस राजाका मन्त्री दुष्ट हो उसका राज्य शीघ्र नष्ट हो जाता है । मन्त्रिन् देवो । दुर्मर (स० स्त्री०) दुष्टो मरो मृत्युः । १ दुष्ट मृत्यु । (त्रि०) दुःखिन मरो मरणं यस्य । २ दुष्टभावसे मृतः जिसको मृत्यु, बड़े कष्टसे हो ।

जो प्रतिगय पापी है, उनकी मृत्यु बड़े कष्टसे

नडकोंमेंसे एक । २ कन्दोमेद, एक कन्दका नाम । इसके हरएक चरणमें १०, ८ और १४के विराममें ३२ मात्राएं होती हैं । ३ एक वर्णवृत्त । इसके प्रत्येक चरणमें आठ सगण होते हैं ।

दुर्मिलका (सं० स्त्री०) मात्रावृत्तमेद, एक वर्णवृत्त । इसके प्रत्येक चरणमें तीस वर्ण होते हैं ।

दुर्मुख (सं० त्रि०) दुष्टं मुखं यस्य तदुच्चापारो वा यस्य । १ अग्नि, घोडा । २ बानरमेद, रामचन्द्रजीको सेनाका एक बन्दर । ३ मणिपासुरका सेनापतिमेद, मणिपासुरके एक सेनापतिको नाम । ४ रामचन्द्रजीका एक गुग्गुचर । इसके द्वारा वे अपनी प्रजाका वृत्तान्त जाना करते थे । इसीके मुखसे उन्होंने सीताका लोकापवाद वृत्तान्त सुना था जिसके कारण सीताका द्वितीय वनवास हुआ था । उत्तर-रामचरितमें इसका उल्लेख पाया जाता है । ५ वृत्तमेद, एक राजाका नाम । ६ नाग मेद, एक नागका नाम । ७ गिव, महादेव । ८ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । ९ उत्तरहागृह, वह घर जिसका द्वार उत्तरकी ओर हो । १० षट्सम्बत्सरके मध्य ११ संवत्सर, साठ संवत्सरोंमेंसे ग्यारहवां संवत्सर । ११ यज्ञमेद, एक यज्ञका नाम । १२ गणेशजीका एक गण । (त्रि०) १३ प्रप्रियवादी, बुरा वचन बोलनेवाला । १४ जिसका मुख बुरा हो । भक्तमालमें एक दूसरे दुर्मुखका उल्लेख पाया जाता है । ये राधिकार्क देवर और उनकी बहन अनङ्गमङ्गरीके स्वामी थे ।

दुर्मुखा (सं० स्त्री०) शूल गुञ्जा, सफेद बुधची ।

दुर्मुखी (सं० स्त्री०) एक राजसी । इसे रावणने जानकोंकी समझानेके लिए नियत किया था ।

दुर्मुट (हि० पु०) दुर्भ्रम देखो ।

दुर्मुस (हि० पु०) एक प्रकारका लुखा डंढा जो गटाके आकारका होता है । इसके नीचे लीड़े या पत्थरका भारी गोल टुकड़ा रहता है । यह महकों आदि पर कंकड़ या मिट्टी पीट कर वैठानेके काममें आता है ।

दुर्मुहूर्त (सं० पु० स्त्री०) निन्दितो मुहूर्तः प्रादिस० । अग्रमन्त्र मुहूर्तः, श्रावण समय ।

दुर्मुख्य (सं० त्रि०) दुस्वितं मुख्यं । दुस्वित मुख्य, जिसका नाम अधिक हो, महंगा ।

दुर्मुखम् (सं० त्रि०) निन्दिता मैघा शस्य, अशुभं, समा० । निन्दित मति, मन्दबुद्धि, नासमझ ।

दुर्मुखस्त्व (सं० स्त्री०) दुर्मुखो भावः त्व । दुष्ट बुद्धिका काय ।

दुर्मुखाविन् (सं० त्रि०) दुष्ट मैघावी । दुष्टमैघावृत्त, मन्दबुद्धिका, नासमझ ।

दुर्मुत्र (सं० पु०) दुष्टो मैत्रः । दुष्टबन्धु, दुष्टमित्र ।

दुर्मुका (सं० स्त्री०) श्वेत गुञ्जा, सफेद बुधची ।

दुर्मुह (सं० पु०) दुष्टं निन्दितं सुहृत्वननं सुह करणं घञ् । १ काकतुण्डो, कौवा ठीठी । (स्त्री०) २ काकादनो, सफेद बुधची ।

दुर्मुहा (सं० स्त्री०) १ काकाटनोलता, सफेद बुधची । २ रक्त गुञ्जा, लाल बुधची ।

दुर्य (सं० पु०) दुरं याति या-क दुरि द्वारे भवः वद् वा । १ गृह, घर । २ द्वारभक्ष्युप, दरवाजे परका खंभा ।

दुर्ययम् (सं० स्त्री०) निन्दितं यम् । अज्ञोक्तिः, अपयम् ।

दुर्योग (सं० पु०) दुष्टो योगः । १ दुर्भाग्यसूचक अष्टयोगमेद, वह अष्टयोग जो दुर्भाग्यकी चार्ते सूचित करता है । २ दुष्ट कौशल ।

दुर्योगि (सं० स्त्री०) दुष्टा ज्योतिषानमस्त्रस्य अर्ग आदि० अच, सञ्ज्ञायां णत्व । सञ्ज्ञाम, बुद्ध, लडाई ।

दुर्योध (सं० पु०) दुःखेन युधतेऽसौ दुर, बुध कर्मणि खल्व् । दुःख द्वारा योधनीय, वह जो वही बड़ी कठिनाइयोंको सह कर भी युद्धमें स्थिर रहने विकट लड़ाका ।

दुर्योधन (सं० पु०) दुष्टुःखेन युधतेऽसौ दुर-बुध-युष् । कुरुवंशीय राजा धृतराष्ट्रके बड़े लड़के । महाभारतीय युद्धके ये ही प्रधान नायक और कौरवदलके नेता थे । पाण्डु राजाके मरने पर पांचों पाण्डव राजा धृतराष्ट्रसे हस्तिनापुरको लाये गये । यहां वे दुर्योधनादि सौ भाइयोंके साथ शास्त्र और शस्त्र विद्या सीखने लगे । द्वितीय पाण्डव भीम और दुर्योधन दोनों एक समरके थे । भीमके अपरिमित बलविक्रम और गदा चलातेसे सिद्ध हस्त देख कर दुर्योधन बहुत लजते थे । दुर्योधन भी गदाबुद्धमें विशेष पारदर्शी थे और

इसमें शक्तिविपत्ति श्रीलक्ष्मणसे बड़े मार बरामामसे पक्षादि पक्षानेको मोखा था, पर वे भीमकी बराबरी नहीं कर सकते थे। परत उन्हें मार सकनेके लिए एक दिन दुर्घोषनने खेलके बहाने उन्हें ब्रिय पिला दिया और मूर्खतापूर्वकस्वामी पक्षामें कि ब दिया। इसी प्रकारसे बाघको उन्हें मानसोत्सव नभे जिससे उन्हें मरीरका क्षारा विषज्वर जाता रहा।

इतराष्ट्रपाण्डवों और श्रीरामोंमें बुधितिरको बड़ा समझ बुधराज बनाया जाकर है, लेकिन दुर्घोषनने बहुत धारणा की। मुखमें बसे दीक्षित की कर इतराष्ट्रमें दुर्घोषनको कुमन्त्रधारी बुधितिरादि पाँचों माहरी को बलमें भेज दिया। राक्षोंमें उन्हें बना कर मार कासनेके लिए दुर्घोषनने आइया एक घर बनवाया और उसी घरमें उन्हें रहनेकी आज्ञा मया, किन्तु इसमें भी वे इतराष्ट्रमें न हुए। बनबाघसे छोट कर पाण्डवों ने रन्ध्र प्रकामें अपनी राजधानी बघाई। इस समय बुधितिरने राजपुत्र वध किया। उस वधमें पाण्डवोंको समता, प्रतिपत्ति और यथ देख कर दुर्घोषन लज उठे और अपने पिताकी आज्ञा सुन कर पाण्डवीको पासा खेलनेके लिए बुलाया। अन्धकारके राजहमार शत्रुनि पासा खेलनेमें बड़े सिद्धहस्त थे और दुर्घोषनके मामा होने के बराबरे के ही दुर्घोषनकी तरफने पासा खेलने कसे। राजा बुधितिर भी पक्षविधामें बल नहीं थे। शत्रुनिके न्यायपक्षके तो नहीं मगर उसके जल और क्रोधनके बुधितिर अपनी क्षारा राज्य और बन बहा तक कि द्रोपदीको भी हार नभे। दुर्घोषनने इस जोतमें प्रपुत्रित को द्रोपदीको धमाके बीच जानेका हुक्म दिया। द्रोपदी उस समय राज-क्षमा थी परत वे धर्ममें राजी न हुई। इस पर दुःशासन अन्धत्वात् बाध की क्षता हुआ उन्हें समझ लाया। दुर्घोषनने द्रोपदीको प्रपनो न था पर वे उन्हें लिए बुलाया। इस पर भीमने लज हो कर गदासे दुर्घोषनको बंधाको तोड़नेको प्रतिज्ञा की। परन्तु इतराष्ट्रमें मन्त्रज हो कर इस विवादको निपटा दिया और पुरुते निपटानुसार बंध निर्यय किया कि पाण्डव वारक वर्ष बनवास और एक वर्ष पश्चात वाक करे। बनवासके समय दुर्घोषन पाण्डवीको दुर्घ्या देख पक्षे

न ममासे और घोष क्षामाको निरक्षे। राक्षोंमें दलबल से माय व मन्त्रकी पक्षके गये। बुधितिरके बंधनके भीम और पक्षुं न उन्हें मन्त्रकी क्षामे हुआ लाये। इस वदनासे दुर्घोषन बहुत क्षमित हुए और पाण्डवोंके मायका पचाय सोचने लगे। पश्चातवाम पूरा हो जाने पर लक्ष्मणने दोनों पक्षोंके बीच मेल हो जानेकी लक्ष्य कोशिश की, लेकिन दुर्घोषनने एक मो न सुनो। इस पर दोनों पक्षोंके धनधोर हुआ था आयोजन होने लगा। दोनों पक्षने लक्ष्यसे मजबूतता मंगो। परन्तु पाण्डवोंने पक्षके लक्ष्यका और दुर्घोषनने लक्ष्यको पक्षोचितको मिलाको पक्ष किया। बुधितिरमें महाशुभ किया। दस दिन तक लगातार हुआ वे वाद कोरकके विनापति मोक्ष, पाँच दिनके बाद नेनापति क्षीय, ठारै दिनके बाद लक्ष्य और पाँच दिनके बुधमें कोरक-नेनापति क्षय मंगे मये। इस प्रकार औरना को पूरा कर हुई। दुर्घोषन भाग कर एक जदमें छिप रहे। परन्तु वे पाण्डवोंकी नगरी-वातोंने उत्प्रेक्षित हो बाहर निकले और भीमके माय गदा बुध चरने लगे। इस वार दुर्घोषनका ही जोत होनाका सम्भावना थी किन्तु भीमने पूरा प्रतिज्ञाका समर्थ करती हुए न्याय विरह कोसे पर मो लभरके नीचे नदा प्रहार किया। इससे दुर्घोषनका जम्बो पक्षता पुर हो गई और वे भीम पर गिर पड़े। इसी अवस्थामें उनके मन्त्रक पर बटावात कर भीमने अपना बहुत दिनका बचकता हुआ लोच डका किया। पाण्डव लज क्षत प्रायः दुर्घोषनकी होड़ चले मये तब द्रोणपुत्र पश्यन्त्यामा उन्हें टिकने को पावे। इताय पक्षस्थामें दुर्घोषनने रक्षा को पाण्डव स हारमें निगुह किया और भीमका सिर काट लेनेको बहा। पश्यन्त्यामने क्षपरीयमें पाण्डवोंके शिरिमें प्रथिय कर द्रोपदीके पक्षपुत्रोंको मार कासा और दुर्घोषनके यह पश्चाद बंध क्षताया। यह लक्ष्य सुनते ही दुर्घोषन बहुत लुप्त हुए और क्षवी समय परलोचको निहारै। (महामारण्य) कायोशोमहाभारतमें लिखा है—पश्यन्त्यामा पक्षपाण्डवके लक्ष्यसे द्रोणशेके पाषां पुत्रके शिर काट नावे। दुर्घोषनमें भीमका मिर देखना था। इस पर पश्यन्त्यामने मोमाक्षति मोमपुत्रका शिर ना दिया। किन्तु दुर्घोषनके क्षामे दक्षमेंके ब्रह्म बंध निर कर हो

गया, तमी शम्भत्यामाका भ्रम समझा गया। भन्तपे दुर्योधन लम्बो माँ भर कर बोले, शम्भत्याम। पञ्चपाण्डव ही हमारे शत्रु हैं, न कि द्रोपदीके ये निर्दोष नर वधे।' इसके बाद ही दुर्योधनको हथ पियाद दोनों ही चाया और उसी समय उनको प्राणवायु उड गई। दुर्योधनको युधिष्ठिर 'सुर्योधन' कहने थे। (त्रि०) २ जो बहुत दुःख सह कर लड़ाई कर सके।

दुर्योनि (सं० स्त्री०) निन्दिता योनिः प्रादिम० । १ निन्दित जाति, श्रेच्छजात। दुःस्वियता योनिर्दुःस्विय (त्रि०) २ निन्दित जातिक, जिम्का उल्ल मोच कलमे हो।

दुरा (फा० पु०) झोडा, दाबुक।

दुरानी (फा० पु०) अकगानेकी एक जाति।

दुर्लक्षण (सं० क्री०) दुष्ट लक्षण। अशुभ चिह्न।

दुर्लक्ष (सं० त्रि०) दुःखेन लक्ष्यते। दुर्लक्ष यत् । १ अदृश्य, जो कठिनतासे दिखाने पड़े। (पु०) दुष्ट उद्देश्य, बुरी नीयत।

दुर्लक्ष (सं० त्रि०) दुःखेन लक्ष्यते लक्ष्युच् । दुःख द्वारा लक्षनीय, जो जल्दो लांघ न हो सके।

दुर्लक्ष (सं० त्रि०) दुःखेन लक्ष्यते लक्ष्युच् । अलक्षनीय, जिसे जल्दो लांघ न सके।

दुर्लक्षिका (सं० स्त्री०) दुष्टा नतैव स्वार्थे कन् टाप् । १ निन्दित लता। २ कन्दमिड, एक प्रकारकी छत्त।

दुर्लभ (सं० त्रि०) दुःखेन लभ्यते। दुर्लभ कर्मणि लुच् । १ दुःप्राप्य, जो कठिनतासे मिल सके। २ अति प्रियस्त बहुत बढ़िया। ३ प्रिय, प्यारा। चाणक्यने लिखा है, कि सत्यवाक्य, उत्तमपुत्र, महेशो भार्या और प्रियतम श्वजन ये सब संसारमें अति दुर्लभ हैं। (पु०) ४ ऊँचूर, कच्चा। ५ विष्णु। "दुर्लभो दुर्लभो दुर्लभः।" (विष्णुसहस्रनाम) अर्थात् दुर्लभभक्तिसे विष्णुका दर्शन होता है, इसीसे भगवान् विष्णुका नाम दुर्लभ पड़ा है। व्यासका वचन है, कि महम्म महम्म जन्म धारण कर तपस्या करनेसे क्षत्र्यमें भक्ति उत्पन्न होती है। इसी भक्ति द्वारा उनका दर्शन होता है। (स्त्री०) ६ दुरालभा, लबासा, घमासा। ७ श्वेत कण्ठकारी, सफेद भटकटैया।

दुर्लभक—काशमीरराज दुर्लभवर्द्धनके पुत्र। ये अमर-

लेखाके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। पिताको मृत्युके बाद ये काशमीरके सिंहासन पर बैठे और दोहे प्रतापादित्य नामसे प्रसिद्ध हुए।

दुर्लभेन प्रतापपुर नामक एक नगर स्थापित किया जहा रोहितसे नोनपामका एक वनिया भा कर रहने लगा था। इस वनियेके साथ इनको गाढ़ी मित्रता थी। एक दिन ये अपने मित्र वनियेको श्री श्रीनरेन्द्रप्रभाको देख कर बहुत मोहित हो गये, किन्तु अपनी अमितायाकी हिये रखनेका कारण मानसिक पांडासे प्रमित हो श्यामायी हो पड़े। यह उनके मित्रको लवग्रह हाल मालूम हो गया, तब उनसे अपनी स्त्रोको इन्हें अर्पण कर दिया जिससे उनका भारो व्यथा जाता रही और पूर्ववत् ये स्वस्थ हो गए। इस रानीके गर्भसे इनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए—चन्द्रापोद् वा वज्रादित्य, तारापाद् वा उदयादित्य और अविमुक्तापोद् वा ललितादित्य। ६० वर्ष राज्य करनेके बाद इनका प्राशान्त हुआ।

दुर्लभ—मुलतानके एक विख्यात ज्योतिषिद् । अन्ध विद्वाने इनका मत उद्घृत किया है।

दुर्लभराज—सासुद्रतिज्जक नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। इनके पुत्र जगद्देवने स्वप्नचिन्तामणि नामक संस्कृत ज्योतिषग्रन्थकी रचना की।

दुर्लभवर्द्धन—काशमीरराज शालादित्यके जामाता। शालादित्यने ज्योतिषके सुंइसे सुना था, कि उनको मृत्युके बाद गोनर्दवंगका लोप होगा। इसी कारण उन्होने दुर्लभवर्द्धनके साथ अपनी कन्या पनइलेखाका विवाह कर इनके पुत्र दुर्लभकको पुत्र कह कर ग्रहण किया। ये कर्कोटनागके वंशीय थे। इनके स्वशुरने इन्हें प्रजादित्यका नाम देकर प्रशुर घन पर्यण किया। श्री इनको बहुत श्रधदा करती थी और उनका श्यमिचार काशमीरमें चारों ओर फैल गया। दुर्लभवर्द्धनने यह श्यमिचार-हत्याला सुन कर अपनी ज्जोका छोड़ दिया। स्वशुरको मृत्युके बाद ये ही राजा बन बैठे। इनकी स्त्रोसे अनेक सन्तान हुई थीं जिनमेंसे दुर्लभक जो इन्हींके औरससे उत्पन्न हुए थे वोहे राज्याधिकारी हुए। इन्होंने ३६ वर्ष राज्य किया था। काशमीर देखो।

दुर्लभशब्दाणि (स० पु०) आम्बोरके शीतलरसं प्रतिष्ठित
देवमूर्तिविग्रह ।

दुर्लभा (स० स्त्री०) १ ओदरतो । २ श्रेष्ठ वस्त्रकारो
'सफिद मटकट्टे वा । ३ 'रत्नदुरात्मना नाम कवयिता ।

दुर्लभित (स० लो०) दुर्- लभ ईष्यायां भावे च ।
१ दुर्घटना, दुर्घातम् । २ दुर्घटित इच्छामं, पाप । (त्रि०)

३ दुर्लभं कामिनाम् । ४ चपल, चञ्चल ।

दुर्लभित (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । दुर्घटा, दुर्घ
ताम् ।

दुर्लभ (स० पु०) दुर्-लभ-इत् । दुर्- लभ-इत् । दुर्घ
द्वारा नाम, बहुत कठिनतासे प्राप्त होमिनाम् ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । १ महिंत्त शिष्य पत्र,
पाच्यशैलीय काम्य प्रसादिषि भट्ट हो जाने पर जो दूसरी

बार काम्य भिन्ना जाता है उसे दुर्लभ कहते हैं ।
मारहने मनाकुमार निचिका पत्तर लोप कर दुर्घ भावसे

भूठ बना कर जो निष्ठा खाता है उसे दुर्लभ कहते हैं ।
पयात् काम्यत्रय से सा निष्ठा का पक्षान निष्ठा कर

पपनो पाच्यशैलीय पयुवार भूठ बना कर लिखना ।
(त्रि०) २ जो दुरा निष्ठा हुआ हो, जिसको निष्ठावट

बुरो हो ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । दुर्- लभ-इत् ।
१ जो दुर्लभे कथा वा सङ्घ, निरुपे कहनेमें कह हो ।

२ जो कठिनतासे कहा जा सके । (पु०) ३ दुर्लभन,
गाथो ।

दुर्लभ (स० पु०) दुर्लभ, कट्ट वचन भाषो ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन ।

दुर्लभ (स० पु०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त
वचन, पाठ्यपत्र ।

दुर्लभा (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन । १ रत्न, शंभो । २ एतद्गुण एतद्गुण । (त्रि०)

३ निष्ठावचनं कथा वचन आदिनाम् । ४ पत्रावर मला ।
५ कठिनपुत्रो, जिसे पविद कोड हुआ हो । (पु०) दुर्घो

वचनं । ६ निष्ठावचनं आदिनाम् । ७ दुर्घ पत्तर,
पत्रावर मला ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । दुर्लभ, महिंत्त
नाम् ।

निवारण कठिन हो, जो कठिन रोका न जा सके ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । दुर्- लभ-इत् । पाच्य
वचन । कठिन वचनोप, कथा रत्नमें बहुत कट्ट हो ।

दुर्लभित (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन । कथा रत्नमें बहुत लभनीय होता हो ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन । दुर्घ द्वारा कठिनोय जिसे कठिन से पचना

कठिन हो ।

दुर्लभ-इत्-समापितावरोहण एक प्राचीन मन्त्र कवि ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन । दुर्घ द्वारा कठिनोय जिसे कठिन से पचना

कठिनोय जिसे कठिन से पचना
कठिनोय जिसे कठिन से पचना

दुर्लभ (स० स्त्री०) निष्ठा नाम, कट
वचन । पाच्यशैलीय, निष्ठा नाम, कट

दुर्लभ (स० पु०) दुर्घो पाद प्रादिषु । १ पचोत्ति,
पचोत्ति कट्टनाम् । २ लुत्तिपुत्रं पचियवाम्य लुत्ति

द्वारा कथा हुआ पचिय वचन । ३ निष्ठा नाम, कट
वचन ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्घ नाम, कट
वचन । १ निष्ठा नाम, कट

वचन । २ दुर्घ नाम, कट
वचन । जिसे पचियवाम्य कट्टो होतो

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन । पाच्यशैलीय जिसे कथा निवारण कठिन हो ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन । जो कठिन रोका न जा सके । (पु०) २ पच,
सहादेव ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन । जिसे कथा निवारण कठिन हो ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन । जिसे कथा निवारण कठिन हो ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन । जिसे कथा निवारण कठिन हो ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन । जिसे कथा निवारण कठिन हो ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन । जिसे कथा निवारण कठिन हो ।

दुर्लभ (स० स्त्री०) दुर्- लभ-इत् । महिंत्त नाम, कट
वचन । जिसे कथा निवारण कठिन हो ।

ऐसी कामना जो कभी पूरी न हो सके। २ दुष्ट
आकांक्षा, बुरी इच्छा।

दुर्वासा (स० पु०) दुर्दुष्ट निगूढमिति वाम इव धर्मा-
वरणत्वं यस्य । १ एक मुनि । इनकी नामनिर्गुणिके
विषयमें इस प्रकार लिखा है, जिसका धर्ममें दृढ़ विश्वास
हो उसे दुर्वासा कहते हैं ।

“निगूढनिश्चयं धर्मं यं तं दुर्वासाधं विदुः ।”

(भारत अथ ४० अ०)

दुर्वासा अत्रिमुनिके पुत्र और शिवांगसम्भूत थे।
इनका स्वभाव बहुत उग्र था। श्रौवमुनि की कन्या
कन्दलीसे इनका विवाह हुआ था। विवाहके समय
इन्होंने प्रतिज्ञा की थी, कि पत्नीके सौ अपराध क्षमा
करेंगे। तदनुसार इन्होंने पत्नीके सौ अपराध कर चुक-
नेके बाद उनको शापसे भक्ष्य कर दिया।

इस पर श्रौवमुनीने बहुत दुःखित हो 'तेरा अभि-
मान चूर होगा' ऐसा अभिशाप दिया। तदनुसार
महाराज अश्वरीपसे इनका अभिमान चूर हुआ। एक
दिन भ्रमण करते समय इन्होंने किसी अपराधके हाथमें
एक सन्तानक पुष्पमालाकी देख उससे माग लिया।
मालाकी जब इन्होंने ऐरावतके मस्तक पर डाला, तब
ऐरावतने उसे जमोन पर फेंक दिया। इस पर दुर्वासा-
ने बहुत कुपित होकर इन्द्रको शाप दिया जिससे वे ओ-
न्नत हो गये। इन्द्रके शापसे शकुन्तला दुष्यन्तसे परित्यक्त
हुई थी। इन्होंने कुन्तोमोजरुहमें कुन्तोकी परिचर्यामें
तुष्ट हो कर उन्हें जो महामन्त्र प्रदान किया था, उसकी
प्रभावसे पाण्डवोंका जन्म हुआ। इन्होंने राधिकाको
प्रकृति जान कर हृषभासु राजाके निकट उनकी भूरि
प्रशंसा की।

दुर्योधन पर खुश होकर ये काम्यकवचमें द्रौपदीके
खानिके वाद भोजन करने गये थे। एक समय भ्रमण
करते हुए इन्होंने श्रीकृष्णका आतिथ्य ग्रहण किया था।

दुर्वासा उन्मत्त स्वभावके थे, इससे कभी किसी काम
की व्यवस्था न थी। कभी तो ये बहुत मनुष्योंका भोजन
खा लेते और कभी थोड़ा ही खा कर भोजन समाप्त करते
थे। एक दिन इन्होंने उत्तम पायस भोजन करते समय
श्रीकृष्णसे कहा कि, 'इस पायसकी सर्वाङ्गमें लेपन

कोजिये।' कृष्णने उषी समय वैसा ही किया, केवल
ब्राह्मणके प्रति भक्तिवशतः पैरके तले न लगाया। इस
पर ऋषिसे रुक्मिणीको देहमें पायस लेप कर उन्हें रथमें
लगाया और आप रथ पर चढ़ कर रुक्मिणीकी कशाघात
करने लगे। रुक्मिणी यथाशक्ति रथ खींच कर जब
क्रान्त हो गईं, तब दुर्वासा क्रोध होकर रथ परसे उतर
और टचियको और जानिको उद्यत हुए। पीछे श्रीकृष्णसे
सन्तुष्ट किये जाने पर इन्होंने कहा था, "आप क्रोधजित्
हैं, हमारे वरसे आप और रुक्मिणी दोनों सर्व लोकके
प्रिय होंगे। आपने जो पैरके तले पायस नहीं लेपा
उपने हम बहुत अपमन्न हुए हैं। जो क्रुद्ध हो, पदतल
छोड़ कर आपका सर्वाङ्ग भ्रमेय हुआ।" इन्द्रके
शापसे शास्वनि यदुवंश नामक मूढ मूढ प्रसव किया था
और इसीसे यदुवंशका ध्वंस हुआ। (भारत, ब्रह्मवै०,
भागवत)।

२ आर्याहिन्यतो, देवी महिम्नस्तोत्र, परशिवमहिम्न-
स्तोत्र, ललितास्तवरत्न और सुन्दरीमहिमा नामक
संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

दुर्वहित (स० क्लो०) दुर्वह, जिसे उठाकर ले चलना
कठिन हो।

दुर्विकल्पन (स० त्रि०) जो क्रोध वा दम्भसे अभिमान
पूर्वक कहा जाय।

दुर्विगाह (स० त्रि०) दुर्दुःखिन विगाहयते दुर-वि-गाह
कर्मणि खल। दुरवगाह, जिसको याह जल्दो न लग
सके।

दुर्विगाह्य (स० त्रि०) दुःखिन विगाहयते दुर-वि-गाह
ण्यत्। दुर्विगाहनीय, जिसका अवगाहन करना कठिन
हो।

दुर्विचिन्त्य (स० त्रि०) दुःखिन विचिन्त्यते दुर-वि-चिन्ति-
यत्। चिन्ताका असाध्य, जो जल्दो सोचा न जा सके।

दुर्विज्ञान (स० क्लो०) दुर्दुःखिन विज्ञायते दुर-वि-ज्ञा-
युच्। अज्ञेय, वह जो बहुत मुश्किलसे जाना जा सके।

दुर्विज्ञेय (स० त्रि०) जिसका कष्ट या कठिनतासे
ज्ञान हो।

दुर्वितर्क (स० त्रि०) दुर्वितर्क्य देखो।

दुर्वितर्क्य (स० त्रि०) दुर-वि-तर्क्यत्। जो सहजमें

धीन धर निर न बिठा बा नके तिसरे निहय करने-
में कठिनता हो।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुर्बिन्दु, जिसे ज्ञानमा कठिन हो।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुष्टो विदग्ध प्रादिम०। १ मर्बिल
पदद्वारी। २ जो पथी तरद जमा न हो, पथप्रपा (३
जो पूर्ण परिपक्व न हो।
दुर्बिन्दुता (स० जो०) पूरो निपुणताका समान पद
अपराधन।
दुर्बिन्दु (स० वि०) बिद-नामो बिद जाने वा बाहु० सम,
विद्वज्ज जन्म जन ज्ञान वा प्रादिम०। १ दुर्बिन्दु। २
दुष्मान्।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुर्बिन्दुत्। पथ, अधिष्ठित,
मूर्ख।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुष्ठा विधा पक्ष। १ हरिद्र। २ यम।
३ मूर्ख।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुष्ट विधि। १ दुर्मयि। २ कुनिष्ठम,
पुरो विधि।
दुर्बिन्दु (स० जो०) कर्षु०।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुर्बि भी माथि कथ। विनय रात्रिज,
पुरा सिद्धाचार।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुर्बि भी कर्षु०। विनय
शून्य, पयिष्ठ पक्ष, पक्षज्ज।
दुर्बिन्दु (स० जो०) दुर्बि भी माथे निम्न। विनय
रात्रिज अधिष्टाचार, पक्षतपन।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुष्ट विधा। १ मन्द परिचाम
पुरा जन्म। २ दुर्बिन्दुता, पुरा न जीव।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुष्टो विदग्ध प्रादिम०। मन्द
विदग्ध, बह जो ज्ञेयो विदग्ध न विधा प्राद।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुर्बिन्दु विदग्धो दुर्बिन्दु
पक्ष। दुर्बिन्दु, विनय अनुमान न हो पक्ष।
दुर्बिन्दु (स० जो०) दुष्ट विधा। १ दुर्बिन्दु, पुरा
बन्धन।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुर्बिन्दु विदग्ध पक्ष। १ बह
कपडे मोचनो, विनय दुर्बिन्दुता पक्ष। मुरिचन हो
(दु०) १ हतराद्रु एक पुत्रका नाम।
दुर्बिन्दु (स० जो०) दुष्ट विधि। दुर्बिन्दु,
बन्धन नाम।

दुर्बिन्दु (स० वि०) दुष्ट विधा। मन्दपक्षा, बह,
पक्षन जोलनेनामा।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुर्बिन्दु विधा। पापु
पादि चार प्रकारके विधा। ब्राह्मण्यति चार प्रकारके
विधाके सुचनान् पुत्र कल्प्य होये, द्योमे एक प्रकारके
विधाके दुर्बिन्दु कहते हैं। पौर पापु प्रथति चार
प्रकारके विधाके ब्राह्मण्यो तथा धर्मके पुत्र
कल्प्य होते, द्योमे एक दुर्बिन्दु कहते हैं। निन्दिता
पथीको व्याचर्मे निन्दितमत्तान प्रोतो है, वन जो दुर्बि
न्दु है।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुर्बिन्दु विधो यम्। विदग्धन विचार
शून्य विन, महादेव। मनुज मयमेके मय महादेवमे
विदग्धन विधा वा, पर विचका प्रमाध चतपर कुक्ष भी
न पक्ष, द्योमे महादेवका नाम 'दुर्बिन्दु' पक्ष है।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुर्बिन्दु विधो यम्। दुर्बिन्दु
कथ विन। १ पक्षन दुर्बिन्दु मन्तोय जिसे मन्तो
कठिन हो। २ पक्षज्ज। (पु०) १ विन, महादेव।
३ हतराद्रु एक पुत्रका नाम।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुर्बिन्दु विधो यम्। पक्षन
पक्षन दुर्बिन्दु मन्तोय, जिसे मन्तो कठिन हो।
दुर्बिन्दु (स० जो०) दुष्ट विधा। १ निन्दित पाप
एक पुरा मन्तोय। दुर्बिन्दु कथ यम्। २ दुर्बिन्दु,
जिसका वाचरक पुरा हो।
दुर्बिन्दु (स० जो०) दुष्ट विधि। मन्द मन्तोय,
निन्दित पाचरक पुरा नाम।
दुर्बिन्दु (स० जो०) दुर्बिन्दु विधो यम्। दुर्बिन्दु
नामो कथ विन। दुर्बिन्दु, जो कठिनताये विन पक्ष।
दुर्बिन्दु (स० जो०) दुर्बिन्दु, मन्द-मन्तोय।
दुर्बिन्दु (स० जो०) दुष्ट विधा। १ दुष्ट विधा
मन्तोय। २ दुष्ट विधा, पुरा मन्तोय। ३ दुष्ट विधा।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुर्बिन्दु विधो यम्। १ मय पौर
मोमादि द्वारा पक्षन, निचोले मन्तोय, बह मन्तोय
विधा के मन्तोय पक्षन पादि के वाचरक मन्तोय न पुरा
हो। २ मन्द पाचरक, पुरा मन्तोय। ३ दुष्ट विधा।
दुर्बिन्दु (स० वि०) दुष्ट विधि। १ दुर्बिन्दु,
दुर्बिन्दु (स० जो०) दुष्ट विधि। १ दुर्बिन्दु,
दुर्बिन्दु (स० जो०) दुष्ट विधि। १ दुर्बिन्दु,
दुर्बिन्दु (स० जो०) दुष्ट विधि। १ दुर्बिन्दु,

दुर्व्याहृत (सं० त्रि०) दुष्टं श्ववृहत् प्रादिस० । मन्द-
कथित, खराब शब्दका व्यवहार करना ।

दुर्व्रजित (सं० लो०) गर्हितं व्रजितं प्रादिस० । निर्गन्त
गति, खराब हालत ।

दुर्व्रत (सं० त्रि०) दुष्टं व्रतं । १ दुर्नीत, नीचाशय, जिस-
ने बुरा व्रत लिया हो । (पु०) २ दुष्ट मनोरथ, नीच
आशय ।

दुर्घण (सं० त्रि०) दुःखेन प्राह्वयतेऽसौ प्रा-हन कर्मणि
खुलः । इनन करनेमें शय, जिसे मारना कठिन हो ।

दुर्घणायु (सं० त्रि०) दुष्टं इननमिच्छति क्यच्, दुर्घ-
नाय वन्, वेदे णत्व । दुष्ट इननेच्छु, जो मार डालने
की इच्छा करता हो ।

दुर्घणावत् (सं० त्रि०) दुर्घणा विद्यतेऽस्य दुर्घणा मतुप
मस्य वः । सांघातिक, संहार करनेवाला ।

दुर्घणु (सं० त्रि०) दुःखो हनुयस्य प्रादि वहु० वा दुर्-
हन-वन् । १ दुःखसे इननीय, जिसे कान्त करना
कठिन हो । २ दुष्ट हनुयुक्त, संहार करनेवाला ।

दुर्घल (सं० त्रि०) दुष्टो हलिस्य अच् समा० । मन्द
हलयुक्त, खराब हलवाचा ।

दुर्घर्दि (सं० त्रि०) दुराचरित, बुरा चालचलन ।

दुर्घित (सं० त्रि०) शत्रु, वैरी ।

दुर्घित (सं० लो०) निन्दितं इतं । निन्दित होम ।

दुर्घणायु (सं० त्रि०) दुष्टं कृणीयते क्रुध्यति लज्जते
वा दुर्घणो कण्डवादिवात् यक्-ततो लण-प्रसोपय-
लोपो ष्यो० साधुः ईकारस्याकारः । १ दुष्ट क्रोधन, दुष्ट-
भावसे क्रोधी । २ दुष्टभावसे लज्जमान ।

दुर्घट्ट (सं० त्रि०) दुर्दुष्टं हृदयं यस्य (सहस्रसहस्रौ
मित्रामित्रयोः । पा ५।४।१५०) इति निपातनात् हृदयस्य
हृदभावः । शत्रु, दुश्मन ।

दुर्घट्टय (सं० त्रि०) दुःस्वं हृदयं यस्य प्रादि० वहु० ।
१ दुष्टान्तःकरण युक्त, बुरे दिलका, खोटा । दुष्टं हृदयं ।
(की०) २ दुष्ट अन्तःकरण । जहाँ शत्रु और मित्र न
मानस्य म पडे वहाँ हृदय शब्दको जगह हृद आदेश नहीं
होता है । शत्रु और मित्र मानस्य म पडने पर दुर् और
सु पूर्वक-हृदय शब्दको जगह हृद आदेश होता है । इसी
से 'दुर्घट्टय' इस जगह हृद आदेश नहीं हुआ ।

दुर्घषीक (सं० त्रि०) दुर्दुष्टं हृष्योक्तं यस्य । दुर्ब-
लीन्द्रिय जिसको इन्द्रिया दुर्बल हैं ।

दुर्गकी (हिं० स्त्री०) घोड़ेकी एक चाल । इसमें घोड़ा
चारों पैर अनग अलग लडा कर कुछ उछलता हुआ
चलता है ।

दुर्गधो (हिं० स्त्री०) ज्वार, नील, तमासू, मरसो और
गेहूँ आदि फसलोंको नुकसान पहुंचानेवाला एक
प्रकारका कीड़ा ।

दुर्गहा (हिं० वि०) १ दो लड़ोका । २ वह माला जिस
में दो लड़ें हैं ।

दुर्गडो (हिं० स्त्री०) दो लड़ोंको माला ।

दुर्गती (हिं० स्त्री०) १ मालाश्रमको एक कसरत । २
गोड़े आदि चौपायोंका पिछले दोनों पैरोंकी लडा कर
मारना ।

दुर्गदुल (अ० पु०) एक प्रकारको खच्चरी । इसे इसकन्द-
रिया (मिस्र)के हाकिमने मुहम्मद साहबको नजरमें
दिया था । साधारण लोगोंमें यह घोड़ा ममभा जाता है
और मुहर्रमके दिनोंमें इसकी न ल निकाली जाती है ।
सुमलमान लोग मुहर्रमकी आठवीको अब्बासके नाम-
का और नवीकी हूमै नकी नामका विना सवारका घोड़ा
धूमधामके साथ निकालते हैं ।

दुर्गरो (हिं० स्त्री०) दुर्गडो देखो ।

दुर्गहन (हिं० स्त्री०) नवविवाहिता वधू, नई ब्याही
हुई स्त्री ।

दुर्गहा (हिं० पु०) दूल्हा देखो ।

दुर्गहिन (हिं० स्त्री०) दुर्गहन देखो ।

दुर्गहेटा (हिं० पु०) प्रिय पुत्र, लाडला बेटा, दुलारा
लड़का ।

दुर्गाई (हिं० स्त्री०) ओटनेका टोहरा कपडा । इसकी
भोतर रुई भरौ रहती है ।

दुर्गाई—१ पावतोय त्रिपुराराज्यमें प्रवाहित एक चपनदी
जो मनुनदीसे निकली है । २ त्रिपुरा राज्यके पश्चगत
एक परगना ।

दुर्गार (हिं० पु०) प्रेम, अनुराग ।

दुर्गारना (हिं० स्त्री०) प्रेमके कारण, वहाँ या प्रेमपात्रों-
और खुश करनेके लिए उनकी साथ अनिक प्रकारकी बेटा
करना, लाड़ना ।

दुहारमहाचार्य—प्रसिद्ध व्यायाम्य महाधरीको कोपु
नामक राजाके रचयिता ।

दुनारा (वि • वि०) १ ध्यारा, लाङ्गना । (पु०) २ प्रिय
पुत्र, लाङ्गना पैदा ।

दुमारो (वि० वि०) १ ध्यारो, भाङ्गनी । २ प्रिय कन्या
साइली शैली ।

दुकोचन्द—दिल्लीके एक कवि । रणका जयपुरमें निवास-
स्थान था । इन्होंने स० १८०० के समयमें महाराज राम
सिंह जयपुरनरेशकी आज्ञासे "महाभारत भाषा" नाम
की एक पुस्तक लिखी ।

दुकोचा (वि० पु०) चासमनियम, मसोबा, आलोल ।

दुलीदुच (स० पु०) दिल्लीवाजाके पिता, चममितके
पुत्र । (इति ४ १२ ब०)

दुसैचा (वि० पु०) गरीबा, कालोल ।

दुधाल—सूत्रिकवास्तवत एक कवि ।

दुधोको (वि० फो०) एक प्रकारकी तनवार । यह कोड़े
के दो टुकड़ोंको जोड़ कर बनाई जाती है ।

दुधम (स० वि०) दु-द्विप दुत मलति सव सव ।
रोमय ।

दुहा नवान—एक विख्यात जातु । १०१४ मकमेंसे एक
कनोके निकटवर्ती शिवपुरके भूक्रीवासमें जाये गये ।
उस समय से समाधिस्थ थे । कितने बड़ाही पौर मादक
ने इनके ध्यान भङ्गको चेहा को । जादूके पास चमा
निशाका प्रयोग करनेसे भी इनका ध्यान भङ्ग न हुआ ।

जब तक वे समाधिस्थ रहे, इसका कुछ निश्चय नहीं
है इस समय से कुछ ही आते पीते नहीं थे । बहुत
सुरिहकमें दो चार दुग्द दूध मसिब मोतर डाला जाता
था । जो कुछ ही उन मादकको उतारनामि कुछ
दिनके बाद ही उनका ध्यानभङ्ग हुआ । ११० दिन
कोशिय करने पर वे दो एक बात बोले थे । नाम पुर्जन
पर ही "दुहानवान" पदना नाम बतकामि थे । कोड़े कोड़े
उन्के पक्षाको समझता था । जब वे समाधिज थे
तब उनका बच तत्र बाह्यनके जेवा कसबल था । किन्तु
ध्यानभङ्गके बाद उनको पड़को सुखी पौर यतोको
श्रुति आतो रही । १०१४ मकमें उदरभङ्ग हो कर
उनको मरु हुई ।

समाधिस्थानमें योगेश की मन्त्रा शक्तिक्रम मोग करने
के एक इस दुटि मन्त्रे समय भी को भारतमें शिव योगी
का प्रभाव नहीं है यह मास उनका निर्माण करव
है ।

दुल—तिव्वतमें बोहाका विनयमाफ्य ।

दुपडा—प्रयोग्य प्रदेशके खेरी जिल्ला एक नगर । यह
बोहा नदीसे दो खोम उत्तर पूर्वमें अवस्थित है । पहले
यहां कर्मोदारका एक बड़ा मन्थान था । सिपाही बिह्वर
के समय तक य धोकोके अधिकांशसुख हुआ ।

दुडा (वि० खो०) दूसरे नगरका मोली, मोलीके खेन
में नीर गोलीके पोखीको मोली ।

दुपन (वि० पु०) १ दुर्जन पुरा पादमी । २ राजव,
दौल । ३ मरु, बेरो ।

दुपन (स० खो०) दुबस् परिचरके कल्पादि । यह दुपन
द्विप चलोपयन्मोणे मान । १ इति । २ परिचरके
टवक, छिदमत ।

दुपन (स० वि०) दुबन शक्यां मत्तु पक्षोपयो ।
परिचरोंके, सेवा करने योग्य, छिदमत करने काविस ।

दुबस्तु । स० वि० दुब परिचरके मिच्छति क्वचु ततो
उत्तु । परिचरके प्यायुध, निमको दृष्ट्या सेवा करनेको
झे, जो टवक करना चाहता हो ।

दुबस्तु (स० वि०) दुबो इति परिचरके वास्तव्य
उत्तुप-मप्य वा साम्प्रदात् न पदसाव । १ इति ।
२ परिचरकेपुत्र ।

दुवाक (वि० पु०) एक प्रकारका कोड़ा ।

दुवान (फा० खो०) चमके का तनया । २ रिवाजका
तनया ।

दुवाक द (फा० पु०) चमा पादिमें लपटमेंका चमके का
तनया ।

दुवानी (वि० खो०) १ एक प्रकारका योजार । यह
रंथि का जपे कपड़ों पर चमका खानेके लिए खाटनेके काम
में जाता है । २ बन्दूक तनवार पादि खटवानका
चमके के कोड़े तनमेका परतका ।

दुवाको द (फा० पु०) बह सिपाही जो परतका पादि
नवाये तें वार रहता है ।

दुबोया (स० खो०) पुत्रा ।

दुर्वीथु (स० त्रि०) दुःखः परिचर्यामिच्छति क्वचि वदे वा पदकार्यं ततो उन् । परिचरणेच्छु, जो पूजा वा सेवा करना चाहता हो ।

दुग्धवार (फा० वि०) १ दुग्ध, कठिन । २ दु-सह, जो सहन करने योग्य न हो ।

दुग्धवारो (फा० स्त्री०) कठिनता ।

दुग्धाला (हि० पु०) पशमीनेकी चद्दरोका जोड़ा । इसके किनारे पशमीनेकी रंग विरंगो बेलें बनो रहती हैं । काश्मीर और पेशावरमें दुग्धाला बहुत तै पार होता है । काश्मीरो दुग्धाले अच्छे और कौमती होते हैं ।

दुग्धालोपोग (फा० वि०) १ अमीर । २ जो अच्छा कपड़ा पहने हुए हो । ३ जो दुग्धाला ओढ़े हो ।

दुग्धाला-फरोश (फा० पु०) दुग्धाला बेचनेवाला ।

दुग्धक्रम (स० पु०) गोघर, गोखस ।

दुग्धर (स० त्रि०) दुःखिन चर्यतेऽसौ दुर्-चर कर्मणि खल् । १ दुःखर, जिसका करना कठिन हो । २ दुर्गम, जहाँ जाना कठिन हो । दुःखिन दुष्टं वा चरति चर-अच् । ३ शम्बूक, सौप । ४ भङ्गूक, भालू ।

दुग्धरत्व (स० स्त्री०) दुग्धरस्य भावः त्व । दुग्धरका भाव, दुग्धरता ।

दुग्धरित (स० स्त्री०) दुष्टं चरितं प्रादिस० । १ दुष्कृत, पाप ।

मनुने लिखा है, कि इस जन्म वा पूर्व जन्मके दुग्धरित द्वारा मनुष्य कीटी, कुनखी आदि होते हैं अर्थात् पाप करनेका फल उन्हें अवश्य हो भुगतना पड़ता है । जिस तरह महाद्गदमें टेला फेंकनेसे वह डूब जाता है, उसी तरह सब दुग्धरित वेदमें डूब जाते हैं, अर्थात् वेदपाठ और वेदोक्त क्रियाकलापका अनुष्ठान करनेसे सब दुग्धरित जाते रहते हैं । जो यथाविहित वेदपाठ और वैदिक क्रियाका अनुष्ठान करते हैं उन्हें पापकी और ध्यान नहीं रहता है एवं पूर्वकृत पाप दूर हो जाते हैं । २ दुग्धरित, बुरा आचरण, बदचालिनो । (त्रि०) दुःखिन चरितं । ३ दुःखसे आचरणयोग्य, बहुत कठिनतासे करने योग्य । ४ दुष्ट आचरणयुक्त, बदचलन ।

दुग्धरितिन् (स० त्रि०) दुराचार ।

दुग्धरित् (स० त्रि०) दुर्निन्दितं चरितं यस्य । १ मन्द-

चरित, बुरा चरितवाला, बदचलन । (पु०) २ दुर्गचार, बुरो चाल ।

दुग्धमन् (स० पु०) दुष्टं चमं यस्य । अनाहतमेष्ट, वह पुरुष जिसकी लिङ्गेन्द्रियके मुख पर टाकनेवाला चमड़ा न हो । इसका पर्याय—हिनग्नक, चण्ड और शिपिविष्ट है । गुरुपत्नोद्धरण करनेसे दुग्धमा होता है जो महापातकका चिह्न है ।

इस प्रकारके लोग जन्मसे ही बिना इस चमड़ेके होते हैं । ऐसे पुरुषोको बिना प्रायश्चित्त क्रिये किसी कर्मके करनेका अधिकार नहीं है । यहा तक कि बिना प्रायश्चित्त किये उनका दाहकर्म और मृतकर्म भी नहीं किया जा सकता । महापातक देखो ।

दुग्धलन (हि० स्त्री०) दुराचरण, खोटी चाल ।

दुग्धारित (स० स्त्री०) चरितमेव स्वार्थे षण्, चारित, दुष्टं चारितं । १ दुष्ट चरित, पाप । (त्रि०) दुःखितं चारितमस्य । २ दुष्टचरितयुक्त, बदचलन ।

दुग्धकित् (स० त्रि०) दुर्-चिकित्स-खल । अचिकित्स, जिसकी चिकित्सा कठिन हो ।

दुग्धकित्सा (स० स्त्री०) दुर्निन्दिता चिकित्सा । निन्दित चिकित्सा, आयुर्वेद मन्त्रन्धी चिकित्साके विरुद्ध चिकित्सा करना । अनाहो या दुष्ट चिकित्सक यदि इस तरह गोप्य आदि को चिकित्सा करे तो उन्हें उत्तम साहस दण्ड और मनुष्यकी चिकित्सा करे तो मध्यम साहस दण्ड देनेका विधान है ।

दुग्धकित्सित (स० त्रि०) दुग्धकित्स ह । अचिकित्सनीय, जिसकी चिकित्सा बड़ी कठिनाईसे हो सके । जिस ग्राम में दुग्धकित्सित व्याधि पीडित लोग रहते हैं, उस ग्राममें वास नहीं करना चाहिये ।

दुग्धकित्स्त्र (स० त्रि०) दुर्-कित स्वार्थे सन्, दुःखिन चिकित्सप्रते दुर्-चिकित्स कर्मणि यत् । बहुत दुःखसे चिकित्सनीय, जिसका चिकित्सा कठिनतासे हो सके ।

दुग्धक्य (स० स्त्री०) लग्नसे तृतीय राशि, फलित ज्योतिषके अनुसार जन्मसे तीसरा स्थान ।

दुग्धित् (स० पु०) १ दुग्धिता, आगहता, खटका । २ आकुलता, घबराहट ।

दुग्धिता (स० स्त्री०) कुचिन्ता, आगहता, बिन्ता

दुःखिता (स० वि०) दुःखिन चिन्तासे विभक्ति कर्मसिद्धिं यत् । प्रति दुःखे शास्त्र चिन्तायै, जो कर्मिन्तासे समझ में पाये ।

दुःखेष्टा (स० स्त्री०) दुःखेष्टा, दुरा काम ।

दुःखद्विज (स० स्त्री०) दुःखिन्दित वेदित । १ निन्दित वेदित, दुष्कर्म, पाप । २ मन्द कार्य, छोटा काम ।

दुःखान्ध (स० पु०) दुःखेष्ट चक्षुष्य चालनमप्य वा दुःखेष्टावयवमिदं यत्तु दुःखेष्टम् । १ इन्द्र ।

इन्द्र बहुल आत्म तत्र क्षमं राज्य करेदेके बाद धरने ज्ञानसे च्युत हुए थे, इन्को कारक इनका नाम दुःखान्ध पड़ा है । एक एक मन्त्रकारने चोटके इन्द्र होती है । कर्मसे कम पापे करके हुए तत्र एक एक इन्द्र धरने ज्ञान पर रहते हैं । कर्मादेदेके मन्त्रके इन्द्रका नाम मित्र मित्र है । इन्द्र हीको । (वि०) २ पवित्रात्म जो कन्दो विचरित न हो ।

दुःखशय (स० वि०) दुःखेष्ट आत्मनेऽसौ दुःखेष्टु विचर कर्मसिद्धिं यत् । प्रति कहेने आत्मनेऽसौ, जो कन्दो च्युत न चित्त का सके । (पु०) २ मित्र, महादेव

दुःखमन (का० पु०) मन्त्र, वेदो ।

दुःखमी (का० स्त्री०) मन्त्रता, मंत्र ।

दुःखचम (स० स्त्री०) दुःखिन च्युतेऽसौ दुःखेष्टम् । प्रतिदुःखान्ध पदपदके दुःख कायरोपमैः । कदा इन्द्र विद्याय सन्नेने बहुत कठोर मालूम पड़े, कदा यह होय होता है ।

दुःखर (स० वि०) दुःखिन चिन्तासे दुःख कर्मसिद्धिं यत् । प्रति कहेने करकेय जिसे करना कर्मिन्ता हो । (स्त्री०) २ पात्राय । मार्ग यत् । ३ दुःखसे करके, नच काम जो कर्मिन्तासे किया जा सके ।

दुःखरक्षार्थ (स० स्त्री०) दुःखर कार्थके प्रयोग ।

दुःखरथ (स० वि०) जो सुगन्धिन्ने हो सके ।

दुःखार्थ (स० पु०) हतपदके एक पुत्रका नाम ।

दुःखमन्त्र (स० स्त्री०) दुःख कर्म प्रादिस० । १ पाप । दुर्मिन्दित कर्म यत् । २ पापकर्मकारक, दुरा काम करनेवाला ।

दुःखमो (वि० वि०) १ दुराकारी दुरा काम करनेवाला । (पु०) २ पापी ।

दुःखसेवर (स० पु० स्त्री०) दुःख निन्दित कसेवर । १ कुम्भित कसेवर, चराच मरीर । २ वराचिमय सेच ।

दुःखान (स० पु०) दुःख काम, प्रादिस० । १ निन्दित-खान, त्रिष कामके सिधे जो खान निर्वात है, नच काम कम समयमें न कर सिधे दूसरे समयमें करनेने खानका दुःख होता है । दुःख काको कचनमप्य । २ महादेव । ३ दुर्मिन्ध, पबाल ।

दुःखीति (स० वि०) दुःख कौत्सिर्धयत् । १ दुःखकौत्सिर्धयत्, जिसे पपयय हो । (स्त्री०) दुःख कौत्सि । २ दुःखीति, पपयय बदनामो ।

दुःखान (स० स्त्री०) दुःख कुत्स प्रादिस० । १ निन्दित कुत्स, मोच कुत्स, दुरा ध्यान्दात् । २ चोरके नामके गन्ध इयत् । दुःख कुत्स यत् । (वि०) २ मोच कुत्सप्रात, मोच कुत्सका पुच्छ घरानेका ।

दुःखलीन (स० वि०) दुःखसे मय दुःखक-टण्ड । निन्द्य कुत्समय मोच घरानेका ।

दुःखत् (स० स्त्री०) मन्दकार्य दुरा काम ।

दुःखत (स० स्त्री०) दुःख क्त प्रादिस० । १ पाप । २ दुरा काम ।

दुःखतकर्म (स० स्त्री०) दुःखत कर्म यत् । १ दुःखार्थ, दुरा काम । (वि०) २ पापे, दुरा काम करनेवाला ।

दुःखतामन् (स० वि०) दुःखत धामा क्षमासे यत् । पापाका दुराका, छोटा ।

दुःखति (स० वि०) दुःखा कर्मिन्धयत् । १ दुःखकर्मकारक, दुःखमो पापी । २ दुःखम, दुरा काम ।

दुःखतिन् (स० वि०) दुःखतमप्यय पदसिद्धिं यत् । दुःखतकारो, दुरा काम करनेवाला ।

दुःखेष्ट (स० वि०) दुःखेष्ट-यत् । जो दुःखसे कर्मिन्धयत् च्या हो, जो बहुत कर्मिन्तासे कींचा गया हो ।

दुःखिया (स० स्त्री०) दुःखा शिवा । दुःखार्थ, दुराका ।

दुःखियाकर (स० स्त्री०) दुःखियाका पनुष्ठान, दुरे कामका करना ।

दुःखियारत (स० वि०) दुःखियारत-यत् । दुःखार्थसे प्रतिनिधित, जो दुरे कामसे नया रहता हो ।

दुःखोत (स० वि०) दुःखेष्ट चिन्तासे कम इति दुःखो न । दुःखेष्ट, मन्त्र ।

दुष्ट—दुष्ट, देवी ।

दुष्टद्वार (सं० त्रि०) दुष्टः खट्वरः प्राटिम० । कालस्कन्ध, एत प्रशारका त्वै । इमका पंडे खोटा होता है । इमका मंस्कृत पर्याय—रस्वोत्रो, कालस्कन्ध, गोरट, अमरज, पवनक अक्षमार, खट्वर, महामार और सुदुखद्वार है । इमका गुण—कटु, उष्ण, तिक्त, रक्तत्रणोत्प दोष, ज्वरप्रति, विष, विमर्ष, च्वर, कृष्ट और उन्माद नाशक है ।

दुष्ट (सं० त्रि०) दुष्टः क । १ दुबल, कमजोर । २ अचम, मोच, खोटा । ३ दोषयुक्त, जिसमें दोष हो । ४ पिप्तादि दोषरक्त, जिसे पित्त प्राटि टोप हो । (फलो) ५ कुठ, कोट ।

दुष्टगज (सं० पु०) दुष्ट गजः । गम्भीरबेदो इक्षी, वदमाग हाथी ।

दुष्टचारिन् (सं० त्रि०) दुष्टं चरति चर णिनि । १ दोषयुक्त कर्मकारी, बुरा आचरण करनेवाला । २ दुर्जन, खल । दुष्टचेता (सं० त्रि०) १ बुरी चिन्ता करनेवाला, बुरे विचारका । २ अहिना मंत्रिः बुरा चाहनेवाला । ३ कपटी ।

दुष्टता (सं० स्त्री०) दुष्टस्य भावः दुष्ट-तन्-ततो टाप् । १ दुर्जनता, बदमागी । २ दोष, मुक, पैस । ३ बुराई, गराबी ।

दुष्टत्व (सं० फलो०) दुष्टस्य भावः दुष्ट भावे-क्त । दुष्टता, खोटाई ।

दुष्टतु (सं० त्रि०) दुष्ट्या तनुयंस्म प्राटि वहु० वेटे पत्व । दुष्ट डेल्युक्त, सराब शरीरवाना ।

दुष्टपत्ता (सं० पु०) दुष्टता, खोटाई ।

दुष्टपोनस (सं० पु०) पोन्मरोग ।

दुष्टप्रतिश्राय (सं० पु०) नामारोगविशेष, नाशको एक प्रशारका बीमारी ।

दुष्टयोग (सं० पु०) दुष्टः योगः । १ वै छति व्यतिपात प्रभृति निश्चित योग । इम योगमें मनान टानादि सभी शुभ कर्म धर्मित हैं । २ परिष्टसुखक गोचरविनानादि स्थित पक्षयोगमेव ।

दुष्टर (सं० त्रि०) दुःशेन तोयतेऽसौ कर्मणि खलु वेटे पत्व । दुष्टर, जिसे पार करना कठिन हो ।

दुष्टरक्तक (सं० त्रि०) दुष्टः रक्ता च टगस्य । पिप्तादि दोषज रक्तनेत्रक । पिप्तादि दोष उत्पन्न होनेसे आंखें नान हो जाती हैं, इसीको दुष्टरक्तक कहते हैं । जो अत्यन्त खो आशक्त है, वे दुष्टरक्तक होकर जन्मग्रहण करते हैं ।

दुष्टगीतु (सं० पु०) दुर्-द-तुन्-वेटे इ-दोर्घञ्-ततोपत्व । बहुत दुःख द्वारा तरणीय, जिसे पार करना कठिन हो । दुष्टवृष (सं० पु०) दुष्टः वृष, । वह बैल जो सामथ्य होने पर भी बोझ खोंच न सके, मूढ़ बैल । इसका पर्याय गलि है ।

दुष्टव्रण (सं० पु०) दुष्टः व्रणः । अचिकित्स्य व्रणभेद. वह घाव जो अच्छा न हो सके । यह रोग चिकित्सा करने पर भी आरोग्य नहीं होता है । जिसने पूर्व जन्ममें घोर पाप किया है, उसे ही यह रोग होता है । इममें यदि सृत्यु हो जाय, तो प्रायश्चित्त किये बिना दाहादिकार्य नहीं होता है । यदि कोई मोहवश उमका दाहादि-क्रिया न कर बैठे, तो दाहाकारीको भी प्रायश्चित्त करना पड़ता है नहीं तो वह किसी तरहका धर्म-कर्मका अनुष्ठान नहीं कर सकता है ।

दुष्टव्रण, गण्डमाला, पचाघात प्रभृति रोग सदा-पातकज है । रोगी यदि जोवित कालमें इम रोगका प्रायश्चित्त न करे, तो उम घरके लोग भी व्रतनियमादि किसी धर्म-कर्मका अनुष्ठान नहीं कर सकते हैं । किन्तु प्रायश्चित्त करने पर पाप नष्ट हो जाता है और पोछे रोग भी धीरे धीरे घटने लगता है । इसी कारण सभी पात-कज रोगोंमें सबसे पहले प्रायश्चित्त करना आवश्यक है ।

दुष्टमात्रिन् (सं० पु०) दुष्टः मात्तो कर्मघा० । नारटादि कथित असाक्षित्व प्रयोजक दोषयुक्त साक्षी, कूटमात्तो । जो गवाह सबो गवाहो नहीं देते, उन्हें दुष्टसाक्षी कहते हैं । ममो वर्णोंमें जो सत्यवादी है, जिन्हें कसंध्य कर्मका ज्ञान है और जो धनुष्य हैं उन्हें साक्षी बना सकते हैं । किन्तु इसका विपरीत गुणावलम्बी होनेसे उन्हें त्याग कर देना चाहिये । जिनके साथ अर्थका सम्बन्ध है, जो मित्र, साहाय्यकारी, शत्रु और प्रकृति शत्रु हैं, जिन्होंने पहले झूठे गवाही दी है, जो आधि-

यस्त तत्रा मङ्गलात्कालि दोषे प्रवृत्त ई सन् ही साधो
 प्राङ्ग नही ई । बहो मत्र साधो दुष्टभाषो बहवन्ति
 ई । लुपकार तथा लो प्रकारका बाहकर्म जोडी,
 मटादि बहुवेदक, अत्राचारी वा सव्यानी, दान, नाच
 विमजित प्यत्रि, निविदकम कारो ह्य मिध. बप्या-
 नादि नौचत्राति पन्व बह्वारि िकभेभिय, पास
 मत्त लम्पत्त, दुहा ह्वाये पोडित. पयत्रमसे म्नात्त,
 काम्मातुर, ऋद्ध पोर तस्कर हन्ने मी माधो बना नही
 मर्ध । दन लोयोको मी दुष्टसाधोमि गिनतो को मर्द
 ई । (मधु ॥१३-१३) विधेय विवराय दन्दिन् पन्ने रेको ।

दुष्टाचार (स० पु०) १ कुचर्म, कुचाच, जोटा नाम ।
 (ति०) २ दुराचारी, दुरा चास करमेवाना ।
 दुष्टाचारो (स० ति०) दुर्मी जोटा नाम करमेवाना ।
 दुष्टाया (न० ति०) निमः पन्नाकरय ह्य ङी जोटी
 प्रहर्तिना ।

दुष्टाव (स० पु०) १ दुष्ट पत्र, बिगडा बुधा पत्र नामो
 धनाव । २ कुचि पत्र । ३ वच पत्र को पापको
 कर्मादि हो । ४ नौचका पत्र ।

दुष्टि (स० ली०) दुष्-विष् । टोक, पिय ।

दुष्ट (स० ति०) दुर्निन्दित तिष्ठति दुर्-प्याङ्गुपल ।
 चविनोत्, को विनीत न हो, उद्यत ।

दुष्ट (स० चण०) दुर् निन्दित तिष्ठति दुर्-प्याङ्गु,
 तनो पत्र । निम्दा मिखायत ।

दुष्ट (स० ति०) दुर्दुष्ट निन्दित' दुर्ता बंदे पत्र ।
 निन्दित मावधे स्तुत, जिसको बड़ाई बुरो तारधे को
 मर्द ई ।

दुष्ट (स० ति०) दुष्-विन पन्ने दुर्-पय क्त । १ जो
 कठिनताये पधे । २ जो जल्दी न पधे ।

दुष्टनन (स० लो०) दुष्ट पन्नेन पत्त करधे स्तुट । १
 पयपन्, बुधाव, गावा । (लो०) दुर्-वन भावें द्दुष्ट ।
 बहूत दुष्-वधे पत्त, बहूत सुविचरधे विरलेका भाव ।
 दुष्टन (स० पु०) दुष्टानि पत्ताचि यम्प । १ पोर नामक
 गन्धद्रव्य । २ बन्नास-कम्प ।

दुष्ट (स० ति०) दुष्-विन पन्ने दुर्-पय कर्मचि क्त ।
 पापय दुष्-वधे माव, जो बहूत कठिनताये मिने ।
 दुष्मात्र (स० ति०) दुष्-विन पराधीयतेऽसौ दुर्-परान्ति

कर्मचि क्त । १ अय कर्मनि पगन्, जिसका जीवनना
 कठिन हो । (पु०) २ इतगाङ्गे एक पुत्रका नाम ।

दुष्परिपद्य (स० ति०) दुष्-विन परिपद्यतेऽसौ दुर्-परि पद्य
 कर्मचि क्त । १ परिपद्य कर्मनि पयका को जल्दी
 पङ्गे न पा कर्मे, जिधे कर्मि जाना कठिन हो ।
 (लो०) २ निम्पमायर्, बद्धचन योग । (ति०)
 दुष्पितः परिपद्यो भार्या यत्त । १ दुष्टमाय'त, जिसको
 स्त्री कराय हो ।

दुष्परिहन्तु (स० ति०) दुर्-परि-हन् क्तर्त्वं तुम् । कत्यन्त
 दुष्-विने नाग्रयितव्य, जिने मरना कठिन हो ।

दुष्परोक्ष (स० ति०) दुष्-विन परोक्षेऽसौ दुर्-परि ईच यत् ।
 धम्मा दुष्-वधे परोक्षेऽप जिने चाचना कठिन हो ।

दुष्प्रा (स० ति०) दुर्-स्वय कर्मचि क्त वा विचर्म
 नोपः । १ दुष्-वधे चर्मनोप जिने चर्म करना कठिन
 हो, जिने कृती न कर्ने । २ दुष्प्राय को जल्दी शर्मि
 न कर्ने । (लो०) ३ दुरासभा, अवाभा, अमाना ।

दुष्प्रा (स० ली०) दुष्टभा, अवाभा ।

दुष्प्रा (स० ति०) दुष्-विन पौपटीसो कर्मचि
 क्त । दुष्-वधे पौ, जो बहुत कठिनताये पिया जा
 मने ।

दुष्प्रा (स० ति०) १ दुष्प्रा, जिधे जल्दी पार न कर पधे ।
 २ दुष्-प्रा, कठिन ।

दुष्प्रा (स० पु०) दुष्टः पुत्र कर्मचा० । १ कुपुत्र, कराय
 नकुचा (ति०) दुष्टः पुत्र यत्त । २ दुष्ट पुत्रसुक्त, जिसके
 पत्र नहवा हो ।

दुष्प्रा (स० पु०) दुष्टः पुत्रका कर्मचा० । निन्दित पुत्र
 जोटा मनुष्य ।

दुष्प्रा (स० ति०) दुर् पूरि कर्मचि क्त । १ पूरक कर्मनि
 पगन् को जल्दी पूरा न हो सके । २ अनिचार्य, जो
 निवारकधे पोष्य न हो । मनुष्यको प्राणा दुष्प्रा ई पोर
 के रसको मोडिनी मायामि विमोहित होकर पट पद्य
 दुष्-प्राई है । प्राणा एक मो पूरी नहो होती है । एक
 प्राणा पूरी भी हो जाती है, तो फिर टूट ही लम्बी
 जाय एक दूसरी प्राणा कल्प हो जाती है ।

दुष्प्रा (स० ति०) दुष्-विन प्रकल्पते दुर्-प्र कल्प-यत् ।
 जो सवर्त्त न कर्त्त पधे ।

दुष्प्रकाश (सं० त्रि०) दुष्टः प्रकाशः प्रादिम० । अन्धकार, अंधिरा ।

दुष्प्रकृति (सं० त्रि०) दुःस्या प्रकृति र्यस्य । १ दुःशोन, बुरी स्वभावका । (स्त्री०) २ बुरी प्रकृति, खोटा स्वभाव दुष्प्रजसु (सं० त्रि०) दुःस्या प्रजा यस्य बहुव्रीहो अमिच, समामान्तः । निन्द्य प्रजायुक्त, जिसको प्रजा खोटी हो । दुष्प्रज्ञ (सं० त्रि०) निर्बोध, अनजान ।

दुष्प्रज्ञान (सं० त्रि०) दुःखेन प्रज्ञायतेऽसौ दुर-प्रज्ञा खल्वर्थे कर्मणि युच् । १ जो सहजमें जाना न जा सके । (स्त्री०) दुष्टं प्रज्ञानं । २ निन्दनीय ज्ञान, खराब बुद्धि ।

दुष्प्रतिग्रह (सं० त्रि०) प्रतिग्रहके पक्षमें बहुत कठिन, जो जल्दों ग्रहण न किया जा सके ।

दुष्प्रतिव्रीक्षणोय (सं० त्रि०) दुर-प्रति वि-द्वेष अनोयर्, जो बहुत कष्टसे टेशा जाय, जो जल्दों टोख न पड़े ।

दुष्प्रतिवीचर (सं० त्रि०) दुःखेन प्रतिवीच्यते दुःख-प्रति वि-द्वेष कर्मणि-यत् । जो बहुत कठिनतासे दिखार्हे पड़े ।

दुष्प्रवर्ष (सं० त्रि०) दुष्करः प्रवर्षोऽस्य । १ अत्यन्त दुःखसे धर्षणीय, जो जल्दों धर पकड़में न आ सके । (पु०) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । (भारत मीम० ६८ अ०) (स्त्री०) ३ दुरालभा, जवामा, धमासा । ४ खजूर, खजूर ।

दुष्प्रवर्षण (सं० त्रि०) दुर-प्र-वृष भाषायां युच् । १ अत्यन्त दुःखसे धर्षणीय, जो जल्दों पकड़में न आ सके । (पु०) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । (स्त्री०) ३ वात्तार्की ।

दुष्प्रवर्षा (सं० स्त्री०) १ दुरालभा, जवामा, हिं गुवा । २ खजूर, खजूर ।

दुष्प्रवर्षिणी (सं० स्त्री०) दुष्प्रवर्षोऽस्यस्याः इनि-डोप । १ कण्टकारो, भटकटैया । २ बृहतो, बैंगन, भंटा ।

दुष्प्रवृष्य (सं० त्रि०) दुःखेन प्रवृष्यतेऽनेन, दुर-प्र-वृष्य कर्मणि यत् । अत्यन्त दुःखसे धर्षणीय, जो बहुत मुश्किल-से पकड़में आ सके ।

दुष्प्रमेय (सं० त्रि०) जो सहजमें नापा न जा सके ।

दुष्प्रलम्भ (सं० त्रि०) दुःखेन प्रलम्भ्यते दुर-प्रलम्भ-खल ।

जो सहजमें ठगा न जा सके । २ जो सहजमें प्राप्त न हो सके ।

दुष्प्रवाद (सं० पु०) दुष्टः प्रवादः प्रादिम० । १ दुष्ट प्रवाद, बुरी अफवाह । दुष्टः प्रवाहो यस्य । २ निन्दित प्रवादयुक्त, जिसको बुरी अफवाह हो ।

दुष्प्रवृत्ति (सं० स्त्री०) दुष्टा प्रवृत्तिः प्रादि-म० । दुष्टा प्रवृत्ति, बुरी प्रवृत्ति ।

दुष्प्रवेग (सं० त्रि०) दुष्करः प्रवेगोऽत्र । दुःखसे प्रवेश्य, जिसमें घुसना कठिन हो ।

दुष्प्रवेशा (सं० स्त्री०) कन्यारो वृक्ष ।

दुष्प्रमह (सं० त्रि०) दुःखेन प्रमह्यतेऽसौ दुर-प्र-मह कर्मणि खल् । १ दुःसह, जिसका सहन करना कठिन हो । २ भोषण, भयानक । (पु०) ३ एक प्रसिद्ध कैनाचार्य ।

दुष्प्रमाद (सं० त्रि०) जो सहजमें प्रमत्त न हो, जो बहुत मुश्किलसे खुग किया जाय ।

दुष्प्रसादन (सं० त्रि०) दुष्प्रसाद देखो ।

दुष्प्रसाध्य (सं० त्रि०) दुःखेन प्रसाध्यतेऽनेन दुर-प्रसाध-यत् । साधन करनेमें अशक्य, जो बहुत कठिनतासे किया जाय ।

दुष्प्रसाह (सं० त्रि०) दुःखेन प्रसाह्यतेऽनेन खल्वर्थे घञ । दुःसह, जिसका सहन-करना कठिन हो ।

दुष्प्रहर्षे (सं० त्रि०) दुष्करः प्रहर्षोऽस्य । १ दुष्कर प्रहर्षयुक्त, जो सहजमें प्रसन्न न हो । (पु०) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम ।

दुष्प्राप (सं० त्रि०) दुःखेन प्राप्यतेऽसौ दुर-प्र-प्राप-खल् । दुर्लभ, जो कठिनतासे प्राप्त हो ।

दुष्प्रापन (सं० त्रि०) दुष्प्राप्य, जो सहजमें न मिल सके ।

दुष्प्राप्ति (सं० स्त्री०) दुःखसे प्राप्ति, वह चीज जो बहुत कठिनतासे मिले ।

दुष्प्राप्य (सं० त्रि०) दुःखेन प्राप्यतेऽसौ दुर-प्र-प्राप कर्मणि यत् । दुरालम्भ, जिसका मिलना कठिन हो ।

दुष्प्रावी (सं० स्त्री०) १ दुष्प्राप्य । २ अशुभकर ।

दुष्प्रीति (सं० स्त्री०) दुष्टा प्रीतिः । १ अप्रति, कुप्रति, बुरी सुहृत्त्वत । (त्रि०) दुष्टा प्रीतिर्यस्य । २ दुष्ट प्रीति-युक्त, जिसमें बुरा प्रेम हो ।

दुष्कर्म (स० वि०) दुष्कर्म प्रकृतं दुर्-प्र-रूपं कर्मणि चम् । (दुर्दृश्यं, त्रिषु देवता कर्मिणो । २ मीपय मयङ्कर ।

दुष्कर्मणीय (स० वि०) दुर्दृश्यनीय ।

दुष्कर्मण (स० वि०) दुष्कर्म प्रकृतं दुर्-प्र-रूप-कर्मणि चम् । बहुत बुरे कार्योप, त्रिषु देवता कर्मिणो ।

दुष्कर्म (स० पु०) दोषवत् शीघ्र एक राजा, चन्द्र मीन पतिराजाके पुत्र । ये पावन कर्म पराधन थे । इनकी कथा को महाभारतमें लिखा है वह इस प्रकार है—एक दिन राजा दुष्कर्म (दुष्कर्म) गिकार चित्त से खेद से यह कर ब्रह्मसुनिने पावनसे पास जा निकले । यह कि ये ब्रह्मात्मवत्की विद्या कर पाप पक्षिसे ब्रह्मसुनिने पावनमें गये । इस समय ब्रह्मि कक्ष पावनमें न थे । उनकी पत्नी हुई ब्रह्मको ब्रह्मकामाने राजाका उचित प्रकार बिना । इस प्रकार पूजित हो कर राजा ने ब्रह्मकामसे पूजा 'मई' में कर्म कथिका टमन करने पाया है, 'ने कहां गये हैं ?' ब्रह्मकामाने कथा कह दिवस 'मिता एक दुःख कानिसे किये गये हैं कुछ काळ बुर करारये तब कर्मये दर्शन होता ।'

राजा ब्रह्मकामसे ब्रह्मात्म सोम्यं देव कर उप पर मोहित हो गये और फिर पूजने लगे, 'दुष्कर्म' तुम ऐसी कर्मकामका हो कर इन ब्रह्ममें कर्म और ब्रह्मि पाई हो ? यदि कोई बाधा न हो, तो इमें सब ब्रह्मात्म यह सुनाओ जिससे ब्रह्मात्त को ब्रह्म दूर हो काम । यह सुन कर ब्रह्मकाम बोली 'मैं ब्रह्मात्म गम से उत्पन्न हुई हूँ, महासुनि कौटिल्य मेरे पिता है । मैं कर्म' देना मन्त्रवात् ब्रह्मकी पावनकाम्या हूँ ।' राजाने ब्रह्मकामाको पश्चात्-गमसे उत्पन्न काम कर लसे विवाह करनेका प्रस्ताव किया । इस पर ब्रह्मकामाने कहा 'यदि मन्त्रविवाहमें कुछ दोष न हो और यदि पाप मेरे ही सुमकी सुवराज ब्रह्मि, तो मैं आपसे विवाह करनेको मन्त्र हूँ ।' राजा दुष्कर्मने 'मिमा ही हीया कौटिल्य कर यथाविधान मन्त्र-मन्त्रने ब्रह्मकामाका पावनपत्र किया । ब्रह्मि करण जब पावनमें पाई तब यह ब्रह्मात्म सुन कर बहुत दुःख हुए । विवाहके बाद ब्रह्मकामाने गम करण किया । तोम बर्ष भीत जाने पर ब्रह्मि

एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम कृपियेने सर्व टमन रखा । कुछ दिन बाद ब्रह्मि कर्मने मिथोके साथ ब्रह्मकामाको राजासे पास मीन दिया । ब्रह्मकामा राजासे पास पहुँच और यमोपब्रह्म लम्बा कम्हार कर बोने, 'राजन् ! यह आपका पुत्र मेरे गमसे उत्पन्न हुआ है । देवसुत्त यह आपका और सुपुत्र है, इसे सुवराज बनाइये । राजाको उस बातें पाद तो बौं, किन्तु भीक निम्नसे मरने तकने लक्ष बिपानको देना की और ब्रह्मकामाका तिरस्कार करते हुए कहा, 'रे दुर्दृश्य कर्मि ! तू बिबकको पदो है ? तुम्हारे पाद धर्म, धर्म और कामसे बिपयमें मीने कर्मो कोरे मन्त्र नहीं किया । पात तुम्हारे ब्रह्मा पन कहा जानिको हो, कहा कर्मो का ।'

राजाका ऐसा कठोर बचन सुन कर ब्रह्मकामाने भी लम्बा रोड़ कर जो भीम पाया कुछ कहा । दुष्कर्मने भी लक्षोकोटो बातोंसे ब्रह्मकामाका तिरस्कार किया । पत्नीने नितात्म मोहित हो कर ब्रह्मकामाने लागती बातोंसे राजासे कहा 'राजन् ! पाप सर्व सुपुत्र हो कर सत्यनीका तिरस्कार करते हैं, जिस प्रकार कृपित सुपुत्रये कर कथना है, लक्षो प्रकार सत्यनीक्युन पुत्रपदे पावनकोकी बात तो दूर रहे नाशिक लोगमो करते हैं । जो कुछ हो, जो मनुष्य पुत्र उत्पन्न कर उसे लोकार नहीं करता, भगवान् उसे यदोचित दण्ड देते हैं ।' इतना कह कर ब्रह्मकामाने पत्नी राह ली । कर्मो समय देवबाओ हुई, 'महाभारत ! ब्रह्मकामाने जो कुछ कहा पश्यतः मन्त्र है । यह पुत्र पापका ही है इसे पश्य कौटिल्ये । इस भीयोके कर्मने पाप इसका मरण करे और इसका मरण नाम रहे ।' देवबाओ सुन कर राजाने ब्रह्मकामाको पश्य किया । ब्रह्मकामाके यह पुत्र पानी पक्ष कर काव भीम राजब्रह्मको हुए । लक्षो भरतसे मारत काम पड़ा है । (महाभारत भाग १८-७७)

यथाकथं काचिदानुगतं धर्मिज्ञान-ब्रह्मकामा कामक धर्मने दुष्कर्मका को धाम निष्ठा है वह महाभारतसे विन्नुक्त पत्रक है । महाभारतमें यह निष्ठा है, कि दुष्कर्म ने ब्रह्म लोचनिने कि मन्त्रने ब्रह्मकामाको पच्छो तरह जानते हुए भी उसे परित्याग किया था । विन्नु काचि

दासने की शलसे राजा दुष्कन्तकी दुष्ट भायक होनेसे वचाने के लिए दुर्वासकी शपथको कल्पना की है और यह दिखलाया है, कि उसी शपथके प्रभावसे राजा मधुवर्ति भूल गये जिसे शकुन्तलाको लाचार हो कर लौट जाना पड़ा। फिर भी कविने राजाकी वतलाते हुए यह कहा है, कि उस समय शकुन्तला गर्भवती थी, कि भी धर्मभीरु व्यक्तिके बिना गर्भिनो स्त्रोको कौन अपनी स्त्री बना सकता है ? इसके सिवा शकुन्तला जब राजाकी दी हुई अंगूठी उन्हें स्वयं दिखलानेकी राजी हुई थीर पीछे न दिखला सकी, तब राजाका सन्देह और भी बढ़ गया और शकुन्तलाकी लौट जाना पड़ा।

महाभारतमें लिखा है, कि शकुन्तलाने भी लज्जा छोड़ कर पुंशुनीकी नाईं गालियोंकी बौद्धाद् राजा पर की थी, किन्तु कालिदासने शकुन्तलाकी सृष्टिमती लज्जा बतलाया है।

“शकुन्तला मूर्त्तिमतीव सत्किया ।” (शकुन्तला)

शकुन्तला कालिदासकी एक अपूर्व सृष्टि है। विशेष विवरण शकुन्तला चरममें देखो।

हृदय-शर्म दुष्कन्तका जो विवरण लिखा है, वह इस प्रकार है—महाराज सुरोधके औरस और उपदानवके गर्भसे दुष्कन्त उत्पन्न हुये थे। दुष्कन्तके पुत्र भरत थे जिनका जन्म शकुन्तलाके गर्भसे हुआ था।

(हरिवंश ३२ अ०)

दुःखोदर (सं० पु०) एक प्रकारका उदर-रोग। यह सिंह आदि पशुओंके नख और रोएँ अथवा मल, मूत्र, आत्तव मिश्रित अन्न वा एक माद्य मिला हुआ घी और मधु खाने तथा गन्दा पानी पीनेसे उत्पन्न होता है। इस रोगमें त्रिदोषके कारण रोगी दिन दिन दुबला और पीला होता जाता है, उसके शरीरमें जलन होती है और कभी कभी उसे मूर्च्छा भी आती है। बदलके दिन यह रोग प्रायः उभरता है।

दुःमङ्ग (हि० वि०) असहा, जो सहा न जाय।

दुसाखा (हि० पु०) १ दो कनखे निकले हुए एक प्रकारका गमादान। २ एक प्रकारकी छोटी लकड़ी जो उटके भाँकेरको होती है। इसके कोर पर दो कनखे फूटते होते हैं। इनमें माको बांध कर भाग जानो जाती है।

दुसाध (हि० पु०) १ सूपरपाली हिन्दुओंमें एक नौच जाति। यह पाण्डुपुत्र भोममेनके अनुचरमें उत्पन्न है, ऐसा प्रवाद है। यह जाति पाठ सम्प्रदायोंमें विप्रक्ष है—कनौजिया, मगई हिया, भोजपुरिया, पैलवार, कामर वा कानवर, कुरो वा कुरीण, धाढ़ी वा धार, यिलोटिया और बाहलिया।

उक्त सम्प्रदायोंमें परस्पर खानपान होता है, मगर विवाहका आदान प्रदान नहीं होता। किसी बालेने देवात् एक गायको मार डाला था, इसीसे वह घाटो-दुसाध नामसे प्रसिद्ध हुआ। इसी कारण अन्त्या दुसाध धादियोंके माद्य भिन्नकर भोजनादि नहीं करते हैं। कामर वा कानवर सम्प्रदाय भी गोमांस खानेके दोषसे इसी तरह बहिर्गत थे, किन्तु अभी उक्त दोषसे विमुक्त हो कर वे आपसमें खाने पीने लगे हैं। कोई कोई बाहलियों को दुसाध नहीं मानते हैं, उन लोगोंका कहना है, कि ये वेदियाको नाईं एक विभिन्न जाति हैं। दुसाधमें यह रियाज है कि वह जब चाहे तब अपनी कन्याका विवाह कर सकता है, अधिक उमर होने पर भी यदि कन्याका विवाह न करे, तो कोई शिकायत नहीं होती। लेकिन किसी किसी सम्प्रदायमें ऐसा भी है कि अविवाहिता कन्याकी उमर ज्यादा हो जाने पर उसका विवाह विधवा-विवाहमें जैसा होता है। इन लोगोंका विवाह हिन्दूके मतसे ही होता है। केवल धना दुसाध विवाहके समय अपने पुरोहितकी बुलाते हैं। कन्या यदि बचपनमें ही व्याही जाय, तो ऋतुमती हुए बिना वह मसुराल नहीं जाती है। पुरुषमें केवल एक विवाह है, किन्तु स्त्री यदि चिररग्ना, बन्धा या ऋतवत्सा हो, तो वह दूसरा विवाह कर सकता है। सन्यास परगनेमें तीन विवाह तक करनेको प्रथा है। विधवा विवाहमें भी कोई आपत्ति नहीं है, किन्तु विधवा अपने देवरसे विवाह कर सकती है। यदि विधवा किसी दूसरेसे विवाह करे, तो वह न तो अपने स्वामीकी सम्पत्तिकी अधिकारिणी होती और न सन्तानको अपने साथ ही ले जा सकती है। इन लोगोंमें पञ्चायत है। पञ्चायत सामाजिक दोषका विचार करती है। इस जातिमें विवाह-विच्छेदकी प्रथा भी है। सन्यास परगने और पालासौमें शालके पत्तकी फाड़

करं तथा एकं लक्ष्मीं चोटी लक्ष्मीं चरति पतिपत्नीका
मन्त्रम् तोडां प्राप्य है।

ये लोग अपनेको हिन्दू बतानाते हैं। अपनेक त्रिवेत्ति
से जानारायको लक्ष्मीपत्नी, तुलसीदास गोरक्षनाथ वा
मानकके लक्ष्मीदासपुत्र हैं। हिन्दु यह बहुत पाहुनिच
है। पक्षी राहू ही दुग्धाकी एकमात्र लयाध देवता
है। पत्नी भी चक्रवर्त, मात, मास्मिन् और वैद्याक
मन्त्रोके किसी जिनो दिन राहुको पुत्रा जोतो है।
पटनेके समये बैरपुरमें बिष्णुपत सुधा मोड़ियाके नाममें
एक मन्दिर है। वहां मोड़ियाको देवता मान कर
पूजते हैं।

बिहारमें मोसमेनके द्वारो मानारन वा गैलिय, मिरजा-
पुरमें दिव्यापथ, पटनेमें दीर, मीरक, कबदा सा, काको
धोर भिपु तथा पञ्जाब्य ग्यानोंमें चौरागमल दुग्धाप्रति
लयाध देवता हैं।

बहुतने कमोत्री वा मं विलो ब्राह्मण ही दुग्धाकी
पुत्रोचित हैं। पूर्व ब्रह्मणमें मातृकीवी ब्राह्मण मां दुग्धाको
को सुगोदितारि करतें हैं। चतुर्मुख रूपवारी बिष्णुरचित
जानवानर पुत्रक रन कोवीका चर्मपत्र है। ये लोग
सबको बहाते और कभी कभीमें भी मातृ देते हैं।
चक्र के बाद म्यारपदे दिनमें साहकर्म किया जाता है।
पत्यान कल्पक जोते पर किया ६ दिन तक पर्युच रहतो
है और बारह दिन दूध बिना से सांसारिक कार्य नहीं
कर सकतो है।

दुग्धाक घोम घोमो और चमार छोड़ कर नमा
वातिका एक जाती है। एक आतिथीके प्रतिरिज और
कमो हिन्दू आतिथि लोग दुग्धाको लक्ष्मी हैं। दुग्धा
कोते समय लक्ष्मी सम्भ्रान्त ब्राह्मिणीको बगइना मान
बिनामा पढ़ता है तथा गणक भी दिने पढ़ता है। पर
बिने ही अपना ब्रह्मणके दुग्धा होता है। इन जागीका
आतिथेया सीबीदोते है। पर पश्चिमक, माहुत, दुग्धा
हरदामके नाममें भी ये लोग निबुध होते हैं। बहुतने
दुग्धाक मातृकके चरबी और जानसामा भी कोते है।
माहारपता दुग्धाक कर्ममें और और कर कर मयहर हैं,
रमोके पुत्रिक रन सीगोके लपर कड़ी निमाक
रहती है।

दुग्धाक लोग साधारणतः ब्रह्मपुत्र कोते हैं। ब्रह्मण-
के तथाक प्रतिबर्दीपति मयमें वनेक दुग्धाक योनिच
का काम करती है। काहके समयमें मो दुग्धाक नीतिच
है। ब्रह्मण, शोचविहार, दात्रि मित्र, त्रिपुरा पटना,
मया तिरुत मन्त्राक परमेला मोहरइगा मि भूम,
मातभूम बुध प्रदेयमें करि कयक तथा गात्रोपुरमें बहुत
से दुग्धाक मास करतें हैं। (वि०) २ पथम दुट, मोच।
दुग्धा (वि० पु०) १ पार पार छिद कइ छिद जो एक
धोर से दूसरी धोर तक हो। (वि० वि०) २ पारपार,
बारपार।

दुग्धा (वि० पु०) पार पार छिद।
दुग्धा (वि० पु०) कइ छिद जिनमें दो पक्षी हों,
दोपक्षको छिद।

दुग्धी (वि० धो०) पञ्जाबमें तैयार होमेबाको एक
प्रकारको मोटी चादर। इसमें दो तांगोका ताना धोर
बाना होता है।

दुग्धी (वि० पु०) पक्ष म, बड़ी प्याठ।
दुग्धी (स० वि०) १ जिसे पार करना कठिन हो। २
दुर्घट, रिक्त, कठिन।

दुग्धी (वि० वि०) जिनका स्वागता कठिन हो, जो
कठिनहिसे छोड़ा जा सके।

दुग्धी (स० वि०) दुग्धी-का, वाहुलकात् विवर्गयोग।
दुग्धीके चक्रकित, जिनका रहना कठिन है। २ दुग्धी,
सुगा। १ क, दुग्धी, दुग्धी।

दुग्धी (स० धो०) दुग्धी पट वा जिनमें लोच। मन्त्र
मायने जिज्ञासिन, जो सुरो तरङ्गके पूजा मया हो।

दुग्धी (स० पु०) दुग्धीका प्रथमा।

दुग्धी (स० धो०) १ कविचक्र। २ रज दुग्धीका,
काक बवाधा ३ पाठक इच। ४ पाकायनको मता।
५ कल्पकारा, मटकेया।

दुग्धी (स० पु०) १ दुग्धी मच, दुग्धी माच। २ मच
मेच, एक प्रकारका हथियार।

दुग्धी (वि० वि०) दुग्धी सेना।

दुग्धी (वि० पु०) वैद्यका पेट, भातो।

दुग्धी (वि० वि०) १ दोनो जायाके किया दूध। २
जिनमें दो मूठे या दूधो हो।

दुहत्या (हि० स्त्री०) मालखम्बकी एक कसरत । इसमें खिलाड़ी मालखम्बकी दोनों हाथोंसे जुहनी तक लपेटता है और जिधरका हाथ ऊपर होता है उधरकी टांगको उठा कर मालखम्ब पर सवारी बाधता है और हाथ पेटके नीचे निकाल लेता है ।

दुहना (हि० क्ति०) १ दूध निकालना । २ तत्त्व निकालना, निचोड़ना, मार खींचना ।

दुहना (हि० स्त्री०) दूध दुहनेका वरतम, दोहो ।

दुहरना (हि० क्ति०) दोहरना देखो ।

दुहरा (हि० वि०) दोहरा देखो ।

दुहराना (हि० क्ति०) दोहराना देखो ।

दुहाई (हि० स्त्री०) १ घोषणा, पुकार । २ सहायताके लिये पुकार । ३ शपथ, कसम, सौगन्ध । ४ गाय भैस आदिकी दुहनेका काम । ५ दुहनेकी मजदूरी ।

दुहाग (हि० पु०) १ दुर्भाग्य । २ वैषम्य, रंङावा ।

दुहागिन (हि० स्त्री०) विधवा, सुहागिनका उलटा ।

दुहाजू (हि० वि०) १ जो पहली स्त्रीके मर जाने पर दूसरा विवाह करे । २ जो पहले पतिके मर जाने पर दूसरा विवाह करे ।

दुहादि (स० पु०) दुह आदि यस्य । धातुगणविशेष । लकार निर्णयके लिये यह गण निर्दिष्ट हुआ है । दुह, याच, रुध, प्रच्छ, भि, चि, ब्रु, शास, जि, दण्ड, मन्य, वद ये सब धातु दुहादिगण हैं । "अप्रधानं दुहादीनां" पाणिनिके शासनानुसार जहाँ हिकर्मक धातुका कर्म उक्त होगा वहाँ दुहादि धातुका अप्रधान कर्म उक्त होगा । गौणकर्मको अप्रधान कर्म कहते हैं । अप्रधान कर्म उक्त होनेसे 'उक्तेकर्मणि प्रथमा' इस नियमके अनुसार दुहादि धातुका अप्रधानकर्म अर्थात् गौणकर्मसं द्वितीया विभक्ति होगी । हिकर्मक धातुका मुख्यकर्म उक्त होता है, किन्तु 'अप्रधानं दुहादीनां' इस विशेष नियमके अनुसार ऐसा नहीं होगा ।

दुहाना (हि० क्ति०) दूध निकालवाना ।

दुहाव (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी प्रथा । इसमें जमींदार प्रतिवर्ष जन्माष्टमी आदि त्योहारोंके उपलक्ष्यमें किसानोंकी गाय भैसका दूध दुहा कर ले लेता है । २ वह दूध जो इस प्रथाके अनुसार किसान जमींदारको देता है ।

दुहावनी (हि० स्त्री०) गाय दुहनेके लिये ग्वालिकी टिये जानेका धन, दूध दुहनेकी मजदूरी ।

दुहिता (हि० स्त्री०) दुहितृ, कन्या, लड़की ।

दुहितृःपति (स० पु०) दुहितृः पतिः वा षट्पाः अलुक् समासान्तः । दुहिताका पति, जामाता, दामाद ।

दुहितृ (स० स्त्री०) दोग्धि विवाहादिकाले धनादिकमाकृत्य गृह्णातीति वा दोग्धि गा इति दुह लृच् (नप्) नेष्टृत्वद्द्रोह् पाठ् प्रात् जामात् मात् पिह् दुहितृ । उण् २।८६) निपातनात् गुणाभावः । कन्या, बेटो, लड़को ।

लड़कीको यत्नपूर्वक पालन कर उसे उपयुक्त पात्रके हाथ सौंप देना चाहिये । विशेष रूपसे पात्रकी विवेचना करके कन्यादान करना उचित है । कन्यादानके पात्रापात्रका विषय इस प्रकार लिखा है—गुणहीन, वृद्ध, अज्ञानी, दरिद्र, मूढ़, रोगी, कुक्षित, अत्यन्त क्रोधी, अत्यन्त दुमुख, चापल, अङ्गहीन, अन्ध, बधिर, जड, सुर्ख, क्रोवतुल्य और पापो इनके साथ कन्याका विवाह करनेसे ब्रह्महत्याका पाप होना है । उक्त पात्रको कन्यादान कदापि नहीं देना चाहिये ।

शान्त, गुणी, युवक, परिष्ठित और वैश्याव ये सब पात्रके योग्य हैं । इनके साथ कन्याका विवाह करनेसे कन्यादाताके दशवापी दान करनेका फल प्राप्त होता है ।

उक्त रूप गुण और दोषको विशेष रूपसे परीक्षा कर कन्यादान करना चाहिये । यदि कोई कन्या पालन कर उसे विक्रय करे, तो उसे कुम्भीपाक नरक होता है । उस नरकमें जाकर वह मृत और विष्ठा खाता है तथा जन्म तक चोटह इन्द्र भवस्थान करेगी, तब तक इसी दुर्दशामें रहेगा । बाद व्याध योनिमें उसका जन्म होता है । इस व्याधजन्मको प्राप्त कर रात दिन वह मांसका भार वहन करता और भेषता रहता है ।

यथोक्तरूपसे कन्यादान करनेसे उसे नाना प्रकारके पुण्य प्राप्त होते हैं । वैदश, तिसन्ध्या करनेवाला, परिष्ठित, सत्यवादी, जितेन्द्रिय इस प्रकारके सद्बुधसम्पन्न पात्रको कन्यादान करना श्रेय है । अपात्रको मूल कर भी कन्यादान न करे ।

जो अपनी कन्याको विष्णु वा महादेवकी प्रीतिके

मित्रे दान करती हैं वे नारायण स्वरूप होते हैं, यह कथा श्रुतिमें बिली है।

सम्बन्धित इतिमो मो पपात्रको कथा टीना निविष्ट भतकाया है।

दुहितव्य (स० श्लो०) दुहितुर्मानः, दुहित-त्व। कथाका नाम।

दुहितपति (स० पु०) दुहितुः पतिः। प्रामाता, दामाद।

दुहितवत् (स० वि०) दुहित विघातेऽप्यप्यत्रो मत्पु। दुहित वृत्त, त्रिमर्षे कृत्तको हो।

दुकोना (हि० वि०) १ दुःकदायी, दुःसाध, कठिन। (पु०) २ दुःखदायक भाव, विघट घेन।

दुकोतरा (हि० पु०) कथाका पुत्र, मातो।

दुकर (स० श्लो०) दुःकरति इति दुःक-कर्मणि क्वप्, (एषीत्) याव ह्य ह्य क्वप्। वा ३।१।१०८ इति सूत्रस्य 'य मि दुःक दुःकित्यो वा' इति कार्याकोत्रा क्वप्। दोहन योष्य, दुःकनेपोष्य।

दुःकामान (स० वि०) दुःकरति इति दुःक कर्मणि मानस्य। दोहननिघ्नित, ओ दुःका काव।

दुःक वृ (स० पु०) यदाति राजाके एक पुत्रका नाम।

इन्मिं यमिंहाथे मर्मथे कथापत्रक किवा का। राजा यदाति कर दिग्बिषय कर चुके, तब इन्मिं भूमिकी धरती बुद्धिमें बंरा का। पवित्र दिग्माथे देग दुःक बुको मिले थे। राजा बहातिने कर धपना बुझाया देकर इनमे ब्रह्मानी मांयो की, तब इन्मिं पत्न्योकार कर दिया था। इस पर बहातिने माप दिया था, कि भिरे इहयथे कथ सीकर ओ धपना घोवन मुनि नहीं देते हो इहयथे तुम्हारे कीर्ति त्रिय धमिनाया पुत्र न बोने।

यथापि बेली।

दू (स० पु०) रीम, बीमारी।

दूषा (हि० पु०) १ कथापर पड़नेका एक प्रकारका यज्ञना। यह घर मठनों के लियेको होर पड़ना जाता है। २ दो वृद्धियां तायाका यह पत्ता। ३ बिनी खेल बिमियता सुधवाते येनका एक दधि। यह दो चिन्नी, वृद्धि या कौडियों वादिसे सम्बन्ध रखता है। (श्लो०) ४ दूष्य देकी।

दूषान (हि० पु०) दुषान देकी।

दूषानदार (हि० पु०) दुषानदार देकी।
दूषानदारी (हि० श्लो०) दुषानदारी देकी।
दूषु (हि० पु०) किमाव्यको तगारमें मिमनेवाका एक प्रकारका बकरा।

दूष (हि० श्लो०) हिनीया किमो पचको दूषयौतिवि।
दूषम (स० वि०) दुदुःखेन दम्पति इति दर-दम-कच (दुःखोपवगम दमप्येवूनमनगरारो-दत्वच। वा ३।१०८) इत्यर्थेति कर्त्तृकोत्रा कत्व भक्ष कृत्वच। १ भावका दम्पते दपछनीय। २ खननमाय विपदवृत्त, जो धमनी होतेके कारक दुःखो हो। ३ द द च, माय करनेमें पयस्य।

दूषाय (स० वि०) दःखेन दाप्यते य दर-दायि जन 'दुःखोदरदीनि यदोदरिष्ठ इत्यन्व द रोदामागीति' इति कर्त्तृकोत्रा कत्व कृत्वच। पोडापुत्र कुपित।
दूषी (स० वि०) द द धावति दुर औ पिक्तावां मय्य-दादित्यात् मावे कर्त्तरि वा द्विप्। दूषम शब्दवत् कार्त्तृ। १ द द ध्यायी। २ दुष्ट दुःहि।

दूष्य (स० वि०) दुःखेन धावति दुर औ-क दूषम शब्द वत् क कार्त्तृ। दुष्टध्यायी, पचम।

दूष्या (स० वि०) दुःखेन कथतेऽनो दुः-आयि-जन (दुःखे वायमयेति; वा ३।१।१०८) इत्यन्व वा-सि-कीत्रका कत्व कत्वच। जो बहुत कठिनतासे मट वा बरवाट हो।

दूष (स० पु०) दूषते वातावरणनादिना दू-श दोषं च (दू-पित्तं दोषक। उप ३।८०) १ कार्त्तृकार सम्बन्ध यह जाने वा मानेवाका। पर्याय—मन्देन, मन्दिटकयक। राजा कर मन्त्रिविषय कारिदा घमुष्ठान करते हैं यदवा सोर सम्बन्ध सिकते हैं, तब दूषका प्रयोजन होना है।

“कारेपना दूषमुकः।” राजाओं का दूष मुष्ट फलप है, यह वदु है यहाँ राजा जो कुछ कहते हैं यह दूषके मुकथे। दूष होर यह राजापथि प्रधान मन्त्राय हैं। दूषके बिना मन्त्रि विरह पादि कार्य काम नुहवाक माय नहीं होता। इधने दूषका सम्बन्ध पच्छी तरङ्ग सेय सुन कर लये यधने यहा निवृत्त करे। दूषका विषय पुराणमें जो लिखा है वह इन प्रकार है—

त्रिन दूषका निवृत्त करे, तमके पान से सब गुण रचना पावत्रक है,—ब्रह्मवाको, देयमाकाविधारद

जहाँ उगे भोजना होगा, वहाँको भाषामें सुपण्डित, कार्य-
कुशल, क्षेममय, ऐशकालविभागविदुष्यार्थान् किम समय
किम तरुने काम करनेमें फलदायक होगा, वह जो
विशेष रूपमें जानता हो तथा नोतियास्त्रमें वक्ता इस
प्रकारका लक्षणवाक्ता मनुष्य दूत होनेके योग्य है चाण-
क्यने दूत का विषय इस प्रकार कहा है—

‘निषादी वाक्पटुः प्राज्ञः परथितो रत्नरुक् ।

धोरो यथोक्तवादी च एष दूतो विधीयते ॥’

(चाणक्य १०६)

जो अत्यन्त बुद्धिमान्, वाक्पटु, उत्तम बुद्धिमय्यद
तथा दूतका हृदय जाननेमें विशेष पारदर्शी हैं
घोर और यथोक्तवादी हैं, इस प्रकारके गुणसम्पन्न पुरुष
दूत बनाये जा सकते हैं। युक्तिरूपतमें दूतका विषय
इस प्रकार लिखा है—जो गद्गल, शोक, आक्रान्त और दुःख
देख कर सब भाव समझ सके तथा जो प्रयुक्तमति,
धीर, इन्द्रिय, सभ्य, मत्कुलजन, कार्यकुशल, राजाके
प्रति दृढ़ पशुक्त, विशुद्ध स्वभावसम्पन्न, मेधावी, ऐश-
कालविदुष्य, वपुमान्, निर्भोक्त, वाग्मा पाटि गुणसम्पन्न
पुरुष दूतके योग्य हैं और वही दूत प्रगल्भ माने गये हैं।
यह दूत तीन प्रकारका होता है—विश्वप्राय, मितायं
और शासनकारक। इनमें जो कार्यकालमें केवल
प्रभुको आज्ञा प्रतिपानन करते हैं, उन्हें विश्वप्राय; जो
कार्य मात्र कह कर सन्तुष्ट हो जाते हैं, उत्तर प्रदुत्तर
कुछ भी नहीं देते, उन्हें मितायं और जो नोच्य पत्रादि ले
कर जाते हैं, उन्हें शासनकारक कहते हैं। दूत किमो
विषयका निश्चय नहीं कर सकते भोग वह कोई विषय
लिख हो सकते हैं। दूतको जब उनके प्रभुका विषय
कुछ पूछा जाय, तो उसे प्रभुका किमो प्रहारका छिद्र
प्रकाश न करना चाहिये; बल्कि वे जा कर अपने
मातृका तेज एवं योग्य, प्रिय और उन्नतिकर वाक्य,
शत्रुकी घोरभार चेष्टा, अमय शोचता कार्यकलाता और
निर्भोक्तता से सब विषय बर्णन करें। कामन्दकीमें जो
दूतका विषय लिखा है, वह इस प्रकार है—मन्त्रणा-
कुशल, मन्त्रज्ञ, प्रगल्भ, मेधावी, वाग्मी और सुपण्डित
इस प्रकारके गुणसम्पन्न व्यक्ति दूत होनेके उपायुक्त हैं।
ऐसे दूतकी दूताभिमानोके समीप भोजना चाहिये। राजा-

धीके चर दो प्रकारके हैं— पकाय और अपकाय। जो
प्रजाप्यभावने राजाके कार्यादि करने हैं, उन्हें दूत और
जो अपकायित रहते हैं, उन्हें चर कहते हैं।

गहने दूत द्वारा मन्थान में कर का प्रेषण करे, तब
रत्न दो उपायमें परराष्ट्रका समुद्रय इत्तान्त मान्त्रम ही
मरुता है। जो राजा स्वयं वा परपक्ष वा अभिप्राय
नहीं जान सकते, वे जगतें दूत भी अत्यन्त निद्रित हैं,
कभी उनकी यह निद्रा टूट नहीं सकती और थोड़े ही
दिनमें वे विनष्ट हो जाते हैं। इसीमें दूत और चर
नियुक्त कर जेमें परराष्ट्र वे ही परराष्ट्र मन्त्रयोंय समी
इत्तान्त जानना चाहिये। दूत बध्य नहीं है। दूतकी
मन्थानादि प्रदर्शन कर उनमें सब इत्तान्त सुन लेना
चाहिये। राजपदमें देखो।

२ किमोका भो कट कान हो, उसे ज्ञान कर जो
वैद्यकर्ममें जाता है, उसे वैद्यकोक दूत कहते हैं। उममें
सुखमें सुन कर चिकित्सक रोगका निश्चय करे।

वैद्यक दूतका लक्षण।—खड्ग, अश्व, मूक, वधिर,
वामन, स्त्री, कृद्ध, वृषित, जोष, आन्ध, बुधार्त, दीन,
क्रोधा आदि टापयुक्त व्यक्ति दूत नहीं हो सकते अर्थात्
इन्हें वैद्यकर्ममें भोजना न चाहिये।

३ प्रेमोका सन्देशा प्रेमिका तक या प्रेमिकाका
सन्देशा प्रेमो तक पहुँचानेवाला मनुष्य।

(त्रि०) ४ प्रेष्यमात्र, भेजनेके योग्य।

दूतन (मं० पु०) दूत स्वार्थे कन्। १ दूत। २ राजप्रदत्त
शासनादि ज्ञापन करनेके प्रधान कर्मचारी, वह कर्म-
चारी जो राजाको दो दुई आज्ञाका सब साधारणमें
प्रचार करता है।

दूतकत्व (सं० पु०) १ दूतका काम। २ दूतका काम।
दूतकर्म (सं० पु०) दूतत्व, स्वयं पहुँचानेका काम।
दूतज्ञी (सं० स्त्री०) दूतं दु उपतापे भावे शोषादिक क्तः,
दोषं घ, दूतं उपतापं हन्तीति हन-ठक्-डोप्। कटम्ब-
पुष्पो, गोरखमुञ्जी। (Michelia Kādamha)

दूतता (सं० स्त्री०) दूतत्व, दूतका काम।

दूतत्व (सं० स्त्री०) दूतस्य भावः दूत भावे त्व। दूतका
काम।

दूतपन (हि० पु०) दूतका काम।

दृति (म० स्त्री०) दृश्यते भाष्यकारिणां दृष्ट्यादिति ।
 पु भाष्येति दोषश्च । दृतो दृष्टो ।
 दृतिका (म० स्त्री०) दृष्टिरैव व्याप्यं कन् तलटाउ पत
 इत् । दृतो दृष्टो ।
 दृतो (म० स्त्री०) दृष्टिस्तद्विचारान्ति या दीप । दीप्य
 कामेति निवृत्ता स्त्री, स्त्रीपुत्रयोर्नास्त्यधिके, कुश्लो,
 ऋष्टो, महाशिका । पठान्त—पाठिका दृष्टिका दृष्टोका ।
 पाठिकादप्येवमिदं दृष्टो दृष्टीका विषय इव पञ्च
 निपायैः—

‘मिदृशोऽपि मितं बंधं तदा करेनागच्छ ।
 वाच्यं च विद्या दृष्टो दृष्ट्यानि लक्षयिष्या ॥

(भाष्यकर० १५८)

प्रत्येकं पश्यति परं त्रिं पुत्रं मित्रं ज्ञाता है तने दृष्ट
 कहते हैं । यह दृष्ट तोन प्रपारका है—‘मिदृशोऽपि
 मितार्थं चो मन्दिपञ्चकार । दृष्टोचो मो रमो पञ्च
 ज्ञानका वाहिये ।

ओ मत्र दृष्ट का दृष्टो दोनोके पर्यात् त्रिपने मित्रा है
 पौर त्रिपने पाप मित्रा यदा है भाव त्रिपकपने जमम
 कर प्यय कपका पत्तर मो दे दे तथा पपना काम
 निबाल सि तने निघटाव ओ दोहा हो इह कर पयना
 याम निबाल सि तने मितार्थं चो पौर ओ विपन प्रमुचो
 कया हो कह दे, तने मन्दिपञ्चकार दृष्टो कहते हैं ।
 (स्त्रिके) को भाषामिदृष्टि दृष्टीपेरव्य दारा ज्ञानो
 ज्ञानो है ।

बन्धो, मत्तं हो टामो, ज्ञातो बन्धो, प्रतिविमिने,
 बन्धो दृष्टा कथा म श्यामिने भोविन, विज्ञाकारि स्त्रो
 म भोविन म विन पाणि शिवाय दृष्टो कामे निबं त्र
 दृष्ट ममभो ज्ञाना है । भाषिका। वचयमे ये मत्र दृष्टो
 दोनो है विद्यु इव नायक विषयमे भो दृष्टो ममभन
 बीया ।

दृष्टिपे के ये मत्र पुत्र रक्षता पाषाणक है,—दृष्ट
 मोनादि भाष्ये दृष्टता कथा इदृश एव भन्ति, इदृश
 विनष्टता पर्यात् विनष्टे च त्रिं पश्यति हो कहे
 कथ भाष्यं मय्येव माह्वय, मय विज्ञान पर्यात् परि
 दृष्टाभिज्ञता भाष्येना पौर मय्येभाषित हो इत मत्र
 दृष्टो है मय्येव है इन्ने दृष्टा कहते हैं । पुत्रके तार

तन्मातृभार दृष्टिया तोन प्रपारको है—उत्तमा, मन्धमा
 पौर पञ्चमा ।
 दृष्टिपे को ज्ञानज्ञानमे क टना कहते हैं । इतके
 ज्ञानमे पश्य कर जितते जितन्द्रिय पुत्रय पत्र मे प्युत हा
 गये हैं ।
 दृष्ट (म० स्त्री०) दृष्टव्य माताः कथं वा (इत वरि
 व्याघ । वा ३।१।२२) इत्यप्येति शक्तिं कोशा यः
 वेदितव्यं (दृष्टव्यं वाच्यमिति । वा ३।३।२०) इति य ।
 १ दृष्टकम, दृष्टका काम । २ दृष्टका माव ।
 दृष्टकय (पा० स्त्री०) १ बह माय त्रिपने पुषी वाहर
 निबल आब, भुषीकय, विमलो । २ एक पञ्चकारका दम
 कय । इमके द्वारा पुषी दे कर पोबति जगें इए कोहें
 कृपाये ज्ञाने हैं ।
 दृष्टना (वि० पु०) एक प्रपारका पैह ।
 दृष्ट (वि० पु०) दृष्टव रेभो ।
 दृष्टवदो (वि० वि०) त्रिपने मन्मोमे दृष्ट पश्येके बह
 मन्मो ।
 दृष्टनाय इत्येके एक कवि । इतका कथा म० १८२१ में
 कृपा तथा म० १८३३ में इतने हररामकोषो पौर
 हरिहरमतक नामक दो मय्य विमि ।
 दृष्टनाय उवाच्य—एक हिन्दी कवि । इतने गोरवा पर
 एक पुत्रक निपाय ।
 दृष्टिनायो (वि० स्त्री०) १ बह टाई ओ दृष्ट विज्ञातो
 है । २ विज्ञाहको एक प्रपार । इमके बारातके मय्य
 बरक कोहें या पालको पादि पर बहनेके पहले माता
 करको दृष्ट पिनादि को मुद्रा कथना है । ३ बह जन
 या जेव को माताको एक विद्याके बहनेमे मितता है ।
 दृष्टवृत्त (वि० पु०) बल पौर मन्मति ।
 दृष्टवृत्त (वि० स्त्री०) बह कालिका ओ विमो ऐमो
 व्याका दृष्ट पो कर पको हो त्रिपका दृष्ट पो कर कोहें
 पोर कालिका या वाचक भो पना हो ।
 दृष्टवार्त (वि० पु०) ऐमे दो बालकोमेने कोहें एक को
 एक को कोहें पालका दृष्ट पो कर पना हो पर त्रिपने
 कोहें एक बालक दृष्टो माता जिताने कथक हो ।
 दृष्टमप्यरी (वि० स्त्री०) एक प्रपारका पयमो कृपा ।
 दृष्टवृत्ता (वि० वि०) ओ जमी तत्र माताका दृष्ट दोन
 हो, बीटा बहा, बालक ।

दूधमुख (हि० वि०) छोटा बच्चा, बालक ।
 दूधराज (हि० पु०) १ भारत, अफगानिस्तान और तुर्क
 स्थानमें पाई जानेवाली एक प्रकारकी बुलबुल ।
 कोई कोई इसे शह बुलबुल भी कहते हैं । २ एक
 प्रकारका सांप जिसेका फन बहुत बड़ा होता है ।
 दूधवाला (हि० पु०) वह जो दूध बेचता हो, ग्वाला ।
 दूधहंडो (हि० स्त्री०) दूध गरम करनेका मटोका बर-
 तन, सेटिया ।
 दूधा (हि० पु०) १ अगहन महीनेमें होनेवाला एक
 प्रकारका घान । इसका चावल वर्षों तक रह सकता है ।
 २ अनाजके कच्चे दानेमेंका रस । यह दूधके रंगका
 होता है ।
 दूधभाती (हि० स्त्री०) विद्याको एक रसम । इसमें
 वर और कन्या दोनों अर्पण पर्वने हाथसे एक दूसरेको
 दूध और भात खिंचाते हैं । यह रसम विवाहसे चौंठ दिन
 होती है ।
 दूधिया (हि० वि०) १ दूध मम्बुथो, जिसमें दूध मिला हो ।
 २ श्वेत, सफेद । (पु०) ३ एक प्रकारका सफेद बटिया
 पत्थर । यह चिकना और चमकीला होता है और इसकी
 गिनती रत्नोंमें होने है । इसका रंग कभी कभी बदना
 करता है अर्थात् लाल, भूरा और हरा भी हो जाता है ।
 इसमें रेतका भाग अधिक होता है और कुछ लोहा भी
 होता है । इसके कई भेद हैं और इसमें धूप-छाँदकीभी
 चमक होती है । इसका नग अंगूठियोंमें जड़ा जाता
 है । ४ प्यालियाँ आदि बनाई जानेका एक प्रकारका
 सफेद बटिया मुलायम पत्थर । ५ एक प्रकारका हनुआ
 सोहन । इसमें दूध मिला रहता है, इस कारण यह कुछ
 नरम हो जाता है ।
 दूधिया खाकी (हि० पु०) सफेद राखका सा रंग ।
 दून (सं० पु०) दू उपतापे ऋ 'दुग्धो दीर्घश्च' इति
 वार्तिकोक्त्या तस्य न दीर्घश्च । १ अध्यादि द्वारा आन्त,
 वह जो चलते चलते थका गया हो । २ उपतम, वह जो
 तकलीफमें पड़ा हुआ हो । ३ दुःखिताकृष्ट, वह जो
 दुःखसे व्याकुल हो ।
 दून (हि० स्त्री०) १ दूनीका भाव । २ साधारणसे कुछ
 जल्दी जल्दी गाना । (पु०) ३ तराई, चाटी ।

दूनमरिचि (हि० पु०) हिमालय पर्वत पर मिलनेवाला
 सफेद सिरिसका पेड़ । यह बहुत ऊँचा होता है और
 इसे बरनेमें देगे नहीं लगती है । इसका किलका हरा-
 पन लिये सफेद होता है । इसकी लकड़ोसे, जो भूरो
 चमकदार और मजबूत होती है, रस पोरनेका कीकड़,
 सुफल, पहिण, चायके सन्दूक और खेतीके योजार बनाये
 जाते हैं । इसका कोयला भी बनाया जाता है । इसके
 फूल बड़े सुगंधित होते हैं । इसमें तेज बहुत निक-
 लता है ।

दूना (हि० वि०) दिगुण, दुग्ना
 दूनाराय—हिन्दीमें एक कवि । इन्होंने म० १७५४के पूर्व
 बहुतसी अच्छी कविताएँ रचीं । इनका नामोल्लेख सूदन-
 कवि द्वारा भी पाया गया है ।

दूध (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी बहुत प्रसिद्ध घास ।
 दूरी देखो ।

दूधदू (हि० क्रि०-वि०) सामने सामने, सुकाविलेमें
 दूधिया (हि० वि०) एक प्रकारका हरा रंग ।
 दूने (हि० पु०) दिवोदो ब्राह्मण ।
 दूभर (हि० वि०) दुःसाध्य, कठिन, सुगं किल ।
 दूमा (हि० पु०) एक छोटा दौला जो चमड़ेका बना
 होता है । इसमें तिब्बतसे चाय भर कर भाती है । इसमें
 कमसे कम तीन घेर चाय भाती है ।

दूरदंग (फा० वि०) दूरदर्शी, अग्रगोचो, आगा पोका
 सोचनेवाला ।

दूरदेशो (फा० स्त्री०) दूरदर्शिता ।

दूर (सं० स्त्री०) देव शुद्धो वाचुनकात् क । १ प्राणरूप
 देवताभेद, उपासकोंके शरीरमें अवस्थित प्राणरूप देवता
 'दूर' नामसे प्रसिद्ध है । ३ उपासकोंको नृत्यको दूर
 करते हैं, इसीसे उनका नाम दूर पड़ा है । (वि०)
 दुर्दुःखिनेयते प्राप्यते इति दूर-इण् (दुरिणो लोपश्च ।
 षण् २।२०) इति रक्-धातोर्लोपश्च । अनिकट, बहुत
 फासले पर । इसका पर्याय—विप्रकट और अनासन्न है ।
 वैदिक पर्याय—आक, पराक, पराच, आर और परा-
 वत है ।

दूरक (सं० त्रि०) दूर-स्वार्थी कन् । दूर, जो फासले
 पर हो ।

दूरग (घ० वि०) दूर गच्छति दूर गम-ठ। १ दूरगामी
बहुत दूर तक जानेवाला। (घ०) २ चंद्र, खंडः। ३
सईम गदहा।

दूरगत (न० वि०) दूर गत्। जो बहुत दूर तक
जाना गया हो।

दूरगामी (घ० वि०) दूर गच्छति दूर-गम चिनि। जो
बहुत दूर चला गया हो।

दूरपश्य (न० क्री०) बहुत दूरसे पश्य वा दर्शन करने
की शक्ति।

दूरपरच (स० क्री०) एक स्थानसे दूसरे स्थानको से
जानेकी क्रिया।

दूरप्रम (घ० वि०) दूर गच्छति गम वा दूरगतात् विदे क,
सुम्ब। दूरगामी, बहुत दूर तक चलनेवाला।

दूरचर (स० वि०) दूर चरति चर-ठ। दूरनिचरचकारो,
दूर तक चलनेवाला।

दूरजम् (स० क्री०) से दूर्यंम वि।

दूरतय (स० पद्य०) दूर तय। दूरसे।

दूरत्व (न० क्री०) दूरत्व भाव दूर भावे क। दूर होनेका
भाव, अन्तः, दूरी, फासला।

दूरदृश्यं (स० वि०) १ दूर तक देखनेवाला। (घ०)
२ पच्छिम, उदिसाम्।

दूरदृश्यं (घ० पु०-क्री०) दूरदृशि दर्शनं दृष्टिर्दृश्यं।
१ दूर मोक्ष। (घ०) २ पच्छिम। दूरभावे लुट्।

(क०) ३ दूरसे दृश्य। ४ दूरबीचक अन्तर्दृष्ट, दूर
बांन।

दूरदृशिता (स० क्री०) दूरको बात मोक्षनेका गुण
दूर नेणे।

दूरदर्शी (न० वि०) दूरत् पश्यति कार्योत्पत्तौ। प्राक्-
पश्यति जानाति वा दृश्य-चिनि। १ दूरदृश्यक, बहुत दूर
को बात मोक्षनेवाला, दूरदृश्य (घ०) २ पच्छिम दृशि
सम्। ३ चंद्र, मोक्ष।

दूरदृश्य (स० वि०) दूरत् पश्यति दृश्य-चिन्। १ दूर
दर्शी। (घ०) २ पच्छिम। ३ चंद्र, सिद्ध।

दूरदृष्टि (स० वि०) दूर दृष्टियं च। १ दूरदर्शी, दूर दृश्य।
(क्री०) २ दूरदृश्यं, भविष्यका विचार।

दूरनिरोधक (घ० पु०) दूरको नामक बन्ध।

दूरवा (वि० पु०) दूरवा देवो।
दूरवीन (घा० क्री०) एक प्रकारका यन्त्र।

दूरसूत्र (घ० पु०) दूर पश्यति दृष्टे भुक्त यन्त्र। १ सुखयन्त्र,
सूत्र। २ सुरात्मन्, जवाका, बसासा।

दूरजायो (स० वि०) दूर याति वा-चिनि। दूरगामी,
दूर तक चलनेवाला।

दूरवर्ती (स० वि०) दूर वरति दूर हत चिनि। दूर-
छित जो दूर हो।

दूरवप्यत्र (स० वि०) दूर वप्य यत्र। वप्यहीन,
उत्तम नया।

दूरवासो (स० वि०) दूर वसति वस चिनि। दूरदेव-
वासो। दूरदेगमें रहनेवाला।

दूरवीचक (स० क०) दूर मोक्षनेनिन दूर वि
दृश्य-लुट्। (Telescope) नयाकार पश्यविधि एक
प्रकारका यन्त्र जिससे दूरको चीजें बहुत पास धोर
प्यट या बड़ो दिखाई देती हैं, दूरबीन।

जिन सब यन्त्रोंमें ज्ञानबहुतका विधि कच्चाव दृष्टा
है, उनमेंसे दूरबीनचयन भी एक है। दूरबीनका
धातुप्रकार पक्षी पक्षक जोईह दिग्में प्रकटहोई शताब्दीमें
प्राथम्यमें हुआ था। एक बार एक चन्द्रवाहा यणो
दुकान पर बैठा हुआ काम कर रहा था तभीमें उसका
बड़का जो अपनी पीछीमें दो शीशे लगा कर खेच
रहा था, सहाया चिन्ता उस कि देखो ! वह
धामनेका ठुका चितना पास था क्या। चन्द्र
वाहनें देखा कि उसका बड़का दो शीशोंको धामि पोछि
रक कर देख रहा है। जब उसने मो लपो प्रकार
उन शीशोंको रक कर देखा, तब उसे मनका लययोग
जान पड़ा। पहले उपर्यंत उसने धमके प्रकारको परी-
चाय करके कुछ विज्ञान किंर किए धोर कर्षोंमें यन्त्र-
सार दूरबीनचयका धातुप्रकार हुआ। १६०० ई०में
हान्धर कोम परिचेचित शीशे (Perspective glasses)-
का नियम बर्चन किया था। पोके दूरबीनचयनके
धातुप्रकारके नियममें धमके उपोचाय हुईं। जोईहने
जो बर्षसे पहले दूरबीनचयका धातुप्रकार हुआ है,
एक चन्द्रात्र कोन एबीकार करते हैं। जवाहिरक, जग-
द

सेन, हान्मलिंगम, जेम्स वा याकूब सेतिग्राम आदि कुछ व्यक्ति दूरबीचणके आविष्कारकर्ता माने जाते हैं। पीछे भुवनविख्यात गैलीलियो इसका विषय जान कर दूरबीचणयन्त्रको सृष्टि करनेको यत्नशील हुए। उन्होंने १६०८ ई०में एक काठके नल्ले दोनों ओर दूरदृष्टि-साधक शीशे बैठा कर एक प्रकृत दूरबीचण यन्त्रकी सृष्टि की और उसमें वे आकाशमण्डलस्थ चन्द्र, सूर्य, तारे आदिको देखने लगे। इस यन्त्रकी सहायतासे उन्होंने यह पता लगाया कि बृहस्पति ग्रहके चारों ओर चार चन्द्रमा घूम रहे हैं, सूर्य अपने सेक्रेटर पर घूमते हैं और उनमें कितने प्रकारके दाग हैं, चन्द्रमामें पर्वत और उपत्यका हैं तथा मामान्य चक्षुसे अगोचर अनेक ज्योतिषका आकाशमण्डलमें विराजमान हैं। १६१० ई०में प्रकृत दूरबीचण-यन्त्रकी सृष्टि हुई। तबसे दूरबीचण बनानेके काममें बराबर उन्नति होती आई है।

ज्योतिर्विदुर्गण साहस्रकृत दूरबीचणयन्त्र द्वारा जो वस्तु देखी जाती है वह अपने स्वाभाविक अवयवकी अपेक्षा ६०० गुण बड़ी देखती है। महातिजः पुञ्ज गनिग्रह उस यन्त्रमें ऐसा स्पष्ट टोख पड़ता है। मानो हम लोग ग्रहभिमुख ४०००००००० कोस अग्रसर हो कर उन्हें देख रहे हैं। १ घंटेमें यदि हम लोग २५ कोस ग्रहको और जा सकें, तो ४०००००००० कोस जानेंगे हम लोगोंको १८० वर्ष लगेगा, किन्तु इस यन्त्रको सहायतासे इतने दूरस्थित होने पर भी उन्हें स्पष्टरूपसे देख सकते हैं। इसको सहायतासे हम लोगोंको बहु-दूरस्थ अगम्य अचल ज्योतिष्क और उनका अवस्थिति स्थान देखनेमें आता है। दूरबीचण यन्त्रको सृष्टि होनेसे ज्योतिषशास्त्रकी विशेष उन्नति हुई है। पहले जिन सब ग्रह, उपग्रह, नक्षत्र और धूमकेतुका हाल मनुष्य स्वप्नमें भी नहीं जानते थे, अभी दूरबीचणयन्त्रकी सहायतासे उन्हें उन्का आविष्कार कर डाला है। इसकी दिनों दिन उन्नति होती जा रही है। सूर्य और बृहत् आदि कई प्रकारके दूरबीचणयन्त्र हैं।

लिफ्ट मानमन्दिरके दो हाथ व्यासयुक्त दूरबीचण और आयर्न गडके चार हाथ व्यासयुक्त यन्त्र ही आजकल पृथ्वी परमें सबसे बड़ा यन्त्र माना जाता है। इनमेंसे दूसरे

(जार्ड रमके) यन्त्रका व्यास परिमाण पहलेसे दूना होने पर भी लिफ्टके प्रतिफलक दूरबीचण (Reflecting-telescope) यन्त्रकी अपेक्षा इसको परिभर दृष्टिकारो गति बहुत कम है। इस प्रकार लिफ्ट-मानमन्दिरके दूरबीचण-यन्त्रकी वैज्ञानिकोंने उत्कृष्ट शक्तिसम्पन्न वत-नाया है और अपने कल्पित दूरबीचणकी क्षमताको इसी यन्त्रके साथ तुलना की है। उन्होंने गणना करके देखा है, कि नूतन यन्त्रकी रश्मिपुञ्जोत्तरणशक्ति (Light-gathering Power) लिफ्टके यन्त्रकी अपेक्षा एकचतुर्थांश अधिक होगी।

दूरबीचणयन्त्र एक गोल नल्लके आकारका होता है जिसमें आगे और पीछे दो गोल शीशे लगे रहते हैं। आगेवाले शीशेको प्रधान लेन्स और पीछेवाले शीशेको उपनेत्र वा चक्षुलेन्स कहते हैं। प्रधान लेन्स अपने मध्य, पदार्थका प्रतिबिम्ब ग्रहण करके पीछेवाले लेन्स पर फेंकता है और पीछेवाला लेन्स या उपनेत्र उस प्रतिबिम्बको विस्तृत करके आंखोंके सामने उपस्थित करता है। आवश्यक्तासुसार प्रधान लेन्स आगे पीछे हटाया बढ़ाया भी जा सकता है। दर्शनीय पदार्थकी आकृतिको छोटाई वा बड़ाई इन्हीं दोनों लेन्सोंकी दूरी पर निर्भर रहती है।

विज्ञानको उन्नतिके साथ साथ जितने नये नये यन्त्रोंका आविष्कार हो रहा है उसको सुमार नहीं। वैज्ञानिक लोग एक ऐसा दूरबीचणयन्त्र बनाना चाहते हैं, जिसमें ज्योतिष्कमण्डलका समस्त विवरण प्रत्यक्षगोचर हो।

- दूरवेधी (स० पु०) दूरात् वेधीऽस्त्यस्य इति । १ दूरसे लक्ष भेदक, वह जो दूरसे निगाना मारता है।
- दूरसंख्य (स० त्रि०) दूरे संख्या स्थितियस्य । दूरस्थ, दूरवर्ती, दूरस्थित।
- दूरसंस्थान (स० क्री०) दूरे संस्थानं । १ दूरस्थता, वह जो दूरमें हो। २ दूरमें स्थिति, दूरका वास।
- दूरस्थ (स० त्रि०) दूरे तिष्ठति दूर-स्था क । दूरस्थित, दूरका।
- दूरापात (स० त्रि०) दूरमापतति दूर-आ-पत-स्य । दूर-पाती अस्त्र, वह अस्त्र जिसे दूरसे फेंककर मारा जाय L;

दृशामिन् (स० लि०) दूरं चापतति चापन विनि ।
 दूरनिष्येय पश्य दूरमे किंमे जातिका पश्य ।
 दृशज्ञाव (स० लि०) दूरे पाज्ञानो यत्न । दूरमे मय्य
 प्रगनकारो, जो दूरमे उन्नतता हो ।
 दृशवर्जित (स० लि०) दूरवर्तो, जो दूरमे हो ।
 दूरो (हि० श्री०) दूरल पत्तर कामना शेष ।
 दूरीकः (स० श्री०) बहिष्कृतकरण, बाहर निवास्त
 देनिबो द्विवा ।
 दूरान्त (स वि०) ताद्वित, जो निवान द्विवा गया हो ।
 दूरोन्मूत (स० लि०) ताद्वित, निवाना द्विवा ।
 दूरदा (स० लि०) दूर-ब-ब ईकि परे पूवाचो दीर्घ ।
 दूरदोर्वाविय ।
 दूरे धमित्र (स० पु०) दूरे धमित्र दूर वंश ईके वमय्या
 पशुक् । एषोपपञ्चाम् मवत्तुं मय्य मवत्तुं ए उत
 चाप मवत्तुं ए एक मवत्तुं नाम ।
 दूरिण (स० लि०) दूरे मव-एव । दूरमव, दूरव, जो
 दूरमे हो ।
 दूरीपाव (स० लि०) दूरे पवति पव च मवत्तुं दित्वात्
 दूर, उन्नत-पशुक् । दूरमे पचाने वा पचानिवा ।
 दूरीपाव (स० लि०) पव-उच मवत्तुं दित्वात् दूर
 मवत्तुं पशुक् । दूरीपाव देनी ।
 दूरिया (स० लि०) जो दूरमे वमर्ष ।
 दूरिकम (स० लि०) जो वमर्षी पशु-एके बाहर हो वहां
 यम न जा सके ।
 दूरिरेवच (स० लि०) दूरे ईरित ईवच देन । ईवर,
 ईया ईवा ताता ।
 दूरिवच (स० लि०) जो दूरमे प्रहार करे ।
 दूरीव (स० पु०) दुःखेन दूरितेनो दूर-ब-ब कर्मणि पशु
 ईकि परे पूवाचो दीर्घ । १ दुःख द्वारा रोवर्षीव, पादित्य
 शोक वहां पशु कर जाना पशुभव है । (लि०) २ दूर-
 रोवर्षीव, जिस पर पशु कर जाना सुरिलस हो ।
 दूरीवच (स० पु०) दुःखर कारोवच पश्य । १ पादित्य,
 दुर्ष । (श्री०) २ अन्धमिद, एव प्रकाशको अन्ध । (लि०)
 ३ दूरारोवर्षीव जो पशुने योग्य न हो । ४ जिस पर
 पशुना बहुत कर्मिण हो । ५ दुःखाव रोवर्षीव जिस पर
 पशुना वचपव हो ।

दूर (स० श्री०) दूरे उच्चार्य दूर यत् । १ पुरीय, बिहा ।
 अवे लठ वर मेवततकोचमं वदुवा नो वर तोर कोइमेने
 बच जिततो दूर तव जाट, उतना स्वान कोइ वर जित
 स्वात करना चाहिये इसीने पुरीयका नाम दूर पड़ा है ।
 २ दूर कश्चूर, कोइ कश्चूर ।
 दूर (स० पु०) दूरमेद, एव राजाका नाम ।
 दूर्वा (स० श्री०) दूर ति रोमान् पण्डित वा दूर्व
 द्विसार्वा एव ईके परे पूवाचो दीर्घ । (Panious
 daetylon) लनामस्यात एवमेद दूर नामको वाम ।
 पवाव—गतपर्निवा, मवत्तुं वीणां भाग जो वद, पनत्ता,
 तिजपवो, दूर्म राद्विपुर्वा वरिता, वरितामी पोर कच्छ
 सदा । एते दूर्वाके पयाव—गतवोव, मज्जानो, मज्जना
 चव सोमोमो, गतपर्वा गतदूर्व, निता, मया पोर,
 मवावरा । भावप्रकाशके मतसे दूर्वा पोर मज्जुर्वा तोल
 प्रकाशको जोतो है—मीनदूर्वा, एते दूर्वा पोर मज्जुर्वा ।
 वहा पनत्ता, भागवो, गतपर्निवा, मय्य, मवत्तुं वीणां
 पोर गतवको ये वच मोलदूर्वाके पर्याय हैं । इमने शीत
 शीय, तिज, मज्जु कपाव, रस पोर कपपित्त, रज्जुदोव,
 मोमर्ष अथा, दाह पोर चमरोगनागव शुच माना
 गया है ।
 मोलोको पोर गतवोवां एते दूर्वाके नामान्तर हैं ।
 इसका शुच—वयाव, तिज मज्जुरम, मचनायव, धोको
 घातुवईव, शीतवोव, मोसय, रन्धीय अथा, पित्त,
 एव पोर दाहनयव है ।
 मज्जानो, मज्जानो पोर मज्जुनाचव ये मज्जुदूर्वाके
 नामान्तर हैं । शुच—शीतवोव, मोइशुवच, वरव
 नपु तिज वयाव मज्जु रच बाहुवईव, वद, निगव
 पोर दाह, अथा कप, उठ रज्जुवित पोर वरनागव
 है । (भाष्यकाय)
 यह वास पश्चिमी पञ्चासके कोइने बाहुमय भागको
 कोइकर शीत ममय्य भारतमें पोर पञ्जाब पर घाट इज्जर
 ए ठको उंचाई तक बहुत उपजतो है । मव अतु तथा
 मव बमीनमें यह लगतो है तथा बहुत अन्धो पोर मवक-
 मं वीन जाती है । याव पोर कोइ इके वक्के मेमने
 मत्ता है पोर इमने उतका वच पशु वदता है । वही
 वही वचव एके पञ्चावरवर्मी तक रश्मि है । इवव

खानिसे गाय और भैंस अधिक दूध देने लगती है। जिस स्थानपर यह एक बार हो जाती है, वहहिसे इसे विलकुल अलग कर देना बहुत दुरूह है।

दूर्वाका उत्पत्ति-विवरण भविष्योत्तर-पुराणमें इस प्रकार लिखा है—

प्राचीनकालमें जब देवासुरसे चोरोदसमुद्र मथा जा रहा था, तब विष्णुने मन्दरपर्वतको अपना बाहु और जङ्घा पर धारण किया था। मथनेके निचे पर्वत बहुत वेगसे घुमने लगा, जिससे विष्णुके सब रोएँ घिस कर गिर पडे। वे सब रोएँ समुद्रको तरङ्गसे किनारे जा लगे थे जिससे हरे रंगको सुन्दर दूर्व निकल आई। इसी प्रकार विष्णुके शरीरसे दूर्वाकी उत्पत्ति हुई थी। इसके ऊपर मयित असुर-कुम्भ रखा गया था और उस कुम्भ परसे कुछ जलको बुन्द इगपर टपक पडे थी। इसीसे यह दूर्वा अजर और अमर हो गई है तथा पवित्र कष्ट कर प्रसिद्ध है।

दूर्वा सब पापोंको विनष्ट करती है, इसीसे इसका नाम दूर्वा पडा।

‘दूर्वा हरति पापानि धाम्नी हरति पातकं’ ।

हरीतकी हरेद्रागं गुलकी हरेते प्रयं ॥” (विष्णुध०)

दूर्वा पूजाका एक प्रधान उपकरण है। केवल इसीसे देव पूजा को जा सकता है। यह बहुत पवित्र मानी गई है। किन्तु दुर्गादेवीके पूजनमें इसका व्यवहार नहीं होता।

अक्षत द्वारा विष्णुका तुलसी हाग विनायकका और दूर्वा हाग दुर्गाका पूजन नहीं करना चाहिये।

‘न दूर्वया यजेत् दुर्गां’ इस वचनके अनुसार दुर्गाका दूर्वमें पूजन करना निषेध है, किन्तु दुर्गापूजामें अर्घमें दूर्वा तो ना सकती है। क्योंकि अर्घमें दूर्वादानकी विशेष विधि बतलाई गई है, इसीसे अर्घ्यकार्यमें दूर्वा दान दोषावह नहीं है। (आधिकारत्व)

दूर्वाको (म० स्तो०) वासुदेवके भाई ढककी स्त्री।

दूर्वाग्राम—पद्मकूटके प्रन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह चन्दनकारोंके ५ कोम पूर्वमें अवस्थित है।

दूर्वाघटत—यैशकील रत्नपिताधिकारका शोधमेद।

इसकी प्रसृत प्रणाली—४ सेर चावलमें १६ सेर जल

डाल कर उम जलको फिर ढांक लेते हैं। पीछे उसमें बकरीका दूध १६ सेर, बकरीका घी ४ सेर डालते हैं। दूर्वासुल, केसर, मजोठ, एलुषा, चोनी, सफेद चन्दन, गन्सकी जड़, मोथा, लाल चन्दन और पद्मकाष्ठ प्रत्येक के दो तोलेको लेकर चूर्ण बनाते हैं। रत्नवमन होनेसे सभी घोंको पीते, नाकसे लेह गिरनेसे इसका नख लेते, कान और आँखसे लेह गिरनेसे उसमें उक्त जल देते, गुह्य हागसे लेह गिरनेसे पिचकारी देते और रोमकूपसे लेह गिरनेसे शरीरमें मालिश करते हैं।

दूर्वाष्टमी न० स्तो०) दूर्वा तद्रूपा गौरी तप्रिया अष्टमी।

भाद्र शुक्लाष्टमी, भाद्र मासके शुक्लपक्षकी अष्टमी तिथिमें जो व्रतानुष्ठान किया जाता है, उसे दूर्वाष्टमी कहते हैं।

भाद्रमासके शुक्लपक्षकी अष्टमी तिथिमें उपवास कर दूर्वा, गौरी, गणेश और महादेवका फल प्रभृति यथा शक्ति उपचार द्वारा पूजन करते और इस अनग्निपक्ष द्रव्यको खाते हैं। इस प्रकार जो व्रतानुष्ठान करता है, वह ब्रह्महत्यापापसे मुक्त होता है। यह व्रत आठ वर्षोंमें समाप्त होता है। जिस वर्षमें आरम्भ किया जाता है, उस वर्षसे ले कर जिस वर्ष में सम्पूर्ण होगा उस वर्षमें इस व्रतकी प्रतिष्ठा करनी होती है। जिस वर्षमें यह व्रत ग्रहण करना होगा, उस वर्षमें यदि अकाल पड़ जाय, तो व्रत ग्रहण नहीं किया जा सकता। फिर यदि प्रतिष्ठा वर्षमें किसी प्रकारका प्रतिबन्धक उपस्थित हो जाय जिससे प्रतिष्ठा न को जा सके, तो अकालमें प्रतिष्ठा नहीं कर सकते। जो वर्ष कालाशुद्धि रहेगा, उस वर्षमें प्रतिष्ठा करना होगा।

व्रतप्रयोग विधि—व्रतारम्भके पूर्व दिन संयम कर दुसरे दिन प्रातःकालमें स्नानादि और आचमन करके स्वस्तिवाचन करना चाहिये, पीछे सूर्याव देकर सङ्कल्प करते हैं।

सङ्कल्प—विष्णुं मोऽद्य भाद्रे मार्गिण शुक्ले पक्षे अष्टम्यां तिथावारभ्य अमुक गोत्रा योऽमुकी मर्त्यांशोकाधिकरणक सुखसौभाग्याविच्छिन्न पुत्रपौवादिलाभपूर्वक ब्रह्मलोकप्राप्तिकामा भविष्यपुराणोक्ताऽथावर्ष-निष्यादित दूर्वाष्टमोव्रतमहं करिष्ये।

इस प्रकार सङ्कल्प करके सङ्कल्पसुक्त पढ़ें। पीछे

प्रदाविधि दास्य दुःखादि वरुषे मधिवादि देवताका पूजन
करे । इमं वाह कृष्णका ध्यान करमा होता है ।
ध्यान—

“ओम्भवत्प्रकाशं वदुर्गां तु विदिताम् ।
सहस्रशतं पादाणि च शक्तिं च
वीर्यवक्रकोपेन विधा कृष्णा लक्ष्मीवता ॥”

इतः परत ध्यान चेर मातलोपचारमे पूजा कर “यां
कृष्णाव ममा इतः कर्ममे पादादि दारा पूजा करतो
चाहिजे ।

इमं वाह पादाव देवताको पूजा करतो होता है ।
शची, दुर्गा, गौरी, श्री, सरस्वती, गंडा, दिति, चट्टिनि
सुषेका, चक्रवर्ती मन्मथी, सुमद्रः, शक्तिपत्नी अथा
विजया, वमा, दोला ईश्वरी इत्येतो गोला सुषेका,
अथा काष्ठदेव तेजको, विष्णु महापति ये मम ध्याय
रव देवता है । पूजा करके दूर्वाका ध्यान करमा होता
है । ध्यान—

“ओ मीरुजवत्प्रभां सर्वसमिपुष्पां ।
विष्णुर्देव दुर्गा वृष्णवर्जितसिद्धिदा ।
वर्षैश्चकारां दुर्गामतां विष्णुर्भवो ।
दिव्यकलावर्षाशी वसोर्वाद्यमोहतां ॥”

जेहे वसोपचारमे दूर्वाका पूजन करके तसे प्रथम
करता चाहिजे । प्रथमका मन्त्र—

“य सूर्वेष्टमन्त्रावर्षिक वृक्षकानि पुरातुरी ।
ओम् चक्रवर्ति देवता सर्ववर्षिदपीमवा ॥
अथा शाकाशकादि सिद्धयन्ति मती है ।
तथा इवामि मन्त्राव वैशिव्यवशात्तरे ॥”

इतो अथा प्रथम, ओम् चक्र चेर लक्ष्मी करमा होता
है । जेहे काहे काचमें दोर पावतु कर ततोको कथा सुनने
है । प्रथमका -

दुर्गिणी इत्यम् ।
“इत्येकं मन्त्रं विचार्य सर्वसुखम् ।
येन कल्पयिष्यसे वापते च वशात्तव ॥
अथ पूजा इत्यम् ।
आदि आरतैःतथां दुर्गायां कुर्वात् ।
दूर्गायां ॥ अथ च शक्ति वन्दना ॥

व लक्षां सप्तशतैश्चि वचनां च कल्पयिष्ये ।
मन्त्रे वरुते मित न्या दूर्वां तथा कुक् च
कुर्वात्त वशात् ।
वधमत्त मद्रुग्वा वरणादूर्वाविरापुत्री ।
वरणात् तथा चक्रिदा च अथै वरुणा शक्तिमे ॥
येन वा तारां देव वरुण येन देवुवा ।
श्रीरुप वशात् ।

श्रीदेवताये पूर्व म् मायेऽष्टमूर्धनि ।
विष्णुना वायुन पाप्मां विष्णुमे मन्त्रो गिति ॥
अथाने तेन धेयेन गोवागपात्येनानि मे ।
अभिनिमित्ताय देव कि चोम्बुधियाय तज्जगते ॥
अथाने दुर्गा दूर्वा वरुणा शक्तिवशात् ।
वरुणा वरुणाया दूर्वा विष्णुन दुर्गा ॥
तस्या सपरि विष्णुन मयिवायुवदुर्गा ॥
दिव्यवशात्तवर्षावसुधिरावकारुणोः ।
तव देऽष्टमूर्धमम् मिदुर्गाविरावर्ष ॥
ते विद्य तव माताय दूर्वा वैशाखमासा ।
व वा चक्रिदा देवेऽपु सर्वेऽष्टमूर्धनि तथा ॥
वरुणां प्रथम च इत्येनामविषयि ।
वदुर्गा वदुर्गायेऽपु दुर्गाये वा देवतेः ॥
शाका इतिशक्ति वीरुते शिष्टेऽपुका ।
गर्तं च इत्येहे श्री वरुणां दोमने ॥
वदुर्गाः वदुर्गाय वरुणैःकेऽपुरीः ।
मन्त्रे कल्पेन वाये इत्युक् च चक्रिदा मन्त्र ।
तव सूर्वेष्टमन्त्रावर्षिक विदुर्गाय वरुणा ॥
गोवाय वरुण देवता शक्तिवशात् ।
अथा शाकाशकादि सिद्धयन्ति मयि गिति ।
तथा मयमि वंशान वरुण लक्ष्मणावर्ष ।
एतव दुर्गा वाव वरुणा विरुणोत्तमे ॥
तेनां वरुणविशिक इतिशक्तिवशात् ।
दुर्गाया च तथा शीर्षा देव्या इत्युक् च तथा ।
वरुणाया वरुणा च शक्तिवशात् सुष्टेवशा ।
विष्णुमया वैषवना इत्युक् च तथा सुष्टेवशा ॥
मन्मथीयां च वरुणा शक्तिवशात् ।
मन्मथी च देवता मन्मथीया सुष्टेवशा ॥
सुष्टेवशा वरुणा च इत्युक् च शक्तिवशा ॥

मञ्जनन्या मेनकया तथैव मानिकादिभिः ।
 क्षीभिरन्यर्चिता दूर्वा सौभाग्यसुखदायिनी ॥
 स्नाताभिः शुभिवस्त्राभिर्दूर्वा संपूजिता जनेः ।
 दत्त्वा पिष्टानि विभेभ्यः कलानि विविधानि च ॥
 निरुपिष्टानि गोधूमघान्यपिष्टानि पायसं ।
 भोजयित्वा सुहृन्मित्रं मन्मथिषस्त्रजनं तथा ॥
 ततो भुञ्जीत तच्छेषं तदयं भक्षा नमोहिता ।
 नारीचैव प्रकृवीत चाष्टमीव्रतमुत्तमं ॥
 सर्वतः सुरसौभाग्यपुत्रपीत्रादिगिर्युता ।
 मत्स्यलोके चिरं स्थित्वा चतुर्वर्गं गता गुणः ॥
 वसते रमया मन्त्रिं यावच्चन्द्रदिवाकरौ ।
 मेघावृतेऽम्बरतले विशदे च पक्षे
 याथाष्टमीव्रतमदो नमसीद शुभ्युं ।
 दूर्वां तदक्षतिलैः प्रतिपूजयेद्यु
 स्ताः प्राप्नुयुः सकलसिद्धमृद्धिमृद्धिं ॥”
 इति भविष्योत्तरे दूर्वाष्टमीव्रतकथा समाप्ता ।

युधिष्ठिरने एक दिन श्रीकृष्णसे पूछा था, कि कौन व्रतानुष्ठान करनेसे स्त्रियोंका सन्तति विच्छेद नहीं होता । इस पर श्रीकृष्णने कहा था, कि भोद्रु मासके शुक्लपक्षको अष्टमो तिथिमें दूर्वाष्टमो व्रत करनेसे उनशी सन्ततिकी अकाल मृत्यु नहीं होती । दूर्वा जिस तरह पृष्ठा पर अजर अमर हो कर विस्तृत हो गई, उसी तरह जो नारी इस व्रतका अनुष्ठान करती है, उसकी सन्तति भी वृद्धि लाभ करती कभी च्य नहीं होती । यह व्रत सौभाग्य प्रदान करता है । भविष्योत्तरपुराणके मतसे इस व्रतका अनुष्ठान करना प्रत्येक नारोका कर्तव्य है ।

दूर्वासोम (स० पु०) सुश्रु, तोक्तरसायनाङ्ग सोमलताभेद । सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारकी सोमलता ।

दूर्वाष्टका (स० स्तो०) यज्ञाङ्ग चितिरूप इष्टकाभेद, यज्ञकी वेदोमें काम आनेवाली एक प्रकारकी ईंट ।

दूलनदास—एक सुप्रसिद्ध हिन्दी-कवि । इन्होंने शब्दावली नामकी एक पुस्तक रची ।

दूलमदास—हिन्दीके एक कवि । इन्होंने अपने पिता जगजोवनदाससे शिक्षा पाई थी, जिनका जगजोवनदासो पन्थ कीटका गाजरमें चलाया हुआ है । इस मतके अनुयायी उत्तर प्रान्तमें बहुत हैं ।

दूलह—हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि । इनके जन्म-कालका ठोक ठोक पता नहीं लगता, किन्तु अनुमान किया जाता है कि इनका जन्म स० १७७७ में हुआ था । ये कान्यकुब्ज त्रिपाठो ब्राह्मण थे तथा इनका यामव्यान बगपुराया । स्फुट छन्दोंके अतिरिक्त 'कविकुलकण्ठाभरण' इनका एक मात्र ग्रन्थ है जिसमें कुल द्वादशो छन्द हैं । दूलहके स्फुट छन्द बहुत ही उत्तम नहीं मिलते । कुल मिलाकर इनके एक सीसे अधिक छन्द मिलेंगे, परन्तु इन्हीं थोड़ेसे छन्दोंमें इस कविने ऐसी मोहनो डाल रखो है कि इसको कविता पढ़ कर यह कोई नहीं कह सकता कि दूलहके छन्द न्यून है । क्या भाषाको उत्तमता, क्या कविताकी प्रौढ़ता और क्या वचनरे अन्य गुण, सभी बातोंमें इनकी कविता अत्यन्त सगहनीय है । कंठाभरणमें इन्होंने अलङ्कारका विषय कहा है और कुल ८१ छन्दोंमें उसे ऐसा दिखा दिया है कि यह धनिर्वचनीय है । गीतिके अधिकांश ग्रन्थ कविताको प्रौढ़तामें कंठाभरणको नहीं पासकते । दूलहने लक्षण और उदाहरण एक ही छन्दमें ऐसे मिला दिये हैं कि कंठाभरण कंठ करनेमें बहुत ही सुगम और काव्यमें बहुत ही सुहायना हो गया है । कंठाभरणका माहात्म्य दूलहने निम्न दोहेसे कहा है,—

“जो या कंठाभरणको, कंठ करे चित्तनाथ ।

सभा मध्य शोभा लई, अलङ्कृतो ठहराय ॥”

यदि किसी ग्रन्थका माहात्म्य मञ्चा है, तो इसका सबसे पहले है । वास्तवमें कंठाभरण कंठाभरण ही है—यह ग्रन्थ कंठ करने योग्य अवश्य है और ऐसा रोचक है कि दो चार बार पढ़नेसे बिना परिश्रमके ही सुखम्य हो सकता है । कविताके न जाननेवालेको चाहे दो चार स्थानों पर इसके अलङ्कार भले ही ध्यानमें न आवें, परन्तु एक बार समझ लेनेसे इसके लक्षण और उदाहरण बहुत ही साफ हो जाते हैं ।

दूलह कविताके आचार्य न हो कर केवल अलङ्कार-मखन्यो आचार्य है और ऐसे आचार्योंमें इनका पद बहुत ऊँचा है । किसी कविने इनकी प्रशंसामें कहा है कि, “और दराती सकल कवि दूलह दूलहराय ।” उनकी भाषा और काव्य-प्रौढ़ताके उदाहरणार्थ केवल एक छन्द नीचे देते हैं—

“आतीये बरोडे” बर आतीये मिकल सोनी
 मरुपी वेर बैसे वेर बरिगत है ।
 बई करि बूबर द्विगमे रर हर सुक वेर
 हैये गीतिमयी वेर हरियत है ॥
 काला विवसाय से निवदि पुनवत काले
 श्रीरी जगुराई या कथाई करियत है ।
 सारिका पुकारे इन गारी इन गारी एव
 राम राम श्री गारी गारी करियत है ॥”
 दूसहस्रिका—द्वितीये एक कवि । इनका नामक्याम
 बनपुरीये जा । इनकी ‘सविस्तृतकथासंग्रह’ नामक
 ग्रन्थ सन् १७७६ ई०में लिखा था ।
 दूसहस्रिक—उ द्वार राज्यके स्थापनकर्ता । ये नियथा
 विपति राजा मलको ३३ पौडिवाके बाद राजा सेठ्ठा-
 मि बड़े पुत्र थे । पौडिवा बड़े मरने पर उनके भाईने
 अपने सुकुमार मनीश्रीको यहाँके उत्तरा दिया । दूसह-
 राय का माता अपने देवरका ऐसा कठोर पत्नीचार देख
 कर बहुत विवशित हुई । वे नामने प्यारी हुई एक
 दूसरी विपत्तिको देख पुत्रको भोजीमें बाँध कर राज
 आशने पाहर निकसो । कथा में खोखा कि, ‘जब यह
 युवक राज्य सेनेके लिये जघत हुआ है तब मेरे मुखके
 प्राण ही थीं रहने देना । परत मज्जारानी के गाँस-
 के शिपये मुखकी आनो से कर लसी । जसते जसते ये
 खोदबंदके पास पहुँचो, जो बलमान जयपुरके टाई
 कोमको हुरी पर था । माथकी घटाबट तथा मूख प्याम-
 ने रानी प्याकुल को मर बी । घतएव ये बन्दके भोजी
 रथ कर पल खूनादि डूँकेका गई बाद बोट कर
 लपने देखा कि कथा सोया हुआ था और उस पर एक
 माय पत्रकी छाया किए खड़ा था । वह देख दुःखिनी
 रानी पर आगे बय मिरा—उनका शरीर काय कडा ।
 उसी समय एक ब्राह्मण कबरके जाता देख पड़ा । उसने
 रानीको धामना देते हुए कहा ‘घाय विवशित न होई,
 घायका पुत्र राजा होय ।’ इस पर रानीने कहा ‘मजि
 पत्नीको सुनि कुछ बिना नहीं—प्रविष्ट सर्वदा पत्यकादि
 रहा करना है । इन समय हमनोव मूठे हैं, घाय पैसा
 खोद लपाय बताई जियके हम लोको भी भोजन मिले ।
 तब ब्राह्मणने उन्हें प्योगविद्या धर्म बतका दिया ।

रानी उक्त घामने जा कर मोनाराजके यहाँ दावियो में
 मर्तो हुई । एक दिन मोनाकी रानीके प्रादेयके राजा
 भोजन बनाया । उस भोजनको जा कर मोनाराज बहुत
 सन्तुष्ट हुए और उनको ले पूजा कि, ‘यह भोजन किसने
 बनाया है ?’ उस भोजन बनाईवानो परिधरिकाका
 परिचय पाते हैं मोनाराज उनको अपने भगिनीके समान
 तथा दूसहस्रिकको मानके समान मानने लगे । दूसह-
 राय भी मोनाराजका प्रायय था कर पालनमें ली
 दिया प्राप्त करनी लमा । उस समय द्वितीये सि हासन
 पर तामर-व तथा पचिकार का योग मोनाराज लक्ष्मी
 करद राजा थे । जब दूसहस्रिककी पत्रम्मा १३ वर्षकी
 हुई, तब मोनाराजने उन्हें कर देनेके लिये दिया पैसा ।
 दूसहस्रिक द्वितीये पाँच वय तब १३ उस समय
 मोनाके एक कविने प्राह इनका विदेय परिचय हो गया
 था । नितीके राजाको ऐकनेके दूसहस्रिककी मो राजा
 बर्नकी प्रथम पत्नी लपक हुई । मोनाके कविनी कथा
 में दूसहस्रिकने मोनाराज कालनपी पर पालन
 दिया और इनकी मार करके प्यय राजा बन बैठे ।
 राजा बन कर दूसहस्रिक विवशित लगे बैठे रहे उन्हें
 अपना राज्य बड़मिने चिन्ता हुई । इसी विचारसे वे बहुत
 गुबर राजा पर पालन करनेके लिये प्रवृत्त हुए ।
 बहुतकरके राजाने इनकी अपनी लड़की ब्याह हो और
 इनकी अपना उत्तराधिकारी मो बनाया । माथी नामक
 खानसी गाँव नामका एक मोनाराज रहा करता था,
 उस पर मो दूसहस्रिक बड़ा मय । कोनी हकीमें जनपौर
 लड़ाके हुई मोनाराजको पैसा पराप्त हुई और दूसह-
 रायने उस पर माँ पचिकार बना लिया । माथी प्रदेश
 पर एक कथा कर दूसहस्रिकने बड़ा अपनी लगे राज
 बाना बनवायी और बड़का नाम रखा ‘राधमद’ ।
 इनकी पत्रमैरकी राजकुमारी मरुतीके प्राह मो ब्याह
 किया था । एक समय राजा दूसहस्रिक किनी देव-
 मन्दिरके इष्टन करके बैठे था रड़े थे, राफूँके मीतापीका
 एक बड़ा दल दल पर टूट पड़ा । इनकी मो काम
 बचानेकी निताम पिठा थी, परन्तु ये एककी इतनी
 बड़ी मीताका ब्या कर सकते थे । इसीके जन बुद्धि ही
 मारे मय ।

दूनाग (स० त्रि०) दूहाय इत्य वा नः । दुःख द्वारा हिंस्य, जो कठिनतासे माग जा सके ।

दूषिका (स० स्त्री०) दूलो-स्वार्थे कन्-टाप्, पूव ऋस्वश्च । दूलो, नीनका पेठ ।

दूलो (स० स्त्री०) दूरं दूरत्वं अस्या अस्ति दूर-अच् रम्य नः, गौराटित्वात् ङोष् । नोलो वृक्ष, नीनका पेठ । इसे उत्पन्न करने अथवा ईंधनेमें भारी दोष माना गया है । जो नोभ वग इसकी खेती करते, वे तीन कृच्छ्रचान्द्रायणव्रत करके विशुद्ध होते हैं । इसके उपजाने आदिमें पाप होता है अतः इसे दूर कर देना चाहिये, इसा कारण इसका नाम दूलो पडा है ।

दूल्हा (हि० पु०) दूल्ह देखो

दूल्हाराम—रामसनेही पत्यके तीसरे गुरु तथा एक हिन्दी-कवि । इनका जन्म मन् १७७६ ई०में हुआ था और १८२४ ई०में वे परमपदको प्राप्त हुए । इनके प्रायः १०००० सवद और ४००० दाखी प्रसिद्ध हैं ।

दृवकुण्ड—स्वानियर राज्यके अन्तर्गत एक प्राचीन स्थान । यह स्वानियर शहरसे ७६ मील दक्षिण-पश्चिम तथा मिर्षीसे ४४ मील पश्चिमोत्तर कोणसे कुतु और चम्बल नदीको अधित्यकाई ऊपर घने जङ्गलके मध्य अवस्थित है । यहां अत्यन्त प्राचीन एक जैन मन्दिर है जो लगभग ८ सौ वर्ष पहलकेका बना हुआ है । मन्दिरमें जैन त्रैपुत्रो और श्यावशौके उकीर्ण अनेक खोदित लिपियुक्त शिलाफलक हैं । इनके पढ़नेसे जाना जाता है, कि एक समय यहां दिगम्बर जैनियोंको विशेष प्रधानता थी । आज भी अनेक भग्न दिगम्बरकी जिनमूर्तियां विद्यमान हैं । प्रवाद है, कि अमरकण्डु नामक एक मज्ञा राष्ट्र सरदारने यहांकी जैन देवमूर्तियोंको तोड़ फोड़ डाला था ।

दूवा (हि० पु०) दूआ देखो ।

दूय (म० स्त्री०) दूयते इति भावे क्लिप् दूः खेदस्ता श्यायते श्यै-क । वस्तुनिर्मित ऋह, तंशु, खेमा ।

दूषक (स० त्रि०) दूषयति दूष्-णिच् ण्वुल् । १ दोषो त्याटक, दोष लगानेवाला । इसका पर्याय पांसन है । २ खल, दूष्ट । (पु०) ३ शास्त्रिधन्यभेद, एक प्रकारका धान ।

दूषण (म० स्त्री०) दूषि भावे ल्युट् । १ दोष, ऐव, भुगई । २ दोष लगानेकी क्रिया या माय । (त्रि०) दूषि कर्त्तरि ल्यु । ३ दोषजनक, दोष उत्पन्न करनेवाला । मनुके अनुसार पाप, दुर्जन संभर्ग, प्रतिविरह, भ्रमण, दूमरी-उं चर्म रचना और निद्रा ये सब काम कियोंके निचे दूषणोय हैं । (पु०) ४ राजसभेद, रावणके भाई । पञ्चवटांमें यह खरके माघ सुर्पनवाको रक्षाके लिये नियुक्त किया गया था । सुर्पनवाकी नाक और कान कट जाने पर रामचन्द्रकोके साथ इसका घमसान युद्ध हुआ था, जिसमें रामचन्द्रके हाथसे यह मारा गया । (रामा० पार०) ५ जैनियोंके मारुतक श्रुतेमें ३२ लक्ष्य दार्ते, तिनमेंसे १२ काविक, १० वाचिक और १० मानसिक हैं ।

दूषणारि (स० पु०) दूषणस्य राजसभेदस्य परिः ६-तत् । रामचन्द्र । इन्होंने दूषणको मारा था ।

दूषयित् (स० त्रि०) दूष्-णिच्-लृच् । दोषोत्पाटक, दोष लगानेवाला ।

दूषयितु (स० त्रि०) दूषि शोलायै इत्युच् । दूषणशील, जो दूषने योग्य हो ।

दूषि (स० स्त्री०) दूषयति दूष्-इत् । (सर्वभावभ्यः इत् । उण् ४।११७) दूषिका, चाँसकी मैल ।

दूषिका (स० स्त्री०) दूषि-स्वार्थे कन्-टाप्, यदा दूषि-श्वुल्-टाप् अत इत्श्च । १ नेत्रमल, चाँसकी मैल । इसका संस्कृत पर्याय—दूषि, दूषा, पिष्टोद्धक, दूषिका, पिच्छेट और पिच्छट है । २ तुलिका चित्रकारोंकी कूँची । (त्रि०) ३ दूषणकर्त्री, दोष लगानेवाला ।

दूषित (स० त्रि०) दूष्-लृत् । १ प्राप्तदोष, जिसमें दोष हो । २ मैथुनापवादयुक्त, जिस पर व्यभिचारका दोष लगा हो । इसका पर्याय—अभिगस्त, वाध्य, आरित और आचारित है ।

दूषिता (स० स्त्री०) दूषित-टाप् । दूषणप्राप्ता कन्या, वह लड़की जिसमें कोई ऐव लगा हो । इसका पर्याय—सखेदा, वर्षकारिणी और प्रमाटिका है ।

दूषो (स० स्त्री०) दूषि 'कृदिकारादिति' ङोष् । दूषिका, चाँसकी मैल ।

दूषीका (स० स्त्री) दूषयति दूषि ईकन् ततष्टाप् (कृषि दूषिभ्यामीकन् । उण् ४।१६) दूषिका, चाँसकी मैल ।

दुर्बीविष (स० लो०) दूधततोति दूधि वाहुतत्वात् ई, ततः
अम धारय। सुदुतोक्तं वातुदूधक विपरीत, सुदुतते पशु
सार शरीरमें रहनेवाला एक प्रकारका विष जो वातुको
दूधित करता है। इस विषका विषय सुदुधनमें इस प्रकार
लिखा है।

आहार, अन्नम पचका कृमिंश्च हन तोन प्रकारके विदो-
शैश्च यदि कोटि विष शरीरमें प्रविष्ट हो जानिके उपरान्त
नहीं लिखना, इसका उक्त पद्य शरीरमें रह कर जोष
हो जाता है पचका विपरीतय जोषकोबे इजामि या
नष्ट करनी पर भी पूर्वकृषि नष्ट नहीं होता, तब वह
कषये प्राक्कालिन हो कर दूयोविष लक्षणाता है। इस
विषसे तो प्राय नहीं जाति, किञ्चिन् कषयक लाज मिल कर
वह शरीरमें लक्ष रहता है। जिसके सुद्धमें
वह विष रहता है, उसका एक पीला पड़ जाता है, मलक
र न बदल जाता है सुद्धमें दुग्धम्य और बिरसता होती
है प्याय लगती है, मुखमें और लम्बी होती है और
दुग्धोदरके से अत्यन्त दिवार्द होने लगती है। जब यह विष
पचकायमें रहता है तब अक्षयान्त अन्ध रोम और अक्ष
पचकायमें रहता है, तब वातुपित्तत्रय रोम अक्षय होता
है। इसमें पशुकोन पसीका नहीं रोयीके बिरसे ज्ञान
पहुँ जाते हैं, रक्तपादि वातुधर्मिं इस विषसे रहनेसे विष
वातुमें यह रहता है, लक्षोका विचार होता है। मोतल
वातु प्रकाशित मीमांसकदिनेममें अक्ष यह कृपित होता है
तब निष्कल्पित लक्षण दिवार्द होने लगत हैं—अंमार्द
पाती है पच टूटती है, रोवें अक्ष हो जाते हैं, शरीर
पर बहने पड़ जाते हैं, हाव घेर दूज जाते हैं, अन्धोदरी
पौर हो जाती है, समो वातु अय हो जाते हैं तथा मुखमें
और पिपाको और और बहने लगती है। इसमें मित्रा इय
विषसे अन्ध, पानाक्ष, अक्षयय, वाक्कली अक्षता, सुद्ध
पादि तरह तरहके लक्षण होने लगती हैं।

पूर्वोक्त जोषकेन विष देयं आक्ष और मल्लद्वयं
दोषसे तथा दिवार्दिकासे कृपित हो कर वह वातुपीको
दूधित करता है, इसीसे इसे दूयोविष कहते हैं। दूयोविष
अर्थात् दूधित रोगीके अक्ष, शिर और मग्न द्वारा अंमो
पिन हो जाने पर उसे निष्कल्पित दूयोविषनामक
दवा पिसानो चाहिये। पौण, अक्षयय, अक्षय, अक्ष-

मायो, लोच, मोक्ष, सुवर्षिका, जोये इत्यादिकी, अक्षय
पक्षाग रोकमहो इन सबको पेश कर मद्यसे साध विषय
करनेसे दूयोविष जाता रहता है। इसको विपारि पगद
कहते हैं। यह पगद पचकाय रोगीमें मो अक्षयत
होता है। अक्ष, दाह, बिम्बा, अक्षयय, योष पती
सार, मुखमें अक्षय, अक्षरोग, लम्बाद और अन्य इन
सब रोगोंमें भी विषनामक जोषका प्रयोग कर सकते
हैं। दूयोविष रोमं प्राक्कालान् होनेसे वह शीघ्र शरीरमें
हो जाता है, किन्तु एक वर्ष से ज्यादा प्राक् रहने पर
यह पचकाय हो जाता है। (अधुन अक्षयान् २००)

दूयोविपारि (स० पु०) दूयोविषम्य अति। दूयोविष-
नामक अक्ष, यह पदाय जिससे दूयोविष दूर जाता है।
दूध (स० वि०) दूध विष, अयत् १ दूधकोष, दोष
लगाने योग्य। २ निम्ब, निम्बा करने योग्य। ३ राज्याय
घातक, राजको ज्ञानि पक्षीकाशिका। ४ तुच्छ, मोच।
(पु०) १ अक्ष, अयत्। २ अक्षयय, तद् विना।
० पूय, पीय।

दूधा (स० ली०) दूधते १ति दूध, विष, अयत्-हाय-।
वद्विषयक रक्त, वाको वाक्कलीका रक्षा। रक्त। पर्याय—
अक्ष, अक्षय और दूधा है।

दूधदर (स० लो०) उपरपामेद, पेटका एक रोग।
इसका लक्षण—अक्षय अक्षो द्वारा मक्ष, रोम, मूत्र, मक्ष
वा शरीरवतुत्र अक्षयान् दिने जाते हैं या यत्, अक्षय
विष देनेसे पचकाय दूधित अक्ष का दूयोविषके सेवन करने
से रक्त और दोष कृपित हो कर अक्षमें सापिपायिक
मक्षयविषिट और लक्षरी रोग अक्षय करता है। जिस
नि मीतल वातु बहते है और आकाय आठकोधि
आकायिन रहता है, उस दिन इस रोगके समो दोष
बिगड जते हैं। जिससे दाह लक्षय होता है, रोगीको
मुखमें पामि लगती है, यह अक्षय और पायु, अक्षका हो
जाता है तथा अक्षयसे अक्षय लक्षने लगता है; इसको
दूधदर कहते हैं। (सुद्ध)

मात्रप्रकायमें इसका अक्षय इस प्रकार लिखा है,—
जिसो पचकारिका अक्षो अक्षयकारिकादि द्वारा कार्य
लिखको आमनासे जिसको पचजनकं पाय नक्ष अक्षय
मूत्र, मार्जारादिकी विद्या का अक्षय अक्षय विद्याया जाता

है प्रथम त्रिभे गले संयोगजं विष देता है प्रथवा जो व्यक्ति दूषित जलपान वा दूषोविष भक्षण करता है, उसका वातादि दोष और रक्त दूषित हो कर शीघ्र ही भ्रतान्त घोरतर त्रैदोषिक उदररोग उत्पन्न करता है। शीतजवायु और दुर्दिनमें यह रोग और भी बढ जाता है। रोगीको प्यास अधिक लगती है, बार बार सूच्छी आती है, शरीर पीला हो जाता है और प्यासमें गला सूख जाता है। इसे साखिपातिक उदर भो कहते हैं।
(भावप्र०)

दूमना (हि० क्रि०) दूषना देखो।

दूमरा (हि० वि०) १ द्वितीय, पहलेके बादका। २ अन्य, अपर, और गौर।

दूहड़—इंडरके राजा आसथानके कथेष्ट पुत्र। पिताको मृत्युके बाद दूहड़ अपनी पैतृक सम्पत्तिके अधिकारी हुए। परन्तु ठनका हृदय उस राज्यके पानसे लग्न नहीं हुआ। प्राचीन कन्नोजराज्य पर टखल जमानेकी उनको बड़ी प्रबल इच्छा थी। पिताके राज्य पर बैठ कर दूहड़ अपने अभिलाषको पूर्ण करनेका प्रयत्न करने लगे। परन्तु उनका प्रयत्न निष्फल व्यर्थ हुआ। कन्नोजराज्यके उदार करनेमें निष्फलप्रयत्न हो कर दूहड़ने मंदोर-राज्य पर अधिकार जमानेको नितांत चेष्टा की। इस चेष्टामें वे केशव असफल ही नहीं हुए किन्तु कराल कालके गानमें फंस गए।

दूहना (हि० क्रि०) दुहना देखो।

दूहनी (हि० स्त्री०) दोहनी देखो।

दंङ्गण (सं० स्त्री०) दंङ्ग ल्युट्। दड़करण, मजबूत करने की क्रिया।

दंङ्गित (सं० त्रि०) दंङ्गत्। वर्धित, बढ़ाता हुआ।

दक (सं० स्त्री०) दीयेते इति द-विदारि वाहुलकात् कक।

१ छिद्र, छेद। २ नेत्र, आंख।

दक (हि० पु०) हीरा।

टकाण (सं० स्त्री०) ज्योतिषोक्त राशिका तृतीय दशांशरूप अंश, फलित ज्योतिषमें एक राशिका तीसरा भाग जो दश अंशोंका होता है।

टकाण (सं० पु०) दृशी नवाविष कर्णो यस्य। सर्प, सर्प।

टकमे (सं० स्त्री०) दृशयं दृशयं कर्म। भ्रमप्र प्रहोको दशनेन योष्यताके ज्ञानार्थं कर्म भेद, ज्योतिषमें वह क्रिया वा संस्कार जो ग्रहोंको अपने चित्त पर लानेके लिये किया जाता है। इससे ग्रहोंके योग, चन्द्रमाको अंगोत्रति तथा ग्रहों और नक्षत्रोंके उदयास्तका पता चलता है। इस संस्कारके दो भेद हैं भाषटक और भावनटक।

टकाण (सं० स्त्री०) ज्योतिषोक्त राशिका दशांशरूप तृतीय-यांश, एक राशिका तीसरा भाग जो दश अंशोंका होता है। प्रत्येक राशिमें तीन तोन ट्रेकाण होते हैं। राशिको तीन भागोंमें विभक्त करके एक एक भागको ट्रेकाण कहते हैं। जो ग्रह जिस राशिका अधोस्वर होता है, वही उस राशिके प्रथम ट्रेकाणका स्वामी होता है, उससे पाँचवाँ राशिका अधोस्वर द्वितीय ट्रेकाणका और उससे नववाँ राशिका तृतीय ट्रेकाणका अधिपति होता है, अर्थात् मेघ राशिका अधोस्वर मङ्गल है। अतः मेघराशिके प्रथम ट्रेकाणका अधिपति मङ्गल, द्वितीय ट्रेकाणका रवि क्योंकि यह मेघसे पाँचवाँ राशि सिंहका अधिपति है और तृतीय ट्रेकाणका बृहस्पति होगा क्योंकि यह मेघसे नववाँ राशि धनुका स्वामी है। इसी प्रकार हय प्रभृति सभी राशियोंके विषयमें जानना होगा। मेघादि लग्न परिमाणको तीन भाग करनेसे ट्रेकाण मालूम हो जायेगा। टटान्त—कलकत्ताके प्रदेशमें अग्रनाश शोषित मेघलग्नका परिमाण ४ दण्ड, ७ पल, ७ विपल है; उसे तीन भाग करनेसे प्रत्येक भाग १ दण्ड, २१ पल, २२ विपल, २० अनुपल होता है। अतएव मेघलग्नके प्रथम भागमें जन्म होनेसे उसका मङ्गलके ट्रेकाणमें जन्म होना कहते हैं। प्रथम भागके बाद २ दण्ड ४४ पल ४४ विपल ३० अनुपलमें जन्म होनेसे उसका रविके ट्रेकाणमें जन्म होना सावित होता है; क्योंकि मेघसे पञ्चम राशि जो सिंह है, उसका अधिपति रवि है और रवि ही उस मेघके द्वितीय ट्रेकाणके अधिपति है। २ दण्ड ४४ पल ४४ विपल ४० अनुपलके बीत जाने पर जिसका जन्म होता है उसका बृहस्पतिके ट्रेकाणमें जन्म माना जायगा, कारण मेघसे नववाँ राशि धनु है और उस धनुके अधिपति बृहस्पति है। अग्रनाश शोषित सभी

मन्त्रोंको विनाम कर मङ्गल लयायमे द्रुक्षाच माक म करनिके लिए एक तालिका गोबे दा मर्त है जिसमें सप्त-मानकी तोन भाग करके द्वादशा क्रिम भावने कथ्य कृपा है, यह द्वादशमे हो लक्षमें मानूम गो जानया।

राशिका-

शयिके नाम प्रथम द्रुक्षाच द्वितीय द्रुक्षाच तृतीय द्रुक्षाच			
मेघ	मङ्गल	रवि	बृहस्पति
हय	शुक्र	शुभ	शनि
मिथुन	शुभ	शुक्र	शनि
कर्कट	शुक्र	मङ्गल	बृहस्पति
मिथु	रवि	बृहस्पति	मङ्गल
कन्या	शुभ	शनि	शुक्र
तुला	शुक्र	शनि	शुभ
वृश्चिक	मङ्गल	बृहस्पति	शुक्र
धनु	बृहस्पति	मङ्गल	रवि
मकर	शनि	शुक्र	शुभ
कुम्भ	शनि	शुभ	शुक्र
मेष	बृहस्पति	शुक्र	मङ्गल

प्रथमद्विके द्रुक्षाचका नाम कल है और प्रथम पक्षीके द्रुक्षाचका नाम दहन। अतद्रुक्षाचमें त्रिमका अर्थ होता है, लक्षकी शत्रु अर्थमें होती है और दहन द्रुक्षाचमें विरथा अर्थ होता है लक्षको शत्रु अर्थमें होती है। प्रथमपक्षीके द्रुक्षाचमें पापशत्रुका, दोनके लक्षको सक्षिप्त और मित्र लक्ष होती है।

सौम्यक्य द्रुक्षाच—मिथुनक्य एक मेषमन्त्रके प्रथम द्रुक्षाचका कर्कट और धनुमन्त्रके द्वितीय द्रुक्षाचका तथा कन्यामन्त्रके तृतीय द्रुक्षाचका नाम सौम्यक्य द्रुक्षाच है। इन सब द्रुक्षाचोंमें कम जानने मनुष्य कृषी होता है।

रजसाण्डान्वित द्रुक्षाच—कर्कट मन्त्रके प्रथम द्रुक्षाच का नाम परशुपुत्रक्य है। इन द्रुक्षाचमें त्रिमका अर्थ होता है यह परशुपुत्रक्य लक्षमें बान करता है। धनु मन्त्रके द्वितीय द्रुक्षाचका और तुला मन्त्रके प्रथम द्रुक्षाचका नाम रजसाण्डान्वित है। इसमें अर्थ जोनिके रजसाण्ड प्राण होता है।

शुक्रद्रुक्षाच—शुक्रमन्त्रके द्वितीय और तृतीय द्रुक्षाच,

वृश्चिकके द्वितीय और तृतीय, मिथुन और तुलाके तृतीय, मानमन्त्रके द्वितीय और सि बृहस्पतिके प्रथम तथा द्वितीय द्रुक्षाचका नाम शत्रु द्रुक्षाच है।

शुक्राण्डान्वित द्रुक्षाच—मिथुन मन्त्रके प्रथम द्वितीय और तृतीय द्रुक्षाच तथा धनुके प्रथम और तृतीय तुलाके तृतीय, सि ब और कन्याके द्वितीय द्रुक्षाचका नाम लयाण्डान्वित द्रुक्षाच है। इन सब द्रुक्षाचों में त्रिमका अर्थ होता है, कमको परलयाण्डान्वित मन्त्र होती है।

सर्पनियक्य द्रुक्षाच—मेष और कर्कटके शेष द्रुक्षाच और वृश्चिकके प्रथम और द्वितीय द्रुक्षाचका नाम सर्पनियक्य द्रुक्षाच है। इन सब द्रुक्षाचोंमें त्रिम मनुष्य का अर्थ होता है लक्ष सर्प अर्थ होता है।

शत्रु द्रुक्षाच—शुक्र और वृश्चिकके प्रथम और द्वितीय, कर्कट और मेषके तृतीय, सि ब्र प्रथम और तृतीय, मकरके तृतीय, तुलाके द्वितीय और तृतीय द्रुक्षाचका नाम शत्रु द्रुक्षाच है। इसमें अर्थ जोनिके लक्षकी शत्रु अर्थमें मन्त्र होती है।

पापशत्रुपक्षि-द्रुक्षाच—वृश्चिकके प्रथम और मकरके प्रथम तथा तृतीय द्रुक्षाचका नाम पापशत्रु-द्रुक्षाच है। इसमें अर्थ जोनिके पापशत्रु अर्थ का अर्थ विविध अर्थ होता है। तुलाक्यके द्वितीय और तृतीय एक सि ब और कुम्भके प्रथम द्रुक्षाचको पक्षि-द्रुक्षाच कहती है। इन द्रुक्षाचमें त्रिमका अर्थ होता है लक्षकी मन्त्र, पक्षीकी होती है।

द्रुक्षाचमें अन्तर्मन्त्र—प्रति सप्तमानको तोन भाग करके लक्षके त्रिम द्रुक्षाचमें सुख होना और त्रिममें लक्ष एक कमको लक्ष पाण्डित होना तथा त्रिम का लक्ष शत्रुको अर्थ-अर्थनाये और सुख है वा लक्ष और लक्षकी लक्ष पाण्डित है तथा परिच्छेदादि लक्ष है लक्षका त्रिमक्य प्रथम लक्षमें २५ प्रकार लिखा है—

शेषके प्रथम द्रुक्षाचमें अन्तर्मन्त्रके सुख पाँदा होता है। यह मनुष्य भयको कमरमें सक्रिय लक्ष लयाण्डान्वित रङ्गा तथा लक्ष अर्थ, लक्षी, विप्लवक्य लक्षकी लक्षान्वित लक्ष मन्त्रके लक्ष लक्षान्वित, लक्षारथारी तथा लक्षक्य सुख होता।

मेषके द्वितीय द्रेकाणमें स्त्री जन्म लेती है। उसे नानवस्त्र पहननेकी तथा भूषण और भोजनीय द्रव्यकी विशेष लालसा होगी। वह कुम्भीदारी, प्रयत्नसुधी, विपामा-युक्ता और गृह्णा होगी। मेषके तृतीय द्रेकाणमें पुरुष उत्पन्न होता है। वह पुरुष क्रूर, चतुःषट्कनाभिन्न, कपिलवर्ण, सर्वदा काममें अभिलाषी, नियम पालन करनेमें असमर्थ, अशत दण्डप्रस्त, रक्षावस्त्रपरिधानप्रिय और क्रोधी होगा।

वृषके प्रथम द्रेकाणमें स्त्री उत्पन्न होती है। उस स्त्रीका केश कुञ्चित और लून, उदर बुभ्राकृति तथा वह कान पीने और अक्षुद्धार पहननेमें सर्वदा अभिलाषिणी होती है।

वृषके द्वितीय द्रेकाणमें पुरुषका जन्म होता है। वह पुरुष क्षयि, धान्य, गृह, धेनु आदि यद्येष्ट प्राप्त करेगा तथा वह परिश्रुत, हस्त और गाड़ी चलातेमें दत्र, क्षुधात्त और मलिन वस्त्रधारी होगा।

वृषके तृतीय द्रेकाणमें भी पुरुष उत्पन्न होता है। उस पुरुषका शरीर शायिके जैसा हृहत्, दांत पाण्डु, वष, चरण हृहत्, वर्ण पिङ्गल तथा वह मेष और मृगमांस खानेको बहुत पसन्द करेगा।

मिथुनके प्रथम द्रेकाणमें स्त्रीका जन्म होता है। वह स्त्री सूचोक्ष्ममें अभिलाषिणी, सुन्दरी, आभरण पहनने और पहनानेमें ग्राह्यादिता, मन्तनहीना तथा अत्यन्त कामार्त्ता होती है।

मिथुनके द्वितीय द्रेकाणमें पुरुष उत्पन्न होता है वह पुरुष धनुर्दारी एवं बलवान् होगा और क्रीडा, पुत्र और अलक्षार आदिकी चिन्तामें सर्वदा व्यतिथ्यस्त रहेगा।

मिथुनके तृतीय द्रेकाणमें पुरुष पैदा होता है। वह पुरुष अक्षुद्धार विभूषित, बहु श्रेयशाली, धनुर्दारी, नृत्य गीतादि कुशल और परिहासपटु होगा।

कर्कटके प्रथम द्रेकाणमें जन्म होनेसे पुरुष होता है। वह पुरुष शायिके समान बलवान् और मद्यकाननवास-प्रिय होगा, तथा उसका सुँह सुषरके जैसा और हृद्ययौव होगा।

कर्कटके द्वितीय द्रेकाणमें जन्म होनेसे स्त्रीको उत्पत्ति

होगी है। वह स्त्री ककगम्बमाया और पूर्णयौवना होने पर भी रोदनशीला होगी।

कर्कटके तृतीय द्रेकाणमें पुरुष उत्पन्न होता है। वह पुरुष स्त्रिके आभरणके लिये विशेष व्यतिथ्यस्त रहेगा।

सिंहके प्रथम द्रेकाणमें पुरुष जन्म लेता है। वह पुरुष मलिन वस्त्रधारी तथा पितृमातृविश्रोगनिधुर हो कर रोदनपरायण होता है।

सिंहके द्वितीय द्रेकाणमें पुरुष होता है। उस पुरुषको शत्रु मट्टग आकृति, मन्त्रकर्म पाण्डुवर्ण माना युक्त क्षण्यसार चर्म, कम्पनधार, दुरामट तथा उसको नाकका मगला भाग फुका होगा।

सिंहके तृतीय द्रेकाणमें पुरुषका जन्म होता है। वह पुरुष धानरके जैसा म्भभाववाना, अस्थी दाढ़ी बाना तथा कुटिल होगा।

कन्याके प्रथम भागमें स्त्री जन्म लेती है। वह स्त्री मलिन वस्त्रपरिधाना, पर्याभिलाषिणी और गुरुकुल गामिनी होगी।

कन्याके द्वितीय भागमें पुरुष होता है। उसके हाथमें लेखनी, श्यामवर्ण मन्त्रक वस्त्रधारा वंशित तथा वह धनुर्दारी और लोभश होगा।

कन्याके तृतीय द्रेकाणमें स्त्री जन्म लेती है। वह स्त्री गौरवर्णा, धोतवस्त्रमें आच्छादिता और देवभक्ति परायणा होगी।

तुलाके प्रथम द्रेकाणमें पुरुष उत्पन्न होता है। वह पुरुष सन्त पर तुला दण्ड धारण कर विक्रयादि हाग जोविष-निर्वाह करेगा तथा तुलाकायेमें विशेष दक्ष होगा।

तुलाके द्वितीय द्रेकाणमें पुरुषका जन्म होता है। उस पुरुषका मुख पक्षाक जैसा होगा, वह सर्वदा क्षुत्-पिपासान्वित हो कर स्त्रीपुत्रको स्मरण करता रहेगा।

तुलाके तृतीय भागमें भी पुरुष जन्म लेता है। वह पुरुष नाना प्रकारके स्वर्णालङ्कारोंमें विभूषित होगा और उसको आकृति कुत्सित होगी।

वृश्चिकके प्रथम द्रेकाणमें स्त्रीका जन्म होता है। वह स्त्री वस्त्र आभरणनिता होती है और तरह तरहके कष्ट प्रायां करती है। वृश्चिकके द्वितीय भागमें भी स्त्री

होता है, वह जो सुखानिवापिनी होगी।

प्रथम ही तृतीय द्वैजाचमं पुत्र्य होता है। वह पुत्र्य पञ्चम प्रयागान्वित होना और तपे दीर्घनिधि ममो मय करेगी।

अनुषे प्रथम मायमे पुत्र्यको उत्पत्ति होती है। वह पुत्र्य भोजके सद्यः बलवान् होगी और अनुवाचक वर तपस्विपति यज्ञोपद्रव्यको रक्षा करेगा।

अनुषे द्वितीय द्वैजाचमं स्त्री होती है। वह जो मनोरमा धरणा सुखी और भीमाग्वाक्षिनी होगी।

अनुषे तृतीय द्वैजाचमं पुत्र्य जन्म लेता है। वह पुत्र्य पञ्चम सुन्दराक्षतितुल्य होना है और नाना प्रकार का सुख कल्पदुःखा भोग करता है।

मन्वाडे प्रथम द्वैजाचमं पुत्र्य होता है। वह पुत्र्य रोमाय मन्वाडन्य और शूकर मह्य उच-म्यस होता है।

मन्वाडे द्वितीय मायमे जो जन्म लेतो है। वह जो कला काननिवासी तथा नाना प्रकारके विचित्र वस्तुषोको धर्मिणापिनी होती है।

मन्वाडे तृतीय द्वैजाचमं पुत्र्य होता है। वह पुत्र्य सुन्दराक्षतितुल्य तथा पयः मय्युः काम करता है।

कृष्णे प्रथम द्वैजाचमं पुत्र्यका जन्म होता है। वह पुत्र्य कर्म देी को विस्तारि सखंदा स्वाह्वर रक्षेमा।

कृष्ण द्वितीय द्वैजाचमं जो जन्म लेतो है। वह जो पुनर्गवाक्षिनी होगी।

कृष्ण तृतीय मायमे पुत्र्यका जन्म होता है। वह प्रयागवर्ष होना और उत्तरे नाम लोमबुध होगी।

मौनके प्रथम द्वैजाचमं पुत्र्य जन्म लेता है, वह पुत्र्य भीमाग्वाक्षिनी होगी।

मौनके द्वितीय द्वैजाचमं स्त्री जन्म लेता, वह जो बहूत सुन्दरी होगी।

मौनके तृतीय द्वैजाचमं पुत्र्य होता है। वह पुत्र्य नाना प्रकारके वस्तु भोगता है तपिय यह है कि द्वैजा

पाचपति कोयह वदि दुर्बल को और लम्बावितियह वदि पुत्र्य हो पचमा सुखयव देना जाता हो, तो जो द्वैजाचमं पुत्र्य जन्म लेता है एवं बलवान् जोयव

यदि वह मय्यरि रहे, तो पुत्र्य द्वैजाचमं जो जन्म लेतो है। किन्तु स्त्री द्वैजाचमं पुत्र्यके जन्म लेने पर वह पुत्र्य-

का समाय स्त्रीके जैसा जोर पुत्र्य द्वैजाचमं स्त्रीके जन्म लेने पर, उस स्त्रीका स्वभाव पुत्र्यके जैसा होता है। (दीर्घ)।

अन्धे जिसो द्वैजाचमं जन्म होनेके जो जोर पुत्र्य जन्म लेते हैं, उसका पूरा विवरण दिया गया। वह कोष्ठीवदोपडे पतने—मिषके प्रथम द्वैजाचमं जन्म होनेसे पुत्र्य जाता, मोला, मित्रगी, उष, उषतिहीन, बन्धुविय, और लोपो होगा। मिष द्वितीय द्वैजाचमं जन्म होनेसे वह जो बहूत, रतिमान्, योर्तापव, प्रयष्टमना, मित्रवर्ष होगी और सुदय तथा सुतोय द्वैजाचमं जन्म होनेसे पुत्र्य बान्, परदोयवर्ष मरेन्द्रिबी, स्वन्नप्रविव पतिगय चामिं व और राजप्रिय होगा।

हृषिके प्रथम द्वैजाचमं जिस पुत्र्यका जन्म होता है वह पानभोजनप्रिय और नाराचिदोत-मन्वाडपुत्र्य, स्त्री-कर्मनुवासी तथा मन्वाडवृत्तवृत्त होगा।

द्वितीय द्वैजाचमं जन्म होनेसे उत्तम बलमय्यस मित्रतायुध, सुदयनम्यस, भोज भूयवरन, बलवान् और प्रहृतिवृत्त, मन्वाडी, कोडी और स्त्रीप्रिय तथा उत्तम द्वैजाचमं जन्म होनेसे चतुर, पयः माय्यवर्ष, प्रहिन तथा सप्रतिदा को पञ्च करके पीछे परित्यापित होता है।

मिष मर्ष प्रथम द्वैजाचमं जन्म होनेसे पयः सुदयन मय्यस बलवान् प्रायः सुखवान्, धूर्त, बिकारो राजमन्वाक्षिनी और बाली होता है। द्वितीय द्वैजाचमं जन्म होनेसे सुकय और सुन्दर यठनबुध, सुख जेजबुध, बिकार, अद्, महाबोसम्यस, प्रतापान्वित, बन्वाणी और ययात्री तथा तृतीय द्वैजाचमं जन्म होनेसे कोमल नवनबुध उत्तम शरीरसम्यस, उद्यत् मन्वाकविगिड, मिर्चनप्रिय और स्वयन्वर्ष होता है।

अन्धे रागिके प्रथम द्वैजाचमं जन्म होनेसे हेनता और ब्राह्मणमन्वा जपत वारवच सुधोर सूत्रि और जो पुत्रप्रिय जाता है। द्वितीय द्वैजाचमं जन्म होनेसे मोसो सुन्दर स्त्रीपत, पक्षपति स्त्रीप्रिय, धर्मिमानो, श्राद्ध पूजित, बिकारी, चपल और बहूभोजी रोमा तथा तृतीय द्वैजाचमं जन्म होनेसे स्त्रीबहूत, माय्यवान्, विदुषप्रिय, मित्र और पुनर्गदिका प्रीतिकर तथा स्वैव होता है।

यि वके प्रथम द्वैजाचमं जन्मका जन्म होता है, वह

दाता, धानक, विजयेच्छु, वदुधनसम्पन्न, रमणोका
बन्धु, गुरु, राजमेवक और अहिष्णु भोगा । द्वितीय द्रेक्का-
णमें जन्म होनेसे मुकवि, कामो, दाता, स्थिरस्वभाव
तथा उत्तम शरीरयुक्त, मृदुणेच्छु, सुखभोगी, शुभकर्म में
रुचि और उत्तम बुद्धियुक्त तथा तृतीय द्रेक्काणमें जन्म
होनेसे परधनहरणमें लोभो, स्थूल शरीरयुक्त, मद्यामति,
धृत्त अनेक सन्तानियुक्त और प्रगल्भ होता है ।

कन्याके प्रथम द्रेक्काणमें जन्म होनेसे महोय श्याम-
वर्ण, सुवाक्यसम्पन्न, विनीत, प्राज्ञ, सुन्दरसूक्ति और
उत्तम चक्षुयुक्त होता है । द्वितीय द्रेक्काणमें होनेसे धीर
विदेगगामी, गित्य और समरकृशल, वाचाल और बुद्धि-
मान् तथा तृतीय द्रेक्काणमें जन्म होनेसे रोगी, पराश्र-
भोजी, रति और गातयुक्त, राजप्रिय, स्वर्ग, स्थूलदृष्टि
और स्थूल मस्तकयुक्त होता है ।

तुलारामिके प्रथम द्रेक्काणमें जन्म होनेसे कन्दर्पके
समान रूपवान्, कर्मनिपुण, मन्त्र और सेवाश्र तथा
उत्तम मेधावी ; द्वितीय द्रेक्काणमें जन्म होनेसे पद्मचक्षु
विगिष्ट, उत्तम रूपवान्, प्रलापो, विद्यात आत्मवंग
वर्द्धनकर्त्ता हृत्ति और अर्थपटु, एवं तृतीय द्रेक्काणमें
जन्म होनेसे चपल, गठ, कतन्न, रूपहीन, क्रूरचारो, कृग
गरीरयुक्त, धन, वन्धु और यशोहीन, अल्पबुद्धि तथा पतित
होता है ।

वृष्टिकके प्रथम द्रेक्काणमें जन्म होनेसे गौरवर्ण, स्थिर
प्रकृतियुक्त, क्रोधो, मदरहित, चक्षुविगिष्ट, स्थूल, विगान
शरीर और विवादप्रिय ; द्वितीय द्रेक्काणमें मिष्टान्नयान
भोजी, धनवान्, रतिप्रिय, कमनोय सूक्ति, शत्रुजय-
कारी, सरल और क्रियावान् तथा तृतीय द्रेक्काणमें जन्म
होनेसे श्मश्रुरामहान, हिंस्र, पित्राश्र, महांटर, प्रवक्ता,
धर्मच्युत, वाह्य और हृदय स्थूल तथा सव्य होता है ।

धनुरामिके प्रथम द्रेक्काणमें जिसका जन्म होगा है वह
उत्तम मण्डलाकार चक्षुसम्पन्न, वाग्मी, मृदु और धन-
परायण होता है । द्वितीय द्रेक्काणमें जन्म होनेसे शास्त्र-
वेत्ता, मन्त्रभृतीमें श्रेष्ठ और प्रभु तथा तृतीय द्रेक्काण-
में जन्म होनेसे वन्धुतापटु, साधुगतियुक्त, धार्मिक,
मानो, वाराङ्गनासक्त, रूपयगीभाजन और प्रभु होता है ।

मकरके प्रथम द्रेक्काणमें जन्म होनेसे आकाशकम्बित

वाह्य, श्यामवर्ण, पृथुलोचन, गठ, मितभाषी, श्लो-
विजित और मेधायुक्त ; द्वितीय द्रेक्काणमें जन्म होनेसे
श्यामवर्ण, गठ, परस्त्री और धनापहारी तथा तृतीय
द्रेक्काणमें जन्म होनेसे दोष ललाटयुक्त, पापात्मा, कृग
और दोर्घाङ्ग एवं विदेगवासी होता है ।

कुम्भके प्रथम द्रेक्काणमें जन्म होनेसे महोय अतिशय
लुब्ध, उन्नत, कायंकुशल, धनवान् और सुवाक्यसम्पन्न ;
द्वितीय द्रेक्काणमें लुब्ध, पटु, धृतिमान्, और गौरवर्ण,
मेधावी और बहुमित्रसम्पन्न तथा तृतीय द्रेक्काणमें
जन्म होनेसे गठ, प्रलापो, कृग, कुशील, रतिर्वेत्ता और
बहुमित्रयुक्त होता है ।

मौनके प्रथम द्रेक्काणमें जन्म होनेसे प्राज्ञ, गौरवर्ण,
मेधावी, कतन्न, विस्वरात, क्रियाकृशल, सुखभोगी और
विनीत; द्वितीय द्रेक्काणमें जन्म होनेसे वहनशील,
पराश्रमोक्ता, कामी, सज्जनोक्ता स्मरणोय और पण्डितप्रिय
तथा तृतीय द्रेक्काणमें जन्म होनेसे श्यामवर्ण, कला-
निपुण, शुचि, हिलानुक्त, क्रीडा और हास्यकुशल होता
है ।

यदि सूर्यके द्रेक्काणमें जन्म हो, तो वाक्क मलिन, गूर,
श्लोवर्ण, क्रूर, साहसिक, कुकर्म कुशल, सूखं, रूपहीन,
व्रणान्वित शरीर, बहु आशयुक्त, गुणज्ञनागामी, अस्व-
सन्तानविगिष्ट, अतिक्रियारत, पापी, सुखर, रूपर और
असूयान्वित होगा ।

चन्द्रके द्रेक्काणमें जन्म होनेसे बालक सुन्दर गठनसम्पन्न,
ममूर्ध, धनवान्, बहुभाषी वैधकमरत, तोर्षगामी,
शास्त्रवेत्ता, कुलभूषण, देवता, गुण और वन्धुघोका भक्त,
नित्य धर्मरत, विदेगयात्राकुशल और दाता होता है ।

मङ्गलके द्रेक्काणमें जन्म होनेसे मलिन, क्रूर, धनहीन,
पापात्मा, स्वल, दयाहीन, दुःखरित, बहुभाषी, आत्मभरि,
क्रोधो, रोगात्त, परसेवक आर गुणविहीन होगा ।

बुधके द्रेक्काणमें जन्म होनेसे बुद्धिमान्, सर्वदा राज-
पूज्य, दोर्घायु, वलवान्, बहुमन्तनियुक्त, शान्त, यशस्वी,
शुचि, धर्मज्ञानपरायण, प्रमादगून्ध, शास्त्रविद, धनो,
मानो और मृरूप होता है ।

बृहस्पतिके द्रेक्काणमें जन्म होनेसे अतिशय सुखवान्,
दोर्घायु, सुबुद्धिसम्पन्न, प्रियभाषी, धार्मिक, दयालु, शान्त,
शुची और यशस्वी होता है ।

शुद्धि प्रोद्योतने जन्म जोतिसे सुन्दर धरीरक्ष्यक,
पञ्चमन्त्रो, धर्मज्ञ, दाता धीर मातृपीडा प्रतिपादक,
बन्धो दयालु, शुचि धीर धार्मिक होता है।

यन्त्रिसे प्रोद्योतने जन्म जोतिसे मन्त्रिण ब्रह्म, सुदु-
तन्त्रक, दुर्बल, स्वयं, शुचिबोध पापात्मा, शुचिज्ञान
मानो, प्रतिपादक, श्लोकी, निर्दय रोगार्थ सुन्दर,
सुकृप धीर आमातुर होमा। (चोर्धमपीर)

इच्छेय (स० पु०) इयां सेय ६ तत्। १ इच्छिपात, धर्म-
लोचन। २ स्वसिद्धात्कोष्ठ इच्छेयत्वात्तात्पर्य पर
रूप सेय दयम लम्बे नतांशकी मुञ्ज्या। इसका काम
सूर्यपक्षसे व्यतीकरणमें पड़ता है। मन्त्र्याको चक्षु-
श्यासे शुभा कर शुचनयनमें निज्याने माय दिवा जाता
है। फिर भाग्यदशको बर्ग करके धीर चरमें मन्त्र्यासे
बग को घटा कर जो शेष स द्या रह जाती है उसका
व्यमूल निकाला जाता है। इसी मूलसे य काको इच्छे-
य कहते हैं।

इच्छेय (स० पु०) इयां पत्ता ६ तत्। इच्छियोग ज्ञान,
इच्छिका मार्ग इच्छिनी पद्वैय।

इच्छेय (स० जो०) शोरीराम्यन।

इच्छेय (स० पु०) इयां पात ६ तत्। इच्छिपात, धर्म
लोचन।

इच्छेयसादा (स० स्त्री०) इयो मियो प्रसादयति प्र-सद विच-
यच टाप। कुपना, कुक्कशासन। धार्मिके पक्ष लगानेसे
पाँच भाग होती है। इसीसे इसका नाम इच्छेयसादा
रूपा है।

इच्छेयिमा (स० स्त्री०) इयो. रिपा ६ तत्। योमा, सुन्द-
रता च्छुचस्त्री।

इच्छेयगि (स० स्त्री०) इच्छेय-प्रकाशनामे यच्छि। १
प्रकाशयति तन्व। २ तच्छुद्ध सर्व प्रकाशक चेतन सुख,
धाया।

इच्छेयुति (स० पु०) इयो एव नृति चर्चो यन्त्र। सर्व,
माँव।

इच्छेय (स० पु०) १ पाँच। २ इच्छि, विचनेको मन्त्रि। ३
दीको लप्या।

इच्छेय (स० पु०) पक्ष।

इच्छेय (स० पु०) इयो. नेत्रयोश्चायः पश्चिच्छेयः।

सूर्य। सूर्यसे प्रकाश प्राप्त होता है। इसी प्रकाशमें
देखनेको मन्त्रि कल्प्य होता है।

इच्छेयिमा (सि० पु०) पाँच मिथोकीका शिख।

इच्छेय (स० स्त्री०) इयो इयं पात यन्त्रि पक्ष-पक्ष। पक्ष
पक्ष, सुरोद्योग।

इच्छेयगिति (स० पु०) पक्षोका विष करके यचित करना।

इच्छेयचित्तं (स० पु०) प्रयोको विद्यो समय पर यचितने
व्यत करके पुना लसे विष कर निकालनेकी श्रिया। कर
व्युत्ता वा यचितता प्रतीत हो, तो उसमें सकार
करना पड़ता है जिससे प्रयोके विष धीर काटमें धामि
से द न पड़े।

इच्छेयगिति (स० स्त्री०) इयोयंति ६ तत्। १ पक्षको यति,
इच्छिनी पद्वैय। २ ध्यसिद्धात्कोष्ठ प्रक्षेत्रोपयोगो इच्छेय-
मेद। ३ दयमलम्बो नतांशकी शोच्छिपा। इसका काम
सूर्यपक्ष निकालनेमें जाता है। इसका तरीका इस प्रकार
है—मन्त्र्याको उदयश्यासे शुभा करके धीर शुचनयन-
को निज्यासे भाग देते हैं। योक्षि भाग्यदशका बर्ग करके
धीर बस पक्षसे निज्याका बग घटाते हैं। इस प्रकार
जो शेष पक्ष बच जाता है उसका व्यमूल इच्छेयति
कहना जाता है।

इच्छेयचर (स० सि०) जो पाँचसे दोष पड़े।

इच्छेयोल (स० पु०) यमोलसे चरगत एक मोल इच्छेय
पक्ष।

य से चक्षुषिक धीर चक्षुषिक से दो चक्षुषिक
करते हैं योक्षि जन्में दो चक्षुषिकलक बना कर रक्षकपक्ष-
से गाढ़ देते धीर तत्र इच्छेयलक बनाते हैं। इस इच्छेयलक-
को पूर इच्छेय कुच्छु छोटा बनाया जाता है जिससे यह
चक्षुषिकसे नीच थकी तरह दूर रहे। इसमें यदि एक
ही पक्षगोल हो, तो एक इच्छेयलक होमा। जो जो पक्ष
जहाँ जहाँ पक्षज्ञान करता है, उस बस पक्षसे लपरी
भागमें इच्छेय धीर शच्छुद्धि करना होगा पक्षना मिष
मिष इच्छेय पाँच इच्छेयलक बनाया होया। बाद यहम
धीर इच्छेयमपक्ष उस चक्षुषिकमें च्छुचिच्छुको ही ललि
कायो को बाँधते धीर ललिच्छेय पाकारकमें चक्षुषिक कर
के लोन उ बन्धोकी दूरी पर इच्छेयलक बनाते हैं।

आन्तिमर्षादिदुष्ट चक्षुषिकसे धीर मूलोच्छेयति

जो निबद्ध होता है, उसीको दृग्गोल कहते हैं। अथा, कुर्ब्या, समग्रद्, आथञ्चक्षेत्र, द्विगोलजात, भगोलवृत्त और खगोलवृत्त मिल कर गोलवन्धसे सस्यक् रूपमें उपलक्षित न हो, तो इसको दृग्गोल कहते हैं।

दृग्ग्या (सं० स्त्री०) सूर्यसिदान्तोक्त दिनमाणादि ज्ञानार्थे शङ्खच्छायाकी उपयोगिनी दृष्टियोग्या दृक्वृत्तक्षेत्रस्थ जीवा, दृक्-मण्डल वा दृग्गोलके खखस्तिकसे जो ग्रह जितना लटकता है उसे नतांश और इसी नतांशकी ज्याकी दृग्ग्या कहते हैं।

दृग्भक्ति (सं० स्त्री०) प्रेनदृष्टि, सुहृद्वतकी निगाह।

दृग्भू (सं० स्त्री०) १ वक्ष। २ सूर्य। ३ सर्प।

दृग्लम्बन (सं० स्त्री०) सिदान्तशिरोमणि-कथित ग्रहण दर्शनोपयोगी दृक्क्षेत्रस्थ लम्बभेद। ग्रहण स्पष्ट करनेमें जब सूर्य और चन्द्रमा गर्भाभिप्रायसे एक सूत्र भा जाते हैं, परप्रष्टाभिप्रायसे एक सूत्रमें नहीं आते, तब उन्हें प्रष्टाभिप्रायसे एक सूत्रमें लानेके लिए जो पूर्वापर संस्कार किया जाता है उसे दृग्लम्बन कहते हैं।

दृग्विष (सं० पुं०) दृग्वि विषं यस्य। दृष्टिविष सर्पभेद वक्ष सर्प जिसकी आंखोंमें विष होता है।

दृग्वृत्त (सं० स्त्री०) दृग्-प्रचारस्थानं वृत्तमिव। वृत्ताकार दृक्प्रचार-स्थल, चित्तिज।

दृग्ध्याधिष्ठतम् (सं० स्त्री०) रक्षाञ्जन।

दृङ् नति (सं० स्त्री०) सिदान्तशिरोमण्युक्त ग्रहण दर्शनोपयोगिताके लिये दर्शित दृक्प्रचारकी नति। ग्रहण स्पष्ट करनेमें सूर्य और चन्द्रमाका जब समान्त कालीन स्पष्ट किया जाता है और वे गर्भाभिप्रायसे एक सूत्रमें भा जाते हैं परप्रष्टाभिप्रायसे नहीं आते, तब प्रष्टाभिप्रायसे उन्हें एक सूत्रमें लानेके लिये जो याम्योत्तर संस्कार किया जाता है, उसे दृङ् नति कहते हैं।

नति देखो।

दृङ्मण्डल (सं० स्त्री०) दृग्ः सत्प्रचारस्य मण्डलमिव। गोलवन्धान्तगत बलयाकार मण्डलभेद, दृग्गोल।

दृड (सं० त्रि०) दृ-क्क निपातनान् साधुः। १ स्थूल, मोटा। २ अग्निधिल, जो ढोला न हो, जो खूब कस कर बांधा या मिला, हो। ३ बलवान्, दृष्टपुट। ४ कठिन।

५ निडर, दीठ। ६ ध्रुव, पक्का। ७ स्थायी, जो जल्दी

दूर, नष्ट वा विचलित न हो सके। (स्त्री०) ८ लौह, लोहा। (पुं०) ९ धृतराष्ट्रपुत्रभेद, धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। १० त्रयोदश मनु रुचिका पुत्रभेद, तेरहवें मनु रुचिके एक पुत्रका नाम। ११ विष्णु। १२ सप्तविष रूपके मध्य एक प्रकार, संगीतमें वात रूपकीमेंसे एक। १३ लोलावत्युक्त कुटलगणितभेद। १४ गणितमें षष्ठ अंक जो दूसरे अंकसे पुरा पुरा विभाजित न हो सके, जैसे १, ३, ५, ७, ...। १५ एलवालुक, एलुवा, मुसव्वर। १६ शाकमलोत्पन्न, सेमरका पेड़। १७ धवहृत्। १८ हीरक, होरा।

दृढकण्टक (सं० पुं०) दृढः कण्टको यस्य। १ सुदृढ कण्टकयुक्त वृक्षभेद। २ सुदृढ फलकवृक्ष। ३ खजूरवृक्ष, खजूरका पेड़। ४ अद्वोटवृक्ष, अक्षरराटका पेड़।

दृढकाण्ड (सं० पुं०) दृढं काण्डं यस्य। १ वंशवृक्ष, वांस। २ दोषरौहिषक, रोहिंस घास। ३ पाताल गरुडोलता, छिरेटा।

दृढकाण्डा (सं० स्त्री०) वक्ष्मादनोलता, छिरेटा।
दृढकारी (सं० त्रि०) दृढ-क-पिनि। १ प्रारब्धसम्पादयिता, जो अपने कर्त्तव्य विषय पर अटल रहे। २ दृढ़तासे काम करनेवाला। ३ मजबूत करनेवाला।

दृढचक्र (सं० पुं०) धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम।
(भारत १।६७ अ०)

दृढचूरा (सं० स्त्री०) दृढं चूरमिव अथं यस्याः। वल्लभा-दण, सागी बागी।

दृढगमे (सं० स्त्री०) हीरक, हीरा।

दृढगात्रिका (सं० स्त्री०) दृढं गात्रं यस्याः कप, टापि अतद्वत्। मत्स्याण्डो, रात्र, खाड़।

दृढग्रन्थि (सं० पुं०) दृढः ग्रन्थिः पर्वं यस्य। १ वंश, वांस। (त्रि०) २ दृढ ग्रन्थियुक्त मात्र, जिसकी गर्ठि मजबूत हो।

दृढभाही (सं० त्रि०) दृढ-ग्रह-णिनि। दृढरूपसे ग्रहणकारी, निश्चय करेगा ऐसा सोच कर जो ग्रहण करता हो।

दृढच्छद (सं० पुं०) दृढः क्षदो यस्य। १ दीर्घ रौहिषक दण, बड़ी रौहिस। २ तालवृक्ष, ताड़का पेड़।

दृढद्युत (सं० पुं०) अगस्त्य मुनिके एक पुत्रका नाम।

वारम्बार एकाग्र वा एकतान करेना तथा उसके पूष साधक यमनियमादि घात प्रकारके योगार्द्धोका अनुष्ठान करना ही अभ्यास है। यमनियमादि द्वारा परिशोधित चित्तको वार वार एकाग्र करते समय उसे धीरे धीरे दृढ, अर्थात् अविचल्य होकर स्थिर करना चाहिये। जब देखें, कि अभ्यास दृढ़ हो गया है, तब वैसे चित्तको जग्य चाहें, तब एकतान कर सकते हैं। इस प्रकारके अभ्यासको दीर्घकाल तक सदा अद्यापूर्वक करते रहनेसे वह क्रमशः दृढ़ और अविचलित हो जाता है, इसीको दृढ़भूमि कहते हैं। वस्तुतः उक्त प्रकारका अभ्यास दो चार दिनमें नहीं होता। अर्थात् साय, भक्तिके साथ, उन्मादके साथ सर्वदा अभ्यास करते रहनेसे ही, वह बहुत दिनके बाद दृढ़ता प्राप्त करता है। इस तरह योगाभ्यास जब दृढ़ होगा, तब चित्त सम्पूर्ण रूपसे अज्ञान हो जायेगा। चित्तमें किसी प्रकारको चञ्चलताका समावेश न होगा। वह आपसे आप एकाग्र हो जायेगा, ऐसा होनेसे ही दृढ़भूमि होता है। इस अवस्थाको प्राप्त कर लेने पर वैराग्यको प्राप्ति निकट हो जाती है।

दृढ़माला (स० स्त्री०) मूषावती ।

दृढ़मुष्टि (स० पु०) दृढ़ा मुष्टिधारणाय यस्य । १ खत्रादि । दृढ़ा दानाद्यभावात् कठिना मुष्टियस्य । (त्रि०) २ कृष्ण, कलूस । ३ दृढ़, मुष्टिधारक, जो मुष्टीमें जोरसे पकड़े, कस कर पकड़नेवाला ।

दृढ़मूल (स० पु०) दृढ़ं मूलं यस्य । १ मुञ्जलण, मूँज । २ मन्थानक लण, मथाना नामकी घास जो तानोंमें होती है । ३ नारिकेल, नारियल ।

दृढ़रङ्गा (स० स्त्री०) दृढ़ः स्थिरः रङ्गो रागो यस्याः । स्फोटो, फिटकरी ।

दृढ़रजा (स० स्त्री०) श्रेष्ठ, स्त्री, यवान औरत ।

दृढ़रथ (स० पु०) १ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । २ कृषियु वंशके एक राजाका नाम ।

दृढ़रुचि (स० स्त्री०) दृढ़ा रुचिर् यस्य । १ मधुर रागयुक्त । २ कुयधीपपति हिरण्यरेता प्रियव्रतके एक पुत्रका नाम ।

दृढ़लता (स० स्त्री०) दृढ़ा कठिना लता । पातालगरुडो-लता, किरेंटा ।

दृढ़लौम् (स० पु०) दृढ़ानि लौमानि यस्य । १ शूकर,

सूत्र । (त्रि०) २ कठिन लोमयुक्त, जिसके रोए कड़े हों । दृढ़वज्र (स० पु०) एक असुरराज ।

दृढ़वर्म (स० पु०) १ धृतराष्ट्रका पुत्रविशेष, धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । दृढ़वर्मो यस्य । (त्रि०) २ दुर्मद-सन्नाहयुक्त, जिसका कवच वा वज्रतर बहुत कठिन हो ।

दृढ़वल्—एक प्राचीन वैद्यक ग्रन्थकार । वाचस्पतिने इनका वचन उद्धृत किया है ।

दृढ़वल्कल (स० पु०) दृढ़ं वल्कलमस्य । १ पूगहृत्, सुपारोका पेड़ । २ लकड़का पेड़ । (त्रि०) ३ दृढ़वल्कल-युक्त, जिसकी छाल कड़ी हो ।

दृढ़वल्का (स० स्त्री०) दृढ़ं वल्कं यस्याः । अम्बुहा, बाघ्रणीलता, पाट, आ ।

दृढ़वक्ष (स० पु०) मुञ्जलण, मूँज ।

दृढ़वीज (स० पु०) दृढ़ं वीजं यस्य । १ चक्रमदे, चक्र-वट । २ वदर, बेर । ३ बवूर, बबूल ४ नारिकेल, नारियल । (त्रि०) ५ कठिन बीजयुक्त, जिसके बीज कड़े हों ।

दृढ़वृक्ष (स० पु०) नारिकेल, नारियल ।

दृढ़वृन्त (स० पु०) दृढ़वृक्ष देखो ।

दृढ़वेधन (स० स्त्री०) दृढ़रूपसे विद्वकरण, मज्जभूतीके भेदनेकी क्रिया ।

दृढ़व्य (स० पु०) ऋषिभेद, एक मुनिका नाम ।

दृढ़व्रत (स० त्रि०) दृढ़ं प्रतिपन्नं द्यालयितुं व्रतं यस्य । स्थिर सद्बल्युक्त, अपने सद्बल्य पर जमा रहनेवाला ।

दृढ़शक्तिक (स० त्रि०) दृढ़ा शक्तिर्यस्य ततो रूपम् । महाशक्तियुक्त, जिसे खूब ताकत हो ।

दृढ़सन्ध (स० त्रि०) दृढ़ा सन्धा यस्य । १ स्थिर मन्थान, सद्बल्यका पक्षा । (पु०) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम ।

दृढ़सन्धि (स० त्रि०) दृढ़ः स्थूलः सन्धिर्यस्य । निष्क्रिद्र । इसका पर्याय संहत है ।

दृढ़सत्रिका (स० स्त्री०) दृढ़ं सत्रं यस्याः कप-अत-धत्वं । सूर्वालता, सुरा ।

दृढ़सेन (स० पु०) कलियुगके जनमेजय वंशीय नृपभेद ।

दृढ़स्कन्ध (स० पु०) दृढ़ः स्कन्धो यस्य । १ लीनिका वृक्ष, खिरनोका पेड़ । २ पिण्डखजूर, पंडखजूर ।

(त्रि०) ३ दृढ़, स्कन्धविशिष्ट, जिसका कंधा मज्ज-वृत्त हो ।

दृष्ट (सं० त्रि०) दृष्ट प्रत्यये कर्मणि क्त । १ ग्रथित, गुया वृथा । २ भोत, डरा वृथा । भावे-क्त । (लो०) ३ प्रत्यय । ४ भय ।

दृष्टोक (सं० पु०) दृष्ट वाहुलकात् ईकन् । असुरभेट, एक दैत्यका नाम ।

दृष्टिचण्डेश्वर (सं० लो०) मत्स्यपुराणोक्त शिवलिङ्गभेद । दृष्टन् (सं० त्रि०) दृ-विदारि क्तिय-वाहुलकात् वं दे-ङ्ङन् । विदारक, चोरफाह करनेवाला ।

दृष्ट (सं० पु०) पश्यत्यनेन इति दृग्-करणे क्तिप् । १ चक्षु, आंख । भावे क्तिप् । २ दर्शन, देखना । ३ बुद्धि । (त्रि०) पश्यतीति दृग् कर्त्तरि क्तिन् । ४ बोचक, दिखाने-वाला । ५ देखनेवाला । (स्त्री०) ६ दृष्टि । ७ द्वित्व-संख्या, दोक्री संख्या ।

दृष्टति (सं० स्त्री०) दृग् वाहुलकात् भावे अतिक् । दर्शन, देखना ।

दृष्टद् (सं० स्त्री०) दृष्ट् श्योदरादित्वात् साधुः । १ शिला, पत्थर । २ सिल, पट्टी ।

दृष्टवती (सं० स्त्री०) दृष्टवती श्योदरादित्वात् साधुः । १ ब्रह्मावर्त्तं सोमास्य नदीभेद, एक नदी जो ब्रह्मावर्त्त-को सोमा पर अवस्थित है । यह कुरुक्षेत्रके अन्तर्गत है । जो इम नदीके किनारे वाम करते हैं, वे स्वर्ग लोकको प्राप्त होते हैं । यह स्थान बहुत मनोरम है । दृष्टवती देखो । २ कात्यायनो ।

दृष्टा (सं० स्त्री०) दृग् हलन्तत्वात् वा टाप् । चक्षु, आंख ।

दृष्टाक (सं० त्रि०) दृग् कर्मणि ईकक् । दर्शनीय, देखने योग्य ।

दृष्टाकाक्ष्य (सं० लो०) दृष्टा दृश्या वा आकाक्ष्यं अभि-लपणौयं । पद्म, कमल ।

दृष्टान (सं० पु०) दृग्-भानच् क्तिञ्च । १ लोकपाल, प्रजाका पालन करनेवाला राजा । २ विरोचन नामक दैत्य । ३ आचार्य, गुरु । ४ ब्राह्मण । ५ उपाध्याय । (लो०) ६ ज्योतिः, प्रकाश, आत्मा । (त्रि०) दृष्टान्ते इति दृग्-कर्मणि भानच् । ७ दृश्यमान, जो दिखाई पड़ रहा हो ।

दृष्टि (सं० स्त्री०) दृष्टान्तेऽनया दृग्-इन् स च क्तिप् । १ चक्षु, नेत्र । २ चेतन पुरुष । "दृष्टा दृश्यात्: शुद्धोऽपि प्रस्ययानुपपद्यः ।" (पाठ० २।२०)

पुरुषका नाम दृष्टा है, अर्थात् जिसमें दृष्टां कर्त्तृत्वात् चाहिये, वह दृष्टा नहीं है, क्योंकि वह चिद्रूपे और अपरिणामो है । सुतरां परिणमनस्वभाव अन्तःकरण ही ज्ञानादि धर्मका आधार है । निर्विकार-स्वभाव आत्मा वा पुरुष जब उस प्रकारको बुद्धिमें उपरत हो, बुद्धिके साथ एकौभूत हो अर्थात् जब वे अन्निधानवगत बुद्धि-वृत्तिमें प्रतिविम्बित वा अभिष्णक्त हों, तभी उन्हें उप-चार क्रममें दृष्टा कहते हैं । बुद्धि वा अन्तःकरणके परि-णाम वा विषयाकारताके नहीं रहने पर उन्हें कुछ भी दृष्टव्य नहीं रहता ।

तात्पर्य यह, कि बुद्धिवृत्तिमें प्रतिविम्बित होना ही उसका देखना होगा, अन्यथा किसी प्रकारसे नहीं ।

(पाठ० २।२१)

दृक् और दृश्यके संयोगका कारण अविद्या है । यह अविद्या यदि योगाभ्यास द्वारा तथा तत्त्वज्ञान वा चित्त-निरोध द्वारा विदूरित हो जाय, तो उस पुरुषके साथ प्रकृतिका संयोग वा दृष्ट् दृश्यभाव नहीं रहता, वरं वह मुक्त अर्थात् केवल हो जाता है । जड़ सम्बन्धवर्जित ही जानिसे वह निज चिद्रूप-स्वभावमें प्रतिष्ठित रहता है । ३ प्रकाश, उजाला । ४ शास्त्र ।

दृष्टो (सं० स्त्री०) दृष्टि वाहुलकात् ङीप् । शशि देखो । दृष्टीय (सं० त्रि०) दृग्-कर्मणि क्तिन् । दर्शनीय, देखने योग्य ।

दृष्टोपम (सं० लो०) दृष्टाया उपमा यत् । स्त्रीतपस्य, सफेद कमल ।

दृश्य (सं० त्रि०) दृश्यते इति दृग्-कर्मणि क्तिप् । १ दर्शनीय, जो देखने योग्य हो । २ मनोरम, सुन्दर । ३ दृष्टव्य, जो देखनेमें आ सके, जिसे देख सके । ४ ज्ञेयमात्र, जानने योग्य ।

दृष्टा और दृश्यका संयोग ही ज्ञेय अर्थात् दुःखका प्रतिकारण है । दृष्टा, आत्मा और दृश्य अर्थात् अन्तःकरण इन दोनोंका संयोग होनेसे ही दुःख उपस्थित होता है । केवल दुःख ही नहीं, बल्कि सुख, दुःख और मोह ये सभी अन्तःकरणके विकार हैं । बुद्धि दृश्यका अन्तःकरण इन्द्रिय सम्बन्ध द्वारा विषयाकारमें और सुख दुःखादि आकारमें परिणत होनेके साथ ही वह चित्-

यसि द्वारा प्रवृत्त हो जाती है। सुतर्प परिचाम
समाप्त हुइलत वा सन्त'करव पदार्थ' इत्य' पौर तत्-
वचिचिख अपरिचामो चित्पयिख समसो इत्या है।

इत्य' पौर इहा एन दोनोंका को स कोय है पर्याप्तु वे
दोनों को एकको भावसे नटे हुए हैं, वही स भारी बीजों
के दुःखसमुहका मूल है। 'प्रकाशविदास्त्रिणिपीठ
मूर्तेरुद्रात्मक मोगावर्धने' एव।" (अण० १।१८) प्रकाश
समाप्त एव, त्रिदात्मक एव, दोनोंका प्रतिरोधक प्रवृत्त
समाप्त तम, परतु द्विदात्मक, मूल पौर इन्द्रिय से सब
इत्य' है। प्रवृत्त सिव परिच्छन्न जगत्में जो कुछ इच्छि-
तगौर होती है, वही इत्य' है। ये सभी इच्छवर्षीय पौर
अपवर्ग प्रदानके लिये व्यक्त हैं। एव, एव पौर तम यह
गुणतयात्मक प्रकृति पौर तदुत्पन्न जो कुछ मूल मोक्षक
है, सभी प्रवृत्तसे भीम पौर अपवृत्तके कारण हैं। यह
इत्य' परिच्छिन्नीके भीम पौर विच्छेदोरे मोक्ष प्रदानके लिये
व्यक्त है। इसच निवैय विरत्य इच्छि सत्यसे हैके। (पु०)
१ दिवनेकी वस्तु, निज्ञोका विषय, चोक्षिक सामनेका
पदार्थ । २ इच्छि सामनेका मनोरञ्जक व्यापार, लभ्याया।
३ परिमय द्वारा दर्शकोंको दिखाने कामिका काम
नाटक। ८ शक्तिमें प्राप्त वा हो हुई लभ्या।

इत्य'वाच्य (स० श्लो०) वाच्यविधिय, जो वाच्य नाच्य
भावमें नष्ट होगिये दिवताका जाता है, उसे इत्य'वाच्य
कहते हैं।

वाच्य ही प्रकारका है—इत्य' पौर सत्य। जो परि-
मोक्ष होता है, उसे इत्य'वाच्य कहते हैं। इसे जग-
त्कारणक नाटक कहते हैं, किन्तु साक्षिद्वयपत्र पादि
अन्यद्वार माझेसे मतासुधार नाटक इत्य'वाच्यका रूप
में है मात्र है।

नाच्यवाच्यमें नष्ट कोय जो जो पुत्रक परिमय करते
हैं वे सभी इत्य'वाच्यके अन्तर्गत हैं। जो नाच्यवाच्य
इत्य'वाच्यका अर्थकल्प है, उसे मरत सुनिने बताया वा।
कहते हैं, कि कर्मोंमें यह इच्छासे लोभ कर अर्थक पौर
अच्छरणीकी विच्छेदका वा। जोरे बीरे यह प्रवृत्त हो
सका। इत्य'वाच्य ही भावोंमें विभक्त है, अर्थक पौर अर्थ
कल्प। इनमेंसे अर्थक ही दय पौर अर्थकल्पके प्रकार
में है।

नाटक, प्रवृत्त, भाव, भावोम, समनकार, डिम
ईहाच्य, यह भीय पौर प्रवृत्त से दय कल्प है तथा
माठिका मोटक मोहो रुचक, नाच्यरासक, प्रकाश,
लभाव्य, काव्य, प्रेङ्गव, रासक, सलायक, योगदित,
मिच्छक, विवासिका, दुर्मजिका, प्रवृत्तिका, इज्ञीय
पौर भाविका ये प्रकारक उपकरण हैं।

इत्य'वाच्यमें नाटक सबसे प्रधान है। इसका मूल
पौराणिक विवरणमें दिया जाता है तथा कुछ पद्य कथोय
कथित रहता है। इसका मायक दुसला सरीका
राजा, रामचन्द्र सरीका पत्तोक्षिक समतामन्त्रक पौर
योष्टय सरोका देवता होगा। शूद्रार वा बोरस
इसका प्रधान वर्चनीय विषय रहेंगा। परिमोक्ष-याकु
कल, सुद्वाराचम, विधीय दार, अन्वर्षाचय पादि
अन्य नाटक-अर्थको मूल है। प्रवृत्तका मयक नाटकके
जेका है, विवृत इच्छे सत्यमें समाप्तको प्रकृति पौर प्रेम
विषयक अर्थक रहेंगा। प्रवृत्त दा स यार्थ विमल
है, यह पौर घटोच। इत्य'प्रवृत्तका माठिका विज्ञा पौर
नदोर्ष प्रवृत्तकी माठिका विज्ञा मन्त्र मकी प्रतिपा
मिता कामिनी वा नद्वारा होमो। प्रवृत्तका मायक
नाटकके बोधा उक्त अर्थका अर्थक नहीं रहेंगा, इसका
मायक मन्त्री, ब्राह्मण वा अम्मान्तवाच्य होमा। अर्थक
कदिक, मानतोभायक पादि प्रवृत्त अर्थकात्मक है।
है। भाव यह एक अर्थमें सम्युक्त होगा, इसको माया
विगुह होगा, प्रारब्ध पौर विषय घटोच रहेंगा। नाच्यका
विचल मायक ही परिमय जोड़ा करेगा। उसे रङ्गमूर्तिमें
दा कर नामा अर पौर नामा भावमन्त्रो द्वारा दिविच
अर्थिकोंको मन्त्राचल कर सम्युक्तको मनोरञ्जन करना
होमा। नाच्यमन्त्र पौर कारदात्मक नामकअन्य
मायककोमूल है।

व्यायोग यह भी एक अर्थमें सम्युक्त है। कुछ वर्चन
इसका अर्थक है, प्रेम पौर रङ्गकको वर्चन इत्य'में नहीं
है। इसका मायक पत्तोक्षिक समतामन्त्रक प्रवृत्त होगा।
आमदम्ब्राय मोक्षिकाद्वारक, अन्वर्षाचय पादि
स अलत अन्व व्यायोममें किल जाते हैं।

अमन्त्रकार तोष अर्थमें सम्युक्त होता है। देवता
पौर अर्थकी सुद्वर्चन इत्य'का अर्थक वर्चनीय विषय

है। यह आद्योपान्त वीररसयुक्त तथा उष्णोक्त और गायत्री छन्दमें भरा हुआ है। अभिनयकाल इसमें हाथो, घोडा, रथादि परिपूर्ण, युद्धभैरव, तुमुलमंग्राम और नगराटिका ध्वंम इत्यादिका विषय विषयरूपसे दर्शित रहैगा। गमवकार ग्रन्थ बहुत विरल है। 'उम-यद्य वीर और भयानक रम संयुक्त रूपक है तथा चार अङ्गोंमें समाप्त होता है। प्रसुर और देवता इसके नायक है। इहा-नृग भी चार अङ्गोंमें समाप्त होता है। देवदेशी इनके नायक और नायिका हैं प्रेम और कौतुक वर्णन इसका प्रधान उद्देश्य है। कुसुमशेखर-विजय आदि ग्रन्थ इहा-नृगके अन्तर्गत हैं। अद्भुत—यह एक अद्भुत सम्पूर्ण होता है और करुणरस-प्रधान है। कवि किसी प्रसिद्ध पौराणिक विषय ले कर इसके गल्पको रचना करे। ग्रमिष्ठा-ययाति नामक छुद्र संस्कृत ग्रन्थ अद्भुत लक्षणान्त है। वीथ्य ठोक भाणके लक्षणके जैसा है और एक अद्भुत सम्पूर्ण होता है। किन्तु दशरूपकके मतानुसार इसके दो अद्भुत हो सकते हैं। प्रहसन हास्यरस प्रधान रूपक है, इसे एक अद्भुत सम्पूर्ण करना होता है। समाजकी कुरीतिका संशोधन और रहस्यजनक भिवरणका वर्णन करना इसका मुख्य उद्देश्य है। नाट्योक्तिवित व्यक्तिकण राजा राजपारिषद, धृत्, उदासीन, भृत्य और वेश्या होंगे। इसमें नोच जातिके पुरुष स्त्रियोंके जैसा प्राकृत भाषामें कथोपकथन करेगा। हास्यार्णव, कौतुकसर्वस्व और धृत्त समागम आदि संस्कृत प्रहसन हैं। नाटिका वा प्रकरणिका प्रायः एक प्रकारकी है। अक्षररस इसका प्रधान वर्णनोय विषय है। रत्नावली आदि नाटिका है। लोटक ५।७।८ वा ९ अङ्गोंमें सम्पूर्ण होता है, पाथिव और स्वर्गीय विषय इनका प्रधान वर्णनीय है। विक्रमो-वंशी आदि लोटक है। गोष्ठो एक अद्भुत सम्पूर्ण है। इसके नाट्यप्रदर्शक व्यक्ति १।२० पुरुष और ५।६ स्त्री हैं। रैवतमदनिका गोष्ठोके लक्षणान्त है। सटकमें एक आद्ययं गल्प आदिसे अन्त तक प्राकृत भाषामें वर्णित रहता है। कर्पूरमञ्जरो ग्रन्थ इसी लक्षणका है। नाट्यरासक—यह एक अद्भुत सम्पूर्ण होता है और इसका वर्णित्य विषय प्रेम और कौतुक है। इसका

आद्योपान्त अभिनय-कालमें नृत्य और सङ्गीतसे भर देना चाहिये। नमं वतो और विनासवती नामक संस्कृत ग्रन्थ नाट्यरासकके अन्तर्गत हैं। प्रस्थान भी नाट्यरामकके जैसा है, पर इसके नाट्योक्तिवित व्यक्तिकण अत्यन्त नीच जातिके होते हैं। यह भी तान लय स्वर संयुक्त नृत्यगोतोंसे परिपूर्ण और दो प्रङ्गोंमें सम्पूर्ण है। उल्लास्य एक अद्भुत समाप्त होता है, प्रेम और हास्य इसका प्रधान वर्णनोय विषय है। पौराणिक तथा नाट्यविषयक कथोपकथन गोतमें गाया जाता है। देवोमहादेव नामक संस्कृत ग्रन्थ इसी श्रेणीके अन्तर्गत है। काव्य प्रेमविषयक वर्णनमें तथा एक अद्भुत सम्पूर्ण होता है। इमं चोच चोचमें संज्ञीत और कविता भरी रहती है। यादवोदय आदि ग्रन्थ इसके अन्तर्भुक्त हैं। प्रेक्षण वीररस प्रधान और एक अद्भुत समाप्त होता है। इसका नायक नोच जातिका होना चाहिये। वानिवध आदि संस्कृत ग्रन्थ प्रेक्षण कष्ट कर प्रसिद्ध है। रामक—यह हास्यरस उद्दीपक उपरूपक है तथा एक अद्भुत समाप्त होता है। इसमें केवल पांच पुरुष अभिनेता रखे गये हैं। नायक नायिका ये दोनों उच्चश्रेणीके व्यक्ति, नायक मूर्ख और नायिका बुद्धिमती-हीनो चाहिये। मेनकाहित यही केवल एक रासक है। मंलापक १।२।३ वा ४ अङ्गोंमें समाप्त होता है। इसका नायक प्रचलित धर्मके विरुद्ध मतावलम्बी है। इसके अधिकारमें युद्धवर्णन रहता है। मायाकापालिक नामक संस्कृत ग्रन्थ इसी श्रेणीके अन्तर्भुक्त है। योग-दित—एक अद्भुत सम्पूर्ण है। इसको नायिका लक्ष्मी है और इसमें अधिकार्य सङ्गीत रहता है। क्रोडा रथा-तल संस्कृत ग्रन्थको योगदित मानते हैं। शिष्यक—यह चार अङ्गोंसे युक्त है, शमशन इसका रङ्गस्थल है, नायक ब्राह्मण और प्रतिनायक चण्डाल है। इन्द्रजाल और आस्यं घटनाका वर्णन करना ही इसका उद्देश्य है। कनकावतीमाधव नामक संस्कृतग्रन्थ इसी श्रेणीके भुक्त है। विलासिका एक अद्भुत समाप्त है। प्रेम और कौतुक इसका वर्णनीय है। दुर्मलिका हास्यरस प्रधान उपरूपक है और चार अङ्गोंमें सम्पूर्ण होता है। विन्दु मती इसी श्रेणीके अन्तर्गत है। प्रकरणिका नाटिकाके

के सा है। जलो-—इसमें पाद्योपान्त मूलोत्त पौर लक्ष
रदता है। भावकाल 'ये' 'पयेर' कश्च मयति है। यह
एक चतुर्दश समाप्त होता है। एक पुत्रव पौर ८१०
जिबोये यह उपपन्न विद्या जाता है। केविरैवतल
नामक स कृत पत्र इयो यो बोटा है। माचिका एक
पत्रमें मय्युक्त होता है पौर इन्द्ररमसे परिपूर्व है।
नामदत्ता नामक स कृत पत्र इतके लक्षबाहान्त है।

स कृत इयाबाध्मिं यको सब लक्ष पाये जाति है।
नाटक रचनामें भावादिना भी नियम था। नाटक
पद्य पौर मर्मज्ञमें विभक्त है। माटोद्विधित स्वधियेनि
नाम्ने, विदुपक, सूत्रपार, परिप्रायिक पौर ग्य म्दी-
का कत्रेण रचेया। सुषयोको भावा स कृत पौर स्थियो-
की प्राकृत भाषामें उद्योयकण जोना भावप्रक है। से
सब विपद्य धादि-वद्वं-चमें इस प्रकार लिखे हैं। लक्ष
पदक पञ्चितीकी बन्धन भावा स कृतमें होगी। इसी
प्रकार जिबोके विपद्यमें शौर्येमी एव गाथा चहमें
मय्युक्त होता है पौर इन्द्ररमसे परिपूर्व होता है।
मय्युक्तमें महाप्राज्ञ भावा प्रबुध होती। राज भन्ता-
पुर कारिणीकी भाषा सामने होगी पौर गजपुत्र राज
परिचारक तथा वेदियोंके मय्युक्तमें चर्चामामने। विदु-
पकके लिए प्राध्य, पुत्रके लिए चरन्तिका पौर वीहा
तथा नागर पादिके लिए टाचिबाह भावाका प्रयोग
करना उचित है। प्रहार पादि चरन्तक जातिके लिए
यकारो, बाहोबके लिये बाहोकी द्वाभिकुके लिए
द्राविकुके, पामीर सेयोवटे येक पामारो, पञ्च
पौर लयो प्रकारकी जातिके लिये पाचालो
रीतिकी भाषा व्यवहार है। जाहना दक्ष
पथादिनीके स्वधिये विपद्यमें प्राचीरो वा वाण्णाली
तथा चन्द्राकारक मोच व्यवसायियोंकी मो लकी भाषा
प्राज्ञ है। कुम्भितनाह मूर्ध्नीके लिए पैवाको पौर लक्ष
पदाभिप्रायिक पौर चन्द्रिके लिए गोरयेकी व्यवहार्य है।
बालक, लम्पक, वच्छ पौर पाचुं स्वधियोंकी शौर्येमी
पौर लहो लही स कृतका व्यवहार करना भी कर्तव्य
है। ऐश्वर्य मरुषी मत्त एक सुगिह मियु पादिके लिये
प्राकृत भाषाका प्रयोग करना प्राकृत्यक है। लक्षमायव
स्वधि, कष्ट स न्यायो पादि, देवी मन्विष्यता पौर

वेद्या इत मय्ये लिए स कृत भाषा व्यवहार है। यदि
रिची दूवरो भाषाका भी प्रयोग हो, तो कोई दोष
नहीं। स्त्री बयो, भावक, पुत्र, वेद्या पौर पय्यापो
की चपनी भाषा व्यवहार करती समय बीच प्रोचमें चपनी
चतुर्दश दिशानामने लिए स कृतका भी प्रयोग करना
चाहिये। (शक्तिपर्यव)

विशेष विवरण नाटक और लक्ष्मण परमें देना।
इन्द्रमान (म० वि०) १ को दिव्याई पङ्क रका को। २ लम
कीना सुन्दर।
इन्द्राद्य (म० वि०) इन्द्राद्य पङ्कलक्ष इन्द्रसं। इन्द्र
पौर पङ्कलक्ष।
इन्द्राद्य (म० लो०) १ जिबो च यमें इन्द्र चन्द्र पौर
जिबो चर्चमें पङ्कलक्ष चन्द्र। २ तदमितानो देवताभिद।
ये पङ्किकाको तीसरी लक्ष्या है।
इन्द्र (म० वि०) इन्द्र-लक्ष। इन्द्रक, देवनेवाना।
इन्द्र (म० लो०) इन्द्र देवो।
इन्द्राद्य (म० लो०) इन्द्रा पायाचक्ष भार इव भारी
लक्ष। सुषाययस।
इन्द्र (म० लो०) दीवते चमी इति दु-पादिपुत्र कक्षय
(इन्द्रादे पुत्र-कक्षय। इन्द्र (११११) १ पायाय, पयतको
बहान। २ मिक, पयो। ३ प्रहृष्ट, पञ्जर।
इन्द्रमायव (म० पु०) भावाः शल्लक्ष्येन दोषयेकान् इन्द्र
विषय व्यवहारी राज्ञे देवः मायवः पनुचुं समान।
विषय व्यवहारमें राजदेव मायव्य कर एक प्रकारका
कर जो प्लरके व्यवसायमें राजाको दिया जाता है।
इन्द्र (म० वि०) इन्द्र- सन्ताकिन् मृष्या मनुष्य-
मय्युक्त। १ इन्द्रपुत्र, यिचोपुत्र। (पु०) २ एक राजाका
नाम।
इन्द्र (म० लो०) इन्द्र-लक्ष्मिं लोय। १ एक लकी
का नाम। सरलतो पौर इन्द्रतो ये दोनो दिव्यदिया
हैं पौर इनका मध्यस्थान ब्रह्मावत नामसे प्रसिद्ध है।
इन्द्रसेममें यह कदो प्रकाशित है। शब्द न शिताव
पनुसार यह पुष्पलक्षिता नामसे मयाहर है। महा
भारतमें इसकी विनतो महातोर्चिं चो गई है। इसे
प्राकृतक प्रथम पौर राखी कहते हैं। यह मान्यरसे ११
श्लोक हविष्यमें प्रकाशित है। अन्यत्र २५। २ विद्यामिन्न
को एक पकीका नाम। (वि०) १ पञ्चरीनी।

दृष्ट' मं० त्रि०) दृष्ट-कर्मणि क्त । १ विलोकित, देखा
इत्या २ ज्ञात ज्ञाना इत्या । दृष्ट विषय और श्रानु-
श्रवण श्रवण वेटप्रतिपादित विषय इन दोनोंमें
सम्बन्धरूपसे निष्पन्न होने पर वगोपार मंज्ञा नामक
वैशम्य उत्पन्न होता है जो देखा जाता है, उसका
नाम दृष्ट है । स्त्री, श्रवण, पान, उपरूपन प्रादि वर्त्तमान
भोग साधन सभी वस्तु दृष्ट हैं । जो वस्तुमात्र भी प्रत्यक्ष-
गोचर होती है, वे सभी दृष्ट पदवाच्य हैं । भावे क्त ।
३ दर्शन, देखना । ४ राजाशक्ति स्वराट्स्मित चोरादि-
का भय । ५ पररुष्टमित दाडविलोपाटिका भय ।
(स्त्री०) ६ साक्षात्कार ।

सांख्यके मतमें प्रमाण तीन प्रकारके हैं—दृष्ट, श्रानु-
मान और श्राम्य वचन । इनमें प्रथम प्रमाणका नाम
दृष्टप्रमाण है जो सबसे बड़ा माना गया है । जो प्रत्यक्ष
हो जाता है, उसमें और किसी प्रकारका सन्देह नहीं
रहता । इसीमें दृष्टप्रमाण सबसे बड़ा है । इन्द्रिय-
साय बाह्य वस्तुके संबोधका अत्यवहित वाद ही जो
उसमें सम्बन्ध रखनेवाले वास्तुका स्वरूपबोधक वृत्ति
उत्पन्न होती है, उसीका नाम दृष्ट वा प्रत्यक्ष है ।

प्रमाण देखो ।

दृष्टकर्म (मं० त्रि०) जो कार्य दृष्ट वा परोक्षित इत्या
हो, जो काम देखा वा जांचा गया हो ।

दृष्टकृत (मं० स्त्री०) १ प्रहेनिका, पहेली । २ कोई ऐसी
कविता जिसका अर्थ देवल शब्दोंके वाचकार्यसे न
समझा जा सके, बल्कि प्रसंग वा रूढ़ अर्थोंसे जाना
जाय ।

दृष्टत्व (सं० स्त्री०) दृष्टस्य भावः दृष्ट भावे त्व । दृष्टका
भाव, देखनेका कारण ।

दृष्टदोष (मं० त्रि०) दृष्टो दोषः रागलोभादिर्यस्य । ज्ञात
रागलोभदोषादियुक्त, जिस मनुष्यके राग, लोभ आदि
दोष देखे गये हैं, उसे दृष्टदोष कहते हैं ।

दृष्टनट (सं० त्रि०) दृष्टः सन् नटः । दर्शन मात्र नट,
जो देखनेसे ही वरवाद हो जाय ।

दृष्टपृष्ठ (मं० त्रि०) दृष्टं प्रतियोधैः पृष्ठं यस्य । पला-
यमान, युद्धके समय भाग जाननेसे शत्रुगण उनकी पीठ
देखते हैं, इसीमें दृष्टपृष्ठसे पलायनका अर्थ होता है ।

दृष्टप्रत्यय (मं० त्रि०) दृष्टेन दर्शनैः प्रत्ययः विश्रामो
यस्य । दर्शन द्वारा क्षतदृष्टनिघण्ट, वह पका विचार जो
देख कर ही किया जाय ।

दृष्टरजम् (मं० स्त्री०) दृष्टं रजः श्रात्तं वं यथा । १
दृष्टरजस्का नारो, वह शरीर जिसकी रजस्वला दीर्घ
पड़े । २ तदुपलक्षिता प्रोदा स्त्री, जवान शरीर ।

दृष्टवत् (सं० द्वि०) १ प्रत्यक्षके समान । २ सांसारिक
लौकिक ।

दृष्टवाट (सं० पुं०) केवल प्रत्यक्षको ही माननेवाला
दार्शनिक सिद्धान्त ।

दृष्टवीर्यं (सं० त्रि०) दृष्टं वीर्यं येन । दृष्टवल, जिसको
शक्ति देखी वा जांची गई हो ।

दृष्टमार (सं० त्रि०) दृष्टः सारो येन । दृष्ट बल,
जिसकी ताकत देखी गई है ।

दृष्टादृष्ट (सं० त्रि०) १ वह जो देखनेका नहीं है, उसे
जिसे देखा हो । २ जो देखा और जो न देखा गया हो ।

दृष्टान्त (सं० पुं०) दृष्टः अन्तः निघयो यन्मिनः । १
उदाहरण, किसी विषयकी स्पष्टरूपसे जतानेके लिये वा
प्रमाणित करनेके लिये अन्य किसी परिज्ञात विषयका
उल्लेख । २ शास्त्र । ३ मरण । ४ अर्थात्तद्वारविषय ।
इका लक्षण साहित्यदर्पणमें इस प्रकार लिखा है—

समान धर्माक्रान्त वस्तुके प्रतिबिम्बनका नाम
दृष्टान्त है जहां दो विषय समान धर्मावलम्बी होंगे और
उनका प्रतिबिम्बन प्रणिधानगम्य साम्यत्व होगा अर्थात्
दोनों विषयोंकी समता प्रणिधान करनेसे हो बीच होगा,
वहाँ दृष्टान्तानुसार होता है । यह भाष्य और वैधर्म्य-
में होगा ।

उदाहरण—

“ अविदितशुणापि सत्कविभगितिः कर्णेषु वसति मधुधारा ।
अनधिगतपरिमलापि हि हरति दृष्टं मालतीमाला ॥”

(साहित्यदर्पण १० पं०)

सत्कवियोंकी वाणीका गुण नहीं जानने पर भी
अर्थात् अर्थादि नहीं मालूम होने पर भी उनकी सक्ति
कर्णोंमें मधुधारा वर्षण करती है, जिस तरह मालती
पुष्प-माला गन्ध नहीं होने पर भी वह नेत्रोंको सुरा
लेती है । यहाँ पर कर्णोंमें मधुधारा वसन और नेत्र

हरच दून दोनोंके मध्य एकद्वे तो नहीं है, पर कुछ प्रथि
 खान करके देखनेसे दोनोंकी समानता स्पष्टरूपसे मात्स्र
 को जायगी। यहाँ दो विषय हैं, एक मल्लविमचिति पौर
 दूधरा मासतोमाका। मल्लविमचिति की उदर 'अपि
 दितमन्वा' गुच अर्थात् अर्थादि दोय नहीं होने पर भी
 अर्थादि मनुष्यारा अथवा और दूधरा मासतोमाका इस
 पदमें 'अमविमत्परिमासा' मन्वपरिमात् नहीं होने
 पर सो मनुष्यहरच इन दो विषयोंको समता यद्यपि एक
 सो नहीं है, तोमो प्रविधान अर्थात् कुछ मनायोग्यतुत क
 दिपनेसे ये दोनों एकद्वे मात्स्र म पद्धति हैं। इसी कारण
 द्वयान्त यहाँ पर अङ्कहार हुआ। साधर्म्य और वैश्वर्य
 अर्थात् वैपरीत्यमें यह अङ्कहार होता है। पूर्वोक्त को
 उदाहरण दिया गया, वह मात्स्र्य द्वारा हुआ। यह
 वैश्वर्य का उदाहरण यो है—

'त्वमि द्वे उदाहरण्य न सरे मरवमवा।

द्वयपुरवमात्रिणे गामिन् इतरच हरे ॥'

(साहित्यदर्पण १० वरि०)

तुम्हारे प्रकट होनेसे कुरङ्गाओंको मदनबाधा दूर
 होती है। इन्हीं उदित नहीं होने पर कुसुदम इति की
 स्थानि देखो जाते हैं। यहाँ पर दोनोंको विपरीत मान-
 के समता को जानिये दृष्टान्ताङ्कहार हुआ। इस शोकमें
 कुरङ्गाओंको मदन बाधाका नाम और कुसुदम इतिको
 स्थानिका दर्शन, एकका दुःखनाय और दूसरेका दुःख-
 दमन इन दो पदोंको विपरीत मानके प्रविधान द्वारा
 समता को जानिये दृष्टान्ताङ्कहार हुआ। दृष्टान्त और
 प्रतिबन्धूयमा प्राय एकद्वे हैं, एक विचल नहीं है, कि
 यहाँ एक द्विवाका एकच-निर्देश होता, यहाँ प्रतिबन्धू-
 यमा अथवा होता। प्रतिबन्धूयमा देखो।

इ मीतमधुमेध कोषय पदायके मन्व पदार्थभेद,
 आदिके लोचन पदार्थसिद्धि एक पदाय। आदिके पदुसार
 मन्व पदार्थके विषयमें लोचिक कर्मों पौर परोचकोंका
 एक मत हो उन्हें दृष्टान्त कहते हैं। जिस प्रकथ बातकी
 कमी जानिये वा मानिये हो, नहीं दृष्टान्त है; 'यहाँ भुप्रा
 होता है यहाँ धाम होती है' इस बातको कह कर
 किसीने कहा "मैंने रघुवीर्य" तो यह दृष्टान्त हुआ।
 आदिके अन्वयमें उदाहरणके सिद्धे एकको अन्वयता होती

है अर्थात् जिस दृष्टान्तका भावहार तर्कमें होता है, उसे
 उदाहरण कहते हैं।

दृष्टान्तित (स० जि०) दृष्टान्त-अक्षरप यद्योत, को उदा
 हरण वा मिसालमें लिया गया हो।

दृष्टाय (स० जि०) दृष्ट-अर्थों सेन। १ विसर्ग अर्थ देना
 हो। २ जिसका अर्थ अष्ट हो। (पु) ३ यह अर्थ जिससे
 अन्वयके होताको किसी ऐसे अर्थका बोध हो जिसका
 प्रत्यय हम व भारतमें होता हो। जिस तरह 'मन्व'
 अर्थके अन्वयमें ही ऐसे मन्वोका बोध हो जाता है को
 हिन्दुजानके कचरो मार्गमें प्रयत्न देनी जाती है।

दृष्टि (स० जो०) दृष्ट माने जिन्। १ दर्शन, देखनेको
 शक्ति। २ इच्छापूर्व अथवाकर्म, निगाह, टक। ३ प्रकाश।
 ४ अक्षु। ५ अथवाकर्म, अक्षु, अक्षु। ६ अक्षुदृष्टि
 मिथ्याभावको नजर। ७ ध्यान अनुमान, विचार।
 ८ ध्यायको दृष्टि, ध्याय अक्षुद। ९ अक्षुदृष्टि शोचत।

दृष्टिभूत (स० पु०) दृष्टभूत देखो।

दृष्टिभूत (स० जि०) दृष्टि करती है शक्ति, तुमानमन्व।

१ दृष्ट का देखनेवाला। (जी०) २ अक्षुदृष्ट।

दृष्टिभेष (स० पु०) दृष्टि भेष। दृष्टिपाठ, अथवाकर्म।

दृष्टिमत् (स० पु०) दृष्टि यत्न विषयतया प्राप्त रवा
 त्तु। १ नैत्रका निवृत्त। २ नैत्रयत्न योगभेद, अथवाको
 एक भीमाय। (मि०) ३ को दृष्टिभेष न पढ़े को देखने
 में न पाया हो।

दृष्टिगुण (स० पु०) दृष्ट्या शुद्धति पद्ममयति यम गुण अन्वये
 अथवा अक्षु। १ आधादिमन्व, तोर आदिवा निमाया।
 २ नैत्र-शुद्ध।

दृष्टिगोचर (स० पु०) दृष्टिगोचर। नैत्रगोचर, वह जो
 देखनेमें आ सके।

दृष्टिदृक् (स० पु०) राजा दृष्ट्यादृक् एक पुत्रका नाम।

दृष्टिनिपात (स० पु०) दृष्टिनिपात। दृष्टिनि-अपे,
 अथवाकर्म।

दृष्टिप (स० पु०) दृष्टि विवति पान्वा। दिग्गमभेद।

दृष्टिपथ (स० पु०) दृष्टि पन्वा। दृष्टिका पथ, नजरका
 पद्धति।

दृष्टिपात (स० पु०) दृष्टि पात। दृष्टिनि-अपे,
 अथवाकर्म।

दृष्टिपूत (स० ति०) १ जो देखनेमें शुद्ध हो । २ जिसके देखनेसे आँखें पवित्त हों ।

दृष्टिपूतना (स० स्त्री०) लडकोंका स्त्री-ग्रहविशेष ।

दृष्टिप्रदा (स० स्त्री०) नेत्ररोग, आँखको बीमारो ।

दृष्टिकल (स० स्त्री०) एक राशिमें स्थित ग्रहके दूररो राशिमें स्थित ग्रह पर दृष्टि करनेसे जो फल होता है, उसे दृष्टिकल कहते हैं । बृहज्जातकमें दृष्टिकलका विषय इस प्रकार लिखा है—

मेघराशिस्थित चन्द्र यदि मङ्गलसे देखा जाय, तो भूपाल, बुधसे पण्डित, बृहस्पतिसे राजरुदय, शुकसे गुणवान्, शनिसे तस्कर और रविसे भृत्य होता है । वृषराशिस्थित चन्द्र मङ्गलसे देखे जाने पर धनहीन, बुधसे चोर, गुरुसे माननीय, शुकसे भूपाल, शनिसे धनवान् और रविसे भृत्य होता है ।

मिथुन राशिस्थित चन्द्र मङ्गलसे दृष्ट होने पर शास्त्र-अध्ययायो, बुधसे क्षितिपति, गुरुसे पण्डित शुकसे भयहीन, शनिसे तन्त्रमकारो और रविसे दृष्ट होने पर धनहीन होता है । कर्कट राशिस्थित चन्द्र मङ्गलसे दृष्ट होने पर योद्धा, बुधसे कवि, बृहस्पतिसे पण्डित, शुकसे भूपाल, शनिसे अस्त्रजीवी और रविसे धनहीन होता है ।

मिथुनराशिस्थित चन्द्र यदि बुधसे देखा जाय, तो मनुष्य ज्योतिषवेत्ता, गुरुसे धनवान्, शुकसे नरयेष्ठ, शनिसे क्षुरकर्मकर, रविसे नरपालक और मङ्गलसे दाख पहने पर प्राणिवातरु होता है ।

वृश्चिक राशिस्थित चन्द्र बुधसे दृष्ट होने पर युगल कन्तानोत्पादक, बृहस्पतिसे दृष्ट होने पर कुष्माङ्ग, शुकसे वस्त्रभारागकर्ता, शनिसे अङ्गहीन, रविसे धनहीन और मङ्गलसे दृष्ट होने पर भूपाल होता है ।

धनुराशिस्थित चन्द्र बुधसे दिग्वाङ् पहने पर ज्ञातिभ्रों का अधीश्वर, बृहस्पतिसे क्षितिपति, शुकसे मनुष्योंका आययस्वल् तथा शनि, रवि और मङ्गलसे देखे जाने पर जातवालका दाम्भिक और शठ होता है ।

मकरराशिस्थित चन्द्र बुधसे दृष्ट होने पर राजाधिराज, बृहस्पतिसे दृष्ट होने पर राजा, शुकसे पण्डित, शनिसे धनवान्, सूर्यसे दरिद्र और मङ्गलसे भूपति होता है ।

कुम्भराशिस्थित चन्द्र यदि बुधसे देखा जाय, तो जातवालक भूपाल, गुरुसे राजतुल्य और शुक, शनि, रवि तथा मङ्गलसे परस्त्रीमें आसक्त रहता है ।

मीनराशिस्थित चन्द्र बुधसे देखे जाने पर उपहास-वेत्ता, बृहस्पतिसे नरपाल, शुकसे पण्डित एवं शनि, रवि और मङ्गल इन पापग्रहोंसे दृष्ट होने पर मनुष्य पापात्मा होता है ।

मेघादि द्वादशराशिके अर्ध भागको होरा कहते हैं । यह होरा रवि और चन्द्रमाका हुश्रा करता है ।

सूर्यादि ग्रहगण अपनी अपनी अधिष्ठित राशिके जिस होरामें रहेंगे, यदि चन्द्रमा उस समय स्वयं अधिष्ठित मेघादि द्वादश राशिको किसी एक राशिमें सूर्यादि ग्रहके अधिष्ठित होरामें रह कर उन सब ग्रहोंसे देखे जाय, तो शुभफल होगा ।

मेघादि द्वादश राशिको किसी एक राशिमें चन्द्रमा यदि रविके होरा भागमें रहे और मेघादि द्वादश राशिके रविके होराभागस्थित रवि आदि ग्रहोंसे देखे जाय, तो अत्यन्त शुभ होता है । फिर मेघादि द्वादश राशिको किसी एक राशिमें चन्द्रके होराभागस्थित सूर्यादि ग्रहोंसे देखे जाने पर भी शुभकर होता है । इसका विपरीत होनेसे अर्थात् रविके होराभागस्थित ग्रहोंसे तथा चन्द्रके होराभागस्थित चन्द्र सूर्यके होराभागस्थ ग्रहोंसे दृष्ट होने पर अशुभ होता है । अधिपति शुभग्रहसे देखे जाने पर शुभ और पापग्रहसे देखे जाने पर मध्यफल प्राप्त होता है । यदि रवि आदि ग्रहगण मित्रभवन और स्वभवन गत हो कर दृष्टिप्रदान करें, तो शुभ होता है । फिर शत्रुभवन गत हो कर दृष्टिप्रदान करनेसे अशुभ फल मिलता है ।

ग्रहोंको दृष्टिके अनुसार जो सब फल ऊपर लिखे गये, वे हो लग्नके फल हुआ करते हैं । (बृहज्जातक)

जिस राशिमें राहु रहता है, उस राशिसे दक्षिणावर्त्तको गणनासे पञ्चम, सप्तम, नवम और द्वादश राशिमें राहुको पूर्ण दृष्टि, द्वितीय और दशम राशिमें त्रिपाद दृष्टि, तृतीय, षष्ठ, चतुर्थ और अष्टम राशिमें अर्धदृष्टि रहती है और जिस राशिमें राहु रहता है, उस राशिके फिर ग्यारहवें स्थानमें राहु और केतुको दृष्टि नहीं रहती । इन सब दृष्टि और ग्रहोंके बलावलके अनुसार फलाफलका विचार किया जाता है । (ज्योतिषवस्त्र)

दृष्टिबन्ध (स० पु०) दृष्ट्यात्, जातुं, दोषवत् टो ।
 दृष्टिबन्धु (स० पु०) दृष्टेर्न बन्धु बन्धुरिव धाद्वयापाद-
 नात् । अघोत शुभम् ।
 दृष्टिमण्डल (स० स्त्री०) दर्शनम् ।
 दृष्टिमत् (स० लि०) दृष्टिर्निश्चयि चम्ब दृष्टि मत्तुप ।
 दृष्टिबुद्ध, त्रिषु दृष्टि चो ।
 दृष्टिवीनि (स० पु०) ईर्ष्या, शोच ।
 दृष्टिरोम (स० पु०) नेत्ररोग, पापिको बीमारी ।
 दृष्टिरोध (स० पु०) १ दृष्टिको रोध नगर पञ्च ननेमि
 क्वाकट । २ वाचभान, पादु योड ।
 दृष्टिबन्ध (वि० वि०) १ दृष्टिबाधा । २ प्राणी जानकार ।
 दृष्टिबन्ध (स० स्त्री०) धर्मको पक्ष ।
 दृष्टिवाद (स० पु०) जैनदार्शनानुसार पञ्चमविध भूतके
 हादय अहोमिसे धारणकी बाध । जे हादगाह जेन
 धर्मके मूल धर्म हैं । खारद पद तथा यह दृष्टि-
 वाद मिश्रता नहीं । जेनाबाय मन्त्रमूर्तिरचित
 मन्त्राबांमारोपकमें इसका जो बन्ध है उससे पाया
 जाता है, कि इसमें चन्द्र सूर्य आदिको गति पादु बादि,
 प्राणापान चिचिक्का, मन्त्र तन्त्र तथा यनेक प्रकारके
 विषय सम्पन्नित हैं ।
 दृष्टिवादमें विद्यावादिदोषका मत विरुद्ध मानके
 पासोचित हुआ है । यह पांच मार्गमें विमल है—परि-
 बन्ध, सुख, प्रथमानुयोग, पूवमत और सुखिका ।
 परिबन्धके मन्त्र—
 १। चन्द्रमन्त्र—इसमें जिनानिच पञ्चको मन्त्रि, मति
 पाहु, विभूति आदिका वर्णन है । इसको पदम ज्या
 १११००० है ।
 २। सूर्यमन्त्र—इसमें सूर्यको पाहु परिवार, चार
 और केन्द्रादिसम्बद्ध बर्णित है । पदम ज्या १०१००० है ।
 ३। जम्बूद्वीपमन्त्र—इसमें जम्बूद्वीपका नाम, भूमि
 और कुलपता आदिका विषय बर्णित है । इसको पद-
 म ज्या १२१००० है ।
 ४। होपकारिणमन्त्र—इसमें पद पद होय, वस्तु और
 पञ्चतादिका विषय बर्णित है । पदम ज्या १२११००० है ।
 ५। व्याघ्रमन्त्र—इसमें ज्ञानकारके द्रव्योका शुभ-
 पर्याय और अशुभादिका बर्णन है । पदम ज्या
 १२११००० है ।

सुख मित्रा कर परिबन्धको पदम ज्या १२११००० है ।
 सुख—मानव द्वारा कामके अर्द्धतय और भोगानि जो
 सब सुधा करते हैं, सुखमें नहीं सब विषय बर्णित है ।
 इसको पदम ज्या १२००००० है ।
 प्रथमानुयोग—इसमें ११ प्रमाका सुखयोग अस्फाटि
 बर्णित हुए हैं । पदम ज्या १०००० है ।
 पूवमतके मन्त्र—
 १। कल्याणपूव—इसमें जोबादिबी कल्पति नाम और
 मित्रिका विषय बर्णित है । पदम ज्या १०००००० है ।
 २। अघायकोपूव—इसमें अज्ञसमूहके विषय और
 सुख तात्पर्य निर्णयित हुए हैं । पदम ज्या ११००००० ।
 ३। वीथ प्रवादपूव—अज्ञो, अज्ञो और देवादिना
 यज्ञिज्ञान और योगादि निदिष्ट हुए हैं । पदम ज्या
 १०००००० है ।
 ४। अस्तिनाथि प्रवादपूव—इसमें अज्ञके पञ्चाधि-
 कायका अस्तिनाथिका विषय पासोचित हुआ है । पद-
 म ज्या १०००००० है ।
 ५। ज्ञानप्रवादपूव—इस अन्तमें पञ्चज्ञान और तीन
 प्रकारका अज्ञान तथा जो ज्ञानाज्ञान धारण करते हैं,
 सर्वोका विषय बर्णित है । पदम ज्या १०००००० है ।
 ६। अयप्रवादपूव—भाग्युनि घणोत् वाक्य धर्म,
 सुख और अत्यादिका विषय सिद्धा है । पदम ज्या
 १०००००० है ।
 ७। धामप्रवादपूव—इस अन्तमें जोबादि बर्णन,
 अज्ञत्व और भीकत्वादि निकल्पित हुए हैं । पदम ज्या
 ११००००० है ।
 ८। धर्मप्रवादपूव—इसमें मानके धर्मसम्बन्धमें
 बहुतही बातें लिनी हैं । पदम ज्या १२०००००० है ।
 ९। प्रत्याप्यानपूव—इसमें जोको का प्रत्याप्यान, प्रत-
 निवसादि अस्वय बर्णित है । पदम ज्या १३००००० है ।
 १०। विद्यानुवादपूव—इसमें सब विद्यायोग
 निमित्तादि अस्वाद्युका विषय सिद्धा है । पदम ज्या
 ११००००० है ।
 ११। अज्ञापूव—इसमें ११ प्रमाका सुखयोगके
 पञ्चाकार धर्मसमूहका विषय बर्णित है । पदम ज्या
 ११०००००० है ।

के माय माहमोहा विनाह कृपा वा । एको त्रिजिवाहं
मर्मसि महाभीर शिवाभी वा जल म कृपा पा ।

आनोमय य जी जगतात्त यहाँकी भाय मीय करते था
रुहे थे । पर १८३१ ई०में जब बाजीरावसे यहीन एक
दक परत नेनाते था जब यहाँ पापय मिया तब इन्द्रिय
मयमें गुरुने जादोनाको मयसि सार कर ली । जादोनाके
यज्ञके बरारमें श्री मय देवत्यान बनाये गये हैं, उनमेंसे
इसी जयरका भावाभोवा मन्दिर विख्यात है ।

कार्तिक मसौमिनि बावाभोवा मसौमय होना है
त्रिसमें प्राय पात्र माह रूपये लूचं किए जाते हैं । जो
मय देवार्थन करमे धारते हैं वे मयसे मय भर पीठ
प्रसाद पाते हैं । अयाम घोर रोगमका अयमाय यहाँ
पधान है ।

टेकवाहट-मरारके कुलदाना त्रिलोके पन्नायत एक महर ।
यह यथा० २० ३१ ७० घोर देगा ०६ १० ३०
पु०में देवमहा नहोके त्रिनारे पनमित है । पदके देवका
नाम टेजनी था । यहाँ बहूतके त्रिभू देवमन्दिर से जो
घोरइतिहसे मीत्र हुए नामोरे उद्योगमें तबइ मयम कर
हामि गये ।

देव (हि० श्री०) पदमोचन । टेकनीको त्रिवा या
भाह ।

देवना (हि० त्रि०) १ पदमोचन करना । २ निरोचय
करना, त्रांच करना । ३ पन्थेयप करना, हुकुना,
कोचना । ४ परीका करना, परचना । ५ निगरागो रचना
ताकने रचना । ६ समझना, सोचना । ७ अनुमत्र
करना, मोगना । ८ पञ्चजन करना, बाँचना । ९ पीडा
करना मुचनेयका पता लगाना । १० स लोचिन करना
सोचना ।

देवमान (हि० श्री०) १ निरोचय त्रांच पड़तान । २
साक्षात्कार, दर्शन ।

देवम (हि० श्री०) निरोचय, देवमान ।

देवाक (हि० वि०) १ जो देवम देखनेके लिये हो,
झुठो ७ कृत्त मङ्कवाया । २ वनावटी ।

देवादेवी (हि० श्री०) साक्षात्कार, दर्शन ।

देवमात्री (हि० श्री०) देवमाह देवी ।

देवाव (हि० पु०) १ इन्द्रको बीमा, नगरको पहुँच ।

२ रूपर ग टिका-को त्रिवा या भाह, वनाह । ३ डाट
वाट, तङ्कठ मङ्कक ।

देवावट (हि० श्री०) १ रूप रम दिनामिकी त्रिवा या
भाह । २ डाट वाट, तङ्कठ मङ्कक ।

देवावना (हि० त्रि०) रिचना देवी ।

देवीधा (हि० वि०) देवाक देवी ।

देग (फा० पु०) एक प्रकारका बड़ा बरतन जिसका मुँह
घोर पीठ चौड़ा होता । इसमें राना पनाया जाता है ।

देम (हि० पु०) एक प्रकारका वात्रपयो ।

देमवा (फा० पु०) ब्रोटा देग ।

देगको (फा० श्री०) ब्रोटा देगवा ।

देदोचमान (म० त्रि०) आन्वलयमान, पञ्चम पशाय
वृक्ष दमनका कृपा ।

देन (हि० श्री०) १ देनेको त्रिवा या भाह दान । २
प्रदत्त वस्तु ।

देनदार (हि० पु०) देवो, कर्त्तदार ।

देनदारो (हि० श्री०) देवोको जोमिको पदव्या ।

देनलीन (हि० पु०) महाजकोका शयमाय

देना (हि० त्रि०) १ त्रिना वस्तु परमे धयना फल
हडा कर लस पर दूमेरका सन्ध स्थापित करना, प्रदान
करना । २ धीपना, इकाई करना । ३ बमाना, बाध
पर रचना । ४ प्रकार करना, माना । ५ स्थापित करना
रचना । ६ बंद करना, सिङ्गना । ७ कल्पक करना
निष्ठापना । ८ पतुमय कराना, मोयाना ।

देना (हि० पु०) देव, कर्त्त ।

देमागिरि-चइपाम पाव अयदेगमें बर्त्तुसो लगीका एक
जनप्रपात । इसी प्रपातके यादने बर्त्तुसो नदीका
पाकार कुछ बड़ मया है । १८०२ ई०में देमागिरि
प्राममें बरघोर पन्थाय बनन पदाबै बैचनेके लिये
एक डाट जावित हुई है ।

देमाजपुर-रिवाजपुर देवो ।

देव (म० वि०) दा बर्त्तुबि वत् । दातक, देमि योम्य ।

देर (फा० श्री०) १ पतिधान, विवध । २ समय,
मञ्ज ।

देव (म० पु०) दिव पच । १ पसर, धुर, देवना ।

२ भाजा । ३ मीच । ४ पारद, पावा । ५ बाधयोको एक

उपाधि । ६ देवदारु, देवदार ! ७ पूज्य व्यक्ति । ८ दोम, तीजोमय व्यक्ति । ९ परात्मा । प्रधानतः स्वर्गयायीको देव वा देवता कहते हैं । इस नामार्थमें भी अष्ट व्यक्ति देव कहनाते हैं, जिन तरह भूदेव अर्थात् ब्रह्माण, नरदेव अर्थात् राजा । कोई कोई देव नष्टको अर्थार्थवाचक कहते हैं जैसे नरदेव नरअष्ट । देवता शब्दमें विन्तुन विदरण देखो । १० एक प्राचीन वैवाकरण । ११ आतुर-संन्यासकारिका नामक धर्मशास्त्रकार । १२ देवर । १३ ज्ञानिन्द्रिय । १४ ऋत्विक् ।

देव (फ्रा० पु०) दैत्य राक्षस ।

देव—हिन्दीके एक पण्डित कवि । ये जिला मैतपुरीके शाल्यने गांवके रहनेवाले थे । इनका जन्म मं वत् १६६१ में हुआ था । ये हिन्दी भाषा काव्यके आचार्य माने जाते हैं । गिवसिंह-अरोजके कर्त्ताको इनको बर्नाई ७० पुस्तकोंका पता चला था जिनमेंमें कुछ ग्रन्थके नाम ये हैं— प्रेमतरङ्ग, भावविलास, रसविलास, रमानन्दनहरी, सुज्ञानविनोद, काव्यमायन, विद्वान्, अटयाम, देवदाय-प्रपञ्चनाटक, प्रेमदीपिका, सुमिलविनोद और राधिका-विलास ।

२ इनका दूसरा नाम चाण्डनिष्ठास्वामी था । ये काशीमें रहते तथा संस्कृतके बड़े पण्डित थे । एक बार इन्होंने शास्त्रार्थमें अपने गुरुका परात्म शिष्या था जिनमें इन्होंने बड़ा कष्ट हुआ । तभीमें इन्होंने काठको जाभ गया और मुंडमें डाल लो । दे पाटी पर लिख कर लोभमें धातघेत किया करते थे । काशीनरेश महाराज अम्बरो-नारायणसिंहने इनमें उपदेग लिया था । इन्होंने 'विनया चत' आदि अनेक भाषाके ग्रन्थ बनाये हैं ।

देवप्रशो (हि० वि०) जो देवताके अंगमें उत्पन्न हो ।
देवस्य (सं० पु०) देवताओंके लिये कर्त्तव्य, अर्घ्यादि ।
देवस्यधर्म (सं० पु०) देवताओंके ऋषधर्मके लिये कर्मका प्रकृतिवद्भावः । धर्मकी स्त्री भानुगर्भजान पुत्र, ये कश्यपकी कन्या थीं ।

देवस्यपि (सं० पु०) देवताके ऋषिः पूज्यत्वात् प्रकृति-वद्भावः । देवर्षि नारदादि । नारद, अत्रि, मरुचि, भर-हाज, पुण्ड्र्य, पुनह, क्रतु, भृशु इत्यादि ऋषि देवर्षि माने जाते हैं ।

देवक (सं० पु०) ? एक बहुव्रीहियोग्य शब्द । ये श्रीकृष्णके मातामह थे । इन्होंने गम्भयपतिके पंगायतार रूपमें जन्म ग्रहण किया था । इनके चा सुत्र और मानकन्याएँ थीं जिनका शिवाएँ बसुदेवके साथ हुआ था । दृश्यनेन इनके बड़े भाई थे । २ युधिष्ठिरके एक पुत्रका नाम । ३ देव, देवता ।

देवक—एक हिन्दी-कवि । सूर्यमल्ल नामक कविने इनका नाम अपने १८८७ सं०में बनारसि दृष्ट ग्रन्थमें लिखा है । इसमें प्रकट होता है कि ये सं० १८८७ में विद्यमान थे ।
देवकन्या (सं० स्त्री०) देवताका पत्नी, देवा ।

देवकपास (हि० स्त्री०) रामकपास, नरसा, मनवा ।

देवकण—१८५७ ई०में जो गिवाही-विद्रोह हुआ था, उसमें देवकण अंगरेज गवर्मेण्टके विपक्षमें थे । इन्होंने चिटा और यत्नमें मधुरमें चारों ओर विद्रोहको आग धधकने लगी थी । ५ अखूवरको आगरमें मजिस्ट्रेट माहव सेना प्राप्त लेकर मधुरा पर चढ़ाई करनेके लिये पहुँच गये । विद्रोही-सेनापति देवकण मजिस्ट्रेटमें कैद कर लिये गये । पोछे कर्नल कटनर मधुरे ३ भोतर जा कर विद्रोहियोंको माग्लना देते हुए धागा तक चले गये । तभीसे मधुरेमें और जोड़े गड़बड़ा न मची ।

देवकर्म (सं० पु०) देवपियः कर्म इव । सुगन्धि द्रव्यविशेष । यह चन्दन, अमर, कपूर और केशरको एकस मिलानेसे बनता है ।

देवकर्म (सं० पु०) वह कर्म जिसमें देवता प्रसन्न किये जाय ।

देवकलि-शशिणी विशेष । इसका नामान्तर देवगिरि है ।
देवगिरि देखो ।

देवकवि—हिन्दीके एक कवि । इन्होंने १७२७ सं०में रागमाला नामक एक पुस्तक लिखी है जिसमें इन्होंने अमोरखाको अपना आश्रयदाता बतलाया है ।

देवकांडर (हि० स्त्री०) एक बहुत छोटा पौधा । इसको पत्तियों और डंठलोंमें राईकी-सी भाला होता है । यह कच्चे करारों वाली बड़ी नदियोंके किनारे पाई जातो है । पत्तियाँ कटावदार और फाँकीमें विभक्त होती हैं । चमरी हुई गिलटो वैठानमें यह पौधा बहुत उपयोगी है ।
देवकाम्यजा (सं० स्त्री०) देवकस्य काम्यजा कन्या । देवकी ।

देवकार्य (स० श्लो०) देवप्रियायं कार्यं । देवप्रियायं
श्रीम पूजादि कार्यं, देवताधीनो प्रथम करनीये विधि
किया हुआ काम ।

देवकाका—तिरहुत ब्रह्मिनिं सोतामारो रास्तिंके अपर पत्र
लिखत एक घाम । यहाँ कई एक बड़े मन्दिर हैं जिनमें
एक शिवलिंग प्रतिष्ठित है । फान्गुन मासमें इस शिव
लिंग पर बस चतुर्मासिक विधि बहुतमें शीघ्र समाप्त
होति हैं ।

देवकाध्व (स० श्लो०) देवमिव काठ । देवदार, देव
दार । इसका पर्याय—तूतिचाह, मद्रकाठ, चुलाहक,
दिग्गदाहक और काहदाह है । इसका गुण—तिष्ठ
लघु, बभ्रु, श्लेष्म घोर नाडुनायक है ।

देवकिरि (स० श्लो०) देव शिव किरतीति कृ-क
श्रीराष्ट्रियायुं शीय । एक रातिची लो मंत्ररागची मार्या
मानो जातो है ।

देवकिन्निव (स० श्लो०) देविन क्ततं विधिवत् पविष्ट-
कर्म, देवस्तन पविष्ट कार्य ।

देवका (स० श्लो०) देवका-दोय । देवकाची कन्या, यक्ष-
देवकी थी । पर्याय—देवकी कल्पजननी और देवका-
जजा । जब बहूदेवके नाश इनका विवाह हुआ, तब
भारद्वाज पाकर मनु राक्षे राजा अंधवि कहा, 'मनु, रामें जो
तुम्हारी कपिरी बहन देवकी है उसके पाठके सम से जो
पुत्र उत्पन्न होगा वही तुम्हारा वध करेगा । धन तुम
धर्मोके सावधान हो जाओ ।' इतना कहकर नारद पक्ष
दिडे । क हने जाइये पशौर, सोकर अपनी पामीय तथा
बर्षीये कहा, 'तुम लोग देवकीका गर्भ नष्ट करनेमें
सावधान रहना, एक एक क्षणके देवकीके सब नमं नष्ट
कर देना । देवकी विष्टा ब्रह्मदेवे श्लेष्माहवार हमारे
धर्मपुरमें रहे और धर्मपुरकी जियां उसको पच्छी
तरह बिना छुट्टवा करतो रहे' । क हने एक एक करके
देवकीके का बर्षाओ मरना काला । जब सातवां शिशु
गर्भमें थाका, तब योगमायाने अपनी प्रविधे उस शिशुको
देवकोके गर्भसे शीघ्र कर रोहिणीके गर्भमें कर दिया ।
इकर तो यह तस्याय होने लयो कि देवकीका धातवां गर्भ
क्या हो गया । रही भीय देवकीको पार्थमें समका
उच्चार हुआ । इस समय कल पर कड़ा पहरा बैठाका

गवा । समय पूरा हो न होने पाया जा, कि देवकोके
गर्भमें पाठके मासमें हो मादो बढी पहलीकी रातको
श्रीकृष्णका जन्म हुआ । उही रातकी यमोदाके एक कन्या
उत्पन्न हुई । यक्षदेव रातो रात देवकोके शिशु पौष्ट्य
को मोठमें लेकर यमोदाके पास दे पाये और यमोदा
की कन्याको लाकर उहीने देवकोके पास सुका दिया ।
बाद बसुदेवने क यक्षे पास जा कर कहा, कि यक्षे एक
कन्या उत्पन्न हुई है । यह सुनकर क लनी उस कन्याको
ले कर लो हो ज्यार पर पटकनेकी या, लोको बह कन्या
को योगमाया को लकके हाथसे छुट कर अवरके बोली,
'तू इस पापके बहुत अस्व भाय हो जायेगा ।' इतना
कह कर बह धाकाय-भारमें कड़ कर विन्यपर्वत पर
पा बैठी । पीछे कल्पमें क सवा बच कर देवकी और बसु-
देवकी कहार किया । देवकी और बसुदेव पूषं कर्णमें
कमय हुत्रि और सुतल नामके प्रविष्ट थे । भगवान्के
बरने लकीने पहिनि और कल्प ही कर कामनयो
भगवान्को सुत्र रूपमें प्राप्त किया । पहिनिने जब कल्प
को बहककी पाय लोडा देनेके रीका का, तब कल्पके
पापके मातृको योनिमें कन्या जन्म हुआ और ये देवकी
नामके प्रविष्ट हुए । बहुरेन, कल्प और कब रहेको ।

मधुरेमें इनको मुनि प्रतिष्ठित है । दार्शन करनिसे
सब प्रकारके पाप जाते रहते हैं । (५४०)

देवकीनन्दन (स० पु०) देवका-नन्दनः १ तत् । यक्ष-
देवकी थी देवकीके पुत्र श्रीकृष्ण ।

देवकीनन्दन—१ एक हिन्दी-कवि । इनकी मिनती
गाठकारोंमें होती थी तथा इन्होंने जयनरसि इको,
शोकोशोतय और बसुदान नामक ग्रन्थ लिखे ।

२ हिन्दीके एक कवि । इनका जन्म क बसु १८१८
में मुजफ्फरपुरमें हुआ था । २४ वर्षकी पक्का तथा ये
मुजफ्फरपुर तथा गया जिलोंमें हो रहे और इससे पीछे
वे कायोंमें रहने लगे । इन्होंने कबलोंको पच्छी घरे की
पो । अपनी देखे हुए काली तथा कबली का बर्षान
इन्होंने अपनी कय्यासोंमें कबु किया है । इनके बनावे
हुए बन्दूकाला, बन्दूकालासक्ति, लोभमोहकी, कुसुम-
कुमारो बीरन्दरी, काकरकी कोठरो पादि कय्यास
परम शोकायित तथा मनोहर हैं । इनके प्रपन्थाय ऐसे

रोचक हैं कि बहुतसे लोगो'ने उन्हें पढ़ कर जो हिन्दी सोची। इन्होंने परिष्ठत माधवप्रसादके सम्पादकत्वमें सुदर्शन नामक एक उत्तम मासिकपत्र भी निकाला था, पर वह बन्द हो गया। इनकी भाषा बहुत सरल होती है और वह मनोहर भी है। इनका हालमें ही परलोकवास हुआ है।

३ कानोजसे एक मौलको दूरो पर मकरन्द नगर नामक ग्राममें कविभूषण देवकीनन्दनका जन्म स० १८०१ में हुआ था। इनके पिताका नाम था सुपत्नी शूक्त

देवकीनन्दनजी अवधूतसिंह रुहामज जिला हरदोईके यहाँ रहते थे। इन्होंने शृङ्गारचरित और अवधूत भूषण नामक ग्रन्थ यथाक्रम स० १८४१ और १८५७में लिखे। प्रथमोक्त पुस्तकमें नायक तथा नायिकाका भेद, भावादि, हाव, गुण, अनुप्रास और अलङ्कारका वर्णन है। यह ग्रन्थ अस्त्रा तथा इसकी भाषा ललित है। अलङ्कार विभाग प्रायः दोहेमें कहा गया है। इनकी कवितामें दो एक जगह कूट भो पाये जाते हैं। शेषोक्त अवधूत-भूषण नामक पुस्तकमें कवि तथा राजवंशका पूरा वर्णन किया गया है। तदनन्तर अर्थालङ्कार एवं शब्दान्तरका व्यौरा है। देवकीनन्दनकी कविता सराइनोय है। उसमें ऊँचे भाव बहुतायतसे आए हैं। काव्यांगोंका चमत्कार इस कविने अच्छा दिखाया है और पाठकोंको विचारशक्ति भी पैनी करनेका मसाला छन्दोंमें रखा है। इनको अनेक ललित कविताओंमेंसे एक उदाहरणार्थ नीचे देते हैं,—

“मोतिनकी माल तोरि चौर सब चीरि डारे
फेरि कै न जँहों आली दुःख विकरारे हैं।
देवकीनन्दन कहै खोखे नाग छैननके
अलकें प्रखन नोचि नोचि निरवारे हैं।
मानि मुख चन्द भाव चोच दँई अघरन
तीनों ये निकुंजन में एक तार तारे हैं।
ठौर ठौर बोलत मराल मतवारे वैसे
मारे मतवारे ल्यों बकोरे मतवारे हैं ॥”

देवकीनन्दनः कविराज—एक प्रसिद्ध वैष्णव ग्रन्थकार। इन्होंने आचार्यचिन्तामणि, एकादशीत्रतनिर्यय, चरितचिन्तामणि, नामरत्नविनयण, बालबोध, रसामिधे महा-

काव्य और वैष्णवाभिधान आदि संस्कृत ग्रन्थ प्रथयन किये हैं।

देवकीनन्दन शूक्त—एक सुप्रसिद्ध हिन्दीकवि। ये मकरन्दपुर जिला कानपुरके रहनेवाले थे। इनका जन्म स० १८००में हुआ था। इनकी कविता मगध और मनोहर होती थी। इनके और दो भाई थे, ये तीनों ही कविता करनेमें पहले निपुण थे। इनका बनाया “नसुमिधे” नामक एक ग्रन्थ है।

देवकीपुत्र (स० पु०) १ देवकीनन्दन श्लोकण। २ पुरुष यज्ञदर्शन विषयमें घोर नामक आन्तरिकके शिष्य श्लोकण। इनकी माताका नाम भी देवकी था।

देवकीनाट (स० पु०) देवकी माता यस्य। समासात् विधेरनित्यत्वात् न कपः। श्लोकण।

देवकीय (स० त्रि०) देवस्येदं गहादित्वात् क। देव सम्बन्धीय, देवताका।

देवकीर्ति—१ एक प्राचीन संस्कृतके ज्योतिषी। मद्योत्पन्ने इनका मत उद्धृत किया है। २ वर्षदेगना नामक संस्कृत वराकरणके रचयिता। रायसुकुटने इनकी कथा उद्धृत की है।

देवकुण्डकं (स० पु०) सुनिपणक शाकभेद, एक प्रकारका माग।

देवकुण्ड (स० स्त्री०) देवकृतं कुण्डं। १ वह जलाशय जो किसी देवताके निकट या नाम पर होनेके कारण पवित्र माना जाता है। २ प्राकृतिक जलाशय, वह गङ्गा या ताल जो आपसे आप बन गया हो।

देवकुतुम्बक (स० पु०) महाद्रोणपुष्प।

देवकुम्भ (स० पु०) स्वनामख्यात वृक्षविशेष, तुम्बा।

देवकुरु (स० पु०) जम्बूद्वीपके कुछ खण्डोंमेंसे एक खण्ड। यह सुमेरु और निपथके बीच माना गया है।

देवकुरुम्बा (स० स्त्री०) महाद्रोणी, बड़ा गुमा।

देवकुल (स० स्त्री०) देवाय कोलतीति कुल संघाते क।

१ देवगृहभेद, एक प्रकारका देवमन्दिर जिसका द्वार अत्यन्त छोटा हो। देवानां कुलं। २ देवताओंका वंश।

३ देवतासमूह।

देवकुला—प्रभासखण्डोक्त पवित्र नदी।

देवकुल्या (स० स्त्री०) देवकृता कुल्या अल्पसरित्। १ देव-

नदी गङ्गा । २ मराठि घोर पूर्बिमाकी कान्ता ।
देवकुमुद (स० झी०) देवदिय कुमुद पुण्य यण्ड)
बनङ्ग बौन ।

देवकूट (स० झी०) १ बसिष्ठाश्रम दक्षिणवर्तिन पायम
मेट, एक पवित्र पायम की वसिष्ठकी पायमके निबट
या । २ सिन्धी पूर्बलिखित एक पर्वत ।

देवहस्त—हिन्दीके एक कवि । इनकी कविता सराइनोम
जोगी की । उदाहरणार्थ एक लीपि देते हैं—

“हारे हारे जिरे नदी हव राम भवभरि ।
बौरनकी इन्देय करत है अरे हव वरुडी तमभरि ॥
जोम पस्तो ररत निमि बाबर क्यथा कानी है क्यमी ।

देवहस्त अनुभूते सुमान कर है गीक गरी लीङ्गावतमि इ”
देवकीबर (स० पु०) सुर बुवाग, एक प्रकारका सुवाग ।

देवबोट—दिनात्रपुरकी भन्तमंत एक प्राचीन नगर । महा
भारत बन्धुपारके गौड़ शाहमण्डके बाद कुछ दिने तक
इन्हीं यहाँ राजधानी बनाई थी । इसी खानमें ६२
हिन्दुकी पत्नीमर्दनमें लक्ष्मी मार डाला था । इमदमें कि
निबट गङ्गापारमें त्रौ भव सावयय है, मर्दों लौकल्यान
साइकी मतानुसार प्राचीन देवबोट भवस्थित था । धमी
मी इसके निबटवर्ती समस्त खान देवकाठ परगनेके
पचीन हैं ।

देवचक्र (स० झी०) देवान् चक्रं बलं यत्न । कण्ड ।

देवधर (स० झी०) देवानां धर । १ देवताओं का धर,
पुष्पखान । २ फल ।

देवधिय (स० पु०) विद्यालय नामक ग्रन्थके रचयिता ।

देवघात (सं० झी०) देविन खातं, पक्षिमत्वादस्य तयात्वं ।
देवघातक पक्षिमत् कलाग्रय, पिचा तान या गङ्गा की
पापके पाप बन गया हो । मनुने लिखा है, कि नदी,
देवघात तहाग करीबर, मर्दों घोर मस्त्रबर्षि निबन्धान
करना चाहिये ।

देवघातक (स० पु० झी०) देवघातमैव स्यात् बन् ।
१ पक्षिमत् कलाग्रय । इसका पर्याय—पाषात, यषात
घोर देवनिर्मित है । २ गुहा, बन्दर ।

देवघातविष (स० झी०) देवघातं पक्षिमत् विन निब
कर्मका० । गुहा, बन्दर ।

देवगङ्ग—पाषाणमें प्रवाहित एक नदी । इसका वर्त-
मान नाम दिवङ्ग है ।

देवगङ्ग—१ बम्बई प्रदेशके पयोन राजगिरि त्रिषिषे भन्त-
मंत एक कवचिभाग । यह पचा० १६ ११ ने १६ बरे
७० घोर रेखा० ०१ १८ से ०१ ३० पू०में अवस्थित
है । भूपरिमात्र ३२१ वर्ग मील घोर लोकाय क्या प्राय
१३३०२० है । इसमें ११८ ग्राम समते हैं । इस कव-
चिभागके मध्य देवगङ्ग नगर समुद्र तीरवर्ती एक सुन्दर
बन्दर है । यहाँ दुर्गाका एक मन्थानगरेय है । प्रायः हारे
घो भव पक्षि महाप्राण्ड दन्तुये यह दुर्ग निर्माच किया
है । १८१८ ई०में यन्त्रक लोमकान्वये पहिला पक्षके
गये । १८०५ ई०में खैरापत्तने महारुमा कर्म कर यहाँ
साया मका ।

२ एक कवचिभागका एक बन्दर । यह पचा० १६
२३ ७० घोर रेखा० ०१ २२ पू० बम्बईसे १८० मील-
की दूरी पर अवस्थित है । लोकाय क्या प्रायः १०६१ है ।
पान्थकी महाराई १८ पुष्ट है ।

३ बम्बईके अन्धोर राज्यका एक ग्राम । यह घो
बईमें १ मील दक्षिणमें अवस्थित है । लोकाय क्या ल-
भग ११३० है । यहाँ काष्ठमें रवका एक मन्दिर है यहाँ
जामेये भूत प्रेतके वसित मनुष्य पक्षके हो श्रांति हैं ।
महायिगराजि घोर कालिंके दृष्टके कपलधर्म यदाक्रम
परबरो घोर भवम्बर मर्दोनिमें हो भेरी कगते हैं ।

देवगङ्गे (स० झी०) एक प्रकारकी ईष ।

देवगण (स० पु०) देवानां गणः इत्यत् । १ देवसमूह ।
२ लक्ष्मिदेव । ३ देवपत् । ४ देवानुचरादि, किसी देवता
का अनुचर ।

देवगणपद (स० पु०) सुश्रुतोक्त देवादि गणक्य पद ।
देवसमूह विद्वद् कलावर्षे होति हैं, इसीसे कि यह मर्दों
को कक्षति । सुश्रुत देवगण देवपद माने गये हैं । इस
का विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—

रोमोके क्लिया—गुह्यता निबभता, पमानुविबता घोर
नविष्णुता जोमिदि कचे यह कक्षते हैं । यस व्यपच घोर
यहाविषयितयक पर्याच, यमयोदक, यत वा यक्षत जोमो-
के हि साकारो है । ये सव्धार पानिकी पमिस्थापाये इकर
उत्तर अमक करते हैं । ये सव्धय मिच मिच साकारके
होते हैं घोर पाठ भागमें विमल हैं । देव, यद्वर, क्यर्ष
यक, पिङ्ग, रक, सुकङ्ग घोर नियाच्ये वी पाठ साकार है ।

सन्तुष्ट, शक्ति, गन्धमात्य प्रकृति, तन्द्राहोन, विशुद्ध, संयतमाषी, तेजस्वी, स्थिरदृष्टि, वरप्रदाता, ब्रह्मनिटा ग्रील ये सब देवग्रहाविष्टके लक्षण और वर्माङ्क, द्विज, गुरु तथा देवनिन्दक, कुटिलनेत्र, निर्भय, विषम दृष्टि, अन्नपानसे असन्तुष्ट और दुष्टवृत्ति ये सब असुरग्रहाविष्टके लक्षण हैं।

जिस प्रकार दर्पणादिमें छाया, प्राणियोंकी टेढ़में शीतोष्ण, सूर्यकान्तामणिमें सूर्यरश्मि और टेढ़में जोष अनाक्षित भावसे प्रवेश करता है, वृहगण भो उसी प्रकार शरीरके मध्य प्रवेश करते हैं। देवग्रह पीणमासी तिथिमें आविष्ट होते हैं। ग्रहोंमेंसे जो देवांसम्भृत हैं उनमें देवताकी सत्ता रहनेके कारण वे देवग्रह कहलाते हैं। उन सब शुचिशील देवग्रहोंको देवताके समान नमस्कार और प्रार्थना करनी चाहिये।

किन्तु ये सब देवग्रह दिवसभाव धारण कर हिंसार्के सिद्ध विचरण करते हैं, जमीसे इन्हें भूत भी कहते हैं। इनकी शान्तिके लिए एकाग्रचित्त हो कर जप, होम आदि क्रियाओंका अनुष्ठान करना होता है।

इन सब ग्रहोंकी रक्षवर्ण गन्धमान्य, सब प्रकारके भक्ष-द्रव्य, वस्त्र, मद्य, मांस, रक्त आदि जिनका जो अभिलषित पदार्थ है, उन्हें बही दें। जो टिवामागमें मनुष्यकी हिंसा करते हैं, उन्हें दिवाभागमें ही बलिप्रदान करें। देवग्रह होनेसे देवताके गृहमें होम करके बलिदान देना होता है। देवग्रहकी जगह किमी विषयका अयुक्तरूपसे प्रयोग न करें, नहीं तो यह गृह क्लेश हो कर वैद्य और आतुर दोनोंको ही मार डालता है।

(सुश्रुत उत्तरतन्त्र १० अ०)

देवगणदेव—एक प्राचीन संस्कृत कवि।

देवगणिका (सं० स्त्री०) स्वर्गशा, अप्सरा।

देवगति (सं० स्त्री०) १ मरनेके उपरान्त उत्तमगति, स्वर्गलोक। २ मरने पर देवयोनिकी प्राप्ति।

देवगन्धर्व (सं० स्त्री०) रोहिण्यष्टक, रोहिण्य नामको वासा

देवगन्धर्व (सं० पुं०) देवानां गन्धर्वः इत्यत्। देवताओंके निकट गात्र करनेवाला गन्धर्व।

देवगन्धा (सं० स्त्री०) देवप्रियो गन्धो यस्यः। महासेदा।

देवगर्भ (सं० पुं०) देवान् गर्भे यस्य। १ देवाहित गर्भका

वह मनुष्य जो देवताके वीर्यसे उत्पन्न हो। (स्त्री०)

२ कुम्भदीपको एक नदीका नाम। (भागवत ५।२०।२१)

देवगांव—युक्तप्रदेशके भाजीमगड जिलेकी एक तहसील।

यह अक्षा० २५° ३८' से २५° ५०' उ० तथा देशा०

८२° ४८' से ८३° २१' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण

३८८ वर्गमील और लोकसंख्या लगभग २६४८५१ है।

यह तहसील देवगांव, बिनदीनतावाट और बिनहावान् लै

कर संगठित है। इसमें ७०२ ग्राम लगते हैं, गहर एक

भी नहीं है। यहाँकी प्रायः ३५३००० है। यहाँकी प्रधान

नदियां मनगाँ, वैष्, और गाहो हैं।

देवगांधार (सं० पुं०) देवप्रियः देवयोष्योक्त गान्धारः।

एक रागका नाम। यह भैरव रागका पुत्र माना जाता

है। यह सम्पूर्ण जातिका राग है। इसमें ऋषभ

और धैवत कोमल लगते हैं। इसका स्वरग्राम इस प्रकार

है—ग स प ध नि स रे।

देवगान्धारी (सं० स्त्री०) त्रीरागकी भार्या। यह गिरि

श्रुतमें तोमरे पहरने लेकर राधे रात तक गाई जाती

है।

देवगायक (सं० पुं०) गन्धर्व।

देवगायन (सं० पुं०) देवानां गायनः इत्यत्। गन्धर्व।

देवगिरा (सं० स्त्री०) देववाणी, संस्कृत।

देवगिरि (सं० पुं०) देवानां प्रियः गिरिः। एक पहाडका

नाम। यहाँ अनेक देवमूर्तियाँ हैं, इससे उस पर्वतका

नाम ऐसा पड़ा है।

देवगिरि—हेट्टरावाट राज्यके श्रीरङ्गावाट तालुक और

जिलेका एक नगर और दुर्ग। अभी यह दौनतावाट नामसे

प्रसिद्ध है। यह अक्षा० १८° ५०' उ० देशा० ७५° १२'

पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १३५० है।

देवगिरि दुर्ग अत्यन्त प्रसिद्ध है। दक्षिणाल्पमें हिन्दू

राजाओंके समयमें यहाँ बहुतसे प्रबल पराक्रान्त राजा

वास करते थे। डेढ़ सौ फुट ऊँचे कोषाकार पत्थर पर

दुर्गका दुर्ग संगठित है। इसका बाहरी घेरा प्रायः डेढ़

कोस है। दुर्ग और प्राकारके मध्यवर्ती स्थानमें बहुतसो

खाइयाँ हैं। सदर फाटकके सिवा भीतर प्रवेश होनेका

और कोई दूसरा दरवाजा नहीं है। खाइके बाहर घोड़ो

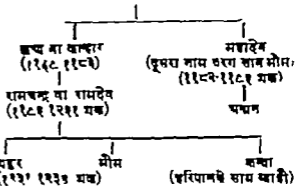
ही दूर पर २१० फुट ऊँचा एक मिनार है। १२८४ ई०में

मुसलमानोंने सबसे पहली इस स्थान पर पाण्डव विद्या चोर दही स्मरचार्य यह मिनार बनाया गया है। धर्मो भी इस मिनारका बोर्डि चय करवाइ नहीं हुआ है। इसके सिद्ध पर चढ़नेमें निवृत्तकर्ता प्रदेशका इन्ह बहुत मनोरम लगता है। मिनारके पास जो बहुत प्राचीन चोर बड़े जैन मन्दिरका ध्व सावरीय पड़ा है तथा मन्दिरके निकट श्रीमोमहासका यह शहर जो देखनेमें जाता है। जोसकुण्डाके अन्तिम सुसतान धनुज बोसेन (ताम्रया नामसे प्रसिद्ध) चौरद्विबसे इसी स्थान पर बन्दे हुए थे। इसके सिवा प्राचीन राजप्रासादका मन्मान शेष पूर्व सफरिका परिचय होता है।

जिस पहाड़के ऊपर देवगिरि दुर्ग स्थापित है, वह माय ६०० फुट ऊँचा होमा। ऊर्ध्व भी समसय २० फुट विस्तृत होगी जिसे एक छोटे प्यारसे पुन जो कर पार करती है।

देवगिरिनगर अब स्थापित हुआ है, इसका पता नहीं चलता है। यहके माहबराजापोंके अस्तुदयकाकसे देवगिरिका मयम चौर यहकि मालनिकाकत हुई है।

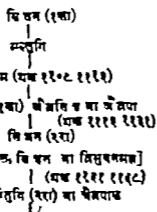
प्रसिद्ध काल्हुरी व महाकाल पद्यपतन हुआ, तब इसके पास पासका सारा प्रदेश होयमन-जनाल चौर हार-पहुँचके बादबराजापोंके हाथ आया। इस समय उत्तर भाग एक दूसरे बादबन गये इष्टगत हुआ। अर्थात् देवगिरिमें राजधानी स्थापित थी। कई मिनार-निर्माणों को इन बादबराजापोंको व शासकी मिली है, यह रूप बहार है—



यादवराज १म नि बनने महाकाल्यामी कर्षाटके राजाको पराजय किया। प्रवाद है, कि निबन्धके जोधे की समस्त सङ्घे जैतुगि करवाइ जिनके अन्तर्गत सकुण्डो नामक स्थानमें होयमनराज द्वितीय बबालसे पराजित हुए। जैतुगि निजयपुरमें राजधानी स्थापित की। अर्थात् निबन्धके राजाको पराजय कर समस्त राज्य अपने अधिकारमें कर लिया। जोके करवाइ तब इनकी राज्य-सोमा जैसे गये थी।

द्वितीय वि बनने राजबन्धालसमें जो देवगिरि ताड़नों की राजधानी कह कर प्रसिद्ध हुआ। उनके समयमें ३८ मिलासेय पाये गये हैं, जिनमें पढ़नेसे मालूम होता है, कि लकीने तिबड़, कलपुरि चौर अन्धराजको होता था। उनके समयमें देवगिरिका यादवराज्य बहुत बढ़-बढ़ गया था। २४ मि बनने बाद उनके पोते कल्प राजा हुए। उनके महाप्रधान वा प्रतिनिधिके कीर्तित मिला-सेकसे जाना जाता है, कि उनके पिता (यादवसेना पति)ने यह, जोइयके बादबन्ध, सुसीके पाण्डव चौर होयमनराजको पराजय कर काथिरीके चिनारे कयस्यथ स्थापन किया था।

द्वितीय वि बनने बाद महादेवने अपने काहुबनसे राजसि हासन अधिकार कर लिया। महादेवके समय देवगिरिसमामें धर्मिक महापरिष्कृत रहने थे जिनसेये महापरिष्कृत ईसाई चौर बोपदेवका नाम बहुत प्रसिद्ध है। महादेवके बाद उनके बड़े पद्मनके माथमें राज्य-धम्पदू बढ़ा नहीं का इनकेिये कल्पके पुत्र रामचन्द्र नि का-यम पर बैठे। अर्थात् अपने काहु-बनसे यत्नमान धम्पई प्रदेशका समस्त दक्षिण चौर सम्प्रमाण अपने कब्जेमें कर लिया। १२१६ गणक (१२८३ ई०)में अलाउद्दौलने इनका



अज्ञारोहीकी माथ ले देवगिरि पर अक्रमात् चढ़ाई कर दी। राजा जहाँ तक लड़ते बना वहाँ तक लड़े, पर तीन सप्ताह तक लगातार युद्ध कर चुकनेके बाद जब दुर्गके भीतर सामग्री घट गई, तब उन्होंने आत्मसमर्पण किया और विजेता खिलजीके साथ सन्धि कर ली। यज्ञो सत्रमे पहला समय था कि देवगिरिके यादववंशने सुमनमानोंको अधीनता स्वीकार की। देवगिरिपति कर देनेकी बाध्य हुए। १२२८ शकमें रामचन्द्रने कर देना अस्वीकार किया। उस समय अलाउद्दीन अपने चचेकी मार कर दिल्लीके सिंहासन पर बैठ चुके थे। उन्होंने एक लाख अज्ञारोहीके साथ मालिक काफुरको दक्षिण भेजा। इस वार भी रामचन्द्र विपुल मुसलमान-बाड़िनोकें साथ युद्ध कर स्वाधीनता वचा न मके और बाध्य हो कर उन्होंने अधीनता स्वीकार कर ली। बाद वे दिल्ली भेज दिये गये।

अलाउद्दीनने सम्मानपूर्वक उन्हें फिर देवगिरि भेज दिया। तीन वर्षके बाद जब मालिक काफुर और इल्तुतस को जोतने गये थे, तब राजा रामचन्द्रने बहुत समा-रोहसे उनकी अभ्यर्था की थी। १२३२ शकमें राजा शहरने अपनेकी स्वाधीन कह कर प्रचार किया और मुसलमानराजको कर देनेसे अस्वीकार किया। पुनः १२३४ शकमें मालिक काफुरने शहर पर आक्रमण कर दिया, शहर पराजित हुए और मार डाले गये। इस समय मालिक काफुर दक्षिणके और राज्या म लूट पाट करने लगे। देवगिरि उनका सदर हुआ। कुछ दिन बोंतने पर जब वे दिल्लीको बुलाये गये, तब राजा रामचन्द्रके जामाता हरिपाल दक्षिणात्यके नाना स्थानोंसे दलबल संग्रह कर मुसलमानोंको मार भगाया और आप देवगिरिके सिंहासन पर अधिकार कर बैठे। छह वर्ष तक उन्होंने पूर्ण प्रतापके साथ राज्य किया। अन्तमें १३४० शकमें दिल्लीके बादशाह सुबारकने मसैन्य भ्रू कर उन पर चढ़ाई की। पड़यन्त्र और विश्वासघातकतासे हरिपाल पराजित हुए। बाद मुसलमानोंने उनका मस्जिद दो खण्ड कर नगरके द्वार पर लटका दिया। इस प्रकार यादव-राज्यकी समाप्ति हुई। पीछे दिल्लीखरके प्रिय-पाद कई एक व्यक्ति यथाक्रमसे देवगिरिके सिंहासन पर,

बैठे। गयासुद्दीनके पुत्र मसूदर तुगलक १३२५ ई० में दिल्लीके सिंहासन पर आरोहण हुए। सुविख्यात दिल्ली नगर उन्हें अच्छा न लगा। अतः १३३८ ई०में उन्होंने देवगिरिमें राजधानी स्थापन करनेका संकल्प किया और दिल्लीवासियोंको हफ्त दिया कि वे अति शोषण दिल्ली छोड़ कर देवगिरिको चले जायें। दिल्लीसे देवगिरि ४०० मी. की दूरी थी, अतः दिल्लीवासियोंकी उतनी दूरीकी यात्रा करनेमें कौसा कष्ट भेजना पड़ा था, वह चकचकोय है। सोणमति सुवारकको बुद्धिके दोषसे दिल्ली नगर जनशून्य और शोषण हो गया और देवगिरिको मन्दिर बहुत बढ़ गये। इस समय देवगिरिका नाम 'दोलताबाद' अर्थात् मौभाग्ययानी नगर रखा गया। तालियर वासी पवनवृत्ता देवगिरिको मन्दिर देख कर मुक्तकण्ठसे तारोफ कर गये हैं। तुगलक-वंशके बाद देवगिरि कुलवर्गा और विदरके वाङ्मनोवशके शासनाधीन हुआ। १५२६ ई० तक यह स्थान वाङ्मनोवशके अधीन रहा। पीछे देवगिरिका दुर्ग अहमद नगरके निजामशाही वंशके हाथ आया। उनके अधःपतनके बाद यह मुगलोंके अधीन हुआ। १७०७ ई०में औरंगजेबकी मृत्युके बाद वर्तमान निजाम-वंशके स्थापयिता आसफजाने मुगलाधिकृत प्रदेशोंके साथ साथ देवगिरि भी अपने अधिकारमें कर लिया। यद्यपि दुर्गमें अभी केवल १०० सैन्य है।

देवगिरि—धारवाहके अन्तर्गत एक गण्डग्राम। यह करालजगसे तीन कोस पश्चिममें अवस्थित है, यद्यपि कादम्बर राजाओंके समयके बहुतसे ताम्रशासन पाये गये हैं। एक समय यहाँ जैनोंकी प्रधानता थी। जखनाघाय निमित्त यहाँका यहमाका मन्दिर विख्यात है।

देवगिरि (सं० स्तो०) रागिणीविशेष, एक रागिणी जो सोमेश्वरके मतसे वसन्त रागकी भार्या मानी गई है। भरतके मतसे ये हिन्दोल रागके पुत्र, नागधनिकी सङ्गोत्पन्नके मतसे नटकल्याणकी और हनुमत्के मतसे मालकोश रागकी भार्या है। यह हीमन्त ऋतुमें दिनके चौथे पहरसे ले कर आधी रात तक गाई जाती है। किसीका मत है, कि यह रागिणी संकर है और यह पूर्वी तथा सारंगके मेलसे और फिर किसीके मतानुसार सरस्वती,

मातृको धीर गाभारोच मनसि वनो है । यह सम्पूर्ण
 काशिकी रासिकी है और इसमें सब यश आर समते हैं ।
 अर्याम इल प्रकार है—“स श्व म म प च नि न” ।
 देवगुप्तसूरि—१ उर्वरयपयस्यसम्पत्त एक विद्यात जौना
 भाव्य, कइसु, रिषि एक शिष्य । इनका दूसरा नाम जिन-
 चन्द्र था । इन्होंने पद्यके “नवपद्य” वा नवपद्यप्रकरण
 नामक जैन शास्त्रोप पद्य प्रकार का किया ठीके १८०१
 सम्बत्में भावनाशब्द नामक नवपद्यकी एक विद्यत
 नवकृत टीका लिखी । इनकी कुलचन्द्र नामक एक
 पौर भी थापिथी ।

२ एक जौनाचार्य, सिद्धमूर्ति शिष्य । इनके दो
 शिष्य थे, यमोदिय और विहसूरि । प्रथम शिष्याने
 ११७० य वत्में अष्टावर्गविहरण पौर द्वितीय शिष्याने
 ११६२ सम्बत्में अष्टावर्गसमासुत्रात्मकी रचना की ।

देवगुप्त (स० सु०) १ देवताधीके सुक, इच्छाति । २ देव

ताधीके सुक शर्वात् पिता अश्वप ।

देवगुप्त (स० श्री०) वरकालो ।

देवगुप्त (स० वि०) देवताधी गुप्त ३ तत् । देवताधीके
 प्रति रहस्य, जो देवताधीके अश्वत्थ गुप्त विषय हो । जिन
 के प्राचिनोके बौरास्य सत्य न जो और देवताधीके मध्य
 बह विषय किया रहे वही कारण इसका नाम देवगुप्त
 हुआ है ।

देवगुप्त—यथाका एक गुप्तज्ञान । यहाँ अश्वनाथम का ।

देवगुप्त (स० श्री०) देवताधी गुप्त ३ तत् । देवताधी,
 देवमन्दिर । इसका विषय इच्छातितामें इस प्रकार
 लिखा है—

देवगुप्त यदि बननाका चाहे तो उसके मध्य अक्षा
 मय और उपवनका रहना परमानन्दक है । इहापूर्त
 द्वारा जो मय लोच काम होते हैं, एक देवगुप्त बनानेके
 वही मय लोच मिलते हैं । इससे लोचमूयक और देवता
 गुप्त होनेके दो फल हैं । अजिन पौर उद्यानगुप्त मनुया
 कृत या देव सत्यादित अज्ञानके समीप देवतामय अथ
 या पशु वसे हैं । जिस सरोवरमें नभिनोष्य इच्छाद्वारा
 सूर्यको शिरस्य पड़तो है जिस निम्न अक्षरमें व लक्ष्मी
 द्वारा अतिपयके नीचे तर्पे मारती हैं, जिस सरोवरमें
 व स, आरक्य, शीघ्र और अक्षराक्षय मन्द करती हैं

तथा जिनके तोरस्य निगुक्त इच्छाको ज्ञायामे अक्षराक्षरी
 प्राचिगय विद्याम करती हैं इस सरोवरके समीप देवगुप्त
 सुधी रहती हैं । अक्षयको जिनको काशीकनाप है
 अक्षय सका अक्षय जिनका मन्द है अथ जिनका अक्षय
 है, सफरिया जिनको मिक्षना है तोरस्य मनुज इय जिनके
 अक्षयमूयक हैं, अथ पौर अक्षयका अक्षयज्ञान जिनका
 शोषो है पुनिज जिनके अक्षय स्थान है पौर व स जिनके
 अक्षय है इस प्रकार निष्कामिनो मद्योके समीपवर्ती
 अज्ञानोंमें देवगुप्त उच्यते हो जाने हैं ।

अनके उद्यान ज्ञानमें नरो गौस पौर निम्नरको
 उद्यान भूमिमें पौर उद्यानगुप्त पुर प्रदेशमें देवगुप्त निष्क
 रति नाम करती हैं । देवगुप्त निर्माणका अज्ञान निष्कपक
 करनेमें वास्तुविद्यामें जो सब भूमि प्राज्ञकीकी कही गई
 है, देवमन्दिरक निये वही सब भूमि प्रमथ है । देवगुप्त
 में नर्वादा अतुपहितवास्तुमयकथा अरना कर्त्तव्य है ।

इसमें समष्टिक क्लित मध्यस्थानमें द्वार बनाये । जिस
 का विष्टार जिनका होया उसे उसके भूमि परिमापके
 उच्यते करे । अक्षयिका अक्षयतोयाय अक्षि हो विष्टार
 का पूर्वक मर्गस्थ पौर अतुपहित अथ अमी दीवारों
 हैं । गर्भ एक अतुर्वा य शोका पौर समसे दूना अर्था हो ।
 अर्थाके अतुर्वा मर्मे विष्टोर्था गाथा पौर उपरितम
 अर्थाके दिगनाको मममाके निर्माण कर उसका विष्टार
 एक अतुका य वरी पौर उसके शीरेको विष्टारका अतुर्वा म
 बनाये अर्थादीनो यावापो का दृष्ट विष्टारका शोधाई
 हो । तोर, पाँच, सात पौर नो यावापो का पायतन
 हो प्रमथ है । अक्षय गाथाके चार भागोंमें दो द्वारकेय
 बनाये । इसका शिष्यभाग महासुपयक विहङ्गम, शोहक,
 अक्षिच घट, मिथुन, पवनका पौर प्रमथगणके उच-
 योमित हो । द्वारके परिमापके पाठका भाग कम पौर
 विष्टारगुप्त प्रतिभा हो । प्रतिभागुप्त विष्टारका म् दो
 भाग प्रतिभा पौर अतोयाय विष्टारक रहे । मेष, मन्द
 कोसाय विमानक्य, मन्द, समुह पद्य, गङ्ग, मन्दि
 वरुण, कुशर, सुव्राम इय, व म, सर्वतोमङ्ग, घट, सिद्ध,
 हत अतुषोच, पोड्यासि पौर अक्षान्ति ये बीम प्रकार-
 की देवगुप्तकी यथा है । यथाक्रम इनका अक्षय
 लिखा जाता है—

जो देवगृह षड् कोण, दशभौम, सुन्दर कुहरयुक्त और वत्तीस हाथ लम्बा हो तथा जिसमें चार दरवाजे लगे हों, वैसे देवगृहका नाम 'मिह' है। जो तीस हाथ विस्तीर्ण, दश भौमयुक्त तथा चूड़ावान् हो, उसे 'मन्दर' कहते हैं। मन्दर लक्षणका देवगृह यदि १८ हाथ विस्तीर्ण और आठ भौमयुक्त हो, तो उसे 'कौलाम' कहते हैं। जो जालाकृति गवाक्षविशिष्ट तथा २१ हाथ विस्तीर्ण हो उसका नाम 'विमान' है। जो ३१ हाथ विस्तीर्ण और १६ चूड़ा युक्त हो तथा जिसमें ६ भौम लगे हों, उसे 'नन्दन' कहते हैं। गोलाकार एक शृङ्ग और एक भौम देवालयका नाम 'मसुह'; एक भूमिक, एक शृङ्ग, पद्माकृति और अष्टशाख देवागृहका नाम 'पद्म' गरुडको तरह आकृतिविशिष्ट देवगृहका नाम 'गरुड'; २४ हाथ विस्तीर्ण सप्तभौम और २० अण्डोंमें विभूषित देवगृहका नाम 'नन्दिवर्धन'; गजपृष्ठकी तरह आकारधारी और मूलमें चारों ओर १६ हाथ विस्तृत देवालयका नाम 'कुञ्जर', १६ हाथ विस्तृत और तीन चन्द्रशालाओंमें विशिष्ट वल्गुभेदेष्ट, ऐसे देवालयका नाम 'गुहराज', बारह हाथ विस्तृत, गोलाकार, एक शृङ्ग और एक नेमियुक्त देवालयका नाम 'वृष' इसी प्रकारके गोलाकार देवगृहका नाम 'वृष', हंसाकार देवगृहका नाम 'हंस', ८ हाथ विस्तीर्ण कलशाकार देवालयका नाम 'घट', ४ द्वार तथा अनेक चूड़ाविशिष्टका नाम 'सर्वतोभद्र', ८ हाथ विस्तृत, द्वादश कोण तथा सिंह चिह्न समन्वित देवालयका नाम 'सिंह' और जिस देवालयके ५ अण्डोंमेंसे ४ कृष्णवर्णके हों उसका नाम 'चतुरस्र' है। (बृहत्सं ७४ अ०)

अग्निपुराणमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है—पहले स्थानका निरूपण कर चौकोन क्षेत्रको सोलह भागोंमें विभक्त करके मध्यस्थित चार भागोंको आयत और शेष बारह भागोंको भित्तिके लिये कल्पित करे। जह्वा चतुर्भागे परिमित उच्छ्रित, जह्वासि द्विगुण उन्नत मञ्जरी और मञ्जरीके चतुर्थ भागमें प्रदक्षिण परिमाण हो। उभयपाश्वर्यमें सम वा द्विगुण शोभासम्पादनानुरूप अथ भूमिका विस्तार हो। मण्डपकी आगे दो गभस्तत्र विस्तीर्ण और चतुर्थांशसे अधिक दीर्घस्तम्भ द्वारा मुखमण्डप बनाने। पीछे इकासी पदयुक्त वास्तु करके मण्डपका

आरम्भ करे। प्रतिमा प्रसाणका शुभ पिण्डिका बनाकर उसके आधे भागमें गभे निर्माण करे। उस गभके बराबर सभी भित्तियां, भित्तिके आधामके बराबर उत्तरेध, भित्तिके उच्छ्रयसे दूना शिखर, शिखरसे चौगुना भ्रमरभूमि, शिखरका चौथाई भाग सामनेका मुखमण्डप, गभका आठवां भाग रथ निकलनेका द्वार और परिधिसे छठे भागके बराबर रथ रहें। देवगृहमें तीन रथोंका रहना परमावश्यक है और तीनों रथ तीन घोड़ोंको सर्वदा लगाये रखे। वेदिकासे कुछ ऊर्चेमें कससकी स्थापना करे। प्रासादके चतुर्थांश परिमाणमें प्राकारकी ऊँचाई और पादोनपरिमिति गोपुरकी ऊँचाई होगी।

(अग्निपु० २६८ अ०)

विशेष विवरण प्रासाद और मन्दिर शब्दमें देखो।

देवघर (सं० पु०) भूतप्रहविशेष। जो सब मनुष्य जागते वा सोते देवताओंको देखते हैं, वे उसी समय उन्मत्त हो जाते हैं, इन्हींको देवघर कहते हैं।

देवग्राम—त्रिपुराके भन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह राधानगरके दक्षिणमें अवस्थित है।

देवघट—१ बङ्गालमें यशोहरके मध्यवर्ती एक गण्डग्राम। २ हिमालय पहाड़ पर स्थित देवप्रयागके निकटवर्ती एक प्राचीन तीर्थ। स्कन्दपुराणके हिमवत्खण्डमें इसका माहात्म्य वर्णित है। (हिमवत् ८८८, ४४१४४)

देवघन (हि० पु०) बगौचीमें लगाये जानेका एक पेड़।

देवघर—१ बिहार और उड़ीसेके सन्ताल परगनेका एक उपविभाग। यह अक्षा० २४° ३' और २४° ३८' उ० तथा देशा० ८६° २८' और ८७° ४' पू० अवस्थित है। भूपरिमाण ८५२ वर्ग मील और लोकसंख्या २८७४०३ है। इसमें देवघर और मनुपुर नामके दो शहर और २३६८ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त विभागका एक शहर। यह अक्षा० २४° ३८' और देशा० ८६° ४२' पू० इष्ट इण्डियन रेलवेकी कौड-लाईनसे चार मील पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या ८८३८ है। यहाँ २२ शिवमन्दिर हैं। जिनमेंसे वैद्यनाथका मन्दिर प्रसिद्ध है।

विशेष विवरण वैद्यनाथ शब्दमें देखो।

देवङ्गम (सं० त्रि०) देव गच्छति गम वेदे क। देवनामी, जो देवताके पास हो।

देवचक्र (स० श्लो०) १ यथायुः पवित्रवर्षेण, गवामयम
यच्छे एक पवित्रवक्रा नाम । २ यामनोः देवताषु मेदये
नपायमाश्रायणं चक्रमेद ।

देवचन्द्र - निप्यात जैन यत्न ३। श्रीमचन्द्रके दिव्य । हकी
ने आस्तिलापयुक्त नामक साक्षर यत्न बनाया है । मुनि
देवचन्द्रने लमोने पवित्रमे सफल भावाम प्रकाश
विद्या है ।

देवचन्द्रपवि—एक पवित्र जैन पण्डित । हकीने १६३८
सम्बन्धने अपने विद्या मुनिचन्द्रके निये यमचक्रुति चोर
लमोने लोका हकी है ।

देवचर्या (स० श्लो०) देवता चर्या ६ तत् । १ देवचर्या ।
२ देवार्थं चरय चोसादि ।

देवचाली (स० पु०) देवचालके एक भेदमिसे पद ।
देवचालिक (स० पु०) १ देवताओंके बलिभक्त,
पवित्रोद्धार । २ दिव्य सभ्या होकी सभ्या । ३
३ पवित्रोत्तर ।

देवचक्र (स० पु०) देवचक्रुति या बाहुने चन्द्र-चक्र ।
चारविंश, एक प्रचारण चार । वह बिमोड मतके १००
या १०८ लक्षियों का चौर बिमोड मतके ८१ लक्षियोंका
कोना है ।

देवचक्रुत्त (स० श्लो०) देवचक्रुत्त एक ममात्मनः ।
संज्ञिक चक्रुत्तमेद ।

देवचक्र (स० पु०) देवचक्रुत्तमेद । १ देवचक्रुत्त, देवताके
चक्रुत्त । (श्लो०) १ मासमेद । २ लयायके भाई युग
के योग के समय युक्तिसे एक युगका नाम ।

देवचक्र (स० श्लो०) देवचक्रुत्तमेद । १ देवचक्रुत्त, देवताके
चक्रुत्त । (श्लो०) १ मासमेद । २ लयायके भाई युग
के योग के समय युक्तिसे एक युगका नाम ।

देवचक्र (स० पु०) देवचक्रुत्तमेद । १ देवचक्रुत्त, देवताके
चक्रुत्त । (श्लो०) १ मासमेद । २ लयायके भाई युग
के योग के समय युक्तिसे एक युगका नाम ।

देवचक्र (स० पु०) देवचक्रुत्तमेद । १ देवचक्रुत्त, देवताके
चक्रुत्त । (श्लो०) १ मासमेद । २ लयायके भाई युग
के योग के समय युक्तिसे एक युगका नाम ।

देवचक्र (स० पु०) देवचक्रुत्तमेद । १ देवचक्रुत्त, देवताके
चक्रुत्त । (श्लो०) १ मासमेद । २ लयायके भाई युग
के योग के समय युक्तिसे एक युगका नाम ।

यथा यद्यपि विद्या यो । (पु०) देवताके आना । २ देवताके
देवताके (स० श्लो०) देवताके आसिद्धि । ३ देवताके
२ देवताके (श्लो०) देवताके आसिद्धि ।

देवचक्र-पञ्चाङ्गिकाय टोका नामक देव चक्रुत्त १४३६।
देवचक्र (स० श्लो०) देवचक्रुत्त । देवचक्रुत्त देवताके
चक्रुत्त ।

देवचक्र (स० श्लो०) देवचक्रुत्त देव चक्रुत्त । (श्लो०) देवचक्रुत्त
चक्रुत्त । (श्लो०) देवचक्रुत्त देव चक्रुत्त ।

देवचक्र (स० श्लो०) देवचक्रुत्त देव चक्रुत्त । (श्लो०) देवचक्रुत्त
चक्रुत्त । (श्लो०) देवचक्रुत्त देव चक्रुत्त ।

देवचक्र (वि० पु०) १ विद्या भगवान्मुक्ता मो चक्र
चक्रुत्त । २ चक्रुत्तके युग एकचक्रुत्त । इस दिन विद्या
भगवान् मो चक्रुत्त है । हकीने एकचक्रुत्त मासा
जाता है ।

देवचक्र - पञ्चाङ्गिक चक्रुत्तके एक चक्रुत्तके । यह
पञ्चा ३३ ०८० चौर टोका ०० ३३ पु० पावर
भुक्तिके चक्रुत्तके चक्रुत्त है । मोक्षके चक्रुत्तके २५०
है । चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके

देवचक्र (वि० श्लो०) चक्रुत्तके चक्रुत्तके ।

देवचक्र (स० श्लो०) चक्रुत्तके चक्रुत्तके ।
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके

देवचक्र (स० पु०) देवचक्रुत्तके चक्रुत्तके ।
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके

देवचक्र (स० पु०) देवचक्रुत्तके चक्रुत्तके ।
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके

देवचक्र (स० पु०) देवचक्रुत्तके चक्रुत्तके ।
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके

देवचक्र (स० श्लो०) देवचक्रुत्तके चक्रुत्तके ।
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके
चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके चक्रुत्तके

अभी देवता कहनेमें स्वर्ग धामो अमर प्राणोका घोष होता है। ऋग्वेदके ऋषि लोग ऐसा समझते थे कि नहीं, परन्तु घोर मन्देह है। कात्यायन ऋषिने ऋक्संहिताकी अनुसंधानिकामें लिखा है—

“यस्य वाक्यं य ऋषिः सा तेनोच्यते सा देवता। तेन वाक्येन प्रतिपाद्यं यद्वस्तु सा देवता।”

जिनकी वधा या वाक्य है वही ऋषि है। जिनका दिव्य उर्ध्वमें ज्ञात होता है, वही देवता है। ऋषि-वाक्यके प्रतिपाद्य जो वस्तु है, वही देवता है।

ऋषि, इन्द्र और देवता इन्हीं तीन ली कर बेट बना है। जो वस्तु हम लोग सचराचर देखते हैं, चन्द्र, सूर्य, ग्रहादि, गिरि, नदी, वनस्पति आदि जिनके द्वारा वैदिक ऋषियोंने कुछ उपकार पाया है, ऋक्संहितामें वे देवता नामसे प्रसिद्ध हैं।

निरुक्तकार यास्कने देवता शब्दका ऐसा अर्थ लाया है—

“शानाद्वा वीपनाद्वा धूस्यानो मयतीति वा यो देवः सा देवता।” (७।१५)

दान और दीपनके लिये जो धूस्यानगत हो, वही देव और देवता है।

सायणाचार्यने ऋक्संहिताके प्रथम मन्त्रके भाष्यमें ‘देव’ शब्दको ऐसी व्याख्या की है,—

“तथा देवनाथं वीपयति धातुमिसिषी दं यजस्व इत्येत दास्यायते। देवनाद्देवोऽभूति तद्देवानां देवायमिति।”

देवनाथं दिवधातुसे देव शब्द निकला है, इन्हींसे देवता नाम पड़ा है। देवकी हेतु देवता हुआ है इसीलिये देवताश्रीका देवत्व है। योगी याज्ञवल्काने लिखा है— “वीपयते क्रीयते यस्मात् गीचते शीतते दिवि।

तस्माद्देव इति प्रोक्तः स्तूयते सर्वं देवतः ॥”

जो दीप्ति पाते है, क्रोडा करते है, स्वर्गमें शोभते है और धृतिविशिष्ट है वे ही देवता कहलाते हैं तथा वे ही सब देवताश्रीसे प्रशंसित होते हैं।

देव शब्दका मूल धात्वर्थयौतमान् वा दीप्तिमान् है। (‘यौतनाद्देवः’ मनुवीणा क्रन्दक १२।११७) आर्य ऋषियोंके सामने जो दीप्तिमान् हुए थे, पहले उर्ध्वकी उन लोगोंने देवता माना था। अभी देव शब्दकी जै भी विग्रहपता है, पहले वैदिकयुगमें देवता-आख्यात प्रकृति-

पुञ्जकी यै भी विग्रहपता आरोपित नहीं हुई थी। धीरे धीरे सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि आदिका स्थायित्व देख कर तथा इन सब प्रकृतियोंपुञ्जमें संसारके नित्य उपकार और नित्य प्रयोजनोपयोगी सुख ही ऋषियोंने उनके प्रति विग्रह देवत्व आरोपित किया। देवत्वका यही मूल बोज है। ऋक्संहितामें जिन सब देवदेवियोंके नाम पाये हैं उनमेंसे कुछ ये हैं;—अग्नि, वायु, इन्द्र, मिथ, वसु, अश्विद्वय, विश्वदेवगण, मरुतगण, ऋतुगण, वृद्धगण्यति, भीम, त्वष्टा, सूर्य, विष्णु, पृथ्वि, यम, पर्जन्य, अर्यमा, पूषा, रुद्र, रद्रगण, वसुगण, आदि-गण, उगना, वित, वैतन, अश्वि-सुभ्र, अज एकपाय, ऋभुजा, गुरुमान् ये सब देव है और सरस्वती, सन्तता, इला, इन्द्राणा, ज्योता, पृथिवी, उषा, आर्षी, रोदगी, राका, मिगोवानो और गुह्य, ये सब देवियां।

इतना हीने पर भी देवत्व सर्वथादिसम्मत नहीं हुआ। देवताश्रीकी संख्या और भी अस्तित्व नास्तित्वके विषयमें वैदिक ऋषियोंमें भी मतभेद था। इस विषयमें निरुक्तकार यास्कने ऐसा लिखा है—

“देवता तीन है, पृथ्वीमें अग्नि, अन्तरीक्षमें इन्द्र वा वायु और आकाशमें सूर्य। बाकी देवता या तो इन्हीं तीनोंके अन्तर्भूत है; अथवा ज्योता, अध्वर्यु, ब्रह्मा, उगता आदिके कर्मभेदके लिए इन्हीं तीनोंके अलग अलग नाम हैं। क्योंकि स्वतन्त्र भाषसे उनको स्तुति की गई और भिन्न भिन्न नाम दिये गये हैं।” (निरुक्त ७।५)

ऋक्संहिताकी १म, ८म और ८म मण्डलके अर्धके सूक्तोंमें ३३ देवताश्रीका उल्लेख है।

“ये देवास्तो दिव्येकादसस्य पृथिव्यामप्येकादसस्य।

धत्सुक्षितो महर्षिकादसस्य देवतो यमिमं जुषस्व ॥”

(ऋक् १।१३८।११)

जो देवता स्वर्गमें ग्यारह, पृथ्वीमें ग्यारह और अन्तरीक्षमें भी ग्यारह हैं वे अपनी अपनी महिमासे यज्ञ सेवा करते हैं।

“ये त्रिंशति त्रयस्वरो देवास्तो बहिरासदन्।

विश्वदत्त दित्तासन् ॥” (ऋक् ८।२८।६)

जो तीस और तीन अर्थात् ३३ देवता वर्ति (मयूर) पर बैठे थे, वे हमें अवगत हो जाय और दो प्रकारका धन दान करे।

ये ३३ देवता हीन हीन है ? इससे विचयमें शक-
म जितामें तो कोई बात नहीं मिली है पर प्रत्यक्ष-
साक्ष्यमें इसका जो उल्लेख है वह हम प्रकार है—

'इत्यतः त्रैलोक्ये शक्तिः शक्तिः एव एव एव एव
विशाल एवैव शक्तिः प्रकृतिक शक्तिः शक्तिः ॥'
(शतसप्तमः १११।१।५)

८ वध, ११ वध १२ पादित्य तथा वधु चोर प्रजा
पति यही ३३ देवता हैं ।

किर शिरोब्रह्मण्यं ३३ सोम्य चोर ३३ पसोम्य
इत ३३ देवताषी का उल्लेख है ।

पठ वधु, एकादश वधु, शाक्य पादित्य प्रजापति चोर
वपुषः चार ये ३३ सोम्य हैं चोर एकादश भयात्र, एका-
दश वधुपात्र चोर एकादश उपायत्र ये ३३ पसोम्य ।
सोमपायी सोमसे वध जोति हैं चोर पसोमपायी यज्ञो
पशुधोमे । (पनपत्र ३।१।८)

शर्मदं एव ज्ञान पर देवताषी की म प्या ३३३८
बहुो मई है ।

"श्रीविद्या श्री ब्रह्मण्यमि वि वच देवा नव वाचवन्तु ।"
(शक ३।१।५)

तोम वप्रार तोम सो रीय चोर मो देवगणक शक्ति
की पूजा करते हैं ।

शतसप्तमः (११।१।५) शाहायनश्रीमय
(८।१।१४) पादि ब्रह्मिध पश्यामि मी ३३३८ देव-
ताषीका उल्लेख है । मान्यम पड़ता है कि देवताषी
की हम प्रकारका म प्याक विचयमें मनमैद द्विज कर
ही कोई कोई शक्ति विर देवताषीके पशित्तमें मन्दे
कर मडे हैं । शक म जितामें लिखा है—

"शु शु शोम मान शक्य उ शहाय वच वरी वचवन्ति ।
वैदा वरदोपि वैम उ शक्य उ री वरये वचवन्ति ॥"
(८।१।१३)

हे ज्ञापिताषी शक्तिवन्द । वन्दु हैं, यह पति मूख
की, तो वन्दु उल्लेख वचमून सोमया उकार्य करो ।

७ शाहायणके मन्त्रमें लिखा है, कि देवता देव
३३ ही है, ३३३८ नाम मरीमापचाक है । शिष्ट शक-
व्रित्तके १०५ मन्त्रके ३३ वचने की इन ३३३८ देव
ताषीका उल्लेख है ।

नेम शक्ति कहते हैं वन्दु नामका कोई नहीं है । किपने
उल्लेख है ? हम लोग किसको शक्ति कहते हैं ?

इस प्रकारका मन्दे व घोड़े की दिनोंमें शक्तिषी के
वृद्धयके दूर को गया था । वे जानते हैं, कि देवता सोम
सोमयस पात्र करते हैं चोर मनुष्यामें मित्र हैं ।

शर्मदं मय्यु लिया है—'हे चसुर वधुषः देवता
षी वा मय्यु (मनुष्या) ही तुम सबसे राजा हो ।' (यथा
देवता चोर मनुष्यामें पृथक्ता निकलित हुई ।)
(शक ३।१।१०)

शक मजितामें मन्त्रोच मान मो प्रगट किया है ।
शक्यममें बतनाया है कि मित्र मित्र देवता एक पर
साम्राजे नाम मान हैं ।

'इय मिय वरममिममदूरवो विव्यः व सुपर्णे वरमम्यु ।
एव मदिग वधुषा वरवयमि मय माशीशक्यवधु ॥'
(१।१।३।४)

पशित्त लोग वन्दु, मित्र, वधुष चोर शक्ति कहा
करते हैं । वे सब शर्मोय सुपच चोर गदशानु हैं तथा
एक जोति पर मी बहुताका बोध होता है । उमाको पशित्त,
हम चोर मातरिका कहते हैं ।

"सुपर्णे विव्यः वरयो मयोमिरेव सुपर्णे वधुषा वरवन्ति ।"
(१।१।१।४।४)

सुवच यथात्पथा एक को है, बुधियानु पशित्त लोग
उमाका वन्दुनाके वचने पनेच बतनाते हैं ।

पशके को दो शक्य, वन्दु, वधुष हैं वही उपनिषद्
चोर वेदान्तप्रतिपाद्य एकात्मवादके मूल बोध हैं ।
पुराणमें जिन पत्र प्य देव देवियोंको मर्चण हैं, वे वन्दु
नहीं हैं वे केवल एक परमात्मा का ईश्वरकी ही महिमा-
व्यक्त रूपकाके वचना हैं । शक मजितामें उल्लेख ही
मन्त्रोंमें उनका मूमसुव मजहित किया है । पशिक
कहना नहीं पड़ेगा, कि देव-देवीका लयामनामूलक
बर्तमान हिन्दुधर्म उल्लेख दो-सुपर्णे प्रतिष्ठित है । मीर्माया
दयणके मन्त्रे देवताषीके वाप्यविक रूपका विषय नहीं
है । देवपच शक्यात्क है । चतुष्पात्क पटयत्र मन्त्र की
देवता है । शैविक देवपच मन्त्रे विलून विचरन देवो ।
मनुष्यजितामें लिखा है—

‘ऋषिभ्यः पितृगे जातः पितृभ्यो देवदानवः ।

देवभ्यस्तु जगत् सर्वं नरं त्वाभ्यनुपवेशः ॥’

(मनु ३०२०१)

ऋषियोंसे पितृगण, पितृगणसे देवदानव और देव-
गणसे स्थावर जड़मादि मारा मंमार उत्पन्न हुआ है ।

मनुके वचनानुसार देवताओंकी मान्यता एक स्वतन्त्र
नहीं है । सभी पुराणके मतमें कश्यप ऋषि तथा प्रदिति
से ही देवताओंकी उत्पत्ति हुई है । फिर दार्ष्टान्तात्म्यमें
द्राघिदादि अज्ञानके हिन्दुओंमें ऐसा विश्वास है, कि सत्
व्यक्ति जो मर कर देवता और असत्व्यक्ति मर कर उप-
देवता होते हैं ।

इधर वैदिक और पौराणिक ग्रन्थोंमें देवासुर-संग्राम
का परिचय मिलता है ।

ऐतरेयब्राह्मणमें इस लीग सभसे पहले देव और
असुर नामके दो दलोंके संग्रामका परिचय साफ साफ
पाते हैं ।

फिर किसोसा मत है, कि देवासुरसंग्राम रूपका
वर्णनात्मक है । वह प्राकृतिक शक्ति समूहका संघर्ष-
प्रकाशक है । ऋषयश्चिताई अनेक मन्त्रोंमें देव और
असुर ये दोनों शब्द एक अर्थमें प्रयुक्त तथा अनेक जगहों
में दृश्यमान पृथग्विस्तृतके संग्रामरूपमें व्यक्तत ज्ञान
पर भी ऋक्ष-मंथिताके किमी किमी मन्त्रमें एवं ऐतरेय
ब्राह्मणमें देव और असुर इन दो दलोंके परस्पर वैर-
भावका प्रभूत दृष्टान्त मिलता है । इस दृष्टान्तसे अनेक
भाषाविद और पुराविद अनुमान करते हैं, कि ये दोक्त
देवासुर ही संसारके प्राचीनतम सभ्य आर्यजातिके पूर्व-
पुरुष हैं । पारस्य और भारतवासी आर्योंके पूर्वपुरुष जब
एक साथ मिलकर रहते थे, तब देवासुरमें कोई पृथक्ता
नहीं थी । उस समयके ऋक्ष-मंथना देवासुरकी वर्णना एक
ही भावसे की गई है । फिर जब गृह-विवाद अथवा और
दूसरे दूसरे कारणोंसे देव और असुरके उपासकोंमें फूट
ही गई और जब उनका परस्पर विद्वेषभाव बढ़ने लगा
था, तब एक दल दूसरे दलकी निंदा करने लगा । अग्नि
उपासक प्राचीन पारसिकोंने अक्स्ता नामके प्राचीन धर्म-
ग्रन्थमें देवताओंकी अहिताचारी और प्रेतस्वरूप तथा
देव उपासकोंकी सिद्धा अदि नामोंसे संशोधन

किया है । फिर उधर भी धार्ष्टिक ऋषियोंने असुर और
असुर-उपासकोंकी निन्दा करना छोड़ा नहीं ।

आर्य, वेद, पारसी प्रवृत्ति शब्द इष्टम् ।

पारसीयमें जिन प्राचीनतम ग्रन्थ-लिपिका यावि-
ष्कार हुआ है उतमें आभिरीयकी लीर्गीको ‘असुर’ बत-
लाया है । कोई कोई अनुमान करते हैं, कि उन असुरों
और देवोपासकोंमें जो घोरतर संग्राम छिड़ा था वही
देवासुर संग्राम नामसे प्रसिद्ध है ।

वेदमें जिन ३३ देवतासंज्ञा उल्लेख है, उन्हींमें
पञ्चपुराणमें ३३ कोटि देवताओंकी कल्पना की गई है ।
पुराणमें लिखा है—

“उद्याम विवृणु मं म्नादी म्नादी म्नादीः ३३ ।

प्रैलोक्ये वे द्यधिमंन्तु कोटिसंख्यतवाग्निमन्त्रं ॥”

(वाग्ने उत्तरचण्ड)

इस लींकारमें देवता, उनकी स्त्री तथा उनके गण
सब मिलाकर ३३ कोटि हैं ।

देवताओंके गण गणदेवता शब्दमें दणो ।

पुराणके मतानुसार अधिज्ञारोने भेदमें देवताका
भेद सुझा करता है । कर्मपुराणमें लिखा है—

जिस पुरुषके जो अभिमत हैं, वे ही उनके देवता
हैं । वे ही कार्य विनियम द्वारा पूजित हो कर मनुष्योंको
अभीष्ट दान देते हैं । सभी जगह यह नियम है, मो नहीं;
इसका विपरीत भी सुझा करता है । राजाओंके देवता
अग्नि, प्रादित्य, ब्रह्मा और महादेव हैं; देवताओंके देवता
विष्णु, दानवोंके महादेव, गन्धर्व और यक्षाके सोम,
विद्याधरोंके वाग्देवी, साध्योंके हरि, रक्षोंके शङ्कर रुद्र,
किन्नरोंके पार्वती, ऋषियोंके ब्रह्मा और महादेव, मनुके
विष्णु, उमा और भास्कर, ब्रह्मचारियोंके ब्रह्मा, वेदान्त-
नसोंके देवता सभी हैं, यतिोंके देवता महेश्वर, भूतोंके
भगवान् रुद्र, कुम्भाण्डके विनायक और सबोंके देवता
देवदेव प्रजापति हैं । ऐसा भगवान् ब्रह्मानी स्वयं
कहा है ।

फिर देवताओंमें भी वर्णभेद बतलाया गया है ।
महाभारतके शक्तिपर्वमें मोक्षधर्ममें लिखा है—हादय
प्रादित्य चतुर्यु है, मरुद्गण वैश्य है, उग्र तपस्यायुक्त
अश्विद्वय शूद्र है और आङ्गिरस देवगण ब्राह्मण हैं । इस

प्रकार मन् देवता चार वर्गमें विभक्त हुए हैं।
 ब्रह्मदेवताके मतमें— देवताओंमें केवल ब्रह्म ही प्रथम है—

‘दनेऽप्यु र्दिनेऽप्यु बहि विष्णु शिव शिवाम् ।
 देवदत्तदत्त इत्येव नमस्तस्य विभक्तम् ॥’ (ब्राह्मणे०)

ब्रह्म, सृष्टि, पश्चि विष्णु, शिव और दुर्गा ये ही देवपट्टक हैं। इन सबको पूजा और प्रथम करना इरादका अर्थ है।

मासबिधीयमें देवताविशेषको पूजा निदिष्ट है। मन्थमन्त्रोदविधि मतमें—

‘‘व्या पञ्चोद्देशेषु दुर्गा भक्तिः कर्मवने ।
 शम्भुते वैराजने नमोऽपीह तथा तथा ॥
 दुर्गो तत्पदेह कृपाद्देव तस्वभोरुद्वयम् ।
 कर्मै तर्पेव देवाणामुत्पापमिधि सुधी ॥
 म वक्रव्याचतुर रणा रिशेणमिच्छतुवन्म् ।
 भास्विनापवनादेसु दुर्गा पूज्यावकाशिति ॥
 योगात् पूज्यवैशिश्रवण इत्याद्यौदिने ।
 रश्मि चैव शिवे चैव कार्तिके प्रदुन्द्वेद ॥
 वक्रवक्रवक्रव्यान्सु वषेय नानामावधोग ॥
 महामूर्धो बर्धेह्वात्तु भावयन्पुण्यदीक्षिते ।
 माचरय इन्द्रवामर्धो विद्येणाहृतिनानाकर्म ॥
 यत्र कान्तिद कर्मय शुक्रा । विचारतुता हरिः ।
 ताराय त्रिभुव कंवृत्त वचनार्थे पुणेतिम् ॥
 तस्य वक्रोवितावन्वन् वैवामोत्पिचर्द्वयम् ।
 विद्येवन्निवन्तु कृत्वा मन्त्रेह्वमनन्वनी ॥
 भावानी कार्त्तिके मन्त्रे शिविभिवन्मन्त्रवरेत् ।
 ईदवक्रमन्त्रे विद्यात् नच पूजाविररता ॥
 एव नो मन्त्रे विष्णु हर दुर्गा गणाभिरम् ।
 मारुतै वदवा मिस व वदाशिव हीरति ॥’

‘‘ब्रह्म प्रकार इष्टदेवमें मन्त्र तथा यज्ञ क्रिये बिना मनुष्यो को पमीष्ट काम हो सकता है, इसका विषय कहती हैं— योगशास्त्रमें पहले देवताको या प्रथमको नच और पीछे उनका उपासन करे। माघमासको कृष्णचतुर्दशी तिथिमें शिवपूजा करे। श्रावणमासमें प्रतिपदमें ही कर नचमी तक पूजापूजा आचरको कृष्ण दशमीं सोपाचपूजा, वैशाखाके शुक्लपक्षकी नचमी

तिथिमें रामपूजा वैशाखको कृष्णचतुर्दशी तिथिमें गणेशपूजा, भाद्रमासको कृष्णचतुर्दशी तिथिमें महा-
 लक्ष्मीपूजा, माघमासको शुक्ल पक्षमें तिथिमें दिननायक को पूजा, यदि किसी शुक्लपक्षमें रविवार पक्ष आब तो उस वारमें नक्षत्रपूजा करनी चाहिये। श्रावण और कार्तिकमासमें कोई दिवस आचरय कर सकते हैं। देवताको ध्यय करनेके लिये जपपूजादिमें तत्पर होकर यदि विष्णु, ब्रह्म, दुर्गा गणेश और सृष्टि देवतां लिय पूजा को काब, तो जो पूजा धरते हैं, वे जमा भवमय नहीं होती।

वत्समान हिन्दुओंमें कुम्भदेवता, इष्टदेवता, यज्ञ देवता, शम्भुदेवता कामदेवता आदिको पूजा देखी जाती है।

कुम्भकामानुषारमें जो देवता पूजित होती या रहते हैं, वे ही कुम्भदेवता हैं। शिव, विष्णु, दुर्गा इनमें कोई एक किसी श्रेणीके हिन्दु परिवारके कुम्भदेवता मानी मये हैं। जो जिन देवताके मन्त्रके दोषित होते हैं वे ही मन्त्र प्रतिपाद्य देवता इष्टदेवता हैं। घरके पश्चि भागमें स्वरूप वास्तु पूजित होती हैं, वही यज्ञदेवता हैं। शम्भुदेवताका कोई विशेष रूपादि निदिष्ट नहीं है। शम्भुन्दर्शन लिय है—

शम्भुदेवताका स्थितिकाम कालिका प्रथम २००० वर्ष है। इन समयके बादने फिर शम्भुदेवताका देवत्व नहीं रहता।

‘‘वक्रवक्र सरस्वति विष्णुलिप्यदि मूतके ।
 तरुदं ब्रह्मयोगेव तरुदं शम्भुदेवता ॥’

‘‘शेष प दि कृष्णादिमें तसे जिन देवताका पूजन होता है, उनको शम्भुदेवता कहते हैं।

दाक्षिणात्यमें जो शम्भुदेवताको पश्चिम पक्षगत है। वहाँके निम्नमें कोई हिन्दुमें जो शम्भुदेवताके प्रति विशेष श्रद्धा है। वे सब शम्भुदेवता कहतीं तो मूर्त्तिबोध काठकण्ठमें और वहाँ मिलाकण्ठमें पूजित होते हैं।

दाक्षिणात्यके दक्षिण और पश्चिममें ये देवता पश्च, पश्चम का पश्चार तथा पश्चिम और उत्तरागमें मद्रास, भेरी, मछीवा, चासुन्डा, चमरा, पाद, मरिचार्थ आदि नामके प्रकारों ज्ञाते हैं। जनसाधारण बिपद् पड़ने पर

अथवा रोगसे पीड़ित होने पर उनको पूजा करते हैं तथा उनको ढलिके लिये बकरे, भेंड़े, भैंसे आदिकी बलि देते हैं।

बौद्ध लोग भी देवताका अस्तित्व स्वीकार करते हैं। उनके मतसे बुद्ध और बोधिसत्वसे निम्नयोगोंमें देवगण और देवगणके नीचे मानव हैं। उनका कहना है, कि देवता अनेक प्रकारके हैं जिनमेंसे दिव्यावदान नामक संस्कृत बोधग्रन्थमें चातुर-महाराजिक, तुषित आदि देवताओंका उल्लेख है।

जो ऊपरो भागसे विचरण करते हैं, वे ये हैं—चातुर-महाराजिक देवता, तुषित, निर्माणरति, परिनिर्मित-वशवर्त्ती, परोत्ताम, अग्रमाणाम, आभास्वर, परोत्तशुभ, अग्रमाणशुभ, शुभकलत्र, अनभ्रक, पुण्यप्रसव, वृहत्फल, अष्टह, अतप, सुदृग, सुदर्श और अकनिष्ठ।

जैन लोग भी बौद्धके जैसा तीर्थंकर केवलीको जो उनके उपास्यदेवता हैं देवाधिदेव मानते हैं। उनके मतसे देवगण इन देवाधिदेवोंको अपेक्षा पदमर्यादा तथासभी विषयोंमें निम्न हैं। देवताओंके बाद मानव हैं। जैनियोंके देवता चार प्रकारके हैं—वै मानिक वा कल्प-भव, कल्पातीत, ग्रै वैयक और अनुत्तर। फिर वै मानिकके १२ भेद हैं—सोवर्म, ईशान, सनःकुमार, माहेन्द्र, ब्रह्मा, अन्तक, शुक्र, सहस्रार, नत, प्राणत, आरण और अच्युत। कल्पातीतके ८ और अनुत्तरके ५ भेद हैं।

पृथ्वीके प्राचीनतम सभी सभ्य देशोंमें एक समय भिन्न भिन्न देवदेवियोंकी उपासना प्रचलित थी। अनेक देवदेवियोंकी पूजा पद्धति तथा रूपादिकी देखभाल कर किसी किसीमें ऐसा कहा है, कि मिस्त्रदेशसे देवतत्त्वका सूत्रपात हुआ। भिन्न भिन्न देशोंमें उन्हींको स्थायाको नकल हुई थी। किन्तु यह मत समाचीनसा प्रतीत नहीं होता। वैदिक आर्योंकी नाईं दूसरो दूरगो सभ्य जातियोंमें भी देवतत्त्व आपसे आप निकला था। पर हां, यह नहीं कह सकते कि विदेशीय संभवमें एक भाव भावान्तरमें रूपान्तरित नहीं हुआ।

मिन्, रोम प्रभृति शब्द देखो।

देवताकुसुम (सं० क्ली०) लवङ्ग, लौंग।

देवतागार (सं० क्ली०) देवतानां आगारं इत्यतः। देवगृह, देवताओंके घर।

जो कोठागार, आयुधगृह और देवगृह नष्ट करता है तथा जस्ती, अश्व और रथ धरण करता है उसे राजाको चाहिये कि विना गवाही आदि लिये विनाश कर दे। देवतागृह (सं० क्ली०) देवतानां गृहं इत्यतः। देवताओंके आलय, देवालय।

देवताजित् (सं० पु०) देवतां जयति जि क्षिप्त्वा। १ देवविजयी असुरादि। २ भरत पुत्र सुमतिके एक लड़केका नाम।

देवताड (सं० पु०) देवो दीप्तस्तालः इति लस्यङ्। १ वृक्ष-विशेष, एक प्रकारका पीछा। इसका पर्याय—वेणी, खरा, गर, जोसूत, अगरो, खरागरो, ताड़ी, आखुविषहा, आखु, विपजिह्व, महाच्छद, कदम्ब, खुल्लाक और देवताडक है। इसमें इधर उधर टहनियां नहीं निकलतीं, तलवारकी तरह दो दाईं हाथ तक लंबे सोधे पत्ते पेहोंसे चारों ओर निकलते हैं। पत्ते कड़े होते हैं और कुछ नोला पन लिए होते हैं। इसके मध्यका काण्ड उठकी तरह छः मात हाथ ऊपर निकल जाता है और इसोके सिरे पर फूलोंके गुच्छे लगते हैं। पत्तोंके रेशोंसे बहुत मजबूत रस्से बनाये जाते हैं। कोई कोई इसे रामवांस भी कहते हैं। देवो चन्द्रार्की ताडयति ताडि कर्मणि अण्। २ राहु। देवनाय देपनाय ताडयतेऽसि ताडि कर्मणि अच्। ३ अग्नि, आग। ४ घोपकलता। ५ देवदासी वृक्ष, वेदाल।

देवताडक (सं० पु०) देवताड स्वार्थे कन्। देवताडवृक्ष। देवताही (हिं० स्त्री०) १ देवदासीलता, वेदाल। २ तुरई, तरोई।

देवताण्ड (सं० पु०) देवदालोवृक्ष।

देवतात (सं० पु०) तन ज्ञात एव तात स्वार्थे अण्। देवाना तातः। १ देवताओंके निमित्त विस्तृत यज्ञ। २ देवताओंके पिता, कश्यप। ३ मरीचादि ऋषि। ४ हिरण्यगर्भ।

देवताति (सं० पु०) देवस्वार्थे तात्तिल। देवता।

देवताधिकरण (सं० क्ली०) देवताकर्मसु तदधिकारित्व-मनधिकारित्वं वा अधिष्ठायते विचार्यतेऽत्र अधिष्ठा

चापारि श्युट । यन्नादिभिं देवतायोः च विचारित्वा च
पन्तर साधक म्यायमेद ।

देवताविषय (स० पु०) देवतायां विषय इत्य् । देवतायोः
च विषय इत्य् ।

देवताभ्याय (स० कु०) धामवेदका एक प्राध्याय ।

देवतागुणम (स० पु०) देवतायां अनुष्ठानम् इत्य् । देवो
इति देवतायो वा इत्य् ।

देवताप्रतिमा (स० श्लो०) देवतायां प्रतिमा इत्य् । देव
तायोः च प्रतिमूर्ति । देवतायोः च प्रतिमा गठने च
मातादि चौर मूर्ति-विषय सामान्य रूपेण उच्यते चित्तमि
दम प्रकार विधा है -

देवालय-वारका एक छतीयांग जितना हो, वही
विष्णुकाका प्रमाच है । दोनो परिमाणो विष्णुका बना
कर इसी छेने परिमाणो प्रतिमा बनायो चाहिये । प्रति-
माका विष्णुका पयसो छंगनीदे परिमाणवे वारह छ गनोका
रहे और सुम धायत हो । किन्तु मन्वसित् सुमिसे मतसि
प्रतिमाका देव्य चोष्टक छंनको बतनाया है । यह सुविह
देससि प्रचलित है । ना१, महाट और घोबाका परिमाण
चार छंनको, दो कान, दो हनु और चिबुके विष्णुका
परिमाण दो छंगनो होना चाहिये । कणाटका परिमाण
पाठ छंनको, विष्णुका दो छंगनी, दोनो शङ्ख दो छंनको
और कच, इतु तथा चिबुकेका विष्णुका दो छंनको
रहे । दोनो भौ माटे पांच छंगनीको तथा कचंकोत
हृन्दर छंनको बनाना चाहिये । निवान्ने दोना बनो का
बिबर चार छंनको, पचर एक छंगनो और पांचवे पवित्र
पौठ रहना चाहिये, पैसा बहिहने कडा है । पङ्क वा
पर्वान्क तथा सुख चार पङ्क, नाकसे पयसागने कन-
के दोनो पुट तक दो पङ्क और नाकका लच्छाय दो
पङ्क हो तथा यह दोनो पाँचोके मध्यस्थानसि चार
पङ्कसे पन्तर तक म्याय रहे । पवित्रोय और निर
इय दो पङ्क, इसका छतीयांग निरन्तरा पयसांग इव
तारा और पवित्रिवाय एक पङ्क बना रहे ।

एक पायसि से कर दूधरे पाय तक इय पङ्क, लक्ष
म्, पर्वान्कको म्परेका दो पङ्क तथा म्पय्य और
चार पङ्कका म्परेका रहना चाहिये । म्पय्यमानका
विष्णुका पर्वान्क च रहे, रसे केगरेकावत् बनाया चाव-

यक है । मेजात्मसि पङ्क, हो मध्य वरयोरे दिना कर्त्तव्य
है । म्पय्यको विमागना १२ च गुणको और म्पय्य
१४ च गुणका होना चाहिये । घोषादेम दग च गुनो
विष्णुका और इकोम च गुनो टैर्ष्यं रहे । म्पय्यत् सुमि
के मतागुवार केगुण म्पय्यको म्पय्यै १६ च गुनोको
होनी चाहिये । कण्ठसे हृदय तकका परिमाण वारह
च गुनि, हृदयसे नासि और नासिसे म्पुदेय तक मो
वही परिमाणका होना चाहिये । दोनो कूक और कडा
चोबोस च गुनीका, मातु और विष्णु चार च गुनिका,
दोनो गुण्ठ मो चार च गुनिका दोनो पट १२ च गुनि
दोर्ष्य और ६ च गुनि म्पय्य दोनो पाटाङ्क ३ च गुन
म्पय्य और पांच च गुन दोर्ष्य तथा पादतर्कोको म्पय्यै
३ च गुनिको होनो चाहिये । पचगिष्ट समो पदंगुनीको
क्रमय पटीत कस करण जगना चाहिये । १० छ मनो
च गुणका कर्कोच और च गुणका चतुव भाग हो च गुण
मका परिमाण रहे । रससि चिसो चिमीका मत इस
प्रकार मो है - एक च गुनिका परिमाण चतुर्षं माय कस
और पच्य समो च गुनिवा एक छ गनो का पायो छ गनो
पयसा कससे मो कसको होनी चाहिये । कडाके पय
सागको म्पय्यै १४ छंनको और चोडाई ३ छ गनो-
को होनो चाहिये । कडाका म्पय्यमाय सात छंनकोका
रहे और कसको म्पय्यै परिचाइवे तियुनो तथा कसका
मेच सात छंगनीका हो । कानुकेच पाठ छंनको और
परिचाइ १४ छंनकोका होना चाहिये । चटुटंय च गुनो
परिमित चियुन दोनो कसके म्पय्येगको परिचि कससे
दूनी पचात् २८ च गुनको पटादय च गुन परिमित
कटिदेमको परिचि ४ पंगुनको और नासिका मेच और
प्रमाच १ च गुनका होना चाहिये । नासिमध्यसे साय
दोनो प्पय्येके म्पय्य परिचाइका परिमाण २४ च गुनो
और कच १६ च गुनि, दोनो कच ६ च गुनि म्पय्येय
८ च गुनि और मातु तथा दोनो पयसाङ्कका परिमाण १२
च गुनि, वाइ ६ च गुनि विष्णुका और प्रतिमाङ्क चार
पङ्क चि परिमाणका होना चाहिये । दोनो मातुमूलको
म्पय्यै १६ च गुनिको और पागिसे दोनो वाकोको
सगरी वारह पङ्किको होनी चाहिये ।

करतकका विष्णुका ६ च गुनो और टैर्ष्यं ० च गुनो,

मध्यमा ५ अङ्गुली, प्रदेगिनी अङ्गुलीका परिमाण मध्याङ्गुलिसे पर्वद्विसे कम, अनामिका तर्जनीके बराबर और कनिष्ठाका परिमाण अनामिकासे एक पर्व कम रहना चाहिए। अंगुष्ठमें दो पर्व और अन्यान्य अंगुलियोंमें ३ पर्व तथा उनके नखका परिमाण पर्वसे आधा होना चाहिए। देहातुरूप भूषण, वेश, अलङ्कार और मूर्त्ति द्वारा प्रतिमाको लक्षणयुक्त करना चाहिए।

देवप्रतिमा १८ अंगुलिकी होनेसे उत्तम, ८६ होनेसे मध्यम और ८४ होनेसे अधम समझी जाती है। भगवान् विष्णुको द्विभुज, चतुर्भुज वा अष्टभुज बना कर उनके वक्षस्थलको त्र्योक्ताङ्गयुक्त और कोष्ठभूषणमें भूषित करना चाहिए। उनको आकृति अतर्ही पुण्यवर्णकी तरह श्मामवर्ण, पीतवस्त्र परिहित, प्रभञ्जमुख, जगदल और किरोटधारी तथा उनको गदा, वक्षस्थल, स्कन्ध और दो भुजाएँ होने चाहिए। इस विष्णु प्रतिमाके दाहिने हाथोंमें यथाक्रम खड्ग, गदा, शर और चौथे हाथमें गान्ति और बायें हाथोंमें कामुक, खेटक, चक्र और शङ्ख देना चाहिए। नारायणको यदि चार भुजा देनी हो, तो दाहिने पाश्वर्कके एक हाथमें गान्तिप्रद और दूसरे हाथमें गदाधर तथा बायें पाश्वर्कके हाथोंमें शङ्ख और चक्र देना उचित है। लेकिन द्विभुज करते समय दाहिने हाथमें गान्ति और बायें हाथमें शङ्खका रहना आवश्यक है। भक्त लोगोंको इसी प्रकार विष्णुकी प्रतिमा बनानी चाहिए।

वलदेवकी शङ्ख, चक्र और मृणालकी नाईं गौरवर्ण कसेवरविशिष्ट, एक कुण्डलधारी, मदविभ्रमस्तोचन और हलधारी बनाना कर्त्तव्य है।

हृष्य और वलदेवके बीच एक अर्धशा नामकी देवी प्रतिमा बना कर उस देवीकी कटि संस्थित और उनके हाथमें पद्म दे। उस देवीके चतुर्भुजा होने पर उसके बायें दो हाथोंमें पुस्तक सहित पद्म और दाहिने दो हाथोंमें वरट और अक्षसूत्र रहे। अष्टभुजा देवीके बायें सभी हाथोंमें कमण्डलु, धनु, पद्म और शङ्खयुक्त तथा दाहिने हाथोंमें वर, शर, दर्पण और अक्षसूत्र देना चाहिये। साम्ब गदाधारी, प्रद्युम्न चापधारी और सुन्दर रूप विशिष्ट हों, तथा इनकी स्त्रियोंको भी खेटक और

निम्नि'शधारिणी बनावे। ब्रह्मा कमण्डलुधारी, चतुर्भुज और पद्म संस्थित हों। कान्तिवैद्यकी कुमाररूपधारी, शक्तिधर और मयूरचिह्नित बनावे। शुकवर्ण इन्द्रके हाथमें वज्र, और तिर्यकभाषापद्म मनाट, वाहन चतुर्देव गेरावत हो और उनके तीन नेत्र हों। महादेवके मस्तक पर चन्द्रकला, वृषध्वज, ऊपरमें तोसरा नेत्र, बाईं और शूल, धनु और पिनाक रहे तथा गिरिजाकी उमाका अर्धाङ्ग बनाना चाहिए। बुधके चरण और हाथोंमें पद्म रहे उनके मूर्त्ति प्रसन्न और शंभू होने रंगका हो तथा वे पद्मामन पर बैठे हों। अर्द्धतुकी आजानुलम्बित धार, शोक्ताङ्गयुक्त, प्रगान्तमूर्त्ति, दिव्यसन, तरुण और रूपवान् बनाना चाहिये।

रविकी नाक, मनाट, जहा, ऊरु, गण्ड और वक्षः टयत रहे, किन्तु घटमें ले कर वक्षभाग तक छिपा रहे तथा वे शौक्तिक मेघधाने हों। उनके हाथोंमें पद्म, साधे पर सुकुट तथा वे भ्रमणकारी ग्रहोंमें परिहृत हों; उनके गलेमें हार और कुण्डल द्वारा घटन भूषित हो। जो सुवर्णके जैसा था, तिगाली सुवर्ण, कंबुक द्वारा गुम देह, श्मिंत और प्रसन्नमुख तथा रत्नकी उज्ज्वलप्रभा मण्डल-विशिष्ट सूर्यकी प्रतिमा बनाते हैं उन्हें अनेक प्रकारके मङ्गल होते हैं। देवप्रतिमा यदि एक हाथके परिमाणकी हों, तो सौम्या, दो हाथकी होनेसे धनदायिनी, तीन वा चार हाथकी होनेसे जैम और सुभिक्षका कारण होती हैं। देवप्रतिमाके अधिक अङ्ग होनेसे कर्त्ताकी नृपभय, होनाहो होनेसे अमङ्गल, घोणोदरो होनेसे क्षुब्ध और हृद्य होनेसे उनका अर्थनाग होता है।

प्रतिमा यदि शस्त्रपात द्वारा क्षत और बाईं और धवनत हों, तो कर्त्ता तथा उसकी स्त्रीका मरण एवं दाहिनी और भी धवनत होनेसे उसकी मृत्यु अवश्य होती है।

प्रतिमाकी दृष्टि कर्ध्वगत होनेसे कर्त्ता अन्धा और अन्धोमुखी होनेसे वह सर्वदा चिन्तित रहता है। इस सूर्य प्रतिमाके सम्बन्धमें जो कुछ कहा गया, सभी देव-प्रतिमाके विषयमें भी वैसा ही समझना चाहिये।

जिससे पूर्वोक्त दोष न होने पावे, उसी प्रकार विशेष सावधानीसे देवप्रतिमा बनानी चाहिए।

निष्कण्ठो वृत्तपरिधिर्को मुख द्वारा दृश्यं परिमित कर
 से उसे तोत्र भागमें विभक्त करे। उसका एक भाग मुख
 का परिमाण हो। किन्तु मुख चोक्षोप रहे, उस पर
 विशेष ध्यान देना चाहिये। दूसरे भागमें पष्ठाक्षिप्ते
 मन्त्र पौर तीसरे भागमें लक्ष्मण्य बनाया चाहिये।
 निष्कण्ठा निचला नौकण्ड भाग पिण्डिका दिग्ग्रेसे बीच दम
 प्रकार विभक्त्य रहे कि वह मन्त्रमें से कर पिण्डिकाके
 चक्षुश्या भाग तक चारों पोर दोष पड़े। उक्त निष्कण्ठ
 लक्षणदोष होनेसे वह देयनायक, पाप्यं चोत्र होनेसे पुर
 नायक एक चतमन्त्रक होनेसे मन्त्रोका पणितकार
 होता है।

माह्वतकको सनाम देवताके अनुकूप विष्णुवृत्त
 करना कर्तव्य है। सूत्र सुप्त देवता चन्द्राक्ष, श्यया-
 क्रोडादिबुद्ध, मन्त्रिपाकृष्ट और बह्वक्षपागधारी तथा
 व साकृष्ट; कुवर नरबाह्यकृष्ट, वृष्टव् कुचिबुद्ध और
 हृन्दर बिरोटकारो है। प्रथमाधिपति गणेश गजमुख,
 प्रकल्प अक्षर, कुम्भरधारो एकदन्त तथा मूलक धन्द पौर
 तुलोक दक्ष कन्द चारवक्षारो है। (हरपदं० १८ प०)

अम्बिपुराणमें देवव्रतिमाका लक्ष्य इस प्रकार लिखा
 है—ममयान् नापयचने को मन्त्रावतार धारण बिया
 वा, उस मन्त्राका धाकार प्राकृत मन्त्रके औषा। जूम
 का धाकार जूमके औषा; मराहका धाकार मनुचके
 वे मा पङ्कमन्त्रविधिसे हो, हाथमें मण्ड, चक्र, गदा और
 पद्म हो, दाहिने पोर बाबे पाश्र्वमें शङ्ख, मध्यां वा पद्म
 पोर वी हो तथा अरुचतलमें प्रथिवो पोर धनन्त हो।

सुवि श्वाक बदल व्याहित, नाम लक्षमें दामक चत
 बिचत, यक्षिमें माना हाथमें चक्र और गदा है। इमी
 पयक्षामें धी देवपतिका बह्व बिदारण कर रही है।

वामनको पाञ्चति अक्षर, मन्त्रक पर ब्रह्म हाथमें दन्त
 और चार बाहु है। परशुरामावतारके हाथमें श्यर यरा
 शक, चक्र और पद्म है। रामावतारमें दां सुबा है और
 उस दौ सुबापोंमें चक्र, मण्ड, चक्र और मण्ड सुगोमित है।
 बह्वरामको चार बाहु काञ्चल और मदावि सुगोमित है।
 रजनीसे बाये हाथों के ऊपरके हाथमें काङ्कन, मोचेय
 सुगोमन मण्ड और दाहिने हाथों के ऊपरके हाथमें मूयल
 और नीचेके हाथमें चक्र है।

ममयान् सुहवी मूर्ति चञ्चला शान्द, शान लम्बे, पद्म
 गौरवर्च, परिधान सुन्दर वस्त्र, शानन लक्ष्य पद्म है। ये
 कर पौर समवदान दे रही है। ममयान् अक्षिप्तको मूर्ति
 काञ्चलकी है। ये चोक्षिमें ऊपर बैठे हुए हैं, हाथमें मनु
 गून, चक्र, मण्ड, चक्र और मण्ड है। उच्छिचोर्ध्वमें गदा,
 पाशोर्ध्वमें चक्र, दांनो पाश्र्वमें ब्रह्मा पौर मण्डर है। इमी
 प्रकार वासुदेवको मूर्ति बनानो चाहिये।

चण्डोर्ध्व दोम हाथ हैं, त्रिभुजि दाहिने हाथोंमें मूल,
 पश्चि यक्षि, चक्र प्रास पेट, चाबुच, पमय, कमर पौर
 यक्षिका तथा बाबे हाथोंमें नागनाग शेटक, कुम्भार,
 पद्मश, चतु, चक्षुश्य अत्र गदा, पाश्र्वों पौर सुहर है।
 बाबाई बाबाई चण्डोर्ध्व दम हाथ मी चिखे है। इनके मोचे
 क्षिप्तमूर्त्तौ पतित मन्त्रि है। श्रोत्रसे भर कर लम्बे हाथों-
 में पद्म गीमरी है। लम मन्त्रिपने गर्भमें एक सुवच
 निचला कृपा है, त्रिभुजि हाथमें मण्ड है, मुखमें एक वमन
 हो रहा है तथा उदरे केश पौर माना है, दोनो पांखे
 माना है तथा पागवह है पौर वह नि हने बाह्याता है।
 चण्डोका दाहिना चरण बि हके कन्धेपर पौर बायां पौर
 चतुरको पोट पर है। ये विरिता पौर समप्रा है।

चण्डोको एक पौर मूर्ति है जिसे पठारक बाहु है।
 इलमेंसे दाहिने हाथोंमें मनुष्य शेटक, पादयं, तत्रंनो,
 चाप, अत्र, कमर पौर पाय है तथा बायें हाथोंमें यक्षि,
 सुहर मूल, चक्र, चक्र पद्म, मण्ड, चक्र पौर मन्त्राका
 है। अयगिट मूर्त्तियां के १६ बाहु हैं। बह्वक्षपादि
 नो मूर्त्तिका हाथोंमें कमर धार तत्र नो छोड़ कर उच्चि
 वित धनो चक्र है। बह्वक्षपा, प्रचन्दा चण्डोका
 चण्डनायिका चण्डा चण्डनती चण्डकृपा, पतिचक्रिका
 पौर चण्डचन्दा इनका रूप तथाकृत रोचनाम, चक्षु,
 पश्चि, मोच शङ्ख बुध, पोट पौर श्वेत है। ये धनो
 सि बडे ऊपर बैठे हुए सृष्टि द्वारा मन्त्रि पौर लक्षके
 पांवा अन्तः शय्यायाका सुवचका कच (बाक)पद्मक कर रही
 है इनका नाम नवदुवा है। अक्षिताके बायें हाथमें लक्ष्म
 पौर मन्त्रक तथा दाहिने हाथमें द्यंभ है। अक्षिका
 दाहिने हाथमें पद्म और बाबे हाथमें वीरुण है। पर
 अतोके हाथमें मण्डक, पयमाका पौर बीचा है। जाऊवा
 के हाथमें कुम्भ पौर पद्म है, लम्बा कर्च श्वेत पौर

आसन मकर है। तुम्बुक शुक वण और शूल तथा वीणा हाथमें ले कर माताके पुरोभागमें दृप पर आरूढ़ है। गोगे चतुर्मुखी और ब्रह्मचारिणी हैं, हाथमें अक्षमाला ओभती है। ग्राह्णरो श्वेतवर्णा और हंसगामिनी हैं, बायें हाथों में कुण्ड और अक्षपात्र तथा दाहिनेमें गर और चाप है। कौमारो द्विभुजा और रक्तवर्णा हैं, हाथमें शक्ति है, शिविदृष्ट पर बैठी हुई है। वाराहो दण्ड, शङ्ख, शसि और गदा हाथमें लिए मक्षिपदृष्ट पर बैठी है। बायें हाथमें चक्र और पार्श्वमें गदा पद्मधारिणी लक्ष्मी विराज कर रही हैं। इन्द्राणो सहस्रलोचना है, बायें हाथमें वज्र है।

चामुण्डाके तोन नेत्र हैं, देहमें मांस नहीं है, अस्थि-चर्मसार है, वेश लज्ज ग है, उदर कृश है, परिधान टोपिचर्म है, बायें हाथमें कपाल और पट्टिय है, दाहिने में शूल और वक्त्ररी है, अस्थि भूषण है और आसन शवका है। यक्षिणोके लोचन स्तब्ध और टोघ है, शाकिनीको दृष्टि वक्र और अक्षराओंके नेत्र रक्त और पिङ्गलवर्ण हैं, शरीर मीन्दर्यसे दृग्ण है। हारपाल नन्दी-श्वरके हाथमें अक्षमाला और त्रिशूल है।

(अभिपु० ८८ अ०)

देवप्रतिमाको नगरकी ओर स्थापित करना चाहिये। पूर्वकी ओर इन्द्रका, अग्निकोणमें अग्निका, दक्षिणका और मातृका, भूतसमूह, यम और चण्डिकाका नैऋतमें पितृदेवताओंका, वारुणमें वरुणाटिका, वायुअसं वायु और नागका, सौम्यमें यक्ष और गुह्यका, ईशानमें चण्डीश्वर और महादेवका, सब दिशाओंमें विष्णुका और मध्यभागमें ब्रह्मका मन्दिर बनाना चाहिए। देवालयका विशेष सावधानीसे निर्माण कर उसमें देवप्रतिमाकी प्रतिष्ठा करनी चाहिये।

(अभिपु० ८८ अ०)

अग्निपुराणमें अनेक देवप्रतिमाके लक्षण लिखे गये गये हैं। विस्तारके भयसे उनका उल्लेख यहाँ नहीं किया गया। हेमाद्रि-त्रतखण्डमें, विष्णु-धर्मोत्तरमें और हर्षशीर्षपञ्चरात्रमें अनेक देवताओंके मूर्त्तिलक्षण लिखे हुए हैं। यहाँ पर सभी लक्षण न लिख कर केवल उन्हीं सब देवताओंके नाम दिये गये हैं। गणेश, सर-

स्वती (मूर्त्ति चतुर्भुजा और सर्वाभरणविभूषिता है, दाहिने हाथमें पुस्तक और अक्षमाला तथा बायेंमें वीणा तथा कमण्डलु है), लक्ष्मी, महालक्ष्मी, भद्रकाक्षी, चण्डिका, दुर्गा, नन्दा, अम्बा, सर्वमङ्गला, कालरात्रि, ललिता, ज्येष्ठा, गौरी, भूतमाता, सुरभि, योगनिद्रा, मातृगण, ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराहो, ऐन्द्री, चामुण्डा, नान्दीमुख मातृगण (गौरी, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया, देवमाता, स्नाह, स्वधा, धृति, पुष्टि, तुष्टि, आत्मदेवता, कुलदेवता ये सब नान्दी-मुख मातृगण हैं), नवदुर्गा, वामा, ज्येष्ठा, रौद्रो, काली, कलविकर्णिका, वलविकर्णिका, वलप्रमथनी, सर्वभूत-दमनी, मनोन्मनी, कृष्णा, उमा, पावती, महाकाली, वारुणो, चामुण्डा, शिवदूतो, कात्यायनी, अश्विका, योगी-श्वरो, भैरवी, रश्मा, शिवा, कीर्त्ति, सिद्धि, ऋद्धि, जमा, वैष्णवी, ऐन्द्री, याम्या, टोमि, रति, श्वेता, भद्रा, मङ्गला, जया, विजया, कालो, घण्टाकर्ण, जयन्तो, दिति, अरुन्धती, अपराजिता, कौमारो और चतुःपट्टि योगिनी है। मय-दोषिकाके मतसे योगिनोर्थोंके नाम ये हैं—मन्त्रोभ्या, ऋक्षपर्णी, राक्षसी, चपणा, जया, पिङ्गली, अक्षया, जेमा, वाला, लीला, लया, लोला, लङ्गा, लङ्केश्वरो, लालसा, विमला, हुताशना, विशालाक्षी, हुड्डारा, बहुवा-सुखी, हाहारवा, महाक्र रा, क्रोधना, भयानना, सर्वज्ञा, तरला, तारा, कृष्णा, हयानना, रससंयाहो, श्वरा, तालुजिह्विका, रक्षाक्षी, सुप्रसिद्धा, विद्युज्जिह्वा, करद्विनी, सेवमादा, प्रचण्डोग्या, कामकर्णी, चन्द्रावली, चन्द्रहासा, वरप्रदा, प्रपञ्चिका, प्रलयान्ता, शिशुवक्त्रा, पिङ्गली, पिङ्गिताशया, लोलुपा, धमनी, तपनी, वामनी, विह्वता-नना, वायुवेगा, दहत्कुचि, विह्वता, विश्वरूपिका, यम-जिह्वा, जयन्तो, दुर्गा, यमान्तिका विडाली, श्वेती, पूतना और विजयन्तिका।

आदित्यपुराणमें इन सब देव-मूर्त्तियोंका उल्लेख पाया जाता है—ब्रह्मा, प्रजापति, लोकपाल, विश्वकर्मा, धर्म, ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, शिवा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष, मौमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र, पुराण, इतिहास, धनुर्वेद, आयुर्वेद, निम्ब-शास्त्र, पञ्चरात्र, पाशुपत, पातञ्जल, साङ्ख्य, अर्थशास्त्र,

नीरद सुनि, श्यु चरित्रा, विष्णु, जोबदाय विष्णु, काशुदेव महर्षय, प्रपुष्य, चरित्रा चाम, मास्य देवको, यगोदा योपाय, पुत्र चरित्र, तर गारायक इति, इयपीच, उदिक, व्यास, वासुदेवि, दत्तात्रेय, बभ्रुवर्ण, बलयापी, महर्ष, बद्र, मृत्यु इव, चरित्रागोप, इचिचामूर्ति, उमादेव्यर चरित्र, विष्णुदेव, बद्रुमिद, एवपाद, चरित्रुच विवपाच, देवत, इर, बद्रुप, ब्राह्मण सुखर, जयन्ता यपराजिता, कन्द, मैरव, महाबाल मदि, मोरमद्र, क्वर, वदु, प्रुच, पाय, चरित्र, चरित्र, प्रभुय प्रमान इादयादिक, प्रातु, मित चयमा, बद्र, बभ्रुच, स्यु, मय, विवपानु, पूषा, स्यु, त्रडा, विष्णु, इट मयदु, देवता, यच मय घादि, गयच, वासुचि, लयकानि, यिदयय समी विष्णु देव, उतचमुद्र, होपादि दिक् घात, चरित्र, यम बभ्रु वातु चरित्र, पाचाय, प्रुच, मयच, तिदि, लयय योच, करच, रायि, वाक, मुद्रात, सित चयय, पायमद, वाचिक, मैराक, गयच, चरित्रित, रोचिचि, बल विचय, चरित्रय, बभ्रुच, सुमय, विष्णुच, इय चरित्रभातु, सुमानु तारच, चयय, मय जिनु, देव, मयाय, इममय विव क, विचारी, इव घादि चरित्र देवताकोका चरित्र है। इन सब देव प्रतिमाको यथाविधान प्रतिष्ठा करनेसे अनेक फल प्राप्त होते हैं। यथोक्त-स्तोत्र तत्तदं धर्यते देवे। देवताप्रतिष्ठा (च० पु०) देवताकी प्रतिष्ठा है तत्। देव ताको की प्रतिष्ठा। देवताको को विधिसे अनुसार प्रतिष्ठा करनेसे देवप्रतिमाके देवत्व प्राप्त होता है। देवप्रतिमाकी प्रतिष्ठा विधिसे बिना पूजादि नहीं जाता। परसे देव मूर्ति का निष्ठा कर दोही यथाविधि प्रतिष्ठा करते हैं। "वीर्ये रावते वापि तासो रत्नमयी तथा। शौचराज्ये वरिषे कोदाहमयी तथा। पीठेय वातुपुत्र्य च तावन्वायमयी तथा। सुमहावमयी वापि केरतासो ब्रह्मण्ये च" (प्रभातल)

सुवर्ण, रत्न, तास्य, रत्न, पायाच, दाव लोच, यदु, रीतिका और बाल द्वारा देवप्रतिमा बना कर प्रतिष्ठा करते हैं। इन सब प्रतिमाको शाकादि प्रतिष्ठा करनेसे बलिदान प्राप्त होता है। प्रतिमाके देवत्वको

सम्पन्न नहीं करनेसे वायको को यथासामं स्थापना प्रयुक्तता है। इसीसे चैतन्यरूप, चरित्रेय, चरित्रेरी ब्रह्मदेवताको विचार्ये विधिसे देवको स्थापना की जाती है।

"विष्णुप्रभातिटीरय निष्कम्भाशरीरिका।
 उजबकवा वास्ये ब्रह्मणे स्वरुपयाना ॥"
 'स्वरुपयाना स्वरुपयाना देवताया पुत्रु पाते कल्पना।'
 (देवप्रतिष्ठातत्त्व)

अनेक प्रतिमाका प्रतिष्ठा करनेसे मुक्तिप्राप्त होर निकोनिमित्त वाचनिमित्त तथा चैतन्यको-प्रतिमाको प्रतिष्ठा करनेसे शुभ होता है। देवप्रतिमाको तरह धातुपामादि मिठा चौर मिश्रकित्तादिही भी प्रतिष्ठा करनेसे होती है। ज्योतिषको दिवसे तथा वासुदेवसे प्रतिष्ठा करने का विधान है। प्रकृमासादि चण्डमहासे प्रतिष्ठा नहीं होती। प्रतिष्ठा केकी।

- देवतामचि (च० पु०) महादेव।
- देवतामय (च० वि०) देवतामय देवता-मयद। देव तामय देवतामय। (पु०) २ चिरच्छगर्मकय देवतामद। देवतायतन (च० जो०) देवताकी पायतन है-तत्। देव-यद, देवताय।
- देवतामय (च० पु०) देवताकी पायक है तत्। देवयद। देवतामयतत् (च० जो०) देवताकी चरित्र है-तत्। देव यद, देवताय।
- देवतियि (च० पु०) पुत्रय यीर पकोचनके एक पुत्रका नाम।
- देवतियक - बभ्रुवर्णमन्दिरोचने मीकाकार।
- देवताय (च० जो०) १ पवित्र तीर्थमद। २ देव पूजा का उपयुक्त समय। ३ च मुक्तिका समय। च मुक्तिको काहु चरित्रेयो का यमना पाय विचरि ही कर च बभ्रु या तर्पणका उच गिरता है।
- देवता (च० वि०) देवता का उच दत्त, जो देवतासे दिया गया हो।
- देवता (च० वि०) देवसम्बन्धीय, देवताका।
- देवता (च० पु०) यमद, चैतन्यके अनुसार एक प्रकार का दत्त।
- देवता (च० यम०) देवता सेव करीति बभ्रुपते देवे

त्राच. १ करणादि विषयमें देवताको देने योग्य । २ देवताधीन । (पु०) देयं वन्दे देवो रमे वा द्वितीयान्तात् सम्यक्तात् न देवशब्दात् ता । ३ वन्देनादि कमयुक्त देवता । ४ रमणविषय देवता । (त्रि०) देवान् त्रायते वाचक । ५ देवता-रक्षक ।

देवतात—आश्वलायन श्रौतसूत्रके एक भाष्यकार । निर्णय-सिन्धु और संस्कारकौस्तुभमें यह भाष्य उद्धृत हुआ है । देवतायां (सं० पु०) ब्रह्मा, विष्णु और शिव इस तीन देवताओंका समूह ।

देवत्व (सं० क्लो०) देवस्य भावः भावे त्व । देवताका भाव, देवताका धर्म ।

देवदग्ध (सं० क्लो०) रोहिष त्वण, रोहिष घास ।

देवदग्धा (सं० स्त्री०) देशात् सेधात् दग्धो यस्याः । नागवला, गौरन ।

देवदग्धोत्पला (सं० स्त्री०) नागवला ।

देवदत्त (सं० पु०) देवा एनं देवासुरिति संज्ञाया (किञ्च कौ च संज्ञाया । पा. ३।३।१७४) १ संज्ञा शब्द प्रति-पाद्य नरभेद, जिस जगह नामादि मालूम न हो, उस जगह देवदत्त यही शब्द प्रयोग किया जाता है, जैसे देवदत्त प्रस्तुत करता है ।

जिस तरह ब्राह्मण कस्वलेमें ब्राह्मणार्थ नहीं है, उसी तरह देवदत्तादि वाक्य निरर्थक अर्थात् इसका कोई अर्थ नहीं है । २ वह सम्पत्ति जो देवताके निमित्त दान की गई हो । ३ देहस्थित जृम्भनकर प्रायुभेद, शरीरकी पाँच वायुओंमेंसे एक जिससे जंभाई आतो है । ४ अजुलके एक शंखका नाम । ५ अष्टकुल नागोंमेंसे एक । (त्रि०) देवेन दत्तः ३-तत् । ६ देवलब्ध, जो देवतासे दिया गया हो । ७ जो देवताके निमित्त दिया गया हो । देवदत्त—शाक्यवंशीय एक राजकुमार, शूद्रोदनका भतीजा । जिस प्रकार दुर्योधन युधिष्ठिरादिके शत्रु थे, उसी प्रकार देवदत्त भी शाक्यवृद्धके चोर प्रातिशत्रु रहे । जिस जिस बौद्ध ग्रन्थमें वृद्ध शाक्यसिंहका चित्रण है, उसी उसी ग्रन्थमें देवदत्तके भी अनेकों परिचय मिलते हैं । वृद्धके साथ लड़कपनसे ही पाले पोसे जाने पर भी तेजःवीर्य विद्याबुद्धि सभी विषयोंमें शाक्यसिंहको बढ़ा-चढ़ा-देकर देवदत्त वृद्धत-जलते थे । पहले इन्हीं

यशोधरासे विवाह करनेको इच्छा की थी, किन्तु यशोधराने उन्हें पसंद न किया और वे सिद्धार्थकी श्रद्धालुओं हो गईं । इस पर देवदत्त बहुत विगड़े और उनका अनिष्ट करनेमें लग गये । किस प्रकार वृद्धका अनिष्ट कर सकते, वे हमेशा यही सोचा दूटने लगे । मगधराज विम्बिसारके पुत्र अजातशत्रु, देवदत्तके परम मित्र थे । कल्प-द्रुमावदानमें लिखा है, कि अजातशत्रु ने अपने मित्र देवदत्तकी बातमें पड़ कर अपने पिता विम्बिसारको मार डाला था । फिर अवदानशनकमें भी एक जगह लिखा है, कि जब वृद्ध जितवनमें रहते थे, तब दुर्धत्त देवदत्तने बहुतसे घातकोंको उन्हें मार डालनेके लिये भेजा था ; किन्तु वे उनका बाल बाँका भी कर न सके । देवदत्त और अजातशत्रु ने मिल कर वृद्ध मतके विरुद्ध कई एक ग्रन्थ भी प्रकाशित किये थे । भद्रकल्यावदानमें लिखा है, कि सिद्धार्थके सारत्याग करने पर उनकी प्रियतमा भार्या यशोधराको पानेके लिये देवदत्तने उन्हें बहुत प्रलोभन दिया था । पर जब उनको इच्छा पूरी न हुई, तब वे उन्हें मार डालनेके लिये मो उद्यत हो गये थे ।

जो कुछ ही, सिद्धार्थके विरुद्ध इन्होंने जितनी दालें चलाईं सब निष्फल हुईं । इनके मित्र अजातशत्रु, भी वृद्धसे दौचित्त हुए थे । पृथ्वी इस दुर्धत्त देवदत्तको और अधिक दिन रख न सकी, एक दिन वह विदोण हो हो गई । देवदत्तको नरकभी यन्त्रणा भुगतनी पड़ी । बौद्धोंके अनेक अवदान ग्रन्थोंमें लिखा है, कि वृद्ध जितनो बार उत्पन्न हुए थे, उतनी बार देवदत्तने उनका शत्रु हो कर जन्मग्रहण किया था ।

ब्रह्मदेशीय बौद्ध लोग देवदत्तकी ही योशुवृष्ट मानते हैं । फिर श्यामवासियोंका विश्वास है, कि देवदत्त यूरोपके एक देवता हैं ।

देवदत्त—१ एक हिन्दी कवि । शिवसिंहसरोजमें लिखा है कि इनका बनाया ललितकाव्य प्रसिद्ध है । सं० १७०५ में ये विद्यमान थे ।

२ ये भी एक हिन्दीके कवि थे । सं० १७७२ में इनका जन्म हुआ था । इनका बनाया 'योगतत्त्व' नामक एक ग्रन्थ है ।

३ हिन्दीके एक कवि । इन्होंने सं० १८१८ में

काशीरंके महावीर सुमार प्रगवाहके कश्मिसे श्लोकपर नामक एक पद्य लिखा ।

४ एक सुप्रसिद्ध हिन्दी-कवि । ये बटावाके रहनेवाले सभास्य ब्राह्मण थे । इनका जन्म सन् १७२० ई. में हुआ था और स. १८०२में इनका देहान्त होना अनुमान-सिद्ध है । ये केवल १६ वर्षकी भाष्यावस्थामें ही ललित कविता करने लगे थे । इनकी कविता खोई उदार पाठ्य टाता नहीं मिला और इसीकी कौशलमें पद्यवा शब्द किसी कारणसे ही प्रायः समस्त भारतवर्षके प्रत्येक प्रांत भूमि । इनका प्रभाव इनकी कविता पर बहुत ही पच्छ्या पड़ा और प्रत्येक स्वामके निराश्रितों का इसीमें सहा वर्षेन किया । यही समस्त वाच्यदाताकी ही मीमी कायका हाल इसीमें सत्रसे विविध नवावुद्ध सिखा । खोई खोई तो इन्के ३२ पद्योंका और खोई ७० पद्योंका एक पिता बतलाते हैं । जो कुछ ही, इनके बगैरे कुछ पद्योंके नाम मीचे दते हैं—मातृविद्याय, प्रेमतरङ्ग, सुखसार तरङ्ग, सुज्ञानविभेद, काव्यरसायन, तत्त्वज्ञानवर्षोष्ठी, वृत्तानन्दसहस्री, देवमायाप्रपञ्चनाटक, सुमित्रविभेद प्रेमचन्द्रिका और मोलित्तक ।

इनकी कवितामें उत्तम शब्द बहुतायतमें पाये जाते हैं । इनकी भाषा यह ब्रह्मभाषा है और यह भाषा-सम्बन्धी प्रायः सभी भाषावर्षोंमें सुकल्पित है । इसीमें तुलना भी बड़े ही मनोहर रहे हैं ।

१ जैन मतानुसार सूर्य के एक पुत्र ।

२ एक विष्णुवादी श्रोत्रविद् । इसीमें स स्मृत भाषामें प्रकृतकवचमन्त्र नामक एक पद्यकी रचना की ।

३ महाारण्यकनाम नामक अष्टादश-बन्धके एक पितृ ।

४ शुद्धरवाको हरिके पुत्र । इसीमें आठव्रजमाका नामक लक्षण शेषक पद्य लिखा है ।

देवदत्तक (स. पु.) देवदत्तो सुप्य यथा रति कम् । देवदत्त-प्रकाशक ।

देवदत्त काश्मिणी—एक हिन्दी कवि । ये सत्जनन जितेके पुरन्दर नामक ग्राममें रहते थे ।

देवदत्त शशी—हिन्दीके एक कवि । इनका जन्म संवत् १६०८ को आनपुरमें हुआ था । इसीमें पैरिबिबदमन

भाव और शब्दोंका भावमूर्तिरूपरग नामक दो पद्य लिखे ।

देवदत्तायन (स. पु.) देवदत्तक भयक । शब्द सुद । देवदत्त (स. वि.) देव पश्यति इव-यम् । १ देवता दर्शन, देवताका दर्शन करनेवाला । (पु.) २ शब्दके अर्थ, एक शक्तिवा नाम ।

देवदर्शन (स. वि.) देव पश्यति इव-यम् । १ देव दर्शन । (पु.) २ शक्तिवेद, एक शक्तिवा नाम । (इ.) ३ देवताका दर्शन ।

देवदर्शनम् (स. पु.) देवदर्शनमग्रेण यथोपैति इति देव दर्शनं चिन्ति । यह भी देवदर्शन शक्तिमोक्ष शास्त्र प्रथमकरण है ।

देवदानी (स. वि.) देव शोभने भावे इन्द्र, देवत्वक शान्ति शक्ति-शान्ति गौपदित्वात् कोप । शोपकाकति, बड़ो तरोई ।

देवदार—शुद्धरातके धन्वर्त एक पर्ये स्वाधोन सुद राश्व । यहाँ पश्चिमिय राजपूत और कोसजातिका वास है । पश्चिमे एक राश्वमें विद्यमान इसी तोंका पश्चा वा । तन्के अत्यायमे निवृत्तवर्ती केसवायो तग वा गये थे । १८१८ ई. में इटिय यवर्षमें लगे लगे यज्ञके निकाल बाहर किया । तमोंके यह राश्व यवर्षमें लगे लगे देखे लक्ष्य है । किन्तु इटिय मनमें यह राश्वके पश्चिमतिरके किसी विषयमें ज्ञानसे नहीं करती । यह पचा. २३ ८ स. और देशा. ७१ इ. पू. में अवस्थित है ।

देवदार (वि. पु.) एक बहुत खंका पिक । देवदार है की ।

देवदार (स. वि.) देवाना दाह तिया विदित्वात् । लक्ष्य विश्व, एक बहुत खंका पिक । स स्मृत पचाय—ग्रह, पादप, पारिमद्रक, मद्रदाह, कृत्विचिन्म, योद्धाह दाह, पूनिकाह, हुरदाह, दाहक, क्षिप्रदाह, परमदाह, शान्धक, भूतदाह, मधदाह, मद्रदाह, इन्द्रदाह, मत्तदाह, परमुरह, सुराह और देवदाह ।

हिन्दीमें इसे किल्लन, देवदार वा किल्लका पिक, पश्चिममें देवदार, क्लान्द, दादा, काशीरंके हार वा देवदार, हिमाचल-पश्चिममें दिवार, देवदार, उदार, तिम्बतमें गियन, तामिषमें देवदारो पिकी, तो लक्ष्में देव

टारी चेदू, मलयमें देवदारु, अरधर्म सफुट देवदारु वा सनोवकुलुहिन्दू और फारसोंमें दरगु देवदारु वा निम्बार कहते हैं। इसका अंग्रेंजी वैज्ञानिक नाम है Cedrus Deodara or Pinus Deodara.

यह पेड़ हिमालय पर ६००० फुटसे ८००० फुट तककी ऊँचाई पर होता है। पेड़ अग्नो गज तक सीधे उँचे चले जाते हैं और पश्चिमो हिमालय पर कुमाऊँसे लेकर काश्मीर तक पाये जाते हैं। इस दरगुकी अनेक जातियाँ संसारके अनेक स्थानोंमें पाई जाती हैं। हिमालयवाले देवदारुके अतिरिक्त एशियाई कोचक (तुर्कीका एक भाग) तथा लुबना और साइप्रस टापूके देवदारु मशहूर हैं। हिमालय पर जो देवदारु होते हैं उनकी डालियाँ सीधी और कुछ नोचिको और झुकी होती हैं, पत्तियाँ महीन महीन होती हैं। डालियोंके सहित सारे पेड़का घेरा ऊपरको और बराबर कम अर्थात् गाव-दुम होता जाता है। देवदारुके पेड़ डेढ़ डेढ़ दो दो सौ वर्ष तकके पुराने पाये जाते हैं। वे जितने ही पुराने होते हैं उतने ही विशाल होते हैं। बहुत पुराने पेड़ोंके घड़े या तनेका घेरा १५—१५ हाथ तकका पाया गया है। इसके तने पर हर एक ग्रान एक मण्डल या छ्वा पड़ता है, इसलिए इन छ्वाँको गिन कर पेड़की अवस्था बताई जा सकती है।

देवदारुकी लकड़ी कड़ी, सुन्दर, हलकी, सुगन्धित और सफेदी लिये वादामी रङ्गकी होती है और मजबूतीके लिये प्रसिद्ध है। इसमें घुन काड़े कुछ भी नहीं लगते। यह इमारतोंमें लगता है और अनेक प्रकारके सामान बनानेके काममें आता है। काश्मीरमें बहुतसे ऐसे मकान हैं जिनमें चार चार सौ वर्षको देवदारुकी धरनें आदि लगी हैं और अभी ज्योंको त्यों हैं। काश्मीरमें देवदारुकी लकड़ी पर नक्कासो बहुत अच्छी होती है। कागड़े-में इसे घिस कर चन्दनके स्थान पर लगाते हैं। इससे एक प्रकारका अलकतरा और तारपीनको तरहका तेल भी निकलता है। इस तेलको पञ्जावमें 'किलोनका तेल' कहते हैं। यह चौपायोंके घाव पर लगाया जाता है। वर्षाकके मतसे यह तिल, रुख, श्लेषा, वायु और भूत दोषनाशक माना जाता है। भावप्रकाशके मतमें इसका

गुण—निर्गन्ध, उष्ण, कटुपाक, विषम, आधान, शोथ, छिन्ना, ज्वर, प्रमेह, पीनस, श्लेषा, श्वास, काम, कृच्छ्र और वायुनाशक है।

देवदारुवन-एक पुण्य स्थान। महाद्विषण्ड, तृषिं हपुराण और ब्रह्माण्डपुराणमें इसका वर्णन है।

देवदारुवादि (सं० पु०) भावप्रकाशगीत कायोपधभेद, भावप्रकाशके अनुसार एक काय। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—देवदारु, वच, कुठ, पिप्पली, मीठ, शिगयता, जायफल, मोथा, कुटफो, धनिया, हड़, गजपिप्पली, जवाभा, गोखरू, भटकटैया, गुनकन्द, कोकड़ा सौंगी और स्याह जोरा इन सबका बराबर भाग ले कर काड़ा बनाते हैं। पीछे उममें हींग और नमक डाल देते हैं। इसे प्रस्तुत स्त्रोकी पिलानेमें खर, दाह, भिरकी पीड़ा, प्रतीमार, मूच्छा आदि उपद्रव जन्त हो जाते हैं।

देवदारुका (सं० स्त्री०) देवदारुव कायति कै-क टापू-पूर्व क्लृप्तः। महाकाल हृष।

देवदारु (सं० स्त्री०) देवेन मेघोदयेन दालो दलनं यस्याः गीरादित्वात् डोप्। लताविशेष। इसका पर्याय—जौमूतक, कण्टकना, गरा, गरी, वणो, महाकीपफला, कटफला, घोरा, कदम्बी, विपहरा, कफंटी, सारमूषिका, हन्तकोपा, शाखुविषहा, दालो, रोमगपत्रिका, कुरङ्गिका, सुतर्कारी और देवताहृ है। इसका गुण—तिक्त, उष्ण, कटु, पाण्डु, कफ, दुर्भास, श्वास, कास, कामला और भूतनाशक है। यह लता देखनेमें तुरंदकी बलसे मिलती चुलती है। पत्तियाँ भी तुरंदकी पत्तियोंके समान होती हैं, पर उनसे कुछ छोटी होती हैं और कोनों पर तुकोली नहीं होती। इसके फूल पोले लाल और सफेद इन तीन रंगोंके होते हैं। फल ककोड़ेकी तरहके काटेदार होते हैं। इसको लताको घघरबेल और बंदाहल भी कहते हैं।

देवदासो (सं० स्त्री०) देवं इन्द्रियं दास्यति इतीति देव-दास-अण्-गीरादित्वात् डोप्। १ वनवोजपूरक हृष, विजोरा नीबूका पेड़। देवाय क्रीडायै दासीव। २ वेश्या। देवानां दासो। ३ देवताओंकी परिचारिका, मन्दिरोकी दासो वा नर्तकी। दाक्षिणात्यमें मन्दिरकी देवनर्तकीकी ही देवदासो कहते हैं। देवपूजनके समय उनके सामने नाचना गाना ही इनका काम है। जग-

बाह्ये शिखर दत्तवर्धे प्रायः समी प्रथम प्रधान मन्दिरों में देवताओं का देवमत्त'को देखो जातो है ।

प्राचीन काथर्म मिस्र, चीन यासिरोया, जिनमिधिया आदि स्थानोंके देवानलयमें इस प्रकारकी पत्थर देवमत्त'को थीं । बहुत दिनकी बात नहीं है, कि पश्चिमांचे पश्चिमांगमें तथा चीनके बीजाम् देवोके मन्दिरमें पत्थर देवदासो देखो जातो थीं । बेशबाहलिये पौर देवकीर्तन करना ही उतथा दिया दा। एक समय धर्मविद्यमें यह नियम था कि उद्ये व शीव समीकी कथाएं विवाहके पक्षमें पनाहितन (पनाहितता) देखोकी नियमि निवृत्त होयें । इस समय बाटि व पयदाचर्य भी कर बीडनों तो विवाहके बाट कीरि उतको निन्दा नहीं करता । काथलिनिर्मो मो पियदा अब तक एक बार मिनित्ता (Mylitta) नेकीके मन्दिरमें पालनसमय व न कर सीतीं, तब तक वे मन्तव्य नहीं हो पयतो थीं । विवाहके बाट पिर देवमन्दिरमें उतका प्रयोजन नहीं पड़ता । बाह्यमचे पञ्चोत्तम पथमें भी सिखा है—प्राचनिर्मित मोरम पयद देवके धाममें इन्प्राणकी मन्तान गाथ मान करतो थीं । (Exodus)

दाविदाहके पेट्रनपत्तु जिसेमें कई जयह तांतियेमें यह रीति है कि वे पयमी समयें बड़ी मजकीकी शत्रु मनि होनेके पक्षमें बिधो मन्दिरको टान कर ऐमि है । बर्तन पयदाच नीय रथें भाचना गाना विधान है । तेकड में इन सब कुमारियो को 'बसवा' पौर महााराष्ट्रमें 'कुर्मो' कहते हैं । बसवा विधिये कर विवत्रीके मन्दिरमें पयना समय वितातो है । इनमेंके को बहुरिज रहते, वे पाओवन इन्द्राचर्ये पयनस्यन करतो है । प्राय' पत्थर देवानवर्धे पूजार्थियो तथा बसु'पयोमें से कथोय बिद्या करती है । इनमेंके बिधोका तो मउने पौर बिधीका देवके विवाह होता है । यहूडे काथ विवाह करने समय कथा बाहके जण पयनको माना रय देवो के भाट मइन-कीक पड़ता है, माना धान बूराने पाओबाट ऐतो है । तभीके यह 'मवि' वा कुमारी को कर बिधी मन्दिरमें निवृत्त होनी है । अब कीरि मनुया कथाको कथो कथामें को वने देवताके बर मने टान कर ऐता है, तब इस विधानको दाविदाहमें बिज कहते है ।

देवताओ लोग बहुत मही पयात्त दो टण्ड रात रहनेके पक्षमें हो मन्दिर जातो है । इस समय वे दो पयरे पौर पिर पयथा समय दो पयरे भाचना गाना मोपतो है । दो बार मयर्मि हो भाचना गाना पयसी तरह था जाता है । इनमेंके बहुतो का विग्राम है बिधर्मको देवमत्त'में त्रिय प्रकार पयथागण देवमत्त'को है समी प्रकार मयर्धे देवानलयमें भी धर्मोय देवमत्त'को है । रथें मन्दिरोंमें गुजारा मिनता है । राजा या बिधी बनेके यहां अब कीरि उद्येव होता है तब ये लोग तुनाई जातो है पौर बर्तन मो कुक व कुक रथें मिन ही जाता है । भरने पर इनका कतप्राधिकारी पुत्र नहीं होता, कथा होतो है । कथा नहीं रहने पर यह दूतकी कथाको गोद सेतो है पयथा कथा परोद कर पयका मानन पासन करती है । मविद्यमें यह भी भाचना गाना जोय पय देवमत्त'को को जातो है ।

देवमेंबाधे निवे देवमत्त'की निवृत्त करनेको ब्रया पोम पाटि पावाव्य टोमोंको मर्त भारतवर्षमें बहुत पयभेदे बनी या रही है । इजरो बर्त पयसेको प्योनिज निविमि मन्दिरमतिहाके भाय पाय देवमत्त'की-प्रदानको बात भी निवो है । एक समय उतगी मारतमें मो रमो प्रकार पत्थर देवमत्त'की रहतो थीं पर पात्रकन वैया नहीं है । प्रवाद है कि एक समय कामाख्याके मन्दिरमें प्रायः पांच हजार देवमत्त'की देखो गई थीं । पयो दक्षिण भारत छोड़ कर पौर नहीं मो देवमत्त'कीका पारर नहीं है ।

देवदोय (म० पु०) देवार्थः दोय । १ देवताके निमित्त दीय यह दोया को बिधी देवताके निवृत्त जनाका गया हो । देव' दोत्रिमाक दीयजति प्रकाशयति बुद्धिज करति दीय-विच-पय । २ लोचन चट्ट, पाल । निवदुमुमि (म० पु०) देवताओ दुमुमिरिज यह बटसाम् । १ रथ तुमनी, नाम तुमनी । २ इन्द्र तुमनी, नामो तुमनी । ३ देवउडा, निवमार्थोका भाषा । देवदूत (म० पु०) देवताओका दूत, पयि । देवदूती (म० स्त्री०) देवकिन्दिपावि दूतको पयथा इयजोति दूत्रिज तनी दीय । १ पयवीनपूरक इय, बिधोय नीय । २ पयरा ।

प्रवेश करती है। केवल राजपूतानेमें नागर नामके ८।१० स्थान हैं जिनमेंसे तीन गङ्गमें गिने जाते हैं। एक गहर जयपुर राज्यमें ४, दूसरा सारवाड राज्यमें १ और तीसरा सिद्ध गणयस्वरमें ५ कोस दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। मन्थाल परगनेमें भी दुर्गसमन्वित नागर नामका एक विख्यात ग्राम है। अफगानिस्तानके अन्तर्गत काबुल जिलेके पार्वत्य प्रदेशमें नागर नामकी एक जाति भी रहती है। एक समय ब्रिटिश गवर्नेमण्टके साथ उसकी लड़ाई भी हो चुकी है। किसी व्यक्तिने इसी नागर जातिका अनुगमन पा कर छिप किया है, कि उसीके नामानुसार इस नागराक्षरका नामकरण हुआ है। उनका विश्वास है कि जिन तरह प्राचीनतम आर्य लोग मध्य एशियासे आ कर धीरे धीरे भारतवर्षमें बस गये उसी तरह इस नागर जातिसे जो किसी तरह नागराक्षरका भारतवर्षमें प्रचार हुआ होगा। किन्तु उक्तमत समर्थन करने योग्य नहीं है। वह नागरजाति अभी इस्लाम धर्मावलम्बी होने पर भी अभी राजपूत है। वे राजपूतानेमें ही अपना आदि निवास बतलाते हैं। इस हिस्साके काबुलके उत्तरभागमें जो नागराक्षर इस देशमें आया है उसकी कल्पना करना भी असम्भव है।

राजपूतानेके विस्तारके समय नागरी नामक एक अत्यन्त प्राचीन नगर है। ईसा जन्मके कई मंटी पहलेसे ही इस नगर अवस्थित है, इसका पता सुप्रसिद्ध कनिङ्गहम साहबने इन स्थानमें आविष्कृत छेनो-चिह्नित (Cheno-marked) सुत्रा द्वारा लगाया है; किन्तु उनके मतमें इस स्थानका प्राचीन नाम ताम्रवती नगरी है।

ऊपर जो सब नाम उद्धृत किये गये, उन सब स्थानोंमें एमो कोई बात अथवा अनुसङ्गिक ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता, जिससे नागराक्षरके उत्पत्तिस्थानका ठोक ठीक पता लग सके।

प्रजननविद् कनिङ्गहमका मत है, कि इसका प्राचीन नाम कर्कोटनगर है। प्रवाद है, कि राजा मुजुकुन्दने यह नगर बसाया था। यहांसे हिन्दूनाओंके समयकी बहुत प्राचीन छद्म हज़ार मुशायें धादिष्ट हुई हैं।

स्थानीय लोगोंके मतमें नागराक्षर वर्णमाला नागर नाम पड़ा है।

उपरोक्त लोगोंके सिवा इसके प्रदेशके अहमदनगर जिलेमें नागर नामक एक विस्तीर्ण विभाग है जिसका भूपरिमाण ६१८ वर्गमील है *। वहां नागर नामक एक ज्योतिकी ब्राह्मण भी रहते हैं। स्थानीय मनुष्य अहमदनगरको देवनगर कहा करते हैं। उनका कहना है, कि मुलतान सल्तनतमें १४११ ई०में अहमदनगर स्थापित होनेके पहले भी यह स्थान नागर नामसे प्रसिद्ध था। वहांके नागर ब्राह्मण स्कन्दपुराणके नागरखण्डकी अपना प्रधान परिचायक ग्रन्थ मानते हैं। नागरखण्डमें लिखा है—सरस्वती नदीके तीरवर्ती हाटकेश्वरदेवताका दूसरा नाम नागर है। नागर विभागके नागर ब्राह्मण लोग कहते हैं, कि उक्त विभागमें सरस्वती नदीके किनारे योगुण्डोनगरमें जो प्राचीन हाटकेश्वर मन्दिर है, वही नागरखण्ड वर्णित हाटकेश्वर है जिसके क्षेत्रका विस्तार पांच कोस तक है। एक समय नागर वा अहमदनगर इसी विस्तृत क्षेत्रके अन्तर्गत था। उन लोगोंका विश्वास है कि नागरखण्डमें जिन बहुसंख्यक तीर्थोंका उत्पत्ति है, वे उक्त नागरविभागमें ही पड़ते थे। सुसलमान राजाओंके घोर अत्याचारमें उनमेंसे अधिकांश तहस नहस तथा विलुप्त हो गये हैं अभी सिद्धेश्वर नागनाथ, हाटकेश्वर आदि थोड़े मन्दिर विद्यमान हैं।

उक्त नागरविभाग और वहांके ब्राह्मणोंकी बातों पर विश्वास करनेमें ऐसा कह सकते हैं, कि यही स्थान नागरखण्डके प्राचीन नगरक्षेत्र है और वहीसे नागर ब्राह्मण और नागराक्षरका नामकरण हुआ है। किन्तु हाटकेश्वरके पण्डा लोगोंके अपने नाम जाहिर करनेके लिए ऐसा क्षेत्रमाहात्म्य प्रकाश करने पर भी वर्तमान योगुण्डोनगरका हाटकेश्वर नागरखण्डके प्राचीन हाटकेश्वर नहीं है। पूर्वतन हाटकेश्वरक्षेत्र स्थापित होनेके बहुत पीछे उक्त मन्दिर बनाया गया। नागरखण्डमें एक जगह लिखा है, कि चम्पयर्मा नामके एक नागर ब्राह्मणने पुण्य नामक किसी व्यक्तिसे टान अक्षर किया था, इस कारण वे समाजच्युत किये गये। वे आति वस्तुओंसे परित्यक्त हो कर नगर छोड़ सरस्वती नदीके दाहिने किनारे जा कर रहने लगे। उनके वंशधर वाञ्छ-

नामर नामसे प्रसिद्ध हुए। उन्हीं काष्ठ नामहीने अर्त्तमान नगरविभागीय पन्नागत योगुच्छो ० नामक नगर में पूर्वतन डाटकेररोयके पादम पर सरकारी नदीके दाहिने किनारे डाटकेरराटि स्थापन किये और वहाँ अर्त्तमान पञ्चमदनगरकी वी प्राचीन 'नगर' मानने लगे। नामरखण्डके मतसे नामरदेव पञ्चमीसी डाटकेररोयके पन्नागत है और सरकारी नदीके उत्तरोय किनारे पर पञ्चकित है किन्तु अर्त्तमान पञ्चमदनगर योगुच्छीसे पांच कोच दूरमें पड़ता है। पञ्चमदनगरके समीप सरकारी नदी भी नहीं बहती, इस सिद्धांतसे नगरविभागीय पन्नागत पञ्चमदनगरकी नापर ब्राह्मणोंका यादि निवास नगर केरके भी था नहीं मान सकते। इसी स्थानसे नागरा चरकी उत्पत्ति हुई है इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता।

तब यह कहा जा सकता है कि प्रकृत नागरोत्पत्ति-स्थान कहाँ है ?

मुजरातसे एक मनुष्यने कहा है कि पश्चिमि नागर पश्चित लोग कहते हैं कि नागरी पत्तार उनसे पूव सुवयोसे उत्पन्न हुआ है।

मुजरातमें पात्र मो बहुत पत्रक नागर ब्राह्मणोंका पास है। वे ही पत्रके और पत्र ब्राह्मणोंके अंठ समझते हैं। यहाँ तक कि वे किसी अन्य खोलेन ब्राह्मणोंका पत्रक कहने नहीं करते। मुजरातके हिन्दू राजागण प्राचीन काससे ही कर पात्र तक भी इन नामर ब्राह्मणोंका विधीय आदर सत्कार करते आ रहे हैं। सन्कित यादि सभी राजकीय कार्योंमें नामरब्राह्मण ही नियुक्त किये जाते हैं। ये लोग प्लतपुराणके नामर पण्डितों की पचना प्रधान परिपात्रक धर्मग्रन्थ मानते हैं।

नागर ब्राह्मणोंकी उत्पत्तिके विषयमें नामरखण्डमें इस प्रकार लिखा है,—'आकतात्रिप मषिट कुठरोमथे पाञ्चान्ना हुप। इस रोयसे बचनेका कोई उपाय न देख के इत्याय ही पड़े। एक दिन कर्णने विद्यामित्रके पात्रममें जा कर उनसे अपनी पुरस्काकी कथा कह सुनाई। पात्रममें

जितने सुनि धे, कर्णने राजाको आतरोत्रिसे दयाविरत हो उन्हे यज्ञतीर्थमें खान करमिनी कहा। यज्ञतीर्थमें खान कर राजा कुठरोयसे मुक्त हुए। बाद कर्णने उस शङ्क-तोयके समीप चमन्कारपुर नामक एक खोस विपन्न एक नगर बसाया। यहाँ वे विविध सुरम्ह इन्हे बनवा कर विदित् कुलोन भीर धामि क साधनोंको भा अर बसान लगे। कुछ समय बाद उनमेंसे विषयमा नामक एक वेदवित् ब्राह्मणने कथा किया। विषयमने तपस्यादि द्वारा देवाहितेवको पन्नुष्ट किया। महादेव उनको मनोमाप्सा पूरो करतसे तपे पातामके डाटके अर मूर्त्तिमें आबिभूत हुए। मिय मिय टिमिने याति गय उस पनुपम डाटकेअर विज्ञको देहने धारि ली। चमन्कारपुरवासी दूसरे दूसरे ब्राह्मणोंमें सोचा कि विज्ञ धर्ममें और हम बीनामें कुछ भी प्रभेद नहीं है। वह चिरन्वायो कीर्त्ति स्थापन करके जनतामें पूज्य हुआ तो हम लोग भी क्यों न होयें ? ऐसा सोच कर वे पत्रके सत्र बहुत लठोर तपस्या करने लगे। महादेवने मन्नुष्ट हो कर अपना देहने दिया। उस समय चमन्कारपुर वासी ब्राह्मणोंमें ६८ गोम थे। महादेवने उन ब्राह्मणोंसे कहा, 'कुल ६८ हीय दित हैं। मैं ६८ भागोंमें विभक्त हो कर उन सब स्थानोंमें रहना हूँ।' अभी ठम मोर्षी-को धमोष्ट विधिके निजे मैं ६८ मूर्त्तियोंमें ६८ क्षेत्र पर आगिभूत होऊया। तदनुसार यहाँ ६८ देवमासाद बनाने गये और एक एक गोम एक एक देवकी सेवामें नियुक्त हुए। (नामरखण्ड १०६ और १०७ अध्याय)।

किसी समय पान्तर्वाधिपतिको मालूम हुआ कि उनके पुत्रके दुष्ट चरके कारण चिरधामितामय कर्णहि शाको राज्यमें महाविज्ञ कर्णकित होया। इस पर कर्णने प्रधान प्रधान देवको को मुक्तबाया। देवधर्म राजाने तपपुत्र ब्राह्मणों द्वारा हमको मान्ति करानेका कहा। इसच पक्षसे ही पान्तर् राजाने चमन्कारपुरमें सुन्दर सोबा बनो निमाच कर ६८ गोमक ब्राह्मणोंको बसाया जा। कर्मो लम्हा में देवको के चयमानुसार चमन्कारपुरमें जा कर उन ब्राह्मणोंके अपने धार्मिकुत्रके कथाचकी मान्तिसे निजे बहुत पनुरोच किया। इस पर १६ ब्राह्मण मान्ति और दोम धार्मिके नियुक्त हुए। इतर भी धाम यज्ञ होने

• List of Antiquarian Remains in the Bombay Presidency, by J Burgess, p 107

लगा, उधर आनुत्त राजकी राजधानीमें भी राजपुत्रके जन्मोत्सव-उपलक्षमें बहुत धूमधाम होने लगी, किन्तु इस आसोट प्रयोदशमें पुनः निरानन्द देख पडा। राज-पुत्रके ग्रहदोषसे राजाके राज्य, हाथी-घोड़ेके यानवाहन-नादि सभी क्षय होने लगे। इस पर चमत्कारपुरके ब्राह्मण बहुत गुस्सा गए। उन्होंने सोचा, कि हम लोग प्रतिमास १६ मनुष्य नित्य कर यथाविधि होमादि कर रहे है, किन्तु उसका कोई फल देखनेमें नहीं आता। अतएव हम लोग अग्निदेवको अवश्य ही श्राप देंगे। इस पर अग्निदेवने अपना दर्शन दे कर उनसे कहा, 'ब्राह्मण-गण! क्रोधमें आ कर हमें क्यों व्यर्थ श्राप दे रहे हैं। नास मासमें जो १६ आदमी होम क्रिया करते हैं उनमेंसे त्रिजात नामक एक ब्राह्मणके दोषसे सभी द्रव्य नष्ट हो जाते हैं। इसी कारण सूर्यादि ग्रहगण आपके दिये हुए द्रव्यको ग्रहण नहीं करते। यही कारण है कि राज्यमें रोग शोक दिनों दिन इतना बढ़ रहा है। उस नीच ब्राह्मणको छोड़ कर होम करनेसे जो राजा आरोग्य और पुत्रादि लाभ कर सकते हैं तथा उनके शत्रुओंका भी विनाश हो सकता है।' यह सुन कर ब्राह्मणगण बहुत लज्जित हो कर बोले, "किस प्रकार मालूम होगा कि हममेंसे एका मनुष्य होमद्रव्यका दोषित कर रहा है।" अग्निने उत्तर दिया, "होमकुण्डमें मेरे पसोनेकी पानीसे स्नान कर सभी परिशुद्ध होवें, स्नान करनेके बाद जिसके शरीरमें विस्फोटक निकल आवें गा, समझिये, कि उसीसे द्रव्य नष्ट हो रहा है।" अग्निके कथनानुसार एक एक करके १६ ब्राह्मणोंने होमकुण्डमें पैठ कर स्नान किया। उनमेंसे केवल त्रिजातके शरीरमें विस्फोटक निकला। इस पर त्रिजात लज्जासे अपना मुंह कपूर न उठा सका। नितान्त दुःख, खेद और लज्जासे वे वन-वासी हो गये। सूच पृच्छिये तो त्रिजात एक वेदवित् महा पण्डित थे। केवल मानाजे दोषसे ही उनकी ऐसी दुःख हुआ। अपना अवस्था जान कर वे निर्जन वनभूमिमें कठोर तपस्या करने लगे।

महादेवने मन्तुष्ट हो कर उन्हें अपना दर्शन दिया। त्रिजात उनके पैरों पर गिर कर बोले, "देवादिदेव! मैं माददोषसे चमत्कारपुरवासी ब्राह्मणों और आनन्द-

राजसे बहुत लज्जित हुआ हूँ। जिससे मैं सब ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठत्व प्राप्त कर सकूँ, उसका उपाय आप कृपा कर बता दें।" महादेवने कहा, "कुछ काज तक सब रखो, तुम्हारा अभोष्ट अवश्य ही पूरा होगा।" इतना कह कर देवादि-देव अन्तर्हित हो गये। उधर चमत्कारपुरमें महाविष्वाट, उपस्थित हुआ। मौहल्य गोत्रज देवराजके पुत्र क्रब नामक एक ब्राह्मण और ब्राह्मणोंके साथ नागपक्षमीके दिन स्नान करने गये। सामान्य जलसर्प समझ कर उन्होंने लाठीसे नागकुमार रुद्रमालकी मार डाला। इस पर नागराजके हुकमसे अनेक विषधर चमत्कारपुरमें कुण्डके कुण्ड उपस्थित हुए। विषधरोंके विषम उत्पातसे आवाल-वृद्धवनिता सभी घर छोड़ भागने लगे। सैकड़ों ब्राह्मण सांपके काटनेसे परलोककी मित्रारे। वाट बहुतसे ब्राह्मण अत्यन्त भयभीत हो, जिस वनमें त्रिजात रहते थे, उसी वनमें चले गये। त्रिजातने उनके दुःखको बात सुन कर कहा, "तुम लोग डर मत करो।" वे फिर देवादि-देवके ध्यानमें निमग्न हुए। महादेवने दर्शन दे कर कहा, "तुम्हें एक सिद्ध मन्त्र देता हूँ। इस मन्त्रके उच्चारण करनेसे ही महा विषधर भी विषहीन हो जायगा।

"गरं विषमिति श्लोकं न तत्रास्ति च साम्प्रतम्।

मत्प्रसादात्तथा ह्येतदुच्चार्य ब्राह्मणोत्तम ॥

न गरं न गरं चैतत् श्रुत्वा ये पद्मगाधमाः।

तत्र स्थास्यन्ति ते वध्या भविष्यन्ति यथा बुखम् ॥

अथ प्रवृत्ति तत्स्थानं नगराख्यं धरातले।

भविष्यति बुखियातं तव कीर्त्तिविषदेनम् ॥

तथाम्बोऽपि च धो विप्रो नागरः शुद्धवंशजः।

नगराख्येन मन्त्रेन भूमिमग्न्य श्रिया जलम् ॥

प्राणिनं कालसदृष्टमपि मृत्युवशं गतं।

प्रकरिष्यति जीवन्तं प्रशिष्य वदने स्वयम् ॥"

(नागरखंड ११७।७८-८२)

अर्थात् 'गर शब्दसे विषका बोध होता है, किन्तु अभो वहाँ पर विष नहीं है। जब तुम 'न गरं' 'न गरं' (विष नहीं' विष नहीं) यह शब्द उच्चारण करोगे, तब उसे सुन कर जो पद्मगाधम वहा रहिगा, उसे तुम मेरे अनुग्रहसे बहुत आसानीसे मार सकोगे। इस धरातल

परचासवे तुम्हारा कौतिलि बरिख यह स्थाने 'नगर' नामनि प्रसिद्ध होगा । जो कौटिलि विद्वद् नगर ब्राह्मण इस नगर स्मरणको उच्चारण करके तीन बार बस ही कर मरवावक प्राचीन सुखमें देगा, उसकी मो प्राच तुम्हारा कोट प्राचीन । यह स्मरण उच्चारण वा स्मरण करनेसे स्वामर ब्रह्मण, कृत्स्निमादि धर्मो विद्य आते रहस्य हैं । इतना बह्य पर मग बान् पदस्थ हो गये । त्रिजगत जन प्राणियोंकी प्राय ही समस्तपुरमें पाये । एव कौटिलि मिथ्य कर सर्वे प्राये 'न गये' 'न य' यह शब्द बोधते की । सिद्धमन्त्र सुन कर चमत्कारपुरके धर्मो विद्वधर लिखि'व हो पड़े । एव भी प्राग न पडा । इकारी साँप मारै गये । धर्मो त्रिजगतके पञ्चामका पाशावार न रहा । जो एव दिन लज्जावन्त-सुखसे दुर्घटित हो रोग झोड़ गये थे, प्राञ्ज लक्ष्मीके हृदयमें धानम्बुका छोल बहने लगा । प्राञ्ज लक्ष्मीके चमत्कार पुर 'नगर' नामसे प्रसिद्ध हो गया और वहाँसे ब्राह्मण नामर बहकामे गये ।

नागरशब्दके मतमें—नगरका पदना नाम चमत्कार था । राजा चमत्कारसे पनेक सोध निर्माण कर वहाँ ब्राह्मणोंको बसावा और लक्ष्मीके नाम पर चमत्कारपुरका नामकरण हुआ । इस स्थानका दूसरा नाम हाटकेसर राज मी है जो प्राणर्त्त टैगरे नैर्जतकोयमें अवस्थित है । यह शब्द-प्राय प्राय कोस तक विस्तृत है । (नागर शब्द ३११-३२ ।) इसके पूर्वमें यथायोग्य, पवित्रमें विष्णुपद और पवित्र-रत्नमें गोकर्णेश्वर है ।

(नागरशब्द ११३-११४)

नागरशब्दके दूसरे स्थानमें लिखा है—उच्च क्षेत्र पक्षकोय होने पर भी नगरका प्रायतन केवल एक कोष है । (नागर ११११-११२) उच्च पक्षकोय हाटकेसरमें पक्षकोय, मोक्षकोय, यथायोग्य, माकण्डकोय, चित्रेश्वर, बुधमारीश्वर, यथायोग्य, कालेश्वर, कृत्स्निश्वर, भानुकोय, गुरुकोय, चक्रवाकोय, यापेश्वर, लक्ष्मीश्वर, त्रिशाकेश्वर, चम्पारकोय, वेदाश्वर, इषामनाथ मन्त्रकोय, धर्मेश्वर, ब्रह्मरामेश्वर मिहाकदेश्वर, विशाकदेश्वर, चमत्कारेश्वर, धर्मेश्वर, मन्त्रेश्वर, पुष्पादिच प्राणि द्वैतमन्दिर है और पन्थाकमन्त्र, मन्त्राधुना, माधोधरकोय, नागतोय, महतोय, यमतोय,

निष्कर्मोद्भवतोय, ब्रह्मवर्ष, रामकन्द, लक्ष्मीकोय, माडतोय, सुधारतोय प्रादि सौकर्मकोय हैं ।

नागरशब्दके मतमें—

नैमिषारक्षक वेदांगनाम सुन्दर, भूमिवाङ्मन बाबा लक्ष्मी कुक्षसेन प्रमाण और हाटकेसर इन प्राञ्ज लक्ष्मीप्रमाण पुष्पकोयमें जो यथाञ्ज लक्ष्मी स्थान बरता है उसे प्रसक्तोय स्थान करनेका पत्र मिलता है । इन प्राञ्ज लक्ष्मीके हाटकेसरमें ही प्रमाण है । यहाँ पितृको प्राणाये धर्मो तोष परिचित है । कृत्स्निनामि सुमुख कृत्स्निनामका जो सप्ततोय विदित यह हाटकेसर पत्र सेकनोय है ।

(नागरशब्द १०११-१०२)

विष्णुमन साहबने धर्मो भारतोय कावितत्त्व (Indiads Caste) नामक ग्रन्थमें लिखा है—

“नागर शब्द पुराणायक नगर शब्दका विभेदक शब्द है । नागर शब्दमें ही गुजरातके प्रमाण १ अर्थियोंका बोध होता है । उच्च प्रदेशके उत्तर-पूर्व भागके बिबी बिबी नगरसे लज्जा नामकरण हुआ है ।” (१)

पहले जो कहा था सुझा है कि नागरशब्दके मतमें त्रिजगत द्वारा हाटकेसरका पत्र बह विद्वधर होन हो गया, तब लक्ष्मी नाम नगर रखा गया और लक्ष्मीको ब्राह्मणपत्रक रत्न देगमें पाये गये कि लक्ष्मी बस आदिसे होनाम नाम पड़ा था । (२)

गुजरातके नामर ब्राह्मण कहते हैं, कि पानन्दपुर का लक्ष्मी नाम ब्रह्मनगर नामक स्थान ही लक्ष्मी प्रादि निवास है जो गुजरातमें पञ्चालत बहो जिलेमें अवस्थित है । धर्मो बह बरोदा मायकबाहु राजके पवित्राधर्म का गया है । कौटिलि प्रादि पुत्राकिन् पानन्दपुर से लक्ष्मी

(1) The word Nagar is the adjectival form of Nagar a city. It is applied to several (viz.) principal cities of Brahmans in Cojrat getting their designations respectively from certain towns in the low h eastern portion of the province.
(Wilson's Indras Caste Vol. II p. 96.)

(2) नागरशब्दके भी लिखा है कि त्रिजगतके लक्ष्मीके पदके लक्ष्मीके उच्चारण लक्ष्मीकोय बनाने का गया था । लक्ष्मी त्रिजगतने त्रिज मित्र स्थानोंसे १६ लक्ष्मी ब्राह्मणोंको का कर बरि बसावा । (नागरशब्द १००० न०)

नागराक्षरको उत्पत्ति कबसे हुई यह फिर बरना बहुत कठिन है। इस समयके ब्राह्मण वणितोंका विश्वास है कि कबसे लिखनेकी प्रणालीकी खोज हुई है तभीसे नागराक्षरका उत्पत्तिनिर्णय करना होगा। उत्पत्तुर नामी प्राचीन निरिमाकाके प्रथित वणित तोरीशहरमें भी यही मत प्रकाय किया है किन्तु हम जोर्गेकि प्लासमें एक वणितों का मत समाचीनता प्रतीत नहीं होता।

त्रिन सह प्राचीन पत्रों में भारतीय प्राचीन लिपियों का नामोर्नेण है, इन सब पत्रों में नामरो लिपिका एक मो उत्तम नहीं है। उदाहरण स्वरूप यहाँ कुछ प्रमाच उद्धृत करत हैं—

प्राचीनतम बोधप्रत्य ललितविस्तरमें लिखा ०, निम्नामिल-दाहकाचार्य सिद्धार्थको एक लिपि विधाने पाये तब सिद्धार्थने लिखा यह सबके पक्षमें ही मुद्रके निष्पट निष्क ६४ प्रकारको लिपियों का परिचय दिया था—यथा १ ब्राह्मी २ खरोठी ३ पुष्करसारी ४ पत्र लिपि ५ बड़लिपि ६ मगधलिपि ७ माह्वज्जलिपि ८ मनुचलिपि ९ पद्मलौकलिपि १ यक्षारिलिपि ११ ब्रह्मसौलिपि १२ द्वाविजलिपि १३ क्षिप्रलिपि १४ दक्षिणलिपि १५ उत्तलिपि १६ नस्थानलिपि १७ पद्म नामलिपि १८ पद्मसुलिपि १९ हरदलिपि २० व्यास लिपि २१ भोजलिपि २२ ब्रह्मलिपि २३ मञ्जाक्षरलिपि २४ पुष्पलिपि २५ देवलिपि २६ नागलिपि २७ यक्षलिपि २८ मन्थर्लिपि २९ विष्णुलिपि ३० महा रगलिपि ३१ पद्मलिपि ३२ मङ्गलिपि ३३ मयचक्र लिपि ३४ ब्रह्मलिपि ३५ नागुमलिपि ३६ भौमदेव लिपि ३७ पत्तरोक्षदेवलिपि ३८ उत्तरकुक्षदेवलिपि ३९ उत्तरलौकलिपि ४० पूर्वविदेवलिपि ४१ कन्देप लिपि ४२ निर्मललिपि ४३ विसेणलिपि ४४ प्रसेणलिपि ४५ नामलिपि ४६ कथलिपि ४७ सेवप्रतिशेषलिपि ४८ अनुदूतलिपि ४९ प्रास्तावर्त्तलिपि ५० मन्थभक्त लिपि ५१ कर्षेपावर्त्त लिपि ५२ निसेगवर्त्तलिपि ५३ पाट लिखितलिपि ५४ दिहत्तरपदलिखितलिपि ५५ दसोत्तर पदलिखितलिपि ५६ अष्टाक्षरिषीलिपि ५७ सर्वसम व कर्षोलिपि ५८ विद्यानुक्रमलिपि ५९ विप्रिचितलिपि ६० अविनयप्रसन्न ६१ वीचमाना ६२ प्रोक्षेणलिपि ६३

सर्वीचिनिबन्धा ६४ सर्वसारण यक्षो घोर ६५ सर्व भूतवतपदलिपि। (ललितविस्तर १० प ४)

कैलिके प्राचीनतम एकादशाक्षरके मध्य समाया नामक ४५ पद्धतें लिखा है कि चादिनिन म्यम देवको लकड़ो ब्राह्मीके पाचार पर जो लिपि तैयार हुई, नही ब्राह्मी कहनाई। ब्राह्मी धादि १८ प्रकारको सेवम प्रक्षियाके नाम से हैं—१ ब्राह्मी २ यक्षनामो ३ दाम पुष्का ४ खरोठी ५ पुष्करगारिका ६ पार्वतोया ७ कथ तुरिका ८ पत्तपुरिष्का ९ मागधयक्षा १० वैयव लिपा ११ निराहृष्टया १२ पद्मलिपि १३ मन्थलिपि १४ मन्थर्लिपि १५ पादम लिपि १६ माङ्गलर लिपि १७ टामलिपि घोर १८ वीजिदिलिपि। (वचनारण्य)

कैलियोंने इहं सपात्र प्रकायमाधुवर्षमें मो १८ प्रकार को लिपियोंका उल्लेख है। यथा—१ ब्राह्मी २ यक्षनामो ३ दामपुरो ४ खरोठी ५ पुष्करगारी ६ भोगविका (१) ७ पार्वतोया ८ पत्तलकरो ९ पत्तपुरिष्का १० वैयव-निया (१) ११ निहृष्टया १२ पद्मलिपि १३ मन्थलिपि १४ मन्थर्लिपि १५ पादमर्लिपि १६ माङ्गलो १७ टामिको घोर १८ वीजिदिलिपि (८) । यह छोई छोई वह मो मरते हैं कि उत्पन्न लिपियोंमेंसे देवलिपि, भौमदेवलिपि घोर पत्तरोक्षदेवलिपि इन तीन प्रकारको लिपियोंका उल्लेख तो है पर इनमें लोभ देवनागर को महता है तथा नागर नाम देवलिपिसे पड़ा है वा भौम देवलिपिसे। किन्तु भव हम भोग नागर मन्थका छोई उल्लेख नहीं पाते, तब सेवम देव मन्थको सेवार नागरो लिपिको कल्पना की वह मो बुद्धिमिद नहीं है।

(८) दीवाघा मन्थगिरिके लिखा है—
 “ब्रह्मदेवपत्नी-पारश मिनिहेस्तु मन्थसाधारकक्षे ४”
 के लियेके घण्टे प्रगतीके समयमें ही लङ्क ३६ प्रथमिय पा और ४६ प्रगतीके लियेके १६० वर्ष बाद लकार ३६१ ई० ३०० वर्ष बाद १५०० वर्षके लक्ष्मि मन्थटी दुना। यतिव समय मान केने वर धी वर वर मरते हैं कि ३००० वर्षकी प्रगतीके वरके नागरी लिपि। लकार वटी ना। लकार-पात्रने ‘लकार-मिया’ का जो उल्लेख है, वही शान्ति-वर्णित लकारगी लिपि यवती जाती है।

इस प्रबन्धके प्रारम्भमें ही प्रमाण उद्धृत करके बतला चुके हैं, कि प्राकृतचन्द्रिकाके रचयिता शेषकल्पने (१२वीं शताब्दीमें) सत्ताईस प्रकारकी अपभ्रंश भाषाओंमेंसे नागर, उपनागर और देव नामक तीन स्वतन्त्र भाषाका उल्लेख किया है। जो सकता है, कि जिन प्रकार तीन भाषाएँ थीं उसी प्रकार तीन तरहके अक्षर भी प्रचलित थे। ललितविस्तारमें जिन भौमदेवलिपिका उल्लेख है, या तो उसकी देवके साथ या देवभाषाके अक्षरोंके साथ समानता हो सकती है।

किन्तु देवलिपि कहनेसे नागराक्षरका जो बोध हो सकता है, ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता। नागर कहनेसे जिस प्रकार देवनागरका ज्ञान होता है, उस प्रकार देवाक्षर-कहनेसे नहीं होना।

इं० सन्के १२ शताब्दीके अन्दर ललितविस्तार रचा गया। जैनियोंका ४र्थ उपाङ्ग प्रज्ञापनासूत्र श्यामार्य (१म कालकाचार्य) द्वारा प्रणीत हुआ। खरतरगच्छोय पट्टावलोके मतसे वोर-निर्वाणके ३७६ वर्ष पोछे श्यामार्य आविर्भूत हुए। जैन शब्द देखो। अतः यह स्वीकार करना पड़ेगा, कि प्रायः दो हजार वर्ष पहले किसी अक्षरका नागरी नाम नहीं था।

अब प्रश्न यह उठ सकता है, कि नागर वा नागरी नाम कबसे पहले पहल प्रचलित हुआ।

जैनियोंके धर्मशास्त्र नन्दीसूत्रमें हम लोग सवसे पहले नागरीलिपिका उल्लेख पाते हैं। जैन परिष्ठत लक्ष्मी-वल्लभगणने खरचित कल्पसूत्रकल्पद्रुमकलिका नामक कल्पसूत्रको व्याख्यामें लिखा है—

“अथ श्रीऋषभदेवेन ब्राह्मो दक्षिणहस्तो न अष्टादश निपयो दर्शिताः। नन्दीसूत्रे उक्ता यथा—१ हंसलिपि २ भूतलिपि ३ यत्तलिपि ४ राक्षसोलिपि ५ उद्गोलिपि ६ यावनोलिपि ७ तुरङ्गोलिपि ८ कौरीलिपि ९ द्राविडी-लिपि १० सैम्बवीलिपि ११ मालवीलिपि १२ नङ्गीलिपि १३ नागरीलिपि १४ पारमीलिपि १५ लाटोलिपि १६ अनिमित्तलिपि १७ चाणक्यलिपि और १८ मौलदेवी। देश-विशेषान्या अपि लिपयः तद्वयथा—१ साटी २ चौडी ३ डहली ४ काणही ५ गूजरौ ६ सोरठो ७ मरठो ८ कौडणी ९ खुरासानी १० मागधी ११ सैहली १२ हाडी

१३ कोरी १४ इम्बोरो १५ परतोरौ १६ मसो १७ मानवी १८ महायोधी इत्यादयो लिपयः पुनरुद्धानां गणितकला दर्शिताः वामहस्तो न सुन्दरी प्रतिलिपि दर्शिता।”

नन्दीसूत्र और कल्पसूत्रकी रचनाप्रणाली प्रायः एक ही है। जैनाचार्यगण कहते हैं, कि कल्पसूत्रके कुछ पङ्क्तियोंमें नन्दीसूत्र रचा गया। कल्पसूत्र आनन्दपुरमें (वर्त्तमान बहानगरमें) वल्लभोराज ध्रुवसेनके कहनेसे वोरनिर्वाणके ८८० वर्ष पोछे (४५३ ई०में) सङ्कलित हुआ। प्रायः उसी समय या उससे कुछ पहले नन्दीसूत्र भी सङ्कलित हुआ होगा। इस हिसाबसे ४थी या ५वीं शताब्दीमें हम लोग नागरीलिपिका सम्भान पाते हैं। ४थी वा ५वीं शताब्दीके पूर्ववर्ती किसी ग्रन्थमें नागरी-लिपिका आज भी कोई सम्भान नहीं मिलता। हम लोगोंका भी अनुमान है, कि ४थी शताब्दीके पहले किसी विशेष लिपिका नागरी नाम नहीं हुआ।

जब ४थी शताब्दीके पूर्ववर्ती प्राचीन ग्रन्थोंमें नागरी लिपिका कोई उल्लेख नहीं मिलता तथा कबसे नागराक्षरका आरम्भ हुआ है, उसका भी जब कोई निश्चय नहीं है, तब भारतके भिन्न भिन्न स्थानोंसे जो नागराक्षर में सङ्कीर्ण प्राचीनतम शिलालिपि, ताम्रशासनदि तथा नागरी अक्षरमें लिखित प्राचीन हस्तलिपि आविष्कृत हुई हैं वे ही प्रमाणस्वरूप हैं। अतः उन्हींको यहाँ दिखला देना उचित है। केवल दो एक प्राचीन खोदितलिपि वा हस्तलिपिमें काम नहीं चल सकता। एशियाटिक सोसायटीके आरम्भसे ले कर आज तक प्रतत्त्वविदोंके यत्नसे जितनी खोदितलिपियाँ वा हस्तलिपियाँ संग्रहित हुई हैं तथा निज सम्भान द्वारा जहाँ तक आविष्कृत हो सका उनके अक्षरविन्यासको गौरसे देखना एकान्त आवश्यक है। सुतरां नागराक्षरके पूर्वापर लिपिविन्यासका स्थिर करना बहुत अनुसन्धान और समयकी जरूरत है।

उपस्थित थोड़ी खोजसे जहाँ तक स्थिर हो सकता है, उसीका यहाँ पर संक्षेपसे विवरण दिया जाता है।

वैदिक समयमें भारतवर्षमें किस प्रकारका अक्षर प्रचलित था उसका आज तक भी पता नहीं लगा। बहुतांका मत है, कि वैदिक समयमें भारतवर्षमें लिपिपद्धति

नहीं थी, सभी एक रूपके सुनते पा रहे थे इसी कारण वेदका दूसरा नाम श्रुति रूप है। पाषाण पण्डितोंकी धारणा है कि पाश्चिमी जो "यवनानि लिपि"का उल्लेख है, उससे जान सकता है कि भारतमें प्रथमता यवन-लिपि को प्रचलित हुई और वही लिपि पोके भारतीय लिपि व्यवहारेके श्रोत है (८)। पण्डित सत्यव्रत सामाज्यमीने प्रमाण दे कर यह साबित किया है, कि पून वेद और उपनिषद्के रचे जानेके बाद तथा वेदके निरुद्धकार वास्तव यहकी पाणिनि आदिभूत हुए थे। उनसे अशौर गवेषणापूर्वक प्रथम पढ़नेसे जान सकता है, कि हमसे कम तीन हजार वर्ष पहले पाणिनि विद्यमान थे। (१०) पाणिनिसे ३२३२१ छन्दमें "लिपिहर" शब्दका उल्लेख है। अतः उनसे हममें लिपिप्रकाशी प्रचलित हो, इसमें शक्य नहीं। पण्डित गोपबन्धुकरके मतसे पाश्चिमी जो "यवनानि" शब्दका उल्लेख है वह Ovalform writing भी कह सकते हैं (११)। लिखोका अनुमान यह भी है, कि पाणिनिसे समयमें ब्राह्मणोंका प्रचलित ब्राह्मी अक्षर प्रचलित था। उस अक्षरके साथ पूष्यशुक्रादिब्रह्मण्डलेके लिपे जो पाश्चिमी यवनलिपिका उल्लेख किया जाय। पोके परांटा आदि लिपियाँ निरुद्धी हैं। ब्राह्मी-लिपि नागरीके जो प्राचीनलिपि होने पर भी बिना किसी प्रमाणके कहनेके हम सोच भारतका आदि अक्षर नहीं मान सकते। सैनियोंके प्रमाणानुसारे लिखा है, कि ब्रह्मण्डले पूर्वमागधी भाषाका प्रकाय जो सके उरीको ब्राह्मीलिपि कहते हैं (१२)। किन्तु जो लिपि वेदव्यास आदीकीको अक्षरमयी लिखनीके निरुद्धी थी, वह भीन या लिपि है यात्र तब मान्य नहीं।

पुरके समय भारतमें तरु तरुके अक्षर प्रचलित थे इसका पता हम भोगाओ अनित्यविपरने लगाता है। उनके बादमें जो भारतवर्ष पर मगध राज्यको बढ़ती दीख पड़ी। उस समय यहाँके अक्षर गण स्थानीय मगधलिपियों की काममें आते थे, इसमें संदेह नहीं। समस्त भारतवर्षमें ही वह मगध राजाओंका प्राधिपत्य विस्तृत था, उस समय मगधलिपि को सब जगह प्रचलित होगी इसमें भी संदेह नहीं। इसीसे हम लोग सिन्धु नदीके पश्चिम पार जोड़ कर समी जगह एत की प्रचारके अन्वेषण अभीकी अनुयायनलिपि देखते हैं। उक्त मगधलिपिसे और और उचित काम कर यथाक्रम ग्राह, गुह, बभ्रु, चातुर्य आदि अशौर राजाओंके समयकी अन्वेषण लिपियोंका आकार प्रारंभ दिया है। उन सब लिपियोंमें किस प्रकार पुष्टि नाम को है वह इस प्रथममें नहीं दिया जाता है। इसी और वर्णमात्र देणे।

प्राचीन मगध लिपिसे जो मैत्रिक (पूष बिदेह), बहू आदि लिपियाँ उत्पन्न हुई हैं। नागरी लिपि भी मगध-लिपिसे ही निरुद्धती है। किम प्रकार और सबसे आमकीलिपिसे नामराक्षर का प्रकाय हुआ है उसीको का प्रमाण देना कठिन है।

परांन्ता सुवराजगण इयो गताम्हो से कर उरी गताम्हो तक मगधके निरुद्धन पर आरुद्ध थे। उनसे समयके अशौर लिपिसे गुह मिषाकनक और ताम्र मानन आदिभूत हुए हैं। उनसे जाना जाता है, कि इयो गताम्होके से कर उरी गताम्हो तक भारतवर्षके पश्चिम प्रांतसे पूर्ण प्रांत बहू उत्पन्न पयत्त सुवममक लिपि, व्यवहृत होती थी (१३)।

(१३) गुजरातकीके बरननेके लिपि भारतवर्षके सब अन्तमें प्रचलित थी, इसी कारण इहका अनुगति नाम रखा गया। बकाथनेके ली लिपि गुजरातकीके समयके बहुत बड़े प्रचलित थी। य सब सुवराज और मसुरा अक्षरके गह (१४)-गताम्होके समयमें अशौरों को सब प्राचीन लिपिसे और सुवराज आदिभूत हुई है इनके गुणलिपिका नियम है। अशौरके रूपकेयाँ परांन्ते प्रथम प्राचीन गुण-पाठ, बभ्रु गुणके पूर्वमें मसुराक अक्षरमें जो लिपि लिखी जाती आदि पठत हुई है उरमें की गुणलिपिका पूर्व निरुद्ध देना जाता

(१) Max Müller's Ancient India, Weber's Indisch Studien, IV p. 546

(१०) एशियाटिक सोसायटीसे प्रकाशित लिपिके इवें मान है "६" काये एरुद्धस्य" प्रथम इहय ।

(११) Prof. Goldstucker's Manava-kalparatra, preface p. 16.

(१२) 'उ किं तं वाचयिष्यां ? इव अक्षरमगधाय माधाय न. सैनिक अक्षर वन गताम्होके अक्षर' (मगधराष्ट्र)

७वीं शताब्दीके मध्यभागमें मगधराज आदित्यसेनकी गिला लिपिमें इस लोग नागरो लिपिका निशान पाते हैं। गया जिलेके अन्तर्गत नवादा यानेकी सकरी नदीके टाँचने किनारे जाफरपुर वा अफ्सह नामक एक प्राचीन ग्राम है, जहाँ एक प्राचीन मन्दिरमें वराह-मूर्त्तिके समीप वह गिला-लिपि रखी हुई थी। तदादित्य नामक एक गोडवामासे वह लिपि उत्कोर्ण हुई है। प्रसिद्ध प्रवक्तव्यवित् फ्लिन्ट् साहबने इस लिपिके विषयमें वों लिखा है—“इस खोदित लिपिके अक्षरका ७वीं शताब्दीका मागधी-कुटिन नामक (१४) अक्षर कह सकते हैं। यद्यपि वें वर्तमान देवनागरोसे इसमें थोड़ा ही अन्तर देखनेमें आता है।” (१५)

आदित्यसेनके पूर्ववर्ती उक्त राजाओंके समयमें जो लिपि उत्कोर्ण हुई है उसके युक्तस्वरोंकी लेखप्रणाली वर्तमान समयके वज्जीय वा नागराक्षर सरोखा नहीं है वरन् वह यहाँके तिब्बतीय (१६) अक्षरोंसे मिलती जुलती है। किन्तु उक्त अफ्सह लिपिका युक्तस्वर प्राचीन गुप्तलिपिके स्वरसे तो नहीं, वरन् मैथिली वा प्राचीन नागराक्षरोंमें लिखी हुई पुस्तकोंके युक्ताक्षरोंसे बहुत कुछ मिलता है। अफ्सह लिपिके स्वर और व्यञ्जनका आकार लाखा मण्डनप्रशस्ति (१७) और भट्टिन्दाके गिलाफलकमें (१८) है। इस लोगोंके मालसे अजाकलिपिसे साह और दाहसे ही शुभलिपिका क्रमविज्ञान हुआ है।

(१४) डिन्दराज लालके १०४८ पृष्ठमें ‘उत्कीर्ण देवत-प्रशस्तिमें’ कुटिलाक्षर ७२२वाँ सर्व प्रथम उल्लेख मिलता है—
‘विष्णुदेस्तनयने च लिखिमा गौडेन करणिकेनैषा।

कुटिलाक्षराणि विदुष्या तदादित्यानिधानेन ॥”
Epigraphia Indica, vol I. p. 8.

(१५) Corpus Inscriptionum Indicarum, Vol. III p. 202.

(१६) तोन-मी-सम-मो-ट नामक एक व्यक्तिने ७वीं शताब्दीमें भारतीय वर्णमालाका तिब्बतमें प्रचार किया। इसीसे ७वीं वा उसके भी पहले उत्तर-भारतीय वर्णमालाके साथ तिब्बतीय अक्षरोंकी समानता है। भारतवर्षसे बहुत दिन हुए, जो अक्षर विज्ञप्त हुआ या तिब्बतमें वह आज भी प्रचलित है।

(१७) Epigraphia Indica, Vol. I. p. 10.
(१८) Cunningham's Archaeological Survey Reports, Vol. XXIII, plate XXVII.

पूर्णता प्राप्त हुई है। श्रीपुरके गयराजाओंकी गिला-लिपिके अक्षर भी अफ्सह लिपिके क्रमविकाश हैं (१९)। भट्टिन्दा-गिलाफलक यद्यपि पञ्जाब प्रान्तमें आविष्कृत हुआ है, तो भी उसके युक्तस्वरको छोड़कर दूसरे दूसरे अक्षरोंके साथ प्राचीन और आधुनिक मैथिल अक्षर बहुत कुछ मिलती जुलती हैं। गौडराज धर्मपानके ताम्रफलकमें जो अक्षर उत्कोर्ण है वह भी भट्टिन्दालिपि सरोखा है (२०)। यद्यपि अफ्सह लिपिके पूर्ववर्ती गुप्त-लिपिका युक्तस्वर विलक्षण प्रत्यक् या अर्धात् वर्तमान भोटाक्षरके युक्तस्वरसे नहीं मिलता था, तो भी उसने धीरे धीरे उत्पत्ति लाम कर वर्तमान मैथिल, ब्रह्म और नाग राक्षरके युक्तस्वरका आकार धारण कर लिया है, इसमें सन्देह नहीं। खज्पाहीसे मारदा अक्षरमें लिखी हुई जो प्राचीन पुस्तक आविष्कृत हुई है उसको वर्णमाला जो हमलोगोंके प्रस्तावकी बहुत कुछ समर्थन करती है। डाक्टर होरननो माहबके मतसे वह पुस्तक प्रायः ‘ःवी’ वा ‘ःवो’ शताब्दीके अन्दर लिखी गई होगी (२१)। उस पुस्तकमें लिखे हुये क, ग, घ, च, छ, ज, ण, त, द, ध, प, व, म आदि अनेक अक्षरोंके साथ प्राचीन ब्रह्माक्षर और मैथिल हस्तलिपिके अक्षर कुछ मिलते हैं। फिर अनेक युक्तस्वर और व्यञ्जनके साथ अफ्सह आदि गुप्त-लिपियोंको पूरी सटशता देखी जाती है। इससे मालूम पड़ता है, कि उक्त सारदा अक्षर भी मगध वा गौडसे पहले निकला और पीछे वह काश्मोर और पञ्जाब प्रान्तमें प्रचलित हुआ होगा, क्योंकि वह लिपि सामयिक गौडलिपि से होने पर वह तत्काल-प्रचलित युक्त-प्रदेशकी लिपियोंसे भी नहीं मिलती। इस प्रकार दूर देशोंमें प्रचारित होनेके पहले कमसे कम ७वीं वा ‘ःवी’ शताब्दीकी गौड-राज्यमें वह अक्षर प्रचलित था, यह आसानो से स्वीकार किया जा सकता है।

अतएव जिस समय मगधराज्यमें अफ्सह-गिला-लिपि उत्कोर्ण हुई, उस समय वा उसके कुछ बादमें

(१९) Cunningham's Archaeological Survey Reports, Vol. XVII, plates IX, XIV and XX.
(२०) Journal Asiatic Society of Bengal, Vol. LXII, pt. I, plate III.
(२१) Indian Antiquary, Vol. XII. p. 89.

प्राथमिक लिपिमूलक में विद्य और बड़ाकर प्रचलित हुआ होगा।

एक वर्षा यह प्रश्न उठ सकता है, कि यदि ७वीं या ८वीं शताब्दीमें वर्तमान में विद्य और बड़ाकर प्रचलित हुआ हो, तो गौड़राज वर्मपासकी लिपिमें वर्तमान गौड़राज का महत्त्वपूर्ण नहीं दिया गया ? इसका उत्तर यही है, कि वर्मपासके पिता गोपाल मगधमें राज्य करती थी, जब समय आकरका परिवर्तन होने पर भी वे राजकीय दानपत्रादिमें पूर्वतन मगधलिपिका परिज्ञान न कर सके (२२)। किन्तु वर्मपास और देवपालके परवर्ती पास-राजपौत्र पूर्वराजका परिज्ञान करके उस समयके प्रचलित पत्रोंमें ही ताम्रयासन और यिकापत्रकादि लम्बोर्ध्व लिखे हैं। उनके प्रचलित पत्रोंमें प्रायः गुप्त लिपिही कोई बह्यता न थी। वही पत्र वहाँकी वर्तमान गौड़लिपिका प्रादि ब्रह्माय है (२३)। उन सब लिपियोंमें रहने कोही समयमें पूर्णता नाम न थी। पूर्णता तथा सुदृढता काम करनेमें, कर्मसे काम दो तोन गताब्दीके काम समय नहीं खयता। इस प्रकार ६वीं या ७वीं शताब्दीके गौड़राज वर्तमान प्रथममें पा गया है, इसमें शक्य नहीं। किन्तु मूक बड़लिपि सबसे बहुत प्राचीन है, जो कि दो हजार वर्षोंसे भी पूर्व वर्णों अक्षरलिपिमें बड़लिपिका बाद उत्पन्न है। (ब्रह्मिरेको)। नागरीलिपि उत्तरी प्राचीन नहीं है।

वर्तमान नामराजमें लम्बोर्ध्व जितने यिकापत्रका ताम्रयासन और इत्यादि लिपि आदिखत हुई हैं, उनमेंसे बहुमतेमें प्रायः गुप्तराज दक्षप्रयासराजका ताम्रयासन ही जो ७११ मगधमें लम्बोर्ध्व हुआ था, सबसे प्राचीन है (२३)। इस ताम्रयासनका सर्वोप ही उस समयके

गुजराती पत्रों से लिखे जाने पर भी सबसे पत्रमें जहाँ राजाका इत्यादि हुआ है वहाँ किन्तु नागराजमें इस प्रकार लिखा है—“सहस्रोय मम यौवोतरामगुणोः यौप्रगासराजपत्रे।”

किन्तु राजाका इत्यादि नामराजमें लिखा रहनेसे यह बात ज्ञान पड़ता है, कि गुजरातमें मिय पत्रों (गुप्त-लिपियों) का प्रचार होने पर भी उस समय या उसमें पहलेसे ही राजपरिवारमय नामराजमें लिखनेका प्रथास करती थी। उपरोक्त दक्ष ताम्रयासनके बाद इत्यादिपत्रोंके अक्षर पूर्वमें समुद्रके बिगारे प्रथमलिपि लिपिमें प्राप्तके तोराइराज आरहदेवका जो ताम्रयासन ७८३ मगधमें प्राविष्टत हुआ है, उसमें नामराज का मूठ प्रचार देखा जाता है (२५)। आरहदेवने महामात्र महाराजवर्षी अनुमति से कर ही सुदृढगोत्र ईश्वरको उक्त यासनपत्र दिया था। आरहदेवका यह ताम्रयासन ईश्वर बहुत ही बड़ा करते हैं, कि उसको लिखावट लिखे परन्तु, निश्चयही है। किन्तु हम सोमा का विषयस क्लृप्त हो रहे हैं। महाराज दक्षी इत्यादिलिपिमें निश्चयकार नामराजके साथ बहुतेरी गुप्तलिपियोंका प्रामास भ्रमकता है, आरहदेवको लिपिमें उस प्रकारका प्रामास तो नहीं देखा जाता, लेकिन वह वर्तमान नागराजका प्राचीनतम रूप है, इसमें तमिष भी शक्य नहीं। इसके बाद ही राष्ट्रकूटराज दन्तिदुर्ग यक्षावलीके ६७१ मगधमें जो ताम्रयासन लम्बोर्ध्व हुआ है वही, दक्षमें जाता है। कोसापुरके प्रथम त नामनयके यह यासन प्राविष्टत हुआ है (२६)। इस ताम्रयासनका पत्राविषयस बहुत बड़िया है। इसमें द, ए, च, ख, ज, न, व पौर प्र गुजरातके प्राचीन *Caro* पत्रका रूप करके करने पर भी बूढ़े बूढ़े समो वर्णों नामराजका ब्रह्माय देखा जाता है। यथावर्तमें दन्तिदुर्ग और उनके परवर्ती गुजरातके राष्ट्रकूट राजापीके यज्ञके ही नामराजका प्रचार प्रारम्भ

(२२) आर्यभट्ट महाराज गौड़राजके ही लक्ष्मीने लिपि शक्ति थी है, इसका भी एक प्राथमिक नाम केनेसे भी वह बहुत कुछ शक्य लिखे किन्तु लुप्त है। (Cunningham's Archaeological Survey Reports, Vol. 1, plate XIII, No. 1)

(२३) Cunningham's Archaeological Survey Reports Vol. III, plates XXXV XXVII

(२४) Indian Antiquary Vol. XVII

(२५) Indian Antiquary, Vol. XII, p. 165.

(२६) Journal of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society, Vol. II, p. 3-11 and Indian Antiquary Vol. XI, p. 110.

दृष्टा है (२०)। ७५० शकमें उत्कीर्ण राष्ट्रकूटराज २य ध्रुवके ताम्रशासनमें (२८), ८३६ शकमें उत्कीर्ण राष्ट्रकूटराज इन्द्र नित्यवर्षके ताम्रशासनमें (२८), ८५५ शकमें उत्कीर्ण गोविन्द सुवर्णवर्षके ताम्रशासनमें (३०), ८६२ शकमें उत्कीर्ण राष्ट्रकूटराज क्षुण्ण अकालवर्षके ताम्रशासनमें (३१) तथा ८८४ शकमें उत्कीर्ण अमोघवर्षके ताम्रशासनमें नागराक्षरका पूर्ण विकास देखा जाता है।

२य ध्रुवका ताम्रशासन प्राचीनतम नागराक्षरमें लिखा रहने पर भी उसके त, ध, ण, न, ए आदि किसी किसी वर्णमें प्राचीन गुहाक्षर वा दक्षिणात्यकी गुहालिपिका छन्द है, किन्तु गोविन्द सुवर्णवर्ष, इन्द्र नित्यवर्ष और अमोघवर्षके ताम्रशासनमें आधुनिक नागराक्षरका प्रादुर्भाव हुआ है। पूर्वतन दह, जादह, दन्तिदुर्ग वा ध्रुवकी शासनलिपिके युक्तस्वर देखनेसे ही वे युक्तस्वरसे निकले हुए तथा वत्तमान नागराक्षरकी आदिम अवस्थाके युक्तस्वर सरोखा प्रतीयमान होते हैं। किन्तु गोविन्द सुवर्णवर्षकी लिपिमें विलक्षणता देखी जाती है। जिस प्रकार प्राचीन वक्षीय और मैथिल लिपिमें ँ, ी, ी आदि युक्तस्वर हैं, उसी प्रकार सुवर्णवर्ष आदिके ताम्रशासनमें मैथिल वा वक्षीय युक्तस्वर दिये गये हैं। इससे ज्ञान पड़ता है, कि वत्तमान वक्षीय और मैथिललिपिमें जो युक्तस्वर अयच्छत होता है, गुप्त वा नागरोलिपिके साथ उसकी सटभ्यता नहीं रहने पर भी वह नितान्त आधुनिक नहीं है। क्रमसे क्रम ७वीं वा ८वीं शताब्दीमें इस प्रकार का युक्तस्वर निकला होगा। इस प्रकारको युक्तस्वरविशिष्ट नागरालिपि गुजरातमें जैननागरीकी नामसे प्रसिद्ध है।

(२०) इन्द्र राष्ट्रकूटराज ७५० ध्रुववर्षके ७३४ शकहित ताम्रशासनमें लिखितता तो देखी जाती है। इस ताम्रशासनमें दक्षिणात्यकी प्राचीन गुहालिपि (Cave alphabet) संगृहीत हुई है। *Indian Antiquary*, 1883, p. 156.

(२८) *Indian Antiquary*, Vol. XIV. p. 200.

(२९) *Journal of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society*, Vol. XVIII.

(३०) *Indian Antiquary*, Vol. XII. p. 280.

(३१) *Journal of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society*, Vol. XVIII.

वहे ही आश्चर्यका विषय है, कि गौहराज धर्मपालके ताम्रशासनमें इस प्रकारका युक्तस्वर व्यवहृत नहीं होने पर भी तत्परवर्ती दूसरे दूसरे पाल और सेनराजाओंके समयमें जो लिपि उत्कीर्ण हुई है, उसमें भी इस प्रकारका युक्तस्वर साफ साफ दोख पड़ता है। ८३० शककी वज्राक्षरमें लिखित काशीखण्डका जो ग्रन्थ विश्वकोष-कार्यालयमें संग्रहित है, उसमें इस प्रकारका युक्तस्वर साफ साफ अक्षित है।

८वीं शताब्दीसे नागरी और गौडलिपिका पूरा प्रचार देखा जाता है। ८वींसे ले कर ११वीं शताब्दीके अन्ध नागरी और गौडलिपिने जो आकार धारण किया था आज भी वह आकार देखनेमें आता है। यदि कुछ कुछ मामान्य भेद देखा भी जाता है, तो स्थानके भेदसे वा लेखकके भेदसे।

ऊपर जो सब बातें लिखी गई हैं उनसे सिर्फ यही जाना जाता है, कि क्या ग्रन्थगत प्रमाण, क्या प्राचीनलिपि दोनोंसे ही ५वीं शताब्दीमें हम लोग सबसे पहले नागरोलिपिका सम्मान पाते हैं। इसके पहले नागरोलिपि थी वा नहीं इसका कोई प्रमाण नहीं पाते। सबसे पहले लिखा जा चुका है, कि नगर नामक पुरवोषी नागर ब्राह्मणसे नागराक्षर वा नागरोलिपि प्रचलित हुई है। नागर ब्राह्मण लोग गुजरातके रहनेवाले थे। गुजरातसे ही सर्व प्राचीन नागरोलिपिका आविष्कार हो जानेसे वह हम लोगोंके प्रस्तावका बहुत कुछ समर्थन करता है।

किन्तु यहां अब वह प्रश्न उठ सकता है, कि गुजरातमें २रीसे ७वीं शताब्दी तक जो असंख्य शिलालिपि आविष्कृत हुई हैं उन्हें पुराविद् लोगोंने गुहालिपिके जैसा उल्लेख किया है। समूचा दक्षिण प्रदेशसे जो सब प्राचीन शिलालिपि वा ताम्रशासन आविष्कृत हुये हैं, उनमेंसे अधिकांश इसी तरहकी गुहालिपिमें उत्कीर्ण हैं। इस प्रकार नागर ब्राह्मणोंने देश प्रचलित अक्षरोंकी ग्रहण न कर दूसरे प्रकारका जो अक्षर ग्रहण किया उसका क्या कारण ? गुहालिपिकी यदि गौरसे देखा जाव तो उससे नागरोलिपि उत्पन्न हुई है यह साफ साफ स्वीकार नहीं कर सकते, वरन् नागरोलिपिकी भगधका गुहालिपि-

मूलक मान पकती है। इससे शीघ्र होता है, कि गुज-
रातमें प्रचलित प्राचीनतम नागरोत्थिपिको बौद्ध, समग्र
ना उत्तर भारतमें वैसे का कर नागर ब्राह्मण द्वारा दण्डका
न्यायी नाम पड़ा होगा।

किञ्च प्रचार और किस समयमें इस नामरोत्थिपिका
प्राचीन रूप उत्तर भारतमें गुजरातमें आया गया इसका
निर्णय करना अशक्य है। स्कन्दपुराणीय नागरकण्ठमें
१०८ अध्यायमें लिखा है, कि दूर दिग्मात्तरके जो ब्राह्मण
पपने पुत्रकलसादिको समय से कर हाटकेयरकेलमें
पाये थे, नामसे नगर-उत्तारकाये विप्रवर त्रिजातने
उन सबको बन्धकादि दे कर यहाँ (नगरमें) बसाया था।
इससे मान्य पड़ता है कि नामर ब्राह्मण बहुत दूर
दियेथे या कर यहाँ रहने भरी थे।

पहले ही सिद्ध हुआ है, कि नगर वा बड़ानगरका
प्राचीन नाम पानन्दपुर था। इको, १५० और ६५
शताब्दीके तान्त्रशासनमें नगरके इदके किञ्च पानन्दपुर
का नाम देखा जाता है। ११० संवत्में बहूचित
केनियोंने बर्मपत्य कल्पसुतमें लिखा है, कि बलमोराय
धुबसेनके भादियेथे इको पानन्दपुरमें बहके कामने
कल्पसुत पढ़ा जाता था। चीनपरिव्राजक सुपनसुबह
यहाँ बौद्धब्राह्मण और धनेक हिन्दू देवमन्दिर देख गये
थे। उस समय यह नगर मालव-राज्यके अधीन था।
चीनपरिव्राजकने यहाँ जो सब हिन्दू देवालय दिष्टे थे,
जान पड़ता है, कि वे ही नामरकण्ठ-वर्षित हाटकेयर
पार्थिक मन्दिर हैं।

यस प्रश्न यह रहता है कि इको वा १५० शताब्दी
को मन्वीसुतमें नागरोत्थिपिका कर्णक रहनेपर भी नागर
कण्ठ बौद्ध कर उन समयके इतने इतने पत्थरों वा
कण्ठके किपियेमें "नगर" नामका जो उल्लेख नहीं है,
दण्डका क्या कारण? मान्य पड़ता है, कि बौद्ध और
अनराजापोंके पार्थिवकालमें किञ्चिन्नाम राजपुत्रवर्षि
ब्राह्मणमदत मूलतः नामको पड़क गयो किया। वे सब-
के सब पानन्दपुर ही कहा करते थे। योहि नामरम
हिन्दू-राजापोंके समय यह नगर नामसे प्रसिद्ध
हुया (१२)।

नागरकण्ठमें लिखा है,—विप्रवर त्रिजात और उनके
पहचारी ब्राह्मणोंने नामव य भू स करके वा नामोंको
मना करके हाटकेयरका उत्तार किया—यह प्रसङ्ग पहले
ही सिद्ध हुआ है। इस लीयेकि विचारसे यह एक रूपक
वर्णन है। मायद गेन सोयोंने श्री यतान्दीके यन्तमें गुज-
रातके ब्राह्मण वा नामव शीघ्र राजापोंको पण्डित कर हाट
केयर पर पबिचार बसाया,—यही रूपकको तोर पर
स्कन्दपुराणके नामरकण्ठमें वर्णित हुआ है।

गुजरेन्द्रके सुपेक्षित सोमेश्वर एक नामर ब्राह्मण
थे। कर्णके कर्णित कुरबोसक नामक महाशायने
पपने पूब सुवर्षोंका परिचय देने हुए लिखा है,—“दिका
निर्दोषी प्रयत्न बासमूर्ति नगर नामका एक ज्ञान है,
वेदवित् और पवित्र यज्ञोय सोमाम्बिसे जिस स्त्रामने पबिज
मान बारक किया है, वहाँ राजमसादमात्रे यमिहगोत्र
के गुणिक बास करते थे। उनके यन्तमें सोल्यममें उत्पन्न
हुय। वे गुजरेन्द्र मूलराज सुपेक्षित थे।” सोमेश्वरने
फिर एक जगह लिखा है कि उनका पूर्वपुत्र ही पुत्र
पाशकमने गुजरेके बाहुम्बकि यहाँ सुपेक्षितारै करारि
रहे। उनमेंके कोई और राष्ट्रकूटराजके भा सुपे
क्षित थे।

मूलराज १०० शताब्दीमें विद्यमान थे। उनके समय
में नगर नाम प्रचलित ज्ञान पर भी उनके बहुतपहलेसे
ही नामर ब्राह्मण को यहाँ रहत पात थे, यह सोमेश्वरका
बचन पढ़नेसे जाना जाता है। ८५ शताब्दी तक यहाँ
मनराज प्रथम केन राजवय राज्य करते थे, इसीसे जान
पड़ता है, कि वहाँ नामरब्राह्मणमूलक नगर नाम प्र-
चलित ही नहा सकता।

चीनपरिव्राजकके समय ७५ शताब्दीके प्रारम्भमें
यहाँ हिन्दू देवमन्दिराद प्राप्ततत थे। नामरकण्ठके
मतानुसार नामर ब्राह्मणान नगर वा बलकण्ठपुरके देव
मन्दिरादिबा निर्माक किया। १५ शताब्दीमें वा उत्तरके
पहले पानन्दपुरमें केनियोंका प्रधानताका प्रमाण मिलता
है। पहले ही कहा जा चुका है, कि इको वा १५०
शताब्दीमें वर्षित मन्दसुतमें नागरोत्थिपिका कण्ठ कर्णक
पहला है कि पानन्दपुरके ही नामरकण्ठका नामकरण हुआ
होता।

(१२) नामरकण्ठमें पानन्दपुर के बहुरिकवा वर्णन है, जिन
Vol. X. 160

हे और उस समयके गुजराज दह-प्रशान्तरागके हस्ताक्षरमें भी नागरीलिपिका प्रथम प्रयोग देखनेमें आता है। इस प्रकार हम लोग अनुमान कर सकते हैं, कि पूर्वोक्त शताब्दीके पहली प्रायः ३० और ४थी शताब्दीके मध्य उत्तरी अक्षर जो नागर ब्राह्मण यहाँ आये, उन्हींसे नागराक्षर प्रचलित हुआ होगा। आद्यर्थका विषय है, कि गुजरातसे नागराक्षरमें उत्कीर्ण जो सब प्राचीन ताम्रशासन पाये गये हैं, उनमेंसे अधिकांश कान्यकुब्ज, पाटलीपुत्र, पुण्ड्रवर्धन आदि स्थानवासो समागत ब्राह्मणोंके लिये ही दिये गये हैं।

उक्त दह प्रशान्तरागके ४१५ शकाब्दित ताम्रशासनमें लिखा है, कि कान्यकुब्जासुख्य भट्ट महोदरके पुत्र भट्ट-गोविन्दको वह ताम्रशासन दिया गया था। राष्ट्रकूटराज-निखवर्षके ८३६ शकाब्दित ताम्रशासनमें लिखा है, कि पाटलीपुत्रके लक्ष्मणगोत्रोय वेन्नपभट्टके पुत्र सिद्धपभट्टको साटदेशान्तर्गत तैत्रयाम दानमें दिया गया। इसी प्रकार ८५४ शकाब्दित राष्ट्रकूटराज गोविन्द सुवर्णवर्षके ताम्रशासनमें भी पुण्ड्रवर्धननगरके कौशिक गोत्रोय केशव-दौचितको लोहग्रामके दानको बार्ते लिखी है। इन सब प्रमाणोंसे यह स्पष्ट प्रतीत होता है, कि बहुत पहलसे ही कान्यकुब्ज, पाटलीपुत्र और पुण्ड्रवर्धनसे बहुत ख्यक्त ब्राह्मण गुजरातमें आ कर रहने लगे। उनके भी बहुत पहलसे नागर ब्राह्मण लोग उक्त स्थानोंसे आ कर सम-कारपुरमें रहने लगे थे। यह सब हाल हम खोगोंकी नागरखण्डवर्णित दूरदेशान्तरागत ब्राह्मणोंका विवरण पढ़नेसे मालूम होता है। इस प्रकार ब्राह्मणों द्वारा ही नागरीलिपिका प्राचीनरूप गुजरातमें लाया गया और उन्हींसे प्रचार भी किया गया होगा, इसमें सन्देह नहीं।

नागर ब्राह्मण बहुत प्राचीन कालसे गुजरातके राष्ट्रकूट और चौलुक्य राजाओंके वंशानुक्रमसे पुरोहित थे, इतना ही नहीं, दरबारमें उनको खातिर भी खूब होती थी। गुर्जर राजगण नागर ब्राह्मणोंके प्रति किस प्रकार असामान्य भक्ति श्रद्धा दिखलाते थे, वह नागर ब्राह्मणोंके आदि वासस्थान बहानगरमें जो प्रस्तरलिपि उत्कीर्ण हैं, उनकी सैकड़ों प्रशस्तिमें घोषित है। उक्त राष्ट्रकूट और चौलुक्य राजाओंके यज्ञसे ही नागरीलिपि सारे भारतवर्षमें

प्रचलित हुई। नाटाधिपति राष्ट्रकूटवंशीय कर्क सुवर्णवर्षके ७३४ शकाब्दित ताम्रशासनमें स्पष्ट लिखा है—

“गौडेन्द्र वज्रपति-निर्जयदुर्विदग्ध

सद्गुणैश्वरदिगर्गस्तां च यस्य।

नीत्वा भुञ्जे विद्वत्-मालव-रक्षणार्थं

स्वामी तथान्यासपि राज्यच्छलानि भुङ्क्ते ॥” (३३)

फिर मान्यखेटके प्रतिष्ठाता राष्ट्रकूटराज नृपमुद्रके पुत्र गुर्जरेश्वरने क्षणराजके विषयमें अकालवर्षके ८६२ शकाब्दित ताम्रशासनमें लिखा है—

“तस्योत्तर्जितगूर्णरोपतद्वृत्तादोद्भट श्रीमद्वो

गोदाना विनयव्रतार्पणगुरुसामुद्रनिदाहरः।

द्वारस्थान्ध-धृष्टिङ्ग-गाङ्गमर्गधर-भयवितामखिरि

सुतु ससृष्टतवाग्भुवः परितृष्टः श्रीकृष्णराजो भवत् ॥” (३४)

यहाँ शासनलिपि पढ़नेसे जान पड़ता है कि ८वीं, ९वीं और १०वीं शताब्दीमें गुर्जरके राष्ट्रकूटराजाओंने गोड़, वहल, कलिङ्ग, गाङ्ग, मगध, मालव आदि स्थानोंको जीता था। (कनीजके विख्यात राठीर-राजगण भी राष्ट्रकूटवंशके थे।) इस प्रकार ज्ञात होता है, कि ८वींसे १०वीं शताब्दीके भीतर गुर्जरके राष्ट्रकूटवंशके कुल गुरु नागर ब्राह्मणोंका प्रवर्तित भयवा व्यवहृत नागराक्षर नागरी नामसे सारा आर्यावर्तमें प्रचलित हुआ था।

राष्ट्रकूट-राजाओंके यत्नसे जो नागरी नाम समस्त आर्यावर्तमें फैल गया था, मुद्रायन्त्रकी सहायतासे तथा पाश्चात्य विद्वानोंके उच्छाहसे वह लिपि आज सारे संसारमें परिख्यात हो गई है।

देवनागरी—नागरी लिपिका नामान्तर। देवनागर देसो।

देवनाथ (सं० पु०) देवानां नाथः इत्यत्। शिव, महादेव।

देवनाथ—१ एक संस्कृत ग्रन्थकार। इन्होंने तन्त्रचिन्ता-मणिकी रचना की है। २ मीनकेतूदय नामक संस्कृत काव्यके रचयिता। ३ रसिकप्रकाश नामक संस्कृत अलङ्कारके रचयिता। ४ एक हिन्दीकवि। इनका और कुछ विशेष पता नहीं मिलता है।

देवनाथ ठक्कर—एक संस्कृत ग्रन्थकार, सोमभट्टके शिष्य।

(३३) Indian Antiquary for 1883, p. 106.

(३४) Journal of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society, Vol. XVIII, p. 245.

रक्षति पवित्ररक्षकोमुदो, पवित्ररक्षसार धीर स्मृति-
चौमुदी नामक कई ग्रन्थ बनाये हैं।

इन्को पवित्ररक्षकोमुदीमें त्रोटकका रखाकर, हरि
नाथका अन्वयतक धीर बाधकतिमित्यका मत उद्धृत
हुया है।

देवनाथ तर्कसंग्रह—काम्यकौमुदी नामक काम्यप्रकाश
के एक विख्यात टीकाकार।

देवनामन् (स० पु०) १ कुम्भसोपपत्ति विरचयिताके एक
पुत्रका नाम। २ कुम्भसोपपत्ति एक ग्रन्थका नाम।

देवनामक (स० पु०) देवति नाम यज्ञ कथ । देवयोनि
विद्याधरादि।

देवनायक (स० पु०) सुरपति, इन्द्र।

देवनाथ (स० पु०) नर एव नाटः ततः स्वावे कन् ।
देवद्वय नर, देवद्वय।

देवनाथारक्षकसौ—हिन्दुके एक कवि। इनका कथ्य स०
१८३३में जोधपुर जिल्लेमें हुआ था। इन्होंने रामियमनो
रक्षकौ विद्योमकारिणि, प्रेमपदावली धादि कई एक
ग्रन्थ प्रचलन किये। इनकी कविता अच्छी होती थी,
उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं,—

“यज्ञ तरङ्ग लहे कच कीर्त्तये ननु उमा मरुत्तु नदी है।
ननु इ न ग अ न व वंग सुच गम मृगम माघ बही है ॥
प्यारे क्या वग धैरव ही तप वैभवके विपदा विनयी है।
बंजर भाय पदाय कौ ननु श्रेणी इ वी नदी लेटी इ वी है ॥”

देवनाथारव्य साह—हिन्दुके एक कवि। इनका कथ्य स०
१८३३ में हुआ तथा इन्होंने रामियमनोरक्षकौ नामक एक
पुस्तक लिखी है।

देवनाथ (स० पु०) नक्षत्रव स्वरार्थे भव, देवदत्त योऽ
तात् भावः। मनीषाम्, देवनाथ, बड़ा नरकट।

देवनाथाय (स० वि०) देवार्थ निःकायः ६-तत् । १ देव
मन्त्र । २ देवज्ञान स्वयम् ।

देवनिद्र (स० वि०) देवनिद्रति निद्र-निद्राय । देव-
निद्रक, देवताओंको निद्रा करमेवाका।

देवनिर्मित (सं० वि०) देवो निर्मित ३-तत् । १ देवताके
रचित, जो देवताके बनाया गया हो। (क्यो०) २ शुद्ध, जो,
शुद्ध।

देवनिर्मिता (सं० क्यो०) शुद्ध जो, शुद्ध।

देवनाथ (स० पु०) धर्मदयापादयुक्त मन्त्रमेद, एक प्रकार
का मन्त्र जिसमें यत्तरङ्ग शब्द होते हैं।

देवज्यस—एक ग्राम। यह पन्ना ३२ १ ७० धीर देवा०
०० २ पू० पन्नाके पन्नावत सुभाके विमला कानिजे
राष्ट्री पर दम्बर नदीके किनारे अवस्थित है। इस स्थान
को किति धीर इन्द्र बहुत प्रेमयोग्य है।

यद्यपि १९ मोक्ष पुर देवज्यस नामका एक दूधरा
प्रतिष्ठ स्थान है जहाँ १८२३ ई०में अन्नरत्न चौधरमोनीके
साथ गोरक्षापौका मोषय स ग्राम हुआ था। कुछके बाद
ही गोरक्षा लोग हठिय नगरमें प्यके साथ मन्त्रि कारमेंको
बाध हुए।

देवपञ्चम (स० पु०) पञ्चाङ्ग यागमेद, पाँच दिनमें
होनेवाला एक प्रकारका यज्ञ।

देवपण्डित—एक संस्कृत शब्दकार। इन्होंने पन्थापय
नियम्य, नामक एक वैद्यक ग्रन्थ बनाया है।

देवपति (स० पु०) देवार्थ पतिः ६-तत् । इन्द्र, देव
तापो के स्वामी।

देवपतिमन्त्रिन् (स० पु०) देवपते मन्त्रो ६-तत् । इन्द्र
मन्त्रो, हठकति।

देवपत्तन—छाडियावाडीके पन्नावत एक प्रतिष्ठ देव
स्थान। इसका वर्तमान नाम सोमनाथ है।

सुरापादिमें यह स्थान प्रथम धीर प्राचीन योदिन
लिपिमें देवपत्तन नामसे वर्णित हुआ है। १३वीं शताब्दी
में लक्ष्मण मारुतदेवको प्रयत्नमें लिखा है, कि पहले
यह स्थान देवनगर नामसे भी प्रसिद्ध था। १३वो
शताब्दीमें जयसिंह देववर्तिक कुमारपालपरिवर्तमें इस
देवनगरका वर्णन है।

बिभी किसोका मत है, कि गुजरातके नागर ब्राह्मणों
को नाम पर अभिहित नामराशर इसी स्थान पर यज्ञके
पक्षे नागरो नामसे प्रसिद्ध हुआ। छेन्ननाथ, प्रभास,
देवनागर आदि जन्म ईशो।

देवपथो (स० क्यो०) देवार्थ पथो मियदर्यमत्तात् ।
१ मन्थापुत्र, एक प्रकारका शब्द। देवार्थ पथो वा देव-
पत्तिय स्यात् । २ देवताकी पथो।

देवपत्र (स० पु०) देवार्थ पत्रा ६-तत् । १ देवताओंका
पत्र, पात्राद्य। इसका पर्याय—बावापत्र, सोमनाथ
धीर मन्त्रपरिच्छे है।

देवपथ बहुते रमणीय है, किन्तु उस पथ ही कर मानवगण नहीं जा सकते हैं। २ तीर्थ विशेष, एक तीर्थका नाम। देवपथतीर्थमें जाकर विधिपूर्वक स्नान दानादि करनेसे देवसत्रका फल लाभ होता है।

देवपथादि (सं० पु०) पाणिन्युक्त शब्दगण विशेष। देवपथ, इंसपथ, वारिपथ, रथपथ, स्वसपथ, करिपथ, अलपथ, राजपथ, जतपथ, गह्वरपथ, सिन्धुपथ, सिद्धिगति, उष्ट्रपथ, वाथरज्जु, हस्त, इन्द्रदण्ड, पुष्य, मत्स्य ये सत्र पथादि हैं।

देवपद्मिनी (सं० स्त्री०) आकाशमें बहनेवाली गङ्गाका एक नाम।

देवपर (सं० त्रि०) देवः परो यस्य। देवायन्त, सिद्धिचिन्तक, जो संकट पढ़ने पर कोई उद्योग न करे, केवल देवताका भरोसा किये बैठे रहें।

देवपर्ण (सं० स्त्री०) देवप्रियं पर्णं यस्य। सुरपर्ण, माचीपत्र।

देवपशु (सं० पु०) देवाय उष्ट्रपशुः पशुः। १ देवताके उष्ट्रपशु उष्ट्रपशु, वह पशु जो देवताके नामपर उस्तगे किया गया हो। २ देवताका उपामक।

देवपात्र (सं० स्त्री०) देवानां पात्रं हतत्, वा देवैः पीयतेऽत्र वा आधारे द्रुन्। अग्नि।

देवपान (सं० पु०) देवैः पीयतेऽनेन पाकरणे च्युट्। चमस, भीमपान करनेका एक पात्र।

देवपाल (सं० पु०) १ शाकहीपका वर्षपर्वतभेद।

(भागवत ५।२०।१८)

२ पालवंशीय एक प्रबल पराक्रान्त और विख्यात राजा, गौड़के प्रथम पालवंशीय राजा धर्मपालके पुत्र। मुद्गरमें प्राप्त देवपालका ताम्रशासन पढ़नेसे जाना जाता है, कि कामरूपसे ले कर चढ़ीसा तक इनका आधिपत्य फैला हुआ था (१)। तिव्वतके बौद्ध ऐतिहासिक तारानाथका मत है कि हिमालयसे विन्ध्य और जालन्धरसे समुद्र तक समस्त उत्तरभारत कामरूप विजिताके हाथमें आ गया था (२)।

(१) Asiatic Researches, Vol. I, p 123

(२) Cunningham's Arch. Sur. Report, Vol. XV, p. 151.

यद्यार्थमें जिन सब बौद्धपालराजाओंने गौड़में राज्य किया उनमेंसे यश, मान, पराक्रम और विद्या बुद्धिमें देवपालने ही सर्वोपेक्षा ख्याति लाभ की थी। हरिमिश्र नामक राष्ट्रीय ब्राह्मणोंकी कुलाचार्यकारिकामें देवपालकी यथेष्ट सुख्याति देखी जाती है। सच पूछिये तो ये बौद्ध राजा ही कर भो यहाँके ब्राह्मणोंका यथेष्ट आदर करते थे। यहाँ तक कि भट्टनारायणवंशीय ब्राह्मणगण इनके मन्त्री थे। एक ताम्रशासनसे ज्ञान होता है कि ब्राह्मणमन्त्रीके कौशलसे ही इनका राज्य इतनी दूर तक विस्तृत था। दिनाजपुरसे आविष्कृत महीपालका ताम्रशासन पढ़नेसे मालूम होता है कि जयपाल नामक देवपालके एक भाईने भी अपनेक राज्य जय किए थे (३)।

देवपाल किस समयमें गौड़के सिंहासन पर बैठे, इस विषयमें अनेक मतभेद हैं। ढाई सौ वर्ष पहले लिखित ब्रह्मखण्ड नामक एक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा है—

“बहुवर्ष सहस्रान्ते देवपालो महानृपः।

अथै ग्रामान् चांगदेषे स्थापयिष्यति दानहृतः।”

(ब्रह्मखण्ड २२।४४)

कलिकालके चार हजार वर्ष बीतने पर महाराज देवपालने अङ्गदेशमें आठ ग्राम स्थापन किये थे। अभी कलिका ५०२६६वाँ वर्ष बीत रहा है। इस हिसाबसे प्रायः हजार वर्ष पहले ८वीं शताब्दीके शेषभागमें किसी समय देवपाल विद्यमान थे। बिहारके निकटस्थ गोमरावान नामक स्थानसे आविष्कृत खोदित लिपि पढ़नेसे जाना जाता है कि वोरदेव नामक एक बौद्ध परिव्रजालक बिहारमें (यशोवर्मपुरमें) महाराज देवपालके अनुग्रहसे अनेक दिन ठहरे थे (४)।

गौड़ाधिपति देवपालके पहले कान्यकुब्जमें यशोवर्मा नामक एक प्रबल पराक्रम राजा राज्य करते थे। उन्होंने अपने वैवाह्यबन्धसे गौड़के किसी राजाकी पराजय और किसीको दध किया था। इसी उद्देश्य पर उनके सभास्थ कवि वाकपतिने “गौड़वध” नामक प्राकृत काव्यकी

(३) Journal of the Asiatic Society of Bengal, pt. I. 1895 p. 82;

(४) Indian Antiquary, Vol. XVII p. 309.

रचना को। मान्य होता है, उक्त यमोवर्मा को
 मोक्षेश्वरको पराजय कर देने नाम पर यमोवर्मापुत्र
 स्थापन कर गए हैं। यमोवर्माके पुत्रका नाम धामराज
 था। राजमीमंसाको प्रबन्धविज्ञानासिंह पदमेसे ज्ञाना
 जाता है, कि मोक्षेश्वर 'धर्म' को भाषावै कथमभ्युदयके
 शिष्या धामराजके ज्ञानो दुग्मनसि। कथमभ्युदयिका
 करकतो मोक्ष पदमेसे मान्य होता है, कि मोक्ष
 निर्वाचके ११० वर्ष पौष्टि यष्ट प्रथम कथ्य वै दूपा वा।
 ८८५ मन्वन्तमे उगवी कथ्य दूष्टे (१)। राजमीमंसाके
 प्रमाणानुसार मोक्षराज वर्म प्रथम धामराजके समसाम-
 न्तिक होते हैं, तब से मो ८१० से ८८५ मन्वन्तके मन्व
 जोवित थे, यममे सन्दिह नहीं। मोक्षराज वर्मपालमे
 बहुत दिन तक राज्य किया। यमराज देना। इस
 से पहले पुत्र देवपाल ८८५ मन्वन्तके बाद राजा हुए
 थे, ऐसा अनुमान किया जाता है। ब्रह्मवन्तमे देवपाल
 का भी समय दिया गया है। यह बहुत कुछ इस समयसे
 मिलता है। तात्कालिकमे देवपालके पुत्रका नाम राज-
 पाल, तिब्बतके तातागावके मतमे रामपाल और उक्त
 ब्रह्मवन्तके मतमे शरवजाल बतलाया है। दिनात्रपुर
 और सुहारे प्राकमे देवपालका जन्मके कालि था देवनेमे
 पाती है।

१ कथ्यपुत्रके एक विष्णाल राजा कुरम्बपालके
 एक पुत्र। कलिपालके बाद से कनोजके सि शासन पर
 बैठे। मोयडोको द्योदिन निपिब अनुसार ये १०५
 मन्वन्तमे राज्य करते थे (१)।

२ पञ्चाल (बदायन)के एक विष्णाल राजकुट
 व शीव राजा। ये शीवके पुत्र और मदनवन्तके
 कलिब कपोदर तथा कलाशिवकाय से। ये प्रथम पञ्च
 ज्ञान राजा से पौर ११०५ मन्वन्तमे राज्य करते थे एक
 द्योदिन निपिबे ज्ञाना ज्ञाना है। (२)

३ इतिहासके पुत्र शरवजालके भाषाके एक
 पिता।

देवपालित (स. वि.) देविल मोक्षराजका पालित। १
 देवमावक देव, यह देव त्रिमने इष्टिके जन्मने कितो
 पाटिका नाम चल्ता है।

देवपोत्र (स. पु.) देवकोटा पत्तुर।
 देवपुत्र (स. पु.) देवनां पुत्र ५ तत्। १ देवकुमार।
 (सो.) २ देवश्च पुत्रोच निपत्वात्। १ पत्ता, पत्ता
 यको। ३ देवकथा।

देवपुर (स. सो.) पमरावती।
 देवपुरी (स. सो.) देवनां पुरी ५-तत्। पमरावती।
 देवपुत्र (स. सो.) नवद्व, शीव।
 देवपुत्रो (स. सो.) ब्रह्मविजय, एक पदका नाम।
 देवपुत्रा (स. सो.) देवतापीका पुत्रन।
 देवपुत्र्य (स. पु.) देवनां पुत्र्या ५-तत्। पुराचार्य
 इत्यस्ति।

देवप्रतिहति (स. सो.) देवनां प्रतिहति प्रतिमा
 ५ तत्। देवप्रतिमा।

देवप्रतिमा (स. सो.) देवनां प्रतिमा ५ तत्। देव
 प्रतिमूर्ति। देवप्रतिमा देवी।

देवप्रवास—हिमाचलके तिहरी जिलाके पलमंत मन्दा
 और पलमन्दा नदीके लडम पर अवस्थित एक सुन्दर
 स्थान। अन्तर्पुराचर हिमवन्तपुत्रमे (३०५) पौर ११
 पञ्चायमे एक सुन्दर-भूमिका साहाय्य कथित है। ये तो
 यहाँ पलम सुखतोय है, पर देवप्रवास और ब्रह्मकुण्ड
 यको दो ताप प्रधान हैं। मासीरकोबे उत्तरमे शिवविड,
 दो शिवदेवके मन्व अद्यम्भुविड, नदीमण्डल पर है तानिब
 विष्णु, वतानकुण्ड, शिवतोय, सुय कुण्ड, शायिडतोब,
 शारडतोब, शारडो शिवा, सुधमातातोब, यमुच
 स्थान मन्वन्तकालके समाप्त के ज्ञानवन्दिक तथा सुधाके
 मन्व विष्णुमूर्ति प्रतिष्ठित है। यमने पांच सो.को पूरा
 पर यज्ञाचनन समयो विद्वन्तोय है। सुधकुण्ड ५ पलमे
 शिवकुण्ड, सुधाके टण्डिवा किनारे मोक्षकुण्ड, मोक्ष
 दक्षिण किनारे तन्त्रेश्वरविड, यमने ६ घण्टेके पानमे
 पर दानवती नदीके किनारे टानेदेवर मन्दिर, दानवतीके
 सुधाके घण्टेके किनारे महाविड, महादेवर सुध
 मर पौर दानवेश्वरविड है। देवप्रवासके टण्डिबने जहाँ
 महाविडकी शार मातारकोको शायके मिमो है, यहाँ

(१) P. 100. Ep. Ind. in the Year 5 of B. S. 1908
 M. 1908 P. 1. LXXXII
 (२) Ep. Ind. in the Year 5 of B. S. 1908 P. 150-170
 (३) Ind. in the Year 5 of B. S. 1908 P. 310.
 Vol. X 161

इन्द्रप्रयागतोर्ध, इन्द्रकुण्ड और धर्मकुण्ड है। उसके भी दक्षिणमें धनुस्तोर्थ, ब्रह्मधारा और इन्द्रेश्वरलिङ्ग है। नवानिकके पूर्वमें त्रिशूलतोर्थ है। त्रिशूलतोर्थके दक्षिणमें उर्मिका नदी और वैनेतेय नदी है। इन दो नदियोंके मङ्गम पर गुरुदेखरलिङ्ग, इसके दक्षिणमें विभाविनी नदी, नदीसङ्गम पर भावेश्वरीदेविका मन्दिर, मण्डिरके वाईं ओर सेन्द नदी और दाहिनी ओर राजेन्द्री नदी है। इन दो नदियोंके सङ्गम पर पृथ्वी-तोर्थ अवस्थित है। दक्षिणमें कपटक शैलके ऊपर कपिल्लानदी, पूर्वमें चन्द्रकूट और देवेश्वर शैलके समोप चन्द्रतोया नदी है। इसके वाट लाङ्गलशैल है जहाँ लाङ्गलेश्वरलिङ्ग प्रतिष्ठित हैं। मन्दिरके दक्षिण-पश्चिममें मञ्जुकुला नदी प्रवाहित है और इसी नदीके सङ्गम पर भीमतीर्थ पड़ता है। देवप्रयागमें यज्ञो सव तोर्थ है। कितने हिन्दू, मन्थासो और हिमालयवासी हिन्दू लोग इन सव तोर्थोंका दर्शन करने आते हैं।

देवप्रभसूरि—एक श्वेताम्बर जैनाचार्य। इनका कोटिक-गण, मध्यमशाखा, श्रीमश्रवाहनकुल और हर्षपुरीय गच्छ था। गुजरात राज सिन्धुराजके समसामयिक हेमसूरिके शिष्य विजयसिंहसूरि, विजयसिंहके शिष्य चन्द्रसूरि, चन्द्रके शिष्य मुनिचन्द्र सूरि और मुनिचन्द्रके शिष्य देव-प्रभ थे। इन्होंने पाण्डवचरित्र और मृगावतीचरित्र नामक कई ग्रन्थ रचे हैं। यशोभद्र और नरचन्द्रने देवप्रभके लिए पाण्डवचरित्रका संगोधन किया था।

देवप्रग्र (सं० पु०) देवानुद्दिश्य प्रश्नः वा देवानां ग्रह-देवताना प्रश्नः। १ ग्रहनचत्वादि घटित जिज्ञासा, वह प्रग्र जो ग्रह, नक्षत्र, ग्रहण आदिके सम्बन्धमें हो। २ शुभाशुभ सम्बन्धो प्रश्न। यह किसी देवताके प्रति समझा जाता है और इसका उत्तर किसी विशेष युक्तिसे निकाला जाता है।

देवप्रसूत (सं० त्रि०) देवतासे जात, जो देवतासे उत्पन्न हुआ हो।

देवप्रस्थ (सं० पु०) सेनाविन्दु राजाको पुरी। यह कुरु-क्षेत्रसे पूर्वमें अवस्थित था।

देवप्रिय (सं० पु०) देवानां प्रियः इ-तत्। १ पोतभृङ्ग

राज, पोली भँगरैया। २ वकत्रण, अगस्तका पेड़। ३ नागवल्ली लता। ४ सम्राट्, अशोकको उपाधि।

देववधू (सं० स्त्री०) देवाना वधूः इ-तत्। अप्सरा। देववन्द (हिं० पु०) छातो पर होनेवाली घोड़ोंको एक भँवरो। यह शुभ लक्षण गिनी जाती है। जिस घोड़ेमें यह भँवरो हो उसमें और कई तरहके दोष रहते भी वे निष्फल समझे जाते हैं।

देववन्द्यु (सं० पु०) ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम। देववन्दा (सं० स्त्री०) देवानामिव वलं यस्याः। १ सह-देवीलता, सहदेव्या नामकी वृत्। २ वायमाणा लता, एक प्रकारकी वेल।

देववलि (सं० पु०) देवार्थं वलिः। देवताओंके निमित्त उपहार।

देववांस (हिं० पु०) पूरवो बंगाल और आसाममें होने-वाला एक प्रकारका वांस। यह १५से २० हाथ और ४०से ४५ हाथ भी ऊँचा होता है। यह मजबूत होता है और मकानोंकी छाजनमें लगाया जाता है। चटाई आदि इससे बनाई जाते हैं। इससे नरम कस्बोंका अचार भी पड़ता है।

देववाहु (सं० पु०) १ यदुवंशीय हृदोकपुत्रभेद, यदु-वंशके हृदोक राजाके एक पुत्रका नाम। २ ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम।

देववोध (सं० पु०) महाभारतके एक टीकाकार।

देवबोधिसत्त्व—एक बोधिसत्त्व।

देवब्रह्मन् (सं० पु०) देव इव ब्रह्मा। नारद।

देवब्राह्मण (सं० पु०) देवपूजक ब्राह्मणं। देखल, वह ब्राह्मण जो किसी देवताकी पूजा करके जीविका निर्वाह करे।

देवभद्र—१ एक चन्द्रगच्छीय जैनाचार्य, भद्रेश्वर सूरिके शिष्य और प्रवचनसारोद्धारके विख्यात टीकाकार सिद्ध-सेनके गुरु। इन्होंने प्रमाणप्रकाश, श्रैयांसचरित्र आदि ग्रन्थोंकी रचना की। ये १२४२ सम्बत्के पहले विद्यमान थे।

२ राजा भोजके समसामयिक एक कवि।

३ एक प्रसिद्ध जैनग्रन्थकार। इन्होंने प्राकृत भाषामें 'पासनाहचरिय' (पाण्डवाचरित्र), कदारयष-

कोष (अक्षरकोष), कोरवरिय (कोरवरिय), सन्धिसरज्याना, पाषाणयान पादि यन्त्रो को रचना को है। इनमें अक्षरकोष १११२ सम्बन्धको कोर कोरवरिय ११६८ सम्बन्धको मरोचनगरमि मन्त्रुं रूपया वा। इनमें मुद्रका नाम प्रसन्नचन्द्र कोर लणायामका नाम समति वा। इन्हीं चमयदेव स्वरिं अहनेदे विचोरेमि महाभोरके मन्त्रिमें 'जिनब्रह्म'को प्रतिष्ठा को की।

४ लपदेभरजकोयके टोकाकार।

देवमन्त्र पाठक—एक वैद्विदु पण्डित। इनके पिताका नाम बलमन्त्र कोर माताका नाम भागीरथी वा। इन्हीं काकायनब्रह्मसुत्रको 'ब्राह्मयनप्रयोगशा' नामक एक पदति रची है।

देवमन्त्र (स० जी०) देवनां मन्त्र ६-तत्। १ अर्ग। २ धम्मजुष, पोष्य। ३ दीपप्रतिमानय, देवालय।

देवमान (स० पु०) देवनां भागः ६-तत्। १ देवताधोका नाम। स्वैरिवात्मने सिद्धा है कि नवच-समुद्रके से कर उत्तरदिक्त म्योचका परे अम्रुदोप तक देवताधा का विमान है। देवना देवां भागः। २ देवताधो देव धनादि भागभेद, बिचो बन्धु या धर्म्यतिका बह च य को देवताधे सिधे निष्ठाका मदा को। ३ देवताधोका मान।

देवभावा (स० जो०) लक्ष्मण भावा।

देवमिषक (स० पु०) पवित्रोन्नमार।

देवमोति (स० जो०) देवैन्मा मोतिः। १ देवताका मय। २ देवताधे मय, देवताधे कर रक्षण।

देवमू (स० पु०) देव देवत्व भवते मू क्षिय। १ देव देवता। देवनां मू निवासमूमिषत्पत्तिज्ञान वा यत्। २ अर्ग।

देवमूर्ति (स० जो०) देवात् देवकोक्तात् मूर्तिचत्पत्ति-र्यथाः। मन्दाबिचो। देवनां मूर्ति ६-तत्। २ देव-ताधोका दिवर्ष।

देवमूमि (स० जो०) देवनां मूमिः ६-तत्। १ अर्ग। २ देवताधोको शिव मूमि।

देवमूप (स० जी०) देवका मावः मू मय। (मूयो-

माथे। प ३.१।००) १ देवत्व। २ देवसाहस्य। देवमूत् (स० पु०) देव विमर्शि पाकयति ध-क्षिप। १ इन्द्र। २ विष्णु।

देवमोक्ष (स० जी०) देवैर्न मोक्ष्य। पद्वत्।

देवम्बात् (स० पु०) देवेषु म्बाकते म्बात् क्षिप। स्यं व शीय देवमेद।

देवमन्त्र (स० जो०) कोलुममन्त्रिः।

देवमन्त्रि (स० पु०) देवेषु मन्त्रिभः। १ मग स्यं।

देवः कोतनयोक्त मन्त्रिः। २ कोलुम। ३ पम्बरोमावर्त्त, घोड़ेको र्भेवरो। ४ मङ्गनिदा।

देवमन्त्रि—एक विन्दो मन्त्रि। इन्में १६ धन्वाय तक पाषाणमोतिमापा रची है।

देवमत (स० नि०) देवानां मतः ६-तत्। १ देवसधत्, देवताको राय। (पु०) २ अयिमेद, एक अयिका नाम।

देवमन्दि (स० पु०) देवप्रतिमालय, देवालय।

देवमर्त्या (स० जो०) मर्त्यामिदा।

देवमात्र (स० जो०) देवानां माता ६-तत्। १ देवता जननी देवताको माता। २ अदिनि। ३ दाचाबको।

देवमात्रक (स० नि०) देवो इतिमासिक यन्त्रोत्पादनेन पाकत्वत्वात् जननोव बन्ध यत्। इन्द्रम्यूनम्यत्र ब्राह्मि-पाकित देय बह देय जिसमें जेती पादि के सिधे कर्पाका जो ब्रह्म बर्षह को। देय तीन प्रकारके है, देवमात्रक नदोमात्रक, कोर लमबमात्रक। इन्में जो देय इति द्वारा जो बन्ध होता है उसे देवमात्रक देय कहते है।

देवमादन (स० पु०) देवमोहनकारी सोम, बह सोम जिससे देवता मोहित वा मग को करते है।

देवमान (स० जो०) देवानां मान कासपरिच्छेदः। १ दिव्यमान, काकनी मन्त्रनामें देवताधोका मान मनुष्या के एक सोर कर्पाका देवताधो का एक दिन। इस तरह ३० दिनका एक महीना कोर १२ महीनेका बर्ष होता है, इन्में परिमात्रको देवमान कहते है।

ब्राह्म दिव्य पित्रा प्राजापत्य, युव, कोर, वाक्य, चान्द्र कोर अथ यौ १कारके मान है। देवेषु मानो उच्च रमकोक्तात्। २ देवकोय्य इच्छादि।

देवमानक (स० पु०) देवेषु मानो वन्ध अथ। लक्षात् सन् वा। कोलुममन्त्रि देवमन्त्रि।

देवयानपदमे ब्रह्मलोकको आर्ति है । यही पद ब्रह्मलोक-
 समनवा प्रसिद्ध पद है । मातृक प्रथमतः पश्चिमी-
 सन्ध्य होती है, पोछे पश्चिमे दिनदेवतामें आर्ति है ।
 ब्रह्मलोक जानेका संबन्ध एक ही पद है जिसका नाम है
 देवयान । कदापक हमें देवयान पदका अर्थबोधन करके
 प्रथमतः पश्चिमलोकको समन करनी है । इससे निवा घोर
 भी अनेक प्रकारके दोषों का विषय बलिष्ठित है । अनेक
 प्रकारके पद जोनिसे यह पद सदेह होता है कि ये
 सब पद एक हैं वा मित्र मित्र ? क्या श्रुतिमें कश्चुच
 विभिन्न पदों का उल्लेख है अथवा एक ही पद माना
 प्रकारके विशेषणोंके विद्योपित रूपों है ? सामान्य दृष्टिसे
 देखनेसे मान्य पदोंका कि वे सब पद विभिन्न हैं, पर
 बहुत गौरव देवनेसे वे सब पद एक हैं, विभिन्न नहीं
 ऐसा जान पड़ेगा । ब्रह्मनिष्ठाश्रमात्र जो पदसे पश्चि
 पोछे यह इस प्रकार समन करनी है । कारण यह है, कि
 कहीं पद अति ब्रह्मलोकके अर्थ प्रसिद्ध है । आन्दोष्य
 उपनिषद्को पश्चिमविद्याप्रकरणमें लिखा है कि जो
 परस्पर रश्च कर यथा घोर तपको कथामना करते हैं,
 वे पश्चिंरादि पद ही कर आते हैं । किन्तु यह समो
 उपासकोंके जानेका पद नहीं है । भाष्यमें त्रिन सब
 उपासनाओंके अन्तर्गत निदिष्ट अति परिचित नहीं
 हुई है अर्थात् सब उपासनाओंके कदापक पश्चिंरादिबो
 जाते हैं । मित्र मित्र स्त्रानोमें मित्र भिव पयशोबक
 शब्दोंके अन्वयित होने पर भी बहुधा सब प्रकारके पश्चि
 भिव एक ही अर्थात् पद एक है । नही एक पद विभिन्न
 स्त्रानोमें विभिन्न विशेषणोंके विद्योपित रूपों है । इन
 विशेषणों का विशेषमूल पद एक है, पश्चि नहीं ।
 १२२६ अथ ३६ शाल्वरदिदेवयान पदके अर्थ
 जान पड़ता है अर्थात् के समो पद एक है । अतः
 एकलोक पदके मातृक अर्थबोधन पद विशेषणोंका
 अर्थबोधन होता ही बहुत है । समो शाल्वोमें प्चि
 रूपों है कि ब्रह्मयान पद एक है । किन्तु त्रिन त्रिन
 प्रकारके त्रिन प्रकार पद विशेषण वा पयशोबक शब्द
 अन्वयित रूपों के समो इहो ब्रह्मपदके विशेषण है ।
 श्रुतिमें देवयान घोर विद्यायान इन दो पदों का अर्थ
 कर दोहे अर्थ है कि समस्त पयशोबको का स्त्रान पाते

कटका है घोर वह अतीव पयमें गिता मया है । श्रुतिमें
 उक्त कटदायक अतीव अमानकी बात कहनेमें ही जाना
 जाता है कि विद्यायान पदके अतिरिक्त देवयान नामक
 एक दूसरा पद है, घोर यह पद पश्चिं रादि अनेक
 पदोंमें है । इसका तात्पर्य यह कि समस्त यदि
 अनेक होती तो श्रुति अनेक पदका अर्थ नहीं बतलाते ।
 पश्चिंश्रुतिमें लिखा है, कि इन पदके अनेक पदों वा
 विद्यायान है । उपासकोंको ब्रह्मलोकमें आते हैं । उनका
 यह ब्रह्मलोक जानेका पद किस प्रकार अतिशय विद्योप
 है वा किस प्रकार एक ही पद श्रुतिमें माना विशेषणोंके
 विद्योपित रूपों है ? इससे अन्वयमें ऐसा सब विनिवह
 रूपों है—

“शत्रुमन्त्रादिघोरविद्यायान्” (वैश्वानस्य ३।३।२)

ब्रह्मलोक जानेवासी देवयान पद वा कर पदसे
 पश्चिमोक्तमें, पोछे शत्रुमन्त्रोक्तमें, अथपयोक्तमें, इन्द्र
 लोक्तमें, प्रजापतिलोक्तमें घोर ब्रह्मलोकमें आते
 हैं । इसमें प्रथमतः पश्चिमोक्तमनवा उल्लेख
 है । पश्चि श्रुतिमें प्रथमतः पश्चिः प्रासिका
 विषय लिखा है जिसे देखनेमें प्रतीत होता है कि पश्चिं
 शब्द घोर पश्चिमोक्त दोनोका एक पद है । पश्चि घोर
 पश्चि शब्दके अन्वय (पयशो लो)का बोध होता है,—
 अतः पश्चिं घोर, पश्चि दानो का एक पद होना जिना
 प्रकार पश्यत नहीं है । आन्दोष्यक देवयान पदके
 अर्थ अथ शत्रुमन्त्रोक्तमनवा उल्लेख नहीं है, किन्तु शत्रु
 लोक्त घोर देवयान पदका एक पद है —आन्दोष्यमें उक्त
 का उल्लेख नहीं है, यह किस प्रकार, हो सकता ? इसका
 उत्तर यही है, कि उपासकतक पदके पश्चिंका पाने हैं,
 पश्चिं पद, पदके आनूय मातृक वा अत्यन्त आनूयमातृ
 पदके उपासकके अर्थ अर्थात् का, अन्वयपदके अर्थबोधन,
 ल अन्वयके आदिशब्दोंके, आदिशब्दके अन्वयमातृके अन्वयमातृके
 विद्युत्को मात्र होने हैं घोर अर्थ अन्वय (पयशु
 दिव) हो आते हैं । इन सब श्रुतिमें जो उक्त का घोर
 आदिशब्द शब्द है, उन दोनो के अर्थ आनूयका अर्थबोधन
 है अर्थात् न अन्वयक वाट शत्रुमें अन्वय होने हैं घोर
 पोछे आदिशब्दको अर्थ आते हैं । इन श्रुतिमें सामान्यतः
 शत्रुलोक्त जानेको अर्थ नहीं है, किन्तु किस प्रकार

क्रमशः वायुलोकको गति होती है सो नहीं कहा। अन्यान्य नृतियों में इसका विशेष उल्लेख देखने में आता है। सब उपासक व्यक्ति इस लोक से परलोकको जाते हैं, तब वे इस देहको परिव्याग कर वायुलोकको प्राप्त होते हैं।

कौषीतकि नृत्तिमें अग्निके वाट वायुपर्वका उल्लेख है; छान्दोग्यनृत्तिमें वायुके वाट वरुणका स्थान बतलाया है। प्रादित्यमें चन्द्र, चन्द्रमें विद्युत् इत्यादि हैं। नृत्तिमें जिम विद्युत् लीकको कथा है, उसी विद्युत् लीकके ऊपर वरुणका स्थान निर्दिष्ट किया है। कारण विद्युत् के साथ वरुणका सम्बन्ध देखा जाता है। विद्युत् और वरुण दोनों में परस्पर सम्बन्ध रहनेके कारण ही ऐसा अनुमान किया गया है। उसी समय देखा जाता है, कि अति विशाल विद्युत् अति तोत्र मेघनिर्घर्षसे मेघोदरमें गूळ करती है और उसके वाट ही जलवर्षण होने लगता है। वरुणके ऊपर इन्द्र और प्रजापति हैं। इन दोनोंका स्थान अग्निः वा अग्नि, पीछे भद्र वा दिन, तब शक्रपत्न्य और उत्तरायण है। ये सब जो कहे गये, वस्तुतत्त्वमें वे सब क्या हैं? अर्थात् किसरूप हैं? ये सब क्या देवयान पथके एक एक स्थान हैं वा चिह्न? क्या ये सब ब्रह्मलोक प्रस्थित उपासक जीवोंके भोगस्थान हैं वा उनके वाहक विशेष? इसके उत्तरमें पहिले यह कहा गया है, कि अग्निः आदि देवयानके पथ चिह्नस्वरूप हैं। कारण उपदेशको वा, स्वरूप प्रायः उसी तरह है जिस तरह किमो व्यक्ति को एक नगर वा ग्राममें जाना है और वह राहमें दूरसे पूछता जाता है। दूसरा जो उस राहसे जानकार है, कहता है अर्थात् उपदेश देता है कि यहाँसे एक भ्रुक पहाड़ मिलेगा, बाद एक बटहल और उसके बाद नदी मिलेगी। नदी पार होनेके बाद वह ग्राम मिलेगा जहाँ तुम जाना चाहते हो। जैसा यह दृष्टान्त है वैसा ही अग्निः है। अग्निसे दिवा, दिवासे शक्रपत्न्य इत्यादि कहे गये हैं। ये सब अग्निः प्रकृति एक एक भोग स्थान हैं, ऐसा जानना चाहिये। नृत्तिमें 'अग्नि लोक' 'भागच्छति' इत्यादि क्रमसे अग्नि आदि कई एक पथ पर्वोंके लोक शब्द योजित किया है। इससे प्रतीत होता है, कि वे अग्निः प्रकृति सभी लोक विशेष हैं। लोक शब्दसे भी प्राणियोंके भोगाय

तनका बोध होता है, जैसे मनुष्यलोक, देवलोक, पिंढलोक इत्यादि। अग्निः प्रकृति का भोगभूमित्व पक्ष स्थिर हुआ है, अतिवाहिक पक्ष नहीं। चूंकि अग्निः प्रकृति अचेतन है, इस कारण उनके अतिवाहिकत्व अनुपपन्न हैं। ऐसा देखा जाता है, कि मचेतन जीव ही राजासे वा दूरसे अथवा स्वयं प्रयुक्त हो कर राह और दुर्गम प्रदेशमें अतिवहनोय जीवोंको बहन करते हैं। इसके सिद्धान्तमें ऐसा निगवा है, कि वे सब अर्थात् अग्निः आदि पथ चिह्न नहीं हैं, भोगस्थान भी नहीं हैं, वे अतिवाहिक चेतन हैं। चन्द्रसे विद्युत्, विद्युत्से उर्ध्वे भ्रमानव पुरुष ब्रह्मलोकको ले जाते हैं। अग्निः आदि सभी पर्वोंको वाहकरूपमें निर्देश कर सकते हैं। अग्निसे ले कर विद्युत् तक सभी चेतन हैं, देवात्मा और ब्रह्मलोकप्रापक नेता वा वाहक हैं। जो पुरुष विद्युत्से ले जाते हैं, वे ब्रह्मलोकवासी भ्रमानव हैं। जो अग्नि आदि पथ होकर ब्रह्मलोकको जाते हैं, देहत्यागके वाट पिच्छितेन्द्रिय होते हैं।

अग्निः भोगभूमि नहीं है, उस समय गन्ता पिच्छितेन्द्रिय अवस्थामें रहता है। मूत्ररा उस समय उसका भोग भी असम्भव है। यदि मूत्र छूटे, कि बल लोकवाचो भोग शब्दको, क्या आवश्यकता है? इसका उत्तर यही होगा कि जहाँ गन्ताका भोग नहीं है वहाँ तक्षक वासियोंका भोग रहनेके कारण ही भोगवाचो लोक शब्दका प्रयोग हुआ है। जिस लोकके अधिपति अग्निः अर्थात् अग्नि हैं, उस लोकमें जब उपासक जाता है, तब अग्निदेवता उसके बहन करते हैं अर्थात् ले जाते हैं और वायुलोकमें जानेसे वायुलोकके स्वामी उसे बहन करते हैं, इत्यादि। विद्युत् लीकमें जानेके बाद विद्युत् लीकके परवर्ती भ्रमानव पुरुषोंके द्वारा उपासक वरुणादि लोकमें लियाए जाते हैं और वहासे वे फिर ब्रह्मलोकमें जाते हैं। भ्रमानव पुरुष ही उर्ध्वे ब्रह्मलोकमें पहुँचा देते हैं। वरुण आदि भी कोई-रोक टोक नहीं करते, बल्कि उन्हें सहायता देते हैं। अग्निः प्रकृति पथचिह्न अथवा भोगस्थान नहीं हैं वे अतिवाहिकी देवता हैं। इस पूर्वोक्त देवयान पथ ही कर उपासकगण अग्निः आदिकी सहायतासे ब्रह्मलोकको जाते हैं।

देवयानी (स • खो •) टैम्बुलक यज्ञाचार्यकी बच्चा ।
 इन्द्रप्रतिष्ठे पुत्र कथ घृतमन्त्रीबनो बिद्या सोमनीके जिये
 यज्ञाचार्यके गियरा हुए । बुझा कथ यज्ञाचार्यको लम्बु
 कर मृत्यु, मोत, बाघ घोर फल पुण्यादि द्वारा तथा मृत्यु-
 वत् पाशाशुभ्रवर्तिता द्वारा बुझती देवयानीको प्रयत्न
 करने लगी । इस प्रकार देवयानी उस पर चतुराङ्ग हुई ।
 चतुरो को जब यह भासूम हुआ कि कथ घृतमन्त्री-
 बनी बिद्या सेनिके लिए पाया है, तब उन्होंने उसे मार
 डाला । देवयानी कथको पानेमें विरक्त देख यज्ञा-
 चार्यसे बोली, 'हे तात ! कथ यह तक भा खोड कर
 नहीं पाया है, इमें कहां तक भासूम पड़ता है कि ता
 तो कथ मर गया चरवा मारा गया है । कथके बिना हम
 कथकास भी जीवन धारण नहीं कर सकते ।' तब यज्ञा-
 चार्यमें मृतमन्त्रीबनी बिद्याके बचने उसे जिज्ञासा दिया ।
 फिर एक दिन कथ देवयानीके पादेयसे लड़नेमें फूट
 तोड़नेके किये हुए रहे थे । इसी बीच दानवीनें उसे
 पीस कर समुद्रदे कि ब दिया । कथके पानेमें विरक्त
 देख देवयानीनें विहाय करती हुई अपनी पितासे कहा,
 'कथ फिर भी मारा गया । मैं उसके बिना पच भर मो
 बोलित नहीं रह सकती ।' इसपर यज्ञाचार्यनें कहा,
 देवयानि ! तुम क्या शोक करती हो कथ मारा गया
 है । मैं बिधाके बचने उसे बार बार जिज्ञासा देता, तो मो
 उसे चतुर लोग मार डालती हैं, अतएव तुम इस क्या
 शोकको छोड़ दो । तुम करीबी प्रभावयानिनी खोलो
 किसे नखर ध्मिकके प्रति शोक नहीं करना चाहिये ।
 अतः तुम शोकको परिहारा करो ।' देवयानीनें उनको बात
 पर कुछ भी ध्यान न दे कर बोले, मैं कथके बिना पच
 कासमी रह न सकती । यह सुन कर यज्ञाचार्यनें पुनः
 कथको जिज्ञासा दिया । कथको बार बार अतएव खोजित
 होता देख दानवीनें उसे पीस कर यज्ञाचार्यके पोनेको
 द्वारा मित्रा दिया । यज्ञाचार्य कथको सुराके साध
 दो गये । जब कथ कचो न मिला तब देवयानी बहुत
 विहाय करने लगी और पितासे बोली, 'यदि पाप रहे
 दूढ न जिज्ञासेमें तो मैं निराहार रह कर प्राण त्याग
 करूंगी । इतना कह कर कथ रोने लगी । यज्ञाचार्यका
 इतने टकावे पिछल गया और लगीनें कथको पाहान

बिधा । कथने यज्ञाचार्यके घटमेंसे उखाव दिया, 'चुरो !
 चतुरोनें इमें मार कर सुराके साथ पापतो पिन्ना टिया
 या ।' यह सुन कर यज्ञाचार्य बहुत बहरासे घोर देवयानी-
 से बोले, 'देवयानि ! कथ तो भी घटमें है । पच बिना
 भी भरे कचकी रचा नहीं हो सकती है ।' इस पर
 देवयानीनें कहा, कि कथका नाम घोर पापकी वत्,
 ये दोनों भी लिए कटकर हैं ।

अन्तमें यज्ञाचार्यनें कथसे कहा 'यदि तुम कथ
 खोने इच्छु नहीं हो तो घृतम जोबनो बिद्या पचक करो
 घोर उसके प्रभावसे बाहर निकल पाओ । कथनें
 घृतमन्त्रीबनो बिद्या पारं घोर यह घटमें बाहर निकल
 पाया । तब देवयानीनें कहा, कथ ! मैं तुम पर
 नितान्त चतुराङ्ग हूँ, तुमको नहीं देखनेसे मुझे त्रिभुवन
 मृग्य दीप्तता है । अतएव चकोचित विद्यानायुवार तु
 सुभवे विवाह कर । यह सुन कर कथनें कहा, रामे !
 मैं तुम्हारे पिताका मिथ्य हूँ, तुम मेरो शुभपुत्रो हो, पिता
 बोधना तुम्हें उचित नहीं ।' देवयानी बोली, 'कथ !
 कथनें तुम यहां रहती हो, तथसे तुम्हारे प्रति मेरो जेनी
 भक्ति, सोदाह' घोर चतुराङ्ग कथक हुआ है, यह तुम्हें
 नहीं भासूम है । तुम मुझे कदापि परित्रात न करो ।'
 कथनें बहुत नमस्त्र बुझ कर कहा पर देवयानी कथ
 माननीबाको थी, यह खोजित हो कर बोली, 'देखो
 कथ ! तुम किस प्रकार मुझे बिना पचपावके छोडा सेते
 हो, उमे प्रकार तुम्हारे घृतमन्त्रीबनो बिद्या पचकतो
 न होयो ।' इस पर कथनें मो देवयानीको धाप दिया
 'देवयानि ! मैंने धनकोपके मयमें तुम्हें शुभकथा
 जान कर छोडा दिया है । अतएव बिना पचपावके
 जिन प्रकार तुम । मुझे धाप दिया, उमे प्रकार तुम
 यज्ञाचार्यकी कथा हो कर भी किसे ज्ञाह्यपत्री पयो
 नहीं हो सकती । तुम्हारे मापवे यह मन्त्र निष्कल होमा
 नहीं, पर यह बिधा पचीक है, यदि भी हाकथे फलवतो
 न होमो तो जिने मैं सिष्ठाक गा उनोके हाकथे होमी ।'
 इतना कह कर कथ जिदमात्रकी चले गये । उचईको ।
 देवयानी राजा उपपयोकी कथा धर्मिहा घोर देव
 यानीनें परस्पर सलो साथ था । एक बार सन्धिसेके साथ
 दोनों बिगारे पर कपड़े रह उन बिधाके किये एक

जलाशयमें घुमो'। इमो बीच इन्होंने वायुका रूप धारण कर दोनोंके वस्त्र एक साथ कर दिये। शर्मिष्ठा ने जवदो-में देखा नहीं और जलसे निकल कर देवयानीके कपड़े पहन लिये। इस पर दोनोंमें झगडा हुआ और शर्मिष्ठा ने देवयानीको कूएँमें ढकेल दिया। शर्मिष्ठा यह समझ कर कि देवयानी मर गई, अपने घर चली आई। इसी बीच नहुष राजाके पुत्र ययाति गिकार खेचने आये थे। उन्होंने देवयानीको कूएँमें निजाला और उससे दो चार बातें करके वह अपने नगरजी और चले गये। इधर देवयानीने घृणि का नामक एक दासोसे अपना सब वृत्तान्त शक्राचार्यके पास कहला भेजा। घृणिकाने दैत्य-मर्भमें पहुँच कर शक्राचार्यसे सारो बातें कह सुनाईं। शक्राचार्य यह खबर पा कर देवयानीके पास आये और घर चलनेके लिये बहुत कहा, पर उसने एक भी न सुनी और साथ साथ यह भी कहा, 'चाहे मेरी निष्कृति हो चाहे न हो, इसमें कोई क्षति नहीं', मैं अब दैत्योको राजधानीमें कटापि न जाऊँगी, क्योंकि शर्मिष्ठाने बहुत जल्दी कटो बातोंमें आपका तिरस्कार किया है और कहा है, कि तुम्हारा पिता दैत्योका स्तुतिपाठक और गायक है।'।

यह सुन कर शक्राचार्य भी दैत्योकी राजधानी छोड़ अन्वद जानेको तैयार हुए। यह खबर जब हृष-पर्वाको लगे, तब वे शक्राचार्यसे बड़ो विनति करने लगे। शक्राचार्यने कहा, देवयानीको प्रसन्न करो। तब हृषपर्वा देवयानीके पास जाकर उसे प्रसन्न करनेको चेष्टा करने लगे। देवयानीने कहा, 'मेरी इच्छा है, कि शर्मिष्ठा महस्र और कन्याओंके साथ मेरी दासो हो। जहाँ मेरे पिता सुफे दान करे वहाँ वह मेरो दासो हो कर जाय।' हृषपर्वा इस पर सन्मत हुए और उन्होंने महस्र कन्याओंके साथ शर्मिष्ठाको देवयानीकी दासो बनाकर शक्राचार्यके घर भेज दिया। एक दिन देवयानी अपने नई दासियोंके साथ उषी वनमें झोड़ा कर रही थी, इसी बीच राजा ययाति वहाँ आ पहुँचे। उन्हें देख कर देवयानीने कहा, 'मेरा बड़ा भाग्य है, कि दो हजार कन्याओं और शर्मिष्ठाके साथ आज मैं आपकी प्रधोना होती हूँ, आप मेरा सखा और भर्ता होना

स्वीकार करें।' राजा ययातिने इसे स्वीकार कर लिया और यह खबर शक्राचार्यको कहला भेजा। शक्राचार्यने आ कर ययातिके साथ देवयानीका विवाह कर दिया। पीछे असुरोंमें नाना प्रकारके उपचार पा कर ययाति देवयानी आदिके साथ अपने राजधानीको चले गये। कुछ दिन पीछे ययातिसे शर्मिष्ठाको एक पुत्र हुआ। देव-यानीने शर्मिष्ठाका पुत्र देख कर उससे पूछा, कि तुमने कामलुख हो कर अन्याय आचरण किया है। इस पर शर्मिष्ठा बोली, कि यह लड़का मुझे एक तेजस्वी ब्राह्मण-से हुआ है। देवयानी इस पर विश्वास करके चुप रह गई। इसके उपरान्त देवयानीके गर्भसे यदु और तुर्वसु नामके दो पुत्र और शर्मिष्ठाके गर्भसे दृष्ट्यु, अणु और पुरु ये तीन पुत्र हुए। ययातिसे शर्मिष्ठाके तीन पुत्र हुए हैं, यह जान कर देवयानी अत्यन्त क्रुपित हुई और उसने अपने पिताके पास इसका समाचार भेजा। शक्रा-चार्यने भी क्रीधमें आ कर ययातिको शाप दिया कि, 'तुमने धर्म छोड़ कर अधम किया है, इसलिये तुम्हें बहुत शीघ्र बुढ़ापा घेरगा।' ययातिने शक्राचार्यसे विनयपूर्वक कहा, 'भगवन्! मैंने कामवग हो कर ऐसा नहीं किया, दानव दुष्टिता शर्मिष्ठाने ऋतुमती होने पर ऋतु रक्षाके लिये प्रार्थना की। उसको प्रार्थनाको अस्वीकार करना मैंने पाप समझा। इसमें मेरा कुछ भी दोष नहीं है। यदि कोई स्त्री ऋतुरक्षाके लिये प्रार्थना करे और उसकी पूरो न की जाय, तो वह भ्रूणहा कइलाता है। इस प्रकार जातर हो कर ययाति शक्रा-चार्यसे अनुनय विनय करने लगे। इस पर शक्राचार्यने कहा, 'तुम्हें इस विषयमें अनुमति लेना उचित था। अब तो मेरा कहा हुआ निष्फल हो नहीं सकता, किन्तु यदि कोई तुम्हारा बुढ़ापा ले लेगा और अपना योवन दे देगा, तो तुम फिर ज्योंके त्यों जवान हो जाओगी।'।

ययाति और शर्मिष्ठा देखो।

देवयावन् (सं० त्रि०) देव याति या-वपिन्। देवता प्रो-के प्रतिगन्ता, जो देवताके सहेशसे यात्रा करे।

देवयिह (सं० त्रि०) दिव-पिच्-परिदेवने लृच्। परि-देवक।

देवयु (सं० त्रि०) देव याति उपास्त्वैन प्राप्नोति या-

हु (यन्मारयम् । ऋ. १.३८) १ धार्मिक । २ लोक
 नायिक । (पु०) १ देवता । २ यौति कुञ्जिय । ३
 कथादि द्वारा देवतापीथा मिथीकारक ।

देवयुग (ध० पु०) देवयुग युग । अन्वयुग ।

देवयोनि (स० पु०) देवानामिभ योनिः यन्त्र । १ विद्या-
 बरादि । विद्यावर, यन्त्ररा, यन्त्र, राघव, गन्धर्व, विन्धर,
 विद्याव, शुक्राक्ष यौर निव ये देवयोनिके यन्त्रमत है ।
 २ देवजाति ।

देवयोवा (स० स्त्री०) देवानां योवा इ-तत् । देवतापीथी
 थी ।

देवर (स० पु०) दैवज्ञानेन दिव-पर (वापि) क्ति प्रयोधि ।
 ऋ. १.११२) । १ पतिव्या छोटा भार्ग । पर्याय—देवा,
 देव, देवाट, देवान, सुरागाव, यौर देवतो । २ पतिव्या
 आश्रमात्र, पतिव्या भार्ग, छोटा या बड़ा ।

मनुस्मृतिते विद्या है कि यदि विधवाको अपने पति-
 के कोई सम्मान न हो, तो वह अपने देवर वा पतिके
 किसी एक परिच्छेदे एक सम्मान उत्पन्न करा सकती है
 एवमे पतिव्य नहीं । फिर किसीका बहना है, कि वह
 दो सम्मान तक पैदा करा सकती है । किन्तु सामान्य
 यदि ऐसा पाचारण करे, तो उसे दीव्य कथना है । पर
 "इमान् धर्मान् पत्नीणां कसौ कुते" परापरके इय
 बचनासुसार बहिष्कारसे इसका निषेध है । देवरके सिधे
 बड़े माईकी थी माताके समान गौर हाटेकी थी बड़े
 समान है ।

देवर—राजपूतानिके उदयपुर राज्यके पत्तनमें एक उद ।
 वह पचा० २३ १८' स० और दिया० ७३ ३ पु०में
 उदयपुर महारथे १३ कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है ।
 बहलिके शोध रथे 'अयवामन्द' का उदयपुर कहते हैं ।
 १६८१ ई०में राजा जयचंद्र इने अपने नाम पर यह बड़ा
 बसाय बनावया । यह पूर-पश्चिममें प्रायः ८ मा १०
 मील विरहल है और इसकी परिधि प्रायः १० मील है ।
 यह चारों ओर बड़े बड़े पत्तनके ब वा हुआ है । इतने
 उत्तरी बिनाई बीबरीको एक सुन्दर कृष्णवाटिका है ।
 पत्तना बड़ा कृष्ण बसायव ल सारमें बहुत कम देवनि-
 में जाता है ।

देवरक (ध० पु०) देवर काव-कम् । देवर, पतिव्या
 छोटा भार्ग ।

देवरचित (स० स्त्री०) देवै रचिताः । १ जो देवताओं
 द्वारा रचित हो । (पु०) २ देवक राजाके एक पुत्रका
 नाम । देवक राजाके चार पुत्र और मात कथा हैं । ३
 एक राजा जो ताम्रसिधमें राज्य करते थे ।

देवरचिता (स० स्त्री०) देवकको एक कथा, देवकीकी
 कहान ।

देवरव (स० स्त्री०) देवव्य पादित्वाय रवः । १ सूर्यका
 रथ । २ मकरात्ममें स्थापित । देवानां रवः । ३ देव
 तापीका रव, विमान ।

देवरहस्य (स० स्त्री०) देवानां रहस्य । देवतापीका
 रहस्य ।

देवराज (स० पु०) देवेषु राजते राज क्रिय । इन्द्र ।

देवराज (स० पु०) देवानां राजा इ-तत् 'राजाइसकि-
 म्यठक्' इति ठक् धमादात् । सुरराज इन्द्र । इसका
 नामान्तर—इन्द्र, सुरपति, यम दितित्र, पवनायत्र,
 वरुणाय, भयाइ, अश्वपामत्र, विष्णोत्रा, सुनाधोर,
 महत्त्व, पाक्यासन अन्नप्रजनक मधोय, दैत्यसूदन,
 कव्यइष्ट, कामसुधा, गौतमोपेतनागल इन्द्रवा, वाक्व
 पक्षीविदेइमिष्टुड, तिष्ठ, वामनभाना, पुरइन्द्र, सुन्दर,
 दिव्यशक्ति, यतमक, सुवामा, मोक्षजित्, विष्णु, अर्धपंम,
 बभारति, जन्मदी, सुरायय, म लम्बन, दुयारवम, मित
 वाहन, पाक्यउक, इरइर, मनुषि-प्राचन्याम, उदयवा,
 पुत्र और दैत्यदण्डनिस्तदन है । इसका नाम उच्चारण
 करनेसे सब पाप नाश हो जाती है

देवराज (हि० पु०) १ छोटा मोटा देवता २ एक प्रकार
 का पत्तन जो सुतोके वनामिके काममें जाता है ।

देवराज—प्रसिद्ध हिन्दू राज काश्मिरके चाचाका कहना ।
 जोई जोई इनके पिताका नाम चन्द्र बतनाते हैं । ये
 ब्राह्मणवादके ८१ मीस कूर लोकके निकटवर्ती योरो
 नामक काममें राज्य करते थे । महत्त्व-विन काश्मिरके
 समीप जब काश्मिर पराजित और मार गये, तब इनके
 धर्मिक हठजने देवराजके यहां आशय लिया था ।

देवराज—टाचिषायके एक हिन्दू राजा । विषयवारा,
 मईसुर और वारव राजर था देवो ।

देवराज-१ एक म सक्त कवि, पतिव्यवहित, पार्यंमपूरो,
 मानवसन्तोष्य पादि काव्यिके रचयिता । २ विन्व

तत्त्व-प्रकाशिका नामक वैदान्तिक ग्रन्थकार। ३ वरद-
राजके पुत्र, मूहूँतपरोक्षाके रचयिता और मुक्तायली
नामक एक जीतिषके टीकाकार।

देवराज—दाक्षिणात्यमें मन्द्राजके अन्तर्गत विजयनगरके
प्राचीन चन्द्रवंशीय राजाओंमेंसे एक राजा। आज तक
इस वंशके जितने ताम्रशासन वा शिलालिपि पाई गई
हैं उनमेंसे "राजा देवराज" नामक कोई राजप्रदत्त-
लिपि नहीं मिली है। किन्तु डा० वुनेलने इस वंशकी
जो नाममाला और राजत्वकाल स्थिर किया है, उनके
पढ़नेसे मालूम होता है, कि राजा द्वितीय बुक्के वड़े
लड़केका नाम देवराज वीरदेव वा वीर भूपति था और
उन्होंने १४१८ ई०से ले कर १४३८ ई० तक राज्य किया
था। मि० सोवेलने मन्द्राजका प्राचीनतत्त्व-संग्रह करनेके
लिये जो सब शिलालिपि और ताम्रशासन पाये थे, उन्हें
देख कर उन्होंने स्थिर किया है, कि राजा बुक्के वड़े
लड़केका नाम हरिहर (२य) और राजा द्वितीय हरि-
हरके वड़े लड़केका नाम देवराय (१म) था। देव-
राय १४३६ ई०में राज्य करते थे। इनके लड़केका नाम
विजयभूपति था। यहाँ १४१८ शकाब्दमें राजा थे। मि०
सोवेलने राजा विजयभूपतिप्रदत्त १४१८ शकाब्दका
(१४८६ ई०का) एक ताम्रशासन पाया है। अतः विजय-
भूपतिका ही दूमरा नाम देवराज था, ऐसा मान सकते
हैं या नहीं तो इस वंशकी नाममाला और काल-
तालिकाकी पालीचना अच्छो तरहसे नहीं की गई है,
यह भी कह सकते हैं। विजयनगर देखो।

देवरात (सं पु०) रैःक देवेन श्रीकृष्णेन रातः रक्षितः ।
१ देवता काल क रक्षित परीक्षित रूप । २ विश्वामित्र-
के एक पुत्रका नाम । ३ हापरयुगके एक प्रसिद्ध राजा ।
४ एक स्मृतिकार । ५ एक प्रकारका सारस ।

देवरानी (हिं० स्त्री०) १ देवरकी स्त्री, स्वामीके छोटे
भाईकी औरत । २ देवराल इन्द्रकी रानी, शची ।

देवराय—१ अधिकारणमाला और आक्रिकचन्द्रिका नामक
संस्कृत ग्रन्थके रचयिता । २ एक सुप्रसिद्ध हिन्दी कवि ।
इन्होंने बहुतसी सुरस और मनोहर कविताओंकी रचना
की। इनकी कविता सराहनीय होती थी।

देवराय—विजयनगरके प्राचीन चन्द्रवंशीय राजाओंमें

'देवराय' नामक दो राजाओंके नाम पाये जाते हैं।
प्रथम देवराय राजा द्वितीय हरिहरके पुत्र थे। इन्होंने
१४०६ ई०से ले कर १४१७ ई० तक राज्य किया। द्वितीय
देवराय विजयभूपतिके पुत्र थे जिन्होंने १४२२से लगा-
यत १४४७ ई० तक राज्य किया। विजयनगर देखो।

देवराय दुर्ग—महिसुर राज्यके तुमकुड़ जिलेके अन्त-
र्गत एक सुरक्षित गिरिदुर्ग। यह अक्षा० १३° २२' ३०"
उ० और देशा० ७७° १४' ५०" पू० तुमकुड़ गहरसे ८
मोल पूर्वमें अवस्थित है।

१६०८ ई०में देवराजने यह स्थान जीत कर यहाँ
सत्ता गढ़ निर्माण किया। महिसुरके किछी राजप्रति-
ष्ठित गिरिस्थल पर दुर्गनरसिंहका एक मन्दिर है।
देवके वापिक सख्तवके समय यहाँ बहुत लोग समा-
गम होते हैं।

श्रीभकालमें जिलेका अंगरेज राजपुरवण यह
आ कर रहते हैं। यहाँ जल का अभाव नहीं है।

देवरायपत्तो—नेलूर जिलेके आळकूर तालुकका एक ग्राम।
लाकसंख्या प्रायः ३००० है।

देवराय—हिन्दीके एक कवि। इन्होंने अनेक कविता
रचां। इनको कविता सराहनीय होती थी, उदाहरणार्थ
एक नोचे देते हैं—

"विषय लज्जा भ्रम श्रीरामया ।

विष मत्तुगोया एकबार मरे कोटि कोटि जन्मवा उषा लया उषा ;
कामनी ऊपर धरिल ताहे मती मायुष्य नाह उषा लया उषा ।
देवराय भये श्रीपुत्र लापुषा संसारीन फला फला फलाया ॥"

देवरो (हिं० स्त्री०) छोटी मोटी देवी ।

देवरूखे—महाराष्ट्र ब्राह्मणोंका एक भेद। शब्दार्थ तो
इसका ऐसा है, कि जो देवताओंसे उदासीन है वे देवरूखे
कहाते हैं। परन्तु वहाँ इनको प्रति इस भावका ग्रहण
नहीं है, मगर ये यथार्थमें देवरूखे हैं। देवका अर्थ
देवता और रूखका अर्थ क्षपा है; अतः जिन ब्राह्मणों
पर उनकी गुण-विरिष्ठताके कारण देवतागण प्रसन्नता
दिखाया करते थे, वे देवरूखे कहाते कहाते देवरूखे कह
जाने लगे। आजकल इनकी स्थिति सामान्य है। ये कवी
भी करते हैं। इनको दक्षिणमें मध्य योषो-ब्राह्मण भी
कहते हैं। विशेषरूपसे देशस्थ और सामान्य रूपसे कौड-

मन्त्र ब्राह्मणोंके साथ इनका भोजन व्यवहार एक है।
 देवर्षि (स० पु०) जे मोके एक प्रसिद्ध स्वर्धिका नाम।
 एकोने जैनसिद्धान्त लिपिबद्ध किया या।
 देवर्षि (स० पु०) देवर्षि श्रुति देवार्थं श्रुतिर्षा। १
 नारदादि श्रुति। नारद, पति मतेचि, भरवात्र, सुलसत्र,
 पुत्र, अष्ट, अष्टु इत्यादि श्रुति देवर्षि नामे जाते है।
 २ व्यावादि कर्त्ता कथादादि।

देवण (स० पु०) देव जाति गृह्णाति निम्न श्रीविद्याय देव
 ना क। १ देवाजात्र, यह जो देवताओंको पूजा करके
 श्रीविद्या निवाह करता है पुत्रारो, पंडा।

मनुषि सिद्धा है, जि बिबिअल, देवल, मातविअयो,
 व्यवसायीवि ये अत्यन्तधर्म वर्त्त मोय है। देवल ब्राह्मण
 द्वारा आवादि करानेके यह विद नहीं होता है। टोष्यति
 पानन्देनाति टिच-अलक्ष् (दृष्यतिप्यतिच। वन ११०८)।
 २ धार्मिक प्रथम। १ नारद सुनि। ४ देवर, पतिना
 छोटा मारि। ३ धर्मशास्त्रज्ञा सुनिविद्येय, धर्मशास्त्रके
 ब्रह्मा एक सुनि। ये अतिमत्र पुत्र पौर वेदव्यासके विद्य
 माने जाते है। जे अथाके शापके पचमत्र रूप है। ४
 मन्त्रके श्रुतिके एक पुत्र। ७ एक कृतिकार।

देवण (वि० पु०) देवमन्दिर, देवालय।

देवल—मिथुनरौने मुहूर्तमें पर अवकित एक बहुत प्राचीन
 मन्दर। एको लकका विडमात्र मो नहीं है। यह
 समुद्रके तोम कोम दूर पड़ता या। पड़से यहाँ बहुतके
 मनुष्य रहते है। मित्र मित्र देगके अविश्वयच साविश्व
 करमेच बिसे यहाँ जाते है।

७१२ ई०में मङ्गलद बिम्बु कासिम् लसैय इन मन्वमें
 बाडे है। कुलकमान वैतिहासिक बलाबरोने निष्ठा है
 बि मङ्गलद परमारण होने हुए बिम्बुके मन्दर देवलको
 बाडे है। यहाँ परवाने एक बौद्धमन्दिरको खोली
 प्लगका देयो हो बिसे एकोने तोड़ पाड़ कर मन्दर
 पचिकार कर निष्ठा। जयनामाके मत्तानुसार ८१ दिअरी
 राजव मान पर्यात् ८१२ ई०के मई मासमें देवल मन्दर
 काबिसर्के पुत्र मङ्गलदके पचिकृत हुआ।

देवल—मन्त्रात्रके लोकाधिकरि जिनेसे अलगल मृगुनूर तादुअ
 का एक नाम। यह अन्ना ११ २८ ए० पौर देया०
 ७१ २१ पू० बरदूर काटके उमोलको हूरो पर पच

जित है। पूर्व अमयमें एक एक सचदियाओ ध्यान या।
 प्रथमे सोनेका आरवार पडति उठ गया है, तन्मे उठको
 दगा बहुत मोचनोय हो गई है। एको यहाँको लोच
 च गया प्राय पंच सो है।

देवलक (स० पु०) देवल एक कायें अन्। देवल, पुत्रारो,
 पञा।

देवलगाव—मध्यदेशके अन्। जिसेके अन्तर्गत एक छोटा
 पाम। एको लमोच एक सुन्दर पहाड़ है। यह अन्ना०
 २० २१ ए० पौर देया० ८० २ पू० रीवासके १ कोम
 दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। पहाड़ पर बहुत लमकर
 लोहा पाया जाता है।

देवलगावा—१ मध्यदेशके यहाँ जिलेका एक छोटा पाम।
 यह यहाँकीके जिनारे अवस्थित है। यहाँको एकिकी
 देवोका मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है। प्रति वर्ष कार्तिकमास
 में यहाँ एक बड़ा मेला लगता है जिसेमें नाचपुर, पुना,
 नाचिक, अलखपुर आदि स्थानोंसे अनेक तोयें याता पौर
 बचिक समाजमें होते हैं। मेला प्राय २२ दिन तक
 रहता है। एक मिलेले देवालयका बहुत धामदमो होती
 है। इसी धामके पास मातगतोत्र प्राचीन कुचिणपुर
 अवस्थित था। यहाँ बिदम राज भोषक राज्य करते है।

२ बरारके दक्षिणपुर जिलेका एक पाम। यह अन्ना०
 २१ ३८ ए० पौर देया० ०० ३२ पू० इलियपुरके प्रायः
 मात कोम दूर पूर्वा नदीके जिनारे अवस्थित है। पड़से
 यहाँ बहुतके कोम रहते है एको बहुत मोर्क है। दो
 एक प्राचीन मन्दिर पौर तान दो वर्ष पड़सेका एक
 मरिअदके सिका पौर लूसरा काई बिड नहीं है जिसेके
 प्राचीन अथथिका परिचय प्राप्त हो। इन्दूके मन्दिरमें
 सुनि व मन्दिर उके लपोय है। इस मन्दिरके पास जो
 'बरदुधितोब' है। ब्रवादे है बि नरसिंह विरप्याकविपुको
 मार कर अपने हाकके निड लकी मो को न लके। अन्तमें
 यहाँमें देवलगावामें या कर अपना हाव थोया। त्रिभ
 ल्कान पर एकोने डाव कोण का अको अतोच एको
 'बरदुधितोब' नामके जिनव है।

देवलता (स० एको) देवप्रिया अन्ना। १ मध्यमजिवा,
 मेवारो। देवलक मानः तक टाप। २ देवलक, अन्
 लोविवाके जिसे देवपुत्रन।

देवलाङ्गुलिका (म० स्त्री०) देवयति परि देवयत्वेन देव णिच् घञ् । देवः लाङ्गुलिकः शूको यस्यः । वसिष् कालि ।

देवलाति (स० पु०) देवानां तत्प्रतिमानां लातिः ग्रहणं इ-तत् । देवप्रतिमा ग्रहण ।

देवलीक (म० पु०) देवानां लोकः इ-तत् । स्वर्ग । मत्स्य-पुराणमं भूः भुव, स्व, मरु, जन, तपः और सत्य ये साती लोक देवलीक कहें गये हैं ।

देवली (हि० स्त्री०) दिवली देखो ।

देवली—मध्यप्रदेशके बरोदा तहसिल और जिल्लाका एक शहर । यह अक्षा० २० ३८ उ० और देशा० ७८ २८ पू० बरोदा शहरसे ११ मील तथा देवगांव स्टेशनसे ५ मीलको दूरी पर अवस्थित है । लोकसेख्या लगभग ५००० है । यहाँ चिकित्सालय, विद्यालय और पान्यनिवास है ।

देवली—राजपूतानेके अन्तर्गत अजमेर, जयपुर और मारवाड़के मध्यवर्ती स्थानमें अवस्थित एक सैन्य-निवास । यह अक्षा० २५ ४५ उ० और देशा० ७५ २२ पू० समुद्रपृष्ठसे १२२२ फुट ऊँचे पर अवस्थित है । यह स्थान मेजरटमसे प्रतिष्ठित हुआ है । यहाँ पदातिक और अग्ना रोही सेनाओंके रहनेका बन्दोबस्त है । हरवलीके पोलि टिकल एजेंट यहां रहते हैं ।

देववह्न (स० स्त्री०) देवानां वह्नं मुखमिव । देवताओंका अग्नि मुखस्वरूप है क्योंकि वे अग्निरूपो मुखसे ही भोजन करते हैं । देवताओंके निमित्त अश्वकव्य आदिका अग्निमें डबन होता है, इस कारण यह नाम पड़ा ।

देववतो (म० स्त्री०) ग्रामणी नामक गन्धर्वकी कन्या । यह सुवैश्व राक्षसी पत्नी और माल्यवान्, सुमाली और मालीकी माता थी ।

देववधू (न० स्त्री०) १ देवताकी स्त्री । २ देवी । ३ अम्बरा ।

देववर्णिनी (स० स्त्री०) भरहाजमुनिकी कन्या । यह विद्यवासुनिकी पत्नी और कुवेरकी माता थी । इसके गर्भसे वैश्वण नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ था । वैश्वणना दूमरा नाम कुवेर है । ये देवताओंके घनाध्यक्ष हैं । पहले लहापुरी इनको राजधानी थी, परन्तु सोतेले भाई रावणके अनेक अत्याचारोंके कारण इन्होंने

हिमालयके उत्तरस्थित अलकापुरीकी अपनी राजधानी बनाई ।

देववर्त्मन् (स० स्त्री०) देवानां वक्त्र इ-तत् । आकाश ।

देववर्धकि (स० पु०) देवानां वर्धकिः । विश्वकर्मा ।

देववर्धन (स० पु०) देवके राजाके एक पुत्रका नाम ।

देववर्ष (स० स्त्री०) देवानां वर्ष इ-तत् । हीमभेद, एक होपका नाम । किसी किसी पुस्तकमें वैदवर्ष ऐसा लिखा है ।

देववला (स० स्त्री०) सहदेवी, सहदेई नामकी बूटी ।

देववक्षभ (स० त्रि०) देवानां वक्षभः इ-तत् । १ देवताओंके प्रिय । (पु०) २ सुरपुत्राग वृक्षः ३ केसर ।

देववक्षो (स० स्त्री०) १ संस्कृत भाषा । २ आकाश-वाणी ।

देववात (स० पु०) देवैर्वातः कर्मणि क्त । अविभेद, एक वैदिक ऋषिका नाम ।

देववायु (स० पु०) द्वादश मनुका पुत्रभेद, बारहवें मनुके एक पुत्रका नाम ।

देववाहन (स० पु०) देवान् हवींषि वाहयति प्रापयति वह-णिच् ल्यु । १ अग्नि । ये देवताओंका हव्य ले जाकर पहुँचाते हैं, इसीसे इनका नाम देववाहन पड़ा । (स्त्री०) देवानां वाहन । २ देवताओंका वाहन ।

देवविद्या (स० स्त्री०) देवघ्नानार्थो विद्या । निरुक्तविद्या । देवविष् (स० स्त्री०) देवानां विषः । देवताविशेष ।

देवविहाग (हि० पु०) एक प्रकारका राग । यह कल्याण और विहाग अथवा सारंग और पुरभीके योगसे बना है ।

यह सम्पूर्ण जातिका है ।

देववी (स० त्रि०) देवै वेति कामयते वी-क्तिप् । देव-काम ।

देववीति (स० स्त्री०) वी-खादने क्तिन्, देवानां वोतिः इ-तत् । देवताओंका भक्षण ।

देववृक्ष (स० पु०) देवप्रियो वृक्षः । १ मन्दारवृक्ष । २ गुग्गुलु । ३ सप्तपर्णवृक्ष, सतिवन ।

देववृत्ति (स० स्त्री०) देवकृता उणादिसूत्रक वृत्तिः । उणादिसूत्रका वृत्तिभेद ।

देववृद्ध (स० पु०) सात्वतका एक पुत्र ।

देवव्यसम्. (स० त्रि०) वि-व्यसं मतो बसुन् देवीकं च
 ३ तत् । देवता कर्त्तृक व्याज ।
 देवव्रत (स० पु०) १ मीप्यदेव । २ नीय धाममेद एक
 प्रकारका सामयान । (श्लो०) १ देवत्व प्राप्तव्रत ।
 देवव्रतम् (स० त्रि०) देवतायै व्रत परम्परा इति ।
 देवार्थव्रतयुक्तो देवताके निमित्त व्रत चारण करता
 हो ।
 देवव्यस, (स० पु०) देवार्ता व्यसः १-तत् । १ देवार्ति,
 पद्यर । २ सुदूतोक्त देवमन्त्रप्रवर्तित् । देवत्व देवो ।
 देवव्यसम् (स० पु०) देव इव यस्मात् परमनामाय ।
 १ ब्राह्मणका उपनाम, ब्राह्मण जातिवो एक व्यासि ।
 ब्राह्मणके नामकरणके समस्त नामके धर्ममे देवव्यसम्
 दिया रखा जाता है । २ अविभेद, एक अविद्या नाम ।
 ३ एक विद्वद्ब्राह्मण । इनके कोई यन्त्रान न रहनेके
 कारण इनकी स्त्री पदा चिन्तित रहतो हो । इतसिप
 रकोनि मन्त्रके बसने देवताको बन्दुट कर एक पुत्र
 प्राप्त किया, इस पुत्रका धाकार साय-सा या चिन्तु
 ब्राह्मणो कथि हो यज्ञके पाठतो हो । उसके साथ एक
 ब्राह्मण-बन्धाका विवाह हुआ था । इस समय कथ
 सर्वकर्मो ब्राह्मण तन्त्रमे सुव्यवस्थित चारण को धोर सर्व
 देव मत्स हो गई । ४ पाठकोपुत्रनगरवासो एक
 विद्वद्ब्राह्मण । इनके आसनेमे धोर विमत्सय नामके
 दो मिथ्य सि जिनके साथ रक्षने अपने दो बन्धापो
 का विवाह कर दिया ।
 देवव्यस (स० पु०) देव वाङ्मय यत् । देवता ।
 देवव्यस (स० पु०) एक सहर नाम । यह महारा
 मरु, बाङ्गाली धोर महारके मिस कर बना है । इसमें
 गांवार कोमक समता है । इतके गानिका समय १०
 बन्धके २० दण्ड तक है ।
 देवमित्रम् (स० पु०) देवार्ता मित्रो । विनम्रता ।
 देवव्यो (स० जो०) देव इव प्रभावान्विता इति ।
 देवव्यस्य प्रभावबुद्धा इति, देवकोकको कृतिपा, परमा ।
 एक देवव्योकी कथा अष्टाभारतमें इस प्रकार लिखी
 है—परीक्षितके पुत्र रामा जनसिञ्जने छत्रकेत्रमे एक
 वज्रका अनुष्ठान किया । यह करते समय एक कृत्ता
 वहाँ का पक्ष था । जनमे व्यपके मारयोने कथि मार कर

मया दिवा । उस कुर्तेमे अपने माता सरमाके आकर
 कडा, मीने न ता कोई परराज किया का धोर न
 व्यपको कोई नामयो हो हुई थी इस पर मो बिना
 परराजके मुक्ति कोमीने मारा है । देवव्यो करमा यह
 पुत्र कर जनमे व्यपके पास आ कर बोली 'मेरे इस पुत्रने
 कोई परराज नहीं किया था, तुम्हारा चो पादि कुछ
 मो नहीं बाटा था, तिस पर मो बिना परराजके तुम
 कोमो मे हने मारा, इसने तुम्हारे ऊपर पक्षक्यात् कोई
 दुःख पड़ना ।' यह श्राप दे कर देवव्योमो चली गई ।
 (मारत नादि० ३ म०)
 देवव्यस (स० पु०) देव की इमाम् विद्यतो यस्य । १
 इमनक, दोनेका पोवा । (श्लो०) देवार्ता मित्र ।
 २ देवताका मन्त्रक ।
 देवमिय (स० श्लो०) धमन्त ।
 देवव्यस (स० पु०) १ विद्यामित्रके एक पुत्रका नाम ।
 २ बसुदेवके भाई ।
 देववा (स० पु०) देवान् व्यसति हविर्दानिन सेवते सो
 क्षिय । १ यत्स । (श्लो०) देवार्ता यो । २ देवताको को
 कथ्यो ।
 देवव्यस (स० त्रि०) देवेभु न्ययति नृ-क्षिय तुङ् । देव
 ताकोमें प्रसिद्ध ।
 देवव्यस (स० पु०) देवेभु न्युतः विख्यात । १ ईश्वर ।
 ५ नारद । १ श्राप । ४ पञ्चसिंघोके एक जिनका
 नाम । ५ दक्षाचार्यके एक पुत्रका नाम ।
 देवव्यो (स० जो०) देवार्ता यो सो स । १ मूर्खता,
 मरोकनो, सुर्ता । २ देवताका को पक्षि ।
 देवव्यो (स० पु०) १ दक्षय मनुका पुत्रमेद, बारहवें
 मनुके एक पुत्रका नाम । देवेभु व्यसः । २ देवताकोमें
 यत् ।
 देवव्यस (स० पु०) देवार्ता यथा "राजाय" यक्षिष्यत्येव ।"
 इति इव यमासन्त । देवतायो वा यथा या मित्र ।
 देवव्यस (स० पु०) उत्तर दियाका एक पर्वत ।
 देवव्योतपोनिम् (स० त्रि०) नारद ।
 देवव्यस (स० जो०) यज्ञमेद, एक यज्ञका नाम ।
 देवव्यस (स० त्रि०) देव इव सत्य बज्ज । देवताके कोका
 अभावकाथा ।

देवसद (सं० त्रि०) सोदत्यत्र सदृ क्रिय, देवानां सदः ।
देवस्थान ।

देवसदन (सं० त्रि०) सोदत्यत्र सदृ आधारे ल्युट् । १
देवताश्रीका आधार । २ स्तम्भे । ३ देवालय ।

देवसद्यन् (सं० स्त्री०) देवानां सद्यः । देवतागृह, देवा-
लय ।

देवसभा (सं० स्त्री०) देवानां सभा । १ देवताश्रीका
सभा । इसका पर्याय—सुधर्मा और सुधर्मी है । २ राज-
सभा । ३ सुधर्मा नामक सभा जिसे मयने भर्जुन या
युधिष्ठिरके लिए बनाया था ।

देवसभ्य (सं० त्रि०) देवस्य क्रीडायाः सभा तस्यां
सौदति इति यत् । क्रीडासभास्य, जुएमें उपस्थित ।
इसका पर्याय—सभिक और देवसामाजिक है ।

देवसमाज (सं० पु०) सुधर्मा नामकी सभा ।

देवसरि (सं० स्त्री०) गङ्गा नदी ।

देवसपप (सं० पु०) देवप्रियः सर्षपः । वृषभेद, एक
प्रकारकी सरसों । इसका पर्याय—अखाज, वदर, रक्त
मूलक, सुरसर्षपक, सूक्ष्मदल, निजरसर्षप और
जुरवाह्नि है । इसका गुण—कटु, उष्ण, कफदीय और
रक्षाप्रशयनाशक है ।

देवसह (सं० स्त्री०) देव सहति सह-अच् । १ मिचा-
सूत्रभेद । (स्त्री०) २ दन्तात्पलोपधि, सफेद फूलका
दण्डोत्पल । (पु०) ३ सोमाकर पर्वतभेद । ये सब
पर्वत उत्तरकी और विस्तृत हैं और उन पर प्रसुर सोम
उत्पन्न होता है ।

देवसाक (हिं० पु०) देवसाक देवे ।

देवसागरगाणि—एक जैन परिष्ठित । इन्होंने १६३० ई०में
अभिधानचिन्तामणिकी 'व्युत्पत्तिरत्नाकर' नामक एक
टीका बनाई है ।

देवसात् (सं० प्रथ०) देवाधीनं करोति देव साति ।

देवताके निमित्त देय, जो देवताको उन्नत किया जाय ।
देवसायुज्य (सं० स्त्री०) देवेन सायुज्यं संमिलनं ।
देवत्व ।

देवसार (सं० पु०) इन्द्रतालके ऋः भे दोमिसे एक ।

देवसावर्षि (सं० पु०) मनुभेद, तेरहवें मनुका नाम ।

देवसिंह—मध्यभारतके अन्तग स राधपुर जिलेके राजिम

नामक स्थानसे ८८६ कलसुरि संवत्की (११४५ ई०का)
माघो शुक्लपक्षमें (३री जनवरीमें) खोदित एक शिलालिपि
आविष्कृत हुई है । यह लिपि वहाँके रामचन्द्रके मन्दिरमें
रक्तोष्ण है । उससे जाना जाता है, कि राजमासवशको
पञ्चहंस शास्त्रमें ठाकुर साहिब नामक एक विख्यात
वीरने जन्म लिया था । वे जयलक्ष्म भूभागके राजा हुए ।
उनके वासुदेव नामके एक छोटे भाई और सायिल,
देगन तथा स्वामिन् नामके तीन पुत्र थे । इनमेंसे छोटे
लड़के स्वामिन्ने भटाविल और विहरा प्रदेश जोता था ।
देवसिंह उन्हींके छोटे लड़के थे । इनके बड़े भाई
जयदेवने टाण्डोर प्रदेश पर और इन्हींके कोमो
नामक मण्डल पर अधिकार किया था । देवसिंहके पुत्र
सुविख्यात वीर जगपाल वा जगत्पाल उदया ठाकुराना-
के गर्भसे उत्पन्न हुए थे । जगत्पाल देखो ।

देवसिंहके और भी दो पुत्र थे जिनका नाम राजल
और जयसिंह था । इनके देवराज नामक मन्त्री बड़े
हैं चतुर थे । उन्हींके मन्त्रणा-बलसे जगत्पालादि तीनों
भाग बहुत प्रतापशाली हो गये थे और कई एक राज्य
जोते थे ।

देवसुन्द (सं० पु०) सोमाकार इन्द्रभेद ।

देवसुन्दर—१ तपागच्छके एक विख्यात जैनाचार्य ।
इन्होंने १२८६ संवत्में जन्म, १४०४ संवत्की महेश्वर
ग्राममें व्रत और १४२० संवत्की अण्डोलपत्तनमें स्मृति-
पद प्राप्त किया था । इनके पांच शिष्य प्रधान थे—कुल-
मण्डन, गुणरत्न, सोमसुन्दर, ज्ञानसागर और साधुरत्न ।
इन पांचोंने अनेक जैन शास्त्रीय ग्रन्थोंको हस्त रचा है ।

२ भक्तामरस्त्रोत्रके टीकाकार एक जैन ग्रन्थकर्त्ता ।

देवसुष (सं० पु०) देवैः प्राणादिभिः वक्ष्यमाणः सुषि
हार । प्राणादि द्वारा वक्ष्यमाता हृदयका हारभेद, यह
हार पांच है ।

देवसू (सं० पु०) सुवन्ति अनुजानन्ति सू-क्रिय, देवाश्च-
ते सुवर्षति कर्मधारयः । अनुज्ञाकर्त्ता देवभेद ।

देवसुरि—१ जैन ग्रन्थकार । इन्होंने जइदिनपरिया
(यतिदिनचर्या) की रचना की है ।

२ एक विख्यात जैनाचार्य । मुनिचन्द्रसुरिके शिष्य ।
११४६ संवत्में इनका जन्म, ११५२ संवत्में

होया पौर ११०४ संवत्में पशुपुं हुई थी। पञ्च-
 विहंगपत्तनमें अथर्विह लिखराजकी तमामिं श्रियो
 की मुक्तिके विषय पर दिग्भराचार्य सुमुद
 चन्द्रके साथ इनका कुछ तर्क विर्तक हुआ था।
 इत तर्कमें अथ काय कर इन्होंने दिग्भरो की नगरसे
 निकाल भंगाबा था। १२०६ सम्बत्में इन्होंने अलकवि
 प्राप्तमें एक सिर्नाबिम्ब, एक चैत्य पौर धाराहन नामक
 स्नानमें निम्नतापको प्रतिष्ठा की।

वे श्वादादरजाकर नामक एक सुन्दर प्रमत्त पत्न्य को
 बना गये हैं। इनको शिवाय १४३प्रभयुक्ति रजाकरावतारिका
 नामक श्वादादरजाकरकी एक डोका शिवाय है। ११२५
 संवत्में इनका दिशान्त हुआ।

देवचन्द्र (स० शि०) देवैत चन्द्र। देवता कल्प चन्द्र,
 जो देवतासे बनाया गया था।

देवचन्द्रा (स० श्री०) देवाय श्लोकार्थ चन्द्रा। मय,
 मदिता।

देवदेव (महारज देवदेव)—एक प्रसिद्ध जंग पत्न्यकार,
 रामदेवनेसे शिवाय। ८३१ संवत्में इनका अन्त हुआ था।
 इनके बनसे हुए ६ मनसार (६३ मनसार), मानस पर्व
 पौर तप्यकार नामक प्राकृत पत्न्य, पापकर्मकार (पारा
 बनकार) प्रादि प्राकृत व स्तुत सिद्धित पत्न्य पौर बन
 व पर्व नामक स स्तुत पत्न्य प्राये जाते हैं।

देवदेवा (न० श्री०) देवानां देवा। १ देवदेव्य देव
 तापोंकी देवा। २ प्रजापतिको कन्या का शान्तिसे
 मर्म व उत्पन्न हुई थी। इनका नूयरा नाम पठो का महा
 ब्रह्मो मी है। वे मायकाश्रीमें लोभ हैं पार शिवायका
 पासन करनेवाली है। इनको बहनका नाम देवदेवा
 है। एक बार शिवी दानव इन्हें हर ले गया, किन्तु
 इन्होंने इनकी रक्षा की। एक दिन इन्होंने कन्दको मुखा
 कर कहा, 'हे सुरोत्तम! पापके अन्ध शक्ति न सेते अहम्भू
 नि इह कन्याकी पापको पदां निदिष्ट कर रक्ता है,
 यतः शाय इनके शाय विवाह कीजिये।' इन्हीं कहनेसे
 कन्दने कयाविधि देवदेवासे विवाह कर लिया। विवाहमें
 प्रकृतिमें होय पौर अय किया था। श्राद्धमें इह
 ब्रह्म, लक्ष्मी, धामा, सुसमदा, शिनीवासी, सुहृ
 लक्ष्मिनी पौर चण्डिका नामीं मुकारा। जिस समय कन्दके

मात्र इनका विवाह होता था, उस समय कन्दोदेवीने
 मुर्तिमतो को कर इन्हें धायव दिया था। जिस
 पक्षमें तिथिको कन्द यीमुक्त हुए थे, वह यीपक्षमें
 कहलाई पौर जिस पक्षको कन्द स्तुत शाय हुए थे वह
 पक्षो वा महापक्षो कहलाई। (मारव ११०-२८८ प०)
 देवैतनापति (स० पु०) देवैतनाया पति। इ तत्। कन्द,
 कार्तिक।

देवस्मृति—धाम्नायतन्य। रचयिता।

देवस्नान (स० पु०) देवानां स्नानमिव स्वान कथ्य।
 १ एक सिद्ध महति। इन्होंने पापकोकी तन जाते समय
 अमुपदेश दिया था। पोखे अब मुक्तिरने राण्य प्राय
 किया तब इन्होंने पनेक प्रकारके उपदेश करके उन्हें
 राण्य छोड़नेसे रोखा था। (मारव प्राण्ड १-२० प०)
 २ देवताओंके रहनेकी जगह। ३ देवालय
 देवमन्दिर।

देवस्मिता—वर्गमुनवर्षिको कन्या। ये पवनी
 इच्छसे गुहसेनसे विवाह करनेके सिद्धे यितामातने
 विना कहे सुने तनके साथ भाग गई। ये पञ्चत
 पतिपरायणा थीं पौर श्वायोका कनो बिदेय जाने न
 देती थीं। एक बार गुहसेन अत्र कटाहहोपमें स्नापार
 करेने गये तब वहाके पनेक बधिक पुवाने पा कर देव
 किताका कतित नष्ट करनेको चेष्टा की। इस कामके
 सिद्धे ठन सुष्टि योगकरिण्यका नामक एक परिव्राजिका
 को मरच की। परिव्राजिकासे शिबिकरो नामको एक
 शिवा था। उसको साथ ही ये देवकितासे भर पड़ थीं।
 वहा का कर परिव्राजिका देवस्मिताको परपुत्रपानका
 करनेके सिद्धे कोशिय करने कने। देवस्मिता इस
 बातको ताड़ गई। उन्हें उपपुत्र दृष्ट्य देनेका इच्छ
 मद्रुय करके उन्हां दासोंके द्वारा धूरा गिरी हुई मयाव
 पौर कुम्भरूपत विच्छुद्रय एक सुहर बनवाई। पोखे इमारा
 करके उन्हां परिव्राजिकासे बधिक पुत्र जानेको कटा।

इकर देवस्मिता परिव्राजिकाने उर्फी ना भिन बना
 तप बधिक पुत्रको मराम पिता कर वैद्योय कर दिया
 पौर उस सुहरको धामने तथा कर उबक कपान पर हाव
 दे दिया पौर मद्रुयके विनासे मद्रुयें कि क दिया।

इस प्रकार एक एक करके वे चारा पपने किए हुए

कर्मों का उचित दण्ड या कर अपने घर लौट आये। यहाँ किमीके सामने उन्हींने यह बात प्रगट न की। पीछे देवस्मिताने उस परिव्राजिका और शिष्याकी इसी प्रकार शराब पिला कर बेहोश कर दिया और उनको नाक, कान काट कर उन्हें उन्ही स्थान पर फेंक दिया। इसके बाद देवस्मिताने सोचा, कि शायद वे वणिकपुत्र उनके स्वामी का कोई अमिष्ट भी न कर डाले, इस स्थानसे वे वणिकपुत्रों के धारण कर कटाहहीपकी गईं। यहाँ जाकर उन्होंने राजासे कहा, 'मेरे चार चिह्नित नौकर आपके राज्यमें भाग आये हैं, उन्हें मुझे तलाश कर दे'। राजाने अब उन्हें तलाश करने कहा, तब वणिकपुत्रों के धारण देवस्मिताने उन चार वणिकपुत्रोंकी दिखला दिया।

इस पर वहाँके सभी लोग, विशेषतः वे चारों वणिकपुत्र बहुत क्रोधित हुए। देवस्मिताने कहा, 'राजन्! मेरे नौकरोंके कपाल पर कुत्तेके पैरका चिह्न है, देखनेकी आशा मिले।' अनन्तर देवस्मिताने आशुपान्त कुलवाते राजाके सामने कह सुनाई। इस पर वहाँ जितने मनुष्य खड़े थे, सब कोई इनकी भूम्यो प्रशंसा करने लगे और राजाने भी पातिव्रत्यके उपहारस्वरूप इन्हें प्रचुर सम्पत्ति दी। बाद देवस्मिता गुप्तसेनकी साथ लेताम्रलिप्त जा कर सुखसे रहने लगीं।

(रुपाग्रित्सागर)

देवस्व (सं० ली०) देवाना स्व। १ देवप्रतिमाके लिये उत्कृष्ट धन, वह लायदाद जो किसी देवताकी पूजा आदिके लिये अलग निकाल दो जाय। २ यज्ञशील मनुष्यका धन। जो इस धनको लोभसे हरता है, वह परलोकमें मोक्षका लूटा खा कर लौता है।

देवस्वत्वक (सं० पु०) देवस्वत्वति आद्यगण्डोऽस्त्रात् अनुवाकै अध्याये वा दुन। देवस्वत्वादि प्रतीकयुक्त अध्याय वा अनुवाक।

देवस्वामी—१ एक विख्यात भाष्यकार। इन्होंने आश्वलायनश्रौतसूत्र, आश्वलायनगृह्यसूत्र और बौधायनसूत्रका भाष्य रचा है। हेमाद्रिप्रणतिने इनका मत उद्धृत किया है। २ भक्तिकल्पतरु नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

देवहंस (हिं० पु०) एक प्रकारकी वस्तु।

देवहरिया (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी गाय।

देवहृद्य (सं० पु०) देवाय हृद्यं यस्य। ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम।

देवहाटा खुलाना जिलेके माहहाटी परगनेका एक छोटा शहर। यह अक्षां २२° २३' ३०" उ० और देशां ८८° ०' १५" पु० यमुना नदीके किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ७ हजार है। यहाँ एक म्युनिसिपैलिटी है। शंख जला कर यहाँ चूना तैयार होता है। इसी चूनेके व्यवसायके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है।

देवहरिया (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी गाय।

देवहित (सं० स्त्री०) देवाना या देवहितं। १ देवताओंका हित। २ देवताओंसे प्राप्त हित।

देवह (सं० स्त्री०) देवाद्यन्तेऽत्र ह्ये सम्यं भावे कर्त्तरि वा क्तिप्। १ देवाज्ञान, देवताओंका आज्ञान। २ मोहिर्गं शकट, अनाजसे भरो गाड़ो। ३ वामकर्ण, बायां कान। ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम। (त्रि०) ४ देवाज्ञानकर्ता, देवताओंका आज्ञान करनेवाला।

देवहति (सं० स्त्री०) स्वायम्भुव मनुको कन्या। महर्षि कर्दमके साथ इनका विवाह हुआ था। महर्षिने इनकी सेवासे प्रसन्न हो कर इन्हें दिव्यज्ञान दिया। इनके गर्भसे नौ कन्याएँ और एक पुत्र हुआ। सांख्यशास्त्रके कर्त्ता कपिल इन्हींके पुत्र हैं। (भागवत)

कर्दम और कपिल देवो।

देवहृय (सं० पु०) देवा हृयन्तेऽसुरैः यत्र आधारी क्वप। देवासुरसंग्राम, देवता और राक्षसको लड़ाई।

देवहेहन (सं० स्त्री०) हेख-भावे ऽपुट् देवाना हेहनं सस्य हः। देवताओंके अवहेलनरूप अपराध।

देवहेति (सं० स्त्री०) देवाना हेतिः। देवास्त।

देवहीत्र (सं० पु०) त्रयोदश मन्वन्तरमें योगेश्वररूप हरिके पिता।

देवहृद (सं० पु०) श्रीपर्वतस्थित तोर्षभेद। इसमें संयतचित्त हो कर स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है। इस पर्वत पर महादेव देवीके साथ और ब्रह्मा सब देवताओंके साथ वास करते हैं।

देवा (सं० स्त्री०) दिव्यत्वान्वा दिव-घञ्, तत्तहाप।

१ पद्मचारिकी कता । २ पद्मनपचीं, विजयसार । ३ मूर्त्ति, मूर्त्ति । इसका पर्याय—तीजनी, किन्तु देवा, तिष्ठन्ती प्रकृत्या, कृत्यायै, मन्त्ररसा धीर निर्दग्धे । ४ पद यत् ।

देवा-१ धर्मोच्चा प्रदेशके बड़वांकी जिसका एक परमना । १०३० ई०में सेवट सासार मसाठरुने इस म्नुमा पर पवि कार सिद्धा । बहुत दिने तक यहाँ सुसुसमानो की प्रथा जाता थो । पोले जनबाके राजपूत सोम प्रवस हो उठे धीर लोनें इस परमनेका पविर्कार्य जेत लिया । पत्तमें स्वामीय राजाने बहुतयो धिना मेव कर इससे मरदार को एककम गया धीर इस स्थानको हकक कर लिया । जनबाके राजपूत सोम पपनीको बैय-धर्मिय बतमारि है । यहाँका म्नुपरिमाव १११ अम मीत है । इस परमने का पावा तामुबदारो धीर पावा कर्मीदारी है ।

२ एक बड़वांकी जिसका एक नगर । यह बड़वांकी नगरमें ४ कोसकी दूरी पर धनकित है । यहाँ बहुत प्राचीन शिव सुसुसमान राजाधोके न मरकरका मास है यहाँके शांतिके बरतन बहुत मजदूर है ।

देवाकवि—विन्दोके एक कवि । ये राजपूतानेके रहने वाले कहे जाते थे । स० १८१३ में इनका जन्म हुआ था । वे कवि कच्छदास पावहारो गलताजीबासीके शिष्य धीर उदयपुरके पास एक मन्दिरमें जसुसुसमानोके म्नुगारी थे ।

देवाकोट (स० पु०) देवा पाकोटुम्बर, पा कोट पावार बन्, देवाना पाकोट । देवोधान, देवतापो का उद्यान, इन्द्रका बगीचा ।

देवामार (स० पु०) देवाना पागाट । देवतापो का स्थान, देवास्य ।

देवागारिक (स० वि०) देवामारो निगुण धयारामत्वात् इन् । जो देवास्यका नाम काज करता है ।

देवज्ञ—दक्षिणप्रदेशके तमिलो का एक भेद । ब्रह्माण्ड उपपुराणके पत्तम त देवाज्ञचित्तमें इस जातिको उत्पत्ति-विषय इस प्रकार लिखा है—

मानको को जब सृष्टि हुई, तब वे सबसे धन बन्ध-जोन थे । एक दिन सदायिकमें सोचा, कि किस प्रकार इन नबन्ध प्राणियों को ब्रह्मादि मिथिने ? इसी समय

उनके शरीरके एक मुखको उत्पत्ति हुई । देवताके पञ्चके उत्पत्त होनेके कारण उनका नाम देवाज्ञ रखा गया । देवाज्ञको विषुसे सुता धीर मयदानकोसे तोत पादि कपड़ा बुननेकी कुछ सामग्रियां मिलीं । बाद लोनेने जग, मन्त्र धीर पातान इन तीन कोको से उपयोगी ब्रह्मादि तैयार कर दिये । मन्त्रवासियोने पुत्र हो कर उन्हें पामोदपत्तन वा पामोदपुरका राजा बनाया । देवताधोने सुयको एक कन्या धीर शिपको एक कन्या इन दो कन्यायो के साथ उनका विवाह कर दिया । भागराज कन्याके एक पुत्र धीर सुय कन्याके तोन पुत्र उत्पन्न हुए । भागराजके दोहिनने सोराइदेश पर पाकामक सिद्धा धीर सुय कन्याके पुत्रगण कुछ दिन तक पामोदपुरमें ही राज्य करती रहीं । पोले कन्याका राजाधोने जब उनका राज्य होन लिया तब वे नितान्त जोगयन्ताको प्राप्त हुए । पत्तमें वे सब कपड़े बुन कर धयना मुञ्जारा करनी लगी । इसी प्रकार इनके न मन्त्रोंसे देवाज्ञ नामक तन्तुवाय जेबीको उत्पत्ति हुई ।

देवाधो (स० धी०) देवानधति भेदे वाहु० न धीप नाइरादेशय धीप । १ देवताधोके प्रतिपमनयोका, देवताधोके कहेमने पकनेवाको । २ देवभूजिका देवता का पूजन करनेवाकी ।

देवाजोष (स० जो०) देवेन देवप्रतिमादेवनेन पाजोष तोति या जीव-पच । देवक, मुञ्जारी पञ्चा ।

देवाजीविन् (स० वि०) देवेन पाजीवतोति या-जोष चिनि । देवक, देवताधो को पूजा करके जीविका कमाने-वाका ।

देवाट (स० पु०) यद गतो मावे भन्, देवान् यद गमन यत् । १ हरिहरकेन्द्र । यराइपुराणमें लिखा है, कि जहाँ मन्दी महादेवका गोचन से कर रहते हैं, वही हरिहराजक क्षेत्रमें सब देवता परिष्मयक करती हैं, इसीसे इसका नाम देवाट, हुआ है ।

देवातिथि (स० पु०) कुरुव शीव पकोचनका पुत्र ।

देवातिदिन (स० पु०) देवागतिजन्म दीधति पति-दिन पच । विष्णु ।

देवात्मन् (स० पु०) देव पाया पविहाइदेवता यत् । १ पञ्चमण्डप, पीपल । २ देवककप ।

देवाधिदेव (स० पु०) देवानां अधिदेवः ६-तत् । १ सर्वेश्वर, परमेश्वर । २ महादेव, शिव । ३ इन्द्र ।

देवाधिप (स० पु०) देवानामप्यधिपः । १ सर्वान्विता परमेश्वर । २ हापरयुगके एक राजाका नाम । ३ इन्द्र ।

देवान (फ्रा० पु०) १ राजसभा, दरवार, कचहरो । २ माल्य, मन्त्री । ३ प्रबन्धकर्त्ता ।

देवानन्दसूर एक जैनाचार्य । इन्होंने सिद्धसारम्बत व्याकरण प्रणयन किया है । जिनप्रभसूरिके तोष्यवत्य पट्टनेसे जाना जाता है, कि १२६६ संवत्में देवानन्दसूरिने एक जिनप्रतिष्ठा की थी ।

देवानुहसि (देवन्हसि)—१ महिसुरके बङ्गलोर जिलेका एक तालुक । यह अक्षा० १३°५' से १३°२२' ०" और देशा० ७७° ३२' से ७७° ५०' पू०में अवस्थित है । भूसुरिमाण २३५ वर्गमील और लोकसंख्या लगभग ६०५३० है । इस तालुकमें दो शहर और २८४ ग्राम लगते हैं । प्राय १२१००० रु०की है । पिनाकिनी नदी इस विभाग को कर प्रवाहित है । यहा कहीं कहीं पोस्ता, बिलयतो आलू और चल्कट इष उपजायी जाती है । टोपू सुलतान के यत्नसे किसी धान द्वारा यहाँ ईशुकी खेतीका उन्नति हुई है ।

उक्त तालुकका एक प्रधान शहर । यह अक्षा० १५° ३' ०" और देशा० ७७° ४३' पू० बङ्गलोर शहरसे २३ माल उत्तरमें अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः ६६४८ है । पहले यहाँ पलिगारोंकी राजधानी थी । वे अपनेकी मोर सुबोक्ल जातिके बतलाते थे । पलिगार देवे । उक्त पलिगार सरदारगण गौड़ नामसे परिचित थे । १७५८ ई०में महिसुरके हिन्दूराजासे अंतिम गौड़ पराजित हुए । इस युद्धमें हैदरअलीने अश्वारोहीके रूपमें अपने वीरत्वका परिचय दे कर हिन्दूराजासे सुख्याति पाई थी । इसी शहरमें टोपू सुलतानका जन्म हुआ था । हैदरअली यहाँ एक पत्थरका दुर्ग निर्माण कर गये हैं । १७८१ ई०में लार्ड कनेवालिसने इस दुर्ग पर आक्रमण किया था । यहाँ प्रति समाह बुधवारको जाट लगती है ।

देवानामिय (स० पु०) देवानां प्रिय ६-तत् । देवानां प्रिय इति च मूलैः इति वाहुल्यकात् अलुकसमासः । १

मूर्धु । २ देवताओंको प्रिय । ३ हाग, बकरा । ४ धर्माशोक । अशोक देवे ।

देवाना (डि० वि०) १ शैवाग देवता । (पु०) २ एक चिड़िया ।

देवानाक (म० पु०) १ सावर्षि नामक तोषरे मतुके एक पुत्रका नाम । २ मगरवंशीय नृपते, मगरवंशके एक राजाका नाम । ३ देवताओंको सेना ।

देवानुकृत (स० पु०) वैदिकमन्त्राणां देवताप्रणय अनुक्रमो यत् । वैदिकमन्त्रका देवताप्रापक ग्रन्थभेद ।

देवानुचर (म० स्त्री०) देवानुचरति अनुचर-ट । देवताओंके पद्यात्गामो, देवताओंके साथ चलनेवाले विद्याधर आदि उपदेव ।

देवानुयायिन् (स० पु०) देवान् अनुयाति अनु-या-णिनि । देवानुचर ।

देवान्तक (म० पु०) देवानां अन्तकः ६-तत् । १ राजसभे, एक राजसभाका नाम । २ दैत्यभेद, एक असुरका नाम ।

देवान्धम् (म० स्त्री०) देवानां अन्ध इव दर्शनेन प्रीति-धरं । १ अन्ध । २ देवनेवेद्यके लिए कल्पित अन्ध ।

देवात्र (म० पु०) चरु, हवि ।

देवापि (स० पु०) पुरुवंशीय प्रतोपराजपुत्र नृपभेद । महागज प्रतोपके तीन पुत्र थे, देवापि, शान्तनु और वाह्वाक । तानांमि देवापि बड़े धर्मपरायण थे । इन्होंने संसारी विषयोंमें आसक्त न हो कर तपोवनसे ब्राह्मण्य प्राप्त किया । वचनसे हा वे संसारी विषय छोड़े हुए थे । आजकल ये सुमेरु पर्वतके कलापयाममें योगिके वेदमें रहते हैं । कलिके समाप्त होने पर सत्ययुगमें वे चन्द्रवंश स्थापित करेंगे । (भारत १८५५/४४-४५)

वैदिकमतमें—मृष्टिसेन राजाके दो पुत्र थे, देवापि और शान्तनु । दोनोंमें देवापि बड़े थे, पर राज्य शान्तनुको मिला और देवापि तपस्यामें लगे । शान्तनुके ज्येष्ठपुत्रके लिए उनके राज्यमें बारह वर्षको अनाहृष्टि हुई । इस पर ब्राह्मणोंने उन्हें कहा, 'तुमने अधर्म आचरण किया है, बड़ेके रहते तुम राजसिंहासन पर बैठे हो, इससे देवता लोग असमन्न हो कर जल नहीं बरसाते हैं ।' तब शान्तनुने देवापिको सिंहासन पर अभि-

विद्युत् विद्या । देवाग्निं शान्तनुमे कदा धा, 'तम यत्र करो इमं तुनां पुरोहित इति' देवाग्निं यत्र वरादा विभवै पूज्य इति इति । (विष्णु २।१०)

देवाय (हि० षो०) एक प्रकारको ईंद्र । यह बौध्म, गौड, बुद्ध, बौध्मन और पानो मित्रावर बनाइ जाती है । देवामियोग (म० पु०) किबो सुद देवताका प्रतीक प्रथिय । इस देवताके प्रथिय जोरिसे मनुष्य हुए काम करति लगत है ।

देवामीट (म० सि०) देवार्ग पमीट । १ देवतापोंके अभिषेकित । छियां टाप । २ ताम्बूको, पाम । ३ पूज्य हय, सुपाणीका पीड़ ।

देवायतन (म० ङो०) देवार्ग आबतन । देवप्रतिमानय, देवमन्दिर ।

देवायुध (म० ङी०) देवयुध इत्यय पाशुप ६ तत् । १ इन्द्र वनुय । सत्रय मीचबुद्ध पाकारार्थं नृवीरिष्य प्रति विहित होनेसे वनुपाकारका पदार्थ उत्पन्न होता है, उसीको इन्द्रयुध कहते हैं । २ देवतापों का यन्त्र ।

देवायुध (म० ङी०) देवार्ग पाशुप यन्त्र समासान्त । देवतापों का भोजनवाहन ।

देवार्थ (म० ङी०) देवप्रिय देवसूयिष्ठं वा परस्य । तीर्थभेद एक तोत्र का नाम । देवार्ग परयत् । २ देवतापों का प्रधान ।

देवायजन (म० पु०) देवतापों को पूजा ।

देवादि (म० पु०) देवार्ग अदि ६ तत् । अयुर ।

देवार्थ (म० ङो०) देवसु पर्यत् । १ देवताके निमित्त किमो वस्तुका हान । देवैभ्योऽपान्ते वै अथिचरके वसुट । २ अर्थदेहादि ।

देवार्थ (म० पु०) परब्रह्मभेद, परब्रह्मै एक मतका नाम ।

देवार्थ (म० जि०) देवानर्गति पर दाने पर्यत् । १ देवतापोंके निमित्त दानयोग्य । (ङो०) २ सुरपर्यत्, माचीपर्यत् ।

देवार्थ (म० ङो०) देवार्थेऽय । सद्देवोन्मता ।

देवानय (म० पु०) देवार्ग धामना धामना । १ अर्थ । २ देवस्थ, मन्दिर ।

देवाय (म० ङो०) देवानदि बान्ति स्नायसोबरोति धा-का-क । रायिचोबिथिय ।

देवाय (हि० पु०) विष्णु देवो ।

देवाका—मन्त्राद्य प्रदेगके भीष्मगिरि जिलेके परमार्ग त मन्त्रसकीट्ट य मन्त्रा एक प्रधान मन्त्र । यह पचा० ११ पृ० ७० पौर देया० ७६ पृ० १०० में प्रकृतित है । यहकारके मन्त्रसावके सिधे पहने बह स्थान बहुत प्रसिद्ध था । बौनाइके सोनेकी धानके निचट होनेके कारण यहां की लोकम प्या पीरे पीरे बढ़ती गई और यह एक प्रधान मन्त्रमें गिना जाने लगा । यहां पान्तिवाम, बाना, टेडिपाक, डाकधर और मन्त्रिईट सांठकका आवास है ।

देवाका—मन्त्रप्रदेगके चन्द्र जिलेके परमार्ग त एक छोटा पाम । यह पचा० २० पृ० ७० पौर देया० ७६ पृ० १०० में प्रकृतित है । मन्त्र सावके तीन बोनको पूरी पर प्रकृतित है । चन्द्र विस्वनेपुष्प और स्नायक हुक देवासवके मन्त्रावरीके सिधे यह ज्ञान प्रसिद्ध है । मन्त्र देवो ।

देवानिया—काठियावाड़के भास्कार प्रान्तके मन्त्रवर्ती एक छोटा राज्य । यहाँके सामन्तके पचीन ही पाम हैं । वे हठिय मन्त्रेष्टको प्रतिभय ३६० इ० पौर कुनाइके नवाबको १६ इ० कर देते हैं । यहाँको कार्यालय पाय पाय ६ हजार रुपयेकी है ।

देवानतार (म० पु०) देवार्ग अतार ६ तत् । देवतापों का अतार ।

देवावाय (म० पु०) देवार्ग धामापो वापस्थान । १ पञ्चव्यय पोपकका पीड़ । २ अर्थ । ३ देवप्रतिमान । ४ सुमेह ।

देवाको (म० पु०) देवानवति पर-मीचमि पीवादिक् है । देवतर्पक सीम ।

देवाह (म० पु०) देवा बर्हेऽस्य हय हिय, पूर्वबह दोय । पर तमिष्ट, एक पहाड़का नाम ।

देवाह (म० पु०) देवा बर्हेऽस्य । कावत मृपमेह, हरिद मके अतुसार एक राजाका नाम ।

देवाय (म० पु०) देवय इत्यय पायः । बर्हेऽयवा, इन्द्रका पीड़ा ।

देवास— मन्त्रमारतके मानपुर एमिटीके देववासीन एक देगोय राज्य । यह पचा० २२ पृ० १६ से २१ पृ० ७० पौर देया० ७१ पृ० १६ से ७६ पृ० १०० में प्रकृतित है । मृपरिमात्र ८८६ वर्गमील है ।

वर्तमान राजवंशके पूर्वपुरुष कालुजीने पेशवा बाजी-
रावको शुभ करके उनसे देवास, सारङ्गपुर और बड़तमे
भूभाग पाये थे। कालुजीके दो पुत्र थे, तुकोजी और
जीवाजी। राज्य पानिके लिए दोनों भाइयोंमें विवाद
भारम्भ हुआ जिससे यह राज्य दो भागोंमें विभक्त हो
गया। तभीसे यह दो भागोंमें चला आ रहा है। बड़े
पुत्रके उत्तराधिकारी बाबा-साहब और छोटेके दादा साहब
नामसे प्रसिद्ध थे। बड़े वंशका जो सम्मान अधिक होता
है। १८१८ ई०में दोनों सरदारोंने आपसमें मेल कर
द्वितीय गवर्मेण्टका आग्रह लिया और वे अपनी अपनी
सेनासे द्वितीय गवर्मेण्टको सहायता पट्टेचानेमें राजी
हुए। अन्तमें गवर्मेण्टने ३५६०० रु० वार्षिक कर
निश्चित कर दिया। १८२८ ई०में देवासके सरदारोंने
वगन्द परगना द्वितीय गवर्मेण्टको देव रेखमें छोड़ दिया
और इसके बदले गवर्मेण्टसे सब खर्च काट सार कर
साठे छः हजार रुपये पाने लगे।

सिपाहीविद्रोहके समय देवासके राजाओंने द्वितीय
गवर्मेण्टको खूब सहायता की थी। इसी कारण इन्हें
दत्तकपुत्र ग्रहण करनेका अधिकार मिला है।

बड़े वंशके अधिष्ठाता १म तुकोजी राव थे। १७५३
ई०में उनके स्वर्गारोहणके बाद उनके दत्तकपुत्र क्षणजी
राव पुनर राजगद्दी पर बैठे। वे बाबासाहब नामसे
भी प्रसिद्ध थे। १७६१ ई०में पानोपतको लडाईमें
इन्होंने अपनी खूब वीरता दिखाई थी। १७८८ ई०में
उनकी मृत्यु हुई। पीछे उनके पोष्य पुत्र २य तुकोजी-
राव राजसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। इस समय दोनों
वंशको अवस्था शोचनीय थी; क्राण, पिण्डारी, सिन्धिया
और छोलकर जहाँ तहाँ इनके राज्यों पर अधिकार कर
बैठे थे। तुकोजीरावके मरने पर ३य तुकोजी १८००
ई०में राजसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। इन्दौरके दली
कालेजमें और अजमेरके मेयो कालेजमें इन्होंने विद्या
शिक्षा प्राप्त की। सम्प्रति बड़े बड़े वंशके राजा हैं।
इनका पूरा नाम है,—H. H. महाराज त्रियकुला-
वतंस सप्तमहस्त्र सेनापति प्रतिनिधि सर तुकोजीराव
पुनर बाबासाहब महाराज के. सी. एस. आइ। इन्हें १५
तोपोंकी सलामी मिलती है। इनके अधीन ६२ अखा-

गोही, ७८ पदातिक, ६८ सिवन्दी और १८ गोल्फ्राज
हैं। इसके अन्वा ६०० माधारण पुलिस हैं।

छोटे वंशके अधिष्ठाता जिवाजी राव थे। १७७५ ई०में
उनकी मृत्यु हुई। तबसे लेकर १८८१ ई० तक इस
वंशके इतिहासका पता नहीं चलता। पीछे १८८२
ई०में मलहारराव पुंवार राजसिंहासन पर बैठे और
फिलहाल यही बहाकि राजा हैं। इनका पूरा नाम H.
H. महाराज सर मलहार राव बाबासाहब पुनर
के. सि. एस. आइ है। इन्हें द्वितीय गवर्मेण्टको ओरसे
१५ तोपोंकी सलामी मिलती है। इनके अधीन ८० अखा-
रोही ८८, पदातिक और २७ गोल्फ्राज तथा २६८
साधारण पुलिस हैं।

यहाँकी लोकसंख्या प्रायः ५४८०४ है, जिनमेंसे सैकड़
८५ हिन्दू, १० मुसलमान और गेपमें अन्यन्य जाति हैं।
इनमें दो शहर और ३७ ग्राम लगते हैं। यहाँकी भाषा
हिन्दी, उर्दू और मराठी है। राज्यकी प्रधान उपज
ज्वार, चना, रुई, गेहूँ, टनहन और अफोम है।

यहाँके राजा विश्व राजपूतवंशके होने पर भी महा-
राष्ट्रके साथ वैवाहिक सूत्रमें आवद्ध हो जानेसे राजपूत-
समाजमें नीच समझे जाते हैं। दोनों वंशका राजस्व
मिला कर तोन लाख रुपयेसे अधिक है।

२ उक्त देवास राज्यका एक प्रधान शहर। यह
अक्षा० २२' ५८" उ० और देशा० ७६' ४' पू०
इन्दौरसे प्रायः १० कोस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है।
लोकसंख्या प्रायः १५४०३ है। देवासके दो राजा
ही यहाँ भिन्न भिन्न प्रासादमें रहते हैं। शहरके
पास हो चामुण्डा नामका एक पहाड़ है जो समुद्रपृष्ठसे
३०० फुट ऊँचा है। इस पहाड़का नाम देवोवासिनो
भी है। कहते हैं कि इस पर देवता वास करते थे। शायद
इसो देववासिनो पहाड़के नामानुसार नगरका नाम
करण हुआ है। १७३८ ई०में जबसे यह शहर महा-
राष्ट्रके हाथ आया था तभीसे इसकी उन्नति हो रही है।
चामुण्डा पहाड़ पर एक सुन्दर मूर्ति है जो पत्थर काट
कर बनाई गई है और वहाँ मन्दिरके पास ही एक
तालाब है। तालाबको एक बगलमें एक छोटा शिव-
मन्दिर है। दूर दूर स्थानोंसे लोग देवोके दर्शन करनेको

धर्म हैं। यहाँ स्थूल, अर्थात् धारं धामनिवास है।
देवदार (व० पु०) देवदोष्य धादार'। देवताके योग्य
धादार, धारण।

देवद्वय (स० पु०) १ अनुसुप्त एक राजाका नाम। २
देवदासद्वय, देवदार।

देविक (स० पु०) अनुसुप्तितो देवदत्त' अनुसुप्तनाम ब्रह्म-
चक्रज्ञानम् इति शब्दार्थः परस्पर शोषः। अनुसुप्तित
देवदत्त।

देविका (स० स्त्री०) दोष्यतीति दिव-क्लृ-टाप् टाप्
भत इत् । १ नदीसिद्ध, धारणा नदी। पशुपुराणके पशुधारा
यह धारा योजन चौड़ी धोर पंच योजन लम्बी है। इसमें
देवदियम् सर्वदा परिश्रित रहती है। मन्वपुराणके
मतेय यह नदी हिमालयके पाददेशमें निकली है।

काठियापुराणमें लिखा है—इस नदीके माघ मरु-
मित्री हुई है। यह एक प्रधान तीर्थ है। इसमें स्नान का
बहुलाक करके महादेवको चर्चना करनेसे सब कार्य
बिह होती हैं और यह करनेका फल मिश्रता है। देविका
पीठ स्नानसे एक है, भगवतो यहाँ नन्दियोंके रूपमें
विद्यमान हैं।

२ तुबिष्टिको एक स्त्रीका नाम। तुबिष्टिकने इन्के
शय करमें जीता था। इन्के नाम से योषिक भायक पुत्र
उत्पन्न हुआ था। (अरव १:८५ अ०) ३ हस्तु, हस्तु।
(त्रि०) ४ देवधर्मको।

देविया (व० पु०) हस्तु, हस्त, हस्तुका पिक।

देवित (व० पु०) देव-द्वय'। अथकीकाकारो, सुधा
खेलेनाका।

देविन् (व० त्रि०) दिव चिति। श्लोकाकारक, देवने
बासा।

देविय (व० पु०) अनुसुप्तितो देवदत्त' ब्रह्म-कमलुप
नाम्नार्थात्, इतीयादथ परस्पर शोषः। अनुसुप्तित
देवदत्त।

देविन (व० त्रि०) देव देवने इत्थं दोष्यति धाम्देशेति
दिव-क्लृ-टाप् (प्रकारिकः द्वि०) अन् १:५०) १ कामि का।
(पु०) अनुसुप्तितो देवदत्त' इत्यम्'। २ अनुसुप्तित देव
दत्त।

देवी (न० स्त्री०) दोष्यतीति दिव-क्लृ-टाप् ततो शोषः। वा

देवयति प्रवृत्ति निवृत्तपुण्येभ्यः यथाविचारं व्यवहा रयति
मर्मान् देव चिन्-प्रच डोप'। १ दुर्गा। देवोभासवतर्मे
निष्ठा है, कि एक बार महापूजा कर देवीका पाद-
स्नान पीनेसे सब प्रकारके दुष्कृति जाती रहती है। जो धनस्थ
चित्त हो कर देवीकी भक्ति करती है उनके अयत्न करने
पर भी दुष्कृति नहीं भोगना पड़ता है बर मदा सुख ही
मिथता है। क्योंकि उनके परिजाता शय प्रियको है।
२ देवपत्नी देवताको स्त्री। ३ ज्ञतामिषका
राजमहिषो, वह रामो निषका राजाके साथ अमिषक
पूजा को, पटरामो। ऐसी रामोको देवो कहना चाहिये।
४ ब्राह्मण-जनोंके नामोपपद, ब्राह्मणकी स्त्रीके नामके
पत्नीमें देवो अन्व प्रयोग करना चाहिये। ५ मुर्धा,
मरोरफलो मुग्ध। ६ सुधा, एक प्रकारकी सुमन्वित
बास, अथवरस। ७ पादित्त्वमहा बुद्धि, बुरबुर।
८ स्थितिना पचपुरिया। ९ नम्यताकर्त्तव्यो, नमि-
त्यपसा। १० मारुपर्षी, अरिजन। ११ महाज्ञोषो,
बड़ गुण। १२ पाठा। १३ नागरसुप्ता, नागर
सोया। १४ सुमेधाइका, मज्जे इन्द्रायवः। १५
जरोतकी, बड़, इर्'। १६ पतसा तोषो। १७ म्यामा
पत्नी। १८ रविस्त्राणि। यह बहुत सुश्रजनक
धर्मको जानी है, रहती यह समय देवीके स्वस्वमें कहा
गया है। देवीपूजा करनेसे जिस तरह सर्वोभयिष्ठि
होती है उसी तरह इस सन्मानिमें किया हुआ कार्य
फलदायक होता है। जे सब विषय अनुसुप्तित
एवाद्योगतत्त्वमें लिखे हुए हैं।

देवोपुराणमें लिखा है, कि सन्मानिमें पुष्पाकारं
करनेसे वह कोटिगुण फलदायक होता है।

देवी—बहुशामं प्रवाहित एक नदी। अटक त्रिसेको
काठमुखी नदीकी दाहिनी बगलमें छोटी धोर बड़ी देवी
नामकी दो छोटी नदियाँ निकली हैं धोर के कुछ दूर
जा कर एक बूढ़ीसे मिल घुटी त्रिसेमें प्रवेश करती है।
बाद यह अटक त्रिसेको दक्षिण घोरामें निकल बहोप
घाटीमें गिरी है। इस नदीके निरगत नुवालेके समुद्र
आई बय' पहले एक चालोच-व्यह बनाया गया था।
नदीके मुच पर बालू पड़ जानेसे धारने जानेका पथ
दुर्गम हो गया है। बाढ़के समय यहाँ प्रायः १५ हाथ

जल ऊपर उठता है। वर्षाकालमें नदीका जल बहुत बढ़ जाता है। श्रौषकालमें नदीमें १४ कोस तक च्वार जाता है। इस समय धान और चावलसे लदो हुई वही वही नाव नदी ही कर जाती आती हैं। नदीके सुहानेके चार्गे तरफ जङ्गल है, ग्राम एक भो नहीं है। देवी (हि० स्त्री०) १ जहाजके किनारे पर लज्जही या लोहेको दे कर चौंसकी तरफ जहाजको और मुके हुए खंभे जिनमें घिरनियां लगे होते है। इन घिरनियों पर पड़े हुए रस्सीके द्वारा किशियां जहाज पर चढ़ाई या जहाजसे उतारो जाती है। २ लकड़ोका एक मजबूत चौखटा जिसमें दो खड़े खंभोंके ऊपर घाड़ा बन्ना लगा रहता है। यह मस्तूल आदिके सहारेके लिये होता है। देवीकवि—हिन्दीके एक कवि। इनको बनाई शृङ्गारको कविता बहुत उत्तम होती थी।

देवीकृति (स० स्त्री०) गोटावरो तटस्थित एक देव उद्यान। वक कच्छप देववासी एक ब्राह्मणने भगवतो विन्ध्यवासिनोके आदेशसे प्रतिष्ठानपुरके निकट देव-मन्दिरके सामने यह उद्यान लगाया था। (कथामरित्सागर ५।७२) देवीकोट (स० पु०) वागराजधानी शोणितपुरका नामान्तर। दिनाजपुरके अन्तर्गत वत्तमान देवाकोट। देवीकोट—तन्त्रो जिलेका एक प्राचीन भवन दुर्ग। यह प्रक्षा० ११° २२' ३०" और देशा० ७८° ४८' ५०" वांकुवरसे १२ कोस उत्तरमें अवस्थित है। इष्ट इण्डिया-कम्पनी भारतवर्षमें आ कर पहले पहल यहाँ व्यापार करने आई थी। यहाँका दुर्ग पहले तन्त्रोके हिन्दू राजाओंके अधिकारमें था। इसके अवरोधके समय क्लाइवने अपनी खुब वीरता दिखाई थी। दुर्ग १२ हाथ ऊंचे प्राचीरसे घिरा हुआ है और इसका घेरा प्रायः आध कोस होगा। इष्ट-इण्डिया-कम्पनीने यहाँ कोई कोठी स्थापित नहीं की थी। १७५८ ई०में फरासीसियोंने जब इस दुर्ग पर आक्रमण किया, तब अङ्गरेज लोग इसे छोड़ भाग गये थे। बाद बन्दोवासकी लड़ाईमें सर आयर कूटने फरासीसियोंको परास्त कर उनसे यह दुर्ग छीन लिया।

२ मन्दाज प्रदेशके मदुरा जिलेका एक नगर। यहाँकी लोकसंख्या प्रायः ८ लाख है।

३ नीलतन्त्र-त्रिणित एक पोठस्थान।

देवीगृह (सं० स्त्री०) देव्याः गृहः ६-तत्। देवीका मन्दिर। देवीघाट—नेपालराज्यके नयाकोटके निकटस्थ एक सुन्दर ग्राम। साल भरमें ८ महीना महाह घोर कुन्धार छोड़ कर यहाँ और कोई नहीं रहता। यह तोड़ो नदीके किनारे पर अवस्थित है। नदीके ऊपर एक पुल बना हुआ है। जमींदारके मिवा और किमीको यह पुल पार होनेका हुकम नहीं है। देवी भैरवो यहाँकी अघिठावो देवी है। यह पवित्र स्थान है, पर देवीभैरवीके अमुगृहीत होने पर भो यहाँ देवीका मन्दिर नहीं है। विगूल-गङ्गा और तोड़ोके सङ्गम पर देवीके सम्मानार्थ सिर्फ एक बंदी लकड़ोके स्तूपमें घेरो हुई है। नयाकोटमें देवीका मन्दिर है। प्रवाट है, कि वह मन्दिर देवीके कहनेसे ही बनाया गया है। देवीघाट समुद्रपृष्ठसे २००० फुटसे भो नीचेमें अवस्थित है। १२वीं सदीके आरम्भमें कर्णाटकवंशके हरिदेव नेपालके राजा हुए। एक समय हरिदेवने अपने एक नौकरकी वरखास्त कर दिया। इस पर वह नौकर अपने मालिकके व्यवहारसे क्रुद्ध हो कर मुकुन्दसेनको राज्यमें बुला लाया। मुकुन्दसेन हरिदेवकी परास्त कर मत्स्येन्द्रनाथके मन्दिरसे भैरवी-मुर्तिको पालपामें उठा ले गये। इस पर देवादिदेव शिवजी बहुत विगड़े, जिससे मुकुन्ददेवकी सारी सेनायें विस्चुचिकारोगसे नष्ट हो गईं। मुकुन्दसेनने भो अकेला धतिके वेशमें भाग कर इसी देवीघाटमें प्राण त्याग किये।

वैशाखमासमें देवीका एक उत्सव होता है। उस समय देवीप्रतिमा नयाकोटसे देवीघाटमें लाई जाती है। यह उत्सव पाँच दिन तक रहता है।

देवीचन्द्र—एक हिन्दी कवि। इन्होंने स० १७८७ के पूर्व हितोपदेशभाषा नामक एक ग्रन्थ प्रणयन किया।

देवोतन्त्र (स० स्त्री०) तन्त्रमेद, एक तन्त्रका नाम।

देवीत्व (स० स्त्री०) देव्याः भावः देवी भावे त्व। देवीका भाव।

देवीदत्त—१ हिन्दीके एक कवि। इनकी शान्तरस तथा सामयिक कविताएँ अच्छी होती थीं।

२ एक हिन्दी-कवि। इन्होंने सम्बत् १८०८ में भरकपचीसी नामक एक पुस्तक लिखी।

३ एक हिन्दो-कवि । इनका जन्म स० १८२२ में हुआ था । ये जातिसे ब्राह्मण थे ।

४ हिन्दोके एक कवि । इनोंने नरहरिचम्पू नामको एक सुष्ठव लिखी ।

५ सुप्रसिद्ध एक हिन्दो कवि । इनका जन्मा हुआ वीतालयकोषी नामक ३८८ छठे का एक सुन्दर पन्थ है । इनको कविता श्रुतिमधुर और मनोहर है । इनोंने बहू पन्थ स० १८२२ में लिखा है । इसमें विविध हिन्दोमें कविता हुई है । उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं—

“ये गन बाधक नीर विरह दुःख संहरान ।
 ये गन बाधक नीर साधु बन विपत्ति विदारण ॥
 ये गन बाधक नीर नीर विनामक मति दाखक ।
 ये गन बाधक नीर निरन बन राहण बाधक ॥
 सुम एक हरन गन बरन ने मे मख ६ नाबन्ध मय ।
 कवि देवीदत्त दयालु मे कियोस नन्द सुखमयय ॥”

देवीदत्तराय—एक हिन्दो-कवि । इनोंने महाभारत भाषा नामक एक सुष्ठव रचा है ।

देवीदास—१ एक हिन्दो-कवि । ये हुन्देलकण्ठी तथा स० १०३१ में उत्पन्न हुए थे । इनोंने पनेक पन्थ बनाए हैं । माहकन को कहीकोके महाराज भैया रतनसि बबोको समर्पित ये १०३२ स बत्में गए और तबसे मरबपकना बहो रहें । इनोंने नाम पर इनो में ‘म म बहाकर’ नामक एक पन्थकी भी रचना की है । इनके नाति सम्मन्धी दोहे बहुत सुन्दर हैं ।

२ सिद्धान्तसारस प्रथम और तत्त्वार्थ सुख टोका गम को न-पन्थके रचयिता । ये कसबा नामक जगमें रहते थे और जातिके बच्छेसवालके । इनका पन्था पन्थ १८३३ स बत्का रचा हुआ है ।

३ परमात्मविज्ञान हिन्दोबध, प्रवचनसार हिन्दोबध, चरित्रसार बचनका और बौद्धोपनिषदाद्य आत्मक जैन धर्मके प्रथिता । ये सुगोदर कनकधारी (जिज्ञासा) प रहनेवाल और स १८२१ में विद्यमान थे ।

४ प्रसिद्ध जैन-कवि श्यामनदासके समकालीन एक कवि । थापके बनाए हुए बहुतेके मञ्जन का पद पथ भी जैन-समाजमें प्रचलित हैं ।

देवीदीन—हिन्दोके एक कवि । ये विलयामोके बासी थे तथा इनको ने मथयिष और रसदपथ नामके दो पन्थ लिखे ।

देवीश्रियक (स० पु०) देवी श्रिया इत्याध्यायीकहिन्दोविद्या पन्थ पशुपतिके पन्थासे वा गोपदादित्यात् हुन् । देवीश्रिय इत्यादि प्रतोदनुस पशुपतिके वा पन्थाय ।

देवीपुर—माकदूक जिसेके पकडवरपुर परमनेक पन्थगत एक ग्राम । यहाँ ममाइमें एक बार हाट लगता है । यहाँको जलवायु अच्छा नहीं है । धापाऊ, प्याबक और माइ इन तीन महीनोंमें ज्वरका प्रकोप अधिक रहता है ।

देवीपुर—दिनालगुर जिसेके सम्बोध परमनेका एक ग्राम । देवीपुराय (स० छो०) देवी भगवतोके साहाय्यादि कुछ उपपुरायमें, बह उपपुराय सिद्धमें देवीका साहाय्य बर्चित है । पुराय देवी ।

देवीप्रसाद—१ एक हिन्दो-कवि । ये काबल जातिके थे । इनका जन्म स बत् १८८० में हुआ था तथा इनको ने स० १८२१ में नैपथकल नामक एक पन्थ लिखा । स० १८३६ में इनका जग बाप हुआ ।

२ हिन्दोके एक कवि । ये विलयाराम सिद्धा हर दोहेके रचनेवाले थे तथा इनका जन्म स० १८०० में हुआ था ।

३ एक हिन्दो-कवि तथा मथसेकक । थाप सुज कफूरपुरके बासी थे तथा थापने प्रबोधपरिचल नामक एक सुष्ठव लिखी है ।

देवीप्रसाद शोषो—हिन्दोके एक कवि । ये धामरा ग्रामके रहनेवाले थे । इनको कविता मनोहर होती थी ।

देवीप्रसाद सुगो—एक सुप्रसिद्ध हिन्दो-कवि । इनका जन्म स बत् १८०३ को हुआ था । इनको विताका नाम कल्पक द सुगो था । ये कायकर जातिके थे । इनको पूर्वक सुष्ठवमानो राष्ठाके सम्बन्ध रहनेके क एक धारणा बिधा थी । निवश इनके पिता और माताहीको हिन्दोका कुछ कुछ पन्थाक था । इनोंने पपने पिताके लहूँ और धारणा तथा पपनी मातासे साधारण हिन्दो दीखी थी । १६ बपको पथकामि परनी और धारणोका

थोड़ा बहुत अभ्यास कर चुकने पर संवत् १८२० में ये रियासत टोंकमें और तदुपरान्त अजमेरमें नौकर हो गए जहाँ ये स० १८३५ तक रहे। बाद १८३६ स० में आप योधपुरमें नौकर हो गये।

जिस समय आप टोंकमें नौकर थे, उस समय आपने चट्टूमें “खवाब राजस्थान” नामक एक पुस्तक लिखी थी जिसका “स्वप्न राजस्थान” नामक हिन्दी अनुवाद भी आपने कर लाया है। आप प्राचीन इतिहासके बहुत अच्छे ज्ञाता थे। आपने इस विषय पर हिन्दी और चट्टूमें प्रायः ५०—६० ग्रन्थ लिखे हैं जो ऐतिहासिक दृष्टिसे बड़े महत्त्वके समझे जाते हैं। आपकी लिखी हिन्दो-पुस्तकींमेंसे अकबरनामा, जहानगीरनामा, औरङ्ग-जिहनामा, नावरनामा तथा राजपूतानेके बहुतसे वीर महाराजाओंके जीवनचरित बहुत प्रसिद्ध हैं। पहले पहल स० १८७५ में आपने मारवाड़का जो इतिहास लिखा था उसके लिये स० युक्तप्रान्तको सरकारने आपको ३०००० पारितोषिक दिया था। इसके अतिरिक्त नौति और स्त्री शिक्षा-सम्बन्धो कई पुस्तकींके लिये आपको और भी कई पुरस्कार तथा प्रशंसापत्र आदि मिल चुके थे।

देवीभागवत (स० क्ली०) देव्यामाहात्म्यावेदकं भागवताख्यं पुराणं। पुराणभेद, बहुतसे लोग इस पुराणको गणना उपपुराणोंमें और कुछ लोग महापुराणोंमें करते हैं। ‘भागवतं पञ्चमं स्मृतं’ महापुराणमें भागवत पञ्चम अर्थात् श्रीमद्भागवत पञ्चम महापुराण है, किन्तु कोई कोई श्रीमद्भागवतको महापुराण नहीं कह कर देवी भागवतको ही महापुराण कहते हैं। पुराण देखो।

श्रीमद्भागवतके समान इस पुराणमें भी बारह स्कन्ध और १८ हजार श्लोक हैं। इसमें देवी भागवतका माहात्म्य विस्तृत रूपसे वर्णित है।

देवीभाट—हिन्दीके एक कवि। इनका जन्म संवत् १७५० में हुआ था। इन्होंने संवत् १७७५ में सूमसागर नामक एक ग्रन्थ बनाया है जिसमें सूमांके लक्षण और उनके भक्त-रूप वर्णन किये हैं।

देवीभोया (हि० पु०) देवीकी माननेवाला, भोक्ता।
देवीमहिमन् (स० पु०) देव्याः महिमा। देवीमाहात्म्य।

देवीमाहात्म्य (स० क्ली०) देव्या माहात्म्यं इत्यतु। देवी दुर्गाका माहात्म्य, मार्कण्डेयपुराणान्तर्गत ‘सावर्णिः सूर्यतनयः’ इत्यादिसे ले कर ‘सावर्णि भविता मनुः’ तक त्रयोदश अध्यायात्मक ग्रन्थभेद, चण्डी। इसमें देवीका माहात्म्य वर्णित हुआ है, इससे इसका नाम देवीमाहात्म्य हुआ है। जो मक्तिपूर्वक देवीमाहात्म्य पढ़ता वा सुनता है, उसके सब पाप जाते रहते हैं। शरत् कालीन दुर्गा-पूजाके समय देवीमाहात्म्य पढ़ना चाहिये।

देवीयात्रा—उत्सवविशेष। वैशाखमासमें नयाकोटके भू-रवोविग्रहका एक उत्सव होता है। इसमें देवीविग्रह नयाकोटसे देवीघाटमें लाया जाता है। यह उत्सव पांच दिन तक रहता है। इसमें एक भैंसकी बलि दी जाती है। एक नेपाली स्त्री और पुरुष भैंरव और भैंरवीकी सजाते हैं। बंछा जाति ही पुरोहितका काम करती है।

महिष बलिके बाद ही निवार लोग (नेपाली) गलेकी रुधिरधारा भर पेट पी लेते हैं। जब पेटमें और जगह खाली न रहती, तब वे समस्त पीतरक्त वमन कर देते हैं। इस उत्सवमें रक्तको पवित्र समझ कर वे जमा रखते और कुछ इधर उधर बाँटते भी हैं। इस उत्सवमें हिन्दू और बौद्ध दोनों धर्मके मनुष्य शामिल रहते हैं। देवी-घाटमें देवीका मन्दिर नहीं है। पांच दिन उत्सवके बाद देवीमूर्ति पुनः नयाकोटमें लाई जाती है।

देवीरापमक (स० पु०) देवीराप इत्याद्यप्रतीकमस्त्व-वानुवाक्ये अध्याये वा गोपवादित्वात् बुन्। ‘देवीराप’ इत्यादि प्रतीकयुक्त अध्याय वा अनुवाक।

देवीराम—शान्तरसके एक कवि। ये संवत् १७५० में उत्पन्न हुए थे, इनके काव्य उत्कृष्ट नहीं है।

देवीलता (स० स्त्री०) अनन्तमूल।

देवीधीर्य (स० क्ली०) गन्धक।

देवीसहाय—१ एक हिन्दी कवि। ये कायस्थ जातिके थे। तथा इन्होंने स० १८६० के पूर्व बहुतसो अच्छो कविताओंकी रचना की।

२ एक हिन्दी कवि तथा गव्यलेखक। ये ब्राह्मण थे तथा इनकी कविता सुमधुर और सराहनीय होती थी।
देवीसिंह—भंगरेज शासनके प्रारम्भमें जो सब अर्थ लोतुप मनुष्य अङ्गरेजोंको सहायतासे बङ्गदेशकी उत्पन्न करनेमें

हुए थे, बहूँके ये मजदूर तिनके देवोसिंह के घरमेंसे एक थे। १९०१ ई०में वह इण्डिया कम्पनीको जब बङ्गाल-बिहार घोर उद्योगको दोषानो मित्री, तब यह गरिब लोग राज्यपालका हाथ कुछ भी नहीं जानते थे। परत राजभक्त बल्लु खरनेका भार मायब लुभादार महच्छद ईजाकाके हाथ सौंपा गया। इस समय देवीसिंह इन चम्पारण्य पक्षमें प्रचुर पर्यटन करवा दिया था। महम्मद ईजाका देवीसिंह के लक्ष्य क्षेत्रको बाध हुए। इस प्रकारके प्रभु-पञ्चकण्ठ देवोसिंह महच्छद ईजाकाके पञ्चोन पुर्णिया में राज्य बल्लु खरनेके लिये भेजे गये। दिन दिन प्रकारीय राजभक्त बल्लु खरनेके कम्पनीका प्रियपात्र होना ईजाकाका लक्ष्य था—यस लक्ष्यको निवृत्त करनेके लिये उन्होंने बल्लुख मनुष्योंके हाथ जो बंध भार सौंप दिया था। पूर्णियाका राजभक्त बल्लु खरनेका भार पक्षमें मायबो देवीसिंह इन १९०५ ई०में पूर्णियाके प्रभुवंत प्राज्ञः समो परगणो का इजारा लिया। यह इजारा भी वह देवीसिंह को प्रायातत पर प्राप्त होने लगा।

देवोसिंह के पक्ष से पहलेको सोनुपता इतनी बढ़ गई कि पूर्णिया जनशुभ को मया या कोटि बितने मनुष्य घर छोड़ कर देवान्तरको भागने लगे। पूर्णिया को बार्थिक पाठ ८ लाख रुपये को भी जमना यतो यथा तक भी बल्लु नहीं होता था। किन्तु देवीसिंह के ऐसे प्रादमो नहीं थे कि एक रुपया मो किमोके यहां बाकी रह जाते। वे बार्थिक १५ लाख रुपयेके विचारके राजभक्त बल्लु खरने लगे। १९०० ई०में बङ्गालमें घोर दुर्मिच्छ पड़ा। देवोसिंह का घोर तनिक भी ध्यान नहीं था। ईजाका भी उसी तरह थे। उन लोगों का ध्यान यही पञ्चायत या कि कम्पनीको जब तक बाकी रुपया न हो जायता तब तक राज्य बंध जो नहीं सकता। सुयोग समर्थ वह देवीसिंह मनमाना काम करने लगे। जब पांच फसल कुछ भी न हुई, जिससे प्रजा भाङ्गगुजारी दे न सके। इस पर देवोसिंह के जमींदारों को बहुत तह करने लगे। जमींदारों के चरमें जो कुछ नकद रुपया था तब पहले ही देवीसिंह को दिया गया था। पनो पक्ष के चम्पारण्य के पनबा जातिहुत सम्पन्न गड होने लगा। देवोसिंह के जमींदारों को पक्षका कर

कोट दिया, मय दिखजाया, पीछे उन्हें मजा मो भी गई परन्तु इतने पर भी जब कोई परिचाम न मिलता, तब वे इनके दिनोंको लक्ष्यही म यथा कर बहुत सुयो तरहसे उनको साध पैग पाये। उनके दिनोंके चम्पारण्य मय लताए लिए गये घोर नही करके वे सक्के सामने कड़ी को गई।

उप समय बार्थिक स व गालके मयनरं से। वे जमोनमें जमींदारका कोई कल्प है ऐसा लीकार नही करती थी। जमींदार उपलब्धमोमो मात्र हैं। उन दुर्मिच्छ में चमो तरहसे जमो दारोंको भी पति हुई। बहुतेरे मयपदा हो गये। देवोसिंह के इस चम्पारण्यकी लुभा बोरे बोरे पक्षने लगे। इस बातको भी लर पाल्योनन मो पूरुव हुआ। महच्छद ईजाका पदच्युत हुए। ईजाका तो चले गये सेलिन देवीसिंह के लिये लगे बने रहे। यदि देवोसिंह भी चले जाते, तो किनमें जमो दारोंके सम्पन्नकी रचा होती, बितनी प्रजाके माय बंध भाति। ईजाका चले गये, यह बात बिली रह न सके। १९०२ ई०में एक परिद्वयं न समिति (Committee of Circuit) स्थापित हुई, केटि स साङ्ग ठसके समापति हुए। परिद्वयं न समितिमें जमो बाते सुभ गई, देवोसिंह के पक्ष्युत हुए। देवोसिंह को पदच्युत करनेमें बाध जो का मा कि सने देवोसिंह को चनुपम गुच्छरामिको हृदय ह्वम कर लिया था परतः उन्हें अपने हाथमें रखा। १९०० ई०में महम्मद ईजाका पदच्युत होनेके बाद राजभक्त बल्लुका भार केटि मने अपने को हाथमें लिया। १९०२ ई०में परिद्वयं न समिति स्थापित करके यह नियम प्राप्त हुआ कि कम्पनीके पञ्चोन कोई मनुष्य इजारा नहीं ले सकता। राजभक्त बल्लुके लिये मित्र मित्र प्रदेशों में प्रादेमिक्-समिति स्थापित हुई। बल्लुका सुर्मिदा-बाद, बर्हमान, का-का घोर दिनात्रुर इन का निमातामें समिति कायम हुई। कर्ष्य चारो निहुका मार केटि स साङ्गके ही हाथ था। कर्ष्य इन सुधाममें देवोसिंह को सुर्मिदाबाद प्रादेमिक्-समिति दीवानो पद पर निहुक दिया। सुर्मिदाबादको समितिमें कपर एक बरोड मय लक्ष रुपया बल्लु खरनेका भार था।

१९०२ ई०को २३वें मईको चम्पारण्य केन्दोबध

हुआ। यह बन्दोवस्त प्रंगरेजों के साथ ही किया गया। हेष्टिसने स्वयं खूब ज्यादा दर पर बन्दोवस्त करके प्रत्येक जिलेमें एक एक प्रंगरेज कलक्टर नियुक्त किया और उन्होंने ऊपर राजस्व वसूलका कुल भार सौंपा। इसका फल यह हुआ, कि कलक्टरसाहब स्वयं हो वेड़े-मानी करके इजारा लेने लगे। बढोतरौ मासगुजारो जो कुछ वसूल होतो थे उसे वे कम्पनीको न दे कर स्वयं हड़प करने लगे। हेष्टिस भी इसमें कुछ कर न सकते, क्योंकि यदि वे उन्हें कुछ कहते भी तो उनको अपना हो पोल खुल जानेको सम्भावना थी। इसो डरसे वे उन्हें छेड़छाड़ नहीं करते थे। किन्तु राजस्व वसूल नहीं होनेसे घोरतर विपत्तको सम्भावना है, ऐसा स्थिर कर उन्होंने फिरसे इस काममें देवीसिंह लोको को नियुक्त किया और उनको देखभालके लिये छः समितियां स्थापित हुईं। सुर्गिदावादमें देवीसिंह और कलकत्तेमें हेष्टिसके प्रिय पात्र गङ्गागोविन्दसिंह दोबान बनाये गये।

गङ्गागोविन्दसिंह ही हेष्टिसके स्वरूप थे। परिदर्शन-समितिके सभापति हो कर हेष्टिस पूर्णिया देखने गये। गङ्गागोविन्द भी हेष्टिसके साथ थे। देवीसिंहको गङ्गागोविन्द पहिले हीसे जानते थे। किसी कारणवश दोनोंमें मनोमालिन्य हो गया। देवीसिंहको जब वह मालूम हुआ, कि हेष्टिस गङ्गागोविन्दसिंहके परामर्शानुसार सभी काम कर रहे हैं, तब वे भी गङ्गागोविन्दकी शरणमें पहुँचे। गङ्गाजल छू कर उन दोनोंने आपसमें मित्रता कर ली। गङ्गागोविन्दसिंहको सुफारिगसे ही देवीसिंह पूर्णियासे निकाल दिये जाने पर भी १७७२ ई०में सुर्गिदावादको प्रादेशिक-समितिके दोबान बनाये गये।

दोबान हो कर देवीसिंहने देखा कि प्रादेशिक-समितिके सभ्यगण उन पर अपना दबाव डाल सकते हैं ऐसा होनेसे अर्थसंचय करनेमें उन्हें बाधा पहुँच सकती है। यह सोच कर वे कूटनीति अथवा स्वनपूर्वक उन्हें खूब करके अपना काम निकाल लेनेमें तत्पर हुए। प्रादेशिक-समितिके सभी सभ्यगण अल्पवयस्क, कार्यानभिन्न और आमोदप्रिय थे। देवीसिंह तो यही चाहते

हो थे। वे उन्हें खुश करके लिये उत्तमोत्तम विनायती गराव और अच्छो औरतको ला कर उन्हें देने लगे। अपरिणत लोगमस्तिष्क प्रंगरेजदल इन्द्रियदृष्टिके उपकरणस्वरूप उन सब भेंटोंको भादर ग्रहण करने लगे। देवीसिंहको इच्छा पूरा हुई, प्रंगरेजदल घामोद प्रमोदमें उलफे रहते थे। अब देवीसिंह बिना रोकटोकके राजस्व वसूल करने और अपना पेट भरने लगे।

किन्तु निरवच्छिन्न सुखभोग किसीके भाग्यमें वदान था। समितिके प्रंगरेजदल राजस्व सम्बन्धोय हिसाब-पत्र वा नियमावली कुछ भी समझते न थे और न समझनेको कोशिश ही करते थे। कुछ दिन बाद रिगवतका बँटवारा ठाकवे न होनेके कारण आपसमें विरोध शुरू हो गया। क्रमशः यह विवाद इतनी दूर तक बढ़ गया, कि १७७८ ई०में समितिके सभ्य लोगोंने देवीसिंहको पदच्युत करनका संकल्प किया। देवीसिंहने कोई दूसरा उपाय न देख गङ्गागोविन्दसिंहको शरण ली।

हेष्टिसने कुछ वर्षोंसे प्रादेशिक-राजस्व-समिति द्वारा अपना स्वार्थ सिद्ध होता न देख प्रादेशिक समितिको उठा देनेके लिये विलायत कोर्ट-आफ-डिरेक्टरोंको लिख भेजा। किन्तु उनका प्रस्ताव अश्वोकार किया गया। इस पर हेष्टिस बड़े असमञ्जसमें पहुँ गये। इधर कोई उपाय नहीं करनेसे देवीसिंहके जैसा कामठ मनुष्य हाथसे जाता है, यह सोचकर हेष्टिस और भी उद्दिग्ध हुए। इस समय एक सुयोग उपस्थित हुआ।

१७८० ई०में दिनाजपुरके राजा एक दत्तकपुत्र ग्रहण कर परलोकको सिधारे। राजाके भाई और दत्तकपुत्र उत्तराधिकारो होनेके लिये आपसमें लड़ने लगे। हेष्टिसने नाबालिग दत्तकपुत्रको ही उत्तराधिकारो कायम किया और इस मेहनतानेमें उन्हें चार लाख रुपये मिले। राजाको नाबालिग जान कर हेष्टिसने उसके राज्यकी सुव्यवस्था और रक्षणाविवरणका भार गुडलाड नामक एक अपरिणत वयस्क युवकके हाथ सुपुर्द किया। इसो मौकेमें उन्होंने देवीसिंहको गुडलाड साहबके दोबान बना कर उन्हें राजस्व समितिके कोपसे बचाया।

गुडलाड साहबके हाथ केवल राज्य-रक्षणका भार हो नहीं था, बल्कि उसके साथ साथ वे रङ्गपुर और

दिनात्रपुर त्रिभिन्ने कनकपुरो एव पर मो निवृत्त हुए थे ।

इस बार सोय्य मनुष्यांका जोड़ा था । इन दोनोंमें राजाके पुत्रने कर्मचारियोंको बरपाया और उनके स्थान पर नये कर्मचारियोंको निवृत्त किया । राजाका बहुत अच्छे प्रथा दिया गया । बर्मानुष्ठान पादिके नियम राजाको कुछ पालते थे, वह बन्द कर दिया गया । राजाको मानिक मोनक को रुपये जो गुप्तार्थके नियम मिलते थे वह जमा कर कर धो बनाया गया । यहाँ तक कि अब कर्मो राजाको प्यता का पन्थ कोई प्राणीय पाले थे, तो उन्हें राज-भवनमें खानेको नहीं मिलता था । पूर्वियार्थमें देवीसिंह को अनुष्ठित धम्माचार बहानो बचके किमोके भी जिजा न हो । लमो देवीसिंह के पन्थो न ही कर दिनात्रपुर (इ-पुर) तरसे कायि लडा ।

त्रिस पायदावे लोग काया करते थे, कान्ठममें वह सब कायेंके कर्म परिचय हो गई । १७८१ ई०में देवीसिंह ने कर्मों करके एक सुमनमानके काम पर राजपुर दिनात्रपुर और एटाकपुरका प्रभारा किया । प्रभारा लेनेके साथ ही लमोने यमो कर्मोदारीके प्यादा जया देने के नियम तनव किया । एकर १७७२ ई०के दुमिचये कोकन प्यादा प्रभारा ही कर्मोके कर्मोदारीमें पाय कर्म गई थी । फिर १७७२ ई०में पालमाना बन्दोपनाके समय ईदिक मने पबिक दर पर कर्मोने लमो पड़ी थी, काकि कोई भी पेटिक कर्मो दारीका परिचय गयो कर मकते थे । किन्तु निम बढोतरो पर कर्मोने लो गई थी, लतना के कर्मोको पुचा गयी सकते थे, जो मान कृत्र न कुछ बाकी पड़ हो जाता था । यही पन्थोमें कर्मोको किरके ईदिक ही कर्मोके कर्मो दार सोय्य बंधे देनमें किन्तु न पन्थ-मर्त्य थे । पन्थ यह हुआ, कि जो पन्थो कर्मोने देनेके इनकार गये उन्हें देवीसिंह इन पन्थोका कर बंद कर दिया । फिर त्रिभन्ने इन्धोका देना बाधा के भा बाधो राज्म बुदावे बिना इच्छोका ही नहीं पचत थे । इस कारण के भी बंद कर निवे मने । किन्तो पोर पन्था पानि रवा कानेका पन्थ न टपे के बचके नव कर्मोने पन करनेको बाध्य हुए ।

कर्मोने कर्मोके कुछ निम मान ही देवादि कर्मो कर्मचारियोंके पन्थाना बण्ड करना मन्ड कर दिया ।

उस समय नारायणो देवीका प्रचार था । कर्मोके देवीके चिन्ताके एक रुपये पर बडा कमाया गया । इस प्रकारके राज्म पोर मो बड़ गया, कोई मो बचे हुआ देनमें मर्त्य न हुए । कर्मो दार पोर प्रभा दोनों हो हत हो कर देवीसिंह के कठोर शासनकालो पन्थिमें बाधा होने लगे । दिनात्रपुरमें बाँटो पोर हाडाकार मन्थ भया । उस समय पायबलके प्रभा कारणानर नहीं था । बिना इतकाने बरोंमें के टो रखे जाते थे जो । वहीं पहरा बैठता था । देवीसिंह के प्रतापके क्वा बनेका गयो कर्मो एक ही रखोके बांध कर रखे गये । कर्मोने जन काप्यार्थमें इन्धोको सु काय्य न रही, तब भी पान्यनमें बचरो हुई महीक लयर रखे गये ।

देवीसिंहको दिनात्रपुरमें जो रचना पढ़ता था । कबकरके दोशान, राजा तथा राज्यको देवमानका भार लमो पर सुपुर्द था । देखा रहति भी थे राजपुर नहीं आ सकते थे । इस कारण कर्मोने कर्मोप्रसाद नामक एक प्रतिनिधिको राजपुर भेज दिया । प्रतिनिधि द्वारा जब कर्मोदारीको कर इच्छिका शान मान्युम हुआ, तब ही देवीसिंह के कर्मोप था वह पयना पयना पुचका रोम कर्म । कर्मोने यह मान मान्युवारी बर्मानके निधि कर दिया था ।

देवीसिंह ने कर्मोको पात्राको कर्मोने कर लन मन्थ कर्मोदारीको बंद करके राजपुर भेज दिया पोर पयन प्रतिनिधिमें कर्मोप्रसादके बरके करपानको निवृत्त किया ।

हरामने वहाँ कर्मोप रखी न रखी कर्मो कर्मो दारो को लख को । वह कोई कर्मोदारीको कर्मोने पन्थि करने के इन्कार मने । इस पर हरामने कर्मो कर्मो देवीको पात्रा दे हो । फिर बडा का पन्थोने लुप कर्मोचारियोंके लमो बँध पर चका लमरको परिचयमा कर्नाई । इस प्रकारका यदि कामात्रिक दण्ड होना तो उन्हें कानिच्य न होना पड़ना । दो बार कर्मोदारीकी देया दुठया देक हीच कर्मो कर्मोदारीमें कर्मोने पन्थि कर दो । कर्मोने देवीके बाट हो के देया बलन करने लगे । कोई भी देया दे न लने कर्मो दारीका कर्मोने कर्मोने नाममात्र दे कर देनाकि वह कर्मो कर्मोने कर्मोने लगी । बिचौक पात्र

चार पर तिरोह बंगाली प्रजाने मी एक बारक
किया बा ।

रमपुरका बिद्वान् जितना सङ्ग्रहमें मिटा जतनी
बुद्धी बात न मिटा । नसकता कौंसिने इस बिद्वान्-
का बारक जाननेके लिये पिटरसन साङ्गको र गपुरमें
गया । पिटरसन साङ्गने पा कर प्रमाण स एक करनेको
जितनी चेष्टाए की सब धरु' निश्चयो । फलमें
उकोने जसो दारो को उपस्थित होनेका इच्छाए दिया ।
पञ्चक्राम जसो दार देस छोड़ कर भान मये पी एकके
सिवा और कोई जाजिर न हुआ । पिटरसन साङ्गने
ससका इच्छाए से कर उये शुद्धाङ्ग साङ्गके पास भोज
दिया और शुद्धाङ्ग साङ्गने मी उये देवीसिंह के जिधों
कर दिया । एउके बाद और कोई मी साक्ष्य देनेको जाजिर
न हुआ । पिटरसन साङ्गके जसा-बसुलको बाबीबी
तलब करनी पर देबोसिंह जने उये दानिष्ठ किया । शुद्ध
साङ्ग साङ्गने ससको लज्ज रक्षमका बहाना करके उये
से लिया और फिर मोटा कर न दिया । एन तरह जामा
प्रकारके धरु' मनोरथ हो कर मी पिटरसन साङ्गको
सब बर्ति मासूस हो गई, और उकीने पपमा मन्थय
सिख भेजा । जेटि स साङ्गने पिटरसन साङ्गको
निप्याबादी समझ कर एक नई जामायन १०८४ ई में
बिबाई । १०८५ ई०में जेटि स साङ्ग भारत छोड़ कर
चली गये ।

साङ्ग जल बानिध भारतवर्षमें गहनर सीमरु हो
कर पाये । उकीने पा कर र गपुर बिद्वान्के विषयमें
धर्मिक बातें सुनी । १०८८ ई०में जमीनरका काम मीत्र
हुया । देबोसिंह जका बाड़े रखनके लिये हो, बाड़
और दूधरा बाई बारक हो बहुतनी भूठो सवाबो
दा । फलतः देबोसिंहका पपराष धावित न हुआ, हर
शामने ही पत्थाचार किया है यही प्रमाणित हुआ ।
हरराम एक वय के लिये कैद किये गये । देबोसिंहका
पपराष प्रमाणित नहीं होमि पर मी जाड' जर्म बानिधने
उकीं बन्धनीको नीचराये मदादि सिधे जटा दिया ।
देबोसिंह जके कर्म-श्रीवन्डा यही पर मीत्र हुआ ।

जोवनके मिय साङ्ग तब देवीसिंह स मुग्घिदाबादके
धन्तर्मन मणीपुर नामक स्थानमें पा कर रहने लगे ।

मियावस्तामें उर्ध्वनि धर्मिक दान और प्रतिष्ठा को यो ।
इसो मनोपुरमें देवीसिंह जके सत्पराधिकारोमप प्राप्त मी
वास करतें हैं ।

देबोसिंह—हिन्दीके एक कवि । देवीसिंह राजा देबो ।

देबोसिंह राजा—हिन्दोके एक कवि । जे कन्दरोके रहने
जाने थे । उकीने मुग्घि मनोका, पासुबोटबिनास, रक्ष
मोका देबोसिंह बिक्राम, पतुं दबिबास और बारहमासी
नामक पन्ध लिखे ।

देबोसूत्र (५० श्लो०) देखा: तद्-दिवताक लूत शक-
समुदाय:। शब्दोदमे माकलसोइताके मज्ज पञ्जल प्रविष्ट
देबो-दिवताक लूतमेद । शब्दोद माकलस जितका एक
पत्र जिसका देवतादेबो है ।

देबोमाहात्म्य पठते समय पढ़ने पविष्ठक, तब सब
घता और सबके पोखे देबोसूत्र पढ़ना बाहिये देबो-
सूत्र पाठ किये बिना अष्टोपाठ निष्कृत होता है ।

देव (१० पु०) दिव-शब्द । देवर, पतिता छोटा भाई ।
देवेश (५० पु०) देव यजते यज्ञ-रूप । देवब्रह्मा, यह
जिसने देवताकोका यज्ञ किया हो ।

देवलय (५० पु०) देवताके इच्छा पूष्ण । सुराचार्य उच
र्यति ।

देवभू (५० पु०) देवान् रन्द्र ६ तत् । सुरैन्द्र देव
तापोके राजा इन्द्र ।

देवभू- कर्त एक स सक्त पन्धकारी जे नाम । १ त्वाग
राजाउकके मर्षणा २ स इतमुद्राकभीके रचयिता ।
१ स्नातभूतिबकामके रचयिता । जे मीबधिन्द्रपरश्वती और
धर्मैन्द्र मुग्घिके मियाप थे । इ ययोवररास नामक जैन-
पन्धके रचयिता ।

देवेन्द्रकीर्ति— मंगानिरकी महोके एक महारथ । जे सं०
१६६२में बियमान थे । उकीने पादिसिद्धरोषापन,
बुहाटम्युषापन, मन्धोयगविधान, पुष्पाश्रमिबिधान,
कौबनशान्दायपोषापन, पन्धवतोषापन, जम्पाचमन्दितो
षापन, मियापहारपूजाविधान मियापाम्निषोषापन,
मन्धोयरतनुपूजा, सिद्धचतुपूजा, रैदमतकका औरजन
कथा बोय नामक जैन पन्था का रचना को है ।

समा ज्ञायम को जिनका नाम रखा The society for the acquisition of general knowledge यहाँ "साधारण ज्ञानोपासिका समा" । १८३८ ई०, ता० १६ मईने इसका काम चालू हुआ। करीब २०० पुरुष इसकी समासदृष्टि, जिनमें श्रीमान् द्वैतसूत्रनाथ अक्षर भी शामिल थे।

पहले ब्राह्मणमात्र और तत्त्वबोधको समा' पुरुष पुरुष को। १८४१ ई०में दोनो समाए द्वैतसूत्रनाथके लक्ष्यमें एक ही मई और लोरेने अपना कार्य करने लगे। १८४३ ई०में "तत्त्वबोधिनोपनिषत्" प्रकाशित हुई, जो एक भी विद्यमान है। अब समाका प्रायः सम्पूर्ण कार्य प्रत्यक्ष या परीक्षणात्मक द्वैतसूत्रनाथ को करने लगे। स्वर्णिय पञ्चसहस्रादिको आपने पत्रिकाका सम्पादन नियुक्त किया। पत्रिकामें मासिक, विज्ञान, इतिहास, दर्शन, जीवनचरित आदि ज्ञाना विषयके पण्डित पण्डित लेख प्रकाशित होने लगे। शोध ही इसकी ध्येयको उन्नति कर ली।

इसके बाद आपने एक "ग्रन्थ समा" (Literary Committee) कावम को जिसके ईश्वरचन्द्र विद्यानाथ आदि प्रमुख विद्वान् समासदृष्टि थे। जो कुछ ग्रन्थ या लेख आदि प्रकाशित होने थे, वे सब पहले इस समा द्वारा पास करा लिये जाते थे।

१८४४ ई०में पत्रिकाका कार्यभार आपने अपने लखर से लिया और ज्ञाना प्रचारमें उसको उन्नति को। बादमें बंगाली धर्ममें आपने "तत्त्वबोधिनो पाठशाला" कावित को; जो तीन बार वर्ष चल कर बन्द हो गई।

आपके विद्वान् आपकी प्रसिद्धिद्वाराका काम विद्वान्के जिन्य बहुत कोशिश को, मगर आपका उस तरह बुरा भी ध्यान न था, जिन्य कर आप केद्वारा पत्रिके लिये निजल जाया करते थे। आपने स्वर्णिय पञ्चसहस्र विद्वान्, योग्या और स्वर्णिय गणेशचन्द्र महाशयको अपने लखरमें वेद-वेदाङ्गके पञ्चयनार्थ कायी भेजा था।

एक समय (१८४३ ई०) डच शासन बड़े जोरोंमें ईशान् धर्मका प्रचार कर रहे थे। जो एक मद्र परिवार कर ईशान् को लगे तो ब्राह्मणमात्रमें इसका आन्दोलन हुआ। आपने ईशान्के विरुद्ध व्यापार टिप्पण्ये और जनक

कीर्तमें बहुत कुछ बाधा डाली। इस लक्ष्यमें प्रथम को कर कायसम्पन्नमात्रपति राजा राजा-भक्तदेव बहादुर ने आपको "Defender of the national religion" (जातीय धर्मके रक्षक)को उपाधि दी थी। इससे बाद आपने "हिन्दू जितो विद्यालय"को स्थापना को। कुछ वर्ष बाद लोयाप्यसभे देखाकिया जो जर्मने इसका काम ठोका हो गया था।

इसके बाद आपने जागीरे सीटें हुए परिष्कृतिसे धार प्राप्तोचना करके ब्राह्मणमात्रके कुछ ज्ञान विद्वान्का परिहार किया। इसी वर्ष आपने स्वर्णदेवका बङ्गला भाषामें अनुवाद करना शुरू किया था; हिन्दू मेष मूलके समाए स्वर्णदेव प्रकट होने पर आपने यह कार्य बन्द कर दिया।

उपर ब्राह्मणों ने व्याजवि जिनसे लोयोमें मतभेद होने लगे और समय कार्यके लक्ष्य प्रयत्निका सूचना हुई। यह सब देख मात्र कर १८३३ ई०में आप याग साधनके लिये विद्यालयको बन्द लिये। इसके एक वर्ष बाद ही सिपाहीविद्रोह उपलक्षित हुआ। १८३८ ई०में विशेष-ज्ञानिक निर्वाचित होने पर आप लखरके पत्रों और ब्राह्मणमका बगलान दिया। इसा समय स्वर्णिय बंगल चन्द्रमनने ब्राह्मणमात्रमें धर्म दाग किया। १८४१ ई० में आपको बङ्गला विवाह हुआ जिसने अपने ध्येयको लक्ष हिन्दू-पण्डितका प्रथम लक्ष्यप्राप्त किया। इन्हीं साल "साधारण ब्राह्मणमात्र"में आपको "प्रभाषाचार्य" की उपाधि प्रदान को।

धर्मचन्द्र बेलके साथ आपकी अनुसू मीति थी; किन्तु वह कायो न हुई। उपवास-न स्नानको न कर दोनों में मतभेद हो गया। धर्मचन्द्र चाहते थे कि किसी भी उपवासकारण आपका काम न लिया जाय; किन्तु देव सून्याय सबको शामिल रूप कर काम करना चाहते थे। द्वैतसूत्रनाथ बंगलचन्द्रके समासक आपसे जनकर पाइय करनेके लिये अनुसू लिये। इस विरुद्धा का विरोधात्मिक प्रयत्नित हो लगे। धर्मचन्द्रने "नवविधान" नाम रूप कर एक पुरुष ब्राह्मणमात्र ही स्थापना को कर भा मीत्र, ई। १८४७ ई० तक है।

धर्मचन्द्रने "रक्षितम मिरर नामक पत्र"को प्रक

को इस्तगत कर लिया। इस पर देवेन्द्रनाथने "निगनल-पिपर" नामक अंग्रेजी संवादपत्र निकालना शुरू कर दिया। इसके बाद आपने फिर हिमालयको प्रस्थान किया। वस, इसी समयमें आपने सांसारिक सभी कार्योंमें अपना हाथ खींच लिया, देशभ्रमण करने लगे। छां, समाजके कार्यकर्त्ताओंको सम्मति प्राप्त अवश्य दिया करते थे; सब काम आप ही को अनुमति अनुसार हुआ करते थे।

१८७२ ई०में, जनककोठेमें जातीय सभा (National Society) का एक अधिवेशन हुआ, जिसके आप सभापति हुए। १८८६ ई०में जब आप हुगली जिलेके बु'बुड़ा नामक स्थानमें रहते थे, साधारण ब्राह्मणसमाजमें आपको अभिनन्दन किया, जिसके उत्तरमें आपने उपदेशपूर्ण उपहार प्रदान किया। इसके बाद आप बीमार हो गये; जैनीकी आशा न होने पर भी इस बार आप बच गये।

इसके बाद आपने अपने जीवनके शेष भागका एक कार्य किया। १८८८ ई०के फाल्गुन मासमें आपने सर्व-साधारणके उपकारार्थ वीरभूम जिलेके बोलपुर नामक स्थानमें एक आश्रमकी स्थापना की, जिसमें अब भी "गान्तिनिकेतन"के नामसे अपना अस्तित्व कायम रखा है। यहां देवेन्द्रनाथके दोचारहणके दिन (बंगला ता० ७ चौपकी) प्रति वर्ष उत्सव हुआ करता है।

इसके निवा आपने कई एत्र पुस्तक भी रची है। जो छोटी होने पर भी सारवान् और गम्भीरताको लिए हुए है। जैसे—'श्रावतक्षविव्या, ब्राह्मधर्मका मत और विग्वाम ज्ञान और धर्मकी उत्पत्ति, परलोक और मुक्ति इत्यादि।' देवेन्द्रमुनीश्वर—रुद्रपक्षीयगच्छके एक ग्रन्थकार। ये महात्मनके गिष्य थे। इन्होंने अपने भाई भोला और स्वनामाके अनुगोषमें प्रयात्तरत्नमालावृत्तिकी रचना की।

देवेन्द्रसिंह—अश्वलागच्छके एक विद्यात जैनाचार्य। ये अजितसिंहसूरिके गिष्य तथा धर्मप्रमके गुरु थे। मेरु-तुद्रके पट्टपट्टि अनुसार इनका संघत् १२८८ में जन्म, १३०६ में टीका, १३२३ में सूरिपद, १३३८ में गच्छेश्वर तथा संघत् १३०१ में मृत्यु हुई थी।

देवेन्द्रसूरि—१ एक विद्यात जैनाचार्य। ये जगन्नाथके

गिष्य तथा विद्यानन्दके गुरु थे। इन्होंने कर्मविपाक, कर्मसूत्र, बन्धन्वामित्व, पङ्गीतिक, यतक और सत्त-तिक नामक प्राकृत भाषाके छः कर्मग्रन्थके साथ साथ प्रथम पांच ग्रन्थोंको टीका, आठदिनकृत्य और आषक-दिनकृत्यका मूल तथा टीकाकी रचना की। इन्होंने सप्ततिकके शेष भागमें लिखा है, कि उक्त ग्रन्थ चन्द्रमह-त्तरका बनाया हुआ है; किन्तु इन्होंने इसमें केवल १८ कहानियां योग की हैं।

२ तपागच्छके एक पटाचार्य। पटावलीके देवनेसे जाना जाता है, कि ये प्रतीर्थ विजयचन्द्र वसुधासुके 'लैल्यकर्मकृत' मन्वी थे। इनके बनाये हुए कई ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं—आठदिनकृत्यसूत्रवृत्ति, नवकर्मग्रन्थपञ्चकसूत्र-वृत्ति, सुदर्शनचरित्र, त्रिभाष्य, योक्त्रपभवदेमान प्रकृति सूत्र। मालव्यमें संघत् १२२७को इन्होंने मानवलीला स्वरण की। इसके बाद इनके गिष्य नित्यानन्द सूरि-पदकी प्राप्ति हुए।

३ एक जैन ग्रन्थकार। इन्होंने २४० ई०में इम-चन्द्रके शब्दानुशासनकी लघुन्यासवृत्ति रची है।

देवेन्द्राश्रम—पुरश्चरणचन्द्रिकाके रचयिता। इनके गुरुका नाम विबुवेन्द्राश्रम था।

देवेग (सं० पु०) देवाना ईशः ६-तत्। १ देवनिग्रन्ता, देवताओंके राजा इन्द्र। २ विष्णु। ३ महादेव। ४ पर-मेश्वर। स्त्रियां डीप। ५ देवेशी, दुर्गा।

देवेशतीर्थ (सं० कौ०) तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम।

देवेश्य (सं० पु०) देवो अधिष्ठातृतया शिती शी-अच-अतुक्, सामानः। परमेश्वर, विष्णु।

देवेशी (सं० स्त्री०) १ पार्वती। २ देवी।

देशेश्वर (सं० पु०) देवाना ईश्वरः। १ महादेव।

२ एक प्राचीन कवि। इन्होंने गोविन्दराज, भोजप्रकृतिके नाम सप्तसूत्र किये हैं। ३ गद्वाटकप्रणेता। ४ कविकल्प-लताके रचयिता। ये वागभटके पुत्र थे।

देशेष्ट (सं० त्रि०) देवाना ईष्टः। १ देवताओंके प्रिय। (पु०) २ महासिद्ध। ३ गुण, लु, गुण, ल।

देशेष्टा (सं० स्त्री०) १ महासिद्धा, बड़ा विजोरा। २ यज्ञ-वीजपूरवृक्ष।

देशोत्तर (सं० पु०) देवताको अर्पित किया हुआ धर्म,

बहु सम्पत्ति को किसी देवताको नाम पर प्रकृत निष्काय ही गई हो और जो प्रतिष्ठित देवताको निम्न देवा लक्ष्मणवि तथा मन्दिर और पूज्यवादिना अर्घ्य चरानर्तिमें समती हो। इससे सिवा देवप्रतिमाको अर्घ्यादि निष्कायिक वा पञ्चद्वारादिको भी देवीशर कहते हैं।

बहुशरदेवमें देवीशर मूलसम्पत्ति बहुत है। प्रथमोत्तर मारुतमें देवमन्दिरादिनी स तथा पवित्र है नहीं, पर जन्ममें प्रतिहाता जोय मूलसम्पत्तिनी अपिचा नष्ट हो पवित्र दान कर मने हैं। देवमन्दिरको पापसे जन्मो यमी देवताको नाम पर जमींदारी करोटी प्राती है, बिन्दु साधारणतः १५ सव जमा दारिद्र्यको भी लोग देवीशर सम्पत्तिको जैसा मारुत है।

प्रतिहाताका दान नहीं होनेसे देवीशर नहीं होगा जो नहीं कोई भी अन्तर प्रतिष्ठित देवता या प्राचीन देवताको बहुशरी दान कर दे, बहो देवीशर कहलावेगा।

पहले इस प्रकारकी प्रकृत मूलसम्पत्तिका कर राज सरकारमें नहीं देना पड़ता था। १९०१ ई.में ई-१ विधवा सम्पत्तिको उक्त बहुशर, विहार और उड़ोवाको दीवानी मिलो तब बहु भी इस प्रकारकी जमीनसे कर नहीं लेती हो। बिन्दु देवानी लेनेके बादसे सम्पत्तिले ऐसी जमीन पर कर निर्धारित कर दिया। जर्मिक बिन्दु जमींदार वा जमी लोच प्राप्त भी देवता देवमन्दिर और मन्दिनी प्रतिष्ठासे समय मूलसम्पत्ति देवीशरसे जपमें दान करती हैं नहीं, मगर उक्त राजस्वरकारमें कर देना पड़ता है। पर हां, जो माधुपुरारो के जलसे लेते हैं, जसे के निम्नमें जहाँ न कर उक्त देवमन्दिरमें जहाँ देते हैं जिनमें उक्तमें बहु मूलि दान कर दो है।

जमी देवीशर-सम्पत्तिको देवमान दाता जपमें दान नहीं रखते। न जपने व शरीरोंके प्रतिष्ठित वा प्रतिष्ठित देवतासे बहुशरी को सम्पत्ति दान करते हैं, प्राय उक्तको देवमान दाता जप करते हैं। फिर जहाँ विधो साधारण देवमन्दिरमें तथा किसी इष्टरक प्रतिष्ठित देवमन्दिरमें जो सम्पत्ति दान को गई है वहाँ दाताको उक्तका कोई भार लेना नहीं पड़ता है।

जो सब मन्दिर बिना साक्षिकसे हैं अर्थात् जिन देव मन्दिरमें प्रतिष्ठाज्ञान तथा कोई स तब नहीं है वा

प्रतिहाताका उद्देश नहीं है, उक्त सब मन्दिरोंके देवी शरका रचनाकोच पुत्रागो वा महत्ता ही करते हैं। कई जगह महत्त लोग ऐसे हैं जो निम्नप्रथ विपयविरत सन्ध्याको योकोके होने पर भी देवमन्दिरको सम्पत्ति पा कर ऐसे निवहायज्ञ हो जाते हैं कि जन्मा साधारण व्यवहार ऐसे कर जन्मो दार जोय जातीं उ नहीं आटती हैं। ऐसे पञ्चाचारी महत्त जोय देवीशरको भायसे जपना जोय विभासजा जप चलाते हैं। महत्तोंके हम पुन्य-व्यवहारको रोक्नेसे लिये कोई सामाजिक विधि जर्त मान बिन्दु समाजमें हो नहीं है।

अपनिवृद्धि समय देवोद्देशसे प्रदत्त जन्मोंको 'देवता' कहते हैं। देवता देवता।

देवीपान (स० छी०) देवता लक्ष्य। देवतापो क बनीसे जो चार हैं, मन्दन, जैजराक, बैश्याज और सर्व तोमर। विद्याश्रीपके अनुहार चार देवीपानके नाम से हैं—बैश्याज, जैजराक मिश्रक और मिश्रकामण।

देवीपान (स० पु०) एक प्रकारका उपाय। इसमें रोगो पवित्र रचना है, सुसंज्ञित फूलोंकी मात्सा पड़ना है, पक्षि बन्द न हो करना और संज्ञित बोलना है। देवताके शोचसे यह रोग उत्पन्न जाता है। सुदृष्टमें मूलविद्यामें पमानुप प्रतिपिबक पनगत वसना उक्त है।

देवीकृ (स० छी०) देवता जोयः ६-भत्। देवमान, सुभिक पर्यंत।

देव (स० छी०) देवज भाव जल न दे वाहुकवापु न हविः। देवज।

देवा (स० जो०) १-सुरा। २-जाड़ी चुप।
देवुष्पाद (स० पु०) एक प्रकारका उपाय या रोग। इसमें पञ्चाक्षत जोता है शरीर सूख जाता है, सुष्ट होर जाय पर्य-देवुं हो प्राति हैं तथा श्मशानस्थि जाती रहती है। जहाँ जहाँ ऐसे विद्याजगो देवो वा माधुक्वा जो कहते हैं।

देय (स० पु०) दिगति दिग्-अच। १ भूगोमानामत विमायमिद इकोका यह विमाय विरुष्वा कोई पन्म नाम हो विरुषके पन्मपरंत कई प्राक्त नमर, धाम पादि हो, जगपद। देय-तोन प्रकारके होते हैं—शास्त्रस्य जनुप और साधारण। इससे सिवा और तोन प्रकारके देय

माने गये हैं। देवमाहक, नदीमाहक और सभयमाहक।
पर्याय—जनपद, नोदत, विषय, उपवर्त्तन, प्रदेश, और
राष्ट्र। (ग्रन्थर०) देशका विषय वर्णन करते समय इन सब
विषयोंके वर्णन करने होते हैं, रत्न, खान, द्रव्य, पत्थ,
भान्य, कर्मोद्भव, दुर्ग, ग्राम, जनाधिक्य, नदीमाहकादि,
रत्ता, वृक्ष, सरोवर, पशुपुष्टि, क्षेत्र, अरघट, कंदार, ग्रामियो-
सुख और विश्रम। (ऋषिकल्पलता) २ रागविशेष। यह
किमोके मतसे तो सम्पूर्ण जातिका और किमोके मतसे
पाहल या ऋ वर्जित है।

स्वरग्राम - ग म प ध नि स० गः :

अथवा—ग म प ध नि स ऋ गः :

अथवा—स० ग म प ध नि सः :

सृष्टि—“ वास्फोटनाविष्कृतो महर्षः :

नियुद्धगोले हि विशालवाहुः ।

प्रांशुप्रचण्डश्च तिहेमगौरः

देशाद्वराम स हि महरामः ॥” (संगीतर०)

३ विस्तार, जिसके भीतर सब कुछ है, इति। न्याय वा
वैशेषिकके मतानुसार जिससे प्रागे, पोछे, ऊपर, नीचे,
उत्तर-दक्षिण आदिका प्रत्यय होता है वह देश वा
दिग्द्रव्य कहलाता है। कालके समान संख्या, परिमाण,
पृथक्त्व, संयोग और विभाग देशके भी गुण है। देशके
विभु और एक होने पर भो उपाधिके भेदसे उत्तर-दक्षिण,
प्रागे पोछे आदि भेद माने गये हैं। देश-सम्बन्धी 'पूर्व'
और 'पर'का विपर्यय ही सकता है, लेकिन काल
सम्बन्धी पूर्वोत्तरका विपर्यय नहीं हो सकता। पश्चिमो
दार्श निकोमि कान्ट आदिने देशको अस्तःकरणका आरोप
मात्र कहा है, न कि इसे मनसे आहरकी कोई वस्तु माना
है। ४ शरीरका कोई अङ्ग। ५ जैन शास्त्रानुसार चौथा
पञ्चक। इसके द्वारा अर्थालुसंधान करके तपस्या अर्थात्
गुरु, जम, गुहा, भ्रमण और रुद्रकी वृद्धि होती है। ६
एक ही राजा या शासकके अधीन भूभाग, राष्ट्र। ७ स्थान,
जगह।

देशक (स० त्रि०) दिशतोति दिश-खुल्ल। शास्ता, उप-
टेटा, उपदेश करनेवाला।

देशकन्तो (स० स्त्री०) एक रागिणी। इसमें नाचार
कीमल और वाकी सब स्वर शुद्ध लगते हैं।

देशकार—सम्पूर्ण जातीय राग। यह सबेरे एक दण्डसे
पाँच दण्ड टिन चढ़े तक गाया जाता है यह राग परज,
मोरठ और सरस्वतीके मेलसे बनता है। यह दोपक राग-
का पुत्र माना जाता है। इसका स्वरग्राम इस प्रकार है—
स ऋ ग म प ध नि +

अथवा—ध नि स ऋ ग म प +

देशकारी (स० स्त्री०) रागिणीविशेष। यह दशुमत्के
मतसे मेघरागकी पत्नी और किसी किसीके मतसे
हिंदोल रागकी पत्नी मानी जाती है। यह सम्पूर्ण
जातिकी है। इसका स्वरग्राम इस प्रकार है—

स ऋ ग म प ध नि स +

इसके गानेका काल वर्षाऋतुका निशांत वा प्रातः-
काल है।

देशगन्धार (स० पु०) सबेरे एक दण्डसे पाँच दण्ड तक
गाये जानिका एक राग।

देशचारित्र (स० पु०) जैन शास्त्रानुसार गार्हस्थ्य धर्म।
इसके वारह भेद हैं—(१) प्राणातिपातविरमणव्रत, (२)
स्थूलमृपावादविरमणव्रत, (३) द्रूलभ्रदत्तदानविरमण-
व्रत, (४) मैथुनविरमणव्रत, (५) स्थूलपरिग्रहविर-
मणव्रत, (६) दिशपरिमाणव्रत, (७) भोगोपभोग-
विरमणव्रत, (८) अनर्थदण्डविरमणव्रत, (९) साम-
यिकव्रत, (१०) दिशावकाशिकव्रत, (११) पोषघोष-
वासव्रत, (१२) अतिविषय विभागव्रत।

देशज (स० त्रि०) देश जन ज। देशजात, देशमें उत्पन्न।
देशज (हि० पु०) शब्दके तीन विभागोंमेंसे एक, वह
शब्द जो न संस्कृत हो, न संस्कृतका अपभ्रंश हो
वल्कि किसी प्रदेशमें लोगोंकी बोल-चालसे आपसे आप
निकल गया हो।

देशज्ञ (स० पु०) वह जो देशका हाल जानता हो।
देशधर्म (स० पु०) देशानुरूप; धर्मः। देशोचित धर्म,
देशको रीतिनीति आचार व्यवहार। जिस देशमें जैसा
आचरण प्रचलित रहे, वही उस देशका धर्म है। देश-
धर्म परित्याग नहीं करना चाहिये, किन्तु देशाचारके
साथ यदि धर्मशास्त्रका विरोध उपस्थित हो, तो धर्म-
शास्त्रका मत ग्रहण करना उचित है। किन्तु जहाँ
देशधर्म पालन करनेमें धर्मशास्त्रका कोई नियम उल्लंघन

नहीं होता हो, वहाँ रियासत प्रति-व्यसन करना ही कर्त्तव्य है।

देवना (स० श्री०) दिग्-दिग् सुष् टाय, । निवेष विधि प्रयति ।

देवनिष्ठाका (वि० पु०) देवसे निकाल दिग् जानेका दण्ड ।

देवनिर्णय (स० पु०) देवसे निर्णय । देवनिष्पन्न । देवपरिनिष्कृत (स० सि०) देविन परिनिष्कृत इ तत् । धर्म व्यापी, जो सब जगद धर्म गया हो ।

देवपात्री—रामित्रीविधिय, देवकारी रामित्रीका रूपय नाम ।

देवबन्धु विश्वरंजन दास—सनातन प्रसिद्ध देवनाथक । १ नवम्बर सन् १८०० ई०को कलकत्ता प्लेजडाया स्कोट्रमें पापका जन्म हुआ था। सुवनमोहन दास पापके पिता थे। उनका पादि निवास विजयपुरके पन्थालत सिद्धि बाग धाममें था। विजयपुरके राजा दामय य एक समस्त पूब बहूका शासन करती थे।

विश्वरंजन अपने पिताके द्वितीय पुत्र थे। पापके जन्मके कुछ समय बाद ही सुवन दास मरानेपुरमें जा कर रहने लगे। सुवनमोहन कलकत्ता आईकोर्टके नामी बखोब थे। उन्होंने कुछ समाचारपर्यन्त सन्धाहन में ही बड़ी योग्यता दिखाई जो। सुवनमोहन बहुत ही धर्मिक प्रकृतिके, ईश्वरी, अष्टबादो शेर बड़े दानो पुरय थे। अपने दानमोक्षताके कारण जो वे सदैव श्रेष्ठ-प्रसन्न रहे और एकमें दिवाधिया होना पड़ा। अपने बंशको इस परम्परा, इन सन्धारों और सन्धारोंका देवबन्धुके शरित पर भारी प्रमान पड़ा। कहावत है, "श्रीगङ्गा विरवाकके होत श्रीकर्म पात।" वि० पार० दामयके जन्ममें ही यह भासुम हो गया था कि वे धारी जब कर बहुत बड़े धान्यको होंगे। सुमित्तित परिवारमें जन्म होनेके कारण उनको यिवा हीनाका समुचित प्रबन्ध किया गया था। आपने मरानेपुरके लन्दन-मियनरी-सोसाइटीके स्कुलके एण्डेस पाठ किया और १८८०में कलकत्तेके प्रेसिडेन्सी कालेजमें बी० ए० पाठ किया। कालिजमें आपको विधि पढिदिष्टि हो। आप प्रेसिडेन्सी कालेजको आइल्युवभाके प्रधान कार्यकर्त्ता

थे। एही समाने देवबन्धुने पहले पदस व्याख्यान देना खोला था। बादमें देवबन्धु पाद० वि० एल० को परोवा दिनेके विद्ये विहायत मय। जिन दिनों पाप निजिन लभियकी परीक्षाकी तैयारिया कर रहे थे उन दिनों कर्षिक दादा भाई गोरुको पाठि यामिष्कको मीस्वराते विद्ये लड़े हुए थे। वि० पार० दामयने चारों पोर बूम पुम कर दादामाईके पक्षमें बहूतार्थ दों। विहायतके कई समाचार पर्यन्त पापको इन बहूतार्थोंको सुनकर लड़े प्रय छा की। १८८२ ई०में पापिया मीष्कके श्रेष्ठ निकसियन नामके एक मेम्बरने अपने भापपके बहूत-सुमकमानोंके प्रति कुछ कुवाक लड़े। इस पर देवबन्धुने लन्दनके एकमट जालमें एक समा करके इन भापपकी बहुत ही तीव्र आलोचना की। जन्मसमय भारी धान्योहन लठ लड़ा हुआ। पन्थमें एडवोकेटके एक प्रधान मन्त्री मि० स्वाइटोनके समा पतिष्कमें शेरबहासमें एक विराट, सभा हुई जिसमें विन्ड मेकडियनको अपने अपराधके विद्ये धमा मंगानो पड़ी। इस धमामें देवबन्धुदामयने को भापप दिया था उसे सुन कर मि० स्वाइटोन तब सुण हो मरे थे। कहते हैं कि एही तीव्र भापपके कारण पापको सिद्धि सपिये धम होना पड़ा। लठ परोवा पाठ करने पर ही पापका नाम प्रवेगनर सिटके खाट दिया गया। तदनन्तर आपने इनरटम्पलमें बैरिटरो पकना धारण कर दिया और धोड़े जो दिनीके मन्थ सपकता प्राप्त कर पाप सपियेको लोटे।

१८८३ ई०में सन्देश लोड कर देवबन्धुदायने कलकत्ता आईकोर्टमें बैरिटरो धारण कर दो। यह लड़में पापको अपने योग्यताका सिद्धा जमानेमें बड़ी कठिनाई पड़ी। परन्तु जब सौरास्य अपरिबन्धोव पर बम-बाजोका सुबहमा चकिया मका तब देवबन्धुने सुबहमा अपने जालमें लिया और इधो सुबहमेंको शीतके पापको प्रतिभा जमकने लगे। एही जमकके पापके ज्ञानमें कठिनके कठिन सुबहमें धानि जमे। पकयलकारिये, नबरबन्धों और दूसरे राजनोतिक अपराधियोंके कई सुबहमेंको पापमें पड़े की। इनमेंके पबिकायमें पापको सपकतता मिली और इनमेंके पबिकाय जर्मियोय

संपने जोवनको कमी मी खण्ड विस्ताररूपमें देख
गईं पकते थे। परमसाहित्य और राजनीतिका भावके
रूपमें खूब समायेंग था।

बहुधाई साहित्यिक प्रभावमें पापको प्रतिमाका परि
चय पा कर मानसपुर, ठाका और मुन्नाखुमें पापको
बहुधा साहित्य सम्मेलनका विविध समापति बनाया था।
जब कभी पापको कुछ घबराह मिश्र जाता था तब पाप
साहित्यकी चर्चा करके भगवद् काम करते थे। यहाँ
तक कि साहित्यमें खलुके दो दिन पकते मी पापने
कविताकी रचना करके लवे चण्डी मी और कथाको
बुनाया था।

राजनीतिक जीवन—१८०१ ई०में बहजिमान होमिंके
बाद देवकी राजनीति धर्ममोति हो लगे। दादा मार
नोरोडीने १८०१ ई०को कलकत्ता-कार्यक्रममें जातीय
पक्षकी ओरसे स्वातंत्र्यसंग्रामकी इच्छा प्रकट की।
१८०१ ई०के पूर्व परबल कार्यवाही रातिमोति सुझे मर
कथावाचकके नाम को। देवकी लजबाजारके माल इस
का उतना सम्पर्क नहीं था। १८०१ ई०की १२ीं सुल्तान
को इस्तिम-संखित-एयोपोरोवेयन-पक्षमें कार्यसमितीका
को पब्लिशियन हुआ लक्षमें खण्ड म कार्यस-समिती
मदन और सम्बन्धना समितिमदन से कर नबोन दक्ष
पौर प्राचीन दक्षमें विवाद उपस्थित हुआ। नबोन दक्षके
सुखिया मी विचररक्षण, प्रामसुन्दर, विपिनचन्द्र, कुंमिन्द्र-
प्रसाद आदि और प्राचीन दक्षके सुरेन्द्रनाथ, मृण्मनाथ
आदि। ११वीं सुल्तानको रसका पंसेका हुआ, नबोन
दक्षकी को जेत हुई। यही भारतवर्षमें मन्वतन्त्र प्रति
शासका प्रथम प्रवृत्त था।

१८०१ ई०के ही विचररक्षण महासभे मर्दान प्रभो
जातीय दक्षके नेता हुए थे। १८१० ई०को कलकत्तामें को
कार्यक्रम हुई उसके नेता बोन जंति बह मी कर विवाद
बहु। हुआ। विचररक्षणके दक्षने पनी मेसेफको पौर प्राचीन
दक्षमें मन्वभूदाबादके राजाको समापति बनाया जाधा,
पक्षमें विचररक्षणके दक्षको ही विचररक्षणका लक्ष्मी। एमो-
मेसेफ ही कार्यवाही समापति निर्वाचित हुई। एमो
बमयके गरम और गरम इन पक्षन पक्षम ही बना।

१८१० ई०के सितम्बर मासमें कलकत्तामें कार्यसभका

एक विधिय पब्लिशियन हुआ। उस कार्यसभमें पराजय-
काम, पञ्चाय इत्यादिवाक्यका प्रतीकार, शिक्षाकर्मके
पन्थान्ध ध्वनहारका मीचन ही कर तोष पाकोपना
हुई। महात्मानोंने हम कार्यसभमें पक्षयोग मोतिका
प्रचार किया। खय कार्यसभे समापति साभा कात्रवत
राय, विचररक्षण, विपिनचन्द्रवाक्य आदि सम्मानोंने इस
का प्रतिपाद किया। किन्तु बोडके महात्माको हा प्रस्ताव
झोहत हुआ।

इसके पनकर लगे साक्षी दिसम्बर मासमें नामपुरमें
कार्यसभे मी। इस कार्यसभे द्वारा बहूना महात्माके
पक्षयोग प्रस्तावके विरुद्ध ठठ बड़ा हुआ, इसका पूर्व
पान्दोलनकथा। गजब या विचररक्षणने बहूनाके २००
'मोच्छा मोक्षपीयरोको विरुद्धे पर मयादा पौर पक्ष
योगप्रस्तावको निर्मूल करलेको एक भी कक्षर उठा न
रलो। विचररक्षणवाचार्य मी महात्माके विरुद्ध ठठ लुके
हुए। भाटिया पौर मुञ्जलीके साय इत्यादिही तक मो चल
गईं को। किन्तु मगमानको इच्छाको भीन रोक पकता ?
कार्यसभे महात्माका पक्षयोग-पान्दोलन सब समितिसे
पास हुआ पौर सबसे पाचय का वियय यह था कि खय
विचररक्षणमें मी सचयोगकी मोतिका परिष्कार कर पक्ष
योगमोतिको पक्षय किया। सुगवे है, कि महात्माने
विचररक्षणको पक्षयोगकी प्रबोधनोबता पर बहुत देर
तक समझाया था। फिर क्या था, विचररक्षण जब
विषको सत्य समझ लेते थे, तब भी उसके लिए पचना
परबल निवारण करनीको तैयार हो जाते थे। पक्ष
योगमोतिको खलता जब उनको समझमें पक्यो तरफ
पा गईं तब पाप देवमाताको सेवाके लिए बैरिहरो
कोड़ पकौर हो गए। पाप देवमाताके सेवाके लिए बैरिहरो
विद्यमें तमाम प्रमति लगे।

१८११ ई०की ११वीं नवम्बरकी भारतसरकारके वा
मन्वबके वि द भार-वेसस भारतवर्षमें पपारे। उस दिन
मारे हिन्दुस्थानमें बहुतायतको घायका कर दी गई। विल
रक्षणमें मी हम बहुतायतका को कोल कर समर्थन किया।
सुखके लुप्त कोच्छावेबक प्रमति लगे, सारे भारतवर्षमें
बहुतायत मनाको गई। इस पर भारतसरकार पापबहुना
हो गई पौर बहूना नबमोप्ये विचररक्षणके खय देवक

बुलाने और वालगिटयर होनेको घोषणाको गैरकानून वतलाया। देशवासियोंने गवर्नरके इस मन्तव्यको स्वेच्छान्तरमूलक तथा अन्याय्य समझा। प्रादेशिक कांग्रेस-कमिटीको एक सभाने कांग्रेस और खिलाफत-कमिटीको सलाह ले कर देशबन्धु पर कांग्रेसका सभो भार सौंप दिया।

दूसरी दिसम्बरकी आपने 'हम लोगोंके देशवासियोंके प्रति' शीर्षकसे एक लेख छपवा कर १० लाख वालगिटयरीकी बुलावा था। ७वीं दिसम्बरको अन्याय्य पुरुष वालगिटयरीके साथ आपकी पत्नी वसन्ती देवी, बहिन तथा एक और महिला पुत्रिमकी गिरफ्तार करनेका सुअवसर दे स्वेच्छासेवक रूपमें बाहर निकलीं। सरकारने उन्हें इस कामसे रोकनेकी यथेष्ट कोशिश की, लेकिन कुछ भी फल न निकला। आखिरकी पुलिस उन्हे गिरफ्तार करनेको बाध्य हुई। वे सब प्रेसिडेन्सी जेलमें रखे गये, लेकिन उसी रातको सरकारके आदेशसे छोड़ दिए गये। इसी दिनसे स्वेच्छासेवक दल बांध कर घूमन लगे और एक एक कर सब पकड़े गये तथा जेलमें ठूस दिये गये। १० दिसम्बरकी शनिवारके दिनके साढ़े चार बजे चित्तरञ्जन भी गिरफ्तार हुए। ३सो।दन आनान् वीरेन्द्रनाथ श्यामल, मौलाना अबदुल कलाम आजाद, मौलाना असरफ खाँ आदि नेता भी गिरफ्तार किये गए। गिरफ्तारके समय चित्तरञ्जनके पारिवारिकगणे आपसे पूछा था, क्या आपके खानेके लिए भोजन घरसे जायगा? इस पर आपने गम्भीर भावमें जवाब दिया था, नहीं! उसका कोई जरूरत नहीं। साधारण जेल कैदाका भोजन ही मेरे लिए यथेष्ट होगा। एक पंसक चावल चनेसे ही काम चल जायगा।

गिरफ्तार होनेके पहले चित्तरञ्जन अहमदाबाद-कांग्रेसके सभापति निर्वाचित हुए थे। किन्तु कारावह हो जानेके कारण आप सभापति हो न सके, हकीम अजमलखाँ उनकी जगह पर सभापति हुए। जब आप कारागारमें थे, तब पण्डित मदनमोहन मालवीने कलकत्ते आ कर सरकारके साथ देशकी राजनीतिक अवस्थाके विषयमें एक अधिवेशन करनेकी चेष्टा की। देशबन्धु

इस प्रस्तावमें सहमत हो गये थे। किन्तु महात्मा गांधीने १६ दिसम्बरको तार द्वारा यह सूचना दी कि वे इस प्रस्तावमें शामिल नहीं हो सकते। अहमदाबाद-कांग्रेसको बैठक होनेके पहले ही देशबन्धुदाशने महात्मा गांधीके पास एक लेख भेजा था जिसे उन्होंने यंग-इण्डियामें छपवा दिया था। उस लेखमें आपने आपकी असहयोग-आन्दोलनका कष्टर पक्षपातो वतलाया था और यह भी कहा था, कि क्या कारण है कि भारतवासी इस आन्दोलनके द्वारा किसी प्रकारका लाभ उठा नहीं सकते। उस लेखमें यह भी था कि जब तक इस देशवासीको स्वराज्य नहीं मिलेगा, तब तक वे अहिंसा आन्दोलनको छोड़ नहीं सकते। जेलसे छूटनेके बाद बङ्गवासियोंने एक स्वरसे चित्तरञ्जनको अविश्वसितानेता स्वीकार किया था। देशके कल्याणके लिये आपने जो अनाधारण स्वार्थ त्याग किया था, देशवासियोंने उनके प्रति सम्मान दिखानेके लिए गया-कांग्रेसमें उन्हें सभापति बनाया। इसके पहले उपयुं पर तीन कांग्रेसके अधिवेशनमें कौंसिल-वहिष्कारका प्रस्ताव पास हो चुका था। देशबन्धुदाशने गया-कांग्रेसमें उस प्रस्तावका खण्डन किया और कौंसिल-प्रवेश करनेका जोरदार भाषण दिया। किन्तु आपका प्रस्ताव सब समितिसे पास न हुआ। इस समय आपने स्वराज्य-दल गठनको और ध्यान दिया। दाक्षिणात्यके नाना स्थानोंमें घूम घूम कर आपने अपना मत प्रचार किया। देशके आधिकांश लोगोंने आपका मत स्वीकार कर लिया। इसके बाद दिक्को कांग्रेसके विशेष अधिवेशनमें आपका ही चेष्टासे कौंसिल प्रवेश बहुमतसे पास हुआ। मौलवा अबुल कलाम आजाद उस सभाके सभापति थे।

इसके बाद कोकनद कांग्रेसमें जो अधिवेशन हुआ, उसमें भी कौंसिल-प्रवेशका प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। फलस्वरूप स्वराज्यदलने कौंसिलमें प्रवेश किया। देशबन्धुने वङ्गीय व्यवस्थापक सभामें भी प्रवेश किया था। मध्यप्रदेश और बङ्गाल देशमें स्वराज्यदल सचमुच हैत शासनका संहार करनेमें समर्थ हुआ। चित्तरञ्जनकी यह सफलता भारतके राजनीतिक इतिहासमें सदाके लिए उज्ज्वल अक्षरोंमें लिखी रहेंगी।

अस्वस्थ अवस्थामें आप कौंसिलमें पहुँचे। बड़ीय कौंसिलमें जिस दिन बहुतसंख्यक वोटोंसे सरकारकी परास्त किया उस दिन आपने कहा था 'इस वार निश्चय है, कि मेरा रोग जाता रहेगा।'

इसके अनन्तर आप असुख्य अवस्थामें ही फरोदपुर प्रादेशिक समितिमें सभापति हो कर गए। सभामें आपने वक्तृता तो यो कि, 'मैं आत्मसम्मानको रक्षा करते हुए सरकारके साथ सहयोगिता करनेकी प्रस्तुत हूँ।' लाडवाकिनन्देडने उनके इस मन्तव्यकी ले कर विलायतको लाड सभामें आलोचना की थी।

इसके अनन्तर आप स्वास्थ्यलाभ करनेके लिये टाजि-लिङ्ग गए। वहाँ आपका शरीर क्रमशः अच्छा होता जात था। लेकिन १८२५ ई०को १५वीं जून नोमवारको यकायक बुखार आया और दूबरे दिन तारीख १६ जून मङ्गलवारकी शामको ५॥ बजे देशका चिराग बुझ गया। सर्वत्र अश्रुकारकी घटा छा गई। दोन दुखियोंके सहारे, भारत माताके दुलारे, सैनिकोंके प्यारे देशवन्दु दाश इस अभागि देशकी नायकी भूमिधरमें क्रीड कर चल बसे।

देशवन्दुदाशका शव १८ जून हृदयतिथारकी स्याच-दह स्टेशन पर ७। बजे पहुँचा। उस समय जो दृश्य देखनेमें आया, वह कलकत्तेमें पहले कभी नहीं देखनेमें आया था। रातके दो बजेसे ही लोग इकट्ठे होने शुरू हो गये और सबेरे छः बजे तक कमसे कम चार लाख लोग इकट्ठे हो गये थे। कलकत्तेके तमाम बाजार बन्द रहे। सरकारी फौजो भण्डे भी देशवन्दुदाशके शवका सम्मान करनेके लिये झुका दिये गये थे। जुलूस आठ घण्टेमें श्मशानघाट पर पहुँचा। कलकत्तेमें ऐसी भीड आज तक न कभी देखी गई और न सुनी गई थी। हिन्दुस्तान भरमें दूकानें तथा स्कूल आदि बन्द रहे, शोक-सभाएँ करके सहासुभूति प्रकट की गई।

यूरोपकी एक प्रसाधारण बुद्धिमान् महापुरुषका कहना है कि, 'जब तक किसी मनुष्यके जीवनका अन्त न देख लो, तब तक उसे सुखी मत कहो।' परन्तु देशवन्दु चित्त-रञ्जनदाशके जीवनके अन्तकी भी देख कर हम दाविके साथ यह कह सकते हैं कि वे सुखी सैनिक (Happy warrior) थे।

देशः या (सं० स्तो०) देशीय भाषा, वह भाषा जो किसी देश या प्रान्तमें ही बोली जाती है।

देशभूषण—एक जैन कवि। ये जातिके योग्य और सं० ७६५ तक विद्यमान थे।

देशमङ्गार—सम्पूर्ण जातीय रागविशेष। इसमें सब स्वर लगते हैं।

देशराज (सं० पु०) आर्या कदलके पितृका नाम। ये राजा परमानके मामन्तोंमें थे।

देशराजचरित (सं० स्तो०) गद्यपद्यमयात्मक चम्पूभेद। माहित्यदर्पणमें इस पुस्तकका उल्लेख है।

देशरूप (सं० स्तो०) दिश-क्रमण घञ्-देशस्य दिश्य-मानस्य उचितस्य रूपं। उचित, सुनामिव।

देशसमाख्यबीज (सं० स्तो०) इन्द्र यत्र।

देशस्य (सं० त्रि०) देश-स्या-ड। १ देशमें अर्थाप्यत, देशमें रहनेवाला। (पु०) २ महाराष्ट्र ब्राह्मणोंका एक भेद। देशस्य नाम क्यों पडा इसका निर्णय करना कठिन है या तो इस देशमें उत्पन्न होनेके कारण या पूर्वतयासो ब्राह्मणोंसे समतलभूमिवासी ब्राह्मणोंको पृथक् पृथक् करनेके कारण देशस्य नाम पडा है। अहमदनगर और पूना जिलेमें देशस्य ब्राह्मण दो भागोंमें विभक्त हैं—ऋग्वेदीय और यजुर्वेदीय। यहाँ यजुर्वेदीयोंकी दो शाखाएँ हैं, माध्यन्दिन और काण्व। इनमेंसे माध्यन्दिन शाखा ही अधिक देखी जाती है। नोच जातिको ये लोग कहते तक भो नहीं और न उन्हें अपने घरहो चटने देते। छोटेसे बड़े सभी भङ्ग पोते हैं। इसके सिवा और किसी प्रकारको मादक वस्तु ध्यवहार नहीं करते। ये लोग बड़े ही आलसो और निकम्मे होते हैं। इनमेंसे कोई तो वैदिक, कोई पौराणिक और कोई गृहस्थ हैं। गृहस्थ लोग नाना प्रकारके काम काज किया करते हैं जमो-दारो, महाजनी, सरकारी, पौरोहित्य आदि सभी कामोंमें इनका अधिकार है। ऋग्वेदीय देशस्य सुबह-शाम आङ्गिक करते हैं। यजुर्वेदीय देशस्य केवल मध्य दिन या दो पहरको आङ्गिक करते हैं, इसीसे इसका दूसरा नाम माध्यन्दिन भी है। ये लोग उच्चश्रेणीके ब्राह्मणोंमें गिने जाते हैं। अन्यान्य ब्राह्मण इन लोगोंको अपने सामाजिक प्रथामें निकट हैं। इनमेंसे कोई तो

पहले तबादी स्मार्त और शौरी ईतबादी भाववत भी हैं। ये लोग सभी देवदेवीका पूजन करते हैं तथा व्रतउपवासदि भी किया करते हैं। पाशुपतो, इमाहाबाद, कामो गवा, सिलुगे, नासिक, पण्डरपुर रामेश्वर और तुलजापुर इनके पबित्र तोर्ब माने जाते हैं। जो लोग करका काम सन्हासती हैं। इनमें परदेसी दिवान प्रायः नहींके बराबर हैं, वे बहुत कुछ आघोन रहते हैं। उस्तामके काम सेने पर माताको दय दिन तक घरीच मानना पड़ता है। उमर धानिके पहले जो नङ्गुशियां खाओ जाती हैं और पुत्र वा विवाह होसने से कर तीस वर्षके भीतर होता है। घतका पन्निख स्कार होता, निशवा विवाह नहीं होता, पर बाकविवाह और बहुविवाह प्रचलित है। निशवा सिर सुझये रखती है। सामाजिक नङ्गुशुमें शहेश्वरके मङ्गपाचार्यको पतुमति हो सब चोड है। जो उनको पचड़ेसा करता, वह जानिभूत बिदा जाता है। पहले उन सोमिके हासमें बहुत प्रबिहार के पर सभी सामाजिक व्यवहारमें कुछ काम गया है। स्वयंके और वलुर्बेदे देयक एक डूढरेके साथ घाते पीते हैं सको, पर पापसमें विवाह नहीं होता। अनोत्रमें भी ये लोग विवाह नहीं करते। सभी देयक बानबयच प गरीको खूनमें पड़रीको बिधा पड़ते हैं।

सतरा देयक ब्राह्मणको पावन नामक एक और यादा है। वे प्रबिन्दाय त्रिसिके पूर्व भावमें रहते हैं। यहाँकी बिनाहिता खिले माद्रमासमें यमोहेयके पीका लना अपने सलमें पड़ती हैं।

गोसापुरके देयक ब्राह्मण बहुत ही पर्यरिष्कार और पर्यरिष्कार रहते हैं। पञ्चमदाबादके देयक बटवपात्र सभी बन्धुपीका पालन करते हैं, किन्तु गोसापुरके देयक एक पत्नी तक मो नहीं वालते। इनमेंमें कुछ शाह है। शाहके प्रतिबिध और कोई मो गराब नहीं पोता। पुत्रव सीम सबसुच्छा तो नहीं रखते, पर लड़ा पकपट बाँधते हैं। खिबां बनावडी बानका व्यवहार करते हैं। इनके पञ्चदेवताके नाम करका और यक्षच पादि हैं, जो दाबिको दिवताके लैके माकुम पड़ते हैं।

इस्ताबिके देयकमें पापपक्ष्य नामक एक और

शाखा देखनेमें आती है। मंत्रिने साथ नङ्गुकोवो व्याहना ये लोग गोरबका विषय समझते हैं। लको कर। तो मामा भांजोमें विवाह कर देता है। सायशाशाभि देयकगव पहले बहुत देय समझे जाते थे, पात्र खन लकोने जो समाजमें उदति कर भी है। लपयलुर्बेदे और यक्षवलुर्बेदे इनमें एक दूसरेके साथ बिबाह गादो नको जेतो।

गोसापुरके देयक ब्राह्मण स्मार्त, वैश्वन और सोयम इन तीन भावोंमें विभक्त है। स्मार्त और वैश्वन देयकमें खानपान पकता है, पापसमें पादानप्रदान भी करी है। किन्तु वैश्वनदेयक स्मार्तदेयकको अपने लम्बा नहीं देते। सोयमदेयक वैश्वन और स्मार्त देयककी पको रचोई खाते हैं, पर स्मार्त वा वैश्वन देयक उनको पको रचोई नहीं खाते। सोयम देयकको उत्पत्तिके विषयमें प्रवाद है, कि कियो ब्राह्मणने बागोचा छोड़ते समय एक चड़ा खोपसा पाया। उन्होंने समझा कि यह चड़ा पहले खोनेके मरा वा उनके कामके दोपके जो सोना खोपसा हो गया है। पीके लकोने उस चड़ेको दरबानेके सामने रख प्यानके लटका दिया, कि यदि कियोको लड्डि होगी तो खोपसा किरके सोना हो जायेगा। एक बमार अपने लङ्गोको पाब सिर लगे राके भी आ रहा था। चड़ेको को इच्छिने खोपसा सोनेमें पकट गया। इस पर ब्राह्मणने उस बमारको लङ्गोने गादो कर लो बिसने बह जाति लट हो गये। बाद लकोने १२५ प्रकोही में विभक्त एक घर बनवाया और उनमें अपने १२५ बन्धुवां को बिपके खानेके सिधे निमन्त्रण किया। उनमेंमें सब कियोसे, 'मैं जो पञ्चमा निमन्त्रित हुआ हूँ' ऐसा समझा था।

मोत्रन कर लुङ्गनेके बाद सु ह बोले समय के सबके सब एक साथ मिन गये। यह रडख डर कियोने जान निदा। पीके जानिभट हो कर लकोने सोयम नामक एक लकोन बिभागको छडि की।

पहले जिन सब तोर्बकामो को कजा लिखी गई है, सभी लकीं सब तोर्बको मानते हैं। एकके धिया बादाम, मोकक और सोयम स्मार्तके तथा दारका, मयुप

पस्टरपुर और वाइटागिरि वैष्णवोंके प्रिय तीर्थस्थान हैं।

हिन्दूके दश प्रकारके संस्कारोंमें केवल पांचको ही ये सब मानते हैं। दश और ग्यारह वर्षके अन्दर लड़कों का उपनयन संस्कार होता है। इन लोगोंमें जन्माग्नीच ग्यारह दिनमें और मृताग्नीच तेरह दिनमें सम्पन्न होता है।

धारवारमें वैष्णव देगस्थोंका दूसरा नाम माध्व है। इस जिलेके देगस्थगण ग्राम और नगरमें रहते हैं। छोटे छोटे गांधोंमें ये लोग रहना पसन्द नहीं करते।

१२वीं शताब्दीमें हनुमान्ने मध्वाचार्य नामसे जन्म ग्रहण किया। उन्होंने मङ्गलूरके उद्विपिनगरमें, मध्यतलमें और सुब्रह्मण्यमें तीन मन्दिर निर्माण किये और संन्यासियोंको स्वामो नाम दे कर प्रत्येक मन्दिरके कर्तृत्वमें नियुक्त किया। केवल उद्विपिनगरमें षाठ मन्दिर स्थापित किये गये थे। प्रति दूसरे वर्ष सूर्यके मकरराशिमें प्रवेग करते समय इन षाठ मन्दिरोंके एक एक मनुष्य पर्याय-क्रमसे उद्दूषण और शौचार्चनमें नियुक्त होता था। मध्वाचार्यके और भी कई एक नाम थे, यदा-योमदाचार्य, पूर्णबोध, सर्वज्ञाचार्य। वे शशिथ भारतमें भ्रमण करके जगद्गुरु नामसे प्रसिद्ध हुए। उनके बनये हुए ३७ संस्कृत ग्रन्थ आज भी वत्तमान हैं। अस्सी वर्ष तक धर्मकार्यको परिचालना कर उन्होंने अपने शिष्य पद्मनाभ-तीर्थके ऊपर कुल भार सौंप माघी शुक्लनवमोमें बदरि काम्रमकी यात्रा की। लोगोंका विश्वास है, कि वे अब भी जोधित अवस्थामें वहाँ मौजूद हैं। पद्मनाभके मरने पर नरहरितीर्थ स्वामीके पद पर बैठे। स्वामियोंका कर्तव्य होती है। प्रत्येक स्वामीके मरने पर उनके वन्धु वा अनुचर लोग उनके नाम पर एक एक सम्प्रदायकी सृष्टि करते हैं। इस प्रकार अठारह सम्प्रदायकी उत्पत्ति हुई है। १२वीं शताब्दीसे लेकर सत्रोसवीं शताब्दीके शेष भाग तक ३५ मनुष्य स्वामीके पद पर अभिषिक्त हुए हैं। इन अठारह सम्प्रदायोंमें आपसमें विवाहकी प्रथा नहीं है। केवल सत्यबोध, राजेन्द्र तीर्थ और वल्लभेन्द्र सम्प्रदायमें एक दूसरेके साथ आदान प्रदान होता है। स्वर्गोत्तमोंमें भी विवाह करना निषेध है। ये लोग एकादशी करते, पान खाते और तमाकू भी पीते हैं। इसके सिवा और किसी

प्रकारका मादकद्रव्य काममें नहीं लाते। ये लोग केवल शिखा ही रखते हैं, दाढ़ी नहीं। स्त्री-पुरुषमें भिन्न भिन्न प्रकारका अलङ्कार व्यवहृत होता है। स्त्रियाँ सावित्री-व्रत करती हैं। गणेशचतुर्दशी, दशहरा, दोवाली, वलि-पर्व, मकरसंक्रान्ति, महाशिवरात्रि आदि उत्सव बहुत समारोहसे किये जाते हैं। उपवास हो धर्मका अङ्ग है। पर्व और व्रतके दिन वे प्रायः उपवास किया करते हैं। विधवा और कर्मकृत् ब्राह्मण एकादशी होती है। तिरु-पतिका वैष्णवरमण, अहोबलका नरसिंह, उद्विपिका-क्षण, काशिका बरदराज, कालहस्तीका कानहस्ती-श्वर, रामेश्वरका श्रीराम, श्रीरङ्गका श्रीरङ्गनाथ, तुमजा-पुरका अम्बाभवानी, गोकर्णका महाबलेश्वर, कोलापुरका महालक्ष्मी आदि अनेक स्थान हो देगस्थोंके पवित्र तीर्थ हैं। इन लोगोंके सोलह संस्कार होते हैं। सन्तान-के मरने पर दशदिन तक अशोच रहता है।

षाठवें वर्षमें लड़केका उपनयनसंस्कार होता है। अन्यान्य देगस्थोंके जैसा इनमें भी विवाहकी वही प्रथा है। विवाहके समय चावलका नैवेद्य सात जगह पूज कर कन्याको उस पर सात बार घुमाते हैं। इसको समझते कहते हैं। इससे होनेसे ही विवाह समाप्त हो जाता है। अन्यान्य देगस्थोंमें ऐसी प्रथा है, कि स्त्रीके प्रथम रजोदर्शन होनेके सत्तरहवें दिनमें द्वितीय विवाह सम्पन्न होता है, पर माध्व लोगोंमें ऐसी प्रथा नहीं है, उनमें केवल पाँच ही दिनमें ऋतुरक्षा होती है तथा इस उत्सवको वे लोग फलशोभन कहते हैं। संन्यासीके सिवा और सभोका दाहकर्म होता है। मृताग्नीच ग्यारह दिन तक मानते हैं। ब्राह्मणकी मृत्यु होने पर जब तक ऋतुदेहको दूसरी जगह नहीं ले जाते, तब तक उस जगहके भयवा उस ग्रामके ब्राह्मण जलपान नहीं कर सकते हैं। इन्हें भो यथाविधि यादादि करना होता है। संन्यासीकी मृत्यु होने पर केवल एक दिन तक अशोच रहता है। अन्यान्य देगस्थोंकी स्त्रियोंमें जैसी स्वाधोभता है, वैसी वैष्णव देगस्थ-स्त्रियोंमें नहीं। विधेय कर युवती स्त्रियोंके साथ बुलाई हुई, वा स्वयं आई हुई स्त्रियोंसे बातचीत करनेकी प्रथा नहीं है।

समाजमें जब किसी प्रकारको गड़बड़ी या पहुँचती

है, तब उसकी मोर्मावा लगे सम्प्रदायसे जोतो है। पश्चिम लोकमात्र होने पर ये कामो (मन्दिरके प्रधान गुरो दित) के पास जाते हैं। स्वामी जिसका दाय पाते, उसे पत्र दण्ड देते हैं। सभी जमी दोनो समाजके लुत भी बिद्या जाता है। जिनके बिसे धर्मदण्ड होता है, वह फिरसे समाजमें ही बिद्या जाता है। मत कई एक तर्कों में पदीकी जिज्ञासे प्रभावसे कितनेमें सामाजिक पाचार व्यवहारको परिष्कार कर दिया है। यहाँके समाज-भागवतो का पाचार व्यवहार अन्य जिकोंके भागवत सरोका है।

देयक ब्राह्मणों का प्रायः एक सा पाचार व्यवहार देखनेमें जाता है। पर हाँ किन्तु देयमें जोही व्यवस्था है उस देयमें जोही ही है। सुसक्तमानके धर्ममें जो उतना दोन नहीं मानते। अथवा उतना, बिबाह, अता-शोध सभी इकी देयके ब्राह्मणों के जैसे है। बहानों ब्राह्मणों के जैसे उन लोकोमें भी पश्चिम सम्प्रदायिक मत हैं। कौन किस सम्प्रदायके हैं, वह उनमें सत्यदर्शन विपुल, चादि ऐसा देखनेसे ही मालूम हो जाता है। शब्दोंके ब्राह्मण या तो बरबारी नोकरी करते या अपने देयमें कर्मोंको वा सुहरिरेका काम करते हैं। यद्युमें दो ब्राह्मण बरबारी भीकरी करनेकी प्रथमा व्यवसाय करना अधिक पसन्द करते हैं।

सुसक्तमानो के बचकमें देयक ब्राह्मण भागजाद रक्षने में इतने चारबाह से, कि उस काममें देयकब्राह्मणके बिबा पोर कोरि गिबुन नहीं होता था। उतना ही नहीं, बल्कि भागजाद भी पारको भाषाके बहसे लकी को भाषामें बिसे जाते थे। बचकमें प्रदेयमें जिनको जातियां रहती हैं उद्यमें देयक ब्राह्मणकी ही संख्या पश्चिम है। देयको (सं० छो०) एक रागिनी। बहुमतके मतानुसार इसका कर प्राप्त होता है—ग म प ब नी सा म, यजना न म प ब नो धा रै य।

देया—एक गन्धर्व। इन्के लोभिलरके निवृत्त कहीत विद्या भीकी थी।

देयाका (सं० छो०) रागिनी विधाय। इसका करप्राप्त यह है—ग म प ब नि सा +

देयाको (सं० ली०) रागिनीविधाय। इसमतके मतके

यह हिंदोबकी दूबरो रागिनी है। यह पादक जातिकी है। कर गान्धार होता है। गानेका समय बसन्त ऋतुका मन्थाह है। इसका रूप सुन्दर, बन्धुके जैसे बदन, लोचनसमाह, सर्वदा कलहविय तथा पच-कास वृत्ति हुक है।

देयाचार (सं० पु०) देयकी पास या व्यवहार।

देयात्म (सं० पु०) देयधर्मक, मित्र मित्र देयो की यात्रा।

देयात्तर (सं० छो०) सभी देयाः मयूरक शब्दादिबन्धु ममास। १ देयमेद, विदेय, परदेय। स्वतंत्रमें देया मरका विषय इस प्रकार लिखा है।

जहाँको लोको परस्पर विभिन्न है पर्याप्त जहाँ करका तारतम्य देखा जाता है तथा जहाँ बड़ो बड़ो नदी पोर पहाड़ बीचमें पड़ा है, उसे देयात्तर कहते हैं। नदी पोर देयके मित्र मित्र होने पर यदि वह नजदोक मो रड़े तो भी उसे देयात्तर कहेंगे। अथवा जहाँ हम जिनमें समाचार नहीं पहुँचता है वह भी देयात्तर कहलाते हैं।

कोई कोई कहते हैं, कि ६० योजन दूर कित देया मर कहलाता है। फिर कोई कोई ३० वा ३० योजन दूरके स्थानकी ही देयात्तर बतलाते हैं।

२ दुमिह पौर लहाके मन्वेरेका कल्प देय पोर अदेयका अन्तर योजन भूयोके भूयोके जो कर अन्तर इतिवत् नहीं हुई किसे सर्व-मात्र देखा है पूर्व या पश्चिमकी दूरी।

दुमिह पर्वत पोर लहाकी मध्यगत भूमिके अन्तर जो कर को देया अन्तर पश्चिमकी पोर पश्चिम कहित हुई है उसे मया देखा कहते हैं। उस देयाके अन्तर देय कितना योजन दूर रहें मया उतने योजनकी इयके गुणा कर सुचनकरके, फिर तिरुके भाग देयके को भाग-पक्ष होमा वह पक्ष होगा। वह पक्ष यदि सार्वके पश्चिम ही, तो उसे दण्ड बना कर मया देयाके पूर्व-देयमें जोड़ पोर मया देयाके पश्चिमदिक्में उदाह करना होमा। जैसे, कलकत्ता देय मया देयाके २०० ली योजन पूर्वमें है, अतएव इस देयमें देयात्तर १ दण्ड १३ पन होमा।

(सिद्धान्तसिद्धि)

देशधर-वस्त्रं प्रदिग्वासां नायदुश्रक्तिं जैमा एक प्रसारकी नीच जाति । ये लोग कई वर्ष पहले ब्रह्मनूरसे वे-गांवमें आ बसे हैं । तैलगु इनकी भाषा है । वे गाय, बकरे, कुत्ते, सुरभी आदिको पालते हैं । साधारणतः उनका प्रधान भोजन चावल और जौ है । कभी कभी ये लोग मांस भी खा लेते हैं । शराब पीनेको प्रथा इस जातिमें अधिक है । भद्र, गांजा आदि एक नशा भी छूटने नहीं पाता । पुरुष शिखा धारण करते और स्त्रियां भिरके दाढ़िने किनारे जुड़ा बांधती हैं । किन्तु बनावटो बालका व्यवहार इन लोगोंमें नहीं है । ये लोग बहुत मीले कुचले रहते हैं । जितने देवता हैं सभी इनके उपास्य हैं । लेकिन शिवजीके प्रति इनकी विशेष भक्ति रहती है । देशस्य ब्राह्मण ही इनके पुरोहित होते हैं । हर काममें पुरोहितकी जरूरत होती है । गेटी और किम्फुट तैयार कर लोखे प्रपना गुजारा करते हैं । छोटे छोटे लड़के स्कूलमें पढ़ने जाते हैं । इनके गुरु नहीं होते, तोर्थावा भा जो लोग नहीं करते हैं । नून वारिको ये लोग जलाते नहीं, गाड़ते हैं ।

देशिक (स० पु०) देशे प्रसितः देश-ठक् । १ पथिक, बटोही । देश उपदेशः तत्र प्रसितः ठक् । २ गुरु प्रवृत्ति उपदेश ।

देशित (स० त्रि०) दिग्-णिव-कर्मणि क्त । उपदेश-प्रेरित, वह जिसका उपदेश लिया गया हो ।

देशिन् (स० त्रि०) दिगतोति दिग्-आदेशे णिनि । देशक, आदेशकारो ।

देशिनी (स० स्त्री०) देशिन् स्त्रियां डोष । १ अंगुष्ठ और मध्यमाके बीचकी अंगुलि, तजनी अंगुली । २ हत्ती ।

देशो (स० स्त्री०) १ रागिणीविशेष, हनुमत्के मतसे दीपकरागको भार्या । पञ्चम वर्जित, ऋषभ, यह अंश और न्यास । श्रीकृष्णका मध्याह्नकाल इसके प्रकृत गानका समय है । सोमेश्वरके मतसे यह वसन्तरागको पत्नी है । मतान्तरमें धैवत वर्जित है । (संगीतसारस०) यह मधुमाधव, सारङ्ग, पहाड़ी वा टोरो और खट्योगले उत्पन्न हुई है । संपूर्ण म वादी है—

प म्वाटी ऋ निः (संगीततरंग ।)

ऋ ० म प ध नि स :: गगविशेष ।

ऋ ग म ० घ नि स :: मीर्जावा ।

पूर्ति—“निद्रालयं गा करटं कान्तं विवोषयन्ती हुरोतोमुक्तेव । गौरी मनोहा शुकुच्छवला ख्याता च देशी रसपूर्वचिन्ता ।” (संगीतसारस०)

यह सुरतोत्कृष्णकाको नाईं निद्रालय कान्तकी छल पूर्वक जगा रहो हैं तथा गौरी, मनोज्ञा, शुभ्र वस्त्रधारिणी और चित्तरसमें परिपूर्णा हैं ।

स्वरयाम—ऋ ग म घ नि स ऋ ::

अन्यत्र सूक्तिभेद—

“गचपतिगतिवेणी लोचनेन्द्रीवराज्ञी
पृथुक्तरनिम्बालम्बिवेणीभुजंगा ।
तनुतानुपत्नी वीतकौशुम्भरागा
श्यमुदयति देशी रागिणी चारुहासा ॥” (संगीत सारसंग्रह)

२ सङ्गीतभेद ।

गीत, वाद्य और नर्तन इन तीनोंका नाम सङ्गीत है । यह नङ्गीत मार्ग और देशकी भेदसे दो प्रकारका है । दृष्टिगने जिसका अनुभवान किया या, भरतसे जो प्रयुक्त हुआ या और महादेवके सामने जो गाया गया या, उसी रोति द्वारा जो देश देशमें लोकानुरञ्जनके लिये गाया जाता है, उसे देशी कहते हैं । (संगीतदर्पण)

देशीय (स० त्रि०) देशे भवः गहादित्वात् छ । १ देशज, देशका । २ स्वदेशका । ३ अपने देशमें उत्पन्न या बना हुआ ।

देशोपवराही (स० पु०) रागिणीभेद । गीतगोविन्दमें इसका उल्लेख देखनेमें आता है, यथा—“देशीय वराही रूपकतालैः गीयते” (गीतगोविन्द)

देश्य (स० स्त्री०) दिश्यते इति दिग् कर्मणि ख्यत् । १ पूर्वपक्ष । (त्रि०) २ देशार्थं । देशे भवः इति दिगादिभ्यो यत् । दिग्-यत् । ३ देशभव, देशका ।

देश्यु (स० त्रि०) दिग्-लृच् । दशक ।

देश् (स० पु०) १ लघ्व, आज्ञा । २ प्रपय, कसम ।

अस्थि, अस्थिसे मज्जा और मज्जासे शुक्रोत्पत्ति होती है। इसी शुक्रसे गर्भ होता है। खाद्यद्रव्य ही एक मात्र शरीरका परिपोषक है। अच्छा भोजन करनेसे देह सबल और खराब भोजन करनेसे ही देह क्षीण होता है। यह संसार त्रिगुणमय है, अतएव इस संसारमें जितने पदार्थ हैं सभी त्रिगुणमय हैं। इसीसे जो सब वस्तुएँ खायी जाती हैं, उनमें मत्स्य, रज. वा तमः इनमेंसे जिस गुणही अधिकता जिस खाद्य वस्तुमें रहता है वही वस्तु प्रति दिन खानेसे देह वा प्रकृति उसी की तरह होती है। अर्थात् सात्विक भोजन करनेसे सात्विक प्रकृति, राजसिक भोजन करनेसे राजसिक प्रकृति वा तामसिक भोजन करनेसे तामसिक प्रकृति होती है। देह भी तदनु रूप होता है। पुरुष स्थूलभूतके साथ पाट्कौशिक देह परिग्रह करके अपने अपने श्रेष्ठानुसार सब दुःख पाता है। देहके बिना भोग नहीं हो सकता। यह पाट्कौशिक शरीर रसान्त, भस्मान्त वा विष्टान्तके रूपमें परिणत होता है, अर्थात् इस देहके अवसान ही जाननेसे जब धन्व-दान्धव उसे भस्मसात् करते हैं तब वह भस्मान्त वा जब मट्टोंमें गाड़ते हैं तब रसान्त वा जब कोई प्राणी इस जीवदेहको खा लेता है, तब वह विष्टान्तके रूपमें परिणत होता है। इस स्थूलदेहके अभाव ही जाननेसे एक दूसरा शरीर बनता है जिसे सूक्ष्म शरीर कहते हैं। प्रत्येक पुरुष एक न एक शरीर अवश्य अवलम्बन करता है। जिस प्रकार चित्र आश्रयके बिना ठहर नहीं सकता उसी प्रकार पुरुष भी जब तक आश्रयरूप देहको अवलम्बन नहीं करता, तब तक वह ठहर नहीं सकता है। जिस तरह जो एक दूसरी घासको पकड़ नहीं लेतो तब तक पहली घासको छोड़तो नहीं है, उसी तरह पुरुष एक देहका आश्रय किये बिना अपनी पूर्व देहका परित्याग नहीं करता है। देहके अवसान होनेके पहले एक भावनामय शरीर उत्पन्न होता है, अर्थात् सृष्टिके सभी संस्कार आ कर उपस्थित होते हैं और उस समय सैकड़ों शरीर आ पहुँचते हैं। उस समय अपने अपने कर्मानुरूप एक शरीर परिग्रह करके पुरुष पूर्व देहको परित्याग करता है। यह सूक्ष्म शरीर प्रलयकाल तक

भी स्थायी रहता है। यह जन्म, अग्नि आदि किशोरों से भी नष्ट नहीं होता। प्रकृतिमें आदि सृष्टि कालमें प्रत्येक पुरुषके लिये इस सूक्ष्म शरीरकी एक एक सृष्टि की थी। जब तक उसे पुरुषके स्वरूपका ज्ञान नहीं होता तब तक यह शरीर पुरुषको नहीं छोड़ता है। बुद्धितत्त्व, अहंकार, पञ्चज्ञानेन्द्रिय, पञ्चकर्मेन्द्रिय, मन और पञ्चतन्मात्र इन सबको समष्टिका नाम सूक्ष्म शरीर है। यह सूक्ष्म शरीर धर्म और अधर्म, ज्ञान और अज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्ययुक्त रहता है। यह सूक्ष्म शरीर भूत शरीरके साथ पाट्कौशिक शरीरमें आश्रय ले कर बार बार जन्मग्रहण करता है और मृत्यु सुखमें पतित होता है। सभी भूतशरीर पञ्चमहाभूतोंमें लीन होते हैं और पाट्कौशिक शरीर पूर्वोक्त रसान्तादि रूपमें परिणत होता है। किन्तु यह सूक्ष्म शरीर किसी रूपमें परिणत नहीं होता। नादस्वरूप रंगभूमिमें जिस प्रकार नट कभी तो राम और कभी रावणका रूप धारण कर अभिनय करता है, उसी प्रकार यह सूक्ष्म शरीर भी अपने अपने श्रेष्ठानुसार कभी देवता, कभी पशु और कभी वनस्पति आदि रूपोंमें परिणत होता है। केवल स्थूल शरीरका ही पुनः पुनः त्याग और ग्रहण हुआ करता है। किन्तु जब तक महाप्रलय न होगा वा प्रकृति पुरुषका साक्षात्कार न होगा तब तक यह सूक्ष्म शरीर मौजूद रहेगा। इसका ध्वंस वा परिवर्तन कुछ भी नहीं होगा। परिवर्तन इसी पाट्कौशिक शरीरमें हुआ करता है, भूत शरीरमें कुछ भी नहीं होता। यह महाभूतोंमें निविष्ट हो कर रहता है और इन्हीं लिङ्ग भो कह सकते हैं। क्योंकि ये समय पा कर लय प्राप्त होते हैं। जब प्रकृतिपुरुषका विवेक साक्षात्कार होता है, तब सूक्ष्म शरीर प्रकृतिमें; पञ्चतन्मात्र और एकादश इन्द्रिय अहङ्कारतत्त्वमें; अहङ्कार महत्तत्त्वमें और महत्तत्त्व प्रकृतिमें लीन हो जाता है, उस समय सूक्ष्म शरीर आदि कुछ भी नहीं रहता।

जहवुद्धि नास्तिकोंका कहना है, कि देहके अतिरिक्त और कोई पृथक् आत्मा नहीं है। जिस तरह चूना और खैरके मिलनेसे स्वभावतः रक्तवर्णका संचार होता है उसी तरह पञ्चभूतोंकी समागमरूप देहके गठित होनेसे

की मोतिवत् कमाव गगतः चैतन्यका प्रकाश वृथा करता है। उनका मत है, कि जब तक क्लृप्तदेहका विनाश है तभी पाप्माका विनाश रहना देखे बिनाट होमिसे को पाप्मा नष्ट हो जावेगी। श्रीगामा देवोः देहसि हः विनाशै-सद्यः पश्चित्, इति परिणाम, पञ्चमय धोर विनाश। विष्णु को पाप्मा के यह पङ्क भाव विचाररहित है। यह देह धोर इन्द्रियों से साव को सम्बन्ध होता है उसी का नाम कमा है। उत्पत्तिकालसे ही कर मरचकाल तक को सामयिक विद्यमानता है वह उसका पश्चित् है। देह को प्रथि प्राय होती है परिणत होती है, चोच होती है धोर पक्षमें विनट होती है। वे पङ्क भाव विचार देह में ही देखे जावे हैं। इस क्लृप्तदेह का शरीरको पञ्चमय कोय, सुप्तदेह प्राचमक कोय धोर कारकदेह मगो-मय कोय जानना चाहिये। शिदास्तदुर्गमदे मतातुसार विद्वत्कृत पञ्चमय पञ्चोक्त मूल ही देहका उत्पादक है। सिंह ब्राह्मण है पञ्चात् मूलत्रयका परिणाम है, क्यो कि देहमें तंत्र, कस धोर दुष्को इन तौली के ही धाम देखे जाते हैं। मग्यजुताका पञ्च निदुर्गम विधातु पयात् बाहु, पिच धोर टीका है। एवै तौली से देह लच्छो हुई है। पतः विना मूताम्बरके योगसे केवम कससे देह मरी को बहती। यदि देह केवल अत्रज होती तो इनमें कायक धोर तैत्रस कांठ मरी रहता। इत्यादि कारकोसि धाना जाता है, कि विद्वत्कृत पञ्चात् पञ्चोक्त मूल ही देहका उत्पादक है। शरीर देखो। २ ज्योतिषोक्त मन्त्र ज्योतिषमें एक कम्पका नाम। (पु०) ३ इति भाव कम् । ३ शीबल । ३ शरीरका कोर्द पङ्क । ३ जीवन, कि दयो। ३ विचर मूर्ति, चित्र।
 देह (पा० पु०) धाम, नभ, शिवा मीमा।
 देहवत् (प० वि०) देह करोति ह्य वत् । १ देहकारक दुष्को प्रथति मूल सनुदाव । २ ईश्वर । ३ सूर्य।
 देहवान (पा० पु०) १ कवक, विद्यान । २ मर्दार।
 देहवामी (पा० वि०) धामोच य कार।
 देहवत् (स० वि०) देह करोति ह्य-वत् । १ देहकारक प्रथिमादि मूल । २ परमेश्वर।
 देहकोच (स० पु०) देहस्य कोच इव धारकत्वात् । १ देहकारक, पचिरीके कोमि । २ कवक, कम्पका।

देहस्य (स० पु०) देहस्य सयो यम्मात् । १ रोग। रोग कोमिसे शरीर सय हो जाता है, एहीसे रोगका नाम देह सय पडा है। देहस्य सय ३ तत् । २ देहका नाग।
 देहज (स० पु०) देहात्पादने जन ह । १ तनुज, पुत्र हैटा। (स्त्री०) २ पुत्रो नक्षत्रो हैटो। (वि०) ३ देह-जातमात्र, को शरीरसे उत्पन्न हो।
 देहज्वाय (स० पु०) देहस्य ज्वाय ३ तत् । प्रायनाय, मूल्य । मनुने निष्का है कि पुरस्कारको प्रयाया न करके को गो ब्राह्मण, श्री धोर शासक इतमिसे किसी एकको बिदुदुसे कचानेमें पयना प्राच दे दे नष्ट यदि मोचसे शीच खातिना भो क्यो न हो तो भो सिद्धिनाम कर लकता है।
 देहद (स० पु०) देह दायति मोधयति, देह देहपुटि ददाति रसायनेन वा दे मोघने दा दानि वा क । २ पारद, पाप। यह वातु देहका परियोज्य करता तथा इने मत्र-मूल बनाये रहतो है। २ देहदाता।
 देहदुर्गम्यता (स स्त्री०) देहस्य दुर्गम्यता इ-तत् । १ शरीरको दोर्गम्य शरीरको बुरो मन्त्र । २ शरीरदोर्गम्य नायक पीपच, एक प्रकारको दवा चित्रसे शरीरको दुर्गम्य जाती रहती है।
 देहधारक (स० स्त्री०) देह धारयति धारि-व्युत् । (लुक्) यथै। पा १।१।११) १ पक्षि इच्छो, हाङ्क । २ पादार, मोहन। (वि) ३ देहधारी शरीरको धारण करनेवाला।
 देहधारण (स० स्त्री०) देहस्य धारण इ-तत् । प्राच धारण शरीररत्ता।
 देहधारी (स० वि०) देह धारयति धारि चिनि। शरीरो, शरीरको धारण करनेवाला।
 देहधि (स० पु०) देहो धीयतेऽस्मिन् देह-त्वा पाधारे कि । देहाधार, पचिषोका पञ्च।
 देहद्वज (स० पु०) देह धर्जति मन्त्ररति ह्यज द्विप् । बाहु, कमा।
 देहधर्यासि (स० स्त्री०) देहस्य धर्यासि । देहोत्पत्ति । रस, रक्त, मीस, मूद पक्षि, मच्छा धोर इत्यादि वातुको जो उत्पत्ति होती है, एसे देहधर्यासि कहते हैं।
 देहपात (स० पु०) ध्वज, मोत।

देहभाज. (स० त्रि०) देह भजते भजन्ती । देही, जोव ।
देहभुज. (स० त्रि०) देहे भुङ्क्ते कर्मफलानि भुज-
क्तिन् । १ देहाभिमानो जोव । देहं भुङ्क्ते भोजयति
कर्मसाजित्वात् भुजक्तिन् । २ सूर्य ।

देहभृत् (स० पु०) देहं विभर्ति स्वकर्मानुभारेण भृत्किप,
तुक्तागमस्य । १ जोव, अपने अपने कर्मानुभार देहाधिष्ठाता
कर्मात्माजोव । २ विवेकज्ञानशून्य अविद्यायुक्त कर्त्तृ-
त्वाभिमानो जोव । मैं देवता हूँ, मैं मनुष्य हूँ, मैं
ब्राह्मण हूँ, मैं गृहस्थ हूँ इत्यादि अभिमानयुक्त जोवको
देहभृत् कहते हैं । यह जोव तोन प्रकारका है । जो
रागादि दोषकी प्रबलता वश काम्य निषिद्ध प्रवृत्ति यद्यत्
कर्मोंका आचरण करते, वे प्रथम श्रेणीके हैं । फिर जो पूर्व
जन्मकी सुकृति वश रागादि दोष क्षीण होने पर निषिद्ध
श्रीर काम्य कर्मका परित्याग करके नित्य श्रीर नैमित्तिक
कर्मफलानि स्थिरहित हो कर कार्यानुष्ठान करते, इस
तरहके गोण संन्यासो द्वितीय श्रेणीके हैं । पुनः
जिनके नित्य नैमित्तिक कर्मानुष्ठान करके चित्तकी
मलिनता दूर हुई है और जो सब कर्मोंको विधिपूर्वक
परित्याग कर ब्रह्मनिष्ठ गुरुका अनुसरण करते हैं, वे
तृतीय श्रेणीके हैं ।

देहभार (स० त्रि०) देहं विभर्ति भृ-वा० ख-व-मुम् च ।

देहपोषक, अपने ही शरीरका पोषण करनेवाला ।

देहयात्रा (स० स्त्री०) देहस्य यात्रा लोकान्तरगमनं । १
यमपुरीगमन, मृत्यु, मौत । देहाय देहरक्षणाय वा यात्रा
उद्यमादिः । २ भोजन । ३ भरण पोषण ।

देहर (हि० स्त्री०) नदीके किनारेकी नीची भूमि ।

देहरा (स० पु०) देवमन्दिर, देवालय ।

देहरादून— १ शुक्लप्रदेशके मोरट विभागका एक जिला ।

यह अक्षा० २८° ५७' से ३१° २' उ० और देशा० ७७° ३५' से
७८° १८' पू० में अवस्थित है । भूपरिमाण १२०८ वर्ग मील
है । इसके उत्तर-पूर्वमें टेहरी राज्य, दक्षिण-पूर्वमें गढ़-
वाल जिला, उत्तरपश्चिममें सिरमौर, रबैन, तरौच और
पञ्जावका जव्वलपुर राज्य तथा दक्षिण-पश्चिममें साहरान-
पुर जिला है । हिमालय और सिवालिक पहाड़की रहनेके
कारण जिलेका अधिकांश ढालवां है । यमुना और गङ्गा
यहाँ बहुत वेगसे बहती है, इसीसे इसका किनारा बहुत
गहरा हो गया है ।

यहाँके सिवालिक पहाड़ पर साल लकड़ी बहुत
मिलती है । जंगलमें बाघ, चीता, भालू, हरिण और
तरह तरहके बन्दर पाये जाते हैं । जिले भरमें वार्षिक
वृष्टिपात ८५ इंच होता है ।

इतिहास । देहरादून महादेवका आवास स्थान
केदारखण्डका एक श्रंश है । रावणवध जनित पापका
प्रायश्चित्त करनेके लिये राम और लक्ष्मणने यहा आ कर
पूजन आदि किये थे । महाप्रस्थान जाते समय पाण्डव
लोग भी यहाँ आये थे । नागवंशिय वामनने नागाश्व
पर्वत पर कुछ काल तक राज्य किया । हरिपुरके निक-
टस्थ विख्यात कालसो शिलाके ऊपर अशोककी एक
लिपि उल्लोर्ण है, जिससे जाना जाता है कि यही
देहरादून एक समय भारत और चीन साम्राज्यका
सीमा निर्देशक था । युएन-सुवंग जब भारतवर्षमें आये
थे, तब उन्होंने यहाँ कोई नगर ही नहीं देखा । कहते
हैं, कि ग्यारहवीं शताब्दीमें जब बख्शाराका एक दल
इम राह हो कर जा रहा था, तब इस स्थानको शोभा
से सुगंध हो उठने पर इम वसतिशून्य तथा लोकसमागम-
शून्य स्थानमें अपना चिर वासस्थान निरूपित किया ।
सत्रहवीं शताब्दीके पहलैका इसका कोई यवार्थ इति-
हास नहीं पाया जाता है । उस समय देहरादून गढ़-
वाल राज्यके अधीन था । सिखगुह रामराय पञ्जावसे
भगाये जाने पर सम्नाट औरङ्गजेवसे प्रशंसापत्र लेकर
गढ़वाल राजाके यहा गये । रामराय देखो । राजा
फतेशाने रामरायको गुरुद्वारमें एक मन्दिर बनवा दिया
और उसके खर्चके लिये कुछ सम्पत्ति भी दे दो । फतेशा-
के मरने पर उनके नाबालिग पौत्र प्रताप शा १६८८
ई०में सिंहासन पर बैठे । राज्यकी वृद्धि देख कर साह-
रानपुरके शासनकर्त्ता नाजीव-उद्दौलाने राजद्वार अपना
लिया । उनके समयमें गुरुद्वार और भी बड़ चढ़ गया ।
नाजीवके मरने पर देहरादूनको अवस्था बहुत शोचनीय
हो गई । सोमान्तके जातिसमूहके क्रमागत आक्रमणसे
देशकी दशा और भी गिर गई । इसी साल १८०३ ई०में
गोरखाजातिने देहरादून पर आक्रमण किया । राजा
पर्युमान शा ओनगरसे दून और फिर वहासे साहरान-
पुरकी भाग गये । गोरखा लोगोंने देहरादून अच्छी

तरह नौत किया। तबसे धामन-काशी गुणमो प्रया
पारम्भ हुई जिसने देगका क्या पदनेने भी पचिब
मोचनीय हो गई।

गोरखा मोकोडे ध्वजारमे लजता कर १८१३ ई० में
प गोरज गवर्मेण्डने लभके विचर करुारे ठान दा पौर
देहरादून सहर जोमें पचिबकार कर लिया। कसम
विषय घतिपप होने पर मो प गोरज गवर्मेण्डने
कलियुगदुर्ग इस्तमत बिबा। १८१३ ई० को देहरादूनमें
पूरुवकमे प मरीको का गामन शुरू हुआ।

इस त्रिलेमें ६ गहर पौर ४१६ ग्राम लमते हैं। मोरज
म प्या प्रायः १०८२६ है। त्रिलेमें से लकु ८३ दिव
१३ सुवममान पौर मियमें पश्चात्प जति हैं। यहाँका
प्रधान उपज धान, तिल गेहूँ जो प्यार, कुकरो पादि
है। यहाँमें टिखर, हाँप, चूना कोयले धान पौर चाय
को रक तनी पौर कूरर दूधने देगसे बपड़े, कम्पन
लसक, गुड़ पनात्र तमाजू पौर मसा-को पामदनी
कोतो है। कारा बिबा देहरा पौर पञ्चराता इन दो
तहमीनीमें बिभक्त है।

त्रिलेके प्रधान मासन रत्ताको सुपरि टेण्डेण्ड करते हैं।
को दो बरकारो सुपरि टेण्डेण्डा हारा बिचार बाय
करते हैं। देहरा पौर पञ्चराता इरपक तहमीनीमें एक
एक तहमीनीदार है। पञ्चरातेमें कलन-कोयल मजिस्ट्रेट
मो है त्रिले अजको समता है पौर नामान्य नामान्य
पञ्चरातीका बिचार करते हैं। यहाँ ३८ म्मूष १ ली ल
पौर ११ पचकान है।

२ कक बिलेको एक तहमीनी। यह पचा २८
३० से ३० ३२ ल पौर देगा ०० ३३ से ०८ १८
पू० में पचकित है। सुपरिमाथ ०११ नममीन पौर
मोक्षम प्या प्रायः १२००८४ है। यह तहमीनी दो पर
गनेमें बिभक्त है। इसमें चार गहर पौर ३०० ग्राम
लमते हैं। यहाँचायके १३ बड़े बड़े सधान हैं।

३ लक तहमीनीका एक प्रधान गहर। यह पचा
३० १८ ल पौर देगा ०८ २ पू० मसुदरुहके
२३० पुट लकेमें पचकित है। मोक्षम प्या प्रायः
२८०८३ है त्रिलेमें १८०३६ दिव ८००० सुवममान,
११०० रीवाई पौर कुछ घुसनीय है।

यह गहर १८वीं शताब्दीमें मन्दादायके गुड रामगणने
स्थापित हुआ है। १६८८ ई० का बना हुआ गुदका
मन्दिर धार भी विद्यमान है जिसमें गुदका यथा पक्षी
तरह रचित है।

१८५० ई०में यहाँ म्युनिसिपल्टी स्थापित हुई है।
गहरको पाय तीस हजार बपवेमें पचिबनी है। यहाँ
कुल १३ स्कूल हैं।

देहलसथ (घ० झा०) देहलस लसथ घव । १ सादुद्रि
गाम । देहलस लसथ । २ गरीरके लपका पिछ, तिष,
मसा।

देहवा (म खी०) देह मालि देहलस पुटि ददाति देह-
वा क टाप । मघ, घराच।

देहल स० खी० दिह मारी घम् । देहो-खीयल मालि
एद-प्राताति देह-ला-बाहुन-मालु को । देहली देठा।

देहलो (स० खी०) देहल गौराविलानु टाप । १ हार
पिछिका, हारको लोचलको यह सङ्को को लीके कोतो
है, दहलोच।

देहलो—बिबो देहो।

देहलोदीपक (घ० पु०) १ यह दीपक ली देहलो पर रखा
हुवा रहता है पौर नीतर बाहर दानो पौर प्रकाश
पँकाता है । २ एक चर्वांलहार इसमें बिबो एक
मन्त्रल मन्त्रका पच दोना पौर समया जाता है।

देहलना (दि० बि०) १ गरीर, त्रिसक देह को। (पु०) २
गरीरघारो प्यक्ति, यह ली गरीरधानु है।

देहलनु (म० त्रि०) देह मन्त्रयों मनुपु मन्त्रकः । देहलना
मिमामो कोव।

देहवानु (स० त्रि०) १ गरीरघारो। (पु०) २ गरीरघारो
प्यक्ति, देहा । ३ बनीच प्राको।

देहवानु (घ० पु०) देहलो वातु। देहलित वातु, प्राचादि
वातु वाँच है—प्राथ, यवान, ममान, लधान पौर ध्यान।

देहगदु (घ० पु०) म्मूषर, म्मूष, प्यरखा च ना।
देहमहारिषो (घ० जो०) दुदित, कथा, मङ्को।

देहनाम्य (घ० झा०) देहानी नाम्य । १ पञ्चमसूषका
लमल गरीरको समता।

देहवार (घ० पु०) देहलस कारः ६ तत् । मन्त्रा, बाटु।
देहात (घा० खी०) धाम, नीच।

देहातो (का० वि०) १ ग्रामोण, गाँवमें रहनेवाला । २ ग्रामसम्बन्धी, गाँवका । ३ गवाँर ।

देहातोत (स० पु०) देहं देहाध्यासं अतीतः । देहाभिमानशून्य विद्वान्, ब्रह्म विद्वान् जिसे शरीरको ममता न हो ।

देहात्मवादो (म० पु०) देहं आत्मानं वदतीति वद णिनि । त्रार्वाक, वह जो शरीरको ही आत्मा माने ।

देहात्मप्रत्यय (स० पु०) देहस्य आत्मतया प्रत्ययः । देहमें आत्मत्वाभिमान, शरीर ही आत्मा है ऐसा अभिमान ।

देहाध्यास (स० पु०) देहस्य तद्वर्त्मस्य वा आत्मतया तद्वर्त्मतया वा अध्यासः भ्रमः । देहधर्म को ही आत्मा समझनेका भ्रम ।

देहान्त (स० पु०) मृत्यु, मौत ।

देहान्तर (स० पु०) देहात् अन्तरः । देहान्तरप्राप्ति, मृत्यु ।

देहावरण (स० पु०) शरीरका आच्छादन पक्षियाँका पंख ।

देहिका (स० स्त्री०) देहोति दिङ्-वृद्धो ण्वुन्, टाप् अत इत्वं । कोटविशेष एक कीड़ेका नाम । इसका पर्याय—वाट, उपादिक, उपजिहिका, उत्पादिका, उद्देहिका और दिवी है ।

देहिन् (स० पु०) देहाः सर्वे भूतभविष्यद्वर्तमाना जगन्मण्डलवर्तिनोऽस्य सन्तीति इनि । शरीर, देहधरो, देहतादात्ता, ध्याससम्पन्न जीव, देहाधिष्ठाता जीव, आत्मा प्रकृति पुरुषका स्वरूप जाननेके लिये उसके ममोप नाना प्रकारके रूपोंमें उपस्थित होता है बहो जीवका संसार है । जब उसके स्वरूपका ज्ञान हो जाता है और प्रकृतिके साथ उसे साक्षात् नहीं होती, तब शरीरादि कुछ भी नहीं रहता है । यह जीव बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, यत्न, संख्या, स्पर्श, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, भावना, धर्म और अधर्म इन चौदह गुणोंसे युक्त रहता है । यही इन्द्रियादिका अधिष्ठाता है, पुण्यपापादिका आश्रय है और प्रवृत्त्यादिके द्वारा अनुभेय है । (भगवापरि०) जोषात्मा देखो । देहमें चैतन्यादि कुछ भी नहीं है, किन्तु आत्मामें है । देहाधिष्ठाता जीव देहका आश्रय करके सुख दुःख आदिका भोग करता है । देहमें यदि चैतन्य रहता

तो मृत शरीरमें इसका व्यभिचार देखा नहीं जाता । जो कुछ ही देही अर्थात् देहाधिष्ठाती जीव ही देहो कहलाता है ।

“देही नित्यमवधोऽयं देहे सर्वेषु भारत ।

तस्मात् सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचिषुमर्हसि ॥”

(गीता २।३०)

देही नित्य अवध्य है । सभी देहोंमें एक नित्य अवध्य आत्मा रहती है । जिस तरह घटके फूट जाने पर घटा-काशका नाश नहीं होता, उधो तरह ब्रह्मासे ले कर पिपोलिका तक कोई देह क्यों न विनष्ट हो जाय पर उससे सूक्ष्म शरीर वा आत्माका विनाश नहीं होता ।

त्रिकालमें और त्रिलोकमें जितने प्रकारको देह सम्भूत होती है, जो तत्तावत् देह धारण करते हैं वे ही देही हैं । आत्मा विभुके रूपमें सभी देहोंमें विराजमान है । सिर्फ एक आत्मा ही मैं बालक हूँ, मैं युवा हूँ, मैं बृद्ध हूँ इत्यादि तोन अवस्थाओंका अनुभव करते हैं । देह त्रिभावापन्न है सही, लेकिन जो आत्मा है वह बालककालमें जिस प्रकार थो घौवनकालमें वह उभो प्रकार है तथा बृद्धा अवस्थामें भो उधो प्रकार रहेगो । देहिक अवस्थामें पृथक्ता तो देखी जाती है पर अपनापन जाननेमें कुछ भी विभिन्नता नहीं होती ।

देही स्वप्नावस्थामें कितनी विचित्र देहामें विहार करता है, लेकिन कहीं और कभी भी आत्मज्ञानकी स्वतंत्रता नहीं होती । शरीरतत्त्वविदोंका मत है कि शरीरका परमाणुपुञ्ज प्रति १०।१२ वर्षोंमें सम्पूर्ण स्वतंत्र हो जाता है । अतएव बाल्यादि अवस्थामें भी शरीरका नाश हुआ करना है, किन्तु देहीकी कुछ भी विवृति नहीं होती । ‘न जायते न म्रियते’ इत्यादि श्रुति द्वारा देहीका किसी प्रकारका विकार हो नहीं होता । जिस प्रकार वस्त्र पुराना होने पर नया वस्त्र पहनते हैं उसी प्रकार देही बाल्य कौमार आदि अवस्थाका भोग करके पीछे बृद्ध होने पर देहको छोड़ कर नवीन देह धारण करता है ।

देहु—ग्रामविशेष, एक गाँवका नाम ।

देहेश्वर (स० पु०) देहाधिष्ठाता, आत्मा ।

देहीरूप (स० पु०) देहजात, शरीरसे उत्पन्न ।

दोहल (स० पु०) दोहना ।
 दोष (स० ति०) दोषा यच् । दोषासम्बन्धोय ।
 दोष्य (स० पु० ङो०) निदोष्य ङङ् । १ दितिका
 ययञ्, दितिको म तत्ति, टैञ् । द्वियां ङोप । २
 राहुका एक नाम । (ति०) ३ दितिसि क्ययञ् ।
 दोष्य (स० पु०) दिदोष्य दिति-ञ् (विसृष्टिभाष्य
 पशुधरवाच्यम् । वा ३।।२५६) १ चसुर, कश्चपके धे पुत्र
 को दिति नामको षोमे पैटा वृष, ये देवतायोके विरोधी
 हैं । २ यमाचारक समकाममुप्य । ३ यति चरनेनामा
 पादयो । ४ दुर्गाचारी सुट् ङङि । ५ षोड, षोडा ।
 (ति०) ६ दितिसम्बन्धी ।
 दोहगुह (स० पु०) दोहानां गुह । यज्ञाचार्य ।
 दोहकानमदंन । स० पु०) दोह पौर दानयोके दमन
 कागी, इन्द्र ।
 दोहदेव (स० पु०) दोहानां देवः ६-तत् । १ कषच ।
 २ बाहु ।
 दोहक्षोप (स० पु०) यज्ञाचार्योद, यज्ञिके पूर्वमिधे
 यञ् ।
 दोहयज्ञ (स० पु०) यज्ञ यञ् ।
 दोहयमिने (स० षी०) मुद्रामेव तारादेवोको ताजिक
 लपासनामेव मुद्रा ।
 योनि, मूर्तिनी बीजाद्या दोहयमिने पौर षेति
 शाना ये पांच मुद्राये ताराचर्मने लक्षित हैं । दोनों
 हाथोंको सम्पूञ् रूपसे परिवर्तन कर अनिष्टपशुनिधौ
 मन्त्रमात्रा पाठार्थक करते हैं । दोनों यनामिकाको
 जोधे पौर दोनीं तर्जनीको एकत्र रूपसे रखते हैं तथा
 प गुहके ययमाभने यनामिका फंघाते हैं । ऐसा करने
 से दोहयमिने मुद्रा बनती है ।
 दोहयमिने (स० पु०) दोहयान् निरुदयति द्विन्द्वि
 निन्द्वि न्नु । विष्णु ।
 दोहयति (स० पु०) दोहानां पति ६ तत् । १ द्विरञ्-
 कर्मिपु ।
 दोहयपुरोचन (स० पु०) दोहानां पुरोच ६ तत् । यज्ञा
 चार्यं दोहोके पुरोहित ।
 दोहयपुत्र (स० पु०) दोहानां पुत्रः ६ तत् । दोहोके
 पुत्रभाव यज्ञाचार्य ।

दोहमात्र (स० षी०) दोहानां माता ६-तत् । दोहोको
 माता, दिति ।
 दोहमिद्व (स० पु०) दोहयञ् मिद्वत् कार्त्तव जम-ञ् ।
 १ गुण्यु, गुण्य । द्वियां ट्यप । २ द्विवयो । द्विवयो
 मसु पौर षोडमने मिद्वे लत्यञ् कुई बी, इवीके पुत्राका
 नाम दोहमिद्वका पञ्चा है ।
 दोहयुग (स० षी०) दोहानां युग ६-तत् । दोहानां
 युगविमेक, दोहयुगको मारं १२ इजार चर्च ।
 दोहयिना (स० षी०) यज्ञायतिनी कस्या पौर द्वे
 येनाको यज्ञ । यज्ञ ययोदानवको यज्ञत पादतो यो ।
 येयो इमे हर के यया का पौर कसने इक्ष्वे पात्र विवाह
 किया था ।
 दोहयन् (स० पु०) महादेव । (भाष्य १३।।२५६)
 दोहया (स० षी०) द्विविय इति ष्, तत्तयापु । १ सुरा
 नामक मन्त्रग्रन्थ, कपूरचर्चो, सुर्य । २ चण्डीपथि । ३
 मय, शराव । ४ दोहय मतिको षो ।
 दोहयारि (स० पु०) दोहानां पति ६ तत् । १ विष्णु ।
 २ द्विभवा माय । ३ इन्द्र ।
 दोहयोराम (स० पु०) दोहानां यदोरामः ६-तत् ।
 दोहोका एक रात दिन । यज्ञ मनुष्यके एक चर्चके
 करार होता है ।
 दोहय्य (स० पु०) दोहानां यञ्चः ६-तत् । दोहके सुत्र
 यज्ञाचार्य ।
 दोहय्य (स० पु०) दोहानां यञ्चः ६ तत् । १ दोहयके
 मन्त्र, दोहोके राजा । २ मन्त्रक ।
 दोहय्यराज (स० ङो०) द्विद्वुञ् ।
 दोहय्य (स० पु०) दोहोके दूरै पतिका पुत्र ।
 दोन (स० ङो०) दोनञ् भावः यञ् । १ दोनता, दोन
 योमका भाव । दिनका इद दिन-यञ् । (ति०) २
 दिवस सम्बन्धी, दिनका ।
 दोनन्द (स० ङि०) दिन दिन भव इत्यञ् निपातनात्
 याञ् । प्रतिदिनका, नितराका, दिन दिन होनेवाका ।
 दोनन्दिनय (स० पु०) दिनन्दिनकासौ प्रययति ।
 यज्ञाके प्रतिदिनावसानमेव यज्ञयुक्तोका ययक्य प्रत्यय ।
 यदुर्दंन इन्द्राविक्ष्वकाक यज्ञाका दिन है, यवार्त्तु का
 तत्र योदक इन्द्र रक्षेते, तत्र तत्र यज्ञाका दिन पौर

तत्परिप्रित्तान ब्रह्माज्ञो गति है। इसमें ब्रह्मज्ञो कर्म
अधःस्वित्त सभो लोक विनष्ट होते हैं और ब्रह्मरात्रके
बोत जाने पर ब्रह्मा पुनः सृष्टि करते हैं। इस ब्राह्मो
निशामें जो प्रलय होता है, उसे क्षुद्रप्रलय कहते हैं। इस
प्रलयमें देवता, मुनि और नरादि सभो नाश होते हैं।
पूर्वोक्त ३० दिनोंका ब्रह्माका एक महीना और १२
महीनोंका वर्ष होता है। ब्रह्माके इस तरह पन्द्रह
वर्ष बीत जाने पर दैनन्दिनप्रलय होता है। वेदविदों-
ने इसीको दिन रात्रि माना है। इस प्रलयमें चन्द्रादि
दिगोश्वर, आदित्य, वसु, रुद्र, मनु प्रभृति सभो विनष्ट
हते हैं। दैनन्दिनप्रलय बीतने पर ब्रह्मा पुनः सभो
लोकोंको सृष्टि करते हैं। इस तरह सो वर्ष ब्रह्माको
परमायु है। (ब्रह्मवैवर्तपु०)

दैनार स० त्रि०) दोनार भव० दोनारस्येदं वेति-अण् ।
दोगारपरिमित स्वर्णजात वस्तु ।

दैनिक (स० त्रि०) दिने भवः इति ठञ् । १ दिनभव,
जो रोज रोज हो । २ दिन सम्बन्धोय । ३ प्रतिदिनका,
रोज रोजका । (क्लो०) ४ एक दिनकी तनखाह ।

दैन्य (स० पु०) १ दरिद्रता, दोनता । २ अहङ्कारके
प्रतिकूलभाव, विनोतभाव । ३ काव्यके सञ्चारो भावमिसे
एक । इसमें दुःखादिसे चित्त बहुत नन्म हो जाता है ।

दैन्यास्पति (स० पु०) द्यास्पति शब्दका गोत्रापत्य ।

दोर्घवरत्र (स० पु०) दोर्घवरत्रेण, निर्वृत्तः कूपः-अण् ।
वह कुर्त्ता जहा पानी निकालनेके लिये एक बड़ा रस्सा
रखा जाता है ।

दोर्घ्य (स० क्लो०) दोर्घस्य भावः पाञ् । दोर्घता,
लम्बाई ।

दौलीपि (स० पु०) दिलीपस्यापत्यं दिलीप-इञ् । दिलीपका
अपत्य ।

दौव (स० क्लो०) देवस्येदं देव-अण् । (तस्येदं ।
पा ४।३।२०) १ देवतोय, दाहिने हाथको उंगलीके
अगले भागका नाम देवतोय है। (मनु० २।५८)

दुदांगुष्ठके मूलके अधोभागको ब्रह्मतीर्थ, कनिष्ठांगुलिके
मूलका नाम प्रजपतितीर्थ और ममस्तु अंगुलियों-
के अग्रभागका नाम देवतीर्थ है। ब्राह्मणोंका सब समय
ब्रह्म, प्रजापति वा देवतीर्थसे आचमन करना चाहिये ।

२ विवाहविधि, ब्राह्मदेवादि विवाह आठ प्रकारका
है। (मनु ३।२८)

अत्यन्त विस्तृत ज्योतिषोमादि यज्ञके आरम्भ होने
पर उस यज्ञमें यदि कर्मकर्त्ता पुरोहितको सब अन्नद्वारां
से युक्त कन्यादान करे, तो उसे देवविवाह कहते हैं।
देव कार्यको सिद्धिको कामनासे यह विवाह किया
जाता है, इसीसे इसका नाम देवविवाह पड़ा है। देव
विवाहात्पन्न पुत्र पढ़ने पूर्व पित्रादि ७ पुरुष और पीछे
७ परपुरुष इन चोदह पुरुषोंको उदार करता है और
जो सन्तान इस विवाहसे उत्पन्न होती, वह ब्रह्मतेजः
सम्पन्न होता है। विवाह जे० । ३ देवतासम्बन्धो ।

पितामाताको मृत्यु होने पर गरोर अपवित्र होता
है। जवतक वर्ष पूरा न हो, तब तक देव सम्बन्धो वा
पितृसम्बन्धो काम नहीं करना चाहिये। देवात् निय-
तादागतं अण् । ४ भाग्य, प्रारब्ध, अष्टष्ट ।

ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें लिखा है कि जन्म, कर्म, शुभ
और अशुभ सभो देवके अधीन हैं। केवल यही नहीं,
वरं सारा संसार ही एकमात्र देवाधीन है। इस
कारण देवसे अधिक और कोई बल नहीं है। यह देव
एक मात्र ओक्षणके भायत्त हैं, सिफे वे ही देवसे अधिक
वा श्रेष्ठ हैं। इसी हेतु उस परमात्मा ईश्वरको भक्त लोग
भजते हैं। वे देववर्द्धन करनेमें समर्थ हैं तथा अपने
लीला द्वारा जय भी कर सकते हैं, इसीसे कृष्णभक्तगण
देवके अधीन नहीं है। ये लोग कवन कथापाठना द्वारा
ही शुभाशुभ सभो कामोंसे विमुक्ति लाभ कर सकते हैं।

मत्स्यपुराणमें देवका विषय इस प्रकार लिखा है—
एक समय मनुने मत्स्यसे पूछा, कि देव और पुरुषकारमें
कौन श्रेष्ठ है ? इसमें मुझे बहुत सन्देह है। इस पर
मत्स्यने जवाब दिया था, कि देवान्तराजित जो अपना
अपना कर्म है उसको देव कहते हैं अर्थात् पूर्व जन्ममें जो
भले बुरे कर्म किये गये हैं, वे ही वर्त्तमान जन्ममें देव
वा भाग्य कहलाते हैं। इसी कारण मनापियोंने पुरुष-
कारको श्रेष्ठ बतलाया है। पुरुषकार हो जब भाग्यका
प्रति कारण है, तब यही सबसे प्रधान भी है। पुरुषकार
नहीं करनेम भाग्य उत्पन्न नहीं हो सकता है। पूर्व
जन्ममें जिन्होंने सैकड़ो सन्तान किये हैं, इस जन्ममें

जनके भी पुत्रवधारके बिना ही सब माय्य शुद्ध भी फल नहीं दे सकती है। दोषव्यभिक्त मनुष्य देवको भी मानते हैं पर्याप्त ही ईश्वर देवके लपर ही निर्भर रहते हैं। देव सम्पत् पुत्रवधार करनेसे फल देना है। देव, पुत्रवधार और काम ये त्रोटो मिल कर फल देते हैं। देव पुत्रवधार या काम इनमेंसे कोई भी धर्मना फल नहीं दिसकता है। जिस तरह ज्ञापि उल्लिखे योगिन फल देतो है, तमो तरह देव भी पुत्रवधारके योगिन फल देता है। इसलिये हमैया बहुत बखते पुत्रवधार परबलम्बन करना चाहिये। इस तरह को धारणगुण्य हो कर पुत्रवधारका परबलम्बन करते, विपरबोहने हम फल पाते हैं। पुत्रवधारहोन नाति किबल दे बपरबल धर्मिये फल प्राप्त नहीं कर सकता है। इवणिए सर्वदा यज्ञपूर्वक पुत्रवधारका परबलम्बन करना चाहिये। जब पुत्रवधारके बिना देव भी फल नहीं दे सकता, तब देवसे भी पुत्रवधारको बड़ कर समझना चाहिये। देव बदि प्रतिशुद्ध हो, परबल पुत्रवधार करनेसे बड़ नाथ हो सकता है, पर्याप्त प्रतिशुद्ध देव परशुद्ध इला है। पतः को सर्वदा धारणरहित हो कर पुत्रवधार परबलम्बन करते, तन्मो तन पर प्रसन्न रहते हैं।

(मलमयु- १८५७०)

जा कोई कार्य किया जाता है, तमका एक सकार रहता, है इनो सकारके नाम मासना; सकार पडट वा देव इत्यादि हैं। कामके बिने जो सकार है उसका नाम देव है। जेम् हो जोबोको काम प्रकृतिका मूल है, पतएव जेम् नामक पशान परबहार, समतः, रागदेव प्रकृति ज्ञापि निधय ही उत्पन्न करेना। एषा कौन मनुष्य है जो प्रकृतिके परीन काय करते हुए भी उबका फल न लेनी ? बड़ सब देख कर योगी कोम कहते हैं, कि यमी जीव जेम्से नाथ हो कर पश्या गुण काम कर करते हैं पीर में पर काम देव, पडट वा सकार इत्यादि नाम बारक कर काममूलको खडि करती है। याज्ञिक कोमोने सर्वे पर्यु, पडट, पाप पुष्प, धमाधम वा देव नामसे उल्लेख किया है। बीन कर्णो सब खडिन कामियेको भेरणाके बारम्बार नवो सब काम करनेका इच्छा हो जाता है। इसका पार यह है, कि बड़ काम

करनेके धाय हो जोबोके ल्पमरोरमें या चित्तदेवमें एक प्रकारको शक्ति वा शुभ उत्पन्न होता है। यही काम बीन पडटरित हा कर जोबोको बार बार परबलम्बन करता है और नये नये रागदेवादिके ल्पम ल्पम बीन उत्पादन करता है। तन्मो सब काम वीजोका नाम काम देव है। इसका इला नाम धर्माधम, पडट, माय्यप्रकृति है। काम करनेसे जो बीनो व ल्पमरोरमें कामके निये पायय धर्माधम नामक शुभ वा शक्ति परबल हा उत्पन्न होगी। धर्माधम नामक शुभ उत्पन्न हो कर बड़ परमे पाययोमूल कामको निधय हो देवबलम्बनमें पतित करेगा। जब पीर लिध परबलामि पतित करेया, उसका निधय नहीं है। लेकिन काम न कामो परबल हो करेगा, कोई निवारक नहीं कर सकता इस परबलम्बन-नामिका नाम काम पत्र है। यह कामफल वा तो किसीके वर्तमान यरोरमें प्राप्त होता, वा किछोह अपात्तर वा धरोरात्तर में। इस तरह जकमोगका नाम माय्यफलमोग है। यह माय्यकर्मफलमोगके मूलमें पुत्रवधार रहता है, पतएव पुत्रवधारके प्रति सब टा पत्र करना होगा पर्याप्त यन्त्राव में पुत्रवधार करनेसे हम देव वा धमाइड होगा; ज्ञापि बधका फल भी हम ही होगा। कण्ट बा तो प्र तम पुत्रवधार वा काम करनेसे तन्मनित पायय पीर तीव्रतम शक्तिपाको वा वेगवालो होगा। इस तरह पुत्रवधार करनेसे पुरट्ट नाथ जाता पीर बहुत कन्द हमपत्रक सिमता है। इसलिये पुत्रवधार ही देवसे बड़ है। कायमासका हा निधये हमपडट हा, बीसा ही पुत्रव धार करना निये है।

६ देवस्य रूप समीप । यह देवस्य पाठ प्रचार का है—विशुद्ध, पित्रयक, परशु, मन्व्य धरारत्, विद, यज्ञरक्षकारक, भूतभेदपियाक, विद्याधर किचरदि एहो ८ प्रकारके देवस्य हैं। (मागएत) कांक्षतस्य बीसुदोके मतये शाड, प्राधापरय ऐम्, पैत्र, मन्व्य धर, राचस पीर पैयाक ये पाठ प्रचारके देवस्य हैं। देवो देवभेदो देवताऽप्य पर । ७ याज्ञमेद, देवताके उद्देश्ये को याज्ञ किया जाता है, उसे ही व याज्ञ कहते हैं।

हिजातियो को देवकार्यको परेबा निजकार्यनिये-

रूपसे करना चाहिये। दैवकार्य पितृकार्यका अङ्ग स्वरूप पूर्वपोषक मात्र है। पितृकार्यका रचक समभक्त कर देवकार्य अर्थात् विश्वदेव प्रावाहनादि पत्रले करना चाहिये। जो पहिले दैवकार्य न कर पितृश्राद्धमें ब्राह्मण निमन्त्रण और अन्तमें विसर्जनादि करते, वे श्राद्धमें पतित होते हैं। (त्रि०) ८ देव सम्बन्धो, जो कुछ देवताके विषयमें क्रिया जाय, उसे दैव कहते हैं। ८ देवताके द्वारा होनेवाला। १० देवताको अर्पित। (पु०) ११ विधाता, ईश्वर। १२ आकाश, आसमान।

दैवक (सं० पु०) देवएव स्वार्थे कन्। दैव।

दैवको (सं० स्त्री०) देवकस्यापत्यं स्त्री अण. ङोप।

देवककी कन्या, वसुदेवकी पत्नी, श्रीकृष्णकी माता।

दैवकीनन्दन (सं० पु०) दैवक्याः नन्दनः ङन्तत्।

दैवकीपुत्र, वासुदेव, श्रीकृष्ण।

दैवकोविद (सं० त्रि०) दैवै शुभाशुभप्रापकहेतौ कोविदः। १ दैवज्ञ, ज्योतिषो। २ दैव पण्डित, जो

देवताका विषय जानता हो।

दैवचक्रि (सं० पु०) कोष्टुवंशीय राजा देवचक्रके एक पुत्रका नाम।

दैवगति (सं० स्त्री०) १ ईश्वरीय वात, दैवी घटना। २ प्रारम्भ, भाग्य।

दैवचिन्तक (सं० पु०) दैव लक्षणैः शुभाशुभं चिन्तयति चिन्ति-ष्णुल्। दैवज्ञ, ज्योतिषो।

दैवज्ञ (सं० त्रि०) दैवं जानन्ति ज्ञा-क। गणक, दैवचिन्तक, जो प्रश्नादिको गणना करके शुभाशुभका विचार करता हो। ब्रह्म वैवर्तपुराणमें इनकी कथा इस प्रकार लिखी है—इन्होंने देवता और ब्राह्मणका धन अपहरण किया था, इस कारण इन्हें शाप था, कि ये लोग धूमान्ध नरक भोग कर शतजन्म भ्रूपिक प्रभृति योनियोंमें जन्म लेनेके बाद श्वर, खणकार, सुवर्णवर्षिक और यवन आदिकी सेवा करेंगे तथा देवता और ब्राह्मणोंकी गणना करके अपना जीविका चलावेंगे, एवं दैवज्ञ ब्राह्मण नामसे पुकारे जायेंगे।

जो विप्र लाक्ष, लौहादि एवं रसादि वेचते हैं, वे नागवेष्टित हो कर नागवेष्ट नरकमें जाते हैं। पीछे वे अपनी शरीरकी सोमसंख्याके अनुसार नागदंष्ट्रित हो कर वास

करते हैं। अन्तमें वे ही गणक हो कर जन्मग्रहण करते हैं और पीछे मात जन्म तक वैद्य, गोप, चर्मकार और रङ्गकार वर्गमें जन्म ले कर शुचि होते हैं।

दैवज्ञ—वज्रदेशीय एक अणुके ब्राह्मण। ये लोग अपना परिचय देनेके लिये निम्नलिखित प्रमाण उद्धृत करते हैं। शाकलीय कुलज-पद्धतिमें लिखा है—

“शाकद्वीपस्थितायां ब्राह्मणा वेदपारगाः।

आनीता खगभूयेन प्रहचालनतपरगाः॥

प्रहदानविपाकेन प्रहविप्र उदाहताः।

आचार्यस्तस्य आख्यातिः दैवज्ञः शाकलद्विजः॥”

शाकहोषमें आठ वेदविद् ब्राह्मण थे, पद्मिराज गरुड इन लोगोंको इस देशमें लाये थे। ये ग्रहनिरूपण विद्यामें पारदर्शी थे। सभी ग्रहदान ग्रहण करते थे, इसलिये इनका नाम ग्रहचिप्र पड़ गया। इनके अन्य नाम आचार्य, दैवज्ञ और शाकलद्विज हैं।

ग्रहयामलके षष्ठ पटलमें लिखा है,—

“माकण्डो माण्डवो गगः पराशरस्तथा ययुः।

सनातनोगिरा जह्नुः शाकद्वीप्यष्टको मुनिः॥

तदात्मजा महातेजाः प्रत्यहं प्रहचारकाः।

आज्ञया देवदेवस्य गतवान् गरुडस्तथा॥

शाकद्वीपेस्थितो विप्रो प्रविशेत् शम्भुमन्दिरं।

वराहलोमईशानः शान्तिः शुक्रो धनजयः॥

दत्तुर्नद्युन्धराधैव प्रहदाने च ब्राह्मणः।

प्रहदानविपाके च प्रहविप्र उदाहृतः॥

गुर्वाहित्ये वराहध सोमे सोमे स्तथैव च।

ईशानो भूमिपुत्रश्च शान्तिश्च शशिनन्दने॥

शुकश्च शुकदाने स्यात् सूर्यपुत्रे धनजयः॥

राहुदाने दत्तश्चैव केतुदाने वसुन्धरः।

काश्यपश्च वराहश्च सोमः कौशिक एव च॥

ईशानो गौतमश्चैव शान्तिर्वास्तप स्तथैव च।

भरद्वाजो भृगुश्चैव पराशर धनजयौः।

दत्तुर्शाङ्गिल्यगोत्रः स्याद् मोह्वयश्च वसुन्धरः॥

एते च प्रवरास्तेषां सामवेदेषुदाहृतः।

सहस्रशीर्षाः पुरुषः सर्वाभूमिं सृष्ट्वा

ग्रहशान्तये तु तिर्यगादि प्रकाशतः।

सपादशतशुक्लात् ग्रहांश्च सपादशतद्रितान् चतुर्वेदेवेदिनः

पराशरानाम् कामरुचाम् वषाम् योशान् उदुशायाय
 पशुविद्याविषयमिति॥ अथवा अथवा ३
 काशरुचस्यो ज्योतिषिषो वैश्वो मन्थोपि च ।
 पशुविद्या द्विविधः सर्वशास्त्रविद्यारम्भः ।
 कात्यायनो ब्राह्मणवैश्वानर इत्येव कर्मवैदिकः ॥
 सुखी शास्त्री वनस्योपेयाः वद कर्मो पशुसुखः ।
 मोक्षसिद्धयः मोक्षः इत्येव कर्मवैदिकः च ॥
 पशुवैद्यः । पशुवैद्यकर्मवैद्योः शास्त्रोपेयासुखः ।
 ब्रह्मण्यन्यास्येयम् वैश्वो ब्राह्मण्य सुच ॥
 अथै पशुविद्या पशुवैद्योः शास्त्रोपेयाः स मित्रविद्या ।
 काशीयाः इत्येव विद्या निरुत्तिहासनाः कर्मो ॥
 ज्योतिषशास्त्रान् इत्या वैश्वशास्त्रोपेयाः ।
 यत्र प्रतिपद्ये भिक्षा वदुःपशुविद्यकर्मणः ॥
 इति पशुविद्याशास्त्रेणो यो पशुविद्याः सुखेति ।
 पशुविद्यायाः शास्त्रोपेयाः कर्मवैद्यः च ॥

मासकं, मासकं मग, पराशर, अथ, सनातन
 पशुविद्या पौर, अथ, वे पात्र सुनि शास्त्रोपेयां रक्षा वे ।
 तन्मै भवानीया पुत्रागण प्रतिदिन पशु कामन करति ये ।
 निव ह्यथै पादियानुसार मङ्गल अथ लक्ष्मी कर्मान् नि
 पायै, तत्र वे शास्त्रै चरमै ह्युपेयाः । तन्मै नाम ये वि-
 वशाथ सोम ईमान् शास्त्रि, यज्ञ, धनस्य, दनु पौर
 वसुधरः । पशुवैद्यमै ये वे पात्र व्यक्त ब्राह्मण ये ।
 पशुदान पशुवैद्य करतैक कारक ये पशुविद्य नामसै प्रतिप
 ह्यु । लक्ष्मी पौर इत्यर्थैक दानमै वशाथ अथ दानमै
 मोम मङ्गलकै दानमै ईमान्, सुभकै दानमै शास्त्रि यज्ञकै
 दानमै यज्ञ, यज्ञिकै दानमै कनक्य राधु ६ दानमै दनु
 पौर ईशुके दानमै वसुधर दान पशुवैद्यता ह्यु ये ।
 तन्मै गौत्र वस प्रकाश ये—वशाथका शास्त्रय, मामका
 कौमिक, ईमानका गौतम, शास्त्रिका कात्या अथुका
 भरद्वाज, धनस्यका पराशर दनुका याज्ञिक्य पौर
 वसुधरका मोक्षयः ।

परमेश्वर अथ ईशु है—मङ्गलसुख ब्रह्मणै मव प्रकाश
 भूमिको अथि कर पशुवैद्यिके निमित्त मन्थ, अथ पौर
 पशुवैद्यिके प्रकाशानुसार एक को पशुवैद्य सुखैकै वशाथ
 वे योमै एक एक करतै एक को पशुवैद्य पशुवैद्यशास्त्रोका
 अथि को को । वे वे पौर वेदिकै ज्ञाता हो कर पशु

ब्राह्मण ह्यु । ये सामवेदिके मान या सकरी है । इनके
 मो प्रकारके मोत्र ये । पेशि ब्रह्मणै १२५ कात्याय लक्ष्य
 कीं जिनके पात्र उनका विद्या ह्युपा ।

पशुविद्योके ये इत्येव नाम निर्दिष्ट ये—१ सामन्तर,
 २ ज्योतिषिक, ३ वेदक ३ गणक, ४ पशुविद्य ५ दिव्य
 योक्त, ६ सर्वशास्त्रविद्यारम्भ, ७ पाशार्थ, ८ ब्राह्मणिक ९
 वदक, १० साम वेदिक, ११ सुखी, १२ शास्त्रो, १३ लक्ष्य,
 १४ पशुवै, १५ वद कर्मा १६ पशुसुख, १७ मोक्षिक
 १८ मोक्षत, १९ ज्ञानो पौर २० कात्यायिक ॥ ०

पौर मो लक्षा मया है, कि पशुवैद्यो पुत्राकै निवे
 शास्त्रोपेयां ब्रह्मणै सुखैकै वदक लक्ष्य ह्यु ये, उनको
 निवेद्य हो ब्राह्मण समझना चाहियं । सबसुगमै पशुविद्य
 ज्ञेतामै भास्त्रिक ब्राह्मण इत्येव नामकोय ब्राह्मण पौर
 कास्त्रोपेयां निर्दिष्ट ब्राह्मण ह्युपा है ।

पशुविद्योके ज्योतिष पशुवैद्य, पुत्रा, वदगाणकानन,
 यज्ञ, दान पशुवैद्य पौर मिया ये हो प्रकारके मन्थ है ।
 वे कर्मसै वजित ब्राह्मणका पशुविद्य नहीं कहा जा
 सकता ।

अथमप्यमिना (जनमपयसा) लिप्यना कर जो वास्त्रि
 पशुविद्योको लक्ष्यै पशुवैद्यमानुप र लिप्यना नहीं देते, वे
 पितृवैद्यसाथ सो कर्म तत्र कुर्षोयाः नामक करकर्म
 नाम करतै है ।

देवाधिवा श्लोक गणकोक पौर गताथु वास्त्रि चिचि
 कर्मसै ह्येव करतै है यतयो वास्त्रि पौर गताथु वास्त्रि
 ब्राह्मणमात्रवे हो ह्यु रक्षी है । (पशुवैद्यक)

रात्रमात यज्ञमै निवा है—
 'पशुविद्यासुखतमा वदन्ति वदन्तपराः कर्मनिवासाणि ।
 सुखे च सुखाः जनय मन्थैयुर्वाशुवैद्यैः कर्तव्यसुखयाः ॥
 पशुवैद्यको विद्यो यो इत्यापेयै ह्युवैद्यः ।
 वदकै वि वदन्तपै शम्भुवैद्य पशु लक्ष्य ॥
 ब्रह्मण्य पशुवैद्यकाया पशुवैद्य पशुवैद्यम् ।
 पशुवैद्यकिया च वदन्तपशुवैद्यक व ॥
 दशात् ४६६ मङ्गल्य पशुवैद्यकोयम् ।
 एतेव पशु-इत्येव कात्यायिकेवैदिके मन्थै ३"
 पशुविद्यकस्युक्त हो कर जा कुछ करतै है, पशुवैद्य
 ० ये इत्येव नाम ब्रह्मण्यपुत्रावैद्यो को कर्तै काह है ।

कार्य-द्वारा वैसा ही आचरण करते हैं। ग्रहविप्रोक्ते तुष्ट होने पर भो सूर्यादि ग्रह तुष्ट नहीं होते। ग्रहविप्रगण हस्तादि द्वारा जो घृतादि होम करते हैं तथा जो कुछ ग्रहण करते और भोजन करते हैं, ग्रहोंका वही प्राप्त होता है। ग्रहविप्रकी पूजा करनेसे ही ग्रहोंका पूजा हो जाती है। ग्रहहोममें जो कुछ दक्षिणा दी जाती है, वह तथा ग्रहयज्ञकी ममत्त सामग्री ग्रहविप्रको देना चाहिये। ग्रहयज्ञमें ग्रहविप्रको भोजन कराना उचित है। इस प्रकार ग्रहयज्ञ करनेसे काम्यादि कर्म सिद्ध होते हैं। गणक और ग्रहविप्र देखो।

दैवज्ञा (सं० स्त्री०) देवज्ञ-टाप्। देवज्ञ-पत्नी, ज्योतिषाकी स्त्री। इसका पर्याय—विप्रश्रिका और ईक्षणिका है।
दैवत (सं० स्त्री०) देवतैव स्वार्थे अण्। १ देवता। देवताना समूहः अण्। २ देवतासमूह। (त्रि०) देवताया इट् अण्। ३ देवता सम्बन्धी। ४ देवता-सम्बन्धीय प्रतिमादि। ५ निरुक्तका वह भोग जिससे वेदमन्त्रोंके देवताओंका परिचय होता है।

दैवतन्त्र (सं० त्रि०) दैव भाग्यं तन्त्रं प्रधानं यस्य। भाग्याधीन।

दैवतपति (सं० पु०) दैवतानां देवानां पतिः इ-तत्। इन्द्र।

दैवतप्रतिमा (सं० स्त्री०) दैवतानां देवानां प्रतिमा इ-तत्। देवता-सम्बन्धीय प्रतिमा।

दैवतरस (सं० पु०) प्रवर ऋषिभेद।

दैवतरय (सं० पु० स्त्री०) दैवतरस्य अष्टदेवस्य अपत्यं शुभ्रादित्वात् ठक्। अष्ट देवताका अपत्य।

दैवति (सं० पु० स्त्री०) दैवतस्यापत्यं इव्। देवताको सन्तति।

दैवतीर्थ (सं० पु०) आचमन करनेमें उँगलियोंके अग्र-भागका नाम, उँगलियोंको नोक।

दैवत्य (सं० त्रि०) देवता स्वार्थे यञ्। देवता।

दैवदत्त (सं० त्रि०) देवदत्तस्य छात्राः अण्। १ देवदत्तके छात्रादि। देवदत्तः भक्तिरस्य, अचित्तत्वाभावात् न ठक् किन्तु अण्। २ देवदत्त-भक्तियुक्त।

दैवदत्ति (सं० पु० स्त्री०) देवदत्तस्यापत्यं देवदत्त-इव्। देवदत्तका अपत्य, देवदत्तको सन्तति।

दैवदर्शनं निन् (सं० पु०) देवदर्शनं नैन ऋषिणा दृष्टं अधो-यते शौनकादित्वात् णिनि। देवदर्शनं ऋषिप्रोक्तं समस्त छन्दोऽध्यायी।

दैवदारव (सं० त्रि०) देवदारोर्विकारः भव्। देवदारवृत्तके विकार यूपटि।

दैवदोष (सं० पु०) दैव सूर्याधिष्ठात्रिको दीपः। १ चक्षु, नेत्र, आँख।

दैवदुर्विपाक (सं० पु०) दैवको प्रतिकूलता, भाग्यको खोटाई।

दैवन्त्यायन (सं० पु०) देवन्त वाहु० गोत्रे फज्., ततो-यूनि फक्.। त्राप्यं य गोत्र प्रवर ऋषिभेद।

दैवपर (सं० त्रि०) दैवं भाग्यं परं चिन्त्यं यस्य। दैवनिष्ठ। इसका पर्याय यज्ञविषय है।

दैवप्रश्न (सं० पु०) दिवि आकाशे भवः दैवः, दैवः प्रश्नः कर्मघा०। १ शुभाशुभ कर्मको जिज्ञासा। २ दैववाणी। जो सब शुभाशुभ वाक्य आकाशसे सुने जाय, उसे दैवप्रश्न कहते हैं।

दैवमति (सं० पु० स्त्री०) देवमतस्य ऋषेरपत्यं इव्। १ देवमत ऋषिका, अपत्य। स्त्रियां ङीप्। ततोयूनि फक्.। २ देवमतायन, देवमत ऋषिका युवा अपत्य।

दैवमित्रि (सं० पु० स्त्री०) देवमित्रस्य ऋषेरपत्यं देवमित्र इव्। देवमित्र ऋषिका अपत्य।

दैवयज्ञि (सं० पु० स्त्री०) देवो देवार्थो यज्ञो यस्य तस्यापत्यं इव्। १ देवार्थ-यज्ञकारकके अपत्य। स्त्रियां ङीप्। दैवयज्ञायन।

दैवयुग (सं० स्त्री०) देवस्य इदं अण्, दैवं युगं कर्मघा०। दिव्ययुग। मनुष्योंके चारों युगोंके बराबर एक दिव्ययुग होता है।

मनुने लिखा है, कि मनुष्योंके एक वर्षका देवताओंका एक रातदिन होता है। इसी दैव परिमापके चार हजार वर्षका सतयुग होता है। इस युगकी सन्ध्या और सन्ध्यांश चार सौ वर्षके होते हैं। अन्यान्य तीन युगोंमें उनको सन्ध्या और सन्ध्यांश एक हजार एक सौ वर्ष कम होते हैं अर्थात् तीन हजार वर्षमें त्रेतायुग, तीन सौ वर्ष उसको सन्ध्या और तीन सौ वर्ष उसका सन्ध्यांश। दो हजार वर्ष हापरयुग और हजार वर्ष

कश्चिद्गुणत्वा प्रमाद है । मनुष्योऽपि वि भो चार सुयो बी
 य स्या है । इसका बारह बारह अर्थ देवताओंका एक
 युग होता है ।

द्वैतयोग (स० पु०) द्वैतज्ञ योग फलोऽनुभूतया सत्त्वम् ।
 मान्यत्वा आह्वयिक फल, मयोग, इतिपाठक ।

द्वैतरत्न (स० पु०) द्वैतरत्नस्य द्वैतरत्न-पत्र । द्वैतरत्न
 मन्त्रयोः ।

द्वैतराजिक (स० त्रि०) द्वैतराजि मन्त्र काष्ठादित्यात् ठप् ।
 द्वैतराजभय, जो द्वैतराजमे उत्पन्न हो ।

द्वैतराति (स० पु० श्लो०) द्वैतरातस्त्रापतर इव । १ दिन
 रातका अपतर । २ अन्नकराकषी यिता ।

द्वैतन (स० पु०) द्वैतलक्षापतर विभादितात् पत्र ।
 द्वैतन कृषिका अपतर वा सन्तति ।

द्वैतनक (स० पु०) द्वैत द्वैतयोनि काति पञ्जाति पूष्य-
 मने कुम्भितार्त्वा वा । १ मृतयिषक । द्वैतनकस्य इद
 पत्र । २ द्वैतन फलश्रीः ।

द्वैतनीलक (स० पु०) द्वैत द्वैतनिमित्तस्यमायम निव
 तीनि तिस्र-शुक्ल । मोक्षचित्तं च, मन्त्र, श्लोतियो ।

द्वैतनय (स० पु०) द्वैतानां द्वैतानां वयः ६ तत् ।
 द्वैतानां का नयः ।

द्वैतनय (स० पु०) द्वैतानां का नयं जो ११११२१ और
 दिनां का होता है ।

द्वैतनय (वि० त्रि० वि०) अक्षरमात् द्वैत योयसि ।
 द्वैतनयमात् (वि० त्रि० वि०) द्वैतनय देखो ।

द्वैतवाचो (स० श्लो०) द्वैतो वाचाय सत्यमिदो वाची ।
 १ वाचाप्रवाचो । इत्थाका पर्याय—चित्तोक्ति, सुषुम्नचटो ।

द्वैतवद और उपपत्ति है । २ स स्मृतवाक्य ।

द्वैतवादी (स० पु०) १ वद जो मान्यके मरुये रहता
 हो । २ निरुपयोगी, पाठकी ।

द्वैतविद् (स० पु०) द्वैतं विदित विद ज्ञिप । द्वैतच मन्त्र,
 श्लोतियो ।

द्वैतविभाज (स० पु०) स्वतित्योमि तिस्रे पाठ प्रकाशके
 विभाजोऽर्थे एक ।

द्वैतवर्मा (स० पु० श्लो०) द्वैतवर्मा बोध्यक ततो वाङ्मा
 दितात् विन् । द्वैतवर्माका अपतर ।

द्वैतवाह (स० पु०) द्वैतवाचो के उद्देश्यके द्विधे जानिका
 वाह ।

द्वैतधर्म (स० पु०) द्वैत धर्मः धर्मं वा । द्वैतादि
 धर्मस्यै, देवताओं की छटि । इतके धर्मतात पाठ सित
 है—ब्राह्म, माशापत्र, पिक, पैत, मान्यवर्मा, मन्त्र, राक्षस
 पौर पेशाच ।

द्वैतछटि (स० श्लो०) द्वैतछेद पत्र, देवो छटि
 धर्मं वा । अथयत्त द्वैतवाचोकी छटि ।

द्वैतज्ञान (स० पु० श्लो०) द्वैतज्ञानस्य अथेरेपस्य इव ।
 द्वैतज्ञान कृषिका अपतर ।

द्वैतज्ञय (स० पु०) द्वैतज्ञयस्य द्वैतज्ञानस्य अथिरे
 पतास्य ज्ञानः काष्ठादित्यात् पत्र, यकोत्तुप । द्वैतज्ञयके
 समस्त ज्ञान ।

द्वैतज्ञान (स० त्रि०) द्वैतज्ञ मान्येन ज्ञाने २ तत् । अम
 मान्यज्ञान, जिनके मान्यके कोरे अम कथय न हो । जो
 पतास्य ध्वसनी, पधर्मो और तीनों उपातके उत्पोकित
 है, वे ही द्वैतज्ञान हैं ।

द्वैतकारि (स० पु०) द्वैतकारिणापत्र सुमान् द्वैतकार
 इव । १ शानि । २ अम । (श्लो०) ३ यमुना ।

द्वैतकृत (स० त्रि०) धाकस्मिन् सप्तसा होनेवाला ।

द्वैतकारिक (स० त्रि०) द्वैतकारि निमुक्तः 'तत्र निमुक्त'
 इत्यधिकारि उक्त् । द्वैतकारि निमुक्त, जो द्वैतकारमे
 निमुक्त हुआ हो ।

द्वैतात् (स० पद्य०) चठात्, चकलमात्, पचानक,
 इतिपाठके ।

द्वैतान्य (स० पु०) द्वैतज्ञतोऽर्थस्य उत्पत्ता । द्वैतज्ञत-
 उत्पत्त, पचानक भाषये भाव होनेवाला पत्रवर्मा ।

द्वैतदिक् (स० पु०) द्वैतदिग्निधे यद्विन्त उक्त् । दिवा
 दिग्निधयन्ति वातु । द्वैतदिग्निध वातुमि जो मन्त्र वातु
 है, उक्त् द्वैतदिग्निध कहते हैं ।

द्वैतपत्र (स० पु०) मन्त्रका गोत्रापत्र ।

द्वैतपरि (स० पु०) द्वैतपरिन् चतुरान् पाति आह्वय
 शानिन पा-क द्वैतपरि' चतुर' तत् मन्त्र पत्र । मन्त्र ।

द्वैतस्य—भारतोय पद्योविधिप । च मरुको मङ्गलमाह्वयि
 कश्च टण्डोपवेशो पद्मी कातिसे मन्त्र दूरकोडो (Tur-
 didao) शाखाको इटिसेलिनी (Buticellini) उप-
 शाखाके पत्रार्थत कश्चिद्वय (Copsychus) विमानके
 मन्त्र मिला जाता है । इसका नाम कप/चिद्वय ससेरिप

(Copsychus Saularis) है, साधारणतः अंगरेजोंमें इसे मगपाई रोबिन (Magpie—Robin) कहते हैं। भारतवर्षमें यह भिन्न भिन्न नामोंसे पुकारा जाता है। हिन्दोमें इसे दैवान, बङ्गालमें दैयाल, सेलगुमें पेहान, लखि या सरैनागडू, नेपथामें जन्दिदको और ब्रह्ममें सगो-लथ्ये कहते हैं।

यह पक्षी देखनेमें सुन्दर होता है। इसके नरका सिर, छाती, गला और ऊपरी भागके पर त्रिलकुल काले, पेट और पूँछके निम्नस्थ पर सफेद और डैने काले होते हैं। सादाके डैने और पूँछ धूसर रंगको होती है, लेकिन परनरके जैसे सफेद होता है। इसको चाच काली और ८ इञ्च लम्बो होता है। समस्त भारत और मोलमिन पर्यन्त ब्रह्मदेशमें इस पक्षीके नभो वर्ष एक प्रकारके होते हैं। तेनसेरिम प्रदेश तथा सिङ्गलमें वर्ष में फर्क पड़ भो जाता है, तो भी इनका अणोविभाग नहीं किया जाता। यह पक्षी सिन्धुदेश और पञ्जाब-काश्मिरमें कहीं भो देखा नहीं जाता तथा निकोवार हापमें भो यह नहीं मिलता है।

दैवाल कौडे मकोड़े तथा अनाज खा कर अपना पेट पालता है वै गाखसे ले कर आवण तक सादा हचकोटर वा टीवालके छेदमें अंडे पारतो है, एक एक साथ ४।५ अंडे टेतो है। यह पक्षो बहुत आमानोसे पोस मानता है। इसको बोली बडो मोठी होता है। मैना और तोतेकी तरह यह भो मनुष्यकी बोली समझता और बोलाता है।

दैवासुर (स० स्त्री०) देवासुरस्य वीरं अण् । १ देवता और असुरकी वीरता । देवासुरशब्दोऽ स्तरस्य अनुवाके अध्याये वा विमुक्तादित्वात् । २ देवासुरशब्दयुक्त अनुवाक वा अध्याय ।

दैवाहोरात्र (म० पु०) दैवः देवसम्बन्धो अहोरात्रः । देवताओंका एक दिन जो मनुष्यका एक वर्ष होता है।

दैविक (स० त्रि०) देवस्य अयं दैवे भवो वा ठक् ।

१ देवसम्बन्धोय, देवताओंका । देवानुद्दिश्य प्रवृत्तः वा ठक् । २ देवताओंके उद्देश्यसे किये जानेका आह ।

दैवो (स० स्त्री०) देवस्य इयं देव-अण्, ततो ङोप ।

१ देवसम्बन्धोय । २ दैवविवाह द्वारा परिणीता स्त्री, वह स्त्री जो दैव-विवाह द्वारा व्याही गई हो । ३ चिकित्सा-विशेष । दैवी, आसुरी और मानुषी ये तीन प्रकारकी चिकित्सा हैं। देव-डीप । ४ गीतोक्त सम्पन्नेद ।

इस संसारमें जीवोंकी प्रकृति तीन प्रकारकी है— दैवी, आसुरी और मानुषी । ये तीनों क्रमशः मत्त्व, रज वा तमोगुणसे निकले हैं। इनमेंसे जो दैवी प्रकृति का उपकरण ले कर जन्मग्रहण करते, उनको आत्मोन्नति वा सुज्ञादि होता है। अभय, सत्त्वसंशुद्धि, ज्ञान और योगके विषयमें निष्ठा यही दैवी है। पुत्रकलत्वादि सभी परि-जना और सब प्रकारके परिच्छेद तथा प्रतिग्रहादिकी परित्याग कर केवलमात्र अर्कला में किस तरह जीवित रहंगा, इस तरह निर्भय हो कर जो रहता है उसीमें एक प्रकारके उखाहविशेषका नाम अभय है। अन्तः-करणकी निर्मलता अर्थात् सम्यक्-रूपसे आत्मतत्त्व परि-स्फुरणको उपयुक्तता ही मत्त्वसंशुद्धि है। आत्मतत्त्वादि प्रकाशक शास्त्रका प्रकृत तात्पर्य ग्रहण कर जो संस्कार-विशेष उत्पन्न होता है, उसीको ज्ञान कहते हैं। उस ज्ञानकार्यमें परिणत करानेके लिये अर्थात् देहादि जड़ पदार्थके अतीत आत्मतत्त्वके अनुभयके लिये जो चित्तकी एकाग्रताका अभ्यास किया जाता है, उसे योग कहते हैं। फिर इस ज्ञानके योगमें सर्वदा निष्ठा रहनेका नाम ज्ञानयोगनिष्ठा है। इसीको दैवोसम्पद् कहते हैं। ये सब परमहंसाश्रममें सम्पूर्ण विकाश पाते हैं। दान शक्ति, दमशक्ति, यज्ञ प्रभृति स्वाध्याय-शक्ति और तप शक्ति ये भा दैवीसम्पद् हैं। ये यथाक्रमसे चतुराश्रममें ही विकसित होते हैं। इसके सिवा आज्ञे, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शान्ति, अपशुन, सर्वभूतदाय, अलोलु-पत्व, मृदुता, लज्जा, अचापत्य, तेज, जमा, धृति, शौच और अमानित्वादि शक्तियां भी दैवीसम्पद् कहलाती हैं। यह दैवोसम्पद् ब्राह्मणादि चतुर्वर्णोंमें ही विक-सित हो सकता है। जो पूव जन्मके कर्मानुसार दैवी प्रकृतिका बीज ले कर जन्मग्रहण करते, उन्हींके परि-णामसे बहुत कुछ सहायता पा कर वे सब शक्तियां परि-स्फुट होती हैं। ५ एक वैदिक छन्द ।

दैवी (हि० स्त्री० वि०) १ देवतासम्बन्धो । २ देवकृत,

देवताओं को भी हुई । ई पाचस्मिन्, प्रारब्ध या संयोगि होनेवाली । ४ सात्विक ।

देवानगि (स० स्त्री०) १ ईश्वरकी भी हुई बात । २ प्रारब्ध, भावो, शोणहार ।

देवदासि (स० पु०) द्वितीयापन्न पण्य १३ । दिवो दासका पण्य ।

देवोद्यान (स० स्त्री०) देवानां दिवानां उद्यान । देव ताबोद्या उद्यान ।

देवोपहतक (स० लि०) देवैर्भक्त उपहतं कम् । इतमाय्य, परमात्मा ।

देव्य (स० स्त्री०) देवपत्ने देव-यम् । १ देव, देवता । २ माय्य, नदीव । (लि०) ३ देवसम्बन्धीय ।

देविय (स० लि०) देविम निर्गता तपत्रेद वा उच्यते । १ देवसत्त । २ देवसम्बन्धीय । ३ सम्बन्धविविध ।

देविय पण्य बहुत शूर्य स योगान्तरितलक्षणसे उत्पन्न होता है अर्थात् जहाँ शूर्य है स योगसे अनेक व्यवधान हो लसे द त्रिकपरत्न कहते हैं । पण्य रेखो ।

देवियविषयवता (स० स्त्री०) देवसत्त धर्माधीय अण्य सम्बन्धसैद ।

देविक (स० लि०) दिव्य माय्यमिति मतिवर्षण इति उच्यते । भाव्यवसावक देवपर, भाव्यसे भरोसे रहने-वाला ।

देविक (स० लि०) दिव्य इद देवमव वा देव उच्यते । १ देव सम्बन्धीय, शारोविक । २ देवमव, शरीरसे उत्पन्न । मनुने लिखा है कि सदा, रैत, रज, मय्या, मूत्र, विष्य, नासिकासक, कर्णमल स्रष्टा, नेत्रजल, निद्रमल और चर्म से बारहों देविक मल हैं । इन्हें सर्वदा परिष्कार रचना चाहिये ।

देविका (स० लि०) देवो भवति देव-व्यम् । देवमव शोच । दोहना (हि० स्त्री०) शुरुणा ।

दोहो (हि० स्त्री०) दोहनेको ।

दोह (हि० पु०) एक प्रकारका शौच ।

दो (हि० वि०) तीसरे एक कम एक धोर एक ।

दो-पातया (पा० वि०) जो दो बार खींचा या छतारा गया हो । एक बार चर्च या शराव खादि धींच जुबन पर अभी अभी लक्ष्मी बहुत तोष करनिके सिद्धे विरसे

धौचरी या चुपाने हैं जिसे दो पातया कहते हैं । दोपाव (पा० पु०) बर प्रदेय जो दो नदियोंके बीचमें पड़ता हो ।

दोपाव—युद्ध प्रदेशमें साइराभपुर, सुत्रपकरनगर, मौल, हुसन्दरहर पबोगड़, इत्याका कुछ पय, मयुपाका कुछ पय काभपुर, पयपुर धोर इत्याकाबाद त्रिलोका कुछ पय इस भूमामके पन्नागत है । युद्ध प्रदेशमें यही दोपाव सबसे अधिक ठहरा है धोर यहाँ कुछ कुछ पनात्र मो हुआ करता है । वहाँ बहुत लोग रहते हैं जिनमेंसे अधिकांश क्षत्रियोंने हैं । मोरठ, काभपुर, पलागड़ धोर इत्याकाबाद ये चार प्रधान जातिव्य जात हैं । ईश्वरकी विस्तृतित्ने बारच काल पय हो कर हो पनात्रोकी रक्तनी धोर धामदनीकी विषय सुविधा है । दोपाव तीन भागोंमें विभक्त है । सहारापुरके पबोगड़ तक एक भाग मयुपा धोर पटाके से कर इटावा धोर पबुकाबाद तक दूसरा भाग तथा काभपुरसे से कर इत्याकाबाद तक तीसरा भाग है । महा धोर पसुनासे नहर काट कर खेन सींचनेकी जो व्यवस्था की गई है उससे दोपावकी कमीन बहुत कम रा है तथा पनात्र मो काफी उपजता है ।

१८२१ ई०में पसुनाको नहरका काम प्रारम्भ हो कर १८३० ई०में समाप्त हुआ था । पहले दोपावमें काफी पनात्र नहीं उत्पन्नसे प्रतिवय पबुकाह होता था, अतः पसुना बन्दसे कमोल सींचनेके लक्ष्यसे दो नहर काटी गई । उक्त नहरके काटे जानेसे मयुपा पनात्र उत्पन्न होती देख मद्रासे भी एक नहर काटनेका प्रस्ताव किया गया ।

१८६०-६८ ई०में युद्ध प्रदेशके पबुकाके बहुत भवानक बुनियाद पड़ा, जिसमें मयमेंस्थले उक्त प्रस्ताव कार्यमें परिचय करनिका स कार्य किया ।

१८६२ ई०के प्रारम्भ हो कर १८६४ ई०में उत्तरीयका काम धोर १८७१-७४ ई०के प्रारम्भ हो कर १८७८ ई० में नहर काटनेका काम समाप्त हुआ ।

दोपावा (पा० पु०) दोपाव हैको ।

दोष (हि० पु०) दोषको उक्तका नदीव ।

दोकला (हि० पु०) १ वह ताला जिसमें दो कल या पेच
हों। २ एक प्रकारकी मजबूत वेड़ी।

दोकोहा (हि० पु०) वह कट जिसको पीठ पर दो
कूवर हों।

दोखंभा (हि० पु०) बिना कुल्फोका नैचा।

दोगंग (हि० स्त्री०) दो नदियोंके बीचका प्रदेश।

दोगण्डो (हि० स्त्री०) १ उताती, उपद्रवी, फसादी।
२ वह चित्ती या इमलौका चीन्ना जिसे लहके जूपा
खेलनेमें वैश्रमानी करनेके लिये दोनों औरसे घिस लेते
हैं और जिसके दोनों औरका काला अंश निकल जाता
और सफेद अंश निकल आता है।

दोगला (फा० पु०) १ वह जीव जिसके मातापिता
भिन्न भिन्न जातियोंके हों। २ वह मनुष्य जो अपने
माताके असली पतिसे नहीं बल्कि उसके यारसे उत्पन्न
हुआ हो, जारज।

दोगला (हि० पु०) एक प्रकारका गोल और गहरा पात्र
जो बांसकी कमचिरियोंका बना होता है। इससे किसान
लोग पानी उलीचते हैं।

दोगा (हि० पु०) १ एक प्रकारका लिहाफ। यह
मोटे देशी कपड़े पर बेल बूटे छाप कर बनाया जाता
है। २ पानीमें घोला हुआ चूना। यह सफेदी करनेके
काममें आता है।

दोगाहा (हि० पु०) वह बन्दूक जिसमें दो नली लगी
रहती हैं।

दोगुना (हि० वि०) दुगना देखो।

दोग्धव्य (सं० त्रि०) दुह-तथ्य। दोहनोय, दुहने योग्य।

दोग्धृ (सं० त्रि०) दुह लृच्। १ दोहनकर्ता, दुहने-
वाला। (पु०) २ गोपाल, ग्वाला। ३ बत्त, बछड़ा। ४
अर्थोपलवो। ५ अर्क। ६ दोहनशील, वह जो दुहने
योग्य हो।

दोग्धो (सं० स्त्री०) दोग्धृ-डोप्। दुग्धवती धेनु, दुग्धार
गाय।

दोघ (सं० पु०) दुह-अच्-वेदे निपातनात् हस्य घ।
दोग्धा, दुहनेवाला मनुष्य।

दोचंद (फा० वि०) दुगना।

दोच (हि० स्त्री०) १ असमंजस, दुवधा। २ कष्ट, दुःख।
३ दबाव।

दोचन (हि० स्त्री०) १ असमंजस, दुवधा। २ दबाव। ३
कष्ट, दुःख।

दोचना (हि० क्रि०) दबाव डानना।

दोचला (हि० पु०) दो पलिया छाजन।

दोचित्ता (हि० वि०) उद्विग्न चित्त, जिसका चित्त एकाग्र
न हो।

दोचित्तो (हि० स्त्री०) चित्तकी उद्विग्नता, दो चित्त
होनेका भाव।

दोचोवा (हि० पु०) वह बड़ा खेमा जिसमें दो दो चो-
लगती हों।

दोज (सं० पु०) सङ्गीतमें अष्टतालका एक मेट।

दोजई (हि० स्त्री०) गोलाकार वृत्त बनानेका नकाशो-
का एक औजार। इसका आकार छेनीसा होता है।

दोजख (फा० पु०) १ सुसलमानोंके धार्मिक विश्वासके अनु-
सार नरक। इसके सात विभाग हैं और इसमें दुष्ट तथा
पापी मनुष्य मरनेके उपरान्त रखे जाते हैं। (हि० पु०)
२ एक प्रकारका पौधा। इसमें सुन्दर फूल लगते हैं।

दोजखी (फा० वि०) १ दोजखसम्बन्धी, दोजखका। २
दोजखमें भेजे जानेके योग्य बहुत बड़ा अपराधो, पापो।

दोजर्वी (फा० स्त्री०) दोनली बन्दूक।

दोजा (हि० पु०) कल्याणभार्या, दोवारा ब्याहा हुआ
आदमी।

दोजानू (फा० क्रि० वि०) घुटनोंके बल या दोनों घुटनों
टेक कर।

दोजोरा (हि० पु०) एक प्रकारका चावल।

दोजीवा (हि० स्त्री०) गर्भवती स्त्री।

दोड़ो (सं० स्त्री०) दोल-अच्-गौरादित्वात् डीष। लक्ष्य
ह। फलप्रधान वृक्षमेट, एक प्रकारका पेड़ जिसमें अच्छे
फल लगते हैं।

दोण्डिका (सं० स्त्री०) कोपातको, कह, ई तरीई।

दोतरफा (फा० वि०) दोनों और सम्बन्धी, दोनों तरफका।

दोतर्फा (फा० वि०) दोतरफा देखो।

दोतला (हि० वि०) दोतला देखो।

दोतला हि० वि०) दो खंडका, दोमंजिला।

दोतहो (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी देशी मोटो चादर।
यह दोहरी करके विद्वानोंके काममें आती है।

दीर्घा (हि० पु०) दीर्घी देवी ।

दीर्घा (हि० पु०) १ एक प्रकारका दुग्धाक्षी । २ एक प्रकारका बाजा की एकतारकी तरहका होता है । इसमें एकतारकी पथिया बियेयता यह है कि इसमें बजातेक लिये एकके बदेसे दो तार होते हैं ।

दीर्घा—सुमनाके दक्षिण पश्चिममें अवस्थित एक बहुजना-कोर्ष प्रदेशीय शहर । इसके मध्य दो कर चर्खाकी नदी प्रवाहित है । यह प्रधान नगर राजपूतानेसे साठे धर कोस पूर्वोत्तरमें अवस्थित है ।

यह प्रदेश पथीयानकी तातुबामय प्रदेशके को द्वारा और दोहिनखण्डको कासी नदी द्वारा विभक्त करता है ।

दीर्घी (हि० स्त्री०) दारुजिह्वा, सिद्धिदा, शूद्रान शौर पूर्वी व मासमें मिलनेवाला एक प्रकारका सदाबहार फल । इसकी बड़की कासी, चिकनी और बड़ी होती है और रमारतके काममें पाती है ।

दीर्घ (हि० पु०) १ चर्मकी दाह या तरकारो । २ कच नारकी कर्मिया को तरकारोके काममें मो पाता है ।

दीर्घाक्षिकाक्ष (पा० पु०) तासिक तुषपके खेचमें बिधी एक बिधाङ्गीका एक साथ बाकी दोनी चित्ताङ्गीकी को मात करना ।

दीर्घाङ्गीपुर—१ महिहारके बड़ोतर त्रिभेवा उत्तर पश्चिमोत्तर तातुब । यह पचा० ११ ०' से ११ १०' ०" और देशा० ७७ १८' से ७७ ३०' पू०के मध्य अवस्थित है । मूलरिमाच १५१ वर्गमील और जन सख्या ५७०५ पथीय इलाके है । इसमें इसो नामका एक शहर और १३१ ग्राम समते हैं । तातुबका पूर्वीय भाग वर्षाकाल है । सारे तातुबमें परजायतोके वस्त्रके काम चलता है ।

२ एक तामुलका एक शहर । यह पचा० ११ १८' ०" और देशा० ७७ ११' पू० बड़लूर शहरसे २१ मील दूर परजायती नदीके किनारे अवस्थित है । जनसख्या ८ हजारके करीब है । १ नौ यताम्हीमें यह बाबिज्जका प्रधान क्षेत्र था, लेकिन १९वीं यताम्हीके प्रारम्भमें यह नगर बयाया गया है । १०६१ ई०में ईदरफोनमें इस पर अपना अधिकार जमाया । १८७० ई०में मुनिस्व-रिडो स्थापित हुई है ।

दीर्घा (हि० पु०) एक प्रकारका बड़ा खीरा । यह दो बड़े शायकम्पा होता है । इसका रंग काला तथा जो ब या पैर चमकीले होते हैं । यह गर्मो तथा अम्लामि बहुत पाया जाता है । इसकी घादमें मामूली कोबेको मो होते हैं । इसका घोंसला खँबे इस पर बना रहता है और बड़ पूससे प्रागुन तक पड़े देता है । एक शहर इसमें पाँच पड़े होते हैं ।

दीर्घा (हि० स्त्री०) त्रिभेवाकी दीर्घामि प्रवृत्त करना मोटनेका काम दूसरेके कराना ।

दीर्घामि (हि० स्त्री०) इराणी देवी ।

दीर्घ (हि० पु०) रीठेको जानिजा एक फल । इसके एक शायकम्पा तरह बपड़े साइ करके काममें पाते हैं और पत्ते खीरायो को गुलाये जारी हैं और बीज टबाके काममें पाते हैं ।

दीर्घा (हि० स्त्री०) त्रिभेवा चित्त एकाय न हो, दो चित्त ।

दीर्घा (हि० स्त्री०) चित्तकी अस्मिता, दीर्घता ।

दीर्घाग्राम (म० स्त्री०) दुग्ध एक दीर्घाग्राम । पत्तान दीर्घाग्राम को बार बार लुप्तता को ।

दीर्घ (म० पु०) दुग्ध-एक निपातनात् साहु । गोबल, गाय का बच्चा । २ गोप, ग्यामा, पकोर । ३ वह कवि जो गुरव्याके लिये कविता करता हो ।

दीर्घ (म० स्त्री०) इन्दोमेंट एक नरकल । इसमें तीन मगच और पत्तमें दो शुद्धक होते हैं ।

दीर्घा (हि० पु०) माना बरका ।

दीर्घा (हि० स्त्री०) १ त्रिभेवाकी दोनी और बार हो । (पु०) २ एक प्रकारका शूकर ।

दीर्घाग्राम (म० स्त्री०) पुनः पुन अतिमयेन वा धूमने धू-यन । दीर्घयु शायु ग्राम । पुनः पुनः कल्पनविधि को बार बार व्यापता हो ।

दीर्घ (हि० पु०) १ वह मोचो जमीन जो दो पहाड़ोंके बीचमें पड़तो है । २ दोपाव, दो नदियोंके बीचकी जमीन । ३ दो नदियों का न बम ज्ञान । ४ दो नदियोंके मेल । ५ दो नदियों का मेल । ६ एक प्रकारका काठका जम्बा और मोचके कोखका दुग्ध । इससे जानके शितो'से वि बार्द को बातो है । इसका पाकार जान शूद्रनेको

ट्रॅंजलीके आकारका होता है और उसकी तरह अमीन पर लगा रहता है इसका एक सिरा बहुत चौड़ा होता है और इसीसे पानी लिया जाता है। पहले इस सिरके पानीमें डुवाते है और पानीसे भर जाने पर उसे ऊपरको ओर उठाते है। ऐसा करनेसे इसका दूसरा सिरा नीचे हो जाता है और उसके खोखले मार्गसे पानी नालोमें चला जाता है।

दोनलो (हिं० वि०) दो नालवाली।

दोना (हिं० पु०) पत्तोंका बना हुआ छोटा गहरा पात्र। यह काटोरेके आकारका होता है और इसमें खानेकी चीजें आदि रखी जाती है।

दोनिया (हिं० स्त्री०) छोटा दोना।

दोनो (हिं० वि०) एक और दूसरा।

दोपथी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारको दोहरे खानेकी जाली। स्त्रियाँ प्रायः इसको कुरतियाँ बनाती है।

दोपटा (हिं० पु०) दुपटा देखो।

दोपलका (हिं० वि०) १ दो पल्लेका नगीना, दोहरा नगीना। २ एक प्रकारका कवूतर।

दोपलिया (हिं० वि०) दोपल्लो देखो।

दोपल्लो (हिं० वि०) १ दो पल्लेवाला। (स्त्री०) २ एक प्रकारकी टोपी जो मलमल, अद्वी आदिकी बनी होती है। इसमें कपड़ेके दो टुकड़े एक साथ मिले होते हैं। इस तरहकी टोपी लखनऊ, प्रयाग और काशी आदिमें अधिक व्यवहृत होती है।

दोपहर (हिं० स्त्री०) मध्याह्नकाल, सबेरे और सन्ध्याके बीचका समय।

दोपहरिया (हिं० स्त्री०) दोपहर देखो।

दोपीठा (हिं० वि०) १ दोरुखा, जिसके दोनो ओर एक सा रंग रूप हो। (पु०) २ कागज आदिका एक ओर छपनेके उपरान्त दूसरो ओर छापना।

दोपीवा (हिं० पु०) १ पानकी आधो टोली। २ किसो वस्तुका आधा।

दोप्याजा (फा० पु०) एक प्रकारका पका हुआ मांस। इसमें तरकारो नहीं पड़ती और प्याज दो बार पड़ता है।

दोफसली (हिं० वि०) १ दोनों फसलोंके सम्बन्धका। २ दोनों ओर काम देने योग्य।

दोवन (हिं० पु०) दोप, अपराध।

दोवारा (फा० क्रि० वि०) १ दूसरो वार, दूसरो दफा। (स्त्री०) २ दो-आतशा शराव। ३ दो आतशा परक आदि। ४ यह चीज जो एक वारकी प्रसृत चीजसे फिर दूसरो वार प्रसृत की गई हो।

दोबाला (फा० वि०) दूना, दुगना।

दोभापिया (हिं० पु०) दुभापिया देखो।

दोमखिला (फा० वि०) दो खण्डका, दोतमा।

दोमट (हिं० स्त्री०) बानू मिश्रित मटो, दूमट भूमि।

दोमडला (हिं० वि०) दो खण्डका, दोमखिला।

दोमरगा (हिं० पु०) एक प्रकारका देशो मोटा कपड़ा। इसकी जनानो धोतियाँ बनाई जाती है। इस तरहका कपड़ा मिर्जापुरमें बहुत बनता है।

दोसुहा (हिं० वि०) १ दो सुहवाला। २ दोहरी चाल चलनेवाला, कपटो।

दोमुर्झासाप (हिं० पु०) हाथ भर लंबा एक प्रकारका साप। इसकी दुम मोटो होनेके कारण सुहके समान ही जान पड़ती है। इसमें न तो विष होता और न यह किसीकी काटता है। कहते है, कि छः महीने तक इसका सुह एक ओर रहता है और छः महीने इसकी दुमका सिरा सुह बन जाता है और पहला सुह दुम बन जाता है।

दोसुही (हिं० स्त्री०) नकाशी करनेका सोनारोंका एक औजार।

दोयम (फा० वि०) जो क्रमसे टोके स्थान पर हो, दूसरा।

दोयरो (हिं० स्त्री०) दारजिलिङ्गके जङ्गलोंमें मिलनेवाला एक प्रकारका पेड़। इसको लकड़ो सफेद और मजबूत होते हैं तथा सन्दूक आदि बनाने और इमारतके काममें आती है। इसकी लकड़ोका कोयला भी बनाया जाता है जो बहुत देर तक ठहरता है।

दोयल (हिं० पु०) बया पत्नी।

दोरङ्गा (हिं० वि०) १ दो रङ्गका, जिसमें दो रङ्ग हो। २ दोनों पक्षोंमें आ सकनेवाला, जो दोनों ओर लग या चल सके। ३ वर्षासङ्कर, दीगला।

दोरङ्गी (हिं० स्त्री०) १ दोनों ओर चलने या लगनेका भाव। २ छल, कपट।

दोहरक (स० पु०) दोहरक गियातनात् इत्यत्र द । बीजा
तन्तु बन्धनरज्जु, बह रस्सी जिसमें बीजाका तन्तु बंधा
जाता है ।

दोहरसा (हि० बि०) १ जिसमें दो तरफों से रस या खाद
हो । (पु०) २ एक प्रकारका पीनेका तमाकू । दण्डका
सुषुं बहूपा धोर मीठा मिठा हुआ होता है ।

दोहराहा (हि० पु०) बह खान बहानि धारीको धोर दो
राष्ट्रों जाती हो ।

दोहरका (फा० बि०) १ जिसके दोनों धोर एकसा २ म
या भिन्न मूटि हो । २ जिसके एक धोर एक रंग धोर
दूसरो धोर दूसरा रंग हो । ३ सोनरो का एक धोरार ।
यह ह सुकी बगानिके काममें आता है ।

दोहरको (फा० रसो०) गोबरको दूसरो फसल को पक्षे
सासकी फसल बह जानिके बाद उसको बहो से फिर
होतो है ।

दोहरकु (स० पु०) दोपा बाहुला महुः कुण्डिता ।
कुण्डिताच्छ, काठकी मो मरो । दण्डका पर्याय—दुग्ध
धोर बाहुकुण्ड है ।

दोहरंघ (स० दि०) दोहरंघतेऽनेन पक्ष करके धरज ।
१ बलवान् । दण्डका पर्याय कौराह, चाम धोर दोहोपक्ष
है । २ सुबप्रपक्ष, शायका पक्षकृता । ३ इच्छणी म्यादा
हाथका दण्ड ।

दोहरां (स० श्लो०) सुय सिद्धान्तोश्च सुत्राकार ज्ञा, सुय
सिद्धान्तैश्च सुप्रकार बह ज्ञ्या जो सुत्रके पाकारको हो ।

दोहरंघ (स० प०) दोहरंघ इव । बाहुकूप इत्यत्र,
सुत्रदण्ड ।

दोहरंघ (स० श्लो०) दोहो मध । बाहुमधमाध सुत्रका
विषया माय ।

दोहरंघ (स० श्लो०) दोहो मूत्र । सुत्रमूत्र, काक, बमन ।
दण्डका पर्याय सुत्रकोटर है ।

दोहर (स० पु०) दुग्ध-बन् । १ दोहरण, हिंकोला । रोक्क-
तेऽस्मिन् बन्धनेति दोहसि पक्षिकरके बन् । २ जोरुप्यथा
अनामप्यात उक्तवर्तियेव । इस उक्तवर्तमें जोरुप्यथाको
होकारोहच करवा कर सुजाते हैं, इसीसे दण्डका नाम टाक
पड़ा है । यह उक्तवर्त काश्गुनमासकी दोहंमासो तिथिमें
बिधा जाता है ।

दोहरबी बबका—जिस दिन पदसोदपक्षे समय
दोहंमासो पड़े उस दिन जोरुप्यथाको दोहयात्रा होती
है । यह सोदपक्षे समय यदि दो दिन दोहंमासो पड़े,
तो दोहयात्रा पक्षे दिन होगी क्योंकि उस दिन मङ्गल
धोर मङ्गलकाश पाया है धोर यह दोहंमासो जिय म्
तक स्थापित है; इस कारण इस प्रकारको दोहमासो
का पक्षिकार होता है । इस दिनको दोहयात्रा पक्षे
प्रसिद्ध मानो गई है । यदि त्रिविधयत्ने कारण यह सो-
दपक्षे समय दोहंमासो न पड़े तो दोहयात्रा पक्षे
दिन होगी । इसमें चतुर्दशीका जो पक्षर बिधा गया
है । पूरं दिन यह सोदपक्षे समय दोहंमासो न पड़ कर
बदि पूर्वाह्णमें पड़े धोर दूसरे दिन सुजगंवागमें सो
काम यदि पौर्णमासो पड़े, तो भी पूरं दिनमें ही दोह
यात्रा होगी । पक्षमो तिथि तक दोहयात्राकी बबक्या
इस प्रकार है ।

कस्त्रिभुवने यह दोहोत्तम मत्र उक्तवर्तमें प्रदान है ।
फास्त्रुनको क्नुदयो त्रियिके पक्षम मासमें पक्षका प्रति-
पत् सन्धिके समय यथाविधि भक्तिपुनं नित, रत्न, गौर
धोर पीत इन चार प्रकारके फस्त्रुपुनंमें नाम प्रकारके
सुगन्ध द्रव्य मिठा कर जोरुप्यथाको सन्तुष्ट करते हैं ।
एकादशीके दिन धोर पक्षमो तक इसी प्रकार करते दण्डका
चाहिये । यह उक्तवर्त पक्ष दिन तक मनाया जाता है ।
दक्षिणामिस्तुष करके उक्तवर्त दोसवान पर रहते हैं ।
जि .स दोहस्य उक्तवर्त दयंन करते हैं वे मसो पापों
से मुक्तकार । पाते हैं, इसमें तनिक मो सन्देह नहीं ।

(पयउरण)

पक्षदपुराचके उक्तवर्तकर्ममें दोहोत्तमका विषय इस
प्रकार लिखा है—

पाशुनमासमें दोहोत्तम करना चाहिये । इस
उक्तवर्तमें गोविन्द जोयो से चामोद प्रमोदके सिद्धे म्यय
कोड़ा करते हैं । इसमें देवदेवकी चर्चना करने होती
है धोर देवदेव विष्णुको गोविन्द इस पापमो पक्षंता
करते हैं । प्रासादके पूर्व १६ द्वाभो को नन्दपक्षे पाक
देते हैं उनमें जोकोन चार चार बंदिनासुक्त मण्डप
प्रकृत करते हैं धोर उक्तवर्त बाद चन्द्रातप, माच, चामर
तया ध्वजा पादिसे सुशोभित कर देते हैं । उक्त बंदिनाम

श्रीपर्णी काष्ठका बना हुआ भद्रामन होना चाहिये, यह उत्सव पाँच वा तीन दिन तक किया जाता है। चतुर्दशी रात्रिके निशासुखमें दोलमण्डपके पूर्व भागमें वस्त्र उत्सव करना होता है। यह वस्त्र उत्सव दोलयात्रा का एक अङ्ग है। आचार्यको वरण और भूमि सहाय करके विधिवत् लणाराशि मञ्चित करते हैं। जो इस समय हरिका अवलोकन करते हैं, वे सब पापोंसे मुक्त हो जाते हैं। ऋत तक दोलयात्रा समाप्त न हो, तब तक इस आग्निको बहुत यत्नपूर्वक रखना होता है। चतुर्दशीके यामावसान होने पर अर्थात् अरुणोदयके समय शुभा गोविन्द प्रतिमाको सुगन्ध द्रव्योंसे अधिवासित कर नाना प्रकारके उपचार द्वारा उनकी पूजा करते हैं। उन्हें रंग विरगकी माला तथा अच्छे अच्छे वस्त्र समर्पण करते तथा हिजन्नेष्टगण गोविन्दकी पद्मद्वय मानकर मन्त्र पाठ करते हैं। इस समय देवप्रतिमा स्वयं पुरुषोत्तम रूपसे धाराजित रहते हैं। पीछे उस प्रतिमाको रत्नान्दोलिका द्वारा स्नानमण्डपमें लाते हैं। इस समय अनेक प्रकारके तूर्य-निनाद, शङ्खध्वनि, जयमन्द, स्तोत्रपाठ, ध्वज, पताका, चामर और व्यजन आदि तरह तरहके उपकरणोंसे महोत्सव करते हैं। इस समय देवगण पिता महकी आगे करके उस स्थान पर पहुँच जाते हैं। ऋषि लोग भी यह उत्सव देखने आते हैं। भद्रामन पर गोविन्दको अधिवासित कर उपचार द्वारा उनकी पूजा करते और महास्नानकी विधिके अनुसार उन्हें स्नान कराते हैं। यथाविधि महास्नान हो जाने पर गन्ध, तीय और श्रीसूक्त द्वारा उनकी अभिषेक करना होता है। स्नानके बाद गोविन्दकी वस्त्र, अलङ्कार और माल्यादि द्वारा विभूषित कर उनकी पूजा करनी होती है। इस प्रकार पूजा करके प्रासादका परिवेष्टन करते हैं। पीछे समस्त करके गोविन्दकी दोल पर बिठा कर सातवार नीचे और ऊपर झुलाते हैं। दोलयात्रा समाप्त होने पर इकीस वार उन्हें घुमाते हैं। यहो भगवान्की लोला है। स्वयं पितामहने ऐसा कहा है। राजर्षि इन्द्र-युञ्जने पहले पहल यह दोलोत्सव किया था। गोविन्दका ध्यान—

“अनघरत्नघटित-कुण्डलोत्थापितश्रुतिं ।

यथास्थानं यथाशोभं दिव्यालंकाररत्नं ॥”

विश्वाम्बुजमध्यस्थं विश्वधात्रया विधा युतं ।
 ग्रंथचक्रगदापट्टमपरिणं वनमालिनं ॥
 सुप्रधनं सुनासभूषीनवस्रःस्थलोज्ज्वलं ।
 पुरोव्योमस्थिते देयमंघ्रायैर्नतकन्यरः ।
 कृताञ्जलिपुटैर्भक्त्या जयगर्भरंभित्तुलं ॥
 गन्धर्वैरुपरोमिद्व किरनैः सिद्धचारणैः ।
 दाहादृष्ट प्रवृत्तिभिः सत्वरं दिव्यगायनैः ॥
 अर्धं पूर्विकाया नृत्यगीतवादिप्रकारिभिः ।
 नेत्राम्युजसहस्रैस्तु पूज्यमानं मुदान्वितैः ॥
 विद्विरद्विभिः सर्वदिक्षु गंधचन्दनजं रजः ।
 उपवेद्याथ गोविन्दं पूजयेदुपचारकैः ॥
 वल्लवी वृन्दमध्यस्थं कदम्बततकमूलगम् ।
 हावहास्यविलासश्च कीडमानं धनान्तरे ॥
 गोपीभिश्चैव गोपालैर्लीलान्दोलिकया नगं ।
 चिन्तयित्वा जगन्नाथं विकिरेदुगन्धचूर्णकैः ॥”

दोलोत्सवमें इसी ध्यानसे गोविन्दकी पूजा करनी होती है। जो इस अवस्थामें योक्षणका दर्शन करते हैं उनकी मुक्ति होती है। योगोविन्ददेवकी तीन वार दोल प्रदान करना होता है। इस दोल प्रदानसे सब पाप जाते रहते हैं। तीन वार दोलोत्सव देखनेसे आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक इन तीन प्रकारके तापोंसे मानव मुक्त हो जाते हैं। जो राजा यह दोलोत्सव करते हैं, वे चक्रवर्ती होते हैं। ब्राह्मण वेदविद्व हो कर मुक्तिलाभ करते हैं।

(स्कन्दपुराण उत्कलखण्ड ४२ अ०)

चैत्र मासमें भी दोलयात्रा होता है—

“चैत्रमासि सिते पक्षे दक्षिणामिमुखं हरि ।

दोलाखण्डं समभ्यर्च्य मासमान्दोलयेत् कलौ ॥”

(गण्डपुराण)

चैत्रमासके शुक्लपक्षमें हरिकी दक्षिणमुख करके दोल पर बैठाना चाहिये। इस दोलोत्सवकी नित्यता पद्मपुराणमें इस प्रकार लिखी है—

“ऊर्जे रथं मघौ दोला श्रावणे तत्तुर्ष्व च ।

चैत्रे मदनकारोपमकुर्वाणो ब्रह्मल्यधः ॥

विष्णु दीक्षादिगत इय प्रथमे बन्धोऽहमे मनेर ।
 तस्यात् श्रावणतः "मन्वा सोऽहो वल्लव इय ३" (ब्रह्म०)
 को अत्र (कार्तिक मास) मय, प्रभुमास पञ्चात् सैत्र
 मासमें दोनवाडा श्रावण मासमें भूचन, सैत्रमासमें
 मदनक पारोप नहीं करतें उनको पयोमति होतो है ।
 विष्णुको दोनाकित देखनेमें सौ कीशका लक्ष्य होता है,
 वसन्ति यपने सौक्यों कार्य टाङ्क कर दोनाकवके
 दिन दोनाकव करना चाहिये ।

दोनाकवका विषय इतिमतिविभासमें दी लिखा है,
 इस प्रकार है—

सैत्रमासकी शुक्लाष्टम्ये दिन प्रातः कार्य तथा
 निवृत्त पूजादि करके दोनाकव करना चाहिये । इस
 दोनाकविक्रिमे क्रिमे प्रथम प्रकारके अष्टावर्षादि म पक्ष
 करके तथा वैश्वदेवे प्रति एम्मान दिनका करके मुख
 गीत पादि श्रावण प्रसूये दोन पर चढ़ाना चाहिये ।
 पत्त नका बहिर्द्विधा पर यथाविति स्थापित करके
 पूजा करना चाहिये । इस प्रकार पूजा करके एक एक
 पक्षमें प्रसूये मुनाना चाहिये और यद्युक्त नामा
 प्रकारके मञ्जोतन कर दिन और रात प्रथमे रचना
 चाहिये । वैश्व नोग इस प्रकार अष्टावर्षादि करके
 प्रसूये प्रथम, प्रायना पादि कर दोनाकविक्रिमे यपने घर
 में जाते हैं ।

सैत्रमासकी शुक्लपौष यतोया तिथिमें रमापति
 विष्णुका दोनपर चढ़ा कर यथाविति पूजा करके एक
 मास तक लक्ष्मी रचना चाहिये ।

क्राव्युत्तमासको शक्रादिने यदि उत्तराश्रमुगो नक्षत्र
 पड़े, तो उसी दिन दोनाकव करना उचित है ।

सैत्र मासको यज्ञनवमीका दिन भी दोन होता है,
 उसे रामनवमीका दोन कहते हैं ।

अशुक्ल और रामनवमी हेको ;

भारतवर्षमें समो अष्ट दोनवाडा वा होकोकी ब्रह्म-
 काम होतो है । क्रिमेयनः युद्धमदीय और लक्ष्य ब्रह्मेयमें
 हो होकोका पामोद कुछ पबिध देखा जाता है । दोनके
 दिन विष्णु कीपुत्र्य आपनमें पञ्चोर सिद्धकरी तथा तरु
 तरुके र रीति शोडा करते हैं । इस प्रकारके बौमस
 दम्य रत्नप्रतक बाणका पामो और दूसरे हूने दिने-

में सतया पबिध प्रचार नहीं देखा जाता । कोई कहते
 हैं, कि भगवान् विष्णुने शङ्खपुङ्ग वा शोमिवाका वध
 कर यह होको-उत्सव किया वा । फिर कोई कहते हैं कि
 यही प्रधान बसन्तोत्सव है ; बसन्तागममें प्रकृति सती गये
 गये धामोने बसित हुई हैं, सैतन पवेलन समो अष्ट
 अग्युषे अपर प्रकृतिने मारो अपना आक्षिपक पैसा किया
 है । उसो नासको प्रकृतिकी पूजाके क्रिमे ही इस प्रकारका
 अनुष्ठान हुआ करता है । एक समय यूरोपोव धनेस
 मन्व जातिवर्ष मी इस प्रकारका बालनिक पामोद प्रमोद
 किया करते हैं । यज्ञसे रोमराज्यमें Festum Stal-
 torum, Matronalia, Fesia, Lupercalia Festa
 (on the Idea of March), बावियोत्सव (Feast of
 Bacchus) पक्षपूजा (Anna Perenna) का पूजन
 पादि को सब मञ्जोत्सव होतें थे, उनमें होकी उत्सवको
 तरुध भूमिचाम होकी हो । प्रथम तीन उत्सवोंमें युवकगण
 उत्सव हो गये हो कर पक्षमें, चादमें और मन्दिरमें
 बहकरी कूदते थे । इनके बिना the Abbot of
 Unreason, the Carnival, the Passover और
 the day of All-fools ये सब को परिहामनक
 पामोद यूरोपमें प्रचलित थे ये इस द्देशके पञ्चोर-लक्ष्य
 मरीछे थे । एक समय जर्मनीमें मो यद्युषि जोसा होकी-
 उत्सवका प्रचार था । पाबेनस (Joannes Boe-
 mus Antanus) ने लिखा था कि, 'समो जम भी यान
 भोजन और रसरममें यपनेको भूत जाते थे । वे
 मोचते थे, कि पात्रके सौया दिन फिर कमी पानेको
 नहीं । पबिधामिसक सुच पर नवान कास कर ब्रह्मेय
 बना कर, समुर्थ योरको कास और कासे र गीति रग
 कर रहर उतर गये भूमि फिरने थे ।

नैवर्गमने (Naogeorgeus) यूरोपीय कार्निवाल
 (Carnival) नामक क्रिस उत्सवकी बात लिखी है,
 यह ठीक भारतकी होकीके असा प्रतीत होता है ।
 उनोंने जो कुछ लिखा है उसके कुछ पक्ष मीचि उद्धृत
 क्रिमे जाते हैं—

"Then old and young are both as much
 as guest of Bacchus' feast ;
 And four days long they tupples, squares'
 food and never rest.

—fear and shame away ;

The tongue is set at libertie, and hath no
kind of stay
All things are lawful then and done, no
pleasure passed by,

That in their minds they can devise, as if
they then should dies,

Some naked run about the streets, their
faces hid alone,

With-visars close, that so disguised they
they may of none be known

* * * * *
No matron old nor sober man can freely by
them Come* * *

नेवगगं सने जै सा विवरण लिखा है, हृन्दावनमें आज भी होलो-उत्सवमें वै मा हो वीभक्त व्यापार हुआ करता है। वहा आवालहृदवनिता मानसम्भ्रम लीकनजा छोड़ कर इस उत्सवमें उन्मत्त हो जाते हैं। इस समय अच्छे बुरेका ज्ञान नहीं रहता। अचोर लगा कर नाना रंगोंसे भूषित हो कर वे अश्लील भाषामें गान करते, बाजा बजाते तथा इधर उधर चकर लगाते हैं। इस समय बहुत सी हिन्दू-स्त्रियां दरवाजा बन्द किये रहती हैं। रंगमें रंगो जानिके भयसे वे बाहर नहीं निकलतीं। पर हां, घरके भीतर भो फाग खेलने, अचोर-गुलाब छड़ाने तथा नाच गान करनेसे वे वाज नहीं आतीं।

विशेष विवरण होली शब्दमें देखो।

दोलड़ा (हिं० वि०) दो लड़ोका, जिसमें दो लड़े हैं।

दोलक्षी (हिं० पु०) दुलक्षी देखो।

दोला (सं० स्त्री०) दोल्यतेऽस्यामिति दोलि-घञ्-टाप्।

१ उद्यानमें झोड़ाके निमित्त काठादिमय हिन्दोस्तक, हिंडोला, भूला। २ वाद्यखटा, डोली। इसका पर्याय—प्रेक्षव, देली, खट्टाला, दोलिका, प्रेक्ष और हिन्दोला है

दोलाद्वारा भ्रमणगुण—वातकोप, अङ्गका स्थैर्य और शलाग्निकारक है।

इयथोपपञ्चरात्र, ज्ञानरत्नकोष और विश्वकर्मयि-शिल्पमें दोलिकायानकी निर्माण-प्रणाली लिखी है।

दोलायन्त्र (सं० पु०) वर्षोका एक यन्त्र। इसको महा-पतासे वे औपधियोंके अर्क उतारते हैं। एक घड़ेमें कुछ तरल पदार्थ भर कर उसे भाग पर चढ़ाते हैं। घड़ेके सुंङ पर एक लकड़ी रखी रहती है उसी लकड़ीमें बांध कर कुछ औपधियोंकी पीटलीको इस तरह लटकाते हैं कि वह पीटली उस तरल पदार्थके बीचमें रहे, मगर घड़ेकी पैदोसे न छू जाय। इस तरह उन औपधियोंका अर्क उस तरलपदार्थमें उतर आता है।

दोलायमान (सं० त्रि०) दोनां करोति दोला-क्वड्-ततः शानच्। दोलनविशिष्ट, भ्रूणता हुआ, हिलता हुआ।

दोलायमान गोविन्द, मधुस्थिन, मधुसूदन और रथ-स्थित वामनका दर्शन करनेसे पुनर्जन्म नहीं होता है।

दोलायुद्ध (सं० स्त्री०) दोल्ये युद्धं। अनियत जयपरा-जययुक्त युद्ध, वह लड़ाई जिसमें बार बार दोनों पक्षोंकी हारजित होती रहे और जल्दी किसी एक पक्षकी प्रतिम विजय न हो।

दोलिका (सं० स्त्री०) दोला-स्त्रार्थे कन् टाप् अत इत्वं। हिन्दोला, हिंडोला, भूला। २ डोली।

दोलो (सं० स्त्री०) दोल्यतेऽनया दोलि-इन् ततो डोप्। दोला, डोली।

दोलोक्तव (सं० पु०) वै षोर्षोका एक लोहार। इसमें वे अपने ठाकुरजीके फूलोंके हिंडोले पर झुलाते हैं। यह उत्सव फागुनकी पूर्णिमाके मनाया जाता है।

दोल्का—अहमदाबादसे ११ कोस दक्षिण-पश्चिममें अव-स्थित एक शहर। यहां दो सुन्दर मस्जिद हैं जो लगभग १५० फुट लंबे हैं। मस्जिदका सम्पूर्ण भाग ५ गुम्बज और तीन गुम्बजयुक्त दीवारसे घिरा है।

दोवाहार—हादश माताका ताल।

दोष (हिं० पु०) एक प्रकारका लाल। इसका व्यवहार रंग बनानेमें होता है।

दोषमान (फा० पु०) कसाईका अंगोच्छा वा तीलिया।

दोशाखा (फा० पु०) १ दो वस्त्रियोंका शमादान, दो डालोंकी दीवारगौर। २ भाग छाननेको लकड़ी। इसमें दो शाखें होती हैं और साफो बांध कर भांग छानते हैं।

दोशाला (हिं० पु०) दुशाळा देखो।

दोष (सं० पु०) दूष्यते इति दुष्ये वैकृत्ये चिच्-भावे षञ्। १ दूषण, बुरापन, खराबी, दुष्क।

“अदत्ता व धरोरेण कर्त्तव्योवापूरिता ।

इत्यथो वापुदीनेव भिदुरोरेव दूर्द्धवा ॥” (वाचस्पय इट)

य शोधोपेयं पदात्ता, कामं दीपयते हरिद्रः, माखदीपये
लघाद् धोर पित्रदीपये मूत्रं होता है ।

दुग्धस्यमिति दुग्धं कश्चिं ह्वत् । २ पाप, त्रिषमिं मनुष्य
दुषित होता है, इवे दीप्य कश्चिं है । इषोसे शोधका नाम
पाप पक्का है । ३ नैषधके अनुसार शरीरमें रक्तमय
मांस, पित्त घोर रूप जिनके लुपित होनेसे शरीरमें
विकार पचका म्यालि उत्पन्न होती है । ४ गीबस, गाव-
का बहका । ५ पम्बिमीम, कगादा कृपा अपराध, लोहान ।
६ लम्ब्यायमें बह मृत्ति की तर्कसे पचवबोका प्रयोग
करनेमें होता है । यह तीन प्रकारकी होती है—पति
म्यामि, पचामि धोर पचदुग्धमात्र । ७ म्यायसे अनुसार
बह मानसिक मात्र ही मित्रा ज्ञानसे उत्पन्न होता है
धोर त्रिषमिं प्रेरणासे मनुष्य मन्त्रि या हुरे कामोंमें प्रवृत्त
होता है । ८ भागवतके अनुसार पाठ मनुष्यमेंसे एकका
नाम । ९ प्रदीप । १० अपराध, अष्ट, सुम । ११ अप-
कर्म-प्रबोधात्क मनुष्यिज्ज कर्ममेव, साहित्यमें वे नार्ति
जिनसे कामके सुखमें लसी हो जाती है ।

साहित्यदर्पणमें लिखा है, कि रसापचय का नाम दीप्य
है । यह पचके पांच प्रकारका है—पददीप्य, पदाग्दीप्य,
वाक्यदीप्य, पद्यदीप्य धोर रसदीप्य । पांचो दीप्य तुम्हें भाग
भागमें विभक्त हैं ।

पददीप्य धोर पदाग्दीप्य १५ प्रकारके हैं—दुग्ध,
त्रिषमि, पक्षोक्त, अनुचितार्थ, अप्रबुद्धता, धाम्य, अप्र-
तीत, पक्षिन्व, मीवाहं निवृत्ताव ता, पचाचकञ्ज,
क्रिहल, विरह्य पतिकारिता, पविच्छट निषेधाय, निर-
बोध, पद्यमर्त्य धोर चतुर्थकारिता ।

जहाँ पर पतिमय पद्यवचन का प्रयोग रहता है धोर
उप पद्यवचन प्रयोगके कारण कृतिका पचका दुग्धामय
होता है, पर्याप्त सुननेमें बहुत कठोर लगता है जहाँ पर
दुग्धमदीप्य होता है ।

अनुचितार्थ—जहाँ पर लक्षितार्थ शब्दका प्रयोग
नहीं होता, जहाँ पर यह दोष होता है ।

अप्रबुद्धता—प्रसिद्ध कविपद्य त्रिषमका प्रयोग नहीं करनेमें
पर्याप्त जो शब्द अभिधानमें हैं, किन्तु वाचारात् कश्चिं जिन

का प्रयोग नहीं है उन सब शब्दों का प्रयोग करनेमें
अप्रबुद्धता नामक दोष होता है ।

अपतीतत्व दोष—जो पद्य शब्द एक देशमें प्रसिद्ध
है, उन सब शब्दोंका प्रयोग करनेमें यह दोष होता है ।

सम्बन्धता—जहाँ पर पर्याप्त बोधक काममें निवृत्तकर्ममें
पद्य प्रयोग नहीं होता, जहाँ पर यह दोष लगता है ।

धाम्यतादीप्य—अपञ्चक भावोंमें ही शब्द व्यवहृत
होता है, जसे धाम्यशब्द कहते हैं धोर जहाँ पर धाम्य
शब्द प्रयुक्त होता है पद्यका धाम्याहं बोधक पदको रचना
होती है, पर्याप्त किसी प्रकार चर्याकारित्व अभिहित न हो
कर शेषक प्रथम बलनादि चिन्तादिमें पर्यवसित होता
है, जहाँ पर धाम्यशब्दका प्रयोग होवकर्ममें गिना
जाता है ।

निवृत्तार्थता—पर्येकाहक शब्दका अप्रसिद्ध पर्याप्त
प्रयोग करनेमें निवृत्तार्थ दोष होता है पर्याप्त उभयापहक
शब्दका अप्रसिद्ध पर्याप्त प्रयोग करनेमें यह दोष
लगता है ।

क्रिहता—जहाँ पर पर्याप्त बोध करनेमें बह होता है
जहाँ पर यह दोष होता है ।

विरह्यमतिकारिता—जहाँ पर विरह्यार्थका बोध होता
है पर्याप्त विपरीत कृतिसे अनुसार पद्य का बोध होता
है, जहाँ पर यह दोष लगता है ।

निरव्यक्तता—जो शब्द शेषक श्लोकके पादपूर्वाद्य
प्रयुक्त होता है तथा जो पर्याप्त शब्द है, कचका प्रयोग
करनेमें ही यह दोष होता है ।

वाक्यवत्दीप्य २५ प्रकारका है—वचं प्रतिबुद्धता,
सुप्रसिद्धता, पाठनविधर्गता, पक्षिकपदता, म्यु-
पदता, इतद्वृत्ता पतन्पद्यता, सङ्घर्षमिवता सन्धि
विर्द्धय, कम्बुशोचता, लम्बिकहता, पर्याप्तरे कपदता,
समाप्त्युपगतावता, अमयवत्तमसम्बन्ध चाम्यता, अमत्
पदावता वाचानभिधान, मन्वपञ्चमत्त, प्रसिद्धिभाग,
अज्ञानमें पद्यवाच, बहोचंता, पर्याप्तता कवितपदता
धोर पञ्चानमि पद्यापच्यक जे यह दोष शेषक वाक्यवत्
ही कृपा करती है ।

प्रतिबुद्धवर्चता—जिध रक्तमें विष्य कर्षोका प्रयोग
करना लक्षित है, जहाँ उनका प्रयोग न कर यदि विप-

रीत वर्णों का प्रयोग किया जाय, तो वहाँ प्रतिकूलवर्णत दोष लगता है।

लुप्तविसर्गता—जहाँ पर केवल विसर्ग का लोप करके पदका प्रयोग किया जाता है, वहाँ यह दोष होता है; जैसे “गता निशा इमा वाले” यहाँ पर “गताः” ‘निशाः’ ‘इमाः’ इन तीनों पदका विसर्ग लोप कर प्रयोग किया गया है, इसीसे यह दोष हुआ।

आहत-विसर्गता—जहाँ पर विसर्गोंका श्लोकार करके पदप्रयोग किया जाता है, वहाँ पर यह दोष लगता है। यथा—“धीरो वरो नरो याति” यहाँ पर ‘धीरः’ ‘वरः’ ‘नरः’ इन तीन पदोंके विसर्गके स्थानमें श्लोकार करके प्रयोग किया गया है, इसीसे यह दोष हुआ।

अधिकपदता—जहाँ पर दो एक पद अधिक रहते हैं, वहाँ पर अधिकपदतादोष होता है। यथा ‘पल्लवाकृति-रक्षोष्ठी’ यहाँ पर ‘रक्षोष्ठी’ इसका प्रयोग करनेसे ही काम चल जाता, किन्तु ‘पल्लवाकृति’ यह पद अधिक हुआ है, इसीसे यहाँ पर यह दोष हुआ।

न्यूनपदता—जहाँ पर दो एक पद हीन हों, वहाँ पर न्यूनपदता दोष होता है।

समामुनरासता—जहाँ पर वाक्य अर्थात् कर्त्ता, कर्म और क्रियादिका दोष करके पुनः पद वा वाक्य गृहीत होता है, वहाँ पर यह दोष लगता है।

दुष्क्रमता, सन्धिघ्नता, अनुचितता, सहचरभिन्नता, अर्थपुनरुक्तता आदि भेदसे अर्थदोष नाना प्रकारका है।

दुष्क्रमता—क्रमविपर्यायको जगह दुष्क्रमता नामक दोष होता है अर्थात् जिस क्रमसे कहा जाता था, उसके विपरीत भावमें कहनेसे यह दोष होता है, यथा—

“द्विह मे वाजिनं राजन् गजेन्द्रं वा मदालसं।”

राजन्! मुझे एक अश्व प्रथवा एक अत्युत्तम गजेन्द्र दीजिये; यदि वह न दे सके, तो उसके बदलेमें राज्यभा चतुर्थींश वा राजसिंहासनका आधिपत्य हो दीजिये।

यहाँ पर याचकोंको चाहिये था, कि वह पहले सिंहासनाधिपत्यके लिये, उसके नहीं मिलने पर गजके लिए और सबसे पीछे एक अश्वके लिए प्रार्थना करता, लेकिन यहाँ पर उसका विपरीत हुआ है। इस कारण दुष्क्रमता दोष लगा।

व्याहृतता—पढ़ने किसी विषयके लक्ष्य वा अपकर्ष का वर्णन कर पीछे उसके अन्यथा प्रतिपादन करनेके व्याहृतदोष कहते हैं।

अनुचितता—द्वेष काल पात्र व्यवहारादिके विपरीत वर्णनकी जगह अनुचितता दोष होता है।

कान्तानौचित्य—भाविकालको घटनाओं अतीत वा वर्त्तमान कालकी घटना माननेसे यह दोष लगता है।

सहचरभिन्नता—उत्तम वस्तुके पर्यायमें अधम वस्तुका अथवा अधमवस्तुके पर्यायमें उत्तम वस्तुका समावेश होनेसे सहचरभिन्नता नामक दोष होता है।

अर्थपुनरुक्तता—जहाँ पर एक विषयका बार बार वर्णन देखा जाता है, वहाँ पर अर्थपुनरुक्तता दोष लगता है।

प्रसिद्धिविरुद्धता—आकाश और पापमें मन्दिनता, यममें धवलता, क्रोधमें रक्तिमा, वर्षाकालमें हंशोंका मानस-सरोवरमें गमन, कन्दर्पका पुष्प-धनु, भ्रमरपङ्क्तिश्री ज्या, पञ्चवाण, कामशर और स्त्रियोंके कटाक्षमें युवजन हृदयभेद, दिवसमें पद्मोन्मेष और कुमुदनिमीलन, निशाकालमें पद्मना निमोलन और कुमुदका प्रकाश, सूर्यकी प्रिया पद्मिनी और छाया, चन्द्रप्रणयिणी कुमुदिनी और तारकावली, मेघगर्जनमें मयूरोंका नृत्य, चक्रवाक मिथुनका रातिविरह, कामिनोके चरणघातसे अशोकपुष्पका विकाश और उनके सुखान्तमें वज्रसका उद्गम, वसन्तकालमें जातीपुष्पका अपकाश, चन्द्रनक्ष फलपुष्पहोन ये सब कवियोंकी प्रसिद्धि हैं। इन प्रसिद्ध विषयोंका व्यतिक्रम वर्णित होनेसे ही प्रसिद्धिविरुद्धता नामक दोष होता है।

च्युतसंस्कृति—जहाँ पर व्याकरणदृष्ट शब्द देखा जाता है, वहाँ पर च्युतसंस्कृति दोष होता है।

असमर्थता—जिस शब्दमें जिस अर्थका बोध नहीं होता है, उस अर्थमें उस शब्दका प्रयोग करनेसे असमर्थता नामक दोष होता है।

निरर्थकता—जो शब्द केवल श्लोकके पादपूरणार्थ प्रयुक्त होता है और जो अर्थशून्य है उसका प्रयोग करनेसे यह दोष होता है।

रूपदोष—कवचादि रस, शोष्णादि स्थायिमान और निर्बोधादि क्षामिचारिमात्रके लक्षणबालके यदि सन्त्य नाम निर्दोष-पुत्र के लक्षणवादिवाचक लक्षण किन्ना जाय तो उसे लक्षणवाच्य ही कहते हैं।

बिम्बहरसमानदोष—जिस रसमें जी स्थायिमात्रादि प्रतिबुद्ध है, उस रसमें समाना बर्णन हीनेके विद्वद्वरम नामक दोष होता है।

पञ्चहारदोष—जहाँ पर चार चरकोके मध्य तोष चरकोमें समक है, एक चरकोमें नहीं, वहाँ समदोष समता है। उपमानद्वारमें उपमान और उपसीयमत ज्ञाति प्रमाण और गुणादिको व्यजता, पवित्रता वा पदो किर्वादिसे चरनेसे उपमादोष होता है।

रातिविपरीत—जिस रीतिसे अनुसार सचराचर प्रयोग किया जाता है, यदि उसका विपरीत देखा जाय, तो उसे रातिविपरीत नामक दोष कहते हैं।

यद्दृग्दृश्या प्रयोग करकेसे तद्दृग्दृश्या प्रयोग करना ही होता है। किन्तु जहाँ केवल तद्दृग्दृश्या प्रयोग है, वहाँ यद्दृग्दृश्या कहकर नहीं। प्रविष्टाद्यमें तद्दृग्दृश्या प्रयोग कृपा करता है। किन्तु केवल यद्दृग्दृश्या रसनेसे तद्दृग्दृश्या ही होता, नहीं देनेसे वाक्य हीय नहीं होता।

दूरान्वयदोष—जहाँ पर समर्थता पादि कारण निज विद्योके सम्बन्धित न हो कर अन्य वाक्यान्तमें चरना बहुत दूरमें देखे जाय, वहाँ दूरान्वयदोष कृपा करता है।

अन्वयोदोष—अन्वयोदोष नामा प्रकारका ही जिनमेंसे पवित्राकार, न्यनाचर और दतिमज्ञादि भेदके कोरे प्रकार देखे जाते हैं। इनमेंसे जो सब प्रसिद्ध हैं उनका केवल पदमें आवरण होता है, गद्यमें नहीं। यदि उनका आवरण गद्यमें किया जाय, तो दोष समता है।

पञ्चीकतादोष—सुन्दाररत्न और शोष्णादिमें पञ्चीकता जहाँ पर मन्थोमार्थ ही-पुत्र समो इकडे हुए हैं वहाँ यह दोष गुण कृपा करता है, पञ्चीकता ऐसे ज्ञान पर पञ्चीकताका बर्णन करकेसे दोष नहीं होता।

निश्चयार्थता और पद्यबुद्धता दोष से वादिही जगह दोषरूपमें गिना नहीं जाता। बला और श्रोता यदि

दोषों ही भारतव्ययसे जानकार हों, तो चमत्तोतता दोष गुणरूपमें गिना जाता है।

जहाँ पर सब किसी विषयका परामर्श पर्याप्त समन होता है, वहाँ पर चमत्तोततादोष नहीं होता।

विहितसे अनुवाच्य विषय, विस्मय शोक, दौष्य, काटागुण, अनुकम्पा, प्रसादन, इय, अवधारण और पर्याप्तर सञ्ज्ञातिके बर्णनमें पदतादोष गुणरूप गिना जाता है।

व्याजसुतिका बर्णन करकेसे मन्दिपतादोष गहा होता, बलिबुध गुणमें गिना जाता है।

व्याकरणविद्युवका प्रतिपाद्य विषयका बर्णन करकेसे कहता और दुःप्रयत्ना दोष नहीं होता। नाच सेगोका लक्ष्मि बर्णनको जगह पाम्यदृश्या प्रयोग दोष न हो कर गुण होता है। प्रविष्ट पदमें निर्दोषता दोष नहीं समता।

पाम्यदृश्या प्रथममें मन्त्र सञ्ज्ञिको का समो भी व्युत्पन्न पदता दोष न हो कर गुण कृपा करता है।

बिम्बाद, विस्मय दृश्य और चर्य प्रथमको जगह सुनसिद्ध दोषरूपमें गिना नहीं जाती।

स्वाय निष्ठावतादिक परिचयको जगह सिद्ध दृग्दृश्या प्रयोग ही गुण होता है।

पद्यपुराणके पातासुखमें ३२ प्रकारके दोषोंका विषय लिखा है—

दान का पातुका द्वारा देवदृग्दृश्या गमन, देवताके पक्षसे सेवा, देवताके समीपमें प्रमाण नहीं करना पयोच परब्रह्मणो और लच्छित् प्रसोचि प्रगायद्वर्णना एक हावसे प्रथम, एक बार प्रदक्षिण, देवताके पानि पादप्रसारण, पदद्वन्द्वन, मयन और मयच सिप्यासायण प्रति लच्छरसे कर्जन, उपसमन, रोदनादि विषय, निषय और अनुपय, खिटीके साथ क्रूरभावण, कर्मसावरण परमिन्दा, परसुति, शुद्धनेके प्रति मोभावकर्मन और देवताकोके निन्दा से सब दोष पदवाच्य हैं। धाततादि यद्दृग्दृश्या यदि मय किया जाय, तो लक्ष्मि कोरे दोष नहीं समता।

दोषक (स + पु०) दोष एक शब्द कहन्। गोबद्ध, गोबद्धा, बद्धा।

दोषकर (स० पु०) लक्ष्मणदत्त ।

दोषकुम्भ—प्राचीन गुप्तवंशीय राजाओंके मन्त्रो । यष्टी-
दत्त इस वंशके आदि पुरुष थे । ये लोग गुप्तवंशीय
राजाओंके अधोन-विन्ध्य और पारिपात्र पर्वतसे आसमुद्र
विन्ध्य भूभागके अधिपति थे । दोषकुम्भ रविकोत्तिके
तौसरे पुत्र और प्रसिद्ध अभयदत्तके छोटे भाई थे । इन-
के धर्मदोष और दक्ष नामके दो पुत्र थे । दक्ष राजा
विष्णुवर्माके यहां मन्त्रीका काम करते थे ।

दोषग्राही (स० त्रि०) दोषं गृह्णाति ग्रह-णिनि । खल,
दुर्जन, दुष्ट । इसका पर्याय—पुरोभागी, द्विजह्व और
मत्सरो है ।

दोषघ्न (स० त्रि०) दोषं वातादिविकारं हन्ति हन-टक् ।
धा-वैषम्यरूप दोषनाशक औषधादि, वह दवा जिससे
कुपित कफ, वात और पित्तका दोष शान्ति हो ।

दोषज्ञ (स० पु०) दोषं कर्त्तव्याकरणे दोषं जानाति
ज्ञा-क । १ पण्डित । २ वैद्य, चिकित्सक ।

दोषस्थ (स० त्रि०) दोषिण भवः दोष-यत् दोषस्थादेशः ।
वाहुभय, बाँहसे उत्पन्न ।

दोषता (स० स्त्री०) दोषका भाव ।

दोषत्रय (स० स्त्री०) दोषाणां त्रयं ह-तत् । वायु, पित्त
और कफ ।

दोषत्व (स० स्त्री०) दोषस्य भावः "त्वत्तलौ भावे" इति
त्व । दोषका धर्म वा भाव ।

दोषपत्र (स० पु०) किसी अपराधीके अपराधीका
विवरण लिखा हुआ कागज ।

दोषपाचन (स० पु०) कपित्थद्वय, कौथका पेड़ ।

दोषवलप्रह्नतः (स० पु०) शैवविशेष, एक प्रकारकी
वामारो ।

दोषमेद (स० पु०) दोषस्य मेदः ह-तत् । सुश्रुतीका ६२
प्रकारके दोषोन्निसे एक ।

दोषल (स० त्रि०) दोष मत्वर्थे लिच् । दोषयुक्त, जिसमें
दोष हो ।

दोषस् (स० स्त्री०) दुष-प्रसृन् । रात्रि, रात ।

दोषा (स० स्त्री०) दुष्यतेऽन्धकारेणेति दुष-घञ्-टाप् ।
१ रात्रि, रात । दम-डोसि, टाप् । (दमेर्दसिः । षण्. २।६६)
भागुरि मते टाप् । २ सुज, बाँह । दुष्यत्यत्रेति

दुष-भा (धाः सभिननिकपिभ्यां । षण्. ४।१७४) इति सूत्रस्य
उच्चनदत्तौक्ते भा । ३ नक्त, रात्रि । ४ निशामुख ।

दोषाकर (स० पु०) दोषा रात्रौ करा यस्य वा दोषा
कराति दोषा-क्त-वाहुलकात् ट । १ चन्द्रमा । दोषाणां

आकरः । २ दोषका आकर, प्रवर्ण वा ऐवकी खान ।
दोषाक्तेशी (स० स्त्री०) दोषां भुजं क्षिप्रातीति क्षिप-

श्रण-गौरादित्वात् ङीप् । वनवर्षुरिका, वनतुलसी ।
दोषाङ्गुश (स० पु०) दोषाणां काव्यदोषाणां ऋङ्गुश

इव, निरासकत्वात् । चन्द्रालोकैक काव्यदोषनिवारक
कार्यं धर्मभेद ।

दोषाक्षर (सं० पु०) अभियोग, लगाया हुआ अपराध ।

दोषातन (स० त्रि०) दोषा रात्रौ भवः दोष ट्यु-
तुट्च् । रात्रिभव, जो रातमें हो ।

दोषातिलक (स० पु०) दोषा रात्रे स्तिलक इव । प्रदोष,
दोषक, दोषा ।

दोषान्ध (स० पु०) दृष्टिरोगभेद, आँखकी एक बीमारो,
दोषाभूत (स० त्रि०) रात्रिमें परिणत ।

दोषामान्य (स० त्रि०) रात समभकर ।

दोषावस्तर (स० पु०) १ आलोक, प्रकाश । २ अग्निकी
उपाधि ।

दोषावह (स० त्रि०) दोषयुक्त, दोषपूर्ण, जिसमें
दोष हो ।

दोषास्य (स० पु०) दोषा रात्रिरास्यमिव यस्य । दोषा-
तिलकत्वादस्य तथात्वं । प्रदोष, चिराग ।

दोषिक (स० पु०) दोषाः वातपित्तकफाः कारणत्वेन
सन्तप्रस्येति ठन् । रोग, बीमारो ।

दोषिन् (स० त्रि०) दुष्यतीति दुष-घिनुण वा दुष-णिनि ।
१ दोषयुक्त, अपराधो, कसूरवार । २ पापी । ३ अभियुक्त,
सुजरिम ।

दोषैकदृश्य (स० त्रि०) एवैकस्मिन् नतु गुणसङ्घट्टक-
ज्ञानमस्येति वा दोषमेव एकं केवलं पश्यतीति दृश्य-

क्षिप । दोषमात्रदर्शी, जो गुण आदिको न देख कर
केवल दोष ही दृढ़ता हो ।

दोषम् (स० पु० स्त्री०) दम्यतेऽनेन दम ङीप् । बाहु, बाँह ।
दोषा (हिं० पु०) पानीमें डीनेवाली एक प्रकारकी घास ।

इसका बहुत अधिक धर्म पानेमें हुआ रहता है और इसमें एक प्रकारके दाने अधिकतासे होते हैं ।

श्रीसाध (हि० पु०) उद्यान हैको ।

श्रीसाध (हि० पु०) बरमाके दार्जिलेको एक जाति । यह कुमरियासे कुछ छोटा होता है और साधारणतः लम्बाईमें पादि छेने या सवारी पादिके काममें पाता है ।

श्रीसाध (हि० नि०) बिन्दमें वर्तमान दो पक्षमें पैदा हो ।

श्रीसाध (हि० श्री०) एक प्रकारकी मोटी चादर को बिन्दानिके काममें पातो है ।

श्रीसाध (पा० पु०) १ बन्धु मित्त रहिनी । २ नक्षत्रिणसे प्रसुचित सम्बन्ध हो, पार ।

श्रीसाधकी—सुगन्धसम्पादके शासनकालमें अधिकत प्रदेसों पर कर्तव्य करनेके निम्ने और पञ्चम राजापेसि टेय कर वस्तु करनेके लिए सुवाहार रहति थी । द्वितीय परमान पाप बिन्धा कोई भी राजा या नवान नहीं मानि जाते थे । पौरुषनिष्ठी सुखके साथ साथ सुगन्धसम्पादकी भी वदित विलसति रहते भी समताका ज्ञास हो गया था । इसी समय दक्षिण प्रदेसमें निजाम-सत्त्व-सुख सुवा दार निबुद्ध हुए । वे पपनेको बर्बादे एक प्रकारका राजा भी समझने लगे । उनको समता पर झिड़काव करनेकी बिन्धीकी मक्ति न हो । कर्नाटक और पञ्चाटके नवान बचपि द्वितीय पञ्चम थे, तो भी उन्हें दक्षिण साधके सुवाहारके कर्तमानुसार बचना पड़ता था । नवान बादत-जन्माके कोरे घन्टान न रहनेके कारण उनके पपने हो मतीजको मोद सिखा । बड़े दोस्त-पत्नीकी कर्नाटकका नवान और शिष्टि बबराको को बहुराका दुर्माधिपति बना कर पाप १७१२ ई०में इस लोकमें चम बने । मरने समय पपने विष मन्त्रियोके भाई सुलाम, हुयेनको भी दीवानी देनेको पात्रा है गये थे । इस पर निजाम-सत्त्व-सुख बहुत सोच में पड़ गये । उनको पूरो दख्खा हो कि वे पपना प्रसुख प्रेसा कर जय राज्यमाचन लक्ष्मी । सुगन्धसम्पादने वे करते तो बहो थे, पर उन्हें पपना करके मादत जन्मा को शासनको व्यवस्था कर गये, उसे ही बहदाव

कर न छडे । लेकिन जन्मात् से कुछ कर मो नहीं ससति थे, क्योंकि उस समय पुरानो पठान मारनवर्ष पर पकड़ि करने पा पड़े थे । द्वितीय सि शाबनको भी कर बहुत गड़बड़ी बच रही थी । पातः इस समय निजाम उच्च सुख लक्ष्मी सब काममें कियते रहे । बिन्धु जन्मने पड़पल करके दोस्त-पत्नीको परमान मिन्नेमें बाधा बात ही ।

दक्षिणसाधके बिन्धुपत्नी और तञ्जोरके राजा ननुनः द्वितीय पञ्ची जेने पर मो उनके राजत्व पक्ष करनेका मार पञ्चाटके नवानके ऊपर घोषा गया था । १७१६ ई०में बिन्धुपत्नीके राजाको सुख जेने पर बलावा राजत्व वस्तु करनेके निम्ने दोस्त-पत्नीने दीवान चाँद साहबको मन्त्रा । चाँद माइने मुन्नाम हुयेनको पपने लक्ष्मी म्पाहो घो, पतः मुन्नाम हुयेने मादत उन्माके पात्रानुसार पञ्चाटका हीमानोपद पाप न ले कर चाँद साहबको प्रदान किया । चाँद माइने कसबन और कोयलसे कुर्ममें प्रवेश कर उसे अधिकार कर लिया । यह सुन कर निजाम-सत्त्व-सुख और मो पाग बहूना हो गये ।

कुर्मबिषयके बाद सुवेदार पत्नी पञ्चाटको कोट गये । चाँद साहब बिन्धुपत्नीका सुख शरमदार पपने ऊपर ले कर नवा रहने लगे । सुवेदार-पत्नीने पञ्चाट कोट कर पिताने सब बर्ति लक्ष सुगाई । इस पर दोस्त-पत्नीने चाँद साहबके बहने मीर पासदको दीवान निबुद्ध किया । ननुन दीवान पानद चाँद साहबको पत्नी तरफ पक्षपातने थे । चाँद साहबको राज्य पानेकी को प्रयत्न दख्खा हुई भी उसे लक्ष्मी दोस्त-पत्नीको बच सुगाया । दोस्त-पत्नीने इस समय कोरे विवाह पड़कर करना उचित न समझ, पतः इन विषयमें कुछ भी झिड़काव न को । चाँद साहब मो ताड़ मय और बिन्धुपत्नीको दुर्गको पत्नी तरफ सुझु और परिचित करने लगे ।

इस समय महाराष्ट्रको तुतो जाते और बोक रही थी । वे इस समय दिवाडीके कर्तमानुसार काम नहीं करके देय देयमें कर वस्तु करनेके बर्तानेके दख्खल करति थी । १७१८ ई०में निजाम-सत्त्व-सुखके बहनेमें था कर महाराष्ट्र-नायक शही भी लक्ष्मी देय जन्म

१८२३ ई० में आज़मिखाने दरने पर पुनः एक विवाद उपस्थित हुआ। दोस्त महम्मदने इस विवादको खैर मो कबड़ दिया। आबुन मय उनसे हाथमें पा गया था। इसी समय दिनकाँ पौर सुल्तान महमूदने उन्हें छिड़ दो। पर वे ही एक गबारने आबुन में प्रसूत करने लगे। किन्तु न तो दिन काँ पौर न सुल्तान महमूद जो शासन कार्यमें विधेय पड़ें, परत गोब्रगान कारो जो रखा। फिरसे नूतन आवस्था हुई। दिनकानि बन्दहार पर पौर दोस्त महम्मदने मज्जो पर अपनी पक्षि कार बिबा। सुल्तान महमूद पिगारर जोड़ कर आबुन के राजा को मये। इसी बीच बन्दहारमें दिनकाँकी मज्जु हुई। पर दोस्त महम्मदने आबुन सेना बाहा। सुल्तान महमूद मने अपनीको दोस्त महम्मदसे पक्षिना लड़ने में परतमर्ग समझ कर १८२५ ई० में उन्हें आबुन दे दिया पौर प्राय पैगाररको मौट पावे। शासनकार्यमें दोस्त महम्मद विधेय पड़ें। कई वर्ष इन्हीं आबुन को सुशासनमें रखा जा।

इस समय शाहशुजा रचबिद्वि इके साथ नम्बि करके आबुन खोतनेको पधरर हुए। रचबिद्वि वने मो सेना भेजी। शाहशुजा पराजित हो कर सुबिबाना को मौट पाय। इसी मौषिमें रचबिद्वि सुल्तान महमूदको मार मया कर पिगारर बहाल कर लिया। दोस्त महम्मदको अब वह बात साझ्य हुई। तब ही सेनाको साथ ले पागे बड़े। सुल्तान महमूदने मो दय इज्जार मिनायेबि उनको महायता को। रचबिद्वि चार्द पौरसे विपदने विरा देह दोस्त महम्मदकी सेनाको बहुत कुछ रुमा दिया। सुल्तान महमूदने सेनाके साथ प्रस्ताव किया। कुछसे दिन पहले दोस्त महम्मदने देहा कि उन्हें पास जितनी सेनाये लीं उनसेवे अपनेक कशों पको गई हैं। इस पर वे विपक्ष जितसे आबुन मौट पावे। बाद सुल्तान महमूद चिन्तिते मिस बने पौर उन्होंने लहायतासे आबुन खोतनेको अधपर हुए। इस पर दोस्त महम्मदने अपने पुत्र अजबखानाँ पौर पक्ष बरवाँको सुल्तान महम्मदके बिबल लड़ाई करनेसे दिये भेवा। १८२७ ई० में यह युद्ध बिबाँया। ठिख-बैय इरफ्त पौर तबल महक ही गई। इस समय

पारखटावने जिवाट पौर आबुन खोतनेको बिचारा। दोस्त महम्मदने खोई दूनरा उपाय न टिख प गरीजोमे मन्बि करनेका प्रस्ताव पेश किया। उस समय माई पउरने एक भारतवर्षके मन्त्रर जेनरल गी। उन्होंने साम-रिख सन्बि करना ता। न चाहा किन्तु बाबिब्य सम्झौती मन्बि करनेको सवाह दे दो। कार्य भो उनकोके बह लम्बुमार हुआ। बहसावके विपदमें खयाबाना करकेके बिबे मर अपनेकमन्दरने बाने स नामक एक व्यक्तिको दूनरलके साथ आबुन भेजा। दोस्त महम्मदको बात खोतने साथ म पड़ा कि प गरीज उनको विपदमें न तो उन्हें मदद देनी पौर न रणबिद्वे पिगारर सेनेमें उनको पक्ष हो लै गी।

किन्तु उस समय ऐसी घबराह लैनी कि कदियामे एक दून आबुन जा रहा है। इस पर प गरीज खोम कर मने। इदुलैयुध पौर कसिठाके बीच बह विपदमें बातचीत होने लगे। अन्तमें ऐसा साझ्य म पड़ा कि कस-गर्भमें पड़ने आबुनमें दून नहीं भेजा है। मिश्रीमिचो नामक एक कन-कर्मचारी पापये पाप बह काम कर रहा है। यह गड़-बड़ो घान्त हो गई, सिखिन बन्दहार प्रादि स्थानोंके राजा पारख राजके साथ सन्बि करनेको विधेय लम्बुल हुए। बानेस आबुनकी घबराहसे जानकार पी। परतः ही इन सब राजापोंको सहायता देनेमें राजो हुए पौर उन्हें पारख-राजके साथ सन्बि न करने दी। कई घब लैयु यइ सम्वाद सुलकर बहुत विपदें पौर उन्होंने इसो विपदमें एक परत बाने मको निख मित्रा कि लवें देना प्रस्ताव पान करनेमें बिभुक्त समता न को। उन्होंने समताका पयजबहार बिबा है प गरीज मनेमें एक आबुनपतिको बिचो प्रकार महायता कर ही नहीं सकती। उस परसे हीर भो सिक्का बा, कि दोस्त महम्मद यदि बिभी दूसर पक्षिसे राजाके साथ सन्बिबन्धन करे तो उनसे मित्रता टूट जायगी, यह बात उन्हें समझा देनी चाहिये। फिर बन्दहार राजापाँको महायता देनेकी बात दे दो गई है, उसका प्रकाहार करना होगा। इससे साथ साथ दोस्त महम्मदको भो एक पक्ष बिबा गया था। बानेवने यह पक्ष पा कर अपनी बात खोदा ली। दोस्त महम्मद भी परत पड़ कर बहुत चिन्तित हुए। वे प गरीज

दममें था गया। १८१२ ई०में इन्हीं दुन्दुलकण्ठको
कूट कर गया लक्ष्मण देवोंको बरबाद कर दिया था। तब
विशेष कर मानव देवोंमें से ही रहता था और बर्षों
देव विदेशको लूटने जाता था। परन्तु अपने
माई भादिब्रह्ममहेश्वर शिव काब'भास होय कर पाप
पक्षत्वको प्राप्त हुआ।

दोष्याण्य (पा० पु०) १ मित्रता, दोष्यो। २ मित्रताका
व्यवहार। (वि०) १ मित्रताका, दोष्योका।

दोषी (पा० लो०) १ मित्रता, श्रेष्ठ। २ पशुचित
व्यवहार।

दोषोरोदो (वि० लो०) एक प्रकारकी रोदो। वह पाटे-
की दो दोहोंके बीचमें सो लया कर और एकको दूसरी
पर रख कर बैकरी और तब तब पर ही लया कर पकाते
हैं। जब यह पक जाता है, तब इसमें दोनों रोदो
पसमा पसमा हो जाती हैं।

दोष (स० पु०) दोष दोषोपारि तिष्ठति का-क। १
दोषक। २ शोचक, खेस करनिवाला। (वि०) ३ बाह
जित, जो बाँह पर हो।

दोष (स० पु०) दोषि परिमिति, दुष्ट-प्राचारे वज्।
१ दोषगणना, दुष्टनेका बरतन। दुष्टति, इति दुष्ट-कर्मणि
वज्। २ दुष्ट, दुष्ट। दूष मायै वज्। ३ दोषन,
दुष्टनेका काम।

दोषन (स० वि०) दोषान् दोषनात्प्रायसं वज्-ड। १
दोषनका, दुष्टनेके को निषेध। (लो०) २ दुष्ट, दूष।
दोषक (स० लो०) माताहृतविशेष। इसका प्रथम
वर्षमें १३, दूसरेमें १०, तीसरे और चौथेमें ११ मासा
होती हैं।

दोषक (वि० लो०) वह बच्चा जो दोनों शार्बोंके
मारा जाय।

दोषक (वि० वि०) १ दोनो शार्बोंके, दोनो शार्बोंके
द्वारा। (वि०) २ जो दोनो शार्बोंके हो।

दोषक (स० पु० लो०) दोष प्राचर्यं ददाति दा क।
गर्मि'कोका परिहाय, गर्म'वती लोको' इच्छ, लचीना।
इच्छा पर्याय—दोषक, दशा, सासवा और जातुन है।

मार्गिकार्मि'जिन सब बन्धुओंकी इच्छा होती है, वे
सब बन्धु यदि गर्मि'कोको न दो जाय, तो गर्म'के कर्म

एक मरब वा भयान्य होय होता है, इसीसे गर्मि'को
कोका विष प्राचर्य करना चाहिये। (पाठ० ११०८) सुश्रुत-
में दोषकका विषय इस प्रकार लिखा है—जिनको वे गर्म
होनेके चौथे मासमें सब प्रकारके पशु प्रजाइ और चेतन्य
प्रजाइका विकार होता है। जिनका प्राचर्य हो इच्छय
है वह भी चौथे मासमें उत्पन्न होता है। इसी समयके
इन्द्रियोंकी कोई कोई विषय मोन करनेकी इच्छा होती
है। इस परिहायपूर्वको ईषित बन्धु देना चाहिये है। इस
समय जिनको देह दो इच्छय विषय। धर्मात्पपना और
गर्म'का सन्तानका) होती है परत'तात्कालिक परिहाय-
की इच्छा चाहिये है। यह सन्तानका यह परिहाय पूर्व
विषय जाय, तो गर्म'का सन्तान कुछ कृषि, पशु, बन्धु,
वामन, विद्वताय पत्रका भय्य होती है। इसलिए धर्मा-
वर्मा'में जिनको परिहाय देना पत्रका कर्तव्य
है। गर्मि'को दोष प्राप्त होने पर सन्तान बलवान्
और प्राकृत्यन्त होती है। धर्मावर्मा'में इन्द्रियों का जो
बन्धु भोग करनिका परिहाय उत्पन्न होता है गर्म'कोका
होनेकी प्रायश्चित्तके यह परिहाय पत्रका पूरा करना
चाहिये। गर्म'वती लोको' ईषित बन्धु मिल जाने पर यह
शुचवान् पुत्र प्रसन्न करता है, नहीं तो गर्म'के विषयमें
पत्रका कर्म कर बना रहता है। गर्मि'कोके जिन जिन
इन्द्रियोंका परिहाय पूरा नहीं होता, सन्तानके भी लोको'
इन्द्रियोंका पीड़ा उत्पन्न होती है। गर्मि'कोको इच्छा यदि
राजस्य लोको' हो, तो सन्तान महाभायवान् और वन
वान् होती है। दुष्टक, रियसो वज् पत्रका पशुकारको
इच्छा हो, तो सन्तान सुन्दर और पशुकारविषय;
धायम'की इच्छा हो, तो पुत्र धर्म'गोच और स वताका।
देवप्रतिमाकी इच्छा हो, तो सन्तान देवपुत्र। स्यादि
प्यास वाति देवनेत्री इच्छा हो, तो सन्तान विशाखा
पौत्रका मांस खानेकी इच्छा हो, तो निश्रुत और फिर
चित्तः भैसका मांस खानेकी इच्छा हो, तो शूर, रत्नाय
और लोमसः करिकका मांस खानेकी इच्छा हो, तो वन
कर बराहका मांस खानेकी इच्छा हो, तो निश्रुत
और शूर, कर्मरका मांस खानेकी इच्छा हो तो उत्थि
नया लोतरका मांस खानेकी इच्छा हो, तो सन्तान बहुत
मीठ होती है। इन सब बन्धुओंकी शोच कर यदि धर्म

जन्तुका मांस खानेकी इच्छा हो, तो जो जन्तु जिस स्वभाव और आचारका हीना, सन्तान भी उसी स्वभाव और आचारकी हो जायेगा। जो कुष्ठ ही, गर्भिणीको अभिषेक पूर्ण करना ही एक मात्र विधेय है। (सुश्रुत नारीरस्थान ३ अ०) २ गर्भ चिह्न। ३ एक प्राचीन विद्या। मङ्गिनाथने लिखा है कि सुन्दर स्त्री अग्न से प्रियङ्गु, पानको पोरु घूकनेसे मौलमिरी, पटाघातसे अग्निक दृष्टिपात तथा आग्निह्ननसे तिलक और कुरुवक, सृष्टुवात्तसे मन्दार, सृष्टुहामसे चम्पक, हंसोसे पटु, मधुरगानसे आम और नाचनेसे कचनार आदि वृक्ष फूलते हैं।

यही दोहद कवि प्रसिद्ध है। जिस तरह गर्भिणीका दोहद पूर्ण नहीं करनेसे सन्तान अपुष्ट होता है, उसी तरह ४ विधों ने उक्त वृक्षोंके कुसुम विकाशादिके वर्णनको जगह उक्त लिखित दोहदका विषय कहा है। ४ यात्राके समय दिगा, वार या तिथिके भेदसे उनके दोपको शान्तिके लिये खाए या पीए जानेवाले कुछ निश्चित पदार्थ। यह विषय सुहृत्तचिन्तामणिसमें इस प्रकार लिखा है—पूर्वको और जानिसमें कोई दोप हो, तो उसको शान्त हो खानेसे होती है, पश्चिम जानिसमें कोई दोप हो, तो मङ्गली खानेसे, दक्षिण जानिसमें तिलको खोर खानेसे और उत्तरकी ओर जानिसमें कोई दोप हो, तो वह दूध पीनेसे शान्त हो जाता है। इसको दिग्दोहद कहते हैं।

नारदके मतानुसार पूर्वको और जानिसमें वृक्षान्न, पश्चिममें मस्यान्न, उत्तरमें घृत और दक्षिणमें खीर खा कर जानिसमें शुभ होता है। यह जो मतभेद लिखा है सो जिस देशमें जैसा व्यवहार है, उस देशमें वैसा ही व्यवस्था जाननी चाहिये।

इसी तरह रविवारकी घी, सोमवारकी दूध, मंगलकी रुठ, बुधकी तिल, बृहस्पतिकी दही, शुक्रेकी जो और शनिवारकी लड्डु खानेसे यात्रा मन्वन्वो वार दोपकी शान्ति होती है। इसे वारदोहद कहते हैं।

तिथिदोहद—प्रतिपदमें मदारका पत्ता, द्वितीयांमें चावलका धोया हुआ पानी, तृतीयांमें घी, चतुर्थीमें यज्ञा, पञ्चमीमें हविष्य, षष्ठीमें सुवर्णप्रक्षालित जल, सप्तमीमें अपूप, अष्टमीमें बीजपूरक, नवमीमें जल,

दशमीमें श्लोगयोमूत्र, एकादशीमें यक्ष्म, द्वादशीमें पायस, त्रयोदशीमें ईश्वका गुड, चतुर्दशीमें राध, पूर्णिमा और अमावस्यामें मूगका भात खाकर जानिसमें शुभ होता है। इसका नाम तिथिदोहद है। इस प्रकार दोहदमें किन्नी दिगा, वार या तिथिकी यात्रामें होनेवाले समस्त अनिष्टों या दुःख फलोंका निवारण हो जाता है।

दोहद—१ बम्बईके पंचमहल जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १२' २८ से २३' ११ उ० और देशा० ७४' २' से ७४ २८' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ६०० वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः ८०८८८ है। इसमें दो गहर और २११ ग्राम लगते हैं। यहाँको प्राय एक लाख रुपयेमें अधिकांश है। तालुकके पूर्वभागमें अनाम नदी प्रवाहित है।

२ उक्त तालुकका एक नगर। यह अक्षा० २२'५०' उ० और देशा० ७४' १६' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १३८८० है। यह पश्चिममें गुजरात और पूर्वमें मालव इन दो सोमान्त देशोंमें अवस्थित है, इससे इसका नाम दोहद पड़ा है। यहाँ एक दुर्ग है जो १४१२-१४४० ई०में गुजरातके राजा अहमदके समयमें बनाया गया है। मजफ्फरके समयमें (१५१३-१५२६ ई०) दुर्गका संस्कार और मजफ्फर और अहमदके समयमें इसका एक वार जोर्ण संस्कार हुआ था। यहाँ ५२० गुजराती भोल सेना रहते हैं। मध्यभागसे समुद्रके किनारे जानिका रास्ता इसी दोहदके भीतर हो कर गया है, इसीसे यह एक सुन्दर वाणिज्य-स्थान हो गया है। इसका प्राचीन नाम दधिप्रदक है। १८०६ ई०में यहाँ एक म्युनिसिपैलिटी कायम हुई है। शहरको प्राय प्रायः १२०००, ६० की है। यहाँ एक सब-जजकी अदालत, एक अस्पताल और पाँच विद्यालय हैं।

दोहदलक्षण (सं० स्त्री०) दोहदस्य गर्भस्य लक्षणं यत्र। १ वयःसन्धि। दोहदस्य लक्षणं ६-तत्। २ गर्भलक्षण। दोहदवती (सं० स्त्री०) दोहदो गर्भिणीमिलापोऽन्तरस्थाः दोहद-मनुष्य मस्य व डोपू च। गर्भवती। गर्भाश्यास्य गर्भिणीको स्थान पीनेकी अधिक इच्छा होती है, इसीसे उसे दोहदवती कहते हैं। गर्भिणीके कर्त्तव्यके विषयमें मस्यपुराणमें इस प्रकार लिखा है,—गर्भवती स्त्रीकी

सेभारि समय खाना, हचके समोय जाना और रचना,
 लखे खान पर चढ़ना, मूसन चोर लखनो पर बैठना,
 जयमें चक्रगाहन और मूल्यागारमें रचना नहीं चाहिये।
 बरसोकर पर रचना; इतिव्यवहारा, नख पडार, चोर
 मस्म हाए मूमि पर लिखना, सब टा ग्रयन, व्यापार
 पायनका चण्ड, पर्याय वा सुखकेय जो कर रचना, लता
 और पर्ययको चोर चिराहने करके जोना लोके नुषेने
 बल चोर भीमें पाब रचना तथा लदुबिधता इन सबको
 परिभाषा करना चाहिये। लखे सर्वदा सुखययुवा
 लखलखार्यमें निरुद्ध तथा पतिवो सेवामें हमेशा जना
 रचना चाहिये। गर्भवती देखा।

दोहदानिवृत्त (स० खी०) दोहदेन गर्भजनितामिकापिच
 चरिन्ता। दोहदवती, गर्भवती।

दोहदोहोय (स० खि०) साममद एक प्रकारका वैदिक
 मोत वा नाम।

दोहन (स० ली०) दुध माषे वस्तु। १ स्नानसे दुग्ध
 निःसारण, मास मेंव इत्यादिके स्तनोंसे दूध निकालना।
 दुध बतियमिन् दुध पाधारे वस्तु। २ दोहनपात्र,
 दोहनो।

दोहनी (स० खी०) दुग्धतेऽप्यां दुग्ध-वस्तु-कोप। १
 दोहनपात्र दूध दुग्धनेको बाले। इसका पर्याय—खेपन,
 पारी, दीह और दीहन है। २ बातकी हथ। ३ दूध
 दुग्धनेका काम।

दोहनोद्धरण—दुग्धमियेय, एक कुण्डका नाम जहां जो
 लखचन्द्रको माय दुग्धसे वे।

दोहर (हि० खी०) एक प्रकारको चादर। यह कपड़े
 को दो परतोंका एवमें जो कर बनारि जातो है और
 इसके चारों ओर मोड़ जगो रहती है। यह कभी कभी
 एक जो कपड़ेको दो तहसे बनारि जातो है और कभी
 कभी एक तह बिधो माटे कपड़े या छीट आदिको
 चोर कूबरी तह मसमस पादि मजोन कपड़ेको
 जोतो है।

दोहरना (हि० खि०) १ दूसरो पारित जोना, दो बार
 जोना। २ दो परतोंका बिधा जाना, दोहरा जाना।

दोहरण (पा० पु०) बिहार, जानत।

दोहरा (हि० वि०) १ जिनमें दो परत वा तह हो।

२ दुगला। (पु०) १ एक जो परतमें लपटे हुए पाग
 दो बोके। २ बतरो हुई सुपारी। ३ दोहरा नामका
 जन्तु।

दोहराणा (हि० खि०) बिभी काम या बातको पुनरा
 प्रति करना किनो बातको दूसरो बार कहना।

दोहरोघाट—दुग्ध प्रदेयके पक्षीमगदु बिलेके पक्षगत
 पौषो तहपोलका एक गहर। यह पक्षां २६ १६ उ
 चोर दियां २२ ३२ पू० चय रा नदोबि बिनारे भय
 स्मित है। शीतस प्ला माका इ३० है। प्रवाद है कि
 पमारहवीं प्रताप्दीमें यह गहर पाकमगदुके राजाने
 स्थापित हुआ है। यहां एक खुनिमयेसिटी है।
 कानि को पूर्बिंसा चोर खानवाकामें यहां मीठा लयता
 है। गहरमें सिधं एक प्राइमरो झूल है।

दोहरोपट (वि० खी०) कुटोका एक पैच।

दोहरोसखो (वि० खी०) कुटोका एक पच।

दोहन (स० पु०) दीह पाकर्व जातोति का-क। दोहद,
 इच्छा।

दोहनवती (स० खी०) दोहनेो इत्यप्याः मतुप्-सख
 का कोपः। दोहदवती, गर्भवती का।

दोहका (वि० वि०) जिसमें दो बार बधा दिया हो।

दोहको (स० खी०) दोहल डा.पु. १ चयोडवच।
 २ पकडक, पाकका पैके, मदार।

दोहस (स० पु०) दुग्ध-माके पदम्। दोहन, दुग्धनेका
 काम।

दोहधि (स० पय०) दुग्धतमसे पनेन। दुग्धनेमें।

दोहा (स० खी०) १ मातावच जन्तु, एक हिन्दो जन्तु।
 इसमें दोसे लो बार चरच हैं, पर को दो पंक्तिमें लिखा
 जाता है, पर्याय पक्षका चोर दूधका चरच एक पक्षिम
 चोर तोमरा तथा चौदा चरच एक मूसरो पक्षिमें लिखा
 जाता है। इससे पहले तथा तांभरी चरचमें १३-१३ माताए
 जोतो हैं चोर दूधरे तथा चौधमें ११ ११। दूधरे चोर
 चौबे चरचका तुकाता मिलना चाहिये। २ पक्षीचं
 रायका एक भेद।

दोहारि (वि० खी०) दुगारि देको।

दोहापत्र (स० पु०) दीह चयनवति कानिहरदिनेति
 चयनो पच। गव्यदुग्ध, मायका दूध।

दाहित (स० त्रि०) दोह-तारकादित्वात् तच् । सञ्जात दोह, दूहा हुआ ।

दोही (स० त्रि०) दुह-गौनाथं घिनुन् । १ दोहनगौल, दूध दुहनेवाला । (पु०) २ गोप, ग्वाला ।

दोहो (हिं० पु०) एक छन्द । यह भी देहिकी तरह दो पंक्तिमें लिखा जाता है । इसके पहले और तीसरे चरणमें पन्द्रह पन्द्रह मात्राएं और दूसरे तथा चौथे चरणमें ग्यारह ग्यारह मात्राएं होती हैं ।

दोहोयस्य (स० त्रि०) अयमनयोरतिगयेन दोग्धा दोग्धु इयमुन् ढणोलोपः । अत्यन्त दोग्धा, बहुत दुधारी ।

दोह्य (स० त्रि०) दुह्यते इति दुह-ण्यत् । १ दोहनीय, दूहने योग्य । (पु०) २ दुग्ध, दूध । दुह्यतेऽस्या इति । ३ गोमहिषादि, गाय, भैंस आदि जानवर जो दूह जाते हैं ।

दोच (हिं० स्त्री०) दोच देखो ।

दोरो (हिं० स्त्री०) १ कटो फसलके उठलोकें टाना भाङ्गनेके लिए एक साथ रस्सोमें बंधे हुए बालोंका झुंड फिराना । २ दोरीके बालोंके गलेमेंकी रस्सी । ३ झण्ड ।

दोःसाधिक (स० पु०) दुर्दुष्टः साधः कर्म तत्र नियुक्त ठक । द्वारस्थित, द्वारपाल, खोढ़ोदार ।

दोकूल (स० पु०) दुकूलिन परिव्रता रथः इति अण् । (परिवो रथः । पा ४।२।१०) १ दुकूल द्वारा परिव्रत रथादि, कपड़े से घेरा हुआ रथ आदि । (त्रि०) २ कपड़ेका ।

दोड़ (हिं० स्त्री०) १ द्रुतगमन, दौड़नेकी क्रिया । २ वेग पूर्वक आक्रमण, घावा, चढ़ाई । ३ द्रुतगति, वेग । ४ गतिकी सोमा, पहंच । ५ उद्योगको सीमा, ज्यादासे ज्यादा उपाय जो हो सके । ६ प्रयत्न, उद्योगमें इधर उधर फिरनेकी क्रिया । ७ बुद्धिकी गति, अज्ञकी पहंच । ८ आयत, विस्तार, लम्बाई । ९ सिपाहियोंका वह दल जो अपराधियोंकी एकवारगी कहीं पकड़नेके लिये जाता है । १० जहाज परकी एक लकड़ी । इसमें लकड़ी डाल कर हुमानेसे पतवार बंधो हुई जखोर लिप्तकतो है ।

दौड़घपाड़ (हिं० स्त्री०) दौड़घूप देखो ।

दौड़धूप (हिं० स्त्री०) परिश्रम, प्रयत्न, किसी कामके लिए इधर उधर फिरनेकी क्रिया ।

दौड़ना (हिं० क्रि०) १ द्रुतगतिसे चलना, मानू लो चालमें ज्यादा तेज चलना । २ सहसा प्रवृत्त होना, झुक पड़ना, ढलना । ३ व्याप्त होना, फैलना, छाजना । ४ उद्योग करना, कोशिशमें डेरान होना, उपाय करना ।

दौड़ादोड़ (हिं० क्रि० वि०) अविविचान्त, वेतहाशा ।

दौड़ादौड़ी (हिं० स्त्री०) १ दौड़घूप । २ बहुतसे लोगोंके एक साथ इधर उधर दौड़नेकी क्रिया । ३ आतुरता, हड़बड़ी ।

दौड़ान (हिं० स्त्री०) १ द्रुतगमन, दौड़नेकी क्रिया या भाव । २ वेग, भौंक । ३ सिलसिला । ४ फेरा, वारो पारो ।

दौड़ाना (हिं० क्रि०) १ द्रुतगमन कराना, जल्द जल्द चलाना । २ बार बार आने जानेके लिए कहना या विवश करना । ३ फैलाना, पोतना । ४ किसी वस्तुकी यहाँसे वहाँ तक ले जाना । ५ फेरना ।

दौण्डिका (स० स्त्री०) क्रीडातक्री, कहुँई तरीई ।

दौत्य (स० स्त्री०) दूतस्य भावः कर्म वा यत्नः । १ दूतकर्म, दूतका काम । २ घटकता ।

दौना (हिं० पु०) एक प्रकारका पौधा । इसके पत्ते गुल दाजदौकी तरह कटावदार होते हैं । पौधेकी डालियोंके सिरे पर एक पतली सीकमें मंजरी लगती है जिसमें महोन महीन फूल होते हैं । जब फूल भङ्ग जाते हैं, तब उस मंजरीके बीज-कोशोंमें छोटो छोटो दाने पड़ते हैं । पौधे बीजोंसे निकलते हैं और बरसातमें उगते हैं । इसका गुण—शोथल, कड़ुवा, कसेला, खुजली, विस्फोटक आदि नाशक है ।

दौनागिरि (हिं० पु०) द्रोणगिरि नामक पर्वत । पूर्व समयमें यहाँ विश्वकर्माणो नामको संजोवनी औषध पाई जाती थी । जब लक्ष्मणको शक्तिशैल लगा था, तब इन्तुमानजी इसी पर्वत पर औषध खानेके लिये भेजे गये थे ।

दौर (अ० पु०) १ भ्रमण, चक्कर, फेरा । २ कालचक्र, दिनोंका फेर । ३ अभ्युदय काल, वदतीका समय । ४ वार, दफा । ५ प्रताप, प्रभाव, हुकूमत । ६ वारी, पारो ।

दौरा (अ० पु०) १ भ्रमण, चक्कर । २ चारों ओर हुमनेकी क्रिया, फेर, गच्छ । ३ निरोक्षणके लिये भ्रमण । ४

द्विधो दिने रोमका लक्षण प्रगट होना को समय समय पर होता है। १ बार बार होनेवाली बनका द्विधो बार होता। २ मामयिष आगमन, केरा।

दोराभ्य (स० श्लो०) दुर्मिन्दित पाका प्रभावः यत्र स दुराका तत्र भावः कर्म वा चमः । १ दुराकाका भावः दुर्जनता । २ दुराकाका कामः दुष्टता ।

दोरादोर (दि० श्लो० वि०) १ पवित्रात्म्य, अमातर । २ दुग्धमे तिजोमे ।

दोरान प्रा० पु०) १ चक्र दोरा । २ कासचक्र, दिना का केर । ३ केरा भारी पारी । ४ मिलसिन्हा, भीष दोरित (स० श्लो०) चलि, जालि ।

दोरेयवस (स० पु०) दोरेयुत देवः ।

दोरेयुत (स० पु०) सयु-सुरोचित तिमिषका गोत्रापत्य ।

दोर्म (स० श्लो०) दुर्गण्य दुर्माया वा दद पचः । १ दुर्ग सन्धयो, दुर्गाका । २ दुर्मा सन्धयो, दुर्गाका ।

दोर्मन्त्र (स० श्लो०) दुर्गात्म्य मान चमः । १ पारिष्टः । २ दुर्गात्म्य दुरवला ।

दोर्मन्त्र्य (स० श्लो०) दुर्गुद्धो नभ्यो यत्र दुर्मन्त्र्य । ततो भाषि चक्रः । १ दुग्धमन्त्र्य । २ दुग्धमन्त्र्योय । दुग्धमन्त्र्यायत्र निषेधे विषयमे मयदुग्धमन्त्र्ये लिखा है कि चन्द्रम, कुहुम, मांसी, कर्पूरी, क्षात्रियत्र, ज्ञातो, कडोच, पूग लवङ्ग पत्र, चमुद, मोर, काशमठे, कुष्ठ, तयरमाक्षिका, भोरो-चना, मियङ्गु, चोस, मदनक परलकाड ममपथं लापा, पामसको बभूरक पौर पक्षक हल सब इन्धोमे प्रपात्रित कर तीन प्रसुत करमेके दोर्मन्त्र्यमाय होता है ।

दोर्मन्त्र (स० पु०) दुर्गाहस्तापत्य मिधादित्वादच । १ दुर्गन्त्र श्रविका अपत्य, पुत्रकुस श्रवि । २ पच, चोड़ा ।

दोप ह (स० पु०) दुग्धेन प्रयो पचकमप्य चक्रमप्य तत् प्राथो यान पचः । चक्रमिषवचः ।

दोर्मायत्र (स० पु०) दुर्माह्यापत्य नडादित्वात् पचः । दुर्माका अपत्य ।

दोर्म्य (स० श्लो०) दुर्गात्म्य भावः दुर्गन्धेद वा चमः । १ दुर्गन्धेदचमः । २ दुर्गन्धेदचम्यो ।

दोर्मन्त्र (स० श्लो०) दुर्गन्धेद ममाकोर्म ।

दोर्मन्त्र्य (स० श्लो०) दुर्गन्धेद भावः दद वा चमः । १ दुर्गन्धेद, दुर्गन्धता, दुष्टता । २ दुर्गन्धेद, करार पाच-रक ।

दोर्मन्त्र्य (स० श्लो०) दुर्गन्धेद मान दद्वये प्य वा प्यचः । दुर्गन्धता, कर्मकोरो ।

दोर्माह्यत्र (स० श्लो०) दुर्माह्यत्रस्य भावः चमः । दुर्माह्य-त्रस्य कुत्राह्यत्रका कामः ।

दोर्मागिनिय (स० पु० श्लो०) दुर्मगाया अपत्य पुमान् दुर्माया दन्व दन्व (अन्वगायीनामिन्द्र व । १। ३। १। २। ३।) १ दुर्मायाका पुत्र, दद लङ्का जिसकी माताको लपका पिता पमन्द न करता हो । निगर्ग होय । २ दोर्मागिनियो, दुर्मागाभी अन्व ।

दोर्मात्र्य (स० श्लो०) दुर्मगाया दुर्मागाया वा भावः चक्रः, ततो लपयवद्विः । दुर्मगाया, दुर्मात्र्य । ज्योतिष-वचने लिखा है, कि जिघर्षे यदि पिताके धर्ममें मोहन करके फिर लपो दिन क्षामोषे चामे मोहन करे, तो लपे दोर्मात्र्य लपय होता है और ममो कुनगाविहा माप देतो है ।

दोर्मात्र (स० श्लो०) दुष्टो म्नाता तत्र भावः दुर्मादि-त्वादचः । दुष्ट म्नावल ।

दोर्मात्र्य (स० श्लो०) दुष्ट मनो यत्र तत्र मान चक्रः । दुष्ट मित्रमन्त्र चित्तमसाद, दुर्मात्रना चित्तको खोटाई ।

दोर्मात्र (स० श्लो०) दुर्मन्त्रस्य भावः चक्रः । दुर्मन्त्रता कुमन्त्रका करार निचार ।

दोर्मन्त्रि (स० श्लो०) दुर्मन्त्राका अपत्य ।

दोर्मन्त्रि (स० पु०) दुर्मन्त्रका गोत्रापत्य ।

दोर्मन्त्रि (स० पु०) दूरी, कासका ।

दोर्मात्र्य (स० श्लो०) दुर्गोचन-सन्धयोय ।

दोर्मात्र्य (स० पु०) दुर्गाचनका गोत्रापत्य दुर्गाचनके गोत्रमें लपय चक्रि ।

दोर्मन्त्र्य (स० पु०) दुर्गन्धता, कर्मकोरो ।

दोर्मात्र्य (स० श्लो०) दुर्गासता मोत्र पचः । दुर्गासा मोत्र लपयुरापमेद दुर्गासाक्षविका बनाया हुआ पच लपयुराचः ।

दोर्मात्र्य (स० श्लो०) दुर्गाया दद चक्रः । १ दुर्गात्म, दूबका रस । २ ददपच, लक्ष्मणता ।

दोर्मात्र्य (स० श्लो०) दुष्ट चक्रको लपयनादि कर्त यत्र तत्र मान चक्रः । दुष्टतत्त्व ।

दोर्मात्र्य (स० श्लो०) १ कुन्वमात्र, दुष्ट प्रकृति । २ दुर्मात्र, बेर ।

दौहट (स० लो०) दुहटो भावः अण् वाङ्मलकात् न
डिपदह्रस्विः । १ इच्छा । दोहर देखो । २ दूषित हृदयत्व,
हृदयको खोटाई ।

दौहटय (स० लो०) दुहटयस्य दुष्टहृदययुक्तस्य भावः
युवादित्वाद्गण् न डिपदह्रस्विः । दुष्टचित्तत्व, दुष्टता ।

दौलत (अ० पु०) धन, सम्पत्ति ।

दौलतखी—बङ्गालके बाखरगञ्ज जिलेके दक्षिण शाहा
वाजपुर उपविभागका एक ग्राम । १८७६ ई०को भक्तू
वर-मासमें तूफान और बाढ़से यह ग्राम तहस नहस हो
गया तथा ग्रामवासी भी बिलकुल विनष्ट हो गए । अभी
दौलतखी प्रायः जनशून्य हो गया है ।

दौलतखी लोदी—ये अफगानवंशोय थे । बहुत दिनों
तक ये तुगलक वंशोय राजाओंके अधीन रह कर अनेक
उच्च पदोंमें नियुक्त हुए थे । बाद इन्हें महमूद तुगलकसे
अजोज ममालिकको उपाधि मिली थी । महमूद तुग-
लकके मरने पर १४१३ ई०में दिल्लीके सम्राज्य उच्च
पदस्थ व्यक्तिोंने इन्हें दिल्लीके सिंहासन पर अभिषिक्त
किया । लगभग एक वर्ष राजत्व करनेके बाद १४१४ ई०में
मुनतानके शासनकर्त्ता खिजिरखाने दिल्ली पर आक्रमण
किया । वे चार मास तक दिल्लीको घेरे रहें । अन्तमें
उन्हींके हाथ दिल्ली सौंप दी गई । खिजिरखाने फौरन
दौलतको फिरोजाबादके कारागारमें भेज दिया । दो ही
मासके अन्दर कारागारमें इनका देहान्त हुआ ।

दौलतखी लोदी (दौलत लोदी)—इब्राहिमलोदीके समय
ये पञ्जाबके शासनकर्त्ता थे । इनके अत्याचारसे सभी
लोग तंग आ गये । इस समय इन्होंने बिहारके शासन-
कर्त्ता बहादुरखीको स्वाधीनता अवलम्बन की ।

दौलतखीने भी विद्रोही ही कर तैमुरवंशके बाबरको
काबुलसे बुलाया । १५२६ ई०में बाबरने पानीपतकी
लड़ाईमें इब्राहिमको परास्त कर दिल्ली पर अपना अधि-
कार जमाया । दौलतखी बाबर आनेके कुछ पहले ही इस
लोकसे चल बसे थे । वे विद्वान् और कवि थे ।

दौलतखी लोदी ग्राह्खेल—विद्रोही खी जहान् लोदीके
पिता । ये पहले मिर्जा अजीज मोका, पोछे अबदुल
रहौम और अन्तमें राजकुमार द्रानियालके अधीन काम
करके दो हजारो मनुसबदार हुए थे । १६०० ई०को
दक्षिण प्रदेशमें इन्होंने प्राण त्याग किये ।

दौलतखाना (फा० पु०) निवासस्थान, घर ।

दौलतमन्द (फा० पु०) धनी, सम्पन्न ।

दौलतकन्दी (फा० स्त्री०) सम्पन्नता, मालदारो ।

दौलतराम—१ भाषाके एक प्रसिद्ध जैन विद्वान् और ग्रन्थ-
कार । ये बरवा (मारवाड)के रहनेवाले थे और जय-
पुरमें आ रहे थे । इनके पिताका नाम था आनन्दराम ।
इनकी जाति खण्डेलवाल और गोत्र काशलीवाल था ।
आप राज्यके किसी बड़े पद पर थे । आपने अपने भाषा-
हरिवंशपुराणको प्रशस्तिमें लिखा है—

“सेवक नरपतिकी सही, नाम सुदौलतराम ।

तानै यह भाषा करी, जप कर जिनवानाम ॥२५॥”

वि०स० १७२५में जब आपने “क्षिप्रकोश” लिखा
था, तब आप किसी राजाके मन्त्रो थे, जिनका संचित
नाम आपने जयसुत (जयसिंहके पुत्र) लिखा है । उस
भयम आप उदयपुरमें थे, जैसा कि आपने लिखा है,—
“सबत सत्रासै पिच्याणव, भादव सुदि वासस तिथि जानव ।

मंगलवार उदैपुर माहीं, पूरन कीनी संसै नाही ॥

आनंदसुत जयसुतकौ म'श्री, जयकौ अनुवर जाहि कहै ।

षो दौलत जिनदोषनि दाषा, जिनमारगको शरण गहै ॥”

भाषा-हरिवंशपुराणमें लिखा है, कि हरिवंशपुरा-
णको रचनके समय जयपुरमें रत्नचन्द्र दीवान थे और
साथ ही यह भी लिखा है कि उक्त राज्यके मन्त्रो प्रायः
जैनी हुआ करते हैं । रायमल्ल नामक एक धर्मात्मा
सज्जन जयपुरमें रहते थे । उनको प्रेरणासे प० दौलतराम-
जीने जैन आदिपुराण, पद्मपुराण और हरिवंशपुराणकी
वचनिकाये (गद्यानुवाद) लिखी हैं । हरिवंशपुराणका
गद्यानुवाद करनेके लिए उन्होंने मालवसे पत्र लिख
कर आपसे प्रेरणा को थी । रायमल्ल किसी कार्य वश
मालव गये थे; वहा भाषा पद्मपुराण और आदिपुराण-
से लोगोंका बहुत उपकार हो रहा था, यह देख उनके
मनमें हरिवंशकी वचनिका करानेको तोत्र इच्छा
हुई और वहांसे उन्होंने पत्र लिखा ।

उक्त तीनों ही ग्रन्थोंका जैन-समाजमें बहुत प्रचार
है, ये ग्रन्थ बहुत बड़े बड़े हैं । हरिवंशकी वचनिका
१८ हजार श्लोकप्रमाण है और पद्मपुराणकी लगभग २०
हजार श्लोक-प्रमाण । आदिपुराण उससे भी बड़ा है ।

भावा वदत मरव, दू डारोपनको लिए घोर प्राबोध है। इन पद्य'का प्रचार बेबल हिन्दो-भावा भाषियेमें ही नहीं, बल्कि गुजरात घोर दक्षिणमें भी ये पद्य पढ़े घोर समझि जाते हैं।

भावा-रुचि मको रचना सं० १८२८में आदिपुराणको १८५७ घोर पद्यपुराणको १८२१में हुई है। योगेशदेव-जन 'परमात्मप्रकाश' तथा 'योगान्तरिका' को वचनिका भी आपको जो बनाई हुई है। प० टोडरमलको पुत्र पारसिहदूपायको भावायोका अप्युष जोड़ गये थे; वरु भी इन्हीं दोहतरंगमत्रोने पूरी को है।

'पुष्पाक्षर' नामक जैन-पद्यको वचनिका सं० १७७५में बनी है; मानसु नहीं वरु इन्हींको है या पद्य दोनतरंगको? ये पद्यकाल धार्मिक सुख है।

२ हिन्दोके एक प्रसिद्ध जैन कवि। आप सामनी (जिना धर्मोपगु) व रहनेवाले घोर जातिके पत्नीराम थे। सुना जाता है, कि आप बीपोका काम करते थे; परन्तु आप्पाभिन्न ज्ञानमें बहुत बढ़े बढ़े थे। आपका रचा हुआ एक 'ब्रह्मठाता' नामक सुन्दर पद्य-पद्य है, जिसका जैन-समाजमें बहुत प्रचार है। वरु पद्यमें आप्पाभिन्नरस कूट कूट कर मरा हुआ है। सचमुच मोतरी निमाइके देखा जाय तो 'ब्रह्मठाता'में जैनधर्मका चार मरा हुआ है। यह समस्त जैन-विद्या जगत्में पाठपुरतक है। यह कविको सदा या अत्यन्त रचना है। इससे बिना पद्य में कहीं पदोंको रचना भी है, जो पद्यमें डरके निराले घोर पञ्चाक्षरमत्रे पाकर हैं। इनको कविता मर्चन मरव घोर भावपूर्ण होती है। मोके एक मनुना दिया जाता है।

"मय श्रीयो भी गरी, विर-गेरु हैर बड़ु चारके ॥
मात-साठ रव-वीरवरी यद रवरी मरुतुपराटी ॥
कविनाम वरुनावातरी, काठक वरु कयाती ॥

॥मय श्रीयो०॥

धर्म-पुराणरतीपुनमी (१) वरु मुरपुडिण मरुताटी ॥
धर्म म जो मियुवन बड़ो वरु धर्म पुरारनराटी ॥

॥मय श्रीयो०॥

(१) धर्म (कवोरे पद्य पुन) रुती हरिनाथे कवने बकी बगद वरु कुराधीके कमान ।

के के पवन वस्तु बगतमें, दे रव वरु सिपायी ।
रुहर-मेद-इक कहेरमरी बड़ु, मर-भार ल्याक रिगरी ॥
॥मय श्रीयो०॥
म स योग रोम मय ठौलो, बा बियेग सिनकरी ।
मुच तापो न ममल करे यद, मूड मतिनको बराटी ॥
॥मय श्री०॥
जिन घेरी ते मये सरोषी, तिब गने इच्छ मापी ।
जिब उप कन प्यान कर कोषा, तिब परनी पिर-बापी ॥
॥मय श्री०॥
सुर वदु शरव बरुद बरुदुपुद, स्त्री बरु दिनकपराटी ।
गर्ति किम बरु किम वेतन, "हीरु" होडु कर्मचारी (२) ॥
॥मय श्रीयो०॥
विम-गेरु हर बड़ु चारके मरपी ॥
३ शकपूताभी भावाके एक कवि । इन्हीं पद्यत् १८५७में कलपरजोरोगुच घोर परिचयप्रकाश नामक दो पद्य लिखे ।

द्वैततरंग सिन्धिया—प्रसिद्ध सिन्धियाउपनिषदके एक राजा, आस्तियुगविपति माओत्रीरावके उत्तकपुत्र । माओत्री सिन्धिया केने । माओत्री सिन्धिया मरते समय पपनी कोटे मारि धानन्दरावके पुत्र दोहतरंग सिन्धियाको अपना उत्तराधिकारी बना गये थे । किन्तु उस समय दोहतरंग १२ वर्षके बालक मात्र थे, इसलिये नाना पड़ुनकोष महाराज्जा आतिथे भाव्य निवन्ता हो गये । नाना पड़ुनकोष केने । माओराव पियवा उप समय भी पद्यवयस्त थे ; पड़ुनकोषने उनके बालकलनके विषयमें पूरु कड़ाई करना थक कर दिया । पड़ुनकोषके इस तरह बडोरता पबलम्बन करने पर उन्होंने पाकाइका करनेका निश्चय कर लिया घोर मरते समय थे रहनुमाइरावके पुत्र बाओ-रावको पपना उत्तराधिकारी बना गये । नाना पड़ुनकोष बाओरावके कुछ इरते थे, इसलिये उन्होंने पत पियवाको विषया पत्रोको उत्तकपुत्र पदक करनेको परो पढ़ाई, परन्तु कुछ न हो सका । आखिर उन्हें बाओ-रावके मित्र कर रहना पड़ा । पोथे इटिय ऐनिटैण्ट सि-मनेटको महायताथे उन्होंने सम्मान्य पत्रिकों घोर काव'कर्ता'को मुका कर धनके बाओरावके कोटे माट विमनाओ पपनाको उत्तक पदक करनेके विषयमें पति मत श्रीजन करा लिया । बाओरावने इन स बादको प

(२) पद्यके कविटीन ।

कर अपने मन्त्री वल्लभ तात्या और दौलतराव सिन्धिया-को सहायतायें बुलावा भेजा। ये दोनों यथासमय आ पहुँचे। नाना-फड़नवीस इन दोनोंसे भी डरते थे फड़नवीसने परशुरामभाऊको अपने पास बुला लिया। परशुराम और फड़नवीसकी तरफके लोगोंने परामर्श करके बाजीरावके पक्षमें मिलना ही युक्तिसङ्गत समझा तथा परशुराम अथवा उठा कर बाजीरावकी पूना ले गये। इधर वल्लभ तात्या परशुरामके इस प्रकार आचरण करने पर, अपने उद्यमकी विफलता समझ विमनाजो अप्पाकी पूना ले गये और उन्हें यथारोति विधवाके दत्तकपुत्ररूप ग्रहण कर १७७६ ई०की २०वीं मईकी पेशवाकी गद्दी पर बिठा दिया। इस तरह विमनाजो अप्पा ही पेशवा बनाये और माने गये। परशुराम राजकार्य निर्वाह करने लगे। नाना-फड़नवीस इससे पहले ही, अपनेको विपन्न समझ कर किसी कामके वहाने बाहर चले गये थे। परशुरामने समझौता करनेके लिये नाना-फड़नवीससे पूना आनेके लिए अनुरोध किया। फड़नवीस कोङ्कण प्रदेशमें रह गये। वल्लभ तात्याने चारों और विपत्ति देख कर बाजीरावकी दिल्लीकी तरफ भेज दिया। बाजीराव अपने अनुचर घाटगय सिरिजीरावके साथ परामर्श करने लगे। इस परामर्शके अनुसार घाटगयने दौलतराव सिन्धियाके साथ अपनी कन्याका पाणिग्रहण करना स्वीकार कर लिया। बाजीरावने वल्लभ तात्याके परामर्शानुसार कार्य नहीं किया; वे दिल्ली न गये, बीमारोका बहाना कर वहीं ठहर गये।

इधर नाना-फड़नवीसने शैलराजादके निजामके साथ सन्धि कर बाजीरावको पेशवाके पद पर बिठानेका मार्ग निकाला लिया। बरारके रघुजी भोन्सले तथा गवर्मेण्टने बाजीरावकी तरफ अपना अभिमत दिया। सब ठोक हो चुकने पर, दौलतरावने पहले वल्लभ तात्याकी कैद किया। परशुराम लक्षण देख कर विमनाजोको ले कर कहीं भाग गये। २५ नवम्बरको नाना-फड़नवीस पूना लौटे। बाजीराव १७१६ ई०में ४ दिसम्बरको पेशवा-पद पर अभिषिक्त हुए।

बाजीराव कूटनीति-विद्यारथी। राज्यमें जमताशाली व्यक्तिमात्रको न रहने देना ही उसका लक्ष्य था और

‘कण्टकेनैव कण्टकं’ उनका मूलमन्त्र था। उन्होंने दौलतरावको समझाया, कि नाना-फड़नवीसकी विना दूर किये हम लोगोंका मङ्गल नहीं हो सकता। इच्छा न रहने पर भी, बाजीरावने अपने अशुरके अनुरोधसे बाध्य हो कर इस कार्यमें अपना मत दिया। दौलतरावने नाना-फड़नवीस और अन्यान्य जमतापन्न व्यक्तियोंको अहमदनगरके कारागारमें भेज दिया।

१७७८ ई०के मार्च मासमें घाटगयकी कन्या वैजावाईके साथ दौलतरावका विवाह हो गया। बाजीरावने दौलतरावको दो लाख रूपया देना कबूल किया था। उन्होंने पूनाके अवस्थान लोगोंसे उक्त रुपये वसूल करनेके लिए कह दिया। दौलतरावके अशुर और मन्त्री घाटगय नाना प्रकारके अत्याचार करके रुपये इकट्ठे करने लगे। परन्तु इतने पर भी जब दौलतराव पूनासे न हटे, तब बाजीराव कुछ चिन्तित हुए।

बाजीरावने नाना-फड़नवीसके स्थान पर अमृतरावको नियुक्त किया था। दौलतरावके व्यवहारसे भोत हो कर, उन्होंने अमृतरावसे दौलतरावको मारनेके लिए कहा। पड़यत्न रचा गया, परन्तु ठोक समय पर कार्य न हुआ, दौलतराव बच गये। बाजीरावके साथ दौलतरावका मनोमालिन्य ही गया। बाजीरावने निजामके साथ सन्धिकर ली। दौलतरावको चारों ओरसे विपत्तियोंने घेर लिया। इनको सेनाकी बहुत दिनोंसे वेतन न मिला था। टोपू सुलतानने इन्हें सहायता न दी। अन्तमें यह सोच कर कि इस विपत्तिमें नाना-फड़नवीसके सिवा अन्य कोई भो उधार नहीं कर सकता, ये दश लाख रुपये खर्च करके उन्हें छुड़ा लाये। इमो समय आपने घाटगयके अत्याचारसे झुंझला कर उन्हें कैद कर लिया। अब तो पेशवा डर गये और छिप कर नाना-फड़नवीससे मुलाकात करने लगे। बाजीरावको पट्टीमें आकर नाना-फड़नवीसने मन्त्रि-पद ग्रहण कर लिया। किन्तु दौलतरावके मुँहसे यह सुन कर कि गुप्त रीतिसे बाजीराव उन्हें कैद करनेके लिए दौलतरावकी उर्ते जित कर रहे हैं, वे सावधान हो गये। दौलतराव और बाजीरावने परामर्श करके टोपू सुलतानके राज्य पर आक्रमण करनेकी तैयारियाँ कीं। किन्तु इसी

धर्म्य डोयू सुदतानबी यन्तु को बर्त, निघने लम्बे यह
कल्प्य होइ देना पया ।

१८०० ई०में आना-पड़नबोसको बन्ध, हुई । राज्यमें
बड़ी भारी गड़बड़ी होऊ गई । दोस्ततावने इस बहाने
के बिना आना-पड़नबोस पर हमारे एक करोड़ रुपये
पावने हैं, उनको जामोर बड़मनेबी सोमिय को और
उनकी (नामा-पड़नबोसकी) पत्नीः बसक पकब करने
को यत्नाइ हो । बहाने तावतेके इस समय मन्त्रिपद पर
समिपित्त होने पर दोस्ततावने मद्रासके परामर्शानुसार
लम्बे पकड़ कर पदमदनगर भेज दिया और वहाँ
उनको यन्तु को गई । पेशवा बाजीराव दोस्ततावके
इस कार्यके उर मये से किन्तु कयायात्तर न देख चुप
रह गये । इस समय ब्रह्मोद्वेगताव दोस्तकारने दोस्त
तावके अधिकारसुख प्रदेय पर आक्रमण किया । बुद्धिमें
पहले दोस्तकार को भी मय हुई किन्तु पोलिसे दोस्ततावने
इन्दीके पास एक बुद्धि दोस्तकारको पराप्त कर
दिया । दोस्तकार इससे डरे नहीं, उन्होंने हिम्मत
लगावके साथ दोस्ततावके खानदेय पर आक्रमण
किया और समयः पूना तक था पहुँचे । पञ्चोवर
मासमें दोस्तकारके साथ दोस्तताव और पेशवाकी
सेनाका युद्ध हुआ । पेशवा और दोस्तताव पराप्त
हो कर भाग गये । नामा खानोमें परिभ्रमण करनेके
बाद पेशवाने बेलिमें पदरेखीके एक सन्धि को ।
इस सन्धिके अनुसार खिर हुआ कि पेशवाको रजधाम
छुड़ चढ़ाओ सेना उनके राजमें रहनी और उनके
कार्यके लिए २१) ६० पावकी एक सम्पत्ति लम्बे कौय
दो कायतो । इससे यमो मराठे माण्यु को मये ।
नामा-पड़नबोस २१ वर्ष तक बिज कार्यके बिबह बड़े
से, पर उनको यन्तु को जर्मिसे मद्रममें बह नाम हो
गया । दोस्तताव बरारके राजाके साथ मिल कर समय
महाराष्ट्र-बालिको साथ से प गेकीके बिबह युद्ध करने
को तैयारिा करनी ली । पदरेखीको इस बातका
पता लग गया । पक्षेक पेशवाको मरने पर
बेकानेके निघे थाया २० हजार सेनाके साथ पूना पाये ।
बाजीराव पयने सि हालत पर ईड मये । दोस्तकार
मान्य मये चुप से, से नहीं पाये । दोस्तताव, क्या कर

क्या नहीं करे, कुछ निबध नहीं कर सके । पक्षेकीने
इसके बिबह युद्ध करनेका निबध कर लिया । जनरल
वेस्लिम को पर इस युद्धका भार पौया गया । बन्दीने
पहले पदमदनगर अधिकार किया । पर दोस्तताव
महाराष्ट्रो सेनाके साथ युद्धमें पक्षतोषी हुए । पसाई
पेत्रमें वेस्लिमीके साथ युद्ध हुआ, जिसमें वे पराजित हो
कर भाग गये । जनरल रिटर्नमयने मीर हो बाइल-
पुर और पायोरागड़ दुर्ग पर अधिकार कर लिया ।
पक्षेकीके साथ ब्रमण दिखी, पायरा और मायनारीमें
दोस्ततावका युद्ध हुआ और अन्त्येक युद्धमें इनकी परा-
जय हुई । अटक बरार पादि खानोमें भी पक्षेकीने
पयने मकार्यकिया परिषय दिया । दोस्ततावने पक्ष
सन्धिके प्रस्ताव किया पर सन्धि न हुई । एहकी भीमसे
और दोस्ततावको सेना पुन पक्षेकी द्वारा पाह्लात
और पराजित हुई । इस युद्धमें महाराष्ट्रकी पन्थिम
प्राय पर पाने फिर गया ।

१८०६ ई०में दोस्ततावने पक्षेकीके सन्धि कर को ।
यह सन्धि सुर्जी प जनार्दनमें हुई को । सन्धिके शर्तके
अनुसार दोस्ततावने दोषाव और अन्त्यान् बहुरिसे खान
होइ दिये तथा हा हजार पक्षेकी सेनाके कार्यका भार
पयने ऊपर से लिया ।

पर इनके पास राजपूतानेमें मयपुर और जोधपुर
तथा दक्षिण और खानदेयमें पेशवा सम्पत्तिके पिना और
कुछ मी न रहा । १८०१ ई०में पक्षेकीके मरगपुर
दुर्ग निजब करनेके बाद सिन्धियाने दोस्तकारके साथ मिल
कर फिर गड़बड़ महानेबी सोमिय को, पर सार्डे सेकके
साथ बुद्धिमें पराजित हो भाग गये । लक्ष समय काई
जनसन्धिजन जनरल प्रमरल से ; बन्दीने दोस्ततावके
साथ सन्धि कर ली । परन्तु वे निरस्त रहनेवाले न से ;
१८०१ ई०में, जब पक्षेक निदाक-राजके साथ युद्धमें
निजल से, तब दोस्तकार, पेशवा और दोस्तताव बह
पक्षेकीके बिबह युद्धप तैयार हो मये । जब समय
दक्षिणारयवे पक्षेकीकी सेना न पानी तो मायद से
भोग युद्ध करनी ; किन्तु सेनाके पा पड़ बने पर मरने
पयना पयना राष्ट्रा लिया ।

१८०९ ई०में जनरल जनरल सार्डे वेल्डिङ्ग, पिच्छाओ

दमनके लिये कृतसङ्कल्प हो दोनतरावके साथ युद्धसूत्रमें आबद्ध हुए। दौलतरावको इच्छा न होने पर भी अंग्रेज गवर्नरके इच्छानुसार कार्य करने लगे। वे नेपालियोंको अंग्रेजोंके विरुद्ध उत्तेजित कर रहे थे। उन्होंने पेशवासे अंग्रेजोंकी विपत्तता करनेके लिये प्रायः २५ लाख रुपये लिये थे। किन्तु जब सुना कि गवर्नर जनरल सेना सहित उनकी राजाकी सीमान्तमें आ पहुँचे हैं, तब आप शीघ्र ही अंग्रेजोंके अभिप्रायानुसार कार्य करने लगे। इसी समय पेशवा युद्धार्थ अग्रसर हो गये। अतः तक वे पिण्डारियोंको गुप्तरीत्या सहायता पहुँचाते थे, किन्तु जब देखा कि उन्हीं पिण्डारियोंके ध्वंसके लिए अंग्रेजोंने कसर कस ली है, तब वे अंग्रेजोंके विरुद्ध युद्धार्थ अग्रसर हुए। प्रत्येक युद्धमें अंग्रेजोंकी विजय होने लगी। दौलतराव इस समय स्वयं निरस्त थे, पर उन्होंने अपने सेनाध्यक्ष यशोवन्तरावकी पेशवाकी सहायता देनेकी आज्ञा दी थी, यह बात प्रकट हो गई। इस पर अंग्रेजोंने दौलतरावका अग्ररीगढ़ अधिकार कर लिया। घेरि घेरि अग्ररीजोंका प्रभुत्व देश भरमें फैल गया। दौलतराव सिन्धिया मन्त्रोपधिरुद्धबौर्य भुजङ्गमकी तरह कालातिपात करने लगे और आखिर १८२७ ई०में उनकी मृत्यु हो गई।

दौलतरावको विधवा पत्नीने एक ज्ञाति पुत्रको दत्तक ग्रहण किया। प्रवाद है, कि सिन्धियावंशके राजा अपुत्रक होते हैं। यह बात आज तक सत्य होती चली आ रही है। सिन्धियावंशके राजगण अपुत्रक होनेके कारण आज तक दत्तकपुत्रोंको ही अपना अपना राज्य देते गये हैं।

दौलतशाह—समरकन्दके बख्तशाहके पुत्र। हिराट के अबुल गाजी बहादुर उर्फ सुलतान हुसेन मिर्जाके समयमें इनका अभ्युदय हुआ। इनकी लिखी हुई 'ताजकिरा दौलतशाही' नामक एक कविजीवनी है। इस पुस्तकमें दश अरबो कवि और एक सौ चौतीस पारसी कवियोंके जीवनचरित वर्णित हैं। सुलतान हुसेन मिर्जाके समकालीन ६ मन्दि-कवियोंको जोधनी भी इसमें दी गई है। कविजीवनी १४८६ ई०में लिखी गई थी। १४८५ ई०में दौलतशाहका देहान्त हुआ।

दौलतशाह—निजामराज्यका एक शेर। यह हैदराबादसे २८ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। हिन्दू राजाओंके समयमें इसका नाम देवगढ़ या देवगिरि था।

देवगिरि देखो।

दौलिय (स० पु०) दुलियपत्यं ठक् । कच्छप, ककुषा । दौलेश्वरम्—मन्द्राजके गोटावरी जिलेके अन्तर्गत राजमहेन्द्री तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १६° ५७' उ० और देशा० ८१° ४०' पू० राजमहेन्द्रीसे ५ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १०३०४ है। पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दीमें राजमहेन्द्रीके सेतुपति राजाओंके साथ इन्दोराके सुसलमान राजाओंका युद्ध इसी स्थान पर हुआ था। गोटावरीका जल सञ्चय करनेके लिये जो कृत्रिम उपाय अवलम्बित हुआ है वह कल इसी शहरमें स्थापित है। यहाँ पहाड़से पत्थर काट कर बाहर निकाला जाता है।

दौलिन (स० पु०) दुल्लस्य अपत्यं दुल्लम-इज् । इन्द्र । दौवारिक (स० पु०) द्वारि नियुक्तः ठक्, (तत्र नियुक्तः पा ४।४।६८) ततो न वृद्धिः श्री आगमस्य । १ द्वारचक्र, द्वारपाल । इसका संस्कृत पर्याय—हास्य, क्षत्ता, दण्डो, वेतधर, प्रतीहार, प्रतिहार, दर्शक, द्वारी, वेताल, द्वारपालक, दौःसाधिक, वर्त्तरुद्ध, गर्वाट, दण्डपांशुल, हास्यित, वर्त्तरुक और दण्डवासो है।

दौवारिकका लक्षण—उन्नत, सुन्दराकृतिविशिष्ट, कार्यकुशल, अनुदत्तप्रकृति और परचित्तग्राहक इस तरहके मनुष्य प्रतोहार वा द्वारपालके उपयुक्त हैं। नोतिकुशल चाणक्यने दौवारिकका लक्षण इस तरह बतलाया है—जो इशारा और आकार देख कर सभीके मनका भाव, समझ सके और जो बलवान्, प्रियदर्शन, प्रसादशून्य और कार्यदक्ष हो, वे ही प्रतीहारके उपयुक्त हैं। जो अस्त्रशस्त्रकुशल, दृढ़ाङ्ग और आलस्यशून्य हो, वे भी प्रतोहारके योग्य हैं। उपरोक्त लक्षणयुक्त मनुष्योंको द्वाररक्षके कार्यमें नियुक्त करना चाहिये। प्रतीहार देखो। २ एकाग्रोतिपदस्य वासुदेवभेद, एक प्रकारका वासुदेव जिन्हे इक्कासी पाँव हैं। दौवालिक (स० पु०) १ देशभेद, एक देशका नाम । २ दौवालिक देशके राजा और अधिवासी ।

दौर्घ्ये (स० झी०) पुत्रमं चो मीव' अत्र । अमावस्य-
पनाह्नमसि, एक प्रकारका रोम जो अथर्वे ही होता
है । मनुष्ये सिद्धा है, कि जो पुत्र-पत्नी हरण करता है,
उसीको यह रोम होता है ।

दोष (स० सि०) दोषाचरति इति 'दोष इत्यस्य स्थानम्'
एतस्य चार्ति शोभ्या इत्यु ततो पत्य । बाहु द्वारा निष-
रयकारो, जो शैबल दोगो बाहोके पाचारत्ये तीरता या
पार होता हो ।

दोष्कृत (स० सि०) दुष्ट कुलमप्य दुःकुल स्यात् एव ।
दुष्टकुलमुक्त त्रियका कुल प्यराम हो, निन्दित
न स्यात् ।

दोष्कृत्य (स० पु०) दुष्कृत्यजाप्य तत्र भयो वा डम् ।
१ दुःकुलजात, त्रियका अथ निन्दित कुलमें हुआ हो ।
२ पत्नियत् मूल ।

दोष्कृत्य (स० सि०) दुष्कृत्य अन्त्ये स्यात् वा ।
दुष्टकुलमुक्त, निन्दित न स्यात् ।

दोष्कृत्य (स० झी०) दुष्टता, मन्त्र अमावस्य ।
दोष (स० झी०) दुष्टो' पविनीतस्य माय' एव ।
पविनीतस्य दुष्टका व्यवहार ।

दोष्युक्त (स० झी०) दुष्ट-पुत्रवा तस्य भावः कार्ये वा
अत्र । १ दुष्ट पुत्रन अत्राप पादमी । २ दुष्ट पुत्रमका
भावः ।

दोषस्त (स० पु०) दुष्मत्प्रजापत्य विवादिस्वादय ।
दुष्मत् राजाका पत्यय, दुष्मत्का पुत्र मरत ।

दोषन्ति (स० पु०) दुष्मत्प्रजापत्यं दुष्मत् इन् । दुष्मत्
का पत्यय, मरत ।

दोषन्त (स० सि०) दुष्मत्प्रजापत्ये च । दुष्मत् अन्त्ये
श्लोक, दुष्मत्का ।

दोष—राजपूतार्थमें अथपुर राज्यके धर्मार्थ रक्षी नामकी
तक्षशील और निजामतका एक महर । यह पचा-
२६ २७० चौर दिमा ७६ २१००० पक्षित है ।
मौख्यस्य माय ७१७० है । अर्थात् एक समय पम्बरको
राजधानी थी । मावीन हिन्दू मन्दिर दोन पहातिकापेके
मन्दाकिनीय पूर्व पक्षिका परित्यय देते है । १८२८ ई०में
मिथ्याविज्ञानके सिद्धमें विज्ञानो-भावक तातिया तोयेको
प गरीको दो दन विनामे रनी ध्यान विपर रा बा । यहाँ
७००० चौर एक पक्षताल है ।

दोष (स० झी०) दुष्टा शो तस्य भावः पुवादिस्वादय ।
दुष्टा शोका भाव या अत्र ।

दोषिक (स० सि०) दोष चर्चन्ति इन् । निय दोषार्थ,
प्रतिदिन दुर्घनेके योग्य ।

दोषिक (स० पु० श्लो०) दुश्चिन्तयन् विदादिस्वादय ।
१ दुश्चिन्ताका पत्यय, सङ्कोचका सङ्घटा, भातो । धर्मसाध-
नं योग्य और दोषिकमें कुछ भेद नहीं माना गया है,
क्योंकि एक ही व्यक्तिसे पुत्र और अन्त्या अत्यन्त दुर्घ है ।
योगके समान दोषिक भी विद्वदान् पादि द्वारा परलोकमें
बहार कर सकता है । अथवा दोषिक न ही जाय, तत्र
तत्र पिताको अन्त्याके घर भोजन पादि न करना चाहिये,
यदि करे तो वह नरकगामी होता है । दोषिक हो जाने
पर भोजन करनेमें कोई दोष नहीं है ।

दुष्कृत्य शोभित दत्तक हो सकता है, किन्तु ब्राह्मणादि
तोनों वर्ष यदि दोषिकको दत्तक प्रकृष्ट करे, तो विद-
नही होता है । एतद् देवो ।

दोषिक मातामहका धर्माधिकारी हो सकता है,
दुश्चिन्ताके नहीं रहती दोषिक अत्र प्राप्त कर सकता है ।
शयभय देवो । (झी०) २ खड्गदि, तस्यवार पादि । १
तिम् । ३ गन्धवृत्त, मायका यो ।

दोषिक (स० सि०) दोषिकसम्बन्धो ।
दोषिकवत् (स० सि०) दोषिक-विपरीतस्य, मत्पु-मस्य
व । दोषिकमुक्त, त्रिसरे जाती हो ।

दोषिजाप्य (स० पु० श्लो०) दुश्चिन्तयन्तं युवा विदादि
स्वात् पत्यं पक्षि कुनि फल । दुश्चिन्ताका युवा अत्यय ।

दोषद (स० पु०) दोषद, वह रक्ष्या लो पितृको
गर्भको शोभिको दामने होती है ।

दोषदिनो (स० श्लो०) मर्मवतो नारो । मर्मके मरय
श्लोको पयना पोर गर्भका हृदय से कर दो हृदय हो
जाता है, इकोके लिये दोषदिनी कहते है ।

पादिर्दो—एक वैदिक पण्डित । इकोने १२२० अमृत-
में भौतिकमन्त्रो नामक एक ग्रन्थ प्रचयन किया है ।

दाननिराय—हिन्दो सायाके एक कौनो कवि । इकोने
सम्बत् १०८०में अरमविद्याल, एकोमोमभाया तथा एको
अरमभाया नामक तीन ग्रन्थ प्रचयन किये ।

पाणिनि (स० श्लो०) दिवय, दिन ।

धामाक्षमा (स० स्त्री०) द्यौश्च क्षमा च दिवो धावा
 देयः । स्वर्गं और पृथिवी ।
 धाव्यापृथिवी (स० स्त्री०) द्यौश्च पृथिवी च, दिवो धावा-
 देयः । स्वर्गं और पृथिवी । इसका वैदिक पर्याय—स्रध,
 पुरंधी, धिपण, रोदसी, चाणो, अशसो, नभसी, रजसी,
 मदसी, सद्यनो, दृत्वती, दहुल, गभीर, गभौर, ओम्णो,
 चम्ब, पाश्वं, महो, उर्वी, पृथ्वी, अदिति, अही, दूर, अस्ता,
 अणार, अर और पार हैं ।
 धावामूमि (स० स्त्री०) द्यौश्च भूमिश्च, दिवो धावादेयः ।
 स्वर्गं और पृथिवी ।
 द्यु (स० स्त्री०) दिव-उन् किञ्च वा द्योति इति द्यु-
 क्तिप् । १ दिन, राज । २ गगन, आकाश । ३ स्वर्ग । (पु०)
 ४ अग्नि । ५ सूर्यलोक ।
 द्युक (स० पु०) पेषक ।
 द्युकारि (स० पु०) काक, कौवा ।
 द्युक्ष (स० त्रि०) दिवि द्युनि चयति चि निवासे ड । १
 स्वर्गलोकवासी । २ दीप्तियुक्त ।
 द्युक्षवचस (स० त्रि०) स्वर्गीय देवताका नाम उच्चारण ।
 द्युग (स० पु० स्त्री०) द्युनि दिवि आकाशे वा गच्छति
 गम-ड । १ पक्षी, चिड़िया । स्त्रियां जातित्वात् डोप् ।
 (त्रि०) २ आकाशगामिमात्र, आकाशमें विचरण करने-
 वाला ।
 द्युगण (स० पु०) द्युर्णा दिवां वा दिनानां गणः । ग्रहों
 को मध्य गतिके साधक अंग दिन ।
 द्युगत् (स० स्त्री०) द्यु-गम-क्तिप् । शीघ्र, जल्दी ।
 द्युचर (स० त्रि०) दिवि आकाशे चरति चर-ट । १ ग्रह ।
 २ पक्षी ।
 द्युज्या (स० स्त्री०) अहोरात्रहृत्तको व्यासरूप ज्या ।
 द्युत् (स० पु०) द्युस-क्तिप् । १ किरण । (त्रि०) २ द्योत-
 मान, चमकता हुआ ।
 द्युत (स० त्रि०) द्युत क । द्योतमान, प्रकाशवान् ।
 द्युतान (स० त्रि०) द्युत-शानच-वन्दे गणव्यत्ययात् शपो-
 लुक् । द्योतनशील; प्रकाशवान्; चमकीला ।
 द्युति (स० स्त्री०) द्युत-इन् । १ दीप्ति, कान्ति, चमक ।
 २ शोभा, छवि । ३ देहज त कान्ति, देहका लावण्य ।
 ४ रश्मि, किरण । ५ चतुर्थ मनुके समय ऋषि, एक

ऋषिका नाम जो चतुर्थ मनुके समयमें थे । ६ तामस
 सुनिके एक पुत्रका नाम ।
 द्युतिकर (स० पु०) करोतीति क्त-अच् द्युतेः करः । १
 ध्रुव । (त्रि०) २ दीप्तिकारक प्रकार, उत्पन्न करनेवाला ।
 द्युतर (स० पु०) कल्पतरु ।
 द्युतित (स० स्त्री०) द्युत-भावे क्त वाहुलकात् न गुणः ।
 १ दीप्ति, कान्ति, चमक । द्युत कर्त्तरि क्त । (त्रि०) २
 दीप्तियुक्त, प्रकाशवान् ।
 द्युतिधर (स० पु०) द्युतिं देहगतां कान्तिं धारयति
 अन्तर्भूतार्थे धृ-अच् । १ विष्णु । (त्रि०) २ प्रकाश
 या कान्तिको धारण करनेवाला ।
 द्युतिमणि (स० पु०) अकं हृत्, आकका पेंड़, मदार ।
 द्युतिमत् (स० त्रि०) द्युति प्रशंसायां अस्त्वर्थे वा
 मतुप् । १ प्रशस्त कान्तियुक्त, जिसमें चमक वा आभा
 हो । (पु०) २ स्वायम्भुव मनुके एक पुत्रका नाम । ३
 मेरुसावर्णमन्वन्तरमें सप्तर्षिभेद । ४ मददृष्टभेद । ५
 शास्त्रदेशके एक राजाका नाम । ७ प्रियव्रतके पुत्र । इनके
 पिताने इन्हे क्रोचद्वीपका शासन-भार सौंपा था ।
 द्युतिला (स० स्त्री०) द्युतिः लाति ला-क । औषधभेद,
 एक प्रकारकी दवा ।
 द्युष्टुनि (स० स्त्री०) स्वर्गनदी, गङ्गा ।
 द्युन (स० स्त्री०) लग्नसे सप्तमराशि ।
 द्युनिवास (स० पु०) दिवि द्युनि वा निवासो यस्य ।
 देवता ।
 द्युनिश (स० स्त्री०) द्यु च निशा च-तयोः समाहारः ।
 अहोरात्र, दिन रात ।
 द्युनिवासिन् (स० पु०) द्युनि स्वर्गं निवसतीति-वस-
 णिनि । देवता ।
 द्युपति (स० पु०) द्युनो दिनस्य पतिः । १ दिनपति,
 सूर्य । द्युनो स्वर्गस्य पतिः । २ इन्द्र ।
 द्युपथ (स० पु०) द्युनो पथा इ-तत् । आकाशपथ, स्वर्ग-
 मार्ग ।
 द्युमणि (स० पु०) द्युनो गगनस्य मणिरिव । १ सूर्य । २
 अकं हृत्, आकका पेंड़ । ३ परिशोधित ताम्र, शोभा हुआ
 तांबा ।
 द्युमत् (स० त्रि०) द्योः कान्तरस्वास्ति दिव-मतुप् दिव
 चत्वं । कान्तियुक्त, चमकदार ।

य मर्येन (स० पु०) शास्त्रदिगके एक राजा । इनके मुखका नाम मखवान् था । दैवदुर्विपाक्ये ये जेजुकीन श्री मर्ये थे, उच समय मखवान् गया था । इस समय सभोंने मङ्गल्य करके इनके राज्यच्युत कर दिया । इस पर ये अपनी छोटी और सखवान्को ले कर मनवायो श्री मर्ये ।

मखवान् धनस्यधर्मा श्री कर पितामाताकी सेवा करने लगे । एक समय मर्येदेगके राजा अश्वपति बनमें इनके धर्मोप गये और अपनी सङ्गकी सावित्रीका विवाह करीने सखवान्के साथ कर दिया । इनकी प्रकार कुछ दिन बीत गये । सखवान्की पानु श्रीरि श्रीरि करने लगे । सावित्रीके समक्षमें सखवान्काटी मलय उनको प्रायश्चातु लड़ गई । सावित्रीने अपने पातिप्रस्थे धर्मको विमोहित कर दिया और उन्हें साधारण जो कर कर देना पड़ा । उनके बरक प्रभावसे द्युमखोन्के मीन और राज्य पल्ट धरते तथा सखवान्में भी जोबन काम किया । सावित्री कीर मखवान् देखी । द्युमखोन् राज्य पा कर मन्तानको तरक प्रजाका पावन करने लगे ।

एक समय राजा द्युमखोन् मङ्गल्येय्य म्यत्रिका कर कर करमें उताह हुए थे, तब सखवान्नी कहा था, 'तात । इनके कर करना पापका कर्त्तव्य नहीं है । धर्म अभी धर्म और धर्म अभी धर्म ही लक्षता है । किन्तु अब हमें धर्मपदवाच्य नहीं की मक्षता । इस पर द्युमखोन्ने कहा 'बस । यदि तुम मङ्गल्ये धर्मका धर्म कहते हो, तो हस्तु किञ्च प्रकार माहित होया ? सुतरां पुत्रका दमन अब तक नहीं होया, तब तक किम प्रकार हीनवासा निर्वाह होगी ? मखवान्ने कहा 'दिया, 'पित' । अरिप वैश्व और गुरु इन तीन वर्षिका श्री शास्त्रोके पद्येन करना उचित है । इन लोगोंके धर्म पायने पावक होनेसे ही लक्ष्मणादि लभे धर्माचरन्ने मङ्गल्य की जायगी । त्रिनके किमोका दिव्यमय न हो, लक्षी प्रकारका माहन पावक है । दिग दण्ड अभी नहीं होना चाहिये किञ्च दिव्य विनाय जो । मखान्, मल्लक मुक्तन आदि हाथ हस्त देना निदिह है और उन्हें सत्य पर लानेका विटा करना उचित है । यह सुन कर द्युमखोन्ने कहा था, 'इस प्रकारका माहन कथादिभुगु

सिधे था, पात्रकल इच प्रकारके हस्तुके द्युमशासित नहीं की लक्षता । फिर सखवान्नी कहा 'पित । यदि पाप विना हि ना किञ्च द्युमकुकी पद्येन नहीं कर सकने, तो नरनिधय हाथ उन्हें स हाथ कोसिये । अब देना जाता है, कि विमहा कर किया गया, धर्मका कोरि उच कर नहीं हुआ था कि इनके बाद भी तुम लभोके सेवा दूररा दीयी देखनेमें जाता है, तब मेरे कामसे मारो पपदाव करनेवाले होयोको पात्रोवन साधारण करके इनके मनके अनुपितमावकी दूर करनेकी विटा करना ही उचित है ।' द्युमखोन्ने कुछ दिन राज्य करके सखवान्के लपर राज्यभार को पयो मैवाके पाव पाव-प्रक्य पकलम्बन किया । (मारन आदि, शक्ति, वन्य)

द्युमदुगान (स० क्री०) साममाननेह, एक प्रकारका सामगान ।

द्युमयो (स० लो०) विर्यधर्माको कथा, लुईपकी ।
 द्युम्य (स० क्री०) द्युमनि मरति पम्पमल्लर्त्त व्याक ।
 १ मन । २ मन । ३ सुह । ४ पय ।

द्युमोक्ष (स० पु०) खीरेन मोक्ष दिन उल । स्वर्ग लोका । वैदिक पद्योमें द्युमोक्षकी तीन अर्थाएँ कही गई हैं, पशुकी उदन्तो, दूधो पोतुमनि और तोषरी प्रयो है । इनो तीन अर्थोंको लाक, स्वर्ग और विर्यकोक कहते हैं । उदन्तो अर्थामें चन्द्रमा है, पोतुमतो अर्थामें लुप है और तोमरो अर्थामें धनिक लोका लोकातर है । इन लोकोमें जाना ही पश्यनेवादि बड़े बड़े पद्योका फल होता है ।

द्युमन् (स० पु०) द्योति द्यु-उमिन् (धनेन सु इपीति ।
 मन १।१०६) १ लुप । २ मग ।

द्युमद (स० पु०) दिशि स्वर्गे छोदतीति द्यद द्विप ।
 इन्दुसि बल कोङ्कुपल । १ देव, देवता । २ मक्षन ।
 ३ पय ।

द्युमदगन् (स० पु०) यः नद्य वस्य । अय ।
 द्युमरन् (स० क्री०) अर्थाके अदविद्येन, स्वर्गके एक अन्त्यायका नाम ।

द्युमरित् (स० क्री०) स्वर्गकी मन्दाकिनी ।
 द्युसिन्धु (स० लो०) मन्दाकिनी ।

समय वसुगण अपने अपने श्रियंकिं साथ क्रीडा करते हुए वशिष्ठ ऋषिके आश्रममें पहुँचे और स्त्रीके कहनेमें यो नन्दिनीगायको चुरा ले गये । वशिष्ठकी जय यह हाल मान्नुम हुआ, तब उन्होंने शाप दिया जिससे उन्होंने पृथ्वी पर भीषक रूपमें जन्म ग्रहण किया । भीष्म देवी ।

(देवीभागवत २।३ स्कन्ध, भारत १।६८ अ०)

महाभारतमें इसका नाम 'यु' वतनाया है ।

योकार (सं० त्रि०) योतुत्यान् प्रासादादीन् करोति क्-अण् । प्रासादादिकर गित्पिमेड, वह कारीगर जो प्रासादादि बनानेका काम करता हो, राजगीर ।

योन (सं० पु०) युत् भावे घञ् । १ प्रकाश । २ आतप, धूप ।

योन (सं० स्त्री०) यत् शीलार्थे युच् । १ योतन शील, प्रकाशमान । (स्त्री०) युत् भावे ल्युट् । २ दर्शन । ३ प्रकाशन । (पु०) युत्-युच् । ४ दीप, टीया । ५ दिग्दर्शन, दिग्दानिका काम ।

योनित् (सं० त्रि०) युत्-णिच्-अनि । प्रकाशक, जिससे प्रकाश हो ।

योतित (सं० त्रि०) प्रकाशित ।

योतिरिङ्गण (सं० पु०) ज्योतिरिङ्गण ष्योदरादित्वात् साधुः । य्-योत, जुगन् ।

यभूमि (सं० पु०) योगाकाशं भूमिरिव यस्य । १ पत्नी, चिह्निया । (स्त्री०) योश्च भूमिश्च । २ स्वर्ग और पृथिवी ।

योपट् (सं० पु०) यवि स्त्रगे सीदतीति सट-क्लिप् । देवता, स्वर्ग वासी ।

योत्र (सं० क्लो०) दिव्यत्वात्प्रविति दिव-द्रन् (दिवैर्धृष । षण् ४।१६०) यद्वादेगः ततो हृद्विश्च । १ ज्योतिः-पदार्थ, समकोली वस्तु । २ बीज ।

योर्लोक (सं० पु०) योरेव लोकः योलोकः ष्योदरादित्वात् साधुः । यूलोक, स्वर्ग ।

द्रगड् (सं० पु०) द्रेति गड्दति गड्-अच् । वायव्यधिप, एक बाजा, दगडा । इसका पर्याय प्रतिपत्सूर्य है ।

द्रङ्गण (सं० क्लो०) द्राङ्गत्वनेनेति, द्राङ्ग-आकाशायां ल्युट्, ष्योदरादित्वात् ङ्खः । तोनक, ताला । इसका पर्याय—कोल, वटक और कर्पाई है ।

द्रङ्ग (सं० पु०) पुरोमिड, वह नगर जो पत्तनसे बड़ा और ऊँचे रमे छोटा हो ।

द्रट्टिमन् (सं० पु०) दृट्टस्य भावः दृट्ट इमनिच् (ष्यञ्-दिभ्य इमनिज् वा । पा ५।१।१२२) ततो ऋकारस्य रकारः । दृट्टता, मज्जवृत्ती ।

द्रट्टिष्ठ (सं० त्रि०) अयमनयोरेयां वा अतिगयेन् दृट्टः इति इष्टन् । अतिशय दृट्ट, बहुत मज्जवृत्त ।

द्रघस (सं० क्लो०) परिच्छेद, पोशाक ।

द्रष्म (सं० क्लो०) दृषति कफोऽनेन दृषं षाद् कम्-ऋतो रः । १ वह पदार्थ जो गाढ़ा न हो । २ तक्र, मट्टा । ३ रस । ४ शुक । (त्रि०) ५ द्रुतगतिशुक, तेज चलने वाला ।

द्रस्मा (सं० क्लो०) दृष्यत्वनेनेति 'दृष अघ्राटयश्च' इति निपातनात् साधुः । १ वह पदार्थ जो गाढ़ा न हो । २ शुक । ३ रस । ४ तक्र, मट्टा, छाँड । (त्रि०) ५ द्रुत-गमनशील, तेज चलनेवाला । ६ द्रुतहननशील, बहुत जल्द मारने योग्य ।

द्रमिन् (सं० पु०) देगभेद, एक देशका नाम ।

तामिळ देवी ।

द्रम् (सं० पु०) लीनावत्युक्त पोहयपण मूलकी मुद्रा, सोनह पण मूलकी एक मुद्रा ।

द्रव (सं० पु०) द्रु-अप । १ द्रवण । २ पलायन, डौड़ । ३ परोहाम, हँसो । ४ गति । ५ चरण, बहाव । ६ आसव । ७ वेग । ८ रस । ९ द्रवत्व । (त्रि०) १० आर्द्र, गोला । ११ तरल, पानीकी तरङ्ग पतला । १२ पिघला हुआ ।

द्रवक (सं० त्रि०) द्रु शीनार्थे ष्युल । १ पलायनशील, भागनेवाला, भगेट्ट । २ चरणशील, वहनेवाला ।

द्रवज (सं० पु०) द्रवाज्जायते जन-ञ् । १ गुड । २ द्रव-जात वस्तुमात्र, वह वस्तु जो रससे बनाई जाय ।

द्रवण (सं० क्लो०) द्रु-भावे ल्युट् । १ गमन, गति, डौड़ । २ चरण, बहाव । ३ अतुताप, गर्मी । ४ पिघलने या पसीजनेकी क्रिया । ५ हृदय पर करुणापूर्ण प्रभाव पहुँचानेका भाव, चित्तके कोमल होनेकी वृत्ति ।

द्रवत् (सं० त्रि०) द्रु शब्द । १ चरणशुक, वहनेवाला । (क्लो०) २ शीघ्र, जल्दी ।

वृषपत्री (सं० स्त्री०) वृश्पत्रं दस्थाः गौरादित्वा

द्रोपु । इत्यभियेय, एक प्रकारका पात्र । जोम कर्णों कर्णों
रहे संयोगो कहते हैं । यह पौषपक्षे काममें पाता है ।

द्रवत्व (स० श्लो०) द्रवत्व भावा द्रवत्व । व्यापोक स पा
वक्ष्युवसेक, पानोको तरह पतना होनाका भाव ।

द्रव्य दो भेद हैं—सामिदिक पर्याप्त कामाविष्ये और
नैमित्तिक पर्याप्त जो कारकोव उत्पन्न हो ।

मौलीका मत है कि व्यामाविष्ये वा सामिदिक द्रवत्व केवल प्रथम
के पौर द्रव्योमें नैमित्तिक द्रवत्व है जो पश्चिमे म योग
के पा जाता है । सामिदिक विदातके मतामुसार द्रवत्व

द्रव्यका एक रूप या लक्षण है । पक्षका मत है । इसका
कोई धान वाकार नहीं है, किन्तु जिय वस्तुके आधारमें
बद रहता है उभोके पाकारका बद हो जाता है । जिन

तरह पानो अब बोलनमें भर टिया जाता है, तब बोलन-
के पाकारका पौर अब कटोरे लोटे आदिमें रहता है,
तब उन्को पात्रीके पाकारका होता है । द्रवत्व पौर विमुक्त-
में केवल भेद रहता हो है कि द्रव्यपदाके परिमित पन

कायको चेरता है पौर विमुपदाके पूरे पनकायमें ध्यात
रहता है । (श्लो०) इत्ये मथि तन टापु । द्रवता, बहना,
उत्पना ।

द्रवदत्व (स० श्लो०) द्रवतीति द्रव इत्ये कर्मधा० । १
द्रव्य, दधि, पाण्य तक्ष, पाचक, जल पौर तैलादि द्रव
पदाव । २ दैहिक मृदादि ।

द्रवतो (स० श्लो०) द्रवतीति द्रु-यत् ङीप् । १ एक लटो ।
२ मूषिकपर्षो, मूषाकाशी । इसका पयाप—यशरो,
विदा, पनकेधा, पापुर्वाकेधा, मूषिकपर्षो प्रतिगर्भ
गिधा, नक्षत्रमूली पौर विदाका है । इसका गुण—मद्धर,
गतिन रहस्यकारक ऊवर, क्षमि, मूलनायक पौर
वकावक है ।

द्रवरच (स० श्लो०) द्रववृको रको यत् । आर्द्रैम मोला
वृक्ष ।

द्रवरना (स० श्लो०) नावा, लाप लाव ।

द्रवाकार (स० पु०) द्रवाका द्रवाका पावा । १ पुपुञ्ज,
च जनि, पुञ्ज । २ द्रवद्रव्याद्यापत, तरलपदाके रचने
का धरतन ।

द्रवाय (स० श्लो०) द्रु पाय । धूमिदीन बमकोला ।

द्रवि (स० श्लो०) द्रावयति पनतुं तप्यते द्रु-वन्,
कर्णादि द्रावक, मोला आदि मवानिहाका ।

द्रविङ् (स० पु०) १ स्वनामध्यात देवभेद । दक्षिण भारतका
एक देव जो लङ्कोमाक दक्षिण पूर्विय पायगके बिनारे
रामियर तक विस्तृत है । तेजा रात्रा जोऽमि जनोऽप्य
वा पच । २ द्रविण देयके राजा । ३ विदादिद्रव्यके द्रविङ्
देयवाको ।

मनुने द्रविङ्को सबकां पानेके कल्पे वाच्ये पत्रियो
को स तति कडा है, यदा—मद्र, मद्र, निष्कृति, मद्र,
वरच यम पौर द्रविङ् । महाभारतमें भी लिखा है कि
परशुरामके मन्त्रके वृत्तमें पत्रिय दूर दूरके पहाड़ों पौर
ज गर्भमें भाग गये वहां भी वे काके मारे विदिच्छावका
पनुष्ठान नहीं कर मारी है, इस कारण पत्रिय काम
ब्राह्मणोंके पदार्थ आदिके कारण भूल मये पौर उप-
पत्नको प्राप्त हो मये । वे भी द्रविङ्, पामोर, यवर, पुवङ्
आदि हुए । वहुतु पकोपुङ् । ३ ब्राह्मणभेद, रसके
पनार्थक पंच ब्राह्मण हैं—पामि, कर्णाटक गुजरा,
त्रुविङ् पौर महाप्राङ् ।

द्रविङ् (स० श्लो०) द्रविङ् वीरादित्यात् ङीव । रामिची-
विमिष, एक रामिचीका भाग ।

द्रविच (स० श्लो०) द्रवति मच्छति द्रुयते प्रायाने वेति
द्रु-वन्त् (द्रु-वन्त्प्रायामिव, वन १।१०) । १ वन ।
२ काचन, मोला । ३ वन । ४ पनाक्षय । (पु०) ५ पुञ्ज
गजाके एक पुञ्जका नाम । ६ दूरनामक वस्तुके एक पुञ्ज-
का नाम ७ कुयरीपक्षित वीमान्त निरिभेद कुयरीप-
का एक वीमान्पक्षित । ८ लोकोपेय्य एक लव,
लोकोपेयके पनार्थक एक लव ।

द्रविचक (स० पु०) वहुवृत्त, पत्रिकी एक श्लोका नाम ।

द्रविचनायन (स० श्लो०) द्रविच नाययति नायि-कनुट ।
पोमापन्न, बहव्रतका पिङ् । बह वानिके वन नाम होता
है इकोके इसका नाम ऐसा पड़ा है ।

द्रविचपद (स० श्लो०) द्रविच प्रवदानि प्र-दा क । १ वन
दावक, वन देनवाला । (पु०) २ विष्णु । ये पत्रिक-
नित्यन देन हैं इपाने रनका भाग द्रविचपद हुआ है ।

द्रविचपु (स० श्लो०) द्रविचमिच्छति आनयायां कर्त्वि
वृक्ष-द्रविचमिति तता भावे हिप-पानो कोपि को द्रुने
न आनिवद्वरति इति यमोऽय । चनेच्छा त्रिचने इच्छा
वन पानेको हो ।

द्रविणस्यु (सं० त्रि०) द्रविणं आत्मनो लालसया इच्छति, अथि सुक-द्रविणस्य उण् । लालसापूर्वक धनक्रामो । द्रविणोदस (सं० त्रि०) १ धनदाता । (पु०) २ अग्नि । वराहपुराणमें लिखा है, कि जो बल और धनप्रदान करते हैं, उन्हींका नाम द्रविणोदा है ।

अध्वर और यज्ञसमूहमें धनार्थी ऋत्विक्, हाथमें पत्थर ले कर द्रविणोदा देवकी स्तुति इस प्रकार करते हैं—हे द्रविणोदा । संसारमें जितने धन हैं, वे हमें दे । हम लोग उस धनको यज्ञकी लिये ग्रहण करेंगे ।

द्रविणोविट् (सं० त्रि०) जो धन और बल देते हैं ।

द्रविणोदस् देखो ।

द्रविह (सं० त्रि०) द्रु-शब्द । गतिशील, चलनेवाला ।

द्रवित्सु (सं० त्रि०) द्रु-गतौ इत्सुच् । गतिशील, चलने-वाला ।

द्रवोकरण (सं० क्री०) अद्रवस्य द्रवकरणं इति चि प्रत्ययेन साध्यं । गलानेकी क्रिया ।

द्रवोक्त (सं० त्रि०) अद्रवस्य द्रवोक्तं । जो गलाया गया हो ।

द्रवीभाव (सं० पु०) अद्रवस्य द्रवभावः । गलनेका भाव ।

द्रवीभूत (सं० त्रि०) १ जो द्रव हो गया हो, जो पानीकी तरह पतला हो गया हो । २ पिचला हुआ, गला हुआ । ३ दयालु, दयालु, पमोजा हुआ ।

द्रव्य (सं० क्री०) द्रौरिव द्रु-यत् प्रत्ययेन निपातनात् साधुः (द्रव्यञ्च भव्ये । पा ५।३।१०४) १ वस्तु, चीज । २ पिचल, पोतल । ३ वित्त, धन । ४ पृथिव्यादि नव पदार्थ । ५ विलेपन । ६ भेषज, भोषण, दवा । ७ द्रुमविकार । ८ द्रुमसम्बन्धी । ९ जल, ताड़ । १० विनय । ११ मद्य, शराव ।

द्रव्यके लक्षण भाषापरिपट्टमें इस प्रकार लिखे हैं—चित्ति, अप, तेज, मरुत्, व्योम, काल, दिक्, देही और मन इन नवोंका नाम द्रव्य है । केवल नाम वत लानेसे इसका कुछ भी पता नहीं चलता । न्यायदर्शनमें इस विषयकी विशेषरूपसे आलोचना की गई है ।

विशेष विवरण तत्तत् शब्दमें देखो ।

चित्ति द्रव्य ही गिनतीमें पहला है । इसके अनेक लक्षण हैं, जैसे-गन्धवत्त्व, नानाजातीय रूपवत्त्व, पद-विध

रसवत्त्व और वाकजम्पगवत्त्व । पृथ्वीके सिवा और किसी पदार्थमें गन्ध नहीं है, इसलिये गन्धवतो कहतेसे पृथ्वीकी बोध होता है । सुगन्ध और दुर्गन्ध प्रादि जितने प्रकारका गन्ध है, वे सभी पृथ्वीमें ही हैं, दूसरे पदार्थमें नहीं ।

रूपवत्त्व नानाजातीय रूप, चित्तिके सिवा और किसीमें नहीं है । इसीसे नाना जातीय रूपवत्त्व पृथ्वीका लक्षण है । जन और तेजमें जो रूप हैं, दृष्ट भेद है ।

रसवत्त्व—छः प्रकारके रस केवल पार्थिव पदार्थमें ही विद्यमान हैं, इसीसे यह विध रसवत्त्व चित्तिके लक्षण है । जलका स्वाभाविक रस मोठा, कसैला और खारा है । रस पार्थिवोंके योगमें उपपन्न होता है ।

पाकज स्पर्शवत्त्व—पाकजस्पर्श चित्तिके सिवा और किसीमें नहीं है, इसीसे पाकजस्पर्शवत्त्व पृथ्वीका लक्षण है ।

चित्तिके चौदह प्रकारके गुण हैं—रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, वेग अर्थात् संस्कारविशेष, गुरुत्व और नैमित्तिक द्रवत्व । इनमेंसे रूप, रस, गन्ध और स्पर्श ये चार विशेष गुण हैं ।

चित्ति दो प्रकारको है, नित्य और अनित्य । पार्थिव परमाणु नित्य है । अनित्य पृथ्वी तोन प्रकारसे विभक्त की जा सकती है—देह, इन्द्रिय और विषय । पार्थिव देह चार प्रकारको है—जरायुज, शण्डज, स्वदज और उद्भिज्ज । प्राणैन्द्रिय ही पार्थिवेन्द्रिय है । जिस इन्द्रिय द्वारा गन्धका अनुभव होता है वही प्राणैन्द्रिय है । जो न तो देह है और न इन्द्रिय ही है, अथवा पृथ्वी वही विषय है । स्थूलतः इसे भोग्य पृथिवी भी कह सकते ।

अप-द्रव्य गणनामें दूसरा है । जलके भी अनेक लक्षण देखे जाते हैं, जैसे-शुक्लरूपत्व, मधुररसत्व, शीतल-स्पर्शवत्त्व । स्रष्टवत्त्व और सांघिक द्रवत्व ।

जलमें शुक्लरूपके सिवा और किसी प्रकारका रूप नहीं है । पृथिवीमें अनेक प्रकारके रूप हैं । जलमें और कोई रस नहीं है, केवल मधुर रस है । मधुर रसमात्र विशिष्ट कहनेसे जलका ही बोध होता है, इसीसे मधुर-रसमात्रवत्त्व जलका लक्षण है ।

स्रष्टवत्त्व—स्रष्ट मसृणता है, मसृणता जलकी

सुख है, जो कि सोमि भी नहीं है। सुत तंसादिमि जो
जो है, वह भी तलवे परमायत है और जलोपायका
गुण है। इसीसे स्निग्धविशिष्ट कहनेसे कष्टका शोच होता
है अतएव जो इवज्ज अलका लक्षण है।

सांख्यिक द्रव्यपर्याय सामाजिक तरलता। सामा
जिक तरलता जलके सिवा और जिसेमि भी नहीं है।
इसीसे सांख्यिक द्रव्यवत्त कष्टका लक्षण है। अन्तर्
कूल (३) गुण हैं, जैसे रूप, रस, कार्य, संख्या, परिमाण,
द्रव्यत्व, स योग, विभाग, परत्व, अपरत्व, वेग, शुचत्व,
सांख्यिक द्रव्य और जोड़। इनमेंसे रूप, रस, कार्य,
सांख्यिक द्रव्य और जोड़ ये पांच विषय सुख हैं।
अब दो प्रकारका है, निम्न और अग्नित्व। अक्षीय पर
माह निम्न है, अपर समुदाय अल जो अग्नित्व है। इसी
अक्षीय परमाहसे अनेक बड़ी बड़ी अलनिश्चितोंकी खडि
हुई है। हिमाक्षयकी अवलम्बय तुषारादिमि जो इसी
परमाहसे लक्षण हुई है। कूल अलके सभी गुण लक्ष्योय
परमाहमें है, किंतु ये ही नहीं, इसमें क्रिया भी है।

अग्नित्व अक्षीयमें ही है, अग्नित्व अब भी तीन
प्रकारका है—दिह, अग्नित्व और विषय। अक्षीय देख सभी
निम्न है, अक्षीय देख अक्षीयकोसाधियोंकी है। समे-
न्द्रिय जो अक्षीय अग्नित्व है, किध अग्नित्वसे रसाकादन
क्रिया जाता है, अक्षीय अग्नित्व है। जो देख भी नहीं
है, अग्नित्व भी नहीं है, किंतु अल है, अक्षीय विषयान्तर
अब है। अतः इसे मोम अक्षीय अक्षीय लक्षीय। हिम
अक्षीय से कर महासमुद्र तक सभी विषय हैं।

तीज द्रव्यवत्तमि तीक्ष्ण है। इसका लक्षण लक्ष,
कार्यवत्त भाकरद्रव्यवत्त और नैमित्तिकद्रव्यवत्त
है। जिसमें लक्षणवत्त है, भाकरद्रव्यवत्त है और
नैमित्तिक द्रव्य है, इसीका नाम तीज है। तीजमें और
कीर्त कार्य नहीं है, किंतु लक्षणवत्त है अक्षीय और
सुयक्षित्व इसका लक्षण है। लक्षणवत्त और जिसेमि
नहीं है, किंतु तीजमें है, लक्षणवत्त विशिष्ट कहनेसे
किंतु तीजका ही शोच होता है। इसलिये लक्षणवत्त
तीजका लक्षण है। तीजमें और कीर्त रूप नहीं है, किंतु
भाकरद्रव्यवत्त है, औरसादि इससे उदाहरण है।
भाकरद्रव्यवत्त मो तीजसे सिवा और जिसेमि भी नहीं

है। अतः भाकरद्रव्यवत्त कहनेसे तीज जो मममा जाता
है। इसीसे मासाद्यद्रव्यवत्त तीजका लक्षण है।

तीजमें सामाजिक द्रव्य नहीं है किन्तु नैमित्तिक
द्रव्य है; सुवर्णादि इससे उदाहरण है। अतः नैमि-
त्तिकद्रव्यविशिष्ट कहनेसे तीजका शोच होता है।
नैमित्तिकद्रव्यका अर्थ अक्षीयको साहाय्यसम्पन्न
तरलता है। अक्षीयको अक्षीय सुवर्णादि सिवा अक्षीय
अल जाता है, किन्तु यह अक्षीय तरल सामाजिक तरल
नहीं है। इसलिये नैमित्तिक द्रव्यवत्त तीजका
लक्षण है।

तीजमें कूल सिवा कर ११ गुण हैं जैसे—रूप, संख्या,
परिमाण, द्रव्यत्व व योग, विभाग, परत्व, अपरत्व, रूप,
द्रव्यत्व और वेग। अक्षीय सक्षार। इनमेंसे कार्य और रूप
ये दोनों विषय गुण हैं। तीज, दो प्रकारका है, निम्न और
अग्नित्व। तीज परमाह निम्न तीज है और दूसरा दूसरा
तीज जो अग्नित्व है। अक्षीयमें बड़ा सुयक्षित्व, सेबकी
अक्षीयवत्त और सुवर्ण कीर्तसादि तीज परमाहसे
लक्षण रूप है। अक्षीय तीज सभी गुण और सभी क्रियासे
परमाहमें अक्षीयमान हैं। अग्नित्व अक्षीयमें ही है,
अग्नित्व तीज भी तीन प्रकारका है—दिह, अग्नित्व और
विषय। तीज देख सभी अक्षीय है जो अक्षीय अक्षीयोंकी मानो
जाता है। अक्षीय अक्षीय जो तीज अक्षीय है। जो देख
नहीं है, अग्नित्व भी नहीं है, किंतु तीज है अक्षीय विषय
अक्षीय तीज है। अग्नित्व, सुवर्ण, सुवर्ण से सब विषय हैं।

वातु—द्रव्यवत्तमि शोचो है। वातुका लक्षण एव
वा दो सुक्षीयकोकारका अक्षीय है। वातुका अक्षीय
लक्षण अक्षीयवातुवा-शोचकार्यवत्त है, सुवर्ण लक्षण
लक्षण अक्षीयवत्त है। वातुमें रूप नहीं है, रस नहीं,
है, गन्ध नहीं है, कार्य अक्षीय है किन्तु यह कार्य एव
प्रकारका नहीं अक्षीय प्रकारका है, अतः—अक्षीयवत्त,
अक्षीयवत्त, वायव्यवत्त और शोचकार्यवत्त।
अक्षीय वातुके से पांच प्रकार अक्षीयवत्त किन्ते जा सकते
हैं। अक्षीय, अक्षीय और वायव्यवत्त परस्पर विद्वह है
तथा अक्षीयवत्त भी परस्पर विद्वह है। किन्तु इनमेंसे
अक्षीय अक्षीय वातुमें अक्षीयमान है ? अक्षीय अक्षीय
अक्षीयवत्त वातुमें अक्षीयमान है। इस वायव्यवत्त की

स्य लसंज्ञाको वाष्पस्पर्ग कहा गया है। स्पर्गके विषयमें विश्वनाथने कहा है—

“अनुष्णा शीतशीतोष्णमेदात् स त्रिविधो मतः ।” (भाषापर)

स्पर्ग तीन प्रकारका है, अनुष्णाशीत, शीतल और उष्ण। कठिन और कोमलस्पर्ग पृथ्वीमें है, कठिन और कोमलस्पर्गमें भी अनुष्णाशीतस्पर्गके अन्तर्गत है। पृथ्वीमें जो अनुष्णाशीतस्पर्ग है, उसोका नामान्तर कठिनस्पर्ग और कोमलस्पर्ग है। एक और प्रकारका अनुष्णाशीतस्पर्ग वायुमें है। हमने इस अनुष्णाशीत स्पर्गका पृथक् भावसे उल्लेख न कर उसकी जगह कठिनस्पर्ग, कोमलस्पर्ग और वाष्पस्पर्ग इन तीन प्रकारके स्पर्गोंका उल्लेख किया है। वायुका अनुष्णाशीतस्पर्ग ही वाष्पस्पर्ग है। यह अपाकज है—अनुष्णाशीतस्पर्ग वायुमें है, ‘अपाकजानुष्णाशीत स्पर्गवान्’ कहनेसे ही वायुका बोध होता है। इसीसे अपाकजानुष्णाशीतस्पर्गवत्त्व वायुका लक्षण है। तिर्यक्, गमन वायुमें है। तिर्यक् गमनका अर्थ वक्रगति है, वायुमें न तो शरत् गति, न ऊर्ध्वगति और न अधोगति ही है। वायुकी गति केवल वक्र है। इसीसे तिर्यक् गमनवान् कहनेसे वायुका ज्ञान होता है।

प्राचीन मतानुसार कोई कोई पण्डित कहते हैं, कि वायुका दूसरा लक्षण ‘स्पर्शानुमेयत्व’ है; स्पर्श आदि द्वारा जिसका अनुमान होता है, वही स्पर्शादि अनुमेय है। अतएव स्पर्शानुमेयत्व वायुका लक्षण है। वायुमें ८ गुण हैं जैसे—स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व और वेगारख्यसंस्कार। इनमेंसे केवल स्पर्श ही विशेष गुण है। वायु दो प्रकारकी है, नित्य और अनित्य। वायुवीय परमाणु नित्यवायु है, इसके सिवा और सभी वायु अनित्य हैं। यावापृथ्वी परिव्यापक वायु इसी वायुवीय परमाणुसे उत्पन्न हुई है। स्थूलवायुके सभी गुण वायुवीय परमाणुमें वत्त मान है। अनित्य पृथिव्यादिके जैसा अनित्यवायु तीन प्रकारको है, देह, इन्द्रिय और विषय। वायुवीय-देह अयोनिज है, यह देह प्रेतपियाचादिकी है। त्वगिन्द्रिय ही वायुवीय इन्द्रिय है। जो देह भी नहीं है, इन्द्रिय भी नहीं है, अथवा वायु है, वही विषयात्मक वायु है। इसके ४८ भेद माने गये हैं।

आकाश द्रव्यगणनामें पांचवा है। आकाश से कर नव्य और प्राचीन दोनों प्रकारके दार्शनिक सम्प्रदायोंमें विवाद चला आ रहा है, यहाँ पर उसका उल्लेख करना निष्प्रयोजन है। नैयायिकोंके मतानुसार आकाशके अवयव नहीं है, अथवा सर्वव्यापक है, आकार नहीं है, अथवा गुणवान् है। इसी आकाशके साथ ब्रह्मका सादृश्य देखा जाता है। आकाश अनन्त, अपरिसीम, अनादि और अव्यय है। जितने प्रकारके मूर्त्तद्रव्य हैं मभोमें आकाश संयुक्त है। मूर्त्तका अर्थ किमोका परिमाण स्थिर करना है। पृथिवी, जन, तेज, वायु, इन सब भूतोंको अपेक्षा जो विराट्, तथा विश्वव्यापक है, जो पृथ्वी, तेज तथा जनके भीतर बाहर है और जो वायुके सर्वत्र श्रोतश्रोतभावमें अवस्थित है वह नित्य, निर्विकार, निराकार, निर्लेप, परम महत् पदार्थके लक्षण इतलाये गये हैं, यही महत् पदार्थ आकाश है।

आकाशके लक्षण—‘शब्दाश्रयत्व आकाशत्व’। जो शब्दका आश्रय है वह आकाश है। शब्दका आश्रय और कोई नहीं है, केवल आकाश है। शब्द और किसी द्रव्यमें नहीं रहता, केवल आकाशमें ही रहता है। आकाशके कई एक गुण हैं—संख्या, परिमाण, पृथक्, संयोग, विभाग और शब्द। आकाश नित्य द्रव्य है, आकाशका विशेष गुण मात्र शब्द है। आकाश नित्य द्रव्य है, आकाशके अवयव नहीं है और देहादिके भी विभाग नहीं है। आकाश स्वरूप इन्द्रिय है। इस इन्द्रियका नाम कर्ण है।

काल द्रव्य गणनामें छठा है। नैयायिकके मतसे कालके विषयकी पर्यालोचना नहीं की जा सकती। कामकी कोई अपनी आंखों से देख नहीं सकता, न कोई स्पर्श करके उसका अस्तित्व समझ सकता, और न कोई प्रमाण से कर उसकी सत्ता ही पा सकता है। फिर कालको जौन नहीं जानता ? कालका आस्वाद ले कर कोई कभी उसको मधुर रसनासे परितृप्त नहीं हो सकता, मधुर शब्दके जैसा कर्ण भर कर कोई कभी कालामृत पान नहीं कर सकता, तो भी कालकी कथा, कालको सत्ता सर्वोके प्राणमें ग्रथित है। जनकत्व ही कालका लक्षण, काल जन्य मात्रका ही जनक

आय्य ने कर नहीं रह सकती। द्रव्यसे ही द्रव्य परिपाक होता है लेकिन रस उस प्रकार नहीं होता। इन्होंने सब कारणोंसे द्रव्य ही प्रधान है। रस, वीर्य और पाक उसका आय्य किये हुए हैं।

द्रव्यका विशेष विज्ञान—पृथ्वी, जल, तेज और वायु इन सबके मिलनेसे द्रव्य उत्पन्न होता है। इनमेंसे जिस भूतको अधिकता रहती है, वह उसी नामसे पुकारा जाता है। जैसे—पृथिवी भागको अधिकतासे पार्थिव, अप् भागकी अधिकतासे आप्य और उसी तरह तैजस, वायव्य और आकाशीय ऋच कर द्रव्यके नाम दिये जाते हैं। इनमेंसे जो सब द्रव्य स्थूलसारविशिष्ट मान्द्र, मन्द, स्थिर, गुरु, कठिन, गम्भवहुल, कुष्ठ कपाय वा मधुर-प्राय हैं, उन्हें पार्थिवद्रव्य कहते हैं। पार्थिवद्रव्य स्थिरताबलमहात और वन्धनकर, विशेषतः अधोगमनशील है।

जो द्रव्य शीतल, आर्द्र, स्निग्ध, मन्द, गुरु, सारक, मान्द्र, मृदु, पिच्छिल, रसवहुल, ईषत्कपाय, अम्ल वा लवण रसविशिष्ट अथवा मधुरप्राय है, उन्हें जलोयद्रव्य कहते हैं। जलोयद्रव्य स्नेह, हृष्य, क्लृप्त और संक्षेपकर तथा क्षरणशील है। जो द्रव्य उष्ण, तीक्ष्ण, सूक्ष्म, रुच, खर, लघु, विशदरूप, गुणवहुल, ईषत्पक्व और लवणरसविशिष्ट अथवा कटुरसप्राय विशेषतः ऊर्ध्व गमनशील है, उसे तैजस कहते हैं। तैजसद्रव्य दहन, पचन, दारण, तापन, प्रकाशक, प्रभा और वर्णकर है। जो द्रव्य सूक्ष्म, स्निग्ध, मृदु, ग्राम्यधर्मका उत्तेजक, अवरत्नरस अथवा शब्दवहुल है उसे आकाशीय द्रव्य कहते हैं। आकाशीयद्रव्य मृदु, सच्छिद्र और लघु है। इन सब लक्षणों द्वारा जगतके सभी द्रव्योंको श्रेणिक कह सकते हैं। युक्ति और प्रयोजनके अनुसार सेवित होनेसे तथा वीर्य और गुणविशिष्ट होनेसे सभी द्रव्य कार्यकर होते हैं। इन सब श्रेणियोंका सेवन करनेसे जिस समय काम होता है उस समयको काल, काम करनेवालेको कर्म, जिसके द्वारा किया जाता है, उसे वीर्य, जहाँ वह काम होता है, उसे अधिकरण, जिस तरह कहा जाता है, उसे उपाय और उस कामका जो परिणाम निकलता है, उसे फल कहते हैं। इन सब श्रेणियोंके मध्य विरेचन द्रव्यमें

पार्थिव और जनीय गुण ही अधिक हैं, पृथिवी और जल गुरु हैं, यह गुरुताके कारण अधोगामी है। इस अधोगुणकी अधिकतासे ही विरेचन हुआ करता है। वमन द्रव्यमें अग्नि और वायु गुण ही अधिक हैं। अग्नि और वायु लघु हैं, इसीसे यह लघुताप्रयुक्त ऊर्ध्वगामी है। अतएव ऊर्ध्वगुणके वाहुल्यसे ही वमन हुआ करता है। वमन और विरेचन इन दो प्रकारके गुणविशिष्ट द्रव्योंमें ऊर्ध्वगमिता और अधोगमिता ये दो प्रकारके गुण ही अधिक रहते हैं, उसी तरह संशमन द्रव्यमें आकाशगुण ज्यादा है और वायुका शोषण गुण है, इस कारण संश्रावक द्रव्यमें वायुका गुण अधिक है। दोमिकर श्लेषमें अग्निकी और पुष्टिकर श्लेषमें पार्थिव तथा जलोयगुणकी अधिकता देखी जाती है।

भूमि, अग्नि और जलोय द्रव्यों द्वारा वायुको, भूमि, जल और वायुजात द्रव्योंसे पित्तको और आकाश, अग्नि तथा वायुजात द्रव्योंसे श्लेष्माको शान्ति होती है। आकाश और वायुद्रव्यसे वायुकी, आग्नेय द्रव्यसे पित्तकी और पार्थिव तथा जलजात द्रव्यसे श्लेष्माकी वृद्धि हुआ करती है। प्रत्येक द्रव्यके ही इसी प्रकार गुणादिका विचार करके दोषमें प्रयोग करना होता है। शीतल, उष्ण, स्निग्ध, रुच, मृदु, तीक्ष्ण, पिच्छिल और विशद-द्रव्योंके इन सब गुणोंको वीर्य कहते हैं।

द्रव्यमें अग्निगुणकी अधिकता रहनेसे तीक्ष्णोष्णवीर्य, जनीयगुण रहनेसे शीत और पिच्छिल वीर्य, पार्थिव और जलोयगुण रहनेसे स्निग्धवीर्य, जल और आकाशगुण रहनेसे मृदुवीर्य, वायुगुण रहनेसे सूक्ष्मवीर्य और चित्ति तथा वायुगुण रहनेसे विषद वीर्य कहलाता है। उष्ण, स्निग्धवीर्य, वातघ्न, शीत, मृदु वा पिच्छिलवीर्य, पित्तघ्न और तीक्ष्ण रुक्ष वा विशदवीर्य श्लेष्मघ्न है।

गुरुपाकसे वातपित्तकी शान्ति होती है एवं लघुपाकसे श्लेष्माकी वृद्धि होती है। मृदु, शीतल और उष्णगुण स्पर्श द्वारा जाना जाता है। पिच्छिल, और विशद दृश्य न स्पर्श द्वारा, स्निग्ध और रुचगुण दृश्यन द्वारा तथा सुख और दुःख उत्पादन द्वारा शीत एवं उष्णगुणका ज्ञात होता है। गुरुपाकसे विष्टान्त्र रुद्ध हो जाता है तथा ऊर्ध्वगत कफजन्य पीड़ा होती है। लघुपाकसे विष्टा-

मृत्त वस्तु को जाता है और उसको वायु कृपित हो जाती है । जिस द्रव्यका लेशा रस है, उसका गुण भी उसीके अनुसार होता है । जैसे मसुररस होनेसे गुणपाक और पाकि वगुण विगिष्ट तथा मसुर और किण्व होनेसे कडीय गुणविगिष्ट होता है । द्रव्यके जिस प्रकारके गुण हों, वहीरसके लिये प्रकृत आवे करे । द्रव्यके गुणके जो द्वैतको लिति, चय और छवि दृष्टा करते हैं ।

(सुश्रुत सूत्रस्थान ३०।४१ व०)

द्रव्यक (स० त्रि०) द्रव्य क्वरति क्वरति धारकति वा ।
द्रव्यकम् । १ द्रव्यधारक । २ द्रव्यवाहक ।

द्र १११११ (स० पु०) वेद्यकोत्त क्कालटिपदक ।

द्रव्यमय (स० पु०) द्रव्यार्था मयः ३ तत् । सुश्रुतोक्त भोज्य विधिवत् १० प्रकार गन्धमेद ।

द्रव्यगुण (स० पु०) द्रव्यस्य गुणः प्रतिपाद्यतया यत् ।
१ द्रव्यभा गुणप्रत्यय यत्मेद बह सुश्रुतक जिससे द्रव्यार्थ गुण आदि मातृम हो ।

द्रव्यरस (स० पु०) द्रव्यभा माय, द्रव्यरस ।

द्रव्यपति (स० पु०) द्रव्यमिदानीं पतिः । इहत्सु द्वितोक्त द्रव्योपे पति । इहत्सु द्विताने द्रव्यका विवरण द्रव्य प्रकार लिखा है—

जो जो राशि जिस जिस द्रव्यकी पचिपति हो कर श्म और पश्म कस देती है उनका विवरण यहा जाता है ।
मिपराशि—पश, मेघकम्बल, क्षामकम्बल, मसुर, मीठ, याकलक, जो कानसम्बन्ध भोज्यके और कर्षे रस मय द्रव्योको पचिपति है ।

श्वराशि—बल, गोरुम, कुशुम्भ, यास्त्रिवाय, यम, मडिम और गोकुली पचिपति है ।

इसी प्रकार बान, मरकतद्रव्य, कता, मातृक और कपास मिश्रणके पचोन है । कोशुव (कोदा) कदको, कृष, कन्द, मूल, यम और लवण, वे सब कर्षेद्रव्यके पचोन है । तुप, बान, रस, गुड़ और पिप्रादि कर्षे विंश राशिसे पचोन है । तोतो, कक्याय, कुशयो, मेड़ और मूंग रस सबको पचिपति तुकाराशि है । ईश, मिश्रक द्रव्य लोह और पश्मादि छविजके तथा पश, सवक, चम्बर, कस, तिल, बान और मूल वपुराशिसे पचोन है । तब शुष्मादि तथा मिश्रक द्रव्य, ईश, लवण और

कष्यशीत रस सबका पचिपति मयः है । पलिनत्रान पय, पुष्य, रस, चित्र और क्य मे सब कृषके पचोन है । कषाकसम्बन्ध रज, चम्बुद्रुत कय, माना कयद्रुत रनेत्र द्रव्य और मकारमृत्त मौनराशिसे पचोन है ।

जिब राशिसे कृषे, चोये पाचये, घातये, मये, दमये म्यारकने वा क्कानमे इहस्पति बधि, पचवा दूमेरे, पंचमे, घातये, दमये वा म्यारकने क्कानमे शुच रश्मे; उस राशिमें जो पच द्रव्य कपर कहे मये, उनकी इहि होती है । इसी प्रकार द्रव्य जिस राशिसे छठे वा घातये घातये रश्मे उस राशिसे द्रव्योको क्षानि तथा द्रव्य पचिपति राशिसे गत होने पर उनको इहि होती है ।

जिब कूर पच बदि उपचय गत हो चर्षात् उत्तये पच, दमय और पकादय मत हो, तो श्मपद होता है; तथा तद्विष यदि चम्बरादिक्षिण हो, तो क्षानिजनक होता है । बलवान् कूर पदगण जिस राशिसे पोका क्कानमे चर्षात् उपचय जिब क्कानमे संक्षित होते है, कष राशिसे पचिपति द्रव्य मूलकान् तथा दुर्घम हो जाती है । बलवान्, श्मपदगण जिस राशिसे इह क्कानमे चर्षात्, उपचय क्कानमे रहते है, उस राशिसे पचोनक द्रव्योको इहि होती है तथा वे बहुतायतसे मिश्रते है । मोचर-पोकांमो भी यदि समी राशि बलवान् श्मपदोपे देवी जाय, तो वे कडकर नहीं होती, किन्तु कूर पचोके देवी जानी पर, उसका विपरीत पच होता है ।

(हरद्वैरिण ३१ व०)

द्रव्यमय (स० त्रि०) द्रव्य-प्राप्तये मयट्; इत्यकारजनक कषादि ।

द्रव्यवान् (स० त्रि०) बलवान्, बनी ।

द्रव्यविशेष (स० पु०) सुश्रुतोक्त चम विधिये क्षरा पाचि व-लादि विशेष । इत्येवेषो ।

द्रव्यशुद्धि (स० ली०) द्रव्यार्था शुद्धि । कषाकनादि द्वारा द्रव्यदिक्का मलापनबन, कष, मशी आदि द्वारा बहुषोका पाक या पचिपति होना ।

“इहत्सु द्वैत इवस्पति द्रव्यगुह्ये तवैव च ।

वपुरांमपि चर्षां यथाचरुत्त मः ३”

(मय ३।१०)

पर्वत पर उत्पन्न द्राक्षा अर्थात् जहारो लसुं, अम्बरस, कफ और पित्तकारक मानी गई है।

कर्मर्दिका अर्थात् करोदो जहारोके समान गुण-दायक है।

भिन्न भिन्न देशोंमें भिन्न भिन्न प्रकारकी दाख (Vitis Vinifera) उत्पन्न होती है। दाखके कितने भेद हैं उसका निर्णय करना कठिन है। हिमालयके पश्चिमोद्य भागोंमें यह आपसे आप होती है। भारतके गुजरातप्रदेशमें इसको खेतो होती है। दक्षिण यूरोपमें दाख सब जगह उपजती है, किन्तु इसको लता देशान्तरमें रोपनेसे यथारूप फल नहीं लगता है। शीतप्रधान देशमें लाई हुई दाख यदि शीतप्रधान देशमें रोपी जाय, तो आशानुरूप फल नहीं लगते हैं।

इसकी खेतो भिन्न भिन्न देशोंमें भिन्न भिन्न तरहमें होती है। एशिया-माइनरकी दाखको लता जमीन पर लताकी तरह फैलती है। स्पेन और मेसिलिया देशमें लता काट कर छोटी कर देनेसे यह फैलती नहीं यो। सुतरां टटो आदिकी जहरत भी नहीं पड़ती। इटलीके अन्तर्वर्ती इद्रिया और कम्पेनिया प्रदेशमें दाखकी लता हर्षों पर और बुन्दुसियममें रखीको मचान पर चढ़ा दी जाती थी जहां वह छत सरीखा बन जाती थी। इन्डोय प्रदेशमें ही पहले पहल खूंटो वा किमी अन्य प्रकारका अवलम्बन दे कर दाखकी लताको उसके ऊपर चढ़ा दी जाती थी। अब भी उक्त उपायको अच्छा समझ कर लोग इसे काममें लाते हैं।

घालू मिली हुई मट्टीमें ही दाख अच्छी उपजती है। कड़ी जमीनमें यह अच्छी नहीं लगती। इस कारण दो भाग मट्टीमें एक भाग घालू घोंघा आदि मिलाना पड़ता है और दो हाथ गद्दा करके उसमें मट्टी, घोंघा और घालू आदिके अस्तरसे मट्टी तैयार करनी पड़ती है।

दाखके बोजसे पौधे नहीं उगते, पर उसके उंठलकी काट कर गाड़ देते और उसीसे अंशुर निकलते हैं। चार पांच उंठलकी एक औरकी मट्टीसे ढक देते और दूसरी औरमें गोबर या कीचड़ इसलिये लगा देते हैं, कि उससे कहीं रस न निकल जाय। दश ही दिनमें उंठलोंसे अंशुषा निकलने लगता है। जिस जमीनमें

दाखकी लता लगानों ही, उमें पहले इनमें अच्छी तरह जोत डालें और उसमेंमें देने और कंकड़की आहर फेंक दें। जमीन तैयार हो जाने पर ७८ हाथकी दूरी पर एक एक गद्दा खोदना पड़ता है। पोछे उसमें डंठल टेकर पानी देना पड़ता है। जब डंठलमें अंशुषा निकलने देखें, तब उसके चारों ओर चार खूंटो गाड़ कर रेरीको उनमें बांध दें। पांच महीनेमें वह लता आदमो के बराबर हो जाती है; तब उसे एक वृत्त काण्डमें घटका देना चाहिये। अक्टूबर महीनेमें जड़ को हट कर खुली अवस्थामें १५।१६ दिन तक रखना चाहिये। गाड़ छांटनेके प्रथम समाहके बाद ही फिरसे अंशुषा निकलने लगता है। इस समय जड़में अच्छी तरह खाट टेकर उसे मट्टीसे ढक देना चाहिये। इस समय दिनमें दो बार जल देना पड़ता है। जब दाख फलने लगे, तब जड़में पानी देनेका प्रयोजन नहीं पड़ता, अगर खेतमें पानी कहीं जमा भो हो गया हो, तो उसे बाहर कर देना ही अच्छा है। उस समय किसान प्रतिदिन सुबहमें खेत जा कर पौधेकी कुछ कुछ छिला देते हैं जिससे कि उसमेंमें पानी, कीड़ा, सूखा पत्ता आदि नीचे गिर जावे। जो नीचे गिर पड़ते हैं उन्हें वे जला डालते हैं। दाखका फल बढ़ा हो जाने पर ५६ दिन बाद भो पानी देनेसे काम चल सकता है। अक्टूबर महीनेमें जो लता छांटी जाती है, जनवरीमें उसके फल पकने लगते हैं। गाड़ छांटनेके पांच समाह वा डेढ़ मासके बाद फल खाने योग्य हो जाता है। सुतरां जनवरी महीनेमें गाड़ छांटनेसे अप्रिल महीनेमें उसका फल खा सकते हैं। वर्ष भरमें दो बार उक्त नियमसे फल मिल सकता है, किन्तु उससे पौधेकी तैजो जाती रहती है।

गाड़ टाफनेके पहले वर्षके अन्तमें ही उससे बहुत सूख फल निकलते दिखाई देता है। पोछे प्रतिवर्ष वह पूरा होता जाता है। नमक, मेड़को विष्टा, भेड़का लेह और लवणाक्त मस्य इसका अच्छो खाद है। कहीं कहीं जड़को कोड़ कर केवल पांच-छः दिन तक उसे खुला अवस्थामें रखते हैं। साधारणतः इसी नियमसे दाख लगाई जाती है।

आसाममें जलवायुके कारण दाख अच्छी तरह नहीं

पकतो है। इसी कारण इसकी लताकी पत्तों परकी दोबारमें मया देते हैं। यहाँ सूर्यके तापसे तथा दोबार की ममीके एक पत्थरी तरह एक आते हैं। विभिन्न देवोंमें जनबाबुके भेदेसे इसी तरह दो एक सामान्य परिवर्तन कर दाखका चित्तो को आतो है।

दाखके फलके विद्यमिय बनता है। इसके प्रसृत करनेके दो निबन्ध हैं, पक्षी उन्हें चूमि सुखा लेते हैं, जब तक छ ठन मसोमालि सुख न जाय तब तक विद्यमियमें आद नहीं पाता है और इस भी काम हो जाता है। एक दूसरे प्रकारका विद्यमिय होता है जो दाखके फलकी लान मसित तोड़कर परकी छत पर रखनेसे बनता है। इस तरहकी विद्यमिय सपूष रगका होता है। प्रायः १०१० दिनके भीतर दाखके फल विद्यमियमें परिवर्त हो जाते हैं। जबकी पक्कामें दाखके फलकी सुखा लेनेसे भी विद्यमिय बनता है।

सुपूष दाखके फलसे सुनका बनता है। उससे मसो-मालि एक आने पर छ ठन मसित उधे तोड़ लेते हैं। बड़ाहीमें जब दे कर उधे चमानते हैं। जब पानोका पीठना मरु हो जाता, तब उसमें लगभग २५ बीर ईयर पीर दूध देर बाद २२ बेर चना काक देते हैं। पीछे बड़ाहीको भीसे उतार रखते हैं। जबके ठण्डा हो जाने पर बीरे बीरे उधे एक दूधरे बरतनमें डाल देते हैं। उसी जबका नाम तिसाव है। पीछे फिर एक दूधरो बड़ाहीमें जब डाल कर उधे पाम पर चढ़ाते हैं। जब जब फोसने काम आता है, तब उसमें तीन बीर पन्दाव तिसाव मिला देते हैं। बाद दाखके फलको उसमें डुबो कर निकाल लेते हैं। उस पीछेते दूध उसमें फलको एक मिनटसे अधिक समय तक नहीं रखना चाहिये। इस तरह तीन बार डुबाये जानेसे बाद दाखके फलको स्वच्छ जलमें मसोमालि हो देते हैं।

सुपूष पीर चरखन चित्तोंमें दाखका कबोख है। इसका सुष—मोतन, मिट पीर रैचक है तथा प्रप्य मर्दे, यक्षा चादि रोगोंमें बहुत बिलकर मानो मर्दे है। इससे आकारिड नामक एक प्रकारका चरिड मो तैपार होता है। सुपूषमान मीम इधे पाचक पीर उखपरिपोषक मानते हैं। इससे छ ठनकी लता कर जो राख बनती

है उसे लयामि या चानिसे पकरी, मसुद्र चादि रोय आते रहते हैं। दाखका शरबत शरीरको निम्न करता दाखकी निवारण करता तथा मन्दाग्नि, धामामय चादि रोगोंके क्षाममें पाता है। उ ठन काट देनेसे बसल काठमें उससे एक प्रकारका रस निखलता है जो पड़ने कम रोगमें बरबहुत होता वा। यह मो यूरोपमें जन साधारण इसे नेत्ररोग (Ophthalmia) में आते हैं। इनके निरन्वेने मन्दाग्नि, पेटदुद पीर जमो जमी हैजा पारोष्य हो आता है। इनको लमबसे साय जानिने ठनको हो पातो है।

स सुख साहित्यमें दाखका जो लेख पाया गया है उससे ज्ञाना जाता है कि तोन इजार बर्ष पक्षी मो माजबायी दाखका नाम जानते थे, किन्तु इसकी लया दनबिचि मायद बँ नही जानते थे। चिकित्साशास्त्रमें दाखके स योगसे प्रसृत जिन सब धोषभियो का कबोख है, उनमें ताजी दाखकी पाचक्यता नहीं पाई गई है। सुतरां इससे अनुमान किया जाता है कि उठ समय भारतवर्षमें दाखकी चित्तो नही होती थी।

सुमनमान राजाधोषे पक्षी दाखकी चित्तोका बीर विवरण नहीं मिलता है।

सुमनमान मोग जब लमी कोई देय विषय करते, तब उस देयकी दाखको लताको निर्मुक्त कर कासते थे। भारतवर्षमें जो सब बड़ाको दाख पाई जाती है वे सब प्रायः इकी सुमनमान राजाधोषे परिवारके समयमें तइम नइम कर डालो मर्दे को, किन्तु यह कह नही सकते कि वे पीछे सुमनकी भाई बिना परि नमने बड़ कर इस पक्कामें प्राप्त हो मर्दे हो।

कायमैरमें भी चार प्रकारकी उत्तम, पाठ प्रकारको मिहड पीर तोन प्रकारकी लइमो दाख पाई जाती है। उत्तमसे उत्तम लइकी दाख सुगलसखाट, बहानुनोरके समयमें बाबुबने खाई गई थी। सुयल-राजाधोषो को जोने पोष्य मराव इसी उत्तम दाखसे बनाई जाती थी। बहानु मोरकी बन्धुके बाद पीरइबने सुलनमानो धाधार से चनुमार दाखकी लताको ध्व म कर डाला। भारतमें दाखकी चित्तो तमीके ज्ञान हो गई है।

बीज मोमनि विमिचि आतिसे दाखकी चित्तो

मोक्षी थी। सिरीयामे टाख पहले निवियन आदि इरानीय जातिगोंमें प्रचारित हुई। वं ही ग्रीक लोगोंके गिन्नक हुए। पीछे रोमकजातिने ग्रीक लोगोंसे टाखका व्यवहार सीखा। रोमकराज न्यूयूरके समयमें भी टाखका रस मव कामोंमें नहों लाया जाता था। दक्षिण इटलीमें ही पहले पहल टाखकी खेती शुरू हुई। पांचवों शताब्दीमें इटलीको टाख बहुत मशहूर हो गई। रोमक-प्रजातन्त्रको समाप्तिके समय टाखका आदर यहां तक बढ़ गया था कि वहांके लोग अनाज आदिको न बो कर इसकी खेती करते थे। यूरोपके अन्धान्द देशोंमें विशेषतः फ्रान्समें सौजरके अधिकारके साथ साथ टाखके व्यवहारकी खूब वृद्धि हुई थी। फ्रान्ससे जर्मनीमें और तब स्पेनमें इसका व्यवहार प्रचलित हुआ।

रोमक-साम्राज्यके ध्वंसके बाद ही इटलीमें टाखकी खेती गिरने लगी। वहां इसके रससे जो शराब बनती थी उसका अनादर होने लगा और दक्षिण फ्रान्सको शराबका आदर बढ़ गया। आज भी दक्षिण फ्रान्समें इसके रससे बने हुई शराब शराबोंकी मां समझी जाती है। पहले भारतवर्षमें भी टाखसे शराब बनाई जाती थी जिसे लोग मारहीक कहते थे।

पञ्जाबमें बारह प्रकारकी टाख देखी जाती है। यहांको भी टाख यूरोपीय टाखके समान फल देती है मही, किन्तु भाड़ बांध कर जंगल हो जाती है। यद्यपि खेती नहीं करना ही इसका प्रधान कारण है। पञ्जाबमें बढ़िया टाख उत्पन्न होने पर भी शराबके लिये इसको खेती नहीं की जाती है। विशेषतः पञ्जाबकी टाख जिस समय पकती है, उस समय इतनी गरमी पड़ती, कि उसका रस गरमीसे छूटा हो जाता है। पञ्जाबके मध्य पेशावरकी टाख सर्वोत्तम है। हजारों टैगमें भी चार पांच प्रकारके अद्भूत पाये जाते हैं। भारतके मध्य काश्मीरमें टाखकी जमीनें खेती होती है, वैसी और दूररी जगह नहीं होती। मुसलमान-राज्यके पहले काश्मीरमें टाखकी किस तरह खेती होती थी, उसका अच्छी तरह पता नहों चलता। सुगल सम्राट् अकबर साहिबप्रिय थे। उन्होंने ही पहले पहल

काश्मीरमें टाखकी खेतीकी व्यवस्था की। ज्यैष्ठ, आषाढ़ और आषाढमासमें काश्मीरसे एवं आश्विन, कार्तिक और अश्विमासमें काबुलसे टाख मंगाई जाती थी। सुगल सम्राट् वा उमरावगण काश्मीरी टाखकी शराब पीते थे। काश्मीरमें इसकी खेतीसे यद्यपि राजस्व वसूल होता था। सम्राट् अकबरके यत्नसे लाहौर, दिल्ली, आगरा, इलाहाबाद आदि स्थानोंमें भी टाखकी खेती होने लगी थी।

सम्राट् जहान्गोरके समयमें काश्मीरी टाखकी विशेष उन्नति हुई। उन्होंने काबुलसे चार प्रकारकी बढ़िया टाख ला कर काश्मीरमें रोपा था। उस समय इस देशके लोग टाखसे प्रस्तुत शराब पीते थे। औरङ्गजेबके समयसे टाखकी खेती ढीली पड़ गई। १८७६ ई०में किसी साहबने काश्मीरी जङ्गली टाखसे शराब बना कर उसे काश्मीरके राजा प्रतापसिंहके पास भेजा था। यह देख कर राजाने एक बेलजियनके ऊपर शराब तैयार करानेका भार दिया। १८८० ई०में पहले पहल मद्य प्रस्तुत हुआ और १८८५ ई० तक होता रहा। किन्तु इससे किसी प्रकारकी आसतनी न देख इसको प्रथा बन्द कर दी गई।

१८८४ ई०में काश्मीरके राजाने अपने राज्यमें सुशासन चलानेके लिये अङ्गरेज गवर्नेमण्टकी सहायता मांगी। गवर्नेमण्ट भी इसमें सहमत हो गई। टाखकी खेतीका हाल अच्छी तरह जानते हुए अङ्गरेज गवर्नेमण्टने १८८० ई०में यूरोपसे कुछ लोगोंकी मंगा कर काश्मीरमें टाखकी खेती करनी आरम्भ कर दी। अभी काश्मीरमें टाखसे एक प्रकारकी गटली और एक प्रकारकी स्वच्छ पीनेयोग्य शराब बनती है जिसको प्रशंसा देशविदेशमें हो रही है।

पश्चिमोत्तर प्रदेश और अयोध्याके नाना स्थानोंमें टाख उत्पन्न होती है। सम्राट् अकबरने आगरा, इलाहाबाद आदि स्थानोंमें बढ़िया टाख मंगा कर रोपा था। इस देशकी समतल भूमिमें टाख यद्यपि फल देती है। आगरा, इलाहाबाद, कानपुर, काशी, लखनऊ, आदि स्थानोंमें उत्तम टाख होती है, किन्तु सब प्रकारकी टाखसे शराब नहीं बन सकती। कनावर प्रदेशमें बहुत पहलेसे टाखकी खेती होती है। यहां टाखके फलका

नाम दखन घोर लताका नाम जान है। यहाँको दाघने को गराव बनतो उसे विष कहते हैं। इससे एक प्रकार का मादक मी बनता है जिसका नाम रब या परल है। परलसे लनाकर प्रदेशमें घ मूखो खेतो चलो या रहो थी। १८२६ घोर १८६० ई०में इसको फसलमें एक प्रकारका रोग हो गया जिससे फसल दाघके लक्षण बरबाद हो गये, हमीसे इसको खेती बहुत कुछ कम गई है।

अधमारतके फसीरगढ़ घोर लसे जिखटवर्ती खानोमें दाघ उपजाई जाती है। इस लसनेके माघ हो इसे लोग वैष खाते हैं घोर जिसो प्रकारके काममें नहीं नाते। प्याउमामें भी दाघ लगाई जाती है।

हिन्दु प्रदेशमें भी दाघ उत्पन्न होती है। यहाँ लसे किममिय लसे बनाका जाता किन्तु दो एकमका गराव तै वार होती है। एक प्रकारकी गरावका नाम विगमिमी गराव है जो दाघके लुखानेसे बनती है दूसरेका नाम चामूरी गराव है। यह पक्षी दाघने तै वार होती है। हैदराबाद, सिधवाल, मिहारपुर आदि खानोमें भी चामूरी गराव बनती थी।

बम्बई प्रदेशमें दाघ लक लगाई जाती है, यह डोक डीक लसे लक पत्रते हैं। खानदेयके राजव-संघादक (Collector) यहाँ दाघ खर खगते हैं। पुन, पत्रमद मरद, घोरबाबाद आदि खानोमें भी दाघकी खेती होती है। कुछेमा या बटलोके समय दाघका बहुत सुकमान होता है, इसी कारण पूर्वघाट परतके दक्षिणमें दाघ नहीं उपजती है। नाबिष घोर मातपुरा आदि खानोमें भी दाघको दिती होती थी किन्तु कुछ दिन पहले लसमें रोग हो कामसे बहुतने खेत नष्ट हो गये हैं।

बङ्गालमें पबिष इदि इतिके कारण दाघ न तो पबिष उपजती घोर न लुघादु होती है। बिहारमें बिमियत, दामापुर घोर तिरहुतका जनबायु उत्तर-पश्चिम प्रदेशका जनबायुसा है, इस कारण यहाँ दाघ काये उपजती है। १८२६ ई०में बङ्गाल मिन्गलमें जनबलके प्राय पपने लघामने दाघ लगाई थी घोर बहुत पहले एक प्राय बिघा था। बङ्गाल देयमें जिसो जिसो लगे मनुष्यके लघाममें दाघको लता देयी जाती है किन्तु लकको खेतो नहीं होती।

आसाममें घ घेकोसे समयमें जो दाघ ललाई गई थी। यहाँके मननर जेनरलके एमिएल मेजर जेकिनसन सबसे पहले मोहाटोमें दाघ उत्पन्न थी। लकोने दाघके फलको पखानेका एक नया नियम बसाया था।

मन्दाजमें बङ्गिन परिकम घोर यल किये बिना दाघ नहीं उपजती है। किन्तु मोलबिरि घोर लसको लपन्नाममें यदह लक लगते हैं। यहाँ दोदक प्रकारको देयोय हाफो को खेतो होती है। १८८८ ई०में बिहायल-मि को दाघ मगा कर लगाई गई है लसमें भी काफो फल बनते हैं। कुछ दिन पहले मियने भी दाघ मगा कर रोयो गई है।

मध्यदेशमें प घेक लोन को दाघ उपजती है लसमें लुघादु फल बनते हैं। किन्तु यहाँके जनबायुसे दोपने दाघको खेती होना एक तरह लपन्ना है।

इस देशमें बहुतसे ऐसे सुन्दर लान हैं जहाँ दाघ लामिने पायातोत फल पाये जाती हैं। दक्षिण यूरोपमें दाघ जिस तरह बहुतीकी त्रोविकाके लपमें परिमलित हुई है, उस तरह कुछ कुछ कागमोर घोर पखानेके उत्तर पश्चिम प्रदेशके बिना मातलपमें घोर लहाँ लो बाबिष्य लसके लहेलसे दाघ नहीं उपजाई जाती है। मन्चिपुरमें ऐसे बहुतसे खान हैं जहाँ जनबायु घोर मडोके मुषसे दाघ पक्षी लल मकती है। गवमेंलको लपाने कागमोर में पमी दाघको खेती होती है। यहाँ यह बाबिष्य-लसके लहेलसे लगाई जाती घोर लघीसे बहुतीकी कीबिका चलतो है किन्तु साधारणतः दाघने किममिय, सुनका आदि प्रलुत हो कर लगे बाबिष्य लस हो गया है। सुगल-सम्माद, पखारसे ली कर मादकलामुके पखलवास लक कागमोरो दाघको गराव बहुत पादर भीय लो। घोर गलिबके समयमें जो लसको पबनति होती लयो। जनबलके फल-कालिक-परदगं लोमें कागमोरो गरावमें लघर्वलक पुरल्लार दिया मका ल। इससे बिना लस दो प्रलय लोमें लो कागमोरका मघ बिघय मय लित दया है। बाबिष्यकी घोर इस देशके लोयका लस लहनेने भारतलपमें दाघकी खेती एक प्रमान ल्यलसाय हो लायो।

श्राधापुत्र (म० लो०) श्राधामिदपिन पल लुत। लक दसोड लुतोबबिषिय।

द्राक्षादिशष्टादशादि क्वाथ (सं० पु०) क्वाथ औषधभेद । इसकी प्रसृत प्रणाली—किशमिश, गुलच्छ, कपूर, कचूरी, काकड़ाशुद्धी, मोथा, लालचन्दन, सोंठ, फटकी, आकनादि, चिगायता, जवासा, धनिया, पझकाष्ठ, बाला, भटकटैया, वेणामूल, पुष्करमूल और नीम इन सब द्रव्योंको एकत्र कर क्वाथ बनाते हैं । इसका सेवन करनेसे जीर्णज्वर, अरुचि, श्वास, कास और शीथ जाता रहता है ।

द्राक्षारिष्ट (सं० पु०) अरिष्ट औषधभेद । इसकी प्रसृत प्रणाली—द्राक्षा ६। सेरको १२८ सेर पानीमें पकाते हैं, ३२ सेर पानी रह जाने पर उसे निकाल लेते हैं । बाद इस क्वाथमें २५ सेर गुड़, दारचीनी, इलायची, तेजपत्ता, नागेश्वर, प्रियङ्गु, मिर्च, पोपल और विडङ्ग प्रत्येक १ तोला दे कर मथते हैं, बाद छतभाण्डमें १ मास सुं ह वांध कर रख छोड़ते हैं । अन्तमें उसे अच्छो तरह छान लेते हैं । यही द्राक्षारिष्ट है, इसे सेवन करनेसे कर्शत, चयरोग, कास, श्वास और गलरोग निराकृत तथा बलवृद्धि और मलशुद्धि होता है ।

द्राघिमन् (सं० पु०) दोर्घस्य भावः दोर्घ-इमनिच् । दोर्घस्य द्राघादेशः । द्वीर्घत्व, लम्बाई ।

द्राघिमा (सं० पु०) १ दैर्घ्यं, दीर्घता, लम्बाई । २ वे कल्पित रेखाएँ जो भूमध्य रेखाके समानान्तर पूर्व और पश्चिमको मानो गई हैं । (Longitude) इस स्थानके प्राथमिक द्राघिमाके पूर्वकी और होनेसे पूर्व-द्राघिमान्तर और पश्चिमकी ओर होनेसे पश्चिम-द्राघिमान्तर होता है । संस्कृत ज्योतिषमें इसे 'दिशान्तर' कहते हैं ।

फिलहाल हम लोग जो द्राघिमान्तर स्वीकार करते हैं, वह ग्रेणवोचके मानमन्दिरको मध्यरेखासे गिना जाता है । किन्तु फरासोवी लोग पारि-शहरके और अमेरिकन वासिंटनके मानमन्दिरकी मध्यरेखाको मान कर द्राघिमान्तरको गणना करते हैं ।

किसी स्थानका द्राघिमान्तर निकालनेका उपाय ।

१। ग्रेणवोचका समय रखता हो, ऐसा एक उष्णकालमानयन्त्र (Chronometer) ले कर यहाँकी एक घड़ीके साथ मिला कर देखो । दोनोंमें

समयका जो फर्क पड़ेगा, वही समय मान कर द्राघिमान्तरके पार्थक्यका निरूपण हो सकता है ।

२। किसी एक स्थानमें जिस समय तार द्वारा सम्वाद भेजा जाता है और जिस समय सम्वाद पहुँच जाता है, दोनों समयके अन्तरसे भी द्राघिमान्तर निकाला जाता है ।

३। किसी एक मनुष्यने निर्दिष्ट जगहोंकी भूमि पर रोशनी की, दूसरी मनुष्यने ज्यों ही रोशनीको जलता देखा, त्यों ही उसने अपनी घड़ोंमें समय देख रखा । प्रकाशका जलना और दूसरी मनुष्यका देखना, इसमें जितने समयका फर्क पड़ता है, उस हिसाबसे भी द्राघिमाका निरूपण किया जाता है ।

उदाहरण—१। क और ख दो मनुष्य टेलिग्राफ तारके परस्पर विभिन्न दिशामें हैं । कने ठोक दो पहरको तार द्वारा सम्वाद भेजा, किन्तु खके पास वह सम्वाद साढ़े दश बजे पहुँचा । अभी यह देखना होगा, कि ख कके पूर्वमें था या पश्चिममें और दोनोंमें कितने अंश (Degree)-का अन्तर था ? दोनों स्थानका समय भेद १२-१०' ३०" = १' ३०" अर्थात् डेढ़ घण्टा है ।

किन्तु द्राघिमान्तरका एक अंश = ४ मिनट समयका अन्तर ∴ दोनों स्थानका अन्तर अर्थात् द्राघिमान्तरिक दूरत्व = $\frac{१\frac{१}{२} \times ६०}{४} = २२\frac{१}{२}$ । कका समय अधिक होनेसे ख कके पश्चिम होता है ।

२। मान लो, कलकत्तेसे शामको छः बजे अमेरिकाके निउवोर्कमें तार दिया गया । वहाँ तार दूसरे दिन सबेरे ७ बज कर १० मिनट २० सेकेण्डमें पहुँचा । अब कलकत्तेका द्राघिमान्तर होता है ८८° २७' ००, तो निउवोर्कका द्राघिमान्तर क्या होगा ?

निउवोर्कका समय बहुत पीछे पड़ता है, इस कारण निउवोर्क कलकत्तेसे पश्चिममें अवस्थित है ।

कलकत्तेकी शाम छः बजे और निउवोर्ककी सुबह ७ घण्टा १० मिनट २० सेकेण्ड, इसमें १० घण्टा ४८ मिनट ४० सेकेण्डका फर्क पड़ता है ।

∴ अब दोनों स्थानका द्राघिमान्तरिक दूरत्व ।

= $\frac{१० घं० ४८ मि० ४० से०}{४ मि०} = १६२' २५''$ । किन्तु

पक्षी जो खाता वा खुदा है कि लक्ष्यक्षेत्रों का द्राघिमात्तर
८८ २० पु० है।

निडकोठका द्राघिमात्तर = (२१२ २५' - ८८' २०) =
७१ १८ प०।

द्राघिष्ठ (स० वि०) अतिप्रथम दीर्घ इति, दीर्घ-वहन, दीर्घज
द्राघादिगः। १ अतिदीर्घ, बहुल लम्बा। (झो०) २
दोस्त चोद्विपक्ष लम्बो रोजिम नामको सुमन्वित प्राप्त।
द्राघ (स० वि०) द्रा कर्त्तरि ल निडा तप्य न ततो
कर्त्तः। १ सुम घोडा हुआ। २ पञ्चाबित, मगिहू। (झो०)
१ लम्ब। ३ पञ्चायन मामना।

द्राघ (स० पु०) द्राघयति द्रा षिच सुगायते द्राघि षच ।
१ पङ्, कौचङ्। २ पाषाय। ३ खपटी कौको। (त्रि०)
३ मूष्। ४ सुम, घोडा हुआ।

द्रामिन् (स० पु०) द्रामिन्नाप्यो दिगोऽमित्रानो-षच । १
चापक्य सुनि। २ पितादिभूमि द्रामिषदेयवासी।

द्राघ (स० पु०) द्रु गतो द्रु-षच। १ गमन। २ परब
बहावः। ३ पशुताप, गर्मी। ४ बहने या पशोऽग्नेषी
क्रिया।

द्राघक (स० पु०) द्रुगति द्राघयति वा द्रु द्राघि वा षु, लः।
१ चन्द्रनात्मनि। (त्रि०) २ इदयपाशो। ३ द्रुम
कर्म करनीवाला। ४ बहाने वाला। ५ ब्रह्म पर प्रभाव
कान्तनामा। ६ बहुर, जानाक। ७ घीसा करनेवाला
भगानेवाला। (झो०) ८ स्थितकारी, कार। ९ मोम।
१० सुहावा। ११ शोहाबोपचमेद शोहारोगको एक
दवा।

महाद्राघक पौर महाद्राघक नामक शोहानायक
बोपचका मियन्वरवाकलीमें उत्पन्न है। प्रस्तुत प्रचामी—
यवचार ही भाग और फिटकरी तोल मात्र इन दोनोंको
बहङ्के मृतके पीस कर सुहावा होता है। पीछे चिकी
बोचके बरतनमें कपड़े पौर मछीका प्रक्षेप दे कर तनमें
बह झूटा हुआ पदार्थ रख झोड़ते हैं। इस प्रकारके दूधरे
बरतनमें खपर इके चबोसुक्त करके दोनोंके सु च पर क्षेप
कगा देते हैं। नीचेके बरतनके दिमें एक हिंद रजना
चादिये। यह दोनों बरतनको तनी शवकामि एक
मधुमें रप दिते हैं। इस मधुमें एक पौर बरतन रजता
है। इस प्रकार क्वापन करके खपरी भागमें पाँच सगति

है यह चागकी गर्मीके तप बरतनका मोतरो पदार्थ
मस कर लक्षकार म मधुके बरतनमें टपक पड़ेगा।

इसके पनकार तप रखको लवङ्गपूज वा करित
ताम्बके आब मिला कर एक रत्तीकी गोली बनाते हैं।
इसके मिकन करनेसे शोहा पादि रोग द्रुमोमृत वा जाता
है। यिष्ठ पौर द्रु पादि रोगमें इचका खानिक प्रयोग
भी किया जाता है। किन्तु इससे चागकी तरब खाना
निवृत्तते है। इलीमें द्रिचि साय इचका प्रक्षेप देना
पावश्यक है।

पदवप वितामून्, पपाङ्, इमनोका जिषका,
कोरङ्केका छठन, यूहरकी बङ्ग, तासकट्ट, पुनर्वा
पौर विनहच इन सबको मक्कमको पातो नीचुके रसमें
मिला कर खान लेते हैं। पीछे इस चार द्रव्योंको कड़ो
कर्म सुधने देते हैं। बह चार २ पक्ष, यवचार २ पक्ष,
फिटकरी १ पक्ष, निपादक १ पक्ष, शैत्य ३ तोला,
सुहागा २ तोला, शीराबस १ तोला, सुद्रायङ् १ तोला
पौर ससुद्रकिन १ तोला, इन सब द्रव्योंको एक साथ चुर
कर बचयानमें गुषा करके परब निखावते हैं। इसका
नाम महाद्राघक है। इससे ११० विन्दु कर्ममें खस कर
लेवन करनेसे यज्ञत, शोहा पौर शुष्मादिरीग जाति
रजते हैं। पञ्चाधिक—कर्ममाधिक कौश, शैत्य
मवच, रसाभ्रम, ससुद्रकिन यवचार, सुहागा, चाचि
चार पाषाणचार, चातुबानीस, पञ्चबानीस पौर शोराबच
इन सबका बराबर बराबर मात्रा में कर कर्म करते हैं।
पीछे तने शिब मख पौर मीं द्वारा सेपित कर्षक कर
तनी रककर बचयानमें क्वाप्य शैव पाँचके समाबिधान
एक करके लम्बा रप गुषा छीते हैं। महाद्राघक प्रस्तुत
करनेका पदो तटीका है। इसके मो खिर तीन मीद हैं
एक, मख पौर उहत्। फिटकरो, सुहागा, यवचार
पौर शोराबच इन चार द्रव्योंके समान चुचको मिला
करको परब बनता है तने पञ्चशुबक कहते हैं।
इसो प्रकार सुहागा, निपादक, फिटकरो, यवचार,
चातुबानीस, पञ्चबानीस पौर शोराबच इन सात द्रव्योंमें
परबको मज्जमङ्गक वरते हैं। खिर मखमाधिक
पादि ससुद्राय द्रव्योंके परबला नाम महाद्राघक है।
यह बोपच सोड ना बहङ्गपूजके साथ अन्-विन्दु शैवक

नीव है। इससे अतिशय अग्निवृद्धि और यकृत, प्लीहा आदि नाना प्रकारके रोग शान्त हो जाते हैं। (मैफ़्यर०)

यहाँके रसायनशास्त्रमें अंगरेजी Acid शब्दका अर्थ 'द्राव'के शब्द लगाया है। किन्तु यद्यार्थमें Acidमें द्रावणकी क्षमता नहीं है। पर हाँ, वैद्यकशास्त्रमें गृह-द्रावक, महाद्रावकादिका उल्लेख रहनेसे पारिभाषिक-रूपमें Acidका अर्थ द्रावक माना जा सकता है।

द्रावककन्द (स० पु०) द्रावकी कन्दो यस्य। तैलकन्द, तेलियाकन्द।

द्रावकर (स० स्त्री०) द्रावं सुवर्णादिद्रव्यं करोति स्वसं-योगिनेति द्राव-क-ट। श्वेतदृङ्गण, सुहागा।

द्रावकवर्ग (स० पु०) द्रवकर द्रव्यपञ्चक। तैल, घी आदि तरल पदार्थ।

द्रावण (स० स्त्री०) द्रावयति जलमलं स्वसम्पर्केणेति-द्वु-णिच्-युच्-। १ कतकफल, रोठा। द्राविल्युट्-। २ विद्रावण, द्रवीभूत करनेका कार्य वा भाव। द्रावय-तीति द्राविल्यु-। ३ भगानेका काम।

द्रावणक (स० पु०) दृङ्गणचार, सुहागिका खार।

द्राविका (स० स्त्री०) द्रावक-टाप-भ्रत इत्वं। १ लाला, लार। २ मोम।

द्राविड़ (स० त्रि०) द्रविड़ो देशोऽभिजनोऽस्येति षण्-। १ देशविशेषजात, जो द्रविड़ देशमें उत्पन्न हुआ है। २ पित्रादि कर्मसे द्राविड़देशवासो। द्राविड़, कर्णाट, गुर्जर, महाराष्ट्र और तैलङ्ग ये पांच तरहके द्राविड़ हैं। यह देश विन्ध्याचलके दक्षिणमें अवस्थित है। तामिळ शब्द देखो। (पु०) ३ संख्याभेद। ४ वेधसुर्य, आशिया इवदी। ५ कचूर, कचूर।

द्राविड़—१२वीं शताब्दीके पहले प्राङ्मुक्त सृष्टिप्रद्वीप नामक ग्रन्थके रचयिता।

द्राविड़क (स० पु०) द्राविड़ एव, स्वार्थे कन्। १ वेधसूर्य, कचिया इवदी। २ विटलवण, सोंचर नमक।

द्राविड़गौड (स० पु०) रातके समय गाये जानेका एक राग। इसमें शृङ्गार और वीररस अधिक गाया जाता है।

द्राविड़मूर्तिक (स० पु०) द्राविड़ एव भूतिकृत्पत्तिर्यस्य कप्-। द्राविड़क, विटलवण, सोंचर नमक।

द्राविड़ो (स० स्त्री०) द्रविड़ो भवा द्रविड़-अण-डीष्-।

एला, छोटी इलायची। इसका पर्याय—सुन्ना, उप-लुञ्जिका, तुच्छा, कोरङ्गो, द्राविडी और गुटो है।

द्राविडी (त्रि० स्त्री०) १ द्रविड़ जातिको स्त्री। (वि०) २ द्रविड़मन्त्रो, द्रविड़ देशका।

द्राविणोदस- (स० त्रि०) द्रविणोदस- देखो।

द्रावित (स० त्रि०) द्रावि क्त। १ ताडित, भगाया हुआ। २ द्रवीकृत, गलाया या पिघलाया हुआ।

द्राव्य (स० त्रि०) द्रु-ण्यत्-। १ अवश्य गमनीय। २ अवश्य चरणोय। ३ अवश्यानुत्पत्नीय।

द्राघ्यायण (स० पु०) द्रघ्यस्य ऋषेर्गोत्रापत्यं। युवादि-त्वात् अङ्-यूणि फक्-। ऋषि विशेष। ये द्रघ ऋषिके गोत्रमें उत्पन्न हुए थे। इन्होंने नामवेदके कल्प, त्रौत और गृह्यसूत्र बनाये हैं।

द्राघ्यायणसूत्रभाष्य (स० स्त्री०) धन्विन् कृत द्राघ्यायणसूत्रका भाष्य।

द्राघ्यायणि (स० पु०) द्राघ्यायणके गोत्रापत्य।

द्राघ्यायणीय (स० त्रि०) द्राघ्यायणकृत, द्राघ्यायण ऋषिका बनाया हुआ।

द्रु (स० पु०) द्रवति ऊर्ध्वं गच्छति द्रु-मितद्रु-वादित्वात् ड-। १ वृक्ष, पेड़। २ शाखा, डाल। (स्त्री०) ३ गति।

द्रुकिलिम (स० स्त्री०) किल्यतेऽनेनेति किल श्वैत्वक्रीड-नयोः किल-वाहुलकात् किमच्-। द्रुषु वृक्षेषु किलिमं। देवदारु वृक्ष, देवदार। इसका संस्कृत पर्याय—देव-दारु, सुराङ्ग, भद्रदारु, देवकाष्ठ, पोतदारु और दास है।

द्रुग—१ मध्यप्रदेशके छत्तोसगढ़ विभागका जिला। यह अक्षा० २०° २३' से २२° ८' और देशा० ८०° ४३' से ८२° २' पूर्वमें अवस्थित है। भूपरिमाण ३८७६ वर्ग मील है। इसके उत्तरमें खैरागढ़, कवरघाराज्य और बिलास-पुर जिला, पूर्वमें रायपुर जिला, दक्षिणमें कङ्करराज्य, और पश्चिममें खैरागढ़, मन्दागाव राज्य तथा चान्दा और वालाघाट जिला है। जिलेका अधिकांश जङ्गलमय है। यहाँ तन्दुला नदी प्रवाहित है। इसको प्रधान उपनदियाँ पथरा, वरा, सोमवरसा और भ्रमनर है। जिलेमें गरमो बहुत पड़ती है। वार्षिक वृष्टिपात लगभग ४७६ इञ्च है।

इस जिलेमें एक शहर और २०४७ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्राय ७५७१५१ है। यहाँको प्रधान उपज धान, गेहूँ, कोदों और तोसो है।

बहानतागपुर १११६ त्रिसेके मध्य को कर गरी है ।
त्रिसेके कुछ जमींदारी राज्य पड़ता है जिसका क्षेत्रफल
प्रायः १०४० बर्ग मोड होता है । त्रिसेको प्रायः चार लाख
रुपये में अधिक की है ।

२ छत्र त्रिसेकी एक तहसील है । यह १८०६ ई० में
राजपुर तथा बिनासपुर से कर में विलीन हुई है । यह
पचास २० ११ से २१ ३२० चौर दिमा ८२ ६
से ८१ ३० पू० में अवस्थित है । मूपरिमात्र १८११
जर्जनील चौर कोकम जमा प्रायः ३२३६०८ है । इस
तहसील में हुय नामका एक शहर चौर ४८३ पाम बगते
है । यहाँ की जमीन बहुत उपजाऊ है । यहाँ की जितनी
भी अधिक की जाती है । तहसीलको कुछ भाग एक
लाख रुपये में ज्यादाकी है ।

३ छत्र त्रिसेका एक प्रधान शहर । यह पचास २१
११ ८० चौर दिमा ८२ १० पू० बम्बईसे ८३८ मील
को दूरी पर अवस्थित है । जोकस जमा प्रायः ४००२
है । मन्दाहोले १७४०-४१ ई० में जब कलौसगढ़ पर
शाहजहाँ बिधा, तब इसी नगर में जन भोगो का पञ्जा
बा । जन्मेने वहाँ एक सुदृढ़ दुर्ग निर्मात्र बिधा बा
जिससे चारों चौर छ को दोवार पो । यमो यह मन्दा
बहामें पड़ा है । यहाँ सत्सट बपालदे बपड़े प्रभुन
जोते है ।

दुपन (स० पु०) दुर्ग का जन्मदिनेनेति इन-पप बना
दिशत, ततो पत्न दुपमको बनः इति वा । १ सुद्वर ।
२ लूनधारसे सुद्वरकार कोडाकाबिदिय, लूनधारका कोड़े
का इतिवार जो सुद्वरसे धाकारका होता है । ३ र्दशम्या-
बनोड धनुर्बे इति मतासुसर परप-पाकतिविमिड कोडाका-
बिदिय, परप या परसेके धाकारका एक पत्त । यह
पचास च शुभ नन्दा कोड़ेका बना होता बा । इसका सिपा
बड़ा चौर मन्दा टेड़ा होता वा । इसमें सुबाने, मिराने,
कोड़ने चौर चौरनेका नाम लेते है । दु स कारहर्षा
इत्यर्त्थमिति । ४ ब्रह्मा । ५ सुद्वर, सुद्वराको । ६ मूनि-
बन्धक, मूबन्धा । ७ दुपमय वन ।

दुप (स० लो०) दुर्गति द्विजतीति दुर्ग कः १ धनु, धनुष ।
२ यज्ञ । (पु०) ३ उषिक, विष्णु । ४ यज्ञ यज्ञो कोड़ा ।
५ न्यमर, भीरु । ६ मनुमचिबा, मनुमन्त्री । ७ पिपुल ।

दुपन (स० सि०) दुर्गति दोर्षा नाशिका यत्त । यत्त-
समापान्त ततो नाशिकाया नसादेवच पूष पदादिति
पत्त । दोर्षनाशिकायुक्त, मिसकी नाम लम्बी हो ।
दुपच (स० पु०) दुर्ग कत्र इति गच्छतीति इन गतो
क । अत्रविधान, लनवारका म्यान ।

दुवा (स० लो०) दुर्ग धनुषाययजे मास्त्वस्या यत्त
यत्त । अथ, धनुषकी डोरो ।

दुनि (स० लो०) दुर्गति ब्रह्मादिब्रह्मिति द्रुव-गतो
इर (इपपवात् सिन् । इन ३११८८) होषो, पिद्वार,
मन्वा ।

दुनो (स० लो०) दुर्ग-रत्न वापुनकात् डोपु । १ कर्ष
जनोका, जनकद्वर । २ कच्छ्या कच्छो । ३ बाह्यान्-
वाहिनी, कच्छत ।

दुत (स० सि०) द्रु-त्त । १ जातद्वर, मना दुवा । इर्षका
पर्याय—पवदोष, विज्ञान चौर विद्वत्त है । २ दौत्र सिद्ध ।
३ शोभगामी, शीतले कलनेवाका । ४ पचायित भामा
दुवा । (पु०) ५ उषिक, विष्णु । ६ उष पिड़ । ७ विष्णुक,
बिबो । ८ ताककी एक माताका चादा । इसका पित्र ०
है । इसक देवता मित्र चौर इसको उत्पत्ति जन्मसे मायी
जाती है । इसका उच्चारक पदोकी बोलीके समान होता
है । इसका पर्याय—विष्णु, व्याखन, मन्व यक्षमात्रक
प्राचाय, धूप चौर बलय है । ८ क कय का मन्वमदे
सुख सेत्र हो, दून । ९ इरिच । ११ मयक, चरवा ।
दुतनति (स० सि०) शोभगामी सिद्ध कलनेवाका ।
दुतगामी (स० सि०) शोभगामी ।
दुतचारिन् (स० सि०) द्रुत यत्ति चरबिनि । जो जमीन
पर बहुत सेत्रसे चलता हो ।
दुतमिताना—वीर कीर्ति हने कोपालो कहते है ।

ओकाकी देको ।

दुतपद (स० लो०) इत गात्रमामि पद । १ शोभयामि-
पद । २ इन्दोमेद, एक इन्दु जिसके प्रबन्ध चरचमें
चारक चरच जोते है जिनमें कोका, चारहर्षा चौर चारहर्षा
अथरुच चौर शीप मधु जोते है । (सि०) ३ दुतयामि-
पदुक्त जिनमें दुतयामिपद हो ।

दुतमन्वा (स० लो०) यक्षेयमवर्त्तसमेद । इसके
प्रथम चौर उत्तम तथा द्वितीय चौर चतुर्थ पर समान

होती है। प्रथम और तृतीय पदमें सातवां, नवां और ग्यारहवां अक्षर गुरु तथा द्वितीय और चतुर्थ पदमें पांचवां, आठवां, दशवां और बारहवां अक्षर गुरु होता है।

द्रुतमांस (सं० पु०) हरिण, खरहे आदिका मांस।

द्रुतचिन्तित (सं० स्त्री०) हन्दोविशेष, एक वर्णवृत्तिका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें १२ अक्षर रहते हैं जिनमेंसे ४।७।१०।१२ ये सत्र वर्ण गुरु और अन्यान्य वर्ण लघु होते हैं।

द्रुति (सं० स्त्री०) द्रु-भावो-ल्लिप्त् । १ द्रव । २ गति।

द्रुनख (सं० पु०) द्रोणक्षत्र नख इव असंज्ञात्वात् णत्वाभावः। कण्टक, काँटा।

द्रुपद (सं० पु०) चन्द्रवंशीय ऋषिविशेष। चन्द्रवंशमें पृथत नामक एक राजा थे। भरद्वाज ऋषिके साथ उनको गाढ़ी मित्रता थी। दोनोंको एक ही समयमें पुत्र उत्पन्न हुआ था। पृथतने अपने पुत्रका नाम द्रुपद रखा। भरद्वाजके पुत्र द्रोणाचार्य और द्रुपद वचपनमें साथ खेला करते थे और दोनोंमें बड़ी दोस्ती थी। पिताके मरण पर द्रुपद उत्तर पाञ्चालके अधीश्वर हुए। इस समय भरद्वाज भी चल बसे थे। द्रोण बड़ा रह कर अनन्य-कर्मा हो तपस्या करने लगे। एक दिन द्रोणाचार्यने द्रुपदसे आ कर कहा, 'आपसे मेरो वचपनकी मित्रता है, अतः मुझे मित्रता समझिये।' यह सुन कर द्रुपद आग-वावृत्ता हो गये और द्रोणसे बोले, 'मृदु ब्राह्मण! तुम्हारी बुद्धि मारी गई है, अतुल ऐश्वर्यशाली राजाश्रीके साथ क्या कभी तुम सरोखे शौहीन और निर्धन मनुष्यकी मित्रता हो सकते है। काल सभी पदार्थोंकी जीर्ण करता है और कालसे ही सौहार्द भी जीर्ण होता है। मान लिया, कि पहले योग्यतावश तुमसे मेरो मित्रता हुई होगी, लेकिन भूमण्डलमें सौहार्द किसेके भी हृदयमें अजर नहीं रहता। क्योंकि कालक्रमसे वह निराक्षत होता अथवा क्रोध कलक समूल नष्ट हो जाता है। अतएव तुम इस पुरानी मित्रताकी आशको छोड़ दो। हे द्विजपुत्र! किसी प्रयोजनवश तुम्हारे साथ मेरो मित्रता हुई होगी। देखो। दरिद्र मनुष्य कभी भी धनवान् मनुष्यका, मूर्ख विद्वान्का और वीर्य-

हीन मनुष्य शूरका मित्र नहीं हो सकता। अतएव तुम व्यर्थ ही सखित्वकी इच्छा रखते हो। जिसके समान धन, समान बल है उसीसे मित्रता वा विवाद हो सकता है। वसवान् और निर्वन मनुष्योंमें कभी भी दोस्ती वा विवाद होनेको सम्भावना नहीं। राजाके साथ राजाकी मित्रता हुआ करती है। तुम दरिद्र ब्राह्मण हो, तुम्हारे साथ किस प्रकार मेरो मित्रता हो सकती।' इस प्रकार द्रोण द्रुपदसे अपमानित हो कर अत्यन्त दुःखसे समय बिताने लगे। पीछे भीष्मदेवने द्रोणाचार्यके ऊपर कुरुपाण्डवोंकी अस्त्रशिक्षाका भार अर्पण किया। इन्होंने भी यथाविधान उन्हें अस्त्र-शिक्षा दी। कुरुपाण्डवोंकी अस्त्रशिक्षादिमें विशेष पाण्डुश्री बना कर इन्होंने उनसे गुरुदक्षिणा मांगते हुए कहा, 'पाञ्चालदेशके राजा द्रुपदने मेरा अपमान किया था। अतः उसका बदला चुकानेके लिये तुम लोग पाञ्चानपुरी जा कर घेर लो और अमाल्योके साथ द्रुपदको बांध कर मेरे पास लाओ।' अर्जुन आदि शिष्योंने 'तथासु' कह कर श्लोकार कर लिया। पीछे पाण्डुपुत्रोंने द्रुपदको संग्राममें जोत कर अमाल्योके साथ उन्हें बांध द्रोणके निकट समर्पण किया। द्रोणने द्रुपदसे कहा, 'हे नराधिप! मैं फिरसे तुम्हारे साथ मित्रता करना चाहता हूँ, किन्तु अभी मैं राजा हूँ, तुम राजा नहीं हो। राजा नहीं होने पर राजाके साथ मित्रता नहीं हो सकती। अतः तुम्हारे साथ मैं अपना राज्य बाँट देना चाहता हूँ। तुम भागीरथीके दक्षिणकूलका राजा हो और मैं उत्तर-कूलका राजा होता हूँ।' यह सुन कर द्रुपदने कहा, 'आप जो अच्छा समझें वही करें।'।

इस प्रकार वे दोनों फिरसे सख्य अवलम्बन करके अपने अपने स्थानको चल दिये। किन्तु इस अपमानसे द्रुपदके हृदयमें गहरी चोट आई और क्षणकाल भी वे इसे भूल न सके। अतः अमर्ष शोकसे व्याकुल हो वे उपयुक्त पुत्रोत्पत्तिकी अभिलाषासे तेजस्वी ब्राह्मणोंका अनुसन्धान करने लगे। गङ्गाके किनारे कल्माषपाद राजाको पुरोके समीप याज घोर उपयाज नामक दो आतकब्राह्मण रहते थे। ये दोनों बड़े ही तपोनिष्ठ और ब्रह्मपरायण थे। इन्होंने मनोरथ सिद्ध होगा, यह सोच

राधा पनमकामा भी उनको उपासना करने लगी। इन प्रकार एक बंधु भीत मया किन्तु उपपात्रने द्रुपदका पौरोहित्य शोकार न किया और कहा, 'तुम यात्रकी समीप जाओ तर्कसे तुम्हारा मनोरथ निश्च होगा। राजा उपपात्रने कथनानुसार यात्रके पात्रमसे गये और बहुत विनीत भावसे बोले 'मैं जिसने धर्म द्वारा म धामर्म दुःख और श्लोकादिनागत्र पुत्र प्राप्त कर सकूँ, पाप परी कपाय कर दोजिसे।' 'नात्र तत्राशु' कह कर उपपात्रा पायोत्रण करने लगी और इस कार्यमें उन्होंने उपपात्रने भी कहायता मांगी। उपपात्र भी उन्हें सहायता देनेमें राजी हुए। पछि इन दोनों घात होने मिक कर श्रोत कि नाथ दशरथ किया। यत्रकी समाप्त होने पर यात्रने राजीको कहला मिया, कि पात्रि। तुम क्विपि क्विपि भिदे शीघ्र मरे समीप जाओ।' यह सुन कर राजीने कहा, 'मैंने पत्रामादि शरत्क किया है अतः मैं समी पद्यवि न, कुछ कान निरन्ध आरसे, र्थि हो कर क्विमामि पश्य करती हूँ। पात्र बोले 'इथ कथु क्वपात्र द्वारा मन्व्युत हो कर तुमसे पात्र को गई है, चाहे तुम पापी चाहे न पापी पत्रात्र ही उनसे तुम्हारी कामना निश्च होगी। इतना कह कर यात्रने पुत्रागममें न श्रुत कबको पाहुति प्रदान की। पाहुति देनेके माघ ही उस पश्चिमि ज्वाभावर्ष, भीषणाकृति किरौटमूयप पत्तम क्वचकुत्रु कह और क्वुवाकवारो देव मह्य एक कुमार उत्पन्न हुआ। त्रय मनेत्र बाद ही यह कुमार सिद्ध नाद करती हुए प्रथान रथ पर पारोहित हुए और इकर क्वर बिचार्य करने लगी। इसी समय पात्रामात्राको हुई, 'रात्रदुमारने श्लोकका वच करमके मिये त्रय किया है, यह पुत्र पात्राकीके क्वमन्त्र, मयनागत्र और रात्राका भीवावत्र होगा।' पछि क्वेरीमने भीमाव्यमानिने म्यामन्त्रो एत्र कुमारो निरुकी। यह दुमारो पमासाया क्वपत्रो ही। इन समय कि मो पात्रामात्राको हुई, 'यह क्वना मत्र मन्त्रियमिने श्रुता और पनेक क्विपिोंकी क्वपचारिषो ही गो तथा क्वसे द्विचत्रय मन्व्य होगे। पछि श्राद्धकोने द्रुपदने कहा, 'रात्रम्। यह कुमार द्रुट पर्वन् प्रगम, क्विपिट्ट पमात् क्विपिपोंके क्वपर्वका क्विप्यु, और क्वुव्यानि पर्वान् क्वन क्वुव्यादिने भाव

उत्पन्न हुआ है, अतएव इमका नाम द्रुपद्वन्त्रुषा और कुमारी क्वचकर्षा हुई है, इसीसे इसका नाम क्वप्या हुआ। राजा द्रुपद श्लोक निश्चला पुत्रको पा कर विमेष पामन्दित हुए। इनके मियल्लो नामक एक और पुत्र थे। द्रुपद भारतवर्षमें श्लोकके क्वपवे मारे गये।

(भाव्य कारि श्लोक)

१ आश्रवा देयमे ट। (१५५) १ आश्रमय पादुका, पत्रात्र ।

द्रुपदा (म० श्लो०) द्रुपद तक्षकन्दे श्लोकमें क्विपि क्वच। वैदिक मन्त्रविषय, एक वैदिक क्वया त्रिसके पात्रिमें द्रुपद मन्त्र पाता है यदि प्रसादपूर्वक मुक्ताकृष्ट पायत्रण और क्वपचादिको अर्घ्य करे, तो पात्र इकार गावत्रो वा भी द्रुपदात्रण करके पवित्र होना पात्रिसे। द्रुपदात्मत्र (म० पु०) द्रुपदव्य पात्रात्र। द्रुपदके पुत्र, मिकल्लो और द्रुटव्युक्। श्लोकं टाए, श्लोपे।

द्रुपदादिम्य (म० पु०) श्लोपेरीमे प्रतिष्ठित कायोक् पादयनिर्गुणिय। इसका विषय कायोक्कर्म इक प्रकार निष्ठा है—पात्रीं पात्रक कोरौने पतारित हो कर कर क्वनवागो हुए थे, उस समय पतित्रता पात्राकोन म्युकी पाराधना को से। सूर्यमें प्रनय हो कर द्रोपदी को करको पौर क्वनेत्र साय पचवव्यानिष्ठा (क्वपत्री) दे कर कहा था, 'कत्र तक तुम्हारा भोजन श्रेय न होगा तब तक त्रितने ध्यत्रि प्यार्थी हो कर पायेगे, इस कर तमके प्रभावने कोई म। मूला न लोटेया, लमो त्रि मर था मीरी। तुम्हारी धानेके बाद यह करतन पानो को कायगा। इससे पतिरिक्त क्विप्यत्रक दक्षिण मन्त्रमें श्लोपरी मामने पचपित्त हमारो को मनुष्य पाराधना करेता उसको पुत्रात्रनि त्रिष्ठा कागा रहेगे। सूर्यमें पुत्र श्लोपेरीमे कहा है पतित्रत पात्रात्रि। मगवान् क्विप्ये मने प्रनय हो कर इमें ली कर दिया है, उभे कहता है लुको हो रहे। जो मनुष्य पचने तुम्हारो पुत्रा करके पात्रि मिरा द्यमं क्वीमा उसका दुःख तुम बहुत त्रुट दूर कर देगा। मैं क्विप्यत्रके इस पचने मनुष्याका पाप माघन करतय हूँ। हे द्रोपदि। कायोमं त्रि तुम्हारा द्यमं क्वीमा उभे क्वमो मो ध्यात्रित्रनि पुत्रात्रम्य का द्रुक्क मन्त्र त्रिष्ठा मयतमा न पक्क्या (कायोक्क ३८ म०

द्रुपदी (सं० स्त्री०) वन्दाक ।

द्रुम (सं० पु०) समुदाये वृक्षाः शब्दा अवयवेष्वपि वर्तन्ते इति न्यायात् द्रुः शाखा विद्यतेऽस्य म (य, द्रु, म्या मः । पा ५।२।१०८) १ वृक्ष, पेड़ । २ पारिजात । ३ कुवेर । ४ खनामख्यात किम्पुरुषेश्वर । ५ खनामख्यात नृपविशेष । ये पूर्व जन्ममें शिवि नामक दैत्य थे । ६ रुक्मिण्योके गर्भसे उत्पन्न श्रीकृष्णके एक पुत्रका नाम । (हरिवंश १६०।६) ७ प्राचीन नृपवरभेद । ८ कुटजवृक्ष, कुरैया, कर्ची । ९ आरग्वध वृक्ष, भ्रमिलतास ।

द्रुमकाण्टका (सं० स्त्री०) सेमरका पेड़ ।

द्रुमकिञ्चरप्रभ (सं० पु०) गन्धर्वविशेष, एक गन्धर्वका नाम ।

द्रुमकिञ्चरराज (सं० पु०) एक किञ्चरराज ।

द्रुमकिल (सं० पु०) देवदारु, देवदार ।

द्रुमग (सं० पु०) स्वल्पजल देश ।

द्रुमत् (सं० त्रि०) काठनिर्मित, लकड़ोका बना हुआ ।

द्रुमत्वक् (सं० त्रि०) कुटजवल्कल, कुरैयाका किलका ।

द्रुमध्वज (सं० पु०) तालवृक्ष, ताड़का पेड़ ।

द्रुमनख (सं० पु०) द्रुमस्य नख इव । कण्टक, कांटा ।

द्रुमव्याधि (सं० पु०) १ पेड़का एक रोग । २ लाजा, लाख, लाह ।

द्रुममय (सं० पु०) द्रुम विकारि मयट । वृक्षविकार यूपादि ।

द्रुममर (सं० पु०) द्रुम नृ अप् । कण्टक, कांटा ।

द्रुमर (सं० पु०) द्रुम्वियतेऽनेन सृ-करणे-अप् । १ कण्टक, कांटा ।

द्रुमरत्नशाखाप्रभ (सं० पु०) किञ्चरविशेष ।

द्रुमवत् (सं० त्रि०) द्रुमो विद्यतेऽस्य द्रुम-भतुप-मस्य व ।

द्रुमविधिष्ट, जिसके उद्यान आदि हों ।

द्रुमवल्क (सं० त्रि०) वृक्षको छाल ।

द्रुमशय (सं० पु०) वानर ।

द्रुमश्रेष्ठ (सं० पु०) द्रुमेषु श्रेष्ठ । १ प्रधान वृक्ष । २ तालवृक्ष, ताड़का पेड़ ।

द्रुमशीर्ष (सं० स्त्री०) द्रुमस्य शीर्षमिव शीर्षं यस्य । १ कुट्टिमभेद, एक प्रकारकी छत वा गोल मण्डप जो पेड़की तरह फैला हुआ होता है । द्रुमस्य शीर्षं इ-तत् । २ वृक्षाद्य, पेड़का मिरा ।

द्रुमपण्ड (सं० स्त्री०) द्रुमाणां समूहः द्रुम-यण्डच् । वृक्षसमूह ।

द्रुमसार (सं० पु०) दाडिम, अनार ।

द्रुमसेन (सं० पु०) १ राजभेट, एक राजा जो पूर्व जन्ममें गविष्ट नामका असुर था । २ कौरव पत्नीय एक वीर, कौरवोंके पक्षका एक योद्धा । यह धृष्टद्युम्नके हाथमें मारा गया था । (भारत द्रोणप०)

द्रुमामय (सं० पु०) द्रुमस्य आमय इव । १ लाजा, लाख, लाह । २ वृक्षका रोग ।

द्रुमारि (सं० पु०) द्रुमस्य अरिः वृक्षनाशकत्वात् तयात्वं इस्ती, हाथी ।

द्रुमारुहा (सं० स्त्री०) केशसंमुस्ता, केशटो मोथा ।

द्रुमाश्रय (सं० पु०) द्रुमो-आश्रयो यस्य । १ सरट, गिर-गिट । (त्रि०) २ वृक्षाश्रित माव ।

द्रुमिणो (सं० स्त्री०) वन, जङ्गल ।

द्रुमिल (सं० पु०) १ एक दानवका नाम । यह सोमवृक्षका राजा था । २ नवयोगेश्वरोंमेंसे एक ।

द्रुमिला (सं० पु०) एक छन्द । इसके प्रत्येक चरणमें ३२ मात्राएँ होती हैं और प्रत्येक चरणके अन्तमें गुरु होता है तथा १० और १८ मात्रा पर यति होता है ।

द्रुमेश्वर (सं० पु०) द्रुमेषु ईश्वरः श्रेष्ठः । १ तालवृक्ष, ताड़का पेड़ । द्रुमाणां श्रोत्रधानां ईश्वरः । २ चन्द्रमा । ३ पारिजात ।

द्रुमोत्पल (सं० पु०) द्रुमो उत्पलमिव पुष्पं यस्य । कर्णिकार वृक्ष, कनकचम्पा, कनियारो ।

द्रुमवय (सं० पु०) द्रोहवृक्षस्य विकारभूतं प्रस्थादिपरिमाणं द्रुमानिवय । (मानेवयः । पा ४।३।१६२) १ परिमाण । २ लकड़ोको माप, पैमाना ।

द्रुपद् (सं० त्रि०) वृक्ष वा काठके खण्डके ऊपर उप-वेशनकारो, जो पेड़ या किसी काठके टुकड़े पर बैठा हो ।

द्रुसलक (सं० पु०) द्रुपु सलक इव । पियालवृक्ष, चिरौजोका पेड़ ।

द्रुह (सं० पु०) द्रुह्यति धनादिनाभाशया पितृविनाशं चिन्तयति द्रुह-क । १ पुत्र, बेटा । २ वृक्ष, पेड़ । (त्रि०) ३ दोहकारक । (स्त्री०) स्त्रीभ्यां डोप् । ४ दुहिता, लड़की, बेटो ।

दृश्य (म० पु०) दृ न मारयति इति इम पञ्च ।
 (दृश्यत्वं संशयाम्ना । पा ८.३.११) इति अत्र । इत्या ।
 दृश्य (म० पु०) दृ इति दृष्टेभ्य इति इ-अ-नन्,
 नृशामास्य । (बहुवचनभाषि । अन् ३.३८) इत्या ।
 दृष्टा (म० स्त्री०) दृष्ट्वात् (विभे विवाहकालोत्तरना-
 पञ्चादिना, दृष्ट्वा-अ, ततो ङीप् । दुहित्वा, कन्या,
 ष्टे ।

दृष्ट्वा (म० पु०) दृशति यस्मै शर्मिण्याया वडा लदृश्या ।
 ययातिने दृष्ट्वा ङीप् अत्र अयं तत्र ययना पुत्राया
 शिनेको कडा या, किन्तु दृशते यह कश्चित् इदं यस्मै
 कार किया या, कि अरायतु वरिष्ठ कोष ययस्यामि
 शोभे, शोभे एव शोर शो पादिना भोग नहीं कर
 नकता है शोर लनका भाष्य मो अस्तुत वा जाता है ।
 यत्- पुत्रायेको नहीं के मलता । यह सुनकर ययातिने
 गाव दिया था, "तुम मरे इदपन अथ न कर भी
 ययने ययस्या मुक्ति प्रदान नहीं करम, दृश कार्थ
 मुन्यारो यिततर वसिन्नाया कही मिह न होमो । अहां
 शोभे दृश शोभे, शोभ्यते योम्य नवारो, याव, गददे,
 वरि, पाश्वो पादि द्वारा ममनाममन न हो महे, अहां
 नमना शोभे तथा कृद पाठ कर चकना पदे शोर कहां
 शारा दृश्या म्यपहार नहीं है नहीं पर मुक्ति पारवार
 महिल रहना पड़ेगा ।" दृष्ट्वा न शर्मिणी शोभे शारा
 नहीं हुए । दृश्य न शर्मि भाजगचने अथ किया या ।

विप्रा शैलो ।

दृ (म० पु०) दृ इति दृश च । अथ, शोभा ।
 दृश्य (म० पु०) दृश्य दृशोदरादित्वात् माह । दृश्य
 मुदा ।

दृश (म० पु०) दृश इजोदरादित्वात् माह । इतिच,
 विष्णु ।

दृश्या (म० स्त्री०) मर्यादित्वा वकायन ।

दृश्या (म० पु०) दृश्या इजोदरादित्वात् माह । दृश्या
 अथ शर्मिण्या मुनीयेय ।

दृश्या (म० पु०) अथ शर्मिण्या मुनीयेय ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० स्त्री०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात्
 माह । इत्या ।

दृश्या (म० पु०) दृश्या इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० स्त्री०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० पु०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० स्त्री०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० पु०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० स्त्री०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० पु०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० स्त्री०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० पु०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० स्त्री०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० पु०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० स्त्री०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० पु०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० स्त्री०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० पु०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० स्त्री०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० पु०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

दृश्या (म० स्त्री०) दृश्या अथ इजोदरादित्वात् माह ।
 इत्यादि शैलो ।

वीर । पुराण आदिके अनुसार परशुरामके वाद द्रोणाचार्यके जैसा किसी ब्राह्मणने जन्म न लिया ।

महाभारतमें आदिसे ले कर द्रोणपर्वके मध्य तक द्रोणाचार्यके विषयमें बहुतसी बातें लिखी गई हैं । यहाँ संक्षेपसे दिया जाता है—

गङ्गाहार (हरहार)के निकट भरहाज नामक एक विख्यात महर्षि रहते थे । एक दिन वे गङ्गास्नान करने जाते थे, इसी बीच छताची नामकी अम्बरा नहा कर निकल रही थी । मंयोगवश उसका कपड़ा छूट कर गिर पड़ा । ऋषि उसे देख कोमात्त हुए और उनका वीर्यपात ही गया । तब ऋषिने वीर्यको द्रोण नामक यज्ञपात्रमें रख छोड़ा । उसी यज्ञीयपात्रसे उत्तम ब्राह्मण वीर उत्पन्न हुए । द्रोण नामक पात्रसे उत्पन्न होनेके कारण उनका नाम भी द्रोण पड़ा । भरहाजने पहले अग्निवेश ऋषिकी आग्नेय अस्त्रादि प्रदान किये थे, अभी अग्निवेशने गुरुपुत्र द्रोणको वे ही अस्त्र दिये ।

भरहाजकी पृथत नामक एक राजासे मित्रता थी । जिस समय द्रोण उत्पन्न हुए थे, उसी समय पृथतके भी एक पुत्र हुआ था जिसका नाम द्रुपद था । द्रुपद प्रति दिन भरहाजके आश्रममें आ कर द्रोणके साथ खेलते और लिखते पढ़ते थे । इस तरह दोनोंमें गाढ़ी मित्रता हो गई । राजा पृथतके मरने पर द्रुपद उत्तर-पञ्चाल देशके राजा हुए ।

उसी समय भरहाजका भी देहान्त हुआ । द्रोणने पिताके पूर्वनियोगानुसार पुत्र-लाभके लिये शरहानकी कन्या कृपीके साथ विवाह किया । यथासमय कृपीके एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसने जन्म लेते ही उच्चैःश्रवा घोड़ेके समान घोर शब्द (स्याम) किया जो दिग्दिगन्तमें फैल गया, इस कारण लड़केका नाम अश्वत्थामा पड़ा ।

उस समय द्रोण भृशुनन्दन परशुरामके निकट महास्त्र और नीतिशास्त्र पढ़नेके लिये महेन्द्र पर्वत पर गये और वहाँ भार्गवरात्मके धरण पर गिर कर उन्होंने पहले धनरत्न-प्रार्थना की । परशुरामने कहा, “मेरे सभी धनरत्न ब्राह्मणोंकी दान दे दिये गये हैं और पृथ्वी भी कश्यपकी दी गई है । विविध अस्त्र शस्त्र और मेरे इस शरीरके सिवा और कुछ नहीं है, इनमेंसे तुम्हें जो

मांगनेको इच्छा हो, मांग सकते हो ।” वाद द्रोणने प्रसन्नचित्तसे प्रयोग, उपसंहार और सरहस्य समग्र अस्त्र ग्रहण किये ।

प्रफुल्लित्तसे द्रोण घरकी लीटे । एक दिन अश्व-त्यामा किसी धनोके लड़केको दूध पाते देख कर खूब जोरसे रोने लगा, कोई उसे रोक न सका । द्रोणके घरमें दूध अथवा गाय नहीं थी । दूसरेके घरमें कोई चीज मांग लानेमें धर्म श्रुत होगा, इस भयमें वे कहीं न गये । वाद दूसरे दूधर लड़केको दूधसा रुफेट जल उसे पिला कर शान्त किया । अश्वत्यामा बहुत खुश हो कर नाचने लगा । यह देखकर दरिद्र द्रोणको बहुत दुःख हुआ । वे स्त्रीपुत्रके साथ प्रिय मखा राजा द्रुपदके यहाँ चले गये । उन्होंने समझा था, कि पञ्चालराज बालमत्तैके कारण उनके सब दुःख दूर कर देंगे । किन्तु राजमदके कारण द्रुपदने पूर्व सोह्य स्त्रोकार न किया, वरं महामति द्रोण उनके निकट बहुत अपमानित हुए । द्रुपद शब्द शटथ्य ।

इस पर दुःखित और क्रुद्ध हो कर अपमानका बदला लेनेके लिये संकल्प करके कौरव-राजधानी हस्तिनापुरकी गये । वहाँ वे अपने सान्ने कृपाचार्यके यहाँ सानन्द रहने लगे । यहाँ अश्वत्यामा गुप्त भावसे पाण्डवोंकी अस्त्रविद्या सिखाते थे । किन्तु उन्हें कोई पहचान न सके ।

एक दिन युधिष्ठिर आदि राजकुमार हस्तिनापुरसे बाहर निकल कर गेद खेल रहे थे । खेलते खेलते गेद कुएँमें गिर पड़ा, कोई उसे निकाल न सके । इसी बीच द्रोणाचार्य वहाँ आ निकले । उन्होंने तीर द्वारा गेदको बाहर निकाल दिया । उनके इस प्रसामान्य शरसन्धान-नैपुण्य देख कर राजकुमारोंने उनका परिचय पूछा ।

द्रोणने उन्हें अपना परिचय न टिया । वाद उन्होंने भीष्मके निकट जा कर उस अद्भुतकर्मी ब्राह्मणकी कथा कह सुनाई । इस पर बोरवर भीष्म स्वयं द्रोणके पास गये और उन्हें राजकुमारोंकी अस्त्र शिक्षाके लिये नियुक्त किया । इसी समयसे वे द्रोणाचार्य नामसे प्रसिद्ध हुए । उनका सब अभाव दूर हो गया । इन्हींकी शिक्षाके प्रतापसे कौरव और पाण्डव ऐसे बड़े धनुर्धर और अस्त्रकुशल हुए । भिन्न भिन्न देशोंसे अनेक राजकुमार आ कर

इसके पक्षविद्या मोक्षमें लगी। अन्ततः इसको प्वाति मारी भारत बचपमें छोड़ गई। इससे अमर स्व गिणशोभिते पशुन जो सबसे खेड निजने। कर्न, कर्तुन एवम्प्य धरतत्याग आदि मय इवडर।

अब श्लोकमें पाण्डव धीर धार्तराष्ट्रको लिप्यक्षपके घडक रिया नव एक िन लक्ष्मी नित्तन स्थानमें रात्रकुमारोके कथा वा जि, "मिरे इदधमें एक यमिनाया बहूत दिन में चलो था रहो है तुम लोग पक्षविद्यामें पारदर्शी हो कर मीरो वह यमिनाया पूरा कर सकोगी?" यह सुन कर कोरनवच न्यु हो बैठे किन्तु पशुन गुणका यमोट माचन कानिमें तयार हो गये।

कीरनोको पक्षविद्या समाप्त हो गई। एक दिन श्लोकाचार्यने कनोको बुला कर कहा, 'हमारो गुड टखिया यको है, जि बुद्धमें पक्षाभारत द्रुपदको पराजय कर हमारे पाक लायो।' इस पर कुषपाण्डवयय गुड टखिया बुकानिके लिये समझ बचपार हुए। कीरन धीर पाखालमें वसमान लड़ाई किड़ी। महावीर पशुन द्रुपदको लड़ाईमें पराजय कर लके अपने गुड श्लोकके पास पकड़ लाये। इस तरह श्लोकाचार्यका बहुत दिनोंका न कथन पूरा हुआ। किन्तु यमामोच श्लोकने द्रुपदको कोई दुलाई न की, नर यहुत प्रेममायके लक्ष्ये कहा है राजन। तुम बाककालमें हमारे साथ खेडा करता बा लक्ष्मी तुम्हारे प्रति हमें खेड धीर प्रीति हो कर बी। यमो मो हम पुन तुम्हारे साथ मिममा कर्ताव करती हैं। तुमने कहा बा कि राजाके विवा धीर कोई राजा का सखा नहीं हो सकता है, इसी कारण धार हम राजा पदिक लिये यत्र कर रहे हैं। यमोमि तुम मामोकोके टखिया-खिनारिके राजा होसे धीर हम उत्तर खिनारे में। पाखाक रहेको। यह सुन कर द्रुपदने लज्जाके सूँड मोले कर सिवा। बी कुड हो, यमी व श्लोकाचार्यके पशुपदके टखिया-पाखालके राजा हुए। लक्ष्मीने वममला कि लक्षणर नहीं होतिले श्लोकाचार्यका क स यमकथन है रस कारण लक्ष्मीने सुवेडियान धारण्य सिवा। यमके पनये श्लोकके निरुत्पक्षयमें इदधुनका अर्थ हुआ।

श्लोका एक स कथन विव हुआ मयो, किन्तु एक धीर मी बाको रव मया। पशुन ननको यमिनायित गुड

टखिया देनेमें प्रतिश्रुत हुए थे। यमी लक्ष्मीने पशुनके यचना वह यमिनाय प्रकाय करी हुए कहा, "हे पशुन देखो! जब मैं तुम्हारे साथ बुध करनेको महत होऊ गा, तब तुम मो मेरे साथ प्रतिबुध करोगी।" शुद्धमयक महावीर पशुन गुडके चरन स्याम करती हुए येसा ही करनेको महमत हुए। इसी कारण कुषकेलके सुद्धमें श्लोकाचार्यके प्रतिश्रुतीके रूपमें पशुनने लक्ष्मीने वमसान गुड बिया या; लक्ष्मी तो पशुन गुडके विवडर कनो पक्ष धारण नहीं करती। श्लोकाचार्यके बोचनमें ये कई एक घटनाएँ हुई थीं—जब कुषपाण्डवोंमें घडविवाह प्रकथित हुआ, तब लक्ष्मीने सुयोधनको पाण्डवोंके प्रति पुष्पवधार करनेमें कई बार निषेध किया बा। यमने कुषबधर कुषसेनका महासतर लपकित हुए। लक्ष्मीने मो दिन कीरनोको बोले धीर बुध कर य स स्व योहायो का प्राचनान सिवा। किन्तु लक्ष्मीके सेनापतिल्ल के समय यमिमानु धन्यायबुद्धमें मारा गया बा। यमने लक्ष्मी मो जब यन्यायबुद्धमें बुधितिरके सु डवे 'यम-त्नामा मारा गया जाको 'यह सुना तब पुद्धयोद्धमें मोबा सिर करके में धारनमें लड़े। इसी घबसर पर इदधुनने लनका सिर दो पक्ष कर डाला। बुधियिर धीर इधुन्य देको।

श्लोकवचन (स ० पु ०) श्लोक-रव कलय। द्रुममय यत्र धामम द, लकड़ोका एक पाख बिधमें यद्धमें धीम काना जाता बा। यह बी कथको लकड़ोका बनाया जाता था।

श्लोकवाद (स ० पु ०) श्लोक-रव काक। बलकाक, काका कोषा, धीम लीषा; इनका स स्रुत पर्याय—काकोष श्लोक पररकनयन बलकाको महापाक, लडुबाको, यल मिय धीर काकल है। कथ रहेको।

श्लोकधीरा (स ० प्धा ०) श्लोकमिते पुष्य यज्जा। श्लोकपरि-मित दुग्धवतो गी, वह गाय बी एक कलस दूध दिनी है।

श्लोकगन्धिका (स ० लो ०) श्लोकन श्लोकसुधयक मय्य रव गन्यो यज्जा कय-अपि यत इव। राक्षना।

श्लोकगिरि (स ० पु ०) एक पर्वतका नाम। पुराणके धनु-धार यह एक बर्षपर्यंत है। बाबनीकोय रामायणमें वने कीरोदधसुद्धमें लिखा है। अनुमान् विद्यकधारिको स कीरनो कड़ी लीने इलो पर्वत पर गये है।

द्रोणचा (स० स्त्री०) द्रोणद्रुचा पृषोटरादित्वात् दुलीपः ।
द्राणद्रुचा ।

द्रोणचित् (स० पु०) यज्ञीय अग्निभेद ।

द्रोणद्रुघा (स० स्त्री०) द्रोणपरिमितं दुग्धं यस्याः ।
द्रोणद्रुघा, वह गाय जो एक द्रोणदूध होती है ।

द्रोणद्रुघा (स० स्त्री०) द्रोणं दोग्धेति दुह-कप-घञान्ता-
देशः (दुहः कप घञ् । पा ३।२।७०) गवोविशेष, एक
प्रकारकी गाय जो एक कनक दूध देती है । इसका
पर्याय - द्रोणजीरा द्रोणमाना, द्रोणचा, पयस्विनी, द्रोण-
द्रुघा और द्रोणमानपयस्विनी है ।

द्रोणपदो (स० स्त्री०) द्रोण-इव पादो यस्याः, कुम्भप्यादि-
त्वात् डीप, डोपि पादोऽन्त्यन्तोपे पद्मवः । द्रोणतुल्य-
पादशुक्ला स्त्री वह औरत जिसके पांव द्रोणसे हों ।

द्रोणपर्णी (स० स्त्री०) द्रोणस्य वृक्षमेदस्य पर्णमिथ पर्णं
यस्याः जानित्वात् डीप, १ भूमिकदली, भूकदली । २
द्रोणपुष्प ।

द्रोणपुष्पी (स० स्त्री०) द्रोणवत् पुष्पं यस्याः डीप, १ चूद्र
शुपविशेष, गुमा । इसका पर्याय—खर्बपत्रा, कुम्भयोनि,
कुम्भिका, चित्राक्षुप, कुरुम्बा, सुपुष्पा, चित्रपत्रिका,
द्रोणा और फलेपुष्पा है । इसका गुण—कटु, उष्ण, रुचि-
कर, वात, पित्त, कफ, अग्निमान्द्य और वातनाशक है ।

भावप्रकाशके मतसे—द्रोणा, द्रोणपुष्पी और फलेपुष्पा
वे कई एक एकार्थवाचक शब्द हैं । इसका गुण—गुरु,
लघण, मधुर, कटुरस, रुच, उष्णवीर्य, वायु और पित्त-
वर्हक, तोष्ण, मधुर, विपाक, भेदक एवं कफ, आत,
कामला, शोथ, तमकश्मान और क्षिप्रिनाशक है ।

२ गोशोषकहृत् । इसका गुण—कफ, अर्श, कामला,
क्षिप्रि और शोथनाशक है ।

द्रोणमाना (स० स्त्री०) द्रोणो मानं दुग्धस्य यस्याः । १
द्रोणद्रुघा, एक द्रोण दूध देनेवाली गाय ।

द्रोणमुव (स० स्त्री०) चतुःशत ग्रामके मध्य मनोहर
ग्राम, वह गांव जो ४०० गांवोंके बीच प्रधान हो ।

द्रोणमेघ (स० पु०) मेघोंके अधिपतिभेद, बादलके एक
अधिपतिका नाम ।

पाम्पच (स० त्रि०) द्रोणं द्रोणपरिमितं पचतीति
द्रोण पच-वृष- (परिमाणे पचः । पा ३।२।३३) द्रोणपरि-
मित वस्तु पाककर्त्ता ।

द्रोणशर्मपट (स० स्त्री०) एक तीर्थभेद, तीर्थका नाम ।
(भारत अनु २५ अ०)

द्रोणस (स० पु०) एक दानवका नाम ।

द्रोणसाच (स० त्रि०) द्रोणं द्रोणकनकं सचते मच-
अण् । द्रोणजलसेचक ।

द्रोणसिंह (स० पु०) वनभोवंग्रीय नृपविशेष, वल्लभो-
वंशके एक राजाका नाम ।

द्रोणस्तूप (स० पु०) स्तूपविशेष ।

द्रोणा (स० पु०) द्रोणपुष्पो, गुमा ।

द्रोणपल (स० पु०) द्रोणगिरि, एक पर्वत ।

द्रोणाचार्य (स० पु०) कुरुपाण्डवोंके अन्तर्गच्छक, भर-
हाजके पुत्र । इसका पर्याय—अश्वत्थामापिता, ह्योपति,
पाण्डवोंके अन्तर्गच्छागुरु, द्रोण, गुरु, आचार्य, कीर्त्ति-
भाक्, भारहाज, कुम्भयोनि और द्रोणाचार्यक है ।

द्रोण देखो ।

द्रोणास (स० पु०) १ वह जिसका मुँह द्रोणसा हो । २
दानवविशेष, वह दानव जो मर्वाटा मनुष्योंकी रोगग्रस्त
करता है ।

द्रोणाहाव (स० त्रि०) आह्वयत्त्र पानार्थं वलीवर्तान्
आहावो जलाधारः जलाशयभेदः, द्रोणमयः द्रुममयं
आहावः । द्रुममय जलाधारभेद, काठका बना हुआ
पानीका बरतन, कठवत ।

द्रोणि (स० स्त्री०) द्रवतीति द्रु-गती नि-सच कित्
(वहिभ्रियुवल्केति । उण् ४।५१) १ द्रोणी, कठवत । २
कदलीत्वगादि निर्मित पात्रभेद, फलेके छिलकेका बना
हुआ पात्र, डोंगो । आदिदि कर्ममें डोंगीका काम होता
है । ३ काष्ठमय स्नानपात्र, लकड़ीका बना हुआ स्नान
करनेका एक बरतन । ४ पर्वत मध्यस्थ देशभेद, दो
पर्वतोंके बीचको भूमि । (पु०) ५ अश्वत्थामा । ६ अष्टम-
मन्वन्तरके एक ऋषि । ७ एक परिमाण जो दो सूर्य
या १२८ सेरका होता था ।

द्रोणिका (स० स्त्री) द्रोणिरिव कायति प्रकाशते कै-क
टाप् । नीलोहृत्, नोलका पौधा ।

द्रोणो (स० स्त्री०) द्रोण डीप । १ देशविशेष, एक
देशका नाम । काष्ठाश्वत्थाहिनी, लकड़ोंका बना हुआ
पात्र, कठवत । ३ कलयाकार-पात्रविशेष, कलशके

पाकारका आकारका प्याना, डोडिया । ४ होमियां, कोटा होना । १ मीलोड्य । ६ पयतमिद, एक पडाडुका नाम । ७ हो पयतोकी चम्बि । ८ इन्द्रविमिडो, इन्द्रायन । ८. श्लोकोत्पथ, एक प्रकारका नमक । १० नदीबिगीय, एक नदी । ११ हिरुपंपरिमाच, एक परिमाण जो दो रूप का १२० बिरका होता था । इसका पर्याय—वाड थोर गोथो है । श्लोच-पडो डीप । १२ श्लोचाचार्यको थो थो ज्यो । १३ कडलो, किला । १४ हुत, योद्धा ।

श्रीबीज (स० श्लो०) श्लोकोत्पथ, एक प्रकारका नमक । श्रीबीज (स० पु०) श्लोका इव इव यज । शितवीपुथ, शितबीजा प्लु ।

श्रीबोसुच (स० श्लो०) श्रीबीज सुच यज । श्रीबसुच । श्रीबोसुच (स० श्लो०) श्रीबोसुच सुच यज । उप कर्णाट देगमसिद्ध सवचबिगीय, एक प्रकारका नमक जो कर्णाटके देगवे पासपाच होता है । इसी बिरिया लोन भी कहते हैं । इसका पर्याय—श्लोचिय, वाडेंथ, श्रीबीज बारिक, वाडेंमच, श्लोको, बिन्नकूटसुच है । इवका सुच—उत्थ, भिदक ज्ञात इतनामाच थोर पय पित्तवर्धक है ।

श्रीबोदन (स० पु०) नि इवतुडि पुत्रका नाम जो याक सुदई बाबा से ।

श्लोच (स० श्लो०) श्लोच इममय यूपमर्ति यत् । इममय यूपमर्ति यथादि ।

श्लोच्य (स० श्लो०) श्लोचि हुत यत्रुसे यग यानो बाहु० थ । हुतथापक बहुत जस्त यौन जानेबाना । श्लोचामय (स० पु०) श्लोचके आन्वकारिक रोगमेद, श्लोचके भीतरका एक रोग ।

श्लोमिन (स० पु०) श्लोचक सुति ।

श्लोच (स० पु०) हुड माथि यम् । १ जिजाया, दूसरेका पढ़ित चिन्तन, बिर, इव । २ इववक इव ग बोखेये मारना । ३ हि सामाज । मनुने निष्ठा है हि प्रत्येक कृतिवामीको श्लोच परिपाम करना उचित है ।

श्लोचबिन्तन (स० श्लो०) श्लोचक चिन्तन इ तत् । परानिदचिन्ता, प्रतिदि बाबा भाव ।

श्लोचट (स० पु०) श्लोचय चटतोति चट-पच । १ बौवास

बतिय, उपरसे दिखनेमें साधु पर मोतर सुरारि रखने बाना । २ चगतुम्बक, चगतया । ३ केर्याकभिद, बेटको एक भाषा ।

श्लोचिन् (स० पु०) श्लोकोऽप्यात्वेति इति, वा हुद्यतोति चिति । श्लोचक, नच जो सुरारि बाधता हो, बेरो, मज्जु ।

श्लोच (स० श्लो०) श्लोच सन्धवति धवहरति पचति वा यम् । १ श्लोचपरिमित आन्वटिके नित्र हृष्यमें समावेयम् । २ तदपकारक । ३ तदपाचक ।

श्लोपायच (स० पु०) श्लोचक अपयज सुमान् पच । यम्बन्तामा ।

श्लोपायचि (स० पु०) यम्बन्तामा ।

श्लोचि (स० पु०) श्लोचक्यापच श्लोच इयम् । १ यम्बन्तामा । २ एक शक्ति जो सुरावातुपार बनतोसर्वे श्वापमें जेम्बि ।

श्लोचिक (स० श्लो०) श्लोचक श्लोचपरिमितकोचक याप इति श्लोच (उत्थ वाप । वा श्लोचक इति उच्यते । श्लोच परिमित कोचवपनयोच्ये चेत, नच चेत जसमें एक श्लोच या इव हीर कोच बोया काय । श्लोचिन कोतः शिवादित्रयात् उच्यते । २ श्लोचकोत । श्लोचं श्लोचपरिमितद्रव्य पचतोति पच उच्यते । (इममयवचरति पचतीति । पा ३।१।३२) ३ श्लोचपाचक ।

श्लोच (स० पु०) हुपदन्वापक सुमान् हुपद शिवादित्रयात् यच । हुपदरात्रपुत्र, हुपद रात्राका कडका ।

श्लोपदो (स० श्लो०) हुपदस्त्रापक श्लो हुपद-पच डीप । हुपदरात्रकथा । पर्याय—वाशाको, कथा, कैरिन्को नित्र योतना, बंदिना थोर पाठशेनो ।

इतका मज्जत नाम कथा है । हुपदको कथा जेने-के कारण इतका नाम श्लोपदो पडा । एका हुपदने श्लोच-से मर्मपौडिन हो कर श्लोचनिवन्ता पुत्रकामके निचे यात्र थोर उपयाच नामक दो श्लोचकोको वा कर पुत्रेदि यत्र जिहा । हुपद थोर हीन वर देको । इस यत्रको यन्त्रिबे श्लोच्य थोर कथाकी उपपत्ति हुई ।

हुप्युन्व देको । महाभारतमें लिखा है, कि कथा या कथन-सुवतो रदी । उनका कथं खामर, पदपास्यके सहाय सुन्दनेव, नीच थोर कुचित किंय तथा सुमनोहर दोनों धौं धौं । उनके शरीरके नीचोत्पन्न मन्त्र निकलतो धौं । मुनिपुत्र होवे समय

वाञ्छनीं नारदं माममि प्रतिष्ठा श्री यो, 'इम
 पाशोर्मिदं किमि एवमि वाम श्रोत्रो ज्वर रक्षेमी तम
 समय कोरिं मो तम श्रोत्रोर्मिं नहिं वा सकता । ओ
 इम नियमका उक्तुन कथिया । इमे वृद्धचारो हो कर
 वारह जव बमोरे रक्षता पड़ेमा । अतुं न रक्षेत्तमये एक
 वार एक त्रिवसथा मनु कररे वारह वर्षं तत्र बमोरे
 रक्षे सि । अतुं न श्री युधिष्ठिर देवो ।

किमो समय युधिष्ठिर दुर्वाचनके माव लुपा चिन्तेको
 पाथ्य हुए । दुर्वाचनके मामा शकुनिके कपटपुत्रने
 युधिष्ठिर चपला मव लुक्क वार मवे । पक्षां तत्र
 कि न चपने भावयोको चपनेको तथा श्रोत्रोको मो
 वार गये । बाद दुर्वाचनके प्रातिष्ठाकोको मरो ममामिं
 श्रोत्रोको कामे मेवा श्रोत्र समय श्रोत्रोने प्रातिष्ठाकोने
 कहा वा, 'रात्रामि पूर पावो नि पक्षे -श्रो'ने चपनेको
 चपया इमे वाकोर्मि रया था । प्रातिष्ठाकोको युधिष्ठिरने
 जब इमका कोरिं उचार न मिला, तत्र दुर्वाचनके कहनेने
 बह पुनः श्रोत्रोको पकडने पाया । श्रोत्रोने किरने
 यह कह कर तमे लोटा दिया कि, 'तुम ममामिं वा कर
 माननीय यत्रियोने पुको, कि चमी इमे क्या करमा
 कर्त्तव्य है ?

इस किर मो प्रातिष्ठाकोको लोट पाया देण दुर्वाचन
 तम पर बहुत विचकें चोर लमी समय तथा ने दुःखामन
 को श्रोत्रोरो पक्षे कामि मित्रा । पुत्र का दुःखामने श्रोत्रो
 को एक मो बात न लुनी चोर बह तत्रे वा दो पकड़
 कबोटा हुआ मरो ममामिं लाया । दुर्वाचनके दुकवे
 दुःखामने श्रोत्रोको मगा करला वाहा । किन्तु कपाने
 कपयाको लात्र रय लो । इम समय श्रोत्रोके कहव रोदन-
 वे भीम बहुत कतो जित हो लठि चोर ममाक कोच लकीने
 प्रतिष्ठा को 'हे दुर्वाचन । वाचनेकोको त्रो वाच दिग
 मारिं है निवध जानो इम कपयाका कुरपुर कर डानू मा ।
 त्रिध दुःखामने कपयाका दिसा चयमान बिधा है, तत्रे
 कपयाकोको काड़ कर वंरु मिये न वात्र चोर तत्रे
 श्रोत्रो काव न र वात्र मो मेवा न म भीम नही ।'
 यद्यार्थमे बुधपेक्षे मी दामनें भागवेनन चपनी प्रतिष्ठा
 पूरी हो ली ।

चपने हुना के वच दुर्वाचनकरने हुनराडु भो विचलित
 १०५ १९७

हुए थे । लकीने श्रोत्रोको तना समय होउ देने कहा ।
 इन समय श्रोत्रोने मो उतराण्डने पतिष्ठा राज्य लोटा
 लिया तथा दामन्य मोचन करया ।

हुराण्डु और युधिष्ठिर देवो ।

येहिं पक्षमे युधिष्ठिर शकुनिके कूटपुत्रने वरान्त हो
 कर जनबामो हुए । इम समय श्रोत्रोने मो वचमण्डको क
 माव बन गई या 'अहां तकें पनेक कष्ट भिन्ने पड़े है ।
 इन कति समय श्रोत्रोने सुप मे एक यानो पाई ली
 यामोने यह गुण वा कि जब तत्र उमका भोजन शिव
 नहीं होता वा, तत्र तत्र वर मरो रक्षतो या । सुतनां
 उमके भोजनके पक्षमे कितने वा मनुवा कहा न वा प्राति
 कोरिं भूखा नाउने मरो पाता वा । दुर्वाचनकां वर
 बात मानू म यी । एक दिन लकीने मर्वाय दुर्वाचनको
 विमियकपने तुत्र कर श्रोत्रोके भोजन कर पुसनेके
 वाट वनेम वा कर तत्रे यदां पातिथ लो वार करनेका
 चतुरोच बिधा । दुर्वाचनो मरिया पाकनके याम
 पकड़े चोर तत्र भोजन करानेको कहा । तम समय
 कपया वा लुको लो । पत मात्रनका प्रथम तत्रो होन
 पर लो मरके मव दुर्वाचनके मापने भन्म ही जायमी
 इम करने के बहुत बिजित हो पड़े । बाद कपयाके
 पात नाउने कपाने वा कर तम पाकनकोने एक जमक
 एक कच मटा हुआ वा तने हो पक्षय कर लिया ।
 इमने कपिया दुर्वाचनको पुका निवृत्त हो गई ।

दुर्वाचन देवो ।

पुत्र जवद्रुपने एक वार श्रोत्रोको वरव करनेको
 चेठा ली, किन्तु तत्रका पाया पर पाता किर मया ।

दुर्वाचन देवो ।

पञ्चातशासक समय श्रोत्रो बिराट-रात्रमद्वियाको
 मेरिष्ठा हुई थी । तम समय काचनेने वन पर मर
 गहारीं वा । यत्नमें इकीको प्राचनाने मामने बोचकका
 वच बिधा ।

महाभारतका मगारिं होनेक बाद कुछ काल तक इमने
 पतिष्ठाके मय सुग भीग किया । महाशयानके समय
 ये मो पञ्चाण्डकाके माव हो ला । चोर मव पतिया
 ले ये चतु मत्रो कपया उक्तु परलो वा । इमो
 दोपके विमानयके लया मरवे पक्ष इकीक माव हुई ।

जिन सब सतो रमणियोंके नाम हिन्दू पुरुष तथा क्रियां नित्य उच्चारण करती हैं, उनमेंसे द्रौपदी भी एक हैं।

ब्रह्मवैवर्तपुराणमें द्रौपदीके पञ्च स्वामीका विवरण इस प्रकार लिखा है—

त्रैतायुगमें रामचन्द्र जब सीताके साथ वन गये थे, उस समय अग्निने उनसे कहा था, कि प्राक्तन दुनिवार्य है, अतएव आप सीताको देखभाल अच्छी तरह किया करें। सात दिनके भीतर रावण सीताको हर ले जायेगा। यह सुन कर रामचन्द्रजीने कहा था, कि आप सीताकी अपने साथ ले जाइये, यहां केवल उनकी छाया मात्र रहेगी। इस बातको सुन कर अग्निदेव सीताको अपने साथ ले गये। सीता-सदृशी छाया उस जगह रह गई। उसी छायाको रावण हर ले गया था। जिस समय सीताकी अग्निपरीक्षा होती थी, उस समय अग्निने छायाको रक्षा कर सीताको कौटा दिया था। उस छायाके नारायण-सरोवरमें सौ वर्ष तक महादेवकी तपस्या को थी। इनकी तपस्यासे तुष्ट हो कर शङ्करजीने उनसे वर मांगने कहा था। छायाके अत्यन्त व्यग्रचित्त हो 'पतिन्देहि! पतिन्देहि,' इस प्रकार पाच बार प्रार्थना की थी। यह सुन कर शङ्करने कहा था, 'अग्नि छाये! तूने व्याकुल चित्तसे पांच बार पतिके लिये प्रार्थना की है, इसीसे हरिके अंशस्वरूप पाच इन्द्र तुम्हारे स्वामी होंगे। अभी वे सब पञ्चपाण्डव नामसे प्रसिद्ध हैं।' पीछे यही छाया द्रुपदके यज्ञकुण्डसे निकली और द्रौपदी नामसे मगधर हुई। ये सत्ययुगमें बंद्दवती, त्रैतामें सीता और क्षापरमें द्रौपदी कहलाई हैं। ये अत्यन्त कृष्ण-भक्तिपरायणा थीं, इसीसे इनका नाम कृष्णा पड़ा। राजा द्रुपदने अर्जुनके साथ इनका विवाह किया था। माताके समाप जा कर अर्जुन बोले थे, 'भाज एक रमणोय भिक्षा मांग लाए हैं।' यह सुन कर कुन्ताने घरके भीतरसे कहा था, 'अच्छी बात है, जो कुछ लाये हो, उसे सब भाई मिल कर बांट लो।' यह सुन कर पूर्व समयके महादेवके वर तथा माता-पिता इन दो कारणोंसे पांचो भाइयोंने मिल कर द्रौपदीका पाणिग्रहण किया था।

(ब्रह्मवैवर्त-श्रीकृष्णवर्मख० १५५ अ०)

द्रौपदेय (स० पु०) द्रौपद्या अपत्यं ढकं । युधिष्ठिरादिसे उत्पन्न द्रौपदीके पांच पुत्र ।

द्रौहिक (स० त्रि०) द्रोहं नित्यं अर्हति छेदादित्वात् ठञ् । नित्यद्रोहाहं, रोजं रोजं वुराई करनेके योग्य ।

द्रौह्य (स० त्रि०) द्रुह्यस्वापत्यं द्रुह्य-श्रिवादित्वात् । द्रुह्यका अपत्य ।

इन्द्र (स० क्लो०) ह्यौ ह्यौ सहाभिव्यक्तौ (इन्द्रं रहस्यमर्यादा-वचनग्युत्क्रमणयश्चात्रप्रयोगाभिव्यक्तिषु । पा ८।१।५) इति सूत्रेण द्विशब्दस्य द्विवचन पूर्वपदस्याम् भावो उत्तरपदस्य नपुंसकत्वं निपात्यते । १ रहस्य, सेदकी बात, गुप्त बात । २ कलह, झगडा, बखेडा । ३ मिथुन । ४ युग्म, दो वस्तुए जो एक साथ हो, जोडा । ५ श्रौतो-प्यादि, दो परस्पर विरुद्ध वस्तुओंका जोडा, जैसे श्रोत उषा, सुख दुःख, भला बुरा इत्यादि । ६ दुर्ग, किला ।

राजाओंके बल बहुत कम है, किन्तु दुर्गवलसे उनका स्थिर बल हो जाता है। दुर्गवल ही राजाओंका बल है। दुर्ग देखो। ७ स्त्रीपुरुष वा नरमादाका जोडा । ८ समासविशेष, एक प्रकारका समास ।

जिस समासमें एक दूसरेको प्रधानता रहती है, उसे इन्द्रसमास कहते हैं। 'उभयपदार्थप्रधानो इन्द्रः' इन्द्रसमासमें समस्यमान दोनों पदार्थोंमें जो प्रधानभावसे प्रतीयमान होते हैं। 'अश्वजौ' 'तालतमालौ' इत्यादिकी जगहमें अश्व, राज, ताल, तमाल आदि जितने पदार्थ हैं, सभी प्रधानभावसे प्रतीयमान हुआ करते हैं। किन्तु सभी जगह इस लक्षणका समावेश नहीं होता। स्थलविशेषमें व्यभिचार लक्षित हुआ करता है। 'हंससारसं दंशमशकं' इत्यादि इन्द्रमें दोनों पदार्थ प्रधानभावसे प्रतीयमान न हो कर तत् समाहाररूप अन्य पदार्थ प्रधानभावसे प्रतीयमान होता है। अतः पूर्वाक्त लक्षण प्रायिक अभिप्रायमें निर्दिष्ट होता है अर्थात् प्रायः सभी जगह तत्तद् लक्षणका समावेश होता है, कहीं कहीं नहीं भी होता। इतरेतरइन्द्रमें दोनों पदार्थकी जो प्रधानता रहती है। 'उभयपदार्थ-प्रधानो इन्द्रः' इस लक्षणमें दोनों शब्द सम्यक् संलग्न नहीं हैं। उभयपदमें जिस प्रकार इन्द्रसमास होता है, वहुपदमें भी उसी प्रकार हुआ करता है। केवल अव्ययी-

भाव समाप्त हो ही पटमें होता है। इन्हें और बहुवचन में भी बहुवचन में पाता है; तत्पुरुष प्रायः सभी अर्थों से पद में आया करता है। कहीं कहीं बहुवचन में भी पाये देवा गया है। इस इन्द्र लक्ष्मण लय शब्दों जगह पत्नी के शब्दों का समावेश था। यथात् समस्त और बहुवचन में दम्पत्यसमाप्त होता है। इससे दो भेद हैं। इतरतर और समाहार। परस्पर योग समझी जाने देव इन्द्रसमाप्त होता है। यथाहरण - हरिहर, यहाँ पर हरि और हर पदात्म में परस्पर योग समाप्त आता है। इसीसे यहाँ इन्द्र समाप्त हुआ। 'सव्यदिरपत्न्यास' यहाँ पर सव्य, सव्यदिर और पत्न्यास इन तीन पदार्थों का परस्पर योग समाप्त आता है। इतरतर इन्द्रसमाप्त होनेसे दो पदों में भाव यदि समाप्त हो तो द्विवचन और यदि बहुवचन में सव्य समाप्त हो, तो बहुवचन होता है। जैसे—'हरिहरों' 'सव्यदिरपत्न्यास' इत्यादि। दो वा पत्नी पदार्थों का समाहार होनेसे इन्द्रसमाप्त होता है। समाहार इन्द्र समाप्त होनेसे द्विवचन और एकवचन होता है। किन्तु इतरतरइन्द्रमें पदपदा का द्विवचन होता है। इन्द्रसमाप्तमें सव्य, तुर्वाङ्ग और सिन्हाङ्गवाचक पदका समाहार होगा, यथा—'पापक पापक पापिपाद' यहाँ पर इतरतर इन्द्र का सव्यदिरपत्न्यास समाप्त हो कर 'पापिपाद' ऐसा हुआ। निम्नका भेद रहनेसे नदीवाचक शब्दका समाहारइन्द्र होगा। पुंलिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग का द्विवचन परस्पर विभिन्न लिङ्ग होने पर भी होगा। यथा—'गङ्गा' मोच्य गङ्गा मोच' यहाँ पर पुंलिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग मोच और गङ्गा शब्दका समाप्त हुआ, इस कारण द्विवचन में अनुनास समाहारइन्द्र हुआ। किन्तु 'गङ्गा' अनुनास 'गङ्गायतुने' ऐसा होगा स्त्रीलिङ्ग गङ्गा और अनुनास दोनों स्त्रीलिङ्ग शब्द हैं। यहाँ पर लिङ्गभेद न होनेसे कारण इतरतर इन्द्र हुआ, समाहार नहीं।

लिङ्गभेद रहने वा देववाचक शब्दका समाहार होता है। यथा—'हरणक कुचवेचन' यहाँ पर पुंलिङ्ग और स्त्रीलिङ्गका भेद होनेसे समाहार हो कर 'हरणकुचवेचन' ऐसा हुआ।

बहुवचनमें पदवाचक बहुवचनवाचक और सव्यदिर वाचक पदके द्विवचनमें समाहार होता है। यथा—'गावक

सव्यदिर' यहाँ पर पदवाचक शब्द भी बहुवचन हुआ है, इसीसे 'गोमि'य' ऐसा समाहारसमाप्त हुआ। किन्तु यह यदि एकवचन होता, यथा—'गोय सव्यदिर' ऐसा वाच्य होता तो समाहारइन्द्र न हो कर 'गोमि'यो ऐसा इतरतरइन्द्र होता। बहुवचनमें पदवाचक, एक वाचक और तत्वाचक पदका द्विवचनमें समाहार होता है।

जो सब शब्द परस्पर द्विवचनमें होते हैं उनसे बहु वचनमें तद्वाचक पदका द्विवचन समाहार होता है। यथा—'पादिका द्विवचन समाहार होता है। पूर्वपर पादिका द्विवचनमें समाहार हुआ करता है।

परस्पर द्विवचन पदार्थोंका द्विवचनमें समाहार होता है। शून्यको पदका द्विवचनसमाहार हुआ करता है। द्विवचन पादिका समाहार नहीं होता।

समाप्त करनेमें समाप्तके बाद जो प्रत्यय आये जाते हैं उन्हें समाप्तका शब्दते हैं। इन्द्रसमाप्तमें त्रिसुक्ता उत्तर समाप्तका होता है उसका विषय कहते हैं। समाहार इन्द्रमें चर्वाणात् टकारान्त यकारान्त और इन्द्र शब्दोंके उत्तर प होता है यथा 'वाट् लक्ष्मण' यहाँ पर लक्ष्मण इन्द्र शब्दके द्विवचनमें एक प्रकार हुआ, इसीसे 'वाट् लक्ष्मण' ऐसा शब्द बना। बिना सव्यदिर और मोच सम्बन्ध रहनेसे तदा लकारान्त शब्द परवर्ती होनेसे लकारान्त शब्दके उत्तर टा होता है। लकारका लोप होता है, पाकार रक्ष जाता है, यथा—'होता च पोता च' यहाँ पर समाप्त होनेसे होतपोत ऐसा होगा, किन्तु इस शब्दके समाप्तकार होतके लकारके स्तानमें टा हो कर होता हुआ पोके 'होतापोत' ऐसा हो कर द्विवचनमें 'होतापोतारो' ऐसा बना।

इन्द्रसमाप्तमें पुत्र शब्द यदि पोके रहे, तो त्रिसुक्ता शब्दके उत्तर टा होता है। यथा—'पिता च पुत्र' यहाँ पर द्विवचन न हो कर द्विवचनके लकारके स्तानमें टा हुआ, अतएव 'पितापुत्री' ऐसा पद बना। द्विवचनवाचकपदका इन्द्र होनेसे पूर्वपदके उत्तर टा होता है यथा 'रक्षा बद्ध' 'मित्रावद्ध' इत्यादि। समाप्तकारपतिके उत्तर टा नहीं होता। यथा—'रक्षा च रक्षापति' यहाँ पर 'रक्षापतिपति' ऐसा न हो कर 'रक्षापतिपति' होता है।

द्वन्द्वसमासमें सोम और वरुण शब्द यदि पीछे रहे, तो पश्चिम शब्दके उत्तर प्रत्यय होता है, त (इत्) चना जाता है, तबल प्रकार रत्न जाता है। दिव्य शब्दके साथ समास होनेमें पूर्ववर्ती दिव्य शब्दको जगत् या वा होना है। यथा—'सोम भूमि' यहाँ पर दिव्य शब्दको जगत् या वा पाठिग ही घर 'यावाभूमो' ऐसा हुआ। यदि एतलो शब्द पीछे रहे, तो दिव्य ही जगत् या वा और 'दिव्य' होना है। यथा—'आजाहृदितो दिव्यपथितो' द्वन्द्व समासमें 'मातापितरो' यह पठनियत प्रयुक्त सिद्ध होता है। जाया और पति शब्दमें समास होनेमें 'दम्पती, उम्पती और नायपती' ये तीन पठ होगे। द्वन्द्वसमास होनेमें 'स्तोत्रं' आदि पठ निपात प्रयुक्त किए होते हैं।

एकशेषद्वन्द्व - एक विभक्ति होनेमें समानाकार पदों का एक साथ बच जाता है। द्विपदका एक शेष होनेमें अवशिष्ट पद बह्यचनान्त होता है। यथा—'तस्य तस्य तस्य' यहाँ पर एक तस्य अवशिष्ट रह गया और दो पदके साथ समास हुआ है, इस कारण 'तस्य' द्विचनान्त हुआ। शेषपद फलत् फलत् फलत् फलानि' यहाँ पर तीन पदोंके साथ समास हो कर एक पद अवशिष्ट रह गया और फल शब्दमें बह्यचन हो कर 'फलानि' ऐसा पठ बना।

समानाकार श्लोकाद्यक पदके साथ समास होनेमें पुरुषवाचक पद अवशिष्ट रहता है। यथा—'ब्राह्मणश्च ब्राह्मणी च ब्राह्मणी' यहाँ पर पुरुषवाचक ब्राह्मणपद अवशिष्ट रहा और उसमें द्विचन ही घर 'ब्राह्मणी' ऐसा हुआ। स्तोत्रिक निमित्तान् आप, ईप, आदि विशेष व्यतिरिक्त प्रत्यान्त पदोंमें समानाकार होना प्रायशक्य है। किन्तु शब्दका स्वरूपगत वलक्षण रहनेमें नहीं होता, यथा—'हंसश्च सारसो च' 'हंससारस्यो' ऐसा पठ हुआ।

व्यक्ति विशेषके संज्ञावाचक पदका एकशेष नहीं होता। यथा—'इन्द्रश्च इन्द्राणी च' यहाँ पर एकशेष हुआ 'इन्द्रेन्द्राण्यो'।

स्वल्पके साथ भ्रातृका और दुहितृके साथ पुत्रका समास होनेमें भ्रातृ और पुत्र पद अवशिष्ट रह जायगा। यथा—'भ्राता च स्वसा च' यहाँ पर भ्रातृ शब्द अवशिष्ट रह

और द्विचनमें 'भ्रान्तरो' ऐसा हुआ। 'पुत्रश्च दुहिता च पुत्रो' यहाँ पर पुत्र पद अवशिष्ट रहा। स च शब्दके साथ समास होनेमें द्विच शब्द विकल्पमें अवशिष्ट रहता है।

यथा—माता च पिता च, इम वा इयं 'पितरो' और 'मातापितरो' ये दो पठ होगे।

सङ्घ शब्दके साथ समास होनेमें शब्द मात्र विकल्पमें अवशिष्ट रहता है। यथा—'सङ्घ सङ्घ' इन दो पदोंमें 'सङ्घो' और 'सङ्घसङ्घो' ये दो पठ होगे। नपुंसक भिन्नके साथ नपुंसकका समास होनेमें नपुंसक शब्द अवशिष्ट रहता है और तदुत्पन्नमें विच पद अवशिष्ट रहता है। किन्तु नपुंसका नपुंसकके साथ समास होनेमें उक्त वचन नहीं होता। सुशोभोपसाहरणमें द्वन्द्वसमानाकार 'न' पदो संज्ञा का गठ है। हिन्दीमें यह समास "बोर" आदि संज्ञाशक पदोंका साथ बनाया जाता है, जैसे, 'राज बोर पाँव' में 'राज पाँव' रात और दिन में 'रात दिन' इत्यादि।

द्वन्द्वगट (सं० पु०) इन्दोदपो गट । रागदोपादि रूप रोग ।

द्वन्द्वघर (सं० पु०) इदं न परतीति चर-पच । चक्रनाज, चक्रथा । यह यहाँ जाता है, यहाँ श्लोकों का द्विच फिरेता है, इसीसे इसका नाम चर-पच पड़ा है।

द्वन्द्वचारिन् (सं० पु०) दंष्ट्रेण चरनाति चर-णिनि । चक्र-याक, चक्रथा ।

द्वन्द्वज (सं० द्वि०) दंष्ट्रात् जायते जन-उ । १ वायु, पित्त और कफ नामके विदोषोंमेंसे दो दोषमें उत्पन्न रोग । २ सुष, दुःख, रागदोष आदि दंष्ट्रोमें उत्पन्न ।

द्वन्द्वयुद्ध (सं० क्री०) द्वयोर्द्वयो युद्धं । बह लड़ाई जो दो पुरुषोंके बीचमें हो, कुर्ती ।

द्वय (सं० क्री०) द्वौ पक्षयो यच्च द्वि-अपयवे तयप् (सं० भाषा अवयवे तयप् । पा ५।२।४२) १ द्वात्मक, दो । इसका पर्याय—उभ, द्वि, युगल, द्वितय, युग, द्वैत, यम, दंष्ट, युग्म, यमल और यामल है। स्त्रियां ड.प. । द्वौ अवयवे यस्य अयच । (द्वि०) २ द्वित्वान्वित, दोहराया हुआ ।

द्वयस (सं० द्वि०) पाणिशुक्त प्रत्ययविशेष, पाणिनिका एक प्रत्यय ।

हिन्दी विश्वकोष

संस्था विश्वकोषके सम्पादक
श्रीमन्नन्दिनाथ वसु प्राध्यविद्यामहाशय्ये,
विद्याल-वार्दधि, सदाशिवपुर, काशीविशालनि १०१, १०२, १, २, ३,
तथा हिन्दूवि विद्यानी द्वारा सङ्कलित ।

दशम पाण

[लोडिन्-दादममाष]

THE ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. X.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU, Prāchyavikhyāmahārṇava

Siddhānta-vārdhi, Śabda-ratnākara, Tattva-chintāmani, M. R. A.

Compiler of the Bengali Encyclopædia; the late Editor of Bengali Śāhitya Patrika

and Klyāntia Patrika; author of Causes & Sects of Bengal, Mayura

śāstra, Archaeological Survey Reports and Modern Buddhism;

Hony. Archaeological Secretary Indian Research Society

Member of the Philological Committee, Asiatic

Society of Bengal; &c. &c. &c.

— 3 —

Printed by P. C. Bose at the Vidyakosha Press.

Published by

Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu

9 Vidyakosha Lane, Bagbazaar, Calcutta

1925.

गानि यस्य । शुभनक्षत्रान्वित, महापुरुष लक्षणयुक्त मनुष्य अर्थात् वह मनुष्य जिसने ३२ शुभ लक्षण हीं । जिसके शरीरकी लंबाई और चौड़ाईया परिमाण १०८ अंगुल हो, चमड़ा, बंग, उंगलें, दांत और उंगलीयें पंच मसूह ये पांच सुख्य हो, जिसके हाथ, शीर्ष, टुड्डो, घुटना और नाक ये पांच लम्बे हीं, जिसके वक्ष, कुक्षि, अलक (कल्लेदार वान), कन्धा, छाथ और मुँह ये छह उन्नत हीं, जिसके हस्ततन, नीलका कोण, नालु, जिह्वा, अधर, श्रोत्र और नख ये सात रक्त वर्ण हीं, जिसके ललाट, कटि और वक्षःस्थल विस्तीर्ण तथा छाथ कक्षपका पोठ की नाईं स्थिति हीं तथा जिसके टीनों पांच कोमल हीं वे हो राजराजिखर हो सकते हैं । ये सब महापुरुषके लक्षण हैं ।

काशीखण्डमें लिखा है, कि जिनके पञ्चावयव दोष और सुख्य हीं, सप्तप्रदेश रक्त वर्ण, षट् प्रदेश उन्नत और त्रिप्रदेश पृथु, लघु और गम्भीर हीं, वे सब ऊपर प्रपन्ना आधिपत्य जसाते हैं । इन ३२ प्रकारके लक्षणको द्वात्रिंशत्क्षण कहते हैं । ये लक्षण बहुत प्रभ माने जाते हैं ।

द्वादश (सं० त्रि०) द्वादशिका दश तनो भात्वं (द्वादश इति । पा ६।३।७) जो संख्यामें दश और दो हो, बारह । द्वादशवाचक शब्द—सूर्य, मास, राशि, संक्रान्ति, गुहवाहु, सारिकोष्ठ, गुहनेत्र और वाजमण्डल है । द्वादशानां पूरणः इति उट् (तस्य पूरणे उट् । पा ५।२।४८) २ द्वादश संख्याका पूरण, बारहवां । (पु०) ३ बारहकी संख्या या अंक । ४ महादेव, शिव । द्वादशव (सं० त्रि०) द्वादश संख्यास्य कन् । द्वादश संख्यान्वित पण रूप टण्डादि, बारहका ।

द्वादशकर (सं० पु०) द्वादशकरा भुजा यस्य । १ कार्त्तिकेय । २ बृहस्पति । ३ शूलयोग । ४ हर्षणयोग । ५ बुभुक्षानुचरणभेद, कार्त्तिकेयका एक अनुचर । (स्त्री०) ५ भैरवोभेद ।

द्वादशतैलो—वहलकै निम्नयोगोस्व तैलियोकी एक शाखा ।

द्वादशन् (सं० त्रि०) दो च दश च द्वादशिका वा दश ।

१ जो संख्यामें दश और दो हो, बारह, १२ । २ द्वादश संख्यायुक्त, जिसमें बारहको संख्या हो ।

द्वादशपत्रक (सं० को०) द्वादश पत्राणि पत्राणि यस्य योगविधेय, बारह पत्रोंका भगवान्के मन्त्ररूप का प्रकारका योग जिसमें वैशाखादि बारहों मासको कल्पना की गई है । 'श्रीं नमो भगवते वासुदेवाय' यज्ञो वारह अक्षरका मन्त्र है । इनके विषयमें वामनपुराणमें इस प्रकार लिखा है । स्वयं पितामहने मनःकुमारका द्वादशपत्रक योगका शिक्षा देकर उनमें कृपा की—

जिह्वासंख्य शोकार मन्त्र, सप्तराशि, वैशाखमास पञ्चमास पत्र है । नकार ललाटेऽग्रे ह्यपराशि, चैत्रमास दूमरा पत्र है । लोकार वाह्यगुण, मिथुनमन्त्रियत, प्राषाढमास तोमरा पत्र है । भकार पञ्चमगुण श्रोत्रोंका टोनी विरनी) कंठरागिसंस्थित, चावणमास चोया पत्र है । गकार हृदय मन्त्ररागिसंस्थित, भाद्रमास पाववां पत्र है । वकार वाक्पानिचय ऊचारागिसंस्थित, प्राग्विनमास छटा पत्र है । तेकार अस्त्रमसूह तुलारागिसंस्थित कार्त्तिकेयमास सातवां पत्र है । लकार नाभिदेग हृदिकारागिसंस्थित, अश्लेषमास आठवां पत्र है । सुकार जगन्मिथुन घनुरागिसंस्थित, वीषमास नवां पत्र है । टेकार उम गुणमकररागिसंस्थित, माघमास दशवां पत्र है । वाकार ऊरुगुण, कुभारागिसंस्थित, फाल्गुनमास ग्यारहवां पत्र है । यकार टीनों चरण सीनरागिसंस्थित, चैत्रमास बारहवां पत्र है । 'श्रीं नमो भगवते वासुदेवाय' यज्ञो वारहवर्णका चक्र है । आठवर्णमें नाभिदेशमें द्वादशवर्णको एक मूर्त्ति है । यही द्वादशवर्णका द्वादश पादयोग है । जो इस योगसे अच्छी तरह अवगत है, उनका पुनर्जन्म नहीं होता है ।

(वामनपुराण ३२ अ०)

द्वादशपत्रिका (सं० स्त्री०) शताह्वाख्या लुप, शोफका पोषा ।

द्वादशपुत्र (सं० पु०) श्रीरमादि द्वादशविध पुत्र, बारह प्रकारके पुत्र । इनका विषय विशुद्धिहितामें इस प्रकार लिखा है—

पुत्र बारह प्रकारके होते हैं । अपनी संस्कृता स्त्रीसे उभादित पुत्र औरस है, यही पद्मला है । नियोगधर्मा-

कुमारि मणिक, मनीष, मयन या लतामयन के लया
 दित पुत्र सेवक है, यह दूत है। लतामयन लता
 तोसरा है। इनका जो पुत्र होता वही मिरा पुत्र होगा,
 पर्याप्त आहारि कार्य करो होया, यह उक्त कर पितामि
 जो लया दी जाती है, वही सुखिका है। आर्यजोना
 अन्धाश्री भी पुत्रिका कह कहते हैं।

श्रीवा पोतनं पुत्र। पुनः क कृता पर्याप्त जो पात्रा
 मारके साय परिशोता यथात् पर्याप्त पशुपमुखा जोने पर
 मी काम द्रणा हो, उसे पुनर्मु कहते हैं और परोधमुखा
 पुनः क कृता यथात् सिद्धका पक्षी साय काम द्रण पोर
 दूतके पात्र विचार ऐसा नहीं होने पर भी जो देवन
 दूसरे पुत्रके क सर्गसे सुपिन हो गई हो वह भी पुनर्मु
 कहलाती है। ऐसी श्रोमि जो पुत्र उत्पन्न होता है उसे
 पोतन कपुत्र कहते हैं। पात्रका आनोनपुत्र यथात् वह
 पुत्र जो किमो अन्धाश्री कुमारी पवत्रामें पैदा हुआ
 हो। ऐसा पुत्र हम पुत्रपत्रा आनील पुत्र कहनाता है
 त्रिमको वह अन्धा श्रुती जाय। कृता गूणोत्पन्नपुत्र
 पर्याप्त पतित्र कर रहते हुए भी पत्नीमि जो पुत्र किमो
 सुम आरसे पैदा किया हो उसे गूणोत्पन्नपुत्र कहते हैं।
 त्रिष पत्नीके वह पुत्र उत्पन्न होगा वह पुत्र उसीका मम-
 भ्रमा चाहिये। मातर्मा परोधपुत्र, जो श्री गर्गवन्धा
 में व्याप्री जाय, समये लन मनीषत्र पुत्रको परोध कहते
 हैं। वह पुत्र पात्रिपात्रका होता है। पात्रका दत्तक
 पुत्र, मातापितामि अपना पुत्र त्रिष दे दिया हो, वह
 पुत्र कसोका कहनाता है। इतक देखो। नर्मा कृतपुत्र
 त्रिषके जो बानक आरशा गथा हो वह कभीना पुत्र
 होता है। इमर्मा स्वयमुपायन, त्रिष बानकमि यनायय
 हो कर पित्रसम्बोधनपुत्र के लय दिमो दूतके मरच
 जो हो, उसे लय उपायन कहते हैं। त्रिषका भायप
 सिधा है, वह कसोका पुत्र जाता है। म्मारहर्मा अपवित्र
 पुत्र, मातापिताके परिश्रम पुत्रको अपवित्र कहते हैं।
 जो इन पुत्रको पश्य करता, वही कथका पिता समभा
 जाता है। इसो दूसरी श्रोमि उत्पादितपुत्र आरहर्मा
 है। इन आरहर्माके परोक्षितको अपिधा पुत्र सिधित
 पुत्र हो म्वाल है। ये सब पुत्र विताके अनाधिकारो होते
 हैं। (रिन्दुपुत्र २३ अ०)

अभिषन्धिनामि मी आरह म्मारके पुत्रोका उक्त
 है। तथा—व्याप्री हुई अपनी श्रोमि गर्गवे लय जो पुत्र
 उत्पन्न करे, वही पक्षना है। इस पुत्रके नर्मा जोनेके
 निपुत्र अपनी पत्नीका मम जात सेवक पुत्र दूत है।
 पुत्रिकापुत्र तोसरा है। अभिषन्धिपुत्र का किमो पात्रको
 दो हुई आर्यजोना अन्धा पिताका पुत्र समझी जाती है।
 उस अन्धासे जो पुत्र उत्पन्न होता है वह मातामयका
 पुत्रक मान करता है कथा मो है कि 'मि तुमको अन्धा
 गृह्या मम कृता अन्धा दात देता हूँ, इससे गर्गसे जो
 पुत्र होगा वह मिरा पुत्रकाय' करेगा।' पोतनं पुत्र
 बोया है जो श्री नाम दान दिवे हुए स्वामीको परिश्राव
 कर दूतके सात्र सङ्ग्राम करतो है, उसे पुनर्मु कहते
 हैं, एक जो श्री श्रोव पतित्र वा लम्पत आनीको परि-
 श्राव कर पयमा अपने श्रायोके मरने पर दूसरे पुत्रसे
 विचार करतो है उसे भी पुनर्मु कहते हैं। आनोनपुत्र
 पात्रका है। कुमारी पवत्राम पिताके घर जो पुत्र उत्पन्न
 हो उसे कानोन कहते हैं। पित्रताका कथना है कि
 उसे मातामयका पुत्र समझना चाहिये और वह पुत्र
 मातामयका पित्र देता और अनाधिकारो होता है।
 सुम आरसे जो पुत्र उत्पन्न होता है, वह दत्त है। आरह
 म्मारके पुत्रमिने यह पुत्र उत्तराधिकारो होता और
 पिताको विपक्षे परिश्राव करता है। श्रेय क' म्मारके
 पुत्र अनाधिकारो नहीं होते हैं। पक्षना कसोके पुत्र
 गर्भोन्मासि व्याप्री हुई श्रोमि गर्गवे जो पुत्र उत्पन्न
 होता है, उसे कसोके कहते हैं। दूसरा दत्तकपुत्र विता
 और माताके प्रदत्त पुत्रका नाम दत्तक है। तोसरा जात
 पुत्र दानधियेकविश्वरन्मि इस पुत्रका उक्त है। पूव
 यनयने राजा हरिषन्दने पत्रोगतको लुह मर्मा तोका
 बनाद दे कर लनका पुत्र करोदा था। श्रीवा स्वयमुपायन
 पुत्र, इसको कथा दानधियेकविश्वरन्मि इस प्रकार लिखी
 है—पुत्र समयमें यूपकाठमें वह होकर दानधियेक
 देवता वींका पत्र किया। लन देवतापामि उके अन्धमने
 सुन्न कर दिया, तब अन्धमने मन्त्र कहने लगे, कि यह
 बानक हम आर्गोका पुत्र होया। इस पर किमीने
 अन्धमने कहा, कि आप लोम इने अपना पुत्र तो
 बनाया चाहते हैं पर वहुतो का एक पुत्र होना असम्भव

है। बाट उन्हीं ने यह स्थिर कर दिया कि यह बालक जिसका पुत्र होनेकी इच्छा करेगा, उसीका यह पुत्र कहलायेगा। उस यज्ञमें विश्वामित्र होता था, शनःसेक उन्हींका पुत्र हो गया। पांचवा अपविद्ध पुत्र है, जो पुत्र मातापितासे परित्यक्त हो कर दूधरेके घरमें माता-पोसा जाता है, उसे अपविद्ध कहते हैं। छठां शुद्धपुत्र है। ये छः प्रकारके पुत्र धनाधिकारो नहीं हो सकते। पहलके छः और पीछेके छः यज्ञे वारह प्रकारके पुत्र हैं। यदि पूर्व-वर्णका कोई उत्तराधिकारो पुत्र न रहे, तो ये मत्र धनाधिकारो हो सकते हैं।

द्वादशप्रश्न (सं० वि०) द्वादश प्रश्नतयः मन्व्यत्र अत्र । द्वादश प्रश्नतयुक्त सुश्रुतोक्त वस्तिभेद । इसका विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—एक अन्नमैश्वर्य और दो पसर मधुको मिलाते हैं। बाट उसमें दो पसर चोड़ डाल कर पुनः मशते हैं। अच्छी तरह मशे जानैके बाद एक पसर कल्क, चार पसर कपाय और अन्नमें प्रलेप द्रव्य दो पसर डाल देते हैं। इस तरह वस्तिद्रव्य बाहर पसरका कल्पित हुआ है। पूर्णमावाका यज्ञे परिमाण है। मात्राके कम होनेसे उसीके अनुसार प्रश्न (पसर) भी कम होगी। इस तरह यदि मैश्वर्यसे ले कर तरल पदार्थके सहयोगसे निरुद्ध वस्तिको कल्पना की जाय, तो उनका परिमाण वयसके अनुसार समझना चाहिये।
(सुश्रुत चिकित्सितस्थान ३८ अ०)

द्वादशभाव (सं० पु०) द्वादश गुणितो भावः। ज्योति-
स्तत्त्वोक्त तन्वादि द्वादशभाव, फलित ज्योतिषमें जन्म कुण्डलोके वारह घर। जन्मकालके लग्नस्थानसे तनु आदि राशियोंके वारह नाम निर्दिष्ट हुए हैं, इसीसे इसको द्वादशभाव कहते हैं। इसका विषय दौषिकामें इस प्रकार लिखा है,—जन्मकालीन लग्नसे पहले घरमें तनु अर्थात् शरीर चौध होगा कि स्थूल, सबल कि निबल, लम्बा कि नाटा तथा शिथिल कि दृढ़का विचार करना चाहिये। लग्नसे दूसरे घरमें धन और कुटुम्ब, तीसरेमें युद्ध और विक्रम; चौथेमें बन्धु, वाहन, सुख और आलस्य, पांचवेंमें बुद्धि, मन्त्रणा और युद्ध; छठेमें क्षत और शत्रु; सातवेंमें काम, स्त्री और पथ; आठवेंमें आयु, मृत्यु, अपवाद वा पापचिन्ता, नवेंमें शुक, माता, पिता,

तप अर्थात् पुण्य, भाग्य और मन; दशवेंमें मान, शान्ता और कर्म, ग्यारहवेंमें प्राप्ति और आय (प्रश्रुटोपिकाके मतमें विद्या और अर्थको प्राप्ति) तथा बारहवें घरमें मन्त्री और व्ययका विचार किया जाता है।

यह जो वारह भावके विषय कहे गये उनमें पूर्वोक्त भावस्थित ग्रहण यदि शुभ अथ हीं और अपने अपने भावके अधिपति ग्रहसे देखे जाते हों या नहीं भी देखे जाते हों अथवा मिने हुए हों, तो उस भावको हानि समझनी चाहिये। जिस जिस भावमें जो सब विचार कहे गये हैं, उनका फलाफल निर्णय करने समय उस भावा पत्र राशि एवं उसके अधिपति कुल सोम्य इत्यादि ग्रहों का वर्ण और प्राकृतिक शब्दें राक्षाभा प्रभृति, स्थूलता, और स्वयंता एवं राशिकी बलाघन और वे किस तरहके फल देनेमें समर्थ हैं इन सबको विवेचना करके उक्त फलोंका विचार करना पड़ता है।

शुभग्रह एवं अधिपतिग्रहसे देखे जाने पर जिस फलका आधिक्य कहा गया है, उसका वासस्थान भी समझना जाता है। छठे स्थानमें शत्रु और व्रण, आठवेंमें मृत्यु, अपवाद वा पाप; बारहवेंमें व्ययको इसका विपरीत समझना चाहिये। इसका तात्पर्य यह है, कि—यदि कोई ग्रह छठे स्थानमें रह कर शुभग्रहसे देखा जाता हो वा युक्त हो, तो व्रण और शत्रुको हर्षि न हो कर उनका हानि होता है। फिर वह ग्रह यदि उसी स्थानमें रह कर पापग्रहसे देखा जाता हो अथवा युक्त हो तो उनकी हर्षि समझनी चाहिये। आठवें वा बारहवें स्थानमें यदि ऐसे शुभग्रह और उसके अधिपति ग्रहसे देखा जाता हो, तो फलको हानि और यदि पापग्रहसे देखा जाता हो वा संयुक्त हो, तो फलका आधिक्य समझना चाहिये। आठवें स्थानमें मृत्यु एवं अपवादका विपरीत फल कहा गया है। इसीसे केवल इन्हीं दोको विपरीत फल होगा न कि आयुका। बारहवें स्थानमें एक मात्र व्ययका विपरीत फल कहनेसे सिर्फ उसीका विपरीत फल होता है न कि मन्त्रीका।

तनु प्रश्नित जो वारह प्रकारके भाव कहे गये हैं उनमेंसे समस्त भावापन्न ग्रहोंको स्फुट गणनाके सिवा उनके फलाफलका विचार नहीं हो सकता है। जिस

तरह काय ज्ञानको तनुभाव पीर उससे पोछेको रायिको ब्रह्मभाव कह कर उन स्वानर्त को यह रवेगा उसे ब्रह्मभाव समझ कर यदि उसका जन्मापन्न लडा जाय, तो माझोकर फलसे मृत पड्न जाता है। यदि यह स्फुट करके गचना को जाय तो सब फलके साथ एकसा होता है। इसी कारण रविप्रथति पदका स्फुट, पीछे भाव पीर भावसन्धि इत्यादिको यचना करना उचित है। पहले पदको स्फुट गचना करके पीछे फलाफलका विचार करना चाहिये।

तन्वादि बारह भावके जिस जिस भावमें जो पद रहे, वे यदि सब प्रथमसे सुचित पदका जोमित हो, तो यह मनुष्य दुःख पाता है। पच्छिन्ताको तन्वादि बारह भावोंके समी भावमें पदको रचित हा। उनके लक्ष्यतादि भावको विवेचना तथा उन सब पदको ब्रह्म-ब्रह्म विचार करके फलका निर्णय करना चाहिये। यदि तन्वादि बारह स्वानर्तके जिनको स्वानर्त दो का उन से अधिक यह रहे पीर विभिन्न भावके जो, पद्यवा एक लक्षित एक रचित इत्यादि को पद्यवा तीन भावों से युक्त हो, तो निश्चयन समझना चाहिये। यदि वे सब यह दुःख हो, तो फलको ज्ञान पीर यदि सबन जो मो लक्ष्य फल होता है। जिसके सम पदार्थ दशमें ज्ञानमें लक्षित रचित, सुचित पद्यवा जोमित कोर यह रहे, तो यह मनुष्य दुःख पाता है। जिसके पांचमें स्वानर्त लक्षित कोर यह रहे उसको सब मन्तान लड हो जाता है किंचद एक लवी रहतो है। सुचित पद्यवा जोमित कोर यह यदि बर्षके लखके मातमें ज्ञानमें रहे उसको लोका भाग होता है।

पदोंके शयनादि बारह भाव हैं, उदा-शयन, उपवेशन, शिवादि-पञ्चायन, बर्षमेंका, शयन समावसति, पाग मग, भोजन, नृत्त, शिवा, कोतुल पीर निद्रा। रवि पादि नवग्रहके शयनादि बारह भावका यदि निष्पद्य करना रहे तो सब ममक पद्यवच जिस ममकमें रहती हैं सबसे पहले लोका विचार करके उसी पद्यवहित ममक हाप पद्यको गुचा करना चाहिये पीर पद्यवच शय लक्षित जिस लक्ष्यमात्रमें रहती हैं उसी लो पद्यके उक्त गुणलक्षको गुचा करना पड़ता है। पीछे

पद्यके यदने यदने लक्षणलक्षणको उस पद्यमें जोड़ कर लक्षणलक्षणको मन्त्रा तथा लदपादधि ज्ञानदण्ड लक्षमें मिलाया पड़ता है। इस तरह जो पद्य बनेगा उसे १२से मात टनेने उस पद्यम प्याका बारहवा भाव मान म जो जायगा। पर्याप्त यह शिवादि १२ रहे तो शयनभावको विवेचना करनी चाहिये।

रविप्रथके शयनादि भावको गचना करते समय बारह इतावगिष्ट पद्यमें १ जोड़ना पड़ता है पीर बन्ध प्रथके तीन मङ्गलके दो, बुधके तीन, शुकप्रतिके पांच मङ्गलके तीन, शनिके तीन, राहुके चार पीर शिषुके पांचको जोड़ कर भावका विचार करना चाहिये। युक्ताह यदि बारहसे अधिक हो, तो पुनः उसे १२के भाग दे कर जो शेष सब रहे उसमें भावका जोष होता है। यदि ज्ञत शिवादि एक हो तो शयनभाव इसी तरह भावमें प्रथे निर्णय कर लेना चाहिये।

रविको ११ विगाथा, चन्द्रको १ लक्षिका, मङ्गलको २० नूर्वापाका कुपको २२ यक्षका, लक्ष्यतिको ११ पुत्र लक्ष्युको, शुकको १० पुत्रा, शनिको २० पितो राहुको २ मरको पीर शेषको ८ पद्यवा से सब पद्यके लक्षणलक्षण नाममें प्रनिह हैं।

इस शयनादि हादप्रभावमें बहुत मतभेद देखा जाता है। मतांतरमें शयनादि हादप्रभाव। शयनादि हादप्र भावका यदि विचार करना हो, तो रविप्रथति पद्यवच जिस रायिमें हो, उस रायिके पद्यके शिवादि पद्य लक्ष्य पद्यको गुचा करना चाहिये। फिर लय पद्यको ८८के गुचा कर जिस पद्यके भावको यचना करनी हो, उसो पद्यका लक्षणलक्षण जममें जोड़ देना चाहिये। पीछे लक्ष्यको मन्त्रा पीर ज्ञानदण्ड परिमित यह लक्षमें जोड़ कर १२के भाग दे कर जो शेष बचे लमोके ज्ञानमा शय नादिभाव खिर करना चाहिये।

दूधरा मीह। जिस रायिमें यह रहे, उसी रायि परि मित पद्यके पद्यको म प्याको गुचा कर फिर उसे ८के गुचा करती हैं पीर जिस पद्यका भाव ज्ञानमा हो लय पद्यका लक्षणलक्षण एक ज्ञानदण्ड पीर लक्ष्यपरिमित यह गुणलक्षणमें जोड़ कर १२के भाग देती हैं। शेष लो बचे लक्ष्यको भावको लक्ष्य समझना चाहिये।

तोसराभेट ।—जिस राशिमैं ग्रह रहे, उस ग्रहको दूना करके १५से उसे गुणा करते है वाट जिस नक्षत्रमें ग्रह हो उस नक्षत्रके ग्रहको पूर्व गुणनफलमें जोड़ कर १२से भाग देते है, अब भागशेष जो बचे उसीसे द्वादशादि भावका कौन भाव है, वह मालूम हो जायगा । एक उदाहरण देनेसे ही साफ भाव मालूम हो जायगा ।

मान लो, कि कोई बालक वृषभलग्नेमें पैदा हुआ है और उस बालककी जन्मकालीन मेघराशिमैं रवि ग्रह है । अब उस ग्रहका द्वादशभाव इस तरहसे निकल सकता है । मेघराशिपरिमित ग्रह एक है और रविग्रहका परिमित ग्रह भी एक है । यहां मेघराशि परिमित एक ग्रहसे रविग्रहके एक ग्रहकी गुणा करनेसे गुणनफल एक होगा । फिर इस गुणनफलको ८से गुणा करनेसे गुणनफल ८ होगा । अब ग्रहादिके खोयनचक्र योग करनेकी गैति दिखलाई जाती है । -रविका नक्षत्र विशाखा है और इसका परिमित ग्रह १६ है । पूर्वोक्त गुणनफल ८को इसमें जोड़नेसे २४ होगा । अब उस बालकका उदयावधि जातदण्ड परिमित ग्रह ६ है । इसे वृषभलग्न परिमित ग्रहमें जोड़नेसे ८ हुआ । अब ८को २४में जोड़नेसे ३२ होगा । इस ३२को १२से भाग देनेसे लब्धि २ होगी और शेष ८ बचेगा । लब्धिकी छोड़ कर शेषाहमे भावका विचार करना चाहिये । यहां पर शेषाह नौ रहनेसे ग्रहका भोजन भाव समझा जाता है । अतएव उस बालकका रविग्रह भोजन भावमें है, ऐसा स्थिर करना चाहिये । जिस तरह रविग्रहको शयनादि भाव-गणनाका उदाहरण दिया गया, यदि रवि मेघराशिमैं न रहे कर वृषादि किसी राशिमैं रहे, तो २३।४ इत्यादि क्रमसे १२ तक ग्रह होगा और रवि प्रभृति ग्रहका राहु तथा केतु ले कर भी ८ तक ग्रह होगा । इस तरह द्वादशभावको गणना करके यहीँका

वलावल श्री। शुभाशुभका विषय स्थिर कर लेना चाहिये । (भक्तिकौमुदी)

द्वादशमद्य (मं० लौ०) द्वादशविधं मद्यं । पुलस्त्योक्त द्वादशविधमद्य, पुलस्त्यके मतानुसार १२ प्रकारको शराव । कटहल, दाम्ब, महवे, खजूर, ताड़, ऐलव, माध्वोक, टड्डमाध्वोक, मैरय और नारियलका मद्य इसके निवा नारइवाँ सुरा है । यह शराव बहुत निहत्त समझी जाती है ।

द्वादशमन (सं० पु०) द्वादशगुणितो मनः । अद्विसंहिताके अनुसार अनुष्येति वारह प्रकारके मन ।

रसा (चर्वी) रेत, रक्त, मज्जा, मूत्र, विष्ठा, नाकका मल, कानका मल, नखका मल, श्लेष्मा, आँखका जल और मन यहो वारह शारीरिक मन है । जो इसको सफाई रखना चाहते, उनका कर्त्तव्य है, कि विष्ठासूत्र त्याग करके लिङ्गमें एक बार, गुच्छमें तीन बार, वायें हाथमें दश बार और दोनों हाथमें पात बार जलके साथ मटो दें । यह शोध नियम गृहस्थके लिये है । ब्रह्मचारीके लिये इसका दूना, वानप्रस्थावल्ग्वोके लिये तिगुना और यतिके लिये चोगुना किया गया है । विष्ठासूत्र त्याग करनेके वाट शुद्ध हो आचमन करके मधु इन्द्रिय छिद्रोंको स्वयं करना चाहिये । वैवाध्ययनके समय तथा खानेके वाट सर्वदा इसी तरह आचमन करना चाहिये । ऐसा करनेसे उक्त वारहके मलको शुद्धि होती है ।

(मनु ६ अ०)

द्वादशमास (सं० पु०) द्वादश गुणितो मासः चैत्रादि १२ मास । वारह महीनेका वर्ष होता है, किन्तु कभी कभी १३ महीनेका भी वर्ष हो जाता है, प्रायः वारह ही महीनेका वर्ष हुआ करता है । ठाई वर्षके बाद जब मलमास होता है, तब १३ महीनेका वर्ष होता है ।

